

Barcode : 99999990312097  
Title - Shri Bhagavatisutram Bhag-4  
Author - Maharaj, Ghasilalji  
Language - sanskrit  
Pages - 1475  
Publication Year - 1963  
Barcode EAN.UCC-13







जेनाचार्य-जेनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-वासीलालजी-महाराज-

विरचितया अनगारधर्माभूतवर्णिष्यान्वया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्-

श्री-भगवतीसूत्रम् ।

BHAGAVATĪ

SŪTRAM

(चतुर्थो भागः)

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-  
पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

राजकोटनिवासी श्रेष्ठिश्री-शामजीभाई-बेलजीभाई-वीराणी  
तथा कडवीभाई-वीराणी स्मारक ट्रस्ट-प्रदत्त-द्रव्यसाहाय्येन  
अ० भा० श्वे० स्या० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः  
श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-भावृत्तिः  
प्रति १२००

वीर-संवत्  
२४८९

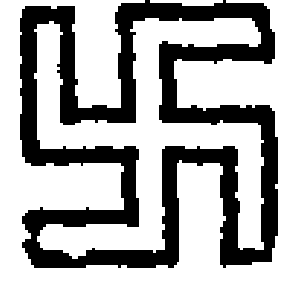
विक्रम-संवत्  
२०१९

ईसवीसन्  
१९६३

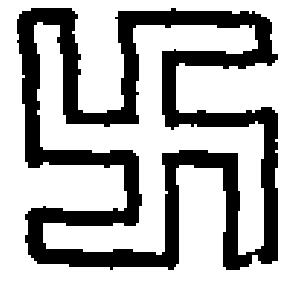
मूल्यम्-रु० ३५-०-०

ॐ ठेकाखुं :  
भा. श्वे. स्थानकुवासी  
शाओद्धार समिति,  
कुवा रोड, श्रीन लॉन्  
राजकोट, ( सौराष्ट्र ).

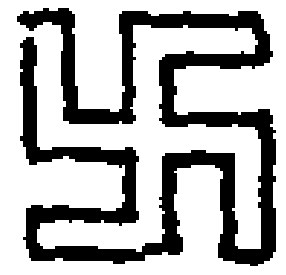
Published by :  
Shri Akhil Bharat S. S.  
Jain Shastroddhara Samiti,  
Garedia Kuva Road, RAJKOT,  
( Saurashtra ), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,  
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।  
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,  
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।  
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥  
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।  
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

भूख्यः ३. ३५=००

आवृत्ति : प्रत १२००  
संवत् : २४८८  
संवत् २०१८  
रीसन १८६३

: मुद्रक :  
मणिलाल छगनलाल शाह  
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,  
धी ठांटा रोड, अमदावाद.

# श्री भगवती सूत्र भा. चौथे की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रममाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
पाँचवे शतकका पहला उद्देश		
१	पाँचवेंशतक के उद्देशों की संग्रहार्थ गाथा	१-२
२	सूर्यके स्वरूपका निरूपण	३-१०
३	रात्रीदिवसके स्वरूपका निरूपण	११-५२
४	ऋतुविशेषादिके स्वरूपका निरूपण	५२-७७
५	लवणसमुद्र के स्वरूपका निरूपण	७७-९७
दूसरा उद्देशक		
६	दूसरे उद्देशका विषयों के विवरण	९८-९९
७	वायुके स्वरूपका निरूपण	१००-१२३
८	ओदनादि द्रव्य का निरूपण	१२४-१४०
९	लवणसमुद्र के विष्कम्भ का निरूपण	१४०-१४७
तीसरा उद्देश		
१०	अन्यतीर्थिकों के मिथ्याज्ञान पने का निरूपण	१४८-१६८
११	नैरयिकादिकों के आयुष्यका निरूपण	१६८-१८१
चतुर्थ उद्देशक		
१२	चौथे उद्देशके विषयोंका विवरण	१८२-१८५
१३	छद्मस्थों के शब्दश्रवण का निरूपण	२८६-२००
१४	छद्मस्थ केवली के हासादि निरूपण	२००-२१६
१५	हरिनैगमिपिदेव की शक्तिका निरूपण	२१६-२२४
१६	अतिमुक्त अनगार के स्वरूपका निरूपण	२२४-२३८
१७	महावीर स्वामीके प्रति दो देवोंकी शिष्यविषयक वक्तव्यता निरूपण	२३८-२६२
१८	नोसंयत के स्वरूपका निरूपण	२६२-२६८
१९	देवों की मापाका निरूपण	२६८-२७०
२०	केवली छद्मस्थ के स्वरूपका निरूपण	२७१-२७९
२१	प्रमाण के स्वरूपका निरूपण	२७९-२९०
२२	केवली के चरम कर्मका निरूपण	२९०-२९४

भणवानुं ठेकाछुं :

Published by :

श्री अ. बा. प्रवे. स्थानकवारी  
नैन शास्त्रोद्धार समिति,  
ठ. गरेडिया कुवा रोड, श्रीन लोंग  
पासे, राजकोट, ( सौराष्ट्र ).

Shri Akhil Bharat S. S.  
Jain Shastroddhara Samiti,  
Garedia Kuva Road, RAJKOT,  
( Saurashtra ), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवशा,  
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैप यत्नः ।  
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,  
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।  
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥  
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।  
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

भूस्थः ३. ३५=००

प्रथम आवृत्ति : प्रत १२००

वीर संवत् : २४८६

विक्रम संवत् २०१६

धंसवीसन १६६३

: मुद्रक :

मणिलाल छगनलाल शाह

नवप्रसात प्रिन्टींग प्रेस,

धी कांटा रोड, अमदावाद.

# श्री भगवती सूत्र भा. चौथे की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क

विषय

पृष्ठाङ्क

## पाँचवे शतकका पहला उद्देश

१ पाँचवेंशतक के उद्देशों की संग्रहार्थ गाथा	१-२
२ सूर्यके स्वरूपका निरूपण	३-१०
३ रात्रीदिनसके स्वरूपका निरूपण	११-५२
४ ऋतुविशेषादिके स्वरूपका निरूपण	५२-७७
५ लवणसमुद्र के स्वरूपका निरूपण	७७-९७

## दूसरा उद्देशक

६ दूसरे उद्देशका विषयों के विवरण	९८-९९
७ वायुके स्वरूपका निरूपण	१००-१२३
८ ओदनादि द्रव्य का निरूपण	१२४-१४०
९ लवणसमुद्र के विष्कम्भ का निरूपण	१४०-१४७

## तीसरा उद्देश

१० अन्यतीर्थिकों के मिथ्याज्ञान पने का निरूपण	१४८-१६८
११ नैरयिकादिकों के आयुष्यका निरूपण	१६८-१८१

## चतुर्थ उद्देशक

१२ चौथे उद्देशके विषयोंका विवरण	१८२-१८५
१३ छद्मस्थों के शब्दश्रवण का निरूपण	२८६-२००
१४ छद्मस्थ केवली के हासादि निरूपण	२००-२१६
१५ हरिनैगमिपिदेव की शक्तिका निरूपण	२१६-२२४
१६ अतिमुक्त अन्तगार के स्वरूपका निरूपण	२२४-२३८
१७ महावीर स्वामीके प्रति दो देवोंकी शिष्यविषयक वक्तव्यता निरूपण	२३८-२६२
१८ नोसंयत के स्वरूपका निरूपण	२६२-२६८
१९ देवों की भाषाका निरूपण	२६८-२७०
२० केवली छद्मस्थ के स्वरूपका निरूपण	२७१-२७९
२१ प्रमाण के स्वरूपका निरूपण	२७९-२९०
२२ केवली के चरम कर्मका निरूपण	२९०-२९४

भणवानुं ठेकाछुं :  
श्री अ. भा. श्वे. स्थानध्वारी  
नेन शाश्वतार समिति,  
ठ. गरेडिया कुवा रोड, श्रीन लॉन्  
पासे, राजकोट, ( सौराष्ट्र ).

Published by :  
Shri Akhil Bharat S. S.  
Jain Shastrodhdhara Samiti,  
Garedia Kuva Road, RAJKOT,  
( Saurashtra ), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रययन्त्यवशा,  
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैप यत्नः ।  
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,  
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।  
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥  
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।  
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्यः ३. ३५=००

प्रथम आवृत्ति : प्रत १२००

वीर संवत् : २४८६

विक्रम संवत् २०१६

धसवीसन १६६३

: मुद्रक :

भण्डालाल छगनलाल शाह

नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,

धी कांटा रोड, अमदावाद.

# श्री भगवती सूत्र भा. चौथे की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क

विषय

पृष्ठाङ्क

## पाँचवे शतकका पहला उद्देश

१	पाँचवेंशतक के उद्देशों की संग्रहार्थ गाथा	१-२
२	सूर्यके स्वरूपका निरूपण	३-१०
३	रात्रीदिवसके स्वरूपका निरूपण	११-५२
४	ऋतुविशेषादिके स्वरूपका निरूपण	५२-७७
५	लवणसमुद्र के स्वरूपका निरूपण	७७-९७

## दूसरा उद्देशक

६	दूसरे उद्देशके विषयों के विवरण	९८-९९
७	वायुके स्वरूपका निरूपण	१००-१२३
८	ओदनादि द्रव्य का निरूपण	१२४-१४०
९	लवणसमुद्र के विष्कम्भ का निरूपण	१४०-१४७

## तीसरा उद्देश

१०	अन्यतीर्थिकों के मिथ्याज्ञान पने का निरूपण	१४८-१६८
११	नैरयिकादिकों के आयुष्यका निरूपण	१६८-१८१

## चतुर्थ उद्देशक

१२	चौथे उद्देशके विषयोंका विवरण	१८२-१८५
१३	छद्मस्थों के शब्दश्रवण का निरूपण	२८६-२००
१४	छद्मस्थ केवली के हासादि निरूपण	२००-२१६
१५	हरिनैगमिपिदेव की शक्तिका निरूपण	२१६-२२४
१६	अतिमुक्त अनगार के स्वरूपका निरूपण	२२४-२३८
१७	महावीर स्वामीके प्रति दो देवोंकी शिष्यविषयक वक्तव्यता निरूपण	२३८-२६२
१८	नोसंयत के स्वरूपका निरूपण	२६२-२६८
१९	देवों की भाषाका निरूपण	२६८-२७०
२०	केवली छद्मस्थ के स्वरूपका निरूपण	२७१-२७९
२१	प्रमाण के स्वरूपका निरूपण	२७९-२९०
२२	केवली के चरम कर्मका निरूपण	२९०-२९४

२३ केवली प्रणीत मनोवचनका निरूपण	२९५-३०४
२४ अनुत्तर देवसंबन्धी प्रश्नोत्तर	३०५-३१५
२५ केवलीके ज्ञानके स्वरूपका निरूपण	३१५-३१८
२६ केवलीके हस्तादि न्यासका निरूपण	३१८-३२४
२७ चौदह पूर्वधरकी शक्तिका निरूपण	३२५-३३०

### पाँचवां उद्देशक

२८ पाचवे उद्देशके विषयोंका निरूपण	३३१-३३२
२९ छद्मस्थ के सिद्धयभाव का निरूपण	३३२-३३५
३० एवंभूत और अनेवंभूत वेदनाके विषयमें अन्यतीर्थियों के मतका निरूपण	३३५-३५०
३१ कुलकर और तीर्थकर आदि के वक्तव्यताका निरूपण	३५०-३५७

### छठा उद्देशक

३२ छठे उद्देशके विषयोंका विवरण	३५८-३५९
३३ कर्म बंधके स्वरूपका निरूपण	३६०-३७३
३४ गृहपति को भाण्ड-और अग्निकाय के स्वरूपका निरूपण	३७३-३९९
३५ पुरुषकी धनुर्विषयक क्रियाका निरूपण	३९९-४१६
३६ अन्यमतवादियों के मतका निरूपण	४१६-४२०
३७ नैरयिकों की विकृति के विषयका निरूपण	४२१-४२४
३८ आधाकर्मादि आहार आदि के स्वरूपका निरूपण	४२५-४३५
३९ आचार्य और उपाध्यायका सिद्धिगमनका निरूपण	४३६-४३९
४० मृपावादि के कर्मबन्धका निरूपण	४३९-४४४

### सातवां उद्देशक

४१ सातवे उद्देशक के विषयोंका विवरण	४४५-४५०
४२ परमाणु-पुद्गलके स्वरूपका निरूपण	४५०-४६२
४३ परमाणुपुद्गल आदि के विषयमें असिधरा आदिका निरूपण	४६२-४७२
४४ परमाणु-पुद्गलादिके विभाग का निरूपण	४७२-४८१
४५ परमाणु-पुद्गलके परस्पर में स्पर्शनाका निरूपण	४८१-५०४
४६ परमाणु-पुद्गलों आदि की स्थिति एवं अन्तरकालका निरूपण	५०४-५२८



४७	पुद्गल द्रव्यके अल्प बहुत्वका निरूपण	६२८-६४४
४८	नैरयिकों के असुरकुमार आदिकों के और एकेन्द्रियादिकों के आरंभ अनारम्भ आदिका निरूपण	६४४-६६९
४९	हेतु के स्वरूपका निरूपण	६६९-६८२

### आठवां उद्देशक

५०	आठवें उद्देशक के विषयका विवरण	५८३-५८४
५१	पुद्गल के स्वरूपका निरूपण	५८५-६३६
५२	जीवोंके वृद्धिहार आदिका निरूपण	६३७-६७७

### नववां उद्देशक

५३	नववें उद्देशक के विषयों का विवरण	६७८-६८०
५४	राजगृह नगरके स्वरूपका निरूपण	६८०-६८७
५५	प्रकाश और अन्धकार के स्वरूपका निरूपण	६८८-६९९
५६	नैरयिक आदि जीवोंके समयादि ज्ञानकानिरूपण	६९९-७०९
५७	पार्श्वापत्योय स्थविर और महावीर स्वामीका संवाद	७१०-७३१
५८	देवलोक के स्वरूपका निरूपण	७३१-७३५

### दसवां उद्देशक

५९	चन्द्रके स्वरूपका निरूपण	७३६-७५१
----	--------------------------	---------

### छठे शतकके पहला उद्देशक

६०	पहले उद्देशके विषय का संक्षिप्त विवरण	७५२-७५५
६१	उद्देशके विषय संग्राहक गाथा	७५५-७५६
६२	वेदना निर्जराके स्वरूपका निरूपण	७५७-७८२
६३	करण के स्वरूपका निरूपण	७८३-७९५
६४	वेदना और निर्जराके साहचर्यका निरूपण	७९६-८०१

### दूसरा उद्देशक

६५	आहार के स्वरूपका निरूपण	८०२-८०३
----	-------------------------	---------

### तीसरा उद्देशक

६६	तीसरे उद्देशके विषयोंका विवरण	८०४-८०८
६७	महाकर्म और अल्पकर्मके स्वरूपका निरूपण	८०९-८३२

६८ जीवके कर्मका निरूपण	८३२-८३९
६९ कर्म पुद्गलके उपचयका निरूपण	८४०-८६०
७० कर्मके भेद और उनकीस्थितिका निरूपण	८६१-९६२
७१ वेदक जीवके अल्प बहुत्वका कथन	९३३-९३८

### चौथा उद्देशक

७२ चौथे उद्देशकके विषयों संक्षिप्त विषयविवरण	९३९-९४३
७३ जीवके सम्प्रदेश और अप्रदेशके स्वरूपका निरूपण	९४४-१०१५
७४ प्रत्याख्यानादिके स्वरूपका निरूपण	१०१६-१०३१

### पांचवां उद्देशक

७५ पांचवे उद्देशकके विषयोंका संक्षिप्त विवरण	१०३२-१०३६
७६ तमस्काय के स्वरूपका निरूपण	१०३७-१०७८
७७ कृष्णराजिके स्वरूपका निरूपण	१०७७-११०४
७८ लोकान्तिक देवके विमान आदिका निरूपण	११०५-११२८

### समाप्त

## ખા. પ્ર. શ્રી વિનોદમુનિનું સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર

આ પરમ વૈરાગી અને દયાના પુંજ જેવા આ પુરુષનો જન્મ વિક્રમ સંવત ૧૯૯૨ પોર્ટ્સુહાન (આફ્રિકા) માં કે જ્યાં વીરાણી કુટુંબનો વ્યાપાર આજ દિવસ સુધી ચાલુ છે, ત્યાં થયો હતો.

શ્રી વિનોદકુમારના પુણ્યવાન પિતાશ્રીનું નામ શેઠશ્રી દુર્લભજી શામજી વીરાણી અને મહા ભાગ્યવાન માતૃશ્રીનું નામ મણિબેન વીરાણી, બન્નેનું અસલ વતન રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર) છે. બેન મણિબેન ધાર્મિક ક્રિયામાં પહેલેથી જ રૂચિવાળા હતા, પરંતુ શ્રી વિનોદકુમાર ગર્ભમાં આવ્યા પછી વધારે દૃઢધર્મી અને પ્રિયધર્મી બન્યા હતા.

પૂર્વ જીવના સંસ્કારથી શ્રી વિનોદકુમારનું લક્ષ ધાર્મિક અભ્યાસ અને ત્યાગ ભાવ તરફ વધારે હોવા છતાં તેઓશ્રીએ મોનમેટ્રીક સુધી અભ્યાસ કરી વ્યવહારિક કેળવણી લીધેલી અને વ્યાપારની પેઢીમાં કુશળતા બતાવેલી.

તેઓશ્રીએ યુનાઇટેડ કિંગડમ, ફ્રાન્સ, બેલ્જિયમ, હોલેન્ડ, જર્મની, સ્વીઝર્લેન્ડ, તેમજ ઇટાલી, ઇજિપ્ત વગેરે દેશોમાં પ્રવાસ કરેલ. સં. ૨૦૦૬ ના વૈશાખ માસ, સને ૧૯૫૩ માં લંડનમાં રાણી એલીઝાબેથના રાજ્યારોહણ પ્રસંગે તેઓશ્રી લંડન ગયા હતા. કાશ્મિરનો પ્રવાસ પણ તેમણે કરેલ, દેશ પરદેશ ફરવા છતાં પણ તેમણે કોઈ વખતે પણ કંદમૂળનો આહાર વાપરેલ નહીં.

ઉગતી આવતી યુવાનીમાં તેઓશ્રીએ દુનિયાના રમણીય સ્થળો જેવાં કે કાશ્મિર, ઇજિપ્ત અને યુરોપનાં સુંદર સ્થળોની મુલાકાત લીધી હોવા છતાંએ તેઓને રમણીય સ્થળો કે રમણીય યુવતીઓનું આકર્ષણ થયું નહીં. એ એના પૂર્વજીવના ધાર્મિક સંસ્કારનો જ રંગ હતો અને એ રંગે જ તેમને તે બધું ન ગમ્યું અને તુરત વતન પાછા ફર્યા અને સાધુ-સાધ્વીજીનાં દર્શન કરવાને ઠેકઠેકાણે ગયા અને તેમના ઉપદેશનો લાભ લીધો અને વૈરાગ્યમાં જ મન લાગ્યું. હુંડા કાલ અવસર્પિણિના આ દુષમ નામના પાંચમા આરાનું વિચિત્ર વાતાવરણ જોઈ તેમને કંઈક હોભ થતો કે તુરત જ તેનો ખુલાસો મેળવી લેતા અને ત્યાગ ભાવમાં સ્થિર રહેતા. દેશ-પરદેશમાં પણ સામાયિક, પ્રતિક્રમણ, ચોવિહાર આદિ પચ્ચક્રખાણુ તેઓ ચૂક્યા નહીં. ઉચ્ચી કેટિની શૈયાનો ત્યાગ કરી તેઓ સૂવા માટે માત્ર એક શેતરંજી, એક ઓસીકું અને ઓઢવા માટે એક આદર ફક્ત વાપરતા અને પલંગ ઉપર નહીં પણ ભૂમિ

પર જ શયન કરતા અને પહેરતા માટે જોક ખાદીનો લેગો અને અંગો વાપરતા, કોઈ વખતે કળજો પહેરતા, ઝડુ ઠંડી હોય તો વખતે શાદો ગરમ ઠાટ પહેરી લેતા અને મુકપત્તિ, પાપરત્નું, રત્નેદરજ અને બે ચાર પાર્શ્વિક પુસ્તકની ઝોળી સાથે રાખતા, સંઘાસમાં નહીં પણ જંગલમાં એકાંત જગ્યામાં ઘણે ભાગે શરીરની અશુચિ દૂર કરવા જતા, દાઢતાં ચાઢતાં, સંઘાસ અને પેશાબ સંબંધીમાં છવઢ્યાની બરાબર જતના કરતા.

દેશમાં કે પરદેશમાં જ્યારે તેમને ઠાંઈની સાથે મળવાનું થતું ત્યારે તેમની સાથે અહિંસામય નીન ધર્મનું સ્વરૂપ પ્રકટ થયા વગર રહેતા નહીં.

દીક્ષાર્થીઓને જલદી દીક્ષા લેવાની પ્રેરણા કરતા અને એમ જ કહેતા કે જીંદગીનો કોઈ ભરોસો નથી. “અસંસયં જીવિયં મા પમાયદ” આગુધ્ય તૂટતાં વાર લાગતી નથી, તૂટ્યું છવન સંધાતું નથી. માટે ધર્મકરણીમાં સમયમાત્રનો પ્રમાદ ન કરવો જોઈએ.

ગોંડલ સંપ્રદાયના ઘણાખરા પૂ. મુનિવરો અને પૂ. મહાચતીજીઓનો તથા બોટાદ સંપ્રદાયના પૂ. આચાર્યશ્રી માણેકચંદજી મહારાજ અને દરિયાપુરી સંપ્રદાયના શાંત-શાસ્ત્ર પૂ. મુનિશ્રી ભાયચંદજી મહારાજ, શ્રમણ સંધના મુખ્ય આચાર્યશ્રીજી આત્મારામજી મહારાજ તપોમય જ્ઞાનનિધિ શાઓદ્વારક બા. ધ્ર. પૂ. આચાર્ય મહારાજ શ્રી ધામીલાલજી મહારાજ વગેરે અનેક સાધુ-સાધ્વીઓના ઉપદેશનો તેમણે લાભ લીધેલ. મુંબઈમાં સં. ૨૦૧૧ સાલમાં શ્રી ધર્મસિંહજી મહારાજના સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન શ્રી લાલચંદજી મહારાજનો પરિચય થયો. લાલચંદજી મહારાજ પે.તે, ‘સંસારપંક્ષનાં ત્રણ પુત્રો અને બે પુત્રીઓ એમ કુલ ૬ બલકે આખા કુટુંબે સંયમ અંગીકાર કરેલ, તે જાણી તેમને અદ્ભૂત ત્યાગ ભાવના પ્રગટ થઈ કે જે કદી ક્ષય પામી નહીં.

આ પહેલાં તેઓ જ્યારે માતા-પિતાની સાથે પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી માણેકચંદજી મહારાજના દર્શને બોટાદ ગયેલા ત્યારે તેમના ઉપદેશની જે અસર થઈ તે પણ મુખ્ય અસર પહેલી હતી અને બીજી અસર તે પૂજ્ય લાલચંદજી મહારાજના સહકુટુંબની દીક્ષા એ હતી. આ બેઉ પ્રસંગોએ પૂર્વ ભવની બાકી રહેલી આરાધનાને પૂરી કરવાના નિમિત્તરૂપ હોઈને વખતો વખત તેઓ માતા-પિતા પાસે દીક્ષાની આજ્ઞા માગતા હતા અને તેનો જવાબ તેમના પિતાશ્રી તરફથી એક જ હતો, ‘જે હજી વાર છે સમય પાકેવા દીઓ. જ્ઞાનાભ્યાસ વધારો,

સં. ૨૦૧૨ ના અપાડ શુદ્ધ ૧૫ શ્રી વિનોદકુમારે ગોંડલ સંપ્રદાયના શાસ્ત્ર પૂ. આચાર્યશ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ સાહેબ પાસે વેરાવળ આતુર્ભાસ દરમ્યાન ખાસ નિયમિત રીતે દીક્ષાની તૈયારી કરવા માટે તેમની પાસે જ્ઞાનાભ્યાસ કર્યો તેની સાથે પૂ. આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજના સંસાર પદના કુટુંબી, દીક્ષાના ભાવિક શ્રી જસરાજભાઈ પણ જ્ઞાનાભ્યાસ કરતા હતા. તેઓએ ત્યાં એવો નિર્ણય કરેલો કે આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ પાસે આપણે બન્નેએ દીક્ષા લેવી, પહેલાં વિનોદકુમારે અને પછી શ્રી જસરાજભાઈએ દીક્ષા લેવી, શ્રી જસરાજભાઈની દીક્ષા તિથિ પૂ. શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ સાહેબે સં. ૨૦૧૩ ના જેઠ શુદ્ધ ૫ ને સોમવારે માંગરોલ મુકામે નક્કી કરી. શ્રી જસરાજભાઈ વિનોદકુમારને રાજકોટ મળ્યા. શ્રી વિનોદકુમારે શ્રી જસરાજભાઈની યથાયોગ્ય સેવા બજાવી, માંગરોલ રવાના કર્યા અને પોતે નિશ્ચય પૂર્વક દીક્ષા માટે આજ્ઞા માગી પણ તેઓના પિતાશ્રીની એકને એક વાણી સાંભળીને તેમને મનમાં આઘાત થયો અને દીક્ષા માટેનો તેમણે બીજો રસ્તો શોધી કાઢ્યો.

પૂજ્યશ્રી લાલચંદજી મહારાજ અને તેમના શિષ્યોનો પરિચય મુંબઈમાં થયેલ હતો અને ત્યારબાદ કોઈ વખત પત્રવહેવાર પણ થતો હતો. છેલ્લા પત્રથી તેમણે જણેલ હતું, જે પૂ. શ્રી લાલચંદજી મહારાજ, ખીચન ગામે પૂ. આચાર્ય શ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સાહેબ પાસે જ્ઞાનાભ્યાસ અર્થે ગયા છે. પોતાને પિતાશ્રીની આજ્ઞા (દીક્ષા માટે) મળે તેમ નથી અને દીક્ષા તો લેવી જ છે. આજ્ઞા વિના કોઈ સાધુ મુનિરાજ દીક્ષા આપશે નહીં અને સ્વયમેવ દીક્ષા સૌરાષ્ટ્રમાં લઈને આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ પાસે જવામાં ઘણાં વિઘ્નો થાશે, એમ ધારીને તેઓએ દૂર રાજસ્થાનમાં ચાલ્યા જવાનું નક્કી કર્યું.

તા. ૨૪-૫-૫૭ સં. ૨૦૧૩ ના વૈશાખ વદ ૧૦ ને શુક્રવારના રોજ સાંજના માતૃશ્રી સાથે છેલ્લું જમણું કર્યું. ભોજન કરી, માતૃશ્રી સામાયિકમાં ઓસી ગયા. તે વખતે કોઈને જણુ કર્યા વગર દીક્ષાના વિઘ્નોમાંથી બચવા માટે ઘર, કુટુંબ, સૌરાષ્ટ્ર, ભૂમિ અને ગોંડલ સંપ્રદાયનો પણ ત્યાગ કરી તેઓ ખીચન તરફ રવાના થયા.

શ્રી વિનોદમુનિના નિવેદન પરથી માલૂમ પડ્યું કે તા. ૨૪-૫-૫૭ ના રોજ રાત્રે આઠ વાગે ઘેરથી નીકળી, રાજકોટ જંકશને ભેધપુરની ટિકિટ લીધી. તા. ૨૫-૫-૫૭ ના સવારે ૮ વાગ્યે મહેસાણા પહોંચ્યા. ત્યાં અઢી કલાક ગાડી પેડી રહે છે, તે દરમ્યાન ગામમાં જઈને લોચ કરવા માટેના વાળ રાખીને બાકીના કઠાવી નાખ્યા અને ગાડીમાં બેસી ગયા. મારવાડ જંકશન



પર જ શયન કરતા અને પહેરવા માટે જોક ખાદીનો લેવો અને ઝરો વાપરતાં, કોઈ વખતે કબજો પહેરતા, બહુ ઠંડી હોય તો વખતે સાદો ગરમ કોટ પહેરી લેતા અને મુકપત્તિ, પાથરણું, રત્નેકરણ અને બે ચાર ધાર્મિક પુસ્તકની ઝોળી સાથે રાખતા, સંઘાસમાં નહીં પણ જંગલમાં એકાંત જગ્યામાં ઘણે ભાગે શરીરની અશુચિ દૂર કરવા જતા, હાલતાં ચાલતાં, સંઘાસ અને પેશાબ સંબંધીમાં શુદ્ધિની ખરાબર જતના કરતા.

દેશમાં કે પરદેશમાં જ્યારે તેમને કોઈની સાથે મળવાનું થતું ત્યારે તેમની સાથે અહિંસામય જૈન ધર્મનું સ્વરૂપ પ્રકટ થયું વગર રહેતા નહીં.

દીક્ષાર્થીઓને જલદી દીક્ષા લેવાની પ્રેરણા કરતા અને એમ જ કહેતા કે જીવંતો કોઈ ભરોસો નથી. “ઋસંસયં જીવિયં મા વમાયપ” આયુષ્ય તૂટતાં વાર લાગતી નથી, તૂટ્યું જીવન સંધાતું નથી. માટે ધર્મકરણીમાં સમયમાત્રનો પ્રમાદ ન કરવો જોઈએ.

ગોંડલ સંપ્રદાયના ઘણાખરા પૂ. મુનિવરો અને પૂ. મહાસતીજીઓનો તથા બોટાદ સંપ્રદાયના પૂ. આચાર્યશ્રી માણેકચંદ્ર મહારાજ અને દરિયાપુરી સંપ્રદાયના શાંત-શાસ્ત્ર પૂ. મુનિશ્રી લાયચંદ્ર મહારાજ, શ્રમણ સંઘના મુખ્ય આચાર્યશ્રીજી આત્મારામજી મહારાજ તપોમય જ્ઞાનનિધિ શાસ્ત્રોદ્ધારક બા. બ્ર. પૂ. આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ વગેરે અનેક સાધુ-સાધ્વીઓના ઉપદેશનો તેમણે લાભ લીધેલ. મુંબઈમાં સં. ૨૦૧૧ સાલમાં શ્રી ધર્મસિંહજી મહારાજના સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજનો પરિચય થયો. લાલચંદ્ર મહારાજ પે.તે, ‘સંસારપંથનાં ત્રણ પુત્રો અને બે પુત્રીઓ એમ કુલ ૬ બલકે આખા કુટુંબ સંયમ અંગીકાર કરેલ, તે બધી તેમને અદ્ભૂત ત્યાગ ભાવના પ્રગટ થઈ કે જે કદી ક્ષય પામી નહીં.

આ પહેલાં તેઓ જ્યારે માતા-પિતાની સાથે પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી માણેકચંદ્ર મહારાજના દર્શને બોટાદ ગયેલા ત્યારે તેમના ઉપદેશની જે અસર થઈ તે પણ મુખ્ય અસર પહેલી હતી અને બીજી અસર તે પૂજ્ય લાલચંદ્ર મહારાજના સહકુટુંબની દીક્ષા એ હતી. આ બેઠે પ્રસંગેએ પૂર્વ ભવની બાકી રહેલી આરાધનાને પૂરી કરવાના નિમિત્તરૂપ હોઈને વખતો વખત તેઓ માતા-પિતા પાસે દીક્ષાની આજ્ઞા માગતા હતા અને તેનો જવાબ તેમના પિતાશ્રી તરફથી એક જ હતો, ‘જે હજી વાર છે સમય પાકવા દીઓ, જ્ઞાનાભ્યાસ વધારો,

સમય માત્રનો પ્રમાદ કરવો ઠીક ન લાગ્યો, તેથી શ્રી અરિહંત ભગવંતો તથા શ્રી સિદ્ધ ભગવંતોની સાક્ષીએ મારા ગુરુ મહારાજ સમક્ષ પ્રવ્રજ્યાનો પાઠ લાવીને મારા આત્માના કલ્યાણ માટે મેં દીક્ષા અંગીકાર કરી છે. સમાજને જોટો ખ્યાલ ન આવે કે મારી દીક્ષા ક્ષણિક જુસ્સાથી અગર ગેરસમજથી થઈ છે તેથી તથા સમાજમાં નૈનશાસનની પ્રભાવના થાય તે હેતુથી મારે મારો વૃત્તાંત પ્રગટ કરવો ઉચિત છે.

ઉત્તરાધ્યયનનું સૂત્રના ૧૯ માં અધ્યયનપરથી મને લાગ્યું કે મનુષ્ય જીવનનું ખરું કર્તવ્ય મોક્ષાર્થે આપનારી દીક્ષા જ છે.

હેવટ સુધી મેં મારા જાણુ જાણુ પાસે દીક્ષા માટે આજ્ઞા માગી અને તે વખતે પણ પહેલાંની જેમ વાત ઉડાવી દીધી અને અતંત ઉપકારી એવા મારા જાણુ સમક્ષ હું તેમને કહી શકતો ન હતો અને બીજી જાણુથી મને થયું કે આયુષ્ય અશાશ્વત છે અને આવા ઉત્તમ કામ માટે મારે જરાપણ પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી. તેથી મેં વિચારીને આ પગલું ભર્યું છે અને મને પૂર્ણ વિશ્વાસ છે કે, શ્રી વીરપ્રભુ મહાવીર સ્વામીનો સકળ સંઘ મારા આ કાર્યને અનુમોદશે જ “ તથાસ્તુ ”.

રાજકોટમાં શ્રી વિનોદકુમારના ગયા પછી પાછળથી ખગર પડી કે વિનોદકુમાર કેમ દેખાતા નથી, એટલે તપાસ થવા માંડી, ગામમાં કયાંય પત્તો ન લાગ્યો એટલે બહારગામ તારો કર્યા, કયાંયથી સંતોષકારક સમાચાર સાંપડ્યા નહીં, અર્થાત્ પત્તો મળ્યો જ નહીં. આમ વિમાસણના પરિણામે પિતાશ્રીને એ મહીના પહેલાંની એક વાતની યાદી આવી. તે એ હતી કે તે વખતે શ્રી વિનોદકુમારે આજ્ઞા માગેલી કે “ જાણુ ! આપની આજ્ઞા હોય તો આ આતુમોસ ખીચન ( રાજસ્થાન ) જઈ, કારણ કે ખીચનમાં પૂ. ગુરુમહારાજ શ્રી સમર્થભલજી મહારાજ કે જેઓ સિદ્ધાંત વિશારદ છે અને એકાંતવાદના પૂરા જાણુકાર છે, તેઓ ત્યાં મિરાજમાન છે. જેઓશ્રી પાસે શાસ્ત્રાભ્યાસ કરવા માટે પૂ. શ્રી. લાલચંદ્રજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૪ જવાના છે. તો મારી ઈચ્છા પણ ત્યાં તેમની પાસે જવાની છે. ”

આ વાતચીતનું સ્મરણ પિતાશ્રીને આવવા સાથે તેઓએ પં. પૂર્ણચંદ્રજી-દકને પોતાની પાસે બોલાવ્યા અને વિનોદકુમાર માટેની પોતાની ચિંતા વ્યક્ત કરી. પંડિતજીનું આ વાતને સમર્થન મળ્યું, તેઓશ્રીએ જણાવ્યું કે થોડા સમય પૂર્વે વિનોદકુમારે મારી પાસે જાણુવા માગ્યું હતું કે, ખીચનમાં કેવા

તથા ભેષપુર જંકશન થઈને તા. ૨૬-૫-૫૭ ની વહેલી સવારે જાં પામ્યે ફોલોલી પહોંચ્યા ત્યાંથી પગે ચાલીને ખીચન ઉપાશપમાં પહોંચ્યા અને ઉપાશપમાં બિરાજતા મુનિવરોના દર્શન કર્યો, વંદણા નમસ્કાર કરી શુભચાતા પૂછી, બહાર નીકળ્યાં અને પોતાના સામાયિકના કપડાં પહેર્યાં અને પછી પૂજ્ય શ્રી મુનિવરોની સન્મુખ સામાયિક કરવા બેઠા, તેમાં “જાપ નિયમા પઙ્ગુવાસામિ દુષિદં તિવિદેષં” ના બદલે “જાપ લીધ પઙ્ગુવાસામિ તિવિદં તિવિદેષં” બોલ્યા તે શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજે સાંભળ્યું અને તેઓશ્રીએ પૂછ્યું કે “વિનોદકુમાર ! તમે આ શું કરો છો, તેનો જવાબ આપવાને બદલે “અપ્પાણં યોસિરામિ” બોલી પાડ પૂરો કર્યો અને પછી વિનયપૂર્વક બે હાથ ભેડીને બોલ્યા કે “સાહેબ ! એ તો બની ચૂક્યું અને મેં સ્વયંમેવ દીક્ષા લઈ લીધી બરાબર જ છે અને તેમાં કંઈ ફેરફાર થઈ શકે તેમ નથી. આ સિવાય આપશ્રીની બીજી કંઈ પણ પ્રકારની આજ્ઞા હોય તો ફરમાવો.”

તે જ દિવસે બપોરના સાશ્વત પૂ. મુનિશ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સાહેબે શ્રી વિનોદકુમાર મુનિને પોતાની પાસે બોલાવ્યા અને સમજાવ્યા કે “તમે એક સારા ખાનદાન કુટુંબના વ્યક્તિ છો. તમારી આ દીક્ષા અંગીકાર કરવાની રીત બરાબર નથી કારણ કે તમારા માતા-પિતાને આ હકીકતથી દુઃખ થાય અને તેથી મારી સંમતિ છે કે રજોહરણની હાંડી ઉપરથી કપડું કાઢી નાખો જેથી તમો શ્રાવક ગણાવ અને જરૂર પડે તો શ્રાવકોનો સાથ લઈ શકો, એમ ત્રણવાર પૂ. મહારાજશ્રીએ સમજાવેલા પરંતુ તેમણે ત્રણેય વખત એક જ ઉત્તર આપેલો કે “જે થયું તે થયું, હવે મારે આગળ શું કરવું તે ફરમાવો.”

શ્રી વિનોદમુનિના શ્રી સમર્થમલજી જેવા મહામુનિના પ્રશ્નના જવાબ પછી ખીચનનો ચતુર્વિધ સંઘ વિચારમાં પડી ગયો અને મુનિશ્રીઓ પર સંસારીઓનો કંઈ પણ પ્રકારનો આ નિષ્કારણ હુમલો ન આવે તે માટે શ્રી વિનોદમુનિને જણાવવામાં આવ્યું કે “અમારી સલામતી માટે તમારે બહાર નિવેદન બહાર પાડવાની જરૂર છે” ત્યારે શ્રી વિનોદમુનિએ પોતાના હસ્તાક્ષરે નિવેદન શ્રી સંઘ સમક્ષ પ્રગટ કર્યું, તેનો સાર નીચે મુજબ છે:-

મારા માતા-પિતા મોહને વશ થઈને દીક્ષાની આજ્ઞા આપે તેમ ન હતું અને “અસંસ્રયં જીવિયં માં પમાંયદ” ને આધારે એક ક્ષણ પણ દીક્ષાથી વંચિત રહી શકું તેમ નથી, એમ મને લાગ્યું. શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજ સાહેબ-વગેરેએ મને મારી દીક્ષા માટે વિચારી પછી કરવાનું કહેલ પરંતુ મને



દીક્ષા પછી અઢી મહિનાને આંતરે ક્ષોદી ચોમાસા દરમ્યાન શ્રી વિનોદમુનિને હાજતે જવાની સંજ્ઞા થઈ અને તે માટે જવા તૈયાર થયા એટલે તેમના ગુરુએ કહ્યું કે બહુ ગરમી છે, જરાવાર થોભી જાવ એટલે શ્રી વિનોદમુનિએ રત્નેહરણ વગેરેની પ્રતિવેખના કરી તે દરમ્યાન ન રોકી શકાય એવી હાજત લાગી તેથી ફરી આજ્ઞા માગતાં, જણાવ્યું કે મને હાજત બહુ લાગી છે તેથી જાઉં છું, જલદી પાછો ફરીશ. કાળની ગહન ગતિને દુઃખદ રચના રચવી હતી. આજે જ હાજતે એકલા જવાનો બનાવ હતો, હમેશાં તો બધા સાધુઓ સાથે મળીને દિશાએ જતા.

હાજતથી મોકળાં થઈ પાછા ફરતા હતા, ત્યાં રેલ્વે લાઈન ઉપર બે ગાયો આવી રહી હતી. બીજી બાજુથી ટ્રેન પણ આવી રહી હતી, તેની બિહસલ વાગવા છતાં પણ ગાયો ખસતી ન હતી. શ્રી વિનોદમુનિનું હૃદય થરથરી ઉઠ્યું અને મહા અનુકંપાએ મુનિના હૃદયમાં સ્થાન લીધું હાથમાં રત્નેહરણ લઈ જાનના લેખમની પરવા કર્યા વગર ગાયોને બચાવવા ગયા. ગાયોને તો બચાવી જ લીધી પરંતુ આ ક્રિયામાં છકાય જીવની દયાના સાધનભૂત રત્નેહરણ કે જે વિનોદમુનિને આત્માથી વધારે પ્યારો હતો, તે રેલ્વે લાઈન ઉપર પડી ગયો અને શ્રી વિનોદમુનિએ તે પાછો સંપાદન કરવામાં જડવાદને વિદ્ધ કરતાં રાક્ષસી એન્જિનને ઝપાટે આવ્યા અને પોતાનું બલિદાન આપ્યું. અરિહંત....અરિહંત...એવા શબ્દો મુખમાંથી નીકળ્યા અને શરીર તૂટી પડ્યું. રક્ત પ્રવાહ છૂટી પડ્યો અને થોડા જ વખતમાં પ્રાણાંત થઈ ગયો. બધા લોકો કહેવા લાગ્યા કે ગૌરક્ષામાં મુનિશ્રીએ પ્રાણ આપ્યાં અંતિમ સમયે મુનિશ્રીના ચહેરા પર ભવ્ય શાન્તિ જ દેખાતી હતી.

હમેશાં તેઓ જે તરફ હાજતે જતા હતા તે તરફ ક્ષોદીથી પોકરણ તરફ જવાની રેલ્વે લાઈન હતી. આ લાઈન ઉપર રેલ્વે સત્તાવાળાઓએ ક્રાંટક મૂકેલ નથી અને ત્યાં રસ્તો પણ છે, એટલે પશુઓની અવરજવર હોય જ છે અને વખતો વખત ત્યાં ઢોરો રેલ્વેની હડફેટે ચડી જવાના પ્રસંગ બને છે.

ક્ષોદી સધે આ દુર્ઘટનાના ખમર રાજકોટ, ટેલીફોનથી આપ્યા. જે વખતે ટેલીફોન આવ્યો તે વખતે વિનોદમુનિના પિતાશ્રી બહાર ગયા હતા અને માતૃશ્રી મણિબેન સામાયિક-પ્રતિક્રમણમાં બેઠાં હતાં, માત્ર એક નોકર જ ઘરમાં હતો કે જેણે ટેલીફોન ઉઠાવ્યો. પણ તે કાંઈ ટેલીફોનમાં હકીકત સમજી શક્યો નહીં અને સાચા સમાચાર મોડા મળ્યા. સ્પેશલ પ્લેનથી ક્ષોદી પહોંચે તે પહેલાં અગ્નિસંસ્કાર થઈ ગયો. સૂચનાનો ટેલીફોન અડધી કલાક

પ્રકારની સગવડ છે ? આમ મારી સાથે પણ વાર્તાલાપ થયો હતો. બન્નેનો આ પ્રમાણે એકમત થતાં પિતાશ્રીએ ખીચન તાર કરવા શુભના કરી. તા. ૨૬-૫-૫૭ ના રોજ પૃથ્વીરાજજી માધુ ખીચન (રાજસ્થાન) ઉપર તાર કર્યો.

તા. ૨૮-૫-૫૭ ના રોજ જવાબ આપ્યો કે શ્રી વિનોદભાઈએ ખીચનમાં સ્વયમેવ દીક્ષા ગ્રહણ કરી છે. એટલે તેમના પિતાશ્રીએ રાવજદાદુરશ્રી એમ. પી. સાહેબ, શ્રી કેશવલાલભાઈ પારેખ અને પંડિતજી પૂર્ણાંદ્રજી દ્વારા એમ ત્રણેયને શ્રી વિનોદકુમારને પાછા તેડી લાવવા માટે ખીચન મોકલ્યા. તા. ૨૮-૫-૫૭ ના રોજ રવાના થઈ તા. ૩૦-૫-૫૭ ના રોજ સવારે ફ્લોદી સ્ટેશને પહોંચ્યા. બેલગાડીમાં તેઓ ખીચન ગયા કે ત્યાં સ્થવિર મુનિશ્રી મહારાજ પૂજ્ય પંડિતરત્ન શાસ્ત્ર વિશારદ શ્રી સમર્થમતજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૮ તથા પૂજ્ય તપસ્વી મહારાજ શ્રી લાલચંદજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૪ બિરાજતા હતા. કુદ્દે સાધુ-સાધ્વીની સંખ્યા અઠ્ઠાસીથી ત્રીસની હતી.

પૂછપરછના જવાબમાં શ્રી વિનોદમુનિએ કેશવલાલભાઈ પારેખને કહ્યું કે “ મેં તો દીક્ષા અંગીકાર કરી લીધી છે, તેમાં કંઈ ફેરફાર થાય તેમ નથી તમે અમારા વીરાણી કુટુંબના હિતૈષી છો, અને જો સાચા હિતૈષી હો તો મારા પૂ જા અને જાપુજીને સમજાવીને મારી હવે પછીની મોટી દીક્ષાની આજ્ઞા અઠવાડીયાની અંદર અપાવી દો એટલું જ નહિ પણ “ સવિ જીવ કહું શાસન રસી ” ની લાવનામાં અને આજ દિવસ સુધીના મારી ઉપરના ઉપકારના બદલામાં આગમને અનુલક્ષીને મારી એ લાવના હોય જ અને છે કે, મારી દીક્ષા તેઓની દીક્ષાનું નિમિત્ત બને અને મારા માતા-પિતા સદ્-ગતિને સાધે. અર્થાત્ મારી સાથે દીક્ષા લીએ.

આવા દૃઢ જવાબના પરિણામે તે જ સમયે શ્રી વિનોદકુમારને પાછા લઈ જવાની લાવનાને નિષ્ફળતા સાંપડી અને તા. ૩૧-૫-૫૭ ની રાત્રિના રવાના થઈ, તા. ૨-૬-૫૭ ના સવારે મહા પરીપહરૂપ ક્ષેત્રનો અનુભવ કરી, શ્રી વિનોદકુમારના પિતાશ્રીને તમામ વાતથી વાકેફ કર્યા.

થોડા વખતમાં ફ્લોદીના શ્રી. સંઘ પૂ. શ્રી. લાલચંદજી મહારાજને ફ્લોદીમાં ચોમાસુ કરવાની વિનંતી કરી તેનો અસ્વીકાર થવાથી સંઘ ગમગીન બન્યો એટલે નિર્ણય ફેરવ્યો અને અષાઢ શુદ્ધ ૧૩ ના રોજ ખીચનથી વિહાર કરી ફ્લોદી આવ્યા.

શ્રી વિનોદમુનિના જીવનના બે પ્રશ્નો ઉપરિચિત થાય છે તેનો ખુલાસો કરવામાં આવે છે.

પ્રશ્ન ૧—તેમણે આજ્ઞા વગર સ્વયમેવ દીક્ષા કેમ લીધી ?

ઉત્તર:—પાંચમાં આરામાં ભદ્રા ચૈકાણીના પુત્ર એવંતા ( અતિમુક્ત ) કુમારને તેની માતૃશ્રીએ દીક્ષાની આજ્ઞા આપવાની તદ્દન ના પાડી એટલે તેણે સ્વયમેવ દીક્ષા લીધી. ત્યારબાદ ભદ્રા ચૈકાણીએ પોતાના કુમારને ગુરુને સોંપી દીધા. તે જ રાત્રે તેણે બારમી સીખ્ખુની પડિમા અંગીકાર કરી અને શિયાળાણીના પરિપક્વ થી કાળ કરી નહીનગુદમ વિમાનમાં ગયા તેવી જ રીતે શ્રી વિનોદકુમાર સ્વયં દીક્ષિત થયા.

પ્રશ્ન ૨—આવા વૈરાગી જીવને આવો ભયંકર પરીપક્વ કેમ આવે ?

ઉત્તર—કેટલાક ચરમ શરીરી જીવને મરણાંતિક ઉપસર્ગ આવેલ છે. જુઓ! ગજમુકુમાર મુનિ, મેતારજ મુનિ, કૌશલ મુનિ, કારણ કે તેમની સત્તામાં હજારો ભવનાં કર્મ હોવા બેઠાં, ત્યારે તેમને એકદમ મોક્ષ જલ્દી હતું, તે મરણાંતિક ઉપસર્ગ આવ્યા વગર એટલાં બધાં કર્મ કેવી રીતે ખપે ? બા. પ્ર. શ્રી વિનોદમુનિને આવો પરીપક્વ આવ્યો, જે ઉપરથી એમ અનુમાન થાય છે કે તે એકાવતારી જીવ હોય.

શ્રી વિનોદમુનિનું વિસ્તૃત જીવનચરિત્ર જુદા પુસ્તકથી ગુજરાતી ભાષા તથા હિન્દી ભાષામાં છપાયેલ છે તેમાંથી અહીં સાર રૂપે સંક્ષેપ કરેલ છે.



સોડો પહોંચ્યો. નો સંદેશો સમયસર પહોંચ્યો હોત તો માતા-પિતાને શ્રી વિનોદમુનિના સમક્ષે પણ ચહેરો જોવાનો અને અંતિમ દર્શનનો પ્રસંગ મળત. પરંતુ અંતરાય કમે તેમ બન્યું નહીં.

આથી પ્લેઝનનો પોઆમ પડતો મૂવામાં આવ્યો અને માતા-પિતા તા. ૧૪-૮-૫૭ ના રોજ દ્રેષ્ટન ગારક્ત દ્વેષોદી પહોંચ્યા, શ્રી દુર્લભાનુમાઇ અને મણિજેને પૂજ્ય તપસ્વીશ્રી લાલચંદ્ર મહારાજ સાહેબના દર્શન કર્યા.

આ પ્રસંગે શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજ સાહેબે અવસરને પિછાળીને અને ધૈર્યંતું એકાએક ઐક્ય કરીને, શ્રી વિનોદમુનિના માતા-પિતાના આત્મન અર્થે ઉપદેશ શરૂ કર્યો જેનો દૂંઠામાં સાર આ પ્રમાણે છે.

“ હવે તો એ રત્ન ચાલ્યું ગયું ! સમાજનો આશાદીપક એલવાઈ ગયો ! ઝટ ઊગીને આથમી ગયો ! હવે એ દીપ ફરીથી આવી શકે તેમ નથી ”

શ્રી વિનોદમુનિના સંસારપક્ષના માતૃશ્રી મણિજેનને મુનિશ્રીએ કહ્યું કે, જોન ! લાવિ પ્રબળ છે. આ બાબતમાં મહાપુરુષોએ પણ હાથ ધોઈ નાખ્યા છે અને સૌને મરણને શરણ થવું પડે છે. તો પછી આપણા જેવા પામર પ્રણીતું શું ગળું છે ? હવે તો શોક ફર કરીને આપણે એમના મૃત્યુનો આદર્શ જોઈને માત્ર ધીરજ ધરવાની રહી.

પૂ. શ્રી સમર્થમહાજી મહારાજ સાહેબનો અભિપ્રાય:—

પ્રાથમિક તેમજ અંદપકાળના પરિચયથી મને શ્રી વિનોદમુનિના વિશે અનુભવ થયો, કે તેમની ધર્મપ્રિયતા અને ધર્માભિલાષા ‘ અદ્વિમિજા વેમાણુ-રાગરત્તે ’ નો પરિચય કરાવતી હતી. પ્રાપ્ત સાંસારિક પ્રચૂર વૈભવ તરફ તેમની રુચિ દૃષ્ટિગોચર થતી ન હતી. પરંતુ તેઓ વીતરાગવાણીના સંસર્ગથી વિષય-વિમુખ ધર્મકાર્યમાં સદા તત્પર અને તદ્દલીન દેખાતા હતા. પ્રાપ્ત પરિચયના અભાવે વૈરાગ્ય પણ તેમની ધારાથી તેમની ધર્માનુસંગિતા તથા જીવનચર્યાથી કઠિન કાર્ય કરવામાં પણ ગભરાટના સ્થાને સુખાનુભવની વૃત્તિલક્ષમાં આવતી હતી.

શ્રીવીતરાગાય નમઃ

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્યશ્રી-વાસીલાલ-વ્રતિ-વિરચિતયા

પ્રિયદર્શિન્યાલ્યયા વ્યાલ્યયા સમલઙ્કૃતં

વ્યાલ્યાપ્રણપ્ત્યપરનામકમ્

## શ્રી-ભગવતીસૂત્રમ્

ચતુર્થો ભાગઃ

પશ્ચમશતકસ્યોદ્દેશકાર્થસંગ્રહગાથેયમ્—

‘ ચંપ-રવિ-અનિલ-ગંઠિય-સદે, છડમાઽઽડ ઇયણ નિયંઠે,

રાયગિહં ચંપા-ચંદિંમા ય દસ પંચમસ્મિ સયે ॥

છાયા—<sup>૧</sup>ચમ્પા—<sup>૨</sup>રવિરનિલો <sup>૩</sup>ગ્રાન્યિકા <sup>૪</sup>શબ્દઃ, <sup>૫</sup>છદ્મસ્થાઽઽયુરેજનં <sup>૬</sup>નિર્ગ્રન્થઃ ।

રાજગૃહં <sup>૧</sup>ચમ્પા—<sup>૨</sup>ચન્દ્રમાથ <sup>૩</sup>દશ <sup>૪</sup>પશ્ચમે <sup>૫</sup>શતકે ॥

ટીકા—ચતુર્થશતકાન્તે લેશ્યાયા નિરૂપિતત્વેન પશ્ચમશતકે પ્રાયશો લેશ્યા-  
વતાં નિરૂપણાર્થે દશોદ્દેશકાર્થસંગ્રહો ગાયયા ક્રિયતે—“ ચંપ-રવિ-અનિલ-”  
ઈત્યાદિ । તત્ર ચમ્પાનગર્યાં સૂર્યવિષયકપદ્ધનસ્ય સમાધાનાત્મક-નિર્ણયઃ પશ્ચમ-

પંચમ શતક કા પહિલા ઉદ્દેશક પ્રારંભ

ચતુર્થ શતક કે અન્ત મેં લેશ્યાઓં કા નિરૂપણ કિયા ગ-  
યા હૈ । સો અઘ હસ પંચમ શતક મેં પ્રાયઃઁન લેશ્યાઓં સે યુક્ત જો  
હેં ઁન કા નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ । હસ શતક મેં દશ ઉદ્દેશો હેં ।  
ચંપ રવિ ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા ઁન દશ ઉદ્દેશકોં મેં કયા ૨ વિષય કહા  
હૈ યહ વાત સંગ્રહ કર પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ગાથાકા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ-  
ચંપાનગરી મેં હન્દ્રભૂતિ ગૌતમ ને પ્રભુ સે સૂર્ય કે વિષય મેં જો પ્રશ્ન

પાંચમાં શતકનો પહેલા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

ગાથા શતકમાં લેશ્યાઓનું નિરૂપણ કરાયું છે. હવે આ પાંચમાં શતકમાં, એ  
લેશ્યાઓથી યુક્ત જે જીવો છે તેમનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. આ શતકમાં દસ  
ઉદ્દેશકો છે. તે દસે ઉદ્દેશકોમાં આવતા વિષયનો “ ચંપ રવિ ” ઇત્યાદિ. ગાથામાં  
સંશ્લેષ કરવામાં આવ્યો છે—આ ગાથાનો અર્થ નીચે મુજબ છે.





चेइए होत्था, वण्णओ सामीसमोसइहे, जाव-परिसा पडिगया,  
तेणं कालेणं, तेणं समएणं, समणस्स भगवओ महा-  
वीरस्स जेहे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे, गोयमगोत्तेणं  
जाव-एवं वयासी-जंबुदीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उदीणि-  
पाईणमुग्गच्छ पाईण-दाहिण मागच्छंति, पाईण-दाहिण  
मुग्गच्छ, दाहिण पडीण मागच्छंति, दाहिण-पडीण मुग्ग-  
च्छ, पडीण-उइण-मागच्छंति, पडीण-उइणमुग्गच्छ, उदीचि-  
-पाईण मागच्छंति ? हंता. गोयमा ! जंबुदीवेणं दीवे  
सूरिया उदीची-पाईण मुग्गच्छ जाव-उदीच-पाईण  
मागच्छंति ॥ सू० १ ॥

छाया—तस्मिन् काले, तस्मिन् समये खलु चम्पा नाम नगरी आसीत्-  
वर्णकः, तस्यां चम्पायां नगर्यां पूर्णभद्रं नाम चैत्यम् आसीत्, वर्णकः, स्वामी  
समवसतः, यावत्-पर्यत् प्रतिगता, तस्मिन् काले, तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय  
में (चंपानामं नगरी होत्था) चंपा नाम की नगरी थी । (वण्णओ) वर्ण-  
क (तीसे णं चंपाए नगरीए पुण्णभदे णामं चेइए होत्था) उस चंपा नग-  
री में पूर्णभद्र नाम का चैत्यथा । (वण्णओ) वर्णक (सामी समो  
सइहे) वहां महावीर स्वामी पधारे (जाव परिसा पडिगया) यावत् सभा  
अपने २ स्थान पर वापिस गई । (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल  
और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान्

“तेणं कालेणं तेणं समएणं” इत्यादि

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काले अने ते समये, (चंपा  
नामं नगरी होत्था) चंपा नामे नगरी હતી. (વણ્ણઓ) તેનું વર્ણન કરવું.  
(તીસે ણં ચંપાએ નગરીએ પુણ્ણભદ્રે નામં ચેહાએ હોત્થા) તેચંપા નગરીમાં પૂર્ણ-  
ભદ્ર નામનું એક ચૈત્ય હતું. વણ્ણઓ) તેનું વર્ણન કરવું. (સામીસમોસહાએ)  
ત્યાં મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (જાવ પરિસા પડિગયા) પરિપક્વ પોતાને સ્થાને  
પાછી ફરી, ત્યાં સુધીનું વર્ણન કરવું. (તેણં કાલેણં તેણં સમएणं) તે કાળે  
અને તે સમયે (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના

શતકસ્ય પ્રથમે ઉદ્દેશકે વિદિતઃ, દ્વિતીયે વાયુવિષયકપ્રશ્નસ્ય નિર્ણયઃ કૃતઃ, તૃતીયે જાલગ્રન્થિકાજ્ઞાપનીયાર્થવિષયકો નિર્ણયઃ પ્રતિપાદિતઃ, ચતુર્થે ચન્દ્રવિષય-પ્રશ્નોત્તરયોર્નિર્ણયઃ, પચ્ચમે છદ્મસ્થવક્તવ્યતા પ્રતિપાદિતા, ષષ્ઠે આયુર્ગોઽલ્પતા-દીર્ઘત્વાદીનાં પ્રતિપાદનં કૃતમ્, સાતમે પુદ્ગલનામંજનાપયંપ્રતિપાદનં કૃતમ્, અષ્ટમે નિર્ગ્રન્થિપુત્રાભિધાનાનગારવિદિતઃ વાતુચિન્તારસારાનિર્ણયઃ, નવમે રાજગૃહ-નગરવિષયકો વિચારો વિદિતઃ, દશમે ચ ચંપાનગરી ચન્દ્રવિષયિણી વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિતેતિ ગાયાર્થઃ ॥

સૂર્ય વક્તવ્યતાં પ્રસ્તાવઃ—

મૂલમ્—“તેણં કાલેણં, નેણં સમણં, ચંપા નામં નયરી  
હોત્થા, વણઓ, તીસે ણં ચંપાપ નયરીયે પુણ્ણભદ્દે ણામં

કિયા હૈ, ઉસકા સમાધાન હસ પંચમ શતક કે પ્રથમ ઉદ્દેશક મેં પ્રકટ કિયા ગયો હૈ । દ્વિતીય ઉદ્દેશક મેં વાયુ વિષયક પ્રશ્ન કા સમાધાન પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । તૃતીય ઉદ્દેશક મેં જાલગ્રન્થિકા કે ઉદાહરણ ઉપર સે વિવક્ષિત અર્થ વિષયક નિર્ણય કો પ્રકટ કિયા હૈ । ચતુર્થ ઉદ્દેશક મેં શબ્દ કે ઉપર કિયે ગયે પ્રશ્નોં કા ઓર ઉત્તરોં કા નિર્ણય પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । પંચમ ઉદ્દેશક મેં છદ્મસ્થં કી વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ । છઠ્ઠે ઉદ્દેશક મેં આયુ કી અલ્પતા ઓર દીર્ઘતા આદિ કા કથન કિયા ગયા હૈ । સાતમ ઉદ્દેશક મેં પુદ્ગલોં કે કંપન કા વિચાર કિયા ગયા હૈ । આઠવે ઉદ્દેશક મેં નિર્ગ્રન્થ નામ કે અનગાર ને પદાર્થોં કા વિચાર કિયા હૈ । નવમ ઉદ્દેશ મેં રાજગૃહ નગર કા વિચાર હુઆ હસ વાંતકો કહા ગયા હૈ । તથા દશવે ઉદ્દેશ મેં ચંપા નગરી મેં ચન્દ્રવિષયક વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ । હસ પ્રકાર સે હસ ગાથા કા અર્થ હૈ ॥

ચંપાનગરીમાં ઇન્દ્રભૂતિ ગૌતમે સૂર્યના વિષયમાં જે પ્રશ્નો કર્યા છે, તેનું મહાવીર પ્રભુએ પાંચમાં શતકના પહેલા ઉદ્દેશકમાં સમાધાન કર્યું છે. બીજાં ઉદ્દેશકમાં વાયુ વિષયક પ્રશ્નનું સમાધાન કરાયું છે. ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં જાલગ્રન્થિકાના ઉદાહરણથી વિવક્ષિત અર્થ વિષયક નિર્ણય પ્રકટ કર્યો છે. ચોથા ઉદ્દેશકમાં શબ્દ વિશે પૂછાયેલાં પ્રશ્નોના ઉત્તરોનું પ્રતિપાદન કરાયું છે. પાંચમાં ઉદ્દેશકમાં છદ્મસ્થની વક્તવ્યતાનું પ્રતિપાદન કરાયું છે, છઠ્ઠા ઉદ્દેશકમાં આયુની અલ્પતા દીર્ઘતા આદિનું કથન કરાયું છે. સાતમાં ઉદ્દેશકમાં પુદ્ગલોનાં કંપનનો વિચાર કરાયો છે, આઠમાં ઉદ્દેશકમાં નિર્ગ્રન્થ નામના અણુગારે પદાર્થોનો વિચાર કર્યો છે. નવમાં ઉદ્દેશકમાં રાજગૃહ નગર વિષે અને દસમાં ઉદ્દેશકમાં ચંપા નગરીમાં પૂછાયેલા ચન્દ્ર વિષયક પ્રશ્નોનું સમાધાન કર્યું છે. આ પ્રકારનો ગાથાનો વિસ્તૃત અર્થ થાય છે.



ટીકા—શાસ્ત્રકારઃઃમૂર્યસમ્બન્ધિવક્તવ્યતામાદ—‘ તેણં કાલેણં ’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે ‘ તેણં સમયેણં ’ તસ્મિન્ સમયે સ્વલુ ‘ ચંપા ણામં નયરી ’ ચમ્પા નામ નગરી ‘ હોત્યા ’ આસીત્ , ‘ વણ્ણઓ ’ વર્ણકઃ ચમ્પાવર્ણનાપ્રતિપાદક ઔપપાતિકસૂત્રોક્તપદસમુદાયો વિજ્ઞેયઃ ‘ તીસે ણં ’ તસ્યાઃ સ્વલુ ‘ ચંપાણ ’ ચમ્પાયામ્ ‘ નયરીણ ’ નગર્યામ્ ‘ પુણ્ણમહે ણામં ’ પૂર્ણમદ્રં નામ ‘ ચેહણ ’ ચૈત્યમ્ વ્યન્તરાયતનમ્ ‘ હોત્યા ’ આસીત્ , ‘ વણ્ણઓ ’ વર્ણકઃ, તસ્ય વર્ણનં પૂર્વવદ્ વોધ્યમ્ , તત્ર ‘ સામી સમોસહ્ણે ’ સ્વામી મહાવીરઃ સમવસૃતઃ ‘ જાવ-પરિસા પહિગયા ’ યાવત્-પર્પત્ પ્રતિગતા । યાવત્કરણાત્ પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું પર્પત્

દ્વીપ મેં સૂર્ય ઉત્તર ઓર પૂર્વ દિશા કે અન્તરાલ ઈશાન મેં ઉદય હોકર યાવત્ ઈશાન મેં અસ્ત હોતે હેં ॥

ટીકાર્થ— શાસ્ત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સૂર્ય સંબંધી વક્તવ્યતા કા પ્રતિપાદન ક્રિયા હૈ । ( તેણં કાલેણં તેણં સમયેણં ) ઉસ કાલ ઓર ઉસ સમય મેં ( ચંપા ણામં નયરી ) ચંપા નામકી નગરી ( હોત્યા ) થી । ( વણ્ણઓ ) હસકા વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ક્રિયા ગયા હૈ । ( તીસે ણં ) ઉસ ( ચંપાણ નયરીણ ) ચંપા નગરી મેં ( પુણ્ણમહે ણામં ચેહણ ) પૂર્ણમદ્ર નામ કા ચૈત્ય વ્યન્તરાયતન ( હોત્યા ) થા । ( વણ્ણઓ ) હસ વ્યન્તરાયતન કા મી વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ક્રિયા ગયા હૈ । ( સ્વામી સમોસહ્ણે ) મહા-વીર પ્રભુ કા વહાં પર સમવસરણ હુઆ ( જાવ પરિસા પહિગયા ) યા-વત્ પરિપદા અપને ૨ સ્થાન પર યાપિસ ચલી ગઈ । ( યાવત્ ) શબ્દ સે યહાં ( પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું ) પ્રભુ કે ધર્મોપદેશ કો સુનને કે લિયે

ઉદય અને અસ્ત થતો રહે છે-જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં સૂર્ય ઈશાનમાં ઉદય પામીને ( યાવત્ ) ઈશાનમાં અસ્ત પામે છે

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા સૂર્યની વક્તવ્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે ( તેણં કાલેણં તેણં સમયેણં ) તે કાળે અને તે સમયે, “ ચંપા ણામં નયરી હોત્યા ” ચંપા નામે એક નગરી હતી. “ વણ્ણઓ ” તેનું વર્ણન ઔપ-પાતિક સૂત્રમાં કર્યો પ્રમાણે સમજવું. “ તીસેણં ચંપાણ ” તે ચંપા નગરીમાં “ પુણ્ણમહે ણામં ચેહણ હોત્યા ” પૂર્ણમદ્ર નામે ચૈત્ય ( વ્યન્તરાયતન ) હતું ( વણ્ણઓ ) તે ચૈત્યનું વર્ણન પણ ઔપપાતિકસૂત્રમાં કર્યો મુજબ સમજવું. ૨ “ સામીસમોસહ્ણે ત્યાં મહાવીરસ્વામીનું સમવસરણ થયું. ” “ જાવ પરિસા પહિગયા ” પ્રભુનો ધર્મોપદેશ સાંભળવાને માટે પરિપદ નીકળી. ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિપદ. ( જન સમૂહ ) વિખરાઈ ગયો. ( જાવ ) પદથી ઉપરનો

મહાવીરસ્ય જ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી ઇન્દ્રભૂતિર્નામ અનગારઃ, ગૌતમગોત્રો યાવત્-પૃથ્વ્ય  
અવાદીત્-જમ્બૂદ્વીપે સ્વલુ મદન્ત ! દ્વીપેર્ગુપાં ઉદીચીન-પ્રાચીનમ્ ઉદ્ગત્ય, પ્રાચીન  
દક્ષિણમ્ આગચ્છતઃ, પ્રાચીન-દક્ષિણમ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્ આગચ્છતઃ,  
દક્ષિણ પ્રતીચીનમ્ ઉદ્ગત્ય પ્રતીચીન-ઉદીચીનમ્ આગચ્છતઃ, પ્રતીચીન-ઉદી-  
ચીનમ્ ઉદ્ગત્ય ઉદીચી-પ્રાચીનમ્ આગચ્છતઃ ? હન્ત, ગૌતમ ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે  
સૂર્યો ઉદીચી-પ્રાચીનમ્ ઉદ્ગત્ય યાવત્-ઉદીચી-પ્રાચીનમ્ આગચ્છતઃ ॥૫૦૧॥

મહાવીર કે (જેઠ્ઠે અંતવાસી ઇન્દ્રભૂતિનામ અનગારે ગૌતમગોત્રે ણં જાવ પ-  
થં વયાસી) જ્યેષ્ઠ અંતેવાસી-શિષ્ય ઇન્દ્રભૂતિ નામ કે અનગાર ને જો  
ગૌતમ ગોત્ર કે થે, યાવત્ હસ પ્રકાર સે પૂછા-(જંબુદ્વીપે ણં મંતે ! દીવે  
સૂરિયા ઉદીચી-પાર્શ્વમુગચ્છ પાર્શ્વ-દાહિણ-માગચ્છંતિ, પાર્શ્વ-દાહિણ  
મુગચ્છ દાહિણ-પટ્ટીણમાગચ્છંતિ) હે મદન્ત ! જંબુદ્વીપ નામ કે દ્વીપ  
મેં દો સૂર્ય હેં ! વે ઈશાન દિક્ષોણ મેં ઉદય હોકર આગ્નેયદિક્ષોણ મેં અસ્ત  
હોતે હેં-અથવા અગ્નિદિક્ષોણ મેં ઉદયહોકર નૈઋત્યદિશા મેં અસ્ત હોતે  
હે ? (દાહિ ણ-પટ્ટીણમુગચ્છ પટ્ટીણ ઉદ્ગમમાગચ્છંતિ) યા નૈઋત્યકોણ  
મેં ઉદય હોકર, વાયવ્ય કોણે મેં અસ્ત હોતે હેં ? (પટ્ટીણ ઉદીચી મુગચ્છ  
ઉદીચી પાર્શ્વમાગચ્છંતિ) અથવા વાયવ્યકોણ મેં ઉદય હોકર ઈશાન  
કોણ મેં અસ્ત હોતે હેં ? (હંતા ગૌતમ ! જંબુદ્વીપે ણં દીવે સૂરિયા ઉદીચી  
પાર્શ્વ મુગચ્છ જાવ ઉદીચપાર્શ્વમાગચ્છંતિ) હાં ગૌતમ ! હસી તરહ સે  
સૂર્યો કા ઉદય હોના ઓર અસ્ત હોના હોતા રહતા હે જંબુદ્વીપ નામકે

(જેઠ્ઠે અંતેવાસી ઇન્દ્રભૂતિ નામ અનગારે ગૌતમગોત્રે ણં જાવ એવં વયાસી) જ્યેષ્ઠ અંતેવાસી  
(શિષ્ય) ઇન્દ્રભૂતિ નામના અણગાર હતા. તેઓ ગૌતમ ગોત્રના હતા. 'યાવત્'  
તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-(જંબુદ્વીપે ણં મંતે ! દીવે સૂરિયા ઉદીચી  
પાર્શ્વમુગચ્છ પાર્શ્વ-દાહિણમાગચ્છંતિ, દાહિણ-પાર્શ્વમુગચ્છ દાહિણ-પટ્ટીણમાગ  
ચ્છંતિ) હેમદન્ત ! જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં બે સૂર્ય છે. તેઓ ઈશાનકોણમાં  
ઉદય પામીને અગ્નીકોણમાં અસ્ત પામે છે ? અથવા અગ્નિકોણમાં ઉદય પામી  
નૈઋત્ય કોણમાં અસ્ત પામે છે ? (દાહિણ-પટ્ટીણમુગચ્છ પટ્ટીણ-ઉદ્ગમમાગચ્છંતિ)  
અથવા નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને વાયવ્યકોણમાં અસ્ત પામે છે ? (પટ્ટીણ  
-ઉદીચીમુગચ્છ ઉદીચી પાર્શ્વમાગચ્છંતિ) અથવા વાયવ્યકોણમાં ઉદય પામીને  
ઈશાન કોણમાં અસ્ત પામે છે, (હંતા ગૌતમ ! જંબુદ્વીપે ણં દીવેસૂરિયા ઉદીચી  
પાર્શ્વમુગચ્છ જાવ ઉદીચપાર્શ્વમાગચ્છંતિ) હા, ગૌતમ ! બે જ પ્રમાણે સૂર્યોને

ટીકા—શાસ્ત્રકારઃ—સૂર્યસમ્બન્ધિવક્તવ્યતામાહ—‘તેણં કાલેણં’ દ્રષ્ટ્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે ‘તેણં સમયેણં’ તસ્મિન્ સમયે સ્વલુ ‘ચંપા ણામં નયરી’ ચમ્પા નામ નગરી ‘હોત્યા’ આસીત્, ‘વણ્ણઓ’ વર્ણકઃ ચમ્પાવર્ણનાપ્રતિપાદક ઔપપાતિકઃ સૂત્રોક્તપદસમુદાયો વિજ્ઞેયઃ ‘તીસે ણં’ તસ્યાઃ સ્વલુ ‘ચંપાણ’ ચમ્પાયામ્ ‘નયરીણ’ નગર્યામ્ ‘પુણ્ણભદ્દે ણામં’ પૂર્ણભદ્રં નામ ‘ચેદ્દણ’ ચૈત્યમ્ વ્યન્તરાયતનમ્ ‘હોત્યા’ આસીત્, ‘વણ્ણઓ’ વર્ણકઃ, તસ્ય વર્ણનં પૂર્વવદ્ વોધ્યમ્, તત્ર ‘સામી સમોસદ્દે’ સ્વામી મહાવીરઃ સમવસૃતઃ ‘જાવ-પરિસા પહિગયા’ યાવત્-પર્પત્ પ્રતિગતા । યાવત્કરણાત્ પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું પર્પત્

દ્વીપ મેં સૂર્ય ઉત્તર ઓર પૂર્વ દિશા કે અન્તરાલ ઈશાન મેં ઉદય હોકર યાવત્ ઈશાન મેં અસ્ત હોતે હેં ॥

ટીકાર્થ—શાસ્ત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સૂર્ય સંબંધી વક્તવ્યતા કા પ્રતિપાદન કિયા હૈ । (તેણં કાલેણં તેણં સમયેણં) ઉસ કાલ ઓર ઉસ સમય મેં (ચંપા ણામં નયરી) ચંપા નામકી નગરી (હોત્યા) થી । (વણ્ણઓ) હસકા વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ । (તીસે ણં) ઉસ (ચંપાણ નયરીણ) ચંપા નગરી મેં (પુણ્ણભદ્દે ણામં ચેદ્દણ) પૂર્ણભદ્ર નામ કા ચૈત્ય વ્યન્તરાયતન (હોત્યા) થા । (વણ્ણઓ) હસ વ્યન્તરાયતન કા મી વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ । (સ્વામી સમોસદ્દે) મહા-વીર પ્રભુ કા વહાં પર સમવસરણ હુઆ (જાવ પરિસા પહિગયા) યા-વત્ પરિપદા અપને ૨ સ્થાન પર વાપિસ ચલી ગઈ । (યાવત્) શબ્દ સે યહાં (પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું) પ્રભુ કે ધર્મોપદેશ કો સુનને કે લિયે

ઉદય અને અસ્ત થતો રહે છે—જ'બુદ્ધીપ નામના દ્વીપમાં સૂર્ય ઈશાનમાં ઉદય પામીને (યાવત્) ઈશાનમાં અસ્ત પામે છે

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ [સૂત્ર દ્વારા સૂર્યની વક્તવ્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે (તેણં કાલેણં તેણં સમયેણં) તે કાળે અને તે સમયે, “ચંપા ણામં નયરી હોત્યા” ચંપા નામે એક નગરી હતી. “વણ્ણઓ” તેનું વર્ણન ઔપ-પાતિક સૂત્રમાં કર્યા પ્રમાણે સમજવું. “તીસેણં ચંપાણ” તે ચંપા નગરીમાં “પુણ્ણભદ્દે ણામં ચેદ્દણ હોત્યા” પૂર્ણભદ્ર નામે ચૈત્ય (વ્યન્તરાયતન) હતું (વણ્ણઓ) તે ચૈત્યનું વર્ણન પણ ઔપપાતિકસૂત્રમાં કર્યા મુજબ સમજવું. ૨ “સામીસમોસદ્દે ત્યાં મહાવીરસ્વામીનું સમવસરણ થયું.” “જાવ પરિસા પહિગયા” પ્રભુને ધર્મોપદેશ સાંભળવાને માટે પરિવ્રજ નીકળી. ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિવ્રજ. (જન સમૂહ) વિખરાઈ ગઈ. (જાવ) પહચી ઉપરને



નિર્ગચ્છતિ ' इति संप्राप्तम् । ततः ' तेणं कालेणं ' तस्मिन् काले ' तेणं समणं ' तस्मिन् समये खलु ' समणस्त भगवओ महावीरस्त जेट्ठे अंतेवासी ' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठः सर्वप्रथमोज्ज्वेवासी शिष्यः ' इंदभूर्इ ' इन्द्रभूतिः ' णामं ' नाम ' अणगारे ' अनगारः ' गोयमगोत्तेणं ' गौतमगोत्रः खलु ' जाव - एवं वयासी - ' यावत्-एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्, वक्तव्यविषयमाह- ' जम्बूद्वीवेणं भंते ! ' हे भदन्त ! जम्बूद्वीपे खलु ' दीवे ' द्वीपे ' सुरिया ' सूर्यो, जम्बूद्वीपे द्वयोरेव सूर्ययोः सदमावेन सूर्यो इत्युक्तम्, ' उदीण-पाईणमुगच्छ ' उदीचीन-प्राचीनम् उद्गत्य, उदगेन उदीचीनम्, उत्तरदिक् प्रागेव प्राचीनम् पूर्वदिक् उद्गत्वाप्त्यस्तन्नं दिगन्तरालं क्षेत्रदिगपेक्षया पूर्वोत्तरदिगन्तरम् ईशान-कोणम् उद्गत्य तत्रोदयं प्राप्य ' पाईण-दाहिणमागच्छति ' प्राचीन-दक्षिणं दिग-

( पर्यत् निर्गच्छति ) जनसमूहानिकला इस पाठ का संग्रह हुआ है । ( तेणं कालेणं तेणं समणं ) उस काल और उस समय में ( समणस्त भगवओ महावीरस्त जेट्ठे अंतेवासी ) श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ सर्व प्रथम शिष्य ( इंदभूर्इ ) इन्द्रभूति ( णामं ) नामके ( अणगारे ) अनगारने ( गोयमगोत्ते णं ) जो कि गौतम गोत्रीय थे ( जाव एवं वयासी ) यावत् इस प्रकार से पूछा- ( जंबूद्वीवे णं भंते ! दीवे ) हे भदन्त ! जंबूद्वीप नामके द्वीप में ( सुरिया ) दो सूर्य ( जंबूद्वीप में दो सूर्य और दो चंद्रमा हैं ऐसा सिद्धान्त का कथन है इसीलिये यहां पर ( सुरिया ) ऐसा पाठ कहा गया है ) ( उदीण पाईण उवगच्छ ) उदीचीन उत्तरदिशा और प्राचीन पूर्वदिशा इन दोनों के अन्तरालरूप क्षेत्र में ईशानकोण में उदय को प्राप्त होकर ( पाईणदाहिणमागच्छति ) प्राचीन पूर्वदिशा और द-

ભાવાર્થ અહીં કરાયો છે " તેણં કાલેણં તેણં સમણં " તે દાણે અને તે સમયે " સમણસ્ત ભગવઓ મહાવીરસ્ત જેટ્ઠે અંતેવાસી " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના જ્યેષ્ઠ અંતેવાસી પટ્ટશિષ્ય- " ઇંદમ્બૂર્ઈ ણામં અણગારે " ઇન્દ્રભૂતિનામના અણગાર હતા. " ગોયમગોત્તેણં " તેઓ ગૌતમ ગોત્રના હતા. " જાવ એવં વયાસી " તેમણે વંદણા નમસ્કાર કરીને મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું " જંબુદ્વીવે ણં ભંતે ! દીવે " હે ભદન્ત ! જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ' સૂરિયા ' એ સૂર્યો ( જંબુદ્વીપમાં એ સૂર્યો અને એ ચન્દ્રમા છે, એવું સિદ્ધાન્તનું કથન છે, તેથી અહીં " સૂરિયા " પદનો પ્રયોગ કર્યો છે " ઉદીણ-પાઈણઉવગચ્છ " ઇશાન કોણમાં ઉદય પ્રાપ્તિને ( ' ઉદીચીન ' એટલે ઉત્તર દિશા, ' પ્રાચીન ' એટલે પૂર્વદિશા, તે બન્નેની વચ્ચેના ઇશાન કોણમાં ) " પાઈણ-

નતરાલમ્-અગ્નિકોણમ્ આગચ્છતઃ, ક્રમેણૈવાસ્તંગચ્છતઃ ? ' પાર્શ્વેણ દાહિણમુગ્ગચ્છ ' પ્રાચીન-દક્ષિણમ્ અગ્નિકોણમ્ ઉદગત્ય ત્રા ' દાહિણપટ્ટીણમાગચ્છંતિ ' દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્ દિગન્તરમ્ નૈઋત્યકોણમ્ આગચ્છતઃ ? અથવા ' દાહિણપટ્ટીણમુગ્ગચ્છ ' દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્ નૈઋત્યકોણમ્ ઉદગત્ય ' પટ્ટીણમુદીણમાગચ્છંતિ ' પ્રતીચીન-ઉદીચીનં દિગન્તરં વાયવ્યકોણમ્ આગચ્છતઃ, ક્રમેણૈવાસ્તં પ્રાપ્નુતઃ ? અથવા ' પટ્ટીણ-ઉદીણમુગ્ગચ્છ ' પ્રતીચીન-ઉદીચીનં દિગન્તરમ્ વાયવ્યકોણમિતિ યાવત્ ઉદગત્ય ' ઉદીચિ-પાર્શ્વેણ માગચ્છંતિ ' ઉદીચીનપ્રાચીનમ્ દિગન્તરાલમ્, ઈશાનકોણમ્ આગચ્છતઃ ? અસ્તં પ્રાપ્નુતઃ કિમ્ ! મગવાન્ તત્સ્વીકુર્વન્ આદ- ' હંતા ગોયમા ! ' इत्यादि । हे गौतम ! हन्त, सत्यं त्वत्कथनम् , यत् ' जम्बूद्वीपेणं दीवे ' जम्बूद्वीपे

ક્ષિણદિશાં કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર મેં અગ્નિકોણ મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હેં કયાં અંધવા ( પાર્શ્વેણ દાહિણમુગ્ગચ્છ ) પ્રાચીન, દક્ષિણ કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર અગ્નિકોણ મેં ઉદિત હોકર ( દાહિણપટ્ટીણમાગચ્છંતિ ) દક્ષિણદિશા ઓર પ્રતીચીનદિશા ( પશ્ચિમ ) કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર નૈઋત્યકોણ મેં અસ્ત હોતે હેં કયાં ? અથવા ( દાહિણપટ્ટીણમુગ્ગચ્છ ) નૈઋત્યકોણ મેં ઉદિત હોકર ( પ-ટ્ટીણમુદીણમાગચ્છંતિ ) વાયવ્યકોણ મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હેં કયા ? અંધવા ( પટ્ટીણ, ઉદીણમુગ્ગચ્છ ) પ્રતીચીન ઉદીચીન દિશાકે અન્તરાલ-રૂપે ક્ષેત્ર વાયવ્યકોણે મેં ઉદિત હોકર ( ઉદીચિ પાર્શ્વેણમાગચ્છંતિ ) ઉ-દીચીન પ્રાચીન દિશાઓં કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર ઈશાન કોણે મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હેં કયા ? હન પ્રશ્નોં કા સ્વીકારાત્મક ઉત્તર દેતે હુએ પ્રેમું ગૌતમ સે કરતે હેં કિ ' હંતા ગોયમા ! ' હા, ગૌતમ ! જૈસા તુંમને પ્રશ્ન િગા હૈ વહ વૈસા હી હૈ અર્થાત સત્ય હૈ- જમ્બૂદ્વીપ મેં દો

દાહિણમાગચ્છંતિ " અગ્નિકોણમાં ( પૂર્વ અને દક્ષિણ વચ્ચેના ખૂણામાં ) શું અસ્ત પામે છે ? અથવા " પાર્શ્વેણ-દાહિણમુગ્ગચ્છ " શું અગ્નિકોણમાં ઉદય પા-મીને " દાહિણ પટ્ટીણમાગચ્છંતિ " નૈઋત્ય કોણમાં ( દક્ષિણ અને પશ્ચિમ વ-ચ્ચેના ખૂણામાં ) અસ્ત પામે છે ? અથવા " દાહિણપટ્ટીણમુગ્ગચ્છ " નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને " પટ્ટીણમુદીણમાગચ્છંતિ " શું વાયવ્ય કોણમાં અસ્ત પામે છે ? અથવા " પટ્ટીણ, ઉદીણમુગ્ગચ્છ " શું વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને " ઉદીચિ પાર્શ્વેણમાગચ્છંતિ " ઇશાનકોણમાં અસ્ત પામે છે ?

આ પ્રશ્નોનો હકારમાં જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે- " હંતા, ગોયમા ! " હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે-જમ્બૂદ્વીપમાં બે સૂર્યો છે. તેઓ ઇશાનકોણમાં ( પૂર્વ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચેના ખૂણામાં ) ઉદય પામીને

સ્વલ્પ દ્વીપે 'સુરિયા' સૂર્યો 'ઉદીચી-પાર્શ્વ મુગ્ધા' ઉદીચીન-પ્રાચીન દિશ-  
 ન્તરમ્ ઈશાનકોણમ્ ઉદગત્ય ઉદયં પ્રાપ્ય 'જાવ-ઉદીચ-પાર્શ્વ માગચ્છંતિ'   
 યાવત્-ઉદીચીન-પ્રાચીનમ્ આગચ્છતઃ ક્રમેણાસ્તં યાતઃ પિમ્, યાવત્કરણામ્-  
 'પ્રાચીન-દક્ષિણમ્' અગ્નિકોણમ્ આગચ્છતઃ પ્રાચીન-દક્ષિણમ્ ઉદગત્ય (ઉદયં  
 પ્રાપ્ય) દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્ (નૈઋત્યકોણમ્) આગચ્છતઃ દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્  
 ઉદગત્ય (ઉદયં પ્રાપ્ય) પ્રતીચીન-ઉદીચીનમ્ (વાયવ્યકોણમ્ આગચ્છતઃ, પ્રતી-  
 ચીન-ઉદીચીનમુદગત્ય 'ઉદયં પ્રાપ્ય' इति संप्राप्तम् ।

અત્રોદગમનમસ્તગમનઞ્ચ સૂર્યસ્ય દ્રષ્ટૃનાપેક્ષયા યોગ્યમ્ તથાન યેષાં  
 દ્રષ્ટૃણામ્ ઉપર્યુક્તૌ સૂર્યો અદૃશ્યો ભૂત્વા દૃશ્યો મવતઃ, તે દ્રષ્ટારઃ તૌ ઉદગતૌ  
 સૂર્ય હૈં । વે ઉદીચીનપ્રાચીન દિશા કે અન્તરાલરૂપ ઈશાન કોણ મેં ઉદય  
 કો પ્રાપ્ત હોકર 'જાવ' યાવત્ 'ઉદીચપાર્શ્વ માગચ્છંતિ' ઉદીચીન  
 પ્રાચીન દિશા કે અન્તરાલ રૂપ ક્ષેત્ર ઈશાનકોણ મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હૈં  
 ઘઘાં (યાવત્) શબ્દ સે (પ્રાચીનદક્ષિણમાગચ્છતઃ, પ્રાચીન દક્ષિણ  
 મુદગત્ય દક્ષિણપ્રતીચીનમાગચ્છતઃ દક્ષિણપ્રતીચીનમુદગત્ય પ્રતીચીન  
 મુદીચીન આગચ્છતઃ, પ્રતીચીનઉદીચીનમુદગત્ય (હસ પૂર્વોક્ત પાઠ કા  
 હી સંગ્રહ કિયા હૈં । ઉત્તર દિશા કે પાસ કા જો પ્રદેશ હૈં વહ ઉદીચીન,  
 પૂર્વદિશા કે પાસ કા જો પ્રદેશ હૈં વહ પ્રાચીન, ઉત્તર ઓ પૂર્વદિશા કે  
 ઘીચ કા જો ભાગ હૈં વહ ઈશાનકોણ, પૂર્વ ઓર દક્ષિણદિશા કે ઘીચકા  
 જો ભાગ હૈં વહ અગ્નેયકોણ, દક્ષિણ ઓર પશ્ચિમ કે ઘીચ કા જો ભાગ  
 હૈં વહ નૈઋત્યકોણ હૈં તથા પશ્ચિમ ઓર ઉત્તરદિશા કા જો ઘીચ કા  
 ભાગ હૈં વહ વાયવ્યકોણ હૈં । અમુક સમય મેં સૂર્ય ઉદિત હોતા હૈં ઓર  
 અમુક સમય મેં વહ અસ્ત હોતા હૈં એસા જો સૂર્ય કે ઉદય ઓર અસ્ત

“જાવ” યાવત્ “ઉદીચપાર્શ્વમાગચ્છંતિ” ક્રમશઃ ઇશાનકોણ પર્યન્તના ક્ષેત્ર-  
 માં અસ્ત પામે છે. અહીં ‘જાવ’ (યાવત્ પદથી નીચેના પૂર્વોક્ત પાઠને)  
 સમાવેશ કરાયો છે. “પ્રાચીન દક્ષિણમાગચ્છતઃ, પ્રાચીનદક્ષિણમુદગત્ય દક્ષિણ પ્રતીચી-  
 નમાગચ્છતઃ, દક્ષિણપ્રતીચીનમુદગત્ય પ્રતીચીનમુદીચીન આગચ્છતઃ, પ્રતીચીન ઉદીચી-  
 નમુદગત્ય” ઉત્તરદિશાની પાસેના જે પ્રદેશ છે તેને (ઉદીચીન.) અને પૂર્વદિશાની  
 પાસેના પ્રદેશને (પ્રાચીન) કહેવામાં આવેલ છે. ઉત્તર અને પૂર્વદિશા વચ્ચે  
 ઇશાનકોણ છે, પૂર્વ અને દક્ષિણ દિશા વચ્ચે અગ્નિકોણ છે, દક્ષિણ અને  
 પશ્ચિમ વચ્ચે નૈઋત્ય કોણ છે અને પશ્ચિમ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચે વાયવ્ય કોણ છે.

(અમુક સમયે સૂર્ય ઉગે છે અને અમુક સમયે સૂર્ય આથમે છે, આ  
 પ્રમાણે સૂર્યના ઉદય અને અસ્ત વિષેનું જે કથન છે, તે કથન સૂર્યને દેખ-



इति व्यवहरन्ति, येषां तु दृश्यो भूत्वा अदृश्यो भवतस्ते तौ अस्तं गतौ इति व्यवहरन्ति इति तयोर्द्वयास्तमययोः द्रष्टृजनसापेक्षतयाऽनियतत्वमवसेयम् ।

उक्तञ्च—“ जह जह समये समये पुरओ संचरइ भवत्सरो गयणे,  
तह तह इओ वि नियमा जासइ रयणीय भावत्थो,  
एवं च सया नराणं उदयत्थमणाइं होंतिऽनिययाइं,  
सयदेस मेए कस्सइ किंची ववदिस्सइ नियमा,

होने का व्यवहार होता है वह सूर्य को देखने वाले मनुष्यों की अपेक्षा होता है ऐसा जानना चाहिये । कारण की समय-भूमण्डल पर सूर्य के उदय होने का और अस्त होने का समय नियत नहीं है । अच्छी तरह से विचार किया जाय तो दोनों ही सूर्य लोगों के समक्ष सदा उपस्थित ही रहते हैं, परन्तु जब कोई सूर्य-आवारक द्रव्य सूर्यों की आड़में आजाता है तब अमुक देशके मनुष्य उन्हें देख नहीं पाते अतः उनकी दृष्टि के अनुसार सूर्य अस्त हो गया ऐसा व्यवहार होता है । और जब वह आवारकद्रव्य उनके आड़े नहीं आता है तब अमुक देश के मनुष्य सूर्य को देखते हैं तो वे कहते हैं कि सूर्य उदित हो गया । इस तरह “ उपर्युक्त सूर्य अदृश्य होकर जब दर्शक जनों उसको देखते हैं तो उनमें उदय हो गये ऐसा व्यवहार होता है और जब दृश्य होकर वे दर्शक जनों की दृष्टि से ओझल हो जाते हैं तब अस्त हो गये ऐसा उनमें व्यवहार होता है ) सूर्यों के उदय अस्त का यह व्यवहार उनके दर्शक जनों की अपेक्षा वाला होने के कारण अनियत जानना चाहिये ।

નારા મનુષ્યોની અપેક્ષાએ કરવામાં આવેલ છે, એમ સમજવું. કારણ કે સમસ્ત ભૂમંડળ ઉપર સૂર્યોદય અને સૂર્યાસ્ત થવાનો કોઈ નિયત સમય નથી. જો ખરાબર વિચાર કરવામાં આવે તો જાને સૂર્યો લોકોની સમક્ષ સદા ઉપસ્થિત (મોજૂદ) જ રહે છે. પરન્તુ જ્યારે કોઈ આવારક (આચ્છાદિત કરનાર) દ્રવ્ય સૂર્યોની આડે આવી જાય છે, ત્યારે અમુક દેશના લોકો તેમને દેખી શકતા નથી. તેથી તેઓની દૃષ્ટિએ (સૂર્ય અસ્ત પામી ગયો,) એવો વ્યવહાર થાય છે. પણ જ્યારે તે આવારક દ્રવ્ય ત્યાંથી દૂર થઈ જાય છે ત્યારે તે લોકો તેને દેખી શકે છે, અને કહે છે કે (સૂર્યનો ઉદય થઈ ગયો.) આ રીતે (ઉપર્યુક્ત સૂર્ય અદૃશ્ય થઈને ફરીથી જ્યારે દર્શકોની નજરે પડે છે ત્યારે તેઓ કહે છે કે (સૂર્યનો ઉદય થયો) અને પહેલાં દૃશ્ય હોય એવો સૂર્ય જ્યારે દર્શકોથી અદૃશ્ય બને ત્યારે દર્શકો કહે છે કે (સૂર્ય અસ્ત પામ્યો.) સૂર્યના ઉદય-અસ્તનો આ વ્યવહાર તેના દર્શકોની અપેક્ષાએ જ કરાયો છે એમ સમજવું. અને તેથી જ તેને અનિયત સમજવો.

સહ એવ ય નિષ્કિદ્ધો મદગુહનો નમેન મઙ્ગેતિ કે.મિ,

ચીદાર્ણિ પિય વિસમપમાણે રચી જેમિ " રૂપાદિ ।

છાયા—“ યથા યથા સમયે સમયે પુરતઃ સઘરણિ મામ્કરો ગમને,

તથા તથા રૂતોઽપિ નિયમાદ્ ગાયતે રત્નની ચ માર્ચર્થઃ,

અથ સદા નરાણામુદયા-સ્તમ ( ય ) નાનિ મયન્તિ અનિયતાનિ,

સ્વકુદ્દેશમેદ કસ્પનિત્ કિશ્ચિદ્ વ્યપદિદ્વતં નિયમાદ્,

સકુદેવ ચ નિર્દિષ્ટઃ મદગુહનઃ ક્રમેણ સંયંત્રાં કેના-

ચિદિદાનીમપિ ચ વિસમપમાણે રચિર્થેવામ્ ' રૂપિ ।

પ્રતાપતા સૂત્રેણ સ્વેચ્છતઃપિ દિહુ ગમનં પ્રતિપાદિતં, તેન યત્ ' સૂર્યઃ  
પશ્ચિમસમુદ્રં પ્રવિશ્ય પાતાલેન ગમનં કૃત્વા સમુદ્રે ઉદેતિ' રૂપ્યુક્તં તત્ત્વપરાસ્તમ્ ॥૧॥

કહા મી હૈ—સમય ૨ પર જેસે ૨ સૂર્ય આગે ૨ આકાશ મેં ગતિ  
કરતા હુઆ ચલતા હૈ, ઉસી તરહ સે હસ તરફ મી રાત્રિ હોતી ચલી  
આતી હૈ યહ યાત સત્ય હૈ । અતઃજય હસ પ્રકાર સે હૈ કિ સૂર્ય કી ગતિ  
ઉપર હી ઉસકે ઉદિત હોને કા ઓર અસ્ત હોને કા વ્યવહાર નિર્ભર હૈ,  
તો ફિર મનુષ્યોં કે હિસાબ સે ઉનકા ઉદિત ઓર અસ્ત હોના યે દોનો  
બાતેં અનિયમિત હૈ । રૂપાદિ । સૂર્ય ચારોં દિશાઓં મેં ગમન કરતાં હૈ  
આકાશ મેં સૂર્ય સમસ્ત દિશાઓં મેં ફિરતા હૈ—યહ યાત હસ મૂલ સૂત્ર  
દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ, તો જો લોગ એસા માનતેહૈં કિ ( સૂર્ય પશ્ચિમ કે  
સમુદ્ર મેં પ્રવિષ્ટ હોકર પાતાલ સે ગમન કરતા હુઆ પૂર્વસમુદ્ર મેં ઉદિત  
હોતા હૈ) ઉનકા યહ કથન યોગ્ય નહીં હૈ ક્યોં કિ સૂર્ય કી ગતિ ચારોં  
દિશાઓં મેં હોતી હૈ યહ યાત પૂર્વોક્ત સૂત્ર સે પ્રકટ કી ગઈ હૈ ॥સૂ.૧॥

કહું પણ છે—સમય સમય પર જેમ જેમ સૂર્ય આકાશમાં આગળને  
આગળ ગમન કરે છે, તેમ તેમ તે તરફ પણ રાત્રિ થતી જાય છે, એ વાત  
સત્ય છે આરીતે જો સૂર્યની ગતિ ઉપર જ તેના ઉદય અને અસ્ત થવાનો  
વ્યવહાર નિર્ભર હોય, તો મનુષ્યોની દૃષ્ટિએ તેમનો ઉદય અને અસ્ત થવાની  
વાતો અનિયમિત જ છે.

( સૂર્ય ચારે દિશામાં ગમન કરે છે—આકાશમાં સૂર્ય સમસ્ત દિશાઓમાં  
ફેરે છે, ) આ વાત મૂળસૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

આ કથન દ્વારા લોકોની નીચેની માન્યતાઓનું ખંડન કરવામાં આવ્યું છે—  
( સૂર્ય પશ્ચિમ સમુદ્રમાં પ્રવેશીને પાતાલમાં ગમન કરીને પૂર્વ સમુદ્રમાં ઉદય  
પામે છે. ) આ માન્યતાનું એ સૂત્રદ્વારા ખંડન કરાયું છે, કારણ કે સૂર્યની ગતિ  
ચારે દિશામાં થાય છે, એવું પૂર્વોક્ત સૂત્રદ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ.૧॥



मूलम्—“ जया णं भंते ! उं दीवे दीवे दाहिणद्धे दिवसे  
हवइ, तयाणं उत्तरद्धेऽवि दिवसे भवइ, जयाणं उत्तरद्धेऽवि  
दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुर-  
त्थिमपच्चत्थिमेणं राई भवई ? हंता, गोयमा ! जयाणं  
जंबुदीवे दीवे दाहिणद्धे वि दिवसे जाव—राई भवइ जया णं  
भंते ! जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे णं दिवसे  
भवइ, तयाणं पच्चत्थिमेण वि दिवसे भवइ, जयाणं पव्व-  
त्थिमेणं दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्वं-  
यस्स उत्तरदाहिणेणं राई भवइ ? हंता, गोयमा ! जयाणं  
जंबुदीवे दीवे मंदरपुरत्थिमेणं दिवसे जाव — राई भवइ  
जयाणं भंते ! जंबुदीवे दीवे दाहिणद्धे उक्कोसए अट्टारस-  
मुहुत्ते दिवसे भवइ, तयाणं उत्तरद्धे वि उक्कोसए अट्टारसं-  
मुहुत्ते दिवसे भवइ, जयाणं उत्तरद्धे उक्कोसए अट्टारस मुहुत्ते  
दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिम—  
पच्चत्थिमेणं जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? हंता,  
गोयमा ! जयाणं जंबुदीवे दीवे जाव—दुवालसमुहुत्ता राई  
भवइ, जयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिमे उक्कोसए  
अट्टारस मुहुत्ते दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे पच्चत्थि-  
मेण वि उक्कोसेणं अट्टारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जयाणं  
पच्चत्थिमेणं उक्कोसिए अट्टारस मुहुत्ते दिवसे भवइ, तया  
णं भंते ! जंबुदीवे दीवे उत्तरे दुवालसमुहुत्ता जाव—राई

भवइ ? हंता, गोयमा ! जाव-भवइ, जयाणं भंते ! जंबु-  
 द्वीवे दीवे दाहिणद्वे अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ,  
 तयाणं उत्तरे अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, जयाणं  
 उत्तरद्वे अट्टारसमुहुत्ता णंतरे दिवसे भवइ, तयाणं जंबुद्वीवे  
 दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं पच्चत्थिमेणं साइरेगा  
 दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? हंता, गोयमा ! जया णं जंबु-  
 द्वीवे दीवे जाव राई भवइ, जयाणं भंते ! जंबुद्वीवे दीवे  
 मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे  
 भवइ, तयाणं पच्चत्थिमेणं अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे  
 भवइ, जयाणं पच्चत्थिमेणं अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे  
 भवइ, तयाणं जंबुद्वीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणे  
 साइरेगदुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? हंता, गोयमा ! जाव-  
 भवइ, एवं एएणं कमेण ओसारेयव्वं, सत्तरसमुहुत्ते दिवसे  
 तेरसमुहुत्ता राई भवइ, सत्तरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा  
 तेरसमुहुत्ता राई, सोलसमुहुत्ते दिवसे चोदसमुहुत्ता राई,  
 सोलसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगचउदंसमुहुत्ता राई,  
 पण्णारसमुहुत्ते दिवसे पन्नरसमुहुत्ता राई, चोदसमुहुत्ते दिवसे  
 सोलसमुहुत्ता राई, चोदसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सो-  
 लसमुहुत्ता राई, तेरसमुहुत्ते दिवसे सत्तरसमुहुत्ता राई, तेर-  
 समुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सत्तरसमुहुत्ता राई, जयाणं  
 जंबुद्वीवे दीवे दाहिणद्वे जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे

ભવઈ, તયાણં ઉત્તરઢે વિ, જયાણં ઉત્તરઢે તયાણં જંબુદીવે  
 દીવે મંદરસ્સ પઞ્ચયસ્સ પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમેણં ઉક્કોસિયા  
 અટ્ટારસમુહુત્તા રાઈ ભવઈ ? હંતા, ગોયમા ! એવં ચેવ ઉચ્ચારે-  
 યઠ્ઠં, જાવ-રાઈ ભવઈ, જયાણં ભંતે ? જંબુદીવે દીવે મંદર  
 સ્સ પઞ્ચયસ્સ પુરત્થિમેણં જહન્નણ દુવાલસમુહુત્તે દિવસે  
 ભવઈ, તયાણં પચ્ચત્થિમેણં વિ, જયાણં પચ્ચત્થિમેણં વિ, તયા  
 ણં જંબુદીવે દીવે મંદરસ્સ પઞ્ચયસ્સ ઉત્તરદાહિણેણં ઉક્કો-  
 સિયા અટ્ટારસમુહુત્તા રાઈ ભવઈ ? હંતા. ગોયમા ?  
 જાવ રાઈ ભવઈ ॥ સૂ ૨ ॥

છાયા-યદા खलु भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे दक्षिणार्धे दिवसो भवति तदा खलु उत्त-  
 रार्धेऽपि दिवसो भवति, यदा खलु उत्तरार्धेऽपि दिवसो भवति, तदा जम्बूद्वीपे द्वीपे  
 मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्य-पश्चिमे खलु रात्रिर्भवति ? इन्त, गौतम ! यदा जम्बू-

( જયાણં ભંતે ! ) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—( જયા ણં ભંતે ! જંબુદીવે દીવે દાહિણઢે દિવસે હવઈ ) હે  
 ભદન્ત ! જય જંબૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં દિન હોતા હૈ ( તયાણં ઉત્તરઢે  
 વિ દિવસે ભવઈ ) તય ઉત્તરાર્ધ મેં ભી દિવસ હોતા હૈ । ઓર ( જયાણં  
 ઉત્તરઢેઽવિ દિવસે ભવઈ, તયા ણં જંબૂદીવે દીવે મંદરસ્સ પઞ્ચયસ્સ પુર-  
 ત્થિમપચ્ચત્થિમે ણં રાઈ હવઈ ) જય ઉત્તરાર્ધ મેં ભી દિવસ હોતા હૈ તય

“ જયાણં ભંતે ! ” इत्यादि

સૂત્રાર્થ—(જયાણં ભંતે ! જંબુદીવે દીવે દાહિણઢે દિવસેહવઈ) હે ભદન્ત ! જંબુદી-  
 વીપના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે, ( તયા ણં ઉત્તરઢે વિ દિવસે ભવઈ )  
 ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ શું દિવસ હોય છે ? અને ( જયાણં ઉત્તરઢેઽવિ  
 દિવસે ભવઈ, તયાણં જંબૂદીવે દીવે મંદરસ્સ પઞ્ચયસ્સ પુરત્થિમપચ્ચત્થિમેણં રાઈ  
 હવઈ ) ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ હોય છે, ત્યારે જંબૂદીપમાં સુમેરુ

દ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધેઽપિ દિવસઃ, યાવત્-સાધિર્ભવતિ, યદા સ્વલ્પ મદન્ત ! જમ્બુ-  
દ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરતસ્ત્યે દિવસો મવતિ તદા પશ્ચિમેઽપિ દિવસો મ-  
વતિ, યદા સ્વલ્પ પશ્ચિમે દિવસો મવતિ તદા સ્વલ્પ જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય  
ઉત્તર-દક્ષિણે રાત્રિર્ભવતિ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા સ્વલ્પ જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરપૌરતસ્ત્યે

જંબુદ્વીપ મેં સુમેરુ પર્વત કી ઉત્તરદિશા તરફ ઓર પશ્ચિમ દિશા તરફ  
રાત્રિ હોતી હૈ ? (હંતા, ગોયમા જયા ણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણદ્વે વિ દિ-  
વસે જાવ રાઈ ભવઈ) હાં ગૌતમ ! હમી તરહ સે હોતા હૈ-જય જંબુદ્વીપ  
નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં બી દિવસ હોતા હૈ તય યાવત્ રાત્રિ હોતી  
હૈ । (જયા ણં મંતે ! જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ પુરતિયમે ણં દિવસે  
ભવઈ) હૈ મદન્ત ! જિસ સમય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદર પર્વત  
કી પૂર્વદિશા તરફ દિવસ હોતા હૈ (તયા ણં પન્વતિયમેણ વિ દિવસે  
ભવઈ) તય પશ્ચિમ દિશા તરફ બી દિવસ હોતા હૈ ઓર (જયા ણં પ-  
ન્વતિયમેણ દિવસે ભવઈ, તયા ણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ ઉત્તર-  
દક્ષિણેણ રાઈ ભવઈ) જય પશ્ચિમ દિશા તરફ દિવસ હોતા હૈ, તય  
જમ્બુદ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણ દિશા તરફ રાત્રિ હોતી હૈ ?  
કયા ? (હંતા, ગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરપુરતિયમે ણં દિવસે  
જાવ રાઈ ભવઈ) હાં, ગૌતમ ! હસી તરહ સે હોતા હૈ-તય યાવત્ રાત્રિ

પર્વતની ઉત્તર દિશા તરફ અને પશ્ચિમ દિશા તરફ શું રાત્રિ હોય છે  
(હંતા, ગોયમા !-જયાણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણદ્વે વિ દિવસે જાવ રાઈ ભવઈ) હા,  
ગૌતમ ! એણે જ અને છે જ્યારે જંબુદ્વીપ નામના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય  
છે ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ હોય છે, (યાવત્) અને ત્યારે સુમેરુ પર્વ-  
તની ઉત્તર અને પશ્ચિમ દિશામાં રાત્રિ હોય છે. (જયાણં મંતે ! જંબુદ્વીપે દ્વીપે  
મંદરસ્સ પન્વયસ્સ પુરતિયમેણ દિવસે ભવઈ) હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબુદ્વીપના  
મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં દિવસ હોય છે, (તયાણં પન્વતિયમેણ વિ દિવસે ભવઈ  
ત્યારે પશ્ચિમ દિશામાં પણ દિવસ હોય છે અને (જયાણં પન્વતિયમેણ દિવસે  
ભવઈ, તયાણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ ઉત્તરદક્ષિણેણ રાઈ ભવઈ ? ”  
જ્યારે પશ્ચિમદિશામાં દિવસ હોય છે, ત્યારે જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર  
દક્ષિણ દિશામાં શું રાત્રિ હોય છે ? (હંતા ગોયમા ) હા, ગૌતમ ! એણે  
જ અને છે, “ જયાણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરપુરતિયમેણ દિવસે જાવ રાઈ ભવઈ ”



દિવસઃ, યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ, યદા સ્વલુ મદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે ઉત્કૃષ્ટો ષ્ટાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ઉત્કૃષ્ટો ષ્ટાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે ઉત્કૃષ્ટો ષ્ટાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ તદા સ્વલુ જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દ-  
રસ્ય પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે જયન્તિયા દ્વાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે યાવત્-દ્વાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ, યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય

હોતી છે (જયા ણં મંતે ! જંબુદ્વીપે દીવે દાહિણદ્વે ઉક્કોસપ અટ્ટારસમુ-  
હુત્તે દિવસે ભવહ, તયાણં ઉત્તરદ્વે વિ ઉક્કોસપ અટ્ટારસમુહુત્તે દિવસે ભવહ)  
હે મદન્ત ! જય જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં જ્યાદા ૧૮ અટારહ  
મુહૂર્ત કા દિવસ હોતા હૈ, તય ઉત્તરાર્ધ મેં મી અધિક સે અધિક ૧૮ અટાર-  
હ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ, ઓર (જયા ણં ઉત્તરદ્વે ઉક્કોસપ અટ્ટારસમુહુત્તે  
દિવસે ભવહ, તયા ણં જંબુદ્વીપે દીવે મંદરસ્સ પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમેણં જહ-  
નિયા દુવાલસમુહુત્તા રાઈ ભવઈ) જય ઉત્તરાર્ધ મેં સય સે ઘડા અટારહ  
મુહૂર્ત કા દિન હોના હૈ તય જંબૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદરપર્વત કી પૂર્વ  
પશ્ચિમ દિશા તરફ સય સે કમતી પ્રમાણવાલી ધારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ  
હોતી હૈ કયા ? (હંતા ગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીપે દીવે જાવ દુવાલસમુહુત્તા  
રાઈ ભવઈ) હાં, ગૌતમ ! હસી તરહ સે હોતા હૈ । જંબૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં  
યાવત્ ધારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ । (જયા ણં જંબુદ્વીપે દીવે મંદરસ્સ પુરત્થિમે

ન્યારે જંબૂદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં દિવસ હોય છે, ત્યારે પશ્ચિમ  
દિશામાં પણ દિવસ હોય છે (યાવત્) અને ત્યારે મંદર પર્વતની ઉત્તર  
દક્ષિણ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, (જયા ણં મંતે ! જંબુદ્વીપે દીવે દાહિણદ્વે ઉક્કો-  
સપ અટ્ટારસમુહુત્તે દિવસે ભવહ, તયાણં ઉત્તરદ્વે વિ ઉક્કોસપ અટ્ટારસમુહુત્તે દિ-  
વસે ભવહ.) હે મદન્ત ! ન્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં વધારેમાં વધારે અટાર  
મુહૂર્તનો દિવસ હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ શું વધારે ૧૮ અટાર મુહૂર્તનાં  
જ દિવસ હોય છે ! અને (જયા ણં ઉત્તરદ્વે ઉક્કોસપ અટ્ટારસમુહુત્તે દિવસે ભવહ,  
તયાણં જંબુદ્વીપે મંદરસ્સ પુરત્થિમપચ્ચત્થિમેણં જહનિયા દુવાલસમુહુત્તા રાઈ ભવઈ ? )  
ન્યારે ઉત્તરાર્ધમાં સૌથી મોટો દિવસ ૧૮ અટાર મુહૂર્તનો થાય છે, ત્યારે  
શું જંબૂદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ પશ્ચિમ દિશામાં સૌથી નાની બાર મુહૂ-  
ર્તની રાત્રિ થાય છે ! “ હંતા ગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીપે દીવે જાવ દુવાલસમુ-  
હુત્તા રાઈ ભવહ ) હા ગૌતમ ! ન્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં મોટામાં મોટો  
દિવસ ૧૮ અટાર મુહૂર્તનો થાય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ મોટામાં મોટો દિવસ  
૧૮ અટાર મુહૂર્તનો થાય છે, અને ત્યારે મંદર પર્વતની પૂર્વ તથા પશ્ચિમે



પૌરસ્ત્યે ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહર્તો દિવસો ભવતિ. તદા જમ્બુદીપે દ્વીપે પશ્ચિમેઽપિ ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહર્તો દિવસો ભવતિ, તદા પશ્ચિમે ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહર્તો દિવસો ભવતિ, તદા સહુ મદન્ત ! જમ્બુદીપે દ્વીપે ઉત્તરે દ્વાદશમુહર્તો યાવત્-સાવિમેવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-ભવતિ, તદા સહુ મદન્ત ! જમ્બુદીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે અઠાર-

વક્રોસપ્ત અઠારસમુદ્દત્તે દિવસે ભવઈ, તથા ણં જંબુદીપે દ્વીપે પચ્ચ-ત્થિમેણં વિ વક્રોસેણં અઠારસમુદ્દત્તે દિવસે ભવઈ) હે મદન્ત ! જય જંબુદીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદરપર્વત કી પૂર્વદિશા તરફ અધિક સે અધિક અઠારહ મુહર્ત્ત કા દિન હોતા હૈ, તય જંબુદીપ મેં પશ્ચિમ દિશા કી તરફ ઓ અધિક સે અધિક અઠારહ મુહર્ત્ત કા દિવસ હોતા હૈ । ઓર (જયા ણં પચ્ચ-ત્થિમે ણં વક્રોસિપ્ત અઠારસમુદ્દત્તે દિવસે ભવઈ, તથા ણં મંતે ! જંબુદીપે દ્વીપે ઉત્તરે દુવાલસમુદ્દત્તા જાવ રાઈ ભવઈ ) જય પશ્ચિમ દિશા કી તરફ અધિક સે અધિક અઠારહ મુહર્ત્ત કા દિન હોતા હૈ તય હે મદન્ત ! જંબુદીપ મેં ઉત્તરાર્ધ મેં સપ સે કમ ધારહ મુહર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ કયા ? ( હંતા, ગોયમા જાવ ભવઈ ) હાં, ગૌતમ ! હસી તરહ સે યાવત્ સપ સે કમ ધારહ મુહર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ । ( જયા ણં મંતે ! જંબુદીપે દ્વીપે દાહિણદ્વે અઠારસમુદ્દત્તાણંતરે દિવસે ભવઈ.) હે મદન્ત ! જય જમ્બુદીપ

નાનામાં નાની રાત્રિ ૧૨ બાર મુહૂર્તની થાય છે.

( જયાણં જંબુદીપે દ્વીપે મંદરસ પુરત્થિમે વક્રોસપ્ત અઠારસમુદ્દત્તે દિવસે ભવઈ તથા ણં જંબુદીપે દ્વીપે પચ્ચત્થિમેણં વિ વક્રોસેણં અઠારસમુદ્દત્તે દિવસે ભવઈ ? ) હે મદન્ત ! જ્યારે જંબુદીપ નામના દ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વદિશા તરફ લાંબામાં લાંબો ૧૮ અઠાર મુહૂર્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે જંબુદીપમાં પશ્ચિમ દિશા તરફ પણ શું લાંબામાં લાંબો ૧૮ અઠાર મુહૂર્તનો દિવસ થાય છે ? અને (જયાણં પચ્ચત્થિમે ણં વક્રોસિપ્ત અઠારસમુદ્દત્તે દિવસે ભવઈ, તથા ણં મંતે જંબુદીપે દ્વીપે ઉત્તરે દુવાલસમુદ્દત્તા જાવ રાઈ ભવઈ ! ) જ્યારે પશ્ચિમ દિશામાં લાંબામાં લાંબો દિવસ ૧૮ અઠાર મુહૂર્તનો હોય છે, ત્યારે શું જંબુદીપના ઉત્તરાર્ધમાં નાનામાં નાની રાત્રિ ૧૨ બાર મુહૂર્તની હોય છે ? (હંતા, ગોયમા ! જાવમવઈ ) હા, ગૌતમ ! જંબુદીપના ઉત્તરાર્ધમાં દૂંકામાં દૂંકી ૧૨ બાર મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે, ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન સત્ય છે. (જયા ણં મંતે ! જંબુદીપે દ્વીપે દાહિણદ્વે અઠારસમુદ્દત્તાણંતરે દિવસે ભવઈ, તથા ણં ઉત્તરે અઠારસમુદ્દત્તાણંતરે દિવસે ભવઈ)

દશમુહર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, તદા ઉત્તરે અષ્ટાદશમુહર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, યદા ઉત્તરે અષ્ટાદશમુહર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે, પશ્ચિમે સાતિરેકા દ્વાદશમુહર્તા રાત્રિર્ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ, યદા સ્વલુ ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે અષ્ટાદશમુહર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, તદા પશ્ચિમે અષ્ટાદશમુહર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, યદા પશ્ચિમે અષ્ટાદશમુહર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે સાતિરેકદ્વાદશમુહર્તા રાત્રિર્ભવતિ ?

નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ ( તયાણં ઉત્તરે અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ ) તથ ઉત્તરાર્ધ મેં અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ । ઓર ( જયાણં ઉત્તરહ્લે અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયાણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વ-યસ્સ પુરત્થિમેણં પચ્ચત્થિમેણં સાહરેગા દુવાલસમુહૂત્તા રાઈ ભવહ ) જય ઉત્તરાર્ધ મેં અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિન હોતા હૈ તથ જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપમેં મંદરપર્વત કી પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ કી ઓર ઘારહ મુહૂર્ત્તસે કુછ અધિક લંબી રાત હોતી હૈ કયા ? ( હંતાગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે જાવ રાઈ ભવહ ) હાં ગૌતમ ! હસી તરહ સે હોતા હૈ-જમ્બૂદ્વીપ મેં યાવત રાત્રિ હોતી હૈ । ( જયા ણં ભંતે ! જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમે ણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં પચ્ચત્થિમેણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ ) હે ભદન્ત ! જિસ સમય જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વદિશા તરફ અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિવસ હોતા

હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં ૧૮ અઠારમુહૂર્ત્તથી દૂંકે દિવસ થાય છે, ત્યારે શુ' ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ ૧૮ અઠારમુહૂર્ત્ત કરતાં દૂંકે દિવસ થાય છે ? અને ( જયાણં ઉત્તરહ્લે અઠારસ મુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમે ણં પચ્ચત્થિમે ણં સાહરેગા દુવાલસમુહૂત્તા રાઈ ભવઈ ) જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં ૧૮ અઠાર મુહૂર્ત્ત કરતાં દૂંકે દિવસ થાય છે, ત્યારે શુ' જંબૂદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ અને પશ્ચિમ તરફ બાર મુહૂર્ત્ત કરતાં પણ લાંબી રાત્રિ થાય છે ? ( હંતા ગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે જાવ રાઈ ભવહ ) હા, ગૌતમ ! એવું બને છે—જ્યારે જંબૂદ્વીપમાંથી શરૂકરીને બાર મુહૂર્ત્ત કરતાં લાંબી રાત્રિ થાય છે ત્યાં સુધીનું કથન અહીં કરવું. ( જયા ણં ભંતે ! જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમેણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં પચ્ચત્થિમેણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવઈ ) હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વાદિશા તરફ અઠાર મુહૂર્ત્ત કરતાં દૂંકે દિવસ

હન્ત, ગૌતમ ! યાત્ર-ગતિ. પચ્ચ પતેન ક્રમેણ પ્રમાણિતમ્, સપ્તદશમો દિવસઃ, ત્રયોદશમુહર્તો રાત્રિર્ભવતિ, માસદશમુહર્તો નવમો દિવસઃ, સાતિરેકા ત્રયોદશમુહર્તો રાત્રિઃ, પોઢમમુહર્તો દિવસઃ, ચતુર્દશમુહર્તો રાત્રિઃ, પોઢમમુહર્તો નવમો દિવસઃ, સાતિરેકા ચતુર્દશમુહર્તો રાત્રિઃ, પચ્ચદશમુહર્તો દિવસઃ, પચ્ચદશમુહર્તો

હૈ, તથ પશ્ચિમ દિશા તરફ અઠારહ મુહર્તો સે કુલ્લ કમ દિવસ હોતા હૈ । ઓર ( જયા ણં પચ્ચત્થિમેણ અઠારસ મુહુત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તરદાહિણે સાહરેગદુવાલસમુહુત્તા રાહ્ ભવહ ) જય પશ્ચિમ દિશા તરફ અઠારહમુહર્તો સે કુલ્લ કમ દિવસ હોતા હૈ તથ જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદર પર્વતની ઉત્તર દિશાતરફ ચારહ મુહર્તો સે કુલ્લ અધિક લંબી-ચઢી રાત્રિ હોતી હૈ કયા ? ( હંતા ગોયમા ! જાવ ભવહ ) હાં ગૌતમ ! હસી તરહ સે યાવત્ ચારહ મુહર્તો સે કુલ્લ અધિક લંબી રાત્રિ હોતી હૈ । ( ઇવં ઇત્થં કમેણ ઓસારેયવ્વં ) હસી તરહ હસી ક્રમ સે દિવસ કા પ્રમાણ કમ કરના ચાહિયે ઓર રાત્રિકા પ્રમાણ ઘઢાના ચાહિયે । જય ( સત્તરસમુહુત્તે દિવસે તેરસમુહુત્તો રાહ્ ભવહ ) સત્તરહ મુહર્તો કા દિવસ હોગા તથ તેરહ મુહર્તો કી રાત્રિ હોગી । ( સત્તરસમુહુત્તાણંતરે દિવસે સાહરેગા, તેરસમુહુત્તારાહ્, સોલસમુહુત્તે દિવસે; ચોદસ મુહુત્તા રાહ્, સોલસ

થાય છે, ત્યારે શું મંદર પર્વતની પશ્ચિમ દિશામાં પણ અઠાર મુહૂર્ત કરતાં ટૂંકો દિવસ થાય છે ? અને ( જયાણં પચ્ચત્થિમેણ અઠારસમુહુત્તાણંતરે દિવસે ભવહ તયા ણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તરદાહિણે સાહરેગદુવાલસમુહુત્તા રાહ્ ભવહ ? ) ત્યારે પશ્ચિમ દિશામાં અઠાર મુહૂર્ત કરતાં ટૂંકો દિવસ થાય છે, ત્યારે શું જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ તરફ બાર મુહૂર્ત કરતાં લાંબી રાત્રી થાય છે ? ( હંતા, ગોયમા ! જાવ ભવહ ) હા, ગૌતમ એવું અને છે. અહીં ઉપરોક્ત બાર મુહૂર્ત કરતાં લાંબી રાત્રી થાય છે, ત્યાં સુધીનું કથન શ્રદ્ધા કરવું. ( ઇવં ઇત્થં કમેણ ઓસારેયવ્વં ) એજ રીતે એજ ક્રમથી દિવસનું પ્રમાણ ઓછું કરવું જોઈએ અને રાત્રિનું પ્રમાણ વધારવું જોઈએ ત્યારે ( સત્તરસમુહુત્તે દિવસે તેરસ મુહુત્તા રાહ્ ભવહ ) ત્યારે સત્તર મુહૂર્તનો દિવસ થાય ત્યારે તેર (૧૩) મુહૂર્તની રાત્રિ થાય છે. ( સત્તરસ મુહુત્તાણંતરે દિવસે સાહરેગા, તેરસમુહુત્તા રાહ્, સોલસમુહુત્તે દિવસે, ચોદસમુહુત્તા રાહ્, સોલસ



રાત્રિઃ પચ્ચદશમુહર્તાનન્તરો દિવસઃ સાતિરેકા પચ્ચદશમુહર્તા રાત્રિઃ, ચતુર્દશમુહર્તો દિવસઃ પોઢશમુહર્તા રાત્રિઃ, ચતુર્દશમુહર્તાનન્તરો દિવસઃ, સાતિરેકા પોઢશમુહર્તા રાત્રિઃ ત્રયોદશમુહર્તો દિવસઃ સપ્તદશમુહર્તા રાત્રિઃ, ત્રયોદશમુહર્તાનન્તરો દિવસઃ, સાતિરેકા સપ્તદશમુહર્તા રાત્રિઃ । યદા સ્વલુ જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે

મુહુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા ચત્તરસ મુહુત્તા રાઈ) જય સત્તરહ મુહર્ત્તે સે ખી કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ, તય તેરહ મુહર્ત્તે સે ખી કુછ અધિક રાત્રિ હોતી હૈ । ઓર જય સોલહ મુહર્ત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય ૧૪ ચૌદહ મુહર્ત્તે કી રાત્રિ હો જાતી હૈ । જય સોલહ મુહર્ત્તે સે કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ તય રાત્રિ કુછ અધિક ચૌદહ મુહર્ત્તે કી હો જાતી હૈ । ( પળ્લરસ મુહુત્તે દિવસે, પળ્લરસમુહુત્તા રાઈ ) જય પન્દરહ મુહર્ત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય પન્દરહ મુહર્ત્તે કી રાત્રિ હોતી હૈ । ( પળ્લરસ મુહુત્તાણંતરે દિવસે સાહરેગા પળ્લરસમુહુત્તા રાઈ ) પન્દરહ મુહર્ત્તે સે કુછ કમ જય દિવસ હોતા હૈ, તય કુછ અધિક પન્દરહ મુહર્ત્તે કી રાત્રિ હોતી હૈ । ( ચોદસમુહુત્તે દિવસે, સોલસમુહુત્તા રાઈ ) જય ચૌદહ મુહર્ત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય સોલહ મુહર્ત્તે કી રાત્રિ હોતી હૈ । ( ચોદસમુહુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા સોલહમુહુત્તા રાઈ ) જય ચૌદહ મુહર્ત્તે સે કુછ કમ કા દિન હોતા હૈ તય રાત્રિ કુછ અધિક સોલહ મુહર્ત્તે કી હોતી હૈ । ( તેરસમુહુત્તે દિવસે, સત્તરસમુહુત્તા રાઈ ) જય તેરહ મુહર્ત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય

મુહુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા ચત્તરસમુહુત્તા રાઈ ) જ્યારે સત્તર મુહુર્ત્ત કરતાં પંચ કંઈક દૂકે દિવસ થાય છે, ત્યારે તેર (તેર) મુહર્ત્ત કરતાં કંઈક વધારે સમયની રાત્રિ થાય છે, જ્યારે સોળ મુહર્ત્ત નો દિવસ થાય છે, ત્યારે ચૌદ મુહર્ત્તની રાત્રિ થાય છે, જ્યારે સોળ મુહર્ત્ત કરતાં પંચ કંઈક ઓછા સમયનો દિવસ હોય છે ત્યારે ચૌદ મુહુર્ત્તથી કંઈક વધારે સમયની રાત્રિ થાય છે.

( પળ્લરસમુહુત્તે દિવસે પળ્લરસમુહુત્તા રાઈ ) જ્યારે ૧૫ પંદર મુહુર્ત્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે પંદર મુહુર્ત્તની રાત્રિ થાય છે. ( પળ્લરસમુહુત્તાણંતરે દિવસે સાહરેગા પળ્લરસમુહુત્તા રાઈ ) જ્યારે પંદર મુહુર્ત્તથી કંઈક દૂકે દિવસ હોય છે, ત્યારે રાત્રિ પંદર મુહુર્ત્તથી કંઈક લાંબી હોય છે, ( ચોદસમુહુત્તે દિવસે, સોલસ મુહુત્તારાઈ ) જ્યારે ૧૪ ચૌદ મુહુર્ત્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે ૧૬ સોળ મુહુર્ત્તની રાત્રિ થાય છે. ( ચોદસમુહુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા સોલસ મુહુત્તા રાઈ ) જ્યારે દિવસ ચૌદ મુહુર્ત્ત કરતાં કંઈક દૂકે થાય છે, ત્યારે રાત્રિ સોળ મુહુર્ત્ત કરતાં

सत्तरह मुहूर्त्त की रात्रि होती है । ( तेरसमुहूर्त्ताणंतरं दिवसे, साहरेणा मुहूर्त्ता राई ) और जय तेरह मुहूर्त्त से कुछ कम दिवस का प्रमाण रहता है तय रात्रि का प्रमाण कुछ अधिक मगरह मुहूर्त्त का हो जाता है । ( जया णं जंबूद्वीवे दीवे दक्षिण जहण्णए दुवालसमुहूर्त्ते दिवसे भवइ, तथा णं उत्तरद्वे वि, जया णं उत्तरद्वे तथा णं जंबूद्वीवे दीवे मंदरस्स पन्वयस्स पुरत्थिमेणं उपोसिया अठारसमुहूर्त्ता रा- ई भवइ ) हे भदन्त ! जय जंबूद्वीप नामके द्वीप में दक्षिणार्ध में सय से कम पारह मुहूर्त्त का दिवस होता है, तय उत्तरार्ध में भी ऐसा ही होता है । और जय उत्तरार्ध में ऐसा होता है, तय जंबूद्वीप नामके द्वीप में मंदर पर्वत की पूर्व पश्चिम की ओर सय से अधिक अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है क्या ? ( हंता, गोयमा ! एवं चेव उच्चारेयब्बं जाव राई भवइ ) हां गौतम ! इसी प्रकार से होता है इसी तरह से ही सय कहना चाहिये यावत् रात्रि होती है । ( जया णं भंते ! जंबुद्वीवे दीवे मंदरस्स पन्वयस्स पुरत्थिमेणं जहण्णए दुवालसमुहूर्त्ते दिवसे भवइ,

કંઈક લાંબી થાય છે. (તેરસમુદ્ધત્તે દિવસે સત્તરસમુદ્ધત્તા રાઈ) જ્યારે ૧૩ તેર મુદ્ધત્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે ૧૭સત્તર મુદ્ધત્તની રાત્રિ થાય છે. (તેરસમુદ્ધત્તાળંતરે દિવસે, સાડેરેગા -સત્તરસ મુદ્ધત્તા રાઈ) જ્યારે દિવસ ૧૩તેર મુદ્ધત્ત કરતાં થોડા દૂંકા હોય છે, ત્યારે રાત્રિ સત્તર મુદ્ધત્ત કરતાં થોડી લાંબી હોય છે. (જયાળં જંબુદીવે દીવે દાહિણઢઢે જહણણ દુવાઝસમુદ્ધત્તે દિવસે મવહ, તયાળં ઉત્તરઢઢે વિ જયાળં ઉત્તરઢઢે તયાળં જંબુદીવે દીવે મંદરસસ પુરત્થિમવચ્ચત્થિમેળં ઉક્કોસિયા અટ્ટારસ મુદ્ધત્તા રાઈ મવહ) હે ભદ્રન્ત ! જ્યારે જંબુદીપ નામના દીપમાં દક્ષિણાર્ધમાં દૂંકામાં દૂંકા બાર મુદ્ધત્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ શુ' એમ જ બને છે? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં એવું બને, ત્યારે શુ' જંબુદીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ પશ્ચિમ દિશામાં લાંબામાં લાંબી ૧૮ અઠાર મુદ્ધત્તની રાત્રિ હોય છે ? (હંતા ગોયમા ! એવં ચેવ ચચારેયવ્વં જાવ રાઈ મવહ) હે ગૌતમ ! એવું જ બને છે. (૧૮ અઠાર મુદ્ધત્તની રાત્રિ થાય છે) ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન અહીં અહણુ કહણું ભેધિમ્મિ, (જયાળં મંતે ! જંબુદીવે દીવે મંદરસસ પવ્વયસસ પરત્થિમેળં



મુહૂર્તો દિવસોભવતિ, તદા પશ્ચિમેऽપિ, યદા પશ્ચિમેऽપિ તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે ઉત્કૃષ્ટા અષ્ટાદશમુહૂર્તા રાત્રિર્ભવતિ? હન્ત, ગૌતમ? યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ ॥ મૂ—૨ ॥

ટીકા—અય રવેશ્ચતુર્દિશ્વ પરિભ્રમણેऽપિ તત્પ્રકાશસ્ય પ્રતિનિયતદિક્ષાતિતયા રાત્રિદિવસવ્યવસ્થાં ક્ષેત્રભેદેન પ્રતિપાદયિતુમાદ—‘ જયાળં ભંતે । ’ ઇત્યાદિ । ગૌતમઃપૃચ્છતિ— હે ભદન્ત ! યદા સ્વલ્પ ‘ જંબુદ્વીપે દીવે ’ જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મધ્યજમ્બૂદ્વીપે

તયા ણં પચ્ચત્થિમે ણં વિ, જહા ણં પચ્ચત્થિમેણં વિ તયા ણં જંબુદ્વીપે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તરદાહિણેણં ઉક્કોસિયા અઢારસમુહુત્તા રાઈ ભવહ ) હે ભદન્ત ! જય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદરપર્વત કી પૂર્વદિશા કી ઓર સય સે કમ યારહ મુહૂર્ત કા દિવસ હોતા હૈ, તય પશ્ચિમ કી ઓર મી વૈસા હી હોતા હૈ । ઓર જય પશ્ચિમ કી ઓર મી વૈસા હોતા હૈ, તય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણ દિશા તરફ અધિક અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ મી હોતી હૈ કયા ? ( હંતા ગોયમા ! જાવ રાઈ ભવહ ) હાં, ગૌતમ ! હસી પ્રકાર સે રાત્રિ હોતી હૈ યાવત્ અધિક સે અધિક અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ ॥

ટીકાર્થ— સૂર્ય ચારોં દિશાઓં મેં ભ્રમણ કરતા હૈ—ફિર મી હસકા પ્રકાશ પ્રતિનિયત દિશાઓં મેં હી પડતા હૈ, હસ કારણ રાત્રિ દિવસ કી વ્યવસ્થા કો સૂત્રકાર ક્ષેત્ર ભેદ દ્વારા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે કહતે હૈ—( જયા ણં ભંતે ) ઇત્યાદિ ।

જહનપ દુવાલસમુહુત્તે દિસસે ભવહ, તયા ણં પચ્ચત્થિમે ણં વિ, જયાળં પચ્ચત્થિમેણં વિ તયાળં જંબુદ્વીપે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તર દાહિણેણં ઉક્કોસિયા અઢારસમુહુત્તા રાઈ ભવહ) હે ભદન્ત ! ત્યારે જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશા તરફ દૂંઝામાં દૂંઝે ૧૨ બાર મુહૂર્તનો દિવસ થાયછે, ત્યારે શું પશ્ચિમ તરફ એવું બને છે, અને ત્યારે પશ્ચિમ તરફ એવું બને છે ત્યારે શું જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ દિશા તરફ લાંબામાં લાંબી ૧૮ અઢાર મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે ? ( હંતા ગોયમા ! જાવ રાઈ ભવહ ) હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે—(લાંબામાં લાંબી ૧૮ અઢાર મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે,) ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન શ્રવણ કરવું.

ટીકાર્થ—સૂર્ય ચારે દિશાઓમાં ભ્રમણ કરે છે. પણ તેનો પ્રકાશ પ્રતિનિયત દિશાઓમાં જ પડે છે, તેથી રાત્રિ દિવસની વ્યવસ્થાનું ક્ષેત્રભેદ દ્વારા પ્રતિપાદન કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—( જયા ણં ભંતે ! ) ઇત્યાદિ

‘દાહિણદ્વે’ દક્ષિણાર્ધે દક્ષિણદિગ્ભાગે ‘દિવસે ભવદ્’ દિવસો ભવન્તિ, ‘તયાણં’ તદા સ્વલ્પ ‘ઉત્તરદ્વે’ ઉત્તરાર્ધેષ્વપિ ઉત્તરદિગ્ભાગેષ્વપિ ‘દિવસો ભવદ્’ દિવસો ભવન્તિ ‘તયાણં’ તદા સ્વલ્પ કિમ્ ‘જંબુદ્વીપે દ્વીપે’ જંબુદ્વીપે દ્વીપે ‘મંદરાસ પન્થવયસ્સ’ મંદરાસ્ય પર્વતસ્ય ‘પુરત્થિમ-પન્થત્થિમેણં’ પૂર્વત્થિમ-પશ્ચિમેણં સ્વલ્પ પૂર્વ પશ્ચિમભાગે ‘રાઈ ભવદ્’ રાત્રિર્ભવતિ કિમ્ ? મગવાનાદ-‘દંતા, ગોયમા !’ હે

ગૌતમ સ્વામી પ્રભુ સે પૂછતે હું કિ હે ભદન્ત ! જય (જંબુદ્વીપે દ્વીપે) જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં-મધ્યજંબુદ્વીપ મેં (દાહિણદ્વે) દક્ષિણાર્ધ મેં દક્ષિણદિગ્ભાગ મેં-(દિવસે ભવદ્) દિવસ હોતા હે, (તયાણં) તથા (ઉત્તરદ્વે વિ) ઉત્તરાર્ધ મેં-ઉત્તરદિગ્ભાગ મેં-બી (દિવસે ભવદ્) દિવસ હોતા હે તો કયા ઉસ સમય (જંબુદ્વીપે દ્વીપે) મધ્ય જંબુદ્વીપ મેં (મંદરાસ પન્થવયસ્સ) મંદરા પર્વત કી (પુરત્થિમેણં પન્થત્થિમેણં) પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ દિશા મેં પૂર્વપશ્ચિમદિગ્ભાગ મેં (રાઈ ભવદ્) રાત્રિ હોતી હે ? હસકા અભિપ્રાય એસા હે કિ ઉપરકે સૂત્રદ્વારા એસા કહા ગયા હે કિ સૂર્ય ચારોં દિશાઓં મેં ગમન કરતા હે-તો હસસે તો યહી સમજા જા સકતા હે કિ ઉસકા પ્રકાશ સદા કાયમ ફેલતા રહતા હે-જય એસી યાત હે તો ફિર કહીં રાત્રિ ઓર કહીં દિવસ એસા વિભાગ કેસે ધન સકતા હે ? અર્થાત્ નહીં ધન સકતા । કયોં કિ હસ પ્રકાર કી માન્યતા સે તો સર્વત્ર દિવસ હી રહના ચાહિયે । પરન્તુ એસા તો હોતા નહીં હે । સો હસકા કારણ કયા હે ? હસકે સમાધાન નિમિત્ત એસા કહા ગયા હે કિ યદ્યપિ સૂર્ય ચારોં દિશાઓં મેં ગતિ કરતા

ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે કે-હે ભદન્ત ! ત્યારે (જંબુદ્વીપે દ્વીપે) જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (મધ્ય જંબુદ્વીપમાં) (દાહિણદ્વે) દક્ષિણાર્ધમાં (દક્ષિણ દિગ્ભાગમાં) પણ “દિવસે ભવદ્” દિવસ થાય છે ? “તયાણં” ત્યારે “ઉત્તરદ્વે વિ” શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ (દિવસે ભવદ્) દિવસ થાય છે ? અને ત્યારે (જંબુદ્વીપે દ્વીપે) મધ્ય જંબુદ્વીપમાં આવેલા (મંદરાસ પન્થવયસ્સ) મંદરા (સુમેરુ) પર્વતની (પુરત્થિમપન્થત્થિમેણં) પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં (પૂર્વ પશ્ચિમ દિગ્ભાગમાં) શું (રાઈ ભવદ્) રાત્રિ હોય છે ? ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એવું છે કે-પહેલા સૂત્રમાં એવું બતાવવામાં આવ્યું છે કે સૂર્ય ત્યારે દિશાઓમાં ભ્રમણ કરે છે. એથી તો એવું માનવાને કારણ મળે છે કે તેનો પ્રકાશ સદા સર્વત્ર ફેલાતો જ રહે છે. આવું હોવા છતાં કેઈ જગ્યાએ દિવસ અને કેઈ જગ્યાએ રાત્રી થવાનું કારણ શું છે ? ખરેખર તો બંધી જગ્યાએ દિવસ જ હોવો જોઈએ. તો તેનું સમાધાન નીચે પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું છે-સૂર્ય

ગૌતમ ! દન્ત, સત્યમ્ ' જયાણં ' યદા સ્વત્ ' જમ્બુદીવે દીવે ' જમ્બુદીપે દ્વીપે ' દાહિણદ્વે ' દક્ષિણાર્ધે ' દિવસે ' દિવસઃ ' જાવ-રાઈમવઙ્ ' યાવત્-રાત્રિ-ભવતિ, ઇતિ, યાવત્કરણાત્ ' ભવતિ, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, યદા ચ ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, તદા જમ્બુદીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યપશ્ચિમે ' ઇતિ સંપ્રાપ્તમ્ ।

રહતા હૈ ફિર મી ઉસકા પ્રકાશ મર્યાદિત હૈ । અર્થાત્ ઉસકા પ્રકાશ અમુક ભાગતક હી જાતા હૈ- આગે નહીં જાતા હૈ-હસલિયે રાત ઓર દિવસ કા વ્યવહાર યન જાતા હૈ । જિતની મર્યાદા તક જયનક સૂર્યકા પ્રકાશ રહતા હૈ-ઉતના ભાગ મેં તયનક દિવસ કા વ્યવહાર ઓર પ્રકાશ વર્જિત સ્થાન મેં રાત્રિ કા વ્યવહાર હોતા હૈ । હસી વાન કો ક્ષેત્ર વિભાગપૂર્વક હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ, ગૌતમ પ્રભુ સે પ્રશ્ન કરતે છુપ્ પૂછતે હૈં કિ જય જમ્બુદીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં ઓર ઉત્તરાર્ધ મેં દિવસ હોતા હૈ-તય કયા પૂર્વ ઓર પશ્ચિમભાગ મેં રાત્રિ હોતી હૈ કયા? મગવાન હસકા ઉત્તર દેતે છુપ્ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ ( હંતા ગોયમા ! હાં ગૌતમ ! ( જયાણં ) જય ( જંબુદીવે દીવે ) જમ્બુદીપ નામકે મધ્ય જંબુદીપ મેં ( દાહિણદ્વે વિ ) દક્ષિણાર્ધ મેં મી ( દિવસે ) દિવસ હોતા હૈં-તય ( જાવ રાઈ મવઙ્ ) યાવત્ રાત્રિ હોતી હૈ । યહાં યાવત્પદ સે ( ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, યદા ચ ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, તદા (જમ્બુદીપે દ્વીપેમન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યપશ્ચિમે) હસ પાઠકા સંગ્રહ ક્રિયા

ચારે દિશામાં ગતિ કરતો રહે છે, છતાં પણ તેનો પ્રકાશ મર્યાદિત છે-એટલે કે સૂર્યનો પ્રકાશ અમુક હદ સુધી જ જાય છે-તે હદ કરતાં આગળ જતો નથી. તે કારણે રાત્રિ અને દિવસ થાયા કરે છે. જેટલી હદમાં ત્યાં સુધી સૂર્યનો પ્રકાશ રહે છે, તેટલી હદમાં ત્યાં સુધી દિવસ રહે છે, અને પ્રકાશવિહીન સ્થાનમાં રાત્રિ હોય છે એજ વાતને ક્ષેત્ર વિભાગપૂર્વક આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (ત્યારે જંબુદીપના દક્ષિણાર્ધ અને ઉત્તરાર્ધમાં દિવસ હોય છે, ત્યારે શું પૂર્વ અને પશ્ચિમ ભાગમાં રાત્રિ હોય છે ?)

આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ એવો ઉત્તર આપે છે કે (હંતા ગોયમા ! ) હા, ગૌતમ ! ( જયાણં ) ત્યારે ( જંબુદીવે દીવે ) જંબુદીપ નામના મધ્ય જંબુદીપના (દાહિણદ્વે વિ) દક્ષિણાર્ધમાં "દિવસે" દિવસ હોય છે, ત્યારે (જાવ રાઈ મવઙ્) યાવત્ રાત્રિ હોય છે. અહીં યાવત્ પ્રદથી (ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ) મત્યાદિ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ હોય છે, ત્યારે જંબુ-



અતઃ એવં યથા ગન્ધ હાસંતના ગન્ધમાગ્રાયાન્યે ગજાઃ ક્વાપિ પ્રપલાયન્તે તથા ભગવદ્  
ચિન્ત્યાતિશયપ્રભાવવશાત્તદ્વિહરણસમીરણગન્ધસમ્બન્ધગન્ધતોઽપિ-ઈતિ-હમર-મરકાદય  
ઉપદ્રવાસ્ત્ર ન તિષ્ઠન્તીતિ, ગન્ધગજાશ્રિતરાજવદ્ ભગવદાશ્રિતો ભવ્યગણઃ સર્વદા  
વિજયવાન્ ભવતીતિ ચ ભવત્યુભયોર્યુક્તં સાદૃશ્યમ્ । ‘લોગુત્તમેણં’ લોકોત્તમેન-  
લોકેપુ=ઊર્ધ્વાધસ્તિર્યશૂપેપુ ઉત્તમઃ=શ્રેષ્ઠઃ, યદ્વા-લોકસ્ય=ભવ્યલોકસ્ય કલ્યાણ  
કારિત્વાદુત્તમસ્તેન । ‘લોગનાદેણં’ લોકનાથેન-લોકસ્ય=ભવ્યસમૂહસ્ય નાથઃ=યોગક્ષેમ  
કારિત્વાત્પ્રમુસ્તેન । ‘લોગહિણં’ । ‘લોકહિતેન-લોકસ્ય=પદ્જીવનિકાયરૂપસ્ય હિતઃ=  
સર્વથા તદ્રક્ષણપ્રરૂપણેન સ્વયં રક્ષણેન હિતકરસ્તેન । ‘લોગપદ્દીપેણં’ લોકપ્રદીપેન-લોકસ્ય  
=ભવ્યરૂપવિશિષ્ટલોકસ્ય આન્તરમિથ્યાત્વતિમિરનિકરનિરાકરણપુરસ્સરં જીવાજીવાદિ  
પદાર્થસ્વરૂપપ્રકાશકત્વાત્પ્રદીપસ્તેન, નદિ જન્માન્ધઃ પ્રદીપે સત્યપિ વસ્તું પશ્યતિ,

ગંધ ગજારૂઢ નરેશ કી तरह ભગવદાશ્રિત, “ભવ્ય ગણ” ખી સર્વદા વિજયી  
હોતા હૈ । “લોકોત્તમ” પ્રમુ કો હસલિયે કહા ગયા હૈ કિ ઉર્ધ્વ  
અધો એવં મધ્યલોક મેં ડન જૈસા ઉત્તમ શ્રેષ્ઠ ઓર કોઈ નહીં હૈ-ન હુઆ  
હૈ-ઓર ન હોગાં । અથવા-લોક શબ્દ કા અર્થ ભવ્યજન ખી હોતા હૈ-  
ડનકા કલ્યાણ પ્રમુદ્ધારા હી હોતા હૈ-હસલિયે ખી ડન્હે “લોકોત્તમ કહા હૈ ।

ભવ્યસમૂહ કે યે યોગક્ષેમકારી હોને સે નાથ હૈં હસલિયે “લોક-  
નાથ” ડન્હે કહા ગયા હૈ । પદ્જીવનિકાયરૂપ ડસલોક કે રક્ષણ કરને કે  
પ્રરૂપક હોને સે યે “લોકહિત” ડસ શબ્દ કે વાચ્ય હુએ હૈં । લોક પ્રદીપ-  
ભવ્યરૂપ-વિશિષ્ટ લોકોં કો યે, ડનકે આન્તર મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર નિકર  
અન્ધકારસમૂહ) કે નિરાકરણ કરનેવાલે હોને સે ઓર સાથ સાથ મેં ડન્હે  
જીવ અજીવ આદિપદાર્થોં કે ચથાર્થ સ્વરૂપ કા પ્રકાશ દેને વાલે હોને સે  
પ્રદીપ જૈસે કહે ગયે હૈં ।

ગંધ હાથી ઉપર બેસનાર રાજાની જેમ ‘ભગવદાશ્રિત’ ‘ભવ્યગણ’ પણ કાયમને માટે  
વિજયી થાય છે. પ્રભુને ‘લોકોત્તમ’ એટલા માટે કહેવામાં આવ્યા છે કે ઊર્ધ્વ, અધો  
અને મધ્યલોકમાં એમના જેવો ઉત્તમ અને શ્રેષ્ઠ ખીલે કોઈ છે નહિ, થયો નથી  
અને થશે નહિ. અથવા-લોક શબ્દનો અર્થ ભવ્યજન પણ થાય છે-તેમનું શ્રેય પ્રભુ  
વડે જ થાય છે, એટલા માટે પણ તેમને ‘લોકોત્તમ’ કહ્યા છે. ભવ્યસમૂહના એ  
યોગક્ષેમ કરનાર હોવાથી ‘નાથ’ છે, એટલા માટે જ એમને ‘લોકનાથ’ કહ્યા છે.  
પદ્જીવનિકાયરૂપ આલોકના રક્ષણ કરવાના નિરૂપક હોવાથી એઓને ‘લોકહિત’ આ  
શબ્દથી સંબોધવામાં આવ્યા છે. લોકપ્રદીપ-ભવ્યરૂપથી વિશિષ્ટ લોકોને એ તેમના  
અન્તરના મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર નિકટ (અન્ધકાર) સમૂહને દૂર કરનારા હોવાથી અને  
આથે આથે તેમને હવ-અહવ વગેરે પદાર્થોના સાચારૂપનો પ્રકાશ આપનાર (સાચા  
રૂપને બતાવનાર) હોવાથી પ્રદીપના જેમ તેઓને ‘પ્રદીપ’ કહેવામાં આવ્યા છે.





દર્શન' ચક્ષુદયેન પश्यतीति ચક્ષુઃ, હેયોપાદેયવસ્તુવિભાગકારિત્વેન ચક્ષુરિવ ચક્ષુઃ= શ્રુતજ્ઞાનં તસ્ય દયો દાયકશ્ચક્ષુર્દયસ્તેન । 'મગ્ગદર્શન' માર્ગદયેન-મૃગ્યતે=અન્વિષ્યતે સ્વામીષ્ઠસ્થાનમનેનેતિ માર્ગઃ=નિશ્ચયવ્યવહારલક્ષણઃ શિવપુરપથસ્તસ્ય દયેન । 'શરણદર્શન' શરણદયેન-શરણં=સંસારદુઃખસન્તપ્રાણિગણસ્ય રક્ષાસ્થાનં તત્ત્વતો નિર્વાણપદં દયતિતિ શરણદયસ્તેન, સંસારકાન્તારે પરિભ્રમતાં રાગપશ્ચાનન-દ્વેષવ્યાધિ

ચક્ષુર્દય-“પश्यતીતિચક્ષુઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર યહાં ચક્ષુ શબ્દ કા. અર્થ શ્રુતજ્ઞાન હૈ કયોંકિ વહી હેય ઓર ઉપાદેય વસ્તુકા વિભાગ-કારી માના ગયા હૈ ।—

હસ ચક્ષુ કી પ્રાપ્તિ મન્યજીવોં કો પ્રભુ સે હી હોતી હૈ-અતઃ વે ચક્ષુર્દય હૈ । મગ્ગદય-માર્ગદય-“મૃગ્યતે સ્વામીષ્ઠસ્થાનં-અનેન ઇતિ માર્ગઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર માર્ગ કા અર્થ-મોક્ષપુર કા રાસ્તા હોતા હૈ । કયોં કિ માર્ગ સે હી પથિક અપને અમીષ્ઠ સ્થાન કી સ્વોજ કરતે હૈં । યહ રાસ્તા નિશ્ચય ઓર વ્યવહારકી અપેક્ષા દો તરહ કા કહા હુઆ હૈ । મોક્ષરૂપ અમીષ્ઠ-સ્થાનકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલે હસ માર્ગ કી પ્રાપ્તિ મોક્ષા મિલાપીજનોં કો પ્રભુ કે ઉપદેશ સે હી હુઈ હૈ । અતઃ ઉન્હે “માર્ગદય” સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ । શરણદય- સાંસારિક દુઃખોં સે સન્તપ્ત હુણ પ્રાણિયોં કે લિયે રક્ષા કા જો સર્વોત્તમ સ્થાન હૈ ઉસકા નામ શરણ હૈ । એસા સ્થાન-કેવલ એક મોક્ષ હી હૈ । હસ પદ કે પ્રદાતા પ્રભુ હૈં અતઃ વે શરણદય હૈ । યહ સંસાર એક મયંકર કાન્તાર હૈ । હસમેં પરિભ્રમણ કરનેવાલે પ્રાણી રાગરૂપી પંચાનન (સિંહ)

ચક્ષુર્દય-“પश्यતીતિચક્ષુઃ” આ વ્યુત્પત્તિ મુજબ અહીં ચક્ષુ શબ્દનો અર્થ શ્રુતજ્ઞાન છે. કેમકે તેજ હેય ઉપાદેય (અસ્વીકાર કરવા યોગ્ય અને સ્વીકાર કરવા યોગ્ય) પદાર્થને વિભક્ત કરનાર માનવામાં આવ્યો છે. ભવ્યજીવોને આ ચક્ષુની પ્રાપ્તિ પ્રભુથી જ થાય છે, એટલા માટે તેઓ ચક્ષુર્દય છે. મગ્ગદય-માર્ગદય-“મૃગ્યતે અન્વિષ્યતે સ્વામીષ્ઠસ્થાનં અનેન ઇતિ માર્ગઃ” આ વ્યુત્પત્તિ મુજબ માર્ગનો અર્થ મોક્ષપુરનો માર્ગ એ પ્રમાણે થાય છે. કેમકે માર્ગથી જ મુસાફર પોતાના ઈચ્છિત સ્થાનની શોધ કરે છે. આ માર્ગ નિશ્ચય અને વ્યવહારની અપેક્ષાએ બે જાતનો બતાવવામાં આવ્યો છે. મોક્ષરૂપ ઈચ્છિત સ્થાનની પ્રાપ્તિ, મોક્ષાભિલાષીઓને પ્રભુના ઉપદેશથી જ થઈ છે. એટલા માટે તેમને ‘માર્ગદય’ સૂત્રકારે કહ્યા છે.

‘શરણદય’ જગતના દુઃખોથી સન્તપ્ત થયેલ પ્રાણીઓને માટે રક્ષણનું જે સૌથી શ્રેષ્ઠ સ્થાન છે, તેનું નામ શરણ છે. એવું સ્થાન ફક્ત એક મોક્ષ જ છે. આ (મોક્ષ) પદને આપનારા પ્રભુ જ છે, એટલા માટે તેઓ શરણદય છે. આ સંસાર એક મયંકર ‘કાન્તાર’ (અટવી) છે. આમાં વિચરનારા પ્રાણીઓ રાગરૂપી પંચાનન

અનગારવમાં મૃતરવિંળીટીકા. સૂ. ૩ સુધમાં સ્વામિનઃ ચમ્પાનગર્યાં સમવસરણમ્ ૩૨

ક્રોધદાવાનલ-માનમહાગિરિ-માયાપિશાચી-લોભમહાજગર-વિષયાવલીવિષવલી-  
કુગુરુતસ્કરકર્મ મહતિવૃક્ષાલી-મિથ્યાત્વમહાઅન્ધકારચતુર્ગતિદીર્ઘાધ્વતૃણામહાસરિ-  
દામ્ભવજલ-કુશ્રદ્વાપ્રવાહ કુત્સિતપ્રરુપણા-તરદ્વ-કુશીલતટ-ન્દ્રિયગણમકર-સંયોગ-  
વિયોગકણ્ટક નરકનિગોદ મહાવર્ત્તાભિમુખ વહ નાનાવિધદુઃસ્વપરમ્પરાસંકલેશસંવ્રસ્તા-  
નાં પ્રાણિનાં નિરુપદ્રવમચલમરુજમવ્યાવાધમપુનરાવૃત્તિકં સુરક્ષાસ્થાનં દદાતીતિ ભાવઃ।

અત્ર-‘અભયદયેન, -ચક્ષુર્દયેન, -માર્ગદયેન, -શરણદયેન’ इत्येतत्पदचतुष्ट-

સ્થાયમભિપ્રાયઃ—

यथा कोऽपिकारुणिकः पुरुषोऽनेकविधश्चापदादिकीर्णे महारण्ये तरवरनिक-

સે, દ્રેપ રૂપી વ્યાધ સે ક્રોધ રૂપી દાવાનલ સે માનરૂપી મહાગિરિ સે,  
માયારૂપી મહાપિશાચી સે, લોભ રૂપી મહા અજગર સે, વિષયાવલી રૂપી  
વિષવલી સે, કુગુરુ રૂપી તસ્કર સે કર્મપ્રવૃત્તિ રૂપી વૃક્ષ પંક્તિ સે, મિથ્યાત્વ  
રૂપી મહાઅન્ધકાર સે ચતુર્ગતિ રૂપી વિકટ લઘ્વે માર્ગ સે, તૃણા રૂપી  
મહાનદી સે આમ્ભવ રૂપી જલ સે વ્રસ્ત કુશ્રદ્વા રૂપી પ્રવાહ સે કુત્સિત પ્રરુપણા-  
તરદ્વો સે કુશીલ રૂપી તટસે હન્દ્રિયગણ રૂપી મકર સે સંયોગ વિયોગરૂપી  
કંટકોં સે નરક અને નિગોદ રૂપી મહા આવર્તોં મેં પરિભ્રમણ જન્ય અનેક  
વિધ દુઃસ્વ પરમ્પરા કે સંલેશોં સે હો રહે હેં। ઉન્હેં હસ સંસાર કાન્તાર-  
કે દુઃખોં સે છુડાકર નિરુપદ્રવ, અચલ, અરુજ, અવ્યાવાધ એવં અપુન-  
રાવૃત્તિક સિદ્ધિનામ કા સુરક્ષિત સ્થાન દેને વાલે યદિ કોઈ હેં તો વે  
એક ભગવાન હી હેં। હસીલિયં વે “શરણદય” કહલાયે હેં। અભયદય ચક્ષુ  
ર્દય માર્ગદય તથા શરણદય હન ચાર પદોં કા ગ્રહ અભિપ્રાય હેં કિ-જિમ

(ગ્રિંહ)થી, દ્રેપથી વાધથી, ક્રોધથી દાવાનલથી, માનથી મહા પર્વતથી, માયાથી  
મહાપિશાચીથી, લોભથી મહા અજગરથી વિષયાવલીથી વિષની વેલથી, કુગુરુ (ખરાબ  
શુર) થી ચોરથી, કર્મની પ્રવૃત્તિથી અઠની પાંતીથી, મિથ્યાત્વ (મિથ્યાપણ)થી  
ધાર અન્ધારથી, ચતુર્ગતિથી વિકટ લાંબા રસ્તાથી, તૃણાથી મહા નદીથી, આમ્ભવ  
(કર્મનું આત્મામાં દાખલ થવું તે)થી પાણીથી, કુશ્રદ્વાથી પ્રવાહથી, કુત્સિત પ્ર પાણી-  
થી મોજાઓથી, કુશીલથી દિનારાથી, હન્દ્રિયોના અમૂહથી મગરથી, સંયોગ વિયોગ  
થી કાંટાઓથી તક અને નિગોદથી મહા આવર્તો (અકરી અથવા પાણીની બમરી)  
માં પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન અનેકવિધ દુઃખની પરંપરાના સંકલેશોથી વ્રસ્ત થઈ રહ્યા  
છે. તેમને આ અંચાર કાન્તાર (નિર્જન જંગલ)ના દુઃખોથી મુક્ત કરાવીને નિરુપદ્રવ,  
અચલ, અરુજ, અવ્યાવાધ અને અપુનરાવૃત્તિક-સિદ્ધિનામનું સુરક્ષિત સ્થાન આપનાર  
જો કોઈ છે તો તે એક ભગવાન જ છે. એટલા માટે તેઓ ‘શરણદય’ કહેવામાં આવ્યા છે.  
અભયદય, ચક્ષુર્દય માર્ગદય તથા શરણદય આ ચાર પદોનો એ અર્થ છે કે-જેવી રીતે કોઈ

રાપહતસર્વસ્વં ભયસ્થાનપતિતં પટ્ટિકાદદ્યદ્વચક્ષુપં પુરુપં નિરીક્ષ્ય તમમયરૂપમધુરાભા  
પાદિના સંતોષ્ય પટ્ટિકાપનોદેન ચક્ષુર્દત્વા માર્ગપ્રદર્શનપૂર્વકં નિરુપદ્રવં સ્થાનં પ્રાપયન્તિ,  
તથૈવ ભગવાનપિ નાનાવિધવલેશસન્તાપસંકુલે વિપુલે ભવારણ્યે કર્મતસ્કરાપદ્ધતાત્મગુણ  
સર્વસ્વં મોહાચ્છાદિતનેત્રં ભવ્યજનં 'મો ભવ્ય ! મા ભૈષીઃ, બુદ્ધ્યસ્વ નિજાત્મ-  
સ્વરૂપમ્' इति सम्बोधनपुरस्सरं सन्तोष्य ज्ञानचक्षुर्दानेन सम्यग्दर्शनादिलक्षणं  
મોક્ષમાર્ગ પ્રદર્શ્ય નિર્વાણરૂપં શરણં દદાતીતિ ।

પ્રકાર કોઈ કારુણિક (દયાળુ) પુરુષ અનેક વિધ દિસજન્તુઓં સે શ્રાક્ષીર્ણ  
હુણ મહારણ્ય મેં ચોરોં દ્વારા જિસકા સર્વસ્વ હરણ કર લિયા ગયા હૈ  
ઔર જિસે ભયસ્થાન મેં ઢાલ દિયા ગયા હૈ-તથા દોનોં ઔલે  
જિસકી દૃઢ પટ્ટી સે વાંધ કર જકડ દી ગઈ હૈં એસે પુરુષ કો દેખકર  
કરુણાભાવ સે ઉસે અભયપદ મધુર મધુર સ્નેહોત્પાદક આલાપોં સે  
ધૈર્ય વંધાતા હૈ-આંલોં સે પટ્ટી છોલકર ઉસે ચક્ષુ પ્રદાન કરતા હૈ  
ઔર અન્ત મેં માર્ગ દિલાકર ઉસે નિરુપદ્રવસ્થાન મેં પહુંચા દેતા હૈ, ઉસી  
તરહ પ્રભુ ભી નાનાવિધ વલેશ ઔર સન્તાપ સે સંકુલ (ધિરે) હુણ હસ વિસ્તૃત  
ભવારણ્ય મેં કર્મ રૂપી લુટેરોં દ્વારા જિસકા આત્મગુણ સર્વસ્વરૂપ લૂટ  
લિયા ગયા હૈ તથા જિસકે આન્તર જ્ઞાનરૂપ ચક્ષુઓં પર મોહરૂપી પટ્ટી  
વાંધ દી ગઈ હૈ એસે ભવ્યજન કો હૈ ભવ્યો તુમ મત ઢરો, અપને આત્મ  
સ્વરૂપ કો સમજો "इन वचनो द्वारा संतोषित कर उसे ज्ञान रूपी चक्षु  
પ્રદાનકર સમ્યગ્દર્શનાદિપ મોક્ષમાર્ગ કો દિલા કર નિર્વાણરૂપ અભય-  
સ્થાન મેં પહુંચા દેતે હૈં

કારુણિક (દયાળુ) પુરુષ અનેક જાતના હિંસક પશુઓથી આકાંત મોટા જંગલમાં  
ચોરોએ જેનું સર્વસ્વ હરી લીધું છે, અને જેને ભયસ્થાનમાં ફેંકવામાં આવ્યો છે,  
તેમજ તેની જાને આંખો મજબૂત પટ્ટીથી બાંધીને કસવામાં આવી છે, એવા પુરુષને  
કરુણાવાદી તેને નિર્ભય બનાવનાર મીઠા મીઠા વચનોથી ધીરજ આપે છે, આંખોની  
પટ્ટી ખોલીને તેને દૃષ્ટિ અર્પે છે અને અંતે તેને રસ્તો બતાવીને નિરુપદ્રવ સ્થાનમાં  
પહોંચાડે છે, તેમજ પ્રભુ પણ અનેક જાતના કલેશ અને સન્તાપથી ઘેરાયેલા આ  
વિશાલ ભવારણ્યમાં કર્મરૂપી લુટારાઓવડે જેનું સર્વસ્વરૂપ આત્મગુણ લુટાઈ ગયું  
છે, તેમજ જેમના આન્તરજ્ઞાનરૂપ ચક્ષુઓ ઉપર મોહ (અજ્ઞાન)રૂપી પટ્ટી બાંધવામાં  
આવી છે, એવા ભવ્યજનને "હે ભવ્યો તમે મા બીશો, પોતાના આત્મસ્વરૂપને  
સમજો," આ પ્રકારના વચનો વડે અંતુષ્ટ કરીને તેમને જ્ઞાનરૂપી ચક્ષુ અર્પીને  
સમ્યગ્દર્શનાદિપ મોક્ષમાર્ગને બતાવીને નિર્વાણરૂપ અભયસ્થાનમાં પહોંચાડે છે.



જીવદયેન-જીવેણુ દયતે ઇતિ જીવદયઃ, યદ્વા-જીવન્તિ મુનયો યેન સ જીવઃ= સંયમજીવિતં, તં દયત ઇતિ જીવદયસ્તેન । ‘બોધિદણં’ બોધિદયેન-બોધનં બોધિ= જિનધર્મપ્રાપ્તિઃ, પ્રથમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાઽઽસ્તિવચનાં પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યા પ્રાદુર્ભાવોવા, તં દયતે ઇતિબોધિદયસ્તેન । ‘ધર્મદણં’ ધર્મદયેન-ધર્મઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્તસ્ય દયેન ‘ધર્મદેસણં’ ધર્મદેશકેન ધર્મઃ=અગારાનગારરૂપસ્તસ્ય દેશકઃ=પરૂપકસ્તેન । ‘ધર્મનાયકેણં’ ધર્મનાયકેણ ધર્મઃ=ક્ષાયિકજ્ઞાનદર્શનચારિત્રાત્મકસ્તસ્ય । નાયકઃ=સ્વામી-યથાવત્પરિપાલનેન તત્ફલપરિભોગાત્, યદ્વા-ધર્મઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્તસ્ય નાયકઃ સ્વશાસનાપેક્ષયા તત્પરૂપકત્વાત્, તેન । ‘ધર્મસારહિણા’ ધર્મસાર-

‘જીવદય’ જીવોં પર દયા કરને ચાલે હોને સે અથવા સંયમરૂપ જીવન પ્રદાન કરને ચાલે હોને સે પ્રભુ મેં જીવદય યહ વિશેષણ સાર્થક હૈ । બોધિદય-જિનધર્મ કી પ્રાપ્તિ હોને કા નામ બોધિ હૈ-અથવા પશ્ચાન્નુપૂર્વોં સે પ્રથમ સંવેગ નિર્વેદ અનુકમ્પા તથા અસ્તિવચ્ચ ઇન માર્ગોં કા પ્રાદુર્ભાવ હોના હસકા નામ બી બોધિ હૈ, યહ બોધિ પ્રભુ દ્વારા હી જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ । હસલિયે ઉન્હેં બોધિદય કહા ગયા હૈ । શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કા ઉપદેશ જીવોં કો પ્રભુ સે મિલતા હૈ-હસલિયે ઉન્હેં ધર્મદય, તથા અગાર શ્રાવક ઓર અનગારમુનિ રૂપ ધર્મ કી પ્રરૂપણા પ્રભુ દ્વારા હી હુઈ હૈ હસલિયે ઉન્હેં ધર્મદેશક કહા ગયા હૈ । તથા વે ક્ષાયિક જ્ઞાન ક્ષાયિક દર્શન, ઓર ક્ષાયિક ચારિત્ર રૂપ ધર્મ કે સ્વામી હૈં વયોંકિ વે ઇનકા યથાવત્ પાલન કરતે હૈં ઓર ઉનકે સુખોં કા પરિભોગ કરતે હૈં હસલિયે વે ધર્મનાયક હૈં । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કી ઉન્હેંને પ્રરૂપણા અપને શાસન કી અપેક્ષા

‘જીવદય’ જીવોં ઉપર દયા કરનાર હોવાથી અથવા સંયમરૂપ જીવન આપનાર હોવાથી પ્રભુ માટે ‘જીવદય’ આ વિશેષણ સાર્થક છે. ‘બોધિદય’ જિનધર્મ મેળવવો તેનું નામ બોધિ છે, અથવા પશ્ચાન્નુપૂર્વોં વડે પ્રથમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા અને અસ્તિવચ્ચ ભાવોનો જન્મ થવો એનું નામ પણ બોધિ છે. આ બોધિ પ્રભુવડે જ જીવોને મળે છે. એટલા માટે તેમને બોધિદય કહેવામાં આવ્યા છે. જીવોને શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનો ઉપદેશ પ્રભુથી જ મળે છે, એથી જ તેઓ ધર્મદય નામે પ્રસિદ્ધિ પામ્યા છે. તેમજ અગાર શ્રાવક અને અનગાર મુનિરૂપ ધર્મની પ્રરૂપણા પ્રભુવડે જ થઈ છે, એથી જ તેમને ધર્મદેશક કહેલા છે. તેમજ તેઓ ક્ષાયિકજ્ઞાન, ક્ષાયિકદર્શન અને ક્ષાયિક ચારિત્રરૂપ ધર્મના સ્વામી છે, કેમકે તેઓ તેને સારી રીતે પોષે છે, અને તેઓના ક્રીડાને તેઓ સારી રીતે ભોગવે છે, એટલા માટે જ તેઓ ધર્મનાયક છે. અથવા પોતાના શાસનની અપેક્ષાથી જ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની તેઓએ પ્રરૂપણા કરી છે, એટલા માટે પણ તે તેના (ધર્મના) નાયક છે. ‘ધર્મસારથી’ સારથીની એ ક્રૂરજ

થિના-ધર્મસ્ય સારથિઃ=સન્ધ્યાલકઃ-ધર્મસારથિસ્તેન ! યથા સારથિરુન્માર્ગે ગચ્છન્તં  
 રથં સન્માર્ગમાનયતિ તથા ભગવાનપિ શ્રુતચારિત્રધર્મસ્થલિતાન્ તદ્રક્ષણોપદેશેન  
 પુનર્ધર્મમાર્ગે સ્થાપયતીતિ । ‘ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિના’ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિ-  
 ના=દાનશીલતપોભાવૈશ્વતર્પણાં નરકાદિગતીનાં ચતુર્ણાં વા કપાયાણામન્તો નાશો  
 યસ્માત્ સ ચતુરન્તઃ, ચતુરન્ત એવ ચાતુરન્તઃ, ચક્રમિવ ચક્રમ્, ચાતુરન્ત એવ-  
 ચક્રમ્=ચાતુરન્તચક્રમ્ જન્મજરામરણોચ્છેદકત્વેન ચક્રતુલ્યત્વાત્, વરંચ તચ્ચાતુરન્ત-  
 ચક્રમ્=વરચાતુરન્તચક્રમ્, વરપદેન રાજચક્રાપેક્ષયાઽસ્ય શ્રેષ્ઠત્વં વ્યજ્યસે લોકદ્વય-  
 સાધકત્વાત્ ધર્મ એવ વરચાતુરન્તચક્રં=ધર્મવરચાતુરન્તચક્રમ્, તેન વર્તિતું શીલમસ્યેતિ

કી હૈ હસલિયે મ્હી વે ઉસકે નાંચક હૈ। ધર્મસારથી-સારથી કા યહ  
 કર્તવ્ય હોતા હૈ કિ વહ રથકા સંચાલન ઠીકર રૂપ સે કરેં યદિ વહ  
 ઉન્માર્ગ પર જા રહા હૈ-તો ઉસે સન્માર્ગ પર લે આવે। અતઃ હસ અપને  
 કર્તવ્ય કા પાલક જૈસે સારથી હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર પ્રભુને મ્હી ધર્મરૂપી  
 રથ કા અચ્છી તરહ સે સંચાલન કિયા હૈ। યદિ કોઈ પ્રાણી ધર્મરૂપી રથ  
 કો ઉન્માર્ગ મેં લે જાતા હૈ-અર્થાત્ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ સ્થલિત હોતા હૈ  
 તો પ્રભુ ઉસકી રક્ષા કરને કે ઉપદેશ સે પુનઃ ઉસ ધર્મ મેં સંસ્થાપિત કર  
 દેતે હૈ। ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી દાન શીલ તપ એવં મ્હાવોં દ્વારા નરકાદિ  
 ચાર ગતિયોં કા અથવા ક્રોધાદિ ચાર કપાયોં કા યહ ધર્મ નાશક હોતા  
 હૈ હસ લિયે વહ ચતુરન્ત હૈ। જન્મ, જરા એવં મરણ કા ઉચ્છેદક હોને  
 સે ધર્મકો ચક્ર કે સમાન પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। વર શબ્દ કા  
 અર્થ શ્રેષ્ઠ હૈ હસસે યહ બોધ હોતા હૈ કિ રાજ ચક્ર કી અપેક્ષા  
 મ્હી યહ ધર્મરૂપી ચક્ર શ્રેષ્ઠ હૈ। ક્યોં કિ હસસે જીવ કે દોનોં લોક

હોય છે કે તે સારી પેઠે રથને હાંકે, ને તે ઉન્માર્ગ (ખોટો રસ્તો) જતો હોય તો  
 તેને સન્માર્ગ (સારા રસ્તા) તરફ વાળે. માટે જેમ આ સારથી પોતાની ફરજને પાળનાર  
 હોય છે. તે પ્રમાણે જ પ્રભુએ પણ ધર્મરૂપી રથને સારી પેઠે હાંક્યો છે. ને ગમે તે  
 પ્રાણી ધર્મરૂપી રથને ઉન્માર્ગ (ખોટા રસ્તા) તરફ લઈ જવાનો પ્રયત્ન કરે અર્થાત્ શ્રુતચારિ-  
 ત્રવિરૂધ્ધ ધર્મનું રક્ષણ લથાથ એ રીતનું વર્તન કરે તો પ્રભુ તેના રક્ષક થાય, એટલે કે ધર્મના  
 ઉપદેશથી તેને ફરી ધર્મમાં સંસ્થાપિત કરે છે. ધર્મવરચાતુરન્ત ચક્રવર્તી દાન, શીલ,  
 તપ અને ભાવો વડે નરક વગેરે ચાર ગતિયોને અથવા ક્રોધ વગેરે ચાર કપાયોને આ ધર્મ  
 નાશ કરનારો હોય છે, એટલા માટે તે ‘ચતુરન્ત’ છે. જન્મ, જરા [વૃદ્ધાવસ્થા] અને મૃત્યુને  
 નાશ કરનાર હોવાથી ધર્મને ચક્રના આકારે બતાવ્યો છે. વર શબ્દનો અર્થ શ્રેષ્ઠ છે.  
 એનાથી એમ જણાય છે કે ‘રાજચક્ર’ કરતાં પણ ધર્મચક્ર અધિયાતું છે. કેમકે



અનગારધર્મામૃતવર્ષિણી ટીકા. મુ. ૩ સુવર્મસ્યામિનઃચમ્પાનગર્યાં સમવસરણમ્ ૪૩

ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી=લોકોત્તર ધર્મપ્રવર્તકસ્તેન ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિના ।  
'દ્વીપો' દ્વીપઃ સંસારસમુદ્રે નિમજ્જતાં દ્વીપ 'તુલ્યઃ', 'ત્રાણં' ત્રાણં=કર્મકદર્થિતાનાં  
મન્યાનાં રક્ષણસક્ષણઃ, અતएच તેषાં 'સરણગઈ' શરણગતિઃ=આશ્રયસ્થાનમ્,  
'પદ્મદ્રાણં' પ્રતિષ્ઠાનં=કાલત્રયેऽપ્યવિનાશિત્વેન સ્થિતઃ, તેન, અત્ર તૃતીયાર્થે પ્રથમા ।  
'અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધરેણ' અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધરેણ-પ્રતિહતં-ભિત્યાઘા-  
વરણસ્તલિતં ન પ્રતિહતમ્અપ્રતિહતં, જ્ઞાનશ્વદર્શનશ્ચેતિ જ્ઞાનદર્શને, અપ્રતિહતે  
વરજ્ઞાનદર્શને અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શને, ધરતીતિધરઃ-અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનયોર્ધરઃ,

સુખાવહ ધનતે હૈ। ધર્મરૂપી શ્રેષ્ઠ ચાતુરન્ત ચક્ર સે વર્તન કરને કા પ્રભુ કા  
સ્વભાવ હૈ અતઃ વે ધર્મવરચાતુરન્ત ચક્રવર્તી હૈ। હસ કા નિષ્કર્પાર્થ યહ  
હૈ કિ પ્રભુને જિસ ધર્મ કી પ્રરૂપણા કી હૈ વહ લોકોત્તર હૈ। એસે લોકોત્તર  
ધર્મ કે પ્રવર્તક પ્રભુ કે સિવાય ઓર દૂસરા કોઈ નહીં હો સકતા હૈ।  
પ્રભુ દ્વીપ તુલ્ય હસલિયે પ્રકટ કિયે ગયે હૈ કિ વે સંસારરૂપી સમુદ્ર મેં  
હૂવતે હુણ પ્રાણિયોં કો એક દ્વીપ કે સમાન સહારા પ્રદાન કરને વાલે  
હૈ। "ત્રાણં" પ્રભુકર્મોં સે કદર્થિત હુણ મન્ય જીવોં કો રક્ષણ કરને મેં  
સમર્થ હૈ હસલિયે ત્રાણરૂપ હૈ। હસલિયે "શરણગતિઃ" ઉન્હેં આશ્રયસ્થાન  
હૈ। કાલત્રય મેં મી અવિનાશીરૂપ સે સ્થિત રહને કે કારણ  
પ્રભુ પ્રતિષ્ઠાન સ્વરૂપ હૈ અપ્રતિહત વરજ્ઞાનદર્શન ધર-પ્રભુ કે અનન્તજ્ઞાન  
ઓર અનન્ત દર્શન ત્રિકાલ મેં મી કિસી મી પદાર્થ દ્વારા પ્રતિહત નહીં  
હો સકતે હૈ-હસલિયે ઉન્હેં અપ્રતિહત કહા ગયા હૈ। અપ્રતિહતજ્ઞાન ઓર  
દર્શન કો ધારણ કરને વાલે કેવલ એક પ્રભુ હૈ હસલિયે વે ઉસ વિશે-

એનાથી છવના બન્ને લોક [ઇહલોક અને પરલોક] સુખી બને છે. ધર્મરૂપી શ્રેષ્ઠ  
ચાતુરન્ત ચક્રવર્તે વર્તવાની પ્રભુની ટેવ છે. એટલા માટે તેઓ ધર્મવર ચાતુરન્ત  
ચક્રવર્તી છે. એનો નિષ્કર્પરૂપે આ અર્થ છે કે પ્રભુએ જે ધર્મની પ્રરૂપણા  
કરી છે, તે [ધર્મ] લોકોત્તર [અલૌકિક અથવા અસાધારણ] છે. એવા લોકોત્તર ધર્મને  
પ્રવર્તનાર પ્રભુ વિના અન્ય બીજો કોઈ પણ ન થઈ શકે. પ્રભુને દ્વીપ (ખેત)ના જેવા  
એટલા માટે બતાવવામાં આવ્યા છે કે તેઓ સંસારરૂપી સમુદ્રમાં ડૂળનારા પ્રાણિઓને  
એક દ્વીપની જેમ સહારો આપનાર છે. 'ત્રાણ' કર્મો વડે કદર્થિત [દુઃખિત] થયેલ  
છવેનાં રક્ષણ કરવામાં પ્રભુ સમર્થ છે, એટલા માટે ત્રાણરૂપ છે. એથી જ 'શરણ-  
ગતિઃ' તેઓનાં આશ્રય આપનારું સ્થાન છે. ત્રણે કાળમાં પણ અવિનાશીરૂપે [એક-  
રૂપે] સ્થિત રહેવાને લીધે પ્રભુ પ્રતિષ્ઠાન સ્વરૂપ છે. 'અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધર' પ્રભુનાં  
અનન્તજ્ઞાન અને અનન્તદર્શન ત્રણે કાળોમાં પણ ગમે તે પદાર્થ વડે પ્રતિહત  
[પ્રતિબંધ પામેલું] થઈ શકતું નથી, એથી જ તેમને અપ્રતિહત કહેવામાં આવ્યા  
છે. કહત એક પ્રભુ જ અપ્રતિહતજ્ઞાન અને દર્શનને ધારણ કરનાર છે. એટલા માટે તેઓને આ

થિના-ધર્મસ્ય સારથિઃ=સશ્ચાલકઃ-ધર્મસારથિસ્તેન ! યથા સારથિરુન્માર્ગે ગચ્છન્તં  
 રથં સન્માર્ગમાનયતિ તથા ભગવાનપિ શ્રુતચારિત્રધર્મસ્થલિતાન્ તદ્રક્ષણોપદેશેન  
 પુનર્ધર્મમાર્ગે સ્થાપયતીતિ । ‘ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિના’ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિ-  
 ના=દાનશીલતપોભાવૈશ્વતૃપ્તિનાં નરકાદિગતીનાં ચતુર્ણાં વા કષાયાણામન્તો નાશો  
 યસ્માત્સ ચતુરન્તઃ, ચતુરન્ત એવ ચાતુરન્તઃ, ચક્રમિવ ચક્રમ્, ચાતુરન્ત એવ-  
 ચક્રમ્=ચાતુરન્તચક્રમ્ જન્મજરામરણોચ્છેદકત્વેન ચક્રતુલ્યત્વાત્, વરંચ તચ્ચાતુરન્ત-  
 ચક્રમ્=વરચાતુરન્તચક્રમ્, વરપદેન રાજચક્રાપેક્ષયાઽસ્ય શ્રેષ્ઠત્વં વ્યજ્યતે લોકદ્વય-  
 સાધકત્વાત્ ધર્મ એવ વરચાતુરન્તચક્રં=ધર્મવરચાતુરન્તચક્રમ્, તેન વર્તિતું શીલમસ્યેતિ

કી હૈ હસલિયે મી વે ઉસકે નાયક હૈ। ધર્મસારથી-સારથી કા યહ  
 કર્તવ્ય હોતા હૈ કિ વહ રથકા સંચાલન ઠીકર રૂપ સે કરે યદિ વહ  
 ઉન્માર્ગ પર જા રહ્યા હૈ-તો ઉસે સન્માર્ગ પર લે આવે। અતઃ હસ અપને  
 કર્તવ્ય કા પાલક જૈસે સારથી હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર પ્રભુને મી ધર્મરૂપી  
 રથ કા અચ્છી તરહ સે સંચાલન કિયા હૈ। યદિ કોઈ પ્રાણી ધર્મરૂપી રથ  
 કો ઉન્માર્ગ મેં લે જાતા હૈ-અર્થાત્ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ સ્થલિત હોતા હૈ  
 તો પ્રભુ ઉસકી રક્ષા કરને કે ઉપદેશ સે પુનઃ ઉસ ધર્મ મેં સંસ્થાપિત કર  
 દેતે હૈ। ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી દાન શીલ તપ એવં માર્ગો દ્વારા નરકાદિ  
 ચાર ગતિયોં કા અથવા ક્રોધાદિ ચાર કષાયોં કા યહ ધર્મ નાશક હોતા  
 હૈ હસ લિયે વહ ચતુરન્ત હૈ। જન્મ, જરા એવં મરણ કા ઉચ્છેદક હોને  
 સે ધર્મકો ચક્ર કે સમાન પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। વર શબ્દ કા  
 અર્થ શ્રેષ્ઠ હૈ હસસે યહ બોધ હોતા હૈ કિ રાજ ચક્ર કી અપેક્ષા  
 મી યહ ધર્મરૂપી ચક્ર શ્રેષ્ઠ હૈ। વ્યોં કિ હસસે જીવ કે દોનોં લોક

હોય છે કે તે સારી પેઠે રથને હાંકે, જો તે ઉન્માર્ગે (ખોટા રસ્તે) જતો હોય તો  
 તેને સન્માર્ગ (સારા રસ્તા) તરફ વાળે. માટે જેમ આ સારથી પોતાની ફરજને પાળનાર  
 હોય છે. તે પ્રમાણે જ પ્રભુએ પણ ધર્મરૂપી રથને સારી પેઠે હાંક્યો છે. જો ગમે તે  
 પ્રાણી ધર્મરૂપી રથને ઉન્માર્ગ (ખોટા રસ્તા) તરફ લઈ જવાનો પ્રયત્ન કરે અર્થાત્ શ્રુતચારિ-  
 ત્રવ્યૂપ ધર્મનું અનુલ્લઘાય એ રીતનું વર્તન કરે તો પ્રભુ તેના રક્ષક થાય, એટલે કે ધર્મના  
 ઉપદેશથી તેને ફરી ધર્મમાં સંસ્થાપિત કરે છે. ધર્મવરચાતુરન્ત ચક્રવર્તી દાન, શીલ,  
 તપ અને ભાવો વડે નરક વગેરે ચાર ગતિયોને અથવા ક્રોધ વગેરે ચાર કષાયોને આ ધર્મ  
 નાશ કરનારો હોય છે, એટલા માટે તે ‘ચતુરન્ત’ છે. જન્મ, જરા [વૃદ્ધાવસ્થા] અને મૃત્યુને  
 નાશ કરનાર હોવાથી ધર્મને ચક્રના આકારે બતાવ્યો છે. વર શબ્દનો અર્થ શ્રેષ્ઠ છે.  
 એનાથી એમ જણાય છે કે ‘રાજચક્ર’ કરતાં પણ ધર્મચક્ર અધિયાતું છે. કેમકે

પ્રાપ્તેન । 'બોધણં' બોધકેન-બુદ્ધ્યમાનાન્ અન્યાન્ ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ  
 બોધકસ્તેન । 'મુક્તેણં' મુક્તેન-અમોચિ સ્વયંકર્મપંજરાદિતિ મુક્તસ્તેન । 'મોચણં'  
 મોચકેન-મુચ્યમાનાન્-ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ મોચકસ્તેન । 'સર્વવર્ણુણા' સર્વ-  
 જ્ઞેન-સર્વસકલદ્રવ્યગુણપર્યાયલક્ષણં વસ્તુજાતં યાથાતથ્યેન જાનાતીતિ સર્વજ્ઞઃ,  
 તેન । 'સર્વદર્શિણા' સર્વદર્શિના-સર્વ-સમસ્તં પદાર્થસ્વરૂપં સામાન્યેન દ્રષ્ટું શીલ-  
 મસ્યાઽસૌ સર્વદર્શી તેન । 'શિવં' શિવં-નિર્વિલોપદ્વરદિત્ત્વાત્, શિવં કલ્યાણમયં,  
 'સ્થાનં' इत्यस्य विशेषणमिदम्, શિવાદીનાં સર્વેષાં દ્વિતીયાન્તાનામગ્રેતનેન  
 'ઉપગતેન'-इत्यनेनाऽन्वयः । 'અચલં' અચલં-સ્વાભાવિક-પ્રાયોગિક-ચલનક્રિ

જીવોં કો પ્રભુને બોધ પ્રાપ્ત કરને કી પ્રેરણા પ્રદાન કી इसलिये वे बोधक  
 हैं, कर्म पंजर से प्रभु स्वयं छूटे इसलिये मुक्त, तथा अन्य भव्य जीवों  
 को कर्म पंजर से छूटने की प्रेरणा की इसलिये मोचक हैं। समस्त द्रव्य  
 और उनके गुण पर्यायों के यथार्थ ज्ञाता होने से प्रभु सर्वज्ञ हैं तथा  
 समस्त पदार्थों का स्वरूप वे सामान्य रूप से जानते हैं इसलिये सर्वदर्शी  
 हैं ( स्रिवमयलमरुयमणंतमवखयमन्वावाहमपुणरचित्तियं साससंठाणं  
 उवागएणं पंचमस्स अंगस्स विवाहपण्णत्तीय अयमट्ठे पण्णत्ते छट्ठस्स णं भंते  
 अंगस्स णायधम्मकहाणं के अट्ठे पण्णत्ते) शिव अचल अरुज अणंन अक्षय,  
 अव्याबाध एवं अपुनरावृत्तिरूप ऐसे शाश्वत स्थान को प्रभुने प्राप्त किया  
 है। यह स्थान समस्त उपद्रवों से रहित होने के कारण कल्याण मय  
 कहा गया है-इसलिये शिवरूप हैं, इसमें स्वभाविक तथा प्रायोगिक  
 किसी भी तरह की चलन क्रिया नहीं है इसलिये अचलरूप हैं, इसमें

બોધ પ્રાપ્ત કરવાની પ્રેરણા આપી એટલા માટે તેઓ બોધક છે. કર્મના પાંજરામાંથી  
 પ્રભુ બાતે મુક્ત થયા, એટલા માટે મુક્ત તેમજ બીજા ભવ્ય જીવોને કર્મના પાંજરા-  
 માંથી મુક્તિ મેળવવાની પ્રેરણા આપી એટલે તેઓ મોચક છે. બધા દ્રવ્ય અને  
 તેમના ગુણપર્યાયો (પદાર્થના ગુણ અથવા ધર્મો)નાં સાચા જ્ઞાતા હોવાથી પ્રભુ સર્વજ્ઞ  
 છે. તેમજ બધા પદાર્થોના સ્વરૂપને તેઓ સામાન્યરૂપમાં સમજે છે. એટલા માટે  
 સર્વદર્શી છે. (સિવ મલય મરુય મણંત મવખયમન્વાવાહમપુણરાવિત્તિયં સાસર્ગ  
 ઠાણં ઉવાગएणं પંચમસ્સ અંગસ્સ વિવાહપણ્ણત્તીય અયમટ્ઠે પણ્ણત્તે છટ્ઠસ્સ-  
 ણં ભંતે અંગસ્સ ણાયધમ્મકહાણં કે અટ્ઠે પણ્ણત્તે) શિવ, અચળ, અરુજ,  
 અણંત, અક્ષય, અવ્યાબાધ અને અપુનારાવૃત્તિરૂપ એવા શાશ્વત સ્થાનને પ્રભુએ  
 મેળવ્યું છે. આ સ્થાન બધા ઉપદ્રવો વગર હોવાને કારણે કલ્યાણમય બતાવવામાં  
 આવ્યું છે. એટલા માટે શિવરૂપ છે. આમાં સ્વાભાવિક તેમજ પ્રાયોગિક કોઈ પણ  
 બાતની બાબતવાની ક્રિયા [ચલિત થવાની ક્રિયા] નથી, એટલા માટે જ અચળરૂપ છે.



તેન આવરણ રહિત કેવલજ્ઞાન કેવલદર્શનધારણા । 'વિયદ્છડમેણં' વ્યાવૃત્ત-  
 છદ્વના-છાદ્યતે-આવિયતે કેવલજ્ઞાન કેવલદર્શનાઘાત્મનોડનેનેતિ-છદ્વ=વાતિક  
 કર્મવૃન્દં જ્ઞાનાડડવરણીયાદિરૂપં ચા કર્મજાતમ વ્યાવૃત્ત-નિવૃત્ત-છદ્વ યસ્માત્ સ  
 વ્યાવૃત્તછદ્વ, તેન વ્યાવૃત્તછદ્વના । 'જિણેણં' જિનેન-રાગદ્વેષાદિશત્રુવિજય-  
 શીલેન । 'જાવણં' જાપકેન-રાગદ્વેષરિપું જયન્તં ભવ્યજીવગણં પ્રતિધર્મદેશના-  
 દિના પ્રેરકેણ, 'જિ જયે' इतिधातोर्णिनि-'કીઠ્ઠજોનાં ણીં' इत्यात्वे पुकि ण्वुल् ।  
 'તિણ્ણેણં' તીર્ણેન-સ્વયં સંસારીઘાદ્ ઉત્તીર્ણેન । 'તારણં' તારકેણ-તારયતિ-  
 -તરતોડન્યાન્ ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ તારકસ્તેન । 'બુદ્ધેણં' બુદ્ધેન-સ્વયંબોધ

ણ સે કહે ગયે હૈં । તાત્પર્ય આવરણ રહિત કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલ  
 દર્શન કો પ્રભુ ધારણ કરતે હૈં । इसलिये वे अप्रतिहत वरज्ञानदर्शन वाले  
 હૈં । વ્યાવૃત્તછદ્વ-છદ્વ શબ્દ કા અર્થ આવરણ કરના હોતા હૈ-કેવલજ્ઞાન  
 કેવલદર્શન આદિરૂપ આત્મા જિન કે દ્વારા આવિત કી જાતી હૈ એમે  
 જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય તથા અન્તરાય રૂપ ઘાતકકર્મ યા  
 આઠોં કર્મ યહાં છદ્વ શબ્દ સે કથિત દૂષ હૈં । यह छद्व प्रभु की आत्मा  
 સે નિવૃત્ત હો ચુકા હૈ અતઃ વે વ્યાવૃત્ત છદ્વ હૈં । रागद्वेष आदि शत्रुओं  
 કે વિજેતા હોને સે પ્રભુ જિન હૈં તથા इन रागद्वेष रूपी शत्रुओं को  
 જીતને કી પ્રેરણા ભવ્ય જીવોં કોં પ્રભુને અપની ધર્મદેશના દ્વારા પ્રદાન  
 કી અતઃપ્રભુ જાપક હૈં स्वयं संसार समुद्र से प्रभु पार तिर चुके हैं  
 इसलिये तीर्ण हैं, तथा अन्य जीवों को तरने की उन्होंने प्रेरणा की-अतः  
 તારક હૈં, स्वयंबोध को प्राप्त हो जाने के कारण प्रभु बुद्ध हैं तथा अन्य

વિશેષણથી શુક્તકહેવામાં આવ્યા છે. તાત્પર્ય એ છે કે આવરણરહિત કેવળજ્ઞાન અને  
 કેવળદર્શનને પ્રભુ ધારણ કરે છે. એટલા માટે તેઓ અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનવાળા છે.  
 'વ્યાવૃત્તછદ્વ' છદ્વશબ્દનો અર્થ આવરણ, કરવું હોય છે. કેવળજ્ઞાન કેવળદર્શન વગેરેરૂપ  
 આત્મા જેઓ વડે આવૃત્ત (આચ્છાદિત) કરવામાં આવે છે, એવા જ્ઞાનાવરણ, દર્શના-  
 વરણ, મોહનીય તેમજ વિધ્નરૂપ ઘોર ઘાતકકર્મ અથવા આઠે કર્મ અહીં છદ્વ શબ્દ  
 વડે કહેવામાં આવ્યાં છે. આ છદ્વ પ્રભુના આત્માથી નિવૃત્ત થઈ ગયું છે, એટલા  
 માટે તેઓ વ્યાવૃત્ત છદ્વ છે. રાગદ્વેષ વગેરે શત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવનાર હોવાથી  
 પ્રભુ જિન છે, તેમજ આ રાગદ્વેષરૂપી શત્રુઓને છુટવાની પ્રેરણા ભવ્ય હોવાને  
 પોતાની ધર્મ દેશના વડે પ્રભુએ જ આપી છે, એટલા માટે પ્રભુ જાપક છે. પ્રભુ  
 પાતે આ સંસારસમુદ્રને પાર તરી ગયા છે, એટલા માટે તેઓ તીર્ણ છે, તેમજ  
 બીજા હોવાને તરવાની તેમણે પ્રેરણા આપી એટલા માટે તેઓ તારક છે. જાતે  
 બોધ (જ્ઞાન) મેળવનાર હોવાને લીધે પ્રભુ બુદ્ધ છે, તેમજ બીજા હોવાને પ્રભુએ



અસ્ય જ્ઞાતાધર્મકથાદ્ગ્રન્થસ્ય કોડ્યઃ પ્રશ્નઃ ? इति प्रश्नवाक्यम् । अथ उत्तरदानाथ  
शिष्यं सम्बोधयति—हे जम्बूः । इति—इत्थं प्रकारेणाऽऽमन्त्रणवाक्येनाऽऽमन्त्र्य  
आर्यं सुधर्मा स्थविरः—आर्यजम्बूनामानमनगारमेवमवादीत्—अकथयत्—हे जम्बूः ।  
खलु निश्चयेन—एवम्—अमुना प्रकारेण श्रमणेन भगवता महावीरेण जावत् संपा-  
त्तेन सिद्धिगतिस्थानपुपगतेन पठस्याऽङ्गस्य—ज्ञाताधर्मकथाद્ग્રन्थस्य द्वौ श्रुतस्कन्धौ  
प्रज्ञप्तौ, तद्यथाज्ञातानिच धर्मकथाश्च, एतद्वृषौ द्वौ श्रुतस्कन्धौ कथितौ इत्युत्तरम्  
पुनर्जम्बूनामाऽनगारः प्रष्टुं प्रस्तौति 'जह्णं भंते' इत्यादि—हे भगवन् ! यदि  
श्रमणेन भगवता महावीरेण पठस्याऽङ्गस्य द्वौ श्रुतस्कन्धौ प्रज्ञप्तौ—ज्ञातानि च

કહ્યા છે તો જ્ઞાતા ધર્મકથાદ્ગ્ર નામક છઠ્ઠે અંગ કા કયા ભાવ કહ્યા છે ?  
इस तरह अपने शिष्य जंबूस्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी  
इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि—(जंबूत्तितरणं अज्ज सुहम्मे थेरे  
अज्ज जंबूणामं अणगारं एवं वयंसी) हे जंबू इस प्रकार सम्बोधन वाक्य  
द्वारा सम्बोधितकर आर्य सुधर्मा स्वामीने आर्य जंबूनामक अनगार से  
इस प्रकार कहा—(एवं खलु जंबू समणेणं भगवया महावीरेण जाव संप-  
त्तेणं छट्ठस्स अंगस्स दो सुयक्खंधा पणत्ता) हे जंबू ! श्रमण भगवान्  
महावीर ने जो कि पूर्वोक्त आदिकरादि विशेषणों से विशिष्ट हैं एवं  
शिवरूप आदि विशेषण संपन्न सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हो चुके  
हैं उन्होंने छठे ज्ञाताधर्मकथाद्व के दो श्रुतस्कंध प्ररूपित किये हैं  
(तं जहा णायणिय धम्मकहाओय) वे ये हैं—१ ज्ञाता और दूसरा धर्म-  
कथा । (जह्णं भंते समणेणं भगवया महावीरेण जाव संपत्तेणं छट्ठस्स

રૂપ પાંચમા અંગનો અર્થ કહ્યો છે તો જ્ઞાતાધર્મકથાંગ નામના છઠ્ઠા અંગનો શો  
અર્થ કહ્યો છે. પોતાના પ્રધાન શિષ્ય જંબૂસ્વામીના આ પ્રશ્નને સાંભળીને સુધર્મા  
સ્વામી આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં કહે છે (જંબૂતિ તરણં અજ્જસુહમ્મેથેરે અજ્જ  
જંબૂણામં અણગારં એવં વયાસી) હે જંબૂ ! આ જાતના સંબોધન વચન વડે સંબો-  
ધતા આર્ય સુધર્માસ્વામીએ આર્ય જંબૂ નામક અણગારને આ પ્રમાણે કહ્યું— (એવં  
ખલુ જંબૂ સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં જાવ સંપત્તેણં છટ્ઠસ્સ અંગસ્સ દો સુય-  
ક્કંધા પણત્તા) હે જંબૂ ! શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વડે—જેઓ પૂર્વે કહેલા આદિ-  
કથાદિ વિશેષણોથી યુક્ત છે અને શિવરૂપ વિશેરે વિશેષણ સંપન્ન સિદ્ધિગતિ નામના  
સ્થાનને પ્રાપ્ત થઈ ગયા છે તેમણે—છઠ્ઠા જ્ઞાતાધર્મકથાંગના બે શ્રુતસ્કંધ નિરૂપિત કર્યા છે.  
(તં જહા ણાયણિય ધમ્મકહાઓય) તે આ પ્રમાણે છે. પહેલો—જ્ઞાતા [૧] અને  
બીજો ધર્મકથા. [૨] (જહ્ણં ભંતે સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં જાવ સંપત્તેણં

યારહિતમ્ । ‘અરુયં’ અરુજમ્-અવિધમાના રુજા यस્ય તત્, અવિધમાનશરીર-  
મનસ્કત્વાત્, આધિવ્યાધિરહિતમિત્યર્થઃ । ‘અણંતં’ અનન્તમ્-અવિધમાનોઽન્તો=  
નાશો यस્ય તત્, અતएव ‘અવસ્થયં’ અક્ષયં-નાસ્તિ લેશતોઽપિ ક્ષયો यस્ય તત્, અવિ-  
નાશિ-इत्यर्थः, ‘અવ્યાવાહં’ ‘અવ્યાવાધમ્-ન વિધતે વ્યાવાધા-પીડા દ્રવ્યતો  
ભાવતશ્ચ યત્ર તત્ । ‘અપુનરાવિત્તિયં’ અપુનરાવૃત્તિકમ્-અવિધમાના પુનરાવૃત્તિઃ=  
સંસારે પુનરાવર્તનં યસ્માત્ તત્, યત્ર ગત્યા ન કદાચિદપ્યાત્મા વિનિવર્તતે । इत्थ-  
मुक्तश्चિત્તत्वादि विशेषणविशिष्टं. ‘સાસયં’ શાશ્વતં-નિત્યં ‘ઠાણં’ સ્થાનમ્-  
સ્થાયીયતેઽસ્મિન્-इति स्थानं लोकाऽग्रलक्षणम्, ‘ઉવગણં’ ઉપગતેન-પ્રાપ્તેન શ્રમણેન  
ભગવતા મહાવીરેણ પશ્ચમસ્યાઙ્ગસ્ય=વ્યાખ્યાપદ્મસિરુપસ્ય અયમર્થઃ-અનન્ત-  
રોદિતત્વેન બુદ્ધ્યા સન્નિધાવાનીતત્વાત્મત્યક્ષં પ્રજ્ઞપ્તઃ-કથિતઃ, તતઃ પૃષ્ઠસ્યાઙ્ગસ્ય-

પહુંચે હુણ જીવોં કો શરીર ઔર मन से रहित होने के कारण आधि-  
व्याधिरूप दुःखों को भोगना नहीं पड़ता इसलिये यह अरुजरूप हैं। त्रिकाल  
में भी इस स्थान का नाश नहीं होता है इसलिये यह अनन्तरूप हैं  
और इसलिये अविनाशी होने से अक्षयरूप है। द्रव्यपीडा तथा भावपीडा  
का इसमें लेशतः भी सम्बन्ध नहीं है, इसलिये व्यावाधा-पीडा से  
रहित होने के कारण यह अव्यावाध रूप है। इस स्थान पर पहुँचे हुए  
जीवों का पुनः संसार में कभी भी आगमन नहीं होता है इसलिये यह अपु-  
नरावृत्तिरूप है। शाश्वत होने के कारण यह स्थान नित्य है और लोक  
के अग्र भाग में यह स्थित है। ऐसे स्थान को भगवान् महावीर ने प्राप्त  
किया है। अतः जम्बूस्वामीने सुधर्मास्वामी से ऐसा पूछा कि ऐसे स्थान-  
को प्राप्त हुए तथा आदिकर आदि विशेषणों से युक्त हुए श्रमण भग-  
वान् महावीर प्रभुने व्याख्याप्रज्ञसिरूप पंचम अंग का अर्थ इस प्रकार

અહીં પહોંચેલ જીવોને શરીર અને મનથી રહિત હોવાને લીધે આધિવ્યાધિરૂપ દુઃખો  
ભોગવવાનાં રહેતાં નથી, એટલા માટે એ અરુજરૂપ છે. ત્રણે કાળોમાં પણ આ સ્થાન  
નો નાશ થતો નથી, એટલા માટે આ અનંતરૂપ છે. અને એથી અવિનાશી હોવા બદલ  
અક્ષયરૂપ છે, દ્રવ્ય પીડા અને ભાવપીડાનો એનાથી થોડો પણ સંબંધ નથી, એટલા  
માટે વ્યાવાધા પીડાથી રહિત હોવાને કારણે આ અવ્યાવાધ રૂપ છે. આ સ્થાને  
પહોંચેલ જીવોને ફરીથી સંસારમાં ક્યારેય પણ પાછા ફરવાનું થતું નથી, એટલા  
માટે એ આ અપુનરાવૃત્તિરૂપ છે. શાશ્વત હોવાને લીધે આ સ્થાન નિત્ય છે, અને  
લોકના અગ્રભાગમાં આ અવસ્થિત છે. એવા સ્થાનને ભગવાન મહાવીરે મેળવ્યું છે.  
માટે જંબૂસ્વામીએ સુધર્માસ્વામીને એવું પૂછ્યું કે એવા સ્થાનને પ્રાપ્ત થયેલ તેમજ  
આદિકર વગેરે વિશેષણોથી યુક્ત શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુએ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞ

(૧) ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાતમ્-મેઘકુમારજીવેન સ્વ હસ્તિભવે દાવદહમાનશશક  
જીવરક્ષાયૈ પાદ ઉત્તિષ્ઠઃ=ઝર્ધ્વીકૃત એવં ધૂત ઇતિ તદુપલસિતમિદં પ્રથમમધ્યયન-  
મુત્તિષ્ઠજ્ઞાતમ્ । જ્ઞાતમિત્યુદાહરમ્-તદેવાધીયમાનત્વાદધ્યયનમ્ । એવમગ્રેડપિ ।

(૨) સંઘાટકઃ-ધન્યશ્રેષ્ઠિ-વિજયતસ્કરયોરેકવન્ધન યદ્વત્ત્વાર્થાભિધાયકં  
જ્ઞાતં સંઘાટકજ્ઞાતમ્ ।

૧૯ પગૂણવીસડમે ॥

જંબૂ કે इस प्रश्नका उत्तर देते हुए श्रीसुधर्मास्वामी कहते हैं-जंजू ?  
श्रमण भगवान महावीरने जो कि आदिकर आदि विशेषणों से युक्त हैं और  
शिव आदि रूप सिद्धिगति नामक स्थान पर विराजमान हो चुके हैं उन्होंने  
ज्ञाता नामक प्रथम श्रुतस्वंध के इस प्रकार १० अध्ययन प्ररूपित दिये हैं-  
वे ये हैं-उत्तिष्ठज्ज्ञात १, संघाटकर, अंड ३, कूर्म ४, शैलक ५, तुंग ६, रोहिणी ७,  
मल्लि ८, माकंदी ९, चान्द्रिक १०, दावद्रव ११, उदकज्ञात १२, मंडूक १३, तेतलि  
१४, नंदिफल १५, अपरकंका १६, आकीर्ण १७ सुंसमा १८, पुंडरीकज्ञात १९।  
ज्ञात शब्द का अर्थ उदाहरण है। उत्तिष्ठज्ज्ञात में यह कहा गया है  
कि मेघकुमार के जीवने जब कि यह हस्ती के भव में था दावाग्नि से  
दहमान (जलता हुआ) एक शशक की रक्षा करने के लिये अपने चरण  
को ऊँचा किया था-सो वह उसे ऊँचा ही किये रहा।

इस उत्तिष्ठ उदाहरण से युक्त होने के कारण इस अध्ययन का नाम  
भी उत्तिष्ठ ज्ञात पड़ गया है । संघाटकज्ञात में धन्य श्रेष्ठि और विजय

पगूणवीसडमे ।

જંબૂના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં શ્રી સુધર્માસ્વ. મીએ કહ્યું કે-જંબૂ ! શ્રમણ ભગવાન  
મહાવીરે-કે જેઓ આદિકર વગેરે વિશેષણોથી વિશિષ્ટ છે, અને શિવ વગેરેરૂપ સિદ્ધિ ગતિ  
નામના સ્થાને વિરાજમાન થયા છે. તેઓએ જ્ઞાતા નામના પ્રથમશ્રુતના આ રીતે યોગણીસ  
[૧૯] અધ્યયનો પ્રરૂપિત કર્યા છે, તે આ પ્રમાણે છે:-ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત ૧, સંઘાટક ૨, અંડ  
૩ કૂર્મ ૪, શૈલક ૫, તુંગ ૬, રોહિણી ૭, મલ્લિક ૮, માકંદી ૯, ચાંદ્રિક ૧૦, દાવદ્રવ ૧૧,  
ઉદકજ્ઞાત ૧૨, મંડૂક ૧૩, તેતલિ ૧૪, નંદિક્ષલ ૧૫, અંપરકંકા ૧૬, આકીર્ણ ૧૭,  
સુંસમા ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાત ૧૯, જ્ઞાત શબ્દનો અર્થ ઉદાહરણ છે. ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત તમા  
એ બતાવવ માં આ બધું છે કે મેઘકુમારેનો જીવ જ્યારે તે હાથીના ભવ (સ્વરૂપ) માં હતો,  
ત્યારે દાવાગ્નિથી બળતા સસલ ની રક્ષા કરવા માટે પોતાના પગને અદ્ધર કર્યો હતો,  
તે તેને અદ્ધરજ રાખતા રહ્યા.

આ ઉત્તિષ્ઠ ઉદાહરણથી યુક્ત હોવાને કારણે આ અધ્યયનનું નામ પણ  
ઉત્તિષ્ઠ જ્ઞાત પડ્યું છે. ૧, સંઘાટકજ્ઞાતમાં ધન્ય શ્રેષ્ઠી અને વિજય ચોરને લગતી કથા છે,



ધર્મકથાશ્ચ, અનયોઃ શ્રુતસ્કન્ધયોર્મધ્યે પ્રથમસ્ય-જ્ઞાતારૂપસ્ય સ્વત્તુ ભગવન્ ! શ્રુત-સ્કન્ધસ્ય શ્રમણેન યાત્રત્સમ્પાપ્તેન=શાશ્વતસ્થાનપ્રપન્નતેન ભગવતા મહાવીરેણ જ્ઞાતાનાં કતિ અધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ-રૂપિતાનિ, એવં પ્રશ્ને કૃતે સુધર્માસ્વામી-ઉત્તરમાહ-એવં સ્વત્તુ જંબૂઃ ! સ્વત્તુ-નિશ્ચયેન એવમ્=એતન્નામકપ્રથમાશ્રુતસ્કન્ધસ્ય એકોનવિંશતિરધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા તાનિ સાર્દ્ધશ્લોકદ્વયેન દર્શયતિ-‘ઉચ્ચ-ત્તણાણ’ ઇત્યાદિ ।

અંગસ્સ દો સુયવલંબા પળ્લતા તંજહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પઠમસ્સ ણં-મંતે ! સુયવલંબસ્સ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ્ અજ્ઞયણા પળ્લતા?) પુનઃ જંબૂ પૂછતે હૈં ભદન્ત ? યદિ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને કિ જો આદિ-કરોદિ વિશેષણોવાલે એવં શિવ આદિ વિશેષણ સંપન્ન સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાન પર પહુંચ ચુકે હૈં છદ્દે અગકે યે દો શ્રુતસ્કન્ધ પ્રરૂપિત કિયે હૈં- ૧ જ્ઞાતા ઓર દૂસરા ધર્મકથા-તો ભદન્ત ! પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ જ્ઞાતા કે ઉન શ્રમણભગવાન મહાવીરને કિ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણ વાલે હૈં એવં શિવ આદિ વિશેષણ યુક્ત સ્થાન પર વિરાજમાન હો ચુકે હૈં ઉન્હોને કિતને અધ્ય-યનપ્રરૂપિત કિયે હૈં ? (એવં સ્વત્તુ જંબૂ ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં એગૂણવીસં અજ્ઞયણા પળ્લતા તં જહા ઉચ્ચત્તણાણ ૧ સંઘાહે ૨, અંહે ૩, કુમ્મે ૪, સેલગે ૫, તુવે ૬, ય રોહિણી ૭ મલ્લી ૮ માયંદી ૯, ચંદીમાદ્દય ૧૦ ॥૧॥ દાવદ્દવે ૧૧, ઉદગણાણ ૧૨ મંડુકકે ૧૩, તેયલી ૧૪, ત્રિય । નંદીફલે ૧૫, અચરકંકા ૧૬, આહન્ને ૧૭, સુસમા ૧૮ હય । અચરે ય પુંડરીય ણાયાણ ૧૯

છદ્દસ્સ અંગસ્સ દો સુયવલંબા પળ્લતા તં જહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પઠ-મસ્સ ણં મંતે ! સુયવલંબસ્સ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ્ અજ્ઞયણા પળ્લતા ?) ફરી જંબૂ પૂછે છે કે હે ભદન્ત ? જો શ્રમણ ભગવાન મહાવીર-નેઓ આદિકરોદિ વિશેષણોથી યુક્ત અને શિવ વગેરે વિશેષણોથી સંપન્ન સિદ્ધ ગતિ નામના સ્થાને પહોંચ્યા છે-તેઓએ છઠ્ઠા અંગના આ જો શ્રુતસ્કન્ધ નિરૂપિત કર્યો છે-[૧] જ્ઞાતા અને બીજો ધર્મકથા તો હે ભદન્ત ! પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ જ્ઞાતાના તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર-નેઓ પૂર્વે કહેવામાં આવેલા બધા વિશેષણોથી યુક્ત છે અને શિવ વગેરે વિશેષણ યુક્ત સ્થાને વિરાજમાન થયેલ છે, તેમણે કેટલા અધ્યયનો નિરૂપિત કર્યા છે ? (એવં સ્વત્તુ જંબૂ ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં એગૂણવીસં અજ્ઞયણા પળ્લતા તં જહા ઉચ્ચત્તણાણ ૧, સંઘાહે ૨, અંહે ૩, કુમ્મે ૪, સેલગે ૫, તુવે ૬, ય રોહિણી ૭, મલ્લી ૮, માયંદી ૯, ચંદીમાદ્દય ૧૦ ॥૧॥ દાવદ્દવે ૧૧, ઉદગણાણ ૧૨, મંડુકકે ૧૩, તેયલી ૧૪, ત્રિય । નંદી ફલે ૧૫, અચર-કંકા ૧૬, આહન્ને ૧૭ સુસમા ૧૮, હય । અચરે ય પુંડરીય ણાયાણ ૧૯



(૧) ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાતમ્—મેઘકુમારજીવેન સ્વ હસ્તિભવે દાવદહમાનશશક  
જીવરક્ષાયૈ પાદ ઉત્તિષ્ઠઃ=ઝર્ધ્વાકૃત એવં ધૃત ઇતિ તદુપલક્ષિતમિદં પ્રથમમધ્યયન-  
મુત્તિષ્ઠજ્ઞાતમ્ । જ્ઞાતમિત્યુદાહરમ્—તદેવાધીયમાનત્વાદધ્યયનમ્ । એવમગ્રેડપિ ।

(૨) સંઘાટકઃ—ધન્યશ્રેષ્ઠિ—વિજયતસ્કરયોરેકવન્ધન વદ્ધસ્વાર્થાભિધાયકં  
જ્ઞાતં સંઘાટકજ્ઞાતમ્ ।

૧૧ પગૂળવીસહમે ॥

જંબૂ કે इस पश्चका उत्तर देते हुए श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं—जंजू ?  
अमण भगवान महावीरने जो कि आदिकर आदि विशेषणों से युक्त हैं और  
शिव आदि रूप सिद्धिगति नामक स्थान पर विराजमान हो चुके हैं उन्होंने  
ज्ञाता नामक प्रथम श्रुतस्वंध के इस पवार १० अध्ययन प्ररूपित दिये हैं—  
वे ये हैं—उत्तिष्ठज्ज्ञात१, संघाटक२, अंड३, कूर्म४, शैलक५, तुंव६, रोहिणी७,  
मल्लि८, माकंदी९, चान्द्रिक१०, दावद्रव११, उदकज्ञात१२, मंडूक१३, तेतलि  
१४, नंदिफल१५, अपरकंका१६ आकीर्ण१७ सुंसमा१८, पुंडरीकज्ञात१९।  
ज्ञात शब्द का अर्थ उदाहरण है। उत्तिष्ठज्ज्ञात में यह कहा गया है  
कि मेघकुमार के जीवने जब कि यह हस्ती के भव में था दावाग्नि से  
दहमान (जलता हुआ) एक शशक की रक्षा करने के लिये अपने चरण  
को ऊँचा किया था—सो वह उसे ऊँचा ही किये रहा।

इस उत्तिष्ठ उदाहरण से युक्त होने के कारण इस अध्ययन का नाम  
भी उत्तिष्ठ ज्ञात पड गया है । संघाटकज्ञात में धन्य श्रेष्ठि और विजय

पगूળवीसहमे ।

જંબૂના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં શ્રી સુધર્માસ્વ.મીએ કહ્યું કે—જંબૂ ! અમણ ભગવાન  
મહાવીરે—કે જેઓ આદિકર વગેરે વિશેષણોથી વિશિષ્ટ છે, અને શિવ વગેરેરૂપ સિદ્ધિ ગતિ  
નામના સ્થાને વિરાજમાન થયા છે. તેઓએ જ્ઞાતા નામના પ્રથમશ્રુતના આ રીતે યોગાણીસ  
[૧૬] અધ્યયનો પ્રરૂપિત કર્યા છે, તે આ પ્રમાણે છે:—ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત ૧, સંઘાટક૨, અંડ  
૩ કૂર્મ ૪, શૈલક, ૫, તુંબ ૬, રોહિણી ૭, મલ્લિ ૮, માકંદી ૯, ચાંદ્રિક ૧૦, દાવદ્રવ ૧૧,  
ઉદકજ્ઞાત ૧૨, મંડૂક ૧૩, તેતલિ ૧૪, નંદિફલ ૧૫, અંપરકંકા ૧૬, આકીર્ણ ૧૭,  
સુંસમા ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાત ૧૯, જ્ઞાત શબ્દનો અર્થ ઉદાહરણ છે. ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાતમાં  
એ બતાવવ માં આ બ્યું છે કે મેઘકુમરનો જીવ જ્યારે તે હાથીના ભવ (સ્વરૂપ) માં હતો,  
ત્યારે દાવાગ્નિથી બળતા સસલ ની રક્ષા કરવા માટે પોતાના પગને અદ્ધર કર્યો હતો,  
તે તેને અદ્ધરજ રાખતા રહ્યા.

આ ઉત્તિષ્ઠ ઉદાહરણથી યુક્ત હોવાને કારણે આ અધ્યયનનું નામ પણ  
ઉત્તિષ્ઠ જ્ઞાત પડ્યું છે. ૧, સંઘાટકજ્ઞાતમાં ધન્ય શ્રેષ્ઠી અને વિજય ચોરને લગતી કથા છે,

ધર્મકથાશ્ચ, અનયોઃ શ્રુતસ્કન્ધયોર્મધ્યે પ્રથમસ્ય-જ્ઞાતારૂપસ્ય સ્વલુ ભગવન્ ! શ્રુત-  
સ્કન્ધસ્ય શ્રમણેન યાત્રત્સમ્પાપ્તેન=શાશ્વતસ્થાનમુપગતેન ભગવતા મહાવીરેણ  
જ્ઞાતાનાં કતિ અધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ-કથિતાનિ, એવં પ્રશ્ને કૃતે સુધર્માસ્વામી-  
ઉત્તરમાહ-એવં સ્વલુ જંબૂઃ ! સ્વલુ-નિશ્ચયેન એવમ્=એતન્નામકપ્રથમાશ્રુતસ્કન્ધસ્ય  
एकोनविंशतिरध्ययनानि प्रज्ञपानि, तद्यथा तानि सार्द्धंश्लोकद्वयेन दर्शयति-'उक्त्वि-  
त्तणाए' इत्यादि ।

અંગસ્સ દો સુયવસ્થંધા પળ્લત્તા તંજહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પદમસ્સ ણં-  
ખંતે ! સુયવસ્થંધસ્સ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ્ અજ્ઞયણા પળ્લત્તા ?)  
પુનઃ જંબૂ પૂછતે હૈં મદન્ત ? યદિ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને કિ જો આદિ-  
કરાદિ વિશેષણોવાલે એવં શિવ આદિ વિશેષણ સંપન્ન સિદ્ધિગતિ નામક  
સ્થાન પર પહુંચ ચુકે હૈં છઠ્ઠે અગકે યે દો શ્રુતસ્કંધ પ્રરૂપિત કિયે હૈં-  
૧ જ્ઞાતા ઓર દૂસરા ધર્મકથા-તો મદન્ત ! પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ જ્ઞાતા કે ઉત્ત  
શ્રમણભગવાન મહાવીરને કિ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણ વાલે હૈં એવં શિવ આદિ  
વિશેષણ યુક્ત સ્થાન પર વિરાજમાન હો ચુકે હૈં ઉન્હોને કિતને અધ્ય-  
યનપ્રરૂપિત કિયે હૈં ? (એવં સ્વલુ જંબૂ ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં  
एगुणवीसं अज्झयणा पणत्ता तं जहा उक्त्वित्तणाए १ संव्राडे २, अंडे ३,  
कुम्मे ४, सेलगे ५, तुवे ६, य रोहिणी ७ मल्ली ८ मायंदी ९, चंदीमाइय १०  
॥ १॥ दावद्वे ११, उदगणाए १२ मंडवके १३, तेयली १४, विय । नंदीफले  
१५, अवरकंका १६, आइन्ने १७, सुसमा १८ इय । अवरे य पुंडरीय णायए

છઠ્ઠસ્સ અંગસ્સ દો સુયવસ્થંધા પળ્લત્તા તં જહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પદ-  
મસ્સ ણં ખંતે ! સુયવસ્થંધસ્સ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ્ અજ્ઞયણા  
पणत्ता ?) ફરી જંબૂ પૂછે છે કે હે ભદન્ત ? જે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે-  
જેઓ આદિકરાદિ વિશેષણોથી યુક્ત અને શિવ વગેરે વિશેષણોથી સંપન્ન સિદ્ધ ગતિ  
નામના સ્થાને પહોંચ્યા છે-તેઓએ છઠ્ઠા અંગના આ બે શ્રુતસ્કંધ નિરૂપિત કર્યા છે-[૧] જ્ઞાતા  
અને બીજો ધર્મકથા તો હે ભદન્ત ! પ્રથમ શ્રુતસ્કંધ જ્ઞાતાના તે શ્રમણ ભગવાન  
મહાવીરે-જેઓ પૂર્વે કહેવામાં આવેલા બધા વિશેષણોથી યુક્ત છે અને શિવ વગેરે  
વિશેષણ યુક્ત સ્થાને વિરાજમાન થયેલ છે, તેમણે કેટલા અધ્યયનો નિરૂપિત કર્યા છે ?  
(એવં સ્વલુ જંબૂ ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં एगुणवीसं अज्झयणा पणत्ता तं  
जहा उक्त्वित्तणाए १, संव्राडे २, अंडे ३. कुम्मे ४, सेलगे ५, तुवे ६,  
य रोहिणी ७, मल्ली ८, मायंदी ९. चंदीमाइय १० ॥ १॥ दावद्वे ११  
उदगणाए १२, मंडवके १३. तेयली १४, विय । नंदी फले १५, अवर-  
कंका १६, आइन्ने १७ सुसमा १८, इय । अवरे य पुंडरीय णायए १०

(૧૨) ઉદકજ્ઞાતમ્-ઉદકં=નગરપરિસ્થાજલં, તદુદાહરણેન પુદ્ગલસ્વભાવ  
પ્રતિપાદકત્વાદજ્ઞાતમ્ ઉદકજ્ઞાતમ્ ।

(૧૩) મણ્ઢકઃ-મેકઃ-નન્દમણિકાર શ્રેષ્ઠિજીવઃ, તચ્ચરિત્રોપલક્ષિતં મણ્ઢકજ્ઞાતમ્ ।

(૧૪) તેતલિઃ-તેતલિરિતિ તેતલિપુત્રઃ શ્રુચામાત્રત્વાત્સૂત્રસ્ય, સ કનકસ્થરાજા-  
માત્યઃ, તદુપલક્ષિતં તેતલિજ્ઞાતં તેતલિપુત્રજ્ઞાતમિત્યર્થઃ ।

(૧૫) નન્દિફલમ્-નન્દિફલાભિધાના આપાતભદ્રાઃ પરિણામદારુણાવૃક્ષાઃ,  
તદુદાહરણપ્રતિપાદકમધ્યયનં નન્દિફલજ્ઞાતમ્ ।

(૧૬) અપરકઙ્કા-ધાતકીલ્ખંડ-ભરતક્ષેત્ર રાજધાની, તત્ર પરિહૃતદ્રૌપદ્યા-  
નયનાર્થ કૃષ્ણ વાસુદેવ ગમનરૂપાશ્ચર્યાદિ પ્રરૂપકં જ્ઞાતમ્ અપરકઙ્કાજ્ઞાતમ્ ।

(૧૭) આકીર્ણઃ-આકીર્ણાઃ-કાલિકદ્વીપવર્તિનો જાત્યાશ્વાઃ, તદુદાહરણો-  
પલક્ષિતમ્ આકીર્ણજ્ઞાતમ્ ।

(૧૮) સુંસુમા-સુંસુમાનામ્ની ધન્યશ્રેષ્ઠિદુહિતા, તચ્ચરિત્રવિષયકમધ્યયનં  
સુંસુમાજ્ઞાતમ્ ।

(સ્વાઈ) કે જલ કે દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુદ્ગલ કે સ્વભાવ કા પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા  
હે ૧૨, મંઢકજ્ઞાત મેં નન્દિમણિકારસેઠ કા જીવ જો મંઢક હુઆ થા ઉસકા  
જીવનચરિત્ર કહા ગયા હે ૧૩। તેતલિજ્ઞાત મેં કનકસ્થરાજા કે શ્રમાત્ય  
તેતલિ કા જીવન ચારિત્ર લિખા ગયા હે ૧૪। નન્દીફલજ્ઞાત મેં નન્દિફલ-  
જો દેખને મેં તો વડા સુન્દર હોતા હે પરન્તુ ઉસકા પરિણામ વડા હી  
દારુણ હોતા હે- યદ-ચાત સ્પષ્ટ કી ગઈ હે ૧૫। અપર કંકાજ્ઞાત મેં ધાતકી  
લ્ખંડસ્થ ભરતક્ષેત્ર કી રાજધાની અપરકંકા મેં પરિહૃત દ્રૌપદી કો લાને કે લિયે  
ગયે હુણ કૃષ્ણ વાસુદેવ કા વર્ણન ક્રિયા હે ૧૬। આકીર્ણજ્ઞાત મેં કાલિક  
દ્વીપ મેં રહે હુણ જાત્યશ્વો (જાતિમાન અશ્વો) કા ઉદાહરણ પ્રદર્શિત ક્રિયા  
ગયા હે ૧૭। સુંસુમાજ્ઞાત મેં ધન્ય શ્રેષ્ઠી કી પુત્રી કા ચરિત્ર લિખા ગયા

૧૧, ઉદકજ્ઞાતમાં પરિણા (ખાઈ)ના પાણીના ઉદાહરણ વડે પુદ્ગલના સ્વભાવનું નિરૂ-  
પણ કરવામાં આવ્યું છે. ૧૨ મંઢકજ્ઞાતમાં નન્દિ મણિકાર સેઠનો જીવ જે મેઢક (હેડકે)  
થયો, તેના જીવનની કથા કહેવામાં આવી છે ૧૩, તેતલીજ્ઞાતમાં કનકસ્થ રાજાના  
મંત્રી તેતલીનું જીવન ચરિત્ર લખવામાં આવ્યું છે ૧૪, નન્દીફળજ્ઞાતમાં નન્દીફળ જે  
જોવામાં બહુ જ સારું હોય છે, પણ તેનું પરિણામ બહુ જ ખરાબ હોય છે, આ વાત  
સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. અપરકંકાજ્ઞાતમાં ધાતકી ખંડ ક્ષેત્રની રાજધાની અપરકંકામાં  
પરિહૃત દ્રૌપદીને લાવવા માટે ગયેલા કૃષ્ણ-વાસુદેવનું વર્ણન કરાયું છે ૧૬. આકીર્ણ-  
જ્ઞાતમાં કાલિકદ્વીપમાં રહેતા જાત્યશ્વો (જાતિમાન અશ્વો)નું દૃષ્ટાન્ત બતાવવામાં આવ્યું  
છે ૧૭. સુંસુમાજ્ઞાતમાં ધન્ય શ્રેષ્ઠીની પુત્રીનું ચરિત્ર લખાયું છે. ૧૮. પુંડરીકજ્ઞાતમાં







सर्वभूमियासु लङ्घपञ्चए विद्वणवियारे रजधुरचित्तए यावि होत्था,  
सेणियस्स रन्नो रज्जे च रट्ठं च कोसं च कोट्टागारं वलं च वाहणं च  
पुरं च अंतेउरं च सयमेव समुवेक्खमाणे समुवेक्खमाणे विहरइ।सू, ४।

टीका—‘जइणं भंते !’ इत्यादि । जम्बूस्वामी भगवन्तमार्यसुधर्मस्वामिनं  
पृच्छति—यदि खलु भगवन् ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन ज्ञातानां=ज्ञाताख्य-  
स्य प्रथमश्रुतस्कन्धस्यैकोनविंशतिरध्ययनानि—प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्क्षिप्तज्ञातादीनि  
यावत्=पुण्डरीकज्ञातान्त्वानि च, एतेषु प्रथमस्य खलु भगवन् ! अध्ययनस्य=  
उत्क्षिप्तज्ञाताख्यस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । इति प्रश्ने कृते सति—आर्यसुधर्मास्वामी प्राह—  
एवम्=अमुना प्रकारेण खलु=निश्चयेन हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन्  
समये इहैव=निवासाधारतया प्रत्यक्षाऽऽसन्ने न तु जम्बूद्वीपानामसङ्ख्यतयाऽन्य-

❀ जइणं भंते ! समणेणं जाव इत्यादि ❀

जम्बूस्वामी—आर्य सुधर्मास्वामी से पुनः यह पूछते हैं कि (जाव  
संपत्तेणं समणेणं) आदि करआदि विशेषणों से लेकर—सिद्धिगति को प्राप्त ।  
हुए विशेषणों वाले श्रमण भगवान्—महावीरने (णायाणं एगूणवीसा अज्झ-  
यणा पणत्ता) ज्ञाता नामक—प्रथम श्रुतस्कंध के ये १०, उन्नीस अध्ययन कहे  
हैं (तं जहा) जैसे (उत्तिवत्तणाए जाव पुंडरीएत्तिय) उत्तिवत्तज्ञात से लगाकर—  
पुंडरीकज्ञात तक । तो इनमें (पढमस्स णं भंते । अज्झयणस्स के—अट्टे पणत्ते)  
प्रथम अध्ययन जो उत्तिवत्तज्ञात है उसका क्या अर्थ उन्होंने प्रतिपादित  
किया है । इसप्रकार जम्बूस्वामी का वक्तव्य सुनकर श्री सुधर्मास्वामी उत्तर  
रूप में यह कहते हैं कि—(एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव

“जंबूणं भंते ! समणेणं जाव इत्यादि”

जम्बूस्वामी आर्य सुधर्मास्वामीने इरी आ प्रमाणे पूछे छे डे (जाव संपत्तेणं समणेणं)  
आदि कर आदि विशेषणोधी लछने सिद्धिगतिने प्राप्त करेव विशेषणोवाणा श्रमण  
भगवान् महावीरे (णायाणं एगूणवीसा अज्झयणा पणत्ता) ज्ञाता नामना प्रथम  
श्रुतस्कंधना ओ ओगणीअ (१८) अध्ययनो कह्यां छे. (तं जहा) जेभ डे  
(उत्तिवत्तणाए जावपुंडरीएत्तिय) उत्तिवत्तज्ञातथी लछने पुंडरीकज्ञात सुधी तो  
जेभनामां (पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स के अट्टे पणत्ते) प्रथम अध्ययन जे  
उत्तिवत्तज्ञात छे, तेना ओ अर्थ तेओओ जताओओ छे ? आ रीते जम्बूस्वामीना  
वचनो आंखणीने श्री सुधर्मास्वामी उत्तरमां आं प्रमाणे छे डे छे डे—(एवं खलु  
जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं जंबू दीवे दीवे भारहे वासे दाहिणड्ढे भ.हे

अपरं च अन्यत्—एकोनविंशतितमं—

(१९) पुण्डरीकज्ञातम्—पुण्डरीकः=पुष्कलावतीविजयमध्यवर्त्तिपुण्डरीकिणी नगर्यामेतन्नामको राजा, तद्वक्तव्यता प्रतिबद्धत्वादिदं पुण्डरीकज्ञातम् ।

इत्थं सङ्कलनया प्रथमश्रुतस्कन्धे ज्ञातानामके एकोनविंशतिसंख्यकानि ज्ञातानि—उत्क्षिप्तादीनि सन्ति ॥मू० ३॥

मूलम्—जड़णं भंते समणेणं जाव संपत्तेणं एगूणवीसा अज्झ यणा पणत्ता तं जहो—उक्खित्तणाए जाव पुंडरीए त्ति य, पढमस्स णं भंते अज्झयणस्स के अट्टे पन्नत्ते ? एवं खलु जंवू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुदीवे दीवे भारहे वासे दाहिणवट्ठे भरहे राय-गिहे णामं नयरे होत्था वण्णओ, गुणसिलए चेइए वन्नओ । तत्थणं रायगिहे नयरे सेणिए नामं राया होत्था, महयाहिमवंतं वण्णओ । तस्स णं सेणियस्स रन्नो नंदा नामं देवी होत्था सुकुमालपाणिपाया वण्णओ ।

तस्स णं सेणियस्स रन्नो पुत्ते नंदाए देवीए अत्तए अभए नामं कुमारे होत्था, अहीण जाव सुरूवे साम—दंड—भेय—उवप्पयाणणीति—सुप्पउत्तणयविहिन्नू ईहा—वूह—मग्गण—गवेसण—अत्थसत्थ—मइविसारए उप्पत्तियाए वेणइयाए कम्मियाए पारिणा-मियाए चउव्विहाए बुद्धिए उव्वेए सेणियस्स रण्णो बहुसु कज्जेसु य कुडुंवेसु य मंतेसु य गुज्जेसु य रहस्सेसु य निच्छएसु य आपु-च्छणिजे पडिपुच्छणिजे मेढीपमाणं आहारे आलंवणं चक्खू मेढी-भूए पमाणभूए आहारभूए आलंवणभूए चक्खूभूए सच्चकज्जेसु

है १८। पुण्डरीकज्ञात में पुष्कलावती विजय के मध्य में रही हुई पुण्डरी किणी नान की नगरी में पुंडरीक राजा की कथा दिखलाई गई है १९ ॥३॥

पुष्कलावती विजयना मध्यमां आवेली पुंडरीकिणी नामनी नगरीमां पुंडरीक राजनी इथा ज्ञातव्यामां आवी छे १८. ॥३॥

પર્વતઃ ક્ષુદ્રહિમવત્પર્વતાપેક્ષયા-ઉચ્ચત્વાયામોદ્દેધ (ગામ્ભીર્ય) વિષ્કંભપરિક્ષેપાદિના  
રત્નમયપદ્મવરવેદિકા નાનામણિરત્નમયકૂટ=રત્નરત્નશ્રેણિપ્રભૃતિના ક્ષેત્રમર્યાદાકા-  
રિત્વેન ચ મહાન્ તથા શ્રેણિકભૂષોડપિ શેષરાજાપેક્ષયા જાતિકુલનીતિન્યાયાદિના  
વિપુલધનકનકરત્નમણિમૌક્તિકશક્તિશિલામવાલ-રાજ્યરાષ્ટ્રવલવાહનકોશકોષ્ઠાગા-  
રાદિના જાતિકુલધર્મમર્યાદાકારિત્વેન ચ મહાન્ વરીવર્તિ, તથા-સર્વજનમનોમોદક-  
તથા વિસ્તૃતયશઃ કીર્તિરૂપસુગન્ધતથા ચ મહામલયવત્, ઔદાર્ય-ધૈર્ય-ગામ્ભી-  
ર્યાદિગુણૈર્મન્દરવત્, ભૂપટ્ટન્દે દિવ્યર્દિ-દિવ્યશ્રુતિ-દિવ્યપ્રભાવાદિભિર્મહેન્દ્રવત્

કે-જેસા શ્રેષ્ઠ થા । જેસે મહા હિમવાન પર્વત અન્ય છોટે ૨ પર્વતોંકી  
અપેક્ષા ઉચ્ચતા આયામ (દીર્ઘતા) एवं ઉદ્દેધ (ગામ્ભીર્ય) તથા વિષ્કંભ  
ઔર પરિક્ષેપ આદિ દ્વારા રત્નમય પદ્મ કી ધરવેદિકાદ્વારા નાનામણિ મય  
एवं, રત્નમય કૂટોં દ્વારા તથા કલ્પવૃક્ષોંકી પંક્તિયોંદ્વારા ક્ષેત્ર કી મર્યાદા-  
કારી હોને સે મહાન્ માના જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર શ્રેણિક રાજા બી અન્ય  
રાજાઓં કી-અપેક્ષા, જાતિ, કુલ નીતિ, ન્યાય આદિદ્વારા વિપુલ ધન,  
કનક, રત્ન, મણિ મૌક્તિક, શંખ શિલા-પ્રવાલ દ્વારા, રાજ્ય, રાષ્ટ્રવલ,  
વાહન કોશ, કોષ્ઠાગાર આદિ દ્વારા, જાતિ કુલ, ધર્મ કી મર્યાદા કરનેવાલા  
હોને સે મહા હિમવાન જેસા કહા ગયા હૈ । સમસ્તજનતા કે મન કો પ્રમદ્ધ  
કરનેવાલા હોનેસે તથા વિસ્તૃત યશઃ एवं કીર્તિરૂપ સુગંધિવાલા હોનેસે  
મહામલય કી તરહ વહ શ્રેષ્ઠ માના ગયા હૈ ।—ઔદાર્ય ધૈર્ય તથા ગાંભીર્ય  
આદિ ગુણોં સે યુક્ત હોને કે કારણ વહ-રાજા મન્દર કી તરહ ઉત્તમ કહા

જેવા શ્રેષ્ઠ હતા. જેમ મહાન્ હિમવાન પર્વત બીજા નાના પર્વતોની અપેક્ષા ઉચ્ચતા  
આયામ (દીર્ઘતા) ઉદ્દેધ (ગાંભીરતા) તેમજ વિષ્કંભ અને પરિક્ષેપ વડે રત્નમય પદ્મની  
ઉત્તમ વેદિકાવડે અનેક મણિમય અને રત્નમય કૂટો (શિખરો) વડે, તેમજ કલ્પવૃક્ષની  
હારમાળાઓ વડે ક્ષેત્રની મર્યાદા કરનાર હોવાથી મહાન્ માનવામાં આવે છે, તેમજ  
શ્રણિક રાજા પણ બીજા રાજાઓ કરતાં જાતિ, કુળ, નીતિ ન્યાય વગેરે વડે પુષ્કળ  
ધન, કનક, રત્ન, મણિ, મૌક્તિક, શંખ, શિલા પ્રવાલવડે રાજ્ય, રાષ્ટ્ર, બળ, વાહન,  
કોશ, કોષ્ઠાગારવડે જાતિકુળ અને ધર્મની મર્યાદા કરનાર હોવાથી મહા હિમવાન  
જેવા કહેવામાં આવ્યા છે. સંપૂર્ણ જનસમાજના મનને પ્રસન્ન કરનાર હોવાથી  
તેમજ વિસ્તૃત યશઃ અને કીર્તિરૂપ સુગંધિવાળા હોવાથી મહા મલયની જેમ તેમને  
શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવ્યા છે. ઉદારતા ધીરજ, તેમજ ગાંભીરતા વગેરે ગુણોથી સંપન્ન  
હોવાને લીધે તે રાજાને મેરુપર્વતની જેમ ઉત્તમ કહેવામાં આવ્યા છે. રાજાઓના



સ્મિન્ જમ્બૂદ્વીપે, જમ્બૂદ્વીપનામકે દ્વીપે ભારતે=ભારતનામકે વર્ષે=ક્ષેત્રે દક્ષિણા-  
ર્ધભરતે ભરતક્ષેત્રસ્ય દક્ષિણાર્ધે રાજગૃહં નામકં નગરમાસીત્, 'વણ્ણઓ' વર્ણકઃ=વર્ણન-  
ગ્રન્થોઽવ વક્તવ્યઃ, સ ચ ચમ્પાવર્ણનાત્મકઔપપાતિકસૂત્રં વર્તતે, સોઽવ નપુંસકલિ-  
ટ્ત્વનિર્દેશેન દ્રષ્ટવ્યઃ, વ્યાખ્યાતોઽપ્યસૌ તસ્ય પીયૂષવર્ષિણ્યાં ટીકાયાં મયેતિ । ગુણ-  
શિલકં ચૈત્યમ્ વર્ણકઃ=ઔપપાતિકસૂત્રકૃતવર્ણનવદેવાત્રજ્ઞાતવ્યઃ । તદ્વ ચ્છલુ રાજગૃહે  
નગરે શ્રેણિકો નામ રાજાઽઽસીત્ । સ કીદશઃ ? इत्यत्राह—'महयाहिमवंत०' इत्यनेन  
'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिदसारे' इत्येवं विज्ञेयम् महाहिमवन्महामलय-  
मन्दरमहेन्द्रसारः=तत्र महाहिमवानिव=एतन्नामकवर्षधरपर्वतइव, यथा महाहिमवान्

જંબુદ્વીપે દ્વીપે-ભારતે વાસે દાહિણર્ધભરતે રાયગિહે ણામં નયરે હોત્યા) જંબૂ ।  
તુમ્હારે પ્રશ્ન કા ઉત્તર હસ પ્રકાર હૈ-ઉસકાલ મેં ઓર ઉસ સમય મેં ઇસી  
જંબૂ દ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં ભરત નામ કા ક્ષેત્ર હૈ । ઇસ ભરત ક્ષેત્ર કે દક્ષિ-  
ણાર્ધ મેં રાજગૃહ નામકા નગર થા । યહાં જો (વણ્ણઓ) યહ પદ આગ્યા હૈ  
ઉસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ચમ્પાનગરી કા જૈસા વર્ણન  
કિયા ગયા હૈ જૈસા હી વર્ણન ઇસ રાજગૃહ નગર કા મી જાનનાં ચાહિયે ।

ઉસ વર્ણનકા અનુવાદ ઔપપાતિક સૂત્રકી પીયૂષવર્ષિણી નામકી ટીકા મેં  
કર દિયાં હૈ । જિજ્ઞાસુઓં કો વહાં સે યહ વિષય સમજ લેનાં ચાહિયે । (ગુણ  
સિલ્લુ ચેટ્ટુ વણ્ણઓ) ઉસ નગર મેં ગુણ શિલક નામકા-ચૈત્ય થા । ઇસકા  
વર્ણન મી ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ વહાં સે જાન લેનાં ચાહિયે ।  
(તત્થ ણં રાયગિહે નયરે સેણિય નામં રાયા હોત્યા મહયા હિમવંત વણ્ણઓ) ઉસ  
રાજગૃહ નામ નગર મેં શ્રેણિક ઇસ નામ કા રાજા રાજ્ય કરતા થા । યહ મહાં  
હિમવાન પર્વત-જૈસા મહામલય પર્વત જૈસા, મંદરાચલ જૈસા, ઓર મહેન્દ્ર

રાયગિહે ણામં નયરે હોત્યા) જંબૂ! તમારા પ્રશ્નનો જવાબ આ પ્રમાણે છે-તે  
કાળે અને તે વખતે એજ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ભરત નામે ક્ષેત્ર હતું. આ  
ક્ષેત્રના દક્ષિણાર્ધમાં રાજગૃહ નામે નગર હતું. અહીં જે (વણ્ણઓ) આ પદ આવ્યું  
છે. તેનો અભિપ્રાય આ પ્રમાણે છે કે ઔપપાતિક સૂત્રમાં ચંપાનગરીનું જેવું વર્ણન  
કરવામાં આવ્યું છે, તેવું જ વર્ણન આ રાજગૃહ નગરનું પણ સમજવું જોઈએ.

તે વર્ણનનો અનુવાદ પીયૂષવર્ષિણી નામની ટીકામાં કરવામાં આવ્યો છે. જિજ્ઞા-  
સુઓએ ત્યાંથી આ વિષયને સમજવો જોઈએ. (ગુણસિલ્લુ ચેટ્ટુ વણ્ણઓ) તે નગરમાં  
ગુણશિલક નામે ચૈત્ય હતું. આનું વર્ણન પણ ઔપપાતિક સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે.  
ત્યાંથી જાણવું જોઈએ. (તત્થ ણં રાયગિહે નયરે સેણિય નામં રાયા હોત્યા મહયા  
હિમવંત વણ્ણઓ) તે રાજગૃહ નગરમાં શ્રેણિક નામે રાજા રાજ્ય કરતા હતા. તે  
મહા હિમાલય પર્વતના જેવા મહામલય પર્વત જેવા, મંદરાચલ જેવા અને મહેન્દ્રના



લક્ષણ-વંજનગુણોચ્ચે, માણુમ્માણપ્રમાણપડિપુણમુજાતસર્વાંગસુદરંગે, સસિ-  
સોમાકારે, કંતે, પિયદંસણે મુસ્તે' ઇતિ સંગ્રહઃ । વ્યાખ્યા-અહીનપ્રતિપૂર્ણપદ્મે-  
ન્દ્રિયશરીરઃ- અહીનાનિ=લક્ષણતોડન્યૂનાનિ પ્રતિપૂર્ણાનિ=સ્વરૂપતોડસ્વણ્ડિતાનિ  
પદ્માવીન્દ્રિયાણિ યસ્મિન્ તત્તથાવિધં શરીરં યસ્ય સ તથોક્તઃ । લક્ષણવ્યજ્ઞનગુણો-  
પપેતઃ-લક્ષણાનિ=સ્વસ્તિકચક્રચમત્સ્યાદીનિ, વ્યજ્ઞનાનિ=મપતિલાદીનિ,  
તેષાં ગુણઃ=પ્રશસ્તત્વરૂપાસ્તૈઃ ઉપપેતઃ=યુક્તઃ । અત્ર-'ઉપ' 'અપ' અનયોરુપ-  
સર્ગધોઃ શકન્વાદિત્વાત્પરરૂપે 'ઉપપેતઃ' અનયોર્ગુણે 'ઉપપેતઃ' ઇતિ સિદ્ધમ્ ।  
માનોન્માનપ્રમાણપ્રતિપૂર્ણમુજાતસર્વાંગસુન્દરાદ્ધઃ-અત્ર માનં=જલેન પરિપૂર્ણં કુણ્ડે  
યસ્મિન્ પુરુષે પ્રવિષ્ટે સતિ યજ્જલં કુણ્ડાદ્વદિર્નિસ્સરતિ તજ્જલં યદિ દ્રોણપરિ-  
માણં ભવતિ તદા તસ્ય શરીરાવગાહના માનમુચ્યતે । તુલાદણ્ડેન સન્તુલિતઃ  
પુરુષો યદ્યર્ધભારપરિમાણો ભવતિ તદા તસ્ય અર્ધભારપરિમાણમ્ ઉન્માનમુચ્યતે ।  
સ્વાર્જુલેનાપ્ટોત્તરશતોન્નતતા પ્રમાણં કથ્યતે તતઃ-માનં ચ ઉન્માનં ચ પ્રમાણં  
ચ માનોન્માનપ્રમાણાનિ, તૈઃ પ્રતિપૂર્ણાનિ મુજાતાનિ સર્વાંગાણિ, તૈઃ  
સુન્દરાદ્ધઃ-સર્વથા પ્રમાણપ્રતિપૂર્ણમુજાતતથા સર્વાંગીણ સુન્દર ઇતિ ભાવઃ । 'સસિ-

તથા સ્વરૂપ સે પરિપૂર્ણ પાંચો હિન્દ્રિયો સે યુક્ત થા ।' લક્ષણો-સ્વસ્તિક-ચક્ર  
ચવ એવં મત્સ્ય આદિ કે ચિહ્નો-સે-તથા મપા તિલ-આદિરૂપ વ્યજ્ઞનો સે  
મરપૂર થા । 'માન' 'ઉન્માન', તથા 'પ્રમાણ' સે શરીર કા પ્રત્યેક અવયવ

આવ્યો છે કે એમનું શરીર લક્ષણોથી અન્યૂન (અંપૂર્ણ) તેમજ સ્વરૂપ (સૌંદર્ય)થી  
પરિપૂર્ણ પાંચે હિન્દ્રિયોથી યુક્ત હતું. લક્ષણો-સ્વસ્તિક ચક્ર, ચવ અને મત્સ્ય વગેરે  
ચિહ્નોથી તેમજ મપાતિલ વગેરે વ્યજ્ઞનોથી અંપૂર્ણ રીતે ભરેલું હતું. માન, (૧)  
ઉન્માન, (૨) તેમજ પ્રમાણવડે (૩) શરીરનો દરેકે દરેક અવયવ પરિપૂર્ણ હતો.

(૧) જલ સે પરિપૂર્ણ ભરે હુણ કુણ્ડ મેં મનુષ્ય કો વૈઠાને પર ઉસ  
કુણ્ડ સે જિતના પાની વાહર-નિકલ આતા હૈ વહ પાની નૌલને પર યદિ  
એક દ્રોણ પ્રમાણ હોતા હૈ તો વહ જલ ઉસ પુરુષ કી શરીરાવગાહના કા  
માન માના જાતા હૈ । (૨) તરાજૂ પર સન્તુલિત હોને પર પુરુષ કા જો અર્ધ  
માર હોગા વહ ઉન્માન માના જાવેગા । (૩) ૧૦૮ અંગુલ કી જો ઝંચાઈ હોતી

વિશેષઃ-(૧) પાણીથી પૂર્ણ ભરેલ કુંડમાં માણસને બેસાડ્યા પછી તે કુંડમાંથી  
બેટલું પાણી બહાર નિકળી આવે છે, તે પાણીને બે તોલવામાં આવે, અને તે એક  
દ્રોણ પ્રમાણ તોલમાં ઉતરે તો તે પાણીને તે પુરુષની શરીરાવગાહનાનું 'માન' માન-  
વામાં આવે છે.

(૨) ત્રાજવા ઉપર તોલવામાં પુરુષનું જે અર્ધું વજન થાય તેને 'ઉન્માન' માનવામાં આવે છે.

(૩) એકસો આઠ (૧૦૮) આંગળીની જે બિંચાઈ હોય છે તેને 'પ્રમાણ' કહેવામાં આવે છે.

સારઃ=શ્રેષ્ઠઃ, इत्यादि । ‘वर्णओ’ वर्णकः=भूषणवर्णनप्रकरणमीपपातिकमृत्राद् विज्ञेयम्, तस्य खलु श्रेणिकस्य राज्ञः नन्दानाम्नी देव्यासीत् । सा कीदृशी ? इत्यत्राह-‘सुकुमालपाणिपाया’ सुकुमारपाणिपादा=पाणी च पादौ च पाणिपादं= कस्चरणं, सुकुमारम्=अतिकोमलं पाणिपादं यस्याः सा तथोक्ता=अतिकोमलकर- चरणवतीत्यर्थः, ‘वर्णओ’ वर्णकः=राज्ञीवर्णन औपपातिकमृत्रादवसेयम् ।

तस्य खलु श्रेणिकस्य पुत्रः ‘नन्दाए देवीए अत्तए’ नन्दाया देव्या आत्मजः= तद्गर्भज इत्यर्थः अभयनामा कुमारऽआसीत् । स कीदृशः ? इत्याह-‘अहीण जाव सुखे’ अहीन यावत्सुखः, भवत्ययावच्छब्देन-‘अहीणपडिपुण्णपंचिदियसरीरे,

गया है । राजाओं के समूह में दिव्यक्रुद्धि, दिव्यद्युति, तथा दिव्यप्रभाव आदिद्वारा वह महेन्द्रकी तरह उत्तम प्रकट किया गया है । यहां पर भी जो यह “वर्णओ” शब्द आया है वह यह प्रकट करता है कि इस राजा- के विषय में और भी अधिक वर्णन अन्य ग्रन्थों में किया गया है, सो वह वर्णन औपपातिक सूत्र से जाना जा सकता है ।

(तस्स णं सेणियस्स रन्नो नन्दा नामं देवी होत्था सुकुमार पाणिपाया वर्णओ) उस श्रेણિક राजा की रानी का नाम नन्दा था । इसके हाथ पाँव बहुत ही सुकुमार थे । यह कितनी-अधिक सुन्दर थी-और किस स्वभाव आदि की थी यह सब विषय का वर्णन औपपातिक सूत्र में दिया गया है । (तस्स णं सेणियस्सरन्नो पुत्ते नन्दाए अत्तए अभयनामं कुमारे होत्था) उस श्रेણિક राजा के एक पुत्र था जिसका नाम अभयकुमार था । यह नन्दा-देवी की कुक्षि से अवतरित हुआ था । (अहीण जाव सुखे) यहां यावत् शब्द से यह पाठ-ग्रहीत हुआ है-इसका शरीर लक्षण से अन्यून

અમૂઢમાં દિવ્યક્રુદ્ધિ, દિવ્યદ્યુતિ તેમજ દિવ્યપ્રભાવ વગેરેથી તેને મહેન્દ્રની જેમ ઉત્તમ બતાવવામાં આવ્યા છે. અહીં પણ જે ‘વર્ણઓ’ શબ્દ આવ્યો છે, તે આમ બતાવે છે કે આ રાજાના વિષે એના કરતાં બીજું વધુ વર્ણન બીજા શાસ્ત્રોમાં કરવામાં આવ્યું છે. માટે તે વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રવડે સમજી શકાય છે.

તસ્સ ણં સેણિયસ્સ રન્નો નન્દા નામં દેવી હોત્થા સુકુમાર પાણિપાયા વર્ણઓ) તે શ્રેણિક રાજાની રાણીનું નામ નન્દા હતું. તેના હાથપગ બહુ જ સુકોમળ હતા. તે કેટલી બધી રૂપવતી હતી તેનો સ્વભાવ વગેરે કેવો હતો, આ બતના બધા વિષયોનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં આપવામાં આવ્યું છે. (તસ્સ ણં સેણિય- સ્સ રન્નો પુત્તે નન્દાણ દેવીણ અત્તણ અભયનામં કુમારે હોત્થા) તે શ્રેણિક રાજાના એક પુત્ર હતા. તેનું નામ અભયકુમાર હતું. તે નન્દાદેવીની રૂપમાંથી અવ- તર્યા હતા. (અહીં જાવ સુખે) અહીં યાવત્ શબ્દથી એ પાઠ ગ્રહણ કરવામાં

કોપાદ્યપહરણેન વા. શત્રોરનુશાસનમ્ । મેદઃ=શત્રુપક્ષે સ્નેહાપનયનપુરસ્સરં સ્વામિ  
સેવકયોશ્ચિત્તમેદકરણં, સ ત્રિવિધઃ, ।

ઉક્તચ્ચ-“પરોપ્પરં ણેહમંગો, કલ્હુપ્પાયણં તદ્દા ।

તજ્જણં સત્તુપક્કસેસુ, મેયણીઈ પકિત્તિયા ॥૧” ઇતિ ।

અર્થ છાયા-પરસ્પરં સ્નેહમદ્ગઃ, કલહોત્પાદન તથા ।

તર્જનં શત્રુપક્ષેષુ, મેદનીતિઃ પ્રકીર્તિતા ॥૧॥ ઇતિ ।

ઉપપ્રદાનમ્=પૂર્વગૃહીતવસ્તુપ્રતિપ્રદાનમ્, અભિમતાર્થદાનં વા, એતદ્વૃષ્ટા ચતુર્વિધા  
નીતિઃ-નીયતે=સ્વાનુકૂલ્યં પ્રાપ્યતે રિપુરનયેતિ સા તથોક્તા તયા સામાદિ ચતુ-  
ર્વિધયા નીત્યા મુ=મૃષ્ટુ પ્રયુક્તં=પયોગો વ્યાપારો-યત્ર સ મુપ્રયુક્તઃ, એતાદૃશો નયઃ=  
ન્યાયસ્તસ્ય વિધિઃ=વિધાનં, તં જાનાતીતિ સ તથોક્તઃ-યથાયોગ્યનીતિન્યાય  
કુશલ ઇત્યર્થઃ । નીતિ પ્રયોગો યથા-‘ઉત્તમં પ્રણિપાતેન, શૂરં મેદેન યોજયેત્ ।

‘પરોપ્પરં ણેહમંગો, કલ્હુપ્પાયણં તદ્દા ।’

તજ્જણં સત્તુપક્કસેસુ “મેયણીઈ પકિત્તિયા ॥૧॥

શત્રુ પક્ષમે સ્વામી સેવકમે સ્નેહ કો મંગ કરવાના ઉનમે આપસમે  
લડાઈ ઈગડા કરવા, દેના-એવં પરસ્પર મે તર્જન-હાટ-હપટ-આદિ  
કરવાના । પૂર્વમે ગૃહીત કી હુઈ વસ્તુ કા દેના અથવા અભિમત  
અર્થકા દેના હસે કા નામ ઉપપ્રદાન હે સામ, દંડ મેદ એવં ઉપપ્રદાન  
હસે તરહ ૪ ચાર પ્રકારે કી નીતિ કે પ્રયોગરૂપ ન્યાય કે વિધાનમેં યહ અમય-  
કુમાર નિષ્ણાત ધ્યા-યથા યોગ્યનીતિ ન્યાય મે કુશલ યા-નીતિ કા  
પ્રયોગ હસે પ્રકાર કહા ગયા હે-(ઉચ્ચમં પ્રણિપાતેન) ઉત્તમ જનકો યદિ

સ્નેહભાવ હોય છે, તેમાં ફૂટ પાડવી, તેમના મનમાં એવી વાત ઠસાવવી કે જેથી બન્ને  
એક બીજાનો વિશ્વાસ ન કરે, તેનું નામ ભેદ-નીતી છે. આ ભેદ નીતિ ત્રણ પ્રકારની  
બતાવવામાં આવી છે.

પરોપ્પરં ણેહમંગો, કલ્હુપ્પાયણં તદ્દા ।

તજ્જણં સત્તુપક્કસેસુ મેયણીઈ પકિત્તિયા ॥૧॥”

શત્રુપક્ષમાં સ્વામી સેવકના સ્નેહમાં ફૂટ પડાવવી, તેમનામાં પરસ્પર કલહ કરાવવો અને  
પરસ્પર તર્જન (તિરસ્કાર) દમદાટી વગેરે કરાવવાં. પૂર્વે કોઈ પાસેથી લીધેલ પદાર્થને  
આપવો અથવા અભિમત (છિદ્ર) અર્થને આપવો તેનું નામ ઉપપ્રદાન છે. સામ, દંડ,  
ભેદ અને ઉપપ્રદાન આ પ્રમાણે ચાર પ્રકારની નીતિનો પ્રયોગ કરતાં ન્યાય આપવામાં  
અમયકુમાર નિષ્ણાત હતા. નીતિના સમુચિત માર્ગને અનુસરતાં ન્યાય આપવામાં તે  
કુશળ હતા. નીતિનો યથાયોગ્ય વ્યવહાર આ રીતે બતાવવામાં આવ્યો છે:- ‘ઉત્તમં  
પ્રણિપાતેન, સારા માણસને વશ કરવો હોય તો તેની સામે નમ્ર થઈને વર્તન



સોમાગારે' શશિસૌમ્યાકાર:-શશી=ચન્દ્રસ્તદ્વત્ સૌમ્ય:=રમણીય:, આકાર:=  
સ્વરૂપં यस્ય સ તથોક્તઃ । 'કંતે' કાન્ત:=કમનીયઃ । 'પિયદંસણે' પ્રિયદર્શન:-  
પ્રિયં=દર્શકજનમનોહલાદકં દર્શનમ્=અવલોકનં यस્ય સ તથોક્તઃ । 'સુરુવે'  
સુરૂપ:=સર્વાતિશાયિરૂપલાવણ્યવાન્ । 'સામદંડભેદઉવપ્પયાણનીઠ્ઠુપ્પઉત્તણ-  
યવિહિણ્ણુ' સામદંડભેદોપપદાનનીતિ સુપયુક્તનયવિધિજ્ઞ:-તત્ર સામ='વયં યુપ્પા-  
કં યૂયમસ્માકં કો ભેદોઽસ્માકમ્' इत्यादि मधुरवाक्यैः शत्रुपक्षवशीकरणम्, दण्डः  
दण्डयते-धनाद्यपहरणेन निस्सारी क्रियते जनो येन स तथोक्तः=क्लेशोत्पादेन

परिपूर्ण था । चंद्रमाके जैसा इसका सौम्य आकार था । देखने वालों को  
यह बहुत अधिक प्रिय लगता था । कमनीय था । रूप लावण्य  
इसके प्रत्येक अंग से टपकसा रहा था ।

यहाँ “अहीणजावसुरुवे” में जो यावत् पद रखा है-उस से इस  
पाठ का यहाँ ग्रहण किया गया है-अहीणपडिपुण्ण-पंचेन्द्रियसरीरे  
लक्खणवज्जनगुणोववेए, माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्ण -सुजायसव्वंगसुदरंगे,  
ससिसोमागारे, कंते, पियदंसणे सुरुवे । (सामदंडभेदउवप्पयाणणी-  
तिसुप्पउत्तणयविहिन्नु ईहा-बृहमग्गण-गवेसणअत्थसत्थमइविसामए) हम  
आपके हैं आप हमारे हैं हम में और आप में कोई भेद नहीं है इत्यादिमधुर वचनों  
द्वाराशत्रुपक्ष को वश में करना यह साम उपाय है, क्लेश उत्पन्न करके अथवा  
काप आदि का अपहरण करके शत्रु को वश में करना-या उसे विलकुलकम-  
जोर बना देना यह दण्डनीति है, शत्रु पक्ष के स्वामी-तथा सेवक में जो  
परस्पर में स्नेह होता है उसमें भेद करना-उनके चित्त में ऐसी बात  
जमा देना कि जिससे दोनों आपसमें एक दूसरे का विश्वास न कर  
सके इसका नाम भेदनीति है । यह भेदनीति ३ तीन प्रकार की कही गई है-

ચન્દ્રના જેવો એમનો સૌમ્ય આકાર હતો. જોનારને એ બહુજ વધારે ગમતો હતો.  
એ કમનીય હતા. ૩૫ અને લાવણ્ય એમના દરેકે દરેક અંગમાંથી નીતરતું હતું.

અહીં 'અહીણ જાવ સુરુવે' માં જે યાવત્ પદ મુક્યામાં આવ્યું છે, તેનાથી  
આ પાઠનું અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે-અહીણપડિપુણ્ણપંચેન્દ્રિયસરીરે  
લક્કણવજ્જનગુણોવવેए माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुदरंगे  
ससिसोमागारे, कंते, पियदंसणे सुरुवे ।" सामदंडभेदउवप्पयाण  
णीतिसुप्पउत्तणयविहिन्नु ईहा बृहमग्गणगवेसणअत्थसत्थमइविसामए)  
અમે તમારા છીએ; તમે અમારા છો; આપણામાં કોઈ પણ બાતનો ભેદ નથી, વગેરે  
મીઠા વચનોથી શત્રુપક્ષને વશ કરવો આ સામ ઉપાય છે. પીડિત કરીને અથવા તે  
ધન-ભંડારનું હરણ કરીને દુશ્મન ઉપર ક્રાધૂ ભેગાવવો અગરતો તેને આવ નિર્ગળ  
બનાવવો આ દણ્ડનીતિ છે. શત્રુપક્ષના સ્વામી તેમજ સેવકમાં જે એક બીજા તરફ

हे वह प्रमाण कही गई है ।



અપોહ:-અપોહ્યતે=નિવાર્યતે સ્વાકારાદ્વિપરીત આકારોઽનેનેતિ સ તથોક્તઃ=નિજા-  
કારનિર્ણયજ્ઞાનં યથા-‘સ્થાણુરેવાય’ મિતિ। માર્ગણ-માર્ગ્યતે=અન્વિષ્યતે વસ્ત્વ-  
નેનેતિ તત્તથોક્તમ્=અપોહાગ્રે સદ્ભૂતાર્થવિશેષજ્ઞાનાભિમુખમેવ ‘તત્સત્ત્વે તત્સ-  
ત્ત્વમન્વયઃ’ इत्यन्वयधर्मान्वेषणं, યથા વલ્લીલતાધારોહણં સ્થાણુધર્મં ઇવાત્ર ઘટતે  
इति। સ્થાણુમેવાશ્રિત્ય વલ્લીલતાધારોહણં ભવતિ, અતઃસ્થાણુ ધર્મત્વેન વલ્લીલતા-  
ધારોહણં વ્યપદિશ્યતે। ગવેષણ-ગવેષ્યતે=વિશેષતો નિશ્ચીયતે વસ્ત્વનેનેતિ તત્ત-

“इसी का नाम संशय है। इस संशयके होने पर यह स्थाणु होना चाहिये  
अथवा पुष्प होना चाहिये इसतरह किसी एक तरफ झुकती हुई जो  
बुद्धि की चेष्टा होती है यही ईहा है।

ईहा के बाद जो विशेष ज्ञान होता है उसका नाम अवाय है-  
अपोह है-। अपने आकार से विपरीत आकार जहां दूर किया जाता है  
वह ‘अपोह’ है ऐसी अपोह शब्द की व्युत्पत्ति है। जैसे जब यह  
बोध हुआ कि यह स्थाणु होना चाहिये तब ऐसा जो बोध  
होता है कि यह स्थाणु ही है इसी का नाम अपोह है मार्गण शब्द  
का अर्थ होता है-अन्वेषण-यह स्थाणु ही है ऐसा जो अपोह नामक  
बोध हो रहा है वह इस वान को लेकर हो रहा है कि यहाँ पर वल्ली  
आरोहण आदि जो स्थाणुगत धर्म है वे ही घटित हो रहे हैं। इसी का  
नाम अन्वय है ‘तत्सत्त्वे तत्सत्त्वमन्वयः’ यह अन्वय का लक्षण है। स्थाणु  
को अश्रित करके ही वल्ली लता आदि का वहाँ आरोहण होता है-  
इसलिये ये स्थाणु के धर्म तरी के प्रकट किये जाते हैं। मार्गणा में अन्वय  
धर्म की पर्यालोचना होती है। गवेषणा में व्यतिरेक धर्म का विचार चलता

આ પ્રમાણે કેમ એક તરફ વળતી બુદ્ધિની ચેષ્ટા થાય છે, તેનું નામ ઇહા છે.

ઇહા પછી જે વિશેષજ્ઞાન હોય તેનું નામ અવાય છે-અપોહ-છે. પોતાના  
આકારથી ભિન્ન આકારને જ્યાં દૂર કરવામાં આવે તેને અપોહ કહે છે. એ રીતે અપોહ શબ્દની  
વ્યુત્પત્તિ છે. દા. ત. જ્યારે એ જ્ઞાન થયું કે આ સ્થાણુ (કુંડ) હોવું જોઈએ. ત્યારે  
એવું નિશ્ચયરૂપે જે જ્ઞાન થાય છે કે આ સ્થાણુ (કુંડ) જ છે, આનું જ નામ અપોહ છે.  
માર્ગણ શબ્દનો અર્થ ‘અન્વેષણ’ થાય છે. આ સ્થાણું જ છે, આ પ્રકારનું અપોહ  
નામે જે જ્ઞાન થઈ રહ્યું છે, તે આને લઈને જ થઈ રહ્યું છે કે અહીં વલ્લી (વેલ)  
આરોહણ વગેરે જે સ્થાણુમાં રહેનારા ધર્મો છે, તે જ ઘટિત થઈ રહ્યા છે. આનું નામ  
અન્વય છે. “તત્સત્ત્વે તત્સત્ત્વમન્વયઃ” આ અન્વયનું લક્ષણ છે. ‘સ્થાણુ (કુંડા) ના  
આધારે જ લતા વગેરેનું આરોહણ થાય છે. માટે જ એ સ્થાણુના ધર્મ બતાવવામાં  
આવ્યા છે. માર્ગણમાં ‘અન્વય’ ધર્મની પર્યાલોચના થાય છે. ગવેષણામાં કે વ્યતિરેક

નીચમલ્પપ્રદાનેન, સમં તુલ્યપરાક્રમેઃ ॥૧॥” ઇતિ, અન્યત્ર—“લુબ્ધમર્થેન ગૃહ્ણીયાત્, સાધુમઙ્ગલિકર્મણા । મૂર્ખે છન્દાનુરોધેન, તત્ત્વાર્થેન ચ પણ્ઠિતમ્ ॥” ઇતિ । ‘ઈદાવોદ મગ્ગણગવેસણઘ્રત્થસત્થમહવિસારણ’ ઈદાઽપોદમાગ્ગણગવેપણાર્થશાસ્ત્રમતિવિશાદઃ— તત્ર ઈદા=કસ્યાપિવસ્તુનોઽનાલાંચિતવિલોકનજન્યસંશયનિરાશાય બુદ્ધિવેષ્ટા, યથા દૂરત ઉચેસ્ત્વયુક્તસ્ય કસ્યચિદર્શને ‘સ્થાણુ વા પુરુષો વા ઇતિ વિવેકાય બુદ્ધિવેષ્ટનમ્ ।

વશ મેં કરના હાંવે તો ઉસકે સાથ નમ્રતા કા વ્યવહાર રાખના ચાહિયે । (શૂરં ભેદેન યોજયેત્) કિસી શૂરવીરકો યદિ વશ મેં કરના હે તો ઉસકે સાથ ભેદનીતિ કા પ્રયોગ કરના ચાહિયે । (નીચમલ્પપ્રદાનેન) યદિ કિસી નીચજનકો વશ મેં કરના હે, તો ઉસે કુછ ન કુછ થોડા બહુત અવશ્ય દે દેના ચાહિયે ।

(સમં તુલ્યપરાક્રમેઃ) વરાવરી વાલે શત્રુ કો યદિ વશ મેં કરના હે તો ઉસકે તો ઉસકે સાથ વરાવરી કા પરાક્રમ કરના ચાહિયે । યદી વાત અન્યત્ર હસ પ્રકાર સે ગઈ હે—

‘લુબ્ધમર્થેન ગૃહ્ણીયાત્ સાધુમઙ્ગલિકર્મણા,  
‘મૂર્ખે છન્દાનુરોધેન તત્ત્વાર્થેન ચ પણ્ઠિતમ્’ ।

સામાન્ય રૂપ સે વસ્તુ કે વાદ જો ઉસમેં સંયશ હોતા હે ઉસ સંશય કો દૂરકારને કી જો એક પ્રકાર કી બુદ્ધિ વેષ્ટા હોતી હે ઉસકા નામ ઈદા હે । જૈસે દૂર સે કિસી ઊંચી વસ્તુ કા જવ હમે દર્શન હોતા હે તવ યહ કુછ હે એસા સામાન્ય બોધ હોતા હે અવ હસ સામાન્ય બોધ કે વાદ ફિર એસા જો વિચાર આતા હે કિ યહ સ્થાણુ હે યા પુરુષ હે

કરવું જોઈએ ‘શૂરં ભેદેન યોજયેત્’ વીર પુરુષને વશ કરવો હોય તો તેની સાથે ભેદનીતિનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ. ‘નીચમલ્પપ્રદાનેન’ નીચ માણસને વશ કરવો હોય તો કંઈકને કંઈક—થોડું ચોક્કસ આપવું જોઈએ. ‘સમં તુલ્યપરાક્રમેઃ’ સરખી શક્તિવાળા દુશ્મનને વશ કરવો હોય તો તેની સાથે બરાબરીનું શૂરાતન બતાવવું જોઈએ એજ વાત બીજે સ્થાને આ રીતે બતાવવામાં આવી છે:—

લુબ્ધમર્થેન ગૃહ્ણીયાત્ સાધુમઙ્ગલિકર્મણા ।

મૂર્ખે છન્દાનુરોધેન તત્ત્વાર્થેન ચ પણ્ઠિતમ્ ॥૧॥,

સામાન્ય રૂપમાં વસ્તુના બોધ પછીજે તેમાં સંશય ઉદ્ભવે છે તેને દૂર કરવાની એક પ્રકારની બુદ્ધિનીચેષ્ટા હોય છે, તેનું નામ ‘ઇદા’ છે. દા. ત. દરથી કોઈ બિંચી વસ્તુનું જ્યારે દર્શન થાય છે, ત્યારે આ કંઈક છે, એવું સામાન્ય જ્ઞાન આપણને થાય છે. આ સામાન્ય જ્ઞાન પછી ફરી એમ વિચાર થાય કે આ સ્થાણું (હુડું) છે કે પુરુષ છે, આનું નામ સંશય છે. આ સંશય પછી આ સ્થાણું હોવું જોઈએ અથવા પુરુષ હોવો જોઈએ,

વૈનયિકયા-વિનયેન જાતા વૈનયિકી=ગુર્યાદિવિનયપ્રાપ્તશાસ્ત્રાર્થ સંસ્કારજન્યા, તયા,  
અત્ર નૈમિત્તિકશિષ્યદ્વયોદાહરણં સંક્ષેપતઃ પ્રદર્શયતે—

एकस्मिन्नगरे समकक्षवयस्कौ द्वौ शिष्यौ निमित्तशास्त्रं पठितुं कस्यापि  
नैमित्तिकस्य समीपे गतवन्तौ । तयोरेको विनयशीलो यद् यथा गुरुरपदिशति तत्तथैव  
बहुमानपुरस्सरं विनयावनतमस्तकोऽधीते, गुरुपाठितं मुहुर्मुहुर्विमृशति, शङ्कास्पदं स्थूलं  
गुरुसमीपमुपेत्य सविनयं निर्णयति च । अपरस्तु न तथा विनयेन पठति, न पृच्छति,  
नापि विमृशति च । अधीतशास्त्राबुधौ कालान्तरे जीविकार्थं देशान्तरं गतौ । क्वचि-

હૈ। ગુરુ આદિ કે વિનય સે પ્રાપ્ત હુણ શાસ્ત્રી અર્થ કે સંસ્કાર સે જો  
બુદ્ધિ પ્રાપ્ત હોતી હૈ વહ વૈનયિકી બુદ્ધિ હૈ।

इस विषय में दो नैमित्तिक शिष्यों का उदाहरण इस प्रकार है—  
किसी नगर में समान अवस्था वाले दो शिष्य किसी निमित्तज्ञ के पास  
निमित्त शास्त्र को पढ़ने के लिये गये । उनमें एक शिष्य विनय शील  
था । गुरुमहाराज उसे जिस प्रकार जिस बात को पढ़ाते थे वह उस  
बात को बहुमान पुरस्सर बड़े भारी विनय के साथ पढ़ता था । विद्या  
गुरु जिस विषय को उसे समझाया करते थे वह उस विषय को बार  
बार विचार में लाया करता था । जिन विषय में उसे किसी भी तरह  
का संदेह होता तो वह गुरु के पास जा कर विनय के साथ उसका  
निर्णय करता । दूसरा शिष्य ऐसा कुछ अविनयी था कि वह न तो कुछ  
पढ़ता न कुछ लिखता और न गुरु से कुछ पूछता और न कुछ विचार  
ही करता । अब उन दोनों के लिये ऐसा अवसर आया कि उन्हें आज्ञा

ગુરુ વગેરેના વિનયથી પ્રાપ્ત કરેલ શાસ્ત્રીય અર્થના સંસ્કાર વડે જે બુદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય  
છે, તેવૈનાયિકી બુદ્ધિ છે. આ વિષયને લગતા બે નૈમિત્તિક શિષ્યોના દષ્ટાન્ત આ પ્રમાણે છે—

કોઈ નગરમાં સરખી ઉમરના બે વિદ્યાર્થીઓ કોઈ નિમિત્તજ્ઞની પાસે નિમિત્ત-  
શાસ્ત્રના અભ્યાસાર્થે ગયા. તેઓમાં એક શિષ્ય વિનયમય હતો. ગુરુ તેને જે વાત  
શીખવતા તે તે વાતને બહુજ માનપૂર્વક ધણા વિનય સાથે તે શીખતો હતો. વિદ્યા  
આપનારા ગુરુ જે વિષય તેને સમજાવતા તે તે વિષય ઉપર વારંવાર મનન કરતો  
હતો. તે વિષયમાં તેને કોઈ પણ બાતની શંકા હોય તો તે ગુરુની પાસે જઈને  
સવિનય તેનું સમાધાન કરતો હતો. બીજો શિષ્ય કંઈક અવિનયી હતો ન  
તો તે કંઈ વાંચતો અને ન તે કંઈ લખતો તેમજ ન ગુરુને તે કંઈ પૂછતો અને  
ન તે કોઈપણ—સૂતના વિચાર કરતો. હવે વિદ્યાઅભ્યાસ કરી રહ્યા પછી આ બન્નેને



યોક્ત-માર્ગનાદ્યર્થે સદ્ભૂતાર્થવિશેષ નિર્ણયાભિપ્રુણમેવાન્યધર્મપરિત્યાગેન 'તદસત્ત્વે તદસત્ત્વં વ્યતિરેકઃ' इति व्यतिरेक धर्माभ्यास समालोचनं यथा- 'अस्मिन् शिरः शरीर कण्डूयनादयः पुरुषधर्मा न दृश्यन्ते' इति । एतेषां समाहारे ईहापोहमार्गणगवेपणानि, तैरर्थशास्त्रे=अर्थोपार्जननिमित्तं शास्त्रमर्थशास्त्रं, तत्र या मतिः=मननं तथा विशारदः=निपुणः स तयोक्तः । तथा 'उत्पत्तियाए वेणइयाए कम्मयाए पारिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उव्वेए' औत्पत्तिकया, वैનयिकया, कर्मजया, पारिणामिकया, चतुर्विधया बुद्ध्या उपपेतः, तत्र-औत्पत्तिकया-उत्पत्तिरेव-शास्त्राभ्यासकर्मपरिशीलनादिकं विहाय प्रयोजनं यस्या सा औत्पत्तिकी-पूर्वमदृष्टाश्रुताननुभूतविषयतयाप्यकस्मादुद्भवशीला, तथा, अत्र रोहकदृष्टान्तःप्रसिद्ध एव ।

है जैसे ऐसा विचार होना-कि यह स्थाणु ही है- पुरुष नहीं-कारण पुरुषगत जो शिरः कण्डूयन आदि धर्म हैं वे यहां प्रतीत नहीं हो रहे हैं 'तदसत्त्वे तदसत्त्वम्' यह व्यतिरेक का लक्षण है । अभयकुमार जिस तरह सामआदि नीति के प्रयोग करने में विशेष पटु थे उसी प्रकार वे ईहा अपोह मार्गण, गवेपण द्वारा अर्थशास्त्र के विचार करने में भी विशेष विशारद थे । (उत्पत्तियाए वेणइयाए कम्मयाए पारिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उव्वेए) औत्पत्तिकी, वैनयिकी कर्म जा तथा, परिणामिकी, इस तरह चार प्रकार की बुद्धि से वे अभयकुमार युक्त थे । जो बुद्धि स्वतः इस जीव को बिना किसी शास्त्राभ्यास आदि के उत्पन्न होती है वह औत्पत्तिकी बुद्धि है । यह बुद्धि पूर्व में अदृष्ट अश्रुत तथा अननुभूत हुए विषयों को अकस्मात् जान लेती है । इस विषय में रोहके का दृष्टान्त प्रसिद्ध ही

[અભ્યાસ] ધર્મ ઉપર વિચાર કરવામાં આવે છે. દા. ત. એમ 'વિચાર' થયો કે આ સ્થાણુ જ છે, પુરુષ નથી. કારણુ કે પુરુષગત જે શિર કણ્ડૂયન વગેરે ધર્મો છે, તેઓની અહીં પ્રતીતિ થતી નથી. 'તદસત્ત્વે તદસત્ત્વમ્' આ વ્યતિરેકનું લક્ષણુ છે. એમ અભયકુમાર, સામ વગેરે નીતિનો પ્રયોગ કરવામાં વિશેષ કૃત્યજ હતા; તેમજ ઇહા, અપોહ, માર્ગણ, ગવેપણ વડે અર્થશાસ્ત્ર ઉપર વિચાર કરવામાં પણ વિશેષ હોશિયાર હતા. (ઉત્પત્તિયાએ વેણઇયાએ કમ્મયાએ પરિણામિયાએ ચઉવ્વિહાએ બુદ્ધીએ ઉવ્વેએ) ઔત્પત્તિકી, વૈનયિકી, કર્મજ અને પરિણામિકી આ રીતે ચાર પ્રકારની બુદ્ધિથી અભયકુમાર સંપન્ન હતા. છપને પોતાની મેળે કોઈ પણ જાતના શાસ્ત્રાભ્યાસ વગર જે બુદ્ધિ ઉદ્ભવે છે તે ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ છે. આ બુદ્ધીપહેલાં કોઈપણ વખત જોવામાં નહિ આવેલા, સાંભળવામાં નહીં આવેલા તેમજ અનુભૂતિના વિષયમાં નહિ આવેલા વિષયને અનાયાસ સમજી લે છે. આ જાણતમાં રોહકનું દૃષ્ટાંત પ્રસિદ્ધ થયેલું છે.

વૈનયિકયા-વિનયેન જાતા વૈનયિકી=ગુર્વાદિવિનયપ્રાપ્તશાસ્ત્રાર્થ સંસ્કારજન્યા, તથા,  
અથ નૈમિત્તિકશિષ્યદ્વયોદાહરણં સંક્ષેપતઃ પ્રદર્શયતે—

एकस्मिन्नगरे समकक्षत्रयस्कौ द्वौ शिष्यौ निमित्तशास्त्रं पठितुं कस्यापि  
नैमित्तिकस्य समीपे गतवन्तौ । तयोरेको विनयशीलो यद् यथा गुरुरपदिशति तत्तथैव  
बहुमानपुरस्सरं विनयावनतमस्तकोऽधीते, गुरुपाठितं मुहुर्मुहुर्निमृशति, शङ्कास्पदं स्मरन्  
गुरुसमीपमुपेत्य सविनयं निर्णयति च । अपरस्तु न तथा विनयेन पठति, न पृच्छति,  
नापि विमृशति च । अधीतशास्त्रावुभौ कालान्तरे जीविकार्थं देशान्तरं गतौ । ववचि-

હૌ ગુરુ આદિ કે વિનય સે પ્રાપ્ત હુણ શાસ્ત્રી અર્થ કે સંસ્કાર સે જો  
બુદ્ધિ પ્રાપ્ત થોતી હૈ વહ વૈનયિકી બુદ્ધિ હૈ।

इस विषय में दो नैमित्तिक शिष्यों का उदाहरण इस प्रकार है—  
किसी नगर में समान अवस्था वाले दो शिष्य किसी निमित्तज्ञ के पास  
निमित्त शास्त्र को पढ़ने के लिये गये । उनमें एक शिष्य विनयशील  
था । गुरुमहाराज उसे जिस प्रकार जिस बात को पढ़ाते थे वह उस  
बात को बहुमान पुरस्सर बड़े भारी विनय के साथ पढ़ता था । विद्या  
गुरु जिस विषय को उसे समझाया करते थे वह उस विषय को बार  
बार विचार में लाया करता था । जिस विषय में उसे किसी भी तरह  
का संदेह होता तो वह गुरु के पास जा कर विनय के साथ उसका  
निर्णय करता । दूसरा शिष्य ऐसा कुछ अविनयी था कि वह न तो कुछ  
पढ़ता न कुछ लिखता और न गुरु से कुछ पूछता और न कुछ विचार  
ही करता । अब उन दोनों के लिये ऐसा अवसर आया कि उन्हें आज्ञा

ગુરુ વગેરેના વિનયથી પ્રાપ્ત કરેલ શાસ્ત્રીય અર્થના સંસ્કાર વડે જે બુદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય  
છે, તેવૈનાયિકી બુદ્ધિ છે. આ વિષયને લગતા બે નૈમિત્તિક શિષ્યોના દષ્ટાન્ત આ પ્રમાણે છે—

કોઈ નગરમાં સરખી ઉમરના બે વિદ્યાર્થીઓ કોઈ નિમિત્તજ્ઞની પાસે નિમિત્ત-  
શાસ્ત્રના અભ્યાસાર્થે ગયા. તેઓમાં એક શિષ્ય વિનય હોતો. ગુરુ તેને જે વાત  
શીખવતા તે તે વાતને બહુજ માનપૂર્વક ઘણા વિનય સાથે તે શીખતો હતો. વિદ્યા  
આપનારા ગુરુ જે વિષય તેને સમજાવતા તે તે વિષય ઉપર વારંવાર મનન કરતો  
હતો. તે વિષયમાં તેને કોઈ પણ જાતની શંકા હોય તો તે ગુરુની પાસે જઈને  
સવિનય તેનું સમાધાન કરતો હતો. બીજો શિષ્ય કંઈક અવિનયી હતો ન  
તો તે કંઈ વાંચતો અને ન તે કંઈ લખતો તેમજ ન ગુરુને તે કંઈ પૂછતો અને  
ન તે કોઈપણ જાતના વિચાર કરતો. હવે વિદ્યાઅભ્યાસ કરી રહ્યા પછી આ બન્નેને

નગરનિકટે સરસ્તીરે વિશ્રમતઃ । 'एतावुमौ विद्वांसौ' इति ज्ञात्वा मस्तकन्यस्त-  
जलभृतघटा काचिद्वृद्धा विदेशगतस्वसुतकुशलिनीं वार्तां पप्रच्छ । मश्नतमकालमेव  
तन्मस्तकाद् घटो न्यपतत्. तद्वृद्धा सोऽविगृह्यकारी रुदिति प्राह—'वृद्धे ।=मृतस्व-  
पुत्रः' इत्यादि । कर्णकठोरं प्राणापहारकं वज्रमिवाऽऽपतत् पुत्रमरणरूपं तद्वचनं  
श्रुत्वा यावत्सा मूर्छा प्राप्नोति तावदपरो विमर्शशीलो नेमित्तको न्यगदत् भोभ्रात-  
र्मेव ब्रूहि, अस्याः पुत्रः साम्प्रतमेव स्वगृहमागतो वर्तते, मातः ! गच्छ शीघ्रं गृहं  
पुत्रमुखावलोकनजनितममन्दपरमानन्दमनुभवेत्त्यादि । तच्छ्रुत्वा प्रत्युज्जीवितेव

વિકા સંપાદન કે લિયે પરદેશ મેં જાના પડા । જ્ય એ વાહર જા રહે થે તો  
કિસી એક નગર કે પાસ કે સરોવર કે કિનારે યે દોનો ઠહર ગયે । ઇતને મેં  
એક વૃદ્ધાને કિ જિસકા પુત્ર વહુત સમય સે પરદેશ ગયા હુઆ થા ઓર યમી તક  
વાપિસ નહીં આયા થા ઝન્હે દેલા-વહ મસ્તક પર ઘડા રાલ્લકર વહાં  
જલ ભરને કો આઈ થી । ઝસને વિદ્વાન સમજ્ઞ કર ઇનસે અપને પુત્ર કો  
કુશલ વાર્તા પૂછી તો અવિનીત શિષ્યને યહ દેલ્લકર કિ ઝસકે મસ્તક  
સે મશ્ન પૂછને કે સાથ સાથ ઘડા ગિર ગયા હૈ જલ્દી સે એસા કહા  
કિ હે વૃદ્ધે ? તેરા પુત્ર તો પરદેશ મેં હી મર ગયા હૈ-તૂ અચ કિસ કો  
કુશલ વાર્તા પૂછ રહી હૈ એસા ઝસકા કર્ણકઠોર વજ્ર કે મહાર જૈસા  
તીક્ષ્ણ મર્મભેદક પુત્ર કા મરણ રૂપ વચન સુનકર વહ મૂર્ચ્છિત હોને  
વાલી હી થી ઇતને મેં દૂસરે વિનયશીલ શિષ્યને વિચાર કર કહા માઈ  
એસા મતકહો-ઇસકા પુત્ર તો ઇસ સમય ઘર પર હી આ પહુંચા હૈ એસા  
કહકર ફિર ઝસને ઝસ વૃદ્ધા સે કહા ! તુમ જલ્દી સે જલ્દી ઘર જાઓ ।

પોતાની આજીવિકા ચલાવવા માટે પરદેશ જવાનું થયું. ત્યારે તેઓ બહાર જઈ રહ્યા  
હતા ત્યારે માર્ગમાં કોઈ નગર પાસે સરોવરના કાંઠે આ બન્ને રોકાયા. એટલામાં એક ડાંશીએ  
કે જેનો પુત્ર ઘણા સમય પહેલાં વિદેશ ગયો હતો અને હજી પોતાને ઘેર ખાંદો ક્યો  
ન હતો-તેઓને જોયા, તે ઘડો માથા ઉપર મૂકીને પાણી ભરવા આવી હતી. તે  
ડાંશીએ તેઓને વિદ્વાન સમજીને એમને પોતાના પુત્રનું કુશળ પૂછ્યું પ્રશ્ન પૂછતાની  
સાથે જ વૃદ્ધાના માથા ઉપરથી પાણીનો ઘડો પડી ગયોછે, -એ જોઈને અવિનીત શિષ્યે અડપટ્ટી  
કહ્યું કે હે વૃદ્ધે ! તારો પુત્ર તો વિદેશમાં મરણ પામ્યો છે, તું હવે કેના  
કુશળની વાત પૂછે છે, આ પ્રમાણે તેનું વજ્રપ્રહાર જેવું કાર્યકંડુ, તીક્ષ્ણ, અન્તાઃકરણને  
વર્ધનાઈ, પુત્રમરણ રૂપવચન સાંભળીને તે જોલાન થવાની જ હતી તેટલામાં બીજા વિનયશીલ  
શિષ્યે વિચારીને કહ્યું કે ભાઈઆવું ન જોલો એનો પુત્ર તો અત્યારે ઘેર આવી પહોંચ્યો છે.  
આમ કહીને પછી તેણે તે ડાંશીને કહ્યું કે મા ! તમે સત્વરે ઘેર જાઓ. તમારો પુત્ર



सा गता गृहं, मिलितो लब्धलक्ष्मणः पुत्रः, हर्षमर्कमुपागता । तदनु सा बहुमूल्यं पारितोषिकमादाय सरस्तीरमागत्य तौ पृष्ठवतीकथं ज्ञातमेतदुत्तमिति । अविमृश्य-  
कारी द्यूते-प्रश्नसमये तव मस्तकान्निपत्य कुम्भः स्फुटितस्तेन मया ज्ञातं—‘मृतस्त्व-  
पुत्रः’ इति । तत्पश्चाद् विमृश्यकारी प्रवक्ति—प्रश्नसमकालमेव तव घटाऽथो भूमौ  
निपतितस्तज्जलं च सरोजलेन साकं मिलितं तेन मया ज्ञातं—‘यस्य यज्जलं तत्तेन

तुम्हारा पुत्र घर पर आ गया है। उसके मुख्वावलोकन से तुम परम हर्ष का अनुभव करो । इस प्रकार उस विनयशील विचारक शिष्य के वचन सुन-  
कर उसे मानो नई चेतना सी प्राप्त हो गई हो इस तरह बनकर वह अपने घर पहुँची । पहुँचते ही वहाँ उसने एक व्याघ्र रूपियों को कमा-  
कर साथ में लाये हुए अपने पुत्र को देखा—देखते ही उसे परम आनन्द का अनुभव हुआ हर्ष प्रकर्ष से युक्त हो कर वह बहुमूल्य पारि-  
तोषिक लेकर पुनः उस तालाब के किनारे पर वह आई। आते ही उन दोनों से उसने पूछा—भाई बतलाओ तुमने यह सब कैसे जाना । सुनकर अविमृश्यकारी शिष्यने उससे कहा—मा! प्रश्न पूछने के साथ ही जब तुम्हारे मस्तक से घड़ा गिर कर फूट गया—तो मैंने विचार किया कि जिस प्रकार यह घड़ा अचानक गिरकर फूट गया है उसी प्रकार तुम्हारा पुत्र भी मर गया है। विमृश्यकारीने अपनी बात के समर्थन में उसे कहा—कि मातः ? प्रश्न करने के समकाल में ही जब आप का घड़ा जमीन पर गिर पड़ा और उसमें का जल सरोवर के साथ मिल गया

घेर आवी गयो छे. तेनुं भो जेधने तमे पूज्य आनंद अनुभवो. आ रीते विनयी अने विचारक शिष्यना वचन सांलणीने तेणे जेणे दे नवी चेतना न भेजवी छेय, तेम ते तस्तज पोताने घेर गध अने घेर पछोयतां न त्यां तेणे अेक क्षण इधिया इभाध आवेल पोता-  
ना पुत्रने जेयो. जेतांनी साथे न तेनुं हेयुं आनन्दथी तरणोण थर्ग गयुं. प्रसन्न थती ते णहु क्षीमती लेट लधने तेन तणावने छोठे इरी आवी आवीने तेणो णन्नेने तेणे पूछयुं ‘लाध. तमे आ णधुं देवी रीते जेणयुं ?’ अे सांलणीने अविमृश्यकारी [अविचारी] शिष्ये कहुं—‘मा ! प्रश्न इरतांनी साथे न तमारा माथा उपरधी घडो पडीने इटी गयो, त्यारे भने थयुं दे ने रीते आ घडो ओयितो पडीने इटी गयो, ते रीते तमारे पुत्र पणु भणु पाभ्यो हुणे. “विमृश्यकारीअे [विचारके] पोतानी बातना समर्थनभां कहुं दे ‘मा ! प्रश्न इरती वणते तमारे घडो जमीन पर पडयो अने तेनुं पाणी सरोवरना पाणीनी साथे भणी गयुं ते अे उपरधी भे जेणयुं दे ने प्रमाणे आ घडानुं पाणी आ सरोवरना पाणीनी साथे भणी गयुं छे, तेन प्रमाणे तमारे पुत्र पणु तमने नदी भणयो जेधये. आ

મિલિતમિત તતોઽસ્યાઃપુત્રેઽપ્યનયા સહદ્રુતમેવ મિલિપ્યતી' ત્યાદિ । તચ્છુત્વા તમવિમૃશ્યકારિણં દુર્વચનૈર્નિર્મલસ્ય વિમૃશ્યકારિણે વહુમૂલ્યં પારિતોષિકં સમર્પ્યા- શીર્વાદશતાનિ દદૌ । અથાસાવવિમૃશ્યકારી શ્વેદલિન્નો ભૂત્વા સ્વચેતસિ ચિન્તયા- માસ-‘મયા ગુરુજન વિનયાભાવેન શાસ્ત્રમભ્યસ્તં તસ્માન્મે વિદ્યા ન ફલવતી જાતે' ત્યાદિના મનઃસંતાપં સંપ્રાપ । વિનયશીલો વિમૃશ્યકારી તુ ગુરોરુપકારં મુહુર્મુદ્ધ- રનુસ્મરન્ વિદ્યાપ્રચારં કુર્વન્વાસ્મિન્ લોકે જનરમૃતમિવ પૂજિતઃ-ક્રમણ આત્મ- વિદ્યાં સંપ્રાપ્ય કલ્યાણમાર્ગ સાધિતવાન્ । સહાધ્યયને કૃતેઽપિ વિનીતે एव

તો હસ પર સે મૈને જાના કિ જિસ પ્રકાર યહ જલ હસ જલ કે સાથ મિલ જુલ ગયા હૈ-ઉસી પ્રકાર આપકા પુત્ર બી આપકે સાથ શીઘ્ર હી મિલ જાના ચાહિયે। હસ પ્રકાર ઉસ વિમૃશ્યકારી કે ભૂરિ ભૂરિ પ્રશંસા કરતી હુઈ ઉસ વૃદ્ધાને ઉસ અવિમૃશ્યકારી વ્યક્તિ કો બુરા ભલા કહ કર તથા ઉમ વિચારશીલ વ્યક્તિ કો વહુમૂલ્ય પારિતોષિક પ્રદાન કર અન્ત મેં સૈકડોં આશીર્વાદ વચનોં સે વધાયા। અપને સાથી કા હસ પ્રકાર દેવ દુર્લભ સન્માન દેલ્લકર અવિમૃશ્યકારી વહુત અધિક શ્વેદ લિન્ન હુઆ। ઉસને અપને ચિત્ત મેં સોચા મૈને વિદ્યાગુરુકે પાસ વિદ્યા કા અધ્યયન તો કિયા હૈ-પરન્તુ વિનયાભાવ કે કારણ વહ મુદ્ધ મેં ફલવતી નહીં હુઈ હૈ। વિનયશીલ વિમૃશ્યકારીને ‘વિનયાદિ સંપન્ન બનકર જો બી વિદ્યા મૈને વિદ્યા ગુરુ સે પઢી વહ મુદ્ધ મેં વિશેષ રીતિ સે પ્રસ્ફુટિત હુઈ હૈ અતઃ મેરે ઉપર વિદ્યાગુરુ કા વહા ભારી ઉપકાર હુઆ હૈ-‘હસ પ્રકાર વાર વાર વિદ્યા ગુરુ કે ઉપકાર કા સ્મરણ કરતે હુए વિદ્યા કા પ્રચાર અચ્છી તરહ સે કિયા હસ પ્રચારસે લોગો મેં ઉસકી અમૃત જૈસી માન્યતા વઢી। ક્રમશઃ જવ વહ આત્મવિદ્યા કી સાધના કરતેર કલ્યાણમાર્ગ કા પથિક વચન

પ્રમાણે વાતબાણી તે ડોશીએ અવિમૃશ્યકારીના જ્ઞાનની ખૂબ આટકણી કાઢી. અને તે પછી વિચારશીલને ખૂબ કીમતી ભેટ અને સેંકડો આશીર્વાચનો આપ્યાં. પોતાના સાથીનું આ રીતે દેવ દુર્લભ સન્માન લેઈને અવિમૃશ્યકારી ખૂબ જ હુઃખી થયો અને તેણે પોતાનાં મનમાં વિચાર કયો કે ‘મેં વિદ્યાગુરુ પાસેથી વિદ્યાભ્યાસ તો કયો છું પણ વિનય રહિત હોવાને લીધે વિદ્યા સારી પેઠે મારામાં ફળવતી થઈ નથી.’ વિનય- શીલ વિમૃશ્યકારી શિષ્યે વિચાર કયો કે ‘વિનયાદિથી જે વિદ્યા ગુરુ પાસેથી મેળવી છે, તે મારામાં સવિશેષ વિકાસ પામી છે. ખરેખર મારા ઉપર વિદ્યાગુરુનો બહુ ભારે ઉપકાર થયો છે.’ આ રીતે વારંવાર વિદ્યાગુરુના ઉપકારનું સ્મરણ કરતાં મારી પેઠે વિદ્યાપ્રચાર કયો. આ પ્રચારથી લોકોમાં અમૃત જેવી તેની ખ્યાતી વધી. અનુક્રમે ત્યારે તે આત્મવિદ્યાની સાધના કરતાં કરતાં કલ્યાણપથનો પથિક બન્યો ત્યારે અનન્ત જનમ-

વિદ્યા સકલશાસ્ત્રરહસ્યં પ્રકટયતિ । મુચિનીતમ્ તદ્ વિદ્યા પ્રભાવેનાસ્મિન્ લોકે  
સ્વ રચનયા શાસ્ત્રાદિરહસ્યં પ્રકટયન્ આત્મવિદ્યાં સમવાપ્ય સ્વપર કલ્યાણાય પ્રભવતિ ।  
इतिवैनयिकी बुद्धि दृष्टान्तः । अत्रानेकशो दृष्टान्ताः सन्तीति विस्तरभयाद्  
विरम्यते ।

કાર્મિકયા=કર્મણઃ=કૃપિવાણિજ્યાદિ વ્યવસાયાત્ જાતા કાર્મિકી=તત્તત્ક-  
માંગ્યાસપ્રકર્ષજનિતેત્યર્થઃ તથા । અત્ર તસ્કરકૃપીવલોદાહરણમ્—

કથિત્તસ્કરો વાણિજગ્રામે કસ્યચિદ્વાણિજો મૃદે કમલ્પાકારં સ્વાતં સ્વનિતવાન્ ।  
પ્રમાતે જના એકત્રીભૂતારત્તસ્વાતં દૃષ્ટ્વા ભૂયો ભૂયઃ પ્રશંસાં કૃતવન્તઃ—અહો ! ચૌરસ્ય

ગયા તો અનન્ત સંસાર કા ખી અંત ઉસને કર દિયા । ઇસ દૃષ્ટાન્ત લિખને કા  
તાત્પર્ય યદ્દ હૈ કિ સાથર અધ્યયન કરને પર મી વિનીત જનમેં હી વિદ્યા  
ફલવતી બનતી હૈ તથા સકલ શાસ્ત્રોં કા રહસ્ય ખી આત્મા મેં પ્રકટ હોતા હૈ  
જો આત્મા વિનીત હોતા હૈ । વિનીત જન હી વિદ્યા કે પ્રભાવ સે ઇસ  
લોક મેં અપની રચના દ્વારા શાસ્ત્રાદિ કે રહસ્ય કો પ્રકટ કરતે હૈ—ઔર  
આત્મવિદ્યા કો પ્રાપ્ત કર અન્ત મેં વે સ્વ ઔર પર કે કલ્યાણ કરને મેં  
સમર્થ બન જાતે હૈ । ઇસ બુદ્ધિ કે ડપર ઔર ખી અનેક પ્રકાર દૃષ્ટાન્ત  
હૈ જો યદાં ગ્રન્થ વિસ્તૃત હો જાને કે ભય સે નહી લિખે ગયે હૈ । કૃપિ વાણિ  
જ્ય આદિ વ્યવસાયરૂપ કર્મ સે જો બુદ્ધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ કાર્મિકી બુદ્ધિ હૈ ।

इसके ऊपर कृपिवल (किशान) और चोर का उदाहरण इस प्रकार है—

एक चोर ने वाणिज गाँव में किसी एक वाणिज के घर में रात्रि  
के समय कमल के आकार जैसा स्वात-ओँडा किया ।—प्रमातकाल जब  
हुआ तो लोगोंने इसे देख कर चोर की बड़ी भारी प्रशंसा की । कहने

મરણુનો પણ તેણે અંત કયો. આ દૃષ્ટાન્ત લખવાનું પ્રયોજન એ છે કે એકી સાથે  
અભ્યાસ કરવા છતાં પણ વિનીત માણસમાં જ વિદ્યા સફળ થાય છે, અને બધા શાસ્ત્રોનું  
રહસ્ય પણ તે જ આત્મામાં પ્રકટે છે, કે જે આત્મા વિનમ્ર હોય છે. નમ્ર માણસ જ  
વિદ્યાના પ્રભાવથી આ લોકમાં પોતાની રચના વડે શાસ્ત્ર વગેરેનું રહસ્ય બતાવે છે, અને  
આત્મવિદ્યાને મેળવીને અંતે સ્વ [પોતાનું] અને પર [પારકાનું] કલ્યાણ સાધવામાં સમર્થ  
થાય છે. આ બુદ્ધિ વિષે બીજાપણ એનેક દૃષ્ટાન્તો છે. જે અહીં અન્ય વિસ્તારના  
ભયથી લખ્યા નથી. કૃપિ, વાણિજ્ય વગેરે વ્યવસાયના કર્મોથી જે બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય  
છે, તે કાર્મિકી બુદ્ધિ છે.

એના માટે કૃપીવલ [ખેડૂત] અને ચોરનું ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે—

વાણિજ ગામમાં કોઈ એક વાણિયાના ઘેર રાતના વખતે એક ચોરે કમળના  
આકાર જેવું બાકોડું [ખાતર] પાડ્યું. સવારે લોકોએ એ જોયુંને ચોરના બહુ ભારે



અસ્યામવસર્પિण्याં જાતસ્ય ચતુર્વિંશસ્ય ચરમતીર્થેકસ્ય ભગવતઃ શ્રીવર્ધમાન-  
સ્વામિનશ્ચરમચાતુર્માસ્યં પાવાપુર્યામાસીત્ । તત્ર કૃતપૃથ્ભક્તેષુ નવમહ્લકિ-નવ-  
લેચ્છકિ-કાશી-કૌશલકેષુ અષ્ટાદશસુ ગણરાજેષુ સમુપસ્થિતેષુ તસ્ય ચરમદેશના  
પટ્ટત્રિંશદધ્યયનાત્મિકા ઉત્તરાધ્યયનનામતઃ પ્રસિદ્ધા, વિંશત્યધ્યયનાત્મિકા તુ  
વિપાકશ્રુતારવ્યા । તત્રોત્તરાધ્યયનસ્ય શબ્દાર્થસ્ત્વેવમ્-ઉત્તરાણિ=મોક્ષસાધકત્વાત્  
પ્રધાનાનિ અધ્યયનાનિ યત્ર તદુત્તરાધ્યયનમ્ ।

નન્વિદમેવ શાસ્ત્રં પ્રધાનં ચેત્ આચારાજ્ઞાદિદ્વાદશાક્તી ભગવત્પ્રજ્ઞાસાપિ  
પ્રધાનતયાનુક્તવાદિતોઽપકૃષ્ટતયા પ્રેક્ષાવદ્ધિરનુપાદેયા સ્યાદિતિ ચેદ્ ? અત્રો-  
ભગવાન ગૌતમ ગણધર કો ( નત્વા ) નમસ્કાર કર મેં ( ઉત્તરાધ્યયને )  
હસ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કે ઉપર ( પ્રિયદર્શિનીં વૃત્તિં ) પ્રિયદર્શિની નામક  
વૃત્તિ કી ( કુર્વે ) રચના કરતા હું ॥ ૪ ॥

ટીકાર્થ-હસ અવસર્પિણી કાળમાં ઉત્પન્ન ચૌવીસવેં અન્તિમ તીર્થકર  
ભગવાન શ્રીવર્ધમાન સ્વામી કા અન્તિમ ચાતુર્માસ પાવાપુરી મેં હુઆ ।  
વહાં પર ભગવાન કી સેવા મેં, નવમહ્લકિ નવલેચ્છકિ જો કાશી ંવં  
કૌશલદેશ કે અઠારહ ગણરાજા થે વે ઉપસ્થિત હુણ । ઉન સર્વોંને પૃથ્ભક્ત  
કિયા । ઉસ સમય ઉન શ્રી ભગવાન મહાવીર સ્વામી કી અન્તિમ દેશના  
હુઈ, જો દેશના છત્તીસ અધ્યયનરૂપ ‘ઉત્તરાધ્યયન’ હસ નામ સે પ્રસિદ્ધ  
હુઈ, તથા વીસ અધ્યયનરૂપ વિપાકશ્રુત, હસ નામ સે ભી પ્રસિદ્ધ હુઈ ।  
ઉનમેં ‘ઉત્તરાધ્યયન’ શબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ—મોક્ષ સાધક હોને  
સે ઉત્તર-પ્રધાન હૈ અધ્યયન જિસમેં વહ ઉત્તરાધ્યયન હૈ ।

ગણધરને ( નત્વા ) નમસ્કાર કરી હું ( ઉત્તરાધ્યયને ) ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર ઉપર  
( પ્રિયદર્શિનીં વૃત્તિં ) પ્રિયદર્શિની નામની વૃત્તિની ( કુર્વે ) રચના કરું છું. ॥૪॥

ટીકા-આ અવસર્પિણી કાળમાં ઉત્પન્ન થયેલા ચૌવીસમા છેલ્લા તીર્થકર ભગ-  
વાન શ્રી વર્ધમાન સ્વામીનો છેલ્લો ચાતુર્માસ પાવાપુરીમાં થયો. ત્યાં આગળ  
ભગવાનની સેવામાં નવમહ્લકિ નવલેચ્છકિ જે કાશી અને કૌશલ દેશના અઠાર  
ગણરાજા આવેલા હતા એ બધાએ પૃથ્ભક્ત કરેલા. આ સમયે ભગવાન શ્રી  
મહાવીર સ્વામીની અંતિમ દેશના થઈ, જે દેશના છત્તીસ અધ્યયનરૂપ  
‘ઉત્તરાધ્યયન’ આ નામથી પ્રસિદ્ધ થઈ, તથા વીસ અધ્યયનરૂપમાં વિપાકશ્રુત  
નામથી પણ પ્રસિદ્ધ થઈ, આમાં ‘ઉત્તરાધ્યયન’ શબ્દનો અર્થ આ પ્રકારે છે-  
મોક્ષસાધક હોવાથી ઉત્તર-પ્રધાન છે અધ્યયન જેમાં તે ઉત્તરાધ્યયન છે.

( સગુણિસમિતિં સમાં વિરતિમાદધાનં સદા ) જો પાંચ સમિતિ  
 ઓર ત્રીન ગુણિયોં કો ધારક હૈં, તથા સર્વદા સર્વવિરતિ કો પાલને વાલે  
 હૈં, ( ક્ષમાવદલિલક્ષમં ) પૃથિવી કો સમાન જો સર્વ પ્રકાર કો અનુકૂલ  
 પ્રતિકૂલ પરીપહાદિક કો સહન કરતે હૈં, ( કલિતમઞ્જુચારિત્રકમ્ )  
 જો નિરતિચાર ચારિત્ર અરાધન મેં સદા તત્પર રહતે હૈં, તથા—( સદોર-  
 મુલ્લવલ્લિકાવિલસિતાનનેન્દું ) વાયુકાયાદિ કો યતના કો લિયે જિનકા  
 મુલ્લરૂપી ચન્દ્રમણ્ડલ સદા સદોરક મુલ્લવલ્લિકા સે સુશોભિત હૈ, તથા—  
 ( અપૂર્વવોધપ્રદં ) જો અપૂર્વ સમકિતરૂપી વોધ-વીજ કો દાતા હૈં ઓર  
 ( ભવવારિધિપ્લવમ્ ) ઇસ સંસારસમુદ્ર સે ભવ્ય જીવોં કો પાર હોને કો  
 લિયે નૌકા સમાન હૈં, ઇસે ( ગુરું ) નિર્ગન્ય ગુરુ મહારાજ કો ( પ્રણૌમિ )  
 મેં નમસ્કાર કરતા હૂં ॥ ૩ ॥

અવ ટીકાકાર ભગવાનકો વાણી આદિકો નમસ્કાર કરકે અપની  
 વ્યક્તવ્યતા પ્રકટ કરતે હૈં—‘ જૈનોં ’ ઇત્યાદિ ।

( જૈનોં સરસ્વતીં ) જિનેન્દ્ર કો મુલ્લકમલ સે નિર્ગત દ્વાદશાંગીરૂપ  
 સરસ્વતી દેવી કો, ઇવં ( ગણનાયકં ગૌતમં ) ગણનાયક-ગચ્છ કો નાયક

( સગુણિસમિતિં સમાં વિરતિમાદધાનં સદા )—જો પાંચ સમિતિ અને  
 ત્રણ ગુણિયોના ધારક છે, તથા સર્વદા સર્વવિરતિને પાળવાવાળા છે, ( ક્ષમા-  
 વદલિલક્ષમં ) પૃથ્વીના સમાન જે સર્વ પ્રકારના અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પરિપહોને સહન  
 કરે છે, ( કલિતમંજુચારિત્રકમ્ )—જો નિરતિચાર ચારિત્રના આરાધનમાં  
 સદા તત્પર રહે છે. તથા ( સદોરમુલ્લવલ્લિકાવિલસિતાનનેન્દું ) વાયુકાય આદિની  
 યતનાને માટે જેમનું મુખરૂપી ચન્દ્રમંડળ સદા દોરાસહિતની મુંડપત્તીથી  
 સુશોભિત છે, તથા ( અપૂર્વવોધપ્રદં ) અપૂર્વ સમકિતરૂપી વોધ-ખીજના  
 દાતા છે અને ( ભવવારિધિપ્લવમ્ ) આ સંસારસમુદ્રથી ભવ્ય જીવોને પાર  
 કરવામાં નૌકાસમાન છે, એવા ( ગુરું ) નિર્ગન્ય ગુરુ મહારાજને ( પ્રણૌમિ )  
 હું નમસ્કાર કરું છું.

હવે ટીકાકાર જીન ભગવાનની વાણી આદિને નમસ્કાર કરી સ્વવક્ત-  
 વ્યતા પ્રકટ કરે છે—‘ જૈનોં ’ ઇત્યાદિ.

( જૈનોં સરસ્વતીં ) જિનેન્દ્રના મુખકમળથી નિર્ગત દ્વાદશાંગીરૂપ સરસ્વતી  
 દેવીને, અને ( ગણનાયકમ્ ગૌતમં ) ગણનાયક-ગચ્છના નાયક ભગવાન ગૌતમ

તત્ર પદ્ત્રિંશદધ્યયનાનાં નામાનિ પ્રદર્શ્યન્તે—

૧-વિનયશ્રુતમ્, ૨-પરીપહઃ, ૩-ચતુરંગીયમ્, ૪-અસંસ્કૃતમ્, ૫-અકામસકામમરણીયમ્, ૬-ક્ષુલ્લકનિર્ગ્રન્થીયં, ૭-એલકીયમ્ (ઉરખીયમ્), ૮-કાપિલકમ્, ૯-નમિપ્રવ્રજ્યા, ૧૦-દ્રુમપત્રકમ્, ૧૧-વહુશ્રુતમ્, ૧૨-હરિકેશીયમ્, ૧૩-ચિત્તસંભૂતીયમ્, ૧૪-ઇપુકારીયમ્, ૧૫-સભિક્ષુ, ૧૬-બ્રહ્મચર્યસમાધિઃ, ૧૭-પાપશ્રમણીયમ્, ૧૮-સંયતીયમ્, ૧૯-મૃગાપુત્રીયમ્, ૨૦-મહાનિર્ગ્રન્થીયમ્, ૨૧-સમુદ્રપાલીયમ્, ૨૨-રથનેમીયમ્, ૨૩-કેશિગૌતમીયમ્, ૨૪-સમિતીયમ્, ૨૫-યજ્ઞીયમ્, ૨૬-સામાચારી, ૨૭-સ્વલુંકીયમ્, ૨૮-મોક્ષમાર્ગગતિઃ, ૨૯-સમ્યક્ત્વપરાક્રમઃ, ૩૦-તપોમાર્ગઃ, ૩૧-ચરણવિધિઃ, ૩૨-પ્રમાદસ્થાનમ્, ૩૩-કર્મ-

જગદ્-જગદ્ વર્ણિત હુઆ હૈ, અતઃ પ્રસિદ્ધિવશાં ઇસે પ્રધાન કહના કોઈ અનુચિત નહીં હૈ । ઇસલિલ્લ ઇસ મૂલસૂત્ર કા નામ ઉત્તરાધ્યયન કહા ગયા હૈ । ઉત્તરાધ્યયન કે ૩૬ અધ્યયન યે હૈ—

(૧) વિનયશ્રુત, (૨) પરીપહ, (૩) ચતુરંગીય, (૪) અસંસ્કૃત, (૫) અકામસકામમરણ, (૬) ક્ષુલ્લકનિર્ગ્રન્થીય, (૭) એલકીય, (૮) કાપિલક, (૯) નમિપ્રવ્રજ્યા, (૧૦) દ્રુમપત્રક, (૧૧) વહુશ્રુત, (૧૨) હરિકેશીય, (૧૩) ચિત્તસંભૂતીય, (૧૪) ઇપુકારીય, (૧૫) સભિક્ષુ, (૧૬) બ્રહ્મચર્યસમાધિ, (૧૭) પાપશ્રમણીય, (૧૮) સંયતીય, (૧૯) મૃગાપુત્રીય, (૨૦) મહાનિર્ગ્રન્થીય, (૨૧) સમુદ્રપાલીય, (૨૨) રથનેમીય, (૨૩) કેશિગૌતમીય, (૨૪) સમિતીય, (૨૫) યજ્ઞીય, (૨૬) સામાચારી, (૨૭) સ્વલુંકીય, (૨૮) મોક્ષમાર્ગગતિ, (૨૯) સમ્યક્ત્વપરાક્રમ, (૩૦) તપોમાર્ગ,

એટલે પ્રસિદ્ધિવશાં આને પ્રધાન કહેવામાં કાંઈ અનુચિત જેવું નથી. આ માટે આ મુલસૂત્રનું નામ ઉત્તરાધ્યયન કહેવાયેલ છે. ઉત્તરાધ્યયનના છત્રીસ અધ્યયન આ પ્રકારે છે—

(૧) વિનયશ્રુત, (૨) પરિપહ, (૩) ચતુરંગીય, (૪) અસંસ્કૃત, (૫) અકામસકામમરણ, (૬) ક્ષુલ્લકનિર્ગ્રન્થીય, (૭) એલકીય, (૮) કાપિલક, (૯) નમિપ્રવ્રજ્યા, (૧૦) દ્રુમપત્રક, (૧૧) વહુશ્રુત, (૧૨) હરિકેશીય, (૧૩) ચિત્તસંભૂતીય, (૧૪) ઇપુકારીય, (૧૫) સભિક્ષુ, (૧૬) બ્રહ્મચર્યસમાધિ, (૧૭) પાપશ્રમણીય, (૧૮) સંયતીય, (૧૯) મૃગાપુત્રીય, (૨૦) મહાનિર્ગ્રન્થીય, (૨૧) સમુદ્રપાલીય, (૨૨) રથનેમીય, (૨૩) કેશિગૌતમીય, (૨૪) સમિતીય, (૨૫) યજ્ઞીય, (૨૬) સામાચારી, (૨૭) સ્વલુંકીય, (૨૮) મોક્ષમાર્ગગતિ, (૨૯) સમ્યક્ત્વપરાક્રમ,

ચ્યતે—યદ્યપિ સર્વે પ્રવચનં પ્રધાનમેવ, તથાપ્યેતાનિ વિનયશ્રુતાદીનિ પટ્ટત્રિંશદ-  
ધ્યયનાનિ રુઢિવશાત્ પ્રધાનાનિ । ભગવદ્ધર્મદેશનાસ્વરૂપતયાઽસ્મિન્ શાસ્ત્રે દ્વાદશાંગી  
પ્રતિપાદિતાર્થમુપસંહરતા ભગવતા પ્રાધાન્યં રુઢ્યા પ્રદર્શિતમ્, સવિસ્તરં તુ તત્ત્વં તત્ર  
તત્ર સૂત્રે વર્ણિતમિતિ ન કાઽપ્યનુપપત્તિઃ ।

પ્રશ્ન—યદિ છત્તીસ અધ્યયનાત્મક યહ શાસ્ત્ર હી પ્રધાન માના  
જાવેગા તો આચારાંગ આદિ દ્વાદશાંગ કિ જિનકા પ્રરૂપણ મી સ્વયં  
ભગવાન્ ને હી કિયા હૈ, પ્રધાનરૂપ સે નહીં કહે જાને કે કારણ ઇસકી  
અપેક્ષા અપકૃષ્ટ-અપ્રધાન હો જાયેંગે, ઓર ઇસ કારણ વે પ્રેક્ષાવાન્-  
બુદ્ધિમાનો-કી દૃષ્ટિ મેં ઉપાદેય નહીં રહ સકેંગે, સો ઇસ પ્રકાર યદિ  
કોઈ પ્રશ્ન કરે તો ઉસકા સમાધાન ઇસ પ્રકાર હૈ—

ભગવત્પ્રતિપાદિત હોને કે કારણ યદ્યપિ સમી દ્વાદશાંગાત્મક  
પ્રવચનપ્રધાન હૈ ફિર મી યહાંજો ઇન વિનયશ્રુતાદિક છત્તીસ અધ્યયનો  
મેં પ્રધાનતા પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ વહ કેવલ પ્રસિદ્ધિ કે વશ સમજના  
ચાહિયે । ભગવાન કી અન્તિમદેશનાસ્વરૂપ હોને સે ઇસ શાસ્ત્ર મેં  
દ્વાદશાંગપ્રતિપાદિત અર્થ કા સંક્ષેપ સે સમાવેશ કિયા ગયા હૈ, અતઃ  
સૂત્રકાર ને પ્રસિદ્ધિ સે હી ઇસમેં પ્રધાનતા પ્રકટ કી હૈ । દ્વાદશાંગ કા  
વિસ્તારસહિત વાસ્તવિક તત્ત્વ, આચારાંગ, સૂત્રકૃતાંગ આદિ આગમોમેં

પ્રશ્ન—જો છત્તીસ અધ્યયનાત્મક આ શાસ્ત્ર જ પ્રધાન મનાશે તો આચારા-  
રાંગ વગેરે દ્વાદશાંગ કે જેનું પ્રરૂપણ પણ સ્વયં ભગવાને જ કરેલ છે, તે  
પ્રધાનરૂપનાં ન કહેવાવાને કારણે આની અપેક્ષા અપકૃષ્ટ-અપ્રધાન બની જશે,  
અને આ કારણથી તે પ્રેક્ષાવાન્-બુદ્ધિમાનો-ની દૃષ્ટિએ ઉપાદેય નહીં રહે. જો  
આ પ્રકારનો કદાચ કોઈ પ્રશ્ન કરે તો એનું સમાધાન આ પ્રકારથી છે—

સ્વયં ભગવાનથી પ્રતિપાદિત હોવાના કારણે જોકે બંધાં દ્વાદશાંગાત્મક  
પ્રવચન પ્રધાન છે છતાં પણ અહિં આ વિનયશ્રુતાદિક છત્તીસ અધ્યયનોમાં  
પ્રધાનતા પ્રદર્શિત કરાયેલ છે, તે કેવળ પ્રસિદ્ધિને વશ હોવાનું સમજવું  
જોઈએ. ભગવાનની છેલ્લીદેશનાસ્વરૂપ હોવાથી આ શાસ્ત્રમાં દ્વાદશાંગપ્રતિ-  
પાદિત અર્થનો સંક્ષેપમાં સમાવેશ કરવામાં આવેલ છે, એટલે સૂત્રકારે  
પ્રસિદ્ધિથી જ આમાં પ્રધાનતા પ્રગટ કરી છે. દ્વાદશાંગનું વિસ્તારસહિત  
વાસ્તવિક તત્ત્વ, આચારાંગ, સૂત્રકૃતાંગ વગેરે આગમોમાં ઠેકઠેકાણે વર્ણન થયેલ



સહ સમ્વન્ધઃ । ભાવસંયોગઃ—અશુભભાવૈઃ સહાત્મનઃ સમ્વન્ધઃ, તસ્માત્ સર્વવિધ-  
સંયોગાદ્ વિપ્રયુક્તસ્ય=વિપ્રયુક્તસ્ય, અનિત્યાશરણાદિદ્વાદશભાવનાભિઃ સંયોગસ્ય  
ફલં સંસારપરિભ્રમણાદિરૂપં વિજ્ઞાય સંયોગં પરિત્યક્તવત્ इत्यर्थः । સંયોગો હિ મૃગ-  
તૃષ્ણાચ્ચદ્ ભ્રમોત્પાદકઃ, કુગતિસાધકઃ, વિવેકતરૂન્મૂલને મત્તગજરાજોપમઃ, અમ-  
ન્દાત્માનન્દરસશોષણે પ્રચન્ડમાર્તન્ડસમઃ, શ્રુતચારિત્રધર્મારામદાવાનલઃ, સદ્ધ્યાન-  
વાસિદ્વિક્ષેપણે શૈલશિખરાનિલઃ । સંયોગસ્ય પ્રિયવિયોગજનકત્વેન દારુણદુઃસ્વોત્પાદ-  
કતયાઽપિ પરિહાર્યતા,

ક્તસ્ય ) સર્વથા રહિત ( અણગારસ્સ-અનગારસ્ય ) અનગાર ( મિક્ષુણો-  
-મિક્ષોઃ )-સાધુ કે ( વિણયં-વિનયં ) વિનય કો મૈં ( આણુપુર્વિ-આ-  
નુપૂર્વી ) શાસ્ત્રોક્તપદ્ધતિ કે અનુસાર ( પાઙ્કરિસ્સામિ-પ્રાદુષ્કરિણ્યામિ )  
પ્રગટ-ક ગા । અતઃ હે જમ્બૂ ! તુમ સવ ઉસે ( મે-મત્તઃ ) મુક્ત સે  
( સુણેહ-શૃણુત ) સુનો ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દ કા અર્થ સંવંધ હૈ । દ્રવ્યસંયોગ ઔર  
ભાવસંયોગ કે ભેદ સે યહ સંયોગ દો પ્રકાર કા હૈ । પૂર્વસંયોગ ઔર  
પશ્ચાત્સંયોગ કે ભેદ સે દ્રવ્યસંયોગ ભી દો તરહ કા બતલાયા ગયા હૈ ।  
માતા પિતા આદિ કે સાથ જો જન્મ સે સંવંધ હૈ વહ પૂર્વસંયોગ હૈ ।  
શ્વશુર અદિ કે સાથ પીછે સે હુઆ સંવંધ પશ્ચાત્સંયોગ હૈ । અશુભ  
ભાવોં કે સાથ આત્મા કા સંવંધ રહતા હૈ વહ ભાવસંયોગ હૈ । ઇસ  
સંયોગ કા સર્વથા પરિત્યાગ વહી આત્મા કર સકતા હૈ જો અનિત્ય

રહિત ( અણગારસ્સ-અનગારસ્ય ) અણગાર ( મિક્ષુણો-મિક્ષોઃ ) સાધુના ( વિણયં-  
વિનયં ) વિનયને હું ( આણુપુર્વિ-આનુપૂર્વી ) શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ અનુસાર ( પાઙ્ક-  
રિસ્સા મિ-પ્રાદુષ્કરિણ્યામિ ) પ્રગટ કરીશ. એટલે હે જમ્બૂ ! તમે બધા એને  
( મે-મત્તઃ ) મારી પાસેથી ( સુણેહ-શૃણુત ) સાંભળો.

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દનો અર્થ સંબંધ છે. દ્રવ્યસંયોગ અને ભાવસંયોગના  
લેદથી આ સંયોગ બે પ્રકારે છે. પૂર્વસંયોગ અને પશ્ચાત્સંયોગના લેદથી દ્રવ્ય  
સંયોગ પણ બે રીતનો બતાવેલ છે. માતા પિતા વગેરેની સાથેનો જે જન્મનો  
સંબંધ છે, તે પૂર્વસંયોગ છે. શ્વશુર વગેરેની સાથે પછીથી થયેલ સંબંધ  
એ પશ્ચાત્સંયોગ છે. અશુભ ભાવોની સાથે આત્માનો જે સંબંધ રહે છે એ  
ભાવસંયોગ છે. આ સંયોગનો સર્વથા પરિત્યાગ એજ આત્મા કરી શકે છે

પ્રકૃતિઃ, ૩૪-લેશ્યા, ૩૫-અનગાર માર્ગગતિઃ, ૩૬-જીવાજીવ-વિભક્તિઃ, ઇતિ । તત્ર-શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામિનમન્યાનપિ શિષ્યાનુત્તરાધ્યયનમુત્તરાર્થે પ્રતિબોધ-યિતું પ્રવૃત્તઃ સન્ ધર્મસ્ય વિનયમૂલકત્વાત્પ્રથમં વિનયશ્રુતાલ્ચમધ્યયનં પ્રસ્તુવંસ્ત-સ્યાદં સૂત્રમાહ—

મૂલમ્—

સંજોગો વિપ્પમુક્કસ્સ, અણગારસ્સ ભિવ્વણો ।  
વિનયં પાઉંકરિસ્સામિ, આણુપુંવિવં સુણેહં મે ॥ ૧ ॥

છાયા—

સંયોગાદ વિપ્રમુક્તસ્ય, અનગારસ્ય મિશ્નોઃ ।  
વિનયં પ્રાદુષ્કરિષ્યામિ, આનુપૂર્વો ગૃણત મે ॥ ૧ ॥

ટીકા—

‘સંજોગા.’ ઇત્યાદિ । સંયોગાદિતિ, સંયોગઃ=સમ્બન્ધઃ, સ દ્વિવિધઃ—દ્રવ્યસંયોગઃ ભાવસંયોગશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યસંયોગો દ્વિવિધઃ—પૂર્વસંયોગઃ પથાત્સંયોગશ્ચ । તત્ર પૂર્વસંયોગો માતાપિત્રાદિભિઃ સાર્થે સમ્બન્ધઃ । પથાત્સંયોગસ્તુ શ્વશુરાદિભિઃ (૩૧) ચરણવિધિ, (૩૨) પ્રમાદસ્થાન, (૩૩) કર્મપ્રકૃતિ, (૩૪) લેશ્યા, (૩૫) અનગારમાર્ગગતિ, (૩૬) જીવાજીવવિભક્તિ ।

इन में श्री सुधर्मास्वामीने सर्व प्रथम जंबूस्वामी एवं और भी दूसरे शिष्योंको इस उत्तराध्ययन सूत्र के अर्थको समझाने के लिये “विनय है मूल कारण जिसका ऐसा धर्म है” ऐसा समझकर पहले इस विनयश्रुत नाम अध्ययनका प्ररूपण करते हुए प्रथम सूत्र कहते हैं—‘संजोगा’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(સંજોગા-સંયોગાત્)સંયોગ સે (વિપ્પમુક્કસ્સ-વિપ્રમુ-

(૩૦) તપોમાર્ગ, (૩૧) ચરણવિધિ, (૩૨) પ્રમાદસ્થાન, (૩૩) કર્મપ્રકૃતિ, (૩૪) લેશ્યા, (૩૫) અનગારમાર્ગગતિ, (૩૬) જીવાજીવવિભક્તિ.

આમાં શ્રી સુધર્મા સ્વામીએ સર્વ પ્રથમ જમ્બૂસ્વામી અને બીજા ઘણા શિષ્યોને આ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રનો અર્થ સમજાવવા માટે “વિનય છે મૂળ કારણ જેનું એવો ધર્મ છે” એવું સમજાવેલું અને આ વિનયશ્રુત નામના અધ્યયનનું પ્રરૂપણ કરતાં પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘સંજોગા વિપ્પમુક્કસ્સ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થઃ—(સંજોગા-સંયોગાત્) સંયોગથી (વિપ્પમુક્કસ્સ-વિપ્રમુક્તસ્ય) સર્વથા

સહ સમ્વન્ધઃ । ભાવસંયોગઃ—અશુભભાવૈઃ સહાત્મનઃ સમ્વન્ધઃ, તસ્માત્ સર્વવિધ-  
સંયોગાદ્ વિપ્રયુક્તસ્ય=વિપ્રયુક્તસ્ય, અનિત્યાશરણાદિદ્વાદશભાવનાભિઃ સંયોગસ્ય  
ફલં સંસારપરિભ્રમણાદિરૂપં વિજ્ઞાય સંયોગં પરિત્યક્તવત્ત્વત્ત્વમ્મિત્યર્થઃ । સંયોગો દ્વિ મૃગ-  
તૃણાવદ્ ભ્રમોત્પાદકઃ, કુગતિસાધકઃ, વિવેકતરુન્મૂલને મત્તગજરાજોપમઃ, અમ-  
ન્દાત્માનન્દરસશોષણે પ્રચण्डमार्तण्डसमः, શ્રુતચારિત્રધર્મારામદાવાનલઃ, સદ્ધ્યાન-  
વારિદિવિક્ષેષણે શૈલશિખરાનિલઃ । સંયોગસ્ય પ્રિયવિયોગજનકત્વેન દારુણદુઃસ્વોત્પાદ-  
કતયાऽपि परिहार्यता,

ક્તસ્ય ) સર્વથા રહિત ( અણગારસ્સ-અનગારસ્ય ) અનગાર ( ભિક્ષુણો-  
-ભિક્ષોઃ )-સાધુ કે ( વિણયં-વિનયં ) વિનય કો મૈં ( આણુપુર્વિ-આ-  
નુપૂર્વી ) શાસ્ત્રોક્તપદ્ધતિ કે અનુસાર ( પાઙ્કરિસ્સામિ-પ્રાદુષ્કરિષ્યામિ )  
પ્રકટ-ક ગા । અતઃ હે જમ્બૂ ! તુમ સવ ઉસે ( મે-મત્તઃ ) મુઝ્ઞ સે  
( સુણેહ-શ્રુણુત ) સુનો ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દ કા અર્થ સંવંધ હૈ । દ્રવ્યસંયોગ ઔર  
ભાવસંયોગ કે ભેદ સે યહ સંયોગ દો પ્રકાર કા હૈ । પૂર્વસંયોગ ઔર  
પશ્ચાત્સંયોગ કે ભેદ સે દ્રવ્યસંયોગ ભી દો તરહ કા વતલાયા ગયા હૈ ।  
માતા પિતા આદિ કે સાથ જો જન્મ સે સંવંધ હૈ વહ પૂર્વસંયોગ હૈ ।  
શ્વશુર અદિ કે સાથ પીછે સે હુઆ સંવંધ પશ્ચાત્સંયોગ હૈ । અશુભ  
ભાવોં કે સાથ આત્મા કા સંવંધ રહતા હૈ વહ ભાવસંયોગ હૈ । ઇસ  
સંયોગ કા સર્વથા પરિત્યાગ વહી આત્મા કર સકતા હૈ જો અનિત્ય

રહિત ( અણગારસ્સ-અનગારસ્ય ) અણગાર ( ભિક્ષુણો-ભિક્ષોઃ ) સાધુના ( વિણયં-  
વિનયં ) વિનયને હું ( આણુપુર્વિ-આનુપૂર્વી ) શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ અનુસાર ( પાઙ્ક-  
રિસ્સા મિ-પ્રાદુષ્કરિષ્યામિ ) પ્રગટ કરીશ. એટલે હું જમ્બૂ ! તમે બધા એને  
( મે-મત્તઃ ) મારી પાસેથી ( સુણેહ-શ્રુણુત ) સાંભળો.

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દનો અર્થ સંબંધ છે. દ્રવ્યસંયોગ અને ભાવસંયોગના  
ભેદથી આ સંયોગ બે પ્રકારે છે. પૂર્વસંયોગ અને પશ્ચાત્સંયોગના ભેદથી દ્રવ્ય  
સંયોગ પણ બે રીતનો બતાવેલ છે. માતા પિતા વગેરેની સાથેનો જે જન્મનો  
સંબંધ છે, તે પૂર્વસંયોગ છે. શ્વશુર વગેરેની સાથે પછીથી થયેલ સંબંધ  
એ પશ્ચાત્સંયોગ છે. અશુભ ભાવોની સાથે આત્માનો જે સંબંધ રહે છે એ  
ભાવસંયોગ છે. આ સંયોગનો સર્વથા પરિત્યાગ એજ આત્મા કરી શકે છે

અન્યચ— ન સ્વલુ વિઘટિતાઃ પુનર્ઘટન્તે,  
 ન ચ ઘટિતાઃ સ્થિરસંગતં શ્રયન્તે ।  
 પિપતિપુમવશં રુજન્તિ વશ્યા,—  
 સ્તટતરુમાપ ઇવાપગાગણસ્ય ॥ ૩ ॥  
 અત્ર વિપયે દૃષ્ટાતં કથયતિ—

કશ્ચિદ્ વણિક્પુત્રઃ સંયોગસ્ય કટુકફલં વિજ્ઞાય વિરજ્ય સંયોગં પરિત્યક્ત-  
 વાન્ । તથાહિ—મથુરાનગર્યો સુભગ-સુનન્દનામાનો દ્વો વણિજો સ્તઃ, સુભગસ્તત્ર

और भी—न स्वलु विघटिता पुनर्घटन्ते, न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वश्यास्तटतरुमाप इवापगागणस्य ॥ ३ ॥

જો મિલકર ફિર અલગ હો જાતે હૈં उनका उसी पर्याय में उसी  
 रूप से फिर मिलना होगा, यह सर्वथा असम्भव है । जो मिले हें वे  
 हमारे साथ सदा स्थिर ही रहेगें—यह भी कोई नहीं कह सकता । जिस  
 प्रकार नदियों का पानी अपने तट पर रहे हुए वृक्षोंको दुःख देता है,  
 उसी प्रकार वश्य-प्रिय स्त्रीपुत्रादि मरते समय मनुष्य को दुःखी करते हैं,  
 अर्थात् ये स्त्री पुत्रादिक इस जीव को अनेक प्रकार से व्यथित करते  
 रहते हैं । इस लिये माता पिता आदि का संयोग सर्वथा त्यागने योग्य है ।

इस पर सुधन नामक वणिकपुत्र का दृष्टान्त इस प्रकार है—

सुधन नामक एक वणिकपुत्र ने किस तरह इस संयोग का फल  
 कटुक जाना और किस तरह विरक्त होकर उसका परित्याग किया? यह

બળી પણ....ન સ્વલુ વિઘટિતાઃ પુનર્ઘટન્તે, ન ચ ઘટિતાઃ સ્થિરસંગતં શ્રયન્તે ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वश्यास्तटतरुमाप इवापगागणस्य ॥ ३ ॥

જે મળીને ફરી જુદા થઈ જાય છે. એમનું એજ પર્યાયમાં એજ રૂપમાં  
 ફરી મળવાનું થાશે; એ સર્વથા અસંભવ છે. જે મળ્યા છે તે અમારી સાથે  
 સદા સ્થિર જ રહેશે—આ પણ કોઈ કહી શકતું નથી. જે રીતે નદિયોનું પાણી  
 પોતાના તટ ઉપરનાં વૃક્ષોને દુઃખ આપે છે, એજ પ્રકારે વશ્ય-પ્રિય સ્ત્રી પુત્રાદિ  
 મરતી સમયે મનુષ્યને દુઃખી કરે છે, અર્થાત્ એ સ્ત્રીપુત્રાદિક આ જીવને  
 અनेक प्रकारથી દુઃખી કરતાં રહે છે. આ માટે માતાપિતા આદિનો સંયોગ  
 સર્વથા ત્યાગવા યોગ્ય છે.

આ અંગે સુધન નામના વણિકપુત્રનું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે—

સુધન નામના એક વણિકપુત્રને કેવી રીતે આ સંયોગનું ફળ કડવું  
 માલુમ પડ્યું? અને કેવી રીતે વિરક્ત બનીને તેનો પરિત્યાગ કર્યો? એ વાત



दक्षिणतः, सुनन्दश्चोत्तरतो निवसन्नासीत् । तत्रैकोऽपरस्य गृहे प्राघुणिकोऽभवत्, तदोभौ मिथश्चिन्तितवन्तौ—आवयोः प्रीतिर्दृढतरा कथं भविष्यति ?, यथावयोर्मध्ये एकस्य पुत्रः स्यादेकस्य च पुत्री, तदा तयोर्वैवाहिकसम्बन्धेनावयोः संयोगस्तज्जनिता प्रीतिश्च स्थिरतरा भविष्यति । अथैकदा दक्षिणदिग्वर्तिनः श्रेष्ठिनः सुधननामकः पुत्रो जातः, उत्तरदिग्वासिनः श्रेष्ठिनश्च पुत्री, कुसुमवती—नाम्नी समजनि । तयोः परस्परं वाम्दानं संजातम् । तदनन्तरं दक्षिणदिग्वासी वणिग् मृतः । तस्मिन् मृते—सति तत्पुत्रः सुधनः पितुर्धनाधिकारी संजातः । प्रचुरं पितृधनं प्राप्य स प्रसुदितो—

यात उसीके आख्यान द्वारा प्रकटित की जाती है—मथुरा नगरीमें सुभग और सुनन्द नाम के दो वणिक् निवास करते थे । सुभग का घर दक्षिण दिशा में था और सुनन्द का घर उत्तर दिशा में । एक दिनकी बात है कि इन दोनों में से एक दूसरे के घर मेहमान हुआ था, वहाँ इन दोनों ने परस्पर यह विचार किया कि-अपने दोनों का यह स्नेह सर्वदा इसी तरह से बना रहे, इस हेतु अपनेदोनों में से यदि एक को पुत्र हो और दूसरे को पुत्री हो तो दोनों का विवाह कर दें । भाग्यवशात् ऐसा ही हुआ कि-सुभग के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ । लड़केका नाम सुधन रखा गया । उत्तरदिशा में निवास करनेवाले उस सुनन्दके यहाँ एक पुत्री हुई । उसका नाम कुसुमवती रखा गया, पूर्वनिश्चित के अनुसार इनकी सगाई-वाम्दान पक्की कर दी गई । सगाई पक्की करके सुभग का तो देहांत हो गया । पिता के धनका अधिकारी पुत्र होता है, इस नियम

तेना आખ्यान द्वारा प्रकट કરવામાં આવે છે—મથુરા નગરીમાં સુભગ અને સુનંદ નામના બે વણિક્કુ નિવાસ કરતા હતા. સુભગનું ઘર દક્ષિણ દિશામાં હતું અને સુનંદનું ઘર ઉત્તર દિશામાં. એક દિવસની વાત છે કે એ બંનેમાંથી એક બીજાને ઘર મહેમાન બનેલ, ત્યાં આ બંનેએ પરસ્પર વિચાર કર્યો કે—આપણા બંનેનો આ સ્નેહ કાયમ ટકી રહે તે હેતુથી આપણા બંનેમાંથી કદાચ એકને પુત્ર હોય અને બીજાને પુત્રી હોય તો બંનેના વિવાહ કરી દેવા. ભાગ્યવશાત્ એવું જ બન્યું કે, સુભગને ત્યાં પુત્રનો જન્મ થયો, છોકરાનું નામ સુધન રાખવામાં આવ્યું. ઉત્તર દિશામાં નિવાસ કરવાવાળા તે સુનંદને ત્યાં પુત્રી અવતરી, તેનું નામ કુસુમવતી રાખવામાં આવ્યું. અગાઉના નિશ્ચય અનુસાર તેમની સગાઈ કરવામાં આવી. સગાઈ પાકી કર્યા પછી સુભગનું મૃત્યુ થયું. પિતાના ધનનો અધિકારી પુત્ર હોય છે, આ નિયમ અનુસાર પોતાના પિતાના ધનનો સુધન અધિકારી બન્યો. કોઈ એક સમયે સુધને સ્નાન

ઽભવત્ । અથૈકદા તેન સ્નાનાર્થે પાર્શ્વતઃ પૃષ્ઠતઃ પુરતથતુર્દિશુ ચત્વારઃ સ્વર્ણ-કલશા-  
થત્વારો રૌપ્યકલશાથત્વારસ્તામ્રકલશાથત્વારો મૃન્મયકલશા જલપૂર્ણાઃ સ્થાપિતાઃ,  
અન્યાન્યપિ સ્નાનોપકરણાનિ તત્રોપસ્થાપિતાનિ । અત્રાન્તરે તત્પૂર્વભવમિત્રદેવસ્તં  
પ્રતિવોધયિતું સમાગતઃ । સ વણિક્ષુપુત્રઃ સુધનઃ સ્નાનાર્થે સ્વર્ણકલશમુત્થાપયતિ,  
સ સ્વર્ણકલશસ્તદાનીમેવ મિત્રદેવપ્રભાવાત્પ્રણપ્ઠઃ, એવં ચતુર્દિશુ સર્વે કલશાઃ  
પ્રણપ્ઠાઃ । તતોઽસૌ સ્નાનપીઠાદુત્તિષ્ઠતિ । તસ્મિન્નુત્થિતે સતિ સ્નાનપીઠમપિ નષ્ટમ્ ।  
તતસ્તસ્ય ધૃતિર્નષ્ટા । યાવદ્ ગૃહં પ્રવિષ્ટઃ, ધૃત્યૈર્ભોજનવિધિરુપસ્થાપિતઃ, સ્વર્ણરૌપ્ય-

કે અનુસાર સુધન અપને પિતાકે ધનકા અધિકારી બના । કિસી એક  
સમય સુધનને સ્નાન કે અવસર પર ધૃત્યોંસે ચાર સોને કે કલશ, ચાર  
ચાંદી કે કલશ, ચાર તાંબેકે કલશ ઓર ચાર હીંમિટ્ટી કે કલશ પાની  
સે ભરવાકર અપની ચારોં ઓર આજૂ વાજૂ ઓર સમક્ષ એવં પીછે કી  
ઓર, હસ પ્રકાર ચારોં દિશાઓં મેં રચવા લિયે । હસકે વાદ હસકા  
પૂર્વભવકા મિત્ર જો દેવપર્યાય મેં થા હસકી હસ તરહ સંયોગી પદાર્થોં કે  
સેવન મેં અધિક લાલસા કા નિરીક્ષણ કર હસકો પ્રતિવોધ દેને કે લિયે  
વહાં આયા । વણિક્ષુપુત્ર હસ સુધન ને જ્યોંહી નહાને કે લિયે સુવર્ણ કે  
કલશ કો ડપર ડઠાયા કિ હસી સમય વહ કલશ હસ અદૃશ્ય હુણ દેવ  
કે પ્રભાવ સે શીઘ્ર હી અદૃશ્ય હો ગયા । હસી તરહ અવશિષ્ટ ત્રીન  
કલશોં કી બી યહી હાલત હુઈ । વહ એકદમ સ્નાન પીઠ સે ડઠ કર ચડા  
હો ગયા ઓર જ્યોં હી હસસે નીચે ડતરા તો વહ સ્નાન પીઠ બી હસકી  
નજરોં કે સમક્ષ હી નષ્ટ-અદૃશ્ય હો ગયા । હસને આશ્ચર્યચકિત હોકર  
હધર ડધર દેલા પર કુછ સમજ મેં નહોં આયા । યહ કયાવાત હૈ હસસે

કરવાના સમયે નોકરોથી ચાર સોનાના કળશ, ચાર ચાંદીના કળશ, ચાર તાંબાના  
કળશ, અને ચાર માટીના કળશ પાણીથી ભરાવીને પોતાની ચારે તરફ-આબુ-  
બાબુ ચારે દિશાઓમાં રખાવ્યા. આ પછી એના પૂર્વ ભવનો મિત્ર જે દેવ  
પર્યાયમાં હતો તેણે આ રીતે સંયોગી પદાર્થના સેવનમાં અધિક લાલસાનું  
નિરીક્ષણ કરી તેને પ્રતિબોધ આપવા માટે ત્યાં આવ્યો. વણિક્ષુપુત્ર સુધને નહાવા  
માટે જ્યાં સુવર્ણ કળશને ઉપાડ્યો ત્યાં અદૃશ્ય રહેલા દેવના પ્રભાવથી  
તે કળશ તુરંત જ અદૃશ્ય થઈ ગયા. આજ રીતે બીજા ત્રણ કળશોની  
પણ એજ હાલત થઈ. વણિક્ષુપુત્ર સ્નાનની જગ્યાએથી એકદમ ઊભો થઈ  
ગયો અને પાટલા ઉપર પોતે બેઠો હતો તેનાથી નીચે ઊતર્યો ત્યાં એ પાટલો  
પણ અદૃશ્ય થઈ ગયો. એણે આશ્ચર્યચકિત બની ચારે તરફ જોવા માંડ્યું

मयभोजनपात्राणि समानीतानि, तत्रैकैकभाजनं क्रमेण नष्टमभवत् । यदाऽसौ स्वर्णमयस्थालमग्रतो धावमानं व्योम्नि पश्यति, तदा तत् स्थालं हस्तेन गृह्णाति, गृहीते सति तदग्रभागतः खण्डमेकं तस्य करतललग्नमासीत्, अपरभागतः स्वर्णमय-स्थालं सर्वं प्रणष्टम् । ततः त्रुटितस्थालैकखण्डहस्तः सुधनः सर्वं नश्यद् विलोक्यन् मूलधनं द्रष्टुमागच्छति, तावत् सर्वं मूलधनमपि नष्टम् । एवं सर्वाऽपि तस्य श्री विनष्टा । अथ निर्धि द्रष्टुमागच्छति तदा सर्वं निधानमपि नष्टम् । एवं दासीवर्गः, परिवारवर्गोऽपि तस्य नष्टः ।

इसका धैर्य नष्ट हो गया । घर में जाकर यह ज्यों ही भोजन करने के लिये भोजनालय में गया तो रसोईयेने पहिलेसे सजाकर रखे हुए सुवर्ण एवं चांदी के भोजनपात्रों में इसके बैठने पर भोजन परोस दिया परन्तु इसके समक्ष ही वे सब के सब भोजनपात्र क्रम २ से नष्ट हो गये—पता नहीं पडा कहाँ चले गये। जब एक सुवर्ण का थाल जो इसके समक्ष ही आगे से उठकर आकाश में उड़ने लगा तो इसने उसे थाम कर पकड़ लिया । पकड़ते ही उस थाल की किनार टूटकर इसके हाथ में रह गयी। चांदी का थाल नष्ट हो गया । यह फिर उस टुकड़े को हाथ में लिये हुए ही अपने मूल धन को देखने के लिये वहाँ से दूसरी तरफ चला तो क्या देखता है कि इसका मूल धन भी सब नष्ट हो चुका है । इस तरह समक्ष ही देखते २ इसकी समस्त लक्ष्मी नष्ट हो गई । निधान नष्ट हो गया । दासी-दास आदि और परिवार वर्ग भी नष्ट हो गये । अब यह उस

परंतु કાંઈ સમજવામાં ન આવ્યું. એનામાં ધિરજ ન રહી. આથી અકળાઈ નાવાનું છોડી દઈ ઘરમાં ગયો અને ભોજન કરવા ભોજનાલયમાં પહોંચ્યો. જ્યાં રસોઈયાએ સોના ચાંદિના વાસણોમાં એના બેઠા પછી ભોજન પીરસ્યું. ભોજન પિરસાયા પછી તેની નજર સામે ભેત ભેતામાં કમ કમથી ભોજનપાત્રો અદૃશ્ય થવા લાગ્યાં. બીજર ન પડી કયાં ચાલ્યાં ગયાં. એક સુવર્ણ થાળ જે તેની સામેથી ઉડવા માંડેલો તેને હાથથી પકડતાં એ થાળની કિનાર તુટીને તેના હાથમાં રહી ગઈ. અને બાકીનો થાળ અદૃશ્ય બની ગયો. થાળના તુટેલા ટુકડાને હાથમાં રાખીને પોતાના મુળ ધનને ભેવા માટે ત્યાંથી બીજી તરફ ગયો. ત્યાં જતાં શું દેખે છે કે પોતાનું મુળ ધન પણ અદૃશ્ય બની ગયું હતું આ રીતે પોતાની નજર સામે તેની સઘળી લક્ષ્મી અદૃશ્ય બની ગઈ, નિધાન નષ્ટ થઈ ગયો. દાસી દાસ વગેરે પરિવાર પણ

અથાસૌ સ્વર્ણમયસ્થાલૈકલ્પહસ્તઃ સન્નિતસ્તતો ભ્રામ્યન્નકસ્માદુત્તરભાગ-  
વાસિનઃ પિતૃમિત્રસ્ય સુનન્દનામકસ્ય વણિજો ગૃહં જગામ । તં દૃષ્ટ્વા સુનન્દસ્તં  
સાદરં ભોજયામાસ । ભોજનસમયે સુધનસ્તાનિ તાનિ રત્નાનિ, તાંથ સ્વર્ણકલશાન્,  
તાનિ સ્વર્ણમયસ્થાલાનિ સર્વાણિ સ્વકીયાનિ વસ્તૂનિ તત્ર દદર્શ । તત્તદ્ વસ્તુજાતં  
પ્રેક્ષમાણં વણિક્પુત્રં સુધનં સુનન્દો વણિક્ પૃચ્છતિ-કિં મમ પુત્રીં પશ્યસિ ?  
સુધનેનોક્તમ્-નાહં તવ પુત્રીં પશ્યામિ, કિં તુ ત્વદ્ગૃહસ્થિતાન્યેતાનિ રત્નમયાનિ  
વસ્તૂનિ મદીયાનિ સન્તીતિ વિલોકયામિ । સુનન્દેન વણિજા પ્રોક્તમ્—કિમત્ર

સોને કે થાલ કે ટુકડે કો હાથ મેં લિયે હુણ્ ઇધર-ઉધર ઘૂમને ફિરને  
લગા । ફિરતે ૨ इसकी दृष्टि उस उत्तर दिशा में रहने वाले सुनन्द के  
मकान ऊपर पड़ी, जो इसके पिता का मित्र था । यह उसके घर पर  
गया । सुनन्द ने उसको आदर के साथ भोजन करने के लिये बैठाया ।  
वहां पर सुधन ने अपनी समस्त नष्ट हुई वस्तुएँ देखीं-वे ही सोने के  
थाल, वे ही सुवर्णादि के कलश और वे ही रत्न आदि । जब उसकी दृष्टि  
उन अपनी चीजोंके निरीक्षण करने में आसक्त हो रही थी, तब अचानक  
ही बीचमें टोकते हुए सुनन्द ने कहा-सुधन ! यह क्या करते हो ?  
तुम्हारी दृष्टि इस समय कहां है, क्या हमारी पुत्री को देख रहे हो ?  
सुनन्द के वचन सुन कर सुधन ने कहा-महाशय ! मैं आपकी पुत्री को  
नहीं देख रहा हूँ, किन्तु यह विचार कर रहा हूँ कि “ तुम्हारे यहां रही  
हुई ये सबही रत्नादिक वस्तुएँ मेरी हैं, यहां ये कैसे आ गईं ” इस बात  
का विचार कर रहा हूँ । सुनन्द ने कहा-तुम्हारी होने का क्या प्रमाण है ?

નષ્ટ થઈ ગયા, આ પછી સોનાના થાલના ટુકડાને હાથમાં રાખીને તે અહિં  
તહિં ધુમવા લાગ્યો. ફરતાં ફરતાં તેની દૃષ્ટિ ઉત્તર દિશામાં રહેવાવાળા સુનંદના  
મકાન ઉપર પડી, જે તેના પિતાનો મિત્ર હતો. તે એના ઘર ગયો. સુનંદે  
તેને આવકારી પ્રેમપૂર્વક ભોજન કરવા બેસાડ્યો. ત્યાં સુધને પોતાની નષ્ટ  
થએલી સઘળી વસ્તુઓ જોઈ-તેજ સોનાનો થાળ, એજ સોનાના કળશ અને  
એજ રત્ન આદિ. જ્યારે તેની દૃષ્ટિ એ પોતાની ચીજોનું નિરીક્ષણ કરવામાં  
આસક્ત થઈ રહી હતી, ત્યારે અચાનક જ તેને ટોકતાં સુનંદે કહ્યું-સુધન !  
આ શું કરો છો ? તમારી દૃષ્ટિ આ સમયે ક્યાં છે, શું મારી પુત્રીને જોઈ  
રહ્યા છો ? સુનંદના વચન સાંભળીને સુધને કહ્યું-મહાશય ! હું આપની  
પુત્રી તરફ જોતો નથી, પરંતુ એ વિચાર કરું છું કે “ તમારે ત્યાં રહેલી આ  
સઘળી રત્નાદિક વસ્તુઓ મારી છે, અહિં એ કઈ રીતે આવી ” આ વાતનો  
વિચાર કરી રહ્યો છું. સુનંદે કહ્યું-તમારી હોવાનું શું પ્રમાણ છે. હા. પ્રમાણ છે.



प्रमाणम् ? । सुधनः प्रत्याह—त्वद्गृहावस्थितस्यैतस्य त्रुटितस्वर्णमयस्यालस्य खण्ड—  
मेकं मम हस्ते विद्यते, पश्य संयोजयामीत्युक्त्या संयोजयति, संयोजिते सति तत्  
खण्डं तत्र सम्यक् संलग्नम् । अथ सुनन्दः पृच्छति—कस्त्वम्, सुनन्देन पृष्टोऽसौ  
वणिक्पुत्रः सुधनः स्वपितुर्नाम कथयित्वा परिचयं दत्तवान् । तस्मिन् वणिक्—  
पुत्रे परिचिते सति सुनन्दः पुनराह—त्वं तु मम जामाताऽसि, इति । इत्थं सर्वे  
हां, प्रमाण है तभी तो ऐसा कह रहा हूँ, नम्रता से सुधन ने  
जवाब दिया । साबित करनेकी चेष्टा करते हुए सुधन ने वह एक  
सोने के थाल की किनार जो उसके हाथ में पहिलेसे थी उसको  
दिखलाया, और यह भी बतलाया कि देखो यह सुवर्ण का थाल  
जो भग्न अवस्था में आप के यहां है उसी की यह किनार है ।  
मैं आप के ही समक्ष उसे इसमें जोड़ता हूँ, यदि यह उस थाल में  
जुट जाये तो आपको मेरी बात सत्य माननी पड़ेगी । सुनन्द ने  
यह सब स्वीकार कर लिया । सुधन ने सुनन्द के समक्ष ही उस किनार  
को उस थाल में ज्यों ही योजित किया तो वह उस में अच्छी तरह जुट  
गया । यह देखकर सुनन्द ने कहा—ठीक है । अब तुम यह तो बतलाओ  
कि तुम हो कौन ? इस प्रकार सुनन्द के पूछ ने पर सुधन ने उसे अपना  
परिचय दे दिया । परिचय पाकर सुनन्द बहुत हर्षित हुआ और कहने  
लगा कि धन्य है आज का दिन जो आपके दर्शन हुए । आपके पिताने  
मेरी पुत्री के साथ आप का पहिले से वाग्दान निश्चित कर दिया था,  
अतः आप मेरे संबंध में जामाता हैं । अब आप योग्य हो चुके हैं, इस

त्यारे तो એવું કહી રહ્યો છું તેવો નમ્રતાથી જવાબ સુધને આપ્યો. સાબીત  
કરવાની ચેષ્ટા કરતાં પોતાના હાથમાં રહેલી સોનાના થાળની કિનાર તેને  
બતાવી, અને એ પણ જણાવ્યું કે જુઓ સોનાનો થાળ જે તુટેલી અવસ્થામાં  
તમારે ત્યાં છે તેની આ કિનાર છે. આપની સમક્ષ જ હું તેને આ સાથે જોડું  
છું, કદાચ તે આ થાળ સાથે જોડાઈ જાય તો આપને મારી વાત સત્ય માનવી  
પડશે. સુનંદે એ વાતનો સ્વીકાર કર્યો. સુધને સુનંદની સામે જ એ કિનાર  
તુટેલા થાળ સાથે જોડતાં તેની સાથે બરાબર મળી ગઈ. આ જોઈ સુનંદે  
કહ્યું—ડીક છે, હવે તમે એ તો બતાવો કે તમે છે કેણુ ? આ પ્રકારે સુનંદના  
પૂછવાથી સુધને તેને પોતાનો પરિચય આપ્યો. પરિચય સાંભળતાં જ ખૂબ જ  
હર્ષ પામ્યો અને કહેવા લાગ્યો કે ધન્ય છે આજનો દિવસ, કે આપનાં દર્શન  
થયાં. તમારા પિતાએ મારી પુત્રી સાથે તમારું વેવિશાળ અગાઉ નક્કી કરેલું  
એટલે તમે મારા જમાઈ છો, અને તમે યોગ્ય ઉમરના થયા છો, એ માટે મારી

પૂર્વવૃત્તં વર્ણયિતા સુનન્દો વણિક્ષુ પુનરવોચત્-ગૃહાણ મમ પુત્રીં, મદીયં સર્વસ્વં ચ ।  
 एतद्वचनं श्रुत्वा सुधनोऽब्रवीत्-पुरुषः पूर्वं कामभोगान् परित्यजति, कामभोगा  
 वा पुरुषम्, मां तु कामभोगा एव पूर्वं परित्यक्तवन्तस्तेनाहं तान् परित्यजामि,  
 नास्ति मे किञ्चित् प्रयोजनं तव पुत्र्या सर्वस्वेन चेति । एवं संवेगसंवलितं सुधन-  
 वचनं श्रुत्वा सुनन्दो वणिक्ષु संवेगं प्राप्तवान् ।

अथ वणिक्ષुपुत्रस्य सुधनस्य वैराग्यं दृष्ट्वा तत्पूर्वभवमित्रदेवः प्रत्यक्षीभूय  
 तमब्रवीत्-त्वां प्रतिबोधयितुं मया सर्वमेतत् समाचरितम्, इत्युक्त्वा तस्मै सदोरक्त-  
 मुखवस्त्रिकारजोहरणपात्रादीनि साधूपकरणानि समर्पितानि । तदा सुधनः सुनन्देन  
 सह प्रव्रजित इति ।

લિયે મેરી પુત્રી કો ઓર મેરે સર્વસ્વ કો અપનાકર મુझे કૃતાર્થ કરે ।  
 सुनंद के वचनोंको सुनकर सुधन ने कहा-संसार की विचित्रता को  
 देखो । प्रायः पुरुष ही पहिले काम-भोगोंका परित्याग किया करता है  
 परन्तु आश्चर्य है कि जब काम-भोगों ने ही मुझे पहिले से छोड़ दिया  
 है, तब अब सुन्दर मार्ग यही है कि मैं भी अब इन्हें सर्वथा छोड़ दूं,  
 अतः मुझे अब न आपकी पुत्री से मतलब है और न आपके सर्वस्व से ।  
 इस प्रकार वैराग्य से युक्त सुधन के वचनको सुनकर सुनंद भी वैराग्य  
 को प्राप्त हुआ । वणिक्ષुपुत्र सुधनके वैराग्यको देखकर उसका पूर्वभवीय  
 वह मित्र जो देव था प्रत्यक्ष होकर उससे कहने लगा-मित्र सुधन !  
 तुम्हें प्रतिबोधित करने के लिये ही मैंने यह सब खेल रचा है, अच्छा  
 हुआ तुम प्रतिबोधित हो गये । इस प्रकार कहते हुए उसने उसके लिये

પુત્રીને અને મારા સર્વસ્વને પોતાનું માની મને કૃતાર્થ કરે. સુનંદનાં વચનો  
 સાંભળી સુધને કહ્યું-સંસારની વિચિત્રતાને જુઓ, ખરી રીતે પુરુષ જ કામ  
 ભોગોનો પરિત્યાગ કરતો આવેલ છે, પરંતુ આશ્ચર્ય છે કે જ્યારે કામ-ભોગોએ  
 જ પહેલેથી મને છોડી દીધેલ છે, ત્યારે સારામાં સારો માર્ગ એ છે કે હું  
 પણ આને સર્વથા છોડી દઉં, એટલે મને હવે નથી આપની પુત્રીથી મતલબ  
 કે ન આપના સર્વસ્વથી. આ પ્રકારનાં વૈરાગ્યથી યુક્ત એવાં સુધનનાં વચનો  
 સાંભળીને સુનંદને પણ વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત થયો. હવે વણિક્ષુપુત્ર સુધનના વૈરાગ્યને  
 જોઈ તેના પૂર્વભવનો મિત્ર કે જે દેવ છે તે પ્રત્યક્ષ બની તેને કહેવા લાગ્યો-  
 -મિત્ર સુધન ! તને પ્રતિબોધિત કરવા માટે જ મેં આ મિત્રજો બેલ રચેલ છે.  
 હીક થયું કે તમે પ્રતિબોધ પામ્યા. આ પ્રકારે કહેતાં તેણે તેના માટે

अनगारस्य=न विद्यतेऽगारं = गृहं यस्य सोऽनगारः=द्रव्यभावगृह-  
रहितः, तत्र द्रव्यागारं-नियतवासस्थानम्, भावागारं कपायमोहनीयं कर्म, तस्य  
स्थित्यादिभूयस्त्वे नास्ति विरतिसंभवस्तस्मादल्पकपायमोहनीयो भावतोऽनगार-  
स्तस्य भिक्षोः=हननघातनादिनवकोटिपरिशुद्धभिक्षाग्राहिणः विनयम्=विशिष्टो  
साधु के उपकरणरूप सदोरक मुखवस्त्रिका रजोहरण एवं पात्र आदि  
समर्पित किये । इस प्रकार संयोग का कटुक फल जानकर सुधनके साथ  
सुनन्द भी प्रव्रजित हो गया ।

अब 'अणगारस्स भिक्खुणो' का अर्थ कहते हैं-अनगार शब्द  
का अर्थ घर का परित्याग करना है । द्रव्य और भावके भेदसे अगार  
के दो भेद हैं । नियत जो निवास का स्थान है-वह द्रव्य-अगार है ।  
कपाय-मोहनीय कर्म भाव-अगार है । इसकी उत्कृष्ट स्थिति आदि में  
जीव को विरतिका लाभ नहीं होता है । विरति का लाभ होने के लिये  
इसकी स्थिति आदि अल्प अपेक्षित होती है, इसलिये अल्पकपाय-  
मोहनीयवाला भावानगाररूप से विवक्षित हुआ है । अब 'भिक्षु'  
शब्द का अर्थ कहते हैं-भिक्षु वही हो सकता है जो हनन घातन आदि  
क्रियाओं का नवकोटि से परित्यागी होता है, अर्थात् हनना, हनवाना,  
उसका अनुमोदन करना, पकाना, पकवाना, उसका अनुमोदन करना,  
खरीदना, खरीदवाना, उसका अनुमोदन करना, इन नवकोटि दोषोंसे

साधुनां उपकरणरूप दोरासाधेभुजवस्त्रिका, रजोहरण अने पात्रा आदि  
समर्पित कर्था. आ प्रकारे संयोगनां कटुवां क्षणने ज्ञप्तिने सुधननी साथेसाथ  
सुनंदे पणु प्रव्रज्या अंगीकार करी.

इसे "अणगारस्स भिक्खुणो" का अर्थ कहे छे-अनगार शब्दने  
अर्थ घरने परित्याग करवे. ते द्रव्य अने भावना लेहर्था अगारना जे लेह छे.  
नियत जे निवासनु स्थान छे ते द्रव्य-अगार छे. कपाय मोहनीय  
कर्म भाव-अगार छे. तेनी उत्कृष्ट स्थिति आदिमां जवने विरतिने लाभ थतो  
नथी. विरतिने लाभ थवा भाटे अनी स्थिति आदि अल्प अपेक्षित थाय  
छे, आ भाटे अल्पकपायमोहनीयवाणा भावानगाररूपथी विवक्षित थयेल छे.

इसे "भिक्षु" शब्दने अर्थ कहे छे-भिक्षु अज्ज थछं शके छे जे हनन घातन  
आदि क्रियाओने नवकोटीथी परित्याग करे छे. अर्थात् डणुवुं, डणुववुं अने तेनुं  
अनुमोदन करवुं. पकाववुं, पीज्जथी तैयार कराववुं, तेनुं अनुमोदन करवुं,  
परीदवुं, परीदववुं, अने तेनुं अनुमोदन करवुं, आ नवकोटी दोषेथी रहित

નયો નીતિર્વિનયઃ=સાધુસમાદતઃ સમાચારસ્તમ્, યદ્વા-વિનયતિ=નાશયતિ સકલ-  
 વલેશજનકમણ્વિધં કર્મ સ વિનયસ્તમ્, ગુરું પ્રતિ નીચૈર્વૃત્તિલક્ષણા નમ્રતા દ્રવ્યતો  
 વિનયઃ, સાધ્વાચારં પ્રતિ પ્રવળત્વં ભાવતો વિનયસ્તમિત્યર્થઃ, પ્રાદુષ્કરિષ્યામિ=  
 પ્રકટયિષ્યામિ । કેન પ્રકારેણ પ્રાદુષ્કરિષ્યામીત્યાકાઙ્ક્ષાયમાહ-‘આણુપુર્વિ’  
 इति । આનુપૂર્વીમિતિ, અત્ર-સૌત્રત્વાત્ તૃતીયાર્થે દ્વિતીયા, આનુપૂર્વ્યા=ક્રમેણ  
 શાસ્ત્રોક્તપરિપાટ્યેત્યર્થઃ, હે શિષ્યાઃ ! મે=મમ મત્સકાશાદિત્યર્થઃ, યદ્વા-‘મે’ इति  
 વિભક્ત્યન્તમતિરૂપકમવ્યયમ્ મે=મત્તઃ, ગૃણુત=ગૂયમાકર્ણયત શ્રવણં પ્રતિ સાવધાના  
 ભવતેત્યર્થઃ । સ્વશિષ્યાભિમુખીકરણાર્થમિદમ્ ॥ ૧ ॥

‘વિનયં પ્રાદુષ્કરિષ્યામી’ત્યુક્તં, તત્ર વિનીતલક્ષણે વિજ્ઞાતે સતિ વિનય-  
 સ્વરૂપં વિદિતં સ્યાદિતિ વિનીતલક્ષણમાહ—

રહિત ભિક્ષા કા ગ્રહણ કરનેવાલા ભિક્ષુ કહા ગયા હૈ । વિનયં કા અર્થ  
 હૈ-વિશિષ્ટ નય, હસલિયે યહાં ‘વિનય’ શબ્દ સે સાધુઓંકા આચાર  
 સમજના ચાહિયે । અથવા-જો અષ્ટવિધ કર્મોંકા નાશ કરે સો ‘વિનય’  
 હૈ । વહ વિનય દ્રવ્ય-વિનય ઓર ભાવ-વિનય કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા  
 હૈ । ગુરુ કે પ્રતિ, તથા પર્યાયજ્યેષ્ઠોંકે પ્રતિ નમ્ર હોના, તથા ઝનકી સેવા  
 કરના યહ દ્રવ્ય-વિનય હૈ । સાધ્વાચાર મેં તત્પર રહના યહ ભાવ-વિનય  
 હૈ । ઝસ વિનય કો મૈં શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ કે અનુસાર પ્રકટ કરૂંગા,  
 અતઃ હે જંબૂ ! તુમ સબ મુઝ સે હસ વાત કો અઙ્છીતરહ સુનો ॥ ૧ ॥

વિનીત કે લક્ષણ કા જવતક જ્ઞાન ન હો જાય તવ તક વિનય કા  
 સ્વરૂપ જાના નહોં જા સકતા હૈ, હસલિયે સૂત્રકાર વિનીત કા લક્ષણ  
 કહતે હૈ—‘આણાણિદેસકરે’ इत्यादि ।

ભિક્ષાને ગ્રહણ કરવાવાળા ‘ભિક્ષુ’ કહેવાય છે. વિનયનો અર્થ છે-વિશિષ્ટ નય,  
 આ માટે અહિં ‘વિનય’ શબ્દથી સાધુઓનો આચાર સમજવો જોઈએ. અથવા-  
 જે અષ્ટવિધ કર્મોનો નાશ કરે તે ‘વિનય’ છે. તે વિનય દ્રવ્ય-વિનય અને ભાવ-  
 વિનયના ભેદથી બે પ્રકારે છે. ગુરૂના પ્રતિ તથા પર્યાયથી બડાઓ પ્રતિ નમ્ર  
 થવું, તથા તેની સેવા કરવી તે દ્રવ્ય વિનય છે. સાધુના આચારમાં તત્પર રહેવું  
 એ ભાવ-વિનય છે. તે વિનયને હું શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ અનુસાર પ્રગટ કરીશ,  
 માટે હે જંબૂ ! તમે મારાથી આ સઘળી વાતને સારી રીતે સાંભળો (૧).

વિનીતના લક્ષણનું જ્યાં સુધી જ્ઞાન ન થાય ત્યાં સુધી વિનયનું સ્વરૂપ જાણી  
 શકાતું નથી. આ માટે સૂત્રકાર વિનીતનાં લક્ષણ કહે છે.—‘આણાણિદેસકરે’. इत्यादि.



मूलम्—आणाणिदेसकरे, गुरुणमुववायकारण ।

इंगियागारसंपण्णे, से विणीए त्ति वुच्चई ॥ २ ॥

छाया—

आज्ञानिर्देशकरः गुरुणामुपपातकारकः ।

इङ्गिताकारसम्पन्नः स विनीत इत्युच्यते ॥ २ ॥

टीका—

‘आणाणिदेसकरे’ इत्यादि । आज्ञानिर्देशकरः=आज्ञा=विधिरूपं प्रतिषेधरूपं वा गुरुवचनं, यथा—‘इदं कुरु’ ‘इदं मा कुरु’ इति, तस्या निर्देशः—भवद्वचनानुसारेण करिष्यामीति कथनं, तस्य करः=कर्ता, यद्वा—आज्ञायाः=तीर्थ-करवाण्या निर्देशः=उत्सर्गापवादकथनं, तस्य कारकः, तथा-गुरुणाम्=आचार्यादीनाम्, उपपातकारकः=उपपातः=समीपेऽवस्थानं, तस्य कारकः, आचार्यादिसंनिहितस्थान-वर्ती, न तु तन्नियोगवचनभयाद् दूरावस्थायीत्यर्थः, तथा-इङ्गिताकारसम्पन्नः, इङ्गितं=निपुणमतिगम्यं स्वाभिप्रायसूचकमीपद्भ्रूचालनादिकम्, आकारः=स्थूल-मतिगम्यः प्रस्थानादिसूचको दिगवलोकनादिः, ताभ्यां संपन्नः=युक्तः, गुरुमनो-वृत्तिज्ञानवानित्यर्थः, एवंभूतो यः शिष्यः सः विनीतः=विनयवान्, इत्युच्यते तीर्थैकरगणधरादिभिरिति शेषः ।

अन्वयार्थ—(गुरुणं-गुरुणां) आचार्य आदिकी (आणाणिदेसकरे-आज्ञानिर्देशकरः) आज्ञा को मानने वाला (उववायकारण-उपपातकारकः) उनके निकट सदा रहने वाला (इंगियागारसंपण्णे-इंगिताकारसंपन्नः) इंगित-सूक्ष्म बुद्धि वालों से जानने योग्य गुरु आदि की भ्रूचालन आदि चेष्टा । आकार-स्थूल बुद्धि वालों से भी समझने योग्य गुरु आदि की गमनादिसूचक दिशाका अवलोकनादि चेष्टा । गुरु आदि की इन दोनों चेष्टाओं को अच्छी तरह जानने वाला जो शिष्य होता है (से विणीए

अन्वयार्थ—(गुरुणं-गुरुणां) आचार्य वगैरेणी (आणाणिदेसकरे-आज्ञा-निर्देशकरः)आज्ञाने मानवावाणा (उववायकारण-उपपातकारकः) ओमनी पास सदा रहेवावाणा (इंगियागारसंपण्णे-इंगिताकारसंपन्नः) इंगित-सूक्ष्म बुद्धिवाणाथी न्णुवा योग्य गुरुनी भ्रूचालन-(आणने धशारे) आदिनी चेष्टा, आकार-स्थूल बुद्धिवाणाथी पणु समजवा योग्य गुरु आदिनी गमनादिसूचक दिशानुं अवलोकन आदि चेष्टा, गुरु आदिनी आ जन्ने चेष्टाओने सारी रीते न्णुवावाणा

તિ બુચ્ચઇ-સઃ વિનીત ઇતિ ઉચ્યતે) વહ તીર્થંકર ગણધર આદિ કે દ્વારા વિનીત કહા ગયા હૈ ॥ ૨ ॥

ભાવાર્થ—“આજ્ઞાનિર્દેશકરઃ” “યહ કરો, યહ ન કરો” ઇસ પ્રકાર વિધિરૂપ ઓર નિષેધરૂપ જો ગુરુ કે વચન હૈં વે ‘આજ્ઞા’ શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । “આપ કે વચન કે અનુસાર હી પ્રવૃત્તિ કરને કા ભાવ હૈ, અન્યથા નહીં,” ઇસ પ્રકાર શિષ્ય કા કથન નિર્દેશ હૈ । ઇસ નિર્દેશ કા અચ્છી તરહ સે પાલન કરને વાલા આજ્ઞાનિર્દેશકર હૈ । અથવા—આજ્ઞા-તીર્થંકર પ્રભુ કી વાણી કેદ્વારા જો ઉત્સર્ગ ંવં અપવાદ માર્ગ કા નિર્દેશ અર્થાત્ વિધાન કિયા ગયા હૈ ઉસકે અનુસાર કરને વાલા આજ્ઞાનિર્દેશકર કહા જાતા હૈ । ઉપપાત શબ્દ કા અર્થ હૈ—સમીપ બૈઠના । શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સદા અપને ગુરુ કે સમીપ બૈઠે । ઉનકી આજ્ઞા કે પાલન કરને કે ભય સે ઉનસે દૂર ન બૈઠે । ગુરુ કા અભિપ્રાય પરત્વના યહ સાધારણ વાત નહીં હૈ । યહ વાત તબ હી સીખી જા સકતી હૈ કિ જબ શિષ્ય ઉન કે પાસ મેં બૈઠે, અન્યથા નહીં । વિનીત શિષ્ય ગુરુ કી સેવા કરને સે આત્મકલ્યાણ કરતા હૈ, ।

જે શિષ્ય હોય છે, (સે વિનીત-તિ બુચ્ચઇ-સઃ વિનીત ઇતિ ઉચ્યતે) તે તીર્થંકર ગણધર આદિ દ્વારા વિનીત કહેવાયેલ છે (૨).

ભાવાર્થ—“આજ્ઞાનિર્દેશકરઃ” “આ કરો અને આ ન કરો.” આ પ્રકારે વિધિરૂપ અને નિષેધરૂપ જે ગુરુનાં વચન છે તે ‘આજ્ઞા’ શબ્દથી બ્રહ્મણ કરવામાં આવેલ છે. “આપના વચન અનુસાર જ પ્રવૃત્તિ કરવાના ભાવ છે બીજા નથી” આ પ્રકારનું શિષ્યનું કથન નિર્દેશ છે. નિર્દેશનું સારી રીતે પાલન કરવા-વાળા આજ્ઞાનિર્દેશકર છે. અથવા—આજ્ઞા-તીર્થંકર પ્રભુની વાણીદ્વારા જે ઉત્સર્ગ અને અપવાદ માર્ગનો નિર્દેશ અર્થાત્ વિધાન કરવામાં આવેલ છે તે અનુસાર કરવાવાળા આજ્ઞાનિર્દેશકર કહેવાય છે. ઉપપાત શબ્દનો અર્થ છે. સમીપ બેસવું. શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સદા પોતાના ગુરુની સમીપ બેસે. ગુરુની આજ્ઞાનું પાલન કરવાના ભયથી તેનાથી દૂર ન બેસે. ગુરુનો અભિપ્રાય બ્રહ્મણો તે સાધારણ વાત નથી. એ વાત ત્યારે જ શીખી શકાય કે જ્યારે શિષ્ય તેની પાસે બેસે, એ શિષ્ય નહીં. વિનીત શિષ્ય ગુરુની સેવા કરવાથી આત્મકલ્યાણ કરે છે.

अत्र गुणनिधिश्रमणस्य दृष्टान्तः—

तथाहि—धर्मसिंहाचार्यस्य गुणनिधिनामकः सुधीः शिष्यः प्रकृतिभद्रः प्रकृतिविनीतः प्रतिदिवसं गुरुनिकटवासी गुरुवचनानुकूलकार्यकारी गुरुमनोवृत्त्यनुसारी गुरुविचारश्रेणिसरणिसंचरणशीलः प्रकृतिसरलः सुशील आसीत् । यदा गुरुरागच्छति तदाऽऽसनादुत्थाय तस्मै सविनयमासनं प्रयच्छति, यदा गच्छति तदाऽऽसनमुपादाय तदुपवेशनस्थाने विस्तारयति, गुरोराज्ञा कदा कीदृशी भविष्यतीत्येवं प्रतिक्षणं प्रतीक्षमाणस्तिष्ठति । यस्मिन् यस्मिन् ऋतौ यद् यद् गुरुप्रकृत्यनुकूलमशनादिकं, तत्तत् समानीय गुरवे समर्पयति । गुरुर्हि जननीजनकाभ्यामप्यधिकः, तत्र कारणं-जन्मदाता जन्मनि जन्मनि भवति, मुक्तिदाता गुरुस्तु दुर्लभः,

इस पर गुणनिधिश्रमण का दृष्टान्त कहते हैं—

धर्मसिंह आचार्य का गुणनिधि नामका एक शिष्य था। यह सुबुद्धि एवं प्रकृतिभद्र था। विनीत था। गुरु महाराज के पास बैठना उनके वचन के अनुसार चलना, उनकी मनोवृत्ति के अनुकूल काम करना, इत्यादि समस्त सद्गुणों से युक्त था। बड़ा ही सुशील था। जब गुरु महाराज पधारते तब आसन से उठ कर वह उनके लिये विनयपूर्वक आसन देता, तथा जब गुरु महाराज वहाँ से उठ कर जाते तब वह आसन लेकर उनके पीछे २ चलता और जहाँ गुरु महाराज बैठना चाहते वहाँ आसन बिछा देता। गुरु महाराज की आज्ञा कब कैसी होगी, इसकी प्रतिक्षण प्रतीक्षा करता था। जिस २ ऋतु में जो जो आहार पानी आदि गुरुमहाराज के प्रकृति के अनुकूल होता उस उस ऋतु में वही वही पदार्थ लाकर गुरु महाराज को अर्पण करता। गुरु ने जो कुछ कहा वही

आ अंगे गुणनिधि श्रमणुं दृष्टांत कहे छे—

धर्मसिंह आचार्यने गुणनिधि नामने अक शिष्य छेतो. ते सुबुद्धि-वाणे। अने प्रकृतिभद्र छेतो. विनीत छेतो. गुर् महाराज पासे भेसवुं, तेमना वचन अनुसार आलवुं, तेमनी मनोवृत्ति अनुकूल काम करवुं इत्यादि समस्त सद्गुणोथी युक्त छेतो. धणो सुशील छेतो. न्यारे गुर् महाराज पधारे त्यारे आसनथी छीने ते तेमने भाटे विनयपूर्वक आसन आपतो, तथा न्यारे गुर् महाराज त्यांथी छीने जता त्यारे ते आसन लधने तेमनी पाछण पाछण जतो अने न्यां गुर् महाराज भेसवा छच्छे त्यां आसन भीछावी (पाथरी) देतो. गुर् महाराजनी आज्ञा क्यारे डेवी छे, तेनी प्रतिक्षण प्रतीक्षा करतो छेतो. जे जे इतुमां जे जे आहार पाणी आदि गुर् महाराजनी प्रकृतिने अनुकूल होयते ते इतुमां ते ते पदार्थ लावीने गुर् महाराजने

गुरुं विना कालत्रयेऽपि ज्ञानं दुर्लभम्, यथा सिद्धाञ्जनं विना भूतलान्तर्गतं निधानं नयनपथं नावतरति, तथैव गुरुमन्तरेणात्मस्वरूपं न पश्यति । यथा दुग्धाच्चवनीतं तद्विलोडनं विना न प्राप्यते, एवं गुरुसेवनं विना रत्नत्रयं नोपलभ्यते । स गुण-

करना, यह समझ कर कि गुरु महाराज कभी भी अन्यथा प्रवृत्ति नहीं कर सकते हैं, अहित में प्रवर्तन कराने का अभिप्राय इनके अन्तःकरण में कभी भी जाग्रत नहीं हो सकता है, क्योंकि ये मेरे हितकारी हैं, इस अभिप्राय से-इस दृढ़ आस्था से-वह सदा गुरु की आज्ञा का आराधन किया करता था । साथ में उसका यह पक्का विश्वास था कि गुरुमहाराज माता पिता से भी अधिक उपकारी होते हैं, क्योंकि जन्म दाता तो इस जीव को प्रत्येक भव में प्राप्त होते रहते हैं, परन्तु मुक्तिदाता गुरु तो बड़े भाग्य से ही मिलते हैं, निर्धन को निधिके समान आत्मा को इनका समागम बहुत दुर्लभ है । आत्मज्ञानकी प्राप्ति इनसे ही हुआ करती है । गुरु के विना तो कालत्रय में भी सम्यग्ज्ञान का लाभ नहीं हो सकता है. ये तो सिद्ध-अंजन समान हैं-जिस प्रकार सिद्ध-अंजन आंखों में आंजने के प्रभाव से जीवों की भूमिगत निधान को लक्षित करनेवाली दृष्टि खुल जाती है उसी प्रकार गुरु की कृपा से आत्मज्ञान का अनुभव जीवको होने लगता है । दुग्ध के विलोडन किये विना जैसे मक्खन का

અર્પણ કરતો. ગુરુએ જે કંઈ કહ્યું એજ કરવું, એવું સમજીને કે ગુરુ મહારાજ કદી પણ અન્યથા પ્રવૃત્તિ ન જ કરાવે. અહિતમાં પ્રવર્તન કરાવવાનો અભિપ્રાય તેમના અંતઃકરણમાં કોઈ વખત પણ જાગત થાય જ નહીં, કેમકે તેઓ મારા હિતકારી છે. આ અભિપ્રાયથી-આવી દ્રઢ આસ્તાથી-તે સદા ગુરુની આજ્ઞાનું આરાધન કર્યા કરતો. સાથોસાથ તેને એ પાકો વિશ્વાસ હતો કે ગુરુ મહારાજ માતા પિતાથી પણ અધિક ઉપકારી હોય છે. કેમકે જન્મદાતા તો આ જીવને પ્રત્યેક ભવમાં પ્રાપ્ત થતા જ રહે છે. પરંતુ મુક્તિદાતા ગુરુ તો સારા સદ્ભાગ્યથી જ મળે છે. નિર્ધનને નિધિ સમાન તેવી રીતે આત્માને ગુરુનો સમાગમ ઘણો જ દુર્લભ છે. આત્મજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ તેમનાથી જ થાય છે. ગુરુ વિના તો કાલત્રયમાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાનનો લાભ થઈ શકતો નથી. એઓ તો સિદ્ધ-અંજન સમાન છે. જે પ્રકારે સિદ્ધ-અંજન આંખોમાં આંજવાના પ્રભાવથી જીવોની ભૂમિગત નિધાનને લક્ષિત કરવાવાળી દૃષ્ટિ ખુલી જાય છે એવી રીતે ગુરુની કૃપાથી આત્મજ્ઞાનનો અનુભવ જીવને થવા લાગે છે. દુધને વલોળ્યા શીવાય જેમ માળાણનું મળવું અસંભવ છે તેમ



નિધિર્ગુરુસ્તુતિં કરોતિ—હે ગુરો ! ભવાન્ વારિદ્ इव કરુણારસઘટ્ટચામામકીનં ચિત્ત-  
ચાતકં પ્રમોદયતિ, શમદમાદિગુણોદ્યાનં દરિતીકરોતિ । હે કરુણાસાગર ! ભવ-  
ત્કરુણાં વિના સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિર્ન ભવતિ, સમ્યક્ત્વં વિના તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરૂપાઽમૃત-  
ભાવના ન જાયતે, અમૃતભાવનાં વિના વિશુદ્ધધ્યાનં ન ભવતિ । વિશુદ્ધધ્યાનં વિના  
ક્ષપકથ્રેણિર્ન પ્રાદુર્ભવતિ । ક્ષપકથ્રેણિં વિના શુદ્ધધ્યાનસ્ય દ્વિતીયપાદઃ પ્રાપ્તો ન  
ભવતિ । શુદ્ધધ્યાનસ્ય દ્વિતીયપાદં વિના કેવલજ્ઞાનં ન સંભવતિ । કેવલજ્ઞાન-

મિલના અસંભવ હૈં उसी प्रकार गुरुकी सेवा किये बिना भी रत्नत्रयकी  
प्राप्ति होना महादुर्लभ है, धन्य है, गुरुमहाराज !। गुणनिधि ने इस प्रकार  
मन में विचार कर गुरु महाराज की स्तुति की, जो इस प्रकार है—  
हेगुरुमहाराज ! आप मेघ की तरह मेरे चित्तरूपी चातक को करुणारस  
के वर्षण से प्रमुदित करनेवाले हैं । शम दम आदि गुणस्वरूप उद्यान  
को हरा भरा बनाने वाले हैं । हे करुणासागर ! जयतक आपकी करुणा-  
रसार्द्र दृष्टि जीवों पर नहीं पड़ती, तबतक उन्हें सम्यक्त्व का लाभ नहीं  
होता है । सम्यक्त्व प्राप्त किये बिना जीव कभी भी तत्त्वातत्त्वविवेकरूप  
अमृत से भरी हुई भावना को अपने में नहीं भर सकता । अमृतभा-  
वना भरे बिना विशुद्ध ध्यान कभी भी नहीं जग सकता । विशुद्ध  
ध्यान की जागृति बिना जीव को क्षपकथ्रेणिकी प्राप्ति नहीं हो सकती,  
क्षपकथ्रेणि की प्राप्ति हुए बिना शुद्धध्यान का द्वितीयपाद (दूसरा

શુરની સેવા કર્યા સિવાય રત્નત્રયની પ્રાપ્તિ થવી મહાદુર્લભ છે. ધન્ય છે  
શુર મહારાજ !. ગુણનિધિએ આ પ્રકારનો મનમાં વિચાર કરી શુરમહારાજની  
સ્તુતિ કરી, જે આ પ્રકારની છે.—હે શુરમહારાજ આપ મેઘની માફક  
મારા ચિત્તરૂપી ચાતકને કરુણારસના વર્ષણથી પ્રમુદિત કરવાવાળા છો. શમ  
દમ આદિ ગુણસ્વરૂપ ઉદ્યાનને ફાલતો ફૂલતો બનાવવાવાળા છો, હે કરુણાસાગર !  
ત્યાં સુધી આપની કરુણા રસાર્દ્ર (દયાથી ભીની) દૃષ્ટિ જીવો પર નથી પડતી  
ત્યાં સુધી તેને સમ્યક્ત્વનો લાભ થતો નથી. સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કર્યા વગર  
જીવ કયારેય પણ તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરૂપ અમૃતથી ભરેલી ભાવનાને પોતાનામાં  
ભરી શકતો નથી. અમૃત ભાવના ભર્યા વગર વિશુદ્ધ ધ્યાન કદી પણ જાગ્રત  
થતું નથી. વિશુદ્ધધ્યાનની જાગ્રતિ વિના જીવને ક્ષપકથ્રેણીની પ્રાપ્તિ થતી  
નથી. ક્ષપકથ્રેણીની પ્રાપ્તિ થયા વિના શુદ્ધધ્યાનનો બીજો પાયો પ્રાપ્ત થતો

પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશ્યવસ્થા ન જાયતે । તાં વિના સકલકર્મક્ષયો ન ભવતિ । સકલ-  
કર્મક્ષયં વિના મુક્તિર્ન સંભવતિ । મુક્તિપ્રાપ્તિ વિનાઽયમાત્માઽમરપદં ન લભતે ।  
અમરપદપ્રાપ્તિ વિનાઽઽત્મનઃ સિદ્ધાવસ્થા ન જાયતે, અતો ભવાનેવ સકલકલ્યાણ-  
કારણમિતિ પ્રતિક્ષણં ભવચરણસમારાધનમેવ મમ સંયમારાધનમ્ । એવં ગુરુમારા-  
ધયન્ ગુણનિધિઃ સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ સ્વાત્મકલ્યાણમચિરેણ સાધિતવાન્ । એવ  
મન્યેનાપિ શિષ્યેણ વિનયપરેણ ભવિતવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

અવિનીતત્વવર્જનેન વિનીતો ભવતીત્યતો વિનીતવિપરીતમવિનીત-  
સ્વરૂપમાહ—

પાયા) પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । શુક્લધ્યાન કે દૂસરે પાયે કી પ્રાપ્તિ વિના  
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી  
અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ વિના સકલ  
કર્મોંકા ક્ષય નહીં હો સકતા હૈ ઓર સકલ કર્મોંકે ક્ષય વિના મુક્તિ  
કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, ઓર મુક્તિકી પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ નહીં  
મિલ સકતા । અમર પદ પાયે વિના આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસમ્પન્ન નહીં  
બન સકતા । ઇસ લિયે હે નાથ ! આપ હી સકલ કલ્યાણ કે કારણ  
હૈં, અતઃ પ્રતિક્ષણ આપકે ચરણોંકા આરાધન હી મેરા સંયમારાધન હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર અપને ગુરુકી આરાધના કરતે હુઁ ગુણનિધિ ને તપ સંયમ  
કી આરાધના કી, ઓર થોડે હી કાલ મેં આત્મકલ્યાણ કિયા । ઇસી  
તરહ અન્ય શિષ્યોંકો ભી અપને ગુરુકે પ્રતિ વિનયશીલ રહના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

નથી. શુક્લધ્યાનના ખીજ પાયાની પ્રાપ્તિ વિના કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થતી  
નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી. શૈલેશી  
અવસ્થાની પ્રાપ્તિ વિના સકલ કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી અને સકલ કર્મોંનો  
ક્ષય વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ  
મળી શકતું નથી. અમરપદ મેળવ્યા વગર આત્મા સિદ્ધઅવસ્થાસંપન્ન  
બની શકતો નથી માટે હે નાથ ! આપજ સકલ કલ્યાણના કારણ છો. એટલે  
પ્રતિક્ષણ આપના ચરણોંનું આરાધનજ માફ સંયમ આરાધન છે. આ પ્રકારથી  
પોતાના ગુરુની આરાધના કરતાં કરતાં ગુણનિધિએ તપ સંયમની આરાધના  
કરી અને થોડાજ કાળમાં આત્મકલ્યાણ કર્યું. આવી રીતે અન્ય શિષ્યોંએ  
પણ પોતાના ગુરુ પ્રત્યે વિનયશીલ રહેવું જોઈએ. ॥૨॥

આળાઽણિદેસકરે, ગુરુણમણુવવાયકારણ ।

પડિણીણ અસંબુદ્ધે, અવિણીણ-તિં વુચ્ચઈ ॥ ૩ ॥

છાયા—

આજ્ઞાઽનિર્દેશકરો ગુરુણામનુપપાતકારકઃ ।

પ્રત્યનીકોઽસંબુદ્ધઃ અવિનીત ઇત્યુચ્યતે ॥ ૩ ॥

ટીકા—

‘આળાઽણિદેસકરે’ ઇત્યાદિ । આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ=આજ્ઞાયા ગુરુવચન-  
સ્યાનિર્દેશકરઃ—અનાદરકારકઃ, તથા ગુરુણામ્=આચાર્યાદીનામ્, અનુપપાતકારકઃ=  
સમીપાનવસ્થાયી, ગુરુણાં સંનિધૌ તિષ્ઠામિ चेद् ગુરવો માં સ્વકાર્યાર્થમાજ્ઞાપયિष्य-  
ન્તીતિ વિજ્ઞાય દૂરે તિષ્ઠતીત્યર્થઃ । તથા—પ્રત્યનીકઃ=પ્રતિકૂલઃ, ગુરુદોષાન્વેષણપર  
ઇત્યર્થઃ । તથા—અસંબુદ્ધઃ જીવાજીવાદિતત્ત્વાનભિજ્ઞઃ, એવંભૂતો યઃ શિષ્યઃ સ  
સ્વત્ત્વવિનીત ઇત્યુચ્યતે ।

શિષ્ય મેં વિનીતતા, અવિનીતતા કે પરિત્યાગ સે હી આતી હૈ  
ઇસલિયે વિનીત સે વિપરીત અવિનીત કા સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહતે હૈ—  
‘આળાઽણિદેસકરે૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(ગુરુણ આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુ  
કી આજ્ઞા કા અનાદર કરને વાલા, ( અણુવવાયકારણ ) અનેકે સમીપ  
નહીં વૈઠને વાલા ( પડિણીણ ) અનેકે સદા પ્રતિકૂલ વર્તાવ કરનેવાલા  
( અસંબુદ્ધે ) જીવ એવં અજીવ આદિ કે સ્વરૂપ કો નહીં જાનનેવાલા એસા  
શિષ્ય ( અવિણીણ વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ—ઉચ્યતે ) અવિનીત કહા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ને વિનીત સે વિપરીત અવિનીત  
કા સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કિયા હૈ । યદ્યપિ યહ વાત અર્થાપત્તિ સે સ્વયં સિદ્ધ

શિષ્યમાં વિનીતતા અવિનીતતાના પરિત્યાગથી જ આવે છે. આ માટે  
વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહે છે—‘આળાઽણિદેસકરે.’ ઇત્યાદિ  
અન્વયાર્થ—(ગુરુણ આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુની આજ્ઞાનો  
અનાદર કરવાવાળા ( અણુવવાયકારણ ) એમની સામે ન બેસવાવાળા ( પડિણીણ )  
એમનાથી સદા પ્રતિકૂળ વર્તાવ કરવાવાળા ( અસંબુદ્ધે ) જીવ અને અજીવ આદિના  
સ્વરૂપને નહીં જાણવાવાળા એવા શિષ્ય ( અવિણીણ—વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ ઉચ્યતે )  
અવિનીત કહેવાય છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથાદ્વારા સૂત્રકારે વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ  
પ્રદર્શિત કરેલ છે. બોલે આ વાત અર્થાપત્તિથી સ્વયંસિદ્ધ થઈ જતી હતી

પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશ્યવસ્થા ન જાયતે । તાં વિના સકલકર્મક્ષયો ન ભવતિ । સકલ-  
કર્મક્ષયં વિના મુક્તિર્ન સંભવતિ । મુક્તિપ્રાપ્તિ વિનાઽયમાત્માઽમરપદં ન લભતે ।  
અમરપદપ્રાપ્તિ વિનાઽઽત્મનઃ સિદ્ધાવસ્થા ન જાયતે, અતો ભવાનેવ સકલકલ્યાણ-  
કારણમિતિ પ્રતિક્ષણં ભવચરણસમારાધનમેવ મમ સંયમારાધનમ્ । એવં ગુરુમારા-  
ધયન્ ગુણનિધિઃ સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ સ્વાત્મકલ્યાણમચિરેણ સાધિતવાન્ । એવ  
મન્યેનાપિ શિષ્યેણ વિનયપરેણ ભવિતવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

અવિનીતત્વવર્જનેન વિનીતો ભવતીત્યતો વિનીતવિપરીતમવિનીત-  
સ્વરૂપમાહ—

પાયા) પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । શુદ્ધધ્યાન કે દૂસરે પાથે કી પ્રાપ્તિ વિના  
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી  
અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ વિના સકલ  
કર્મોંકા ક્ષય નહીં હો સકતા હૈ ઓર સકલ કર્મોંકે ક્ષય વિના મુક્તિ  
કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, ઓર મુક્તિકી પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ નહોં  
મિલ સકતા । અમર પદ પાથે વિના આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસમ્પન્ન નહોં  
બન સકતા । ઇસ લિયે હે નાથ ! આપ હી સકલ કલ્યાણ કે કારણ  
હૈં, અતઃ પ્રતિક્ષણ આપકે ચરણોંકા આરાધન હી મેરા સંયમારાધન હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર અપને ગુરુકી આરાધના કરતે હું ગુણનિધિ ને તપ સંયમ  
કી આરાધના કી, ઓર થોડે હી કાલ મેં આત્મકલ્યાણ કિયા । ઇસી  
તરહ અન્ય શિષ્યોંકો ભી અપને ગુરુકે પ્રતિ વિનયશીલ રહના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

નથી. શુદ્ધધ્યાનના બીજા પાયાની પ્રાપ્તિ વિના કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થતી  
નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી. શૈલેશી  
અવસ્થાની પ્રાપ્તિ વિના સકલ કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી અને સકલ કર્મોંનો  
ક્ષય વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ  
મળી શકતું નથી. અમરપદ મેળવ્યા વગર આત્મા સિદ્ધઅવસ્થાસંપન્ન  
બની શકતો નથી માટે હે નાથ ! આપજ સકલ કલ્યાણના કારણ છે. એટલે  
પ્રતિક્ષણ આપના ચરણોંનું આરાધનજ માફ સંયમ આરાધન છે. આ પ્રકારથી  
પોતાના ગુરુની આરાધના કરતાં કરતાં ગુણનિધિએ તપ સંયમની આરાધના  
કરી અને થોડાજ કાળમાં આત્મકલ્યાણ કર્યું. આવી રીતે અન્ય શિષ્યોએ  
પણ પોતાના ગુરુ પ્રત્યે વિનયશીલ રહેવું જોઈએ. ॥૨॥



આળાઽણિદેસકરે, ગુરુણમણુવવાયકારણ ।

પડિણીણ અસંવુદ્ધે, અવિણીણ-તિ' વુચ્ચઈ ॥ ૩ ॥

છાયા—

આજ્ઞાઽનિર્દેશકરો ગુરુણામનુપપાતકારકઃ ।

પ્રત્યનીકોઽસંવુદ્ધઃ અવિનીત ઇત્યુચ્યતે ॥ ૩ ॥

ટીકા—

‘આળાઽણિદેસકરે’ ઇત્યાદિ । આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ=આજ્ઞાયા ગુરુવચન-  
સ્યાનિર્દેશકરઃ=અનાદરકારકઃ, તથા ગુરુણામ્=આચાર્યાદીનામ્, અનુપપાતકારકઃ=  
સમીપાનવસ્થાયી, ગુરુણાં સંનિઘૌ તિષ્ઠામિ चेद् ગુરવો માં સ્વકાર્યાર્થમાજ્ઞાપયિष्य-  
ન્તીતિ વિજ્ઞાય દૂરે તિષ્ઠતીત્યર્થઃ । તથા—પ્રત્યનીકઃ=પ્રતિકૂલઃ, ગુરુદોષાન્વેષણપર  
ઇત્યર્થઃ । તથા—અસંવુદ્ધઃ જીવાજીવાદિતત્ત્વાનભિજ્ઞઃ, એવંભૂતો યઃ શિષ્યઃ સ  
સ્વસ્વવિનીત ઇત્યુચ્યતે ।

શિષ્ય મેં વિનીતતા, અવિનીતતા કે પરિત્યાગ સે હી આતી હૈ  
હસલિયે વિનીત સે વિપરીત અવિનીત કા સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહતે હૈ—  
‘આળાઽણિદેસકરે૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(ગુરુણં આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુ  
કો આજ્ઞા કા અનાદર કરને વાલા, ( અણુવવાયકારણ ) અનેકે સમીપ  
નહીં વૈઠને વાલા ( પડિણીણ ) અનેકે સદા પ્રતિકૂલ વર્તાવ કરનેવાલા  
( અસંવુદ્ધે ) જીવ એવં અજીવ આદિ કે સ્વરૂપ કો નહીં જાનનેવાલા એસા  
શિષ્ય ( અવિણીણ વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ—ઉચ્યતે ) અવિનીત કહા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—હસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ને વિનીત સે વિપરીત અવિનીત  
કા સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કિયા હૈ । યદ્યપિ યહ વાત અર્થાપત્તિ સે સ્વયં સિદ્ધ

શિષ્યમા વિનીતતા અવિનીતતાના પરિત્યાગથી જ આવે છે. આ માટે  
વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહે છે—‘આળાઽણિદેસકરે.’ ઇત્યાદિ  
અન્વયાર્થ—(ગુરુણં આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુની આજ્ઞાનો  
અનાદર કરવાવાળા ( અણુવવાયકારણ ) એમની સામે ન બેસવાવાળા ( પડિણીણ )  
એમનાથી સદા પ્રતિકૂળ વર્તાવ કરવાવાળા ( અસંવુદ્ધે ) જીવ અને અજીવ આદિના  
સ્વરૂપને નહીં જાણવાવાળા એવા શિષ્ય ( અવિણીણ—વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ ઉચ્યતે )  
અવિનીત કહેવાય છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથાદ્વારા સૂત્રકારે વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ  
પ્રદર્શિત કરેલ છે. જોકે આ વાત અર્થાપત્તિથી સ્વયંસિદ્ધ થઈ જતી હતી

પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશ્યવસ્થા ન જાયતે । તાં વિના સકલકર્મક્ષયો ન ભવતિ । સકલ-  
કર્મક્ષયં વિના મુક્તિર્ન સંભવતિ । મુક્તિપ્રાપ્તિ વિનાઽયમાત્માઽમરપદં ન લભતે ।  
અમરપદપ્રાપ્તિ વિનાઽઽત્મનઃ સિદ્ધાવસ્થા ન જાયતે, અતો ભવાનેવ સકલકલ્યાણ-  
કારણમિતિ પ્રતિક્ષણં ભવચરણસમારાધનમેવ મમ સંયમારાધનમ્ । એવં ગુરુમારા-  
ધયન્ ગુણનિધિઃ સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ સ્વાત્મકલ્યાણમચિરેણ સાધિતવાન્ । એવ  
મન્યેનાપિ શિષ્યેણ વિનયપરેણ ભવિતવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

અવિનીતત્વવર્જનેન વિનીતો ભવતીત્યતો વિનીતવિપરીતમવિનીત-  
સ્વરૂપમાહ—

પાયા) પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । શુક્લધ્યાન કે દૂસરે પાયે કી પ્રાપ્તિ વિના  
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી  
અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ વિના સકલ  
કર્મોંકા ક્ષય નહીં હો સકતા હૈ ઓર સકલ કર્મોંકે ક્ષય વિના મુક્તિ  
કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, ઓર મુક્તિકી પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ નહીં  
મિલ સકતા । અમર પદ પાયે વિના આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસમ્પન્ન નહીં  
વન સકતા । હસ લિયે હે નાથ ! આપ હી સકલ કલ્યાણ કે કારણ  
હૈ, અતઃ પ્રતિક્ષણ આપકે ચરણોંકા આરાધન હી મેરા સંયમારાધન હૈ ।  
હસ પ્રકાર અપને ગુરુકી આરાધના કરતે હુણ ગુણનિધિ ને તપ સંયમ  
કી આરાધના કી, ઓર થોડે હી કાલ મેં આત્મકલ્યાણ કિયા । હસી  
તરહ અન્ય શિષ્યોંકો મી અપને ગુરુકે પ્રતિ વિનયશીલ રહના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

નથી. શુક્લધ્યાનના ળીજ્ઞ પાયાની પ્રાપ્તિ વિના કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થતી  
નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી. શૈલેશી  
અવસ્થાની પ્રાપ્તિ વિના સકલ કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી અને સકલ કર્મોંના  
ક્ષય વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ  
મળી શકતું નથી. અમરપદ મેળવ્યા વગર આત્મા સિદ્ધઅવસ્થાસંપન્ન  
બની શકતો નથી માટે હે નાથ ! આપજ સકલ કલ્યાણના કારણ છો. એટલે  
પ્રતિક્ષણ આપના ચરણોંનું આરાધનજ માફ સંયમ આરાધન છે. આ પ્રકારથી  
પોતાના ગુરુની આરાધના કરતાં કરતાં ગુણનિધિએ તપ સંયમની આરાધના  
કરી અને થોડાજ કાળમાં આત્મકલ્યાણ કર્યું. આવી રીતે અન્ય શિષ્યોંએ  
પણ પોતાના ગુરુ પ્રત્યે વિનયશીલ રહેવું જોઈએ. ॥૨॥

અત્ર ક્ષુદ્રબુદ્ધિશિષ્યસ્ય દૃષ્ટાન્તઃ—

યથા એકસ્ય ભદ્રબુદ્ધિનામકાચાર્યસ્યાઽવિનીતઃ ક્ષુદ્રબુદ્ધિનામકઃ શિષ્ય આસીત્ । યદા ગુરુઃ શિક્ષાર્થે પ્રેરયતિ, તદા શિક્ષા વહ્નિજ્વાલેન્ન તસ્ય પ્રતિભાતિ, વ્રતં વિપવત્, તપસ્યા સ્વજ્વાલેન્ન, સ્વાધ્યાયઃ કર્ણમૂર્ચીન્ન, સંયમો યમ ઇવ । અયમાદારે વિહારે વ્યવહારે ચં સર્વદાઽઽચાર્ય પીડયતિ । સરસં ભદ્રકં સુસ્વાદમાહારં સ્વયમશ્નાતિ વિવર્ણે વિરસમભદ્રકં રૂક્ષમાચાર્યાય પ્રયચ્છતિ । અથ કદાચિદસૌ શ્રાવકશ્રાવિકાણાં પુરતો વ્રૂતે—અથ મમ ગુરોરુપવાસઃ,

પાસ વહ્નિજ્વાલેન્ન નહીં રહના ચાહતા હૈ કિ વહ્નિ પ્રત્યનીક—અર્થાત્—ગુરુ-દ્વેષી—ગુરુ કે છિદ્રાન્વેષણ મેં તત્પર હૈ, ગુરુદ્વેષી વહ્નિજ્વાલેન્ન હૈ કિ વહ્નિ અસમ્બુદ્ધ અર્થાત્ હિતાહિત કે વિચારોં સે રહિત હૈ ।

અવિનીત શિષ્ય કેસા હોતા હૈ હમ્ વાત કો ક્ષુદ્રબુદ્ધિ શિષ્ય કે દૃષ્ટાન્ત સે સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—

ભદ્રબુદ્ધિ નામકે એક આચાર્ય થે । ડનકા ક્ષુદ્રબુદ્ધિ નામક શિષ્ય થા જો વહ્નિ અવિનીત થા । યહ યથાનામ તથાગુણ થા । ગુરુ મહારાજ જન્ન હસે શિક્ષા દેને બેઠતે તન્ન ડમકા મન ડદાસ હો જાતા થા । શિક્ષા ડસે એસી માલૂમ હોતી થી કિ જૈસે અગ્નિ કી જ્વાલા હૈ । વિપતુલ્ય હસે વ્રત જ્ઞાત હોને લગતે । તલવાર કી ધાર કે સમાન યહ તપસ્યા કો માનતા, કર્ણ કો ભેદનેવાલી શલાર્ક કે તુલ્ય યહ સ્વાધ્યાય કો સમજ્ઞતા । અધિક કયા કહા જાય—સંયમ કો તો યહ યમકે સમાન નિહારતા । આહાર મેં વિહાર મેં એવં વ્યવહાર મેં યહ સદા ગુરુ—મહારાજ કો દુઃખિત હી કિયા

નથી, તેમની પાસે રહેતો નથી, પાસે રહેવાનું તે એટલા માટે નથી ચાહતો કે તે પ્રત્યનીક—અર્થાત્ ગુરુદ્વેષી—ગુરુનાં છિદ્રોં જોવામાં તત્પર છે. ગુરુદ્વેષી તે એ માટે છે કે તે હિતાહિતના વિચારોથી રહિત છે.

અવિનીત શિષ્ય કેવો હોય છે આ વાતને ક્ષુદ્રબુદ્ધિ શિષ્યના દૃષ્ટાન્તથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

ક્ષુદ્રબુદ્ધિ નામના એક આચાર્ય હતા. તેમને ક્ષુદ્રબુદ્ધિ નામનો એક શિષ્ય હતો જે અવિનીત હતો, તેનામાં નામ પ્રમાણે ગુણ હતા. ગુરુ મહારાજ જ્યારે તેને શિક્ષા આપવા બેસતા ત્યારે તેનું મન ઉદાસ થઈ જતું. શિક્ષા જેને અગ્નિની જ્વાળા જેવી લાગતી હતી. વ્રત તેને ઝહેર જેવાં કડવાં લાગતાં, તપસ્યાને તે તરવારની ધાર સમાન ગણતો, સ્વાધ્યાયને તે કાનને વિધનારા સોચા માફક જાણતો હતો. વધુ શું કહેવામાં આવે. સંયમને તો તે યમની માફક જ જોતો, આહારમાં, વિહારમાં, ને વહેવારમાં એ ગુરુમહારાજને

હો જાતી થીં કિ જો વિનીત કે કથિત સ્વરૂપસે રહિત હૈં વહ અવિનીત હૈં  
 ફિર ખી જો યહાં સૂત્રકાર ને ઉસે સ્પષ્ટ શબ્દોં દ્વારા અલગ ઉલ્લેખ  
 કિયા હૈં ઉસકા કારણ વિશેષરીતિ સે વિવેચન કરના હૈં, તાકિ મંદ-  
 બુદ્ધિ જન ખી ઇસ વાત કો અચ્છી તરહ સમજ સર્કેં। ગુરુ કે સમીપ વહ  
 અવિનીત શિષ્ય ઇસલિયે નહીં રહના ચાહતા હૈં કિ વહ વિચારતા હૈં કિ  
 યદિ ગુરુ કે પાસ વૈઠુંગા તો ઉનકા પ્રત્યેક કાર્ય મુજે કરના પડેગા  
 ઇસલિયે અચ્છા હૈં કિ મૈં ઉનસે દૂર હીં વૈઠું। એસા કરને વાલા શિષ્ય  
 સ્વેચ્છાચારી હો જાતા હૈં। ગુરુ કે પાસ વૈઠને કા મુખ્ય યહી ઉદ્દેશ્ય હોતા  
 હૈં કિ શિષ્યજન વિનય આદિ ગુણોં કો પ્રાપ્ત કરતે હુણ તપ સંયમ કી  
 આરાધના સુખ સે કર સર્કેં। મુજ સે ગુરુ કુછ ખી કહ ન સર્કેં, ગુરુ  
 પર ખી મેરા રૌવ રહે, ઇસ ધ્યાલ સે વહ અપને પૂજ્ય ગુરુજનોં મેં ખી  
 દોષોં કો ઢૂંઢને મેં લગા રહતા હૈં। યહ કામ ઉસી શિષ્ય સે હો સકતા  
 હૈં જો અસંબુદ્ધ-અર્થાત્ હિતાહિત કે વિચારોં સે રહિત હૈં। અભિજ્ઞ  
 શિષ્ય એસા નહીં હોતા। ગાથા મેં યે સઘ વિશેષણ હેતુહેતુમદ્ભાવ વાલે હૈં,  
 જિનકા અભિપ્રાય ઇસ પ્રકાર હૈં-વહ ગુરુ કી આજ્ઞા કા પાલક ઇસલિયે  
 નહીં હૈં કિ વહ ઉનકે પાસ નહીં વૈઠતા હૈં-ઉનકે પાસ નહીં રહતા હૈં,

કે જે વિનીતના કથિત સ્વરૂપથી રહિત છે, તે અવિનીત છે, તો પણ અહિં  
 સૂત્રકારે એનો સ્પષ્ટ શબ્દો દ્વારા અલગ ઉલ્લેખ કરેલ છે, તેનું કારણ વિશેષ  
 રીતિથી વિવેચન કરવું એજ છે, કારણ કે મંદબુદ્ધિવાળો માણસ પણ આ  
 વાતને સારી રીતે સમજી શકે. ગુરુની સમીપ તે અવિનીત શિષ્ય એટલા  
 માટે રહેવા નથી ચાહતો કે તે વિચારે છે કે કદાચ ગુરુની પાસે બેસું તો  
 તેનું પ્રત્યેક કાર્ય મારે કરવું પડશે. આ માટે સાડું એ છે કે હું તેમનાથી  
 દૂર બેસું. આવું કરનાર શિષ્ય સ્વેચ્છાચારી બને છે. ગુરુની પાસે બેસવાનો  
 ખાસ ઉદ્દેશ તો એ છે કે શિષ્યજન વિનય આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરતાં કરતાં  
 તપ સંયમની આરાધના સુખથી કરી શકે. ગુરુ મને કાંઈ પણ કહી ન શકે,  
 ગુરુ ઉપર મારો હાબ રહે, આ ખ્યાલથી તે પોતાના પૂજ્ય ગુરુજનોમાં પણ  
 દોષોને શોધવા લાગી રહે છે. આ કામ તેવા શિષ્ય કરે છે કે જે અસંબુદ્ધ  
 અર્થાત્ હિતાહિતના વિચારથી રહિત છે, અભિજ્ઞ શિષ્ય આવા નથી હોતા.  
 ગાથામાં આ બધાં વિશેષણ હેતુહેતુમદ્ભાવવાળાં છે, જેનો અભિપ્રાય આ પ્રકારે  
 છે. તે ગુરુની આજ્ઞાનો પાલક એ ખાતર નથી કે તે ગુરુની પાસે બેસતો



કરોતિ, યદિ કમપિ દાનાદિકં વિષયમવલમ્બ્ય ગુરુર્મન્યાનુપદિશતિ, તદા તત્સ-  
ભાયામેવ ગુરોરનભિજ્ઞતાં વદન્ તં વિષયં સ્વયમુપદિશન્ ગુરુમપમાનયતિ । કદાચિદ્  
વદતિ—‘અથ મમ ગુરુમૌનવ્રતમનુતિષ્ઠનાસ્તે’ ઇત્યુક્ત્વા સ્વયમેવ વ્યાખ્યાનં કરોતિ ।  
એવં ક્ષુદ્રબુદ્ધિચરિતં વિલોક્ય વૃદ્ધાચાર્યઃ સ્વચેતસિ ચિન્તયતિ—અયમભીક્ષ્ણં ‘સનિ-  
મિત્ત—મનિમિત્તંવા ક્રોધકારકઃ, કલ્હપ્રિયઃ, અભિમાની, અજ્ઞાની, મર્મમૃપાવાદી ચ,  
તદિદં મમૈવ કર્મણઃ ફલમિતિ મન્વાનો વૃદ્ધાચાર્યઃ સર્વં સહમાન આસીત્ । કદા—

સે વિહીન હો ગયા । ગુરુજી વૃદ્ધ થે, ઇસ લિયે વિહારકાલ મેં ચલતે  
સમય ઉન્હેં વડા કણ્ટ હોને લગા, પરન્તુ ક્યા કિયા જાય ફિર મી  
શિષ્ય કી પ્રેરણા સે ઉન્હેં અનિચ્છા હોને પર મી વિહાર કરના હી પડતા  
થા । શિષ્ય કા યહ હાલ થા કિ વહ સાધુસામાચારી કો મી વિપરીત  
કરતે હુણ નહીં લજાતા થા । ગુરુ-મહારાજ જય કમી કિસી દાનાદિક  
વિષય કો લેકર પ્રવચન પરિપદ કે મીતર બેઠકર કરતે તવ યહ ઉન્કે  
પ્રવચન કો અન્યથારૂપ મેં જાહિર કરને કે લિયે, અથવા ઉસ વિષય મેં  
ઉન્કી અનભિજ્ઞતા પ્રકટ કરને કે લિયે વીચ હી મેં બોલ ઉઠતા ઓર  
કહતા કિ યહ એસે નહીં એસે હૈ, ગુરુજી વૃદ્ધ હોને કે કારણ મૂલ ગયે  
હૈં । જય કમી ઇસે બોલના હોતા તો લોગોંસે કહને લગતા કિ આજ  
ગુરુજી કો મૌનવ્રત હૈ, વે વ્યાખ્યાન નહીં દેંગે, મેં હી વ્યાખ્યાન દૂંગા, ઇસ  
પ્રકાર કહ કર વ્યાખ્યાન દેને લગ જાતા । ક્ષુદ્રબુદ્ધિ કા ઇસ પ્રકાર  
સ્વચ્છંદાચરણ દેખ કર ગુરુ-મહારાજ સ્વયં ઇસમેં અપને કર્મેંકા ફલ

ળની ગયું. ગુરુ વૃદ્ધ હતા એથી વિહારમાં ચાલતી વખતે તેમને ઘણું કષ્ટ  
થવા લાગ્યું પરંતુ શું થઈ શકે ? શિષ્યની પ્રેરણાથી તેમણે ઈચ્છા ન  
હોવા છતાં પણ વિહાર કરવો પડતો. શિષ્ય સાધુસામાચારીથી વિપરીત  
ચાલવામાં પણ લજતો નહતો. ગુરુ મહારાજ જ્યારે કોઈ દાનાદિક વિષયને  
લઈને તેના ઉપર પ્રવચન પરિપદમાં કરતા ત્યારે તે શિષ્ય તેમના પ્રવચનને  
અન્યથારૂપમાં જાહેર કરવા માટે અથવા એ વિષયમાં તેમની અનભિજ્ઞતા  
જતાવવા માટે વચમાં જ બોલી ઉઠતો અને કહેતો કે આ આમ નથી પણ  
આમ છે, ગુરુજી વૃદ્ધ હોવાથી ભૂલી ગયા છે. જ્યારે તેને બોલવાનું મન થતું  
ત્યારે તે લોકોને કહેતો કે આજે ગુરુજીને મૌનવ્રત છે. તે વ્યાખ્યાન આપશે  
નહીં, હું જ ભાષણ કરીશ. આ રીતે કહીને ભાષણ કરવા લાગતો. ક્ષુદ્રબુદ્ધિનું  
આવું સ્વચ્છંદ આચરણ જોઈને ગુરુ મહારાજ પોતાના કર્મેનું ફળ

इति, ततोऽसौ स्वयमश्नाति, गुरुश्च क्षुधार्तः सन् दिवसं यापयति । कदाचिद् वदति-  
अद्य मम गुरुणा पष्ठभक्तं कृतम्, कदाचिच्च वदति-अद्य मम गुरुणाऽष्टभक्तमनु-  
ष्ठितमिति, एवं क्रमेण गुरुः क्षुधया विवर्णः कृशः शक्तिरहितः संजातः । विहार-  
काले वृद्धत्वेन शीघ्रगमनसामर्थ्यवर्जितोऽपि गुरुः शिष्यप्रेरणया सकलेशं  
विहरति । साधुसामाचार्या क्षुद्रबुद्धिर्विपरीतमाचरति, मतिलेखनादिकं सम्यग् न

करता था । आहार के समय सरस सुस्वादु एवं रुचिकारक आहार यह  
स्वयं पहिले खाता और जो स्क्ष विरस एवं अंत प्रान्त आहार होता  
वह गुरु-महाराज को देता । जब इसे गुरु-महाराज को आहार देनेकी  
इच्छा नहीं होती तो श्रावक और श्राविकाओं के समक्ष कहने लगता  
कि आज तो मेरे गुरु-महाराज ने उपवास किया है, इस प्रकार यह गुरु  
महाराज को भूखा रखकर स्वयं खूब खाने पीनेकी मजामौज उड़ाता  
रहता । विचारे गुरुजी क्षुधा को शांतिभाव से सहन करते हुए  
शमभाव में समय को व्यतीत करते । कभी २ कहता है कि आज  
हमारे गुरु महाराज ने पष्ठभक्त किया है, आज अष्ट-भक्त किया है ।  
इस प्रकार गुरु को अत्यन्त कष्ट पहुँचाता । गुरु जी भी सम-  
ताभाव से क्षुधा की वेदना इसे अविनीत समझ कर सहन करने लगे,  
परन्तु आखिर औदारिक शरीर ही तो ठहरा वह बिना आहार के कहाँ  
तक टिके । अन्त में वह शरीर विवर्ण-म्लान, कृश-कमजोर, और शक्ति

સદા હુઃખીત જ કર્યા કરતો, આહારના સમયે સરસ સ્વાદવાળા એટલે રૂચી-  
કારક આહાર તે પોતે પહેલાં ખાઈ લેતો અને જે રૂક્ષ, વિરસ એવો અન્ત-  
પ્રાન્ત આહાર હોય તે ગુરૂ મહારાજને આપતો. જ્યારે તેની ગુરૂમહારાજને  
આહાર દેવાની ઈચ્છા ન થતી ત્યારે શ્રાવક અને શ્રાવિકાઓની સમક્ષ કહેવા  
લાગતો કે આજ તો મારા ગુરૂમહારાજે ઉપવાસ કરેલ છે. આ પ્રકારે તે  
ગુરૂ મહારાજને ભૂખ્યા રાખીને પોતે ખૂબ ખાવાપીવાની મોજમજાડ ઉડાવતો  
રહેતો, ધીયારા ગુરૂજી ક્ષુધાને શાન્ત ભાવથી સહન કરીને સમભાવમાં સમયને  
વ્યતીત કરતા. કેઈ કેઈ વખત કહેતો કે આજે અમારા ગુરૂ મહારાજે છઠ્ઠું કરેલ  
છે. આજે અકુમ કરેલી છે. આવી રીતે ગુરૂને અત્યંત કષ્ટ પહોંચાડતો. ગુરૂ  
પણ સમતાભાવથી ક્ષુધાની વેદના તેને અવિનીત સમજી સહન કરવા લાગ્યા.  
પરંતુ આખરે ઔદારિક શરીર તો છે જ તે આહાર વિના ક્યાં સુધી ટકી  
શકે ? અંતમાં તો શરીર વિવર્ણ મ્લાન, કૃશ-કમજોર, અને શક્તિ વગરનું

જરાજર્જરિતે કૃશે નિઃસત્ત્વે સત્યપિ શરીરે કાતરજનદુષ્કરં કઠિનતરં તીવ્ર-  
મનશનં સ્વીકૃતમ્ । एवं चतुर्विधसंघवचनं श्रुत्वा गुरुणा चिन्तितम्—यदि स्वगतां  
बुभुक्षां प्रकाशयामि शिष्यप्रपञ्चं चावेदयामि, तर्हि जिनशासनस्य हीलना  
निन्दना लघुता भवतीति । तदन्तरं वृद्धाचार्येण चिन्तितम्—मम साहजिकं सकल-  
कर्मक्षयसमयः समायात इति । एवमसौ मनसि धारयन् समाधिभावमुपगत्य प्रवृद्ध-  
परिणामेन क्षपकत्रेणि प्राप्य सकलकर्म क्षपयित्वा केवली भूत्वा सिद्धिगतिं प्राप्तवान् ।

કો સુનકર સમસ્ત ચતુર્વિધ સંઘ ઉસી સમય આચાર્ય કે સમીપ આયા  
ઔર कहने लगा हे महात्मा ! आपको अनेकशः धन्यवाद है, आप वास्तव  
में बड़े भाग्यशाली हैं, आप जैसे जिनशासन को प्रकाशित करनेवाले  
सूर्य से धर्मकी प्रभावना होती है । करुणासागर ! हम आपका गुणगान  
कहां तक गावें, हम सबको तो यह सुनकर अपार हर्ष हो रहा है कि  
आपने जरा से जर्जरित, कृश एवं निःसत्त्व शरीर के होने पर भी  
कायर जनों द्वारा दुष्कर एवं कठिनतर तीव्र अनशन को जो स्वीकृत  
किया है । इस प्रकार चतुर्विध संघ के वचन सुनकर गुरुमहाराज ने  
चित्त में विचार किया कि यदि मैं अपनी भूख प्रकट करता हूं और 'यह  
सब कुछ शिष्यका प्रपंच है' ऐसा जो कहता हूं तो जिनशासन की अव-  
हेलना होती है, निन्दा होती है लघुता जाहिर होती है अतः अब श्रेय  
इसी में है कि अनशन व्रत अंगीकार कर लूं, यह सहज ही कर्मक्षय-  
का समय उपस्थित हुआ है, इसे छोड़ना बुद्धिमानी की बात नहीं

નોને સાંભળી સમસ્ત ચતુર્વિધ સંઘ તે સમયે આચાર્યની પાસે આવી અને  
વિનંતી કરી કહેવા લાગ્યા કે હે મહાત્મા ! આપને અનેકાનેક ધન્યવાદ છે,  
આપ વાસ્તવમાં મહાન ભાગ્યશાળી છો. આપ જેવા જનશાસનને પ્રકાશિત  
કરવાવાળા સૂર્યથી ધર્મની પ્રભાવના થાય છે. કરુણાસાગર અમે આપના  
ગુણોને ક્યાં સુધી વર્ણવી શકીએ. અમને બધાને તો એ બાણીને એવો હર્ષ  
થયો છે કે આપે વૃદ્ધાવસ્થાથી જીર્ણ કૃશ અને નિઃસત્ત્વ શરીર હોવા છતાં  
પણ કાયરજનો દ્વારા દુષ્કર એવા આ કઠિનતર તીવ્ર અનશનનો અંગીકાર  
કરેલ છે. ચતુર્વિધ સંઘના આ પ્રકારનાં વચન સાંભળીને ગુરૂ મહારાજે ચિત્તમાં  
વિચાર કર્યો કે જો હું મારી ભુખ પ્રગટ કરું અને 'આ સઘજો શિષ્યનો  
પ્રપંચ છે' એમ જો કહું તો જનશાસનની અવહેલના થાય છે, નિન્દા થાય  
છે, લઘુતા બહાર થાય છે, માટે હવે તો શ્રેય એમાં છે કે અનશન વ્રત  
અંગીકાર કરી લઉં. કર્મક્ષયનો આ સહેજે સમય પ્રાપ્ત થયો છે. એને  
છોડવો એ બુદ્ધિવાળી વાત નથી. આ પ્રકારે વિચાર કરી ગુરૂ મહારાજે

ચિદતિશુધયા પીડિતો ગુરુશ્ચિન્તયતિ આહારાનયનાર્થે ક્ષુદ્રબુદ્ધિં પ્રેપયामीતિ,  
તાવદસૌ ક્ષુદ્રબુદ્ધિઃ સ્વગુરોઃ પ્રાણવ્યપરોપણાર્થે ચતુર્વિધસંઘસમક્ષમવાદીત્-ગુરુના  
શરીરમતિકૃશં શક્તિરહિતં વિલોક્ય યાવજ્જીવમનશનં સ્વીકૃતમ્ , ક્ષુદ્રબુદ્ધિવાક્યં  
શ્રુત્વા ચતુર્વિધસંઘસ્તદૈવાચાર્યસ્ય સમીપમાગત્યાબ્રવીત્-ધન્યોઽસિ કૃતપુણ્યોઽસિ  
મહાત્મન્ ! મવાન્ જિનશાસનભાસ્કરઃ કરુણાસાગરઃ, યત્ સ્વલુ મવતા

વિચારતે થે ઓર મનહી મન કહતે થે-દેવો તો સહી ઇસકી કિનની  
બડી ભારી અજ્ઞાનતા હૈ જો વિના નિમિત્ત કે હી ક્રોધ કિયા કરતા હૈ,  
ચાહે જિસસે ઝગડા કરતા હૈ, સમજાને પર ભી નહીં માનતા હૈ, અભિ-  
માન કા પુતલા બના હુઆ હૈ, મર્મચ્છેદી મૃપાવચન બોલને મેં ઇસે  
સંકોચ તક નહીં હોતા, અવ ઇસકા ઇલાજ ક્યા કિયા જાવે, કુછ ભી  
ઉપાય નહીં, અનુપાયવસ્તુ મેં સહનશીલતા ધારણ કરના હી ઉચિત હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર કે વિચાર સે ગુરુમહારાજ શાન્ત હોકર ઉસ કે દ્વારા પ્રદત્ત  
કષ્ટોંકો સહતે રહતે । એક સમય કી વાત હૈ જવ કિ ગુરુ-મહારાજ  
ક્ષુધા સે પીડિત હોકર આહાર લાને કે લિયે ક્ષુદ્રબુદ્ધિકો ભેજનેકા વિચાર  
કર રહે થે કિ ઇતને મેં ક્ષુદ્રબુદ્ધિ ને ગુરુમહારાજ કો મારને કે અભિપ્રાય  
સે ચતુર્વિધ સંઘ કે સમક્ષ એસા પ્રકટ કર દિયા કિ વૃદ્ધાવસ્થા કે  
કારણ ગુરુમહારાજને શરીર કી સ્થિતિ કમજોર જાનકર યાવજ્જીવ અન-  
શનવ્રત-સંયારા ધારણ કર લિયા હૈ । ક્ષુદ્રબુદ્ધિ કે ઇસ પ્રકાર વચનોં

હોવાનું પોતે વિચારતા અને મનમાં જ કહેતા કે બુદ્ધિ તો ખરા આની  
કેટલી બધી અજ્ઞાનતા છે કે જે વિના નિમિત્ત ક્રોધ કર્યા કરે છે, ચાહે  
તેનાથી ઝગડે છે, સમજાવવા છતાં પણ માનતો નથી, અભિમાનનું પુતળું  
બની ગયો છે. મર્મવેધક મૃપા વચન બોલવામાં તેને સંકોચ થતો નથી,  
હવે એનો ધડાજ શું થઈ શકે, કોઈ ઉપાય નથી. અનુપાય વસ્તુમાં સહન-  
શીલતા ધારણ કરવી તે જ ઉચિત છે. એવા પ્રકારના વિચારથી ગુરુમહારાજ  
શાન્ત બનીને તેનાથી અપાતા કષ્ટોંને સહા કરતા. એક સમયની વાત છે  
જ્યારે ગુરુ મહારાજ ભુખથી પીડિત બનીને આહાર લાવવાને ક્ષુદ્રબુદ્ધિને  
બોલવાનો વિચાર કરતા હતા એટલામાં ક્ષુદ્રબુદ્ધિએ ગુરુમહારાજને મારવાના  
અભિપ્રાયથી ચતુર્વિધ સંઘની સમક્ષ એવું પ્રગટ કર્યું કે વૃદ્ધાવસ્થાને કારણે  
ગુરુ મહારાજના શરીરની સ્થિતિ સારી રહેતી ન હોવાથી તેમણે જ્યાં સુધી  
હવે ત્યાં સુધી અનશન વ્રત ધારણ કરેલ છે. ક્ષુદ્રબુદ્ધિના આ પ્રકારનાં વચ-



તરાં દશવિધક્ષેત્રવેદનામનુભૂય સ ગર્ભાદ્ ગર્ભ, જન્મતો જન્મ, મરણાદ્ મરણ, દુઃખાદ્ દુઃખં, પુનઃ પુનઃ પુનઃતુર્ગતિદુઃખં પ્રાપ્નુવન્ દુર્લભવોધિતાં દીર્ઘસંસારિતાં ચ પ્રાપ્તવાન્ ॥૩॥

અવિનીતસ્ય સદૃશાન્તમવસ્થામાહ—

મૂલમ્—જહાં સુળી પૂઝકર્ણી, નિવકસિજ્ઞ સર્વસો ।

એવં દુસ્સીલ પડિર્ણી, મુહરી નિવકસિજ્ઞ ॥ ૪ ॥

છાયા—

યથા શુની પૂતિકર્ણી નિષ્કાસ્યતે સર્વતઃ ।

એવં દુઃશીલઃ પ્રત્યનીકઃ મુખારિર્નિષ્કાસ્યતે ॥ ૪ ॥

‘જહાં’ इत्यादि—यथा—पूतिकर्णी=पूती=दुर्गन्तवन्तौ कर्णौ यस्याः सा

तथोक्ता, कर्णगतानेकविषमव्रणपरिपाकजनितदुस्सहदुर्गन्धपूयविकृतरक्तस्रावस्थि-  
तकृमिमक्षिकानिकरदंशनोद्भूततीव्रतरवेदनान्याकुलतया प्रतिक्षणमितस्ततो भ्रम-  
न्तीत्यर्थः, शुनी=कुक्कुरी, सर्वशः=सर्वप्रकरेण प्रतिस्थानात् निष्कास्यते=निःसार्यते,

और घोर नरक में जाकर नारकी की पर्याय से उत्पन्न हुआ । वहां उसने दश प्रकार की तीव्रतर क्षेत्रसंबंधी वेदना को पाया । वहां की स्थिति को समाप्त कर जब वह वहां से निकला तो भी इस के दुःखों का अन्त नहीं आया । एक गर्भ से दूसरे गर्भ में पहुंचना और वहां के कष्टों को भोगना, फिर वहां से मर कर पुनः जन्म धारण करना और कष्टों को भोगना, इस प्रकार अनंतसंसारी बने हुए इस क्षुद्रबुद्धि की आत्मा को बोधिका लाभ दुर्लभ हो गया ॥ ३ ॥

अविनीत की अवस्था को दृष्टान्तद्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—

‘जहा सुणी’ इत्यादि ।

દસ પ્રકારની તીવ્રતર ક્ષેત્ર સંબંધી વેદનાઓ સહેવી પડી. એ સ્થિતિ ભોગવી એ બ્યારે ત્યાંથી નિકળ્યો છતાં પણ તેના દુઃખોનો અંત ન આવ્યો. એક ગર્ભમાંથી બીજા ગર્ભમાં જવું અને ત્યાંનાં કષ્ટ ભોગવવાં. એક સ્થળેથી મરી બીજે સ્થળે ફરી જન્મ ધારણ કરવો અને કષ્ટો ભોગવવાં. આ પ્રકારે અનન્ત સંસારી બનેલ તે ક્ષુદ્રબુદ્ધિના આત્માને બોધિનો લાભ દુર્લભ બની ગયો.

અવિનીતની અવસ્થાને દૃષ્ટાંત દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે—‘જહા સુળી’. ઇત્યાદિ.

તદા ગગનમણ्डले देवैर्दुन्दुभि वादयद्भिर्जयजयध्वनिः कृतः । क्षुद्रबुद्धिकृतं सर्वमत्याचारं च ते देवा विदितवन्तः । ततस्ते तद्वृत्तमुद्धोषितवन्तः । तच्छ्रुत्वा चतुर्विधसंग्रस्तं संघान्निष्कासितवान् । तस्मिन्नेव समये आचार्याशातनाजनितपापेन क्षुद्रबुद्धेर्वपुषि षोडश रोगाः समुत्पन्नाः । गच्छान्निष्कासितः, तीव्रवेदनां सर्वजनतिरस्कारं च प्राप्नुवन् स क्षुद्रबुद्धिर्मृतः । तदतन्तरं स नरके निपतितः । तत्र तीव्र-

હોગી । इस प्रकार विचार कर गुरु-महाराज ने समाधिभाव को धारण कर लिया, और परिणामों की अतिशय विशुद्धि एवं वृद्धि से क्षपक श्रेणि पर आरुढ़ होकर घातिया कर्मों के नाश से केवली-अवस्था प्राप्त करली, पश्चात् अघातिया कर्मों के नाश से सिद्धिगति के अधिपति बन गये । देवों ने भद्रबुद्धि आचार्य के केवलज्ञानप्राप्तिका उत्सव मनाया । आकाशमें जयरघोषपूर्वक दुंदुभियां बजायीं । उन देवों ने साथ-साथ यह भी जान लिया कि इन आचार्य के साथ इस क्षुद्रबुद्धि ने अच्छा व्यवहार नहीं किया, उन्हें इसने अधिक से अधिक दुःख दिये और खूब मनमाना उनके साथ अविनीतता का व्यवहार किया है । देवताओं ने इस बात को संघ में जाहिर की । संघ ने क्षुद्रबुद्धि को संघबाहर किया, क्षुद्रबुद्धि भी कुछ समय बाद गुरुद्वेषी होने के कारण अर्जित पापकर्म के उदय से बहुत दुःखी हुआ, उसके शरीर में १६ प्रकार के रोगों ने अपना प्रभाव जमाया । संघ से बहिष्कृत वह इस प्रकार तीव्र वेदना एवं तिरस्कारजन्य दुःखों का अनुभव करता हुआ मर गया,

સમાધિભાવ ધારણ કર્યો અને પરિણામોની અતિશય વિશુદ્ધિ અને વૃદ્ધિથી ક્ષપકશ્રેણી પર આરુઢ થતી ઘાતીયા કર્મોના નાશથી સિદ્ધગતિના અધિપતિ થતી ગયા. દેવોએ ભદ્રબુદ્ધિ આચાર્યને પ્રાપ્ત થયેલ કેવળજ્ઞાનનો ઉત્સવ મનાવ્યો. આકાશમાં જયજયકાર સાથે દુદુંભિયો વગાડવામાં આવી, અને દેવોએ સાથેસાથ એ પણ જાણી લીધું કે આ આચાર્યની સાથે ક્ષુદ્રબુદ્ધિએ સારો વહેવાર કરેલ નથી, તેણે એમને વધુમાં વધુ દુઃખ આપેલ છે, અને મનમાન્યો અવિનીતનો વહેવાર એમની સાથે ચલાવ્યો છે. દેવતાઓએ આ વાતને સંઘમાં જાહેર કરી સંઘે ક્ષુદ્રબુદ્ધિને સંઘ બહાર કર્યો. ક્ષુદ્રબુદ્ધિ ગુરુદ્વેષી હોવાના કારણે થોડા સમય બાદ અર્જુન પાપકર્મના ઉદયથી ઘણો દુઃખીત થયો, તેના શરીરમાં સોળ ૧૬ પ્રકારના રોગોએ પોતાનો પ્રભાવ જમાવ્યો. સંઘથી બહિષ્કૃત એવા એ શિષ્યે આ પ્રકારની તીવ્ર વેદના અને તિરસ્કાર-જન્ય દુઃખોનો અનુભવ કર્યો, અને છેવટે તેનો દેહાંત થયો. મરણબાદ તેને

સમાલોચયતિ, મુત્ત્વં હિ આસેવના ક્રિયતે, દુઃસ્વં ચેત્યમાલોચયિતુમ્, તસ્માદયં શાસ્ત્રહીનઃ શુદ્ધ ઇતિ । એવં તં ગુરુણા પ્રશસ્યમાનં દૃષ્ટ્વાઽન્યેઽપિ અગીતાર્થશ્રમણાઃ પ્રશંસન્તિ ચિન્તયન્તિ ચ-દોપાસેવનાયામસક્રુદાપતિતાયામપિ ન કથિદોષઃ, આલોચનયૈવ સકલદોષપરિહારસંભવાત્ । અથાન્યદા તત્ર સંવિગ્નગીતાર્થઃ કથિદા-ચાર્યઃ શિષ્યગણપરિવૃતઃ સમાયાતઃ । સ ચ પ્રતિદિનં તમેવ વ્યતિકરં વિલોક્યા-ચાર્યમવ્રવીત્-હે મહાભાગ! શાસનપ્રભાવક! મન્યમાસ્કર ! અયમવિનીતઃ સ્વલુશિષ્યો

કરતા હૈ । જો મુનિ ઇસ પ્રકાર સે અપને અતિચારોં કી આલોચના કરતા હૈ ડસી કી આલોચના કરના ઠીક હૈ । ઁસી આલોચના સે હી દુઃસ્વોં કા વિનાશ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અન્ય શિષ્યોંને જવ ગચ્છાચાર્ય કો ડસકી પ્રશંસા કરને મેં રત દેઝા તો અગીતાર્થ શિષ્ય બી ડસકી પ્રશંસા કરને લગે । તથા સાથ ૨ મેં યહ બી ધારણા ડનકે ચિત્ત મેં જમ ગઈ કિવાર ૨ દોષોં કી આસેવના કરને પર બી હરકત નહીં હૈ, ક્યોંકિ દોષ કરને પર બી ડન દોષોંકી શુદ્ધિ આલોચના સે હો જાતી હૈ, નહીં તો ઇસ મુનિકી પ્રશંસા હમારે આચાર્ય ક્યોં કરતે, ઔર ક્યોં યહ દોષોં કા આસેવન કરતા હુઝા બી ડનકી આલોચના કરતા હૈ । ઁક દિન કી વાત હૈ કિ વહાં સંવિગ્ન ગીતાર્થ-( ક્રિયાપાત્ર ) કોઈ આચાર્ય મહારાજ અપની શિષ્યમંડલીસહિત આયે । ડન્હોં ને જવ વહાં ઇસ અવિનીત શિષ્ય કે ઇસ પ્રકાર કે પ્રતિદિન કે વ્યવહાર કો દેઝા તો વે આશ્ચર્ય પાયે ઔર ગચ્છાચાર્ય સે કહને લગે કિ-હે મહાભાગ ! શાસનપ્રભાવક ।

લાગેલા અતિચારોની શુદ્ધ આલોચના કરે છે. જે મુનિ આ રીતે પોતાના અતિચારોની આલોચના કરે છે. તેવી આલોચના કરવી ઠીક છે. આવી આલોચનાથીજ દુઃખોનો વિનાશ થાય છે. આ પ્રકારે અન્ય શિષ્યોએ જ્યારે ગુરુ મહારાજને તેની પ્રશંસા કરવામાં રત બેઠા ત્યારે બીજા શિષ્યો પણ તેની પ્રશંસા કરવા લાગ્યા. અને સાથેસાથ એવી ધારણા એમના ચિત્તમાં ઠસી ગઈ કે વારંવાર દોષોનું સેવન કરવામાં પણ હરકત નથી કેમકે દોષ કરવા છતાં પણ તેવા દોષોની શુદ્ધિ આલોચનાથી થઈ જાય છે. નહીં તો આ મુનિની પ્રશંસા અમારા આચાર્ય ક્યા કારણે કરત. તેમ આવા દોષોનું આસેવન કરવા છતાં પણ તે તેની આલોચના કરે છે. એક દિવસની વાત છે કે ત્યાં કેઈ અન્ય આચાર્ય મહારાજ પોતાની શિષ્યમંડળી સાથે આવ્યા. તેઓએ જ્યારે ત્યાં તે અવિનીત શિષ્યના આ પ્રકારના દરરોજના વહેવારને જોયો તો તેમને આશ્ચર્ય થયું અને આચાર્ય મહારાજને કહેવા લાગ્યા કે

અત્ર દૃષ્ટાન્તસ્તથાહિ—

કસ્મિંશ્ચિદ્ ગચ્છે એકઃ શ્રમણગુણમુક્તઃ સર્વથા ભાવવિનયવર્જિતઃ સાધ્વાભાસઃ શિષ્ય આસીત્ । સ ચ પ્રતિદિનં પુરઃકર્માદિદોષદૂષિતમનેપનીયં ભક્તાદિકં ગૃહીત્વા મહતા સંવેગેન પ્રતિક્રમણકાલે આલોચયતિ । તસ્ય ગચ્છાચાર્યઃ પ્રાયશ્ચિતં પ્રયચ્છન્ વદતિ—અહો પશ્યત કથમસૌ ભાવમગોપયન્ શાલ્યહીનઃ સર્વં

इस अविनीततारूपी घाव के होने पर शिष्यजनों में स्वाभाविक चञ्चलता आजाती है, परन्तु जब उस घाव में गुरुओं से भी प्रत्यनीक होनेरूप सड़ा आने लगता है तब उसकी दुर्गंध को गुरुजन भी सहन नहीं कर सकते हैं, अतः वह संघ से अथवा गच्छ से बाहर कर दिया जाता है। यदि इसप्रकार की परिस्थितिवाले शिष्य को संघ से बाहर न करे तो कुल गण एवं संघ में महान् अनर्थ होता है। इसी विषय को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जाता है—

કિસી ગચ્છ મેં સાધુઓં કે ખીતરી આચાર વિચાર સે રહિત પરન્તુ ઉપર સે સાધુ જૈસા જ્ઞાત હોને વાલા એક સાધ્વાભાસ શિષ્ય રહતા થા। વહ પ્રતિદિન પુરઃકર્માદિદોષોં સે દૂષિત અનેપનીય—આહારાદિક ગ્રહણ કરતા ઓર ઝપર સે દિશાવટી સંવેગભાવ સે વઢે જોર-શોર સે પ્રતિક્રમણ કે સમય આલોચના કિયા કરતા થા। ગચ્છાચાર્ય પ્રાયશ્ચિત દેતે સમય કહા કરતે કિ દેખો યહ કિતના ભદ્રપરિણામી જીવ હૈ જો અપને હાર્દિક ભાવોં કો નહીં છુપાકર લગે હુવે અતિચારોં કી શુદ્ધ આલોચના

કારણે અવિનીતતારૂપ ઘા ને લઈ તેના મનમાં ભારે ચંચળતા આવી જાય છે પરંતુ ગુરુ—આજ્ઞાના અનાદરરૂપી સડો એના દિલમાં લાગી જાય છે ત્યારે એની દુર્ગંધીને ગુરુજન પણ સહન કરી શકતા નથી એટલે એને સંઘથી અથવા ગચ્છથી બહાર કરી દેવામાં આવે છે. જો આ પ્રકારની પરિસ્થિતિવાળા શિષ્યને સંઘથી બહાર કરવામાં ન આવે તો કુલ ગણ અને સંઘમાં મહાન અનર્થ બને છે. આ વિષયને એક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે:—

કોઈ ગચ્છમાં સાધુઓના અંદરના આચાર વિચારથી રહિત પરંતુ ઉપરથી સાધુ જેવો દેખાવ રાખતો એક સાધ્વાભાસ શિષ્ય રહેતો હતો. તે દિન દહાડે આધા કર્માદિ દોષથી દૂષિત અનેપનીય આહારાદિક ગ્રહણ કરતો. અને ઉપરના દેખાવમાં સંવેગભાવથી ઘણા જોરશોરથી પ્રતિક્રમણના સમયે આવે—અના કર્યા કરતો. ગુરુ મહારાજ એને પ્રાયશ્ચિત્ત દેતી વખતે કહેતા કે બુદ્ધો આ કેટલો ભદ્રપરિણામી જીવ છે જે પોતાના હાર્દિક ભાવોને નહીં છુપાવતાં



આગતેનાચાર્યેણ કથિતમ્—

ગિરિનગરનિવાસી કશ્ચિદગ્નિભક્તો વણિક્ પદ્મરાગરત્નૈર્ભવનં પૂરયિત્વા પ્રતિવર્ષં વહ્નિના પ્રદીપયતિ । તત્રત્યમન્દબુદ્ધિનૃપતિસભાયાં સ વણિક્ પ્રશંસિતઃ—અહો ધન્યોઽયં વણિક્ યદનેન વહ્નિદેવઃ પદ્મરાગરત્નૈઃ સંતર્પ્યતે । તદનન્તરમેકદા પ્રવલપવનપટલપ્રેરિતસ્તત્પ્રદીપિતદહનઃ સરાજપ્રાસાદં સમસ્તમપિ તન્નગરં દહતિસ્મ । તતોઽસૌ વણિક્ રાજા દણ્ડિતો નગરાન્નિષ્કાસિતઃ, તદેવં રાજા કો વાંધને મેં મિહ્લ કે જૈસા સિદ્ધહસ્ત હોતા હૈ । ધર્મરૂપી ઉદ્યાન કો નષ્ટ કરને કે લિયે યહ તરુકોટરાન્તર્ગત વહ્નિકી જ્વાલા કે સમાન દારુણ ઔર વિનાશકારી માના ગયા હૈ । આપ જૈસે ગચ્છાધિપતિ કો ઇસ અવિનીત કી પ્રશંસા કરતે હુઃ! દેખ કર મુજે ડસ રાજા કી કથા યાદ આતી હૈ—

ગિરિનગરનામક એક શહેર મેં અગ્નિભક્ત કોઈ એક વનિયા રહતા થા, જો પ્રતિવર્ષ અપને ભવન કો પદ્મરાગ મણિયોં સે ભર કર જલા દિયા કરતા થા । ડસકે ઇસ કાર્યકી પ્રશંસા વહાં કે મન્દબુદ્ધિ નામક રાજા તથા પ્રજા સભી મુક્તકંઠ સે કરતે થે । વે કહતે થે—ધન્ય હૈ યહ અગ્નિભક્ત જો અગ્નિ કી પ્રતિવર્ષ ઇસ પ્રકાર સે પૂજા કિયા કરતા હૈ । એક દિન કી વાત હૈ કિ ડસ વણિક્ ને જ્યોં હી અપના મકાન જલાયા કિ ઇતને મેં વડી ભારી આંધી કા એક પ્રવલ વેગ આયા, ઔર ડસસે પ્રજ્વલિત હો ડસ અગ્નિજ્વાલા ને ડસ નગર કો ભસ્મ કર દિયા ।

ભાળા ભવ્ય જીવડૂપી મૃગોને બાંધવામાં લિલની માફક સિદ્ધહસ્ત હોય છે. ધર્મડૂપી બાગનો નાશ કરવા માટે આ તરુકોટરાન્તર્ગત અગ્નિની જ્વાલા સમાન દારુણ અને વિનાશકારી માનવામાં આવેલ છે. આપ જેવા ગચ્છાધિપતિને આવા અવિનીતની પ્રશંસા કરતા બેઈ મને એક રાજાની વાત યાદ આવે છે—

ગિરિનગર નામના એક શહેરમાં અગ્નિભક્ત એવો એક વણીક રહેતો હતો જે દર વરસે પોતાના મકાનને પદ્મરાગ મણીઓથી ભરી બાળી નાખતો. તેના આ કાર્યની પ્રશંસા રાજા અને પ્રજા બધા મુક્તકંઠે કરતા હતા અને કહેતા હતા કે—ધન્ય છે આ અગ્નિભક્તને કે જે દરવરસે અગ્નિની આ પ્રકારથી પૂજા કર્યા કરે છે. એક દિવસની વાત છે કે એ વણીકે પોતાનું મકાન સળગાવ્યું એ સમયે ભારે ભેરશોરથી પવનની આંધી ચઢી આવી વેગવાળી પવનની આંધીને લઈ અગ્નિ ભેરશોર પ્રજ્વલિત બન્યો અને તેના અંગારા શહેરભરમાં ફરી વળતાં આખું શહેર અને રાજાના મહેલમાં પણ અગ્નિશાળાઓ ફરી વળી અને સાડુંએ શહેર તથા રાજાના મહેલ પણ નાશ પામ્યો. રાજાએ આથી અસંતુષ્ટ બની એ વણીકને

જન્મજરામરણગર્તપાતનાય પશ્ચવિધાસ્રવરૂપઃ, ક્ષાન્ત્યાદિગુણકમલનિકરનાશનાય મયંકરતુપારનિકરસ્વરૂપઃ, ચારિત્રવિધ્વંસને ધૂમકેતુઃ, સકલાસ્રવહેતુઃ, મુનિ-મણ્ડલાલ્પાંડશશિમણ્ડલે રાહુરિવ, માયાજાલેન મન્યમૃગવન્ધને મિહ્નિરિવ, ધર્મોદ્યાનદહને તરુકોટરવહ્નિરિવ ગચ્છે વર્તતે । મવાનિત્યમસ્ય પ્રશંસાં કુર્વન્ ક્ષિતીશિરિવ લક્ષ્યતે । આચાર્યેણોક્તમ્—કોઽસૌ ક્ષિતીશઃ ? કીદૃશી તસ્ય વાર્તા ?

આપ મન્ય જીવોંકે વિકસિત કરને મેં યદ્યપિ સૂર્ય કે તુલ્ય હેં તો મી આપકી છત્રછાયા મેં રહ્કર મી જો કુમુદ હી બના રહે, અર્થાત્—આચાર વિચાર સે સદા શિથિલ રહે ઉસ મન્દમાગી કે લિયે ક્યા કહા જાય । આપ કે હસ ગચ્છ મેં એક અવિનીત શિષ્ય હૈ, જો હસ ગચ્છ કા કલંક સ્વરૂપ હૈ, ક્યોં કિ અવિનીત શિષ્ય જન્મ જરા એવં મરણરૂપી સ્વેદુ મેં પાડને કે લિયે પંચવિધ આસ્રવરૂપ માના ગયા હૈ, જિસ પ્રકાર તુપાર-હિમ કા પુંજ કમલોં કે વન કો વિધ્વસ્ત કરને મેં કસર નહોં રખતા હૈ ઉસી પ્રકાર અવિનીત શિષ્ય મી ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોં કો નષ્ટ ભ્રષ્ટ કરને મેં જરા મી આગે પીછે કા વિચાર નહોં કરતા હૈ । અવિનીત શિષ્ય ચારિત્ર કે વિનાશ કરને કે લિયે ધૂમકેતુ કે જૈસા માના ગયા હૈ । સમ્પૂર્ણ આસ્રવોં કા યહ કારણ બતલાયા ગયા હૈ । મુનિમંડલરૂપ અલ્પાંડ ચન્દ્રમણ્ડલ કો ગ્રસન કરને કે લિયે વિદ્વાનોં ને હસ કો રાહુ કે જૈસા કહા હૈ । યહ અપની માયા-જાલસે અન્ય વિચારે મોલે માલે મન્યજીવરૂપી મૃગોં

હે શાસન પ્રભાવક ! આ મન્ય જીવોંને વિકસિત કરવામાં જો કે સૂર્યના તુલ્ય હો તો પણ આપની છત્રછાયામાં રહીને પણ જો કુમુદ જ બની રહે—અર્થાત્ આચાર વિચારથી સદા શિથિલ રહે તેવા મંદભાગી માટે શું કહેવામાં આવે. આપના આ ગચ્છમાં એક અવિનીત શિષ્ય છે—જે આ ગચ્છમાં કલંકસ્વરૂપ છે કેમકે અવિનીતજન જન્મ, જરા, અને મરણરૂપી ખાડામાં પાડવાવાળા પંચવિધ આસ્રવરૂપ માનવામાં આવેલ છે. જે પ્રકારે તુપાર, અર્થાત્ (બરફ) હીમનો પુંજ કમળના વનનો નાશ કરવામાં કસર રાખતો નથી તેમ અવિનીત શિષ્ય પણ ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોંને નષ્ટ ભ્રષ્ટ કરવામાં આગળ પાછળનો વિચાર કરતો નથી. અવિનીત શિષ્ય ચારિત્રનો વિનાશ કરવા માટે ધૂમકેતુ જેવો માનવામાં આવેલ છે. સંપૂર્ણ આસ્રવતું એ કારણ બતાવવામાં આવ્યું છે. મુનિમંડળરૂપ અલ્પાંડચન્દ્રમંડળને ગ્રહણ કરનારા રાહુ જેવો વિદ્વાનોંએ કહેલ છે તે પોતાની આ અવિનીતતા રૂપી બળથી અન્ય બીચારા લોભા-

ननु दुःशीलं सकलानर्थमूलं चेत् अविनीतेन कथं तर्हि तत्रानुरज्यते ?  
इत्याकाङ्क्षायां दुःशीलरतिकारणं दृष्टान्तं प्रतिबोधयितुमाह—

मूलम्—कणकुण्डगं चङ्क्तां णं; विट्ठं भुंजइं सूर्यरो ।

एवं सीलं चङ्क्तां णं, दुस्सीले रमइं मिण ॥ ५ ॥

छाया—

कणकुण्डकं त्यक्त्वा खलु, विष्टां भुङ्क्ते मूकरः ।

एवं शीलं त्यक्त्वा खलु, दुःशीले रमते मृगः ॥ ५ ॥

टीका—

‘कणकुण्डगं’ इत्यादि । मूकरः खलु कणकुण्डकम्—तण्डुलपूर्णभाजनम्—  
इदमुपलक्षणम्—रुचिरं मधुरं सुस्वादं सुगन्धयुक्तं त्वद्भासादिपुष्टिकरं हितकरं  
यत् तण्डुलादिकं, तेन पूर्णं यद्भाजनमुपस्थितं तदिति भावः, त्यक्त्वा विष्टां  
भुङ्क्ते, अत्र विष्टामित्यनेन अपवित्रां घृणोत्पादिकां रुजाकरां हेयां दुर्गन्धां कृमिमक्षि-  
कादिपरिपूर्णमित्यर्थो ध्वनितः । एवम्—अमुना प्रकारेण मृगः—मृग इव मृगः अज्ञः—  
हिताहितविवेकवर्जित इत्यर्थः, शीलं—मूलोत्तरगुणलक्षणं साध्वाचारं, यद्वा—विनय-  
समाधिलक्षणं त्यक्त्वा दुःशीले—दुराचारे अविनयलक्षणे रमते—आसज्यते । अयं  
भावः—यथा मूकरः प्रशस्तमाहारं विहाय नितान्तमथुचि सादरं भुङ्क्ते, अज्ञत्वात्,

यदि दुःशील सकल अनर्थों की जड़ है तो फिर क्यों अविनीत उसमें  
अनुरक्त होता है? इस प्रकार की शंका के समाधान निमित्त दुःशील में  
रतिका कारण दृष्टान्त देकर सूत्रकार समझाते हैं—कणकुण्डगं. इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जैसे—( सूर्यरो—मूकरः ) मूकर ( कणकुण्डगं—कणकुण्डकं )  
तण्डुल—आदि उत्तम भोजनीय पदार्थों से भरे हुए भाजन को ( चङ्क्ता )  
परित्याग कर ( णं—खलु ) निश्चय से आनंद के साथ ( विट्ठं—विष्टां )  
विष्टा—अशुचिको ( भुंजइं—भुंक्ते ) खाता है ( एवं ) इसी तरह ( मिण—

ले दुःशील सकल अनर्थोंनी जड़ छे तो पछी अविनीत अभां डेम  
अनुरक्त थाय छे. आ प्रकारनी शंकातुं समाधान करवा निमित्त दुःशीलभां  
रतिनुं दृष्टान्त आपी सूत्रकार समझावे छे—‘कणकुण्डगं.’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—लेम ( सूर्यरो—मूकरः ) मूकर ( कणकुण्डगं—कणकुण्डकं )  
आणा पगेरे उत्तम भोजनना पदार्थोंथी लरेला भोजन पात्रनो ( चङ्क्ता ) त्याग करी  
( णं—खलु ) निश्चयथी आनंद साथे ( विट्ठं—विष्टां ) विष्टा—अशुचिने ( भुंजइं—

તસ્ય પ્રશંસાં કુર્વતા આત્મા નગરં લોકથ્વા નાશિતઃ । તથા મન્થનપિ અસ્યાવિધિ-  
પ્રવૃત્તસ્ય પ્રશંસાં કુર્વન્ આત્માનં સમસ્તગચ્છં ચોચ્છેદયતિ । તતસ્તદ્વચનં શ્રુત્વા સ  
આચાર્યઃ સાધ્વાભાસમવિનીતં શિષ્યં સ્વગચ્છતો નિષ્કાસિતવાન્ । તસ્માદ્ દુઃશી-  
લસ્ય નિષ્કાસનં શ્રેયસ્કરમ્ ॥ ૪ ॥

દેખતે ૨ વહ સમસ્ત નગર ઉસ રાજા કે મહલસહિત એકદમ જલ કર  
નષ્ટ હો ગયા । રાજાને ઇસસે અસંતુષ્ટ હો ઉસ વણિક્કો કો દણ્ડિત  
કરકે અપને નગર સે વાહર નિકાલ દિયા । રાજા જો પેહિલે સે ઉસ  
વણિક્કે ઇસ કાર્ય કી પ્રશંસા ન કરતા તો ઉસકા હોસલા આગે મી  
ઇસ કાર્ય કો કરને કે લિયે નહીં વઢતા । સમસ્ત નગર એવં રાજમહલ  
જો નામશેષ હુણે ઉસકા પ્રધાન કારણ ઉસ રાજા કી હી નાસમક્ષી હૈ ।  
ઇસી તરહ સાધુ કે અકલ્પનીય કાર્ય મેં પ્રવૃત્ત ઇસ અવિનીત શિષ્ય કી  
જો આપ પ્રશંસા કરતે હૈં ઉસસે ઇસકા હોસલા વઢતા હૈ, આગે મી  
અકલ્પનીય કાર્ય કરને મેં સોત્સાહ વનતા હૈ । જિસકા અન્તિમ ફલ  
હોગા ગચ્છકા ઉચ્છેદ, ઓર ઇસ ઉચ્છેદજન્ય દોષોં કે ભાગી હોના  
પડેગા આપ કો, અતઃ આપકા અપની ઓર ગચ્છકી રક્ષાનિમિત્ત ઇસ  
અવિનીત કો ગચ્છ સે વાહર કર દેને મેં હી શ્રેય હૈ । ઇસ પ્રકાર આવે  
હુવે આચાર્ય મહારાજ કે કથન પર અચ્છી તરહ ધ્યાન દેકર ગચ્છા-  
ચાર્યજીને ઉસ અવિનીત શિષ્ય કો અપને ગચ્છ સે વાહર કર દિયા ।  
વયોં કિ દુઃશીલ શિષ્ય કા ગચ્છ સે સંબંધવિચ્છેદ કરના શ્રેયસ્કર હી  
માના ગયા હૈ ॥ ૪ ॥

સારી રીતે દંડ કરવા ઉપરાંત તેને પોતાના શહેરમાંથી કાઢી મૂક્યો. રાજા  
જો વણીકના એ કાર્યની પ્રશંસા ન કરત તો એ વણીકની તાકાત નહોતી  
કે દર વરસે આ પ્રમાણે અગ્નિજ્વાલા પ્રગટાવી શકે. સમસ્ત શહેર અને  
રાજમહેલ બળી ગયાં તેનું પ્રધાન કારણ એ રાજાની બીનસમજદારી જ છે.  
એ રીતે સાધુના અકલ્પનીય કાર્યમાં પ્રથમ આ અવિનીત શિષ્યની આપ  
પ્રશંસા કરો છો, એથી એ પોતાના મનમાં કુલાઈને આગળ ઉપર આથી  
પણ વિશેષ અકલ્પનીય કાર્યમાં આગળ વધશે. જેનું અંતિમ ફળ ગચ્છના  
ઉચ્છેદમાં આવવાનું અને એ ઉચ્છેદજન્ય દોષોના ભાગી આપને બનવું પડશે.  
આથી આપની અને ગચ્છની રક્ષા માટે આ અવિનીતને ગચ્છમાંથી બહાર  
કરી દેવામાં જ શ્રેય છે. આ પ્રકારે આવેલા આચાર્ય મહારાજના કહેવા ઉપર  
સારી રીતે ધ્યાન દઈ ગચ્છાચાર્યજીએ એ અવિનીત શિષ્યને પોતાના ગચ્છથી  
બહાર કરી દીધો. કેમકે દુઃશીલ શિષ્યનો ગચ્છથી વિચ્છેદ કરવો એ શ્રેયસ્કર  
માનવામાં આવેલ છે (૪).



જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મરજઃસમુત્પાદકં ક્ષાન્ત્યાદિગુણઘાતકં મૂલોત્તરગુણકલ્પપાદ-  
પોન્મૂલકં શુભભાવનાઽમ્મોજનિકરનીઠારપટલં સકલ્લાનર્થમૂલં ધર્મમર્યાદાવિધ્વંસન-  
શીલં દુઃશીલં સેવતે । અજ્ઞાનં હિ સર્વાનર્થકરં વિવેકહરં કષ્ટકષ્ટકાનુવિદ્ધં સકલ-  
દુર્ગુણસમિદ્ધં તપઃસંયમવિનાશકં પ્રમાદજનકં સ્વર્ગાપવર્ગમુત્સહારકમ્ ।

દેને ચાલે એસે શીલ-અર્થાત્ મુનિ કે આચાર કા પરિત્યાગ કર દેતા હૈ ।  
યહ શીલ સકલ ગુણોં મેં પ્રધાન માના ગયા હૈ । જીવ કે સાથ અનાદિ-  
કાલ સે લગે હુણ અણ્ડવિધ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે બંધ કા ઉચ્છેદ  
કરને ચાલા ચતલાયા ગયા હૈ । મિથ્યાત્વરૂપી પ્રવલગ્નિ- (ગાંઠ) કા યહ  
ભેદ કરને ચાલા હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપી અમૃત કી વૃષ્ટિ કરના ઇસ્કા  
સ્વભાવ હૈ । એસે પ્રશસ્ત ઉપકારક ઇસ શીલ કા ચહ અવિનીત શિષ્ય  
પરિત્યાગ કરકે દુઃશીલકા સેવન કિયા કરના હૈ । યહ દુઃશીલ શિષ્ય  
જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મરૂપી ધૂલીકો અપની આત્મા મેં ચિપકાને ચાલા હૈ ।  
ક્ષાન્તિ આદિ સદ્ગુણોં કા ધ્વંસક હૈ । મૂલગુણ ઇવં ઉત્તરગુણરૂપ  
કલ્પવૃક્ષ કા ઉન્મૂલક હૈ । શુભભાવનારૂપી કમલોં કો નષ્ટ-ભ્રષ્ટ કરને  
કે લિયે તુપારપાત-અર્થાત્-હિમવર્ષા જૈસા હૈ । સકલ અનર્થોં કા યહ  
મૂલ હૈ । એસે ધાર્મિક મર્યાદા કો ઉઘાડને કે સ્વભાવવાલે ઇસ દુઃશીલ  
કા ચહ અવિનીતશિષ્ય સેવનકર હિતાહિન કો નહીં સમજતા હૈ । યહ  
કિતને આશ્ચર્ય કી ચાત હૈ કિ જિસ વિનયમૂલ ધર્મ સે અપની આત્મા  
કા ઉદ્ધાર હોતા હૈ ઇસ્કા ચહ અવિનીત ત્યાગ કર અપકારક દુઃશીલ

આચારનો પરિત્યાગ કરી દે છે. આ શીલ સકલ ગુણોમાં પ્રધાન મનાયેલ છે.  
જીવની સાથે અનાદિકાળથી લાગેલા આઠ પ્રકારના જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મના  
બંધનોનો ઉચ્છેદ કરવા વાળા બતાવેલ છે. મિથ્યાત્વરૂપી પ્રબળ બ્રંથીનો આ  
લેદ કરવાવાળો છે, સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપી અમૃતની વૃષ્ટિ કરવી તેનો સ્વભાવ છે,  
એવા પ્રશસ્ત ઉપકારક આ શીલનો તે અવિનીત શિષ્ય પરિત્યાગ કરીને દુઃશીલનું  
સેવન કરે છે. આવો દુઃશીલ શિષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મરૂપ ધૂળને પોતાના  
આત્મામાં ચોંટાડનાર છે. ક્ષાન્તિ આદિ સદ્ગુણોનો નાશ કરનાર છે. મૂળગુણ  
ઉત્તરગુણરૂપ કલ્પવૃક્ષનો ઉન્મૂલક-નાશ કરનાર છે. શુભ ભાવનારૂપી કમલોને  
નષ્ટ ભ્રષ્ટ કરવા માટે તુપારપાત-અર્થાત્ હિમવર્ષા જેવા છે. સકલ અનર્થોનું  
એ મુળ છે. એવા ધાર્મિક મર્યાદાને ઉઘાડવાની વૃત્તિવાળા આવો દુશીલનું  
તે અવિનીતજન સેવન કરી હિતાહિતને સમજતા નથી. આ કેવા આશ્ચર્યની  
વાત છે કે જે વિનય મુળ ધર્મથી પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર થાય છે. તેનો

યથા ચા હિતાહિતવિવેકરહિતત્વાન્મૃગઃ સ્વાપાયમપશ્યન્ ગાનતાનશ્રવણમોહિતઃ  
સન્ વ્યાધમભિસરતિ, એવમ્-અજ્ઞાનતિમિરસંવૃતાત્મા સ્વલુ સંસારવારિધિમહાતરણિ  
શિવપદસરલસરણિ સિદ્ધિપદદાયકં સકલગુણનાયકમ્, અનાદિભવસંચિતાવૃથિ-  
કર્મવન્ધનોચ્છેદકં મિથ્યાત્વગ્રંથિભેદકં સમ્યગ્જ્ઞાનમુધાવર્પણશીલં શીલં પ્રવિહાય  
મૃગઃ ) વિવેક રહિત હોને કે કારણ મૃગ જેસા યહ અવિનીત શિષ્ય મી  
( સીલં-શીલં ) મૂલોત્તરગુણરૂપ અથવા વિનયસમાધિરૂપ સાધુસંબંધી  
આચાર કો ( ચક્ષુ-ત્યક્ત્વા ) પરિત્યાગ કર ( ણં-સ્વલુ ) નિશ્ચય સે  
( દુસ્સીલે-દુઃશીલે ) અવિનયરૂપ દુરાચાર કા ( રમઈ-રમતે ) સેવન  
કરતા હૈ ॥ ૫ ॥

ભાવાર્થ—બોધવિકલ હોને કે કારણ જૈસે સૂકર પ્રશસ્ત આહાર  
કા પરિત્યાગ કર નિતાન્ત અશુચિ પદાર્થકા વડે આનંદકે સાથ સેવન  
કરતા હૈ, તથા હિતાહિત વિવેક સે રહિત હોનેકી વજહ સે જૈસે  
મૃગ ભવિષ્ય મેં હોને વાલી આપત્તિ કો નહીં જાનતા હુઆ ગાન કે  
સુનને મેં એકતાન હોકર અપને આપ વ્યાધ કી જાલ મેં ફસ જાતા હૈ,  
ઉસી તરહ અજ્ઞાનરૂપી અંધકાર સે આચ્છાદિત હુઆ અવિનીત શિષ્ય મી  
સંસારરૂપી સમુદ્ર સે પાર લગાને કે લિયે વડે સુરક્ષિત જહાજ જૈસે, તથા  
શિવપદ મેં લેજાને કે લિયે સુન્દર સીધે માર્ગ જૈસે, એવં સિદ્ધિપદ કો

મુક્તે) પાય છે (એવં) આ પ્રમાણે (મિથ્યા-મૃગઃ) વિવેકરહિત થવાને કારણે મૃગ  
જેવા આ અવિનીત શિષ્ય પણ (સીલં-શીલં) મૂલોત્તર ગુણરૂપ અથવા વિનય-  
સમાધિરૂપ સાધુસંબંધી આચારનો (ચક્ષુ-ત્યક્ત્વા) પરિત્યાગ કરી (ણં-સ્વલુ)  
નિશ્ચયથી (દુસ્સીલે-દુઃશીલે) અવિનયરૂપ દુરાચારનું (રમઈ-રમતે) સેવન કરે છે.

ભાવાર્થ—બોધવિકલ હોવાને કારણે જેમ સૂકર (ભૂંડ) પ્રશસ્ત  
આહારનો પરિત્યાગ કરી નિતાન્ત અશુચિ પદાર્થનું ભારે આનંદથી સેવન કરે  
છે. અને હિતાહિત વિવેકથી રહીત હોવાના કારણે જેમ મૃગ ભવિષ્યમાં  
આવનારી આપત્તિને બાણતો નથી, કારણકે સંગીતના સુરોમાં એકતાન બનીને  
ચોતે ચોતાના હાથે શીકારીની બળમાં ફસાઈ જાય છે. એવી રીતે અજ્ઞાનરૂપી  
અંધકારથી આચ્છાદિત બનેલા અવિનીતશિષ્ય પણ સંસારરૂપી સમુદ્રથી પાર  
કરવાવાળા મોટામાં મોટા સુરક્ષિત જહાજ જેવા તથા શિવપદમાં લઈ જવાવાળો  
સુંદર સીધા માર્ગ જેવા અને સિદ્ધિપદને આપનાર એવા શીલ-અર્થાત્ મુક્તિના

दासी सूकरीसंनिधौ गत्वा तदीयशिशुं समानीय राजपुत्र्यै समर्पयामास । सा च राजपुत्री चात्सल्येन सूकरशिशुं पालयन्ती कदाचित्तमङ्गे स्थापयति, स्नापयति, तदङ्गं करेण प्रोच्छ्रयति, कदाचित् तदङ्गसंलग्नां धूलिमपसारयितुं मार्जयति, विविधं मिष्टान्नं भोजयति, मृदुलशय्यायां स्वसमीपे स्वापयति । सा राजपुत्री तस्य सूकरशिशोर्गले चरणेषु च सकिङ्किणीकं स्वर्णाभरणं रचयति, पृष्ठोपरि बहुमूल्यकं विविधवर्णरञ्जितं 'ञ्ज' इति प्रसिद्धं स्वर्णजटितयस्त्रं च वितरति । एवं सा राजपुत्री पुत्रवत् सूकरशिशुं लालयतिस्म ।

एक दिनकी बात है कि जब वह अपने महलके झरोखे में बैठी हुई बाहर की ओर निहार रही थी कि सहसा इसकी दृष्टि एक सूकरी पर पड़ी, जो अपने बच्चोंको संगमें लिये हुए वहीं पर इधर-उधर फिर रही थी । उसे देखकर उसने मन में विचार किया कि यह सूकरी मेरी अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ है, जो कम से कम अपने बच्चों के साथ घूमा करती है । इस अवस्था में इसे जो आनंद मिलता है वह यही जान सकती है । एक मैं अभागिनी हूँ जो राजमहल में रहती हुई भी इस प्रकार के सुख से वंचित बनी हुई हूँ । इस प्रकार का विचार कर उसने अपनी एक दासी को बुलाया और कहा कि जाओ और इन सूकरी के बच्चों में से एक बच्चे को ले आओ । आज्ञा पाते ही दासी सूकरी के पास पहुँची और वहाँ से एक बच्चे को उसने उस राजपुत्री के लिये लाकर दे दिया । राजपुत्री ने भी बड़े आनंद के साथ उसका पालन पोषण करना प्रारंभ कर दिया । इस सिलसिले में कभी वह उसे अपनी गोद में बैठा लेती,

ज्यादे એ પોતાના મહેલના ઝડખામાં બેઠી બેઠી બહાર જોઈ રહી હતી, કે સહસા તેની દૃષ્ટી એક ભૂંડણ ઉપર પડી. જે પોતાના બચ્ચાઓને સાથમાં લઈને આમતેમ ઘુમી રહી હતી તેને જોઈને રાજકન્યાએ મનમાં વિચાર કર્યો કે આ સૂકરી મારા કરતાં ઘણી સુખી છે, જે પોતાના બચ્ચાઓ સાથે લઈને ફરે છે, આ અવસ્થામાં એને જે આનંદ મળતો હશે તે એજ જાણતી હશે. એક હું જ એવી અભાગણી છું કે રાજમહેલમાં રહેવા છતાં પણ આ પ્રકારના સુખથી વંચિત બનેલ છું. આ પ્રકારનો વિચાર કરી તેણે પોતાની એક દાસીને બોલાવી અને કહ્યું કે જાઓ અને એ સૂકરીના બચ્ચામાંથી એક બચ્ચું લઈ આવો. આજ્ઞા મળતાં જ દાસી સૂકરીની પાસે પહોંચી અને ત્યાંથી એક બચ્ચું લઈ રાજપુત્રી પાસે આવી તેને સુખદ કર્યું. રાજપુત્રીએ તેનું સારી રીતે પાલન પોષણ કરવાનું શરૂ કર્યું. આ ઉત્સાહમાં તે કેઈ વખત સૂકરીના બચ્ચાને પ્રેમથી પોતાના બોળામાં બેસારી દેતી, ક્યારેક તેને નવડાવતી

અસ્મિન્નર્થે સૂકરદૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

વૃંગદેશેક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિતનગરેઽરિમર્દનનામા નૃપો વભૂવ । તસ્ય સપ્ત કન્યકા આસન્ । સ ભૂપતિસ્તાસાં કન્યકાનાં યોગને વયસિ પ્રાપ્તે તા એકૈકક્રમેણ વિવાહિતાઃ । તત્રૈકા કન્યકા કર્મયોગતો વિવાહાનન્તરમચિરેણૈવ કાલેન પતિહીના જાતા । એકદા સા ગચ્ચાક્ષે સ્થિતા કુતચિત્ સમાગતાં સમુતાં સૂકરીં દૃષ્ટ્વા ચિન્તયામાસ—અહો ! ધન્યમસ્યા જન્મ, યદિયં વ્રહ્મભિરપત્યૈઃ સાર્ધં વિચરન્તી મુલ્લમનુભવતિ । ઇતિ વિચિન્ત્ય સા સ્વદાસીમવ્રવીત્—અત્રૈકં સૂકરશિશું સમાનય । તદાજ્ઞયા

કો સેવતા હૈ । અજ્ઞાન કી મહિમા અપાર હૈ । સમસ્ત અનર્થો કી જડ એક અજ્ઞાન હી તો હૈ । અજ્ઞાન આતે હી પહિલે વહ વિવેક પર હી કુઠારા ઘાત કરતા હૈ । જિસ આત્મા સે વિવેક કા લોપ હો જાતા હૈ ઉસ આત્મા મેં વિવિધ કષ્ટરૂપી કાંટે સ્વહે હો જાતે હૈ । યહ અજ્ઞાન અનેક પ્રકાર કે દુર્ગુણો કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ । તથા તપ ઔર સંયમ કા વિનાશક હૈ, યહ પ્રમાદ કો ઉત્પન્ન કરનેવાલા હૈ, તથા સ્વર્ગ ઔર મોક્ષ કે સુખોંકા વિધાતક હૈ ॥ હસ પર સૂકર કા દૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—

વંગદેશ મેં ક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિત નામકા એક સુંદર નગર થા । અરિમર્દન નામકા રાજા ઉસકા શાસક થા । હસકે સાત કન્યાઈ થીં । રાજા ને હનકા ક્રમશઃ જબ વે તરુણ અવસ્થાવાલી હો ચુકીં વિવાહ કર દિયા । કર્મકી વિચિત્રતાવશ એક લડકી વિવાહ કે વાદ હી વિધવા હો ગઈ ।

તે અવિનોત ત્યાગ કરી અપકારક દુઃશીલને સેવે છે. અજ્ઞાનની મહિમા અપાર છે. સમસ્ત અનર્થોની જડ એક અજ્ઞાન જ છે. અજ્ઞાન આવતાંની સાથે જ તે સહુ પ્રથમ વિવેક ઉપર જ ઘા કરે છે. જે આત્મામાંથી વિવેકનો લોપ થઈ જાય છે એ આત્મામાં નાના પ્રકારના કષ્ટરૂપી કાંટાઓ ખીછાવાઈ જાય છે. એ અજ્ઞાન અનેક પ્રકારના દુર્ગુણોને ઉત્પન્ન કરે છે. તથા તપ અને સંયમનો વિનાશ કરે છે. એ પ્રમાદને ઉત્પન્ન કરનાર છે તથા સ્વર્ગ અને મોક્ષના સુખોનો નાશ કરનાર છે.

આ ઉપર સૂકરનું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારે છે.

વંગદેશમાં ક્ષિતિ પ્રતિષ્ઠિત નામનું એક સુંદર નગર હતું. અરિમર્દન નામના રાજાનું શાસન હતું, તેને સાત કન્યાઓ હતી રાજાએ તેના ક્રમ પ્રમાણે ૧. ૨. ૩. જેમ જેમ ઉમર લાયક થતી ગઈ તેમ તેમ તેના વિવાહ કરી આપ્યા. કર્મની વિચિત્રતાવશ એક પુત્રી વિવાહ પછી વિધવા બની. એક દિવસની વાત છે કે



सह भुक्तवत्यः । सा दुर्भगाऽपि सूकरशिशुना सह भोक्तुं प्रवृत्ता स्वर्णस्थाले रत्न-  
कटोरकेषु च स्थापितं प्रशस्तं पथ्यं रुचिकरं वातपित्तकफहरं विविधमशनं पानं  
खाद्यं स्वाद्यं च चतुर्विधमाहारमभ्यवहरन्ती प्रेम्णा प्रथमग्रासं सूकरशिशुमुखे दत्त्वा  
तदनु सानन्दं स्वयमश्नाति, तदाऽकस्मादेकस्या भगिन्याः शिशुना आसन्नप्रदेशे  
पुरीषोत्सर्गः कृतः, तमालोक्य तेन सूकरशिशुना प्रशस्तमशनं परित्यज्य पुरीष-  
भक्षणं कृतम् । पुरीषमशनन्तं सूकरशिशुं विलोक्य सर्वा भगिन्यः सपरिहासमब्रुवन्-

विधवा राजपुत्रीने कहा कि यदि आप सब जनों मेरे इस सूकर शिशु के  
साथ जो भोजन करने के लिये तैयार हों तो ही मैं आपके साथ भोजन  
करने में सम्मिलित हो सकती हूँ अन्यथा नहीं । उसकी इस बात को  
सुनकर उसकी अन्य बहिनोंने मंजूर नहीं किया । अतः उन सबने  
अपने-अपने बच्चोंके साथ पृथक्-पृथक् रूप में ही भोजन करना प्रारंभ  
किया । और पति विना की राजपुत्री भी अपने सूकर शिशु के साथ  
भोजन करने में प्रवृत्त हुई । खाने के पहिले उसने जो भोजन सुवर्णके  
थालों में परोसा हुआ था और सुवर्णकी कटोरियों में अलग-अलग  
रूपमें रखा गया था और जो प्रशस्त, पथ्य, रुचिप्रद तथा वात पित्त  
एवं कफ हारक था ऐसे उस विविध भांति के अशन-हलुआ पुरी आदि,  
पान-दुध शरबत आदि, खाद्य-द्राक्षा आदि, स्वाद्य-चूरण आदि, एवं  
चार प्रकार के भोजन में से एक-एक ग्रास अपने प्रिय उस सूकर  
शिशु के मुखमें देती हुई आनंद के साथ भोजन करने लगी । जब यह  
भोजन करने में प्रवृत्त थी कि इतने में ही एक अपनी बहिन के बच्चे

भारा सूकरना जन्थानी साथे लोजन करवा तैयार हो, तो न हूँ आपनी  
साथे लोजन करवाभां सामील थई शकुं ओ सिवाय नहीं। तेनी आ वातने  
भीलु जडेनाओ भंगुर न करी ओटले ते जधीयोओ पोतपोताना जाणके।  
साथे जुही जुही रीते लोजन करवानो आरंभ कर्यो। अने विधवा राजपुत्री  
पण पोताना सूकर जन्थानी साथे लोजन करवा लागी। आवा जेसतां पडेलां  
ओणे जे लोजन सोनाना थाणमां पीरसेल डतुं, जे नानी वाटकीओमां अलग  
अलग रीते गोठववाभां आवेल डतुं जे लोजन प्रशस्त, पथ्य, रुचिप्रद तथा  
वातपित्त अने कफ हरनार डतुं ओवा विविध प्रकारना लोजनमां डलवा  
पुरी आदि, पान-दुध शरबत विगेरे भाद्य-द्राक्ष वगेरे, स्वाद्य-चूर्ण वगेरे  
आवा चार प्रकारना लोजनमांथी अडेक डोणीयो पोताना प्रिय सूकरना जन्थाना  
भोढाभां देती देती विधवा राजपुत्री भुशी साथे लोजन करवा लागी। ज्यारे  
ओ लोजन करवाभां प्रवृत्त डती त्यारे तेनी ओक जडेनना जाणके थोडे छे

एकदाऽरिमर्दनस्य भवने कंचिदुत्सवं निमित्तीकृत्य सर्वाः कन्यकाः समायाताः । प्रेम्णा परस्परं ता ऊचुः—अद्यास्माभिः सर्वाभिः सहैव भोजनं कर्तव्यम्, तदाऽसौ दुर्भगा राजपुत्री जगाद—यद्यनेन मम प्रियशिथुना सह यूयं भोजनं कुरुत, तर्हि युष्माभिः साकं मया भोक्तव्यं नान्यथा, ततोऽन्याभिस्तस्याः सर्वभगिनीभिस्तद्वचनं नाङ्गीकृतम् । तदा पृथक् पृथगेव सर्वाः स्व-स्व-शिशुभिः

કभी उसको स्नान कराती । और स्नान कराकर फिर उसका शरीर भी पोंछती । कभी कभी यह उसके शरीर पर लगी हुई धूलीका मार्जन करती । विविध मिष्ठान्न खिलाती । नरम-मृदुल-शय्या पर उसे अपने ही पास सुलाती । इतने मात्र से ही वह राजपुत्री संतुष्ट नहीं रहती किन्तु वह उस बच्चे के गले में और पैरों में सुवर्ण रचित बहुमूल्य आभरणों को भी पहिराती । जिनमें छोटी-छोटी बजती हुई घंटियां लगी रहती थी । उसकी पीठ पर वह झूल भी ओढाती जो बहुत कीमती होती तथा अनेक प्रकार के रंगविरंगे रंगों से रंजित रहा करती । और जिस झूलमें सुनहरी काम बना रहता । इस प्रकार वह राजपुत्री उस सूकर के बच्चे का लालन पालन करने में तत्पर रहने लगी । एक समय की बात है कि राजा अरिमर्दनने अपनी समस्त कन्याओं को किसी उत्सव के समय आमंत्रित किया और कन्यायें आयीं, बहुत समय के बाद उन सबको परस्पर मिलने से बहुत ही आनंद हुआ । सबने विचार किया कि आज हम सब मिलकर एक ही साथ भोजन करें । यह सुनकर उस

અને નવડાવી તેના શરીરને સાફ કરતી, ક્યારેક ક્યારેક તેના શરીર ઉપર ઉડેલી ધુળને સાફ કરતી, વિવિધ મિષ્ટાન્ન ખવડાવતી અને સુંવાળી એવી શેયા ઉપર પોતાની પાસે સુવાડતી. આટલાથી જ રાજપુત્રીને સંતોષ ન થતો પરંતુ તે બચ્ચાના ગળામાં અને પગોમાં સોનાના બહુ મુલ્ય અલંકારો પણ પહેરાવતી જેમાં નાની નાની ટોકરીઓ-ધુધરીઓ લગાડવામાં આવતી એની પીઠ ઉપર ઝુલ પણ ઓઢાડતી જે ઘણી કિંમતી હતી તેમજ અનેક પ્રકારના રંગબેરંગી રંગોવાળી હતી. જેમાં સોનેરી તારની કસબ કળા પણ કરવામાં આવેલ હતી. આ પ્રકારે રાજપુત્રી એ સૂકરના બચ્ચાનું લાલન પાલન કરવામાં તત્પર રહેતી. એક સમયે રાજા અરિમર્દને પોતાની સમસ્ત કન્યાઓને કેાઈ ઉત્સવના પ્રસંગે આમંત્રણ આપી બોલાવી, કન્યાઓ આવી ઘણા સમય પછી એક બીજાઓને પરસ્પર મળતાં ઘણો જ આનંદ થયો. બધી બહેનોએ મળી વિચાર કર્યો કે આજે બધી બહેનો સાથે બેસીને ભોજન કરીએ. આ સાંભળી એ વિધવા રાજપુત્રીએ કહ્યું કે જો તમે બધી બહેનો

ઉત્કાર્યપુપસંહરન્ કર્તવ્યપુપદિશતિ—

મૂલમ્—સુણિયાંઽભાવં સાણસ્સ સૂયરસ્સ નરસ્સ ચ ।

વિણેઽ ઠવિજ્જે અપ્પાણં ઇચ્છંતો હિયમપ્પણો ॥૬॥

છાયા—

શ્રુત્વાઽભાવં શુન્યાઃ સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ।

વિનયે સ્થાપયતિ આત્માનમ્ ઇચ્છન્ હિતમાત્મનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—

‘સુણિયા.’ इत्यादि —शुन्याः=पूतिकर्णशुन्याः सूकरस्य च एतदुभय-  
दृष्टान्तस्य, तथा च=पुनः नरस्य=पुरुषस्य-दार्ष्टान्तिकतया कथितस्य दुःशीलशिष्य-  
अग्नि जलाकर उसकों अग्नि में भून दिया । इस कुमौत से उसको  
मारा । इस लिये सूत्रकार कहते हैं कि-दुःशील का त्यागकर शील  
सदाचार का सेवन करना चाहिये ॥ ५ ॥

इसी कथित अर्थका उपसंहार करते हुए सूत्रकार कर्तव्य का उप-  
देश अगली गाथा द्वारा करते हैं—‘सुणिया. इत्यादि’

अन्वयार्थ—( साणस्स-शुन्याः ) पूतकर्णी कुत्ती के ( सूयरस्स  
नरस्स य-सूकरस्य नरस्य च ) सूकर के और दार्ष्टान्तिक रूप में प्रदर्शित  
किये गये दुःशील शिष्य के ( अभाव-अनादर ) अर्थात् दुर्दशारूप  
अवस्था को ( सुणिया-श्रुत्वा ) सुनकर ( अप्पणो हियं इच्छंतो-आत्मनः  
हितम् इच्छन् ) आत्मा के हित के अभिलाषी शिष्य ( अप्पाणं-  
आत्मानं ) अपनी आत्माको ( विणए ठविज्ज-विनये स्थापयेत् ) विनय

સળગાવ્યો અને તેમાં તેને ભૂંછ નાખ્યું. આ રીતે કમોતથી તેને માર્યું.  
આ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે દુઃશીલનો ત્યાગ કરી શીલ-સદાચારનું સેવન  
કરવું જોઈએ. (૫)

આ કહેવાયેલા અર્થનો ઉપસંહાર કરીને સૂત્રકાર કર્તવ્યનો ઉપદેશ  
આ ગાથા દ્વારા કરે છે.—‘સુણિયા ભાવં.’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—( સાણસ્સ-શુન્યાઃ ) પૂતકર્ણી કુતરીના ( સૂયરસ્સ નરસ્સ ચ -  
સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ) સૂકરના અને દૃષ્ટાંતિક રૂપમાં પ્રદર્શિત કરાયેલ દુઃશીલ શિષ્યના  
( અભાવ-અનાદર ) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ અવસ્થાને ( સુણિયા-શ્રુત્વા ) સાંભળીને  
( અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ હિતમ્ ઇચ્છન્ ) આત્માના હિતના અભિલાષી  
શિષ્ય ( અપ્પાણં-આત્માનં ) પોતાના આત્માને ( વિણએ ઠવિજ્જ-વિનયે સ્થાપયેત્ )

ભગિનિ ! પશ્ય તવાયં શિશુઃ કિં કરોતિ ! વિષ્ઠાં ભક્ષયતિ । અનેનૈવ સાક્રમસ્માન  
 ભોજયિતું સમીહસે, एवं सर्वभगिनीनां वचनं श्रुत्वा लज्जिता सा राजपुत्री सूकर-  
 शिशुं तत्याज । तदनन्तरमितस्ततो भ्रमन्तं दृष्टपुष्टाङ्गं तं सूकरशिशुं विलोक्य  
 चाण्डालः स्वगृहं नीत्वा चरणेषु वदध्या बह्वौ प्रक्षिप्य कुत्सित मृत्युना हतवान् ।  
 तस्मात् दुःशीलं परित्यज्य शीलमासेवनीयम् । ॥ ५ ॥

ને થોડી દૂર પર જાકર અશુચિ કર દી । यह देखकर उस सूकर शिशु  
 ने उस प्रशस्त मधुर सुस्वादु सुगन्धि पथ्य भोजन का परित्याग करके  
 कन्या के मना करते भी शीघ्र ही दौड़कर अशुचि के पास जाकर  
 उसका भक्षण करने लगा । सूकर शिशु को अशुचि खाते देखकर वे  
 सभी बहिनें मजाक करती हुई अपने बहिन से बोलीं कि हे बहिन !  
 देखो तो सही आपका यह प्यारा पुत्र क्या कर रहा है । कितने आनंदसे  
 अशुचि खाने में मग्न हो रहा है । इसी के साथ आप हम सबको  
 भोजन करने के लिये प्रेरित करती हैं ? इस प्रकार बहिन को उन सब  
 बहिनों ने उलाहना दिया । उलाहनेके वचन सुनकर वह उनके समक्ष  
 अधिक लज्जित हुई और उस सूकर शिशु को घर से बाहिर निकाल  
 दिया । घरसे बाहिर होजाने पर यह इधर उधर फिरने लगा । इतने में  
 चांडाल ने इसे पकड़ लिया और घर ले जाकर चारों पैर बांधकर जमीन  
 पर डाल दिया और उस पर घांस डालकर फिर अग्नि जलाई और

જઈને અશુચિ કરી, આ જોઈ તે સૂકર બચ્ચાએ પ્રશસ્ત, મધુ, સુસ્વાદિષ્ટ, સુગંધી  
 ભોજનનો પરિત્યાગ કરીને વિધવા રાજકન્યાના રોકવા છતાં ન રોકાતાં  
 ઝડપથી દોડી જઈ અશુચિ પાસે પહોંચી તેનું ભક્ષણ કરવું શરૂ કર્યું. સૂકર  
 બચ્ચાને અશુચિ ખાતું જોઈ બધી બહેનો મશ્કરી કરતાં પેલી વિધવા બહે-  
 નને કહેવા લાગી કે હે બહેન ! જુઓ તો ખરાં તમારો એ પ્યારો પુત્ર  
 શું કરી રહેલ છે. કેટલા આનંદથી અશુચિ ખાવામાં મગ્ન બની ગયેલ છે.  
 આની સાથે તમે અમોને ભોજન કરવાનું કહેતાં હતાં. આ પ્રકારે પેલી બધી  
 બહેનોએ તેને મહેણું દેતાં મહેણાનું વચન સાંભળીને તે એમની સમક્ષ  
 ખુબ શરમાઈ ગઈ અને એ સૂકર બચ્ચાને ઘરમાંથી બહાર કાઢી મૂક્યું.  
 ઘરથી બહાર થઈ જતાં તે જ્યાં ત્યાં ભટકવા લાગ્યું એટલામાં ચાંડાળને હાથ  
 તે પડી ગયું જેને પકડી તે પોતાને ઘેર લઈ ગયો અને ત્યાં લઈ જઈ ચારે  
 પગ બાંધી જમીન ઉપર પછાડ્યું, અને તેના ઉપર ઘાસ નાખીને પછી અગ્નિ



ઉક્તાર્થમુપસંહરન્ કર્તવ્યમુપદિશતિ—

મૂલમ્—સુણિયાઽભાવં સાણસ્સ સૂયરસ્સ નરસ્સ ચ ।

વિણેણ ઠવિજ્જ અપ્પાણં ઇચ્છંતો હિયમપ્પણો ॥૬॥

છાયા—

શ્રુત્વાઽભાવં શુન્યાઃ સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ।

વિનયે સ્થાપયતિ આત્માનમ્ ઇચ્છન્ હિતમાત્મનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—

‘સુણિયા.’ ઇત્યાદિ —શુન્યાઃ=પૂતિકર્ણશુન્યાઃ સૂકરસ્ય ચ એતદુભય-  
દષ્ટાન્તસ્ય, તથા ચ=પુનઃ નરસ્ય=પુરુષસ્ય-દાર્ઢાન્તિકતયા કથિતસ્ય દુઃશીલશિષ્ય-  
અગ્નિ જલાકર ઉસકોં અગ્નિ મેં ભૂન દિયા । ઇસ કુમૌત સે ઉસકો  
મારા । ઇસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-દુઃશીલ કા ત્યાગકર શીલ  
સદાચાર કા સેવન કરના ચાહિયે ॥ ૬ ॥

ઈસી કથિત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કર્તવ્ય કા ઉપ-  
દેશ અગલી ગાથા દ્વારા કરતે હૈં—‘સુણિયા. ઇત્યાદિ’

અન્વયાર્થ—( સાણસ્સ-શુન્યાઃ ) પૂતકર્ણી કુત્તી કે ( સૂયરસ્સ  
નરસ્સ ચ-સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ) સૂકર કે ઔર દાર્ઢાન્તિક રૂપ મેં પ્રદર્શિત  
કિયે ગયે દુઃશીલ શિષ્ય કે ( અભાવ-અનાદર ) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ  
અવસ્થા કો ( સુણિયા-શ્રુત્વા ) સુનકર ( અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ  
હિતમ્ ઇચ્છન્ ) આત્મા કે હિત કે અભિલાષી શિષ્ય ( અપ્પાણં-  
આત્માનં ) અપની આત્માકો ( વિણેણ ઠવિજ્જ-વિનયે સ્થાપયેત્ ) વિનય

સળગાવ્યો અને તેમાં તેને ભૂંછ નાખ્યું. આ રીતે કમોતથી તેને માર્યું.  
આ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે દુઃશીલનો ત્યાગ કરી શીલ-સદાચારનું સેવન  
કરવું જોઈએ. (૫)

આ કહેવાયેલા અર્થનો ઉપસંહાર કરીને સૂત્રકાર કર્તવ્યનો ઉપદેશ  
આ ગાથા દ્વારા કરે છે.—‘સુણિયા ભાવં.’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—( સાણસ્સ-શુન્યાઃ ) પૂતકર્ણી કુતરીના ( સૂયરસ્સ નરસ્સ ચ -  
સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ) સૂકરના અને દાર્ઢાન્તિક રૂપમાં પ્રદર્શિત કરાયેલ દુઃશીલ શિષ્યના  
( અભાવ-અનાદર ) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ અવસ્થાને ( સુણિયા-શ્રુત્વા ) સાંભળીને  
( અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ હિતમ્ ઇચ્છન્ ) આત્માના હિતના અભિલાષી  
શિષ્ય ( અપ્પાણં-આત્માનં ) પોતાના આત્માને ( વિણેણ ઠવિજ્જ-વિનયે સ્થાપયેત્ )

સ્યેત્યર્થઃ, અભાવં-કુત્સિતો ભાવઃ અભાવઃ દુર્દશાલક્ષણઃ, સ ચેહ ભવે સર્વતો નિષ્કાસનાદિરુપઃ, પરભવે ગુરોરાશાતનયા અવોધિઃ, અવોધેસ્તપઃસંયમાસંમયઃ, સંયમભાવેન મોક્ષમાર્ગનારાધનમ્, તેનાનન્તસંસારપરિભ્રમણમ્ તં તથાવિનયમભાવં તપઃ શ્રુત્વા=ગુરુસંનિધૌ નિશમ્ય આત્મનઃ=સ્વસ્ય, હિતં=કલ્યાણમ્ ઇચ્છન્ આત્માને ધર્મ મેં સ્થાપિત કરતા હૈં । અથવા-ભાવ યહ હૈં કિ કુત્તી સૂકર ઓર અવિનીત શિષ્યકા સ્વરૂપ સૂનકર આત્મહિતૈપી વિનય શીલ બનેં ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર યહ ઉપદેશ દે રહે હૈં કિ જો શિષ્ય આત્મકલ્યાણ કા અભિલાષી હૈં ડસકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ઇસ વિનયધર્મકે આચરણ કરને મેં થોડા ભી પ્રમાદ ન કરે । કારણ કિ અવિનીત શિષ્ય કી વહ દુર્દશા હોતી હૈં જો પૂતિકર્ણી શુની કી તથા સૂકર શિશુ કી હુઈ હૈં । અવિનીત કે ડપર કિસી કા ભી વિશ્વાસ નહીં રહતા વહ ઇસ ભવમેં ગુરુ કી અકૃપાકા ભાજન બનતા હુઆ જગહ-જગહ અપમાન આદિ દુઃસ્થિતિ કો સહન કરતા હૈં—ઓર ગચ્છ સે વાહર ભી કર દિયા જાતા હૈં તથા પરભવ મેં ગુરુ કી આશાતના સે વોધિ કે લાભ સે ભી વંચિત રહતા હૈં વોધિલાભ કે વિના કમી ભી શ્રેયસ્કર મુક્તિ કા માર્ગ ડસે પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈં । વ્યોં કિ વોધિ કે અભાવ મેં સમ્યક્ તપ ઓર સંયમ નહીં હોતા હૈં । સમ્યક્ તપ સંયમ કે અભાવ સે મોક્ષમાર્ગ કી આરાધના નહીં હોતી હૈં ઓર મોક્ષ-

વિનય ધર્મમાં સ્થાપિત કરે છે. અથવા ભાવાર્થ એ છે કે—કુતરી, સૂકર અને અવિનીત શિષ્યનું સ્વરૂપ સાંભળી આત્મહિતૈપી વિનયશીલ બને.

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર એવો ઉપદેશ આપે છે કે જે શિષ્ય આત્મ કલ્યાણનો અભિલાષી છે, એનું કર્તવ્ય છે કે તે આ વિનય ધર્મનું આચરણ કરવામાં થોડો પણ પ્રમાદ ન કરે. કારણ કે અવિનીત શિષ્યની આવી દુર્દશા થાય છે જે પૂતકર્ણી શુનીની તથા સૂકર (ભૂંડણના બચ્ચાંની) બાળકની થઈ છે, અવિનીતનો કોઈ પણ વિશ્વાસ કરતું નથી. તે આ ભવમાં ગુરુની અકૃપાનો ભાજન બની દરેક સ્થળે અપમાન આદિ દુસ્થિતિને સહન કરે છે. અને ગચ્છથી બહાર કરી દેવામાં આવે છે અને પરભવમાં ગુરુની આશાતનાથી બોધિના લાભથી પણ વંચિત રહ્યા કરે છે. બોધિ લાભ વિના કદી પણ શ્રેયસ્કર મુક્તિનો માર્ગ એને પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. કેમકે બોધિના અભાવમાં સમ્યક્ તપ અને સંયમ હોતું નથી. સમ્યક્ તપ સંયમના અભાવથી મોક્ષ માર્ગની આરાધના બની શકતી નથી. અને મોક્ષમાર્ગની

વિનયે=અભ્યુત્થાનાદિગુરુશુશ્રૂપાલક્ષણે સ્થાપયતિ । ઉક્તં ચ—

વિનયા હોઝ ય ણાણં, ણાણાઓ દંસણં તઓ ચરણં ।

ચરણાર્હિતો મોક્ષો મોક્ષે, સોક્ષ્મં નિરાવાહં ॥ ૧ ॥

છાયા—

વિનયાદ્ ભવતિ ચ જ્ઞાનં, જ્ઞાનાદ્ દર્શનં તત્તથ્ચરણમ્ ।

ચરણાદ્ મોક્ષો, મોક્ષે સૌખ્યં નિરાવાધમ્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૬ ॥

અધોપસંહરન્નાદ—

મૂલમ્—તમ્હાં વિનયમેસિંજ્જા સીલં પહિલભેજ્જંઓ ।

બુદ્ધપુત્તે નિયાગંદ્દો નં નિવ્વકસિંજ્જંઙ્ગ કણ્હુઙ્ગ ॥ ૭ ॥

છાયા—

તસ્માદ્ વિનયમેપયેત્ શીલં પ્રતિલભેત્ યતઃ ।

બુદ્ધપુત્રો નિયાગાર્થી ન નિષ્કાસ્યતે કુતથ્ચિત્ ॥ ૭ ॥

ટીકા—

‘તમ્હા. ઇત્યાદિ ।—તસ્માત્=દુઃશીલસ્ય સર્વતો નિષ્કાસનાદિરૂપા દુર્ગતિર્ભવતીત્યુક્તરૂપાત્ કારણાત્ સાધુર્વિનયમ્ એપયેત્=કુર્યાત્ ધાતૂનામનેકાર્થત્વાત્ ।

માર્ગ કે આરાધના કે અભાવ મેં અનંત સંસાર પરિભ્રમણ કરના પડતા હૈ, ઇસલિયે શિષ્ય કો અપને પરમોપકારી ગુરુ મહારાજ કા વિનય સદા કરના ચાહિયે । વે જવ કહીં સે અપને સ્થાન પર આવેં તો શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ્ન ઉનકે સમક્ષ જાવેં—ઉન્હેં દેખકર અપને આસનસે ઉઠ સ્વહા હોવે । ઉનકી શુશ્રૂપા આદિ કરતા રહે । ઇસસે વિનય ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ । કહ્તા મી હૈ—વિનય સે જ્ઞાન હોતા હૈ । જ્ઞાન સે દર્શન ઓર દર્શન સે ચારિત્રકા લાભ હોતા હૈ ચારિત્ર સે મોક્ષ ઓર મુક્તિ હોને સે ઇસ જીવ કો અવ્યાવાધ સુખ્મ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ॥ ૬ ॥

આરાધનાના અભાવથી અનંત સંસાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે. આ માટે શિષ્યે પોતાના પરોપકારી ગુરુ મહારાજનો સદા વિનય કરવો જોઈએ. તેઓ જ્યારે ક્યાંયથી પોતાના સ્થાન ઉપર આવે ત્યારે શિષ્યનું એ કર્તવ્ય છે કે તે તેમની સામે જાય—એમને જોઈ પોતાના આસન ઉપરથી ઉઠી ઉભા રહે અને એમની સેવા કરવામાં લાગી જાય, આથી વિનય ધર્મની આરાધના થાય છે. વિનયથી જ્ઞાન થાય છે, જ્ઞાનથી દર્શન અને દર્શનથી ચારિત્રનો લાભ થાય છે. ચારિત્રથી મોક્ષ અને મુક્તિ થવાથી આ જીવને અવ્યાવાધ સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. ॥૬॥

સ્યેત્યર્થઃ, અભાવં-કુત્સિતો ભાવઃ અભાવઃ દુર્દશાલક્ષણઃ, સ ચેહ ભવે સર્વતો નિષ્કાસનાદિરૂપઃ, પરમવે ગુરોરાશાતનયા અવોધિઃ, અવોવેસ્તપઃસંયમાસંભવઃ, સંયમભાવેન મોક્ષમાર્ગાનારાધનમ્, તેનાનન્તસંસારપરિભ્રમણમ્ તં તથાવિયમભાવં તપઃ શ્રુત્વા=ગુરુસંનિધૌ નિશમ્ય આત્મનઃ=સ્વસ્ય, હિતં=કલ્યાણમ્ ઇચ્છન્ આત્માનં ધર્મ મેં સ્થાપિત કરતા હૈ । અથવા-ભાવ યહ હૈ કિ કુત્તી સૂકર ઓર અવિનીત શિષ્યકા સ્વરૂપ સૂનકર આત્મહિતૈપી વિનય શીલ બને ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર યહ ઉપદેશ દે રહે હૈં કિ જો શિષ્ય આત્મકલ્યાણ કા અભિલાષી હૈં ઉસકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ઇસ વિનયધર્મકે આચરણ કરને મેં થોડા ભી પ્રમાદ ન કરે । કારણ કિ અવિનીત શિષ્ય કી વહ દુર્દશા હોતી હૈં જો પૂતિકર્ણી શુની કી તથા સૂકર શિશુ કી હુઈ હૈં । અવિનીત કે ઝપર કિસી કા ભી વિશ્વાસ નહીં રહતા વહ ઇસ ભવમેં ગુરુ કી અકૃપાકા ભાજન બનતા હુઆ જગહ-જગહ અપમાન આદિ દુઃસ્થિતિ કો સહન કરતા હૈં—ઓર ગચ્છ સે બાહર ભી કર દિયા જાતા હૈં તથા પરમવ મેં ગુરુ કી આશાતના સે બોધિ કે લાભ સે ભી વંચિત રહતા હૈં બોધિલાભ કે વિના કભી ભી શ્રેયસ્કર મુક્તિ કા માર્ગ ઉસે પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈં । ક્યોં કિ બોધિ કે અભાવ મેં સમ્યક્ તપ ઓર સંયમ નહીં હોતા હૈં । સમ્યક્ તપ સંયમ કે અભાવ સે મોક્ષમાર્ગ કી આરાધના નહીં હોતી હૈં ઓર મોક્ષ-

વિનય ધર્મમાં સ્થાપિત કરે છે. અથવા ભાવાર્થ એ છે કે—કુતરી, સૂકર અને અવિનીત શિષ્યનું સ્વરૂપ સાંભળી આત્મહિતૈપી વિનયશીલ બને.

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર એવો ઉપદેશ આપે છે કે જે શિષ્ય આત્મ કલ્યાણનો અભિલાષી છે, એનું કર્તવ્ય છે કે તે આ વિનય ધર્મનું આચરણ કરવામાં થોડો પણ પ્રમાદ ન કરે. કારણ કે અવિનીત શિષ્યની આવી દુર્દશા થાય છે જે પૂતકર્ણી શુનીની તથા સૂકર (ભૂંડણના બચ્ચાની) બાળકની થઈ છે, અવિનીતનો કોઈ પણ વિશ્વાસ કરતું નથી. તે આ ભવમાં ગુરુની અકૃપાનો ભાજન બની દરેક સ્થળે અપમાન આદિ દુસ્થિતિને સહન કરે છે. અને ગચ્છથી બહાર કરી દેવામાં આવે છે અને પરભવમાં ગુરુની આશાતનાથી બોધિના લાભથી પણ વંચિત રહ્યા કરે છે. બોધિ લાભ વિના કદી પણ શ્રેયસ્કર મુક્તિનો માર્ગ એને પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. કેમકે બોધિના અભાવમાં સમ્યક્ તપ અને સંયમ હોતું નથી. સમ્યક્ તપ સંયમના અભાવથી મોક્ષ માર્ગની આરાધના બની શકતી નથી. અને મોક્ષમાર્ગની



માલમ્વનમ્ । યથા શ્રીલ્ખણ્ડચન્દનતરુઃ સમસ્તમલયાચલકાનનગતાન્ વૃક્ષાન્ સુર-  
ભયતિ, યથા વા અમૃતમયશીતલચન્દ્રકિરણસંસર્ગતો વિકસત્ કુમુદવનં મનોજ્ઞસુગન્ધ  
શીતલપવનમનોહરચન્દ્રિકાભિર્જનમનઃપ્રસાદકં ભવતિ, યથા વા ક્ષીરસાગરનિર્ઘરી  
સ્વાસન્નવર્તિનો વૃક્ષગુચ્છગુલ્મલતાવલ્લીપ્રભૃતીન્ નાનાવિધાન્ વનસ્પતીન્ રસપ્રદાનેન  
વર્ધયન્તી મોદયતિ, એવં વિનયવિભૂષિતઃ સ્વલુ શીલેન કુલગણગચ્છાન્ મોદયન્  
લોકે ચિન્તામણિરિવ સંમન્યતે, કલ્પતરુરિવ સેવ્યતે, નિધિરિવ સમાદ્રિયતે, સુધેવ  
પરિપૂજ્યતે ॥ ૭ ॥

કર લેતી હૈ કિ મુજ્હે અપના કલ્યાણ કરના હૈ—અતઃ વહ નિયાગાર્થી—  
મોક્ષાભિલાષી વન જાતા હૈ । ઓર ઇસ સ્થિતિ મેં ડસકી પ્રત્યેક ક્રિયા  
ઈ મોક્ષપ્રાપ્તિ કી ઓર હી ડસે લે જાને વાલી હોતી રહતી હૈ, અતઃ વહ  
કિસી ખી કુલ, ગણગવં-ગચ્છ સે નહીં નિકાલા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—જિસ પ્રકાર શ્રીલ્ખણ્ડચંદન કા વૃક્ષ સમસ્ત મલયાચલ  
કે જંગલ મેં રહે હુણ વૃક્ષોં કો અપની અપાર સુગંધિ સે સુરભિત કરતા  
રહતા હૈ । અથવા જિસ પ્રકાર અમૃતમય શીતલચન્દ્ર કી કિરણોં કે  
સંસર્ગ સે વિકસિત કુમુદવન, મનોજ્ઞ, શીતલ એવં સુગંધિત વાયુ એવં  
મનોહર ચાંદની કે દ્વારા પ્રત્યેક જન કે મન કો આલ્હાદિત કરતા હૈ ।  
અથવા—જિસ પ્રકાર ક્ષીર સાગર કી નિર્ઘરી અપને નિકટ રહે હુણ વૃક્ષોં  
કો ડનકે ગુચ્છોં કો ગુલ્મોં એવં લતાવલ્લી આદિ કો રસપ્રદાન સે વૃદ્ધિ-  
ગત અર્થાત્ વઢાતી હુઈ ડન્હેં વિકસિત કરતી હૈ ઇસી તરહ વિનય સે

મારે પોતાનું કલ્યાણ કરવું છે—આથી તે નિયાગાર્થી—મોક્ષ અભિલાષી બની  
જાય છે. અને એ સ્થિતિમાં એની પ્રત્યેક ક્રિયાઓ મોક્ષ પ્રાપ્તિની તરફ જ  
એને લઈ જવાવાળી થતી રહે છે. એટલે તે કોઈપણ કુળ, ગુણ અને ગચ્છથી  
દૂર કરવામાં આવતા નથી. મતલબ આનો એ છે કે જે પ્રકારે શ્રીખંડ  
ચંદનનું વૃક્ષ સમસ્ત મલયાચલના જંગલમાં રહેલાં બધાં વૃક્ષોને પોતાની  
અપાર સુગંધીથી સુરભિત કરતું રહે છે. અથવા જે પ્રકારે અમૃતમય શીતળ  
કિરણોના સંસર્ગથી વિકસિત કુમુદવન, મનોજ્ઞ, શીતળ અને સુગંધિત વાયુ  
એવી મનોહર ચાંદની દ્વારા પ્રત્યેક જનના મનને આલ્હાદિત કરે છે. અથવા—  
જે પ્રકાર ક્ષીર સાગરની નિર્ઘરી (ઝરણાં) પોતાની નિકટ રહેલા વૃક્ષોને  
એની ડાળો વિગેરેને તથા કુલક્ષ્ણાદિ, પાંદડાં વગેરેને રસપ્રદાનથી વૃદ્ધિગત  
અર્થાત્ વધારે છે. અને વિકસિત કરે છે. આ રીતે વિનયથી વિભૂષિત બનેલા

વિનયસ્ય ફલમાહ—સીલમિત્યાદિ । યતઃ વિનયાત્, શીલં=મૂલોત્તરગુણલક્ષણં પ્રતિલભેત=પ્રાપ્નુયાત્ । અનેન વિનસ્ય ફલં શીલપ્રાપ્તિરિત્યુક્તમ્ । શીલસ્યાપિ ફલં પ્રદર્શયન્નાહ—‘બુદ્ધપુત્તે.’ ઇત્યાદિ । બુદ્ધપુત્રઃ—બુદ્ધસ્ય=આચાર્યસ્ય પુત્ર ઇવ પુત્રઃ—શીલધારી શિષ્યઃ, પુત્રશિષ્યયોઃ શિક્ષણીયતયા સામ્યાત્ ; અતएव નિયાગાર્થી—નિયાગો=મોક્ષસ્તમર્થયતીતિ નિયાગાર્થી—મોક્ષાભિલાષી કુતશ્ચિત્=કુલગણગચ્છતઃ ન નિષ્કાસ્યતે=ન વહિષ્ક્રિયતે । અયં ભાવઃ—વિનીતઃ કુલગણગચ્છાનાં સર્વેષા—

અવ ઉપસંહાર કરતે હૈં—‘તમ્હા.’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—અતઃ (તમ્હા-તસ્માત્) અવિનીત શિષ્ય કી સર્વ જગહ દુર્દશા હોતી હૈ સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ (વિણયં-વિનયમ્) વિનયરૂપ ધર્મકા (એસિજ્ઞા-એપયેત્) પાલન કરે । ઇસ વિનય ધર્મ કે પાલન કરનેકા કયા ફલ હૈ—ઇસ વાતકો (સીલં પઢિલભેજ્જઓ—શીલં પ્રતિ લભેત યતઃ) ઇસ પદ દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હુણ કહતે હૈં કિ યહ વિનયધર્મ, આચરિત હોને સે આચરણ કરને વાલે સાધુ કે લિયે મૂલગુણ ઓર ઉત્તરગુણોંકી પ્રાપ્તિ કરાતા હૈ । શીલ કી પ્રાપ્તિ હોને સે વહ શીલધારી શિષ્ય (બુદ્ધપુત્તે નિયાગદ્વી-બુદ્ધપુત્રઃ નિયાગાર્થી) ગુરુજનોં કી દ્રષ્ટિ મેં અપના પુત્ર જૈસા હો જાતા હૈ । ક્યોં. કિ પુત્ર શિક્ષણીય હોતા હૈ ઓર વૈસે શિષ્ય ભી શિક્ષણીય હોતા હૈ । ઇસી વિચાર સે શિષ્ય કો યહાં પુત્ર જૈસા વતલાયા ગયા હૈ જવ વહ ગુરુ કૃપા કા પાત્ર હર તરહ સે હો જાતા હૈ તવ યહ વાત ભી સ્વતઃ ઉસકે હૃદય મેં સ્થાન

હવે ઉપસંહાર કરે છે—‘તમ્હા.’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એટલા માટે (તમ્હા-તસ્માત્) અવિનીત શિષ્યની સર્વ સ્થળે દુર્દશા થાય છે. સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે (વિણયં-વિનયમ્) વિનયરૂપ ધર્મનું (એસિજ્ઞા-એપયેત્) પાલન કરે. આ વિનય ધર્મનું પાલન કરવાનું શું ફળ છે. આ વાતને (સીલં પઢિલભેજ્જઓ—શીલં પ્રતિ લભેત યતઃ), આ પદ દ્વારા સૂત્રકાર પ્રગટ કરતાં કહે છે કે આ વિનય ધર્મ આચરિત હોવાથી આચરણ કરવાવાળા સાધુને માટે મુળગુણ અને ઉત્તર ગુણોની પ્રાપ્તિ કરાવે છે. શીલની પ્રાપ્તિ થવાથી એ શીલધારી શિષ્ય (બુદ્ધપુત્તે નિયાગદ્વી-બુદ્ધપુત્રઃ નિયાગાર્થી) ગુરુજનોની દ્રષ્ટીમાં પોતાના પુત્ર જેવો બની જાય છે. કેમકે પુત્ર શિક્ષણીય હોય છે અને આવા શિષ્ય પણ શિક્ષણીય હોય છે. આ વિચારથી શિષ્યને અહિં પુત્ર જેવો ખતાવવામાં આવેલ છે. જ્યારે તે ગુરુકૃપાને પાત્ર દરેક રીતે બને છે ત્યારે આ વાત પણ સ્વતઃ એના દિલમાં સ્થાન કરી જાય છે કે

યુક્તાનિ-અર્ચ્યતે=પ્રાર્ચ્યતે મુમુક્ષુભિર્યઃસોઽર્થઃ અવ્યાવાધસુખરૂપો મોક્ષસ્તેન  
યુક્તાનિ તત્પ્રતિબોધકાનિ । યદ્વા-અર્થો=હેયોપાદેયરૂપસ્તેન યુક્તાનિ-તત્પ્રતિપાદ  
કાનિ વીતરાગશાસ્ત્રાણિ શિક્ષેત=અભ્યસ્યેત્ । અયં ભાવઃ-મોક્ષમાર્ગપ્રદર્શકાનિ  
શાસ્ત્રાણ્યેવ ઉપાદેયાનિ પારમાર્થિકસ્વરૂપપ્રતિપાદકત્વાત્, યથા સિન્ધુસ્તરઙ્ગૈર્વિલસતિ  
તથા સ્યાદ્વાદૈર્વિલસિતાનિ રાગદ્વેષદોષપરિવર્જિતાનિ અવ્યાવાધસુખજનકાનિ  
ઉત્પાદવ્યયધ્રૌવ્યસ્વરૂપનિરૂપકાણિ ભગવદ્વચનાનિ, તસ્માત્ તાન્યેવાભ્યસેદિતિ ।

કે સમીપ (સયા-સદા) સદા-કાલ (અઠ્ઠજુક્તાનિ-અર્થયુક્તાનિ) મોક્ષ-  
પ્રતિબોધક-અથવા હેયોપાદેય તત્ત્વ પ્રતિપાદક-એસે વીતરાગો-પદિષ્ટ  
શાસ્ત્રોંકા (સિલ્લિજ્જા-શિક્ષેત) અભ્યાસ કરે । તથા (નિરઠ્ઠાણિ ડ  
વજ્જણ-નિરર્થાનિ તુ વર્જયેત્) ઇનસે વિપરીત અન્ય શાસ્ત્રોંકા વર્જન કરે ।

ભાવાર્થ—વસ્તુકા પારમાર્થિક સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરને વાલે હોને  
સે મોક્ષમાર્ગકે પ્રદર્શક શાસ્ત્ર હી ઉપાદેય હેં । જિસ પ્રકાર સમુદ્ર અપની  
તરંગમાલાઓસે શાંભિત હોતા હેં ડસી તરહ પ્રભુ કે વચન સ્વરૂપ  
આગમશાસ્ત્ર ભી સ્યાદ્વાદ-શૈલી સે સુશોભિત હોતે હેં । ઇનમેં રાગ ંવં  
દ્વેષકો વઢાને વાલી-કથાઁ વિલકુલ નહીં હેં । ડનસે યે સદા વર્જિત હેં ।  
અવ્યાવાધ સુખ કે યે જનક હેં । ઉત્પાદ વ્યય ંવં ધ્રૌવ્ય કે યથાર્થ  
સ્વરૂપ કા યે નિરૂપક હેં । ઇસલિયે મોક્ષાભિલાષિઓ કો વીતરાગ  
પ્રણીત શાસ્ત્રકા હી અભ્યાસ કરના ંવાહિયે । જિન મેં ઇસ પ્રકાર કી  
ંવતેં નહીં હેં જો સર્વથા ંકાન્તવાદ કે પોષક અસર્વજ્ઞોપદિષ્ટ શાસ્ત્ર હેં

(અઠ્ઠજુક્તાનિ-અર્થયુક્તાનિ) મોક્ષ પ્રતિબોધક-અથવા હેયોપાદેય તત્ત્વ પ્રતિપાદક  
ંવાં વિતરાગોપદિષ્ટ શાસ્ત્રોંનો (સિલ્લિજ્જા-શિક્ષેત્) અભ્યાસ કરે. તથા  
(નિરઠ્ઠાણિ ડ વજ્જણ-નિરર્થાનિ તુ વર્જયેત્) ંનાથી વિપરીત અન્ય શાસ્ત્રોંનો  
ત્યાગ કરે.

ભાવાર્થ—વસ્તુતુ' પારમાર્થિક સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરવાવાળા હોવાથી  
મોક્ષમાર્ગના પ્રદર્શક શાસ્ત્ર જ ઉપાદેય છે. જે પ્રકાર સમુદ્ર પોતાની તરંગ-  
માળાઓથી શોભિત દેખાય છે ંજ રીતે પ્રભુના વચન સ્વરૂપ આગમ-  
શાસ્ત્ર પણ સ્યાદ્વાદશૈલીથી સુશોભિત હોય છે. તેમાં રાગ ંને દેશને વધા-  
રનારી કથાઓ ંલીલકુલ હોતી નથી. ંનાથી ંજ સદા વર્જીત છે. અવ્યાવાધ  
સુખના ંજ જનક છે. ઉત્પાદ વ્યય, ંને ધ્રૌવ્યના યથાર્થ સ્વરૂપના ંજ નિરૂપક છે.  
આ માટે મોક્ષાભિલાષિઓએ વિતરાગ પ્રણીત શાસ્ત્રનો જ અભ્યાસ કરવો  
જોઈએ. જેમાં આ પ્રકારની વાતો નથી, જે સર્વથા ંકાન્તવાદને પોષનાર

વિનયઃ કથમેષણીય इत्याह—

મૂલમ્—નિસંતે સિંયાઽમુંહરી બુદ્ધાણં અંતિષં સયાં ।

અદ્વજુંતાણિ સિખિવર્જજા, નિરદ્વાંણિ ઁ વર્જંષે ॥૮ ॥

છાયા—

નિશાન્તઃ સ્યાત્ અમુલ્હારિઃ બુદ્ધાનામ્ અન્તિકે સદા ।

અર્થયુક્તાનિ શિક્ષેત નિર્થ્યાનિ તુ વર્જયેત્ ॥ ૮ ॥

ટીકા—

‘નિસંતે इत्यादि’—નિશાન્તઃ=નિતરાં શાન્તઃ—ઉપશમયુક્તઃ—અન્તઃ ક્રોધ-પરિવર્જનેન વહિશ્ચ સૌમ્યાકારેણ પ્રશાન્તઃ સ્યાદ્=ભવેત્, અમુલ્હારિઃ=અવિરુદ્ધભાષી પ્રિયભાષી સન્ બુદ્ધાનામ્=આચાર્યાણામ્, અન્તિકે=સમીપે, સદા=સર્વકાલમ્ અર્થ—

વિભૂષિત વના શિષ્ય મી શીલ સે કુલ, ગણ ંવં ગચ્છ કો પ્રમુદિત કરતા હુઆ લોક મેં ચિન્તામણિ રત્ન કે સમાન માના જાતા હૈ કલ્પ-વૃક્ષકે સમાન સેવિત કિયા જાતા હૈ, નિધિકે સમાન આદરીણય હોતા રહતા હૈ ઔર સુધા (અમૃત) કે સમાન પૂજા જાતા હૈ ॥ ૭ ॥

વિનય પાલન કૈસે કરના ચાહિયે ઈસે સૂત્રકાર ઈસ નિમ્નલિ-લિખિત ગાથા સે સ્પષ્ટ કરતે હેં—‘ નિસંતે. ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(નિસંતે—નિશાન્તઃ) જો ઉપશમ ભાવ સે યુક્ત હૈ—મીતર મેં જિસકે ક્રોધ કા ઉદ્રેક નહીં હોતા હૈ—તથા બાહિર સે જિસકાં સદા સૌમ્ય આકાર વના રહતા હૈ ંસા શિષ્ય (અમુલ્હારિ) અવિરુદ્ધ-ભાષી—પ્રિયભાષી—હોતા હુઆ (બુદ્ધાણં અંતિષ—બુદ્ધાનાં અન્તિકે) આચાર્યો

શિષ્ય પણ શીલથી કુળ, ગણ એટલે ગચ્છને પ્રમુદિત કરીને લોકમાં ચિન્તા-મણી રત્ન સમાન માનવામાં આવે છે. કલ્પવૃક્ષના સમાન સેવિત કરવામાં આવે છે. નિધિની માફક આહત થતા રહે છે. અને સુધાની (અમૃત) માફક પૂજાય છે. ॥૭॥

વિનય પાલન કેવી રીતે કરવું બોધ્યે તેને સૂત્રકાર આ નિચે બતાવેલ ગાથાથી સ્પષ્ટ કરે છે. નિસંતે. इत्यादि.

અન્વયાર્થ—( નિસંતે—નિશાન્તઃ ) જે ઉપશમ ભાવથી યુક્ત છે—જેને અંદર ક્રોધનો ઉપદ્રવ થતો નથી. તથા બાહરથી જેનો સદા સૌમ્ય આકાર બન્યો રહે છે એવા શિષ્ય (અમુલ્હારી) અવિરુદ્ધભાષી—પ્રિયભાષી બનીને (બુદ્ધાણં અંતિષ—બુદ્ધાનાં અન્તિકે) આચાર્યોની સમિપ (સયા—સદા) હંમેશાં

પ્રશમસરઃશોષણે પ્રચંડમાર્તઙ્ડકિરણરૂપાણિ, ભ્રમોત્પાદને મૃગતૃષ્ણાસ્વરૂપાણિ,

શ્રદ્ધા જાગ્રત હુણ વિના જીવકો આત્મ કલ્યાણ કા માર્ગ દિશ્વલાઈ નહીં દેતા હૈ । અતઃ વહ પતિત હોકર અનંત સંસારી હો જાતા હૈ । હસીલિયે લૌકિક શાસ્ત્રોંકા અધ્યયન વર્જનીય વતલાયા ગયા હૈ યદિ હસ ભાવના સે ડનકા અધ્યયન કિયા જાય કિ દેશું કિ વીતરાગ પ્રરૂપિત શાસ્ત્રોં મેં ઓર ડનકે ઉપદેશ મેં કિતના ભેદ હૈ તો હસ સ્થિતિ મેં જ્ઞાની કો અનેકાન્ત શાસન પર ઓર અધિક દૃઢ શ્રદ્ધા વદ જાતી હૈ । વયોં કિ સચ્ચે મણિકી કીમત તો શૂઠે મણિ કે દેશ્વને સે હી હોતી હૈ । સચ્ચે મણિકા પરિચાયક શૂઠામણિ હી હુઆ કરતા હૈ । હસીલિયે ટીકાકાર નેં ડન્હેં મહાવ્રત રૂપ પર્વત કે ભેદન કરને મેં વજ્રકી ઉપમા દી હૈ । દાવાનલ જિસ પ્રકાર વન કો ભસ્મ કરને મેં ઢીલ નહીં કરતા ડસી પ્રકાર નિરર્થક શાસ્ત્રોં કા અધ્યયન ભી મોક્ષાભિલાષિઓં કે તપ ઓર સંયમરૂપ ઉદ્યાન કો નાશ કરતા હૈ । જિસ પ્રકાર ગ્રીષ્મકાલ કા પ્રચર આતપ-ધૂપ સરોવર કો શોષણ કરતા હૈ ડસી પ્રકાર યે મોક્ષમાર્ગ કે ઉપદેશ સે વિહીન શાસ્ત્ર ભી મોક્ષાભિલાષી કે પ્રશમભાવકોશુષ્ક કરને મેં જરા સી ભી કસર નહીં રહ્વતે હૈ । મૃગતૃષ્ણા જિસ પ્રકાર મૃગોં કો

વિના જીવને આત્મકલ્યાણનો માર્ગ મળતો નથી. એટલે તે પતિત બની અનંત સંસારી થઈ જાય છે આ માટે લૌકિક શાસ્ત્રોં અધ્યયન વર્જનીય બતાવવામાં આવેલ છે. જો એ ભાવનાથી તેનું અધ્યયન કરવામાં આવે કે જોઈ વીતરાગ પ્રરૂપિત શાસ્ત્રોંમા અને એમના ઉપદેશમાં કેટલો ભેદ છે તો આ સ્થિતિમાં જ્ઞાનીને અનેકાન્ત શાસન પર વધુ દૃઢ શ્રદ્ધા જેસી જાય છે કેમકે સાચા મણિની કિંમત તો જુઠા મણિને જોવાથી જ થાય છે સાચા મણિને ઓળખાવનાર ખોટો મણી જ હોય છે. આ માટે ટીકાકારે તેને મહાવ્રતરૂપ પર્વતનું ભેદન કરનારા વજ્રની ઉપમા આપી છે. દાવાનળ જે રીતે વનને ભસ્મ કરવામાં ઢીલ કરતો નથી, તેવી જ રીતે નિરર્થક શાસ્ત્રોંનું અધ્યયન પણ મોક્ષાભિલાષિઓના તપ અને સંયમરૂપ ઉદ્યાનનો નાશ કરે છે. જે પ્રકાર ગ્રીષ્મકાળનો પ્રચર આતપ સરોવરનું સોશણ કરે છે. તેવા પ્રકારે મોક્ષમાર્ગનાં ઉપદેશથી વિહીન શાસ્ત્ર પણ મોક્ષ અભિલાષિના પ્રશમભાવને શુષ્ક કરવામાં કસર રાખતો નથી. મૃગજળ જેવા પ્રકારે મૃગોંને



નિર્થકાનિ મોક્ષાર્થવર્જિતાનિ, યદ્વા-હેયોપાદેયરૂપાર્થાનભિધાયકાનિવૈશેષિકાદીનિ  
વાત્સ્યાયનપ્રણીતકામશાસ્ત્રાણિ તુ વર્જયેત્=પરિહરેત્ । અયં ભાવઃ-લૌકિકશાસ્ત્રાણિ  
તુ-મહાવ્રતપર્વતભેદને વજ્રોપમાનિ, તપઃસંયમકાનનવિનાશને દાવાનલસમાનિ,  
વે નિર્થક શાસ્ત્ર હૈં । उनका अभ्यास नहीं करना चाहिये । क्यों कि वे  
अपने अभ्यासियोंके लिये मोक्षमार्ग के यथार्थ स्वरूप से वंचित एवं  
अपरिचित हैं । अथवा-निर्र्थक वे शास्त्र हैं कि जिनके अध्ययन करने  
से जीवोंको हेय और उपादेय रूप अर्थका भान न हो सके, जो इस  
प्रकार के मोक्ष अर्थ के अभिधायक नहीं हैं ऐसे वैशेषिक आदि-आदि  
द्वारा प्रणीत शास्त्र तथा वात्स्यायनद्वारा प्रणीत काम शास्त्रों का अध्ययन  
कभी भी मोक्षामिलापियों को नहीं करना चाहिये । लौकिक-असर्वज्ञ-  
द्वारा उपदिष्ट लौकिक शास्त्र संसार बढ़ाने वाली ही शिक्षाओं से परि-  
पूर्ण हैं । इनसे साधुओं को अपने महाव्रतों को पालन कर-  
नेकी शिक्षा यथार्थतया प्राप्त नहीं होती है । अतः उनका अध्येता  
अर्थात्-अध्ययन करने वाला भद्रपरिणामी साधुजन अपने व्रतों से  
भी च्युत हो जाता है । इसलिये ऐसे शास्त्रों का अध्ययन महाव्रतरूप  
पर्वत को नष्ट करने के लिये वज्रका काम करता है । सम्यग्दर्शन की  
पुष्टि जबतक जीव की नहीं होती हैं-तबतक उसे समस्त द्रव्यों से  
भिन्न आत्मद्रव्य में दृढ श्रद्धा जाग्रत नहीं होती है । इस प्रकार के

અસર્વજ્ઞોપદિષ્ટ શાસ્ત્ર છે તે નિર્થક શાસ્ત્ર છે, તેનો અભ્યાસ નહીં કરવો  
જોઈએ. કેમકે તે આપણા અભ્યાસિયો માટે મોક્ષમાર્ગના યથાર્થ સ્વરૂપથી  
વંચિત અને અપરિચિત છે. અથવા-નિર્થક તે શાસ્ત્ર છે કે જેનું અધ્યયન  
કરવાથી જીવોને હેય અને ઉપાદેયરૂપ અર્થનું ભાન થઈ શકતું નથી. જે  
આ પ્રકારના મોક્ષ અર્થના અભિધાયક નથી એવા વૈશેષિક આદિ આદિ  
દ્વારા પ્રણીત શાસ્ત્ર તથા વાત્સ્યાયન દ્વારા પ્રણીત કામશાસ્ત્રોનું અધ્યયન કદી  
પણ મોક્ષના અભિલાષીયોએ કરવું ન જોઈએ. લૌકિક-અસર્વજ્ઞ-દ્વારા ઉપદિષ્ટ  
લૌકિક શાસ્ત્ર સંસાર વધારનારી શિક્ષાઓથી પરિપૂર્ણ હોય છે. તેનાથી  
સાધુઓને પોતાનાં મહાવ્રતોનું પાલન કરવાની શિક્ષા યથાર્થ તથા પ્રાપ્ત થતી  
નથી, એટલે એનું અધ્યયન કરવાવાળા ભદ્રપરિણામી સાધુજન પોતાના  
વ્રતોથી પણ ચ્યુત બની જાય છે. આ માટે એવા શાસ્ત્રોનું અધ્યયન મહા-  
વ્રતરૂપ પર્વતને નષ્ટ કરનાર વજ્રનું કામ કરે છે. સમ્યગ્દર્શનની પુષ્ટિ  
જ્યાં સુધી જીવને થતી નથી, ત્યાં સુધી તેને સમસ્ત દ્રવ્યોથી ભિન્ન આત્મ-  
દ્રવ્યમાં દૃઢ શ્રદ્ધા જાગ્રત થતી નથી. આ પ્રકારની શ્રદ્ધા જાગ્રત થયા

गुरु परुषवचनानि ग्रीष्मर्तुसहस्रकिरणकिरणावलीसमानि तथापि स्वल्पेनैव समयेन सजला जलदावलीसमुत्थितसमीरसहचारिनीरकणिका इव परिणमन्तीति गुरुणां परुषवचनानि अनन्तहितविधायकानि मोक्षपथप्रदर्शकानि सावधकर्म-निवर्तकानि अमृतमयानि आसेवनाग्रद्वण शिक्षारूपाणि भवन्तीति मन्यमानः सन् सहेत । उक्तं च—

शास्त्र किस तरह से सीखे सो बतलाते हैं—‘अणुसासिओ.’

इत्यादि ।

अन्वयार्थ—शिष्यजन यदि कदाचित् गुरुओं द्वारा कठोर वचनों से भी (अणुसासिओ-अनुशासितः) अनुशासित-शिक्षापाते हों तो भी उन्हें चाहिये कि वे (न कुपिज्जा-न कुप्येत्) अपने शिक्षाप्रदाता गुरुजन पर कभी भी कुपित न हों । प्रत्युत ऐसी अवस्था में सत् और असत् के विवेक करने में (पण्डित-पण्डितः) कुशलमति वह शिष्य (खंति सेविज्ज क्षान्ति सेवेत्) परुषभाषणको सहन करने रूप शांतिभाव का ही सेवन करे । तथा (खुड्डेहिं सह संसग्गं हासं क्रीडं च वज्जए-क्षुद्रैः सह संसग्गं हासं क्रीडं च वर्जयेत्) क्षुद्रजनों-वाल अथवा पार्श्वस्थ अवसन्न-कुशील संसक्त-स्वेच्छाचारी साधुओं का संग वर्जन करें । तथा-हास्य फ्रीडा का भी वर्जन करें ।

भावार्थ—यद्यपि गुरु महाराजके वचन उस समय शिष्य को ग्रीष्मऋतुके प्रखर सूर्यकी किरणों के समान मालूम पड़ते हैं परन्तु

शास्त्र कुछ रीते शीघ्रतां ते जातावे छे.—अणुसासिओ. इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्यजन जे कदाच गुर्ओ द्वारा कठोर वचनोथी पणु (अणुसासिओ-अनुशासितः) अनुशासित-शिक्षा भेणवता डोय तो पणु तेभणु विचारवुं जेधो छे ते (न कुपिज्जा-न कुप्येत्) पोताना शिक्षा प्रदाता गुर्जन उपर कही पणु कोध न करे. परंतु ओवी अवस्थाभां सत् अने असत्नो विवेक करवाभां (पण्डित-पण्डितः) कुशलमति ते शिष्य (खंति सेविज्ज-क्षान्ति सेवेत्) (कठोर) परुष भाषणुने सहन करवाइप शांतिभावनुं न सेवन करे. तथा (खुड्डेहिं सह संसग्गं हासं क्रीडं च वज्जए-क्षुद्रैः सह संसग्गं हासं क्रीडां च वर्जयेत्) क्षुद्रजनो, १ भाण अथवा २ पार्श्वस्थ, ३ अवसन्न, ४ कुशील, ५ संसक्त-स्वेच्छाचारि साधुओनो संग वर्जन करे. तथा हास्य फ्रीडानुं पणु वर्जन करे.

मतलब तेनो ओ छे ते कदाच गुर् महाराजनुं वचन, ते समये शिष्यने उनाणाना प्रखर सूर्यना किरणो समान मालूम पडे छे. परंतु परिणामभां

સકલાપત્તિદાયકવિષયવિલાસમવર્તકાનિદીર્ઘાશ્વચતુર્ગતિકસંસારપરિભ્રમણકારણાનિ  
સન્તિ, તસ્માદ્ વિપમવિપધરભુજઙ્ગવત્ તાનિ દૂરતઃ પરિવર્જનીયાનિ ॥૮॥

અર્થયુક્તાનિ કયં શિક્ષેત ? इत्याह—

મૂલમ્—અણુસાસિઓ નં કુપ્પિજ્જાં, સ્વંતિં સેવિજ્જં પંડિણં ।

खुँडेहिं सह संसर्गं, हांसं क्रीडं' चं वज्जये ॥ ९ ॥

ઝાયા—

अनुशासितः न कुप्येत्, क्षान्तिं सेवेत पण्डितः ।

क्षुद्रैः सह संसर्गं, हांसं क्रीडां च वर्जयेत् ॥ ९ ॥

ટીકા—

‘અણુસાસિઓ.’ इत्यादि—अनुशासितः—गुरुभिः कठोरवचनैस्तर्जि-  
तोऽपि न कुप्येत्=कोपं न कुर्यात् । किं तर्हि ? इत्याह—‘स्वन्ति.’ इत्यादि । पण्डितः=  
सदसद्विवेकवान् सन् क्षान्तिं=परुषभाषणसहनरूपां सेवेत । अयं भावः—यद्यपि

जलका भ्रम उत्पन्न करती है उसी तरह मिथ्या शास्त्र भी मोक्षाभिला-  
षियोंके लिये यथार्थस्वरूप का ज्ञान न कराकर केवल वस्तु के स्वरूप  
में भ्रमोत्पादक होते हैं । समस्त आपत्ति—एवं विपतियों को देने वाले  
विषय कपायोंकी ही इनसे केवल वृद्धि होती रहती है अतः इनसे  
संसार का अन्त न आकर जीवों के अनन्त संसार के मार्ग की ही पुष्टि  
होती है और इसी वजह से यह जीव इस चतुर्गति स्वरूप संसार में  
इतस्ततः परिभ्रमण किया करता है । इस लिये जिस प्रकार जहरीले  
सर्पका दूर से ही परिहार कर दिया जाता है उसी प्रकार मोक्षाभिला-  
षियों को इन निरर्थक शास्त्रोंका परिहार कर देना चाहिये ॥ ८ ॥

જળનો ભ્રમ ઉત્પન્ન કરે છે, તેવી રીતે મિથ્યાશાસ્ત્ર પણ મોક્ષ અભિલાષીઓ  
માટે યથાર્થ સ્વરૂપનું જ્ઞાન ન કરાવતાં કેવળ વસ્તુના સ્વરૂપમાં ભ્રમોત્પાદક  
બને છે. સમસ્ત આપત્તિ અને વિપત્તિને દેવાવાળા વિષય કપાયોની જ તેનાથી  
ફક્ત વૃદ્ધિ થતી રહે છે. જેથી તે વડે સંસારનો અંત ન આવતાં જીવોને  
અનંત સંસારના માર્ગમાં લઈ જાય છે, અને એ કારણે આ જીવ આ ચતુ-  
ર્ગતિરૂપ સંસારમાં અહિં તહિં ભટકતો રહે છે. આ માટે જે પ્રકારે જહેરીલા  
સાપનો દુરથી જ ત્યાગ કરવામાં આવે છે, તેવી રીતે મોક્ષના અભિલાષીઓએ  
આવા નિરર્થક શાસ્ત્રનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. ॥૮॥

નનુ ઘાલપાર્શ્વસ્થાદિસંસર્ગે સત્યપિ સાથોઃ કા હાનિઃ ? દૃશ્યતે હિ વૈદૂર્યમણિઃ કાચસહયોગેऽપિ કાચધર્મં નામોતિ, એવમાત્માર્થિનો મુનેર્ઘાલપાર્શ્વસ્થાદિ-સંસર્ગે સત્યપિ સ્વાચારપરિવર્તનં ન સ્યાત્ ? અગ્રોચ્યતે-જીવો હિ સંસર્ગદોષાનુ-ભાવતો ઘાલપાર્શ્વસ્થાદ્યાચરિતપ્રમાદાદિભાવનાભાવિતત્વાત્ દ્રુતમેવ તદ્ભાવં મામોતિ, યથા-નિમ્બોદકવાસિતાયાં ભૂમૌ કચિદામ્રવૃક્ષઃ સમુત્પન્નઃ, પુનસ્તત્રામ્રસ્ય નિમ્બસ્ય ચ દ્વયોરપિ મૂલે મિલિતે, તતશ્ચ સંસર્ગદોષાદામ્રો નિમ્બત્વં પ્રાપ્ય

કઠોર અક્ષરોં સે યુક્ત ગુરુજનોં કે વચનોં સે તિરસ્કૃત હુણ શિષ્યજન મહત્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હેં । જવતક મળી શાળ પર નહીં ચઢાયા જાતા હે તવતક વહ અપને ઉત્કર્ષ કો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હે ઓર ન રાજાઓં કે મુકુટોં મેં ભી જડા જાતા હે । સાધુ યદિ ઘાલ એવં પાર્શ્વસ્થ આદિ કી સંગતિ કરે તો ઉસકી ઇસસે કયા હાનિ હે । કયોં કિ દેખા જાતા હે કિ વૈદૂર્યમણિ કાચમણિ કે સાથ રહતે હુણ ભી ઉસકે ધર્મકો અર્થાત્ કાચ કે ગુણ કો ગ્રહણ નહીં કરતા હે ઇસી પ્રકાર પાર્શ્વસ્થ આદિ કી સંગતિ મેં રહા હુઆ આત્માર્થો સાધુ ભી અપને આચાર વિચાર સે પરિચલિત નહીં હો સકતા ? પ્રશ્ન ઠીક હે-પરંતુ યહ ધ્યાન રખના ચાહિયેકિ ભદ્રપરિણામી આત્મા નિમિત્તાધીન હોતા હે । નિમિત્ત મિલને પર નિમિત્ત કે અનુસાર શીઘ્ર હી ઉસકા પરિણમન હો જાતા હે । જિસ પ્રકાર જિસ ભૂમિ મેં નીમકે વૃક્ષ લગે હુણ હોતે હેં ઓર ઉસી ભૂમિમેં યદિ આમ કા ભી વૃક્ષ લગા દિયા જાવે તો વહ નીમકે મૂલ કે

કઠોર અક્ષરોથી ભરેલા ગુરુજનોના વચનોથી તિરસ્કૃત થયેલા શિષ્યજન મહત્ત્વને પામે છે. ત્યાં સુધી મળીને સરાણ ઉપર ચડાવવામાં આવતો નથી ત્યાં સુધી તે પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. અને ન તો એ રાત્રઓના મુગટોમાં જડાય છે. સાધુ જે ઘાલ અને પાર્શ્વસ્થ આદિની સંગતિ કરે તો એથી એને કંઈ જ નુકશાન થતું નથી. કેમકે જેમ શકાય છે કે વૈદૂર્યમણી કાચ મણીની સાથે રહેવા છતાં પણ એ કાચના ગુણ ગ્રહણ કરતો નથી. આ રીતે પાર્શ્વસ્થ આદિની સંગતિમાં રહેલા આત્માર્થો સાધુ પણ પોતાના આચાર વિચારથી પરિચલિત થતા નથી ? પ્રશ્ન ઠીક છે-પરંતુ એ ધ્યાનમાં રાખવું જેમકે કે ભદ્રપરિણામી આત્મા નિમિત્ત આધિન બને છે. નિમિત્ત મળવાથી નિમિત્તના અનુસાર જલ્દીથી તેનું પરિણમન થઈ જાય છે. જે પ્રકારે જે ભૂમિમાં લીમડાનાં વૃક્ષો લાગેલાં હોય છે. અને એ જ ભૂમિમાં જે આંખાનું વૃક્ષ વાવવામાં આવે તો લીમડાના મૂળ સાથે તેના મૂળ મળવાથી

ગીર્મિર્ગુરુણાં પરુપાક્ષરાભિ,-

સ્તિરસ્કૃતા યાન્તિ નરા મહત્ત્વમ્ ।

અલબ્ધશાનોત્કપ્પણા નૃપાણાં,

ન જાતુ મૌલૌ મળયો વસન્તિ ॥ ૧ ॥

ચ=પુનઃ ક્ષુદ્રૈઃ=વાલૈઃ, અથવા પાર્શ્વસ્થાવસન્નકુશીલસંસક્તયથાચ્છન્દૈઃ

સહ સંસર્ગે=સજ્ઞં વર્જયેત્ ।

પરિણામ મેં વે જલ સે ભરે હુણ મેઘ કે સમય ઉત્પન્ન વાયુ કે સાથ જલ કણિકા કે સમાન હિતવિધાયક હોતે હૈં । જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં જબ આકાશ મેં ઘટાણે ઘિર આતી હૈં તો ઉસસમય વાયુ કા બી સંચાર હોને લગતા હૈં-આંધી ઉઠને લગતી હૈં ઓર ઉસકે ઉઠતે હી વે ઘટાણે વરસને લગતી હૈં । ઇસસે આતપતસ-ગરમીસે પીડિત આત્માઓં કો શીતલતા કા અનુભવ હોને લગતા હૈં । ઇસી પ્રકાર ઉસ સમય ગુરુજનોં કે વચન કઠોર પ્રતીત હોતે હૈં પરન્તુ ભવિષ્ય મેં વે શિષ્યોં કે લિયે આત્મકલ્યાણ કે સાધક હોને સે અનંત શીતલતા પ્રદાન કરને વાલે હો જાતે હૈં । શિષ્યજન કો ગુરુ કે વચન અનંતહિત વિધાયક, મોક્ષપથ પ્રદર્શક, સાવધકર્મ નિવર્તક અમૃતસ્વરૂપ જાનકર સહતે રહના ચાહિયે । કર્યોં કિ ઇનસે શિષ્યોંકો આસેવનશિક્ષા ઇવં ગ્રહણ શિક્ષા પ્રાપ્ત હોતી હૈં વ્રતોં કો ગ્રહણ કરના ઇવં ઉનકા સમ્યગ્રીતિ સે પાલન કરના યહ શિક્ષા ગુરુ કે વચનોંસે હી શિષ્યોં કો મિલતી હૈં । કહા બી હૈં—ગીર્મિર્ગુરુણાં૦ ઇત્યાદિ—

તે જળથી ભરેલા મેઘના સમયે ઉત્પન્ન થતા વાયુની સાથે જળકણિકાના જેવાં હિત વિધાયક હોય છે. જે પ્રકારે વર્ષાકાળમાં જ્યારે આકાશમાં ઘટાઓ ઘેરાય છે. એ સમયે વાયુનો પણ સંચાર થાય છે. અને આંધી ઉઠવા લાગે છે. અને આંધીના આગમનથી તે ઘટાઓ વરસવા લાગે છે. એનાથી ( તડકાથી તપેલ ) આતપતપ્ત આત્માઓને શીતળતાનો અનુભવ થવા લાગે છે. આ પ્રકારે એ સમયે ગુરુજને.નું વચન કઠોર જણાય છે. પરંતુ ભવિષ્યમાં તે શિષ્યોને માટે આત્મ કલ્યાણનું સાધક હોવાથી અનંત શિતળતા આપનાર બને છે. શિષ્યજને ગુરુનાં વચન અનંત હિત વિધાયક, મોક્ષપથ પ્રદર્શક, સાવધ કર્મ નિવર્તક અમૃત સ્વરૂપ બાણીને સહી લેવાં જોઈએ. કેમકે તેનાથી શિષ્યોને આસેવન શિક્ષા અને ગ્રહણશિક્ષા પ્રાપ્ત થાય છે. વ્રતોનું ગ્રહણ કરવું અને તેને સમ્યગ્રીતિથી પાલન કરવું આ શિક્ષા ગુરુના વચનોથી જ શિષ્યોને મળે છે. કહ્યું પણ છે—ગીર્મિર્ગુરુણાં. ઇત્યાદિ—



તથા-હાસં=હસનં, ક્રીડાં=કન્દુકાદિકાં ચ વર્જયેત્, જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધ-  
કર્મવન્ધજનકત્વાદિતિ ભાવઃ ।

ઉક્તંચ—“જીવે ણં મંતે ! હસમાણે વા ઉસ્સુયમાણે વા કહ કમ્મપગડીઓ  
વંધઈ ? । ગોયમા ! સત્તવિહવંધણ વા અટ્ટવિહવંધણ વા ”

છાયા-જીવઃ સ્વલુ મદન્ત ! હસન્ વા ઉત્સુકન્ વા કતિ કર્મપ્રકૃતીર્વ-  
ધ્નાતિ, ગૌતમ ! સપ્તવિધવન્ધકો વા અષ્ટવિધવન્ધકો વા ઇત્યાદિ । ક્રીડાવિપયે-  
ઽપ્યેવમેવાગમોઽનુસન્ધેયઃ ॥ ૯ ॥

કે મહત્વ કો ખી વિનષ્ટ કર દેતા હૈ એવં દશવિધ ધર્મકો ધ્વસ્ત કર દેતા  
હૈ । ઇસલિયે ધુદ્રોં કા તથા ચાલકોં કા સંસર્ગ સદા પરિહાર્ય વતલાયા  
ગયા હૈ । તથા ચાલઆદિજનોંકી સંગતિ સે નિંદા હોતી હૈ એવં પાપકાર્યોં  
મેં અનુમતિ દેને કી ખી આદત પડ જાતી હૈ । ઇસી તરહ જ્ઞાનાવરણીય  
આદિ અષ્ટવિધ કર્મોંકે વંધ કે જનક હોને સે સાધુજન કો ચાલોંકે સાથ  
હૈસી કરના, ક્રીડા કરના આદિ અકર્તવ્યોંકા ખી પરિહાસ કર દેના  
ચાહિયે । પ્રભુકા સ્વયં ખી એસા હી ઉપદેશ હૈ—“જીવે ણં મંતે ! હસમાણે  
ઉસ્સુયમાણે વા કહ કમ્મપગડીઓ વંધઈ ? ગોયમા ! સત્તવિહવંધણ વા  
અટ્ટવિહવંધણ વા ” ઇત્યાદિ—પ્રભુ સે ગૌતમને પ્રશ્ન કિયા હૈ મદન્ત !  
યહ જીવ જવ હૈસી કરતા હૈ અથવા ઉત્સુક હોતા હૈ તવ કિતને કર્મકી  
પ્રકૃતિયોં કા વંધ કરતા હૈ ? તવ પ્રભુ ને ઉત્તર દિયા કિ હૈ ગૌતમ ! ઇસ  
અવસ્થા મેં યહ જીવ સાત પ્રકાર કે યા આઠ પ્રકાર કે કર્મોંકા વંધ કરતા

સંયમના મહત્વનો પણ નાશ કરી નાખે છે. એમ જ દશવિધ ધર્મનો  
પણ ધ્વસ્ત કરી નાખે છે. આ માટે ધુદ્રોનો તથા બાલકોનો સંસર્ગ સદા  
પરિહાર્ય બતાવવામાં આવેલ છે. તથા બાળ આદિ જનોની સંગતિથી નિંદા  
થાય છે. તેમજ પાપકાર્યોમાં અનુમતિ દેવાની પણ આદત પડી બાય છે.  
આ રીતે જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મનાં બંધનોના જનક હોવાથી સાધુજનોએ  
હાંસી કરવી, ક્રીડા કરવી આદિ અકર્તવ્યોનો પરિહાર કરી દેવો બોધ્યો.  
પ્રભુનો સ્વયં આવો જ ઉપદેશ છે. “જિવેણં મંતે ! હસમાણે વા ઉસ્સુયમાણે વા  
કહ કમ્મપગડીઓ વંધઈ ? ગોયમા ! સત્તવિહ વંધણ વા અટ્ટવિહ વંધણ વા”  
ઇત્યાદિ—પ્રભુથી ગૌતમે પ્રશ્ન કર્યો હો ભદન્ત ! આ જીવ જ્યારે હસે છે  
ત્યારે કેટલા કર્મની પ્રકૃતિઓનો બંધ કરે છે ? પ્રભુએ ઉત્તર આપ્યો કે હો  
ગૌતમ ! આ અવસ્થામાં આ જીવ સાત પ્રકારના અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોનો

કટુફલો ભવતિ । અપરં ચ ચાલપાર્શ્વસ્થાદિસંસર્ગો લોકે ગદ્ધો જનયતિ, સર્વ  
 એવૈતે સાધવ એવંભૂતા ઇતિ, તથા પાપેऽનુમતિમુત્પાદયતિ । અયં ભાવઃ-યથા-  
 રજઃપુઞ્જો મણિગણં મલિનયતિ, રાહુચન્દ્રમણ્ડલપ્રભામપકર્પયતિ, લોભઃ સર્વગુણ-  
 ગણં વિનાશયતિ, હેમન્તઃ કમલવનં પ્રલીનયતિ, તથા-ક્ષુદ્રસંસર્ગઃ શાન્ત્યાદિગુણગણં  
 મલિનયતિ, લબ્ધ્યાદિપ્રભાવમપકર્પયતિ, તપઃસંયમજનિતમહત્ત્વં વિનાશયતિ, દશ-  
 વિધધર્મં પ્રલીનયતિ, તસ્માત્ ક્ષુદ્રસંસર્ગઃ પરિવર્જનીય ઇતિ ।

સાથ અપને મૂલ સે મિલા રહને પર કટુકફલ દેને લગતા હૈ । यह बात  
 प्रसिद्ध है । इसलिये संसर्ग के दोष से जैसे आम्र निम्बभाव को प्राप्त  
 होकर कटुवे फल देने लगता है उसी प्रकार आत्मार्थी साधुजन भी  
 चाल पार्श्वस्थादि के संगति से स्वाचार भ्रष्ट हो जाते हैं । आम्र पर  
 नीमका ही प्रभाव पड़ता है-नीम पर आम का नहीं-कारण कि बुरी  
 वस्तु का ही अधिक प्रभाव पड़ा करता है और वही वस्तु दूसरों को  
 जल्दी अपने अनुरूप परिणाम लेती है-यह एक स्वाभाविक बात है ।  
 यह तो आंखोंदेखी बातें हैं कि धूलि का पुंज मणिगणको भी मलिन  
 बना देता है । राहुचन्द्रमंडल की प्रभा का अपकर्षक होता है, लोभ  
 समस्त सद्गुणोंका लोपक होता है । हेमन्त ऋतु कमलवन को दग्ध कर  
 देता है । इसी तरह यह भी मानने में कोई आपत्ति नहीं है कि क्षुद्र-  
 जनों का संसर्ग भी साधुजनों के शांति आदि गुणगणों को मलिन  
 बना देता है । उनके प्राप्त-प्रभाव को कम कर देता है । तप एवं संयम

કડવાં ફળ આપવા લાગે છે. આ વાત પ્રસિદ્ધ છે. આ માટે સંસર્ગના -  
 દોષથી જેમ આંખો લીમડાના ભાવને પામી કડવાં ફળ આપનાર બને છે  
 એ જ રીતે આત્માર્થી સાધુજન પણ બાળ પાર્શ્વસ્થાદિના સંગથી સ્વાચારભ્રષ્ટ  
 બની જાય છે. આંખા ઉપર લીમડાનો જ પ્રભાવ પડે છે, લીમડા ઉપર  
 આંખાનો નહીં કારણ કે ખરાબ વસ્તુનો અધિક પ્રભાવ પડે છે. અને વસ્તુ  
 બીજાઓને જલ્દી પોતાના જેવી બનાવે છે. આ એક સ્વાભાવિક વાત છે આ  
 તો આંખે જોયેલી વાત છે કે ધુળનો વંટોળ મણીઓને પણ મલિન બનાવી  
 દે છે. રાહુ ચંદ્ર મંડળ તેજને ઢાંકી દે છે. લોભ સમસ્ત સદ્ગુણોને લોપનાર  
 હોય છે. હેમન્ત કમળ વનને બાળી નાખે છે. આ રીતે એ માનવામાં કેાઈ  
 અયુક્તિ નથી કે ક્ષુદ્રજનોનો સંસર્ગ પણ સાધુજનોના શાન્તી આદિ ગુણોને  
 મલિન બનાવી દે છે. એના પ્રાપ્ત પ્રભાવને ઓછો કરે છે, તપ અને

ક્રોધ કે આવેશ સે મૃપાભાષણ મત કરો । ( વહુયં માય આલવે-વહુકં માચ આલપેત્ ) વ્યર્થ આલજાલરૂપ વચનોંકા ઉચ્ચારણ મત કરો-અનર્થ પ્રલાપ મત કરો-અધિક મત બોલો । ( કાલેણ ય અહિજ્જિત્તા-કાલેન ચાધીત્ય ) પ્રથમ પૌરુષી મેં સ્વાધ્યાય કરકે ( તઓ ઇગઓ જ્ઞાજ્ઞ-તતઃ એકાકી ધ્યાયેત્ ) દ્વિતીય પૌરુષી મેં એકાકી હોકર સૂત્રાર્થકા ચિન્તવન કરો । ઉપલક્ષણ સે તૃતીય પૌરુષી મેં ભિક્ષાચયી, એવં ચતુર્થી પૌરુષી મેં ભણ્ડોપકારણ કી પ્રતિલેખના કે વાદ પુનઃ સ્વાધ્યાય કરો । યહ વાત સ્વયં સૂત્રકાર છાઈસ વે અધ્યયન મેં કહેંગે ।

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકારાન્તર સે વિનય ધર્મકા શિષ્ય-જનોં કો ઉપદેશ દેતે હુઃ સૂત્રકાર કહેતે હેં કિ હે શિષ્યોં યદિ તુમ ઇસ વિનય ધર્મકો પાલન કરને કે અભિલાષી હો તો તુમ્હારા યહ કર્તવ્ય હૈ કિ તુમ ક્રોધ કે આવેશમેં આકર કમી મી મૃપાભાષણ મત કરો । ક્યોં કિ ઇસ પ્રકાર કરનેસે વિનયધર્મકી પાલના નહોં હોતી હૈ મૃપા-ભાષણ કે નિવેધ સે ઉત્તકે સાય-સાય માન, માયા, લોભ, એવં હાસ્યાદિ કોં કા મી વિનયવાન કો ત્યાગ કર દેના ચાહિયે । મૃપાવાદાદિ કો ત્યાગ કરને કા કારણ યહ હૈ કિ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ કરને વાલા

મૃપાભાષણ ન કરે । ( વહુયં માય આલવે-વહુકં માચ આલપેત્ ) આળપંપાળ રૂપ વચનોંકા વ્યર્થ ઉચ્ચારણ ન કરે-અનર્થ પ્રલાપ ન કરે-વધારે ન બોલે । ( કાલેણ ય અહિજ્જિત્તા-કાલેન ચાધીત્ય ) પ્રથમ પૌરુષીમાં સ્વાધ્યાય કરી ( તઓ ઇગઓ જ્ઞાજ્ઞ-તતઃ એકાકી ધ્યાયેત્ ) બીજા પૌરુષીમાં એકાકી થઈને સૂત્રાર્થનું ચિન્તવન કરે । ઉપલક્ષણથી ત્રીજા પૌરુષીમાં ભિક્ષા ચર્યા અને ચોથા પૌરુષીમાં ભણ્ડોપકારણની પ્રતિલેખના પછી ફરી સ્વાધ્યાય કરે । આ વાત સૂત્રકાર પોતે ૨૬ મા અધ્યયનમાં કહેશે ।

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકારાન્તરથી વિનય ધર્મનો શિષ્યજનોને ઉપદેશ આપતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્યો ! જો તમે આ વિનયધર્મનું પાલન કરવાના અભિલાષી હો તો તમારું એ કર્તવ્ય છે કે તમે ક્રોધના આવેશમાં આવી કદી પણ મૃપાભાષણ કરો નહીં. કેમકે આ પ્રકારે કરવાથી વિનય ધર્મની પાલના થતી નથી. મૃપાભાષણના નિવેધથી એની સાથે માન, માયા, લોભ અને હાસ્યાદિકનો પણ વિનયવાને ત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. મૃપાવાદાદિકોનો ત્યાગ કરવાનું કારણ આ છે કે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરવા-

પુનરપિ પ્રકારાન્તરેણ વિનયમુપદિશન્નાહ—

મૂલમ્—માં યં ચંડાલિયં કાંસી, વહુયં માં યં આલંચે ।

કાલેપં યં અહિર્જિંતા, તંઓ જ્ઞાઈજ્ઞં ઇગંઓ ॥ ૧૦ ॥

છાયા—

મા ચ ચણ્ડાલીકં કાર્પીદ્, વહુકં મા ચ આલપેત્ ।

કાલેન ચાધીત્ય, તત્તો ધ્યાયેત્ એકકઃ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા—

‘મા ય’ इत्यादि—च शब्दः समुच्चयार्थकः । चण्डालीकं—चण्डः=क्रोध-  
स्तद्वशादलीकं=मृषाभाषणं मा कार्पीत्=मा कुर्यात्, इदमुपलक्षणं मानमायालोभ-  
भयहास्यादीनाम् । उक्तंच—

મુસાવાઓ ઉ લોગમ્મિ, સન્વસાહુદિ ગરિહિઓ ।

અવિસ્તાસો ય ભૂયાગં, તમ્હા મોસં વિવજ્જણ ॥ ( દશવૈ. ૬ અ. ૧૩ ગા. )

છાયા—

મૃષાવાદસ્તુ લોકે, સર્વસાધુભિર્ગર્હિતઃ ।

અવિશ્વાસશ્ચ ભૂતાનાં, તસ્માદ્મૃષા વિવર્જયેત્ ॥

ચ=પુનઃ વહુકં=વદ્ધેવ વહુકમ્—અતિશયમ્ આલજાલરૂપં મા આલપેત્=મા  
વદેત્ । વહુભાષણે વહવો દોષા ભવન્તિ । ઉક્તં ચ—

હૈ । इसी तरह क्रीडाके विषय में भी समझ लेना चाहिये ॥ ९ ॥

दूसरे प्रकार से भी इसी विनयधर्मका सूत्रकार उपदेश करते हैं—‘ माय. ’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—शिष्यजनों को संबोधित करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्यो ! तुम (चण्डालियं मामकासी-चण्डालीकं मा चकार्षीत्

બંધ કરે છે. આ રીતે ક્રીડાઓના વિષયમાં પણ સમજી લેવું જોઈએ. ॥ ૯ ॥

બીજા પ્રકારથી પણ આ વિનય ધર્મનો સૂત્રકાર ઉપદેશ કરે છે—  
માય૦ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—શિષ્યજનોને સંબોધન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્યો ! તમે ચંડાલિયં મામ કાસી-ચંડાલીકં મા ચકાર્ષીત્ ) ક્રોધના આવેશથી

પાલને કા આદેશ હૈ । વહુભાપણ મેં અથવા વિના વિચાર કિયે ભાપણ મેં ન તો સાધુ કે મૂલગુણરૂપ ઇસ સમિતિ કા હી પાલન હોતા હૈ ઓર ન ગુપ્તિ કા હી । ઇસીલિયે વહુભાપણ મેં “વહુત દોષ હૈ” અન્યત્ર ભી ઁસા હી કહા હૈ—

વહુભાપણમુન્માદં સ્વાધ્યાયધ્યાનમંજનં કુરુતે ।

અહિતમનર્થકરં તત્, ભવતિ ચ પીડાકરં નિતરામ્ ॥ ૧ ॥

વહુભાપણાત્ દ્વિતીયં નશ્યતિ, તાવન્મહાવ્રતં તસ્માત્ ।

સ્યાદેવ કર્મવંધસ્તસ્માદ્ દીર્ઘાધ્વસંસારઃ ॥ ૨ ॥

વહુત આલજાલરૂપ વકવાદ કરને વાલોંકે ઉન્માદ રોગ હો જાતા હૈ । સાધુ કે સ્વાધ્યાય ઁવં ધ્યાન મેં વિઘ્ન પડતા હૈ—સ્વાધ્યાય ધ્યાન નષ્ટ હો જાતે હૈ । વહુભાપણ સે અનેક અનર્થ હોતે હૈ । જ્યાદા ઇસ વિષય મેં ઓર કયા કહા જાય સાધુ કા ઇસ હાલત મેં દ્વિતીય સત્ય-મહાવ્રત ભી ઁંડિત હો જાતા હૈ અતઃ વહુભાપીકે કર્મ વહુત વન્ધતે હૈ ઓર વહુ દીર્ઘ સંસારી હોકર સંસાર મેં પરિભ્રમણ કરતા હૈ ।

“કાલેણ” ઇસ પદ સે સૂત્રકાર સાધુ કા કયા કર્તવ્ય હૈ યહ વાત દિઁલ્લાતે હૈ । વે કહતે હૈં કિ સાધુ કો પ્રથમ પૌરુષી મેં સ્વાધ્યાય

સમિતિ અને વચનશુપ્તિ પાળવાનો આદેશ છે. બહુ ભાપણમાં અથવા વિચાર કર્યા વગરના ભાપણમાં ન તો સાધુના મુળગુણ રૂપ એ સમિતિનું પાલન થાય છે અને ન શુપ્તિનું પણ આ માટે બહુ ભાપણમાં “ઘણો દોષ છે” બીજામાં પણ તેમજ કહ્યું છે.

વહુભાપણમુન્માદં સ્વાધ્યાયધ્યાનમંજનં કુરુતે ।

અહિતમનર્થકરં તત્ ભવતિ ચ પીડાકરં નિતરામ્ ॥૧॥

વહુભાપણાત્ દ્વિતીયં નશ્યતિ તાવન્મહાવ્રતં તસ્માત્ ।

સ્યાદેવ કર્મવંધસ્તસ્માત્ દીર્ઘાધ્વસંસારઃ ॥૨॥

આલ જાલરૂપ વધુ બકવાદ કરવાવાળાને ઉન્માદ રોગ થઈ આવે છે. સાધુના સ્વાધ્યાય અને ધ્યાનમાં વિઘ્ન પડે છે—સ્વાધ્યાય ધ્યાન નષ્ટ થઈ જાય છે. બહુ ભાપણથી અનેક અનર્થ થાય છે. આ વિષયમાં વધુ શું કહેવાય. સાધુનું આ હાલતમાં બીજું સત્ય મહાવ્રત પણ ખંડિત થઈ જાય છે. એટલે બહુભાપીનાં કર્મ વધુ બંધાય છે. અને તે દીર્ઘ સંસારી બની સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

“કાલેણ” આ પદથી સૂત્રકાર સાધુનું શું કર્તવ્ય છે આ વાત બતાવે છે, તેઓ કહે છે કે સાધુને પ્રથમ પૌરુષીમાં સ્વાધ્યાય કરવો જોઈએ. પછી



વહુભાષણમુન્માદં, સ્વાધ્યાયધ્યાનમહનં કુરુતે ।

અહિતમનર્થકરં તદ્, ભવતિ ચ પીડાકરં નિતરામ્ ॥૧॥

વહુભાષણાદ્ દ્વિતીયં, નશ્યતિ તાવન્મહાગ્રતં તસ્માત્ ।

સ્યાદેવ કર્મવન્ધ, -સ્તસ્માદ્ દીર્ઘાધ્વસંસારઃ ॥ ૨ ॥

તર્હિ કિં કુર્યાત્ ? इत्याह—‘कालेण.’ इत्यादि । ‘कालेण’—इत्यत्र सप्तम्यर्थे तृतीया; काले=प्रथमपौरुष्यां तु, चकारस्त्वर्थवाचकः, अशीत्य=स्वाध्यायं कृत्वा ततः=तदनु द्वितीयपौरुष्याम् एककः—एकाकी सन् भावतो रागादिरहितः, द्रव्यतो विविक्तशयनासनादिसंस्थः ध्यायेत्—सूत्रार्थं चिन्तयेत् । उपलक्षणमेतत् तृतीयचतुर्थ-पौरुष्योरपि, तथा च—तृतीयपौरुष्यां भिक्षाचर्यं चतुर्थ्यां पुनः स्वाध्यायं कुर्या-दित्यर्थः । वक्ष्यति षड्विंशेऽध्ययने—

સાધુ સાધુ નહોં હૈ વહ સાધ્વાભાસ હૈ । કહા બી હૈ કિ—

मुसावाओ उलोगम्मि सब्बसाह्हिं गरिहिओ ।

अविस्सासो य भूयाणं तम्हा मोसं विवज्जए । (दशवै० ६ अ. १३ गाथा)

यह मृपावाद सर्व-साधुओं अर्थात् तीर्थंकर आदि महापुरुषों द्वारा गर्हित-निन्दित है, दूसरे मृपावादी पर जगत का कोई भी प्राणी विश्वास नहीं करता है, अर्थात् वह सब के लिये अविश्वास्य होता है । इसी प्रकार बहुत बोलने से भी विनय धर्म यथावत् पालित नहीं हो सकता है । क्यों कि इस अवस्था में ऐसे भी कई शब्द निकल जाते हैं जो व्यर्थ होते हैं एवं सुनने वाले के लिये भी कष्टप्रद होते हैं । जो मन में आया सो बोल देना—यह प्रवृत्ति साधु मार्ग की नहीं है । इसमें तो बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है । इसी लिये भाषासमिति एवं वचनगुप्ति

વાળા સાધુ સાધુ નથી તે સાધ્વાભાસ છે. કહ્યું પણ છે કે—

मुसावओ उ लोगम्मि सब्बासाहु हिं गरिहिओ ।

अविस्सासो य भूयाणं तम्हा भासं विवज्जए । दशवै० ६ अ. १૩ ગાથા.

આ મૃપાવાદ સર્વ સાધુઓ અર્થાત્ તીર્થંકર આદિ મહાપુરુષોદ્વારા અહિત છે. બીજા મૃપાવાદી ઉપર જગતના કોઈપણ પ્રાણી વિશ્વાસ કરતા નથી તે બધાને માટે અવિશ્વાસ હોય છે. આ પ્રકારે બહુ બોલવાથી પણ વિનયધર્મ યથાવત્ પાલિત નથી થઈ શકે. કેમકે એ અવસ્થામાં એવા પણ કોઈ શબ્દ નિકળી જાય છે, જે વ્યર્થ હોય છે, અને સાંભળવાવાળાને માટે પણ દુઃખદાયક હોય છે. જે મનમાં આવ્યું તે બોલી નાખ્યું—આ કામ સાધુનું નથી. એણે તો ખૂબજ સાવધાની રાખવી પડે છે. આ માટે ભાષા

ચ-પુનઃ, અકૃતમ્=અનાચરિતં ચણ્ડાલીકાદિકં, નો કૃતમિતિ=મૃપાભાષણં મયા ન કૃતમિત્યેવ ભાષેત । અયં ભાવઃ-ગુરુશ્રૂપાકારિણોઽપિ શિષ્યસ્ય કથંચિદતીચાર-સંભવે ગુરુસંનિધૌ તદાલોચના કરણીયા । આલોચના દિ-મોક્ષમાર્ગવિચારકાનામ-નન્તસંસારવર્ધકાનાં માયા-નિદાન-મિથ્યાદર્શનશલ્યાનાં નિષ્કર્ષણી, જ્ઞાનાવરણીયા-દૃષ્ટિવિધર્મમલાપકર્ષણી, શુદ્ધાત્મસ્વરૂપદર્શની, તત્ત્વાતત્ત્વવિમર્શની, અવ્યાવાધ-સુલ્લવર્ષિણીતિ ॥ ૧૧ ॥

(આહચ-કદાચિત્) યદિ અકસ્માત્ (ચંડાલિયં કટ્ટુ-ચંડાલીકં કૃત્વા । ક્રોધ કે આવેશ સે અકસ્માત્ ઝૂઠ વોલા ગયા હો તો મી ઉસે (કયાવિ ન નિન્દુવિજ્ઞ-કદાપિ ન નિહ્નુવીત) કમી મી કિસી મી પરિસ્થિતિ મેં છિપાના નહીં ચાહિયે । (કડં કડેત્તિ ભાસેજ્ઞા-કૃતં કૃતમિતિ ભાષેત ) એસા નહીં કહના ચાહિયે કિ મેંને ક્રોધાદિક કે આવેશ સે અસત્ય ભાષણ નહીં કિયા હૈ-કિન્તુ એસા હી કહના ચાહિયે કિ મેરે દ્વારા ક્રોધાદિક કે આવેશ સે અસત્યભાષણ અવશ્ય-અવશ્ય હુઆ હૈ, (અકડં નો કડેત્તિ ચ-અકૃતં નો કૃતમિતિ ચ ) ઓર જો ક્રોધાવેશસે અસત્ય નહીં વોલા ગયા હો તો એસા મી નહીં કહના ચાહિયે કિ મેંને અસત્ય ભાષણ કિયા હૈ ।

ભાવાર્થ—યદિ ક્રોધાદિક કપાયોં કે આવેશ સે સહસા અસત્ય ભાષણ હો મી જાય તો ઉસે યહ નહીં કહના ચાહિયે કિ મેંને અસત્ય ભાષણ નહીં કિયા હૈ । જૈસે રક્ત સે દૂપિત વસ્ત્ર રક્તસે ધોને

આહચ્ચ-કદાચિત્-કદાચ યદિ-અકસ્માત્ ચંડાલિયં કટ્ટુ-ચંડાલીકંકૃત્વા ક્રોધના આવેશથી અકસ્માત્ બુદ્ધિ બોલી જવાયું હોય તો પણ તેને કયાવિ ન નિન્દુ-વિજ્ઞ-કદાપિ ન નિહ્નુવીત કદી પણ કદાચ પરિસ્થિતિમાં છુપાવવું નહીં લેઈએ. કડં કડેત્તિ ભાસેજ્ઞા-કૃતં કૃતમિતિ ભાષેત એમ ન કહેવું લેઈએ કે મેં ક્રોધા-દિકના આવેશમાં અસત્ય-ભાષણ કરેલ નથી-પરંતુ એવું કહેવું લેઈએ કે મારાથી ક્રોધના આવેશમાં અસત્ય ભાષણ જરૂરજરૂર થયું છે. અકડં નો કડે-ત્તિ ચ-અકૃતં નો કૃતમિતિ ચ અને નો ક્રોધાવેશના લીધે અસત્ય ન બોલાયું હોય તો એવું પણ ન કહેવું લેઈએ કે મેં અસત્ય ભાષણ કર્યું છે.

મતલબ આનો એ છે કે નો ક્રોધાદિક કપાયોના આવેશથી સહસા અસત્ય-ભાષણ થઈ જાય તો એવું ન કહેવું લેઈએ કે મેં અસત્ય-ભાષણ નથી કર્યું. જે રીતે લોહીથી ખરડાયેલું દૂપિત વસ્ત્ર લોહીથી ધોવાથી શુદ્ધ થતું

“ પઢમં પોરિસિ સજ્ઞાયં વીયં જ્ઞાણં જ્ઞિયાયઈ ।

તદ્યાપ્ ભિક્ષાયરિયં પુણો ચઉત્થીઈ સજ્ઞાયં ” ઇતિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

યદિ કથન્નિદસત્યભાષણં ભવેત્તદા તન્ન ગોપયેદિત્યાહ—‘આહચ્ચ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્—આહચ્ચં ચંડાલિયં કટ્ટું, નં નિન્નુવિજ્ઞ કય્ઞાઈવિ” ।

કંડં કંડેત્તિ” ભાસેજ્ઞાં, અકંડે ‘નાં કંડેત્તિ’ યં ॥૧૧॥

છાયા—

કદાચિત્ ચણ્ડાલીકં કૃત્વા, ન નિન્નુવીત કદાચિદપિ ।

કૃતં કૃતમિતિ ભાષેત, અકૃતં નોકૃતમિતિ ચ ॥ ૧૧ ॥

ટીકા—

‘ આહચ્ચ ’ ઇત્યાદિ—કદાચિત્=અકસ્માદ્ ચણ્ડાલીકં=ક્રોધાદિવશાદ-  
વૃત્તભાષણં કૃત્વા કદાચિદપિ—યદા પરેણ જ્ઞાતં નોજ્ઞાતં વા તદાપિ ન નિન્નુવીતન્ન  
ગોપયેત્—અવૃત્તભાષણં મયા ન કૃતમિત્યપલાપં ન કુર્યાત્ । કિં તર્હિ ? ઇત્યાહ—કૃતં  
ચણ્ડાલીકાદિ, કૃતમિતિ=ક્રોધાદિવશાદવૃત્તભાષણં મયા કૃતમિત્યેવ ભાષેત, તથા  
કરનાં ચાહિયે । પશ્ચાત્ દ્વિતીય પૌરુષી મેં રાગાદિક ભાવોં સે રહિત  
હોકર સૂત્રાર્થકા ચિન્તવન કરનાં ચાહિયે । ઉપલક્ષણ સે તૃતીય ‘ એવં  
ચતુર્થ પૌરુષી કા ગ્રહણ હુઆ હૈ જિસકા ભાવ ઇસ પ્રકાર હૈ કિ તૃતીય  
પૌરુષી મેં વહ ભિક્ષાચર્યા કરે ઓર ચતુર્થ પૌરુષી મેં પુનઃ સ્વાધ્યાય કરે  
ઈસી વાત કો ઇસી સૂત્ર કો છાઈસ ૨૬ વેં અધ્યયન મેં ભગવાનને કહા હૈ—

પઢમં પોરિસિ સજ્ઞાયં વીયં જ્ઞાણં જ્ઞિયાયઈ ।

તદ્યાપ્ભિક્ષા યરિયં પુણો ચઉત્થીઈ સજ્ઞાયં ॥ ઇતિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

અગર કિસી કારણ વશ અસત્ય બોલાજાય તો ઉસે છિપાવે  
નહીં, ઇસી વાતકો કહતે હૈ—‘ આહચ્ચ. ’ ઇત્યાદિ ।

બીજા પૌરુષીમાં રાગાદિક ભાવોથી રહિત બની સૂત્રાર્થનું ચિંતવન કરવું  
જોઈએ. ઉપલક્ષથી ત્રીજા અને ચોથા પૌરુષીનું ગ્રહણ થયેલ છે. જેનો ભાવ  
આ પ્રકારે છે કે ત્રીજા પૌરુષીમાં તે ભિક્ષા ચર્યા કરે અને ચોથા પૌરુષીમાં  
ફરી સ્વાધ્યાય કરે. આ વાત આજ સૂત્રના ૨૬મા અધ્યયનમાં ભગવાને કહી છે—

પઢમં પોરિસિ સજ્ઞાયં વીયં જ્ઞાણં જ્ઞિયાયઈ ।

તદ્યાપ્ ભિક્ષાયરિયં પુણો ચઉત્થીય સજ્ઞાયં ઇતિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

આ વાતને આ સૂત્રના ૨૬ મા અધ્યયનમાં ભગવાને કહ્યું છે.

જો કોઈ કારણવશ અસત્ય બોલાઈ જાય તો એને છૂપાવવું નહિં એજ  
વાત ને કહે છે. આહચ્ચં ઇત્યાદિ.



ગુરોરભિપ્રાયેણૈવ સર્વં કર્તવ્યમિત્યાહ—

મૂલમ્—માં ગલિયસ્સેવં કંસં, વંચનામિચ્છે પુર્ણો પુર્ણો ।

કંસં વં દંદુમાહન્ને', પાંચંગં પરિવંજ્જણ ॥૧૧॥

છાયા—

મા ગલિતાશ્વ ઇવ કશાં, વચનમ્ ઇચ્છેત્ પુનઃ પુનઃ ।

કશામ્ ઇવ દૃષ્ટ્વા આકીર્ણઃ, પાપકં પરિવર્જયેત્ ॥ ૧૨ ॥

ટીકા—

‘મા ગલિયસ્સેવ.’ इत्यादि—इव=यथा, गलिताश्वः=अविनीततुरङ्गः, पुनः पुनः कशां=कशामहारं वाञ्छति, तथा पुनः पुनः वचनं=प्रवृत्तिनिवृत्तिपरं गुरोरुपदेशं मा इच्छेत् । उपदिष्टार्थमेव पुनः पुनर्वक्तुं गुरवे परिश्रमो न देय इति भावः ।

પર શુદ્ધ નહીં હોતા, उसी प्रकार झूठ की शुद्धि पुनः झूठ बोलने से नहीं होती है यह विश्वास रखना चाहिये । फलितार्थ यह है कि वास्तविक स्थिति को साधु के लिये छुपाना नहीं चाहिये, और अवास्तविक स्थिति को कल्पना के तूलिका से सजाकर प्रकट नहीं करना चाहिये । शिष्य चाहे गुरुजन की शुश्रूषा करनेवाला भी क्यों न हो तो भी उसे कथंचित् अतीचार लगने पर गुरु के समीप आलोचना अवश्य करनी चाहिये । कारण कि आलोचना से आत्मा की शुद्धि होती है एवं मोक्ष-मार्ग के विघातक तथा अनंत संसार के वर्धक ऐसे माया, मिथ्या एवं-निदान इन तीन शक्तियों का अभाव होता है । आत्मा को मलिन करने-

નથી એજ રીતે જુઠની શુદ્ધિ કરી જુઠ બોલવાથી થતી નથી, આ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ. આનો અર્થ એ છે કે વાસ્તવિક સ્થિતિને સાધુએ કદી પણ છુપાવવી ન જોઈએ, અને અવાસ્તવિક સ્થિતિને કલ્પનાથી સજાવીને પ્રગટ ન કરવી જોઈએ. શિષ્ય ગુરુજનની શુશ્રૂષા કરવાવાળો પણ કેમ ન હોય તો પણ તેને કથંચિત્ અતીચાર લાગવાથી ગુરૂની પાસે તેણે આલોચના જરૂર કરવી જોઈએ. કારણ કે આલોચનાથી આત્માની શુદ્ધિ થાય છે અને મોક્ષ-માર્ગના વિઘાતક તથા અનંત સાગરને વધારનાર એવાં માયા, મિથ્યા અને નિદાન આ ત્રણ શક્તિઓનો અભાવ હોય છે. આત્માને મલિન કરવાવાળા અષ્ટ-વિધ ક્રમેનો આ આલોચનાના પ્રભાવથી વિનાશ થાય છે. આત્મિક



સ ચ તુરંગમઃ કશયા પુનઃ પુનસ્તાડિતોઽપિ નેચ્છતિ શત્રુમભિગન્તુમ્ । અત્રાન્તરે શત્રુ-  
સૈનિકા અસ્ય સવલાનપિ સૈનિકાન્ અનાથાનિવ અશરણાનિવ મન્યાના અચિરેણૈવ  
વિજિત્ય નિજયાત્રં વાદયામાસુઃ, શત્રુમર્દનઃ સ્વવાહનેન ગલિતાશ્વેન પરાજિતઃ શ્રી-  
હતો યાવત્પલાયિતું વાચ્છતિ, તાયત્ “ગૃહ્યતાં ગૃહ્યતામ્”-ઇતિ વદન્તઃ શત્રુસૈનિકાસ્તં  
નિગ્રહીતું પથાદ્વાવમાનાઃ શત્રુમર્દનં નિગૃહ્ય લૌહપિઞ્જરે સ્થાપિતવન્તઃ । એવં ગલિતા-  
શ્વસદૃશઃ શિષ્યો મહતેઽનર્થાય ભવતિ । કિં તર્હિ કુર્યાદિત્યાહ-કશાં-‘ચાવૂક’  
ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધાં દૃષ્ટ્વા, અકીર્ણઃ=જાત્યાશ્વઃ, વિનીતાશ્વ इव શિષ્યો ગુરોરિદ્ધિ-  
તમાકારં દૃષ્ટ્વા પાપકં=પાપાનુષ્ઠાનમ્-અવિનીતતામિત્યર્થઃ, પરિવર્જયેત્=સર્વથા પરિ-  
હરેત્ । અયં ભાવઃ-યથા જાત્યાશ્વઃ કશાં દૃષ્ટ્વાશ્વાસ્થસ્થસ્યાશયં વિજ્ઞાય કશાતાડનં

ઘોડે કો ચાવુકસે તાડના કરતા થા વહ ઘોડા ત્યોં ત્યોં પીછે હટતા  
જાતા થા ઓર શત્રુ કે સન્મુખ જાને મેં અચકચાતાથા । ઇસકે વાદ શત્રુ  
સૈનિકોં ને ઇસ રાજા કે સૈનિકોંકો અશરણ એવં અનાથ જેસા માનકર  
વહુત જલ્દી પરાજિત કર દિયા । ઓર અપની વિજયકી હુંદું મી વજા દી ।  
શત્રુમર્દન નરેશ જ્યોં હી અપને કો ઉસ અડિયલ ઘોડે કી વજહ સે  
પરાજિત સમક્ષકર એવં શ્રીવિહીન હોકર યુદ્ધભૂમિ સે પલાયન કરને કો  
તૈયાર હુઆ કિ ઇતને મેં હી “ ઇસકો પકડ લો પકડ લો ” ઇસ પ્રકાર  
બોલતે હુએ શત્રુસૈનિકોં ને ઉસકા પીછા ક્રિયા ઓર ઉસકો પકડકર  
ઉન્હોંને લૌહનિર્મિત એક પાંજર કે અન્દર વન્દ કર દિયા ।

ઇસ કથા સે યહ સારાંશ નિકલતા હૈ કિ ગલિતાશ્વ-અડિયલ  
ઘોડે કી તરહ અવિનીત શિષ્ય મી મહાન્ અનર્થકારી હોતા હૈ । તથા  
જિસ પ્રકાર વિનીત ઘોડા અપને સ્વામી કે અભિપ્રાયાનુસાર ચલતા

વાર તેને ફટકારવાનું શરૂ કર્યું. પરંતુ ગમે તેટલા ચાબુક પડવા છતાં પણ  
ઘોડો પાછળજ હઠતો ગયો, શત્રુની સામે જવામાં તે અચકાતો હતો. આ  
પરિસ્થિતિનો લાભ લઈ શત્રુ સેનાએ શત્રુમર્દન રાજાના સૈન્યમાં હાહાકાર વર્તાવી  
દીધો અને શત્રુઓએ છત મેળવી પોતાના વિજયનાં વાન્ત વગાડ્યાં. શત્રુમર્દન  
રાજાએ, આ પોતાના અડીયલ ઘોડાને કારણે પરાજિત થવું પડ્યું છે તે જાણી  
યુદ્ધભૂમિથી પલાયન કરવાની તૈયારી કરી એટલામાં “આને પકડી લ્યો, પકડી  
લ્યો” આ પ્રકારે બોલતા શત્રુસૈનિકો તેની પાસે આવી પહોંચ્યા. અને તેને  
પકડી લોહના મજબુત સળીયાવાળા પાંજરામાં પુરી દીધો.

આ વાર્તાથી એ સારાંશ નિકળે છે કે ગલિતાશ્વ-અડિયલ ઘોડાની  
માફક અવિનીત શિષ્ય પણ મહાન અનર્થકારી હોય છે. જે પ્રકારે વિનીત

अत्र शत्रुमर्दनदृष्टान्तः, तथाहि—

आसीदङ्गदेशे चम्पापुरी नाम नगरी, तत्र नरवीरः समरवीरः शूरः शत्रु-  
मर्दनो नाम नृपतिर्विभूव । स चैकदा युद्धप्रसङ्गेन तुरङ्गमारुह्य हस्त्यश्वरथपदातिभिः  
परिवृतः संग्रामभूमौ गतः । तत्प्रतिपक्षनृपसैनिका दुर्बला अपि ससैन्यं शत्रुमर्दनं  
शस्त्रास्त्रवर्णैः पीडयन्ति । अथ शत्रुमर्दनः सोत्साहं शत्रुसैनिकान् मर्दयितुं स्ववाहनं  
वैरिसेनायां प्रवेशयन् प्रेरयति स्म । तेन तुरङ्गमेन विलोमतः पश्चात् गमनं समार-  
ब्धम् । ततः शत्रुमर्दनः कशया स्ववाहनं ताडयन् पुनः पुनरपि धावयितुमिच्छति,

અંગદેશ મેં ચંપાપુરી નામકી એક નગરી થી । उसका शासक  
शत्रुमर्दन नामका एक राजा था । वह मनुष्यों में श्रेष्ठ, युद्धकला में  
निपुण एवं शूरों में वीर था । एक दिन की बात है कि वह नरेश युद्ध  
के प्रसंग से घोड़े पर सवार होकर हस्ति, अश्व, रथ एवं पदातियों से  
परिवृत होकर संग्राम भूमि में गया । उसके प्रतिपक्षभूत राजा की  
सेनाने जो कि एक प्रकार से दुर्बल थी तो भी ससैन्य उस शत्रुमर्दन  
नरेश को शस्त्र एवं अस्त्रों के प्रहारों से जर्जरित कर दिया । शत्रुमर्दन  
ने जब इस प्रकार की अपनी स्थिति देखी तो उसने उत्साहित होकर  
शत्रु के सैनिकों को मर्दन करने के लिये अपने घोड़े को शत्रुकी सेनाके  
भीतर प्रविष्ट होने के लिये आगे प्रेरित किया । परन्तु वह घोड़ा उस  
सेना के भीतर न घुसकर उल्टा पीछे ही हटने लगा । तब शत्रुमर्दन ने  
कोड़े से बारंबार अपने उस घोड़े की ताड़ना करना प्रारंभ की जिससे  
कि उस घोड़े द्वारा वह शत्रुसेना हट सके । परन्तु ज्यों-ज्यों नरेश उस

અંગદેશમાં ચંપાપુરી નામની એક નગરી હતી. ત્યાં શત્રુમર્દન નામના  
રાજા રાજ્ય કરતા હતા. તે મનુષ્યમાં શ્રેષ્ઠ, યુદ્ધકળામાં નિપુણ અને શૂરવીર  
હતા. એક દિવસની વાત છે કે રાજા શત્રુમર્દન યુદ્ધના પ્રસંગે ઘોડા ઉપર  
સ્વાર થઈ હાથી, ઘોડા, રથ અને સૈનિકોના સમુદાય સાથે સંગ્રામ ભૂમિ  
ઉપર ગયા. એના પ્રતિપક્ષી રાજાની સેના એક પ્રકારથી ઘણી ઓછી હતી,  
છતાં પણ શત્રુમર્દન રાજાના સૈન્યને તથા યુદ્ધ શત્રુમર્દનને પણ શસ્ત્ર અસ્ત્રના  
પ્રહારોથી વિહ્વળ બનાવી દીધા. શત્રુમર્દને પોતાની આ પ્રકારની સ્થિતિ  
જોઈ ત્યારે એક સાચા વીર પુરુષને થોભે એ રીતે શત્રુસૈન્યને શિક્ષસ્ત  
આપવા અને પોતાના સૈન્યનો નિકળતો કચ્ચરઘાણ બચાવવા પોતાના ઘોડાને  
શત્રુસૈન્યની વચ્ચેવચ્ચ લઈ જવા પ્રયત્નશીલ બન્યા, પરંતુ તે ઘોડા શત્રુ-  
સેનાની વચ્ચે ન જતાં પાછો હટવા લાગ્યો. ત્યારે શત્રુમર્દને કેંદરડાથી વારં-

भो ! मन्त्रिणः ! किमधुना करणीयं, प्रचलवैरिणश्चतुर्ङ्गिणी सेना चतुर्षु खलु भागेषु नगरी-मावेष्ट्य तिष्ठति। मन्त्रिण ऊचुः-प्रभो ! अलमनया चिन्तया, वयमल्पसंख्यका अपि भवदीयतेजः समुपलभ्य शात्रववलविजये प्रखरतरशक्तिशालिनो भवामः । भवत्प्रतापादेव सर्वं रिपुवलं प्रणष्टं भविष्यति । देव ! जात्याश्वमारुह्य भवान् सन्नद्धः सन्नग्रतः शत्रुमभिसरतु, वयमपि सन्नद्धाः सन्तो भवन्तमनुगच्छामः । एवं विचार्य स्वकीयसेनापरिवृतः स मणिनाथो योद्धुं निःसृतः । अल्पवलं मणिनाथ-मवलोक्य शत्रुसैनिकाः केचिदसिचर्महस्ताः केचिद्भल्लहस्ताः केचिदनुर्वाणधराः साथ विचार किया, बोला-हे मंत्री महाशयो ! कहो अब क्या करना चाहिये । देखो, प्रचलशत्रुकी चतुरंगिणी सेना नगरी को चारों ओर से घेर कर पड़ी हुई है । सुनकर मंत्रियोंने कहा प्रभो ! चिन्ता मत करो । हम सब लोग आपके प्रचल तेज से उद्दीप्त होकर शत्रुसेना को पराजय करने में प्रखर शक्तिशाली होंगे । आपके प्रताप से ही समस्त रिपुदल प्रणष्ट होगा । स्वामिन् ! सजधज कर आप जात्याश्व पर सवार होकर पहिले से ही शत्रु के सम्मुख जाड्ये । हम लोग भी सन्नद्ध होकर आपके पीछे-पीछे आते हैं । इस प्रकार विचार कर मणिनाथ नरेश सेना से परिवृत होकर युद्ध करने के लिये निकल पडे । अल्पचलवाले नरेश को देखकर शत्रु के सैनिकोंने उसे घेर लिया । सैनिकों में किन्हीं-किन्हीं के हाथों में तलवारें थीं । किन्हीं-किन्हीं के हाथों में भाले थे । किन्हीं-किन्हीं के हाथों में धनुष एवं बाण थे । किन्हीं-किन्हीं के हाथों में

आ बल्लही मंत्रीओ साथे विचार क्यो, मंत्रीओने उद्देशीने तेणु कहुं-हे मन्त्रि-महाशयो ! कहे डवे शुं करवुं लेधये. प्रणण शत्रुनी चतुरंगिणी सेना नगरने आरे तरक्षी घेरे घालीने पडेल छे. आ प्रकारनुं राजनुं कहेवुं सांलणी मन्त्रियोओ कहुं, प्रभो ! चिन्ता न करे. अमो जधा आपना प्रणण तेजथी उद्दीप्त थध शत्रु सेनाने पराजय करवामां प्रखर शक्तिशाली थधशुं. आपना प्रतापथी शत्रुनुं सैन्य डारी नशे. स्वामिन् ! आप तैयार थध जात्याश्व पर सवार थध पडेलान् शत्रुओनी सन्मुण पडोथो, अमे पणु तैयार थध आपनी पाछण पाछण आवीओ छीये. आ प्रकारे विचार करी मणिनाथ राज सेनाथी परिवृत थध युद्ध करवा भाटे निकणी पडथा. थोडा जणवाणा राजने लेध शत्रुसेनाओ तेभने घेरी लीधा. सैनिकोभां डोध डोधना डायभां तरवार डती, डोधना डायभां लातां डतां. डोधनी पासे धनुष्य बाणु डतां. डोधनी

વિનૈવ તદભિપ્રાયानુસારં ચેષ્ટતે, તથા શુશિષ્યોઽપિ ગુરોરિદ્વિતાકારં દૃષ્ટ્વા તદાશયં વિજ્ઞાય “ગુરોર્વચનાયાસો માભૂદિતિ”-વચનેનાપેરિત એવ તદભિપ્રાયानુસારં કુર્યાત્ ।

અત્ર મણિનાથદૃષ્ટાન્તઃ-તથાહિ—

આસીદજિતનાથજિનશાસને વદ્વદેશે રઙ્ગપુરં નામ નગરમ્ । તત્ર પ્રજા-પાલનતત્પરઃ સ્વજનપદહિતકરઃ પ્રશાન્તમાનસઃ સુજનહંસમાનસઃ સમાશ્રિતનીતિ-સરણિઃ સકલસદ્ગુણસરોજતરણિર્મણિનાથનામકો નૃપતિઃ । સ ચૈકદા દુરાત્મભિઃ પ્રવલરિપુભિઃ પરિતો વેષ્ટિતાં સ્વનગરીમાલોક્ય મન્ત્રિભિઃ સહ વિચારિતવાન્-ભો હૈ ઉસી પ્રકાર શુશિષ્ય ભી ગુરુ કે હંગિત આકાર કો સમજ્ઞ કર ઉનકી આજ્ઞા કે અનુસાર ચલતા રહતા હૈ ।

इस विषय में मणिनाथराजा का दृष्टान्त है और वह इस प्रकार है—

દ્વિતીય તીર્થકર શ્રી અજિતનાથ સ્વામી કે સમય મેં બંગાળ દેશ કે અન્દર રંગપુર નામકા એક નગર થા । વહાં કે નરેશ કા નામ મણિ-નાથ થા । યહ પ્રજાપાલન કરને મેં સદા તત્પર રહા કરતા થા । ઇસસે દેશ ભર મેં આનન્દ મંગલ છા રહા થા । રાજ્યકાર્ય સે ઇસકા મન કમ્બી ભી કાયર નહીં બનતા થા । સુજનરૂપી હંસોં કો રમને કે લિયે યહ માનસરોવર જૈસા માના જાતા થા । રાજનીતિ કે પાલન કરને મેં યહ સર્વદા દત્તચિત્ત રહા કરતા થા । સદ્ગુણરૂપી કમલોં કો વિકસિત કરને કે લિયે યહ સૂર્ય જૈસા થા । એક દિન કી વાત હૈ કિ ઇસકી નગરી કો ઇસકે પ્રવલ શત્રુ ને આકર ઘેર લિયા । રાજાને યહ દેખકર મંત્રિયોંકે

ઘોડા પોતાના માલીકના કહેવા મુજબ ચાલે છે, એ જ રીતે શુશિષ્ય પણ ગુરુના હંગિત આકારને સમજી એમની આજ્ઞા પ્રમાણે ચાલતો રહે છે.

આ અંગે મણિનાથ રાજાનું દૃષ્ટાંત છે જે આ પ્રકારનું છે.

બીજા તીર્થકર શ્રી અજિતનાથ સ્વામીના સમયમાં બંગાળ દેશમાં રંગપુર નામના એક નગરમાં મણિનાથ નામના રાજા રાજ્ય કરતા હતા. જે પ્રજા પાલન કરવામાં સદા તત્પર રહેનાર હતા. આથી દેશભરમાં આનંદ મંગળ વરતાઈ રહેલો હતો. રાજ્યકાર્યથી એનું મન કદી પણ કાયર બનતું નહીં. મુજનરૂપી હંસોને રમવા માટે તે માનસરોવર જેવા ગણાતા હતા. રાજ-નીતિનું પાલન કરવામાં તે સર્વદા દત્તચિત્ત રહેતા હતા, સદ્ગુણરૂપી કમ-ળોને વિકસિત કરવા માટે તે સૂર્ય જેવા હતા. એક દિવસની વાત છે કે એના નગરને એના પ્રબળ શત્રુએ, સૈન્યસાથે આવી ઘેરી લીધું. રાજાએ

ટીકા—

‘અણાસવા’ इत्यादि—अनाश्रवाः=अनाज्ञाकारिणः, उच्चृङ्खलत्वात्, स्थूलवचसः=अविचारितभाषिणः, अभिमानित्वात्, कुशीलाः=कुत्सिताचारवन्तः दुष्टस्वभावा उभयलोकभयरहितत्वादित्यर्थः । शिष्याः मृदुमपि=कोमलहृदयमपि गुरुं, चण्डं=सक्तोपं प्रकुर्वन्ति । पूर्वार्धेनाविनीतशिष्याचरणं प्रदर्शितम् ।

કા આરાધન કરતા હુઆ સ્વ ઓર પર કા કલ્યાણ કરનેવાલા હોતા હૈ ॥ ૧૨ ॥

फिर भी सूत्रकार अविनीत एवं विनीत के स्वरूप को कहते हैं—  
‘अणासवा०’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(અણાસવા-અનાશ્રવાઃ) અવિનીત હોને સે આજ્ઞા-નુસાર નહીં ચલને વાલે (થૂલવચા-સ્થૂલવચસઃ) અભિમાની હોને સે વિના વિચારે વોલનેવાલે, (કુસીલા-કુશીલાઃ) ઇહલોક એવં પરલોક કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ દુષ્ટ સ્વભાવવાલે એસે (સીસા-શિષ્યાઃ) શિષ્ય (મિઝંપિ-મૃદુમપિ) કોમલ હૃદયવાલે ગુરુ કો ભી (ચંડં પકરંતિ-ચંડં પ્રકુર્વન્તિ) કોપયુક્ત કરતે હૈં । એવં જો શિષ્ય (ચિત્તાણુયા-ચિત્તા-નુગા) આચાર્ય મહારાજકી આરાધના તપ એવં સંયમ કી હેતુ હોતી હૈં એસા જાનકર આચાર્ય મહારાજ કી મનોવૃત્તિકા અનુસરણ કરનેવાલે હોતે હૈં અર્થાત્ उनके आज्ञा के आराधक होते हैं, तथा (दक्षोवचेया-दाक्ष्योपपेताः) गुरु महाराज की सुख शाता के अभिलाषी होने से

દરકાવી આ પ્રકારે સુશિષ્ય પણ ગુરુ મહારાજની આજ્ઞાનું આરાધન કરતાં પોતાનું અને બીજાનું કલ્યાણ કરવાવાળા હોય છે. ॥૧૨॥

सूत्रकार वधुभां अविनीत अने विनीतना स्वरूपने कहे छे. अणासवा० इत्यादि

અન્વયાર્થ—અણાસવા-અનાશ્રવાઃ અવિનીત બનવાથી આજ્ઞાનુસાર ન ચાલ-વાવાળા થૂલવચા-થૂલવચસઃ અભિમાની હોવાથી વગર વિચાર્યું બોલવાવાળા કુસીલા-કુશીલાઃ આલોક અને પરલોકના ભયથી રહિત હોવાના કારણે દુષ્ટ સ્વભાવવાળા એવા શિષ્ય કોમળ હૃદયવાળા ગુરુને પણ કોપ યુક્ત કરે છે. અથવા જે સીસા-શિષ્યાઃ શિષ્ય મિઝંપિ-મૃદુમપિ । કોમળ હૃદયવાળા ગુરુને પણ ચંડં પકરંતિ-ચંડં પ્રકુર્વન્તિ કોપ યુક્ત કરે છે. આચાર્ય મહારાજની આરા-ધના તપ અને સંયમના હેતુથી હોય છે એવું બાણી આચાર્ય મહારાજની મનોવૃત્તિનું અનુસરણ કરવાવાળા હોય છે, અર્થાત્ એમની આજ્ઞાના આરાધક હોય છે તથા દક્ષોવચેયા-દાક્ષ્યોપપેતાઃ ગુરુ મહારાજની સુખશાતાના અભિલાષી



કેચિદ્ યષ્ઠિધારિણઃ કેચિત્તોમરકરા અનેકાનેકશસ્ત્રાસ્ત્રધારિણઃ પરિતો મણિનાથં  
વેષ્ટિતવન્તઃ । एवं विविधसंकटेषु समुपस्थितेषु स मणिनाथस्तेन जात्याश्चवाहनेन  
शत्रुसैनिकरचितविविधव्यूहेषु मृगेषु सिंह इव निःशङ्कः प्रविश्य सर्वानुचरैः सहाग्रतो  
धावमानः शत्रुसैनिकेषु विजयं प्राप्तवान् । एवं सुशिष्यः स्वगुरुमाराधयन् स्वपर-  
कल्याणाय भवति ॥ १२ ॥

પુનરવિનીતવિનીતયોરાચરણમાહ—

मूलम्—अणासंवा थूलवया कुसीला, मिउं पि चंडं पकरंति सीसा ।

चित्ताणुया लहुं दक्खोववेया, पसार्येण ते' हुं दुरासंयंपि ॥ १३ ॥

છાયા—

अनाश्रवाः स्थूलवचसः कुशीलाः, मृदुमपि चण्डं प्रकुर्वन्ति शिष्याः ।

चित्तानुगा लघु दाक्ष्योपपेताः, प्रसादयन्ति ते हु दुराशयमपि ॥ १३ ॥

લકડિયાં થીં । કિન્હીં—કિન્હીં કે હાથોં મેં તોમરજાતિ કે શસ્ત્ર થે । इस प्रकार अस्त्र एवं शस्त्रों से सुसज्जित उस शत्रुसेना ने चारों ओर से मुझे घेर लिया है, यह देखकर नरेश ने अपने उस घोड़ेको उस सेना के रचित विविध प्रकार के व्यूह में आगे बढ़ाया । जिस प्रकार मृगों के टोले में निःशंक होकर सिंह घुस जाता है उसी प्रकार मणिनाथनरेश भी उस घोड़े पर बैठे हुए उस शत्रु की सेना में घुस पड़े और अपनी एवं अपने अनुचरों की उनसे रक्षा करते हुए आगे बढ़ते गये । शत्रु-सेना भी इनसे ज्यों—ज्यों ये आगे बढ़ते जाते थे परास्त होती जाती थी । इस प्रकार शत्रुसेना को पराजित कर मणिनाथ ने अपनी विजय-पताका वहां फहराई । इसी प्रकार सुशिष्य भी गुरु महाराज की आज्ञा

હાથમાં લાકડીઓ હતી, કોઈના હાથમાં તોમર નામનાં શસ્ત્ર હતાં. આ પ્રકારના શસ્ત્ર-અસ્ત્રથી સુસજ્જ એવી શત્રુસેનાએ મને ઘેરી લીધેલા છે, એવું જોઈ મણિનાથ રાજાએ પોતાના ઘોડાને એ સેનાએ રચેલા વ્યૂહની વચ્ચે આગળ વધાર્યો. જે રીતે મૃગોના ટોળામાં નિઃશંક બની સિંહ ધૂમતો હોય, આ રીતે શત્રુસેનાની વચ્ચે ઘુસી જઈ પોતાનું અને પોતાના સૈનિકોનું રક્ષણ કરતાં કરતાં આગળ વધવા માંડ્યું. આથી શત્રુસેનામાં ભંગાણ પડ્યું. આ પ્રકારે શત્રુસેનાને પરાજિત કરી રાજા મણિનાથે પોતાની વિજયપતાકા

ચંડનામકઃ શિષ્યો મિલિતઃ । અથૈકદા ભિક્ષાચર્યા ગચ્છતસ્તસ્યાચાર્યસ્ય માર્ગે-  
કસ્માદજ્ઞાનતો મૃતમણ્ડૂકલેવરોપરિ ચરણતલં સંલગ્નમ્ । તદનુગતોઽસૌ ચંડસ્તદાની-  
ગુરુમબ્રવીત્-અહહ ! ભવતા ચરણાઘાતેન મણ્ડૂકો મારિતઃ, તદા ગુરુઃ શિષ્યવચનં શ્રુત્વા  
દુઃશીલોઽયમિતિ મત્વા સમતામવલમ્બ્ય મૌનમાસ્થાય સ્વસ્થાનમાગત્ય સ્વાધ્યાય-  
ધ્યાનસંલગ્નો જાતઃ । તદાનોં ચંડેન મનસિ વિચારિતમ્-મામયં પ્રતિદિનં પ્રતિક્ષણં  
ગ્રહણાસેવનાશિક્ષાયાં પ્રેરયતિ-મા પ્રમાદ્યતામ્, મા પ્રમાદ્યતામ્ । ઇતિ કાર્યભારં

છિદ્રોંકા અન્વેષણ કરના હી એક ડસકા કામ થા । ઇસી સે ગુરુમહારાજ  
જૈસે પરમોપકારી કે સાથે ભીં યહ સદા અંપની દેષ ભરી દટ્ટિ રહ્યા  
કરતા થા । એક દિન કી વાત હૈં કિ જવ ગુરુ મહારાજ સ્વયં ગોચરી કે  
લિયે જા રહે થે-તવ માર્ગ મેં ઇનકા પૈર એક મૃતક મણ્ડૂક કે કલેવર  
કે ડપર અનજાન સે પડ ગયા । સાથ મેં યહ ક્રોધી શિષ્ય ભીં થા ।  
જો ગુરુમહારાજ કે પીછે-પીછે ચલ રહ્યા થા । ડસને ડ્યોં હી યહ દેખા,  
સહસા ચોલ ડઠા કિ ગુરુ મહારાજ આપ કે પૈર કે આઘાત સે મંડૂક કી  
વિરાધના હુઈ હૈં । ઇસ પ્રકાર શિષ્ય કા વચન સુનકર ઓર યહ દુઃશીલ  
હૈં એસા જાનકર સમતા કા અવલંબન કરકે ચુપચાપ ગુરુ મહારાજ અપને  
સ્થાન પર વાપિસ લોટ આયે ઓર વહાં આકર સ્વાધ્યાય એવં ધ્યાન મેં  
લીન હો ગયે । એસા દેખકર ડસ સમય ચંડ-(ક્રોધી શિષ્ય) ને મનમેં  
વિચાર કિયા-દેખો ગુરુ મહારાજ તો મુજે પ્રતિદિન એવં-પ્રતિક્ષણ  
“પ્રમાદ મત કરો, પ્રમાદ મત કરો” ઇસ પ્રકાર સે ગ્રહણ શિક્ષા ઓર

મહારાજના છિદ્રોનું અન્વેષણ કરવું એ જ એનું કામ હતું. એથી ગુરુ  
મહારાજ જેવા પરમોપકારીના સાથે પણ સદા પોતાની દ્વેશભરી દટ્ટી રાખ્યા  
કરતો હતો. એક દિવસની વાત છે કે, જ્યારે ગુરુમહારાજ પોતે ગોચરી  
માટે જઈ રહ્યા હતા, ત્યારે માર્ગમાં તેમનો પગ એક મરેલા દેડકાના  
કલેવર ઉપર અજાણથી પડી ગયો. તે ક્રોધી શિષ્ય પણ સાથે હતો જે ગુરુ  
મહારાજની પાછળ પાછળ ચાલતો હતો જ્યારે તેણે આ જોયું તો તુર્તજ  
બોલી ઉઠ્યો કે ગુરુ મહારાજ આપના પગના આઘાતથી દેડકાનું મૃત્યુ થયું  
છે. આ પ્રકારનાં શિષ્યનાં વચન સાંભળીને અને તે દુઃશીલ છે, તેવું જાણીને,  
સમતાનું અવલંબન કરીને ગુરુ મહારાજ ચુપચાપ પોતાના સ્થાન ઉપર પાછા  
ફરી ગયા. અને ત્યાં આવીને સ્વાધ્યાય તેમજ ધ્યાનમાં લીન બની ગયા. આવું  
જોઈ ચંડ (તે ક્રોધી શિષ્યે) મનમાં વિચાર કર્યો. જુઓ ગુરુ મહારાજ તો  
મને પ્રતિદિન તેમજ પ્રતિક્ષણ “પ્રમાદ ન કરો, પ્રમાદ ન કરો” આ પ્રકાર

અન્ન ચણ્ડશિષ્યદૃષ્ટાન્તઃ, તથાહિ—

एकः सरलहृदयः सदयस्तपस्वी तेजस्वी रत्नत्रयसम्पन्नः कोमलान्तःकरणः सुभद्रनामको वृद्धाचार्य आसीत् । तस्यातिविद्वेपी गुरुच्छिद्रान्वेपी प्रचण्ड-चतुराई से युक्त होते हैं वे शिष्य (दुरासयंपि-दुराशयं अपि) कुपित भी अपने गुरुमहाराज को (हु) निश्चय से (लहु-लघु) शीघ्र ही (पसायए-प्रसीदयन्ति) प्रसन्न करते हैं ।

अविनीत शिष्य का आचरण चण्ड अर्थात् क्रोधी शिष्य के दृष्टान्त से वर्णन किया जाता है—

एक वृद्ध आचार्य थे । जिनका नाम सुभद्र था । हृदय इनका कषाय निर्मुक्त होने से बहुत ही सरल था । और दयालु थे । वे बहुत ही अधिक तपस्या किया करते थे, अतः “तपस्वी” इस नाम से प्रसिद्ध थे । जैसे ये तपस्वी थे वैसे ही ये तेजस्वी भी थे । इसी से रत्नत्रय से सुशोभित इनका अन्तःकरण बना हुआ था । आर्जव (सरलता) धर्मकी प्राप्ति हो जाने से जो मनमें एक प्रकार की नरमाई आजाती है उसका नाम कोमलता है । यह कोमलता इनके अन्तःकरण में पूर्णतया भरी हुई थी । इनका एक शिष्य था । इसका नाम चण्डथा । यह यथा नाम तथा गुणवाला था । जितने गुरु महाराज कोमल परिणामी थे उतना ही अधिक यह कठोर था । अपने गुरु महाराज के

હોવાથી ચતુરાઈથી યુક્ત હોય છે તે શિષ્ય દુરાસયંપિ-દુરાશયંઅપિ ક્રોધાયમાન થયેલા પોતાના ગુરુ મહારાજને હુ નિશ્ચયથી લહુ-લઘુ જલ્દી પસાયએ-પ્રસીદયન્તિ પ્રસન્ન કરે છે.

અવિનીત શિષ્યનું આચરણ ચંડ અર્થાત્ ક્રોધી શિષ્યના દૃષ્ટાંતથી વર્ણન કરવામાં આવે છે.

એક વૃદ્ધ આચાર્ય હતા, જેમનું નામ સુભદ્ર હતું. એમનું હૃદય કષાય નિર્મુક્ત હોવાથી ખૂબ જ સરળ હતું અને દયાળુ હતા. તેઓ ખુબ અધિક તપસ્યા કર્યા કરતા હતા. જેથી તપસ્વી નામથી પ્રસિદ્ધ હતા. જેવા એ તપસ્વી હતા એવા એ તેજસ્વી પણ હતા. તેજસ્વીપણાને લીધે રત્ન-ત્રયથી સુશોભિત એમનું અંતઃકરણ હતું. આર્જવ (સરલતા) ધર્મની પ્રાપ્તિ થઈ જવાથી જે મનમાં એક પ્રકારની નરમાઈ આવી જાય છે, એનું નામ કોમળતા છે. આ કોમળતા એમના અંતઃકરણમાં પૂર્ણતયા ભરી હતી. એમને એક શિષ્ય હતો જેનું નામ ચંડ હતું. તે યથા નામ તથા ગુણવાળો હતો. જેટલા ગુરુ મહારાજ કોમળ પરિણામી હતા એટલા જ એ કઠોર હતો. પોતાના ગુરુ

વચંગતોઽસૌ વૃદ્ધાચાર્યઃ શરીરં ત્યક્ત્વા સર્પદેહં પ્રાપ્તવાન્ । સ ચ વિપમવિપધરો  
નામ્ના ચણ્ડકૌશિકઃ સર્પો જાતઃ । એવં ચણ્ડશિષ્યવદવિનીતશિષ્યા મૃદુમપિ ગુરુ  
પ્રકોપયન્તિ, દુર્ગતિમપિ પ્રાપયન્તિ ।

અથ વિનીતશિષ્યાચરણં પ્રદર્શયતિ—‘ચિત્તાણુયા’. ઇત્યાદિ । ચિત્તાણુગાઃ=  
આચાર્યમનોદૃત્યનુસરણશીલાઃ, આચાર્યારાધનસ્ય તપઃસંયમહેતુત્વાત્, દાક્ષ્યોપેતાઃ  
—દાક્ષ્યં=વાતુર્યં તેનોપેતાઃ=યુક્તાઃ, ગુરુશાતાભિલાપિત્વાત્, તે શિષ્યાઃ હુ=  
નિશ્ચયેન, દુરાશયમપિ=સકોપમપિ ગુરુ, લઘુ=શીઘ્રં પ્રસાદયન્તિ=પ્રસન્નં કુર્વન્તિ ।  
અથ ચણ્ડરુદ્રાચાર્યશિષ્યોદાહરણમ્—તથાહિ—

કદાચિદુજ્જયિનીનગર્યાં શિષ્યપરિવારસહિતઃ સ્વભાવતઃચણ્ડ ચણ્ડરુદ્રનામક  
આચાર્યઃ સમવસૃતઃ । સ ચ સાધૂનાં ગ્રહણાસેવનાશિક્ષાયાં ન્યૂનાતિરિક્તાદિદોષ-  
જો અન્ધકાર હોને કી વજહ સે દિલ્લાઈ નહીં પડ રહ્યા થા । ઉસસે  
ઉનકા માથા ટકરાયા ઓર ફૂટ ગયા વિશિષ્ટ આઘાત હોને સે ઉનકે  
ચિત્ત મેં આર્તધ્યાન ઉત્પન્ન હુઆ । ઇસસે વે વૃદ્ધ આચાર્ય આર્તધ્યાન મેં  
મરકર વિપમ-વિપધર ચણ્ડકૌશિક સર્પકી પર્યાય મેં ઉત્પન્ન હુએ । ઇસ  
પ્રકાર ચંડશિષ્યકી તરહ અવિનીત શિષ્ય કોમલ હૃદયવાલે ભી અપને  
ગુરુ મહારાજ કો કુપિત કરતે હૈં ઓર દુર્ગતિ તક પહુંચાતે હૈં—

વિનીત શિષ્યકા આચરણ કેસા હોતા હૈ, યહ વાત ચણ્ડરુદ્ર-  
ચાર્યકે શિષ્ય કે ઉદાહરણ સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ—

કિસી સમય ઉજ્જયિની નગરી મેં શિષ્ય પરિવાર સહિત ચણ્ડરુદ્ર  
નામક એક આચાર્ય જો સ્વભાવતઃ ક્રોધી થે આયે । વે એકાન્ત સ્થાન મેં  
બેઠકર સ્વાધ્યાય એવં ધ્યાન ઇસ અભિપ્રાય સે કિયા કરતે થે કિ કહીં

તેમનું માથું ટકરાયું અને ફુટી ગયું. વિશિષ્ટ આઘાત હોવાથી તેમના ચિત્તમાં  
આર્તધ્યાન ઉત્પન્ન થયું, જેનાથી તે વૃદ્ધ આચાર્ય આર્તધ્યાનમાં મરીને વિપમ  
વિપધર ચંડકૌશિક સર્પની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયા. આ પ્રકારે ચંડ શિષ્યની  
માફક અવિનીત શિષ્ય કોમળ હૃદયવાળા પોતાના ગુરુને પણ ક્રોધીત બનાવે  
છે, અને દુર્ગતિમાં પહોંચાડે છે.

વિનિત શિષ્યનું આચરણ કેવું હોય છે તે વાત ચંડરુદ્રાચાર્યના શિષ્યના  
ઉદાહરણથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.

કેાઇ એક સમય ઉજ્જયની નગરીમાં શિષ્ય પરિવાર સહિત ચંડરુદ્ર  
નામના એક આચાર્ય જે સ્વભાવે ક્રોધી હતા તે પધાર્યા તે એકાન્ત સ્થાનમાં  
બેસીને સ્વાધ્યાય તેમજ ધ્યાન એવા અભિપ્રાયથી કરતા હતા કે ક્યારેક

દત્ત્વાડનેન વિશ્રામાય મહં સમયો ન પ્રદીયતે, અથ તુ સ્વયમેવ પ્રમાદવશં ગતઃ ।  
પ્રતિક્રમણસમયે સાયંકાલે સર્વવૈરનિર્યાતનં કરિષ્યામિ । તદનુ સાયંકાલે દૈવસિક-  
પ્રતિક્રમણે કૃતે સતિ સ ચણ્ડો વન્દન સમયે શ્રાવકસંઘસમક્ષે વ્રવીતિ-ગુરો !  
મણ્ડૂકવિરાધનાયાઃ પ્રાયશ્ચિત્તં કથં ન ગૃહ્યતે, एवं पुनः पुनः शिष्येणोक्तः सन्  
गुरुः क्रोधवशेन तं शिष्यं ताडयितुं सवेगमुत्थितो यावत् तदभिमुखं गच्छति ताव-  
दुपाश्रये तमसि पापणमयस्तम्भे संघट्टितं तस्य शिरः स्फुटितम् । तदाऽऽर्तध्यान

આસેવન શિક્ષા દેતે રહતે હૈં । તથા મેરે ઊપર इतना अधिक कार्यभार  
रख दिया है कि जिससे मुझे विश्राम करने का भी समय नहीं मिलता  
है । और आप स्वयं प्रमाद का सेवन करते हैं । आज सायंकाल के  
समय प्रतिक्रमण करने के अवसर पर मैं उनसे समस्त वैर भाव का  
बदला लूंगा । इस प्रकार विचार कर उसने सायंकाल के समय प्रति-  
क्रमण कर चुकने पर वन्दना के समयश्रावकसंघ के समक्ष गुरुमहाराज  
से कहा कि हे गुरो ! आज आपने मंडूक की विराधना का प्रायश्चित्त  
क्यों नहीं लिया । शिष्य की इस बात को गुरु महाराज ने लक्ष्य में नहीं  
दिया । अतः शिष्य को बुरा मालूम दिया और ईर्ष्यावश उसने फिर से  
वही बात बारंबार कही । गुरुमहाराज को सुनकर क्रोध का आवेश हो  
आया । इससे वे उस शिष्य को मारने के लिये खड़े हुए और उसकी  
तरफ आगे बढ़े । बीच में उस उपाश्रय में एक पाषाण का स्तम्भ था

રથી અહણુ શિક્ષા અને આસેવન શિક્ષા આપે છે અને મારા ઉપર એટલો  
અધિક કાર્યભાર રાખ્યો છે કે જેથી મને વિશ્રામ કરવાનો સમય મળતો  
નથી, અને પોતે પ્રમાદનું સેવન કરે છે. આજ સાંજના વખતે પ્રતિક્રમણ  
કરવાના અવસર ઉપર હું તેમનાથી સમસ્ત વૈરભાવનો બદલો લઈશ. આ  
પ્રકારે વિચાર કરી તેણે સાયંકાળનું પ્રતિક્રમણ કરી લીધા પછી વંદનાના  
સમયે શ્રાવક સંઘની સમક્ષ ગુરુ મહારાજને કહ્યું કે હે ગુરુ ! આજ આપે  
દેડકાની વિરાધનાનું પ્રાયશ્ચિત્ત કેમ ન લીધું ? શિષ્યની આ વાતને ગુરુ  
મહારાજે લક્ષમાં લીધી નહીં આથી શિષ્યને ખરાબ લાગ્યું અને ઈર્ષ્યાવશ  
ફરીથી તેને તે વાત વારંવાર કહી. ગુરુ મહારાજે સાંભળીને તેમના મનમાં  
ક્રોધનો આવેશ આવી ગયો જેથી તે પોતાના શિષ્યને મારવા ઉભા થયા  
અને તેની તરફ આગળ વધ્યા, વચમાં તે ઉપાશ્રયમાં એક પથ્થરનો સ્તંભ  
હતો જે અંધકાર હોવાના કારણે દેખવામાં આવતો ન હતો તે સ્તંભ સાથે



निर्विण्णोऽयं गृह्वासेन, भार्ययाऽप्ययं परित्यक्तः अतः प्रसीदत, संसारदुत्तारयत, साधुभिरुक्तम्—अत्रास्माकं गुरुस्ति स प्रव्राजयिष्यति, वयमनधिकारिणोदीक्षा—दानस्य, तस्मात् तत्समीपं गच्छत, तदनु मित्रवर्गस्तमिभ्यपुत्रं चण्डरुद्राचार्यस्य समीपं नीत्वा तं प्रणम्य सपरिहासमुक्तवान्—भदन्त ! दीयतामस्मै दीक्षा । ततस्तत्परिहासवचनं श्रुत्वा संजातकोपेन चण्डरुद्राचार्येण कथितम्—भस्मानयेति, तदानीमेकेन मित्रेण हास्यादेव भस्मानीतं, ततश्चण्डरुद्राचार्यो भस्म गृहीत्वा बलादेव तत्केशलुञ्चनं चकार, तदा तद्वयस्याः सर्वे प्रव्रज्याभयात्पलायिता ।

उन्होंने हँसी में कहा कि महाराज ! इस नव परिणीत श्रेष्ठ पुत्र को आप दीक्षा दीजिये । क्यों कि यह गृहस्थावाससे उदासीन हो रहा है । इस की धर्मपत्नी ने भी इसका परित्याग कर दिया है । अतः प्रसन्न होकर इसे संसार से पार उतारिये । मुनिराजों ने सुनकर उनसे कहा कि यहां हमारे गुरुमहाराज विराजमान हैं—वे ही दीक्षा देंगे—हम लोग उनके समक्ष दीक्षा देने के अधिकारी नहीं हैं । इसलिये आप लोग इन्हें उनके ही पास ले जाइये । साधुओंके इस प्रकार के कहे गये वचनों को सुनकर वे लोग अपने उस मित्र को चंडरुद्र आचार्य के समीप ले गये । आचार्य महाराज को वन्दना कर वे उनसे भी परिहासपूर्वक यही कहने लगे कि हे भदन्त ! इसको आप दीक्षा दीजिये । उनकी हँसी के वचन सुनकर कुपित होते हुए चंडरुद्र आचार्य बोले—ठीक है—भस्म लाओ मैं इसे दीक्षा देता हूँ । इतना सुनते ही किसी एक मित्र ने हंसी—हंसी में शीघ्र ही भस्म लाकर वहां उपस्थित कर दी । चंडरुद्राचार्य ने उस भस्म

तेમણે કહ્યું કે મહારાજ ! આ નવપરિણીત શ્રેષ્ઠ પુત્રને આપ દીક્ષા આપો કેમકે એ ગૃહસ્થાવાસથી ઉદાસીન બની રહેલ છે. આની ધર્મપત્નિએ પણ તેનો ત્યાગ કર્યો છે. આથી પ્રસન્ન થઈને આને સંસાર સાગરથી પાર ઉતારો. મુનિરાજોએ એ સાંભળીને તેમને કહ્યું કે અહિં અમારા ગુરુ મહારાજ બિરાજે છે તે દીક્ષા આપશે. અમે તેમની સામે દીક્ષા આપવાના અધિકારી નથી. માટે આપ લોક તેને ગુરુ મહારાજ પાસે લઈ જાવ. સાધુઓના આ પ્રકારે કહેવામાં આવેલ વચનોથી તેઓ તેમના મિત્રને ચંડરુદ્ર આચાર્ય પાસે લઈ ગયા. આચાર્ય મહારાજને વંદના કરી તેઓ તેમને પણ પરિહાસપૂર્વક એવું જ કહેવા લાગ્યા કે હે ભદન્ત ! આને આપ દીક્ષા આપો. તેમનાં હાંસીનાં વચન સાંભળીને કેાધીત થતાં ચંડરુદ્ર આચાર્ય બોલ્યા ઠીક છે—ભસ્મ લાવો, હું તેને દીક્ષા આપું છું આ સાંભળતાં કેાઈ એક મિત્રે હસતાં હસતાં તુરંતજ ભસ્મ લાવીને હાજર કરી. ચંડરુદ્રાચાર્યે એ ભસ્મને હાથમાં

दर्शनात् कौपोत्पत्तिर्माभूदिति मनसि कृत्वा रहसि स्वाध्यायध्यानं कुर्वन्नन्यसाधुभ्यः  
पृथगवतिष्ठते । अत्रान्तरे उज्जयिनीवास्तव्य इभ्यपुत्रः कोऽपि नवपरिणीतः  
सुहृत्परिवृतः कृतकुङ्कुमरागः प्रवरनेपथ्यः साधूनां वन्दनार्थं तत्रागतः, साधूनां  
सविधि वन्दनं कृत्वा तत्र स्थितः । अथ तन्मित्रैः कैश्चित् सौपहासमुक्तम्-भो साधवः !  
धर्मं द्यूत । ते साधवस्तेषामुपहासवचनं विदित्वा किमपि नोक्तवन्तः, किंतु स्वा-  
ध्यायं कुर्वन्त आसन् । पुनस्तैः सपरिहासमुक्तम्-हे भगवन्तः ! दीयतामस्मै दीक्षा,

साधुओं की ग्रहण शिक्षा एवं आसेवन शिक्षा में न्यूनातिरिक्त दोषों के  
देखने से उनके प्रति मेरे चित्त में क्रोध की उत्पत्ति न हो जाय, । अतः  
वे साधुओं से सदा अलहदा ही एकान्त में रहा करते थे । और वहाँ  
स्वाध्याय एवं ध्यान करते-करते अपना समय व्यतीत करते । एक  
समय की बात है कि उसी उज्जयिनी नगरी का रहने वाला कोई एक  
सेठ का पुत्र कि जिसका उसी समय विवाह हुआ था अपनी मित्रमंडली  
सहित सजधज के साधुओंको वन्दना करनेके लिये आया ! उसके  
पैरों का माहुर अभी ठीला भी नहीं पड़ा था और हाथोंकी मेंहदी भी  
अभी पूरी तरह से सुखी नहीं थी । वह सविधिवन्दना कर एक ओर  
बैठ गया । इतने में उसके मित्रों ने मुनिराज से उपहास करके कहा कि  
हे महाराज ! आप लोग धर्मका उपदेश दीजिये । साधुओंने उनके हास्य  
मिश्रित वचन सुनकर उन्हें धर्मका उपदेश नहीं दिया और न कुछ कहा  
भी किन्तु अपने स्वाध्याय करने में ही तल्लीन रहे । पश्चात् फिर भी

साधुओंनी अछुलु शिक्षा अने आसेवन शिक्षाभां न्यूनातिरिक्त दोषोंने जेवाथी  
तेमना प्रति मारा चित्तभां क्रोधनी उत्पत्ति न थई जय, आथी तेओ साधु-  
ओथी सदा अलायदा ओकान्तभां ज रहा करता छता. अने त्यां स्वाध्याय  
अने ध्यान करतां करतां पोतानो समय व्यतीत करता. ओक समयनी बात  
छे डे, ओ उज्जयनी नगरीभां रहनेार ओक सेठनो पुत्र डे जेनो तुरतभांज  
विवाह थयो छतो. ते पोताना मित्र मंडल साथे जनी ठनीने. साधुओने  
वंदना करवा आओ. ओना पगनुं माहुर (मडावर) पगना तणीयानो लाल  
रंग ) छलु ठीलु थयेल न छतुं तेम हाथभांनी मेंही पणु सुकाई न छती.  
ते सविधि वंदना करी ओक आलु जेठो. ओ वजतेतेना मित्रोओ मुनिराजने  
उपहास करी छलुं डे महाराज ! आप धर्मनो उपदेश. आपो. साधुओओ  
तेमनुं हास्य मिश्रीत वचन सांलणीने उपदेश न आओ. अने न कांछ  
पणु छलुं, पोतानो स्वाध्याय करवाभांज तल्लीन रह्या. इरीथी, छसतां. छसतां

वान्धवा उपद्रवं करिष्यन्ति । गुरुणोक्तम्—अहो शिष्य ! संप्रति रात्रिर्जाता, अहं रात्रौ न पश्यामि । ततस्तेन शिष्येण स्वकीयस्कन्धे गुरुरारोपितः, मार्गे उच्च-नीचप्रदेशे वहनेन गुरुचेतसि खेदः समुत्पन्नः, तेन चण्डरुद्राचार्येण शिष्यशिरसि रजोहरणदण्डप्रहारो दत्तः, असौ शिष्यो मनस्येवं विचारयति—अहो ! ममाराधनीयो गुरुं मयेदृशीमवस्थां प्रापितः इति । एवं सम्यग्भावनायाः तस्य शिष्यस्य केवल-

बन्धुजन यहाँ आकर उपद्रव करेंगे । शिष्यकी यह बात सुनकर आचार्य महाराज ने कहा—ठीक है परन्तु इस समय तो अब रात्रि हो चुकी है तथा मुझे रात्रि में दिखता भी नहीं है—अतः जाना ठीक नहीं है । आचार्य महाराज की बात सुनकर शिष्य ने कहा कि आप इसकी चिन्ता नहीं करें । मैं आप को अपने कंधे पर बैठा लूंगा । ऐसा कह कर उस शिष्य ने गुरु महाराज को अपने कंधे पर बैठा लिये और उस स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिये प्रयाण प्रारंभ कर दिया । मार्ग सम विपम था । अतः गुरु महाराज को अचानक हिलने डुलने की वजह से कष्ट हुआ और इससे उनके चित्तमें अशांति उत्पन्न हो गई । उन्होंने बैठे-बैठे ही अपना रजोहरण दंड उसके मस्तक पर दे मारा । चोट लगते ही शिष्य ने चित्त में चिन्तन किया कि हे मन जिनकी मुझे सेवा करनी चाहिये उन गुरु महाराज को इस समय मेरे द्वारा कितना कष्ट पहुँच रहा है । गुरुमहाराज की इस कष्टावस्था का कारण मैं ही बन रहा हूँ । इस प्रकार की भक्तिरूप हार्दिकभावना के प्रभाव से क्षपक श्रेणी

जन अड़ियां आवीने उपद्रव करे. शिष्यनी आ वात सांलणीने आचार्य भडाराने कहुं, ठीक छे. परंतु आ समये रात्रीनुं आगमन थछ थुकथुं छे तेम मने रात्रीमां सुजतुं पण नथी, आथी नवुं ठीक नथी. आचार्य भडाराननी वात सांलणी शिष्ये कहुं, आप ओनी चिंता न करे. हुं आपने भारा जला उपर जेसाडी लछि ओवुं कडी ते शिष्ये गुरु भडारानने पोताना जला उपर जेसाडी लीधा अने ओ स्थानथी जीन स्थान तरङ्ग प्रयाण करवाने प्रारंभ कर्यो. मार्ग सम विपम छतो. आथी गुरु भडारानने अचानक डलवा डलवाने कारणे कष्ट थयुं अने तेथी ओमना चित्तमां अशान्ती उत्पन्न थछ तेओओ जेहा जेहा न पोताने रजोहरण दंड ओना माथा उपर भार्यो, चोट लागतांन शिष्ये मनमां विचार्युं के छे मन ! जेनी भारे सेवा करवी जेधओ ओ गुरु भडारानने आ समय भारा तरङ्गी डेटवुं कष्ट थछ रह्युं छे. गुरु भडाराननी कष्ट अवस्थानुं कारणे हुं न जनी रहेल छुं. आ प्रकारनी लक्ष्तिरूप हार्दिक भावनाना प्रभावथी क्षपक श्रेणी प्राप्त करी घातक कर्मेनी

તતઃ સ ઇમ્યપુત્રો ભાગ્યવશેન લઘુકર્મણા ચ ભાવશ્રમણો જાતઃ, તદાનીં તસ્યેમ્યપુત્રસ્ય લોચે કૃતે સતિ “મમ પ્રવ્રજ્યૈવાસ્તુ” ઇતિ પરિણામઃ સંપન્નઃ, તતો રજોહરણસદોરકમુખવસ્ત્રિકાદિભિઃ સાધુવેપં ધૃત્વા દ્રવ્યભાવતઃ સંયતો જાતઃ । તતોઽસૌ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ શિષ્યો ગુરુમવ્રવીત્-ભદન્ત ! અન્યત્ર વ્રજામઃ, અત્ર મમ કો હાથ મેં લેકર જવર્દસ્તી ઉસકે કેશોં કા લુંચન કર દિયા । મિત્રોં ને યહ દેખકર સમજ્ઞા કિ કહીં હમારી ખી યહી હાલત ન હો જાય-હમેં ખી જવર્દસ્તી સે દીક્ષિત ન વના દિયા જાય-ઇસ ડરસે વે સય કે સય વહાં સે શીઘ્ર ભાગ ગયે ।

ઉસ સમય વહ શ્રેષ્ઠિપુત્ર ભાગ્ય કે ઉદય સે એવં લઘુકર્મ કે પ્રભાવ સે ભાવશ્રમણ વન ગયા થા । ક્યોં કિ જિસ સમય આચાર્ય-મહારાજને ઉસકે કેશોંકા લુંચન કિયા થા ઉસ સમય ઉસકે ચિત્ત મેં યહી પરિણામ હો ગયા થા કિ મેરી દીક્ષા હી હો જાય તો સર્વ સુન્દર હૈ । ” ઇસ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવ શ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-ઉસ ઇમ્યપુત્ર કે લિયે આચાર્ય મહારાજ ને કેશલુંચન કરને કે વાદ હી રજોહરણ એવં સદોરક મુખવસ્ત્રિકા પ્રદાન કરદી-ઇસસે વહ યથાર્થ મેં દ્રવ્યરૂપ સે ખી સાધુ વેપસે સુશોભિત હોને લગા । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્ય એવં ભાવ સે સંયત અવસ્થા કો ધારણ કિધે હુએ-ઉસ નવીન શિષ્ય ને ગુરુમહારાજ સે કહા કિ હે ભદન્ત ! ચલો અવ યહાં સે દૂસરી જગહ ચલે । નહીં તો મેરે

લઈને જખરજસ્તીથી તેના વાળનો લોચ કર્યો. મિત્રો આ જોઈને એવું સમજ્યા કે અમારી પણ આવી હાલત ન થઈ જાય અમને પણ જખરજસ્તીથી દીક્ષિત ન બનાવાય આવા ડરથી તેઓ સધળા ત્યાંથી તુરતજ ભાગી ગયા.

તે સમય શ્રેષ્ઠી પુત્ર ભાગ્યના ઉદયથી તેમજ લઘુ કર્મના પ્રભાવથી ભાવશ્રમણ બની ગયો હતો કેમકે જે સમય આચાર્ય મહારાજે તેના વાળનો લોચ કર્યો ત્યારે તે સમયે તેના ચિત્તમાં એજ પરિણામ થઈ ગયું હતું કે મને દીક્ષા અપાય તો તે સર્વ સુન્દર છે. આ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવશ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-તે ઇમ્ય પુત્ર માટે આચાર્ય મહારાજે કેશનો લોચ કર્યો પછી રજોહરણ અને દોરા સાથેની મુખવસ્ત્રિકા આપી. આથી યથાર્થમાં દ્રવ્ય રૂપથી પણ સાધુ વેશથી સુશોભિત બની રહ્યો. આ પ્રકારે દ્રવ્ય અને ભાવથી સંયત અવસ્થાને ધારણ કરીને એ નવીન શિષ્યે ગુરુમહારાજને કહ્યું કે હે ભદન્ત ! ચાલો હવે અહિંથી બીજા સ્થળે જઈએ. નહીં તો મારા બંધુ-

वान्यवा उपद्रवं करिष्यन्ति । गुरुणोक्तम्—अहो शिष्य ! संप्रति रात्रिर्जाता, अहं रात्रौ न पश्यामि । ततस्तेन शिष्येण स्वकीयस्कन्धे गुरुरारोपितः, मार्गे उच्च-नीचप्रदेशे वहनेन गुरुचेतसि खेदः समुत्पन्नः, तेन चण्डरुद्राचार्येण शिष्यशिरसि रजोहरणदण्डप्रहारो दत्तः, असौ शिष्यो मनस्येवं विचारयति—अहो ! ममाराधनीयो गुरुं मयैदृशीमवस्थां प्रापितः इति । एवं सम्यग्भावनया तस्य शिष्यस्य केवल-

बन्धुजन यहाँ आकर उपद्रव करेंगे। शिष्यकी यह बात सुनकर आचार्य महाराज ने कहा—ठीक है परन्तु इस समय तो अब रात्रि हो चुकी है तथा मुझे रात्रि में दिखता भी नहीं है—अतः जाना ठीक नहीं है। आचार्य महाराज की बात सुनकर शिष्य ने कहा कि आप इसकी चिन्ता नहीं करें। मैं आप को अपने कंधे पर बैठा लूंगा। ऐसा कह कर उस शिष्य ने गुरु महाराज को अपने कंधे पर बैठा लिये और उस स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिये प्रयाण प्रारंभ कर दिया। मार्ग सम विषम था। अतः गुरु महाराज को अचानक हिलने डुलने की वजह से कष्ट हुआ और इससे उनके चित्तमें अशांति उत्पन्न हो गई। उन्होंने बैठे-बैठे ही अपना रजोहरण दंड उसके मस्तक पर दे मारा। चोट लगते ही शिष्य ने चित्त में चिन्तन किया कि हे मन जिनकी मुझे सेवा करनी चाहिये उन गुरु महाराज को इस समय मेरे द्वारा कितना कष्ट पहुँच रहा है। गुरुमहाराज की इस कष्टावस्था का कारण मैं ही बन रहा हूँ। इस प्रकार की भक्तिरूप हार्दिकभावना के प्रभाव से क्षपक श्रेणी

जन अङ्गियां आवीने उपद्रव करे। शिष्यनी आ वात सांलणीने आचार्य महाराज्जे कह्युं, ठीक छे. परंतु आ सभये रात्रीनुं आगमन थछ युक्त्युं छे तेम भने रात्रीमां सुजतुं पणु नथी, आथी नहुं ठीक नथी. आचार्य महाराजनी वात सांलणी शिष्ये कह्युं, आप ऐनी चिंता न करे हुं आपने भारा जला उपर जेसाडी लधशि ऐवुं कही ते शिष्ये गुरु महाराज्जे पोताना जला उपर जेसाडी दीधा अने ऐ स्थानथी जीज स्थान तरङ्ग प्रयाणु करवानो प्रारंभ कर्यो. मार्ग सम विषम हुतो. आथी गुरु महाराज्जे अचानक डलवा डालवाने कारणे कष्ट थयुं अने तेथी ऐभना चित्तमां अशान्ती उत्पन्न थछ तेओओ जेहा जेहा न पोतानो रजोहरण दंड ऐना माथा उपर भार्यो, चोट लागतांज शिष्ये मनमां विचार्युं डे छे मन ! जेनी मारे सेवा करवी जेधओ ऐ गुरु महाराज्जे आ सभय भारा तरङ्गथी डेटलुं कष्ट थछ रह्युं छे. गुरु महाराजनी कष्ट अवस्थानुं कारणे हुं न जनी रहेल छुं. आ प्रकारनी लक्षितरूप हार्दिक भावनाना प्रभावथी क्षपक श्रेणी प्राप्त करी घातक कर्मोना



તતઃ સ ઇમ્યપુત્રો ભાગ્યવશેન લઘુકર્મણા ચ ભાવશ્રમણો જાતઃ, તદાનીં તસ્યેમ્યપુત્રસ્ય લોચે કૃતે સતિ “મમ પ્રવ્રજ્યૈવાસ્તુ” ઇતિ પરિણામઃ સમ્પન્નઃ, તતો રજોહરણસદોરકમુખવલ્લિકાદિભિઃ સાધુવેપં ધૃત્વા દ્રવ્યભાવતઃ સંયતો જાતઃ । તતોઽસૌ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ શિષ્યો ગુરુમવ્રવીત્-ભદન્ત ! અન્યત્ર વ્રજામઃ, અત્ર મમ

કો હાથ મેં લેકર જવર્દસ્તી ઉસકે કેશોં કા લુંચન કર દિયા । મિત્રોં ને યહ દેલ્લકર સમજ્ઞા કિ કહીં હમારી ખી યહી હાલત ન હો જાય-હમેં ખી જવર્દસ્તી સે દીક્ષિત ન વના દિયા જાય-ઇસ ડરસે વે સય કે સબ વહાં સે શીઘ્ર ભાગ ગયે ।

ઉસ સમય વહ શ્રેષ્ઠિપુત્ર ભાગ્ય કે ઉદય સે ઇવં લઘુકર્મ કે પ્રભાવ સે ભાવશ્રમણ વન ગયા થા । ક્યોં કિ જિસ સમય આચાર્ય-મહારાજને ઉસકે કેશોંકા લુંચન કિયા થા ઉસ સમય ઉસકે ચિત્ત મેં યહી પરિણામ હો ગયા થા કિ મેરી દીક્ષા હી હો જાય તો સર્વ સુન્દર હૈ । ” ઇસ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવ શ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-ઉસ ઇમ્યપુત્ર કે લિયે આચાર્ય મહારાજ ને કેશલુંચન કરને કે વાદ હી રજોહરણ ઇવં સદોરક મુખવલ્લિકા પ્રદાન કરદી-ઇસસે વહ યથાર્થ મેં દ્રવ્યરૂપ સે ખી સાધુ વેપસે સુશોભિત હોને લગા । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્ય ઇવં ભાવ સે સંયત અવસ્થા કો ધારણ કિયે હુઇ-ઉસ નવીન શિષ્ય ને ગુરુમહારાજ સે કહા કિ હે ભદન્ત ! ચલો અબ યહાં સે દૂસરી જગહ ચલે । નહીં તો મેરે

લઈને જખરજસ્તીથી તેના વાળનો લોચ કર્યો. મિત્રો આ જોઈને એવું સમજ્યા કે અમારી પણ આવી હાલત ન થઈ જાય અમને પણ જખરજસ્તીથી દીક્ષિત ન બનાવાય આવા ડરથી તેઓ સઘળા ત્યાંથી તુરતજ ભાગી ગયા.

તે સમય શ્રેષ્ઠી પુત્ર ભાગ્યના ઉદયથી તેમજ લઘુ કર્મના પ્રભાવથી ભાવશ્રમણ બની ગયો હતો કેમકે જે સમય આચાર્ય મહારાજે તેના વાળનો લોચ કર્યો ત્યારે તે સમયે તેના ચિત્તમાં એજ પરિણામ થઈ ગયું હતું કે મને દીક્ષા અપાય તો તે સર્વ સુન્દર છે. આ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવશ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-તે ઇમ્ય પુત્ર માટે આચાર્ય મહારાજે કેશનો લોચ કર્યો પછી રજોહરણ અને દોરા સાથેની મુખવલ્લિકા આપી. આથી યથાર્થમાં દ્રવ્ય રૂપથી પણ સાધુ વેશથી સુશોભિત બની રહ્યો. આ પ્રકારે દ્રવ્ય અને ભાવથી સંયત અવસ્થાને ધારણ કરીને એ નવીન શિષ્યે ગુરુમહારાજને કહ્યું કે હે ભદન્ત ! ચાલો હવે અહિંથી બીજા સ્થળે જઈએ. નહીં તો મારા બંધુ-

પુનસ્તત્સામણં કુર્વન્ સોઽપિ કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્તવાન્ । એવં વિનીતશિષ્યૈર્ભવિતવ્યમ્ ॥૧૩॥

કયં ગુરુચિત્તાનુગામી ભવેદિત્યાહ—

મૂલમ્—નાપુટ્ટો<sup>૧</sup> વાગેરે કિંચિ, પુટ્ટો વાં નાલિયં વણં ।

કોહં અસત્ત્વં કુંવિજ્ઞા, ધારિજ્ઞો પિયંમાપ્પિયં<sup>૨</sup> ॥૧૪॥

છાયા—

નાપુટ્ટો કુર્યાત્ કિંચિત્, પુટ્ટોવા નાલીકંવદેત્ ।

ક્રોધમ્ અસત્યં કુર્યાત્, ધારયેત્ પ્રિયમપ્રિયમ્ ॥ ૧૪ ॥

ટીકા—‘નાપુટ્ટો’. ઇત્યાદિ—

અપુટ્ટઃ=ગુરુનાઽનુક્તઃ કિંચિત્ ન વ્યાકુર્યાત્=ન વદેત્ પુટ્ટો વા=ગુરુના કાસ્મિ-  
થિદ્ વિષયે પુટ્ટઃસન્ અલીકમ્=અનૃતં ન વદેત્, ક્રોધં=કેનાપિ કારણેન સમુત્પન્નં  
કોપમ્ અસત્યં=નિષ્ફલં કુર્યાત્ ।

કર વાર વાર અતિશય પશ્ચાત્તાપ કરને લગે । પશ્ચાત્ત્ ઉનસે અપને દોષ  
સ્વમાને લગે । ઇસ પ્રકાર પશ્ચાત્તાપ કરતે કરતે વિશુદ્ધ ભાવના સે ગુરુ  
ને ભી કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કિયા । ઇસદૃષ્ટાન્ત કા સાર યહી હૈ કિ વિનીત  
શિષ્ય અપની વિશુદ્ધિ કે સાથ-સાથ ગુરુ મહારાજ કી ભી વિશુદ્ધિ કા  
કારણ બનતા હૈ । અતઃ શિષ્ય કો ઇસી તરહ વિનીત હોના ચાહિયે ॥૧૩॥

ગુરુ-ચિત્તાનુગામીશિષ્ય કે ચિન્હોં કો ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર  
બતાવે હૈ—‘ નાપુટ્ટો. ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—( અપુટ્ટો કિંચિ ન વાગેરે-અપુટ્ટઃ કિંચિત્ ન વ્યા-  
કુર્યાત્ ) ગુરુમહારાજ જવ તક કોઈ વાત નહીં પૂછે તવ તક શિષ્ય કા  
કર્તવ્ય હૈ કિ વહ કિસી ભી વિષય મેં કુછ ન કહે । (પુટ્ટો વા

અતિશય પશ્ચાત્તાપ કરવા લાગ્યા. પછી તેનાથી પોતાનો દોષ ખમાવવા લાગ્યા.  
આ પ્રકારે પશ્ચાત્તાપ કરતાં કરતાં વિશુદ્ધ ભાવનાથી ગુરુને પણ કેવલી જ્ઞાન  
પ્રાપ્ત થયું.

આ દૃષ્ટાંતનો સાર એ છે કે વિનીત શિષ્ય પોતાની વિશુદ્ધિની સાથે  
સાથે ગુરુ મહારાજની પણ વિશુદ્ધિનું કારણ બને છે. એટલે શિષ્યોએ આ  
રીતે વિનીત થવું જોઈએ. ॥૧૩॥

ગુરુ-ચિત્તાનુગામી શિષ્યના ચિન્હોને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર બતાવે  
છે. નાપુટ્ટો. ઇત્યાદિ,

અન્વયાર્થ—અપુટ્ટો કિંચિ ન વાગેરે-અપુટ્ટઃ કિંચિત્ ન વ્યાકુર્યાત્ ગુરુ  
મહારાજ ત્યાં સુધી કોઈ વાત ન પૂછે ત્યાં સુધી શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે  
કોઈ પણ વિષયમાં કંઈ ન કહે. પુટ્ટો વા નાલિયં વણં-પુટ્ટોવા અલીકંવદેત્

જ્ઞાનમુત્પન્નમ્, તતઃ કેવલજ્ઞાનપ્રભાવાદસૌ સમપ્રદેશ इव वहन् गुरुणा प्रोक्तः—  
 मार एव सारः, अधुना कीदृशः समप्रदेशे इव वहन्मसि ? शिष्येणोक्तं—युष्मत्प्र-  
 सादान्मम वहनं संभं भवति । पुनर्गुरुणोक्तम्—किं रे ! ज्ञानं समुत्पन्नं तव । शिष्ये-  
 णोक्तम्—एवम् । पुनर्गुरुणा प्रोक्तम्—प्रतिपाति, अप्रतिपाति वा ज्ञानमुत्पन्नम् ? ।  
 तेनोक्तम्—अप्रतिपाति । ततो गुरुः पश्चात्तापं कुर्वन् वदति—हा ! मया केवली आशा-  
 तितः—इत्युक्त्वा शिष्यशिरसि रजोहरणदण्डप्रहारजनितं रुधिर प्रवाहं पश्यन् पुनः

પ્રાસકર ઘાતક કર્મોંકા નાશકર ઉસ શિષ્ય ને કેવલજ્ઞાન કો પ્રાસ  
 ક્રિયા । કેવલ જ્ઞાન કે પ્રભાવ સે યહ ગુરુકો ઇસ પ્રકાર અવ લેજાને લગા  
 કિ માનો સમ પ્રદેશમેં હી વહ ચલ રહા હો । ગુરુજીને કહા કિ માર હી  
 સાર હૈ, ઇતના માર ને પર અવ તૂ સીધા ચલને લગા હૈ । શિષ્યને કહા  
 મહારાજ આપકે પ્રભાવસે હી યહ સવ કુછ હો રહા હૈ—અર્થાત્ પહિલે ચલતે  
 સમય ઉંચી નીચી જગહ મેં મેરા પૈર પડતા થા સો આપકો કષ્ટ હોતા થા ।  
 પર અવ નહીં પડતા હૈ અતઃ સમભૂમિ મેં ચલને કી તરહ મેં ચલ રહા  
 હૂં । ગુરુ મહારાજ ને કહા તો ક્યા તુજે જ્ઞાન ઉત્પન્ન હો ગયા હૈ ? શિષ્યને  
 કહા હાં ! પુનઃ ગુરુ મહારાજ ને કહા વહ જ્ઞાન પ્રતિપાતિ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ  
 યા અપ્રતિપાતિ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । શિષ્યને ઉત્તર દિયા મહારાજ ! અપ્રતિ-  
 પાતિ જ્ઞાન ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । વાદ ગુરુ ને કહા ! હાય ! મેં ને કેવલી કી  
 ઇસ સમય આશાતના કી હૈ । ઇસ પ્રકાર કહ કર ગુરુ જી શિષ્ય કે  
 શિર પર રજોહરણ કે દણ્ડ કે પ્રહાર સે વહતે હુએ રુધિર કો દેખ-દેખ

નાશ કરી તે શિષ્યે કેવલ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કર્યું. કેવલજ્ઞાનના પ્રભાવથી તે  
 ગુરુને એવા પ્રકારે લઈ જવા લાગ્યો કે જાણે તે સમપ્રદેશમાં ચાલી રહ્યા  
 હોય. ગુરુજીએ કહ્યું કે “ માર જ સાર છે. ” આટલું મારવાથી હવે તું  
 સીધો ચાલવા લાગ્યો છે, શિષ્યે કહ્યું મહારાજ ! આપના પ્રભાવથી જ આ  
 સઘળું બની રહ્યું છે. અર્થાત્ પહેલાં ચાલતી વખતે ઉંચી નીચી જગ્યામાં  
 મારા પગ પડતા હતા જેનાથી આપને કષ્ટ થતું હતું પણ હવે પડતા નથી.  
 એટલે સમભૂમિમાં ચાલવાની માફક હું ચાલું છું. ગુરુ મહારાજે કહ્યું કે  
 શું તને જ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ ગયું છે ? શિષ્યે કહ્યું હા ! ફરી ગુરુ મહારાજે  
 કહ્યું, તે જ્ઞાન પ્રતિપાતિ ઉત્પન્ન થયું છે કે અપ્રતિપાતિ શિષ્યે કહ્યું.  
 મહારાજ ! અપ્રતિપાતિ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું છે. આથી ગુરુજીએ કહ્યું, અહાહા !  
 મેં કેવલીની આ સમયે આશાતના કરી છે. આ પ્રકારે કહીને ગુરુજીએ  
 શિષ્યના શીર ઉપર રજોહરણના દંડના પ્રહારથી વહેતા રુધીરને જોઈ વારંવાર

ઉક્તંચ—લોભી પશ્યેદ્ધનપ્રાપ્તિ, કામિનીં કામુકસ્તથા ।

ભ્રાન્તં પશ્યેદયોન્મત્તો ન કિંચિચ્ચ ક્રુધાકુલઃ ॥૧॥

અન્વચ—અપકારિણિ ચેત્ ક્રોધઃ ક્રોધે ક્રોધઃ કથં ન તે ।

ધર્માર્થકામમોક્ષાણાં ચતુર્ણાં પરિપન્થિનિ ॥ ૨ ॥

ક્રોધસ્યાસત્યકરણે ઉદાહરણમ્ । યથા—કસ્યચિત્કુલપુત્રસ્યભ્રાતાવૈરિણા હતઃ ।

“લોભી આત્મા ધનની પ્રાપ્તિની ચિન્તામાં હી મસ્ત બના રહેતા હૈ । કામુક કામિનીમાં મસ્ત હૈ । ઉન્મત્ત સર્વત્ર ભ્રાન્તિ યુક્ત બના રહેતા હૈ । પરન્તુ ક્રોધ સે આકુલ હુઆ આત્મા દેશ્વતા હુઆ ભી અન્ધા બના રહેતા હૈ ॥૧॥”

ઇસ ક્રોધ કો નિવારણ કરના હો તો ઇસ પ્રકાર કી ભાવના માનની ચાહિયે જૈસે—

“હે આત્મન્ ! તુ અપને અપકાર કરનેવાલે પર જિસ પ્રકાર ક્રોધ કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઇસ અપકાર કરને વાલે ક્રોધ પર ક્રોધ ક્યોં નહોં કરતા । ક્યોં કિ યહ તેરા વડા ભારી અપકારી હૈ । કારણ કિ ઇસકે સદ્ભાવ મેં ધર્મ, અર્થ, કામ એવં મોક્ષ કા સર્વથા વિનાશ હો જાતા હૈ । અતઃ ચતુર્વર્ગકા વિનાશ કરને વાલા હોને સે યહ તેરા સવસે અધિક અપકારી હૈ । ક્રોધ પર ક્રોધ કરના ઇસકા મતલબ હૈ કિ ક્રોધ કમી નહોં કરના ચાહિયે ॥ ૨ ॥”

ક્રોધ કો અસત્ય કરને મેં દવા દેને મેં—દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—

કિસી કુલપુત્ર કે ભાઈ કો ઉસકે વૈરી ને માર ડાલા । વહ કુલ-

લોભી આત્મા ધનની પ્રાપ્તિની ચિન્તામાં જ મસ્ત બની રહે છે, કામુક કામિનીમાં મસ્ત છે, ઉન્મત્ત સર્વત્ર ભ્રાન્તિયુક્ત બની રહે છે. પરંતુ ક્રોધથી વ્યાકુલ બનેલ આત્મા જોવા છતાં પણ આંધળો બની રહે છે. ॥૧॥

આ ક્રોધનું નિવારણ કરવું હોય તો આ પ્રકારની ભાવના કરવી જોઈએ કે હે આત્મા ! તું તારા ઉપર અપકાર કરવાવાળા ઉપર જે પ્રકારે ક્રોધ કરે છે એ પ્રકારે તે અપકાર કરવાવાળા ક્રોધ ઉપર ક્રોધ કેમ નથી કરતો. કેમકે એ તારો ખુબ મોટો અપકારી છે. કારણ કે તેના સદ્ભાવમાં ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષનો સર્વથા વિનાશ થાય છે. એથી ચતુર્વર્ગનો વિનાશ કરવાવાળો હોવાથી એ તારો બધાથી વધુ અપકારી છે. ક્રોધ પર ક્રોધ કરવો એનો મતલબ છે કે ક્રોધ કદી ન કરવો જોઈએ.

ક્રોધને દબાવી દેવામાં દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારે છે—

કોઈ કુળપુત્રના ભાઈને તેના વૈરીએ ભારી નાખ્યો. તે કુળપુત્ર મરણ

અર્થ ભાવ:-ગુરુગા નિર્ભર્ત્સને કૃતે સતિ કદાચિત્ ક્રોધોત્પત્તો સત્યાં તસ્ય કદુકવિપાકમનુચિન્ત્ય ક્ષમયા તં પરિહરેત્, ક્રોધો હિ સર્વાનર્થકરઃ સકલશુભહરઃ તપઃ સંયમોદ્યાનદાગ્ન્યલનઃ સમભાવજલદપટલીવિકિરણપ્રચંડપવનઃ શાન્તિસુધા-કરતમઃ' સકલસદ્ગુણસરોજવનહિમઃ ચિત્તોદ્વેજકઃ શત્રુતાવર્ધકઃ સકલવિપદા-માસ્પદં જનપદં વિપ્લવયતિ ।

૧-તમઃ=રાહુઃ ।

નાલિયંવણ-પૃષ્ઠો વા અલીકં ન વદેત્ ) યદિ પ્રસંગ વશ કિસી વિષય મેં ગુરુ મહારાજ પૂછે મી તો ઉસ મેં શૂઠ નહીં વોલના ચાહિયે । (કોહં અસત્યં કુવિજ્ઞા-કોપં અસત્યં કુર્યાત્ ) કિસી નિમિત્ત સે ઉત્પન્ન હુણ ક્રોધ કો શીઘ્ર હી દવા દેના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ—કિસી કારણ વશ યદિ કદાચિત્ ગુરુ મહારાજ શિષ્ય કો કઠિન વચન સે શિક્ષા દેં તો ઉસ સમય ક્રોધ કા કદુઆ ફલ સમજકર ઉત્પન્ન હુવે ક્રોધ કો ક્ષમા સે દવા દેવે । કારણ કિ ક્રોધ સમસ્ત અનર્થોં કી એક મજબૂત જડ હૈ । સકલ કલ્યાણોં કા વિનાશક હૈ । સંયમરૂપી ઉદ્યાન કો ભસ્મ કરને કે લિયે યહ દાવાનલ કી જ્વાલા જૈસા ભયંકર હૈ । સમતારૂપી મેઘઘટાઓં કો વિક્ષિપ્ત કરને કે લિયે યહ ક્રોધ પ્રચંડ પવન કે જૈસા હૈ । શાન્તિરૂપી ચંદ્રમંડલ કે ગ્રસને કે લિયે રાહુ જૈસા, સકલ સદ્ગુણરૂપી કમલવન કો દગ્ધ કરને કે લિયે હિમ-પાત જૈસા કહા હૈ । ક્રોધ સે ચિત્ત મેં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર ક્રોધ સે હી શત્રુતા કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । જિસ જનપદ (દેશ) મેં ઇસ ક્રોધ કા આવાસ હો જાતા હૈ વહ સકલ વિપત્તિયોં કા સ્થાન બનકર દેશ આદિ કો નષ્ટ કર દેતા હૈ । કહા મી હૈ—

જો પ્રસંગવશ કોઈ વિષયમાં ગુરુ મહારાજ પૂછે તો પણ એમાં બુદ્ધિ નહીં બોલવું જોઈએ. કોહં અસત્યં કુવિજ્ઞા-કોપં અસત્યં કુર્યાત્ કોઈ નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયેલા ક્રોધને જલદીથી દબાવી દેવો જોઈએ.

ભાવાર્થ—કોઈ કારણવશ જો કદાચ ગુરુ મહારાજ શિષ્યને કઠીન વચ-નથી શિક્ષા આપે તો તે સમયે ક્રોધનું કડવું ફળ સમજી ઉત્પન્ન થયેલ ક્રોધને ક્ષમાથી દબાવી દે. કારણ કે ક્રોધ સમસ્ત અનર્થોની એક મજબૂત જડ છે. બધા કલ્યાણોનો વિનાશક છે. સંયમરૂપી ઉદ્યાનને ભસ્મ કરવા માટે દાવાનળની જ્વાળા જેવો ભયંકર છે. સમતારૂપી મેઘ ઘટાઓને વેરવિખેર કરવા માટે આ ક્રોધ પ્રચંડ પવન જેવો છે. શાંતિરૂપી ચંદ્રમંડળને ગ્રસવા માટે રાહુ જેવા સકળ સદ્ગુણરૂપી કમલવનને દગ્ધ કરવા માટે હિમપાત જેવો કહેલ છે. ક્રોધથી ચિત્તમાં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન થાય છે અને ક્રોધથીજ શત્રુતાની વૃદ્ધિ થાય છે. જે જનપદ (દેશમાં) આ ક્રોધનો આવાસ થાય છે તે સકલ વિપત્તિઓનું સ્થાન બની દેશ આદિનો નાશ કરે છે. કહ્યું પણ છે—



તતસ્તેન કુલપુત્રેણ કથિતમ્-તર્હિ કથં સ્વરોપં સફલીકરોમિ ? જનન્યા પ્રોક્તમ્-વત્સ ! સર્વત્ર ન રોષઃ સફલીક્રિયતે । માતૃવાક્યાત્ કુલમિત્રેણ સ વન્ધુયાતકો મુક્તઃ । તતોઽસૌ તયોશ્વરણેષુ નિપત્ય સ્વાપરાધં ક્ષામયિત્વા ગતઃ । એવં કુલ-પુત્રવત્ ક્રોધમસત્યં કુર્યાત્ ।

તથા-અપ્રિયં=શિક્ષાર્થં ગુરોઃ કટુવચનં, પ્રિયં=પ્રિયમિવ-દિતમિત્યર્થઃ, ધારયેત્=

માતા કે ઇસ પ્રકાર વચન સુનકર કુલપુત્ર ને કહ્યા-ટીકા હૈં યહ અવધ્ય હૈં પરંતુ હૈં જનનિ ! યહ રોષ જો મુઝે ઉત્પન્ન હુઆ હૈં ઉસે કૈસે અવ સફલ કરૂં ? માતા બોલી પ્રિય પુત્ર ! ઉત્પન્ન રોષ સર્વત્ર સફલ હી કિયા જાય એસા કોઈ નિયમ નહીં હૈં । માતા કે ઇન વચનોંસે સન્તુષ્ટ હોકર કુલપુત્ર ને રોષ કો શાંત કરતે હુએ ઉસ અપને વન્ધુ કે ઘાત કરને વાલે વૈરી કો વિના કિસી તકલીફ દિયે છોડ દિયા । ઉસ વૈરી ને ભી ઉન દોનોંકે ચરણોં મેં ગિરકર અપને અપરાધ કી ક્ષમા માંગી ઓર ખુશ હોતે હુએ અન્ત મેં વહ અપને ઘર ચલા ગયા । પ્રત્યેક મુનિ કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ કુલપુત્ર કી તરહ અપને ઉત્પન્ન હુએ ક્રોધ કો વિફલ બનાને મેં સચેષ્ટ રહે ।

( અપ્રિયં પ્રિયં ધારિજ્ઞા-અપ્રિયં પ્રિયં ધારયેત્ ) શિષ્ય કા યહ કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ગુરુ મહારાજ કે દ્વારા કહે ગયે અપ્રિય વચનોં કો ભી પ્રિયવચન હી માનકર હૃદય મેં ધારણ કરે । ગુરુ મહારાજ કે વચન

એમના ઉપર મહાપુરૂષ પ્રહાર કરતા નથી, પરંતુ તેની રક્ષા કરે છે.

માતાનાં આ પ્રકારનાં વચન સાંભળીને કુળપુત્રે કહ્યું ઠીક છે. આ અવધ્ય છે. પરંતુ હે માતા ! આ રોષ જે મારામાં ઉત્પન્ન થયો છે તેને હું કઈ રીતે શાન્ત કરૂં ?

માતાએ કહ્યું પ્રિય પુત્ર ! ઉત્પન્ન થયેલ રોષ બધી રીતે સફળ કરવામાં આવે એવો કોઈ નિયમ નથી, માતાનાં આવાં વચનોથી સંતુષ્ટ બની કુળપુત્રે રોષને શાન્ત કરીને તેણે પોતાના બંધુનો ઘાત કરનાર વૈરીને કોઈ તકલીફ આપ્યા વગર છોડી દીધો. મારનાર વૈરીએ પણ બંનેના ચરણોમાં પડીને પોતાના અપરાધની ક્ષમા માંગી અને ખુશ થતો તે પોતાના ઘર તરફ ચાલી ગયો. પ્રત્યેક મુનિનું કર્તવ્ય છે કે કુળપુત્રની માફક પોતાનામાં ઉત્પન્ન થયેલ ક્રોધને દબાવવામાં સચેષ્ટ રહે.

( અપ્રિયં પ્રિયં ધારિજ્ઞા-અપ્રિયં પ્રિયં ધારયેત્ ) શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે ગુરુ મહારાજ દ્વારા કહેવામાં આવેલ અપ્રિય વચનોને પણ પ્રિય વચન માની હૃદયમાં ધારણ કરે. ગુરુ મહારાજના વચન પરિણામમાં સંતાપને

પુત્રમરણાર્ત્તધ્યાનયુક્તાં જનનીં વિલોક્ય સ કુલપુત્રસ્તં વૈરિણં ગૃહીત્વા માતુઃ  
સમિપમાનીયાવ્રવીત્-અરે ! વન્ધુઘાતક ! અનેનાસિના ત્વાં કુત્ર હન્યામ્, તેનાતિભી-  
તેન કથિતમ્ યત્ર શરણાગતા ન હન્યન્તે તત્ર । एतद्वचनं શ્રુત્વા કુલપુત્રેણ જનનીમુખં  
વિલોકિતમ્ । જનન્યા ચ મધ્યસ્થભાવમવલમ્બ્ય સંજાત-કરુણયા નિગદિતમ્-હે  
પુત્ર ! શરણાગતા ન હન્યન્તે । યતઃ—

સરણાગયા ય વીસ,-ત્યા પળયા વસણપત્તા ય ।

રોગી અજંગમા ય, સપ્પુરિસા ણેવ પહરંતિ ॥

છાયા—શરણાગતાંશ્વ વિશ્વસ્તાન્ પ્રણતાન્ વ્યસનમાત્તાંશ્વ ।

રોગિણઃ અજઙ્ગમાંશ્વ સત્પુરુષા નૈવ પ્રહરન્તિ ॥

પુત્ર પુત્રમરણ જનિત દુઃખ સે આર્ત્તધ્યાન કરતી હુઈ માતા કો દેખકર  
શીઘ્ર હી અપને ભાઈ કે ઉસ ઘાતક કો પકડ કર માતા કે સન્મુખ  
ઉપસ્થિત કર કહા અરે વન્ધુ ઘાતક ! વોલ તુજે ઇસ તલવાર કે દ્વારા  
કહાં પર મારું । ઉસને હરતે હુએ કહા-જહાં શરણ મેં આયે હુએ પ્રાણી  
નહીં મારે જાતે હેં વહીં પર આપ મુજે મારેં । વન્ધુ ઘાતક કે ઇસ પ્રકાર  
વચન સુનકર કુલપુત્ર ને માતા કે મુખકી ઓર દેખા । માતા ને ધૈર્ય  
ધારણ કર દયાયુક્ત હોતે હુએ કહા કિ હે વેદા ! શરણ મેં આયે હુએ કો  
વીર પુરુષ મારા નહીં કરતે હેં । કયોં કિ ઇતને પ્રાણી અવધ્ય હોતે હેં—

સરણાગયા ય વીસ-ત્યા પળયા વસણ પત્તાય ॥

રોગી અજંગમા ય, સપ્પુરિસા ણેવ પહરંતિ ॥ ૧ ॥

ગાથાર્થ—શરણાગત, વિશ્વાસપાત્ર, કબ્જ મેં પડા હુઆ, રોગી  
ઔર અપંગ, ઇન્કે ડપર મહા પુરુષ પ્રહાર નહીં કરતે હેં અર્થાત્ ઇન્કી  
રક્ષા કરતે હેં ॥

જનીત દુઃખથી આર્ત્તધ્યાન કરતી માતાને જોઈ તુરતજ પોતાના લાઈના એ  
ઘાતકને પકડીને માતાની સન્મુખ ઉભો રાખી કહ્યું, અરે બંધુ ઘાતક !  
બોલ તને આ તરવાર કયે સ્થળે મારું. તેણે કહ્યું-જ્યાં શરણુમાં  
આવેલાં પ્રાણીને મારવામાં નથી આવતાં એ સ્થળે આપ મને મારો. બંધુને  
મારનારનાં આ પ્રકારનાં વચનને સાંભળી કુળપુત્રે માતાના મુખની સામે  
જોયું. માતાએ ધૈર્ય ધારણ કરી દયાયુક્ત બની કહ્યું કે હે બેટા ! શરણુમાં  
આવેલાને વીરપુરુષો કદી મારતા નથી કેમકે આટલા પ્રાણી અવધ્ય હોય છે.

સરણાગયા ય વીસ,-ત્યા પળયા વસણપત્તા ય ।

રોગી અજંગમા ય, સપ્પુરિસા ણેવ પહરંતિ ॥ ૧ ॥

ગાથાર્થ—શરણાગત, વિશ્વાસપાત્ર, કબ્જમાં પડેલા, રોગી અને અપંગ,

इदमत्र बोध्यम्—यथा गुरोराज्ञया भिक्षाचर्या गतः शिष्यः श्रावकगृहं प्रविष्टः, तत्र भद्रभावसंपन्नो धार्मिको धर्मानुगो धर्मसेवी धर्मिष्ठो धर्मख्यातिधर्मानुरागी धर्मप्रलोकी धर्मजीवी धर्मप्रखनो धर्मशीलः श्रावको मुनिं दृष्ट्वा सप्ताष्टपदानि तदभिमुखमागच्छन् हृष्टस्तुष्टः प्रसन्नचित्तः प्रीतमनाः परमसौमनस्ययुक्तो मुनिदर्शनजनितहर्षवशविसर्पन्मानसस्तं वन्दित्वा नमस्कृत्य पुनः पुनः स्तुवन् वदति—

लाभ में, अलाभ में, सुख में, दुःख में, जीने में मरण में, ज्ञान में, अपमान में तथा निंदा और प्रशंसा में एक साधु ही ऐसा है जो समान रहता है। यहां इस प्रकार समझना चाहिये—गुरु की आज्ञा प्राप्त कर ही तो शिष्य भिक्षाचर्या के लिये गृहस्थों के घर जाता है। गृहस्थ भी अपने घर पर पधारे हुए साधु के दर्शन कर अपने आपको बहुत ही पुण्यशाली मानता है। क्यों कि ऐसे गृहस्थजन प्रकृति से भद्रपरिणामी एवं धर्मानुग-धर्मका अनुसरण करने वाले होते हैं। धर्म सेवी होते हैं और धर्मिष्ठ होते हैं। धर्मख्याति-धर्मका उपदेश देनेवाले एवं धर्मानुरागी-धर्म में अनुराग रखने वाले होते हैं। धर्मप्रलोभी और धर्मजीवी होते हैं। धर्मप्रखन और धर्मशील होते हैं। ये मुनि को घर पर आते हुए देखकर सर्व प्रथम उनका विनय करने के निमित्त सात आठ पग उनके समक्ष जाते हैं। हर्ष से संतुष्ट चित्त होकर ऐसे फूल जाते हैं कि मानों कोई अपूर्व निधि का ही इन्हें लाभ हुआ है।

લાભમાં, અલાભમાં, સુખમાં, દુઃખમાં, જીવવામાં, મરણમાં, જ્ઞાનમાં, અપમાનમાં, તથા નિંદા અને પ્રશંસામાં એક સાધુજ એવા છે જે સમાન રહે છે. અહિં એ પ્રકારે સમજવું જોઈએ—ગુરુની આજ્ઞા મેળવીને પછીજ શિષ્ય ભિક્ષાચર્યા માટે ગૃહસ્થોને ઘેર જાય છે. ગૃહસ્થ પણ પોતાના ઘેર પધારેલા સાધુનાં દર્શન કરી પોતાને બહુજ પુણ્યશાળી માને છે. કેમકે એવા ગૃહસ્થજન પ્રકૃતિથી ભદ્ર પરિણામી તેમજ ધર્મનું અનુસરણ કરવાવાળા હોય છે, ધર્મ સેવી હોય છે અને ધર્મિષ્ઠ હોય છે. ધર્મખ્યાતિ-ધર્મનો ઉપદેશ દેવાવાલા એટલે ધર્માનુરાગી-ધર્મમાં અનુરાગ રાખવાવાળા હોય છે. ધર્મપ્રલોકી અને ધર્મજીવી હોય છે. ધર્મ પ્રખન અને ધર્મશીલ હોય છે. મુનિને ઘેર આવતા જોઈને સર્વ પ્રથમ તેનો વિનય કરવા નિમિત્ત સાત આઠ પગલાં એમની સામે જાય છે. હર્ષથી સંતુષ્ટ ચિત્ત બનીને એવા કુદાતા હોય છે કે જાણે કેાઈ અપૂર્વ નિધિનો એમને લાભ થયો હોય, અહિં પ્રસન્ન થઈ જાય છે, મનમાં

મનસા ભાવયેત્ । ગુરોર્વચનં હિ પરિણામે તાપોપશ્ચમકં રત્નત્રયપરિશોધકં શાન્તિઘૃષ્ઠા-  
સંઘૃતં પરમહિતમ્, આમ્રફલમિવાદૌ કદુકં, મધ્યેઽમ્લરસયુતમ્, અન્તે ચાપૂર્વાસ્વાદ-  
જનકં ભવતીતિ મત્વા પ્રિયમેવ મન્યેતેતિ ભાવઃ ।

યદ્વા-પ્રિયં=પ્રીતિજનક સ્તુત્યાદિ, અપ્રિયમ્=અપ્રીતિકારકં નિન્દાદિ, ધારયેત્=  
સમં જાનીયાત્ । ભિક્ષાચર્યાદૌ પ્રિયમપ્રિયં વા વચનં શ્રુત્વા સમભાવનયા તત્ તિતિક્ષેત્,  
તત્ર રાગં દ્વેષં વા ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । ઉક્તં ચ ભગવતા—

લાભાલાભે સુહે દુઃખે, જીવિષ્ મરણે તદ્વા ।

સમો નિંદાપસંસાસુ, તદ્વા માણાવમાણઓ ॥ (ઉત્ત૦ ૧૯અ.)

પરિણામ મેં સંતાપ કો મિટાને વાલે રત્નત્રય કો પરિ શુદ્ધ કરને વાલે,  
શાન્તિરૂપી અમૃત કે સમુદ્ર પરમ હિતકારી તથા આમ્રફલ કે સમાન  
આદિ મેં કદુક, મધ્ય મેં આમ્લરસયુક્ત એવં અન્ત મેં અપૂર્વ રસ કા  
આસ્વાદ કરાને વાલે હોતે હૈં । ફસલિયે ગુરુ મહારાજં કે વચન કો પ્રિય  
માનકર હી ઉનકા સેવન કરતે રહના ચાહિયે યહી વિનીત શિષ્ય કા  
કર્તવ્ય હૈ । અથવા—“ ધારિજ્ઞા પ્રિયમપ્રિયં ” ફસકા અભિપ્રાય યહ ણી  
હૈ કિ સાધુ જવ ભિક્ષાચર્યા આદિ કે લિયે જાવે તવ ઉસ સમય યદિ  
કોઈ ઓટે મીઠે વચન ણી કહે-નિંદા એવં સ્તુતિ ણી કરે તો ણી ઉસમેં  
ફસે પક્ષપાતી નહીં હોના ચાહિયે-દોનોં પર સાધુ કા સમાન ભાવ હી  
હોના ચાહિયે । ઉસ પર રાગ એવં દ્વેષ કરના સાધુકા કર્તવ્ય નહીં હૈ ।

લાભાલાભે સુહે દુઃખે । જીવિષ્ મરણે તદ્વા ॥

સમો નિંદા પસંસાસુ । તદ્વા માણા વ માણઓ ॥ (ઉ. ૧૯અ.)

મટાડવાવાળા રત્નમયને પરિશુદ્ધ કરવાવાળા શાંતિરૂપી અમૃતના સમુદ્ર પરમ  
હિતકારી તથા આમ્રફળ જેવા, શરૂઆતમાં તુર, મધ્યમાં આમ્લરસ યુક્ત  
તથા અંતમાં અપૂર્વ રસનો આસ્વાદ કરવાવાળા હોય છે. આ માટે ગુરુ  
મહારાજનાં વચનને પ્રિય માનીને તેનું સેવન કરતા રહેવું જોઈએ. તે વિનીત  
શિષ્યનું કર્તવ્ય છે. અથવા—“ ધારિજ્ઞા પ્રિયમપ્રિયં ” આનો અભિપ્રાય એવો  
પણ છે કે સાધુ જ્યારે ભિક્ષા ચર્યા વગેરે માટે જાય ત્યારે તે સમયે કોઈ  
કાંઈ સાડું નરસું વચન કહે-નિંદા અગર સ્તુતિ પણ કરે તો પણ એમાં  
તેમણે પક્ષપાતિ ન જાનવું જોઈએ. ખત્તે પર સાધુનો સમાનભાવ હોવો જોઈએ.  
એના પર રાગ અગર દ્વેષ કરવો એ સાધુનું કર્તવ્ય નથી.

લાભાલાભે સુહે દુઃખે, જીવિષ્ મરણે તદ્વા ।

સમો નિંદાપસંસાસુ, તદ્વા માણાવમાણઓ ॥ (ઉત્ત૦ ૧૯ અ.)

તથા—કેચિદધાર્મિકા અનાર્યા મ્લેચ્છા અધર્મજીવિનોઽધર્માનુરાગિણોઽધર્મ-  
શીલા વિવેકવિકલાઃ સાધું દૃષ્ટ્વા નિન્દન્તિ હીલન્તિ સ્વિસન્તિ—‘અયં વરાકો  
નિઃસત્ત્વઃ કાતરો દામ્ભિકો મિક્ષામાત્રોપજીવી કુર્ષિભરિર્ભૂમિભારસ્વરૂપો ગૃહે ગૃહે  
ગૃહપાલ इव भ्रमति’ इत्यादि वचनं श्रुत्वा मुनिः स्वात्मानं नापकर्षयेत् ।

અત્રોદાહરણમ્—કથિદ્ વૃદ્ધો મહાત્મા મિક્ષાર્થમેકસ્મિન્ ગૃહે ગત્વા તદ્ગૃહસ્વા-  
મિર્નો પ્રતિ કિં સચિત્તજલાદિસ્પર્શરહિતાઽસિ ન વેત્યાશયેન પૃષ્ટવાન્-ભગિનિ !

તથા કિતનેક એસે મી અધાર્મિક, મ્લેચ્છ, અનાર્યજન હૈં કિ  
જિનકા જીવન સત્ય ધર્મ કી વાસના સે ચિલકુલ વિહીન વના હુઆ  
હૈ, અધર્મ મેં હી જિન્હેં વડાભારી અનુરાગ હૈ, પ્રકૃતિ મી જિનકી  
અધર્મશીલ હૈં, વિવેક સે જો સર્વથા પરાઙ્મુખ હૈં વે સાધુજન કો દેખતે  
હી અપની નાક મૈંહેં સિકોડને લગતે હૈં ઓર જો મન મેં આતા હૈ વહી  
વકને લગ જાતે હૈં-નિન્દા કરતે હૈં, હીલના કરતે હૈં-સ્વિસાતે હૈં-કહતે  
હૈં કિ દેખો તો સહી યહ વિચારા કિતના અપને આપકો ભૂલતા હૈ તથા  
કિતના કાયર વના હુઆ ફિર રહા હૈ કૈસે-કૈસે દંભ રચ રહા હૈ જો  
યહ વહાં સે મિક્ષા માંગકર અપના નિર્વાહ કરતા હૈ । અપના હી પેટ  
ભરના હસને સીખા હૈં । એસે જનોં સે સંસાર કી ક્યા મલાઈ હો સકતી  
હૈ । યે તો કેવલ હસ પૃથિવી કે મારભૂત હૈં જો કુત્તેકી તરહ ઘર ઘર મેં  
પ્રતિદિન ભ્રમણ કરતે રહતે હૈં । હસ પ્રકાર કે વચન સુનકર સાધુ કો  
ચાહિયે કિ વહ અપની આત્મા કો હલ્કી ન સમજે । હસી વિષય કો  
એક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—

તથા કેટલાક એવા પણ અધાર્મિક, મ્લેચ્છ, અનાર્યજન છે કે જેમનું  
જીવન સત્ય ધર્મની વાસનાથી ખીલકુલ વિહીન બનેલ હોય છે. અધર્મમાં જ  
જેને ભારે અનુરાગ છે, પ્રકૃતિ પણ જેની અધર્મશીલ છે, વિવેકથી જે સર્વથા  
પરાઙ્મુખ છે. તે સાધુજનને જોઈને પોતાનાં નાક તથા મોંને બગાડે છે  
અને મનમાં આવે તેવું બકવા લાગી જાય છે. નિંદા કરે છે, હીલના કરે છે-  
ખિસાય છે, કહે છે કે જુઓ તો ખરા આ ખીચારો કેટલો પોતાની જાતને  
ભુલે છે તથા કેવો કાયર બનીને ફરી રહ્યા છે, કેવા કેવા દંભ રચી રહેલ છે,  
જે અહિં તહિંથી ભિક્ષા માગીને પોતાનો નિર્વાહ કરે છે. પોતાનું જ પેટ  
ભરવાનું એ શીખેલ છે. આવા સાધુથી સંસારની શું ભલાઈ થઈ શકવાની  
છે. આ તો કેવળ આ પૃથ્વી ઉપર ભાર જેવા છે. જે કુતરાની માફક ઘેર  
ઘેર દરરોજ ભમતા રહે છે. આ પ્રકારનાં વચન સાંભળી સાધુએ પોતાના  
આત્માને હલકો માનતા ન બનવું જોઈએ. આ વિષયને એક ઉદાહરણ દ્વારા  
સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—



‘ધન્યોઽસ્મિ, કૃતપુણ્યોઽસ્મિ, કૃતલક્ષણોઽસ્મિ ભવદર્શનેન, ભવદાગમનં દરિદ્રસ્ય ગૃહે સ્વર્ણવૃષ્ટિરિવ કામધેનુરિવ મમ સર્વસૌભાગ્યજનકમ્’” ઇત્યુક્ત્વા સ્વગૃહં સાદર-  
માનીય વિપુલમશનં પાનં શ્વાદં સ્વાદં દદાતિ, દત્ત્વા ચ પુનઃ પુનઃ સ્તૌતિ, તત્ર  
મુનિઃ સ્વાત્માનં નોત્કર્પયેત્ ।

ચેહરા પ્રસન્ન હો જાતા હૈ । મન મેં એક પ્રકાર કા વિલક્ષણ સંતોષ આ  
જાતા હૈ, ઉસ સમય ઉસે વડા ભારી આનન્દ આતા હૈ । ઉસ આનન્દ મેં  
તલ્લીન હોતા હુઆ વહ શ્રાવક ઉસ સમય એક પ્રકાર સે અપને આપકો  
ભી ભૂલ સા જાતા હૈ ઓર વન્દના એવં નમસ્કાર કર ભક્તિ કે આવેશ  
સે સ્વયં અપને ગુરુ મહારાજ કી સ્તુતિ કરતા હુઆ કહતા હૈ હે નાથ !  
આજ મેં ધન્ય હુઆ હું કૃતપુણ્ય હુઆ હું ઓર મેરી યહ પર્યાય સફલ  
હુઈ હૈ જો આપકે દર્શન પાયે । દરિદ્ર કે ઘર મેં સુવર્ણ કી વર્ષા કે સમાન  
એવં કામધેનુ કે સમાન આપ કા મેરે ઘર પધારના મેરે પરમ સૌભાગ્ય  
કા ઉત્પન્ન કરને ચાલા એવં વૃદ્ધિ કરનેચાલા હૈ । ઇસલિયે પધારિયે ઓર  
ઘર કો પાવન કીજિયે—ઇસ પ્રકાર કહ કર વહ મહાત્મા કો અપને ઘર  
લાતા હૈ ઓર સાદર ઉન્હેં વિપુલ અશન, પાન, શ્વાદ એવં સ્વાદ ચાર  
પ્રકાર કા આહાર દેતા હૈ । ફિર વારંવાર ઉનકી સ્તુતિ કરતા હૈ । એસી  
પ્રશંસા સુનકર ગૃહસ્થકી એસી વિનય ભક્તિ દેખકર સાધુ કો ફૂલ નહીં  
જાના ચાહિયે ।

એક પ્રકારનો વિલક્ષણ સંતોષ આવી જાય છે. એ સમયે એને ઘણોજ આનંદ  
થાય છે. એ આનંદમાં તલ્લીન થતાં થતાં તે શ્રાવક એ સમયે એક પ્રકારથી  
પોતે પોતાને પણ ભૂલી જાય છે. અને વંદના એવં નમસ્કાર કરી ભક્તિના  
આવેશથી સ્વયં પોતાના ગુરુ મહારાજની સ્તુતિ કરતાં કહે છે કે હે નાથ !  
આજ હું ધન્ય બન્યો છું, કૃત પુણ્ય બન્યો છું, અને ભારી આ પર્યાય સફળ  
બની છે જે આપનાં દર્શન થયાં. દરિદ્રતા ઘરમાં સોનાના વરસાદ સમાન તેમ  
કામ ધેનુ સમાન આપનું મારે ઘર પધારવું મારા પરમ સૌભાગ્યને ઉત્પન્ન  
કરવાવાળું અને વૃદ્ધિ કરનાર છે. આ માટે પધારો અને ઘરને પાવન કરો. આ  
પ્રકારે કહી તે મહાત્માને પોતાને ઘર લાવે છે અને આદર માનથી તેમને  
વિપુલ અશન, પાન, શ્વાદ અને સ્વાદ એમ ચાર પ્રકારનો આહાર આપે છે.  
પછી વારંવાર તેની સ્તુતિ કરે છે. એવી પ્રશંસા સાંભળી, ગૃહસ્થની એવી  
વિનય ભક્તિ જોઈ, સાધુએ કુલાઈ જવું ન જોઈએ.

યતિ-સ્થૂલસ્ય હૃષ્ટપુષ્ટાન્નસ્ય તવ કથમલ્પેનોદરં ભરિષ્યતિ ? इत्यादि परिभववचनं  
શ્રુત્વાઽપિ સ મહાત્મા સમભાવં સમાલમ્બ્ય સ્વાત્માનં હીનં ન મન્યતે સ્મ, તદા સ  
ઉચિતભિક્ષાં ગૃહીત્વા પ્રતિનિવૃત્તઃ । एवं सर्वैर्मुनिभिर्भाव्यम् ॥ ૧૪ ॥

આત્મનો દમને સત્યેવ ક્રોધવૈફલ્યં કર્તુ શક્યતે તસ્માત્ તદુપદેશં તત્કલં ચાહ-  
મૂલમ્—અપ્પાં ચેવં દમેયંઘ્વો અપ્પા હું સ્વલ્લુ દુર્દમો ।

અપ્પાં દંતો સુહી હોઈં અંસિંસ લોઈં પરંથં યં ॥૧૫॥

છાયા—આત્મા એવ દમિતવ્યઃ આત્મા હુ સ્વલ્લુ દુર્દમઃ ।

આત્માનં દામ્યન્ સુખી ભવતિ, અસ્મિન્ લોકે પરંત્ર ચ ॥૧૫॥

સ્વામિનિ ને કહ્યા—ચાહ સ્વલ્લુ કહ્યા ઇતને સંડસુસંડ તો હોરહે હો ફિર મી  
થોડા આહાર દેને કે લિયે કહ રહે હો થોડે સે દિયે ગયે આહાર સે  
મલા ઇસ હૃષ્ટપુષ્ટ શરીર કી તૃપ્તિ કૈસે હો સકેગી । इत्यादि उसके  
અપમાન જનક વચન સુનકર મી વે મહાત્મા સમભાવશાલી હી બને રહે  
ઔર ઉન્હોને ઉસકે વચન સે અપને આપકો હીન નહીં સમજા । વહાં સે  
ઉચિત ભિક્ષા લેકર ફિર વે અપને સ્થાન પર વાપિસ આગયે । इसी  
પ્રકાર કહને કા મતલબ યહ હૈ કિ સમસ્ત મુનિજનોંકો અપને આપકો  
પ્રતિકૂલ સંયોગ મેં હીન નહીં માનના ચાહિયે ॥ ૧૪ ॥

જો આત્મા કા દમન કરતા હૈ વહી ક્રોધ કો નિર્ફલકર સકતા  
હૈ ઇસ લિયે સૂત્રકાર આત્મા-અર્થાત્-મન કો દમન કરને કા ઉપદેશ  
દેતે હૈં એવં ઉસકા ફલ મી કહતે હૈં—‘ અપ્પાચેવં’ इत्यादि ।

વાહ ખૂબ કહ્યું, આટલા અલમસ્ત જેવા તો બની રહેલ છે છતાં પણ  
થોડો આહાર દેવાનું કહી રહ્યા છે. થોડા આહારથી લલા આ અલમસ્ત  
શરીરની તૃપ્તિ કઈ રીતે થઈ શકશે. इत्यादि એનાં અપમાન જનક વચન  
સાંભળીને પણ તે મહાત્મા સમભવશાળી જ બની રહ્યા અને તેનાં તેવાં વચનોથી  
પોતાની બાતને હીન નહિં સમજ્યા. ત્યાંથી ઉચિત ભિક્ષા લઈને પછી તે પોતાના  
સ્થાન ઉપર આવી ગયા. આ પ્રકાર કહેવાનો મતલબ એ છે કે સમસ્ત મુનિ  
જનોએ પોત પોતાને પ્રતિકૂલ સંજોગમાં પણ હિન માનવું ન જોઈ એ. ॥૧૪॥

જે આત્માનું દમન કરે છે તે ક્રોધને નિબ્ધળ કરી શકે છે આ માટે  
સૂત્રકાર આત્મા-અર્થાત્-મનને દમન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે. અને તેનું કૃણ  
પણ કહે છે—અપ્પાચેવં इत्यादि .

સ્વસ્થાઽસિ, તયા કથિતમ્-ત્વમેવાસિ રોગી, અહં તુ સ્વસ્થૈવારિમ મિશ્નાદાનાય મહાત્મના પ્રોક્તા સા ગૃહસ્વામિની વદતિ-કિમત્ર તવ પિત્રોપાર્જનં કૃત્વા સ્થાપિતં, તદ્ ગ્રહીતુમગ્રાગતોઽસિ, એતદ્ વચનં શ્રુત્વા સ મહાત્મા પરાઘૃતઃ । તતો ગૃહસ્વામિની વદતિ-અઠો ! મિશ્નાર્થિનોઽપિ તવૈતાવાન્ મદઃ, એહિ, એહિ, દદામિ મિશ્નામ્, એવં તયાઽભિહિતઃ સન્ સ મહાત્મા પુનસ્તદ્ગૃહે મિશ્નાં ગ્રહીતુમાગતઃ । સ્થૂલાઃ સ્થૂલાશ્ચ-તસો રોટિકાસ્તયા સમાનીતાઃ, મહાત્મના પ્રાંક્તમ્-સ્તોકં દેહિ, ગૃહસ્વામિની કથ-

કોઈ એક ઘૃદ્ધ મહાત્મા મિશ્નાકે લિયે કિસી ઁક ઘર પર પહુંચે । વહાં જાકર ગૃહસ્વામિની સે “ સચિત્ત જલાદિક કે સ્પર્શ સે રહિત હો કિ નહીં ” ઇસ અભિપ્રાય સે પૂછા કિ વહિ ન ! સ્વસ્થ તો હો ? મહાત્મા જી કી વાત સુનકર ગૃહસ્વામિની કહને લગી કિ મેં તો સ્વસ્થ હી હું-રોગી તો તુમ હી હો । મહાત્માજીને ફિર ઉસસે મિશ્ના દેને કે લિયે કહા તો વહ બોલી કિ યહાં કયા તુમ્હારા વાપ કમાકર રહ્ન ગયા હું જો લેને કે લિયે દોડે આયે હો ? ઇન વચનોંકો સુનકર મહાત્માજી વહાં સે પીછે લોટે । મહાત્માજી કો પીછા લોટા હુઆ દેખકર ગૃહસ્વામિની વડવડાતી હુઈ કહને લગી-ઓહો ! મિશ્નાર્થી હોકર કે મીઝતના અભિમાન । અચ્છા આઓ આઓ ઔર મિશ્ના લે જાઓ । મેં મિશ્ના દેતી હું । ઇસ પ્રકાર જવ ઉસ ગૃહસ્વામિની ને કહા તો મહાત્મા ઉસકે ઘર મિશ્ના લેને કે લિયે પીછે આયે । વહ જવ ઉન્હેં મોટી-મોટી ચાર રોટી દેને લગી તો મહાત્મા-જીને પુનઃ કહા વહિન થોડા આહાર દો-યહ તો અધિક હૈ । તવ ગૃહ

કોઈ એક ઘૃદ્ધ મહાત્મા મિશ્ના માટે કોઈ એક ઘેર પહોંચ્યા ત્યાં જઈ ગૃહસ્થની સ્ત્રીને “ સચિત્ત જલાદિકના સ્પર્શથી રહિત છે કે નહીં ” આ અભિપ્રાયથી પૂછ્યું કે, બહેન ! સ્વસ્થ છે ને ? મહાત્માજીની વાત સાંભળીને ગૃહસ્થની સ્ત્રી કંઈવા લાગી કે હું તો સ્વસ્થ જ છું-રોગી તો તમેજ છે. મહાત્માજીએ પછી તેને મિશ્ના આપવા કહ્યું તો એ બોલી કે, અહીં કયાં તમારો બાપ કમાઈને રાખી ગયેલ છે, જે દેવા માટે દોડી આવ્યા છે ? આ વચનોને સાંભળીને મહાત્માજી ત્યાંથી પાછા ફર્યા, મહાત્માજીને પાછા ફરેલા જોઈ ગૃહસ્થની સ્ત્રી બડબડાટ કરતાં કહેવા લાગી, ઓહો ! મિશ્નાર્થી દોવા છતાં પણ આટલું અભિમાન ! આવો મિશ્ના લઈ જવ. હું મિશ્ના આપું છું. આ પ્રકારે એ ગૃહસ્થની સ્ત્રીએ કહ્યું તો મહાત્મા એને ઘેર મિશ્ના દેવા પાછા ગયા તે જ્યારે તેને મોટી મોટી ચાર રોટલી દેવા લાગી તો મહાત્માજીએ કહ્યું બહેન થોડો આહાર આપો-આ તો ઘણું છે. ત્યારે ગૃહસ્થની સ્ત્રીએ :-

ઉક્તંચ—જઓ જઓ સંચરઈ, મળો ચંચલમત્થિરં ॥

તઓ તઓ નિયમિય, કુજ્જા અપ્પંમિ તં થિરં ॥૧॥

છાયા—યતો યતઃ સંચરતિ મનઃ ચંચલમસ્થિરમ્ ।

તતસ્તતો નિયમ્ય કુર્યાત્ આત્મનિ તત્ સ્થિરમ્ ।

સૂર્યોદયે સતિ શીતવેદના નિવૃત્તવન્મનોવિજયે સતિ સકલદુઃખાનામાત્યન્તિક નિવૃત્તિર્ભવતિ । અવિજિતં મનસ્તત્ત્વજ્ઞાનં વિનાશયતિ તપઃ સંયમશિખરાદાત્માનં

જાગ્રત્ હો સકતી છે । આત્મા શબ્દ કા અર્થ યહાં પર મન છે । ક્યોં કિ હસીકા દમન કિયા જાતા છે । જીવ આત્મા હસકા દમન કરને વાલા છે । દમન કરને સે આત્મા કો સવ સે વડા ભારી લાભ યહ હોતા છે કિ જિસ પ્રકાર સૂર્યકે ઉદય હોને પર શીતવેદના કો નિવૃત્તિ હો જાતી છે ઉસી પ્રકાર મનકો જીત લેને પર આત્મા સે સકલ દુઃખોં કો આત્યન્તિક નિવૃત્તિ હો જાતી છે । હસીલિયે શાસ્ત્રકારોં કા યહ ઉપદેશ છે કિ “જઓ જઓ સંચરઈ મળો ચંચલમત્થિરં । તઓ-તઓ નિયમિય કુજ્જા અપ્પંમિ તં થિરં ॥ યહ અસ્થિર ચંચલ મન જિન-જિન પદાર્થોંકો ઓર ઝુકે-ઝનમેં ચલે-ઝસે વહાં સે લેંચકર મોક્ષાભિલાષી કા કર્તવ્ય છે કિ વહ ઝસે અપની આત્મા મેં સંલગ્ન કરે । જવતક મન સ્થિર નહીં હોગા ઝસકા નિગ્રહ નહીં હોગા-તવ તક તત્ત્વજ્ઞાન આત્મા મેં ઉત્પન્ન નહીં હો સકતા છે । તત્ત્વજ્ઞાન કો જાગૃતિ હુએ વિના આત્મા કો હેય એવં ઉપાદેય પદાર્થોંકા વાસ્તવિક ભાન નહીં હો સકતા । મનકો હી તો યહ ચંચલતા

જ આત્મામાં શાંતી જાગી શકે છે. આત્મા શબ્દનો અર્થ અહીં મન છે. કેમ કે આત્માનું જ દમન કરવામાં આવે છે. જીવ આત્મા એનું દમન કરવાવાળા છે. દમન કરવાથી આત્માને મોટામાં મોટો લાભ તો એ થાય છે કે જે પ્રકારે સૂર્યનો ઉદય થવાથી ઠંડીની વેદનાની નિવૃત્તિ થાય છે. એજ રીતે મનને જીતી લેવાથી આત્માના સકળ દુઃખોની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે. આ માટે શાસ્ત્રકારોનો આ ઉપદેશ છે કે:-

“જઓ જઓ સંચરઈ, મળો ચંચલમત્થિરં ।

તઓ તઓ નિયમિય, કુજ્જા અપ્પંમિ તં થિરં ॥”

આ અસ્થિર ચંચલ મન જે જે પદાર્થોની તરફ ઢળે-એમાં ચાલે-એને ત્યાંથી ખેંચીને મોક્ષાભિલાષીએ પોતાના આત્મામાં સંલગ્ન કરી રહેવું જોઈએ. જ્યાં સુધી મન સ્થિર નહીં હોય-ત્યાં સુધી એનો નિગ્રહ થનાર નથી-ત્યાં સુધી તત્ત્વજ્ઞાન આત્મામાં ઉત્પન્ન થઈ શકતું નથી. તત્ત્વજ્ઞાનની જાગૃતિ થયા વગર આત્માને હેય અને ઉપાદેય પદાર્થોનું વાસ્તવિક ભાન થઈ શકતું નથી.

ટીકા—‘અપ્પા ચેવં’ ઇત્યાદિ—

આત્મૈવ=મન એવ, દમિતવ્યઃ—વશી કર્તવ્યો જેતવ્ય ઇત્યર્થઃ, રૂઢાત્મશબ્દેન મનો ગૃહ્યતે તસ્યૈવ દમનીયત્વાત્ । આત્મા તુ દમકો વોધ્યઃ । શબ્દાદિ વિષયેષુ પ્રવર્તમાનં મનસ્વતઃ પ્રત્યાહત્ય સ્વાત્મનિ સ્થાપનીયમિતિ ભાવઃ ।

અન્વયાર્થ—(અપ્પાચેવ દમેયવ્યો—આત્મા એવદમિતવ્યઃ) મન હી દમન કરને યોગ્ય હૈ । ( અપ્પા હુ સ્વલુ દુદ્દમો—આત્મા હુ સ્વલુ દુર્દમઃ ) કયોં કિ મન હી દુર્દમ હૈ । (અપ્પા દંતો અસ્સિ લોણ પરત્થ ય સુહી હોઈ—આત્માનં દામ્યન્ રૂહલોકે પરત્ર ચ સુખી ભવતિ ) મનકો દમન કરને ચાલા જીવ નિયમ સે રૂસ લોક મેં તથા પરલોક મેં સુખી હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર રૂસ ગાથા દ્વારા રૂન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં પ્રવર્તમાન મન કે નિગ્રહ કરનેકા ઉપદેશ દે રહે હેં । વે કહતે હેં કિ રૂસલોક એવં પરલોક મેં યદિ સુખી હોના ચાહતે હો—તો મનકા નિગ્રહ કરો રૂસે અપને વશ મેં કરો । જવ તક રૂસકો વશ મેં નહોં કિયા જાયગા તવ તક રૂસકા અધીન વના હુઆ આત્મા કમી મી કિસી મી ભવ મેં સુખ શાંતિ નહોં પાયેગા । આત્મા હી મન કા દમન કર સકતા હૈ । દમન કરનેકા મતલબ યહ હૈ કિ જો મન રૂન્દ્રિયોંકે વિષયોં મેં ગૃહ્ય વના હુઆ હૈ રૂસકો રૂનમેં ગૃહ્ય નહોં વનને દેતા । યહી મનકા દમન કરના હૈ । મનકો વિષયોંસે હટાકર આત્મામેં સ્થાપિત કરના ચાહિયે । તમી આત્મા મેં શાંતિ

અન્વયાર્થઃ—અપ્પા ચેવ દમેયવ્યો—આત્મા એવ દમિતવ્યઃ—,

મનજ દમન કરવા યોગ્ય છે.

અપ્પા હુ સ્વલુ દુદ્દમો—આત્મા હુ સ્વલુ દુર્દમઃ—,

કેમકે મનજ દુર્દમ છે.

અપ્પા દંતો અસ્સિ લોણ પરત્થ ય સુહી હોઈ ।

આત્માનં દામ્યન્ રૂહ લોકે પરત્ર ચ સુખી ભવતિ ।

મનનું દમન કરનાર એવ આલોક અને પરલોકમાં સુખી થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા રૂન્દ્રિયોના વિષયોમાં પ્રવર્તમાન મનનો નિગ્રહ કરવાનો ઉપદેશ આપી રહ્યા છે. તેઓ કહે છે કે, આ લોક અને પરલોકમાં જો સુખી થવાં ચાહતા હો તો—મનનો નિગ્રહ કરો, અને પોતાના વશમાં રાખો. જ્યાં સુધી મનને વશ કરવામાં ન આવત્યાં સુધી એના આધીન બનેલો આત્મા કયારેય પણ—કોઈ પણ ભવમાં સુખ શાંતિથી રહી શકવાનો નથી. આત્મા જ મનનું દમન કરી શકે છે. દમન કરવાનો હેતુ એ છે કે મન રૂન્દ્રિયોના વિષયમાં વ્યાપ્ત બન્યું છે. એને એમાંથી દુર કરવું એજ મનનું દમન કરવું છે. મનને વિષયોથી હટાડી આત્મામાં સ્થાપિત કરવું જોઈ એ. ત્યારે



वृक्षतले उपविष्ट आसीत् तदा तेन महात्मना ध्यानावस्थायामेकं श्वापदसंकुलं व्यालाकुलं विशालं महारण्यं दृष्टम् । तत्रैको पुरुषस्तेन दृष्टः, स च सहस्रभुजो विस्तृतकायः सहस्रहस्तधृतैः सहस्रमुशलैः स्वदेहं ताडयन् भीतभीत इव चीत्कारं कुर्वन्नितस्ततः पलायमानः शतयोजनानि धावमानः श्रमेण शिथिलावयवः परवशः सन् पातालवद्गम्भीरे गाढान्धकारे महान्धकूपे निपतितः । पुनरसौ तस्मादन्धकूपाद् वहिर्निःसृतः पूर्ववत् सहस्रमुशलैः स्वदेहं ताडयति तदनु महत्यामग्निज्वालायां शलभ इवासौ प्रविष्टः । पुनरसौ ततोऽपि वहिर्निःसृत्यकण्टकाकीर्णे महारण्ये इतस्ततो धावति, तदनु पुनः स्वदेहोपरि पूर्ववत्सहस्रमुशलप्रहारं कुर्वन् स दृष्टः ।

बैठे हुए थे । मुख पर सदोरक मुखवस्त्रिका बँधी हुई थीं, उन्हें उस ध्यान में एक विशाल जंगल दिखलाई पड़ा । जो श्वापदों हिंसक प्राणीयों से संकीर्ण एवं व्याप्त था । उस में उन्होंने एक महाकाय व्यक्ति जिसके हजार हाथ थे देखा । उसके सब ही हाथों में मुसल थे । वह इधर उधर भागता हुआ मुसलको शरीर पर मारता हुआ भयंकर चीत्कार शब्द करता था । वह भागता भी इतना अधिक कि सौ योजन तक निकल जाता । जब वह थक जाता और उसका शरीर जब ढीला हो जाता तब वह पाताल के समान गंभीर एक महान्धकूप में कि जिसमें गाढ़ अंधकार ही अंधकार था उसमें गिर जाता था । पीछे वहाँसे निकलना और इसी तरह अपने शरीर को हजारों मुसलोंसे पीटता, बाद में शलभ—(पतंग) की तरह एक महती अग्निज्वाला में प्रविष्ट हो जाता । पश्चात् वहाँ से भी निकल कर वह एक कण्टकाकीर्ण अरण्य में घुस जाता और वहाँ इधर उधर दौड़ता हुआ अपने शरीर को सहस्र मुसलों से पूर्वकी तरह

બેઠા હતા. મોઢા ઉપર દોરાસાથે મુખવસ્ત્રિકા બાંધેલ હતી. એમને એ ધ્યાનમાં એક વિશાળ જંગલ દેખાયું, જે અનેક પ્રકારના હિંસક પ્રાણીઓથી ભરેલું હતું, તેમાં એમણે એક મહાકાય વ્યક્તિ જેને હજાર હાથ છે તેવી ભેધ, એના બધા હાથોમાં મુશળ હતાં, તે અહિંથી તહીં દોડતા દોડતા મુસલોને પોતાના શરીર પર મારતો હતો અને ભયંકર ચિત્કાર શબ્દ કરતો હતો, એ એટલા ભેરથી દોડતો હતો કે સો યોજન સુધી નિકળી જતો. થાક લાગતો અને શરીર જ્યારે ઢીલું થઈ જતું ત્યારે તે ખુબજ ઉંડા અને ગાઢ અંધકારથી છવાયેલ કુવામાં કુદી પડતો, પાછો ત્યાંથી નિકળતો અને એજ રીતે હજારો મુસલોથી પોતાના શરીરને ટીપતો. બાદમાં શલભ (પતંગ)ની માફક એક મહત્તી અગ્નિ-જ્વાલામાં પડતો અને ત્યાંથી પણ નીકળીને તે મહાન કાંટાઓવાળા જંગલમાં ઘુસી જતો ત્યાં પણ આમ તેમ દોડતો અને પહેલાંની જેમ પોતાના

પાતયતિ ઉન્માર્ગં પ્રાપયતિ ચતુર્ગતિકસંસારચક્રે ભ્રામયતિ નરકનિગોદાઘ્રનન્તદુઃખ-  
ગર્તે નિપાતયતિ રત્નત્રયં લુપ્તયતિ આત્મગુણાન્ પાતયતિ જ્ઞાનાવરણીયાઘપ્તવિધં  
કર્મોપાર્જયતિ । તસ્માન્મનો નિગ્રહં કુર્યાત્ ।

અત્રોદાહરણમ્—

તથાહિ—एको लब्धिसंपन्नो महात्मा बद्धसदोरकमुखवह्निकः ध्याननिष्ठः सन्

હે જો અચ્છે-અચ્છે જ્ઞાનીજન 'મી સંયમરૂપી શિશ્વર' સે ઇકદમ પતિત  
હો જાતે હૈં ઓર નહીં સેવન કરને યોગ્ય માર્ગ મેં 'મી પ્રવૃત્ત' હો જાતે હૈં ।  
ઇસસે ડનકી ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં પરિભ્રમણરૂપ દુર્દશા હી હોતી રહતી  
હૈં । નરક ણં નિગોદ કે અનંત દુઃખોં કો વે ભોગતે હૈં । ઇન સમસ્ત  
દુઃખોં સે આત્મા કા સંરક્ષણ કરનેવાલા જો રત્નત્રય ધર્મ હૈં-વહ ડનકા  
લુપ્ત જાતા હૈં । વે બિલકુલ નિર્ધન બન જાતે હૈં । ઇન નિર્ધનતા મેં ઓર  
મી અનેક જો આત્મા કે સદ્ગુણ હૈં ડનકા વિકાસ નહીં હોતે પાતા હૈં  
ઇસ સ્થિતિ મેં ઇસ આત્મા કી ઇતની દયનીય સ્થિતિ હો જાતી હૈં, કિ  
જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મ ઇસ પર રાત દિન અપના પ્રહાર  
કરતે રહતે હૈં । ઇસકો ડસ સમય વચ્ચાનેવાલા કોઈ નહીં હોતા હૈં । ઇસ  
લિયે મોક્ષાભિલાષી કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ મન કા નિગ્રહ કરે ।

ઇસ વિષય કો ઇક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈં—

कोई एक महात्मा जो लब्धिसंपन्न थे, एक वृक्ष के नीचे ध्यानमें

મન એવું ચંચળ છે કે બલબલા જ્ઞાનીજનને પણ સંયમરૂપી શિશ્વર ઉપરથી  
એકદમ નીચે ગળડાવી મુકે છે, અને સેવન ન કરવા યોગ્ય માર્ગમાં પ્રવૃત્ત  
બનાવી દે છે. આથી તેમની ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં પરિભ્રમણ રૂપ દુર્દશા જ  
થતી રહે છે. નરક અને નિગોદના અનંત દુઃખો તે ભોગવે છે. આ સમસ્ત  
દુઃખોથી આત્માનું રક્ષણ કરનાર જે રત્નત્રય ધર્મ છે-તે એની પાસેથી  
લુપ્ત થાય છે, આથી બિલકુલ નિર્ધન બની જાય છે. આ નિર્ધનતામાં  
આત્માના જે બીજા સદ્ગુણ હોય છે એનો પણ વિકાસ થતો નથી. આ  
પરિસ્થિતિમાં આત્માની એટલી દયામય હાલત થઈ જાય છે, કે જ્ઞાનાવરણાદિક  
આઠ પ્રકારનાં કર્મ રાત અને દિવસ એના પર પ્રહાર કરતાં રહે છે. આ સમયે  
એને આમાંથી કોઈ બચાવનાર હોતું નથી આ માટે મોક્ષાભિલાષીનું કર્તવ્ય  
છે કે, તે મનને નિગ્રહ કરે.

આ વિષયને એક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

કોઈ એક મહાત્મા જે લબ્ધિસંપન્ન હતા, એક વૃક્ષની નીચે ધ્યાનમાં

અહમન્યો નાસ્મિ કિં તુ મનોનામ્ના પ્રસિદ્ધોઽસ્મિ ઇષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયે પ્રવર્ત-  
માનોઽહં તૃષ્ણારજ્જ્વા પ્રાણિનં વધ્નામિ, તતસ્તમારમ્ભપરિગ્રહાઽસક્તં સંસારચક્રે  
ભ્રામયન્ કદાચિદેવજાતૌ કદાચિન્નરજાતૌ કદાચિત્તિર્યગ્જાતૌ કદાચિત્ પૃથિ-  
વ્યાદિસ્થાવરયોનિષુ દ્વીન્દ્રિયાદિ-ત્રસયોનિષુ અનન્તદુઃખં પ્રાપયામિ । યદા તુ  
ભવાદૃશેન મહાત્મના નિગૃહીતો ભવામિ તદા રત્નત્રયારાધનં કારયામિ, મોક્ષમાર્ગે  
સ્થાપયામિ, ક્ષપકશ્રેણિમારોહયામિ । શનૈઃ શનૈર્નિગ્રહાભ્યાસપ્રકર્ષે સતિ શાસ્ત્રસંદર્શિ-

નહીં હું-મેરા નામ મન હૈ । ઇષ્ટ અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોં મેં પ્રવૃત્તિ  
કરના ઓર તૃષ્ણારૂપી રસી સે પ્રાણિયોં કો જકડના યહી મુજે પ્રિય  
હૈ । મુજે આનંદ મી ઇસી મેં આતા હૈ કિ જવ પ્રાણી આરંભ પરિગ્રહ મેં  
આસક્ત હોકર સંસાર ચક્રમેં ઘૂમતા હૈ । મેં હી તો ડનકી ઇસ સ્થિતિ  
કા મૂલ કારણ બનતા હું । કમી મેં જીવોં કો દેવજાતિ મેં, કમી મનુષ્ય  
યોનિ મેં કમી તિર્યગ્જાતિ મેં, કમી પૃથ્વીયાદિક સ્થાવર યોનિ મેં, કમી  
દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ પર્યાયોં મેં ઘુમાતા રહતા હું ઓર વહાંકે અનંત કષ્ટોં  
કા ડન્હે પાત્ર બનાતા હુઆ વડા ખુશી હોતા રહતા હું । આપ જૈસે  
મહાત્માઓ પર દુઃખ હૈ કિ મેરા વશ નહીં ચલતા । કારણ કિ આપકે  
સામર્થ્ય કે આગે મેરી શક્તિ સર્વથા સંકુચિત હો જાતી હૈ । વહ  
ઇસ દિશા મેં ન વહ કર દૂસરી દિશા તરફ વહને લગ જાતી હૈ ।  
ઇસલિયે મેં નિગૃહીત હોકર આપ જૈસોં સે રત્નત્રય કી આરાધના  
કરવાતા હું । મુક્તિ કે માર્ગ મેં લગા દેતા હું તથા ક્ષપકશ્રેણિ  
પર મી ચઢા દેતા હું । જવ સાધુજનોં કા મુજે નિગ્રહ કરને

હું બીજો કોઈ નથી-મારું નામ મન છે. ઇષ્ટ અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં  
પ્રવૃત્તિ કરવી અને તૃષ્ણારૂપી રસીથી પ્રાણીઓને બાંધવા એ મને પસંદ છે.  
મને આનંદ પણ એ વાતમાં આવે છે કે જ્યારે પ્રાણી આરંભ પરિગ્રહમાં  
આશક્ત બની સંસાર ચક્રમાં ઘૂમે છે. હું પોતેજ તેની આ સ્થિતિનું મૂળ  
કારણ બનું છું, કોઈ વખત હું જીવોને દેવ જાતીમાં, ક્યારેક મનુષ્ય યોનીમાં,  
ક્યારેક તિર્યંચ ગતિમાં, ક્યારેક પૃથ્વી આદિ સ્થાવર યોનીમાં, ક્યારેક બે  
દ્વીન્દ્રિયવાળા ત્રસ પર્યાયોમાં ઘૂમતો રહું છું. અને ત્યાંના અનેક કષ્ટોનો પાત્ર  
બનાવી હું ખુશી થતો રહું છું. આપ જેવા મહાત્માઓ ઉપર મારો પ્રભાવ પડી  
શકતો નથી એ વાતનું મને દુઃખ છે. કારણ કે આ આપના સામર્થ્ય આગળ  
મારી શક્તિ સર્વથા સંકુચિત બની જાય છે. તે આ દિશામાં ન વહેતાં બીજી  
દિશા તરફ વહેતી હોય છે. આ માટે હું નિગૃહીત બનીને આપ જેવાઓથી  
રત્નત્રયની આરાધના કરાવું છું મુક્તિના માર્ગમાં લગાડી દઉં છું, અને ક્ષપક

અથાસૌ દૂરં ગત્વાઽદ્રાહસં કુર્વન્ ધાવમાનચન્દ્રકિરણશીતલં કદલીવનં પ્રવિષ્ટઃ ।  
 ક્ષણાદેવ તતોઽપિ વહિર્નિઃસૃત્ય પુનઃ સ્વદેહોપરિ સહસ્રમુશલૈઃ પ્રહારં કુર્વન્ ધાવમાન  
 શ્વસ્તતો ભ્રામ્યતિ । પુનઃ શ્રમેણ શિથિલાવયવઃ સન્ મહાન્ધકપે નિપતિતઃ । તત-  
 થિરેણ નિઃસૃત્ય પુનઃ કદલીવનં પ્રવિષ્ટઃ, તતોઽપિ નિર્ગત્ય લતાવનં ગતઃ, લતા-  
 વનાદ્ વહિર્ભૂત્વાઽન્ધકૂપે પતિતઃ, તદનુ કૂપાન્નિઃસૃત્ય કુસુમવનં ગતસ્તત્રેતસ્તતો  
 ધાવમાનઃ સ્વદેહોપરિ મુશલૈઃ પ્રહારં કરોતિ તતોઽપિ નિઃસૃત્ય ફલવનં પ્રવિષ્ટઃ,  
 તત્રાપિ ધાવમાનઃ સ્વદેહોપરિ પૂર્વવત્ સહસ્રમુશલૈઃ પ્રહારં કરોતિ । એવંવિધં પુરુષં  
 સ મહાત્મા જ્ઞાન દૃષ્ટ્યા વિલોક્ય સ્વલબ્ધિ વલેન તસ્ય પ્રતિરોધં કૃત્વા પૃષ્ટવાન-  
 કસ્ત્વમ્ ? કિમર્થમેવં ક્રિયતે ? તવ કિં પ્રિયમસ્તિ ? એવં પૃષ્ઠોઽસૌ પુરુષોઽબ્રવીત્-

હી પ્રહારિત કરતા । ફિર દૂર જાકર વઢે જોર સે હૈસતા ઓર ચંદ્રકિરણ  
 કે સમાન શીતલ કદલીવન મેં પ્રવેશ કર વહાં વિશ્રામ કરને લગતા ।  
 ક્ષણ એક વિશ્રામિત હોકર વહાંસે બાહર આતે હી ફિર વહી અપની ચાલ  
 શુરુ કરતા, જવ વહુ ઇસ ચાલ સે થક જાતા થા તો ગાઢ અંધકાર વાલે  
 કૂણેં મેં ગિર જાતા થા, વહાં સે નિકલ કર ફિર કદલી વનમેં જાતા, વહાં  
 સે બાહર હોતે હી લતાવન મેં વહાંસે ફિર અંધકૂપ મેં વહાં સે કુસુમિત  
 વન મેં, વહાં સે ફલ વાલે વન મેં ઇસ પ્રકાર ભ્રમણ કરતા-કરતા વહુ  
 અપને શરીર કો મૂસલોં કે પ્રહારોંસે કૂદતા રહતા । મહાત્મા ને જવ ઇસ  
 પ્રકાર કી ઇસકી સ્થિતિ દેસ્વી તો ઉન્હેં વઢા હી અચરજ હુઆ । ડસકી  
 ઇસ સ્થિતિ કો ઉન્હોંને અપને લબ્ધિવલ સે સ્થંભિત કર દિયા ઓર ડસસે  
 પૂછા-તું કોન હૈ ઓર ક્યોં ઇસ પ્રકાર કી ચેષ્ટાઈ કરતા હૈ ? તુજે ક્યા  
 પ્રિય હૈ ? મહાત્માકી ઇસ વાત કો સુનકર ડસને કહા કિ મૈ ઓર કોઈ

શરીર ઉપર મુશલોના ફટકા લાગાવતો પછી થોડા આગળ વધી ઝેર ઝેરથી  
 હસતો અને ચંદ્રકિરણ સમાન શીતળ કેળોના વનમાં પ્રવેશ કરી ત્યાં આરામ  
 કરવા લાગતો. થોડો સમય વિશ્રાંતિ લઈ-શ્રમ રહિત બની ત્યાંથી બહાર  
 નીકળી પૂર્વવત્ દોડા દોડ અને શરીર ઉપર મુશલના પ્રહારની પ્રવૃત્તિ, અંધ-  
 કારવાળા કુવામાં પડવું, ફરી પાછો કેળોના વનમાં પ્રવેશ, ત્યાંથી લતા વનમાં,  
 ત્યાંથી ફરી કુવામાં, ત્યાંથી નીકળી ફરી કેળોના વનમાં, આ પ્રકારે બ્રમણ કરતો  
 અને પોતાના શરીરને મુસલોથી મારતો. આ સ્થિતિ બ્યારે મહાત્માએ જોઈ  
 ત્યારે તેમને ભારે અચરજ થઈ, એની એ સ્થિતિને પોતાના લબ્ધિબળથી સ્થંભિત  
 બનાવી દઈ મહાત્માએ તેને પૂછ્યું-તું કોણ છે અને આ પ્રકારની ચેષ્ટાઓ  
 શા માટે કરે છે ? તને શું પ્રિય છે ? મહાત્માની વાત સાંભળી તેણે ક

યદ્વા—આત્મા=વાહ્યેન્દ્રિયં દમિતવ્ય એવં વાહ્યેન્દ્રિય પંચવિધં શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણી  
રસનસ્પર્શનભેદાત્ । વાહ્યેન્દ્રિયાણાં દમનાકરણે આત્મનો વિનાશઃ સ્યાત્ । ઉક્તંચ—  
જિસ પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદય હોને કે પહિલે ઉસકા આલોક-પ્રકાશ  
પ્રસૂત હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સમસ્ત રૂપાદિક પદાર્થોંકો વિષય કરને  
વાલા યહ પ્રતિભજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનરૂપ સૂર્ય કે ઉદિત હોને કે પહિલે ઉસકી  
પ્રમા સરીગ્વા પ્રકટ હો જાતા હૈ । જિસસે યહ વાત નિશ્ચિત હો જાતી  
હૈ કિ અવ ઇસ આત્મા મેં કેવલજ્ઞાન કા ઉદય હોનેવાલા હૈ । જવ મનો-  
નિગ્રહ કા અભ્યાસ સર્વોત્કૃષ્ટ અવસ્થા સંપન્ન હો જાતા હૈ તવ ઉસ સમય  
આત્મા મેં કેવલજ્ઞાન કી ઉદ્ભૂતિ હો જાતી હૈ । ઇસકે સમસ્ત પદાર્થોંકા  
સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ હોને લગ જાતા હૈ । કોઈં મીં રૂપી અથવા અરૂપી પદાર્થ  
એસા નહીં વચતા જો કેવલજ્ઞાન કા વિષય નહીં વનતા હો । યહ જ્ઞાન  
અનુપમ હૈ—એસા કોઈં ઓર જ્ઞાન નહીં હૈ—કિ જિસસે ઇસે ઉપમિત ક્રિયા  
જા સકે । ઇસકે દ્વારા પ્રકાશિત પદાર્થોં મેં કિસી મીં પ્રકાર સે વાધા  
નહીં આતી હૈ । ઇસ પ્રકાર મહાત્માસે કહકર વહ મન નામકા પુરુષ  
અન્તર્હિત હો ગયા ॥

આત્મા શબ્દ કા અર્થ વાહ્ય ઇન્દ્રિયાં મીં હૈં । વે સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ ઓર કર્ણ કે ભેદ સે ૫ પ્રકાર કી હૈં । મોક્ષાભિલાષી આત્મા

જ્ઞાનની અપેક્ષા રહેતી નથી. જેમ સૂર્યનો ઉદય થયા પહેલાં તેનો આવવાનો  
પ્રકાશ પ્રસાર પામે છે, જાસ પ્રસ્તુત બને છે તે પ્રકારે સમસ્ત રૂપાદિક પદાર્થોનો  
વિષય કરવાવાળા આ પ્રાતિભ જ્ઞાન કેવળ જ્ઞાનરૂપ સૂર્યના ઉદય થતાં  
પહેલાં તેની પ્રભારૂપે પ્રગટ થાય છે. જેથી એ વાત નિશ્ચય બને છે કે  
હવે આ આત્મામાં કેવલજ્ઞાનનો ઉદય થવાનો છે. બ્યારે મનોનિગ્રહનો અભ્યાસ  
સર્વોત્કૃષ્ટ અવસ્થા સંપન્ન બની જાય છે, ત્યારે તે સમય આત્મામાં કેવલજ્ઞાનની  
ઉદ્ભૂતિ થઈ જાય છે. આથી સમસ્ત પદાર્થોનો સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ થવા લાગી જાય  
છે. કોઈ પણ રૂપી અથવા અરૂપી પદાર્થ એવો નથી બચતો જે કેવલજ્ઞાનનો  
વિષય ન બનતો હોય, આ જ્ઞાન અનુપમ છે એવું બીજું કોઈ જ્ઞાન નથી કે  
જેનાથી આને ઉપમિત કરી શકે. તેના દ્વારા પ્રકાશિત પદાર્થોમાં કોઈ પણ  
પ્રકારની બાધા આવતી નથી. આ પ્રકારે મહાત્માને ઠહીને તે મન નામનો  
પુરુષ અંતર્ધાન થઈ ગયો.

આત્મા શબ્દનો અર્થ બાહ્ય ઇન્દ્રિયો પણ છે, જે સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ, અને જ્ઞાનના લેહથી પાંચ પ્રકારની છે. મોક્ષાભિલાષી આત્મા એવું હમન



તોપાયાઃ વચનગોચરાતીતાઃ, નિગ્રહાભ્યાસપ્રકર્પરહિતમાણિગણસંવેદનયાગમ્યાઃ  
સિદ્ધિપદસંપજ્જનકાઃ સૂક્ષ્મસૂક્ષ્મતરાર્થવિપયા મનાઃ સમૃદ્ધસત્સ્ફુટપ્રતિભાસા  
જ્ઞાનવિશેષા ઉત્પદ્યન્તે । તતઃ કિંચિદ્નાત્યન્તપ્રકર્પે નિરપેક્ષમત્યાદિજ્ઞાનં પ્રકર્પપર્યન્તો-  
ત્તરકાલભાવિકેવલજ્ઞાનાદર્વાક્તનં સવિતુરુદયાત્ પ્રાઃ તદાલોકકલ્પમ્ અશેષ-  
રૂપાદિવસ્તુવિશેષં પ્રાતિમં જ્ઞાનમુદયતે, પથાત્ સર્વોત્કૃષ્ટપ્રકર્પે સતિ મુસ્પૃષ્ટપ્રતિ-  
ભાસંસકલલોકાલોકવિષયમનુપમમવાધ્યં કવલજ્ઞાનમુત્પદ્યતે । એવમુક્ત્વાઽસૌ વિરો-  
હિતો જાતઃ । તસ્માદાત્મૈવ દમનીયઃ ।

કા અભ્યાસ ધીરે-ધીરે પ્રકર્પ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ તવ્વે આ અભ્યાસ કી પ્રકર્પતા કી કૃપા સે અન્હે જ્ઞાનવિશેષોંકી પ્રાપ્તિ હો જાતી  
હૈ । અન્હે સે શાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત ઉપાયોં કા નિરીક્ષણ કિયા કરતે હૈ । અન્હે જ્ઞાનવિશેષોં કા કથન એસા તો નહીં હૈ જો આપકે સમક્ષ વચનોં  
દ્વારા કથિત હો સકે । યહ વાત તો વે હી જાન સકતે હૈ જો આ અવ-  
સ્થા પર પહુંચ ચુકે હોતે હૈ । અન્હેની આત્મા આ નિગ્રહ કે અભ્યાસ કે  
પ્રકર્પ સે વિહીન હૈ ભલા વે અન્હે સ્વાદ કો કિયા જાને । એ જ્ઞાન વિશેષ  
સિદ્ધિપદરૂપી સંપત્તિ કે જનક હોતે હૈ । સૂક્ષ્મ, સૂક્ષ્મતર અપી પદાર્થોંકે એ  
નિર્ણાયક હોતે હૈ । અન્હે જીવોંકા કુછ-કુછ પદાર્થોંકા સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ  
હોને લગ જાતા હૈ । જવ્વે મનોનિગ્રહ કરનેકા અભ્યાસ કિશ્ચિત્ ન્યૂન  
અત્યંત પ્રકર્પ અવસ્થા તક પહુંચ જાતા હૈ તવ્વે અન્હે સમય આત્મા મેં  
પ્રાતિભ નામકા એક જ્ઞાનવિશેષ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । યહ જ્ઞાન કેવલજ્ઞાનસે  
પહિલે હોતા હૈ । અન્હે મત્યાદિક પરોક્ષ જ્ઞાનકી અપેક્ષા નહીં રહતી હૈ ।

શ્રેણી પર યથુ ચડાવી દઉં છું. ત્યારે સાધુજનનો નિગ્રહ કરવાનો મને અભ્યાસ  
ધીરે ધીરે પ્રકર્ષ અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે આ અભ્યાસની પ્રકર્ષતાની  
કૃપાથી તેને જ્ઞાન વિશેષોની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે, તેનાથી તે શાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત  
ઉપાયોનું નિરીક્ષણ કર્યા કરે છે. એ જ્ઞાન વિશેષોનું કથન એવું તો નથી જે  
આપની સામે વચનથી કહી શકાય, તે વાત તો તેજ જાણી શકે છે જે આ અવ-  
સ્થાને પહોંચેલ છે. જેની આત્મા આ નિગ્રહના અભ્યાસના પ્રકર્ષથી વિહીન  
છે. આવા જીવ એ સ્વાદને ક્યાંથી જાણે. આ જ્ઞાન વિશેષ સિદ્ધિ પદરૂપી  
સંપત્તિના જનક હોય છે. સૂક્ષ્મથી સૂક્ષ્મ પદાર્થોના પણ એ જાણકાર હોય છે.  
એમનાથી જીવોને કોઈ કોઈ પદાર્થનો સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ થવા લાગે છે.  
મને નિગ્રહ કરવાનો અભ્યાસ ત્યારે થોડા અંશે અત્યંત પ્રકર્ષ અવસ્થા સુધી  
પહોંચી જાય છે ત્યારે એ સમયે આત્મામાં પ્રાતિભ નામનું એક જ્ઞાનવિશેષ  
ઉત્પન્ન થાય છે. આ જ્ઞાન કેવલ જ્ઞાનથી પહેલાં થાય છે. તેમાં મત્યાદિક

અર્થ ભાવઃ—મનોનિગ્રહેણ વાહ્યેન્દ્રિયનિગ્રહેણ ચાત્મા ઉપશમભાવે નેતવ્ય  
ઇતિ ભાવઃ ।

હુ=નિશ્ચયેન, સ્વલુ-યતઃ આત્મા દુર્દમઃ=દુર્જયઃ ।

અત્રોદાહરણમ્—

‘અપ્પા હુ સ્વલુ દુર્દમો’ ઇતિ ભગવદ્વચનં ભદ્રાચાર્યસન્નિધૌ શ્રુત્વાઽઽત્મક-  
લ્યાણસાધક ઉગ્રવંશોત્પન્ન ઉગ્રનામા નૃપઃ પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ । સ્વકલ્યાણાર્થં મનો  
નિગ્રહીતું પ્રવ્રત્તઃ । કિન્તુ મનઃ પારદવત્ પરમચન્ચલમ્, તેન તત્સ્વાયત્તં ન જાતમ્,  
અસૌ મુનિવ્રતધારી નૃપથિન્તયતિ-અહો ! એકેનાપિ કોપકટાક્ષમાત્રેણ સર્વે જના  
મમાજ્ઞાં શિરસિ ધૃત્વા મમાયત્તાઃ સન્તો મમ ચરણં શરણીકૃત્ય તિષ્ઠન્તિ સ્મ । પરન્તુ

વિષયોં કી ઓર અર્થાત્ અસંયમ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । સંયમરૂપી  
લગામ સે સંયમિત કરે જિસસે ડનકી અસંયમ મેં પ્રવૃત્તિ રુક જાય । કહને  
કા ભાવ યહી હૈ કિ પાંચ ઇન્દ્રિય એવં મન ઇન છહ કો નિગૃહીત કરને સે  
આત્મા અપને ઉપશમ ભાવમેં સ્થિત હોતા હૈં । અતઃ ઇનકે નિગ્રહ કરનેકા  
પ્રયત્ન પ્રત્યેક મોક્ષાભિલાષીઃ આત્મા કો કરના ચાહિયે । “અપ્પા હુ  
સ્વલુ દુર્દમો ” ઇસ પ્રભુ કથિત વચન કો ભદ્રાચાર્ય કે પાસ સુનકર ઉગ્ર-  
વંશીય ઉગ્ર નામકા રાજા દીક્ષિત હુએ । ડન્હોને હર તરહ સે અપને મન  
કો નિગ્રહ કરને કા સ્વલુ પ્રયત્ન કિયા, પરન્તુ પારે એવં પવનકે સમાન  
અતિ ચંચલ હોને સે ડસકા વહ નિગ્રહ નહીં કર સકે । ડસી મુનિવ્રત-  
ધારી રાજા ને વિચાર કિયા-વડે આશ્ચર્યકી વાત હૈ કિ એક કોપકુટિલ  
બ્રહ્મકુટીમાત્ર સે બી સમસ્ત મેરે પ્રજાજન મેરી આજ્ઞાકો શિર પર ધારણ  
કર લિયા કરતે થે ઓર ચરણ કી શરણ મેં આ જાતે થે-પરન્તુ-યહ

માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે. એને સંયમરૂપી લગામથી સંયમિત બનાવે જેનાથી  
તેની અસંયમની પ્રવૃત્તિ રોકાઈ જાય. મતલબ કહેવાનો એ છે કે, પાંચ ઇન્દ્રિય  
અને મન, આ છ ને નિગૃહીત કરવાથી આત્મા પોતાના ઉપશમ ભાવમાં સ્થિત  
થાય છે. આથી એનો નિગ્રહ કરવાનો પ્રયત્ન ફરેક મોક્ષાભિલાષી આત્માએ  
કરવો જોઈએ. “અપ્પાહુ સ્વલુ દુર્દમો” આ પ્રભુએ કહેલા વચનને ભદ્રાચાર્યની  
પાસેથી સાંભળીને ઉગ્રવંશીય ઉગ્ર નામના રાજા દીક્ષિત થયા. તેઓએ ફરેક  
પ્રકારે પોતાના મનનો નિગ્રહ કરવાનો ખુબ પ્રયત્ન કર્યો, પરંતુ પવનના સમાન  
અતિ ચંચળ હોવાથી તેનાથી નિગ્રહ કરી શકાયો નહીં. એ મુનિવ્રતધારી રાજાએ  
વિચાર કર્યો-ધણા આશ્ચર્યની વાત છે કે, એક કોપ કુટિલ બ્રહ્મકુટી માત્રથી મારા  
સમસ્ત પ્રજાજનો મારી આજ્ઞાને માથા ઉપર ધારણ કરતા હતા અને ચરણના  
શરણમાં આવી જતા હતા. પરંતુ આ મન કેટલું બળવાળું છે જે મારા વશમાં

કુરંગમાતલ્લપતલ્લપ્ત-  
 મીના હતા: પશ્ચભિરેવ પશ્ચ ।

एकः प्रमादीस न हन्यते किं,

यः सेवते पश्वभिरेव पश्व ॥ १ ॥

अन्यच्च—इन्द्रियाणां हि चरतां, विषयेष्वपहारिण ।

संयमे यत्नमातिष्ठेद्, विद्वान् यन्तेव वाजिनाम् ॥ १ ॥

અયમર્થઃ—વિદ્વાન્=તત્ત્વજ્ઞઃ અપહારિણુ=પ્રાકર્ષકેષુ=તત્ત્વદિન્દ્રિયવિષયેષુ ચરતાં=ગચ્છતામ્ ઇન્દ્રિયાણાં સંયમે=સંયમને યત્નમ્ આતિષ્ઠેત્=કુર્યાત્, ક ઇવ ? ઇત્યાદિ-વાજિનામ્=અશ્વાનાં યન્તેવ=સારથિરિવેતિ ।

यदि इनका दमन नहीं करता है तो वह मुक्तिमार्ग में प्रवृत्त नहीं हो सकता है और न साधक ही बन सकता है । इन्द्रियों का यदि दमन न किया जाय तो शास्त्रकारों ने यहां तक कह दिया है कि आत्मा का भी विनाश हो जाता है । कहा भी है—देखो—जब क्रमशः एक एक इन्द्रिय के विषय में लोलुप होने से कुरंग-हिरण, मातंग-हस्ती, पतंग, भ्रमर एवं मीन-मछली, ये प्राणी अपने प्राणों से रहित होते हैं तब जो मनुष्य पांचों इन्द्रियोंके विषय में लोलुप बनेगा क्या वह विनष्ट नहीं होगा ? परंतु अवश्य विनष्ट होगा—दुर्गति को प्राप्त करेगा । अतः जिस प्रकार यन्ता-अश्वरोही-घुड़सवार-इच्छित मार्ग पर चलाने के लिये घोड़े को लगाम द्वारा अपने आधीन बना लेता है उसी प्रकार आत्महितैषी का कर्तव्य है कि वह भी इन इन्द्रियरूपी घोड़ों को कि जो अपने-अपने

ન કરે તો તે મુક્તિ માર્ગમાં પ્રવર્તી બની શકતો નથી. તેમજ સાધક પણ બની શકતો નથી. ઇન્દ્રિયોનાં જો દમન ન કરવામાં આવે તો શાસ્ત્રકારોએ ત્યાં સુધી કહેલું છે કે, આત્માનો પણ વિનાશ થઈ જાય કહ્યું પણ છે—બુઓ-બ્યારે ક્રમથી એક એક ઇન્દ્રિયના વિષયમાં લોલુપ હોવાથી કુરંગ-હરણ, માતંગ-હાથી, પતંગ, ભ્રમર, તેમજ માછલી, આ પ્રાણી પોતાના પ્રાણોથી રહિત બને છે. તો પછી માણસ બ્યારે પાંચેય ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોલુપ બની રહે તો તેનો નાશ ન થાય ? ખરેખર નાશ થવાનો—દુર્ગતિને પ્રાપ્ત કરશે. એથી જે રીતે ઘોડેસ્વાર ઇચ્છિત માર્ગ ઉપર ચલાવવા માટે ઘોડાને લગામ દ્વારા પોતાના આધિન બનાવી લે છે. એજ પ્રકારે આત્મહિતૈષીનું કર્તવ્ય છે કે, તે પણ આ ઇન્દ્રિયરૂપી ઘોડાઓને કે જે પોત પોતાના વિષયોની તરફ અર્થાત અસંયમ

नियमयति, ततोऽपि निःसृतं पुनरुपशमभावे समारोहयति, ततोऽपि निःसृतं दृष्ट्वा स चिन्तयति—अहो ! मनो हि दुर्दमम् तदपि ज्ञानक्रियाभ्यां वशीकरिष्यामि, इति विचिन्त्य क्षपकश्रेण्यामारुह्य मनो निगृह्य शुक्लध्यानद्वितीयपादं संप्राप्य केवलज्ञानं प्राप्तवान् । आत्मानं दाम्यन् अस्मिन् लोके परत्र च सुखी भवति ।

अत्रोदाहरणम्—

एको धर्मघोषनामाऽऽचार्यः शिष्यसहितो ग्रामानुग्रामं विहरन् विस्मृतमार्गः पञ्चशतचौराधिष्ठितायां चौरपल्ल्यां गतः । मार्गविस्मरणादेव चातुर्मास्यकरणार्थं

जब यह वहां भी नहीं ठहरा तो सूत्रार्थचिन्तनरूप ध्यान में लगा दिया । तब यह वहां सूत्रार्थ के चिन्तन करने में लग गया । परंतु यह बहुत काल तक स्थित नहीं रह सका । तो फिर उसको उपशम भाव में लगाया । जिससे उसको शांति मिले, फिर भी यह स्थिर नहीं रहा और निकला तो मुनि विचारने लगे अहो ! मन बड़ा ही दुर्दम है उसको ज्ञान एवं क्रिया में लगा दिया । ज्ञान क्रिया से इसको वश में करूँगा ऐसा निश्चित विचारकर क्षपक श्रेणी का आश्रयण किया, फिर मन स्थिर हो गया, और शुक्ल ध्यान के द्वितीय पाद के अवलम्बन से केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया और सिद्धिपद पाये, तात्पर्य कहनेका यह है कि आत्मा को दमन करने वाला साधु इस लोक एवं परलोक में सुखी होता है ।

धर्मघोष नाम के कोई एक आचार्य थे । वे शिष्यों सहित विहार करते हुए किसी दूसरे ग्राम को पधार रहे थे । चलते-चलते वे मार्ग

तडिं जवानो प्रयत्न कर्यो के, राज्ञपिणे तुरतज स्वाध्यायमां निरत करी दीधुं. न्यारे ते त्यां पणु न टक्युं त्यारे सूत्रार्थं चिंतनरूप ध्यानमां लगावी दीधुं. अने ते सूत्रार्थना चिंतनमां त्यां लागी गया. परंतु त्यां पणु ते लांजे समय स्थिर न रही सक्या. आ पछी उपशम लावमां लगाववामां आवतां जेमांथी शांति भणे. छतां पणु जे स्थिर न रह्युं. त्यारे मुनि विचारवा लाग्या के, मन णहुं चंचल छे. तेने ज्ञान वगेरेनी क्रियामां लगाववामां आय्युं, ज्ञानक्रियाथी तेने वश करीश जेवे. निश्चित विचार करी क्षपक श्रेणीने आश्रय लीधो, पछी मन स्थिर थयुं अने शुक्ल ध्यानना भीज पढ़ना अवलंबनथी केवलज्ञानने प्राप्त कर्युं. अने सिद्धी पद पाय्या. तात्पर्य कहेवानुं जे छे के, आत्माने दमन करवावाणा साधु आ लोक अने परलोकमां सुखी थाय छे. आने उदाहरण द्वारा समर्थन करवामां आवे छे—

धर्मघोष नामना कोई जेक आचार्य छता, ते शिष्यो सहित विहार करीने कोई गांमे जई रह्या छता, आलतां आलतां ते मार्ग भुली गया अने

इदमेकमेव मनः शतधा मां नर्तयति, अहं जातिसम्पन्नः कुलसम्पन्न उग्रवंशीयः क्षत्रियोऽस्मि, येन केनापि प्रकारेणातिचञ्चलमिदं मनः स्वायत्तीकरिष्यामि तपसा संयमेन वा स्वाध्यायध्यानादिना वा यथातथा मनः सुस्थिरं करिष्यामि, इति मनसि निश्चित्य समितिषु मनः संयोजयति, ततो निःसरति तदनु गुप्तिषु नियोजयति ततोऽपि निःसृतं स्वाध्याये, ततोऽपि निःसृतं मूत्रार्थचिन्तनलक्षणे ध्याने

मन कितना चलिष्ट है जो मेरे वशमें नहीं आता है—उल्टा मुझे ही अनेक तरह से नचाता है। मैं जाति संपन्न हूं, कुल संपन्न हूं और उग्रवंशीय क्षत्रिय हूं, अतः मेरा कर्तव्य है कि इसका विजय करने के लिये मैं अपनी शक्ति का परिचय दूं। मैं कोई ऐसा वैसा व्यक्ति तो हूं नहीं जो इसके वश में पड़ जाऊं। अतः जैसे भी हो सकेगा हर एक उपाय से चाहे यह कितना भी चंचल क्यों न हो इसे अपने अधीन बनाकर ही रहूंगा। यदि यह तप से वश में होना चाहेगा—तो तप करूंगा—संयम से वश में होना चाहेगा—तो संयम मार्ग अराधुंगा, यदि स्वाध्याय एवं ध्यान से वश में होना चाहेगा—तो स्वाध्याय, ध्यान करूंगा, परंतु इसे अब छोड़ूंगा नहीं। इस प्रकार दृढ प्रतिज्ञा होकर सर्वप्रथम उसने पांच समितियों के पालन करने में मनको नियुक्त किया, परन्तु यह तो बड़ा ही चंचल था, इसलिये ज्यों ही वहां से निकला की गुप्तियों में नियुक्त किया, फिर भी यह वहां कुछ ही देर ठहर कर जब इसने इधर उधर जानेका प्रयत्न किया कि राजक्रांति ने शीघ्र ही स्वाध्याय में निरत कर दिया।

आवतुं नथी. उलटुं मनेज् अनेक रीते नथावे छे. हुं जाति संपन्न छुं, कुल संपन्न छुं, अने उग्र वंशीय क्षत्रिय छुं. आथी भाइं कर्तव्य छे के, अना उपर विजय करवा भाटे हुं भारी शक्तिने परिचय करावुं. हुं कोई ऐसे नखणा मनने भावस नथी के अना वशमां पडी नठे. आथी जेम जने तेम दरेक उपायथी चाडे ते डेटहुं पणु अंचल केम न डोय तेने भारा अधिन बनावीने ज् जंपीश. जे ते तपथी वश अनशे तो हुं तप करीश—संयमथी वश थशे तो संयम मार्गनुं आराधन करीश, जे स्वाध्याय अने ध्यानथी वशमां आवशे तो स्वाध्याय, ध्यान करीश. परंतु आने हुं छोडनार नथी, आ प्रकारनी दृढ प्रतिज्ञा लई सर्व प्रथम तेणे पांच समितिओनुं पालन करवामां मन परावुं परंतु मन तो लारे अंचल डेतुं आ कारणे जेम त्याथी निकलुं के गुप्तिओमां नियुक्त थयुं. छतां पणु ते त्यां थोडीवार रडी न्यारे तेणे. अडिं



मेघां पिपीलिका हन्ति, यूका कुर्याज्जलोदरम् ॥  
 कुरुते मक्षिका वान्ति, कुष्ठरोगं च कोलिकः ॥ १ ॥  
 कण्टको दारुखण्डं च, वितनोति गलव्यथाम् ।  
 व्यञ्जनान्तर्निपतित, - स्तालु विध्यति वृश्चिकः ॥ २ ॥  
 विलग्नस्तु गले वालः, स्वरभंगाय जायते ।  
 इत्यादयो दृष्टदोषाः, सर्वेषां निशिभोजने ॥ ३ ॥  
 तथैव परलोकेऽपि, दुर्गतिर्जायते ध्रुवम् ।  
 तस्मात् रात्रौ न भुञ्जीत प्रोक्तं भगवता सदा ॥ ४ ॥

लिये उनके पीछे २ गये । वहां आचार्य ने उन्हें रात्रिभोजन न करने का उपदेश दिया । उस समय में उन्होंने ने बतलाया कि रात्रिभोजन में अनेक दोष हैं, क्यों कि सूर्यास्त हो जाने से उस समय अनेक सूक्ष्म जीवों का प्रचार और उत्पत्ति होती है तथा यदि भोजन में पिपीलिका-कीड़ी खाने में आ जावे तो खाने वाले की बुद्धि नष्ट हो जाती है । जूं यदि भोजनमें खाने में आ जावे तो जलोदर नामका रोग हो जाता है । भोजनमें मक्षिका आ जानेसे चमन होता है, भोजनमें कौलिक करोळिया के खाने से कुष्ठरोग होता है, कांटा तथा लकड़ी की फांस से गले में घोर दुःख होता है, विछु खाने में आ जाय तो तालु का भेदन होता है, केश-खाने में आ जावे तो स्वर का भंग होता है इत्यादि अनेक दोष रात्रिभोजन में है । तथा परलोक में रात्रिभोजन करने वाले को दुर्गति की प्राप्ति होती है । इसलिये किसी को रात्रिभोजन नहीं करना चाहिये ।

भडारान् ने पछोयाउवा तेमनी पाछण पाछण गया. त्यां आचार्ये तेमने रात्री भोजन न करवाने उपदेश आये, ते वणते तेमणे ज्ञाव्युं के रात्री भोजनमां अनेक दोष छे केमके, सूर्यास्त थर्ध जवाथी अनेक सूक्ष्म ज्वेने प्रचार अने उत्पत्ति थाय छे. अने भोजनमां जे पीपीलीका-कीड़ी भावामां आवी जय तो बुद्धिने नाश थाय छे. जुं वगेरे जे भावामां आवी जय तो जलोदर नामने रोग थाय छे, भाभी आवी जवाथी उलटी थाय छे, जे करणीये भावामां आवी जय तो कण्ट थाय छे, कांटा तेमज लाकडांनी फांस जेवुं भावामां आवी जय तो गलांमां अटकाई जय छे अने तालु दुःख थाय छे, विछी जे भावामां आवी जय तो तालुवुं तोडी नाजे छे, मोवाणे भावामां आवी जय तो स्वरने भंग थाय छे. इत्यादि अनेक दोष रात्री भोजनमां छे अने रात्री भोजन करवाने दुर्गतिनी प्राप्ति थाय छे. आ भाटे केईये रात्री भोजन न करवुं.

નિશ્ચિતસ્થાનં ગન્તુમક્ષમો ભૂત્વા ચૌરપલ્લયામેવ ચાતુર્માસ્યેઽવસ્થાતું ચૌર-  
પલ્લીનાયકમુપાશ્રયં યાચિતવાન્ ચૌરપલ્લીનાયકેન પ્રોક્તમ્-અત્ર ભવતા દેશના ન  
કર્તવ્યા, સર્વે વયં તસ્કરવૃત્તિજીવિનઃ । મુનિના તદ્વચનં સ્વીકૃત્ય સ્વાધ્યાયધ્યાના-  
દિના ચાતુર્માસ્યં યાપિતમ્ । ચાતુર્માસ્યાવસાને વિહારસમયે સર્વે તસ્કરાઃ કિંચિદ્દૂરં  
મુનિમનુગતાઃ તદા મુનિના તેભ્યો રાત્રિમોજનપતિપેધરૂપા દેશના દત્તા । તથા ચોક્તમ્-

ભૂલ ગયે ઓર ચોરોંકી પલ્લી મેં જા પહુંચે । વહાં ૫૦૦ ચૌર રહતે યે,  
ચૌમાસે કા સમય ચિલકુલ નજદીક આ પહુંચા થા । ઇતના સમય થા  
નહીં કિ કિસી ઓર દૂસરે સ્થાન પર વહાં સે ચલકર ચૌમાસે મેં રહને  
કા નિશ્ચય કિયા જા સકે । અતઃ આચાર્યને વહીં પર ચતુર્માસ વ્યતીત  
કરને કે અભિપ્રાય સે ચૌરોં કે નાયકસે ચતુર્માસ મેં ઠહરને કે લિયે  
ઉપાશ્રયકી યાચના કી । આચાર્યકી વાત સુનકર પલ્લીપતિ ને ઉનસે કહા  
કિ આપ યહાં ઠહરે-હમેં ઇસમેં કુછ હરકત નહીંહે પરંતુ આપ યહાં  
ધાર્મિક ઉપદેશ દેને કા કષ્ટ ન કરે । કારણ કિ હમ સબ યહાં કે  
નિવાસી ચૌરી કરકે અપના નિર્વાહ કરતે હેં કહીં એસા ન હો કિ  
આપકી દેશના સે હમારા વ્યાપાર ધંદાવંદ હો જાય । આચાર્ય ને ઉસકી  
વાત માન લી ઓર સ્વાધ્યાય એવં ધ્યાન સે વહીં પર રહતે હુએ અપના  
ચૌમાસે કા સમય વ્યતીત કિયા । જવ વિહાર કરને કા સમય આયા  
તો ઉસ વખત સબ ચૌર મિલકર આચાર્ય કો પહુંચાને કે લિએ ઇકઢે  
હુએ ઓર કુછ દૂર તક સબ કે સબ આચાર્ય મહારાજ કો પહુંચાને કે

ચોરોના નેસડામાં જઈ પહોંચ્યા. ત્યાં ૫૦૦ ચૌર રહેતા હતા, ચૌમાસાનો સમય  
નજીક આવી રહ્યો હતો, એટલે સમય ન હતો કે ત્યાંથી બીજા સ્થાને પહોંચીને  
ત્યાં ચૌમાસામાં રહેવાનો નિશ્ચય કરી શકાય. આથી આચાર્યે એ સ્થાન ઉપર  
ચતુર્માસ વ્યતિત કરવાના અભિપ્રાયથી ચોરોના નાયકથી ચતુર્માસ રોકાવા માટે  
આશ્રય સ્થાનની યાચના કરી. આચાર્યની વાત સાંભળી ચોરોના નાયકે કહ્યું કે  
બહે આપ અહિં રહો અમને એમાં કંઈ વાંધો નથી. પરંતુ આપ અહિં  
ધાર્મિક ઉપદેશ આપવાનો વિચાર ન રાખશો. કારણ કે અમે સઘળા અહિંના  
નિવાસી ચૌરી કરીને પોતાનો નિર્વાહ કરીએ છીએ. કદાચ એવું ન બને કે  
આપના ઉપદેશથી અમારો ધંધો બંધ થઈ જાય, આચાર્યે તેની વાત માની  
લીધી અને સ્વાધ્યાય અને ધ્યાનથી ત્યાં રહીને પોતાનો ચૌમાસાનો સમય વ્યતિત  
કર્યો. જ્યારે વિહાર કરવાનો સમય આવ્યો તે વખતે બધા ચોરાએ મળી આચાર્ય-  
ને પહોંચાડવા માટે એકઠા થયા અને થોડે દૂર સુધી આ બધા

निर्विपा । पाकप्रवृत्ता अपि एवमेव विचार्य स्वभोजनार्थमर्थ मांसं पृथक् निधाय  
अर्थ मांसं विषमिश्रितं कृतवन्तः । सर्वे भोजनार्थमुपस्थिताः पल्लीनायकं प्रोक्तवन्तः ।  
पल्लीपतिनोक्तम्—इदानीं रात्रिः संजाता, मया रात्रिभोजनस्य प्रत्याख्यानं कृतम्,  
सर्वेर्भुज्यताम्, ततः पल्लीनायकाज्ञया सर्वे चौरा भोक्तुमुपविष्टाः । तत्र सार्धद्वय-  
संख्यकाश्चोराः सविषमदिरापानेन मृताः, अन्ये सार्धद्वयसंख्यकाः सविष-  
मांसभक्षणेन मृताः । एतत् सर्वं दृष्ट्वा पल्लीनायकेन मनसि चिन्तितम्—

से आधी मदिरा में विष मिला दिया जाय । ऐसा विचार कर उन्होंने  
आधी मदिरा में विष मिला दिया और आधी मदिरा अपने लिये बिना  
विष की अलग रख ली । उधर जो मांस आदि पकाने में लगे हुए थे  
उन्होंने भी यही विचार किया और जैसा काम इन लोगोंने किया वैसा  
ही उन्होंने ने किया—अर्थात् उन लोगों ने भी आधे भोजन में विष मिला  
दिया और आधा भोजन अपने लिये बिना विष का अलग रख लिया ।  
जब सब भोजन के लिये बैठने लगे तब सब ने पल्लीपति को भोजन  
करने के लिये बुलाया । परंतु पल्लीपति ने उस समय भोजन करने से  
यह कह कर मना कर दिया कि देखो भाईयों इस समय रात्रि हो चुकी है—  
मैं ने रात्रिभोजन का त्याग किया है, अतः आप लोग ही इस समय  
भोजन करें ! पल्लीपति की इस प्रकार आज्ञा प्राप्त कर वे सब के सब  
भोजन करने के लिये बैठ गये । उनमें आधे तो विष मिश्रित मदिरा  
के पान करने से मर गये और आधे विषमिश्रित मांस के खाने से  
मर गये । इस प्रकार सर्व विनाश देखकर पल्लीपति ने मन में विचार

आवे, એવો વિચાર કરી તેઓએ અરધા દારૂમાં વિષ મેળવી દીધું અને અરધો  
દારૂ પોતાના માટે અલગ રાખ્યો. અહિં પણ જે માંસ વગેરે પકાવવામાં  
લાગેલ હતા તેમણે પણ એવો વિચાર કર્યો જેવું કામ આ લોકોએ કર્યું.  
અર્થાત્ એ લોકોએ પણ અરધા ભોજનમાં વિષ મેળવી દીધું અને અરધું પોતાના  
માટે અલગ રાખી લીધું. ત્યારે બધા જમવા માટે બેસવા માંડ્યા ત્યારે બધાએ  
તેના આગેવાનને જમવા માટે બોલાવ્યા. પરંતુ આગેવાને એમ કહી ના કહી  
કે જુઓ ભાઈઓ આ સમયે રાત્રીનો સમય થઈ ચુક્યો છે મેં રાત્રી ભોજ-  
નનો ત્યાગ કરેલ છે આથી આપ લોકોજ જમી લ્યો. આગેવાનની આ પ્રકારે  
આજ્ઞા મળતાં તે બધા જમવા માટે બેસી ગયા, અને અરધા તો વિષ મેળવેલ  
દારૂનું પાન કરવાથી મરી ગયા અને અરધા વિષ મિશ્રીત માંસના ખાવાથી  
મરી ગયા. આ પ્રકારે સર્વ વિનાશ જોઈને આગેવાને મનમાં વિચાર કર્યો કે

देशनां श्रुत्वा तेषु केवलमेकेन पल्लीपतिना रात्रिभोजनप्रत्याख्यानं कृतम् । एकदा पञ्चशतसंख्यकैश्वरैः सह पल्लीपतिः स्तंभं कर्तुं गतः । एकस्यां नगरीं बहुतरं धनं चौर्येण प्राप्तं, तदुपादाय ते सर्वे महारण्ये समागम्य तत्र सर्वे संस्थिताः । तत्र तन्नायकेन कथितम्—अत्र भुज्यतां सर्वः, तदा सार्धद्वयसंख्यकाः पाककरणार्थं प्रवृत्ताः, सार्धद्वयसंख्यकाश्च सुरादिकमानेतुं समीपस्थं ग्रामं गताः । मदिरादिकमानेतुं प्रवृत्तैस्तैश्चिन्तितम्—चौर्येणोपार्जितं सर्वं धनमस्माकं भविष्यति, यद्यर्थमदिरा विपमिश्रिता नीयते । एवं विचिन्त्यार्धमदिरा विपमिश्रिता तैरानीता, अर्धा तु स्वार्थं

आचार्य महाराज की इस प्रकार की धर्मदेशना सुनकर उनमें से केवल एक पल्लीपति ने रात्रिभोजन का त्याग कर दिया । एक समय की बात है कि यह पल्लीपति उन पांचसौ चोरों के साथ चोरी करने के लिये बाहर गया । किसी एक नगर में चोरी करने से उन्हें बहुत सा द्रव्य मिला । उसे लेकर वे सब के सब वहां से चल दिये और किसी एक जंगल में आकर ठहर गये । पल्लीपति ने सब से कहा कि अब सब लोग भोजन की तैयारी करो । पल्लीपति के इस आदेश को पाकर उनमें से आधे अर्थात् अठाईसौ चोर तो भोजन करने की तैयारी में लग गये और अठाईसौ चोर सुरा मदिरा आदि को लेने के लिये पास के गावों में गये । मदिरादिक लानेके लिये गये हुए इन व्यक्तियों ने मनमें विचार किया कि चोरी में जितना भी द्रव्य हाथ लगा है वह सब का सब हम सब लोगों को ही मिल जावे तो बहुत ही उत्तम बात है, इसलिये ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि जो लोग भोजन बना रहे हैं वे सब के सब मर जायें—अतः उन्हें मारने की तरकीब एक यही है कि इस मदिरा में

આચાર્ય મહારાજની આ પ્રકારની ધર્મ દેશના સાંભળીને તેમાંથી ક્રૂર એક ચોરના આગેવાને રાત્રી ભોજનનો ત્યાગ કર્યો. એક વખતે તે ચોરનો આગેવાન એ પાંચસો ચોરોની સાથે ચોરી કરવા માટે બહાર ગયો, કોઈ એક નગરમાં ચોરી કરવાથી તેને ઘણું દ્રવ્ય મળ્યું એને લઈ તે બધા ત્યાંથી ચાલતા થયા અને કોઈ એક જંગલમાં પહોંચી ત્યાં રોકાયા. ચોરના આગેવાને બધાને ભોજનની તૈયારી કરવાનું કહ્યું તેના આદેશને સાંભળી અરધ જેટલા ચોર તો ભોજનની તૈયારીમાં લાગી ગયા અને અરધા દાડૂ વિગેરે લેવા માટે પાસેના ગામમાં ગયા, દાડૂ વિગેરે લેવા ગયેલા એ ચોરોએ મનમાં વિચાર કર્યો કે, ચોરીમાં મળેલું સઘળું દ્રવ્ય બધું અમને મળી જાય તો ઘણું સારું થાય આ માટે એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે જે લોકો ભોજન બનાવે છે તે બધા મરી જાય. તેમને મારવાની તરકીબ કેવળ એક જ છે કે આ દાડૂમાંના અરધા દાડૂમાં વિષ ભેળવ

લક્ષણેન સપ્તદશવિધેન, તપસા અનશનાદિદ્વાદશવિધેન ચ દાન્તઃ=વશીકૃતઃ સ્યાત્ તર્હિ વરં=શ્રેયઃ શોભનં ભવેદિત્યર્થઃ, સંયમો હિ આસ્રવનિરોધં જનયતિ, ક્ષપકશ્રેણિ સમારોહયતિ, કર્મ નિર્જરયતિ કેવલજ્ઞાનમુત્પાદયતિ, શૈલેશ્યવસ્થાં પ્રાપયતિ સિદ્ધા-વસ્થાં પ્રકટયતિ । તપથ રાગદ્વેષાદિદોષમલિનાત્મસંશોધકં, તેજોલેશ્યાદિવિવિ-ધલવિજનકં પૂર્વસંચિતસકલકર્મદાહકં નવકર્માનુત્પાદકમ્ । પુનર્મનસ્યેવં ચિન્ત-યેત્-અહં પરૈઃ=અન્યૈઃ વન્ધનૈઃ શૃંગલાદિભિઃ, વધૈઃ=લગુડચપેટાદિભિઃ, દમિતઃ=નિગૃહીતઃ-વદ્ધ્વા તાડયિત્વા ચ સ્વાધીનીકૃતિત્યર્થઃ, મા ભવેયમ્ ।

અર્થ ભાવઃ-યદાઽન્યે મમ વન્ધન તાડનૈર્દમનં કરિષ્યન્તિ તદા મમ શ્રેયો નાસ્તિ, પરવશત્વાત્, તથાહિ-વધવન્ધનૈઃ પરવશસ્ય મમ ચિત્તસમાધિર્ન સમ્ભવતિ તદભાવે કર્મનિર્જરાભાવઃ, તદભાવે દીર્ઘાધ્વસંસારપરિભ્રમણં ભવિષ્યતીતિ ।

एवं मन का दमन करूँ यह सर्वोत्तम है । अगर ऐसा नहीं करूँ तो कदाचित् मुझे (बंधणेहि वहेहि परेहि दम्भं तो अहं मा वरं-बंधनैः वधैः परैः दमितः अहं मा वरं) बधनों-शृंगला आदि के द्वारा बांधना-रूप क्रियाओं से तथा वध-चपेटा आदि प्रहारों से जो मैं दूसरों के द्वारा दमित होऊँ । अथवा यदि मैं इन्द्रियो एवं मनका जो तप तथा संयम द्वारा दमन कर लूंगा तो यह इसलिये उत्तम है कि मैं भविष्य में अन्य व्यक्तियों द्वारा बंधन एवं वध से निगृहीत नहीं हो सकूंगा । कहने का तात्पर्य यह है कि जब मुझे अन्यजन बंधन एवं ताडन आदि द्वारा निगृहीत करेंगे तो इसमें मेरी कोई भी भलाई नहीं है कारण कि यह अवस्थाएँ अनिच्छापूर्वक वश होने की वजह से सहन करनी पड़ती हैं । इसमें चित्त की समाधि तो होती नहीं है । चित्त में समता भावरूप

સંયમ અને તપ દ્વારા જે હું આત્માનો-ઇન્દ્રિયો અને મનનું દમન કરું એ સર્વોત્તમ છે. જે તેમ ન કરું તો કદાચિત મને બંધણેહિ વહેહિ પેરેહિ દમ્ભંતો અહં મા વરં-બંધનૈઃ વધૈઃ પૈરૈઃ દમિતઃ અહં મા વરં બંધનો શ્રંગલા આદિ દ્વારા બાંધવારૂપ ક્રિયાઓથી તથા વધ-ચપેટા આદિ પ્રહારોથી જે હું બીજાઓથી દમિત બનું અથવા-જે હું ઇન્દ્રિયો અને મનનું તપ તથા સંયમ દ્વારા દમન કરી લઉં તો તે એ માટે ઉત્તમ છે કે હું ભવિષ્યમાં અન્ય વ્યક્તિઓ દ્વારા બંધન અને વધથી નિગૃહીત નહીં થઈ શકું. કહેવાનો મતલબ એ છે કે બ્યારે મને બીજા માણસો બંધન અથવા તાડન આદિ દ્વારા નિગૃહીત કરે તો આમાં મારી કોઈ પણ ભલાઈ નથી. કારણ કે, આ અવસ્થાઓ અનિચ્છાએ પરવશ થવાને કારણે સહન કરવી પડે છે. તેમાં ચિત્તની સમાધિ થતી નથી. ચિત્તમાં



રાત્રિભોજનપત્યાખ્યાનેન રસનેન્દ્રિયમાત્રદમનસ્ય ફલમેતદ્ યન્મયા જીવનં લબ્ધમ્, યદિ પુનઃ સર્વથાઽઽત્મદમનં કુર્યો તર્હિ કથં ન ધ્રુવં નિત્યમચલમવ્યાઘ્રાધં શિવસૌખ્યં લભેયમ્ । એવં વિચિન્ત્ય ચોરપછીનાયકેન મુનિસમીપે ગત્વા પ્રત્રજ્યા ગૃહીત્વા સ્વાત્મકલ્યાણં સાધિતમ્ ॥ ૧૫ ॥

આત્મદમનાર્થમેવં ચિન્તયેદિત્યાહ—

મૂલમ્—‘વરં મે’ અપ્પાં દંતો. સંજમેણ તવેણ ચે ।

મોઽહં પંરેહિં દમ્મંતો, વંધંણેહિં વેહેહિ ચે ॥ ૧૬ ॥

છાયા—વરં મે આત્મા દાન્તઃ સંયમેન તપસા ચ ।

માઽહં પરેદમિતઃ વન્ધનૈર્વધૈથ ॥ ૧૬ ॥

ટીકા—‘વરં મે૦’ ઇત્યાદિ ।

મે=મયા, આત્મા-મનરૂપઃ પશ્ચેન્દ્રિયરૂપથ સંયમેન=સાવધાનુષ્ઠાનવિરતિ-

ક્રિયા કિ રાત્રિભોજન ત્યાગ કરને કા, જિસમેં એક માત્ર રસનેન્દ્રિય કા દમન ક્રિયા જાતા હૈ, યહ ફલ હૈ જો મેં અકેલા જીવિત વચ સકા હું । યદિ સર્વ પ્રકાર સે મેં આત્મા-ઇન્દ્રિયોં એવં મન કા દમન કરું તો કયોં નહીં ધ્રુવ, નિત્ય, અચલ ઓર અવ્યાઘાધ મુક્તિ સુખ કા અધિકારી થનું । ઇસ પ્રકાર વિચાર કર ઉસ પછીપતિ ને ઉસી સમય મુનિકી પાસ જા કર દીક્ષા ધારણ કર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ કા સાધન કરના પ્રારંભ કર દિયા ॥૧૫॥

આત્મા કો દમન કરને કે લિયે મોક્ષાભિલાષી કો ઇસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે—‘વરંમે૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—( મે અપ્પા સંજમેણ તવેણ ચ દંતો વરં-સંયમેન તપસા મયા દાન્તઃ વરં ) સંયમ એવં તપ કે દ્વારા જો મેં આત્મા કા-ઇન્દ્રિયોં

રાત્રી ભોજન ત્યાગ કરવાથી માત્ર એક રસનેન્દ્રિયનું દમન કરવામાં આવે છે તેનું આ ફળ છે. જે હું એકલો જીવતા રહી શક્યો. જે હું સર્વ પ્રકારથી આત્મા-ઇન્દ્રિયો અને મનનું દમન કરું તો ધ્રુવ, નિત્ય, અચલ અને અવ્યાઘાધ મુક્તિ સુખનો અધિકાર કેમ ન થનું ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી તે ચોરના આગેવાને એજ વખતે મુનિ પાસે જઈને દીક્ષા ધારણ કરી આત્મ કલ્યાણના માર્ગનું સાધન કરવાનો પ્રારંભ કરી દીધો ॥ ૧૫ ॥

મોક્ષના અભિલાષીએ આ પ્રકારે આત્માનું દમન કરવાનો વિચાર કરવો જોઇએ—વરંમે૦ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મે અપ્પા સંજમેણ તવેણચ દંતોવરં-સંયમેન તપસા મયા દાન્તઃ વરં

ચિન્તયતિ, યદા કથમપિ મે ચાલકો ભવિષ્યતિ તદાઽનેન ઠનિષ્યતે । તતઃ  
સા હસ્તિની યુથાદપસરતિ, ક્રમેણ પ્રહરં પ્રહરદ્વયમન્તરિતં કૃત્વા યુથમધ્યે મિલતિ,  
ક્રમશઃ સા દ્વિતીયે દિવસે યુથમધ્યે ગત્વા મિલતિ એવં કુર્વત્યા તયા પ્રસવસમયે  
સમાગતે સતિ તાપસાશ્રમો દૃષ્ટઃ, સા તત્રાઽલીના ગુપ્તસ્થાને પ્રસૂતા, ચાલકઃ  
સંજાતઃ। સ ચાલકસ્તત્ર યથા તાપસકુમારા ઘટાદિભિરુદ્યાનગતાન્ વૃક્ષાન્ સિશ્વન્તિ,  
તથા જલાશયં ગત્વા સ્વશુણ્ડાયાં જલં ભૃત્વા વૃક્ષાન્ સિશ્વતિ । તતસ્તાપસૈસ્તસ્ય

નિવાસ કરતા થા । વહાં જિતને મી નવીન વચ્ચે પૈદા હોતે થે સવ કો  
માર ડાલતા થા । એક સમય કી વાત હૈ કિ એક હસ્તિની ગર્ભવતી હુઈ ।  
ગર્ભાવસ્થા મેં હસ્તિની ને વિચાર કિયા કિ જવ મેરી કુક્ષિ સે  
વચ્ચા પૈદા હોગા તો યહ નિશ્ચય હૈ કિ યહ દુરાત્મા ગજ ઉસે વિના  
મારે નહીં રહેગા, અતઃ અચ્છી અવ યહી હૈ કિ મૈં ઇસ યુથ સે અલગ  
હી હોકર રહું । એસા વિચાર કર યુથ સે અલગ રહને લગી-પરન્તુ યહ  
અલગ રહને કા ભેદ પ્રકટ ન હો જાય ઇસ રુચાલ સે પહિલે તો વહ  
યુથ મેં એક ૨ દો ૨ પ્રહર કે વાદ આતી જાતી રહી, ફિર ૧-૧-૨-૨ દિન  
કે વાદ મિલતી રહી । ઇસ પ્રકાર કરતે ૨ જવ ઉસકે પ્રસવ કા સમય  
નજદીક આ ગયા તો વહ કિસી તાપસ કે આશ્રમ મેં જા પહુંચી । વહાં  
પર ગુપ્તસ્થાન મેં પ્રચ્છન્ન હોકર ઉસને વચ્ચે કો જન્મ દિયા । વચ્ચા  
ક્રમશઃ વઢને લગા । વહાં પર જિસ તરહ તાપસ કુમાર ઘડો મેં પાની  
ભરકર ઉદ્યાન કે વૃક્ષોં કો સીંચા કરતે થે ઉસી પ્રકાર યહ હાથી કા  
વચ્ચા મી જલાશય સે અપની સુંઢ મેં પાની ભર કર ઉદ્યાન કે વૃક્ષોં

(હાથી) નિવાસ કરતો હતો. ત્યાં જોટલાં નવાં બચ્ચાં જન્મતાં હતાં તે  
બધાને તે મારી નાખતો. એક સમયની વાત છે એક હાથણી ગર્ભવતી થઈ,  
ગર્ભાવસ્થામાં હાથણીએ વિચાર કર્યો કે બ્યારે મને બચ્ચુ આવતરશે ત્યારે એ  
વાત નિશ્ચિત છે કે આ દુરાત્મા હાથી તેને મારી નાખ્યા વગર રહેશે નહીં.  
આથી સારું તો એ છે કે, આ બુથથી બુદ્ધા પડીને રહું. આવો વિચાર કરી  
તે બુથથી બુદ્ધી રહેવા લાગી. પરંતુ અલગ રહેવાનો ભેદ પ્રગટ ન થઈ બચ્ચ એ  
માટે તે બુથમાં અવાર નવાર આવતી જતી અને ધીરે ધીરે એકેક દિવસ અને  
બીજે દિવસના અંતરે આવતી જતી. આ પ્રકારે કરતાં કરતાં બ્યારે તેનો પ્રસવ  
સમય નજીક આવ્યો ત્યારે તે કોઈ તપસ્વીના આશ્રમમાં જઈ પહોંચી અને  
ત્યાં ગુપ્ત સ્થાનમાં પ્રચ્છન્ન-છૂપાઈ ને બચ્ચાને જન્મ આપ્યો. બચ્ચું મોટું થવા  
માંડ્યું, ત્યાં જો રીતે તાપસ કુમાર ઘડામાં પાણી ભરીને ઉદ્યાનના વૃક્ષોને પાતા  
હતા તે રીતે આ હાથીનું બચ્ચું પણ જળાશયથી પોતાની સુંઢમાં પાણી ભરીને

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ સેચનકહસ્તી યથા—

એકસ્યામટવ્યાં વહુતહસ્તિર્નાભિઃ સદ્ મહાગજો નિવસન્નાસીત્ । સ ચ જાતં જાતં કરિશાવકં વિનાશયતિ । એકદા તૈર્નાકા હસ્તિર્ના સગર્ભા જાતા, સા ચૈવં સમાધિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોગી—યહ બી નિશ્ચિત હૈ કિ કર્મ કી નિર્જરા નહીં હોગી । કર્મ કી નિર્જરા કે અભાવ મેં હસ અનન્તસંસાર કા પરિભ્રમણ બી નહીં રુક સકતા હૈ । ૧૭ પ્રકાર કે સંયમ સે એવં ૧૨ પ્રકાર કે અનશન આદિ તપ સે જો મેં આત્મા કા દમન કર લુંગા ઉસસે મેરા એકાન્ત હિત હોગા । કારણ કિ સંયમ સે હી આશ્રવ કા નિરોધ હોતા હૈ । હસકી સહાયતા સે હી આત્મા ક્ષપકથ્રેણી પર આરુઢ્ધ હોતા હૈ । અનન્તગુણી કર્મો કી નિર્જરા હસકે હી સદ્ભાવ સે હોતી હૈ । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હસી કે વલ પર હોતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કા લાભ એવં સિદ્ધાવસ્થા કી પ્રગટતા હસી તપ સંયમ સે મિલતી હૈ । રાગદ્વેષ આદિ સે મલિન આત્મા કા શોધન તપ સે હોતા હૈ । તેજોલેશ્યા આદિ વિવિધ લબ્ધિયોં કા જનક તથા પૂર્વ મેં સંચિત સમસ્ત કર્મોં કા નાશક એવં નવીન કર્મોં કા આગમન કા નિરોધક તપ હોતા હૈ । અતઃ હસ અવસ્થા મેં એકાન્તતઃ આત્મા કા હિત ભરા હુઆ હૈ ।

અવ સેચનકહસ્તી કે દૃષ્ટાન્ત સે હસ વિષય કો સ્પષ્ટ કરતે હૈ—

કિસી એક અટવીમેં અનેક હસ્તિનીકે સાથ એક મદોન્મત્ત મહાગજ

સમતાલાવરૂપ સમાધીની પ્રાપ્તિ થશે નહીં. આ પણ નિશ્ચીત છે કે, કર્મની નિર્જરા પણ થશે નહીં. કર્મની નિર્જરાના અભાવમાં આ અનંત સંસારનું પરિભ્રમણ પણ રોકી શકાવાનું નથી. ૧૭ પ્રકારના સંયમથી અને ૧૨ પ્રકારના અનશન આદિ તપથી જો હું આત્માનું દમન કરી લઉં તો તેનાથી મારું એકાન્ત હિત થશે. કારણ કે, સંયમથી જ આશ્રવનો નિરોધ થાય છે, તેની સહાયતાથી જ આત્મા ક્ષપક શ્રેણીએ પહોંચે છે. અનંતગુણી કર્મોની નિર્જરા એનાજ સદ્ભાવથી થાય છે. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જીવને એના જ બળથી મળે છે. શૈલેશી અવસ્થાનો લાભ તેમજ સિદ્ધાવસ્થાની પ્રગટતા એજ તપ સંયમથી મળે છે. રાગદ્વેષ આદિથી મલિન આત્માનું શોધન તપથી થાય છે. તેજોલેશ્યા આદિ વિવિધ લબ્ધિઓના જનક તથા પૂર્વનાં સંચિત સમસ્ત કર્મોનો નાશ કરનાર અને નવીન કર્મોને રોકનાર તપ હોય છે. આથી આ અવસ્થામાં એકાન્તતઃ આત્માનું હિત સમાયેલું છે.

( સેચનક હાથીના દૃષ્ટાંતથી સૂત્રકાર આ વિષયને સ્પષ્ટ કરે છે. )

કોઈ એક વનમાં અનેક હાથણીઓની સાથે એક મદોન્મત્ત

આલાનસ્તમ્ભે લૌહગૃહ્ણલાભિઃ સ નિવદ્ધઃ । તાપસાસ્તત્રાગત્ય સેચનકં ભર્ત્સયન્તિ—  
અરે ગજરાજ ! અધુના ક્વ તે પરાક્રમઃ, અવિનયસ્ય ફલમિદાર્નીં લબ્ધમ્ । એતદ્વચનં  
શ્રુત્વા સેચનકઃ ક્રુદ્ધઃ સ્તમ્ભં મંક્ત્વા પુનર્વનં પ્રવિષ્ટસ્તેપામાવાસભૂમૌ વૃક્ષાન્ વિધ્વં-  
સિતવાન્ । પુનઃ શ્રેણિકઃ સેચનકં ગજં નિગૃહીતું તદ્વનં ગતઃ । અત્રાન્તરે પૂર્વભવ  
મિત્રદેવેન સેચનકસમીપમાગત્ય પ્રોક્તમ્—હે વત્સ ! પરેભ્યો દમનાત્ સ્વયં દમનં  
વરમ્, તતસ્તદ્વચઃ શ્રુત્વાઽસૌ સ્વયમાગત્યાલાનસ્તમ્ભનિકટ્ટે સ્થિતઃ ।

રહા છે । હમારે આશ્રમ કા સમસ્ત વન ઉસને નષ્ટ ભ્રષ્ટ કર દિયા છે ।  
તાપસૌં કી હસ પ્રકાર વાત સુનકર શ્રેણિક ને વડી સેના કે સાથ વન  
મેં જાકર ઉસ સેચનક હાથી કો પકડ લિયા । ઓર ઉસે લાકર આલાન-  
સ્તંભ મેં લોહે કી સાંકલોં સે વાંધ દિયા । તાપસ આકર અવ ઉસે  
ભર્ત્સિત કરને લગે । કહને લગે—અરે ! સેચનક ગજરાજ ! કહ અવ વહ  
તેરા પરાક્રમ કહાં ચલા ગયા, દેસવ તેરી કેસી દુર્દશા હુઈ છે । સમજા  
યહ અવિનય કરને કા ફલ છે, જિસે તૂ ભોગ રહા છે । તાપસૌં કે  
હસ પ્રકાર ભર્ત્સના ભરે વચનોં કો સુનકર સેચનક કો વહુત હી ક્રોધ  
આયા ઓર ઉસ આવેશ મેં આલાનસ્તંભ કો તોડ મરોડ કર વહ સીધા  
વન મેં જા પહુંચા । વહાં પહુંચકર ઉસને પહિલે કી તરહ હી ઉનકી  
આવાસભૂમિ કે વૃક્ષોં કા વિધ્વંસ કરના પ્રારંભ કર દિયા । રાજા શ્રેણિક  
પુનઃ ઉસે પકડને કે લિયે વન મેં આયે । હતને મેં પૂર્વભવ કે મિત્ર દેવને  
આકર સેચનક સે કહા—જો તુમ વાર ૨ દૂસરોં કે દ્વારા દમિત કિયે  
જાતે હો—ઉસકી અપેક્ષા તો યહી અચ્છા છે કિ તુમ અપને આપકો

આશ્રમનાં સઘળાં વૃક્ષોનો એણે નાશ કરી નાખ્યો છે. તાપસોની વાત સાંભળી  
શ્રેણિક રાજાએ ભારે સેના સાથે વનમાં જઈ એ સેચનક હાથીને પકડી લીધો.  
અને તેને રાજધાનીમાં લાવી એક ખૂબ મજબૂત સ્તંભ સાથે લોઢાની સાંકળોથી  
બાંધી દીધો. તાપસોએ આ સમયે તેની સાથે જઈ તેની મશ્કરી શરૂ કરી અને  
કહેવા લાગ્યા—અહો ! સેચનક ગજરાજ કહો હવે તમારું પરાક્રમ કયાં ચાલ્યું  
ગયું ? જો તારી કેવી દુર્દશા થઈ ? અવિનયનું આ ફળ છે, જે તું લોગવી રહેલ છે.  
તાપસોનું આ કહેવાનું સાંભળી સેચનકને ખૂબ જ ક્રોધ આવ્યો. અને તે  
જખરજસ્ત એવા સ્તંભને તોડી નાખી લોઢાની સાંકળોને ફગાવી દઈ વનમાં  
જઈ પહોંચ્યો. ત્યાં પહોંચીને ચારે બાજુથી વનનાં વૃક્ષોનો વિચ્છેદ કરવાનું  
શરૂ કરી દીધું. રાજા શ્રેણિક ફરી તેને પકડવા માટે વનમાં પહોંચ્યા. આ સમયે  
સેચનકના પૂર્વભવના મિત્ર દેવે આવી સેચનકને કહ્યું—તમે બીજા દ્વારા ઘડી  
ઘડી હેરાન થાવ છો—આથી સારું તો એ છે કે તમે તમારી જાતે પોતાનું દમન કરો.

‘સેચનક’ इति नाम कृतम् । स सेचनकस्तापसबालकानां वयस्यो जातः । कदाचिद् भ्रमन्तं यूथाधिपतिं दृष्ट्वा सेचनकस्तं मारितवान् । स्वयं यूथाधिपतिर्जातः । स च तापसाश्रमे वृक्षाणां विध्वंसनं कृतवान् , काऽप्यन्या मन्मातेव प्रच्छन्ना मा तिष्ठतु इति विचारितवांश्च । ततस्ते तापसा रुष्टाः पुष्पफलपूर्णहस्ताः श्रेणिकनृपस्य समीपं गत्वा तमनुबन्-एकः सेचनकनामाहस्ती वने तिष्ठति, स चास्माकं वासस्थाने वनं विनाशयति । ततः श्रेणिकेन महत्या सेनया सह वनं गत्वा सेचनकं निगृह्य

કો સીંચને કા કામ કરને લગા । સિંચનરૂપ કાર્ય કો કરને સે તાપસો ને હસકા નામ “સેચનક” રાખ દિયા । તાપસ બાલક હસ પર ઘડે પ્રસન્ન રહા કરતે, અતઃ ઉન સવકે સાથ યહ સૂચ હિલમિલ કર રહને લગા, યહાં તક કિ ઉનકે સાથ હસકી પૂર્ણ મિત્રતા હો ગઈ । જબ યહ સૂચ વલિષ્ટ હો ચુકા-તો એક સમય કી વાત હૈ કિ ઉસને અવસર પાકર યૂથાધિપતિ હાથી કો ઘૂમતે સમય જાન સે માર દિયા ઓર સ્વયં યૂથ કા અધિપતિ હો ગયા । હસને એસા વિચાર કિયા કિ મેરી માતા કે સમાન કોઈ બી હથિની છુપ કર ન વચ્ચા ઉત્પન્ન કરે ઓર ન છુપ કર હી રહે, હસ અભિપ્રાય સે હસને આશ્રમ કે સમસ્ત વૃક્ષ ઉઘાડ ઢાલે । હસકે હસ પ્રકાર કે કાર્ય સે તાપસ લોગ રુષ્ટ હો ગયે । વે સબ કે સબ પુષ્પ ફલાદિકરૂપ ભેટ લેકર રાજા શ્રેણિક કે પાસ પહુંચે । વહાં પહુંચકર ઉન્હોં ને રાજા કો અપની સારી કથા સુનાઈ । કહા મહારાજ ! એક સેચનક નામક હસ્તી વનમેં રહતા હૈ વહ બહુત હી ઉપદ્રવ કર

ઉધાનના વૃક્ષોને પાણી પાવાનું કામ કરવા લગ્યું, તાપસોએ આ પ્રકારનું કામ કરવાથી તે હાથી બાળકનું નામ ‘સેચનક’ રાખ્યું. તાપસ બાળક તેના પર ખૂબ પ્રસન્ન રહ્યા કરતા, એથી તે એમની સાથે ખૂબ હળી મળીને રહેવા લાગ્યું, તે ત્યાં સુધી કે એમની સાથે તેની પૂર્ણ મિત્રતા થઈ ગઈ જ્યારે તે હાથી બચ્ચું ખૂબ બળવાન બન્યું ત્યારે એક સમયે તે સશક્ત અને બળવાન બનેલા હાથી બાળે મહાબળવાન અને ઘાતક એવા હાથી ઝુંડપતિને અવસર મેળવી છવથી મારી નાખ્યો. અને પોતે ઝુંડપતિ બન્યો. તેણે વિચાર કર્યો કે મારી માતાની માફક કેઈ પણ હાથણી છુપાઈ ને બચ્યાને જન્મ ન આપે અને ન તો છુપાઈને રહે. આ અભિપ્રાયથી તેણે આશ્રમનાં બધાં વૃક્ષોને જડમુળથી ઉખેડી નાખ્યાં. હાથીના આ પ્રકારના કાર્યથી તપસ્વીઓના હિલમાં ભારે દુઃખ થયું અને તેઓ પુષ્પ ફળ વગેરે ભેટ લઈ રાજા શ્રેણિકની પાસે પહોંચ્યા અને ત્યાં જઈ રાજાને બધી વાત કહી સંભળાવી અને કહ્યું, મહારાજ ! સેચનક નામનો એક હાથી વનમાં રહે છે તે ખૂબ ઉપદ્રવ કરે છે, અમારા



समागताः प्रजा संमिलन्ति । तस्य प्राज्यं राज्यसुखं, प्रतिदिवसं नवं नवमिव यौवनम्, नवनीतमिव शिरीषकुसुममिव सुकुमारं शरीरम्, नयनलोभकरं रूपलावण्यम्, सर्वत्रा-  
व्याहतगतिकं यानम्, दिङ्मण्डलविजयिनी चतुरङ्गिणी सेना, शीतलसुगन्ध-  
मन्दमारुतमनोविनोदनं, नन्दनवनमिव सर्वर्तुसुखदं रमणीयमुद्यानम्, चन्द्रमण्डला-  
वधीरणगगनस्पर्शिधवलप्रासादाः, सर्वे कामभोगा अनुकूला आसन् । असौ दौण्डु-  
कदेव इव सर्वं सुखमनुभवन्नास्ते । तत्रैकदा धर्मचन्द्रनामक आचार्यः शिष्यगणपरि-

राज्य का उसे अधिक से अधिक सुख था । यौवन भी इसका प्रति-  
दिन नवीन नवीन रूप में खिलता रहता था । शरीर इसका नवनीत  
एवं शिरीष पुष्प से भी अधिक सुकुमार था । रूप लावण्य नयनों को  
लुभावे ऐसे थे इसे कहों पर भी चले जाने में कोई रुकावट नहीं होती  
थी । इसकी चतुरंगिणी सेना दिङ्मण्डल को विजय करने वाली थी ।  
इसके एक रमणीय उद्यान था जो नन्दनवन के समान समस्त ऋतुओं  
में सुखदायक था । जिसमें शीतल, मंद एवं सुगंधित पवन बहा  
करता था उससे मन का अच्छा विनोद होता था । जिस महल में  
राजा का निवास था वह चंद्रमण्डल से भी रमणीय था तथा इतना ऊँचा  
था कि आकाश को जैसे स्पर्श करता हो । समस्त कामभोग इसके  
अनुकूल थे । दौण्डुक देव की तरह यह समस्त प्रकार के सुखों को  
भोगता हुआ अपना समय निश्चितरूप से व्यतीत करते थे । इतने में  
एक दिन की बात है ग्रामानुग्राम विचरते हुए धर्मचन्द्र नामके आचार्य

दिशाओमांथी ढोके होडीने आवता हुता. राज्यतुं ओमने साइं ओवुं सुख हुतुं,  
यौवन पछु ओमतुं प्रतिदिन अपनवीन रीते भीलतुं रडेतुं हुतुं, शरीर ओमतुं  
नवनीत (भाअछु) अने शिरीष पुष्पथी पछु अधिक सुकुमार हुतुं, रूप लावण्य  
नयनाने ढोलावे तेवुं हुतुं, केछ पछु स्थणे ज्वाभां ओने केछ रुकावट न  
हुती, ओमनी चतुरंगिणी सेना दिङ्मण्डलने विजय करनार हुती, ओमतुं ओक  
सुंदर ओवुं उद्यान हुतुं जे नन्दनवन समान हरेक रतुभां सुख आपनार  
हुतुं. जेभां शीतल, मंद, अने सुगंधित पवन बह्या करतो हुतो, जेथी मनने  
सारे आनंद भणतो. जे मंडेलभां राजनो निवास हुतो ते चंद्रमण्डलथी  
पछु रमणिय हुतो अने ते ओटवो उंचो हुतो. के जे आकाशने अडीने उलो  
डाय ओम लागतुं. जधा कामभोग ओने अनुकूल हुता. दौण्डुक देवनी माइक  
ओ समस्त प्रकारनां सुओने लोगवतां पोतानो समय निश्चीत रीते व्यतित  
करता हुता. आभां ओक हिवसनी बात छे के ग्रामानुग्राम विचरता धर्मचंद्र

સ્વયમાગતં સ્તમ્ભસમીપે ત્રિચરણેનાવસ્થિતં સેચનકં દૃષ્ટ્વા શ્રેણિકલ્પસ્તં  
મિષ્ટાહારૈઃ સ્વર્ણભૂષણૈઃ કરસ્પર્શાદિભિઃ નિતરાં લાલયતિ સ્મ । एवं सैचनकह-  
स्तिवत् स्वयमात्मनो दमनेन लोके सर्वत्रादरं लभमानः सुखी भवति । तथैव  
परलोकेऽपि सुखी भवति ' तत्रोदाहरणम्—

અષ્ટમતીર્થકરસ્ય શ્રીચન્દ્રપ્રભસ્ય શાસને ચન્દ્રપુરીનગર્યાં તદ્વંશપરંપરાયાં સુદ-  
ર્શનો નામ નરપતિરાસીત્ । સ ચૈવં પૂર્વોપાર્જિતપુણ્યરાશિરાસીત્-યેન તસ્ય દર્શનાત્  
પ્રજાનામિષ્ટલાભો ભવતિ, અતસ્તદર્શનાર્થમનુદિવસં તત્ર ચતસૃભ્યો દિગ્ભ્યઃ

દમન કરો । દેવ કે इस प्रकार वचन सुनकर सैचनक आलानस्तम्भ के  
पास स्वयं आ कर खड़ा हो गया । राजा सैचनकको आलानस्तम्भके  
पास खड़ा देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ । उसने मिष्ट आहार से तथा स्वर्ण  
के आभूषणों से उसका खूब सत्कार किया । बारंबार उसके ऊपर हाथ  
फेरा और पुचकारा । मतलब कहने का यही है कि जो व्यक्ति सैचनक  
हाथी की तरह अपना स्वयं दमन करता है वह सर्वत्र आदरणीय बन  
कर इस लोक में खूब सुखी हो जाता है । तथा परलोक में आनंदका  
भोक्ता बनता है, इस विषय में उदाहरण इस प्रकार है—

અષ્ટમતીર્થકર શ્રી ચંદ્રપ્રભુ સ્વામી કે શાસન મેં ચંદ્રપુરી નામ કી  
નગરી મેં સુદર્શન નામકા એક રાજા થે । યહ ચંદ્રપ્રભુસ્વામી કી વંશપરં-  
પરા મેં હી ઉત્પન્ન હુએ થે । उसकी पूर्वोपार्जितपुण्यराशि इतनी प्रबल थी कि  
जो कोई प्रजाजन इसका दर्शन करते थे उसे अवश्य ही इष्ट का लाभ  
होता था । इसी से उसके दर्शन के लिये हरएक दिशा से दौड़ २ आते थे ।

દેવનાં આ પ્રકારનાં વચન સાંભળી સેચનક પોતાની જાતે જ રાજધાનીમાં  
પહોંચ્યો અને પ્રથમ જે સ્થળે તેને બાંધવામાં આવેલ હતો તે સ્થળે જઈ ઉભો  
રહી ગયો. સેચનકને આ રીતે પાછો આવેલો જોઈ રાજા શ્રેણિક પુશી થયા  
અને તેને સાડું એવું મીઠું લોજન આપી સોનાના અલંકારો પહેરાવી તેના  
શરીર ઉપર પ્રેમથી હાથ ફેરવવા લાગ્યા. કહેવાનો મતલબ એ છે કે જે વ્યક્તિ  
સેચનક હાથીની માફક સ્વયં પોતાનું દમન કરે છે તે સર્વત્ર આદરને પાત્ર  
બની આ લોકમાં ખૂબ સુખી થઈ પરલોકમાં પણ આનંદના ભોગવનાર બને છે.

આ વિષયમાં ઉદાહરણ આ પ્રકારનું છે—

આઠમા તીર્થંકર શ્રી ચંદ્રપ્રભુસ્વામીના શાસનમાં ચંદ્રપુરી નામના નગ-  
રમાં સુદર્શન નામના રાજા હતા. તે ચંદ્રપ્રભુ સ્વામીના વંશના જ હતા. એની  
પૂર્વોપાર્જિત પુણ્યરાશિ એટલી પ્રબળ હતી કે જે કોઈ પ્રબળ અને એમનાં દર્શન  
કરતો તેને ઈષ્ટનો લાભ અવશ્ય મળી જતો, આથી એમના દર્શન માટે ઘરેક

अनशनावमौदरिकाभ्यां तपोभ्यां रूपलावण्य संपन्नं सुकुमारं शरीरं कृशयति, तथाहि—चतुर्भक्तं कृत्वा तत्पारणायामन्तप्रान्तरुक्षं, तदपिसाभिग्रहं, तदपि स्वल्पं, तदप्यवमौदरिकानुकूलं गृह्णाति । तदनन्तरं षष्ठभक्तमष्टमभक्तं दशमभक्तं द्वादशभक्तं यावन्मासक्षपणं तपः कृत्वा सर्वपारणासु अवमौदरिकं तपः कुर्वन्नेव शरीरं कृशतरं कृतवान् । एवं तीव्रतरतपश्चरणाद् धन्यनामानगारवत् शुष्कमांसशोणितः सन् परिचिन्तयति—आचार्यदेशनानुसारेण मया सर्वथाऽऽत्मा दमितः, धर्मध्यानेनात्मवलं प्राप्य पुष्टोऽस्मि, अतः परं शुकुध्यानाय सर्वथा यतिष्ये, एवं सोत्साहं विशुद्धभावनया क्षपकत्रेणि समारुह्यान्तर्मुहूर्तमात्रेण केवलज्ञानं प्राप्तवान्, एवं वर्षकमात्रेण तीव्रतपसा स्वात्मानं दमयन् सिद्धो जातः । तस्मात् स्वयमेव स्वात्मा दमनीय इति ॥१६॥

होकर दीक्षित हो गये । उन्होंने ने अपने रूपलावण्ययुक्त सुन्दर सुकुमार शरीर को अनशन एवं अवमौदरिक तप द्वारा कृश करना प्रारंभ कर दिया । कभी वह चतुर्भक्त उपवास करते और पारणा के समय अन्त, प्रान्त एवं रुक्ष आहार लेते, उसमें भी अभिग्रह, अभिग्रह में भी स्वल्प, उसमें भी अवमौदरिकानुकूल लेते । वाद में षष्ठ भक्त, अष्टमभक्त, द्वादशभक्त, से लेकर एक मासक्षपण तक भी तपश्चर्या करते । और इन सब तपस्याओं के पारणा के दिन यह अवमौदरिक तप करते । इससे इनका शरीर अतिशय दुर्बल हो गया । इस प्रकार तीव्र तपश्चर्या के करने से इनका शरीर धन्य नामक अनगार के शरीर की तरह शुष्क मांस शोणित वाला होकर केवल अस्थिपंजर मात्र अवशिष्ट रहा । उस समय उन्होंने विचार किया—कि मैं ने आचार्य महाराज की देशना अनुसार सर्व प्रकार से अपनी आत्मा का दमन किया तथा इस अवस्था

सुकुमार शरीरने अनशन अने अवमौदरिक तपथी कृश करवाने प्रारंभ करी दीये। क्यारेक तेये। चतुर्भक्त उपवास करता अने पारणाना समये अन्त, प्रान्त अने रुक्ष आहार लेता हुता। येमां पणु अलिग्रह, अलिग्रहमां पणु स्वल्प, येमां पणु उमौदरिक तप करता आदमां षष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दशभक्त, द्वादशभक्त, थी लछि अेक मासक्षपण सुधीनी पणु तपश्चर्या करता अने अे अधी तपश्चर्याना पारणाना दिवसे उल्लोदरिक तप करता। आथी अेमनुं शरीर अतिशय दुर्बल अनी गयुं, आ प्रकारनी तीव्र तपश्चर्या करवाथी तेमनुं शरीर धन्य नामका अनगारना शरीरनी भाइक बोडी मांस वगरनुं थछि गयुं, अने इकत डाडकाने भाणजे। न आधी रह्यो। अे समये तेमणे विचार कर्यो के—मैं आचार्य महाराजनी देशना अनुसार सर्व प्रकारथी मारा आत्मानुं दमन कर्युं

વૃતો ગ્રામાનુગ્રામં વિહરન્ ચન્દ્રપુસીનગર્યાં વહિરુદ્યાને સહસ્રાઽઽમ્રવને સમવસૃતઃ ।  
તદ્વન્દનાર્થં સુદર્શનો નૃપઃ સપરિવારઃ સમાયાતઃ । આચાર્યેણ સુદર્શનનૃપસ્ય નામા-  
નુરૂપં રૂપલાવણ્યાદિકં વિલોચ્ય ધર્મદેશનાદત્તા-સુદર્શનનૃપો નિશમ્ય મુનિદેશનાં  
મનસિ ચિન્તયતિ-અહો ! યઃ સ્વાત્માનં સ્વયં ન દમયતિ, સ પરે વંધવન્ધનાદિભિ  
દમિતઃ સન્ સ્વાત્મનઃ કર્મ નિર્જરયિતું ન પ્રમયતિ અપિતુ જ્ઞાનાવરણીયાઘપ્ટવિષ-  
કર્મરજોમિઃ સ્વાત્માનં ગુરુતરીકૃત્ય ચતુર્ગતિકસંસારગર્તે નિપતતિ જન્મમરણ-  
રણાધનન્તદુઃખં પ્રાપ્નોતિ । ઇતિ ચિન્તયન્ સર્વેભ્યઃ કામભોગેભ્યો વિરજ્ય મત્રજિતઃ ।

મહારાજ અપને શિષ્યગણ સહિત ઉસ ચંદ્રપુરો નગરી કે બાહિર બગીચે  
મેં સહસ્રામ્રવન મેં પધારે । ઉનકો વન્દન કરને કે લિયે વે સુદર્શનનરેશ  
પરિવારસહિક વહાં ગયે । આચાર્ય મહારાજ ને નામ કે અનુરૂપ ઉનકે  
રૂપલાવણ્ય કો દેખકર ધર્મ દેશના પ્રારંભ કી । સુનકર નરેશ વહૂત  
હી આનંદિત હુણે ઓર વિચારને લગે-જો વ્યક્તિ અપનો આત્મા કો સ્વયં  
દમન નહીં કરતા હૈ વહ દૂસરોં દ્વારા વધ વંધનાદિક સે દમિત હોકર  
અપને કર્મોં કી નિર્જરા કરને મેં શક્તિ શાલી નહીં હોતા હૈ કિન્તુ દુધ્યાન  
હોને સે ઉસ સમય વહ આત્મા ચતુર્ગતિક સંસારરૂપ ગર્ત મેં નિપાતન  
હેતુ જો જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મ કા વંધ હૈ ઉસે દૃઢ કરતા હૈ ।  
ઉસ કર્મરૂપી રજ સે મલિન બના વહ આત્મા ઇતના ભારી હો જાતા હૈ  
કિ ઉસકા પતન સંસારરૂપી ગર્ત મેં અવશ્યંભાવી હોતા હૈ । ઓર વહાં  
પડા હુવા વહ જન્મમરણ આદિકે અનંત દુઃખોં કો ભોગતા રહતા હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર વિચાર કર વહ નરેશ સમસ્ત કામભોગોં સે વિરક્ત

નામના આચાર્ય પોતાના શિષ્યગણ સહિત એ ચંદ્રપુરી નગરના બહારના બગી-  
ચામાં પધાર્યા. રાજા સુદર્શન તેમને વંદન કરવા પરિવાર સાથે ત્યાં ગયા. આચાર્ય  
મહારાજે નામના જેવાજ તેના રૂપ લાવણ્યને જોઈ ધર્મ દેશના પ્રારંભ કરી.  
સાંભળી રાજા ખૂબજ ખુશી થયા અને મનમાં વિચારવા લાગ્યા કે જે વ્યક્તિ  
પોતાના આત્માનું સ્વયં દમન નથી કરતો તે બીજા દ્વારા વધ બંધનાદિકથી  
દમિત થઈ પોતાના કર્મોની નિર્જરા કરવામાં શક્તિશાળી બની શકતો નથી.  
પરંતુ દુધ્યાન હોવાથી એ સમય તે આત્મા ચતુર્ગતિક સંસારરૂપ ખાડામાં  
અવશ્ય પડે છે. અને એમાં જ પડ્યો રહી તે જન્મ મરણ આદિના અનંત  
દુઃખો ભોગવતો રહે છે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી રાજા સુદર્શન સમસ્ત કામ-  
ભોગોથી વિરક્ત બની હીક્ષિત થઈ ગયા. તેમણે પોતાના રૂપલાવણ્ય યુક્ત સુંદર



कर्मयोग्यानाम् आचार्यादीनामित्यर्थः, पक्षतः=पार्श्वतः, न उपविशेदिति शेषः । पार्श्वभागोपवेशने गुर्वादिपंक्तौ समावेशात् तत्साम्यं स्यात्, किंच शिष्यं प्रति वक्रावलोकने गुरोः स्कन्धादिबाधासम्भवः तथा चाविनयः प्रसज्येत, तस्मादाचार्यादिबाहुना सह बाहुं कृत्वा शिष्यो नोपविशेदिति भावः । पुरतो न=गुर्वादीनामग्रतोऽपि नोपविशेत्, तथोपवेशने वन्दनार्थमागतानां जनानां गुर्वादिमुखावलोकनेऽन्तरायः स्यात्, पृष्ठतोऽपि नैवोपविशेत्, गुरुशिष्ययोरुभयोरपि मुखादर्शने वाचनादीनामानन्दो न स्यादिति भावः । ऊरुणा=जङ्घया ऊरुं=जङ्घां न युञ्ज्यात्=न संघट्टयेत्, अत्यासन्नोपवेशनादिभिः शिष्यः स्वकीयेनोरुणा गुरोरूरुं न स्पृशेदित्यर्थः । तथाकरणे सति गुर्वादीनामविनयः स्यात् । तथा-शयने=शय्यायां शयित आसीनो वा न प्रतिशृणुयात् । अयं भावः-शय्यागतः शिष्यो यदि गुरुणाऽऽहूतः

आसन विनय को सूत्रकार कहते हैं—'न पक्खओ०' इत्यादि ॥

अन्वयार्थ ( किच्चाणं पक्खओ-कृत्यानां पक्षतः "न उपविशेत्" कृतिकर्म-अर्थात् वन्दनादि के योग्य-आचार्य तथा अपने से बड़ो के पास में संघट्टा करते हुए बराबर नहीं बैठे । ( पुरओ न पिट्ठओ न-पुरतः न पृष्ठतः न ) गुरु महाराज के आगे नहीं बैठे । पीछे संघट्टा करता हुआ नहीं बैठे । ( ऊरुणा ऊरुं न जुंजे-ऊरुणा ऊरुं न युञ्ज्यात् ) उनके ऊरु-घुटना से घुटना लगाकर नहीं बैठे । ( सयणे नो पडिस्सुणे ) तथा जिस समय आचार्य आदि किसी काम करने के लिये बुलावें अथवा कहें उस समय अपने आसन पर बैठे ही बैठे उत्तर नहीं दे ।

कृतिकर्म का अर्थ वन्दन विशेष है । इसका वर्णन मेरे द्वारा रचित आवश्यक सूत्र की टीका में किया गया है । अतः यह विषय वहां से जान लेना चाहिये । इस कृतिकर्म के योग्य आचार्य आदि होते हैं ।

आसन-विनय विषे सूत्रकार कहे છે—ન પક્કઓ૦ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—કિચ્ચાણં પક્કઓ-કૃત્યાનાં પક્ષતઃ "ન ઉપવિશેત્" કૃતિકર્મ અર્થાત્ વન્દનાદિને યોગ્ય આચાર્ય તથા પોતાનાથી મોટાઓની પાસે તેમની અડોઅડ થઈને બેસવું નહીં, પુરઓ ન પિટ્ઠઓ ન-પુરતઃ ન પૃષ્ઠતઃ ન ગુરુ મહારાજની આગળ બેસવું નહિ, પાછળ અડોઅડ થઈ ન બેસે. ઉરુણા ઉરું ન જુંજે-ઉરુણા ઉરું ન યુજ્જ્યાત્ તેમના ઘુંટણથી ઘુંટણ લગાડીને ન બેસે. સયણે નો પડિસ્સુણે તથા જે સમયે આચાર્ય આદિ કોઈ કામ કરવા માટે બોલાવે અથવા કહે તે સમયે પોતાના આસન ઉપર બેઠાં બેઠાં જવામ ન આવે.

ભાવાર્થ—કૃતિકર્મનો અર્થ વંદન વિશેષ છે. જેનું વર્ણન મારાથી રચિત આવશ્યક સૂત્રની ટીકામાં કરવામાં આવેલ છે, આથી આ વિષય ત્યાંથી



આસનવિનયમાહ—

મૂલમ્—નં પંક્તઓ નં પુરંઓ, નેવં કિચ્ચાંણ પિટ્ઠંઓ ।

નં જુંજે'' ઝરુણા ઝરું, સયંણે નો'' પડિસ્સુણે ॥ ૧૮ ॥

છાયા—ન પશ્વતો ન પુરતો, નૈવ કૃત્યાનાં વૃષ્ટઃ ।

ન યુઙ્ગ્યાદ્ ઝરુણા ઝરું, શયને નો પ્રતિગ્રણ્યાત્ ॥ ૧૮ ॥

ટીકા—‘ ન પંક્તઓ ’ इत्यादि ।

કૃત્યાનામ્=કૃતિયોગ્યાઃ કૃત્યાઃ, અત્ર કૃતિશબ્દેન કૃતિકર્મ ગૃહ્યતે, કૃતિકર્મ-વન્દનવિશેષઃ, તદ્વર્ણનમાવશ્યકસૂત્રસ્ય મત્કૃતમુનિતોપિનીટીકાયાં દ્રષ્ટવ્યમ્, કૃતિ-

સુન્દર લતા કો પ્રત્યનીકભાવ નષ્ટ કર દેતા હૈ । ફસલિયે મોક્ષાભિલાષી વિનયવાન શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સ્વપ્ન મેં બી અપને ગુરુ મહારાજ કા પ્રત્યનીક ન્ વનેં ।

શ્લોક મેં “ વાચા કર્મણા ” જો પદ દિયે ગયે હેં ઉસકા મતલબ યહ હૈ કિ ગુરુ કે પ્રતિ શિષ્ય એસા ન કહે કિ “ આપ બી કયા કુછ જાનતે હેં ” । ફસ પ્રકાર કા વ્યવહાર વાચનિક પ્રતિકૂલ આચરણ મેં ગર્ભિત હોતા હૈ । ફસી તરહ વે જિસ સંસ્તારક પર વૈઠતે હોં ઉસકા કબી બી શિષ્ય કો ઉલ્લંઘન નહીં કરના ચાહિયે । ઉસસે પૈર કા સંઘર્ષણ યા સંઘટ્ટન ન હો ફસકી સદા સાવધાની રખની ચાહિયે । તથા આચાર્ય મહારાજ કે સમક્ષ કબી બી શિષ્ય કો ઉચ્ચ આસન પર નહીં બેઠના ચાહિયે ઓર ઉનકે આને પર અપને આસન સે ઉઠકર ગુરુ મહારાજ કો વંદન આદિ કરના ઉચિત હૈ ॥ ૧૭ ॥

લતાનો પ્રત્યનિકભાવ નાશ કરી નાખે છે. આ માટે મોક્ષાભિલાષી વિનયવાન શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સ્વપ્નામાં પણ પોતાના ગુરુ મહારાજનો પ્રત્યનિક ન બને.

શ્લોકમાં ( વાચા કર્મણા ) જે પદ આપવામાં આવેલ છે તેનો મતલબ એ છે કે ગુરુના પ્રતિ શિષ્ય એવું ન કહે કે “ તમે પણ શું કાંઈ જાણો છો ” આ પ્રકારનો વહેવાર વાચનિક પ્રતિકૂલ આચરણમાં ગર્ભિત થાય છે. આ રીતે તે જે આસન ઉપર બેસતા હોય તેનું શિષ્યે કદિ પણ ઉલ્લંઘન કરવું ન જોઈએ, એ આસનને તેનો પગ ન લાગે તેની તેણે સાવચેતી રાખવી જોઈએ તથા આચાર્ય મહારાજની સામે કદી પણ શિષ્યે ઉંચા આસન પર બેસવું ન જોઈએ અને તેમના આવવાથી પોતાના આસન ઉપરથી ઉભા થઈ ગુરુ મહારાજને વંદન વગેરે કરવું ઉચિત છે ॥ ૧૭ ॥

मूलम्—नेव पल्हत्थियं कुज्जा, पक्खपिण्डं च संजए ।

पाए पँसारिए वावि नँ चिट्ठे' गुरुणंतिए ॥ १९ ॥

छाया—नैव पर्यस्तिकां कुर्यात्, पक्षपिण्डं च संयतः ।

पादौ प्रसार्य वापि, न तिष्ठेद् गुरुणामन्तिके ॥ १९ ॥

टीका—‘नेव पल्हत्थियं’ इत्यादि ।

संयतः—मुनिः, पर्यस्तिकाम्—द्वे जानुनी उत्थाप्य वस्त्रेण पृष्ठतः समारभ्य पार्श्वद्वयं जानुद्वयं च संवेष्ट्योपवेशनं पर्यस्तिका, यद्वा—जङ्घाद्वयं वस्त्रेण संवेष्ट्यो-

उन्हें प्राप्त नहीं हो सकेगा । तथा गुरु महाराज की जंघा से जंघा अड़ाकर भी शिष्य को इसलिये नहीं बैठना चाहिये कि इस प्रकार की क्रिया से गुरु महाराज का अविनय होता है । गुरु महाराज जब किसी कार्य करने के लिये शिष्य को बुलावे तो उस समय उसका कर्तव्य है कि वह ‘तहेति-तहेनि’ कहकर आसनसे उसी वस्तु संभ्रान्तचित्त होकर आसन का परित्यागकर देवे और बड़ी भक्तिसे विनयके साथ गुरुके समक्ष जाकर हाथ जोड़ वन्दना करके पूछे कि हे भदन्त ! आज्ञा दीजिये—किस कार्य के लिये आपने मुझे याद किया है । इस प्रकार का व्यवहार भी विनयधर्म में परिगृहीत हुआ है ॥ १८ ॥

‘नेव पल्हत्थियं०’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(संजए संयतः) मुनि शिष्य को (गुरुणंतिए—गुरुणामन्तिके) अपने गुरुजनों के समक्ष (पल्हत्थियं नेव कुज्जा—पर्यस्तिकां नैव कुर्यात्) पैरों पर पैर रखकर—पालरथी मारकर—पद्मासन माड़कर—कभी नहीं बैठना चाहिये । इस प्रकार बैठने से आशातना दोष लगता है ।

એને પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. તેમ ગુરુ મહારાજના ગોઠણથી ગોઠણ ભીડાવીને શિષ્યે એટલા માટે ન બેસવું જોઈએ, કારણ કે આ પ્રકારની ક્રિયાથી ગુરુ મહારાજનો અવિનય થાય છે, ગુરુ મહારાજ કોઈ કામ માટે શિષ્યને બોલાવે તો તે સમયે એનું કર્તવ્ય છે કે પોતાના આસન ઉપરથી એજ વખતે સ્વસ્થ ચિત્ત બની ગુરુ બોલાવે ત્યારે તહેત કહી આસનનો ત્યાગ કરી ભક્તિપૂર્વક વિનય સાથે ગુરુની સામે જઈ હાથ જોડી વંદના કરી પૂછે કે હે ભદ્રન્ત ! આજ્ઞા આપો કયા કામ માટે આપે મને યાદ કરેલ છે. આ પ્રકારનો વહેવાર પણ વિનય ધર્મમાં અહણ કરવામાં આવેલ છે ॥ ૧૮ ॥

नेव पल्हत्थियं इत्यादि,

अन्वयार्थ—संजए—संयतः मुनि शिष्ये गुरुणंतिए—गुरुणामन्तिके पौताना गुरुजनोंनी सामे पल्हत्थियं नेवकुज्जा—पर्यस्तिका नैव कुर्यात् पण उपर पण राभी—पळेांडी लगावी—पद्मासन लगाडी, कडि पणु बेसवुं न जेईये. आ

કિંચિત્કાર્યકરણાય પ્રોક્તો ચા સ્યાત્, તદા શિષ્યેણ શર્યાયાં સ્થિતેનૈવ ન શ્રોતવ્યમ્, કિં તુ ગુરુવચનશ્રવણસમનન્તરમેવ સંભ્રાન્તચેતાઃ સચિનયઃ કૃતાન્જલિઃ સન્ ગુરોઃ સમીપમાગત્ય ચરણારવિન્દં વન્દમાનઃ ‘અનુગૃહીતોઽહમ્’ ઇતિ મનસિ મન્યમાનો વદેત્—‘ભદન્ત ! આજ્ઞાપયતુ કિં વિધેયં મયા ’ ઇતિ ॥ ૧૮ ॥

મોક્ષાભિલાષી શિષ્ય કા કર્તવ્ય છે કિં વહ આચાર્યાદિક કો દાયેં વાયેં ન વૈઠે । કારણ કિં ઇસ પ્રકાર વૈઠને સે ગુર્વાદિક કી પંક્તિ મેં ઉસકા સમાવેશ હોતા હૈ । દર્શનાર્થી લોગ શિષ્ય કો સમજેંગે કિં યહી ગુરુ મહારાજ હૈ । તથા શિષ્ય કે પ્રતિ જય ગુરુ કો દેખને કી ઇચ્છા હોગી તો વે અપની ગર્દન કો મોઢકર ઉસકો દેખેંગે, ઇસસે ઉનકી ગર્દન મેં તથા સ્કન્ધ આદિ ફિરાને મેં તકલીફ હોગી, તથા ગુરુ મહારાજ કા સંઘટ્ટા આદિ હોને સે શિષ્ય કો આશાતના આદિ દોષ લગને કા સંભવ હૈ । ઇસલિયે ગુરુ મહારાજ કી વરાવરી મેં નહીં વૈઠના ચાહિયે । ગુરુ મહારાજ કે આગે બી ઇસી તરહ સે નહીં વૈઠના ચાહિયે । કારણ કિં ઇસ પ્રકાર સે વૈઠને મેં ગુરુ મહારાજ કો વન્દના નિમિત્ત આને વાલોં કો ઉનકે દર્શનોં મેં અન્તરાય હોતી હૈ । ઇસી પ્રકાર ગુરુ કે પીછે બી શિષ્ય કો નહીં વૈઠના ચાહિયે—ક્યોં કિં ઇસ પ્રકાર સે વૈઠને પર ગુરુ કો શિષ્ય કા મુખ નહીં દીઘ સકેગા ઓર શિષ્ય કો ગુરુ કા મુખ નહીં દીઘ સકેગા, ઇસસે વાચના પૃચ્છના આદિ મેં અન્તરાય હોને સે ઉનકા આનંદ

જાણી લેવો જોઈએ, આ કૃતિકર્મના યોગ્ય આચાર્ય આદિ હોય છે. મોક્ષા-ભિલાષી શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે આચાર્ય આદિથી ડાબા-જમણા ન બેસે કારણ કે, આ પ્રકારે બેસવાથી ગુરુ આદિની પંક્તિમાં તેનો સમાવેશ થાય છે. દર્શનાર્થી લોક શિષ્યને જ ગુરુ મહારાજ માની લે. શિષ્ય તરફ જ્યારે ગુરુ મહારાજને જોવાની ઇચ્છા થાય ત્યારે તે પોતાની ગરદન મરડીને તેના તરફ જોશે આથી એમની ગરદનમાં તથા ખભા વગેરે ફેરવવામાં તકલીફ થશે તથા ગુરુ મહારાજનું સંઘટ્ટ આદિ થવાથી શિષ્યને અશાતના આદિ દોષ લાગવાનો સંભવ છે. આ માટે ગુરુ મહારાજની બરોબરીમાં બેસવું ન જોઈએ તેમ ગુરુ મહારાજની આગળ પણ આ રીતે બેસવું ન જોઈએ. કારણ કે આ પ્રકારના બેસવાથી ગુરુ મહારાજની વંદના માટે આવનારને તેમના દર્શનમાં અંતરાય થાય છે. આ પ્રકારે ગુરુની પાછળ પણ શિષ્યે બેસવું ન જોઈએ કેમ કે આ રીતે બેસવાથી ગુરુ શિષ્યનું મુખ જોઈ શકતા નથી અને શિષ્ય, ગુરુનું મુખ જોઈ શકતા નથી અને ગુરુ શિષ્યનું મુખ જોઈ શકે નહીં આથી વાચના પૃચ્છના આદિમાં અંતરાય થવાથી એનો

प्रेक्षितुं शीलमस्येति तथा, असौ गुरुणां प्रसादः—यदन्येषां शिष्याणां सद्भावेऽपि गुरवो मामाज्ञापयन्तीति विचारशील इत्यर्थः । यद्वा—केन विधिना गुरुः प्रसन्नो भवेदिति भावनाभावितः, गुरुप्रसादलाभार्थी इति यावत् । उक्तञ्च—

जो नखि भग्गसाली, नो सो गुरुदेसणं इहं लभए ।

धारामियस्स निवडइ, अंगेणो पुनहीणाणं ॥ १ ॥

छाया—यो नास्ति भाग्यशाली, नासौ गुरुदेशनामिहालभते ।

धाराऽमृतस्य निपतति, अङ्गे नो पुण्यहीनानाम् ॥ १ ॥

तथा नियागार्थी=मोक्षार्थी शिष्यः गुरुं=धर्माचार्यादिकं, सदा उपतिष्ठेत्= 'मत्थएण वंदामि' इत्यादि वदन् सचिन्तयं गुरुसमीपे तिष्ठेदित्यर्थः ॥१०॥

जावे, अथवा किसी कार्य करने के लिये कहा जावे—तब वह (कयाइवि—कदाचिदपि) कभी भी (तूसणीओ न-तूणीकः न भवेत्) उत्तर दिये बिना नहीं रहे चाहे बीमार भी होवे तौ भी चुपचाप न रहे । (पसाय-पेही-प्रसादप्रेक्षी) यह समझे कि मेरा बड़ा भारी सौभाग्य का उदय है, जो अन्य शिष्यों के होने पर भी गुरु महाराज मुझे ही आज्ञाप्रदान कर रहे हैं । अथवा—यह विचार करे कि गुरु महाराज जिस उपाय से मेरे पर प्रसन्न हों वही उपाय मुझे करते रहना चाहिये । इस प्रकार की भावना से भावित होकर गुरु के प्रसाद का लाभार्थी बने । क्यों कि कहा भी है—जिस प्रकार हीन पुण्यवालों के शरीर ऊपर अमृत रस की धारा नहीं पड़ती है—उसी प्रकार जो शिष्य भाग्यशाली नहीं होता है वह गुरु की देशना का पात्र नहीं होता है । इसी तरह (नियागद्वी) मोक्ष-मिलापी शिष्य का कर्तव्य है कि वह (सया गुरुं उवचिद्धे—सदा गुरुं

त्यारे तेने जेलाववाभां आवे अथवा केअ कभ भाटे छडेवाभां आवे त्यारे कयाइवि-कदाचिदपि ते कदि पणु तुसणीओ न-तुणीकः न भवेत् उत्तर आभ्या वगर न रहे. चाडे ते भीमार डाय तो पणु चुपचाप न रहे. पसायपेही-प्रसादप्रेक्षी ते जेवुं समजे के, भारा सौभाग्यने। मोटे। उदय छे के, भीन शिष्यो डोवा छतां पणु गुरु महाराज भने न आज्ञा आपे छे. अथवा जेवो विचार करे के गुरु महाराज ने उपायथी भारा उपर प्रसन्न रहे तेवो न उपाय भारे करता रहेवुं जेअ. आ प्रकारनी भावनाथी भाविक जनीने गुरुना प्रसादने। लाभार्थी जने. केभके, कहुं छे के—ने प्रकारे दुर्भागीना शरीर उपर अमृतरसनी धार पडती नथी, जे प्रकारथी ने शिष्य भाग्यशाली नथी डोते। ते गुरुनी देशनाने पात्र जनते। नथी. आ रीते नियागद्वी-मोक्षमिलापी शिष्यनुं कर्तव्य छे के ते सया गुरुं उवचिद्धे—सदा गुरुं उपतिष्ठेत् जेभेशां

પવેશનં, પર્યસ્તિકા, તામ્, પક્ષપિણ્ડં—વાહુદ્વયેન કાયવેષ્ટનં ચ નૈવ કુર્યાત્ । અપિ  
વા=અપિ ચ ગુરુણામ્ અન્તિકે=સંનિધૌ પાદૌ=ચરણૌ પ્રસારિતૌ કૃત્વા ન તિષ્ઠેત્ ।  
ઇદમુપલક્ષણમ્—એકજઘ્નોપરિ અપરચરણં નિધાયાપિ ન તિષ્ઠેત્ । તથાસત્યવિનયઃ  
સ્વાદિતિ ભાવઃ ॥ ૧૯ ॥

મૂલમ્—આયરિણ્હિં વાહિત્તો, તુસિંળીઓ નં કયાઈં ત્રિ ।

પસાયપેહી નિયોગટ્ટી, ઉંવચિદ્દે ગુરં સયા ॥૨૦॥

છાયા—આચાર્યવ્યાહતઃ તૂળીકો, ન કદાચિદપિ ।

પ્રસાદપ્રેક્ષી નિયાગાર્યો, ઉપતિષ્ઠેત્ ગુરં સદા ॥ ૨૦ ॥

ટીકા—‘આયરિણ્હિં૦’ ઇત્યાદિ ।

આચાર્યઃ=ગુરુભિઃ, વ્યાહતઃ—આહૂતઃ, યદ્વા-ઉક્તઃ સન્ તૂળીકઃ=મૌનાવલમ્બી,  
કદાચિદપિ=ગ્લાનાઘવસ્થાયામપિ ન ભવેદિતિ શેષઃ । કિંતુ પ્રસાદપ્રેક્ષી=પ્રસાદં  
( પક્ષપિણ્ડં ચ નૈવ કુઝ્જા-પક્ષપિણ્ડં ચ નૈવ કુર્યાત્ ) હસી પ્રકાર દોનોં  
હાથોં સે ઘુટને વાંધકર તથા પીઠ ભાગ સે લેકર દોનોં ઘુટનોંકો વસ્ત્ર  
વાંધકર ભી વૈઠના ગુરુ મહારાજ કી આશાતના હૈ । ( પાણ પસારિણ વાવિ  
ન ચિદ્દે-પાદૌ પ્રસાર્ય વાપિ ન તિષ્ઠેત્ ) અર્થાત્ ગુરુ મહારાજ કે સામને  
પૈરોં કો પસાર કર ભી શિષ્ય કો વૈઠના ઉચિત નહીં હૈ । હસી તરહ  
અર્ધ પદ્માસન કે રૂપ મેં મોં ઉનકે સમક્ષ નહીં વૈઠના ચાહિયે । એસા  
કરને સે અવિનય દોષ લગતા હૈ ॥ ૧૯ ॥

‘આયરિણ્હિં૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્યથાર્થ—શિષ્ય કો ચાહિયે કિ વહ ( આયરિણ્હિં વાહિત્તો-  
આચાર્યઃ વ્યાહતઃ સન્ ) આચાર્ય તથા અપને સે વડોં દ્વારા જવ ઘુલાયા

પ્રકારે બેસવાથી અશાતનાનો દોષ લાગે છે. પક્ષપિણ્ડં ચ નૈવ કુઝ્જા-પક્ષપિણ્ડં  
ચ નૈવ કુર્યાત્ આ પ્રકારે બન્ને હાથોને ગોઠણ ઉપર લગાવી. તથા  
વાંસાના લાગથી લઈ બન્ને ઘુટણને વસ્ત્રથી બાંધી બેસવાથી પણ ગુરુ  
મહારાજની અશાતના થાય છે. પાણ પસારિણ વાવિ ન ચિદ્દે-પાદૌ પ્રસાર્યવાપિ ન  
તિષ્ઠેત્ અર્થાત્ ગુરુ મહારાજની સામે પગ લાંબા કરીને પણ શિષ્યે બેસવું  
ઉચિત નથી. આ રીતે અર્ધ પદ્માસનના રૂપથી પણ એમની સામે બેસવું ન  
ભેઈ એ એમ કરવાથી અવિનય દોષ લાગે છે ॥ ૧૯ ॥

‘આયરિણ્હિં૦’ ઇત્યાદિ.

અન્યથાર્થ—વિવેક્ષી શિષ્ય માટે એ જરૂરી છે કે તે આયરિણ્હિં વાહિત્તો-  
આચાર્યઃ વ્યાહતઃ સન્ આચાર્ય તથા પોતાનાથી મોટા ૧



આસનાવસ્થિતં શિષ્યં વદતિ, તદા શિષ્યો વ્યાખ્યાનાદિકાલેપિ પટ્ટાઘાસને નોપ-  
વિષ્ટઃ સ્યાદ્, કિંતુ આસનં ત્યક્ત્વા ધીરઃ=યુદ્ધિમાન્, શિષ્યઃ યતઃ=યત્નવાન્ એકા-  
ગ્રચિત્તઃ સન્ યત્=યત્ કાર્યં, ગુરુણોક્તં સુકરં દુષ્કરં વા, તત્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્,  
'અવશ્યકરણભાવોઽસ્તિ' હત્યુક્ત્વા સ્વીકુર્યાત્ । અત્ર-ધીર ઇતિ વિશેષણં વ્યાખ્યા-  
નાદિકાલે, તથા સ્વશરીરાદિકાર્યવશાદ્ વ્યગ્રસ્યાપિ શિષ્યસ્ય ગુરુવિનયારાધનાર્થં  
ક્ષમત્વં સાવધાનત્વં ચ સૂચયતિ । 'યતઃ' ઇતિ વિશેષણેન સમિતિગુપ્તિસમારાધન-  
પૂર્વકં ગુરોઃ સકલકાર્યસંપાદનાભિરુચિઃ સૂચિતા । પ્રતિશૃણુયાદિતિ પદેન ગુરુવ-  
ચનશ્રવણસમનન્તરમવિલમ્બેન તત્કાર્યસંપાદનાર્થં સ્વીકૃતિવચનમુક્ત્વાઽન્યત્ સર્વં  
સ્વકીયકાર્યં વિહાય પ્રથમં સર્વથા ગુરુકાર્યસાધને સાદરા પ્રવૃત્તિઃ સૂચિતા ॥૨૧॥

બેઠા હો તો મી ઉસ સમય શીઘ્ર ઉઠકર ઉસે ગુરુ મહારાજ કી આજ્ઞા  
કા પાલન કરના ચાહિયે । એસા નહીં કરના ચાહિયે કિ ગુરુ મહારાજ  
કી વાત સુનકર મી પુનઃ આસન પર બેઠ જાવે । અર્થાત્ ઉસ સમય  
વ્યાખ્યાન આદિ કા સમય હો તો મી ગુરુ મહારાજ કી આજ્ઞા કા  
આરાધન કરના ચાહિયે । હસી વાત કો ઉત્તરાર્ધ મે સૂત્રકાર ને સ્પષ્ટ  
કિયા હૈ—( ચઙ્ગણ આસનં ધીરો જઓ જત્તં પઢિસ્સુણે—ત્યક્ત્વા આસનં  
ધીરઃ યત્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્ ) ચાહે વહ કાર્ય સરલ હો ચાહે કઠિન હો તો  
મી સર્વપ્રકાર કે સંકલ્પ વિકલ્પ સે રહિત હોકર ગુરુ મહારાજ કથિત  
કાર્ય કો “ અવશ્ય કરને કા ભાવ હૈ ” એસા કહકર શિષ્ય કો સ્વીકાર  
કરના ચાહિયે । સૂત્ર મેં જો ધીર વિશેષણ દિયા ગયા હૈ ઉસસે સૂત્રકાર  
કા યહ અભિપ્રાય સૂચિત હોતા હૈ કિ જિસ સમય ગુરુ મહારાજ કાર્ય  
કરને કે લિયે શિષ્ય સે કહેં ઉસ સમય વહ શિષ્ય ચાહે વ્યાખ્યાન દેને

આસન ઉપર બેસેલ હોય તો પણ ત્યાંથી તુરત જ ઉઠીને તેણે ગુરુ મહારાજની  
આજ્ઞાનું પાલન કરવું જોઈએ. એવું નહીં કરવું જોઈએ કે, ગુરુ મહારાજની  
વાત સાંભળીને પણ આસન ઉપર પાછો બેસી બીજા અર્થાત્ એ વખતે વ્યાખ્યાન  
આદિને સમય હોય તો પણ ગુરુ મહારાજની આજ્ઞાનું આરાધન કરવું  
જોઈએ. આ વાતને ઉત્તરાર્ધથી સૂત્રકારે સ્પષ્ટ કરેલ છે.

ચઙ્ગણ આસનં ધીરો જઓ જત્તં પઢિસ્સુણે—ત્યક્ત્વા આસનં ધીરઃ યતો યત્તત્ પ્રતિ-  
શૃણુયાત્ આહે તે કામ સરળ હોય, આહે કઠીન હોય તો પણ સર્વ પ્રકારના  
સંકલ્પ વિકલ્પથી રહિત થઈને ગુરુ મહારાજે કહેલા કામને “ અવશ્ય કરવું  
જોઈએ તેવો ભાવ છે ” એવું કહીને શિષ્યે તેનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ.  
સૂત્રમાં જે ધીર વિશેષણ અપાયેલ છે તેનાથી સૂત્રકારનો એ અભિપ્રાય જણાય  
છે કે, જે સમયે ગુરુ મહારાજ કામ કરવા માટે શિષ્યને કહે તે સમયે શિષ્ય

આસનસ્થિતસ્ય શિષ્યસ્ય વિનયમાહ—

મૂલમ્—આલંબંતે લંબંતે વા, ન નિસિજ્ઞં કર્યાદિવિ ।

चङ्कुण आसणं धीरो, जंओ जंतं” पडिस्सुणे ॥२१॥

છાયા—આલપતિ લપતિ વા, ન નિપીદેત્ કદાચિદપિ ।

ત્પક્ત્વા આસનં ધીરો, યતો યત્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્ ॥ ૨૧ ॥

ટીકા—‘ આલંબંતે ’ इत्यादि ।

ગુરૌ આલપતિ=સકૃદ્ વદતિ સતિ, કાર્યસ્ય લઘુત્વાત્સકૃત્કથનમિતિ ભાવઃ,

યથા—આસનમાનીયતામ્, પારણં ક્રિયતામ્, इत्यादि, વા=અથવા ગુરૌ લપતિ=

પુનઃ પુનઃ કથયતિ સતિ ગ્રહણાસેવનાશિક્ષાયાં સ્વપરચૈયાવૃત્ત્યકાર્યે ચ, કાર્યસ્ય વૃદ્ધ-

ત્વાદત્યાવશ્યકત્વાચ્ચ પુનઃ પુનઃ કથનમિતિ ભાવઃ, શિષ્યઃ કદાચિદપિ ન નિપીદેત્=

આસનાઽસીનો ન ભવેત્ । અયં ભાવઃ—યદિ ગુરુઃ કિંચિત્ કાર્યં સકૃદ્વા, પુનઃ પુનર્વા,

ઉપતિષ્ઠેત્ ) “ મત્થે ણં વંદામિ ” इस प्रकार विनयद्योतक शब्द का

व्यवहार करता हुआ सदा अपने गुरु के समक्ष उपस्थित होवे ।

ભાવાર્થ—ગુરુમહારાજ જિસ તરહ અપને ઉપર પ્રસન્ન હો ઉત્તમ શિષ્ય

કા કર્તવ્ય છે કે વહ ઉસ પ્રકાર પ્રયત્નશીલ રહે ॥ ૨૦ ॥

‘ આલંબંતે૦ ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(આલંબંતે લંબંતે વા કયાઈ વિ ન નિસિજ્ઞા—આલપતિ

લપતિ વા કદાચિદપિ ન નિપીદેત્) ઉત્તમશિષ્ય—વિનયશીલશિષ્ય

કા કર્તવ્ય છે કે જવ ગુરુ મહારાજ કિસી કાર્ય કો કરને કે

લિયે એક હી વાર મેં કહેં યા વાર ૨ મી કહેં તૌ ઉસ સમય

ઉસે કમી ઉસ કાર્ય કો કરને કે લિયે આના કાની નહીં કરની

ચાહિયે । અર્થાત્—ઉસ સમય વહ શિષ્ય ચાહે અપને આસન પર મી

પોતાના ગુરુની સમક્ષ જતી વખતે મત્થે ણં વંદામિ આ પ્રકારનો વિનય દ્યોતક શબ્દનો વહેવાર કરતો રહે.

ભાવાર્થ—ગુરુદેવ જે રીતે પોતાના ઉપર પ્રસન્ન થાય એવો પ્રયત્ન કરવાનું ઉત્તમ શિષ્યનું કર્તવ્ય છે, અને એ પ્રકારે તે પ્રયત્નશીલ રહે ॥ ૨૦ ॥

આલંબંતે૦ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—આલંબંતે લંબંતે વા કયાઈ વિ ન નિસિજ્ઞા—આલપતિ

લપતિ વા કદાચિદપિ ન નિપીદેત્ ઉત્તમ શિષ્ય—વિનયશીલ શિષ્યનું કર્તવ્ય

છે કે જ્યારે ગુરુ મહારાજ કોઈ કામ કરવા માટે એક જ વખતે કહી

દે અથવા વારંવાર કહે તે સમયે તેણે કદિ પણ એ કાર્યને કરવા માટે

આનાકાની કરવી ન જોઈએ. અર્થાત્—એ વખતે એ શિષ્ય જલે પોતાના

कृत्वा स्थितः सन् प्राञ्जलिपुटः=कृताञ्जलिः, सूत्रादिकं पृच्छेत् । यद्वा-कदाचिदपि  
=बहुश्रुतत्वेऽपि आसनगतः शय्यागतो वा न पृच्छेत् सूत्रादिकमित्यर्थः ।

‘आसनगओ’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—उत्तम शिष्यं को चाहिये कि वह (आसनगओ-आसनगतः) आसन पर बैठे २ अथवा (सेज्जागओ-शय्यागतः) संस्तारक पर बैठे २ या सोये २ (रोगादिक अवस्था को छोड़कर) (कदाइवि-कदाचिदपि) कभी भी (न पुच्छिज्जा-न पृच्छेत्) गुरु महाराज से सूत्र का अर्थ अथवा उनकी कुशलता न पूछे । किन्तु (आगम्मुक्कुडुओ संतो पंजली उडो पुच्छिज्जा-आगम्य उत्कुडुकः सन् प्राञ्जलिपुटः पृच्छेत्) उनके समीप आकर और उत्कुडुकासन-उकडु आसनसे बैठकर दोनों हाथजोड़ फिर उनसे सूत्र आदि का अर्थ पूछे । शिष्य कितना ही बहुश्रुती क्यों न हो तौ भी अपने गुरु से सूत्रार्थ की प्रच्छना अथवा सुख शाता की पृच्छना आसन पर बैठे २ या विस्तर पर लेटे २ नहीं करनी चाहिये । यद्यपि सूत्रार्थ की पृच्छना संशय होने पर ही की जाती है । बहुश्रुत होने पर भी संशय हो सकता है । अब ऐसी स्थिति में शिष्य का धर्म है कि उस संशय की

आसनगओ इत्यादि.

अन्वयार्थ—उत्तम शिष्यनी ओ इरज छे के ते आसनगओ-आसनतः आसन उपर जेठां जेठां अथवा सेज्जागओ-शय्यागतः शय्याभां जेठां जेठां के सुतां सुतां (रोगादिक अवस्थाने छोडीने) कदाइवि-कदाचिदपि इदी पणु गुरु महाराजथी सूत्रने। अर्थ अथवा ओमनी कुशलता न पुच्छिज्जा-न पृच्छेत् न पुछे. परंतु आगम्मुक्कुडुओ संतो पंजलि उडो पुच्छिज्जा-आगम्य उत्कुडुकः सन् प्राञ्जलिपुटः पृच्छेत् तेमनि सामे आवी अने उत्कुटासनथी जेसी जन्ने हाथ जेडी त्थारपछी ओमने सूत्र आदिना अर्थ पुछे अने सुण-शाताना समाचार पुछे शिष्य गमे तेवे। बहुश्रुत केम न डोय तो पणु पोताना गुरुथी सूत्रार्थना अर्थ अथवा सुणशाताना समाचार आसन पर जेठां जेठां अथवा तो पथारी पर सुतां सुतां न पुछवा जेछये. जे के सूत्रार्थ आदिना अर्थ संशय थवाथी ज पुछाय छे. बहुश्रुत डोवा छतां पणु संशय थाय छे. आवी आवी स्थितिमां शिष्यने। धर्म छे के, ओ संशयनी निवृत्ति भाटे ते गुरुनी समक्ष जय अने पुण विनयनी साथे ओ संशयनी निवृत्ति

મૂલમ્—આસનગઓ ને પુચ્છજ્જા, નેવં સેજ્જાગઓ કર્યાઈ વિ ।

આગમ્મુવકુદુઓ સંતો, પુચ્છજ્જા પંજલેંડો ॥૨૨॥

છાયા—આસનગતો ન પૃચ્છેત્, નેવ શય્યાગતઃ કદાચિદપિ ।

આગમ્યોત્કુદુકઃ સન્, પૃચ્છેત્ માણ્ણલિપુટઃ ॥ ૨૨ ॥

ટીકા—‘આસનગઓ’ इत्यादि । आसनगतः=आसनोपविष्टः सन् न पृच्छेत्  
सुप्रार्थं कुशळादिकं वा किमपि न पृच्छेदित्यर्थः । तथा—कदाचिदपि कस्मिन्नपि  
फाले शय्यागतः-संस्तारकरिथतः नैव पृच्छेत्-रोगाद्यवस्थां विना शयानः सन् किमपि  
नैव पृच्छेदित्यर्थः । किंतु आगम्य=गुरोः समीपे आगत्य, उत्कुदुकः=उत्कुदुकासनं

के लिये भी तैयार रहा हो—वह काल उसके व्याख्यान करने का भी  
हो अथवा अपने शारीरिक कार्य के वश से वह शिष्य व्यग्रचित्त वाला  
भी हो तो भी विनय धर्म की आराधना निमित्त उसे गुरु महाराज  
कथित कार्य करने की क्षमता एवं उस कार्य करने में विशेष सावधानी  
रखनी चाहिये । “जओ-यतः” यह पद यह प्रकट करता है कि शिष्य  
को समिति गुप्ति के आराधनपूर्वक ही गुरु महाराज के समस्त कार्यों  
के सम्पादन में रुचि शील होना चाहिये । “प्रतिशृणुयात्” यह क्रिया-  
पद इस विशेषता का सूचक है कि गुरु वचन के श्रवण के अनन्तर ही  
विना किसी विलंब के उनके कार्य को करने के लिये प्रतिज्ञा वचन  
कहकर और अपने निज कार्य को भी छोड़कर शिष्य का कर्तव्य है कि  
वह सर्व प्रकार से उनके कार्य के साधन करने में सादर प्रवृत्ति करे ॥२१॥

ભલે વ્યાખ્યાન આપવા માટેની તૈયારીમાં હોય—તે સમય તેને વ્યાખ્યાન  
કરવાનો હોય, અથવા પોતાના શારીરિક કાર્યના વશથી તે શિષ્ય વ્યગ્ર ચિત્ત-  
વાળો હોય તો પણ વિનય ધર્મની આરાધના નિમિત્ત તેનામાં ગુરુ મહારાજે  
કહેલા કામને કરવાની ક્ષમતા અને એ કામ કરાવવામાં વિશેષ સાવધાની  
રાખવી જોઈએ. જઓ-યતઃ એ પદ એવું પ્રગટ કરે છે કે, શિષ્યે સમિતિ  
ગુપ્તિના આરાધન પૂર્વક જ ગુરુ મહારાજના દરેક કામોનું સંપાદન કરવામાં  
રુચી કેળવવી જોઈએ. પ્રતિશ્રુણુયાત્ એ ક્રિયાપદ એ વિશેષતાનું સૂચક છે કે  
ગુરુવચનને સાંભળતાં જ કોઈ પ્રકારના વિલંબ વિના એમના કામને કરવા  
માટે પ્રતિજ્ઞા વચન કહીને અને પોતાનું કામ હોય તેને છોડીને શિષ્યનું કર્તવ્ય  
છે કે, તે સર્વ પ્રકારથી ગુરુ મહારાજના કામને પૂરું કરવામાં પોતાની સાદર  
પ્રવૃત્તિ કરે. ॥ ૨૧ ॥

કૃત્વા સ્થિતઃ સન્ પ્રાજ્જલિપુટઃ=ઠતાજ્જલિઃ, સૂત્રાદિકં પૃચ્છેત્ । યદ્વા-કદાચિદપિ  
=વહુશ્રુતત્ત્વેઽપિ આસનગતઃ શય્યાગતો વા ન પૃચ્છેત્ સૂત્રાદિકમિત્યર્થઃ ।

‘આસનગઓ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—ઉત્તમ શિષ્ય કો, ચાહિયે કિ વહ (આસનગઓ-આસનગતઃ) આસન પર ઘેઠે ૨ અથવા (સેજાગઓ-શય્યાગતઃ) સંસ્તારક પર ઘેઠે ૨ યા સોયે ૨ (રોગાદિક અવસ્થા કો છોડ-કર) (કયાઈવિ-કદાચિદપિ) કમી મી (ન પુચ્છિજ્જા-ન પૃચ્છેત્) ગુરુ મહારાજ સે સૂત્ર કા અર્થ અથવા ડનકી કુશલતા ન પૂછે । કિન્તુ (આગમ્મુક્કુહુઓ સંતો પંજલી ડહો પુચ્છિજ્જા-આગમ્ય ઉત્કુટુકઃ સન્ પ્રાજ્જલિપુટઃ પૃચ્છેત્) ડનકે સમીપ આકર ઓર ઉત્કુટુકાસન-ડકહુ આસનસે ઘેઠકર ડોનોં હાથજોડ ફિર ડનસે સૂત્ર આદિ કા અર્થ પૂછે । શિષ્ય કિત્તના હી વહુશ્રુતી વર્ધો ન હો તો મી અપને ગુરુ સે સૂત્રાર્થ કી પ્રચ્છના અથવા સુખ શાતા કી પૃચ્છના આસન પર ઘેઠે ૨ યા વિસ્તર પર લેટે ૨ નહીં કરની ચાહિયે । યદ્યપિ સૂત્રાર્થ કી પૃચ્છના સંશય હોને પર હી કી જાતી હૈ । વહુશ્રુત હોને પર મી સંશય હો સકતા હૈ । અવ ઁસી સ્થિતિ મેં શિષ્ય કા ધર્મ હૈ કિ ડસ સંશય કી

આસનગઓ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ઉત્તમ શિષ્યની ઁ કુરજ છે કે તે આસનગઓ-આસનતઃ આસન ઉપર ઁઠાં ઁઠાં અથવા સેજાગઓ-શય્યાગતઃ શય્યામાં ઁઠાં ઁઠાં કે સુતાં સુતાં (રોગાદિક અવસ્થાને છોડીને) કયાઈવિ-કદાચિદપિ કદી પણ ગુરુ મહારાજથી સૂત્રનો અર્થ અથવા ઁમની કુશળતા ન પુચ્છિજ્જા-ન પૃચ્છેત્ ન પુછે. પરંતુ આગમ્મુક્કુહુઓ સંતો પંજલિ ડહો પુચ્છિજ્જા-આગમ્ય ઉત્કુટુકઃ સન્ પ્રાજ્જલિપુટઃ પૃચ્છેત્ તેમનિ સામે આવી અને ઉત્કુટાસનથી ઁસી ઁન્ને હાથ ઁડી ત્યારપછી ઁમને સૂત્ર આદિના અર્થ પુછે અને સુખ-શાતાના સમાચાર પુછે શિષ્ય ઁમે તેવો ઁહુશ્રુત કેમ ન હોય તો પણ પોતાના ગુરુથી સૂત્રાર્થના અર્થ અથવા સુખશાતાના સમાચાર આસન પર ઁઠાં ઁઠાં અથવા તો પથારી પર સુતાં સુતાં ન પુછવા ઁઘઁ. ઁ કે સૂત્રાર્થ આદિના અર્થ સંશય થવાથી જ પુછાય છે. ઁહુશ્રુત હોવા છતાં પણ સંશય થાય છે. આથી આવી સ્થિતિમાં શિષ્યનો ધર્મ છે કે, ઁ સંશયની નિવૃત્તિ માટે તે ગુરુની સમક્ષ જાય અને યુગ વિનયની સાથે ઁ સંશયની નિવૃત્તિ



અર્થ ભાવઃ—વહુશ્રુતોઽપિ શિષ્યઃ સંશયે સતિ ગુરુમ્ પૃચ્છતિ સૂત્રાર્થમ્, તત્ર વિનયપૂર્વિકૈવ પ્રચ્છના કરણીયા યથા ગુરોરાશાતના ન મવેદિતિ । ઉત્કુટુક ઇતિ વિશેષણેન—ઇન્દ્રિયદમનશીલત્વં વિનીતત્વં ચ સૂચિતમ્, પ્રાઞ્જલિપુટ ઇત્યનેન સર્વવિધવિનયવત્ત્વં જાતિકુલસમ્પન્નત્વં ચ સૂચિતમ્ ॥ ૨૨ ॥

મૂલમ્—એવં વિણયજુત્તસ્સ, સુત્તં અર્થં ચં તદુભયં ।

પુચ્છમાણસ્સ સીસસ્સ, વાગંરિજ્જ જહાસુયં ॥૨૩॥

છાયા—એવં વિનયયુક્તસ્ય, સૂત્રમ્ અર્થં ચ તદુભયમ્ ।

પૃચ્છતઃ શિષ્યસ્ય, વ્યાકુર્યાદ્ યથાશ્રુતમ્ ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘ એવં વિણયજુત્તસ્સ ’ ઇત્યાદિ । એવં=ઉક્તપ્રકારેણ વિનયયુક્તસ્ય—વિનયવતઃ, સૂત્રમ્-કાલિકોત્કાલિકાદિ, અર્થ—તદ્વોધ્યં, સૂત્રાભિપ્રાયમિત્યર્થઃ ।

નિવૃત્તિકે લિયે ગુરુકે સન્મુખ જાવેઔર વહે વિનયકે સાથ ઉસ સંશય કી નિવૃત્તિ કરે । ગુરુ મહારાજ કા વિનય ભક્તિ મેં યદિ જરા સી ભી ઝુટિ હો જાયગી તો શિષ્ય આશાતના દોષ કા ભાગી હોગા । “ ઉત્કુટુક ” ઇસ વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હેં કિ જો ઇસ આસન સે બેઠતા હૈ વહ સાધુ ઇન્દ્રિય દમન શીલ તથા વિનીત હોતા હૈ । “ પ્રાઞ્જલિપુટ ” ઇસ વિશેષણ સે શિષ્ય મેં સભી પ્રકાર કે વિનયગુણ તથા જાતિસમ્પન્નતા એવં કુલ સમ્પન્નતા સૂચિત હોતી હૈ ॥ગા.૨૨॥

‘ એવં ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—( એવં-એવં ) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે ( વિણયજુત્તસ્સ-વિનયયુક્તસ્ય ) વિનયધર્મ સે યુક્ત હોકર ( સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ ) સૂત્ર-અર્થ ઔર સૂત્ર અર્થ દોનોં કો પૂછને વાલે ( સીસસ્સ-શિષ્યસ્ય ) શિષ્ય કો ( જહાસુયં

કરી લ્યે. ગુરુ મહારાજની વિનય ભક્તિમાં જરા પણ ભૂલ થાય તો શિષ્ય આશાતના દોષનો ભાગી બને છે. “ ઉત્કુટુક ” આ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ સૂચિત કરે છે કે, જે આ આસનથી બેસે છે તે સાધુ ઇન્દ્રિયનું દમન કરનાર તથા વિનિત હોય છે. “ પ્રાઞ્જલિપુટ ” આ વિશેષણથી શિષ્યમાં સર્વ પ્રકારના વિનયગુણ તથા જાતિસંપન્નતા અને કુલસંપન્નતા દેખાઈ આવે છે. ॥૨૨॥ એવં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એવં-એવં પૂર્વોક્ત પ્રકારથી વિણયજુત્તસ્સ - વિનયયુક્તસ્ય વિનય ધર્મથી યુક્ત બની સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ સૂત્ર-અર્થ અને સૂત્ર અર્થ બન્નેને પૂછવાવાળા

ઉક્તન્વ—

જો સુત્તાભિપ્પાઓ, સો અત્યો અજ્ઞાણ ય જમ્હા । (સ્થા. ૨ ઠા. ૧ ઉ૦)

છાયા—યઃ સૂત્રાભિપ્રાયઃ સોઽર્થઃ, અર્થતે ચ યસ્માત્ ।

વ્યાખ્યા—યઃ સૂત્રસ્ય અભિપ્રાયઃ સ એવ અર્થઃ । યસ્માત્=યતઃ કરણાદસા-  
ર્થઃ સૂત્રાત્ અર્થતે ગમ્યતે । તદુભયં=સૂત્રાર્થદ્વયં ચ પૃચ્છતઃ=પૃચ્છાં કુર્વતઃ શિષ્યસ્ય  
ગુરુઃ યથાશ્રુતં-ગુરુપરંપરાતો યથા જ્ઞાતં તથા સૂત્રમ્, અર્થ તદુભયં ચ વ્યાકુર્યાત્  
=કથયેત્, ન તુ સ્વબુદ્ધ્યા કલ્પિતં કૃત્વા બોધયેદિતિ ભાવઃ । इह तावत् सूत्रज्ञा-  
नाय सूत्रस्य शब्दार्थं तद्वक्षणं तदभेदं तदाचनादिकं च निर्दिशामः, तथाहि—

વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્) ગુરુ મહારાજ ઉન સવ કા શાસ્ત્રવિહિત  
વિધિ કે 'અનુસાર પ્રતિપાદન કરે ।

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર હૈ । સૂત્ર કા જો અભિપ્રાય હૈ વહી  
અર્થ હૈ । કહા બી હૈ-જો સુત્તાભિપ્પાઓ સો અત્યો અજ્ઞાણ ય જમ્હા-  
સૂત્ર કે અભિપ્રાય કો અર્થ કહા ગયા હૈ । ક્યોં કિ યહ અર્થ સૂત્ર સે હી  
નિશ્ચિત કિયા જાતા હૈ । હસ તરહ કેવલ સૂત્ર કો અથવા ઉસકે અર્થ  
કો એવં હન દોનોં કો જવ શિષ્ય અપને આચાર્ય મહારાજ સે પૂછે તો  
આચાર્ય મહારાજ કો ચાહિયે કિ વે ઉસકો ગુરુ પરંપરા સે યથાજ્ઞાત  
સૂત્ર-અર્થ એવં દોનોં કો અચ્છી તરહ સમજાવે । એસા ન કરેં કિ અપની  
નિજી કલ્પના સે મિશ્રિત કર ઉન્હેં સમજાવે । સૂત્રજ્ઞાન કે લિયે ઉપયોગી  
સમજકર સૂત્ર કા શબ્દાર્થ, ઉસકા લક્ષણ, ઉસકે ભેદ, એવં ઉસકી  
વાચના આદિ કે વિષય મેં કુછ સ્પષ્ટીકરણ કિયા જાતા હૈ ।—

શિષ્યને જહાસુયં વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્ ગુરુ મહારાજ એ બધાનો શાસ્ત્ર  
વિહિત વિધિ અનુસાર પ્રતિપાદન કરે.

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર છે, સૂત્રનો જે અભિપ્રાય છે તે જ અર્થ  
છે. કહું પણ છે,—જો સુત્તાભિપ્પાઓ સો અત્યો અજ્ઞાણ ય જમ્હા-સૂત્રના અભિપ્રાયને  
અર્થ કહેવામાં આવેલ છે. કેમ કે, આ અર્થ સૂત્રથી નિશ્ચીત કરવામાં આવે  
છે. આ રીતે કેવળ સૂત્રને અથવા તેના અર્થને અથવા એ બન્નેને બ્યારે  
શિષ્ય પોતાના આચાર્ય મહારાજને પૂછે તો આચાર્ય મહારાજે તેને ગુરુ  
પરંપરાથી યથાજ્ઞાત સૂત્ર-અર્થ અને બન્નેને સારી રીતે સમજાવે એવું ન  
કરે કે પોતાની જ કલ્પનાથી મિશ્રિત કરી તેને સમજાવે. સૂત્ર જ્ઞાનને માટે  
ઉપયોગી સમજીને સૂત્રનો શબ્દાર્થ, તેનું લક્ષણ, તેનો ભેદ, અને તેની વાચના  
આદિના વિષયમાં કાંઈક સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—સૂચયતીતિ સૂત્રમ્—

અયં ભાવઃ—વહુશ્રુતોઽપિ શિષ્યઃ સંશયે સતિ ગુરું પૃચ્છતિ સૂત્રાર્થમ્, તત્ર વિનયપૂર્વિકૈવ પ્રચ્છના કરણીયા યથા ગુરોરાશાતના ન ભવેદિતિ । ઉત્કુટુક ઇતિ વિશેષણેન—ઇન્દ્રિયદમનશીલત્વં વિનીતત્વં ચ સૂચિતમ્, પ્રાઞ્જલિપુટ ઇત્યનેન સર્વવિધવિનયવત્ત્વં જાતિકુલસમ્પન્નત્વં ચ સૂચિતમ્ ॥ ૨૨ ॥

મૂલમ્—એવં વિણયજુત્તસ્સ, સુત્તં અર્થં ચં તદુભયં ।

પુચ્છમાણસ્સ સીસસ્સ, વાગંરિજ્જ જહાસુયં ॥૨૩॥

છાયા—એવં વિનયયુક્તસ્ય, સૂત્રમ્ અર્થં ચ તદુભયમ્ ।

પૃચ્છતઃ શિષ્યસ્ય, વ્યાકુર્યાદ્ યથાશ્રુતમ્ ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘ એવં વિણયજુત્તસ્સ ’ ઇત્યાદિ । એવં=ઉક્તપ્રકારેણ વિનયયુક્તસ્ય—વિનયવતઃ, સૂત્રમ્-કાલિકોત્કાલિકાદિ, અર્થ—તદ્વોધ્યં, સૂત્રાભિપ્રાયમિત્યર્થઃ ।

નિવૃત્તિકે લિયે ગુરુકે સન્નુલ જાવેઔર વહે વિનયકે સાથ ઉસ સંશય કી નિવૃત્તિ કરે । ગુરુ મહારાજ કા વિનય ભક્તિ મેં યદિ જરા સી ભી ત્રુટિ હો જાયગી તો શિષ્ય આશાતના દોષ કા ભાગી હોગા । “ ઉત્કુટુક ” ઇસ વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હેં કિ જો ઇસ આસન સે બેઠતા હૈ વહ સાધુ ઇન્દ્રિય દમન શીલ તથા વિનીત હોતા હૈ । “ પ્રાઞ્જલિપુટ ” ઇસ વિશેષણ સે શિષ્ય મેં સમી પ્રકાર કે વિનયગુણ તથા જાતિસમ્પન્નતા એવં કુલ સમ્પન્નતા સૂચિત હોતી હૈ ॥ગા.૨૨॥

‘ એવં ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(એવં-એવં) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (વિણયજુત્તસ્સ-વિનયયુક્તસ્ય) વિનયધર્મ સે યુક્ત હોકર (સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ) સૂત્ર-અર્થ ઔર સૂત્ર અર્થ દોનોં કો પૂછને વાલે (સીસસ્સ-શિષ્યસ્ય) શિષ્ય કો (જહાસુયં

કરી લ્યે. ગુરુ મહારાજની વિનય ભક્તિમાં જરા પણ ભૂલ થાય તો શિષ્ય આશાતના દોષનો ભાગી બને છે. “ ઉત્કુટુક ” આ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ એ સૂચિત કરે છે કે, જે આ આસનથી બેસે છે તે સાધુ ઇન્દ્રિયનું દમન કરનાર તથા વિનિત હોય છે. “ પ્રાઞ્જલિપુટ ” આ વિશેષણથી શિષ્યમાં સર્વ પ્રકારના વિનયશુણ તથા જાતિસંપન્નતા અને કુલસંપન્નતા દેખાઈ આવે છે. ॥૨૨॥ એવં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એવં-એવં પૂર્વોક્ત પ્રકારથી વિણયજુત્તસ્સ - વિનયયુક્તસ્ય વિનય ધર્મથી યુક્ત બની સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ સૂત્ર-અર્થ અને સૂત્ર અર્થ બન્નેને પુછવાવાળા

ઉક્તઞ્ચ—

જો સુત્તાભિપ્પાઓ, સો અત્યો અજ્ઞાણ ય જમ્હા । (સ્થા. ૨ ઠા. ૧ ૩૦)

છાયા—યઃ સૂત્રાભિપ્રાયઃ સોઽર્થઃ, અર્થતે ચ યસ્માત્ ।

વ્યાખ્યા—યઃ સૂત્રસ્ય અભિપ્રાયઃ સ એવ અર્થઃ । યસ્માત્=યતઃ કરણાદસા-  
ર્થઃ સૂત્રાત્ અર્થતે ગમ્યતે । તદુભયં=સૂત્રાર્થદ્વયં ચ પૃચ્છતઃ=પૃચ્છાં કુર્વતઃ શિષ્યસ્ય  
ગુરુઃ યથાશ્રુતં-ગુરુપરંપરાતો યથા જ્ઞાતં તથા સૂત્રમ્, અર્થ તદુભયં ચ વ્યાકુર્યાત્  
=કથયેત્, ન તુ સ્વબુદ્ધ્યા કલ્પિતં કૃત્વા બોધયેદિતિ ભાવઃ । ઇહ તાવત્ સૂત્રજ્ઞા-  
નાય સૂત્રસ્ય શબ્દાર્થ તલ્લક્ષણં તદ્ભેદં તદ્વાચનાદિકં ચ નિર્દિશામઃ, તથાદિ—

વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્ ) ગુરુ મહારાજ ઉન સવ કા શાસ્ત્રવિહિત  
વિધિ કે અનુસાર પ્રતિપાદન કરે ।

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર હૈ । સૂત્ર કા જો અભિપ્રાય હૈ વહી  
અર્થ હૈ । કહા भी है-जो सुत्ताभिप्पाओ सो अत्यो अज्ज्ञाण य जम्हा-  
સૂત્ર કે અભિપ્રાય કો અર્થ કહા ગયા હૈ । વયોં કિ યહ અર્થ સૂત્ર સે હી  
નિશ્ચિત કિયા જાતા હૈ । હસ તરહ કેવલ સૂત્ર કો અથવા ઉસકે અર્થ  
કો એવં હન દોનોં કો જવ શિષ્ય અપને આચાર્ય મહારાજ સે પૂછે તો  
આચાર્ય મહારાજ કો ચાહિયે કિ વે ઉસકો ગુરુ પરંપરા સે યથાજ્ઞાત  
સૂત્ર-અર્થ એવં દોનોં કો અચ્છી તરહ સમજાવે । એસા ન કરે કિ અપની  
નિજી કલ્પના સે મિશ્રિત કર ઉન્હેં સમજાવે । સૂત્રજ્ઞાન કે લિયે ઉપયોગી  
સમજકર સૂત્ર કા શબ્દાર્થ, ઉસકા લક્ષણ, ઉસકે ભેદ, એવં ઉસકી  
વાચના આદિ કે વિષય મેં કુછ સ્પષ્ટીકરણ કિયા જાતા હૈ ।—

શિષ્યને જહાસુયં વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્ ગુરુ મહારાજ એ બધાને શાસ્ત્ર  
વિહિત વિધિ અનુસાર પ્રતિપાદન કરે.

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર છે, સૂત્રનો જે અભિપ્રાય છે તે જ અર્થ  
છે. કહું પણ છે,—જો સુત્તાભિપ્પાઓ સો અત્યો અજ્ઞાણ ય જમ્હા-સૂત્રના અભિપ્રાયને  
અર્થ કહેવામાં આવેલ છે. કેમ કે, આ અર્થ સૂત્રથી નિશ્ચીત કરવામાં આવે  
છે. આ રીતે કેવળ સૂત્રને અથવા તેના અર્થને અથવા એ બન્નેને જ્યારે  
શિષ્ય પોતાના આચાર્ય મહારાજને પૂછે તો આચાર્ય મહારાજે તેને ગુરુ  
પરંપરાથી યથાજ્ઞાત સૂત્ર-અર્થ અને બન્નેને સારી રીતે સમજાવે એવું ન  
કરે કે પોતાની જ કલ્પનાથી મિશ્રિત કરી તેને સમજાવે. સૂત્ર જ્ઞાનને માટે  
ઉપયોગી સમજીને સૂત્રનો શબ્દાર્થ, તેનું લક્ષણ, તેનો ભેદ, અને તેની વાચના  
આદિના વિષયમાં કાંઈક સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—સૂચયતીતિ સૂત્રમ્—

અયં ભાવઃ—વહુશ્રુતોઽપિ શિષ્યઃ સંશયે સતિ ગુરું પૃચ્છતિ સૂત્રાર્થમ્, તત્ર વિનયપૂર્વિકૈવ પ્રચ્છના કરણીયા યથા ગુરોરાશાતના ન ભવેદિતિ । ઉત્કુટુક ઇતિ વિશેષણેન—ઇન્દ્રિયદમનશીલત્વં વિનીતત્વં ચ સૂચિતમ્, પ્રાઞ્જલિપુટ ઇત્યનેન સર્વવિધવિનયવત્ત્વં જાતિકુલસમ્પન્નત્વં ચ સૂચિતમ્ ॥ ૨૨ ॥

મૂલમ્—એવં વિણયજુત્તસ્સ, સુત્તં અર્થં ચં તદુભયં ।

પુચ્છમાણસ્સ સીસસ્સ, વાગંરિજ્જ જહાસુયં ॥૨૩॥

છાયા—એવં વિનયયુક્તસ્ય, સૂત્રમ્ અર્થં ચ તદુભયમ્ ।

પૃચ્છતઃ શિષ્યસ્ય, વ્યાકુર્યાદ્ યથાશ્રુતમ્ ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘ એવં વિણયજુત્તસ્સ ’ ઇત્યાદિ । એવં=ઉક્તપ્રકારેણ વિનયયુક્તસ્ય—વિનયવતઃ, સૂત્રમ્—કાલિકોત્કાલિકાદિ, અર્થ—તદ્વોધ્યં, સૂત્રાભિપ્રાયમિત્યર્થઃ ।

નિવૃત્તિકે લિયે ગુરુકે સન્નુસ્થ જાવેઔર વહે વિનયકે સાથ ઉસં સંશય કી નિવૃત્તિ કરે । ગુરુ મહારાજ કા વિનય ભક્તિ મેં યદિ જરા સીં મી ત્રુટિ હો જાયમી તો શિષ્ય આશાતના દોષ કા ભાગી હોગા । “ ઉત્કુટુક ” ઇસ વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હેં કિ જો ઇસ આસન સે બેઠતા હૈ વહ સાધુ ઇન્દ્રિય દમન શીલ તથા વિનીત હોતા હૈ । “ પ્રાઞ્જલિપુટ ” ઇસ વિશેષણ સે શિષ્ય મેં સમી પ્રકાર કે વિનયગુણ તથા જાતિસમ્પન્નતા એવં કુલ સમ્પન્નતા સૂચિત હોતી હૈ ॥ગા.૨૨॥

‘ એવં ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—( એવં-એવં ) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે ( વિણયજુત્તસ્સ-વિનયયુક્તસ્ય ) વિનયધર્મ સે યુક્ત હોકર ( સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ ) સૂત્ર-અર્થ ઔર સૂત્ર અર્થ દોનોં કો પૂછને વાલે ( સીસસ્સ-શિષ્યસ્ય ) શિષ્ય કો ( જહાસુયં

કરી દ્યે. ગુરુ મહારાજની વિનય ભક્તિમાં જરા પણ ભૂલ થાય તો શિષ્ય આશાતના દોષનો ભાગી બને છે. “ ઉત્કુટુક ” આ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ એ સૂચિત કરે છે કે, જે આ આસનથી બેસે છે તે સાધુ ઇન્દ્રિયનું દમન કરનાર તથા વિનિત હોય છે. “ પ્રાઞ્જલિપુટ ” આ વિશેષણથી શિષ્યમાં સર્વ પ્રકારના વિનયગુણ તથા જાતિસંપન્નતા અને કુલસંપન્નતા દેખાઈ આવે છે. ॥૨૨॥  
એવં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એવં-એવં પૂર્વોક્ત પ્રકારથી વિણયજુત્તસ્સ - વિનયયુક્તસ્ય વિનય ધર્મથી યુક્ત બની સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ સૂત્ર-અર્થ અને સૂત્ર અર્થ બન્નેને પુછવાવાળા સીસસ્સ-



સૂત્રપદનિર્લેપનામકં દ્વિતીયં દ્વારમ્—

અથ—સૂત્રપદનિર્લેપઃ । દ્રવ્યસૂત્રં—કાર્પાસાદિકમ્ । ભાવસૂત્રં તુ—અસ્મિન્ જ્ઞાનાધિકારે સૂચકં જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્, તસ્યૈવ સ્વપરાર્થસૂચકત્વાત્, શ્રૂયતે યત્ તત્ શ્રુતં જ્ઞાયતેઽનેનેતિ જ્ઞાનં, શ્રુતં ચ તદ્ જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્ । તચ—૯કાદશાજ્ઞાનિ, પ્રકીર્ણકાનિ, દૃષ્ટિવાદશ્ચ । તદુક્તમ્—

“ ૯કારસમંગાઈં, પઙ્ગમં દિદ્ધિવાઓ ય ” ઇતિ । ( ડ. ૨૮ અ. ૨૩ ગા. )

॥ ઇતિ દ્વિતીયં સૂત્રપદનિર્લેપદ્વારમ્ ॥

અથ તૃતીયં સૂત્રલક્ષણદ્વારમ્—

યત્ સૂત્રં સૂત્રલક્ષણોપેતં તદેવોચારણીયમ્, લક્ષણરહિતં હિ સૂત્રં વિવક્ષિતમર્થં ન સાધયતિ, તસ્માદ્લક્ષણયુક્તમેવ સૂત્રમિષ્યતે, અતઃ સૂત્રલક્ષણં વાચ્યમ્ । તદ્ યથા—  
અપ્પક્વરં મહત્થં, વત્તીસદોસવિરહિયં જં ચ ।  
લક્ષણજુત્તં સુત્તં, અદ્ધહિ ય ગુણેહિ ઉવ્વેયં ॥

જિસકે સેવન સે—ઉપાસના કરને સે—ઉસકે દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગ કા અનુસરણ કરને સે—અષ્ટવિધ કર્મો કા આત્મા સે નિર્ગમન હો જાય ઉસકા નામ સૂત્ર હૈ । ૧ ।

સૂત્ર પદ નિર્લેપ નામક દૂસરા દ્વાર કહતે હૈ—

સૂત્ર કે દો ભેદ હૈ—૧ દ્રવ્યસૂત્ર, ૨ ભાવસૂત્ર । કપાસ આદિ સે વના હુઆ દ્રવ્યસૂત્ર હૈ । ભાવશ્રુત કા નામ ભાવસૂત્ર હૈ । ઇસસે હી સ્વરૂપ ઔર પરસ્વરૂપ કા સૂચન—અર્થાત્ વોધ હોતા હૈ । જો સુના જાય વહ શ્રુત ઔર જિસકે દ્વારા જાના જાય વહ જ્ઞાન હૈ । શ્રુતરૂપ જો જ્ઞાન હૈ ઉસ કા નામ શ્રુતજ્ઞાન હૈ । ૧૧ અંગ પ્રકીર્ણક ( પઙ્ગમા ) ઔર દૃષ્ટિવાદ યે સવ શ્રુતજ્ઞાન સ્વરૂપ હૈ । કહા ઓ હૈ—“ ૯કારસમંગાઈં પઙ્ગમં દિદ્ધિવાઓય ” । ૩ ।

કરવાથી તેના દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગનું અનુસરણ કરવાથી આઠ પ્રકારના કર્મોનું આત્માથી નિર્ગમન થઈ જાય તેનું નામ સૂત્ર છે. ॥ ૧ ॥

સૂત્રપદ નિર્લેપ નામનું ખીણું દ્વાર કહે છે—

સૂત્રના બે ભેદ છે—૧ દ્રવ્યસૂત્ર, ૨ ભાવસૂત્ર કપાસ વગેરેથી બનેલ દ્રવ્યસૂત્ર છે, ભાવશ્રુતનું નામ ભાવસૂત્ર છે. આનાથી જ સ્વ સ્વરૂપ અને પર-સ્વરૂપનું સૂચન—અર્થાત્ વોધ થાય છે. જે સાંભળી શકાય તે શ્રુત અને જેનાથી બાધી શકાય તે જ્ઞાન છે. શ્રુતરૂપ જે જ્ઞાન છે. એનું નામ શ્રુતજ્ઞાન છે. ૧૧ અંગ પ્રકીર્ણક ( પઙ્ગમા ) અને દૃષ્ટિવાદ એ બધા શ્રુતજ્ઞાન સ્વરૂપ છે. કહ્યું પણ છે કે—૯કારસમંગાઈં પઙ્ગમં દિદ્ધિવાઓય

નનુ કઃ સૂત્રશબ્દાર્થઃ ?-ઉચ્યતે-સૂચયતીતિ સૂત્રમ્, યથા સૂચી સૂત્રેણ સૂચ્યતે, સૂચીસંલગ્નં યત્ સૂત્રં તદેવ સૂચ્યાઃ સૂચકં પ્રબોધકં ભવતિ, તથાઽર્થસંબદ્ધં સૂત્રં, વાચ્યવાચકભાવસમ્બન્ધેન યાવાનર્થઃ સૂત્રે વિદ્યમાનસ્તસ્ય તસ્યાર્થસ્ય સૂચકં સૂત્રમ્। એવમર્થસ્ય સૂચનાત્ સૂત્રમ્ ॥ ૧ ॥ અથવા-સીવ્યતીતિ સૂત્રમ્ । યથા-સૂત્રં-તેનુઃ અઙ્ગરક્ષિકાદીનિ સીવ્યતિ, એવમર્થ ચ પદં સીવ્યતિ=યોજયતિ-એવં ચ સીવનાત્ સૂત્રમિતિ ॥ ૨ ॥ અથવા-સ્રવતીતિ સૂત્રમ્ યથા-ચન્દ્રકાન્તમણિઃ ચન્દ્રકિરણસંનિધાનાઙ્ગજલં સ્રવતિ-પ્રાદુર્ભાવયતિ । એવં સૂત્રમપ્યાચાર્યસંનિધાનાદર્થં પ્રસ્રવતિ તથા ચ સ્રવણાત્ સૂત્રમિતિ ॥ ૩ ॥ અથવા-સરતીતિ સૂત્રમ્, અષ્ટવિધં કર્મ સરતિ-નિર્ગચ્છતિ યેન તત્ સૂત્રમ્ ॥ ૪ ॥

॥ इति प्रथमं सूत्रशब्दार्थद्वारम् ॥ १ ॥

સૂચયતીતિ સૂત્રમ્—

સૂત્ર શબ્દ કા અર્થ-જિસ પ્રકાર સૂઈ સંલગ્ન સૂત્ર સૂઈ કા પ્રબોધક હોતા હૈ ઉસી તરહ અર્થ સંબદ્ધ સૂત્ર વાચ્ય વાચકભાવ સંબંધ સે જિતના ૨ અર્થ અપને મેં વિદ્યમાન હોતા હૈ ઉતને ૨ અર્થ કા સૂચક હોતા હૈ, ઇસ તરહ “સૂચયતીતિ સૂત્રમ્” અર્થ કા સૂચક હોને સે સૂત્ર કહા ગયા હૈ । યહ વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ હૈ । અથવા-“સીવ્યતીતિ સૂત્રમ્”-જિસ પ્રકાર ડોરા અંગરક્ષિકા-કુર્તા-આદિ વસ્ત્રોં કો સીતા હૈ પરસ્પર મેં જોડ દેતા હૈ-ઉસી તરહ સૂત્ર મી અર્થ કો યોજિત કર દેતા હૈ । અથવા-“સ્રવતીતિ સૂત્રમ્”-જિસ પ્રકાર ચંદ્રકાન્તમણિ ચંદ્ર કિરણોં કે સંપર્ક સે દ્રવિત હો જાતા હૈ-પાની છોડતા હૈ-ઉસી પ્રકાર સૂત્ર મી આચાર્ય કે સંનિધાન સે અર્થ કો અપનેમેં પ્રકટ કર દેતા હૈ । અથવા-“સરતીતિ સૂત્રમ્”-

સૂત્ર શબ્દનો અર્થ-જે રીતે સોય સંલગ્ન સૂત્ર સોયનો પ્રબોધક બને છે તેવી રીતે અર્થ સંબદ્ધ સૂત્ર વાચ્ય વાચક ભાવ સંબંધથી જોડલા જોડલા અર્થ તેનામાં વિદ્યમાન હોય છે, એટલા એટલા અર્થનો સૂચક હોય છે. “સૂચયતીતિ સૂત્રમ્” અર્થનો સૂચક હોવાથી જ સૂત્ર કહેવામાં આવેલ છે. આ વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ છે. અથવા-સીવ્યતીતિ સૂત્રમ્ જે રીતે દોરા અંગતું રક્ષણ કરનાર કુર્તા આદિ વસ્ત્રોને સીવે છે, પરસ્પરથી જોડી દે છે. એવી જ રીતે સૂત્ર પણ અર્થને યોજનાર હોય છે. અથવા સ્રવતીતિસૂત્રમ્ જે રીતે ચંદ્રકાન્ત મણી ચંદ્રકિરણોના સંપર્કથી દ્રવિત બને છે. પાણી છોડે છે-તે પ્રકારે સૂત્ર પણ આચાર્યના સંનિધાનથી અર્થને કે જે પોતાનામાં સમાયેલ છે તે પ્રકટ કરી દે છે અથવા સરતીતિ સૂત્રમ્ જેના ને

‘महाक्षरं महार्थं’ यथा-दृष्टिवादः ॥ ४ ॥ यच्च द्वात्रिंशदोषविरहितं= अलीकादिभिर्द्वात्रिंशदोषैर्वर्जितं तथाऽष्टभिर्गुणैरुपेतं सूत्रं तल्लक्षणयुक्तं सूत्रं भवति तत् सूत्रं पठनीयमित्यर्थः ।

अथ-सूत्रदोषाः—

अथ सूत्राणां द्वात्रिंशदोषा उच्यन्ते—

अलियमुवघायजणयं, निरत्यगमवत्ययं छलं दुहिलं ।  
निस्सारमहियमूणं, पुणरुत्तं वाहयमजुत्तं ॥ १ ॥  
क्रमभिन्न-वयणभिन्ने, विभक्तिभिन्नं च लिङ्गभिन्नं च ।  
अणमिहियमपयमेव य, सभावहीणं व्यवहियं च ॥ २ ॥  
काल-जति-च्छवि-दोसो, समयविरुद्धं च वयणमित्तं च ।  
अत्थावत्ती दोसो, हवइ य असमासदोसो य ॥ ३ ॥  
उवमा रूवगदोसो, निदेसपयत्यसंधिदोसो य ।  
एए य सुत्तदोसा, वत्तीसं हुंति नायव्वा ॥ ४ ॥

छाया—अलीकम् १, उपघातजनकं २, निरर्थकं ३, अपार्थक्यं ४, छलं ५, दुहिलम् ६, निःसारम् ७, अधिकम् ८, ऊनम् ९, पुनरुक्तं १०, व्याहतं ११, अयुक्तम् १२, ॥ १ ॥

क्रमभिन्न १३, वचनभिन्ने १४, विभक्तिभिन्नं च १५, लिङ्गभिन्नं च १६, अनभिहितं १७, अपदमेव च १८, स्वभावहीनं १९, व्यवहितं च २० ॥ २ ॥

तथा बृहत्कल्पादि सूत्र २ । महा अक्षर वाला हो पर अर्थ अल्प हो जैसे— ज्ञाताध्ययन आदि ३ । महाक्षर वाला हो और अर्थ भी जिसका महान् हो जैसे दृष्टिवाद ४ । ३२ वत्तीस दोष सूत्र के ये हैं—

३२ दोष सूत्र के—अलीक १, उपघातजनक २, निरर्थक ३, अपार्थक्य ४, छल ५, दुहिल ६, निःसार ७, अधिक ८, ऊन ९, पुनरुक्त १०, व्याहत ११, अयुक्त १२, क्रमभिन्न १३, वचनभिन्न १४, विभक्तिभिन्न १५, लिङ्गभिन्न १६, अनभिहित १७, अपद १८, स्वभावहीन १९, व्यवहित

२५६ सूत्र २. वधु अक्षरवाणा डोय पणु अर्थ नानो डोय जेवां ज्ञाताध्ययन आदि ३. वधु अक्षरवाणा डोय अने अर्थ पणु जेनो महान् डोय जेवां दृष्टिवाद ४. सूत्रना अत्तीस दोष आ छे.....

अलीक १, उपघातजनक २, निरर्थक ३, अपार्थक्य ४, छल ५, दुहिल ६, निःसार ७, अधिक ८, ऊन ९, पुनरुक्त १०, व्याहत ११, अयुक्त १२, क्रमभिन्न १३, वचनभिन्न १४, विभक्तिभिन्न १५, लिङ्गभिन्न १६, अनभिहित १७, अपद १८, स्वभावहीन १९, व्यवहित २०, कालदोष २१, यति-

યદ્ અલ્પાક્ષરં, તથા-મહાર્થં ચ ભવતિ, અત્ર “અલ્પાક્ષરં મહાર્થમ્” इति विशेषणद्वये चत्वारो भङ्गा भवन्ति, यथा—अल्पाक्षरमल्पार्थम्’ यथा कार्पास-  
दिकम् ॥ १ ॥ ‘अल्पाक्षरं-महार्थम्’ यथा-सामायिकं बृहत्कल्पादि च ॥ २ ॥  
‘महाक्षरमल्पार्थम्’ । यथा—ज्ञाताध्ययनानि, अन्यच्च यदस्यां कोटी व्यवस्थितम् ।

અવ સૂત્રલક્ષણ નામ કા ત્રીસરા દ્વાર કહતે હૈ—જો સૂત્ર સૂત્રલક્ષણ સે યુક્ત હૈ વહી ઉચ્ચારણ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । ઓર ઉસીસે અપને વાસ્તવિક અર્થ કા વોધ હોતા હૈ । ઇસસે વિપરીત સૂત્ર દ્વારા વિવક્ષિત અર્થ કી પ્રતિપત્તિ-જ્ઞાન નહીં હો સકતી હૈ ક્યોં કિ ઉસસે યથાર્થ અર્થ કા પ્રકાશન નહીં હોતા હૈ । ઇસ લિયે “સૂત્ર કા કયા લક્ષણ હૈ” ઇસ પ્રકાર કે પ્રશ્ન કે સમાધાન નિમિત્ત ઉસકા લક્ષણ કહા જાતા હૈ ।

“અપ્પક્ષરં મહત્થં, વત્તીસદોસ, વિરહિયં જં ચ ।

લક્ષણજુત્તં સુત્તં, અદ્દહિય ગુણેહિ ઉવવેયં” ॥ ૧ ॥

જિસમેં અલ્પ અક્ષર હોતે હૈં ઓર મહાન્ જિસકા અર્થ હોતા હૈ એવં વત્તીસ દોષોં સે જો રહિત હોતા હૈ તથા આઠગુણોં સે જો યુક્ત હોતા હૈ વહ સૂત્ર હૈ “અલ્પ અક્ષર વાલા હો એવં અર્થ જિસકા મહાન્ હો” ઇસ પ્રકાર કે સૂત્ર કે વિશેષણ સે ચે ૪ ભંગ હોતે હૈં—અલ્પ અક્ષર વાલા હો એવં અલ્પ અર્થ વાલા હો જૈસે કપાસ આદિ કા બના હુઆ સૂત ૧ । અલ્પ અક્ષર વાલા હો, પર જિસકા મહાન્ અર્થ હો જૈસે સામાયિક સૂત્ર,

હવે સૂત્ર લક્ષણ નામનું ત્રીણું દ્વાર કહે છે—

જે સૂત્ર સૂત્રલક્ષણથી યુક્ત છે તે જ ઉચ્ચારણ કરવા માટે યોગ્ય છે, અને એનાથી પોતાના વાસ્તવિક અર્થનો બોધ થાય છે. એનાથી વિપરીત સૂત્રથી વિવક્ષિત અર્થની પ્રતિપત્તિ-જ્ઞાન થઈ શકતું નથી, કારણ કે, એનાથી યથાર્થ અર્થનું પ્રકાશન થતું નથી.

અપ્પક્ષરં મહત્થં વત્તીસ દોસવિરહિયં જં ચ ।

લક્ષણજુત્તં સુત્તં અદ્દહિયથેણેહિ ઉવવેયં જેમાં અક્ષર ઓછા હોય છે અને અર્થ મહાન હોય છે જે બત્તીસ દોષોથી રહિત હોય છે તથા આઠ ગુણોથી જે યુક્ત હોય છે તે સૂત્ર છે. “થોડા અક્ષરવાળા હોય અને અર્થ જેનો મહાન હોય”

આ પ્રકારના સૂત્રના વિશેષણથી આ ચાર ભંગ થાય છે. થોડા અક્ષર-વાળા હોય અથવા અલ્પ અર્થવાળા હોય. જેમ કે કપાસ આદિથી બનેલ સૂતર ૧. થોડા અક્ષરવાળા હોય પણ જેનો અર્થ મહાન હોય, જેવાં સામાયિક

યથા- 'અ, આ, ઇ, ઈ,' ઇત્યાદિ । ડિત્યાદિવદ્વા ॥ ૩ ॥ અપાર્થકમ્-અસંવદ્ધ-  
ર્થકમ્, યથા-“દશ દાડિમાનિ પડપૂષાઃ, સપ્ત ગર્દભપુચ્છાઃ, ઇત્યાદિ ॥ ૪ ॥

છલં—યત્રાનિષ્ટસ્યાર્થાન્તરસ્ય સંભવાદ વિવક્ષિતાર્થોપધાતઃ કર્તું શક્યતે  
તચ્છલમ્, યથા—‘નવકમ્બલો દેવદત્તઃ’ ઇત્યાદિ, અત્ર-નૂતનકમ્બલસ્ય વિવ-  
ક્ષિતાર્થસ્ય નવસંખ્યકકમ્બલવિષયકબોધસંભવાદુપધાતઃ કર્તું શક્યતે ॥ ૬ ॥

દુહિલં-જન્તુનામહિતોપદેશકત્વેન પાપવ્યાપારપોષકમ્, યથા—

અનુષ્ટુપૂછન્દઃ—एतावानेव लोकोऽयं, यात्रानिन्द्रियगोचरः ।

મદ્રે ! વૃકપદં પશ્ય, યદ્ વદન્ત્યવહુશ્રુતાઃ ॥ ૧ ॥

વિયોગિની છન્દઃ—पिव खाद च चारुलोचने, यदतीतं वरगात्रि ! तन्न ते ।

નહિ મીરુ ! ગતં નિવર્તતે, સમુદયમાત્રમિદં કલેવરમ્ ॥ ૨ ॥

નહીં પડતા; જૈસે-અ આ ઇ ઈ ઇત્યાદિ ॥ ૩ ॥ અસંવદ્ધ અર્થ જિસ સૂત્ર  
દ્વારા કહા જાતા હૈ વહ અપાર્થક દોષ વાલા સૂત્ર માના જાતા હૈ-જૈસે  
દશદાડિમ, છહ માલપુષ, સાત ગધે કી પૂંછે ઇત્યાદિ ॥ ૪ ॥ યે સવ સૂત્ર  
અસંવદ્ધ અર્થ કે પ્રતિપાદક હૈ । જહાં અનિષ્ટ અર્થાન્તર કી સંભાવના સે  
વિવક્ષિત અર્થ કા અપલાપ કિયા જા સકતા હૈ વહ છલદોષ હૈ જૈસે કિસી  
ને કહા કિ “નવ કમ્બલોઽયં દેવદત્તઃ” દેવદત્ત નવકમ્બલ વાલા હૈ-યહાં  
નવ શબ્દ કા અર્થ નૂતન હૈ, ઓર હસી અર્થ મેં નવ શબ્દ વિવક્ષિત હુઆ  
હૈ, પરંતુ ઇસ અર્થ કો ઉપધાત કરને વાલા યહ કહ દેતા હૈ કિ ૯ સંખ્યા  
યુક્ત કમ્બલ ઇસકે પાસ કહાં હૈ એક હી કમ્બલ તો હૈ । ઇસ પ્રકાર કે  
અર્થ કી સંભાવના નવ શબ્દ સે હુઈ હૈ । અતઃ વિવક્ષિત અર્થ કા ઉપધાત  
જિસ શબ્દ સે યુક્ત સૂત્ર કા હોના, ઉપધાત દોષાવશિષ્ટ માના જાતા હૈ.

જ મળતો નથી, જેમ અ આ ઇ ઈ ઇત્યાદિ (૩) અસંવદ્ધ અર્થ જે સૂત્ર દ્વારા  
કહેવામાં આવે છે તે અપાર્થક દોષવાળા સૂત્ર માનવામાં આવે છે. જેમ દસ  
દાડમ, છ પુષ્પા, સાત ગધેડાની પૂછે ઇત્યાદિ. (૪) આ બધા સૂત્ર અસંવદ્ધ  
અર્થનાં પ્રતિપાદક છે. જ્યાં અનિષ્ટ અર્થાન્તરની સંભાવનાથી વિવક્ષિત અર્થનો  
અપલાપ કરવામાં આવે છે તે છલદોષ છે. જેમ કેઈએ કહ્યું કે, “નવ  
કમ્બલોઽયં દેવદત્તઃ” આ દેવદત્ત નવ કમ્બલવાળા છે-અહિં નવ શબ્દનો અર્થ  
નૂતન છે. અને આજ અર્થમાં નવ શબ્દ વિવક્ષિત થયેલ છે. પરંતુ આ અર્થને  
ઉપધાત કરવાવાળા એવું કહી દે છે કે, નવ સંખ્યા યુક્ત કમ્બલ એમની પાસે  
કયાં છે. એક જ કમ્બલ છે. આ પ્રકારે અર્થની સંભાવના નવ શબ્દથી થઈ છે.  
વિવક્ષિત અર્થનો ઉપધાત જે સૂત્રમાં થાય છે એ શબ્દથી યુક્ત સૂત્રનું હોવું  
ઉપધાત દોષાવશિષ્ટ માનવામાં આવે છે. (૫)



કાલ-યતિ-છવિદોષઃ (કાલદોષઃ ૨૧, યતિદોષઃ ૨૨, છવિદોષઃ ૨૩) સમયવિરુદ્ધં ચ ૨૪, વચનમાત્રં ચ ૨૫, । અર્થાપત્તિર્દોષો ૨૬, ભવતિ ચ અસમાસ દોષશ્ચ ૨૭ ॥ ૩ ॥

ઉપમા ૨૮, -રૂપકદોષો ૨૯, નિર્દેશ ૩૦, -પદાર્થ ૩૧, -સંધિદોષશ્ચ ૩૨, एते तु सूत्रदोषा द्वात्रिंशद् भवन्ति ज्ञातव्याः ॥ ૪ ॥

વ્યાખ્યા—અલીકમ્—અનૃતમ્ તચ દ્વિધા—અભૂતોદ્ભાવનં ભૂતનિહ્વથ । યથા—‘ઈશ્વરકર્તૃકં જગત્’ ઇત્યાદિ—અભૂતોદ્ભાવનમ્ । ‘નાસ્તિ આત્મા’ ઇત્યાદિકસ્તુ ભૂતનિહ્વઃ ॥ ૧ ॥ ઉપઘાતઃ—સત્ત્વઘાતાદિઃ, તજ્જનકં યથા—‘વેદવિહિતા હિંસા-ધર્માય’ ઇત્યાદિ ॥ ૨ ॥ નિરર્થકં—યત્ર વર્ણનાં ક્રમનિર્દેશમાત્રગુપલભ્યતે ન ત્વર્યો

૨૦, કાલદોષ ૨૧, યતિદોષ ૨૨, છવિદોષ ૨૩, સમયવિરુદ્ધ ૨૪, વચનમાત્ર ૨૫, અર્થાપત્તિ ૨૬, અસમાસદોષ ૨૭, ઉપમા ૨૮, રૂપક ૨૯, નિર્દેશ ૩૦, પદાર્થ ૩૧, એવં સંધિદોષ ૩૨ । કહા ખી હૈ—

‘અલિય મુવઘાય જળયં’ ઇત્યાદિ—

इन ३२ दोषों का स्वरूप इस प्रकार है—अलीक नाम असत्य का है यह दो प्रकार का होता है—अभूतोद्भाव १ । भूतनिह्व है २ । जैसे—“ईश्वर कर्तृक जगत् इत्यादि” जगत् को ईश्वर ने बनाया है—इस प्रकार का प्रतिपादक सूत्र अभूतोद्भावक है नास्ति आत्मा—आत्मा नहीं इस प्रकार जमाली द्वारा कथित सूत्र भूतनिह्व स्वरूप है ॥ १ ॥ उपघात शब्द का अर्थ है प्राणियों की हिंसा आदिका प्ररूपण करना । इस बात के प्ररूपक सूत्र उपघात दोषवाले माने जाते हैं—जैसे कहना कि वेदविहिता हिंसा धर्माय ” वेदविहित हिंसा धर्म के लिये है ” ॥ २ ॥ जिसमें सिर्फ वर्णों का क्रम ही निर्दिष्ट हो वह निरर्थक दोष है—इसमें अर्थ का पता

દોષ ૨૨, છવિદોષ ૨૩, સમયવિરુદ્ધ ૨૪, વચનમાત્ર ૨૫, અર્થાપત્તિ ૨૬, અસમાસ દોષ ૨૭, ઉપમા ૨૮, રૂપક ૨૯, નિર્દેશ ૩૦, પદાર્થ ૩૧. અને સંધીદોષ ૩૨, તદુક્તં—“આલિયમુવઘાય જળયં” ઇત્યાદિ !

આ બત્રીસ દોષોનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે—અલીક નામ અસત્યનું છે. આ બે પ્રકારે છે, ૧ અભૂતોદ્ભાવન, ૨ ભૂતનિહ્વ, જેમ—‘ઈશ્વર કર્તૃક જગત્ ઇત્યાદિ’ જગતને ઈશ્વરે બનાવ્યું છે—આ પ્રકારે પ્રતિપાદિત સૂત્ર અભૂતોદ્ભાવક છે, નાસ્તિ આત્મ—આત્મા નથી, આ પ્રકારના જમાલી દ્વારા કહેવાયેલ સૂત્ર ભૂતનિહ્વ સ્વરૂપ છે. ઉપઘાત શબ્દનો અર્થ છે. પ્રાણીયોની હિંસા આદિનું પ્રરૂપણ કરવું, આ વાતને પ્રરૂપક સૂત્ર ઉપઘાત દોષવાળા માનવામાં આવે છે—જેમ કહેવું કે, વેદવિહિતા હિંસા ધર્માય (૨) ” વેદ વિહિત હિંસા ધર્મના માટે છે ” જેમાં ફક્ત વર્ણોના ક્રમનો જ નિર્દેશ હોય તે નિરર્થક દોષ છે,—આમાં અર્થ

ઝનમ્—અક્ષરપદાદિભિર્હીનમ્ । અથવા—હેતુદૃષ્ટાન્તાભ્યામેવ હીનમ્ ઝનમ્ ।  
યથા—અનિત્યઃ શબ્દો ઘટવદિતિ । અત્ર હેતુર્નાસ્તિ, યથા વા ‘અનિત્યઃ શબ્દઃ  
કૃતકત્વાદ્’ इत्यादि, अत्र-घटादिरूपो दृष्टान्तो नास्ति ॥ ९ ॥

પુનરુક્તં ત્રિધા—શબ્દતોડ્યતશ્ચ । તથા—અર્થાદાપન્નસ્ય પુનર્વચનં—પુનરુક્તં । તત્ર  
શબ્દતઃ પુનરુક્તં યથા—ઘટઃ, ઘટઃ, इत्यादि । अर्थतः पुनरुक्तं यथा—घटः, कुटः,  
कुम्भ इत्यादि । अर्थादापन्नस्य पुनर्वचनं यथा—पीनोऽयं देवदत्तो, दिवा न भुङ्क्ते  
इत्युक्ते अर्थादापन्नं—‘रात्रौ भुङ्क्ते’ इति, तत्रार्थादापन्नमपि ‘रात्रौ भुङ्क्ते’  
इति यो ज्ञेयात् तस्य पुनरुक्तता ॥ १० ॥

વ્યાહતં—યત્ર પૂર્વેણ પરં વિહન્યતે । યથા—

“કર્મ ચાસ્તિ ફલં ચાસ્તિ કર્તા ન ત્વસ્તિ કર્મણામ્” इत्यादि ।

અક્ષર એવં પદ આદિ સે હીન હોતા હૈ વહાં ઝન નામક દોષ માના જાતા  
હૈ । અથવા હેતુ એવં દૃષ્ટાન્ત સે જો હીન હોતા હૈ વહાં મી યહ દોષ માના  
જાતા હૈ । જૈસે “અનિત્યઃ શબ્દઃ ઘટવત્” યહ વાક્ય હેતુ સે હીન હૈ ॥૯॥  
પુનરુક્ત દોષ શબ્દ, અર્થ એવં પ્રસંગાદિ સે પ્રાપ્ત અર્થ કે પુનઃ કથન સે  
હોતા હૈ । ઘટ ઘટ યહાં શબ્દ કી અપેક્ષા, ઘટ કુંભ કુટ યહાં અર્થ કી  
અપેક્ષા તથા “પીનોઽયં દેવદત્તઃ દિવા ન ભુંક્તે” યહાં અર્થાત્ પ્રસક્ત અર્થ  
રાત્રિ મેં ભોજન કરના હૈ ફિર મી “રાત્રૌ ભુઙ્ક્તે” રાત્રિ મેં ખાતા હૈ યહ  
કહના પુનરુક્તિ દોષ સે દૂષિત માના જાતા હૈ ॥ ૧૦ ॥ પૂર્વ સે પર જહાં  
વિરોધ હોતા હૈ, વહાં વ્યાહત દોષ માના જાતા હૈ—જૈસે—કિસી ને કહા કિ  
કર્મ હૈં ફલ હૈં પરન્તુ કર્મોં કા કર્તા કોઈ નહીં હૈ । યહ વાક્ય પૂર્વાપર મેં

અને એ દૃષ્ટાંત નહીં. (૮) જે અક્ષર અને પદ આદિથી હીન હોય છે. ત્યાં  
ઝન નામનો દોષ માનવામાં આવે છે. અથવા હેતુ અને દૃષ્ટાંતથી જ હીન હોય  
છે, ત્યાં પણ એ દોષ માનવામાં આવે છે. જેવી રીતે અનિત્યઃ શબ્દઃ ઘટવત્  
આ વાક્ય હેતુથી હીન છે. અનિત્યઃ શબ્દઃ કૃતકત્વાત્ અહિં દૃષ્ટાંતથી વિહિનતા  
છે. (૯) પુનરુક્ત દોષ શબ્દ, અર્થ અને પ્રસંગ આદિથી પ્રાપ્ત અર્થના પુનઃ  
કથનથી થાય છે. ઘટ ઘટ અહિં શબ્દની અપેક્ષા ઘટ કુંભ કુટ અહિં અર્થની  
અપેક્ષા તથા “પીનોઽયં દેવદત્તઃ દિવા ન ભુંક્તે” અહિં અર્થાત્ પ્રસક્ત અર્થ  
રાત્રીમાં ભોજન કરવું એ છે. છતાં પણ એ કહેવું છે કે રાત્રૌ ભુંક્તે એ  
રાત્રીમાં ખાય છે, આમ કહેવું પુનરુક્તિ દોષથી દુષિત માનવામાં આવે છે. (૧૦)  
પૂર્વથી પરનો જ્યાં વિરોધ છે, ત્યાં વ્યાહત દોષ માનવામાં આવે છે, જેમ કે,  
કેઈ એ કહ્યું કે, કર્મ છે, ફળ છે, પરંતુ કર્મોનો કર્તા કેઈ નથી. આ વાક્ય

इत्यादि ॥ ६ ॥

निःसारं=तथाविधयुक्तिरहितं परिफल्गु, यथा-सौगतादिशास्त्रम् ॥ ७ ॥

अधिकम्-अक्षरपदादिभिरतिमात्रम् । अथवा हेतोर्दृष्टान्तस्य वाऽऽधिक्ये सति अधिकं, यथा-अनित्यः शब्दः, कृतकत्वप्रयत्नानन्तरीयकत्वाभ्यां घटपटवदित्यादि। एकस्मिन् साध्ये एक एव हेतुर्दृष्टान्तश्च वक्तव्यः । अत्र च प्रत्येकं द्वयाभिधानादाधिक्यमिति भावः ॥ ८ ॥

॥ ५ ॥ जन्तुओं को अहित का उपदेशक होने से जो पापव्यापार का पोषक सूत्र होता है वह दुहिल दोषवाला सूत्र माना जाता है । जैसे-चार्वाक का यह कहना कि-यह लोक जितना प्रत्यक्ष से दिखता है उतना ही है इससे आगे नहीं । पुण्य पाप एवं स्वर्ग नरक यह भी नहीं है । इस लिये खाओ पीओ मस्त रहो और आनंद से अपने समय को निकालो ॥ ६ ॥ युक्ति रहित जो सूत्र होता है वह निस्सार दोष वाला माना जाता है, जैसे सौगत आदि का शास्त्र ॥ ७ ॥ जिसमें अक्षर पद आदि आवश्यकता से अधिक होते हैं वह सूत्र अधिक दोष संयुक्त जानना चाहिये, अथवा-जिसमें एक हेतु और दृष्टान्त के अतिरिक्त हेतु और दृष्टान्त हों वह भी अधिक दोषवाला सूत्र मानना चाहिये-जैसे-“अनित्यः शब्दः कृतकत्वप्रयत्नानन्तरीयकत्वात् घटपटवदिति” शब्द अनित्य है क्योंकि वह कृतक है एवं प्रयत्नपूर्वक होता है जैसे घट और पट ॥ ७ ॥ इस अनुमान में एक हेतु और १ दृष्टान्त अधिक है । एक साध्य में १ ही हेतु और १ ही दृष्टान्त होता है । दो हेतु और दो दृष्टान्त नहीं ॥ ८ ॥ जो

જનતુઓના અહિતના ઉપદેશક હોવાથી જે પાપ વ્યપારને પોષક સૂત્ર હોય છે, તે દુહિલ દોષવાળા સૂત્ર માનવામાં આવે છે. જેમ ચાર્વાક કહે છે કે:- આ લોક જે રીતે પ્રત્યક્ષથી દેખાય છે એટલું જ છે એનાથી આગળ નથી, પુણ્ય, પાપ અને સ્વર્ગ નરક એ પણ નથી, આ માટે ખાઓ પીઓ અને મસ્ત રહો તથા આનંદથી સમયને પસાર કરો, (૬) યુક્તિ રહિત જે સૂત્ર હોય છે તે નિસ્સાર દોષવાળા મનાય છે. જેમ સૌગત આદિ શાસ્ત્ર, (૭) જેમાં અક્ષર પદ આદિ આવશ્યકતાથી અધિક હોય છે તે સૂત્ર અધિક દોષ સંયુક્ત બાણુવું જોઈએ. અથવા જેમાં એક હેતુ અને દૃષ્ટાંતના અતિરિક્ત હેતુ અને દૃષ્ટાંત હોય તેને પણ અધિક દોષવાળા સૂત્ર માનવા જોઈએ. જેમ-“અનિત્યઃ શબ્દઃ કૃતકત્વપ્રયત્નનન્તરીયકત્વાત્ ઘટપટવદિતિ” શબ્દ અનિત્ય છે, કેમ કે, તે કૃતક છે. અને પ્રયત્નપૂર્વક થાય છે, જેમ ઘટ અને પટ. આ અનુમાનમાં એક હેતુ અને એક દૃષ્ટાંત અધિક છે. એક સાધ્યમાં એક જ હેતુ અને એક જ દૃષ્ટાંત હોય છે. બે :

शब्दरूपगन्धरसस्पर्शा इति वक्तव्ये रूपगन्धशब्दस्पर्शरसा इति ब्रूयाद्' इत्यादि ॥१३॥

वचनभिन्नं—यत्र वचनव्यत्ययः, यथा—'वृक्षा ऋतौ पुष्पितः' इत्यादि ॥१४॥

विभक्तिभिन्नं—यत्र विभक्तिव्यत्ययः, यथा—'वृक्षं पश्य' इति वक्तव्ये 'वृक्षः पश्य' इति ब्रूयात्' इत्यादि ॥ १५ ॥

लिङ्गभिन्नं—यत्र लिङ्गव्यत्ययः, यथा—'इयं स्त्री' इति वक्तव्ये 'अयं स्त्री' इति ब्रूयात्, इत्यादि ॥ १६ ॥

अनभिहितं—स्वसिद्धान्तोपदिष्टाधिककथनम् । यथा—राशिद्वयमिति वक्तव्ये राशित्रयकथनम्, इत्यादि ॥ १७ ॥

का दोष आता है । क्यों कि सूत्र में जिस क्रम से इन्द्रियों का वर्णन किया गया है उसी क्रम से उनके विषय का भी वर्णन करना चाहिये ॥ १३ ॥ जहां वचन का व्यत्यय होता है वहां वचनभिन्न नामका दोष होता है जैसे "वृक्षाः ऋतौ पुष्पितः" यहां वचन व्यत्यय है । क्यों कि "पुष्पितः" की जगह "पुष्पिताः" ऐसा बहुवचन होना चाहिये ॥१४॥ जहां विभक्ति का व्यत्यय होता है वहां विभक्तिभिन्न दोष माना जाता है जैसे "वृक्षः पश्य" यहां पर विभक्ति भिन्न दोष है यहाँ, 'वृक्षः' की जगह 'वृक्षं' ऐसा होना चाहिये ॥ १५ ॥ जहां स्त्रीलिङ्ग आदि का व्यत्यय होता है वह लिङ्गभिन्न दोष है जैसे; "अयं स्त्री" यहां हुआ है । 'अयं' की जगह 'इयं' होनी चाहिये सो 'इयं' की जगह 'अयं' कर दिया यह लिङ्गव्यत्यय है ॥ १६ ॥ जो बात सिद्धान्त में प्रतिपादित नहीं है उसे भी मानना अर्थात् सिद्धान्तकथित बात से भी

भिन्न नामनो दोष आवे छे. કેમ કે, સૂત્રમાં જે ક્રમથી ઇન્દ્રિયોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે એજ ક્રમથી એના વિષયનું પણ વર્ણન કરવું જોઈએ. (૧૩) ત્યાં વચનનો ઉલટ-સુલટ વ્યત્યય થાય છે. ત્યાં વચનભિન્ન નામનો દોષ લાગે છે. જેમ વૃક્ષાઃ ઋતૌ પુષ્પિતઃ-અહીં વચનવ્યત્યય છે, કેમકે પુષ્પિતઃ ની જગ્યાએ "પુષ્પિતાઃ" એમ બહુવચન હોવું જોઈએ. (૧૪) ત્યાં વિભક્તિનો વ્યત્યય હોય છે. તે વિભક્તિ ભિન્ન દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ "વૃક્ષઃ પશ્ય" અહીં પદ છે "વૃક્ષં પશ્ય" એ ઠીક છે. વૃક્ષં ની જગ્યાએ વૃક્ષઃ આ વિભક્તિનો વ્યત્યય છે. (૧૫) ત્યાં સ્ત્રીલિંગ આદિનો વ્યત્યય બને છે તે લિંગ ભિન્ન દોષ છે, જેમ અયં સ્ત્રી અહીં અયં ની જગ્યાએ ઇયં હોવું જોઈએ. તે ઇયં ની જગ્યાએ અયં કરી દીધું એ લિંગવ્યત્યય છે, (૧૬) જે વાત સિદ્ધાંતમાં પ્રતિપાદિત નથી તેને માનવી, અર્થાત્ સિદ્ધાંત કથિત વાતથી પણ અધિક જે યુક્તિ

पूर्व—‘कर्म चास्ति’ इत्युक्तम्, तेन—कर्मणां कर्तानास्तीत्यस्य विघातो भवति।  
यथा वा—अयं बालको बन्ध्याप्रसूतः, इत्यादि ॥ ११ ॥

अयुक्तम्—बुद्ध्या चिन्त्यमानम्—अनुपपत्तिक्षमम्। यथा—

“तेषां कटतटभ्रष्टैर्-र्गजानां मदविन्दुभिः।

मायर्तत नदी घोरा, हस्त्यश्वरथवाहिनी ॥ १ ॥

यथा वा—श्रावकस्य मुनिदर्शनदर्पाश्रुभिरुपाश्रयः संभृतः ॥ १२ ॥

क्रमभिन्नं—यत्र क्रमो नाराध्यते। यथा—‘श्रोत्रचक्षुर्घ्राणरसनस्पर्शनानां વિષયાઃ

વિરોધી છે કારણ કિ જવ કર્મ છે તોં કોઈ ન કોઈ ફનકા કર્તાં મીં—ફિર  
યહ કહના કિ ફનકા કોઈ કર્તાં નહીં છે યહ વ્યાહત દોષ છે । ફસી તરહ  
“અયંબાલકોબન્ધ્યાપ્રસૂતઃ” અર્થાત્ યહ બાલક બન્ધ્યાપુત્ર છે યહ મી  
સમજના યાહિયે ॥ ૧૧ ॥ જો યુક્તિ સહ નહીં હોતા છે વહાં અયુક્ત દોષ  
આતા છે જૈસે—હાથિયોં કા વર્ણન કરતે સમય ઈસા કહા જાય કિ ઉનકે  
હાથિયોં કે ગણડસ્થલ સે ય્યુત મદજલ કા ફતના અધિક પ્રવાહ વહા  
કિ વહાં ઈક ઘોર નદી હો ગઈ જિસમેં હાથી, અશ્વ ઈવં રથ સવ કે સબ  
વહ ગયે । યહ બુદ્ધિકલ્પિત ચીજ યુક્તિ સહ નહીં છે । ફસ લિયે યે  
અયુક્ત નામકા દોષ છે । ફસી તરહ યહ કથન મી “કિ મુનિયોં કે  
દર્શન સે શ્રાવકોં કી આંખોં સે ફતને આનંદાશ્રુ નિકલે કિ ઉપાશ્રય  
મર ગયા” ॥ ૧૨ ॥ જહાં ક્રમ વર્ણન પર ધ્યાન નહીં રલા જાતા છે વહાં  
ક્રમભિન્ન નામકા દોષ છે—જૈસે—શ્રોત્રચક્ષુર્ઘ્રાણરસનસ્પર્શનાનાં વિષયાઃ  
રૂપગંધશબ્દસ્પર્શરસાઃ, ઈસા કોઈ સૂત્ર બનાવેં તો ઉસમેં ક્રમભિન્ન નામ

પૂર્વાપરમાં વિરોધી છે કારણ કે, જ્યારે કર્મ છે તો કોઈને કોઈતેનો કર્તા પણ  
હોવો જોઈએ. પણ એ કહેવું કે એનો કોઈ કર્તા નથી એ ‘વ્યાહત’ દોષ છે. આ  
રીતે “અયં બાલકો બન્ધ્યાપ્રસૂતઃ” અર્થાત્ “આ બાળક બન્ધ્યા પુત્ર છે” એમ  
કહેવું તે પણ સમજવું જોઈએ. (૧૧) જે યુક્તિ પુરઃસર નથી ત્યાં અયુક્ત દોષ  
આવે છે. જેમ હાથીયોનું વર્ણન કરતી વખતે એમ કહેવામાં આવે કે તે  
હાથીયોના ગંડસ્થલથી ચ્યુત મદજળનો એટલો વધુ પ્રવાહ નિકળ્યો કે, ત્યાં એક ઘોર  
નદી થઈ ગઈ જેમાં હાથી, અશ્વ અને રથ આ બધાં તણાઈ ગયાં, આ બુદ્ધિ  
કલ્પિત ચિજ યુક્તિ સહ નથી. આ માટે અયુક્ત નામનો દોષ છે. એવી રીતે  
“મુનિયાના દર્શનથી શ્રાવકોની આંખોમાંથી એટલાં આંસુ વહ્યા કે તેનાથી ઉપાશ્રય  
ભરાઈ ગયો. આ કથન પણ અયુક્ત દોષવાળું છે (૧૨) જ્યાં ક્રમવર્ણન ઉપર ધ્યાન  
નથી રખાતું ત્યાં ક્રમભિન્ન નામનો દોષ છે—જેમ શ્રોત્રચક્ષુર્ઘ્રાણરસનસ્પર્શનાનાં  
વિષયાઃ—રૂપ—ગંધ—શબ્દ—સ્પર્શ—રસાઃ એવું કોઈ સૂત્ર બનાવે તો એમાં ક્રમ-



કાલદોષો યત્રાતીતાદિકાલવ્યત્યયઃ, યથા 'રામો વનં પ્રવિવેશ' इति वक्तव्ये 'रामो वनं प्रविशति' इत्यादि ॥ २१ ॥

યતિદોષોઽસ્થાનવિરતિઃ, સર્વથાઽવિરતિર્વા । યથા—'ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ટું' इत्यादौ 'धम्मो' इत्यत्र विरामः । यद्वा—गाथायां अन्ते विरामकरणम् ॥ २२ ॥

છવિઃ—અલંકારઃ, તેન શૂન્ય છવિદોષઃ । યથા—'વાલો ધાવતિ' इत्यादि ॥ २३ ॥

સમયવિરુદ્ધ—સ્વસિદ્ધાન્તવિરુદ્ધ, યથા—સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તે તદ્વિરુદ્ધકથનમ્ ॥ २४ ॥

મેં સુવન્ત તિહન્તાત્મક પદ કા સ્વરૂપ વિસ્તાર સે વિવેચિત કરકે અથવા અર્થશાસ્ત્ર કા કથન કરકે પુનઃ હેતુ કા કથન કરને લગ જાના । હસી તરહ દયા કે વર્ણવ કરતે સમય શીલ કા વિસ્તૃત વર્ણન કરના ઔર પુનઃ દયા કા વર્ણન કરના । હસ પ્રકાર કા વર્ણન હસ દોષ વાલા જાનના ચાહિયે ॥ ૨૦ ॥ જહાં અતિતાદિકાલ કા વ્યત્યય હોતા હૈ વહાં કાલ-દોષ માના જાતા હૈ—જૈસે—રામ વન મેં પ્રવિષ્ટ હુણ કી જગહ ઈસા કહના કિ રામ વન મેં પ્રવેશ કરતે હૈ ॥ ૨૧ ॥ અસ્થાન મેં વિરતિ—'અર્થાત્-વિરામ-રુકના' હોના અથવા સર્વથા અવિરતિ—'નહી રુકના' હોના ઉસકા નામ યતિ દોષ હૈ । જૈસે—ધમ્મોમંગલ મુક્કિટ્ટું" इत्यादि મેં ધમ્મો યહાં વિરામ કરના અથવા ગાથા કા અન્તમેં વિરામ કરના ॥ ૨૨ ॥ અલંકાર શૂન્યતા મેં છવિદોષ હોતા હૈ—જૈસે—"વાલો ધાવતિ" इत्यादि ॥ २३ ॥ જહાં સ્વસિદ્ધાન્ત સે વિરુદ્ધ કહા જાતા હૈ વહાં સમય વિરુદ્ધ દોષ લગતા હૈ—જૈસે—સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્ત મેં ઉસકે વિરુદ્ધ પ્રતિપાદન કરના

સુખન્ત તિહન્તાત્મક પદનું સ્વરૂપ વિસ્તારથી વિવેચિત કરીને અથવા અર્થ-શાસ્ત્રનું કથન કરીને પુનઃ હેતુનું કથન કરવા લાગી જવું. આ રીતે દયાનું વર્ણન કરતી વખતે શિલનું વિસ્તૃત વર્ણન કરવું અને ફરીથી દયાનું વર્ણન કરવું. આ પ્રકારનું વર્ણન વ્યવહિત દોષવાળું બનેલું બેધાયક. (૨૦) જ્યાં અતીતાદિ કાળનો વ્યત્યય થાય છે ત્યાં કાળ દોષ મનાય છે—જેમ રામ વનમાં પ્રવિષ્ટ થયાની જગ્યાએ એવું કહેવું કે, રામ વનમાં પ્રવેશ કરે છે. (૨૧) અસ્થાનમાં વિરતિ—અર્થાત્-વિરામ—રોકાવું, થવું અથવા સર્વથા અવિરતિ—“ન રોકાવું” થવું, તેનું નામ યતિદોષ છે. જેમ—“ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ટું” इत्यादिમાં ધમ્મો એ જગ્યાએ વિરામ કરવો અથવા ગાથાના અંતમાં વિરામ કરવો. (૨૨) અલંકાર શૂન્યતામાં છવિ દોષ થાય છે. જેમ “વાલો ધાવતિ” છોકરો દોડે છે. (૨૩) ઇત્યાદિ. જ્યાં સ્વસિદ્ધાન્તથી વિરુદ્ધ કહેવામાં આવે છે ત્યાં સમયવિરુદ્ધ દોષ લાગે છે. જેમ સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તમાં તેની વિરુદ્ધ પ્રતિપાદન કરવું. (૨૪) યુક્તિશૂન્ય કથન કરવામાં વચન માત્ર નામનું દુષણ આવે છે.

અપદં—નિર્વિભક્તિકશબ્દોચારણરૂપમ્ । યથા—મુનિર્વિહરતીતિ વક્તવ્યે મુનિ  
વિહરતીતિ કથનમ્ ॥ ૧૮ ॥

સ્વભાવહીનં—યત્ર વસ્તુસ્વભાવોઽન્યથા સ્થિતોઽન્યથાઽભિધીયતે તત્ । યથા  
'શીતો વહ્નિઃ' 'રૂપવદાકાશમ્' इत्यादि ॥ ૧૯ ॥

વ્યવહિતં—યત્ર પ્રકૃતમુક્તવાઽપ્રકૃતં વિસ્તરતોઽભિધાય પુનઃ પ્રકૃતમુચ્યતે તદ્ ।  
યથા—હેતુકથામધિકૃત્ય સુતિદ્વન્તપદલક્ષણપ્રપञ्चमर्थशास्त्रं वा अभिधाय पुनर्हेतुवच-  
नम् । यथा वा—दयां प्रस्तुत्य शीलस्य विस्तरवर्णनं विधाय पुनर्दयावर्णनम् ॥ ૨૦ ॥

અધિક જો યુક્તિયુક્ત નહીં હૈ—ઉસ કો માનના જૈસે—જીવરાશિ અજીવ-  
રાશિ યે દો હી રાશિયાં હૈ । પર એસા કહના કિ “નો જીવ નો અજીવ”  
ઇસ પ્રકાર તૈસરા રાશિ કા વર્ણન કરના અનભિહિત દોષ હૈ ॥ ૧૭ ॥  
વિભક્તિ રહિત શબ્દ ચાલા સૂત્ર અપદ દોષ ચાલા માના જાતા હૈ જૈસે  
“મુનિવિહરતિ” યહાં હુઆ હૈ । ક્યોં કિ સુવન્ત એવં તિદ્વન્ત કી પદ  
સંજ્ઞા હોતી હૈ । નિર્વિભક્તિક શબ્દ પદ સંજ્ઞક નહીં હોતા । અતઃ ઇસ  
પ્રકાર કા શબ્દ ચાલા સૂત્ર ઇસ દોષ સે વિશિષ્ટ માના જાતા હૈ ।  
“મુનિવિહરતિ” યહ શુદ્ધ હૈ ॥ ૧૮ ॥ જિસ સૂત્ર દ્વારા વસ્તુ કા યથા-  
વસ્તિ સ્વરૂપ નિરૂપિત ન હોકર અન્યથારૂપ મેં નિરૂપિત કિયા જાતા  
હૈ વહાં સ્વભાવહીન દોષ હોતા હૈ । જૈસે—અગ્નિ કો શીત એવં આકાશ  
કો રૂપી કહના ॥ ૧૯ ॥ જહાં પ્રકૃત અર્થ કો છોડકર અપ્રકૃત કા  
વિસ્તાર સે વર્ણન કરકે પુનઃ પ્રકૃત અર્થ કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ વહાં  
વ્યવહિત નામ કા દોષ હોતા હૈ—જૈસે—હેતુ કે લક્ષણ કે કથન અવસર

યુક્ત નથી તેને માનવી જેમ—જીવરાશી અજીવરાશી એ જે રાશી છે, પણ  
જેમ કહેવું કે નો જીવ—નો અજીવ આ પ્રકારે ત્રીજી રાશીનું વર્ણન કરવું  
અનભિહિત દોષ છે. (૧૭) વિભક્તિરહિત શબ્દવાળા સૂત્ર અપદ દોષવાળા  
માનાય છે જેમ “મુનિવિહરતિ” અહિં થયેલ છે. કેમકે, સુવન્ત અને તિદ્વન્તની  
પદ સંજ્ઞા થાય છે. નિર્વિભક્તિક શબ્દ પદ સંજ્ઞક થતો નથી એટલે આ  
પ્રકારના શબ્દવાળા સૂત્ર આ દોષથી વિશિષ્ટ માનવામાં આવે છે. “મુનિર્વિહરતિ”  
આ શુદ્ધ છે. (૧૮) જે સૂત્રથી વસ્તુનું યથાવસ્થિત સ્વરૂપ નિરૂપિત ન થતાં  
બીજા રૂપમાં નિરૂપિત કરવામાં આવે છે ત્યાં સ્વભાવહિન દોષ હોય છે. જેમ  
અગ્નિને શીત અને આકાશને રૂપી કહેવું. (૧૯) જ્યાં પ્રકૃત અર્થને છોડીને  
અપ્રકૃતનું વિસ્તારથી વર્ણન કરીને પુનઃ પ્રકૃત અર્થનું વર્ણન કરવામાં આવે છે  
ત્યાં વ્યવહિત નામનો દોષ લાગે છે—જેમ હેતુ લક્ષણના કથન અવસર

પ્રિયદર્શિની ટોકા ગા. ૨૩ સૂત્રદોષાઃ ૩૨

રૂપકદોષઃ—અવ્યવિન્યારોપયિતવ્યેઽવ્યવારોપણમ્ । યથા—પર્વતાદૌ રૂપયિ-  
તવ્યે શિખરાદૌસ્તદવ્યવાન્ રૂપયતિ । ગજં પ્રતિ ઉચ્ચત્વાદિ ધર્મં નિરીક્ષ્ય પર્વતા-  
ભેદમારોપ્ય પર્વતોઽયમિતિ વક્તવ્યે શિખરોઽયમિતિ કથનમ્ ॥ ૨૯ ॥

નિર્દેશદોષસ્ત્ર, યત્ર નિર્દિષ્ટપદાનામેકવાક્યતા ન ક્રિયતે, યથા—ઈહ શ્રાવક  
ઉપાશ્રયે પ્રતિક્રામતીત્યભિધાતવ્યે પ્રતિક્રામતિ શબ્દં નાભિધત્તે ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થદોષઃ—યત્ર વસ્તુનિ પર્યાયોઽપિ સન્ પદાર્થાન્તરત્વેન કલ્પ્યતે, યથા—  
'સતો ભાવઃ સત્તા' ઇતિ કૃત્વા વસ્તુપર્યાય એવ સત્તા, સા ચ વૈશેષિકૈઃ પદ્મસુ  
પદાર્થેષુ મધ્યે પદાર્થાન્તરત્વેન સ્વીકૃતા, તચ્ચાયુક્તમ્—વસ્તૂનામનન્તપર્યાયત્વેન  
પદાર્થાનિન્ત્ય—પ્રસંગાદિતિ ॥ ૩૧ ॥

ઉપમા કરને મેં આતી છે વહાં ઉપમા દોષ માના જાતા હૈ જૈસે કહના કિ મેરુ  
સર્પ કે સમાન હૈ અથવા સર્પ મેરુકે સમાન હૈ ॥૨૮॥ અવયવી કા જહાં  
આરોપણ કરના ચાહિયે વહાં અવયવ કા આરોપણ કરના, જૈસે—પર્વતકે  
નિરૂપયિતવ્ય હોને પર ઉસ કે અવયવભૂત શિખરાદિકોં કા નિરૂપણ  
કરના । ગજ મેં ઉચ્ચત્વ આદિ ધર્મ કા નિરીક્ષણ કર કે ઉસ મેં પર્વત કા  
રૂપક બાંધકર ફિર એસા કહના કિ યહ શિખર હૈ ॥ ૨૯ ॥ જહાં નિર્દિષ્ટ  
પદો મેં એક વાક્યતા નહીં કી જાતી હૈ વહાં નિર્દિષ્ટ દોષ માના જાતા  
હૈ । જૈસે—ઈસ ઉપાશ્રય મેં શ્રાવક પ્રતિક્રમણ કરતા હૈ એસે કહને કી  
જગહ સિર્ફ ઇતના હી કહના । “ ઇહ ઉપાશ્રયે શ્રાવકઃ ” અર્થાત્ એક  
વાક્યતા પ્રદર્શક ક્રિયાપદ કા પ્રયોગ નહીં કરના ॥ ૩૦ ॥ જિસ વસ્તુમેં  
પર્યાય બી દૂસરે પદાર્થરૂપ મેં કલ્પિત કી જાવે વહાં પદાર્થદોષ માના  
જાતા હૈ । જૈસે—સત્ કા ભાવ હી સત્તા હૈ ઓર યહ સત્તા વસ્તુ કી હી

ત્યાં ઉપમાદોષ માનવામાં આવે છે. જેમ કહેવું કે, મેરુ સર્પવના જેવો છે  
અથવા સર્પ મેરુના સમાન છે. (૨૮) અવયવીનું જ્યાં આરોપણ કરવું  
જોઈએ ત્યાં અવયવનું આરોપણ કરવું, જેમ પર્વતના નિરૂપયિતવ્ય કથન  
કરવું જોઈએ ત્યાં એમના શિખરાદિકોનું નિરૂપણ કરવું, ગજમાં ઉચ્ચત્વ  
આદિ ધર્મનું નિરીક્ષણ કરી એમાં પર્વતનું રૂપક બાંધીને પછી એવું કહેવું કે  
એ શિખર છે. (૨૯) જ્યાં નિર્દિષ્ટ પદોમાં એકવાક્યતા કરવામાં નથી આવતી  
ત્યાં નિર્દિષ્ટ દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ આ ઉપાશ્રયમાં શ્રાવક પ્રતિક્રમણ  
કરે છે એમ કહેવાને બદલે ક્રિયાપદનું પ્રયોગ કરવો નહીં. (૩૦) જે વસ્તુમાં  
અર્થાત્ એક વાક્યતા પ્રદર્શક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કરવો નહીં. (૩૦) જે વસ્તુમાં  
પર્યાય પણ બીજા પદાર્થરૂપમાં કલ્પિત કરવામાં આવે ત્યાં પદાર્થ દોષ મનાય  
છે, જેમ સતનો ભાવ જ સત્તા છે અને એ સત્તા વસ્તુની જ એક પર્યાય છે—

વચનમાત્ર-નિર્હેતુકં કેવલવચનમ્, યથા કથિવ્ યથેચ્છયા કંચિત્ પ્રદેશં લોક-મધ્યતયા જનેભ્યઃ પ્રરૂપયતિ ॥ ૨૫ ॥

અર્થાપત્તિદોષઃ—યત્રાર્થાપત્ત્યાનિષ્ટમાપતતિ તત્ર, યથા-પ્રામકુક્કુટો ન હન્તવ્યઃ, ઇત્યુક્તેઽર્થાપત્ત્યા શેષઘાતોઽદુષ્ટ ઇત્યાપતતિ ॥ ૨૬ ॥

અસમાસદોષઃ—યત્ર સમાસવિધિપ્રાપ્તૌ સમાસં ન કરોતિ, વ્યત્યયેન વા કરોતિ તત્ર । યથા-ભગવતો નામનિર્દેશે ‘મહાવીરઃ’ ઇતિ વક્તવ્યે ‘મહાન્ વીરઃ’ ઇતિ કથનમ્ । યદ્વા-સમાનાધિકરણ્યેન સમાસે કર્તવ્યે વ્યધિકરણેન તત્કરણમ્ । યથા-મહતો વીરો મહદ્વીર ઇતિ ॥ ૨૭ ॥

ઉપમાદોષો યત્ર હીનોપમા ક્રિયતે । યથા-મેરુઃ સર્પપોપમઃ । અધિકોપમા વા ક્રિયતે, યથા-સર્પપો મેરુસંનિમઃ । અનુપમા વા યથા મેરુઃ સમુદ્રોપમઃ, ઇત્યાદિ ॥ ૨૮ ॥

॥ ૨૪ ॥ યુક્તિ શૂન્ય કથન કરને મેં વચનમાત્ર નામકા દૂષણ આતા હૈ । જૈસે-અપની ઇચ્છા સે કલ્પના કરકે કહના કિ અમુક પ્રદેશ લોક કે મધ્ય મેં હૈ ॥ ૨૫ ॥ જહાં પર અર્થાપત્તિ સે અનિષ્ટ કી પ્રસક્તિ હોતી, વહાં અર્થાપત્તિદોષ માના જાતા હૈ । જૈસે-કિસી ને કહા કિ ગ્રામ કા કુક્કુટ ( મુર્ગા ) નહીં મારના ચાહિયે, તો ઇસસે ઇસ અનિષ્ટ કા આપાદન હોતા હૈ કિ શેષ જીવોં કા ઘાત કરના દોષાવહ નહીં હૈ ॥ ૨૬ ॥ જહાં સમાસવિધિ પ્રાપ્ત હો ભી તૌ ભી વહાં સમાસ નહીં કરના, ઇસમેં અસમાસદોષ માના જાતા હૈ અથવા વ્યત્યય સે સમાસ કરના ઇસમેં ભી સમાસદોષ માના જાતા હૈ । જૈસે કિસી ને પૂછા કિ અન્તિમ તીર્થંકર કા નામ કયા હૈ ? વહાં મહાવીર ન કહ કર મહાન્ વીર એસા કહ દેના । અથવા-સમાનાધિકરણ્ય સે સમાસ કર્તવ્ય હોને પર વ્યધિકરણ સે સમાસ કરના-જૈસે-મહતો વીરઃ મહદ્વીરઃ ॥ ૨૭ ॥ જહાં હીન ઉપમા અથવા અધિક

જેમ પોતાની ઇચ્છાથી કલ્પના કરીને કહેવું કે, અમુક પ્રદેશ લોકના મધ્યમાં છે. (૨૫) જ્યાં અર્થાપત્તિથી અનિષ્ટની પ્રસક્તિ થાય છે ત્યાં અર્થાપત્તિ દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ કોઈએ કહ્યું કે, ગામનો કુકડો મારવો ન જોઈએ, તો આથી એ અનિષ્ટનું કથન આપાદન થાય છે કે, શેષ જીવોનો ઘાત કરવો તે દોષાવહ નથી. (૨૬) જ્યાં સમાસવિધિ પ્રાપ્ત થાય તો પણ ત્યાં સમાસ ન કરવો એમાં અસમાસ દોષ માનવામાં આવે છે, અથવા વ્યત્યયથી સમાસ કરવો એમાં પણ સમાસ દોષ માનવામાં આવે છે, જેમ કોઈએ પૂછ્યું કે અન્તિમ તીર્થંકરનું નામ શું છે ? ત્યાં મહાવીર ન કહેતા મહાન્ વીર એમ કહી દેવું અથવા સામાનાધિકરણ્યથી સમાસ કર્તવ્ય હોવા છતાં વ્યધિકરણથી સમાસ કરવો, જેમ ‘મહતોવીરઃ મહાવીરઃ’ (૨૭) જ્યાં હીન ઉપમા અથવા અધિક ઉપમા કરવામાં આવે છે

વ્યાખ્યા—નિર્દોષમ્—અલીકાદિદોષવર્જિતમ્ ॥ ૧ ॥ સારવત્—ભૂમિશબ્દવદ્  
વહુપર્યાયયુક્તમ્ ॥ ૨ ॥ હેતુયુક્ત—હેતવઃ—અન્વયવ્યતિરેકલક્ષણાસ્તૈર્યુક્તમ્ ॥ ૩ ॥  
અલંકૃતમ્—ઉપમાઉત્પ્રેક્ષાઅલંકારૈર્યુક્તમ્ ॥ ૪ ॥ ઉપનીતમ્—ઉપનયોપસંહતમ્ ॥ ૫ ॥  
સોપચારં—ગ્રામ્યભણિતિરહિતમ્ ॥ ૬ ॥ મિતં=વર્ણાદિનિયતપરિમાણમ્ ॥ ૭ ॥  
મધુરં—શ્રવણમનોહરમ્ ॥ ૮ ॥

અવ સૂત્રકે ૮ ગુણ કૌન ૨ સે હૈં સો કહતે હૈં—નિર્દોષ ૧, સારવત ૨, હેતુયુક્ત ૩, અલંકૃત ૪, ઉપનીત ૫, સોપચાર ૬, મિત ૭, એવં મધુર ૮, કહાં મી હૈ—

“નિર્દોષં સારવતં ચ, હેતુયુક્ત મલંકિયં ।

ઉવર્ણીયં સોપચારં ચ, મિતં મધુરમેવ ચ ॥૧॥

જો સૂત્ર અલીકાદિ દોષોં સે વર્જિત હોતા હૈં વહાં નિર્દોષ યહ ગુણ માના જાતા હૈં ॥ ૧ ॥ જિસ પ્રકાર ભૂમિ શબ્દ કે અનેક પર્યાયવાચી શબ્દ હૈં, ઉસી પ્રકાર અનેક પર્યાયોં સે યુક્ત જો સૂત્ર હોતા હૈં વહ “સારવત્” હિસ ગુણ સે વિશિષ્ટ માના જાતા હૈં ॥ ૨ ॥ અન્વય વ્યતિરેક લક્ષણ હેતુ સે યુક્ત હો વહ હેતુયુક્ત નામક તીસરા ગુણ હૈં ॥ ૩ ॥ ઉપમા ઉત્પ્રેક્ષા આદિ અલંકારોં સે સંપન્ન સૂત્ર કો અલંકૃત ગુણ વાલા કહા ગયા હૈં ॥ ૪ ॥ ઉપનય પૂર્વક સે ઉપસંહત—સમાસિ જો સૂત્ર હોતા હૈં વહ ઉપનીતગુણવાલા કહા ગયા હૈં ॥ ૫ ॥ ગ્રામ્યભણિતિ સે રહિત જો સૂત્ર હોતા હૈં અર્થાત્ જિસ સૂત્ર કી ભાષા સાધારણજનોં કી ભાષા જૈસી નહીં હોતી હૈં વહ સૂત્ર સોપચારગુણ સે વિશિષ્ટ માના ગયા હૈં.

હવે સૂત્રના આઠ ગુણ કયા કયા છે તે કહે છે—નિર્દોષ, સારવત્, હેતુયુક્ત, અલંકૃત, ઉપનીત, સોપચાર, મિત, અને મધુર કહ્યું પણ છે—

નિર્દોષં સારવતં ચ, હેતુયુક્ત મલંકિયં ।

ઉવર્ણીયં સોપચારં ચ, મિતં મધુરમેવ ॥ ૧ ॥

જે સૂત્ર અસત્ય અલીકાદિ દોષોથી વર્જિત હોય છે ત્યાં નિર્દોષ આ ગુણ માનવામાં આવે છે. (૧) જે પ્રકારે ભૂમિ શબ્દ જે અનેક પર્યાયવાચી શબ્દ છે એ જ રીતે અનેક પર્યાયોથી યુક્ત જે સૂત્ર હોય છે તે “સારવત્” આ ગુણથી વિશિષ્ટ માનવામાં આવે છે. (૨) અન્વય વ્યતિરેક લક્ષણ હેતુથી યુક્ત હોય તે હેતુયુક્ત નામનો ત્રીજો ગુણ છે. (૩) ઉપમા ઉત્પ્રેક્ષા આદિ અલંકારોથી સંપન્ન સૂત્રને અલંકૃત ગુણવાળા કહેવામાં આવેલ છે. (૪) ઉપનય પૂર્વકથી ઉપસંહત સમાસિ જે સૂત્ર હોય છે તે ઉપનીત ગુણવાળા કહેવાયેલ છે. (૫) ગ્રામ્યભણિતિથી રહિત જે સૂત્ર હોય છે અર્થાત્ જે સૂત્રની ભાષા સાધારણ જનોની ભાષા જેવી હોતી નથી તે સૂત્ર સોપચાર ગુણથી વિશિષ્ટ માનવામાં આવેલ છે. (૬)



સન્ધિદોષઃ—યત્ર સન્ધિમાતૃં તં ન કરોતિ, દુષ્ટં વા કરોતિ તત્ર, યથા—“સંયમારાધનમ્” ઇતિ વક્તવ્યે ‘સંયમ, આરાધનમ્’ ઇતિ કથનમ્ । યથા વા ‘મુનિ एतौ’ ઇતિ વક્તવ્યે ‘મુન્યેતૌ’ ઇતિ કથનમ્ ॥૩૨॥ एते द्वात्रिंशत् सूत्रदोषाः ।

अथ सूत्रगुणाः—

सूत्राणामष्टौ गुणास्त्वेवम्—

निदोसं सारवंतं च, हेउजुत्त मलंकियं ।

उवणीयं सोवयारं च, मिर्यं महुरमेव य ॥ १ ॥

एक पर्याय है—फिर भी वैशेषिक सिद्धान्तकार इसे द्रव्यगुण आदि पदार्थ से भिन्न पदार्थरूप से स्वीकार करते हैं । अतः उनके सूत्रों में यह दोष आता है । कारण कि इस प्रकार से पर्याय को यदि भिन्न पदार्थ तरीके माना जायगा तो प्रत्येक पदार्थ की अनंत पर्याये हैं उन सबमें अनंत पदार्थता की प्रसक्ति माननी पड़ेगी, इस प्रकार छह ही भावात्मक पदार्थ हैं, यह कथनविरुद्ध मानना पड़ेगा ॥ ३१ ॥ जहां संधि की प्राप्ति होने पर भी संधि नहीं की जाय वहां सन्धिदोष होता है जैसे—“यह संयम का आराधन करता है” इस स्थानमें संयमाराधनं न कह कर “संयम आराधनं” ऐसा कहना । इसी प्रकार “मुनी एतौ” इस जगह “मुन्येतौ” कहना । “मुनौ एतौ” यहां व्याकरण सिद्धान्त के अनुसार द्विवचनान्त ईदन्त शब्दकी प्रगृह्य संज्ञा होती है और उससे सन्धिकार्य का अभाव हो जाता है ॥ ३२ ॥ इस प्रकार सूत्रके ये वत्तीस (३२) दोष हैं ।

વૈશેષિક સિદ્ધાંતકાર તેનો દ્રવ્યગુણ આદિ પદાર્થથી ભિન્ન પદાર્થ રૂપથી સ્વીકાર કરે છે. આથી તેમના સૂત્રોમાં એ દોષ આવે છે. કારણ કે, આ પ્રકારથી પર્યાયને કદિ ભિન્ન પદાર્થ તરીકે માનવામાં આવે તો પ્રત્યેક પદાર્થની અનંત પર્યાયો છે એ બધામાં અનંત પદાર્થતાની પ્રસક્તિ માનવી બેઠશે. આ પ્રકારે છ ભાવાત્મક પદાર્થ છે, એ કહેવું વિરુદ્ધ માનવું પડશે. (૩૧) બ્યાં સંધિની પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સંધી ન કરવામાં આવે તો સંધી દોષ બને છે. જેમ—“આ સંયમનું આરાધન કરે છે” આ સ્થાનમાં સંયમારાધન ન કહીને “સંયમ આરાધન” એમ કહેવું. આ પ્રકારે “મુનિ एतौ” આ સ્થળે મુન્યેતૌ કહેવું. વ્યાકરણ સિદ્ધાંત અનુસાર દ્વિવચનનાંત ઈદન્ત શબ્દની પ્રગૃહ્ય સંજ્ઞા થાય છે. અને એથી સંધી કાર્યનો અભાવ થઈ જાય છે. (૩૨) આ પ્રકારે સૂત્રના ૩૨ દોષ છે.

चत्वारोऽप्यनुयोगा व्याख्यायन्ते॥४॥ ‘अस्तोभकम्, -स्तोभकाः-निरर्थकतया प्रयुक्ताः, चकार-वा-शब्दादयो निपाताः, तैर्वियुक्तम् ॥५॥ ‘अनवद्यं’-कामादिपापव्यापारा-प्ररूपकम् ॥६॥ एवंभूतं सूत्रं सर्वज्ञभाषितम् । इमे पद गुणाः पूर्वोक्तेष्वष्टसु गुणे-ष्वन्तर्भूताः सन्ति, तथाहि-अल्पाक्षरस्य विश्वतोमुखस्य च मिते समावेशः, अस-न्दिग्धानवधास्तोभानां च निर्दोषेऽन्तर्भावः ।

एवं सूत्रानुगमे समस्तदोषवर्जिते लक्षणयुक्ते सूत्रे उच्चारिते सति स्वसमयगत-जीवाद्यर्थप्रतिपादकस्य स्वसमयपदस्य ज्ञानं भवति तथा परसमयगत-प्रकृतीश्व-राद्यर्थप्रतिपादकस्य परसमयपदस्य ज्ञानं भवति । अनयोरेव मध्ये परसमयपदं जैसे “ धम्मोमंगलमुक्किट्ठं ” यह सूत्र है । इस सूत्र में चारों ही अनुयोग का व्याख्यान है ॥ ४ ॥ जिस सूत्र में चकार, वकार आदि निरर्थक शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाता है वह सूत्र “अस्तोभ” गुण वाला माना गया है ॥ ५ ॥ जिस सूत्र द्वारा कामादिक व्यापारों की प्ररूपणा नहीं की जाती है वह सूत्र “अनवद्य” गुण संपन्न है ॥६॥ सूत्र इसी प्रकार का होना चाहिये, इससे विपरीत नहीं, ऐसा प्रभु का आदेश है । ये छह गुण पूर्वोक्त अष्टगुणों में अन्तर्भूत समझना चाहिये । अल्पाक्षर एवं विश्वतोमुख, इन दो गुणों का अन्तर्भाव “मित” इस गुण में तथा असंदिग्ध, अनवद्य एवं अस्तोभ इन गुणों का अन्तर्भाव “निर्दोष” इस गुण में हुआ है ।

इस प्रकार समस्तदोषवर्जित, एवं लक्षणयुक्त सूत्र के उच्चारित होने पर जीवादिक अर्थ के प्रतिपादक स्वसमय-पद का ज्ञान तथा पर समयानुसार प्रकृति ईश्वर आदिक अर्थ के प्रतिपादक परसमय-पद का

लेभ-“ धम्मो मंगलमुक्किट्ठं ” આ સૂત્ર છે આમાં ચારે અનુયોગ ને વ્યાખ્યાન છે. ચકાર, વકાર આદિ વ્યાખ્યાન છે આદિ નિરર્થક શબ્દોનો પ્રયોગ નથી કરવામાં આવ્યો તે સૂત્ર અસ્તોભ ગુણવાળા મનાયેલ છે. (૫) જે સૂત્રદ્વારા કામાદિક વ્યાપારોની પ્રરૂપણા કરવામાં નથી આવતી તે સૂત્ર અનવદ્ય ગુણસંપન્ન છે. (૬) સૂત્ર આવા પ્રકારનું હોવું જોઈએ એનાથી વિપરીત નહીં એવો પ્રભુનો આદેશ છે. આ છ ગુણ પૂર્વોક્ત આઠ ગુણમાં અન્તર્ભૂત સમજવા જોઈએ. અલ્પાક્ષર તેમજ વિશ્વતોમુખ આ બે ગુણોનો અન્તર્ભાવ “ મિત ” આ ગુણમાં તથા અસંદિગ્ધ, અનવદ્ય અને અસ્તોભ ગુણોનો અન્તર્ભાવ “ નિર્દોષ ” આ ગુણમાં થયેલ છે.

આ પ્રકાર સમસ્ત દોષ વર્જિત, અને લક્ષણયુક્ત સૂત્રના ઉચ્ચારિત હોવાથી જીવાદિક અર્થના પ્રતિપાદક સ્વસમય પદનું જ્ઞાન તથા પર સમયાનુ-સાર પ્રકૃતિ, ઈશ્વર આદિક અર્થના પ્રતિપાદક પરસમયપદનું જ્ઞાન થાય છે.

કેચિત્તુ સૂત્રસ્ય પદ્ ગુણાન્ વદન્તિ । તદ્ યથા—

અપ્પલક્ષરમસંદિગ્ધં, સારવં વિસ્સમોમુદ્ધં ।

અત્યોભમણવજ્જં ચ, સુત્તં સવ્વણ્ણમાસિયં ॥ ૧ ॥

છાયા—અલ્પાક્ષરમસંદિગ્ધં, સારવદ્ વિશ્વતોમુખમ્ ।

અસ્તોભમનવદ્ધં ચ, સૂત્રં સર્વજ્ઞમાપિતમ્ ॥ ૧ ॥

વ્યાख्या—‘અલ્પાક્ષરમ્’ મિત્તાક્ષરં, યથા સામાયિકસૂત્રમ્ ॥ ૧ ॥

અસંદિગ્ધમ્—સૈન્ધવશબ્દવદ્ યલ્લવણ-વસન-તુરગાદ્યનેકાર્થસંશયકારિ ન ભવતિ, યથા—અહિંસા ॥૨॥ સારવત્ત્વં ચ પૂર્વવત્ ॥૩॥ ‘વિશ્વતોમુખં’ પ્રતિમૂત્રં ચરણાનુયોગાદ્યનુયોગચતુષ્ટયવ્યાખ્યાક્ષમમ્, યથા—‘ધમ્મોમંગલ મુક્કિટ્ઠં’ इत्यादि શ્લોકે

॥ ૬ ॥ વર્ણાદિક કા જિસમેં નિયત પરિમાણ હોતા હૈ વહ મિત ગુણ હૈ ॥ ૭ ॥ એવં કર્ણમનોહર જો હોતા હૈ વહ મધુર ગુણ સંયુક્ત સૂત્ર માના જાતા હૈ ॥ ૮ ॥ કિન્હીં ૨ કે મતાનુસાર સૂત્ર કે ૬ ગુણ મી માને ગયે હૈ—વે યે હૈ—

અલ્પાક્ષર ૧, અસંદિગ્ધ ૨, સારયુક્ત ૩, વિશ્વતોમુખ ૪, અસ્તોભ ૫, અનવદ્ધ ૬ । इनमें मित अक्षर जिसमें हो वह अल्पाक्षर गुण है, यह “अल्पाक्षर” प्रथम गुण है । जैसे सामायिक सूत्र ॥ १ ॥ सैन्धव शब्द की तरह जो लवण, वसन, तुरग आदि अनेक अर्थों के बोध का संशय-जनक नहीं हो वह “असंदिग्ध” गुण है । जैसे अहिंसा शब्द ॥ २ ॥ भूमि शब्द के समान अनेक पर्यायों से युक्त जो सूत्र वह “सारवत्” तीसरा गुण वाला है ॥ ३ ॥ प्रत्येक सूत्र चरणानुयोगादिक अनुयोग-चतुष्टय से युक्त है वह “विश्वतोमुख” गुणवाला सूत्र माना जाता है ।

વર્ણાદિકતુ' જેમાં નિયત પરિમાણ હોય છે તે મિતગુણ છે. (૭) જે કર્ણ મનોહર હોય છે તે મધુરગુણ સંયુક્ત સૂત્ર માનવામાં આવે છે. (૮) કોઈ કોઈના મત અનુસાર સૂત્રના છ ગુણ પણ માનવામાં આવ્યા છે તે પ્રમાણ છે—

અલ્પાક્ષર ૧ અસંદિગ્ધ ૨ સારયુક્ત ૩

વિશ્વતોમુખ ૪ અસ્તોભ ૫ અનવદ્ધ ૬

આમાં મિત અક્ષર જેમાં હોય તે અલ્પાક્ષર ગુણ છે, આ “અલ્પાક્ષર” પ્રથમ ગુણ છે, જેમ સામાયિક સૂત્ર (૧) સૈન્ધવ શબ્દની માફક લવણ, વસન, તુરગ આદિ અनेक अर्थोंના બોધ જેમાં સંશયજનક ન હોય તે “અસંદિગ્ધ” ગુણ છે. જેમ અહિંસા શબ્દ (૨) ભૂમિ શબ્દની માફક અनेक पर्यायोंથી युक्त જે સૂત્ર હોય તે “સારવત્” ત્રીજા ગુણવાળા છે. (૩) પ્રત્યેક સૂત્ર ચરણાનુયોગાદિક અનુયોગ ચતુષ્ટયથી યુક્ત છે તે “વિશ્વતોમુખ” ગુણવાળા સૂત્ર માનવામાં આવે છે.

“સુયનાળે દુવિહે પળ્ણત્તે, તં જહા-અંગપવિટ્ઠે ચેવ, અંગવાહિરે ચેવ” ।  
સ્થા૦ ૨ ઠા૦ ૧

અઙ્ગપ્રવિષ્ઠં દ્વાદશભેદમ્-આચારાદિભેદાત્, તત્ર દષ્ટિવાદવર્જં સર્વં કાલિકમ્, દષ્ટિવાદસૂત્રં તૂત્કાલિકમ્ । તત્ર યદ્ દિવસસ્ય પ્રથમપશ્ચિમપૌરુષીદ્વયે રાત્રેશ્ચ પ્રથમપશ્ચિમપૌરુષીદ્વય એવ પઠ્યતે, તત્ કાલિકમ્ । યત્તુ કાલવેલાવર્જં પઠ્યતે તદુત્કાલિકમ્ । અઙ્ગવાહ્યં દ્વિવિધમ્, આવશ્યકં, તદ્ વ્યતિરિક્તં ચ । તત્રાવશ્યક મુત્કાલિકં, તત્ત્વ-પદ્ધતિવિધમ્-સામાયિકં ૧, ચતુર્વિંશતિસ્તવઃ ૨, વન્દનકં ૩, પ્રતિક્રમણં ૪, કાયોત્સર્ગઃ ૫, પ્રત્યાખ્યાનં ૬ ચ ।

અવ સૂત્ર ભેદનામ કે પાંચવા દ્વાર કહતે હૈં—

યહ કહા હી જા ચુકા હૈં કિ સૂત્ર કા દૂસરા નામ શ્રુતજ્ઞાન ભી હૈં, અતઃ યહ મૂલભેદ કી અપેક્ષા સે દો ભેદવાલા હૈં—૧ અઙ્ગપ્રવિષ્ઠ ૨ અંગવાહ્ય । કહા ભી હૈં—“સુયનાળે દુવિહે પળ્ણત્તે તં જહા-અંગપવિટ્ઠે ચેવ અંગવાહિરે ચેવ” ઇનમેં અંગપ્રવિષ્ઠ શ્રુતજ્ઞાન કે ૧૨ ભેદ હૈં—આચારાંગ સે લેકર દષ્ટિવાદ તક । ઇનમેં દષ્ટિવાદ કો છોડકર વાકી સવ કાલિક હૈં । દષ્ટિવાદ ઉત્કાલિક હૈં । જો સૂત્ર દિવસ કે પ્રથમ પશ્ચિમ પૌરુષીદ્વય મેં તથા રાત્રિ કે પ્રથમ પશ્ચિમ પૌરુષીદ્વય મેં હી પઢા જાતા હૈં વહ સૂત્ર કાલિક જાનના ચાહિયે । જો સૂત્ર અકાલ કે સમય કો છોડ કર પઢા જાતા હૈં વહ ઉત્કાલિક હૈં । અંગવાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન ભી આવશ્યક એવં તદ્વ્યતિરિક્ત કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈં । ઇનમેં આવશ્યક સૂત્ર ઉત્કાલિક હૈં, ઓર વહ ૬ પ્રકાર કા હૈં જૈસે—સામાયિક ૧, ચતુર્વિંશતિસ્તવ ૨, વન્દનક ૩, પ્રતિક્રમણ ૪, કાયોત્સર્ગ ૫, એવં પ્રત્યાખ્યાન ૬ । કાલિક, ઉત્કાલિક કે ભેદ

હેવે સૂત્રભેદ નામનુ પાંચમું દ્વાર કહે છે:—

એ કહેવાઈ ગયું છે કે, સૂત્રનું બીજું નામ શ્રુતજ્ઞાન પણ છે. આથી તે મૂળ ભેદની અપેક્ષાએ બે ભેદવાળું છે અંગ પ્રવિષ્ઠ ને ૧ અંગબાહ્ય ૨. કહ્યું પણ છે કે સુયનાળે દુવિહે પળ્ણત્તે તં જહા-અંગપવિટ્ઠે ચેવ અંગવાહિરે ચેવ તેમાં અંગ પ્રવિષ્ઠ શ્રુતજ્ઞાનના ૧૨ ભેદ છે. આચારાંગથી લઈને દષ્ટિવાદ સુધી. એમાં દષ્ટિવાદને છોડીને બાકી બધા કાલીક છે. દષ્ટિવાદ ઉત્કાલિક છે, જે સૂત્ર દિવસના પ્રથમ અને પશ્ચિમ બે પૌરુષીમાં તથા રાત્રીના પ્રથમ અને પશ્ચિમ બે પૌરુષીમાંજ વાંચી શકાય છે, તે સૂત્રને કાલીક બોલવાં જોઈએ. જે સૂત્રને અકાલના સમયને છોડી વાંચી શકાય છે તે ઉત્કાલિક છે. અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન પણ આવશ્યક અને તદ્વ્યતિરિક્તના ભેદથી બે પ્રકારે છે. એમાં આવશ્યક સૂત્ર ઉત્કાલિક છે, અને તે છ પ્રકારનું છે, જેમ સામાયિક ૧, ચતુર્વિંશતિસ્તવ ૨, વંદનક ૩, પ્રતિક્રમણ ૪,

કુવાસનાજનકત્વાં વન્ધપદમ્, સ્વસમયપદં તુ-સદ્બોધકારણત્વાન્મોક્ષપદ-  
મિતિં વોધ્યમ્ ।

इति तृतीयं द्वारम् ।

अथ सूत्रपर्यायनामकं चतुर्थं द्वारम् :—

सुयसुत्तगंधसिद्धं-त, सासणे आण वयण उवएसो ।

पणवणा मा गमइय, एगढा पज्जवा सुत्ते ॥ १ ॥

શ્રુતમ્, સૂત્રમ્, ગ્રન્થઃ, સિદ્ધાન્તઃ, શાસનમ્, આજ્ઞા, વચનમ્, ઉપદેશઃ,  
પ્રજ્ઞાપના, આગમઃ, इति दश पर्यायाः एकार्थाः ।

॥ इति चतुर्थं द्वारम् ॥

अथ सूत्र भेद नामकं पञ्चमं द्वारम्—

સૂત્રં નામ શ્રુતજ્ઞાનમિત્યુક્તમ્, તત્ સ્વલ્પ મૂલભેદાપેક્ષયા દ્વિભેદમ્, અક્ષપ્રવિ-  
ષ્ટમ્, અક્ષવાહં ચ । તથા ચોક્તમ્—

જ્ઞાન હોતા હૈ । કુવાસના કા જનક હોને સે પરસમયપદ વન્ધપદ હૈ  
એવં સદ્બોધ કા કારણ હોને સે સ્વસમય-પદ મોક્ષપદ હૈ ॥

॥ इस प्रकार तीसरा द्वार सम्पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥

अब चौथा द्वार कहते हैं—

શ્રુત, સૂત્ર, ગ્રન્થ, સિદ્ધાન્ત, શાસન, આજ્ઞા, વચન, ઉપદેશ, પ્રજ્ઞાપના  
આગમ, એ સર્વ સૂત્ર કે પર્યાયવાચી શબ્દ-નામાન્તર હૈ—

કહા મી હૈ—“ સુયસુત્તગંથસિદ્ધંત સાસણે આણ વયણ ઉવેસો ।

પણવણા-માગમ ઇય, એગઢા પજ્જવા સુત્તે ॥ ૧ ॥

॥ चौथा द्वार संपूर्ण ॥ ४ ॥

કુવાસનાના જનક હોવાથી પરસમયપદ બન્ધ પદ છે અને સદ્બોધના કારણ-  
રૂપ હોવાથી સ્વસમયપદ મોક્ષપદ છે.

આ પ્રકારથી ત્રીજું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું.

હવે સૂત્રભેદ નામનું ચોથું દ્વાર કહે છે:—

શ્રુત, સૂત્ર, ગ્રન્થ, સિદ્ધાન્ત, શાસન, આજ્ઞા, વચન, ઉપદેશ, પ્રજ્ઞાપના,  
આગમ, આ બધા સૂત્રના પર્યાયવાચી શબ્દ-નામાન્તર છે, કહ્યું પણ છે—

સુયસુત્તગંથસિદ્ધંત, સાસણે આણ વયણ ઉવેસો ।

પણવણા-માગમ ઇય એગઢા પજ્જવા સુત્તે ॥ ૧ ॥

॥ ચોથું દ્વાર સંપૂર્ણ ॥



કિંચિદર્થવિશેષં જાનાતિ, યદા તુ ગુરુનાડર્થેન સહ સૂત્રં પ્રવોધિતં ભવતિ, તદા શિષ્યસ્તદન્તર્ગતાનાં સર્વેષાં ભાવાનાં જ્ઞાતા ભવતિ, યથા સ એવ કલાડમિત્તઃ પુરુષઃ પ્રવોધિતઃ સન્ સર્વાસાં કલાનાં જ્ઞાતા ભવતિ, અતઃ સૂત્રં ગુરુસંનિધાનં વિના પ્રસુત્ત-સમં ભવતિ, તસ્માદ્ સૂત્રં ગુરુસંનિધૌ શ્રુત્વા પઠનીયમ્ ।

કિંચ-ગુરુસંનિધાનાભાવે સૂત્રોચ્ચારણં સ્વલિતાદિદોષદુષ્ટં સ્યાત્ । તથા સત્તિ પ્રાયશ્ચિત્તમ્, અજ્ઞાનં, મિથ્યાત્વં, આત્મવિરાધના, સંયમવિરાધનાદયો દોષા ભવન્તિ તસ્માદ્ ગુરુસંનિધૌ સૂત્રમુચ્ચારણીયમ્ ।

સૂત્ર કા અર્થ યદિ જ્ઞાત ન હો તો પઢને વાલા વ્યક્તિ ઉસકે મહત્ત્વ કો નહીં જાન સકતા હૈ । જિસ સમય શિષ્ય ગુરુ મહારાજ કે પાસ અર્થ-સહિત સૂત્ર કા અધ્યયન કરતા હૈ, અથવા ગુરુ મહારાજ શિષ્ય કો અર્થ-સહિત સૂત્ર પઢા દેતે હૈં ઉસ સમય શિષ્ય ઉસકે અન્તર્ગત સમસ્ત ભાવોં કા જ્ઞાતા હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર ૭૨ કલા કે જાનને વાલા પુરુષ જગને પર સમસ્ત કલાઓં કા જ્ઞાતા હોતા હૈ । ઇસલિયે સૂત્ર ગુરુ મહારાજ કે સમીપ સુનકર હી પઢના ચાહિયે, ક્યોંં કિં વિના ગુરુ મહારાજ કે પઠિત સૂત્ર કલાનિપુણ સોયા હુઆ પુરુષ જૈસા માના જાતા હૈ, પઢને વાલે કો ઉસસે અર્થવિશેષ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી હૈ ।

કિંચ-ગુરુમુખસે યદિ સૂત્ર કા અધ્યયન ન કિયા જાય તો સૂત્ર કે યથાવત્ ઉચ્ચારણ કરને મેં સ્વલના આદિ દોષોં કા સદ્ભાવ હો સકતા હૈ । ઇસસે અધ્યયન કરને વાલોં કો લાભ કે સ્થાન મેં પ્રાયશ્ચિત્ત કા ભાગી હોના પડતા હૈ । અજ્ઞાન, મિથ્યાત્વ, આત્મવિરાધના એવં સંયમ કી વિરાધના આદિ દોષોં કા ભાજન ભી વનના પડતા હૈ । ઇસલિયે ગુરુ મહારાજ કે

વ્યક્તિ તેના મહત્ત્વને જાણી શકતા નથી. જે સમયે શિષ્ય ગુરુમહારાજની પાસે અર્થ સહિત સૂત્રનું અધ્યયન કરે છે અથવા ગુરુ મહારાજ શિષ્યને અર્થ સહિત સૂત્ર લખાવી દે છે, તે સમયે શિષ્ય તેના અંતર્ગત સમસ્ત ભાવોનો જ્ઞાતા બની જાય છે. જે પ્રકારે ૭૨ કલાને જાણવાવાળા પુરુષ જગવાથી સમસ્ત કલાઓના જ્ઞાતા બને છે. આ માટે સૂત્ર ગુરુમહારાજની સમીપ સાંભળીને લખવું જોઈએ. કેમ કે ગુરુમહારાજ વગર લખવામાં આવેલ સૂત્ર કલા નિપૂર્ણ સુતેલા પુરૂષ જેવું માનવામાં આવે છે. લખવાવાળાને એનાથી અર્થ વિશેષની પ્રાપ્તિ થતી નથી.

કિંચ દ્વિતી-ગુરુ મુખથી સૂત્રનું અધ્યયન કરાવ્ય ન કરવામાં આવે તો, સૂત્રનું યથાવત્ ઉચ્ચારણ કરવામાં સ્વલના આદિ દોષોનો સદ્ભાવ બને છે. એથી અધ્યયન કરવાવાળાએ લાભના સ્થાનમાં પ્રાયશ્ચિત્તના ભાગી બનવું પડે છે, અજ્ઞાન, મિથ્યાત્વ, આત્મવિરાધના અને સંયમની વિરાધના આદિ દોષોના ભાજન

આવશ્યકવ્યતિરિક્તં દ્વિવિધમ્—કાલિકમ્, ઉત્કાલિકં ચ । તત્ર—જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞસિ-  
ચન્દ્રપ્રજ્ઞસિર્નિરયાવલિકાદીનિ ચ પञ્ચ સૂત્રાણીતિ સપ્તોપાદ્ધાનિ, વ્યવહારાદીનિ ચત્વારિ  
છેદસૂત્રાણિ, મૂલસૂત્રેષુ—ઉત્તરાધ્યયનં, સમુત્થાનસૂત્રં ચ । એતત્ સર્વં કાલિકમ્ ।  
ઉત્કાલિકં તુ દશવૈકાલિકસૂત્રં નન્દીસૂત્રમ્, અનુયોગદ્વારસૂત્રં ચ—એતત્ત્રયં મૂલસૂત્રમ્,  
ઔપપાતિકં રાજપ્રશ્નીયં જીવાભિગમઃ પ્રજ્ઞાપના સૂર્યપ્રજ્ઞસિરિતિ પञ્ચોપાદ્ધાનિ ચ ।

॥ इति पञ्चमद्वारम् ॥

अथ सूत्रोच्चारणविधिनामकं षष्ठं द्वारम्—

સુવિનીતેન શિષ્યેણ સૂત્રં ગુરુસંનિધૌ ગ્રહીતવ્યમ્ । યથા—દ્વાસપ્તતિકલાપણ્ડિતો  
મનુષ્યઃ પ્રસુપ્તઃ સન્ તાસાં કલાનાં ન કિંચિત્ જાનાતિ, એવમર્થેનાવોધિતે સૂત્રે ન  
સે તદ્વ્યતિરિક્ત દો પ્રકાર કા હૈ । જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞસિ, ચન્દ્રપ્રજ્ઞસિ ઓર નિર-  
યાવલિકા આદિ પાંચ સૂત્ર—યે સાતોં ઉપાંગ, વ્યવહાર આદિક ચાર છેદ  
સૂત્ર, મૂલસૂત્રોં મેં ઉત્તરાધ્યયન, ઓર સમુત્થાનસૂત્ર, યે સર્વ કાલિક હૈ ।  
દશવૈકાલિક, નન્દીસૂત્ર ઓર અનુયોગદ્વાર યે ત્રીનોં મૂલસૂત્ર, તથા—  
ઔપપાતિક, રાજપ્રશ્નીય, જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના ઓર સૂર્યપ્રજ્ઞસિ યે  
પાંચોં ઉપાંગ ઉત્કાલિક હૈ ।

॥ पांचवा द्वार संपूर्ण ॥

अब छोटे द्वार में सूत्र के उच्चारण की विधि कहते हैं—

સુવિનીત શિષ્ય કો સૂત્ર કા અધ્યયન ગુરુ મહારાજ કે સમીપ  
કરના ચાહિયે । જિસ પ્રકાર ૭૨ કલાઓં કા જ્ઞાતા મનુષ્ય પ્રસુપ્ત  
અવસ્થા મેં ઉન કલાઓં કે અર્થવિશેષ કો નહી જાનતા હૈ, ઉસી પ્રકાર

કાયોત્સર્ગ ૫, અને પ્રત્યાખ્યાન ૬. કાલિક, ઉત્કાલિકના લેદથી તદ્વ્યતિરિક્ત બે  
પ્રકારે છે. જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞસિ, ચન્દ્રપ્રજ્ઞસિ અને નિરયાવલિકા આદિ પાંચ તથા  
વ્યવહારઆદિક ચાર સૂત્ર—એ સાતે ઉપાંગ, વ્યવહાર આદિક ચાર છેદ સૂત્ર,  
મૂળસૂત્રોમાં ઉત્તરાધ્યયન અને સમુત્થાન સૂત્ર એ બધાં કાલિક છે. દશવૈકાલિક,  
નન્દિસૂત્ર અને અનુયોગદ્વાર આ ત્રણે મૂળસૂત્ર તથા—ઔપપાતિક, રાજપ્રશ્નીય,  
જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના અને સૂર્યપ્રજ્ઞસિ આ પાંચે ઉપાંગ ઉત્કાલિક છે.

॥ पांचमुं द्वार संपूर्ण ॥

હવે છઠા દ્વારમાં સૂત્રના ઉચ્ચારણની વિધિ કહે છે—

સુવિનીત શિષ્યે સૂત્રનું અધ્યયન ગુરુ મહારાજની સમીપ કરવું જોઈએ,  
જે પ્રકાર ૭૨ કલાઓનો જ્ઞાતા મનુષ્ય પ્રસુપ્ત અવસ્થામાં એ કલાઓના અર્થ  
વિશેષને નથી જાણતો એ જ રીતે સૂત્રનો અર્થ જો જાણેલ ન હોય તો પાંચનાર

અત્ર ન જ્ઞાયતે સકલસાધારણશ્રોતૃભિઃ, યદિદં કાલિકમુત્કાલિકં વા । યથા વા-સામાયિકપદે દશવૈકાલિકોત્તરાધ્યયનમ્ભૃતીનામનેકાનિ પદાનિ મીલયતિ ।

૩ વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્—વ્યાવિદ્ધાક્ષરં, વિપર્યસ્તરત્નમાલાગતરત્નાનીવ વિદ્ધાનિ વિપર્યસ્તાન્યક્ષરાણિ યત્ર તત્ । યથા—‘ધમ્મો મંગલ’ इत्यत्र ‘लंगमंमोध’ इत्युच्चारणम् ।

૪ હીનાક્ષરમ્—અક્ષરૈર્હીનમ્ । યથા—‘નમો અરિહંતાણં’ इत्यत्र ‘नमो अरिहंता’ इत्युच्चारणम् ।

૫ અધિકાક્ષરં—સ્વબુદ્ધ્યાઽધિકાક્ષરયોજનં યત્ર તત્ । યથા—‘ધમ્મો મંગલ મુક્ષિટ્ઠં’ अत्र—‘धम्मो मंगलमुक्खिट्ठं नरगं’ इत्युच्चारणम् । હીનાક્ષરે અધિકાક્ષરે વા

સર્વસાધારણ શ્રોતાજન યહ નહીં સમજ સકતે કિ યહ કાલિક હૈ અથવા ઉત્કાલિક હૈ । અથવા—જો ઉચ્ચારણ સામાયિક પદ મેં દશવૈકાલિક ઉત્તરાધ્યયન આદિકે અનેક પદોં કો મિલા દેતા હૈ વહાં પર મી યહ દોષ હોતા હૈ ॥ ૨ ॥ વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્—જિસ ઉચ્ચારણ મેં ઉલ્ટે ઉલ્ટે કર અક્ષર વોલે જાવેં વહાં વ્યાવિદ્ધાક્ષર નામકા દોષ હોતા હૈ—જૈસે—ધમ્મો મંગલં એસા ન વોલકર “લંગમંમોધ” એસા ઉચ્ચારણ કરના ॥૩॥ હીનાક્ષરમ્—જૈસા સૂત્ર હો વૈસા ઉચ્ચારણ ન કરના—હીનાક્ષર દોષ હૈ । જૈસે—“નમો અરિહંતાણં” કી જગહ “નમો અરિહંતા” એસા વોલના ॥૪॥ અધિકાક્ષર—જિસ ઉચ્ચારણ મેં અધિક અક્ષર ઉચ્ચરિત હોં વહાં અધિકાક્ષર નામકા દોષ જાનના ચાહિયે, જૈસે—ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં ” વોલતે સમય ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં નરગં ” એસા અધિક “નરગં ” અક્ષર કા ઉચ્ચારણ કરના । હીનાક્ષર એવં અધિકાક્ષર, યે દોનોં દોષ ઉચ્ચારણ કે

સર્વ સાધારણ શ્રોતાજન એ નથી સમજી શકતા કે, આ કાલિક છે કે ઉત્કાલિક છે. જે ઉચ્ચારણ સામાયિક પદમાં દસ વૈકાલિક ઉત્તરાધ્યયન આદિના અનેક પદોને મેળવી દે છે ત્યાં પણ આ દોષ થાય છે. (૨)

(૨) વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્—જે ઉચ્ચારણમાં ઉલટાવી ઉલટાવીને અક્ષર બોલવામાં આવે ત્યાં ‘વ્યાવિદ્ધાક્ષર’ નામનો દોષ બને છે. જેમ ધમ્મોમંગલં એવું ન બોલીને લંગમંમોધ એવું ઉચ્ચારણ કરવું.

(૩) હીનાક્ષરમ્—જેવાં સૂત્ર હોય તે પ્રમાણે ઉચ્ચારણ ન કરવું. અર્થાત્ ઓછા અક્ષરોથી ઉચ્ચારણ કરવું—‘હીનાક્ષર’ દોષ છે, જેમ—“નમો અરિહંતાણં” ની જગ્યાએ “નમો અરિહંતા” એવું બોલવું.

(૪) અધિકાક્ષર—જે ઉચ્ચારણમાં વધુ અક્ષર ઉચ્ચારવામાં આવે ત્યાં અધિકાક્ષર નામનો દોષ બાળવો જોઈએ. જેમ “ધમ્મો મંગલ મુક્ષિટ્ઠં” બોલતી વખતે “ધમ્મો મંગલ મુક્ષિટ્ઠં નરગં” એમ “નરગં” આ વધારાના અક્ષરનું ઉચ્ચારણ કરવું. હીનાક્ષર અને અધિકાક્ષર આ બંને દોષ ઉચ્ચારણમાં

અથોચ્ચારણદોષાઃ સ્વલિતાદયો દશ પ્રોચ્યન્તે—સ્વલિતમ્ ૧, મિલિતમ્ ૨, વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્ ૩, હીનાક્ષરમ્ ૪, અધિકાક્ષરમ્ ૫, વ્યત્યામેઙિતમ્ ૬, અપરિપૂર્ણમ્ ૭, અપરિપૂર્ણઘોષમ્ ૮, અકણ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્તમ્ ૯, અગુરુવાચનોપગતમ્ ૧૦, इति । तत्र—

૧ સ્વલિતમ્—યદ્ અન્તરાઽન્તરા આલાપકાન્ મુચ્ચતિ, યથા—“ અર્હિસા ” “ દેવા વિ તં નમંસંતિ ” ।

૨ મિલિતમ્—યદ્ અન્યસ્યાન્યસ્યોદ્દેશકસ્યાધ્યયનસ્ય વા આલાપકાન્ એકત્ર મીલયતિ ‘ સર્વ જિનવચનમ્ ’ इति कृत्वा, યથા—“ સર્વે પાણા પિયાડયા ” ( સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુષ્કાઃ ) ( આચા. ૧ શ્રુ. ૨ અ. ૩ ઉ. ) “ સર્વે જીવા વિ ઇચ્છંતિ જીવિઠં ન મરિજ્જિઠં ” (સર્વે જીવા અપિ ઇચ્છન્તિ જીવિતું ન મર્તુમ્) દશ. વૈ. ૬ અ. ।

સમીપ હી સૂત્ર કા અધ્યયન યા ઉસકા ઉચ્ચારણ કરના સીખના ચાહિયે । ઉચ્ચારણ કે કિતને દોષ હૈં યહ અવ પ્રકટ કિયા જાતા હૈ—સ્વલિત ૧, મિલિત ૨, વ્યાવિદ્ધાક્ષર ૩, હીનાક્ષર ૪, અધિકાક્ષર ૫, વ્યત્યામેઙિત ૬, અપરિપૂર્ણ ૭, અપરિપૂર્ણઘોષ ૮, અકણ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્ત ૯, એવં અગુરુવાચનોપગત ૧૦, યે ૧૦ દોષ ઉચ્ચારણ સંબંધી હૈં । સ્વલિત—વીચ ૨ મેં રુક ૨ કર સૂત્ર કા બોલના યહ સ્વલિત દોષ હૈ, જૈસે—અર્હિ સા, દેવા વિ તં નમંસંતિ ઇત્યાદિ ॥૧॥ મિલિત—જહાં અન્ય ૨ ઉદ્દેશક અથવા અધ્યયન કે આલાપકોં કો એકત્ર મિલા દિયા જાતા હૈ વહાં મિલિત દોષ હોતા હૈ, જૈસે—“ સર્વ જિનવચનં ” એસા રુયાલકર “ સર્વે પાણા પિયાડયા ” “ સર્વે જીવા વિ ઇચ્છંતિ જીવિઠં ન મરિજ્જિઠં ” इन सब को एक साथ ही बोल देना । इन सब के एक साथ बोलने में मिलित दोष इसलिये आता है कि

પણ બનવું પડે છે. માટે શુરુ મહારાજ સમીપજ સૂત્રનું અધ્યયન અગર તેનું ઉચ્ચારણ કરવું—સીખવું જોઈએ ઉચ્ચારના કેટલા દોષ છે તે હવે પ્રગટ કરવામાં આવે છે. (૧) સ્વલિત, (૨) મિલિત, (૩) વ્યાવિદ્ધાક્ષર, (૪) હીનાક્ષર, (૫) અધિકાક્ષર, (૬) વ્યત્યામેઙિત, (૭) અપરિપૂર્ણ, (૮) અપરિપૂર્ણઘોષ, (૯) અકંઠોષ્ટવિપ્રમુક્ત, અને (૧૦) અગુરુવાચનોપગત આ દસ દોષો ઉચ્ચારણ સંબંધી છે.

સ્વલિત—વચમાં વચમાં રોકાઈને સૂત્રનું બોલવું તે સ્વલિત દોષ છે. જેમ—અર્હિસા દેવા વિ તં નમંસંતિ ઇત્યાદિ ! (૧) મિલિત—જ્યાં અન્ય અન્ય ઉદ્દેશક અથવા અધ્યયનના આલાપોને એકત્ર મેળવી અપાય છે ત્યાં મિલિત દોષ થાય છે જેમ “ સર્વ જિનવચનં ” એવો ખ્યાલ કરી “ સર્વે પાણા પિયાડયા સર્વે જીવા વિ ઇચ્છંતિ જીવિઠં ન મરિજ્જિઠં ” આ બધાને એક સાથે જ બોલવું. આ બધાને એક સાથે બોલવામાં મિલિત દોષ એ માટે આવે છે કે,



દ્રવ્યભાવતો વ્યત્યાગ્રેહિતં સૂત્રે કુર્વતોઽર્થસ્ય વિસંવાદઃ ઇત્યાદિ વિવક્ષા પ્રાગિત્ર, યયા દીક્ષા નિરર્થિકા ।

૭ અપરિપૂર્ણ-માત્રાભિઃ, પદૈશ્ચરણૈર્વિન્દુભિર્વર્ણૈશ્ચ । માત્રાભિરપરિપૂર્ણ 'ધમ્મ મંગલમુક્ષિદ્ધં' । પદૈરપરિપૂર્ણ-યથા-"ધમ્મં ઉક્ષિદ્ધં" । ચરણૈરપરિપૂર્ણ-યથા-'ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધં' ઇત્યાદિ ગાથાયાં કમપિ ચરણં પરિત્યજ્ય પઠનમ્ । વિન્દુ-ભિરપરિપૂર્ણ-યથા 'ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધં' ઇતિ । વર્ણૈરપરિપૂર્ણે યથા-'ધમ્મો લ ઉક્ષિદ્ધં' ઇત્યાદિ । માત્રાભિઃ પદૈશ્ચરણૈર્વિન્દુભિર્વર્ણૈરપરિપૂર્ણે ઉચ્ચારિતે તદેવ પ્રાયશ્ચિત્તં ત એવ દોષાશ્ચ ભવન્તિ ।

મેં વ્યત્યાગ્રેહિત કર દેતા હૈ તવ ઉસકે અર્થ મેં સ્વભાવતઃ વિસંવાદ હોને લગતા હૈ ઓર ઇસસે જો હાનિ હોતી હૈ યહ અધિકાક્ષર તથા હીનાક્ષર કે દોષ કે સ્વરૂપનિરૂપણ મેં ચતા ચુકે હૈ ॥ ૬ ॥ અપરિપૂર્ણ-જહાં માત્રાઓં સે, પદોં સે, ચરણોં સે, વિન્દુઓં સે, વર્ણોં સે અપરિપૂર્ણતા હોતી હૈ વહાં અપરિપૂર્ણ દોષ માના જાતા હૈ, જૈસે "ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધં" કી જગહ "ધમ્મમંગલમુક્ષિદ્ધં" ઇસ પ્રકાર "ઓકાર" કી માત્રા હીન કર પઢના । "ધમ્મં ઉક્ષિદ્ધં" એસા મંગલપદ હીન કર પઢના । કિસી ચરણ કો-પાદ કો-હીન કર પઢના, કિસી વિન્દુ કો હીન કર પઢના, કિસી વર્ણ કો હીન કર પઢના સો ક્રમશઃ માત્રા આદિકોં સે અપરિપૂર્ણ દોષ માના ગયા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે ઉચ્ચારણ કરને પર એકતો આગમ કી આશાતના હોને સે પ્રાયશ્ચિત્ત કા ભાગી હોના પડતા હૈ દૂસરે વિસંવાદાદિ અનેક અનર્થ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । ઇસસે જીવ કો મુક્તિ કા લાભ નહીં હો સકતા હૈ । તથા દીક્ષા મેં નિરર્થકતા કી પ્રસક્તિ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ॥ ૭ ॥

વિસંવાદ યથા લાગે છે અને એથી જે હાની થાય છે તે અધિકાક્ષર તથા હિનાક્ષરના દોષના નિરૂપણમાં બતાવવામાં આવેલ છે.

(૬) અપરિપૂર્ણ ત્યાં માત્રાઓથી પદોથી, ચરણોથી, વિન્દુઓથી, વર્ણોથી, અપરિપૂર્ણતા હોય છે ત્યાં 'અપરિપૂર્ણ' દોષ માનવામાં આવે છે. "ધમ્મો મંગલ મુક્ષિદ્ધં" ની જગ્યાએ ધમ્મમંગલમુક્ષિદ્ધં આ રીતે, ઓકાર"ની માત્રા હીન કરી વાંચવું, "ધમ્મં ઉક્ષિદ્ધં" એમ મંગલ પદ હીન કરી વાંચવું, કોઈ વર્ણને હીન કરી વાંચવું તે ક્રમશઃ માત્રા આદિથી અપરિપૂર્ણ દોષ માનવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારનું ઉચ્ચારણ કરવાથી એક તો આગમની આશાતના થવાથી પ્રાયશ્ચિત્તના લાગી થવું પડે છે બીજું વિસંવાદાદિ ઘણા અનર્થ ઉત્પન્ન થાય છે, આથી જીવને મુક્તિનો લાભ મળી શકતો નથી. આથી દીક્ષામાં નિરર્થકતાની પ્રસક્તિનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે.



ઉચ્ચારિતે સતિ-અર્થસ્ય વિસંવાદઃ, અર્થસ્ય વિસંવાદે ચરણસ્ય વિસંવાદઃ, ચરણ-વિસંવાદાન્ન મોક્ષઃ, મોક્ષાભાવે સર્વા દીક્ષા નિરર્થિકા ।

૬ વ્યત્યાગ્રેડિતં—નામ અન્યાન્યશાસ્ત્રપલ્લવવિમિશ્રણં, યથા—‘ સવ્વભૂયપ્પ-ભૂયસ્સ સમ્મં ભૂયાઈં પાસઓ । પિહિયાસવસ્સ દંતસ્સ, પાવકમ્મં ન વંધઈ ॥ ’  
અત્રેદમપિ-ઘટતે ઇતિ કૃત્વા સિપતિ—અન્યશાસ્ત્રવચનમ્—

શ્રૂયતાં ધર્મસર્વસ્વં, શ્રુત્વા ચૈવાવધાર્યતામ્ ।

આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ, પરેપાં ન સમાચરેત્ ॥

હસલિયે માને જાતે હૈં કિ સૂત્ર મેં હીનાક્ષર અથવા અધિકાક્ષર ઉચ્ચરિત હોને પર ઉસકે અર્થ મેં વિસંવાદ ( વિપરીતતા ) હોતા હૈં । અર્થ મેં વિસંવાદ જહાં હુઆ કિ ચરણ-આચાર-ચારિત્ર મેં ભી વિસંવાદ હોને લગતા હૈં । હસસે મોક્ષ કા લાભ નહીં હો સકતા । મોક્ષ કે અભાવ મેં સમસ્ત દીક્ષા નિરર્થક હો જાતી હૈં ॥ ૬ ॥ વ્યત્યાગ્રેડિત-મિશ્ર ૨ શાસ્ત્રોં કે પલ્લવ ( અંશ ) કા જિસ ઉચ્ચારણ મેં મિશ્રણ હોતા હૈં વહાં વ્યત્યાગ્રેડિત દોષ માના જાતા હૈં । જૈસે—“ સવ્વભૂયપ્પભૂયસ્સ સમ્મં ભૂયાઈં પાસઓ । પિહિયાસવસ્સ દંતસ્સ પાવકમ્મં ન વંધઈ ”—યહાં યહ ભી ઘટિત હોતા હૈં એસા સમજકર અન્ય શાસ્ત્ર કા વચન મિલાના, જૈસે—

“ શ્રૂયતાં ધર્મસર્વસ્વં, શ્રુત્વા ચૈવાવધાર્યતામ્ ॥

આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ, પરેપાં ન સમાચરેત્ ॥૧॥ ”

મહાભારતકે હસ વાક્ય કો મિશ્રિત કરના । યહ વ્યત્યાગ્રેડિત દોષ હસ લિયે માના ગયા હૈં કિ ઉચ્ચારણ કરને વાલા દ્રવ્ય એવં ભાવ સે જવ સૂત્ર

એ માટે માનવામાં આવેલ છે કે સૂત્રમાં હીનાક્ષર અથવા અધિકાક્ષર ઉચ્ચારવાથી એના અર્થમાં વિસંવાદ થાય છે. વિપરીત અર્થમાં વિસંવાદ ન્યાં થયો કે, ચરણ-આચાર ચારિત્રમાં પણ વિસંવાદ થવા લાગે છે એથી મોક્ષનો લાભ થઈ શકતો નથી. મોક્ષના અભાવથી સમસ્ત દીક્ષા નિરર્થક થઈ જાય છે.

(૫) વ્યત્યાગ્રેડિત જુદા જુદા શાસ્ત્રોના પલ્લવનું જે ઉચ્ચારણમાં મિશ્રણ થાય છે ત્યાં “ વ્યત્યાગ્રેડિત ” દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ સવ્વભૂયપ્પભૂયસ્સ સમ્મં ભૂયાઈં પાસઓ ” “ પિહિયાસવસ્સ દંતસ્સ પાવકમ્મં ન વંધઈ ” અહિં એ પણ ઘટિત થાય છે એમ સમજી બીજા શાસ્ત્રનું વચન મેળવવું જેમ—

“ શ્રૂયતાં ધર્મસર્વસ્વં શ્રુત્વા ચૈવાવધાર્યતામ્ ॥

આત્મનઃ પ્રતિ કૂલાનિ પરેપાં ન સમાચરેત્ ॥૧॥

મહાભારતના આ વાક્યને મેળવવું, આ “ વ્યત્યાગ્રેડિત ” દોષ એ માટે માનવામાં આવેલ છે કે, ઉચ્ચારણ કરવાવાળા દ્રવ્ય અને ભાવથી જ્યારે સૂત્રમાં વ્યત્યાગ્રેડિત થવાથી એના અર્થમાં સ્વભાવતઃ

અથ વાચનાનામકં સપ્તમં દ્વારમ્—

અથ વાચનાવિધિરુચ્યતે—તત્રૈવં વાચનાશબ્દાર્થઃ—વાચયતીતિ વાચના—પાઠના, શિષ્યાય સૂત્રાદિદાનં । નનુ વાચનાયાઃ કિં ફલમ્ ? વાચનયા જીવો નિર્જરાં જનયતિ શ્રુતસ્ય ચાનાશાતનાયાં પ્રવર્તતે, તત્ર ચ પ્રવર્તમાનો જીવઃ શ્રુતપ્રદાનરૂપં તીર્થધર્મમવલમ્બતે, એવં તીર્થધર્મમાશ્રયન્ કૃત્સ્નકર્મક્ષપણેન મહાનિર્જરાવાન્ ભવતિ । તતો મુક્તિપ્રાપ્ત્યા તસ્ય સર્વથા ભવપર્યવસાનં ભવતિ । વાચનાદાનગ્રહણવિધિસ્ત્વેવમ્—

ઉવવિસદ્ ઉવજ્ઞાઓ, સીસા વિઅરંતિ વંદણં તસ્સ ।

સો તેસિં સન્નસમયં, વાયદ્ સામદ્યપ્પમુહં ॥ ૧ ॥

વાચના સે જો વિહીન હોતા હૈ, અર્થાત્—ગુરુપ્રદત્ત વાચના સે જો પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ વહ અગુરુવાચનોપગત દોષ હૈ ॥ ૧૦ ॥

॥ યહ છટ્ટા દ્વાર હુઆ ॥ ૬ ॥

સાતવાં વાચનાદ્વાર કહતે હૈ—

અથ વાચના કી વિધિ વતલાતે હૈ—શિષ્ય કો સૂત્રાદિક કા દેના-પઢાના યહ વાચના હૈ । સૂત્ર કી વાચના સે કર્મોં કી નિર્જરા હોતી હૈ તથા ઉસકી અનાશાતના મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ વાચના મેં લગા હુઆ જીવ શ્રુતપ્રદાનરૂપ તીર્થધર્મ કા આધાર હોતા હૈ । તીર્થધર્મ કા આધાર હોને સે વહ જીવ સમસ્ત કર્મોં કે ક્ષપણ સે મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ । મહાનિર્જરાવાલા હોને સે મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ દ્વારા ઉસકે સર્વથા ભવ કા ક્ષય હો જાતા હૈ । વાચના કે દેને કી એવં ઉસકે ગ્રહણ કરને કી વિધિ હસ પ્રકાર હૈ—

નાથી જે વિહિન હોય છે, અર્થાત્—ગુરુપ્રદત્ત વાચનાથી જે પ્રાપ્ત થયેલ નથી હોતું. તે અગુરુ વાચનોપગત દોષ છે. (૧૦)

આ છટ્ટું દ્વાર થયું

સાતમું વાચનાદ્વાર કહેવામાં આવે છે.—

હવે વાચનાની વિધિ બતાવવામાં આવે છે—શિષ્યને સૂત્રાદિક લખાવવા-સમજાવવાં એ વાચના છે. સૂત્રની વાચનાથી કર્મોની નિર્જરા થાય છે, તથા તેના અનાશાતનાની પ્રવૃત્તિ થાય છે. એ વાચનામાં લાગેલ જીવ શ્રુતપ્રદાનરૂપ તીર્થ ધર્મના આધાર બને છે, તીર્થ ધર્મના આધાર થવાથી તે જીવ સમસ્ત કર્મોના ક્ષપણથી મહાનિર્જરાવાળા થાય છે. મહાનિર્જરાવાળા થવાથી મુક્તિની પ્રાપ્તિ દ્વારા એને જીવન મરણના ફેરાનો ભય મટી જાય છે.

૮ અપરિપૂર્ણઘોષમ્—ઘોષૈરેવાપરિપૂર્ણં નાક્ષરાદિભિઃ, ઘોષા-ઉદાત્તાદયઃ । તત્ર-ઉચ્ચૈરુદાત્તઃ, નીચૈરનુદાત્તઃ, સમાઠારઃ સ્વરિતઃ । ઉચ્ચૈઃશબ્દેન યથા—“ઉપ્પન્નેહ વા વિગમેહ વા, ધુવેહ વા ” ઇત્યાદિ । નીચૈઃશબ્દેન યથા—“જે મિક્ષૂ વા મિક્ષુણી વા ” ઇત્યાદિ । અત્ર ઘોષૈરયુક્તમુચ્ચારણં કુર્વતસ્તદેવ પ્રાયશ્ચિત્તં ત એવ ચ દોષાઃ ।

૯ અકણ્ઠૌષ્ઠવિપ્રમુક્તમ્—કણ્ઠૌષ્ઠેન વિપ્રમુક્તં-વ્યક્તં-સુસ્પષ્ટં યન્ન ભવતિ, બાલમૂકભાષિતત્રદવ્યક્તમિત્યર્થઃ ।

૧૦ અગુરુવાચનોપગતમ્, ગુરુપ્રદત્તયા વાચનયા યન્ન પ્રાપ્તં તત્ ॥

॥ ઇતિ પઠંદ્વારમ્ ॥

અપરિપૂર્ણઘોષ-ઘોષોં સે અર્થાત્-ઉદાત્તાદિક સ્વરોં સે-જો અપરિપૂર્ણ હોતા હૈ વહાં અપરિપૂર્ણઘોષ નામ કા દોષ આતા હૈ । જો ઊંચે સ્વર સે બોલા જાય उसका नाम उदात्त, નીચે સ્વર સે જો બોલા જાય उसका नाम अनुदात्त, तथा जो न अधिक ऊँचे स्वर और न अधिक नीचे स्वर से किन्तु मध्यम स्वर से बोला जाय उसका नाम स्वरित है । जैसे—“उपपन्नेह वा, विगमेह वा, धुवेह वा,” इत्यादि ऊँचे स्वर से बोले जाते हैं । नीचे स्वर से जैसे—“जे भिक्षू वा भिक्षुणी वा ” इत्यादि सूत्र नीचे स्वर से बोला जाता है । इस को दोष इसलिये माना है कि घोषों से अयुक्त उच्चारण करने वाले को आगम की आशातनाजन्य दोष का भागी होने से प्रायश्चित्त का भागी होना पड़ता है ॥ ८ ॥ अकण्ठौष्ठविप्रमुक्त-बालमूकादिक के बोलने की तरह जो उच्चारण व्यक्त-स्पष्ट नहीं होता है वह अकण्ठौष्ठविप्रमुक्त दोष है ॥ ९ ॥ अगुरुवाचनोपगतदोष-गुरुप्रदत्त

(૭) અપરિપૂર્ણઘોષ—ઘોષોથી-અર્થાત્ ઉદાત્તાદિક સ્વરોથી-જે અપરિપૂર્ણ હોય છે, ત્યાં ‘અપરિપૂર્ણઘોષ’ નામનો દોષ લાગે છે, જે ઉંચા સ્વરથી બોલાય તેનું નામ ઉદાત્ત, નીચા સ્વરથી બોલાય એનું નામ અનુદાત્ત તથા જે ન તો ઘણા ઉંચા સ્વરથી કે ન તો ઘણા નીચા સ્વરથી પરંતુ મધ્યમ સ્વરથી બોલાય એનું નામ સ્વરિત છે. જેમ—“ઉપ્પન્નેહ વા, વિગમેહ વા, ધુવેહ વા,” ઇત્યાદિ ઉંચા સ્વરથી બોલાય છે. નીચા શબ્દથી જેમ—“જેમિક્ષૂ વા મિક્ષુણી વા ” ઇત્યાદિ સૂત્ર નીચા સ્વરથી બોલાય છે. આનો દોષ એ માટે માનવામાં આવેલ છે કે, ઘોષોથી અયુક્ત ઉચ્ચારણ કરવાવાળાએ આગમની આશાતના જન્ય દોષના ભાગી બનવાથી પ્રાયશ્ચિત્તના ભાગી બનવું પડે છે. (૮) અકણ્ઠૌષ્ઠ વિપ્રમુક્ત-બાલ મૂકાદિકના બોલવાની રીતે જે ઉચ્ચારણ સ્પષ્ટ વ્યક્ત થતું નથી તે અકણ્ઠૌષ્ઠ વિપ્રમુક્ત દોષ છે. (૯) અગુરુ વાચનોપગત દોષ-ગુરુ પ્રદત્ત વાચ-

નિદ્રારૂપે પ્રમાદે, અપ્રતિલેખને દુષ્પ્રતિલેખનાદૌ ચ સકૃત્ સ્વલિતસ્ય સ્મા-  
રણા કર્તવ્યા ભવતિ । યથા—“ ભો આયુષ્મન્ ! પ્રમાદો વર્જનીયઃ ” ઇતિ પૂર્વમેવા-  
સ્માભિઃ કથિતમ્, અતઃ પ્રમાદં મા કુરુ તપઃસંયમં ચ સમારાધય, ઇત્યેષા સ્મારણા ।

અથ પ્રતિસ્મારણા—

પુનઃ પુનઃ સામાચાર્યૌ પ્રમાદં કુર્વન્ શિષ્યઃ પુનર્ગુરુણા વોધનીયઃ—“ વત્સ ! મા  
પ્રમાદતામ્, તપઃસંયમારાધનં ક્રિયતામ્ ” । ઇત્યેષા પ્રતિસ્મારણા ।

ઇત્યમુક્તોઽપિ યદિ પ્રમાદ્યતિ, તદા દણ્ડના-લઘુપ્રાયથિત્તરૂપા કર્તવ્યા ।

પ્રતિલેખના નહીં કરે અથવા દુષ્પ્રતિલેખના આદિ કરતા હૈં ઉસ સમય  
ઉસે સ્મારણા વાચના દેની ચાહિયે, હસમેં ઉસે યહ સમજ્ઞાના ચાહિયે  
કિ હૈં આયુષ્મન્ ! તુમ્હેં યહ પહિલે વતલા દિયા ગયા હૈં કિ પ્રમાદ  
વર્જનીય હૈં । હસલિયે હસ વાત કા ઢ્યાલ કરો, ઓર પ્રમાદ કા આસે-  
વન મત કરો. તથા તપ એવં સંયમ કી અચ્છી તરહ આરાધના કરો,  
હસકા નામ સ્મારણા હૈં । પ્રતિસ્મરણા વાચના શિષ્ય કો ઉસ સમય દી  
જાતી હૈં જવ શિષ્ય અપની સમાચારી મેં વાર ૨ પ્રમાદ કરતા હૈં । ઉસ  
સમય ઉસે યહી સમજ્ઞાયા જાતા હૈં કિ હૈં વત્સ ! દેખો યહ પ્રમાદ  
ઠીક નહીં હૈં, હસસે તપ એવં સંયમ કી આરાધના ઠીક ૨ નહીં હોતી હૈં ।  
તુમ્હેં વાર વાર યહ સમજ્ઞા દિયા ગયા હૈં અતઃ હસકા પરિત્યાગ કર તપ  
એવં સંયમ કી આરાધના કરો । હસી મેં આત્મા કી ભલાઈ હૈં, હસકા  
નામપ્રતિસ્મારણા હૈં । અથ દણ્ડના કહતે હૈં—હસ પ્રકાર ઉપદેશ, સ્મારણા,

ઉપદેશ છે. નિદ્રારૂપ પ્રમાદમાં પડેલ શિષ્ય જો પ્રતિલેખના ન કરે અથવા દુષ્પ્ર-  
તિલેખના આદિ કરતો હોય તો એ સમયે એને સ્મારણા વાચના આપવી જોઈએ  
એમાં એને એ સમજાવવું જોઈએ કે આયુષ્યમન્ ! તમને એ પહેલું ખતાવ-  
વામાં આવેલ છે કે, પ્રમાદ છોડવા યોગ્ય છે, જેથી એ વાતનો ખ્યાલ કરો ને  
પ્રમાદનો ખ્યાલ ન કરો, તથા તપ અને સંયમની સારી રીતે આરાધના કરો.  
આનું નામ સ્મારણા છે. પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્યને તે સમયે આપવામાં આવે  
છે જ્યારે શિષ્ય પોતાની સામાચારીમાં વારંવાર પ્રમાદ કરે છે. તે સમયે  
તેને એવું સમજાવાય છે કે હે વત્સ જુઓ આ પ્રમાદ કરવો ઠીક નથી તેનાથી  
તપ અને સંયમની આરાધના સારી રીતે થતી નથી તમને વખતો વખત એ  
સમજાવવામાં આવેલ છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી સંયમ અને તપની આરા-  
ધના કરો. તેમાં આત્માની ભલાઈ છે, તેનું નામ પ્રતિ સ્મારણા છે. હવે  
દંડના કહે છે—આ પ્રકારનો ઉપદેશ સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા રૂપ ત્રણ પ્રકાર-

છાયા—ઉપવિશતિ ઉપાધ્યાયઃ, શિષ્યા વિતરન્તિ વન્દનં તસ્મૈ ।

સ તેભ્યઃ સર્વસમયં, વાચયતિ સામાયિકપ્રમુખમ્ ॥ ૧ ॥

વાચના—ત્રિવિધા ભવતિ—ઉપદેશઃ, સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા ચ । એ સ્વલ્પ ગૃહીત-સામાચારીકાઃ શિષ્યાસ્તેભ્ય સૂત્રાર્થવાચના દાતવ્યા । તેપાં સામાચારીકરણે પ્રમાદં કુર્વતાં ક્રમેણ ઉપદેશઃ, સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા ચ કરણીયા । તત્ર ગુરુસ્તાન્ પ્રતિ વદતિ—“ મુનીનામેષા સામાચારી યન્નિદ્રાવિકથાદયઃ પ્રમાદાઃ પરિહર્તવ્યાઃ ” એવ ઉપદેશઃ ।

“ ઉવવિસદ્ ઉવજ્ઞાઓ, સીસા વિચરંતિ વંદનં તસ્સ ।

સો તેસિં સર્વસમયં, વાયદ્ સામાહ્યપ્પમુહં ॥ વાચના દેને વાલા ઉપાધ્યાય અપને આસન પર વિરાજમાન જવ હો જાય તવ વાચના લેને વાલા શિષ્ય સર્વપ્રથમ ઉન્હેં વંદના કરે । ફિર વાદ મેં ઉનસે સામાયિક આદિ સર્વ સૂત્રોં કી વાચના લેવે । ઉપદેશ ૧, સ્મરણા ૨ એવં પ્રતિ-સ્મારણા ૩ કે ભેદ સે વાચના ૩ પ્રકાર કી હૈ । જિન શિષ્યોં ને સામા-ચારી કો ગ્રહણ કર લિયા હૈ ઉન શિષ્યોં કો સૂત્રાર્થ કી વાચના દેના ચાહિયે । વે યદિ સામાચારી કે આચરણ કરને મેં પ્રમાદ કરેં તો ગુરુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વે ઉન્હેં ક્રમ સે ઉપદેશ, સ્મારણા એવં પ્રતિસ્મારણા રૂપ વાચના દે । ઉસમેં વે ઉસે યહ સમજાવેં કિ દેસ્કો યહી મુનિયોં કી સામાચારી-આચાર હૈ કિ વે સર્વપ્રથમ નિદ્રા વિકથા આદિ પ્રમાદોં કો દૂર કરેં । યહ ઉપદેશ હેં । નિદ્રારૂપ પ્રમાદ મેં પડા હુઆ શિષ્ય યદિ

વાચના દેવાની અને તેને શ્રદ્ધા કરવાની વિધિ આ પ્રકારે છે—

ઉવવિસદ્ ઉવજ્ઞાઓ, સીસા વિચરંતિ વંદનં તસ્સ ।

સો તેસિં સર્વસમયં વાયદ્ સામાહ્યપ્પમુહં ॥

વાચના આપવાવાળા ઉપાધ્યાય જ્યારે પોતાના આસન ઉપર બિરાજમાન થઈ જાય ત્યારે વાચના દેવાવાળા શિષ્ય સર્વ પ્રથમ એમને વંદના કરે અને પછી તેમની પાસેથી સામાયિક આદિ સર્વ સૂત્રોની વાચના લે. ઉપદેશ, સ્મારણા અને પ્રતિ સ્મારણા ના ત્રણે લેઈથી વાચના ત્રણ પ્રકારની છે. જે શિષ્યોએ સામાચારીને શ્રદ્ધા કરી લીધેલ હોય તે શિષ્યોને સૂત્રાર્થની વાચના દેવી જોઈએ. તે કદી સામાચારીનું આચરણ કરવામાં પ્રમાદ કરે તો શુરુ કર્તવ્ય છે કે તે એને ક્રમથી ઉપદેશ, સ્મારણા, અને પ્રતિ સ્મારણા રૂપ વાચના આપે. એમાં તેઓ શિષ્યને એ સમજાવે કે, જુઓ આજ મુનિયોની સામાચારી આચાર છે કે જે સર્વ પ્રથમ નિદ્રા, વિકથા આદિ પ્રમાદોને દૂર કરે આ



નિદ્રારૂપે પ્રમાદે, અપ્રતિલેખને દુષ્પ્રતિલેખનાદૌ ચ સકૃત્ સ્વલિતસ્ય સ્મા-  
રણા કર્તવ્યા ભવતિ । યથા—“ ભો આયુષ્મન્ ! પ્રમાદો વર્જનીયઃ ” ઇતિ પૂર્વમેવા-  
સ્માભિઃ કથિતમ્, અતઃ પ્રમાદં મા કુરુ તપઃસંયમં ચ સમારાધય, ઇત્યેષા સ્મારણા ।

અથ પ્રતિસ્મારણા—

પુનઃ પુનઃ સામાચાર્યો પ્રમાદં કુર્વન્ શિષ્યઃ પુનર્ગુરુણા વોધનીયઃ—“ વત્સ ! મા  
પ્રમાદતામ્, તપઃસંયમારાધનં ક્રિયતામ્ ” । ઇત્યેષા પ્રતિસ્મારણા ।

ઇત્યમુક્તોઽપિ યદિ પ્રમાદ્યતિ, તદા દણ્ડના—લઘુપ્રાયથિત્તરૂપા કર્તવ્યા ।

પ્રતિલેખના નહીં કરે અથવા દુષ્પ્રતિલેખના આદિ કરતા હૈં ઉસ સમય  
ઉસે સ્મારણા વાચના દેની ચાહિયે, ઇસમેં ઉસે યહ સમજ્ઞાના ચાહિયે  
કિ હૈં આયુષ્મન્ ! તુમ્હેં યહ પહિલે વતલા દિયા ગયા હૈં કિ પ્રમાદ  
વર્જનીય હૈં । ઇસલિયે ઇસ વાત કા ઢ્યાલ કરો, ઓર પ્રમાદ કા આસે-  
વન મત કરો. તથા તપ એવં સંયમ કી અચ્છી તરહ આરાધના કરો,  
ઇસકા નામ સ્મારણા હૈં । પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્ય કો ઉસ સમય દી  
જાતી હૈં જવ શિષ્ય અપની સમાચારી મેં વાર ૨ પ્રમાદ કરતા હૈં । ઉસ  
સમય ઉસે યહી સમજ્ઞાયા જાતા હૈં કિ હૈં વત્સ ! દેખો યહ પ્રમાદ  
ઠીક નહીં હૈં, ઇસસે તપ એવં સંયમ કી આરાધના ઠીક ૨ નહીં હોતી હૈં ।  
તુમ્હેં વાર વાર યહ સમજ્ઞા દિયા ગયા હૈં અતઃ ઇસકા પરિત્યાગ કર તપ  
એવં સંયમ કી આરાધના કરો । ઇસી મેં આત્મા કી ભલાઈ હૈં, ઇસકા  
નામ પ્રતિસ્મારણા હૈં । અવ દણ્ડના કહતે હૈં—ઇસ પ્રકાર ઉપદેશ, સ્મારણા,

ઉપદેશ છે. નિદ્રારૂપ પ્રમાદમાં પડેલ શિષ્ય જો પ્રતિલેખના ન કરે અથવા દુષ્પ્ર-  
તિલેખના આદિ કરતો હોય તો એ સમયે એને સ્મારણા વાચના આપવી જોઈએ  
એમાં એને એ સમજાવવું જોઈએ કે આયુષ્યમન્ ! તમને એ પહેલું ખતાવ-  
વામાં આવેલ છે કે, પ્રમાદ છોડવા યોગ્ય છે, જેથી એ વાતને ખ્યાલ કરે ને  
પ્રમાદને ખ્યાલ ન કરે, તથા તપ અને સંયમની સારી રીતે આરાધના કરે.  
આનું નામ સ્મારણા છે. પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્યને તે સમયે આપવામાં આવે  
છે જ્યારે શિષ્ય પોતાની સામાચારીમાં વારંવાર પ્રમાદ કરે છે. તે સમયે  
તેને એવું સમજાવાય છે કે હે વત્સ જુઓ આ પ્રમાદ કરવો ઠીક નથી તેનાથી  
તપ અને સંયમની આરાધના સારી રીતે થતી નથી તમને વખતો વખત એ  
સમજાવવામાં આવેલ છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી સંયમ અને તપની આરા-  
ધના કરો. તેમાં આત્માની ભલાઈ છે, તેનું નામ પ્રતિ સ્મારણા છે. હવે  
દંડના કહે છે—આ પ્રકારનો ઉપદેશ સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા રૂપ ત્રણ પ્રકાર-

તતોઽપિ યદિ પ્રમાદ્યતિ તર્હિ માસલઘુપ્રાયશ્ચિત્તરૂપા દણ્ડના કર્તવ્યા ।  
 इत्थं दण्डितोऽपि यदि प्रमादान्न विरमते तदा कुङ्कुमदृष्टान्तो वक्तव्यः । यथा—अतीव  
 पिष्टं कुङ्कुमं 'केसर' इति भाषाप्रसिद्धं पापाणमिव कठोरं न भवति, भवान्  
 महता प्रयासेन प्रतिनोद्यमानः कथं प्रमत्तः संवृत्तः । अत्र मासलઘુ दीયતે ।

વાસ્તવ્યાદૂર્ઘ્વં યદિ પ્રમાદતો ન નિવર્તતે તદા નિષ્કાસના કર્તવ્યા । અથાસૌ  
 स्वयं परेण वा प्रज्ञापितः सन् पुनरागत्य प्रमादात् प्रतिनिवृत्तो वदति—भगवन् ! क्षमस्व  
 मदीयमपराधनिकुरम्वम्, न पुनरेवं करिष्यामीति । તદા ગુરુરેવં વદેત્—યથા  
 પ્રતિસ્મારણારૂપ ત્રીન પ્રકાર કી વાચના કે દેને પર ખી યદિ શિષ્ય  
 પ્રમાદપતિત હોતા હૈ, તો ઉસે ઇક માસ કા લઘુ પ્રાયશ્ચિત્ત દેના ચાહિયે ।  
 उस समय उससे यह कहना चाहिये कि देखो केशर जब बार २ रगड़  
 कर पीसी जाती है तो वह भी पापाण जैसी कठोर नहीं रहती है किन्तु  
 इकदम नरम पड़ जाती है परन्तु बड़े आश्चर्य की बात है कि तुम्हें बार २  
 समझाया जाता है फिर भी तुम प्रमाद को नहीं छोड़ते हो । क्या बात  
 है पता नहीं पड़ता कि तुम प्रमादी क्यों बन रहे हो ॥

આચાર્ય તથા અન્ય મુનિ દ્વારા ત્રીન વાર સમજાવે પર ખી યદિ  
 શિષ્ય પ્રમાદ સે પીછે નહીં હટતા હૈ, ઉસ સમય ઉસે સંઘ સે બાહર  
 કરને રૂપ દણ્ડ દેના ચાહિયે । ઉસ સમય યદિ દૂસરોં કે દ્વારા સમજાવે  
 જાને પર અથવા અપની ગલ્તી અપને આપ સ્વીકાર કરને પર યહ ઇસા  
 ગુરુ મહારાજ કે સમક્ષ કહે કિ હે ગુરુ મહારાજ ! મેરે અભીતક કે  
 સમસ્ત અપરાધ આપ ક્ષમા કરેં, અવ આગે ઇસા નહીં કરને કા ભાવ

રની વાચના દેવા છતાં પણ જો શિષ્ય પ્રમાદ વશ બને, તો તેને એક માસનું  
 લઘુ પ્રાયશ્ચિત્ત દેવું જોઈએ. તે સમય તેને એવું કહેવું જોઈએ કે, કેશર  
 ને વારંવાર ઘુંટાઈ ઘુટાઈને પીસવામાં આવે છે, તો પણ પથ્થરની  
 માફક કઠોર નહિ બનતાં વધુ ને વધુ નરમ બને છે. ઘણા જ આશ્ચર્યની  
 વાત છે કે, તમને વારંવાર સમજાવવા છતાં પણ તમે પ્રમાદને છોડતા નથી.  
 કયું કારણ છે તે સમજાતું નથી કે તમે તમારો પ્રમાદ છોડતા નથી. આચાર્ય  
 તથા અન્ય મુનિદ્વારા ત્રણવાર સમજાવ્યા છતાં પણ જો શિષ્ય પ્રમાદથી પાછો  
 ન હટે તો તેને તે સમયે સંઘની બહાર કરવારૂપ દંડ દેવો જોઈએ. તે સમય  
 કદાચ બીજાઓ દ્વારા સમજાવવાથી અથવા પોતાની ભૂલ પોતે જ સ્વીકારીને તે  
 ગુરુ મહારાજ સમક્ષ એવું કહે કે, હે ગુરુ મહારાજ ! મારા આજ સુધીના  
 બધા અપરાધ આપ માફ કરો, હવે આગળ હું આવું નહિં કરું. તે સમયે

તામ્બૂલપત્રં કુથિતં ન પરિત્યજ્યતે ચેત્ , તર્હિ શેષાપ્યપિ પત્રાણિ તત્ કોથયતિ ।  
 एवं ત્વમપિ સ્વયં વિનષ્ટો મમ અન્યાનપિ સાધૂન્ વિનાશયિष्यસીતિ કૃત્વા  
 નિષ્કાસિતોઽસ્માભિઃ । સંપ્રતિ પુનરપ્રમત્તેન ભવિતવ્યમ્ , માસગુરુ ચ તે પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ।

અત્ર રાજદષ્ટાન્તો વર્ણનીયઃ ।

કસ્યચિદ્ રાજ્જોઽક્ષિરોગઃ સંજાતઃ । તત્રત્યવૈગ્રાસ્તચિકિત્સાં કર્તુમશક્તા  
 અભૂવન્ । અન્યથ કથિદાગન્તુકો વૈદ્યસ્તત્રાગત્યાહ-મમાક્ષિગુટિકાસ્તુ અક્ષિરોગપ્રશ-  
 મન્યઃ । તાભિરઙ્ગિતેષુ અક્ષિપુ તીવ્રતરા દુઃસહા વેદના ભવતિ । સા તુ મુહૂર્તમાત્રમ્ ।

હૈ, उस समय गुरु महाराज उससे ऐसा कहें कि देखो, पान सड़ जाने  
 पर यदि बाहर निकाल कर न फेंक दिया जाय तो वह जैसे अन्य पानों  
 को सड़ा कर बिगाड़ देता है, उसी प्रकार तुम भी स्वयं विनष्ट होकर  
 मेरे संघ के अन्य साधुओं को विनष्ट कर दोगे इस ख्याल से हम  
 तुम्हें संघ से बाहर कर रहे हैं । यदि आगे ऐसा नहीं करोगे तो संघ में  
 रख लिये जाते हैं । इसलिये जाओ १ मास का यह तुम्हें गुरु प्रायश्चित्त  
 दिया जाता है । इस विषय में एक राजा का दृष्टान्त इस प्रकार है—

કિસી એક રાજા કો આંખોં મેં રોગ હો ગયા । નગર ભર મેં જિતને  
 વૈદ્ય થે ઉન સવ ને સ્વયં યત્નપૂર્વક ઇલાજ કિયા, પરંતુ ઉનકે ઇલાજ સે  
 રાજા કી આંખોં કા રોગ શમિત નહીં હુઆ । એક સમય વહાં બાહર  
 ગાંવ કા એક વૈદ્ય આયા । ઉસને નરેશ કે પાસ જાકર કહા કિ મહારાજ !  
 હમારે પાસ એસી ગોલિયાં હૈં જો આંખોં મેં આંજને પર વિલકુલ રોગ  
 કો નષ્ટ કર દેતી હૈં । પરંતુ ઉનકે આંજને પર ૧ મુહૂર્ત તક વડી દુઃસહ

गुरुमहाराज तेने એવું કહે કે જુઓ પાન સડી જવાથી બહાર કાઢી ફેંકી  
 દેવામાં ન આવે તો તે જેમ બીજા પાનને સડાવી બગાડી દે છે. તે જ રીતે  
 તમે પણ સ્વયં વિનષ્ટ બની મારા સંઘના બીજા સાધુઓને પણ વિનષ્ટ  
 બનાવી દેશો. આ ખ્યાલથી તમને સંઘથી બહાર કરવામાં આવે છે. કદાચ  
 આગળ એવું નહીં કરો તો સંઘમાં રાખવામાં આવશે. આ માટે તમને એક  
 મહિનાનું શુદ્ધ પ્રાયશ્ચિત્ત આપવામાં આવે છે.

આ વિષયમાં એક રાજાનો દાખલો આ પ્રકારે છે.—

કેઈ એક રાજાની આંખમાં રોગ થયો, શહેરમાં જેટલા વૈદ્ય હતા તે  
 સઘળાથી ખૂબ પ્રયત્ન પુર્વક ઇલાજ કરવામાં આવ્યો પરંતુ તેઓના ઇલાજથી  
 રાજાની આંખોનો રોગ મટ્યો નહીં. એક સમયે ત્યાં બહાર ગામનો એક વૈદ્ય  
 આવ્યો તેણે રાજાની પાસે પહોંચી કહ્યું કે, મહારાજ ! મારી પાસે એવી ગોળીઓ  
 છે, જે આંખોમાં આંજવાથી રોગને બીલકુલ મટાડે છે પરંતુ તેને આંજવાથી

યદિ વેદનાયાં સત્યાં માં પ્રાણદણ્ડં કર્તું કર્મચારિભ્ય આજ્ઞાં ન દદાસિ, તર્હિ ત્વા-  
ક્ષિણી અજ્ઞયામિ । રાજા કથિતમ્-નાહં તવ પ્રાણદણ્ડં કર્તુમાજ્ઞાપયિष्याમિ । તદા  
રાજોઽક્ષ્ણોરજ્ઞનં વૈદ્યઃ કૃતવાન્ । અજ્ઞિતયોરક્ષ્ણોસ્તીવ્રતરા વેદના જાતા । તદા  
રાજા નિગદિતમ્-‘અનેનાક્ષિણી મમ પીડિતે, અત એનં મારય ’ ઇત્યાજ્ઞાં સ્વકર્મ-  
ચારિણઃ પ્રતિ દત્તવાન્ । તૈઃ કર્મચારિભિસ્તસ્ય રાજો હિતકરં વિજ્ઞાય વૈદ્યઃ પ્રચ્છન્નઃ  
સ્થાપિતઃ । મુહૂર્તાન્તરેણ રાજો વેદના ઉપશન્તાઃ, અક્ષિણી રોગરહિતે દિવ્યે દિવ્ય-  
જ્યોતિષ્મતી સંજાતે । તદા રાજા વૈદ્યઃ સ્મૃતઃ । રાજકર્મચારિભિરાનીય સમર્પિતો  
વૈદ્યઃ સત્કારિતઃ સંમાનિતશ્ચ । યથા તસ્ય રાજસ્તત્કાલદુઃસહમપિ ગુટિકાજ્ઞનં ક્રમેણ  
ચક્ષુષો નૈરુજ્યકરણાત્ પરિણામસુન્દરં સમજનિ, એવં ભવતામપિ સ્મારણાદિકં સ્વર-  
પીડા હતી છે । યદિ આપ વેદના હોને પર અપને કર્મચારિયોં કો મુક્ષે  
પ્રાણદણ્ડ દેને કી આજ્ઞા ન કરે તો મેં આપકી આંખોં મેં ઉન ગોલિયોં  
કો આંજ સકતા હું । રાજાને વૈદ્ય કી વાત સુન કર ઉસે અભય કરને  
કા વચન દે દિયા । વૈદ્ય ને બી ગોલિયોં કો ઘિસ કર રાજા કી આંખોં  
મેં આંજ દિયા । આંજતે હી રાજા કી આંખોં મેં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના  
હોને લગી । ઉસ વેદના સે પીડિત હોકર રાજા ને ઉસે મારને કી  
આજ્ઞા દે દી । કર્મ ચારિયોં ને ઉસે રાજા કા હિતકારી માન કર એક  
જગહ છિપા દિયા ઓર મારા નહોં । કુછ સમય કે વાદ વેદના શાંત હો  
ગઈ ઓર આંખેં રોગ રહિત હો ગઈ । રાજા ને પ્રસન્ન હોકર ઉસ વૈદ્ય  
કો યાદ કિયા તવ કર્મચારિયોં ને ઉસ વૈદ્ય કો લાકર હાજર કિયા ।  
રાજા ને ઉસકો સૂચ આદર સત્કાર કરકે વિસર્જિત કિયા । મતલબ  
હસ દૃષ્ટાન્ત કા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર ઉસ રાજા કે લિયે દુઃસહ બી

એક ઘડી સુધી ઘણી જ અસહ્ય વેદના થાય છે. વેદના થવાથી આપ આપના  
કર્મચારીઓ દ્વારા મને પ્રાણદણ્ડ દેવાની આજ્ઞા ન કરો તો હું આપની આંખોમાં  
એ ગોળીઓ આંજવા ઇચ્છું છું. રાજાએ વેદની વાત સાંભળીને તેને અભય  
કરવાનું વચન આપ્યું. વૈદ્યે પણ ગોળીઓને ઘસીને રાજાની આંખમાં આંજ  
દીધી આંજતાં જ રાજાની આંખોમાં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના થવા લાગી, આ  
વેદનાથી બ્યાકુળ બની રાજાએ તેને મારવાની આજ્ઞા આપી. કર્મચારીઓએ  
તેને રાજાનો હિતકારી માની એક જગ્યાએ છુપાવી દીધો અને માર્યો નહીં.  
થોડા સમય પછી વેદના શાંત થઈ અને આંખો રોગ રહિત બની. રાજાએ  
પ્રસન્ન થઈને તે વૈદ્યને યાદ કર્યો ત્યારે કર્મચારીઓએ તે વૈદ્યને લાવીને હાજર  
કર્યો. રાજાએ તેનો ખૂબ આદરસત્કાર કરીને વિદાય આપી. આ દૃષ્ટાંતનો સાર એ  
છેકે, રાજા માટે દુઃસહ એવી આંખોની પીડાનું ગુટિકાના અંજનથી શમન થયું.

પરુપત્વાત્ યદ્યપ્યાપાતમાત્રદુઃસ્વજનકં તથાપિ પરિણામસુન્દરમેવ દ્રષ્ટવ્યમ્, इह परत्र च सकलकल्याणपरंपराकारणत्वादिति ।

॥ इति सप्तमं वाचनाद्वारम् ॥

સૂત્રાર્થયોઃ પૌર્વાર્થનિરૂપણનામકમષ્ટમંદારમ્—

અથ પૂર્વે સૂત્રમ્ અર્થો વા ? इति निरूप्यते—उत्पादव्ययध्रौव्यलक्षणोऽर्थस्तीर्थ-  
करैः पूर्वमुक्तः, पश्चात् तमेवार्थं हृदये निधाय गणधराः सूत्रं रचयन्ति, तस्मादर्थतः  
पश्चाद्भावि सूत्रम्, इति सिद्धान्तः । अत एव सूत्रम् अणु-लघु भवति, अर्थस्तु महान्,  
गुटिकांजन आंखो की पीड़ा का शमक हुआ-पीडाजनक होने पर भी  
परिणाम में हितविधायक हुआ, उसी प्रकार शिष्यों को भी गुरु  
महाराज द्वारा प्रदत्त स्मारणादिक तीव्र कठोर होने पर भी आयति-  
( उत्तरकाल ) सुख कारक होने से एकान्त हितविधायक ही होते हैं ।  
क्यों कि इनसे इस लोक में तथा परलोक में आत्मा का हित ही होता  
है अहित नहीं ।

॥ सातवाँ द्वार समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

અવ આઠવાં દ્વાર કહતે હૈ—

સૂત્ર એવં અર્થ કે પૌર્વાર્થ દ્વાર કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

અવ યહાં યહ વતલાયા જાતા હૈ કિ પહિલે સૂત્ર હોતા હૈ કિ અર્થ  
હોતા હૈ । ઉત્પાદ, વ્યય, એવં ધ્રૌવ્ય હસ લક્ષણ સે યુક્ત અર્થ-પદાર્થ  
હોતા હૈ । અર્થ કા યહ લક્ષણ તીર્થકર પ્રભુને કહા હૈ । હસી અર્થ  
કો હૃદય મેં અવધૂત કર ગણધર દેવોં ને સૂત્રોં કી રચના કી હૈ । હસ-

પીડા આપનાર હોવા છતાં પણ પરિણામમાં હિતકારક પરિણામ આનું.  
આ પ્રકાર શિષ્યોએ પણ ગુરુમહારાજ દ્વારા પ્રદત્ત સ્મારણાદિક તીવ્ર-કઠોર હોવા  
છતાં પણ અંતે શુભ કરનાર સુખકારક હોવાથી એકાન્ત હિતવિધાયક જ હોય  
છે કેમકે એનાથી આલોક તથા પરલોકમાં આત્માનું હિત થાય છે, અહિત નહીં

॥ सातमुं द्वार समाप्तं ययुं ॥७॥

હવે આઠમું દ્વાર કહેવામાં આવે છે—

સૂત્ર તથા અર્થના પૌર્વાર્થદ્વારનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.—

હવે અહિં એ બતાવવામાં આવે છે કે, પહેલાં સૂત્ર હોય છે કે અર્થ  
હોય છે. ઉત્પાદ, વ્યય, અને ધ્રૌવ્ય આ લક્ષણથી યુક્ત અર્થ પદાર્થ બને છે.  
અર્થનું એ લક્ષણ તીર્થકર પ્રભુએ કહેલ છે તે અર્થને હૃદયમાં ધારણ કરીને  
ગણધર દેવોએ સૂત્રની રચના કરી છે, માટે અર્થની પાછળ સૂત્ર છે, એ સિદ્ધાંત



યદિ વેદનાયાં સત્યાં માં પ્રાણદણ્ડં કર્તુ કર્મચારિભ્ય આજ્ઞાં ન દદાસિ, તર્હિ ત્વા-  
ક્ષિણી અઙ્યામિ । રાજા કથિતમ્-નાહં તવ પ્રાણદણ્ડં કર્તુમાજ્ઞાપયિષ્યામિ । તદા  
રાજોઽક્ષ્ણોરઙ્ગનં વૈદ્યઃ કૃતવાન્ । અઙ્ગિતયોરક્ષ્ણોસ્તીવ્રતરા વેદના જાતા । તદા  
રાજા નિગદિતમ્-‘અનેનાક્ષિણી મમ પીડિતે, અત એનં મારય ’ ઇત્યાજ્ઞાં સ્વકર્મ-  
ચારિણઃ પ્રતિ દત્તવાન્ । તૈઃ કર્મચારિભિસ્તસ્ય રાજો હિતકરં વિજ્ઞાય વૈદ્યઃ પ્રચ્છન્નઃ  
સ્થાપિતઃ । મુહૂર્તાન્તરેણ રાજો વેદના ઉપશાન્તાઃ, અક્ષિણી રોગરહિતે દિવ્યે દિવ્ય-  
જ્યોતિષ્મતી સંજાતે । તદા રાજા વૈદ્યઃ સ્મૃતઃ । રાજકર્મચારિભિરાનીય સમર્પિતો  
વૈદ્યઃ સત્કારિતઃ સંમાનિતશ્ચ । યથા તસ્ય રાજસ્તત્કાલદુઃસહમપિ ગુટિકાઙ્ગનં ક્રમેણ  
ચક્ષુષો નૈરુજ્યકરણાત્ પરિણામસુન્દરં સમજનિ, એવં ભવતામપિ સ્મારણાદિકં સ્વ-  
પીડા હોતી હૈ । યદિ આપ વેદના હોને પર અપને કર્મચારિયોં કો મુઝે  
પ્રાણદણ્ડ દેને કી આજ્ઞા ન કરે તો મૈ આપકી આંખોં મૈં ઉન ગોલિયોં  
કો આંજ સકતા હું । રાજાને વૈદ્ય કી વાત સુન કર ઉસે અભય કરને  
કા વચન દે દિયા । વૈદ્ય ને બી ગોલિયોં કો ઘિસ કર રાજા કી આંખોં  
મૈં આંજ દિયા । આંજતે હી રાજા કી આંખોં મૈં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના  
હોને લગી । ઉસ વેદના સે પીડિત હોકર રાજા ને ઉસે મારને કી  
આજ્ઞા દે દી । કર્મ ચારિયોં ને ઉસે રાજા કા હિતકારી માન કર એક  
જગહ છિપા દિયા ઓર મારા નહોં । કુછ સમય કે વાદ વેદના શાંત હો  
ગઈ ઓર આંખેં રોગ રહિત હો ગઈ । રાજા ને પ્રસન્ન હોકર ઉસ વૈદ્ય  
કો યાદ કિયા તવ કર્મચારિયોં ને ઉસ વૈદ્ય કો લાકર હાજર કિયા ।  
રાજા ને ઉસકો સૂચ આદર સત્કાર કરકે વિસર્જિત કિયા । મતલબ  
ઇસ દૃષ્ટાન્ત કા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર ઉસ રાજા કે લિયે દુઃસહ બી

એક ઘડી સુધી ઘણી જ અસહ્ય વેદના થાય છે. વેદના થવાથી આપ આપના  
કર્મચારીઓ દ્વારા મને પ્રાણદંડ દેવાની આજ્ઞા ન કરો તો હું આપની આંખોમાં  
એ ગોળીઓ આંજવા ઇચ્છું છું. રાજાએ વેદની વાત સાંભળીને તેને અભય  
કરવાનું વચન આપ્યું. વૈદ્યે પણ ગોળીઓને ધસીને રાજાની આંખમાં આંજ  
દીધી આંજતાં જ રાજાની આંખોમાં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના થવા લાગી, આ  
વેદનાથી વ્યાકુળ બની રાજાએ તેને મારવાની આજ્ઞા આપી. કર્મચારીઓએ  
તેને રાજાનો હિતકારી માની એક જગ્યાએ છુપાવી દીધો અને માયો નહીં.  
થોડા સમય પછી વેદના શાંત થઇ અને આંખો રોગ રહિત બની. રાજાએ  
પ્રસન્ન થઇને તે વૈદ્યને યાદ કર્યો ત્યારે કર્મચારીઓએ તે વૈદ્યને લાવીને હાજર  
કર્યો. રાજાએ તેનો ખૂબ આદરસત્કાર કરીને વિદાય આપી. આ દૃષ્ટાંતનો સાર એ  
છેકે, રાજા માટે દુઃસહ એવી આંખોની પીડાનું ગુટિકાના અંજનથી થમન થયું.

તત્ર માન્તિ સ્મ । એવં પેટિકાસ્થાનીયે સૂત્રે વહુન્યર્થપદાનિ વર્તન્તે, તત્ર સૂત્રમેવ વાદરં ભવિતુમર્હતિ નાર્થં ઇતિ । કિંચાર્થસ્ય મહત્ત્વમેકાન્તતો નાસ્તિ, પ્રથમે ઉત્ક્રિષ્ટજ્ઞાતે હિ ‘અનુકંપા કર્તવ્યા’ ઇત્યર્થો વહુભિઃ સૂત્રૈર્વર્ણિતઃ । તથા—અષ્ટાદશે સુંસુમાદારિકાજ્ઞાતે વર્ણરૂપવલાદિવૃદ્ધ્યર્થં નાહારયિતવ્યમ્, ઇત્યર્થો વહુભિઃ સૂત્રૈર્વર્ણિતઃ, તસ્માદર્થો ન મહાન્ કિન્તુ સૂત્રમેવ મહદિતિ ચેત્—?

અત્રોચ્યતે—પૂર્વં સૂત્રં પશ્ચાદર્થઃ, ઇતિ ન સંભવતિ । અર્થસ્ય હિ સૂત્રતઃ પશ્ચાદ્ભાવિત્વં ન યુજ્યતે, અર્થં વિના સૂત્રં નિશ્ચારહિતં સત્ કીદૃશં સ્યાત્ ? અસંવદ્ધં મેં અનેક વસ્ત્ર રસ્ત્ર દિયે જાતે હેં ઇતાવતા પેટી મેં હી વાદરતા આતી હૈ વસ્ત્રોં મેં નહીં । કયોં કિ ઉસકે આધાર સે હી વહુન વસ્ત્ર ઉસમેં સમા જાતે હેં । હસી તરહ પેટી કે સ્થાનીય સૂત્ર મેં ભી વહુત સે અર્થપદ રહા કરતે હેં હસલિયે સૂત્ર કો હી વાદર હોને કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ અર્થ કો નહીં । તથા—અર્થ મેં મહત્તા ભી એકાન્ત સે સ્થાપિત નહીં હોતી હૈ । “પ્રથમે ઉત્ક્રિષ્ટજ્ઞાતે” જ્ઞાતાસૂત્ર કે પ્રથમ ઉત્ક્રિષ્ટજ્ઞાત નામક અધ્યયન મેં ભગવાન ને ફરમાયા હૈ કિ અનુકંપા કરની ચાહિયે હસ પ્રકાર કા અર્થ વહુત સૂત્ર સે વર્ણિત કિયા હૈ । તથા “અષ્ટાદશે સુંસુમાદારિકાજ્ઞાતે” અર્થાત્ હસી જ્ઞાતા સૂત્ર કે અઠારવેં સુંસુમાદારિકાનામક અધ્યયન મેં વર્ણ, રૂપ, વલ આદિ કો વૃદ્ધિ નિમિત્ત મુનિયોં કો આહાર નહીં કરના ચાહિયે યહ અર્થ વહુત સૂત્રોં સે વર્ણિત કિયા હૈ । હસલિયે અર્થ મહાન્ નહીં હૈ કિન્તુ સૂત્ર હી મહાન્ હૈ યહી વાત જ્ઞાત હોતી હૈ ।

ઉત્તર—પહિલે સૂત્ર હોતા હૈ પશ્ચાત્ અર્થ યહ કથન યુક્તિયુક્ત નહીં હૈ,

આવે છે, વસ્ત્રોમાં નહીં, કેમ કે પેટીના આધારથી જ ઘણાં વસ્ત્રો તેમાં સમાઈ શકે, એવી રીતે સ્થાનીય સૂત્રમાં પણ ઘણા અર્થ પદ રહ્યા કરે છે માટે જ સૂત્રને બાદર હોવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થને નહીં. તેમ અર્થમાં મહત્તા પણ એકાન્તથી સ્થાપિત થતી નથી, જ્ઞાતા સૂત્રના પ્રથમ ઉત્ક્રિષ્ટજ્ઞાત નામના અધ્યયનમાં ભગવાને ફરમાવ્યું છે કે, અનુકંપા કરવી જોઈએ. આ પ્રકારનો અર્થ ઘણા સૂત્રોથી વર્ણવવામાં આવેલ છે તથા “અષ્ટાદશે સુંસુમાદારિકા જ્ઞાતે” અર્થાત્ આ જ્ઞાતા સૂત્રના અઠારમા “સુંસુમાદારિકા” નામના અધ્યયનમાં વર્ણ, રૂપ, બળ વગેરેની વૃદ્ધિ નિમિત્તે મુનિયોએ આહાર ન કરવો જોઈએ આ અર્થ ઘણા સૂત્રોમાં વર્ણવવામાં આવેલ છે. આ માટે અર્થ મહાન નથી પણ સૂત્ર જ મહાન છે આ વાત જ્ઞાત થાય છે.

ઉત્તર—પહેલાં સૂત્ર હોય છે પછી અર્થ આ કહેવું યુક્તિ યુક્ત નથી, કારણ

एकैकस्य सूत्रस्यार्थोऽनन्तः । स्तोकत्वात् पश्चादभिहितत्वाच्च सूत्रम् 'अणु' इत्युच्यते, तेन चाणुना सूत्रेण सार्थस्य यः सम्बन्धो योगः स चानुयोग इत्युच्यते ।

ननु पूर्वमर्थः पश्चात् सूत्रमिति कथनमयुक्तम्, पूर्वं हि सूत्रं पश्चादर्थः, सूत्राभावे तु अर्थः कस्य स्यात् । लौकिका अप्येवमेव वदन्ति-आधारे सत्येवाधेयं तिष्ठतीति ।

यच्च सूत्रमणु, अर्थस्तु विस्वृत इति, तदप्ययुक्तम् ? एकस्यां हि पेटिकायां बहूनि वस्त्राणि सन्ति, तत्र પેટિકાયા એવ વાદરત્વં યુજ્યતે, તદ્વશાદ્ બહુનિ વસ્ત્રાણિ

લિયે અર્થ કે પશ્ચાદ્ સૂત્ર હૈ यह सिद्धान्त निर्धारित हो जाता है । सूत्र अणु-लघु होता है । तथा-अर्थ सूत्र की अपेक्षा महान् होता है । एक २ सूत्र के अनन्त अर्थ होते हैं । सूत्र को अणु इसी अभिप्राय से कहा गया है कि एक तो वह अर्थ के पश्चाद् भावी है और दूसरे वह स्तोक अर्थात् छोटा होता है । उस अणु सूत्र के साथ अर्थ का जो योग है-संबंध है उसी का नाम अनुयोग है ।

પ્રશ્ન-પહિલે અર્થ હોતા હૈ વાદ મેં ઉસકે સૂત્ર હોતા હૈ यह कथन अयुक्त है । कारण कि सूत्र के बिना अर्थ नहीं हो सकता है । इसलिये ऐसा मानना चाहिये कि पहिले सूत्र होता है और बाद में अर्थ होता है । लौकिक जन भी यही कहते हुए पाये जाते हैं । सूत्र आधार है और अर्थ आधेय है । सूत्र में अर्थ रहता है अर्थ में सूत्र नहीं । आधार के होने पर ही आधेय रह सकता है अन्यथा नहीं । दूसरे-अर्थ की अपेक्षा जो सूत्र को अणु कहा गया है वह भी ठीक नहीं मालूम पड़ता । कारण कि देखा जाता है कि एक ही सन्दूक

નિર્ધારિત બની જાય છે. સૂત્ર આણું-લઘુ હોય છે. તથા અર્થ સૂત્રની અપેક્ષાથી મહાન હોય છે, એક એક સૂત્રના અનન્ત અર્થ થાય છે. સૂત્રને આણુ એ અભિપ્રાયથી કહેવામાં આવેલ છે કે, એક તો તે અર્થના પશ્ચાદ્ભાવિ છે, (પાછળ થનાર) અને બીજું તે લઘુ હોય છે, એ આણુ સૂત્રની સાથે અર્થનો જે યોગ છે-સંબંધ છે તેનું નામ અનુયોગ છે.

પ્રશ્ન-પહેલો અર્થ થાય છે અને એ પછી સૂત્ર થાય છે, તે કહેવું અયુક્ત છે. કારણ કે સૂત્ર વગર અર્થ થઈ શકે નહીં. આ માટે સમજવું જોઈએ કે પહેલાં સૂત્ર હોય છે અને પછી અર્થ થાય છે. સૂત્ર આધાર છે અને અર્થ આધેય છે. સૂત્રમાં અર્થ રહે છે અર્થમાં સૂત્ર નહીં. આધારના હોવાથી જ આધેય રહી શકે છે તેના વગર નહીં. બીજું અર્થની અપેક્ષા જે સૂત્રને આણું કહેવામાં આવેલ છે તે પણ ઠીક નથી. કારણ કે, જોવામાં આવે છે કે, એકજ પેટીમાં ઘણાં વસ્ત્ર રાખવામાં આવે છે આથી તે પેટીમાં બાહરતા

પ્રિયદર્શિની ટીકાં. અં ૧ ગાં ૨૩ સં તથ્યંતદુભયેષુ યંથોત્તરં પ્રાવલ્યમ્ । ૧૭૨

રચ્યન્તે । एवं वस्त्रस्थानीयस्यार्थस्य इत्थम्, पेटिकास्थानीयस्य तु सूत्रस्याणु-  
त्वमेव । यदप्युक्तम्-अर्थो महानित्यस्यैकान्तता नास्तीति तदप्यविचारितभाषितम्  
-उत्क्षिप्तज्ञातादिषु सत्त्वानुकम्पादिकोऽस्तत्तदध्ययनमात्रस्य, अशेषस्य तु सूत्रस्य  
तदतिरिक्ता अपि बहवोऽर्थाः सन्ति ।

॥ इति अष्टमं द्वारम् ॥

અર્થ કે વિના સૂત્ર નિશ્ચારહિત હોતા હુઆ દશદાહિમ આદિ વાક્ય  
કી તરહ કેવલ અસંબદ્ધ ઓર નિરર્થક હી માના જાતા હૈ । ૨ । જો યહ  
કહ્વા હૈ કિ પેટી કી તરહ સૂત્ર વાદર હોતા હૈ તથા વસ્ત્રાદિક કી તરહ  
અર્થ અણુ હોતા હૈ સો યહ કહના ભી ટીક નહીં હૈ । કયોં કિ જિસ  
પ્રકાર ડસી પેટી કે કિસી ઇક વસ્ત્ર દ્વારા ડસી પેટી જૈસી અનેક પેટિયા  
લપેટી જા સકતી હૈં ડસી પ્રકાર ઇક અર્થ સે અનેક સૂત્ર રચે જા સકતે હૈં ।  
ઇસ તરહ વસ્ત્રસ્થાનીય અર્થ મેં મહત્વ આતા હૈ ઓર પેટી સ્થાનીય  
સૂત્ર મેં અણુત્વ હો । ઇકાન્તસે અર્થ મેં મહત્વ નહીં હૈ કયોં કિ ઉત્ક્ષિપ્ત  
આદિ અધ્યયનોં મેં જો કહા ગયા હૈ વહ સત્વાનુકંપાદિક રૂપ અર્થ  
ડસ અધ્યયનમાત્ર કા હી હૈ, અર્થાત્ ડનમેં અનુકંપાદિ અર્થોં કી હી  
પ્રધાનતા હૈ । ઓર અનુકંપાદિ અર્થોં કો હી સિદ્ધ કિયા હૈ । ન કિ  
અવશિષ્ટ સમસ્ત સૂત્ર કા । ડસકે તો ડસસે અતિરિક્ત ઓર ભી  
અનેક અર્થ હૈં ।

॥ यह आठवां द्वार संपूर्ण हुआ ॥ ८ ॥

દશદાહીમ આદિ વાક્યની માફક કેવળ અસંબદ્ધિત અને નિરર્થક જ માનવામાં  
આવે છે. એમ કહેવામાં આવે કે પેટીની માફક સૂત્ર બાદર હોય છે, તથા  
વસ્ત્રાદિકની માફક અર્થ અણુ હોય છે તો તે કહેવું પણ ઠીક નથી. કેમ કે, એ  
પેટીના કેઈ એક વસ્ત્રમાં આવી અનેક પેટીઓ બાંધી શકાય છે. એજ રીતે  
એક અર્થથી અનેક સૂત્ર રચી શકાય છે. આ રીતે વસ્ત્રનું સ્થાનીય અર્થમાં  
મહત્વ આવે છે. અને પેટી સ્થાનીય સૂત્રમાં અણુત્વ જ એકાન્તથી અર્થમાં મહત્વ  
નથી એવું જ કહેવામાં આવેલ છે તે પણ ઠીક નથી. કેમ કે, ઉત્ક્ષિપ્ત વગેરે  
અધ્યયનમાં જ કહેવાયેલ છે તે સત્વાનુકંપાદિક રૂપ અર્થ તે તે અધ્યયન  
માત્રાના જ છે. અર્થાત્ તેમાં અનુકંપાદિ અર્થોની જ પ્રધાનતા છે. અને અનુ  
કંપાદિ અર્થોને જ સિદ્ધ કરેલ છે. ન કે અવશિષ્ટ બધા સૂત્રોને. એના તો એનાથી  
બીજા ઘણા અર્થો છે.

॥ આ આઠમું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું. ॥ ૮ ॥

નિરર્થકં સ્યાત્, યથા નવ પૂપા દશદાહિમાનીત્યાદિવાક્યં સમ્બન્ધરહિતં નિરર્થકં ભવતિ । અપિ ચ-લૌકિકા અપિ શાસ્ત્રારઃ પ્રથમતોડ્યં દૃષ્ટ્વા સૂત્રં કુર્વન્તિ, અર્થમન્ત-  
રેણ સૂત્રસ્યાનિષ્પત્તેઃ । તથા ચોક્તમ્--

“અત્યં ભાસદ્ અરિહા, તમેવ સુત્તીકરેંતિ ગણધારી ।

અત્યં વિના ચ સુત્તં, અણિસ્સિયં કેરિસં હોદ્ ” ॥ ૧ ॥

છાયા--અર્થ ભાપતેડઈન્, તમેવ સૂત્રીકુર્વન્તિ ગણધારિણઃ ।

અર્થ વિના ચ સૂત્રમ્, અનિશ્ચિતં કીદશં સ્યાત્ ॥ ૧ ॥

કિન્ન--“અત્યં ભાસદ્ અરિહા, સુત્તં ગુંફંતિ ગણહરા નિઝણા ।”

અપરન્ન--સાસણસ્સ હિયદ્દાણ, તતો સુત્તં પવત્તઈ ॥

યદપ્યુક્તં--પેટિકાવદ્ વાદરં સૂત્રમ્, અર્થસ્તુ અણુરિતિ તદપ્યસત્, યતસ્તસ્યા પેટિકાયા એકં વસ્ત્રમાદાય તેનાનેકાઃ પેટિકા વધ્યન્તે, તથૈકેનાર્થેન વહ્નિ સૂત્રાણિ

કારણ કિ અર્થ કે વિના નિશ્ચારહિત સૂત્ર હો હી નહીં સકતા હૈ । યદિ વહ્ન હોતા હૈ તો “નવપૂપા દશદાહિમા” આદિ વાક્ય કી તરહ નિરર્થક ઓર અસંબદ્ધ હી હોગા । લૌકિક શાસ્ત્ર કે જાનને વાલે ભી તો પ્રથમ અર્થ કો દેખકર હી સૂત્ર કી રચના કિયા કરતે હૈ । ક્યોં કિ અર્થ કે વિના સૂત્ર કી નિષ્પત્તિ નહીં હોતી હૈ । કહા ભી હૈ--

અત્યં ભાસદ્ અરિહા, તમેવ સુત્તી કરેંતિ ગણધારી ।

અત્યં વિના ચ સુત્તં, અણિસ્સિયં કેરિસં હોદ્ ॥ ૧ ॥

અત્યં ભાસદ્ અરિહા, સુત્તં ગુંફંતિ ગણહરા નિઝણા ।

સાસણસ્સ હિયદ્દાણ, તતો સુત્તં પવત્તઈ ॥ ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન પહિલે અર્થ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ ઓર ઉસી અર્થ કો ગણધર ભગવાન સૂત્રરૂપ મેં ગુંથતે હૈ । ૧ ।

કે અર્થના વિના નિશ્ચારહિત સૂત્ર થઈ જ શકતું નથી. કદાચ તે હોય છે, તે “નવપૂપા દશદાહિમા” આદિ વાક્યની માફક નિરર્થક અને સંબંધ વગરનું હોય લૌકિક શાસ્ત્રના જાણવાવાળા પણ પ્રથમ અર્થને જોઈને સૂત્રની રચના કર્યા કરે છે. કેમ કે અર્થના વગર સૂત્રની ઉત્પત્તિ થતી નથી. કહ્યું પણ છે કે--

અત્યં ભાસદ્ અરિહા, તમેવ સુત્તીકરેંતિ ગણધારી ।

અત્યં વિના ચ સુત્તં, અણિસ્સિયં કેરિસં હોદ્ ॥ ૧ ॥

અત્યં ભાસદ્ અરિહા, સુત્તં ગુંફંતિ ગણહરા નિઝણા ।

સમણસ્સ હિયદ્દાણ, તતો સુત્તં પવત્તઈ ॥ ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન પહેલા અર્થની પ્રરૂપણા કરે છે, અને એજ અર્થને ગણધર ભગવાન સૂત્રના રૂપમાં ગુંથે છે. અર્થના વગર સૂત્ર નિશ્ચાર નીને



પ્રિયદર્શિની ટીકાં. અં ૧ ગાં ૨૩ સ્થાનં તદુભયેષુ ચંચોત્તરં પ્રાવલ્યમ્ । ૧૭૨

રચ્યન્તે । एवं वस्त्रस्थानीयस्यार्थस्य हृत्त्वम्, पेटिकास्थानीयस्य तु सूत्रस्याणु-  
त्वमेव । यदप्युक्तम्—अर्थो महानित्यस्यैकान्तता नास्तीति तदप्यविचारितभाषितम्  
—उत्क्षिप्तज्ञातादिषु सत्त्वानुकम्पादिकोऽर्थस्तत्तदध्ययनमात्रस्य, अशेषस्य तु सूत्रस्य  
तदतिरिक्ता अपि बहवोऽर्थाः सन्ति ।

॥ इति अष्टमं द्वारम् ॥

અર્થ કે વિના સૂત્ર નિશ્ચારહિત હોતા હુઆ દશદાહિમ આદિ વાક્ય  
કી તરહ કેવલ અસંબદ્ધ ઓર નિર્થક હી માના જાતા હૈ । ૨ । જો યહ  
કહા હૈ કિ પેટી કી તરહ સૂત્ર વાદર હોતા હૈ તથા વસ્ત્રાદિક કી તરહ  
અર્થ અણુ હોતા હૈ સો યહ કહના મી ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ જિસ  
પ્રકાર ડસી પેટી કે કિસી એક વસ્ત્ર દ્વારા ડસી પેટી જૈસી અનેક પેટિયા  
લપેટી જા સકતી હૈં ડસી પ્રકાર એક અર્થ સે અનેક સૂત્ર રચે જા સકતે હૈં ।  
इस तरह वस्त्रस्थानीय अर्थ में महत्व आता है और पेटी स्थानीय  
सूत्र में अणुत्व हो । एकान्तसे अर्थ में महत्व नहीं है क्योँ कि उत्क्षिप्त  
आदि अध्ययनों में जो कहा गया है वह सत्त्वानुकम्पादिक रूप अर्थ  
उस अध्ययनमात्र का ही है, अर्थात् उनमें अनुकम्पादि अर्थों की ही  
प्रधानता है । और अनुकम्पादि अर्थों को ही सिद्ध किया है । न कि  
अवशिष्ट समस्त सूत्र का । उसके तो उससे अतिरिक्त और भी  
अनेक अर्थ हैं ।

॥ यह आठवाँ द्वार संपूर्ण हुआ ॥ ८ ॥

દશદાહીમ આદિ વાક્યની માફક કેવળ અસંબદ્ધિત અને નિર્થક જ માનવામાં  
આવે છે. એમ કહેવામાં આવે કે પેટીની માફક સૂત્ર બાદર હોય છે, તથા  
વસ્ત્રાદિકની માફક અર્થ અણુ હોય છે તો તે કહેવું પણ ઠીક નથી. કેમ કે, એ  
પેટીના કેઈ એક વસ્ત્રમાં આવી અનેક પેટીઓ બાંધી શકાય છે. એજ રીતે  
એક અર્થથી અનેક સૂત્ર રચી શકાય છે. આ રીતે વસ્ત્રનું સ્થાનીય અર્થમાં  
મહત્વ આવે છે. અને પેટી સ્થાનીય સૂત્રમાં અણુત્વ જ એકાન્તથી અર્થમાં મહત્વ  
નથી એવું જ કહેવામાં આવેલ છે તે પણ ઠીક નથી. કેમ કે, ઉત્ક્ષિપ્ત વગેરે  
અધ્યયનમાં જે કહેવાયેલ છે તે સત્ત્વાનુકંપાદિક રૂપ અર્થ તે તે અધ્યયન  
માત્રાના જ છે. અર્થાત્ તેમાં અનુકંપાદિ અર્થોની જ પ્રધાનતા છે. અને અનુ  
કંપાદિ અર્થોને જ સિદ્ધ કરેલ છે. ન કે અવશિષ્ટ બધા સૂત્રોને. એના તો એનાથી  
બીજા ઘણા અર્થો છે.

॥ આ આઠમું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું. ॥ ૮ ॥

અથ નવમં દ્વારમ્—સૂત્રાર્થતદુભયેષુ યથોત્તરં માત્રલ્યમ્—

દ્વાદશાન્ગમધીયાનાનાં વૈયાવૃત્ત્યે ક્રિયમાણે તેષાં વૈયાવૃત્ત્યકારણાં મહતી નિર્જરા ભવતિ તદાવરણીયસ્ય કર્મણઃ ક્ષયકરણાત્, તેષાં મહાપર્યવસાનં ચ ભવતિ—પુનરન્ય નવકર્મવન્ધાભાવાત્ । નનુ કસ્ય કીદૃશી નિર્જરા ભવતિ ?

અત્રોચ્યતે—સૂત્રેઽર્થ ચ યથોત્તરં વલત્વતી નિર્જરા । આવશ્યકાદિયાવચ્ચતુર્દશ પૂર્વાણિ સૂત્રં, તદ્વારા યથોત્તરં મહતી મહત્તરા નિર્જરા ભવતિ । इयमत्र भावना—एक आवश्यकसूत्रधरस्य वैयावृत्यं करोति, अपरो दशवैकालिकसूत्रधरस्य वैयावृत्यक-

સૂત્ર, અર્થ એવં સૂત્રાર્થ મેં યથોત્તર પ્રવલતા કા કથન નવમે દ્વાર મેં કરતે હેં—

દ્વારશાંગ કો પઢતે હેં ઓર વે વૈયાવૃત્ત્ય કરતે હેં (અર્થાત્ આચાર્ય ઉપાધ્યાય કી સેવા કરતે હેં) ડનકો શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મો કી મહા-નિર્જરા હોતી હૈ તથા અન્ય નવીન કર્મ કા વન્ધ બી નહીં હોતા હૈ । કિસકે કૈસી નિર્જરા હોતી હૈ ? હિસ વાત કો સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—સૂત્ર એવં અર્થ કો પઢને વાલો કી યથોત્તર મહાનિર્જરા હોતી હૈ । આવશ્યક સૂત્ર સે લેકર ૧૪ પૂર્વતક કે આગમ સૂત્ર હેં । ડનકે દ્વારા ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા હોતી હૈ મો તાત્પર્ય હિસકા હિસ પ્રકાર હૈ કિ કોઈ મુનિ આવશ્યક સૂત્ર કો જાનને વાલે કી વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરતા હૈ ઓર કોઈ દૂસરા દશવૈકાલિક સૂત્ર કો જાનને વાલે કી વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરતા હૈ । તો ડનમેં આવશ્યક સૂત્ર કો જાનને વાલે કી વૈયાવૃત્તિ કરને વાલે કી નિર્જરા કી અપેક્ષા જો દશવૈકાલિક કો પઢાને વાલે કી વૈયા-

સૂત્ર, અર્થ એવં સૂત્રાર્થમાં યથોત્તર પ્રવલતાનું કથન નવમાં દ્વારમાં કરે છે.—

દ્વાદશાંગ લાણે છે અને જે વૈયાવૃત્ત્ય કરે છે. (આચાર્ય—ઉપાધ્યયની સેવા કરે છે) અને શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મોની મહાનિર્જરા થાય છે. તથા નવા બીજા કર્મોનો બંધ પણ થતો નથી. કોને કેવી નિર્જરા થાય છે ? આ વાતને સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.—

સૂત્ર અને અર્થને લાણવાવાળાને યથોત્તર મહાનિર્જરા થાય છે. આવશ્યક સૂત્રથી લઈ ૧૪ પૂર્વ સુધીનાં આગમ સૂત્ર છે, એના દ્વારા ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા થાય છે. મતલબ કેઈ મુનિ આવશ્યક સૂત્રને લાણવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરે છે અને કેઈ બીજા દશવૈકાલિક સૂત્રને લાણવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરે છે. તો એમાં આવશ્યકસૂત્રને લાણવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ કરવાવાળાની નિર્જરાને બદલે જે દશવૈકાલિકના લાણવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ કરવાવાળા છે,

રસ્તસ્યાવશ્યકસૂત્રધરવૈયાવૃત્ત્યકરાપેક્ષયા મહતી નિર્જરા, આવશ્યકસૂત્રધરસ્યૈવ દશ-  
વૈકાલિકાધ્યયનેઽધિકારાત્ । એવમ્ અથસ્તનાથસ્તનતરશ્રુતધરવૈયાવૃત્ત્યકરાપેક્ષયા  
અર્પ્યપસ્તિનશ્રુતધરવૈયાવૃત્ત્યકરો યથોત્તરં મહાનિર્જરાવાન્ ભવતિ । એવં ત્રયોદશ-  
પૂર્વધરવૈયાવૃત્ત્યકરાપેક્ષયા ચતુર્દશપૂર્વધરવૈયાવૃત્ત્યકરો મહાનિર્જરાકારી ભવતિ ।  
એવમર્થેનિ ભાવનીયમ્ । આવશ્યકાર્થધરસ્ય યો વૈયાવૃત્ત્યં કરોતિ, તદપેક્ષયા દશ-  
વૈકાલિકાધેધરસ્ય યો વૈયાવૃત્ત્યકરસ્તસ્ય મહતી નિર્જરા ભવતિ, એવં પૂર્વવદ્વોધ્યમ્  
યથા સૂત્રે યથોત્તરં વલિષ્ઠતા એવમર્થેઽપિ ભાવનીયા । તત્ર વિશેષસ્તુ-અર્થધરવૈયા-

વૃત્તિ કરને ચાલા છે उसके મહાનિર્જરા होती है । क्योंकि आवश्यक  
सूत्र को पढ चुकने वाले का ही अधिकार दशवैकालिक सूत्र के अध्ययन  
में होता है । इस प्रकार नीचे २ श्रुत को धारण करने वालों की वैया-  
वृत्ति करने वालों की निर्जरा की अपेक्षा जो ऊपर २ के श्रुत को धारण  
करने वाले हैं उनकी वैयावृत्ति करने वालों की निर्जरा यथोत्तर अधिक  
अधिकतर होती है । इसी तरह जो तेरहपूर्व के धारी हैं उनकी जो वैयावृत्ति  
करने वाला है उसके जितनी निर्जरा होगी उसकी अपेक्षा जो १४ पूर्व  
के पाठियों की वैयावृत्ति करने वाला होगा उसकी मહાનિર્જરા होगी ।  
इसी तरह इनके अर्थ विषय में भी समझ लेना चाहिये । जैसे-जो आव-  
श्यक सूत्र के अर्थ का पाठी है उसका जो वैयावृत्त्य करने वाला है उसके  
जितनी निर्जरा होगी उसकी अपेक्षा जो दशवैकालिक सूत्र के अर्थ का  
पाठी है उनकी वैयावृत्ति करने वाले की निर्जरा अधिकतर होगी । इस  
तरह पहिले की तरह अर्थ के विषय में लगा लेना चाहिये । जिस तरह

એને મહાનિર્જરા થાય છે. કેમકે, આવશ્યક સૂત્ર પુરી રીતે શીખી લેનારનો જ  
અધિકાર દશવૈકાલિકસૂત્રના અધ્યયનનો હોય છે. આ રીતે નીચે નીચેનાં શ્રુતને  
ધારણ કરવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ કરનારને નિર્જરાની અપેક્ષા જે ઉપર ઉપરનાં  
શ્રુતને ધારણ કરવાવાળા છે એની વૈયાવૃત્તિ કરનારની નિર્જરા યથોત્તર અધિક  
અધિકતર થાય છે. આ રીતે જે તેરપૂર્વના ધારક છે એમની જે વૈયાવૃત્તિ કરે  
છે, એને જેટલી નિર્જરા થાય એની અપેક્ષા જે ચૌદપૂર્વના ધારક છે એની વૈયાવૃત્તિ  
કરવાવાળાને મહાનિર્જરા થાય છે આવી જ રીતે અર્થમાં પણ સમજવું જોઈ એ.  
જે આવશ્યક સૂત્રના અર્થના પાઠી છે, એનો વૈયાવૃત્તિ કરનારની જેટલી નિર્જરા  
થાય એની અપેક્ષા જે દશવૈકાલિક સૂત્રના અર્થના પાઠી છે એમની વૈયાવૃત્તિ  
કરવાવાળાની નિર્જરા અધિકતર થાય છે. એજ રીતે પહેલાની માફક અર્થના વિષ-  
યમાં સમજી લેવું જોઈ એ. જે રીતે સૂત્રમાં ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા કહી છે એજ

વૃત્યકરેષુ નિશીથ-વૃહત્કલ્પ-વ્યવહારાર્થધરાણાં વૈયાવૃત્તકરો મહાનિર્જરાવાન્  
ભવતિ । તથા દ્વાદશાંગીધરસ્ય વૈયાવૃત્તકરઃ । શેષાર્થેભ્યઃછેદ સૂત્રાર્થસ્ય ચલવસ્ત્વે  
કિં કારણમિતિ ચેત્-ઉચ્યતે-સ્વલિતચારિત્રસ્ય છેદસૂત્રાર્થેન શોધિર્ભવતિ, તસ્માત્  
શેષાત્ સર્વસ્માદપ્યર્થાત્ છેદસૂત્રાર્થો ચલવાન્ ।

સૂત્રેઽર્થે તથા યુગપત્ તદુભયર્થમિથિન્ત્યમાને યથોત્તરં નિર્જરા ચલવતી ભવતિ ।  
સૂત્રાપેક્ષયાઽર્થો મહદ્દિકઃ, અર્થાપેક્ષયા તદુભયો મહદ્દિકઃ, તત્ર કિં કારણમિતિ  
ચેત્ ? અત્રોચ્યતે-ગૃહનિષ્પત્તૌ યત્ સાધનં-કાષ્ઠ પાપાણાદિ, તત્સંગ્રહે કૃતે સત્યેવ

સૂત્ર મેં ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા કહી હેં उसी तरह अर्थ में उत्तरोत्तर  
महानिर्जरा समझनी चाहिये । अर्थधरों की वैयावृत्ति करने वालों में  
निशीथ, सूत्र, वृहत्कल्पसूत्र, एवं व्यवहार सूत्र के अर्थधरों की वैयावृत्ति  
करने वालों के महानिर्जरा होते हैं तथा-द्वादशांगी के पाठी की वैया-  
वृत्ति करनेवाला महानिर्जरा करता है । शेष अर्थ की अपेक्षा छेद सूत्रों  
के अर्थों में अधिकता क्यों कही गई है, उसका समाधान इस प्रकार  
है । यदि कोई साधु अपने गृहीत चारित्र से स्वलित हो जाता है तो  
उसकी शुद्धि छेदश्रुत के अर्थ से होती है । इसलिये अवशिष्ट-समस्त  
अर्थों की अपेक्षा छेदश्रुतों का अर्थ अधिक कहा गया है ।

સૂત્ર કા, અર્થ કા તથા યુગપત્ સૂત્રાર્થ કા અધ્યયન કરને પર યથો-  
ત્તર અધિક ૨ નિર્જરા હોતી હે । સૂત્ર કી અપેક્ષા અર્થ મહાન્ હોતા હે  
ઔર અર્થ કી અપેક્ષા તદુભય-સૂત્ર ંવં અર્થ-યે દોનોં મહાન્ હોતે હે ।  
હસમેં કારણ યહ હે કિ જિસ પ્રકાર ઘર બનાને મેં જો કાષ્ઠપાષાળ  
આદિ સાધન હે જબ उनका संग्रह हो जाता है तब घर बनता है । उसी

રીતે અર્થમાં ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા સમજવી જોઈએ. અર્થધરોની વૈયાવૃત્તિ  
કરવાવાળામાં નિશીથસૂત્ર, વૃહત્કલ્પસૂત્ર અને વ્યવહારસૂત્રના અર્થધરોની  
વૈયાવૃત્તિ કરવાવાળાને મહાનિર્જરા થાય છે. તથા દ્વાદશાંગીના પાઠીની વૈયાવૃત્તિ  
કરનાર મહાનિર્જરા કરે છે. શેષ અર્થની અપેક્ષા છેદ સૂત્રોના અર્થોમાં અધિ-  
કતા કેમ કહેવામાં આવી છે, એનું સમાધાન આ પ્રકારનું છે.-જો કોઈ સાધુ  
પોતે ગ્રહણ કરેલા ચારિત્રથી સ્વલિત થઈ જાય છે. તો એની શુદ્ધિ છેદશ્રુતના  
અર્થથી થાય છે. આ માટે અવશિષ્ટ-સમસ્ત અર્થોની અપેક્ષા છેદશ્રુતોનો અર્થ  
અધિક કહેવાયેલ છે.

સૂત્રનું, અર્થનું તથા યુગપત્ સૂત્રાર્થનું અધ્યયન કરવાથી યથોત્તર અધિક  
અધિક નિર્જરા થાય છે. સૂત્રની અપેક્ષા અર્થ મહાન હોય છે. આમાં એ કારણ  
છે કે, જે રીતે ઘર બનાવવામાં પાણા લાકડાં વગેરે સાધન છે, અને તેનો સંગ્રહ

ગૃહં નિષ્પદ્યતે, તથાઽર્થાનુસંધાને સત્યેવ સૂત્રં નિષ્પદ્યતે, અતઃ સૂત્રાપેક્ષયાઽર્થસ્ય પ્રાધાન્યં ભવતિ । કિં ચ-સૂત્રંગણધર પ્રોક્તમ્, અર્થસ્તુ ભગવદ્વોધિતસ્તસ્માત્ સૂત્રાપેક્ષયાઽર્થસ્ય પ્રાધાન્યં ભવતિ । તથાચોક્તમ્—

તિત્થગરદ્વાણો સ્વલુ, અત્યો સુત્તં તુ ગણધરદ્વાણં ।

અત્થેણ ય વંજિજ્જડ્ સુત્તં, તમ્હા ઉ સો વલ્લવં ॥ ૧ ॥

છાયા-તીર્થકરસ્થાનઃ સ્વલુ અર્થઃ, સૂત્રં તુ ગણધરસ્થાનમ્ ।

અર્થેન ચ વ્યજ્યતે સૂત્રં, તસ્માત્તુ સ વલ્લાન્ ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—અર્થઃ સ્વલુ તીર્થકરસ્થાનઃ, તસ્ય તેનાભિદિતત્વાત્ । સૂત્રં તુ ગણધરસ્થાનં તસ્ય તૈર્ગ્રથિતત્વાત્ । અર્થેન ચ યસ્માત્ સૂત્રં વ્યજ્યતે=પ્રકટીક્રિયતે, તસ્માત્ સોઽર્થઃ સૂત્રાદ્ વલ્લાન્ ॥ ૧ ॥

સૂત્રાપેક્ષયાઽર્થાપેક્ષયા ચ સૂત્રાર્થોભયસ્ય પ્રાવલ્યે દૃષ્ટાન્તઃ, પ્રદર્શ્યતે । યથા જાતમાત્રં દધિ મધુરં, તદપેક્ષયા શર્કરા મધુરતરા, એકત્ર સંમિલિતે દધિશર્કરે શ્રીશ્વ-

તરહ અર્થ કા અનુસંધાન જવ હોતા હૈ તમી ગણધર ભગવાન સૂત્રોં કી રચના કરતે હૈ । અતઃ સૂત્ર કી અપેક્ષા અર્થ મેં પ્રધાનતા આતી હૈ । તથા-સૂત્ર ગણધરોં ને કહે હૈં ઔર અર્થ પ્રભુ દ્વારા પ્રરૂપિત હુઆ હૈં હસલિયે મી સૂત્રકી અપેક્ષા અર્થ મેં પ્રધાનતા આજાની હૈ । કહા મી હૈ-અર્થ તીર્થકર કે સ્થાનાપન્ન હૈ ક્યોં કિ તીર્થકર હી અર્થ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં । સૂત્ર ગણધર કે સ્થાનાપન્ન હૈ ક્યોં કિ વહુ ઉનકે દ્વારા ગ્રથિત હોતા હૈ । અર્થ સે હી સૂત્ર ઉત્પન્ન હોતા હૈ અતઃ અર્થ હો પ્રધાન હૈ । સૂત્ર કી અપેક્ષા એવં અર્થ કી અપેક્ષા સૂત્રાર્થ કિસ પ્રકાર પ્રધાન હોતા હૈ યહ ઘાત દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સ્પષ્ટ કી જાતી હૈં-જૈસે-તાજા દહી મીઠા હોતા હૈ । દહી કી અપેક્ષા શર્કર મીઠી હોતી હૈ । જવ ઇન દોનોં કા પરસ્પર

કરવામાં આવે છે ત્યારે જ ધર બને છે એ જ રીતે અર્થનું અનુસંધાન થાય છે, ત્યારે ગણધર ભગવાન સૂત્રોની રચના કરે છે. આથી સૂત્રની અપેક્ષાએ અર્થમાં પ્રધાનતા આવે છે. તથા-સૂત્ર ગણધરોએ કહેલ છે, અને અર્થ પ્રભુ દ્વારા પ્રરૂપિત થયેલ છે. આ કારણે પણ અર્થમાં પ્રધાનતા આવે છે. કહ્યું પણ છે.-અર્થ તીર્થકર પ્રભુના સ્થાનાપન્ન છે કેમકે, તીર્થકર જ અર્થની પ્રરૂપણા કરે છે. સૂત્ર ગણધરનાં સ્થાનાપન્ન છે કેમકે, તે એમના દ્વારા ગ્રથિત થાય છે. અર્થથી જ સૂત્ર ઉત્પન્ન થાય છે આથી અર્થ જ પ્રધાન છે. સૂત્રની અપેક્ષા અને અર્થની અપેક્ષા સૂત્રાર્થ કઈ રીતે પ્રધાન હોય છે, તે વાત દૃષ્ટાંત દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.—જેમ-તાણું દહીં મીઠું હોય છે, અને દહીંથી સાકર મીઠી હોય છે, ત્યારે એ બન્ને ને એક બીજા સાથે મેળવવામાં આવે છે ત્યારે



ઘડનામકં દ્રવ્યં ભવતિ, તત્ સ્વલુ ઉમાખ્યાં પૃથગસ્થિતાખ્યાં દેધિશર્કરાખ્યામધિકં  
વિશિષ્ટાસ્વાદજનકં યથા ભવતિ, તથા સૂચાર્યોભયસ્ય સર્વભાવાધિગમકારણત્વેન  
વિશિષ્ટભાવશુદ્ધિજનકત્વાત્ સર્વતઃ પ્રાધાન્યમ્ । અતસ્તદુભયધરસ્ય મહતી નિર્જરા  
ભવતિ ॥ ૨૩ ॥

॥ इति नवमं द्वारम् ॥

પુનઃ શિષ્યસ્ય વાગ્વિનયમાહ—

મૂલમ્—મુંસં પરિહરે ભિક્ષુવું, નં યં ઓહારણિ વણ ।

ભાસાંદોસં પરિહરે, મોયં ચં વર્જેણ સયો ॥ ૨૪ ॥

મેં સંમિશ્રણ હો જાતા હૈ તો ઉસસે શ્રીલંઢનામ કા એક અપૂર્વ મધુર  
પદાર્થ વનતા હૈં । ઉસકા સ્વાદ ન દહી જૈસા હોતા હૈ ઓર ન શકર  
જૈસા હોતા હૈ । કિન્તુ इन दोनों से विलक्षण स्वाद होता है । इसी  
तरह सूत्र अर्थ ये दोनों जब सम्मिलित होते हैं तब इनसे समस्त भावों  
का-पदार्थों के स्वरूप का ज्ञान होने लगता है जो न केवल सूत्र से साध्य  
है और न केवल अर्थ से । इससे विशिष्ट भावों की अर्थात्-अध्यवसायों  
की विशिष्ट शुद्धि होती है । इसलिये सूत्र और अर्थ इन दोनों की  
अपेक्षा तदुभय प्रधान कहा गया है और इसीलिये केवल सूत्रधारी  
अथवा केवल अर्थधारी को अपेक्षा तदुभयधारी की सेवा करने वाले  
के महानिर्जरा होती है । इस तरह तेवीसवीं गाथा का अर्थ संक्षेप से  
संपूर्ण हुआ विस्तार से अर्थ अन्य शास्त्रों से समझना चाहिये ॥ २३ ॥

નવમા દ્વાર સમ્પૂર્ણ

એનાથી શ્રીખંડ નામનો એક અપૂર્વ મધુર પદાર્થ બને છે, જેનો સ્વાદ ન દહીં  
જેવો હોય છે અને ન તો શાકર જેવો. પરંતુ આ બન્નેથી બુદ્ધિ જ બતતને  
સ્વાદ હોય છે. આવીજ રીતે સૂત્ર અને અર્થ એ બન્ને બ્યારે સમ્મિલિત હોય  
છે, ત્યારે એનાથી 'સમસ્ત ભાવોનું-પદાર્થોના સ્વરૂપનું' જ્ઞાન થવા લાગે છે. જે  
ન કેવળ સૂત્રથી સાધ્ય છે અને ન કેવળ અર્થથી. એનાથી વિશિષ્ટ ભાવોની  
અર્થાત્-અધ્યવસાયોની વિશિષ્ટ શુદ્ધિ થાય છે. આ માટે સૂત્ર અને અર્થ આ  
બન્નેની અપેક્ષા તદુભય પ્રધાન કહેવામાં આવેલ છે. અને એજ માટે કેવળ સૂત્ર  
ધારી અથવા કેવળ અર્થધારીની અપેક્ષા તદુભયધારીની સેવા કરવાવાળાની મહા-  
નિર્જરા થાય છે. આ રીતે તેવીસમી ગાથાનો અર્થ સંક્ષેપથી સંપૂર્ણ થયો.  
વિસ્તારથી અર્થ અન્ય શાસ્ત્રોથી સમજવો જોઈ એ. ॥ ૨૩ ॥

નવમું દ્વાર સંપૂર્ણ

છાયા—મૃપા પરિહરેદ્ મિશ્નુઃ, ન ચાવધારણીં વદેત્ ।

ભાષાદોષં પરિહરેત્, માયાં ચ વર્જયેત્ સદા ॥ ૨૪ ॥

ટીકા—‘ મુસં પરિહરે ’ इत्यादि ।

મિશ્નુઃ=સાધુઃ, મૃપા=મૃપાવાદમ્-અસત્યવચનં પરિહરેત્=વર્જયેત્ । મૃપાવાદઃ સંક્ષેપેણ દ્વિવિધઃ-લૌકિકો લોકોત્તરશ્ચ । તત્ર પ્રત્યેકં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ-ભેદા-ચતુર્ધા । દ્રવ્યતો લૌકિકમૃપાવાદઃ-વિપરીતદ્રવ્યકથનમ્, યથા-ગામ્ અથં કથયતિ । ક્ષેત્રતઃ-યથા-અન્યદીયક્ષેત્રં પ્રતિ મદીયમિદં ક્ષેત્રમ્, इति कथनम् । एवमेव कालेऽपि भूत भविष्यद् वर्तमानविषये विपरीतकथनम्, यथा—पूर्वाह्णं प्रति-मध्याह्नकालो-ऽयमिति कथनम् इत्यादि ।

ભાવતો લૌકિકમૃપાવાદઃ-ક્રોધાદિકપાયનિમિત્તકઃ, તત્ર ક્રોધતો યથા-રુષ્ટઃ પુત્રો વદતિ નૈવ મમ પિતા, રુષ્ટઃ પિતા વા વદતિ-નૈવ મમ પુત્ર इति । मानतो

शिष्य के वचनविनय के विषय में सूत्रकार समझाते हुए कहते हैं कि—‘ मुसं० ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—( મિશ્નુ મુસં પરિહરે-મિશ્નુઃમૃપા પરિહરેત્ ) મિશ્નુ-સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ મૃપાવાદ કા પરિત્યાગ કર દેવે । મૃપાવાદ સંક્ષેપ સે દો પ્રકાર કા હૈ-એક લૌકિક ઓર દૂસરા લોકોત્તર । યે દોનોં દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, એવં ભાવ સે ચાર ૨ પ્રકાર કે હૈં । વિપરીત દ્રવ્ય કા કહના યહ દ્રવ્ય સે લૌકિક મૃપાવાદ હૈ જૈસે ગાય કો ઘોડા કહના ॥ ૧ ॥ દૂસરે કે ક્ષેત્રકો અપના ક્ષેત્ર વનાના યહ ક્ષેત્ર કો અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૨ ॥ પૂર્વાહ્ન કો મધ્યાહ્નકાલ વતલના યહ કાલ કો અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૩ ॥ જો ક્રોધાદિ કપાય નિમિત્તક હોતા હૈ વહ ભાવ કો અપેક્ષા મૃપાવાદ કહલાતા હૈ ૪ ॥ વહ ભી ચાર પ્રકાર કા હૈ-જૈસે ક્રોધ કે આવેશ મેં

શિષ્યના વચનવિનયના વિષયમાં સૂત્રકાર સમજાવતાં કહે છે કે—મુસં૦ ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—મિશ્નુમુસં પરિહરે-મિશ્નુઃ મૃપાપરિહરેત્ મિશ્નુ-સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે મૃપાવાદનો પરિત્યાગ કરી દે. મૃપાવાદ સંક્ષેપથી બે પ્રકારે છે. એક લૌકિક અને બીજો લોકોત્તર આ બંને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવથી ચાર પ્રકારના છે. વિપરીત દ્રવ્યનું કહેવું એ દ્રવ્યથી લૌકિક મૃપાવાદ છે, જેમ ગાયને ઘોડો કહેવો, ॥૧॥ બીજાના ક્ષેત્રને પોતાનું ક્ષેત્ર બનાવવું તે ક્ષેત્રની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. ॥૨॥ સવારને મધ્યાહન કાળ કહેવો એ કાળની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. ॥૩॥ જે ક્રોધાદિક કપાય નિમિત્ત બને છે, તે ભાવની અપેક્ષા મૃપાવાદ કહેવાય છે. ॥૪॥ તે પણ ચાર પ્રકારથી છે. જેમ ક્રોધનાં આવેશમાં આવીને પુત્ર કહે છે કે આ મારો પિતા નથી અથવા જે સમય

ળડનામકં દ્રવ્યં ભવતિ, તત્ સ્વલુ ઉમાખ્યાં પૃથગસ્થિતાખ્યાં દધિર્ગર્ભાખ્યામધિકં  
વિશિષ્ટાસ્વાદજનકં યથા ભવતિ, તથા સૂત્રાર્થોભયસ્ય સર્વભાવાધિગમકારણત્વેન  
વિશિષ્ટભાવશુદ્ધિજનકત્વાત્ સર્વતઃ પ્રાધાન્યમ્ । અતસ્તદુભયધરસ્ય મહતી નિર્જરા  
ભવતિ ॥ ૨૩ ॥

॥ इति नवमं द्वारम् ॥

પુનઃ શિષ્યસ્ય વાગ્વિનયમાહ—

મૂલમ્—મુંસં પરિહેરે ભિક્ષુ, નં યં ઓહારણિ વણ ।

ભાસાંદોસં પરિહેરે, મોયં ચં વર્જાણ સયો ॥ ૨૪ ॥

મેં સંમિશ્રણ હો જાતા હૈ તો ઉસસે શ્રીગ્વંડનામ કા એક અપૂર્વ મધુર  
પદાર્થ વનતા હૈં । ઉસકા સ્વાદ ન દહી જૈસા હોતા હૈ ઓર ન શક્કર  
જૈસા હોતા હૈ । કિન્તુ इन दोनों से विलक्षण स्वाद होता है । इसी  
तरह सूत्र अर्थ ये दोनों जब सम्मिलित होते हैं तब इनसे समस्त भावों  
का-पदार्थों के स्वरूप का ज्ञान होने लगता है जो न केवल सूत्र से साध्य  
है और न केवल अर्थ से । इससे विशिष्ट भावों की अर्थात्-अध्यवसायों  
की विशिष्ट शुद्धि होती है । इसलिये सूत्र और अर्थ इन दोनों की  
अपेक्षा तदुभय प्रधान कहा गया है और इसीलिये केवल सूत्रधारी  
अथवा केवल अर्थधारी की अपेक्षा तदुभयधारी की सेवा करने वाले  
के महानिर्जरा होती है । इस तरह तेवीसवीं गाथा का अर्थ संक्षेप से  
संपूर्ण हुआ विस्तार से अर्थ अन्य शास्त्रों से समझना चाहिये ॥ २३ ॥

નવમા દ્વાર સમ્પૂર્ણ

એનાથી શ્રીગ્વંડ નામનો એક અપૂર્વ મધુર પદાર્થ બને છે, જેનો સ્વાદ ન દહીં  
જેવો હોય છે અને ન તો સાકર જેવો. પરંતુ આ બન્નેથી બુદ્ધિ જ બાતનો  
સ્વાદ હોય છે. આવીજ રીતે સૂત્ર અને અર્થ એ બન્ને બ્યારે સંમિશ્રિત હોય  
છે, ત્યારે એનાથી સમસ્ત લાવેનું-પદાર્થોના સ્વરૂપનું જ્ઞાન થવા લાગે છે. જે  
ન કેવળ સૂત્રથી સાધ્ય છે અને ન કેવળ અર્થથી. એનાથી વિશિષ્ટ લાવેની  
અર્થાત્-અધ્યવસાયોની વિશિષ્ટ શુદ્ધિ થાય છે. આ માટે સૂત્ર અને અર્થ આ  
બન્નેની અપેક્ષા તદુભય પ્રધાન કહેવામાં આવેલ છે. અને એજ માટે કેવળ સૂત્ર  
ધારી અથવા કેવળ અર્થધારીની અપેક્ષા તદુભયધારીની સેવા કરવાવાળાની મહા-  
નિર્જરા થાય છે. આ રીતે તેવીસમી ગાથાનો અર્થ સંક્ષેપથી સંપૂર્ણ થયો.  
વિસ્તારથી અર્થ અન્ય શાસ્ત્રોથી સમજવો જોઈ એ. ॥ ૨૩ ॥

નવમું દ્વાર સંપૂર્ણ

ઝાયા—મૃપા પરિહરેદ્ મિશ્નુઃ, ન ચાવધારણીં વ્રદેત્ ।

ભાષાદોષં પરિહરેત્, માયાં ચ વર્જયેત્ સદા ॥ ૨૪ ॥

ટીકા—‘મુસં પરિહરે’ ઇત્યાદિ ।

મિશ્નુઃ=સાધુઃ, મૃપા=મૃપાવાદમ્-અસત્યવચનં પરિહરેત્=વર્જયેત્ । મૃપાવાદઃ સંક્ષેપેણ દ્વિવિધઃ-લૌકિકો લોકોત્તરશ્ચ । તત્ર પ્રત્યેકં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ-ભેદા-ચતુર્થાં । દ્રવ્યતો લૌકિકમૃપાવાદઃ-વિપરીતદ્રવ્યકથનમ્, યથા-ગામ્ અશ્વં કથયતિ । ક્ષેત્રતઃ-યથા-અન્યદીયક્ષેત્રં પ્રતિ મદીયમિદં ક્ષેત્રમ્, ઇતિ કથનમ્ । એવમેવ કાલેऽપિ ભૂત ભવિષ્યદ્ વર્તમાનવિષયે વિપરીતકથનમ્, યથા—પૂર્વાહ્નં પ્રતિ-મધ્યાહ્નકાલો-ઽપમિતિ કથનમ્ ઇત્યાદિ ।

ભાવતો લૌકિકમૃપાવાદઃ-ક્રોધાદિકપાયનિમિત્તકઃ, તત્ર ક્રોધતો યથા-રુષ્ટઃ પુત્રો વદતિ નૈવ મમ પિતા, રુષ્ટઃ પિતા વા વદતિ-નૈવ મમ પુત્ર ઇતિ । માનતો

શિષ્ય કે વચનવિનય કે વિષય મેં સૂત્રકાર સમજાતે હુણ કહતે હૈં કિ—‘મુસં૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—( મિશ્નુ મુસં પરિહરે-મિશ્નુઃમૃપા પરિહરેત્ ) મિશ્નુ-સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ મૃપાવાદ કા પરિત્યાગ કર દેવે । મૃપાવાદ સંક્ષેપ સે દો પ્રકાર કા હૈ-એક લૌકિક ઓર દૂસરા લોકોત્તર । યે દોનોં દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, એવં ભાવ સે ચાર ૨ પ્રકાર કે હૈં । વિપરીત દ્રવ્ય કા કહના યહ દ્રવ્ય સે લૌકિક મૃપાવાદ હૈ જૈસે ગાય કો ઘોડા કહના ॥ ૧ ॥ દૂસરે કે ક્ષેત્રકો અપના ક્ષેત્ર બનાના યહ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૨ ॥ પૂર્વાહ્ન કો મધ્યાહ્નકાલ વતલાના યહ કાલ કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૩ ॥ જો ક્રોધાદિ કપાય નિમિત્તક હોતા હૈ વહ ભાવ કી અપેક્ષા મૃપાવાદ કહલાતા હૈ ૪ ॥ વહ ભી ચાર પ્રકાર કા હૈ-જૈસે ક્રોધ કે આવેશ મેં

શિષ્યના વચનવિનયના વિષયમાં સૂત્રકાર સમજાવતાં કહે છે કે—મુસં૦ ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—મિશ્નુમુસં પરિહરે-મિશ્નુઃ મૃપાપરિહરેત્ મિશ્નુ-સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે મૃપાવાદનો પરિત્યાગ કરી દે. મૃપાવાદ સંક્ષેપથી બે પ્રકારે છે. એક લૌકિક અને બીજો લોકોત્તર આ બંને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવથી ચાર પ્રકારના છે. વિપરીત દ્રવ્યનું કહેવું એ દ્રવ્યથી લૌકિક મૃપાવાદ છે, જેમ ગાયને ઘોડો કહેવો, ॥૧॥ બીજાના ક્ષેત્રને પોતાનું ક્ષેત્ર બનાવવું તે ક્ષેત્રની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે ॥૨॥ સવારને મધ્યાહન કાળ કહેવો એ કાળની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. ॥૩॥ જે ક્રોધાદિક કપાય નિમિત્ત બને છે, તે ભાવની અપેક્ષા મૃપાવાદ કહેવાય છે. ॥૪॥ તે પણ ચાર પ્રકારથી છે. જેમ ક્રોધનાં આવેશમાં આવીને પુત્ર કહે છે કે આ મારો પિતા નથી અથવા જે સમય

યથા-અસ્ય કુદુમ્બસ્ય ભરણપોષણાદિકાર્યં કર્તું કો માં વિહાય સમર્થઃ ? । માયાતો  
 યથા-રાજકરગ્રાહકઃ કંચિદ્ વ્યાપારિણં વિક્રયવસ્તુ સમાદાય સ્વસ્થાનમાગતં પ્રતિ  
 પૃચ્છતિ-‘ કસ્યેદં વસ્તુજાતમ્ ’ ઇતિ, એવં પૃષ્ઠોઽસૌ વ્યાપારી માયયા કથયતિ-  
 ‘ નાસ્તિ મમેદં વસ્તુજાતમ્, અન્યદીયમેતત્ સર્વમ્ ’ ઇતિ ।

લોભતો યથા-વ્યાપારી લોભવશાદ્ વદતિ ગ્રાહકં પ્રતિ ‘ યાવતા મૂલ્યેન મયા  
 ક્રીતં, તાવતૈવ તવ હસ્તે વિક્રીણામિ કિંચિદપ્યધિકં મૂલ્યં ન ગૃહ્ણામી-’ તિ ।

લોકોત્તરમૃપાવાદઃ પ્રદર્શ્યતે-તવ દ્રવ્યતો યથા-જીવમ્ અજીવં વદતિ, અજીવં

આકર પુત્ર કહતા કિ યહ મેરા પિતા નહીં હૈ । અથવા જિસ સમય  
 પિતા રુઠ્ઠ હોતા હૈ, ઉસ સમય વહ કહતા હૈ કિ યહ મેરા પુત્ર નહીં હૈ,  
 યહ સવ કથન ક્રોધ રૂપ ભાવ કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ (૧) મન કષાય  
 કે વશવર્તી હોકર એસા કહના કિ યદિ મેં ન હોઝ તો ઇસ કુદુમ્બ કા  
 ભરણ પોષણ કૌન કરે (૨) માયા કે વશ મેં હોકર જો એસા કહતા  
 હૈ કિ યહ વસ્તુ મેરી નહીં હૈ યહ તો દૂસરોં કી હૈ, તાત્પર્ય ઇસકા  
 યહ હૈ જવ કોઈ વ્યાપારી કિસી રાજા કા કર લેને વાલે કે પૂછને પર  
 કિ યહ વિક્રેય વસ્તુ કિસકી હૈ તવ યહ માયા વશ કહતા હૈ કિ યહ  
 તો દૂસરો કી હૈ મેરી નહીં હૈ (૩) લોભ કે વશ હોકર જો झूठ વચન  
 બોલા જાતા હૈ વહ લોભ કષાય કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ-જૈસે વ્યાપારી  
 લોગ ગ્રાહકોં કો એસા કહતે હૈં કિ ભાઈ હમને જિતને મૂલ્ય મેં યહ  
 चीज खरीदी है उतने ही मूल्य में हम तुम्हें यह दे रहे हैं । कुछ भी  
 अधिक नहीं ले रहे हैं ॥ ૪ ॥ યહ સવ લૌકિક મૃપાવાદ હૈ । ચાર પ્રકાર  
 કા લોકોત્તર મૃપાવાદ ઇસ પ્રકાર હૈ-જીવ કો અજીવ કહના, અજીવ

પિતા કો ઘેત બને છે તે વળતે તે કહે છે કે, આ મારો પુત્ર નથી, આ સઘળાં  
 કથન ભાવની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે (૧) મન કષાયના વશવર્તી બનીને એવું કહેવું  
 કે જો હું ન હોઉં તો આ કુદુમ્બનું ભરણ પોષણ કેણુ કરે. (૨) માયાના વશમાં  
 આવીને જે એમ કહે છે કે આ વસ્તુ મારી નથી પણ બીજાની છે. મતલબ આની  
 એ છે કે, જ્યારે કોઈ રાજાનો કર્મચારી, કર વસુલ માટે આવે અને તેના પુછ-  
 વાથી કોઈ વેપારી પોતાની વસ્તુ હોવા છતાં માયા વશ બની પોતાની ન હોવાનું  
 કહી બીજાની હોવાનું બતાવે (૩) લોભના વશ બનીને જે જુદું વચન બોલવામાં  
 આવે છે તે લોભ કષાયની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. જેમ-વેપારી લોક ગ્રાહકોને  
 એમ કહે છે કે, ભાઈ જેટલી કિંમતે આ વસ્તુ મારા ઘરમાં પડેલ છે તેજ  
 કિંમતે હું તમોને આપું છું, કાંઈ પણ નફો લેતો નથી. (૪) આ બધા  
 લૌકિક મૃપાવાદ છે. ચાર પ્રકારના લોકોત્તર મૃપાવાદ આ પ્રકારે છે અને



વા જીવમ્, इत्यादि । क्षेत्रतो यथा-भरतक्षेत्रम् ऐरावतक्षेत्रम् वदति, ऐरावतं वा भरतमिति । कालतो यथा-उत्सर्पिणीम् अवसर्पिणीं वदति, तथा-अवसर्पिणीम् उत्सर्पिणीं वदति । भावतो लोकोत्तरमृपावादः क्रोधादिकपायजनितः, तत्र क्रोधतो यथा-सत्यपि गुरुशिष्यसम्बन्धे रूढो गुरुर्वदति-न त्वमिति मम शिष्यः, क्रोधाविष्टः शिष्योऽपि वदति-‘ नायं मम गुरुः ’ इत्यादि । मानतो यथा-अहमेव गच्छधुराधारणे समर्थोऽस्मि, यद्वा-अहमेव साधुनिर्वाहकोऽस्मि । मायातो यथा-कृतातिचारं शिष्यं प्रति गुरुः पृच्छति-त्वयाऽतिचारः कृतः किम् ? तदा शिष्यो मायया वदति न मयातिचारः कृतः ’ इत्यादि ।

કો જીવ કહના । યદ્ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ૧ । ભરતક્ષેત્ર કો ઈરાવત ક્ષેત્ર કહના અથવા ઈરાવત ક્ષેત્ર કો ભરત ક્ષેત્ર કહના યદ્ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકોત્તર મૃપાવાદ હૈ ૨ । ઉત્ત્તર્પિણી કાલ કો અવસર્પિણી કાલ કહના અથવા અવસર્પિણી કાલ કો ઉત્ત્તર્પિણી કાલ કહના યદ્ કાલ કી અપેક્ષા લોકોત્તર મૃપાવાદ હૈ ૩ । ભાવ સે લોકોત્તર મૃપાવાદ ક્રોધાદિક કપાય કો લેકર ચાર પ્રકાર કા હૈ । ગુરુ શિષ્ય સંબંધ હોને પર મી જિસ સમય ગુરુ કિસી નિમિત્ત કો લેકર જય શિષ્ય કે પ્રતિ રુદ્ધ હો જાતે હૈ તય વે કહને લગતે હૈ કિ તુમ મેરે શિષ્ય નહીં હો । શિષ્ય મી જય ક્રોધ કે આવેશ મેં આ જાતા હૈ તો વદ્ મી હસ તરહ સે ગુરુ કે પ્રતિ કહને લગતા હૈ કિ આપ હમારે ગુરુ નહીં હૈ । યદ્ ક્રોધ કી અપેક્ષા લોકોત્તર ભાવ મૃપાવાદ હૈ (૧) । મેં હી ગચ્છ કી ધુરા ધારણ કરને મેં સમર્થ હું અથવા મેં હી સાધુઓં કા નિર્વાહક હું હસ પ્રકાર કહના યદ્ માન કપાય કી અપેક્ષા લોકોત્તર ભાવ મૃપાવાદ હૈ (૨) ।

અણવ ઠહેવું, અણવને છવ ઠહેવો, એ દ્રવ્યની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. (૧) ભરત ક્ષેત્રને ઐરાવતક્ષેત્ર ઠહેવું અને ઐરાવત ક્ષેત્રને ભરતક્ષેત્ર ઠહેવું તે ક્ષેત્રની અપેક્ષા લોકોત્તર મૃપાવાદ છે. (૨) ઉત્તર્પિણી કાળને અવસર્પિણી કાળ ઠહેવો અથવા અવસર્પિણી કાળને ઉત્તર્પિણી કાળ ઠહેવો એ કાળની અપેક્ષા લોકોત્તર મૃપાવાદ છે. (૩) ભાવથી લોકોત્તર મૃપાવાદ ક્રોધાદિક કપાયને લઈ ચાર પ્રકારના છે. ગુરુ કોઈ નિમિત્તે ત્યારે શિષ્ય પ્રત્યે ક્રોધિત બને છે ત્યારે તે ઠહેવા લાગે છે કે તું મારો શિષ્ય નથી, શિષ્ય પણ ક્રોધના આવેશમાં આવી બાય છે, ત્યારે તે પણ પોતાના ગુરુને ઠહેવા લાગે છે કે આપ મારો ગુરુ નથી. આ ક્રોધની અપેક્ષા લોકોત્તર ભાવ મૃપાવાદ છે. (૧) હું જ ગચ્છની ધુરા ધારણ કરવામાં સમર્થ છું અથવા હું જ સાધુઓનો નિર્વાહક છું. આ પ્રકારે ઠહેવું એ માન કપાયની અપેક્ષા લોકોત્તર ભાવ મૃપાવાદ છે. (૨) જે સમય શિષ્ય ત્યારે

લોભતો યથા--અકલ્પ્યેઽપિ વસ્ત્રપાત્રાદૌ, 'મમેદં વહ્નં કલ્પતે' इत्यादि कथनम् ।

યદ્વા-મૃપાવાદશ્વતુર્વિધઃ-સદ્ભાવપ્રતિપેધઃ ૧, અસદ્ભાવોદ્ભાવનમ્ ૨, અર્થા-  
નન્તરમ્ ૩, ગર્હાં ચ ૪, । તત્ર સદ્ભાવપ્રતિપેધો યથા-નાસ્ત્યાત્મા, નાસ્તિ પુણ્યં,  
નાસ્તિ પાપમ્, इत्यादि । અસદ્ભાવોદ્ભાવનં યથા-અસ્ત્યાત્મા સર્વગતઃ, આત્મા સ્યામાક-  
તન્દુલમાત્રઃ, इत्यादि । અર્થાન્તરં યથા-ગોવિષયે-'અશ્વોઽયમ્' इति । ગર્હાં તુ  
ત્રિધા-एका सावद्यव्यापारप्रवर्तनी, यथा 'क्षेत्रं कृप' इत्यादि । द्वितीया-अप्रिया,

જિસ સમય શિષ્ય જવ કોઈ અતિચાર લગા લેતા હૈ તો ગુરુ મહારાજ  
ઉસસે પૂછતે હૈં કિ કયા તુમને અતિચાર લગાયા હૈ તવ શિષ્ય માયા  
કપાય કા અવલમ્બન કર કહતા હૈ કિ મને કોઈ અતિચાર નહીં લગાયા,  
इस प्रकार शिष्य का यह कथन माया कपाय की अपेक्षा लोकोत्तर  
भावमृपावाद है (३) । जो वस्त्र पात्रादिक अकल्पनीय हैं उनमें ये मेरे लिये  
कल्पनीय हैं इस प्रकार कहना यह लोभकपाय की अपेक्षा लोकोत्तर  
मृपावाद है । अथवा-मृपावाद इन अन्य प्रकारों से भी चार भेद वाला  
है-१ सद्भाव का प्रतिषेध, २ असद्भाव का उद्भावन, ३ अर्थान्तर, ४ गर्हा ।  
आत्मा नहीं है पुण्य और पाप नहीं हैं इस प्रकार सत् अर्थ का अपला-  
पक वचन सद्भाव प्रतिषेध मृपावाद है १ । आत्मा सर्वव्यापक है अथवा  
इयामाक तन्दुल के समान आत्मा है इस प्रकार असत् अर्थ का उद्भावक  
वचन असद्भाव का उद्भावनरूप द्वितीय मृपावाद है २ । गो के विषय  
में ऐसा कहना कि यह अश्व है इस प्रकार अर्थान्तर का कथक वचन  
तृतीय अर्थान्तर नामक मृपावाद है ३ । गर्हा तीन प्रकार की है सावद्य

કોઈ અતિચાર લગાડી લે છે તો ગુરુ મહારાજ એને પૂછે છે કે, શું તને અતિ-  
ચાર લાગેલ છે, તારે શિષ્ય માયા કપાયનું અવલંબન કરી કહે છે કે મેં  
કોઈ અતિચાર લગાડેલ નથી. આ પ્રકારનું એ શિષ્યનું કથન માયા કપાયની  
અપેક્ષા લોકોત્તર ભાવ મૃપાવાદ. (૩) જે વસ્ત્ર પાત્રાદિક અકલ્પનીય છે એમાં  
એ મારા માટે કલ્પનીય છે એમ કહેવું તે લોક કપાયની અપેક્ષા લોકોત્તર મૃપા-  
વાદ છે. અથવા-મૃપાવાદ એ અન્ય પ્રકારથી પણ ચાર ભેદ વાળા છે. ૧ સદ્-  
ભાવનો પ્રતિષેધ, ૨ અસદ્ભાવનું ઉદ્ભાવન, ૩ અર્થાન્તર, ૪ ગર્હા. આત્મા નથી,  
પુણ્ય અને પાપ નથી, આ પ્રકારનું સાચા અર્થનું અપલાપક વચન સદ્ભાવ  
પ્રતિષેધ મૃપાવાદ છે. ૧. આત્મા સર્વ વ્યાપક છે, અથવા સ્યામાક એખાના જેવો  
આત્મા છે, આ પ્રકારનું અસત્ અર્થનું ઉદ્ભાવક વચન અસદ્ભાવનું ઉદ્ભાવ-  
ન રૂપ બીજું મૃપાવાદ છે. ૨. ગાયના વિષયમાં એવું કહેવું કે તે ઘોડો છે.  
આ પ્રકારે અર્થાન્તરનું કથન વચન ત્રીજો અર્થાન્તર નામનો મૃપાવાદ છે. ૩. ગર્હા

યથા-કાણં પ્રતિ-‘અયં કાણ’ ઇત્યાદિ । તૃતીયા-આક્રોશરૂપા યથા-‘અરે વાન્ધકિનેય દાસીપુત્રઃ ? ’ ઇત્યાદિ । પુનરયં ક્રોધાદિભાવોપલક્ષિતશ્ચતુર્વિધઃ । અત્રેદં વોધ્યમ્-મૃપાવાદઃ ક્રોધમાનમાયાલોભહાસ્યભયગ્રીડાક્રીડારત્યરતિદાક્ષિણ્યમાત્સર્યવિપાદાદિભિઃ સંભવતિ । પીડાજનકઃ સત્યવાદોઽપિ મૃપાવાદ ઇતિ । મૃપાભાષણે દોષા ઉક્તાઃ—

ધર્મહાનિરવિશ્વાસો, દેહાર્થવ્યસનં તથા ।

અસત્યભાષિણાં નિન્દા, દુર્ગતિશ્ચોપજાયતે ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વ્યાપાર પ્રવર્તિની, અપ્રિયા, ઔર આક્રોશરૂપા । ક્ષેત્ર કો જોતો ઇત્યાદિક સાવચ્છવ્યાપાર મેં પ્રવર્તન કરાને વાલા વચન ગર્હાં કા પ્રથમ ભેદ હૈ । કાને કો કાના કહના યહ ગર્હાં કા દ્વિતીય પ્રકાર હૈ । ‘અરે કુલદા કે પુત્ર’ ઇત્યાદિ વચન ગર્હાં કા તૃતીય પ્રકાર હૈ । ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, હાસ્ય, ભય, ગ્રીડા-(લજ્જા) ક્રીડા, રતિ, અરતિ, દાક્ષિણ્ય, માત્સર્ય એવં વિપાદ આદિ નિમિત્તો કો લેકર મૃપાવાદ મેં મનુષ્યોં કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । જિસ સત્યવચન સે દૂસરોં કી પીડા ઉપજે એસા સત્યવચન ભી મૃપાવાદ મેં અન્તર્હિત જાનના ચાહિયે । મૃપાવાદ મેં અનેક દોષ હૈ—જેસે કહા હૈ—

“ધર્મહાનિરવિશ્વાસો, દેહાર્થવ્યસનં તથા ॥

અસત્યભાષિણાં નિન્દા, દુર્ગતિશ્ચોપજાયતે ॥ ૧ ॥ ”

મૃપાવાદ સે ધર્મ કી ક્ષતિ હોતી હૈ લોગોં મેં વિશ્વાસ ઉઠ જાતા હૈ દેહ ઔર ધન કા નાશ હોતા હૈ । જો અસત્યભાષી હોતે હૈં ઊંકી અનેક

ત્રણ પ્રકારની છે. સાવચ્છ વ્યાપાર પ્રવર્તિની, અપ્રિયા અને આક્રોશ રૂપા ક્ષેત્રને ભેદને ઇત્યાદિક સાવચ્છ વ્યાપારમાં પ્રવર્તન કરાવનાર વચન ગર્હાંનો પ્રથમ ભેદ છે. કાણાને કાણો કહેવો એ ગર્હાંનો બીજો પ્રકાર છે ‘અરે કુલદાના પુત્ર’ ઇત્યાદિ વચન ગર્હાંનો ત્રીજો પ્રકાર છે. ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, હાસ્ય, ભય, લજ્જા ક્રીડા, રતિ, અરતિ, દાક્ષિણ્ય, માત્સર્ય અને વિપાદ આદિ નિમિત્તોને મૃપાવાદમાં મનુષ્યોની પ્રવૃત્તિ થાય છે. જે સત્ય વચનથી બીજાઓને પીડા ઉપજે એવું સત્ય વચન પણ મૃપાવાદમાં અન્તર્હિત બાણુનું ભેદ એ મૃપાવાદમાં એનેક દોષ છે. જેવી રીતે કહું છે કે—

“ધર્મહાનિરવિશ્વાસો દેહાર્થવ્યસનં તથા ।

અસત્યભાષિણાં નિન્દા દુર્ગતિશ્ચોપજાયતે ॥ ૧ ॥ ”

મૃપાવાદથી ધર્મની ક્ષતિ થાય છે, લોકોનો વિશ્વાસ ઉઠી જાય છે, દેહ અને ધનનો નાશ થાય છે, જે અસત્ય ભાષી હોય છે તેની અનેક પ્રકારથી

ચ-પુનઃ, અવધારણીમ્-નિશ્ચયાત્મિકાં ભાષાં ન વદેત્-‘ગમિષ્યામ્યેવ’  
‘કરિષ્યામ્યેવ’ ઇત્યાદિકાં ભાષાં ન વ્રૂયાદિત્યર્થઃ । યતઃ—

“અન્નહ પરિચિતિજ્જહ, કજ્જં પરિણમહ અન્નહા ચેવ ।

વિહિવસયાણ જિયાણં, મુહુત્તમેત્તં પિ વહુવિગ્ધં ॥ ૧ ॥

છાયા-અન્યથા પરિચિન્ત્યતે, કાર્યં પરિણમત્યન્યથા ચૈવ ।

વિધિવશગાનાં જીવાનાં મુહૂર્તમાત્રમપિ વહુવિદ્નમ્ ॥ ૧ ॥

યદ્વા—અવધાર્યતે જ્ઞાયતેઽર્થોઽનયેત્યવધારણી અવબોધજનિકા ભાષા, સા  
ચતુર્વિધા-સત્યા, મૃષા, સત્યામૃષા, અસત્યામૃષા ચ ।

પ્રકાર સે ઇસ લોક મેં નિન્દા હોતી હૈ ઓર પરલોક મેં ઉન્હેં દુર્ગતિ કી  
પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । અવધારણાત્મક ( નિશ્ચયકારી ) ભાષા કો બોલના ગ્રહ  
ભી એક અસત્ય કા પ્રકાર હૈ-જૈસે-‘જાઝંગા હી,’ ‘કરૂંગા હી’ ।  
અથવા-‘જાઝંગા’ ‘કરૂંગા’ ઇસ પ્રકાર કો ભાષા ગૃયાવાદ મેં ઇસલિયે  
સમ્મિલિત હો જાતી હૈ કિ—

“અન્નહ પરિચિતિજ્જહ, કજ્જં પરિણમહ અન્નહા ચેવ ।

વિહિવસયાણ જિયાણં મુહુત્તમેત્તં પિ વહુવિગ્ધં” ॥૧॥

બોલને વાલા વિચારતા કુછ હૈ ઓર હોતા કુછ હૈ । મન મેં અવ-  
ધારિત વાત કી પૂર્તિ નહીં હોતી હૈ । કયોં કિ કર્મ વશવર્તી જીવોં કે  
એક મુહૂર્ત મેં ભી અનેક વિદ્ન ઉત્પન્ન હો જાતે હેં । અથવા-“અવધારણ”  
શબ્દ કા અર્થ અવબોધ જનક ભી હૈ । ગ્રહ અવબોધજનક ભાષા  
સત્યા ૧, મૃષા ૨, સત્યામૃષા ૩, એવં અસત્યામૃષા ૪, કે ભેદ સે

આ લોકમાં નિંદા થાય છે, અને પરલોકમાં તેને દુર્ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે.  
અવધારણાત્મક નિશ્ચયકારી ભાષા બોલવી એ પણ એક અસત્યનો પ્રકાર છે.  
જેમ-‘જઈશજ, કરીશજ’ અથવા-‘જઈશ-કરીશ’ આ પ્રકારની ભાષા મૃષાવાદમાં  
એ માટે સમાય જાય છે,—

અન્નહ પરિચિતિજ્જઈ કજ્જં પરિણમહ અન્નહા ચેવ ।

વિહિવસયાણ જીયાણં મુહુત્તમેત્તં વહુવિગ્ધં ॥ ૧ ॥

બોલવાવાળો વિચારે છે કાંઈ અને જાને છે કાંઈ, મનમાં અવધારિત  
વાતની પૂર્તિ થતી નથી કેમકે, કર્મવશ વર્તી જીવોને એક ઘડીમાં પણ અનેક  
વિદ્ન ઉત્પન્ન થાય છે. અથવા-“અવધારણ” શબ્દનો અર્થ અવ બોધજનક પણ છે.  
અવ બોધજનક ભાષા ૧ સત્યા, ૨ મૃષા, ૩ સત્યામૃષા અને ૪ અસત્યા-  
મૃષાના લેદથી ચાર પ્રકારની છે. દેશકાલાદિકની અપેક્ષા જેમાં કાંઈ પ્રકારનો

તત્ત્વારાધની સત્યા । આરાધ્યતે મોક્ષમાર્ગોઽનયેત્યારાધની યથાવસ્થિતવસ્ત્વ-  
ભિધાયિની-યા સર્વજ્ઞમતાનુસારેણ ભાષ્યતે, યથા-અસ્ત્યાત્મા સદસન્નિત્યાનિ-  
ત્યાયનેકધર્મયુક્ત ઇત્યાદિ ।

યા તુ વિરાધની વિપરીતવસ્ત્વભિધાયિની સા મૃષા । વિરાધ્યતે મોક્ષમાર્ગોઽન-  
યેતિ વિરાધની, સર્વજ્ઞમતપ્રાતિકૂલ્યેન ભાષ્યતે, યથા-‘નાસ્ત્યાત્મા’ યથા યા-  
‘એકાન્તનિત્ય આત્મા’ યથા યા-અચૌરે ‘અયં ચૌરઃ’ ઇત્યાદિ । તથા-સત્યાઽપિ  
પરપીડોત્પાદિકા, સા પરપીડાજનકત્વાદ્ મુક્તિવિરાધનાદ્ યા વિરાધની, વિરાધનો-  
ત્વાચ્ચ મૃષા । યથા ચૌરં પ્રતિ-‘અયં ચૌરઃ’ ઇતિ ।

ચાર પ્રકાર કી હૈ । દેશકાલાદિક કી અપેક્ષા જિસમેં કિસી મી પ્રકાર  
કા વિસંવાદ ન આસકે एवं વસ્તુકા જો સ્વરૂપ હૈ ઉસે उसी  
પ્રકાર સે કહને વાલી ભાષા સત્ય ભાષા હૈ । હસ ભાષા સે મોક્ષાભિલાપી  
મોક્ષમાર્ગ કી આરાધના કરતે હૈ । જૈસે-આત્મા હૈ ઓર વહ ન  
સર્વથા નિત્ય હૈ ઓર ન સર્વથા અનિત્ય હૈ કિન્તુ કથંચિત્ નિત્યા-  
નિત્યાત્મક હૈ (૧) હસ પ્રકાર અનેક ધર્મવિશિષ્ટ વસ્તુ કા કથન કરને  
વાલી ભાષા હસ કોટિ મેં પરિગણિત હોતી હૈ ૧ । જો ભાષા વિરાધિની  
હૈ-વસ્તુ કે વિપરીત સ્વરૂપ કો પ્રતિપાદન કરને વાલી હૈ-વહ મૃષા ભાષા  
હૈ । હસકો બોલને વાલા પ્રાણી કમી મી મુક્તિમાર્ગ કા આરાધક નહીં  
હો સકતા હૈ । હસ પ્રકાર કી ભાષા મેં સદા સર્વજ્ઞ મત સે પ્રતિકૂલતા  
રહા કરતો હૈ । જૈસે-આત્મા નહીં હૈ । અથવા હૈ મી તો વહ સર્વથા  
નિત્ય હૈ યા સર્વથા અનિત્ય હૈ । અથવા જો ચોર નહીં હૈ ઉસકો ‘યહ  
ચોર હૈ’ એસા કહના । જો ભાષા સત્ય મી હો-પરન્તુ યદિ ઉસસે દૂસરોં  
કો પીડા હોતી હો તો વહ મી હસી મૃષાવાદ મેં સમ્મિલિત જાનની ચાહિયે ૨ ।

વિસંવાદ ન આવી શકે અને વસ્તુનું જે સ્વરૂપ છે તેને તેવા પ્રકારથી કહેવા-  
વાળી ભાષા સત્ય ભાષા છે આ ભાષાથી મોક્ષાભિલાપી મોક્ષ માર્ગની આરા-  
ધના કરે છે. જેમ આત્મા છે અને તે સર્વથા નિત્ય નથી તેમ સર્વથા અનિત્ય  
પણ નથી. પરંતુ કથંચિત્ નિત્યાનિત્યાત્મક છે. આ રીતે અનેક ધર્મ વિશિષ્ટ  
વસ્તુનું કથન કરવાવાળી ભાષા આ કોટિમાં પરિગણીત થાય છે (૧) જે ભાષા  
વિરાધિની છે વસ્તુના વિપરીત સ્વરૂપને પ્રતિપાદન કરવાવાળી છે. તે મૃષા ભાષા છે.  
એને બોલનાર પ્રાણી કદી પણ મુક્તિ માર્ગનો આરાધક બની શકતો નથી.  
આ પ્રકારની ભાષામાં સદા સર્વજ્ઞ મતથી પ્રતિકૂળતા રહ્યા કરે છે. જેમ-આત્મા  
નથી, અથવા છે તો પણ તે સર્વથા નિત્ય છે યા સર્વથા અનિત્ય છે, અથવા જે  
ચોર નથી એને ‘આ ચોર છે’ એમ કહેવું, જે ભાષા સત્ય પણ હોય-પરંતુ  
જે એનાથી બીજાને પીડા થતી હોય તો તે પણ આ મૃષાવાદમાં સમ્મિલિત



યા તુ આરાધનવિરાધની સા સત્યમૃષા-આરાધની ચાસૌ વિરાધની ચ આરાધનવિરાધની, 'કર્મધારયત્વાત્ પુંવદ્ભાવઃ । યથાવસ્થિતવસ્તુતત્ત્વાભિધાયિની વિપરીતવસ્ત્યભિધાયિની ચેત્યુભયસ્રભાવા સત્યામૃષા । યથા-ઋર્ષિમશ્વિન્નગરે પચ્ચસુ દારકેષુ જાતેષુ એવમભિધીયતે ' અસ્મિન્નગરેઽધ દશ દારકા જાતાઃ ' ઇતિ સા આરાધનવિરાધની । ઇયં હિ પચ્ચાનાં દારકાણાં યજ્જન્મ, તાવતાંશેન સંવાદન-સંભવાદારાધની, દશ ન પૂર્યન્તે इत्येतावतांશેन વિસંવાદસંભવાદ્ વિરાધની ભવતિ । યદ્વા-શ્વસ્તે શતં દાસ્યામીત્યભિધાય પચ્ચાશત્સ્વપિ દત્તેષુ લોકે મૃષાત્વાદર્શનાત્, અદત્તેષ્વેત્ર ચ મૃષાત્વસિદ્ધેઃ, સર્વથા પ્રદાનક્રિયાઽભાવેન સર્વથાવ્યત્યયાત્ ।

જો ભાષા આરાધની મી હો ઓર વિરાધિની હો વહ સત્યમૃષા ભાષા હૈ । સત્યભાષા કા નામ આરાધિની હૈ ઓર મૃષાભાષા કા નામ વિરાધિની હૈ । ઇન દોનોં સ્વરૂપવાલી જો ભાષા હૈ વહ સત્યામૃષા ભાષા હૈ જૈસે યહ કહના કિ આજ ઇસ ગાંવ મેં દશ ચાલક ઉત્પન્ન હુઐ હૈં । ડસ ગાંવ મેં પાંચ હી ચાલક ઉત્પન્ન હુઐ થે । તચ ઁસા કહના સત્યામૃષા સ્વરૂપ ઇસલિયે હૈ, કિ દશ કે કહને મેં પાંચ કા અન્તર્ભાવ તો હો હી જાતા હૈ અતઃ ઇતને અંશકી અપેક્ષા યહ વચન સત્ય હૈ પરન્તુ દશ ચાલક હુઐ નહીં હૈં ઇતને અંશ મેં વહ મૃષા હૈ । અથવા ઁસા કહના કિ “શ્વસ્તે શતં દાસ્યામિ” મેં કલ તુમ્હે સો (૧૦૦) રૂપયે દૂંગા । ઇસમેં સો રૂપયે ન દેકર વહ યદિ પચાસ રૂપયે હો દે દેતા હૈ તો ઇસપ્રકાર કે વ્યવહાર કો લોક મેં અસત્ય મેં પરિગણિત નહીં કિયા જાતા હૈ । જિતના ભાગ નહીં દિયા ગયા હૈ ડસી મેં અસત્યતા આતી હૈ । હાં યદિ વહ ચિલકુલ ન દેતા તો યહ ભાષા

જાણુંવી જોઈએ. (૨) જે ભાષા આરાધની પણ હોય અને વિરાધની પણ હોય તે સત્યામૃષા ભાષા છે. સત્યભાષાનું નામ આરાધિની છે અને મૃષા ભાષાનું નામ વિરાધિની છે. આ બન્ને સ્વરૂપવાળી જે ભાષા છે તે સત્યામૃષા ભાષા છે. જેમ એવું કહેવું કે, આજ આ ગામમાં ૧૦ બાળક જન્મ્યાં છે. કેઈ ગામમાં પાંચ જ બાળક જન્મ્યાં હતાં. ત્યારે એવું કહેવું સત્યામૃષા સ્વરૂપ આ માટે છે કે, દશના કહેવામાં પાંચનો અંતર્ભાવ તો થઈ જાય છે. આથી આટલા અંશની અપેક્ષા આ વચન સત્ય છે પરંતુ દસ બાળક જન્મ્યાં નથી એટલા અંશે એ મૃષા છે. અથવા એમ કહેવું કે હું “કાલે તમને સો રૂપીયા આપીશ,” આમાં સો ન આપતાં જે ૫૦ રૂપીયા પણ આવે તો આ પ્રકારના વ્યવહારમાં લોકોમાં અસત્ય બોલનાર તરીકેની ગણના નથી થતી, જેટલો ભાગ આપવામાં ન આવ્યો એટલા પુરતી એમાં અસત્યતા આવે છે, પણ

યા તુ નૈવાઽસત્યા નાપિ સત્યા સા અસત્યામૃપા નામ ચતુર્થીભાષાવ્યવહારરૂપા ।  
તત્ર પ્રથમા ચતુર્થી ચ ભાષા ભાષનીયા । ચતુર્થી-અસત્યામૃપા ભાષા-આમન્ત્ર-  
ણ્યાદિભેદયુક્તા । તત્ર કોઽસાવામન્ત્રણ્યાદિભેદઃ ? ઉચ્યતે-અયમર્થો ભગવત્યામુક્તઃ ।  
યથા-“અહં ભંતે ! આસઙ્સામો સઙ્સામો ચિદ્વિસ્સામો નિસીઙ્સામો તુયદ્વિસ્સામો ।  
આમંતણિ આણવણી, જાયણિ તહ પુચ્છણી ય પણવણી ।  
પચ્ચક્ખાણી ભાસા, ભાસા ઇચ્છાણુલોમા ય ॥ ૧ ॥  
અણભિગ્ગહિયા ભાસા, ભાસા ય અભિગ્ગહમ્મિ વોદ્ધન્વા ।  
સંસયકરણી ભાસા, વોયડમન્વોયડા ચેવ ॥ ૨ ॥  
પન્નવણી ણં એસા, ન એસા ભાસા મોસા ? ।

મૃપા મેં હી અન્તર્ભૂત હો જાતો (૩) । જો ન સત્ય હૈ, ઓર ન અસત્ય  
હૈ એસી ભાષા કા નામ અસત્યામૃપા-અર્થાત્ વ્યવહાર ભાષા હૈ ૪ ।  
इनमें प्रथम एवं चतुर्थ भाषा बोलने योग्य है । चौथी जो असत्यामृपा  
भाषा है वह आमन्त्रणी आदि भेदों से अनेक प्रकार की कही गई है ।  
इसी विषय को भगवान ने भगवतीसूत्र में कहा है-

अहं भंते ! आसङ्गसामो सङ्गसामो चिद्विस्सामो निसीङ्गसामो  
तुयद्विस्सामो ।

આમંતણિ આણવણી, જાયણિ તહ પુચ્છણી ય પણવણી ।  
પચ્ચક્ખાણી ભાસા, ભાસા ઇચ્છાણુલોમાય ॥ ૧ ॥  
અણભિગ્ગહિયા ભાસા, ભાસા ય અભિગ્ગહમ્મિ વોદ્ધન્વા ।  
સંસયકરણી ભાસા, વોયડમન્વોયડા ચેવ ॥ ૨ ॥  
પન્નવણી ણં એસા, ન એસા ભાસા મોસા ? ।

ન દેત તો એ ભાષા મૃપામાં જ અંતર્ભૂત બની જાત. (૩) જે ન સત્ય છે અને  
ન અસત્ય છે એવી ભાષાનું નામ અસત્યામૃપા-અર્થાત વ્યવહાર ભાષા છે. (૪)  
આમાં પ્રથમ અને ચોથી ભાષા બોલવા યોગ્ય છે. ચોથી જે અસત્યામૃપા ભાષા  
છે, તેને આમંત્રણી આદિ લેદોથી અनेक प्रकारની કહેવામાં આવે છે. આ વિષયને  
ભગવાને ભગવતી સૂત્રમાં કહેલ છે-

अहं भंते आसङ्गसामो सङ्गसामो चिद्विस्सामो निसीङ्गसामो तुयद्विस्सामो ।  
आमंतणि आणवणी, जायणि तह पुच्छणी य पणवणी ।  
पचक्खाणी भासा, भासा इच्छाणु लोमाय ॥ १ ॥  
अणभिग्गहिया भासा, भासा य अभिग्गहंमि वोद्धन्वा ।  
संसयकरणी भासा, वोयडमन्वोयडा चैव ॥ २ ॥  
पन्नवणी णं एसा, न एसा भासा मोसा ? ।

हंता ! गोयमा ! आसइस्सामो तं चेव० जाव न एसा भासा मोसा ।  
( भ० १० श० ३ उ० ४०३ सू० )

छाया--अथ भदन्त ! आशयिष्यामहे शयिष्यामहे स्थास्यामः निपत्स्यामः  
त्वग्वर्तयिष्यामः ।

आमन्त्रणी आज्ञापनी याचनी तथा प्रच्छनी च प्रज्ञापनी ।  
प्रत्याख्यानी भाषा, भाषा इच्छानुलोमा च ॥ १ ॥  
अनभिगृहीता भाषा, भाषा चाभिग्रहे बोद्धव्या ।  
संशयकरणी भाषा, व्याकृता अव्याकृता चैव ॥ २ ॥  
प्रज्ञापनी खलु एषा, नैषा भाषा मृषा ? ।

हंत ! गौतम ! आशयिष्यामहे तदेव यावत् नैषा भाषा मृषा ।

व्याख्या--'अथ' इति प्रश्नार्थकः । भदन्त ! हे भगवन् इत्येवं श्री महावीरं गौतमः  
पृच्छति--आश्रयिष्यामहे=आश्रयणीयं वस्तु स्वीकरिष्यामः, शयिष्यामहे=विशेषतः  
शयनं करिष्यामहे, स्थास्यामः--ऊर्ध्वस्थानेन स्थास्यामः, निपत्स्यामः=उपवेक्ष्यामः।  
त्वक्परिवर्तयिष्यामः--संस्तारके पार्श्वपरिवर्तनं करिष्यामः, यद्वा-आश्रयिष्यामः=  
आश्रयणीयं स्थानादिकं स्वीकरिष्यामः । इत्यादिका भाषा किं प्रज्ञापनी ? इत्यन्वयः  
इदमुपलक्षणम् । एवंजातीया भाषाविशेषाः किं प्रज्ञापनीरूपाः ? इति भावः ।

हंता ! गोयमा ! आसइस्सामो तं चेव० जाव न एसा भासा मोसा  
( भ. १० श० ३ उ. ४०३ सूत्र )

भगवान् महावीर से गौतम पूछते हैं कि--हे भगवन् ! हम आश्रय-  
योग्य वस्तु का आश्रय लेंगे, शयन करेंगे, खड़े रहेंगे, बैठेंगे, करवट बदलेंगे  
इत्यादिक भाषा, तथा आमंत्रणी आदि भाषा क्या प्रज्ञापनी भाषा है ? यह  
भाषा मृषा नहीं है ? । आमन्त्रणी आदि भाषाओं के नाम ये हैं--१ आमंत्रणी,  
२ आज्ञापनी, ३ याचनी, ४ प्रच्छनी, ५ प्रज्ञापनी, ६ प्रत्याख्यानी, ७ इच्छा-  
नुलोमा, ८ अनभिगृहीता, ९ अभिगृहाता, १० संशयकरणी, ११ व्याकृता,  
१२ अव्याकृता । इस प्रकार गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान् उत्तर

हंता गोयमा ! आसइस्सामो तंचेव० जाव न एसा भासा मोसा (भ. १० श. ३ उ. ४०३ सूत्र)

भगवान् महावीरने गौतम पूछे छे डे डे भगवान् ! अमे सुधंशुं, वधुं  
सुधंशुं, उला रडिंशुं, जेसंशुं, करवट बदलंशुं, इत्यादिक भाषा तथा आमंत्रणी  
आदि भाषा शुं प्रज्ञापनी भाषा छे ? आ भाषा मृषा नथी ?

आमंत्रणी आदि भाषाओंनां नाम आ छे--१ आमन्त्रणी २ आज्ञापनी  
३ याचनी ४ प्रच्छनी ५ प्रज्ञापनी ६ प्रत्याख्यानी ७ इच्छानुलोमा ८ अनभिगृहीता  
९ अभिगृहीता, १० संशयकरणी, ११ व्याकृता, १२ अव्याकृता. आ गौतम

તત્ર-આમન્ત્રણી-યથા 'હે સાધો !' ઇત્યાદિ । એપા ચ કિઠ વસ્તુનોઽવિધા-  
યકત્વાદનિપેધકત્વાચ સત્યાદિભાષાત્રયલક્ષણવિયોગતથ્વાઽસત્યામૃપા વ્યવહારરૂપા । ૧ ।

આજ્ઞાપની-કાર્યે પરસ્પ્ર પ્રવર્તની યથા " હં કુરુ " " હં મા કુરુ " ઇત્યાદિ । એપા ચ નિર્દિષ્ટકાર્યપ્રવર્તકત્વાદદુષ્ટવિવક્ષાસદ્ભાવાચાઽસત્યામૃપા ।  
એવમન્યત્રાપિ ભાવનીયમ્ ॥ ૨ ॥

યાચની-અનિર્દિષ્ટવસ્તુવિશેષસ્ય દેહીત્યેવં યાચનરૂપા । યથા-  
" ભિક્ષાં દેહિ " ॥ ૩ ॥

પ્રચ્છની-અવિજ્ઞાતસ્ય સંદિગ્ધસ્ય વાઽર્થસ્ય જ્ઞાનાર્થ પ્રચ્છનમ્ । યથા-  
" કથમેતત્ " ? ॥ ૪ ॥

દેતે હૈં કિં હે ગૌતમ ! પૂર્વોક્ત પ્રકાર કો ભાષા પ્રજ્ઞાપની ભાષા હૈં, કિન્તુ  
યહ ભાષા મૃપા નહીં હૈં । આમન્ત્રણી આદિ ભાષાઓં કા અર્થ કહતે હૈં-

આમન્ત્રણી-' હે સાધો !' ઇત્યાદિ । યહ કિસી વસ્તુ કી અવિધાયક  
એવં અનિપેધક હોને સે, તથા સત્યાદિ ત્રીન ભાષા કે લક્ષણ સે રહિત  
હોને સે અસત્યામૃપાસ્વરૂપ વ્યવહાર ભાષા હૈં ૧ । આજ્ઞાપની-દૂસરે કો  
કાર્ય મેં પ્રવૃત્ત કરાને વાલી ભાષા આજ્ઞાપની ભાષા હૈં । જૈસે-' યહ કરો,  
યહ મત કરો ' ઇત્યાદિ । યહ ભાષા નિર્દિષ્ટકાર્ય મેં પ્રવર્તક હોને સે તથા  
નિર્દોષ વિવક્ષા કે સદ્ભાવ સે અસત્યામૃપા-સ્વરૂપ હૈં ૨ । યાચની-"ભિક્ષા  
દો" ઇસ પ્રકાર કી યાચનસ્વરૂપ ભાષા યાચની ભાષા હૈં ૩ । પ્રચ્છની-  
અવિજ્ઞાત-અર્થાત્-વિના જાને હુણ વિષય કો, અથવા સંદિગ્ધ અર્થાત્-  
સંદેહયુક્ત વિષય કો જાનને કે લિયે જો પૂછના વહ પ્રચ્છની ભાષા હૈં ૪ ।

સ્વામીના પુછવાથી ભગવાન ઉત્તર દે છે કે હે ગૌતમ પૂર્વોક્ત પ્રકારની ભાષા પ્રજ્ઞા-  
પનીભાષા છે પરંતુ આ ભાષા મૃપા નથી. આમન્ત્રણી વગેરે ભાષાઓના અર્થ કહે છે.

આમન્ત્રણી-હે સાધો ! ઇત્યાદિ ! આ કાઈ વસ્તુની અવિધાયક અને અનિપેધક  
હોવાથી, તથા સત્યાદિ ભાષાત્રયના લક્ષણથી રહિત હોવાથી અસત્યામૃપા સ્વરૂપ વ્યવ-  
હાર ભાષા છે. ૧ આજ્ઞાપની-ખીજાને કાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરાવવાવાળી ભાષા આજ્ઞાપની  
ભાષા છે. જેમ-આ કરો, આ ન કરો, ઇત્યાદિ ! આ ભાષા નિર્દિષ્ટકાર્યમાં પ્રવર્તક  
હોવાથી તથા નિર્દોષ વિવક્ષાના સદ્ભાવથી અસત્યામૃપા સ્વરૂપ છે. ૨ યાચની-  
" ભિક્ષાદો " આ પ્રકારની યાચના સ્વરૂપ ભાષા યાચનીભાષા છે. ૩ પ્રચ્છની-  
અવિજ્ઞાત, અર્થાત્ જાણ્યા વગરના વિષયની અથવા -સંદિગ્ધ અર્થાત્-સંદેહયુક્ત  
વિષયને જાણવા માટે જે પૂછવું તે પુચ્છની ભાષા છે. ૪ પ્રજ્ઞાપની-શિષ્યને ઉપ-

પ્રજ્ઞાપની-ચિનયસ્યોપદેશદાનરૂપા, અર્થચોધિકા માયા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-  
જનન્તદુઃસ્વભાગી ભવતિ ” ઇત્યાદિ । યથા ત્રા-પ્રાણિવધાનિવૃત્તાઃ પ્રાણિનો ભવે  
ભવે દીર્ઘાયુષો નીરોગાથ ભવન્તિ । ઉક્તંચ--

પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ૧ ॥ ૫ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાથ ।

એવા મતિઃ પ્રજ્ઞામા, પ્રજ્ઞાપની ચીતરાગેઃ ॥ ૧ ॥

પ્રત્યાખ્યાની-માયા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં  
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુરિદતિ-“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” ઇતિ ॥૬॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો માયા હોતી છે કિ જિસસે  
તસે અર્થ કા અવગ્રોધ હોતા છે તનકા નામ પ્રજ્ઞાપની માયા છે । જૈસે-“ જો  
હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા છે તહ અનંત દુઃસ્વ કા ભાગી હોતા છે ” અથવા  
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે હૈં વે ભવ ભવ મેં દીર્ઘ આયુ પાતે હૈં તથા  
નિરોગ શરીર હોતે હૈં ૫ । ઉક્તંચ--

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે  
લિયે જો નિવેધાત્મક માયા કા પ્રયોગ હોતા છે તહ પ્રત્યાખ્યાની માયા છે,  
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો  
ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કિ-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા  
જાતા છે ” ઇત્યાદિ ૬ । ઇચ્છાનુલોમા-પ્રતિપાદન કરને વાલે કી અર્થાત્

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવગ્રોધ થાય છે.  
એનું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનંત  
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે ભવોભવમાં  
દીર્ઘાયુ ભોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે--

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે  
નિવેધાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી  
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે.  
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) ઇત્યાદિ । ઇચ્છાનુલોમા-



इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुर्था इच्छा तदनुलोमा-तदनुकूला । यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “ एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत् ” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-  
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘ भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम् ’ इति ।  
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“ साधुसकाशं गच्छामः ” स वदति-एवमस्तु इति ॥ ७ ॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘ डित्थादिवत् ’ । अथवा-अन-  
भिगृह्य यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम् । यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कचन  
पृच्छति-किमिदानीं करोमि ?, स प्राह-‘ यत् रोचते तत् कुरु ’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादिकं धर्मोपकरणम्, अथवा  
પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા બોલી જાતી હૈ વહ ‘ઇચ્છાનુલોમા’  
ભાષા હૈ-જૈસે કોઈ કિમી કો કિમી શુભ કાર્ય મેં પ્રેરણા કરે તવ વહ  
કહે કિ ‘ ટીક હૈ યહ મુજે બી અભિલપિત હૈ ’ । અથવા કોઈ કિસી  
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે હુઁ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો  
યહ મુજે બી પસંદ હૈ । અથવા-કોઈ એસા કહે-‘ મૈ સાધુ કે પાસ જા રહા  
હું ’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭ । અનભિગૃહીતા-  
અર્થશૂન્ય-ડિત્થડવિત્થાદિ શબ્દો કા બોલના । અથવા જિસમેં કિસી  
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-બહુતસે કાર્યોં કે ઉપસ્થિત હોને પર  
કોઈ કિસો સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘ કહો મૈં ઇસ સમય કૌનસા  
કામ કરૂં ? ’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હેં રુચે સો કરો ’ । ઇસ  
પ્રકાર કી ભાષાકા નામ અનભિગૃહીતા ભાષા હૈ ૮ । અભિગૃહીતા-અર્થ  
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ભાષાકા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા  
ભાષા હૈ-જૈસે ‘ યે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હૈં ’ । અથવા ‘ ઇસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે  
‘ઇચ્છાનુલોમા’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે  
કહે કે ટીક છે. એ મારી પણ અભિલપાય છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ  
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો. એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ  
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું જીવ. ૭  
અનભિગૃહીતા-અર્થશૂન્ય-“ ડિત્થ ડવિત્થાદિ ” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ  
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ધણાં કામો ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને જ્યારે  
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને  
રુચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-  
અર્થનું લક્ષ્ય કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’  
ભાષા છે. જેમ-“ આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે ” અથવા ‘ આ સમયે

પ્રજ્ઞાપની-વિનયસ્પોષદેશદાનરૂપા, અર્થબોધિકા ભાષા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-  
ઽનન્તદુઃસ્વભાગી ભવતિ ” ઇત્યાદિ । યથા વા-પ્રાણિવધાન્નિવૃત્તાઃ પ્રાણિનો મૃદે  
મૃદે દીર્ઘાયુષો નીરોગાથ ભવન્તિ । ઉક્તચ--

પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ૧ ॥ ૫ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાથ ।

એવા મતિઃ પ્રજ્ઞા, પ્રજ્ઞાપની વીતરાગેઃ ॥ ૧ ॥

પ્રત્યાખ્યાની-ભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિષેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં  
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્વદતિ--“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” ઇતિ ॥૬॥

પ્રજ્ઞાપની-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ભાષા હોતી છે કે જિસસે  
ઉસે અર્થ કા અવબોધ હોતા છે ઉત્તકા નામ પ્રજ્ઞાપની ભાષા છે । જૈસે-“ જો  
હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા છે વહ અનન્ત દુઃસ્વ કા ભાગી હોતા છે ” અથવા  
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે હૈં વે ભવ ભવ મેં દીર્ઘ આયુ પાતે હૈં તથા  
નિરોગ શરીર હોતે હૈં ૫ । ઉક્તચ--

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે  
લિયે જો નિષેધાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા છે વહ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે,  
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો  
ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કે-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા  
જાતા છે ” ઇત્યાદિ ૬ । ઇચ્છાનુલોમા-પ્રતિપાદન કરને વાલે કી અર્થાત્

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.  
એનું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનન્ત  
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે ભવેભવમાં  
દીર્ઘાયુ ભોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે--

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે  
નિષેધાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી  
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે,  
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) ઇત્યાદિ । ઇચ્છાનુલોમા-

इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुर्ग्रा इच्छा तदनुलोमा=तदनुकूला । यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “ एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत् ” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-  
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘ भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम् ’ इति ।  
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“साधुसकाशं गच्छामः” स वदति-एवमस्तु इति॥७॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘ डित्थादिवत् ’ । अथवा-अन-  
भिगृह्य यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम् । यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कचन  
पृच्छति-किमिदानीं करोमि ?, स प्राह-‘ यत् रोचते तत् कुरु ’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादિકं धर्मोपकरणम्, अथवा

પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા બોલી જાતી હૈ વહ ‘ઇચ્છાનુલોમા’  
ભાષા હૈ-જૈસે કોઈ કિસી કો કિસી શુભ કાર્ય મેં પ્રેરણા કરે તવ વહ  
કહે કિ ‘ ટીક હૈ યહ મુઝે બી અભિલપિત હૈ ’ । અથવા કોઈ કિસી  
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે હુઃ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો  
યહ મુઝે બી પસંદ હૈ । અથવા-કોઈ એસા કહે-‘ મૈં સાધુ કે પાસ જા રહા  
હું ’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭ । અનભિગૃહીતા-  
અર્થશૂન્ય-ડિત્થડવિત્થાદિ શબ્દો કા બોલના । અથવા જિસમેં કિસી  
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-બહુતસે કાર્યોં કે ઉપસ્થિત હોને પર  
કોઈ કિસો સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘ કહો મૈં ઇસ સમય કૌનસા  
કામ કરું ? ’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હેં રુચે સો કરો ’ । ઇસ  
પ્રકાર કી ભાષાકા નામ અનભિગૃહીતા ભાષા હૈ ૮ । અભિગૃહીતા-અર્થ  
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ભાષાકા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા  
ભાષા હૈ-જૈસે ‘ યે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હૈં ’ । અથવા ‘ ઇસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે  
‘ઇચ્છાનુલોમા’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે  
કહે કે ટીક છે. એ મારી પણ અભિલપાય છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ  
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો. એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ  
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું જાવ. ૭  
અનભિગૃહીતા-અર્થશૂન્ય-“ ડિત્થ ડવિત્થાદિ ” શબ્દ બોલવો. અથવા જેમાં કોઈ  
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામો ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને જ્યારે  
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને  
રુચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-  
અર્થનું લક્ષ્ય કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’  
ભાષા છે. જેમ-“ આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે ” અથવા ‘ આ સમયે

પ્રજ્ઞાપની-વિનયસ્પોષદેશદાનરૂપા, અર્થવોધિકા ભાષા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-  
ઽનન્તદુઃસ્વભાગી ભવતિ ” ઇત્યાદિ । યથા ત્રા-પ્રાણિવધાન્નિવૃત્તાઃ પ્રાણિનો મરે  
મરે દીર્ઘાયુષો નીરોગાશ્ચ ભવન્તિ । ઉક્તચ-—

પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મરે પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરામેહિ ॥ ૧ ॥ ૫ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાશ્ચ ।

એવા મતિઃ પ્રજ્ઞા, પ્રજ્ઞાપની વીતરાગૈઃ ॥ ૧ ॥

પ્રત્યાખ્યાની-ભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં  
પાત્રં ત્રા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્વદતિ-“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં ત્રા ન દીયતે” ઇતિ ॥૬॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ભાષા હોતી છે કિ જિસસે  
ઉસે અર્થ કા અવબોધ હોતા છે ઉમકા નામ પ્રજ્ઞાપની ભાષા છે । જૈસે-“ જો  
હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા છે ત્હ અનંત દુઃસ્વ કા ભાગી હોતા છે ” અથવા  
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે છે વે ભવ ભવ મેં દીર્ઘ આયુ પાતે છે તથા  
નિરોગ શરીર હોતે છે ૫ । ઉક્તચ—

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મરે પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરામેહિ ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે  
લિયે જો નિપેધાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા છે ત્હ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે,  
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો  
ગુરુ મહારાજ કહતે છે કિ-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા  
જાતા છે ” ઇત્યાદિ ૬ । ઇચ્છાનુલોમા-પ્રતિપાદન કરને વાલે કી અર્થાત્

દેશ આયવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.  
એનું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનંત  
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે લવોલવમાં  
દીર્ઘાયુ ભોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે—

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મરે પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરામેહિ ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે  
નિપેધાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી  
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે,  
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) ઇત્યાદિ । ઇચ્છાનુલોમા-



इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुया इच्छा तदनुलोमा=तदनुकूला । यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “ एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत् ” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-  
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘ भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम् ’ इति ।  
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“ साधुसकाशं गच्छामः ” स वदति-एवमस्तु इति॥७॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘ डित्थादिवत् ’ । अथवा-अन-  
भिग्रहा यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम् । यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कचन  
पृच्छति-किमिदानीं करोमि ?, स प्राह-‘ यत् रोचते तत् कुरु ’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादિક धर्मोपकरणम्, अथवा  
પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા બોલી જાતી હૈ વહ ‘ઇચ્છાનુલોમા’  
ભાષા હૈ-જૈસે કોઈ કિસી કો કિમી શુભ કાર્ય મેં પ્રેરણા કરે તવ વહ  
કહે કિ ‘ ઠીક હૈ યહ મુજે મી અભિલપિત હૈ ’ । અથવા કોઈ કિસી  
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે હુવ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો  
યહ મુજે મી પસંદ હૈ । અથવા-કોઈ એસા કહે-‘ મેં સાધુ કે પાસ જા રહ્યા  
હું ’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭ । અનભિગૃહીતા-  
અર્થશૂન્ય-ડિત્થડવિત્થાદિ શબ્દો કા બોલના । અથવા જિસમેં કિસી  
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-વહુતસે કાર્યોં કે ઉપસ્થિત હોને પર  
કોઈ કિસી સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘ કહો મેં હસ સમય કૌનસા  
કામ કરૂં ? ’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હેં રુચે સો કરો ’ । હસ  
પ્રકાર કી ભાષાકા નામ અનભિગૃહીતા ભાષા હૈ ૮ । અભિગૃહીતા-અર્થ  
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ભાષાકા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા  
ભાષા હૈ-જૈસે ‘ યે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હૈ ’ । અથવા ‘ હસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે  
‘ઇચ્છાનુલોમા’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે  
કહે કે ઠીક છે. એ મારી પણ અભિલપા છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ  
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ  
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું જીવ. ૭  
અનભિગૃહીતા-અર્થશૂન્ય-“ ડિત્થ ડવિત્થાદિ ” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ  
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામે ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને જ્યારે  
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને  
રુચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-  
અર્થનું લક્ષ્ય કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’  
ભાષા છે. જેમ-“ આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે ” અથવા ‘ આ સમયે



પ્રજ્ઞાપની-વિનયસ્યોપદેશદાનરૂપા, અર્ધવૌધિકા ભાષા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-  
ડનન્તદુઃખભાગી ભવતિ ” ઇત્યાદિ । યથા વા-પ્રાણિવધાન્નિવૃત્તાઃ પ્રાણિનો મરે  
મરે દીર્ઘાયુષો નીરોગાશ્ચ ભવન્તિ । ઉક્તચ્ચ--

પાણિવહાઉ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઉ યા અરોગા ય ।

એસ મરે પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિ ॥ ૧ ॥ ૫ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાશ્ચ ।

એવા મતિઃ પ્રજ્ઞા, પ્રજ્ઞાપની વીતરાગૈઃ ॥ ૧ ॥

પ્રત્યાખ્યાનીભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં  
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્વદતિ-“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” ઇતિ ॥૬॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ભાષા હોતી હૈ કિ જિસસે  
ઉસે અર્થ કા અવબોધ હોતા હૈ ઉત્તકા નામ પ્રજ્ઞાપની ભાષા હૈ । જૈસે-“ જો  
હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ વહ અનંત દુઃખ કા ભાગી હોતા હૈ ” અથવા  
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે હૈં વે ભવ ભવ મેં દીર્ઘ આયુ પાતે હૈં તથા  
નિરોગ શરીર હોતે હૈં ૫ । ઉક્તચ્ચ--

“ પાણિવહાઉ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઉ યા અરોગા ય ।

એસ મરે પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિ ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે  
લિયે જો નિપેધાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા હૈ વહ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા હૈ,  
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો  
ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કિ-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા  
જાતા હૈ ” ઇત્યાદિ ૬ । ઇચ્છાનુલોમા-પ્રતિપાદન કરને વાલે કી અર્થાત્

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.  
એનું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનંત  
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે ભવોભવમાં  
દીર્ઘાયુ ભોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે--

“ પાણિવહાઉ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઉ યા અરોગા ય ।

એસ મરે પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિ ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે  
નિપેધાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી  
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે.  
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) ઇત્યાદિ । ઇત્થિ મા-

इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुर्था इच्छा तदनुलोमा-तदनुकूला । यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “ एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत् ” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-  
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘ भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम् ’ इति ।  
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“ साधुसकाशं गच्छामः ” स वदति-एवमस्तु इति ॥ ७ ॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘ वित्थादिवत् ’ । अथवा-अन-  
भिग्रहा यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम् । यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कचन  
पृच्छति-किमिदानीं करोमि ?, स प्राह-‘ यत् रोचते तत् कुरु ’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादિકं धर्मोપकरणम्, अथवा  
પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા બોલી જાતી હૈ વહ ‘ઇચ્છાનુલોમા’  
ભાષા હૈ-જૈસે કોઈ કિમી કો કિમી શુભ કાર્ય મેં પ્રેરણા કરે તવ વહ  
કહે કિ ‘ ટીક હૈ યહ મુઝે બી અભિલપિત હૈ ’ । અથવા કોઈ કિસી  
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે હુઃ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો  
યહ મુઝે બી પસંદ હૈ । અથવા-કોઈ એસા કહે-‘ મેં સાધુ કે પાસ જા રહા  
હું ’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭ । અનભિગૃહીતા-  
અર્થશૂન્ય-વિત્થડવિત્થાદિ શબ્દો કા બોલના । અથવા જિસમેં કિસી  
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-બહુતસે કાર્યોં કે ઉપસ્થિત હોને પર  
કોઈ કિસો સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘ કહો મેં હસ સમય કૌનસા  
કામ કરૂં ? ’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હેં મ્ચે સો કરો ’ । હસ  
પ્રકાર કી ભાષાકા નામ અનભિગૃહીતા ભાષા હૈ ૮ । અભિગૃહીતા-અર્થ  
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ભાષાકા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા  
ભાષા હૈ-જૈસે ‘ યે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હેં ’ । અથવા ‘ હસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઈચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે  
‘ઇચ્છાનુલોમા’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે  
કહે કે ઠીક છે. એ મારી પણ અભિલાષા છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ  
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો. એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ  
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું જાવ. ૭  
અનભિગૃહીતા-અર્થશૂન્ય-“ વિત્થ ડવિત્થાદિ ” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ  
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામો ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને જ્યારે  
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને  
રૂચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-  
અર્થનું લક્ષ્ય કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’  
ભાષા છે. જેમ-“ આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે ” અથવા ‘ આ સમયે

-પ્રતિનિયતાર્થાવધારણમ્ । યથા-इदमिदानीं कर्तव्यम्, इदं न कर्तव्यमिति ॥ ૯ ॥

સંશયકરણી—યાઽનેકાર્થપ્રતિપત્તિકરી સા । યા ભાષા અનેકાર્થાભિધાયિ તયા પરસ્ય સંશયમુત્પાદયતિ, યથા - સૈન્ધવમાનયેત્યત્ર સૈન્ધવશબ્દો નરજ્વળ-વાજિવાચકત્વેન સંશયોત્પાદકઃ ॥ ૧૦ ॥

વ્યાકૃતા—યા પ્રકટાર્થા । યથા-अहिंसा-सर्वकल्याणकारिणी ॥ ૧૧ ॥

અવ્યાકૃતા—અતિગમ્ભીરશબ્દાર્થા, અવ્યક્તાક્ષરપ્રયુક્તા વા, યથા-  
“સંયત-સ્ય મહત્પાપં પ્રતિક્રમણકર્મણા” । इत्यादि, यथा वा मम्मगादि  
વાલભાષા ॥ ૧૨ ॥ एषा=आमन्त्रण्यादिका भाषा प्रज्ञापनी खलु-प्रज्ञाप्यते प्रकटी  
ક્રિયતેઽર્થોઽનયેતિ પ્રજ્ઞાપની અર્થકથની, સા ભાષણીયા इत्यर्थः । नैषा भाषा मृषा

સમય ગ્રહ કરના चाहिये, ग्रह नहीं करना चाहिये ’ ૯. । સંશયકરણી-  
जिस भाषा से सुनने वालेको अनेक अर्थों की प्रतिपत्ति होने लगे उस  
भाषा का नाम संशयकरणी भाषा है, जैसे-किसी ने कहा कि-‘सैन्धव  
लाओ’ यह सैन्धव शब्द पुरुष, लवण और घोड़े रूप अर्थों का प्रतिपादक है,  
अतः सुनने वाले को संशय जनक हो जाता है १० । व्याकृता-  
जिसका अर्थ स्पष्ट होता है वह व्याकृता भाषा है जैसे-“अहिंसा  
सर्व प्रकार से कल्याण करने वाली है” ११ । अव्याकृता-अतिगंभीर  
शब्दार्थवाली भाषा अव्याकृता भाषा है । अथवा-जो अव्यक्त अक्षर से  
युक्त होती है वह भाषा अव्याकृता भाषा है जैसे-“संयत-स्य महत्पापं  
प्रतिक्रमणकर्मणा” प्रतिक्रमण कर्म से संयत को बड़ा भारी पाप लगता  
है । यहां पर जब “स्य” को क्रियापद मान लिया जाता है तब इसका

આ કરવું જોઈએ, આ ન કરવું જોઈએ.” ૯ સંશયકરણી-જે ભાષાર્થી સાંભળ-  
નારને અનેક અર્થોનો આભાસ થવા લાગે તે ભાષાનું નામ સંશયકરણી ભાષા  
છે. જેમ કેઈએ કહ્યું કે—“સૈન્ધવ લાઓ” આ સૈન્ધવ શબ્દ પુરુષ મીઠું અને  
ઘોડા૩૫ અર્થનો પ્રતિપાદક છે. આથી સાંભળવાવાળાને પ્રકરણાદિના અભાવમાં  
સંશયજનક બને છે. એ માટે પ્રકરણ સમજીને આ ભાષા બોલવામાં દોષ નથી  
કેમકે, તે વ્યવહારુ ભાષા છે. ૧૦ વ્યાકૃતા-જેનો અર્થ સ્પષ્ટ થાય છે તે વ્યાકૃત  
ભાષા છે. જેમ—“અહિંસા” સર્વ પ્રકારથી કલ્યાણ કરવાવાળી છે.” ૧૧ અવ્યાકૃતા  
અતિ ગંભીર શબ્દાર્થવાળી ભાષા અવ્યાકૃતા ભાષા છે. અથવા-જે અવ્યક્ત  
અક્ષરથી યુક્ત હોય છે તે ભાષા અવ્યાકૃતા ભાષા છે. જેમ—

સંયત-સ્ય મહત્પાપં પ્રતિક્રમણા કર્મણા—

પ્રતિક્રમણ કર્મથી સંયતને મોટું ભારે પાપ લાગે છે, અહિં જ્યારે  
“સ્ય” ને ક્રિયાપદ માનવામાં આવે ત્યારે એનો અર્થ એવો થાય છે કે, હું

—एषा भाषा मृषा अवक्तव्या नेत्यर्थः । प्रश्नकर्तुरयमभिप्रायः—‘आशयिष्यामहे’  
इत्यादिका भाषा भविष्यत्कालविषया, साचान्तरायसंभवेन कदाचिदर्थभिधायिनी  
न स्यात् । तथा एकार्थविषयाऽपि बहुवचनान्ततयाऽभिहिता तस्मादयथार्था ।  
तथा—आमन्त्रणीप्रभृतिका, सत्यभाषावदर्थे नियता नास्ति विधिप्रतिषेधबोधकत्वा  
भावात्, अतः किमियं वक्तव्या स्यात्, उत न ? इति ।

अर्थ ऐसा होता है कि हे संयत ? प्रतिक्रमण कर्म से तुम अपने पापोंका  
क्षय करो । यह बोध शीघ्र नहीं हो सकता है, अतः इसे अव्याकृत भाषा  
कहा है । अथवा—बालककी भाषाको अव्याकृत भाषा कहते हैं १२ । ये सब  
भाषायें प्रज्ञापनी हैं, यह प्रज्ञापनी भाषा मृषास्वरूप नहीं है । प्रश्न करने  
वालेका कहने का हेतु यह है—जब यह कहा जाता है कि हम ‘शयनकरेंगे’  
इत्यादि, तब यह भाषा भविष्यत् काल को विषय करने वाली होने से  
अर्थकी पूर्ति में असमर्थ जान पड़ती है, कारण कि अन्तराय कर्म के  
उदय की संभावना होने से उस विवक्षित अर्थकी कदाचित् पूर्ति न भी  
हो सके तो फिर जिस प्रकार मृषाभाषा अर्थको कहनेवाली नहीं मानी  
जाती है उसी प्रकार यह भाषा भी अनर्थाभिधायिनी मान लेना चाहिये  
तथा “हम शयनकरेंगे” इस कथनमें “मैं शयनकरूँगा” इस एक  
वचन के ही प्रयोग में बहुवचन का प्रयोग किया गया है । जैसे एक को  
अनेक कहनेवाली भाषा अयथार्थ मानी जाती है । उसी प्रकार यह भी  
अयथार्थ मानी जानी चाहिये । इसी तरह आमन्त्रणी भाषाएँ भी सत्य  
भाषाकी तरह अर्थ में नियत नहीं हैं, क्यों कि इनमें विधि एवं प्रतिषेध  
की बोधकता का अभाव है, इसलिये यह संदेह होता है कि यह बोलने  
के योग्य है अथवा नहीं है । इस प्रकारकी आशंका का यह उत्तर है कि

संयत ! प्रतिक्रमण कर्मधी तमे तमारां पापेनो क्षय करे. आ बोध जलदी  
थई शकतो नथी आधी आने अव्याकृता भाषा कडेवामां आवे छे. अथवा—  
आणकनी भाषाने अव्याकृत भाषा कडेवामां आवे छे. १२ आ अधी भाषा प्रज्ञापनी छे.  
आ प्रज्ञापनी भाषा मृषा स्वरूपनी नथी. प्रश्न करनारना कडेवानो मतलब  
अे छे के, न्यारे अेम कडेवामां आवे छे के, “अमे सुई अे छीअे” आ  
कथनमां “हुं सुई छुं” आ अेक वचनना प्रयोगमां बहु वचननो प्रयोग  
करवामां आवेल छे. जेम अेकने अनेक कडेवावाणी भाषा अयथार्थ मानवामां  
आवे छे अे रीते पण अयथार्थ मानवी जेईअे आ रीते आमन्त्रणी भाषाअे  
पण सत्य भाषानी जेम अर्थमां नियत नथी केमके, अेनामां विधि अने प्रतिषेधनी  
बोधकतानो अभाव छे. आ भाटे अे संदेह थाय छे, अे बोलवाने योग्य छे,

અગ્રોત્તરમાહ—હંતા । इत्यादि । ‘ हन्त ’ इति स्वीकारार्थकः, अयं भावः—  
‘ आशयिष्यामहे ’ ‘ शयिष्यामहे ’ इत्यादिका भाषा निश्चयात्मकशब्दप्रयोगा-  
भावान्नास्ति निश्चयात्मिका, या तु—‘ आशयिष्यामहे एव ’ ‘ शयिष्यामहे एव ’  
इत्यादिका निश्चयात्मिका सैवान्तरायसंभवाद् भविष्यत्कालविषया भाषा मृषा-  
भवितुमर्हति । ‘ आशयिष्यामहे ’ इत्यादौ तु-शयनादिक्रियायां वक्तुरभिप्रायः  
“शयनादिक्रियाकरणस्य भावो मम वर्तते” इत्यादि रूपः सत्य एवास्तीति भवति  
प्रज्ञापनी । एकार्थविषये बहुवचनाभिधानमपि आत्मनि गुरौ च शास्त्रानुमतं,  
तस्माद् बहुवचनान्ततया प्रयुक्ताऽपि प्रज्ञापन्येव भवति । एवमामन्त्रण्यादिकाऽपि ।

“आश्रयिष्यामहे” इत्यादिक भाષાઈ નિશ્ચયાત્મક શબ્દ કે પ્રયોગ કે અભાવ સે નિશ્ચયાત્મક નહીં હેં । યે નિશ્ચયાત્મક જવ હી માની જાતી હેં કિ જવ इनके साथ निश्चयात्मक शब्दका प्रयोग किया हुआ होता है । जैसे—आश्रयिष्यामहे एव, शयिष्यामहे एव” हस प्रकारकी निश्चया-  
त्मक भाषा में जो कि भविष्यत् कालको विषय करनेवाली हो अन्तराय कर्म के उदय से अपने अर्थकी पूर्ति की निश्चितता संदिग्ध रहती है अतः वही भाषा मृषावाद रूप मानी जाती है । “आश्रयिष्यामहे” इत्यादि भाषा में तो शयनरूप क्रिया करने का भाव ही केवल वक्ता का रहा हुआ है अतः उस अपेक्षा वह सत्य ही है । इसी अर्थ को मन में रख कर मुनिराज भविष्यत्काल के अर्थ में भाव शब्द का प्रयोग करते हैं, जैसे—‘कल स्वाध्याय करने का भाव है’ अथवा—‘तपस्या करने का भाव है’ इत्यादि । एकवचन में भी व्याकरणसिद्धान्त के अनुसार

અથવા નથી એ પ્રકારની આશંકાનો આ ઉત્તર છે કે, “આશયિષ્યામહે” ઇત્યાદિક ભાષાઓ નિશ્ચયાત્મક નથી. અને નિશ્ચયાત્મક ત્યારે જ માનવામાં આવે કે ત્યારે એની સાથે નિશ્ચયાત્મક શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલ હોય જેમ આશયિષ્યામહે એવ શયિષ્યામહે એવ—આ પ્રકારની નિશ્ચયાત્મક ભાષામાં કે જે ભવિષ્યત્ કાળનો વિષય કરવાવાળી હોય અંતરાય કર્મના ઉદયથી તેના અર્થની પૂર્તિની નિશ્ચિતતા સંદિગ્ધ રહે છે. આથી તે ભાષા મૃષા-વા: ૩૫ માનવામાં આવે છે. “આશયિષ્યામહે” ઇત્યાદિ ભાષામાં તો કહેનારનો સુવાની ક્રિયા કરવાનો ભાવ જ ફક્ત રહેલ છે. આથી એ અપેક્ષાથી તે સત્ય જ છે. આ જ અર્થને મનમાં રાખી મુનિરાજ ભવિષ્યકાળના અર્થમાં ભાવ શબ્દનો પ્રયોગ કરે છે. જેમ—‘કાલે સ્વાધ્યાય કરવાનો ભાવ છે’ અથવા “તપસ્યા કરવાનો ભાવ છે” ઇત્યાદિ! એક વચનમાં પણ વ્યાકરણ સિદ્ધાંતની



યા નિરવધપુરુષાર્થસાધની સા પ્રજ્ઞાપન્યેવ । યથા “ હે સાધો ! ” “ હ્રદં કુરુ ” “ હ્રદં મા કુરુ ” इत्यादिका । सा तु भाषणीयैवेति ।

भाषादोषं=सावधानुमोदनादिकं, मृषा-कर्कशाऽसभ्यशब्दोच्चारणादिकं च, परिहरेत् । च-पुनः, मायां सदा=सर्वकालं परिवर्जयेत् ।

अत्र मायामित्युपलक्षणम्, क्रोधमानलोभानां कषायाणाम् । सर्वान् कषायान् परिवर्जयेदित्यर्थः । कषायाणां मृषाभाषणहेतुत्वात्, कषायवर्जने सति मृषाभाषणपरिहारः सुतरां स्यादिति भावः ॥ २४ ॥

વહુવચન કા પ્રયોગ હો જાતા હૈ । વહાં કહાગયા હ કિ અપને મેં एव गुरु में वहुवचन का प्रयोग करना निर्दोष है, इसलिये एक में भी बहु-वचनान्तरूप से प्रयुक्त भाषा प्रज्ञापनी ही भाषा है । इसी तरह आम-न्त्रणी आदि भाषाएँ भी जो निरवध पुरुषार्थ की साधक होती हैं वे प्रज्ञापनी ही हैं । जैसे—“ हे साधो । ” “ यह करो यह मत करो ” इत्यादि ।

સાવધ કર્મ કી અનુમોદના આદિ કરના યહ ભાષા દોષ હૈ । इसी प्रकार कर्कश एवं कठोर शब्द का उच्चारण करना आदि भी मृषा भाषा में ही अन्तर्हित है । माया शब्द उपलक्षण है । इसलिये क्रोधादિક कषाय के विषय में भी समझ लेना चाहिये, क्योंकि कषाय के आवेश से ही मृषाभाषण होता है । इनके परिवर्जन से मृषाभाषાકા પરિવર્જન હો જાતા હૈ । अतः भाषादोष एवं माया का सदा काल परित्याग कर देना चाहिये ॥ २४ ॥

બહુ વચનનો પ્રયોગ થઈ જાય છે, આથી એ બતાવાયું છે કે, પોતાનામાં અને ગુરુ મહારાજમાં બહુ વચનનો પ્રયોગ કરવો નિર્દોષ છે. આ માટે એકમાં પણ બહુવચનાન્તરૂપથી પ્રયુક્ત ભાષા પ્રજ્ઞાપની ભાષા જ છે આ રીતે આમ-ન્ત્રણી આદિ ભાષાઓ પણ જે નિરવધ પુરુષાર્થની સાધક હોય છે તે પ્રજ્ઞાપની જ છે. જેમ—“ હે સાધો ! ” “ આ કરો, આ ન કરો, ” ઇત્યાદિ !

સાવધ—કર્મની અનુમોદના આદિ કરવી એ ભાષા દોષ છે. આ પ્રકારે કર્કશ અને કઠોર શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરવું આદિ પણ મૃષાભાષામાં જ અન્તર્હિત છે. માયા શબ્દ ઉપલક્ષણ છે આ માટે ક્રોધાદિક કષાયના વિષયમાં પણ સમજવું જોઈએ. કેમકે, કષાયના આવેશથી જ મૃષાભાષણ થાય છે. તેના ત્યાગથી મૃષા ભાષાનો ત્યાગ થાય છે. આથી ભાષાદોષ અને માયાનો સદાકાળ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. (૨૪)

મૂલમ્—ન લવેજ્જ પુદ્ધો સાવજ્જં, ન નિરેટ્ઠં ન મમ્મયં ।

અપ્પણદ્ધા પરદ્ધા વો, ઉભયસ્સંતરેણે વો ॥ ૨૫ ॥

છાયા—ન લપેત્ પૃષ્ઠઃ સાવઘં, ન નિરર્થં ન મર્મગમ્ ।

આત્માર્થ પરાર્થ વા, ઉભયસ્ય અન્તરેણ વા ॥ ૨૫ ॥

ટીકા—‘ન લવેજ્જ’ इत्यादि । पृष्ठः=केनचित्, सावघं=अवघेत-पापेन सह वर्तते इति सावघं=सदोषं वचनं न लपेत्=न वदेत्, सावद्यवचनं हि रागद्वेषादिदुर्गुणनिधानं सकलास्त्रवनिदानम्, आत्मसमाधिविधुविधुंतुदस्वरूपं, गुणवृक्षस-मूलोन्मूलने प्रचण्डझंझावातरूपं, कषायविषवल्लीवर्धकं, पइजीवनिकायोपमर्दकम् ।

ન લવેજ્જ ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—(પુદ્ધો સાવજ્જં ન લવેજ્જ-પૃષ્ઠઃ સાવઘં ન લપેત્) કિસી કે દ્વારા પૂછે જાને પર સાવઘ-પાપયુક્ત વચન નહીં બોલનાં चाहिये । (ન નિરેટ્ઠં ન મમ્મયં-ન નિરર્થકં ન મર્મગં) નિરર્થક વચન નહીં બોલનાં चाहिये । મર્મ ઉદ્ધાટક વચન નહીં બોલનાં चाहिये । (અપ્પ-ણદ્ધા પરદ્ધા વા ઉભયસ્સંતરેણ વા સાવજ્જં ન લવેજ્જ-આત્માર્થ પરાર્થ વા ઉભયસ્યાન્તરેણ વા સાવઘં ન લપેત્) અપને નિમિત્ત અથવા પર કે નિમિત્ત તથા ઉભય-સ્વ પર કે નિમિત્ત ઔર વિના પ્રયોજન કે (વ્યર્થ) ઔ સાવઘ વચન નહીં બોલનાં चाहिये । ક્યોં કિ-સાવઘ વચન રાગ દ્વેષ આદિ દુર્ગુણોં કા નિધાન હૈ, સમસ્ત આસ્ત્રવોં કા નિદાન-કારણ હૈ, આત્મસમાધિરૂપ ચન્દ્રમા કો ગ્રસન કરને મેં રાહુસમાન હૈ, ગુણરૂપ વૃક્ષોં કો જહ સે ઉઠાહ ને મેં પ્રચણ્ડ ઝંઝાવાત સમાન હૈ, તથા કષાય-

ન લવેજ્જ ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—પુદ્ધો સાવજ્જં ન લવેજ્જ-પૃષ્ઠઃ સાવઘં ન લપેત્—કેઈના પુછવાથી પાપયુક્ત સાવઘ વચન બોલવું જોઈએ નહીં. ન નિરેટ્ઠં ન મમ્મયં-ન નિરર્થકં ન મર્મગં નિરર્થક વચન બોલવું ન જોઈએ ને મર્મઉદ્ધાટક વચન બોલવું ન જોઈએ.

અપ્પણદ્ધા પરદ્ધાવા ઉભયસ્સંતરેણ વા સાવજ્જં ન લવેજ્જ—

આત્માર્થ પરાર્થ વા ઉભયસ્યાન્તરેણ વા સાવઘં ન લપેત્—

પોતાના નિમિત્ત અથવા બીજાના નિમિત્ત તથા અસપરસના નિમિત્ત અને વગર પ્રયોજન (વ્યર્થ) સાવઘ વચન ન બોલવાં જોઈએ.

કેમકે, સાવઘ વચન રાગ દ્વેષ આદિ દુર્ગુણોં નિધાન છે, સમસ્ત આસ્ત્રવોં કારણ છે, આત્મસમાધિરૂપ ચન્દ્રમાનું ગ્રહણ અસિત કરવામાં રાહુ સમાન છે, ગુણરૂપ વૃક્ષને જહથી ઉખેડવામાં પ્રચંડ ઝંઝાવાત સમાન છે. તથા

સાવચ વચન માપણદ્રષ્ટાન્તઃ—

નિરવચ માપાનમિજ્ઞઃ કશ્ચિદશ્વપતિર્દક્ષમૂલ્યકમશ્વં વિક્રેતું કસ્મિન્નિગરે-  
જગામ । તત્રાકસ્માદશ્વપતિસ્તાદશ્વો નિર્મુક્તઃ સન્ ધાવતિ । ધાવન્તમશ્વં પરિગ્રહીતું  
તત્પૃષ્ઠતો અશ્વપતિરપિ ધાવતિ । તં પરિગ્રહીતુમશક્તો ડસૌ ધાવનાત્ પરિશ્રાન્તઃ કોપા-  
વેશેન તદાનીં સ્વાભિમુખમાગચ્છન્તં કંચિદ્ ભાષાદોપાનમિજ્ઞં દણ્ડહસ્તં પુરુષમ-  
બ્રવીત્-ભો ! અશ્વોઽયં ધાવતિ, એનં મારય મારય, એવમુક્તો ડસૌ દણ્ડેન તમશ્વં  
મર્મસ્થાને તાડિતવાન્ । તદા ડસૌ દણ્ડાઘાતેન મૃતઃ । અથાશ્વપતિસ્તં તુરગઘાતકં  
રૂપ વિપલતાઓં કો વઢાને મેં મેઘસમાન હૈ, एवं पडजीवनिकायों का  
उपमर्दन करने वाला है ।

સાવચ વચન કે ચોલને મેં જીવ કો વયા હાની ઉટાની પડતી હૈ,  
इसे दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट किया जाता है.

एक अश्वपति था जो निरवच भाषा बोलने का अनभिज्ञ था । वह  
एक लाख रुपया की कीमत वाले अपने घोड़े को बेचने के लिये किसी  
नगर में आया । वहां आते ही उसके हाथ से वह घोड़ा छूटकर भाग  
निकला । भागते हुए उस घोड़े का पीछा करने पर भी वह पकड़ नहीं  
सका । जब यह दौड़ते २ थक गया तो क्रोधके आवेश में आकर इसने  
एक पुरुष से जो हाथ में दंडा लिये हुए इसकी ही ओर आ रहा था ।  
तथा भाषा के दोष से अनभिज्ञ था कहा कि हे भाई देखो यह घोड़ा  
जो भाग रहा है इसे मारो मारो । इस प्रकार अश्वपति के कहने पर  
उस व्यक्ति ने एक दंडा ऐसा मारा जो उस घोड़े के मर्मस्थान में लगा ।

કપાયરૂપ વિષ લક્ષ્ણોને વધારનાર છે, પર છવનીકાયેાનું ઉપમર્દન કરનાર છે.

સાવચ વચન બોલવાથી શું અનર્થ થાય છે, તે આ દ્રષ્ટાંત દ્વારા સ્પષ્ટ  
કરવામાં આવે છે—

એક અશ્વપતિ હતો, જે નિરવચ ભાષા બોલવામાં અનભિજ્ઞ હતો. તે  
એક લાખ રૂપીયાની કિંમતના પોતાના ઘોડાને વેચવા માટે કોઈ એક નગરમાં  
ગયો ત્યાં પહોંચતાં જ તેના હાથમાંથી તે ઘોડો છુટીને ભાગી ગયો, ભાગી  
રહેલા તે ઘોડા પાછળ તેને હાથ કરવા તે ખૂબ દોડ્યો છતાં પકડી શકાયો  
નહીં. બ્યારે તે દોડતાં દોડતાં થાકી ગયો ત્યારે ક્રોધના આવેશમાં આવી એણે એક  
પુરુષ, કે જે હાથમાં દંડો લઈને તેની સામે આવી રહ્યો હતો અને તે ભાષાના  
દોષથી અભણ હતો, તેને કહ્યું કે હે ભાઈ ! આ ઘોડો જે ભાગી રહ્યો છે તેને મારો.  
આ પ્રકારે એ અશ્વપતિના કહેવાથી પેલા માણસે એક દંડો ઘોડાને એવો માર્યો  
કે જે મર્મસ્થાનમાં લાગવાથી તેના પ્રહારના કારણે ઘોડો એજ વખતે મરી ગયો.

ગૃહીત્વા ન્યાયાલયં ગતઃ । તત્ર સ ન્યાયાધ્યક્ષસંનિધૌ વદતિ—અનેન મમ લક્ષમ્-  
 લ્યકસ્તુરગો દણ્ડાઘાતેન મારિતઃ । તદા ન્યાયાધ્યક્ષેણ કથિતમ્—‘કથય કસ્તે સાક્ષી’  
 इति । अश्वपतिर्घृते—अस्यैव पुत्रो मम साक्षी । न्यायाध्यक्षेण पृष्टस्तत्पुत्रोऽवदत्—  
 અનેનાશ્વપતિના મમ પિતા નિગદિતઃ—“ ભો ! તુરગોડયં ધાવતિ, એનં મારય મારય ”  
 इति । तदा मम पित्रा दण्डेनास्य तुरगो मारितः । एवं साक्षिभाषणं श्रुत्वा न्याया-  
 धીશो मनसि विचारयति—अहो ! सावधभाषादोषानभिज्ञतयाऽनेनाश्वपतिना ‘मारय  
 मारय’ इत्युक्तम् दण्डताडनभयं प्रदर्श्य तुरगं निवर्तयेत्वाशयेनानेन प्रोक्तमेतत् ।  
 ઘોડા દંડા કે પ્રહાર સે શીઘ્ર મર ગયા । જ્ય અશ્વપતિ ને અપને ઘોડેકો  
 मरा हुआ देखा तो वह उस मारने वाले को पकड़कर न्यायालय ले  
 गया । न्यायधीश के समक्ष उसके ऊपर अभियोग (आरोप) लगा ने के  
 अभिप्राय से इसने कहा कि इसने मेरा एक लाख रुपये की कीमत का  
 ઘોડા દંડે કે પ્રહાર સે માર દિયા છે । यह सुनकर न्यायधीश ने कहा  
 ठीक है । परंतु इसका साक्षी कौन है कहो ! अश्वपतिने कहा कि साहेब !  
 इसका पुत्र ही मेरे इस विषय में साक्षी है । न्यायधीश ने उसके पुत्र  
 સે પૂછા—તવ પુત્ર ને કહા કિ સ્વયં ઇસ અશ્વપતિ ને હી મેરે પિતા સે  
 ઘોડે કો મારને કે લિયે કહા થા । અતઃ મેરે પિતા ને દંડે કે પ્રહાર સે  
 ઇસ કે ઘોડે કો મારા છે । इस प्रकार साक्षी के भाषण को सुनकर  
 न्यायधीश ने मन में विचार किया मालूम पड़ता है कि घोड़े का यह  
 स्वामी भाषा दोष से अनभिज्ञ है । इसलिये इसने “मारो मारो”  
 ऐसा कहा है । इसके कहने का अभिप्राय केवल उस समय इतना ही  
 था की यह दण्डे का भय दिखलाकर उस घोड़े को लौटा देवे । इस

જ્યારે અશ્વપતિએ પોતાના ઘોડાને મરણ પામેલો જોયો ત્યારે તે માર-  
 નારને પકડી ન્યાયાલયમાં લઈ ગયો, ન્યાયાધીશની સામે તેના ઉપર આરોપ  
 लगाववाना लावथी तेले कह्युं के, आ माणसे मारा एक लाख रुपियांनी डिंम-  
 તના ઘોડાને દંડાના પ્રહારથી મારી નાખેલ છે. આ સાંભળીને ન્યાયાધીશે કહ્યું  
 ઠીક છે, પરંતુ આનો સાક્ષી કોણ છે તે કહો. અશ્વપતિએ કહ્યું કે, સાહેબ !  
 તેનો પુત્ર જ મારા આ વિષયમાં સાક્ષી છે. ન્યાયાધીશે તેના પુત્રને પૂછ્યું ત્યારે  
 પુત્રે કહ્યું કે, આ અશ્વપતિએ પોતે જ મારા પિતાને ઘોડાને મારવાનું કહ્યું હતું.  
 આથી મારા પિતાએ દંડાના પ્રહારથી તેના ઘોડાને મારેલ છે. આ પ્રકારે સાક્ષીનું  
 ભાષણ સાંભળી ન્યાયાધીશે મનમાં વિચાર કર્યો કે ઘોડાનો આ સ્વામી ભાષા  
 દોષથી અનભિજ્ઞ છે તેવું જણાય છે, આ માટે તેણે મારો, મારો ! એમ  
 કહેલ છે. આમ કહેવાનો અભિપ્રાય કેવળ તે સમય એટલો જ હતો કે, દંડાનો

इत्थं मनसि विमृश्य न्यायाधीशः सावद्यभाषाभाषिणमश्वपतिं प्राह—त्वया सावद्य-  
भाषा प्रोक्ता, तत्कलमेतत् प्राप्तम् । पुनरेवं कदापि कथमपि सावद्यभाषा न  
वाच्या ॥ इति । तथा निर्णयम्=अर्थरहितं न लपेत्, यथा—

एष बन्ध्यासुतो याति, खपुष्पकृतशेखरः ।

मृगतृष्णाम्भसि स्नातः, शशशृंगधनुर्धरः ॥ १ ॥

પ્રકાર વિચાર કર સાવચ ભાષા ભાષી उस अश्वस्वामी से न्यायधीशने  
कहा कि इसका क्या अपराध है ! अपराध तो तेरा ही है । जो तूने  
मारो २ इस प्रकारकी सावद्य भाषा द्वारा इसे मार ने के लिये उत्साहित  
किया, उसीका यह फल है । अब आगे इस बात का ध्यान रखो कि  
इस प्रकारकी सावद्य भाषा न बोली जाय ।

इसी प्रकार निर्णयक भाषा भी नहीं बोलनी चाहिये । जिस भाषा  
का कोई अर्थ नहीं होता हो ऐसी भाषा का प्रयोग करना भी वर्जित  
बतलाया गया है—जैसे—

एष बन्ध्या सुतो याति । खपुष्पकृतशेखरः ।

मृगतृष्णाम्भसि स्नातः । शशशृंग धनुर्धरः ॥ १ ॥

यह बन्ध्या पुत्र जा रहा है । इस के शिर पर आकाश के पुष्पों की  
माला है, तथा यह मृग तृष्णा के जल में स्नान किया हुआ है, इस के  
हाथ में शशले के सींग का धनुष है । इस प्रकार के वचन निर्णयक  
होते हैं । क्यों कि न तो बंध्या का कोई पुत्र होता है, न आकाश का

ભય દેખાડી તે ઘોડાને પાછો ફેરવી દે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી સાવચ ભાષા-  
ભાષી તે અશ્વસ્વામીને ન્યાયાધીશે કહ્યું આનો શું અપરાધ છે, અપરાધ તો તારોજ  
છે, જે તેં મારો, મારો ! આ પ્રકારની સાવચ ભાષા દ્વારા તને મારવા માટે  
ઉત્સાહિત બનાવ્યો તેનું આ ક્ષણ છે, હવે પછી એ વાત ધ્યાનમાં રાખો કે આ  
પ્રકારની સાવચ ભાષા બોલવામાં ન આવે.

આજપ્રકારે—નિર્ણયક ભાષા પણ ન બોલવી જોઈએ. જે ભાષાનો કોઈ  
અર્થ ન થતો હોય એવી ભાષાનો પ્રયોગ કરવો એ નિર્ણયક બતાવવામાં  
આવેલ છે જેમ—

“ एष बन्ध्या सुतो याति ख पुष्प कृत शेखरः ।

मृगतृष्णाम्भसि स्नातः शशशृंग धनुर्धरः ॥ ”

આ વંધ્યાપુત્ર જઈ રહ્યો છે, તેના માથા ઉપર આકાશના પુષ્પોની માળા છે,  
તથા એણે મૃગતૃષ્ણાના જળમાં સ્નાન કરેલ છે, એના હાથમાં સસલાના  
શીંગનું ધનુષ્ય છે, આ પ્રકારનાં વચન નિર્ણયક હોય છે, કેમકે, ન તો વંધ્યા



ગૃહીત્વા ન્યાયાલયં ગતઃ । તત્ર સ ન્યાયાધ્યક્ષસંનિધૌ વદતિ—અનેન મમ લક્ષ્મ-  
 લ્યકસ્તુરગો દણ્ડાઘાતેન મારિતઃ । તદા ન્યાયાધ્યક્ષેણ કથિતમ્—‘કથય કસ્તે સાક્ષી’  
 इति । अश्वपतिर्ब्रूते—अस्यैव पुत्रो मम साक्षी । न्यायाध्यक्षेण पृष्टस्तत्पुत्रोऽवदत्—  
 અનેનાશ્વપતિના મમ પિતા નિગદિતઃ—“ ભો ! તુરગોઽયં ધાવતિ, એનં મારય મારય ”  
 इति । तदा मम पित्रा दण्डेनास्य तुरगो मारितः । एवं साक्षिभाषणं श्रुत्वा न्याया-  
 धीशो मनसि विचारयति—अहो ! सावधभाषादोषानभिज्ञतयाऽनेनाश्वपतिना ‘मारय  
 मारय’ इत्युक्तम् दण्डताडनभयं प्रदर्श्य तुरगं निवर्तयेत्वाशयेनानेन प्रोक्तमेतत् ।  
 ઘોડા દંડા કે પ્રહાર સે શીઘ્ર મર ગયા । જવ અશ્વપતિ ને અપને ઘોડેકો  
 मरा हुआ देखा तो वह उस मारने वाले को पकड़कर न्यायालय ले  
 गया । न्यायधीश के समक्ष उसके ऊपर अभियोग (आरोप) लगा ने के  
 अभिप्राय से इसने कहा कि इसने मेरा एक लाख रुपये की कीमत का  
 ઘોડા દંડે કે પ્રહાર સે માર દિયા છે । यह सुनकर न्यायधीश ने कहा  
 ठीक है । परंतु इसका साक्षी कौन है कहो ! अश्वपतिने कहा कि साहेब !  
 इसका पुत्र ही मेरे इस विषय में साक्षी है । न्यायधीश ने उसके पुत्र  
 સે પૂછા—તથા પુત્ર ને કહા કિ સ્વયં હસ અશ્વપતિ ને હી મેરે પિતા સે  
 ઘોડે કો મારને કે લિયે કહા થા । અતઃ મેરે પિતા ને દંડે કે પ્રહાર સે  
 હસ કે ઘોડે કો મારા છે । इस प्रकार साक्षी के भाषण को सुनकर  
 न्यायधीश ने मन में विचार किया मालूम पड़ता है कि घोड़े का यह  
 स्वामी भाषा दोष से अनभिज्ञ है । इसलिये इसने “मारो मारो”  
 ऐसा कहा है । इसके कहने का अभिप्राय केवल उस समय इतना ही  
 था की यह दण्डे का भय दिखलाकर उस घोड़े को लौटा देवे । इस

જ્યારે અશ્વપતિએ પોતાના ઘોડાને મરણ પામેલો જોયો ત્યારે તે માર-  
 નારને પકડી ન્યાયાલયમાં લઈ ગયો, ન્યાયાધીશની સામે તેના ઉપર આરોપ  
 લગાવવાના ભાવથી તેણે કહ્યું કે, આ માણસે મારા એક લાખ રૂપીયાની કિંમ-  
 તના ઘોડાને દંડાના પ્રહારથી મારી નાખેલ છે. આ સાંભળીને ન્યાયાધીશે કહ્યું  
 ઠીક છે, પરંતુ આનો સાક્ષી કોણ છે તે કહો. અશ્વપતિએ કહ્યું કે, સાહેબ !  
 તેનો પુત્ર જ મારા આ વિષયમાં સાક્ષી છે. ન્યાયાધીશે તેના પુત્રને પૂછ્યું ત્યારે  
 પુત્રે કહ્યું કે, આ અશ્વપતિએ પોતે જ મારા પિતાને ઘોડાને મારવાનું કહ્યું હતું.  
 આથી મારા પિતાએ દંડાના પ્રહારથી તેના ઘોડાને મારેલ છે. આ પ્રકારે સાક્ષીનું  
 ભાષણ સાંભળી ન્યાયાધીશે મનમાં વિચાર કર્યો કે ઘોડાનો આ સ્વામી ભાષા  
 દોષથી અનભિજ્ઞ છે તેવું જણાય છે, આ માટે તેણે મારો, મારો ! એમ  
 કહેલ છે. આમ કહેવાનો અભિપ્રાય કેવળ તે સમય એટલો જ હતો કે, દંડાનો

મૂર્ખો, એકસ્તુ ભાણ્ડનિર્માણકલાભિજ્ઞોઽપિ નૈવ નિર્માતિ । યસ્તુ નાસ્તિ ભાણ્ડનિર્માતા, તેન ત્રીણિ ભાણ્ડાનિ નિર્મિતાનિ । તત્ર દ્વે સ્ફુટિતે, એકં ન યુજ્યતે । અયોજિતે ભાણ્ડે ત્રયસ્તણ્ડુલા રન્થિતાઃ, તત્રોમૌ તણ્ડુલાવામરૂપૌ, એકો ન સિધ્યતિ । તેન ત્રયો બ્રાહ્મણા ભોજિતાઃ તત્રોમૌ વુમુક્ષિતૌ, એકો ન મુક્ચતે, એવમેકઃ કથિદાસીદ્ ભૂપતિર્ય આસીદાસીન્નચાસીત્ ।

તથા—મર્મગં=મર્મવાચકં વચનં ન લપેત્ । રહસ્યોદ્ઘાટકં વચનં ન વ્રૂયાદિત્યર્થઃ । મર્મગં વચનં હિ હૃદયે શરાઘાતવેદનામિવ વેદનાં જનયતિ, ત્રાઘાત ઇવ મૂર્છયતિ,

નિવાસ કા હી અભાવ થા । જો ગાંવ જનોં કે નિવાસ સે વિહીન થા ઉસમેં તીન કુંભાર થે । इन में दो मूर्ख थे और एक वर्तन बनाने की कला में निपुण था । परंतु यह वर्तन नहीं बनाता था । जो वर्तन बनाने वाला नहीं था—उसने तीन वर्तन बनाये । दो फूटे और एक ऐसा जो जुड़ता नहीं था । अर्थात् कपाल माला जिसकी जुड़ी २ थी । इस में तीन चावल पकाये गये । इन में दो चावल कच्चे रहे और एक चावल सीझा नहीं । उससे तीन ब्राह्मणों को भोजन कराया गया । दो ब्राह्मण तो भूखे रहे और एक ने खाया नहीं । इस प्रकार इस कथा में केवल निरर्थक शब्दों का ही प्रयोग हुआ है । इस प्रकार के निरर्थक वचन नहीं बोलना चाहिये ।

जिनसे दूसरों के मर्म का उद्घाटन होता तो ऐसे वचन भी नहीं बोलना चाहिये । जो मर्मोद्घाटक वचन होते हैं वे जिस प्रकार बाण हृदय में आघात पहुँचाता हैं, उसी तरह आघात पहुँचाते हैं । वज्र के

વિહીન હતું તેમાં ત્રણ કુંભાર રહેતા હતા, જેમાં બે મૂર્ખ હતા અને એક વાસણ બનાવવાની કળામાં નિપુણ હતો, પરંતુ તે વાસણ બનાવતો ન હતો, જે વાસણ બનાવનાર ન હતો, તેણે ત્રણ વાસણ બનાવ્યાં. બે ફુટેલાં અને એક એવું કે જે જોડાતું ન હતું. અર્થાત્ કપાલમાળા જેની જુદી જુદી હતી, એમાં ત્રણ ચોખા પકવવામાં આવ્યા, જેમાં બે ચોખા કાચા રહ્યા અને એક ચોખો ચડ્યો નહીં—એનાથી ત્રણ બ્રાહ્મણોને ભોજન કરાવવામાં આવ્યું. બે બ્રાહ્મણ તો ભુખ્યા રહ્યા અને એકે ખાધું નહીં. આ રીતે આ કથામાં કેવળ નિરર્થક શબ્દોનો જ પ્રયોગ થયો છે. આ પ્રકારનાં નિરર્થક વચન ન બોલવાં જોઈએ.

જેનાથી બીજાના મર્મનું ઉદ્ઘાટન થાય એવાં વચન પણ ન બોલવાં જોઈએ. જે મર્મોદ્ઘાટક વચન હોય છે, તે જેમ બાણ હૃદયમાં આઘાત પહોંચાડે છે એજ રીતે આઘાત પહોંચાડે છે. વજ્રના આઘાતથી જે રીતે મૂર્છા

નિરર્થકં વચનં હિ વહ્નિવત્ સકલગુણભસ્મકારકં, સદ્ભૂતાર્થાપલાપકં, મિથ્યા-  
ર્થપ્રતિવોધકં, ભવાટવીભ્રામકં, વિકલ્પજાલજનકં, વૈરાગ્યલતાવિનાશકં, વિવેક-  
ચન્દ્રપચ્છાદકમ્ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે યથા—

આસીત્ કશ્ચિદેકો વસતિનિર્માપકો નૃપતિઃ, સ આસીદાસીન્ન ચાસીત્ ।  
અસદ્ભાવં પ્રાપ્તેન તેન ભૂપતિના ત્રયો ગ્રામા નિર્માપિતાઃ । તત્ર વસતિનિવાસિનાં  
જનાનાં નિર્વાસનાદ્ દ્વૌ ગ્રામો નિર્વાસિતો, એકથ જનનિવાસાભાવાદેવ વસતિ-  
ર્નાભૂત્ । અથ યત્ર જનાનાં વાસો નાભૂત્ તત્ર ત્રયઃ કુમ્ભકારા આસન્ । તેષુ દ્વૌ  
કોઈ પુષ્પ હોતા હૈ, ન મૃગતૃષ્ણા રૂપ જલ કોઈ ભાવાત્મક પદાર્થ હૈ, ઓર  
ન શશશ્રંગ કોઈ વસ્તુ હૈ । નિરર્થક વચન અગ્નિ કી તરહ સકલગુણો  
કો ભસ્મ કરને વાલે સદ્ભૂત અર્થ કે અપલાપક એવં મિથ્યા અર્થ કે  
પ્રતિવોધક હોતે હૈ । इनके प्रयोग से प्रयोक्ता भवाटवो में ही भ्रमण  
करता रहता है । अनेक प्रकार के विकल्पों का तांता इन निरर्थक वचनों  
से आत्मा में उद्भूत होता रहता है । वैराग्यरूपी लता के ये विनाशक  
तथा विवेक रूपी चंद्रमा के आच्छादक ये माने गये हैं । इस विषय में  
दृष्टાंत इस प्रकार है—

કોઈ એક રાજા થા જો વસ્તિ કા નિર્માણ ક્રિયા કરતા થા । વહ  
હોકર મો નહોં થા । उसने अपनी गैर मौजूदगी अवस्था में तीन ग्रामों  
की रचना की । दो गाँवों को उसने वहाँ के निवासियों को निकाल कर  
विलकुल उजड़ कर दिये । एक इसलिये उजड़ था कि उसमें जनों के

ચિને પુત્ર હોય છે, ન આકાશનું કોઈ પુષ્પ હોય છે, મૃગતૃષ્ણારૂપ જળ ન તો  
કોઈ ભાવાત્મક પદાર્થ છે, અને ન તો સસલાના શિંગ કોઈ વસ્તુ છે. નિરર્થક વચન  
અગ્નિ માફક સઘળા ગુણોને ભસ્મ કરવાવાળા સદ્ભૂત અર્થનો અપલાપક અને  
મિથ્યા અર્થ કરવાવાળા હોય છે. આવા પ્રયોગથી પ્રયોક્તા ભવાટવીમાં જ  
ભ્રમણ કરતા રહે છે. અનેક પ્રકારના વિકલ્પોના તાંતા આવા નિરર્થક વચનોથી  
આત્મામાં ઉદ્ભવતા રહે છે, વૈરાગ્યરૂપી લતાના એ વિનાશક તથા વિવેકરૂપી  
ચંદ્રમાનું આચ્છાદન કરનાર માન્યા ગયા છે.

આ વિષયમાં આ પ્રકારે દ્રષ્ટાંત છે.—

કોઈ એક રાજા હતો, જે વસ્તીનું નિર્માણ કર્યા કરતો હતો, તે હોવા  
છતાં ન હતો, તેણે પોતાની ગેરમોજૂદગી અવસ્થામાં ત્રણ ગામોની રચના કરી જે  
ગામોને ત્યાંના રહેવાસીઓને ત્યાંથી કાઢી મુકી ઉજ્જડ બનાવી દીધાં. એક એ  
માટે ઉજ્જડ હતું કે ત્યાં કોઈ વસ્તી જ ન હતી. જે ગામ લોકોના નિવાસથી

શ્વશુરગ્રામસમીપસ્ય કૂપસ્ય તટે વિશ્રામાર્થમુપવિષ્ટઃ । તત્ર તદ્ધાર્યયા ચિન્તિતમ્-વિદેશે નાનાવિધં કષ્ટં મયા કયં સોઢવ્યમ્ ? इति विमृश्य सा पतिमब्रवीत्-प्राणनाथ ! मां पिपासा बाधते । ततोऽसौ श्रेष्ठी भार्यावचनं निशम्य तत्र कूपादुदकमुद्धर्त्तुं कूपाभिमुखं शिरोऽवनतीकरोति यावत्, तावदेव भार्यया पृष्ठे हस्ताघातेन कूपे निपातितः । तदनन्तरं सा पितुर्गेहं गत्वा पितरमब्रवीत्-तव जामाता गृहात् क्वचिन्निर्गतस्तस्य नास्ति वार्ता, अतस्तव समीपे समागताऽस्मि ।

उसे अपने श्वशुर का ग्राम मिला । वह वहां गाम के बाहर कुए के पास विश्राम करने के लिये एक तरफ ठहर गया । इतने में उसकी पत्नी ने विचार किया कि-‘ये विदेश जा रहे हैं और मैं भी इनके साथ जा रही हूं । विदेश में अनेक प्रकार के कष्ट प्राणियों को सहन करने पड़ते हैं मैं उन कष्टों को कैसे सहन करूंगी’ ऐसा विचार कर उसने अपने पति धनगुप्त से कहा कि हे प्राणनाथ ! मुझे इस समय बड़े जोरकी प्यास लग रही है, पति पानी लेने को ज्यों ही कुए पर पहुँचा और पानी भरने लगा कि इतने में पीछे से उस पत्नी ने आकर उसे धक्का मारकर कुए में पटक दिया । बाद में फिर वह अपने पिता के घर जाकर कहने लगी कि हे पिता ! तुम्हारे जमाई न मालूम घर से कहां निकल कर चले गये हैं । मैं ने बहुत तपास कराई परन्तु अभीतक उनकी कोई खबर नहीं मिली है, सो मैं तुम्हारे पास आई हूँ ।

જવા નીકળ્યા ચાલતાં ચાલતાં માર્ગમાં તેના સસરાનું ગામ આવ્યું. તે ત્યાં ગામ બહાર એક કુવા પાસે આરામ કરવા રોકાયા. એ સમયે તેની સ્ત્રીએ વિચાર કર્યો કે, “શેઠ પરદેશ બંધ છે અને હું પણ તેમની સાથે બાઉ છું પરદેશમાં અનેક પ્રકારના દુઃખો પ્રાણીયોએ સહન કરવાં પડે છે, હું એ દુઃખોને કેમ કરીને સહન કરી શકીશ ” એવો વિચાર કરી તેણે પોતાના પતિ ધનગુપ્તને કહ્યું કે, હે પ્રાણનાથ ! મને અત્યારે ખૂબજ તરસ લાગી છે, પતિ પાણી લેવા માટે જ્યાં કુવા પર પહોંચ્યા, અને પાણી ભરવા લાગ્યા કે એટલામાં તેની સ્ત્રીએ પાછળથી આવીને તેને ધક્કો મારી કુવામાં હડસેલી દીધો. આ પછી તે પોતાના પિયર પહોંચી અને ત્યાં જઈ કહેવા લાગી કે, હે પિતા ! તમારા જમાઈ કહ્યા વગર કોણ બાણે કેમ ઘેરથી ચાલ્યા ગયા છે, મેં ઘણી તપાસ કરાવી છતાં હજી સુધી તેની કોઈ બાબત મળી નથી. માટે હું તમારી પાસે આવી છું.

દ્વેષાગ્નિ મજ્જલયતિ, શોકમૃત્પાદયતિ, ચારિત્રં ધ્વંસયતિ, ગુણગણં સંહારયતિ, નરકનિગોદાદિદુઃસ્વર્ગતે નિપાતયતિ, નિશિતકૃપાણધારાચન્મર્માણિ કર્તયતિ ।

મર્મગવચનભાષણસ્ય દૃષ્ટાન્તસ્ત્વેવમ્—

આસીદ્ ધનગુપ્તનામા કથિદેકઃ શ્રેષ્ઠી । સ ચૈકદા માર્યામિત્રવીત્-પ્રિયે ! ધનાર્જનાય વિદેશં વ્રજામિ । તથા પ્રોક્તમ્-નાથ ! મયાન્ મામપિ તત્ર નયતુ । સ શ્રેષ્ઠી સહગમનાર્થમનુમતિં પત્ન્યૈ પ્રદત્તવાન્ । તતોઽસૌ પત્ન્યા સહ ગચ્છન્ માર્ગે

આઘાત સે જિસ પ્રકાર મૂર્છાં આજાતી હૈ उसी प्रकार इन वचनों से भी प्राणी मूर्च्छित हो जाता है । ये वचन सदा द्वेष रूपी अग्नि को प्रज्वलित करते रहते हैं और शोक परम्परा के संवर्द्धक होते हैं । इन के सद्भाव में चरित्र का सर्वथा विनाश होता रहता है । गुणगण का संहार करके ये वचन प्राणी को नरक एवं निगोदादिक के दुःख रूपी खड्गे में गिराते हैं । जैसे तीक्ष्ण धार वाली तलवार हर एक वस्तु को छेदनभेदन करती है उसी प्रकार मर्मग वचन भी प्राणी के मर्मस्थानों को छेदनभेदन करते हैं ।

इस विषय में दृष्टાंत इस प्रकार है—

कोई एक धनगुप्त नाम का सेठ था । उसने एक दिन अपनी पत्नी से कहा कि हे प्रिये ! मैं धन कमाने के लिये परदेश जाना चाहता हूँ । सुनकर उसने कहा कि हे नाथ ! आर मुझे भी साथ ले ते चलिये । पत्नी की बात सुनकर धनगुप्त ने उसे अपने साथ चलने की अनुमति दे दी । धनगुप्त पत्नी को साथ लेकर परदेश निकला । चलते-र मार्ग में

આવી જાય છે, એ જ રીતે આવા વચનોથી પણ પ્રાણી મૂર્ચ્છિત થઈ જાય છે. આવાં વચનો હંમેશાં દ્વેષરૂપી અગ્નિને પ્રગટ કરતાં રહે છે અને શોક પરંપરાને ઉત્તેજન કરનાર નિવડે છે. આના સદ્ભાવમાં ચારિત્રનો સર્વથા વિનાશ થતો રહે છે. ગુણ સમૂહનો સંહાર કરીને એ વચનો પ્રાણીને નરક અને નિગોદાદિ કના દુઃખરૂપી ખાડામાં પાડે છે. જેમ તીક્ષ્ણ ધારવાળી તલવાર હરએક વસ્તુનું છેદન ભેદન કરે છે એજ રીતે માર્મિક વચન પણ પ્રાણીના મર્મસ્થાનોનું છેદન ભેદન કરે છે.

આ વિષયમાં આ પ્રકારનું દૃષ્ટાંત છે.—

કોઈ એક ધનગુપ્ત નામે શેઠ હતા, એણે એક દિવસ પોતાની સ્ત્રીને કહ્યું કે, હે પ્રિયે ! હું ધન કમાવા માટે પરદેશ જવા ઇચ્છું છું. સાંભળીને તેણે કહ્યું, કે હે નાથ ! આપ મને પણ સાથે લેતા જવ, સ્ત્રીની વાત સાંભળી ધનગુપ્ત શેઠે તેને પોતાની સાથે ચાલવાની અનુમતિ આપી. ધનગુપ્ત સ્ત્રીને સાથે લઈ



વ્યજનવીજનં કુર્વતી પુરોઽવતિષ્ઠતે । અકસ્માદ્ ભાસ્કરકિરણાસ્તદ્ધવનજાલાન્ત-  
ર્ગતાઃ શ્રેષ્ઠિષ્ઠોપરિ નિપતન્તસ્તયા દૃષ્ટાઃ । પત્યુર્મુખે ભાસ્કર કાર સ્પર્શજનિતસ્તાપો  
મા ભૂદિતિ ભાવનયા સા સત્વરં નિજકરદ્યયં ભાસ્કર કિરણસંમુખેઠ્ઠ્વા શ્રેષ્ઠિષ્ઠો-  
પરિ સૂર્યકિરણાન્ નિવારયતિ ।

અકસ્માત્તદૈવ પત્નીકૃતં પૂર્વઘૃતં શ્રેષ્ઠિના સ્મૃતમ્ । શ્રેષ્ઠી મનસિ ચિન્તયતિ-  
“અહો યયાહં કૂપે નિપાતિતઃ સૈવેયમધુના મમ સૂર્યઋસ્પર્શજનિતં તાપં નિવારયતિ”  
इत्येवं विचारयतस्तस्य श्रेष्ठिनो मुखे हास्यं समजनि । तदा तत्पुत्रवधूर्हसन्तं श्रेष्ठि-  
नमकस्मादपश्यत् । सा पत्युः समीपमागत्य वदति-नाथ ! भवतः पिता श्वश्रूसमक्षं

કિ ધનગુપ્ત અપને રંગભવન મેં વૈઠા હુઆ ભોજન કર રહા થા । ઓર  
પત્ની ઉસ કે ડપર પંચા કર રહી થી । ધનગુપ્ત કે ચહરે પર અકસ્માત્  
સૂર્ય કી કિરણે મકાન કી છત કે છિદ્રો મેં સે આકર પડને લગી, પત્ની  
ને ડ્યોં હી યહ દેખા કિ શીઘ્ર હી ઉસને ‘પતિ કો તાપ ન લગે’ ઇસ  
ખ્યાલ સે અપની દો નોં હથેલિયોં કો સૂર્ય કે સામ્હને કર દિયા । ઇસસે  
ધનગુપ્ત કે મુખ પર પડતી હુઈ વે કિરણે ધમ ગઈ-મુખ પર હથેલિયોં કી  
છાયા હો ગઈ । પત્ની દ્વારા ઇસ પ્રકાર કી ગઈ સેવા કા અવલોકન કર  
ધનગુપ્ત કો પહેલે કા વહ કુણ મેં ડાલ ને કા ઘૃસ્તાન્ત યાદ આ ગયા ।  
ધનગુપ્ત ને વિચાર કિયા, દેખો-જિસને મુઝે પહિલે કુણ મેં પટકા વહી  
અવ મુઝે ‘સૂર્યજનિત સંતાપ ન હો’ ઇસ ખ્યાલ સે ઉસ સંતાપ કા  
નિવારણ કર રહી હૈ । ઇસા ખ્યાલ કર ધનગુપ્ત કો કુછ હૈસી આગઈ ।  
ધનગુપ્ત કો અકસ્માત્ હૈસતા હુઆ ઉસ સમય ઉસકી પુત્રવધૂ ને દેખ-  
લિયા થા, ઇસલિયે વહ અપને પતિ કે પાસ આકર કહને લગી કિ નાથ,

અને તેની સ્ત્રી પંખાથી તેને ઢાંકી નાખી રહી હતી એ વખતે ધનગુપ્તના ચહેરા  
ઉપર મકાનના છતના કાણામાંથી સૂર્યનાં કિરણો અકસ્માત પડવા લાગ્યાં તેની  
સ્ત્રીએ જોયું આ જોયું કે તુરંત જ એણે “પતિને તાપ ન લાગે” એવા ખ્યાલથી  
પોતાના બન્ને હાથની હથેલીઓને સૂર્યના એ કિરણોની આડે ધરી દીધી. આથી  
ધનગુપ્તના ચહેરા ઉપર પડતો કિરણોનો તાપ અટકી ગયો, મુખ ઉપર  
હથેલીઓની છાયા થઈ ગઈ, સ્ત્રી તરફથી આ રીતે કરવામાં આવેલી સેવા  
જોઈને ધનગુપ્તને પહેલાંનો કુવાવાળો પ્રસંગ યાદ આવી ગયો, ધનગુપ્તે વિચાર  
કર્યો, જુઓ ! જેણે મને પહેલાં કુવામાં નાખી દીધો હતો તે હવે મને સૂર્યના  
કિરણોનો તાપ ન લાગે એવા ખ્યાલથી એ સંતાપનું નિવારણ કરી રહી છે. આ  
વિચારથી ધનગુપ્તને જરા હસવું આવ્યું. ધનગુપ્તને અકસ્માત્ હસતાં તેની પુત્ર  
વધુએ જોઈ લીધેલ, આથી એ પોતાના પતિ પાસે જઈ કહેવા લાગી કે-

इतथासौ श्रेष्ठी कूपे पतन् भाग्यवशात् कूपमिनिगतं पापाणं प्राप्य तमवल-  
म्ब्य स्थितः । तदनु तत्रागतैर्जलार्थिजनैरनुकम्पयाऽसौ कूपान्निःसारितः । ततोऽसौ  
विदेशं गत्वा पुण्यप्रभावात् प्रचुरं धनं समुपाज्य श्वशुरगृहे समायातः । तदा तस्य  
पत्नी प्रसन्ना जाता, तथा सह श्रेष्ठी स्वगृहं गतः । अथैकदा श्रेष्ठिनः पुत्रो जातः  
तस्य यौवने वयसि प्राप्ते श्रेष्ठिना विवाहः कारितः । पुत्रवधूरागता । किञ्चिदि-  
वसेषु व्यतीतेषु सत्सु श्वश्रूवध्वोर्मध्ये कलहः प्रवृत्तः । वधूर्नित्यं श्वश्रूच्छिद्रान्वेषण-  
परा जाता । एकदाऽसौ श्रेष्ठी रक्षभवने भोजनं कुर्वन्नासीत्, तत्पत्नी तदानीं बाल-

धनगुप्त ज्यों ही कुए में गिरा कि भाग्यवश से उसे कुए की भित्ति  
में पास ही एक पत्थर का टुकड़ा लगा हुआ दिखलाई पड़ा । यह भित्ति से  
कुछ अधिक बाहर की ओर निकला था । पड़ते ही धनगुप्त ने उसको पकड़  
लिया । जब पानी भरने वाले वहां पानी भर ने के लिये आये तब  
उन्होंने धनगुप्त को कुए से बाहर निकाला । स्वस्थ होकर यह बिना कुछ  
कहे परदेश की ओर चल दिया । वहां पहुँच कर उसने पुण्यकर्म के  
उदय से खूब धन कमाया । कमाकर यह वहां से अपने घर वापिस  
हुआ । रस्ते में इस के श्वसुर का गाम आया और यह श्वशुर के घर  
पहुँचा । पत्नी ने पति को देखकर बहुत आनंद मनाया । वहांसे अपनी  
पत्नी को साथ लेकर घर आ गया । कालान्तर में धनगुप्त के एक पुत्र  
हुआ । समय पर उसका विवाह कर दिया गया, बहु घरमें आई । रहते २  
सास और बहु में झगडा होने लगा । बहु ने सास को दबाने के लिये  
उस के छिद्रों का अन्वेषण करना प्रारंभ कर दिया । एक दिनकी बात है,

धनगुप्त कुवामां पड्यो के, भाग्यवश कुवानी लीं तमां तेनी पासे ज ओक  
पत्थर थोड़ा डेढ़ो नजरे पड्यो जे लीं तथी थोड़ा जडार चिकजेलो डतो । कुवामां  
पडतां नी साथे ज धनगुप्ते ते पत्थर पकड़ी लीयो ज्यारे पाणी भरवावाणा कुवा उपर  
पाणी भरवा आव्यां त्यारे तेमणे धनगुप्तने कुवामां थी जडार काढ्यो । स्वस्थ जनी  
कांछ पणु जोड्या सिवाय ते परदेश जवा चाली निकज्यो । त्यां पडों थी ते पुण्य  
कर्मना उदयथी पूज धन कमायो । पूज धन कमाछ ते पोताने घेर आववा निकज्यो,  
रस्तामां सासरानुं गाम आव्युं त्यारे ते सासराने घेर पडों थ्यो, पतिने पतिने  
जोछ आनंद मनाव्यो । त्यां थी जे पोतानी स्त्रीने लछने पोताने गाम पोताने घेर  
पडों थ्यो । समय जतां जे धनगुप्तने त्यां ओक पुत्र थ्यो, समय उपर तेनां लग्न  
कर्यां, बहु घेर आवी, रडेतां रडेतां सासु अने बहु वर्ये विषवाड थवा लाज्यो,  
बहु जे सासुने दगाववा भाटे तेनां गुप्त छिद्रोनां अन्वेषण करवाने प्रारंभ करी  
दीयो । ओक दिवस धनगुप्त पोताना रंगलवनमां जेसी लोजन करी रडेल डतो ।

पुनरेकदा श्रेष्ठिपत्न्याः पुत्रवध्वा सह कलहो जातः, तस्मिन्नवसरे पुत्रवधू-  
वदत्-जानामि तव चरित्रम्, पतिं कूपे निपात्य, संपति पतिव्रता भवितुमुद्यताऽसि।  
एतन्मार्मिकं वचनं निशम्य श्वश्रूः परमदुःखिता जाता, बहुशो रुरोद, रुदित्वा च  
मनसि चिन्तयति स्म-अधुना मम जीवनं धूलिरिव निरर्थकम्, अद्य ममेयं वार्ता  
लोके प्रसारिष्यति, मां लोकः किं वदिष्यति। इत्येवं विचिन्त्य सा भवनस्य द्वितीय-  
भूमिकामारोह। तत्र गत्वा गले पाशं संयोज्य रज्ज्वां लम्बिता प्राणान्  
परित्यक्तवती ।

हंसी का जो कुछ कारण था वह अपने पुत्र को कह दिया। माँका पाकर  
श्रेष्ठि पुत्र ने भी जो कुछ जैसी बात थी वह अपनी पत्नी से कह दी।

एक समय सास बहु में परस्पर जब कलह हुआ तो पुत्रवधू ने  
सासु से कहा कि "आप ज्यादा मत बोलो मैं जानती हूँ कि आप वही  
हैं जिन्होंने ने अपने पति को कूप में डाल दिया था, अब पतिव्रता  
बनती हैं।" इस प्रकार वह के मार्मिक वचनों को सुनकर सास के  
हृदय में अपार दुःख हुआ, वह बारं बार रोने लगी, विचार किया कि  
अब मेरा जीना बिल्कुल निरर्थक है। वह ने मेरी सब शान धूलि में  
मिला दी है। यदि मेरी यह बात लोक में फैल गई तो लोग क्या कहेंगे?  
इस प्रकार सोचकर वह अपने मकान के दूसरे मंजिल पर गई, और  
वहाँ उसने गले में फांसी डालकर आत्मघात कर लिया।

वाणा शेठे હાંઓનું જે કાંઈ કારણ હતું તે સ્વર્ણ પોતાના પુત્રને કહી દીધું.  
અવસર મેળવીને શેઠ પુત્રે પણ જે કાંઈ વાત હતી તે પોતાની પત્નીને  
કહી દીધી.

સાસુ વહુમાં પરસ્પર વચ્ચે કંઈક થયો ત્યારે પુત્રવધુએ સાસુને કહ્યું  
કે, "તમે વધુ ન બોલો, હું જાણું છું કે, તમે એ જ છો કે જેણે પોતાના  
પતિને કુવામાં ધકેલી દીધેલ, હવે પ્રતિવ્રતા બનેા છો." આ પ્રકારનાં વહુનાં  
માર્મિક વચનોને સાંભળી સાસુના હૃદયમાં અપાર દુઃખ ઉપજ્યું અને તે ચોધાર  
આંસુએ રડવા લાગી, તેણે મનમાં મનમાં એવો નિશ્ચય કર્યો કે, હવે મારું  
જીવન બિલકુલ નીરર્થક છે, વહુએ મારી બધી શાન ધુળમાં મેળવી દીધી છે. જે  
મારી આ વાત લોકોમાં ફેલાઈ જાય તો લોકો શું કહેશે? આ રીતે વિચાર  
કરી તે પોતાના મકાનના બીજા માળા ઉપર પહોંચી અને ત્યાં જઈ ગળામાં  
ફાંસો નાખી આત્મઘાત કર્યો.

હસન્ મયા દૃષ્ટઃ, કિં તત્ર હાસસ્ય કારણમભૂદિત્યાયંચતામ્ । શ્રેષ્ઠિપુત્રઃ પ્રાઠ-  
પતિપત્ન્યોર્વૃત્તમવેદ્યં ભવતિ । પત્ની વદતિ-ભવતા યાવદેતદ્દૃષ્ટં નાનેધ્યતે, ન વા  
વૃત્તાનયનવચનં દાસ્યતે, તાવન્મયાઽન્નપાનં પરિત્યાજ્યમ્ । પ્રેમપરચ્છેન વિસ્મૃતવિવે-  
કેન શ્રેષ્ઠિપુત્રેણ 'હાસ્યકારણં કથયિષ્યામી' તિ વચન પ્રદાનેન પત્ની પરિતોષિતા ।

एकदा श्रेष्ठिपुत्रः पितुश्चरणसंग्राहनं कुर्वन् पृच्छतिस्म आर्य ! तस्मिन् दिवसे  
केनकारणेन भवता हसितम्, इत्येवं पृष्ठोऽसी सरलहृदयः श्रेष्ठो सर्वं पूर्ववृत्तं  
पुत्राय कथितवान् । श्रेष्ठिपुत्रः सर्वं पूर्ववृत्तं विज्ञाय पत्न्यै कथयामास ।

आज मैं ने आप के पिता को सासुजी के समक्ष हँसते हुए देखा है  
अतः हे नाथ ! आप मुझे बतलाई ये कि इस अकारण हँसी का क्या  
कारण है । सेठ के पुत्र ने अपनी पत्नी को समझाया कि पति और पत्नी  
का वृत्त अवेद्य हुआ करता है । अतः इस विषय को जानने की चेष्टा  
करना व्यर्थ है । पत्नी ने पति के मुख से यह बात सुनकर कहा हे नाथ !  
जब तक आप मुझे इसका कारण नहीं बतलावेंगे, तबतक मैं अन्नजल  
ग्रहण नहीं करूँगी । पत्नी का इस प्रकार वृत्त को जानने का अधिक  
आग्रह देखकर पति ने उसके प्रेम से पागल जैसे बनकर उसे इस  
बात का आश्वासन दिया कि वह कुछ समय बाद इसका वास्तविक  
कारण उसे बतला देगा । इस प्रकार रुष्ट हुई पत्नी संतुष्ट हो गई । एक  
समय की बात है कि श्रेष्ठि पुत्र ने पिता के चरणों को दाबते हुए उनसे  
पूछा कि हे तात ! आप एक दिन भोजन करते समय किस कारण से  
हँसे थे ? पुत्र की इस बात को सुनकर सरल हृदय वाले सेठ ने समस्त

હે નાથ ! આજ મેં તમારા પિતાને સાસુજી સામે હસતા જોયા. તો આપ એ  
ખતાવો તે તેમના અકારણ હસવાનું શું કારણ છે ? સેઠ પુત્રે પોતાની સ્ત્રીને  
સમજાવ્યું કે, પતિ પત્નીનો સંબંધ અવેદ્ય હોય છે. આ વિષયને જાણવાની  
ચેષ્ટા કરવી વ્યર્થ છે. પત્નીએ પતિના મુખથી આવી વાત સાંભળીને કહ્યું કે,  
હે નાથ ! જ્યાં સુધી તમે મને તેનું કારણ નહીં ખતાવો ત્યાં સુધી હું અન્ન  
જળ ગ્રહણ કરીશ નહીં. પત્નીનો આ પ્રકારે વૃત્તાન્ત જાણવાનો અધિક આગ્રહ  
જાણીને પતિએ તેના પ્રેમમા પાગલ જેમ બનીને તેને આ વાતનું આશ્વાસન  
આપ્યું કે, થોડા સમયમાં પોતે તેનું વાસ્તવિક કારણ ખતાવશે. આથી રૂષ્ટ  
બનેલ પત્નીને સંતોષ થયો. એક સમયની વાત છે કે, સેઠ પુત્રે પોતાના પિતાના  
પગ દાબતા દાબતાં એમને પૂછ્યું કે, હે તાત ! આપ એક દિવસ ભોજન  
કરતાં કરતાં શા માટે હસ્યા હતા ? પુત્રની આ વાતને સાંભળીને સરળ હૃદય

તદાઽસૌ પુત્રોઽપિ માતાપિત્રોર્વિયોગેન શોકાર્તઃ સન્ ભવિષ્યદનિષ્ઠં ચિન્તયન્ મૃતં પિતરં પાશવન્ધનાદ્ વિમુચ્ય સ્વગલે તં પાશં વદધ્વા મૃતઃ ।

તદનન્તરં પુત્રવધૂઃ ‘ ઇમે ત્રયઃ સ્વલુ મિલિત્વા મમૈવ દુર્દશાં ભાવયન્તિ ’ ઇતિ વિચિન્ત્ય ક્રોધાવેશેન ધમધમાયમાના ઉપરિ ગતા । તત્ર સા પश्यति—શ્વશૂઃ શ્વશુર-શ્ચોર્મૌ મૃતૌ નિપતિતૌ, પતિરપિ ગલે વદ્ધપાશો મૃતઃ પાશરજ્જ્વાં લમ્બિત્વ ઇતિ । તદા વિનિવૃત્તક્રોધા નિવાન્તદુઃખાર્તાસા ચિન્તયતિ સ્મ—અતઃ પરં કીદૃશી દશા મમ ભવિષ્યતિ, લોકાઃ કિં વદિષ્યન્તિ, કઃ સ્યાન્મમ શરણમ્, ઇત્યાદિ । તદનન્તર-મસૌ સગર્ભા પુત્રવધૂઃ પત્યુર્ગલે સંલગ્નં પાશવન્ધનં વિમુચ્ય સ્વગલે સંયોજ્ય લમ્બિતા પ્રાણાન્ ત્યક્તવતી ।

ગલે મેં ફાંસી લગાકર મરે હુણ લટક રહે હેં । ઇસ પરિસ્થિતિ સે ઉસે વહુત હી દુઃખ હુઆ । માતા પિતા કે વિયોગ ને ઉસે પાગલ બના દિયા, અન્ત મેં ઉસ વિચારે ને ભી અપને પિતા કે ગલે સે ફાંસી ઉતાર કર અપને ગલે મેં લગાલી । જવ પૂત્રવધૂ ને યહ વિચારા કિ “ દેખો યે તિનોં કે તિનોં મિલકર મેરી દુર્દશા કર ને કી ભાવના કર રહે હેં । અતઃ ડપર જાકર દેખૂં, કિ હન સવકી કયા રાય હો રહી હૈ ’ ઇસ પ્રકાર ક્રોધ કે આવેશ સે ધમ ધમ કરતી હુઈ વહ ડપર ગઈ । જાતે હી ઉસને દેખા કિ સાસ શ્વશુર મરે પહે હુણ હેં પતિ ભી ગલે મેં ફાંસી લગાકર મરે હુણ લટક રહે હેં । ઉસ દુર્ઘટના કો દેખકર ઉસકે શરીર મેં સન્નાટા છા ગયા, કોપ જાતા રહા । અત્યંત શોક સે વહ વિહ્વલ હો ગઈ । વિચારા કિ અવ સંસાર મેં મેરા કૌન હૈ, કિ જિસ કે લિયે હન પ્રાણોં કી રક્ષા કરૂં । લોગ સુનેંગે તો કયા કહેં ગે । ઇસ પ્રકાર વિચાર કર વહ ભી અન્ત મેં

ગળામાં ફાંસો લગાડી મરેલી હાલતમાં લટકી રહ્યા છે. આ પરિસ્થિતિ જોઈ તેને ખૂબ દુઃખ થયું, માતા પિતાના વિયોગે તેને પાગલ બનાવી દીધો. અંતે એ બિચારાએ પણ પોતાના પિતાના ગળામાંથી ફાંસો કાઢી પોતાના ગળામાં લગાવી આત્મઘાત કર્યો જ્યારે પુત્રવધુએ એ વિચાર્યું કે, “ આ ત્રણે જણા મળી મારી દુર્દશા કરવાની યોજના ઘડી રહ્યાં હશે. આથી ઉપર જઈ જોઉં તો ખરી કે બધા કેવો વિચાર કરી રહ્યા છે ” આ રીતે ક્રોધના આવેશથી ધમ ધમ કરતી વહુ ઉપર પહોંચી ને જુએ છે તો સાસુ સસરા મરેલ પડ્યા છે. અને પતિ પણ ગળામાં ફાંસો લગાવી મરેલ લટકી રહેલ છે. આ દુર્ઘટનાને જોઈ એના શરીરમાં કંપારી વધુટી, ક્રોધ જતો રહ્યો અને શોકથી વિહ્વળ બની ગઈ. વિચાર્યું કે હવે સંસારમાં મારું કેણુ છે કે જેના માટે આ પ્રાણની રક્ષા કરેં લોકો જાણશે તો શું કહેશે ? આ વિચાર કરી તેણે પોતાના



અવ શ્રેષ્ઠી ગૃહમાગતઃ, પત્નીમનવલોક્ય પુત્રવધૂં પૃષ્ટવાન્-આયુષ્મતિ ! તવ શ્વશ્રૂઃ ક્વાસ્તિ ?, પુત્રવધૂઃ કર્ણેષ્ટયાઽઽવેદયતિ-મમાનોપરિભાગે ગતા ઇતિ । શ્રેષ્ઠી ગૃહોપરિભાગભૂમિકાં ગત્વા શ્રેષ્ઠિર્નાં ગલ્લે પાશવદ્ધાં મૃતાં પश्यति । તદાઽસૌ શ્રેષ્ઠી ત્રિપાદમુપગતઃ સન્ ત્રિચિન્તયતિ-અનયા વિના મમ કીદશી દશા મવિષ્યતિ, ઇત્યાદિ । તદનુ સ શ્રેષ્ઠો પત્નીગલગતં પાશં વિમુચ્ય સ્વગલે સંયોજ્ય પ્રાણાંસ્ત્યક્તવાન્ । પુત્રોઽપિ ગૃહમાગતઃ, સ પિતરમદૃષ્ટ્વા પત્નીં પૃષ્ટવાન્-‘ક્વાસ્તિ મમ તાતઃ’ । પત્ની પ્રાહ-ઉભૌ મમાનિષ્ટં કર્તુમુપરિ વર્તેતે । પુત્રઃ પત્નીવચનમાકર્ષ્ય તત્ર ગત્વા પश्यति-માતા મૃતા નિપતિતાઽસ્તિ, પિતાઽપિ પાશવદ્ધો મૃતઃ મલમ્વિતો વર્તેતે, ઇતિ ।

ધનગુપ્ત જવ ઘર આયા તો उसने सेठानी को न देखकर वह से पूछा आयुष्यमती ! तुम्हारी सास कहाँ है ? उसने हाथ के इशारे से कहा कि वे मकान के दूसरे मंजिल पर हैं । धनगुप्त वहाँ पहुँचा और देखा कि वह गले में फाँसी लगा कर मर गई है । धनगुप्त ने यह दशा देखकर बहुत ही शोच विचार किया और अन्त में यह निर्णय कर कि सेठानी के बिना मेरी क्या दशा होगी, पत्नी को फाँसी से उतार कर वह स्वयं फाँसी लटक गया । पुत्र ने पिता को घर पर आकर जब नहीं देखा तो पत्नी से पूछा कि पिताजी कहाँ पर हैं । उसने घात को बनाकर कहा कि माता-पिता दोनों ही दूसरे मंजिल पर मेरा अनिष्ट करने की विचारणा करने के लिये गये हुए हैं । पत्नी की बात सुनकर वह मकान के ऊपर गया । देखा कि माता मरी पड़ी है और पिताजी

ધનગુપ્ત બ્યારે ઘેર આવ્યો તો તેણે પોતાની સ્ત્રીને ન જોતાં વહુને પૂછ્યું, આયુષ્મતી ! તમારી સાસુ ક્યાં છે ? તેણે હાથના ઈશારાથી કહ્યું કે, ખીજા માળ ઉપર (મેડી ઉપર) છે. ધનગુપ્ત ત્યાં પહોંચ્યો અને જુએ છે તો ગળામાં ફાંસો નાખી તે મરી ગયેલ છે. આ રીતે પોતાની પત્નિની દશા જોઈ ધનગુપ્તે ખૂબજ મનોમંથન સાથે વિચાર કર્યો. અને અંતે એ નિર્ણય કર્યો કે, પત્નિના જવા પછી હવે મારી શું દશા થશે ? ફાંસાથી લટકતી પત્નિને નીચે ઉતારી એ દોરડાનો ફાંસો પોતાના ગળામાં નાખી લઈ પોતે પણ અત્મઘાત કર્યો.

એક તરફ પતિપત્નિ એક જ દોરડાના ફાંસાથી આત્મહત્યા કરી જીવમુક્ત બન્યાં એ સમયે પુત્રે ઘેર આવતાં પોતાના પિતાને ન જોવાથી પત્નિને પૂછ્યું, પિતાજી ક્યાં ગયા ? સ્ત્રીએ વાતને બતાવીને કહ્યું કે, માતા-પિતા બન્ને જણાં મારું અનિષ્ટ કરવાની વિચારણા કરવા મેડી ઉપર ગયેલ છે. પત્નિની વાત સાંભળી તે મેડી ઉપર ગયો. જોયું તો મા નીચે મરેલી પડી છે, અને પિતાજી

લક્ષણં सर्वेषां स्थानानाम्, कुत्रापि स्त्रिया सहावस्थानं संभाषणं च न कुर्यादित्यर्थः,  
एकग्रहणमप्युपलक्षणम् तेनानेकस्त्रीभिरपि सहावस्थानं संभाषणं च वर्जनीयम्, यत्र  
पुरुषः साक्षी नास्ति तत्र स्त्रिया सहावस्थानं संभाषणं च परिहरेदिति सूत्राशयः।  
उक्तं च श्रीदशवैकालिक सूत्रे—

जहा कुक्कुटपोयस्स, निच्चं कुललओ भयं।

एवं खु वंभयारिस्स, इत्थीविग्गहओ भयं ॥ (अ. ८ गा. ५४)

छाया—यथा कुक्कुटपोतस्य, नित्यं कुललाद् भयम्॥

एवमेव ब्रह्मचारिणः, स्त्रीविग्रहाद् भयम्॥

स्वगत दोष का निरूपण कर के अब अन्य के संसर्ग से होने वाले दोषोंका वर्णन करते हैं—‘समरेसु-इत्यादि.

अन्वयार्थ—(समरेसु-समरेषु) लुहारकी शाला में (अगारेसु-अगारेषु) घरों में, (संधीसु-संधिषु) दो घरों के अंतराल में तथा (महापहेसु-महापथेषु), राजमार्ग में (एगित्थिएसद्धि-एकस्त्रियासार्ध) अकेली स्त्री के साथ (नेवचिट्ठे न संलवे-नैवतिष्ठेत् नैव संलपेत्) न खडा होवे और न उससे बातचीत करे।

इस श्लोक में समरादिक चार पद उपलक्षण हैं, इससे समझना चाहिये कि किसी भी जगह में जब तक पुरुष साक्षीभूत न हो तब तक अकेली स्त्री से अथवा अनेक स्त्रियों से ब्रह्मचारी का कर्तव्य है कि वह न बोले और न वहाँ खडा रहे। दशवैकालिक सूत्र में भगवानने कहा है

આ પ્રકારે પોતાનામાં રહેલ દોષોનું વર્ણન કરી હવે બીજાના સંસર્ગથી થયેલ દોષોનું વર્ણન કરે છે. સમરેસુ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—સમરેસુ-સમરેષુ લુહારની કેડમાં, અગારેસુ-અગારેષુ ઘરોમાં, સંધેસુ-સંધેષુ બે ઘરોના અંતરાળમાં તથા મહાપહેસુ-મહાપથેષુ રાજ માર્ગમાં, એગિત્થિયે સદ્ધિ-એકસ્ત્રિયા સાર્ધ એકલી સ્ત્રીની સાથે, નેવ ચિટ્ઠે ન સંલવે-નૈવ તિષ્ઠેત્ નૈવ સંલપેત્ બિના ન રહેવું અને એનાથી વાતચીત કરવી નહીં.

આ શ્લોકમાં સમરાદિક ચાર ઉપલક્ષણ છે, એથી એ સમજવું જોઈએ કે, કેાઈ પણ સ્થળે જ્યાં સુધી બીજો પુરુષ સાક્ષીભૂત ન હોય ત્યાં એકલી સ્ત્રીથી અથવા અનેક સ્ત્રીઓ સાથે બ્રહ્મચારીએ બોલવું ન જોઈએ, અને ત્યાં ઉભવું પણ ન જોઈએ. દશવૈકાલિક સૂત્રમાં ભગવાને કહ્યું છે કે, જે રીતે કુકડાના બન્થાને બિલાડીનો ભય રહે છે, એ રીતે સ્ત્રીના શરીરનો બ્રહ્મચારીને પણ ભય રહ્યા કરે છે.

અસ્મિન્ દૃષ્ટાન્તે-સકદુક્તાદપિ મર્મવચનાત્ પૃષ્ઠાં જીવાનાં પ્રાણવ્યપરોપણં  
જાતમ્, યતઃ પુત્રવધૂર્ગર્ભે દ્વયમપત્યમાણીત્ । તસ્માન્માર્મિકં વચનં ન માપનીયમ્ ।

સાવચ-નિર્થક-મર્મગ-વચનમાપગસ્ય સર્વથા પ્રતિષેધં વોધયિતુમુત્તરાર્થમાહ-  
'અપ્પણઢ્ઠા' ઇત્યાદિ । આત્માર્થ=સ્વાર્થ, પરાર્થ વા, તથા ઉભયસ્ય આત્મનઃ પરસ્ય  
ચ અર્થે, વા-અથવા, અન્તરેણ=અનુભવાર્થે સ્વારપ્રયોજનાભાવેઽપિ સાવચં ન લપેત્=  
ન નિર્થકં લપેત્, ન મર્મગં લપેત્, ઇતિ સમ્બન્ધઃ ॥ ૨૫ ॥

અથાન્યસંસર્ગકૃતદોષપરિહારમાહ—

મૂલમ્—સમરેસુ અગારેસુ, સંધીસુ યં મહાપથે ।

૧ંગો ૧ંગિરિથિ ૧ સંધિ, નેવં ચિદ્દે' ને સંલેવે ॥૨૬॥

છાયા—સમરેષુ અગારેષુ, સંધિષુ ચ મહાપથે ।

૧કઃ ૧કસ્ત્રિયા સાર્થ, નૈવ તિષ્ઠેત્ ન સંલપેત્ ॥૨૬॥

ટોકા—'સમરેસુ' ઇત્યાદિ—

સમરેષુ=ઝોહકારશાલાસુ તથા-અગારેષુ=ગૃહેષુ, તથા સંધિષુ=ગૃહદ્વયાન્તરા-  
લેષુ તથા-મહાપથે=રાજમાર્ગે, ૧કઃ=૧કાકો, ૧કસ્ત્રિયા=૧કાકિન્યા સ્ત્રિયા,  
સાર્થ=સહ, નૈવ તિષ્ઠેત્=ઝર્ખસ્થાનાંચસ્થિતો નૈવ ભવેત્ । ન સંલપેત્-તયા=સહ સમ-  
રાદિષુ સ્થાનેષુ ક્વાઽપિ સંમાપણં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । અત્ર સમરાદિચતુષ્ટયસ્થાનમુપ-

પતિ કે ગલે સે ફાંસી નિકાલ કર અપને ગલે મેં ફાંસી ડાલકર મર  
ગઈ વહ ઉસ સમય ગર્ભવતી થી । ઉસ કે ગર્ભ મેં દો બાલક થે ।

ઇસ દૃષ્ટાંત સે યહ વાત સ્પષ્ટ હોતી હૈ કિ દેલો ૧ક વાર મો કહે  
ગયે માર્મિક વચન સે છહ પ્રાણિયોં કા દારુણ આપઘાત હુઆ । ઇસલિયે  
માર્મિક વચન નહીં કહના ચાહિયે । અપને અથવા પર કે નિમિત્ત તથા  
દોનોં કે નિમિત્ત ૧વં જહાં સ્વ ઔર પર કા કુછ મી પ્રયોજન ન હો વહાં  
પર મી વ્યર્થ હી મનુષ્ય કો સાવચ, નિર્થક ૧વં મર્મગ વચન નહીં  
બોલના ચાહિયે ॥ ૨૬ ॥

પતિના ગળામાંથી ફાંસો કાઢી પોતાના ગળામાં નાખી મરી ગઇ. તે એ સમયે  
ગર્ભવતી હતી, એના ગર્ભમાં બે બાળક હતાં.

આ દૃષ્ટાંતથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે, એક વખત પણ કહેવામાં  
આવેલા માર્મિક વચનથી છ પ્રાણીઓનો કંઈ પણ આપઘાત થયો, આ માટે  
માર્મિક વચન ન બોલવાં જોઈએ. પોતાના અથવા બીજાના નિમિત્ત તથા  
બીજાના નિમિત્ત અને જ્યાં પોતાનું કે બીજાનું કોઈ પણ પ્રયોજન ન હોય ત્યાં  
પર પણ મનુષ્યને સાવચ, નિર્થક અને માર્મિક વચન બોલવાં ન જોઈએ. (૨૫)

ણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન—સમ્યગ્જ્ઞાન—સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણતત્ત્વસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इतिप्रेक्षया=इतिपर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=भनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात् ।

અર્થ ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिव-साभ्यन्तर एव ते जलदावलीसमागमनशीतलपवनजलधारासंपातजनितशीतस्पर्श-सुखं प्रादुर्भावयन्ति । “यथा वा—नालिकेरं वहिः कर्कशं भवति. तथापि तदीयं शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागमुपलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं

इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे प्राप्ति होती है । (त्ति पेहाए—इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे—प्रयतःतं प्रतिशृणुयात् ) सहनशील बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर अंगीकार करे ।

तात्पर्य—जिस प्रकार वर्षाकाल में सूर्यकी किरणें प्रचण्डतर हो जाती हैं और इस से वे प्राणियों को असहनीय बनती हैं परन्तु परिणाम में दो तीन दिन के भीतर ही वे वरसात के समागमन से पवन को शीतल बना देती हैं उस से जलवृष्टि खूब होकर शीतस्पर्श के सुख का उन्हें अनुभव कराती हैं । अथवा जैसे—नारियल ऊपर से कठोर होता है परन्तु उसका भीतर का भाग शीतल, मीठे जल से भरा रहता है, उसको

બધું મારે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યગ્ દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન, અને સમ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્તિપેહાએ—इतिप्रेक्ष આ પ્રકારે પર્યા-લોચનાત્મક બુદ્ધિથી વિચાર કરી, પયઓ તં પંડિસ્સુણે—प्रयतः तत् प्रतिशृणुयात् सहनशीલ બનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને કર્તવ્ય સમજી અંગિકાર કરે.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે. પરંતુ પરિણામે જે ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ સુખનો અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાળિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને મેળવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા સુયા નુસા માયા, ઇયાર્હિં વિ ન સંલપે ।

અંગતે નૈવ ચિદ્દેજ્ઞા, અપ્પઠ્ઠી સંજ્ઞા સયા ॥ ૧ ॥

છાયા—સ્વસા સુતા સ્તુપા માતા, ઇતામિરપિ ન સંલપેત્ ।

અકાન્તે નૈવ તિષ્ઠેત્, આત્માર્થી સંયતઃ સદા ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીતશિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—જં મે' બુદ્ધાઽણુસાસંતિ, સી'ણેણ ફરુસેણ વા ।

મમ લાભો ત્તિ' પેહા'ણે, પંચઓ તં' પડિસંસુણે ॥ ૨૭ ॥

છાયા—યન્માં બુદ્ધા અનુશાસંતિ, શીતેન પરુપેણ વા ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિગૃણુયાત્ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—'જં મે' ઇત્યાદિ ।

બુદ્ધાઃ=આચાર્યાઃ, યન્મામ્ શીતેન=શીતલવચનેન મૃદુવચનેનેત્યર્થઃ, વા=અથવા પરુપેણ=કઠોરવચનેન અનુશાસતિ શિક્ષયન્તિ, ઇદમનુશાસનં મમ લાભઃ=મામકા-

-કિ-જિસં પ્રકાર મુર્ગે કે ઘચ્ચેકો કુલલ-વિલાડી સે ભય વના રહતા હૈ  
ઉસી તરહ બ્રહ્મચારી કો ભી સ્ત્રી કે શરીર સે સદા ભય રહા કરતા હૈ ।  
ઇસલિયે ચાહે અપની સાંસારિક વહિન ભી હો, ચાહે પુત્રી હો, વહુ હો,  
માતા ભી હો, તો ભી એકાન્તમેં બ્રહ્મચારી કો ઇન્કે સાથ ઉઠના બેઠના  
નહીં ચાહિયે ઓર ન ઘાતચીત હી કરની ચાહિયે ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—'જંમે' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—વિનીત શિષ્ય કો ઇસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે  
કિ (જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા) જો મુજે આચાર્ય મહારાજ (સી'ણ-શીતેન)  
મીઠે વચનોં સે, વા અથવા (ફરુસેણ-પરુપેણ) કઠોર વચનોં સે (અણુસા-  
સંતિ-અનુશાસતિ) અનુશાસિત કરતે હૈ અર્થાત્ શિક્ષા દેતે હૈ સો  
(મમ લાભો-મમ લાભઃ) યહ મેરે લિયે એક બડા ભારી લાભ હૈ, ક્યોં કિ

આ માટે ભલે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, ચાહે પુત્રી હોય, વહુ  
હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાન્તમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે  
વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન ભેઈએ. ॥ ૨૬ ॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો ભેઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સી'ણ-શીતેન  
મીઠા વચનોથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુપેણ કઠોર વચનોથી, અનુસાસંતિ-અનુ-  
શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમ લાભો



રણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન—સમ્યગ્જ્ઞાન—સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણત્તત્રયસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इतिप्रेक्षया=इतिपर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=अनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात् ।

અર્થ ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिवसाभ्यन्तर एव ते जलदावलीसमागमनशीतलपवनजलधारासंपातजनितशीतस्पर्श-सुखंभादुर्भावयन्ति। “यथा वा—नालिकेरं वहिः कर्कशं भवति. तथापि तदीयं शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागमुपलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं

इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे प्राप्ति होती है। (त्ति पेहाए—इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे—प्रयतःतं प्रतिशृणुयात्) सहनशील बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर अंगीकार करे।

तात्पर्य—जिस प्रकार वर्षाकाल में सूर्य की किरणें प्रचण्डतर हो जाती हैं और इस से वे प्राणियों को असहनीय बनती हैं परन्तु परिणाम में दो तीन दिन के भीतर ही वे वरसात के समागमन से पवन को शीतल बना देती हैं उस से जलवृष्टि खूब होकर शीतस्पर्श के सुख का उन्हें अनुभव कराती हैं। अथवा जैसे—नालियल ऊपर से कठोर होता है परन्तु उसका भीतर का भाग शीतल, मीठे जल से भरा रहता है, उसको

બધું મારે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યક્ દર્શન સમ્યક્ જ્ઞાન, અને સામ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. .ત્તિપેહાણ—इतिप्रेक्ष आ प्रकारे पर्या-लोचनात्मक बुद्धिથી વિચાર કરી, पयओ तं 'पंडिस्सुणे—प्रयतः तत् प्रतिशृणुयात् सहनशील બનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને 'કર્તવ્ય સમજી અંગિકાર કરે.

આતું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે. પરંતુ પરિણામે એ ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ સુખનો અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાળિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને મેળવી લેાકો તુષ્ટિ—સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા સુયા જુસા માયા, ઇયાહિં વિ ન સંલપે ।

અગંતે નેવ ચિદ્ઢેજ્ઞા, અપ્પઢી સંજણ સયા ॥ ૧ ॥

છાયા—સ્વસા સુતા સ્તુપા માતા, ઇતામિરપિ ન સંલપેત્ ।

અકાન્તે નેવ તિષ્ઠેત્, આત્માર્થી સંયતઃ સદા ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીતશિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—જં મે' બુદ્ધાઽણુસાંસંતિ, સીંણં ફરુસેણં વા ।

મમ લાભો ત્તિ' પેહાણે, પંચઓ તં' પહિસંસુણે ॥ ૨૭ ॥

છાયા—યન્માં બુદ્ધા અનુશાસંતિ, શીતેન પરુપેણ વા ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—'જં મે' ઇત્યાદિ ।

બુદ્ધાઃ=આચાર્યાઃ, યન્મામ્ શીતેન=શીતલવચનેન મૃદુવચનેનેત્યર્થઃ, વા=અથવા પરુપેણ=કઠોરવચનેન અનુશાસતિ શિક્ષયન્તિ, ઇદમનુશાસનં મમ લાભઃ=કામકા-

-કિ-જિસં પ્રકાર મુર્ગે કે ઘચ્ચેકો કુલલ-વિલાડી સે ભય બના રહતા હૈ ઉસી તરહ બ્રહ્મચારી કો બી સ્ત્રી કે શરીર સે સદા ભય રહા કરતા હૈ । ઇસલિયે ચાહે અપની સાંસારિક વહિન બી હો, ચાહે પુત્રી હો, વહૂ હો, માતા બી હો, તો બી અકાન્તમેં બ્રહ્મચારી કો ઇન્કે સાથ ઉઠના બૈઠના નહીં ચાહિયે ઓર ન યાતચીત હી કરની ચાહિયે ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—'જંમે' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—વિનીત શિષ્ય કો ઇસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે કિ (જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા) જો મુજે આચાર્ય મહારાજ (સીંણ-શીતેન) મીઠે વચનોં સે, વા અથવા (ફરુસેણ-પરુપેણ) કઠોર વચનોં સે (અણુસા-સંતિ-અનુશાસતિ) અનુશાસિત કરતે હૈ અર્થાત્ શિક્ષા દેતે હૈ સો (મમ લાભો-મમ લાભઃ) યહ મેરે લિયે અક બડા ભારી લાભ હૈ, ક્યોં કિ

આ માટે ભલે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, ગાહે પુત્રી હોય, વહુ હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન જોઈએ. ॥ ૨૬ ॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા બને આચાર્ય મહારાજ, સીંણ-શીતેન મીઠા વચનોથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુપેણ કઠોર વચનોથી, અણુસાસંતિ-અનુશાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમ લાભો એ

રણમ્, લાભઃ-અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન-સમ્યગ્જ્ઞાન-સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણત્ત્રયસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इतिप्रेक्षया=इतिपर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=अनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात् ।

અર્થ ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिवसाभ्यन्तर एव ते जलदावलीसमागमनशोतळपवनजलधातासंपातजनितशीतस्पर्श-सुखं प्रादुर्भावयन्ति। “यथा वा-नालिकेरं वहिः कर्कशं भवति. तथापि तदीयं शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागमुपलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे प्राप्ति होती है। (त्ति पेहाए-इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे-प्रयतःतं प्रतिशृणुयात् ) सहनशील बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर अंगीकार करे ।

तात्पर्य-जिस प्रकार वर्षाकाल में सूर्य की किरणें प्रचण्डतर हो जाती हैं और इस से वे प्राणियों को असहनीय बनती हैं परन्तु परिणाम में दो तीन दिन के भीतर ही वे वरसात के समागमन से पवन को शीतल बना देती हैं उस से जलवृष्टि खूब होकर शीतस्पर्श के सुख का उन्हें अनुभव कराती हैं । अथवा जैसे-नारियल ऊपर से कठोर होता है परन्तु उसका भीतर का भाग शीतल, मीठे जल से भरा रहता है, उसको

ખધું મારે માટે લાલકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યગ્ દર્શન સમ્યગ્ જ્ઞાન, અને સમ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્તિપેહાએ-इतिप्रेक्ष આ પ્રકારે પર્યાલોચનાત્મક બુદ્ધિથી વિચાર કરી, પયઓ તં પંડિસ્સુણે-प्रयतः तत् प्रतिशृणुयात् સહનશીલ બનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને 'કર્તવ્ય' સમજી અંગિકાર કરે.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે. પરંતુ પરિણામે બે ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ સુખનો અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નારિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને મેળવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા સુયા નુસા માયા, ય્યાર્હિં વિ ન સંલપે ।

एगंते नेव चिद्वेज्जा, अप्पही संजए सया ॥ १ ॥

छाया—स्वसा सुता स्नुषा माता, एताभिरपि न संलपेत् ।

एकान्ते नेव तिष्ठेत्, आत्मार्यी संयतः सदा ॥ १ ॥ इति ॥ २६ ॥

अथ विनीतशिष्यकर्तव्यमाह—

मूलम्—जं मे<sup>३</sup> बुद्धाऽणुसांसंति, सीएण फरुसेण वा ।

મમ લાભો ત્તિ<sup>૩</sup> પેહાર્પે, પંચઓ તં<sup>૩</sup> પડિસંસુણે ॥ ૨૭ ॥

छाया—यन्मां बुद्धा अनुशासंति, शीतेन परुषेण वा ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિગૃણુયાત્ ॥ ૨૭ ॥

टीका—‘जं मे’ इत्यादि ।

बुद्धाः=आचार्याः, यन्माम् शीतेन=शीतलवचनेन मृदुवचनेनेत्यर्थः, वा=अथवा परुषेण=कठोरवचनेन अनुशासति शिक्षयन्ति, इदमनुशासनं मम लाभः=आभका-

-कि-जिस प्रकार सुर्गे के वच्चेको कुलल-विलाडी से भय बना रहता है उसी तरह ब्रह्मचारी को भी स्त्री के शरीर से सदा भय रहा करता है । इसलिये चाहे अपनी सांसारिक बहिन भी हो, चाहे पुत्री हो, बहू हो, माता भी हो, तो भी एकान्तमें ब्रह्मचारी को इनके साथ उठना बैठना नहीं चाहिये और न यातचीत ही करनी चाहिये ॥ २६ ॥

अथ विनीत शिष्य का कर्तव्य कहते हैं—‘जंमे’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—विनीत शिष्य को इस प्रकार विचार करना चाहिये कि ( जंमे बुद्धा-यन्मां बुद्धा ) जो मुझे आचार्य महाराज (सीएण-शीतेन) मीठे वचनों से, वा अथवा (फरुसेण-परुषेण) कठोर वचनों से (अणुसा-संति-अनुशासति) अनुशासित करते हैं अर्थात् शिक्षा देते हैं सो (मम लाभो-मम लाभः) यह मेरे लिये एक बड़ा भारी लाभ है, क्योंकि कि

આ માટે ભણે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, ચાહે પુત્રી હોય, વહુ હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન જોઈએ. ॥ ૨૬ ॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમેબુદ્ધા-યન્માંબુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સીએણ-શીતેન મીઠા વચનોથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુષેણ કઠોર વચનોથી, અણુસાસંતિ-અનુ-શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમલાભો એ

ણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન—સમ્યગ્જ્ઞાન—સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણત્વત્રયસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इतिप्रेक्षया=इतिपर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=अनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात् ।

અર્થ ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिवसाभ्यन्तर एव ते जलदावलीसमागमनशीतपवनजलधारासंपातजनितशीतस्पर्श-सुखंप्रादुर्भावयन्ति। “यथा वा—नालिकेरं वहिः कर्कशं भवति, तथापि तदीयं शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागमुपलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे प्राप्ति होती है। (त्ति पेहाए—इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे—प्रयतःतं प्रतिशृणुयात्) सहनशील बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर अंगीकार करे।

તાત્પર્ય—જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં સૂર્યકી કિરણે પ્રચણ્ડતર હો જાતી હેં ઓર હસ સે વે પ્રાણિયોં કો અસહનીય બનતી હેં પરંતુ પરિણામ મેં દો ત્રીન દિન કે ખીતર હી વે વરસાત કે સમાગમન સે પવન કો શીતલ બના દેતી હેં ઉસ સે જલવૃષ્ટિ ખૂબ હોકર શીતસ્પર્શ કે સુખ કા ઉન્હેં અનુભવ કરાતી હેં । અથવા જૈસે—નારિયલ ડુપર સે કઠોર હોતા હૈ પરંતુ ઉસકા ખીતર કા ભાગ શીતલ, મીઠે જલ સે ભરા રહતા હૈ, ઉસકો

ખધું મારે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યક્ દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન, અને સામ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્તિપેહાણ—इतिप्रेक्ष આ પ્રકારે પર્યાલોચનાત્મક બુદ્ધિથી વિચાર કરી, પયઓ તં પંડિસ્સુણે—प्रयतः તત્ પ્રતિશ્રુણુયાત્ સહનશીલ અનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને કર્તવ્ય સમજી અંગિકાર કરે.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે. પરંતુ પરિણામે જે ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીને સ્પર્શ સુખનો અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાળિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને ખેળવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ



ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા સુયા નુસા માયા, ઇયાદિં ત્રિ ન સંલપે ।

एगंते नेव चिदृठेज्जा, अप्पही संत्रए सया ॥ १ ॥

छाया—स्वसा सुता स्नुषा माता, एतामिरपि न संलपेत् ।

एकान्ते नैव तिष्ठेत्, आत्मार्थी संपतः सदा ॥ १ ॥ इति ॥ २६ ॥

अथ विनीतशिष्यकर्तव्यमाह—

मूलम्—जं मे<sup>३</sup> बुद्धेऽणुसांसंति, सीएण फरुसेण वा ।

મમ લાભો તિં<sup>૩</sup> પેહાણે, પેયઓ તં<sup>૩</sup> પડિસેસુણે ॥ ૨૭ ॥

छाया—यन्मां बुद्धा अनुशासंति, शीतेन परुपेण वा ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્ ॥ ૨૭ ॥

टीका—‘जं मे’ इत्यादि ।

बुद्धाः=आचार्याः, यन्माम् शीतेन=शीतलवचनेन मृदुवचनेनेत्यर्थः, वा=अथवा परुपेण=कठोरवचनेन अनुशासति शिक्षयन्ति, इदमनुशासनं मम लाभः=कामका-

-कि-जिस प्रकार सुर्गे के बच्चेको कुलल-बिलाडी से भय बना रहता है उसी तरह ब्रह्मचारी को भी स्त्री के शरीर से सदा भय रहा करता है । इसलिये चाहे अपनी सांसारिक बहिन भी हो, चाहे पुत्री हो, बहू हो, माता भी हो, तो भी एकान्तमें ब्रह्मचारी को इनके साथ उठना बैठना नहीं चाहिये और न बातचीत ही करनी चाहिये ॥ २६ ॥

अब विनीत शिष्य का कर्तव्य कहते हैं—‘जंमे’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—विनीत शिष्य को इस प्रकार विचार करना चाहिये कि (जंमे बुद्धा-यन्मां बुद्धा) जो मुझे आचार्य महाराज (सीएण-शीतेन) मीठे वचनों से, वा अथवा (फरुसेण-परुपेण) कठोर वचनों से (अणुसा-संति-अनुशासति) अनुशासित करते हैं अर्थात् शिक्षा देते हैं सो (मम लाभो-मम लाभः) यह मेरे लिये एक बड़ा भारी लाभ है, क्योंकि कि

આ માટે ભલે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, ચાહે પુત્રી હોય, વહુ હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન જોઈએ. ॥ ૨૬ ॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમેબુદ્ધા-યન્માંબુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સીએણ-શીતેન મીઠા વચનેથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુપેણ કઠોર વચનેથી, અણુસાસંતિ-અનુ-શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમલાભો-મમલાભ એ

છાયા—અનુશાસનમૌપાયં, દુષ્કૃતસ્ય ચ નોદનમ્ ।

હિતં તત્ મન્યતે પ્રજ્ઞઃ, દ્વેષ્યં ભવતિ અસાધોઃ ॥ ૨૮ ॥

ટીકા—‘અણુસાસણ’ ઇત્યાદિ—

પ્રજ્ઞઃ=પ્રજ્ઞાવાન મેધાવી શિષ્યઃ, ઔપાયમ્-ઉપાયં=શીતપરુષભાષણરૂપે ભવમ્, મૃદુકઠોરભાષણસમન્વિતમ્ અનુશાસનં=ગુરોઃ શિક્ષાવાચ્યં, ચ-પુનઃ દુષ્કૃતસ્ય=અતિ-ચારસ્ય નિવારણાર્થં નોદનં=પ્રેરણં, ‘હા કિમિદમકલ્પ્યં ત્વયા કૃતમ્’ ઇત્યાદિરૂપમ્ તદ્ વચનં હિતં-લોકદ્વયકલ્યાણકારકં, મન્યતે । અસાધોઃઅવિનીતશિષ્યસ્ય તદેવ વચનં દ્વેષ્યં=દ્વેષજનકં ભવતિ ।

યથા—શુદ્ધક્ષેત્રે દત્તં જલં મધુરસરૂપેણ પરિણતં ભવતિ, નિમ્બતરુમૂલે તુ તદેવ

સકલ કલ્યાણ કરનેવાલી ખી ગુરુશિક્ષા કિસ કો કિસ રૂપ મેં પરિણત હોતી હૈ સો કહતે હૈ—‘અણુસાસણ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પન્નો-પ્રજ્ઞઃ) બુદ્ધિમાન મેધાવી શિષ્ય (ઓવાયં-ઔપાયં) મૃદુ एवं કઠોર ભાષણ સે સુક્ત (અનુસાસણં-અનુશાસનં) ગુરુ કે શિક્ષા સ્વરૂપ વચનોં કો કિ જો (દુષ્કકઙ્કસ્ય ચ ચોયણં-દુષ્કૃતસ્ય ચ નોદનમ્) અતિચાર કે નિવારણ કે લિપે પ્રયુક્ત કિયે ગયે હૈ—‘યહ તુમને નહીં કરને યોગ્ય કામ કયોં કર દિયા હૈ’ ઇત્યાદિરૂપ સે જો કહે ગયે હૈ (તં હિયં મન્નત-તત્ હિતં મન્યતે) ઉસકો અપના હિતકારક માનતા હૈ । (અસાધુણો-અસાધોઃ) પરન્તુ જો અવિનીત શિષ્ય હોના હૈ વહ ઉન્હીં શિક્ષાવચનોં કો (વેસંહવહ-દ્વેષ્યં ભવતિ) અહિતકારી માનતા હૈ । મેધાવી શિષ્ય ગુરુ કે મૃદુકઠોરરૂપ વચનોં કો અપના હિતકારક, एवं અસાધુ અર્થાત્ અવિનીત શિષ્ય ઉન્હીં વચનોં કો દુઃસ્વદાયક માનતા હૈ ।

સકલ કલ્યાણ કરવાણી ગુરુ શિક્ષા કેને કયા રૂપમાં પરિણત થાય છે તે કહેવામાં આવે છે. અણુસાસણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પન્નો-પ્રજ્ઞઃ બુદ્ધિમાન મેધાવી શિષ્ય ઓવાયં-ઔપાયં કેામળ અથવા કઠોર ભાષણથી યુક્ત અણુસાસણં-અનુશાસનં ગુરુનાં શિક્ષા સ્વરૂપ વચનોને કે જે દુષ્કકઙ્કસ્ય ચ ચોયણં-દુષ્કૃતસ્ય ચ નોદનમ્ અતિચારના નિવારણ માટે પ્રયુક્ત કરવામાં આવેલ છે. આ ન કરવા યોગ્ય કામ તમે શા માટે કયું ?” ઇત્યાદિ રૂપથી જે કહેવાય છે તેહિયં મન્નત-તત્ હિતં મન્યતે એને પોતાનાં હિતકર માને છે અસાધુણો-અસાધોઃ પરંતુ જે અવિનીત શિષ્ય હોય છે તે એ શિક્ષા વચનોને દ્વેષ્યં ભવતિ અહિતકારી માને છે.

ચ લભતે । એવાચાર્યાનાં શીતં પરૂપં ચેત્યુભયવિધં શિક્ષાવચનં પરિણામે સુત્ર-  
નકમેવ । આચાર્યવચનં દ્વિ-પરિણામતસ્તપઃસંયમારાધનપ્રવર્તકં, મિથ્યાત્વાદિપશ્ચિ-  
ધાસ્રવનિવર્તકં, જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મરજઃપટલાપસારણપરમમીષણસમીરણાત્મકં, ના-  
નાવિધલ્લભિસાધકં, નિશ્ચિન્નભાવસ્વભાવાવભાસકેવલાલોકપદર્શકં, શાશ્વતિક્ષુસુ-  
સમર્પકં ચ ભવતિ ” ઇત્યેવ પર્યાલોચ્ય ગુરોઃ શિક્ષાવચનમદ્વીકૃયાદિતિ ॥ ૨૭ ॥

સકલકલ્યાણકારિણ્યપિ ગુરુશિક્ષા કસ્યૈ કીદૃશી પરિણમતીત્યાદ્—

મૂલમ્—અણુસાસનમોવાયં, દુઃકડંસ્સ ય ચોયણં ।

હિયં તં મન્નણં પેન્નો, વેસંસં હોઈં અસાંહુણો ॥૨૮॥

પ્રાપ્ત કર લોક તુષ્ટિ એવં પુષ્ટિ કો પ્રાપ્ત કરતે હું । ઇસી તરહ આચાર્ય  
મહારાજ કે કોમલ એવં કઠોર, દોનોં પ્રકાર કે શિક્ષાપ્રદ વચન શિષ્ય  
કો પરિણામ મેં સુખજનક હોતે હું । શિષ્ય કો આચાર્ય મહારાજ કે  
વચન હી અન્ત મેં તપ એવં સંયમ કી આરાધના કરને મેં પ્રવૃત્ત કરાને  
વાલે હોતે હું । મિથ્યાત્વાદિ પાંચ પ્રકાર કે આસ્રવ કે વે નિરોધક હોતે  
હું । જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરજ કે પટલ કો હટાને મેં વે પ્રચળ પવન  
કે વેગતુલ્ય હોતે હું । શિષ્યજનોમેં અનેક પ્રકાર કી લલ્લિયોં કી  
જાગૃતિ કરાને વાલે હોતે હું । સમસ્ત પદાર્થોં કે સ્વભાવ કા જિસ મેં  
અવભાસન હોતા હૈ એસે કેવલજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશ કે પ્રદર્શક એવં શાશ્વતિક  
સુખ કે દેનેવાલે હોતે હું । ઇસ પ્રકાર ગુરુ મહારાજ કે શિક્ષા વચનોં કો  
હિતકારક જાનકર શિષ્યકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહુ ઝનું અંગીકાર કરે ॥૨૭॥

અને પુષ્ટિ પ્રાપ્ત કરે છે. આ રીતે આચાર્ય મહારાજનાં કોમળ અથવા કઠોર  
બન્ને પ્રકારનાં શિક્ષાપ્રદ વચન શિષ્યને પરિણામમાં સુખજનક બને છે. આચાર્ય  
મહારાજનાં વચનજ અંતમાં શિષ્યને તપ તથા સંયમની આરાધના કરવામાં  
પ્રવૃત્ત કરાવનાર હોય છે. મિથ્યાત્વાદિ પાંચ પ્રકારના આસ્રવના એ નિરોધક હોય  
છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરજના આવરણને દૂર કરવામાં તે પ્રચંડ પવનના  
વેગ જેવાં હોય છે. શિષ્યજનોમાં અનેક પ્રકારની લલ્લિયોની જાગૃતિ કરાવનાર  
હોય છે, સમસ્ત પદાર્થોના સ્વભાવનું જેનામાં અવભાસન હોય છે એવા કેવળ  
જ્ઞાન રૂપ પ્રકાશના પ્રદર્શક અને શાશ્વતિક સુખને દેવાવાળા હોય છે. આ પ્રકારે  
ગુરુ મહારાજના શિક્ષા વચનોને હિતકારક બાણીને શિષ્યનું એ કર્તવ્ય છે કે  
તે એનો અંગિકાર કરે. ॥ ૨૭ ॥

टीका—‘ हियं ’ इत्यादि—

विगतभयाः=भयरहिताः, भयं सप्तविधम्—इहलोकभयम् १, परलोकभयम् २, आदानभयम् ३, अकस्माद्भयम् ४, आजीविकाभयम् ५, मरणभयम् ६, अश्लोकभयं च ७, एतैर्विवर्जिताः, बुद्धाः=ज्ञाततत्त्वा मेधाविन इत्यर्थः, एवंभूताः शिष्याः परुषमपि=कठोरमपि, अनुशासनम्=गुरुणां शिक्षावचनम् हितं=पथ्यं मन्यन्ते इति शेषः । किंतु क्षान्तिशोधिकरं-क्षान्तिः=क्षमा, शोधिः=शुद्धिः आत्मशुद्धिः, तयोः करम्=उत्पत्तिजनकं, यथा-वर्षाऋतुनिमित्तं प्राप्य जलधरा गर्जन्ति, वसन्तं प्राप्य वृक्षा नूतनपल्लवकुसुमत्रियोपेता भवन्ति, चन्द्रं प्राप्य चन्द्रकान्तमणयः प्रस्रवन्ति, सूर्यं प्राप्य कमलानि विकसन्ति, तथा क्षमां प्राप्य निर्दोषतादिगुणाः प्रादुर्भवन्ति । शोधि-श्च दुःखमेघनाशने पवनरूपा, सुखोत्पादने कल्पतरुरूपा भवसिन्धुपारकरणे नौका-रूपा, अज्ञानान्धकारनाशने प्रभारूपा । एवंभूतयोः क्षान्तिशोध्योर्जनकम्, इदमुप-लक्षणम् तेन आज्ञादिकरमपि, पदं=ज्ञानादि गुणानां स्थानम् । तत्=अनुशासनं, मूढानां=कुशिष्याणां द्वेष्यं=द्वेषजनकं भवति । उक्तं च—

पुनरप्याह—‘ हियं ’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—( विगतभया-विगतभयाः ) इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्मात्भय, आजीविकाभय, मरणभय, एवं अश्लोकभय, ये सात भय हैं । इनसे जो रहित हैं तथा ( बुद्धा-बुद्धा ) तत्त्वों के जो जानकार हैं—मेधावी हैं वे शिष्य ( परुषमपि-परुषमपि ) कठोर भी (अनुशासनं-अनुशासनं) गुरु महाराज के शिक्षात्मक वचनों को (हियं-हितं) पथ्य-हितविधायक मानते हैं । किन्तु ( क्षन्ति सोहिकरं-क्षान्तिशोधिकरं ) क्षमा और शुद्धि के विधायक तथा ( पयं-पदम् ) ज्ञानादिक गुणों के स्थानभूत ( तत् ) गुरु के वे ही अनुशासनरूप

पुनरप्याह हियं:-इत्यादि.

अन्वयार्थ—विगतभया-विगतभयाः आ लोकनो लय, परलोकनो लय, आदान लय, अकस्मात् लय, आजीविका लय, मरण लय अने अश्लोक लय आ सात लय छे येनाथी ने रहित छे तथा ( बुद्धा-बुद्धा ) तत्त्वोनो ने ज्ञातकार छे, मेधावी छे, ते शिष्य परुषमपि-परुषमपि कठोर पण अनुशासनं-अनुशासनं गुरु महाराजनां शिक्षात्मक वचनोनो हियं-हितं पथ्य हित विधायक माने छे, क्षन्तिशोधिकरं-क्षान्तिशोधिकरं क्षमा अने शुद्धिना विधायक, पयं-पदम् ज्ञानादिक

કટુકરસરૂપેણ, યથા ચા સિતોપલં—‘મિસરી’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધં સર્વેણાં મધુરા-  
સ્વાદજનકં ભવતિ તદેવ પિત્તદૂષિતરસનસ્ય નિમ્બાદિત્ કટુકં, ગર્દભાણાં તુ વિષ-  
મેવ ભવતિ, યથા ચા શુદ્ધં ઘૃતં સર્વેણાં પુષ્ટિકરં ભવતિ, તદેવ જ્વરાક્રાન્તાનાં જનાનાં  
રોગવર્ધકમ્ । एवं गुरुवचनं सविनयस्य द्वितीयं जायते, विनयरहितस्य शिष्यस्य तु  
द्वेषाय इति भावः ॥ २८ ॥

ઉક્તમર્થ વિશદયન્નાહ—

મૂલમ્—હિયં વિગયંભયા બુદ્ધા, ફરુસં પિ અણુસાસનં ।

વેસંસં તં હોદે મૂઢાણં, સ્વંતિસોહિકરં પયં ॥૨૯॥

છાયા—હિતં વિગતભયા બુદ્ધાઃ, પરુપમપિ અનુશાસનમ્ ।

દ્રેષ્યં તત્ ભવતિ મૂઢાનાં, ક્ષાન્તિશોધિકરં પદમ્ ॥ ૨૯ ॥

તાત્પર્ય इसका इस प्रकार का है कि जिस प्रकार इक्षु के खेन में दिया गया पानी मधुर रसरूपसे परिणत होता है और वही पानी जब निम्बवृक्ष के मूलमें दिया जाता है तो कटुवे रूपमें परिणत हो जाता है, अथवा जैसे मिश्री सब के लिये मधुर आस्वाद देती है परन्तु जिस की जीभ पित्त से दूषित हो रही है उसके लिये वह मिश्री कटुवी नीम जैसी मालूम होती है, तथा गधों को तो वह विष जैसी ही मालूम होती है । अथवा जैसे शुद्ध घृत समस्तजनों को पुष्टि करने वाला होता है परन्तु वही घृत ज्वरवाले के लिए रोगवर्द्धक होता है, इसी प्रकार जो विनयी शिष्य हैं उनके लिये गुरु महाराज के वचन हितकारक होते हैं और वे ही वचन अविनीत शिष्य के लिये द्वेषकारक होते हैं ॥ २८ ॥

તેનું તાત્પર્ય આ પ્રકારનું છે, કે જે પ્રકારે દ્રાક્ષના ખેતરમાં આપવામાં આવેલ પાણી મધુરરસરૂપમાં પરિણીત બને છે અને તેજ પાણી જ્યારે લિમડાના વૃક્ષના મૂળમાં આપવામાં આવે છે તો કટુરસ રૂપમાં પરિણમે છે. જેમ-સાકર બધા માટે મધુર આસ્વાદ આપે છે પરંતુ જેની જીભ પિત્તથી દુષિત થયેલ હોય છે, તેને માટે સાકર કડવા લિમડા જેવી માલુમ પડે છે. અને ગધેડાને તો તે ઝડેર જેવી બને છે. અથવા જેમ ચોખ્ખું ઘી સઘળા માટે પુષ્ટી કરવાવાળું હોય છે પરંતુ તે ઘી તાવવાળા માટે રોગને વધારનાર બને છે. એ જ રીતે જે વિનયી શિષ્ય છે તેને માટે ગુરુ મહારાજનું વચન હિતકારક હોય છે. અને તે જ વચન અવિનીત શિષ્ય માટે દ્વેષકારક હોય છે. ॥ ૨૮ ॥



टीका—‘ हियं ’ इत्यादि—

विगतभयाः=भयरहिताः, भयं सप्तविधम्-इहलोकभयम् १, परलोकभयम् २, आदानभयम् ३, अकस्माद्भयम् ४, आजीविकाभयम् ५, मरणभयम् ६, अश्लोक-भयं च ७, एतैर्विवर्जिताः, बुद्धाः=ज्ञाततत्त्वा मेधाविन इत्यर्थः, एवंभूताः शिष्याः परुषमपि=कठोरमपि, अनुशासनम्=गुरुणां शिक्षावचनम् हितं=पथ्यं मन्यन्ते इति शेषः । किंतु क्षान्तिशोधिकरं-क्षान्तिः=क्षमा, शोधिः=शुद्धिः आत्मशुद्धिः, तयोः करम्=उत्पत्तिजनकं, यथा-वर्षाऋतुनिमित्तं प्राप्य जलधरा गर्जन्ति, वसन्तं प्राप्य वृक्षा नूतनपल्लवकुसुमत्रियोपेता भवन्ति, चन्द्रं प्राप्य चन्द्रकान्तमणयः प्रस्रवन्ति, सूर्यं प्राप्य कमलानि विकसन्ति, तथा क्षमां प्राप्य निर्दोषतादिगुणाः प्रादुर्भवन्ति । शोधि-श्च दुःखमेघनाशने पवनरूपा, सुखोत्पादने कल्पतरुरूपा भवसिन्धुपास्करणे नौका-रूपा, अज्ञानान्धकारनाशने प्रभारूपा । एवंभूतयोः क्षान्तिशोध्योर्जनकम्, इदमुप-लक्षणम् तेन आज्ञादिकरमपि, पदं=ज्ञानादि गुणानां स्थानम् । तत्=अनुशासनं, मूढानां=कुशिष्याणां द्वेष्यं=द्वेषजनकं भवति । उक्तं च—

पुनरप्याह—‘ हियं ’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—( विगतभया-विगतभयाः ) इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्मात्भय, आजीविकाभय, मरणभय, एवं अश्लोकभय, ये सात भय हैं । इनसे जो रहित हैं तथा ( बुद्धा-बुद्धा ) तत्त्वों के जो जानकार हैं-मेधावी हैं वे शिष्य ( परुषमपि-परुषमपि ) कठार भी (अनुशासनं-अनुशासनं) गुरु महाराज के शिक्षात्मक वचनों को (हियं-हितं) पथ्य-हितविधायक मानते हैं । किन्तु ( खंति सोहिकरं-क्षान्तिशोधिकरं ) क्षमा और शुद्धि के विधायक तथा ( पयं-पदम् ) ज्ञानादिक गुणों के स्थानभूत ( तत् ) गुरु के वे ही अनुशासनरूप

पुनरप्याह हियं:-इत्यादि.

अन्वयार्थ—विगतभया-विगतभयाः आ डोकनो भय, परडोकनो भय, आदान भय, अकस्मात् भय, आजीविका भय, मरण भय अने अश्लोक भय आ सात भय छे जेनाथी जे रहित छे तथा ( बुद्धा-बुद्धा ) तत्त्वोनो जे ज्ञातकार छे, मेधावी छे, ते शिष्य परुषमपि-परुषमपि कठोर पण अनुशासनं-अनुशासनं गुरु महाराजनां शिक्षात्मक वचनोनो हियं-हितं पथ्य हित विधायक माने छे, खंतिसोहिकरं-क्षान्तिशोधिकरं क्षमा अने शुद्धिना विधायक, पयं-पदम् ज्ञानादिक

કડુકરસરૂપેણ, યથા વા સિતોપલં—‘ મિતરી ’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધં સર્વેષાં મધુરા-  
સ્વાદજનકં ભવતિ તદેવ પિત્તદૂષિતરસનસ્ય નિમ્બાદિત્વ કડુકં, ગર્દભાણાં તુ વિષ-  
મેવ ભવતિ, યથા વા શુદ્ધં ઘૃતં સર્વેષાં પુષ્ટિકરં ભવતિ, તદેવ જ્વરાક્રાન્તાનાં જનાનાં  
રોગવર્ધકમ્ । एवं गुरुवचनं सविनयस्य हिताय जायते, विनयरहितस्य शिष्यस्य तु  
द्वेषाय इति भावः ॥ २८ ॥

ઉક્તમર્થ વિશદયન્નાહ—

મૂલમ્—હિયં વિગયેભયા બુદ્ધા, ફરુસં પિ અણુસાસનં ।

વેરુસં તં હોરે મૂઢાણં, સ્વંતિસોહિકરં પયં ॥૨૯॥

છાયા—હિતં વિગતભયા બુદ્ધાઃ, પરુપમપિ અનુશાસનમ્ ।

દ્વેષ્યં તત્ ભવતિ મૂઢાનાં, શાન્તિશોધિકરં પદમ્ ॥ ૨૯ ॥

તાત્પર્ય इसका इस प्रकार का है कि जिस प्रकार इक्षु के खेन में दिया गया पानी मधुर रसरूपसे परिणत होता है और वही पानी जब निम्व्यवृक्ष के मूलमें दिया जाता है तो कडुवे रूपमें परिणत हो जाता है, अथवा जैसे मिश्री सब के लिये मधुर आस्वाद देती है परन्तु जिस की जीभ पित्त से दूषित हो रही है उसके लिये वह मिश्री कडुवी नीम जैसी मालूम होती है, तथा गधों को तो वह विष जैसी ही मालूम होती है । अथवा जैसे शुद्ध घृत समस्तजनों को पुष्टि करने वाला होता है परन्तु वही घृत ज्वरवाले के लिए रोगवर्द्धक होता है, इसी प्रकार जो विनयी शिष्य हैं उनके लिये गुरु महाराज के वचन हितकारक होते हैं और वे ही वचन अविनीत शिष्य के लिये द्वेषकारक होते हैं ॥ २८ ॥

તેનું તાત્પર્ય આ પ્રકારનું છે, કે જે પ્રકારે દ્રાક્ષના ખેતરમાં આપવામાં આવેલ પાણી મધુરરસરૂપમાં પરિણીત બને છે અને તેજ પાણી જ્યારે લિખડાના વૃક્ષના મૂળમાં આપવામાં આવે છે તો કડુરસ રૂપમાં પરિણમે છે. જેમ-સાકર બધા માટે મધુર આસ્વાદ આપે છે પરંતુ જેની જીભ પિત્તથી દુષિત થયેલ હોય છે, તેને માટે સાકર કડવા લિખડા જેવી માલુમ પડે છે. અને ગધેડાને તો તે ઝડેર જેવી બને છે. અથવા જેમ ચોખ્ખું ધી સઘળા માટે પુષ્ટી કરવાવાળું હોય છે પરંતુ તે ધી તાવવાળા માટે રોગને વધારનાર બને છે. એ જ રીતે જે વિનયી શિષ્ય છે તેને માટે ગુરુ મહારાજનું વચન હિતકારક હોય છે. અને તે જ વચન અવિનીત શિષ્ય માટે દ્વેષકારક હોય છે. ॥ ૨૮ ॥

મૂલમ્—આસને ઉવચિદ્વિજ્ઞા, અણુચ્ચે અકુષ્ઠ ધિરે ।

અપ્પુટ્ટાઈ નિરુટ્ટાઈ, નિસીંણજપ્પકુર્વકુષ્ઠ ॥૩૦॥

છાયા—આસને ઉપતિષ્ઠેત્, અણુચ્ચે અકુષ્ઠે સ્થિરે ।

અલ્પોત્થાયી નિરુત્થાયી, નિપીદેત્ અલ્પકૌકુચ્યઃ ॥ ૩૦ ॥

ટીકા—‘આસને’ इत्यादि—

અણુચ્ચે—દ્રવ્યતો ગુર્વાસનાનીચે, ભાવતઃ સ્વલ્પમૂલ્યકે, અકુષ્ઠે અકમ્પમાને, યદ્વા ચટત્કારાદિશબ્દરહિતે, સ્થિરે=સમપાદવત્ત્વેન નિશ્ચલે, આસને ઉપતિષ્ઠેત્ પીઠાદૌ વર્ષાસુ ઉપતિષ્ઠેત્=ઉપવિશેત્ । ઈદ્રશેઽપ્યાસને સાધુઃ કિમવસ્થઃ સંસ્તિષ્ઠે-દિત્યાહ—‘અપ્પુટ્ટાઈ’ इति અલ્પોત્થાયી-કાર્યે સત્યપિ ઈપદુત્તિષ્ઠતીત્યેવંશીલઃ, એકકાર્યેણોત્થિતઃ સન્ વહુકાર્યસંપાદક इत्यर्थः । અત-એવ-કીદ્રશઃ સન્નિત્યાહ—

अव शिष्य के लिये आसन की विधि कहते हैं—‘आसने’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—શિષ્ય (અણુચ્ચે-અણુચ્ચે) દ્રવ્યની અપેક્ષા ગુરુમહારાજ કે આસનસે નીચા ભાવની અપેક્ષા અલ્પમૂલ્યવાળા (અકુષ્ઠ-અકુષ્ઠે) તથા ચટચટ इत्यादि શબ્દ સે રહિત, અથવા હિલનેવાળા નહીં એસા જો (ધિરે-સ્થિરે) સ્થિર-ચારોં પાચે જિસકે સમાન હોં એસે (આસને-આસને) આસન - પીઠ ફલક પાટ પાટલે આદિ, ઉન પર વર્ષાકાલ મેં (ઉવચિદ્વિજ્ઞા-ઉપતિષ્ઠેત્) વેઠે । શિષ્ય જિસ આસન પર વેઠે વહ ગુરુ કે આસન ની અપેક્ષા નીચા હોના ચાહિયે । તથા અલ્પ મૂલ્યવાળા એવં હિલને ડુલને વાળા નહીં હોના ચાહિયે । શિષ્ય અપને આસન પર જમ કર વેઠે, કારણ વિના ન ઉઠે, યહી વાત (અપ્પુટ્ટાઈ-અલ્પોત્થાયી) ઇસ પદ દ્વારા પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । ઉઠને ના કામ યદિ

હવે શિષ્ય માટે આસનની વિધિ કહે છે, આસને-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય અણુચ્ચે-અણુચ્ચે દ્રવ્યની અપેક્ષા ગુરુમહારાજના આસનથી નીચા, ભાવની અપેક્ષા અલ્પમૂલ્યવાળા, અકુષ્ઠ-અકુષ્ઠે તથા ચટચટ इत्यादि શબ્દથી રહિત અથવા હલવાવાળા નહીં એવા જે ધિરે-સ્થિરે સ્થિર-ચારે પાયા જેના એક સરખા હોય તેવા, આસને-આસને આસન-પીઠ ફલક પાટ પાટલા આદિ એના ઉપર વર્ષાકાળમાં ઉવચિદ્વિજ્ઞા-ઉપતિષ્ઠેત્ એસે. શિષ્ય જે આસન ઉપર એસે તે ગુરુના આસનથી નીચું હોવું જોઈએ, તથા હલે ચલે નહીં તેવું હોવું જોઈએ. શિષ્ય પોતાના આસન ઉપર સ્થિર થઈને એસે, કારણ વગર ન ઉઠે, અપ્પુટ્ટાઈ-અલ્પોત્થાઈ આ વાત આ પદ દ્વારા પ્રદર્શિત કરવામાં

સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વાધતે,  
ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ।

રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુષ્પાતિ હન્ત્યુત્પથં,  
યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદભ્યુદ્ગતા ભારતી ॥૧॥ ઇતિ ॥ ૨૯ ॥

વચન (મૂઢાણં વેસ્સં હોદ-મૂઢાનાં દ્વેષ્યં ભવતિ) મૂર્ખ-અવિનીન શિષ્યો  
કે લિયે દ્વેષજનક હોતે હૈં । કહા મી હૈ—

“સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વાધતે,  
ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ।

રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુષ્પાતિ હન્ત્યુત્પથં,  
યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદભ્યુદ્ગતા ભારતી ” ॥ ૧ ॥

સદ્ગુરુ કે મુખસે નિકલો હુદ વાળી પ્રશસ્ત બોધકી-સમ્યગ્જ્ઞાન કી  
જનક હોતી હૈ, કુમતિ કી વિદારક હોની હૈ, મિથ્યાત્વરૂપી દ્રષ્ટિ કી  
વિધ્વંસક હોતી હૈ, ધર્મ મેં મતિ ઉત્પન્ન કરને વાલી હોતી હૈ, સંવેગ,  
એવં નિર્વેદ ગુણ કી ઉત્કર્ષક હોની હૈ, રાગાદિકોં કી વિનાશક હોતી હૈ,  
નિર્મલ નીતિ કી પોષક હોતી હૈ, કુમાર્ગ કી વિદ્રાવક હોતી હૈ । એસે  
ઑર કોન સે સદ્ગુણ વચતે હૈં જો ગુરુદેવ કી વાળી સે જીવોં કો પ્રાપ્ત  
ન હોતે હોં ॥ ૨૯ ॥

ગુણોના સ્થાનભૂત, તત્ તે ગુરુ કે જોગોનાં અનુશાસના રૂપ વચન મૂઢાણં  
વેસ્સં હોદ-મૂઢાનાં દ્વેષ્યં ભવતિ અવિનીત શિષ્ય માટે દ્વેષ જનક બને છે.  
કહ્યું પણ છે કે—

સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિકુમતિ, મિથ્યાદ્રશં વાધતે ।  
ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ॥

રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુષ્પાતિ હન્ત્યુત્પથં ।  
યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદભ્યુદ્ગતા ભારતી ॥૧॥

સદ્ગુરુના મુખથી નીકળેલી વાણી પ્રશસ્ત બોધની સામ્યગ્જ્ઞાનની જનક  
હોય છે, કુમતિની વિદારક હોય છે, મિથ્યાત્વરૂપી દ્રષ્ટિની વિધ્વંસક હોય છે,  
ધર્મમાં મતિ ઉત્પન્ન કરવાવાળી હોય છે, સંવેગ અને નિર્વેગ-ગુણનો ઉત્કર્ષક  
કરવાવાળી હોય છે, રાગાદિકોના વિનાશ કરનારી હોય છે, નિર્મલ નીતીની  
પોષક હોય છે. કુમાર્ગની વિદ્રાવક હોય છે, એવા અને બીજા કયા સદ્ગુણ  
બાકી રહે છે કે જે ગુરુદેવની વાણીથી જીવોને પ્રાપ્ત ન થતા હોય



મૂલમ્—આસને ઉવચિદ્વિજ્ઞા, અણુચ્ચે અકુચ્ચે ધિરે<sup>૩</sup> ।

અપ્પુટ્ટાઈ નિરુટ્ટાઈ, નિસીંણજ્જપ્પકુર્વકુણ ॥૩૦॥

છાયા—આસને ઉપતિષ્ઠેત્, અનુચ્ચે અકુચ્ચે સ્થિરે ।

અલ્પોત્થાયી નિરુત્થાયી, નિપીદેત્ અલ્પકૌકુચ્યઃ ॥ ૩૦ ॥

ટીકા—‘આસને’ इत्यादि—

અનુચ્ચે—દ્રવ્યતો ગુર્વાસનાનીચે, ભાવતઃ સ્વલ્પમૂલ્યકે, અકુચ્ચે અકમ્પમાને, યદ્વા ચટત્કારાદિશબ્દરહિતે, સ્થિરે=સમપાદવત્ત્વેન નિશ્ચલે, આસને ઉપતિષ્ઠેત્ પીઠાદૌ વર્ષાસુ ઉપતિષ્ઠેત્=ઉપવિશેત્ । ઇદ્રશેડપ્યાસને સાધુઃ કિમવસ્થઃ સંસ્તિષ્ઠે-દિત્યાહ—‘અપ્પુટ્ટાઈ’ इति અલ્પોત્થાયી-કાર્યે સત્યપિ ઈપદુત્તિષ્ઠતીત્યેવંશીલઃ, એકકાર્યેણોત્થિતઃ સન્ વહુકાર્યસંપાદક इत्यર્થઃ । અત-એવ-કીદ્રશઃ સન્નિત્યાહ—

अव शिष्य के लिये आसन की विधि कहते हैं—‘आसणे’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—શિષ્ય (અણુચ્ચે-અનુચ્ચે) દ્રવ્યની અપેક્ષા ગુરુમહારાજ કે આસનસે નીચા ભાવની અપેક્ષા અલ્પમૂલ્યવાળા (અકુચ્ચે-અકુચ્ચે) તથા ચટચટ इत्यादि શબ્દ સે રહિત, અથવા હિલનેવાળા નહીં એવા જે ધિરે-સ્થિરે (સ્થિર-ચારોં પાચે) જિસકે સમાન હોં એસે (આસને-આસને) આસન - પીઠ ફલક પાટ પાટલે આદિ, ઉપર વર્ષાકાલ મેં (ઉવચિદ્વિજ્ઞા-ઉપતિષ્ઠેત્) બેઠે । શિષ્ય જિસ આસન પર બેઠે વહ ગુરુ કે આસનની અપેક્ષા નીચા હોના ચાહિયે । તથા અલ્પ મૂલ્યવાળા એવં હિલને ડુલને વાળા નહીં હોના ચાહિયે । શિષ્ય અપને આસન પર જમ કર બેઠે, કારણ વિના ન ઉઠે, યહી વાત (અપ્પુટ્ટાઈ-અલ્પોત્થાયી) इस पद द्वारा प्रदर्शित की गई है । उठने का काम यदि

હવે શિષ્ય માટે આસનની વિધિ કહે છે, આસને-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય અણુચ્ચે-અનુચ્ચે દ્રવ્યની અપેક્ષા ગુરુમહારાજના આસનથી નીચા, ભાવની અપેક્ષા અલ્પમૂલ્યવાળા, અકુચ્ચે-અકુચ્ચે તથા ચટચટ इत्यादि શબ્દથી રહિત અથવા હલવાવાળા નહીં એવા જે ધિરે-સ્થિરે સ્થિર-ચારે પાચા જેના એક સરખા હોય તેવા, આસને-આસને આસન-પીઠ ફલક પાટ પાટલા આદિ એના ઉપર વર્ષાકાળમાં ઉવચિદ્વિજ્ઞા-ઉપતિષ્ઠેત્ બેસે. શિષ્ય જે આસન ઉપર બેસે તે ગુરુના આસનથી નીચું હોવું જોઈએ, તથા હલે ચલે નહીં તેવું હોવું જોઈએ. શિષ્ય પોતાના આસન ઉપર સ્થિર થઈને બેસે, કારણ વગર ન ઉઠે, અપ્પુટ્ટાઈ-અલ્પોત્થાઈ આ વાત આ પદ દ્વારા પ્રદર્શિત કરવામાં



સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વાધતે,  
ધત્તે ધર્મમતિ તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ।

રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં,

યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદભ્યુદ્ગતા ભારતી ॥૧॥ ઇતિ ॥ ૨૯ ॥

વચન (મૂઢાણં વેસ્સં હોદ્-મૂઢાનાં દ્વેષ્યં ભવતિ) મૂર્ખ-અવિનીન શિષ્યોં  
કે લિયે દ્વેષજનક હોતે હં । કહાં ખી હૈ—

“સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વાધતે,  
ધત્તે ધર્મમતિ તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ।

રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં,

યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદભ્યુદ્ગતા ભારતી ” ॥ ૧ ॥

સદ્ગુરુ કે મુખસે નિકલો હુઈ વાણી પ્રશસ્ત વોધકી-સમ્યગ્જ્ઞાન કી  
જનક હોતી હૈ, કુમતિ કી વિદારક હોતી હૈ, મિથ્યાત્વરૂપી દ્રષ્ટિ કી  
વિધ્વંસક હોતી હૈ, ધર્મ મેં મતિ ઉત્પન્ન કરને વાલી હોતી હૈ, સંવેગ,  
અર્થ નિર્વેદ ગુણ કી ઉત્કર્ષક હોતી હૈ, રાગાદિકોં કી વિનાશક હોતી હૈ,  
નિર્મલ નીતિ કી પોષક હોતી હૈ, કુમાર્ગ કી વિદ્રાવક હોતી હૈ । એસે  
ઔર કૌન સે સદ્ગુણ વંચતે હૈં જો ગુરુદેવ કી વાણી સે જીવોં કો પ્રાપ્ત  
ન હોતે હૈં ॥ ૨૯ ॥

શુભોના સ્થાનભૂત, તત્ તે ગુરુ કે જોઓનાં અનુશાસના રૂપ વચન મૂઢાણં  
વેસ્સં હોદ્-મૂઢાનાં દ્વેષ્યં ભવતિ અવિનીત શિષ્ય માટે દ્વેષ જનક બને છે.

કહ્યું પણ છે કે—

સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિકુમતિ, મિથ્યાદ્રશં વાધતે ।

ધત્તે ધર્મમતિ તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ॥

રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં ।

યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદભ્યુદ્ગતા ભારતી ॥૧॥

સદ્ગુરુના મુખથી નીકળેલી વાણી પ્રશસ્ત બોધની સામ્યગ્જ્ઞાનની જનક  
હોય છે, કુમતિની વિદારક હોય છે, મિથ્યાત્વરૂપી દ્રષ્ટિની વિધ્વંસક હોય છે,  
ધર્મમાં મતિ ઉત્પન્ન કરવાવાળી હોય છે, સંવેગ અને નિર્વેગ શુભોના ઉત્કર્ષક  
કરવાવાળી હોય છે, રાગાદિકોના વિનાશ કરનારી હોય છે, નિર્મળ નિતીની  
પોષક હોય છે. કુમાર્ગની વિદ્રાવક હોય છે, એવા અને બીજા કયા સદ્ગુણ  
બાકી રહે છે કે જે ગુરુદેવની વાણીથી જીવોને પ્રાપ્ત ન થતા ॥

મૂલ્મ—આસને ઉવચિટ્ટિજ્ઞા, અણુચ્ચે અકુચ્ચે ધિરે<sup>૩</sup> ।

અપ્પુટ્ટાઈ નિરુટ્ટાઈ, નિસીંજ્જપ્પકુર્વકુચ્ચ ॥૩૦॥

છાયા—આસને ઉપતિષ્ઠેત્, અનુચ્ચે અકુચ્ચે સ્થિરે ।

અલ્પોત્થાયા નિરુત્થાયા, નિપીદેત્ અલ્પકૌકુચ્યઃ ॥ ૩૦ ॥

ટીકા—‘આસને’ इत्यादि—

અનુચ્ચે—દ્રવ્યતો ગુર્વાસનાનીચે, ભાવતઃ સ્વલ્પમૂલ્યકે, અકુચ્ચે અકમ્પમાને, યદ્વા ચટત્કારાદિશબ્દરહિતે, સ્થિરે=સમપાદવત્ત્વેન નિશ્ચલે, આસને ઉપતિષ્ઠેત્ પીઠાદૌ વર્ષાસુ ઉપતિષ્ઠેત્=ઉપવિશેત્ । ઈદ્દશેડપ્યાસને સાધુઃ કિમવસ્થઃ સંસ્તિષ્ઠે-  
દિત્યાહ—‘અપ્પુટ્ટાઈ’ इति અલ્પોત્થાયા-કાર્યે સત્યપિ ઈપદુત્તિષ્ઠતીત્યેવંશીલઃ,  
અકાર્યેણોત્થિતઃ સન્ વહુકાર્યસંપાદક इत्यर्थः । અત-અવ-કીદ્દશઃ સન્નિત્યાહ—

અવ શિષ્ય કે લિયે આસનની વિધિ કહતે હૈ—‘આસને’-इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—શિષ્ય (અણુચ્ચે-અનુચ્ચે) દ્રવ્યની અપેક્ષા ગુરુમહારાજ  
કે આસનસે નીચા ભાવની અપેક્ષા અલ્પમૂલ્યવાળા (અકુચ્ચે-અકુચ્ચે)  
તથા ચટચટ इत्यादि શબ્દ સે રહિત, અથવા હિલનેવાળા નહીં  
એસા જો (ધિરે-સ્થિરે) સ્થિર-ચારોં પાચે જિસકે સમાન હોં એસે  
(આસને-આસને) આસન — પીઠ ફલક પાટ પાટલે આદિ, ઉન  
પર વર્ષાકાલ મેં (ઉવચિટ્ટિજ્ઞા-ઉપતિષ્ઠેત્) બેઠે । શિષ્ય જિસ આસન  
પર બેઠે વહુ ગુરુ કે આસનની અપેક્ષા નીચા હોના ચાહિયે । તથા અલ્પ  
મૂલ્યવાળા એવં હિલને ડુલને વાળા નહીં હોના ચાહિયે । શિષ્ય અપને  
આસન પર જમ કર બેઠે, કારણ વિના ન ઉઠે, યહી ઘાત (અપ્પુટ્ટાઈ-  
અલ્પોત્થાયા) ઇસ પદ દ્વારા પ્રદર્શિતની ગઈ હૈ । ઉઠને કા કામ યદિ

હવે શિષ્ય માટે આસનની વિધિ કહે છે, આસને-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય અણુચ્ચે-અનુચ્ચે દ્રવ્યની અપેક્ષા ગુરુમહારાજના  
આસનથી નીચા, ભાવની અપેક્ષા અલ્પમૂલ્યવાળા, અકુચ્ચે-અકુચ્ચે તથા ચટચટ  
इत्यादि શબ્દથી રહિત અથવા ડુલવાવાળા નહીં એવા જે ધિરે-સ્થિરે સ્થિર-ચારે  
પાચા જેના એક સરખા હોય તેવા, આસને-આસને આસન-પીઠ ફલક પાટ  
પાટલા આદિ એના ઉપર વર્ષાકાળમાં ઉવચિટ્ટિજ્ઞા-ઉપતિષ્ઠેત્ બેસે. શિષ્ય જે  
આસન ઉપર બેસે તે ગુરુના આસનથી નીચું હોવું જોઈએ, તથા હલ્લે ચલે  
નહીં તેવું હોવું જોઈએ. શિષ્ય પોતાના આસન ઉપર સ્થિર થઈને બેસે, કારણ  
વગર ન ઉઠે, અપ્પુટ્ટાઈ-અલ્પોત્થાઈ આ વાત આ પદ દ્વારા પ્રદર્શિત કરવામાં

‘નિરુઠ્ઠાઈ’ ઇતિ નિરુત્થાપી-પ્રયોજનેઽપિ ન પુનઃ પુનરુત્થાનશીલઃ પુનઃ કીદૃશઃ સન્નિત્યાહ-‘અપ્પકુક્કુણ’ ઇતિ અલ્પકૌકુચ્યઃ-અલ્પં કૌકુચ્યં यस્ય સ તથા-અત્રાલ્પશબ્દો નગર્યે વર્તતે તથાચ-કરચરણભ્રૂભ્રમણાદ્યશિષ્ટચેષ્ટારહિત ઇત્યર્થઃ નિષીદેત્=ઉપવિશેત્ ।

‘અનુચ્ચે’ ઇતિ વિશેષણેન વિનયઃ પ્રદર્શિતઃ ।

‘અકુચે’ ઇત્યનેન દ્વીન્દ્રિયાદિત્રસજીવયતના સૂચિતા ।

‘સ્થિરે’ ઇત્યનેન વાયુકાયયતના સૂચિતા ।

‘અલ્પોત્થાપી’ ઇત્યનેન નિષદ્યાપરિપહવિજયઃ સૂચિતઃ ।

‘નિરુત્થાપી’ ઇત્યનેન આભ્યન્તરિકવ્યુત્સર્ગતપસઃ સમારાધનાઽઽવેદિતા ।

પહેં મી તૌં મી જવ ઉઠે તવ જિસ કામ કે લિયે ઉઠા હો ઉસ સમય ઔર મી જો કામ કરના હો વે મી કર લેવે । તથા (અપ્પકુક્કુણ-અલ્પ કૌકુચ્યઃ) હાથ તથા પૈર એવં ભ્રૂ આદિ કા અશિષ્ટ સંચાલન ન કરે, તાત્પર્યં યહ કિ યદિ યહ પાટ આદિ આસનપર જમકર વેઠે તો મી એસી હાલત મેં જિસ પ્રકાર સંસારી જન વેઠે ૨ હી હાથ પૈર આદિ હિલાયા હુલાયા કરતે હૈં વૈસી અશુભ ચેષ્ટાઈ નહીં કરની ચાહિયે । સૂત્રકાર ને ‘અનુચ્ચે’ ઇસ પદ દ્વારા વિનયગુણ પ્રદર્શન કિયા હૈં । ‘અકુચે’ ઇસ વિશેષણ દ્વારા દ્વીન્દ્રિયાદિ જીવોં કી યાતના કા સૂચન કિયા હૈં । ‘સ્થિરે’ ઇસ શબ્દ દ્વારા વાયુકાય કી યાતના કા ‘અલ્પોત્થાપી’ ઇસ પદ દ્વારા નિષદ્યાપરીપહ કે વિજય કા ‘નિરુત્થાપી’ ઇસ દ્વારા આભ્યન્તર

આવેલ છે. ઉઠવાનું કામ ને પડે તો પશ્ચુજ્યારે ઉઠે ત્યારે ને કામ માટે ઉઠેલ હોય તેની સાથે બીજું પશ્ચુ ને કામ કરવાનું હોય તે કરી લે. તથા અલ્પકુક્કુણ-અલ્પકૌકુચ્યઃ તથા હાથ અને પગ તથા ભ્રૂ વગેરેનું અશિષ્ટ સંચાલન ન કરે. તાત્પર્યં એ છે કે, ને તે પાટ આદિ આસન ઉપર સ્થિર બેસે તો પશ્ચુ એવી હાલતમાં ને પ્રકારથી સંસારી જન બેઠાં બેઠાં જ હાથ પગ વગેરે હલાવ્યા-હુલાવ્યા કરે છે તે રીતે અશુભ ચેષ્ટાઓ કરવી ન જોઈ એ. સૂત્રકારે “અનુચ્ચે” આ પદ દ્વારા વિનયગુણ પ્રદર્શન કરેલ છે. અકુચે આ વિશેષણ દ્વારા દ્વિ દ્વિન્દ્રિયાદિ જીવોની યતનાનું સૂચન કરેલ છે. સ્થિરે આ પદ દ્વારા વાયુકાયની યતનાનું સૂચન કરેલ છે. “અલ્પોત્થાપી” એ પદ દ્વારા નિષદ્યા પરિપહના વિજયનું સૂચન કરેલ છે. નિરુત્થાપી એ પદ દ્વારા આભ્યંતર વ્યુત્સર્ગ

‘અલ્પકૌકુચ્યઃ’ ઇતિ વિશેષણેન સંયમલજ્જા સૂચિતા ॥ ૩૦ ॥

સંપ્રતિ એપણાસમિતિવિધયં વિનયમાહ—

મૂલમ્—કાલેણ નિર્વલ્લમે ભિક્ષૂ, કાલેણ ચ પલિક્ષમે ।

અકાલં ચ વિવંજિતા, કાલે કાલં સમાચરે ॥૩૧॥

છાયા—કાલેન નિષ્ક્રામેદ્ ભિક્ષુઃ, કાલેન ચ પ્રતિક્રામેત્ ।

અકાલં ચ વિવર્જ્ય, કાલે કાલં સમાચરેત્ ॥ ૩૧ ॥

ટીકા—‘કાલેણ’ ઇત્યાદિ—

કાલેન—કાલે—દેશકાલાનુસારેણ ભિક્ષાયોગ્યસમયે એવ ભિક્ષુઃ=સાધુનિષ્ક્રામેત્=ભિક્ષાર્થં નિર્ગચ્છેત્—અકાલે ભિક્ષાર્થં નિર્ગમને સંનિવેશનિન્દાસ્વાત્મવલ્લેશાદિ દોષસંભવાત્ । ચ—પુનઃ કાલેન=કાલે ઉચિત સમય એવ પ્રતિક્રામેત્=ભિક્ષાટનાત્ પ્રતિ-નિવર્તેત્, અલ્પલાભે અલાભે વા લાભાશયા કાલમતિક્રમ્ય ન ચિરકાલમટેદિતિ ભાવઃ ।

વ્યુત્સર્ગ તપકા તથા ‘અલ્પકૌકુચ્યઃ’ ઇસ પદ દ્વારા સંયમ કી લજ્જા કે નિર્વાહ કા સૂચન કિયા હૈ ॥ ૩૦ ॥

અવ એપણાસમિતિવિધયક વિનયધર્મકા સૂત્રકાર કથન કરતે હૈ—‘કાલેણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(કાલેણ—કાલેન) દેશ કાલ કે અનુસાર ભિક્ષાયોગ્ય સમય મેં હી (ભિક્ષુ—ભિક્ષુ) સાધુ કો (નિર્વલ્લમે—નિષ્ક્રામેત્) ભિક્ષા કે લિયે અપને સ્થાન સે જાના ચાહિયે । અકાલ મેં ભિક્ષા કે લિયે નિકલ ને મેં સંનિવેશ—ગાંવ કી તથા સાધુ કી નિન્દા હોતી હૈ, ઇસ સે આત્મા કો વલ્લેશાદિક દોષોં કો સંભાવના રહતી હૈ । તથા (કાલેણ ચ પલિક્ષમે—કાલેન ચ પ્રતિક્રામેત્) ઉચિત સમય મેં હી વહ વાપિસ ભિક્ષાટન સે લૌટ આવે, એસા નહીં કરના ચાહિયે કિ ભિક્ષા કા અલ્પલાભ હો અથવા

અલ્પકૌકુચ્યઃ એ પદ દ્વારા સંયમની લજ્જાના નિર્વાહનું સૂચન કરેલ છે. ॥૩૦॥

હવે એપણાસમિતિવિધયક વિનયધર્મનું સૂત્રકાર કથન કરે છે. કાલેણ૦ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—કાલેણ—કાલેન દેશકાળ અનુસાર ભિક્ષાના યોગ્ય સમયેજ, ભિક્ષુ—ભિક્ષુ સાધુએ નિર્વલ્લમે—નિષ્ક્રામેત્ ભિક્ષા માટે પોતાના સ્થાનથી જવું જોઈએ. અકાળમાં ભિક્ષા માટે નિકળવામાં ગામની તથા સાધુની નિંદા થાય છે. એથી આત્માને વલ્લેશાદિક દોષોની સંભવના રહે છે, તથા કાલેણ ચ પલિક્ષમે—કાલેન, ચ પ્રતિક્રામેત્ ઉચિત સમયમાં જ તે ભિક્ષાટનથી પાછા ફરે. એવું ન કરવું જોઈએ કે ભિક્ષાનો અલ્પ લાભ હોય અથવા અલાભ હોય તો તે લાભની

ઉક્તં ચ—અલાભો તિ ન સોઝ્જા, તવોત્તિ અહિયાસણ ॥

છાયા—અલાભ ઇતિ ન શોચેત, તપ ઇત્યધ્યાસીત ॥

ચ-પુનઃ અકાલં-પ્રતિક્રમણ-પ્રતિલેખનાઽપૃચ્છના-સ્વાધ્યાય-ભિક્ષાચરીપ્રભૃતિ-કાર્યાણામયોગ્ય સમયં ચ વિવર્જ્ય=પરિત્યજ્ય, કાલે-યસ્ય કાર્યસ્ય યઃ કાલસ્ત-સ્મિન્નેવ, કાલં-તત્કાલોચિતં પ્રતિક્રમણ-પ્રતિલેખનાદિકં કાર્યં સમાચરેત્=કુર્યાત્ !

અર્થ ભાવઃ—યો યસ્ય અંગપ્રવિષ્ટાદેઃ શ્રુતસ્ય કાલ ઉક્તસ્તસ્ય શ્રુતસ્ય તસ્મિન્નેવ કાલે સ્વાધ્યાયઃ કાર્યઃ, નાન્યદા, વિઘ્નસંભવાત્, તીર્થંકરાદિવિરોધાન્નચ ।

અલાભ હો તો વહીં લાભ કો આશા સે સમય કો ઉલ્લંઘન કર બહુત સમય તક ઘૂમતા હી રહે । ભગવાન ને કહા ખી હૈ—

“અલાભો તિ ન સોઝ્જા, તવોત્તિ અહિયા સણ”

સાધુ કો જવ અપને સમયાનુસાર ભિક્ષા કા લાભ ન હો તો ઉસ સમય ઉસે શોચ નહીં કરના ચાહિયે કિન્તુ એસા સમજના ચાહિયે કિ યહ એક વડે ભારી તપ કા લાભ હુઆ હૈ । પ્રતિક્રમણ, પ્રતિલેખના, અપૃચ્છના, સ્વાધ્યાય તથા ભિક્ષાચર્યા કા જો સમય નિયત હૈ ઉસ સમય કે અતિરિક્ત (અકાલં ચ વિવર્જિત્તા-અકાલં ચ વિવર્જ્ય) શેષ ઉનકા અકાલ કા સમય હૈ અતઃ ઉસે છોડકર (કાલં) જોર, કાર્ય જિસર સમય મેં કિયે જાને ચાહિયે ઉન્હેં (કાલે) ઉસી સમય મેં (સમાચરે-સમાચરેત) કરે ।

ભાવાર્થ—જિસ અંગપ્રવિષ્ટ આચારાંગ આદિ સૂત્રોં કે સ્વાધ્યાય કરને કા જો સમય નિયત હૈ ઉસ સમય મેં ઉસી શ્રુત કી સ્વાધ્યાય

આશાથી સમયનું ઉલ્લંઘન કરીને ઘણા સમય સુધી ફરતા રહે. ભગવાને કહ્યું છે કે અલાભોત્તિ ન સોઝ્જા તવો ત્તિ અહિયાસણ સાધુને જ્યારે પોતાના સમય અનુસાર ભિક્ષાનો લાભ ન થાય તો તે સમયે તેણે સ્વાધ્યાય ન કરવો જોઈએ પરંતુ એમ સમજવું જોઈએ કે, આ એક ભારે તપનો લાભ મળ્યો, પ્રતિક્રમણ, પ્રતિલેખના, અપૃચ્છના, સ્વાધ્યાય, તથા ભિક્ષાચર્યાનો જે સમય નિયત છે એ સમય સિવાય, અકાલં ચ વિવર્જિત્તા-અકાલં ચ વિવર્જ્ય શેષ તેનો અકાળનો સમય છે, આથી એને છોડી, કાલં જે જે કાર્ય જે જે સમયમાં કરી લેવા જોઈએ એને એ જ કાલે સમયમાં સમાચરે-સમાચરેત્ કરે.

ભાવાર્થ—અંગ પ્રવિષ્ટ આચારાંગ આદિ સૂત્રોનો સ્વાધ્યાય કરવાનો જે સમય નિયત છે એ સમયમાં એજ શ્રુતનો સ્વાધ્યાય કરવો જોઈએ. બીજા



દૃશ્યતે ચ લોકેऽપિ કાલ એવ કૃષ્યાદિકરણે ધાન્યાદિનિષ્પત્તિરૂપં ફલં ભવતિ, વિપર્યયે તુ વિપર્યયઃ । યથા કાલ એવ વનસ્પતીનામઙ્કુરાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ, કાલ એવ વૃક્ષાઃ કુસુમિતા ભવન્તિ, ફલવન્તશ્ચ, કાલ એવ પદ્મ ઋતવઃ સમાયાન્તિ, કાલ એવ તીર્થંકરાશ્ચક્રિણો વલદેવા વાસુદેવા જાયન્તે, કાલ એવ શુક્તિકાયાં મુક્તા ઉત્પદ્યન્તે, કાલે આવશ્યકકારિણસ્તીર્થંકરગોત્રં કર્મોપાર્જયન્તિ ।

યતઃ—કાલમ્મિ કીરમાણં, કિસિકમ્મં વહુફલં જહા હોઝ ।

ઇય સવ્વચ્ચિય કિરિયા, નિય-નિય-કાલમ્મિ વિન્નેયા ॥ ૧ ॥

છાયા—કાલે ક્રિયમાણં, કૃપિકર્મ વહુફલં યથા ભવતિ ।

ઇતિ સર્વેવ ક્રિયા, નિજ-નિજ-કાલે વિજ્ઞેયા ॥ ૧ ॥

કરની ચાહિયે, મિન્ન સમય મેં નહીં, કારણ કિ અકાલ મેં વિઘ્નોં કે આને કી સંભવના રહતી હૈ । તથા તીર્થંકર પ્રભુકી એસી આજ્ઞા નહીં હૈ, અતઃ ડનકી આજ્ઞા કે વિરુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કરને સે સ્વચ્છંદતા કા દોષ લગતા હૈ । લોકમેં ઢી યહી વાત દેખી જાતી હૈ—ખેતી આદિ કરને કા જો કાલ નિયત હૈ ડસો મેં ડસ કે કરને સે ધાન્યાદિક ફલ કી નિષ્પત્તિ હોતી હૈ, અન્ય સમય મેં નહીં । સમયાનુસાર હી વૃક્ષોં મેં પત્ર પુષ્પ ફલાદિક આયા કરતે હૈ । તથા વનસ્પતિયોં અંકુરોં કો ઉત્પન્ન કરતી હૈ । અપને અપને સમય મેં છહ ઋતુએ આતી હૈ । તીર્થંકર, ચક્રવર્તી, વલદેવ, વાસુદેવ, યે સવ અપને ૨ સમય પર હી હોતે હૈ । સીપ મેં મોતી, સમયાનુસાર હી હોતે હૈ । આવશ્યક ક્રિયાઓં કો કરને વાલે જીવ સમય પર હી તીર્થંકર ગોત્ર કા ઉપાર્જન કિયા કરતે હૈ । કહા ઢી હૈ—

સમયમાં નહીં. કારણ કે અકાલમાં વિઘ્નો આવવાની સંભાવના રહે છે. તથા તીર્થંકર પ્રભુની એવી આજ્ઞા નથી. માટે એમની આજ્ઞાની વિરુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કરવાથી સ્વચ્છંદતાનો દોષ લાગે છે. લોકોમાં પણ આવી વાત દેખાય છે— ખેતી વગેરે કરવાનો જે કાળ નિયત છે એ સમયે જ કરવાથી ધાન્યાદિક ફળની ઉત્પત્તિ થાય છે. અન્ય સમયમાં નહીં. સમયાનુસારજ વૃક્ષોમાં પત્ર પુષ્પ ફળાદિક આવ્યા કરે છે. તથા વનસ્પતિઓ અંકુરોને ઉત્પન્ન કરે છે. પોતાના સમયમાં છ ઋતુઓ આવે છે તીર્થંકર, ચક્રવર્તી, વલદેવ; વાસુદેવ. એ બધા પોત પોતાના સમય ઉપર થાય છે. સીપમાં મોતી સમયાનુસાર જ થાય છે. આવશ્યક ક્રિયાઓને કરવાવાળા જીવ સમય પર જ તીર્થંકર પ્રકૃતિનો બંધ કર્યા કરે છે. કહ્યું પણ છે કે—

तस्मात् साधुभिः काल एव सर्वा प्रतिक्रमणप्रतिलेखनादिक्रिया कर्तव्येति ।  
सूत्रे 'कालेण' इत्यत्र तृतीया सप्तम्यर्थे ॥ ३१ ॥

मूलम्—परिवाडीए न चिट्ठेज्जा, भिक्खू दत्तेसणं चरे ।

पंडिरूवेण एसित्ता, मियं' कांलेण भवत्ते'ए ॥३२॥

छाया—परिपाट्यां न तिष्ठेत्, भिक्षुः दत्तैषणां चरेत् ।

प्रतिरूपेण एपित्वा, मितं कालेन भक्षयेत् ॥ ३२ ॥

टोका—'परिवाडीए' इत्यादि—

भिक्षुः=साधुः, परिपाट्यां—गृहस्थगृहे भुज्जानानां जनानां पङ्क्तौ न तिष्ठेत् ।  
किं च—दत्तैषणां=दत्तं—दानं तस्मिन् गृहस्थेन दीयमाने, एषणा—तद्गतशक्तित-

“कालम्मि कीरमाणं, किसिकम्मं बहुफलं जहा होइ ।

इय सव्वच्चिय किरिया, निय-निय-कालम्मि विन्नेया ॥ १ ॥

छाया—काले क्रियमाणं, कृषिकर्म बहुफलं यथा भवति ।

इति सर्वा चैव क्रिया निज-निज-काले विज्ञेया ॥ १ ॥

इस लिये साधुओं को चाहिये कि वे समस्त अपनी प्रतिक्रमण  
प्रतिलेखनादिक क्रियाओं को नियत समय पर ही करते रहें ॥ ३१ ॥

'परिवाडीए' इत्यादि.

अन्वयार्थ—( भिक्खू-भिक्षुः ) साधु (परिवाडीए न चिट्ठेज्जा-  
परिपाट्यां न तिष्ठेत्) गृहस्थ के घर में भोजन करती हुई जीमणवार  
की जनपंक्ति में न खड़ा रहे । ( दत्तेसणं चरे-दत्तैषणां चरेत् )

“कालम्मि कीरमाणं, किसिकम्मं बहुफलं जहा होइ ।

इय सव्वच्चिय किरिया, निय-निय-कालम्मि विन्नेया ॥ १ ॥

छाया—काले क्रियमाणं, कृषिकर्म बहुफलं यथा भवति ।

इतिसर्वैवक्रिया, निज-निज-काले विज्ञेया ॥१॥

आ भाटे साधुनुं कर्तव्य छे के तेखे पोतानी समस्त क्रियाओ प्रतिक्रमण  
प्रतिलेखनादिक नियत समय उपर करवी लेधये. ॥ ३१ ॥

परिवाडिए—इत्यादि.

अन्वयार्थ—भिक्षु-भिक्षुः साधु, परिवाडीए न चिट्ठेज्जा-परिपाट्यां न तिष्ठेत्  
गृहस्थनाथरमां भोजन करती भिक्षुवारनी जनपंक्तिमां उभा न रहे. दत्तेसणं चरे—  
दत्तैषणां चरेत् गृहस्थ द्वारा दत्त दानमां शक्ति, भक्षिक आदिदोषोनी अवेषणु ३५

અક્ષિતાદિદોષાન્વેષણાત્મિકા દત્તૈષણા તાં, ચરેત્=આસેવેત । અનેન ગ્રહણૈષણા સૂચિતા ।  
કિં કૃત્વા દત્તૈષણાં ચરેદિત્યાહ-‘ પઢિરૂવેણ ’ ઇત્યાદિ । પ્રતિરૂપેણ=મુનિવેષેણ,  
વદ્ધસદોરકમુખવસ્ત્રિકત્વં, રજોહરણપાત્રધારકત્વં, શ્વેતવસ્ત્રપરિધાયકત્વં ચ મુનિ-  
વેષસ્તેન, એપિત્વા=ગવેપયિત્વા, અનેન ઉદ્ગમોત્પાદનાવિષયા ગવેષણૈષણા પ્રોક્તા ।  
મિતં=પરિમિતં કાલેન-કાલે-આગમોક્તસમયે દેશકાલાનુસારેણ ભક્ષયેત્-ભુજીત ।  
અનેનાભ્યવહરણવિષયા ગ્રાસૈષણાઽઽવેદિતા ।

અત્ર ‘પરિવાડીએ ન ચિદ્દેજ્જા’ ઇત્યનેન અપ્રીતિઃ, રસલોલુપતાવર્જનં  
ચ સૂચિતમ્ । ‘દત્તૈષણં’ ઇત્યનેનાદત્તાદાનનિવૃત્તિઃ સૂચિતા । ‘પઢિરૂવેણ’  
ઇત્યનેન નિષ્કપટતા પ્રદર્શિતા । ‘મિયં’ ઇત્યનેનાધિકભોજનનિવૃત્તિરાવેદિતા ॥૩૨॥

ગહસ્થદ્વારા પ્રદત્ત દાન મેં શક્તિ, અક્ષિત આદિ દોષોં કી ગવેષણા રૂપ  
દત્તૈષણા અર્થાત્ ગ્રહણૈષણા કા ધ્યાન રલે । ( પઢિરૂવેણ-પ્રતિરૂપેણ )  
પ્રતિરૂપસે-મુનિ કે વેષ સે-મુખ પર દોરાસહિત મુંહપત્તિ બાંધના.  
રજોહરણ એવં પાત્રોં કા ધારણ કરના, યહ મુનિવેષ હૈં હસ વેષ સે  
(એસિત્તા-એપિત્વા) ગવેષણા કર (કાલેણ-કાલેન) આગમન મેં કથિત  
સમયમેં દેશ કાલ કે અનુસાર સમય પર મિલે હુએ અન્ન આદિકા (મિયં-  
મિતં) પરિમિતં (ભક્ષવે-ભક્ષેત્) આહાર કરે । ‘એસિત્તા-એપિત્વા’ હસ પદ  
સે ઉદ્ગમ, ઉત્પાદન આદિ દોષોં સે વર્જિત ગવેષણૈષણા, તથા ‘ભુજીત’ હસ  
ક્રિયાપદ દ્વારા ગ્રાસૈષણા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ‘પરિવાડીએ ન ચિદ્દેજ્જા’ હસ  
પદ દ્વારા અપ્રીતિ એવં રસ મેં લોલુપતાકા પરિહાર સૂચિત હુઆ હૈ ।  
‘દત્તૈષણં’ સે અદત્તાદાન સે નિવૃત્તિ, ‘પઢિરૂવેણ’ સે નિષ્કપટતા, ‘મિયં’  
હસ સે અધિક ભોજનકી નિવૃત્તિ સૂચિત કી ગઈ હૈ ॥ ૩૨ ॥

દત્તૈષણા અર્થાત્ શ્રદ્ધાલૈષણાનું ધ્યાન રાખે. પઢિરૂવેણ-પ્રતિરૂપેણ પ્રતિરૂપથી-મુનિના  
વેશથી મોઢા ઉપર દોરાસહિત મુંહપત્તિ બાંધવી, રજોહરણ તથા પાત્રોનું ધારણ  
કરવું તથા શુકલ વસ્ત્રોને ધારણ કરવાં એ મુનિવેશ છે. આ વેશને, એસિત્તા-  
એપિત્વા ધારણ કરી, કાલેણ-કાલેન આગમના કહેલા સમયમાં દેશકાળ સમય અનુ-  
સાર સમય ઉપર મળેલા અન્ન આદિને મિયં-મિતં પરિમિત ભક્ષવે-ભક્ષયેત્ આહાર  
કરે. એસિત્તા-એપિત્વા એ પદથી ઉદ્ગમ, ઉત્પાદન આદિ દોષોથી વર્જિત ગવેષણૈષણા  
તથા “ભુજીત” આ ક્રિયા પદ દ્વારા ગ્રાસૈષણા પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે.  
પરિવાડી એ ન ચિદ્દેજ્જા આ પદ દ્વારા અપ્રીતિ એવં રસમાં લોલુપતાનો  
પરિહાર સૂચિત થયેલ છે. દત્તૈષણં આ પદથી અદત્તાદાનની નિવૃત્તિ, સૂચિત  
કરવામાં આવી છે. પઢિરૂવેણ આ પદથી નિષ્કપટતા સૂચિત કરે છે. મિયં  
એ પદથી અધિક ભોજનની નિવૃત્તિ સૂચવવામાં આવેલ છે. (૩૨)

मूलम्—नाइदूरमणोसन्ने, नन्नेसि चक्खुफासओ ।

छाया—नातिदूरं अनासन्ने, नान्येषां चक्षुःस्पर्शतः ।

• टीका—‘ नाइदूर० ’ इत्यादि—

जिस समय साधु भिक्षाचर्या कर रहा हो उस समय यदि गृहस्थ के घर में कोई दूसरा भिक्षु भिक्षाचर्या के लिये आया हुआ हो तो साधु का क्या कर्तव्य है ? इस विषय को इस गाथाद्वारा स्पष्ट किया जाता है—‘नाहदूर०’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—भिक्षा करता हुआ साधु (नाइदूरमणासन्ने-नातिदूरं अनासन्ने) जब यह देखे कि गृहस्थ के घर पर पहिले से कोई दूसरा भिक्षु आदि भिक्षानिमित्त आया हुआ है, या भिक्षा ग्रहण कर रहा है तो वह उस समय बहुत दूर जाकर खड़ा न होवे और न अति समीप खड़ा होवे। क्योंकि अतिदूर खड़े होने पर भिक्षु का निर्गमन उसे ज्ञात नहीं हो सकता है, तथा अति समीप खड़े रहने पर उससे पूर्वगत

જે સમય સાધુ લિક્ષા ચર્ચા કરતા હોય એ સમયે ગૃહસ્થને ઘેર કોઈ બીજા લિક્ષુ લિક્ષાચર્ચા માટે આવેલ હોય તો સાધુનું શું કર્તવ્ય છે. આ વિષયને આ સૂત્રદ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—નાઈદૂર-ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લિક્ષા માટે નિકળેલ સાધુ, નાહદૂરમળાસન્ને-નાતિદૂર અનાસન્ને એ બુએ કે જે ગૃહસ્થને ત્યાં પોતે જઈ રહેલ છે, ત્યાં તેની પહેલાં કેઈ બીજા લિક્ષુ લિક્ષા નિમિત્ત ગયેલ છે, અથવા લિક્ષા શ્રદ્ધા કરી રહેલ છે, તો તે એ સમયે ઘણે આદે જઈ ઊભા ન રહે તેમ અતિ સમીપમાં પણ ઊભા ન રહે કેમ કે, અતિ દૂર ઊભા રહેવાથી લિક્ષાર્થે ગયેલા લિક્ષુનું નિર્ગ-મન જાણી શકાતું નથી તથા અતિ સમીપ રહેવાથી પહેલાં નિ. માટે

તત્ર સ્થિતે સતિ પૂર્વાગતભિક્ષુકસ્ય દ્વેષઃ સ્યાદિતિ ભાવઃ । અન્યેષાં=ભિક્ષુકાપે-  
ક્ષયા=યેઽન્યે સન્તિ ગૃહસ્થાસ્તેષાં, ચક્ષુઃસ્પર્શતઃ=ચક્ષુઃસ્પર્શે દૃષ્ટિગોચરે ન તિષ્ઠેત્,  
'અયં ભિક્ષુઃ પૂર્વાગતભિક્ષુનિષ્ક્રમણં પ્રતિશ્ચતે' इति यथा गृहस्था न जानन्ति तथा  
તિષ્ઠેદિતિ ભાવઃ । એકઃ=રાગદ્વેષ રહિતઃ સન્, ભક્તાર્થમ્-આહારાર્થં તિષ્ઠેત્ ।  
તમ્=પૂર્વાગતભિક્ષુકં, લઙ્ઘયિત્વા=અનાદૃત્વ, નાતિક્રમેત્=ન ગૃહમધ્યે ગચ્છેત્,  
પૂર્વાગતભિક્ષુકસ્ય સદ્ભાવે ગૃહસ્થસ્યગૃહે.ગમને તદપ્રીતિશાસનલઘુનાદિદોષાણાં સંભવ  
इति भावः ॥ ૩૩ ॥

સમ્પત્તિ ગ્રહણેષણાવિધિ સૂત્રકારઃ પ્રદર્શયતિ—

મૂલમ્—નાંઈઉચ્ચે ન નીચે વા, નાંસંપળે નાંઈદૂરઓ ।

પાસુચં પરંકડં પિંડં, પડિગાંહિજ્ઞ સંજં ॥૩૪॥

છાયા—નાત્યુચ્ચે ન નીચે વા નાસન્ને નાતિદૂરતઃ ।

પાસુકં પરકૃતં પિંડં, પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ સંયતઃ ॥ ૩૪ ॥

ભિક્ષુ કો દ્વેષ હો સકતા હૈ । ઇસી પ્રકાર ( નન્નેસિં ચક્ષુફાસઓ  
ચિદ્વેજ્ઞ-નાન્યેષાં ચક્ષુઃસ્પર્શતઃ તિષ્ઠેત્ ) ગૃહસ્થ કે નજર મેં આવે એસા  
ભી સ્વડા ન હોવે (એગો-એકઃ) એક તથા રાગ-દ્વેષ રહિત હોકર (ભક્તઙ્-  
ભક્તાર્થમ્) આહાર કે લિયે (ચિદ્વેજ્ઞ) સ્વડા રહે ઓર (લંઘિત્તા તં નાઈકમે-  
લઙ્ઘયિત્વા તં નાતિક્રમેત્ ) પહેલે ચાલા ભિક્ષુ જવ તક બાહર ન નિકલે  
તવ તક મુનિ કો ઉસ ગૃહસ્થ કે ઘર મેં આહાર નિમિત્ત પ્રવિષ્ટ નહીં  
હોના ચાહિયે । પહેલે આયે હુએ ભિક્ષુ કે સદ્ભાવ મેં ગૃહસ્થ કે ઘર જાને  
પર ગૃહસ્થ કો ઉસ કે પ્રતિ અપ્રીતિ હો સકતી હૈ એવં શાસન કી લઘુતા  
આદિ દોષોં કી સંભાવના હો સકતી હૈ ॥ ૩૩ ॥

ગયેલા ભિક્ષુકના મનમાં દ્વેષ લાગવા જેવું બને છે. તેમ નન્નેસિં ચક્ષુ-  
ફાસઓ ચિદ્વેજ્ઞ--નાન્યેષાં ચક્ષુઃ સ્પર્શતઃ તિષ્ઠેત્ ગૃહસ્થની દૃષ્ટિ પડે એ રીતે પણ  
ઊભા ન રહે. એગો-એકઃ એક તથા રાગ દ્વેષ રહિત બનીને ભક્તઙ્-ભક્તાર્થમ્  
ભિક્ષુ માટે ચિદ્વેજ્ઞ ઊભા રહે અને લંઘિત્તા તં નાઈકમે-લંઘયિત્વા તં નાતિક્રમેત્  
પડેલા ભિક્ષુ માટે ગયેલ ભિક્ષુ ત્યાં સુધી બહાર ન નીકળે ત્યાં સુધી મુનિએ  
તે ગૃહસ્થના ઘરમાં આહાર નિમિત્ત પ્રવેશ ન કરવો જોઈએ. પડેલાં ગયેલાં  
સાધુના સદ્ભાવમાં ગૃહસ્થને ત્યાં જવાથી ગૃહસ્થને તેના તરફ અપ્રીતિ થાય  
. અને શાસનની લઘુતા આદિ દોષોની સંભાવના થાય છે. ॥ ૩૩ ॥



ટીકા—‘નાહુચ્ચે’ ઇત્યાદિ—

સંયતઃ=સાધુઃ, પ્રાસુકં=પનકાદિજંતુરહિતં, નિર્દોષિં=નવકોટિવિશુદ્ધં, પર-  
કૃતં=પરેણ ગૃહસ્થેન સ્વાર્થ કૃતં ન તુ સાધ્યર્થમ્, પિણ્ડમ્=ચતુર્વિધમાહારમ્, અત્યુચ્ચે-  
ગૃહોપરિભૂમિકાદૌ વંશકાષ્ઠનિર્મિતચર નિશ્રેણિકારોદ્ધનં કૃત્વા, ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્  
પ્રતિગૃહ્ણીયાદિત્યસ્ય નીચાદાવપિ સમ્બન્ધઃ । નીચે=અતિનીચે-ભૂમિગૃહાદૌ વા ન  
પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ તથા-આસન્ને=અત્યાસન્ને, અતિસમીપે સ્થિતઃ સન્ ન પ્રતિ-  
ગૃહ્ણીયાત્, અતિદૂરતઃ-અતિદૂરે સ્થિતઃ સન્ ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ ।

અત્ર-‘અત્યુચ્ચે’ ઇતિ-આરોદ્ધનેઽવરોદ્ધને ચ સ્વપરવિરાધનાસંભવં સૂચયતિ ।

અવ ગ્રહણૈષણા કી વિધિ કહતે હૈં—‘નાહુચ્ચે’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(સંજણ-સંયતઃ) સાધુ (પ્રાસુયં-પ્રાસુકં) પનક-નીલન  
-ફૂલન-આદિ જીવોં સે રહિત-નિર્દોષ-નવકોટિ સે વિશુદ્ધ તથા  
(પરકલં-પરકૃતં) ગૃહસ્થ દ્વારા અપને નિમિત્ત બનાયે ગયે-ન કિ સાધુ કે  
નિમિત્ત બનાયે ગયે, એસે (પિંડ-પિણ્ડ) ચતુર્વિધ આહાર કો (અહુચ્ચે  
ન પલિગાહિજ્જ-અત્યુચ્ચે ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્) ઘર કે ઉપર કી ભૂમિ  
કાદિ પર વાંસ અથવા કાળકાંથી નિસરણી સે ચઢકર ન લેવે. હસી  
તરહ જો આહાર (નીચ-નીચે) અત્યંત નીચે તળઘર આદિ મેં હો ડસકો  
(ન) નહીં લેવે । તથા (નાસણે નાહુદૂરઓ-નાસન્ને નાતિદૂરતઃ) ન અતિ  
નજદીક સે લેવે ઓર ન અતિદૂર સે હી લેવે ।

‘અત્યુચ્ચે’ હસ પદ દ્વારા સૂત્રકાર યહી સૂચિત કરતે હૈં કિ ઉંચે  
સ્થાન પર ચઢને ંવં ઉતર ને મેં સ્વ ઓર પર કો વિરાધના હોને કી

હવે ગૃહણૈષણાની વિધિ કહેવામાં આવે છે. નાહુચ્ચે-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—સંજણ-સંયતઃ સાધુ, પ્રાસુયં-પ્રાસુકં પનક, નીલન, ફૂલન, આદિ  
જીવોથી રહિત નિર્દોષ-નવ કોટીથી વિશુદ્ધ તથા પલકલં-પરકૃતં ગૃહસ્થને ત્યાં  
ચોતાના નિમિત્ત બનાવવામાં આવેલ ન કે સાધુના નિમિત્ત બનાવેલ એવા પિંડ-પિણ્ડ  
ચતુર્વિધ આહારને આહુચ્ચે ન પલિગાહિજ્જ-અત્યુચ્ચે ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ ઘરની  
ઉપરની ભૂમિ ઉપર વાંસ કે લાકડાની નિસરણી ઉપર ચડીને ન લે આ રીતે  
જે આહાર નીચ-નીચે અત્યંત નીચે તળઘર આદિમાં હોય તેને પણ ન લે  
તથા નાસણે નાહુદૂરઓ-નાસન્ને નાતિદૂરતઃ અતી નજીકથી ન લે તેમજ  
અતિ દૂરથી પણ ન લે.

અત્યુચ્ચે આ પદ દ્વારા સૂત્રકાર એવું સૂચિત કરે છે કે, ઉંચા સ્થાને  
ચડવા અગર ઉતરવામાં સ્વ અને પરની વિરાધના થવાની શંકા ન હોય

પ્રિયદર્શિની ટીકા. અ૦ ૧ ગા૦ ૩૪-૩૫ ગ્રાસૈપણાવિધિઃ વાગ્યતના ચં । ૨૩૫

‘નીચે’ ઇતિ તત્રોત્કેપનિક્ષેપનિરીક્ષણાસંભવઃ સ્વપરવિરાધનાસંભવશ્ચેતિ ઘોતયતિ ।

‘આસન્ને’ ઇતિ પશ્ચાત્કર્માદિસંભવં જ્ઞાપયતિ ।

‘અતિદૂરે’ ઇતિ એપણાશુદ્ધ્યસંભવં વોધયતિ ॥ ૩૪ ॥

અથ ગ્રાસૈપણાવિધિમાહ—

મૂલમ્—અપ્પપાણેઽપ્પવીયમ્મિ, પઢિચ્છન્નમ્મિ સંવુડે ।

સમયં સંજેઃ મુંજે, જંયં અપરિસાડિયં ॥૩૫॥

છાયા—અલ્પપ્રાણેઽલ્પવીજે, પ્રતિચ્છન્ને સંવૃતે ।

સમકં સંયતો મુજ્જીત, યતમાનોઽપરિસાદિતમ્ ॥૩૫ ॥

ટીકા—‘અપ્પપાણે’ ઇત્યાદિ—

અલ્પપ્રાણે=અવસ્થિતાગન્તુકદ્વીન્દ્રિયાદિજીવરહિતે, અલ્પવીજે=શાલ્યાદિ-  
વીજરહિતે, ઇદમુપલક્ષણમ્-પૃથ્વીયાદિકેન્દ્રિયજીવરહિતે ઇત્યર્થઃ, પ્રતિચ્છન્ને=સંપા-  
તિમજીવા યથા ન પતન્તિ તથોપરિકૃતપ્રાવરણયુક્તે, સંવૃતે=પાર્શ્વતઃ કટકુડ્યા-

સંભાવના રહતી હૈ । ‘નીચે’ હસ પદ સે ખી યહી વાત ડનકી લક્ષિત  
હોતી હૈ । ‘આસન્ને’ પદ સે પશ્ચાત્કર્માદિક કી સંભાવના રહતી હૈ, તથા  
‘અતિદૂરે’ પદ સે એપણાશુદ્ધિ કી ઠીક તરહ પાલના નહીં હોતી હૈ વહ  
વાત પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ ॥૩૪॥

અવ ગ્રાસૈપણા કા વિધિ કહતે હૈ—‘અપ્પપાણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(અપ્પપાણે અપ્પવીયમ્મિ પઢિચ્છન્નમ્મિ સંવુડે—અલ્પ-  
પ્રાણે અલ્પવીજે પ્રતિચ્છન્ને સંવૃતે) અવસ્થિત એવં આગન્તુક દ્વીન્દ્રિ-  
યાદિક જીવોં સે રહિત તથા શાલી આદિ વીજોં સે રહિત, હસી તરહ  
પૃથ્વી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં સે વર્જિત ઓર સંપાતિમ જીવ ન પડ સકે  
હસ ડ્યાલ સે ડપર સે તથા ચારોં તરફ સે છાયે હુએ એસે ડપાશ્રય

“નીચે” આ પદથી પણ એ જ વાત એને લક્ષિત છે. “આસન્ને” આ પદથી  
પશ્ચાત્કર્માદિકની સંભવના રહે છે. તથા “અતિદૂરે” આ પદથી એપણા શુદ્ધિની  
ઠીક ઠીક પાલના થતી નથી એ વાત પ્રદર્શિત કરવામાં આવી છે. ॥ ૩૪ ॥

હવે ગ્રાસૈપણાની વિધી કહેવામાં આવે છે. અપ્પપાણે—ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—અપ્પપાણે અપ્પવીયમ્મિ પઢિચ્છન્નમ્મિ સંવુડે—અલ્પપ્રાણે અલ્પવીજે  
પ્રતિચ્છન્ને સંવૃતે અવસ્થિત અને આંગતુક દ્વીન્દ્રિયાદિકે ઓવોથી રહિત તથા શાલી  
આદિ બીજોથી રહિત, એજ રીતે પૃથ્વી આદિ એકેન્દ્રિય ઓવોથી વર્જિત અને  
સંપત્તિમય ઓવ ન પડી શકે આ ખ્યાલથી ઉપરથી તથા ચારે બાજુથી

દિના સમાવૃત્તે ઉપાશ્રયાદાવિત્યર્થઃ, સંયતઃ=સાધુઃ, યતમાનઃ-ચપ્પડ ચપ્પડાદિ શબ્દમર્ક્યન્ સન્ અપરિશાદિત=અપરિશાદિતમ્ । સિદ્ધપાતનેન રહિતં યથા સ્યાત્, યથા ઇકોઽપ્યન્નકળઃ કરાન્મુલ્લતો વાઽધઃ પતિતો ન ભવેત્તથેત્યર્થઃ, સમકમ્-સંભોગિ સાધુભિઃ સદ્ ન ત્વેકાવયેવ આહારં શુક્તોત ॥ ૩૫ ॥

સંપ્રતિ વાગ્યતનામાહ—

મૂલમ્—સુકંડેત્તિ સુપંકેત્તિ, સુચ્છિન્ને સુહંડે મંડે ।

સુંનિદ્વિષ સુંલદ્વેત્તિ સાવજ્જં વજ્જેણ મુંળી ॥૩૬॥

છાયા—સુકૃતમિતિ સુપક્વમિતિ, સુચ્છિન્નં સુહૃતં મૃતમ્ ।

સુનિષ્ઠિતં સુલઘ્મમિતિ, સાવઘં વર્જયેન્મુનિઃ ॥ ૩૬ ॥

ટીકા—‘સુકંડેત્તિ’ इत्यादि—

મુનિઃ=સાધુઃ, સાવઘં=સપાપં વચનં વર્જયેત્=ન વદેત્ । કીદૃશં તત્સાવઘમિત્યાહ

આદિ મેં (સંજણ-સંયતઃ) સાધુ (જયં-યતમાનઃ) ચપ્પડ ચપ્પડ આદિ શબ્દ કે તથા ચિના (અપરિસાહિયં-અપરિશાદિતમ્) હાથ સે યા મુંહ સે ઇક ભી સીથ-અન્ન કા કળ-નીચે ન ગીરે, ઇસ રૂપ સે (સમયં-સમકં) સંભોગી સાધુઓં કે સાથ (મુંજે-મુઝીત) આહાર કરે ॥૩૫॥

અવ વચન કી યાતના કહતે હેં—‘સુકંડેત્તિ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(મુંળી સાવજ્જં વજ્જેણ-મુનિઃ સાવઘં (વચનં) વર્જયેત્ મુનિ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ્ ઇસ પ્રકાર કે સાવઘ-સપાપ વચન કે બોલને કા પરિત્યાગ કરે । વે વચન વે હેં—(સુકંડેત્તિ સુપક્વેત્તિ, સુચ્છિન્ને, સુહંડે મંડે સુંનિદ્વિષ, સુંલદ્વેત્તિ, -સુકૃતમિતિ, સુપક્વ-મિતિ સુચ્છિન્નં સુહૃતં મૃતમ્ (સુમૃતમ્) સુનિષ્ઠિતં સુલઘ્મમિતિ, ‘સુકંડે’

છવાયેલ એવા ઉપાશ્રય આદિમાં સંજયે-સંયતઃ સાધુ જયં-યતમાનઃ ચપ્પડ ચપ્પડ આદિ શબ્દ વગર અપરિસાહિયં-અપરિશાદિતમ્ તથા હાથથી તથા મોઢાથી એક પણ સીથ અન્નનો કણ નીચે ન પડે એ રીતે સમયં-સમકં સંભોગી સાધુઓની સાથે મુંજે-મુઝીત આહાર કરે. ॥ ૩૫ ॥

હવે વચનની યતના કહેવામાં આવે છે. સુકંડેત્તિ-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—મુંળીસાવજ્જં વજ્જેણ-મુનિ સાવઘં વચનં વર્જયેત્ મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે આ પ્રકારના સાવઘ-સપાપ વચનને બોલવાનો પરિત્યાગ કરે તે વચન આ છે. સુકંડેત્તિ સુપક્વેત્તિ સુચ્છિન્ને સુહંડે મંડે સુંનિદ્વિષ સુંલદ્વેત્તિ-સુકૃતમિતિ, સુપક્વમિતિ, સુચ્છિન્નં સુહૃતં મૃતમ્ (સુમૃતમ્) સુનિષ્ઠિતમ્ સુલઘ્મમિતિ

—‘સુકડેત્તિ’ ઇત્યાદિ । સુકૃતમિતિ—ઇદં સૂપમિટ્ટાન્નાદિકં હિરુગુજીરકાદિવ્યા-  
ધારૈઃ સુપ્તુ સંસ્કૃતમિતિ, તથા—સુપક્વમિતિ—ઇદં ઘૃતપૂરાદિકં ઘૃતાદિના સુપક્-  
મસ્તીત્યાદિકં, તથા—સુચ્છિન્નમિતિ—ઇદં શાકપત્રાદિ દાત્રાસિપુત્રાદિશ્ચૈઃ સુપ્તુ છેદિત-  
મસ્તીત્યાદિકં, તથા—સુહૃતં=‘કારવેલ્લાદિશાકસ્થં કઢુકત્વં સુપ્તુ હૃતં=નિવારિતં  
તદુત્કાલનેન’ ઇત્યાદિકમ્, તથા—‘મડે’ ઇત્યનેન પૂર્વાપર—સાહચર્યાત્ ‘સુમડે’  
ઇતિ बोध्यते, મૃતં=સુમૃતમ્—પારદાદિધાતુજાતમ્, ઇત્યાદિકં, તથા—‘સુનિટ્ટિય’  
સુનિષ્ઠિતમ્—‘ઇદમન્નાદિકં સમ્યગ્ નિષ્ઠાં રસપ્રકર્ષાત્મિકાં ગ્રાપ્તં, સુપ્તુ રસવત્કૃત-  
મસ્તિ’ ઇત્યાદિકં, તથા—‘સુલટ્ટેત્તિ’ સુલટ્ટં—સુપ્તુ કમનીયમ્ ‘ઇદમન્નાદિકં  
મનોહરમસ્તિ’ ઇત્યાદિકં સાવધં વર્જયેદિતિ સંવન્ધઃ ।

યહ દાલ વગેરહ હીંગ જીરે આદિ કે વઘાર સે વહુત અચ્છી વની હુઈ હૈ,  
તથા ‘સુપકે’ યહ કચોરીં શાજા માલપુઆ ઘેવર આદિ ધી મેં વહુત  
અચ્છી તરહ સે પકાયે ગયે હૈં, તથા—‘સુચ્છિન્ને’ યહ શાક આદિ ચાકૂ  
છરિ આદિ સે વહુત હી ઉત્તમ રીત સે કાટા ગયા હૈ, તથા ‘સુહડે’ યહ  
કરેલા કા શાક દેખો તો સહી કિતના સ્વાદિષ્ટ વના હૈ કિં ઇન કા  
કઢુઆપન સર્વથા હરલિયા હૈ અર્થાત્ ઇન મેં જરા બી કઢુઆપન નહીં  
રહા હૈ, । તથા—‘મડે’ યહ પારદાદિક ધાતુઈ કિતની અચ્છી તરહ સે  
માર કર દવા કે ઉપયોગ લાયક વના દી ગઈ હૈં । તથા—‘સુનિટ્ટિય’ યહ  
આહાર વહુત હી સ્વાદિષ્ટ વનાયા ગયાહૈ । ‘સુલટ્ટે’ યહ ભોજન જવ  
દેખને મેં હી મનોહર લગ રહા હૈ તો ફિર ઇસ કે ખાને મેં કિતના આનંદ  
આવેગા ? ઇત્યાદિ, યે સમસ્ત સાવધ વચન હૈં, ઇસ લિયે સાધુ કો ઇસ  
પ્રકાર કે સાવધ વચન નહીં બોલનાં ચાહિયે ।

આ દાળ વગેરે હિંગ જીરે વગેરેના વધારથી ઘણી સારી બની છે, તથા સુપકે  
આ કચોરી, ખાન્ત, માલપુવા, ઘેવર વગેરે ધીમાં ઘણી સારી રીતે પકવવામાં  
આવેલ છે, તથા સુચ્છિન્ને આ શાક વગેરે આકા છરીથી ઘણી ઉત્તમ રીતે  
સુધારવામાં આવેલ છે, તથા સુહડે આ કારેલાંનું શાક બુચો તો ખરા કેવું  
સ્વાદિષ્ટ બન્યું છે કે એનું કડવાપણું પણ દૂર થયેલ છે. અર્થાત્ એમાં જરા પણ  
કડવાપણું રહેલ નથી. મડે આ પારદાદિક ધાતુઓ કેવી સારી રીતે મારીને  
દવાના ઉપયોગ લાયક બનાવવામાં આવી છે. તથા સુનિટ્ટિય આ આહાર  
ઘણો જ સ્વાદિષ્ટ બનાવવામાં આવેલ છે. સુલટ્ટે આ ભોજન જ્યારે ભેવાથી જ  
મનોહર લાગે છે તો પછી એને ખાવામાં કેટલો આનંદ આવશે ? ઇત્યાદિ.  
આ સઘળાં સાવધ વચન છે. સાધુએ આ પ્રકારનાં વચન ન બોલવા ભેદ્યે.

યદ્વા-સુકૃતં-‘સુપ્તુકૃતં યદનેન શત્રું પ્રતિ પ્રતિક્રિયા કૃતા’ ઇતિ, સુપક્ષ્મ્, ઇદમપૂપાદિકં ઘૃતાઘતિશયેન પાચિત્તમિતિ, સુચ્છિન્નોડ્યં વૃક્ષો વટપિપ્પલાદિરિતિ, સુહૃતં-કૃપણસ્ય ધનં તસ્કરૈરિતિ, મૃતઃ-મૃપ્તુ મૃતોડ્યં દુષ્ટ ઇતિ । સુનિષ્ઠિતઃ-‘સુપ્તુ નષ્ટોડ્યં પ્રાસાદઃ, કૃપો વા’ ઇતિ, યદ્વા-‘સુપ્તુ નિર્મિતોડ્યં પ્રાસાદઃ, કૃપો વા’ ઇતિ, યદ્વા-‘સુપ્તુ નષ્ટમસ્યદુષ્ટસ્ય દ્રવિણાદિક’ મિતિ । સુલટઃ-‘સુપુષ્ટોડ્યં ગજસ્તુર-જ્ઞમો વા’ ઇતિ, યદ્વા-‘સુલટ્ટા રુચિરાવયવેયં રાજકન્યે’-તિ સાવધં વર્જયેત્ ।

અથવા-હસ પ્રકાર સાધુ કો કમી નહીં કરના ચાહિયે, કિ જો -‘સુકડે’-હસને શત્રુ કો માર ભગા દિયા હૈ, યહ વહુત અચ્છા કામ કિયા । ‘સુપક્ષે’ યે અપૂપાદિક અધિક ઘૃત મેં સૂવ અચ્છે પકાયે ગયે હૈં હસ લિયે સુપક્ષ હૈં સ્વાને મેં વહુત અચ્છે લગતે હૈં । ‘સુચ્છિન્ને’ હસ વૃક્ષ કો આસાની સે સૂવ અચ્છા કાટા હૈ । ‘સુહૃડે’ અચ્છા હુઆ જો હસ કંજૂસ કા દ્રવ્ય ચોરોં ને ચુરા લિયા । ‘મૃડે’ યહ વડા દુષ્ટ થા મરા સો અચ્છા હી હુવા । ‘સુનિષ્ઠિત’ યહ મકાન અથવા કુંઆ ગિર ગયા વહ અચ્છા હુઆ, અથવા-યહ મકાન યા કુંઆ વહુત હી સુન્દર બનાયા ગયા હૈ, યા એસા કહના કિ ભલા હુવા હસ દુષ્ટ કી સંપત્તિ જો લૂંટ ગઈ । ‘સુલટ્ટે’ યહ હાથી અથવા ઘોડા વહુત અચ્છા પુષ્ટ હુઆ હૈ । યહ રાજકન્યા વડી સુન્દર હૈ । યે સવ વચન સાવધ હૈં, અતઃ સાધુ કે કહને યોગ્ય નહીં હૈં ।

અથવા—આ પ્રકારનાં વચનો પણ સાધુએ કદી ઉચ્ચારવાં ન જોઈએ. કે જે સુકડે આવે શત્રુને મારી ભગાડી દીધો છે, એ કામ ઘણું સારું કયું. સુપક્ષે આ મિઠાઈઓ, અપૂપ-માલપુડા વગેરે સારા ધીમાં ઘણી જ સારીરીતે પકાવવામાં આવેલ છે તેથી એ સુપક્ષ્વ છે, ખાવામાં બહુ લીજ્જત આવે છે. સુચ્છિન્ને આ વૃક્ષને ઓછી મહેનતે સારીરીતે કાપવામાં આવ્યું છે. સુહૃડે સારું થયું કે, આ કંજુસનું ધન ચોર ઉપાડી ગયા મહે એ ઘણો દુષ્ટ હતો. મર્યો તે સારું થયું, સુનિષ્ઠિત આ મકાન અગર કુવો પાડી અથવા ભૂરી નાખવામાં આવતાં સારું થયું અથવા આ મકાન અગર કુવો ખૂબ સુંદર બનાવવામાં આવેલ છે. તથા આ દુષ્ટની સંપત્તિ લૂંટાઈ ગઈ તે સારું થયું સુલટ્ટે આ હાથી અથવા ઘોડો ખૂબ સારીરીતે પુષ્ટ બનેલ છે, આ રાજકન્યા ખૂબ સુંદર છે, આ બધાં વચનો સાવધ વચન છે આથી તે સાધુએ બોલવા યોગ્ય નથી.



‘સુકૃતમ્’ इत्यनेन सूपनिष्ठानादिसंपादने लवणलक्षणपृथिवीकायादिजल-  
तेजोवायुवनस्पतिद्वीन्द्रियादित्रसजीवपर्यन्त हिंसानुमोदनं सूचितम् । एवं सुप-  
कमित्यत्रापि हिंसानुमोदनं बोध्यम् ।

सुच्छिन्नमित्यनेन-वनस्पतिद्वीन्द्रियादिहिंसानुमोदनं सूचितम् । सुहृतमित्य-  
नेन कारवेष्टादिपक्षे वनस्पत्यादिहिंसानुमोदनम्, धनहरणपक्षेऽदत्तादानपरपीडोत्पा-  
दनाद्यनुमोदनं सूचितम् । मृतमित्यनेन पारदादिधातुपक्षे पृथिवीकायादि हिंसानु-

‘સુકૃતમ્’ इस पद से सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि जब साधु  
ऐसा कहता है कि यह दाल आदि बहुत ही अच्छी बनी हैं तब उसे  
लवणरूप पृथिवीकाय तथा जलकाय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पति-  
काय एवं द्विन्द्रियादिक त्रस काय, इन सबकी हिंसा की अनुमोदना  
करने का दोष लगता है । इसी प्रकार सुपक कहने में भी यही दोष  
लगते हैं ।

‘सुच्छिन्नम्’ इस पद से सूत्रकार यह बात सूचित करते हैं कि  
यदि मुनि ‘ये शाकपत्रादि चाकू आदि से अच्छी तरह काटे गये हैं’  
ऐसा कहता है तो उसे वनस्पति काय की एवं द्वीन्द्रियादिक त्रसकाय  
की हिंसा की अनुमोदना करने का दोष लगता है । ‘सुहृतम्’ यदि  
यही बात धन हरण आदि के पक्ष में जब बोलने में आती है तो उस  
समय उसे अदत्तादान की अनुमोदना करने का तथा पर को पीड़ा  
उत्पन्न कर ने आदि की अनुमोदना का दोष लगता है । ‘मृतम्’ इस

“સુકૃતમ્” આ પદથી સૂત્રકાર એ પ્રકટ કરે છે કે, સાધુ જ્યારે એમ  
કહે છે કે, આ દાળ વગેરે ખૂબ સ્વાદિષ્ટ બનેલ છે. ત્યારે તેને લવણ રૂપી  
પૃથ્વીકાય, જળકાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, વનસ્પતિકાય અને દ્વિન્દ્રિયાદિક  
ત્રસકાય આ બધાની હિંસામાં અનુમોદના કરવાનો દોષ લાગે છે. આ રીતે  
સુપકમ્ કહેવાથી પણ આ દોષ લાગે છે.

સુનિચ્છન્નમ્ આ પદથી સૂત્રકાર આ વાત સૂચિત કરે છે કે, મુનિ જો શાક  
પત્રાદિક ચાકુ વગેરેથી સરસ રીતે કાપવામાં આવેલ છે. એવું કહે તો તેને  
વનસ્પતિ કાય અને દ્વિન્દ્રિયાદિક ત્રસકાયની હિંસા કરવામાં અનુ-  
મોદન કરવાનો દોષ લાગે છે. સુહૃતમ્ આવી જ રીતે ધન હરણ વગેરેની  
બાબતમાં બોલવામાં આવે ત્યારે તેને અદત્તા દાનની અનુમોદન કરવાનો તથા  
બીજાને પીડા ઉત્પન્ન કરવી વગેરેની અનુમોદનનો દોષ લાગે છે મૃતમ્ એ પદથી

મોદનં સૂચિતમ્, દુષ્ટપક્ષે તુ પ્રાણઘાતાનુમોદનં વોધ્યમ્ । સુનિષ્ઠિતમિત્યનેન પટ્કાય  
હિંસાનુમોદનં સૂચિતમ્ । મૂલપ્તમિત્યત્રાપિ તથૈવ વોધ્યમ્ ।

‘સાવચં વર્જયેત્’ इत्यनेन उक्तमेव भाषणं निरवद्यं चेत् तत्र न प्रतिषेध  
इति ध्वन्यते, तथा च पक्षद्वयमनया गाथया गम्यते । तत्र सावद्यपक्षो व्याख्यातः,

પદ સે સૂત્રકાર કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ જય સાધુ ‘સુમૃતં’ હસ પદ કા  
ખુશ હોકર પ્રયોગ કરતા હૈ ઓર વહ પ્રયોગ યદિ ઉસકા પારદાદિક  
ઘાતુઓં કે મારણ કરને કે પક્ષ મેં હોતા હૈ તો ઉસ સમય ઉસે પૃથિવી  
કાયાદિક એકેન્દ્રિય જીવ કી હિંસા કરને કી અનુમોદના કા સમર્થક  
માના જાતા હૈ । જય પહી પ્રયોગ સાધુ કી ઓર સે કિસી દુષ્ટ કે પક્ષ  
મેં કિયા ગયા હોતા હૈ તો વહ પ્રાણઘાત કા અનુમોદક માના જાતા હૈ ।  
‘સુનિષ્ઠિતમ્’ હસ પદ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હૈં કિ જય સાધુ  
‘યહ અન્નાદિક સામગ્રી સરસ તૈયાર હુઈ હૈ’ હસ પ્રકાર કા પ્રયોગ કરતા  
હૈ તો ઉસે અન્નાદિક સામગ્રી કી તૈયારી મેં જો પટ્કાય કે જીવોં કી  
વિરાધના હુઈ હૈ ઉસકી અનુમોદના કરને કા દોષ લગતા હૈ । હસી  
તરહ ‘સુલ્પટમ્’ હસ પદ કે ઉચ્ચારણ કરને મેં બી હસી દોષ કા ભાગી  
હોના પડતા હૈ ।

‘સાવચં વર્જયેત્’ હસ પ્રકાર કે કથન કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ  
યદિ યહ સુકૃત આદિ ભાષણ નિરવચ્ય હોતા હૈ તો ઉસ સમય સાધુ કો

સૂત્રકારનો એ અભિપ્રાય છે કે, જ્યારે સાધુ “ સુમૃતં ” આ પદનો ખુશ થઈ  
પ્રયોગ કરે છે અને તે પ્રયોગ પારદાદિક ધાતુઓનું મારણ કરવાના પક્ષમાં  
હોય છે તો એ સમયે એને પૃથ્વીકાયાદિક એકેન્દ્રિય જીવની હિંસા કરવાની  
અનુમોદનાના સમર્થક માનવામાં આવે છે. જ્યારે એજ પ્રયોગ સાધુ તરફથી  
કોઈ દુષ્ટના પક્ષમાં કરવામાં આવ્યો હોય તો તે પ્રાણઘાતનો અનુમોદક માન-  
વામાં આવે છે.

સુનિષ્ઠિતમ્ આ પદથી સૂત્રકાર એ સૂચિત કરે છે કે, જ્યારે સાધુ “ આ  
અન્નાદિ સામગ્રી સરસ તૈયાર કરવામાં આવી છે ” આ પ્રકારનો પ્રયોગ કરે  
છે તો તેને અન્નાદિક સામગ્રીની તૈયારીમાં જે પટ્કાય જીવોની વિરાધના  
થઈ છે એની અનુમોદના કરવાનો દોષ લાગે છે. આ રીતે “ સુલ્પટમ્ ” એ  
અંગેના પદનું ઉચ્ચારણ કરવામાં પણ એ દોષના ભાગી બનવું પડે છે.

“ સાવચં વર્જયેત્ ” આ પ્રકારના કથન અંગે એ અભિપ્રાય છે કે, જે  
એ સુકૃત આદિ ભાષણ નિરવચ્ય હોય છે તો એ સમયે સાધુને કોઈ દોષ

નિરવધપક્ષો વ્યાખ્યાયતે—યથા—‘ સુકૃતમિતિ ’ સુષ્ટુ કૃતમનેન વૈયાવૃત્યમભયદાનં  
સુપાત્રદાનાદિકં વેતિ, ‘ સુપક્વમિતિ ’ સુષ્ટુ પક્વમસ્ય બ્રહ્મચર્યાદિકમિતિ,  
‘ સુચ્છિન્નં ’ સુષ્ટુ છિન્નમનેન સ્નેહવન્ધનમિતિ, ‘ સુહતં ’ સુષ્ટુ હતં=સ્વાયત્તીકૃતં  
જ્ઞાનાદિરત્નત્રયમિતિ, ‘ સુનિષ્ઠિતમ્ ’ સુષ્ટુ નષ્ટમસ્યાપ્રમત્તસાધોઃ કર્મજાલમ્,  
સુમૃતઃ=સુષ્ટુ મૃતોયં પણ્ડિતમરણેન ઇતિ । સુલપ્તા=સુષ્ટુ મનોજ્ઞા ક્રિયાઽસ્ય સાધોઃ,  
યદ્વા—સુલપ્તા=દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ વદેત્ ॥ ૩૬ ॥

કોઈ દોષ નહીં લગતા, ઇસ પ્રકાર યહ સાવધ પક્ષ કા વર્ણન હુવા હૈ ।  
અવ નિરવધ પક્ષકા અર્થ કહતે હૈ—નિરવધ પક્ષ મેં જવ સાધુ ‘સુકૃતં’  
‘ઇસ ને વૈયાવૃત્ય; અભયદાન એવં સુપાત્ર દાન આદિ સત્કર્મ જો કિયે  
હૈં વે વહુત અચ્છે કિયે હૈં’ ઇસ પ્રકાર વોલ ને મેં કોઈ દોષ નહીં હૈ ।  
ઇસી પ્રકાર આગે સવ જગહ સમક્ષલેના ચાહિયે,—જૈસે ‘સુષ્ટુ પક્વમસ્ય  
બ્રહ્મચર્યાદિકં’ ઇસ કે બ્રહ્મચર્ય આદિ સદ્ગુણ અચ્છી તરહ સે પરિપક્વ  
હો ચુકે હૈં, ઇતિ ‘સુષ્ટુ છિન્નં અનેન સ્નેહવન્ધનમ્’ ઇતિ, ઇસ ને સ્નેહ  
કા વંધન અચ્છી તરહ સે કાટ દિયા હૈ, ‘સુષ્ટુ હતં સ્વાયત્તીકૃતં અનેન  
જ્ઞાનાદિરત્નત્રયં’ ઇતિ, ઇસ ને જ્ઞાનાદિક રત્નત્રય કો અચ્છી તરહ સે  
સ્વાધીન કર લિયા હૈ, ‘સુષ્ટુ નષ્ટમસ્યાઽપ્રમત્તસાધોઃ કર્મજાલમ્’  
ઇતિ, ઇસ અપ્રમત્ત સાધુ કા કર્મજાલ અચ્છી તરહ સે નષ્ટ હો ચુકા હૈ;  
‘સુષ્ટુ મૃતોઽયં પણ્ડિતમરણેન’ ઇતિ, પંડિત મરણ સે ઇસકી મૃત્યુ હુઈ  
યહ વહુત હી સુંદર વાત હુઈ, ‘સુષ્ટુ મનોજ્ઞા અસ્ય સાધોઃ ક્રિયા’ ઇતિ,

લાગતો નથી. આ પ્રકારે આ સાવધ પક્ષનું વર્ણન થયું હવે નિરવધ પક્ષનું  
વર્ણન કરવામાં આવે છે.—

નિરવધ પક્ષમાં ત્યારે સાધુ “સુકૃતં” આણે વૈયાવૃત્ય, અભયદાન, અને  
સુપાત્રદાન આદિ જે સત્કર્મ કર્યાં છે તે ઘણાં સારાં કર્યાં છે ” આ પ્રકારે  
બોલવામાં કોઈ દોષ નથી. આ પ્રકારે આગળ દરેક જગ્યાએ સમજી લેવું  
જોઈએ. જેમ—“સુષ્ટુ પક્વમસ્ય બ્રહ્મચર્યાદિકં” એનો બ્રહ્મચર્ય આદિ સદ્ગુણ  
સારી રીતે પરિપક્વ થયેલ છે, ઇતિ, “સુષ્ટુ છિન્નં અનેન સ્નેહવન્ધનમ્” ઇતિ,  
એણે સ્નેહનું બંધન સારી રીતે કાપી નાખેલ છે “સ્વાયત્તીકૃતં અનેન જ્ઞાનાદિરત્નત્રયં”  
ઇતિ, એણે જ્ઞાનાદિક રત્નત્રયને સારી રીતે સ્વાધીન કરી લીધેલ છે. ‘સુષ્ટુ નષ્ટમસ્યા-  
પ્રમત્ત સાધોઃ કર્મજાલમ્” આ અપ્રમત્ત સાધુની કર્મજાલ સારી રીતે નષ્ટ થઈ  
ચુકેલ છે, “સુષ્ટુ મૃતોઽયં પણ્ડિતમરણેન” ઇતિ, પંડિત મરણથી એનું મૃત્યુ  
થયું એ ઘણું જ સારું થયું, “સુષ્ટુ મનોજ્ઞા અસ્ય સાધોઃ ક્રિયા” ઇતિ યદ્વા—

વિનીતાવિનીતયોરુપદેશદાને યત્ ફલં ગુરોર્ભવતિ તદાહ—

મૂલમ્—રમણે પંડિણે સાંસં, હ્યં ભંદં વે વાહંણ ।

વાલં સમ્મેંદ્ સાંસંતો, ગલિયેસ્સં વે વાહંણ ॥૩૭॥

છાયા—રમતે પંડિતાન્ શાસ્ત્ર, હ્યં ભદ્રમિવ વાહકઃ ।

વાલં શ્રામ્યતિ શાસ્ત્ર, ગલિતાશ્ચમિવ વાહકઃ ॥ ૩૭ ॥

ટીકા—‘રમણ’ ઇત્યાદિ—

અત્ર ગુરુરિતિ કર્તૃપદં પ્રકરણવશાદ્વિજ્ઞેયમ્ । પંડિતાન્=વિનીતશિષ્યાન્, શાસ્ત્ર=શિક્ષયન્ ગુરુઃ, રમતે=સફલપ્રયત્નતયા પ્રસન્નો ભવતીત્યર્થઃ । કઙ્ક ? ભદ્રં=જાત્યં વિનીતં, હ્યમ્=અશ્વં વાહયન્, વાહકઃ=અશ્વવાહ ઇવ, યથા જાત્યાશ્વં વાહયન્નશ્વવાહઃ

યદ્વા- ‘સુલઘ્ઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ’ ઇસી સાધુની ક્રિયા મનોજ્ઞ હૈ અથવા યહ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય હૈ ।

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોં કો પ્રયોગ યદિ સાધુ સાંસારિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રક્ષ કર કરતા હૈ તો વહ દોષ કા ભાગી હોતા હૈ ઓર ઇન્હોં શબ્દોં કા પ્રયોગ યદિ વહ ધાર્મિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રક્ષકર કરતા હૈ તો ઉસકો કોઈ દોષ નહીં લગતા હૈ ॥૩૬॥

વિનીત ઓર અવિનીત શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને મેં ગુરુ મહારાજ કો જો ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસે ઇસ ગાથાદ્વારા સૂત્રકાર કહતે હેં—‘રમણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ (પંડિણ-પંડિતાન્) વિનીત શિષ્યોં કો (સાંસં-શાસ્ત્ર) શિક્ષા દેતે હુણ (રમણ-રમતે) સફલ પ્રયત્નવાળા હોને સે પ્રસન્ન હોતે હેં । જૈસે—(ભંદં હ્યં વ વાહંણ-ભદ્રં હ્યં ઇવ વાહકઃ )

સુલઘ્ઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ” આ સાધુની ક્રિયા મનોજ્ઞ છે. અથવા આ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોંનો પ્રયોગ જો સાધુ સંસારીક કાર્યોંને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તો તે દોષનો ભાગી બને છે અને એ જ શબ્દોંનો પ્રયોગ જો તે ધાર્મિક કાર્યોંને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તો તેને કોઈ દોષ લાગતો નથી. ॥૩૬॥

વિનીત અને અવિનીત શિષ્યને ઉપદેશ દેવામાં ગુરુ મહારાજને જે ફળ પ્રાપ્ત થાય છે એને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર કહે છે.—રમણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ પંડિણ-પંડિતાન્ વિનીત શિષ્યોંને સાંસં-શાસ્ત્ર શિક્ષા આપતાં રમણ-રમતે સફળ પ્રયત્ન વાળા હોવાથી તેના ઉપર પ્રસન્ન થ

પ્રિયદર્શિની ટીકા. અ૦ ૧ ગા. ૩૭-૩૮ વિનીતોપદેશે ફલમ્, કુશિષ્યદુર્ભાવના ચ ૨૪૩

પ્રસીદતિ તદ્વદિત્યર્થઃ । વાલં=વિનયરહિતં શિષ્યં, શાસત્=શિક્ષયન્ ગુરુઃ શ્રામ્યતિ=સ્વિચ્છતે, ક ઇવ ? ગલિતાશ્વં=દુર્વિનીતમશ્વં વહુશઃ કશા તાડનેઽપિ વિપરીતગત્યા પથાદ્ભાગગમનાદિકારિણમશ્વં વાહયન્, વાહક ઇવ । યથા દુર્વિનીતમશ્વં વાહયન્ વાહકઃ સ્વલુ નિષ્ફલપ્રયત્નતયા સ્વેદં પ્રાપ્નોતિ તદ્વદિત્યર્થઃ ॥ ૩૭ ॥

વિનીત ઘોડે કો ઇચ્છિત માર્ગ પર ચલાને રૂપ શિક્ષા સે ઘુડસવાર પ્રસન્ન હોતા હૈ । (વાલં-વાલં) વિનયરહિતશિષ્યકો (સાસંતો-શાસત્) શિક્ષા દેતે હુએ ગુરુ મહારાજ (સમ્મદ-શ્રામ્યતિ) સ્વેદસ્વિન્ન હોતે હૈ । જૈસે- (ગલિયસ્સં વ વાહ-ગલિતાશ્વં ઇવ વાહકઃ) દુર્વિનીત અશ્વકો વાર ૨ કશા સે તાડિત કરને પર સવાર દુઃસ્વિત હોતા હૈ, ક્યોં કિ દુર્વિનીત અશ્વ કો જ્યોં ૨ ચાલુક લગાતે હૈ ત્યોં ૨ વહ પીછે ડલડા હડતા હૈ । ઇસસે સવાર કા પ્રયત્ન નિષ્ફલ હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ-વિનીત શિષ્ય કો દી ગઈ શિક્ષા સફલતા કા સાધક હોને સે ગુરુ કી પ્રસન્નતા કા કારણ હોતી હૈ । અવિનીત શિષ્ય કો દી ગઈ વહી શિક્ષા અસફલ હોતી હૈ । અતઃ ડસ સે ડલડા ગુરુ મહારાજ કો સ્વેદસ્વિન્ન હી હોના પડતા હૈ । જૈસે-વિનીત અશ્વ ઇચ્છિત માર્ગ પર ચલ કર અપને માલિક કો પ્રસન્ન કરતા હૈ ઓર અવિનીત અશ્વ કશાદ્વારા તાડિત હોને પર બી વિપરીત હી માર્ગ પર ચલતા હૈ, ઇસ સે સવાર કો ડલડા કષ્ટ ડઠાના પડતા હૈ ॥ ૩૭ ॥

જેમ મદં હયં વવાહ-મદંહયં ઇવ વાહકઃ-વિનીત ઘોડાને ઇચ્છિત માર્ગ ઉપર ચલાવવા રૂપ શિક્ષાથી ઘોડેસ્વાર પ્રસન્ન થાય છે. વાલં-વાલં વિનય રહિત શિષ્યને સાસંતો-શાસત્ શિક્ષા આપતાં ગુરુ મહારાજ સમ્મદ-શ્રામ્યતિ ખેદ ખિન્ન બને છે, જેમ ગલિયસ્સેવ વાહ-ગલિતાશ્વં ઇવ વાહકઃ અવિનીત ઘોડાને ઘડી ઘડી આખખાથી મારવાની ખાબતમાં સ્વાસ્થ્ય મન દુઃખીત બને છે. કેમ કે, અવિનીત ઘોડાને જેમ જેમ આખુલ મારવામાં આવે છે તેમ તેમ તે પાછો પડે છે આથી સવારનો પ્રયત્ન નિષ્ફળ બને છે.

ભાવાર્થ:-વિનીત શિષ્ય ને આપવામાં આવેલ શિક્ષા સફળતાની સાધક બનવાથી ગુરુ મહારાજની પ્રસન્નતાનું કારણ બને છે, અવિનીત શિષ્યને આપવામાં આવતી એ જ શિક્ષા અસફળ બને છે, આથી ગુરુ મહારાજે ખેદ ખિન્ન બનવું પડે છે. જેમ-વિનીત ઘોડા ઇચ્છિત માર્ગે ચાલી પોતાના માલીકને પ્રસન્ન કરે છે, અને અવિનીત ઘોડા આખુલથી પીટવામાં આવવા છતાં પણ વિપરીત માર્ગ પર જ ચાલે છે જેનાથી સવારને ડલડાનું કષ્ટ જ ભોગવવું પડે છે. ॥૩૭॥



વિનીતાવિનીતયોરુપદેશદાને યત્ ફલં ગુરોર્ભવતિ તદાહ—

મૂલમ્—રમણે પંડિણે સાંસં, હંયં ભદ્રં વે વાહણે ।

વાલં સમ્મેદં સાંસંતો, ગલિયંસ્સં વે વાહણે ॥૩૭॥

છાયા—રમતે પંડિતાન્ શાસ્ત્ર, હયં ભદ્રમિવ વાહકઃ ।

વાલં શ્રામ્યતિ શાસ્ત્ર, ગલિતાશ્વમિવ વાહકઃ ॥ ૩૭ ॥

ટીકા—‘રમણ’ ઇત્યાદિ—

અત્ર ગુરુરિતિ કર્તૃપદં પ્રકરણવશાદ્વિજ્ઞેયમ્ । પંડિતાન્=વિનીતશિષ્યાન્, શાસ્ત્ર=શિક્ષયન્ ગુરુઃ, રમતે=સફલપ્રયત્નતયા પ્રસન્નો ભવતીત્યર્થઃ । કઙ્ક ? ભદ્રં=જાત્યં વિનીતં, હયમ્=અશ્વં વાહયન્, વાહકઃ=અશ્વવાહ ઇવ, યથા જાત્યાશ્વં વાહયન્નશ્વવાહઃ

યદ્વા- ‘સુલષ્ઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ’ ઇતી સાધુ કી ક્રિયા મનોજ્ઞ હૈ અથવા યહ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય હૈ ।

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોં કો પ્રયોગ યદિ સાધુ સાંસારિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રક્ષ કર કરતા હૈ તો વહ દોષ કા ભાગી હોતા હૈ ઓર ઇન્હીં શબ્દોં કા પ્રયોગ યદિ વહ ધાર્મિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રક્ષકર કરતા હૈ તો ઉસકો કોઈ દોષ નહીં લગતા હૈ ॥૩૬॥

વિનીત ઓર અવિનીત શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને મેં ગુરુ મહારાજ કો જો ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસે ઇસ ગાથાદ્વારા સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘રમણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ (પંડિણ-પંડિતાન્) વિનીત શિષ્યોં કો (સાંસં-શાસત્) શિક્ષા દેતે હુણ (રમણ-રમતે) સફલ પ્રયત્નવાલા હોને સે પ્રસન્ન હોતે હૈ । જૈસે—(ભદ્રં હયં વ વાહણ-ભદ્રં હયં ઇવ વાહકઃ )

સુલષ્ઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ” આ સાધુની ક્રિયા મનોજ્ઞ છે. અથવા આ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોંનો પ્રયોગ જો સાધુ સંસારીક કાર્યોંને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તો તે દોષનો ભાગી બને છે અને જો શબ્દોંનો પ્રયોગ જો તે ધાર્મિક કાર્યોંને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તો તેને કોઈ દોષ લાગતો નથી. ॥૩૬॥

વિનીત અને અવિનીત શિષ્યને ઉપદેશ દેવામાં ગુરુ મહારાજને જે ફળ પ્રાપ્ત થાય છે એને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર કહે છે.—રમણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ પંડિણ-પંડિતાન્ વિનીત શિષ્યોંને સાંસં-શાસત્ શિક્ષા આપતાં રમણ-રમતે સફળ પ્રયત્ન વાળા હોવાથી તેના ઉપર પ્રસન્ન થા છે.

અયં ભાવઃ—દુર્વિનીતશિષ્યઃ સ્વલ્લેવં ચિન્તયતિ-અયં ગુરુર્માં કેવલં સ્વડ્ડુકાદિભિઃ પીડયતિ ન તુ કિમપિ મમહિતં ચિન્તયતીતિ ॥ ૩૮ ॥

સચિનયશિષ્યસ્ય ભાવનામાહ—

મૂલમ્—પુત્તો મે' ભાઈ ણાંઈત્તિ, સાહૂ કહ્ણાંણ મન્નઈ ।

પાવંદિટ્ટી ઁ અપ્પાંણં, સાંસં દાંસેત્તિ' મન્નઈ ॥ ૩૯ ॥

છાયા—પુત્રો મે ભ્રાતા જ્ઞાતિરિત્તિ, સાધુઃ કલ્યાણં મન્યતે ।

પાપદટ્ટિસ્તુ આત્માનં, શાસ્યમાનં દાસ इति મન્યતે ॥ ૩૯ ॥

ટીકા—‘ પુત્તો મે ’ इत्यादि—

અયં શિષ્યઃ, મે=મમ, પુત્રતુલ્ય इति, ભ્રાતા=ભ્રાતૃતુલ્ય इति, જ્ઞાતિઃ=જ્ઞાતિ-

ભાવાર્થ—ઉભયલોકસંબંધી હિતકારક ઉપદેશ દેને પર ખી અવિનીત શિષ્યકી દષ્ટિમેં વહ ગુરુ મહારાજ કે શિક્ષાવચન હિતકારક પ્રતીત ન હોકર કેવલ કષ્ટપ્રદ ચપેટા આદિરૂપ હી પ્રતીત હોતે હેં । વહ એસા માનતા હૈ કિ યે મુજે ઇસ વહાને કેવલ પીડિત હી કરના ચાહતે હેં । કયોં કિ ઇન્હોં ને કખી ખી મેરે હિત કા વિચાર હી નહીં કિયા હૈ તો ફિર યે મેરે હિત કી બુદ્ધિ સે અચ્છી વાત કહેંગે ખી કૈસે ॥ ૩૮ ॥

વિનીત શિષ્ય કી ભાવના કૈસી હોતી હૈ ! ઇસકો ઇસ ગાથાદ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હેં—‘ પુત્તો મે ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—જવ ગુરુમહારાજ શિષ્યોં કો શિક્ષા દેતે હેં તવ ડનમેં જો ( સાહુ-સાધુઃ ) વિનીત શિષ્ય હોતા હૈ વહ ઇસ પ્રકાર વિચાર કરતા

ભાવાર્થઃ—ઉભયલોક સંબંધી હિતકારક ઉપદેશ દેવા છતાં પણ અવિનીત શિષ્યની દષ્ટીમાં ગુરુ મહારાજનું તે શિક્ષા વચન હિતકારક ન ગણતાં કેવળ દુઃખદાયક તેમજ મુંજવનાર આદિરૂપ જ લાગે છે તે એવું માને છે કે, આ બહાના તળે તેઓ કેવળ પીડવાજ માગે છે. કેમકે, તેમણે કદી પણ મારા હિતનો વિચાર કર્યો નથી. તો તેઓ મારા હિતની ભાવનાથી સારી વાત કેવી રીતે કહે. ॥ ૩૮ ॥

વિનીત શિષ્યની ભાવના કેવી હોય છે-એને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. પુત્તો મે इत्यादि.

અન્વયાર્થ—ત્યારે ગુરુ મહારાજ શિષ્યને શિક્ષા આપે છે, ત્યારે એનામાં જે સાહુ-સાધુઃ વિનીત શિષ્ય હોય છે તે એ પ્રકારનો વિચાર કરે છે કે, આ ગુરુ

ગુરોઃ શિક્ષાવચને કુશિષ્યસ્ય દુર્ભાવનામાહ—

મૂલમ્—‘સ્વડ્ઙુયા મે’ ચવેડા મે, અક્રોસા યં વહા યં મે’ ।

કલ્યાણમણુસાસંતો, પાવદિટ્ટિત્તિ મન્નંઈ ॥ ૩૮ ॥

છાયા—સ્વડ્ઙુકા મે ચપેટા મે, આક્રોશાશ્ચ વધાશ્ચ મે ।

કલ્યાણમણુસાસંતુ, પાપદટ્ટિરિતિ મન્યતે ॥ ૩૮ ॥

ટીકા—‘સ્વડ્ઙુયા’ इत्यादि—

કલ્યાણં=લોકદ્વયહિતમ્, અનુશાસત્ = શિક્ષયન્ ગુરુઃ કુશિષ્યેણ પાપદટ્ટિઃ= પાપા=પાપમયી દટ્ટિર્યસ્ય સ તથા, इति મન્યતે—અયં ગુરુર્મમ હિંસકોઽસ્તીતિ મન્યતે । યતોઽનેન—મે=મમ, સ્વડ્ઙુકાઃ=દક્ષરા આઘાતા દીયન્તેઽનેનેતિ શેષઃ । તથા મે=મમ, ચપેટાઃ=કરતલાઘાતા દીયન્તે । ચ—પુનઃ, આક્રોશાઃ=પરુષભાષણાનિ, ચ—પુનઃ, મે=મમ, વધાઃ=દષ્ટાદિઘાતાઃ ક્રિયન્તે ।

જો કુશિષ્ય હોતા હે ઉસે જવ ગુરુ મહારાજ શિક્ષા દેતે હે તથ ઉસકી વયા ભાવના હોતી હે યહ વાત ઇસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કી જાતી હે—  
‘સ્વડ્ઙુયા’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—અવિનીત શિષ્ય ( કલ્યાણમણુસાસંતો-કલ્યાણં અનુશાસત્ ) ઉભયલોકસંબંધી હિત શિક્ષા દેને વાલે ગુરુ મહારાજ કો ( પાવદિટ્ટી-પાપદટ્ટિઃ ) યહ પાપદટ્ટિ વાલે મેરે ઘાતક હે ( ત્તિ-इति ) ઇસ પ્રકાર સમજતા હે । કયોં કિ વહ ગુરુ મહારાજ કી શિક્ષા સમ્બન્ધી વાતોં કો ઇસ પ્રકાર માનતા હે કિ ( સ્વડ્ઙુયા મે ચવેડા મે અક્રોસા ય વહા ય મે-સ્વડ્ઙુકા મે ચપેટા મે આક્રોશાશ્ચ વધાશ્ચ મે ) યે મેરે લિયે આઘાતસ્વરૂપ હે થપ્પડસ્વરૂપ હે, પરુષભાષણ-ગાલી-સ્વરૂપ હે, પ્રહારસ્વરૂપ હે ।

જે કુશિષ્ય હોય છે એને ગુરુ મહારાજ શિક્ષા આપે છે, ત્યારે તેની કેવી ભાવના હોય છે તે વાત આ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવે છે. સ્વડ્ઙુયાંઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—અવિનીત શિષ્ય કલ્યાણમણુસાસંતો-કલ્યાણં અનુશાસત્ ઉભય લોક સંબંધી હિતશિક્ષા દેવાવાળા ગુરુ મહારાજને પાવદિટ્ટી-પાપદટ્ટિઃ એ પાપ દટ્ટીવાળા મારા ઘાતક છે ત્તિ-इति એ પ્રકારના સમજે છે. કેમ કે, ગુરુ મહારાજની શિક્ષા સંબંધી વાતોને એ પ્રકારે માને છે કે, સ્વડ્ઙુયા મે ચવેડા મે અક્રોસા ય વહા ય મે-સ્વડ્ઙુકા મે ચપેટા મે આક્રોશાશ્ચ વધાશ્ચ મે આ મારા માટે આઘાત સ્વરૂપ છે, થપ્પડ સ્વરૂપ છે, પ્રહાર સ્વરૂપ છે.

અથ વિનયસર્વસ્વમુપદિશતિ—

મૂલમ્—ન કોવેષ આચરિય, અપ્પાણં પિ ન કોવેષ ।

બુદ્ધોવેધાઈ ન સિયાં, નં સિયાં તોત્તંગવેસણ ॥૪૦॥

છાયા—ન કોપયેત્ આચાર્યમ્, આત્માનમપિ ન કોપયેત્ ।

બુદ્ધોપવાતી ન સ્યાત્, ન સ્યાત્ તોત્તંગવેષકઃ ॥ ૪૦ ॥

ટીકા—‘ન કોવેષ’ ઇત્યાદિ—

આચાર્યં ન કોપયેત્=ક્રોધાવિષ્ટં ન કુર્યાત્, આચાર્યમિત્યુપલક્ષણં તેન વિનયાર્હમુપાધ્યાયાદિકમપિ ન કોપયેદિત્યર્થઃ । આત્માનમપિ ન કોપયેત્—આચાર્યેણ પરુષ ભાષણાદિભિઃ શિક્ષ્યમાણમાત્માનમપિ કોપયુક્તં ન કુર્યાત્ । અપિનાઽન્યસ્યાપિ સંગ્રહઃ અન્યં કમપિ ન કોપયેદિત્યર્થઃ ॥

યતઃ—માસોપવાસનિરતોઽસ્તુ તનોતુ સત્યં,

ધ્યાનં કરોતુ વિદધાતુ વહિર્નિવાસમ્ ।

બ્રહ્મવ્રતં ધરતુ ભૈક્ષરતોઽસ્તુ નિત્યં,

રોપં કરોતિ યદિ સર્વમનર્થકં તત્ ॥ ૧ ॥

કયંચિત્ કોપાવેશેઽપિ બુદ્ધોપવાતી ન સ્યાત્—આચાર્યોપવાતકો ન મવેત્ ।

અથ વિનય કા સારાંશ કહતે હૈં—‘ન કોવેષ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(આચરિયં ન કોવેષ—આચાર્યં ન કોપયેત્) વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ આચાર્ય કો કમી મી કુપિત ન કરે । (અપ્પાણં પિ ન કોવેષ—આત્માનમપિ ન કોપયેત્) આચાર્ય મહારાજ જવ કોઈ શિક્ષા દેવેં ઉસ સમય અપની આત્મા કો મી કુપિત ન કરે । યદિ કદાચિત્ કોપ કા આવેશ આ મી જાવે તો ઉસ સમય (બુદ્ધોવેધાઈ ન સિયા—બુદ્ધોપવાતી ન સ્યાત્) અપને આચાર્ય મહારાજ કા ઉપવાતક નહીં

હવે વિનયનો સારાંશ કહે છે.—ન કોવેષ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—આચરિયં ન કોવેષ—આચાર્યાન્ ન કોપયેત્ વિનીત શિષ્યનું એ કર્તવ્ય છે કે, તે આચાર્યને કદી પણ ક્રોધિત ન કરે. અપ્પાણં પિ ન કોવેષ—આત્માનમપિ ન કોપયેત્ આચાર્ય મહારાજ ત્યારે કોઈ શિક્ષા આપે ત્યારે પોતાના આત્માને પણ ક્રોધિત ન કરે. કદાચિત્ ને ક્રોધને આવેશ આવી પણ જાય તો તે સમયે બુદ્ધોવેધાઈ ન સિયા—બુદ્ધોપવાતી ન સ્યાત્ પોતાના આચાર્ય મહારાજનું

તુલ્ય इति गुरुर्जानाति, इत्येवं साधुः=विनयवान् शिष्यः कल्याणं=शुभं मन्यते-  
‘अयं गुरुः पुत्रादिभावेन मामनुशास्ति’ इति शुभभावनं करोतीत्यर्थः। कुश्लिष्यः  
पुनः किं मन्यते ? इत्याह-‘पावदिद्वीउ’ इत्यादि। पापदृष्टिः=विनयरहितः शिष्यस्तु  
‘शास्यमानम् आत्मानं=मां दास इति गुरुर्जानाति, इत्येवं मन्यते। ‘अयं गुरुर्नैव-  
दृष्ट्याऽवमानयन्मां दासमिव तर्जयति’ इत्यशुभभावनं करोतीत्यर्थः।

अन्ये तु सुप्रविभक्तिव्यत्ययात् ‘पुत्रो’ इत्यस्य ‘पुत्रमिव’ ‘भाय’  
इत्यस्य-‘भ्रातरमिव’ ‘णाय’ इत्यस्य ‘ज्ञातिमिव’ इति द्वितीयान्ताय कल्पयन्ति  
‘मे’ इति द्वितीयान्तार्थकं च कल्पयन्ति तत्सर्वमनुचितम्-आगमोक्तपाठेऽर्थसंगतौ  
सत्यां तद्विपरीतार्थकल्पनायां भगवद्वचनविराधनाऽऽपत्तेः ॥ ३९ ॥

है कि ये गुरु महाराज मुझे ( पुत्रो मे-पुत्रः मे ) यह शिष्य मेरे पुत्रतुल्य  
है ( भाय-भ्राता ) भाई के समान है ( णाय-ज्ञातिः ) ज्ञातिजनतुल्य है,  
ऐसा समझकर शिक्षा देते हैं, ( ति-इति ) इस प्रकार विनीत शिष्य  
( कल्याण-कल्याणं ) शुभ ( मन्नइ-मन्यते ) मानता है, अर्थात् विनीत  
शिष्य गुरु महाराज के प्रति कल्याण भावना करता है। और ( पावदिद्वी  
य-पापदृष्टिस्तु ) जो अविनीत शिष्य होता है वह इस प्रकार विचारता  
है कि ये गुरुमहाराज ( सासं अप्पाणं-शास्यमानमात्मानम् ) शिक्षापाते  
हुए मुझको ( दासे-दासः ) यह दास है, इस प्रकार समझकर शिक्षा देते  
हैं ( ति-इति ) इस प्रकार ( मन्नइ-मन्यते ) अशुभ मानता है, अर्थात्  
अविनीत शिष्य गुरु महाराज के प्रति अशुभ भावना करता है। इस  
गाथा में विनीत और अविनीत शिष्य की भावना प्रदर्शित की है॥३९॥

મહારાજ મને પુત્રો મે-પુત્રઃ મે આ શિષ્ય મારા પુત્ર તુલ્ય છે ભાય-ભ્રાતા ભાઈની  
તુલ્ય છે ણાય-જ્ઞાતિ જ્ઞાતિ તુલ્ય છે. એવું સમજીને શિક્ષા આપે છે. તિ-इति આ  
પ્રકારે વિનીત શિષ્ય કલ્યાણ મન્નइ-કલ્યાણ-મન્યતે કલ્યાણકારક અને શુભકારક  
માને છે. અર્થાત્ વિનીત શિષ્ય ગુરુ મહારાજ તરફ ખૂબ ઉંચી ભાવના રાખે છે અને  
પાવદિદ્વિય-પાપદૃષ્ટિસ્તુ જે અવિનીત શિષ્ય હોય છે તે એવા પ્રકારનું વિચારે છે કે,  
ગુરુ મહારાજ સાસં અપ્પાણં-શાસ્યમાનમાત્માનં શિક્ષા આપતી વખતે મને દાસે-દાસઃ  
આ દાસ છે, એવી રીતે સમજીને શિક્ષા આપે છે. તિ इति આ પ્રકારે મન્નइ-મન્યતે  
અશુભ માને છે. અર્થાત્ કુશિષ્ય, ગુરુ મહારાજ તરફ અશુભ ભાવના ભાવે છે.  
આ ગાથામાં શિષ્યની વિનીત અને અવિનીત ભાવના પ્રદર્શિત કરેલ છે. ॥૩૯॥



બુદ્ધોપધાતી ન સ્યાદિતિ યદુક્તં તત્ર દ્રષ્ટાન્તો વર્ણ્યતે—

અંગદેશે ચમ્પાપુરીનગર્યો ગણિગુણસમન્વિતઃ પ્રક્ષીણપ્રાયકર્મા ક્ષીણજઙ્ઘાવલઃ  
કૃતૈકશિષ્યમતિત્તઃ કથિદ્ વીર્યોલ્લાસનામક આચાર્યઃ ક્ષુદ્રમતિનામ્નૈકૈનૈવ શિષ્યેણ  
જો વિનય કે યોગ્ય હૈં ઉન્હેં ભી કુપિત નહીં કરના ચાહિયે, વર્યોં કિ  
કોપ અનેક અનર્થોં કી જડ એવં સમસ્ત ઉત્તમ ક્રિયાઓં કા વિનાશક  
માના ગયા હૈ, કહા ભી હૈ—

“માસોપવાસનિરતોઽસ્તુ તનોતુ સત્યં,  
ધ્યાનં કરોતુ વિદધાતુ વહિર્નિવાસમ્ ।  
બ્રહ્મવ્રતં ધરતુ મૈક્ષરતોઽસ્તુ નિત્યં,  
રોષં કરોતિ યદિ સર્વમનર્થકં તત્” ॥ ૧ ॥

કોઈ ભી વ્યક્તિ યદિ માસ માસ રવમણ ભી પારણા કરતા હો, સદા  
સત્ય ચોલતા હો, ધ્યાન કરતા હો, વન મેં ભી નિવાસ કરતા હો, બ્રહ્મ-  
ચર્યવ્રત કા પાલન કરતા હો, ભિક્ષાવૃત્તિ કરતા હો પરન્તુ યદિ રોષ  
-કોપ કરતા હૈતો ઉસકી યે સમસ્ત ક્રિયાઈ વ્યર્થ હૈં ॥ ૧ ॥

‘બુદ્ધોપધાતી નહીં હોના ચાહિયે’ એસા જો કહા હૈ ઉસકો  
દ્રષ્ટાન્ત સે સ્પષ્ટ કરતે હૈ—

અંગદેશ મેં ચંપા નામકી નગરી થી । ઉસમેં ગણિગુણોં સે યુક્ત

કરવા ભેઈએ. કેમકે, કેાપ અનેક અનર્થોની જડ તેમજ સમસ્ત ઉત્તમ  
ક્રિયાઓને નાશ કરનાર મનાયેલ છે. કહું પણ છે.—

માસોપવાસ નિરતોઽસ્તુ તનોતુ સત્યં,  
ધ્યાનં કરોતુ વિદધાતુ વહિર્નિવાસમ્ ।  
બ્રહ્મવ્રતં ધરતુ મૈક્ષરતોઽસ્તુ નિત્યં,  
રોષં કરોતિ યદિ સર્વમનર્થકં તત્ ॥ ૧ ॥

કેાઈ પણ વ્યક્તિ કદાચ તે મહિના મહિનાના અપવાસ કરે, સદા સાચું  
બોલતો હોય, ધ્યાન કરતો હોય, વનમાં પણ રહેતો હોય, બ્રહ્મચર્યવ્રતનું  
પાલન કરતો હોય, ભિક્ષાવૃત્તિ કરતો હોય, પરંતુ તેને ક્રોધ કરતો હોય તો  
તેની એ સઘળી ક્રિયાઓ વ્યર્થ છે.

બુદ્ધોપધાતિ ન થવું ભેઈએ, એવું જે કહેવામાં આવે છે એને દ્રષ્ટાં-  
તથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.—

અંગ દેશમાં ચંપાપુરી નામની નગરી હતી, તેમાં ગણીગુણોથી યુક્ત

તથા તોત્રગવેષકો ન સ્યાત્-તોત્રં=તોદનં તત્સદ્શસ્ય પીઠોત્પાદકસ્ય પરુષભાષણા-  
ઽઽદર્ગવેષકઃ=અન્વેષકો ન ભવેદિત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ-યથા-દુષ્ટસ્તુરદ્ગમો વિપરીત-  
ગત્યા પ્રચલન્ તોદનમન્વેષયતિ તઠત્ શિષ્યઃ આચાર્યસ્ય પ્રેરણાલક્ષગવચનસ્ય  
ગવેષકો ન ભવેદિતિ ।

હોના चाहिये । तथा-(तोत्तगवेसए न सिया-तोत्रगवेषकः न स्यात्)  
तोत्रगवेषक भी नहीं होना चाहिये-अर्थात् गुरु महाराज को बार २  
प्रेरणा करने की आवश्यकता नहीं होने दे । तात्पर्य इसका यह है  
कि शिष्य को यह चाहिये कि जिस समय आचार्य महाराज अपने  
लिये परुष भाषण आदि रूप में भी यदि शिक्षात्मक वचन कहें तो  
उस समय वह उनके प्रति ऐसा व्यवहार न करे कि जिससे वे कुपित  
हो जावें, तथा स्वयं भी अपनी आत्मा को उनके व्यवहार से अप्र-  
सन्न न रखे । तथा ऐसी चेष्टा भी उसको नहीं करना चाहिये कि जिसमें  
आचार्य महाराज का उपघात हो । जिस प्रकार दुष्ट थोड़ा विपरीत चाल  
से चलता हुआ अपने मालिक को पद २ पर दुःखित किया करता है  
उसी प्रकार उनकी इच्छा के विरुद्ध चलकर शिष्यको उन्हें कभी भी  
दुःखित नहीं करना चाहिये । सूत्र में जो अपि-शब्द आया है वह इस  
वात का सूचक है कि शिष्य को अपने आचार्य महाराज से अतिरिक्त  
और भी किसी को व्यथित नहीं करना चाहिये । तथा उपाध्याय आदि

અપમાન કરનાર ન થવો જોઈએ. તથા તોત્તગવેસए ન સિયા-તોત્રગવેષકઃ ન સ્યાત્  
તોત્રગવેષક પણ ન બનવું જોઈએ. અથવા-ગુરુ મહારાજને વારંવાર પ્રેરણા કરવી  
પડે તેવું ન થવા દે. જે સમયે આચાર્ય મહારાજ પોતાના માટે પરુષ ભાષણ  
આદિ રૂપથી પણ કદાચ શિક્ષાત્મક વચન કહે તો તે વખતે તે તેમના પ્રત્યે  
એવો વહેવાર ન કરે કે, જેથી ગુરુ મહારાજને ક્રોધિત બનવું પડે. તથા તેમના  
વહેવારથી પોતાની જાતને પણ અપ્રસન્ન ન રાખે. તથા એવી એટા પણ તેણે  
ન કરવી જોઈએ કે જેમાં આચાર્ય મહારાજનું અપમાન હોય, જે પ્રકાર દુષ્ટ  
ઘોડો વિપરીત ચાલથી ચાલીને પોતાના માલીકને પગલે પગલે દુઃખિત કર્યા કરે  
છે તેવી રીતે, તેમની ઈચ્છાની વિરુદ્ધ ચાલીને શિષ્યે તેમને કદી પણ દુઃખી  
ન કરવા જોઈએ. સૂત્રમાં જે ‘અપિ’ શબ્દ આવેલ છે તે આ વાત સૂચન કરે  
છે કે શિષ્યે પોતાના ગુરુ મહારાજ કે બીજા કોઈને પણ દુઃખ ન પહોંચાડવું  
જોઈએ. તથા ઉપાધ્યાય આદિ જે વિનયને યોગ્ય છે તેમને પણ પિત. ન

પથ્યં ચતુર્વિધમશનાદિકં શ્રાવકજનૈરુદારભાવૈરનુદિનં દીયમાનમુપાદાય તસ્મૈ નાર્પ-  
યતિ સ્વયમેવ તદન્નાતિ ।

અન્તં પ્રાન્તં રુક્ષં શુષ્કં કુપથ્યમશનાદિકમાનીય ગુરવે પ્રયચ્છતિ । વદતિ ચ-  
કિમિદ્ કુર્મો વયમ્ । ઈદૃશીં દશામુપગતાનાં ભવતાં યોગ્યમશનાદિકં વિદ્યમાનમપિ  
નામી વિવેકવિકલાઃ શ્રાવકા દાતુમિચ્છન્તિ । શ્રાવકાન્ કથયતિ ચ-મમાચાર્યાઃ  
સ્વલુપરમનિઃસ્પૃહતયા સ્વશરીરયાત્રામપ્યચિન્તયન્તઃ પ્રણીતં ભક્તપાનં ગ્રહીતું નેચ્છન્તિ

और दूसरी जगह भी चल फिर सकें । इस प्रकार विचार कर उसने  
ऐसा काम करना प्रारंभ किया कि-श्रावकों से जो आचार्य की अवस्था  
अनुरूप स्निग्ध, मधुर, मनोज्ञ, सरस चतुर्विध आहार इसे भिक्षा में  
मिलता वह स्वयं खा जाता और गुरु महाराज को अन्तप्रान्त, रूक्ष  
शुष्क एवं कुपथ्यरूप आहार लाकर देता । जब गुरु महाराज पूछते तो  
कहने लगता कि महाराज हम इस में क्या करें । यहां के श्रावक आप-  
की ऐसी अवस्था को देखकर असंतुष्ट हो गये हैं, इसी लिये वे अपने  
घर में होते हुए भी योग्य अशनादिक को देना नहीं चाहते । जब  
श्रावक उससे पूछते तो कहता कि हमारे ये आचार्य महाराज अब  
बिलकुल शिथिलशरीर हो रहे हैं इसलिये उन्हें अपने शरीरमें अब  
कोई ममत्वपरिणति नहीं रही है । उन्हें तो जैसा भी आहार मिलजाता  
है वे उसे ले लेते हैं । वे नहीं चाहते कि हमारा यह शरीर अब और

રહી નથી કે એક સ્થળ ઉપરથી બીજા સ્થળે જરા પણ હાલી ચાલી શકે.  
આ પ્રકારનો વિચાર કરી તેણે એવા કામનો પ્રારંભ કર્યો કે, શ્રાવકોથી  
આચાર્યની અવસ્થા અનુરૂપ જે સ્નિગ્ધ, મધુર, મનોજ્ઞ, સુરસ ચાર પ્રકારનો  
આહાર તેને ભિક્ષામાં મળતો તે સ્વયં ખાઈ જતો અને ગુરુ મહારાજને  
અન્ત, પ્રાન્ત, રૂક્ષ, શુષ્ક અને કુપથ્યરૂપ આહાર લાવી આપતો. ગુરુ મહા-  
રાજના પૂછવાથી તે કહેતો કે, મહારાજ હું એમાં શું કરું અહીંના શ્રાવકો  
આપની આવી અવસ્થા જોઈને અસંતુષ્ટ બની ગયા છે. આ માટે તેઓ પોતાના  
ઘરમાં હોવા છતાં પણ યોગ્ય આહાર આપવા ઈચ્છતા નથી. જ્યારે શ્રાવક  
તેને પૂછતા તો કહેતો કે, મારા આચાર્ય મહારાજ હવે બીલકુલ શિથિલ  
શરીરના બની ગયા છે આ માટે તેમને હવે પોતાના શરીરમાં કેઈ મમત્વ  
પરિણતિ રહી નથી. તેમને જેવો આહાર મળી જાય છે તેવો તે લે છે. તે  
નથી ચાહતા કે મારું આ શરીર હવે વધુ વખત ટક્યું રહે. આ માટે પ્રણીત

સહ કૃતસ્થિરવાસ આસીત્ । તત્રાસૌ શિષ્યઃ પ્રતિદિવસં સંસારસાગરોત્તારકં જન્મમર-  
ણોચ્છેદકં સકલકર્મવિધ્વંસકં તીર્થં કરગોત્રોપાર્જકં ગુરુવૈયાવૃત્ત્યં કુર્વાણો ગુરુકર્મ-  
કત્વાદ્ દુર્લભબોધિત્વાચ્ચૈકદા મનસિ ચિન્તયતિ-‘પ્રક્ષીણચલઃ સ્થવિરોડ્યમસ્મામિઃ  
કિયત્કાલમનુપાલનીયઃ’ ઇત્યેવં વિમૃશ્યાસૌ તદ્વયોઽનુરૂપં સ્નિગ્ધં મધુરં મનોજ્ઞં સુરસં

વીર્યોદ્ધાસ નામ કે આચાર્ય અપને પ્રિય ક્ષુદ્રમતિ નામક શિષ્ય કે સાથ  
સ્થિરવાસ રહેતે થે । વિશેષ વૃદ્ધ હોને કે કારણ હલન-ચલન આદિ  
ક્રિયાઈં इनकी क्षीणप्राय हो चुकी थी । जंघा चल भी कम हो गया था ।  
“मैं एक ही शिष्य करूँगा ” ऐसी उनकी प्रतिज्ञा थी । उस के अनुसार  
उन्होंने क्षुद्रमति नामक एक ही शिष्य किया था, और उसी के साथ वे  
वहाँ रहा करते थे । शिष्य भी अपने गुरु महाराज की ठीक २ रीत से  
वैयावृत्य किया करता था । वैयावृत्य करना यह एक तप है इसके प्रभाव  
से प्राणी संसार समुद्र से पार हो जाता है । जन्म, मरण और जरा से  
विमुक्त हो जाता है । अष्ट कर्मों का विनाश भी इस वैयावृत्य के बल  
पर प्राणी कर देता है । इससे तीर्थकरनामगोत्र का उपार्जन भी करता है ।  
शिष्य गुरु कर्मा था । इस लिये वैयावृत्य करने पर भी इसे बोध  
का लाभ दुर्लभ हो रहा था । एक दिन शिष्य ने विचार किया कि हम  
इनकी अब कबतक वैयावृत्य करते रहेंगे । यह तो बिल्कुल स्थविर हो  
चुके हैं । इन में तो अब इतनी भी शक्ति नहीं रही है जो ये यहाँ से

એક વિર્યોદ્ધાસ નામના આચાર્ય પોતાના ક્ષુદ્રમતિ નામના શિષ્ય સાથે સ્થિર  
વાસ રહેતા હતા. ખૂબ વૃદ્ધ થઈ જવાના કારણે હલન ચલન આદિ ક્રિયાઓ  
તેઓ કરી શકતા નહીં. શરીરનું તેમજ જાંગોનું બળ પણ ક્ષિણ થઈ ગયું  
હતું. “હું એકજ શિષ્ય કરીશ” એવી તેમની પ્રતિજ્ઞા હતી એ અનુસાર તેમણે  
એક જ શિષ્ય કરેલ હતો. જેનું નામ ક્ષુદ્રમતિ હતું તે શિષ્યની સાથે તે  
ચંપાપુરીમાં રહેતા હતા. શિષ્ય પણ પોતાના ગુરુમહારાજની યોગ્ય રીતે આકરી  
ખરદાસ કરતો હતો. વૈયાવૃત્ય કરવું એ એક તપ છે. તેના પ્રભાવથી પ્રાણી  
સંસાર સમુદ્રથી પાર થાય છે. જન્મ મરણ અને જરાથી વિમુક્ત થઈ જાય છે.  
આઠ કર્મોનો વિનાશ પણ આ વૈયાવૃત્યના બળ ઉપર પ્રાણી પુરી દે છે. તેનાથી  
તીર્થંકર નામ ગોત્રનું ઉપાર્જન પણ કરે છે. શિષ્ય ગુરુ કર્મી હતો. આ માટે  
વૈયાવૃત્ય કરવા છતાં પણ એને બોધનો લાભ દુર્લભ થતો હતો. એક દિવસ  
શિષ્યે વિચાર કયો કે, હું કયાં સુધી આમની સેવા આકરી કરતો રહીશ.  
આ તો બીલકુલ સ્થવિર બની ગયા છે, એમનામાં એટલી પણ શક્તિ હવે

રસાભિર્ભવન્તઃ શિષ્યથ પીડનીયાઃ ? इति निवेद्य भक्तं प्रत्याख्याय स प्राणरहितो जातः । एवं क्षुद्रमतिशिष्यवत् साधुर्बुद्धोपधाती न भवेत् ॥ ૪૦ ॥

આચાર્યે કુપિતે શિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—આયરિયં કુવિયં નચ્ચા, પત્તિર્ણ પસાયેણ ।

विज्झविज्झ पंजलीउडो, वएज्ज न पुणुत्ति य ॥ ૪૧ ॥

છાયા—આચાર્ય કુપિતં જ્ઞાત્વા, પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત ।

विध्यापयेत् प्राञ्जलिपुटः, वदेत् न पुनरिति च ॥ ૪૧ ॥

ટીકા—‘ આયરિયં ’ इत्यादि ।

શિષ્યઃ કેનચિત્ સ્વાપરાધેન આચાર્ય કુપિતમ્=અપરિતુષ્ટં જ્ઞાત્વા પ્રીતિકેન= પ્રીતિરેવ પ્રીતિકં તેન-પ્રીતિજનકેન વિનયભાવેન યદ્વા-‘પ્રતીતિકેન’ इतिच्छाया; પ્રતીતિકેન-વિશ્વાસજનકેન વાક્યેન તં પ્રસાદયેત્=પ્રસન્નં કુર્યાત્ । ‘ પ્રીતિકેન ’

કહ્યાં તક કષ્ટ દિયા જાય, અતઃ યહી સર્વસુંદર માર્ગ હૈ કિ સંલેખના ધારણ કરલો જાય । એસા કહ કર ઉન્હોને ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કર દિયા ઓર કુછ સમય કે વાદ વે સમાધિમરણ કો પ્રાપ્ત કર અપના કલ્યાણ કિયા । હસ કથા સે શિષ્ય કો યહ શિક્ષા લેની ચાહિયે કિ ક્ષુદ્રમતિ શિષ્ય કી તરહ વહ ગુરુ મહારાજ કા પ્રાણપ્રહારી ન વને ॥૪૦॥

આચાર્ય મહારાજ કે કુપિત હોને પર શિષ્ય કા કયા કર્તવ્ય હૈ સો કહતે હૈ—‘ આયરિયં ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય (કુવિયં આયરિયં નચ્ચા-કુપિતં આચાર્ય જ્ઞાત્વા । જય યહ સમજે કિ આચાર્ય મહારાજ કુપિત હૈં ઉસ સમય વહ (પત્તિ-ર્ણ પસાયે-પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્) પ્રીતિજનક-વિનયભાવ સે અથવા

સર્વ સુંદર માર્ગ છે કે, સંલેખણા ધારણ કરી દઉં એવું કહીને તેઓએ ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાન કરી લીધું અને થોડા સમય બાદ સમાધી મરણને પ્રાપ્ત કરી. પોતાનું કલ્યાણ કર્યું. આ કથાથી શિષ્યે એ શિક્ષા લેવી જોઈએ કે, ક્ષુદ્રમતિ શિષ્યની માફક તે પોતાના ગુરુ મહારાજના પ્રાણ હરનાર ન બને. ॥ ૪૦ ॥

આચાર્ય મહારાજના ક્રોધિત થવાથી શિષ્યનું શું કર્તવ્ય છે. તે કહેવામાં આવે છે.—આયરિયં-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય કુવિયં આયરિયં નચ્ચા-કુપિતં આચાર્ય જ્ઞાત્વા ન્યારે એવું સમજે કે આચાર્ય મહારાજ કુપિત છે તે સમય તે પત્તિર્ણ પસાયે-પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્ પ્રીતિજનક-વિનય ભાવથી અથવા વિશ્વાસ જનક વાક્યથી તેને પ્રસન્ન



કિંતુ સંલેખનામેવ કર્તું વ્યવસ્યન્તિ । તતઃ શિષ્યવચનં નિશ્ચય શોકાર્ત્વચેતસઃ  
 શ્રાવકાસ્તપ્તપૃથ્વ્ય સગદ્ગદં વદન્તિ-ભગવન્ ! કથમત્ર ભવદ્ધિરકાલેવ સંલેખના-  
 વિધિરાવ્યઃ ? ન ચ વયં નિર્વેદહેતવઃ, इति मन्तव्यम् यतः शिरःस्थिता अपि  
 भवन्तो न भारमस्माकं कुर्वन्ति । इत्थं श्रावकाणां वचनं श्रुत्वाऽऽचार्येण विचारि-  
 तम्—सर्वमेतच्छिष्यदुश्चरितम्—भलमस्य शिष्यस्यापीतिकरेण मम प्राणधारणेन,  
 इति मनसि विचिन्त्य तेन श्रावकाणां शिष्यस्य च पुरस्तादुक्तम्—कियच्चिरमजङ्गमे

અધિક સમય તક ટિકા રહે । ઇસ લિયે પ્રણીત રસ વાલે ભક્ત પાન કો  
 લેને કી વે અવ ચાહના હી નહીં કરતે હૈ, કિન્તુ સંલેખના ધારણ  
 કરને કે લિયે ઉદ્યત હો રહે હૈ, શ્રાવક જનોં ને જવ શિષ્ય કે ઇન વચનોં  
 કો સુના તો વે વહુત શોકાર્ત્વ ચિત્ત હો ચિન્તિત હુઅ ઓર ગુરુ મહારાજ  
 કે સમીપ પહુચ કર ગદ્ગદ વાણી સે કહને લગે કિ-મહારાજ ! અકાલ  
 મેં આપ સંલેખના ક્યોં ધારણ કર રહે હૈં ? હમ લોગ તો આપકે લિયે  
 નિર્વેદ કે કારણ હૈં નહીં-હમારે તો આપ માયે પર ભી વૈઠે તો ભી આપકા  
 હમેં કોઈ ભાર નહીં લગ સકતા હૈ । આચાર્ય ને જવ શ્રાવકોં કે ઇન  
 વચનોં કો સુના તો વે વડે વિચાર મેં પડ ગયે ઓર મન મેં કહને લગે  
 કિ યહ સવ કરતૂત હમારે શિષ્ય કી હૈ, માલૂમ પડતા હૈ ઇસ કો મેં  
 વહુત ભારી હો રહા હું । ઇસ પ્રકાર સોચ સમજ્ઞકર આચાર્ય ને શિષ્ય  
 એવં શ્રાવકોં કે સમક્ષ કહા કિ મહાનુભાવ ! અવ હમ સે ચલના ફિરના  
 વનતા નહીં હૈ, અતઃ એસી સ્થિતિ મેં આપ સવ કો એવં શિષ્ય કો

રસવાળા ભક્ત પાનને લેવાની આહના હવે તેઓ કરતા નથી. પરંતુ સંલેખના  
 ધારણ કરવામાં પ્રયત્નશીલ બની રહ્યા છે. શિષ્યનું આ કહેવું સાંભળી શ્રાવક-  
 જનો ખૂબ શોકાતુર બન્યા અને ગુરુ મહારાજ પાસે જઈને ગદ્ગદ વાણીથી  
 કહેવા લાગ્યા કે, મહારાજ ! અકાલમાં આપ સંલેખના કેમ ધારણ કરી રહ્યા  
 છો ? અમે લોકો તો આપના માટે નિર્વેદના કોઈ કારણ નથી ? આપ અમારા  
 માથા ઉપર બેસો તો પણ અમને આપનો કોઈ ભાર લાગતો નથી. આચાર્યે  
 શ્રાવકોનું જ્યારે આ પ્રકારનું કહેવું સાંભળ્યું તો તે વિચારમાં પડી ગયા અને  
 મનમાં કહેવા લાગ્યા કે, આ બધું કરતૂત મારા શિષ્યનું છે, અને હું ખૂબ ભાર  
 રૂપ બની રહ્યો છું. આ પ્રકારનું સમજી વિચારીને આચાર્યે શિષ્ય તેમજ  
 શ્રાવકોની સમક્ષ કહ્યું કે, મારાથી હાલીચાલી શકાતું નથી, આથી આવી  
 સ્થિતિમાં આપ બધાને તથા શિષ્યને ક્યાં સુધી કષ્ટ આપ્યાં કરું. આથી એજ

રસાભિર્ભવન્તઃ શિષ્યથ પીડનીયાઃ ? इति निवेद्य भक्तं प्रत्याख्याय स प्राणरहितो जातः । एवं क्षुद्रमतिशिष्यवत् साधुर्वुद्धोपघाती न भवेत् ॥ ४० ॥

આચાર્યે કુપિતે શિષ્યકર્તવ્યમાહ--

मूलम्—आयरियं कुवियं नच्चा, पत्तिर्एण पसायए ।

विज्झविज्ज पंजलीउडो, वएँउज न पुंणुत्ति य ॥ ४१ ॥

છાયા—આચાર્ય કુપિતં જ્ઞાત્વા, પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્ ।

विध्यापयेत् प्राञ्जलिपुटः, वदेत न पुनरिति च ॥ ४१ ॥

ટીકા—‘ આયરિયં ’ इत्यादि ।

શિષ્યઃ કેનચિત્ સ્વાપરાધેન આચાર્ય કુપિતમ્=અપરિતુષ્ટં જ્ઞાત્વા પ્રીતિકેન=પ્રીતિરેવ પ્રીતિકં તેન-પ્રીતિજનકેન વિનયભાવેન યદ્વા-‘પ્રતીતિકેન’ इतिच्छाया; પ્રતીતિકેન-વિશ્વાસજનકેન વાક્યેન તં પ્રસાદયેત્=પ્રસન્નં કુર્યાત્ । ‘ પ્રીતિકેન ’

કહાં તક કષ્ટ દિયા જાય, અતઃ યહી સર્વસુંદર માર્ગ હૈ કિ સંલેખના ધારણ કરલો જાય । એસા કહ કર ડન્હોને ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કર દિયા ઓર કુછ સમય કે વાદ વે સમાધિમરણ કો પ્રાપ્ત કર અપના કલ્યાણ કિયા । હસ કથા સે શિષ્ય કો યહ શિક્ષા લેની ચાહિયે કિ ક્ષુદ્રમતિ શિષ્ય કી તરહ વહ ગુરુ મહારાજ કા પ્રાણપ્રહારી ન વને ॥૪૦॥

આચાર્ય મહારાજ કે કુપિત હોને પર શિષ્ય કા વધા કર્તવ્ય હૈ સો કહતે હૈ--‘ આયરિયં ’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्य (कुवियं आयरियं नच्चा-कुपितं आचार्यं ज्ञात्वा । जय यह समझे कि आचार्य महाराज कुपित है उस समय वह (पत्ति-एण पसायए-प्रीतिकेन प्रसादयेत्) प्रीतिजनक-विनयभाव से अथवा

સર્વ સુંદર માર્ગ છે કે, સંલેખણા ધારણ કરી દઉં એવું કહીને તેઓએ ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાન કરી લીધું અને થોડા સમય બાદ સમાધી મરણને પ્રાપ્ત કરી. પોતાનું કલ્યાણ કર્યું. આ કથાથી શિષ્યે એ શિક્ષા લેવી જોઈએ કે, ક્ષુદ્રમતિ શિષ્યની માફક તે પોતાના ગુરુ મહારાજના પ્રાણ હરનાર ન બને. ॥ ૪૦ ॥

આચાર્ય મહારાજના ક્રોધિત થવાથી શિષ્યનું શું કર્તવ્ય છે. તે કહેવામાં આવે છે.—આયરિયં-इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्य कुवियं आयरियं नच्चा-कुपितं आचार्यं ज्ञात्वा न्यारे एवुं समझे के आचार्य मહाराज कुपित છે તે સમય તે પત્તિર્ણ પસાય-પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્ પ્રિતિજનક-વિનય ભાવથી અથવા વિશ્વાસ જનક વાક્યથી તેને પ્રસન્ન

इत् यत्र रुद्ध्या नपुंसकत्वम् । प्राञ्जलिपुटः=कृताञ्जलिः सन् विध्यापयेत्=कथंचिदुत्थित-  
कोपवर्द्धिं प्रशमयेत् । च=पुनः 'न पुनरेवं करिष्यामि' 'सन्तव्योऽयमपराधः' इति  
वदेत् । मानसिक-कायिक वाचिकोपायै गुरुः प्रसादनीय इति भावः ॥४१॥

अथ येन गुरोः कोप एव नोत्पद्येत तमुपायमाह—

मूलम्—धम्मज्जियं चं वव्हारं, बुद्धेहायरियं सय्या ।

तैमांयरंतो वव्हारं, गरंहं नोभिगंच्छइ ॥४२॥

छाया—धर्माजितश्च व्यवहारः बुद्धैः आचरितः सदा ।

तमाचरन् व्यवहारं, गहं नाभिगच्छति ॥४२॥

टीका—‘धम्मज्जियं’ इत्यादि—

यत्तदોર્નિત્યસમ્બન્ધાદ્ યઃ ધર્માર્જિતઃ=ધર્મેણ ક્ષાન્ત્યાદિના અર્જિતઃ=ઉપા-  
ર્જિતઃ, ચ-પુનઃ સદા=સર્વકાલં બુદ્ધૈઃ=તત્ત્વવિદ્ધિઃ આચરિતઃ=સેવિતઃ, વ્યવહારઃ=  
-વિશ્વાસજનક વાક્ય સે ડન્હે પ્રસન્ન કરે । ઓર (પંજલીડડો વિજ્ઞવિજ્ઞ  
-પ્રાજ્ઞલિપુટઃ વિધ્યાપયેત્) ડોનોં હાથ જોડકર ડનકી કથંચિત્ ઉત્થિત  
કોપાગ્નિ કો બુદ્ધાવે । ડસ સમય વહ ંસા (વણ્જ-વદેત્) કહે કિ (ન  
પુણ્તિ ય-ન પુનરિતિ ચ) હે ગુરુ મહારાજ અવ ંસા વ્યવહાર નહીં કરને  
કા ભાવ હૈ અતઃ અવ યહ મેરા અપરાધ આપ ક્ષમા કરે । મન સે વચન સે  
ંવં કાયા સે જૈસે ભી વને ડસ પ્રકાર કે ડપાયોં સે ગુરુ મહારાજ કો  
પ્રસન્ન કર લેના ચાહિયે ॥ ૪૧ ॥

અવ સૂત્રકાર ‘ગુરુ મહારાજ કો કોપ હી ન ઉત્પન્ન હો સકે ંસા  
ઉપાય વતલાતે હૈ—‘ધમ્મજ્જિયં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—જો (ધમ્મજ્જિયં-ધર્માર્જિતઃ) ઉત્તમ ક્ષમા આદિ ધર્મોં

કરે. પંજલિડડો વિજ્ઞ વિજ્ઞ-પ્રાજ્ઞલિપુટઃ વિધ્યાપયેત્ અને બન્ને હાથ જોડીને  
તેમની કથંચિત્ ઉત્થિત કોપાગ્નિને બુઝાવે. ં સમય તે ંવું વણ્જ-વદેત્ કહે કે,  
ન પુણ્તિ ય-ન પુનરિતિ ચ હે ગુરુ મહારાજ હવે હું ંવું કદી નહીં કરું આથી  
હવે આપ આ મારો અપરાધ ક્ષમા કરો. મન વચન અને કાયાથી જેવું પણ  
બને ં પ્રકારના ઉપાયોથી ગુરુ મહારાજને પ્રસન્ન કરી લેવા જોઈ ં. ॥ ૪૧ ॥

હવે સૂત્રકાર ‘ગુરુ મહારાજને કોપજ ન ઉત્પન્ન થાય’ ંવો ઉપાય  
બતાવે છે.—ધમ્મજ્જિયં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—જે ધમ્મજ્જિયં-ધર્માર્જિતમ્ ઉત્તમ ક્ષમા આદિ ધર્મોથી અર્જિત કર-

મોક્ષાર્થી કર્તવ્ય: પ્રતિલેખનાદિરૂપ:, અસ્તિ, તં વ્યવહારમ્-આચરન્ સાધુ:, ગર્હી-  
નિન્દામ્-‘અવિનીતોડ્યમ્’ ઇત્યાદિરૂપાં નાભિગચ્છતિ=ન પ્રાપ્નોતિ । એવં કૃતે ગુરો:  
કોપોત્પત્તિર્ન ભવતીતિ ભાવ: ।

‘ધમ્મજ્ઞિયં’ ઇત્યાદૌ પ્રથમાર્થે દ્વિતીયા આર્પત્વાત્ । ‘ધમ્મજ્ઞિયં’ ઇતિ  
વિશેષણં પ્રતિલેખનાદિવ્યવહારસ્ય શાસ્ત્રાનુકૂલતાં દંભસંમાનાદયથં કૃતવ્યવહારસ્ય  
પરિહાર્યતાં ચ વોધયતિ । ‘બુદ્ધેહાયરિયં’ ઇતિ વિશેષણં વ્યવહારસ્ય શાસનસંપ્રદા-  
યાનુગતત્વં સૂચયતિ ॥ ૪૨ ॥

મૂલમ્—મંળોગયં વર્વકગયં, જાણિંતાર્યરિયસ્સ ૩ ।

‘તં પરિગિજ્ઞા વાર્યાણ, કમ્મુણા ઉવવાંયણ ॥૪૩॥

કે દ્વારા અર્જિત કિયા હૈ, તથા (સયા-સદા) સર્વ કાલ (બુદ્ધેહાયરિયં-  
બુદ્ધૈ: આચરિત:) તીર્થંકર ગણધારોં કે દ્વારા આચરિત-સેવિત હુઆ હૈ  
એસા યહ (વવહારં-વ્યવહાર:) પ્રતિલેખનાદિરૂપ કર્તવ્ય હૈ । (તં વવહારં  
આયરંતો-તં વ્યવહારમ્ આચરન્) ડસ વ્યવહાર કો અપને આચરણ મેં  
લાને વાલા સાધુ (ગરહં-ગર્હી) ‘યહ અવિનીત હૈ’ ઇત્યાદિરૂપ નિન્દા કો  
(નાભિગચ્છહ-નાભિગચ્છતિ) પ્રાપ્ત નહીં કરતા હૈ । “ધમ્મજ્ઞિયં” યહ પદ  
યહ સૂચિત કરતા હૈ કિ પ્રતિલેખનાદિકરૂપ જો વ્યવહાર હૈ વહ શાસ્ત્રાનુ  
કૂલ હૈ, તથા દંભ એવં સમ્માન આદિ કે નિમિત્ત જો વ્યવહાર કિયા  
જાતા હૈ વહ પરિહાર્ય હૈ । “બુદ્ધેહાયરિયં” યહ પદ ‘યહ વ્યવહાર તીર્થ-  
કર એવં ગણધરોં કી પરંપરા સે ચલા આ રહા હૈ અતઃ પ્રામાણિક હૈ’  
યહ સૂચિત કરતા હૈ ॥ ૪૨ ॥

વામાં આવેલ છે તથા સયા-સદા સર્વ કાળ બુદ્ધેહાયરિયં-બુદ્ધ: આચરિત: તીર્થંકર  
ગણધરોથી સેવિત થયેલ છે એવાં આ વવહારં-વ્યવહાર: પ્રતિલેખનાદિરૂપ કર્તવ્ય  
છે. આ વ્યવહારને પોતાના આચરણમાં લાવનાર સાધુ ગરહં-ગર્હી ‘આઅવિનીત  
છે’ ઇત્યાદિ રૂપ નિંદાને નાભિગચ્છહ-નાભિગચ્છતિ પ્રાપ્ત કરતા નથી. ધમ્મજ્ઞિયં  
આ પદથી એ સૂચિત થાય છે કે પ્રતિલેખનાદિક રૂપ જે વ્યવહાર છે તે શાસ્ત્રા-  
નુકૂળ છે. તથા દંભ અને સમ્માન આદિ નિમિત્ત જે વ્યવહાર કરવામાં આવે  
છે તે પરિહાર્ય છે “બુદ્ધેહાયરિયં” આ પદથી આ વ્યવહાર તીર્થંકર તેમજ  
ગણધરોની પરંપરાથી આવ્યો આવે છે આથી તે પ્રમાણીક છે એવું સૂચિત  
કરવામાં આવે છે. ॥ ૪૨ ॥

छाया—मनोगतं वाक्यगतं, ज्ञात्वा आचार्यस्य तु।

तत् परिगृह्य वाचा, कर्मणा उपपादयेत् ॥४३॥

टीका—‘मणोगयं’ इत्यादि—

आचार्यस्य मनोगतं=मनसि वर्तमानं, तथा वाक्यगतं=वचसि स्थितं तु शब्दात् कायगतमपि कार्यं पूर्वं ज्ञात्वा, पश्चात् तत्=कार्यं वाचा परिगृह्य=अङ्गीकृत्य, ‘अहमेतत् कार्यं करोमि’ इत्युक्त्वा शिष्यः कर्मणा=कायिवया क्रियया, उपपादयेत्=संपन्नं कुर्यात्। यत् कार्यं गुरोर्मनसि विद्यमानं, ‘कार्यमिदं क्रियताम्’ इत्यादिना वचसा वाऽभिहितं, गुरुणा क्रियमाणं वा यत् कार्यं तद् गुरुहस्तादुपादाय त्वरितमेव सुशिष्येण संपादनीयमिति भावः ॥४३॥

‘मणोगयं’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—(आयरियस्स मणोगयं वक्कगयं-आचार्यस्य मनोगतं वाक्यगतं) आचार्य महाराज के मनोगत एवं वाक्यगत “तु” शब्द से कायगत कार्य को (जाणित्ता-ज्ञात्वा) पहिले जानकर पश्चात् (तं-तत्) उस कार्य को (वायाए-वाचा) वाणी से (परिगिज्झ-परिगृह्य) अंगीकार कर के शिष्य (कम्मणा-कर्मणा) कायसंबंधी क्रिया द्वारा (उववायए-उपपादयेत्) उस कार्य को कर देवे। जो कार्य गुरु के मन में स्थित हो-गुरु ने जिस कार्य को करने का विचार किया हो ‘इदं कार्यम् क्रियताम्’ यह काम करो’ इस प्रकार जिस कार्य को करने के लिये उन्होंने कहा हो, अथवा गुरु महाराज जिस कार्य को स्वयं अपने हाथ से कर रहे हों तो विनयी शिष्य का कर्तव्य है कि वह उस कार्य को शीघ्र ही स्वयं संपादित करे। और गुरु महाराज करते हों तो उनके हाथ से लेकर स्वयं करने लग जाय ॥ ४३ ॥

मणोगयं-इत्यादि.

अन्वयार्थ—आयरियस्स मणोगयं वक्कगयं-आचार्यस्य मनोगतं वाक्यगतं आचार्य महाराजना मनोगत् अने वाक्यगत “तु” शब्दथी कायगत कार्यने जाणित्ता-ज्ञात्वा पछेलां जाणीने पछीथी तं-तत् ते कार्यने वायाए-वाचा वाणीथी परिसिज्ज-परिगृह्य अंगिकार करीने शिष्य कम्मणा-कर्मणा काय संबंधी क्रिया द्वारा उववाय-उपपादयेत् ओ कार्य करी दे. जे कार्य गुरुना मनमां स्थित होय, गुरुओ जे कार्य करवाने विचार कर्यो होय, “आ काम करे.” आ प्रकार जे कार्यने करवा भाटे पोते पोताना हाथथी करी रह्या होय तो विनयी शिष्यनुं कर्तव्य छे के ओ ते कार्यने तुरत ज पोते उपाडी दे अने गुरु महाराज करता होय तो तेमना हाथमांथी लईने पोते करवा लगी जाय. ॥ ४३ ॥



मूलम्—वित्ते' अचोइए निच्चं, खिप्पं हवइ सुचोइए ।

जहोवइष्टं सुकयं, किच्चाइं कुव्वइं सयां ॥४४॥

छाया—वित्तः अनोदितः नित्यं, क्षिप्रं भवति सुनोदितः ।

यथोपदिष्टं सुकृतं, कृत्यानि करोति सदा ॥ ४४ ॥

टीका—' वित्ते ' इत्यादि—

वित्तः=विनयादिगुणेन प्रसिद्धः शिष्यः, अनोदितः=अप्रेरित एव गुरुकार्येषु नित्यं=सर्वदा, प्रवर्तते । कदाचित् स्वयमेव कार्यं कुर्वाणः सुनोदितः=गुरुणा सुष्ठु प्रेरितश्चेत् स विनयवान् शिष्यः क्षिप्रं=क्षिप्रकृद् शीघ्रमेव-कार्यकारी भवति । अयं भावः-कार्यं कुर्वन् आचार्येण प्रेरितश्चेद् एवं न ब्रूते-' अहं तु कार्यकरोम्येव, किं

' वित्ते ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—( वित्ते-वित्तः ) विनय आदि गुणों से प्रसिद्ध शिष्य (अचोइए-अनोदितः) विना कहे ही-प्रेरणाकिये विना ही-अपने गुरु महाराज के कार्यों में (निच्चं-नित्यं) सर्वदा प्रवृत्ति शील रहा करता है । (सुचोइए-सुनोदितः) गुरु महाराज अपने कार्य को करने की प्रेरणा करें तो विनयवान् शिष्य का कर्तव्य है कि वह (खिप्पं हवइ-क्षिप्रं भवति) गुरु महाराज का कार्य यतनापूर्वक शीघ्र करे । ऐसा शिष्य गुरु महाराज जब कार्य करने के लिये कहते हैं तब ऐसा नहीं कहता है कि 'मैं तो कार्य कर ही रहा हूँ आप क्यों कहते हैं' । वह तो (सया-सदा) सर्वदा जो कुछ भी करने को कहा जाता है उसे ही कहने के अनुसार (सुकयं-सुकृतं) जैसे वह अच्छी रीति से हो सकता है उसी

वित्ते इत्यादि—

अन्वयार्थ—वित्त-वित्तः विनय आदि गुणोंથી प्रसिद्ध शिष्य अचोइए-अनोदितः कહ્યા વગર પ્રેરણા કર્યા વગર-પોતાના ગુરુ મહારાજના કાર્યોમાં નિચ્ચં-નિત્યં સદા સર્વદા પ્રવૃત્તિશીલ રહ્યા કરે છે. સુચોइए-सुनोदितः गुरु महाराज पોતાનું કાર્ય કરવા માટે પ્રેરણા કરે તો વિનયવાન શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે ખિપ્પં હવइ-क्षिप्रं भवति ગુરુ મહારાજના તે કાર્યને યતનાપૂર્વક તુરત જ કરવા માંડે. વિનયી શિષ્ય ગુરુ મહારાજના તરફથી કામ માટેનું સૂચન થતાં એવું કદી પણ કહેતો નથી કે, હું કામ તો કરી રહ્યો છું, આપ શા માટે કહેા છો. તે તો સયા-સદા સર્વદા એને જે કાંઈ કહેવામાં આવે તે કામ તે કહેવા અનુસાર સુકયં-સુકૃતં જેમ તે સારી રીતે થઈ શકે એ રીતે કિચ્ચાઈં કવ્વइ-કૃત્યાનિ

भवद्भिः प्रलप्यते?' इति। यद्योपदिष्टम्=उपदिष्टमनतिक्रम्य सर्वमुपदिष्टं कार्यं, सुकृतं =सुष्ठु कृतं, यथा स्यात्, तथा कार्याणि=सर्वाणि गुरुकार्याणि, सदा=सर्वकालं, करोति=संपादयति। गुरुकार्येष्वालस्यं न विधेयं प्रसन्नभावेन तदेव कार्यं सत्वरं करणीयमिति भावः॥ ४४॥

अध्ययनार्थमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—नच्चा नमइ मेहावी, लोए किंती से जायए ।

हवइ किच्चाण संरणं, भूयाणं जगइ जहां ॥ ४५॥

छाया—જ્ઞાત્વા નમતિ મેધાવી, લોકે કીર્તિસ્તસ્ય જાયતે ।

भवति कृत्यानां शरणं, भूतानां जगती यथा ॥ ४५ ॥

टीका—‘नच्चा’ इत्यादि—

મેધાવી=મર્યાદાવર્તી શિષ્યઃ, જ્ઞાત્વા=અનન્તરોક્તં સર્વમધ્યયનાર્થમવગમ્ય, નમતિ=નમ્રીભવતિ વિનયવાન્ ભવતીત્યર્થઃ, સ્વકર્તવ્યકરણં પ્રતિ સાદરમુદ્યતો ભવતીતિ યાવત્ । વિનયસ્ય ફલમાહ—‘લોએ’ ઇત્યાદિ । લોકે તસ્ય કીર્તિઃ— રીતિ કે માફિક (કિચ્ચાઈ કુવ્વઈ—કૃત્યાનિ કરોતિ) ડન સવ કાર્યો કો સુસંપાદિત કરતા હૈ । ગુરુ મહારાજ કે કાર્યો મેં કમી મી આલસ્ય નહીં કરના ચાહિયે પ્રત્યુત પ્રસન્નચિત્ત સે જો કુછ મી કરને કો કહા જાયવહ શીઘ્ર હી કર દેના ચાહિયે ॥ ૪૪ ॥

અવ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ— ‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મેહાવી-મેધાવી) મર્યાદાવર્તી શિષ્ય (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) અનન્તરોક્ત હસ સમસ્ત અધ્યયન કે અર્થ કો જાનકર (નમઈ-નમતિ) અવશ્ય વિનયી હોતા હૈ । અર્થાત્ અપને કર્તવ્ય કો નિભાને કે લિયે સાદર ઉદ્યત હો જાતા હૈ । (સે લોએ કિત્તી જાયએ-તસ્ય લોકે કીર્તિઃ

કરોતિ તે બધાં કામે સારીરીતે કરતો રહે છે. ગુરુ મહારાજના કામેમાં કદી પણ આજસ શિષ્યે ન કરવી જોઈએ. જે કાંઈ કરવાનું કહેવામાં આવે તે પ્રસન્ન ચિત્તે શીઘ્ર કરી દેવું જોઈએ. ॥ ૪૪ ॥

હવે અધ્યયનના અર્થને ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે—નચ્ચા ઇત્યાદિ— અન્વયાર્થ—મેહાવી-મેધાવીમર્યાદાવર્તી શિષ્ય નચ્ચા-જ્ઞાત્વા અનન્તરોક્ત આ સમસ્ત અધ્યયનના અર્થને જાણીને નમઈ-નમતિ અવશ્ય વિનયી બને છે. અર્થાત્ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવવા માટે સાદર ઉદ્યત રહે છે. સે લોએ કિત્તિ

‘અનેન સફલીકૃતં જન્મ, છિન્નં ચ દુઃષ્ટેયં કર્મવન્ધનં નિસ્તીર્ણથ દુસ્તરઃ સંસાર-સાગરઃ’ ઇત્યાદિરૂપા, જાયતે=પ્રાદુર્ભવતિ, અપિ ચ-સ કૃત્યાનાં=આચાર્યાણાં શરણમ્=આશ્રયો ભવતિ, યથા જગતી=પૃથિવી, ભૂતાનાં=પ્રાણિનાં શરણમ્=આધારો-ઽસ્તિ તદ્વત્ ॥ ૪૫ ॥

મૂલમ્—પુજ્ઞાં જસંસ પસીયંતિ, સંવુદ્ધા પુર્વસંશ્રુયા ।

પસન્નાં લાભઈસંસંતિ, વિઝંલં ઈંદ્રિયં સુર્યમ્ ॥૪૬॥

છાયા—પૂજ્યા યસ્ય પ્રસીદન્તિ, સંવુદ્ધાઃ પૂર્વસંસ્તુતાઃ ।

પસન્ના લાભયિપ્યન્તિ, વિપુલમ્ આર્થિકં શ્રુતમ્ ॥ ૪૬ ॥

ટીકા—‘પુજ્ઞા’ ઇત્યાદિ—

સંવુદ્ધાઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવન્તઃ, પૂર્વસંસ્તુતાઃ=પૂર્વ સમ્યક્ પ્રકારેણ સ્તુતાઃ, શ્રુતદા-

જાયતે ) જો સાધુ અપને કર્તવ્ય કો નિભાતા હૈં ઉસકા ઉસે યહ ફલ મિલતા હૈં કિ ઉસકી કીર્તિ હિસ લોક મેં ફેલ જાતી હૈં । લોગ કહને લગ જાતે હૈં કિ હિસને અપને જન્મ કો સફલ બના લિયા હૈં । દુઃષ્ટેય કર્મવન્ધન હિસને છેદ ડાલા હૈં । દુસ્તર સંસાર સાગર હિસને પાર કર લિયા હૈં । (જહા-યથા) જૈસે-(જગઈ-જગતી) પૃથિવી (ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતાનાં શરણં ભવતિ) પ્રાણિયોં કે લિયે આધારભૂત હોતી હૈં, હિસી તરહ વહ શિષ્ય બી ( કિચ્ચાણ સરણં હવઈ-કૃત્યાનાં શરણં ભવતિ ) અપને આચાર્ય મહારાજ કા આધાર બન જાતા હૈં ॥ ૪૫ ॥

‘પુજ્ઞા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ) પહિલે-શ્રુતદાન કે પહિલે હી વિનય-

લોકે કીર્તિઃ જાયતે જે સાધુ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવે છે એને તેનું એ ફળ મળે છે કે, તેમની કિર્તિ આ લોકમાં ફેલાઈ જાય છે, લોકો કહેવા લાગે છે કે, આણે પોતાના જન્મને સફળ બનાવી લીધો છે. કર્મના બંધનને એણે તોડી નાખ્યાં છે, દુસ્તર સંસાર સાગર એણે પાર કરી લીધો છે. જહા-યથા જેમ-જગઈ-જગતી પૃથ્વી ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતાનાં શરણં ભવતિ પ્રાણીઓને માટે આધારભૂત હોય છે, એજ રીતે તે શિષ્ય પણ પોતાના આચાર્ય મહારાજને આશ્રય બની જાય છે. ॥ ૪૫ ॥

પુજ્ઞા-ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ પહેલાં શ્રુતદાનના પહેલાં-વિનયશુભ્ધી

भवद्भिः प्रलप्यते?' इति। यथोपदिष्टम्=उपदिष्टमनतिक्रम्य सर्वमुपदिष्टं कार्यं, मुकुतं=सुष्ठु कृतं, यथा स्यात्, तथा कार्याणि=सर्वाणि गुरुकार्याणि, सदा=सर्वकालं, करोति=संपादयति। गुरुकार्येष्वालस्यं न विधेयं प्रसन्नभावेन तदेव कार्यं सत्त्वं करणीयमिति भावः॥ ४४॥

अध्ययनार्थमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—नच्चा नमइ मेहावी, लोए किंती से जायए ।

हवइ किच्चाण संरणं, भूयाणं जगइ जहां ॥ ४५॥

छाया—જ્ઞાત્વા નમતિ મેધાવી, લોકે કીર્તિસ્તસ્ય જાયતે ।

भवति कृत्यानां शरणं, भूतानां जगती यथा ॥ ४५ ॥

टीका—‘नच्चा’ इत्यादि—

મેધાવી=મર્યાદાવર્તી શિષ્યઃ, જ્ઞાત્વા=અનન્તરોક્તં સર્વમધ્યયનાર્થમવગમ્ય, નમતિ=નમ્રીભવતિ વિનયવાન્ ભવતીત્યર્થઃ, સ્વકર્તવ્યકરણં પ્રતિ સાદરમુદ્યતો ભવતીતિ યાવત્ । વિનયસ્ય ફલમાહ—‘લોએ’ ઇત્યાદિ । લોકે તસ્ય કીર્તિઃ—રોતિ કે માફિક (કિચ્ચાઈ કુવ્વઈ—કૃત્યાનિ કરોતિ) ઉન સવ કાર્યો કો સુસંપાદિત કરતા હૈ । ગુરુ મહારાજ કે કાર્યો મેં કમી મી આલસ્ય નહીં કરના ચાહિયે પ્રત્યુત પ્રસન્નચિત્ત સે જો કુછ મી કરને કો કહા જાય વહ શીઘ્ર હી કર દેના ચાહિયે ॥ ૪૪ ॥

અવ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મેહાવી-મેધાવી) મર્યાદાવર્તી શિષ્ય (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) અનન્તરોક્ત ઇસ સમસ્ત અધ્યયન કે અર્થ કો જાનકર (નમઈ-નમતિ) અવશ્ય વિનયી હોતા હૈ । અર્થાત્ અપને કર્તવ્ય કો નિભાને કે લિયે સાદર ઉદ્યત હો જાતા હૈ । (સે લોએ કિત્તી જાયએ-તસ્ય લોકે કીર્તિઃ

કરોતિ તે બધાં કામો સારીરીતે કરતો રહે છે. ગુરુ મહારાજના કામોમાં કદી પણ આળસ શિષ્યે ન કરવી જોઈએ. જે કાંઈ કરવાનું કહેવામાં આવે તે પ્રસન્ન ચિત્તે શીઘ્ર કરી દેવું જોઈએ. ॥ ૪૪ ॥

હવે અધ્યયનના અર્થને ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે—નચ્ચા ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—મેહાવી-મેધાવી મર્યાદાવર્તી શિષ્ય નચ્ચા-જ્ઞાત્વા અનન્તરોક્ત આ સમસ્ત અધ્યયનના અર્થને બાણીને નમઈ-નમતિ અવશ્ય વિનયી બને છે. અર્થાત્ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવવા માટે સાદર ઉદ્યત રહે છે. સે લોએ કિત્તિ જાયએ-તસ્ય

‘અનેન સફલીકૃતં જન્મ, છિન્નં ચ દુઃષ્ટેયં કર્મવન્ધનં નિસ્તીર્ણથ દુસ્તરઃ સંસાર-  
સાગરઃ’ ઇત્યાદિરૂપા, જાયતે=પાદુર્ભવતિ, અપિ ચ-સ કૃત્યાનાં=આચાર્યાણાં શર-  
ણમ્=આશ્રયો ભવતિ, યથા જગતી=પૃથિવી, ભૂતાનાં=પ્રાણિનાં શરણમ્=આધારો-  
ઽસ્તિ તદ્વત્ ॥ ૪૫ ॥

મૂલમ્—પુજ્ઞાં જર્સ પસીયંતિ, સંવુદ્ધા પુર્વસંથુયા ।

પસન્નાં લાભઈર્સસંતિ, વિઝંલં ઈદ્રિયં સુર્યમ્ ॥૪૬॥

છાયા—પૂજ્યા યસ્ય પ્રસીદન્તિ, સંવુદ્ધાઃ પૂર્વસંસ્તુતાઃ ।

પસન્ના લાભયિપ્યન્તિ, વિપુલમ્ આર્થિકં શ્રુતમ્ ॥ ૪૬ ॥

ટીકા—‘પુજ્ઞા’ ઇત્યાદિ—

સંવુદ્ધાઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવન્તઃ, પૂર્વસંસ્તુતાઃ=પૂર્વ સમ્યક્ પ્રકારેણ સ્તુતાઃ, શ્રુતદા-

જાયતે ) જો સાધુ અપને કર્તવ્ય કો નિભાતા હૈં ઉસકા ઉસે યહ ફલ  
મિલતા હૈં કિ ઉસકી કીર્તિ ઇસ લોક મેં ફેલ જાતી હૈં । લોક કહને લગ  
જાતે હૈં કિ ઇસને અપને જન્મ કો સફલ બના લિયા હૈં । દુઃષ્ટેય કર્મવન્ધન  
ઇસને છેદ ઢાલા હૈં । દુસ્તર સંસાર સાગર ઇસને પાર કર લિયા હૈં ।  
(જહા-યથા) જૈસે-(જગઈ-જગતી) પૃથિવી (ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતાનાં  
શરણં ભવતિ) પ્રાણિયોં કે લિયે આધારભૂત હોતી હૈં, ઇસી તરહ વહ શિષ્ય  
ભી ( કિચ્ચાણ સરણં હવઈ-કૃત્યાનાં શરણં ભવતિ ) અપને આચાર્ય  
મહારાજ કા આધાર બન જાતા હૈં ॥ ૪૫ ॥

‘પુજ્ઞા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ) પહિલે-શ્રુતદાન કે પહિલે હી વિનય-

લોકે કીર્તિઃ જાયતે જે સાધુ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવે છે એને તેનું એ ફળ  
મળે છે કે, તેમની કીર્તિ આ લોકમાં ફેલાઈ જાય છે, લોકો કહેવા લાગે છે  
કે, આણે પોતાના જન્મને સફળ બનાવી લીધો છે. કર્મના બંધનને એણે તોડી  
નાખ્યાં છે, દુસ્તર સંસાર સાગર એણે પાર કરી લીધો છે. જહા-યથા જેમ-  
જગઈ-જગતી પૃથ્વી ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતાનાં શરણં ભવતિ પ્રાણીઓને માટે  
આધારભૂત હોય છે, એજ રીતે તે શિષ્ય પણ પોતાના આચાર્ય મહારાજને  
આશ્રય બની જાય છે. ॥ ૪૫ ॥

પુજ્ઞા-ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ પહેલાં શ્રુતદાનના પહેલાં-વિનયશુભી



કાર્યે રુચિરિચ્છા યસ્ય સ મનોરુચિઃ—ગુરુમનોઽનુવર્તી ન તુ સ્વેચ્છાચારી તિષ્ઠતિ= આસ્તે તથા-તપઃસમાચારીસમાધિસંવૃતઃ—તપસોઽનશનાદેર્દ્વાદશવિધસ્ય સમાચારી ચ સમાધિશ્ચ તપઃસમાચારીસમાધી, તામ્યાં સંવૃતઃ=નિરુદ્ધાસ્રવઃ, પંચ વ્રતાનિ=પ્રાણાતિપાતવિરમણાદીનિ પંચમહાવ્રતાનિ પાલયિત્વા=નિરતિચારં સમારાધ્ય મહાદ્યુતિઃ=મહતી દ્યુતિ યસ્ય સ મહાદ્યુતિઃ=તપસ્તેજઃસમન્વિતઃ, તેજોલેશ્યાપુલાકલઙ્ઘ્યાદિ સહિતો ભવતીત્યર્થઃ ॥ ૪૭ ॥

કાર્ય કો સંપાદન કરને કી જિસકી ઇચ્છા બની રહતી હૈ—ગુરુ મહારાજ કી ઇચ્છાનુસાર ચલને વાલા, સ્વેચ્છાચારી નહીં । એવં (તવોસમાચારિસમાહિસંવુઢે—તપઃસમાચારીસમાધિસંવૃતઃ) અનશન આદિ બારહ પ્રકાર કે તપ કે અનુષ્ઠાન સે, તથા ચિત્તકી શુદ્ધિરૂપ સમાધિ સે જિસને આસ્રવ કે દ્વારકો નિરુદ્ધ કર દિયા હૈ (પંચવયાઈ પાલિયા—પંચવ્રતાનિ પાલયિત્વા) પાંચ પ્રાણાતિપાતવિરમણ આદિ મહાવ્રતોં કા નિરતિચાર પાલન કરકે (મહજ્જુઈ ચિટ્ઠઈ—મહાદ્યુતિઃ તિષ્ઠતિ) તપસ્તેજ સે સમન્વિત હોતા હુઆ તેજોલેશ્યા એવંપુલાકલઙ્ઘિ આદિ સે સહિત હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ગુરુ મહારાજ કે પ્રસાદ સે જિસને શ્રુતજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ એસા શિષ્ય શાસ્ત્રસંમત અર્થ મેં વિગતસંશયહોકર જનતા દ્વારા પ્રસંશનીયજ્ઞાનવાલા માના જાતા હૈ । ઉસકે વચન કો જનતા નિસ્સંદેહ અંગીકાર કર લેનેમેં નિસ્સંકોચિત હો જાતી હૈ । ઉસકી વિનયાદિ

પોતાનો ગુરુ મહારાજના મનોનુકૂળ કાર્ય સંપાદન કરવાની ઇચ્છા બની બની રહે છે. એવા ગુરુ મહારાજની ઇચ્છાનુસાર ચાલવાવાળા સ્વેચ્છાચારી નહિં એવા શિષ્ય કે જેણે તવોસમાચારિસમાહિસંવુઢે—તપઃ સમાચારીસમાધિસંવૃતઃ અનશન આદિ બાર પ્રકારનાતપના અનુષ્ઠાનથી તથા ચિત્તની શુદ્ધિરૂપ સમાધીથી જેણે આશ્રવના દ્વારને નિરુદ્ધ કરી દીધાં છે, પંચવયાઈ પાલિયા—પંચવ્રતાનિ પાલયિત્વા પંચ પ્રણાતિપાત વિરમણ આદિ મહાવ્રતોને નિરતિચાર પાલન કરી મહજ્જુઈ ચિટ્ઠઈ—મહાદ્યુતિઃ તિષ્ઠતિ તપસ્તેજથી સમન્વિત થઈ તેણે લેશ્યા એવં પુલાકલઙ્ઘિ આદિથી સહિત બને છે.

ભાવાર્થ—ગુરુ મહારાજના પ્રસાદથી શ્રુતજ્ઞાન જેણે પ્રાપ્ત કરી લીધું છે એવા શિષ્ય શાસ્ત્રીય સંમત અર્થમાં વિગતસંશય બનીને જનતા દ્વારા પ્રસંશનીય જ્ઞાનવાળા માનવામાં આવે છે. એવા વચનને જનતા નિઃસંદેહ અંગીકાર કરવામાં સંકેતચરહિત બની જાય છે. એની ક્રિયા—સંપત્તિથી ગુરુ મહારાજ

મૂલમ્—સ દેવગંધર્વમણુસ્સપૂઙ્ગ, ચઈત્તુ દેહં મલપંકપૂઙ્ગયં ।  
સિદ્ધે વા હર્વઙ્ગ સાસં, દેવે<sup>૧૩</sup> વાં અપ્પરં મહિદ્ધિં<sup>૧૪</sup> એત્તિ<sup>૧૫</sup> વેમિ<sup>૧૬</sup> ॥૪૮॥

[ સ સિદ્ધ એ વા હર્વ એ ય સાસં, સુરેય વા અપ્પર એ મહિદ્ધિ એ—ત્તિવેમિ ]

॥ ઉત્તરજ્ઞયણસ્સ પઠમજ્ઞયણં સમત્તં ॥

છાયા—સ દેવ ગન્ધર્વમણુપ્યપૂજિતઃ, ત્યક્ત્વા દેહં મલપદ્મપૂતિકમ્ ।

સિદ્ધો વા ભવતિ શાશ્વતઃ, દેવો વા અલ્પરજા મહર્દિક્ક ઇતિ વ્રવીમિ ॥૪૮॥

[ સ સિદ્ધો વા ભવતિ ચ શાશ્વતઃ, સુરશ્વ વા અલ્પરજા મહર્દિક્કઃ—ઇતિ વ્રવીમિ ]

ટીકા—‘સ દેવગંધર્વ૦’ ઇત્યાદિ—

સઃ=પૂર્વોક્તલક્ષણવિશિષ્ટો વિનયવાન્ શિષ્યઃ, ઇદ્ધ લોકે દેવગન્ધર્વમણુપ્ય-  
પૂજિતઃ=દેવૈઃ=વૈમાનિક જ્યોતિષ્કૈઃ, ગન્ધર્વૈઃ—ગન્ધર્વનિકાયો—પલક્ષિતૈર્વ્યન્તરભ-  
વનપતિભિઃ, મણુપ્યૈઃ=ચક્રવર્ત્યાદિભિઃ પૂજિતઃ સંમાનિતો ભવતિ । યથા મલપદ્મપૂ-  
તિકં=મલં=વિષ્ણુત્રાદિકં, તદેવ પદ્મઃકર્દમસ્તેન પૂતિકં=દુર્ગન્ધિયુક્તદેહમ્=ઔદારિકં

ક્રિયાસંપત્તિ સે ગુરુ મહારાજ ઉસ પર સદા પ્રસન્ન રહા કરતે હૈં । દ્વાદશ  
પ્રકાર કી તપસ્યા સે વહ કર્મોં કે આશ્રવ કો રોકને વાલા હો જાતા હૈ ।  
પાંચ મહાવ્રતોં કી આરાધના સે ઉસકા આત્મિક બલ વિશિષ્ટ હોકર  
ઉસકો તપસ્તેજ કી લબ્ધિ સે સંપન્ન બના દેતા હૈ ॥ ૪૭ ॥

‘સદેવ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(સ-સઃ) પૂર્વોક્ત લક્ષણોં સે વિશિષ્ટ વિનયશાલી શિષ્ય  
(દેવગંધર્વમણુસ્સપૂઙ્ગ—દેવગંધર્વમણુપ્યપૂજિતઃ) દેવ વૈમાનિક જ્યોતિષ્ક  
દેવોં સે ગંધર્વ—ગંધર્વનિકાય સે ઉપલક્ષિત વ્યન્તર દેવોં સે, એવં ભવનપતિ-  
દેવોં સે, તથા મણુપ્યોં—ચક્રવર્તી આદિ સે પૂજિત હોતા હૈ । તથા (મલપં-

એના પર સદા પ્રસન્ન રહ્યા કરે છે બાર પ્રકારની તપસ્યાથી તે કર્મના  
આશ્રવને રોકનાર બની જાય છે. અને પાંચ મહાવ્રતોની આરાધનાથી એનું  
આત્મિક બલ વિશિષ્ટ બને છે. અને આથી તેને તપસ્તેજની લબ્ધિ સંપન્ન  
બનાવે છે. ॥ ૪૭ ॥

“સ દેવ ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—સ-સઃ પૂર્વોક્ત લક્ષણની વિશિષ્ટ વિનયશાળી શિષ્ય દેવ ગંધર્વ-  
મણુસ્સપૂઙ્ગ—દેવ ગંધર્વ મણુપ્ય પૂજિતઃ દેવ—વૈમાનિક જ્યોતિષ્ક દેવો, ગંધર્વ—ગંધર્વ  
નિકાયથી ઉપલક્ષિત વ્યન્તર દેવ અને ભવનપતિ દેવો તથા મણુપ્યો—ચક્રવર્તી  
આદિથી પૂજિત બને છે. તથા મલપંક પૂઙ્ગયં દેહં ચઈત્તુ—મલપંકપૂતિકં દેહં ત્યક્ત્વા

મનુષ્યશરીરં, ત્યક્ત્વા, શાશ્વતઃ=સર્વકાલાવસ્થાયી જન્મમરણરહિતઃ સિદ્ધો ભવતિ ।  
 વા=અથવા, સાવશેષકર્મા તુ અલ્પરજાઃ=અલ્પકર્મા મહર્દિકઃ=મહતી=દિવ્યા ઋદ્ધિઃ=  
 વિમાનાદિસમ્પત્, ઉપલક્ષણેન દિવ્યાનિ યુતિયશોવર્ણવલ્લીયાંદીનિ ચ यस્ય સ  
 મહર્દિકઃ, તત્ર=યુતિઃ-શરીરાભરણકાન્તિઃ, યશઃ=કીર્તિઃ, વર્ણઃ=શુક્લાદિઃ, વલં=  
 શારીરિકપરાક્રમઃ, વીર્યમ્=આત્મવલમ્, આદિપદેન-ઇતોઽન્યદપિ સંગ્રાહ્યમ્, એભિઃ  
 સંપન્નઃ, દેવો ભવતિ ।

કપૂર્યં દેહં ચૈત્તુ-મલપંકપૂતિકં દેહં ત્યક્ત્વા) શુક્રશોણિત સે જન્ય્ ઇસ  
 ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર (સાસણ સિદ્ધે હવઈ-શાશ્વતઃ સિદ્ધો  
 વા ભવતિ) અનંત કાલ તક સદા સિદ્ધિ સ્થાન મેં રહને વાલા સિદ્ધ  
 પરમાત્મા હો જાતા હૈ । (વા) અથવા યદિ વહ સિદ્ધ નહોં વને તો  
 (અપ્પરમહિદ્ધિદેવે વા હવઈ-અલ્પરજાઃ મહર્દિકઃ દેવો વા ભવતિ)  
 અલ્પકર્મા મહર્દિક દેવ હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ — પૂર્વોક્તલક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા  
 પૂજ્ય હોતા હૈ, એવં ઇસ અપવિત્ર ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર  
 સિદ્ધ હો જાતા હૈ । યદિ કર્મ શેષ રહ જાય તો વહ મહાઋદ્ધિશાલી દેવ  
 હોતા હૈ । યહાં ઋદ્ધિસે યુતિ, યશ, વર્ણ, વલ, વીર્ય ઇન સવકા  
 ગ્રહણ હુવા હૈ । વિમાન આદિ સંપત્તિ કા નામ ઋદ્ધિ હૈ । શરીર એવં  
 આભરણ કી કાન્તિ કા નામ યુતિ હૈ । કીર્તિ કા નામ યશ હૈ । શરીર  
 કા જો શુક્લ આદિ વર્ણ હૈ — ઉસકા નામ વર્ણ હૈ । શારીરિક  
 પરાક્રમ કા નામ વલ એવં આત્મજન્ય શક્તિ કા નામ વીર્ય હૈ ।

શુક્ર શોણિત જન્ય આ ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી સાસણ સિદ્ધે હવઈ-  
 શાશ્વતઃ સિદ્ધો ભવતિ અનન્તકાળ સુધી સદા સિદ્ધિ સ્થાનમાં રહેવાવાળા સિદ્ધ  
 પરમાત્મા બની જાય છે. વા અથવા જો તે સિદ્ધ ન બને તો, અલ્પકર્મા મહર્-  
 દ્ધિક દેવ બની જાય છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત લક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા પૂજ્ય બને  
 છે. અને આ અપવિત્ર ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી કાં તો સિદ્ધ બની  
 જાય છે. જો કર્મ શેષ રહી જાય તો તે મહાઋદ્ધિ શાળી દેવ બને છે. ઋદ્ધિથી  
 યુતિ, યશ, વર્ણ, બળ, વીર્ય, આ બધાનું ગાથામાં ગ્રહણ કરેલ છે, વિમાન  
 આદિ સંપત્તિનું નામ ઋદ્ધિ છે. શરીર અને આભરણની કાન્તિનું નામ  
 યુતિ છે, કીર્તિનું નામ યશ છે. શરીરનો જે શુક્લ આદિ વર્ણ છે-દ્રવ્ય લેશ્યા  
 છે-એનું નામ વર્ણ છે. શારીરિક પ્રાક્રમનું નામ બળ છે. અને

इति शब्दः समाप्तिबोधकः, अथवा 'इति' एवम्-अमुना प्रकारेण एतद् विनयश्रुताख्यमध्ययनं ब्रवीमि यथा भगवता कथितं तथा कथयामि न तु स्वबुद्ध्या परिकल्प्य किञ्चिद् ब्रवीमीत्यर्थः ॥ ४८ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-  
कलितललितकलापालापक-प्रवि-शुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्माय-  
कवादिमानमर्दक-श्रीशाहछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-  
“ जैनशास्त्राचार्य ”-पदभूषित-कोल्हापुर-राजगुरु-  
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-  
श्रीधासीलालव्रतिविरचितायां श्रीमदुत्तराध्ययन-  
मूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां  
विनयसमाधिनामकं प्रथममध्ययनं  
संपूर्णम् ॥ १ ॥



(‘તિવેમિ’-इति ब्रवीमि) यह पद अध्ययनकी समाप्ति का सूचक है, इसका यह अर्थ है कि-श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं कि हे जम्बू! यह विनयश्रुत नाम का अध्ययन जैसा भगवान से सुना है उसी तरह का मैंने कहा है। इस में अपनी बुद्धि से कल्पित कुछ नहीं कहा गया है ॥ ४८ ॥

विनयश्रुतनामक प्रथम अध्ययन सम्पूर्ण ॥ १ ॥



શક્તિનું નામ વીર્ય છે. “તિવેમિ” ‘इति ब्रवीमि’ આ પદ અધ્યયનની સમાપ્તિનું સૂચક છે તેનો અર્થ આ છે કે-શ્રી સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે હે જંબૂ! આ વિનયશ્રુત નામનું અધ્યયન જેવું ભગવાનથી સાંભળ્યું છે તેજ પ્રકારે મેં કહ્યું છે. આમાં પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કંઈ નથી કહ્યું. ॥ ૪૮ ॥

॥ આ વિનયશ્રુત નામનું પ્રથમ અધ્યયન સંપૂર્ણ ॥ ૧ ॥



## દ્વિતીયાધ્યયનમ્ ।

વિનયશ્રુતાણ્યં પ્રથમમધ્યયનં વર્ણિતમ્, હદાર્નીં દ્વિતીયમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે ।  
અસ્ય ચાયમભિસમ્બન્ધઃ—હદાનન્તરાધ્યયને વિનયઃ સવિસ્તરં વર્ણિતઃ, સ ચાનુકૂલપ-  
તિકૂલપરીપહજયનશીલૈરેવ કર્તું શક્યતે ઇતિ દ્વિતીયં પરીપહાણ્યમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે—

યદ્વા—વિનયારાધકાઃ પ્રાયઃ પરીપહભાજો ભવન્ત્યેવેતિ દ્વિતીયં પરીપહાણ્ય-  
મધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્યેદમાદ્યં સૂત્રમ્—

મૂલમ્—સુયં મે આઠસં ! તેણં ભગવયા એવમકલાયં—હહ  
ખલુ વાવીસં પરીસહા સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં કાસવેણં  
પવેદયા, જે ભિક્ખૂ સોચ્ચા નચ્ચા જિચ્ચા અભિભૂય ભિક્ખા-  
યરિયાણ પરિવ્વયંતો પુટ્ઠો નો વિનિહન્નેજ્જા ॥૧॥

છાયા—શ્રુતં મે આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતા એવાખ્યાતમ્—હહ ખલુ દ્વાવિંશતિઃ  
પરીપહાઃ શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ કાશ્યપેન પ્રવેદિતાઃ, યાન્ ભિક્ષુઃ શ્રુત્વા  
જ્ઞાત્વા જિત્વા અભિભૂય ભિક્ષાચર્યાયાં પરિવ્રજન્ સ્પૃષ્ઠો નો વિનિહન્યેત ॥૧॥

## દ્વિતીય અધ્યયન ।

વિનયશ્રુત નામ કે પ્રથમ અધ્યયન કા વર્ણન હુવા, અવ સૂત્રકાર  
દ્વિતીય અધ્યયન કા વર્ણન કરતે હૈં । પ્રથમ અધ્યયન કે સાથ હસકા  
સંબંધ હસ પ્રકાર હૈ—પ્રથમ અધ્યયન મેં વિસ્તારપૂર્વક વિનયધર્મ કા  
વર્ણન કરને મેં આયા હૈ । ઁસ વિનયધર્મ કી આરાધના પરીપહોં કો  
જીતને વાલા હી કર સકતા હૈ, ઁર વિનયશીલ કો પ્રાયઃ પરીપહ  
ઉત્પન્ન હોતે હી હૈં હસલિણ અવ પરીપહાધ્યયન કહતે હૈં જિસકા યહ  
પ્રથમસૂત્ર હૈ—“સુયંમે” હત્યાદિ ।

## ખીજું અધ્યયન

વિનય શ્રુત નામના પ્રથમ અધ્યયનનું વર્ણન પુરૂં થયું હવે સૂત્રકાર  
ખીજા અધ્યયનનું વર્ણન કરે છે. પ્રથમ અધ્યયનની સાથે એનો સંબંધ આ  
પ્રકારનો છે. પ્રથમ અધ્યયનમાં વિસ્તાર પૂર્વક વિનય ધર્મનું વર્ણન કરવામાં  
આવેલ છે. તે વિનય ધર્મની આરાધના પરિપહને જીતવાવાળા જ કરી શકે છે  
અને વિનયશીલને પરિપહ ધણે ભાગે ઉત્પન્ન થાય જ છે, આ માટે હવે “પરિ-  
પહાધ્યયન” કહેવામાં આવે છે જેનું આ પ્રથમ સૂત્ર છે સયંમે ”



ટીકા—શ્રીસુધર્મા સ્વામી શ્રીજમ્બૂસ્વામિને પ્રતિ કથયતિ—‘સુયં મે આડસં!’  
 ઇત્યાદિ । હે આયુષ્મન્ ! ભગવતા=જ્ઞાનાદિયુક્તેન, તેન=તીર્થકરેણ, એવમ્=વક્ષ્યમા-  
 નપ્રકારેણ, યત્ આખ્યાતં=સકલજીવભાષાપરિણામિન્યા ભાષયા કથિતમ્, ઉક્તઞ્ચ—

દેવા દૈવીં નરા નારીં, શવરાશ્વાપિ શાવરીમ્ ।

તિર્યંચોઽપિ હિ તૈર્થીં, મેનિરે ભગવદ્ભિરમ્ ॥ ૧ ॥

તત્, મે=મયા, શ્રુતમ્ । ભગવત્કથિતમેવાર્થ તવાગ્રે વર્ણયામીતિ ભાવઃ । અસ્ય  
 સવિસ્તરં વ્યાખ્યાનં જિજ્ઞાસુભિરાચારાદ્ગમ્યસ્ય મત્કૃતાચારચિન્તામણિટીકાયાં  
 દ્રષ્ટવ્યમ્ । યદ્વા—‘આડસંતેણં’ ઇત્યેકં પદં, ‘મયા’ ઇત્યસ્ય વિશેષણમ્ ।

શ્રી સુધર્મા સ્વામી શ્રી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં—(આડસં—આયુષ્મન્)  
 કિ હે આયુષ્મન્ ! જમ્બૂ ! (તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં—તેન ભગવતા  
 એવં આખ્યાતમ્) જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે યુક્ત ઉન તીર્થકર ભગવાન્ શ્રી મહા-  
 વીર સ્વામી ને વક્ષ્યમાણ પ્રકાર સે કહા હૈ વહ (મે સુયં—મયા શ્રુતમ્)  
 મૈને સુના હૈ વહી મૈ કહતા હું । પ્રભુ કી ભાષા સર્વભાષામય હોતી હૈ,  
 કહા બી હૈ—“દેવા દૈવીં” ઇત્યાદિ ।

પ્રભુ કી વાણી કો દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સમી અપની  
 અપની ભાષા મેં સમજતે હૈં ।

હસ સૂત્ર કા વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગ સૂત્ર કી આચારચિન્તામણિ  
 ટીકા મેં કિયા ગયા હૈ, ઇસલિએ જિજ્ઞાસુ કો વહાં સે દેખ લેના ચાહિયે ।  
 “આડસં તેણં” હસ પદ કી સંસ્કૃત છાયા “આયુષ્મન્ તેન” એસી ન

શ્રી સુધર્માસ્વામી, શ્રી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે આડસં—આયુષ્મન્ ‘હે  
 આયુષ્મન્ જમ્બૂ ! તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં—તેન ભગવતા એવં આખ્યાતમ્ જ્ઞાનાદિ  
 ગુણોથી યુક્ત એવા તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ વક્ષ્યમાણ પ્રકાર  
 થી કહું છે મે સુયં—મયા શ્રુતમ્—તે મેં સાંભળ્યું છે એ હું કહું છું. પ્રભુની  
 ભાષા સર્વભાષામય હોય છે. કહું પણ છે—દેવા દૈવીં ઇત્યાદિ.

પ્રભુની વાણીને દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સઘળા પોત પોતાની  
 ભાષામાં સમજે છે.

આ સૂત્રનું વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગસૂત્રની આચારચિન્તામણી ટીકામાં  
 કરેલ છે. માટે જિજ્ઞાસુએ ત્યાંથી જોઈ લેવું જોઈએ. “આડસં તેણં” એ  
 પદની સંસ્કૃત છાયા “આયુષ્મન્ તેન” એવી ન થતાં આડસંતેણં” “આવસતા”

મનુષ્યશરીરં, ત્યક્ત્વા, શાશ્વતઃ=સર્વકાલાવસ્થાયી જન્મમરણરહિતઃ સિદ્ધો ભવતિ ।  
 વા=અથવા, સાવશેષકર્મા તુ અલ્પરજાઃ=અલ્પકર્મા મહર્દિકઃ=મહતી=દિવ્યા ઋદ્ધિઃ=  
 વિમાનાદિસમ્પત્, ઉપલક્ષણેન દિવ્યાનિ ધુતિયશોવર્ણવલ્લીયાદીનિ ચ यस્ય સ  
 મહર્દિકઃ, તત્ર=ધુતિઃ-શરીરાભરણકાન્તિઃ, યશઃ=કીર્તિઃ, વર્ણઃ=શુક્લાદિઃ, ચલં=  
 શારીરિકપરાક્રમઃ, વીર્યમ્=આત્મચલમ્, આદિપદેન-ઇતોઽન્યદપિ સંગ્રાહ્યમ્, એભિઃ  
 સંપન્નઃ, દેવો ભવતિ ।

કપૂર્યં દેહં ચૈત્તુ-મલપંકજૂતિકં દેહં ત્યક્ત્વા) શુક્લશોણિત સે જન્ય ઇસ  
 ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર ( સાસણ સિદ્ધે હવઈ-શાશ્વતઃ સિદ્ધો  
 વા ભવતિ ) અનંત કાલ તક સદા સિદ્ધિ સ્થાન મેં રહેને ચાલા સિદ્ધ  
 પરમાત્મા હો જાતા હૈ । ( વા ) અથવા યદિ વહ સિદ્ધ નહીં બને તો  
 ( અપ્પરણમહિદ્ધિદેવે વા હવઈ-અલ્પરજાઃ મહર્દિકઃ દેવો વા ભવતિ )  
 અલ્પકર્મા મહર્દિક દેવ હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ — પૂર્વોક્તલક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા  
 પૂજ્ય હોતા હૈ, એવં ઇસ અપવિત્ર ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર  
 સિદ્ધ હો જાતા હૈ । યદિ કર્મ શેષ રહ જાય તો વહ મહાઋદ્ધિશાલી દેવ  
 હોતા હૈ । યહાં ઋદ્ધિસે ધુતિ, યશ, વર્ણ, ચલ, વીર્ય ઇન સબકા  
 ગ્રહણ હુવા હૈ । વિમાન આદિ સંપત્તિ કા નામ ઋદ્ધિ હૈ । શરીર એવં  
 આભરણ કી કાન્તિ કા નામ ધુતિ હૈ । કીર્તિ કા નામ યશ હૈ । શરીર  
 કા જો શુક્લ આદિ વર્ણ હૈ — ઉસકા નામ વર્ણ હૈ । શારીરિક  
 પરાક્રમ કા નામ ચલ એવં આત્મજન્ય શક્તિ કા નામ વીર્ય હૈ ।

શુક શોણિત જન્ય આ ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી સાસણ સિદ્ધે હવઈ-  
 શાશ્વતઃ સિદ્ધો ભવતિ અનંતકાળ સુધી સદા સિદ્ધિ સ્થાનમાં રહેવાવાળા સિદ્ધ  
 પરમાત્મા બની જાય છે. વા અથવા જો તે સિદ્ધ ન બને તો, અલ્પકર્મા મહર્દિક  
 દેવ બની જાય છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત લક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા પૂજ્ય બને  
 છે. અને આ અપવિત્ર ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી કાં તો સિદ્ધ બની  
 જાય છે. જો કર્મ શેષ રહી જાય તો તે મહાઋદ્ધિ શાળી દેવ બને છે. ઋદ્ધિથી  
 ધુતિ, યશ, વર્ણ, બળ, વીર્ય, આ બધાનું ગાથામાં ગ્રહણ કરેલ છે, વિમાન  
 આદિ સંપત્તિનું નામ ઋદ્ધિ છે. શરીર અને આભરણની કાન્તિનું નામ  
 ધુતિ છે, કીર્તિનું નામ યશ છે. શરીરનો જો શુક્લ આદિ વર્ણ છે-દ્રવ્ય લેશ્યા  
 છે-એનું નામ વર્ણ છે. શારીરિક પ્રાક્રમનું નામ બળ છે. જન્ય

ટીકા—શ્રીસુધર્મા સ્વામી શ્રીજમ્બૂસ્વામિનં પ્રતિ કથયતિ—‘ સુયં મે આઝસં !’  
 ઇત્યાદિ । હે આયુષ્મન્ ! ભગવતા=જ્ઞાનાદિયુક્તેન, તેન=તીર્થંકરેણ, એવમ્=વક્ષ્યમા-  
 નપ્રકારેણ, યત્ આખ્યાતં=સકલજીવભાપાપરિણામિન્યા ભાપયા કથિતમ્, ઉક્તશ્ચ—

દેવા દૈવીં નરા નારીં, શવરાશ્વાપિ શાવરીમ્ ।

તિર્યંચોઽપિ હિ તૈસ્થોં, મેનિરે ભગવદ્ધિરમ્ ॥ ૧ ॥

તત્, મે=મયા, શ્રુતમ્ । ભગવત્કથિતમેવાર્થં તવાગ્રે વર્ણયામીતિ ભાવઃ । અસ્ય  
 સવિસ્તરં વ્યાખ્યાનં જિજ્ઞાસુભિરાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય મત્કૃતાચારચિન્તામણિટીકાયાં  
 દ્રષ્ટવ્યમ્ । યદ્વા—‘ આઝસંતેણં ’ ઇત્યેકં પદં, ‘ મયા ’ ઇત્યસ્ય વિશેષણમ્ ।

શ્રી સુધર્માસ્વામી શ્રી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હેં—( આઝસં—આયુષ્મન્ )  
 કિ હે આયુષ્મન્ ! જમ્બૂ ! ( તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં—તેન ભગવતા  
 એવં આખ્યાતમ્ ) જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે યુક્ત ડન તીર્થંકર ભગવાન્ શ્રી મહા-  
 વીર સ્વામી ને વક્ષ્યમાણ પ્રકાર સે કહા હે વહ ( મે સુયં—મયા શ્રુતમ્ )  
 મેંને સુના હે વહી મેં કહતા હું । પ્રભુ કી ભાપા સર્વભાપામય હોતી હે,  
 કહા મી હે—“ દેવા દૈવીં ” ઇત્યાદિ ।

પ્રભુ કી વાણી કો દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સમી અપની  
 અપની ભાપા મેં સમજતે હેં ।

હસ સૂત્ર કા વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગ સૂત્ર કી આચારચિન્તામણિ  
 ટીકા મેં કિયા ગયા હે, ઇસલિએ જિજ્ઞાસુ કો વહાં સે દેવ લેના ચાહિયે ।  
 “ આઝસં તેણં ” હસ પદ કી સંસ્કૃત છાયા “ આયુષ્મન્ તેન ” એસી ન

શ્રી સુધર્માસ્વામી, શ્રી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે આઝસં—આયુષ્મન્ ‘ હે  
 આયુષ્મન્ જમ્બૂ ! તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં—તેન ભગવતા એવં આખ્યાતમ્ જ્ઞાનાદિ  
 ગુણોથી યુક્ત એવા તીર્થંકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ વક્ષ્યમાણ પ્રકાર  
 થી કહ્યું છે મે સુયં—મયા શ્રુતમ્—તે મેં સાંભળ્યું છે એ હું કહું છું. પ્રભુની  
 ભાપા સર્વભાપામય હોય છે. કહ્યું પણ છે—દેવા દૈવીં ઇત્યાદિ.

પ્રભુની વાણીને દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સધળા પોત પોતાની  
 ભાપામાં સમજે છે.

આ સૂત્રનું વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગસૂત્રની આચારચિન્તામણી ટીકામાં  
 કરેલ છે. માટે જિજ્ઞાસુએ ત્યાંથી જોઈ લેવું જોઈએ. “ આઝસં તેણં ” એ  
 પદની સંસ્કૃત છાયા “ આયુષ્મન્ તેન ” એવી ન થતાં આઝસંતેણં “ આવસતા ”

## દ્વિતીયાધ્યયનમ્ ।

વિનયશ્રુતાખ્યં પ્રથમમધ્યયનં વર્ણિતમ્, હદાનીં દ્વિતીયમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે ।  
અસ્ય ચાયમભિસમ્બન્ધઃ—હદાનન્તરાધ્યયને વિનયઃ સવિસ્તરં વર્ણિતઃ, સ ચાનુકૂલપ-  
તિકૂલપરીપહજયનશીલૈરેવ કર્તું શક્યતે इति દ્વિતીયં પરીપહાખ્યમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે—

યદ્વા—વિનયારાધકાઃ પ્રાયઃ પરીપહભાજો ભવન્ત્યેવેતિ દ્વિતીયં પરીપહાખ્ય-  
મધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્યેદમાદ્યં સૂત્રમ્—

મૂલમ્—સુયં મે આહસં ! તેણં ભગવયા એવમકલાયં—હહ  
ખલુ વાવીસં પરીસહા સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં કાસવેણં  
પવેહયા, જે ભિક્ખૂ સોચ્ચા નચ્ચા જિચ્ચા અભિભૂય ભિક્ખા-  
યરિયાણ પરિવ્વયંતો પુટ્ઠો નો વિનિહન્નેજ્જા ॥૧॥

છાયા—શ્રુતં મે આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતા એમાખ્યાતમ્—હહ ખલુ દ્વાવિંશતિઃ  
પરીપહાઃ શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ કાશ્યપેન પ્રવેદિતાઃ, યાન્ ભિક્ષુઃ શ્રુત્વા  
જ્ઞાત્વા જિત્વા અભિભૂય ભિક્ષાચર્યાયાં પરિવ્રજન્ સ્પૃષ્ઠો નો વિનિહન્યેત ॥૧॥

## દ્વિતીય અધ્યયન ।

વિનયશ્રુત નામ કે પ્રથમ અધ્યયન કા વર્ણન હુવા, અવ સૂત્રકાર  
દ્વિતીય અધ્યયન કા વર્ણન કરતે હૈં । પ્રથમ અધ્યયન કે સાથ હસકા  
સંબંધ હસ પ્રકાર હૈ—પ્રથમ અધ્યયન મેં વિસ્તારપૂર્વક વિનયધર્મ કા  
વર્ણન કરને મેં આયા હૈ । ઁસ વિનયધર્મ કી આરાધના પરીપહોં કો  
જીતને વાલા હી કર સકતા હૈ, ઁર વિનયશીલ કો પ્રાયઃ પરીપહ  
ઉત્પન્ન હોતે હી હૈં હસલિણ અવ પરીપહાધ્યયન કહતે હૈં જિસકા યહ  
પ્રથમસૂત્ર હૈ—“ સુયંમે ” હત્યાદિ ।

## ખીજુ અધ્યયન

વિનય શ્રુત નામના પ્રથમ અધ્યયનનું વર્ણન પુરું થયું હવે સૂત્રકાર  
ખીજા અધ્યયનનું વર્ણન કરે છે. પ્રથમ અધ્યયનની સાથે એનો સંબંધ આ  
પ્રકારનો છે. પ્રથમ અધ્યયનમાં વિસ્તાર પૂર્વક વિનય ધર્મનું વર્ણન કરવામાં  
આવેલ છે. તે વિનય ધર્મની આરાધના પરિપહને જીતવાવાળા જ કરી શકે છે  
અને વિનયશીલને પરિપહ ધણે ભાગે ઉત્પન્ન થાય જ છે, આ માટે હવે “ પરિ-  
પહાધ્યયન ” કહેવામાં આવે છે જેનું આ પ્રથમ સૂત્ર છે સુયંમે ઈ

एवं श्रीसुधर्मस्वामिना प्रोक्ते सति श्री जम्बूस्वामी पृच्छति—

मूलम्—कयरे ते खलु वावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयंतो पुट्ठो नो विनिहन्नेज्जा? ॥२॥

छाया—कतरे ते खलु द्वाविंशतिः परीपदाः श्रमणेन भगवता महावीरेण काश्यपेन प्रवेदिताः । यान् भिक्षुः श्रुत्वा ज्ञात्वा जित्वा अभिभूय भिक्षाचर्यायां परिव्रजन् स्पृष्टो न विनिहन्येत ? ॥२॥

टीका—‘ कयरे ते ’ इत्यादि ।

कतरे=किं नाम कास्ते=अनन्तरसूत्रोक्ताः खलु द्वाविंशतिः परीपदाः, अत्र खलु शब्दो वाक्यालंकारे, शेषपदानां व्याख्या पूर्ववत् ॥

तदा श्रीसुधर्मा स्वामी श्रीजम्बूस्वामिनं प्रति प्राह—

मूलम्—इमे ते खलु वावीसं परीसहा समणेणं भगवया

इस तरह श्री सुधर्मास्वामि का कहने पर श्री जम्बू स्वामी पूछने लगे—‘ कयरे ’ इत्यादि ।

( कासवेणं ) काश्यपगोत्री ( समणेणं भगवया महावीरेणं ) श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जिन २२ परिषहों का ( पवेइया-प्रवेदिता ) वर्णन किया है और जिनके सुनने आदि से भिक्षाचर्या में घूमता हुवा मुनि उन परिषहों से स्पृष्ट होने पर भी संयममार्ग से चलित नहीं होता है उन परिषहों के नाम क्या २ हैं ? ।

सुधर्मास्वामी जंबूस्वामी के २२ परिषहों के नामों को जानने विषयक प्रश्न का उत्तर देने के लिये कह रहे हैं कि हे जंबू ! सुनो—

આ પ્રમાણે શ્રી સુધર્માસ્વામીએ કહ્યું ત્યારે જમ્બૂસ્વામી ફરી પૂછવા લાગ્યા કયરે ઇત્યાદિ.

કાસવેણં કાશ્યપગોત્રી “સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં” શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ૨૨ પરિષદોનું પવેइया-પ્રવેદિતા વર્ણન કરેલ છે. અને જેના સાંભળવા આદિથી ભિક્ષાચર્યામાં ફરી રહેલ મુનિ એ પરિષદોથી સ્પૃષ્ટ થયા પછી પણ સંયમ માર્ગથી ચલિત બનતા નથી. એ પરિષદોનાં નામ કયાં કયાં છે ?

સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને ૨૨ પરિષદોના નામને જાણવા અંગેના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતાં કહે છે કે, કે જમ્બૂ ! સાંભળો. “ઈમે” ઇત્યાદિ !



કદાચિત્ સ્પૃષ્ટઃ=પરીપહેરાક્રાન્તઃ સન્, ન વિનિહન્યેત=મોક્ષમાર્ગાત્ પ્રચ્યુતો ન ભવેદિત્યર્થઃ । ‘ભિક્ષાચરિયા’ ઇત્યનેન ભિક્ષાટને પ્રાયઃ પરીપદાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ, ઇતિ સૂચિતમ્ ॥

નહીં હોવે । “ભિક્ષાચરિયા” ઇસસે યહ પ્રકટ હોતા હૈ કિ ભિક્ષુ કો ભિક્ષાટન કરતે સમય પ્રાયઃ પરીપદ ઉત્પન્ન હોતે હૈ ।

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર દ્વારા સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામી કો સમજાતે હુએ યહ કહ રહે હૈ કિ હે જમ્બૂ ! મેં ઇસ અધ્યયન મેં ૨૨પરીપદોં કે સંબંધ મેં જો કુછ બી વિવેચન કરૂંગા વહ સવ જૈસા મેંને પ્રભુ વર્ધમાનસ્વામી કે મુખ સે સુના હૈ વૈસા હી કરૂંગા । ભગવાન્ ને વાઈસ પરીપદ ફરમાયે હૈ—જો ભિક્ષુ ઇન પરીપદોં સે સ્વયં પરાજિત ન હોકર ઇનકો જીતતા રહતા હૈ વહ મોક્ષમાર્ગ સે કબી બી વિચલિત નહીં હોતા હૈ । ભિક્ષાચર્યા કરતે સમય પરીપદોં કે આને કો અર્થાત્ ઉત્પન્ન હોને કી પ્રાયઃ અધિક સંભાવના રહતી હૈ, અતઃ સાધુ કો ડનસે વિચલિત નહીં હોના ચાહિયે । પરીપદ સાધુ કી કસૌટી હૈ । ઇનકે દ્વારા કસા જાને પર જો સાધુ મોક્ષમાર્ગ સે ચલાયમાન નહીં હોતા હૈ, એવં વીર્યોલ્લાસ પ્રકટ કર ઇનકા સામ્હના કરતા હૈ વહ કર્મોં કી નિર્જરા કરતા હુઆ અપના કલ્યાણ કરતા હૈ ॥

પદ્ધતી પ્રગટ થાય છે કે, ભિક્ષુને ભિક્ષાટન કરતી વખતે પ્રાયઃ પરિપદ ઉત્પન્ન થાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને એ સમજાવીને કહે છે કે, હે જમ્બૂ ! હું આ અધ્યયનમાં ૨૨ પરિપદનાં સંબંધમાં જે કંઈ પણ વિવેચન કરીશ. તે મેં પ્રભુ વર્ધમાનસ્વામીથી જે રીતે સાંભળ્યું છે તે કરીશ. ભગવાને બાવીસ ૨૨ પરિપદ ફરમાવ્યા છે. જે ભિક્ષુ આ પરિપદોથી સ્વયં પરાજીત ન બની તેને જીતે છે તે મોક્ષ માર્ગથી કદી પણ વિચલિત થતો નથી. ભિક્ષાચર્યા કરતી વખતે પરિપદોના આવવાની અર્થાત્ ઉત્પન્ન થવાની પ્રાયઃ અધિક સંભાવના રહે છે. આથી સાધુએ તેનાથી વિચલિત ન બનવું જોઈએ. પરિપદ સાધુની કસોટી છે તેના દ્વારા કસાયા પછી સાધુ મોક્ષમાર્ગથી ચલાયમાન નથી થતા તેમજ વિર્યોલ્લાસ પ્રગટ કરી એનો સામનો કરે છે તે ક્રમોની નિર્જરા કરીને પોતાનું કલ્યાણ કરે છે.

ટીકા--તદ્ યથા-ધુધાપરીપદઃ દિગ્ગિચ્છાશબ્દો દેશીયઃ ધુધાર્થે વર્તતે  
સૈવ પરીપદઃ પરિપલ્યતે इति परोपदः, ॥ १ ॥ पिपासापरीपदः - पिपासा  
=तृषा, सैव परीपदः, एवं सर्वत्र परीपदार्थेन समानाधिकार्यं बोध्यम् ॥ २ ॥ शीत-  
परीपदः-शीतं=हेमन्तशिशिरयोर्जातः शीतस्पर्शः, तदेव परोपदः शीतपरीपदः  
॥ ३ ॥ उष्णपरीपदः-उष्णं-ग्रीष्मवर्षासु जातस्तापरूप उष्णस्पर्शः, तदेव परोपदः ॥ ४ ॥  
दंशमशकपरीपदः-दंशमशकाः प्रसिद्धाः, त एव परोपदः दंशमशकपरी-  
पदः, दंशमशकाः परोपदत्ववन्त इत्यर्थः, तत्र परोपदत्वगतैकत्वविवक्षया परोपद  
इत्येकवचनम् ॥ ५ ॥ अचैलं=चैलाभावः जिनकल्पिकविशेषणाम् । स्थविरक-  
ल्पिकानां तु जीर्णं खण्डितमल्पमूल्यं प्रमाणोपेतं च चैलं सदप्यचैलमेव । तदेव

“इमे”-इत्यादि । श્રમણ ભગવાન્ મહાવીર સ્વામી ને જિન ૨૨ પરીપદોં કો  
સહન કરને કે લિણ મિશ્રુકો આદેશ દિયા હૈ વે ૨૨ પરીપદ વે હૈ—

દિગ્ગિચ્છાશબ્દ દેશીય શબ્દ હૈ, ઇસકા અર્થ ધુધા હૈ । દિગ્ગિચ્છારૂપ  
પરીપદ કા નામ દિગ્ગિચ્છાપરીપદ હૈ । ૧ । પિપાસા-શબ્દ કા અર્થ તૃષા હૈ ।  
ઇસરૂપ જો પરીપદ હૈ વહ પિપાસાપરીપદ હૈ । ૨ । હેમન્ત એવં શિશિર  
ઋતુ મેં ઉત્પન્ન શીતસ્પર્શ કા નામ શીત હૈ । ઇસરૂપ જો પરીપદ હૈ  
ઉસકા નામ શીતપરીપદ હૈ । ૩ । ગ્રીષ્મ ઋતુ એવં વર્ષા ઋતુ મેં ઉત્પન્ન હુણ  
તાપ કા નામ ઉષ્ણસ્પર્શ હૈ । ઇસરૂપ પરીપદ કા નામ ઉષ્ણપરીપદ હૈ । ૪ ।  
ડાંસ, મચ્છર, વિચ્છૂ, ચિંટી આદિ કા નામ દંશમશક હૈ । ઇન્કે  
કાટને કી વેદનારૂપ જો પરીપદ હૈ વહ દંશમશક પરીપદ હૈ । ૫ । વસ્ત્રકા  
સર્વથા અભાવ અચેલ હૈ, યહ જિનકલ્પિયોં કો હોતા હૈ । સ્થવિરકલ્પિયોં  
કે જીર્ણ, ખંડિત, અલ્પમૂલ્યવાલે એવં પ્રમાણોપેત વસ્ત્ર હોતે હૈ તો ઘી ઊન્કો

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ૨૨ પરીપદોને સહન કરવાનો ભિક્ષુને  
આદેશ આપેલ છે તે ૨૨ પરિપદ આ છે.

દિગ્ગિચ્છાશબ્દ પરિપદનું નામ દિગ્ગિચ્છાપરીપદ છે (૧) “દિગ્ગિચ્છા”  
એટલે ભૂખ. પિપાસા શબ્દનો અર્થ તૃષા છે, આ રૂપ જે પરીપદ છે તે પિપાસા-  
પરીપદ છે (૨) હેમન્ત અને શિશિર ઋતુમાં ઉત્પન્ન થતાં ઠંડા સ્પર્શનું નામ શીત-  
પરીપદ છે (૩) ગ્રીષ્મ તથા વર્ષા ઋતુમાં ઉત્પન્ન થતા તાપ રૂપ ઉષ્ણ સ્પર્શનું નામ  
ઉષ્ણપરીપદ છે (૪) ડાંસ, મચ્છર, વીંછી, માકડ, આદિનું નામ દંશમશક છે. તેના  
કરડવાની વેદના રૂપ પરીપદ તે દંશમશકપરીપદ છે. (૫) વસ્ત્રનો સદા અભાવ તે અચેલ  
છે એ જીનકલ્પિયોને થાય છે. સ્થવિરકલ્પિયોના જીર્ણ, ખંડિત અલ્પમૂલ્યવાળાં  
એવાં પ્રમાણોપેત વસ્ત્ર હોય છે તો પણ તેને અચેલજ માનવા લેઈએ. એવો  
૩૦ ૩૫

महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा  
अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयंतो पुट्ठो नो विनिहन्नेजा ॥३॥

छाया--इमे ते खलु द्वाविंशतिः परीपहाः श्रमणेन भगवता महावीरेण  
काश्यपेन प्रवेदिताः, यान् भिक्षुः श्रुत्वा ज्ञात्वा जित्वा अभिभूय भिक्षाचर्यायां  
परिव्रजन् स्पृष्टो नो विनिहन्येत ॥३॥

‘इमे ते’ इत्यादि ।

ये द्वाविंशतिः परीपहाः श्रमणेन भगवता महावीरेण काश्यपेन प्रवेदितास्ते  
खलु इमे=अग्रे वक्ष्यमाणाः सन्ति, अनन्तरमेव वक्ष्यमाणत्वात् हृदि वर्तमानाः परी-  
पहाः ‘इदं’ शब्देन निर्दिष्टाः। यान् भिक्षुः श्रुत्वा ज्ञात्वेत्यादि पदानां व्याख्या पूर्ववत्॥  
अथ तानेव नामनिर्देशपूर्वकं दर्शयति—

मूलम्—तं जहा—दिगिंछापरीसहे १, पिवासापरिसहे २, सी-  
यपरीसहे ३, उसिणपरीसहे ४, दंसमसयपरीसहे ५; अचेल-  
परीसहे ६, अरुइपरीसहे ७, इत्थीपरीसहे ८, चरियापरीसहे ९,  
निसीहियापरीसहे १०, सेज्जापरीसहे ११, अक्कोसपरीसहे १२,  
वहपरीसहे १३, जायणापरीसहे १४, अलाभपरीसहे १५,  
रोगपरीसहे १६, तणफासपरीसहे १७, जल्लपरीसहे १८,  
सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९, पन्नापरीसहे २०, अन्नाणपरीसहे २१,  
दंसणपरीसहे २२ ॥४॥

छाया—तद् यथा—क्षुधापरीषहः १, पिवासापरीषहः २, शीतपरीषहः ३,  
उष्णपरीषहः ४, दंसमशकपरीषहः ५, अचैलपरीषहः ६, अरतिपरीषहः ७, स्त्री-  
परीषहः ८, चर्यापरीषहः ९, नैषेधिकीपरीषहः १०, शय्यापरीषहः ११, आक्रोश-  
परीषहः १२, वधपरीषहः १३, याचनापरीषहः १४, अलाभपरीषहः १५,  
रोगपरीषहः १६, तृणस्पर्शपरीषहः १७, जल्लपरीषहः १८, सत्कारपुरस्कारपरीषहः १९,  
प्रज्ञापरीषहः २०, अज्ञानपरीषहः २१, दर्शनपरीषहः २२ ॥ ४ ॥

॥ ૧૫ ॥ રોગઃ=વાતપિત્તશ્લેષ્મણાં વૈપમ્યેણ સમુત્પન્નઃ કુષ્ઠાદિઃ, સ એવ પરીપદ્ધો રોગપરીપદ્ધઃ ॥ ૧૬ ॥ તૃણસ્પર્શઃ-દર્ભાદિસ્પર્શઃ, સ એવ પરીપદ્ધઃ તૃણસ્પર્શપરીપદ્ધઃ ॥ ૧૭ ॥ જલ્લ=મલઃ, સ એવ પરીપદ્ધઃ જલ્લપરીપદ્ધઃ ॥ ૧૮ ॥ સત્કારો વસ્ત્રપાત્રાદિદાનેન સંમાનનમ્, પુરસ્કારોઽભ્યુત્થાનાસનપ્રદાનવન્દનાદિ-સંપાદનમ્, તાવેવ પરીપદ્ધઃ સત્કારપુરસ્કારપરીપદ્ધઃ ॥ ૧૯ ॥ પ્રજ્ઞા=સ્વયંવિમર્શ-પૂર્વકો વસ્તુપરિચ્છેદઃ, સૈવ પરીપદ્ધઃ પ્રજ્ઞાપરીપદ્ધઃ ॥ ૨૦ ॥ અજ્ઞાનપરીપદ્ધઃ—જ્ઞાન=મત્યાદિ, તદભાવસ્તુ અજ્ઞાનમ્ તદેવ પરીપદ્ધઃ ॥ ૨૧ ॥ દર્શનપરીપદ્ધઃ—દર્શન=સમ્યગ્દર્શન, તદેવ ક્રિયાદિવાદિનાં નાનાવિધમતશ્રવણેઽપિ નિશ્ચલતયા ત્રિય-માણત્વાત્ સમ્યક્ પરિપદ્ધમાણં સત્ પરિપદ્ધો ભવતિ ॥ ૨૨ ॥ ૪ ॥

एवं श्रीसुधर्मा स्वामी परीपद्धानां नामान्यभिधाय तेषां स्वरूपं वक्तुकामः प्राह—

मूलम्—परीसहाणं पविर्भेत्ती, कासवेणं पवेर्इया ।

तं भे° उदाहर्हस्सामि, आणुपुर्व्वि सुणेहं मे° ॥१॥

કફ કી વિપમતા સે સમુત્પન્ન કુષ્ઠાદિરૂપ પરીપદ્ધ રોગપરીપદ્ધ હૈ ॥૧૬॥ દર્ભ આદિ કા સ્પર્શરૂપ પરીપદ્ધ તૃણસ્પર્શપરીપદ્ધ હૈ ॥૧૭॥ મેલ આદિરૂપ પરીપદ્ધ જલ્લપરીપદ્ધ હૈ ॥૧૮॥ અન્યદ્વારા વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ કે દેને રૂપ સત્કાર, એવં અભ્યુત્થાન, આસનપ્રદાન તથા વંદના આદિ કરને રૂપ પુરસ્કાર, इन दोनोंरूप परीपद्द सत्कारपुरस्कार परीपद्द है ॥१९॥ स्वयं विमर्शपूर्वक वस्तु के परिच्छेद करनेरूप परीपद्द प्रज्ञापरीपद्द है ॥२०॥ मत्यादिज्ञान के अभावरूप अज्ञानपरीपद्द है ॥२१॥ क्रियावादी आदि के अनेकविध सिद्धान्तों के श्रवण करने पर भी सम्यग्दर्शन को निश्चल-रूप से धार रखने के परिपद्द का नाम दर्शनपरीपद्द है ॥२२॥

ઉત્પન્ન થયેલ કુષ્ઠાદિરૂપ પરીપદ્ધ રોગપરીપદ્ધ છે. (૧૬) દર્ભ આદિના સ્પર્શરૂપ પરીપદ્ધ તૃણસ્પર્શપરીપદ્ધ છે. (૧૭) મેલ આદિરૂપ પરીપદ્ધ જલ્લપરીપદ્ધ છે. (૧૮) અન્યદ્વારા વસ્ત્ર, પાત્ર આદિના દેવારૂપ સત્કાર, અને અભ્યુત્થાન, આસનપ્રદાન તથા વંદના આદિ કરવારૂપ પુરસ્કાર આ બંને રૂપ પરીપદ્ધ સત્કાર-પુરસ્કારપરીપદ્ધ છે. (૧૯) સ્વયં વિમર્શપૂર્વક વસ્તુને નિષ્ક્રિય-પરિચ્છેદ કરવારૂપ પરીપદ્ધ પ્રજ્ઞાપરીપદ્ધ છે. (૨૦) મત્યાદિ જ્ઞાનના અભાવરૂપ પરીપદ્ધ અજ્ઞાનપરીપદ્ધ છે. (૨૧) ક્રિયાવાદી આદિના અनेकविध सिद्धान्तोंને શ્રવણ કરવાથી પણ સમ્યગ્ દર્શનને નિશ્ચય રૂપથી ધારી રાખવાના પરીપદ્ધનું નામ દર્શનપરીપદ્ધ છે. ॥૨૨॥

પરીપઢઃ અચેલપરીપહઃ ॥ ૬ ॥ અરતિપરીપહઃ-રતિઃ=સંયમવિષયિકા પ્રીતિઃ । તદ્વિપરીતા ત્વરતિઃ, સૈવ પરીપહઃ, અરતિપરીપહઃ ॥ ૭ ॥ સ્ત્રી=નારી સૈવ કથંચિદ્ દૃષ્ટા સતી તદ્વતરાગપૂર્વકગતિવિલાસહાસચેષ્ટાચંદુર્વિકારાધવલોકનેઽપિ તદભિલાષનિવર્તનેન પરિપદ્યમાણત્વાત્ પરીપહઃ સ્ત્રીપરીપહઃ ॥ ૮ ॥ ચર્યા-ગ્રામાનુગ્રામ વિહારરૂપા, સૈવ પરીપહઃ ચર્યાપરીપહઃ ॥ ૯ ॥ નૈપેધિકી-સ્વાધ્યાયભૂમિઃ, સૈવ પરીપહઃ-નૈપેધિકીપરીપહઃ ॥ ૧૦ ॥ શય્યા=વસતિઃ, સૈવ પરીપહઃ શય્યાપરીપહઃ ॥ ૧૧ ॥ આક્રોશઃ=અસમ્યભાષણરૂપઃ, સ એવ પરીપહઃ આક્રોશપરીપહઃ ॥ ૧૨ ॥ વધઃ-તાડનં, સ એવ પરીપહઃ વધપરીપહઃ ॥ ૧૩ ॥ યાચનૈવ પરીપહઃ યાચનાપરીપહઃ ॥ ૧૪ ॥ અલાભઃ-અભિલપિતવસ્તુનોઽપ્રાપ્તિઃ, સ એવ પરીપહઃ, અલાભપરીપહઃ

અચેલ હી જાનના ચાહિયે । ઇસ રૂપ પરીપહ હી અચેલ પરીપહ હૈ । ૬ । સંયમવિષયક અપ્રીતિ કા નામ અરતિ હૈ ઇસ અપ્રીતિરૂપ હી અરતિ પરીપહ હૈ । ૭ । સ્ત્રી કે રાગપૂર્વક ગમન, વિલાસ, હાસ્ય, ચેષ્ટા, તથા ચંદુર કે વિકાર કટાક્ષ-આદિ કે અવલોકિત હોને પર મી ડસ વિષય કી કોઈ મી અભિલાષા નહીં કરના-વહ સ્ત્રી પરીપહ હૈ । ૮ । ઇક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં વિહાર કરના ઇસકા નામ ચર્યા હૈ ઇસરૂપ પરીપહ ચર્યાપરીપહ હૈ । ૯ । સ્વાધ્યાય કરને કે સ્થાન કા નામ નૈપેધિકી હૈ । ઇસરૂપ જો પરીપહ હૈ વહ નૈપેધિકી પરીપહ હૈ । ૧૦ । વસતિ રૂપ પરીપહ શય્યાપરીપહ હૈ । ૧૧ । અસમ્યભાષણરૂપ પરીપહ આક્રોશપરીપહ હૈ । ૧૨ । તાડનરૂપ પરીપહ વધપરીપહ હૈ । ૧૩ । યાચનારૂપ પરીપહ યાચનાપરીપહ હૈ । ૧૪ । અભિલપિત વસ્તુ કી અપ્રાપ્તિરૂપ પરીપહ અલાભપરીપહ હૈ । ૧૫ । વાત પિત્ત

પરીપહ અચેલપરીપહ છે. (૬) સંયમવિષયક અપ્રીતિનું નામ અરતિ છે, એ અપ્રીતિરૂપ પરીપહ અરતિપરીપહ છે (૭) સ્ત્રી તરફના રાગપૂર્વક ગમન, વિલાસ, હાસ્ય, ચેષ્ટા તથા ચંદુરના વિકાર-કટાક્ષ આદિના અવલોકન બોધને પણ એ વિષયની કોઈ અભિલાષા ન કરવી તેવો પરીપહ તે સ્ત્રીપરીપહ છે. (૮) એક ગામથી બીજા ગામે વિહાર કરવો એનું નામ ચર્યા છે, આ રૂપ જે પરીપહ તે ચર્યાપરીપહ છે. (૯) સ્વાધ્યાય કરવાના સ્થાનનું નામ નૈપેધિકી છે તેવા રૂપનો જે પરીપહ તે નૈપેધિકીપરીપહ છે. (૧૦) વસ્તીરૂપ પરીપહ શય્યાપરીપહ છે. (૧૧) અસમ્યભાષણ સહન કરવું તે આક્રોશપરીપહ છે. (૧૨) તાડનરૂપ પરીપહ વધપરીપહ છે. (૧૩) યાચનારૂપ પરીપહ તે યાચનાપરીપહ છે. (૧૪) અભિલપિત વસ્તુની અપ્રાપ્તિરૂપ પરીપહ તે અલાભપરીપહ છે. (૧૫) વાત, પિત્ત, કફની વિષમતાથી



તસ્માદાદૌ દ્વાભ્યાં ગાથાભ્યાં ક્ષુધાપરીપદજયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—દિગિંછાપરિગણ દેહે, તવસ્તી મિશ્નૂ થામંવં ।

નં છિંદે નં છિંદાવણ, નં પંણે નં પયોવણ ॥ ૨ ॥

છાયા—ક્ષુધાપરિગતે દેહે, તપસ્વી મિશ્નુઃ સ્થામવાન્ ।

ન છિન્ધ્યાત્ ન છેદયેત્, ન પચેત્ ન પાચયેત્ ॥ ૨ ॥

ટીકા—‘દિગિંછાપરિગણ૦’ ઇત્યાદિ ।

તપસ્વી=પટ્ટાપ્તમહત્તાદિતપોઽનુષ્ઠાનવાન્ સ્થામવાન્=મનોવલ સમન્વિતઃ, મિશ્નુઃ=સાધુઃ, દેહે=શરીરે, ક્ષુધાપરિગતે=ચુષ્ણપા વ્યાપ્તે સતિ, ન છિન્ધ્યાત્=ફલાદિકં સ્વયં ન ત્રોટયેત્, ન છેદયેત્=નાપ્યન્યૈઃ ફલાદીનાં છેદનં કારયેદિત્યર્થઃ, ન પચેત્=સ્વયં પાકં ન કુર્યાત્, ન ચ પાચયેત્=અન્યૈઃ પાકં ન કારયેત્ । इदमुपलक्षणम्—

પંથસમા નત્થિ જરા, દારિદ્ર સમો ય પરિભવો નત્થિ ।

મરણસમં નત્થિ ભયં, ક્ષુહાસમા વેયણા નત્થિ ॥ ૧ ॥

માર્ગ કે સમાન જરા કોઈ નહીં હૈ અર્થાત્—નિરન્તર ચલનેવાલા માર્ગ ગામી જરાજનિત દુઃખોં કા અનુભવ કરતા હૈ । તથા દારિદ્ર્ય કે સમાન અન્ય કોઈ ખી પરિભવ—અર્થાત્ અનાદર નહીં હૈ, તાત્પર્ય યહ હૈ—અન્ય ગુણ કે રહને પર ખી દારિદ્ર્ય કે અસ્તિત્વ મેં મનુષ્ય અનાદર પાતા હૈ । તથા—મરણ કે સમાન ભય નહીં હૈ ઓર ન ક્ષુધા સે વઢકર કોઈ વેદના હૈ, અર્થાત્ મનુષ્ય મરણ કે ભયસે જિતના ડરતા હૈ ઉતના અન્ય સે નહીં । તથા—ક્ષુધાજનિત વેદના જિતની દુઃખદાયી હોતી હૈ ઉતની અન્ય વેદના નહીં ॥ ૧ ॥

પંથસમા નત્થિ જરા, દારિદ્ર્યસમો ય પરિભવો નત્થિ ।

મરણસમં નત્થિ ભયં, ક્ષુહાસમા વેયણા નત્થિ ॥ ૧ ॥

માર્ગના સમાન જરા કોઈ નથી, અર્થાત્ નિરંતર ચાલવાવાળા માર્ગગામી જરાજનિત દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. તથા દારિદ્ર્યના જેવું અન્ય કોઈ પણ પરિભવ—અર્થાત્ અનાદર નથી. તાત્પર્ય એ છે કે, અન્ય ગુણના હોવા છતાં દારિદ્ર્યના અસ્તિત્વમાં માણસ અનાદર પામે છે. તથા મરણના સમાન ભય નથી. અને ક્ષુધાથી વધુ કોઈ વેદના નથી. અર્થાત્ મનુષ્ય મરણના ભયથી જેટલો ડરે છે, એટલો ખીલથી નથી ડરતો, તથા—ક્ષુધાજનક વેદના જેટલી અસહ્ય હોય છે, તેવી ખીલુ કોઈ વેદના નથી. ॥ ૧ ॥

છાયા—પરીપહાણાં પ્રવિભક્તિઃ, કાશ્યપેન પ્રવેદિતા ।

તાં યુષ્માકમ્ ઉદાહરિષ્યામિ, આનુપૂર્વ્યાં શૃણુત મે ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘પરીસહાણં’ ઇત્યાદિ ।

હે શિષ્યાઃ ! પરીપહાણાં પ્રવિભક્તિઃ=પૃથક્ પૃથક્ વિભાગઃ, કાશ્યપેન=કશ્ય=ગોત્રોત્પન્નેન, શ્રીમહાવીરવર્ધમાનસ્વામિના પ્રવેદિતા, પ્રકર્ષણ વ્યોધિતા દ્વાદશપરિપદિ, તાં=પરીપહાણાં પ્રવિભક્તિમ્, આનુપૂર્વ્યાં=અનુક્રમેણ, યથાનિર્દિષ્ટક્રમેણ યુષ્માકમ્ ઉદાહરિષ્યામિ=કથયિષ્યામિ, મે=મત્, મમ સકાશાત્, શૃણુત=સાવધાનતયા શ્રવણગોચરી કુરુત । ‘સુણેહ’—અત્ર વહુવચનમાદરાર્થમ્ ॥ ગા. ૧ ॥

इह सर्वेषु परीपहेषु क्षुधापरीपह एव दुस्सहः । उक्तञ्च—

पथसमा नत्थि जरा, दारिद्र्यसमो य परिभवो नत्थि ।

मरणसमं नत्थि भयं, क्षुधासमा वेयणा नत्थि ॥ ૧ ॥

छाया—પથિસમા નાસ્તિ જરા, દારિદ્ર્યસમથ પરિભવો નાસ્તિ ।

मरणसमं नास्ति भयं, क्षुधासमा वेदना नास्ति ॥ ૧ ॥ इति

इस प्रकार सुधर्मा स्वामी परीपहों के नामोंका कथन करके अब उनका प्रत्येक का स्वरूप प्रकट करते हैं—परीसहाणं—इत्यादि.

हे शिष्य ! ( परीसहाणं पविभक्ती-परीपहाणां प्रविभक्तिः ) परीषहों का यह पृथक् २ विभाग ( कासवेणं-काश्यपेन ) काश्यगोत्रोत्पन्न श्री वर्धमान स्वामीने ( पवेइया-प्रवेदिता ) समवसरण में प्रकट किया है । मैं ( तं मे उदाहरिस्सामि-तां युष्माकं उदाहरिष्यामि ) उस परीषहों के पृथक् २ विभाग को तुम को कहूंगा ( मे आणुपुर्व्वि सुणेह-मे आनु पूर्व्व्यां शृणुत ) अतः मेरे से उस को यथा क्रम तुम सुनो । इन समस्त परीषहों में क्षुधापरीपह ही दुस्सह है । कहा भी है—

આ પ્રકારે સુધર્મા સ્વામી પરીપહોના નામોનું કથન કરીને હવે તે દરેકનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરે છે —પરીસહાણં ઇત્યાદિ.

હે શિષ્ય ! ‘પરીસહાણં પવિભક્તી’-પરીપહાણાં પ્રવિભક્તિઃ પરીપહોનો પ્રથક્ પ્રથક્ વિભાગ કાસવેણં પવેइया-કાશ્યપેન પ્રવેદિતા કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન શ્રી મહાવીર વર્ધમાન સ્વામીએ સમવસરણમાં પ્રગટ કરેલ છે. તં મે ઉદાહરિસ્સામિ-તાં યુષ્માકં ઉદાહરિષ્યામિ હું એ પરીપહોના પ્રથક્ પ્રથક્ વિભાગ તમોને કહીશ. મે આણુપુર્વ્વિ સુણેહ-મે આનુપૂર્વ્વ્યાં શૃણુત આથી યથાક્રમ તેને સાંભળો. મારાથી આ સમસ્ત પરીપહોમાં ક્ષુધા પરિપહ હુકર છે. કહ્યું છે કે—

કિંચ —

મૂલમ્—કાલીપવ્વંગસંકાસે, કિંસે ધમ્મણિસંતણ્ણ ।

માયન્ને ઍસણપાણસ્સ, અદીણમણસો ચેરે ॥૩॥

છાયા — કાલીપર્વસંકાશાઙ્ગઃ, કૃશઃ ધમનિસંતતઃ ।

માત્રજ્ઞઃ અશનપાનસ્ય, અદીનમનાશ્ચરેત્ ॥ ૩ ॥

ટીકા—‘ કાલીપવ્વંગ૦ ’ ઇત્યાદિ ।

કાલીપર્વસંકાશાઙ્ગઃ—કાલી=કાકજઙ્ગા વનસ્પતિ, તસ્યાઃ પર્વાણિ મધ્યે તનૂનિ, અન્ત્યે સ્થૂલાનિ ભવન્તિ તત્સંકાશાનિ=તત્સદૃશાનિ વાહુજઙ્ગાદીન્યઙ્ગાનિ યસ્ય સ તથા, યસ્ય સાધોસ્તપથ્વર્યયા જાનુકૂર્પરાદયોઽવયવાઃ કાકજઙ્ગાવત્ પ્રતલાઃ સન્તિ સ ઇત્યર્થઃ । અત એવ કૃશઃ=કૃશશરીરઃ, ધમનિસંતતઃ=ધમનિભિઃ નાડીભિઃ સંતતઃ=વ્યાપ્તઃ શોણિતમાંસાદીનાં શુષ્કતયા દૃશ્યમાનનાડીયુક્ત ઇત્યર્થઃ । તથા—અશનપાનસ્ય=અશનમ્=ઓદનરોટિકાદિ, પાનં=દુગ્ધાદિ, તયોઃ સમાહારઃ અશનપાનં, તસ્ય, માત્રજ્ઞઃ=પરિમાણજ્ઞાનસમ્પન્નઃ । યાવતાઽઽહારેણ સ્વકીયોદરપૂરણં ભવેત્ તાવત્પ્રમાણમેવાહારં ગૃહ્ણતિ, ન તુ રસાસ્વાદાદિલોભાદધિકં ગૃહ્ણતીતિ ભાવઃ । તથા—અદીનમનાઃ

તાત્પર્યં યદ્દ હૈ કિ સાધુ કો ભૂખસે પીડિત હોને પર ભી નવકોટિ સે વિશુદ્ધ આહાર ગ્રહણ કરના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

ફિર ભી—‘ કાલીપવ્વંગ૦ ’—ઇત્યાદિ ।

( કાલીપવ્વંગસંકાસે—કાલીપર્વાંગસંકાશઃ ) કાલી—કાકજંઘા (વનસ્પતિ વિશેષ)કે પર્વ જૈસે અંગવાલા અત એવ (કિસે—કૃશઃ) કૃશશરીરયુક્ત, ( ધમ્મણિસંતણ્ણ—ધમનિસન્તતઃ ) નસાજાલ સે વ્યાપ્ત, એવં ( અસણપાણસ્સ માયન્ને—અશનપાનસ્ય માત્રજ્ઞઃ ) અશન પાન કી માત્રા કા જ્ઞાતા સાધુ

તાત્પર્યં આ છે કે, સાધુએ ભૂખથી પિડિત હોવા છતાં પણ નવપ્રકારના વિશુદ્ધ આહારને જ ગ્રહણ કરવો જોઈએ. ॥ ગા. ૨ ॥

ફરી પણ કહે છે. કાલિપવ્વંગ૦ ઇત્યાદિ.

કાલિપવ્વંગસંકાસે—કાલીપર્વાઙ્ગ સંકાશઃ કાલી—કાકજંઘાના પર્વ જેવા અંગવાળા અતએવ કિસે—કૃશઃ કૃશ શરીરયુક્ત, ધમ્મણિસંતણ્ણ—ધમનિસંતતઃ નસાજાલથી વ્યાપ્ત અને અસણપાણસ્સ માયન્ને—અશનપાનસ્ય માત્રજ્ઞઃ અશન પાનની માત્રાના જ્ઞાતા સાધુ અદીનમણસો—અદીનમનાઃ અદીન મન યની સંયમના માગ્માં

અન્યં છિન્દન્તં પચન્તં વા નાનુમોદયેત્ । ઉપલક્ષણત્યાદેવ-ન સ્વયં ક્રીणीયાત્ ,  
નાપ્યન્યૈઃ ક્રાપયેત્ , ન ચાન્યં ક્રીણન્તમનુમોદયેત્ । ન સ્વયં હન્યાત્ , ન ચાન્યૈ-  
ર્ધાતયેત્ , ન ચાન્યં ઘનન્તમનુમોદયેત્ । બુશુક્ષયા પીડિતોઽપિ નવકોટિશુદ્ધમેવાહારં  
ગૃહીયાદિતિ ભાવઃ ॥ ગા. ૨ ॥

ધુધા સે અધિક કોઈ વેદના નહીં હૈં इस लिये सब से पहिले सूत्रकार  
प्रथम क्षुधापरिपह का जय कहते हैं—‘ दिगिच्छापरिगण ’-इत्यादि.

(તવસ્સી-તપસ્વી) પઠાષ્ટમભક્તાદિ તપોંકા અનુષ્ઠાન કરને વાલા  
એવં (ધામવં-સ્થામવાન્) મનોવલ સે સમન્વિત (મિક્ષૂ-મિશુઃ)  
-સાધુ (દેહે) શરીર (દિગિચ્છાપરિગણ-ક્ષુધાપરિગતે) ક્ષુધા સે  
વ્યાપ્ત હોને પર ખી (ન છિંદે-ન છિન્ધ્યાત્) ફલાદિક કો સ્વયં છેદે  
નહીં-તોડે નહીં (ન છિંદાવણ-ન છેદયેત્) ન દૂસરોં સે તુડવાવે (ન પણ  
ન પચાવણ-નપચેત્ ન પાચયેત્) ન સ્વયં પકાવે ઓર ન દૂસરોં સે પક-  
વાવે । ઉપલક્ષણ સે (અન્યં છિન્દન્તં પચન્તં વા નાનુમોદયેત્, ન સ્વયં  
ક્રીणीયાત્ નાપ્યન્યૈઃ ક્રાપયેત્ ન ચાન્યં ક્રીણન્તમનુમોદયેત્, ન સ્વયં  
હન્યાત્ ત ચાન્યૈર્ધાતયેત્ ન ચાન્યં ઘનન્તં અનુમોદયેત્) इन पदों का भी  
यहां संग्रह करलेना चाहिये, अर्थात् छेदन करने वाले तथा पकाने वाले  
व्यक्ति की अनुमोदना न करे, न स्वयं खरीदे न दूसरों से खरीदवावे  
और न खरीदने वाले की अनुमोदना करे, न स्वयं हणो न दूसरों से  
हणावे और न हणते हुए की अनुमोदना करे ।

ધુધાથી અધિક કોઈ વેદના નથી, એટલા માટે સૂત્રકાર સૌથી પહેલાં  
ધુધા પરીપહનો જય કરવા કહે છે. દિગિચ્છાપરિગણ-इत्यादि.

તવસ્સી-તપસ્વી છઠ્ઠ અક્રમ ભક્તાદિ તપોનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળા તથા  
ધામવં-સ્થામવાન્ અને મનોબળથી સમન્વીત મિક્ષૂ-મિશુઃ મિશુ-સાધુ દિગિચ્છા  
પરિગણ-ક્ષુધાપરિગતે શરીરે ભૂખથી વ્યાકુળ હોવા છતાં પણ ન છિંદે-ન છિન્ધ્યાત્  
ફળ ફળાદિકને સ્વયં છેદવું નહિ, તોડવું નહિ, ન છિંદાવણ-ન છેદયેત્ બીજાથી  
તોડાવવું નહિ. નપણ ન પચાવણ-નપચેત્ ન પાચયેત્ ન સ્વયં પકાવે, અને ન  
બીજાથી પકાવે. ઉપલક્ષણથી અન્યં છિન્દન્તં પચન્તં વા નાનુમોદયેત્ છેદન કર-  
વાવાળી તથા પકવવાવાળી વ્યક્તિની અનુમોદના ન કરે ન સ્વયં ક્રીणीયાત્ નાન્યૈઃ  
ક્રાપયેત્ ન ચાન્યં ક્રીણન્તમનુમોદયેત્ ન સ્વયં ખરીદે ન બીજાથી ખરીદાવે કે  
ન તેની અનુમોદના કરે. ન સ્વયં હન્યાત્ ન ચાન્યૈર્ધાતયેત્ ન ચાન્યં ઘનન્તમનુમોદયેત્  
ન સ્વયં હણે, ન કોઈથી હણાવે કે ન તેની અનુમોદના કરે.

અત્ર ક્ષુધાપરીપહચિજયે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

આસીદુજ્જયિન્યાં ગજમિત્રનામા શ્રેષ્ઠી । તસ્ય દૃઢવીર્યનામકઃ પુત્રોઽભવત્ ।  
 એકદા ગજમિત્રશ્રેષ્ઠિનો માર્યા મૃતા । તતઃ સંસારાસારતાં વિજ્ઞાય સંજાતવૈરાગ્યો-  
 ઽસૌ દૃઢવીર્યપુત્રેણ સહ પ્રવ્રજિતઃ । સ ચ ગજમિત્રમુનિઃ સ્વ શિષ્યેણ દૃઢવીર્યેણ સહ  
 ગ્રામાનુગ્રામં વિચરંસ્તત્ર તત્ર ધર્મદેશનાં કુર્વન્ સંયમેન તપસાઽત્માનં ભાવયન્  
 વિહરતિ । સ ચૈકદા વિહારં કુર્વન્ વિસ્મૃતમાર્ગઃ સન્ મહારણ્યં પ્રવિષ્ટઃ ।

તત્ર ક્વચિન્મૃગાણાં યુથા ઇતસ્તતો ધાવન્તિ । ક્વચિજ્જમ્બૂકાઃ સ્વપરિવારૈઃ સહ  
 શબ્દાયન્તે । ક્વચિદ્ વ્યાત્રાઉત્પ્લવન્તિ । ક્વચિત્ સિંહા ગર્જન્તિ, યેષાં નાદાનુપશ્રુત્ય

ક્ષુધાપરીપહ કે વિજય કરને મેં દૃષ્ટાંત ઇસ પ્રકાર હૈ—ઉજ્જૈની  
 નગરી મેં ગજમિત્ર નામકા એક સેઠ રહતા થા । ઉસકા એક પુત્ર થા  
 જિસકા નામ દૃઢવીર્ય થા । એક સમય કી વાત હૈ કિ સેઠ કી પત્ની  
 કા દેહાન્ત હો ગયા । ઇસસે સેઠ કો સંસાર, શરીર એવં ભોગોં સે  
 વિરક્તિ આગઈ ઓર અપને પુત્ર કે સાથ ઉન્હોંને દીક્ષા ધારણ કરલી ।  
 સાધુચર્યા કી વિધિ કે અનુસાર સશિષ્ય વે વિહાર કરને લગે । વે  
 જનતા કો ધર્મ કે ઉપદેશ સે વાસિત કરતે ઓર સંયમ એવં તપ સે  
 અપની આત્મા કો ભાવિત કરતે હુએ ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતે થે । એક સમય  
 કી વાત હૈ કિ યે વિહાર મેં માર્ગ ભૂલ ગયે ઓર ભયંકર કિસી અટવી  
 મેં જા પહુંચે । વહાં પહુંચ કર યે દેખતે કયા હૈં કિ કહીં પર ઇધર ઉધર  
 મૃગોં કા કુણ્ડ દોડ રહા હૈ, કહીં પર શૃંગાલ ફિક્કાર કર રહે હૈં

ક્ષુધા પરિપહને જીતવાની ઉપર દૃષ્ટાંત આ પ્રકારે છે—

ઉજ્જૈની નગરીમાં ગજમિત્ર નામનો એક સેઠ રહેતો હતો. તેને એક  
 પુત્ર હતો તેનું નામ દૃઢવીર્ય હતું. એક સમયની વાત છે કે, સેઠની પત્નીને  
 દેહાંત થઈ ગયો. તેથી સેઠને સંસાર શરીર અને ભોગોથી વિરક્તિ આવી ગઈ  
 અને પોતાના પુત્રની સાથે તેણે દીક્ષા ગ્રહણ કરી લીધી. સાધુ ચર્યાની વિધી  
 અનુસાર સશિષ્ય તેઓ વિહાર કરવા લાગ્યા. તેઓ જનતાને ધર્મનો ઉપદેશ  
 આપતાં આપતાં સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા ગ્રામનુ  
 ગ્રામ વિચરવા લાગ્યા. એક સમયની વાત છે કે વિહારમાં એ મુનિરાજ માર્ગ  
 ભૂલી ગયા અને ભયંકર જંગલમાં જઈ પહોંચ્યા. ત્યાં પહોંચતાં તેમણે એવું  
 જોયું કે, જ્યાં ત્યાં મૃગોનાં ટોળાં દોડી રહ્યાં છે, કયાંક શિયાળયાં લાળી કરી  
 રહ્યાં છે, વાઘ ધુમી રહ્યા છે, સિંહ ગર્જ રહ્યા છે, કયાંક સિંહગર્જનના ભયથી



=અવ્યાકુલચિત્તઃ, અશનાદેરપ્રાપ્તૌ દૈન્યં વિપાદં ચ ન કુર્વન્નિત્યર્થઃ, ચરેત્=સંયમમાર્ગે વિચરેત્ । પ્રાકૃતત્વાત્-‘સંકાસ’ ઇતિ વિશેષણસ્ય પરનિપાતઃ ।

( અદીનમણસો-અદીનમનાઃ ) આદીનમન હોકર સંયમ કે માર્ગ મેં ( ચરે-ચરેત્ ) વિચરણ કરે ।

ભાવાર્થ-વિશિષ્ટ તપસ્યાઓં કે અનુષ્ઠાન કરતે ૨ જિસકે શારીરિક અવયવ કાક કી જંઘા કે પર્વ સમાન વીચ મેં પતલે તથા અન્ત મેં સ્થૂલ હો ગયે હૈં, ઓર ઇસસે જિસકા શરીર અત્યંત કૃશ હો ગયા હૈ, તથા શરીર મેં કૃશતા હોને કી વજહ સે હી જિસકે શરીર કે નસાજાલ સ્પષ્ટ દિલ્લાઈ દે રહા હૈ એસા સાધુ ઇતના હી આહાર ગ્રહણ કરે કી જિન સે સંયમયાત્રાકા નિર્વાહ હો સકે ! રસાસ્વાદ કે લોભ સે અધિક આહાર ન લેવે । તથા જિસ સમય તપસ્યા કા પારણા કરને કા અવસર આવે ઉસ સમય યદિ આહાર પ્રાપ્ત ન હો તો બી ચિત્ત મેં કિસી બી પ્રકાર કા વિપાદ ન કરે ઓર સંયમમાર્ગ મેં સદા સાવધાન બને રહને કી ચેષ્ટા કરતા રહે । કાક કી જંઘા કે પર્વ વીચ મેં પતલે એવં અન્ત મેં સ્થૂલ હોતે હૈં, તપસ્યા કરતે ૨ સાધુ કે બી જંઘા આદિ અંગ ઇસી તરહ હો જાતે હૈં ।

ચરે-ચરેત્ વિચરણ કરે.

ભાવાર્થ-વિશિષ્ટ તપસ્યાઓનું અનુષ્ઠાન કરતાં કરતાં જેનાં શારીરિક અવયવ કાકની જંઘાના પર્વ સમાન વચમાં પાતળા તથા અંતમાં સ્થૂળ થઈ ગયેલ હોય અને તેનાથી જેનું શરીર અત્યંત કૃશ થઈ ગયેલ હોય તથા શરીરમાં કૃષ્ણતા આવી જવાના કારણે જેના શરીરની નાડીઓ સ્પષ્ટ દેખાઈ આવે છે, એવા સાધુ એટલો જ આહાર ગ્રહણ કરે કે, જેનાથી સંયમ માર્ગનો નિર્વાહ થઈ શકે. રસ સ્વાદના લોભથી અધિક આહાર ન લે. તથા જે સમય તપસ્યાનું પારણું કરવાનો સમય આવે તે વખતે કદાચ આહાર ન મળી શકે તો પણ ચિત્તમાં કોઈ પણ પ્રકારનો વિપાદ ન કરે અને સંયમ માર્ગમાં સદા સાવધાન બની રહેવાની ચેષ્ટા કરતા રહે. કાકની જંઘાનું પર્વ વચમાં પાતળું અને છેડે સ્થૂળ હોય છે, તપસ્યા કરતાં કરતાં સાધુની જંઘા આદિ અંગ આ પ્રકારનાં થઈ જાય છે.

तत्र वने गच्छतस्तस्य गजमित्रमुनेश्चरणतलं विपमविपभरेण कण्टकाग्रेण विद्ध-  
मभवत् । ततो गन्तुमसमर्थोऽसौ निजायुरल्पमवगम्य चतुर्विधाहारस्य प्रत्याख्यानं  
कर्तुमुद्यतः सन् शिष्यमवदत्-इतोऽन्यत्र गम्यताम्, अत्र दुःसहः खलु क्षुधापरीपह-  
स्तव सोढव्यः स्यात् । शिष्योऽवदत्-भदन्त ! यथा छाया शरीरं विहाय नापस-  
रति, तथाऽहमपि भवदीयचरणयुगलं परित्यज्य नैव गमिष्यामि । इत्युक्त्वाऽसौ

उधर फैले हुए हैं, लताप्रतानों द्वारा ग्रथित होकर एक जैसे वन गये हैं ।  
इस प्रकार यह अटवी अनेक हिंसक जीवों से परिपूर्ण होती हुई जनों  
के लिये सर्वथा दुर्गम थी । कुश काश आदि घास से भरे हुए रहने के  
कारण यहां के मार्ग बड़े ही विकट बने हुए थे । यहां की भूमि ऊंची नीची  
और कांटों से व्याप्त थी ।

इस अटवीमें चलते हुए गजमित्र मुनिराज के पैरों में विपम  
वेदना कारक विपैले कांटे चुमने लगे तथा उनके पैरों के तलिये  
कांटों से विंध गये, इससे ये आगे विहार नहीं कर सके । इन्होंने उस  
समय अपनी अवशिष्ट आयु बहुत अल्प जानकर चतुर्विध आहार के  
परित्याग करने के अभिप्राय से अपने शिष्य से कहा—तुम यहां से  
किसी दूसरी जगह चलेजाओ नहीं तो यहां पर मेरे साथ रहने से  
तीव्र क्षुधापरीपह तुम्हें सहन करना पड़ेगा । गुरु की इस बात को सुनकर  
शिष्य ने कहा, भदन्त ! जिस प्रकार छाया वृक्ष को नहीं छोड़ती है उसी  
तरह मैं भी आप के चरणकमलों को छोड़कर अन्यत्र नहीं जा सकता ।

ઓથી આ બધાં વૃક્ષો એકરૂપ બની ગયાં દેખાય છે, આ પ્રકારે તે જંગલ  
અનેક હિંસક જીવોથી પરિપૂર્ણ હતું, માણસો માટે દરેક રીતે ભયકારક હતું,  
જમીન ઉપર ઉગેલાં ઘાસ વગેરેને કારણે કોઈ સરળ માર્ગ દેખાતો નથી, ભૂમિ  
ઉંચીનીચી અને કાંટાથી ભરેલી હતી.

આ જંગલમાં ચાલતાં ચાલતાં ગજમિત્ર મુનિરાજના પગોમાં ઘણી  
વેદના ઉપજાવે તેવા કાંટા લાગવા લાગ્યા આથી તેના પગોનાં તળીયાં કાંટાથી  
વિંધાઈ ગયાં જેથી તે આગળ વિહાર કરી શક્યાં નહીં તેમણે તે સમય પોતાની  
બાકી રહેલ આયુ ઘણી ટુંકી બાકીને ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરવાના  
ભાવથી પોતાના શિષ્યને કહ્યું, તમે અહિંથી કોઈ અન્ય સ્થળે વિહાર કરો, આ  
સ્થળે મારી સાથે રહેવાથી તમારે ભૂખનો તીવ્ર પરિપક્વ સહન કરવો પડશે,  
શુભ્રની આ વાતને સાંભળીને શિષ્યે કહ્યું-ભદન્ત ! જે પ્રકારે છાયા વૃક્ષને છોડતી  
નથી તેવી રીતે હું પણ આપના ચરણ કમળને છોડીને અન્યત્ર જઈ શકતો નથી.

ક્વચિદ્વયભીતાશ્ચકિતા હસ્તિનઃ પલાયન્તે । ક્વચિચ્ચ . વિપમવિપધરા ભયંકરાઃ  
 ફણિનઃ સ્વકીયવિસ્તૃતફળાટોપમુત્થાપ્ય સમુત્તિષ્ઠન્તિ । તથા વૃદ્ધવિપાણધારિણઃ  
 સ્થૂલકાયાઃ શ્યામવર્ગા મહિષાઃ ક્વચિત્ સજલપદ્ધિલે ગર્તે શરીરપરિવર્તનેન પદ્ધલિષ્ત-  
 વેદાઃ સન્તિ । ક્વચિત્ તથૈવ યૂકરાણાં યૂથાઃ પરિભ્રમન્તિ । ક્વચિદ્વાનરાઃ ક્વચિદ્  
 ઋક્ષા અત્યુત્પ્લવન્તિ । લતાવહ્નીસમાવૃતા નિવિડચ્છાયા વિટપિનઃ પરિતઃ સમુલ્લ-  
 સન્તિ । ક્વચિન્નાનાવિધાનિ નિકૃજ્ઞાનિ ભવનાનીવ વિલપન્તિ । ક્વચિત્ કણ્ટકિનો  
 વૃક્ષાઃ પરિતઃ પરસ્પરં લતાવિતાનૈરુદ્ગ્રયિતાઃ સન્તિ, યેષાં કણ્ટકા ઇતસ્તતો વિ-  
 કીર્ણાઃ સન્તિ । એવં વહુર્હિસસંકુલ્લ કુશકાશાદિતૃણપરિપૂર્ણા નિમ્નોન્નતા કણ્ટ-  
 કિતા જનાનાં દુર્ગમા વનસ્થલી વર્તતે ।

કહીં પર વ્યાગ્ર ઘૂમ રહે હૈં, કહીં પર સિંહ ગર્જ રહે હૈં, કહીં  
 પર સિંહ કી ગર્જના કો સુનકર ભય સે ત્રસ્ત ગજરાજ ચિંધાર  
 કરતે હુએ ઇધર ઉધર ભાગે ફિર રહે હૈં, કહીં પર વિપમ વિષધર  
 સર્પ અપને ફળોં કો ડપર ઉઠાકર વૈઠે હુએ હૈં, કહીં પર જંગલી  
 ભૈસે કિ જિનકા શરીર ચિલકુલ કાલા હૈ, તથા સીંગ ભી જિનકે બડે ૨  
 હૈં ઓર જો શરીર મેં વિશેષ સ્થૂલ હૈં, સજલગર્તમેં કિ જિસમેં કાદવ  
 હો રહા હૈ અપને શરીર કો ઇધર સે ઉધર કરતે હુએ કીચડ સે લિપ્ત બને  
 હુએ હૈં । હસી તરહ કહીં ૨ શૂકરોં કા યૂથ ભી ઇધર ઉધર ભાગ રહા  
 હૈ । કહીં ૨ પર વાનર ઓર કહીં પર ઋક્ષ-રીંછ-ઉછલકૂદ કર રહે હૈં ।  
 હસ વન મેં ચારોં ઓર લતાઓં સે વેષ્ટિત વહુત ગહરી છાયા વાલે વૃક્ષોં  
 કે ઝુંડ હૈં । કહીં ૨ પર વૃક્ષોં કા ઝુંડ એસે માલૂમ પડતે હૈં જૈસે માનો  
 મકાન હી ટવે હુએ હૈં । કહીં ૨ પર કાંટેદાર વૃક્ષ કિ જિનકે કાંટે ઇધર

ત્રાસીને હાથી ચિત્કાર કરતાં અહિં તહિં નાસભાગ કરી રહ્યા છે, ક્યાંક  
 વિપમ વિપધરો પોતાની ફૂલોને ઉંચી કરીને બેઠા છે, ક્યાંક જંગલી ભૈસો કે  
 બેનાં શરીર એકદમ કાળાં છે અને બેનાં શીંગ લાંબાં છે અને શરીર બેનાં  
 અલમસ્ત છે તે જળથી ભરેલા ખાડાઓમાં બેમાં કાદવ ભરેલ છે તેમાં આબોટી  
 પોતાના શરીરને કીચડથી ખરડાવી રહેલ છે, આવી રીતે ડુકરોનાં બુથો પણ  
 અહિં તહિં ભાગતાં નજરે પડે છે, ક્યાંક ક્યાંક વાનર અને રીંછ કુદાકુદ  
 કરતાં દેખાય છે. એ જંગલ ચારે તરફથી મોટાં વૃક્ષો અને તેની ડાળીયો  
 તથા અન્ય વેલા પાનથી છવાઈ રહેલ છે, કેઈ વૃક્ષનાં ઝુંડ એવાં અરસપરસ  
 મળી ગયાં દેખાય છે કે બાણે તેની નીચે મકાન જેવું બની ગયેલ છે, કેઈ  
 સ્થળે કાંટાવાળાં વૃક્ષોથી તેના કાંટા જમીન ઉપર જ્યાં ત્યાં પડ્યા છે. વેલા-

યા સા રૂપવિનાશિની સ્મૃતિહરી પઞ્ચેન્દ્રિયાકર્પિણી,  
ચક્ષુઃશ્રોત્રલલાટદીનકરણી સંક્લેશસંપાદિની ।  
વન્ધૂનાં ત્યજની વિદેશગમની ધૈર્યસ્ય વિધ્વંસિની,  
સેયં તિષ્ઠતિ સર્વભૂતદમની પ્રાણાપહારિક્ષુધા ॥ ૧ ॥

અપરં ચ—

વિવેકો હ્રીદયા ધર્મો, વિદ્યા સ્નેહસ્થ સૌમ્યતા ।

સત્ત્વં ચ જાયતે નૈવ, ક્ષુધાર્તસ્ય શરીરિણઃ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ॥

તથાપિ સ દૃઢવીર્યશિષ્યઃ કસ્મિન્નપિ નિજાત્મપ્રદેશે કાતરતાં નાત્રયતિ કિં  
જો આત્માકે પ્રતિપ્રદેશમેં વ્યાસ હોકર અપના પ્રવલ પ્રતાપ દિશ્વલાતી હૈ,  
જૈસે કહા ભી હૈ—

યહ ક્ષુધા રૂપ કો વિનષ્ટ કર દેતી હૈ, સ્મૃતિ કો ધ્વસ્ત કર  
દેતી હૈ, પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિ કા હાસ કર દેતી હૈ, ચક્ષુ મેં  
શ્રોત્ર મેં એવં લલાટ મેં દિનતા કે નિશાનેવના દેતી હૈં સંક્લેશ  
પરિણામોં કો જાગૃત કરતી રહતી હૈ, વન્ધુઓં કા વિયોગ કરા દેતી હૈ,  
વિદેશ મેં વાસ કરા દેતી હૈ, ધૈર્ય કો જડમૂલ સે ઉઘાડ દેતી હૈ,  
અધિક કયા કહા જાય યહ ક્ષુધા પ્રાણિયોં કે પ્રાણ કા ભી હરણ કરને  
વાલી હૈ ॥ ૧ ॥

ઔર ભી કહા હૈ—ક્ષુધાર્ત પ્રાણી કે વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ, વિદ્યા  
સ્નેહ, સૌમ્યતા, બલ આદિ સભી સદ્ગુણ નષ્ટ હો જાતે હૈ ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્ય કી આત્મા કે પ્રતિપ્રદેશ મેં યદ્યપિ ક્ષુધા કી  
તીવ્ર વેદના જાગૃત હો રહી થી તૌ ભી વહ કભી ભી કાયર નહીં બના ।

અંદરના ભાગમાં પ્રવેશ કરીને પોતાનો પ્રબળ પ્રભાવ બતાવે છે. કહ્યું પણ છે—

આ ભૂખ રૂપનો નાશ કરે છે, સ્મૃતિનો ધ્વંસ કરે છે, પાંચ  
ઇન્દ્રિયની શક્તિઓને ક્ષિણ બનાવી દે છે, આંખ, કાન અને કપાળમાં દિનતાની  
નિશાની જગાડે છે. કલેશના પરિણામોને બગાડ કરે છે, બંધુઓનો વિયોગ કરાવે  
છે, વિદેશમાં વાસ કરાવે છે, ધૈર્યને જડમુળથી ઉખેડી નાખે છે, છેલ્લે છેલ્લે  
આ ભૂખ પ્રાણીઓના પ્રાણોનું પણ હરણ કરે છે. ॥ ૧ ॥

ફરી પણ કહ્યું છે ભૂખથી પીડાતા પ્રાણીમાં વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ  
વિદ્યા, સ્નેહ, સૌમ્યતા, બળ, આદિ સઘળા સદ્ગુણો નાશ પામે છે. ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્યના આત્માના ઉંડાણમાં જો કે, ભૂખની તીવ્ર  
વેદના થઈ હતી. તો પણ કોઈ વખત કાયર ન બન્યો. પોતાના

તત્રૈવ નિવસતિ સ્મ । ગુરુથ ચતુર્વિધાદારસ્ય પ્રત્યાખ્યાનં કૃતવાન્ । સ ચ શિષ્યઃ  
સ્વગુરું પરિતસ્તદક્ષરક્ષણાર્થં પરિભ્રમંસ્તિષ્ઠતિ, તત્ર વિવિધેષુ મનોદ્વેષુ રુચિરેષુ ફલેષુ  
સત્સ્વપિ ન તાનિ ત્રોટયિતુમિચ્છતિ, વૃદ્ધાપસ્તલે પતિતાન્યપિ ફલાનિ સચિત્તતયા  
કેનાપ્યદત્તતયા ચ નૈવ ગૃહ્ણતિ । આહારાર્થં કિંચિદ્દૂરં ગત્વા ગત્વા પ્રતિનિવર્તતે ।  
વસતેરભાવાત્ ક્વચિદાહારો ન લભ્યતે । માર્ગસ્ય દુર્ગમતયા કશ્ચિત્ પથિકોઽપિ  
નાયાતિ, યસ્માદશનં ગૃહ્ણીયાત્ । પુનરુજ્જ્વલભાવેન ગુરોર્વૈયાવૃત્ત્યં કરોતિ । યદ્યપિ  
તદા ક્ષુધાયા વલં વર્ધમાનમાત્મનઃ પ્રતિપ્રદેશં વ્યાપ્તું પ્રવર્તતે । યતઃ—

શિષ્ય કી હસ પ્રકાર વાત કો સુનકર ગુરુ મહારાજ ને ચારોં પ્રકાર કે  
આહાર કા પરિત્યાગ કર દિયા । શિષ્ય ને હસ પરિસ્થિતિ મેં અપને ગુરુ  
મહારાજ કો સેવા કરના પ્રારંભ કર દિયા । ઉસ અટવી મેં યદ્યપિ અનેક  
પ્રકાર કે મનોજ્ઞ સરસ ફલ થે તો ભી ઉન્હેં તોડને કા શિષ્ય ને સ્વપ્ન મેં  
ભી વિચાર નહીં કિયા । વૃક્ષોં કે નીચે ટૂટે હુએ ફલ પડે રહતે થે ઉનકો  
ભી સચિત્ત હોને કી વજહ્ સે ગ્રહણ નહીં કિયા । તથા કિસી ૨ ફલ કે  
અચિત્ત હોને પર ભી દાતા કે અભાવ સે વે અદત્ત હોને સે નહીં લિયે ।  
શિષ્ય આહાર કે લિયે જાતા હૈ ઓર કુછ દૂર જા જાકર પીછે વાપિસ  
લોટ આતા હૈ, ક્યોં કિ એક તો વહાં વસતિ નહીં થી, હસ લિયે વહાં  
આહાર કા કોઈ જોગ નહીં મિલતા થા । દૂસરે-માર્ગ અત્યંત દુર્ગમ હોને  
સે ઉસ રાસ્તે કોઈ ભી પથિક પ્રાયઃ નહીં આતા જાતા થા । પરન્તુ શિષ્ય  
અનન્ય ભાવ સે ગુરુ કી સેવા કરતા થા । ક્ષુધા એક એસી વસ્તુ હૈ કિ

શિષ્યની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને ગુરુ મહારાજે ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરી દીધો. શિષ્યે આ પરિસ્થિતિમાં પોતાના ગુરુ મહારાજની સેવા કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. તે જંગલમાં જો કે, અનેક પ્રકારનાં સુંદર અને સ્વાદિષ્ટ એવાં ફળો હતાં તો પણ તેને તોડવાનો શિષ્યે સ્વપ્નામાં પણ વિચાર ન કર્યો. વૃક્ષોની નીચે તૂટીને પડેલાં જે ફળ દેખાતાં તેને પણ સચિત્ત ભાવીને ગ્રહણ કર્યો નહીં તથા કોઈ કોઈ ફળ અચિત્ત હોવા છતાં આપનારના અભાવથી તે અદત્ત હોવાથી લીધાં નહીં. શિષ્ય આહાર માટે જતો અને થોડે દૂર જઈ ત્યાંથી પાછો ફરી આવતો કેમકે, એક તો ત્યાં વસ્તી હતી નહીં. માટે ત્યાં આહારનો કોઈ જોગ મળતો ન હતો, બીજું માર્ગ અત્યંત દુર્ગમ હોવાથી તે રસ્તે કોઈ પણ વટેમાર્ગ આવતો જતો ન હતો. પરંતુ શિષ્ય અનન્ય ભાવથી ગુરુની સેવા કરતો હતો. ભૂખ એક એવી વસ્તુ છે કે જે આત્માની



या सा रूपविनाशिनी स्मृतिहरी पञ्चेन्द्रियाकर्षिणी,  
चक्षुःश्रोत्रललाटदीनकरणी संक्लेशसंपादिनी ।  
बन्धूनां त्यजनी विदेशगमनी धैर्यस्य विघ्नसिनी,  
सेयं तिष्ठति सर्वभूतदमनी प्राणापहारिक्षुधा ॥ १ ॥

अपरं च—

विवेको ह्रीर्दया धर्मो, विद्या स्नेहश्च सौम्यता ।

सत्त्वं च जायते नैव, क्षुधार्तस्य शरीरिणः ॥ २ ॥ इति ॥

तथापि स दृढवीर्यशिष्यः कस्मिन्नपि निजात्मप्रदेशे कातरतां नाश्रयति किं

जो आत्माके प्रतिप्रदेशमें व्याप्त होकर अपना प्रचल प्रताप दिखलाती है,  
जैसे कहा भी है—

यह क्षुधा रूप को विनष्ट कर देती है, स्मृति को ध्वस्त कर  
देती है, पांचों इन्द्रियों की शक्ति का हास कर देती है, चक्षु में  
श्रोत्र में एवं ललाट में दिनता के निशानें बना देती हैं संक्लेश  
परिणामों को जागृत करती रहती है, बन्धुओं का वियोग करा देती है,  
विदेश में वास करा देती है, धैर्य को जड़मूल से उखाड़ देती है,  
अधिक क्या कहा जाय यह क्षुधा प्राणियों के प्राण का भी हरण करने  
वाली है ॥ १ ॥

और भी कहा है—क्षुधार्त प्राणी के विवेक, लज्जा, दया, धर्म, विद्या  
स्नेह, सौम्यता, बल आदि सभी सद्गुण नष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥

मुनि दृढवीर्य शिष्य की आत्मा के प्रतिप्रदेश में यद्यपि क्षुधा की  
तीव्र वेदना जागृत हो रही थी तौ भी वह कभी भी कायर नहीं बना ।

અંદરના ભાગમાં પ્રવેશ કરીને પોતાનો પ્રબળ પ્રભાવ બતાવે છે. કહ્યું પણ છે—

આ ભૂખ રૂપનો નાશ કરે છે, સ્મૃતિનો ધ્વંસ કરે છે, પાંચ  
ઇન્દ્રિયની શક્તિઓને ક્ષિણ બનાવી દે છે, આંખ, કાન અને કપાળમાં દિનતાની  
નિશાની જગાડે છે. કલેશના પરિણામોને જાગૃત કરે છે, બંધુઓનો વિયોગ કરાવે  
છે, વિદેશમાં વાસ કરાવે છે, ધૈર્યને જડમુળથી ઉખેડી નાખે છે, છેલ્લે છેલ્લે  
આ ભૂખ પ્રાણીઓના પ્રાણોનું પણ હરણ કરે છે. ॥ ૧ ॥

ફરી પણ કહ્યું છે ભૂખથી પીડાતા પ્રાણીમાં વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ  
વિદ્યા, સ્નેહ, સૌમ્યતા, બળ, આદિ સઘળા સદ્ગુણો નાશ પામે છે. ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્યના આત્માના ઉંડાણમાં જો કે, ભૂખની તીવ્ર  
વેદના થઈ હતી તો પણ કોઈ વખત કાયર ન બન્યો. પોતાના

તુ કર્મનિર્જરાર્થં ક્ષુધાપરીપહં વિજિત્ય ગુરુસેવાપરાયણ એવાસીત્ । તતોગજમિત્ર-  
મુનિઃ કણ્ઠકજનિતામસશ્વેદનાં સહમાનઃ સમાધિભાવેન નિજાયુઃ સમાપ્ય પ્રથમ-  
કલ્પે વૈમાનિકદેવત્વં પ્રાપ્તઃ । અથાસૌ દેવઃ સ્વકીયપૂર્વભવમવધિના વિજ્ઞાય,  
સ્વદિવ્યશક્ત્યા શિષ્યરક્ષાર્થં તત્સમીપપ્રદેશે વસતિં નિર્માય સ્વયં મનુષ્યરૂપઃ સન્  
દૃઢવીર્યશિષ્યં પ્રાહ—મુને ! ઇતઃ સમીપે વસતિર્દૃશ્યતે, અશનપાનમાનીયતામ્ ।  
શિષ્યો વદતિ—અયમસ્તિ કથિદેવપ્રપન્નઃ, ઇહ હિ નાસૌત્ પુરા કાપિ વસતિઃ, ભૂમિ-

અપને વીર્યોલ્લાસ સે ઉસને ઇસ પરીપહ કો સ્વૂ સહન કિયા ।  
ઔર ગુરુ મહારાજ કી સેવા ભક્તિ કો, ક્યોં કિ શિષ્ય કો યહ પૂર્ણ-  
શ્રદ્ધા થી કિ કર્મનિર્જરા કે લિયે ક્ષુધાપરીપહ કો સહન કરના હી  
ચાહિયે । પૈર મેં લગે હુએ કાંટે કી અસહ્ય વેદના પ્રતિક્ષણ વઢને લગી,  
અપની આયુ કે અન્ત સમયમેં સમાધિભાવ સે કાલધર્મ કો પ્રાપ્ત હોકર  
પ્રથમકલ્પ મેં વૈમાનિક દેવ હુએ । ઇન્હોં ને દેવ કી પર્યાય મેં અપને પૂર્વભવ  
કો અવધિજ્ઞાન સે જાનકર અપને શિષ્ય કી પ્રાણરક્ષા નિમિત્ત દિવ્યશક્તિ  
સે ઉસકે સમીપ પ્રદેશ મેં એક વસતિ કા નિર્માણ કિયા ઔર સ્વયં  
મનુષ્ય કે રૂપ મેં પ્રગટ હોકર શિષ્ય સે કહને લગે કિ યહાં સે નજદીક  
હી એક વસતિ દિલાઈ દેતી હૈ અતઃ વહાં સે આપ આહાર પાની લે આઈયે ।  
દેવ કી ઇસ પ્રકાર વાત કો સુનકર શિષ્ય ને ચિત્ત મેં વિચાર કિયા—યહ  
કોઈ દેવ છલના કરતા હૈ । મૈં પહિલે યહાં કઈ ચાર આયા હૂં પરન્તુ  
મુજે તો કોઈ વસતિ નજર નહીં આઈ, ઇસલિયે યહાં સે આહાર પાની

વિર્યોલ્લાસથી તેણે આ પરીપહને ખૂબ સહન કર્યો અને ગુરુ મહારાજની  
સેવા ભક્તિ કરી. કેમકે, શિષ્યને એ પૂર્ણ શ્રદ્ધા હતી કે, કર્મનિર્જરા  
માટે ક્ષુધા પરિપહ સહન કરવો જોઈએ. પગમાં લાગેલા કાંટાઓની વેદના  
રોજ બરોજ વધવા લાગી, પોતાના આયુના અંતસમયમાં સમાધિલાવથી ગુરુજી  
કાળ ધર્મને પામી પ્રથમ કલ્પમાં વૈમાનિક દેવ બન્યા. તેઓએ દેવની પર્યા-  
યમાં પોતાના પુર્વભવને અવધિજ્ઞાનથી જાણીને પોતાના શિષ્યની પ્રાણરક્ષા  
નિમિત્ત દિવ્યશક્તિથી તેના સમીપપ્રદેશમાં એક વસ્તિનું નિર્માણ કર્યું અને  
પોતે મનુષ્યના રૂપમાં પ્રગટ બનીને શિષ્યને કહેવા લાગ્યા કે, અહિંથી નજીક  
જ એક વસ્તિ દેખાય છે માટે ત્યાંથી તમે આહાર પાણી લઈ આવો, દેવની  
આ પ્રકારની વાતને સાંભળીને શિષ્યે ચિત્તમાં વિચાર કર્યો કે, આ કોઈ દેવ  
મારી છલના કરે છે. હું પહેલાં કેટલીએ વખત ગયો છું પરંતુ મને કોઈ  
વસ્તી દેખાઈ નથી, માટે ત્યાંથી આહાર પાણી લાવવો ઉચિત નથી. શિષ્યની આ

સ્વત્યા પ્રાગેવ દૃષ્ટાઽસ્માભિઃ, અતોઽત્રાશનપાનં ન ગ્રહીપ્યામિ । તતોઽસૌ પ્રસન્નમનસા  
સાક્ષાદેવરૂપં ધૃત્વા દૃઢવીર્યમુનિં પ્રશંસતિ-ધન્યોઽસિ દૃઢવ્રતોઽસિ ' ઇત્યાદિ ।  
પુનરસૌ દૃઢવીર્યમુનિર્દુઃસહં ક્ષુધાપરીપદં સદમાનઃ ક્ષપકથ્રેણીમારુદ્ય પ્રશસ્તધ્યા-  
નેન શુભાધ્યવસાયેન કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્ય મોક્ષં પ્રાપ્તવાન્ । સ ચ દેવસ્તસ્ય કેવલોત્સવં  
નિર્વાણોત્સવં ચ કૃત્વા સ્વસ્થાનં ગતઃ । એવં સર્વમુનિભિરપિ દૃઢવીર્યમુનિવત્ ક્ષુધા-  
પરીપદઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૩ ॥

ક્ષુધાં સદમાનસ્યૈપનીયાહારાર્થં મિશ્નાચર્યાં પર્યટતો મુનેર્યદિ શ્રમાદિજનિતા  
પિપાસા સ્યાત્તર્હિ સાઽપિ સોઢવ્યેત્યાશયેન પિપાસાપરીપદજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—તૈઓ પુઠો પિવાસાંએ, દોંગુંચ્છી લજ્જેસંજાએ ।

સીઓદગં નં સેવિજા, વિયંડસ્સેસંણં ઘેરે ॥ ૪ ॥

ગ્રહણ કરના ઉચિત નહીં હૈ । શિષ્ય કી ઇસ પ્રકાર દૃઢ વિચારધારા કો  
દેખકર વહ દેવ વહુત હી પ્રસન્ન હુઆ ઓર સાક્ષાત્ રૂપ મેં  
પ્રકટ હોકર શિષ્ય કી વહુત પ્રશંસા કરને લગા, વોલા-આપ ધન્ય  
હેં વ્રત કે પાલન કરને મેં અતીવ દૃઢપ્રતિજ્ઞ હેં । શિષ્ય ને દુઃસહ ક્ષુધા  
પરીપદ કો સહન કરને સે ક્ષપકથ્રેણી પર આરુઢ હોકર પ્રશસ્ત-ધ્યાન  
એવં શુભાધ્યવસાય કે વલ પર કેવલજ્ઞાન કા લાભ કર મોક્ષ કો પ્રાપ્ત  
કિયા । ઇનકે ગુરુ મહારાજ કા જીવ જો દેવ થા ડસને અપને પૂર્વપર્યાય  
કે શિષ્ય કો પ્રાપ્ત હુએ કેવલજ્ઞાન કે એવં નિર્વાણ કે ઉત્સવ કો મના-  
કર અપને સ્થાન ગયા । ઇસી તરહ પ્રત્યેક મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ  
દૃઢવીર્યમુનિ કી તરહ ક્ષુધાપરીપદ કો સહન કરે ॥ ૩ ॥

પ્રકારની દૃઢ ધારણા બોધને તે દેવને જીવ ખૂબજ પ્રસન્ન થયો. અને પ્રગટ  
થઈને શિષ્યની ખૂબ પ્રશંસા કરવા લાગ્યા. તેમણે કહ્યું-આપને ધન્યવાદ છે,  
મતનું પાલન કરવામાં દૃઢ પ્રતિજ્ઞ છે. શિષ્યે દુઃસહ જીવને પરિપક્વ સહન  
કરવાથી ક્ષપકથ્રેણી ઉપર આરુઢ બની પ્રશસ્ત ધ્યાન અને શુભ અધ્યવસાયના  
બળ ઉપર કેવળજ્ઞાનનો લાભ કરી મોક્ષને પ્રાપ્ત કર્યો. દેવ કે જે તેના  
ગુરુ મહારાજને જીવ હતો તેણે પોતાના પૂર્વ પર્યાયના શિષ્યને પ્રાપ્ત થયેલ  
કેવળજ્ઞાનના અને નિર્વાણના ઉત્સવને મનાવીને પોતાને સ્થાને ગયા. આવી  
રીતે પ્રત્યેક મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તે દૃઢવીર્ય મુનિની માફક ક્ષુધા પરિવહને  
સહન કરે. ॥ ૩ ॥

- (૧) ઉસ્સેદ્દમં-ઉત્સ્વેદિમં-પિષ્ટોત્સ્વેદનાર્થમુદકમ્ । રોટિકાયાં કૃતાયાં યેનો-  
દકેન પિષ્ટસ્થાલ્યાદિધાવનં ક્રિયતે તદિત્યર્થઃ ।
- (૨) સંસેદ્દમં-સંસેકિમં-ઉત્કાલિતાનાં પત્રશાકાદીનામનપગતતિક્તાદિરસાપ-  
સારણાર્થં શૈત્યાર્થં વા યેનોદકેન ધાવનં ક્રિયતે, તદિત્યર્થઃ ।
- (૩) ચાઉલોદગં-તણ્ડુલોદકં-તણ્ડુલધાવનોદકમ્ ।
- (૪) તિલોદગં-તિલોદકં-તિલધાવનોદકમ્ ।
- (૫) તુસોદગં-તુપોદકં-તુપધાવનોદકમ્ ।
- (૬) જવોદગં-યવોદકં-યવધાવનોદકમ્, અત્ર 'યવ' હત્યુપલક્ષણં તેન વ્રીહ્યા-  
દિધાવનોદકસ્યાપિ ગ્રહણમ્ ।

પર ખી સાધુ કો ચાહિયે કિ વહ કમો ખી સચિત્ત અનેપણીય જલ કા  
ઉપયોગ ન કરે । પ્રાસુક જલ ઇક્કીસ ૨૧ પ્રકાર કા હોતા હૈ યહ વાત  
આચારાંગસૂત્ર મેં દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ કે નવમ અધ્યયન મેં કહી ગઈ હૈ—

- ૧ ઉસ્સેદ્દમં-ખોજન વન ચુકને કે વાદ આટે કી થાલી આદિકા ધોવન ।
- ૨ સંસેદ્દમં-શાકપત્રાદિકોં કે ઉચાલને પર ઉનકા કહુઆપન આદિ  
નિકાલને કે લિયે અથવા ઉન્હે ઠંડે કરને કે લિયે જો  
જલ ઉપર સે ડાલા જાતા હૈ વહ ।
- ૩ ચાઉલોદકં-ચાવલોં કા ધોવન ।
- ૪ તિલોદગં-તિલોં કા ધોવન ।
- ૫ તુસોદગં-તુપોં કો ધોને સે નિકલા હુઆ જલ ।
- ૬ જવોદગં-જો આદિકા ધોયા હુઆ જલ ।

જળનો ઉપયોગ કદી પણ ન કરવો ભેઈએ. પ્રાસુક જળ એકવીસ પ્રકારનું  
હોય છે આ વાત આચારાંગસૂત્રમાં બીજા શ્રુતસ્કંધના નવમાં અધ્યયનમાં  
કહેવામાં આવેલ છે.

- |             |   |
|-------------|---|
| ઉસ્સેદ્દમં- | ૧ ભોજન બની ચુક્યા પછી આટાની થાળી વિગેરેનું ધોવણુ.   |
| સંસેદ્દમં-  | ૨ શાક પત્રાદિકને ઉકાળવાથી તેના કડવા પણુ વગેરેને કાઢવા<br>માટે અથવા તેને ઠંડા કરાવવા માટે જે પાણી ઉપરથી નાખ-<br>વામાં આવે છે તે. |
| ચાઉલોદગં-   | ૩ ચાખ્ખાનું ધોવણુ.  |
| તિલોદગં-    | ૪ તલનું ધોવણુ.  |
| તુપોદગં-    | ૫ તુપોને ધોવાથી નિકળેલ પાણી.  |
| જવોદગં-     | ૬ જવ આદિને ધોતાં નિકળેલ પાણી.   |

છાયા—તતઃ સ્પૃષ્ટઃ પિપાસયા, જુગુપ્સી લજ્જાસંયતઃ ।

શીતોદકં ન સેવેત વિકૃતસ્ય ઇષણાં ચરેત્ ॥ ૪ ॥

ટીકા—‘ તઓ પુઢો ’ ઇત્યાદિ ।

તતઃ=ધુધાપરીપહાનન્તરં, પિપાસયા=ઠપયા, સ્પૃષ્ટઃ=વ્યાપ્તઃ સન્, જુગુપ્સી=જુગુપ્સકઃ અનાચારવિરત ઇત્યર્થ તથા-લજ્જાસંયતઃ-લજ્જાયાં=સંયમે સમ્યગ્ યત્નવાનિત્યર્થઃ । સાધુઃ શીતોદકં=સચિત્તં જલં ‘ ન સેવેત ’ ન વ્યાપ્ણુયાત્ કિં તુ વિકૃતસ્ય=યવત્પ્હુલદ્રાક્ષાદિધાવનોત્કાલનાદિના વર્ણગન્ધરસસ્પર્શૈરન્યધાભાવં પ્રાપ્તસ્ય પ્રાસુકસ્ય જલસ્ય, પ્રાસુકજલં ત્વેકવિંશતિવિધં ભવતીત્યાચારાદ્રમૂત્રે દ્વિતીયશ્રુતસ્કન્ધે નવમાધ્યયને નિગદિતમ્—

ધુધાપરીપહ કો સહન કરને ચાલા મુનિ કો આહાર કી ગવેષણા કરતે હુએ પિપાસા લગે, તથા અહાર કરને કે વાદ પિપાસા લગે તો ઉસકો સહન કરના ચાહિયે, ઇસ આશય સે અવ સૂત્રકાર પિપાસાપરીપહ કો કહતે હૈં—“ તઓ પુઢો ” ઇત્યાદિ ।

(તઓ-તતઃ) ધુધાપરીપહ કે અનન્તર (પિપાસાએ પુઢો-પિપાસયા-સ્પૃષ્ટઃ) પિપાસા સે વ્યાપ્ત હોને પર ખી (દોગુંચ્છી-જુગુપ્સી) અનાચાર-વિરત તથા (લજ્જાસંજએ-લજ્જાસંયતઃ) સંયમ કી રક્ષા કરને મેં પ્રયત્ન-શીલ સાધુ (સીઓદગં ન સેવિજ્જા-શીતોદકં ન સેવેત) સચિત્ત જલ કા સેવન નહીં કરે । કિન્તુ (વિયહસેસણં ચરે-વિકૃતસ્ય ઇષણાં ચરેત્) વિકૃત-યવ, તપ્હુલ, એવં દ્રાક્ષા આદિ કે ધોને સે અથવા ઉનકે ઉકાલને સે જિનકે વર્ણ, ગંધ, રસ તથા સ્પર્શ કા પરિવર્તન હો ચુકા હૈ એસે પ્રાસુક જલ કી ગવેષણા કરે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પિપાસા સે પીડિત હોને

ધુધા પરિપહ સહન કરનાર મુનિને આહાર કર્યા પછી તરસ લાગે તેને સહન કરવી બેધ એ આ આશયથી સૂત્રકાર પિપાસા પરિપહ કહે છે. તઓ પુઢો-ઇત્યાદિ.

તઓ-તતઃ ધુધા પરિપહના અનન્તર પિપાસાએ પુઢો-પિપાસયાસ્પૃષ્ટઃ તરસથી વ્યાપ્ત હોવા છતાં અનાચાર વિરત તથા દોગુંચ્છી-જુગુપ્સી અનાચાર વિરત તથા લજ્જાસંજએ-લજ્જાસંયતઃ સંયમની રક્ષા કરવામાં પ્રયત્નશીલ સાધુ સીઓદગં ન સેવિજ્જ-શીતોદકં ન સેવેત સચિત્ત જલનું સેવન ન કરે. કિન્તુ વિયહસેસણં ચરે-વિકૃતસ્ય ઇષણાં ચરેત્ વિકૃત (અચિત્ત)-જવ, ચોખા, દ્રાક્ષ વગેરેના ધોવાથી અથવા એને ઉકાળવાથી તેના વર્ણ, ગંધ, રસ તથા સ્પર્શનું પરિવર્તન થઈ ચુક્યું છે એવા પ્રાસુક જળની ગવેષણા કરે. તાત્પર્ય એ છે કે, તરસથી પીડાતા હોવા છતાં પણ સાધુએ સચિત્ત ય



- (૧) ઉસ્સેહમં-ઉત્સ્વેદિમં-પિષ્ટોત્સ્વેદનાર્થમુદકમ્ । રોટિકાયાં કૃતાયાં યેનો-  
દકેન પિષ્ટસ્થાલ્યાદિધાવનં ક્રિયતે તદિત્યર્થઃ ।
- (૨) સંસેહમં-સંસેકિમં-ઉત્કાલિતાનાં પત્રશાકાદીનામનપગતતિક્તાદિરસાપ-  
સારણાર્થં શૈત્યાર્થં વા યેનોદકેન ધાવનં ક્રિયતે, તદિત્યર્થઃ ।
- (૩) ચાઉલોદગં-તણ્ડુલોદકં-તણ્ડુલધાવનોદકમ્ ।
- (૪) તિલોદગં-તિલોદકં-તિલધાવનોદકમ્ ।
- (૫) તુસોદગં-તુપોદકં-તુપધાવનોદકમ્ ।
- (૬) જવોદગં-યવોદકં-યવધાવનોદકમ્, અત્ર 'યવ' ઇત્યુપલક્ષણં તેન વ્રીહ્યા-  
દિધાવનોદકસ્યાપિ ગ્રહણમ્ ।

પર ખી સાધુ કો ચાહિયે કિ વહ કમો ખી સચિત્ત અનેપણીય જલ કા  
ઉપયોગ ન કરે । પ્રાસુક જલ ઇક્કીસ ૨૧ પ્રકાર કા હોતા હૈ યહ વાત  
આચારાંગસૂત્ર મેં દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ કે નવમ અધ્યયન મેં કહી ગઈ હૈ-

- ૧ ઉસ્સેહમં-ખોજન વન ચુકને કે વાદ આટે કી થાલી આદિકા ધોવન ।
- ૨ સંસેહમં-શાકપત્રાદિકોં કે ઉવાલને પર ઉનકા કહુઆપન આદિ  
નિકાલને કે લિયે અથવા ઉન્હેં ઠંડે કરને કે લિયે જો  
જલ ઉપર સે ડાલા જાતા હૈ વહ ।
- ૩ ચાઉલોદકં-ચાવલોં કા ધોવન ।
- ૪ તિલોદગં-તિલોં કા ધોવન ।
- ૫ તુસોદગં-તુપોં કો ધોને સે નિકલા હુઆ જલ ।
- ૬ જવોદગં-જો આદિકા ધોયા હુઆ જલ ।

જળનો ઉપયોગ કદી પણ ન કરવો જોઈએ. પ્રાસુક જળ એકવીસ પ્રકારનું  
હોય છે આ વાત આચારાંગસૂત્રમાં બીજા શ્રુતસ્કન્ધના નવમાં અધ્યયનમાં  
કહેવામાં આવેલ છે.

- |           |   |
|-----------|---|
| ઉસ્સેહમં- | ૧ ભોજન બની ચુક્યા પછી આટાની થાળી વિગેરેનું ધોવણું.  |
| સંસેહમં-  | ૨ શાક પત્રાદિકને ઉકાળવાથી તેના કડવા પણા વગેરેને કાઢવા<br>માટે અથવા તેને ઠંડા કરાવવા માટે જે પાણી ઉપરથી નાખ-<br>વામાં આવે છે તે. |
| ચાઉલોદગં- | ૩ ચાખાનું ધોવણું.   |
| તિલોદગં-  | ૪ તલનું ધોવણું.   |
| તુસોદગં-  | ૫ તુપોને ધોવાથી નિકળેલ પાણી.  |
| જવોદગં-   | ૬ જવ આદિને ધોતાં નિકળેલ પાણી.   |

અથ ગ્રામનગરાદિભ્યો વહિઃ ક્વચિદટવ્યાદિમાર્ગે વિહરન્ મુનિર્યદિ પિપાસયા પીડિતઃ સ્યાત્ તદાઽપિ તત્પરીપહઃ સોઢવ્ય ઇત્યાહ—

મૂલમ્—છિન્નાવાણસુ પંથેસું, આઝરે સુપિવાસિણ ।

પરિસુંકમુહાદીણે, તં તિતિંત્રલે પરીસંહં ॥૫॥

છાયા—છિન્નાપાતેષુ પથિષુ આતુરઃ સુપિપાસિતઃ ।

પરિશુષ્કમુખાદીનઃ તં તિતિંક્ષેત્ પરીપહમ્ ॥ ૫ ॥

ટીકા—‘છિન્નાવાણસુ’ ઇત્યાદિ ।

છિન્નાપાતેષુ=છિન્નઃ=અપગતઃ, આપાતઃ=જનનાં ગમનાગમનરૂપઃ સંચારો યત્ર તેષુ, પથિષુ=માર્ગેષુ ગચ્છન્નિતિ શેષઃ, આતુરઃ તૃપ્યા વ્યાપ્તકાયઃ, અત એવ સુપિપાસિતઃ=અતિશયેન તૃપિતઃ, અત એવ પરિશુષ્કમુખાદીનઃ=પરીશુષ્કમુખઃ ગત-નિષ્ઠીવનતયા શુષ્કતાલુરસનોષ્ઠઃ, સ ચાસાવદીનશ્ચ પરિશુષ્કમુખાદીનઃ, પરિશુષ્ક-

ગ્રામ નગર આદિ સે વાહર કિસી અટવી-આદિ કે માર્ગ મેં વિચરતે હુણ સાધુ કો યદિ પિપાસા સે આકુલતા ઉત્પન્ન હો જાવે તો ખી ઉસે ઉસ દ્વિતીય ક્ષુધાપરીપહ કો સહન કરના ચાહિયે યહ વાત હસ નીચે કી ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હેં—‘છિન્નાવાણસુ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(છિન્નાવાણસુ-છિન્નાપાતેષુ) જિન માર્ગોં મેં જનોં કા આવાગ-મનરૂપ સંચાર છિન્ન હો ગયા હૈ અર્થાત્-નહીં, હોતા હૈ એસે (પંથેસુ-પથિષુ) માર્ગોં મેં સંચરણ અર્થાત્-વિચરણ કરતા હુઆ સાધુ (સુપિવાસિણ આઝરે-સુપિપાસિતઃ આતુરઃ) યદિ પિપાસા સે વ્યાપ્ત હોકર આતુર-અત્યંત પીડિત હો જાતા હૈ ઓર હસીસે (પરિસુંકમુહાદીણે-પરિશુષ્ક-મુખાદીનઃ) જિસકે મુખ કા થૂંક તક ખી સૂચકુકા હૈ ઓર એસી

ગ્રામ, નગર વગેરેથી બહારના રસ્તા ઉપર વિચરતા સાધુને માર્ગમાં તર-સની આકુળતા ઉત્પન્ન થાય તો પણ તેણે એ બીજા ક્ષુધાપરીપહને સહન કરવો જોઈએ. આ વાત નીચેની ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે. છિન્નાવાણસુ-ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—છિન્નાવાણસુ-છિન્નાપાતેષુ જે માર્ગમાં માણસોનો અવાગમનરૂપ સંચાર બંધ થઈ ગયો હોય. અર્થાત્ નથી થતો એવા પંથેસુ-પથિષુ માર્ગોમાં સંચારણ અર્થાત્ વિચારણ કરનાર સાધુ સુપિવાસિણ આઝરે-સુપિપાસિતઃ આતુરઃ પાણીની તરસથી વ્યાકુળ બની અત્યંત પીડિત થઈ જાય છે અને એથી પરિસુંકમુહાદીણે-પરિશુષ્કમુખાદીનઃ જેના મોઢામાંનું થૂંક પણ સૂકાઈ જાય છે એવી માં,

મુખોઽપિ સન્નદીન इत्यर्थः । तं=तृपापरीपहं, तितिक्षेत=सहेत । अयं भावः—निर्जन-  
स्थानस्थितोऽपि तृपाव्याकुलितोऽपि सन् सचित्तमनेपणीयं जलं न पिबेदिति ।

‘ छिन्नावाएसु पંથેસु ’ इत्यनेन मुनीनां चरणविहारः सूचितः ।

‘ आउरे ’ इत्यनेन—परीपહ अवस्थायामपि समाधिभावेन वर्तितव्यमिति  
बोधितम् ।

‘ सुपिवासिण ’ इत्यनेन पिपाસાધિક્ષેઽપિ સચિત્તમનેપણીયમુદકં ન ગ્રહીત-  
વ્યમિતિ સૂચિતમ્ ।

‘ પરિસુકમુહાદીણે ’ इत्यनेन कष्टावस्थायामपि परीपहो जेतव्य एवेति—  
सूचितम् ।

‘ तितिक्षे ’ इत्यनेन परीपहोपस्थितौ सहिष्णुता समाश्रयणीया, इति  
बोधितम् ।

हालत में तालु, रसना एवं ओष्ठ भी विलकुल शुष्क हो चुका है फिर  
भी अदान बना हुआ मुनि ( तं परीसहं तितिक्षे—तं परीपहं तितिक्षेत )  
इस तृपापरीपह को जीते । तात्पर्य इसका यह है कि निर्जनस्थान में  
रहने पर भी यदि साधु तृपा से पीड़ित होता है तो भी उसे सचित्त  
अनेपणीय जल का पान नहीं करना चाहिये ।

गाथा में रहे हुए “ छिन्नावाएसु पंथेसु ” इस विशेषणगर्भित पद  
द्वारा मुनियों का चरण विहार सूचित किया है । “ आउरे ” इस  
पद द्वारा परीपह अवस्था में मुनियों को समाधिभावपूर्वक रहना  
बतलाया गया है । “ सुपिवासिण ” पद द्वारा पिपासा की तीव्र  
अवस्था में भी सचित्त अनेपणीय उदक नहीं लेना चाहिये, यह प्रकट

તાલુ રસના અને હોઠ પણ તદ્દન સુકા બની જાય છે, એવી પરિસ્થિતિમાં  
મુકાવા છતાં પણ અદીન બનેલ મુનિ તં પરિસહં તિતિક્ષે—તં પરિપહં તિતિક્ષેત  
એ તૃપા પરીપહને જીતે. એનું તાત્પર્ય એ છે કે, નિર્જન સ્થાનમાં રહેવા  
છતાં પણ સાધુ તરસથી પીડિત હોય તો તેણે સચિત્ત અનેપણીય જળનું  
પાન ન કરવું જોઈએ.

ગાથામાં રહેલા “ છિન્નાવાસુ પંથેસુ ” વિશેષણ ગર્ભિત પદ દ્વારા મુનિ-  
યોનો ચરણ વિહાર સુચવવામાં આવેલ છે. આઉરે—આપદથી પરીપહ અવસ્થામાં  
મુનિયોએ સમાધિ ભાવ પૂર્વક રહેવાનું બતાવેલ છે. સુપિવાસિણ આ પદથી  
તરસની તીવ્ર અવસ્થામાં પણ સચિત્ત અનેપણીય પાણી ન લેવું જોઈએ.

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ—

આસીદુઃખયિન્યાં ધનમિત્રનામકઃ શ્રેષ્ઠી, સ ધનપ્રિયનામ્નાઽષ્ટવર્ષવયસ્કેન સ્વપુત્રેણ સહ મિત્રગુપ્તાચાર્યસમીપે પ્રવ્રજિતઃ । સ ધનપ્રિયશિષ્યઃ સપરિવારેણાચાર્યેણ સહ કદાચિન્માર્ગે વિહરન્ પિપાસાર્તોઽભવત્ । અન્યૈઃ સાધુભિઃ સહાચાર્યમગ્રે ગતં દૃષ્ટ્વા ધનમિત્રમુનિના નદીમાલોકય પુત્રાનુરાગેણ કથિતમ્, વત્સ! જલં પિવ, પશ્ચાદાલોચનયા શુદ્ધિર્ભવિષ્યતિ । इत्युक्तोऽपि शिष्यो जलपानं कर्तुं न वाञ्छति । 'ततो

કિયા ગયા હૈ । “ પરિસુક્કમુહાદીણે ” હસ પદ સે સૂત્રકાર યહ પ્રદર્શિત કર રહે હૈં કિ કષ્ટ કી અવસ્થા મેં બી પરીપહોં કો જીતના હી ચાહિયે । “ તિતિક્લે ” પદ સે યહ જ્ઞાત હોતા હૈ કિ પરીપહ કી ઉપસ્થિતિ મેં ઘવડાના નહીં ચાહિયે કિન્તુ સહિષ્ણુતા ધારણ કરની ચાહિયે ।

હસ વિષય કો અવ દૃષ્ટાન્તદ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—

ઉજ્જૈની નગરી મેં ધનમિત્ર નામ કા એક સેઠ રહતા થા । વૈરાગ્ય પાકર ઉસને અપને આઠવર્ષ કે ધનપ્રિય નામક પુત્ર કે સાથ મિત્રગુપ્ત આચાર્ય કે પાસ મુનિદીક્ષા ધારણ કરલી । એક સમયકી વાત હૈ કિ વે ધનપ્રિય મુનિ સપરિવાર આચાર્ય કે સાથ જવ વિહાર કર રહે થે તવ માર્ગ મેં ઉન કો પ્યાસ કી વેદના જાગૃત હુઈ । અન્ય સાધુઓં કે સાથ આચાર્ય કો આગે ગયે હુએ જાન કર ધનમિત્ર મુનિ ને નદી કો દેખતે હી પુત્રાનુરાગ કે વશવર્તી વન ધનપ્રિય સે કહા કિ વત્સ ! જલ પીલો, પીછે આલોચના સે હસકી શુદ્ધિ કર લેના । હસ પ્રકાર ધનમિત્ર મુનિ કે વચન

એવું પ્રગટ કરેલ છે. પરિસુક્કમુહાદીણે આપદથી કષ્ટની અવસ્થામાં પણ પરિપહોને છૂતવા ભેધએ. એવું સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે. “ તિતિક્લે ” આપદથી પરિપહનાં આવવાથી ગભરાવું ન ભેધએ પરંતુ સહિષ્ણુતા ધારણ કરવી ભેધએ.

આ વિષય ઉપર એક દૃષ્ટાન્ત કહેવામાં આવે છે.—

ઉજ્જૈની નગરીમાં ધનમિત્ર નામે એક સેઠ રહેતો હતો. વૈરાગ્ય પામીને તેણે પોતાના આઠ વર્ષના ધનપ્રિય નામના પુત્ર સાથે મિત્રગુપ્ત નામના આચાર્ય પાસે મુનિ દીક્ષા ધારણ કરી. એક સમયની વાત છે કે, ધનપ્રિય મુનિ સપરિવાર આચાર્યની સાથે જ્યારે વિહાર કરી રહેલો હતો, ત્યારે માર્ગમાં તેને તરસ લાગી. બીજા સાધુઓ સાથે આચાર્યને આગળ ગયેલા બાણીને ધનમિત્ર મુનિએ નદીને ભેધને પુત્રપ્રેમને વશ બની ધનપ્રિયને કહ્યું, વત્સ પાણી પીઈ લે. પછી આલોચનાથી એની શુદ્ધિ કરી લેજો. આ પ્રકારનાં ધનમિત્ર

धनमित्रमुनिश्चिन्तयति—मम समक्षे नायं जलं पिवतीति, एवं विचिन्त्य शुष्कमार्गेण सत्वरं नदीमुत्तीर्याग्रे गतः, तदनन्तरं धनप्रियमुनिर्जलपानार्थं नद्यां प्रविश्याञ्जलीं जलं धृत्वा सद्यः संजातकारुण्यश्चिन्तयति—कथमहं जलं पिबामि । यतः—

एगंमि उदगविंदुम्मि, जे जीवा जिणवरेहि पन्नत्ता ।

ते सरिसवपरिमित्ता, जम्बुद्वीवे न मायंति ॥ १ ॥

छाया—एकस्मिन्नुदकचिन्दो, ये जीवा जिनवरैः प्रज्ञप्ताः ।

ते सर्पपपरिमात्राः जम्बूद्वीपे न मायेयुः ॥ १ ॥

व्याख्या—एकस्मिन् जलचिन्दो ये जीवाः सन्ति, ते यदि सर्पप्रमाणं शरीरं धृत्वा वर्तयुस्तर्हि जम्बूद्वीपे न मायेयुरित्यर्थः ॥ १ ॥

मुनकर धनप्रिय ने पानी पीने की जरा भी इच्छा नहीं की । इस परिस्थिति को देखकर धनमित्र मुनि ने विचार किया कि यह मेरे साम्हने जल नहीं पीवेगा अतः यहां से चल देना चाहिये, सो वे शुष्कमार्ग से नदी को पार कर आगे चले गये । इसके बाद धनप्रियमुनि जलपान करने के लिये नदी में प्रविष्ट हुए और अंजलि में पानी भर कर दया भाव से विचारने लगे कि इस अकल्पनीय सचित्त जल को मैं कैसे पीऊँ ? क्यों कि—

“ एगंमि उदगविंदुम्मि, जे जीवा जिणवरेहि पन्नत्ता ।

ते सरिसवपरिमित्ता, जंबुद्वीवे न मायंति ॥ १ ॥ ”

एक जल के चिन्दु में जितने जीव जिनेन्द्र भगवान ने बतलाये हैं वे यदि सरसों के आकार को धारण करलें तो इस जंबूद्वीप में नहीं समा सकते हैं ॥१॥

मुनिनां वथन सांखणीने धनप्रियमुनिये पाणी पीवानी जरा पणु धिच्छा न करी आ परिस्थितिने लेध धनमित्रमुनिये विचार कर्यो के, आ भारी सामे पाणी पीशे नही भाटे अहीथी आलपुं लेध अे जेथी तेओ सुका भागेथी नहीने पार करीने आगण आदया. आ पछी धनप्रियमुनिये जलपान करवा भाटे नहीमां प्रवेश कर्यो अने हाथमां पाणी लध दया लावथी विचारवा लाग्या के, आ अकल्पनीय सचित्त पाणी हुं डेवी रीते पीठं डेमके डहुं छे डे—

एगंमि उदगविंदुम्मि, जे जीवा जिणवरेहि पन्नत्ता ।

ते सरिसव परिमित्ता, जम्बुद्वीवे न मायन्ति ॥ १ ॥

जलना ओके टीपाभां जेटला जव जनेन्द्र भगवाने बताव्या छे ते उदाय सरसवना आकारने धारण करीदये तो आ जम्बूद्वीपमां समाध न शके. ॥१॥



જત્ય જલં તત્ય વણં, જત્ય વણં તત્ય ણિચ્છિઓ તેજ ।

તેજ વાઉસહગઓ, તસા ય પચ્ચક્ખયા ચેવ ॥ ૨ ॥

છાયા—યત્ર જલં તત્ર વનં, યત્ર વનં તત્ર નિશ્ચિતં તેજઃ ।

તેજો વાયુસહગતં ત્રસાશ્વ પ્રત્યક્ષકા એવ ॥ ૨ ॥

વ્યાખ્યા—યત્ર જલં તત્ર વનં=વનસ્પતિઃ, યત્ર વનસ્પતિસ્તત્ર નિશ્ચયેન તેજો=વહ્નિઃ, યત્ર તેજસ્તત્ર વાયુઃ સહયોગિત્વાત્, ત્રસાસ્તુ પ્રત્યક્ષા એવ સન્તિ ॥૨॥

હંતૂણ પરપ્પાણે, અપ્પાણં જો કરેહ સપ્પાણં ।

અપ્પાણં દિવસાણં, કણ ય નાસેહ સપ્પાણં ॥ ૩ ॥

છાયા—હત્વા પરમાણાન્, આત્માનં યઃ કરોતિ સપ્રાણમ્ ।

અલ્પાનાં દિવસાનાં, કૃતે નાશયતિ સ્વાત્માનમ્ ॥ ૩ ॥

વ્યાખ્યા—તસ્માત્ પરમાણાન્ હત્વા યઃ આત્માનં સપ્રાણં=સર્વલં કરોતિ, સ અલ્પાનાં દિવસાનાં કૃતે સ્વાત્માનં નાશયતિ ॥૩॥

“જત્ય જલં તત્ય વણં, જત્ય વણં તત્ય ણિચ્છિઓ તેજ ।

તેજવાઉ સહગઓ, તસા ય પચ્ચક્ખયા ચેવ ॥ ૨ ॥”

જહાં જલ હૈ વહાં નિશ્ચિત વનસ્પતિ હૈ । જહાં વનસ્પતિ હૈ વહાં નિશ્ચિત તેજ-અગ્નિ હૈ । જહાં તેજ હૈ વહાં નિશ્ચિત વાયુ હૈ । ત્રસકાય તો પ્રત્યક્ષ હી હૈ ॥૨॥

“હંતૂણ પરપ્પાણે, અપ્પાણં જો કરેહ સપ્પાણં ।

અપ્પાણં દિવસાણં, કણ ય નાસેહ સપ્પાણં ॥ ૩ ॥”

જો દૂસરે જીવોં કે પ્રાણોં કા હનન કર કુછ હી દિનોં કે લિયે અપને આપકો સર્વલ વનાને કી ચેષ્ટા કરતા હૈ વહ અપને આપકા વિનાશ કરતા હૈ ॥૩॥

જત્યજલં તત્ય વણં, જત્ય વણં તત્ય ણિચ્છિઓ તેજ ।

તેજ વાઉસહગઓ, તસાય પચ્ચક્ખયા ચેવ ॥ ૨ ॥

જ્યાં જળ છે ત્યાં વનસ્પતિનું હોવું નિશ્ચિત છે, જ્યાં વનસ્પતિ છે ત્યાં તેજ અગ્નિ નિશ્ચિત છે. જ્યાં તેજ છે. ત્યાં વાયુ નિશ્ચિત છે. ત્રસકાય તો પ્રત્યક્ષ છે જ ॥૨॥

હંતૂણ પરપ્પાણે, અપ્પાણં જો કરેહ સપ્પાણં ।

અપ્પાણં દિવસાણં, કણ ય નાસેહ સપ્પાણં ॥ ૩ ॥

જે બીજા જીવોના પ્રાણોની વિનાશ કરીને થોડા દિવસો માટે પોતે પોતાની જાતને સખળ બનાવવાની ચેષ્ટા કરે છે તે પોતે પોતાની જાતને વિનાશ કરે છે ॥૩॥

અહો! દુર્લભા સંયમપ્રાપ્તિઃ, તતોઽપિ સંયમરક્ષણં દુર્લભતરં, તચ્ચાપ્કાયવિરાધનયા પટ્કાયવિરાધનાયાં સત્યાં ન ભવિતું શક્યતે, સંયમરક્ષણાભાવે સર્વેષાં મહાવ્રતાનાં ભજ્ઞઃ સ્યાત્, તતથ ચતુર્ગતિકસંસારપરિભ્રમણં ભવિષ્યતિ । યસ્માન્નેદં જલં પાસ્યામીતિ નિશ્ચિત્યાસૌ મુનિ રઙ્ગલિતો જલં નદ્યામેવ યતનયા મુમોચ । સ લઘુવ્રયસ્કોઽપિ મહ- નીયધૈર્યઃ શુષ્કમાર્ગેણ તાં નદીમુત્તીર્ય તત્તીર એવ પિપાસયા ગન્તુમક્ષમઃ સન્ ભૂમૌ નિપતિતઃ ।

ઇસ પ્રકાર વિચાર કર ધનપ્રિયનામક લઘુમુનિને યહ બી વિચાર કિયા કિ ઇસ સંસાર મેં જીવોં કો એક તો સંયમ કી પ્રાપ્તિ હોના દુર્લભ હૈ, ઓર ઉસકી અપેક્ષા સંયમ કી રક્ષા મહાન્ દુર્લભ હૈ । મેં કચ્ચા પાની પીઝું તો અપ્કાય કી વિરાધના હોતી હૈ અપ્કાય કી વિરાધના મેં પટ્કાય કી વિરાધના અવશ્ય હોતી હૈ, પટ્કાય કી વિરાધના સે સંયમ કી રક્ષા નહીં હો સકતી । જહાં સંયમ કી રક્ષા નહીં હૈ વહાં સમસ્ત મહાવ્રતોં કા ભંગ હૈ । ઇન્કે ભંગ સે સંસારપરિભ્રમણ અવશ્ય હોતા હૈ, અતઃ મેં તો ઇસ જલકો નહીં પીઝુંગા । ઇસ પ્રકાર નિશ્ચય કર લઘુમુનિ ને વઢી હી યતના સે અંજલિ મેં લિયે હુણ જલ કો ઉસી નદી મેં છોડ દિયા । ઉસ સમય ઉન્કી આયુ કોઈ અધિક નહીં થીં પરંતુ ધૈર્ય કી માત્રા હૃદય મેં વઢી હુઈ થી ઇસ લિયે યથા કથંચિત્ વે શુષ્ક- માર્ગ સે હોકર નદી કો પાર કરકે દૂસરે તીર પર આગયે । પરન્તુ પ્યાસ ને ઇતની પ્રવલતા ધારણ કી કિ વે આગે માર્ગ પર નહીં ચલસકે ઓર

આ પ્રકારનો વિચાર કરી ધનપ્રિય નામના નાના મુનિયે એવો વિચાર કર્યો કે, આ સંસારમાં જીવોને એક તો સંયમની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે અને તેની અપેક્ષા સંયમની રક્ષા મહાન દુર્લભ છે. હું કાચું પાણી પીઉં તો અપ્કાયની વિરાધના થાય છે, અપ્કાયની વિરાધનામાં પટ્કાયની વિરાધના અવશ્ય બને છે. પટ્કાયની વિરાધનાથી સંયમની રક્ષા થતી નથી. જ્યાં સંયમની રક્ષા નથી ત્યાં સમસ્ત મહાવ્રતોનો ભંગ છે. તેના ભંગથી સંસાર પરિભ્રમણ અવશ્ય થાય છે. માટે હું તો આ જીવને પીઈશ નહીં. આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરી લઘુ મુનિયે ખૂબજ યતનાથી ખોળામાં લીધેલ પાણીને તે નદીમાં છોડી દીધું. આ સમયે તેની ઉંમર કાંઈ મોટી ન હતી પરંતુ ધૈર્યની માત્રા હૃદયમાં વધેલી હતી. આ કારણે આગળ કહેવામાં આવ્યા પ્રમાણે સુકા માર્ગથી નદીને પાર કરી સામા કાંઠે પહોંચી ગયા. પરંતુ તરસ એટલા જોરથી લાગી હતી કે આને

अथ पिपासाविवशोऽपि धर्मे निश्चलमतिरसौ पञ्चनमस्कारस्मरणपूर्वकं समाधिभावेन देहं विहाय प्रथमकल्पे वैमानिकदेवत्वेन समुत्पन्नः । ततोऽवधिज्ञानेन स्वपूर्वभवं विज्ञाय तेन धनप्रियेण देवेन सर्वेषां मुनीनामनुग्रहार्थं वैक्रियशक्त्या पथि गोकुलं निर्मितम् । अथ सपरिवारो मित्रगुप्ताचार्यः पुरतो गोकुलं दृष्ट्वा तत्र शुद्ध तक्रादि गृहीत्वा पिपासां निवार्य चलितः । अथ तेन देवेन स्वपरिचयार्थमेकस्य साधोरासनं विस्मारितम् । येन मुनिनाऽऽसनं विस्मृतम् , स च स्वासनान्वेषणार्थं पुनर्गोकुलस्थानमागत्य गोकुलमपश्यन् प्रत्यावृत्तः सर्वान् मुनीनब्रवीत्-नास्ति तत्र वहीं पर गिर पड़े । पिपासा से विवश होने पर भी इनकी मति धर्म में निश्चल बनी रही, पंचनमस्कार मंत्र का स्मरण करते हुए इन्होंने समाधिभाव से काल को प्राप्त किया । पिपासापरीपह को सहन करने के प्रभाव से ये प्रथमकल्प में वैमानिक देव हुए । अवधिज्ञान से अपने पूर्व भव को जानकर उस लघुमुनि के जीव देव ने समस्त मुनियों की रक्षा के लिये अपनी वैक्रियिक शक्ति से मार्ग में गोकुल की रचना कर दी । सपरिवार मित्रगुप्ताचार्य ने आगे गोकुल देखा ।

वहां से शुद्ध तक्र आदि को लेकर अपनी पिपासा को शांत किया, एवं आगे विहार करना प्रारंभ कर दिया । किसी ने भी यह नहीं जाना कि यह सब देवकृत माया है, अतः देव ने अपने परिचय के निमित्त एक साधु को अपना आसन विस्मृति करा दिया । जो मुनि वहां पर आसन भूल गया था वह उस आसन को लेने के लिये पीछे उस स्थान पर आया तो क्या देखता है कि यहां पर तो कोई

वर्ध ते आगण भागे' आली शक्या नही' अने त्यां ज पडी गया. तरसथी विवश बनवा छतां पण तेनी मति धर्ममां निश्चल बनी रही. पंचनमस्कार मंत्रनुं स्मरण करीने तेमणु समाधी लावथी कालधर्म प्राप्त कर्यो. तरसना परीपडने सहन करवाना प्रभावथी ते प्रथम कल्पमां वैमानिक देव थया. अवधिज्ञानथी पोताना पूर्वभवने ज्ञानीने ते लघुमुनिना जव देवे समस्त मुनियोना अनुग्रह भाटे पोतानी वैक्रियिक शक्तिथी मार्गमां गोकुलनी रचना करी. सपरिवार मित्रगुप्ताचार्ये आगण गोकुल जेथुं अने त्यांथी शुद्ध छाश आदि वर्धने पोतानी तरसने छिपावी. अने आगण विहार करवा लाग्या. केधजे जे न ज्ञेथुं के आ अधी देवकृत माया हती. आथी देवे पोताना परिचय निमित्त जेक साधुने तेनुं आसन बुलावी दीधुं. जे मुनि आसन बुली गया छता ते मुनि त्यां आसन लेवा भाटे पाछा आव्या तो शुं देजे छे के त्यां केध गोकुल

पूर्वदृष्टं गोकुलम् । तदा तद्वचनेन सर्वैरपि साधुभिर्ज्ञातगोकुलाभावैस्तत्र काचिदेव शक्तिर्विदिता । सर्वैस्तत्पिण्डभोजनस्य प्रायश्चित्तं कृतम् । ततस्तत्रागत्य तेन देवेन संसारावस्थायां तातं स्वगुरुं मुक्त्वा सर्वे साधवो वन्दिताः । किं कारणं त्वया नायं वन्दितः ? एवमाचार्येण पृष्टोऽसौ सर्वं स्ववृत्तान्तं सचित्तजलपानार्थं पितुः प्रेरणं च सर्वेषां साधूनां पुरस्ताद् कथयित्वा देवलोकं गतः । एवमन्यैरपि मुनिभिस्तृपापरीपहः सोढव्यः ॥ ५ ॥

शुधापिपासापरीपहसहनेन कृशशरीरस्य साधोः शीतकाळे शीतमपि बहु वा-  
धते, इति शीतपरीपहजयं प्राह—

गोकुल नहीं है । वह शीघ्र ही पीछे वहां से वापिस लौटा और अपने आचार्य के पास आकर इस बात को कहा कि अब तो वहां पर कोई गोकुल नहीं है । साधुओं ने जब यह बात सुनी तो उन्होंने ने यह निश्चित किया कि अवश्य इसमें कोई देव की माया थी । सब ने मिलकर इसका प्रायश्चित्त लिया, क्यों, कि इन सब ने वहां से पहिले तक्रादि को ग्रहण किया था । बाद में देव ने आकर अपने संसार अवस्था के पिता-धन-मित्र मुनि को छोड़कर बाकी के समस्त साधुओं को वंदना की । आचार्य ने पूछा धनमित्र मुनि को वंदन क्यों नहीं किया? तब उस देव ने समस्त पहिले का वृत्तान्त जो धनमित्र मुनि ने सचित्त जल को पीने के लिये अपने शिष्य धनप्रिय को मुनि की अवस्था में कहा था आचार्य के समक्ष कह दिया । कह कर फिर यह स्वर्ग को वापिस चला गया । इसी प्रकार अन्य मुनियों को भी तृपापरीपह का विजय करना चाहिये ॥ ५ ॥

नथी. ते એજ વખતે પાછા ફર્યા અને પોતાના આચાર્યની પાસે આવીને કહ્યું કે, ત્યાં તો કંઈ ગોકુળ નથી. સાધુઓએ જ્યારે આ વાત સાંભળી તો તેઓએ એવું નક્કી કર્યું કે, અવશ્ય આમાં કંઈ દેવની માયા હતી, સહુએ મળીને તેવું પ્રાયશ્ચિત્ત લીધું. કારણ કે, તે સહુએ ત્યાંથી છાસ આદિ વસ્તુ ગ્રહણ કરેલ હતી. બાદમાં દેવે આવીને પોતાના સંસાર અવસ્થાના પિતા ધનમિત્ર મુનીને છોડીને બાકીના સમસ્ત સાધુઓને વંદના કરી, આચાર્યે પૂછ્યું કે, ધનમિત્ર મુનિને વંદના કેમ ન કરી? ત્યારે તે દેવે પહેલાનો સમસ્ત વૃત્તાંત જે ધનમિત્ર મુનિએ સચિત્ત પાણી પીવા માટે પોતાના શિષ્યને મુનિ અવસ્થામાં કહ્યું હતું તે આચાર્ય સમક્ષ કહી દીધું. આ કહીને તે પોતાના મુળધામ સ્વર્ગમાં ચાલ્યા ગયા. આ પ્રકારે આ મુનિઓએ પણ તૃપાપરીપહને વિજય કરવો જોઈએ. ॥૫॥

મૂલમ્—ચરંતં વિરંયં લૂહં, સીયં ફુસડ્ એગંયા ।

નાંડ વેલં” મુંળી ગેચ્છે, સોઘા ણં જિણંસાસણં ॥૬॥

છાયા—ચરન્તં વિરંતં રૂઢં, શીતં સ્પૃશતિ એકદા ।

નાતિવેલં મુનિર્ગચ્છેત્ શ્રુત્વા સ્વલુ જિનશાસનમ્ ॥ ૬ ॥

ટીકા—‘ચરંતં’ ઇત્યાદિ ।

ચરન્તં=મોક્ષમાર્ગે, ગ્રામાનુગ્રામં વા વિહરન્તં, વિરંતં=સાવધયોગતો નિવૃત્તમ્—અગ્નિમજ્જ્વાલનાદિભ્યો નિવૃત્તમિત્યર્થઃ, રૂઢં=સ્નિગ્ધાહારતૈલાભ્યન્નપરિહારેણ ધૂસરાન્નમુનિમ્, એકદા=શીતકાલે, શીતં સ્પૃશતિ=પીડયતિ ।

શીતકાલે હિ વનસ્પતયો હિમનિપાતેન પરિતઃ પરિશુષ્કા ભવન્તિ, પથિકાઃ સંકોચિતપાણયઃ પદૈકમપિ ગન્તુમસમર્થાઃ પડ્ગુવત્ તત્ર તત્રૈવ તિષ્ઠન્તિ, કેચિત્ ક્વણદન્તવીણિકાઃ કમ્પમાનગાત્રાઃ કુશાનુસેવનાય તદભિમુખં શલભા ઇવાપવન્તિ ।

ધ્રુધા એવં પિપાસા પરીપહ કે સહન કરને સે મુનિ કા શરીર કુશ હો જાતા હૈ ઇસસે શીતકાલ મેં શીત કી પીડા વહુત હોતી હૈ ઇસલિયે તીસરે શીતપરીપહ કો જીતના ચાહિયે; યહી વાત ઇસ નીચે કી ગાથા સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘ચરંતં વિરંયં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—( ચરંતં વિરંયં—ચરન્તં વિરંતં ) મોક્ષ માર્ગ મેં અથવા એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં વિહાર કરને વાલે તથા સાવધયોગ સે વિરક્ત એવં (લૂહં—રૂઢમ્) સ્નિગ્ધાહાર તૈલમર્દન આદિ કે ત્યાગ સે ધૂસર શરીર વાલે એસે મુનિ કો ( એગયા—એકદા ) શીતકાલ મેં ( સીયં ફુસડ્—શીતં સ્પૃશતિ ) શીત પીડિત કરતા હૈ । ઉસ સમય વહ મુનિ ( ણં—સ્વલુ ) નિશ્ચ-

ભૂખ અને તરસ સહન કરનારા મુનિનું શરીર દુર્બળ બની જાય છે, અને દુર્બળ શરીરવાળાને ઠંડિયી બહુ પીડા થાય છે. આથી ત્રીજો ઠંડિના પરિપહને મુનિએ જીતવો જોઈએ. એવી વાત સૂત્રકાર નીચેની ગાથાથી પ્રગટ કરે છે.

ચરંતં વિરંયં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ચરંતં વિરંયં—ચરંતં વિરંતં મોક્ષમાં અથવા એક ગામથી બીજા ગામે વિહાર કરવાવાળા તથા સાવધ યોગથી વિરક્ત અને લૂહં—રૂઢમ્ સ્નિગ્ધાહાર તૈલમર્દન આદિના ત્યાગથી ધૂસર શરીરવાળા એવા મુનિને એગયા—એકદા શીતકાળમાં સીયં ફુસડ્—શીતં સ્પૃશતિ શીતકાળ પીડિત કરે છે. તે સમયે તે મુનિ ણં—સ્વલુ



वायवश्च तुपारासारसंगादतिशय शिशिराः प्राणिनां शरीराणि परितः सातिशयं पीडयन्ति । अनवरतशीतपातजनितव्यथाचारणाय बालकाः काष्ठखण्डादीनि समाहृत्यैकत्र वह्निं प्रज्वाल्य प्रसारितपाणयस्तापमासेवन्ते । यत्र प्रतिक्षणं प्राणिनां प्राणाः प्रखर शीतवेदनाभिरुद्विग्ना भवन्ति ।

तदा स मुनिः खलु=निश्चयेन, जिनशासनं जिनवचनरहस्यं श्रुत्वा 'अनेन ममात्मना नरकनिगोदादौ तीव्रतरा अनन्तवेदना अनन्तवारमनुभूता' इति विभाव्य, अतिवेलं=वेलाऽतिक्रमणं न गच्छेत्=न प्राप्नुयात्-प्रतिलेखनादे र्यः कालस्तं शीतभयादुल्लङ्घ्याऽन्यस्मिन् काले प्रतिलेखनादिकं न कुर्यादित्यर्थः । यद्वा-शीतभयात् पूर्वोपविष्टस्थानं विहाय स्थानान्तरं न व्रजेदिति ।

'चरंतं' इत्यनेन कारणं विना एकत्रावस्थानं न करणीयमिति सूचितम् ।

'विरयं' इत्यनेन यतनावच्छं सूचितम् ।

यसे ( जिनशासनं सोच्चा-जिनशासनं श्रुत्वा ) जिन शासन को- 'इस मेरी आत्मा ने नरक निगोद आदि स्थानों में तीव्रतर अनन्त वेदनाएँ अनन्तवार भोगी हैं उस वेदना के सामने यह शीतवेदना क्या अधिक है ?' इस बात को सुनकर-समझकर ( अइवेलं-अतिवेलम् ) समय को उल्लंघन करके-प्रतिलेखना आदि के समय को टालन करके ( न गच्छे-न गच्छेत् ) प्रतिलेखना आदि का जो समय है उसके सिवाय अन्य समय में प्रतिलेखनादिक क्रियाओं को न करे । तथा शीत के भय से पूर्वाधिष्ठित स्थान का परित्याग कर दूसरे स्थान में भी न जावे ।

गाथा में रहे हुए "चरंतं" इस पदद्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि मुनि को कारणविशेष विना एक जगह स्थिररूप से नहीं

निश्चयथी जिनशासनं सोच्चा-जिनशासनं श्रुत्वा उन शासनने आ भारा आत्माओ नरक निगोद आदि स्थानोभां तीव्रतावाणी अनन्त वेदनाओ धरुी वभत लोगवी छे ते वेदनाओ सामे आ शीत वेदना क्या डिसाभभां छे ?' आ बातने सांभणी सभए अइवेलं-अतिवेलं समयनुं उल्लंघन करी प्रतिलेखना आदिना सभयने टालीने न गच्छे-न गच्छेत् प्रतिलेखना आदिने जे समय छे तेना सीवाय भीन सभयभां प्रतिलेखनादिक क्रियाओने न करे. तथा ठंडीना लयथी पूर्वाधिष्ठित स्थानने त्याग करीने भीन स्थानभां न जाय.

गाथाभां रहेला "चरंतं" ओ पदद्वारा सूत्रकार ओ प्रदर्शित करेछे के, मुनिये कारण विशेष विना ओक जगहाओ स्थिर रूपथी रोकवुं न लेछे ओ.

‘લૂહં’ इत्यनेन तपश्चरणशीलत्वं प्रवेदितम् ॥ ६ ॥

‘मुणी’ इत्यनेन सावधकार्यं मौनत्वमिति बोधितम् ।

मूलम्—‘न मे’ निवारणं अस्ति, छवित्ताणं न विज्जए ।

अहं तु अग्निं सेवामि, इइ भिक्खू न चिंतए ॥ ७ ॥

छाया—न मे निवारणम् अस्ति, छवित्राणं न विद्यते ।

अहं तु अग्निं सेवे, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत् ॥ ७ ॥

टीका—‘न मे’ इत्यादि ।

मे=मम, निवारणं=शीतनिवारकं स्थानं नास्ति, तथा—छवित्राणं=शरीराच्छा-  
दनકં વસ્ત્રકમ્બલાદિકં ન વિદ્યતે । તુ=પુનઃ, અગ્નિં સેવે=અગ્નિં પ્રજ્વાલ્ય તત્તાપમા-  
થયેય, इति=एवं, भिक्षुर्न चिन्तयेत्=मनसापि न प्रार्थयेत् । चिन्ताप्रतिषेधेन  
तत्सेवनं तु दूरत एव निराकृतम् ।

ઠહરના ચાહિયે । “વિરયં” ઇસસે મુનિકો યતનાવાન્ હોના ચાહિયે યહ  
સૂચિત કિયા ગયા હૈ । “લૂહં” પદ સે તપશ્ચરણ શીલતા એવં “મુણી”  
ઇસ પદ સે સાવધકાર્ય મેં મૌન રાખના યહ સૂચિત કિયા ગયા હૈ ॥ ૬ ॥

‘ન મે નિવારણં’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(મે-મમ) મેરે પાસ (નિવારણં-નિવારણમ્) શીત કો દૂર કરને  
વાલા સ્થાન (ન અત્થિ-નાસ્તિ) નહીં હૈ ( છવિત્તાણં ન વિજ્જએ-છવિત્રાણં  
ન વિદ્યતે ) શરીર કો આચ્છાદાન કરને વાલા વસ્ત્ર એવં કમ્બલ આદિ મી  
નહીં હૈ અતઃ ( અહં તુ અગ્નિં સેવામિ-અહંતુ અગ્નિં સેવે ) મેં અગ્નિ કા  
‘સેવન કરૂં (इइ-इति) ઇસ પ્રકાર ( ભિક્ખૂ-ભિક્ષુઃ ) સાધુ ( ન ચિંતએ-ન  
‘ચિન્તયેત્ ) મન સે મી વિચાર ન કરે, ડસકે સેવન કી વાત તો દૂર રહી ।

“વિરયં” એનાથી મુનિયે યતનાવાન બનવું જોઈ એ. એવું સૂચિત કરવામાં  
આવ્યું છે “લૂહં” પદથી તપશ્ચરણ શીલતા અને “મુણી” આ પદથી સાવધ  
કાર્યમાં મૌન રાખવું એ સૂચિત કરવામાં આવેલ છે.

નમે નિવારણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મે-મમ મારી પાસે નિવારણં-નિવારણમ્ ઠંડીથી બચાવી શકે તેવું  
સ્થાન ન અત્થિ-નાસ્તિ નથી, છવિત્તાણં ન વિજ્જએ-છવિત્રાણં ન વિદ્યતે શરીર ઉપર એ. ૬વા  
માટે વસ્ત્ર તાથા કમ્બલ વગેરે પણ નથી. આથી અહંતુ અગ્નિં સેવામિ-અગ્નિં સેવે  
અગ્નિનું સેવન કરું इइ-इति આ પ્રકારનો મનથી પણ ભિક્ખૂ-ભિક્ષુ મુનિ ન  
ચિંતએ-ન ચિન્તયેત્ વિચાર ન કરે. તેના સેવનની વાત તો દૂર રહી.

અયં ભાવઃ—શીતે મહત્યપિ પતતિ સતિ જીર્ણવસનઃ પરિત્રાણવર્જિતો નાક-  
લ્પ્યાનિ વસનાનિ ગૃહ્ણીયાત્ શીતત્રાણાય । આગમવિહિતેન વિધિના એપણીયમેવ  
યથાકલ્પં ગવેપયેત્ પરિશુઞ્ઞીત વા । નાપિ શીતાર્તોઽગ્નિ જ્વાલયેત્, અન્યજ્વાલિતં  
વા નાસેવેત । એવમનુતિષ્ઠતા શીતપરીપદ્ધત્યયઃ કૃતો ભવતીતિ ।

અત્ર ‘ભિક્ષૂ’ इत्यनेन निरवद्यभिक्षाग्रहणशीलत्वं सूचितम् ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ—

ચતુર્થારકે—રાજગૃહે નગરે ચત્વારઃ કુવેરદત્તથ્રેષ્ઠિપુત્રાઃ કુવેરસેન-કુવેરમિત્ર-  
કુવેરવલ્લભ-કુવેરપ્રિયનામાનો ભદ્રગુપ્તાચાર્યસમીપે જિનોક્તં ધર્મં શ્રુત્વા પ્રવ્રજિતાઃ ।

इस का भाव यह है कि जब शीतकाल में शीत पड़ता है उस  
समय जीर्णवस्त्र वाला एवं शीत की रक्षा के साधनों से रहित साधु  
अकल्पनीय वस्त्रों को शीत की रक्षा निमित्त ग्रहण नहीं करे । आगम  
में विहित विधिके अनुसार जो एपणीय हों तथा साधु के लिये कल्प-  
नीय हों उन्हें ही ग्रहण करें । ठंड से पीड़ित होने पर भी अग्नि को न  
जलावे तथा दूसरों द्वारा जलाई गई अग्नि का भी सेवन नहीं करें ।  
ऐसा करने से ही साधु शीतपरिपहविजयी माना जाता है । गाथा में  
रहे हुए-भिक्षूपद से सूत्रकार ‘भिक्षु को निरवद्य भिक्षा ही ग्रहण  
करना चाहिये’ यह सूचित करते हैं ।

इस विषय पर यहां दृष्टान्त दिया जाता है—राजगृह नगरमें कुवेर-  
दत्त नामक एक सेठके कुवेरसेन, कुवेरमित्र, कुवेरवल्लभ, कुवेरप्रिय

આનો ભાવ એ છે કે, જ્યારે શીતકાળમાં ઠંડી પડે છે એ સમયે જીર્ણ વસ્ત્ર-  
વાળા અને ઠંડીની રક્ષાના સાધનોથી રહિત સાધુ અકલ્પનીય વસ્ત્રોને ઠંડીની રક્ષા  
નિમિત્તે ગ્રહણ ન કરે. આગમમાં કહેવાયેલ વિધિ અનુસાર જે એપણીય હોય  
તથા સાધુ માટે કલ્પનિય હોય તેને જ ગ્રહણ કરે. ઠંડીથી પીડિત હોવા છતાં  
પણ અગ્નિને પ્રગટાવે નહીં તથા બીજાઓ દ્વારા પ્રગટાવવામાં આવેલ અગ્નિનું  
પણ સેવન ન કરે. આ રીતનું વર્તન રાખનાર સાધુ શીતપરીપદ્ધતિજયી  
માનવામાં આવે છે. ગાથામાં રહેલા “ભિક્ષૂ” પદથી સૂત્રકાર એમ સૂચિત  
કરે છે કે, ‘ભિક્ષુએ નિરવધ ભિક્ષા જ ગ્રહણ કરવી જોઈએ.’

આ વિષય ઉપર અહીં દૃષ્ટાન્ત કહેવામાં આવે છે.

ચોથા આશામાં—રાજગૃહ નગરમાં કુવેરદત્ત નામનો એક સેઠ હતો. જેને  
કુવેરસેન, કુવેરમિત્ર, કુવેરવલ્લભ અને કુવેરપ્રિય નામે ચાર પુત્ર હતા. આ

તે શ્રુતમધીત્યાન્યદા કદાચિદેકાકિત્વવિહારાસ્થ્યપ્રતિમાં સ્વીકૃતવન્તઃ । તદનન્તર-  
મેકાકિત્વપ્રતિમયા વિહરન્તસ્તે પુનરપિ રાજગૃહનગરસમીપવર્તિનિ વૈભારગિરિપ્રદેશે  
વસતેર્યથાકલ્પમવગ્રહમવગૃહ્ય સંયમેન તપસાઽત્માનં ભાવયન્તો વિહરન્તિ સ્મ । તદા  
હેમન્તર્તુસ્તુપારાસારૈર્જન્યાન્ પીડયન્, વનસ્પતીન્ પરિમ્લ્હનયન્, પશુપક્ષ્યાદીન્ કા-  
ષ્ઠવજ્જડતાં પ્રાપયન્, સર્વપ્રાણિપ્રાણાનુદ્વેજયન્નાસીત્ । તસ્મિન્ સમયે તે ચત્વારો  
મુનયસ્તૃતીયયામે ભિક્ષાચર્યાર્થં રાજગૃહનગરં પ્રવિષ્ઠાઃ, તત્ર ભિક્ષાં ગૃહીત્વા કૃત્વા-  
નામકે ચાર પુત્ર થે ।

એક સમય કી વાત હૈ ઉન્હોં ને એકાકિત્વવિહાર નામ કી ભિક્ષુ  
પ્રતિમા સ્વીકાર કી હસસે વે એકાકી હોકર વિહાર કરને લગે । વિહાર  
કરતેર વે કિસી સમય પુનઃ રાજગૃહ નગર કે સમીપવર્તી વૈભારગિરિ  
કી તલહટી મેં વસી હુઈ એક વસ્તી મેં આયે ઓર વહાં યથાકલ્પ અવ-  
ગ્રહ-આજ્ઞા લેકર ઉતરે ઓર સંયમ એવં તપ સે આત્મા કો ભાતે હુએ  
વિચરને લગે । યહ સમય હેમન્તઋતુ કા થા । તુપાર-હિમ કે છોટે ર  
કળોં સે હસ સમય મનુષ્યોં કો અધિક કષ્ટ હોતા હૈ । વનસ્પતિયાં હિમ-  
કળોં કે નિપાત સે દગ્ધ હો જાતી હૈં । પશુ પક્ષી કાષ્ઠ જૈસે જડ હો  
જાતે હૈં । તાત્પર્ય યહ કિ હસ ઋતુ મેં ઠંડ કી અધિકતા સે હરએક  
પ્રાણી કો અધિક કષ્ટ કા અનુભવ હોતા હૈ । એસે સમય મેં વે ચારોં હી

ચારે પુત્રોએ ભદ્રગુપ્ત આચાર્ય પાસેથી ધર્મનું શ્રવણ કરી મુનિદીક્ષા ધારણ  
કરી. શાસ્ત્રોનું સારી રીતે અધ્યયન કર્યું. એક સમયની વાત છે, તેઓએ  
એકાકિત્વ વિહાર નામની ભિક્ષુ પ્રતિમા સ્વીકારી. આથી તેઓ ચારે એકાકી  
બનીને વિહાર કરવા લાગ્યા. વિહાર કરતાં કરતાં કોઈ સમયે રાજગૃહ નગર  
સમીપ રહેલી વૈભારગિરીની તળેટીમાં વસેલી એક વસ્તીમાં આવ્યા અને ત્યાં  
યથાકલ્પ અવગ્રહ આજ્ઞા લઈને ઉતર્યા સંયમ અને તપથી આત્માને ભાવતા  
વિચરવા લાગ્યા. આ સમયે હેમન્ત ઋતુ હતી. તુપાર હિમનાં નાનાં નાનાં  
કણોથી આ સમયે મનુષ્યો અધિક કષ્ટ પામે છે. વનસ્પતિઓ હિમ કણોના  
પડવાથી બળી જાય છે, પશુ પક્ષીઓ લાકડાં જેવા જડ થઈ જાય છે. મતલબ  
એ કે, આ ઋતુમાં ઠંડીની અધિકતાથી દરેક પ્રાણીને વધુ કષ્ટનો અનુભવ  
થાય છે. એવા સમયમાં એ ચારેય મુનિ દિવસના ત્રીજા ભાગમાં ।

द्वारास्ते सर्वे स्वयसर्ति गन्तुं पृथक् पृथगेव प्रतिनिवृत्ताः तेषामेकस्य कुवेरसेनमुने-  
वैभारगिरिकन्दरान्तिकमुपगतस्य रात्रिः संजाता, अतस्तत्रैव सोऽतिष्ठत् । द्वितीयस्य  
कुवेरमित्रमुनेरुद्याने रात्रिः समजनि, अतस्तत्रैव सोऽतिष्ठत् । तृतीयस्य कुवेरवल्ल-  
भमुनेरुद्यानसमीपे, चतुर्थस्य कुवेरप्रियमुनेस्तु नगरसमीपे । तत्र वैभारगिरिकन्दरा-  
द्वारसमीपावस्थितस्य मुनेर्निपतत्तुपाससंपर्कशीतलैः शैलमारुतैः प्रकम्पितशरीरस्यापि  
मनो मेरुरिवनिष्कम्प मासीत् । यथा यथा शीतं प्रवर्धते, तथा तथा ऽऽत्मिकवलं  
प्रकाशयन् मनः सुस्थिरं कुर्वन् रणे वीर इव शत्रुं शीतं विजेतु प्रोत्साहसंपन्नः सुधीरः  
शीतवेदनां सहमानोऽसौ मुनिः समाधिभावेन रात्रेः प्रथमयाम एव कालं गतः ।

मुनि दिवस के तृतीय प्रहर में भिक्षाचर्या के लिये राजगृहनगर में  
आये । वहां पर मिले हुए एपणीय आहार करके वे सब फिर वहां से  
एक पीछे एक वैभारगिरि के समीप जहां उतरे हुए थे वहां पहुँचने के  
लिए चले । इनमें कुवेरसेन मुनि को मार्ग में ही जब वे वैभारगिरि का  
कन्दरा के पास पहुँचे तो रात्रि हो गई, इसलिये वह वहीं पर ठहर गये ।  
दूसरे कुवेरमित्रमुनि रात्रि हो जाने से बगीचे में ठहरे । वैसे ही तीसरे  
कुवेरवल्लभमुनि बगीचे के पास ठहरे । चौथे कुवेरप्रियमुनि रात्रि होने  
से राजगृह नगर के पास ही ठहर गये । वैभारगिरि की कन्दरा-गुफा के  
द्वार पर ठहरे हुए मुनिराज ने पड़ते हुए शीत के संपर्क से अत्यंत  
शीतल पर्वतीय वायु के वेग से कम्पितशरीर होने पर भी अपने मनको  
मेरु के समान निष्कम्प बनाते हुए उस शीत को प्रबलता का सामना  
किया । जैसे २ शीतकी अधिकता होती जाती थी, उस उस रूप से

भाटे राजगृह नगरमां आव्यां. त्यांथी भजेल ओषणीय आहार करीने ते सधणा  
इरी पाछा ओक पछी ओक वैभारगिरीनी समीप ज्यां तेओ उतर्यो डता त्यां  
पडोयवा भाटे आली नीकल्या. तेमांथी कुवेरसेन मुनिने मार्गमांज रात्रि पडी  
जवाथी वैभारगिरीनी कंदरानी पासो रोकाई गया. थीज कुवेरमित्र मुनि रात्रि  
थवाथी बगीचामां रोकाई गया, ओवी ज रीते तीज कुवेरवल्लभ मुनि बगी-  
चानी पासो रोकाई गया, चौथा कुवेरप्रियमुनि रात्रि थई जवाथी राजगृह  
नगरनी पासो ज रोकाई गया वैभारगिरि कंदराना मुण्य द्वार पासो रोकाई  
गयेला, मुनिराजे डंडीना संपर्कथी अत्यंत शीतल पर्वतीय वायुना वेगथी कंपीत  
शरीर डोवा छतां पण्य पोताना मनने मेइ समान अडग राणी डंडीनी प्रबलतानो  
सामनो क्यो. जेम जेम डंडीनी अधिकता वधनी गर्ध ते ते इपथी तेमनुं आत्म.



ઉદ્યાનસ્થં તુ નીચપ્રદેશવર્તિત્વાદ્ દ્વિતીયયામે પ્રવલતરં શીતં વાધતે સ્મ, તદા સોઽપિ પૂર્વોક્તમુનિવન્નિથલેન મનસા શીતવેદનાં સહમાનઃ સમાધિભાવેન દ્વિતીયયામે કાલગતોઽભવત્ । એવમુદ્યાનસમીપસંસ્થિતસ્તુ તૃતીયયામે, એવં નગરાસન્નસ્તુ-  
 ડનકા આત્મિકચલ ભી અધિકર વિકસિત હોતા જાતા થા । જિસ પ્રકાર કોઈ ઉત્તામ વીર રણાઙ્ગણ મેં વૈરી કા સામના કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર યે ભી ઉસ શીત કા હટકર સામના કર રહે થે । સદ્ભાવના મેં જરા સી ભી શિથિલતા હન્હોં ને નહોં આને દી । સામ્હના કરતે ૨ હી વે મુનિ સમાધિભાવ સે કાલધર્મ કો પાચે ૧ ।

જો મુનિરાજ ઉદ્યાન મેં ઠહરે હુણ થે ઉન્હેં શીત કી વેદના ને દ્વિતીયપ્રહર મેં સતાયા । જિસ પ્રકાર પ્રથમ મુનિરાજ ને શીત કી વેદના સહન કરને મેં નિશ્ચલતા ધારણ કી, ઉસી પ્રકાર હન્હોં ને ભી ઉસકે સહન કરને મેં નિશ્ચલતા ધારણ કી । અન્ત મેં સમાધિભાવ સે યે ભી કાલધર્મ પા ગયે ૨ ।

જો મુનિરાજ ઉદ્યાન કે સમીપ ઠહરે હુણ થે, ઉન્હેં શીત કી વેદના રાત્રિ કે તૃતીય પ્રહર મેં સતાને લગી, ઓર નગર કે પાસ ઠહરે હુણ મુનિરાજ કો શીત વેદના ને રાત્રિ કે ચતુર્થ પ્રહર મેં સતાના શુરુ કિયા । હસ પ્રકાર યે દોનોં મુનિરાજ ભી શીતપરીપહ કો જીતતે ૨ હી સમાધિભાવ સે અન્ત મેં કાલધર્મ કો પ્રાપ્ત હુણ ૪ । યે ચારોં કે ચારોં હી અનુત્તર

બળ પણુ અધિક રૂપથી વિકસતું જતું હતું. જે રીતે કોઈ ઉત્તમ વીર રણાંગણમાં વૈરીનો સામનો કરે છે તેવા પ્રકારે મુનિ પણ ઠંડીનો એવી જ રીતે સામનો કરી રહ્યા હતા. સદ્ભાવનામાં જરા પણ શિથિલતા તેમણે આવવા ન દીધી. સામનો કરતાં કરતાં તે મુનિ સમાધિ ભાવથી કાળ ધર્મ પામ્યા.

જે મુનિ બગીચામાં રહ્યા હતા. તેમને ઠંડીની વેદના બીજા પ્રહરમાં થઈ. જે પ્રકારે પ્રથમ મુનિરાજે ઠંડીની વેદના સહન કરવામાં અડગતા ધારણ કરી તેવી જ રીતે આમણે પણ અડગતા દાખવી અને છેવટે સમાધિભાવથી કાળધર્મ પામ્યા.

જે મુનિરાજ બગીચાની બહાર રોકાયા હતા તેમને ઠંડીની વેદના રાત્રીના ત્રીજા પહોરમાં થવા લાગી અને નગરની પાસે રોકાયેલા મુનિરાજને ઠંડીની વેદના ચોથા પહોરે સતાવવા લાગી. આ પ્રકારે આ બન્ને મુનિરાજ પણ ઠંડીના પરીપહને જીતતાં જીતતાં સમાધિ ભાવથી અંતે કાળધર્મને પામ્યા. આ રીતે

ચતુર્થયામે । સર્વેઽપ્યેતે વિજિતશીતપરીપદાઃ કાલં કૃત્વાઽનુત્તરવિમાનેષુ એકમવા-  
વતારિત્વેન સમુત્પન્નાઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિઃ શીતપરીપદઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૭ ॥

શીતકાલાનન્તરં ગ્રીષ્માગમો ભવતીત્યતઃ શીતપરીપદાનન્તરમુષ્ણપરીપદ  
જયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—ઉસિણપરિયાવેણં, પરિદાહેણ તંજિણ ।

ધિંસુ વાં પરિયાવેણં, સાયં નો પરિદેવણ ॥ ૮ ॥

છાયા—ઉષ્ણપરિતાપેન, પરિદાહેન તર્જિતઃ ।

ગ્રીષ્મે વા પરિતાપેન, સાતં નો પરિદેવયેત્ ॥ ૮ ॥

ટીકા—‘ઉસિણ૦’ ઇત્યાદિ ।

ગ્રીષ્મે=ઉષ્ણકાલે, યત્ર હિ-ભાસ્કરઃ કિરણનિકરૈર્દહનં કિરન્નિવ ધરાતલેઽઙ્ગાર-  
પ્રકરમાસ્તૃણન્નિવ જીવજાતં પરિતાપયતિ, તરુણં પરિશોપયતિ, શુષ્કયતિ ચ ।

વિમાનોં મેં એકમવાવતારી રૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ । ઇસી પ્રકાર અન્ય મુનિયો  
કો મી શીતવેદના કે સહન કરને મેં અપના પરાક્રમ ફોડના ચાહિયે ॥૭॥

શીતકાલ કે વાદ હી ગ્રીષ્મઋતુ કા આગમન હોતા હૈ અતઃ શીત-  
પરીપદ કો સહન કરને કે વાદ ચૌથા ઉષ્ણપરીપદ મી મુનિરાજ કો  
સહન કરના ચાહિયે, યહ વાત ઇસ નીચે કી ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદ-  
ર્શિત કરતે હૈ—‘ઉસિણ૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(ધિંસુ-ગ્રીષ્મે) ગ્રીષ્મકાલ મેં કિ જિસમેં સૂર્ય અપની પ્રચ્છર  
કિરણોં કે નિકર સે ઇસ સમસ્ત ભૂમણ્ડલ પર પ્રવલ તાપ કી વર્ષા કિયા  
કરતા હૈ, સમસ્ત જીવ જિસમેં માનોં અગ્નિ તાપસે જલતે હોં, વૃક્ષસમૂહ  
જિસ મેં શુષ્ક જૈસા હો જાતા હૈ । વિચારે પ્યાસે મોલે મૃગોં કે કુણ્ડ કે

એ ચારે મુનિરાજ અનુત્તર વિમાનમાં એકલવ અવતારી રૂપથી ઉત્પન્ન થયા. આ  
પ્રકારે અન્ય મુનિયોએ પણ શીતવેદના સહન કરવામાં પોતાનું પરાક્રમ  
બતાવવું જોઈએ. ॥૭॥

કંડીના વખત પછી ઉનાળાનો વખત આવે છે અહીં શીતપરીપદને  
સહન કર્યા પછી ચોથો ગરમીના પરીપદને પણ મુનિરાજે સહન કરવો જોઈએ.  
એ વાત નીચેની ગાથાથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે.—“ઉસિણ૦” ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ધિંસુ-ગ્રીષ્મે ગ્રીષ્મ કાળમાં કે ત્યારે સૂર્ય પોતાનાં પ્રખર કિરણોથી  
સમસ્ત ભૂમંડળ ઉપર પ્રબળ તાપની વર્ષા વરસાવે છે. સમસ્ત જીવ જેમાં  
અગ્નિના તાપની માફક બળતા હોય છે, વૃક્ષ સમૂહ શુષ્ક બની જાય છે.

મૃગતૃણાભિરારચિતજલતરંગમાલાભિરિવ પ્રચલજ્જલધારા વિભ્રમમુપગતા મુઘમૃગ-  
યુથાઃ પિપાસયા પરિતઃ પ્રધાવન્તિ । મનુષ્યાઃ સ્વલુ પ્રાયશઃ પ્રચંડમાર્તંડકરનિક-  
રસંપર્કમ્પ્રસ્વરરજઃકળોપેતવાત્યાપરિઘટ્ટિતાઃ પ્રતપ્તભૂતલનિપતિતાઃ પિપાસયાઽઽસ-  
ન્નમૃત્યવ इव भवन्ति । यत्र स्वलु वनस्थली पिपासावशविभ्रमद्विर्विक्लिपशुपक्ष्या-  
दिभिः परिशुष्कतालुरसनकण्ठैः समाकुला, नभस्तलं च नानाविध पत्रकाष्ठतृणकच-  
वरोद्धूलनकरप्रतिकूलमारुतध्वनिसमाकुलं भवति । तस्मिन्नुष्णकाले, वा शब्देन-  
शरदि वर्षासु वा, उष्णपरितापेन=उष्णम्-सूर्यकिरणसंयोगात्तप्तं-भूमिधूलिपाषाणा-

કુણ્ડ જિસમેં “યહ જલધારા વહ રહી હૈ” હસ પ્રકાર ભ્રમોત્પાદક  
મૃગતૃણા સે પાગલ જૈસે વને હુએ ઇધર ઉધર દોડને લગતે હૈ । જિસ  
ઋતુમેં સૂર્ય કી પ્રચંડ કિરણોં સે ધૂપ સૂચ પડતી હૈ જિસસે રેતી તપ  
જાતી હૈ ઓર લૂ ચલને લગતી હૈ । સંતપ્ત રજકળ સે મિશ્રિત ઉસ લૂકે  
વેગ સે વ્યાકુલ હોકર મનુષ્ય ખી ઉસ તપી હુઈ ભૂમિ પર ગિર ગિર કર  
પ્યાસ કે મારે મૂર્છિત હો આસન્નમૃત્યુ જૈસે દિહાઈ દેને લગતે હૈ । જિસ  
ગ્રીષ્મ કાલ મેં પિપાસા કે વશ જિનકે તાલૂ ઓઠ એવં કંઠ સૂચ રહે હૈ  
ગર્મીં કે મારે મુંહ જિન કે ફટે હુએ હૈ ઓર જીભ લટક રહી હૈ એસે  
પશુ પક્ષિયોં સે અટવી વ્યાપ્ત હો જાતી હૈ । તથા જિસમેં આકાશ  
નાનાવિધપત્ર, કાઠ, તૃણ, કૂડા-કચરા આદિ કો ઉડાને વાલી પ્રતિકૂલ  
વાયુ કી સનસનાહટ ધ્વનિ સે વ્યાપ્ત હો જાતા હૈ એસે ઉષ્ણકાલ મેં ।  
( ઉસિણપરિઘાવેણં-ઉષ્ણપરિતાપેન ) ઉષ્ણપરિતાપ સે-સૂર્ય કિરણોં કે

તરસથી બીચારા લોખાં હરણુનાં ટોળાં “આ જળધાર વહી રહી છે” આ  
પ્રકારના ભ્રમથી પાગલની માફક મૃગજળ રૂપી જળના આભાસ તરફ  
દોડતાં રહે છે. જે ઋતુમાં સૂર્યના પ્રચંડ કિરણોથી ખૂબ તાપ પડે છે જેનાથી  
રેતી તપે છે, અને લૂ ચાલવા લાગે છે, સંતપ્ત રજકણથી મિશ્રિત તે લૂના  
વેગથી વ્યાકુળ બની મનુષ્ય પણ તે તપેલી ભૂમી ઉપર તરસના માર્યા પડી  
જઈ મૂર્છિત થઈ આસન્ન મૃત્યુ જેવા દેખાય છે. જે ગ્રીષ્મકાળમાં અટવીમાં પીપા-  
સાને વશ જેતું તાળવું, હોઠ અને કંઠ સુકાઈ જાય છે, ગરમીના માર્યા મોઢું જેવું  
ફાટી રહે છે અને જીભ લટકી જાય છે એવા પશુ પક્ષિઓથી વ્યાપ્ત થઈ જાય છે.  
તથા જેમાં આકાશ જુદી જુદી જાતનાં પાંદડાં, લાકડું, ઘાસ, કચરા, પુંજ વગેરેને  
ઉડાવવાવાળા પ્રતિકૂળ વાયુના સુસવોટા કરતા ધ્વનિથી વ્યાપ્ત થઈ જાય છે. એવા  
ઉષ્ણકાળમાં “ઉસિણ પરિઘાવેણં-ઉષ્ણપરિતાપેન” ઉષ્ણ પરિતાપથી ના

દિકં, તેન પરિતાપ:-ઉષ્ણપરિતાપસ્તેન તર્જિતઃ, અત્યંત પીડિતઃસન્, તથા-  
પરિદાહેન=સૂર્યકિરણસંતપ્તવાયુના 'લૂ' इति भाषाप्रसिद्धेन, दाहज्वरादિકृता-  
ન્તરિકતાપેન વા, તર્જિતઃ, તથા પરિતાપેન=સૂર્યકિરણાદિજનિતતાપેન-તર્જિતઃ,  
સાતં=સુખં પ્રતિ ન પરિદેવયેત્=હા ! કદા મમ ચન્દ્રચન્દનશીતલાનિલાદિભિઃ  
સહ સંયોગો ભવિષ્યતિ યેન મમ શાન્તિઃ સ્યાદિતિ ॥ ૮ ॥

ઉપદેશાન્તરમાહ—

મૂઢમ્-ઉપહાહિતત્તો મેહાવી, સિઘાણં નો વિ' પત્યં ૧ ।

ગાયં નો પરિસિંચેજ્જા, ન વીર્ણેજ્જા યં અપ્પેયં ॥૧॥

છાયા—ઉષ્ણાભિતપ્તઃ મેધાવી, સ્નાનં નો અપિ માર્થયેત્ ।

ગાત્રં નો પરિપિચ્ચેત્, ન વીજયેચ્ચ આત્માનમ્ ॥૧॥

સંયોગ સે તપ્ત એસે જો ભૂમિ, ધૂલિ, એવં પાપાણ આદિ હૈં ઝનકે દ્વારા  
જો પરિતાપ-કષ્ટ હોતા હૈં ઝસસે, તથા (પરિદાહેણ) સૂર્ય કી કિરણોં  
દ્વારા ગર્મ હુઈ વાયુ સે-લૂસે, અથવા દાહજ્વર આદિ સે હોને વાલે  
આન્તરિક તાપ સે (પરિચાવેણં-પરિતાપેન) એવં સૂર્ય કી કિરણોં સે ઉત્પન્ન  
હુઈ અત્યંત ગર્મી સે (તર્જિત-તર્જિતઃ) અતિશય પીડિત સાધુ  
(સાયં નો પરિદેવ-શાતં નો પરિદેવયેત્) સુખ કી વાચ્છા ન  
કરે-હા ! કિસ સમય મુઝે ચન્દ્ર અથવા ચંદન કે સમાન શીતલ પવનાદિ  
કા સંયોગ મિલેગા કિ જિસ સે મુઝે શાન્તિ મિલે । અર્થાત્-સાધુ કા  
કર્તવ્ય હૈં કિ વહ્ હરેક અવસ્થા મેં ઉષ્ણપરીપહ કો જીતે કિન્તુ ઇસ સે  
ઘવરાવે નહીં ॥ ૮ ॥

સંયોગથી તપેલ એવી જે ભૂમિ ધૂળ અને પાપાણુવાળી છે. તેના દ્વારા જે કષ્ટ થાય  
છે, એનાથી તથા “પરિદાહેણ” સૂર્યના કિરણો દ્વારા ગરમ થયેલા વાયુથી લૂથી,  
અથવા દાહજ્વર આદિથી થનાર આંતરિક તાપથી પરિચાવેણં-પરિતાપેન અને સૂર્યના  
કિરણોથી ઉદ્ભવેલ અત્યંત ગરમીથી તર્જિત-તર્જિતઃ અતિશય પીડિત સાધુ  
“સાયંનો પરિદેવ-શાતં નો પરિદેવયેત્” સુખની વાંચ્છના ન કરે-મને કયા સમયે ચંદ્ર  
અથવા ચંદનની જેવી શીતળ પવન આદિનો સંયોગ મળે કે જેથી મને  
શાન્તી થાય. અર્થાત્-સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે દરેક અવસ્થામાં ઉષ્ણ પરીપહને  
છતે, પરંતુ તેનાથી ગભરાય નહીં. (૮)

ટીકા—‘ઉળ્લાહિતત્તો’ इत्यादि ।

મેધાવી=આગમોક્તમર્યાદાનુવર્તી મુનિઃ, ઉળ્લામિતસઃ=ઉળ્લેન-ઉળ્લસ્પર્શેન, અમિતસઃ-તાપાકુલઃ સન્ સ્નાનં નો પ્રાર્થયેત્=નૈવામિલપેત્ । અપિ ચ ગાત્રં-શરીરં, નો પરિપિચ્ચેત્-ન જલૈરાદ્રીકુર્યાત્ । ચ=પુનઃ આત્માનં-સ્વદેહં ન વીજયેત્=વ્યજનાદિના શરીરે વાયું નોદીરયેત્ ।

અર્થ ભાવઃ-ઉળ્લાતપ્તોઽપિ મુનિર્જલાવગાહનસ્નાનવ્યજનવાતાદિ વર્જયેત્, ન ચ જલૈર્ગાત્રં સિચ્ચેત્ । આતપવારણાય સ્વદેહોપરિ રજોહરણાદિના છાયાં ન કુર્યાત્ । ન ચાપિ છત્રાદિકં ધારયેત્ । મનસાઽપિ ન પ્રાર્થયેત્ કિં તુ ઉળ્લાપરીપદં સમ્યક્ સહેતેતિ ।

‘ઉળ્લાહિ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ-(મેહાવી-મેધાવી) આગમોક્ત મર્યાદા કા અનુસરણ કરને વાલા મુનિ (ઉળ્લાહિતત્તો-ઉળ્લામિતસઃ) ઉળ્લસ્પર્શ સે સંતપ્ત હોતા હુઆ મી (સિસાણં નો વિપત્થય-સ્નાનં નોઽપિ પ્રાર્થયેત્) સ્નાન કી અભિલાષા ન કરે । તથા (ગાયં નો પરિસિચ્ચેજ્જા-ગાત્રં નો પરિપિચ્ચેત્) અપને શરીર ઉપર પાની ન છીંટે તથા ઉસકો ગોલા મી ન કરે ઓર ન ગીલે કપડે સે હી પોંછે । તથા (અપ્પયં ન વીજ્જા-આત્માનં ન વીજયેત્) શરીર પર વીજના આદિ સે હવા મી ન કરે ।

હસકા ભાવ યહ હૈ-ઉળ્લા સે સંતપ્ત મી મુનિ અચિત્ત જલ કા મી અવગાહન કરના-ઉસસે સ્નાન કરના, વીજનાદિ સે-પંખા આદિ સે હવા કરના હન સમસ્ત શીતલોપચારકારક ક્રિયાઓં કા પરિત્યાગ કર દેવે । અપને શરીર પર ગમીં કી વેદના કો શમન કરને કે લિયે શીતલ જલ કે

“ઉળ્લાહિ” इत्यादि.

અન્વયાર્થ-મેહાવી-મેધાવી આગમમાં કહેલ મર્યાદાનું અનુસરણ કરવાવાળા મુનિ ઉળ્લાહિતત્તો-ઉળ્લામિતસઃ ઉળ્લ સ્પર્શથી સંતપ્ત થવા છતાં પણ સિસાણં નો વિપત્થય-સ્નાનંનોઽપિ પ્રાર્થયેત્ સ્નાનની અભિલાષા ન કરે ગાયં નો પરિસિચ્ચેજ્જા-ગાત્રં નો પરિપિચ્ચેત્ પોતાના શરીર ઉપર પાણી ન છાંટે તેમ એને ભીનું પણ ન કરે કે ન તો ભીના કપડાથી લુછે, તથા “અપ્પયં ન વીજ્જા”-આત્માનં ન વીજયેત્ શરીર ઉપર વીજણા વગેરેથી હવા પણ ન નાખે.

આનો ભાવ એ છે-ઉળ્લાતાથી સંતપ્ત બનેલ મુનિએ પાણીનો આશરો દેવો, એનાથી સ્નાન કરવું, પંખા આદિથી હવા ખાવી આ સમસ્ત શીતળ ઉપચાર કારક ક્રિયાઓનો પરિત્યાગ કરવો. પોતાના શરીર ઉપર ગરમીની વેદનાનું શમન કરવા માટે શીતળ જળનો છાંટો પણ ન દેવો, આતપનું વારણ



અન્ન દષ્ટાન્તઃ—

આસીત્ તગરાનગર્યાં દત્તનામકઃ શ્રેષ્ઠી । તસ્ય ભદ્રાભાર્યાયામરહન્નક નામકઃ પુત્રો જાતઃ । એકદાઽસૌ દત્તશ્રેષ્ઠી ભાર્યાપુત્રાભ્યાં સહાર્હન્મિત્રાચાર્યસંનિધૌ ધર્મદેશનાં નિશમ્ય વિરક્તઃ સન્ પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ । સ દત્તમુનિઃ સ્નેહવશાદરહન્નકં કદાચિદપિ ભિક્ષાર્થં ન પ્રેષયતિ, સ્વયમેવ ભિક્ષામાનીય તં પોષયતિ, ન ચ તેન કિમપિ કાર્યં કારયતિ, અતોઽસૌ સુકુમારો જાતઃ । અન્યદા કદાચિત્ તસ્ય પિતા છીંટે ભી ન દે, તથા આતપ કો વારણ કરને કે લિયે રજોહરણાદિક સે શરીર પર છાયા ભી ન કરે । છત્ર-છાતા-આદિ કો ભી ધારણ ન કરે ઓર ન હસ પ્રકાર કી ક્રિયાઓ કો કરને કી ભાવના હી રહે । જૈસે ભી બને ઉષ્ણપરીપદ કો સહન કરે ।

દષ્ટાન્ત—તગરા નામ કી નગરી મેં દત્ત નામ કા એક સેઠ રહતા થા । ડસકી ધર્મપત્ની કા નામ ભદ્રા થા । ભદ્રા સે એક પુત્ર હુઆ, જિસ કા નામ અરહન્નક થા । એક સમય સેઠ ને અપને સ્ત્રી પુત્ર કે સાથ જાકર અર્હન્મિત્ર નામકે કિસી આચાર્ય કે પાસ ધર્મ કા ઉપદેશ સુના । સુનકર વે સંસાર સે વિરક્ત હો ગયે ઓર સ્ત્રીપુત્રસહિત ડસને દીક્ષા અંગીકાર કરલી, પુત્ર સે પ્રેમ હોને કે કારણ વે કભી ભી અપને પુત્ર કો ભિક્ષા લાને કે લિયે નહીં મેજલે થે, કિન્તુ સ્વયં જાકર ભિક્ષા લાતે ઓર પુત્ર કો ભી આહાર કરાતે । પુત્ર સે કુછ ભી કાર્ય નહીં કરાતે । હસ તરહ દત્તમુનિ કા વહ પુત્રરૂપ શિષ્ય વહુત હી સુકુમાર પ્રકૃતિ કે

કરવા માટે રજોહરણાદિકથી શરીર ઉપર છાયા પણ ન કરવી, છત્ર-છત્રી વગેરે પણ ધારણ ન કરવાં. અને આ પ્રકારની ક્રિયાઓ કરવાની ભાવના પણ ન રાખવી. જેમ અને તેમ ઉષ્ણપરીપદને સહન કરવાં.

દષ્ટાન્ત—તગરા નામની નગરીમાં દત્ત નામના એક સેઠ રહેતા હતા, તેની ધર્મપત્નિનું નામ ભદ્રા હતું. ભદ્રાથી એક પુત્ર થયો જેનું નામ અરહન્નક હતું એક સમય સેઠે પોતાના સ્ત્રી પુત્રની સાથે અર્હન્મિત્ર નામના એક આચાર્ય પાસે ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળ્યો એ ઉપદેશથી સંસારથી વિરક્તભાવ ઝાગ્યો અને સ્ત્રી પુત્ર સાથે તેણે દીક્ષા અંગિકાર કરી લીધી. પુત્રથી પ્રેમ હોવાને કારણે કદી પણ પોતાના પુત્રને ભિક્ષા લાવવા માટે મોકલતા ન હતા પરંતુ પોતે જ જઈ ને ભિક્ષા લાવતા અને પુત્રને પણ આહાર કરાવતા. પુત્રથી કાંઈ પણ કાર્ય કરાવતા નહીં. આ રીતે દત્ત મુનિના એ પુત્રરૂપ શિષ્ય વહુત જ સુકુમાર પ્રકૃતિવાળા

દત્તમુનિર્મૃતઃ તદનન્તરં સાધુભિઃ પ્રેરિતઃ સન્નરહન્નકો ગ્રીષ્મકાલે ભિક્ષાયં ગતઃ ।  
સ પૂર્વમકૃતશ્રમોઽતીવસુકુમારાક્ષઃ સૂર્યકિરણોત્તપ્તરેણુનિકરણ ચરણતલે, તપનાંશુભિ-  
ર્મસ્તકે ચ તાપાભિભૂતસ્તૃપાશુષ્કઠોઽરહન્નકઃ કસ્યચિત્ શ્રેષ્ઠિનઃ પ્રોતુક્તમવનસ્ય-  
ચ્છાયામાશ્રિત્ય તિષ્ઠતિ ।

તદા તં સુકુમારં રૂપસૌન્દર્યં લાવણ્યગુણૈર્મન્યયાવતારં મુનિમરહન્નકકુમારં દૃષ્ટ્વા  
કાચિત્ પ્રોપિતભર્તૃકા વણિગ્માર્યાં દાસ્યા તં સમાહૃય ગૃહમાનયતિ । તતઃ સા તં  
પૃચ્છતિ-ભવાન્ કિં યાચતે ? અરહન્નકઃ ગ્રાહ-ભિક્ષાં યાચે । તતઃ સા કામવશંગતા

વન ગયે । કાલાન્તર મેં દત્તમુનિ કા સ્વર્ગવાસ હો ગયા । અવ કયા થા-  
સાધુઓં સે પ્રેરિત હોકર વહ્ એક સમય ભિક્ષા લાને કે લિયે ગ્રીષ્મ  
કાલ મેં ગયે । સુકુમાર પ્રકૃતિ કે તો થે હી, પિતા કે સમય પહિલે  
ઇન્હોં ને કુછ પરિશ્રમ મી નહીં કિયા થા, અતઃ ઉસ ગ્રીષ્મકાલ મેં  
સૂર્ય કી પ્રચન્ડ કિરણોં સે સંતપ્ત ભૂમિ પર ચલને સે અનેકે પૈરોં મેં છાલે  
પડ ગયે । માથા ગરમ હો ગયા । કંઠ ગર્મીં કે મારે સૂઝ ગયા ગર્મીં કી  
ઇનકો અધિક વેદના હુઈ । પાસ મેં કિસી એક સેઠકી વહુત ઝૂંચી હવેલી  
થી સો વે ગર્મીં કે મારે ઉસકી છાયા મેં આકર ઠહર ગયે । ઠહરે હુએ ઇન  
મુનિ કો એક પ્રોપિતભર્તૃકા-વિરહિણી-છત્રી ને દેખા । યહ શારીરિક રૂપ,  
લાવણ્ય એવં સૌન્દર્ય સે એસે માલૂમ પડતે થે કિ જૈસે માનો સાક્ષાત્ દેવ  
હી હો । દેખતે હી સુકુમાર ઇસ અરહન્નક મુનિ કો ઉસ વિરહિણી વણિ-  
ગ્માર્યાં ને અપની દાસી દ્વારા મકાન ઉપર બુલવાયા । મકાન ઉપર પહુંચતે

બની ગયા. કાલાન્તરે દત્તમુનિને સ્વર્ગવાસ થયો. આ પછી સાધુઓની પ્રેરણાથી  
પ્રેરિત બની તે સુકુમારમુનિ ગ્રીષ્મકાળમાં ભિક્ષા લેવા માટે ગયા. સુકુમાર  
પ્રકૃતિ તો હતી જ, પિતાની હાજરીમાં તેણે જરા જેટલો પણ પરિશ્રમ કરેલ ન  
હતો. આથી ગ્રીષ્મકાળમાં સૂર્યનાં પ્રચંડ કિરણોથી સંતપ્ત બનેલ ભૂમિ ઉપર  
ચાલવાથી એના પગમાં છાલા પડી ગયાં, માથું ગરમ થઈ ગયું, ગળું ગર-  
મીના કારણે સુકાઈ ગયું, ગરમીની એને અધિક વેદના થઈ, પાસે જ કેઈ એક  
શેઠની ઘણી જ ઉંચી હવેલી હતી-આથી તે એ હવેલીની છાયામાં જઈ ને  
ઉભા રહ્યા. ઉભેલા મુનિને જોઈ એક વિરહિણી સ્ત્રીનું એ તરફ લક્ષ ખેંચાયું જે  
શારીરિક રૂપ, લાવણ્ય અને સૌંદર્યથી તેની દ્રષ્ટિએ દેવ તુલ્ય દેખાયા. આ  
અરહન્નક સુકુમાર મુનિને જોઈ ને તે વિરહિણી વણિક સ્ત્રીએ પોતાની દાસી માર-  
ફત મકાન ઉપર બોલાવ્યા. મકાન ઉપર પહોંચતાં જ મુનિ અરહન્નકને તેણે

તં પ્રલોભ્ય સ્વભવને સ્થાપિતવતી । અથ તન્માતા ભદ્રાસાધ્વી મુનીનાં નિવાસસ્થાને  
વન્દનાર્થમાગતા । સા તત્ર તમપશ્યન્તી અર્હન્મિત્રાચાર્યમપૃચ્છત્-ભદન્ત ! અરહન્ન-  
કમુનિઃ ક્વ વર્તતે ? અર્હન્મિત્રાચાર્યઃ પ્રાહ-અરહન્નકો ભિક્ષાર્થે ગતઃ, કિં તુ ન પુનઃ  
પરાવૃત્તઃ, અતસ્તમન્વેપયન્તિ મુનયઃ, ઇતિ તદનુપલબ્ધિવચનં વજ્રાઘાતમિવકઠોરં  
શ્રુત્વા વ્યાકુલા સતી ભદ્રા સાધ્વી પુત્રમોહેન અરે અરહન્નક ! અરે અરહન્નક !  
ઇત્યુચ્ચૈર્વિલપન્તી નયનનિઃસ્રવદશ્રુધારાં પાતયન્તી મોહેન પદે પદે પ્રસ્વલન્તી પ્રતિ-

હી મુનિ અરહન્નક સે ડસને પૂછા આપ ક્યા ચાહતે હૈં ? અરહન્નક ને કહા  
ભિક્ષા ચાહતા હું । કામ કે વશંગત હુઈ ડસ સ્ત્રી ને ભિક્ષા કા લોભ દેકર  
અરહન્નક મુનિ કો અપને ઘર પર ઠહરા લિયા । ડધર અરહન્નક મુનિ કી  
માતા ભદ્રા સાધ્વી મુનિયોં કો વન્દના કરને કે લિયે આઈ । અરહન્નક  
મુનિ કો ડ્યોં હી વહાં સાધ્વી ને નહીં દેલા ત્યોં હી વહ અર્હન્મિત્રા-  
ચાર્ય કો પૂછને લગી કિ ભદન્ત ! અરહન્નક મુનિ કહાં હૈં । આચાર્ય  
મહારાજ ને કહા કિ વે ભિક્ષા લેને કે લિયે વાહર ગયે થે, પરન્તુ અભી-  
તક વાપિસ નહીં આયે હૈં અતઃ અન્યમુનિજન ડનકી તલાશ કર રહે  
હૈં । માતા ભદ્રા સાધ્વી ને ડ્યોં હી યહ વાત સુની ત્યોં હી ડસકે હૃદય  
મેં વજ્ર કે આઘાત જૈસા ઇક કઠોર આઘાત હુઆ ઓર ડસી સમય  
ડસ કા ચિત્ત વિક્ષિપ્ત-હો ગયા । વહ પુત્ર કે મોહ સે વહુત હી આકુલ-  
વ્યાકુલ હોને લગી, ઓર અપને આપ વડ-વડાને લગી-અરે અરહન્નક !  
તું ડસ સમય કહાં હૈ, કહ તો સહી । ડસ પ્રકાર ડંચે સ્વર સે વિલાપ  
કરતી ઓર આંખોં સે આંસુઓં કી ધારા વહાતી હુઈ વહ સ્થાન સ્થાન પર

પૂછ્યું. આપ શું ઇન્છો છો ? અરહન્નકે કહ્યું કે, હું ભિક્ષા ચાહું છું. કામને  
વશ બનેલ તે સ્ત્રીએ ભિક્ષાનો લોભ આપીને અરહન્નક મુનિને પેતાને ઘેર રોકી  
લીધા. અહિં અરહન્નક મુનિની માતા ભદ્રા સાધ્વી મુનિયોને વંદણા કરવા આવી.  
અરહન્નક મુનિને જ્યારે તે સાધ્વીએ ત્યાં ન જોયા ત્યારે આચાર્યને પૂછ્યું કે, ' હે  
ભદન્ત ! અરહન્નક મુનિ ક્યાં છે ? આચાર્ય મહારાજે કહ્યું કે, ભિક્ષા લેવા માટે તેઓ  
બહાર ગયા છે, પરંતુ હજી સુધી પાછા ફરેલ નથી. જેથી અન્ય મુનિજન તેની  
તપાસ કરી રહેલ છે. માતા ભદ્રા સાધ્વીએ જ્યારે આ વાત સાંભળી ત્યારે તેના હૃદ-  
યમાં વજ્રના ઘા જેવો એક આઘાત થયો અને એ વખતે એનું ચિત્ત વ્યાકુળ બની  
ગયું. તે પુત્રના મોહથી ઘણાં આકુળ વ્યાકુળ થવા લાગ્યાં, અને પોતાના મનમાંજ  
બડબડવા લાગ્યાં કે, અરે અરહન્નક ! તું આ સમયે ક્યાં છો, કહે તો ખરે  
આ પ્રકારે ડંચા સ્વરથી વિલાપ કરતાં અને આંખોથી અશ્રુધારા વહાવતાં, તે

સ્થલં ભ્રામ્યતિ, સા યત્ર યત્ર ગચ્છતિ તત્ર તત્ર પુનઃ પુનર્લોકાન્ પૃચ્છતિ-મમ પ્રાણવલ્લભઃ પુત્રોઽરહન્નકઃ ક્વાપિ દૃષ્ટો ભવદ્ધિઃ? । इत्येवं पृच्छन्ती रुदती यं कमपि दृष्टवती, तं प्रति-अयमरहन्नक इति मत्वा हर्षमुद्धहन्ती, पुनस्तमनालोकय स्वती विलपन्ती एकदा यत्रारहन्नक आसीत् तद्भवनसमीपे समागता । तदा गवाक्षवर्तिनाऽरहन्नकेन तादृशावस्थापन्ना माता दृष्टा, संजातात्यन्तसंवेगः स गवाक्षादुत्तीर्य चरणयोः पतित्वा मातरमेवमाह-हे मातः ! सोऽहमरहन्नकः । इति तद्वचनं श्रुत्वा माता स्वस्थमानसा जाता, तदनु सा पुत्रं प्राह-वत्स ! भव्यकुलोत्पन्नस्य तव कथमीदृशी-

ગિરતી પડતી ફધર ઉધર ઘૂમને લગી । જહાં જહાં વહ જાતી વહાં ૨ પૂછતી કિ હે મહાનુભાવો ! કહો તો સહી તુમ લોગોં ને મેરે પુત્ર અરહન્નક કો કંઠીં દેસ્વા ધી હૈ ? । इस प्रकार पूछती, विलाप करती, रोती हुई वह भद्रा साध्वी जिस किसी को भी देखती हर्ष के भावावेश में आकर कहने लगती 'यह रहा मेरा अरहन्नक' । परन्तु जब उसमें उसे अरहन्नक दिखाई नहीं पड़ता तो पुनः रोने लगती । इस प्रकार अत्यंत विह्वल बनी हुई एक दिन वह वहां पहुँची जिस मकान में स्वयं अरहन्नक थे । जब यह वहां पहुँची थी उस समय अरहन्नक उस मकान की खीड़की में बैठे हुए थे । उसने रोती हुई अपनी माता को ज्यों ही देखा त्यों ही उसे संवेग के भाव अतिशय रीति से जागृत हो उठे । वह इकदम झरोखे से नीचे उतर कर माता के दोनों चरणों में पड़ गये और बोला कि हे मातः मैं अरहन्नक हूँ । इस प्रकार उनके वचन को सुनकर माता का चित्त शान्त हो गया और बोली-वत्स ! तुम तो कुलवान् हो जातिमान हो फिर तुम्हारी

સ્થળે સ્થળે અથડાતાં અહિં તહિં ફરવા લાગ્યાં. જે તે સ્થળે તે જઈ પૂછતાં કે હે મહાનુભાવો ! કહો તો ખરા તમારે મારા પુત્ર અરહન્નકને ક્યાંઈ દેખ્યો છે ? આ પ્રકારે પૂછતાં અને વિલાપ કરતાં અને રોતાં તે ભદ્રા સાધ્વી જ્યારે કોઈ ને જુએ તો હર્ષના ભાવાવેશમાં આવીને કહેવા લાગતાં કે આ રહ્યો મારો અરહન્નક ! પરંતુ જ્યારે તેને અરહન્નક ન દેખાતો ત્યારે તે ફરીથી રોવા લાગતાં આ પ્રકારે અત્યંત વિહ્વળ બની એક દિવસે તે એ મકાન ઉપર પહોંચ્યાં કે જ્યાં અરહન્નક હતો. જ્યારે તે ત્યાં પહોંચ્યાં તે વખતે અરહન્નક તે મકાનની એક બારીમાં બેઠેલ હતો. તેણે પોતાની માતાને રાતી જોઈ ત્યારે તેનામાં સંવેગનો ભાવ અતિશય જાગૃત થયો. તે એકદમ ઝરખેથી નીચે ઉતરીને માતાના ચરણોમાં પડી ગયો અને બોલ્યો કે હે માતા ! હું અરહન્નક છું. આ પ્રકારનાં તેનાં વચન સાંભળીને માતાનું ચિત્ત શાન્ત બની ગયું અને બોલી, વત્સ !

દશા ? સોઝ્યદત્—હે માતશ્ચારિત્રં પાલયિતુમસમર્થોઽસ્મિ । સા ગ્રાહ-તર્હિ  
અનશનં કુરુ । યતઃ—

વરં પવેસો જલિણ હુયાસણે,

ન યાવિ ભગ્ગં ચિરસંચિયં વયં ।

વરં હિ મચ્ચૂ સુવિસુદ્ધકમ્મઓ,

ન યાવિ સીલક્ખલિયસ્સ જીવણં ॥ ૧ ॥

છાયા—વરં પ્રવેશો જ્વલિતે હુતાશને,

ન ચાપિ ભગ્નં ચિરસંચિતં વ્રતમ્ ।

વરં હિ મૃત્યુઃ સુવિશુદ્ધકર્મતો,

ન ચાપિ શીલસ્ત્વલિતસ્ય જીવનમ્ ॥ ૧ ॥

સુવિશુદ્ધકર્મતઃ—નિસ્વદ્યક્રિયાઽઽચરણતઃ, મૃત્યુઃ=મરણં, વરં=શ્રેયઃ, ન તુ  
શીલસ્ત્વલિતસ્ય=ચરિત્રપતિતસ્ય જીવનમ્ । અન્યત્ સુગમમ્ ।

એસી દશા ક્યોં હુઈ ? । અરહન્નક વોલે-માતઃ ! હસ દશા કે હોને કા  
કારણ ચારિત્ર કો પાલન કરને કી અસમર્થતા હૈ । માતા વોલી-યદિ તુમ  
ચરિત્ર પાર કરને કે લિયે અસમર્થ હો તો અનશન કરો । જૈસે કહા હૈ—

“વરં પવેસો જલિણ હુયાસણે,

ન યાવિ ભગ્ગં ચિરસંચિયં વયં ।

વરં હિ મચ્ચૂ સુવિસુદ્ધકમ્મઓ,

ન યાવિ સીલક્ખલિયસ્સ જીવણં ॥ ૧ ॥”

ધધકતી હુઈ અગ્નિ મેં પ્રવેશ કરના તો ઠીક હૈ પરન્તુ ચિરસંચિત  
વ્રત કા ભંગ કરના ઠીક નહીં હૈ । સુવિશુદ્ધ કર્મ-શીલ આરાધન કરતે

તમે તો કુળવાન છો, જાતિવાન છો, છતાં તમારી આવી દશા કેમ થઈ ?  
અરહન્નકે કહ્યું, માતા ! આ દશા થવાનું કારણ ચારિત્ર પાલન કરવાની અસ-  
મર્થતા છે. માતાએ કહ્યું, જો તમે ચારિત્ર પાલન કરવા માટે અસમર્થ છો  
તો અનશન કરો. જેમ કહ્યું છે—

“વરં પવેસો જલિણ હુયાસણે,

ન યાવિ ભગ્ગં ચિરસંચિયં વયં ।

વરં હિ મચ્ચૂ સુવિસુદ્ધકમ્મઓ,

ન યાવિ સીલક્ખલિયસ્સ જીવણં ॥ ૧ ॥”

ભભકતી એવી અગ્નિમાં પ્રવેશ કરવો ઠીક છે, પરંતુ ચિરસંચિત વ્રતનો  
ભંગ કરવો ઠીક નથી. સુવિશુદ્ધ કર્મશીલ આરાધના કરતાં કરતાં મૃત્યુ થવું ઠીક છે,



एवं मातृवचः श्रुत्वा स संजातवैराग्यः सर्वसाधवयोगं प्रत्याख्याय पुनः संयमं गृहीतवान् । तत उत्कृष्टाचारेण ग्रामानुग्रामं विहरन् उष्णपरीपहं सहमानः क्वचित् पापाणमयप्रदेशं प्राप्य चिन्तयति—‘प्रदेशोऽयं प्रचण्डमार्त्तण्डकिरणसंयोगाद् बह्वित्तमः, उष्णतरश्च वायुः प्रवहति, अत्र पदमपि गन्तुमसमर्थोऽस्मि,’ एवं विचिन्त्य परितः प्रतप्तभूमीतलं विलोक्य परीपहोऽयं मया सोढव्य इत्यवधार्य तप्तशिलोपरि करते मृत्यु होना ठीक है, परन्तु शील से स्वलित व्यक्ति का जीवन ठीक नहीं है। निरवय क्रिया का नाम सुविशुद्धकर्म एवं चारित्र से पतित होने का नाम शील से स्वलित होना है।

इस प्रकार जननी के वचन सुनकर उसका मुक्त वैराग्य जग उठा, पश्चात् उसने सर्वसाधव योग का प्रत्याख्यान कर पुनः संयम लिया। माता के वचन से उद्बोधित होकर उसने फिर उत्कृष्ट चरित्र का आराधन किया और चारित्र की आराधनापूर्वक ही ग्रामानुग्राम विहार करते हुए उष्णपरीपह को सहन किया। एक समय की बात है कि ये विहार करते २ ऐसे प्रदेश में पहुँचे कि जहाँ पत्थरों की बहुलता थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने विचार किया कि यह प्रदेश सूर्य की किरणों से अधिक संतप्त बना हुआ है। यह तो ऐसा तप रहा है कि जैसे मानों अग्नि ही जल रही हो। वायु भी इतनी गर्म चल रही है कि जिससे एक पैर भी सुखपूर्वक चला नहीं जा सकता है। इस प्रकार विचार करते हुए अरहन्नक मुनि ने अपने आसपास की समस्त भूमि को

પરંતુ શીલથી સ્ખલિત થયેલ વ્યક્તિનું જીવન ઠીક નથી. નિરવય ક્રિયાનું નામ સુવિશુદ્ધ કર્મ, ચારિત્રથી પતિત થવાનું નામ શીલથી સ્ખલિત બનવું તે.

આ પ્રકારનાં માતાનાં વચન સાંભળીને તેને સુતેલો વૈરાગ્ય બળી ઉઠ્યો અને તેણે સર્વ સાધવ યોગનું પ્રત્યાખ્યાન કરી પુનઃ સંયમને ધારણ કર્યો. માતાના વચનથી ઉદ્બોધિત બની તેણે પછી ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું આરાધન કર્યું અને ચારિત્રની આરાધના પૂર્વક જ ગ્રામનુગ્રામ વિહાર કરીને ઉષ્ણ પરીપહને સહન કર્યો. એક સમયે એ વિહાર કરતાં કરતાં એવા પ્રદેશમાં પહોંચી ગયા કે, જ્યાં પથરાઓ મોટા પ્રમાણમાં હતા. ત્યાં પહોંચીને તેઓએ વિચાર કર્યો કે, આ પ્રદેશ સૂર્યના કિરણોથી અધિક સંતપ્ત બનેલો છે. આ તો એવા તપી રહ્યા છે કે જાણે અગ્નિ જ સળગી રહી છે. વાયુ પણ એટલી જ રીતે ગરમ કુંકારી રહેલ છે આથી એક ડગલું પણ સુખપૂર્વક ચાલી શકાતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં અરહન્નક મુનિએ પોતાની આસપાસની

समुपविशति । तत्र-प्रत्याख्याताष्टादशपापः कृतदुष्कृतगर्हः क्षामितसकलसत्त्वः स्वीकृतचतुर्विधशरणः, परित्यक्तसर्वसंगः पुनः पुनः कृतपंचनमस्कारोऽनशनं कृत्वा समाधिभावसम्पन्नः पादपोषगमनेन मुहूर्तमात्रेण सुकुमारशरीरो नवनीतपिण्डइवोष्णेन विलीनः सौधर्मं सुरलोकं गतः, एवं मुनिभिरुष्णपरीपहः सोढव्यः ॥९॥

ग्रीष्मकालान्तरं वर्षाकाले दंशमशकादिकृतपीडां प्राप्तेन साधुना तत्परीपहः सोढव्यः इत्याह—

मूलम्—पुट्टो यं दंसैमसएहिं, संम रेवं महामुणी ।

नागो संगामसीसे वां, सूरु अमिहणे परं ॥१०॥

छाया—स्पृष्टश्च दंशमशकैः सम एव महामुनिः ।

नागः संग्रामशीर्षे वा, शूरोऽभिहन्यात् परम् ॥ १० ॥

अत्यंत उष्ण देखा और पुनः विचार करने लगे कि यह उष्णपरीपह मुझे साधु के नाते अवश्य सहन करना चाहिये, ऐसा निश्चित कर वह एक तप्त शिला के ऊपर बैठ गये । वहां उन्होंने १८ पापस्थानों का प्रत्याख्यान किया, अपने दुष्कृतों की गर्हा की, समस्त जीवों से खमत खामणा किया । चार प्रकार के शरणों को स्वीकार किया, समस्त ममता का त्याग किया, एवं पंचपरमेष्ठी को बार बार नमस्कार किया । पश्चात् अनशन धारण कर समाधिभाव से युक्त अरहन्नक मुनि ने पादपोषगमन संथारा किया । एक मुहूर्तमात्र में ही उनका सुकुमार शरीर मक्खन के पिंड की तरह गर्मी से विलीन हो गया और वे मर कर सुधर्मदेवलोक में देव हुए । इसी तरह अन्य मुनि जनों को भी उष्णपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ९ ॥

समस्त भूमीने अत्यंत उष्ण जेष्ठ अने पाछा विचार करवा लाग्या के उष्ण परीपह भारे साधुना धर्मथी अवश्य सहन करवो जेष्ठये. जेवो निश्चय करी जेष्ठ तपेली शिला उपर जेसी गया ज्वां तेजोये १८ पापस्थानोनं प्रत्याख्यान करुं, पोताना दुष्कृत्योनी भाई भागी, समस्त जेवोधी जमत जामणा लीधां, चार प्रकारना शरणोनो स्वीकार कर्यो अने समस्त ममतानो त्याग कर्यो तेमज पंचपरमेष्ठीने बारंवार नमस्कार करवा लाग्या. पछी अनशन धारण करी समाधि-भावथी युक्त अरहन्नक मुनिजे पादपोषगमन संथारो कर्यो.. जेष्ठ मुहूर्त मात्रमां ज तेमज सुकुमार शरीर भाजणुना पीडनी भाइक गरभीथी जोगणी गयुं. अने ते मरीने सुधर्म देवलोकमां देव थया. आ रीते अन्य मुनिजनोये पण उष्णपरीपह सहन करवो जेष्ठये. ॥ ९ ॥

एवं मातृवचः श्रुत्वा स संजातवैराग्यः सर्वसाधयोगं प्रत्याख्याय पुनः संयमं गृहीतवान् । तत उत्कृष्टाचारेण ग्रामानुग्रामं विहरन् उष्णपरीपहं सहमानः क्वचित् पाषाणमयप्रदेशं प्राप्य चिन्तयति—‘प्रदेशोऽयं प्रचण्डमार्त्तण्डकिरणसंयोगाद् वह्नि-वत्प्रतप्तः, उष्णतरश्च वायुः प्रवहति, अत्र पदमपि गन्तुमसमर्थोऽस्मि,’ एवं विचिन्त्य परितः प्रतप्तभूमीतलं विलोक्य परीपहोऽयं मया सोढव्य इत्यवधार्य तप्तशिलोपरि करते मृत्यु होना ठीक है, परन्तु शील से स्वलित व्यक्ति का जीवन ठीक नहीं है। निरवय क्रिया का नाम सुविशुद्धकर्म एवं चारित्र से पतित होने का नाम शील से स्वलित होना है।

इस प्रकार जननी के वचन सुनकर उसका सुप्त वैराग्य जग उठा, पश्चात् उसने सर्वसाध योग का प्रत्याख्यान कर पुनः संयम लिया। माता के वचन से उद्बोधित होकर उसने फिर उत्कृष्ट चरित्र का आराधन किया और चारित्र की आराधनापूर्वक ही ग्रामानुग्राम विहार करते हुए उष्णपरीपह को सहन किया। एक समय की बात है कि ये विहार करते २ ऐसे प्रदेश में पहुँचे कि जहाँ पत्थरों की बहुलता थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने विचार किया कि यह प्रदेश सूर्य की किरणों से अधिक संतप्त बना हुआ है। यह तो ऐसा तप रहा है कि जैसे मानों अग्नि ही जल रही हो। वायु भी इतनी गर्म चल रही है कि जिससे एक पैर भी सुखपूर्वक चला नहीं जा सकता है। इस प्रकार विचार करते हुए अरहन्नक मुनि ने अपने आसपास की समस्त भूमि को

परंतु શીલથી સ્ખલિત થયેલ વ્યક્તિનું જીવન ઠીક નથી. નિરવય ક્રિયાનું નામ સુવિશુદ્ધ કર્મ, ચારિત્રથી પતિત થવાનું નામ શીલથી સ્ખલિત બનવું તે.

આ પ્રકારનાં માતાનાં વચન સાંભળીને તેનો સુતેલો વૈરાગ્ય બગી ઉઠ્યો અને તેણે સર્વ સાધ યોગનું પ્રત્યાખ્યાન કરી પુનઃ સંયમને ધારણ કર્યો. માતાના વચનથી ઉદ્બોધિત બની તેણે પછી ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું આરાધન કર્યું અને ચારિત્રની આરાધના પૂર્વક જ ગ્રામનુગ્રામ વિહાર કરીને ઉષ્ણ પરીપહને સહન કર્યો. એક સમયે એ વિહાર કરતાં કરતાં એવા પ્રદેશમાં પહોંચી ગયા કે, જ્યાં પથરાઓ મોટા પ્રમાણમાં હતા. ત્યાં પહોંચીને તેઓએ વિચાર કર્યો કે, આ પ્રદેશ સૂર્યના કિરણોથી અધિક સંતપ્ત બનેલો છે. આ તો એવા તપી રહ્યા છે કે બાણે અગ્નિ જ સળગી રહી છે. વાયુ પણ એટલી જ રીતે ગરમ કુંકારી રહેલ છે આથી એક ડગલું પણ સુખપૂર્વક ચાલી શકાતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં અરહન્નક મુનિયે પોતાની આસપાસની

समुपविशति । तत्र-प्रत्याख्याताष्टादशपापः कृतदुष्कृतगर्हः क्षामितसकलसत्त्वः स्वीकृतचतुर्विधशरणः, परित्यक्तसर्वसंगः पुनः पुनः कृतपंचनमस्कारोऽनशनं कृत्वा समाधिभावसम्पन्नः पादपोषगमनेन मुहूर्तमात्रेण सुकुमारशरीरो नवनीतपिण्डइवोष्णेन विलीनः सौधर्मं सुरलोकं गतः, एवं मुनिभिरुष्णपरीपहः सोढव्यः ॥९॥

ग्रीष्मकालान्तरं वर्षाकाले दंशमशकादिकृतपीडां प्राप्तेन साधुना तत्परीपहः सोढव्यः इत्याह—

मूलम्—पुट्टो ये दंसमसएहिं, संम रेवै महामुणी ।  
नागो संगामसीसे वां, सूरु अभिहणे परं ॥१०॥

छाया—स्पृष्टश्च दंशमशकैः सम एव महामुनिः ।

नागः संग्रामशीर्षे वा, शूरोऽभिहन्यात् परम् ॥ १० ॥

अत्यंत उष्ण देखा और पुनः विचार करने लगे कि यह उष्णपरीपह मुझे साधु के नाते अवश्य सहन करना चाहिये, ऐसा निश्चित कर वह एक तप्त शिला के ऊपर बैठ गये । वहां उन्होंने १८ पापस्थानों का प्रत्याख्यान किया, अपने दुष्कृतों की गर्हा की, समस्त जीवों से खमत खामणा किया । चार प्रकार के शरणों को स्वीकार किया, समस्त ममता का त्याग किया, एवं पंचपरमेष्ठी को बार बार नमस्कार किया । पश्चात् अनशन धारण कर समाधिभाव से युक्त अरहन्नक मुनि ने पादपोषगमन संथारा किया । एक मुहूर्तमात्र में ही उनका सुकुमार शरीर मक्खन के पिंड की तरह गर्मी से विलीन हो गया और वे मर कर सुधर्मदेवलोक में देव हुए । इसी तरह अन्य मुनि जनों को भी उष्णपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ९ ॥

समस्त ભૂમીને અત્યંત ઉષ્ણ જોઈ અને પાછા વિચાર કરવા લાગ્યા કે ઉષ્ણ પરીપહ મારે સાધુના ધર્મથી અવશ્ય સહન કરવો જોઈએ. એવો નિશ્ચય કરી એક તપેલી શીલા ઉપર બેસી ગયા જ્યાં તેઓએ ૧૮ પાપસ્થાનોનું પ્રત્યાખ્યાન કર્યું, પોતાના દુષ્કૃત્યોની માફી માગી, સમસ્ત જીવોથી ખમત ખામણા લીધાં, ચાર પ્રકારના શરણોનો સ્વીકાર કર્યો અને સમસ્ત મમતાનો ત્યાગ કર્યો તેમજ પંચપરમેષ્ઠીને વારંવાર નમસ્કાર કરવા લાગ્યા. પછી અનશન ધારણ કરી સમાધિ-ભાવથી યુક્ત અરહન્તક મુનિએ પાદપોષગમન સંથારો કર્યો.. એક મુહૂર્ત માત્રમાં જ તેમનું સુકુમાર શરીર માખણના પીંડની માફક ગરમીથી ઓગળી ગયું. અને તે મરીને સુધર્મ દેવલોકમાં દેવ થયા. આ રીતે અન્ય મુનિજનોએ પણ ઉષ્ણપરીપહ સહન કરવો જોઈએ. ॥ ૯ ॥

एवं मातृवचः श्रुत्वा स संजातवैराग्यः सर्वसावद्ययोगं प्रत्याख्याय पुनः संयमं गृहीतवान् । तत उत्कृष्टाचारेण ग्रामानुग्रामं विहरन् उष्णपरीपहं सहमानः क्वचित् पापाणमयप्रदेशं प्राप्य चिन्तयति—‘प्रदेशोऽयं प्रचण्डमार्त्तण्डकिरणसंयोगाद् वह्नि-वत्प्रतप्तः, उष्णतरश्च वायुः प्रवहति, अत्र पदमपि गन्तुमसमर्थोऽस्मि,’ एवं विचिन्त्य परितः प्रतप्तभूमीतलं विलोक्य परीपहोऽयं मया सोढव्य इत्यवधार्य तप्तशिलोपरि करते मृत्यु होना ठीक है, परन्तु शील से स्वलित व्यक्ति का जीवन ठीक नहीं है। निरवद्य क्रिया का नाम सुविशुद्धकर्म एवं चारित्र्य से पतित होने का नाम शील से स्वलित होना है।

इस प्रकार जननी के वचन सुनकर उसका मुक्त वैराग्य जग उठा, पश्चात् उसने सर्वसावद्य योग का प्रत्याख्यान कर पुनः संयम लिया। माता के वचन से उद्बोधित होकर उसने फिर उत्कृष्ट चरित्र का आराधन किया और चारित्र्य की आराधनापूर्वक ही ग्रामानुग्राम विहार करते हुए उष्णपरीपह को सहन किया। एक समय की बात है कि ये विहार करते २ ऐसे प्रदेश में पहुँचे कि जहाँ पत्थरों की बहुलता थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने विचार किया कि यह प्रदेश सूर्य की किरणों से अधिक संतप्त बना हुआ है। यह तो ऐसा तप रहा है कि जैसे मानों अग्नि ही जल रही हो। वायु भी इतनी गर्म चल रही है कि जिससे एक पैर भी सुखपूर्वक चला नहीं जा सकता है। इस प्रकार विचार करते हुए अरहन्नक मुनि ने अपने आसपास की समस्त भूमि को

પરંતુ શીલથી સ્ખલિત થયેલ વ્યક્તિનું જીવન ઠીક નથી. નિરવધ ક્રિયાનું નામ સુવિશુદ્ધ કર્મ, ચારિત્રથી પતિત થવાનું નામ શીલથી સ્ખલિત બનવું તે.

આ પ્રકારનાં માતાનાં વચન સાંભળીને તેનો સુતેલો વૈરાગ્ય જાગી ઉઠ્યો. અને તેણે સર્વ સાવધ યોગનું પ્રત્યાખ્યાન કરી પુનઃ સંયમને ધારણ કર્યો. માતાના વચનથી ઉદ્બોધિત બની તેણે પછી ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું આરાધન કર્યું અને ચારિત્રની આરાધના પૂર્વક જ ગ્રામનુગ્રામ વિહાર કરીને ઉષ્ણ પરીપહને સહન કર્યો. એક સમયે એ વિહાર કરતાં કરતાં એવા પ્રદેશમાં પહોંચી ગયા કે, જ્યાં પત્થરાઓ મોટા પ્રમાણમાં હતા. ત્યાં પહોંચીને તેઓએ વિચાર કર્યો કે, આ પ્રદેશ સૂર્યના કિરણોથી અધિક સંતપ્ત બનેલો છે. આ તો એવા તપી રહ્યા છે કે જાણે અગ્નિ જ સળગી રહી છે. વાયુ પણ એટલી જ રીતે ગરમ કુંકારી રહેલ છે આથી એક ડગલું પણ સુખપૂર્વક ચાલી શકાતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં અરહન્નક મુનિએ પોતાની આસપાસની



समुपविशति । तत्र-प्रत्याख्याताष्टादशपापः कृतदुष्कृतगर्हः क्षामितसकलसत्त्वः स्वीकृतचतुर्विधशरणः, परित्यक्तसर्वसंगः पुनः पुनः कृतपंचनमस्कारोऽनशनं कृत्वा समाधिभावसम्पन्नः पादपोषगमनेन मुहूर्तमात्रेण सुकुमारशरीरो नवनीतपिण्डइवोष्णेन विलीनः सौधर्म सुरलोकं गतः, एवं मुनिमिरुष्णपरीपहः सोढव्यः ॥९॥

ग्रीष्मकालान्तरं वर्षाकाले दंशमशकादिकृतपीडां प्राप्तेन साधुना तत्परीपहः सोढव्यः इत्याह—

मूलम्—पुट्टो ये दंसमसएहिं, संम रेवं महामुणी ।

नागो संगामसीसे वां, सूरुओ अभिहणे 'परं ॥१०॥

छाया—स्पृष्टश्च दंशमशकैः सम एव महामुनिः ।

नागः संग्रामशीर्षे वा, सूरुओऽभिहन्यात् परम् ॥ १० ॥

अत्यंत उष्ण देखा और पुनः विचार करने लगे कि यह उष्णपरीपह मुझे साधु के नाते अवश्य सहन करना चाहिये, ऐसा निश्चित कर वह एक तप्त शिला के ऊपर बैठ गये । वहां उन्होंने १८ पापस्थानों का प्रत्याख्यान किया, अपने दुष्कृतों की गर्हा की, समस्त जीवों से खमत खामणा किया । चार प्रकार के शरणों को स्वीकार किया, समस्त ममता का त्याग किया, एवं पंचपरमेष्ठी को बार बार नमस्कार किया । पश्चात् अनशन धारण कर समाधिभाव से युक्त अरहन्नक मुनि ने पादपोषगमन संन्यास किया । एक मुहूर्तमात्र में ही उनका सुकुमार शरीर मक्खन के पिंड की तरह गर्मी से विलीन हो गया और वे मर कर सुधर्मदेवलोक में देव हुए । इसी तरह अन्य मुनि जनों को भी उष्णपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ९ ॥

समस्त भूमीने अत्यंत उष्ण जेष्ठ अने पाछा विचार करवा लाग्या के उष्ण परीपह भारे साधुना धर्मथी अवश्य सहन करवो जेष्ठये. जेवो निश्चय करी जेक तपेली शिला उपर जेसी गया ज्यां तेज्ये १८ पापस्थानोनं प्रत्याख्यान करुं, पोताना दुष्कृत्योनी भाक्षी भागी, समस्त जेवोधी जमत जामणा लीधां, चार प्रकारना शरणुनो स्वीकार कर्यो अने समस्त ममतानो त्याग कर्यो तेमज पंचपरमेष्ठीने वारंवार नमस्कार करवा लाग्या. पछी अनशन धारण करी समाधि-भावथी युक्त अरहन्नक मुनिजे पादपोषगमन संन्यास कर्यो. जेक मुहूर्त मात्रमां ज तेमज सुकुमार शरीर भाजणुना पीडनी भाक्षक गरभीथी जोगणी गरुं. अने ते मरीने सुधर्म देवलोकमां देव थया. आ रीते अन्य मुनिजनेजे पण उष्णपरीपह सहन करवो जेष्ठये. ॥ ९ ॥

ટીકા—‘ પુટ્ટો ય ’ ઇત્યાદિ ।

ચ=અપરં ચ સમ એવ=ઉપકાર્યપકારિણુ તુલ્યભાવધારકઃ, મહામુનિઃ=ઊગ્ર-  
તપશ્ચરણશીલઃ દંશમશકૈઃ, ઇદમુપલક્ષણમ્, તેન મત્કુળયૂકાદિભિરપિ સ્પૃષ્ટઃ-પીડિતઃ  
સન્, સંગ્રામશિરસિ=રણમસ્તકે, શૂરઃ=પરાક્રમી, નાગો વા=હસ્તીવ પરં=શત્રુ-  
રાગદ્વેષલક્ષણં ભાવશત્રુમ્, અભિહન્યાત્=પરાજયેત્ । ‘ સમરેવ ’ ઇત્યત્રાર્પત્વાદ્રેફઃ ।

અયં ભાવઃ-યથા-શૂરઃ=કરી શરાઘાતૈર્વ્યથિતોઽપિ રણે શત્રું જયતિ, તદ્વત્  
સાધુરપિ દંશમશકાદિભિઃ પીડ્યમાનોઽપિ કપાય શત્રું જયેદિતિ ॥ ૧૦ ॥

ગ્રીષ્મ કાલ કે વાદ વર્ષા કાલ આતા હૈ, ઉસમેં દંશમશક આદિ કા  
પરીપહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ દંશમશકરૂપ  
પાંચવે પરીપહ કો સહન કરે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર આગે કી ગાથા  
દ્વારા બતલાતે હૈ—‘ પુટ્ટો ય ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—( સમરેવ-સમણ્વ ) ઉપકારી ઓર અપકારી મેં તુલ્ય ભાવ  
ધારણ કરને વાલા ( મહામુની-મહામુનિઃ ) ઊગ્રતપશ્ચરણશીલ મહામુનિ  
( દંસમસર્ણિ-દંશમશકૈઃ ) દંશમશકોં કે દ્વારા, ઉપલક્ષણ સે મત્કુળ-  
સ્વદમલ, યૂકા-જૂં આદિ દ્વારા મી ( પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ ) પીડિત હોતે પર ( સંગ્રામઃ  
સીસે-સંગ્રામ શીર્ષે ) યુદ્ધ કે વીચ મેં ( સૂરો-શૂરઃ ) પરાક્રમી ( નાગો વા-  
નાગ ઇવ ) હસ્તી કી તરહ ( પરં અભિહણે-પરં અભિહન્યાત્ ) શત્રુ કો-  
રાગદ્વેષરૂપ ભાવશત્રુ કો પરાસ્ત કરે ।

ગરમઝતુ પછી ચોમાસાનો સમય આવે છે આમાં દંશમશક વગેરે પરી-  
પહની ઉત્પત્તિ થાય છે, સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે દંશમશકરૂપી પાંચમો પરીપહ  
સહન કરે. આ વાતને સૂત્રકાર આગળની ગાથાથી બતાવે છે.

“ પુટ્ટો ય ” ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—( સમરેવ-સમણ્વ ) ઉપકારી અને અપકારીમાં સમભાવ ધારણ  
કરવાવાળા મહામુની-મહામુનિઃ ઊગ્ર તપસ્યા કરનાર શીલવાન મહામુનિ દંસમસર્ણિ-  
દંશમશકૈઃ ડાંસ, મચ્છર દ્વારા ઉપલક્ષણથી માકડ, જૂ, આદિ દ્વારા પણ પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ  
પીડિત હોવા છતાં “ સંગ્રામસીસે-સંગ્રામશીર્ષે ” યુદ્ધની વચમાં ( સૂરો-શૂરઃ ) પરાક્રમી  
( નાગો વા-નાગઇવ ) હાથીની માફક ( પરં અભિહણે-પરં અભિહન્યાત્ ) શત્રુને-રાગ દ્વેષ  
રૂપ ભાવશત્રુને પરાસ્ત કરે. એનો ભાવ આ છે. જેમ પરાક્રમી હાથી બાણોના  
આઘાતથી વ્યથિત હોવા છતાં પણ રણમાં શત્રુઓને હરાવે છે તેવી રીતે સાધુ પણ  
ડાંસ, મચ્છર આદિ દ્વારા પીડિત હોવા છતાં પણ કપાયરૂપી શત્રુને પરાસ્ત કરે.

કેન પ્રકારેણ ભાવશત્રું જયેદિત્યાહ—

મૂલમ્—નં સંતસે નં વારેજ્ઞાં, મંણંપિ નં પંઓસણ્ ।

ઉવેહે નં હંણે પાંણે, મુંજંનંતે મંસંસોણિયં ॥ ૧૧ ॥

છાયા—ન સંત્રસેત્ ન વારયેત્, મનોઽપિ ન પ્રદૂષયેત્ ।

ઉપેક્ષેત ન હન્યાત્ પ્રાણાન્, મુજ્જાનાન્ માંસ શોણિતમ્ ॥ ૧૧ ॥

ટોકા—‘ ન સંતસે ’ इत्यादि ।

મહામુનિદંશમશકૈરુપદ્રુતઃ સન્ ન સંત્રસેત્=નોદ્વિજેત્-દંશમશકાદિભિર્દશપમા-  
નોઽપિ ન તતઃ સ્થાનાદપગચ્છેદિત્યર્થઃ । ન વારયેત્, હસ્તવસ્ત્રાદિના નાપસારયેત્-  
મનોઽપિ ન પ્રદૂષયેત્=ન કલુષિતં કુર્યાત્ અપિ-શબ્દાદ્વચનાદિકમપિ ન પ્રદુષ્ટં

હસકા ભાવ યહ હૈ-જૈસે પરાક્રમી હસ્તી વાળોં કે આઘાત સે વ્યથિત  
હોને પર ભી રણ મેં શત્રુ કો પરાસ્ત કર દેતા હૈ, ઉસી તરહ સાધુ ભી  
દંશમશક આદિ દ્વારા પીડિત હોને પર ભી કપાયરૂપી શત્રુ કો  
પરાસ્ત કરે ॥ ૧૦ ॥

ભાવશત્રુ કો કિસ તરહ પરાસ્ત કરના ચાહિયે હસકો હસ ગાથા  
દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—ન સંતસે इत्यादि

અન્વયાર્થ—મહામુનિ દંશમશક આદિ સે પીડિત હોને પર ભી  
( ન સંતસે-ન સંત્રસેત્ ) કમી ભી ચિત્ત મેં ઉદ્વિગ્ન ન હોવે-દંશમશક  
આદિ સે પીડિત હોને પર ભી મુનિ એક સ્થાન સે દૂસરે સ્થાન પર નહીં  
જાવે ( ન વારેજ્ઞા-ન વારયેત્ ) દંસમશક કો અપને શરીર પર બેઠ જાને  
પર હસ્તઅથવા વસ્ત્ર આદિ સે નહીં હટાવે । ( મણં પિ ન પઓસણ્—

આનો ભાવ એ છે કે-જેમ પરાક્રમી હાથી બાણોના આઘાતથી પીડિત  
હોવા છતાં પણ રણમાં શત્રુને પરાજીત કરે છે, તેવી જ રીતે સાધુ પણ  
દંશમશક આદિ દ્વારા પીડિત હોવા છતાં પણ કપાયરૂપી શત્રુનો પરાજય કરે ॥૧૦॥

ભાવશત્રુને કેવી રીતે જીતવા જોઈ એ, એ હકીકત આ ગાથા દ્વારા  
પ્રગટ કરવામાં આવે છે. નસંતસે-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—હાંસ અને મચ્છરથી પીડિત બનવા છતાં પણ ન સંતસે-ન સંત્રસેત્  
મહામુનિ ચિત્તમાં ઉદ્વેગ ન લાવે, —હાંસ મચ્છરના કરડવાથી મુનિએ એક સ્થાનથી  
બીજા સ્થાને ન જવું, ન વારેજ્ઞા-ન વારયેત્ હાંસ મચ્છરને પોતાના શરીર પર  
બેઠેલ જોઈને હાથ અને વસ્ત્ર આદિથી તેને હટાવે નહીં, મણંપિ ન પઓસણ્—

ટીકા—‘ પુટ્ટો ય ’ इत्यादि ।

च=अपरं च सम एव=उपकार्यपकारिषु तुल्यभावधारकः, महामुनिः=उग्र-  
तपश्चरणशीलः दंशमशकैः, इदमुपलक्षणम्, तेन मत्कुणयूकादिभिरपि स्पृष्टः-पीडितः  
सन्, संग्रामशिरसि=रणमस्तके, शूरः=पराक्रमी, नागो वा=हस्तीव परं=शत्रुं-  
रागद्वेषलक्षणं भावशत्रुम्, अभिहन्यात्=पराजयेत् । ‘ समरेव ’ इत्यत्रार्पत्वाद्रेफः ।

अयं भावः-यथा-शूरः=करी शराघातैर्व्यथितोऽपि रणे शत्रुं जयति, तद्वत्  
साधुरपि दंशमशकादिभिः पीड्यमानोऽपि कषाय शत्रुं जयेदिति ॥ १० ॥

ગ્રીષ્મ કાલ કે વાદ વર્ષા કાલ આતા હે, ઉસમેં દંશમશક આદિ કા  
પરીપહ ઉત્પન્ન હોતા હે । સાધુ કા કર્તવ્ય હે કિ વહ ઇસ દંશમશકરૂપ  
પાંચવે પરીપહ કો સહન કરે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર આગે કી ગાથા  
દ્વારા વતલાતે હે—‘ પુટ્ટો ય ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(સમરેવ-સમણ) ઉપકારી ઔર અપકારી મેં તુલ્ય ભાવ  
ધારણ કરને વાલા (મહામુની-મહામુનિઃ) ઉગ્રતપશ્ચરણશીલ મહામુનિ  
(દંસમસણ્હિ-દંશમશકૈઃ) દંશમશકોં કે દ્વારા, ઉપલક્ષણ સે મત્કુળ-  
ખટમલ, યૂકા-જૂં આદિ દ્વારા મી (પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ) પીડિત હોને પર (સંગામ-  
સીસે-સંગ્રામ શીર્ષે) યુદ્ધ કે વીચ મેં (સૂરો-શૂરઃ) પરાક્રમી (નાગો વા-  
નાગ ઇવ) હસ્તી કી તરહ (પરં અભિહણે-પરં અભિહન્યાત્) શત્રુ કો-  
રાગદ્વેષરૂપ ભાવશત્રુ કો પરાસ્ત કરે ।

ગરમઋતુ પછી ચોમાસાનો સમય આવે છે આમાં દંશમશક વગેરે પરી-  
પ્રહની ઉત્પત્તિ થાય છે, સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે દંશમશકરૂપી પાંચમે પરીપ્રહ  
સહન કરે. આ વાતને સૂત્રકાર આગળની ગાથાથી બતાવે છે.

“ પુટ્ટો ય ” इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(સમરેવ-સમણ) ઉપકારી અને અપકારીમાં સમભાવ ધારણ  
કરવાવાળા મહામુની-મહામુનિઃ ઉગ્ર તપસ્યા કરનાર શીલવાન મહામુનિ દંસમસણ્હિ-  
દંશમશકૈઃ ડાંસ, મચ્છર દ્વારા ઉપલક્ષણથી માકડ, જૂ, આદિ દ્વારા પણ પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ  
પીડિત હોવા છતાં “સંગામસીસે-સંગ્રામશીર્ષે” યુદ્ધની વચમાં (સૂરો-શૂરઃ) પરાક્રમી  
(નાગો વા-નાગઇવ) હાથીની માફક (પરં અભિહણે-પરં અભિહન્યાત્) શત્રુને-રાગ દ્વેષ  
રૂપ ભાવશત્રુને પરાસ્ત કરે. એનો ભાવ આ છે. જેમ પરાક્રમી હાથી બાણોના  
આઘાતથી વ્યથિત હોવા છતાં પણ રણમાં શત્રુઓને હરાવે છે તેવી રીતે સાધુ પણ  
ડાંસ, મચ્છર આદિ દ્વારા પીડિત હોવા છતાં પણ કષાયરૂપી શત્રુને પરાસ્ત કરે.

कृत्वा समुत्तस्थौ । तत्र प्रथमयामे लघुकाया मूच्यग्रतीक्ष्णमुखाः दंशमशकाः सह-  
स्रशः परितः समागत्य मुनेः शरीरं दंशन्ति । तदनु-द्वितीययामे तदपेक्षया  
स्थूलाकारा दंशमशकाः घनघनध्वनिं कुर्वन्तः परितस्तद्वपुस्तीक्ष्णतरं दंशन्ति, तदनु  
तृतीयचतुर्थयामयोस्तदपेक्षयापि स्थूलतराः स्थूलतीक्ष्णमुखा विविधजातीया  
दंशमशकास्तं सातिशयं दंशन्ति । ततः सूर्योदये सति पञ्चमप्रहरे अकस्मात् तत्रैवो-  
द्दीयमाना मधुमक्षिकाः सहस्रशस्तद्वपुःसंलग्नास्तं मुनिं दंशन्ति । मधुमक्षिकाभि-  
राच्छादितं सकलं तद्वपुः श्यामवर्णं संजातम् । तस्य मुखोपरि सदोरकमुखवस्त्रिकाऽपि

एक समय की बात है कि इन्होंने ने एक अटवी में रात्रि के समय पांच  
प्रहरका कायोत्सर्ग धारण किया । उस अटवी में कायोत्सर्ग में रहे हुए  
इन सुदर्शन मुनि के शरीर को प्रथम प्रहर में लघुकायवाले हजारों दंशम-  
शकों ने सूची के अग्रभाग के समान अपने २ तीक्ष्ण मुखों से चारों ओर  
से आ आकर खूब डसा । फिर द्वितीय प्रहर में इनकी अपेक्षा स्थूला-  
कार वाले दंशमशकों ने घन घन शब्द करते हुए सब तरफ से आकर  
बहुत बुरी तरह उनके शरीर को डसना प्रारंभ किया । बाद में तृतीय  
चतुर्थ प्रहर में द्वितीय याम में आये हुए दंशमशकों की अपेक्षा वलिष्ट  
एवं स्थूलतर विविध जाति के दंशमशकों ने काटना शुरू किया । इस  
प्रकार जब रात्रि के चार प्रहर समाप्त हो चुके और सूर्योदय हुआ तब  
पंचमप्रहर में-अर्थात् दिवस के प्रथमप्रहर में-अकस्मात् उड़ी हुई हजारों  
मधुमक्षिकाओं ने उन मुनि के शरीर में चिपट कर उन्हें काटना प्रारंभ

तेઓએ એક જંગલમાં રાત્રિના સમયે પાંચ પ્રહરનો કાયોત્સર્ગ કર્યો. તે  
જંગલમાં કાયોત્સર્ગમાં રહેલા આ સુદર્શન મુનિના શરીરને પ્રથમ પ્રહરમાં  
નાના શરીરવાળા હજારો ડાંસ, મચ્છરોએ સોયની અણી જેવા પોત પોતાના  
તીક્ષ્ણ મુખોથી ચારે બાજુથી આવીને ખૂબ ડંખ માર્યા. પાછા બીજા પ્રહરમાં  
તેની અપેક્ષા સ્થૂલ આકારવાળા ડાંસ, મચ્છરોએ ગણુ ગણુ શબ્દ કરીને ચારે  
તરફથી આવીને ઘણી ખરાબ રીતે તેમના શરીરને ડંખ મારવા લાગ્યા. ત્યાર  
પછી ત્રીજા અને ચોથા પ્રહરમાં આવેલા ડાંસ મચ્છરોની અપેક્ષા નાના મોટા  
વિવિધ જાતના ડાંસ મચ્છરોએ ડંખ મારવા શરૂ કર્યો. આ પ્રકારે બ્યારે  
રાત્રીના ચાર પ્રહર પુરા થયા. અને સૂર્યોદય થયો ત્યારે પાંચમા પ્રહરમાં  
અર્થાત્ દિવસના પ્રથમ પ્રહરમાં અકસ્માત ઉડેલી હજારો મધમાખીઓએ તે  
મુનિના શરીર ઉપર ચોટી પડીને કરડવું શરૂ કર્યું. મધમાખીઓથી આચ્છા-



कुर्यादित्यर्थः । किं तु उपेक्षेत-मध्यस्थभावमाश्रयेत् । अत एव-मांसशोणितं भुञ्जानान् प्राणान्=प्राणिनः, न हन्यात्=न मारयेत् ।

अत्र सुदर्शनमुनेर्दृष्टान्तः—

चम्पानगर्यां रिपुमर्दननामको भूपतिरासीत् । तस्य पुत्रः सुदर्शननामकः संजातः । स धर्मघोषाचार्यसमीपे धर्मदेशनां निशम्य कामभोगेभ्यो विरक्तः प्रव्रजितः । स सुदर्शनो मुनिर्गुरुप्रसादात् श्रुतज्ञानसम्पन्नो दृढसत्त्वतया एकाकित्व-विहारारूपप्रतिमया विहन् कदाचित् महादृव्यां निशि पञ्चप्रहरात्मकं कायोत्सर्गं मनोऽपि न प्रदूषयेत् । अपने मन में उनके काटने पर अपने मन में कलुषित विचार नहीं करे । अथवा उनके काटने पर मन को कलुषित नहीं करना चाहिये । अपि शब्द से वचन आदिक को भी प्रदुष्ट नहीं करे । किन्तु उस समय (उवेहे-उपेक्षेत) मध्यस्थभाव का ही आश्रय करे । अतः साधु का कर्तव्य है कि वह (मांस शोणितं भुञ्जते पाणे न हणे-मांस शोणितं भुञ्जानान् प्राणिनः न हन्यात्) मांस खाते एवं शोणित को पीते हुए प्राणियों को कभी भी न मारे ।

दृष्टान्त—चम्पानगरी में रिपुमर्दन नामक एक राजा था । उसका एक पुत्र था, जिसका नाम सुदर्शन था । उसने धर्मघोष आचार्य के पास धर्म-देशना सुनकर काम भोगों से विरक्त बन मुनिदीक्षा धारण की । इन सुदर्शन मुनि ने अपने गुरु महाराज के प्रसाद से श्रुतज्ञान की प्राप्ति कर दृढ प्रराक्रमशाली होने की वजह से एका की विहार करने रूप प्रतिमा को धारण किया । अब ये उस प्रतिमा से विचरने लगे ।

मनोऽपि न प्रदूषयेत् तेना करडवाथी पोताना मनमां कलुषित विचार पणु न करे, अथवा तेना करडवाथी मनने कलुषित न करे. अरे शब्दथी वचनादिकने पणु प्रदुष्ट न करे, परंतु ते सभये उवेहे-उपेक्षेत मध्यस्थ भावने आश्रय करे आथी साधुनं कर्तव्य छे के ते मांसशोणितं भुञ्जतेपाणे न हणे-मांसशोणितं भुञ्जानान् प्राणिनः न हन्यात् मांस खाता अने बोडी पीता प्राणीओने कही पणु न मारे.

दृष्टान्तः—चम्पा नगरीमां रिपुमर्दन नामना एक राजा छता. तेमने एक पुत्र छता; जेतुं नाम सुदर्शन छतुं. तेले धर्मघोष आचार्यनी पासे धर्मदेशना सांलणी कामभोगथी विरक्त अनी मुनिदीक्षा धारणु करी. आ सुदर्शन मुनिओ पोताना गुरुमहाराजना प्रसादथी श्रुतज्ञाननी प्राप्ति करी, दृढ पराक्रम-शाली थवाना कारणथी एकैकी विहार करवा रूप प्रतिमाने धारणु करी अने तेओ ओ प्रतिमाथी विचरवा लाग्या. एक समयनी वात े के,

વેદના જાયતે તતોઽપ્યનન્તગુણા વેદના નરકેઽનન્તવારં મયા સોઢા, एवं निगो-  
 देऽपि, यत्र सूच्यग्रपरिमितकन्दादौ असंख्याताः श्रेणयः सन्ति, एकैकश्रेण्या  
 मसंख्यातानि प्रतराणि, एकैकप्रतरे असंख्याता गोलाः, एकैकगोले असंख्यातानि  
 निगोदशरीराणि, एकैकशरीरे अनन्ता जीवाः, एकैकनिगोदजीवः प्रत्येकश्वासो-  
 च्छ्वासे सार्धसप्तदश जन्ममरणानि करोति, एवंविधनिगोदेऽपि अनन्तजन्ममर-  
 णानां दारुणदुःखानि अनन्तवारं परवशेन मया सोढानि । किं पुनरेतत्, यतस्त-  
 तदुःखसागरैकविन्दुमात्रमपि नैतत्, एवं दंशमशकपरीपहं प्रकृष्टपरिणामेन सहमानः

इससे भी अनंतगुणी वेदना नरक में अनंतवार तूने भोगी है। इसी तरह  
 निगोद में भी सही हैं। सूची-सुई-के अग्रभाग प्रमाण कन्द आदि में  
 असंख्यात श्रेणियां होती हैं एक एक श्रेणी में असंख्यात प्रतर होते हैं।  
 एक एक प्रतर में असंख्यात गोले होते हैं। एक एक गोले में असंख्यात  
 निगोद शरीर हुआ करते हैं। एक एक निगोद शरीर में अनन्त जीव रहा  
 करते हैं। एक एक निगोदराशि का जीव एक २ श्वासोच्छ्वास में १७॥  
 साढासत्रह बार जन्मता है और १७॥ साढा सत्रह बार ही मरता है। इस  
 प्रकार के स्वरूप वाले निगोद में भी हे आत्मन्! तूने अनन्तवार अनंत  
 जन्म और मरण के दुःखों को परवश होकर सहन किया है। उन दुःखों  
 के सामने यह दंशमशक आदि से होने वाला दुःख कितना सा है। उन  
 दुःखों के सामने तो यह एक लेश मात्र भी नहीं है। इस प्रकार दंशमशक  
 परीपह को प्रकृष्ट शुभाध्यवसाय से सहन करते हुए सुदर्शन मुनिराज

અગ્નિથી બાળવાથી જેવી વેદના જીવોને થાય છે, તેથી અનંતગણી વેદના નરકમાં  
 અનંતવાર તેં ભોગવી છે. આ રીતે નિગોદમાં પણ સહન કરેલ છે. સોયના અગ્રભાગ  
 પ્રમાણનાં કન્દ આદિમાં અસંખ્યાત શ્રેણિયો હોય છે. એકેક શ્રેણીમાં અસંખ્ય  
 પ્રતર હોય છે. અને એકેક પ્રતરમાં અસંખ્ય ગોળા હોય છે. અને એકેક ગોળામાં  
 અસંખ્યાત નિગોદ શરીર હોય છે. એકેક નિગોદ શરીરમાં અનંત જીવ રહ્યા કરે છે.  
 એકેક નિગોદ રાશીને જીવ એક શ્વાસોચ્છ્વાસમાં સાડાસત્તરવાર જન્મે છે. અને  
 સાડાસત્તરવાર મરે છે. આ પ્રકારના સ્વરૂપવાળા નિગોદમાં પણ હે આત્મન્! તેં  
 અનંતવાર અનંત જન્મ અને મરણના દુઃખોને પરવશ બની સહન કર્યાં છે  
 એ દુઃખોની સામે આ ડાંસ મચ્છરોથી થતું દુઃખ કેવડું છે? તે દુઃખોની  
 સામે તો આ દુઃખ લેશ માત્ર પણ નથી. આ પ્રકારે ડાંસ મચ્છરોના પરી-  
 પહને પ્રકૃષ્ટ શુભાધ્યવસાયથી સહન કરતાં સુદર્શન મુનિરાજે પ્રશસ્ત

મક્ષિકાભિરાચ્છાદિતત્વાન્નલક્ષ્યતે । एवं दंशमशकमक्षिकाकृतवेदनां प्राप्यापि स  
सुदर्शनमुनिर्दंशादीन् न निवारयति चिन्तयति च-दुःखमेतत् कियत्, इताऽनन्तगुण-  
वेदनाऽनन्तवारं नरकेषु मया प्राप्ता, असिपत्रेण क्षुरपत्रेण कदम्बचीरिकापत्रेण छिद्य-  
माने शक्यपत्रेण कुन्तापत्रेण शरापत्रेण सूक्ष्मापत्रेण छुरिकापत्रेण, सूचीकलापापत्रेण, कपिक-  
च्छुना, वृश्चिककण्टकेन भिद्यमाने, अद्मारेण, प्रज्वलज्वालयामाने च यादृशी

કર દિયા । મધુમક્ષિકાઓં સે આચ્છાદિત સુદર્શન મુનિ કા ગૌર શરીર  
ઉસ સમય શ્યામવર્ણવાલા માલૂમ દેને લગા । ઉનકે મુખ કે ઉપર ઢોરે  
સે જો મુખવલ્લિકા વંધી હુઈ થી વહ બી મક્ષિકાઓં સે આચ્છાદિત હોને  
કી વજહ સે દિખલાઈ નહીં પડતી થી । ઇસ પ્રકાર દંશમશકોં દ્વારા તીવ્ર  
વેદના કો પાકર બી સુદર્શન મુનિ ને ઉન દંશમશકોં કા અપને હાથ  
આદિ સે નિવારણ નહીં કિયા । પ્રત્યુત ઉસ સમય યહી વિચાર કિયા  
કિ હે આત્મન્ ! યહ જો વર્તમાન મેં દુઃખ મિલ રહા હૈ વહ તેરે દ્વારા  
પહિલે ભોગે હુએ નરક એવં નિગોદ કે દુઃખોં કે સમક્ષ કિતના સા હૈ ।  
અરે ! તૂને પહિલે ભવોં મેં ઇસ વેદના સે બી અનન્તગુણી વેદનાઈ અનં-  
તવાર નરક મેં ભોગી હૈ । અસિપત્ર, ક્ષુરપત્ર એવં કદમ્બચીરિકા પત્ર સે  
છેદે જાને પર, શક્તિ કે અગ્રભાગ સે કુન્ત-ભાલા કે અગ્રભાગ સે, ઘાળકે  
અગ્રભાગ સે, છુરિકા કે અગ્રભાગ સે, સૂચિકલાપ કે અગ્રભાગ સે,  
કપિકચ્છુ કોંચકીફલી સે ઓર વિચ્છુ કે ડંક સે ભેદે જાને પર, તથા  
જલતી હુઈ અગ્નિ સે જલાયે જાને પર જૈસી વેદના જીવોં કો હોતી હૈ

દિત બનેલ સુદર્શન મુનિનું ગૌર શરીર તે સમયે શ્યામ વર્ણવાળું દેખાવા  
લાગ્યું, તેમના મુખ ઉપર દોરાથી જે મુખપત્તિ બંધાયેલ હતી તે પણ  
માખીઓથી આચ્છાદિત હોવાના કારણે જોવામાં આવતી ન હતી. આ પ્રકારે  
ઠાંસ, મચ્છરોથી તીવ્ર વેદના પામીને પણ સુદર્શન મુનિએ એ ઠાંસ, મચ્છર,  
વગરેને પોતાના હાથ આદિથી દૂર ન કર્યા. પરંતુ એ વખતે એવોજ વિચાર  
કર્યો કે હે આત્મન્ ! વર્તમાનમાં જે પ્રકારનું આ દુઃખ મળી રહ્યું છે તે  
તારાથી પહેલાં ભોગવવામાં આવેલ નરક અને નિગોદના દુઃખો પાસે શું  
હિસાબમાં છે, અરે ! તે પહેલાંના ભવોમાં આ વેદનાથી પણ અનંતગુણી  
વેદનાઓ અનંતવાર નરકમાં ભોગવી છે. અસિપત્ર, ક્ષુરપત્ર, અને કદમ્બચીરિકા  
પત્રથી છેદાઈ જવાથી, શક્તિના અગ્રભાગથી કુન્ત ભાલાના અગ્રભાગથી,  
ઘાણના અગ્રભાગથી, છુરીના અગ્રભાગથી, સૂચિ કલાપના અગ્રભાગથી, કપિ  
કચ્છુ-કોંચની ફળીથી, અને વીંછીના ડંખથી, ભેદાઈ જવાથી તથા બળતી

ઝકઃ=નૂતનવસ્ત્રવાન્ ભવિષ્યામિ, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत्, अयं भावः—जीर्णवस्त्र-  
साधुर्वस्त्राभावसंभावनया स्वात्मनि विपादं न कुर्याद्, नापि च नूतनवस्त्र-  
संभावनया हर्षं कुर्यादिति ॥१२॥

उक्तार्थमेव दृढीकर्तुमाह—

एग्या—एग्या अचेलें ए होई, संचेले यांविं एगयां ।

एयं धम्मांहियं नचंचा, नाणी नो परिदेवें ॥१३॥

छाया—एकदा अचेलको भवति, सचेलश्चापि एकदा ।

एतद् धर्महितं ज्ञात्वा, ज्ञानी नो परिदेवयेत् ॥१३॥

टीका—‘एग्या’ इत्यादि ।

एकदा=कदाचित्, कल्पनीयजीर्णखण्डितमलिनाल्पवस्त्रस्य सद्भावे मुनिः,

न्यभाव न करे । (अदुवा-अथवा) अथवा (सचेलए होक्खं-सचेलको  
भविष्यामि) नवीन वस्ત્રોં से “उनकी अधिक स्थिति होने से” सचेलक-  
वस्त्र सहित हो जाऊंगा (इति) इस प्रकार (भिक्षू) साधु (न चितए-  
न चिन्तयेत्) विचार न करे ।

इस का भाव केवल यही है कि साधु जिस समय जीर्ण वस्त्रों का  
परिधान करे उस समय मुनि “ये फटे पुराने वस्त्र कितने दिन तक  
चलेंगे इनके फट जाने पर मैं निर्वस्त्र हो जाऊंगा” इस प्रकार कभी  
भी अपनी आत्मा में विपाद न करे । “ये नवीन वस्त्र हैं अधिक दिन  
तक चलते रहेंगे अतः मैं सवस्त्र ही रहूंगा” इस प्रकार कभी हर्ष  
भाव को प्राप्त न हो । अथवा ‘अथ नूतन वस्त्रों की मुझे प्राप्ति होगी,  
इस बात की संभावना से भी साधु कभी भी हर्षित न होवे ॥ १२ ॥

सचेलए होक्खं-सचेलको भविष्यामि नवीन वस्त्रોથી “તે વધુ પ્રમાણમાં હોવાથી”  
સચેલક વસ્ત્ર સહિત થઈ જઈશ આ પ્રકારનો પણ “ભિક્ષુ” સાધુ નચિતએ-ન  
ચિન્તયેત્ વિચાર ન કરે.

આનો ભાવ કેવળ એ જ છે કે, સાધુ જે સમયે જીર્ણ વસ્ત્રો પરિધાન  
કરે એ સમયે આ કાટયાં તૂટયાં વસ્ત્રો કેટલા દિવસ ચાલશે, આના કાટી  
જવા પછી હું વસ્ત્ર વગરનો બની જઈશ. આ પ્રકારનો વિચાર કદી પણ ચોતાના  
આત્મામાં ન કરે. આ નવાં વસ્ત્ર છે, ઘણા સમય સુધી ચાલતાં રહેશે, અને  
આથી હું સવસ્ત્રજ રહીશ. આ પ્રકારનો હર્ષભાવ પણ કદી ન લાવે. અથવા  
હવે મને નવાં વસ્ત્રની પ્રાપ્તિ થશે આ વાતની સંભાવનાથી પણ સાધુ કદી  
હર્ષિત ન થાય (૧૨)

પ્રશસ્તધ્યાનેન શુભાપ્યવસાયેન પ્રાપ્તકેવલજ્ઞાન-કેવલદર્શનઃ સુદર્શનઃ સાધનન્તમ-  
વ્યાવાધં શાશ્વતં શિવપદં લબ્ધવાન્ । એવમન્યૈરપિ મુનિર્મિમધ્યસ્થભાવેન દંશમશ-  
કપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૧૧ ॥

અપાચેલપરીપહજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—પરિજુન્નેહિં વંત્યેહિં, હોક્ષામિ તિં અચેલૅ ॥

અદુવા સચેલૅ, હોક્ષં, ઇતિ મિંક્ષૂ નં ચિંતૅ ॥૧૨॥

છાયા—પરિજીર્ણૈર્વત્તૈ, ભવિષ્યામિ ઇતિ અચેલકઃ ।

અથવા સચેલકો ભવિષ્યામિ, ઇતિ મિશુર્ન ચિન્તયેત્ ॥૧૨॥

ટીકા—‘ પરિજુન્નેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

પરિજીર્ણૈઃ=પુરાતનૈઃ, વત્તૈઃ, અચેલકઃ=વસ્ત્રરહિતઃ, ભવિષ્યામિ, તેષાં સ્વલ્પ-  
કાલસ્થાયિત્વાત્, ઇતિ=એતદ્રૂપં દૈન્યં, મિશુર્ન ચિન્તયેત્= ન કુર્યાત્ । અથવા

ને પ્રશસ્તધ્યાન સે ઓર શુભ પરિણામોં કો ધારા સે કેવલજ્ઞાન ઓર  
કેવલદર્શન પ્રાપ્ત કર લિયા । પશ્ચાત્ આયુ કે અંત મેં સાદિ અનંત,  
અવ્યાવાધ એવં શાશ્વત પદ જો મુક્તિપદ હૈં ઉસ કો પ્રાપ્ત કર લિયા ।  
સુદર્શન મુનિ કી તરહ અન્યમુનિજનોં કોં ભી મધ્યસ્થભાવ સે દંશમશક  
પરીપહ સહન કરનાં ચાહિયે ॥ ૧૧ ॥

અવ સૂત્રકાર છઠે અચેલ પરીપહ કો જીતને કા ઉપદેશ કરતે હૈં—  
પરિજુન્નેહિં-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(પરિજુન્નેહીં-પરિજીર્ણૈઃ) પુરાને ( વત્યેહિં-વત્તૈઃ ) વસ્ત્રોંસે  
( અચેલૅ હોક્ષામિ-અચેલકઃ ભવિષ્યામિ ) મેં ઉનકી અલ્પકાલ  
સ્થિતિ હોંને સે અચેલ વસ્ત્ર રહિત હો જાઉંગા । ( તિ-ઇતિ ) ઇસ પ્રકાર કા

ધ્યાનથી અને શુભ પરિણામોની ધારાથી કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન પ્રાપ્ત  
કયું. પછી આયુના અંતમાં આદિ અનંત, અવ્યાવાધ અને શાશ્વત પદ જે  
મુક્તિપદ છે તેને પ્રાપ્ત કયું. સુદર્શન મુનિની માફક અન્ય મુનિજનોએ  
પણ મધ્યસ્થ ભાવથી ડાંસ અને મચ્છરોના પરીપહને સહન કરવો જોઈએ ॥૧૧॥

હવે સૂત્રકાર છઠા અચેલ પરીપહને જીતવાનો ઉપદેશ કરે છે. પરિજુન્નેહિં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પરિજુન્નેહિં-પરિજીર્ણૈઃ જુનાં “ વત્યેહિં-વત્તૈઃ ” વસ્ત્રોથી અચેલૅ  
હોક્ષામિ-અચેલકઃ ભવિષ્યામિ હું તેની અલ્પકાળ સ્થિતિ હોવાથી અચેલ વસ્ત્ર  
રહિતથઈ જઈશ તિ-ઇતિ આ પ્રકારનો દૈન્યભાવ ન કરે અદુવા-અથવા અથવા



નવીનવસ્ત્રસદ્ભાવે તન્નિમિત્તકં હર્ષં ન કુર્યાત્, તથા એપણીયપ્રમાણોપેતવસ્ત્રાણા-  
મમહામૂલ્યકત્વાદલ્પત્વાદશોભનત્વાચ વિપાદં ન કુર્યાત્ શીતસ્પર્શાદિના વાધિતોઽપિ  
પ્રમાણાધિકવસ્ત્રાકાઙ્ગાં ચ ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । તથાચોક્તમાચારાઙ્ગસૂત્રે—

“જે ભિક્ષુ તિહિ વત્યેહિ પરિવુસિણ પાયચઉત્યેહિ, તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ,  
ચઉત્યં વત્યં જાહસ્સામિ ।” ( આચા. ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩. )

છાયા—યો ભિક્ષુસ્ત્રિભિર્વસ્ત્રૈ પર્યુપિતઃ પાત્રચતુર્થેઃ, તસ્ય સ્વલુ નો એવં ભવતિ  
ચતુર્થં વસ્ત્રં યાચિષ્યે । પર્યુપિતઃ=વ્યવસ્થિતઃ । અત્રેન સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચતુર્થવસ્ત્ર  
પ્રતિપેધોઽવગમ્યતે । અપરં ચ-તત્રૈવોક્તમ્—

“જસ્સ ણં ભિક્ષુસ્સ એવં ભવહ-પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

ભાવ નહીં કરના ચાહિયે-ઔર યે નવીન વસ્ત્ર હૈં ઇનસે શીત આદિક  
કી રક્ષા વહુત અચ્છી તરહ હો જાયગી ” ઇસ પ્રકાર કમી હર્ષિત ભી  
નહીં હોના ચાહિયે । શીતસ્પર્શાદિક સે પીડિત હોને પર પ્રમાણ સે  
અધિક વસ્ત્રોં કી આકાંક્ષા કરના સાધુમોર્ગ મેં નિષિદ્ધ હૈ । આચારાંગ-  
સૂત્ર ( ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩. ) મેં યહી વાત વતલાઈ ગઈ હૈ “જે ભિક્ષુ  
તિહિવત્યેહિ પરિવુસિણ પાયચઉત્યેહિ તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચઉત્યં  
વત્યં જાહસ્સામિ ” જો ભિક્ષુ ત્રીન વસ્ત્રોં સે એવં ચૌથે પાત્ર સે વ્યવસ્થિત  
રહતા હૈ ઉસે ચતુર્થ વસ્ત્ર કે યાચન કી આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈ ઉસ  
કે ચિત્ત મેં યહ વાત નહીં આતી હૈ કિ મૈ ચતુર્થ વસ્ત્ર'કી યાચના કરૂં ।  
ઇસ કથન સે સ્થવિરકલ્પી સાધુ કો ચતુર્થવસ્ત્ર કા પ્રતિપેધ સિદ્ધ હોતા હૈ ।  
ઔર ભી આચારાંગ સૂત્ર ( ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩. ) મેં કહા હૈ “જસ્સ ણં  
ભિક્ષુસ્સ એવં ભવહ-પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

નવીન વસ્ત્ર છે, તેનાથી ઠંડી વગેરેની રક્ષા સારી રીતે થશે, આ પ્રકારે કદી  
હર્ષિત પણ ન થવું જોઈએ. ઠંડીના સ્પર્શથી પીડિત થવાથી અધિક વસ્ત્રોની  
આકાંક્ષા કરવી તે સાધુ માર્ગમાં નિષેધ છે. આચારાંગસૂત્ર ( ૧ શ્રુ. ૮. અ. ૪૩ )  
માં એવી વાત બતાવવામાં આવેલ છે કે, જે ભિક્ષુ તિહિવત્યેહિ પરિવુસિણ પાય  
ચઉત્યેહિ તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચઉત્યં વત્યં જાહસ્સામિ જે ભિક્ષુ ત્રણ વસ્ત્ર અને  
ચોથા પાત્રથી વ્યવસ્થિત રહે છે. તેને ચોથા વસ્ત્રની યાચના કરવાની આવશ્યકતા  
થતી નથી. એના ચિત્તમાં એ વાત આવતી નથી કે હું ચોથા વસ્ત્રની યાચના  
કરું. આ કથનથી સ્થવિરકલ્પી સાધુને ચોથા વસ્ત્રનો પ્રતિપેધ સિદ્ધ થાય છે.

બીજું પણ આચારાંગ સૂત્ર ( ૧. શ્રુ. ૮. અ. ૪. ૩. ) માં કહ્યું છે—

જસ્સ ણં ભિક્ષુસ્સ એવં ભવહ-પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

અચેલકઃ=વસ્ત્રરહિત इव, भवति-तथाविधवस्त्रस्य तनुश्रायकत्वाभावात् । एकदा= कदाचित्-नूतनवस्त्रसद्भावे, सचेलकोऽपि=नवीनवस्त्रवानापि भवति । एतद्=अचेल- कत्वं सचेलकत्वं चेति द्वयं, धर्महितं=धर्माय हितं-श्रुतचारित्रधर्मोपकारकं, ज्ञात्वा ज्ञानी=मेधावी, नो परिदेवयेत्=जीर्णवस्त्रसद्भावे विषादं न कुर्यात्,

‘एगया अचेलए’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(એગયા-એકદા) કબી કિસી સમય કલ્પનીય જીર્ણ સ્વદિત મલિન એવં અલ્પ વસ્ત્રોં કે સદ્ભાવ મેં મુનિ (અચેલએ હોઈ-અચેલકો ભવતિ) વસ્ત્ર રહિત જૈસા હી હોતા હૈ । ક્યોં કિ જો જીર્ણાદિવસ્ત્ર ઉસકે હોતે હૈં ઉનસે યથાવત્ શરીર કી રક્ષા નહીં હોતી હૈ । (એગયા) કબી કિસી સમય-નૂતન વસ્ત્રોં કે સદ્ભાવ મેં (સચેલે યાવિ હોઈ-સચેલ-કોઽપિ ભવતિ) સચેલ ભી-નવીન વસ્ત્ર વાલા ભી હોતા હૈ । (એવં-એતત્) યે દોનોં હી અવસ્થાએ સાધુ કી ઉસકે (ધર્મહિયં-ધર્મહિતમ્) શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મ કી ઉપકારક હૈં । એસા (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) જાનકર (નાળી નો પરિદેવએ-જ્ઞાની નો પરિ દેવયેત્) જ્ઞાની મુનિ કિસી ભી અપની અવસ્થા મેં ચાહે વસ્ત્ર સહિત અવસ્થા હો ચાહે વસ્ત્ર રહિત અવસ્થા હો ઉસમેં હર્ષવિષાદ ન કરે ।

ભાવાર્થ—સાધુ કો “ યે વસ્ત્ર જો મેરે પાસ હૈં વે વહુત હી જીર્ણ શીર્ણ હૈં, તથા હલકે પોતકે હૈં, યે વહુત થોડે હૈં, સુન્દર ભી નહીં હૈં હનસે શીત આદિક કી રક્ષા કૈસે હોગી ” હસ પ્રકાર કબી વિષાદ

‘एगया अचेलए’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—એગયા-એકદા કોઈ વખત કલ્પનીય જીર્ણ સ્વદિત મલિન અને અલ્પવસ્ત્રોના સદ્ભાવમાં મુનિ અચેલએ હોઈ-અચેલકો ભવતિ વસ્ત્ર રહિત જેવો જ હોય છે, કેમ કે, જે જીર્ણ એવાં વસ્ત્ર તેની પાસે હોય છે તેનાથી યથાવત્ શરીરની રક્ષા થતી નથી એગયા કોઈ વખત નવા વસ્ત્રોના સદ્ભાવમાં સચેલે યાવિ હોઈ-સચેલકોઽપિ ભવતિ સચેલ પણ-નવીન વસ્ત્રવાળા પણ હોય છે. એવં-એતત્ આવી બન્ને અવસ્થાઓ સાધુની ધર્મહિયં-ધર્મહિતં શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મમાં ઉપકારક છે એવું નચ્ચા-જ્ઞાત્વા જાણીને નાળી નો પરિદેવએ-જ્ઞાની નો પરિદેવયેત્ જ્ઞાની કોઈ પણ અવસ્થામાં ચાહે વસ્ત્રસહિત અવસ્થા હોય, ચાહે વસ્ત્રરહિત અવસ્થા હોય તેમાં હર્ષ-વિષાદ ન કરે.

ભાવાર્થ—સાધુએ “ આ વસ્ત્ર જે મારી પાસે છે તે ઘણું જીર્ણશીર્ણ છે, તથા હલકા પોતનાં છે અને ખૂબ થોડાં છે, સુંદર પણ નથી, એનાથી ઠંડી વગેરેથી રક્ષા કેમ થશે ” આ પ્રકારનો વિષાદભાવ કદી ન કરવો જોઈએ. આ

નવીનવસ્ત્રસદ્ભાવે તન્નિમિત્તકં હર્ષં ન કુર્યાત્, તથા એપનીયપ્રમાણોપેતવસ્ત્રાણા-  
મમહામુલ્યકત્વાદલ્પત્વાદશોભનત્વાચ્ચ વિપાદં ન કુર્યાત્ શીતસ્પર્શાદિના વાધિતોઽપિ  
પ્રમાણાધિકવસ્ત્રાકાંક્ષાં ચ ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । તથાચોક્તમાચારાંગસૂત્રે—

“ જે ભિક્ષુ તિહિ વત્યેહિ પરિવુસિએ પાયચઉત્યેહિ, તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ,  
ચઉત્યં વત્યં જાહસ્સામિ । ” ( આચા. ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩. )

છાયા—યો ભિક્ષુસ્ત્રિભિર્વસ્ત્રૈ પર્યુપિતઃ પાત્રચતુર્થેઃ, તસ્ય સ્વલુ નો એવં ભૂવતિ  
ચતુર્થં વસ્ત્રં યાચિષ્યે । પર્યુપિતઃ=વ્યવસ્થિતઃ । અત્રેન સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચતુર્થવસ્ત્ર  
પ્રતિપેધોઽવગમ્યતે । અપરં ચ—તત્રૈવોક્તમ્—

“ જસ્સ ણં ભિક્ષુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

ભાવ નહીં કરના ચાહિયે—ઔર યે નવીન વસ્ત્ર હૈં ઇનસે શીત આદિક  
કી રક્ષા વહુત અચ્છી તરહ હો જાયગી ” ઇસ પ્રકાર કમી હર્ષિત મી  
નહીં હોના ચાહિયે । શીતસ્પર્શાદિક સે પીડિત હોને પર પ્રમાણ સે  
અધિક વસ્ત્રોં કી આકાંક્ષા કરના સાધુમાર્ગ મેં નિષિદ્ધ હૈ । આચારાંગ-  
સૂત્ર ( ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩. ) મેં યહી વાત વતલાઈ ગહ હૈ “ જે ભિક્ષુ  
તિહિવત્યેહિ પરિવુસિએ પાયચઉત્યેહિ તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચઉત્યં  
વત્યં જાહસ્સામિ ” જો ભિક્ષુ ત્રીન વસ્ત્રોં સે એવં ચૌથે પાત્ર સે વ્યવસ્થિત  
રહતા હૈં ઉસે ચતુર્થ વસ્ત્ર કે યાચન કી આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈં ઉસ  
કે ચિત્ત મેં યહ વાત નહીં આતી હૈં કિ મૈ ચતુર્થ વસ્ત્ર'કી યાચના કરૂં ।  
ઇસ કથન સે સ્થવિરકલ્પી સાધુ કો ચતુર્થવસ્ત્ર કા પ્રતિપેધ સિદ્ધ હોતા હૈં ।  
ઔર મી આચારાંગ સૂત્ર ( ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩. ) મેં કહા હૈં “ જસ્સ ણં  
ભિક્ષુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

નવીન વસ્ત્ર છે, તેનાથી ઠંડી વગેરેની રક્ષા સારી રીતે થશે, આ પ્રકારે કદી  
હર્ષિત પણ ન થવું જોઈએ. ઠંડીના સ્પર્શથી પીડિત થવાથી અધિક વસ્ત્રોની  
આકાંક્ષા કરવી તે સાધુ માર્ગમાં નિષેધ છે. આચારાંગસૂત્ર ( ૧ શ્રુ. ૮. અ. ૪૩ )  
માં એવી વાત બતાવવામાં આવેલ છે કે, જે ભિક્ષુ તિહિવત્યેહિ પરિવુસિએ પાય  
ચઉત્યેહિ તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચઉત્યં વત્યં જાહસ્સામિ જે ભિક્ષુ ત્રણ વસ્ત્ર અને  
ચોથા પાત્રથી વ્યવસ્થિત રહે છે. તેને ચોથા વસ્ત્રની યાચના કરવાની આવશ્યકતા  
થતી નથી. એના ચિત્તમાં એ વાત આવતી નથી કે હું ચોથા વસ્ત્રની યાચના  
કરું. આ કથનથી સ્થવિરકલ્પી સાધુને ચોથા વસ્ત્રનો પ્રતિપેધ સિદ્ધ થાય છે.

ખીલ્લું પણ આચારાંગ સૂત્ર ( ૧. શ્રુ. ૮. અ. ૪. ૩. ) માં કહ્યું છે—

જસ્સ ણં ભિક્ષુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

अहियासित्तए, से वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं केइ अकरणयाए आ-  
उट्टे, तवस्सिणो हु ते सेयं जं एगे विहमाइए । तत्थवि तस्स कालपरियाए । से  
वि तत्थ विअंतिकारए । इच्चेयं विमोहायतणं हियं सुहं खमं णिस्सेयसं अणु-  
गामियं । ( आचा. १ थु. ८ अ. ४ उ. )

छाया—यस्य खलु भिक्षोः एवं भवति—स्पृष्टः खलु अहमस्मि, नालमहमस्मि  
शीतस्पर्शम् अध्यासितुम्, स वसुमान् सर्वसमन्वागतमज्ञानेन आत्मना कोऽपि अक-  
रणतया आवृतः तपस्विनः खलु तच्छ्रेयः यदेकं वैहायसादिकम् । तत्रापि तस्य  
कालपर्यायः । सोऽपि तत्र व्यन्तकारकः । इत्येतत् विमोहायतनं हितं सुखं क्षमं  
निःश्रेयसम् आनुगामिकम् ।

व्याख्या—यस्य भिक्षोः खलु एवम्=ईदृशी विचारणा भवति—अहं खलु  
परीपहैः स्पृष्टः=वाधितोऽस्मि, अहं शीतस्पर्शम् अध्यासितुं=सोढुम्, अलं=पर्याप्तः,  
नास्मि । सः=ईदृशभावनाभावितः, कोऽपि वसुमान्=संयमी, सर्वसमन्वागतमज्ञा-  
नेन=पूर्णेपयोगयुक्तेन, आत्मना=अन्तःकरणेन अकरणतया=उपसर्गप्रतीकारस्या-  
अहियासित्तए, से वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं केइ  
अकरणयाए आउट्टे, तवस्सिणो हु ते सेयं जं एगे विहमाइ ए । तत्थ  
वि तस्स कालपरियाए । से वि तत्थ विअंतिकारए । इच्चेतं विमोहाय-  
तणं हियं सुहं खमं णिस्सेयसं अणुगामियं ॥ ”

जिस भिक्षु के हृदय में ऐसी विचारणा होती है कि मैं  
परीपहों से पीड़ित हूँ अतः शीतपरीपह को सहन करने के लिये  
समर्थ नहीं हूँ ” । इस प्रकार के विचार से युक्त होकर वह संयमी  
मुनि प्रमाणाधिक वस्तुओं को ग्रहण करने रूप, तथा अग्नि को जलाने  
रूप सावध व्यापारों को कभी भी न करे । किन्तु वैहायस (फांसी)

अहियासित्तए से वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं केइ अकरणयाए आउट्टे  
तवस्सिणो हु ते सेयं जं एगे विहमाइए । तत्थ वि तस्स कालपरियाए । से वि  
तत्थ विअंतिकारए । इच्चेतं विमोहायतणं हियं सुहं खमं णिस्सेयसं अणुगामियं ॥

७ भिक्षुना हृदयमां ऐवी विचारणा थाय छे के, “ हुं परीपडोथी पीडित  
छुं आथी ठंडीना दुःखोने सहन करवामां समर्थ नथी ” आ प्रकारना विचा-  
रथी युक्त अनी ते संयमी मुनि प्रमाणाधिक वस्तुओने ग्रहण करवां रूप, तथा  
अग्निने जलाववा रूप सावधव्यापारोने कही पणु न करे. पणु ते वैयहायस

કરણભાવનયા આદ્યતઃ=વ્યવસ્થિતસ્તિષ્ઠેત્ । તપસ્વિનઃ સ્વલુ તચ્છ્રેયઃ=તદેવ શ્રેયસ્કરં  
ભવતિ, યત્-એકં વૈદાયસાદિકં-વૈદાયસત્રિપદક્ષણં પાપાતાદિમરણેષુ કિમપ્યેકં  
મરણમ્ । તત્રાપિ=વૈદાયસાદિષુ તસ્ય કાલપર્યાયઃ=ભક્તપરિજ્ઞાદિવત્ કાલમૃત્યુરેવ નત્વ-  
કાલમૃત્યુઃ, અત એવ સોઽપિ તત્ર=ચતુર્થવસ્ત્રાનાકાઢ્યાવિપયે, વ્યન્તકારકઃ=પર્યવસાન  
મૃત્યુકારકઃ, સંસારાન્તકારક इत्यर्थः । इत्येतत्-इति=अतः-अस्मात् कारणात्,  
एतन्मरणं विमोहायतनम्-विमोहानां=परीपहसहिष्णूनाम्, आयतनं=स्थानं-मो-  
क्षपददायकमितिभावः, हितम्=उपकारकम्, सुखं=सुखकरं, समं=योग्यं, निःश्रे-  
यसं=निश्चितं-निश्चलं, श्रेयः-शुभम्, आनुगामिकम्=गच्छन्तं पुरुषम् आ=समन्तात्,  
अनुगच्छतीत्येवं शीलं आनुगामि, तदेव-आनुगामिकम्, मोक्षपदपर्यन्तानुगमन-  
शीलमित्यर्थः ।

અર્થે ભાવઃ-અપણીયવસ્ત્રત્રયધારણે શીતસ્પર્શવેદનામસહિષ્ણુચતુર્થવસ્ત્રાકાઢ્યાયા  
અકરણેન ત્રિવસ્ત્રકત્વરૂપમચેલં પરીપદં સહમાનો મુનિર્વૈદાયસાદિષ્વેકં કિમપિ  
મરણમુપગતશ્ચેત્તર્હિ તાદૃશમરણજન્યઃ પ્રકૃષ્ઠધર્મસ્તસ્ય મુનેસ્તસ્મિન્નેવ ભવે સંસારાન્તં  
કરોતિ, મોક્ષપદં ચ પ્રાપયતિ ।

इहाचेलकत्वं प्रवचनोक्तरीत्या ग्राह्यम् । तीर्थकरोपदिष्टाचारसेविनो मुनयः प्रव-  
चनानुसारेण कल्पनीयाल्पजीर्णखण्डितमलिनवस्त्रपरिधानाः प्रमाणोपेतवस्त्रधारिण-  
श्चाप्यचेलका एव । यथा-परिहितकौपीना अपि तापसा लोके नग्ना उच्यन्ते,  
आदि मरणों में से किसी एक मरण को धारण कर अपने प्राणों का  
व्युत्सर्ग कर देवे । इस प्रकार के मरण से होने वाला जो प्रकृष्ट धर्म है  
वह उस मुनि को उसी भव में संसार का अन्त करता हुआ मोक्ष का  
प्रदायक होता है ।

પ્રવચન મેં કથિત રીતિ કે અનુસાર યહાં અચેલકતા કા ગ્રહણ  
કિયા ગયા હૈ । તીર્થકરો દ્વારા ઉપદિષ્ટ આચાર કા સેવન કરને  
વાલે મુનિ પ્રવચન કે અનુસાર કલ્પનીય, અલ્પ, જીર્ણ, એવં

ફાંસી વગેરે મરણોમાંથી કોઈ એક મરણને ધારણ કરી પોતાના પ્રાણનો ત્યાગ  
કરી દે. આ પ્રકારના મરણથી થનાર જે પ્રકૃષ્ઠ ધર્મ છે તે એ મુનિને એ  
ભવમાં સંસારનો અંત કરાવનાર મોક્ષદાયી બને છે.

પ્રવચનમાં કહેલ રીત અનુસાર અહિં અચેલકતાનું ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે.  
તીર્થકરો દ્વારા ઉપદિષ્ટ આચારનું સેવન કરવાવાળા મુનિ પ્રવચન અનુસાર કલ્પનીય,  
અલ્પ, જીર્ણ અને ખંડિત મલિન વસ્ત્રને, પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોને, ધારણ કરેલ હોવા છતાં



યથા વા યસ્યાઢ્ઢરસિકા જીર્ણાં સંજાતા, સ પરિષ્ટતાઢ્ઢરસિકોઽપિ સૌચિકાન્તિકં ગત્વા વદતિ-અનાઢ્ઢતોઽસ્મિ, અઢ્ઢરસિકાં દેહીતિ, યથા વા કાચિન્નારી પરિહિત-પરિજીર્ણશાટિકાઽપિ વસ્ત્રકારં તન્તુવાયં વદતિ-‘નગ્નાઽ હમસ્મિ, દેહિ મે શાટિકામ્’ ઇત્યાદિ, એવં સાધવોઽપ્યમહાલ્પમૂલ્યાનિ સ્વણ્ડિતાનિ જીર્ણાનિ પ્રમાણોપેતાનિ પ્રમાણતો ન્યૂનાનિ વા વસ્ત્રાણિ શ્રુતોપદેશાદ્ ધર્મવુદ્ધયા ધારયન્તોઽવેલકા એવ । અવેલકસદૃશા અપ્પવેલકા ઉચ્ચન્તે ।

સ્વંડિત મલિન વસ્ત્ર કો પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોં કો ધારણ કરતે હુણ્ મી અવેલક હી માને જાતે હેં । જિસ પ્રકાર લોક મેં લંગોટીમાત્ર કો ધારણ કરને પર મી તાપસ લોગ “યે નગ્ન હેં” ઇસ પ્રકાર કહે જાતે હેં । અથવા જૈસે કિસી પુરુષ કા અંગરસા જીર્ણ હો જાય ઓર વહ ઉસે પહિર કર મી જવ દર્જીં કે પાસ દૂસરે અંગરસે કો સિલાને કે લિયે જાતા હૈ તો કહતા હૈ કિ માર્હ દેસો જલ્દી ઇસે સીકર દે દેના મૈ ઉઘાડા ફિરતા હૂં, મેરે પહિરને કો અંગરસા નહીં હૈ । અથવા-જૈસે કોઈ સ્ત્રી કિ જિસકી શાટિકા-સાડી પરિજીર્ણ હો ચુકી હૈ જવ તન્તુ-વાય-કપડે બુનનેવાલે કે પાસ જાતી હેં તો કહતી હેં કિ મુઝે સાડી દે મેં વિના સાડી ફિર રહી હૂં । ઇસી તરહ સાધુ મી પ્રમાણોપેત સ્વંડિત જીર્ણ એવં અત્યંત અલ્પમૂલ્યવાલે વસ્ત્રોં કો શ્રુતોપદેશ કે અનુસાર ધર્મ-વુદ્ધિ સે ધારણ કરતે હુણ્ મી અવેલક હી હેં, એસા સમજ્ઞના ચાહિયે । જો અવેલક કે તુલ્ય હોતે હેં વે મી અવેલક હી માને જાતે હેં ।

પણ અવેલક જ માનવામાં આવે છે. જે પ્રકારે લોકમાં તાપસ લોકો લંગોટી ધારણ કરે છે. પણ “આ નગ્ન છે” આ પ્રકારથી કહેવામાં આવે છે. અથવા જેમ-કેઈ પુરૂષનું અંગરખું જીર્ણ થઈ જાય અને તે તેને પહેરીને પણ જ્યારે દરજીની પાસે બીજું અંગરખું શીવડાવવા માટે જાય છે તો કહે છે ભાઈ જીઓ આને જલ્દીથી શીવી આપજો હું ઉઘાડો ફરું છું. મારે પહેરવાને અંગરખું નથી અથવા જેમ-કેઈ સ્ત્રી કે જેની સાડી પરિજીર્ણ થતાં તે કપડાં બનાવનાર પાસે જાય છે અને કહે છે કે મને સાડી આપ હું સાડી વગરની ફરી રહી છું. આ રીતે સાધુ પણ પ્રમાણોપેત સ્વંડિત જીર્ણ અને અત્યંત અલ્પમૂલ્યવાળાં વસ્ત્રોને શ્રુત ઉપદેશ અનુસાર ધર્મ બુદ્ધિથી ધારણ કરતા હોવા છતાં અવેલક જ છે એવું સમજવું જોઈએ. જે અવેલક તુલ્ય હોય છે તે પણ અવેલક જ માન્યા જાય છે.

આગમે હિ દ્વિવિધઃ કલ્પઃ-સ્થવિરકલ્પઃ જિનકલ્પઃ । તત્ર ગચ્છપ્રતિવદ્ધાનાં મુનીનામાચારઃ સ્થવિરકલ્પઃ ।

નનુ કસ્તાવત્ સ્થવિરકલ્પક્રમઃ ? ઉચ્યતે-પ્રથમં શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મશ્રવણમ્, તતઃ સમ્યક્ત્વલાભઃ, તદનુઆલોચનાપૂર્વિકા પ્રવ્રજ્યાપ્રતિપત્તિઃ, તતઃ શિક્ષાધિકારો ભવતિ શિક્ષા ચ દ્વિવિધા-ગ્રહણશિક્ષા, આસેવનાશિક્ષા ચ । તત્ર ગ્રહણશિક્ષા-સૂત્રાધ્યયનરૂપા, આસેવનાશિક્ષા-પ્રતિલેખનાદિરૂપા । તતઃ સૂત્રાણામર્થગ્રહણમ્ । તત્પશ્યાદનિયતવાસઃ । સ ચ તાદૃશયોગ્યતાસંપન્નસ્ય મુનેઃ સાધુસહાયસ્ય ગ્રામ-નગરસંનિવેશાદિપુ દેશાન્તરે વા ગુરોરાજ્ઞયા પર્યટનમ્ ।

આગમ મેં સ્થવિરકલ્પ ઓર જિનકલ્પ કે ભેદ સે દો કલ્પ ભગવાન ને કહે હેં । ઉનમેં ગચ્છપ્રતિવદ્ધ મુનિયોં કા જો આચાર હૈ વહ સ્થવિર-કલ્પ હૈ । સ્થવિરકલ્પ કા ક્રમ હસ પ્રકાર હૈ-પ્રથમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કા શ્રવણ, ઉસસે સમ્યક્ત્વ કા લાભ, વાદ મેં આલોચનાપૂર્વક પ્રવ્રજ્યા કી પ્રતિપત્તિ, ઉસસે ગ્રહણશિક્ષા એવં આસેવનશિક્ષા કે અધિકાર કા લાભ । સૂત્ર કે અધ્યયન કરને રૂપ ગ્રહણશિક્ષા એવં પ્રતિલેખનાદિકરૂપ આસેવનશિક્ષા હૈ । હસકે વાદ સૂત્રોં કા અર્થ ગ્રહણ કરના, પશ્ચાત્ અનિયત વાસ । અનિયતવાસ કા તાત્પર્ય હૈ ગુરુ કી આજ્ઞા સે ગ્રામ, નગર એવં સન્નિવેશ આદિકોં મેં અથવા દેશાન્તર મેં વિચરણ કરના । યહ વિચરણ, વિચરણ કરને કી યોગ્યતા સંપન્ન જો સાધુ હોતા હૈ ઉસી કા હોતા હૈ । ફિર ભી યહ એકાકી વિહાર નહીં કર સકતા કિન્તુ અન્ય સાધુઓં કે સાથ હી વિહાર કરતા હૈ ।

આગમમાં સ્થવિરકલ્પ અને જીનકલ્પના ભેદોથી બે કલ્પ ભગવાને કહ્યાં છે. એમાં ગચ્છપ્રતિવદ્ધ મુનિયોનો આચાર છે, તે સ્થવિરકલ્પ છે. સ્થવિર કલ્પનો ક્રમ આ પ્રકારનો છે.-પ્રથમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ, એનાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ, પછી આલોચના પૂર્વક પ્રવ્રજ્યાની પ્રાપ્તિ એથી ગ્રહણ-શિક્ષા અથવા આસેવનશિક્ષાનો લાભ, સૂત્રનું અધ્યયન કરવા રૂપ ગ્રહણ-શિક્ષા અને પ્રતિલેખનાદિક રૂપ આસેવનશિક્ષા છે. એ પછી સૂત્રોના અર્થ સમજ્યા પછી અનિયતવાસ, અનિયતવાસનું તાત્પર્ય એ છે કે, ગુરુની આજ્ઞાથી ગ્રામ-નગર અને સિન્નિવેશ વગેરેમાં અથવા દેશાન્તરમાં વિચરણ કરવું. આ વિચરણ કરવાની યોગ્યતા સંપન્ન જે સાધુ હોય છે, તેને જ ગુરુ મહારાજ એવી આજ્ઞા આપે છે. આમાં તે એકાકી વિહાર કરી શકતા નથી પરંતુ અન્ય સાધુઓની સાથે જ વિહાર કરે છે.

નનુ કિં પ્રયોજનં દેશાન્તરપર્યટનસ્ય ? ઉચ્યતે—નાનાસ્થાનેષુ વદુશ્રુતાનાચાર્યાદીન્ પશ્યતસ્તસ્ય સૂત્રાર્થેષુ સમાચાર્યાં ચ વિશેષપ્રતિપત્તિર્ભવતિ, નાનાદેશભાષાજ્ઞાનં ચ । તેનાસૌ તત્તદ્દેશીયભાષયા તત્ર તત્ર ધર્મદેશનાં દદાતિ પ્રવ્રજ્યાં ગ્રાહયતિ ચ । ગચ્છાન્તરીયા અન્યદેશીયાઃ સાધવઃ ‘અયમસ્મદ્દાપાજ્ઞાનવાન્’ इति મત્વા તદન્તિકમાગત્ય શાસ્ત્રાભ્યસનરૂપાં તદુપસંપદં પ્રતિપદ્યન્તે, તેષાં પ્રીતિશ્ચ તદુપરિજાયતે । એવમનિયતવાસેન પર્યટતસ્તસ્ય નિષ્પત્તિર્ભવતિ । નિષ્પત્તિર્નામ સદ્ગુણવત્ત્વેન પ્રભૂતશિષ્યાણાં તદન્તિકે સંસિદ્ધિઃ ।

દેશાન્તર મેં ભ્રમણ કરને કા પ્રયોજન યહ હૈ કિ જય સાધુ દેશાન્તર મેં ભ્રમણ કરતે હૈં, તવ ઉનકા અન્યદેશ કે અનેક વદુશ્રુત આચાર્ય આદિકોં કે સાથ સંપર્ક વઢતા હૈ । ઉસસે ઉનકો સૂત્રમેં અર્થ મેં એવં સાધુ સમાચારી મેં વિશેષ પ્રતિપત્તિ-જાનકારી હોતી હૈ । તથા નાના દેશકી ભાષાઓં કા જ્ઞાન ભી હો જાતા હૈ । ઇસસે સાધુ કો ધર્મપ્રચાર કરને મેં વડી ભારી સહાયતા મિલતી હૈ । કયોં કિ વહ ઉસ ૨ દેશમેં ઉસ ૨ દેશ કી ભાષા સે ઉપદેશ દેકર વહાં કી જનતા કો ધાર્મિક વાસના સે વાસિત કરતે હૈં । એવં લોગોં કો દીક્ષા ગ્રહણ કરને કી ભાવના જાગૃત કરતે હૈં । લોગ ઉનસે પ્રતિવોધ પાકર દીક્ષા ધારણ કરતે હૈં । દૂસરે ગચ્છ કે અથવા અન્ય દેશ કે સાધુ “યે હમારી ભાષા ભાષી હૈં” યહ સમજ્ઞકર ઉનકે પાસ આતે જાતે હૈં ઓર ઉનસે શાસ્ત્રોં કા અભ્યાસ કરતે હૈં । ઇસસે દૂસરે ગચ્છ કે મુનિરાજોં કી ઉન પર અધિક પ્રાતિ ભી હો જાતી હૈ । શિષ્યપરંપરા કી ભી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । કયોં કિ લોગ જબ

દેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાનું પ્રયોજન એ છે કે, ત્યારે સાધુ દેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરે છે ત્યારે તેને ખીજ દેશના બહુશ્રુત આચાર્ય વગેરે સાથે સંપર્ક થાય છે આથી તેને સૂત્રમાં અર્થમાં અને સાધુ સમાચારીમાં વધુ જાણવાનું મળે છે. અને જુદા જુદા દેશની ભાષાઓનું પણ જ્ઞાન થાય છે. આથી સાધુને ધર્મ પ્રચાર કરવામાં સારી એવી સહાયતા મળી રહે છે. કેમ કે, તે જે તે દેશમાં જે તે દેશની ભાષાથી ત્યાંની જનતાને ધાર્મિક ભાવનાથી ભાવનાયુક્ત બનાવી શકે છે, અને લોકોમાં દીક્ષા ગ્રહણ કરવાની ભાવના જાગૃત કરે છે. ખીજ ગચ્છના અથવા ખીજ દેશના સાધુ “આ અમારા ભાષાભાષી છે.” એમ સમજી એની પાસે આવે છે. સંપર્ક વધારે છે. અને એની પાસેથી શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કરે છે. આથી ખીજ ગચ્છના મુનિરાજોની પણ તેના પર પ્રીતિ થવા લાગે છે આથી શિષ્ય પરંપરાની વૃદ્ધિ થાય છે, કેમ કે

एवं शिष्यप्राप्त्यनन्तरं स्व परोपकारकरणेन गच्छकार्ये संपादिते दीर्घे पर्याये च प्रतिपालिते सति अभ्युद्यतमरणं स्वीकरणीयम् । अभ्युद्यतमरणं त्रिविधम्—पादपोषगमनं, इङ्गितम्, भक्तप्रत्याख्यानं च ।

अभ्युद्यतमरणे संलेखनादिरूपा समाचारी प्रदर्श्यते—संलेखना आगमोक्तविधिना शरीरादेः कृशोत्करणम्, सा त्रिविधा—उत्कृष्टा, मध्यमा, जघन्या च । तत्रो-

उनको गुणगणशाली समझने लगते हैं तो उनके अधिक परिचय में आने से लोगों पर उनके ज्ञानादिक गुणों का प्रभाव पड़ता है । इससे प्रभावित होकर वे उनको अपना हितकारक जान उनके समीप दीक्षित भी हो जाते हैं । इससे शिष्यपरंपरा बढ़ती है । इस प्रकार अनियत वास से पर्यटन करने वाले साधु को ये अनेक लाभ होते हैं ।

शिष्यप्राप्ति के अनन्तर स्व एवं पर का उपकार करने से गच्छ का कार्य संपादित होने पर तथा साधु अवस्था की पर्याय दीर्घकालतक पालीजाने पर उन साधुओंको अभ्युद्यतमरण स्वीकार करना चाहिये । यह अभ्युद्यतमरण ३ तीन प्रकार का है १ पादपोषगमन, २ इङ्गित, ३ भक्तप्रत्याख्यान ।

इस अभ्युद्यतमरण में अब संलेखनादि रूप समाचारी दिखलाई जाती है — आगमोक्तविधि के अनुसार शरीर आदि का कृश करना इस का नाम संलेखना है । यह उत्कृष्ट, मध्यम एवं जघन्य के

લોકો ત્યારે તેને ગુણશાળી સમજતા થાય છે ત્યારે તેના અધિક પરિચયમાં આવે છે. આથી લોકો ઉપર એના જ્ઞાનાદિક ગુણોનો પ્રભાવ પડે છે. એથી પ્રભાવિત થઈ તેને પોતાના હિતકારી જાણી તેની સમીપ દીક્ષિત પણ થઈ જાય છે. આથી શિષ્યપરંપરા વધે છે. આથી આ પ્રકારનો અનિયતવાસ અને પર્યટન કરવાવાળા સાધુને અનેક લાભ થાય છે.

શિષ્ય પ્રાપ્તિ ઉપરાંત સ્વ અને પરના ઉપકારક બનવાથી ગચ્છનું કાર્ય સંપાદિત થવાથી. તથા સાધુ અવસ્થાની પર્યાય લાંબા સમય સુધી પાળવામાં આવવાથી એ સાધુઓએ અભ્યુદયતમરણ સ્વીકારવું જોઈએ. આ અભ્યુદયતમરણ ત્રણ પ્રકારનાં છે. (૧) પાદપોષગમન (૨) ઇંગિત (૩) ભક્તપ્રત્યાખ્યાન.

આ અભ્યુદયતમરણમાં હવે સંલેખનાદિ રૂપ સમાચારી બતાવવામાં આવે છે. આગમમાં બતાવેલ વિધિ અનુસાર શરીર વગેરેને કૃશ કરવું, એનું નામ સંલેખના છે. એ ઉત્કૃષ્ટ, મધ્યમ અને જઘન્યના લેહથી ત્રણ પ્રકારની

ત્કૃષ્ટા દ્વાદશવર્ષપ્રમાણા, મધ્યમા-સંવત્સરપ્રમાણા, જઘન્યા-પાળ્માસિકી । તત્રો-  
ત્કૃષ્ટા તાવદેવમ્-પ્રથમં ચત્વારિ વર્ષાણિ વિચિત્રં તપઃ કૃત્વા પારણકે વિકૃતિપરિ-  
ત્યાગં કરોતિ । તતઃ પરં ચત્વારિ વર્ષાણિ વિચિત્રતપાંસિ કરોતિ । નતુ કિં નામ  
વિચિત્રં તપઃ ? ઉચ્યતે-કદાચિચતુર્થમ્ કદાચિત્ પૃષ્ઠમ્, કદાચિદષ્ટમમ્, एवं दशम  
દ્વાદશાદીન્યપિ કરોતિ, પારણં ચ સર્વકામગુણિતેન ઉદ્ગમાદિ શુદ્ધેનાહારેણ વિધતે ।  
તતઃ પરં દ્વે ચ વર્ષે એકાન્તરિતમાચામ્લં કરોતિ । એકાન્તરં ચતુર્થ કૃત્વા આચામ્લેન  
પારણં કરોતીત્યર્થઃ । एवं दशवर्षाणि व्यतीत्यैकादशेवर्षे आद्यान् पण्मासान् चतुर्थ

ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર કી હોતી હૈ । ઉત્કૃષ્ટસંલેખના ચારહ ૧૨ વર્ષ કી,  
મધ્યમ સંલેખના એક ૧ વર્ષ કી एवं જઘન્ય સંલેખના છહ ૬ માસ કી  
હોતી હૈ । ઉત્કૃષ્ટસંલેખના કી વિધિ હસ પ્રકાર હૈ-સવ સે પહિલે જો  
ઉત્કૃષ્ટસંલેખના ધારણ કરતા હૈ વહ પ્રથમ કે ચાર વર્ષ લગાતાર  
વિચિત્ર તપ કરકે પારણા મેં વિકૃતિ-વિગય કા ત્યાગ કરે । દૂસરે ચાર  
વર્ષોં મેં વિચિત્ર તપ અર્થાત્ કમી વહ ચતુર્થ કરતા હૈ કમી છટ્ઠ કરતા  
હૈ કમી અઠ્ઠમ કરતા હૈ કમી દશમ કરતા હૈ ઓર કમી દ્વાદશ આદિ  
કરતા હૈ । પારણા સર્વકામગુણિત સવ ઇન્દ્રિયોં કે અનુકૂલ તથા ઉદ્ગમ  
આદિ દોષોં સે વિશુદ્ધ એસે આહાર સે કરતા હૈ । હસકે વાદ ફિર વહ  
દો વર્ષોં મેં અર્થાત્ નવમેં દશમેં વર્ષ મેં એકાન્તરિત આચામ્લ (આયંબિલ)  
વ્રત કી આરાધના કરતા હૈ । વહ આરાધના ઉસકી દો ૨ વર્ષ તક  
ચલતી રહતી હૈ । અર્થાત્-દો વર્ષ એકાન્તર ચતુર્થ કરકે આચામ્લ  
(આયંબિલ) સે પારણા કરતા હૈ । હસ પ્રકાર કરતે ૨ ઉસકે દસ ૧૦

હોય છે. ઉત્કૃષ્ટસંલેખના બારવર્ષની, મધ્યમ સંલેખના એકવર્ષની, અને  
જઘન્યસંલેખના છ મહિનાની હોય છે. ઉત્કૃષ્ટ સંલેખનાની વિધિ આ પ્રકારની  
છે, સહુથી પહેલાં જે ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના ધારણ કરે છે, તેણે પ્રથમના ચાર  
વર્ષ સુધી વિચિત્ર તપ કરી પારણામાં વિકૃતિ વિગયનો ત્યાગ કરે, બીજા  
ચાર વર્ષોમાં તે વિચિત્ર તપ અર્થાત્ કદી ચોથ કરે છે. કદીક છટ્ઠ  
કરે છે. કદીક અઠ્ઠમ કરે છે. અને ક્યારેક દ્વાદશ વર્ગે કરે છે. પારણું સર્વ-  
કામ શુદ્ધીત બધી ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ તથા ઉદ્ગમ આદિ દોષોથી રહિત  
આહારથી કરે છે. આ પછી તે જે વર્ષમાં અર્થાત્ નવમા દશમા વર્ષમાં  
એકાન્તરિત આયંબીલ વ્રતની આરાધના કરે છે. આ આરાધના જે વર્ષ સુધી ચાલે  
છે. અર્થાત્ જે વર્ષ એકાન્તર ચોથ કરી આયંબીલથી પારણું કરે છે, આ રીતે  
કરતાં કરતાં એના દશ વર્ષ વ્યતિત થઈ જાય છે. જ્યારે અગીયારમાં વર્ષની



પષ્ટં વા તપઃ કરણીયં નાષ્ટમાદિકમ્ । તતઃ પરમન્યાન્ પળ્પાસાન્ અષ્ટમદશમ-  
દ્વાદશાદિકમુત્કૃષ્ટં તપઃ કરોતિ । અસ્મિન્નેકાદશેવર્ષે પારણકે તુ પરિમિતં-સ્વલ્પ-  
સંખ્યકમાચામ્લં કરોતિ । કદાચિત્ કરોતિ કદાચિન્નકરોતીતિ ભાવઃ । દ્વાદશે  
તુ વર્ષે કોટિસહિતં નિરન્તરમાચામ્લં કરોતિ । અત્ર કોટિસહિતમિત્યસ્યાયમર્થઃ-  
કોટિભ્યાં સહિતમ્-વિવક્ષિતદિને આચામ્લં કૃત્વા પુનર્દ્વિતીયેઽહ્નિ આચામ્લમેવ  
પ્રત્યાહ્યાતિ, તતઃ પ્રથમસ્ય પર્યન્તકોટિઃ, દ્વિતીયસ્ય પ્રારમ્ભકોટિઃ, ઇમે દ્વે મિલિતે  
ભવતસ્તત્કોટિસહિતં ભવતિ, ઇદમાચામ્લં નિરન્તરં ભવતીત્યર્થઃ । તત્રાપિ માસાર્દ્ધેન  
માસિકેન વાઽઽહારત્યાગેન તપશ્ચરણીયમ્ । અનશનં કરણીયમિત્યર્થઃ । અનેન ક્રમેણ  
દ્વાદશવાર્ષિકીમુત્કૃષ્ટાં સંલેખનાં કૃત્વા ગિરિગહ્વરં વા પટ્કાયોપમર્દરહિતં નિર્જનં

વર્ષ વ્યતીત હો જાતે હૈં ઓર જવ ગ્યારહ ૧૧વાં વર્ષ પ્રારંભ હોતા હૈં તો  
ઉસમેં આદિ કે છહ ૬ માસ તક વહ ચતુર્થ, પષ્ટ, તપસ્યા કી આરાધના  
કરતા હૈં, અષ્ટમ આદિ કી નહૈં । વાકી ડપર કે છહ ૬ મહિનોં મેં  
અષ્ટમ, દશમ ંવં દ્વાદશ આદિ ઉત્કૃષ્ટ તપ કરતા હૈં । ઇસ વર્ષ મેં  
પારણાં કે દિન પરિમિત આયંચિલ કરતા હૈં । અર્થાત્ કમી આયંચિલ  
કરતા હૈં કમી નહૈં કરતા । વારહ ૧૨વે વર્ષ મેં કોટિસહિત-નિરન્તર  
આયંચિલ કરતા હૈં । જહાં પહિલે આયંચિલ કા અન્ત હો ઓર દૂસરે  
આયંચિલ કા પ્રારંભ, ઇસકા નામ કોટિ હૈં । ઇન દોનોં કોટિયોં સે  
સહિત જો આયંચિલ હોતા હૈં ઉસકા નામ કોટિસહિત આયંચિલ હૈં ।  
યે આયંચિલ નિરન્તર હોતા હૈં, અન્ત મેં માસાર્ધ-એક પક્ષ ઓર  
માસિક-એક માસ કા અનશન કરતા હૈં । ઇસ ક્રમ સે વારહ ૧૨  
દ્વાદશ વર્ષ કી ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના હોતી હૈં । ઇસ ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના કો

શરૂઆત હોય છે. છ માસ સુધી તે ચોથ, છઠ્ઠ તપસ્થાની આરાધના કરે છે.  
અષ્ટમ વગેરેની નહીં એ પછીના છ મહિનામાં અષ્ટમ, દશમ, અને દ્વાદશ  
આદિ ઉત્કૃષ્ટ તપ કરે છે. આ વર્ષમાં પારણાના દિવસે પરિમિત આયંબિલ  
કરે છે. અર્થાત્ કોઈ વખત આયંબિલ કરે છે. કોઈ વખત કરતા નથી.  
પ્રારંભ વર્ષમાં કોટિ સહિત નિરંતર આયંબિલ કરે છે. જ્યાં પહેલાં આયં-  
બિલનો અંત આવે અને બીજા આયંબિલનો પ્રારંભ થાય એનું નામ કોટિ  
છે. આ બંને કોટિઓ સહિત જે આયંબિલ હોય છે એનું નામ કોટિ  
સહિત આયંબિલ છે. આ આયંબિલ રોજ થાય છે. અંતમાં માસાર્ધ-એક  
પક્ષ અને માસિક-એક માસનું અનશન કરે છે. આ કમથી બાર (દ્વાદશ)  
વર્ષની ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના થાય છે. આ ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના કરીને સાધુ કાં તો

સ્થાનં વા ગત્વા પાદપોષગમનમ્, ઇન્દ્રિતં ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં વા મરણં યથાશક્તિ પ્રપદ્યતે ।

મધ્યમા તુ સંલેખના પૂર્વોક્તિપ્રકારેણ દ્વાદશભિર્માસિર્ભવતિ । તત્ર વર્ષસ્થાને માસા સ્થાપનીયાઃ ।

જઘન્યા તુ દ્વાદશભિઃ પક્ષૈઃ પૂર્વોક્તિપ્રકારેણ ભવતિ । પક્ષાનેવ વર્ષસ્થાનીયાન કૃત્વા તપશ્ચરણં કર્તવ્યં ભવતિ । ગિરિકન્દરાદિગમનં મધ્યમજઘન્યયોરપિ ।

કરકે સાધુ યા તો કિસી પર્વત કી ગુફા મેં ચલા જાતા હૈ, યા પટ્ટકાય કે ઉપમર્દન સે રહિત નિર્જીવ કિસી નિર્જનસ્થાન મેં ચલા જાતા હૈ । વહાં પહુંચ કર પાદપોષગમન, ઇન્દ્રિત, ભક્તપ્રત્યાખ્યાન इन तीनों में से किसी एक को जैसी शक्ति होती है उसके अनुसार स्वीकार कर लेता है ।

મધ્યમા સંલેખના એક ૧ વર્ષ કી હોતી હૈ । જો વિધિ વારહ ૧૨ વર્ષ કી સંલેખના મેં પ્રદર્શિત કરને મેં આઈ હૈ વહ વિધિ इसकी भी है वहां जहां वर्ष का प्रमाण ग्रहण किया गया है इसमें उस जगह मास रूप प्रमाण समझाना चाहिये । जैसे वहां ४ वर्ष आदि कहा है इसमें ४ मास समझना चाहिये ।

જઘન્ય સંલેખના ૧૨ પક્ષો-૬ માસ-કે પ્રમાણ વાલી હોતી હૈ । इसकी भी विधि वही है जो उत्कृष्ट संलेखना की है । वर्ष के स्थान में यहां पक्षों को ग्रहण किया जाता है । मध्यम संलेखना एवं जघन्य संलेखना इन दोनों में भी गिरिकन्दरा आदि में जाना आवश्यकिय है ।

કોઈ પર્વતની ગુફામાં ચાલ્યા જાય છે. અથવા પટ્ટકાયના, ઉપમર્દનથી રહિત નિર્જીવ એવા નિર્જન સ્થાનમાં ચાલ્યા જાય છે. ત્યાં પહોંચી પાદપોષગમન ઇન્દ્રિત, ભક્તપ્રત્યાખ્યાન આ ત્રણમાંથી પોતાની શક્તિ પ્રમાણે કોઈ એક મરણનો સ્વીકાર કરી લે છે,

મધ્યમા સંલેખના એક ૧ વર્ષની હોય છે. જે વિધિ બાર ૧૨ વર્ષની સંલેખનામાં પ્રદર્શિત કરવામાં આવી છે તે વિધિ આની પણ છે. જ્યાંવર્ષનું પ્રમાણ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે ત્યાં મહિનાનું પ્રમાણ મધ્યમા સંલેખના માટે સમજવું જોઈએ. જેમ ત્યાં ચાર વર્ષ આદિ કહેલ છે. ત્યાં આમાં ચાર મહિના સમજવા જોઈએ.

જઘન્ય સંલેખના ૧૨ પક્ષ-૬ માસ ના પ્રમાણવાળી હોય છે. આની વિધિ પણ એ જ છે. જે ઉત્કૃષ્ટ સંલેખનાની છે. મધ્યમ સંલેખના અને જઘન્ય સંલેખના આ બંનેમાં પણ ગિરિકન્દરા આદિમાં જવું

સંલેખનાયામસમર્થેન મુનિના સંલેખનાં વિનાઽપિ યથાશક્તિ સંસ્તારકં કૃત્વાઽ-  
ભ્યુદયતમરણં સ્વીકરણીયમ્ ।

અભ્યુદયતમરણાઙ્ગીકરણાત્ પ્રાંગિદં ચિન્તનીયમ્-મયા વિશુદ્ધચારિત્રાનુષ્ઠાનેન  
સ્વપરહિતં સંપાદિતમ્ , શિષ્યાદ્યુપકારતઃ પરહિતં ચ, નિષ્પન્નાશ્ચ સમ્પ્રતિ મમ ગ-  
ચ્છપરિપાલનક્ષમાઃ શિષ્યાઃ, અથ વિશેષેણ મમાત્મહિતમનુષ્ઠેયમિતિ વિચિન્ત્ય  
સ્વપરિજ્ઞાને સતિ સ્વકીયમાયુઃ શેષં સ્વયમેવ પર્યાલોચયતિ, તદભાવેઽન્યં વિશિષ્ટ  
માચાર્યાદિકં વૃચ્છતિ । સ્વાયુપિસ્તોકતયા જ્ઞાતે ભક્તપ્રત્યાખ્યાનાદિ મરણં યથા-  
શક્તિ પ્રતિપદ્યતે । યદિ સ્વાયુર્દીર્ઘતયા જ્ઞાતં જહ્વાવલમાત્રં પરિક્ષીણં તદા સ્થિરવાસં

જો સાધુ સંલેખના કરને મેં અસમર્થ હૈ ઉસે સંલેખના કે વિના મી  
યથાશક્તિ સંધારાકર અભ્યુદયતમરણ સ્વીકાર કરના ચાહિયે । હસ અભ્યુ-  
દયતમરણ કો અંગીકાર કરને કે પહિલે સાધુ કો હસ પ્રકાર વિચાર  
કરના ચાહિયે કિ મૈને વિશુદ્ધ ચારિત્ર કે અનુષ્ઠાન સે સ્વ હિત સંપાદિત  
કર લિયા હૈ । શિષ્યાદિકોં કે ઉપકાર સે પર કા ઉપકાર મી કર દિયા  
હૈ । હસ સમય ગચ્છ કા પરિપાલન કરને મેં સમર્થ મેરી શિષ્યાદિ સંપત્તિ  
મી સર્વ પ્રકાર સે શક્તિશાલી હો ચુકી હૈ । અવ મુજે નિશ્ચિન્ત હોકર  
વિશેષ રીતિ સે અપની આત્મા કા કલ્યાણ કરના ચાહિયે “મેરી અવ-  
શિષ્ટ આયુ કિતની હૈ ” હસ પ્રકાર સ્વયં જાન કર અથવા યદિ સ્વયં  
નહીં જાન સકે તો અન્ય વિશિષ્ટ આચાર્ય આદિ સે પૂછકર નિશ્ચિત  
કરલે । યદિ આયુ અલ્પ જ્ઞાત હોવે તો યથાશક્તિ ઉસે ભક્તપ્રત્યાખ્યા-  
નાદિ મરણ સ્વીકાર કર લેના ચાહિયે । યદિ આયુ દીર્ઘ જ્ઞાત હોવે ઔર

જે સાધુ સંલેખના કરવામાં અસમર્થ છે, એણે સંલેખના વગર પણ  
યથાશક્તિ સંધારો કરી અભ્યુદયત મરણનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. આ અભ્યુ-  
દયત મરણનો અંગિકાર કરતાં પહેલાં સાધુએ એ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ  
કે, મેં વિશુદ્ધ ચારિત્રના અનુષ્ઠાનથી સ્વહિત સંપાદિત કરી લીધું છે, શિષ્યા-  
દિકોના ઉપકારની સાથેસાથ બીજા ઉપર પણ ઉપકાર કર્યો છે. આ સમય  
ગચ્છનું પરિપાલન કરવામાં સમર્થ એવી મારી શિષ્યાદિસંપત્તિ પણ સર્વ  
પ્રકારથી શક્તિશાળી બની ચુકી છે. હવે મારે નિશ્ચિત બનીને વિશેષ રીતથી  
મારા આત્માનું કલ્યાણ કરવું જોઈએ. “મારી અવશિષ્ટ આયુ કેટલી છે ” આ  
વાત પોતે જાણીને અથવા જો પોતે ન જાણી શકે તો બીજા ગુણસંપન્ન  
આચાર્ય આદિથી પૂછીને નક્કી કરી લે. જો આયુષ્ય અલ્પ હોય તો; યથાશક્તિ  
તેણે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન આદિ મરણનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. જો આયુ લાંબી

સ્વીકરોતિ તત્રૈવ ક્ષેત્રે વસન્નપિ વસતિદો પૈરુપધિદો પૈથ રહિતો ભવતિ । શક્તૌ પુષ્ટાર્યા  
તુ અસ્મિન્ પશ્ચમારકે જિનકલ્પપ્રતિપત્તિવિધાનાભાવાત્ સ્થવિરકલ્પેનૈવ સ્વપ-  
રોપકારકરણેન દીર્ઘપર્યાયઃ પ્રતિપાલનીયઃ ।

॥ ઇતિ સ્થવિરકલ્પિકસામાચારી ॥

ચતુર્થારકાપેક્ષયા જિનકલ્પાદિપ્રતિપત્તિરૂપં અભ્યુદયતવિહારે મર્યાદા પ્રદર્શ્યતે  
-તત્ર જિનકલ્પાદિ પ્રતિપિત્સુના પ્રથમમેવ ' મયા વિશુદ્ધચારિત્રાનુષ્ઠાનેન સ્વપર-  
હિતં ' ઇત્યાદિ વિચિન્ત્ય, તપઃ સત્વાદિ ભાવનાભિરાત્મા ભાવનીયઃ ।

સાથ મેં જંઘાવલ ક્ષીણ હુઆ માલૂમ પડે તો ઉસે સ્થિરવાસ અંગીકાર  
કરલેના ચાહિયે । ઓર હસી સ્થિરવાસ સે ડસી ક્ષેત્ર મેં રહતે હુણ્ મો  
વહ વસતિ કે દોપોં સે ઇવં ઉપાધિ કે દોપોં સે રહિત હો જાતા હૈ । યદિ  
શક્તિ પુષ્ટ હોવે તો મો હસ પશ્ચમ આરે મેં જિનકલ્પ કી પ્રતિપત્તિ કે  
વિધાન કા અભાવ હોને સે સ્થવિરકલ્પ કી હાલત મેં હી રહતે હુણ્ સ્વ  
પર કા ઉપકાર કરતે ૨ દીર્ઘપર્યાય કો પાલતે રહના ચાહિયે ।

॥ યહ સ્થવિર કલ્પ કી સમાચારી હૈ ॥

અવ-ચૌથે આરે કી અપેક્ષા સે જિનકલ્પ આદિ કી પ્રતિપત્તિ સ્વી-  
કૃતિ રૂપ અભ્યુદય વિહાર મેં કેસી કયા મર્યાદા હોતી હૈ યહ વાત પ્રકટ  
કી જાતી હૈ-જો સાધુ જિનકલ્પ આદિ કો પ્રાપ્ત કરને કા અભિલાષી હૈ  
ઉસે ચાહિયે કી વહ સર્વ પ્રથમ એસા વિચાર કરે કિ મૈને વિશુદ્ધ ચરિત્ર  
કે અનુષ્ઠાન સે અપના ઓર પર કા હિત તો સાધિત કિયા । અવ હમ કો  
તપ ઇવં સત્વાદિ પાંચ ભાવનાઓં સે આત્મા કો ભાવિત કરના ચાહિયે ।

હોય અને સાથે જંઘાવળ ક્ષીણ જણાય તો તેણે સ્થિરવાસ અંગિકાર કરી  
લેવો જોઈએ. આ સ્થિરવાસથી તે ક્ષેત્રમાં રહેવા છતાં તે વસ્તીના દોષોથી  
અને ઉપાધીના દોષોથી રહિત બને છે. કદાચ શક્તિ સારી હોય તો પણ આ  
પાંચમા આરામાં જનકદેવની પ્રતિપત્તિના વિધાનને અભાવ હોવાથી સ્થવિર-  
કદેવની હાલતમાં રહીને સ્વ અને પરને ઉપકાર કરતાં કરતાં દીર્ઘ પર્યાયનું  
પાલન કરતા રહેવું જોઈએ.

॥ આ સ્થવિરકદેવની સમાચારી છે ॥

હવે ચોથા આરાની અપેક્ષાથી જનકદેવ આદિની પ્રતિપત્તિ સ્વીકૃતિરૂપ  
અભ્યુદય વિહારમાં કેવી અને કેટલી મર્યાદા હોય છે આ વાત પ્રગટ કરવામાં  
આવે છે-જો સાધુ જનકદેવ આદિને પ્રાપ્ત કરવાનો અભિલાષી છે તેણે જાણવું  
જોઈએ કે, મેં વિશુદ્ધ ચારિત્રના અનુષ્ઠાનથી પોતાનું અને પરનું હિત તો સાધ્યું.  
હવે મારે તપ અને સત્વાદિપાંચ ભાવનાઓથી આત્માને ભાવિત કરવા જોઈએ

તથાચોક્તમ્—

તવો સત્તં ચ સુત્તં ચ, એગત્તં વલમપ્પણો ।

પઢમં પંચ ભાવિત્તા, જિણકપ્પં પવજ્જહ ॥ ૧ ॥

છાયા—તપઃ સત્ત્વં ચ મૂત્રં ચ, એકત્વં વલમાત્મનઃ ।

પ્રથમં પંચ ભાવયિત્વા, જિનકલ્પં પ્રપદ્યતે ॥ ૧ ॥

અર્થે ભાવઃ—જિનકલ્પપ્રતિપિત્સુસ્તપોભાવનયાત્માનં ભાવયન્ દેવાદિકૃતોપસર્ગાદિનાઽનેપણાદિકારણતો વા યદિ પળ્માસપર્યન્તમાહારં ન લભતે તથાપિ ન વાધ્યતે ॥ ૧ ॥ સત્ત્વભાવનયા ભયં પરાજયતે ॥ ૨ ॥ સૂત્રભાવનયા મૂત્રં સ્વનામવત્ પહિચિતં કરોતિ ॥ ૩ ॥ એકત્વ ભાવનયા ચાત્માનં ભાવયન્ સાધર્મિક સાધ્વાદિના સહ મિથઃ કથાદિવ્યતિકરાન્ સર્વાનપિ પરિવર્જયતિ । તતો વાહ્ય-

કહા મી હૈ ।

તવો સત્તં ચ સુત્તં ચ, એગત્તં વલમપ્પણો ।

પઢમં પંચ ભાવિત્તા, જિણકપ્પં પવજ્જહ ॥ ૧ ॥

इसका भाव यह है कि—जिनकल्प को धारण करने का इच्छुक साधु तप भावना से आत्मा को भावित करता हुआ यदि देव मनुष्य आदि द्वारा होने वाले उपसर्ग से अथवा अनेपणादि रूप कारण से छह मास तक आहार प्राप्त न कर सके तो भी बाधित नहीं होता है । सत्व भावना से वह भय पर विजय प्राप्त करता है । एकत्व भावना से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ साधर्मिक साधु आदिकों के साथ परस्पर में कथा वार्ता आदि समस्त बातों का परित्याग कर देता है । जब

કહું પણ છે—

તવો સત્તં ચ સુત્તં ચ, એગત્તં વલમપ્પણો ।

પઢમં પંચ ભાવિત્તા, જિણકપ્પં પવજ્જહ ॥ ૧ ॥

આનો ભાવ એ છે કે—જનકલ્પને ધારણ કરવાની ઈચ્છાવાળા સાધુ તપ ભાવનાથી આત્માને ભાવિત કરીને દેવ મનુષ્ય આદિ દ્વારા થનાર ઉપસર્ગથી અથવા અનેપણાદિરૂપ કારણથી છ મહિના સુધી આહાર મેળવી ન શકે તો પણ પીડા પામતો નથી. સત્ત્વભાવનાથી તે ભય ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. સૂત્ર-ભાવનાથી પોતાના નામની માફક સૂત્રનો પરિચય પ્રાપ્ત કરે છે, એકત્વ ભાવનાથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરીને સાધર્મિક સાધુ આદિની સાથે પરસ્પરમાં કથાવાર્તા આદિ સમસ્ત વાતોનો પરિત્યાગ કરી દે છે. બ્યારે બાહ્યમાં તેનું મમત્વ



મમત્વે મૂલત એવોચ્છેદિતે પથાદ્ દેહાદિભ્યોઽપિ ભિન્નમાત્માનં પદ્યન્ સર્વથા તેષ્વ-  
નાસક્તો ભવતિ ॥ ૪ ॥ વલભાવનાયાં વલં દ્વિવિધં-શરીરં, માનસં ચ । તત્ર શરી-  
રમપિ વલં જિનકલ્પપ્રતિપત્તિયોગ્યસ્ય શેષજનાતિશાયિકં સ્યાત્, તપઃ પ્રભૃતિભિઃ  
શુષ્યમાણસ્ય યદ્યપિ શારીરં વલં તાદૃશં ન ભવતિ તથાપિ સ્વાત્મા ધૃતિવલેન તથા  
ભાવયિતવ્યો યથા મદદ્ધિરપિ પરીપહોપસર્ગેર્નવાધ્યતે ।

આભિઃ પદ્મભિર્ભાવનાભિર્માત્રિતાત્મા જિનકલ્પાદિ પ્રતિપિત્સુર્ગચ્છે પ્રતિ-  
વસનાહારાદિપરિકર્મ પ્રથમમેવ કરોતિ । આહારાદાવન્યસાધ્યપેક્ષયાઽન્તપ્રાન્તાદિ-  
વાહ્ય મેં મમત્વ મૂલતઃ ઉસકા ઉચ્છેદિત હો જાતા હૈ તય અન્ય દેહાદિ  
પદાર્થો સે ભિન્ન સ્વ આત્મા કો જાનતા હુઆ વહ્ ઉન મેં સર્વથા અના-  
સક્ત હી રહતા હૈ । ઉનમેં આસક્ત નહીં હોતા । વલભાવના મેં વલ દો  
પ્રકાર હૈ એક શરીર સંબંધી ઔર દુસરા મનસંબંધી । જો સાધુ જિન-  
કલ્પ કી પ્રતિપત્તિ કે યોગ્ય હોતા હૈ ઉસકા શારીરિક વલ ભી યદ્યપિ  
સાધારણજન કી અપેક્ષા અતિશય વિશિષ્ટ હોતા હૈ પરન્તુ તપશ્ચર્યા  
આદિ કે કારણ ઉનકા શરીર જવ કૃશ હો જાતા હૈ તય વહ વૈસા નહીં  
રહતા હૈ તૌ ભી ઉનકી આત્મા ધૃતિવલ દ્વારા इतनी અધિક ભાવિત  
રંહતી હૈ કિ જિસકી વજહ સે વે અધિક સે અધિક પરીપહ ઔર ઉપ-  
સર્ગોં સે આક્રાન્ત હોને પર ભી અપને કર્તવ્યમાર્ગ સે જરા ભી  
વિચલિત નહીં હોતે ।

इन पांच भावनाओं से भावितात्मा जिनकल्पादिक को ग्रहण  
करने की इच्छा से गच्छ में रहता हुआ आहारादि परिकर्म को सब

મુલતઃ નાશ પામે છે ત્યારે બીજા દેહાદિ પદાર્થોથી ભિન્ન પોતાના આત્માને  
જાણીને તેમાં સર્વથા અનાસક્ત જ રહે છે. એમાં આસક્ત બનતા નથી.  
બળભાવનામાં બળ બે પ્રકારનાં છે. એક શરીર સંબંધી અને બીજું મન  
સંબંધી. જે સાધુ જનકલ્પની પ્રતિપત્તિને યોગ્ય હોય છે તેનું શારીરિક બળ  
પણ બે કે, સાધારણ જનની અપેક્ષા અતિશય બલવાન હોય છે. પરંતુ તપ-  
શ્ચર્યા આદિના કારણથી તેનું શરીર જ્યારે કૃષ બને છે ત્યારે તે તેવા રહેતા  
નથી. તો પણ તેની આત્મા ધૃતિબળ દ્વારા એટલી અધિક ભાવિત રહે છે કે,  
જેનાથી તે અધિકથી અધિક પરીપહ અને ઉપસર્ગોથી આક્રાન્ત થતા હોવા છતાં  
પણ પોતાના કર્તવ્યમાર્ગથી જરા પણ ચલિત થતા નથી.

આ પાંચ ભાવનાઓથી ભાવિતાત્મા જનકલ્પાદિકને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છાથી  
ગચ્છમાં રહીને આહારાદિ પરિકર્મને બધાથી પહેલાં કરી લે છે, આહારાદિમાં

ગ્રહણાદુલ્કૃષ્ટતાસંપાદનમ્-પરિકર્મ । યથા-તૃતીયપૌરુષ્યામવગાઢાયાં વલ્લ-ચળ-  
કાદિકમન્તં પ્રાન્તં રુક્ષં ચ ગૃહ્ણાતિ ।

“ સંસટ્ઠમસંસટ્ઠા, ઉદ્ધડ તહ હોઢ અપ્પલેવા ય ।

ઉગ્ગહિયા પગ્ગહિયા, ઉજ્જિયધમ્મા ય સત્તમિયા ॥ ૧ ॥ ”

આસાં સપ્તવિધાનાં પિણ્ડેપણાનાં મધ્યે આદ્યદ્વયં વિહાય પચ્ચાનાં મધ્યાદન્ય-  
તરેપણાદ્વયાભિગ્રહેણાઽઽહારં ગૃહ્ણાતિ એકયૈશ્વર્યા ભક્તં, દ્વિતીયયા તુ પાનકમ્ ।  
એવમાગમોક્તવિધિનાઽઽત્માનં ભાવયિત્વા ગચ્છપ્રતિવદ્ઢ એવ જિનકલ્પં પ્રતિપિત્સુ-  
ચતુર્વિધસંઘં સંમેલયતિ, તદભાવે સ્વગણં તતસ્તીર્થકરસ્ય સમીપે, તદભાવે ગણ-

સે પહિલે હી કર લેતા હૈ આહાર આદિ મૈં અન્ય સાધુ કી અપેક્ષા  
અંતપ્રાંત આદિ ગ્રહણ સે ઉલ્કૃષ્ટતા કા સંપાદન કરના પરિકર્મ હૈ ।  
જૈસે તૃતીય પૌરુષી મૈં વલ્લ; ચના આદિ કા આહાર કરના એવં અન્ત-  
પ્રાન્ત રુક્ષ આહાર કરના ।

સંસટ્ઠમસંસટ્ઠા, ઉદ્ધડ તહ હોઢ અપ્પલેવા ય ।

ઉગ્ગહિયા પગ્ગહિયા, ઉજ્જિયધમ્મા ય સત્તમિયા ॥૧॥

इन सात प्रकार की पिण्डेपणाओं के मध्य में आदि की दो एप-  
णाओं को छोड़कर बाकी बची पांच एपणाओं में से अन्यतर एपणा दो  
के अभिग्रह से वह आहार को ग्रहण करता है । एक एपणा से भक्त  
को और द्वितीय एपणा से पान को । इस प्रकार आगमोक्त विधि के  
अनुसार आत्मा को भावित करके गच्छ में रहता हुआ ही जिनकल्प  
को अंगीकार करने का अभिलाषी साधु चतुर्विध संघ को एकत्रित

અન્ય સાધુની અપેક્ષા અંતપ્રાન્ત આદિ ગ્રહણથી ઉલ્કૃષ્ટતાનું સંપાદન કરવું  
પરિકર્મ છે. જેમ-ત્રીજા પૌરુષીમાં વાલ, ચણા આદિનો આહાર કરવો અને  
અન્તપ્રાન્ત રુક્ષ આહાર કરવો.

સંસટ્ઠમસંસટ્ઠા, ઉદ્ધડ તહ હોઢ અપ્પલેવા ય ।

ઉગ્ગહિયા પગ્ગહિયા, ઉજ્જિયધમ્મા ય સત્તમિયા ॥ ૧ ॥

એ સાત પ્રકારની પિન્ડેપણાઓના મધ્યમાં પહેલાની બે એપણાઓને  
છોડીને બાકી બચેલ પાંચ એપણાઓમાંથી અન્યતર એપણા બેના અભિગ્રહથી  
તે આહાર ગ્રહણ કરે છે, એક એપણાથી ભક્તને અને બીજી એપણાથી પાનને  
આ પ્રકારે આગમમાં કહેલ વિધિ અનુસાર આત્માને ભાવિત કરીને ગચ્છમાં  
રહીને જ જનકલ્પને અંગિકાર કરવાના અભિલાષી સાધુ ચતુર્વિધ સંઘને એક-

ધરસ્ય, તદભાવે ચતુર્દશપૂર્વધરસ્ય, તદભાવે દશપૂર્વધરસ્ય, તદભાવે વટાશ્વત્થાશ્લોક-  
વૃક્ષાણાં સંનિધૌ સિદ્ધસાક્ષિકં જિનકલ્પં સ્વીકરોતિ । તદા સચાલવૃદ્ધં ગચ્છં  
ક્ષામયતિ । તતો નિઃશલ્યો નિષ્ક્રપાયોઽસૌ સ્વગણસાધ્વાદીનનુશાસ્તિ । એવમેવ  
યુષ્માભિરપ્યાચરણીયમ્ નાત્ર પ્રમાદઃ કાર્યઃ । ગણમર્યાદા નોલ્લઙ્ઘનીયા । ઇત્યાદિ  
શિક્ષાં દત્વા ગચ્છાદ્ વિનિર્ગતો ભવતિ । તસ્મિન્ ચક્રુર્વિપયાતિક્રાન્તે સતિ સાશ્રવઃ  
પ્રતિનિવર્તન્તે ।

કરતા હૈ । હસકે અભાવ મેં અપને ગણ કો, ઁકત્રિત કરતા હૈ યાદ મેં  
તીર્થકર કે સમીપ મેં, હનકે અભાવ મેં ગણધર કે સમીપ મેં, હનકે  
અભાવ મેં ચૌદહપૂર્વધારી કે સમીપ મેં, હનકે અભાવ મેં દશપૂર્વધારી કે  
સમીપ મેં, હનકે ઁી અભાવ મેં વટવૃક્ષ, અશ્વત્થ-પીપલ વૃક્ષ, અથવા  
અશોક વૃક્ષ કે સમીપ સિદ્ધ પરમાત્મા કો સાક્ષી કરકે જિનકલ્પ કો  
સ્વીકાર કરતા હૈ । ઁસ સમય યહ અપને ગચ્છ મેં રહને વાલે ચાલવૃદ્ધ  
સાધુઁ સે સ્વમત સ્વામણા કરતે હૈં । પથ્થાત્ નિઃશલ્ય ઁવં નિષ્ક્રપાય  
હોકર અપને ગચ્છ કે સાધુ આદિકૉં કો યહ શિક્ષા દેતા હૈં કિ આપ-  
લોગ ઁી ઁસી તરહ સે 'કરે' ઁસમેં પ્રમાદ કરના ઁીક નહીં હૈં । ગણ કી  
જો મર્યાદા હૈં ઁસકા ઁલ્લંઘન નહીં કરના । ઁત્યાદિ શિક્ષા દેકર ફિર  
વહ ગચ્છ નિર્ગત હો જાતા હૈં । સાધુ વર્ગ જવ તક વહ દિસતા રહતા  
હૈં તવતક ઁસકે પીછે ર ચલતા રહતા હૈં ઁર જવ વહ દિસલાઈ નહીં  
પડતા તવ સવ પીછે વાપિસ લૉટ આતે હૈં ।

ત્રીત કરે છે. ઁના અભાવમાં પોતાના ગણને ઁકત્રીત કરે છે. બાદમાં તીર્થ-  
કરની સમીપમાં, ઁના અભાવમાં ગણધરની સમીપમાં, તેના અભાવમાં ચૌદ  
પૂર્વધારીની સમીપમાં, તેના અભાવમાં દશપૂર્વધારીની સમીપમાં, તેના પણ  
અભાવમાં વટવૃક્ષ, આશોપાલવ, પીપળો અથવા અશોકવૃક્ષના સમીપ સિદ્ધ  
પરમાત્માને સાક્ષી રાખીને જનકલ્પનો સ્વીકાર કરે છે. આ સમયે તે પોતાના  
ગચ્છમાં રહેલા બાળ-વૃદ્ધ સાધુઁથી ખમત ખામણા કરે છે પછી નિઃશલ્ય અને  
નિષ્ક્રપાય થઈને પોતાના ગચ્છના સાધુ આદિને ઁવી શિક્ષામણુ આપે છે કે,  
આપ લોકોઁ પણ આજ રીતે કરવું. તેમાં પ્રમાદ કરવો ઁીક નથી. ગણની જે  
મર્યાદા છે તેવું ઁલ્લંઘન કરવું નહીં. ઁત્યાદિ શિક્ષામણુ આપીને પછી તે ગચ્છ  
નિર્ગત થઈ જાય છે. જ્યાં સુધી તે દેખાય છે ત્યાં સાધુવર્ગ તેની પાછળ પાછળ  
ચાલતા રહે છે અને જ્યારે તે દેખાતા બંધ થાય છે ત્યારે સઘળા પાછા ફરે છે.

અથ જિનકલ્પકમર્યાદા—

અનયા મર્યાદયા જિનકલ્પં સ્વીકૃત્યાસૌ યત્ર ગ્રામે માસકલ્પઃ કરિષ્યમા-  
ણસ્તત્ર પદ્ ભાગાન્ કલ્પયતિ, તતશ્ચ યસ્મિન્ ભાગે એકસ્મિન્ દિને ભિક્ષાચર્યા-  
કૃતા, તત્ર પુનરપિ સપ્તમ એવ દિને પર્યટતિ । ભિક્ષાચર્યા ગ્રામાન્તરગમનં ચ તૃતીય-  
પૌરુણ્યામેવ કરોતિ । યત્ર ચતુર્થપૌરુષી ગ્રામ્તા ભવેત્, તત્રૈવાવતિષ્ઠતે, નાન્યત્ર ગ-  
ચ્છતિ । ભક્તં પાનકં ચ પૂર્વોક્તૈષ્ણાદ્વ્યાભિગ્રહેણાલેપકૃદેવ ગૃહ્ણતિ । એષણાદિ-  
વિષયમન્તરેણ ન કેનાપિ સાર્થં ભાપતે । એકસ્યાં ચ વસતૌ યદ્યપિ ઉત્કૃષ્ટતઃ સપ્ત  
જિનકલ્પિકાઃ પ્રતિવસન્તિ તથાપિ તે પરસ્પરં સંભાષણં ન કુર્વન્તિ । સમાપન્નાન્ ઉપ-  
સર્ગપરીપઠાન્ સર્વાન્ સહત એવ । રોગેષુ ચિકિત્સાં ન કારયત્યેવ તદ્વેદનાં તુ

અવ જિનકલ્પી કી મર્યાદા કહતે હૈ—

હસ મર્યાદા સે જિનકલ્પ કો સ્વીકાર કર યહ જિસ ગ્રામ મેં માસ-  
કલ્પ કરતા હૈ વહાં છહ ભાગોં કી કલ્પના કરતા હૈ । જિસ ભાગ મેં  
એક દિન મેં ભિક્ષાચર્યા કરલી ગઈ હો વહાં ફિર યહ સાતવે દિન હી  
ભિક્ષાચર્યા કરતા હૈ । ભિક્ષાચર્યા કરના અથવા એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ  
મેં જાના યહ તૃતીય પૌરુષી મેં હી કરતા હૈ । જહાં ચતુર્થ પૌરુષી આ  
જાતી હૈ વહ વહીં પર ઠહર જાતા હૈ । અન્યત્ર નહીં જાતા હૈ । પૂર્વોક્ત દો  
એષણાઓં કે અભિગ્રહ સે અલેપકૃત-લેપરહિત જિસકા લેપ ન લગે એસે  
ભક્ત પાન કો ગ્રહણ કરતા હૈ । એષણાદિ વિષય-કે વિના કિસી કે ભી  
સાથ વાતચીત નહીં કરતા હૈ । એક વસ્તી મેં યદ્યપિ અધિક સે અધિક  
સાત જિનકલ્પી સાધુ રહ સકતે હૈ તૌ ભી વે પરસ્પર સંભાષણ નહીં  
કરતે હૈ । જો ભી ઉપસર્ગ યા પરીપહ આપડે તો ઉસે સહતે હી હૈ । રોગ

હવે જીનકલ્પીની મર્યાદા કહેવામાં આવે છે—

આ મર્યાદાથી જીનકલ્પનો સ્વીકાર કરી તે સાધુ જે ગામમાં માસ કલ્પ  
કરે છે ત્યાં છ ભાગોની કલ્પના કરે છે. જે ભાગમાં એક દિવસમાં ભિક્ષાચર્યા  
કરી લેવામાં આવી હોય ત્યાં તે ફરી સાતમા દિવસે જ ભિક્ષાચર્યા કરે છે.  
ભિક્ષાચર્યા કરવી અથવા એક ગામથી બીજા ગામે જવું એ ત્રીજા પૌરુષીમાં જ  
કરે છે જ્યાં ચોથી પૌરુષી આવે ત્યાં તે રોકાઈ જાય છે આગળ વધતા નથી.  
પૂર્વોક્ત જે એષણાના અભિગ્રહથી (અલેપકૃત) જેનો લેપ ન લાગે એવા ભક્ત  
પાનને ગ્રહણ કરે છે. એષણાદિ વિષય વગર કોઈની સાથે વાતચિત કરતા નથી,  
એક વસ્તીમાં જો કે, વધુમાં વધુ સાત જીનકલ્પી સાધુ રહી શકે છે તો પણ  
તેઓ પરસ્પર સંભાષણ કરતા નથી. જે પણ ઉપસર્ગ અને પરીપહ આવી પડે

સમ્યગેવ સહતે । આપાતસંલોકાદિદોષરહિતે સ્થળિડલે ઉચ્ચારાદીન્ કરોતિ, નત્વસ્થળિડલે । પરિકર્મરહિતાયાં વસતૌ તિષ્ઠતિ । યદ્યુપવિશતિ તદા નિયમાદુત્કુ-  
ડુક એવ, ન તુ નિપઘાયામ્, ઔપગ્રાહિકોપકરણસ્યૈવાભાવાત્ । મત્તમાતન્ગસિંહવ્યા-  
ગ્રાદિકે સંપુરે સમાપતતિ સતિ ઝનમાર્ગગમનાદિના ઈર્યાસમિતિ ન મિનત્તિ ।

જિનકલ્પિકોડપવાદં નાસેવતે, જઙ્ઘાવલપરિક્ષીણસ્તુ અવિહરમાળોડપ્યારાધકઃ  
લોચં ચ કરોત્યેવ, દશવિધસામાચાર્યાં પન્ન સમાચાર્યો જિનકલ્પિકાનાં, આપચ્છના,  
મેં યે કિસી મી પ્રકાર ચિકિત્સા નહોં કરાતે હેં કિન્તુ જૈસે મી યનતા હૈ  
ઉસ રોગ કો સહન હી કરતે હેં । જહાં મનુષ્યોં કા આવાગમન નહોં  
હોતા હૈ એસે સ્થળિડલ મેં હી યે ઉચ્ચાર આદિ કે લિયે જાતે હેં । અસ્થ-  
ળિડલ મેં નહોં । પરિકર્મ રહિત-ઘઠારી મઠારી વિના કી વસ્તી મેં યે  
રહતે હેં જવ વૈઠતે હેં તો નિયમ સે ઉત્કુડુક આસન સે હી વૈઠતે હેં ।  
નિપઘા સે નહોં ક્યોં કિ ઔપગ્રહિક ઉપકરણ આસન આદિ કા હી ઇનકે  
પાસ અભાવ હૈ । મત્તમાતંગ, સિંહ, એવં વ્યાગ્ર આદિ ઇન્હેં માર્ગ મેં ચલતે  
હુએ સામ્હને મિલ જાય તો મી યે ઉસીમાર્ગ સે ચલકર અપની ઈર્યા  
સમિતિ કો લંઙિત નહોં કરતે હેં ।

યે જિનકલ્પી સાધુ અપવાદ માર્ગ કા સેવન નહોં કરતે હેં । ઇનકા  
જંઘાવલ યદિ પરિક્ષીણ મી હો જાવે ઔર ઉસકી વજહ સે યે વિહાર  
ન મી કરે તો મી આરાધક હી માને ગયે હેં । યે કેશોં કા લોચ કરતે હેં ।  
દશ પ્રકાર કી સમાચારી મેં સે પાંચ પ્રકાર કી સમાચારી ઇન જિનકલ્પિયોં

તેને તેઓ સહન કરે છે. રોગમાં કેઈ પણ પ્રકારની ચિકિત્સા તેઓ કરાવતા  
નથી પણ જેમ બને તેમ તે રોગને સહન કરે છે. જ્યાં મનુષ્યોનું આવાગમન  
હોતું નથી એવા ઉજ્જડ સ્થાનોમાં જ તેઓ શૌચાદિક કર્મ મટે જાય છે.  
અવરજવરના સ્થાને નહીં. પરિકર્મ રહિત-ઘઠારી મઠારી વગરની-વસ્તીમાં રહે  
છે. જ્યારે બેસે છે તો નિયમથી ઉત્કુડુક (ઉલળક પગે બેસવું) આસનથી બેસે  
છે, નિપઘાથી નહીં. કેમકે, ઔપગ્રહિક ઉપકરણ આસન આદિનો તેની પાસે  
અભાવ છે. મત્ત માતંગ, સિંહ, અને વાઘ આદિ તેને માર્ગમાં ચાલતાં સામા  
મળે તો પણ તે તે માર્ગથી ચલીને પોતાની ઈર્યાસમિતિને ખંડિત કરતા નથી.

એ જનકલ્પી સાધુ અપવાદ માર્ગે જતા નથી, તેમનું જંઘાબળ જો ક્ષિણ  
પણ થઈ જાય અને એ કારણે તે પોતાની જગ્યાએથી વિહાર ન પણ કરે તો  
પણ આરાધક જ માનવામાં આવે છે. તે કેશોનો લોચ કરે છે દશ પ્રકારની સમા-  
ચારીમાંથી પાંચ પ્રકારની સમાચારી જનકલ્પીયોની છે. તે આ પ્રકારે છે. ૧ આપ્ર-



મિથ્યાકારઃ, આવશ્યકી, નૈપેધિકી, ગૃહસ્થોપસંપદ, इति। આવશ્યકીપ્રભૃતયસ્તિસ્રો  
વા સામાચાર્યસ્તેપામ્। તેણાં શ્રુતજ્ઞાનં જઘન્યતો નવમસ્ય પૂર્વસ્ય તૃતીયમાચારવસ્તુ,  
ઉત્કર્ષતસ્તુ દશપૂર્વાણિ ભિન્નાનિ, ન તુ સમ્પૂર્ણાનિ। સંહનનં ચ શારીરં-વજ્રર્પભના-  
રાચાલ્યં, માનસં વજ્રકુડ્યસમાના ધૃતિઃ ચ।

સ્થિતિરપિ તેણાં ક્ષેત્રાદિકા અનેકવિધા। ક્ષેત્રતસ્તાવજ્જન્મના સદ્ભાવેન ચ  
પશ્ચદશસ્વપિ કર્મભૂમિષુ, સંહરણતઃ કદાચિત્ કર્મભૂમૌ, અકર્મભૂમૌ વા સદ્ભાવાપે-

કી હૈ। વહ્ ઇસ પ્રકાર હૈ-૧ આપ્રચ્છના, ૨ મિથ્યાકાર, ૩ આવશ્યકી,  
૪ નૈપેધિકી, ૫ ગૃહસ્થોપસંપદા ગૃહસ્થ કી આજ્ઞા લેકર ઉતરના, વૈઠના।  
અથવા આવશ્યકી, નૈપેધિકી, ગૃહસ્થોપસંપત્, યહ ત્રીન પ્રકાર કી સામા-  
ચારી ઇન જિનકલ્પિયોં કૈ હોતી હૈ। ઇનકા શ્રુતજ્ઞાન જઘન્ય કી અપેક્ષા  
નવમપૂર્વ કી તૃતીય આચાર વસ્તુતક, ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ભિન્ન દશપૂર્વ-  
તક હી સીમિત રહા કરતા હૈ સંપૂર્ણ નહીં। ઇનકા શારીરિક સંહનન  
વજ્ર ઋપભ નારાચ નામક હૈ ઓર માનસિક સંહનન વજ્રકુડય-વજ્રકી  
ભીત કૈ તુલ્ય ધૈર્ય હૈ અર્થાત્ ઇનકા ધૈર્ય વજ્રભિત્તિ કૈ સમાન અભેદ્ય  
હોતા હૈ ઓર વહી ઇનકા માનસિક વલ હૈ।

ક્ષેત્ર આદિ કી અપેક્ષા ઇનકી સ્થિતિ અનેક પ્રકાર કી હૈ। ઇનકા ૧૫  
કર્મભૂમિયોં મૈં હી જન્મ હોતા હૈ ઇસ અપેક્ષા ૧૫ કર્મભૂમિયોં મૈં ઇનકી  
સ્થિતિ જન્મ ઓર સદ્ભાવ કી અપેક્ષા માની જાતી હૈ। સંહરણ કી અપેક્ષા  
કદાચિત્ કર્મભૂમિમૈં કદાચિત્ અકર્મભૂમિમૈં ભી ઇનકી સ્થિતિ હો સકતી હૈ।

ચ્છના, ૨ મિથ્યાકાર, ૩ આવશ્યકી, ૪ નૈપેધિકી, ૫ ગૃહસ્થોપસંપદ ગૃહસ્થની  
આજ્ઞા લઈને ઉતરવું, બેસવું અથવા આવશ્યકી, નૈપેધિકી, ગૃહસ્થોપસંપત્, આ  
ત્રણ પ્રકારની સમાચારી તે જીનકલ્પીઓને હોય છે. તેમનું શ્રુતજ્ઞાન જઘન્યની  
અપેક્ષા નવમા પૂર્વના ત્રીજા આચાર વસ્તુતક, ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ભિન્ન દશપૂર્વ  
સુધી જ સીમિત રહ્યા કરે છે, સંપૂર્ણ નહીં. તેનું શારીરિક સંહનન વજ્ર વૃષભ  
નારાય નામનું છે. અને માનસિક સંહનન વજ્ર કુમ્ભ-વજ્રની ભીંત જેવું ધૈર્ય  
છે. અર્થાત્ તેનું ધૈર્ય વજ્રભીંત સમાન અભેદ્ય હોય છે. તે તેનું માનસિક બળ છે.

ક્ષેત્ર આદિની અપેક્ષા એમની સ્થિતિ અનેક પ્રકારની છે, એમનો ૧૫  
કર્મભૂમીયોમાં જ જન્મ થાય છે. આ અપેક્ષા ૧૫ કર્મભૂમીયોમાં તેની સ્થિતિ  
જન્મ અને સદ્ભાવની અપેક્ષા માનવામાં આવે છે. સંહરણની અપેક્ષા કદાચિત  
કર્મ ભૂમિમાં, કદાચિત્ અકર્મભૂમિમાં પણ એની સ્થિતિ હોઈ શકે છે. આ

ક્ષયા સ્થિતિઃ। કાલતઃ ઉત્સર્પિણ્યાં, વ્રતાપેક્ષયા તૃતીયચતુર્થારકયોરેવ, જન્મમાત્રેણ તુ દ્વિતીયારકેડપિ । અવસર્પિણ્યાં તુ જન્મના તૃતીયચતુર્થારકયોરેવ । પૂર્વપ્રતિપન્નવ્રતાપેક્ષયા તુ પશ્ચમારકેડપિ । સંહરણતસ્તુ મહાવિદેહક્ષેત્રાપેક્ષયા સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રાપ્યતે । ચારિત્રતઃ — પ્રતિપદ્યમાનાનાં સામાયિકે, છેદોપસ્થાપનોયે ચ ચારિત્રે સ્થિતિઃ । મધ્યમતીર્થકર-વિદેહતીર્થકરતીર્થવર્ત્યપેક્ષયાડત્ર સામાયિકં, પ્રથમચરમતીર્થકરતીર્થવર્ત્યપેક્ષયા તુ છેદોપસ્થાપનીયચારિત્રમ્ । પ્રતિપન્નાનાં તુ મુક્તમસંપરાયે,

યહ સદ્ભાવ કી અપેક્ષા કથન હૈ । કાલ કી અપેક્ષા-ઉત્સર્પિણી કાલ કે તૃતીય ઓર ચતુર્થ આરે મેં ઝનકી સ્થિતિ માની ગઈ હૈ । સો યહ વ્રત કી અપેક્ષા જાનના ચાહિયે । વૈસે તો જન્મમાત્ર કી અપેક્ષા સે દ્વિતીય આરે મેં ભી ઝનકી સ્થિતિ હૈં । અવસર્પિણીકાલ મેં જન્મ કી અપેક્ષા તૃતીય ઓર ચૌથે આરે મેં હી, તથા પૂર્વપ્રતિપન્ન વ્રત કી અપેક્ષા અર્થાત્ -ચૌથે આરે કે વ્રત કો લેકર પંચમ આરે મેં ભી ઝનકી સ્થિતિ જાનના ચાહિયે । યદિ કોઈ દેવ ઇન્હેં હરણ કર મહાવિદેહ ક્ષેત્ર સે અન્યત્ર પહુંચા દેવે તો ઝસ અપેક્ષા ઝનકી સ્થિતિ સવ કાલ જાનની ચાહિયે । ચારિત્ર કી અપેક્ષા જો પ્રતિપદ્યમાનચારિત્રી હૈં ઝનકો સામાયિક એવં છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર મેં સ્થિત માનના ચાહિયે, કયોં કિ જો મધ્યમતીર્થકર એવં વિદેહ ક્ષેત્ર મેં રહે હુએ તીર્થકર કે તીર્થ મેં રહને વાલે હૈં વે સામાયિકચારિત્ર મેં, એવં જો પ્રથમ એવં, ચરમતીર્થકર કે તીર્થવર્તી હૈં વે છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર મેં સ્થિત રહતે હૈં । જો

સદ્ભાવથી અપેક્ષનું કથન છે. કાળની અપેક્ષા-ઉત્સર્પિણી કાળના ત્રીજા થોથા આરામાં સ્થિતિ માનવામાં આવેલ છે. આને વ્રતની અપેક્ષાથી જાણવું જોઈએ. એમ તો જન્મ માત્રની અપેક્ષાથી જીવ આરામાં પણ તેની સ્થિતિ છે. અવસર્પિણી કાળમાં જન્મની અપેક્ષા ત્રીજા અને થોથા આરામાં, તથા પૂર્વપ્રતિપન્ન વ્રતની અપેક્ષા અર્થાત્ થોથા આરાના વ્રતને લઈ પાંચમા આરામાં પણ એની સ્થિતિ જાણવી જોઈએ. કદાચ કોઈ દેવ આદિ એનું હરણ કરી મહાવિદેહ ક્ષેત્રથી બીજે પહોંચાડી દે તો એ અપેક્ષા એની સ્થિતિ બધા કાળમાં જાણવી જોઈએ. ચારિત્રની અપેક્ષા જે પ્રતિપદ્યમાન ચારિત્રી છે તે સામાયિક અને છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્રમાં સ્થિત માનવા જોઈએ કેમકે, જે મધ્યમ તીર્થકર અને વિદેહ ક્ષેત્રમાં રહેતા તીર્થકરના તીર્થમાં રહેવાવાળા છે તે સામાયિક ચારિત્રમાં, અને જે પ્રથમ એવં ચરમતીર્થકરના તીર્થવર્તી છે તે છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્રમાં સ્થિત રહે છે. જે પ્રતિપન્ન ચારિત્રી છે તેની

યથાહ્યાતે ચ ચારિત્રે ઉપશમશ્રેણ્યામ્ । તીર્થતસ્તુ જિનકલ્પિકાનાં સ્થિતિર્નિયમત-  
સ્તીર્થ એવ ભવતિ ન તુ તીર્થે વ્યવચ્છિન્ને । પર્યાયાગમવેદાહ્યાઃ સ્થિતિભેદા  
અપ્યવગન્તવ્યાઃ ।

સ્થવિરકલ્પિકાનાં જિનકલ્પિકાનાં ચ કલ્પો દશવિધઃ—આચૈલક્યમ્ ૧, ઔદે-  
શિકં ૨, શય્યાતરપિણ્ડત્યાગઃ ૩, રાજપિણ્ડત્યાગઃ ૪, કૃતિકર્મ ૫, મહાવ્રતમ્ ૬,  
પુરુષજ્યેષ્ઠત્વમ્ ૭, પ્રતિક્રમણમ્ ૮, માસકલ્પઃ ૯, પર્યુપણકલ્પ ૧૦ (વર્ષાકલ્પ)  
થેતિ । તેષુ મધ્યમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં સાધુનાં ચત્વારઃ કલ્પાઃ અવસ્થિતાઃ નિયમેન  
પાલનીયાઃ—શય્યાતરપિણ્ડત્યાગઃ ૧, કૃતિકર્મ ૨, મહાવ્રતમ્ ૩, પુરુષજ્યેષ્ઠત્વં ૪ ચેતિ ।  
ઇતરે પદ્મ કલ્પાસ્તુ તેપામનવસ્થિતાઃ ।

પ્રતિપદ્મચારિત્રી હૈં ડનકી સ્થિતિ ઉપશમશ્રેણી મેં સૂક્ષ્મસાંપરાય, ંવં  
યથાહ્યાતચારિત્ર મેં હોતી હૈ । તીર્થ કી અપેક્ષા જિનકલ્પિયોં કી સ્થિતિ  
નિયમ સે તીર્થ મેં હી હોતી હૈ, તીર્થ કે વ્યવચ્છિન્ન હોને પર નહીં । પર્યાય  
આગમ ંવં વેદ, ંે ઢી સ્થિતિ કે ભેદ હૈ ।

સ્થવિરકલ્પિયોં કા ંવં જિન કલ્પિયોં કા કલ્પ દશ પ્રકાર કા હૈ—

૧ આચૈલક્ય, ૨ ઔદેશિક, ૩ શય્યાતરપિણ્ડત્યાગ ૪ રાજપિંડ-  
ત્યાગ, ૫ કૃતિકર્મ, ૬ મહાવ્રત, ૭ પુરુષજ્યેષ્ઠતા ૮ પ્રતિક્રમણ ૯ માસ-  
કલ્પ ૧૦ પર્યુપણકલ્પ (વર્ષાકલ્પ) ઇન કલ્પો મેં મધ્યમતીર્થકર કે  
તીર્થવર્તી સાધુઓ કે ચાર કલ્પ અવસ્થિત હોતે હૈ—નિયમ સે પાલનીય  
હોતે હૈ । વે ચાર ંે હૈ —શય્યાતરપિંડત્યાગ, કૃતિકર્મ, મહાવ્રત, પુરુષ-  
જ્યેષ્ઠતા । વાકી કે ૬ કલ્પ ડનકે લિયે અનવસ્થિત હૈ ।

સ્થિતિ ઉપશમ શ્રેણીમાં સૂક્ષ્મસાંપરાય, ંવા યથાહ્યાત ચારિત્રમાં થાય છે.  
તીર્થની અપેક્ષા ંનકલ્પિયોની સ્થિતિ નિયમથી તીર્થમાં જ થાય છે, તીર્થના  
વ્યવચ્છિન્ન થવાથી નહીં. પર્યાય, આગમ ંને વેદ ંા પણ સ્થિતિના ભેદ છે.

સ્થવિરકલ્પિયોના ંને ંનકલ્પિયોના કલ્પ દશ પ્રકારના છે.—

૧ આચૈલક્ય, ૨ ઔદેશિક, ૩ શય્યાતરપિંડત્યાગ, ૪ રાજપિંડત્યાગ,  
૫ કૃતિકર્મ, ૬ મહાવ્રત, ૭ પુરુષજ્યેષ્ઠતા, ૮ પ્રતિક્રમણ ૯ માસકલ્પ, ૧૦  
પર્યુપણકલ્પ (વર્ષાકલ્પ) ંા કલ્પોમાં મધ્યમતીર્થકરના તીર્થવર્તી સાધુઓના  
ચાર કલ્પ અવસ્થિત હોય છે—નિયમથી પાળવાના હોય છે. તે ચાર ંા છે—  
શય્યાતરપિંડત્યાગ, કૃતિકર્મ, મહાવ્રત, પુરુષ જ્યેષ્ઠતા. બાકીના છ કલ્પ ંેમને  
માટે અનવસ્થિત છે.

આયચરમતીર્થંકરતીર્થવર્તિનાં સાધુનામેષ દશવિધઃ કલ્પોઽવસ્થિત એવ । તન્ના-  
ચૈલક્યં દ્વિવિધમ્-મુખ્યમ્, ઔપચારિકં ચ । અવિગ્રમાનચૈલકત્વરૂપં મુખ્યમાચૈ-  
લક્યં પ્રાયશો જિનકલ્પિકવિશેષાણામ્ । ઔપચારિકમાચૈલક્યં સ્થવિરકલ્પિકા-  
નામ્, સ્થવિરકલ્પિકા દિ-કલ્પનીયમેષનીયં જીર્ણં સ્વઙ્કિતં મલિનં તથૈવ નૂતન-  
મપિ સ્વલ્પમૂલ્યકં વસ્ત્રં ગૃહ્ણન્તિ, લોકસ્થપ્રકારાદન્યપ્રકારેણ ચ તદાસેવન્તે ।  
અતસ્તે ચૈલસદ્ભાવેઽપ્યુપચારતોઽચૈલકા વ્યપદિશ્યન્તે ।

પ્રથમતીર્થંકર એવં અન્તિમતીર્થંકર કે તીર્થ મેં રહનેવાલે જો સાધુ  
હેં ઉનકે લિયે તો યહ ૧૦ પ્રકાર કા કલ્પ અવસ્થિત હી હેં-અવશ્ય  
પાલને યોગ્ય હી હૈ । આચૈલક્ય જો પ્રથમ કલ્પ હૈ વહ દો પ્રકાર કા હૈ ।

૧ મુખ્ય ૨ ઔપચારિક, કટિવન્ધન-રજોહરણ-ઔર સદોસ્કમુખવ-  
સ્ત્રિકા કે સિવાય અન્ય વસ્ત્ર કા પરિત્યાગ કરના યહ મુખ્ય આચૈલક્ય  
હૈ । યહ જિનકલ્પિક વિશેષોં કે હોતા હૈ । ઔપચારિક જો આચૈલક્ય  
હૈ વહ સ્થવિરકલ્પિકોં કે હોતા હૈ । ક્યોં કિ જો સ્થવિરકલ્પી સાધુ  
હોતે હેં વે કલ્પનીય, એષનીય, જીર્ણ સ્વઙ્કિત એવં મલિન વસ્ત્ર રાખતે  
હેં । જો નવીન વસ્ત્ર મી હેં તો વહ મી અલ્પમૂલ્ય વાલા હી લેતે હેં ।  
લૌકિકજન જિસ પદ્ધતિ સે વસ્ત્રોં કા પરિધાન કરતે હેં વે ઉસ પદ્ધતિ  
સે વસ્ત્રોં કા પરિધાન નહોં કરતે હેં, કિન્તુ અન્ય પ્રકાર સે હી ઉન્હેં  
પહિનતે હેં । હસ લિયે ચૈલ કે સદ્ભાવ મેં મી વે અચૈલક હી કહે જાતે હૈ ।

પ્રથમ તીર્થંકર અને અંતિમ તીર્થંકરના તીર્થમાં રહેવાવાળા જે સાધુ છે,  
તેમને માટે તો આ દશ પ્રકારના કલ્પ અવસ્થિત જ છે.-અવશ્ય પાળવા  
યોગ્ય જ છે. આચૈલક્ય જે પ્રથમ કલ્પ છે તે બે પ્રકારના છે.

૧ મુખ્ય, ૨ ઔપચારિક, કટીબંધન રજોહરણ અને સદોસ્કમુખવસ્ત્ર-  
િકાના સિવાય અન્ય વસ્ત્રનેા પરિત્યાગ કરવો. આ મુખ્ય આચૈલક્ય છે, આ  
જિનકલ્પિક વિશેષોમાં હોય છે. ઔપચારિક જે આચૈલક્ય છે તે સ્થવિરકલ્પ-  
િકાને હોય છે. કેમકે, સ્થવિરકલ્પી સાધુ હોય છે તે કલ્પનીય, એષણીય,  
સ્વઙ્કિત અને મલિન, વસ્ત્ર રાખે છે. જે નવીન વસ્ત્ર મળે તે પણ  
ઓછા મૂલ્યનું હોય તે જ લે છે. લૌકિકજન જે પદ્ધતિથી વસ્ત્રોનું પરિધાન કરે  
છે એ પદ્ધતિથી તેઓ વસ્ત્ર પરિધાન કરતા નથી. પરંતુ અન્ય પ્રકારથી જ અને  
પહેરે છે આ માટે ચૈલના સદ્ભાવમાં પણ તે અચૈલક જ કહેવાય છે.

નનુ—જીર્ણખણ્ડિતાદિવસ્ત્રસદ્ભાવે મુનીનામચેલકત્વે દરિદ્રા અપિ—અચેલકાઃ કથં ન કથ્યન્તે ? ઉચ્યતે—નવવ્યૂતસદશકમહામૂલ્યકાદીનાં વસ્ત્રાણામઘ્નામે દરિદ્રાઃ પરિજીર્ણાદીનિ વાસાંસિ ધારયન્તિ ન તુ ધર્મવુદ્ધ્યા । અતો ભાવતસ્તદ્વિપયકમૂર્છા-પરિણામસ્યાનિવૃત્તત્વાત્ પરિજીર્ણવસ્ત્રસદ્ભાવે દરિદ્રાણામચેલકત્વવ્યપદેશો ન ભવતિ । મુનયસ્તુ—કેનચિદ્દીયમાનાન્યપિમહામૂલ્યકાનિ પ્રમાણવહિર્ભૂતાનિ વસ્ત્રાણિ

શંકા—જીર્ણ, ખણ્ડિત આદિ વસ્ત્રોં કે સદ્ભાવ મેં યદિ મુનિયોંકો અચેલક માના જાય તો જો દરિદ્રી જન હેં, જિનકે પાસ જીર્ણ ખણ્ડિત આદિ વસ્ત્ર હેં વે ભી અચેલક કહે જાને ચાહિયે ? પરન્તુ વે તોં અચેલક નહીં કહે જાતે હેં ?

ઉત્તર—દરિદ્રી જો જીર્ણ શીર્ણ આદિ વસ્ત્ર ધારણ કરતે હેં વે ધર્મ-વુદ્ધિ સે નહીં કરતે હેં કિન્તુ ઉન્હેં નવીન મહામૂલ્યવાલે વસ્ત્ર મિલતે નહીં હેં—અનકા અનકે પાસ અભાવ હૈ—અતઃ અનકે અભાવ મેં અન્હેં વે પહિનને પડતે હેં પરન્તુ પહિનના નહીં ચાહતે, હસલિયે વે અચેલક નહીં કહે જાતે હેં । ક્યોં કિ અનકે ભાવ સે તદ્વિપયક મૂર્છાપરિણામ કો અનિ-વૃત્તિ હૈ, હસલિયે પરિજીર્ણ વસ્ત્ર કે સદ્ભાવ મેં દરિદ્રિયોં મેં અચેલકત્વ કા વ્યવહાર નહીં હોતા હૈ । મુનિયો કો તદ્વિપયક મૂર્છા નહીં હૈ, ક્યોં કિ યદિ કોઈ દાતા અન્હેં વહુમૂલ્યવસ્ત્ર પ્રદાન કરતા હૈ ઓર વસ્ત્ર યદિ પ્રમાણોપેત નહીં હૈ—પ્રમાણ સે વહિર્ભૂત હૈ તો વે અસ કો ગ્રહણ નહીં કરતે હેં, કિન્તુ જીર્ણ ખંડિત હી વસ્ત્ર ગ્રહણ કરતે હેં । યદિ કોઈ નવીન

શંકા છુર્ણ, ખંડિત, આદિ વસ્ત્રોના સદ્ભાવમાં જે મુનિયોને અચેલક માનવામાં આવે તો જે દરિદ્રી જન છે, જેની પાસે છુર્ણ ખંડિત આદિ વસ્ત્ર છે. તેને પણ અચેલક કહેવા લેઈએ ? પરંતુ તેને તો અચેલક નથી કહેવામાં આવતા ?

ઉત્તર—દરિદ્રી જે છુર્ણ શીર્ણ વસ્ત્ર ધારણ કરે છે, તે ધર્મ બુદ્ધિથી નહીં, પરંતુ તેને નવીન સારા મૂલ્યવાળા વસ્ત્રો મળતાં નથી,—એનો એની પાસે અભાવ છે તેથી એના અભાવમાં તેણે તે પહેરવાં પડે છે, પરંતુ પહેરવાં ચાહતા નથી. આ માટે તે અચેલક કહેવાતાં નથી. કેમ કે તેને ભાવથી તદ્વિપયક મૂર્છા પરિણામની અનિવૃત્તિ છે. માટે પરિછુર્ણ વસ્ત્રોના સદ્ભાવથી દરિદ્રીયોમાં અચેલકત્વનો વ્યવહાર થતો નથી. મુનિયોને તદ્વિપયક મમતા-મૂર્છા નથી. કેમ કે, કોઈ દાતા તેમને બહુમૂલ્ય વસ્ત્રપ્રદાન કરે છે. અને તે વસ્ત્ર જે પ્રમાણોપેત નથી હોતું—પ્રમાણથી બહિર્ભૂત હોય છે તો તે તેને ગ્રહણ કરતા નથી. પરંતુ છુર્ણ ખંડિત વસ્ત્ર જ ગ્રહણ કરે છે. જે કોઈ



પરિવર્જયન્તિ, જીર્ણસ્વણ્ડિતાનિ નૂતનાન્યપ્યમહામૂલ્યકાનિ વસનાનિ પ્રમાણોપે-  
તાન્યેવ ધારયન્તિ । તાન્યપિ શ્રુતચારિત્રધર્મોપકરણબુદ્ધ્યં, ન તુ તત્ર મુનીનાં  
મૂર્છાપરિણામો ભવતિ । અતસ્તેષામચેલકત્વેન વ્યવદેશઃ સમ્યગેવ ।

મધ્યમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં મુર્નાનામાચેલવ્યયમનવસ્થિતમ્ અતસ્તેષાં રક્તપીતાદિ  
રાગરક્તિતમહામૂલ્યકાદિવસ્ત્રવર્જનનિયમો નાસ્તિ, મમત્વરહિતતત્વાત્ તેષામ્ ।  
પ્રથમચરમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં મુર્નાનાં તુ ધર્મબુદ્ધ્યા સ્વલ્પમૂલ્યકપ્રમાણોપેત-  
શ્વેતવસ્ત્રાણામેવ ધારકત્વાદાચેલક્યં ભવતિ ।

વસ્ત્ર દેતા भी हो तो वह यदि अल्पमूल्य वाला एवं प्रमाणोपेत है तो ही  
लेते हैं । उसका लेना भी वे इसीलिये आवश्यक समझते हैं कि वह  
उनके श्रुतचारित्ररूप धर्म का उपकरण है । मूर्च्छापरिणाम से उसका वे  
ग्रहण नहीं करते हैं, क्योंकि उनके तद्विषयक मूर्च्छा का अभाव है ।  
इसलिये मुनियो में अचेलकत्व का व्यवहार वास्तविक ही है ।

જો મધ્યમ તીર્થકરોં કે તીર્થવર્તી સાધુ હેં उनमें अचेलकत्व अनव-  
स्थित है । इसलिये उन्हें लालपीले आदि रंग से रंगे हुए, तथा महामू-  
ल्यवाले वस्त्रों के परिवर्जन का कोई नियम नहीं है, क्योंकि ये ममता  
से रहित होते हैं । प्रथम चरम तीर्थकर के तीर्थवर्ती मुनियों के तो प्रमा-  
णोपेत तथा स्वल्पमूल्यवाले श्वेतवस्त्रों के परिधान करने का ही नियम  
है, सो भी उन का ग्रहण केवल धर्मबुद्धि से हो है । मूर्च्छापरिणाम से  
नहीं, अतः वस्त्रों के सद्भाव में भी इनमें अचेलकता ही है ।

નવીન વસ્ત્ર આપે છે તો તે અલ્પમૂલ્યવાળું અને પ્રમાણોપેત હોય તો જ લે  
છે. એ લેવાનું પણ તેઓ એ ખાતર આવશ્યક માને છે કે, એના શ્રુત  
ચરિત્ર રૂપ ધર્મનું ઉપકરણ છે. મૂર્છા પરિણામથી તેને એ ગ્રહણ કરતા નથી.  
કેમ કે એનામાં એના માટેની ભાવનાનો અભાવ છે આ માટે મુનિયોમાં  
અચેલકત્વનો વ્યવહાર વાસ્તવિક જ છે.

જે મધ્યમ તીર્થકરોના તીર્થવર્તી સાધુ છે. એમનામાં અચેલકત્વ અન-  
વસ્થિત છે. આ માટે તેને લાલ, પીળા આદિ રંગથી રંગેલાં તથા બહુમૂલ્ય  
વસ્ત્રોના પરિવર્જનનો કોઈ નિયમ નથી. કેમ કે એ મમતાથી રહિત હોય છે.  
પ્રથમ ચરમ તીર્થકરના તીર્થવર્તી મુનિ છે. એને તો પ્રણોપેત તથા સ્વલ્પ  
મૂલ્યવાળાં શ્વેત વસ્ત્રો પરિધાન કરવાનો જ નિયમ છે અને તે ગ્રહણ કરવાનો  
નિયમ કેવળ ધર્મ બુદ્ધિથી જ છે. મૂર્છા પરિણામથી નહીં. આથી વસ્ત્રોના  
સદ્ભાવમાં પણ એમનામાં અચેલકતા છે જ.

સ્થવિરકલ્પિકાનાં વસ્ત્રધારણમાચારાઙ્ગવૃહત્કલ્પાઘાગમેષુ વ્યવસ્થિતમ્ (આચારાઙ્ગસૂત્રે દ્વિતીયશ્રુતસ્કન્ધે ચતુર્દશાધ્યયને) (વૃહત્કલ્પસૂત્રે તૃતીયોદ્દેશકે) ।

સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે ભગવતાઽચેલકસ્ય પન્ચભિઃ સ્થાનૈઃ પ્રશસ્તત્વં પ્રતિવોધિતમ્, તથાહિ—

પંચર્હિ ઠાળેર્હિ અચેલણ પસત્થે ભવઈ । તં જહા—“અપ્પા પડિછેહા, લાઘવિણ પસત્થે, રૂવે વેસાસિણ, તવે અણુણ્ણાણ, વિઝલે ઇંદિયનિગ્ગહે ।”

પન્ચામિઃ સ્થાનૈઃ=કારણૈઃ, અચેલકઃ પ્રશસ્તઃ—તીર્થંકરાદિભિઃ પ્રશંસિત इत्यर्थः । સ ચ જિનકલ્પિકવિશેષઃ, સ્થવિરકલ્પિકથ્ । તત્ર વસ્ત્રાભાવાદેવ જિનકલ્પિકવિ-

સ્થવિરકલ્પિયોં કે લિયે વસ્ત્રોં કો ધારણ કરને કી વ્યવસ્થા કા ઉલ્લેખ આચારાંગસૂત્ર ંવં વૃહત્કલ્પસૂત્ર આદિ આગમોં મેં પાયા જાતા હે । ઇસકે લિયે આચારાંગસૂત્ર દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ કા ૧૪ વાં અધ્યયન દેખના ચાહિયે । તથા વૃહત્કલ્પસૂત્ર કા તૃતીય ઉદ્દેશ દેખના ચાહિયે ।

સ્થાનાઙ્ગસૂત્રમેં ભગવાન્ ને પાંચ કારણોં કો લેકર અચેલકતા કો પ્રશસ્ત પ્રતિવોધિત કી હે, જૈસે—

“પંચર્હિ ઠાળેર્હિ અચેલણ પસત્થે ભવઈ । તં જહા—અપ્પા પડિ-  
છેહા ૧, લાઘવિણ પસત્થે ૨, રૂવે વેસાસિણ ૩, તવે અણુણ્ણાણ ૪, વિઝલે  
ઈંદિયનિગ્ગહે ૫ ॥”

પાંચ કારણોં સે ભગવાન્ ને અચેલકતા કી પ્રશંસા કી હે । જિન-  
કલ્પિકવિશેષોં મેં જો અચેલકતા કહી ગઈ હે વહ વસ્ત્ર કે અભાવ સે

સ્થવિરકલ્પીયોને માટે વસ્ત્રોને ધારણ કરવાની વ્યવસ્થાને ઉલ્લેખ આચારાંગસૂત્ર એને બૃહત્કલ્પસૂત્ર આદિ આગમોમાં જાણી શકાય છે. આને માટે આચારાંગસૂત્ર ખીજા શ્રુતસ્કન્ધના ૧૪ મા અધ્યયનને જોઈ લેવું જોઈએ, તથા બૃહત્કલ્પસૂત્રના ત્રીજા ઉદ્દેશને જોઈ લેવો જોઈએ.

સ્થાનાંગસૂત્રમાં લગવાને પાંચ કારણોને લઈ અચેલકતાને પ્રશસ્ત પ્રતિબોધિત કરેલ છે.

પંચર્હિ ઠાળેર્હિ અચેલણ પસત્થે ભવઈ । તં જહા અપ્પા પડિછેહા, ૧ લાઘવિણ પસત્થે ૨ રૂવે વેસાસિણ ૩ તવે અણુણ્ણાણ ૪ વિઝલે ઇંદિયનિગ્ગહે ૫ ॥

પાંચ કારણોથી લગવાને અચેલકતાની પ્રશંસા કરેલ છે. જનકલ્પી વિશેષોમાં જે અચેલકતા કહેવામાં આવી છે. તે વસ્ત્રના અભાવથી જ

શેષોઽચેલકઃ, સ્થવિરકલ્પિરુસ્તુ અલ્પમૂલ્યસપ્રમાણજીર્ણમલિનવસનત્વાદિતિ વિશેષઃ।  
તાનિ સ્થાનાનિ પ્રદર્શયતિ—

‘તં જહા’ इत्यादि। ‘अप्पा पडिलेहा’ अल्पा प्रत्युपेक्षा प्रतिलेखनीयस्य  
वस्त्रस्याल्पत्वात्, अल्पप्रतिलेखनया स्वाध्यायादेरन्तरायो न भवतीति भावः।  
तथा ‘लाघविए पसत्थे’ लाघविकं प्रशस्तम्—लघोर्भावो लाघवं तदेव लाघविकम्,  
यद् वस्त्रस्य परिमाणतो मूल्यतः संख्यया चाल्पतरत्वाल्लघुत्वं, तदेव द्रव्यतो  
लाघवम्, भवतोऽपि तत्र रागाद्यभावादित्यचेलकस्य लाघविकं प्रशस्तम्—अनव-  
धम्। ‘रुवे वेसासिए’ रूपं वैश्वासिकम्—तत्र रूपं—वेपः, तच्च साधूनां मुखवद्धम्वेत  
ही कही गई है। तथा स्थविरकल्पियों में जो अचेलकता कही गई है  
वह केवल अल्पमूल्यवाले प्रमाणोपेत जीर्ण, मलिन वस्त्रों के ग्रहण  
करने की अपेक्षा से कही गई है। यह बात तीर्थंकरों की परम्परा से  
प्रशंसित होती हुई चली आ रही है। कल्पित नहीं है। वे पांच स्थान-  
कारण ये हैं—अल्पप्रतिलेखना—प्रतिलेखनीय वस्त्रों की अल्पता से प्रति-  
लेखना भी अल्प ही होगी—अल्पसमयसाध्य होगी, इस से स्वाध्याय  
आदि में अन्तराय नहीं आ सकती है। इस अपेक्षा अचेलकता प्रशस्त  
कही गई है। १। इसी तरह लाघव की अपेक्षा भी अचेलकता प्रशस्त  
कही गई है, क्योंकि वस्त्रों में जो लघुता है वह परिमाण, मूल्य एवं  
संख्या की अपेक्षा से है। यह द्रव्य की अपेक्षा लघुता है। भाव की  
अपेक्षा लघुता उनमें साधु के रागादिक का अभाव है। २। वैश्वासिक  
रूप की अपेक्षा अचेलकता इसलिये प्रशंसित हुई है कि जब कोई ऐसा

કહેવામાં આવી છે. તથા સ્થવિરકલ્પિયોમાં જે અચેલકતા કહેવામાં આવી  
છે તે કેવળ અલ્પમુલ્યવાળા પ્રમાણોપેત જીર્ણ, મલીન વસ્ત્રોને ગ્રહણ  
કરવાની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ છે. આ વાત તીર્થંકરોની પરંપરાથી  
પ્રશંસિત થતી આવી આવેલ છે કલ્પિત નથી. આ પાંચ સ્થાન—કારણ આ  
છે. અલ્પપ્રતિલેખના પ્રતિલેખનીય વસ્ત્રોની અલ્પતાથી પ્રતિલેખના પણ અલ્પ  
જ થશે. અલ્પ સમય સાધ્ય થશે. આથી સ્વાધ્યાય આદિમાં અંતરાય  
આવી શકતો નથી. આ અપેક્ષાથી અચેલકતા પ્રશસ્ત કહેવામાં આવેલ છે.  
(૧) આ રીતે લાઘવની અપેક્ષા પણ અચેલકતા પ્રશસ્ત રહી છે. કેમ કે,  
વસ્ત્રોમાં જે લઘુતા છે તે પરિણામ મૂલ્ય અને સંખ્યાની અપેક્ષાથી છે. આ  
દ્રવ્યની અપેક્ષા લઘુતા છે. ભાવની અપેક્ષા આ લઘુતામાં સાધુના રાગાદિકનો  
અભાવ છે. (૨) વૈશ્વાસિક રૂપની અપેક્ષા આ અચેલકતા એ માટે પ્રશંસનીય થઈ

સદોરકમુખવસ્ત્રિકં પરિહિતશ્વેતચોલપટ્ટકં પરિધૃતશ્વેતવસ્ત્રપાવરણં પરિગૃહીતપ્ર-  
માર્જિકારજોહરણં, ભિક્ષાધાનીસમાવૃતપાત્રહસ્તમ્, અનાવૃતમસ્તકમ્, પાદત્રાણ-  
રહિતચરણમ્, ઈર્યાદિપશ્ચસમિતિસમિતં ગુપ્તિત્રયગુપ્તમ્, જિનકલ્પિકાનાં તુ-મુખ-  
વદ્ધશ્વેતસદોરકમુખવસ્ત્રિકં પરિગૃહીતરજોહરણં, વદ્ધકટિવન્ધનવસ્ત્રં ચ । एतादृशं  
સાધુનાં રૂપં વૈશ્વાસિકં=જનાનાં વિશ્વાસજનકં ભવતિ નિઃસ્પૃહતાસૂચકત્વાત્ । તથા  
'તવે અણુણાણ' તપઃ અનુજ્ઞાતં=તપઃ સકલેન્દ્રિયસંગોપનરૂપમ્ અનુજ્ઞાતં=જિના-

વેપ દેખતા હે કિ “મુખ પર સફેદદોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા વંધી હુઈ હૈ, સફેદ ચોલપટ્ટા પહિરા હુઆ હૈ, સફેદ ચાદર ઓઢી હુઈ હૈ, રજોહ-  
રણ ધારણ કિયા હુઆ હૈ, ભિક્ષાધાની-ઝોલી-સે ઢંકે હુણ પાત્ર હાથ મેં  
હૈ, મસ્તક खुला હુઆ હૈ, પેરોં મેં પગરલી મોજા આદિ નહીં હૈ, ઈર્યા-  
સમિતિ આદિ પાંચ સમિતિયોં સે યુક્ત હૈ, ત્રીન ગુપ્તિયોં સે ગુપ્ત હૈ ”  
યહી સાધુ કા વેપ હૈ ઓર ઇસ વેપ વાલા “યહ સાધુ હૈ ” એસા શીઘ્ર હી  
સમજાજાતા હૈ, તથા જિનકલ્પિયોં કા યહ વેપ હૈ કિ વે અપને મુખ પર  
દોરે સે સફેદ મુખવસ્ત્રિકા વાંધે રહતે હૈ, રજોહરણ લિયે રહતે હૈ ઓર  
કટિવન્ધન વસ્ત્ર રખતે હૈ । જવ કોઈ ઇસ વેપ કો દેખતા હૈ દેખ-  
કર વહ યહ સમજા જાતા હૈ કિ યહ જિનકલ્પિ સાધુ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા  
યહ સાધુ કા વેપ લોગોં મેં વિશ્વાસજનક હોતા હૈ ઓર વહ ઇસલિયે  
હોતા હૈ કિ યહ વેપ નિઃસ્પૃહતા કા સૂચક હોતા હૈ ।૩। તપ કી અપેક્ષા  
યહ અચેલકતા ઇસલિયે પ્રશંસિત હુઈ હૈ કિ ઇસમેં સકલ ઇન્દ્રિયોં કા

છે કે, જ્યારે કોઈ એવો વેશ જુએ છે “મુખ ઉપર દોરા સાથેની મુખ-  
વસ્ત્રિકા બાંધેલ છે. સફેદ ચોલપટ્ટો પહેરેલ છે. સફેદ ચાદર ઓઢેલ છે, રજો  
હરણુ ધારણુ કરેલ છે. ભિક્ષા માટેના પાત્ર ઝોળીમાં ઢંકાયેલ હાથમાં છે.  
મસ્તક ખુલ્લું છે. પગમાં પગરખાં, મોજા આદિ નથી, ઈર્યા સમિતિ આદિ  
પાંચ સમિતિઓથી યુક્ત છે. ત્રણ ગુપ્તિઓથી ગુપ્ત છે.” સાધુનો આજ વેશ  
છે. અને આવા વેશવાળા આ સાધુ છે, એવું તુરત જ સમજાઈ જાય છે.  
તથા જનકલ્પિઓનો એ વેપ છે કે તે પોતાના મોઢા ઉપર દોરાથી સફેદ  
મુખવસ્ત્રિકા બાંધે છે. રજોહરણુ રાખે છે, અને કટિબંધન વસ્ત્ર રાખે છે.  
એને જોતાંની સાથે જ જોનાર સમજી જાય છે કે એ જનકલ્પિ સાધુ છે, આ  
પ્રકારનો સાધુનો વેપ લોકોમાં વિશ્વાસ જનક હોય છે. અને તે એ માટે  
કે, આ વેપ નિસ્પૃહતાનો સૂચક હોય છે. (૩) તપની અપેક્ષા આ અચે-  
લકતા એ માટે પ્રશંસનીય બની છે કે જેમાં સકલ ઇન્દ્રિયોના સંગોપન

નુમતં ભવતિ । તથા—‘ચિત્તે ઇન્દ્રિયનિગ્રહે’ વિપુલઃ=મહાન્, ઇન્દ્રિયનિગ્રહો ભવતિ, ઉપકરણં વિના સ્પર્શનપ્રતિકૂલશીતવાતાતપાદિસહનાત્ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

આસીઘશપુરનામ્નિનગરે સોમદેવનામા વ્રાત્તણઃ । તસ્ય જિનાશ્ચારાધિકા રુદ્ર-સોમાનામ્ની ભાર્યાઽભવત્ । તસ્યાં ભાર્યાયાં સોમદેવસ્ય દ્વૌ પુત્રૌ જાતૌ । તત્ર જ્યેષ્ઠ આર્યરક્ષિતનામકઃ, દ્વિતીયઃ ફલ્ગુરક્ષિતનામકઃ । આર્યરક્ષિતઃ પિતુઃ સંનિધૌ શાસ્ત્ર-મધીત્યાધિકવિદ્યાભાર્ય પાટલિપુત્રનગરં ગતઃ । તત્ર તેન સાંગોપાંગાશ્ચત્વારો વેદા અધીતાઃ, ચતુર્દશવિદ્યાસ્થાનાનિ ગૃહીતાનિ । તતોઽસૌ દશપુરં નગરં સમાયાતઃ ।

સંગોપનરૂપ તપ જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કા અનુજ્ઞાત હૈ । ૪ । તથા ઇસમેં મહાન્ ઇન્દ્રિય નિગ્રહ હોતા હૈ, ક્યોં કિ ઉપકરણ કે વિના સ્પર્શન ઇન્દ્રિય કે પ્રતિકૂલ શીત વાત આતપ આદિ કા સહન હોતા હૈ । ઇસસે ઇન્દ્રિયાં કાવૂ મેં રહતી હૈં ।

દૃષ્ટાન્ત—દશપુર નામકે નગરમેં એક સોમદેવ નામ કા વ્રાત્તણ થા । ડસકી પત્ની કા નામ રુદ્રસોમા થા । યહ જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કી આજ્ઞા કી આરાધિકા થી । સોમદેવ કે દો પુત્ર થે । જેઠે પુત્ર કા નામ આર્યરક્ષિત થા ઓર છોટે પુત્ર કા નામ ફલ્ગુરક્ષિત । આર્યરક્ષિત પિતા કે પાસ શાસ્ત્રોં કા અધ્યયન કરકે અધિક વિદ્યા કી પ્રાપ્તિ કી અભિલાષા સે દશપુર સે પાટલિપુત્ર નગર કો રવાના હુઆ । વહાં પહુંચકર ઇસ ને સાંગોપાંગ ચારોં વેદોં કા એવં ૧૪ ચૌદહ વિદ્યાઓં કા ખૂબ અધ્યયન કિયા । જવ યહ પદુ બન ચુકા તવ વહાં સે વાપિસ દશપુર નગર કી

ઇય તપ જીનેન્દ્ર ભગવાનથી અનુજ્ઞાત છે. (૪) તથા તેમાં મહાન ઇન્દ્રિય નિગ્રહ થાય છે. કેમ કે ઉપકરણ વગર સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને પ્રતિકૂલ શીતવાત, આતપ, આદિ સહેવાં પડે છે, આનાથી ઇન્દ્રિયો કાળુમાં રહે છે.

દૃષ્ટાન્ત—દશપુર નામના નગરમાં એક સોમદેવ નામનો બ્રાહ્મણ હતો, તેની સ્ત્રીનું નામ રુદ્રસોમા હતું. તે જીનેન્દ્ર ભગવાનની આજ્ઞાની આરાધિકા હતી. સોમદેવને બે પુત્રો હતા. મોટા પુત્રનું નામ આર્યરક્ષિત અને નાના પુત્રનું નામ ફલ્ગુરક્ષિત હતું. આર્યરક્ષિત પિતાની પાસે શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરીને અધિક વિદ્યાપ્રાપ્તિની અભિલાષાથી દશપુરથી પાટલીપુત્ર રવાના થયો, ત્યાં પહોંચીને તેણે સાંગોપાંગ ચારે વેદોનું અને ચૌદ વિદ્યાનું ખૂબ અધ્યયન કર્યું. જ્યારે તે પારંગત બની થકયો ત્યારે તે પાટલીપુત્રથી પોતાને



तन्नगरनरेशस्तं नगरसमीपे समागतं विज्ञाय तदभिमुखं गत्वा गजोपरि तमुपवेश्य बहुसंमानपुरस्सरं नगरे प्रावेश्य तस्य रूप्यस्वर्णमणि प्रभृतिभिः प्रभृतैः संमानं कृतवान् । एवं तन्नगरनिवासिभिः प्रवेशोत्सवं कृत्वा संमानितः स्वगृहमागतः पितरौ प्रणतवान् । प्राप्तविद्यं लोकसंमानितमार्यरक्षितं विलोक्य पिताऽपि हृष्टो जातः, किंतु माता हर्षं न दर्शितवती । आर्यरक्षितस्तदा मातरमजातहर्षां दृष्ट्वा प्राह—हे मातः ! किमिदानीं मदवलोकनेन हृष्टा न भवसि ? सा प्राह—किमनेन

ओर प्रस्थान किया । दशपुर के राजा को जब इसके आने का समाचार मिला तो उसने इसके स्वागत की खूब तैयारी की । जब आर्यरक्षित आते २ नगर के समीप पहुँचा तो राजा इन्हें नगर में प्रवेश कराने के लिये इसके संमुख गया । हाथी पर बैठा कर बहुत सन्मानपूर्वक राजा ने इसको नगर में प्रवेश कराया । रूप्य, सुवर्ण और मणि आदि के नजराने से राजा ने इसका खूब सत्कार किया । इसी तरह नगरनिवासियों ने भी राजा का साथ दिया । सब से अच्छी तरह संमानित होकर आर्यरक्षित अपने घर पर आया । मातापिता को नमस्कार किया । विद्या की प्राप्ति से राजा तथा अन्य नगर निवासियों द्वारा संमानित अपने पुत्र को देखकर पिता तो चित्त में बहुत ही हर्षित हुआ, परन्तु माता ने इस विषय में अपना हर्ष नहीं प्रकट किया । जब आर्यरक्षितने अपनी माता की इस प्रकार परिस्थिति देखी तो वह बोला हे माता ! क्या बात है तुम्हें क्यों नहीं इस समय मेरी इस परिस्थिति के अवलोकन से हर्ष

गाम पाछे आव्यो. दशपुरना राजने ज्यारे तेना आववाना समाचार भज्या ओटले तेले तेना स्वागतनी पूज तैयारी करी. आर्यरक्षित ज्यारे नगरनी समीप पडोव्यो, ते समये राज तेने नगरमां प्रवेश कराववा तेनी सामे गया. हाथी उपर जेसाडीने धण्डा सन्मान पूर्वक राजजे तेना नगरमां प्रवेश कराव्यो. रुपुं, सोनुं विगेरेना नगराणुथी राजजे तेना पूज सत्कार क्यो. आ रीते नगर निवासीओजे पणु राजने साथ आव्यो. सारी रीते आदर सत्कार भेजवीने आर्यरक्षित पोताने घेर पडोव्यो. माता पिताने नमस्कार क्यो. विद्यानी प्राप्तिथी राज तथा अन्य नगरवासीओथी सन्मानित पोताना पुत्रने जेध पित तेना हिलमां पूज ज हर्षित जन्हा, माताजे आ विषयमां पोताने हर्ष प्रगट क्यो नही ज्यारे आर्यरक्षिते मातानी आ प्रकारनी स्थिति जेध ते ते बोदये के, हे माता ! शुं कारण छे के तमे आ

जीवघातादिहेतुकेन बहुशास्त्राध्ययनेन ? किं त्वया दृष्टिवादः पठितः ? येन मम हर्षः स्यात् । मातुरेवद् वचनं श्रुत्वाऽऽर्यरक्षितः पृच्छति—क्वास्ति दृष्टिवादः ? जनन्या निगदितम्—इक्षुवाटकनामके ग्रामे विद्यमानस्य तोसळिपुत्राचार्यस्य समीपेऽस्ति, तदासेवनया तदाज्ञापरिपालनया तत्संनिधौ दृष्टिवादोऽभ्यसनीयः । आर्यरक्षितेनोक्तम्—हे मातः ! भवस्तत्राहं गमिष्यामि दृष्टिवादपठनार्थम् । रात्रौ सुप्तो-

हो रहा है। पुत्र के वचन सुनकर माताने कहा कि बेटा ! मुझे जो हर्ष नहीं उमड़ रहा है उसका कारण यह है कि तुम्हें जीवघात की हेतुभूत अनेक वेदादि शास्त्रों की इस पढ़ाई से क्या लाभ ? बेटा ! तुम हमें यह बतलाओ कि क्या तुमने दृष्टिवाद का भी अध्ययन किया है ? मुझे तो तभी हर्ष हो सकता है कि जब तुम दृष्टिवाद का ज्ञाता हो जाओ। जननी के इस प्रकार के वचन सुनकर आर्यरक्षित ने माता से पूछा मातः ! जिसके लिये तुम मुझे पढ़ने के लिये कह रही हों वह दृष्टिवाद शास्त्र कहाँ है। माता ने कहा—सुनो ! इक्षुवाटक नाम का एक ग्राम है। उस में तोसळिपुत्र नामके एक आचार्य ठहरे हुए हैं, उनके पास यह शास्त्र है सो तुम वहाँ जाओ और उनकी खूब सेवा करो तथा उनकी आज्ञानुसार रहो तो वे तुम्हें इस शास्त्र का अध्ययन करा देंगे। आर्यरक्षित ने माता के ये सीखभरे वचन सुनकर कहा—मातः ! मैं कल उनके समीप इस शास्त्र का अध्ययन करने के लिये जाऊँगा। रात्रि में

સમયે મારી આ પ્રકારની સ્થિતિથી હુપિંત થતાં નથી ? પુત્રનું વચન સાંભળીને માતાએ કહ્યું, કે હે પુત્ર ! મને હર્ષ થતો નથી તેનું કારણ એ છે કે, જીવનઘાતના હેતુભૂત અનેક વેદાદિ શાસ્ત્રો ભણવાથી તને શું લાભ થશે ? બેટા ! તું મને એ તો બતાવ કે તેં દૃષ્ટિવાદનું પણ અધ્યયન કર્યું છે ? મને ત્યારે જ હર્ષ થાય કે જ્યારે તું દૃષ્ટિવાદનો જ્ઞાતા બને. માતાનું આ પ્રમાણેનું વચન સાંભળીને અર્યરક્ષિતે માતાને પૂછ્યું, માતા ! તું મને જે ભણવાનું કહે છે તે દૃષ્ટિવાદ શાસ્ત્ર કયાં છે ? માતાએ કહ્યું, સાંભળ ! એક ઇક્ષુવાટક નામનું ગામ છે, તેમાં તોસલી પુત્ર નામના એક આચાર્ય વિચરે છે તેમની પાસે આ શાસ્ત્ર છે, જેથી તું ત્યાં જા અને તેની ખૂબ સેવા કર તથા એની આજ્ઞાનુસાર રહે તો તેઓ તને આ શાસ્ત્રનું અધ્યયન કરાવી દેશે. આર્ય-રક્ષિતે માતાનું આવું હિતવાળું વચન સાંભળીને કહ્યું, મા ! હું આવતી કાલે આ શાસ્ત્રનું અધ્યયન કરવા માટે તેમની પાસે જઈશ, રાત્રે જ્યારે અર્યરક્ષિત સુવા

સ્થિતેન તેન મનસ્યેવં ચિન્તિતમ્-દષ્ટિવાદનામ્નૈવ તસ્ય શાસ્ત્રસ્ય તત્ત્વજ્ઞાનવોધકત્વં જ્ઞાયતે । તતોઽસૌ પ્રભાતે પ્રસ્થિતઃ । માર્ગે દશપુરનગરનિકટવર્તિગ્રામનિવાસી પિતૃમુહુર્દ્વ બ્રાહ્મણઃ સાર્ધનવેશુદણ્ડાન્ ગૃહીત્વા સમાગચ્છન્ મિલિતઃ । સ આર્યરક્ષિતં દૃષ્ટ્વા પરસ્પરં કુશલપ્રદનં કૃત્વાઽવદત્-એતે મયા સાર્ધનવસંખ્યકા ઇક્ષ્વો ભવદર્થમા- નીતાઃ, ગૃહ્ણાતુ ભવાન્ । આર્યરક્ષિતો વદતિ-ઇદમિશુરૂપં પ્રાપ્તં મમ માતુર્હસ્તે ભવતાઽર્પયિત્વા કથનીયમ્-એતે ઇક્ષ્વો મયાઽર્યરક્ષિતાય સમાનીતાઃ, તેન તુભ્યં પ્રેપિતાઃ, ઇતિ । કથિતં ચ-અહમેવ માર્ગે પ્રથમં મિલિતઃ, ઇત્યપિ તદગ્રે કથનીય-

આર્યરક્ષિત સોને કે લિયે અપને સ્થાન પર ગયા ઓર શાંતિ સે સો ગયા । જવ વહ ઊઠા તો ઉસને વિચાર કિયા-માતા ને જો કુછ કહા હૈ વહ ચિલકુલ ઠીક હૈ, કારણ કિ વહ શાસ્ત્ર તત્ત્વજ્ઞાન કા વોધક હૈ યહ વાત તો ઉસકે નામ સે હી જ્ઞાત હોતી હૈ । પ્રાતઃકાલ હોતે હી વહ ઘર સે ઇશુવાટક ગ્રામકી ઓર ચલ દિયા । માર્ગ મેં ઇસ કો દશપુર નગર કે પાસ કે ગ્રામ મેં રહને વાલા એક બ્રાહ્મણ જો ઇનકે પિતા કા મિત્ર થા મિલા । વહ ૧॥ સાઢે નૌ ઇશુ દણ્ડોં કો લેકર આ રહા થા । કુશલ પ્રશ્ન કે વાદ ઉસને આર્યરક્ષિત સે કહા કિ ભાઈ ! યે ૧॥ સાઢે નૌ ઇશુદંડ મેં આપ કે લિયે હી લાયા હું-અતઃ આપ ઇન્હેં લીજિયે । આર્ય- રક્ષિત ને કહા ઠીક હૈ આપ ઇસ મેંડ કો મેરી માતા કે હાથ મેં દેકર કહના કિ યે ૧॥ સાઢે નૌ ઇશુદંડ મેં આર્યરક્ષિત કે લિયે લાયા થા । વે મુઝે માર્ગ મેં મિલ ગયે હૈ । ઉન્હોં ને હી યે તુમ્હારે પાસ મેજે હૈ । ઓર

માટે પોતાના સ્થાન ઉપર ગયો અને શાંતિથી સુઈ ગયો. જ્યારે તે ઉઠ્યો ત્યારે તેણે વિચાર કર્યો કે, માતાએ જે કાંઈ કહ્યું છે તે અક્ષરશઃ સત્ય છે. કારણ કે તે શાસ્ત્ર તત્ત્વજ્ઞાનનો બોધ આપનાર છે, એ હકિકત તેના નામ ઉપરથી જ જણાઈ આવે છે. સવાર થતાં તે ઘરથી બહાર નીકળી ઇશુવાટક ગામની તરફ ચાલતો થયો. માર્ગમાં તેને દશપુરનગરની પાસેના ગામમાં રહેવા વાળો અને પોતાના પિતાનો મિત્ર એક બ્રાહ્મણ મળી ગયો. તે બ્રાહ્મણ હાથમાં હા ઇશુદંડ લઈને આવતો હતો. કુશળ સમાચાર પૂછ્યા બાદ તેણે આર્યરક્ષિતને કહ્યું કે, ભાઈ ! આ હા ઇશુદંડ તારા માટે જ લાવ્યો છું. માટે તું તેનો સ્વીકાર કર. આર્યરક્ષિતે કહ્યું, ઠીક છે. આપ આ દંડ મારી માતાના હાથમાં આપીને કહેજો કે, હું આ હા ઇશુદંડ આર્યરક્ષિત માટે લાવ્યો હતો, તે મને માર્ગમાં મળ્યો હતો અને તેણે આ દંડ તમને આપ-

મિતિ । અથાસી તદ્વચનાત્થૈવ કૃતવાન્ । તતો માતાસ્તીવ દૃષ્ટા તુષ્ટા સંજાતા,  
ચિન્તયતિ ચ । માર્ગે સાર્ધનવસંઘ્યકા રક્ષતો મિલિતા અતોઽસી સાર્ધનવપૂર્વાપિ  
અધ્યેપ્યતે । આર્યરક્ષિતોઽપિ શુભં શકુનં મત્વેશ્વવાટકં ગતઃ । ઉપાશ્રયે પ્રવિશ્ય  
તોસલિપુત્રાચાર્યસ્ય વન્દનં કૃત્વા તત્રોપવિષ્ટઃ । તોસલિપુત્રાચાર્યેણ પૃષ્ટમ્—તવ કિ  
નામ?, કિં ચ પ્રયોજનમ્ ? । આર્યરક્ષિતેન સ્વનામ કથયિત્વા પ્રયોજનં કથિતમ્—  
દૃષ્ટિવાદમધ્યેતુમહમત્રાગતોઽસ્મિ, મામધ્યાપયન્તુ દૃષ્ટિવાદં ભવન્તઃ । આચાર્યઃ

યહ ભી કહના કિ માર્ગ મેં ઉનકો પહલે પહલ મેં હી મિલા યા । આર્ય-  
રક્ષિત કે વચનાનુસાર ઉસ ત્રાભ્મણ ને વૈસા હો ક્રિયા । માતા ને ૧॥ સાઢે  
નૌ રક્ષુદંડ પ્રાપ્તકર રક્ષ શકુનસે ઁસા અનુમાન લગાયા કિ રક્ષે જો ઁ  
૧॥ સાઢે નૌ રક્ષુદંડ માર્ગ મેં ચલતે સમય મિલે હેં ઉસસે ઁસા હી જ્ઞાત  
હોતા હૈ કિ યહ ૧॥ સાઢે નૌ પૂર્વો કા અધ્યયન કર સકેગા । આર્યરક્ષિત  
ને ભી “રક્ષે પ્રાપ્તિ શુભ શકુન સ્વરૂપ હૈ ” ઁસા જ્ઞાનકર બડે આનંદ  
કે સાથ રક્ષુવાટક કો ઓર અધિક તેજી સે ચલને લગા । વહો પહુંચતે  
હી વહ ઉપાશ્રય મેં ગયા । તોસલિપુત્ર આચાર્ય કો વંદન કર ફિર વહો  
વૈઠ ગયા । આચાર્યશ્રી ને પૂછા તુમ્હારા કયા નામ હૈ ? યહાં કિસ પ્રયો-  
જન સે આયે હો । ? આર્યરક્ષિત ને અપના નામ કહ કર પ્રયોજન ભી  
સ્પષ્ટ કર દિયા । આચાર્યશ્રી ને જવ યહ જ્ઞાના કિ “ યહ દૃષ્ટિવાદ કે  
અધ્યયન કે લિયે યહાં આયા હૈ ” તવ આચાર્યશ્રી ને ઉસસે કહા કિ

વાતું કહ્યું છે. અને એ પણ કહેજો કે માર્ગમાં અને પહેલવહેલો હું જ  
મળ્યો હતો. આર્યરક્ષિતના વચનાનુસાર તે બ્રાહ્મણે તેવું જ કયું. માતાએ  
હા રક્ષુદંડ પ્રાપ્ત કરી એ શકુનથી એવું અનુમાન લગાવ્યું કે, તેને જે આ  
હા રક્ષુદંડ રસ્તામાં ચાલવા સમયે મળેલ છે એથી એવું જ્ઞાત થાય છે કે,  
સાડાનવ પૂર્વનું અધ્યયન કરી શકશે. આર્યરક્ષિતે પણ આની પ્રાપ્તિ શુભ શકુન  
સ્વરૂપ છે તેવું જાણીને ધણા આનંદની સાથે રક્ષુવાટકની તરફ ઝડપથી ચાલવા  
માંડ્યું. ત્યાં પહોંચતાં જ તે ઉપાશ્રયમાં ગયો તોસલીપુત્ર આચાર્યને વંદન કરી  
ત્યાં બેસી ગયો. આચાર્યશ્રીએ તેને પૂછ્યું, તમારું નામ શું છે ? શું કારણથી  
અહિં આવ્યા છો ? આર્યરક્ષિતે પોતાનું નામ આપીને આવવાનું પ્રયોજન  
જણાવી દીધું. આચાર્યશ્રીએ બ્યારે એવું જાણ્યું કે, “ આ દૃષ્ટિવાદના અધ્યયન  
માટે અહિં આવેલ છે. ત્યારે આચાર્યશ્રીએ તેને કહ્યું કે, દૃષ્ટિવાદનું અધ્યયન બ્યારે

प्राह—यदि ममान्तिके प्रव्रज्यां गृह्णासि, तर्हि त्वां दृष्टिवादमध्यापयामः । आर्यरक्षितेन प्रव्रज्याग्रहणं स्वीकृतम्, तदनन्तरमसौ श्रावकेण दत्तं साधुवेपयोग्यं सदो-  
रकमुखवस्त्रिका—रजोहरणवस्त्रपात्रादिकं लब्ध्वा साधुवेपेण मातुरनुमत्या च प्रव्रजितः  
सन्नाचार्यस्य समीपे एकादशाङ्गानि सोपाङ्गानि पठित्वा दृष्टिवादस्य प्रथमं परिक्र-  
माख्यं द्वितीयं सूत्राख्यमध्ययनमधीतवान् । अथातः परं दृष्टिवादं पठितुं तोसलि-  
पुत्राचार्याज्ञया स वज्रस्वामिसमीपं गन्तुकामः पथि गच्छन्नवन्त्यां भद्रगुप्ताचार्य-  
स्यान्त्यक्रियारूपां निर्यापनां कृतवान् । तेन चान्त्यसमये प्रोक्तम्—त्वया रात्रौ

दृष्टिवाद का अध्ययन हम तुम को तब ही करायेंगे कि जब तुम मेरे पास  
दीक्षा धारण करोगे । आर्यरक्षित ने दीक्षाग्रहण करना मंजूर कर लिया ।  
माताने उन्हें दीक्षा लेने की अनुमति पहले दे दी थी । आर्यरक्षित ने मुनिदीक्षा  
धारण कर ली । श्रावकों ने मिलकर उनके लिये मुनिवेप के योग्य सदो-  
रक मुखवस्त्रिका एवं रजोहरण तथा वस्त्रपात्रादिक प्रदान किये । आचार्य  
के पास रह कर आर्यरक्षित ने उपाङ्गसहित ग्यारह अंगों का अध्ययन  
कर दृष्टिवाद का प्रथम परिकर्म नाम का अध्ययन तथा द्वितीय सूत्र  
नाम का अध्ययन पढ़ लिया । अवशिष्ट दृष्टिवाद को पढ़ने के लिये  
फिर वे वहां से तोसलिपुत्राचार्य की अनुमति से वज्रस्वामी के समीप  
जाने को इच्छुक हुए । जब ये उनके पास जा रहे थे तो मार्ग में इन्हें  
उज्जैनो नगरी आई । वहां उस समय भद्रगुप्ताचार्य की उन्होंने अन्त्य-  
क्रिया रूप निर्यापना की । आचार्य ने अंत समय में इनसे यह कहा कि

तमे भारी पास दीक्षा धारण करशे। त्वारे न करववाभां आवशे. आर्यरक्षिते दीक्षा  
ग्रहण करवानु स्वीकार्युं, माताये यथ तेने दीक्षा लेवानी अनुमति पडेदांथी आपी,  
हुती. आर्यरक्षिते मुनिदीक्षा धारण करी. श्रावकेअ मणीने तेने भाटे मुनिवेपने योग्य  
सदोरकमुखवस्त्रिका, रजोहरण तथा वस्त्रपात्रादिक प्रदान कर्यां. आचार्यनी पास रहने  
आर्यरक्षिते उपांग सहित अग्यार अंगोनं अध्ययन करी दृष्टिवादनुं प्रथम परिकर्म  
नामनुं अध्ययन तथा द्वितीय सूत्र नामनुं अध्ययन शीजी लीधुं. आकीना दृष्टिवा-  
दने शीजवा भाटे पछी ते त्यांथी तोसलीपुत्राचार्यनी अनुमतिथी वज्रस्वामी समीप  
जवा भाटे धन्य करी. त्वारे ते तेनी पास नई रह्यो हुते। त्वारे पथभां  
मार्गभां उज्जैनि नगरी आवी. त्यां अे समये भद्रगुप्ताचार्यनी अंत्यक्रिया  
रूप निर्यापना करी. आचार्ये अंत समये तेने अे कह्युं के, तमे रात्रीभां वज्र-



વજ્રસ્વામિના સહ ન સ્થાતવ્યમ્ યતસ્તેન સહ રાત્રી સંવસન્ પ્રિયતે । એતદ્વચનં હિદિ  
 નિધાય સ તતો નિર્ગત્યાવન્તીનગર્યા અદૂર એવ ગ્રામાદ્ વહિરુગ્રાને રાત્રી સ્થિતઃ ।  
 વજ્રસ્વામિના રાત્રિશેષે સ્વપ્નો-દૃષ્ટઃ કેનચિદાગન્તુકેન શિષ્યેણ મત્પાત્રસ્યં સાવ  
 શેષં પયઃ પીતમિતિ । આર્યરક્ષિતઃ પ્રભાતે ક્વચિદન્યસ્મિન્નુપાશ્રયે વસતિ કૃત્વા  
 વન્દનાર્થં વજ્રસ્વામિનોઽન્તિકં ગતઃ । તદાનોં સ વજ્રસ્વામી રાત્રિશેષદૃષ્ટં સ્વપ્નં  
 ચિન્તયન્નાસીત્ । વજ્રસ્વામિના કુશલપ્રશ્નનન્તરં રાત્રાવન્યત્રાવસ્થાનસ્ય કારણં પૃષ્ટમ્  
 આર્યરક્ષિતઃ પ્રાહ-ભદ્રગુપ્તાચાર્યસ્યાનુશાસનાદહમન્યસ્મિન્નુપાશ્રયે નિવસામિ,  
 વજ્રસ્વામી તુ તદા પૂર્વે નિજોપયોગં દત્ત્વા આર્યરક્ષિતકૃતસ્ય રત્ન્યામન્યત્રોપાશ્રયેઽ

તુમ રાત્રિ મેં વજ્રસ્વામી કે સાથ નહીં રહના, ક્યોં કિ રાત્રિ મેં અનેકે  
 સાથ રહને વાલે કી મૃત્યુ હો જાની હૈ । આચાર્ય કે હન વચનોં કો હૃદય  
 મેં રલ્લકર વે વહાં સે નિકલે ઓર જાકર પાસ કે કિસી ગ્રામ કે વાહિર  
 ઉગ્રાન મેં રાત્રિ મેં ઠહર ગયે । ઉઘર વજ્રસ્વામીને રાત્રિકે શેષભાગ મેં એક  
 એસા સ્વપ્ન દેલ્લા, કિ કિસી આનેવાલે શિષ્ય ને મેરે પાત્ર કા સાવશિષ્ટ  
 (કુછ વાકી રલ્લકર) ક્ષીરકો પી લિયા હૈ । ઇઘર આર્યરક્ષિત પ્રભાત કાલ મેં  
 કિસી અન્ય ઉપાશ્રયમેં અપને ઉપકરણ રલ્લકર એવં સ્થાન નિશ્ચિત કર વંદના  
 નિમિત્ત વજ્રસ્વામી કે પાસ પહુંચે । ઉસ સમય વજ્રસ્વામી રાત્રિ કે શેષ-  
 ભાગ મેં દૃષ્ટ સ્વપ્ન કા વિચાર કરને મેં મગ્ન હો રહે થે । વજ્રસ્વામી ને  
 કુશલપ્રશ્ન કે વાદ રાત્રિ મેં અન્યત્ર ઠહરને કા કારણ આર્યરક્ષિત સે પૂછા,  
 આર્યરક્ષિત ને કહા કિ મેં ભદ્રગુપ્તાચાર્ય કે અનુશાસન સે અન્ય ઉપા-  
 શ્રય મેં ઠહર ગયા હું । ઉસ સમય વજ્રસ્વામી ને અપને ઉપયોગ કે બલસે

સ્વામીની સાથે રહેલો નહીં. કારણ કે, રાત્રે તેની સાથે રહેવાવાળાનું મૃત્યુ  
 થાય છે. આચાર્યના આ વચનને હૃદયમાં રાખીને ત્યાંથી નીકળી પાસેના કોઈ  
 ગામે બહાર બગીચામાં રાત્રી રોકાયો. આ તરફ વજ્રસ્વામીએ રાત્રીના છેલ્લા  
 પ્રહરે એક એવું સ્વપ્ન દેખ્યું કે, કોઈ આવી રહેલા શિષ્યે મારા પાત્રમાંથી  
 સાવશિષ્ટ (કંઈકે બકી રાખીને) ખીર પીઈ લીધેલ છે. આ તરફ આર્યરક્ષિત પ્રભાતકા-  
 લમાં કોઈ બીજા ઉપાશ્રયમાં પોતાનું ઉપકરણ રાખીને અને સ્થાન નિશ્ચિત કરીને  
 વંદનાનિમિત્ત વજ્રસ્વામી પાસે પહોંચ્યો. એ સમયે વજ્રસ્વામી રાત્રીના છેલ્લા  
 પ્રહરે જોયેલા સ્વપ્નનો વિચાર કરવામાં મગ્ન હતા. વજ્રસ્વામીએ કુશળ પ્રશ્ન બાદ  
 રાત્રીમાં બીજા સ્થળે રોકાવાનું કારણ આર્યરક્ષિતને પૂછ્યું. આર્યરક્ષિતે કહ્યું કે હું  
 ભદ્રગુપ્તાચાર્યના અનુશાસનથી બીજા ઉપાશ્રયમાં રોકાયો છું. તે સમયે વજ્ર-  
 સ્વામીએ પોતાના ઉપયોગના બળથી “આર્યરક્ષિતનું બીજા ઉપાશ્રયમ”

વસ્થાનસ્ય કારણં જ્ઞાત્વાઽવ્રવીત્-યુક્તમેતદુક્તં ભદ્રગુપ્તાચાર્યેણેતિ । અધ્યાર્યરક્ષિતેન વજ્રસ્વામિસંનિધૌ નવ પૂર્વાણિ પઠિતાનિ, દશમપૂર્વસ્ય કતિચિદધિકારાસ્તેન યાવત્ પઠિતાસ્તાવદ્ દશપુરાત્ ફલ્ગુરક્ષિતો ભ્રાતા ચિરચિરહાર્તમાત્રાદિભિઃ પ્રેરિતસ્તસ્યા-કારણાય તત્રાગતઃ । આર્યરક્ષિતસ્તં પ્રતિવોદ્ય તત્રૈવ પ્રવ્રજ્યાં ગ્રાહયતિ સ્મ ।

एकदाऽऽर्यरक्षितो वज्रस्वामिनं पृच्छति-भगवन् ! मम पठनार्थं दृष्टिवादे दशमं पूर्वं कियदवशिष्टमस्ति ? वज्रस्वामी प्राह-वत्स ! त्वया दशमपूर्वस्य विन्दुमात्रं पठितं समुद्रोपमं दशमं पूर्वमस्ति । ततोऽसौ श्रान्तमनाः प्राह-नाहमतः परं पूर्वपाठं कर्तुं

‘આર્યરક્ષિત કા અન્ય ઉપાશ્રય મેં રાત્રિ મેં ઠહરને કા કયા કારણ હૈ’ યહ વાત અચ્છી તરહ જાનકર આર્યરક્ષિત સે કહા ભદ્રગુપ્તાચાર્ય ને જો કહા વહ યુક્ત હી કહા હૈ । વાદ મેં આર્યરક્ષિત ને વજ્રસ્વામી સે નવ પૂર્વ કા અધ્યયન આનન્દ સે કર લિયા । પરન્તુ દશમ પૂર્વ કે કિતનેક અધિકાર જવ યે પઢ રહે થે કિ ઇતને મેં ઇનકા છોટા ભાઈ ફલ્ગુરક્ષિત દશપુર સે ચિરચિરહાર્ત માતા આદિ દ્વારા પ્રેરિત હોકર ઇન્હેં બુલાને કે લિયે વહાં આપહુંચા । આર્યરક્ષિત ને ઉસે સમજાકર-પ્રતિવોદિતકર-વહીં દીક્ષા દિલવા દી । એક દિન કી વાત હૈ કિ આર્યરક્ષિત ને વજ્ર-સ્વામી સે પૂછા કિ ભગવન્ ! દૃષ્ટિવાદ મેં દશમપૂર્વ, પઢને કે લિયે અવ મેરા કિતના વાકી રહા હૈ । યહ સુનકર વજ્રસ્વામી ને કહા કિ વત્સ ! દશમ પૂર્વ તો સમુદ્ર કે સમાન હૈ તુમને તો અભીતક ઉસકો વિન્દુમાત્ર હી પઢા હૈ । વજ્રસ્વામી કી યહ વાત સુનકર ઇનકા મન કુછ શ્રાન્ત સા

રોકવાનું શું કારણુ છે ” આ વાત સારી રીતે જાણીને આર્યરક્ષિતને કહ્યું, ભદ્ર-ગુપ્તાચાર્યે જે કહ્યું છે, તે યુક્ત જ કહ્યું છે. બાદમાં આર્યરક્ષિતે વજ્રસ્વામીથી નવ પૂર્વનું અધ્યયન આનંદથી શીખી લીધું. પરંતુ દશમા પૂર્વના કેટલાક અધિકાર જ્યારે તે શીખી રહ્યો હતો ત્યારે તે અરસામાં તેનો નાનોભાઈ ફલ્ગુ-રક્ષિત દશપુરથી પુત્રનો વિરહ અનુભવતી માતા દ્વારા પ્રેરિત બની તેને બોલા-વવા માટે ત્યાં આવી પહોંચ્યો. આર્યરક્ષિતે તેને સમજાવીને પ્રતિબોધિત કરી ત્યાંજ દીક્ષિત બનાવ્યો. એક દિવસની વાત છે કે, આર્યરક્ષિતે વજ્રસ્વામીને પૂછ્યું કે બદંત દૃષ્ટીવાદમાં દશમું પૂર્વ પુરું થવા માટે હવે કેટલો સમય બાકી છે? આ સાંભળીને વજ્રસ્વામીએ કહ્યું કે, વત્સ ! દશમું પૂર્વ તો સમુદ્ર સમાન છે, આમાંથી તે તો માત્ર હજુ બીંદુ જેટલું જ શીખેલ છે. વજ્ર-સ્વામીની આ વાત સાંભળીને તેનું મન કાંઈક ખિન્ન થઈ ગયું અને કહેવા

शक्नोमि । वज्रस्वामी तु दशमपूर्वस्य स्वस्मिन्नेवावस्थानं ज्ञात्वा मौनमवलम्ब्य स्थितः । आर्यरक्षितो वज्रस्वामिगुरोरनुशया फल्गुरक्षितेन सह दशपुरनगरं समागतः । वज्रस्वामिना स्वापुरल्पं ज्ञात्वा तस्मै सुशिष्याचार्यरक्षिताय विहारसमये आचार्य-पदं प्रदत्तम् । अथार्यरक्षिताचार्यः स्वमातृभगिनीप्रमुखसांसारिकवर्गं प्रतिबोध्य प्रवज्यां ग्राहयामास । सोमदेवस्तु प्रतिबोधितोऽपि साधुवेपं नैव गृह्णाति, आर्य-रक्षिताचार्यस्तं दीक्षाग्रहणार्थं बहुशः कथयति । ततस्तस्य पिता सोमदेवः प्रार-वस्त्रयुग्मं, यज्ञोपवीतं, कमण्डलुं, छत्रं, पादुकां चापरित्यज्यैव मया दीक्षा ग्राह्या ।

हो गया और कहने लगे—भदन्त ! अब मैं इससे आगे बढ़ने के लिये समर्थ नहीं हूँ । वज्रस्वामी दशमपूर्व “मेरे हृदय में ही अवस्थित रहेगा” ऐसा जानकर पश्चात् चुप हो गये । आर्यरक्षित वज्रस्वामी गुरु की आज्ञा से फल्गुरक्षित के साथ विहार करके दशपुर नगर को आये । वज्रस्वामी ने अपनी आयु अल्प जानकर उन सुशिष्य आर्यरक्षित के लिये विहार के समय में आचार्य पद दे दिया था । आचार्य आर्यरक्षित ने अपनी माता वहिन आदि सांसारिक जनों को प्रतिबोधित कर उन्हें दीक्षा से दीक्षित कर दिये । अपने संसारी पिता सोमदेव को भी समझाया पर उन्होंने ने प्रतिबोधित होने पर भी दीक्षा धारण नहीं की । आचार्य आर्यरक्षित ने उनको अनेक बार बहुत २ भी कहा कि ‘आप दीक्षा स्वीकार करलो’ परन्तु उन्होंने ने साधुवेप अंगीकार नहीं किया । कहने लगे कि वस्त्रयुग्म, यज्ञोपवीत, कमण्डलु, छत्र एवं पादुका नहीं छोड़कर ही मैं दीक्षा ग्रहण

लाग्यो, भदन्त ! डूबे डूबे आनाथी आंगण शीथी शकुं तेम नथी. वज्रस्वामी दशमं पूर्व पोताना हृदयमां न अवस्थित रहेशे तेषुं नालीने चुप रह्या. आर्य-रक्षित वज्रस्वामी गुरुनी आज्ञाधी इदगुरक्षितनी साथे विहार करी दशपुर नगरमां आव्या. वज्रस्वामीओ पोतानी आयु अल्प नालीने विहार करवाना समये सुशिष्य आर्यरक्षितने आचार्य पद अपी दीधु. :आचार्य आर्यरक्षिते पोतानी माता, भडेन, वगेरे संसारी संजधीओने प्रतिबोधित करीने तेओने दीक्षा आपी दीक्षित कयां. पोताना संसारिक पिता सोमदेवने पणु समज्जव्या पणु तेओने प्रतिबोध करवा छतां पणु तेमणे दीक्षा ग्रहण न करी. आचार्य आर्यरक्षिते तेमने अनेकवार धणुं धणुं कहुं के, तमे दीक्षा लई ले. परंतु तेओओ साधुवेश अंगिकार न कर्यो. कडेवा लाग्या के, वस्त्रनी जेडी, यज्ञोपवीत, कमण्डलु,

આર્યરક્ષિતાચાર્યેણ સ્વપિતૃવૃદ્ધાવસ્થાયાં તારણબુદ્ધ્યા પૂર્વજ્ઞાને ઉપયોગં દત્ત્વા તથૈવાસૌ પ્રવાજિતઃ ।

અન્યદા કદાચિદ્ ગૃહસ્થચાલકાઃ સાધૂનાં વન્દનાર્થં તત્ર મંડલ્યાં સમાગતાઃ, આચાર્યઃ કચિદન્યત્ર તદાનીં ગતશ્વાસીત્, તત્ર સાધુભિરિદ્ધિતેન પ્રતિવોધિતાસ્તે ચાલકા વદન્તિ—ઇમં છત્રધરં મુક્ત્વાઽન્યાન્ સર્વાન્ સાધૂન્ વન્દામહે । ઇત્યુક્ત્વા તે ચાલકા એકં છત્રધરં તં વિહાય સર્વાન્ સાધૂન્ વન્દન્તે । તતઃ સોમદેવમુનિઃ પ્રાહ—એતે મમ પુત્રનપ્ત્રાદયઃ સર્વે યુગ્માભિર્વન્દિતાઃ, અહં કસ્માન્ વન્દિતઃ? કિં મયાદીક્ષા ન

કરૂંગા । અપને પિતા સોમદેવ કી યહ વાત સુનકર આર્યરક્ષિત આચાર્ય ને ઉન્હે વૃદ્ધાવસ્થા મેં તારણ કી ભાવના સે પૂર્વજ્ઞાન મેં ઉપયોગ દેકર અપને આગમવિહારી હોનેસે ઉસીરૂપ સે દીક્ષિત કર લિયા ।

કિસી એક સમય કી વાત હૈ કિ ગૃહસ્થોં કે ચાલક સાધુઓંકો વંદના નિમિત્ત વહાં મંડલી મેં આયે । આચાર્ય આર્યરક્ષિત કહીં દૂસરી જગહ ઉસ સમય ગયે હુએ થે । સાધુઓંકે ઇશારે સે પ્રતિવોધિત કિયે ગયે વે સબ ચાલક કહને લગે કિ—હમ લોગ ઇસ છત્રધારી સાધુકો છોડકર વાકી સમસ્ત સાધુઓંકો વંદના કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કહ કર વે સબકે સબ એક છત્રધારી મુનિકો છોડકર સબકો વંદના કરનેલગે । સોમદેવ મુનિને જવ યહ ચાલકોંકા વ્યવહાર દેસ્વા તો વોલે—કયોં ચાલકો !—તુમને હમારે ઇન પુત્રોં એવં નાતિયોં કો તો વંદના કી પર મુજે વંદના કયોં નહીં કી ? કયા મૈંને

છત્ર, અને પાહુકા છોડયા શિવાયજ હું દીક્ષા ગ્રહણ કરીશ. પોતાના પિતા સોમદેવની આ વાત સાંભળીને આર્યરક્ષિત આચાર્યે તેમની વૃદ્ધાવસ્થામાં તારવાની ભાવનાથી પૂર્વજ્ઞાનનો ઉપયોગ આપી પોતાના આગમ વિહારી હોવાથી તેવા રૂપથી દીક્ષિત બનાવ્યા.

કોઈ એક સમયની વાત છે કે ગૃહસ્થોનાં બાળકો સાધુઓની વંદના નિમિત્તે સાથે મળીને આવ્યા. આચાર્ય એ સમયે કોઈ બીજી જગ્યાએ ગયા હતા. સાધુઓએ ઇશારાથી દરેકને વંદના કરવા માટે તે બાળકોને કહ્યું. તો તે સઘળા બાળકો કહેવા લાગ્યા કે, અમે બધા આ છત્રધારી મુનિને છોડીને બાકી સમસ્ત સાધુઓને વંદના કરીએ છીએ એમ કહીને તે સઘળા બાળકો છત્રધારી મહારાજને છોડીને બીજા બધાને વંદના કરવા લાગ્યા. સોમદેવ મુનિએ બાળકોનો જ્યારે આ પ્રકારનો વહેવાર જોયો તો બોલ્યા કે હે બાળકો ! તમે મારા આ પુત્રો તેમજ સંબંધીઓને વંદના કરી તો મને કેમ વંદના કરી

ગૃહીતા ?, ચાલકા ઝુચુ:-કિં દીક્ષિતાઞ્છત્રધારિણઃ સ્યુઃ । એવમુત્ત્વા ગતેષુ વાણકેષુ  
 આર્યરક્ષિતાચાર્યસ્ત્ર સમાયાતઃ । તદાઽસૌ સોમદેવમુનિસ્તત્સમીપમાગત્ય વદતિ-  
 પુત્ર ! ચાલકા અપિ માં હસન્તિ, અલમનેન છત્રેણ, સ્ત્યુત્ત્વા તેન છત્રં પરિત્યક્તમ્ ।  
 એવમેકૈકં ક્રમેણ પરિત્યજતા તેન ધૌતિકવસ્ત્રમન્તરેણ સર્વં યજ્ઞોપવીતાદિકં પરિત્ય-  
 ક્તમ્, વહુશસ્ત્રયા વન્દનાકરણૈરુપહાસાદિ પ્રયોગૈશ્ચાપિ સ ધૌતિકં ન મુચ્ચતિ ।

મુનિદીક્ષા ધારણ નહાં કી હૈ ? । ચાલકોં ને ઉનકી હસ યાત કો સુનકર  
 શીઘ્ર હી નિસ્સંકોચ સે ઉત્તર દિયા કિ જો મુનિદીક્ષા સે દીક્ષિત હુઆ  
 કરતે હૈં કયા વે છત્રધારી હોતે હૈં ? । ચાલક એસા કહ કર ચલે ગયે હતને  
 મેં હી વહાં વાહર સે આર્યરક્ષિત આચાર્ય આ પહુંચે । આચાર્ય કો આયે  
 દેવકર સોમદેવ મુનિ ને ઉનકે પાસ જાકર કહા પુત્ર ! દેવો તો સહી-  
 ઘાલક ભી મેરી હૈંસી મજાક કરતે હૈં-કહતે હૈં કિ મુનિં કહીં છત્રધારી  
 ભી હોતે હૈં । અતઃ હસ છત્ર કી મુજ્જે અવ જરૂરત નહીં હૈં । એસા કહકર  
 સોમદેવ ને છત્રકા પરિત્યાગ કર દિયા । હસી તરહ ક્રમશઃ ઓર ભી  
 ગૃહીત વસ્તુઓંસે અપની મુનિ અવસ્થા મેં હૈંસી હોતી હુઈ જાનકર ઉન્હોં ને  
 ધોતીજોડે કે સિવાય અન્ય સમસ્ત જનેઝ આદિ વસ્તુઓં કા પરિત્યાગ  
 કર દિયા । યદ્યપિ ધોતી કે રક્ષને સે લોગ ઉનકા ઉપહાસ ભી કરતે થે  
 તૌ ભી વે ઉસે નહીં છોડ સકે ।

નહીં ? શું મેં મુનિદીક્ષા ધારણ નથી કરી ? 'બાળકોએ તેની આ વાત  
 સાંભળીને તરત જ નિઃસંકોચથી જવાબ દીધો કે, જે મુનિદીક્ષા લે છે તેઓ  
 છત્રધારી હોય છે ખરા ? બાળકો આ પ્રમાણે કહીને ચાલ્યાં ગયાં એવા સમયે  
 બહાર ગયેલા આર્યરક્ષિત આચાર્ય આવી પહોંચ્યા. આચાર્યને આવેલા બેઠને  
 સોમદેવ મુનિએ તેમની પાસે જઈને કહ્યું. પુત્ર બુદ્ધો તો ખરા ! બાળકો  
 પણ મારી હાંસી મજાક કરે છે. કહે છે કે, મુનિ કયાંય છત્રધારી હોય છે  
 ખરા ! આથી આ છત્રની હવે મને જરૂરત નથી એમ કહીને સોમદેવે તે છત્રનો  
 પરિત્યાગ કરી દીધો. આ પ્રમાણે ક્રમે ક્રમે તેમણે ગ્રહણ કરેલી વસ્તુઓથી  
 પોતાની મુનિ અવસ્થામાં હાંસી થતી બાળીને તેમણે ધોતીનેટા સિવાય  
 બીજી સમસ્ત જનોઈ આદિ વસ્તુઓનો પરિત્યાગ કરી દીધો. એમ છતાં પણ  
 ધોતીના રાખવાથી લોકો તેમનો ઉપહાસ કરતા હતા. છતાં પણ તેઓ તેને  
 છોડી શક્યા નહીં.



અન્યદા કદાચિદેકઃ સાધુરનશનતપશ્વરણેન સ્વર્ગં ગતઃ । તત આર્યરક્ષિતાચાર્યેણ તસ્ય સોમદેવમુનેર્ધૌતિકપરિત્યાજનાર્થં સાધવોઽભિહિતાઃ-ય એનં સાધુમૃતકં સ્કન્ધેન વહતિ તસ્ય મહતી નિર્જરા ભવતિ । તદનન્તરં સ સોમદેવમુનિર્વદતિ-પુત્ર ! અત્ર નિર્જરા ભવતિ કિમ્ । આર્યરક્ષિતાચાર્ય આહ-સત્યમ્, તતઃ સ વદતિ-અહં વહામિ । આચાર્યઃ પ્રાહ-અત્રોપસર્ગાં વહવો જાયન્તે, કતિચિદ્ વાલકાસ્તસ્ય સંલગ્ના ભવન્તિ, તત્ર તૂષ્ણીભાવ આશ્રયણીયઃ, કોપો ન કર્ણીયઃ, સ્વીકૃતકાર્યં સર્વથા સં-પાદનીયમ્, યદિ સકલા ઉપસર્ગાઃ શક્યન્તે સોદુમ્, તદા શ્રેયઃ, અન્યથાઽસ્માકમ-

કોઈ એક દિન કી વાત હૈ કિ એક સાધુ અનશન સે કાલધર્મ પાવે । આર્યરક્ષિત આચાર્ય ને સોમદેવ મુનિ કી ધોતી છુડાને કે અભિપ્રાય સે સાધુઓં સે કહા કિ જો હસ મૃતક સાધુ કો અપને કંધે પર આરોપિન કર લે જાયગા ઉસકે લિયે મહાન્ નિર્જરા હોગો । યહ વાત સુનકર સોમદેવ મુનિને કહા કિ પુત્ર ! કયા હસ કાર્ય કે કરને મેં નિર્જરા હોતી હૈ ? । આચાર્ય ને કહા-હાં હોતી હૈ । સોમદેવ ને કહા તો હસે કંધે પર રખકર મેં લે જાઁગા । આચાર્ય ને કહા કિ દેલો-એસા કરને મેં વહુત વિઘ્ન આતે હૈ-કિતનેક વાલક દેલતે હી ઉસકે પીછે લગ જાતે હૈ, હૈંસી ઉડાતે હૈં સો ઉસમેં શાંતિભાવ રખના પડતા હૈ । ક્રોધ નહીં કરના પડતા હૈ । તથા જિસ કાર્ય કો કરને કા આરંભ કિયા જાતા હૈ ઉસે અન્તતક નિભાના પડતા હૈ । યદિ હન સવ વિઘ્નોં કો સહન કરને કે લિયે અપને કો શક્તિશાલી સમજતે હો તો હી હસમેં શ્રેય હૈ અન્યથા હમસવ લોંગોં કા

એક વખતે એક સાધુ અનશનથી કાળધર્મ પામ્યા, આર્યરક્ષિત આચાર્યે સોમદેવ મુનિને ધોતી છોડાવવાના ભાવથી સાધુઓને કહ્યું કે, જે કોઈ આ મૃત્યુ પામેલા સાધુને પોતાની કાંધ ઉપર લઈને જશે તેમના માટે મહાન નિર્જરા થશે. આ વાત સાંભળીને સોમદેવ મુનિએ કહ્યું કે હે પુત્ર ! શું આ કાર્ય કરવામાં નિર્જરા થાય છે ? આચાર્યે કહ્યું કે, હા ! થાય છે. સોમદેવે કહ્યું કે, તો હું એને કાંધ ઉપર ઉપાડીને લઈ જઈશ. આચાર્યે કહ્યું કે, જુઓ ! આમ કરવામાં બહુ વિઘ્ન આવે છે. કેટલાક બાળકો દેખતાં જ તેમની પાછળ પડે છે, હસી ઉડાવે છે, તો આમાં શાન્તી ભાવ રાખવો પડે છે. ક્રોધ આવવો ન જોઈએ તથા જે કાર્ય કરવાનો આરંભ કર્યો છે તેને અન્ત સુધી નભાવવું પડે છે. જે આ બધા વિઘ્નોને સહન કરવા માટે આપ આપને શક્તિશાળી માનતા હો તો જ તેમાં શ્રેય છે. નહિતર અમારા સઘળા લોકોનું તેમાં અનિષ્ટ

शुभं भविष्यति । एवं प्रवर्तितोऽसौ मृतकं साधुं स्कन्धे समारोप्य साधुभिः सह वहति । मार्गे मृतकं वहतस्तस्य श्रौतिकं बालकैराचार्यसंकेति तैराकर्णितम् । स लज्जा-वशात् मृतकं स्कन्धादवतारयति तावदन्यैः साधुभिरुक्तम्—मा शुभ, मा शुभ, तदा तस्य कट्यां केनचित्साधुना स्वसार्धमानीतचोलपट्टको बद्धः, स तु लज्जया तं शयं वहन् निर्जने वने प्रासुकस्थण्डिले तं व्युत्सृज्याचार्यसमीपमागतो ब्रूते—हे

इसमें अनिष्ट हो जायगा । इस प्रकार समझाने पर जब सोमदेव संभल गये तो उन्होंने ने उस शव को उठाकर अपने कंधे पर रख लिया और साधुओं के साथ चले । मार्ग में मृतकसाधु को वहन किये हुए सोमदेव को देखकर बालकों ने :उनकी आचार्यआर्यरक्षिन के संकेत करने पर धोती खींच ली । अपनी धोती उतारी हुई देखकर उन्हें नग्न होने की वजह से बड़ी लज्जा का अनुभव होने लगा । उन्होंने ने चाहा कि इस मृतकसाधु के शव को कंधे से नीचे उतार कर बालकों से अपनी धोती छुड़ा लो जाय । ज्यों ही वे ऐसा करने को उद्यत हुए कि इतने में ही साधुओं ने कहना प्रारंभ कर दिया कि इसे नीचे मत उतारो मत उतारो । और इसी के भीतर ही किसी साधु ने जो चोलपट्टा उनके पहिराने के लिये पहिले से साथ ले आया था उन्हें पहिरा दिया । लज्जा से उस साधु के शव को वहन करते हुए सोमदेव ने निर्जन वन में उस शव को प्रासुक भूमि पर उतार दिया, और आचार्य महाराज के

थઈ જશે. આ પ્રમાણે સમજાવવાથી જ્યારે સોમદેવ સંભળ ગયા ત્યારે તેમણે તે શબને ઊઠાવી પોતાની કાંધ ઉપર રાખી લીધું અને સાધુઓની સાથે ચાલ્યા. માર્ગમાં મરેલા સાધુને ઉપાડી જતા સોમદેવને જોઈને બાળકોએ આચાર્ય આર્યરક્ષિતના ઇસારાથી તેમની ધોતી ખેંચી લીધી. પોતાની ધોતી નીકળી ગયેલી જાણીને તેમને નગ્ન થવાના કારણે ઘણી લજ્જાનો અનુભવ થવા લાગ્યો. તેઓએ ઇચ્છ્યું કે, આ મરેલા સાધુના શબને કાંધથી નીચે ઉતારી બાળકો પાસેથી મારી ધોતી છોડાવી લઉં જ્યાં તેઓ એવું કરવાને ઉદ્યત બન્યા એટલામાં જ સાધુઓએ કહેવાનો પ્રારંભ કર્યો કે, તેને નીચે ન ઉતારો એક તરફથી આમ કહેવાયું એજ વખતે એ સાધુઓમાંથી એક સાધુએ ચોલપટ્ટો તેને પહેરાવવા માટે અગાઉથી જ સાથે રાખેલ તે પહેરાવી દીધો. લજ્જાથી એ સાધુના શબને વહન કરતાં સોમદેવે નિર્જન વનમાં એ શબને પ્રાસુક ભૂમિ ઉપર ઉતારી દીધું અને આચાર્ય મહારાજની સમીપ આવીને

પુત્ર ! અથ મહાનુપસર્ગો જાતઃ, તથાપિ સર્વં કાર્યં ભવત્કથનાનુસારેણ મયા સંપાદિતમ્ । આચાર્યોઽન્યં મુનિં પ્રતિ પ્રાહ-ધૌતિકમાનીયાસ્મૈ દીયતામ્ તદા સ વૃદ્ધોઽવદત્-ઇદાનીમર્લ ધૌતિકવસ્ત્રેણ, યદ્ દ્રષ્ટવ્યં તદ્ દૃષ્ટમેવ, અતઃ પરમયં ચૌલપટ્ટક એવ મમ દેહે તિષ્ઠતુ । અથપ્રભૃતિ નવીનવસનં નૈવ પરિધાસ્યામિ, અન્યસાધુવ્યાપૃતમેવ વસ્ત્રં ગ્રહીષ્યામ, એકેનૈવ પ્રાવરણેન, એકે નૈવ ચોલપટ્ટકેન સંયમયાત્રા નિર્વાહં કરિષ્યામિ । એવમેવાસૌ વિહરન્નવીનવસ્ત્રાનાકાઙ્ગયા દ્વિતીયપ્રાવરણચોલપટ્ટાનાકાઙ્ગયા ચ જીર્ણશીર્ણવસ્ત્રહેતુકદૈન્યાદ્યકરણેન ચાચૈલપરીપહં સહતે સ્મ । એકદા-

સમીપ આકર કહને લગે-હે પુત્ર ! આજ વડા ભારી ઉપસર્ગ ઉપસ્થિત તો હુઆ થા, પરન્તુ આપકે કથનાનુસાર મૈને સર્વ કાર્ય યથાવસ્થિત સંપાદિત કર દિયા હૈ । આચાર્ય ને ઉસી સમય એક મુનિ સે કહા કિ-ધોતી લાકર ઇન્હે દે દો । આચાર્ય મહારાજ કી વાત સુનકર સોમદેવ ને કહા કિ અવ ધોતી સે વસ કરો । ઇસકી અવ આવશ્યકતા નહીં રહી હૈ । જો કુછ દેખના થા વહ દેખ લિયા હૈ, ઇસ લિયે યહ ચૌલપટ્ટા હી અવ મેરે શરીર પર રહે યહી ભાવના હૈ, તથા મૈ આજ સે નવીન વસ્ત્ર નહીં પહિરૂંગા, તથા અન્ય સાધુઓ દ્વારા ઉપમુક્ત વસ્ત્ર હી ગ્રહણ કરૂંગા, એક હી પ્રાવરણ સે એક હી ચોલપટ્ટક સે સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કરૂંગા । ઇસ પ્રકાર સોમદેવ મુનિ વિહાર કરતે હુએ નવીન વસ્ત્ર કી અનાકાંક્ષા સે તથા દ્વિતીય પ્રાવરણ (ચાદર) એવં દ્વિતીય ચોલપટ્ટક કી અનિચ્છા સે જીર્ણશીર્ણવસ્ત્ર હેતુક દીનતા કે નહીં કરને સે અચૈલપરીપહ કો સહતે

કહેવા લાગ્યા હે પુત્ર ! આજ ધણે ભારે ઉપસર્ગ ઉપસ્થિત થયે હો, પરંતુ તમારા કથન અનુસાર મેં સધળું કાર્ય યથાવસ્થિત સંપૂર્ણ કરેલ છે. આચાર્ય એજ વખતે એક મુનિને કહ્યું કે, ધોતી લાવીને આમને આપી દો. આચાર્ય મહારાજની વાત સાંભળીને સોમદેવે કહ્યું કે, હવે ધોતીથી બસ કરો. મારે હવે તેની આવશ્યકતા નથી. જે કાંઈ ભેષ્ટ હોતું તે ભેષ્ટ લીધું છે. જેથી આ ચોલપટ્ટોજ મારા શરીર ઉપર રહે એજ ભાવના છે. તથા હું આજથી નવીન વસ્ત્ર પહેરવાનો નથી. અને બીજા સાધુઓ દ્વારા વપરાયેલા વસ્ત્રોનો હું અંગિકાર કરીશ. એક જ પ્રાવરણથી, એક જ ચોલપટ્ટાથી સંયમ યાત્રાનો નિર્વાહ કરીશ. આ પ્રકારે સોમદેવ મુનિ વિહાર કરતા કરતા નવા વસ્ત્રોની આકાંક્ષા વગર તથા બીજા પ્રાવરણ આદર અને બીજા ચોલપટ્ટાની અનિચ્છાથી ભૂષ્ટ શીષ્ટ વસ્ત્રથી દિનતા ન બતાવતા અચૈલપરીપહ સહન કરતા રહ્યા. એક

ઽતિશયિતં હિમં સમાપતિતમ્ તથાપ્યેકમાત્રં પ્રાવરણમસૌ દધાતિ ન તુ દ્વિતીયક્ષ્મ  
 ગૃહ્ણતિ, તસ્મિન્નેવ જીર્ણશીર્ણં પ્રાવરણે પ્રોત્સાહસમ્પન્નેન મનસાઽચેલપરીપહં  
 સહમાનઃ સમાધિભાવેન કાલધર્મં પ્રાપ્ય દેવલોકં ગતઃ । એવં તેન યથા-અચેલપરીપહઃ  
 સોઢસ્તથૈવાન્યૈરપિ સાધુભિઃ સર્વદાઽચેલપરીપહઃ સોઢવ્ય એવ ॥૧૩॥

અચેલકસ્ય શીતાદિભિઃ સ્પૃષ્ટસ્યારતિઃ સ્વાત્, અતસ્તત્પરીપહઃ પ્રાદ-  
 મૂલમ્—ગામાણુગામં રીયંતં, અર્ણગારં અર્કિચ્ચેણં ।

અરંઈ અણુપ્પવેસેજ્જા, તં તિતિવ્સે પરીસહં ॥૧૪॥

છાયા—ગામાણુગામં રીયમાણમ્, અનગારમ્ અર્કિચ્ચનમ્ ।

અરતિઃ અનુપવિશેત્, તં તિતિક્ષેત પરીપહમ્ ॥ ૧૪ ॥

ટીકા—‘ગામાણુગામં’ ઇત્યાદિ ।

ગામાણુગામમ્-ગ્રામમ્ અનુ, ગ્રામાત્ પશ્ચાત્, ગ્રામાનન્તરવર્તી યો ગ્રામઃ સ

રહે । એક દિન કી વાત હૈ કિ શીતકાલ મેં અત્યન્ત હિમ ગિરા તૌ બી  
 ઇન્હોં ને દ્વિતીય પ્રાવરણ ધારણ કરને કી સ્વપ્ન મેં બી ઇચ્છા નહીં કી  
 કિન્તુ એક હી પ્રાવરણ સે. ઉસ હિમ કા સામના કિયા । જીર્ણ શીર્ણ  
 ઉસ પ્રાવરણ મેં હી પ્રોત્સાહસંપન્ન ચિત્ત સે અચેલપરીપહ કો સહન  
 કરતે હુએ. ઉન સોમદેવ મહાત્માને સમાધિભાવ સે કાલધર્મ પાકર દેવ-  
 લોક કો પ્રાપ્ત કિયા ।

હસ કથા કે કહને કા કેવલ એક યહી પ્રયોજન હૈ કિ દેહો  
 સોમદેવ મુનિરાજ ને પહિલે અચેલપરીપહ નહીં સહા, પશ્ચાત્ પ્રતિબોધિત  
 હોને પર ઉસ પરીપહકો અધિક પ્રોત્સાહ કે સાથ સહન કિયા । હસ તરહ  
 અન્ય સાધુઓં કો બી અચેલપરીપહ સહન કરના ચાહિયે ॥ ૧૩ ॥

દિવસની વાત છે કે, ઠંડીના સમયે અત્યંત હિમ પડ્યું તો પણ તેઓએ બીજું  
 પ્રાવરણ કરવાની સ્વપ્નમાં પણ ઇચ્છા ન કરી. પરંતુ એક જ પ્રાવરણમાં જ ઉત્સાહ  
 સંપન્ન ચિત્તથી અચેલ પરીપહને સહન કરીને તે સોમદેવ મહાત્માએ સમાધિ  
 ભાવથી કાળધર્મ પામી દેવલોક ને પ્રાપ્ત કર્યો.

આ કથા કહેવાનું કેવળ એક જ પ્રયોજન છે કે, જુઓ, સોમદેવ મુનિએ  
 પહેલાં અચેલપરીપહ ન સહ્યો પાછળથી પ્રતિબોધ પામતાં તેમણે એ પરીપહને  
 અધિક ઉત્સાહથી સહન કર્યો. અન્ય સાધુઓએ પણ એમની માફક  
 અચેલપરીપહ સહન કરવો જોઈએ (૧૩)

ગ્રામાનુગ્રામસ્તમ્ । નગરાદ્યુપલક્ષણમેતત્ , નગરાદિકં ચેત્યર્થઃ । રીયમાણં=વિહર-  
માણમ્ , અકિચ્ચનં=નિષ્પરિગ્રહમ્ , અનગારં=મુનિમ્ અરતિઃ=સંયમવિપયિકાઽધૃતિઃ  
મોહનીયકર્મોદયજનિતા સંયમારુચિરૂપાઽઽત્મપરિણતિઃ અનુપ્રવિશેત્=પ્રવિષ્ટા ભવેત્-  
મુનેર્મનસિ પ્રાપ્તા ભવેત્ , તમ્=અરતિરૂપં પરીપદં તિતિક્ષેત=અરતિરૂપસ્ય મનઃ  
પરિણામસ્ય કટુકફલં ચિક્ષણકર્મવન્ધનં ચતુર્ગતિકસંસારપરિભ્રમણં ચ વિજ્ઞાય  
મનસસ્તન્નિરાકરણેન સદેત ॥

અચેલક કે શીત આદિ દ્વારા સતાયે જાને પર અરતિ મી હો સક્તી  
હૈં ફસલિયે સાતવેં અરતિપરીપદ્દ કો સહને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં ।

‘ ગામાણુગામં ’ ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ- (ગામાણુગામં રીયતં-ગ્રામાનુગ્રામં રીયમાણમ્) એક ગાંવ સે  
દૂસરે ગાંવ તથા ઉપલક્ષણ સે એક નગર સે દૂસરે નગર વિહાર કરતે હુણ  
તથા ( અકિચ્ચનં-અકિચ્ચનમ્ ) અકિચ્ચન-પરિગ્રહરહિત એસે ( અનગારં-  
અનગારમ્ ) મુનિ કો (અરદ્ અણુપ્પવેસેજ્જા-અરતિઃ અનુપ્રવિશેત્ ) યદિ  
અરતિ-સંયમમેં અરુચિ અર્થાત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે હોનેવાલી જો  
સંયમઅરુચિરૂપ આત્મપરિણતિ, તથા સંયમમેં અધૃતિ જાગ્રત હો જાવે  
તો મુનિ કો કર્તવ્ય હૈં કિ વહ (તં પરીપદં તિતિક્ષે-તં પરીપદં તિતિ-  
ક્ષેત) ઉસ પરીપદ્દ કો શાંતિ કે સાથ સહન કરે । “ અરતિરૂપ ફસ માન-  
સિક પરિણતિ કો ફલ ચિક્ષણકર્મવન્ધરૂપ હૈં ઓર ઉસસે જીવ કો

અચેલકમુનીને શીતઆદિ સતાવે ત્યારે અરતિ પણ થવાનો સંભવ છે  
તેથી જમા અરતિપરીપદ્દને સહન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે.

‘ ગામાણુગામં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ-ગામાણુગામં રીયતં-ગ્રામાનુગ્રામં રીયમાણમ્ એક ગામથી બીજા ગામ  
તથા ઉપલક્ષણથી એક નગરથી બીજાનગર વિહાર કરતા અકિચ્ચનં-અકિચ્ચનમ્ તથા  
અકિચ્ચન-પરિગ્રહ રહિત એવા અનગારં-અનગારમ્ મુનિને કહાય અરદ્  
અણુપ્પવેસેજ્જા-અરતિ અનુપ્રવિશેત્ અરતિ-સંયમમાં અરુચિ અર્થાત્ મોહનીય કર્મના  
ઉદયથી થનારી જે સંયમ અરુચિ રૂપ આત્મપરિણતિ-તથા સંયમમાં અધૃતિ, જાગૃતિ  
થઈ જાય તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તે મુની તંપરિપદં તિતિક્ષે-તંપરીપદં તિતિક્ષેત  
એ પરિપદ્દને શાંતિની સાથે સહન કરે “ અરતિ રૂપ આ માનસિક પરિણતિનું  
ફળ ચિક્ષણ કર્મબંધ રૂપ છે. અને તેનાથી જીવનું ચતુર્ગતિરૂપે સંસારમાં



‘ગામાનુગામં રીયંતં’ ઇત્યનેન રાગાદિનિવૃત્તિઃ સૂચિતા ।

‘અર્કિચણં’ ઇત્યનેન મમત્વરહિતત્વં પ્રવેદિતમ્ ।

‘અરહં અણુપ્પવેસેજ્જા’ ઇત્યનેન શબ્દાદિવિષયાણા પ્રવલતા પ્રદર્શિતા ।

‘તિતિક્ખલે’ ઇત્યનેનાનગારસ્ય પરીપહસહિષ્ણુતા સૂચિતા ॥ ૧૪ ॥

ઉક્તમર્થ દ્રઢ્યભાદ—

મૂલમ્—અરંઙં પિટ્ઠેઓ કિંચા, વિરઔ આયરંકિલ્લપ્ ।

ધર્મમારામે નિરારંભે, ઉવંસંતે, મુંળી ઘંરે ॥ ૧૫ ॥

છાયા—અરતિ પૃષ્ઠતઃ કૃત્વા, વિરતઃ આત્મરક્ષિતઃ ।

ધર્મારામે નિરારમ્ભઃ, ઉપશાન્તઃ મુનિશ્ચરેત્ ॥ ૧૫ ॥

ટીકા—‘અરંઙં’ ઇત્યાદિ ।

વિરતઃ=હિંસાદિભ્યો નિવૃત્તઃ, આત્મરક્ષિતઃ—આત્મા રક્ષિતઃ નરકનિગોદાદિ-

ચતુર્ગતિક સંસાર મેં પરિભ્રમણ હોતા હૈ” યહ સમક્ષકર હસ સંયમ વિષયક અરતિ કો સાધુ મનસે ખી હટાતે રહે ।

સૂત્રકાર ને “ગામાનુગામં” હસ પદ સે રાગાદિક કી નિવૃત્તિ સૂચિત કી હૈ । “અર્કિચણં” હસ પદ સે મુનિ કો મમત્વરહિત પ્રદર્શિત કિયા હૈ ॥ “અરહં અણુપ્પવેસેજ્જા” હસ પદ સે શબ્દાદિક વિષયોં કી પ્રવલતા પ્રકટ કી હૈ । “તિતિક્ખલે” હસસે ‘અણગાર કો પરીપહ સહિષ્ણુ હોના ચાહિયે’ યહ કહા હૈ ॥ ૧૪ ॥

હસી અર્થ કો દઢ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘અરંઙં પિટ્ઠેઓ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(વિરઔ-વિરતઃ) હિંસાદિક પાપોંસે વિરક્ત તથા (આયર-વિલ્લપ્-આત્મરક્ષિતઃ) નરકનિગોદાદિકકે દુઃખોંકે જનક અશુભ ધ્યાનસે

પરિભ્રમણ થાય છે. એવું સમજીને આ સંયમ વિષયક અરતિને સાધુએ મનથી પણ હટાવવી જોઈ એ.

સૂત્રકારે ગામાનુગામં આ પદથી રાગાદિકની નિવૃત્તિ સૂચિત કરેલ છે.

અર્કિચણં—આ પદથી મુનિને મમત્વ રહિત પ્રદર્શિત કરેલ છે. અરહં અણુપ્પવેસેજ્જા આ પદથી શબ્દાદિક વિષયોની પ્રબળતા પ્રગટ કરેલ છે. “તિતિક્ખલે” આથી અણુગારે પરીપહ સહિષ્ણુ બનવું જોઈ એ તેમ કહ્યું છે. ॥૧૪॥

આ અર્થને દ્રઢ કરતા સૂત્રકાર કહે છે. અરંઙં પિટ્ઠેઓ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—વિરઔ-વિરતઃ હિંસાદિક પાપોથી વિરક્ત તથા આયરવિલ્લપ્-આત્મરક્ષિતઃ નરક નિગોદાદિકના દુઃખના જનક એવા અશુભ ધ્યાનથી ચોતાના આત્માની રક્ષા

દુઃસ્વજનકાદશુભધ્યાનાદ્ યેન સ તથા, યદ્વા-આયરક્ષિત ઇતિચ્છાયા, આયઃ-  
રત્નત્રયસ્ય લાભઃ, રક્ષિતો યેન સ તથેત્યર્થઃ । નિરારમ્ભઃ=સાવધક્રિયાવર્જિતઃ, તથા  
ઉપશાન્તઃ=ક્રોધાદિકપાયોપશમાદ્ મનોવાકાયવિકારવર્જિતઃ મુનિઃ, અરતિ પૃથ્તઃ  
કૃત્વા=ઇયં ધર્મવિરાધિકેતિ મત્વા પરિત્યજ્ય ધર્મારામે ચરેત્, ઇત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ ।

અરતિર્હિ ધૂલિરિવાત્માનં મલિનયતિ, જલદપટલાવલીસંકુલા ગાઢતિમિરપરિ-  
વ્યાપ્તા રજનીવ વિવેકં સંહરતિ, અવિવેકં વૃદ્ધયતિ, વજ્રમિવ જ્ઞાનાદિગુણાનુપધાત-  
યતિ, અવિવેકિજનમનઃકાનનનિવાસિની કૃષ્ણસર્પિણીવ છિદ્રાન્વેષણપરા મુનીનાં

અપની આત્મા કી રક્ષા કરને વાલા અથવા “આયરક્ષિતઃ” રત્નત્રય-  
લાભરૂપ આય-આવક કી રક્ષા કરને વાલા-સંભાલ રાખનેવાલા, તથા  
(નિરારંભે-નિરારંભઃ) સાવધ ક્રિયા કે સેવન સે વર્જિત, તથા (ઉવસંતે-  
ઉપશાન્તઃ) ક્રોધાદિક કપાય કે ઉપશમ સે મન વચન એવં કાય  
સંબંધી વિકારો સે રહિત (મુણી-મુનિઃ) સાધુ (અરહં પિઠ્ઠુઓ કિચ્ચા-  
અરતિ પૃથ્તઃ કૃત્વા) અરતિ કા પરિત્યાગ કર (ધર્મારામે-ધર્મારામે)  
ધર્મરૂપી ઉદ્યાન મેં (ચરે-ચરેત્) સદા લવલીન રહે-ઉસ મેં સર્વદા  
વિચરતા રહે ।

યહ અરતિભાવ ધૂલી કી તરહ આત્મા કો મલિન કરતા હૈ ।  
વાદલોં કે સમૂહ સે સંકુલ એવં ગાઢ અન્ધકાર સે વ્યાપ્ત રાત્રી કે  
સમાન યહ વિવેકરૂપી સૂર્ય કો આચ્છાદિત કરદેતા હૈ, એવં અવિવેક-  
રૂપી અન્ધકાર કી વૃદ્ધિ કરતા હૈ । વજ્ર કી તરહ જ્ઞાનાદિક ગુણરૂપ  
પર્વત કા ભેદન કરતા હૈ । યહ અરતિભાવ અવિવેકી જન કે મનરૂપ

કરવાવાળા અથવા “આયરક્ષિતઃ” રત્નત્રય લાભરૂપ આય-આવકની રક્ષા કરવા-  
વાળા-સંભાળ રાખવાવાળા નિરારંભે-નિરારંભઃ તથા સાવધ ક્રિયાના સેવનથી  
વર્જિત ઉવસંતે-ઉપશાન્તઃ ક્રોધાદિક કપાયના ઉપશમથી મન વચન અને કાય  
સંબંધી વિકારોથી રહિત મુણી-મુનિઃ સાધુ અરહં પિઠ્ઠુઓ કિચ્ચા-અરતિ પ્રથ્થતઃ  
કૃત્વા અરતિનો ત્યાગ કરી ધર્મારામે-ધર્મારામે ધર્મરૂપી ઉદ્યાનમાં ચરે-ચરેત્  
એમાં સદા વિચરતા રહે.

આ અરતિભાવ ધુળી માફક આત્માને મલીન કરે છે. વાદળોના સમૂહથી  
છવાયેલ અને ગાઢ અંધકારથી વ્યાપ્ત રાત્રિના સમાન એ વિવેકરૂપી સૂર્યને  
આચ્છાદિત કરે છે, અને અવિવેકરૂપી અંધકારની વૃદ્ધિ કરે છે. વજ્રની માફક  
જ્ઞાનાદિક ગુણરૂપ પર્વતનું ભેદન કરે છે. આ અરતિભાવ અવિવેકી માણસના

સંયમપ્રાણાનપહરતિ, કુઠાર ઇવ શ્રુતચારિત્રધર્મતરૂન્ સમુચ્છેદયતિ, કુપથ્યારાર સ્વ  
કર્મવ્યાધિ વર્ધયતિ । एवं विचिन्त्य धर्मारामे=धर्म एव निरन्तरानन्दहेतुतया  
प्रतिपालयतया चारामः धर्मारामः, यद्वा-धर्म आराम इव कर्मसंतापोपतप्तानां  
जन्तूनां निर्वृतिहेतुतया स्वाभिलषितफलप्रदानतथेति धर्मारामः, यत्र सम्यक्त्वं भूमिः,

વન મેં વિહાર કરને ચાલા છે, કૃષ્ણસર્પ કી तरह છિદ્રાન્વેષણ મેં તત્પર  
રહતા છે, एवं मुनियों के संयमरूपी प्राणों का हरण करने वाला है ।  
कुठार की तरह श्रुतचारित्ररूपी वृक्ष को यह मूलसे उच्छेदन करता है ।  
कुपथ्य आहार की तरह कर्मबन्धरूपी व्याधिको बढ़ाने वाला है । इस  
प्रकार विचार करके साधु को इस धर्मरूपी उद्यान में विचरण  
करते रहना चाहिये । उद्यान जिस प्रकार अपने में विचरण करने  
वालों को आनंद का हेतु होता है, उसी प्रकार यह धर्म भी अपने  
आराधकों को आनन्द का कारण होता है, तथा उद्यान जिस प्रकार  
प्रतिपाल्य-रक्षण करने के योग्य होता है उसी प्रकार जीवन को सुन्दर  
बनाने वाला होने से धर्म भी प्रतिपाल्य-करने योग्य होता है । अथवा  
धूप से संतप्त प्राणियों के लिये उद्यान जिस प्रकार शीतलता प्रदान  
करता है उसी प्रकार कर्मरूपी आताप के संताप से संतप्त प्राणियों को  
शांति का हेतु होने से एवं अभिलषित फल का देनेवाला होने से धर्म  
भी एक उत्तम उद्यान के समान यहां प्रकट किया गया है । इस उद्यान

મનરૂપી વનમાં વિહાર કરનાર છે. કાળા સાપની માફક ડંશ દેવામાં તત્પર  
રહે છે, અને મુનિયોના સંયમરૂપી પ્રાણોનું હરણ કરનાર છે. કુડાડારૂપે શ્રુત  
ચારિત્રરૂપી વૃક્ષનું એ મૂળસાથે ઉચ્છેદન કરે છે, કુપથ્ય આહારની માફક કર્મ  
બંધરૂપી વ્યાધિને વધારનાર છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને સાધુએ ધર્મરૂપી  
ઉદ્યાનમાં વિચરણ કરતા રહેવું જોઈએ.

ઉદ્યાન જેમ તેની અંદર ફરનારાઓને આનંદ આપવાવાળું છે તેજ પ્રમાણે  
ધર્મ પણ પોતાના આધારરૂપ સાધુ માટે આનંદનું કારણ હોય છે. તથા ઉદ્યાન  
જેમ પ્રતિપાલ્ય-રક્ષણ કરવાને યોગ્ય છે તેજ પ્રમાણે જીવનને સુંદર બનાવવાળા  
ધર્મને પણ પ્રતિપાલ્ય-પાલન કરવાને યોગ્ય છે. અથવા ધૂપથી સંતપ્ત બનેલા  
પ્રાણીઓને ઉદ્યાન જેમ શીતળતા આપે છે તેજ પ્રમાણે કર્મરૂપી આ તાપથી  
સંતપ્ત થયેલા પ્રાણીઓને માટે શાંતિનો હેતુ હોવાથી અભિલષિત ફળને દેનાર  
ધર્મને એક ઉદ્યાન રૂપથી અહિં બતાવવામાં આવેલ છે. આ ઉદ્યાનમાં સમ્યક્ત્વ

ગુપ્તિરાલવાલઃ, સમિતિઃ પાલી, ક્ષાન્ત્યાદયો ધર્મા એવ વૃક્ષાઃ, વિનયસ્તેષાં મૂલમ્, ભાવના સલિલમ્, શ્રુતમેવ સ્કન્ધઃ ધર્મશુક્લધ્યાનરૂપાઃ શાખાઃ, ધ્યાન-ભેદાઃ પ્રશાખાઃ, યોગસંગ્રહાઃ પત્રાણિ, જ્ઞાનાદિગુણાઃ પુષ્પાણિ, સ્વર્ગપવર્ગપ્રાપ્તિઃ ફલમ્, તદ્ગતં સુખં રસઃ, તસ્મિન્ ધર્મારામે ચરેત્=વિચરેત્, અરતિં નિરાકૃત્ય સ્વાધ્યાયધ્યાનેષુ પરાયણો ભવેદિત્યર્થઃ ॥

‘અરહં પિઢ્ઢાઓ કિચ્ચા’ ઇત્યનેન મુનેરાત્મવલસંપન્નત્વં સૂચિતમ્ ।

‘વિરણ’ ઇત્યનેન મુનેવૈરાગ્યદશા પ્રદર્શિતા ।

મેં સમ્યક્ત્વ તો ભૂમિ હૈ, ગુપ્તિયાં ક્યારિયાં હૈં, સમિતિયાં હી પાલિયાં હૈં, ક્ષાન્ત્યાદિક ધર્મ વૃક્ષ હૈ, એવં ડન વૃક્ષોં કા મૂલ વિનય હૈ । ભાવના-રૂપી જલ સે વે સદા હરે-ભરે રહતે હૈં । શ્રુતજ્ઞાન ડનકા વિસ્તૃત સ્કંધ હૈ । ધર્મધ્યાન એવં શુક્લધ્યાન ડનકી શાખાઈ હૈં, ધ્યાન કે ભેદ ડનકી પ્રશાખાઈ હૈં । વત્તીસ યોગસંગ્રહ ડનકે પત્ર, જ્ઞાનાદિકગુણ ડનકે પુષ્પ, સ્વર્ગ એવં મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ ડનકે ફલ, સ્વર્ગમોક્ષસંબંધી સુખ હી ડનકા રસ હૈ । ઇતને મનોહર ઇસ ધર્મરૂપી ઉદ્યાન મેં સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ અરતિ કો દૂર કર વિચરણ કરતા રહે । સ્વાધ્યાય એવં શુભધ્યાન મેં સદા આત્મપરિણતિ કો લગાતા રહે ।

‘અરહં પિઢ્ઢાઓ કિચ્ચા’ ઇસ પદ સે યહ સૂચિત કિયા ગયા હૈ કિ મુનિ કો આત્મવલ સે યુક્ત હોના ચાહિયે । “વિરણ” ઇસ પદ સે યહ જ્ઞાત હોતા હૈ, કિ મુનિ મેં ઇસ પ્રકાર કે વલ કી જાગૃતિ વિના વૈરાગ્ય દશા કે નહીં હો સકતી હૈ, અતઃ વૈરાગ્યદશા દઢ બનાની ચાહિયે ।

તો ભૂમિ છે. ગુપ્તિયો ક્યારા છે, સમિતિયો પાળા છે, ક્ષાન્ત્યાદિક ધર્મવૃક્ષ છે, અને એ વૃક્ષોનું મૂળ વિનય છે, ભાવનારૂપ જળથી તે સદાય હર્યાભર્યા રહે છે. શ્રુતજ્ઞાન એનો વિશાળ સ્કંધ છે, ધર્મધ્યાન તેમજ શુક્લધ્યાન એની શાખાઓ છે, ધ્યાનનો ભેદ એની પ્રશાખાઓ છે, ૩૨ યોગ સંગ્રહ તેના પાન, જ્ઞાનાદિક શુભ તેનાં પુષ્પ, સ્વર્ગ અને મોક્ષની પ્રાપ્તિ એનાં ફળ સ્વર્ગ મોક્ષ સંબંધિ સુખ તે એનો રસ છે, આવા મનોહર ધર્મરૂપી બાગમાં સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે તેઓ અરતિને દૂર કરી વિચરણ કરતા રહે. સ્વાધ્યાય અને શુભ ધ્યાનમાં પોતાના આત્માપરિણતિ ને લગાવતા રહે.

અરહં પિઢ્ઢાઓ કિચ્ચા—આ પદથી એ સૂચિત કરવામાં આવે છે કે, મુનિયે આત્મબળથી યુક્ત રહેવું જોઈએ “વિરણ” આ પદથી મુનિમાં બળની જાગૃતિ વિના વૈરાગ્યદશા આવી શકતી નથી. આથી વૈરાગ્યદશા દઢ બનાવવી જોઈએ.

‘આયરક્ષિણ’ ઇત્યનેન મુનેરાસ્રવનિરોધઃ પ્રદર્શિતઃ ।

‘નિરારંભે’ ઇત્યનેન મુનેરતિપરીપદવિજયયોગ્યતા મુચિતા ।

‘ઉવસંતે’ ઇત્યનેન કપાયનિગ્રહિત્વં મુચિતમ્ ।

‘મુળી’ ઇત્યનેન પ્રવચનરહસ્યમનનશીઘ્રત્વં પ્રતિયોધિતમ્ ।

‘ધમ્મારામે’ ઇત્યનેન સંયમસ્ય રમણસ્થાનત્વં મુચિતમ્ ।

‘ચરે’ ઇત્યનેન મુનેઃ સંયમવિષયે પ્રમાદવર્જિતત્વં પ્રવેદિતમ્ ।

“આયરક્ષિણ” ઇસસે યહ સૂચિત કિયા હૈ કિ મુનિ કો આસ્રવ કા નિરોધ કરતે રહના ચાહિયે । “નિરારંભે” પદ સે યહ જ્ઞાત હોતા હૈ કિ અંરતિપરીપદ કો જીતને કી યોગ્યતા વિના મુનિઅવસ્થા આતી નહીં હૈ, કયોં કિ ઉસી અવસ્થા મેં નિરારંભતા રહતી હૈ । “ઉવસંતે” પદ સે યહ સૂચિત હોતા હૈ કિ વિના કપાય કે નિગ્રહ હુએ આત્મા મેં મુનિવ્રત પાલને કી યોગ્યતા નહીં આતી હૈ, અતઃ કપાય કા નિગ્રહ અવશ્ય કરના ચાહિયે । ‘મુળી’ પદ સે કપાય કા નિગ્રહ કરને વાલા તમી હો સક્તા હૈ કિ જવ વહ પ્રવચન કે રહસ્ય કા મનન કરને વાલા હોતા હૈ । વિના એસા કિયે આત્મા કપાયોં કા નિગ્રહ નહીં કર સક્તા હૈ । “ધમ્મારામે” ઇસસે યહ સૂચિત કિયા ગયા હૈ કિ કપાયોં કા નિગ્રહ કરને કા વહી આત્મા પરિણામશાલી હોગા—જો સંયમ મેં રમણ કરને કી ભાવના રખતા હોગા, ઇસકે વિના નહીં । ઇસી લિયે સંયમ કો રમણ કા સ્થાન ઘતલાયા ગયા હૈ । “ચરે” ઇસ ક્રિયાપદ સે મુનિ કો સંયમ કે વિષય મેં પ્રમાદરહિત હોના ચાહિયે યહ ઘતલાયા ગયા હૈ ।

આયરક્ષિણ આ પદ્ધતી એમ સૂચિત કરવામાં આવ્યું છે કે, આસ્રવનો નિરોધ કરીને રહેવું એ નિરારંભે આ પદ્ધતી અરતિ પરીપદને જીતવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કર્યા સિવાય મુનિઅવસ્થા આવતી નથી. કારણ કે, આ અવસ્થામાં નિરારંભતા રહે છે. ઉવસંતે આ પદ્ધતી સૂચિત થાય છે કે, કપાયનો નિગ્રહ કર્યા સિવાય આત્મામાં મુનિવ્રત પાળવાની યોગ્યતા આવતી નથી એથી કપાયનો નિગ્રહ અવશ્ય કરવો એમ. “મુળી” પદ્ધતી કપાયનો નિગ્રહ કરવાવાળા ત્યારે જ બની શકે છે કે, બ્યારે પ્રવચનનું રહસ્ય મનન કરનાર બની રહે. એમ કર્યા સિવાય આત્મા કપાયોનો નિગ્રહ કરી શકતો નથી. ધમ્મારામે આ પદ્ધતી સૂચિત કરવામાં આવેલ છે કે—કપાયોનો નિગ્રહ તેજ આત્મા કરવાને પરિણામ શાળી બને છે જે સંયમમાં રમણ કરવાની ભાવના રાખતા હોય, તેના વગર નહીં. આથી સંયમને રમણનું સ્થાન બતાવેલ છે. ચરે આ પદ્ધતી મુનિએ સંયમના વિષયમાં પ્રમાદ રહિત બનવું એમ બતાવેલ છે.



અત્ર દષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

અચલપુરે જિતશત્રુનામ્નો રાજ્ઞઃ પુત્રોઽપરાજિતનામા રોહાચાર્યસ્ય સમીપે દીક્ષિતોઽભવત્ । એકદા રોહાચાર્યઃ સ્વશિષ્યપરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુગ્રામં વિહરન્ તગરાનગરીં સમવસ્યતઃ । તદાનીં રોહાચાર્યસ્ય સ્વાધ્યાયશિષ્ય આર્યરોહનામાઽઽ-ચાર્યં ઉજ્જયિન્યામાસીત્, તસ્ય જ્યેષ્ઠઃ શિષ્યઃ શ્રુતકીર્તિનામકો મુનિઃ શિષ્ય-પરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુગ્રામં વિહરમાણસ્તગરાનગર્યાં સમાગતઃ । રોહાચાર્યઃ શિષ્ટા-ચારાનન્તરં શ્રુતકીર્તિમુનિં પૃચ્છતિ—ઉજ્જયિન્યાં સાધવો નિરુપસર્ગં તિષ્ઠન્તિ કિમ્, ? શ્રુતકીર્તિમુનિઃ પ્રાહ—ભદન્ત ! સર્વં તત્ર કુશલમ્, કિન્તુ રાજપુત્રઃ પુરોહિતપુત્રશ્ચ

દષ્ટાન્ત—અચલપુર મેં જિતશત્રુ રાજા કા અપરાજિત નામકા પુત્ર થા । વહ ધર્મશ્રવણ કર રોહાચાર્ય કે સમીપ દીક્ષિત હો ગયા । એક સમય કી વાત હૈ કિ રોહાચાર્ય અપની શિષ્યમંડલી સહિત ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતે હુએ તગરાનગરી પધારે । ઉસ સમય ઇન રોહાચાર્ય કે સ્વાધ્યાય શિષ્ય આર્યરોહ નામકે આચાર્ય ઉજ્જયિની નગરી મેં વિરાજમાન થે । ઉન આર્યરોહ આચાર્ય કે મુખ્ય શિષ્ય શ્રુતકીર્તિ બી અપને શિષ્યપરિ-વાર કે સાથ ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતે હુએ ઇસી તગરા નગરી મેં રોહાચાર્ય કે પાસ પધારે । રોહાચાર્ય ને શિષ્ટાચાર કે અનન્તર શ્રુતકીર્તિ મુનિ સે પૂછા—કહો ઉજ્જયિની નગરી મેં સાધુ મંડલ તો સુખશાતા મેં વિરાજમાન હૈ ન ? સુનકર શ્રુતકીર્તિ મુનિ ને ઉત્તર મેં કહા—ભદન્ત ! સવ સુખશાતા મેં વિરાજમાન તો હૈં, પરન્તુ વહાં કે રાજા કા એવં પુરોહિત કા પુત્ર

દષ્ટાન્ત—અચળપુરમાં જિતશત્રુ રાજાને અપરાજિત નામનો પુત્ર હતો. તેણે ધર્મનું શ્રવણ કરીને રોહાચાર્ય પાસે દીક્ષા લીધી. એક સમયની વાત છે, કે રોહાચાર્ય પોતાની શિષ્ય મંડળી સાથે વિહાર કરતા કરતા તગરાનગરીમાં પધાર્યા. આ સમયે રોહાચાર્યના સ્વાધ્યાય શિષ્ય આર્યરોહ નામના આચાર્ય ઉજ્જયિની નગરીમાં બિરાજમાન હતા. આ આર્યરોહ આચાર્યના મુખ્ય શિષ્ય શ્રુતકીર્તિ પણ પોતાના શિષ્ય પરિવાર સહિત એક ગામથી બીજે ગામ વિચરતા આ તગરા નગરીમાં રોહાચાર્યની પાસે પધાર્યા. રોહાચાર્યે શિષ્ટાચાર પછી શ્રુતકીર્તિ મુનિને પૂછ્યું, કહો ! ઉજ્જયેની નગરીમાં સાધુ મંડળ તો સુખ શાતામાં બિરાજમાન છે ને ? આ સાંભળી શ્રુતકીર્તિ મુનિએ જવાબમાં કહ્યું, ભદન્ત ! દરેક સુખ શાતામાં બિરાજમાનતો છે, પરંતુ ત્યાંના રાજાનો અને પુરોહિતનો પુત્ર

મુનીનુદ્વેજયતઃ । શ્રુતકીર્તિરેતદ્વચનં શ્રુત્વા રોહાચાર્યોઽપરાજિતમુનિ કથયતિ-ત્ત્વ  
સાંસારિકભાવપુત્રોઽસૌ રાજકુમારઃ સાધુજનમુદ્વેજયતિ, તં પ્રતિવોધયિતુમ્બુજ્જયિન્યા  
ત્વયા ગન્તવ્યમ્ । આચાર્યનિદેશેન શિષ્યપરિવારેણ સહાપરાજિતમુનિરુજ્જયિન્યા  
ગતઃ । તત્રાર્યરોહાચાર્ય પ્રણમ્યાપરાજિતમુનિર્મિશાવેલાયાં રાજકુલં પ્રવિષ્ટઃ ।  
તત્રાપરાજિતમુનિ રાજપુત્ર-પુરોહિતપુત્રો સોપહાસં વન્દનં કુરુતઃ । મુનિવરે ગતે સતિ  
તસ્મિન્નેવ સમયે મુનેરુપહાસાઞ્જઠરે વેદના સમુત્પન્ના, ઉચ્ચૈઃ સ્વરેણ તૌ રોદનં

મુનિયોં કો દુઃખિત કિયા કરતે હં । શ્રુતીકર્તિ કે વચનોં કો સુનકર  
રોહાચાર્ય ને અપને શિષ્ય અપરાજિત મુનિ સે કહા કિ ઉજ્જયિની  
નગરી કા જો કુમાર હૈ વહ તુમ્હારે સાંસારિક ભાઈ કા પુત્ર હૈ । હસ  
સમય વહ સાધુઓં કો ઉજ્જયિનીનગરી મેં કષ્ટ પહુંચા રહા હૈ અતઃ  
તુમ ઉસકો સમજાને કે લિયે વહાં જાઓ । આચાર્ય કે આદેશ સે  
અપરાજિત મુનિ તગરાનગરી સે શિષ્યમંડલી સહિત વિહાર કર ઉજ્જ-  
યિની નગરી મેં આર્યરોહ આચાર્ય કે પાસ પહુંચે, ઓર ઉનકો વંદન  
નમસ્કાર કિયે । વાદ ભિક્ષા કે સમય આચાર્ય કે નિદેશ સે વે અપરા-  
જિત મુનિ રાજમહલ મેં પ્રવિષ્ટ હુએ । વહાં ઉન અપરાજિત મુનિ કે  
સાંસારિક ભાઈ કા પુત્ર રાજકુમાર એવં પુરોહિત પુત્ર ને ઉન મુનિ કો  
ઉપહાસપૂર્વક વંદના કિ । અપરાજિત મુનિ કે વહાં સે ચલે જાને પર  
મુનિ કે ઉપહાસ સે ઉન દોનોં કે પેટ મેં વડે જોર સે પીડા હોને લગી ।

મુનિયોંને દુઃખિત કયાં કરે છે. શ્રુતકીર્તિનું વચન સાંભળીને રોહાચાર્યે પોતાના  
શિષ્ય અપરાજિત મુનિને કહ્યું કે, ઉજ્જૈની નગરીના જે રાજકુમાર છે તે તમારા  
સંસારીક ભાઈના પુત્ર છે. આ સમયે તેઓ ઉજ્જૈની નગરીમાં સાધુઓને કષ્ટ  
પહોંચાડી રહ્યા છે જેથી તમે તેને સમજાવવા માટે ત્યાં જાવ. આચાર્યના  
આદેશથી અપરાજિત મુનિ તગરાનગરીમાંથી શિષ્ય મંડળી સાથે વિહાર કરી  
ઉજ્જૈની નગરીમાં આર્યરોહાચાર્યની પાસે આવી પહોંચ્યા અને તેમને વંદન  
નમસ્કાર કર્યા બાદ ભિક્ષાના સમયે આચાર્યના આદેશથી અપરાજિત મુનિયે  
રાજમહેલમાં પ્રવેશ કર્યો. ત્યાં તે અપરાજિત મુનિના સંસારીક ભાઈના પુત્ર  
રાજકુમાર તેમજ પુરોહિતપુત્રે તે મુનિને ઉપહાસપૂર્વક વંદના કરી. અપરા-  
જિત મુનિના ત્યાંથી જવા બાદ મુનિને ઉપહાસ કરવાથી આ બંનેના પેટમાં  
એકદમ પીડા ઉત્પન્ન થઈ. બંને જણા ખૂબ જોર જોરથી રોડો પાડવા આ,

કૃતવન્તૌ । રાજા પુરોહિતશ્ચ પુત્રયોર્દુસ્વસ્થાં પરિવાસ્વચનાદ્ વિજ્ઞાય આર્યરોહા-  
ચાર્યસ્ય સમીપં ગતવન્તૌ । તત્રાર્યરોહાચાર્યં પ્રણમ્ય તૌ સરોદનં પ્રાર્થિતવન્તૌ,  
ભદન્ત ! પ્રસીદતુ ભવાન્, અસ્મદ્બાલકૌ રક્ષણીયૌ, ઇત્યાદિ । આર્યરોહાચાર્ય આહ-  
રાજન્ ! અસ્મિન્ વિષયે ન કિંચિજ્જાનામિ, ઇમં પ્રાધુણ્યકં મહામુર્નિ પ્રસાદય ।  
તતસ્તદ્વચનાદ્રાજા પુરોહિતેન સહાપરાજિતમુનેઃ પાર્શ્વે ગત્વા તં પ્રણમ્ય વ્રવીતિ-  
હે ભદન્ત ! સ્વભ્રાતૃપુત્રં જીવિતં કુરુ, મુનિઃ પ્રાહ—સાધુપીડકસ્ય પુત્રસ્યાપિ  
શિક્ષાં દાતું ન શક્નોપિ?, નીતિમાર્ગાનુસારિણા રાજાઽન્યસ્યાપિ કસ્યચિદપરાધે  
કૃતે તુ પુત્રો નિગ્રહણીયઃ કિં પુનર્યઃ સાધુવાધકઃ ? નૃપેણોક્તમ્—ભદન્ત ! મમાપરાધં-

દોનોં જને સુવ જોર ૨ સે ચિલ્લાને લગે । રાજા એવં પુરોહિત દોનોં હી  
પરિવાર જનોં કે કહને સે અપને ૨ પુત્રોં કી દુરવસ્થા જાનકર સાથ ૨  
આર્યરોહાચાર્ય કે પાસ આયે । આચાર્ય મહારાજ કો વંદન કર વે દોનોં  
કે દોનોં અને સમક્ષ રોતે ૨ પ્રાર્થના કરને લગે, કિ ભદન્ત ! આપ હમારે  
ઊપર પ્રસન્ન હોઈયે—કૃપા કીજિયે—હમારે બાલકોં કી રક્ષા કીજિયે ઇત્યાદિ ।  
આર્યરોહાચાર્ય ને કહા કિ રાજન્ ! મેં ઇસ વિષય મેં કુછ નહીં જાનતા હું ।  
યહ જો મહેમાનરૂપ મેં મહામુનિ આયે હુએ હેં અને પાસ જાઓ ઓર અને  
કહો । રાજા આર્યરોહા કે વચન સે પુરોહિત કો સાથ લેકર અપરાજિત  
મુનિ કે પાસ ગયા ઓર અને કો વંદન કર કહને લગા કિ—હે ભદન્ત !  
અપને ભાઈ કે પુત્ર કો જીવિત કરો । મુનિ ને કહા કિ—હે રાજન્ રાજનીતિ  
ઇસ પ્રકાર કી હૈ કિ જવ અપના પુત્ર સાધારણ જનતા કા ભી અપરાધ કરે  
તો ઉસકે લિયે શિક્ષા હૈ તો ફિર જો મુનિજનોં કો પીડા પહુંચાવે

રાજા અને પુરોહિત બન્ને પોતાના પરિવાર જનોના કહેવાથી પોતાના પુત્રોની  
દુઃખદ અવસ્થા જાણીને આર્યરોહાચાર્યની પાસે આવ્યા. આચાર્ય મહારાજને  
વંદના કરીને બન્ને તેમની સમક્ષ રોતાં રોતાં પ્રાર્થના કરવા લાગ્યા કે, હે  
ભદન્ત ! અમારા ઉપર પ્રસન્ન થાઓ, કૃપા કરો, અમારાં બાળકોની રક્ષા કરો,  
વિગેરે. આર્યરોહાચાર્યે કહ્યું, હે રાજન્ ! આ વિષયમાં હું કંઈ જાણતો નથી. મહેમા-  
નરૂપમાં મહામુનિ પધાર્યા છે તેમની પાસે જાઓ અને તેમને કહો. આર્યરોહાનાં  
વચન સાંભળી રાજા પુરોહિતને સાથે લઈને અપરાજિત મુનિની પાસે ગયા. અને  
તેમને વંદના કરીને કહેવા લાગ્યા કે, હે ભદન્ત ! તમારા ભાઈના પુત્રને જીવતદાન  
આપો. મુનિએ કહ્યું કે, હે રાજન્ ! રાજનીતિ એવા પ્રકારની છે કે, બ્યારે આપનો  
પુત્ર સાધારણ જનતાનો પણ અપરાધ કરે તો તેને માટે શિક્ષા છે તો મુનિરાજને

समस्त, बालकौ महाकण्ठं प्राप्तौ, अनुकम्पस्व भगवन् । स्वस्थावस्थासम्पन्नौ - ही  
मुनिदेशनया प्रव्रज्यां स्वीकृतवन्तौ । तत्र राजपुत्रः शुद्धभावेन चारित्र्यपालनं कृत्वा,  
पुरोहितपुत्रस्तु जातिमदं कृत्वा पूर्वपीडास्मरणेन गुरुं प्रति सामर्थ्यं जातः।  
द्वावपि चारित्र्यं पालयन्तौ मृत्वाऽन्ते देवलोकं गतौ ।

इतश्च कौशाम्बीनगर्या तापसनामकः कोऽपि धनिक आसीत् । स स्वष्टे  
मृत्वा लोभावशेन सुकरो जातः, स स्वभवनादिकं दृष्ट्वा जातिस्मरणं प्राप्तवान् ।

उसके लिए राजा को चाहिये कि जरूर ध्यान रखे । अपराजित मुनि  
की बात सुनकर राजाने समझकर कहा कि महाराज ! आजपीछे ऐसा  
नहीं हागा, आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें । तथा राजकुमार  
और पुरोहित पुत्र ने भी अपराजित मुनि से क्षमा मांगी । फिर उपदेश  
सुनकर वे दोनों प्रव्रजित हो गये । प्रव्रज्या छे ने पर राजपुत्र ने तो  
शुद्ध भाव से चारित्र्य का पालन किया परन्तु जो पुरोहित का पुत्र था,  
वह जाति मद से संयम का आराधन पूरा नहीं करता था और अपने  
पेट की पीड़ा को याद करता हुआ अपने गुरु अपराजित मुनि पर रुष्ट  
भाव रखता था । अन्त में ये दोनों ही चारित्र्य की पालना करते हुए  
काल धर्म को पाकर देव लोक में देव हुए ।

इधर-कौशाम्बी नामकी एक नगरी थी । उसमें तापस नामका एक  
हिंसक धनिक व्यक्ति रहता था । वह लोभ के वश होकर मरा तो  
अपने ही घर पर सूअर की योनि में उत्पन्न हुआ । अपने पूर्व के भवना-

पिडा पडोऽन्तनाशये। भाटे राजये जर ध्यान राजपु' जेधये. अपराजित  
मुनिनी बात सांभलीने राजये समझ जेधने कह्युंके, महाराज ! हुवेथी येपु'  
नडी' जने. आप मारा आ अपराधने क्षमा करे. राजकुमार अने पुरोहि-  
तना पुत्रे पणु अपराजित मुनिनी क्षमा मांगी, त्यार आह उपदेश सांभलीने  
तेजने प्रव्रजित जनिया. प्रव्रज्या लीधा पछी राजपुत्रे शुद्ध लावधी चारित्र्यु' पालन  
कथुं. परंतु जे पुरोहितने पुत्र हुतो ते जतीना महना कारखे संयमनु' आरा-  
धन पूरु' रीते करतो न हुतो अने. पोताना पेटनी पीडाने याद करतां करतां  
अपराजित मुनि उपर कोधभाव राहतो हुतो. अंतमां जे जने चारित्र्यु' पालन  
करतां करतां काणधमने पाभीने देवलोकां देव थया.

आ तरह कौशांभी नामनी एक नगरी हुती. जेमां तापस नामने  
एक हिंसक धनवान भाणुस रहितो हुतो. ते दोलवशे करीने पोताना ज  
धरमां सुवरं ( भूंड ) इये जन्मये. पोताना पूर्वना भवन आदि जेधने

एकदा तत्पूर्वभवपुत्रास्तं तस्यैव श्राद्धदिने हतवन्तः, ततः स्वगृह एवासौ सर्पं जातः, तस्मिन्नपि भवे तस्य जातिस्मरणं संजातम् । पुनस्तः एव पूर्वभवपुत्रास्तं सर्पं गृहान्तर्भ्रमन्तं दृष्ट्वा जघ्नुः । तदनन्तरमसौ स्वपुत्रस्य पुत्रोऽभवत्, पित्रा तस्य 'अशोकदत्त' इति नाम कृतम् । स तत्रापि जन्मनि जातिस्मरणं प्राप्य मूकत्वमङ्गी-  
चकार । पूर्वभवीया पुत्रवधूरिदानीं माता जाता, कथमेनां मातेति ब्रवीमि । पुत्रोऽपि पिताभवत् कथमेनं 'तातः' इति संबोधयामि, इत्येवं मनसि विचार्य स मूकोऽभवत् ।  
मातापितृभ्यां तन्मूकत्वापनयनार्थं बहवः प्रयत्नाः कृतास्तथापि तस्य मूकत्वं नाप-  
गतम्, अतो लोकास्तं मूकनाम्नाऽऽह्वयन्ति ।

दिकको देखकर उस सूअर के बच्चे को जातिस्मरण ज्ञान हो गया ।  
एक दिन की बात है कि पुत्रोने अपने बाप के श्राद्ध के निमित्त उस  
सूअर को मार डाला । यह मर कर अपने ही घर में सर्प हुआ । इस  
भव में भी इसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया । पुत्रों ने अपने घर में  
इधर उधर घूमते हुए सर्प को जब देखा तो उसको मार डाला । मर  
कर यह तृतीयं भव में अपने पुत्र का पुत्र हुआ । पिताने इसका नाम  
अशोकदत्त रक्खा । इस अवस्था में भी इसे जातिस्मरण ज्ञान हो  
गया, अतः इसने मूकपना अंगीकार कर लिया । जो पूर्वभव में मेरी  
पुत्रवधू थी वह इस भव में माता हो गई है अतः कैसे तो इसे माता  
कह कर पुकारूँ तथा जो पुत्र था वह भी अब मेरा बाप बन गया है-  
इसलिये अब इसे पिता कैसे कहूँ, ऐसा मन में विचार कर उसने अपना

आ सूअरना जन्माभां जाति स्मरण ज्ञान थयुं. ओक दिवसनी बात छे.  
पुत्रोणे पोताना आपना श्राद्ध निमित्ते आ सूअरने भारी नाज्युं. त्यांथी  
भरीने इरीथी पोताना ओज घरभां सर्प थयो. आ लवभां पण तेने जाति  
स्मरण ज्ञान थयुं. पुत्रोणे पोताना घरभां आभ तेम धुमता सर्पने न्यारे  
जेथे त्यारे तेने भारी नाज्यो. भरीने त्रीजलवभां पोताना पुत्रना पुत्र (पौत्र)  
तरीके जन्म्यो. पिताणे तेनुं नाम अशोकदत्त राज्युं. आ अवस्थाभां पण  
तेने जातिस्मरण ज्ञान थयुं. आथी तेणे भौनवत धारण करी लीधुं.  
पडेला लवभां जे भारी पुत्रवधू छती ते आ लवभां भारी माता थछ छे तो  
केवी रीते हुं. माता छडीने जेलाधुं. जे भारी पुत्र छतो ते अत्यारे भारी आप  
थछ गयेल छे तेथी छवे तेने पिता तरीके केम संबोधन करे ? ओम मनभां विचार

एकदा चतुर्ज्ञानधराः स्थविराः स्वज्ञानोपयोगेन मूकं विज्ञाय तं प्रति-  
बोधयितुं तत्र शिष्यपरिवारैः सह समवृत्ताः, तैश्च मूकगृहे द्वौ भ्रमणौ प्रेषितौ  
तत्रैकेन मूकस्य पुरतः स्थविरशिक्षिता गाथा पठिता ।

“ तावस ! किमिणा ? मूअव्वयेण पडिवज्ज जाणिउं धम्मं ।  
मरिऊण सूअरोग, जाओ पुत्तस्स पुत्तोत्ति ॥ १ ॥ ”

मूकभाव ( गुंगापन ) रखना ही अच्छा समझा । माता पिता ने अपने  
बच्चे की जब ऐसी स्थिति देखी तो उसकी मूकता दूर करने के लिये  
उन्होंने अनेक प्रयत्न किये, परन्तु उसकी मूकता दूर नहीं हुई, इसलिये  
लोगों ने उसका नाम “ मूक ” रख दिया, और इसी नाम से उसे  
बुलाने लगे ।

एक समय कि बात है कि चार ज्ञान के धारी स्थविर मुनि अपने  
ज्ञानोपयोगसे उस मूक की परिस्थितिको जानकर उसे प्रतियोधित करनेके  
लिये वहां शिष्यमंडलीसहित आये । :उन्होंने उस मूकके घर पर दो  
मुनियों को भेजा । उनमेंसे एक मुनिने उस मूक के आगे स्थविरशिक्षा  
से युक्त एक गाथा पढ़ी । वह गाथा इस प्रकार है—

तावस ! किमिणा ? मूअव्वयेण पडिवज्ज जाणिउं धम्मं ।  
मरिऊण सूअरोग, जाओ पुत्तस्स पुत्तोत्ति ॥ १ ॥

કરીને તે બાળકે મૂંગાપણું રાખવાનું થોડું માન્યું. માતા પિતાએ બ્યારે બાળકની  
આ સ્થિતિ જોઈ ત્યારે તેનું મૂંગાપણું દૂર કરવા માટે અનેક પ્રયત્નો કર્યા પરંતુ  
તેનું મૂંગાપણું દૂર ન થયું. આથી લોકોએ તેનું નામ “મૂંગો” રાખ્યું. અને  
એજ નામથી તેને બોલાવવા લાગ્યા.

એક વખત ચાર જ્ઞાનના ધારી સ્થવિરે પોતાના જ્ઞાનના ઉપયોગથી  
આ મૂંગાની પરિસ્થિતિ જાણીને તેને પ્રતિબોધિત કરવા માટે શિષ્ય  
મંડળી સાથે ત્યાં પધાર્યા. તેઓએ આ મૂંગાના ઘર બે મુનિઓને મોકલ્યા.  
આમાંથી એક મુનિએ આ મૂંગાની આગળ સ્થવિરની શીખવેલી એક ગાથા ગાઈ.  
તે ગાથા આ પ્રકારની છે.

તાવસ ! કિમિણા ? મૂઅવ્વયેણ, પડિવજ્જ જાણિઉં ધમ્મં ।  
મરિઝ્ઞણ સૂઅરોગ, જાઓ પુત્તસ્સ પુત્તોત્તિ ॥ ૧ ॥



छाया—तापस ! किमनेन मूकव्रतेन प्रतिपद्यस्व ज्ञात्वा धर्मम् ।

मृत्वा सूकर उरगो जातः पुत्रस्य पुत्र इति ॥ १ ॥ ”

मूकस्तां गाथां श्रुत्वाऽऽश्चर्यं गतस्तौ प्रणम्य पृच्छति — भवद्विरेतत् कथं ज्ञातम् ? तौ ब्रूतः—इहोद्यानेऽस्मद्गुरवः समवसृतास्ते खलु जानन्ति । ततोऽसौ मूकस्ताभ्यां श्रमणाभ्यां सह गत्वा नगरोद्याने स्थविराणां वन्दनं कृत्वा तद्देशनां श्रुत्वा श्रावको भूत्वा मूकत्वं परित्यक्तवान् ।

इतश्च कृतजातिमदः पुरोहितपुत्रजीवदेवः कृताञ्जलिः सन् महाविदेहे तीर्थकर-समीपे पृच्छति—भगवन् ! किमहं सुलभवोधिस्तदितरो वा ? भगवता प्रोक्तम्—त्वं दुर्लभवोधिकोऽसि । देवः पुनरपृच्छत्—इतश्च्युतः सन् कुत्राहमुत्पन्नो भविष्यामि ?

इस गाथा को सुनकर मूक को बड़ा भारी आश्चर्य हुआ । उसने उन दोनों को नमस्कार कर पूछा—आपने हमारी सूअर की पर्याय से लेकर यहां तक की समस्त परिस्थिति कैसे जानली ? उन्होंने कहा—कि इस नगर के उद्यान में हमारे गुरु महाराज पधारे हुए हैं वे तुम्हारी इस समस्त स्थितिको जानते हैं । मूकने जब यह सुना तो वह उन दोनों मुनियों के साथ उद्यान में आया । उसने सब मुनियों को नमस्कार एवं वंदन किया । पश्चात् उनसे धर्मका उपदेश सुनकर श्रावक हो गया और मूकता का परित्याग कर दिया ।

जातिमद करने वाला जो पुरोहितपुत्र का जीव था कि जो मरकर देव की पर्याय से उत्पन्न हुआ था उसने हाथ जोड़ कर महा-विदेह क्षेत्र में तीर्थकर श्री सीमंधर स्वामी के पास ऐसा प्रश्न किया

आ गाथा सांख्यीने ते भूंगाने लारे आश्चर्यं थयुं. तेहे आ जन्ने स्थविराने नमस्कार करीने पूछयुं, “तमेओ भारी सूवरनी स्थितिथी मांडीने आज सुधीनी समस्त परिस्थिति केम ज्ञाणी ?” तेओओ कह्युं के, “आ नगरना जगीयाभां अमारा गुरु महाराज पधार्थी छे अने तेओ तमारी सधणी भीना ज्ञाहे छे.” भूंगाओ न्यारे आ ज्ञायुं त्यारे ते जन्ने मुनिओनी साथे जगीयाभां आओ, अने तेहे जधा मुनिओने नमस्कार अने वंदना करी. त्यार पछी तेमनी पासैथी धर्मने उपदेश सांख्यीने ते श्रावक जनी गये अने भूंगापणुने छोडी दीधुं.

जातिमद करवावाणा पुरोहित पुत्रनो जव जे मरीने देवनी पर्यायभां उत्पन्न थयो हुतो तेहे हाथ जोडीने महाविदेह क्षेत्रभां तीर्थकर श्रीमंधर स्वामी नी समक्ष जेवो प्रश्न क्यो के, “हे भगवंत ! हुं सुलभजोधी छुं के दुर्लभ-जोधी छुं ?” भगवाने जवाबभां कह्युं के; तमे दुर्लभजोधी छे. देवे करी प्रश्न

भगवता कथितम्-कौशाम्बीनगर्या मूकभ्राता भविष्यति । धर्मप्राप्तिश्च मूकदेव तव भविष्यति । इत्येवं भगवद्वचनं श्रुत्वाऽसौ देवस्तं प्रणम्य कौशाम्बीनगर्या मूकोपान्तिकमागत्य तस्मै बहुद्रव्यं दत्त्वा प्रोक्तवान्-स्वर्गात् प्रच्युतस्य मम जन्म त्वन्मातुर्गर्भे भविष्यति, तदा तस्या अकालेऽप्याम्रदोहदो भविष्यति । तदर्थं सर्वतु फलवानाम्रवृक्षः कौशाम्ब्याः समीप एव पर्वतस्य निर्जनप्रदेशे मया रोपितः । यदा सा वदोहदाकुलाऽऽम्रं याचते तदा तस्याः पुरस्त्वया वाच्यम् । यदि अनिष्यमाणं बालकं मह्यं ददासि, तदाऽऽम्रफलमांसीय तुभ्यं ददामि ।

किं हे भगवान् ! मैं सुलभयोधि हूं किं दुर्लभयोधि हूं ? भगवान् ने इसके उत्तर में कहा कि तुम दुर्लभयोधि हो । देव ने पुनः प्रश्न किया कि मैं यहां से च्यवकर कहाँ उत्पन्न होऊँगा ? भगवान् ने कहा कि कौशाम्बी नगर में मूक के भाई होगे । वहाँ तुम्हें धर्म की प्राप्ति मूक से ही होगी । इस प्रकार भगवान् की वाणी सुनकर वह देव उन्हें नमन कर के कौशाम्बी नगरी में मूक के पास आया और उसे बहुत सा द्रव्य देकर कहने लगा कि मैं स्वर्ग से च्यवकर तुम्हारी माता की कुक्षि में जन्म धारण करूँगा । उस समय उसे अकाल में आम खाने का दोहला उत्पन्न होगा । उस दोहले की पूर्ति के लिये सर्वऋतुओं में फल देने वाला आम का वृक्ष मैंने पहिले से ही कौशाम्बी नगरी के समीप के पर्वत के निर्जन प्रदेश में आरोपित कर दिया है । जिस समय वह दोहद से आकुलित होकर आम की याचना करे तो तुम उससे ऐसा कहना कि जो बालक उत्पन्न होगा उसे यदि तुम मुझे देना अंगीकार करो तो मैं तुम्हें लाकर आम देता हूँ ।

कथ्यो, हु अडिंथी व्यवीने कथां उत्पन्न थधश ? लगवाने कहुं के, कौशांभी नगरीमां भूंगाने। लाध थधश. त्यां तमने धर्मनी प्राप्ति भूंगार्थी थशे. आ प्रकाशनी लगवाननी वाणी सांलणीने ते देव नमस्कार करीने. कौशांभी नगरीमां ते भूंगानी पासे आव्या अने तेने भूष द्रव्य दधने कडेवा लाज्या के हुं. स्वर्गार्थी व्यवीने तमारी मातानी कुंजे जन्म धारण करीश. अे वणते तेने अकाले डेरी आवाने। लाव (दोहद) उत्पन्न थशे. आ दोहदनी सङ्गता माटे सर्व, इतुओमां, क्षण, हेनार आंभाना वृक्षने पडेलेथी ज. कौशांभी नगरीनी पासे आवेला पर्वतना निर्जन प्रदेशमां मे वावी दीधेल छे. ज्यारे ते दोहदथी व्याकुण थधने डेरीनी भागणी करे लारे तारे तेने अे प्रभावे कडेपुं के. अे आणक जन्मे तेने मने सोपवानुं स्वीकारे तो हुं तमने डेरी लावी आपुं.

एवमुक्ता तत्र माता यदि गर्भस्थपुत्रदानं स्वीकुर्यात् तर्हि तस्यै त्वया महर्षि-  
ताऽऽम्रफलं दातव्यम् । जातस्य मम यथा जैनधर्मप्राप्तिर्भवेत् तथा प्रयत्नस्त्वया  
कर्तव्यः । एवमुक्त्वा स पुरोहितपुत्रजीवदेवो गतः ।

अन्यदा कदाचिदसौ देवो देवलोकाच्च्युतस्तस्या गर्भे समुत्पन्नः, तदा तस्या  
आम्रदोहदः समुत्पन्नः । मूकेन पूर्वोक्तव्यवस्थां कारयित्वाऽऽम्रदोहदः पूरितः ।  
पुत्रो जातः । तस्यार्हदत्त इति नाम मातापितृभ्यां कृतम् । तदनन्तरमसौ मूक  
स्तं बालसोदरं बाल्यन् साधूनां समीपं तद्वन्दनार्थं नयति, परन्त्वसौ दुर्लभबोधि-

तुम्हारी माता जब तुम्हारे इस कथन को मंजूर कर ले अर्थात्-  
गर्भस्थ पुत्र का तुम्हें देना स्वीकार कर ले-तो तुम उसके लिये मेरे  
द्वारा बताये हुए आम के वृक्ष से आम लाकर दे देना । तथा तुम इस  
प्रकार का प्रयत्न भी करते रहना कि जिस से मुझे जैनधर्म की प्राप्ति हो ।  
इस प्रकार कह कर वह पुरोहित के पुत्र का जीव देव तिरोहित हो गया ।

किसी समय अपनी आयु के समाप्त होने पर यह स्वर्गलोक-से  
च्यवकर मूक की माता के गर्भ में अवतरित हो गया । उस की माता  
को आम खाने का दोहला उत्पन्न हुआ । मूक ने पूर्वोक्त व्यवस्था करवा  
कर उस के आम के दोहले की पूर्ति की । पुत्र का जन्म हुआ । उसका  
नाम अर्हदत्त रक्खा गया । अर्हदत्त को जो कि अपना बालसोदर था  
मूक ने बड़े चाव से लाड़ प्यार से रखा । कभी २ यह उसे साधुओं के  
समीप भी वंदना कराने के लिये ले जाता था, परन्तु यह तो दुर्लभ-

तमारी माता ज्यारे तमारी आ भागणीने मंजूर करे अर्थात्  
गर्भमां रडेला पुत्रने तमने सोंपी देवाने स्वीकार करे त्यारे तमारे में तमने  
बतावेला आंजाना वृक्ष उपरथी डेरी लावीने तेने आपवी. तथा तमारे जेवा  
प्रकारना प्रयत्न करता रडेपुं के जेनाथी भने जैनधर्मनी प्राप्ति थाय.  
आ प्रमाणे कहीने ते पुरोहित पुत्रने जव-देव अवोप थर्छ गयो. डेटलाक  
समय जाह पोताना आयुष्यनी समाप्ति थवाथी ते देव स्वर्गलोकाथी व्यवीने  
भूंगानी माताना गर्भमां उत्पन्न थया. तेनी माताने डेरी आवानुं मन थयुं. भूंगाये  
पडेलेथी ज व्यवस्था करीने तेनी डेरी आवानी धरिजाने पूछुं करी. समय जतां  
पुत्रने जन्म थयो. तेनुं अर्हदत्त नाम राखवाभां आयुं. अर्हदत्त के जे पोताने  
नाने लार्छ थतो हतो तेने भूंगाये पूण लाड प्यारथी राख्यो. डोर्छ डोर्छ प्यार  
ते तेने साधुओनी पासे वंदना करवा भाटे लर्छ जतो हतो. परंतु आ तो

ત્વેન સાધૂન્ દદ્ધા રોદિતિ । એવમાચાલં પ્રતિવોધિતોઽપ્યસૌ ન વોધિ લમ્પતે ।  
તતસ્તદ્ભ્રાતા મૂકઃ પ્રવ્રજિતો ભૂત્યા સંયમં પરિપાલ્ય દેવલોકં ગતઃ ।

અથ તેન મૂકજીવદંવેનાસૌ દુર્લભવોધિર્વાલકઃ પ્રતિવોધાર્યં જલોદરવ્યાધિ-  
યુક્તઃ કૃતઃ, સ્વયં ચ વૈદ્યરૂપં કૃત્વા તત્સમીપમાગત્યાહ-અહં સર્વરોગોપશ્ચમનં કરોમિ ।  
જલોદરી વદતિ-મમ જલોદરવ્યાધિં પ્રશમય । વૈદ્યેનોક્તમ્-અસાધ્યોઽયં તવ રોગઃ,  
તથાપિ તત્પ્રતીકારં કરોમિ, યદિ મમીપધ્રકોત્થલકં સ્કન્ધે સમારોપ્ય મામનુગચ્છસિ ।  
જલોદરિણોક્તમ્-એવમસ્તુ । તતો વૈદ્યેન સ જલોદરી નિવ્યાધિઃ કૃતઃ ।

વોધિ થા, इसलिये साधुओं को देखते ही रोने लग जाता । इस प्रकार  
पाल्य अवस्था से प्रतिवोधित करने पर भी यह वोधि को प्राप्त नहीं  
कर सका । इसके बाद उसके बड़े भाई मूकने दीक्षा धारण कर ली और  
संयम का पालन कर अन्तमें वह देवलोक में जा कर उत्पन्न हो गया ।

अपने सहोदर को प्रतिवोधित करने के लिये मूक के जीव देव ने  
उसके शरीर में जलोदर की व्याधि उत्पन्न कर दी । यह उसने इस लिये  
की कि देखें यह दुर्लभवोधि कैसे है । तथा स्वयं वैद्य का रूप ले कर  
उसके पास आ कर कहने लगा कि मैं समस्त रोगों को दूर करने का  
इलाज करता हूं । उस जलोदरी बालक ने कहा कि ठीक है आप मेरे  
इस रोग का इलाज करें । वैद्य ने प्रत्युत्तर में कहा कि यद्यपि तुम्हारा  
यह रोग असाध्य है तौ भी इस शर्त पर प्रयत्न करता हूं कि यदि तुम  
मेरे इस कोथले को कि जिस में औषधियां भरी हैं अपने कंधे पर

હુલ્લ બોધી હોતો એટલે સાધુઓને બોધને રોવા લાગી જતો આ પ્રમાણે  
બાલ્યાવસ્થાથી જ તેને પ્રતિબોધિત કરવા છતાં પણ તે બોધને પ્રાપ્ત કરી શક્યા  
નહીં. આ બાદ તેના મોટાભાઈ મૂંગાએ દીક્ષા ધારણ કરીને, સંયમનું પાલન  
કરીને, અંતમાં દેવ લોકમાં ઉત્પન્ન થયો. પોતાના સહોદરને પ્રતિબોધિત કરવા  
માટે મૂંગાના જીવ દેવે તેના શરીરમાં જજોદરની વ્યાધિ ઉત્પન્ન કરી. તે વ્યાધિ  
એટલા માટે ઉત્પન્ન કરી કે, જોઈ તો ખરો કે તે હુલ્લ બોધી કેવો છે? પછી  
પોતે વૈદ્યનું રૂપ લઈને તેની પાસે આવીને કહેવા લાગ્યા કે, સમસ્ત રોગોને  
નિવારવાનો ઈલાજ મારી પાસે છે. તે જજોદરવાળા બાળકે કહ્યું કે, આપ  
મારા આ રોગનો ઈલાજ કરો. વૈદ્યે પ્રત્યુત્તરમાં કહ્યું કે જો કે તમારો આ  
રોગ અસાધ્ય છે. તો પણ એવી શરત ઉપર પ્રયત્ન કરું કે, તમે મારા આ  
કોથળાને જેમાં ઔષધીઓ ભરી છે તેને તમારા કાંધ ઉપર રાખીને મારી પાછળ

અથ તેન વૈદ્યેનૌપધકોત્થલકસ્તસ્મૈ વાહનાર્થં સમર્પિતઃ । સ ચાર્હદત્તઃ કોત્થલકમુત્થાપ્ય સ્કન્ધોપરિ વહન્ વૈદ્યપૃષ્ઠતથ્વલતિ । તથા સ કોત્થલકો દેવમા-  
યયાસ્તીવભારકારકઃ સંજાતઃ, તેનાતિભારેણ સ શ્રાન્તોઽપિ તમુત્સૃજ્ય ગન્તું ન શક્નોતિ,  
ચિન્તયતિ ચ-અહં વચનવદ્ધોઽસ્મિ, કથમિમં ભારં પરિત્યજામિ, કોત્થલકં વહતો  
મમૈતત્પૃષ્ઠતો ગમનેન પુનર્જલોદરવ્યાધિર્ન સ્યાદતો વજ્રસાર તુલ્યમિવ ભારં વહન્ યદહં  
સ્વજ્ઞો ભવામિ તન્મે યોગ્યં ભવતીત્યેવં વિચિન્ત્ય સ કોત્થલકં વહન્ વૈદ્યમનુગચ્છતિ ।

રખ કર મેરે પીછેર ચલો તો । જલોદરી ને કહા હસ મેં કૌન સી ઘડી  
યાત હૈ । ‘યહ મેરા કોથલા ઉઠાયેગા’ એસા જાનકર વૈદ્ય ને હલાજ કે  
દ્વારા ઉસકો વ્યાધિમુક્ત કર દિયા । વૈદ્યને અપના ઔષધિ કા કોથલ  
ઉઠા કર ચલને કે લિયે દે દિયા । અર્હદત્ત ઉસ કોથલે કો કન્ધે પર  
રખ કર વૈદ્ય કે પીછેર ચલને લગા । કોથલા દેવ કી માયા સે લે જાતે  
લે જાતે માર્ગ મેં વહુત વજનદાર બન ગયા । ઉસસે વહ વહુત થક ગયા ।  
પરન્તુ ફિર બી ઉસકી હિમ્મત ઉસે છોડકર આગે જાને કી નહીં હુઈ ।  
વિચારને લગા કિ મેં વચન વદ્ધ હો ચુકા હૂં અતઃ અવ હસ ભાર કો કેસે  
છોડસકતા હૂં । તથા યદિ કોથલે કો લાદ કર હસ વૈદ્ય કે પીછેર જો ન  
ચલૂં તો ફિર જલોદર હો જાનેકી આશંકા હૈ, અતઃ જૈસે બી બનેં વજ્ર-  
સમાન ભારી હસ કોથલે કો લેકર હી ચલને મેં શ્રેય હૈ, ચાહે મેરે શિર કે  
થાલ બી ક્યોં ન ઘિસ જાયેં । હસ પ્રકાર વિચાર કર વહ કોથલે કો  
સિર પર લિયે હુય વૈદ્ય કે પીછેર ચલતા રહા ।

પાછળ ચાલો. જળોદર વાળાએ કહ્યું કે, તેમાં કઈ મોટી વાત છે. ‘આ મારો  
કોથળો ઉઠાવશે’ એવું જાણી ને વેદે ઇલાજ દ્વારા તેને વ્યાધિમુક્ત કરી દીધો.  
વેદે પોતાની ઔષધીનો કોથળો ઉઠાવીને ચાલવા માટે તેને આપ્યો. અર્હદત્ત  
તે કોથળાને કાંધ ઉપર રાખીને વૈદ્યની પાછળ પાછળ ચાલવા લાગ્યો. કોથળો  
દેવની માયાથી ચાલતાં ચાલતાં માર્ગમાં ઘણો વજનદાર બની ગયો, આથી  
તે ઘણો જ થાકી ગયો અને આગળ ચાલવાની તેનામાં હિંમત ન રહી છતાં  
પણ તે વિચારવા લાગ્યો કે હું વચનથી બંધાયેલ છું માટે હવે આ ભારને  
હું કેવી રીતે છોડી શકું? અને જો કોથળાને ઉપાડીને હું આ વૈદ્યની પાછળ પાછળ  
ન ચાલું તો ફરી પાછો જળોદરનો ઉપદ્રવ થઈ જવા સંભવ છે. જેમ અને  
તેમ વજ્ર સમાન ભારે આ કોથળાને ઉપાડીને ચાલવામાં જ શ્રેય છે. મારા  
માથાના વાળ ઘસાઈ જાય તો પણ મારે કોથળાને ઉપાડીને ચાલવું જોઈએ. આ  
પ્રકારનો વિચાર કરી માથા ઉપર કોથળો લઈ તે વૈદ્યની પાછળ પાછળ ચાલતો રહ્યો.

एकदा स मायिको वैद्यस्तं मुनिसंनिधौ नीत्वा वदति यदि त्वं दीक्षां ग्रह्णासि, तर्हि त्वां मुञ्चामि । स भाराक्रान्तो वदति ग्रहीष्याम्येव दीक्षाम् । ततोऽसौ मायिकः वैद्यस्तस्मै दीक्षां प्रदाप्य स्वयं देवलोकं गतः । देवे स्वस्थानं गते स दुर्लभोपि त्वादरतिपरीपहेणाभिभूतः सन् संयमं त्यक्तुं समुद्यतः । ततो देवेनावधिना शास्त्रा पुनरपि तथैव जलोदरं कृत्वा वैद्यरूपेणागत्य पुनरसौ प्रतिबोधितः । पुनर्गते च देवे परीपहाभिभूतेन तेन दीक्षात्पागो मनसि भूतः । तदाऽसौ वैद्यरूपो देवस्वर्गीयः वारं प्रतिबोध्य व्रते स्थिरीकरणार्थमर्हत्तंसमीष एव तिष्ठति ।

अब वह मायिक वैद्य उस जलोदरी को मुनि के पास ले गया और कहने लगा कि यदि तुम दीक्षा धारण करलो तो मैं तुम्हें छोड़ दूँ । भार से हैरान होकर उसने विचार किया कि—अच्छा है दीक्षा लेने से इस वजन को उठाने के दुःख से तो बच जाऊँगा । और बोला दीक्षा ही ले लूँगा । वैद्य उसको संयम दिला कर अपने स्थान देवलोक को चला गया । देव को अपने स्थान पर गया हुआ जानकर वह दीक्षा का परित्याग करने को उद्यत हुआ । देवने पुनः उसे जलोदर रोग से पीडित किया और वैद्य के रूप से आकर प्रतिबोधित किया । फिर भी वह अरतिपरीपह से उद्विग्न होकर संयम छोड़ने की इच्छा करने लगा । फिर भी देव आकर उसको प्रतिबोधित किया और “यह संयम में स्थिर बना रहे” इस खयाल से वह देव स्वयं इसके पास रहने लगा ।

ये भायाधारी वैद्य ये जलोदरवाजाने मुनिनी पास ले गया अने छेवा लाया के ने तमे दीक्षा धारण करी दियो तो हुं तमने छोडी दिते । भारभी छेरान भनेला तेले विचार कयो के,—“छीक छे दीक्षा लेवाथी आ वजनने उठावपाना दुःखथी तो भयो जर्घश” आभ विचारी तेले कहुं के लवे । हुं दीक्षा लेधश ते पछी तेने दीक्षा अपावी वैद्य पोताना स्थाने देवलोकां आल्या गया । देवने पोताना स्थान उपर गयेला जालीने ते दीक्षाने परित्याग करवा तयार थयो । देवे करीथी तेने जलोदरना रोगथी पीडित भनाये । अने वैद्यना स्वइपथी आवीने प्रतिबोधित कयो । करीथी ते अरतिपरीपहथी उद्वेग पाभीने संयम छोडवानी इच्छा करवा लाये । करी पाछा देवे आवीने तेने प्रतिबोधित कयो अने “आ संयममां स्थिर भनी रहे” ओवा ज्योवथी ते देव पोते तेनी पास रहवा लाया ।



एकदा स देवो मनुष्यवेपेण तृणभारं गृहीत्वा कस्मिंश्चित् प्रज्वलति ग्रामे प्रविशति, तदा संयमारति कुर्वन्नर्हदत्तमुनिः प्राह-ज्वलति ग्रामे तृणभारं नयन् कथं प्रविशसि? किं मूढोऽसि? देवेनोक्तम्-त्वं तु महामूढोऽसि, यतः सकलकल्याणकारणं संयमं विहाय क्रोधमानमायालोभबहिर्प्रज्वलिते सकलानर्थकरे गृहवासे पुनः पुनर्वार्यमाणोऽपि प्रवेष्टुमिच्छसि?। स एतद्वचनं श्रुत्वाऽप्यरति सर्वथा न मुञ्चति ।

एक दिन की बात है कि वह देव मनुष्य का वेप धारण कर घास का गट्ठा लेकर एक गांव में कि जिसमें आग लगी हुई थी जाने लगा । उस समय अरतिभाव को धारण करने वाले उस अर्हदत्त मुनि ने उस से कहा कि तुम कितने मूर्ख हो जो आग से जल रहे इस ग्राम में घास का भारा लेकर जा रहे हो । इस स्थिति में तो कोई मूर्ख भी इस गांव में घास का भारा लेकर जाने को तैयार नहीं हो सकता है, अतः तुम्हारे जैसे समझदार व्यक्ति को ऐसा काम करना इस समय सर्वथा अनुचित है । अर्हदत्त मुनि की इस बात को सुनकर देव ने कहा कि -परोपदेश में पांडित्य प्रदर्शन करने वाले दुनिया में अनेक मनुष्य हैं तुम भी उन्हीं में से एक हो । मैं तो समझता हूं कि मेरी अपेक्षा अधिक मूर्ख तुम हो जो कल्याण के कारणभूत इस ग्रहण किये हुए संयम में अरतिभाव धारण करते हुए क्रोध, मान, माया एवं लोभ-रूपी अग्नि से प्रज्वलित एवं सकल अनर्थों के उत्पादक ऐसे गृहस्थाश्रम में जाने के लिये बार-बार मना करने पर भी संयम छोड़ने की इच्छा करते हो ।

એક સમય તે દેવે મનુષ્યનો વેશ ધારણ કરીને ઘાસની ગાંસડી લઈ એક ગામમાં કે જ્યાં આગ લાગી હતી ત્યાં જવા લાગ્યા તે સમયે અરતી ભાવના ધારણ કરવાવાળા તે અર્હદત્ત મુનિએ તેમને કહ્યું, કે, તમે કેવા મૂર્ખ છો કે, આગથી બળી રહેલા ગામમાં ઘાસનો ભારો લઈને જાવ છો? આ સ્થિતિમાં તો કોઈ મૂર્ખ પણ તે ગામમાં ઘાસનો ભારો લઈને જવાની તૈયારી ન કરે. માટે તમારા જેવી સમજદાર વ્યક્તિએ એવું કામ કરવું આ સમયે સર્વથા અનુચિત છે. અર્હદત્ત મુનિની આ વાતને સાંભળીને દેવે કહ્યું કે, પારકાને ઉપદેશ આપવામાં પાંડિતાઈનું પ્રદર્શન કરવાવાળા દુનિયામાં અनेક મનુષ્યો છે. તેમાંના તમે એક છો. હું તો સમજું છું કે મારી અપેક્ષાએ તમે અધિક મૂર્ખ છો. જે કલ્યાણના કારણભૂત એવા લીધેલા સંયમમાં અરતી ભાવ ધારણ કરીને, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ રૂપી અગ્નિથી પ્રજ્વલિત એવા સંકળ અનર્થોના ઉત્પાદક એવા ગૃહસ્થાશ્રમમાં જવા માટે વારંવાર મના કરવા છતાં પણ સંયમ છોડવાની ઇચ્છા કરો છો. આ પ્રમાણે તે દેવના

अन्यदा कदाचित् तेन सह पुरः पुरभल्लभसौ देवः पन्थानं विहाय कण्टकाकीर्णेनोत्पथेनाटवीं गच्छति । ततोऽसौ दुर्लभबोधिरर्हत्तः साग्रहं वदति मन्थनं हित्वा कथमुत्पथेन गच्छसि ? देवेनोक्तम्—त्वमपि विशुद्धं मोक्षमार्गं परित्यज्याऽधि-  
व्याधिरूपे कण्टकाकीर्णे संसारमार्गे कस्माद् व्रजसि ? एवमुक्तोऽप्यर्हत्तो बोधिमल-  
ग्न्या वदति—कस्त्वम् । ततो देवः स्वपूर्वभवसम्बन्धिनं मूकरूपं दर्शयित्वा प्रार्-  
हे भ्रातः ! शृणु, भवता पूर्वजन्मनि देवभवं प्राप्य ममं निगदितम्—यदा स्वर्गा-

इस प्रकार उस देव के वचन सुनकर अर्हत्त मुनि अरतिपरीषद् को सर्वथा नहीं त्याग सका । देवने और भी उपाय उसे समझाने के लिये किये जैसे—कोई एक दिन जब अर्हत्त बाहर जा रहे थे तब देव भी इनके आगे २ चलने लगा और रास्ता छोड़कर कुरास्ते जाने लगा । वह मार्ग कण्टकाकीर्ण था एवं अटवी की ओर जानेवाला था । उसकी इस प्रकार चाल देखकर अर्हत्त मुनि ने कहा कि—तुम कैसे आदमी हो जो मार्ग का परित्याग कर कुमार्ग से जा रहे हो । तब देव ने भी अर्हत्त से कहा कि तुम भी कैसे आदमी हो जो विशुद्ध मोक्षमार्ग का परित्याग कर अधिव्याधिरूप कंटकों से आकीर्ण संसारमार्ग में जाने को तैयार हो रहे हो । इस प्रकार जब देव ने कहा तो वह अर्हत्त कहने लगा कि—सच तो कहो तुम कौन हो । देवने अर्हत्त की इस प्रकार बात सुनकर अपना पूर्वभवसंबंधी मूक रूप दिखा कर कहा—हे मित्र ! सुनो आपने पूर्वभव में देवभव प्राप्त कर मुझ से कहा था कि यदि मैं

वचन सांभलीने पणु अर्हत्त मुनिअे अरतिपरीषदने त्याग सर्वथा न  
कथ्यो. देवे भीज पणु उपाय तेने समझववा भाटे कथो. जेम ठाई अेक  
दिवस अर्हत्त अडार जर्ध रह्या हुता त्यारे देव पणु तेनी आगण आगण  
आलवा लाग्या अने रस्ते छोडीने कुरस्ते जवा लाग्या. ते मार्ग कांटाथी  
भरेल हुतो. अने घोर जंगल तरङ्ग जतो हुतो. तेनी आ प्रकारनी आल  
जेधने अर्हत्त मुनिअे कहुं तमे देवा माणुस छे के मार्गने त्याग करी  
कुमार्गे जर्ध रह्या छे. त्यारे देवे पणु अर्हत्तने कहुं के, तमे पणु देवा  
आहमी छे के, विशुद्ध मोक्ष मार्गने परित्याग करी आधि व्याधि रुप  
कांटाथी भरेला संसारमार्गमां जवाने तैयार थर्ध रह्या छे. आ प्रकारे  
देवे कहुं अेटवे अर्हत्त कडेवा लाग्या के, सायुं कडे तमे डोणु छे । देवे  
अर्हत्तनी आ बात सांभलीने पोताना पूर्वभव संबधी भूंगलुं स्वइय देखाडीने  
कहुं के, हे मित्र ! सांभलो. आपे पूर्वभवमां देव भव प्राप्त करी मने कहुं के,

त्प्रच्युतः स्याम्, तदा तव सहोदरभ्राता भविष्यामि, ततस्त्वया सुरालयगते-  
नाऽप्यहं जैनधर्मं प्रतिबोधनीयः, इति त्वद्वचनं मया स्वीकृतम्, अतस्त्वां प्रतिबो-  
धयितुमहमत्रागतोऽस्मि, तस्माद् धर्मं स्वीकृत्य मुहुर्मुहुररतिं मा सेवस्व, इत्येवं  
मूकदेववचनं निशम्यार्हदत्तोऽब्रवीत्-पूर्वभवेऽहं देव आसमित्यत्र किं प्रमाणम् ? ततो  
मूकदेवस्तद्विश्वासार्यं देवभवे तेन रोपितमाश्रवृक्षं प्रदर्श्य सर्वं पूर्ववृत्तमवदत् । ततस्त-  
स्य जातिस्मरणमभूत् । तेनाऽस्य चारित्रदृढता जाता । अस्य पूर्वमरतिः, पश्चात्संय-  
मे रतिः समुत्पन्ना । एवमन्यैरपि मुनिभिररतिपरीपहस्तन्निराकरणेन सोढव्यः॥१५॥

देवभव से च्युत हुआ तो तुम्हारा सहोदर होऊंगा, इसलिये तुम देवलोग  
में देव होते हुए भी मुझे जैनधर्म का प्रतिबोध देना । तुम्हारे इस कथन  
को उस समय मैंने स्वीकार कर लिया था । इसलिये मेरी प्रतिज्ञा के  
अनुसार मैं तुम्हें प्रतिबोधित करने के लिये यहां आया हुआ हूं; अतः  
संयमको अंगीकार कर फिर उसमें बार बार अरति का सेवन नहीं करना  
चाहिये । इस प्रकार मूक देव के वचन सुनकर अर्हदत्त ने कहा कि  
इस में क्या प्रमाण है कि मैं पूर्वभव में देव था । मूकदेव ने अर्हदत्तकी  
बात सुनकर उसके विश्वास के लिये देवभव में आरोपित आश्रवृक्ष को  
दिखलाकर समस्त पूर्व का वृत्तान्त कह दिया । इस सब को सुनकर  
उसे जातिस्मरण हो गया । इससे इसके चारित्र में दृढता आ गई ।  
इस का सारांश यही है कि देखो अर्हदत्त को पहिले चारित्र में अरति  
थी पश्चात् प्रतिबोधित होने पर उसे चारित्र में रति आ गई इस बात को

जे हुं देव अवधी च्युत थधशि तो तमारो सहोदर बनीश. आ भाटे  
देव बोडभां रडेवा छतां पथु तमे भने जैनधर्भनेा प्रतिबोध आपता  
तमारो जे कथननेा मे' जे समये स्वीकार करी लीधे। छतो जेथी भारी  
प्रतिज्ञा अनुसार हुं तमोने प्रतिबोधित करवा भाटे अहिं आव्ये। छुं.  
आधी संयमनेा अंगिकार करी तेमा वारंवार अरतिनुं सेवन न करवुं  
जेधजे. आ प्रकारे ते भूंगा देवनां वचन सांभणीने अर्हदत्ते कथुं के,  
आभां कथुं प्रमाण छे के, हुं पूर्वभवभां देव छतो. भूंगा देवे अर्हदत्तनी  
वात सांभणीने तेना विश्वास भाटे देव अवभां उगाडेहुं आश्रवृक्ष देभाडीने  
अगाडिनुं सधणुं वृत्तांत कही संभणाव्युं. आ अधुं जेध जण्णीने तेने जति-  
स्मरण थयुं. आनेा सारांश जे छे के, अर्हदत्तने पडेलां चरित्रभां अरति  
छती. पछी प्रतिबोधित थवाथी तेना चरित्रभां रति आवी. आ वातने जण्णीने

અરતિસદ્ભાવે સ્ત્રીપ્રભિલાપઃ સ્પાદતઃ સ્ત્રીપરીપદજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—સંગો એસ મણુસ્સાણં, જાઓ લોગંમિ એતિઓ ।

જેસ પ્યા પરિણ્યાયાં, સુકેડં તસેસ સામંણેણં ॥૧૬॥

છાયા—સંગ એ મનુષ્યાણાં, યાઃ લોકે સ્ત્રિયઃ ।

યસ્ય એતાઃ પરિણાતાઃ, સુકૃતં તસ્ય શ્રામણ્યમ્ ॥ ૧૬ ॥

ટીકા—‘સંગો’ ઇત્યાદિ ।

લોકે=અસ્મિન્ સંસારે યાઃ સ્ત્રિયઃ સન્તિ, એમ મનુષ્યાણાં-પુરુષાણાં સંગઃ=સંગચ્છતે=વશીભવતિ જીવો યસ્માત્ સ સંગો=વન્ધનમ્-યથા મૃગાણાં વન્ધનં વાગુ-રાદિ, યથા વા મક્ષિકાણાં શ્લેષ્મસંગો વન્ધનં, તથા પુરુષાણાં સ્ત્રિયો વન્ધનમિત્યર્થઃ । સ્ત્રિયો દિ હાવભાવાદિભિઃ પુરુષાણાં વિષયાસક્તિરૂપાં રાગપ્રત્યાદયન્તિ, રાગો-જાતકર, સવ મુનિયો, કો ચાહિયે કિ વે આતે હુપ અરતિપરીપદ કો નિવારણ કર સંયમ મેં રતિ રહે ॥ ૧૬ ॥

અરતિ કે સદ્ભાવ મેં મુનિ કો સ્ત્રીપરીપદ ઉત્પન્ન હોને કા સંભવ હૈ, હસ લિયે અવ સૂત્રકાર આઠવે સ્ત્રીપરીપદજય કો કહતે હૈ—

‘સંગો એસ’—ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—(લોગંમિ-લોકેઃ) હસ સંસાર મેં (જાઓ ઇતિઓ-યાઃ સ્ત્રિયઃ) જો સ્ત્રિયાં હૈ (એસ મણુસ્સાણં સંગો-એષઃ મનુષ્યાણાં સંગઃ) યહ મનુષ્યો, કા વન્ધન હૈ । જિસ પ્રકાર મૃગો કા વન્ધન વાગુરા-જાલ-આદિ; મક્ષિકા કા વન્ધન શ્લેષ્મ આદિ હૈ, ડસી પ્રકાર સ્ત્રિયાં ભી પુરુષો કા વન્ધનરૂપ હૈ, ક્યોં કિ, યે સ્ત્રિયાં હાવ, ભાવ, આદિ સે, પુરુષો મેં વિષયા-સક્તિરૂપ રાગ ઉત્પન્ન કરતી હૈ । તદ્વિષયક રાગ કી ઉત્પત્તિ હોને પર

સધના મુનિઓએ બળુબું બેઠએ કે, આવેલ અરતિપરીપદને નિવારી સંયમમાં રતિ રાખે, ॥ ૧૫ ॥

અરતિના સદ્ભાવમાં મુનિને સ્ત્રી પરીપદ ઉત્પન્ન થવાનો સંભવ છે. તેથી સૂત્રકાર આઠમે સ્ત્રી પરીપદ ઉત્પન્ન કરે છે. સંગો એસ—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લોગંમિ-લોકે આ સંસારમાં જાઓ-ઇતિઓ-યાઃ સ્ત્રિયઃ જે સ્ત્રિઓ છે, એસ મણુસ્સાણં સંગો-એષઃ મનુષ્યાણાં સંગઃ તે મનુષ્યોનું બંધન છે. જેમ મૃગોનું બંધન બાળ આદિ માખીઓનું બંધન ગળફા આદિ છે, તે પ્રકાર સ્ત્રિઓ પણ પુરુષોને બંધનરૂપ છે કેમ કે, સ્ત્રિઓ હાવભાવ આદિથી પુરુષોમાં વિષયાસક્તિ રૂપ રાગ ઉત્પન્ન કરે છે, તે વિષયરાગ ઉત્પત્તિ થવાથી પુરુષ તેને વશીભૂત બની જાય છે.

तत्तौ च तद्वशीभूतानां पुरुषाणां नरकनिगोदादिदुर्गतिकसंसारपातः, तस्मात् स्त्रियः पुरुषाणां बन्धनमिति व्यपदेशः ।

अतः किं कर्तव्यमित्याकाङ्क्षायामाह—‘जस्से’ इत्यादि ।

यस्य—अत्र सम्बन्धसामान्ये पठ्यते, येन मुनिनेत्यर्थः, एताः स्त्रियः परिज्ञाताः परि=सर्वथा ज्ञाताः ज्ञ=परिज्ञयाऽस्मिन् भवे परमवे चानन्तदुःखकारणतया विज्ञाताः प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिवर्जिताः, तस्य मुनेः श्रामण्यं=चारित्र्यम्, अत्र श्रामण्येन सह परिपाल्यपरिपालकभावसम्बन्धे पठ्यते । सुकृतं=सुष्ठु आचरितं भवति, सफलं भवतीत्यर्थः ॥ १६ ॥

पुरुष उनके वशीभूत हो जाता है । उनके वश में हो जाने से उसका नरक निगोद आदि दुर्गतिरूप संसार में पतन अवश्यभावी है । इसलिये ये स्त्रियां पुरुषों का बन्धन है । इसलिये ( जस्से-यस्य ) जिस मुनि द्वारा ( एया परिणयाया-एताः परिज्ञाताः ) ये सर्वथा ज्ञ-परिज्ञा से इस भव में तथा परभव में अनन्त दुःखों के कारणरूप जानकर प्रत्याख्यान-परिज्ञा से परिवर्जित कर दी जाती हैं ( तस्स सामणं सुकटं-तस्य श्रामण्यं सुकृतम् ) उस मुनि का साधुपना सफल है ।

भावार्थ—जिस प्रकार मृगादि पशुओं को पकड़ कर रखने के लिये बाँसुरा ( जाल ) आदि बन्धन प्रसिद्ध हैं क्यों कि इन द्वारा परतन्त्र किये वे स्वतन्त्र विहार से रहित हो जाते हैं, और अनेक प्रकार की यातनाएँ सहन करते हैं इसी प्रकार पुरुषों का बन्धन ये स्त्रियां हैं । इनके वश में पड़ा हुआ प्राणी परतन्त्र होकर अपनी स्वतन्त्रता-चारित्र्य

तेना वश थवाथी तेनु नरक निगोद आदि दुर्गति इप संसारमा पतन अवश्यभावि छे माटे स्त्रियो पुइयोनु बंधन छे, आ माटे जस्से-यस्स ले मुनिद्वारा एयापरिणयाया-एताः परिज्ञाताः ये सर्वथा ज्ञ-परिज्ञाथी आ एवं तथा परभवमा अनन्त दुःखोना कारण इप जालीने प्रत्याख्यान परिज्ञाथी परिवर्जित करी देवामा आवे छे, तस्स सामणं सुकटं-तस्य श्रामण्यं सुकृतम् एवा मुनिनु साधु पणु संक्षण छे.

भावार्थ—ले प्रकार मृग आदि पशुओने पकड़ी राखवा माटे जाल आदि बंधन प्रसिद्ध छे केम छे, तेना द्वारा परतन्त्र कयाथी ते स्वतन्त्र विहारथी रहित भनी जाय छे अने अनेक प्रकारनी यातनाओ सहन करे छे, आ रीते पुइयोनु बंधन ओओ छे तेना वशमा पडेवा प्राणी परतन्त्र भनीने



અર્થ ભાવ:-ધર્મમર્યાદાનુવર્તી મુનિ:-સ્ત્રીણામદ્વપ્રત્યદ્વસંસ્થાનહસિતવિભ્રમા-  
ધાશ્ચિત્તવિક્ષેપકારિણીદેષ્ટાઃ કદાચિદપિ ન ચિન્તયેત્, નાપિ કામબુદ્ધ્યા મોક્ષ-  
માર્ગકર્દમકલ્પાસુ તાસુ ચક્ષુરપિ નિશ્ચિપેત્ કિંત્વાત્માનમેવ પર્યાલોચયેત્। એવં સ્ત્રી  
પરીપહજયઃ સ્યાદિતિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

ઢાદશતીર્થંકરવાસુપૂજ્યશાસને ચમ્પાનગર્યાં તદ્વંશીયો રૂપલાવણ્યસમ્પન્નઃ,  
સુજાતસર્વાંગસુન્દરઃ, શશિસૌમ્યાકારઃ, શ્વેતઃ, શ્વેતરૂપઃ, કાન્તઃ, કાન્તરૂપઃ, પ્રિયઃ,

હસ કા ભાવ યહ હૈ-ધર્મ મર્યાદા અનુવર્તન કરને વાલા મુનિ ચિત્ત  
કો વિક્ષિપ્ત કરને વાલી સ્ત્રિયોં કે અંગ, પ્રત્યંગ કી આકૃતિ કા, તથા  
उनकी हांसी आदि क्रियाओं का एवं हाव विभाव आदि विलासों का  
कभी भी विचार तक न करे, और न मोक्षमार्ग में कर्दमस्वरूप  
इनको विकारदृष्टि से देखे । जहां तक हो मुनिका यही कर्तव्य है कि  
वह अपनी आत्मा का जिस तरह से कल्याण होता रहे, तथा जिन  
विचारधाराओं से वह अहर्निश अपने गृहीत पथ पर अग्रगामी बना  
रहे, इस प्रकार का ही प्रयत्न साधु को करते रहना चाहिये । यही  
अपनी पर्यालोचना है ॥

દૃષ્ટાન્ત—વાહર વેં તીર્થંકર શ્રી વાસુપૂજ્ય સ્વામી કે શાસન કાલ મેં  
ચમ્પાનગરી મેં इन्हीं का वंशज लावण्यपूर नामका एक राजा रहता था ।

वह सुजातसर्वाङ्गसुन्दर-अर्थात् आकार से सर्वाङ्ग सुन्दर था,

આનો ભાવાર્થ એ છે કે-ધર્મ મર્યાદાનુ અનુવર્તન કરવાવાળા મુનિ ચિત્તને  
વિક્ષિપ્ત કરવાવાળી સ્ત્રિઓના અંગ પ્રત્યંગની આકૃતિનું તથા તેની હાંસી આદિ  
ક્રિયાઓનું, અને હાવભાવ આદિ વિલાસોનો કદી વિચાર સુદ્ધાં પણ ન કરે.  
મોક્ષમાર્ગમાં કર્દમસ્વરૂપ એવી આ ભાવનાને વિકાર દૃષ્ટિથી ન જુએ. એનું  
કર્તવ્ય છે કે, જ્યાં સુધી બની શકે ત્યાં સુધી પોતાના આત્માનું કલ્યાણ થતું  
રહે અને જે વિચારધારાઓથી તે હરહંમેશ પોતે શ્રદ્ધા કરેલ માર્ગ ઉપર  
અગ્રગામી બની રહે. આ પ્રકારનો જ વિચાર પ્રયત્ન સાધુએ કરવો જોઈએ  
એ જ તેમની પર્યાલોચના છે.

દૃષ્ટાન્ત—બારમા તીર્થંકર શ્રી વાસુપૂજ્ય સ્વામીના શાસનકાળમાં ચંપા-  
નગરીમાં તેમના જ વંશના લાવણ્યપૂર નામના એક રાજા રાજ્ય કરતા હતા.  
તે સુજાતસર્વાંગસુન્દર અર્થાત્ આકારથી સર્વાંગ સુંદર હતા, તે સફલસમાજના  
મનોરથ પૂર્ણ કરવાવાળા હોવાથી બધાને શ્વેત હતા, તેમની આકૃતિ મનોહર



प्रियरूपः, मनोज्ञः, मनोज्ञरूपः, सौम्यः, सुभगः, प्रियदर्शनः, सुरूपोः लावण्यपूर-  
नामको नृप आसीत् । असौ नृपः सुभूमनामकस्य वासुपूज्यतीर्थंकृतप्रथमगणधरस्य  
समीपे धर्मदेशनां श्रुत्वा दीक्षितो जातः ।

स चैकदा भिक्षाचर्या पर्यटन् श्रावकगृहं मत्वा वेश्यागृहं प्रविष्टः, तत्र सा काम-  
वह सकल समाज का मनोरथ पूर्ण करनेवाला होने से सब को इष्ट था,  
इसकी आकृति मनोहर होने से इष्टरूप था, तथा वह सबका सहायक  
होने से कान्त अभिलषणीय था । वह कान्तरूप रूप से भी कान्त कम-  
कमनीय था । वह सब जनों के उपकार करने में परायण होने से सबके  
लिये प्रिय था । वह रूप से भी प्रिय होने से प्रियरूप था । सब के हित-  
कारी होने से वह मनोज्ञ था । इसके देखने वाले के लिये यह चित्ता-  
कर्षक होने से मनोज्ञ रूप था । दुःखियों का दुःख दूर करने वाला होने  
से मनोऽम सबके मन में बसने वाला था । सकल जनमन के अनुकूल  
आकृति वाला होने से मनोऽमरूप था, इसलिये वह सौम्य-भद्र  
स्वभाव होने से समस्त जन का आह्लादक था । तथा कल्याण  
मार्ग पर चलने वाला होने से सुभग था । वह प्रियदर्शन था अर्थात्  
जो व्यक्ति इसे एकवार भी देख लेता तो पुनः उसे देखनेकी लालसा  
उस के बनी रहती थी । वह सुरूप-लावण्य की राशि से भरपूर था ।  
राजा ने सुभूम नाम के गणधर के पास जो वासुपूज्यतीर्थंकर के प्रथम  
गणधर ये धर्मदेशना सुनकर दीक्षा धारण करली ।

डोवाथी इष्टरूप हुता. तथा तेओ अधाने सहायकरवावाणा डोवाथी कान्त अभि-  
लषणीय हुता. ते कान्तरूप इपथी पणु कान्त-कमनीय हुता. तेओ दरेक मनुष्य  
पर उपकार करवाभा परायणु डोवाथी दरेकने प्रिय हुता. ते इपथी पणु प्रिय  
डोवाथी प्रियरूप हुता. दरेकना हितचिंतक डोवाथी ते मनोज्ञ हुता. तेमने  
जेनारने तेओ चित्ताकर्षक डोवाथी मनोज्ञरूप हुता, दुःखीओना दुःख दूर  
करवावाणा डोवाथी मनोऽम अर्थात् दरेकना मनभा पास करवावाणा हुता. सकल  
जनमननी अनुकूल आकृतिवाणा डोवाथी मनोऽमरूप हुता, ओ भाटे तेओ  
सौम्य भद्रस्वभाव डोवाथी समस्तजनना आह्लादक हुता. तथा कल्याण  
मार्ग पर चलवावाणा डोवाथी सुभग हुता तेओ प्रियदर्शनीय हुता, अर्थात् जे ठाई  
तेने ओकवार जुओ तो इरीथी तेने जेवानी लालसा उत्पन्न थया करती. ते सुरूप-  
इषलावण्यथी भरपूर हुता. राजन्ते सुभूम नामना गणधरनी पासो के जे वासुपूज्य  
तीर्थंकरना प्रथम गणधर हुता तेमनी धर्मदेशना सांजणीने दीक्षा धारण करी लीधी.

મંજરીનામ્ની વેશ્યા લાવણ્યપૂરુષુનેર્મનોદરં ચયોરુપલાવણ્યસંસ્થાનાદિકં ક્લિષ્ણ  
મોહિતા જાતા । અથ સા લાવણ્યપૂરુષુર્નિ પ્રણમ્ય શ્વટિતિ દ્વારદેશમાગત્ય સર્વાણિ  
નિર્ગમદ્વારાણિ પિધાય પુનસ્તસ્ય સમીપમાગત્ય સાનુરાગં પશ્યન્તી સસ્મિતં વદતિ-  
મહાત્મન્ ! સ્વરૂપમેવ કાલં મયાનગ્ર તિષ્ઠતુ, યાવન્નિધામાનયામિ । તદ્વિનયવચનં  
નિશમ્ય લાવણ્યપૂરુષુનિસ્તત્રૈવતિષ્ઠતિ । સા ચ ગૃહાભ્યન્તરગતા મુનિસંગમાભિલાષિણી  
મિસોપયોગિયસ્તુગ્રહણવ્યાજેન નૃત્યન્તીવ ભવને ચલન્તી, વાહુવિશેષૈઃ

एक समय की बात है कि जब ये भिक्षाचरी के लिये निकले तो वे श्रावक का घर जानकर वेश्या के घर में आहार पानी के लिये पहुंच गये । वहां वेश्या ने जब इन्हें आया हुआ देखा तो वह इन पर इनके सुन्दरातिशुन्दररूप को देखकर मोहित हो गई । वेश्या का नाम काममंजरी था । अब क्या था रूप का निधान जब घर के भीतर स्वयं आ गया है तो उसने विचार किया कि यह वापिस न हो जाय इस खयाल से उठ कर उसने शीघ्र ही बाहिर निकल ने के जितने भी द्वार थे वे सब द्वार बंद कर दिये । पश्चात् वह उन मुनिराज के पास आई और सानुराग उनकी ओर निहार कर मुस्कराती मुस्कराती कहने लगी कि-हे महात्मन् ! आप कुछ देर तक यहां ठहरिये-जब तक मैं भिक्षा लेकर आती हूं । मुनिराज उसके विनीत वचन सुनकर वे वहीं पर ठहरे रहे और वह मुनि के साथ संगम की अभिलाषा से घर के भीतर रही हुई आहार पानी लाने के वहाने से मकान में ऐसी चलने लगी कि जैसे मानो नाचती हो । कामराग के प्रकट

એક સમયની વાત છે કે, જ્યારે તે ભિક્ષાચર્યા માટે બહાર નીકળ્યા ત્યારે શ્રાવકનું ઘર બાણીને એક વેશ્યાના ઘરમાં આહાર પાણી માટે બંધ થયેલું. જ્યારે વેશ્યાએ મુનિને આવેલા જોયા ત્યારે તે તેના રૂપલાવણ્યને જોઈ તેના ઉપર મોહિત બની ગઈ. વેશ્યાનું નામ કામમંજરી હતું. રૂપનું નિધાન જ્યારે ઘરની અંદર આવેલ હતું પછી બાકી રહે શું ? એણે વિચાર કર્યો કે, મુનિ પાછા ન ફરી જાય એ વાતના ખ્યાલથી ઉઠીને તેણે તરત જ બહાર નીકળવાના જોટલા રસ્તા હતા તે બધા બંધ કરી દીધા. પછી તે મુનિરાજની પાસે આવી અને વિવેકપૂર્વક હસતી હસતી સામે આવી અને મુનિરાજની સામે જોઈ કહેવા લાગી કે, હે મહાત્મન્ ! આપ થોડીવાર રોકાઈ જાવ ત્યાં હું ભિક્ષા લઈને આવું છું. મુનિરાજ તેના વિનીત વચન સાંભળીને હરવાબ પાસે ઉભા રહ્યા અને તે વેશ્યા મુનિરાજની સાથે સંગમની અભિલાષાથી ઘરની અંદર આવી ગઈ. આહારપાણી લાવવાના બહાને તે મકાનમાં એ રીતે આવી

प्रावरणवसनापगमव्यक्तीकृताङ्गप्रत्यङ्गाच्छादनपरा कामरागं प्रदर्शयति । भोगाभिलाषप्रकाशक मदनधनुःकल्पभ्रुकुटिविलाससहकृतशिथिलारुणनयननिपातैर्लावण्यपूरमुनेर्मनो हरन्तीव, रूपयौवनसौन्दर्यसम्पन्नसुकुमाराङ्गलीलाप्रदर्शनपरा कोकिलारावमधुरस्वरेण गायति । तदनु तनुनूतनविविधवर्णचित्रितरुचिरवसनाञ्चलस्फालनं प्रकुर्वती भूषणध्वनिमनोहरैश्वरणप्रचारणैर्मुनेः समीपमागत्य सा भृङ्गावलि-समाश्लिष्टकमलायमानलावण्यभरविद्योतितसुषुप्तरागोपगतकपोलपाली समालम्बितालकावलिबिभ्रूपितसमुज्जृम्भमाणवदना भुजादिनिजगात्राणि मोटयन्ती स्मरमदोन्मादेनापहतकृत्याकृत्यविवेकविज्ञाना गद्गदस्वरेण मुनिमभ्यर्थयति काम-

करने के अभिप्राय से अपने अंग एवं प्रत्यङ्ग को साड़ी के गिर जाने के छल से प्रकट कर फिर उन्हें बार-बार ढकने लगी । मानों मुनि के मन को हरती हो इस प्रकार वह उनके ऊपर, भोगाभिलाष सूचक एवं काम के धनुष जैसी भ्रुकुटी के विलास के साथ-साथ कुछ झुके हुए अरुण नयनों के विक्षेपों से प्रहार करने लगी । रूप, यौवन, एवं सौन्दर्य से संपन्न अपने सुकुमार अंगोंकी लीला के प्रदर्शन में तत्पर बनी हुई उसने फिर कोकिल के शब्दसमान मीठे स्वर से गाना गाना भी प्रारंभ कर दिया । पश्चात् शरीर पर पहिरे हुए नवीन बहुमूल्य रंग विरंगे वस्त्र के अंचल को हिलाती एवं भूषणों की ध्वनि से मनोहर पैरों को ठुमक ठुमक कर रखती हुई वह मुनि के समीप आकर गद्गद स्वर से कहने लगी । कहते हुए उसे जरा भी संकोच जो नहीं हुआ उसका कारण इसके ऊपर चढ़ा हुआ काम का उन्माद था, इससे कृत्य और अकृत्य का विवेक विलुप्त हो चुका था । भौरों से युक्त कमल जिस

लागी है, जल में नाचती होय. कामराग प्रगट करवानी छिछाथी पोताना हरेक अंग प्रत्यंगने साड़ीना पड़ी जवाना जड़ानाथी प्रगट करी करीथी ते शरीरने बार-बार ढांकवा लागी जल में मुनिना मनने डरती होय । आ प्रकारे ते मुनि ऊपर, लोगविलासनां सूचक जेवां कामना धनुष जेवी भ्रुकुटिना विलासनी साथे साथे नयनोनां जल में डेकवा लागी. रूप, यौवन अने सौंदर्यथी संपन्न पोताना सुकुमार अंगोनी लीलाना प्रदर्शनमां तत्पर जनेली ते वेश्याज्ये डेकिलकंठ जेवा भीडा स्वरथी गायन गावानी शब्दयात करी. पछी शरीर ऊपर पड़ेरेला नवीन रंगभेरंगी वस्त्रोना छेडाने छेडावती तेमज धरेणुज्योनी ध्वनीथी मनोहर पगोथी ठुमक ठुमक नाचती ते मुनिनी सामे आवीने ते गद्गद स्वर कहेवा लागी, कहेती वजते तेने जरा पणु संकोच न थयो तेनुं कारण तेना ऊपर कामना उन्मादनी छाया डेलाध गह डती. आथी कृताकृत्यना जानने विवेक ते युकी

મોગાય—“ મહાત્મન ! કામજ્વરભરેણ સંતપ્તમિદં મદદ્ગમધુના, દયસ્વ મમ તપ શાન્ત્યૈ ” ઇત્યાદિવિવિધપ્રાર્થનાવચનૈર્વિવિધકામચેષ્ટાભિથ સા મુનિં ચારિત્રાન્વા-  
હયિતું પ્રવૃત્તા । તદા મુનિચિન્તયતિ—

ગણિકાસ્ત્રિયો હિ સ્વલુ નામ્નાઽવલાઃ ૧, કાર્યેણ સવલાઃ ૨, પ્રકૃતિવિપમાઃ ૩,  
કપટપ્રેમગિરિનિઘઃ ૪, અપરાધસહસ્રગૃહાઃ ૫, પ્રભવઃ ( ઉત્પત્તિસ્થાનં ) શોકસ્ય ૬,

પ્રકાર સુંદર માલૂમ પડતા હૈં उसका मुखकमल भी केशपंक्ति से  
विराजित होने से ठीक ऐसा ही सुन्दर मालूम पड़ता था । मुख की  
कपोलपाली लावण्य के प्रकर्ष से चमक रही थी । ललाई को लिये हुए  
थी । काम के आवेश से यह क्षण २ में जंभाई लेती और क्षण २ में  
आलस्य मोड़ती हुई बोली—महात्मन् ! मेरा यह शरीर इस समय  
कामज्वर से संतप्त हो रहा है । अतः दया करो और इस कामज्वर को  
शान्त करो । इत्यादि विविध प्रार्थना के वचनों एवं अनेकविध काम  
की चेष्टाओं से उसने मुनि को उनके पवित्र चारित्र से चलायमान  
करने के लिये कोशिश की, परन्तु मुनिराज ने उस समय भी यही  
विचार किया कि—

ये वेश्या स्त्रियां केवल नाम से ही अवला हैं कार्यसे नहीं १ । कार्य में  
तो ये बड़ी भारी सवल हैं २ । प्रकृति से ये विपम होती हैं ३ । कपट प्रेम  
की ये पहाड़ी नदियां हैं जो शीघ्र ही शुष्क हो जाती हैं ४ । हजारों  
अपराधों की ये स्थान हैं ५ । शोक की उत्पत्ति का ये स्थानभूत हैं ६ ।

ગઈ હતી. ભમરાથી ગુંજતું કમળ જે રીતે સુંદર દેખાય છે તેવી રીતે એવું  
મુખ કમળ પણ કૈશ પંક્તિથી વિરાજીત હોવાથી એવું જ સુંદર દેખાતું  
હતું. તેના મોઢા ઉપરની લાલીમા લાવણ્યથી ચમકી રહેલ હતી. કામના  
આવેશથી એ ક્ષણ ક્ષણમાં અટકતી અને આળસ મરડતી બોલી. મહાત્મન્ !  
હું આ સમયે કામજ્વરથી પીડાઈ રહી છું આથી દયા કરી આ કામજ્વરને  
શાંત કરો. ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રાર્થના વચનોથી તેમજ અનૈકવિધ કામચેષ્ટાથી  
તેણે મુનિને તેના પવિત્ર ચારિત્રથી ચલાયમાન કરવાની કોશિષ કરી. આ સમયે  
મુનિરાજે એ વિચાર કર્યો કે,—

આ વેશ્યા સ્ત્રીઓ કેવળ નામથી જ અવળા છે, કાર્યથી નહીં ૧. કાર્યમાં  
તો એ ઘણી ભારે સળંગ છે ૨. પ્રકૃતિથી એ વિપમ હોય છે ૩. કપટ પ્રેમની એ  
પહાડની નદીઓ જેવી છે, જે વહેલી સુકાઈ જાય છે ૪. હજારો અપરાધોનું  
એ સ્થાન છે ૫. શોકની ઉત્પત્તિને જગાવનાર છે ૬. બળનો વિનાશ કરનાર

વિનાશો વલસ્ય, (વલહારકત્વાત્) ૭, મૂના (વધસ્થાનં) પુરુષાણામ્ ૮, નાશો  
લજ્જાયાઃ—(લજ્જારહિતત્વાત્, અસ્યાઃ સંગે પુરુષસ્ય લજ્જાનાશાચ્ચ) ૯, મૂલમ-  
વિનયસ્ય ૧૦, ગૃહં માયાનામ્ ૧૧, સ્વનિર્વેરસ્ય ૧૨, ભેદો મર્યાદાનામ્, (સંયમમ-  
ર્યાદાયા વિનાશહેતુત્વાત્) ૧૩, આશ્રયો રાગસ્ય, (આશ્રયઃ સ્થાનં) ૧૪, ગૃહં  
દુશ્ચરિત્રાણામ્ ૧૫, સ્વલનાઃ જ્ઞાનસ્ય ૧૬, વિધ્વંસનં બ્રહ્મચર્યસ્ય ૧૭, વિઘ્નો-  
ધર્મસ્ય ૧૮, અરિઃ સાધુનામ્ (મોક્ષમાર્ગસાધકાનાં ચારિત્રપ્રાણવિનાશકત્વાત્) ૧૯  
દૂષણં બ્રહ્મચારિણામ્ ૨૦, કારણં કર્મરજસઃ ૨૧, અર્ગલા મોક્ષમાર્ગસ્ય ૨૨, ભવનં  
દુર્ગુણસ્ય ૨૩, મત્તગજવન્મદનપરવશાઃ ૨૪, વ્યાધીવદ્ દુષ્ટહૃદયાઃ ૨૫ તૃણચ્છન્ન-  
કૂપવદ્ અપ્રકાશાન્તઃકરણાઃ ૨૬, કારીપાગ્નિવદન્તર્દહનશીલાઃ ૨૭, અન્તર્દુષ્ટવ્ર-

વલ કો વિનાશ કરને વાલી હૈં ૭ । પુરુષોં કે મન કી હત્યા કરને કે  
લિયે યે વધસ્થાન હૈં ૮ । લજ્જા કી વિનાશક હૈં ૯ । અવિનય કી યે  
મૂલ કારણ હૈં ૧૦ । માયા કા તો યહાં સ્વજાના હી ભરા રહતા હૈં ૧૧ ।  
વૈર વિરોધ આદિ જિતને ભી અનર્થ દુનિયાં મેં હોતે હૈં ઊન સવ મેં યે  
પ્રધાન રહા કરતી હૈં અતઃ યે ઊનકી સ્થાન હૈં ૧૨ । સંયમમર્યાદા કા  
ભંગ કરને વાલી હૈં ૧૩ । રાગ કા યે સ્થાન હૈં ૧૪ । દુશ્ચરિત્રોં કી તો  
યે પેટી હૈં ૧૫ । જ્ઞાન કી સ્વલના કરનેવાલી હૈં ૧૬ । બ્રહ્મચર્ય કી  
આંખેં કૈસે ફોડી જાતી હૈં હસ વાત મેં યે વડી હોશિયાર હોતી હૈં  
૧૭ । ધર્મ કી વિઘ્નભૂત હૈં ૧૮ । સાધુઓં કે લિયે શત્રુસમાન હૈં ૧૯ ।  
બ્રહ્મચારિયોં કે લિયે દૂષણરૂપ હૈં ૨૦ । કર્મરજ કી કારણ ૨૧,  
અવં મુક્તિમાર્ગ કી યે આર્ગલા હૈં ૨૨ । યે દુર્ગુણોં કે ભવન હૈં ૨૩ ।  
મત્તગજરાજ કે સમાન હૈં ૨૪ । વ્યાધી કે સમાન દુષ્ટહૃદયવાલી હૈં ૨૫ ।  
તૃણ સે ઢકે હુણ કૂપ કે સમાન હૈં ૨૬ । કરીપાગ્નિ કે સમાન અન્તર્દહન-

છે ૭. પુરુષોના મનની હત્યા કરનાર એ વધસ્થાન છે ૮. લજ્જાના નાશ  
કરનાર છે ૯, અવિનયનું એ મૂળ છે ૧૦. માયાનો તો એ ખજાનો છે ૧૧.  
વૈર વિરોધ આદિ જેટલા અનર્થ દુનિયામાં છે તે સઘળા અનર્થોનું ઉદ્ભવ સ્થાન  
છે ૧૨. આથી તે એ અનર્થોની ખાણ છે, સંયમમર્યાદાનો ભંગ કરનાર છે  
૧૩. રાગનું એ સ્થાન છે ૧૪. દુશ્ચરિત્રોની તો એ પેટી છે ૧૫. જ્ઞાનનો નાશ  
કરનાર છે ૧૬. બ્રહ્મચર્યની આંખ ફેડનારી છે ૧૭. એ મહા ચપલ હોય છે,  
ધર્મમાં વિઘ્ન કરાવનારી છે. ૧૮. સાધુઓ માટે શત્રુ સમાન છે ૧૯.  
બ્રહ્મચારિઓ માટે કલંક છે ૨૦. કર્મરજનું કારણ છે ૨૧. મુક્તિ  
માર્ગમાં આર્ગલા છે ૨૨. દુર્ગુણોની ખાણ છે ૨૩. મત્ત ગજરાજ સમાન છે ૨૪.  
વાધળ જેવી દયા વગરની છે ૨૫. ઘાસથી ઢંકાયેલા કુવા જેવી છે ૨૬. છુપા-



મોગાય—“ મહાત્મન્ ! કામજ્વરભરેણ સંતપ્તમિદં મદક્ષમધુના, દયસ્વ મમ તાપ શાન્તયે ” ઇત્યાદિવિવિધપ્રાર્થનાવચનૈર્વિવિધકામચેષ્ટાભિથ સા મુનિ ચારિત્રાન્વા-  
ઘયિતું પ્રવૃત્તા । તદા મુનિચિન્તયતિ—

ગણિકાસ્ત્રિયો હિ સલ્લુ નામ્નાઽવલાઃ ૧, કાર્યેણ સવલાઃ ૨, પ્રકૃતિવિપમાઃ ૩,  
કપટપ્રેમગિરિનદયઃ ૪, અપરાધસહસ્રગૃહાઃ ૫, પ્રભવઃ ( ઉત્પત્તિસ્થાનં ) શોકસ્ય ૬,

પ્રકાર સુન્દર માલૂમ પડતા હૈં उसका मुखकमल भी केशपंक्ति से  
विराजित होने से दीक ऐसा ही सुन्दर मालूम पड़ता था । मुख की  
कपोलपाली लावण्य के प्रकर्ष से चमक रही थी । ललाई को लिये हुए  
थी । काम के आवेश से यह क्षण २ में जंभाई लेती और क्षण २ में  
आलस्य मोड़ती हुई बोली-महात्मन् ! मेरा यह शरीर इस समय  
कामज्वर से संतप्त हो रहा है । अतः दया करो और इस कमज्वर को  
शान्त करो । इत्यादि विविध प्रार्थना के वचनों एवं अनेकविध काम  
की चेष्टाओं से उसने मुनि को उनके पवित्र चारित्र्य से चलायमान  
करने के लिये कोशिश की, परन्तु मुनिराज ने उस समय भी यही  
विचार किया कि—

ये वેશ્યા સ્ત્રિયાં કેવલ નામ સે હી અવલા હૈં કાર્યસે નહીં ૧ । કાર્ય મેં  
તો યે વડી ભારી સવલ હૈં ૨ । પ્રકૃતિ સે યે વિપમ હોતી હૈં ૩ । કપટ પ્રેમ  
કી યે પહાડી નદિયાં હૈં જો શીઘ્ર હી શુષ્ક હો જાતો હૈં ૪ । હજારોં  
અપરાધોં કી યે સ્થાન હૈં ૫ । શોક કી ઉત્પત્તિ કા યે સ્થાનમ્ભૂત હૈં ૬ ।

ગઈ હતી. ભરણી શુંજતું કમળ જે રીતે સુંદર દેખાય છે તેવી રીતે એવું  
મુખ કમળ પણ કૈશ પંક્તિથી વિરાજીત હોવાથી એવું જ સુંદર દેખાતું  
હતું. તેના મોઢા ઉપરની લાલીમા લાવણ્યથી ચમકી રહેલ હતી. કામના  
આવેશથી એ ક્ષણ ક્ષણમાં અટકતી અને આળસ મરડતી બોલી. મહાત્મન્ !  
હું આ સમયે કામજ્વરથી પીડાઈ રહી છું આથી દયા કરી આ કામજ્વરને  
શાંત કરો. ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રાર્થના વચનોથી તેમજ અન્યેકવિધ કામચેષ્ટાથી  
તેણે મુનિને તેના પવિત્ર ચારિત્રથી ચલાયમાન કરવાની કોશિષ કરી. આ સમયે  
મુનિરાજે એ વિચાર કયો કે,—

આ વેશ્યા સ્ત્રીઓ કેવળ નામથી જ અબળા છે, કાર્યથી નહીં ૧. કાર્યમાં  
તો એ ઘણી ભારે સબળ છે ૨. પ્રકૃતિથી એ વિપમ હોય છે ૩. કપટ પ્રેમની એ  
પહાડની નદીઓ જેવી છે, જે વહેલી સુકાઈ જાય છે ૪. હજારો અપરાધો  
એ સ્થાન છે ૫. શોકની ઉત્પત્તિને જન્માવનાર છે ૬. બળનો વિનાશ કરનાર



४७, परदोषप्रकाशिकाः ४८, अरज्जुकाः पाशाः (रज्जुकं विना बन्धनरूपाः)  
४९, कृतपापपश्चात्तापवर्जिताः ५०, अकार्यप्रवृत्तिशीलाः ५१, अनामका व्याधयः  
५२, अरूपा उपसर्गाः (अनुकूलोपसर्गभूताः) ५३, चित्तविक्षेपकारिकाः ५४,  
अनभ्रका विद्युतः ५४, समुद्रवेगाः, (केनापि निरोद्धुमशक्यत्वात् ५६ । उक्तञ्च—

न तथाऽस्य भवेन्मोहो बन्धश्चान्यप्रसङ्गतः ।

योपित्संगाद् यथा पुंसो यथा स्त्रीसंगिसंगतः ॥ १ ॥

पदाऽपि युवतीं भिक्षुर्न स्पृशेद्दारवीमपि ।

स्पृशन् करीव बध्येत करिण्या अङ्गसंगतः ॥ २ ॥

के दोषों को प्रकाशित करने वाली हैं ४८ । ये विना दोरी के पाशतुल्य हैं ४९ । किये हुए पापों के पश्चात्ताप से वर्जित ५०, एवं अकार्य में प्रवृत्ति करने वाली होती हैं ५१ । विना नाम की ये व्याधियां हैं ५२ । विना आकृति के उपसर्ग समान हैं ५३ । चित्तको विक्षेप करने वाली हैं ५४ । विना बादलों की ये विद्युत् हैं ५५ । किसी से भी इनका वेग रोका नहीं जा सकता, इसलिये ये समुद्र के वेग जैसी हैं ५६ । कहा भी है—

न तथाऽस्य भवेन्मोहो बन्धश्चान्यप्रसंगतः ।

योपित्संगाद् तथा पुंसो, यथा स्त्रीसंगिसंगतः ॥ १ ॥

पदाऽपि युवतीं भिक्षुर्न स्पृशेद्दारवीमपि ।

स्पृशन् करीव बध्येत, करिण्या अंगसंगतः ॥ २ ॥

अर्थात्—पुरुष को स्त्री के संग से तथा विषयविलासी के संग से जिस प्रकार का मोह और बन्ध होता है उस प्रकार का मोह और

स्वप्नमां तेमज्ज मित्राभां छेद लेद करवनारी छे ४७, भीजना दोपोने प्रका-  
शीत करवावाणी छे ४८, दोरी वगरना झंसला जेवी छे ४९, करेला पापोना  
पश्चात्तापथी दूर रहनेारी छे ५०, अकार्यमां प्रवृत्ति करनार डोय छे ५१, नाम  
वगरनेा जे रोग छे ५२, आकृति वगरनेा उपसर्ग छे ५३, चित्तने व्यग्र अना-  
वनार छे ५४, वादण वगरनी विजणी जेवी छे, डोछथी तेनेा वेग रोक  
शकतो नथी आ कारणे ते समुद्रना वेग जेवी छे. कह्युं छे ६—

न तथाऽस्य भवेन्मोहो बन्धश्चान्य प्रसंगतः ।

योपित्संगाद् तथा पुंसो, यथा स्त्री संगिसंगतः ॥ १ ॥

पदाऽपि युवतीं भिक्षुर्न स्पृशेद्दारवी मपि ।

स्पृशन् करीव बध्येत, करिण्या अंग संगतः ॥ २ ॥

पुरुषने अना संगथी तेमज्ज विषय विलासीना संगथी जे प्रकारनेा मोह  
अने अंध थाय छे, ते प्रकारनेा मोह अने अंध भीजथी थतो नथी. आ

ળવત્કુચિતહૃદયા:૨૮, સંધ્યાધ્રાગવન્ગુહર્તરાગા:૨૯, સમુદ્રવીચિવચલસ્વમાવા:૩૦,  
 કૃષ્ણસર્પવનિરુકમ્પા: ૩૧, સલિલવન્નિમ્નગામિન્ય: ૩૨, કૃપણવદુષ્ણન-  
 હસ્તા: ૩૩, નરકવત્ ત્રાસોત્પાદિકા: ૩૪, દુષ્ટાશ્વવદ્ દુર્દમા: ૩૫, બાલવત્ સ્પ-  
 રુષ્ટતુષ્ટા: ૩૬, અન્ધકારવદ્ દુષ્પ્રવેશા: ૩૭, વિપવહ્લીવદ્ અનાશ્રયણીયા: ૩૮,  
 કિંપાકફલતુલ્યમુલ્લમધુરા: ૩૯, રાક્ષસીવદ્ અકાલચારિણ્ય: ૪૦, દુરુપચારા:૪૧,  
 અગમ્ભીરા: ૪૨, અવિશ્વસનીયા: ૪૩, અરતિકરા: ૪૪, રૂપસૌભાગ્યમદ-  
 મતા:- ( રૂપં-સુન્દરાકૃતિ:, સૌભાગ્યં-સ્વકીર્તિશ્રવણાદિરૂપં, મદો-મન્મથજગર્વ:,  
 તૈર્મતા: ) ૪૫, યુગ્ગગતિવત્ કુટિલહૃદયા: ૪૬, કુલસ્વજનમિત્રભેદનકારિકા:

શીલ હૈં ૨૭ । ખીતર કે ઘાવ કી તરહ કુચિત હૃદયવાલી હૈં ૨૮ ।  
 સંધ્યારાગસમાન હૈં ૨૯ । સમુદ્ર કી તરહ કે સમાન ચંચલ સ્વભાવ  
 વાલી હૈં ૩૦ । કૃષ્ણસર્પ કે સમાન ભયંકર હૈં ૩૧ । જલ કે સમાન  
 નીચે કી ઓર જાને વાલી હૈં ૩૨ । કૃપણ કી તરહ ઉત્તાન હાથોવાલી  
 અર્થાત્ હર સમય 'લાવ-લાવ' કરને વાલી હૈં ૩૩ । નરક કે તુલ્ય  
 કષ્ટ દેનેવાલી હૈં ૩૪ । દુષ્ટ ઘોડે કી તરહ દુર્દમ હૈં ૩૫ । બાલક કે  
 સમાન ક્ષણર મેં રુષ્ટ એવં તુષ્ટ હોનેવાલી હૈં ૩૬ । અન્ધકાર કી  
 તરહ દુષ્પ્રવિશ્ય હૈં ૩૭ । વિપવહ્લી કી તરહ આશ્રય લેને યોગ્ય નહીં હૈં  
 ૩૮ । કિંપાક ફલ કી તરહ આદિ મેં મધુર હૈં ૩૯ । રાક્ષસી કી તરહ  
 અકાલ મેં ચલને વાલી હૈં ૪૦ । દુરુપચાર ૪૧, અગંભીર ૪૨, અવિ-  
 શ્વસનીય ૪૩, ઓર અરતિકર હૈં ૪૪ । રૂપ, સૌભાગ્ય તથા મદ સે  
 સદા ઉન્મત્ત હૈં ૪૫ । સર્પ કી ગતિ કે સમાન કુટિલ મનવાલી હૈં ૪૬ ।  
 કુલ મેં, સ્વજન મેં, એવં મિત્રોં મેં હેદ-ભેદ કરને વાલી હૈં ૪૭ । દૂસરોં

યેલા છાણુના અગ્નિ માફક બાળવાવાળી છે ૨૭. અંદરના ઘાના જેવી દુર્ગંધીમાં  
 કુચિત જેવા હૃદયવાળી છે ૨૮. સંધ્યાના રંગ જેવી છે ૨૯. સમુ-  
 દ્રના તરંગોની માફક ચંચલ સ્વભાવવાળી છે ૩૦. કાળા સર્પ જેવી ભયંકર  
 છે ૩૧. જળની માફક નીચે જનારી છે ૩૨. કૃપણની માફક ઉત્તાન હાથવાળી  
 અર્થાત્ હર સમય લાવ લાવ કરવાવાળી છે ૩૩. નરકના જેવાં દુઃખો દેનારી  
 છે ૩૪. દુષ્ટ ઘોડાના જેવી દુર્દમ છે ૩૫. બાળકની માફક ઘડીમાં રીસનાર  
 અને ઘડીમાં હસનાર છે ૩૬. અંધકારના જેવી બીહામણી છે ૩૭. વિષવેલનાં  
 જેવી આશ્રય લેવાય તેવી નથી ૩૮. કિંપાક ફળની માફક શરૂમાં મધુર છે ૩૯.  
 રાક્ષસીની માફક અકાળમાં ચાલવાવાળી છે ૪૦, દુરુપચાર છે ૪૧, અગંભીર  
 છે ૪૨, અવિશ્વસનીય છે ૪૩, અરતિકર છે ૪૪, રૂપ, સૌભાગ્ય તથા મદથી  
 સદા ઉન્મત્ત છે ૪૫, સર્પની ગતી સમાન કુટિલ મનવાળી છે ૪૬.

પ્રિયદર્શિની ટીકા. અં ૨ ગા ૧૭ સ્ત્રીપરીપદજયે લાવણ્યપૂરમુને: પરીપદા: ૪૦૩

મગિનિ ! इदमब्रह्मचर्यं महापुरुषैरनाचरितं, जन्मजरामरणदायकं कातरपुरुषसेवितं  
प्रमादबहुलं तपःसंयमविघ्नभूतमधर्मद्वारम्, पङ्कपनकपाशजालतुल्यम् । अस्य खलु  
अब्रह्मचर्यस्य फलविपाकोनरकनिगोदाद्यनन्तदुखरूपो महादारुणः, पल्योपमसाग-  
रोपमकालेनाप्यमुच्यमानाऽशातवेदनारूपः, तस्माद् विरम्यतामस्मात्पापाचरणात्,

फिर अपनी अमृततुल्य वाणी से समझाना प्रारंभ किया । कहा-हे  
देवानुप्रिये ! तुम क्या करने के लिये उद्यत हो रही हो । तुम्हें क्या  
मालूम नहीं है कि कुशीलसेवन का मार्ग महापुरुषों से अनाचरित  
है । इस में ऐसा कोई भी लाभ नहीं है जो आत्मा को हितकारक  
हो । इस से जन्म जरा एवं मरण व कष्टों को भोगने के सिवाय कुछ  
नहीं मिलता है । ब्रह्मचर्य में जो कायर हैं वे ही इसमें आनंद मानते  
हैं । ये विषयभोग प्रमादबहुल एवं तप तथा संयम के पालन में  
प्रबल अन्तरायस्वरूप हैं । अधर्म के प्रधान मार्ग हैं । यह  
कुशीलसेवन पंक - कीचड़, पनक-काई तथा जाल के समान है ।  
अर्थात् इसमें मनुष्य गड़ जाता है, फिसल जाता है, और बंध जाता है ।  
इस अब्रह्मचर्य सेवन का फल जीवों को नरक निगोद के अनंत दारुण  
दुःखों के भोगने के रूप में प्राप्त होता है ।

इसके सेवन के फलस्वरूप अशातवेदनाएँ पल्योपम सागरोपम  
तक भोगनी पड़ती हैं, इस लिये इस पापाचरण से विरक्त होने में ही

આરંભ કર્યો, અને કહ્યું ! હે દેવાનુપ્રિયે ! તું શું કરવા માટે પ્રવૃત્ત બની છે ?  
તને શું ખબર નથી કે, કુશીલ સેવનનો માર્ગ મહાપુરુષે આચરવા ચોખ્ખો  
નથી. તેમાં કોઈ એવો લાભ નથી જે આત્માને હિતકારક હોય, એનાથી જન્મ,  
જરા અને મરણનાં દુઃખો ભોગવવા સીવાય બીજું કંઈ મળતું નથી. બ્રહ્મચ-  
ર્યમાં જે કાયર હોય છે તેજ આમાં આનંદ માને છે. આ વિષયભોગ પ્રમાદ  
તપ તથા સંયમના પાલનમાં પ્રબળ અંતરાય સ્વરૂપ છે. અધર્મનો પ્રધાન  
માર્ગ છે, આ કુશીલ સેવન કિચડ, ખાઈ, તથા જાળ સમાન છે. અર્થાત્-  
મનુષ્ય તેમાં ગળડી જાય છે, ફસાઈ જાય છે, બંધાઈ જાય છે. આ અબ્રહ્મચર્ય  
સેવનનું ફળ જીવોને નરક નિગોદના અનંત દારૂણ દુઃખોને ભોગવવાના રૂપમાં  
પ્રાપ્ત થાય છે. આના સેવનના ફળ સ્વરૂપ આશાતવેદનાઓ પલ્યોપમ  
સાગરોપમ સુધી ભોગવવી પડે છે. માટે આ પાપાચરણથી વિરક્ત થવામાં જ

તથૈવ પુરુપસંગઃ સાધ્વીનામપિ । ઉક્તઞ્ચ—

ઘૃતકુમ્ભસમા નારી તપ્તાદ્ધારસમઃ પુમાન્ ।

તસ્માદ્ ઘૃતં ચ વહ્નિં ચ, નૈકત્ર સ્થાપયેદ્ બુધઃ ॥ ૧ ॥

इत्येवं विचिन्त्यासौ सुधाधारासारया प्रवचनसारया गिरा तां प्रतिबोधयति ।

બન્ધ દૂસરે સે નહીં હોતા હૈ ॥ ૧ ॥ इसलिये मुनि को चाहिये की वह  
फाट की पुतली को भी पैर से भी स्पर्श न करे, अगर स्पर्श करे तो  
जिस प्रकार हथनी के अंगस्पर्श से हाथी बन्ध जाता है उसी प्रकार  
मुनि भी कामराग में बंध जाता है ॥ २ ॥

इसी प्रकार साध्वियों के लिये भी पुरुषों का संग वर्जनीय है ।  
क्यों कि—पुरुष का संग साध्वी के ब्रह्मचर्य के नाश में असाधारण हेतु  
है । कहा भी है—

“ ઘૃતકુમ્ભસમા નારી, તપ્તાદ્ધારસમઃ પુમાન્ ॥

તસ્માદ્ ઘૃતં ચ વહ્નિં ચ, નૈકત્ર સ્થાપયેદ્ બુધઃ ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—સ્ત્રી ધી કે ભરે હુણ ઘડે કે સમાન હૈ ઓર પુરુષ પ્રજ્વલિત  
અદ્ધાર કે સમાન હૈ । इसलिये विद्वान् को चाहिये कि घृत और अग्नि  
को एक जगह नहीं रखवे ।

इस प्रकार उन लावण्यपूर मुनिराज ने विचार किया । विचार  
करने के पश्चात् काम से अति विह्वल बनी हुई उस वेश्या को उन्होंने ने

માટે મુનિઓએ લાકડાની પુતળીનો પગથી પણ સ્પર્શ ન કરવો જોઈએ. કારણ  
કે, સ્પર્શ કરવાથી જેમ હાથી હાથણીના અંગસ્પર્શથી બંધાઈ જાય છે, એજ  
રીતે મુનિ પણ કામ રાગમાં બંધાઈ જાય છે.

કહ્યું છે કે—આ પ્રકારે સાધ્વિઓને માટે પણ પુરુષોનો સંગ તજવા  
ચોખ્ખો છે, કારણ કે પુરુષોનાસંગ સાધ્વિને બ્રહ્મચર્યના નાશમાં અસાધારણ  
હેતુ છે કહ્યું પણ છે—

ઘૃતકુમ્ભસમા નારી, તપ્તાદ્ધારસમઃ પુમાન્ ।

તસ્માદ્ ઘૃતં ચ વહ્નિં ચ, નૈકત્ર સ્થાપયેદ્ બુધઃ ॥ ૧ ॥

અિ ધીના ભરેલા ઘડા સમાન છે અને પુરુષ પ્રજ્વલિત અગ્નિ સમાન  
છે, માટે વિદ્વાને જાણવું જોઈએ કે ધી અને અગ્નિને એક સ્થળે ન રાખે.

આ પ્રકારે તે લાવણ્યપૂર મુનિરાજે વિચાર કર્યો વિચાર કરીને પછીથી  
કામવિહ્વળ બનેલી તે વેશ્યાને પોતાની અમૃતતુલ્ય વાણીથી સમજાવવાનો

ટીકા—‘ એગ ’ इत्यादि ।

લાઢઃ=અયં દેશીયઃ શબ્દઃ, લાઢઃ=પ્રાસુકૈષ્ણીયાહારેણાત્મનિર્વાહકો મુનિઃ  
પરીપહાન્=શ્રુતિપાસાદીન્ અભિભૂય=વિજિત્ય, ગ્રામે=અલ્પજનનિવાસસ્થાને, વા=  
અથવા નગરે=પ્રાકારવેષ્ટિતેઽપિ, વા=અથવા નિગમે=ત્રિગિજનસ્થાને, વા=અથવા  
રાજધાન્યામ્=રાજસ્થાને, ઉપલક્ષણમેતત્ તેન મડમ્વાદિષુ વા, એષુ ગ્રામાદિષુ યત્ર  
કુત્રાપિ સ્થાને, એકઃ=રાગદ્વેષરહિતઃ, યદ્વા-યોગ્યસહાયસ્યાલાભે એકઃ=એકાકી,  
ચરેદેવ=અપ્રતિવદ્ધવિહારેણ ચર્યાં કુર્યાદેવ ।

મુનિ કો એક જગહ રહતેર અરતિ આદિ પ્રસંગ પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ  
इसलिये उसे ग्रामानुग्रामविहाररूप चर्या करनी चाहिये । इस प्रकार  
चर्याके करने से ही नौवें चर्यापरीपह पर विजय पाई जाती है, इसी बात  
को इस गाथा द्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—‘ एग एव चरे ’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(લાઢે-લાઢઃ) ‘લાઢ’ યહ દેશીય શબ્દ હૈ । ‘પ્રાસુક એષ્ણીય  
આહાર સે અપના નિર્વાહ કરને વાલા મુનિ’ એસા ઇસ્કા અર્થ હૈ,  
અતઃ એસા મુનિ (પરીસહે-પરીપહાન્) શ્રુતિપાસા આદિ પરીપહોં કો  
(અભિભૂય-અભિભૂય) જીતકર (ગામે વા નગરે વાવિ નિગમે વા રાય-  
હાણિએ-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્) ધોડે જનોં કા  
જિસમેં નિવાસ હૈ એસે ગ્રામ મેં, અથવા પ્રાકાર સે જો વેષ્ટિત હૈ એસે  
નગર મેં, અથવા વ્યાપારી જનોંકે સ્થાનભૂત એસે નિગમ મેં, અથવા રાજા  
કા જહાં રહના હો રહા હૈ એસી રાજધાની મેં, ઉપલક્ષણ સે મડંબ આદિ

મુનિને એક જગ્યાએ રહેવાથી અરતિ વગેરેના પ્રસંગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે  
તેથી તેણે એક ગામથી બીજા ગામ વિહાર રૂપી ચર્યા કરવી જોઈ એ આ  
પ્રકારની ચર્યાને કરવાથી જ નવમા ચર્યાપરીપદ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત થાય છે  
આ વાતને સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા પ્રદર્શિત કરે છે—એગ એવ ચરે—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લાઢે-લાઢઃ “ લાઢ ” એ દેશીય શબ્દ છે. ‘પ્રાસુક એષ્ણીય  
આહારથી પોતાનો નિર્વાહ કરવાવાળા મુનિ’ એવો આનો અર્થ છે, એટલે આવા મુનિ  
પરીસહે-પરીપહાન્ શ્રુતિપાસા આદિ પરીપહોને અભિભૂય-અભિભૂય અતીને  
ગામે વા નગરે વાવિ નિગમેવા રાયહાણિએ-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્  
થોડા માણસો જેમાં રહેતા હોય તેવા ગામમાં, અથવા કોટથી ઘેરાયેલ હોય  
તેવા નગરમાં, અથવા વેપારી જનોનો જેમાં વાસ હોય તેવા નિગમમાં, અથવા રાજા  
જ્યાં રહેતો હોય તેવી રાજધાનીમાં, ઉપલક્ષણથી મડંબ આદિ સ્થાનોમાં આવા

एवं मुनिवचनं श्रुत्वा सा वेश्या इतमनोरथा जाता, तदनन्तरमसौ कोप-  
वेशेन यष्टिमुष्ट्यादिभिर्मर्मणि गाढमहारं कृतवती । तदाऽसौ मुनिर्निर्गमनोपायमन-  
वलोकय ब्रह्मचर्यं परिरक्षयन् तामुज्ज्वलवेदनां शुभाध्यवसायेन सहमानः क्षप-  
कश्रेणिमास्त्योऽन्तर्मुहूर्तेनैव प्राप्तकेवलज्ञानः कालं कृत्वा मोक्षं प्राप्तवान् । एवमन्येऽपि  
मुनिभिः स्त्रीपरीपहः सोढव्यः ॥ १७ ॥

एकत्र स्थितस्य मुनेरस्त्यादिप्रसङ्गः स्यात्, अतो ग्रामानुग्रामविहारस्या  
चर्या कार्येति चर्याकरणेनैव चर्यापरीपहः सोढव्य इत्याह—

मूळम्—एंग ऐंव चरे लाढे, अभिभूय परीसहे ।

गाँमे वा नंगरे वावि, निगमे वां रायहोंणिण ॥ १८ ॥

छाया—एक एव चरेत् लाढः, अभिभूय परीपहान् ।

ग्रामे वा नगरे वाऽपि, निगमे वा राजधान्याम् ॥ १८ ॥

तेरा कल्याण है । इस प्रकार मुनि के वचनों को सुनकर वेश्या बड़ी  
लज्जित हुई । कोप के आवेश में आकर वह मुनिराज पर घोर उपसर्ग  
करने लगी । उन मुनि को यष्टि एवं मुष्टि आदि के प्रहारों से मर्म स्थलों में  
आघात पहुँचाया । मुनि महाराज ने वहाँ से निकलना चाहा परन्तु  
निकलने के जितने भी दरवाजे थे वे सब पहिले से ही बंद किये जा  
चुके थे, अतः वहाँ से निकलने का जब उन्हें कोई उपाय नहीं सूझा तो  
अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा में शुभाध्यवसाय से जीवन को समर्पित करते हुए  
उन्होंने क्षपकश्रेणिपर आरोहण किया और अन्तर्मुहूर्त में केवल ज्ञान  
की प्राप्ति कर मुक्ति का लाभ कर लिया । इसी प्रकार अन्यमुनिजनों  
को भी इस स्त्रीपरीपह को जीतना चाहिये ॥ १७ ॥

તારું કલ્યાણ છે. આ પ્રકારનાં મુનિનાં વચનોને સાંભળી વેશ્યા ખૂબ લજવાઈ  
ગઈ અને કોપના આવેશમાં આવીને તે મુનિરાજને ઘોર ઉપસર્ગ આપવા લાગી.  
મુનિના મર્મસ્થાનોમાં મુઠીઓથી અને પગની લાતોથી આઘાત પહોંચાડ્યો.  
મુનિરાજે ત્યાંથી નીકળવા આહું પરંતુ નીકળવાના જેટલા રસ્તા હતા તે પહે-  
લેથી જ બંધ કરી દેવામાં આવ્યા હતા. આથી એ સ્થળેથી નીકળવાનો કોઈ  
પણ માર્ગ ન સુજ્યો ત્યારે પોતાના બ્રહ્મચર્યની રક્ષા માટે તેમણે શુભ અધ્ય-  
વસાયથી જીવનનું સમર્પણ કરીને ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કર્યું અને અંત  
મુહૂર્તમાં કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કરી મુક્તિનો લાભ લીધો. આ રીતે અન્ય મુનિ-  
જનોએ પણ સ્ત્રી પરીપહને જીતવો જોઈએ. ॥ ૧૭ ॥



ટીકા—‘ એગ ’ ઇત્યાદિ ।

લાઢઃ=અયં દેશીયઃ શબ્દઃ, લાઢઃ=પ્રાસુકૈષ્ણીયાહારેણાત્મનિર્વાહકો મુનિઃ  
પરીપદાન્=ક્ષુત્પિપાસાદીન્ અભિભૂય=વિજિત્ય, ગ્રામે=અલ્પજનનિવાસસ્થાને, વા=  
અથવા નગરે=પ્રાકારવેષ્ટિતેઽપિ, વા=અથવા નિગમે=ત્રણિગ્જનસ્થાને, વા=અથવા  
રાજધાન્યામ્=રાજસ્થાને, ઉપલક્ષણમેતત્ તેન મહમ્વાદિષુ વા, એષુ ગ્રામાદિષુ યત્ર  
કુત્રાપિ સ્થાને, એકઃ=રાગદ્વેષરહિતઃ, યદ્વા-યોગ્યસહાયસ્યાલાભે એકઃ=એકાકી,  
ચરેદેવ=અપતિવદ્ધવિહારેણ ચર્યાં કુર્યાદેવ ।

મુનિ કાં એક જગહ રહતેર અરતિ આદિ પ્રસંગ પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ  
હસલિયે ઉસે ગ્રામાનુગ્રામવિહારરૂપ ચર્યા કરની ચાહિયે । હસ પ્રકાર  
ચર્યાકે કરને સે હી નૌવેં ચર્યાપરીપદ પર વિજય પાઈ જાતી હૈ, હસી વાત  
કો હસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘ એગ એવ ચરે ’—ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(લાઢે-લાઢઃ) ‘લાઢ’ યહ દેશીય શબ્દ હૈ । ‘પ્રાસુક એષ્ણીય  
આહાર સે અપના નિર્વાહ કરને વાલા મુનિ’ એસા હસકા અર્થ હૈ,  
અતઃ એસા મુનિ (પરીસહે-પરીપદાન્) ક્ષુત્પિપાસા આદિ પરીપદોં કો  
(અભિભૂય-અભિભૂય) જીતકર (ગામે વા નગરે વાવિ નિગમે વા રાય-  
હાણિએ-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્) થોડે જનોં કા  
જિસમેં નિવાસ હૈ એસે ગ્રામ મેં, અથવા પ્રાકાર સે જો વેષ્ટિત હૈ એસે  
નગર મેં, અથવા વ્યાપારી જનોંકે સ્થાનમૂત એસે નિગમ મેં, અથવા રાજા  
કા જહાં રહના હો રહા હૈ એસી રાજધાની મેં, ઉપલક્ષણ સે મહંવ આદિ

મુનિને એક જગ્યાએ રહેવાથી અરતિ વગેરેના પ્રસંગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે  
તેથી તેણે એક ગામથી બીજા ગામ વિહાર રૂપી ચર્યા કરવી જોઈ એ આ  
પ્રકારની ચર્યાને કરવાથી જ નવમા ચર્યાપરીપદ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત થાય છે  
આ વાતને સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા પ્રદર્શિત કરે છે—એગ એવ ચરે—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લાઢે-લાઢઃ “ લાઢ ” એ દેશીય શબ્દ છે. ‘પ્રાસુક એષ્ણીય  
આહારથી પોતાનો નિર્વાહ કરવાવાળા મુનિ’ એવો આનો અર્થ છે, એટલે આવા મુનિ  
પરીસહે-પરીપદાન્ ક્ષુત્પિપાસા આદિ પરીપદોને અભિભૂય-અભિભૂય છતીને  
ગામે વા નગરે વાવિ નિગમેવા રાયહાણિએ-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્  
થોડા માણસો જેમાં રહેતા હોય તેવા ગામમાં, અથવા કોટથી ઘેરાયેલ હોય  
તેવા નગરમાં, અથવા વેપારી જનોનો જેમાં વાસ હોય તેવા નિગમમાં, અથવા રાજા  
જ્યાં રહેતો હોય તેવી રાજધાનીમાં, ઉપલક્ષણથી મહંવ આદિ સ્થાનોમાં આવા

તથા ચાગ્રે વક્ષ્યતિ—

ન વા લભિજ્ઞા નિઊણં સહાયં, ગુણાહિયં વા ગુણઓ સમં વા ।

एको वि पावाँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ १ ॥

( ઉત્ત. ૩૨ અ. ૫ ગા. )

છાયા—ન વા લભેત્ નિષ્ણં સહાયં, ગુણાધિકં વા ગુણતઃ સમં વા ।

एकोऽपि पापानि विवर्जयन्, विहरेत् कामेषु असजन् ॥

ઉત્તમન્યત્રાપિ—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥ इति ।

સ્થાનોં મેં જહાં કહાં બી વહ ( एग एव चरे—एकाकी एव चरेत् ) राग द्वेष से रहित होकर समुदाय के साथ अथवा योग्य सहाय के अभाव में अप्रतिबंध विहार से अकेला ही विचरे । कहा भी है—

न वा लभिज्ज्ञा निउणं सहायं, गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥

( ઉત્ત. ૩૨ અ. ૫ ગા. )

તાત્પર્યં इसका यह है कि साधु को जब योग्य सहायक (शिष्य आदि) की प्राप्ति न हो तो वह निष्पाप होकर, तथा इच्छाओं को जीतता हुआ अकेला भी विहार करे । अन्यत्र भी यही बात कही है—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥

કોઈ પણ સ્થળે તે એગ એવ ચરે—एकाकी एव चरेत् राग द्वेषથી रहित બની સમુદાયની સાથે અથવા યોગ્ય સહાયના અભાવમાં અપ્રતિબંધ વિહારથી એકલા જ વિચરે કહ્યું છે—

न वा लभिज्ज्ञा निउणं सहायं, गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ उ. ३२. अ. ५.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, સાધુને જ્યારે યોગ્ય સહાયક શિષ્ય આદિની પ્રાપ્તિ ન હોય તો તે નિષ્પાપ બનીને ઇચ્છાઓને જીતીને એકલા પણ વિહાર કરે. અન્યત્ર પણ આજ વાત કહેલ છે—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ ॥

અર્થ ભાવઃ—યથાકલ્પં ગ્રામનગરાદાવનિયતવાસં કુર્વતા મુનિનાઽલસ્યપરિવર્જનેન તત્ર તત્રાનાસક્ત્યા ચ ગ્રામાનુગ્રામવિહરણાત્મકચર્યાકરિણાદેવ ચર્યાપરીપદઃ સોઢો ભવતિ । યસ્તુ પરિક્ષીણજઘ્નાવલસ્તેન સ્થિરવાસે કૃતે ભિક્ષાચર્યાયાં કથંચિત્ સ્વયં પ્રવૃત્ત્યાઽપિ સ પરીપદઃ સોઢો ભવતીતિ ।

નનુ-ચર્યાપરીપદો ન ભવત્યાગન્તુકઃ, કથં તર્હિ સ્વયમુદીરિતાયાથચર્યાયાઃ પરીપદત્વમિતિ ચેત્ , ઉચ્યતે-કલ્પસ્યાપિ કસ્યચિત્ કષ્ટકારિત્વેન સહ્યમાનત્વાત્

યથાકલ્પ ગ્રામ નગર આદિ મેં અનિયતવાસ કરને ચાલા અપ્રતિબન્ધ વિહારી મુનિ નાના પ્રકાર કે અભિગ્રહોં સે યુક્ત હોકર અકેલા અર્થાત્-સમ્પ્રદાય મેં રહતે હુણ્ ભી રાગદ્વેષ રહિત વિચરે ॥૧॥

પ્રમાદ કા પરિહાર કરતે હુણ્ ગ્રામનગરાદિ મેં આસક્તિ રહિત હોકર ગ્રામાનુગ્રામ વિચરણરૂપ ચર્યા કે કરને સે હી યહ ચર્યાપરીપદ જીતા જાતા હૈ । જિસ્કા જંઘાવલ ક્ષીણ હો ચુકા હૈ ઉસ સાધુ કો ભી સ્થિરવાસ કરને પર ભિક્ષાચર્યા મેં કથંચિત્ સ્વયં પ્રવૃત્તિ સે યહ પરીપદ સહન કિયા જાતા હૈ । આયે હુણ્ કષ્ટ કા નામ પરીપદ હૈ । ચર્યા તો આનેવાલી નહીં હૈ યહ તો સ્વયં ઉદીરિત કી જાતી હૈ અતઃ ચર્યા કો પરીપદરૂપ કૈસે માના જા સકતા હૈ ? હિસ્કા સમાધાન હિસ પ્રકાર હૈ-યદ્યપિ ચર્યા સાધુ કા કલ્પ હૈ તો ભી કિસીર કલ્પ કો કષ્ટકારી હોને સે વહ સહન કરના હી પડતા હૈ । ચર્યા ભી હિસી પ્રકાર હૈ । અતઃ ભગવાને હિસ્કો પરીપદરૂપ ફરમાયા હૈ । અપને કલ્પ કા પ્રમાદ સે

યથાકલ્પ ગ્રામ નગર આદિમાં અનિયતવાસ કરવાવાળા અપ્રતિબન્ધ-વિહારી મુનિ વિવિધ પ્રકારના અભિગ્રહોથી યુક્ત બની એકલા, અર્થાત્-સંપ્રદાયમાં રહેવા છતાં પણ રાગદ્વેષ રહિત વિચરે. પ્રમાદને ત્યાગ કરીને ગ્રામ નગર આદિમાં આસક્તિ રહિત બનીને ગ્રામાનુગ્રામ વિચરણરૂપ ચર્યા કરવાથી જ આ ચર્યા પરીપદ જીતાય છે. જેનું જંઘાવળ ક્ષીણ બની ગયેલ છે એવા સાધુએ પણ સ્થિરવાસ કરવાથી ભિક્ષાચર્યામાં કહેવામાં આવેલ સ્વયં પ્રવૃત્તિથી આ પરીપદ સહન કરવામાં આવે છે. આવેલા દુઃખોને સહન કરવાં તેનું નામ પરીપદ છે. ચર્યા આવતી નથી પરંતુ સ્વયં ઉભી કરવામાં આવે છે. આથી ચર્યાને પરીપદરૂપ કેમ માનવામાં આવે છે ? તેનું સમાધાન આ પ્રકારથી છે-કદાચ ચર્યા સાધુનો કલ્પ છે તો પણ કોઈ કોઈ કલ્પ કષ્ટકારી હોવાથી તે સહન કરવાજ પડે છે. ચર્યાનો પણ આજ પ્રકાર છે. માટે ભગવાને તેને પરીપદરૂપ ફરમાવેલ છે. પોતાના કલ્પનું પ્રમાદથી આચરણ ન કરવું તે પરીપદ

તથા ચાગ્રે વક્ષ્યતિ—

ન વા લભિજ્ઞા નિરૂપણં સહાયં, ગુણાદિયં વા ગુણભો સમં વા ।

एको वि पावाहँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेषु असज्जमाणो ॥ १ ॥

( ઉત્ત. ૩૨ અ. ૫ ગા. )

છાયા—ન વા લભેત્ નિરૂપણં સહાયં, ગુણાધિકં વા ગુણતઃ સમં વા ।

एकोऽपि पापानि विवर्जयन्, विहरेत् कामेषु असज्जन् ॥

ઉત્તમન્યત્રાપિ—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥ इति ।

સ્થાનોં મેં જહાં કહાં મી વહ ( એગ એવ ચરે—એકાકી એવ ચરેત્ ) રાગ દ્વેષ સે રહિત હોકર સમુદાય કે સાથ અથવા યોગ્ય સહાય કે અભાવ મેં અપ્રતિબંધ વિહાર સે અકેલા હી વિચરેં । કહા મી હૈ—

न वा लभिज्ज्ञा निरूपणं सहायं, गुणादियं वा गुणभो समं वा ।

एगो वि पावाहँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेषु असज्जमाणो ॥

( ઉત્ત. ૩૨ અ. ૫ ગા. )

તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ સાધુ કો જંવ યોગ્ય સહાયક ( શિષ્ય આદિ ) કી પ્રાપ્તિ ન હો તો વહ નિષ્પાપ હોકર, તથા ઇચ્છાઓં કો જીતતા હુવા અકેલા મી વિહાર કરે । અન્યત્ર મી યહી વાત કહી હૈ—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥

કોઈ પણ સ્થળે તે એગ એવ ચરે—એકાકી એવ ચરેત્ રાગ દ્વેષથી રહિત બની સમુદાયની સાથે અથવા યોગ્ય સહાયતા અભાવમાં અપ્રતિબંધ વિહારથી એકલા જ વિચરે કહ્યું છે—

न वा लभिज्ज्ञा निरूपणं सहायं, गुणादियं वा गुणभो समं वा ।

एगो वि पावाहँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेषु असज्जमाणो ॥ उ. ३२. अ. ५.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, સાધુને જ્યારે યોગ્ય સહાયક શિષ્ય આદિની પ્રાપ્તિ ન હોય તો તે નિષ્પાપ બનીને ઇચ્છાઓને જીતીને એકલા પણ વિહાર કરે. અન્યત્ર પણ આજ વાત કહેલ છે—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ ॥

छाया—असमानश्चरेद् भिक्षुः, नैव कुर्यात् परिग्रहम् ।

असंसक्तो गृहस्थैः, अनिकेतः परित्रजेत् ॥ १९ ॥

टीका—‘असमाणो’ इत्यादि ।

भिक्षुः=मुनिः, असमानः=गृहस्थैरन्यतीर्थिकैश्चासदृशः, तत्राश्रयमूर्च्छारहितत्वेन गृहस्थैरसदृशः, अनियतविहारादिनाऽन्यतीर्थिकैरसदृश इति भावः । यद्वा—मानस-  
हितः समानः, न तथेत्यसमानः, अभिमानवर्जित इत्यर्थः, यद्वा—‘असमाणे’  
इत्यस्य ‘असन्निति’ छाया, असन्निव—असन्, यत्र विद्यते तत्राप्यविद्यमान इव,  
अल्पतरकालस्थायित्वेन तत्र तत्र तत्सत्ताया अनियतत्वात्, तत्र तत्र विद्यमानत्वेऽपि  
तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु ममत्वाभिमानाभावाच्च । इममेवार्थं प्रकटयन्नाह—‘नैव कुञ्जा’  
इत्यादि । परिग्रहम्=तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु स्थानेषु द्रव्यभावपरिग्रहं नैव कुर्यात्=  
न धारयेत् । उक्तञ्च—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा” ॥ इति ॥

‘असमाणे’—इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(असमाणे-असमानः) गृहस्थरूप आधार की मूर्च्छा से  
रहित होने के कारण गृहस्थों के समान नहीं, तथा अनियत विहार आदि  
द्वारा अन्यतीर्थिकों के समान नहीं, अथवा—असमान-मान से वर्जित, या  
“असमाणे-असन्”—अल्पतर काल तक ग्राम नगरादिमें रहने वाला होने  
की वजह से वहां नहीं जैसा ऐसा (भिक्षू-भिक्षुः) मुनि (परिग्रहं-नैव  
कुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात्) उन २ ग्राम एवं उपाश्रयादिकों में द्रव्य एवं  
भावरूप परिग्रह से नहीं बंधे—उनमें ममत्व भाव न करे । कहा भी है—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

असमाणे इत्यादि.

अन्वयार्थ—असमाणे-असमानः गृहस्थरूप आधारनी मूर्च्छांती रहित होवाने  
कारण गृहस्थोना समान नही, तथा अनियतविहार आदि द्वारा अन्य तीर्थी-  
ओना समान नही, अथवा—असमान-मानथी वर्जित, या असमाणे-असन् अल्पतर  
काल सुधी ग्राम नगर आदिमां रहेवावाणा होवाना कारण त्यां नही जेवा जेवा  
भिक्षू-भिक्षुः मुनि परिग्रहं नैवकुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात् जे जे गामे अने  
उपाश्रय आदिमां द्रव्य अने लावइय परिग्रहथी न ;अंधाय-तेमां ममत्वलाव न  
राजे. कह्यु छे के—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

પરીપહરૂપત્વં ભવતિ, તત્ર પ્રમાદેન સ્વકલ્પાનાચરણમેત્ર પરીપહકૃતઃ પરાજયઃ, તસ્માત્ પ્રમાદવર્જિતેન યથાકલ્પચર્યાપરાધનેનૈવ ચર્યાપરીપહઃ સોદ્ધો ભવતીતિ ॥૧૮॥

ઉક્તમર્થ દઢીકુર્વન્નાહ—

મૂલમ્—અસંમાળે ચૈરે મિંક્લૂ, નેવૈ કુઝ્ઝા પરિંગ્ગહં ।

અસંસત્તો ગિહંત્યેહિં, અણિણ્ણો પરિવ્વણ ॥ ૧૯ ॥

આચરણ નહીં કરના હી પરીપહજનિત પરાજય હૈ । इसलिये प्रमाद वर्जित होकर यथाकल्प चर्या के आराधन से ही चर्यापरीपह सहन किया जाता है । तभी चर्यापरीपहजयी साधु कहलाता है ।

ભાવાર્થ—ચતુર્માસ કલ્પ કો છોડકર મુનિ કે લિયે એકત્ર સ્થિર રહના જૈનશાસન કી આજ્ઞા સે વાહિર હૈ । કોઈ ધ્રાસ કારણ હો તો મુનિ એકત્ર વાસ કર સકતા હૈ, અન્યથા નહીં । અતઃ આત્મકલ્યાણ કી ભાવના સે અથવા ‘જનતા મેં ધર્મ કા પ્રચાર હોતા રહે’ હસ શુભ અધ્યવસાય સે મુનિ કો નગર ગ્રામ આદિ સ્થાનોં મેં વિચરતે રહના ચાહિયે । એક સ્થાન પર રહને વાલે સાધુ કો સ્થાનજન્ય મોહ સતા દેતા હૈ, અતઃ વહ ચાહે એકાકી રૂપ મેં વિહાર કરે ચાહે યોગ્ય સહાયકોં કે સાથ વિહાર કરે, પરન્તુ વિહાર અવશ્ય કરે । વિહાર મેં સદા અપને સંયમ કી પૂરી દૃઢતા રક્ષે । ક્ષુત્તિપાસા આદિ પરીપહ સતાવે તો મી ડનકી પરવાહ ન કરે । હસકા નામ ચર્યાપરીપહજય હૈ ॥ ૧૮ ॥

જનિત પરાજય છે માટે પ્રમાદથી દૂર રહીને યથાકલ્પ ચર્યાના આરાધનાથી જ ચર્યાપરીપહ સહન કરી શકાય છે. એજ ચર્યાપરીપહ ભૂતેલ સાધુ કહેવાય છે.

ભાવાર્થ:—ચતુર્માસ કલ્પને છોડીને મુનિ માટે એક સ્થળે સ્થિર રહેવું જૈનશાસનની આજ્ઞાથી બહાર છે. ‘કોઈ ખાસ કારણ હોય તો મુનિ એક સ્થળે વાસ કરી શકે છે, તે સીવાય નહીં’. આથી આત્મકલ્યાણની ભાવનાથી અથવા ‘જનતામાં ધર્મ’નો પ્રચાર થતો રહે એવા શુભ આશયથી મુનિએ નગર ગ્રામ આદિ સ્થાનોમાં વિચરતા રહેવું જોઈએ. એક સ્થાન ઉપર રહેવાવાળા સાધુને સ્થાનજન્ય મોહ સતાવે છે. આથી લઢે તે એકાકી રૂપમાં વિહાર કરે અગર યોગ્ય સહાયકોની સાથે વિહાર કરે, પરંતુ વિહાર અવશ્ય કરે. વિહારમાં પોતાના સંયમની સદા પૂરી દૃઢતા રાખે, ક્ષુત્તિપાસા આદિ પરીપહ સતાવે તો પણ તેની પરવા ન કરે. આનું નામ ચર્યાપરીપહનો વિજય છે. ॥



छाया—असमानश्चरेद् भिक्षुः, नैव कुर्यात् परिग्रहम् ।

असंसक्तो गृहस्थैः, अनिकेतः परिव्रजेत् ॥ १९ ॥

टीका—‘असमाणो’ इत्यादि ।

भिक्षुः=मुनिः, असमानः=गृहस्थैरन्यतीर्थिकैश्चासदृशः, तत्राश्रयमूर्च्छारहितत्वेन गृहस्थैरसदृशः, अनियतविहारादिनाऽन्यतीर्थिकैरसदृश इति भावः । यद्वा-मानस-हितः समानः, न तथेत्यसमानः, अभिमानवर्जित इत्यर्थः, यद्वा-‘असमाणे’ इत्यस्य ‘असन्निति’ छाया, असन्निव-असन्, यत्र विद्यते तत्राप्यविद्यमान इव, अल्पतरकालस्थायित्वेन तत्र तत्र तत्सत्ताया अनियतत्वात्, तत्र तत्र विद्यमानत्वेऽपि तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु ममत्वाभिमानाभावाच्च । इममेवार्थं प्रकटयन्नाह-‘नैव कुञ्जा’ इत्यादि । परिग्रहम्=तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु स्थानेषु द्रव्यभावपरिग्रहं नैव कुर्यात्=न धारयेत् । उक्तञ्च—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा” ॥ इति ॥

‘असमाणे’-इत्यादि ।

अन्वयार्थ- (असमाणे-असमानः) गृहस्थरूपआधार की मूर्च्छा से रहित होने के कारण गृहस्थों के समान नहीं, तथा अनियतः विहार आदि द्वारा अन्यतीर्थिकों के समान नहीं, अथवा-असमान-मान से वर्जित, या “असमाणे-असन्”-अल्पतर काल तक ग्राम नगरादिमें रहने वाला होने की वजह से वहां नहीं जैसा ऐसा (भिक्षू-भिक्षुः) मुनि (परिग्रहं-नैव कुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात्) उन २ ग्राम एवं उपाश्रयादिकों में द्रव्य एवं भावरूप परिग्रह से नहीं बंधे-उनमें ममत्व भाव न करे । कहा भी है—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

असमाणे इत्यादि.

अन्वयार्थ-असमाणे-असमानः गृहस्थरूप आधारणी मूर्च्छांती रहित होवाने कारणे गृहस्थाना समान नहीं, तथा अनियतविहार आदि द्वारा अन्य तीर्थि-याना समान नहीं, अथवा-असमान-मानंती वर्जित, या असमाणे-असन् अल्पतर काल सुधी ग्राम नगर आदिमां रहवावाणा होवाना कारणे त्यां नहीं जेवा जेवा भिक्षू-भिक्षुः मुनि परिग्रहं नैवकुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात् जे जे गाम अने उपाश्रय आदिमां द्रव्य अने भावरूप परिग्रहंती न :अंधाय-तेमां ममत्वभाव न राखे. कथुं छे डे—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

મમત્વાભાવઃ કથં સ્યાદિત્યાહ-ગૃહસ્થૈઃ=શ્રાવકૈઃ, અસંસક્તઃ=રાગસંસર્ગવર્જિત  
 इत्यर्थः, अनिकेतः=गृहवर्जितः नैकत्र प्रतिवद्धस्थितिक इत्यर्थः, परिव्रजेत्=सर्वतो  
 विहरेत् न तु नियतदेशादावेव । अयं भावः-गृहस्थैः सह रागसंसर्गकरणे, एकत्र  
 प्रतिवद्धास्पदत्वे, नियतदेशग्रामनगरादिविहारितायां वा ममत्वबुद्धिः स्यात् ।  
 तस्मादालस्यं निरस्य ग्रामनगरकुलादिष्वनियतवसतिनिर्ममत्वः सन् यथाकल्पमा-  
 सक्तिरहितश्चर्यामाचरेदिति ।

અર્થાત્-ગ્રામાદિ મેં કહીં ખી મમત્વ નહીં કરે । તથા ( ગિહસ્થેહિં અ-  
 संसक्तो-गृहस्थैः असंसक्तः ) ગૃહસ્થોં કે સાથ રાગ કે સંસર્ગ સે વર્જિત  
 उनमें मोहरूप परिणाम से रहित होकर वह ( अणिगओ-अनिकेतः )  
 स्थानादि की ममतारहित होता हुआ ( परिव्रए-परिव्रजेत् ) ગ્રામ  
 नगरादि में विहार करता रहे । इसका भाव यह है कि गृहस्थों से  
 रागात्मक परिणति करने पर साधु को एक ही जगह प्रतिवद्ध होकर  
 रहने का प्रसंग प्राप्त हो सकता है, इस परिस्थिति में नियत देश, ग्राम  
 आदि में ही उसका विहार होगा, अतः उसमें ममत्वबुद्धि का सद्भाव  
 हो जायगा । इसलिये प्रमाद का परित्याग कर ग्राम नगर आदि में  
 अनियतरूप से विचरने वाले मुनि में निर्ममत्वभाव रहता है ।  
 इसलिये साधु को चाहिये की वह गृहस्थों से असंसक्त होकर यथाकल्प  
 अनियतविहाररूप चर्या करता रहे ।

भावार्थ—इस गाथा द्वारा सूत्रकार १८वीं गाथा में कहे हुए ही

અર્થાત્-ગ્રામાદિમાં કયાંય પણ મમત્વ ન કરે તથા ગિહસ્થેહિં અસંસક્તો-  
 गृहस्थैः-असंसक्तः ગૃહસ્થની સાથે રાગના સંસર્ગથી રહિત-તેમાં મોહરૂપ  
 परिणामથી રહિત બનીને તે અણિગઓ-અનિકેતઃ સ્થાનાદિકની મમતા રહિત  
 થઈને, પરિવ્રણ-પરિવ્રજેત્ ગ્રામ નગર આદિમાં વિહાર કરતા રહે. તેનો  
 ભાવાર્થ એ છે કે, ગૃહસ્થો સાથે રાગાત્મક પરિણતી કરવાથી સાધુને માટે એક  
 જગ્યાએ પ્રતિબદ્ધ થઈને રહેવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે. આ પરિસ્થિતિમાં  
 નિયત ગ્રામનગર આદિમાંજ તે વિચરશે, આથી એનામાં મમત્વની લાવના  
 ઉત્પન્ન થશે. માટે પ્રમાદનો પરિત્યાગ કરી ગ્રામનગર આદિમાં અનિયત  
 રૂપથી વિચરનાર મુનિમાં નિર્મમત્વલાવ રહે છે. આટલા માટે જ સાધુ માટે તે ગૃહ-  
 સ્થોથી અસંસક્ત બની યથાકલ્પ અનિયત વિહારસ્વરૂપી ચર્યા કરતા રહે તે જ રીત છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ૧૮ મી ગાથામાં કહેલ

છે

અત્ર દષ્ટાન્તઃ—

કોહ્લાકસંનિવેશે વહુશ્રુતઃ શાન્તો દાન્તઃ પરીપહોપસર્ગસહને સુધીરઃ ક્ષમા-  
દિગુણગમ્भीરઃ કર્મેધૂલિનિવારણે સમીરઃ, શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરઃ ક્ષીણજઙ્ઘા-  
વલો નિઃસદ્ગુનામક આચાર્ય આસીત્ । એકદા તત્ર દુર્ભિક્ષે જાતેઽસૌ સ્વશિષ્યં  
અર્થ કી પુષ્ટિ કર રહે હૈં । જવ ગૃહસ્થ જનોં કા સામાન્ય ખી પરિચય  
મનુષ્ય કો ઉનમેં મમત્વબુદ્ધિ સે જકડ દેતા હૈ તો ફિર સાધુ કી  
આત્મા કો વહ ભાવ વહાં જકડ ન દેગા યહ કૈસે હો સકતા હૈ । હસી-  
લિયે સાધુ કો અનિયત વિહાર કહા ગયા હૈ । હસમેં ગૃહસ્થોં કે સંસર્ગ  
સે સાધુ વચા રહતા હૈ । સંસક્તિભાવ ઉસકા ઉનમેં નહીં હો પાતા હૈ ।  
સામાન્ય પરિચય મેં સંસક્તિ નહીં આતી હૈ । અધિક પરિચય સે યહ  
દોષ પેદા હોતા હૈ । મૂર્છાપરિણતિ કા નામ હી પરિગ્રહ હૈ । યહ પરિ-  
ગ્રહ દ્રવ્ય એવં ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । સાધુ ઇન દોનોં  
પ્રકાર કે પરિગ્રહોં સે રહિત હોતા હૈ । રાગાદિકભાવ ભાવપરિગ્રહ, એવં  
ક્ષેત્ર વસ્તુ આદિ દ્રવ્ય-પરિગ્રહ હૈ । અનિયત વિહાર કરને વાલે સાધુમેં  
યહ દોષ નહીં હો સકતા હૈ । હસીલિયે ઉસકો સદા યથાકલ્પ અનિયત  
વિહાર કરના ભગવાન ને કહા હૈ ।

દષ્ટાન્ત—કોહ્લાક નામ કે સન્નિવેશ મેં વહુશ્રુત, શાંત, દાન્ત પરીપહ  
એવં ઉપસર્ગ કે સહન કરને મેં ધીર વીર ક્ષમાદિ ગુણોં સે ગંભીર, કર્મ  
ધૂલિ કે નિવારણ કરને મેં પવનતુલ્ય નિઃસંગ નામ કે એક આચાર્ય થે ।

કરે છે. જ્યારે ગૃહસ્થ જનો સાથે સામાન્ય પરિચય પણ મનુષ્યને તેની સાથે મમત્વ-  
બુદ્ધિથી જકડી દે છે તો પછી સાધુના આત્માને તે ભાવ ત્યાં ન જકડે તે કેમ  
ખની શકે. આટલા માટેજ સાધુને અનિયત વિહાર સુચવાયેલ છે. આમાં ગૃહસ્થના  
વધુ પડતા સંસર્ગથી સાધુ ખચી જાય છે, સંસક્તિભાવ તેનો તેમાં આવતો નથી,  
સામાન્ય પરિચયથી સંસક્તિભાવ ઉત્પન્ન થતાં નથી. અધિક પરિચયથી આ દોષો  
પેદાથાય છે. મૂર્છાપરિણતીનું નામ જ પરિગ્રહ છે. આ પરિગ્રહના દ્રવ્ય અને ભાવ  
એમ બે પ્રકારના ભેદ છે. સાધુ આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહોથી પર હોય છે.  
રાગાદિકભાવ ભાવપરિગ્રહ અને ક્ષેત્ર વસ્તુ આદિ દ્રવ્ય પરિગ્રહ છે. અનિયત  
વિહાર કરનાર સાધુમાં આ દોષ આવતો નથી આટલા માટે સાધુને સદાય  
યથાકલ્પ અનિયત વિહાર કરવાનું ભગવાને કહ્યું છે.

દષ્ટાંત—કોહ્લાક નામના સન્નિવેશમાં બહુશ્રુત, શાંત, દાન્ત, પરીપહ  
અને ઉપસર્ગ સહન કરવામાં ધીરવીર, ક્ષમાદિ ગુણોથી ગંભીર, કર્મજનું

વિક્રમાચાર્ય ગચ્છસહિતં દૂરદેશે પ્રેષિતવાત્ । સ્વયં તુ એકેન શિષ્યેણ સહ વસન્  
તત્રૈવ નગરે નવ ભાગાન્ કલ્પયિત્વા યથાકલ્પમજ્ઞાતકુલે રુક્ષશુષ્કમન્તપ્રાન્તમમા-  
દિકં ગૃહીત્વા વિહરતિ સ્મ । જરાક્રાન્તોઽપિ ચર્યાપરીપદં સોદુકામઃ કૃતાભિપ્રદત્વાત્  
સ્વયંભિક્ષાર્થમટતિ સ્મ । એવં ચર્યાપરીપદં સદ્માનસ્તમભિપ્રદં યાત્રજીવં નિર્વા-  
હાલોચિતપ્રતિક્રાન્તઃ કાલમાસે કાલં કૃત્વા સ્વકલ્યાણં સાધિતવાન્ ।

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં હીંનકા જીવનના કા-  
અધિકારથી અધિક સમય નિકળતા થાય છે । અવસ્થાપ્રાપ્ત થવાથી હીંનકા  
જંઘાવળ ક્ષીણ થઈ જાય છે । એક સમયની વાત છે કે જ્યાં પર ભયં-  
કર દુર્ભિક્ષ પડી જાય છે । આચાર્યને પરિસ્થિતિના અવલોકન કરીને  
વિક્રમાચાર્ય શિષ્યને ગચ્છસહિત દૂર દેશમાં વિહાર કરાવે છે ।  
સ્વયં એક શિષ્ય સાથે તેની નગરમાં રહે છે । જ્યાં નવ ભાગોની  
કલ્પના કરીને યથાકલ્પ અજ્ઞાતકુલમાં રુક્ષ, શુષ્ક, અન્તપ્રાન્ત આહાર-  
દિક ગ્રહણ કરી જ્યાં વિચરણ કરે છે । યદ્યપિ હીંનકાની વૃદ્ધાવસ્થાથી  
ચલવામાં પૂરો શક્તિ નથી થાય છે તો પણ ચર્યાપરીપદને સહન કરવાની  
અભિલાષાથી તે વિવિધ અભિપ્રદ ગ્રહણ કરે છે । સ્વયં ભિક્ષા માટે  
જાય છે । આ પ્રકારે ચર્યાપરીપદને સહન કરે છે । તેઓને તેમની અભિ-  
પ્રદોના અચ્છી રીતે નિર્વાહ કરે છે । અન્તમાં તેમની કર્તવ્યોની  
આલોચના કરી તેમની પ્રતિ નિવૃત્ત થઈને આત્મકલ્યાણ કરે છે ।

નિવારણ કરવામાં પવનતુલ્ય એવા, એક નિઃસંગ નામના આચાર્ય હતા. શ્રુતચારિત્ર  
રૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં જ તેમના જીવનનો મોટો ભાગ તેઓ ગાળતા  
હતા. અવસ્થા થવાથી તેમનું જંઘાવળ ક્ષીણ થઈ જાયું હતું. એક સમયની  
વાત છે કે, ત્યાં ભયંકર એવો દુકાળ પડ્યો, આચાર્યે પરિસ્થિતિનું અવલોકન  
કરી પોતાના વિક્રમાચાર્ય નામના શિષ્યને ગચ્છ સાથે દૂર દેશમાં વિહાર  
કરાવરાવ્યો અને પોતે એક શિષ્યની સાથે તે નગરમાં રહ્યા. ત્યાં નવ ભાગોની  
કલ્પના કરી તેઓ યથાકલ્પ અજ્ઞાત કુળમાંથી રુક્ષ, શુષ્ક અન્તપ્રાન્ત આહાર આદિ  
ગ્રહણ કરી ત્યાં વિચરતા રહ્યા. જોકે તેમની વૃદ્ધાવસ્થાને કારણે તેમનામાં ચાલવાની  
પૂરી શક્તિ ન હતી તો પણ ચર્યાપરીપદને સહન કરવાની અભિલાષાથી તેઓ  
વિવિધ અભિપ્રદ કરતા અને સ્વયં ભિક્ષા માટે જતા. આ પ્રકારે ચર્યાપરી-  
પદને સહન કરતા કરતાં પોતાના અભિપ્રદોનો સારી રીતે નિર્વાહ કર્યો. અન્ત  
સમય ઉપર પોતાના કર્તવ્યોની આલોચના કરી તેઓ નિવૃત્ત થઈ  
આત્મકલ્યાણ પ્રાપ્ત થયા.

अत्रान्योऽपि दृष्टान्तः—

उज्जयिन्यां वैश्रवणनामक आचार्यः समवसृतः। स स्वशिष्यपरिवारैः सह चर्यापरीपहं सहमानो ग्रामानुग्रामं विहरन् कदाचिदटव्यां प्रविष्टः। आचार्य इव शिष्या अपि चर्यापरीपहसहिष्णव आसन्। तत्र सर्वे मुनिभिरकस्माद् मार्गो विस्मृतः। तत्रैव शर्करामभृथिवीवद् विकीर्णतीक्ष्णकण्टकिते निम्नोन्नतशिलाखण्डदुर्गमे भयङ्करे विपिने गच्छता तेन दिवसो यापितः, रात्रौ च वृक्षाधस्तले निवासः कृतः, एवं शिष्यपरिवारैः सहासौ भ्रमन्नटव्या अन्तं न प्राप, नापि कश्चिद् ग्रामो दृष्टि-

द्वितीय दृष्टान्त—

उज्जैनी नगरी में वैश्रवण नाम के आचार्य पधारे। वे अपने शिष्यपरिवार के साथ चर्यापरीपह को सहन करते हुए ग्रामानुग्राम विहार करते२ कदाचित् मार्ग भूल जाने से एक अटवी में जा पहुँचे। इनके समान ही चर्यापरीपह सहन करने में समर्थ इनके शिष्य भी थे। अकस्मात् वे सब के सब ही मार्ग भूल गये। समस्त दिवस उन सबका शर्करा पृथ्वी के समान, इधर उधर फैले हुए तीक्ष्ण कांटों वाले तथा नीचे ऊँचे शिलाखंडों से दुर्गम उस भयंकर अटवी में ही समाप्त हो गया। रात्रि का समय आ गया। दूसरा कोई उपाय नहीं होने से सभी ने वहीं एक वृक्ष के नीचे ठहर कर रात्रि व्यतीत की। प्रातः काल हुआ। सूर्य की किरणें निकली। मार्ग की तलाश करने लगे परन्तु मार्ग का पता नहीं चला। अटवी कितनी बड़ी थी इसका कुछ अन्त ही नहीं ज्ञात हो सका, और न “यहां से ग्राम कितनी दूर है।”

दृष्टान्त भील्लुं—उज्जैनी नगरीमां वैश्रवणु नामना आचार्य पधार्या. तेज्यो पोताना शिष्य परिवारनी साथे चर्यापरीपहु सडन करता करता ग्रामानुग्राम विहार करता करता मार्ग भूलवाथी अथानक ओक जंगलमां जध गड्या. चर्यापरीपहु सडन करवामां तेमना समानज समर्थ तेमना शिष्यो पणु डता. जोगानुजोग तेज्यो पधा मार्ग भूली गया. शर्कराप्रल पृथ्वीनी समान, आंही तांही योमेर तीक्ष्ण कांटाओथी पथराओली तथा उथी नीथी शिलाओथी दुर्गम ओवी लयानक अटवी—जंगलमां आओओे दिवस बीती गयो. रात्रीनो समय आवी पडोयतां भील्ले डोई पणु उपाय न डोवाथी सधणाओे ओक आड नीचे रहीने रात बितावी. सवार पडयुं, सूर्यनां डिरणो देभायां, मार्गनी तपास करी परंतु अडार नीक जवानो मार्ग न जडयो. जंगल मोटुं डतुं तेना अंतनी पणु अजर पडती न डती अने गाम आ स्थणेथी डेटलुं इर छे ते पणु जणु शकतुं न

પથે સમાયાતઃ । સ ચ તસ્મિન્નેવ વિપમક્રઢ્ટકિતપર્વતીયમાર્ગે ચલન્નપિ ચર્યાપ-  
રીપહૈઃ પરાજિતો નાભૂત્ । આચાર્યો વદતિ-અસ્મિન્ વને ચલતામસ્માકં ત્રયો દિવસા  
અતીતાઃ, ક્વચિદાહારો ન લબ્ધો નાપિ પાનીયમ્ ।

एतदभ्यन्तरे केनचिद्देवेन वैक्रियशक्त्या तत्र शोभनो राजमार्गो निर्मितः ।  
तत्र कस्यचिन्नृपस्य चतुरङ्गिणी सेना गच्छति, बहुधः शिबिका नरैर्वाक्ष्यमाना

इस यात का पता ही चल सका । आचार्य महाराज शिष्यमंडली सहित  
उसी जंगल में घूमते रहे । कभी २ चलते २ विपम एवं कंटकित पर्वत  
के मार्ग पर पहुँच जाते तो भी इनके चित्त में खेदखिन्नता नहीं आती ।  
'चर्यापरीपह सहन करना यह साधु की कर्तव्य कोटि में है ' इस  
ख्याल से ये उसको शांति के साथ सहन करते रहे । चलते २ जब  
ठीक तीन दिन व्यतीत हो चुके तब आचार्य महाराज ने शिष्यों से  
कहा कि देखो-इस वन में लगातार अपने लोग तीन दिन से चल  
रहे हैं फिर भी मार्ग नहीं मिल रहा है । आहार पानी का भी ठिकाना  
नहीं पड़ा, अतः समस्या विकट बन रही है ।

आचार्य महाराज जब इस प्रकार अपने शिष्यों से कह रहे थे कि  
इतने में ही किसी देवने अपनी वैक्रियिक शक्ति के द्वारा उस अटबी  
में एक सुन्दर राजमार्ग बना दिया, और इस प्रकार का दृश्य दिख-  
लाया कि उस पर होकर किसी राजा की चतुरंगिणी सेना जा रही है ।

હતું. આચાર્ય મહારાજ શિષ્ય મંડળી સાથે એ જંગલમાં ખૂબ ભટક્યા.  
ચાલતાં ચાલતાં કોઈ વેળા સ્થળે વિપમ એવા કાંટાળા ટેકરાવાળા રસ્તે  
ચઢી જતા તો પણ તેમના ચિત્તમાં ખેદ-ખિન્નતા આવતી નહીં. “ચર્યાપરીપહ  
સહન કરવો એ સાધુની કર્તવ્ય કોટીમાં છે આ ખ્યાલથી તેઓ આવતા પરીપહોને  
શાન્તી સાથે સહન કરતા રહ્યા. ચાલતાં ચાલતાં જ્યારે ત્રણ ત્રણ દિવસો વીતી  
ગયા ત્યારે આચાર્યમહારાજે શિષ્યોને કહ્યું કે, જુઓ આ વનમાં આપણે ત્રણ  
ત્રણ દિવસોથી ભટકીએ છીએ છતાં પણ બહાર નીકળવાનો કોઈ માર્ગ દેખાતો  
નથી. આહાર પાણીનું પણ ઠેકાણું પડતું નથી એટલે આપણી સમક્ષ વિકટ  
સમસ્યા ઉભી થઈ છે.

આચાર્યમહારાજ આખું જ્યારે પોતાના શિષ્યોને કહી રહ્યા હતા એ  
વખતે કોઈ દેવે પોતાની વૈક્રિયીક શક્તિ દ્વારા તે જંગલમાં એક સુંદર રાજ-  
માર્ગ બનાવી દીધો અને એ પ્રકારનું દૃશ્ય ઉભું કરી દીધું કે તે માર્ગ ઉપરથી  
જાણે કોઈ રાજાની ચતુરંગિણી સેના જઈ રહી છે તેમાં અનેક પાલખી



આસન્ । તત્ર સેનાપતિઃ કાનને ભ્રામ્યમાણમાચાર્યં ત્રવીતિ-ભગવન્ ! સન્ત્યત્ર  
વહ્નિ શિવિકાદીનિ યાનાનિ, યદત્ર રોચતે ભવદ્ગચસ્તત્રાસ્ત્ય ગમ્યતામ્ । આચાર્યેણો-  
ક્તમ્-યાનેન ગમનં નાસ્માકં કલ્પતે, ઇત્યુક્ત્વા તેન ' સર્વોઽયં દેવપ્રપન્ન ' ઇતિ વિજ્ઞા-  
તમ્ । રાજસૈનિકે ગતે સતિ સ આચાર્યઃ શિષ્યાન્ પૃચ્છતિ-કિમિદાનીં કર્તવ્યમ્, ।  
શિષ્યા આહુઃ-આર્યેણ યદનુષ્ઠેયં, તદેવાસ્માભિરપિ કર્તવ્યમ્, આચાર્યઃ પાદપો-  
પગમનાર્થં પ્રતિજ્ઞાતવાન્, તદનુ તદીયશિષ્યા અપિ પાદપોપગમનાર્થં સંસ્તારકં  
કૃતવન્તઃ । સર્વેઃ સમાધિભાવેન કાલં કૃત્વાઽઽત્મનઃ કલ્યાણં સાધિતમ્ । એવમન્યૈ-  
રપિ મુનિભિશ્ચર્યાપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૧૯ ॥

ઉસ મેં અનેક પાલકિયાં કો વહન કરતે હુણ મનુષ્ય ચલે જા રહે હેં ।  
યહ સવ દૃશ્ય આચાર્ય મહારાજ કે દેલ્લને મેં આ રહ્યા થા । હસી સમય  
એક સેનાપતિ ને અટવી મેં ભ્રમણ કરતે હુણ આચાર્ય મહારાજ સે કહ્યા  
હે ભદન્ત ! યહાં વહુત સે પાલકિયાં આદિ વાહન હેં આપ જિન્હેં પસંદ કરે  
ઉનપર ચઢકર ચલે । આચાર્યશ્રીને સેનાપતિ કી વાત સુનકર કહ્યા કિ-  
યાન પર ચઢકર ચલના યહ હમારે કલ્પ સે વાહર હે । તથા સાથ ૨ મેં  
આચાર્યમહારાજ ને યહ બી જાન લિયા કિ યહ સવ દૈવી માયા હે । સેનાપતિ  
કે ચલે જાને પર ફિર આચાર્ય મહારાજ ને શિષ્યોં સે પૂછ્યા કિ કહો હસ  
સમય કયા કરના ચાહિયે । શિષ્યોં ને કહ્યા જો આપકો કરના રુચે  
વહી હમેં મંજૂર હે । શિષ્યોં કી વાત સુનકર આચાર્ય મહારાજને પાદ-  
પોપગમન ધારણ કરને કી વિચારણા કરલી । શિષ્યોં ને બી એસા હી  
કિયા । સવને વહાં સમાધિભાવ સે સંપન્ન હોકર પણ્ડિતમરણ કિયા,

ઉપાડીને મનુષ્યો ચાલી રહ્યા છે આ સઘળું દૃશ્ય આચાર્ય મહારાજના જોવામાં  
આવી રહ્યું હતું. એવામાં એક સેનાપતિએ જંગલમાં વિચરી રહેલા  
આચાર્ય મહારાજને કહ્યું, ભદ્રંત ! અહિં ઘણી પાલખીઓ વિગેરે વાહન  
છે, આપ જેને પસંદ કરો તેમાં બેસીને ચાલો. આચાર્યે સેનાપતિની  
વાત સાંભળીને કહ્યું કે, પાલખીમાં બેસીને વિચરવું તે અમારા  
કલ્પની બહાર છે. સાથે સાથે આચાર્ય મહારાજે એ પણ બાણી લીધું કે આ  
સઘળી દૈવી માયા છે. સેનાપતિના ચાલી ગયા પછી આચાર્ય મહારાજે શિષ્યોને  
પૂછ્યું કે, કહો ! આવે વખતે હવે શું કરવું જોઈએ ? શિષ્યોએ કહ્યું કે, આપને  
જે કરવું રુચે તે અમને મંજૂર છે. શિષ્યોની વાત સાંભળીને આચાર્ય મહારાજે  
પાદપોપગમન કરવાની પ્રતિજ્ઞા ધારણ કરી લીધી. શિષ્યોએ પણ એમજ કયું.  
પરિણામે સઘળા ત્યાં સમાધી ભાવથી સંપન્ન બની પંડિત મરણ પામ્યા અને

અથ નૈપેધિકીપરીપદ્ધત્યં પ્રાહ—

મૂલમ્—સુસાણે સુન્નેગારે વાં, રુક્ષમૂલે વૈ એગંઓ ।

અકુક્કુઓ નિસીણજા, નં યં ત્રિતૌસણ પેરં ॥ ૨૦ ॥

છાયા—શ્મશાને શૂન્યાગારે વા, વૃક્ષમૂલે વા એકકઃ ।

અકૌકુચ્યઃ નિપીદેત્ ન ચ વિત્રાસયેત્ પરમ્ ॥ ૨૦ ॥

ટીકા—‘સુસાણે’ ઇત્યાદિ ।

શ્મશાને—શવસ્થાને, વા=અથવા, શૂન્યાગારે=નિર્જનગૃહે, વા=અથવા, વૃક્ષ-મૂલે=વૃક્ષાધસ્તલે, મુનિઃ એકકઃ=દ્રવ્યતઃ એકાકી પ્રતિમાઽપેક્ષયા, ભાવતો—મુનિ ગણસ્થિતોઽપિ રાગદ્વેષરહિતઃ, અકૌકુચ્યઃ=અશિષ્ટચેષ્ટારહિતઃ—વિષયચેષ્ટાવર્જિતઃ સન્નિત્યર્થઃ, નિપીદેત્=ભયરહિતં યતનાપૂર્વકમુપવિશેદિત્યર્થઃ । ચ—પુનઃ મુનિસ્તત્રોપવિષ્ટઃ સન્, પરમ્—અન્યં જીવં દ્વીન્દ્રિયાદિકં, ન વિત્રાસયેત્=તત્રસ્થં જીવં સ્થાનઅષ્ટાદિકં

और आत्मकल्याण की सिद्धि की । इसी तरह समस्त साधुओं को चर्यापरीपह पर विजय पाने में प्रयत्नशील रहना चाहिये ॥१९॥

અવ દસવેં નૈપેધિકીપરીપદ્ધત્યં કો જીતને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘સુસાણે’—ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—મુનિ કો (સુસાણે—શ્મશાને) શ્મશાનમાં (વા) અથવા (સુન્નેગારે—શૂન્યાગારે) શૂન્ય ઘર માં (વા) વા (રુક્ષમૂલે—વૃક્ષમૂલે) વૃક્ષ કે નીચે (એગંઓ—એકકઃ) એકાકી દ્રવ્ય—સે પ્રતિમા કી અપેક્ષા અકેલે, તથા ભાવ કી અપેક્ષા મુનિ સમુદાય માં રહેતે હુએ મી રાગદ્વેષરહિત એવં (અકુક્કુઓ—અકૌકુચ્યઃ) અશિષ્ટ ચેષ્ટા સે રહિત હોતે હુએ (નિસીણજા—નિપીદેત્) ભયશૂન્ય હોકર યતનાપૂર્વક રહે । ( ય—ચ ) તથા વહાં પર

આત્મકલ્યાણની સિદ્ધિ મેળવી. આ પ્રમાણે સર્વ સાધુઓએ ચર્યાપરીપદ્ધતિ ઉપર વિન્યસ મેળવવા પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. ॥૧૯॥

હવે સૂત્રકાર દશમા નૈપેધિકીપરીપદ્ધતિ બતાવવા માટે કહે છે—‘સુસાણે’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મુનિએ સુસાણે—શ્મશાને શ્મશાનમાં “વા” અથવા સુન્નેગારે—શૂન્યાગારે સૂના એવા ઘરમાં “વા” અથવા રુક્ષમૂલે—વૃક્ષમૂલે વૃક્ષની નીચે એગંઓ—એકકઃ એકાકી દ્રવ્યથી પ્રતિમાની અપેક્ષાએ એકલા તથા ભાવની અપેક્ષાએ મુનિ સમુદાયમાં રહેતાં છતાં પણ રાગદ્વેષ રહિત અને અકુક્કુઓ—અકૌકુચ્યઃ અશિષ્ટ ચેષ્ટાથી રહિત બનીને નિસિણજા—નિપીદેત્ ભય રહિત થઈ યતનાપૂર્વક યજ્ઞ

न कुर्यादित्यर्थः । इदमत्र-बोध्यम्-आदावस्मिन्नध्ययने 'निसीहियापरीसहे' इति यदुक्तं तस्य छाया 'नैपेधिकीपरीपहः' इति । निपेधः=प्राणातिपातादि निवृत्तिः, स प्रयोजनमस्या इति नैपेधिकी । यद्वा निपेधः=पापकर्मणां गमनादिक्रियायाश्च निवृत्तिः, स प्रयोजनमस्या इति नैपेधिकी, निपद्या=उपवेशनस्थानम् कायोत्सर्ग-भूमिः । स्वाध्यायभूमिश्चेत्यर्थः । सैव च परिपहो नैपेधिकीपरीपहः उपवेशनस्थान परीपहः, तत्र श्मशानादिषु स्थानेषु स्थितेन मुनिना भयंकरोपसर्गसमापतने सति न भेतव्यम्, नापि स्वरविकारादिभिरन्येषां भयमुत्पादनीयमिति ॥ २० ॥

रहे हुए उस मुनि को चाहिये की वह (परं न वित्तासए-परं न वित्रा-सयेत्) वहां पर पहिले से रहने वाले द्वीन्द्रियादीक जीवों को स्थान-भ्रष्ट न करे, यहां यह समझना चाहिये कि पहिले इस अध्ययन में "निसीहिया परीसहे" ऐसा कहा गया है उसकी संस्कृत छाया नैपेधिकीपरीपहः" ऐसी की गई है । उसका अर्थ इस प्रकार है- "प्राणातिपातादिक क्रियाओं से निवृत्ति करने का जिसका प्रयोजन हो वह नैपेधिकी है, अथवा पापकर्मों की एवं गमनादिक्रिया की निवृत्तिरूप निपेध जिसका प्रयोजन हो वह नैपेधिकी है, अथवा निपद्या उपवेशन स्थान का नाम है, वह या तो कायोत्सर्ग की भूमिस्वरूप होगा या स्वाध्याय की भूमिस्वरूप । उस निपद्यारूप जो परीपह उसका नाम नैपेधिकीपरीपह है । इसका फलितार्थ उपवेशनस्थान सम्बन्धी परीपह नैपेधिकीपरीपह है । श्मशान आदिक स्थानों में रहे हुए मुनि को भयंकर उपसर्ग के

तथा त्यां रહેતા એ મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે પરં ન વિત્તાસए-परं न वित्रासयेत् त्यां-  
પડેલાથી રહેવાવાળા દ્વિધન્દ્રિયાદિક જીવોને સ્થાનભ્રષ્ટ ન કરે, અહીં એ સમજવું  
જોઈએ કે, પડેલાં આ અધ્યયનમાં નિસીહિયા પરીસહે એવું કહેવાયું છે કે જેની સંસ્કૃત  
છાયા "નૈપેધિકી પરીપહઃ" એમ કરવામાં આવેલ છે. એનો અર્થ આ પ્રકારનો છે-  
"પ્રાણાતિપાતાદિક ક્રિયાઓથી નિવૃત્તિ કરાવવાનું જેનું પ્રયોજન હોય તે નૈપે-  
ધિકી છે, અથવા પાપકર્મોની અને ગમનાદિક ક્રિયાઓની નિવૃત્તિરૂપ નિપેધ જેનું  
પ્રયોજન હોય તે નૈપેધિકી છે, અથવા નિપદ્યા ઉપવેશન સ્થાનનું નામ છે. તે  
યાતો કાયોત્સર્ગની ભૂમિ સ્વરૂપ હોય યા સ્વાધ્યાયની ભૂમિસ્વરૂપ. એ નિપ-  
દ્યારૂપ જે પરીપહ તેનું નામ નૈપેધિકીપરીપહ આનો તો ફલિતાર્થ ઉપવેશન  
સ્થાન સંબંધી પરીપહ નૈપેધિકીપરીપહ છે, શ્મશાન આદિ સ્થાનોમાં રહેનારા  
મુનિએ ભયંકર ઉપસર્ગોના આવવા છતાં પણ ભયભીત ન બનવું જોઈએ,

ઉક્તમર્થે વિશદીકૃયન્નાહ—

મૂલમ્—તત્થ સે<sup>૩</sup> ચિદ્દમાણસ્સ, ઉવસંગ્ગા ભિધારણ ।

સંકામ્ભીઓ નં ગચ્છેજ્જો, ઉદ્ધિત્તાં અન્નમાસેણં ॥ ૨૧ ॥

છાયા—તત્ર તસ્ય તિષ્ઠતઃ, ઉપસર્ગા અભિધારયેત્ ।

શંકામીતઃ ન ગચ્છેત્; ઉત્થાયાન્યદાસનમ્ ॥ ૨૧ ॥

ટીકા—‘તત્થ’ इत्यादि ।

તત્ર=શ્મશાનાદૌ, તિષ્ઠતઃ=ઉપવિષ્ટસ્ય તસ્ય મુનેઃ ઉપસર્ગાઃ—દેવમનુષ્યતિર્ય-  
ન્કૃતા ઉપદ્રવાઃ, યદિ ભવેયુસ્તર્હિ સ મુનિસ્ત્વાનુપસર્ગાન્ અભિધારયેત્—‘મમાચલ  
ચેતસઃ કિમેતે કરિષ્યન્તીતિ ચિન્તયન્ સહેત । પરન્તુ શંકામીતઃ=ઉપસર્ગકૃતોપદ્રવ-  
સંશયાદુદ્વેગવાન્ સન્, ઉત્થાય—તતઃ સ્થાનાદપૃથ્વ્ય, અન્યત્=પરમ્, આસનમ્=  
આસ્યતે—ઉપવિશ્યતેઽસ્મિન્નિત્યાસનં=સ્થાનમ્, ન ગચ્છેત્ ।

‘આને પર મી ભયમીત નહીં હોના ચાહિયે ઓર ન અપને અંગોં કો વિકૃત  
કરકે દૂસરોં કો ભયમીત કરના ચાહિયે ॥ ૨૦ ॥

इसी अर्थ को विशद करते हुए सूत्रकार समझाते हैं—  
‘तत्थ से’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(તત્થ—તત્ર) શ્મશાન આદિ સ્થાન મેં (ચિદ્દમાણસ્સ સે-  
તિષ્ઠતસ્તસ્ય) સ્થિત ઉસ સાધુકે ઉપર (ઉવસગ્ગા-ઉપસર્ગાઃ) દેવ, મનુષ્ય,  
તિર્યંચ સમ્બન્ધી ઉપસર્ગ યદિ આવે તો ઉસ મુનિ કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ  
ઉન ઉપસર્ગોં કો (અભિધારણ—અભિધારયેત્) “યે ઉપસર્ગ મેરા કયા  
કર સકતે હૈં” નિશ્ચલચિત્ત સે એસા વિચાર કર સહન કરે । પરન્તુ  
(શંકામીઓ—શંકામીતઃ) ઉપસર્ગકૃત ઉપદ્રવ કે સન્દેહ સે ઉદ્વેગવાન્

अथवा तो चोताना अंगोने विकृत बनावी भीलने लयलीत करवा न लेधये ॥ २० ॥

આજ અર્થવિશે સૂત્રકાર વિષદરૂપથી સમજાવે છે. ‘તત્થ સે’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(તત્થ—તત્ર) શ્મશાન આદિ સ્થાનમાં ચિદ્દમાણસ્સ સે—તિષ્ઠતઃ તસ્ય રહેલા  
એ સાધુની ઉપર ઉપસગ્ગા—ઉપસર્ગાઃ દેવ, મનુષ્ય, તિર્યંચ સંબંધી ઉપસર્ગ આવે  
ત્યારે એ મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે એ ઉપસર્ગોને અભિધારણ—અભિધારયેત્ આ  
ઉપસર્ગ માફ શું કરી શકવાના છે “નિશ્ચલ” ચિત્તે એવો વિચાર કરી સહન કરે.  
પરંતુ શંકામીઓ—શંકામીતઃ ઉપસર્ગકૃત ઉપદ્રવના સંદેહથી

પ્રિયદર્શિની ટીકા. અ. ૨ ગા. ૨૧ નૈપેધિકીપરીપદજયે કુરુદત્તમુનિદૃષ્ટાન્તઃ ૪૧૨

સ્વાધ્યાયકરણાર્થં કાયોત્સર્ગકરણાર્થં વા સ્ત્રીપશુપંડકવિવર્જિતે સ્થાને નિપ-  
ળ્લેન મુનિના અનુકૂલપ્રતિકૂલોપસર્ગસંપાતેऽનુદ્વેગકરણેન નિપદ્યાપરીપદમકો  
નૈપેધિકીપરીપદઃ સોઢવ્ય ઇતિ ભાવઃ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

હસ્તિનાપુરે કુરુદત્તનામા શ્રેષ્ઠિપુત્રઃ પ્રવ્રજિતો ભૂતૈકાકિવિહારપ્રતિમયા  
પ્રામાનુગ્રામં વિહરન્નયોધ્યાનગર્યાં ઈપદ્દૂરપ્રદેશે કાયોત્સર્ગમ્ કૃત્વા સ્થિતઃ । તત્ર

હોકર ( ઉઢિત્તા-ઉત્થાય ) ઉઠકર ( અન્નમાસણં-અન્યદ્ આસનં ) દૂસરે  
કિસી સ્થાન પર ( ન ગચ્છેજ્જા-ન ગચ્છેત્ ) નહીં જાવે ।

તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ સ્વાધ્યાય કરને કે લિયે અથવા કાયો-  
ત્સર્ગ કરને કે લિયે સ્ત્રી પશુ પંડક સે વર્જિત સ્થાન મેં વૈઠે હુએ મુનિ કો  
ચાહિયે કિ વહ અનુકૂલ પ્રતિકૂલ ઉપસર્ગ કે આને પર અનુદ્વિગ્ન  
ચિત્ત હોકર નિપદ્યાપરીપદ કિ જિસકા દૂસરા નામ નૈપેધિકીપરી-  
પદ હૈ ઉસકો સહન કરે । અર્થાત્-શ્મશાન આદિ સ્થાન મેં વૈઠને પર  
ઉપસર્ગ આદિ કા આના સ્વાભાવિક હૈ । અતઃ એસી સ્થિતિ મેં મુનિ કા  
કર્તવ્ય હૈ કિ વહ તિર્યઠ્ઠાદિકૃત્ત ઉન ઉપસર્ગો કો અવિચલિતચિત્ત  
હોકર સહન કરે । ભયભીત ન હોવે, ઓર ન એક સ્થાન સે દૂસરે  
સ્થાન પર અપની રક્ષા કે અભિપ્રાય સે જાવે ।

દૃષ્ટાન્ત-હસ્તિનાપુર મેં કુરુદત્ત નામ કા એક સેઠ કા પુત્ર રહતા થા ।  
ઉસને ધર્મ કા ઉપદેશ સુનકર દીક્ષા ધારણ કરલી । જય વે શ્રુતચા-

ઉઢિત્તા-ઉત્થાય ત્યાંથી ઉઠીને અન્નમાસણં-અન્યત્ આસનં બીજા કોઈ સ્થાન ઉપર  
ન ગચ્છેજ્જા-ન ગચ્છેત્ ન જાય.

આનો ભાવ એ છે કે, સ્વાધ્યાય કરવા માટે અથવા તો કાયોત્સર્ગ  
કરવા માટે સ્ત્રી, પશુ, પંડકથી વર્જિત એવા સ્થાનમાં બેઠેલા મુનિએ ગમે તેવા  
અનુકૂળ પ્રતિકૂળ ઉપસર્ગ આવવાથી ઉદ્વિગ્ન ચિત્ત ન બનતાં વિપદ્યાપરીપદ કે  
બેનું બીજું નામ નૈપેધિકીપરીપદ છે એને સહન કરે. અર્થાત્-શ્મશાન આદિ  
સ્થાનમાં બેસવાથી ઉપસર્ગ વગેરેનું આવવું સ્વાભાવિક છે. આથી એવી  
સ્થિતિમાં મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તિર્યઞ્ચ આદિ દ્વારા થતા એ ઉપસર્ગોને અવિ-  
ચલીત ચિત્ત બની સહન કરે અને ભયભીત ન થાય. પોતાના રક્ષણના અભિ-  
પ્રાયથી એક સ્થાનથી બીજા સ્થાન ઉપર ન જાય.

દૃષ્ટાન્ત-હસ્તિનાપુરમાં કુરુદત્ત નામે એક શેઠનો પુત્ર રહેતો હતો એણે  
ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી. બ્યારે તે શ્રુતચારિત્ર રૂપ

રાત્રેશ્ચતુર્થપૌરુષ્યાં કુતશ્ચિદ્ ગ્રામાદ્ ગોધનાપહારં કૃત્વા ચૌરાઃ કુરુદત્તમુનેઃ પાર્શ્વ-  
સ્થેન માર્ગેણ સવેગં ગતાઃ । પથ્યાદ્ ગોસ્વામિનસ્તદન્વેષકાસ્ત્રાયાતાઃ દ્વી માર્ગો  
તત્ર દૃષ્ટ્વા તે કુરુદત્તમુનિં પૃચ્છતિ-ભદન્ત ! બ્રૂહિ ચૌરાઃ કેન પથા ગતાઃ । તદ્વચનં  
શ્રુત્વાઽપિ સ મુનિર્ન કિંચિદુક્તવાન્ તતસ્તે ગોસ્વામિનઃ ક્રોધાવેશેન મુનેઃ શિરસિ  
આર્દ્રમૃત્તિકાલેપેન પાલીં કૃત્વાઽદ્ધારાઃ ક્ષિપ્તાઃ મુનિસ્તુ તદુપસર્ગકૃતવેદનાં સહમાનો

રિત્તરૂપ ધર્મ કે પાલન કરને મેં પૂર્ણ નિષ્ણાત હોં ગયે તો ઉન્હોં ને  
एकाकीविहारप्रतिमा लेकर ग्रामानुग्राम विचरण करने लगे विहार  
करते २ वे अयोध्यानगरी के समीप कुछ दूर प्रदेश में कायोत्सर्ग  
धारण कर रहे । रात्रि के चतुर्थ प्रहर में किसी ग्राम से गायों को बुरा-  
कर चौर कुरुदत्त मुनि के पास के मार्ग से जल्दी २ बड़े वेग के साथ  
निकले । इनके निकल जाने के बाद ही गायों के स्वामी उनकी तपास  
करते हुए वहाँ पर आ पहुँचे । वहाँ से दो रास्ते जाते थे । उन्हें देख-  
कर उन लोगों ने कुरुदत्त मुनि से पूछा कि भदन्त ! यहाँ से चौर किस  
रास्ते होकर गये हैं । मुनि ने उनकी बात सुनकर कुछ भी उत्तर नहीं  
दिया । वे सबके सब मुनि के ऊपर रुष्ट हुए । क्रोध के आवेशमें  
आकर उन लोगों ने मुनिराज के माथे ऊपर मिट्टी की क्यारी बनाकर  
उसमें जलते हुए अंगार रख दिये । मुनि ने उनके द्वारा किये गये इस

ધર્મનું પાલન કરવામાં પૂર્ણ પણે નિષ્ણાત બની ગયા ત્યારે એમણે એકાકી  
વિહાર પ્રતિમા લઈ ગ્રામાનુગ્રામ વિચરણ કરવા માંડ્યું. વિહાર કરતાં કરતાં તે  
અયોધ્યા નગરીની પાસે થોડા દૂરના પ્રદેશમાં કાયોત્સર્ગ ધારણ કરી રહ્યા.  
રાત્રીના ચોથા પ્રહરના સમયે કોઈ ગામથી ગાયો ચોરીને ચોર કુરુદત્ત મુનિની  
પાસેના માર્ગ ઉપરથી ઉતાવળથી નિકળી ગયા. ગાયો ચોરીને ભાગેલા એ ચોરની  
પાછળ એના નીકળી જવા પછી થોડીવારે ગાયો જેની ચોરાયેલી તે એની  
તપાસમાં નીકળ્યા. અને કુરુદત્ત મુનિ જે સ્થાને બેઠેલ હતા ત્યાં પહોંચ્યા. આ  
સ્થાનેથી બુદ્ધી બુદ્ધી બાબુ જતા બે રસ્તા કુટતા હોવાથી ગાયોના માલીકોએ  
મુનિને બેઠેલા બેઈ તેની પાસે આવી પૂછ્યું કે, ભદન્ત ! અહિંથી ચોરો કઈ  
બાબુએ ગયા ? મુનિએ આનો કોઈ પ્રત્યુત્તર ન આપતાં તે લોકો મુનિ ઉપર  
ખીજ્યા અને ક્રોધના આવેશમાં આવી જઈ તે લોકોએ મુનિરાજના માથા ઉપર  
માટીની ક્યારી બનાવી તેમાં બળ બળતા અંગારાં મૂકી દીધા. એ લોકો દ્વારા  
કરાયેલા ઉપસર્ગથી મુનિને ખૂબ વેદના થઈ પરંતુ તેને ખૂબજ શાંત ચિત્તે



નિરુદ્ધેગઃ સન્ તત્ર સ્થિત એવ સમાધિભાવેન કાલં કૃત્વા સિદ્ધિ પ્રાપ્તવાન્ । એવ-  
મન્યૈરપિ મુનિર્મિર્નપેધિકીપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૨૧ ॥

અથ શય્યાપરીપહજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—ઉચ્ચાવયાહિં સેજ્જાહિં તવસ્સી મિક્ખુ થામવં ।

નાઙ્ગવેલં વિહન્નેજ્જા, પાર્વદિટ્ઠી વિહંન્નઈ ॥ ૨૨ ॥

છાયા—ઉચ્ચાવચામિઃ શય્યામિઃ, તપસ્વી મિક્ખુઃ સ્થામવાન્ ।

નાતિવેલં વિહન્યાત્, પાપદષ્ટિર્વિહન્યતે ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘ઉચ્ચાવયાહિં’ ઇત્યાદિ ।

સ્થામવાન્=સ્થામ=ચલં તદ્વાન્, શીતોષ્ણાદિસહનશક્તિમાનિત્યર્થઃ, તપસ્વી=  
અનશનાદિવિવિધતપશ્ચરણશીલઃ, મિક્ખુઃ=મુનિઃ, ઉચ્ચાવચામિઃ=ઉત્કૃષ્ટાપકૃષ્ટામિઃ

ઉપસર્ગ કી વેદના કો વડે હી શાન્ત પરિણામોં સે સહન કિયા । ચિત્ત  
મેં જરા બી ઉદ્દેગ નહીં આને દિયા । ધ્યાન મેં હી વે સમાધિભાવ સે  
સ્થિર રહે । અન્ત મેં કાલધર્મ કો પ્રાપ્તકર કુરુદત્તમુનિને સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કી ।  
હસી પ્રકાર અન્ય મુનિયોં કો બી હસ કથાસે યહી શિક્ષા લેની ચાહિયે  
કિ નિપદ્યાપરીપહ મેં યદિ હસ પ્રકાર કે વિઘ્ન આવે તો ઉન્હેં સહન  
કરના ચાહિયે ॥ ૨૧ ॥

અથ ગ્યાહરવેં શય્યાપરીપહજય કે વિષય મેં સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘ઉચ્ચાવયાહિં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(થામવં—સ્થામવાન્) શીત ઉષ્ણ આદિ પરીપહોં કો સહન  
કરનેકી શક્તિવાળા, તથા (તવસ્સી—તપસ્વી) અનશન આદિ વિવિધ તપોં  
કા અનુષ્ઠાન કરને વાળા ( મિક્ખુ—મિક્ખુઃ ) સાધુ ( ઉચ્ચાવયાહિં  
સેજ્જાહિં—ઉચ્ચાવચામિઃ શય્યામિઃ ) અનુકૂલ જૈસે હેમન્ત શિશિર

સહન કરી. ચિત્તમાં જરા પણ ઉદ્દેગ આવવા ન દીધો અને ધ્યાનમાં જ સમાધી  
ભાવમાં સ્થિર રહ્યા. અન્તે કાળ ધર્મને પામી એમણે સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી. આ  
પ્રકારે અન્ય મુનિયોએ પણ આ કથાથી એવી શિક્ષા લેવી જોઈએ કે, નિપદ્યા-  
પરીપહમાં કદાચ આ પ્રકારનાં વિઘ્ન આવે તો એને સહન કરવાં જોઈએ. ॥૨૧॥

હવે સૂત્રકાર શય્યાપરીપહ જીતવાને કહે છે. ‘ઉચ્ચાવયાહિં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—થામવં—સ્થામવાન્ ઠંડીના અને ગરમીના પરીપહોને સહન કરવાની  
શક્તિવાળા તથા તવસ્સી—તપસ્વી અનશન આદિ વિવિધ તપોનાં અનુષ્ઠાન કરવાવાળા  
મિક્ખુ—મિક્ખુઃ સાધુ ઉચ્ચાવયાહિં સેજ્જાહિં—ઉચ્ચાવચામિઃ શય્યામિઃ અનુકૂળ—જેવી કે,

उच्चाः=उत्कृष्टाः, अनुकूलाः-हेमन्तशिशिरयोः शैत्यरहिताः उष्णस्पर्शवत्यो वा, ग्रीष्मवर्षासु उष्णस्पर्शवर्जिताः, शीतस्पर्शवत्यो वा, द्रव्यतः उच्चप्रदेशस्थिता वा उच्चाः, सुधाभिः-‘चूना, सिमेन्ट’ इत्यादिभाषापसिद्धाभिः, उपलिप्ततलादीना-मुपलक्षणं चैतत् । अवचाः=अपकृष्टाः प्रतिकूलाः-हेमन्तशिशिरयोः शीतस्पर्शयुक्ताः, ग्रीष्मवर्षासु उष्णस्पर्शवत्यः, द्रव्यतः अधोभागस्थिता वा अवचाः, उच्चाश्च अवचाश्चेति, उच्चावचास्ताभिः, शय्याभिः शेरते यासु साधवस्ताः शय्याः=वसतयः उपाश्रयाः, पट्टकादिरूपाः संस्तारकाश्च उच्यन्ते, ताभिर्हेतुभिः, अतिवेळम्-वेला-मतिक्रम्य, स्वाध्यायादिकं न विहन्यात्=न परित्यजेत् । यद्वा-अतिवेलाम्-इति छाया । वेलाशब्दो मर्यादावाचकः, अतिशयिता वेला अतिवेला, अन्यमर्यादाऽपेक्षयाऽतिशयिनीं मर्यादां समतारूपां न विहन्यात्=रागद्वेषजनिताभ्यां हर्षविषादाभ्यां

ऋतु में शैत्यरहित, अथवा-उष्णस्पर्शसहित, ग्रीष्म वर्षाऋतु में उष्ण-स्पर्शरहित, अथवा शीतस्पर्शसहित, अथवा द्रव्य की अपेक्षा उच्च-प्रदेश में स्थित, उपलक्षण से चूना सिमेंट आदि की बनाई गई ऐसी उच्चशय्या-उपाश्रय अथवा पाटला संस्तारकको लेकर, अथवा अवच-उच्च से प्रतिकूल-हेमन्त शिशिर में शीतस्पर्शयुक्त, ग्रीष्मवर्षा में उष्णस्पर्शयुक्त तथा द्रव्य की अपेक्षा अधोभाग में स्थित ऐसी शय्या को-उपाश्रय, पाटला, संस्तारक को-लेकर (अइवेलं न विहन्ने-ज्जा-अतिवेलं न विहन्यात्) वेला का उल्लंघन करके स्वाध्याय आदि को न छोड़े, अर्थात् कालोकाल प्रतिलेखनादि करे । अथवा रागद्वेष-जनित हर्षविषादरूप परिणामों के द्वारा अन्यमर्यादा की अपेक्षा अति-शय्यविशिष्ट समतारूप मर्यादा का उल्लंघन न करे । उच्चशय्या-

हेमन्त शिशिर ऋतुमां शैत्य रहित, अथवा उष्णस्पर्शवाणी ग्रीष्म, वर्षा ऋतुमां उष्णस्पर्श रहित अथवा शीतस्पर्श सहित अथवा द्रव्यनी अपेक्षाथी उच्च प्रदेशमां रहित. उपलक्षणथी चूना, सीमेन्ट आदिथी बनाववामां आवेल उच्च शैया, उपाश्रय, अथवा पाटला संस्तारकने लछ अथवा अवच उच्चथी प्रतिकूल हेमन्त शिशिरमां ठंडीवाणी, ग्रीष्म वर्षामां उष्ण स्पर्शवाणी तथा द्रव्यनी अपेक्षा अधोभागमां स्थित ऐवी अवचशय्याने-उपाश्रय, पाटला, संस्तारकने लछ अइवेलं न विनिहन्नेज्जा-अतिवेलं न विहन्यात् वेलानुं उलंघन करी स्वाध्याय आदिने न छोडे, अर्थात् कालोकाण प्रतिलेखनादि करे. अथवा-रागद्वेष जनित हर्ष विषाद रूप परिणामो द्वारा अन्य मर्यादानी अपेक्षा अतिशय विशिष्ट समतारूप मर्यादानुं उलंघन न करे. उच्च शय्या-अनुकूल वस्तिनो लाल मणतां ऐवो विचार

ન લઙ્ઘયેત્ । ઉચ્ચશય્યાં પ્રાપ્ય 'અહો ! ભાગ્યવાનઽહં યન્મમ સર્વકાલસુખદા વસતિ-  
મિલિતે'તિ હર્ષઃ, અવચશય્યાં પ્રાપ્ય તુ 'અહો ! કીદૃશી મમ મન્દભાગ્યતા, યતઃ  
શય્યાઽપિ શીતાદિનિવારિકા ન લઙ્ઘયતે' ઇતિ વિપાદઃ । એવંભૂતાભ્યાં હર્ષવિપા-  
દાભ્યાં મધ્યસ્થભાવરૂપાં મર્યાદાં નોદ્ઘ્વન્નીયેત્યર્થઃ । યસ્તુ મુનિઃ પાપદૃષ્ટિઃ=પૂર્વોક્ત  
મર્યાદોદ્ઘ્વકઃ સ ચિનિહન્યતે, પરીપદૈઃ પરાજિતોઽત एव સાધુમર્યાદાસ્થલિતો  
મુનિઃ સંયમાત્પતિતો ભવતીત્યર્થઃ । તસ્માદુપાશ્રયાદી રાગદ્વેષપરિવર્જનેન શય્યા-  
પરીપદઃ સોઢવ્ય ઇતિ ભાવઃ ॥ ૨૨ ॥

અનુકૂલ વસ્તિ કો પાકર એસા વિચાર ન કરે કિ “અહો ! મેં વઢા હી  
‘ભાગ્યશાલી હું જો મુદ્દે સર્વકાલ મેં સુખ દેનેવાલી વસતિ મિલી હૈ”  
તથા અવચશય્યા પ્રતિકૂલ વસ્તિ કો પાકર એસા વિચાર ન કરે  
કિ-અહો ! મેં કેસા મન્દ-ભાગી હું જો મુદ્દે શીતાદિ નિવારણ કરને  
વાલી વસ્તિ મો નહીં મિલી । હસ પ્રકાર અનુકૂલ પ્રતિકૂલ  
વસતિ કી પ્રાપ્તિ કો લેકર મુનિ કો હર્ષવિપાદાત્મક પરિણામોં દ્વારા  
મધ્યસ્થભાવરૂપ મર્યાદા કા ઉલ્લંઘન નહીં કરના ચાહિયે । જો  
મુનિ ( પાવદિટ્ટી વિહન્નર્દ-પાપદૃષ્ટિઃ વિહન્યતે ) અનુકૂલ પ્રતિકૂલ  
વસતિ મેં રાગદ્વેષ કરતા હૈ વહ પાપદૃષ્ટિ મુનિ હસ સમતાભાવરૂપ  
મર્યાદા કા નાશ કરતા હુવા સંયમ સે પતિત હો જાતા હૈ । હસલિયે  
મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉપાશ્રય આદિ મેં રાગદ્વેષ કે પરિવર્જન સે  
શય્યાપરીપદ સહન કરે ॥ ૨૨ ॥

ન કરે કે, “ અહો ! હું ખૂબ જ ભાગ્યશાળી છું. જે મને સર્વકાળ સુખ દેવાવાળી  
વસ્તિ મળી છે ” તથા “અવચ” શય્યા પ્રતિકૂળ વસ્તિથી એવો વિચાર ન કરે કે, હું  
કેવો મંદભાગી છું જે મને ઠંડી આઢિનું નિવારણ કરવાવાળી વસ્તિ ન મળી, આ  
પ્રકારે અનુકૂળ પ્રતિકૂળ વસ્તિની પ્રાપ્તિને લઈ મુનિએ હર્ષ વિપાદાત્મક પરિણામો  
દ્વારા મધ્યસ્થ ભાવરૂપ મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવું ન જોઈએ. જે મુનિ પાવદિટ્ટી  
વિહન્નર્દ-પાપદૃષ્ટિઃ વિહન્યતે અનુકૂળ પ્રતિકૂળ વસ્તિમાં રાગદ્વેષ કરે છે. તે  
પાપદૃષ્ટિ મુનિ આ સમતા ભાવ રૂપ મર્યાદાનો નાશ કરી સંયમથી પતિત  
થઈ જાય છે. આ માટે મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે, ઉપાશ્રય આદિમાં રાગદ્વેષના  
પરિવર્જનથી શય્યા પરીપદ સહન કરે ॥ ૨૨ ॥

શય્યાપરીપહઃ કયા રીત્યા સોઢ્યઃ ? इति प्रदर्शयति—

मूलम्—पइरिक्कमुवँस्सयं लद्धं, कल्लाणं अटुव पावंगं ।

किमेगंरायं कंरिस्सइ, एवं तत्थऽहियासए ॥ २३ ॥

छाया—प्रतिरिक्तमुपाश्रयं लब्ध्वा, कल्याणम् अथवा पापकम् ।

किमेकरात्रं करिष्यति एवं तत्राध्यासीत ॥ २३ ॥

‘ पइरिक्क ’ इत्यादि ।

साधुः, कल्याणम्=शातरूपं सुखदायकम्, अथवा पापकं-पापरूपं दुःखजनकम्, प्रतिरिक्तं=स्त्रीपशुपण्डकादिवर्जितम् - उपाश्रयं=वसति, लब्ध्वा=प्राप्य, एकरात्रम्-एकस्यां रात्रौ अयमुपाश्रयः किं सुखं दुःखं वा करिष्यति न किञ्चित् करिष्यति’ एवम्=ईदृशेन विचारेण तत्र=उपाश्रये अध्यासीत=अधिवसेत्-रागं द्वेषं वा न कुर्यादित्यर्थः । अयं भावः-क्वचित्-समभूमिकं सुशोभनं सर्वतुल्यसुखदं,

શય્યાપરીપહ કિસ તરહ સહના ચાહિયે । હસ વાતકો સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘ પइरिक्क० ’-इत्यादि.

અન્વયાર્થ-સાધુ (કલ્લાણં-કલ્યાણમ્) શાતરૂપ-સુખદાયક (અટુવ-અથવા) યા (પાવંગં-પાપકમ્) અશાતરૂપ-દુઃખજનક એસે (ઉવસ્સયં-ઉપાશ્રયં) ઉપાશ્રય-વસતિ કો જો (પइरिक्कं-પ્રતિરિક્તમ્) સ્ત્રી પશુ એવં પણ્ડક આદિ સે રહિત હૈ (લદ્ધં-લબ્ધ્વા) પ્રાપ્ત કર એસા વિચાર કરે કિ (‘ એગરાયં-એક-રાત્રં) યહ ઉપાશ્રય એકરાત્રભર ઠહરને વાલે મેરે લિયે કયા તો સુખ દે સકતા હૈ ઓર કયા દુઃખ દે સકતા હૈ ( એવં તત્થઽહિયાસએ-એવં તત્રા-ધ્યાસીત ) હસ પ્રકાર વિચાર કર કે વહાં રહે - ઉપાશ્રય કે વિષય મેં વહ રાગદ્વેષ ન કરે । તાત્પર્ય યહ કિ સાધુ કે લિયે કહીં પર સમભૂમિ-

શય્યાપરીપહ કઈ રીતથી સહન કરવો ? આ વાતને સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે ‘પइरिक्क’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ-સાધુ કલ્લાણં-કલ્યાણમ્ શાતરૂપ-સુખદાયક અટુવ-અથવા યા પાવંગં-પાપકમ્ અશાતરૂપ-દુઃખજનક એવા ઉવસ્સયં-ઉપાશ્રયં ઉપાશ્રય-વસતિ કે જે પइरिक्कં-પ્રતિરિક્તમ્ સ્ત્રી પશુ અને પંડક આદિથી રહિત છે, એવી વસ્તિ લબ્ધ્યું-લબ્ધ્વા પ્રાપ્ત કરી વિચાર કરે કે, એગરાયં-એકરાત્રં આ ઉપાશ્રય એક રાત રોકાવાવાળા મારા માટે શું સુખ આપનાર છે કે શું દુઃખ આપનાર છે. એવં તત્થઽહિયાસએ-એવં તત્રા-ધ્યાસીત આ પ્રકારનો વિચાર કરી ત્યાં રહે. ઉપાશ્રયના વિષયમાં તે રાગદ્વેષ ન કરે. તાત્પર્ય એ છે કે, સાધુને માટે કોઈ સ્થળે સમભૂમિવાળે

કવચિદ્વિપમભૂમિકં પાંસુપચુરં શર્કરાશકલસંકુલં શીતકાલેઽતિશીતં ગ્રીષ્મે વહુધર્મકં  
દુઃસ્વદં સુસ્વદં વા સ્વ્યાદિરહિતમુપાશ્રયં, મૃદુકઠિનાદિભેદેનોચ્ચાવચં પટ્ટકારૂપં  
સંસ્તારકં ચ પ્રાપ્ય, તત્ર તત્ર રાગદ્વેષાકરણેનાનુદ્વિગ્નો ભવેત્ । એવં શય્યાપરીપદઃ  
સાધુના વિજિતો ભવતીતિ ।

બાલા ઉપાશ્રય મિલે યા વિપમ ભૂમિવાલા, ચાહે તો વહ ઋતુ કે અનુકૂલ  
હો ચાહે પ્રતિકૂલ હો, ચાહે વહ કંકર પત્થર સે યુક્ત ભૂમિવાલા હો  
ચાહે સિમેન્ટ આદિ સે યની હુઈ ભૂમિવાલા હો—કૈસા ભી કયોં ન હો  
પરંતુ સ્ત્રી પશુ આદિ સે યદિ વહ રહિત હૈ તો સાધુ કો ઉસ મેં કિસી  
ભી પ્રકાર કા હર્પવિપાદ નહીં કરના ચાહિયે । હસી તરહ સંસ્તારક ભી  
ચાહે :મૃદુગુણયુક્ત હો ચાહે કઠિન હો કૈસા ભી હો ઉસકો પ્રાપ્તકર  
સાધુ કો ઉસ વિષય મેં ભી રાગદ્વેષપરિણતિ નહીં કરની ચાહિયે ।  
હસ તરહ કરને સે સાધુ કે દ્વારા શય્યાપરીપદ જીતા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—શય્યાપરીપદ પર યદિ સાધુ કો વિજય પાના હૈ તો  
ઉસકી વિચારધારા એસી કબી નહીં હોની ચાહિયે કિ યહ શય્યા, ઉપા-  
શ્રય અથવા પાટ-પાટલા આદિ સુન્દર હૈં યા અસુન્દર હૈ? ઋતુ કે અનુકૂલ  
હૈં યા પ્રતિકૂલ હૈં । સાધુ કે લિયે કયા તો અનુકૂલ ઓર કયા પ્રતિકૂલ?  
સયકે ઉપર ઉસકી સમાન દૃષ્ટિ હોની ચાહિયે । યહ તો દૃષ્ટિ કી વિષ-  
મતા હૈ જો સાધુકે લિયે ઉસકી સમાચારી સે ઉચિત નહીં માની જાતી હૈ ।  
સંયમ કા નિર્વિઘ્નરૂપ સે નિર્વાહ જૈસે ભી હો સકે ઉસ રૂપ સે

મળે અથવા વિપમભૂમિવાળો, તે ઋતુને અનુકૂળ હોય અથવા પ્રતિકૂળ હોય,  
આહે તે કાંકરા પત્થરની ભૂમિવાળો હોય કે, આહે સીમેન્ટ આદિની ભૂમિવાળો  
ગમે તેવો હોય. પરંતુ સ્ત્રી પશુ આદિથી જો તે રહિત હોય તો સાધુએ તેમાં  
કોઈ પ્રકારનો હર્પ વિપાદ નહીં કરવો જોઈએ. એ જ રીતે સંસ્તારક પણ  
આહે તેવું સુવાળું હોય અથવા તો કઠણ હોય ગમે તેવું હોય તેને  
પ્રાપ્ત કરી સાધુએ તે વિષયમાં પણ રાગદ્વેષ પરિણતિ રાખવી ન જોઈએ  
આવી રીતે કરવાથી સાધુ શય્યાપરીપદ જીતી જાય છે.

ભાવાર્થ—શય્યાપરીપદને કદાચ સાધુએ જીતવો હોય તો તેની વિચાર  
ધારા એવી કદી ન હોય કે, આ શય્યા ઉપાશ્રય—પાટલા આદિ સુન્દર છે કે અસુન્દર,  
ઋતુને અનુકૂળ છે કે પ્રતિકૂલ સાધુ માટે કયું અનુકૂળ અને કયું પ્રતિકૂળ  
બધા ઉપર તેની સમાન દૃષ્ટિ હોવી જોઈએ. એ તો દૃષ્ટિની વિષમતા છે જે  
સાધુ માટે તેની સમાચારીથી ઉચિત માનવામાં આવતી નથી. સંયમનો નિર્વિઘ્ન

અન્ન દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

... એકદા ભાવિતાત્મા શુભચન્દ્રનામાચાર્યઃ સુવિનીતશિષ્યપરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુ-  
ગ્રામં વિહરન્ શ્રાવસ્તીનગર્યાં વહિરશોકનામકે નન્દનવનતુલ્યે ઉદ્યાને સમક્ષ્યતઃ ।  
તસ્ય વહુમધ્યદેશભાગે કેલિપ્રિયભૂપસ્ય પ્રાસાદ આસીત્ । સ ચ પ્રાસાદઃ પ્રાસાદીયઃ  
પ્રદર્શનીયોઽભિરૂપઃ પ્રતિરૂપો મણિકુટ્ટિમતલઃ સમરમણીયભૂમિભાગ આદર્શતલોપમઃ  
કોમલસ્પર્શઃ સર્વર્તુસુખદઃ સર્વથાઽનુકૂલો રુચિરપીઠફલકસંસ્તારકયુક્ત આસીત્ ।  
તન્નાસૌ તપઃસંયમારાધકો મુનિર્નિવસન્ વિશુદ્ધભાવેન તમનુકૂલશય્યાપરીપદં મધ્ય-  
સ્થભાવેન સહમાનશ્ચિન્તયતિ—અત્રૈકરાત્રમાત્રં મમાવસ્થાનં, કિમનેન શય્યાસુખેન ।

કરતે રહના चाहिये इसी में साधु की शोभा है ।

દૃષ્ટાન્ત—એક સમયની વાત છે—શુભચંદ્ર નામના આચાર્ય સુવિનીત  
અપને શિષ્યપરિવારના સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતે હતા શ્રાવસ્તી  
નગરીનાં બહાર રહે હતા નંદનવનતુલ્ય અશોકનામના ઉદ્યાનમાં પધારે ।  
તે ઉદ્યાનના કે ઠીક મધ્યભાગમાં કેલિપ્રિયભૂપના પ્રાસાદ થતા ।  
યે પ્રાસાદ વહુત હી સુંદર થતા । તેના કુટ્ટિમતલ મણિમય થતા ।  
તેના ભૂમિભાગ સમ અને રમણીય થતા । તે એવો ચલકતા થતા કે  
માનો દર્પણના તલ હો । સ્પર્શ તેના સુકુમાલ થતા । તે મહલ સર્વ  
ઋતુઓનાં અનુકૂલ થતા । રુચિર પીઠ ફલક સંસ્તારકોનાં સે યુક્ત થતા ।  
તથા પ્રાસાદિય દર્શનીય અભિરૂપ અને પ્રતિરૂપ થતા । તપ અને સંયમ  
ના આરાધક તે આચાર્ય મહારાજ તે પ્રાસાદમાં એક તરફ ઠહર ગયા ।  
તેમાં તેને સર્વ વાતની સુવિધા થી । પરન્તુ ફિર મી આચાર્યને  
તે વિષયમાં અનુકૂલતાનાં વિચારનાં સે હર્ષભાવ ધારણ નહીં કર્યા ।

इयथी निषाड जेम धर्ष शके तेवा इये करतुं रडेवु जेधे तेमां साधुनी शोभा छे.

દૃષ્ટાન્ત—એક સમયે શુભચંદ્ર નામના આચાર્ય સુવિનીત પોતાના શિષ્ય  
પરિવાર સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા શ્રાવસ્તી નગરીની બહાર રહેલા  
નંદનવન તુલ્ય અશોક નામના ઉદ્યાનમાં પધાર્યા. તે ઉદ્યાનના મધ્ય ભાગમાં  
કેલિપ્રિય રાજાનું નિવાસ સ્થાન હતું, તે મહાલય ખૂબ જ સુંદર હતો, એનું  
આંગણ મણિજડિત હતું. ભૂમિભાગ સમ અને રમણીય હતો. તે એવો ચળ-  
કાટ મારતો હતો કે જાણે અરિસો હોય । એનો સ્પર્શ ખૂબ સુવાળો લાગતો.  
આ મહેલ સઘળી ઋતુઓમાં અનુકૂલ હતો. રૂચી ઉપજાવે તેવા પીઠ, ફલક,  
શય્યા, સંસ્તારક આદિ યુક્ત હતો. તપ અને સંયમના આરાધક શુભચંદ્ર  
આચાર્ય તે મહેલની એક બાજુ ઉતયો એમાં તેમને દરેક પ્રકારની સગવડતા  
હતી છતાં પણ આચાર્ય તે અનુકૂલતાના વિચારથી હર્ષભાવ ધાર ન કર્યો.



ઈદશસુખાવહશય્યાનુરાગઃ કિમાત્મકલ્યાણાય મમ ભવિષ્યતિ ?; કદાપિ નૈવ ।  
 एवं વિચિન્ત્ય શુભપરિણામેન પ્રશસ્તાધ્યવસાયેન શિષ્યસહિતઃ શુભચન્દ્રાચાર્યસ્ત-  
 દાઽવધિજ્ઞાનં પ્રાપ્તવાન્ । સ ચ દ્વિતીયદિવસે શિષ્યપરિવારૈઃ સહ વિહારં કૃત્વા  
 ક્વચિદ્ લઘુગ્રામે વસતી નિવસતિ સ્મ ।

સા ચ વસતિરુન્દરુકૃતાનેકવિલયુક્તભિત્તિકા, ભૂતભુજંગમાદિભયોત્પાદિકા  
 પ્રચુરપાંસુર્શર્કરાસંકુલા વિષમભૂમિકા જીર્ણશીર્ણા પીઠફલકાદિરહિતા ચાસીત્ । તન્ન  
 પ્રમાર્જનં કૃત્વા સંયમેન તપસાઽઽત્માનં ભાવયન્નસૌ વિહરતિ સ્મ । તન્ન રાત્રી

કિન્તુ વિશુદ્ધ ભાવ સે યુક્ત હોકર ઉસ અનુકૂલ શય્યાપરીપહ કો  
 મધ્યસ્થ ભાવ સે સહન કિયા । વિચાર કિયા કિ-યહાં એક રાત્રિ  
 ભર કે લિયે તો મેરી સ્થિરતા હૈ । ઇસ શય્યા કે સુખ સે મુજે ક્યા  
 લાભ । ઇસ શય્યા કા સુખ મેરે આત્મકલ્યાણ કા કોઈ સાધક નહીં  
 હૈ કિ જિસસે ઇસ મેં મેરી ઉપાદેય બુદ્ધિ હો । પર દ્રવ્ય કે શુભાશુભ  
 પરિણમન સે મેં અપને મેં શુભાશુભરૂપ પરિણમન ક્યોં હોને દું । ઇસકા  
 પરિણમન ઇસકે સાથ હૈ ઓર મેરા પરિણમન મેરે સાથ । ઇસ પ્રકાર  
 વિચાર કર શુભ પરિણામ એવં પ્રશસ્ત અધ્યવસાય કે પ્રભાવ સે શિષ્ય  
 સહિત ઉનકો અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન હો ગયા ।

દસરે દિન ઉન્હોં ને વહાં સે વિહાર કર દિયા । વિહાર કર વે એક  
 છોટે સે ગ્રામ મેં આયે । જહાં યે ઠહરે વહાં કા સ્થાન વડા હી મયાનક  
 થા । ઉસ મેં અનેક ચૂહોં કે વિલ થે । ભૂત, ભુજંગમ આદિ કા વહાં  
 ઉપદ્રવ મી થા । ધૂલિ એવં કંકર સે વહાં કી ભૂમિ સમ વિષમ થી ।

પણ વિશુદ્ધ ભાવથી યુક્ત બની તેમણે અનુકૂલ શય્યાપરીપહને સહન કર્યો. વિચાર્યું  
 કે અહિં એક રાત્રિ માટે મારી સ્થિરતા છે. આ શય્યાના સુખથી મને શો લાભ ?  
 શય્યાનું આ સુખ મારા આત્મકલ્યાણનું કોઈ સાધક નથી કે જેનાથી તેમાં મારી  
 ઉપાદેય બુદ્ધિ થાય. પરદ્રવ્યના શુભાશુભ પરિણમનથી હું પોતાનામાં શુભાશુભ  
 રૂપ પરિણમન શા માટે થવા દઉં. તેનું પરિણમન તેની સાથે અને મારું  
 પરિણમન મારી સાથે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી શુભ પરિણામ અને પ્રશસ્ત  
 અધ્યવસાયના પ્રભાવથી શિષ્ય સહિત તેમને અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું.

બીજે દિવસે તેઓએ ત્યાંથી વિહાર કર્યો. વિહાર કરીને તેઓ એક  
 નાના ગામડામાં આવ્યા. જ્યાં તેઓ રોકાયા હતા તે સ્થાન ઘણું જ ભયા-  
 નક હતું. તેમાં અનેક ઉંદરનાં લોણ હતાં, ભૂત, ભુજંગમ વગેરેનો ઉપદ્રવ  
 ત્યાં હતો. ધૂળ અને કાંકરાથી ત્યાંની ભૂમિ ઉંચી નિચી હતી, અર્થે શીઘ્ર

स्वाध्यायं ध्यानं च कृत्वा शुभचन्द्राचार्यस्तदाज्ञया सर्वे मुनयश्च स्वस्वसंस्तारको-  
परि शयनार्थमुद्यताः । तदा तत्रैको भुजङ्गमः स्वाहारमन्वेपयन् समागतः । तमवलोक्य  
सर्वे मुनयोऽनुद्विग्ना एव तस्थुः । स च भुजङ्गमः कंचिन्मूपकमनुधावमानस्तस्मिन्  
दृष्टिपथातिक्रान्ते मुनीन् पश्यति । तस्य दृष्टौ विपमासीत् अतस्तेन दृष्टमात्रा एव  
सन्तस्ते मुनयो विपाक्रान्ता जाताः अथ शुभचन्द्राचार्यस्तदीयशिष्याश्च सर्वे मुनयः  
समाधिभावमवलम्ब्य क्षपकश्रेणिं समारुह्य शुक्लध्यानानलेन सकलं कर्म भस्मसात्  
कृत्वा केवली भूत्वाऽन्तर्मुहूर्तमात्रेण शिवपदं प्राप्तवन्तः । एवं सर्वैर्मुनिभिः श्रद्धा-  
परीपहः सोढव्यः ॥ २३ ॥

जीर्ण शीर्ण संस्तारक तक भी इसमें कोई नहीं था । उस भूमि का  
प्रमार्जन कर आचार्य महाराज ने वहां पर अपनी साधुमंडलीसहित  
निवास किया । तब एवं संयम से आत्मा को भावित करते हुए उन  
आचार्य महाराज ने रात्रि में स्वाध्याय और ध्यान करने के पश्चात्  
समस्त अपने शिष्यों को अपने२ संस्तारकों पर शयन करने की  
आज्ञा दी । आज्ञा पाते ही सब के सब अपने२ संस्तारक पर सोने  
लगे । इतने में वहां एक सर्प अपने आहार की खोज में आया । देखकर  
समस्त मुनिमंडली अनुद्विग्न ही रही । वह सर्प एक चूहेके पीछे पड़ा हुआ  
था । जब वह चूहा उसे दिखा नहीं तो उसने मुनिमंडली की तरफ अपनी  
दृष्टि लगाई । उसकी दृष्टि में ही विष था, इसलिये उसके द्वारा देखे  
गये वे आचार्यसहित मुनिराज विष से आक्रान्त हो गये । सब ने  
मिलकर समाधिभाव का आलम्बन किया, और उसके प्रभाव से वे  
सब के सब क्षपकश्रेणी पर आरुढ़ होकर शुक्लध्यान की प्राप्ति से सम-

संस्तारक पशु न હતું. આ ભૂમિને સાફ કરીને આચાર્ય મહારાજે તે સ્થળે  
પોતાના શિષ્યો સાથે નિવાસ કર્યો. તપ અને સંયમથી આત્માને ભાવિત  
કરીને તે આચાર્ય મહારાજે રાત્રિમાં સ્વાધ્યાય અને ધ્યાન કર્યા પછી પોતાના  
બધા શિષ્યોને પોતપોતાના સંસ્તારક ઉપર શયન કરવાની આજ્ઞા આપી.  
આજ્ઞા મળતાં જ સધળા પોતપોતાના સંસ્તારક ઉપર સુવા લાગ્યા. એટલામાં  
એક સર્પ પોતાના આહારની શોધમાં નીકળ્યો, એને જોઈ સમસ્ત સાધુ  
ગણ અનુદ્વિગ્નજ રહ્યું. તે સર્પ એક ઉંદરની પાછળ પડેલ હતો. ન્યારે તે ઉંદર  
તેના જોવામાં ન આવ્યો તો તેણે આ મુનિ ગણ તરફ એની દૃષ્ટિ ફેરવી.  
એની દૃષ્ટિમાં જ ઝેર હતું, એટલે એની દૃષ્ટિએ પડેલા આચાર્ય સહિત  
મુનિરાજે વિષથી આકુળવ્યાકુળ બની ગયા. સધળાએ મળીને સમાધિ ભાવનું  
આલંબન કર્યું. અને તેના પ્રભાવથી તેઓ સધળાં ક્ષપકશ્રેણી પર આરુઢ

અથાઽઽક્રોશપરીપહજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—અઘ્કોસિજ્જ પંરો મિક્કલું, નં તંસિ પંડિસંજલે ।

સંરિસો હોઈં વાલાણં, તમ્હાં મિક્કલૂ નં સંજલે ॥૨૪॥

છાયા—આક્રોશેત્ પરો મિક્કલું, ન તસ્મિન્ પ્રતિસંજ્વલેત્ ।

સદશો ભવતિ વાલાનાં, તસ્માદ્ મિક્કલૂનં સંજ્વલેત્ ॥ ૨૪ ॥

ટોકા—‘અઘ્કોસિજ્જ’ ઇત્યાદિ ।

પરઃ=અન્યઃ, યદિ મિક્કલું=પુનિમ્ આક્રોશેત્=દુર્વચનેન તર્જયેત્, તર્હિ મુનિ-  
સ્તસ્મિન્ ન પ્રતિસંજ્વલેત્=ન પ્રતિકુપ્યેત્ । અવાચ્યભાષયાઽઽક્રુષ્ટઃ સન્ કોપાવે-

સ્ત કર્મોં કો નાશકર કેવલી હો ગયે, તથા અન્તર્મુહર્ત મેં શિવપદ કો  
પ્રાપ્તકર સિદ્ધ હો ગયે । હસ કથા સે યહી શિક્ષા મિલતી હૈ કિ  
શય્યાપરીપહ પર વિજય પાનેવાલા મુનિ આત્મકલ્યાણ કર મુક્ત હો  
જાતાં હૈ, અતઃ શય્યાપરીપહ પર વિજય પ્રાપ્ત કરના ચાહિયે ॥ ૨૩ ॥

અવ સૂત્રકાર ચારહવેં આક્રોશપરીપહ કા જય કહતે હેં—

‘અઘ્કોસિજ્જ’—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—યદિ (પરો-પરઃ) કોઈ અજ્ઞાની મનુષ્ય (મિક્કલું-મિક્કલૂમ્)  
સાધુકો (અઘ્કોસિજ્જ-આક્રોશેત્) દુર્વચન સે તર્જિત કરે તવ વહ સાધુ  
(તંસિ-તસ્મિન્) ઉસકે ઉપર (ન પંડિસંજલે-ન પ્રતિસંજ્વલેત્)  
ક્રોધિત ન હો—અર્થાત્ જવ કોઈ અશિષ્ટ ભાષા સે સાધુ કે સાથ  
અસમ્ય વ્યવહાર કરે—ગાલી આદિ દુર્વચન કહે તો સાધુ કો ઉસકે  
પ્રત્યુત્તરરૂપ મેં ક્રોધ કે આવેશ સે ઉસકે પ્રતિ ગાલી વગેરહ અશિષ્ટ

બની શુકલધ્યાનની પ્રાપ્તિથી સમસ્ત કર્મભજનો નાશ કરી કેવળીપદને પ્રાપ્ત કર્યું.  
તથા અંતર મુહૂર્તમાં શિવપદને પ્રાપ્ત કરી સિદ્ધ બની ગયા. આ કથાથી એ શિક્ષા  
પ્રાપ્ત થાય છે કે, શય્યાપરીપહ પર વિજય મેળવનાર મુનિ આત્મકલ્યાણ કરી  
મુક્તિને પામે છે, માટે શય્યાપરીપહને વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. ॥ ૨૩ ॥

હવે સૂત્રકાર ખારમા આક્રોશ પરીપહના જય ને કહે છે. ‘અઘ્કોસિજ્જ’—ઇત્યાદિ,

અન્વયાર્થ—યદિ પરો-પરઃ જો કોઈ અજ્ઞાની મનુષ્ય મિક્કલું-મિક્કલૂ સાધુને અઘ્કો-  
સિજ્જ-આક્રોશેત્ ખરાબ વચનથી અપમાનીત કરે તો પણ તે સાધુ તંસિ-તસ્મિન્  
તેના ઉપર ન પંડિસંજલે-ન પ્રતિસંજ્વલેત્ ક્રોધિત ન થાય અર્થાત્ જો કોઈ અશિષ્ટ  
ભાષાથી સાધુની સાથે અસમ્ય વહેવાર કરે, ગાળ આદિ દુર્વચન કહે તો સાધુએ  
તેના પ્રત્યુત્તર રૂપે ક્રોધ આવેશથી તેના પ્રતિ ગાળ વિગેરે અશિષ્ટ ભાષાનો પ્રયોગ

શેન પ્રત્યાક્રોશરૂપં ગાલીદુર્વચનાદિકં ન વદેદિત્યર્થઃ । નનુ પ્રતિસંજ્વલને કા હા-  
નિરિત્યાશદ્વયાહ—‘ સરિસો હોઢ ચાલાણં ’ ઇતિ । પ્રતિસંજ્વલન્ ચાલાનામ્-  
અજ્ઞાનિનાં સદૃશો ભવતિ, તસ્માદ્ ભિક્ષુઃ=મુનિઃ ન સંજ્વલેત્=આક્રુષ્ટોઽપિ ક્રોધં  
ન કુર્યાદિત્યર્થઃ ।

इदमत्र बोध्यम्—मिथ्यादर्शनोद्भूतमुखनिर्गतानि कोपानलोद्दीपनानि दुर्वचनानि  
श्रुत्वा तत्प्रतीकारं कर्तुं समर्थोऽपि मुनिः—“ दुरन्तः क्रोधकषायोदयनिमित्तपापकर्म-  
विपाकः ” इति चिन्तयन् स्वहृदये क्रोधायानवकाशदानेनाक्रोशपरीषहं सहेत ।

उक्तञ्च—

भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिये, क्यों कि गाली देने वाले को  
गाली देनेवाला साधु—जैसे के साथ वैसा बनने वाला मुनि—( बालाणं  
सरिसो होइ—चालानां सदृशो भवति ) अज्ञानियों के सदृश ही माना  
जाता है । ( तम्हा—तस्मात् ) इसलिये ( भिक्खू न संजले—भिक्षुः न  
संज्वलेत् ) भिक्षु क्रोध न करे ।

तात्पर्य इसका यह है कि—अज्ञान से मन्दोन्मत्त हुए व्यक्तियों के  
मुख से निकले हुए दुर्वचनों को जो कि कोपरूप अग्नि के उद्दीपक होते  
हैं, सुनकर उनके प्रतिकार करने में समर्थ भी मुनि “ क्रोध कषाय के  
उदय के निमित्त से पापकर्म का विपाक दुरन्त होता है ” ऐसा विचार  
कर अपने हृदय में क्रोध को स्थान न दे । इससे मुनि आक्रोशपरीषह  
पर विजय पाता है । कहा भी है—

ન કરવો બોઈએ. કેમ કે, ગાળો દેનારને સામી ગાળ દેનાર સાધુ—જેવાની  
સાથે તેવા થનાર—મુનિ ચાલાણં સરિસો હોઈ—ચાલાનાં સદૃશો ભવતિ અજ્ઞાની-  
ઓની માફક જ માનવામાં આવે છે. તુમ્હા—તસ્માત્ આ માટે ભિક્ષૂ ન સંજલે-  
ભિક્ષુઃ ન સંજ્વલેત્ ભિક્ષુ ક્રોધ ન કરે.

તાત્પર્ય આનું એ છે કે, અજ્ઞાનથી મદોન્મત્ત બનેલ વ્યક્તિઓના  
મોઢામાંથી નિકળેલા દુર્વચનો કે જે ક્રોધ રૂપી અગ્નિ ઉત્પન્ન કરનાર  
હોય છે, તે સાંભળી તેનો પ્રતિકાર કરવામાં સમર્થ હોય પણ મુનિ “ ક્રોધ  
કષાયના ઉદય નિમિત્તથી પાપકર્મનો વિપાક દુરન્ત હોય છે. ” એવો વિચાર  
કરી પોતાના હૃદયમાં ક્રોધને સ્થાન ન આપે. આથી તેવા મુનિ આક્રોશ  
પરીષદ પર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. કહ્યું પણ છે—

नाकृष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः ।

अपेक्षेतोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन ॥ १ ॥

अन्यच्च—

चाण्डालः किमयं द्विजातिरथवा शूद्रोऽथवा तापसः,

किं वा तत्त्वनिवेशपेशलमतियोगीश्वरः कोऽपि वा ।

इत्यस्वल्पविकल्पजालमुखरैः संभाष्यमाणो जनै-

र्नो रुष्टो नहि चैव हृष्टहृदयो योगीश्वरो गच्छति ॥ २ ॥

इति विचार्य समत्वेन तिष्ठेत् ॥ २४ ॥

नाकृष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः ।

अपेक्षेतोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन ॥ १ ॥

सम्यग्ज्ञानादिक का परिहार नहीं करनेवाला, अर्थात् सम्यग्ज्ञानादिक गुणों के उपार्जन करने में कुशलमति भिक्षु अपमानित होने पर भी कभी भी अपमान करने वाले के प्रति अशिष्ट भाषा का प्रयोग न करे । प्रत्युत अपने प्रति इस प्रकार का व्यवहार करने वाले व्यक्ति को अपना उपकारी ही माने, किन्तु इसके प्रति द्वेषभाव कभी न रखे । और भी—

चाण्डालः किमयं द्विजातिरथवा शूद्रोऽथवा तापसः,

किं वा तत्त्वनिवेशपेशलमतियोगीश्वरः कोऽपि वा ।

इत्यस्वल्पविकल्पजालमुखरैः संभाष्यमाणो जनै,

र्नो रुष्टो नहि चैव हृष्टहृदयो योगीश्वरो गच्छति ॥ २ ॥

नाकृष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः ।

अपेक्षेतोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन ॥ १ ॥

सम्यग्ज्ञानादिकने। परिहार न करवावाणा—अर्थात् सम्यग्ज्ञानादिक शुद्धोत्तुं उपार्जन करवाभा कुशलमति भिक्षु अपमानित थवा छतां पक्षु कही पक्षु अपमान करवावाणा तरक्ष अशिष्ट भाषाने। प्रयोग न करे. पोताना तरक्ष आ प्रकारने। वडेवार करवावाणी व्यक्तिने पोताने। उपकारी न माने. तेम तेना तरक्ष द्वेष भाव कही पक्षु न राणे. भीष्टुं पक्षु—

चाण्डालः किमयं द्विजातिरथवा शूद्रोऽथवा तापसः,

किं वा तत्त्वनिवेशपेशलमतियोगीश्वरः कोऽपि वा ।

इत्यस्वल्प विकल्पजालमुखरैः संभाष्यमाणो जनै,

र्नो रुष्टो नहि चैव हृष्टहृदयो योगीश्वरो गच्छति ॥ २ ॥

મુનિકો દેવ કર. કોઈ ઉનકો ચાળડાલ કહે, કોઈ બ્રાહ્મણ કહે, કોઈ શૂદ્ર કહે, કોઈ તપસ્વી કહે, કોઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાની તો કોઈ યોગીશ્વર કહે, ઇસ પ્રકાર કહેને વાલે વ્યક્તિયોં કે મુલ સે નિકલતે હુણ લઘુતા ષ શ્રેષ્ઠતાસૂચક વચનોં કો સુનકર મુનિ ન તો રુષ્ટ હોતા હૈ ન તુષ્ટ હોતા હૈ કિન્તુ સમભાવ સે ચલા જાતા હૈ.

ભાવાર્થ—અશિષ્ટ ભાષા કા પ્રયોગ સાધુ જૈસે સન્ત પુરુષોં કે પ્રતિ ષે હી વ્યક્તિ કરતે હૈં જો મિથ્યાત્વ કે કીચડ સે લિપ્ત હોતે હૈં । અતઃ ઉનકે દ્વારા અપમાનિત હોને પર ખી સાધુ કો ઉનકે પ્રતિ રુષ્ટ ન હોકર પ્રત્યુત દયાવાન હી હોતે રહના ચાહિયે । યહ ઉસ સમય વિચાર કરના ચાહિયે કિ દેલો યે કિતને અજ્ઞાની હૈં જો લોડી લરી વસ્તુ કે યથાર્થ બોધ સે વિકલ હો રહે હૈં । યે જો કુછ કહતે હૈં ઉનમેં હનકા અપરાધ નહીં હૈ, યહ તો મિથ્યાદર્શન કા હી પ્રભાવ હૈ, અતઃ હનકી આત્મા સમ્યગ્જ્ઞાન સે વાસિત થનેં ઓર યે ઉત્તમ માર્ગ પર આરુઢ હો જાયેં, ઁસી ભાવના સાધુકો રલ્ખની ચાહિયે । તથા ઇસ સમય યદિ મેં હનકે સાથ અસમ્ય વ્યવહાર હનહીં જૈસાં કરને લગૂં તો હનમેં ઓર મુક્ત મેં કયા અન્તર હો સકતા હૈ । જ્ઞાની ઓર અજ્ઞાની કી ચેષ્ટાં મેં આસમાન પાતાલ જૈસા અન્તર જો વતલાયા ગયાં હૈં વહ યહાં લુપ્ત હો

મુનિને જોઈ કોઈ એને ચંડાલ કહે, કોઈ બ્રાહ્મણ કહે, કોઈ શૂદ્ર કહે, કોઈ તપસ્વી કહે, કોઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાની તો કોઈ યોગીશ્વર કહે, આ રીતે કહેવા-વાળી વ્યક્તિઓના મુખથી નિકળતા લઘુતા અને શ્રેષ્ઠતા સૂચક વચનોને સાંભળી મુનિ ન તો ક્રોધિત બને છે કે ન તો તુષ્ટમાન થાય છે. પરંતુ સમભાવથી વિચરે છે.

ભાવાર્થ—અશિષ્ટ ભાષાનો પ્રયોગ સાધુ જેવા સંત પુરુષ તરફ એજ વ્યક્તિ કરે છે કે જે મિથ્યાત્વના કિચડમાં લપટાયેલા હોય છે, આથી એમના દ્વારા અપમાનિત થવા છતાં પણ સાધુએ તેના તરફ ન રૂઠતાં પ્રત્યુત્તરમાં દયાવાન જ રહેવું જોઈએ. એ સમયે એવો વિચાર કરવો જોઈએ કે, જુઓ ! આ કેટલા અજ્ઞાની છે. જે ખોટી ખરી વસ્તુના યથાર્થ બોધથી વિકળ બની રહેલ છે. એ જે કાંઈ કહે છે એમાં એનો અપરાધ નથી, મિથ્યાદર્શનનો જ આ પ્રભાવ છે. આથી એનો આત્મા સમ્યગ્જ્ઞાનથી વકસિત બની ઉત્તમ માર્ગ ઉપર આરૂઢ થઈ જાય એવી ભાવના સાધુએ રાખવી જોઈએ. આ સમય જો હું એના જેવોજ અસમ્ય વ્યવહાર કરવા લાગું તો એનામાં અને મારામાં શું અંતર રહ્યું ? જ્ઞાની અને અજ્ઞાનીની ચેષ્ટામાં આકાશ પાતાળ જેટલું અંતર ખતાવવામાં આવ્યું છે તે આથી હુપ્ત થઈ જાય છે. આના આ ૦ રને મારે



उक्तार्थमेव विशदीकुर्वन् प्राह—

मूलम्—सोच्छाणं फरुसा भासा, दारुणा गामकंटगा ।

तुसिणीओ उवेहेज्जा, न ताओ मणंसी करे ॥२५॥

छाया—श्रुत्वा खलु परुषा भाषाः, दारुणा ग्रामकण्टकाः ।

तूष्णीकः उपेक्षेत, न ता मनसि कुर्यात् ॥ २५ ॥

टीका—‘सोच्छाणं’ इत्यादि ।

दारुणाः—दारयन्ति=विदारयन्ति संयमधैर्यमिति दारुणाः=दुःसहाः, मनसि वज्रा-  
घातकारिका इत्यर्थः, ग्रामकण्टकाः=ग्रामः=इन्द्रियाणां समूहस्तस्य कण्टका इव कण्टकाः  
=दुःखोत्पादकत्वेन प्रतिकूलाः परुषा=रुक्षाः कठोराः, भाषाः=वचनानि, श्रुत्वा खलु  
तूष्णीकः=मौनावलम्बी सन्, उपेक्षेत=ता भाषा अवधीरयेत्-नाद्रियेत । ‘उवेहिज्जा’

ज्ञाता है । इनके इस व्यवहार को मुझे समताभाव से सहन करना  
चाहिये, क्योंकि इससे मेरे अधिक कर्मों की निर्जरा होगी, इस निर्जरा  
में यह मेरा उपकारी है । अतः इस उपकारी के प्रति मैं द्वेष करूँगा  
यह मेरी कितनी अज्ञानता होगी । ऐसा विचार कर साधु आक्रोश-  
परीपह पर विजय प्राप्त करे ॥ २४ ॥

उपरोक्त अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहते हैं—‘सोच्छाणं’-इत्यादि.

अन्वयार्थ—(दारुणा-दारुणाः) संयमरूपी धैर्यको विदारणकरने वाली  
मन में वज्र के तुल्य दुस्सह आघात पहुँचाने वाली तथा (गामकंटगा-  
ग्रामकंटकाः) इन्द्रियों को कंटकतुल्य दुःख की उत्पादक होने से प्रतिकूल  
(फरुसा-परुषाः) रुक्ष-कठोर ऐसी (भासा-भाषाः) लोगों की-असभ्य  
व्यक्तियोंकी भाषाओं-वचनोंको (सोच्छाणं-श्रुत्वा खलु) सुनकर मुनि  
(तुसिणीओ उवेहेज्जा-तूष्णीकः उपेक्षेत) चुपचाप रहा हुआ-मौन धारण

समताभावही सहन करे। जेष्ठ अ. केमके अर्थी भने अधिक कर्मोंनी निर्जरा  
थरे. जेवो विचार करी साधु आक्रोश परीपह उपर विजय प्राप्त करे. ॥२४॥

उपरोक्तअर्थने स्पष्ट करतां छे—‘सोच्छा णं’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—दारुणा-दारुणाः संयमरूपी धैर्यने विदारण करवावाणी दुःसह-मनमां  
पुण तुल्य आघात पहुँचावावाणी गामकंटगा-ग्रामकंटकाः तथा इन्द्रियेने  
कंटक समान दुःखने उत्पादन करनार होवाथी प्रतिकूल फरुसाः-परुषाः रुक्ष कठोर  
जेवी भासा-भाषाः असभ्य बोझना वचनोने सोच्छाणं-श्रुत्वा खलु सांभणीने  
मुनि तुसिणीओ उवेहेज्जा-तूष्णीकः उपेक्षेत चुपचाप रही, मौन धारण करी ते

इत्यस्यैवार्थं विशदीकुर्वन् प्राह—‘न ताओ मणसी करे’ इति । ताः भाषा मनसि न कुर्यात्=न स्थापयेत् । ‘अज्ञानवशादनेन संयमधैर्यापहारिण्यो भाषा उक्ता अत्र नास्त्यस्य दोषः किं तु ममैव पूर्वार्जितकर्मणः फलमेतत्’ इति विचार्य तादृशभाषाया अनादरणेन तद्भाषिणि द्वेषं न कुर्यादिति भावः ।

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

एकदा क्षमाधरनामकः कश्चिदुत्थरतपश्चर्यापरायणो मुनिरासीत् । तद्गुणानुरागेण कश्चिद्देवः प्रीत्या तमभिवन्द्याब्रवीत्—मम योग्यं कार्यमावेदनीयं भवद्भिः ।

अन्यदा कदाचिन्मार्गे गच्छन् मुनिः स्वामिमुख्यागतेन केनचिच्चाण्डालेन सोपहासमुक्तः—अहो ! अकर्मण्य ! भिक्षुक ! क्व गच्छसि ? । एतद् दुर्वचनं निश्चम्य

करता हुआ—उस तरफ उपेक्षाभाव धारण करे, किन्तु (ताओ मणसी न करे—ताः मनसि न कुर्यात्) उन वचनों को अपने मन में स्थान न देवे । “अज्ञानवशासे ही इसने संयम धैर्य को अपहरण करने वाली भाषा का प्रयोग किया है सो इस में इसका दोष नहीं है किन्तु मेरे ही पूर्वोपार्जित पापकर्मों का यह फल है ” । यह समझकर उस परुष भाषा बोलने वाले पर द्वेषबुद्धि न करे ।

दृष्टान्त—दुश्चरतपश्चर्या करने में लीन क्षमाधर नामक एक मुनि थे । उनके गुणों में अनुरागी होने से कोई एक देव वंदनाकर उनसे बोला कि यदि मेरे योग्य कोई कार्य हो तो आप मुझ से अवश्य कहें, यह मैं आप से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूं ।

एक समय की बात है कि वे मुनि कहीं जा रहे थे । रास्ते में सन्मुख आता हुआ उन्हें एक चाण्डाल मिला । उसने मुनिराज को

તરફ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે પરંતુ તાઓ મણસી ન કરે—તાઃ મનસિ ન કુર્યાત્ તેના વચનોને પોતાના મનમાં સ્થાન ન આપે. અજ્ઞાનવશતાથી તેણે સંયમ ધૈર્યનું અપમાન કરનાર ભાષાનો ઉપયોગ કર્યો છે તો તેમાં એનો દોષ નથી. પરંતુ મારા પૂર્વોપાર્જિત પાપ કર્મોનું જ એ ફળ છે. આવું સમજીને એ અસહ્ય ભાષા બોલવાવાળા ઉપર દ્વેશબુદ્ધિ ન કરે.

દૃષ્ટાંત—ક્ષમાધર નામના હુકર તપશ્ચર્યા કરવામાં લીન એવા એક મુનિ હતા. તેમના ગુણોના અનુરાગી એવા કેઈ એક દેવે વંદના કરીને એમને કહ્યું કે, મારા થોડાં કેઈ કાર્ય હોય તો આપ મને અવશ્ય કહો. એમ હું આપને હાથ જોડી પ્રાર્થના કરી કહું છું—એક વખત તે મુનિ ક્યાંક જઈ રહ્યા હતા. રસ્તામાં સામેથી આવતો એક ચંડાલ મળ્યો. તેણે મુનિરાજને

જાતકોપઃ સન્ મુનિરવ્રવીત્—ઉન્મત્તસ્ત્વમસિ કિમ્ ? । તતસ્તેન પ્રવણ્ડકોપાવેશેન  
 ચાણ્ડાલેન કથિતમ્—અરે ભિક્ષુક ! કિં પ્રલપસિ ? કોઽન્યસ્ત્વત્સમો મલિનદેહઃ ક્ષુત્  
 —પિપાસાદિવેદનાગ્રસ્તો લુઙ્ચિતશિરા ગૃહે ગૃહે ગૃહપાલ ઇવાહારમન્વેપયન્ ભ્રમસિ ?  
 અરે ! અકર્મણ્ય ! પૂર્વકૃતકર્મણો વિપાકમનુભવન્નપિ ન લજ્જસે । કૃપિવાણિ-  
 જ્યાદિકર્મ કર્તુમસમર્થા એવ મુખોપરિવદ્ધમુખવલ્લિકાઃ પાત્રહસ્તાઃ વહવો ભિક્ષુ-  
 કાસ્ત્વાદૃશા ઉદરપૂરણકામા ગ્રામાનુગ્રામં પર્યટન્તિ । અરે દુર્ભગ ! પુત્રદારાદિભિઃ

દેખતે હી હૈંસી કરતે હુએ કહા કિ—હે અકર્મણ્ય ભિક્ષુક ! તૂ ક્યાં જા  
 રહા હૈ । મુનિ ને જ્યોં હી ઇસ પ્રકાર કે ઉસકે દુર્વચન સુને તો મુનિ  
 કો ક્રોધ આ ગયા, ઓર કહને લગા—ક્યા તૂં ઇસ સમય ઉન્મત્ત હો  
 રહા હૈ । મુનિ કે વચન સુનકર ચાંડાલ કે બી કોપ કા ઠિકાના ન  
 રહા । ઉસને ચિઢકર મુનિકો કહા—“અરે ભિક્ષુક ! ક્યા વકતા હૈ ?  
 તેરે જૈસા મલિન દેહ ચાલા ઓર કૌન હોગા ? જાતે કમાતે નહીં ચના  
 સો મુંઢ મુંઢાકર મુનિ ચન ગયા ઓર ઘર ઘર મેં કુત્તે કી તરહ બીજ  
 માગને કે લિયે ફિરને લગા હૈ । શરમ નહીં આતી, કરતે ધરતે કુછ  
 નહીં ચનતા સો નિકલ ગયે સાધુ ચનને કો । પૂર્વ મેં દાન નહીં દિયા  
 સો તો ઉસકા યહ ફલ ભોગના પડ રહા હૈ કિ દર દર કે ભિખારી ચન  
 રહા હૈ, ફિર બી અકઢ સે ઈંઠતા હૈ ? જરા શર્મ કર, તુમ્હારે  
 જૈસે વહુત સે કાર્ય કરને મેં અસમર્થ હોકર મુંહ વાંધ કર પેટ ભરને કે  
 લિયે ગાંવ ગાંવ ભટકતે હૈં । એસા કહ કર જવ વહ ચલા ગયા તો કોપ

બેધને હાંસી કરતાં કહું કે, હે અકર્મણ્ય ભિક્ષુક ! તું ક્યાં જઈ રહ્યો છે.  
 મુનિએ જ્યારે તેનાં આવા દુર્વચન સાંભળ્યાં ત્યારે તેને ક્રોધ આવી ગયો અને  
 કહેવા લાગ્યા કે, શું તું આ સમયે ઉન્મત્ત બની રહ્યો છે ? મુનિતું વચન  
 સાંભળીને ચાંડાલના ક્રોધનું ઠેકાણું ન રહ્યું અને તેણે ચિડાઈને મુનિને કહ્યું  
 અરે ભિક્ષુક ! તું શું બકે છે ? તારા જેવો મલીન દેહવાળો બીજે કોણ છે ?  
 ખાતાં કમાતાં ન આવડ્યું એટલે મુંડો મુંડાવીને મુનિ બની ગયા, અને ઘર  
 ઘરમાં કુતરાની માફક બીજા માગવા લાગ્યો છે, શરમ નથી આવતી ? કાંઈ  
 કામ કરતાં આવડતું નથી એટલે સાધુ બનવા નિકળી પડ્યો. પૂર્વભવમાં દાન  
 નહીં દીધું હોય એટલે તો એનું આ ફળ ભોગવવું પડે છે. અને ઘરઘરનો  
 ભિખારી બની રહ્યો છે. છતાં પણ અધ્ધક થઈને ફરે છે. જરા લાજ !  
 તારા જેવા અનેક કાર્ય કરવામાં અસમર્થ હોઈને મોં બાંધીને પેટ ભરવા  
 માટે ગામ ગામ ભટકે છે. આમ કહી જ્યારે તે ચાલ્યો ગયો ત્યારે ક્રોધના

परित्यक्ता निर्गतिकाः सन्तः मयज्यामभ्युपगताः । इत्युक्त्वा तस्मिन् गतवति सति  
कोपावेशादन्तर्दहमान इव मुनिः स्वस्थानं गतः । क्रमेण कोपप्रशमे सति मुनिना  
पश्चात्तापः कृतः ।

तदनन्तरमसौ देवस्तस्य मुनेः समीपे समागत्य तमभिवन्द्य तत्पुरोज्वस्विन्नो  
वदति—भवतः संयमयात्रा सुखेन निर्वहति किम् ? । शान्तात्मना मुनिना सस्मितं  
प्रोक्तम्—यदा संयमयात्रा चाण्डालेन बाधिता, तदा क्व गतस्त्वमासीः ? देवेन  
कथितम्—यदा युवयोः कलहो जातस्तदाऽहमलक्षितः कौतुकं द्रष्टुकामस्तत्रैवांसम् ।  
किं तु तदा मया विशेषः कोऽपि नोपलब्धः, यथाऽसौ चाण्डालस्तथैव भवान् ।

के आवेश से वे मुनि भी भीतर ही भीतर जलते हुए अपने स्थान पर आ  
गये । जब कोप शांत हुआ तो उनको इस विषय का बड़ा ही पश्चात्ताप हुआ ।

इस के बाद वह देव मुनि के पास आकर नमस्कार करके बैठ  
गया और बोला—आपकी संयमयात्रा तो सुखपूर्वक है ? शान्तात्मा मुनिने  
मुस्कराते हुए प्रत्युत्तर में कहा कि जिस समय इस संयमयात्रा में  
चाण्डाल ने विघ्न डाला था उस समय तुम कहां गये थे । देवने जबाब  
दिया—जब आप दोनों का कलह हो रहा था उस समय मैं अदृश्य होकर वहीं  
पर था । मुनिने कहा फिर आपने उस परिस्थिति में मेरी सहायता क्यों  
नहीं की ? इस प्रकार मुनि के कहने पर प्रत्युत्तर में देवने कहा कि—मुझे उस  
समय सहायता करने लायक कोई विशेषता आप में लक्षित नहीं हुई ।  
उस समय जैसा वह चाण्डाल मुझे प्रतीत हुआ वैसे ही आप भी मुझे  
प्रतीत हो रहे थे फिर सहायता किसकी करना । देव के इस उत्तर से

आवेशधी ते मुनि अंदरने अंदर भजता भजता चोताना स्थान उपर गयो.

ज्योदे तेमनो ओध शांत थयो त्यारे तेमने आ विषयमां जारे पश्चात्ताप थयो.

आ पछी चेला देव मुनिनी पास आवीने नमस्कार करीने जेठां अने

कहुं, आपनी संयमयात्रा तो सुखपूर्वक छे ने ? शांत आत्मा मुनिने

अंदरधी इसतां इसतां प्रत्युत्तरमां कहुं के, जे समये आ संयमयात्रामां

चांडाले विघ्न नाज्युं ते समये तेमे कथां गयो छेता ? देवे जबाब आये.

ज्योदे आप जनेनो केवड बाली रह्यो छेता त्यारे हुं अदृश्य ह्ये त्यां न

छेता. तो पछी जे परिस्थितिमां तमे भारी सहायता केम न करी ? आ प्रकादे

मुनिना कहेवाधी प्रत्युत्तरमां देवे कहुं, मने ते समये सहायता करवा लायक

कोछ विशेषता आपनामां न हेभाछ. जे वजते जेवे ते चांडाल मने हेभाये तेवा न

आप भारी दृष्टिमां हेभाता छेता. पछी सहायता केनी करवी ? देवना.

મુનિનોક્તમ્—તેન મમ તુલ્યતા કથં જ્ઞાતા? । દેવેનોક્તમ્—એકેન કોપેનૈવ, અત-  
સ્તસ્ય શિક્ષા ન કૃતા, ઇદાનોમાજ્ઞાપયતુ કીદંશી શિક્ષા તસ્મૈ કર્તવ્યા । મુનિઃ પ્રાહ—  
નાસૌ દણ્ડનીયઃ, કિંતુ—સર્વથોપેક્ષણીયઃ, યતઃ સાધૂનામયં ધર્મઃ—આક્રોશપરીપહઃ  
સોઢવ્ય ઇતિ । એવમુક્તોઽસૌ દેવસ્તસ્ય મુનેઃ સેવાયાં સાનુરાગં તથ્યૌ । એવમન્યૈ-  
રપિ મુનિભિરાક્રોશપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૨૫ ॥

મુનિ કો વડા હી વિસ્મય હુઆ ઓર કહને લગે કિ મુદ્ધ મેં ઓર ચાંડાલમેં  
સમાનતા કા અનુભવ કૈસે કિયા ? । દેવ ને કહા—એક ક્રોધ સે આપકે  
અંદર ઉસ સમય ક્રોધરૂપ ચાંડાલ પ્રવિષ્ટ હોયા હુઆ થા, ઓર વહ તો  
ચાંડાલ થા હી, અતઃ સહાયતા કરને જૈસી વાત ઉસ સમય મુદ્ધે  
ઉચિત પ્રતીત નહીં હુઈ ઇસલિયે સહાયતા નહીં કી, ઓર ન ઉસે મી  
કુછ દણ્ડાદિરૂપ શિક્ષા હી દી, હાં ! અવ કહિયે ઉસે કૈસી શિક્ષા દી  
જાય । મુનિરાજ ને કહા કિ અવ વ્યા આવશ્યકતા હૈ જો અજ્ઞાની હોતે  
હૈં વે ઉપેક્ષા કે હી પાત્ર હૈં ઇસલિયે ઉસકો દણ્ડાદિરૂપ શિક્ષા પ્રદાન  
કરને કી કોઈ જરૂરત નહીં હૈં । મુનિયોં કા તો યહ આચાર હી હૈં કિ  
વે આક્રોશપરીપહ કો સહન કરે । મુનિ કી ઇસ વાત કો સુનકર દેવ  
વડા હી અનુરાગી હોકર ઉનકી સેવા મેં રહને લગા । ઇસ કથા સે મુનિ-  
યોં કો યહી શિક્ષા ગ્રહણ કરની ચાહિયે કિ આક્રોશપરીપહ સહન  
કરના યહ મુનિરાજોં કા કર્તવ્ય હૈં ॥ ૨૫ ॥

મુનિને માણું આશ્ચર્ય થયું અને કહેવા લાગ્યા. મારામાં અને ચાંડાલમાં સમા-  
નતાનો અનુભવ તમોને કેવી રીતે થયો ? દેવે કહ્યું એક ક્રોધથી—આપની અંદર  
તે સમયે ક્રોધ રૂપી ચાંડાલ પ્રવિષ્ટ થયો હતો. અને તે તો ચાંડાલ હતો જ.  
આથી સહાયતા કરવા જેવી વાત મને તે સમયે ઉચિત ન લાગી. એ માટે  
સહાયતા ન કરી, અને તેને પણ હાંડ આદિ રૂપ કાંઈ શિક્ષા ન કરી. હા ।  
કહેા એને કઈ રીતે શિક્ષા કરવામાં આવે ! મુનિ મહારાજે કહ્યું કે, હવે શું  
આવશ્યકતા છે. જે અજ્ઞાની હોય છે તે ઉપેક્ષાને પાત્ર જ છે. આ માટે તેને  
હાંડાદિકરૂપ શિક્ષા આપવાની કોઈ જરૂરત નથી. મુનિઓનો તે આચારજ છે  
કે, તેઓ આક્રોશપરીપહને સહન કરે. મુનિની આ વાત સાંભળીને દેવ  
ધણા અનુરાગી બની તેની સેવામાં રહેવા લાગ્યા. આ કથાથી મુનિઓએ  
એ જ શિક્ષા ગ્રહણ કરવી જોઈએ કે, આક્રોશપરીપહ સહન કરવો તે  
મુનિરાજેનું કર્તવ્ય છે. ॥ ૨૫ ॥

કશ્ચિદાક્રોશમાત્રેણાસ્તુષ્ટો દુષ્ટઃ સંયતસ્ય વધમપિ કુર્યાદતો વધપરીપદમાહ-  
મૂલમ્—હૌં ન સંજલે ભિક્ષૂ, મણંપિ ન પઓસણં ।

તિતિક્ષ્ણં પરમં નેચ્ચા, ભિક્ષુધર્મમં વિચિંતેણ ॥૨૬॥

છાયા—હતો ન સંજ્વલેદ્ ભિક્ષુઃ મનોઽપિ ન પ્રદ્વેષયેત્ ।

તિતિક્ષ્ણં પરમાં જ્ઞાત્વા, ભિક્ષુધર્મમં વિચિન્તયેત્ ॥ ૨૬ ॥

ટીકા—‘ હૌં ’ इत्यादि ।

ભિક્ષુઃ=મુનિઃ, હતઃ=કેનાપિ દુષ્ટેન મુષ્ટિપટ્યાદિના તાડિતઃ સન્, ન સંજ્વલેત્=ન ક્રુધ્યેત્, તથા મનોઽપિ ન પ્રદ્વેષયેત્=દ્વેષયુક્તં ન કુર્યાત્, તિતિક્ષ્ણં=જ્ઞાન્તિ,

કોઈ દુષ્ટ પુરુષ આક્રોશમાત્ર સે સંતુષ્ટ નહીં હોકર મુનિ કા વધ બી કરને લગતા હૈ હસલિયે અવ તેરહવે વધપરીપદ્ધ કો કહતે હૈ—‘ હૌં ન સંજલે ’—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(ભિક્ષૂ-ભિક્ષુઃ) મુનિ (હૌં-હતઃ) કિસી બી દુષ્ટકે દ્વારા ઘષ્ટિ મુષ્ટિ આદિ સે તાડિત હો જાય તો બી ( ન સંજલે-ન સંજ્વલેત્ ) ક્રોધ સે તપાયમાન નહીં હોવે । તથા ( મણંપિ ન પઓસણ-મનોઽપિ-ન પ્રદ્વેષયેત્ ) મન કો બી દૂષિત નહીં કરે, કિન્તુ (તિતિક્ષ્ણં-તિતિક્ષ્ણમ્) ઉત્તમ ક્ષમા કો ( પરમં-પરમામ્ ) દશવિધ ધર્મો મેં સર્વોત્કૃષ્ટ ( નેચ્ચા-જ્ઞાત્વા ) જાનકર ( ભિક્ષૂ-ભિક્ષુઃ ) વહ સાધુ ( ધર્મમં વિચિંતેણ-ધર્મ વિચિન્તયેત્ ) ઉત્તમ ક્ષમાદિરૂપ સાધુ કે કર્તવ્ય કા, અથવા અપને આત્મસ્વરૂપ કા વિચાર કરે કિ-ક્ષમામૂલક હી ધર્મ હૈ । યહ જો મુજે નિમિત્ત બના કર કે કર્મોં કા ઉપચય કર રહા હૈ ઉસ મેં મેરા હી

કોઈ દુષ્ટ માણસ આક્રોશ માત્રથી સંતોષ ન પામવાથી મુનિનો વધ પણ કરમા લાગે છે. એ માટે હવે તેરમા વધપરીપદને કહે છે. ‘હૌં ન સંજલે’—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—ભિક્ષૂ-ભિક્ષુઃ મુનિ હૌં-હતઃ કોઈ પણ દુષ્ટ દ્વારા લાકડી ગડદાપાટુથી તાડિત થઈ જાય તો પણ ન સંજલે-ન સંજ્વલેત્ ક્રોધથી તપી ન જાય મણંપિ ન પઓસણ-મનોઽપિ ન પ્રદ્વેષયેત્ મનને પણ દૂષિત ન કરે પણ તિતિક્ષ્ણં-તિતિક્ષ્ણં ઉત્તમ ક્ષમાને પરમં-પરમાં દશવિધ ધર્મોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ નેચ્ચા-જ્ઞાત્વા જાણીને ભિક્ષૂ-ભિક્ષુઃ તે સાધુ ધર્મમં વિચિંતેણ-ધર્મ વિચિન્તયેત્ ઉત્તમ ક્ષમાદિરૂપ સાધુના કર્તવ્યનો તથા પોતાના આત્મસ્વરૂપનો વિચાર કરે કે, ક્ષમા એ જ ધર્મ છે. આજે મને નિમિત્ત બનાવીને કર્મોનો ઉપચય કરી



પરમાન્ન-દશવિધેષુ ધર્મેષુ પ્રાધાન્યાત્ પ્રકૃષ્ટાં, જ્ઞાત્વા મુનિઃ, મિશ્રધર્મ-જ્ઞાન્ત્યાદિકં  
સ્વાત્મસ્વરૂપં ત્રા વિચિન્તયેત્, યથા-ક્ષમામૂલ એવ ધર્મઃ, યત્ત્વ માં નિમિત્તીકૃત્યાયં  
કર્મોપચિનોતિ, તત્ર મમૈવ પૂર્વકર્મ કારણમિતિ મમૈવ દોષઃ, તસ્માદેનં પ્રતિ કોપો  
નોચિત્ત ઇતિ ॥ ૨૬ ॥

પૂર્વોપાર્જિત કર્મ કારણ છે અતઃ હસમેં મેરા હી દોષ છે હસલિયે હસકે  
પ્રતિ કોપ કરના મુજે ઉચિત નહીં છે ।

ભાવાર્થ—મુનિ જનોં કી યહ વિચારધારા કિતની સુન્દર છે ।  
વજ્રહૃદય વાલા શત્રુ બી હસ વિચાર કે સામને નતમસ્તક હોકર  
અપની ક્રૂરતા કા પરિત્યાગ કર દેતા છે । એક તરફ તાડના મારણા  
આદિ ક્રિયાઈ હો રહી હૈં તો દૂસરી ઓર ઉસ પર પ્રતીકાર ન કરતે  
હુણ અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મ કો હી વલવાન માના જા રહા છે કિ-પૂર્વો-  
પાર્જિત કર્મોં કા યહ ફલ મુજે મિલ રહા છે, હસ વેચારે કા કયા દોષ છે ।  
અફસોસ કેવલ ઉંસ મુનિ આત્મા મેં હસી વાતકા હો રહા છે કિ જો  
યહ પ્રાણી મેરા નિમિત્ત લેકર નવીન કર્મોં કા વંધક વન રહા છે ।  
હસ પ્રકાર મન તક મેં બી જહાં પ્રતિકાર કરને કી ભાવના કા ઉદય  
નિષિદ્ધ વતલાયા ગયા છે વહાં ઓર અન્ય પ્રતિકારોં કે કરને કી તો  
વાત હી કયા હો સકતી છે । મહાત્મા કા યહાં કિતના અચ્છા ઉપદેશ  
છે કિ વહ તાડિત હોને પર બી અપની ઉત્તમ ક્ષમાકો ન છોડે । કુલહાડા

રહેલ છે. તેમાં મારાં જ પૂર્વોપાર્જિત કર્મ કારણરૂપ છે. આથી તેમાં મારો જ  
દોષ છે માટે તેના પ્રતિ ક્રોધ કરવો મને ઉચિત નથી,

ભાવાર્થ—મુનિઓની આ વિચારધારા કેટલી સુન્દર છે વજ્ર હૃદયવાળો  
શત્રુ પણ આ વિચાર સામે નતમસ્તક બની પોતાની ક્રૂરતાને ત્યાગી દે છે.  
એક તરફ ધાકધમકી અને માર મારવાની હદ સુધીની ક્રિયાઓ થાય છે,  
ત્યારે બીજી તરફ આનો પ્રતિકાર ન કરતાં પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોને જ  
બળવાન માનવામાં આવે છે. “પૂર્વોપાર્જિત કર્મોનુ” ક્ષણ મને મળી રહ્યું છે.  
એ બિચારાનો કોઈજ દોષ નથી” મુનિના આત્મામાં અફસોસ ક્ષત એ વાતનો  
થાય છે કે, આ પ્રાણી મને નિમિત્ત બનાવીને નવા કર્મોનો બંધ બાંધી રહેલ  
છે. આ પ્રમાણે મનમાં પણ પ્રતિકાર કરવાની ભાવનાના ઉદયનો નિષેધ બતા-  
વવામાં આવેલ છે, ત્યાં અન્ય પ્રતિકાર કરવાની તો વાત જ કયાં રહી ?  
મહાત્માનો આ કેવો સુન્દર ઉપદેશ છે કે તેને ધાકધમકી કોઈના તરફથી  
અપાય અથવા માર મારવામાં આવે તો પણ પોતાની ઉત્તમ ક્ષમાને ન

ઉક્તમેધાર્થે પ્રકારાન્તરેણાહ—

મૂલમ—સમૈણં સંજયં દંતં, હણેજાં કોઈ કત્થઈ ।

નંતિય જીવસ્સ નાંસોત્તિ”, ઇવં પેહેજે સંજંપ ॥૨૭॥

છાયા—શ્રમણં સંયતં દાન્તં, હન્યાત્ કોઽપિ કુત્રાપિ ।

નાસ્તિ જીવસ્ય નાશ ઇતિ, ઇવં પ્રેક્ષેત સંયતઃ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—‘સમણં’ ઇત્યાદિ

કોઽપિ=કશ્ચિન્મનુષ્યઃ, કુત્રાપિ—ગ્રામાદી, સંયતં=પટકાયયતનાવન્તં, દાન્તમ્

ચંદન વૃક્ષ કો કાટ મી હાલે પર ચંદનવૃક્ષ કા જો વસકે મુલ્ક કો મી સુવાસિત કરને કા કામ હૈ વહ ઉસે નહીં છોડતા । નહીં તો વહ ચંદન હી નહીં । મહાત્મા મી અપને શત્રુ કે પ્રતિ હસી કર્તવ્ય કા તિર્વાહ કરતે હૈ નહીં તો વે મહાત્મા હી નહીં હૈ । ધન્ય હૈ મહાત્મા ! તેરે હસ શુભાધ્યવસાય કો । ન્યોછાવર હૈ ત્રૈલોક્ય કા રાજ્ય હંસ પવિત્ર ભાવના પર । કયા હી સુન્દર વિચાર ધારા હૈ । હસી વિચારધારા કે બલ પર મહાવીર પ્રભુ કે શાસન મેં સર્વોત્કૃષ્ટતા રહી હુઈ હૈ । પ્રત્યેક મોક્ષાભિલાષી કો યહ અભિનંદનીય વંદનીય વિચારધારા અપનાને યોગ્ય હૈ ॥૨૬॥ વધપરીપહકો કિસ ભાવના સે સહન કરે સો કહતે હૈ—‘સમણં’—ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—(કોઈ—કોઽપિ) કોઈ અજ્ઞાની (કત્થઈ—કુત્રાપિ) કહીં પર મી (સંજયં—સંયતમ્) પટકાય કે જીવોં કી જતના કરનેવાલે (દંતં—દાન્તમ્)

છા.કે. કુહાડો ચંદન વૃક્ષને કાપી નાખે છતાં ચંદન વૃક્ષમાં જે સુવાસિતતાનો ઉત્તમ ગુણ છે તે પોતાને કાપનાર કુહાડાને પણ આપે છે. જો એમ ન કરે તો તે ચંદન શેનું ? મહાત્મા પણ પોતાના શત્રુ તરફ આવું જ વર્તન રાખે છે. નહીં તો એ મહાત્મા શાના ? ધન્ય છે મહાત્મા ! તમારા આ શુભ વ્યવસાયને ! આ પવિત્ર ભાવના પર ત્રણ લોકો રાજ્ય પણ ન્યોછાવર છે, કેવી સુન્દર વિચારધારા છે ! આ વિચાર ધારાના બળ ઉપર શ્રી મહાવીર પ્રભુના શાસનમાં સર્વોત્કૃષ્ટતા રહેલ છે. પ્રત્યેક મોક્ષાભિલાષીએ આ અભિનંદનીય વંદનીય વિચારધારાને અપનાવવી જોઈએ ॥ ૨૬ ॥

કેવા ભાવથી વધપરીપહને સહન કરવાને કહે છે—સમણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—કોઈ—કોઽપિ કોઈ અજ્ઞાની કત્થઈ—કુત્રાપિ કોઈ જગ્યાએ પણ સંજયં—સંયતમ્ પટકાય છત્રોત્તુ જતન કરનારા દંતં—દાન્તમ્ પાંચ ઇન્દ્રિય આ તમક

=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિય દમનશીલમ્, શ્રમણં=તપસ્વિનં મુનિં હન્યાત્=મુષ્ટિયપ્ત્યાદિના તાડયેત્, તદા સંયતઃ=મુનિઃ, જીવસ્ય=આત્મજ્ઞાનરૂપસ્ય નાશઃ નાસ્તિ=ન ભવતિ શરીરસ્યેવ નાશાત્, इत्येवं प्रेक्षेत=ચિન્તયેત્ ॥

પાંચ ઇન્દ્રિય એવં મન કો નિગ્રહ કરને વાલે ( સમણં-શ્રમણમ્ ) શ્રમણ-તપસ્વી મુનિ કો ( હણેજ્જા-હન્યાત્ ) યપ્તિ મુષ્ટિ આદિ દ્વારા મારે । ઉસ સમય ( સંજય-સંયતઃ ) વહ મુનિ ( જીવસ્સ નાસો નત્થિ-જીવસ્ય નાશઃ નાસ્તિ ) “જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્મા કા નાશ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ ઉસકા પર્યાયાન્તર હોતા હૈ અતઃ શરીરકા હી નાશ હોતા હૈ” ( એવં પેહેજ્જ-એવં પ્રેક્ષેત ) એસા વિચાર કરે ।

ભાવાર્થ—આત્મા કો ક્રોધી તવ હોના ચાહિયે કિ જવ ઉસકી તિજ વસ્તુ કા વિનાશ હો । જૈસે સંસારી લોગ અપની વસ્તુ કે વિનાશ હોને પર ક્રોધી યા દુઃખી હુઆ કરતે હૈ, દૂસરોં કી વસ્તુઓં કે વિનાશ મેં તરીં । હસી પ્રકાર મહાત્મા કો બી કિસીકે દ્વારા તાડિત હોને પર ઘા મારે જાને પર યહ વિચાર કરના ચાહિયે કિ યહ શરીર પુદ્ગલ કા હૈ અતઃ યહ મેરી નિજવસ્તુ નહીં હૈ પરવસ્તુ હૈ । હસકે વિનષ્ટ હોનેપર મેં ક્યોં ક્રોધી યા દુઃખી બનું ? મેરી નિજ કી વસ્તુ જો જ્ઞાનાદિક ગુણ હૈં વે તો હસ કે આઘાત સે નષ્ટ નહીં હોતે હૈં, વે તો સદા અક્ષય હી રહતે હૈં હસ લિયે ક્રોધી યા દુઃખી હોને કી મુણે કિશ્ચિત્ માત્ર બી આવશ્યકતા નહીં હૈ ।

કરનારા સમણં-શ્રમણમ્ શ્રમણ તપસ્વી મુનિને હણેજ્જા-હન્યાત્ ઠાંસા પાટુ વગે-રેથી મારે એ સમયે સંજયે-સંયતઃ તે મુનિ જીવસ્સ નાસો નત્થિ-જીવસ્ય નાશઃ નાસ્તિ જ્ઞાન સ્વરૂપ આત્માનો નાશ થતો નથી પરંતુ એ પર્યાયાન્તરિત હોય છે, આથી શરીરનો જ નાશ થાય છે એવં પેહેજ્જ-એવં પ્રેક્ષેત એવો વિચાર કરે,

ભાવાર્થ—આત્માએ ક્રોધિત તો ત્યારે થવું જોઈએ કે, જ્યારે તેની પોતાની વસ્તુનો વિનાશ થતો હોય. જેમ સંસારી લોકો પોતાની વસ્તુઓનો વિનાશ થતાં ક્રોધિત અને દુઃખી થયા કરે છે, બીજાની વસ્તુઓના વિનાશમાં નહીં. આ પ્રકારે મહાત્માને પણ કોઈ તરફથી માર મારવામાં આવે કે ધાક ધમકી આપવામાં આવે ત્યારે તેણે વિચાર કરવો જોઈએ કે, આ શરીર પુદ્ગલનું છે, આ કારણે તે મારી પોતાની વસ્તુ નથી, પારકી વસ્તુ છે. એનો વિનાશ થવાથી હું શા માટે ક્રોધી અથવા દુઃખી બનું ? મારી પોતાની જે વસ્તુ જ્ઞાનાદિક ગુણ છે તે એના આઘાતથી નાશ પામતી નથી. એ તો સદાય અક્ષય જ રહે છે. આથી ક્રોધી અથવા દુઃખી થવાની મારે લેશ માત્ર પણ આવશ્યકતા નથી.

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

श्रावस्तीनगर्या रिपुमर्दननाम्नो राज्ञः पुत्रो धारिणीदेव्या अद्भुजातः स्कन्दक-  
नामकः कुमार आसीत् । अस्य भगिनी पुरन्दरयशा नाम्नी । सा कुम्भकारकटक-  
नामके पुरे दण्डकिनाम्ने नृपतये पित्रा प्रदत्ता । तस्य दण्डकिभूपस्य पुरोहितः  
पालकनामा ब्राह्मणो मिथ्यादृष्टिरासीत् ।

एकदा मुनिसुव्रतस्वामी त्रिंशतितमस्तीर्थकरः श्रावस्तीनगर्या समवसृतः, तस्य  
देशनां श्रुत्वा स्कन्दककुमारः श्रावको जातः । एकदा कदाचिदसौ पालकपुरोहितः  
श्रावस्तीनगर्यामागतः । स राजसभायामार्हतसिद्धान्तं खण्डयितुं प्रवृत्तः तदा

दृष्टान्त—श्रावस्ती नगरी में रिपुमर्दन नाम का एक राजा राज्य  
करता था । उसकी धर्मपत्नी का नाम धारिणी था । धारिणीदेवी से राजा  
के एक कुमार का जन्म हुवा, जिसका नाम स्कन्दक था । स्कन्दक के एक  
बहिन भी थी । उसका नाम पुरन्दरयशा था । कुंभकारकटक नाम के  
पुर में दण्डकी नामक राजा के साथ उसका विवाह हुवा था । दण्डकी  
राजा का एक ब्राह्मण पुरोहित था । इसका नाम पालक था । यह  
मिथ्यादृष्टि था ।

एक समय की बात है कि वे बीसवें तीर्थङ्कर श्री मुनिसुव्रतस्वामी  
श्रावस्ती नगरी में पधारे । उनकी देशना को सुनकर स्कन्दककुमार  
ने श्रावकधर्म अंगीकार किया । किसी समय पालक पुरोहित श्रावस्ती  
नगरी में आया । राजसभा में बैठकर उसने जैनसिद्धान्त को खण्डन  
करने वाली बात प्रारंभ की । जब वह बोल चुका तब उसकी बात को

दृष्टान्त—श्रावस्ती नगरीमां रिपुमर्दन नामनो, ऐक राज्ञ राज्ञ्य करतो  
उतो. तेने धारिणी नामनी ऐक राणी उती. धारिणीदेवीथी राजने ऐक कुमा-  
रनो जन्म थयो, जेतुं नाम स्कंदक उतुं, स्कंदकने ऐक बहिन पण उती. तेनुं  
नाम पुरंदरयशा उतुं. कुंभकारकटक नामना नगरना दंडकी नामना राजनी साथे  
तेनो विवाह करवामां आवेल उतो. दंडकी राजने ऐक ब्राह्मण पुरोहित उतो  
तेनुं नाम पालक उतुं. ते मिथ्यादृष्टी उतो..

आ ऐक समयनी बात छे के ज्यारे बीसमा तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत  
स्वामी श्रावस्ती नगरीमां पधार्या. तेमनी देशना सांखणीने, स्कंदककुमार  
श्रावकधर्म अंगिकार कर्यो. केरलेक वणते पालकपुरोहित श्रावस्ती नगरीमां  
आव्या. राजसभांमां ऐसीने जैन सिद्धांतनुं भंडन करवावणी बातनी शङ्क  
आत करी. ज्यारे तेणे बात पुरी करी त्यारे ते बात सांखणीने त्यां भेठेवा

श्रावकव्रतधारी स्कन्दककुमारं आर्हतसिद्धान्तं समर्थयन् तं निरुत्तरं कृतवान् । तेन कारणेन पालकपुरोहितस्य स्कन्दककुमारं प्रति महान् विद्वेषो जातः ।

एकदाऽसौ स्कन्दककुमारः पञ्चभिः शतैः कुमारैः सह भगवतो मुनिसुव्रतस्वामिनः समीपे देशानां श्रुत्वा दीक्षां गृहीतवान् । भगवता ते पञ्चशतकुमारकास्तस्य शिष्यत्वेन निश्चिताः कृताः । ततोऽसौ स्कन्दकाचार्योऽन्यदा भगवन्तं पृच्छति—भगवन् ! कुम्भकारकटकपुराभिमुखं विहर्तुमिच्छामि, भगवानाह—वरं तत्र गम्यताम्, किंतु तत्रोपसर्गो मरणान्तिकः । पुनस्तेनोक्तम्—भगवन् ! वयमाराधकाः, किं वा विराधकाः ? । भगवता कथितम्—एकं तां विना सव आराधकाः सन्ति ।

सुनकर वहाँ पर बैठे हुए श्रावकव्रतधारी स्कन्दककुमार ने जैन-सिद्धान्त का समर्थन करते हुए उसको निरुत्तर कर दिया, इससे पालक स्कन्दककुमार का महान् विद्वेषी बन गया ।

कुछ काल के बाद स्कन्दककुमार ने पांचसौ कुमारों के साथ भगवान मुनिसुव्रतस्वामी के समीप धार्मिकदेशना सुनकर दीक्षा ली । उन पांचसौ कुमारोंको भगवानने उनकी नेत्राय(अधीनता) में कर दिया । अब वे स्कन्दक मुनि स्कन्दकाचार्य हो गये । स्कन्दकाचार्य ने एक दिन भगवान से पूछा कि भगवन् ! मैं यहां से कुम्भकारकटक पुर की तरफ विहार करना चाहता हूं यदि आपकी आज्ञा हो तो । भगवान ने कहा जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो परन्तु तुम को वहां मरणान्तिक उपसर्ग का साम्हना करना पड़ेगा । फिर इस बात को सुनकर स्कन्दक ने प्रभु से पूछा कि प्रभो ! हम सब आराधक हैं या विराधक ? भगवान ने कहा तुम्हारे सिवाय सब ही आराधक हैं । भगवान के मुख से इस

श्रावकव्रतधारी स्कन्दककुमार ने जैनसिद्धान्तने समर्थन करतां तेने निरुत्तर जनावी दीधो. आथी पालक स्कन्दककुमारने महान विरोधी जनी गये।

केटलाके समय पछी स्कन्दककुमार ने पांचसो कुमारेनी साथे लगवान मुनिसुव्रतस्वामी पासधी धार्मिक देशना सांलगीने दीक्षा अंगीकार करी, ओ पांचसो कुमारेने लगवाने स्कन्दककुमारनी देभरेण नीचे राख्या, आथी ते स्कन्दकमुनि स्कन्दकाचार्य जनी गया, स्कन्दकाचार्य ओके द्विपस लगवानने पूछ्युं के, हे भगवंत ! हुं अडिंथी आपनी आज्ञा डोय तो कुलकारकटकपुर तरङ्ग विहार करवानी छंछा राखुं छुं. लगवाने कहुं, जे रीते तमने सुभ थाय ओ रीते करे. परंतु तमारें त्यां मरणांतिक उपसर्ग ने सामने करवो पडशे. ते बात सांलगीने स्कन्दके प्रभुने पूछ्युं, के हे प्रभो ! अमे जधा आराधक छीओ के विराधक ? लगवाने कहुं, के तमारा शीवाय जधा आराधक छे. लगवानेने

एवं भगवता कथितोऽपि स्कन्दकाचार्यो भाविशशात् पञ्चशतशिष्यपरिवारसहितः  
कुम्भकारकटकपुरं प्रति विहारं कृतवान् । पालकब्राह्मणेन तद् विहारवार्ता श्रुता-  
“अत्रागच्छति स्कन्दकाचार्यः” इति । ततोऽसौ पूर्ववैरमनुस्मृत्य तन्निर्यातनार्थं  
यत्रोद्याने स्कन्दकाचार्य आगन्तुकस्तत्परितो विविधशस्त्रास्त्राणि प्रच्छन्नरीत्या भूमौ  
निखन्य राज्ञः समीपमागत्य ब्रूते-स्वामिन् ! स्कन्दकाचार्यः पञ्चशतशिष्यपरिवारैः  
सह साधुवेपेण इह समायाति, स भवदीयराज्यं हर्तुमिच्छेति, यतोऽसौ भवदीयोद्या-  
नस्य चतुर्दिक्षु रात्रौ प्रच्छन्नो भूत्वाऽस्त्रशस्त्राणि भूम्यन्तर्निहितानि, तद्दृष्टं कथंचि-  
न्मया ज्ञातम्, तत्र गत्वा पश्यन्तु भवन्तः । पुरोहितवचनं श्रुत्वा राजा तत्र गत्वा

भविष्यत् को सुनकर भी स्कन्दकाचार्य ने भाविशशात् पांचसौ शिष्यों  
के साथ कुम्भकारकटकपुर की ओर विहार कर दिया । पालक  
पुरोहितने उनके विहार की वार्ता सुनी तो उसको ज्ञात हो गया कि  
स्कन्दकाचार्य विहार कर यहां आ रहे हैं । उसने उनके साथ अपना पूर्व  
वैर याद कर “बदला लेने का अवसर आ गया है ” इस अभिप्राय से  
उसने जिस उद्यान में स्कन्दकाचार्य आकर उतरे थे उस में जमीन  
खुदवाकर नीचे विविध शस्त्र एवं अस्त्र गुप्तरीति से गढ़वा दिये । पश्चात्  
राजा के पास आकर फिर वह कहने लगा कि हे स्वामिन् ! यहां पांच  
सौ शिष्यों के परिवार से स्कन्दकाचार्य साधु के वेश में आये हुए हैं ।  
वे आप के राज्य को हरण करना चाहते हैं । इस लिये उन्होंने गुप्त-  
रीति से उद्यान में चारों ओर अस्त्र शस्त्र भूमि में गढ़वा दिये हैं । यह  
बात रात्रि में मैंने छुपकर देखी है । आप को जो विश्वास न हो तो

મોઢાથી આ ભવિષ્યવાણી સાંભળીને પણ સ્કંદકાચાર્યે ભાવિશશાત્ ૫૦૦ શિષ્યોની  
સાથે કુમ્ભકારકટકપુરની તરફ વિહાર કરી દીધો. પાલકપુરોહિતે તેમના  
વિહારની વાત સાંભળીને જાણ્યું સ્કંદકાચાર્ય વિહાર કરતા કરતા આ  
તરફ આવી રહ્યા છે. તેણે પોતાનું અંગાઉનું તેમની સાથેનું વેર યાદ કરીને  
“બદલો લેવાનો અવસર આવી ચુક્યો છે” આવા અભિપ્રાયથી જે બગીચામાં  
સ્કંદકાચાર્ય આવીને ઉતર્યા હતા તેની અંદરની જમીન ખોદાવીને તેની નીચે  
જુદી જુદી જાતનાં શસ્ત્ર અસ્ત્ર દાટી દીધાં. પછી રાજાની પાસે આવીને તે  
કહેવા લાગ્યો કે, પાંચસો શિષ્યોના પરિવાર સાથે સ્કંદકાચાર્ય સાધુના વેશમાં  
અહિં આવ્યા છે. તે આપનું રાજ્ય લઈ લેવા ઇચ્છે છે. કેમકે, તેમણે ગુપ્ત  
રીતે બગીચામાં ચારે બાજુ શસ્ત્ર અસ્ત્ર દટાવી રાખ્યાં છે. આ વાત મેં રાત્રિના  
વખતે છુપી રીતે જોઈ લીધી છે. આપને જે વિશ્વાસ ન હોય તો આપ ખુદ



भूम्यन्तर्गतानि तानि शस्त्रास्त्राणि विलोकितानि । ततोऽसौ नृपः कोपावेशेन पुरो-  
हितमब्रवीत्—हे पालक ! सर्वानेतान् साधून्हं तवाधीनान् करोमि, यथेच्छसि  
तथा कुरु । एवमुक्तोऽसौ दुष्टभावसमन्वितः पुरोहितः सर्वान् मुनीन् परितः समा-  
क्रम्य एकैकं मुनिं तिलादिपीडनयन्त्रे संस्थाप्य पीडयितुं प्रवृत्तः । ते स्वात्मक-  
ल्यागार्थिनो मुनयस्तं वधपरीपहं सम्यक् परिपह्यान्तसमये केवलज्ञानं प्राप्य मोक्षं  
गताः । तत्र ४९८ चतुःशताष्टनवतिसंख्यका मुनयः पीडनयन्त्रे पीडितास्त-  
थापि स्कन्दकाचार्येण समभावं समालम्ब्य तत्र स्थितम् । तदा स्वस्मादन्य एक एव  
मुनिरवशिष्टः, तमपि पीडनयन्त्रे स्थापयितुमुद्यतस्तदा स्कन्दकाचार्येणोक्तम्—

स्वयं चलकर देख सकते हैं । पुरोहित की बात सुनकर राजा उद्यान में  
आया और वहाँ उसने भूमि के भीतर गढ़े हुए अनेक अस्त्र शस्त्र देखे ।  
इस स्थिति से राजा को बड़ा ही कोप बढ़ा और उसने कोप के ही  
आवेश में तन्मय होकर पुरोहित से कहा, पालक ! इन सब साधुओं  
को मैं तुम्हारे आधीन करता हूँ । तुम जैसा भी समझो इनके साथ  
वैसा करो । राजा ने जब ऐसा कहा तब पुरोहित के आनंद का पार  
न रहा । उसने शीघ्र ही चारों ओर से सब मुनियों को घिरवा दिया और  
एक एक मुनि को कोल्हू (घाणो) में पीलने लगा । चारसोअठानवे(४९८)  
मुनियोंने समभाव से वधपरीपहको सहन करके अंत समयमें केवलज्ञान  
प्राप्तकर मुक्ति को प्राप्त किया । स्कन्दकाचार्य और एक बालमुनि पीलनेके  
लिये अवशिष्ट रहे । जब पालक ने उस मुनि को पीलने के लिये कोल्हू  
में रखने को उद्यत हुंवा तो इतने में स्कन्दकाचार्य ने उससे कहा कि

જઘને જોઈ શકે છે. પુરોહિતની વાત સાંભળીને રાજા ખગીયામાં ગયા અને  
ત્યાં જમીનની અંદર દાટેલાં અનેક શસ્ત્ર અસ્ત્ર જોયાં. આથી રાજાને ખૂબ ક્રોધ  
અડ્યો અને ક્રોધના આવેશમાં આવીને તેણે પુરોહિતને કહ્યું, પાલક ! આ  
બધા સાધુઓને હું તમારે હવાલે કરું છું. તમેને ઠીક લાગે તેમ તેને ફેંસલો તમે  
કરો. રાજાએ બ્યારે આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યારે પુરોહિતના આનંદનો પાર ન રહ્યો. તેણે  
તરત જ તરફથી તે મુનિઓને ઘેરી લઈ પકડીને એક પછી એક મુનિને  
ઘાણીમાં પીલવાનું શરૂ કર્યું. ૪૯૮ મુનિઓએ સમભાવથી વધપરીપહને સહન  
કરીને અંત સમયે કેવળજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને મુક્તિને પામ્યા. સ્કંદકાચાર્ય અને  
એક મુનિ પીલવા માટે બાકી રહ્યા. બ્યારે પાલકે તે મુનિને પીલવા માટે  
ઘાણીમાં નાખવા પ્રવૃત્ત થયા ત્યારે સ્કંદકાચાર્યે તેને કહ્યું કે, આ તો કેમબળ.

અંયમસ્તિ કોમલકાયો ચાલકઃ, તસ્માદયં ત્વયા ન હન્તવ્યઃ મમ સમક્ષે પીઢનયન્ત્રેઽસ્ય સ્થાપને પીઢા મમ જાયતે, મુશ્વેનમ્ । સ્કન્દકાચાર્યવચનં શ્રુત્વાઽસૌ રાજપુરોહિતઃ પાલકબ્રાહ્મણો વદતિ-રાજસભાયાં ત્વયા પરાજિતોઽહમ્, અતો યાત્રદધિ-કાદપ્યધિકં દુઃખં તવ સ્યાત્ તદેવ કાર્યં મમ કર્તવ્યમ્ । ઇત્યુત્ત્વાઽસૌ તં ચાલમનગારં સ્કન્દકાચાર્યસ્ય સમક્ષમેવ પીઢનયન્ત્રે સંસ્થાપ્ય તત્પીઢનં કૃત્વાન્ । સ ચાલોઽપ્યનગારસ્તત્ર વધપરીપહં સમ્યક્ પરિપલ્લ્ય કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્ય મોક્ષં ગતઃ ।

તદા સ્કન્દકાચાર્યો રોષાવેશેન નિદાનં કૃત્વાન્-“યદિ મમ તપઃસંયમસ્ય ફલં ભવેત્, તદા एतेषां सर्वेषां दुःखदायको भवेयम्” इति । अथाऽसौ स्कन्दका-

यह इस समय कोमलकाय बालक है अतः तुम इसे छोड़ दो । इसे कोल्हू में रखते हुए देखकर मुझे पीड़ा होती है, अतः यह मारने योग्य नहीं है । स्कन्दकाचार्य के इस प्रकार वचन सुनकर पालक उनसे कहने लगा-सुनो-तुमने मुझे पहिले राजसभा में परास्त किया था, अतः उसके उपलक्ष में अधिक से अधिक जो कष्ट हो सकता है वह मैं तुमको दूँ ऐसा ही मेरा निर्णय है । इस में जरा भी इधर उधर नहीं करना चाहता हूँ । इस प्रकार कह कर उसने उस बालक मुनि को भी स्कन्दकाचार्य के सामने ही कोल्हू में रखकर पील दिया । उस बालक अनगार ने भी खुशी खुशी से वधपरीपह सहन करके अंत में केवल-ज्ञान प्राप्त कर मुक्ति को प्राप्त कर लिया । उस समय स्कन्दकाचार्य ने रोश के आवेश में आकर यह निदान किया कि “यदि मेरे तप एवं संयम का फल होता हो तो मैं इन सब को दुःख देने वाला होऊँ ।”

કાય બાળક છે, માટે એને છોડી દો. એને ઘાણીમાં રાખે ત્ર ભેદ ને મને પીડા થાય છે માટે તે મારવાને યોગ્ય નથી. સ્કંદકાચાર્યનું આ પ્રમાણેનું વચન સાંભળીને પાલક પુરોહિત કહેવા લાગ્યો કે, સાંભળો ! તમે મને અગાઉ રાજસભામાં પરાજીત કરેલ હોતો જેથી તેના ઉપલક્ષમાં હું અધિકમાં અધિક કષ્ટ ને હોય તે હું તમને આપીશ એવો મારો નિર્ણય છે. તેમાં જરા પણ હું ફેરફાર કરવા ઈચ્છતો નથી. આ પ્રમાણે કહીને તેણે તે બાળક મુનિને સ્કંદકાચાર્યની સામે જ ઘાણીમાં નાખીને પીલી નાખ્યો. આ બાળ અનગાર પણ ખુશીથી વધપરીપહ સહન કરીને અંતમાં કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને મુક્તિ પામ્યા. આ સમયે સ્કંદકાચાર્યે રોષના આવેશમાં આવીને આ પ્રમાણે નિદાન કયું કે, જો મારા તપ અને સંયમનું ફળ થતું હોય તો હું આ બધાને દુઃખ દેવાવાળો બનું. પાલકે છેવટે સ્કંદકાચાર્યને પણ પીલીને

चार्यं तत्र यन्त्रे निपीड्य हतवान् । स स्कन्दकाचार्यो मृत्वाऽग्निकुमारदेवत्वेन-  
समुत्पन्नो भूत्वाऽवधिज्ञानेन स्वपूर्वभवं वृत्तं ज्ञात्वा कोपावेशेन नृपपुरोहितामात्यादि-  
सहितं कुम्भकारकटकपुरं सदेशं भस्मसात् कृतवान् । दण्डकिभूपस्य स देशो दण्ड-  
कारण्यनाम्ना पश्चात् प्रसिद्धो जातः । एवमन्यैरपि मुनिभिर्वधपरीपहः सोढव्य एव,  
न तु स्कन्दकाचार्यवत् कोपाविष्टैर्भवितव्यम् ॥ २७ ॥

अथ याचनापरीपहजयं प्राह—

मूलम्—दुष्करं खलु भो ! निच्चं, अणंगारस्स भिक्खुणो ।

सर्वं से ज्ञाइयं होइं, नैत्थि किंचिं अजाइयं ॥ २८ ॥

छाया—दुष्करं खलु भो ! नित्यम्, अनंगारस्य भिक्षोः ।

सर्वं तस्य याचितं भवति, नास्ति किंचिद् अयाचितम् ॥ २८ ॥

टीका—‘दुष्करं’ इत्यादि ।

खलु=निश्चयेन भो ! इति सम्बोधनम्, हे जम्बू ! अनंगारस्य=गृहरहितस्य

पालक ने अन्त में स्कन्दकाचार्य को भी कोल्हू में पील कर नष्ट कर  
दिया । स्कन्दकाचार्य मर कर निदान के प्रभाव से अग्निकुमार जाति  
के देव हुए । देवपर्याय में अवधिज्ञान द्वारा अपने पूर्वभव का वृत्ता-  
न्त जानकर उस देवने क्रोध के आवेश में आकरके नृप पुरोहित एवं  
अमात्य आदि सहित समस्त कुम्भकारकटकपुर को भस्मसात् कर  
दिया । दण्डकीभूप का वह देश दण्डकारण्य नाम से प्रसिद्ध हुआ ।  
इस कथा से मुनियों को यही शिक्षा लेना चाहिये कि वे वधपरीपह  
को समभाव से सहन करे । जिस प्रकार उनमुनियों ने वधपरीपहको  
सहा उसी प्रकार अन्य मुनियोंको भी वधपरीपह सहन करना चाहिये ।  
स्कन्दकाचार्य की तरह कोपाविष्ट नहीं होना चाहिये ॥ २७ ॥

तेनो नांथ कथो. स्कंदकाचार्य मरीने निदानना प्रभावथी अग्निकुमार देव जातीमां  
उत्पन्न थया. देवपर्यायमां पोताना अवधीज्ञानथी पोताना पूर्वभवतु वृत्तांत ज्ञानीने  
ते देव क्रोधना आवेशमां आवीने राज पुरोहित अने आमात्य सहित समस्त  
कुम्भकारकटकपुरने भस्मीभूत बनावी दीधु. दंडकी राजने ते देश पछीथी  
दंडकारण्य तरीके प्रसिद्ध थयो. आ कथाथी मुनिओये शिक्षा अडणु करवी जेधओ  
के, वधपरीपहने समभावथी सहन करे. जे प्रकारे मुनिओये वधपरीपहने सहन  
कथो जे प्रकारे सहन करे स्कंदकाचार्यनी भाइक कोपायमान थनु न जेधओ ॥ २७ ॥

भिक्षोः=मुनेः नित्यं=सर्वदा-याचजीवमित्यर्थः, दुष्करं=दुःखेन क्रियमाणं कठिनं भवति । किं दुष्करं भवति ? इत्याह—‘सर्वं’ इत्यादि, तत् सर्वम्=आहारोप-  
कणादिकं वस्तु तस्य याचितं=याचितमेव भवति, किञ्चिदपि दन्तशोधनादिकमपि  
अयाचितं नास्ति-न गृह्यते तस्मात् कष्टं मुनिजीवनमिति ॥ २८ ॥

उक्तार्थमेव सविशदं वर्णयति—

मूलम्—गोयरंगपविष्टस्य, पाणी नो सुप्सारय ।

सेओ अगारवासोत्ति, ईइ भिक्खू तं चित्तए ॥ २९ ॥

छाया—गोचराग्रप्रविष्टस्य, पाणिः नो सुप्सारयः ।

श्रेयान् अगारवासः इति, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत् ॥ २९ ॥

टीका—‘गोयरंग०’ इत्यादि ।

गोचराग्रप्रविष्टस्य=गोचरः गोस्त्रि चरणं गोचरः भिक्षाचर्या, यथा=ज्ञाताज्ञात-  
विशेषमपहायैव गौः प्रवर्तते, तथा साधुरपि ज्ञाताज्ञातकुलेषु भिक्षार्थम् । तस्याग्रं  
=प्रधानं, यतोऽसौ एषणायुक्तो गृह्णाति, न तु गौस्त्रि यथा कथंचित्, तस्मिन् गो-  
चराग्रे प्रविष्टस्य, मुनेः पाणिः=हस्तः नो सुप्सारयः=नैव सुखेन प्रसारयितुं

अयं सूत्रकार चौदह वें याचनापरीषद् को सहन करने का उपदेश  
करते हैं—‘दुष्करं खलु’—इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(खलु) निश्चय से (भो=भोः) हे जंबू ! (अणगारस्स  
भिक्षुणो=अनगारस्य भिक्षोः) गृहरहित भिक्षुको (सर्वं जाइयं होइ=सर्वं  
याचितं भवति) समस्त वस्तुएँ याचित ही होती हैं । (किञ्चि अजाइयं  
नत्थि=किञ्चित् अयाचितं नास्ति) कोई भी वस्तु अयाचित नहीं होती है ।  
इसलिये मुनिजीवन (दुष्करं=दुष्करम्) बड़ा ही दुष्कर है । बिना दिये  
तो वह दन्तशोधनादिक भी तृण तक भी नहीं ले सकते हैं ॥ २८ ॥

इवे चौदहो याचनापरीषद् सहन करवानो उपदेश सूत्रकार उहे छे—

‘दुष्करं खलु’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—खलुनिश्चयथी भो=भोः हे जंबू ! अणगारस्स भिक्षुणो=अनगारस्य  
भिक्षोः गृह रहित भिक्षुनी सर्व जाइयं होइ=सर्वं याचितं भवति समस्त वस्तुओ  
याचित न होय छे । किञ्चि अजाइयं नत्थि=किञ्चित् अयाचितं नास्ति केहि पण वस्तु  
अयाचित नथी, माटे मुनिजीवन दु रं=दुष्करम् धलुं न दुष्कर छे । केहिना आभ्या  
बगर ते हातने साइ करवा माटे तण्णअणुं पण्ण खलु शकता नथी ।

शक्यः, नहि मुनिः कस्यापि गृहस्थस्य सम्बन्धीति भावः । इति=अतो हेतोः, अगारवासः=गार्हस्थ्यम्, श्रेयान्=श्रेष्ठः, इति=एतद्, भिक्षुः=मुनिर्न चिन्तयेत्, किंतु गृहवासो हि बहुसावध्ययुक्तस्तथा ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मदन्धस्य कारणम्, स कथमपि श्रेयस्करो न भवतीति विचारयेत् ।

फिर सूत्रकार पूर्वोक्त अर्थको ही विशद करते हैं—‘गोचरगग०’—इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(गोचरगगपविट्टस्स-गोचराग्रप्रविट्टस्य) ज्ञात अज्ञातकुलों में गोचरी के लिये प्रविष्ट हुए साधु का (पाणी-पाणिः) हाथ (नो सुप्प-सारए-नो सुप्रसार्यः) सुप्रसार्य नहीं है, क्योंकि मुनि किसी गृहस्थ का संबंधी नहीं है, इसलिये (अगारवासो सेओ-अगारवासः श्रेयान्) इसकी अपेक्षा गृहस्थ जीवन श्रेष्ठ है, ऐसा (भिक्षू न चिंतए-भिक्षुः न चिन्तयेत्) भिक्षुको नहीं विचारना चाहिये, क्यों कि गृहवास बहुसावध्ययुक्त तथा ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों के बंध का कारण है अतः वह किसी प्रकार श्रेयस्कर नहीं माना जा सकता है ।

भावार्थ—गोचरी के लिये ज्ञात अज्ञात कुलों में गये हुए साधु को ऐसा नहीं विचार करना चाहिये कि यहां मैं किसके सामने हाथ फैलाऊँ—कोई मेरा संबंधी तो है नहीं । संबंधी से मागने में कोई शर्म की बात नहीं है । इससे तो अच्छा गृहवास ही है कि जिसमें हर एक से हर एक चीज मांगने में कोई संकोच नहीं होता है । साधु का ऐसा

सूत्रकार पूर्वोक्त अर्थने જ ફરી સમજાવે છે—‘ગોચરગગ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગોચરગગપવિટ્ટસ્સ-ગોચરાગ્રપ્રવિટ્ટસ્ય જાણેલા : અગર અજાણ્યા કુળોમાં ગોચરી માટે જનારા સાધુને પાણી-પાણિઃ હાથ નો સુપ્પસારણ-નો સુપ્ર-સાર્યઃ સુપ્રસાર્ય નથી. કેમકે, મુનિ કોઈ ગૃહસ્થના સંબંધી નથી તેથી અગારવાસો સેઓ-અગારવાસઃ શ્રેયાન્ તે અપેક્ષાએ ગૃહસ્થ જીવન શ્રેષ્ઠ છે એવો ભાવ ભિક્ષુ ન ચિંતણ-ભિક્ષુઃ ન ચિન્તયેત્ ભિક્ષુએ લાવવો ન જોઈએ. કેમકે, ગૃહવાસ બહુ સાવધ-યુક્ત તથા જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોના બંધનું કારણ છે. આથી તે કોઈ પ્રકારે શ્રેયસ્કર માનવામાં આવેલ નથી.

ભાવાર્થ—ગોચરી માટે જાણીતા કે અજાણ્યા કુળમાં જતા સાધુએ એવો વિચાર ન કરવો જોઈએ કે, હું ત્યાં કોની સામે હાથ લાંબો કરું ? કોઈ મારો સંબંધી તો નથી. સંબંધી પાસે માગવામાં કોઈ શરમની વાત નથી. આથી તો ગૃહસ્થાશ્રમ સારો કે જેમાં એક બીજાથી ચીજ માગવામાં સંકોચ થતો નથી.

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

દશમતીર્થકરશ્રીશીતલનાથસ્વામિશાસને તદ્વંશીયો વજ્રપ્રિયનામા શ્રૂપતિ-  
ર્વશૂત્ર । સ દીક્ષાં ગૃહીત્વા માસમાસક્ષપણસ્ય પારણં કરોતિ સ્મ । સ પ્રથમમાસ-  
ક્ષપણપારણે ભિક્ષાચર્યાયાં પ્રવિષ્ટથિન્તયતિ—કથમથ યાચયામિ, વજ્રપ્રિયનામ-  
ધારકોઽહમિક્ષ્વાકુવંશોદ્ભવેષ્વપિ અગ્રસરસ્તથા જાતિકુલસંપન્નોઽસ્મિ, પુનરુચ્ચની-  
ચમધ્યમકુલેષુ હસ્તમસારણં મમાસિધારાત્ કઠિનમ્ । યસ્ય ચરણે રાજાં મુકુટકો-  
ટયઃ પરિલસન્તિ સ્મ, યસ્યાજ્ઞાં મન્દારકુમુદમમાલામિવ જનાઃ સાદરં ધારયન્તિ સ્મ,

વિચાર ફસલિયે પ્રશસ્ય નહીં હૈ કિ ગૃહસ્થાશ્રમ વહુસાવઘ્ય કર્મોં સે  
યુક્ત હોતા હૈ તથા ઉસસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કા બંધ  
હોતા હૈ ।

દૃષ્ટાન્ત—દશવેં તીર્થકર શ્રીશીતલનાથસ્વામી કે શાસનકાલ મેં  
ઇનકા હી વંશજ એક વજ્રપ્રિય નામકા રાજા થા । ઉસને ધાર્મિક ઉપદેશ  
શ્રવણકર દીક્ષા ધારણ કર લી થી । મુનિ બનકર ઉન્હોંને સૂચ તપશ્ચર્યા કી ।  
માસર સ્વમણ કી તપસ્યા કરને લગે । એક સમય કી ઘાત હૈ કિ જબ  
ઉનકે પ્રથમ માસક્ષપણ કા પારણા થા તો સ્વયં ભિક્ષાચર્યા કે લિયે  
ગયે । ઉસ સમય ઉન્હોંને વિચાર કિયા કિ મેં આજ કૈસે યાચના કરૂંગા ?  
મેરા વંશ તો એસા નહીં હૈ કિ જિસમેં કિસીને યાચના કી હો । મેં તો  
ઇક્ષ્વાકુવંશજોં મેં અગ્રેસર હૂં । મેં જાતિકુલસંપન્ન હૂં । ઉચ્ચ નીચ એવં  
મધ્યમ કુલોં મેં હાથ ફેલાના મેરે લિયે તો અસિધારા કે સમાન કઠિન  
પ્રતીત્ હોતા હૈ । જિન મેરે ચરણોં મેં રાજાઓં કે મુકુટ નમતે રહે થે,

સાધુનો આવો વિચાર એટલા માટે ઠીક નથી કે, ગૃહસ્થાશ્રમ ઘણા સાવધ  
કર્મોથી ભરેલ છે. તથા એનાથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોનો બંધ થાય છે.

દૃષ્ટાન્ત—દસમા તીર્થકર શ્રી શીતળનાથ સ્વામીના શાસન કાળમાં તેમના  
જ વંશનો એક વજ્રપ્રિય નામનો રાજા હતો. તેણે ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળીને  
દીક્ષા ગ્રહણ કરી. મુનિ બનીને તેણે ખૂબ તપશ્ચર્યા કરી. માસ માસ ખમણની  
તપશ્ચર્યા કરવા લાગ્યા. એક સમયની વાત છે, જ્યારે તેમનું પહેલા માસ  
ખમણનું પારણું હતું એટલે તે અંગે પોતે ભિક્ષાચર્યા માટે ગયા. તે સમયે તેમણે  
વિચાર કર્યો કે, હું આજ કેની પાસે યાચના કરીશ ? મારો વંશ તો એવો  
નથી કે જે યાચના કરે. હું તો ઇક્ષ્વાકુવંશનો અગ્રેસર છું. જાતિકુળ સંપન્ન  
છું. ઉચ્ચ નીચ મધ્યમ કુળોમાં હાથ ફેલાવવો એ મારા માટે તરવારની ધાર  
માફક કઠીન છે. મારા ચરણોમાં જે રાજાઓના મુગટ નમતા હતા એની



યસ્ય દર્શનેન ચ સ્વજન્મ સફલં મન્યન્તે સ્મ, યેન મયા રાજ્ઞાં પુરતઃ કદાપિ હસ્તો ન પ્રસારિતઃ, સોઽહમિદાનીં તેષાં કુલે તથા હીનદીનકુલેષુ ચ કથં કરં પ્રસાર-  
યામિ । યદિ ગૃહવાસમગ્નીકરોમિ, તદા તુ खलु मम वीरप्रतिज्ञैव नष्टा भवति ।  
જ્ઞાનદર્શનચારિત્રેભ્યશ્ચ પતિતો ભવામિ, તતશ્વાનન્તસંસારવૃદ્ધિઃ સ્યાત્, તત્રાપિ નર-  
કનિગોદેષ્યનન્તદુઃસ્વભોગાનન્તરમપિ રત્નત્રયં દુર્લભં સ્યાત્ । તત્ર રત્નત્રયે-દર્શનેન  
વિના જ્ઞાનં નાસ્તિ, જ્ઞાનેન વિના ચારિત્રં ન ભવતિ, ચારિત્રેણ વિના મોક્ષો ન લભ્યઃ,  
તસ્માદ્ યાચનાપરીપદઃ સર્વથા મયા સોઢ્યઃ, ઇતિ વિચિન્ત્ય પ્રાસુકૈષ્ણીયમિક્ષા-

જિસકી આજ્ઞા કલ્પવૃક્ષ કે ફૂલોંકી માલા કે સમાન મનુષ્ય સાદર  
મસ્તક પર ધારણ કિયા કરતે થે, જિસકે દેલ્લને સે લોગ અપને કો  
સફલ જન્મવાલા માનતે થે-આજ વહી મેં ઉન લોગોં કે ઘરોં મેં જાકર  
કૈસે માંગને કે લિયે હાથ ફેલાઝંગા । મેંને આજતક તો કિસી રાજા  
કે ખી સામને હાથ નહીં ફેલાયા । ફિર સંયમકે વિષય મેં વિચારને લગે  
કિ-યદિ ઇસ સંકોચ સે મેં ગૃહવાસ કો સ્વીકાર કર લેતા હૂં તો મેરી  
સાવધત્યાગરૂપ વીરપ્રતિજ્ઞા નષ્ટ હોતી હૈ । જ્ઞાન દર્શન ઇવં ચારિત્ર-સે  
ખી પતિત હો જાતા હૂં । ઇસકા ફલ યહ હોગા કિ મેરા અનન્ત સંસાર  
વઢેગા । અનન્તસંસારી હોને પર નરક નિગોદ કે અનંતદુઃખોં કો ભોગને  
કે વાદ ખી જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્રરૂપ રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિ મુક્તે દુર્લભ હી  
રહેગા, કયોં કિ દર્શન કે વિના જ્ઞાન નહીં ઓર જ્ઞાન કે વિના ચારિત્ર  
નહીં, તથા ચારિત્ર કે અભાવ મેં મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ । ઇસલિયે  
યાચનાપરીપદ મુક્તે સર્વથા સહન કરના હી ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર વિચાર

આજ્ઞા કલ્પવૃક્ષના ફૂલોની માળા સમાન મનુષ્યે આદર સાથે માથા ઉપર  
ધારણ કરતા હતા, જેને જોઈને લોકો પોતાને સફળ જન્મવાળા માનતા હતા.  
આજ તેજ હું એ લોકોના ઘરોમાં જઈ ભીક્ષા માગવા માટે કેવી રીતે હાથ લાંબો  
કરું ? મેં આજ સુધી કોઈ રાજા સામે પણ હાથ લાંબો કર્યો નથી. પછી  
સંયમના વિષયમાં વિચાર કરવા લાગ્યા કે-જો આ સંકેતથી હું ગૃહવાસને  
સ્વીકારી લઉં તો મારી સાવધ ત્યાગરૂપ વીરપ્રતિજ્ઞા નાશ પામે છે. તેનું  
ફળ એ આવશે કે, મારો અનંત સંસાર વધશે. અનંત સંસારી બનાવથી  
નરક નિગોદનાં અનંત દુઃખોને ભોગવ્યા પછી પણ જ્ઞાન, દર્શન ચારિત્રરૂપ રત્ન-  
ત્રયની પ્રાપ્તિ મને દુર્લભ રહેશે. કેમકે, દર્શન વિના જ્ઞાન નહીં, અને જ્ઞાન  
વગર ચારિત્ર નહીં, અને ચારિત્રના અભાવમાં મુક્તિની પ્રાપ્તિ નહીં. માટે  
યાચનાપરીપદ મારે સર્વથા સહન કરવો જ જોઈએ. આ પ્રકારનો વિચાર

મુપાદાય સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ કાલમાસે કાલં કૃત્વા સ્વકલ્યાણં સાધિત્વાન્ ।  
 એવમન્યૈરપિ મુનિભિર્યાચનાપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૨૯ ॥

યાચનાયાં પ્રવૃત્તસ્ય મુનેઃ કદાચિદ્ધામાન્તરાયોદયાત્ ભિક્ષાયા અભામઃ  
 સ્યાત્, इत्यलाभपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—परेसुं घासमेसेज्जा, भोयणे परिनिट्टिए ।

लद्धे पिण्डे अलद्धे वा, नानुत्तप्येज्जं पण्डिए ॥ ३० ॥

छाया—परेषु ग्रासम् एषयेत्, भोजने परिनिष्ठिते ।

लब्धे पिण्डे अलब्धे वा, नानुत्तप्येत पण्डितः ॥ ३० ॥

टीका—‘परेसु’ इत्यादि ।

पण्डितः=भिक्षुधर्ममर्मज्ञः संयतः, भोजने=ओदनादौ, परिनिष्ठिते=निष्पन्ने  
 सत्येव परेषु=गृहस्थेषु ग्रासं=पिण्डम् एषयेत्=गवेषयेत् । ततश्च पिण्डे=आहारेऽ-

कर उसने प्राप्तुक एषणीय आहार की याचना की । याचना में प्राप्त आहार  
 को लेकर अपनी संयमयात्राका निर्विघ्न रीतिसे निर्वाह करते २ अन्तमें वे  
 आयुके समाप्त होनेपर कालधर्मको प्राप्तकर आत्माका कल्याण किया ॥ २९ ॥

याचना में प्रवृत्त मुनि को कदाचित् लाभान्तराय के उदय से  
 भिक्षा का लाभ न हो सके तो उसे पन्द्रहवें अलाभपरीपह को जीतना  
 चाहोये अब यह बात सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—‘परेसु’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(पण्डिए-पण्डितः) भिक्षुधर्म के मर्म का ज्ञाता संयमी  
 साधु (भोयणे-भोजने) ओदनादिक भोजन (परिनिट्टिए-परिनिष्ठिते)  
 निष्पन्न होने पर ही (परेसु-परेषु) गृहस्थों के घर विषे (घासं-ग्रासम्)  
 पिण्डकी (एसेज्जा-एषयेत्) गवेषणा करे (पिण्डे लद्धे अलद्धे वा-

કરીને તેમણે પ્રાપ્તુક એષણીય આહારની યાચના કરી. અને યાચનાથી પ્રાપ્ત  
 થયેલા આહારને લઈને પોતાની સંયમયાત્રાનું નિર્વિઘ્ને નિર્વાહ કરતાં કરતાં અંતમાં  
 તેઓએ આયુની સમાપ્તિ થતાં, કાળધર્મ પામી આત્માનું કલ્યાણ કર્યું. ॥ ૨૯ ॥

યાચનામાં પ્રવૃત્ત મુનિને કદાચિત્ લાભાન્તરના ઉદયથી ભિક્ષાનો લાભ  
 મળી શકતો ન હોય તો તેથી હવે પંદરમા અલાભપરીપહને જીતવો જોઈએ  
 એ વાત હવે સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે.—‘પરેસુ’ ઇત્યાદિ. .

અન્વયાર્થ—પંડિય-પંડિતઃ ભિક્ષુધર્મના મર્મના જ્ઞાતા સંયમી સાધુ ભોયણે-  
 ભોજને ઓદનાદિક ભોજન પરિનિટ્ટિય-પરિનિષ્ઠિતે નિષ્પન્ન હોવાથી જ પરેસુ-પરેષુ  
 ગૃહસ્થોના ઘેર જઈ ઘાસં-ગ્રાસં પિન્ડની એસેજ્જા-એષયેત્ ગવેષણા કરે પિન્ડે લદ્ધે

पिण्डे स्वल्पे वा लब्धे सति, अल्पे वा नानुत्पद्येत= 'भाग्यहीनोऽस्मि, भिक्षाऽपि न लभ्यते' इत्यादिरूपं संतापं न कुर्यादित्यर्थः । 'परिनिद्रिष्ट' इति विशेषणेन भोजनकाल एव गच्छेदिति सूचितम् । 'घासं' इत्यनेन भ्रमरवृत्त्या ग्राह्यमिति बोधितम् ॥ ३० ॥

तर्हि किं कुर्यादित्याह—

मूलम्—अज्जेवाहं न लब्धमामि, अवि लाभो सुंए सिंया ।

जो' एवं पडिसंचिक्खे, अलाभो तं' न तर्ज्जे ॥ ३१ ॥

छाया—अज्जेवाहं न लभे, अपि लाभः भवः स्यात् ।

य एवं प्रतिसमीक्षते, अलाभस्तं न तर्जयेत् ॥ ३१ ॥

पिण्डे लब्धे अल्पे वा) उस समय यदि थोड़ा आहार मिले अथवा विलकुल भी न मिले तो भी वह (नानुत्पद्येत—नानुत्पद्येत) "मैं भाग्यहीन हूँ मुझे भिक्षा भी नहीं मिली" इत्यादिरूप संताप न करे । "परिनिद्रिष्ट" इस विशेषणद्वारा सूत्रकार की साधु के लिये यह सूचना है कि वे गोचरी के लिये भोजनकाल में ही निकले । "घासं" इस पद से गृहस्थों के यहां से जो भी आहार ग्रहण किया जाय वह भ्रमरवृत्ति से किया जाय, यह सूचित किया है ।

भावार्थ—साधु को गोचरी के लिये भोजनकाल में ही निकलना चाहिये, उस समय यदि भोजन अल्प मिले या विलकुल भी न मिले तो इस विषय में किसी भी प्रकार का उसे मन में संताप नहीं करना चाहिये ॥ ३० ॥

अल्पे वा—पिण्डे लब्धे अल्पे वा એ સમયે તેને થોડું ભોજન મળે અથવા બીલકુલ ન મળે પણ તે નાણુત્પદ્યેજ્જ—નાનુત્પદ્યેત હું ભાગ્યહીન છું, મને ભિક્ષા ન મળી " એવી રીતે સંતાપ ન કરે પરિનિદ્રિષ્ટ એ વિશેષણદ્વારા સૂત્રકાર સાધુ માટે એવું સૂચન કરે છે કે, તે ગોચરી માટે ભોજન સમયે જ નિકળે ઘાસં આ પદ્ધતી ગૃહસ્થોને ત્યાંથી જે કંઈ આહાર ગ્રહણ કરવામાં આવે તે ભ્રમરવૃત્તિથી સ્વીકાર કરવો જોઈએ. આ સૂચના આપવામાં આવે છે.

ભાવાર્થ—સાધુએ ગોચરી માટે ભોજનકાળમાં જ નિકળવું જોઈએ તે સમયે જ થોડું મળે અથવા ન મળે તો પણ આ વિષયમાં તેના મનમાં કોઈ પ્રકારનો સંતાપ થવો ન જોઈએ. ॥ ૩૦ ॥

ટીકા—‘ અજ્જેવાહં ’ इत्यादि ।

અહમ્, અઘૈવ=અસ્મિન્નેવ દિને ન લભે=ન પ્રાપ્નોમિ અપિ=સમ્ભાવયામિ  
શ્વઃ=આગામિદિને, इदमुपलक्षणम् તેન અન્યસ્મિન્ કસ્મિંચિદાગામિનિ દિને इत्यर्थः,  
લાભઃ સ્યાત્=આદારાદિપ્રાપ્તિર્ભવિષ્યતિ, एवम्=અનેનોક્તપ્રકારેણ, यः साधुः प्र-  
तिसमीक्षते=ચિન્તયતિ-અભામે સત્યનુદ્ધિનઃ સન્ સંયમયાત્રાં નિર્વહતીત્યર્થઃ । तं  
मुनिम्-अलाभः=अलाभपरीषदः, न तर्जयेत्=कथमपि पराजयं कर्तुं न शक्नुया-

‘ અજ્જેવાહં ’-इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(અહં-અહમ્) મુણે (અજ્જેવ ન લબ્ધામિ-અઘૈવ ન લભે)  
આજ યદિ આહાર કા લાભ નહીં હુઆ હૈઃ(અવિ-અપિ) તો (સુએ-શ્વઃ)  
આગામી દિન મેં ઉપલક્ષણ સે ઓર મી કિસી અન્ય દિવસ મેં (લાભો  
સિયા-લાભઃ સ્યાત્) ઉસકા લાભ હો જાયગા । (એવં-એવમ્) ઇસ  
પ્રકારસે (જો-યઃ) સાધુ (પઢિસંચિક્ષે પ્રતિસમીક્ષતે) વિચાર લેતા હૈ,  
(તં-તમ્) ઉસકે લિયે (અલાભો - અલાભઃ) અલાભપરીષદ (ન  
તજ્જએ-ન તર્જયેત્) કમી મી સંતાપિત નહીં કર સકતા હૈ । ઇસકા  
તાત્પર્ય યહ હૈ-યાચના કરને પર મી યદિ ગૃહસ્થ-દાતા કી ઇચ્છા હોમી  
તાં હી દેગા, નહીં હોમી તો નહીં દેગા । યદિ વહ નહીં દેતા હૈ તો ઇસમેં  
સાધુ કે લિયે અપરિતુષ્ટ હોને કી વાત હી કૌન સી હૈ । જો સાધુ ઇસ  
પ્રકાર કી વિચારધારા સે યુક્ત હોતા હૈ વહ ભિક્ષા કા લાભ ન હોને  
પર મી સમચિત્ત બના રહતા હૈ, ઉસકે મન મેં વિકૃતિ નહીં આવતી હૈ ।  
ઇસી સે વહ અલાભપરીષદ કા વિજેતા બન જાતા હૈ ।

‘ અજ્જેવાહં ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—અહં-અહમ્ મને અજ્જેવ ન લબ્ધામિ-અઘૈવ ન લભે આજ ને લોજનને  
લાભ થયો નથી અવિ-અપિ તો સુએ-શ્વઃ આગામી દિવસમાં ઉપલક્ષથી ખીજ પંથુ  
કોઈ દિવસે લાભો સિયા-લાભઃ સ્યાત્ એનો લાભ મળશે. એવં-એવમ્ આ પ્રકારે  
જો-યઃ સાધુ પઢિસંચિક્ષે-પ્રતિસમીક્ષતે વિચારી લે છે તં-તમ્ તેને માટે અલાભો-  
અલાભઃ અલાભપરીષદ કહી પણ સંતાપ આપનાર મનનો નથી. આતું તાત્પર્ય એ છે  
કે, યાચના કરવા છતાં પણ ને ગૃહસ્થ દાતાની ઇચ્છા હશે તો આપશે. નહીં  
હોય તો નહીં આપે. ને તે આપે નહિં. તો સાધુ માટે તેમાં અસંતોષ લાવવાની  
વાત જ ક્યાં છે, ને સાધુ આ પ્રકારની વિચારધારાથી યુક્ત છે તે ભિક્ષાનો  
લાભ ન થવાથી પણ સમચિત્ત બની રહે છે. તેના મનમાં વિકૃતિ આવતી નથી.  
તેનાથી તે અલાભપરીષદનો વિજેતા બની રહે છે.

दित्यर्थः । अयं भावः—याचिते सति गृहस्थः स्वेच्छया दद्यात् न वा दद्यात्, तत्र कोऽस्त्यसंतोषो न यच्छति सति । एवं भावनया लाभभावेऽपि मुनिना सम-  
चेतसैव अतिकृतस्यान्ते नैव भवितव्यमित्यलाभपरीपहो विजितो भवतीति ।

भावार्थ—अलाभपरीपह पर विजय पाने के लिये साधु की विचारधारा कैसी होनी चाहिये यह बात इस गाथा द्वारा सूत्रकार ने प्रदर्शित की है । वे कह रहे हैं कि साधु जब गोचरी के लिये किसी सदगृहस्थ के यहां जाता है और आहारादिककी याचना करता है तो उसकी इच्छा की पूर्ति होना न होना यह साधु के हाथ की बात नहीं है । गृहस्थ की भावना होगी तो वह देगा—नहीं होगी तो नहीं देगा । साधु की कोई इस में जबरदस्ती तो है नहीं, अतः ऐसी परिस्थिति में जब कि साधु को आहार का लाभ न हो तो उसका कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मा को व्यर्थ में क्लेशित न करे, और न उस पर रुष्ट परिणति हो धारण करे । विचार यह करे कि—आज नहीं मिला तो कल मिल जायगा, कल भी न मिला तो परसों मिल जायगा, इसमें सोच फिकर करने की बात ही कौन सी है । दाता का भाव होगा तो देगा, नहीं होगा तो नहीं देगा । इस तरह जो साधु वर्तता रहता है वह वीर मुनि अलाभ परीपह को अवश्य जीत लेता है ।

भावार्थ—अलाभपरीपह उपर विजय भोगववा भाटे साधुनी विचारधारा केवी होवो जेधं ओ ओ वात आ गाथा द्वारा सूत्रकारे प्रदर्शित करेले छे. तेओ कहे छे के, साधु न्यारे गोचरी भाटे केधं गृहस्थने घेर जय अने आहारादिकनी याचना करे तो तेनी छच्छानी पूतीं थवी के न थवी ते साधुना हाथनी बात नथी. गृहस्थनी लावना होय तो आपे, नहीं होय तो आपवाना नथी. साधुनी केधं जणरजस्ती केधं शके नडिं. आथी आवी परिस्थितिमां केधं साधुने आहारने लाभ न थाय तो तेनुं कर्तव्य छे के ते पोताना आत्माने नकामे कलुषित न करे. अने न तो तेनां उपर गुस्से करे. विचार ओ करे के, आज न भयुं तो काले भणशे. काले नहीं भजे तो परम दिवस भणशे. आमां झिकर चिंता करवानी होय न नडिं. दाताने लाव होशे तो आपशे, नहीं होय तो नहीं आपे. आ प्रकारे जे साधु वर्तता रहे छे ते वीर मुनि अलाभपरीपहने अवश्य जेती ले छे.

અથ દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

વિન્ધ્યાચલપ્રદેશે હુણ્ડનામકે ગ્રામે નિર્ધનઃ કૃશશરીરઃ કુદુમ્બવહુલઃ સૌવીર નામા કૃષીચલ આસીત્ । તત્ર વિન્ધ્યાચલવર્તિના ગિરિસેનનૃપતિના પચ્ચાશત્સંખ્ય- કાનિ હલાનિ વાહયિતું વારકેણ પચ્ચાશત્સંખ્યકા હલવાહકા નિયોજિતાઃ । તત્રૈકદા સૌવીરકૃષીચલસ્ય વારકઃ સમાયાતઃ । તસ્મિન્ દિને ક્ષેત્રે દૃષમાન્નીત્વા હષ્ટેષુ યોજયિત્વા ક્ષેત્રં કર્ષિતવાન્ । દૃષમાઃ શ્રાન્તાઃ અતિસ્થગ્નાઃ ક્ષુત્પિપાસાવ્યાકુલા ગ્રીષ્માતપસંતપ્તા હલમુક્તાવસ્થાં પ્રતીક્ષમાણાઃ સ્વાહારમભિલપન્તિ, પશ્યન્તિ ચ પુનઃ

દૃષ્ટાન્ત—વિન્ધ્યાચલ પ્રદેશ મેં એક હુણ્ડ નામ કા ગ્રામ થા । ઉસ મેં એક નિર્ધન સૌવીર નામ કા કિસાન રહતા થા । કુદુમ્બ વહુત હોને કી વજહ સે ઉસે સદા હસકે લાલન પાલન કી ચિંતા વેરે રહતી થી । હસલિયે ચિન્તા કે મારે હસકા શરીર કૃશ હો ગયા થા । વિન્ધ્યાચલ-વર્તી ગિરિસેન રાજાને વારીર સે પાંચસૌ હલોં કો જોતને કે લિયે પાંચસૌ હલવાહક-હાલી-નિયુક્ત કર રખે થે । સૌવીર કૃષીચલ (કિસાન) કી બી એક દિન વારી આઈ । ઉસ દિન ઉસને ખેત મેં બૈલ લે જાકર ઔર ઉન્હેં હલ મેં નિયુક્ત કર ઉસ ખેત કો જોતના પ્રારંભ કર દિયા । ખેત જોતતેર બૈલ થક ગયે વે વીચર મેં ટકે બી હોને લગે । ગ્રીષ્મકાલ કે તાપ સે અતિશય સંતપ્ત હોકર વે ક્ષુત્પિપાસા સે અત્યંત વ્યાકુલ હો ગયે ઔર હસ વાત કી પ્રતીક્ષા કરને લગે કિ કવ હમ હલ સે મુક્તહોવેં ઔર કવ ઘાસ આદિ ટાકર અપની ક્ષુધા કો શાંત કરેં । હસી અભિ-પ્રાય સે વે વેચારે વાર વાર અપને હાલી સૌવીર કે મુલકી ઔર બી

દૃષ્ટાન્ત—વિન્ધ્યાચલ પ્રદેશમાં એક હુન્ડ નામનું ગામ હતું. તેમાં એક નિર્ધન સૌવીર નામનો ખેડુત રહેતો હતો. કુદુમ્બ મોટું હોવાના કારણે તેને સદા તેના પાલન પોષણની ચિંતા રહ્યા કરતી હતી. આ ચિંતાનાં બોબના કારણે તેનું શરીર ઘસાર્ધ ગયું હતું. વિન્ધ્યાચલ પ્રદેશના ગિરિસેન રાજાએ વારા પાડીને પાંચસો હળો બેડવા માટે પાંચસો ખેડુતોને નિયુક્ત કરી રાખ્યા હતા. સૌવીર ખેડુતનો પણ એક વખત વારો આવ્યો. એ દિવસે તેણે ખેતરમાં બળદ લઈ બંધને હળ તૈયાર કરી બેડવાનું શરૂ કર્યું. ખેતર ખેડતાં ખેડતાં બળદ થાકી ગયા અને વચમાં વચમાં ઉભા રહેવા લાગ્યા. ઉનાળાના સખ્ત તાપથી અતિશય સંતપ્ત થઈને બૂખ તરસથી તે ઘણા વ્યાકુળ બની ગયા. અને એ વાતની પ્રતીક્ષા કરવા લાગ્યા કે, ક્યારે અમને હળથી મુક્ત કરવામાં આવે અને ક્યારે ઘાસ વગેરે ખાઈ બૂખને શાંત કરીએ, આવા ભાવથી તે ખીચારા વારંવાર પોતાના માલીક સૌવીરના મોઢા તરફ બેતા હતા. આ



पुनः सौवीरमुखम् । परंतु सौवीरस्तान् न मुञ्चति । तेन भक्तपानवेलायामेकथासो-  
ऽधिकः कर्पितस्तेन वृषभाणां भक्तपानान्तरायो जातः, ततश्चान्तरायकर्म सौ-  
वीरेण वद्धम् । अथाऽसौ मृत्वा बहुकालं संसारे परिभ्रम्य, कदाचिद् गोपालदारक-  
भवे बने गाथास्यन् कस्मिंश्चित्तरुतले वद्धसदोरकमुखवस्त्रिकं पट्कायपालकं मुनिं  
दृष्टवान् । तत्र तद्देशनां निशम्य स सौवीरस्तस्मिन् गोपालदारकभवे प्रव्रजितः ।  
तदनन्तरं कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मकल्पे देवत्वेन समुत्पन्नः । ततश्चयुतोऽसौ द्वार-

देखने लगते थे, परन्तु सौवीर ने उनकी इस परिस्थिति पर जरा भी  
ध्यान नहीं दिया और न उन्हें छोड़ा ही । प्रत्युत उनके खाने पीने के  
समय में उसने एक चास (हलरेखा) और अधिक जोता । इससे  
सौवीर को प्रचल अंतराय कर्म का बंध हुआ । कुछ काल के बाद मर  
कर उस पर्याय से पर्यायान्तरित हुआ । बहुत काल तक इसने संसार  
परिभ्रमण किया । संसारपरिभ्रमण करते-करते किसी समय यह गवाल  
के घर में जन्मा । बड़ा होने पर गायों को चराता था । एक दिन जंगल  
में इसकी दृष्टि वृक्ष के नीचे बैठे हुए एक मुनिराज पर जो पट्काय के  
जीवोंकी यतना करने में तत्पर थे, तथा मुख पर जिनके दोरासहित  
मुखवस्त्रिका बंधी हुई थी उन पर पड़ी । उनके पास पहुँचकर इसने  
उनसे धर्मदेशना सुनी । उसका प्रभाव इसकी आत्मा पर इतना पड़ा  
कि यह उसी समय दीक्षित हो गया । साधुचर्या का ठीकर तरह  
निर्वाह करते हुए वह मृत्यु के अवसर में कालधर्म पाकर सौधर्म देव-

परिस्थिति उपर सौवीर ने तो जरा પણ ध्यान आभ्यु के नते। तेमने धुंसरीथी छोड्या।  
वधारामां तेमने भावा पीवाना समयने वणते ओक चास वधारे जेडाये। आथी  
सौवीरने प्रणण अंतरायकर्मने बंध थये। थोडा समय पछी सौवीर जेडूत भरीने  
पर्यायथी पर्यायान्तरित थये। धण्डा डाण सुधी तेले संसारमां परिभ्रमण कथुं।  
संसारपरिभ्रमण करतां करतां डाणांतरे ते ओक गोवाणने त्यां जनभ्ये।  
भोटो थतां ते गाथेने थरावतो हुतो। ओक दिवस जंगलमां तेनी दृष्टी जाडनी नीचे  
जेठेला ओक मुनिराज उपर पडी, जे पटकायना लुवोनी रक्षा करवामां तत्पर  
हुता। तेमना भोढा उपर दोरा साथे ओक मुणवस्त्रिका बांधेली हुती। तेनी  
पासे पडोन्थीने तेमनी पासेथी धर्मदेशना सांभणी। ओनो प्रभाव तेना आत्मा  
पर जेवो पड्यो के ते ओज समये दीक्षित भनी गयो। साधुचर्याने ठीक ठीक  
निर्वाह करतां करतां ते मृत्युना अवसरे कालधर्म पाभ्ये। अने ते सौधर्म देव-

કાયાં શ્રીકૃષ્ણવાસુદેવગૃહે પુત્રત્વેન સમુત્પન્નઃ । સ ચ ઢંઢળનામ્ના પ્રસિદ્ધો જાતઃ ।

અથૈકદા સ ઢંઢળકુમારઃ શ્રીનેમિનાથ તીર્થંકરસ્ય સમીપે પ્રવ્રજિતઃ । મિક્ષા-  
ચર્યાયાં પ્રવૃત્તોઽસૌ શ્રીકૃષ્ણસ્ય પુત્રોઽપિ ત્રિજગદ્ગુરોસ્તીર્થંકરસ્ય શિષ્યોઽપિ સ્વર્ગ-  
લક્ષ્મીજિત્વરસંપત્સમન્વિતાયાં વિશાલાયાં દ્વારકાયાં નગર્યાં મહેમ્યાનાં ભવનેષ્વપિ  
પર્યટન્ લાભાન્તરાયવશાત્ કિંચિદપિ પ્રાપ્તુર્કૈવળીયં ન લભતે । તતોઽસૌ શ્રુત્યા-  
પિપાસયા શુષ્કશરીરઃ શ્રીનેમિનાથસ્વામિનં તદલાભકારણં પૃષ્ઠવાન્ શ્રીનેમિનાથ  
સ્વામિના કથિતમ્-વત્સ ! અસ્માદ્ પૂર્વં નવનવતિલક્ષ-નવનવતિસહસ્ર-નવશત-નવનવતિ  
૯૯,૯૯,૯૯૯ તમે ભવે ત્વં વિન્ધ્યાચલપ્રદેશે હુણ્ડકગ્રામે સૌવીરનામા કૃપીવલ

લોક મેં દેવપને સે ઉત્પન્ન હુવા । વહાં કી સ્થિતિ સમાપ્ત હોને પર ચહ  
વહાં સે ચયવકર દ્વારિકાનગરી મેં શ્રીકૃષ્ણ વાસુદેવ કે ઘર પુત્રરૂપ  
સે ઉત્પન્ન હુઆ ઓર વહાં હસકા નામ ઢંઢળકુમાર રવલા ગયા ।

હસ ઢંઢળકુમાર ને શ્રીનેમિનાથતીર્થંકર કે સમીપ ધર્મદેશના સુન-  
કર દીક્ષા અંગીકાર કી । મિક્ષાચર્યા કરને કો વે સ્વયં જાતે થે ।  
શ્રીકૃષ્ણ કે પુત્ર એવં ત્રિજગદ્ગુરુ તીર્થંકર નેમિનાથ પ્રભુ કે શિષ્ય હોને  
પર મી ઉસ વિશાલ દ્વારિકા નગરી મેં હનકો વહેર સેઠ સાહુકારોંકે ઘરોં  
મેં જાને પર મી લાભાન્તરાય કર્મ કે ઉદય સે ધોડે સે મી પ્રાપ્તુક  
એવળીય આહાર કા લાભ નહીં હોતા, અતઃ યે દિન પ્રતિદિન શુષ્ક  
શરીર હોને લગે । ભગવાન્ નેમિનાથ કે પાસ જાકર એકદિન હનહોને  
આહાર કે અલાભ કા કારણ પૂછા તો ભગવાન્ ને કહા કિ વત્સ ! તું  
હસ ભવ સે પહિલે નિન્યાનવે લાખ નિન્યાનવે હજાર નૌ સો નિન્યાનવે  
૯૯,૯૯,૯૯૯ ભવ મેં વિન્ધ્યાચલ પ્રદેશ મેં હુણ્ડક ગ્રામ મેં સૌવીર નામ

લોકમાં દેવપણે ઉત્પન્ન થયો. ત્યાંની સ્થિતિ સમાપ્ત થતાં તે ત્યાંથી ચવીને  
દ્વારિકા નગરીમાં શ્રી કૃષ્ણ વાસુદેવને ઘેર પુત્ર રૂપે ઉત્પન્ન થયો. અને ત્યાં  
તેમનું નામ ઢંઢળ રાખવામાં આવ્યું.

આ ઢંઢળકુમારે શ્રીનેમીનાથ તીર્થંકર પાસે ધર્મદેશના સાંભળી દીક્ષા ગ્રહણ  
કરી. ભિક્ષાચર્યા કરવા માટે તે સ્વયં જતા હતા. શ્રીકૃષ્ણના પુત્ર તેમજ ત્રીજગદ્ગુરુ  
તીર્થંકર નેમીનાથ પ્રભુના શિષ્ય હોવા છતાં પણ તે વિશાળ દ્વારિકા નગરીમાં તેને  
મોટા મોટા શેઠ સાહુકારોના ઘરોમાં જવા છતાં પણ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયથી  
થોડા પણ પ્રાપ્તુક આહારનો લાભ મળતો ન હતો. આથી એ દિનપ્રતિદિન શુષ્ક  
શરીરવાળા બનવા લાગ્યા. ભગવાન નેમીનાથ પાસે જઈને એક દિવસ તેમણે આહાર-  
ના અલાભનું કારણ પૂછ્યું, ભગવાને કહ્યું કે, હે વત્સ ! તું આ ભવથી પહેલાં  
નવાણુ લાખ નવાણુ હજાર નવસો નવાણુના ૯૯,૯૯,૯૯૯ ભવમાં વિન્ધ્યા પ્રદે-

आसीः। तत्र भवे हलयोजितवृषभाणां भोजनपानान्तरायस्त्वया कृतः। तदन्तरायकर्मा-  
ऽस्मिन् भवे इदानीमुदितम्, अतोऽयमलाभपरीपहस्त्वया सोढव्यः। तदनु ढंढणकु-  
मारेण स्वपूर्वभववृत्तान्तं श्रुत्वा तदन्तरायकर्म क्षपयितुं गाढसंवेगेन सोत्साहमभिग्र-  
हो गृहीतः—अद्यमभृति मया परलाभो न ग्राह्य इति। तदनन्तरमभिग्रहमुपादाय स  
प्रतिदिनं भिक्षार्थमटति, परंतु—लाभान्तरायोदयान्न किञ्चित् प्राप्नोति, तथापि नो  
द्विग्नो भवति, नापि चान्यं निन्दति किन्तु, नित्यमदीनमानसः सन् स्वकर्मैवाचिन्तयत्।

के एक किसान की पर्याय में था। उस समय तूने हल में जुते हुए  
बैलों के भोजन पान में अन्तराय डाला था। वह अंतराय कर्म इस  
भव में तुम्हारे इस समय में उदय में आया है इसलिये इस अलाभ  
परीपह को तुझे सहन करना चाहिये। भगवान् द्वारा इस प्रकार कहे  
गये अपने पूर्वभव के वृत्तान्त को सुनकर ढंढणकुमार मुनिने उस बद्ध  
अन्तराय को नष्ट करने के निमित्त बड़े ही उत्साह के साथ गाढ  
वैराग्य से युक्त अन्तःकरण होकर ऐसा अभिग्रह ग्रहण किया कि  
“आज से लेकर मैं परलाभ को ग्रहण नहीं करूँगा” अर्थात् दूसरे  
के निमित्त से मिला हुआ आहार पानी नहीं ग्रहण करूँगा। इस प्रकार  
अभिग्रह ग्रहण कर वे प्रतिदिन भिक्षाचर्या को जाते परन्तु लाभान्त-  
राय कर्म के उदय से उनको किञ्चित् भी आहार का लाभ नहीं होता,  
परन्तु फिर भी इस परिस्थिति में भी उनके चेहरे पर उद्विग्नता के  
चिह्न जरा भी दिखलाई नहीं पड़ते—वे उद्विग्नचित्त नहीं होते और न

शभां हुंउउ गाभभां सौवीर नामथी अेक जेडुतना पर्यायभां डतो. ते समये  
तें डणभां जेडेला जणहने भोजन पानभां अंतराय नाज्यो डतो. ते अंतराय  
कर्म आ लवभां तभारा भाटे आ समये उदयभां आवेल छे. भाटे आ अलाल-  
परीपहने तभारे सहन करवो जेछेअे, भगवान तरक्षथी डडेवामां आवेल  
आ प्रकारना पोताना पूर्वलवना वृत्तांतने जण्णी ढंढणकुमार मुनिअे आ अस  
अद्ध अंतरायनो नाश करवा भाटे जूज ज उत्साहथी गाढ वैराग्ययुक्त अंतः-  
करणवाणा जनी अेवो अलिग्रह धारणु क्यो डे, “आजथी हुं परलालने अडणु  
नडीं डइं.” अर्थात् जीजना निमित्तथी भजेअ आहार पाणी अडणु नडीं  
डइं. आ प्रकारनो अलिग्रह अडणु करी ते प्रतिदिन भिक्षाचर्या भाटे जता  
परंतु लाभान्तराय कर्मना उदयथी तेभने थोडो पणु आहारनो लाल भजतो नडीं.

अथान्यदा श्रीकृष्णवासुदेवः श्रीनेमिनाथस्वामिनं पृष्ठवान्—भगवन्! अष्टा-  
दशसहस्रेषु श्रमणेषु कोऽस्ति दुष्करकारकः?, श्रीनेमिनाथस्वामिना प्रोक्तम्—सर्वे  
श्रमणदुष्करकारकाः, ढंढणमुनिस्तु अतिदुष्करकारकः। श्रीकृष्णेनोक्तम्—कथम्?,  
श्रीनेमिनाथस्वामी प्राह—अलाभपरीपहस्य सम्यक् सहनेन। ततो भक्तिभरेण  
संजातरोमाञ्चः श्रीकृष्णोऽवदत्—प्रभो ! महात्मा ढंढणमुनिः क्व विद्यते ?। श्री  
भगवानाह—भिक्षार्थं द्वारकापुरीं गतः, नगर्यां प्राविशन्नेव तं द्रक्ष्यसि। तद्वचनं  
श्रुत्वा श्रीकृष्णः श्रीनेमिजिनं प्रणम्य चलितः। ततः पुरद्वारे प्रविशन् श्रीकृष्णः

કિસી દૂસરે કી નિન્દા હી કરતે । નિન્દા કરતે મી તો અદીનમન  
હોકર અપને અશુભ કર્મ કી ।

एक दिन की बात है कि श्रीकृष्ण वासुदेव ने श्रीनेमिनाथप्रभु से  
पूछा कि भगवन्! इन अठाहर हजार मुनियों में इस समय दुष्कर-  
कारक कौन है। प्रभु ने कहा सब ही श्रमण दुष्करकारक हैं परन्तु  
ढंढणमुनि विशेष रीति से दुष्करकारक है। वासुदेव ने कहा यह क्यों?  
प्रभुने कहा अलाभपरीपह के सम्यक् सहन करने से। यह सुनते ही  
श्रीकृष्ण का समस्त शरीर भक्ति के आवेश से रोमांचित हो गया।  
श्रीकृष्ण ने कहा—प्रभो! महात्मा ढंढणमुनि इस समय कहां विराजमान  
हैं?। प्रभु ने उत्तर में कहा कि वे इस समय भिक्षा के लिये द्वारिका  
में गये हैं। तुम्हें वहां जाते ही वे मिल जावेंगे। भगवान् की बात सुनकर  
वासुदेव श्रीकृष्ण नेमिनाथ भगवान् को वंदना करके वहांसे चलेगये।

આ પરિસ્થિતિમાં પણ તેમના ચહેરા ઉપર ઉદ્દીગ્નતાનું ચિહ્ન દેખાતું નહીં.  
એ ઉદ્દીગ્નચિત્ત ન બનતા, અને બીજા કોઈની નિંદા પણ કરતા નહીં. નિંદા  
કરતા તો તે ફક્ત પોતાના અશુભ કર્મની.

એક દિવસની વાત છે કે, શ્રી કૃષ્ણ વાસુદેવે શ્રી નેમીનાથ પ્રભુને પૂછ્યું  
કે, ભગવન્! આ અઠારહજાર મુનિઓમાં આ સમયે દુષ્કર સ્થિતિ કોણ  
લોગવે છે? પ્રભુએ કહ્યું કે, બધા શ્રમણ દુષ્કર કષ્ટ લોગવે છે છતાં ઢંઢણ-  
મુનિ આ બધાથી વધુ દુષ્કરસ્થિતિમાં છે. વાસુદેવે કહ્યું એમ કેમ? પ્રભુએ કહ્યું કે,  
અલાભપરીપહને સમ્યક્ સહન કરવાથી. આ સાંભળતાં જ શ્રી કૃષ્ણનું શરીર  
ભકિતના આવેશથી રોમાંચિત બની ગયું અને કહ્યું, પ્રભુ! મહાત્મા ઢંઢણ મુનિ  
આ સમયે ક્યાં બિરાજે છે? પ્રભુએ ઉત્તરમાં કહ્યું કે, તે આ સમયે દ્વારિકામાં  
ભિક્ષા માટે ગયા છે, તમને ત્યાં જતાં જ ભેટો થઈ જશે. ભગવાનની આ વાત  
સાંભળી વાસુદેવ શ્રીકૃષ્ણ નેમીનાથ ભગવાનને વંદના કરી ત્યાંથી ચાલી નીકળ્યા.

કૃશશરીરં શાન્તચેતસં ઢંઢણમુનિં દૃષ્ટવાન્ । તતસ્તદ્ગુણાકૃષ્ટોઽતિયુદિતઃ શ્રીકૃષ્ણો  
હસ્તિસ્કન્ધાદવતીર્ય મહીતલમિલન્મૌલિસ્તં વચન્દે । તદા તેન વન્ધમાનોઽસૌ ઢંઢણમુનિઃ  
કેનચિદિભ્યેન દૃષ્ટઃ । તદા તેનેભ્યેન ચિન્તિતમ્—અહો ! એમ મહાત્મા શ્રીકૃષ્ણેન  
વન્ધતે । એવં ચિન્તયત એવ તસ્યેભ્યસ્ય ગૃહે ઢંઢણમુનિઃ પ્રવિષ્ટઃ । તેનોત્કૃષ્ટભાવેન  
મોદકૈઃ પ્રતિલમ્બિતઃ ।

તતોઽસૌ ઢંઢણમુનિઃ શ્રીનેમિનાથસ્વામિનઃ સમીપં ગત્વા ભિક્ષાં પ્રદર્શ્ય પૃચ્છતિ-  
ભગવન્ ! મમ લાભાન્તરાયઃ ક્ષીણઃ કિમ્ ? , શ્રીનેમિનાથસ્વામિના પ્રોક્તમ્—ન તવ-

ઉસ સમય ઉન્હોં ને કૃશશરીર એવં શાન્તચિત્ત ઢંઢણમુનિ કો  
પુરદ્વાર મેં પ્રવેશ કરતે હુએ દેખા । દેખતે હી વે અપને ગજરાજ સે નીચે  
ઉતરે ઓર ઝુકકર ઉનકો વંદના કરને લગે । કૃષ્ણવાસુદેવ કો વંદના  
કરતે હુએ ઉસ સમય કિસી સેઠ ને દેખ લિયા । દેખતે હી ઉસને  
વિચાર કિયા કિ જિસ મહાત્મા કો વંદના યે વાસુદેવ કર રહે હેં વહ  
કોઈ સાધારણ સાધુ નહીં હેં, એસા વિચાર કર હી રહા થા કિ ઢંઢણમુનિ  
ઇતને મેં ઉસી સેઠ કે ઘર મેં પ્રવિષ્ટ હુએ । ઉસને વહે હી ઉત્કૃષ્ટભાવોં  
સે સમ્પન્ન હોકર ઢંઢણમુનિ કો મોદકોં કી ભિક્ષા દી । ભિક્ષા લેકર વે  
વાપિસ અપને સ્થાન પર આ ગયે ઓર જો કુછ ભિક્ષા મેં ઉનકો મિલા  
થા વહ ઉન્હોં ને શ્રીનેમિનાથ ભગવાન્ કો દિખલાયા । દિખલાકર ફિર  
ભગવાન્ સે ઉન્હોં ને પૂછા કિ હે ભગવાન્ ! મેરા લાભાન્તરાય કર્મ ક્ષીણ  
હો ચુકા હૈ કયા ? । ભગવાન્ ને કહા અમી નહીં, ભિક્ષા મેં જો યે

એ સમયે તેમણે કૃશશરીરવાળા અને શાંતચિત્ત ઢંઢણ મુનિને દારિકાપુરીના  
દ્વારમાં પ્રવેશ કરતી વખતે જોયા. જોતાં જ પોતાના હાથી ઉપરથી નીચે  
ઉતરી ઢંઢણમુનિ પાસે જઈ પહોંચ્યા અને નીચા નમી વંદના કરી. કૃષ્ણ વાસુદે-  
વને વંદના કરતા કોઈ શેઠ જોઈ ગયા અને મનમાં વિચાર કર્યો કે, જે મહાત્માને  
વાસુદેવ વંદના કરી રહ્યા છે તે કોઈ સાધારણ સાધુ ન હોવા જોઈએ. જ્યાં શેઠ એવો  
વિચાર કરી રહ્યા હતા ત્યાં ઢંઢણમુનિ એજ શેઠને ઘેર ભિક્ષા માટે જઈ પહોંચ્યા.  
એણે ખૂબ જ આદર ભાવથી ઢંઢણમુનિને લાડુની ભિક્ષા આપી. ભિક્ષા લઈ  
તે પોતાના સ્થાન ઉપર પહોંચ્યા અને પોતાને જે કાંઈ ભિક્ષામાં મળ્યું હતું તે  
તેમણે ભગવાન શ્રી નેમીનાથને બતાવ્યું. ભગવાનને બતાવીને પછી તેમણે  
પૂછ્યું કે, ભગવાન્ ! મારું લાભાન્તરાય કર્મ ક્ષીણ થઈ ગયું કે કેમ ? ભગવાને કહ્યું,

અથાન્યદા શ્રીકૃષ્ણવાસુદેવઃ શ્રીનેમિનાથસ્વામિનં પૃષ્ટ્યાન્-ભગવન્ ! અષ્ટા-  
દશસહસ્રેષુ શ્રમણેષુ કોઽસ્તિ દુષ્કરકારકઃ?, શ્રીનેમિનાથસ્વામિના પ્રોક્તમ્-સર્વ  
શ્રમણદુષ્કરકારકાઃ, ઢંઢણમુનિસ્તુ અતિદુષ્કરકારકઃ । શ્રીકૃષ્ણેનોક્તમ્—કથમ્?,  
શ્રીનેમિનાથસ્વામી ગ્રાહ—અલાભપરીપહસ્ય સમ્યક્ સહનેન । તતો ભક્તિભરેણ  
સંજાતરોમાશ્ચઃ શ્રીકૃષ્ણોઽવદત્—પ્રભો ! મહાત્મા ઢંઢણમુનિઃ ક્વ વિદ્યતે ? । શ્રી  
ભગવાનાહ—ભિક્ષાર્થં દ્વારકાપુરીં ગતઃ, નગર્યાં પ્રાવિશન્નેવ તં દ્રક્ષ્યસિ । તદ્વચનં  
શ્રુત્વા શ્રીકૃષ્ણઃ શ્રીનેમિજિનં પ્રણમ્ય ચલિતઃ । તતઃ પુરદ્વારે પ્રવિશન્ શ્રીકૃષ્ણઃ

કિસી દૂસરે કી નિન્દા હી કરતે । નિન્દા કરતે ભી તો અદીનમન  
હોકર અપને અશુભ કર્મ કી ।

एक दिन की बात है कि श्रीकृष्ण वासुदेव ने श्रीनेमिनाथप्रभु से  
पूछा कि भगवन् ! इन अठाहर हजार मुनियों में इस समय दुष्कर-  
कारक कौन है । प्रभु ने कहा सब ही श्रमण दुष्करकारक हैं परन्तु  
ढंढणमुनि विशेष रीति से दुष्करकारक है । वासुदेव ने कहा यह क्यों ?  
प्रभुने कहा अलाभपरीपह के सम्यक् सहन करने से । यह सुनते ही  
श्रीकृष्ण का समस्त शरीर भक्ति के आवेश से रोमांचित हो गया ।  
श्रीकृष्ण ने कहा—प्रभो ! महात्मा ढंढणमुनि इस समय कहां विराजमान  
हैं ? । प्रभु ने उत्तर में कहा कि वे इस समय भिक्षा के लिये द्वारिका  
में गये हैं । तुम्हें वहां जाते ही वे मिल जावेंगे । भगवान् की बात सुनकर  
वासुदेव श्रीकृष्ण नेमिनाथ भगवान् को वंदना करके वहांसे चलेगये ।

આ પરિસ્થિતિમાં પણ તેમના ચહેરા ઉપર ઉદ્દીગ્નતાનું ચિહ્ન દેખાતું નહીં.  
એ ઉદ્દીગ્નચિત્ત ન બનતા. અને બીજા કોઈની નિંદા પણ કરતા નહીં. નિંદા  
કરતા તો તે ફક્ત પોતાના અશુભ કર્મની.

એક દિવસની વાત છે કે, શ્રી કૃષ્ણ વાસુદેવે શ્રી નેમીનાથ પ્રભુને પૂછ્યું  
કે, ભગવન્ ! આ અઠારહજાર મુનિઓમાં આ સમયે દુષ્કર સ્થિતિ કોણ  
લોગવે છે ? પ્રભુએ કહ્યું કે, બધા શ્રમણ દુષ્કર કષ્ટ લોગવે છે છતાં ઢંઢણ-  
મુનિ આ બધાથી વધુ દુષ્કર સ્થિતિમાં છે. વાસુદેવે કહ્યું એમ કેમ ? પ્રભુએ કહ્યું કે,  
અલાભપરીપહને સમ્યક્ સહન કરવાથી. આ સાંભળતાં જ શ્રી કૃષ્ણનું શરીર  
ભકિતના આવેશથી રોમાંચિત બની ગયું અને કહ્યું, પ્રભુ ! મહાત્મા ઢંઢણ મુનિ  
આ સમયે ક્યાં બિરાજે છે ? પ્રભુએ ઉત્તરમાં કહ્યું કે, તે આ સમયે દ્વારિકામાં  
ભિક્ષા માટે ગયા છે, તમને ત્યાં જતાં જ ભેટો થઈ જશે. ભગવાનની આ વાત  
સાંભળી વાસુદેવ શ્રીકૃષ્ણ નેમીનાથ ભગવાનને વંદના કરી ત્યાંથી ચાલી નીકળ્યા.



છાયા—જ્ઞાત્વા ઉત્પત્તિતં દુઃખં, વેદનયા દુઃખાર્તિતઃ ।

અદીનઃ સ્થાપયેત્ પ્રજ્ઞાં, સ્પૃષ્ટસ્તત્ર અધિસહેત ॥ ૩૨ ॥

ટીકા—“ નચ્ચા ” ઇત્યાદિ ।

વેદનયા=વેદનીયકર્મણા દુઃખં=શ્વાસકાસાદિપોઢશત્રિધરોગસમ્બન્ધિકં કષ્ટમ્  
ઉત્પત્તિતમ્=ઉત્પન્નં ભવતીતિ જ્ઞાત્વા દુઃખાર્તિતઃ = ભાવિદુઃખશઙ્કયાઽઽર્તભાવં  
ગતઃ અદીનઃ = દૈન્યભાવરહિતઃ સન્ પ્રજ્ઞાં=બુદ્ધિ સ્થાપયેત્=ભાવિદુઃખશઙ્કયા  
ચલન્તીં બુદ્ધિ સ્થિરીકુર્યાત્ । તથા યદિ સાધુઃ સ્પૃષ્ટઃ=શ્વાસ-કાસ-જ્વર-દાહ-  
કુક્ષિશૂલ-ભગન્દરા-શૌંઽર્જીર્ણ-દષ્ટિરોગ-મૂર્ધશૂલા-રુચ્ય-ક્ષિશૂલ-કર્ણશૂલ-કણ્ઠ-

આહાર કે અલાભ સે અથવા અન્તપ્રાન્ત આહાર કે લાભ સે શરીર  
મેં રોગ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઇસલિયે સોલહવાં રોગપરીપહ સાધુ કો  
જીતના ચાહિયે, યહ વાત સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(વેયણાએ-વેદનયા) વેદનીય કર્મ કે ઉદય સે (દુઃખ-  
દુઃખ) શ્વાસ કાસ આદિ સોલહ પ્રકાર કે રોગ સંબંધી દુઃખ (ઉપ્પદ્ય-  
ઉત્પત્તિતમ્) ઉત્પન્ન હોતા હૈં એસા (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) જાનકર (દુહદિષ્ટ-  
દુઃખાર્તિતઃ) ભાવી દુઃખ કી આશંકા સે આર્ત ભાવ કો પ્રાપ્ત હુઆ  
મુનિ (અદીણો-અદીનઃ) દૈન્યભાવ સે રહિત હોકર (પન્નં ઠાવએ-પ્રજ્ઞાં  
સ્થાપયેત્) ભાવી દુઃખ કી આશંકા સે ચલિત હોતી હુઈં અપની બુદ્ધિ  
કો સ્થિર કરે । યદિ સાધુ (પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ) શ્વાસ, કાસ, જ્વર, દાહ,  
કુક્ષિશૂલ, ભગન્દર, અર્શ, અર્જીર્ણ, દષ્ટિરોગ મૂર્ધશૂલ, અરુચિ, નેત્રશૂલ

આહારના અલાભથી અથવા અહિતકર્તા (અપથ્ય) આહારથી શરીરમાં  
રોગ થવા સંભવ છે તેથી સોળમે રોગપરીપહ સાધુએ જીતવો જોઈએ એ  
વાત સૂત્રકાર કહે છે—‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—વેયણાએ-વેદનયા વેદનીય કર્મના ઉદયથી દુઃખ-દુઃખ શ્વાસ કાસ  
આદિ સોળ પ્રકારના રોગ સંબંધી દુઃખ ઉપ્પદ્ય-ઉત્પત્તિતમ્ ઉત્પન્ન થાય છે એવું  
નચ્ચા-જ્ઞાત્વા જાણીને દુહદિષ્ટ-દુઃખાર્તિતઃ ભાવી દુઃખની આશંકાથી આર્તભા-  
વને પ્રાપ્ત કરતાર મુનિ અદીણો-અદીનઃ દૈન્ય ભાવથી રહિત બની પન્નં ઠાવએ-પ્રજ્ઞાં  
સ્થાપયેત્ ભાવી દુઃખની આશંકાથી ચલિત થતી પોતાની બુદ્ધિને સ્થિર કરે.  
અગર જો સાધુ પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ ૧ શ્વાસ, ૨ કાસ, ૩ જ્વર, ૪ દાહ, ૫ બદગાંઠ,  
૬ ભગન્દર, ૭ હરસ, ૮ અજીર્ણ, ૯ દષ્ટિરોગ, ૧૦ મુર્ધશૂળ, ૧૧ અરુચિ,

કર્મ ક્ષીણમ્, અયં તુ વાસુદેવસ્ય લાભઃ, યતઃ શ્રીકૃષ્ણસ્ત્વાં વન્દિતવાન્, અતસ્તે મોદકાન્ શ્રેષ્ઠી દત્તવાન્ । તદ્વચનં શ્રુત્વા ઢંઢણમુનિઃ ‘ પરલાભો ન કલ્પતે ’ इत्युक्त्वा रागद्वेष-  
वर्जितो मूर्छारहितः सन् नगराद् बहिर्गत्वा प्रासुकस्थण्डिले मोदकान् यत्नया  
परिष्ठाप्य, तापदैर्ન્યાयकरणेन लाभान्तरायकर्म क्षपयन् क्षપकश्रेणिमारुह्य केवली  
जातः । एवमन्यैरपि मुनिभिरलाभपरीषदः सोढव्यः ॥ ३१ ॥

અલાભાદન્તપ્રાન્તાઘ્રાહારલાભાદ્ વા શરીરે રોગા ઉત્પદ્યન્તે, અતઃ પાંડરં  
રોગપરીપહજયં પ્રાહ—

मूलम्—नच्चोऽउपपन्नं दुःखं, वेयणाए दुहृष्टिः ।

अं दीणो ठावए पन्नं, पुंढो तंतथऽहियासंए ॥ ३२ ॥

મોદકોં કા લાભ તુમ્હેં હુઆ હૈ વહ લાભ તુમ્હારા નહીં હૈ કિન્તુ યહ  
લાભ વાસુદેવ કા હૈ, કારણ કિ તુમ કો કૃષ્ણ ને વંદના કી ફસલિયે  
સેઠ ને તુમકો યે મોદક વહરાયે, અતઃ તુમ્હારે ફસ લાભ મેં નિમિત્ત  
કૃષ્ણ હૈં । ઢંઢણમુનિ ને ભગવાન્ કે ફન વચનોં કો સુનકર “ પરલાભ  
મુશ્કે કલ્પતા નહીં હૈ ” એસા કહકર રાગદ્વેષ સે એવં મૂર્ચ્છા સે વર્જિત  
હોતે હુએ નગર કે બાહર જાકર કિસી પ્રાસુક ભૂમિ મેં ઉન મોદકોં કો  
યતનાપૂર્વક પરિઠવદિયા । તાપ એવં દીનતા કે નહીં કરને સે લાભાન્ત-  
રાયકર્મ કો નષ્ટ કરતે હુએ ઉન ઢંઢણમુનિને ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કર  
કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા । ફસી તરહ અન્યમુનિયોં કો બી અલાભ પરિ-  
પહ કો સહન કરના વાહિયે ॥ ૩૧ ॥

હજી સમય બાકી છે. લિક્ષામાં લાડવાનો લાભ તમને થયો છે તે લાભ તમારો નથી  
પરંતુ એ લાભ વાસુદેવનો છે. કારણ કે કૃષ્ણે તમારી વંદના કરી આ જોઈને  
શેઠ તમને લાડવા વહોરાવ્યા છે. આથી તમારા આ લાભમાં નિમિત્ત કૃષ્ણ બન્યા છે.  
ઢંઢણમુનિએ ભગવાનનાં આ વચન સાંભળી “ બીજાનો લાભ મને કલ્પતો  
નથી ” એમ કહી રાગદ્વેષ અને મૂર્ચ્છાથી વશીત રહી નગરની બહાર જઈ કેઈ  
પ્રાસુક ભૂમિમાં એ લાડવાને યતનાપૂર્વક છોડી દીધા. તપ અને લિક્ષામાં દીનતા ન  
કરવાથી લાભાન્તરાય કર્મને નષ્ટ કરતાં એ ઢંઢણમુનિએ ક્ષપકશ્રેણી પર આરો-  
હણ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. આ રીતે અન્ય મુનિઓએ પણ અલાભ  
પરીપહને સહન કરતા રહેવું જોઈ એ. ॥ ૩૧ ॥

छाया—ज्ञात्वा उत्पत्तितं दुःखं, वेदनया दुःखार्तितः ।

अदीनः स्थापयेत् प्रज्ञां, स्पृष्टस्तत्र अधिसहेत ॥ ३२ ॥

टीका—“ नच्चा ” इत्यादि ।

वेदनया=वेदनीयकर्मणा दुःखं=श्वासकासादिषोडशविधरोगसम्वन्धिकं कष्टम् उत्पत्तितम्=उत्पन्नं भवतीति ज्ञात्वा दुःखार्तितः = भाविदुःखशङ्कयाऽऽर्तभावं गतः अदीनः = दैन्यभावरहितः सन् प्रज्ञां=बुद्धिं स्थापयेत्=भाविदुःखशङ्कया चलन्तीं बुद्धिं स्थिरीकुर्यात् । तथा यदि साधुः स्पृष्टः=<sup>१</sup>श्वास-<sup>२</sup>कास-<sup>३</sup>ज्वर-<sup>४</sup>दाह-<sup>५</sup>कुक्षिशूल-<sup>६</sup>भगन्दरा-<sup>७</sup>अर्श-<sup>८</sup>अर्जीर्ण-<sup>९</sup>दृष्टिरोग-<sup>१०</sup>मूर्धशूल-<sup>११</sup>अरुच्य-<sup>१२</sup>क्षिशूल-<sup>१३</sup>कर्णशूल-<sup>१४</sup>कण्डू-

आहार के अलाभ से अथवा अन्तप्रान्त आहार के लाभ से शरीर में रोग उत्पन्न हो जाता है इसलिये सोलहवां रोगपरीपह साधु को जीतना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘नच्चा’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(वेयणाए-वेदनया) वेदनीय कर्म के उदय से (दुःखं-दुःखं) श्वास कास आदि सोलह प्रकार के रोग संबंधी दुःख (उप्पइयं-उत्पत्तितम्) उत्पन्न होता है ऐसा (नच्चा-ज्ञात्वा) जानकर (दुहट्टिए-दुःखार्तितः) भावी दुःख की आशङ्का से आर्त भाव को प्राप्त हुआ मुनि (अदीणो-अदीनः) दैन्यभाव से रहित होकर (पन्नं ठावए-प्रज्ञां स्थापयेत्) भावी दुःख की आशङ्का से चलित होती हुई अपनी बुद्धि को स्थिर करे । यदि साधु (पुट्ठो-स्पृष्टः) श्वास, कास, ज्वर, दाह, कुक्षिशूल, भगन्दर, अर्श, अर्जीर्ण, दृष्टिरोग मूर्धशूल, अरुचि, नेत्रशूल

आहारना अलाभथी अथवा अहितकर्ता (अपथ्य) आहारथी शरीरमां रोग थवा संबध छे तेथी सोणमे। रोगपरीपह साधुये एतवे। नेधं ये ये वात सूत्रकार कहे छे—‘नच्चा’ इत्यादि।

अन्वयार्थ—वेयणाए-वेदनया वेदनीय कर्मना उदयथी दुःखं-दुःखम् श्वास कास आदि सोलह प्रकारना रोग संबध्धी दुःख उप्पइयं-उत्पत्तितम् उत्पन्न थाय छे एवुं नच्चा-ज्ञात्वा ज्ञानीने दुहट्टिए-दुःखार्तितः भावी दुःखनी आशङ्काथी आर्तभावने प्राप्त करतार मुनि अदीणो-अदीनः दैन्य भावथी रहित अनि पन्नं ठावए-प्रज्ञां स्थापयेत् भावी दुःखनी आशङ्काथी चलीत थती पोतानी बुद्धिने स्थिर करे। अगर ने साधु पुट्ठो-स्पृष्टः १ श्वास, २ कास, ३ ज्वर, ४ दाह, ५ भगंगांड, ६ भगन्दर, ७ डरस, ८ अलुण्ठ, ९ दृष्टिरोग, १० मूर्धशूल, ११ अरुचि,

કર્મ ક્ષીણમ્, અયં તુ વાસુદેવસ્ય લાભઃ, યતઃ શ્રીકૃષ્ણસ્ત્વાં વન્દિતવાન્, અતસ્તે મોદકાન્  
 શ્રેષ્ઠી દત્તવાન્ । તદ્વચનં શ્રુત્વા ઢંઢણમુનિઃ ‘ પરલાભો ન કલ્પતે ’ ઇત્યુક્ત્વા રાગદ્વેષ-  
 વર્જિતો મૂર્છારહિતઃ સન્ નગરાદ્ વહિર્ગત્વા પ્રાસુકસ્થણ્ડિલે મોદકાન્ યત્નવાં  
 પરિષ્ઠાપ્ય, તાપદૈન્યાદ્યકરણેન લાભાન્તરાયકર્મ ક્ષપયન્ ક્ષપકશ્રેણિમાસ્ય કેવલી  
 જાતઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિરલાભપરીપહઃ સોઢ્યઃ ॥ ૩૧ ॥

અલાભાદન્તપ્રાન્તાધાહારલાભાદ્ વા શરીરે રોગા ઉત્પદ્યન્તે, અતઃ પાંડવો  
 રોગપરીપહજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—નચ્ચાં ઉપ્પદ્વૈયં દુઃસ્વં, વેયળાણ દુહટ્ટિયં ।

અંદીણો ઠાવણ પંન્નં, પુંઠો તંત્યઽહિયાસંણ ॥ ૩૨ ॥

મોદકોં કા લાભ તુમ્હે હુઆ હૈ વહ લાભ તુમ્હારા નહીં હૈ કિન્તુ યહ  
 લાભ વાસુદેવ કા હૈ, કારણ કિ તુમ કો કૃષ્ણ ને વંદના કી ફસલિયે  
 સેઠ ને તુમકો યે મોદક વહરાયે, અતઃ તુમ્હારે ફસ લાભ મેં નિમિત્ત  
 કૃષ્ણ હૈ । ઢંઢણમુનિ ને ભગવાન્ કે ફન વચનોં કો સુનકર “ પરલાભ  
 મુક્ષે કલ્પતા નહીં હૈ ” એસા કહકર રાગદ્વેષ સે એવં મૂચ્છાં સે વર્જિત  
 હોતે હુણ નગર કે બાહર જાકર કિસી પ્રાસુક ભૂમિ મેં ઉન મોદકોં કો  
 યતનાપૂર્વક પરિઠવદિયા । તાપ એવં દીનતા કે નહીં કરને સે લાભાન્ત-  
 રાયકર્મ કો નષ્ટ કરતે હુણ ઉન ઢંઢણમુનિને ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કર  
 કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરલિયા । ફસી તરહ અન્યમુનિયોં કો બી અલાભ પરિ-  
 પહ કો સહન કરના ચાહિયે ॥ ૩૧ ॥

હુણુ સમય બાકી છે. લિક્ષામાં લાડવાનો લાલ તમને થયો છે તે લાલ તમારો નથી  
 પરંતુ એ લાલ વાસુદેવનો છે. કારણ કે કૃષ્ણે તમારી વંદના કરી આ જોઈને  
 શેઠ તમને લાડવા વહોરાવ્યા છે. આથી તમારા આ લાલમાં નિમિત્ત કૃષ્ણ બન્યા છે.  
 ઢંઢણમુનિએ ભગવાનનાં આ વચન સાંભળી “ બીજાનો લાલ મને કલ્પતો  
 નથી ” એમ કહી રાગદ્વેષ અને મૂર્છાથી વર્જિત રહી નગરની બહાર જઈ કોઈ  
 પ્રાસુક ભૂમિમાં એ લાડવાને યતનાપૂર્વક છોડી દીધા. તપ અને લિક્ષામાં દીનતા ન  
 કરવાથી લાભાન્તરાય કર્મને નષ્ટ કરતાં એ ઢંઢણમુનિએ ક્ષપકશ્રેણી પર આરો-  
 હણ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. આ રીતે અન્ય મુનિઓએ પણ અલાભ  
 પરીપહને સહન કરતા રહેવું જોઈ એ. ॥ ૩૧ ॥

छाया—ज्ञात्वा उत्पत्तितं दुःखं, वेदनया दुःखार्तितः ।

अदीनः स्थापयेत् प्रज्ञां, स्पृष्टस्तत्र अधिसहेत ॥ ३२ ॥

टीका—“ नच्चा ” इत्यादि ।

वेदनया=वेदनीयकर्मणा दुःखं=श्वासकासादिषोडशविधरोगसम्बन्धिकं कष्टम् उत्पत्तितम्=उत्पन्नं भवतीति ज्ञात्वा दुःखार्तितः = भाविदुःखशङ्क्याऽऽर्तभावं गतः अदीनः = दैन्यभावरहितः सन् प्रज्ञां=बुद्धिं स्थापयेत्=भाविदुःखशङ्क्या चलन्तीं बुद्धिं स्थिरीकुर्यात् । तथा यदि साधुः स्पृष्टः=<sup>१</sup>श्वास-<sup>२</sup>कास-<sup>३</sup>ज्वर-<sup>४</sup>दाह-<sup>५</sup>कुक्षिशूल-<sup>६</sup>भगन्दर-<sup>७</sup>अर्श-<sup>८</sup>अजीर्ण-<sup>९</sup>दृष्टिरोग-<sup>१०</sup>मूर्धशूल-<sup>११</sup>अरुचि-<sup>१२</sup>क्षिशूल-<sup>१३</sup>कर्णशूल-<sup>१४</sup>कण्ठ-

आहार के अलाभ से अथवा अन्तर्ग्रन्थ आहार के लाभ से शरीर में रोग उत्पन्न हो जाता है इसलिये सोलहवां रोगपरीपह साधु को जीतना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘नच्चा’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(वेद्यणाए-वेदनया) वेदनीय कर्म के उदय से (दुःखं-दुःखं) श्वास कास आदि सोलह प्रकार के रोग संबंधी दुःख (उत्पद्यं-उत्पत्तितम्) उत्पन्न होता है ऐसा (नच्चा-ज्ञात्वा) जानकर (दुहृष्टि-दुःखार्तितः) भावी दुःख की आशङ्का से आर्त भाव को प्राप्त हुआ मुनि (अदीणो-अदीनः) दैन्यभाव से रहित होकर (पन्नं ठावए-प्रज्ञां स्थापयेत्) भावी दुःख की आशङ्का से चलित होती हुई अपनी बुद्धि को स्थिर करे । यदि साधु (पुटो-स्पृष्टः) श्वास, कास, ज्वर, दाह, कुक्षिशूल, भगन्दर, अर्श, अजीर्ण, दृष्टिरोग मूर्धशूल, अरुचि, नेत्रशूल

आहारना अलाभथी अथवा अहितकर्ता (अपथ्य) आहारथी शरीरमां रोग यथा संभव छे तेही सोणमे रोगपरीपह साधुअे छतये लेअे अे पात सूत्रकार कहे छे—‘नच्चा’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—वेद्यणाए-वेदनया वेदनीय कर्मना उदयथी दुःखं-दुःखम् श्वास कास आदि सोण प्रकारना रोग संबंधी दुःख उत्पद्यं-उत्पत्तितम् उत्पन्न आय छे अेषु नच्चा-ज्ञात्वा ज्ञानीने दुहृष्टि-दुःखार्तितः भावी दुःखनी आशङ्काथी आर्तभा-वने प्राप्त करनार मुनि अदीणो-अदीनः दैन्य भावथी रहित यनी पन्नं ठावए-प्रज्ञां स्थापयेत् भावी दुःखनी आशङ्काथी चलीत यती पोतानी बुद्धिने स्थिर करे. अगर ले साधु पुटो-स्पृष्टः १ श्वास, २ कास, ३ ज्वर, ४ दाह, ५ अङ्गुलि, ६ भगन्दर, ७ अरुचि, ८ दृष्टिरोग, ९ मूर्धशूल, १० अरुचि,

કર્મ ક્ષીણમ્, અયં તુ વાસુદેવસ્ય લાભઃ, યતઃ શ્રીકૃષ્ણસ્ત્વાં વન્દિતવાન્, અતસ્તે મોદકાન્  
 શ્રેષ્ઠી દત્તવાન્ । તદ્વચનં શ્રુત્વા ઢંઢણમુનિઃ ‘ પરલાભો ન કલ્પતે ’ इत्युक्त्वा रागद्वेष-  
 वर्जितो मूर्छारहितः सन् नगराद् वहिर्गत्वा प्रासुकस्थण्डिले મોદકાન્ યત્નયા  
 પરિઘાપ્ય, તાપદૈન્યાદ્યકરણેન લાભાન્તરાયકર્મ ક્ષપયન્ ક્ષપકથ્રેણિમાસ્ત્ય કેવળી  
 જાતઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિરલાભપરીપઢઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૩૧ ॥

અલાભાદન્તપ્રાન્તાઘાહારલાભાદ્ વા શરીરે રોગા વત્પદ્યન્તે, અતઃ પાંડશ્ચ  
 રોગપરીપહજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—નચ્ચૌ ઉપ્પદ્વયં દુઃખં, વેયળાઐ દુહટ્ઠિં ॥

અંદીળો ઠાવણ પૈન્નં, પુંઢો તેંતથઽહિયાસં ॥ ૩૨ ॥

મોદકોં કા લાભ તુમ્હેં હુઆ હૈ વહ લાભ તુમ્હારા નહીં હૈ કિન્તુ યહ  
 લાભ વાસુદેવ કા હૈ, કારણ કિ તુમ કો કૃષ્ણ ને વંદના કી હસલિયે  
 સેઠ ને તુમકો યે મોદક વહરાયે, અતઃ તુમ્હારે હસ લાભ મેં નિમિત્ત  
 કૃષ્ણ હૈં । ઢંઢણમુનિ ને ભગવાન્ કે હન વચનોં કો સુનકર “ પરલાભ  
 મુક્ષે કલ્પતા નહીં હૈ ” એસા કહકર રાગદ્વેષ સે એવં મૂચ્છા સે વર્જિત  
 હોતે હુએ નગર કે બાહર જાકર કિસી પ્રાસુક ભૂમિ મેં ઉન મોદકોં કો  
 યતનાપૂર્વક પરિઠવદિયા । તાપ એવં દીનતા કે નહીં કરને સે લાભાન્ત-  
 રાયકર્મ કો નષ્ટ કરતે હુએ ઉન ઢંઢણમુનિને ક્ષપકથ્રેણી પર આરોહણ કર  
 કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરલિયા । હસી તરહ અન્યમુનિયોં કો ભી અલાભ પરિ-  
 પહ કો સહન કરના ચાહિયે ॥ ૩૧ ॥

હુણુ સમય બાકી છે. લિક્ષામાં લાડવાનો લાભ તમને થયો છે તે લાભ તમારો નથી  
 પરંતુ એ લાભ વાસુદેવનો છે. કારણ કે કૃષ્ણે તમારી વંદના કરી આ જોઈને  
 શેઠે તમને લાડવા વહોરાવ્યા છે. આથી તમારા આ લાભમાં નિમિત્ત કૃષ્ણ બન્યા છે.  
 ઢંઢણમુનિએ ભગવાનનાં આ વચન સાંભળી “ બીજાનો લાભ મને કલ્પતો  
 નથી ” એમ કહી રાગદ્વેષ અને મૂર્છાથી વણ્ણત રહી નગરની બહાર જઈ કોઈ  
 પ્રાસુક ભૂમિમાં એ લાડવાને યતનાપૂર્વક છોડી દીધા. તપ અને લિક્ષામાં દીનતા ન  
 કરવાથી લાભાન્તરાય કર્મને નષ્ટ કરતાં એ ઢંઢણમુનિએ ક્ષપકથ્રેણી પર આરો-  
 હણ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. આ રીતે અન્ય મુનિઓએ પણ અલાભ  
 પરીપહને સહન કરતા રહેવું જોઈ એ. ॥ ૩૧ ॥



રોગાક્રાન્તસ્ય મુનેઃ કર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—તેગિચ્છં નાભિનંદિજ્ઞા, સંચિવ્વસ્તગવેસેષ ।

એયં સું તસ્સે સામન્નં, જં નં કુજ્ઞેના નં કારેણ ॥૩૩॥

છાયા—ચિકિત્સાં નાભિનન્દેત્, સંતિષ્ઠેત આત્મગવેષકઃ ।

एतत् 'सु' तस्य श्रामण्यं, यन्न कुर्यात् न कारयेत् ॥३३॥

ટીકા—‘તેગિચ્છં’ इत्यादि ।

मुनिः, चिकित्सां=रोगप्रतीकारं, नाभिनन्देत्=नानुमोदेत् । अनुमतिनिषेधा-  
चिकित्सायाः करणं कारणं तु दूरत एव प्रतिषिद्धम् । किं तु आत्मगवेषकः=आत्मा-  
नम्—आत्मकल्याणं गवेषयति—संयमरक्षणेनेति आत्मगवेषकः स्वात्मकल्याणार्थं चारि-  
त्रपालकः सन् संतिष्ठेत्=समाधिना तिष्ठेत् । ‘सु’=यस्मात्, एतत् तस्य=श्रम-

कुछ मुझे रोगादिक हो रहे हैं वे सब मेरे ही अशुभ कर्मोंके फल हैं” ॥३२॥

રોગાક્રાન્ત મુનિ કે કર્તવ્ય કો સૂત્રકાર હસ ગાથાદ્વારા કહતે હૈ—

‘તેગિચ્છં’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—मुनि (तेगिचछं—चिकित्साम्) रोग के प्रतीकार की (नाभि-  
नंदिज्ज्ञा—न अभिनन्देत्) अनुमोदना नहीं करे । मुनि जब चिकित्सा तक  
की अनुमोदना नहीं करता है तो उसकी चिकित्सा करना और कराना तो  
बहुत दूरकी बात है । किन्तु (अत्तागवेसए—आत्मगवेषकः) जो संयम  
की रक्षा से आत्मकल्याण का गवेषक है उसका कर्तव्य है कि वह  
(संचिक्खे—संतिष्ठेत्) रोगादिक अवस्था में भी समाधि भाव से रहे ।  
(सु—यस्मात्) क्योंकि (तस्स—तस्य) उस मुनि का (एयं—एतत्) यही

“આ જે કાંઈ મને રોગ આદિ થયેલ છે તે બધાં મારા અશુભ કર્મોનું ફળ છે.” ॥ ૩૨ ॥

રોગાક્રાન્ત મુનિનું કર્તવ્ય શું છે તે સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા કહે છે.  
‘તેગિચ્છં’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—मुनि तेगिचछं—चिकित्साम् रोगना प्रतिकारनी नाभिनंदिज्ज्ञा-  
न अभिनन्देत् अनुमोदना न करे. मुनि जयरे चिकित्सा सुधीनी अनुमोदना नहीं  
करता त्यारे तेनी चिकित्सा करवी अथवा कराववी घण्टी दूरनी बात છે अत्तागवेसए  
—आत्मगवेषकः જે સંયમની રક્ષાદ્વારા આત્મકલ્યાણના ગવેષક હોય છે તેનું કર્તવ્ય  
છે કે, સંચિક્ખે—સંતિષ્ઠેત્ રોગાદિક અવસ્થામાં સમાધીભાવથી રહે સુ—યસ્માત્  
કેમ કે, તસ્સ—તસ્ય એ મુનિનું એયં—એતત્ એજ સામણ્ય—શ્રામણ્યમ્ શ્રમણપણું છે

દરોગ<sup>૧૫</sup> - કુષ્ઠ<sup>૧૬</sup> - તિ પોડશવિધરોગાતઙ્કૃરાક્રાન્તો ભવેત્, તર્હિ તત્ર=તસ્મિન્ સમયે સ સાધુઃ તાન્ રોગાતઙ્ક્રાન્ અધિસહેત-“યદધુનાઽહં વ્યાધિના વાધ્યમાનોઽસ્મિ તદેતન્મમ સ્વસ્યૈવ પૂર્વકૃતકર્મણઃ ફલમ્” ઇતિ સમભાવમવલમ્બ્ય રોગપરીપહ-સહનં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥ ૩૨ ॥

કર્ણશૂલ, કણ્ઠ-ઘ્રજુહટ, ઉદરરોગ, ઓર કુષ્ઠ, ઇન સોલહ પ્રકાર કે રોગોં સે આક્રાન્ત હો, તો (તત્થ-તત્ર) ઉસ સમય વહ સાધુ (અહિ-યાસણ-અધિસહેત) ઉન રોગોં કો શાન્તિપૂર્વક સહન કરે અર્થાત્—‘મૈં જો ઇસ સમય વ્યાધિ સે આક્રાન્ત હું યહ મેરે પૂર્વભવ મૈં કિયે હુઈ કર્મોં કા ફલ હૈ’ એસા વિચાર કર મુનિ રોગપરીપહકો સમભાવ સે સહન કરે ॥ ૩૨ ॥

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા કે દ્વારા સૂત્રકાર સાધુ કો રોગપરીપહ સહન કરને કા ઉપદેશ દે રહે હૈં । વે કહતે હૈં કિ-સંસારી એવં મુનિયોં મૈં રોગોં કો સહન કરને કી વિચારધારા મૈં વડા અન્તર રહતા હૈં । સંસારી તો પ્રાયઃ રોગોં કે ઉત્પન્ન હોતે હી અધીર હો જાતે હૈં તથા સંયમી જન ઉનકા સામ્હના વડે હી ધર્મ સે કરતે હૈં । રોગોં સે પીડિત હોને પર ભી સાધુ કો અપની બુદ્ધિ અસ્થિર બનાની નહીં ચાહિયે-પ્રત્યુત અસ્થિર હોને પર ઉસે માનસિક બલ દ્વારા સ્થિર કર ધર્મધ્યાન મૈં લીન બનાયે રસ્તના ચાહિયે । તથા વિચાર ભી એસા કરના ચાહિયે-“યે જો

૧૨ નેત્રશૂળ, ૧૩ કર્ણશૂળ, ૧૪ ખસ ખુજલી, ૧૫ ઉદરરોગ, અને ૧૬ કોઢ. આ સોળ પ્રકારના રોગથી વ્યાકુળતા થાય તો તત્થ-તત્ર એ સમયે તે સાધુ અહિયાસણ-અધિસહેત એ રોગને શાંતિપૂર્વક સહન કરે. અર્થાત્-‘હું આ સમયે વ્યાધિથી પીડિત થઈ રહ્યો છું’ એ મારા પૂર્વભવનાં કરેલાં કર્મોના બદલો છે” એવો વિચાર કરી મુનિ રોગને સમભાવથી સહન કરે. ॥ ૩૨ ॥

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર સાધુને રોગપરીપહ સહન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે, તેઓ કહે છે કે, -સંસારીઓ અને મુનિઓને રોગોમાં તેને સહન કરવાની વિચારધારામાં ભારે અંતર હોય છે. સંસારી તો રોગોને ઉત્પન્ન થતાં જ અધિરા થઈ જાય છે ત્યારે સંયમી જન તેનો અત્યંત ધૈર્યથી સામનો કરે છે. રોગથી પીડિત હોવા છતાં પણ સાધુએ પોતાની બુદ્ધિને અસ્થિર નહીં થવા દેવી જોઈએ. પરંતુ અસ્થિર થાય ત્યારે તેને માનસિક બળદ્વારા સ્થિર કરીને લીન બનાવી રાખવી જોઈએ. અને વિચાર પણ એવો જોઈએ

કૃતમ્ । તસ્ય કાલવૈશિકસ્ય જ્યેષ્ઠા મગિની જિતશત્રુભૂપતિના મુદ્ગશૈલનામકનગરા-  
ધિપાય હતશત્રુનામ્ને નૃપાય પ્રદત્તા ।

અન્યદા કદાચિત્ સ કાલવૈશિકકુમારો નિશિ શૃગાલશબ્દં શ્રુત્વા સ્વસેવકાન્  
પૃચ્છતિ—કસ્યાયં શબ્દઃ શ્રૂયતે ?, સેવકા અબ્રુવન્—શૃગાલસ્ય, તતઃ કુમારો વ્રૂતે તં  
વદ્ધ્વા મત્સમીપે સમાનયત, તૈઃ શૃગાલ આનીતઃ । ક્રીડનપ્રિયોઽસૌ કુમારસ્તં  
યપ્ત્યા પુનઃ પુનસ્તાડયત્તિ । કાલવૈશિકકુમારેણ તાડ્યમાનોઽસૌ શૃગાલઃ ‘સ્વિ-સ્વી’  
શબ્દં કુર્વન્નુચ્ચૈરાક્રન્દતિ । તં શબ્દં શ્રુત્વાઽસૌ સહપં હસતિ । એવં તાડિતઃ શૃગાલઃ  
કાલં કૃત્વા અકામનિર્જરયા વ્યન્તરદેવો જાતઃ ।

જાય કાલવૈશિક કી એક વડી વહિન થી જિસકા વ્યાહ રાજા ને મુદ્ગ-  
શૈલ નામક નગર કે અધિપતિ હતશત્રુ કે સાથ કિયા થા ।

એક દિન કી વાત હૈ કિ કાલવૈશિકકુમાર ને રાત્રિ મેં શૃગાલ  
કા શબ્દ સુનકર અપને સેવકોં સે પૂછા કિ યહ શબ્દ કિસકા સુનાઈ  
દે રહા હૈ ? નૌકરોં ને કહા કિ યહ શબ્દ શૃગાલ કા સુનાઈ પડ રહા હૈ ।  
કુમાર ને કહા ડસકો વાંધકર મેરે પાસ લે આઓ । તવ વે શૃગાલ  
કો વાંધકર લે આયે ઓર કાલવૈશિકકુમાર કો સોંપ દિયા । કુમાર  
લેલને કા શોકિન થા ઇસલિયે વહ શૃગાલ કો વારં લકડી કા ઘોડા  
મારતા થા । જૈસેર કુમાર ડસકો લકડી કા ઘોડા મારતા થા તૈસેર  
વહ દુઃખિત હોકર “સ્વી સ્વી” શબ્દ કરતા હુઆ જોર સે ચિહ્લાતા  
થા । ડસકે શબ્દ કો સુનકર કુમાર વડા હર્ષિત હોતા થા ઓર વહ  
સ્વૂ હસતા થા । ઇસ પ્રકાર કુમારસે તાડિત વહ શૃગાલ મર કર અકામ  
નિર્જરા સે વ્યન્તરદેવ હો ગયા ।

એની લોકોને જાણ થાય. કાલવૈશિકને એક મોટી બહેન હતી, જેનો વિવાહ  
રાજાએ મુદ્ગશૈલ નગરના અધિપતિ હતશત્રુ રાજા બેડે કર્યો હતો.

એક સમયની વાત છે કે કાલવૈશિક કુમારે રાત્રિના વખતે શીયાળનો  
શબ્દ સાંભળી પોતાના સેવકોને પૂછ્યું કે, આ શબ્દ શેનો સંભળાઈ રહ્યો છે ?  
સેવકોએ કહ્યું કે, આ શબ્દ શીયાળનો સંભળાય છે. કુમારે કહ્યું કે તેને બાંધીને મારી  
પાસે લઈ આવો. સેવકે તેને બાંધીને કુમાર પાસે લઈ આવ્યા. અને કાલવૈશિક  
ને સાંપી દીધું. કુમાર ખેલવાનો ભારે શોખીન હતો. એટલે તે શીયાળને વારંવાર  
લાકડીના ગોદા મારવા લાગ્યો. જેમ જેમ કુમાર તેને લાકડીના ગોદા મારવા  
લાગ્યો તેમ તેમ તે દુઃખી થઈને ખી....ખી....શબ્દ કરીને ભેરથી ચીડાવા  
લાગ્યું. તેના શબ્દો સાંભળીને કુમાર ઘણો ખુશી થતો હતો અને ભેરથી હસતો  
હતો. આ પ્રમાણે કુમારથી મારવામાં આવેલ તે શૃગાલ મરીને અકામ નિર્જ-  
રાથી વ્યંતરદેવ થઈ ગયું.

ણસ્ય, શ્રામણ્યં=શ્રમણધર્મઃ, યત્-ચિકિત્સાં સ્વયં ન કુર્યાત્, અન્યેન વા ન કારયેત્, ઉપલક્ષણત્વાત્ કુર્વન્તમન્યં નાનુમોદેત, इत्यपि बोध्यम् । इदं जिनकल्पिकापेक्षयाऽभिहितम् । स्थविरकल्पापेक्षया तु सावधचिकित्सा वर्जिता, निरवधचिकित्साया अपि ऐच्छिकं वर्जनम् ।

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

मथुरानगर्यां शत्रुविनासी जितशत्रुनामा भूपतिरासीत् । तेन सर्वाङ्गसुन्दरी कालानाम्नी वेश्या स्यान्तःपुरे स्थापिता । तस्यां राज्ञः पुत्रो जातः । तेन जितशत्रु भूपतिना कालवेश्याया अङ्गजातोऽयमिति हेतोस्तस्य “कालवैशिक” इति नाम

તો (સામણ્યં-શ્રામણ્યમ્) શ્રમણપના છે (જં ન કુજ્જા ન કારણ-યત્ ન કુર્યાત્ ન કારયેત્) જો વહ સ્વયં મી ચિકિત્સા ન કરે ઓર ન દસરોં સે કરાવે । તથા ઉપલક્ષણ સે કરને વાલે દસરે કી અનુમોદના ન કરે । યહ જો હસ પ્રકાર કહા ગયા હૈ વહ જિનકલ્પી સાધુઓં કી અપેક્ષાસે કહા ગયા હૈ । સ્થવિરકલ્પિયોં કી અપેક્ષા તો સાવધ ચિકિત્સા હી વર્જિત હૈ । નિરવધચિકિત્સા યાહે તો વે કરાવે ન યાહે નહીં કરાવે યહ ઉનકી ઇચ્છા પર નિર્ભર હૈ ।

દૃષ્ટાન્ત—મથુરા નગરી મેં શત્રુ કો ત્રાસ પહુંચાને વાલા જિતશત્રુ નામ કા એક રાજા થા । ઉસને કાલ નામ કી એક સર્વાંગ સુન્દરી વેશ્યા કો અપને અન્તઃપુર મેં રખી થી । ઉસ વેશ્યા કે એક પુત્ર ઉત્પન્ન હુઆ । રાજાને હસ પુત્ર કા નામ હસ ખ્યાલ સે કાલવૈશિક રખા કિ લોગોં મેં હસકી પ્રસિદ્ધિ “યહ કાલવેશ્યા સે પૈદા હુઆ હૈ” હસ રૂપ સે હો

એ તે જં નકુજ્જા ન કારણ-યત્ ન કુર્યાત્ ન કારયેત્ સ્વયં ચિકિત્સા ન કરે અગર બીજાઓ પાસે ન કરાવે, તથા ઉપલક્ષણથી બીજા કરવાવાળાઓની અનુમોદના ન કરે. એજ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલ છે તે જનકલ્પી સાધુઓની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ છે. સ્થવિરકલ્પિઓની અપેક્ષાએ તો સાવધ ચિકિત્સા જ વર્જિત છે. નિરવધ ચિકિત્સા યાહે તો તે કરાવે અને ન યાહે તો ન કરાવે. તે તેની ઇચ્છા પર નિર્ભર છે.

દૃષ્ટાન્ત—મથુરા નગરીમાં શત્રુઓને ત્રાસ પહોંચાડવાવાળા જિતશત્રુ નામના એક રાજા હતા. તેણે કાલ નામની એક સર્વાંગ સુંદર વેશ્યાને પોતાના અન્તઃપુરમાં રાખેલ હતી. તે વેશ્યાથી તેને એક પુત્ર ઉત્પન્ન થયો. રાજાએ એ પુત્રનું નામ એ ખ્યાલથી કાલવૈશિક રાખ્યું કે એ કાલ વેશ્યાથી પેદા થયેલ છે.



ક્રમેણ યૌવને વયસિ પ્રાપ્તે સ કાલઐશ્વિકકુમારઃ કદાચિત્ પ્રભાસનામકાચાર્યસ્ય સમીપે ધર્મ શ્રુત્વા જાતવૈરાગ્યઃ પ્રવ્રજ્યાં મૃદીતવાન્ । સ ચૈકદા એકાકિવિહારપ્રતિમાં પ્રતિપન્નો ગ્રામાનુગામં વિહરન્ મુદ્ગશૈલારૂપં નગરં ગતઃ । તદા તસ્ય મહામુનેર્શોરોગઃ સમુત્પન્નઃ । સ તેન વ્યાધિના પીડ્યમાનોઽપિ ધીરમાનસો મનસાઽપિ ચિકિત્સાં નેચ્છતિ । ચિકિત્સાયાઃ કરણં કારણં તુ તેન દૂરત્ત્વ એવ નિરાકૃતમ્ । ‘વ્યાધિઃ કદા નિવર્તિષ્યતે’ ઇત્યપિ ન ચિન્તિતમ્, કિંતુ ‘સ્વકૃત-કર્મણઃ ફલમેત’દિતિ ભાવયન્નસૌ રોગજનિતવેદનાં સહતે સ્મ । એકસ્મિન્ દિને

જય કુમાર યૌવન અવસ્થા મેં આયા તો ઉસને પ્રભાસ નામક આચાર્ય કે પાસ ધાર્મિક ઉપદેશ સુનકર વિષયોં સે વિરક્ત હો દીક્ષા ધારણ કરલી । શ્રુતજ્ઞાનકા સૂચ અભ્યાસ કિયા । જય વે મુનિ આગમિક જ્ઞાન સે વિશિષ્ટ જ્ઞાની બન ચુકે તો ડઢ્ઢોં ને એકાકિવિહાર કી પ્રતિમા કો અંગીકાર કર ગ્રામાનુગામ વિહાર કરના પ્રારંભ કિયા । વિહાર કરતેર યે એક દિન મુદ્ગશૈલ નામક નગરી મેં આયે । વહાં ડઢ્ઢેં ઘવાસીર કી બીમારી ઉત્પન્ન હો ગઈ ઇસસે ડઢ્ઢેં અધિકાધિક કષ્ટ હુઆ તો બી ઉસ વ્યાધિ કી ચિકિત્સા કે લિયે ડનકા મન બી નહીં હુઆ । ‘ઇસ વ્યાધિ કી નિવૃત્તિ કય હોગી’ ઇતના તક બી સંકલ્પ ડનકે દિલ મેં નહીં ડઢા, પર યહ વિચાર અવશ્ય હુઆ કિ યહ સ્વકૃત-અપને કિયે હુવે કર્મ કા ફલ હૈ । ઇસ પ્રકાર કે દૃઢ અધ્યવસાય સે ડઢ્ઢોં ને રોગજનિત વેદના કો વડી હી શૂરવીરતા સે સહન કિયા । એક દિન કી

કુમાર બ્યારે યૌવન અવસ્થામાં આવ્યો ત્યારે પ્રભાસ નામના આચાર્યની પાસેથી ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળીને વિષયોથી વિરક્ત થઈને દીક્ષા ધારણ કરી શ્રુતજ્ઞાનનો ખૂબ અભ્યાસ કર્યો. બ્યારે તે મુનિ આગમિકજ્ઞાનથી વિશિષ્ટ જ્ઞાની બની ચુક્યા ત્યારે તેમણે એકાકી વિહારની પ્રતિમાને અંગીકાર કરી એક ગામથી બીજે ગામ વિહાર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. વિહાર કરતાં કરતાં એક દિવસ મુદ્ગશૈલનગરમાં આવ્યા. ત્યાં તેમને હરસની બીમારી ઉત્પન્ન થઈ તેનાથી તેમને અત્યંત કષ્ટ થયું. પરંતુ આ વ્યાધિની ચિકિત્સા કરાવવાની ઇચ્છા પણ તેમને થઈ નહીં. આ વ્યાધિ ક્યારે મટશે, એવો સંકલ્પ પણ તેના દિલમાં ઉઠ્યો નહીં. પરંતુ એ વિચાર તેમના મનમાં અવશ્ય થયો કે, પોતાના કરેલા કર્મનું આ ફળ છે. આ પ્રમાણે દૃઢ અધ્યવસાયથી તેઓ રોગથી ઉત્પન્ન થયેલી વેદનાને ખૂબ શૂરવીરતાથી સહન કરતા હતા.



मुनेर्घोरसुपसर्गं कर्तुं कर्णकठोरं नीरसं शब्दमहर्निशं निरन्तरं करोति । स च व्यन्तर-  
देवस्तं मुनिं शृगालवधरूपं पापं स्मारयति । तदा स तां शृगालीकृतां तथाऽर्शोरोग-  
कृतां च घोरां दुःसहामुज्ज्वलां वेदनां धैर्येण समभावेन च सहमान आसीत् ।  
एवं पञ्चदश दिनानि घोरपरीपहोपसर्गं परिपह्य स कालवैशिकमुनिः शुक्लध्यानेन  
केवली भूत्वा कर्मक्षयं कृत्वा मोक्षपदं प्राप । एवमन्यैरपि मुनिभिः समभावेन रोग-  
परीपहः सहनीयः ॥ ३३ ॥

अथ सप्तदशं तृणस्पर्शपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—अचेलगस्स ल्हंहस्स, संजयस्सं तव्वस्सिणो ।

तणेसु सयमाणस्स, होज्जा गाँयविराहणा ॥३४॥

छाया—अचेलकस्य रुक्षस्य, संयतस्य तपस्विनः ।

तृणेषु शयानस्य, भवति गात्रविराधना ॥ ३४ ॥

तीक्ष्ण दांतों द्वारा काटने लगी, तथा काट खाने के बाद फिर वह  
उनके चारों ओर घूमर कर कर्णकटुक चिरस शब्द करने लगी । इस  
प्रकार वह तब तक करती रही कि जय तक उनका मृत्यु न हुआ । उस  
व्यन्तरदेव ने भी मुनि के लिये शृगाल को वध करने रूप पाप का  
स्मरण करा कर दुःखित करने की भी खूब चेटा की । इस प्रकार  
उन मुनिराज ने उस शृगाली की की हुई, व्यन्तरदेव की की हुई, तथा  
बचाओर की घोर दुःसह वेदना को धैर्यपूर्वक समभाव से सहते हुए  
पन्द्रह दिन व्यतीत कर दिये । पश्चात् शुक्लध्यान के प्रभाव से केवली हो  
कर सर्व कर्मक्षय कर के मुक्ति को प्राप्त किया । इसी तरह अन्य मुनिजनों  
को भी समभाव से रोगपरीपह को सहन करना चाहिये ॥ ३३ ॥

तेनी चारे आणुअे धुमीने डानने अग्रिय अेवा उक्कंश शब्दो ओलवा लाग्युं. आ  
प्रकारे ते त्यां सुधी करतुं रहुं के, अयां सुधी तेनुं मृत्यु न थयुं, अे व्यंतर-  
देवे पणु मुनि भाटे शृगालना वध करवाइप पापनुं स्मरण करी, करानीने  
दुःखीत करवानी भूण अेष्टा करी, आ प्रकारे ते मुनिराजे शृगालीनी भारइत  
थयेली अने व्यंतरदेवे करेली अने डरसनी घोर दुःसह वेदनाने धैर्यपूर्वक  
समभावथी सडेतां १५ दिवस व्यतीत कर्या पछी शुक्लध्यानना प्रभावथी  
केवली अनी सर्व कर्म क्षय करी मुक्ति पाव्या. आवी रीते अन्य मुनिज-  
नोअे समभावथी रोगपरीपह सहन करवो ओधअे. ॥ ३३ ॥

અથ યઃ શૃગાલજીવો કાલવૈશિકેન સંસારાવસ્થાયાં હતઃ, તસ્ય વ્યન્તરદેવમર્મ પ્રાપ્તસ્ય તદાનીં વિમાને ગચ્છતસ્ત્ર પાદપોપગમનાય સંસ્થિતસ્ય મુનેરુપરિ ગગને વિમાનગતિઃ પ્રતિરુદ્ધા, તદા સ વ્યન્તરદેવોઽવધિના પૂર્વભવવૃત્તં જ્ઞાત્વા વૈરનિર્યાતને-  
ચ્છયા તત્ર કાલવૈશિકમુનેઃ સમીપે વિકુર્વગશક્તયા સ શિશુકા શૃગાલી વિકુર્વિતા ।  
સા શૃગાલી 'સ્વિ-સ્વિ' ઇતિ શબ્દં કુર્વતી તસ્ય મહામુનેર્ગાત્રં દન્તૈર્દશતિ । તસ્ય

હતને મેં એકવ્યન્તરદેવ - જો પૂર્વભવમેં શૃગાલ થા, જિસકા  
इन मुनि ने अपनी कुमारावस्था में ताड़न तर्जन आदि किया था, और जो  
इनके ताड़न तर्जन आदि के कारण अकामनिर्जरा से मर कर व्यन्तर  
हो गया था, वह व्यन्तरदेव-विमानमें बैठ कर कहीं दूसरी जगह जा  
रहा था उसका विमान वहां आ पहुँचा, जहां ये मुनिराज पादपोप-  
गमन संधारा धारण किये हुए थे । उनके ऊपर से होकर जाने में उस  
विमान की गति रुक गई । विमान को जातेर रुका हुआ देखकर  
व्यन्तरदेव को बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने अवधिज्ञान से विमान की  
गति के रुकने में कारण मुनिराज का वह समस्त पूर्व भव का वृत्तान्त  
जान लिया । उससे मुनि के ऊपर बहुत क्रोध उसका बढ़ने लगा ।  
अपने पूर्वभव में मृत्यु के कारण मुनि को जानकर उस व्यन्तरदेव ने  
बदला लेने के अभिप्राय से उन मुनिराज के समीप अपनी वैक्रिय  
शक्तिके द्वारा एक बच्चे सहित शृगाली बनाकर खड़ी कर दी । उस शृगा-  
लीने 'स्वी-स्वी' शब्द करते हुए उन मुनिराज के समस्त शरीरको अपने

એટલામાં વ્યંતરદેવ કે જે પૂર્વભવમાં શૃગાલ હતો, તેનું આ મુનિરાજે  
પોતાની કુમાર અવસ્થામાં તાડન તર્જન કરેલ અને એ તાડન તર્જનના પરિ-  
ણામે અકામનિર્જરાથી મરીને વ્યંતર થયેલ તે વિમાનમાં બેસીને કેાઈ બીજે  
સ્થળે જઈ રહેલ હતા. એનું વિમાન ત્યાં આવી પહોંચ્યું કે જ્યાં મુનિરાજે  
પાદપોપગમન સંધારો ધારણ કરેલ હતો. ત્યાંથી પસાર થતા તે વિમાનની ગતી  
અટકી ગઈ. વિમાનને એકદમ અટકેલું જોઈને વ્યંતરદેવને ખૂબ આશ્ચર્ય થયું.  
તેણે અવધીજ્ઞાનથી વિમાનની ગતી રોકવાના કારણરૂપ મુનિરાજનો પૂર્વભવનો  
સમસ્ત વૃત્તાંત જાણ્યો. એનાથી મુનિ ઉપર તેનો ક્રોધ એકદમ વધવા લાગ્યો.  
પોતાના પૂર્વભવના મૃત્યુના કારણરૂપ મુનિરાજ જ છે તેમ જાણીને તે વ્યંતરદેવે  
બદલો લેવાની ઇચ્છાથી તે મુનિરાજની પાસે પોતાની વૈક્રિયશક્તિ દ્વારા એક  
બચ્ચાવાળી પ્રબળ શિયાળને ઉત્પન્ન કર્યું. એ શિયાળ "ખી ખી" શબ્દ કરીને  
પોતાના તીક્ષ્ણ દાંતોથી મુનિરાજના શરીરને કાપવા લાગ્યું. કરડયા પ - ફરીથી

તૃણસ્પર્શપીડાયાં મુનિના યત્ કર્તવ્યં તદ્ વોધયિતુમાહ—

મૂલમ્—આયવસ્સ નિવાંણં, અડૈલા હવૈઙ્ વેયંણા ।

एवं नच्चा नं सेवन्ति", तन्तुजं तर्णतज्जिया ॥३५॥

છાયા—આતપસ્ય નિપાતેન, અતુલા ભવતિ વેદના ।

एवं ज्ञात्वा न सेवन्ते, तन्तुजं तृणतर्जिताः ॥ ३५ ॥

ટીકા—‘ આયવસ્સ ’ इत्यादि ।

भावार्थ—अचेलक पद से यहां स्थविरकल्पिक को भी जो अचेलक कहा है वह इसी अभिप्राय से कि वे शास्त्रमर्यादा के अनुसार ही वस्त्र रखते हैं, उससे अधिक नहीं आगम में स्थविरकल्पिक के लिये अल्पमूल्य वाले प्रमाणोपेत वस्त्रों का रखना मर्यादित है उनको ही ये धारण करते हैं । अतः इस अवस्था में भी ये अचेलक ही माने जाते हैं, इस विषय का विशेषरूप से खुलासा छठे अचेलक परीपह के प्रकरण में किया जा चुका है । मुनि को तैलादिक की मालिश करना वर्जित है । तथा ये तपश्चर्या करते रहते हैं, इसलिये इनका शरीर रूक्ष हो जाता है । रूक्ष शरीर में खून अल्प होने से तृणस्पर्श आदि की वेदना अधिक होती है, अतः ऐसी अवस्था में साधु का कर्तव्य है कि वह उस वेदना को समभाव से सहन करे ॥ ३४ ॥

जब तृणस्पर्श से पीडा हो तब मुनि को क्या करना चाहिये सो कहते हैं—‘ आयवस्स ’ इत्यादि ।

ભાવાર્થ—અચેલક પદથી અહિં સ્થવિરકલ્પિકને જે અચેલક કહ્યા છે. તે એવા અભિપ્રાયથી કે તે, શાસ્ત્ર મર્યાદાની અનુસારજ વસ્ત્ર રાખે છે. તેનાથી અધિક નહીં. આગમમાં સ્થવિરકલ્પિક માટે અલ્પમુલ્યવાળાં પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોને રાખવાં મર્યાદિત છે, એને જ તેઓ ધારણ કરે છે. આથી આ અવસ્થામાં પણ તે અચેલક જ માનવામાં આવે છે. આ વિષયનો વિશેષરૂપથી ખુલાસો પહેલાં છઠ્ઠા અચેલકપરીપહના પ્રકરણમાં આપવામાં આવી ગયેલ છે. મુનિએ તેલ આદિનું માલિશ કરવું વર્જિત છે. તથા તપસ્યા કરતા રહે છે. આથી તેમનું શરીર રૂક્ષ થઈ જાય છે. રૂક્ષ શરીરમાં લેહી ખૂબ ઓછું હોવાથી તૃણસ્પર્શની વેદના અધિક થાય છે. આથી એવી અવસ્થામાં સાધુનું કર્તવ્ય છે કે, તે વેદનાને સમભાવથી સહન કરે. ॥ ૩૪ ॥

ત્યારે તૃણસ્પર્શથી પીડા થાય ત્યારે મુનિએ શું કરવું જોઈએ તે સૂત્રકાર કહે છે—‘ આયવસ્સ ’-इत्यादि.

ટીકા—‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ ।

અચેલકસ્ય=સર્વથા વહ્નરહિતસ્ય જિનકલ્પિકસ્ય, તથા શાસ્ત્રમર્યાદાતિરિક્તવહ્નરહિતસ્ય સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચેત્યર્થઃ । આગમે હિ અરૂપમૂલ્યકાલ્પવસ્તુસ્ય મર્યાદિતસ્યૈવ ધારણાત્ સ્થવિરકલ્પિકોઽપ્યચેલકઃ । એવાસ્તોતિ પ્રાગચેલકપરીપદપ્રકરણે નિર્ણીતમ્ । તથા ઉભયવિધસ્ય મુનેસ્તૃણસ્પર્શપરીપદેઽપ્યાન્યપિ કારણાનિ સન્તીતિ પ્રદર્શયિતુમાદ—‘લૂહસ્સ’-ઇત્યાદિ । રૂક્ષસ્ય=તૈલામ્યદ્વાદિવર્જનાદ્ અસ્નિગ્ધ-શરીરસ્યેત્યર્થઃ, સંયતસ્ય=નિરતિચારસંયમાઽઽરાધનતત્પરસ્ય, તપસ્વિનઃ=તપશ્ચરણશીલસ્ય, અનશનાદિતપઃસમાચરણાત્ કૃશશરીરસ્યેત્યર્થઃ મુનેઃ, તૃણેષુ-દર્ભાદિષુ તદુપરિશયાનસ્ય ઉપલક્ષણત્વાદાસીનસ્ય ચેત્યર્થઃ ગાત્રવિરાધના=શરીરે તૃણસ્પર્શજન્યા પીડા ભવતિ ॥ ૩૪ ॥

અવ સૂત્રકાર સતરહવાં તૃણસ્પર્શપરીપદજય કા વિવેચન કરતે હૈ—  
‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય) સર્વથા વહ્નરહિત જિન-કલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદા કે અતિરિક્ત વહ્ન નહીં રાખવાના સ્થવિરકલ્પિક મુનિ કે (લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય) કિ જિન કા તૈલ આદિની માલિશ કરના વર્જિત હોને સે શરીર ચિલકુલ રૂક્ષ હો રહા હૈ, એવં (સંજયસ્સ-સંયતસ્ય) જો નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરને મેં તત્પર રહતે હૈ, તથા (તપસ્વિણો-તપસ્વિનઃ) અનશન આદિ તપો કે કરનેવાળે હોને સે કૃશ શરીર વાળે હૈ, ઓર જો (તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય) દર્ભાદિક તૃણો કે ઉપર સોતે હૈ ઉપલક્ષણ સે ઉપર બેઠતે હૈ અને (ગાયવિરાહના-ગાત્રવિરાધના) શરીર મેં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા હોતી હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સત્તરમાં તૃણસ્પર્શપરીપદ ઉતવાનું વર્ણન કરે છે.

‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય સર્વથા વહ્ન રહિત જિનકલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદાથી અતિરિક્ત વહ્ન ન રાખવાવાળા સ્થવિરકલ્પિક મુનિ લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય બેને તૈલ આદિની માલિશ કરવાનું વર્જિત હોવાથી શરીર બીલકુલ રૂક્ષ બની ગયેલ છે. સંજયસ્સ-સંયતસ્ય અને જે નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર રહે છે તપસ્વિણો-તપસ્વિનઃ તથા અનશન આદિ તપ કરનાર હોવાથી કૃશ શરીરવાળા છે. અને જે તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય દર્ભાદિક તૃણોની ઉપર સુવે છે, ઉપલક્ષણથી ઉપર બેસે છે, તેમના ગાયવિહારના-ગાત્રવિરાધના શરીરમાં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા થાય છે.

તૃણસ્પર્શપીડાયાં મુનિના યત્ કર્તવ્યં તદ્ વોધયિતુમાહ—

મૂલમ્—આયવસ્સ નિવાંણં, અઉલા હવેઙ્ગ વેયેણા ।

एवं नञ्चा नं सेवन्ति", तन्तुजं तर्णतज्जिया ॥३५॥

છાયા—આતપસ્ય નિપાતેન, અતુલા ભવતિ વેદના ।

एवं ज्ञात्वा न सेवन्ते, तन्तुजं तृणतर्जिताः ॥ ३५ ॥

ટીકા—‘ આયવસ્સ ’ इत्यादि ।

भावार्थ—अचेलक पद से यहां स्थविरकल्पिक को भी जो अचेलक कहा है वह इसी अभिप्राय से कि वे शास्त्रमर्यादा के अनुसार ही वस्त्र रखते हैं, उससे अधिक नहीं आगम में स्थविरकल्पिक के लिये अल्पमूल्य वाले प्रमाणोपेत वस्त्रों का रखना मर्यादित है उनको ही ये धारण करते हैं । अतः इस अवस्था में भी ये अचेलक ही माने जाते हैं, इस विषय का विशेषरूप से खुलासा छठे अचेलक परीपह के प्रकरण में किया जा चुका है । मुनि को तैलादिक की मालिश करना वर्जित है । तथा ये तपश्चर्या करते रहते हैं, इसलिये इनका शरीर रूक्ष हो जाता है । रूक्ष शरीर में खून अल्प होने से तृणस्पर्श आदि की वेदना अधिक होती है, अतः ऐसी अवस्था में साधु का कर्तव्य है कि वह उस वेदना को समभाव से सहन करे ॥ ३४ ॥

जब तृणस्पर्श से पीडा हो तब मुनि को क्या करना चाहिये सो कहते हैं—‘आयवस्स’ इत्यादि ।

ભાવાર્થ—અચેલક પદથી અહિં સ્થવિરકલ્પિકને જે અચેલક કહ્યા છે. તે એવા અભિપ્રાયથી કે તે, શાસ્ત્ર મર્યાદાની અનુસારજ વસ્ત્ર રાખે છે. તેનાથી અધિક નહીં. આગમમાં સ્થવિરકલ્પિક માટે અલ્પમુલ્યવાળાં પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોને રાખવાં મર્યાદિત છે, એને જ તેઓ ધારણ કરે છે. આથી આ અવસ્થામાં પણ તે અચેલક જ માનવામાં આવે છે. આ વિષયનો વિશેષરૂપથી ખુલાસો પહેલાં છઠ્ઠા અચેલકપરીપહના પ્રકરણમાં આપવામાં આવી ગયેલ છે. મુનિએ તેલ આદિનું માલીસ કરવું વર્જિત છે. તથા તપસ્યા કરતા રહે છે. આથી તેમનું શરીર રૂક્ષ થઈ જાય છે. રૂક્ષ શરીરમાં લોહી ખૂબ ઓછું હોવાથી તૃણસ્પર્શની વેદના અધિક થાય છે. આથી એવી અવસ્થામાં સાધુનું કર્તવ્ય છે કે, તે વેદનાને સમભાવથી સહન કરે. ॥ ૩૪ ॥

જ્યારે તૃણસ્પર્શથી પીડા થાય ત્યારે મુનિએ શું કરવું જોઈએ તે સૂત્રકાર કહે છે—‘ આયવસ્સ ’—इत्यादि.

ટીકા—‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ ।

અચેલકસ્ય=સર્વથા વસ્ત્રરહિતસ્ય જિનકલ્પિકસ્ય, તથા શાસ્ત્રમર્યાદાતિરિક્તવસ્ત્રરહિતસ્ય સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચેત્યર્થઃ । આગમે હિ અરૂપમૂલ્યકાલ્પવસ્ત્રસ્ય મર્યાદિતસ્યૈવ ધારણાત્ સ્થવિરકલ્પિકોઽપ્યચેલકઃ । એવાસ્તોતિ પ્રાગચેલકપરીપદપ્રકરણે નિર્ણીતમ્ । તથા ઉભયવિશ્વસ્ય મુનેસ્તૃણસ્પર્શપરીપદેઽન્યાન્યપિ કારણાનિ સન્તોતિ પ્રદર્શયિતુમાદ—‘લૂહસ્સ’-ઇત્યાદિ । રૂક્ષસ્ય=તૈલાભ્યદ્વાદિવર્જનાદ્ અસ્નિગ્ધ-શરીરસ્યેત્યર્થઃ, સંયતસ્ય=નિરતિચારસંયમાઽઽરાધનતત્પરસ્ય, તપસ્વિનઃ=તપશ્ચરણશીલસ્ય, અનશનાદિતપઃસમાચરણાત્ કૃશશરીરસ્યેત્યર્થઃ મુનેઃ, તૃણેષુ-દર્ભાદિષુ તદુપશિયાનસ્ય ઉપલક્ષણત્વાદાસીનસ્ય ચેત્યર્થઃ ગાત્રવિરાધના=શરીરે તૃણસ્પર્શજન્યા પીડા ભવતિ ॥ ૩૪ ॥

અવ સૂત્રકાર સત્તરહવાં તૃણસ્પર્શપરીપદજય કા વિવેચન કરતે હૈં-  
‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય) સર્વથા વસ્ત્રરહિત જિન-કલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદા કે અતિરિક્ત વસ્ત્ર નહીં રાખીને વાલે સ્થવિરકલ્પિક મુનિ કે (લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય) કે જિન કા તેલ આદિની માલિશ કરના વર્જિત હોને સે શરીર બિલકુલ રૂક્ષ હો રહા હૈ, એવં (સંજયસ્સ-સંયતસ્ય) જો નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરને મેં તત્પર રહતે હૈં, તથા (તવસ્સિણો-તપસ્વિનઃ) અનશન આદિ તપોં કે કરનેવાલે હોને સે કૃશ શરીર વાલે હૈં, ઓર જો (તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય) દર્ભાદિક તૃણોં કે ઉપર સોતે હૈં ઉપલક્ષણ સે ઉપર બેઠતે હૈં અને (ગાયવિરાહણા-ગાત્રવિરાધના) શરીર મેં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા હોતી હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સત્તરમાં તૃણસ્પર્શપરીપદ જીતવાનું વર્ણન કરે છે.

‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય સર્વથા વસ્ત્ર રહિત જીનકલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદાથી અતિરિક્ત વસ્ત્ર ન રાખવાવાળા સ્થવિરકલ્પિક મુનિ લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય જેને તેલ આદિની માલિશ કરવાનું વર્જિત હોવાથી શરીર ખીલકુલ રૂક્ષ બની ગયેલ છે. સંજયસ્સ-સંયતસ્ય અને જે નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર રહે છે તવસ્સિણો-તપસ્વિનઃ તથા અનશન આદિ તપ કરનાર હોવાથી કૃશ શરીરવાળા છે. અને જે તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય દર્ભાદિક તૃણોની ઉપર સુવે છે, ઉપલક્ષણથી ઉપર બેસે છે, તેમના ગાયવિહારણા-ગાત્ર-વિરાધના શરીરમાં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા થાય છે.



ક્રિયા સર્વદા સોપયોગાઽલ્પા ચ ભવતીત્યાગન્તુકદ્વીન્દ્રિયાદિજીવાનાં વિરાધના ન સંભવત્યતસ્તે વસ્ત્રં ન સેવન્તે । સ્થવિરકલ્પિકાસ્તુ સાપેક્ષસંયમિનો ભવન્ત્યતસ્તે તાનિ દર્ભાદીનિ તૃણાનિ ભૂમાવાસ્તીર્ય તત્રાગન્તુકકન્થુપિપીલિકાદિજન્તુવિરાધના નિવારણાય પ્રાન્તભાગેષુ વેષ્ટનં યથા સ્યાત્તથા તદુપરિ સંસ્તારકં નિધાય શેરતે, આસર્વે ચ । एवं યઃ કઠોરકુશદર્ભાદિતૃણસંસ્પર્શ સમ્યક્ સહતે તેન મુનિના તૃણસ્પર્શપરીપહો વિજિતો ભવતિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

શ્રાવસ્તીનગર્યાં જિતશત્રુનૃપસ્ય ભદ્રનામકઃ પુત્ર આસીત્ । સ ચૈકદા પદ્મનામકાચાર્યસ્ય સમીપે ધર્મ શ્રુત્વા પ્રવ્રજિતઃ । ક્રમાદ્ બહુશ્રુતો ભૂત્વાઽન્યદા કદાચિન્

उनके शरीर की हलनचलन आदि क्रिया उपयोगपूर्वक तथा अल्प होती है इससे उनके आगन्तुक द्वीन्द्रियादिक जीवों की विराधना का प्रायः संभव नहीं है इसलिये वे वस्त्र का सेवन नहीं करते हैं । स्थविरकल्पिकमुनि प्रायः ऐसे न होने से दर्भादिक तृणों को भूमि पर बिछा कर उसमें आगन्तुक कुन्थु पिपीलिका आदि जन्तुओं की विराधना निवारण करने के लिये प्रान्त भागों में वेष्टन जिस प्रकार हो जाय इस रूप से उस के ऊपर संस्तारक बिछाकर सोते हैं और बैठते हैं । इस प्रकार जो कठोर कुशदर्भादिक तृणस्पर्श को अच्छी तरह सहन करता है वह मुनि तृणस्पर्शपरीपह का विजेता कहलाता है ।

દૃષ્ટાન્ત—શ્રાવસ્તી નગરી મેં જિતશત્રુ નામ કે રાજાં કા ભદ્ર નામ કા એક પુત્ર થા । પદ્મનામક આચાર્ય કે પાસે ડસને એક સમય ધર્મ કા ઉપદેશ સુનકર દીક્ષા ધારણ કરલી । ક્રમ સે આગમોં કા

ચલન આદિ ક્રિયા ઉપયોગ પુરતી અને અલ્પ હોય છે. તેનાથી આવનાર દ્વિધન્દ્રિયાદિક જીવોની વિરાધના થવાનો સંભવ નથી. આ માટે તે વસ્ત્રનું સેવન કરતા નથી. સ્થવિરકલ્પિક મુનિ એવા ન હોવાથી દર્ભાદિક તૃણોને ભૂમિ ઉપર બિછાવી તેમાં આવવાવાળા કંથવા, પીપીલીકા, આદિ જંતુઓની વિરાધનાનું નિવારણ કરવા માટે પ્રાન્ત ભાગોમાં કાપા ન પડે તે માટે તેના ઉપર વસ્ત્ર બિછાવીને સુવે છે અને બેસે છે. આ પ્રકારે જે કઠોર કુશ-દર્ભાદિક તૃણસ્પર્શને સારી રીતે સહન કરે છે તે મુનિ તૃણસ્પર્શપરીપહના વિજેતા કહેવાય છે.

દૃષ્ટાન્ત—શ્રાવસ્તી નગરીમાં જિતશત્રુ નામના રાજાને ભદ્ર નામનો પુત્ર હતો. પદ્મ નામના આચાર્યની પાસે તેણે એક સમય ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી. ક્રમથી આગમોનો અભ્યાસ કરી બ્યારે તે બહુશ્રુત

આતપસ્ય=ઘર્મસ્ય નિપાતેન=સંપાતેન, અતુલા=મહતી દુઃસહા વેદના ભવતિ, આતપોત્પન્નસ્વેદક્લેદવશાત્. તૃણક્ષતે ક્ષારસેચનેન સમુત્પન્ના વેદનેવ વેદના ભવતીતિ ભાવઃ. ૧. એવમ્=અનેન પ્રકારેણ જ્ઞાત્વાઽપિ તૃણતર્જિતાઃ=દર્માદિતૃણક્ષતા મુનયઃ તન્તુજં-સૂત્રનિર્મિતં કાર્પાસિકમ્, ઊર્ણાતન્તુનિર્મિતં કમ્બલાદિકં વા વસ્ત્રમ્=આચ્છાદનવસ્ત્રં ન સેવન્તે ।

અર્થ ભાવઃ-શયને આસને ચ શુષિસ્વર્જિતતૃણસ્ય દર્માદિઃ પરિભોગોઽનુજ્ઞાતો જિનકલ્પિકાનાં સ્થવિરકલ્પિકાનાં ચ । તત્ર જિનકલ્પિકાનાં મુનીનાં દૃઢસંહનન-પૂર્વગતજ્ઞાન - તીક્ષ્ણોપયોગનિદ્રાલ્પત્વાદ્યનેકપ્રસંગુણસમ્પન્નત્વેન સ્પન્દનચલનાદિ

અન્વયાર્થ—( આયવસ્સ - આતપસ્ય ) ધામ-ધૂપ કે ( નિવાણં-નિપાતેન ) પડને સે જો શરીર મેં પસીના આતા હૈ, વહ પસીના તૃણ-ક્ષત અર્થાત્ શરીર મેં તૃણ કે ચુમને સે ઉત્પન્ન હુણ ઘાવ મેં લગતા હૈ, તવ ( અહલા વેયણા હવર્દ-અતુલા વેદના ભવતિ ) મહાવેદના હોતી હૈ । ( એવં નચ્ચા-એવં જ્ઞાત્વા ) એસી વેદના કા અનુભવ કરકે મી ( તણતજ્જિયા-તૃણતર્જિતાઃ ) દર્માદિજન્ય ઘાવ વાલે મુનિ ( તંતુજં-તન્તુજમ્ ) ઝર્ણાદિક તન્તુઓં સે નિર્મિત કમ્બલાદિક તથા કપાસ સે નિર્મિત વસ્ત્રાદિકરૂપ આચ્છાદન વસ્ત્ર કા સેવન નહીં કરતે હૈ ।

હસકા ભાવ યહ હૈ—શયન ઓર આસન મેં નિશ્ચિદ્ર દર્માદિક તૃણોં કા પરિભોગ જિનકલ્પિક તથા સ્થવિરકલ્પિક દોનોં કે લિયે અનુજ્ઞાત હૈ । જિસ મેં જિનકલ્પી મુનિ દૃઢસંહનન, પૂર્વોં કા જ્ઞાન, તીક્ષ્ણ ઉપયોગ તથા અલ્પનિદ્રા આદિ અનેક પ્રસંગુણવાલે હોને સે

અન્વયાર્થ—આયવસ્સ-આતપસ્ય ધામ તડકાના નિવાણં-નિપાતેન પડવાથી શરીરમાં જે પરસેવો આવે છે તે પરસેવો તૃણક્ષત અર્થાત્ શરીરમાં તૃણના સ્પર્શથી ઉત્પન્ન થયેલા ઘાવમાં લાગે છે ત્યારે અહલા વેયણા હવર્દ-અતુલા વેદના ભવતિ ભારે વેદના થાય છે એવં નચ્ચા-એવં જ્ઞાત્વા એવી વેદનાનો અનુભવ કરીને પણ તણતજ્જિયા-તૃણ-તર્જિતાઃ દર્માદિજન્ય ઘાવ વાળા મુનિએ તંતુજં-તન્તુજમ્ બનાવતાં તાંતણાઓથી બનાવેલ કમ્બલ આદિ તથા કપાસથી બનાવેલ વસ્ત્રાદિકેનું આચ્છાદન ન કરવું જોઈએ. એનો ભાવ આ પ્રમાણે છે, શયન અને આસનમાં છિદ્રો વગરના દર્મા આદિ બાંડનો પરિભોગ જનકલ્પિક તથા સ્થવિરકલ્પિક બન્નેને માટે અનુ-જ્ઞાત છે, જેમાં જનકલ્પિક મુનિ તેને દૃઢતાથી સહન કરીને, પૂર્વનું જ્ઞાન, તીક્ષ્ણ ઉપયોગ, તથા અલ્પનિદ્રા આદિ પ્રખર શુભવાળા હોવાથી તેના શરીરનું હલન

શરીરે પ્રત્યેકાવયવસ્ય માંસે વિદીર્યમાણેऽપિ ક્ષોભવર્જિતઃ શાન્તરસનિમગ્નો મહામુનિઃ  
ક્ષમાનિધિઃ કલુષધ્યાનમકુર્વાણઃ સમાધિભાવેન પ્રવલામુજ્જ્વલાં દુઃસહાં ધોરાતિ-  
ધોરવેદનાં સહતે સ્મ । इत्थं तृणस्पर्शपरीपहं विजित्य क्षपकश्रेणिमारुह्य केवली-  
भूत्वा शिवपदं प्राप । एवमन्यैरपि मुनिभिस्तृणस्पर्शपरीपहः सोढव्यः ॥ ૩૫ ॥

અધાષ્ટાદશં જહ્નપરીપહજયં પ્રાહ—

મૂલમ્—કિલિષ્ણગાણ મેહાવી, પંકેણ વં રણ્ણ વા ।

ધિંસુ વા પરિતાવેણં, સાંયં નો પરિદેવેણ ॥૩૬॥

છાયા—ક્લિન્નગાત્રઃ મેધાવી, પક્કેન વા રજસા વા ।

ગ્રીષ્મે વા પરિતાપેન, સાતં નો પરિદેવયેત્ ॥ ૩૬ ॥

ટીકા—‘કિલિષ્ણગાણ’ इत्यादि ।

મેધાવી=સ્નાનપરિત્યાગમર્યાદાવર્તી મુનિઃ, ગ્રીષ્મે, વા શબ્દાત્-શરદિ,

માંસ ક્ષારજલ સે વિદીર્ણ હોને પર ભી ક્ષોભ સે વર્જિત એવં શાંત  
રસ મેં નિમગ્ન, એસે ઉન ક્ષમા કે નિધિ મુનિરાજ ને કલુષધ્યાન નહીં  
કરતે હુણ સમાધિભાવ સે ઉસ ધોરાતિધોર પ્રવલ દુઃસહ વેદના કો  
સહન કિયા । इस प्रकार उन्होंने ने तृणस्पर्शपरीपह को जीतकर अन्त में  
क्षपकश्रेणी पर आरोहण करके केवलज्ञान की प्राप्ति से शिवपद  
प्राप्त कर लिया । इसी तरह अन्य मुनियों को भी तृणस्पर्शपरीपह  
सहन करना चाहिये ॥ ૩૫ ॥

અવ અઠારવેં જહ્નપરીપહ કો જીતને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હેં—

‘કિલિષ્ણગાણ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—( મેહાવી – મેધાવી ) સ્નાનપરિત્યાગરૂપ મર્યાદા મેં  
રહને વાલા મુનિ ( ધિંસુ-ગ્રીષ્મે ) ગ્રીષ્મકાલ મેં (વા-વા) તથા શરત્કાલ

ખારા પાણીથી વિદીર્ણ થવાથી, ક્ષોભથી વર્જિત અને શાંત રસમાં નિમગ્ન એવા  
તે ક્ષમાનિધિ મુનિરાજે કલુષભાવ ન રાખતાં સમાધીભાવથી એ ધોર અતિ ધોર  
દુઃસહ વેદનાને સહન કરી. આ પ્રકારે તેઓએ તૃણસ્પર્શપરીપહને જીતીને  
અંતમાં ક્ષપકશ્રેણી પર ચડીને કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિથી શિવપદ પ્રાપ્ત કરી  
લીધું. આ રીતે અન્ય મુનિરાજોએ તૃણસ્પર્શપરીપહ સહન કરવો જોઈ એ ॥૩૫॥

હવે અઠારમે જહ્નપરીપહ જીતવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—

‘કિલિષ્ણગાણ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—મેહાવી-મેધાવી સ્નાન પરિત્યાગરૂપ મર્યાદામાં રહેવાવાળા મુનિ ધિંસુ-

દેકાકિવિહારપ્રતિમાં પ્રતિપન્નઃ સન્નઽપ્રતિવદ્ધવિહારં વિહરતિ સ્મ । સ ચૈકદા વિહ-  
રન્ ક્વાપિ રાજ્યાન્તરે ગતઃ । રાજપુરુષાઃ “હેરિકોઽય”-મિતિજ્ઞાત્વા તં ગૃહીત્વા  
પ્રપન્ચુઃ-બ્રૂહિ કસ્ત્વં ? કેન ગુપ્તચારત્વાય પ્રહિતોઽસિ ? । સ ભદ્રમુનિઃ પ્રતિમા-  
ધારિત્વાત્ કિમપિ નોત્તરં દદૌ । તતસ્તે કુપિતાસ્તં ભદ્રમુનિં ધુરેણ તક્ષયિત્વા ન-  
સિધારાતુલ્યૈઃ કુરધારાતુલ્યૈઃ કુન્તાગ્રતુલ્યૈસ્તીક્ષ્ણધારૈર્દર્ભર્ગાઢમાવેષ્ટ્ય ક્ષારવર્તિતં  
કૃત્વા, ગર્તે નિપાત્ય સ્વસ્થાનં ગતવન્તઃ । અતિતીક્ષ્ણાગ્રૈઃ કુશૈર્વિધ્યમાને ક્ષારજલૈશ્ચ

અભ્યાસ કર જવ વહ વહુશ્રુત હો ગયા તથા उसने एकाकिविहार  
प्रतिमा अंगीकार कर अप्रतिषद् विहार करना प्रारंभ कर दिया । एक  
दिन की बात है कि ये मुनिराज विहार करते२ दूसरे किसी राज्य में  
जा पहुँचे । राजपुरुषों ने उन्हें “यह कहीं का गुप्तचर है” ऐसा समझ-  
कर पकड़ लिया, और पूछने लगे-कहो कौन हो? किसने तुम्हें खुफिया  
पुलिस के बतौर यहां भेजा है । राजपुरुषों की यह बात सुनकर प्रतिमा-  
धारी होने से मुनिराज ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया । मुनिराज की इस  
मौन परिस्थितिका अवलोकन कर वे सब के सब उन पर बहुत अधिक  
कुपित हुए । उन्होंने ने प्रकृतिभद्र उन मुनिराज को प्रथम धुरा से  
घायल कर पश्चात् तलवार की धार के समान, धुरा की धार के समान,  
एवं भाले की नोंक के समान तीक्ष्ण अनीवाले दर्भों से गाढ़ बेष्टित  
करके और ऊपर से नमक मिला हुआ जल छिड़ककरके एक खड्गे में  
उनको डाल दिया, और वे सब के सब अपने२ स्थान पर चले गये ।  
अति तीक्ष्ण अनीवाले कुशों से बींधे गये शरीर का प्रत्येक अवयवगत

બની ગયા ત્યારે તેમણે એકાકી વિહાર પ્રતિમા અંગિકાર કરી, અપ્રતિષદ્ધ  
વિહાર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. એક દિવસની વાત છે કે, આ મુનિરાજ વિહાર  
કરતા કરતા ખીજા કોઈ રાજ્યમાં જઈ પહોંચ્યા રાજપુરુષોએ તેને “આ કોઈ  
રાજ્યનો ગુપ્તચર છે” એમ સમજીને પકડી લીધા અને એને પૂછવા લાગ્યા કહે  
તમે કોણ છો? કોણે તમને ગુપ્ત ખાતમીદાર તરીકે અહિં મોકલેલ છે? રાજ-  
પુરુષોની એ વાત સાંભળી પ્રતિમા ધારી હોવાથી મુનિરાજે કંઈ પણ ઉત્તર ન  
આપ્યો. મુનિરાજની આ મૌન પરિસ્થિતિ જોઈ સઘળા તેના ઉપર ખૂબ જ  
ક્રોધિત બન્યા. તેઓએ પ્રકૃતિભદ્ર તે મુનિરાજને પ્રથમ છરાથી ઘાયલ કરી  
પછી તરવારની ધાર જેવા, છરાની ધાર જેવા, અને ભાલાની અણી જેવા તીક્ષ્ણ  
અણીવાળા દર્ભોથી ગાઢ બેથિત કરીને ઉપરથી મીઠાનું પાણી છાંટી એક ખાડામાં  
નાખી દીધા અને બધા રાજપુરુષો પોત પોતાને સ્થાને ચાલ્યા ગયા. અતિ  
તીક્ષ્ણ અણીવાળા દર્ભના પાનથી બીંધાયેલા શરીરના પ્રત્યેક અવયવમાંથી માંસ,

मूलम्—वेणुज निजरापेही, आरियं धम्मं णुत्तरं ।

जाव सरीरभेओत्ति, जल्लं काण्ण धारये ॥३७॥

छाया—वेदयेत् निर्जरापेक्षी, आर्यं धर्मम् अनुत्तरम् ।

यावत् शरीरभेदः, इति जल्लं कायेन धारयेत् ।

टीका—‘वेणुज’ इत्यादि ।

निर्जरापेक्षी=आत्यन्तिककर्मक्षयाभिलाषी मुनिः, आर्यं=हेयोपादेयस्वरूपनिरूपकम्, अनुत्तरं=न विद्यते उत्तरम्-उत्कृष्टं यस्मात्सोऽनुत्तरस्तं सर्वोत्तममित्यर्थः। धर्मं=श्रुतचारित्र्यरूपं प्राप्तः इति शेषः । वेदयेत्-प्रक्रमात् जल्लजनितं दुःखं सहेत । इममर्थं विशदीकुर्वन् प्राह—‘जाव सरीरभेओ’ इत्यादि । इति=अतो हेतोः—यावत्-यावताकालेन शरीरभेदः=देहपातः स्यात्, तावत्कालपर्यन्तं, जल्लं=मलं, कायेन=शरीरेण धारयेत् ।

करे कि—“ हा ! इस मेल के निवारण से मुझे साता अर्थात् सुख का अनुभव कब और कैसे होगा ? ” इस प्रकार चिलाप न करे ॥ ३६ ॥

‘वेणुज’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—( निजरापेही-निर्जरापेक्षी ) आत्यन्तिक रूप से कर्मों के क्षयका अभिलाषी मुनि ( आरियं-आर्यम् ) हेय एवं उपादेय के स्वरूपा का निरूपक ( अणुत्तरं-अनुत्तरम् ) सर्वोत्कृष्ट-जिससे श्रेष्ठ और कोई दूसरा नहीं है-सर्वोत्तम ऐसे ( धम्मं-धर्मम् ) श्रुतचरित्ररूप धर्म को प्राप्त कर ( वेणुज-वेदयेत् ) मेल के दुःख को सहन करे । उसका कर्तव्य है कि ( जाव शरीरभेओत्ति-यावत् शरीरभेद इति ) जब तक शरीर का भेद नहीं होता है-मृत्यु द्वारा शरीर का वियोग नहीं

परीपहजय છે. સાધુ સ્વપ્નામાં પણ સુખનો અનુભવ ક્યારે અને કેમ થશે. આ પ્રકારનો વિલાપ ન કરે ॥ ૩૬ ॥

‘વેણુજ’-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—નિજરાપેહી-નિર્જરાપેક્ષી આત્યંતિક રૂપથી કર્મોનો ક્ષય કરવાના અભિલાષી મુનિ આરિયં-આર્યમ્ હેય અને ઉપાદેયના સ્વરૂપના નિરૂપક અણુત્તરં-અનુત્તરમ્ સર્વોત્કૃષ્ટ બેનાથી શ્રેષ્ઠ બીજો કોઈ નથી. સર્વોત્તમ એવા ધમ્મં-ધર્મં શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને પ્રાપ્ત કરી વેણુજ-વેદયેત્ મલના દુઃખને સહન કરે. તેનું, કર્તવ્ય છે કે જાવ શરીરભેઓત્તિ-યાવત્ શરીરભેદઃ इति જ્યાં સુધી શરીરનો ભેદ નથી, થતો-મૃત્યુ દ્વારા શરીરનો વિયોગ થતો નથી ત્યાં સુધી

વર્ષાસુ વા, પરિતાપેન=ઉષ્ણસ્પર્શેન, હેતુર્થે તૃતીયા । પંક્કેન વા=પ્રસ્વેદાદાર્દ્રીભૂતેન મલેન વા, રજસા વા=પરિશુષ્ય કાઠિન્યં પ્રાપ્તેન મલેન વા, યદ્વા-રજસા=ધૂલ્યા, ક્લિન્નગાત્રઃ=વ્યાપ્તદેહઃ, સન્ સાતં=સુખં સમાશ્રિત્ય ન પરિદેવયેત્-“ હા ! મમ-મલાપગમઃ કથં કદા વા ભવિષ્યતી ” - તિ કૃત્વા ન વિલપેત્, વિલાપં ન કુર્યાદિતિ ભાવઃ ॥ ૩૬ ॥

મેં ઓર વર્ષાકાલ મેં ( પરિતાવેણં-પરિતાપેન ) ઉષ્ણસ્પર્શ દ્વારા આવે હુણ ( પંકેણ વ-પંક્કેન વા) પ્રસ્વેદ દ્વારા મીલે હુણ મૈલ સે (રણ વા-રજસા વા) યા પસીને મેં સંસક્ત ધૂલિ સે (કિલિણ્ણગાણ-ક્લિન્નગાત્રઃ) વ્યાપ્ત શરીર હોને પર મી (સાયં નો પરિદેવણ-સાતં નો પરિદેવયેત્) “ હા મેરે હસ મૈલ કા નિવારણ કેસે ઓર કથ હોગા ” એસા વિચાર કર વિલાપ નહીં કરે । કિન્તુ ઉસ હાલત મેં ઉસ પરીપહ કો અછી તરહ સહન કરે, હસકા નામ જલ્પરીપહ જય હૈ ।

ભાવાર્થ—ગ્રીષ્મકાલ મેં યા વર્ષાકાલ મેં અધિક ગર્મી પડ્ને સે શરીર મેં અધિક પસીના આયા કરતા હૈ । ઉસસે શારીરિક મૈલ ઢીલ પડ જાતા હૈ । રગડ્ને સે વહ ચિપકા હુઆ મૈલ શરીર સે અલગ હો જાતા હૈ । પુનઃ ઉસી સ્થાન પર ઉઢી હુઈ રજ આકર લગ જાતી હૈ । ઉસસે શરીર મેં આકુલતા હોતી રહતી હૈ । હસ આકુલતા સે ન ઘચરા કર જો મુનિ ઉસ મૈલ સે સંસક્ત હોને કા પરીપહ સહન કરતે હૈં ઉસોકા નામ જલ્પરીપહજય હૈ । સાધુ સ્વપ્ન મેં મી યહ વિચાર ન

ગ્રીષ્મે ઉનાળાની ઋતુમાં તથા વા-વા શરદકાળ અને વર્ષાકાળમાં પરિતાવેણં-પરિતાપેન ઉષ્ણસ્પર્શ દ્વારા આવેલા પંકેણ વ-પંક્કેન વા પરસેવા દ્વારા પલળેલા મેલથી રણ વા-રજસા વા અગર પરસેવામાં ભળેલ ધૂળથી કિલિણ્ણગાણ-ક્લિન્નગાત્રઃ વ્યાપ્ત શરીર બનવા છતાં પણ સાયં નો પરિદેવણ-સાતં નો પરિદેવયેત્ મારા આ મેલનું નિવારણ કેમ અને કયારે થશે ” એવો વિચાર કરી વિલાપ ન કરે. પરંતુ તેવી હાલતમાં તે પરીપહને સારી રીતે સહન કરે તેનું નામ જલ્પમલ્લ પરિપહ જય છે.

ભાવાર્થ—ગ્રીષ્મકાળમાં યા વર્ષાકાળમાં અધિક ગરમી પડવાથી શરીરમાં અધિક પરસેવો વળે છે તેનાથી શરીર ઉપરનો મેલ ઢીલો પડે છે એળવાથી તે ચોટેલ મેલ શરીરથી છુટો પડે છે. ફરી એજ સ્થળે ઉડતી રજ આવીને ચોટે છે તેનાથી શરીરમાં આકુળતા થતી રહે છે. આથી એ આકુળતાથી ન ગભરાતાં જે મુનિ તે મેલનો સંસક્ત પરીપહ સહન કરે છે એનું નામ જલ્પમલ્લ



અન્યચ—અત્યન્તમલિનો દેહો, દેહી ચાત્યન્તનિર્મલઃ ।

ઉભયોરન્તરં જ્ઞાત્વા, કસ્ય શૌચં વિધીયતે ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અત્યન્તમલિનો દેહો, દેહી ચાત્યન્તનિર્મલઃ ।

ઉભયોરન્તરં જ્ઞાત્વા, કસ્ય શૌચં વિધીયતે ॥ ૨ ॥

ક્યોં કિ માતાપિતા કે રજવીર્ય સે યહ શરીર અપવિત્ર હી સ્વભાવતઃ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । જવ કારણ સ્વયં અશુચિસ્વરૂપ હૈ તો ઉસકા કાર્યરૂપ યહ શરીર શુચિ કેસે હો સકતા હૈ । પ્યાજ કો યા લહસુન કો ક્ષીરસમુદ્ર કે જલ સે પ્રક્ષાલિત કરને પર ભી જૈસે ઉસમેં નિર્ગન્ધતા નહીં આ સકતી હૈ ઉસી પ્રકાર હજારોં વાર સ્નાન કરને પર ભી ઇસ અપવિત્ર શરીર મેં ભી નિર્મલતા-શુચિતા નહીં આ સકતી હૈ, ક્યોં કિ યહ નિરન્તર નૌ દ્વારોં સે મલ કો વહાતા હી રહતા હૈ । દેહ કા જવ સ્વભાવ એસા હૈ તો ફિર ઇસકી શુચિવિધાયક સાધન હી યહાં કૌન સે એકત્રિત કિયે જા સકતે હૈં । જો મેં હું વહ તો પવિત્ર હું અત્યંત નિર્મલ હું । જિસ પ્રકાર વસ્તુસ્થિતિ સે વિચાર કરને પર શૌચાલય મેં રહા હુઆ આકાશ અપવિત્ર ન હો સકતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઇસ અપવિત્ર દેહ મેં નિવાસ કરને વાલા યહ આત્મા ભી અપવિત્ર નહીં હોતા હૈ, વહ તો સદા અત્યંત નિર્મલ હૈ । ઇસ પ્રકાર શરીર ઔર આત્મામેં અન્તર જાનકર જ્ઞાની સદા એસા વિચાર કરતા રહે કી મેં અવ

અત્યંતમલિનો દેહો, દેહી ચાત્યન્તનિર્મલઃ ।

ઉભયોરન્તરં જ્ઞાત્વા, કસ્ય શૌચં વિધીયતે ॥ ૨ ॥

કેમકે, માતા પિતાના રજવિર્યથી આ શરીર અપવિત્ર જ સ્વભાવતઃ ઉત્પન્ન થયેલ છે. જ્યારે કારણ સ્વયં અશુચિ સ્વરૂપ છે તો તેના કાર્ય રૂપ આ શરીર શુચિરૂપ કઈ રીતે ગણાય, ડુંગળીને અથવા લસણને સમુદ્રના પાણીથી ઘોવાથી પણ તેમાં નિર્ગન્ધતા આવી શકતી નથી તેવી રીતે હજારો વાર સ્નાન કરવા છતાં પણ આ અપવિત્ર શરીરમાં નિર્મળતા-શુચિતા આવતી નથી. કેમકે, આ શરીર નિરંતર નવ દ્વારોથી મળને બહાર કાઢ્યા જ કરે છે. દેહનો જ્યારે સ્વભાવ એવો છે તો પછી એના શુચિ વિધાયક સાધન જ ક્યાંથી મેળવી શકાય. જે હું છું તે તો સદા પવિત્ર જ છું, અત્યંત નિર્મળ છું, જે પ્રકારથી વસ્તુ સ્થિતિનો વિચાર કરવા છતાં, શૌચાલયમાં રહેલું આકાશ અપવિત્ર બની શકતું નથી તેવી જ રીતે દેહમાં નિવાસ કરવાવાળો આ આત્મા પણ અપવિત્ર હો તો નથી. તે તો સદા નિર્મળ જ છે. આ પ્રકારે શરીર અને આત્મામાં અંતર જાણી જ્ઞાની એવો સદા

દૃશ્યન્તે હિ કેચિદ્ દાવાનલદગ્ધસ્થાણુવત્ કાલવર્ણાઃ શીતવાતાદિભિરુપાતા  
ધૂલિવ્યાપ્તા મલિનદેહા મનુષ્યાઃ। તેષામકામનિર્જરયા નાસ્તિ કશ્ચિદ્ ગુણઃ, મમ તુ  
મલધારણેન મહાન્ ગુણઃ, ઇતિ મત્વા મહાપનયનાય સ્નાનાદ્યભિલાષમપિ ન કદા-  
ચિત્ કુર્યાદિત્યર્થઃ । ઉક્તञ્ચ—

ન શક્યં નિર્મલીકર્તું ગાત્રં સ્નાનશતૈરપિ ।

અશ્રાન્તમિવ સ્રોતોમિ,—નૈવભિર્મલમુદ્ધિરત્ ॥ ૧ ॥

હોતા હૈ તવ તક વહ ( કાણ-કાયેન ) શરીર સે ( જલ્લં ધારણ-જલ્લં  
ધારયેત્ ) મેલ કો ધારે । ઉસે યહ વિચાર કરતે રહના ચાહિયે કિ હસ  
સંસાર મેં એસે અનેક પ્રાણી-મનુષ્ય દેસે જાતે હૈં । જો દાવાનલ  
સે દગ્ધ સ્થાણુ કી તરહ ઘિલકુલ કૃષ્ણવર્ણ હોતે હૈં । ઉનકા શરીર  
શીતવાત આદિ સે સદા પીડિત હોતા રહતા હૈં । ધૂલિ સે વ્યાપ્ત હોને  
કે કારણ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈં । પરન્તુ ફિર ભી હનકો હસકી  
ચિન્તા નહીં હોતી હૈં । અકામ નિર્જરા સે હનકો ઇતના સઘ કુછ સહન  
કરને પર ભી કોઈ લાભ નહીં । મેરે લિયે તો હસ મેલ ધારણ કરને સે  
મહાન્ લાભ હૈ, અતઃ હસકે દૂર કરને કે લિયે મુશ્કે સ્નાન આદિ  
સાવચક્રિયાઓં કી અભિલાષા સ્વપ્ન તક મેં ભી નહીં કરની ચાહિયે ।  
કહા ભી હૈ—

ન શક્યં નિર્મલીકર્તું, ગાત્રં સ્નાનશતૈરપિ ।

અશ્રાન્તમિવ સ્રોતોમિ,—નૈવભિર્મલમુદ્ધિરત્ ॥ ૧ ॥

કાણ-કાયેન તે શરીરથી જલ્લં ધારણ-જલ્લં ધારયેત્ મેલને રાખે. તેણે એ  
વિચાર કરતા રહેલું બોધ્યે કે, આ સંસારમાં એવાં અનેક પ્રાણી, મનુષ્ય  
દેખવામાં આવે છે જે દાવાનળથી દગ્ધ પાણુની જેવા તદ્દન કાળા સ્વરૂપના બ  
હોય છે. તેનું શરીર શીત, વાત આદિથી સદા પીડિત રહે છે. ધૂળથી ભરેલું  
હોવાને કારણે અત્યંત મલીન હોય છે, છતાં પણ એમને એની ચિંતા હોતી  
નથી. અકામનિર્જરાથી એમને એટલું બધું સહન કરવા છતાં પણ કોઈ  
લાભ નથી. મારા માટે તો આ મેલનો પરીવહ સહન કરવાથી મહાન લાભ  
છે, આથી તેને દૂર કરવા માટે મારે સ્નાન આદિ સાવચક્રિયાઓની અભિ-  
લાષા સ્વપ્ને પણ ન કરવી બોધ્યે. કહ્યું પણ છે.—

ન શક્યં નિર્મલીકર્તું, ગાત્રં સ્નાનશતૈરપિ ।

અશ્રાન્તમિવ સ્રોતોમિ,—નૈવભિર્મલમુદ્ધિરત્ ॥ ૧ ॥

મુનિનિન્દયા દુષ્કર્મ વદ્ધવાન્ । કાલમાસે કાલં કૃત્વા શ્રાવકત્વાત્ સૌધર્મે કલ્પે  
દેવત્વં પ્રાપ્તવાન્ । તતશ્ચ્યુતધાસૌ કૌશામ્બીનગરે ઇમ્યસ્ય વસુચન્દ્રશ્રેષ્ઠિનઃ પુત્રોઽભવત્ ।  
સ શ્રેષ્ઠિપુત્રો વિશુદ્ધમતિનામ્ના પ્રસિદ્ધો જાતઃ ।

સ ચૈકદા વિશાખાચાર્યસમીપે ધર્મં શ્રુત્વા પ્રવ્રજિતઃ । અન્યદા કદાચિત્ તસ્ય  
વિશુદ્ધમતિમુનેઃ પૂર્વભવકૃતમલિનમુનિનિન્દોપાર્જિતકર્મોદયાદ્ દેહેઽતિદુર્ગન્ધઃ સમુ-  
ત્પન્નઃ । શટિતસર્પાદિમૃતકગન્ધાદપ્યધિકં વિશુદ્ધમતિમુનિદેહભવં દુર્ગન્ધં કોઽપિ સોઢું  
નાશકત્ । સર્વો લોકસ્તદ્વપુઃસ્પૃષ્ટવાયુનાઽપિ વ્યાકુલીકૃતઃ સન્નિતસ્તતઃ પલાયતે ।

કારણ મૈલ સે ભરા રહતા હૈ । ફિર भी ये लोग अपने को बहुत ऊँचा  
समझते रहते हैं और इधर से उधर भटकते रहते हैं । इस प्रकार  
मुनि की निंदा से उसने गाढ़ दुष्कर्म का बंध कर लिया, और श्रावक  
होने की वजह से वह मर कर सौधर्म देवलोक में देवपर्याय से  
उत्पन्न हुआ । वहां से च्यवकर यह कौशाम्बी नगरी में वसुचंद्र नामक  
इभ्य-शेठ का पुत्र हुआ । उसका नाम विशुद्धमति रक्खा गया ।

एक दिनकी बात है कि विशुद्धमति ने विशाखाचार्य के पास धर्म  
श्रवणकर दीक्षा ले ली । कालान्तरमें विशुद्धमति मुनिके शरीरमें सुनंद  
वणिक्के भवमें की गई मुनिनिन्दासे उपार्जित पापकर्म के उदय से अति  
दुर्गन्ध आने लगी । सड़े हुए सांप आदिकी जैसी दुर्गन्ध होती है  
उससे भी अधिक दुर्गन्ध इनके शरीर की थी, अतः उस दुर्गन्ध को  
सहन करने के लिये कोई भी समर्थ नहीं हुआ । उसके शरीर को  
स्पर्शकर जो वायु आता था लोग उस वायु से भी घबरा जाते थे ।

પણ આ લોકો પોતાને ખૂબજ ઉંચા સમજે છે અને અહીં તહીં ભટકતા  
રહે છે. આ પ્રકારની મુનિની નિંદાથી તેણે ગાઢ દુષ્કર્મનો બંધ કરી લીધો  
અને શ્રાવક હોવાના કારણે તે મરીને સૌધર્મ દેવલોકમાં દેવ પર્યાયથી ઉત્પન્ન  
થયો. ત્યાંથી ચવીને તે કૌશામ્બી નગરીના વસુચંદ્ર નામના ઇમ્ય-શેઠનો પુત્ર  
થયો. તેનું નામ વિશુદ્ધમતિ રાખવામાં આવ્યું.

એક દિવસની વાત છે કે, વિશુદ્ધમતિએ વિશાખાચાર્યની પાસે ધર્મ શ્રવણ  
કરી દીક્ષા લઈ લીધી કાળાન્તરમાં વિશુદ્ધમતિ મુનિના શરીરમાં સુનંદ વણી-  
કના ભવમાં કરાયેલ મુનિ નિંદાથી ઉપાર્જન કરેલ પાપકર્મના ઉદયથી અતિ  
દુર્ગંધ આવવા લાગી. સડેલા સર્પ વગેરેની જે દુર્ગંધ આવે છે તેનાથી પણ  
અધિક દુર્ગંધ તેના શરીરની હતી. આથી એ દુર્ગંધને સહન કરવા કોઈ સમર્થ  
ન બન્યું, તેના શરીરને સ્પર્શ કરીને જે પવન આવતો તે પવનથી પણ લોકો

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

ચમ્પાનગર્યાં સુનન્દનામા ધનાઢ્યો વણિક શ્રાવક આસીત્ । સંવહુવિધપણ્યૈ-  
ર્વ્યવહારકરણેન જાતાભિમાનો વિવેકરહિતઃ કદાચિદેકદા સાધું દૃષ્ટ્વા નિન્દતિ  
સ્મ—અહો ! શરીરસંસ્કારવર્જિતાઃ અભદ્રવેષા ધૂલિધૂસરા ધર્માદિસમુત્પન્નમલા-  
નપનયનેન મલિનશરીરાઃ પુનરપિ સ્વવેપં મન્યમેવ મન્યમાના વિહરન્તિ । સ ચૈવં

સ્નાનાદિક સે કિસકી શુચિ કરૂં ? જિસ શરીરકી શુચિ હન સ્નાનાદિ  
ક્રિયાઓં સે કરના ચાહતા હું વહ તો સ્વભાવ સે હી અપવિત્ર હૈ, તથા  
આત્મા પવિત્ર હોને સે उसकी શુચિ કરને का प्रयास व्यर्थ है । ऐसा  
समझकर साधु जलपरीषह को सहन करे ।

દૃષ્ટાન્ત—ચંપાનગરી મેં સુનંદ નામકા એક ધનાઢ્ય વૈશ્ય શ્રાવક  
રહતા થા । હસકા વ્યાપાર સૂચ ચલતા થા । અનેક ચીજોં કા રોજગાર  
યહ કિયા કરતા થા । હસસે દુકાનદારી મેં હસકો અધિક લાભ હોતા  
થા, હસલિયે હસે અપની દુકાનદારી કા વહુત કુછ અભિમાન થા ।  
વિવેક સે રહિત હોને કે કારણ એક દિન કી વાત હૈ કિ હસને કિસી  
એક સાધુ કો દેખકર उसकी भारी निंदा की । कहने लगा—देखो तो  
सही ये शरीर के संस्कार से बिल्कुल वर्जित रहते हैं, इनका वेष भी  
भद्रपुरुषों जैसा नहीं होता है, शरीर पर तो इनके धूल चढ़ी रहती है ।  
ये नहाते धोते नहीं हैं । रात दिन पसीना आते रहनेसे कपड़े भी इनके  
बुरी तरह से दुर्गन्ध देने लगते हैं । शरीर भी पसीने से तर हो जाने के

વિચાર કરતો રહે કે, હું હવે સ્નાન આદિથી કેની શુદ્ધિ કરું ? જેની શુદ્ધિ  
આવી સ્નાનાદિક ક્રિયાઓથી કરવા ચાહું છું તે તો સ્વભાવથી જ અપવિત્ર  
છે. તથા આત્મા પવિત્ર હોવાથી જેની શુદ્ધિ કરવાનો પ્રયાસ વ્યર્થ છે એવું સમજીને  
સાધુ જળપરીષદને સહન કરે.

દૃષ્ટાન્ત—ચંપાનગરીમાં સુનંદ નામનો એક ધનાઢ્ય વૈશ્ય-શ્રાવક રહેતો  
હતો. તેનો વેપાર ખૂબ ચાલતો હતો. અનેક ચીજોનો રોજગાર તે કરતો હતો.  
તેનાથી દુકાનદારીમાં તેને અધિક લાભ થતો હતો. તેને પોતાની દુકાનદારીનું  
ધણું અભિમાન હતું. વિવેકથી રહિત હોવાના કારણે એક દિવસની વાત છે કે,  
તેણે કોઈ એક સાધુને જોઈને તેની ખૂબ નિંદા કરી, કહેવા લાગ્યો કે, જુઓ  
તો ખરા ! આ શરીરના સંસ્કારથી તદ્દન વર્જીત રહે છે. તેનો વેષ પણ ભદ્ર  
પુરુષો જેવો નથી. શરીર ઉપર તો ધૂળ ચોંટેલી રહે છે, એ નાતા ધોતા નથી,  
રાત દિવસ પરસેવો આવતો હોવાથી તેમનાં કપડાં પણ દુર્ગંધ મારતાં હોય  
છે અને શરીર પણ પરસેવાથી તર હોવાને કારણે એકથી ભરેલું રહે છે. તો

अथैकोनविंशतितमं सत्कारपुरस्कारपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—अभिवायमव्भुट्टाणं, सामी कुज्जा निमंतणं ।

जे ताइं पडिसेवन्ति, न तेसिं पीहिए मुंणी ॥३८॥

छाया—अभिवादम् अभ्युत्थानं, स्वामी कुर्यात् निमन्त्रणम् ।

ये तानि प्रतिसेवन्ते, न तेभ्यः स्पृहयेत् मुनिः ॥ ३८ ॥

टीका—‘अभिवाय०’ इत्यादि ।

स्वामी=राजादिकः, अभिवादम्-अभिवादनम्-‘शिरोनमनचरणस्पर्शनादिपूर्व-  
कमभिवादये प्रणमामी’त्यादिवचनरूपं पुरस्कारं, तथा-अभ्युत्थानम्=अभिमुखमु-  
त्थानम्-ससंभ्रममासनं परित्यज्योत्थानरूपं पुरस्कारं च, तथा-निमन्त्रणम्-  
आहारादिग्रहणाय प्रार्थनम्, ‘अद्य मद्गृहे भिक्षा ग्रहीतव्या’ इत्यादिवचनरूपं

जन्ममरण से सदा के लिये विमुक्त हो गये । इसी तरह अन्य मुनियों  
को भी जल्लुपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ३७ ॥

अब उन्नीसवां सत्कारपुरस्कारपरीपहजय को सूत्रकार कहते हैं-  
‘अभिवायं’-इत्यादि ।

अन्वयार्थ—यदि (सामी-स्वामी) राजा आदि (अभिवायं अव्भु-  
ट्टाणं निमंतणं-अभिवादनं अभ्युत्थानम् निमन्त्रणं) अभिवादन-अपने  
मस्तक को झुकाकर चरणस्पर्श करते हुए नमस्कार करें, तथा अभ्यु-  
त्थान-मुनि को आते देखकर बड़े आदरभाव से अपने आसन का  
परित्याग कर वे उठ खड़े हों और मुनि के सन्मुख जावें, तथा-निमं-  
त्रण-आहार आदि के ग्रहण करने के लिये प्रार्थना करें कि महाराज !  
आज आप मेरे घर पर भिक्षा लें, इस प्रकार अभिवादन, अभ्युत्थान

कल्याण साधीने जन्ममरणथी सदाने माटे विमुक्त जनी गया. आ रीते अन्य  
मुनिओअे पण जल्लुपरीपहने सहन करवो. जेधअे. ॥ ३७ ॥

हुवे ओगणीसमे सत्कारपुरस्कारपरीपह जल्लवाने सूत्रकार कहे छे.

‘अभिवायं’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—यदि सामी-स्वामी राजा वगेरे अभिवायं अव्भुट्टाणं निमंतणं-अभिवादनं  
अभ्युत्थानम् निमन्त्रणम् पोताना मस्तकने झुकावी चर्चस्पर्श करी नमस्कार करे,  
तथा अभ्युत्थान-मुनिने आवता जेधने धणा आदरभावथी पोताना आसनने  
परित्याग करी ते उठीने उला रडे अने मुनिनी सामे जय, तथा निमन्त्रण-  
आहार आदि ग्रहण करवा माटे प्रार्थना करे छे, महाराज ! आज आप मेरा  
घरे भिक्षा ल्यो. आ प्रकारे अभिवादन, अभ्युत्थान तथा निमन्त्रण कुज्जा-कुर्यात्

યત્ર યત્રાસૌ ભિક્ષાઘર્થ યાતિ તત્ર તત્ર લોકસ્તદ્ગન્ધેન વિમના ભવતિ । મુનિશ્ચ તિરસ્કારં પ્રાપ્નોતિ તથાપ્યસૌ જલ્હપરીપદં સદતે ।

તદનન્તરં વિશાખાચાર્યસ્તમત્રવીત્-વત્સ ! ત્વદ્દેહદૌર્ગન્ધ્યાદ્ ભૃશમુદ્દેગો જનનાં જાયતે, તસ્માદુપાશ્રય એવ ત્વયા સ્થાતવ્યં, ન તુ વહિર્ગૃહસ્થસંનિધૌ ગન્તવ્યમ્ । इत्थं तद्वचनं निशम्य विशुद्धमतिमुनिस्तस्मिन्नेवोपाश्रये स्थितः । अन्तप्रान्ताहारेण दुर्बलशरीरोऽसौ विशुद्धमतिमुनिः स्वगुरुं प्रार्थ्य तदाज्ञामादाय पादपोषगमनं कृत्वा स्वकल्याणं साधयामास । एवमन्यैर्मुनिभिर्जल्लपरीपदः सोढव्यः ॥ ३७ ॥

જહાં જહાં યે ભિક્ષા કે લિયે જાતે વહાંર લોગ ઉનકે શરીર કી દુર્ગન્ધ સે વ્યાકુલ હો ઉઠતે । इस दुर्गन्ध के कारण मुनिराज का भी तिरस्कार होने लगा । फिर भी उन्होंने इस तर्फ ध्यान नहीं दिया और जल्ल-परीपद को जीतने में ही वे अपनी सारी शक्ति लगाते रहे ।

વિશાખાચાર્ય ને એક દિન હનસે કહા વત્સ ! તુમ્હારે શરીર કી દુર્ગન્ધ સે લોગોં મેં વડા અસન્તોષ ફેલ રહા હૈ વે વડે ઉદ્વિગ્ન હોતે હૈં, इसलिये तुम अब कहीं न जाकर सिर्फ उपाश्रय में ही रहा करो । इस प्रकार गुरु महाराज के वचन सुनकर विशुद्धमति मुनिराज अब उपाश्रय में ही रहने लगे-बाहर गृहस्थों के यहां आना जाना बंद कर दिया । अन्त प्रान्त आहार से इनका शरीर भी दुर्बल हो गया था, अतः अपने गुरु महाराज से प्रार्थना कर इन्होंने उनकी आज्ञानुसार पादपोषगमन संथारा धारण कर लिया और अपना कल्याण साध कर

ગભરાઈ જતા હતા. જ્યાં જ્યાં એ ભિક્ષા લેવા જતા ત્યાં ત્યાં લોકો એના શરીરની દુર્ગન્ધથી વ્યાકુળ બની જતા. અને આ દુર્ગન્ધના કારણે જ્યાં ત્યાં મુનિજાનને પણ તિરસ્કાર થવા લાગ્યો. તો પણ તેમણે એ તરફ ધ્યાન ન આપ્યું. અને જળપરીપદ જીતવામાં જ પોતાની બધી શક્તિ લગાડી રહ્યા.

વિશાખાચાર્યે તેને એક દિવસ કહ્યું, હે વત્સ ! તમારા શરીરની દુર્ગન્ધથી લોકોમાં ઘણો અસંતોષ ફેલાઈ રહ્યો છે. આથી ઘણું ઉદ્વિગ્ન બને છે, માટે તમે હવે ક્યાંય ન જતાં ફક્ત ઉપાશ્રયમાં જ રહ્યા કરો. આ પ્રકારનું ગુરુમહારાજનું વચન સાંભળીને વિશુદ્ધમતિ મુનિરાજ હવે ઉપાશ્રયમાં જ રહેવા લાગ્યા. બહાર ગૃહસ્થોને ત્યાં જવા આવવાનું બંધ કરી દીધું. અન્ત પ્રાન્ત આહારથી તેમનું શરીર પણ દુર્બળ થઈ ગયું, અંતે પોતાના ગુરુમહારાજને પ્રાર્થના કરી તેમની આજ્ઞા અનુસાર પદપોષગમન સંથારોં ધારણ કર્યો. આ



छाया—अनुत्कशायी अल्पेच्छः, अज्ञातैषी अलोलुपः ।

रसेषु नानुगृध्येत्, नानुतप्येत प्रज्ञावान् ॥ ३९ ॥

टीका—‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अनुत्कशायी=अनुत्कः—अनुत्कण्ठितः शेते, धातूनामनेकार्थत्वाद् वर्तते इत्येवं शीलः सत्कारादिवाञ्छारहित इत्यर्थः, यद्वा—माकृतत्वाद्—‘अणुकपायी’ इति-च्छाया । अल्पकपायी—कपायरहित इत्यर्थः—वन्दनादिकमकुर्वते न क्रुध्यति, वन्दनादौ कृते वा न मानं कुरुते न वा तदर्थं शीतोष्णाऽऽतापनादिभिर्मायां करोति, न चापि तत्र लोभं करोतीति भावः । अत एव—‘अल्पेच्छः’=धर्मोपकरणमात्राभिलाषी, न तु सत्कारपुरस्काराभिलाषीत्यर्थः । अत एव—अज्ञातैषी—अज्ञातः=जातिश्रुतादिभिरपरिचितो भूत्वा एषयति—गवेपयति पिण्डादिकं, यः स तथा, यद्वा—अज्ञाते=अज्ञातकुले एषयति=गवेपयति पिण्डादिकं यः स तथा, तत्र हेतुं प्रदर्शयति

अब सूत्रकार इसी अर्थ को विशद करते हैं—‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—( अणुकसाई—अनुत्कशायी ) सत्कार आदि की अभिलाषा रहित अथवा अल्पकपाय वाला—सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्—वन्दना आदि नहीं करने वाले के प्रति क्रोध नहीं करने वाला, तथा वन्दनादि करने पर अभिमान नहीं करने वाला, तथा मान सन्मान आदि के निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करने वाला, तथा उस विषय में लोभ—कपाय भी नहीं करने वाला, (अपिच्छे—अल्पेच्छः) तथा अल्पइच्छावाला धर्मोपकरणमात्र की अभिलाषा वाला सत्कारपुरस्कार आदि की अभिलाषा वाला नहीं, तथा ( अन्नाएसी—अज्ञातैषी ) जाति एवं श्रुत आदि से अपरिचित होकर शुद्ध पिण्डादिक की गवेपणा करने वाला, अथवा—अज्ञातकुल में

इसे सूत्रकार आ अर्थने स्पष्ट करे छे—‘अणुकसाई’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—अणुकसाई—अनुत्कशायी सत्कार आदिनी अभिलाषाथी रहित अथवा अल्प कपायवाणा—सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्—वन्दना आदि न करने पर तत्क्रोध नहीं करवावाणा तथा वन्दनादि करवाथी अभिमान नहीं करवावाणा तथा मान सन्मान आदि निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करवावाणा तथा ये विषयमां दोल कपाय पणु नहीं करवावाणा अपिच्छे—अल्पेच्छः तथा—अल्प इच्छावाणा—धर्मोपकरण मात्रा नी अभिलाषावाणा—सत्कार पुरस्कार आदिनी अभिलाषावाणा नहीं तथा अन्नाएसी—अज्ञातैषी जाति अगर श्रुत आदिथी अपरिचितथनीने शुद्ध पिण्डादिकनी गवेपणा

સત્કારં કુર્યાત્, તાનિ=અભિવાદાદીનિ યે સ્વયૂથવર્તિનઃ અવસન્નપાર્શ્વસ્થાદયઃ, પરતીર્થિકા દણ્ડિશાક્યાદયો વા દ્રવ્યલિઙ્ગિનઃ પ્રતિસેવન્તે=આગમનિપિદાન્યપિ સ્વીકુર્વન્તિ, તેભ્યઃ=ઋદ્ધિરસસાતગૃદ્ધિયુક્તેભ્યઃ, મુનિઃ=અનગારઃ ન સ્પૃહયેત્, રાજાદિકૃતસત્કારપુરસ્કારૌ પ્રતિસેવમાનાન્ દ્રવ્યલિઙ્ગિનઃ સાધૂન્ વિલોક્ય—“અહો! પુણ્યશાલિનોઽમી પાર્શ્વસ્થાદયઃ શાક્યાદયથ પદેતાદૃશં વન્દનાભ્યુત્થાનાદિસત્કારં પ્રાપ્નુવન્તિ, અતોઽહમપ્યેતાદૃશો ભવામી”-તિ મુનિસ્તત્સામ્યં ન વાઙ્છેદિત્યર્થઃ ॥૩૮॥

અમુમેવાર્થે વિશદયતિ—

મૂલમ્-અણુર્કંસાઈ અપ્પિચ્છે, અન્નાઈસી અલોલુપ્પ ।

રસેસુ નાણુંગિજ્ઞાજ્ઞા, નાણુંતપ્પિજ્ઞ પંપણવં ॥૩૯॥

તથા નિમંત્રણ ( કુજ્જા-કુર્યાત્ ) કરે ઓર ( તાઈ-તાનિ ) ડનકો ( જે-યે ) જો સ્વયૂથવર્તી અવસન્ન પાસત્થ આદિ, અથવા પરતીર્થિક દણ્ડિશાક્યાદિક દ્રવ્યલિઙ્ગી સાધુ ( પડિસેવંતિ-પ્રતિસેવન્તે ) સેવન કરતે હૈં ડનકો સ્વીકાર કરતે હૈં તો ( મુણી તેસિં ન પીહણ-મુનિઃ તેભ્યઃ ન સ્પૃહયેત્ ) મુનિ ડન ઋદ્ધિરસસાતગૃદ્ધિયુક્તોં કી સ્પૃહા ન કરે રાજા આદિ દ્વારા કિયે ગયે સત્કાર પુરસ્કાર કો પ્રતિસેવન કરને વાલે અવસન્નપાર્શ્વસ્થાદિ દ્રવ્યલિઙ્ગી સાધુઓં કો દેસકર “અહો! યે અવસન્ન પાર્શ્વસ્થાદિક તથા શાક્યાદિક વડે હી પુણ્યશાલી હૈં જિસસે યે ઇસ પ્રકાર કે વન્દન અભ્યુત્થાન આદિ સત્કાર કો પાતે હૈં અતઃ મૈં ઓ ઇનકે જૈસા હોઝં તો અચ્છા હો” ઇસ પ્રકાર અણગાર-મુનિ ડનકી સમાનતા કી અર્થાત્ ડનકે જૈસા હોને કી વાચ્છા નહીં કરે ॥ ૩૮ ॥

કરે અને તાઈ-તાનિ એમને જે-યે જે સ્વયૂથવર્તી અવસન્ન પાસત્થ આદિ અથવા પરતીર્થિક દંડી, શાક્યાદિક દ્રવ્યલિંગી સાધુ પડિસેવંતિ-પ્રતિસેવન્તે સેવન કરે છે-એને સ્વીકાર કરે છે મુણી તેસિં ન પીહણ-મુનિઃ તેભ્યઃ ન સ્પૃહયેત્ તો મુનિ એ ઋદ્ધિરસ સાત ગૃદ્ધિયુક્તોની સ્પૃહા ન કરે. રાજા આદિ દ્વારા કરાયેલા સત્કાર પુરસ્કારતું પ્રતિસેવન કરવાવાળા અવસન્ન પાર્શ્વસ્થાદિ દ્રવ્યલિંગી સાધુએને જોઈને “અહો” એ અવસન્ન પાર્શ્વસ્થાદિક તથા શાક્યાદિક ઘણા જ પુણ્યશાળી છે, જેથી તે આ પ્રકારનાં વંદન અભ્યુત્થાન આદિ સંસ્કાર પામે છે. એથી હું પણ એમના જેવો થાઉં તો સાઈ થાય. આ પ્રકારે અણગાર મુનિ તેમની સમાનતાની અર્થાત્ તેમના જેવા થવાની વાંચ્છના ને કરે. ॥ ૩૮ ॥

छाया—अनुत्कशायी अल्पेच्छः, अज्ञातैषी अलोलुपः ।

रसेषु नानुगृध्येत्, नानुतप्येत प्रज्ञावान् ॥ ३९ ॥

टीका—‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अनुत्कशायी=अनुत्कः—अनुत्कण्ठितः शेते, धातूनामनेकार्थत्वाद् वर्तते इत्येवं शीलः सत्कारादिवाञ्छारहित इत्यर्थः, यद्वा—प्राकृतत्वाद्—‘अणुकपायी’ इति-च्छाया । अल्पकपायी—कपायरहित इत्यर्थः—वन्दनादिकमकुर्वते न कुप्यति, वन्दनादौ कृते वा न मानं कुरुते न वा तदर्थं शीतोष्णाऽऽतापनादिभिर्मायां करोति, न चापि तत्र लोभं करोतीति भावः । अत एव—‘अल्पेच्छः’=धर्मोपकरणमात्राभिलाषी, न तु सत्कारपुरस्काराभिलाषीत्यर्थः । अत एव—अज्ञातैषी—अज्ञातः=जातिश्रुतादिभिरपरिचितो भूत्वा एषयति—गवेपयति पिण्डादिकं, यः स तथा, यद्वा—अज्ञाते=अज्ञातकुले एषयति=गवेपयति पिण्डादिकं यः स तथा, तत्र हेतुं प्रदर्शयति

अथ सूत्रकार इसी अर्थ को विशद करते हैं—‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—( अणुकसाई—अनुत्कशायी ) सत्कार आदि की अभिलाषा रहित अथवा अल्पकपाय वाला—सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्—वन्दना आदि नहीं करने वाले के प्रति क्रोध नहीं करने वाला, तथा वन्दनादि करने पर अभिमान नहीं करने वाला, तथा मान सन्मान आदि के निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करने वाला, तथा उस विषय में लोभ—कपाय भी नहीं करने वाला, (अपिच्छे—अल्पेच्छः) तथा अल्पइच्छावाला धर्मोपकरणमात्र की अभिलाषा वाला सत्कारपुरस्कार आदि की अभिलाषा वाला नहीं, तथा ( अन्नाएसी—अज्ञातैषी ) जाति एवं श्रुत आदि से अपरिचित होकर शुद्ध पिण्डादिक की गवेपणा करने वाला, अथवा—अज्ञातकुल में

इसे सूत्रकार आ अर्थने स्पष्ट करे छे—‘अणुकसाई’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—अणुकसाई—अनुत्कशायी सत्कार आदिनी अभिलाषाथी रहित अथवा अल्प कपायवाणा—सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्—वन्दना आदि न करने तर इ क्रोध नहीं करवावाणा तथा वन्दनादि करवाथी अभिमान नहीं करवावाणा तथा मान सन्मान आदि निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करवावाणा तथा ये विषयमां लोभ कपाय पणु नहीं करवावाणा अपिच्छे—अल्पेच्छः तथा—अल्प इच्छावाणा—धर्मोपकरण मात्रा अभिलाषावाणा—सत्कार पुरस्कार आदिनी अभिलाषावाणा नहीं तथा अन्नाएसी—अज्ञातैषी जाति अगर श्रुत आदिथी अपरिचितथनीने शुद्ध पिण्डादिकनी गवेपणु

—‘અલોલુપ’ ઇતિ । અલોલુપઃ=સરસાહારાદિષુ રસનેન્દ્રિયાદિલોલુપતાવર્જિતઃ, તથા—પ્રજ્ઞાવાન્=હેયોપાદેયવિવેચનનિપુણબુદ્ધિમાન્, રસેષુ=રસાદિષુ, નાનુગૃધ્યેત્=મનોજ્ઞરસાદિભિઃ સત્કારે પુરસ્કારે ચ કૃતે તત્ર મૂર્છાં ન કુર્યાત્ । નાનુતપ્યેત્=સત્કારપુરસ્કારયોરભાવે વિષાદં ન કુર્યાત્ ।

અર્થ ભાવઃ—ભક્તપાનવસ્ત્રપાત્રાદીનાં લાભઃ સત્કારઃ, ગુણોત્કીર્તનં વન્દનામ્બુ-  
ત્થાનાસનપ્રદાનાદિવ્યવહારથ પુરસ્કારઃ । તત્ર—સત્કારપુરસ્કારપ્રાપ્તૌ સત્યાં શુદ્ધિ  
ન કુર્યાત્, તયોરભાવે દ્વેષં ન કુર્યાત્, નાપિ ચ મનસ્તાપેનાત્માનં દૂષયેત્, કિંતુ  
દૈન્યવર્જનેન તદનાકાઙ્ક્ષયા ચ સત્કારપુરસ્કારપરીપદઃ સોઢવ્યઃ, इत्येवं सद्भावस-  
द्भावभेदेन द्विविधोऽयं परीपदः सोढव्य इति । उक्तञ्च

ગવેષણા કરને વાળા, તથા (અલોલુપ-અલોલુપઃ) સરસ આહારાદિક  
મેં રસના-ઇન્દ્રિય કી લોલુપતા સે રહિત એસા (પણ્ણવં-પ્રજ્ઞાવાન્) હેય  
ઔર ઉપાદેય કે વિવેચન કરને મેં નિપુણ બુદ્ધિવાળા મુનિ (રસેષુ નાણુ-  
ગિજ્ઞિજ્ઞા-રસેષુ નાનુગૃધ્યેત્) મનોજ્ઞ રસાદિ કે દ્વારા સત્કારપુરસ્કાર  
હોને પર રસાદિ મેં મૂર્છા-શુદ્ધિ ભાવ નહીં કરે, તથા મનોજ્ઞ રસાદિ કે  
નહીં મિલને પર વિષાદ નહીં કરે ।

ભાવાર્થ—હસકા સારાંશ યહ હૈ કિ-ભક્ત, પાન, વસ્ત્ર એવં પાત્રા-  
દિકકા લાભ સત્કાર હૈ, તથા ગુણોં કા કથનરૂપ તથા વન્દના અમ્બુ-  
ત્થાન એવં આસનપ્રદાનરૂપ જો વ્યવહાર હૈ વહ પુરસ્કાર હૈ । સાધુ કો  
સત્કારપુરસ્કાર કી પ્રાપ્તિ હોને પર શુદ્ધિ ઔર હનકે અભાવ મેં દ્વેષ  
નહીં કરના ચાહિયે, ઔર ન મનકે સંતાપ સે અપને આપકો દૂષિત હી

કરવાવાળા અથવા અજ્ઞાત કુળમાં આહારની ગવેષણા કરવાવાળા તથા  
અલોલુપ-અલોલુપઃ સરસ આહારાદિકમાં રસનાઇન્દ્રિયની લોલુપતાથી રહિત એવી  
પણ્ણવં-પ્રજ્ઞાવાન્ હેય અને ઉપાદેયનું વિવેચન કરવામાં નિપુણ બુદ્ધિવાળા  
મુનિ, રસેષુ નાણુગિજ્ઞિજ્ઞા-રસેષુ નાનુગૃધ્યેત્ મનોજ્ઞ રસાદિ દ્વારા સત્કારપુરસ્કાર  
હોવા છતાં રસાદિમાં મૂર્છા-શુદ્ધિભાવ ન કરે. તથા મનોજ્ઞ રસાદિ નહીં મળ-  
વાથી વિષાદ ન કરે.

આનો સારાંશ એ છે કે—ભક્ત, પાન, વસ્ત્ર, અને પાત્રાદિકનો લાભ  
સત્કાર છે, તથા ગુણોના કથનરૂપ, તથા વંદના અમ્બુત્થાન અને આસનપ્રદાન  
રૂપ જે વહેવાર છે, તે પુરસ્કાર છે. સાધુને સત્કારપુરસ્કારની પ્રાપ્તિ હોવાથી  
શુદ્ધિ અને તેના અભાવમાં દ્વેષ ન કરવો જોઈએ. તેમ મનના સંતાપો

ઉત્થાને વન્દને દાને, ન મવેદભિલાપુકઃ ।

અસત્કારે ન દીનઃ સ્યાત્, સત્કારે સ્યાન્ન હર્ષવાન્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અન્ન દ્રષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

અરુણાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સઠ મથુરાનગર્યાં સમવસ્યતઃ । તન્નારિમર્દનો નામ  
ભૂપતિરાસીત્, ઇન્દ્રદત્તનામકસ્તસ્ય પુરોહિતસ્તત્ર નિવસતિ । સ જિનશાસનવિરો-

કરના ચાહિયે, કિન્તુ દીનતા કે પરિહાર સે એવં સત્કારપુરસ્કાર કી  
અનાકાંક્ષા સે સત્કારપુરસ્કાર ઇન દોનોં કો સહન કરતે રહના  
ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર સદ્ભાવ ઓર અસદ્ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકારકા યહ  
પરીપદ સાધુ કો સહન કરને યોગ્ય બતલાયા ગયા હૈ । કહા ભી હૈ—

ઉત્થાને વન્દને દાને, ન મવેદભિલાપુકઃ ।

અસત્કારે ન દીનઃ સ્યાત્, સત્કારે સ્યાન્ન હર્ષવાન્ ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—વસ્ત્ર પાત્રાદિક કા લાભ હો ચાહે ન હો, કોઈ વંદનાદિક  
કરે યા ન કરે, ઇસ તર્ફ લક્ષ્ય ન દેના ઓર ન ઇસ વિષયક હર્ષ વિષાદ  
કરના । ચાહે કોઈ સત્કાર કરે ચાહે ન કરે સબ મેં સમભાવ રહના સો  
સત્કારપુરસ્કારપરીપદજય હૈ ।

દ્રષ્ટાન્ત—એક સમય અરુણાચાર્ય અપને શિષ્યપરિવાર કે સાથ  
મથુરા નગરી મેં આયે હુએ થે । ઊસ સમય વહાં અરિમર્દન રાજા કા  
રાજ્ય થા । રાજા કે પુરોહિત કા નામ ઇન્દ્રદત્ત થા । યહ ઊસી નગરી

પોતાને દ્વેષિત ન કરે, પરંતુ દીનતાના પરિહારથી અને સત્કારપુરસ્કારની  
અનાકાંક્ષાથી સત્કારપુરસ્કાર આ બંને ને સહન કરતા રહેવું જોઈએ. આ  
પ્રકારે સદ્ભાવ અને અસદ્ભાવના ભેદથી બે પ્રકારનો આ પરીપદ સાધુએ  
સહન કરવા યોગ્ય બતાવેલ છે. કહ્યું છે કે—

ઉત્થાને વંદને દાને, ન મવેદભિલાપુકઃ ।

અસત્કારે ન દીનઃ સ્યાત્, સત્કારે સ્યાન્ન હર્ષવાન્ ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—વસ્ત્ર પાત્રાદિકનો લાભ હોય અગર ન હોય, કોઈ વંદના  
આદિ કરે કે ન કરે, એ તરફ લક્ષ ન આપવું. અથવા ન આ વિષયમાં હર્ષ  
વિષાદ કરવો. આડે કોઈ સત્કાર કરે, આડે ન કરે સધળામાં સમભાવ રહેવો  
તે સત્કારપુરસ્કાર પરીપદ જય છે.

દ્રષ્ટાન્ત—એક સમયે અરુણાચાર્ય પોતાના શિષ્ય પરિવાર સાથે મથુરા  
નગરીમાં વિચરતા હતા. એ વખતે ત્યાં અરિમર્દન રાજાનું રાજ્ય હતું. રાજાના  
પુરોહિતનું નામ ઇન્દ્રદત્ત હતું. તે એજ નગરીમાં રહેતા હતા. જીનશાસન પ્રત્યે

ધિત્વાત્ સ્વગવાક્ષસ્થઃ સન્નયો વ્રજન્તમરુણાચાર્યસ્ય શિષ્યં સુધર્મશીલનામકં મુનિં દૃષ્ટ્વા  
ધર્મદ્વેષાદચિન્તયત્—‘ અસ્ય મુનેઃ શિરસિ પાદં નિક્ષિપામિ ’ ઇતિ એવં વિચિન્ત્ય,  
સ તન્મસ્તકોપરિ સ્વપાદમવલમ્બિતં કૃતવાન્ ।

યદા યદા ભિક્ષાર્થં સ્થણ્ડિલભૂમૌ વા મુનિસ્તદ્ભવનાઽઽસન્નમાર્ગેણ ગચ્છતિ,  
તદા તદાઽસૌ પુરોહિતઃ સ્વગવાક્ષે ઉપવિશ્ય મુનિમસ્તકોપરિ પાદધારણબુદ્ધ્યા  
સ્વપાદૌ તત્રાવલમ્બિતૌ કૃત્વા દૃષ્ટો ભવતિ । એવં નિરન્તરં કુર્વાણં દૃષ્ટ્વાઽપિ શાન્તર-  
સસમુદ્રોઽસૌ મુનિર્મનસાઽપિ નાકુપ્પત્ । એકદા મુનિમસ્તકોપરિ પાદં નિક્ષિપન્ સ

મેં રહતા થા । જિન શાસન કે પ્રતિ હસકા વિરોધ સદા સે ચલા આતા  
થા । એક દિન કી યાત હૈ કિ જય યહ અપને મકાન કે ઈરોલે મેં બેઠા  
હુઆ થા ઉસી સમય હસને અરુણાચાર્ય કે એક શિષ્ય કો કિ જિનકા  
નામ સુધર્મશીલ મુનિ થા દૃષ્ટિ કો ઈકાકર જાતે હુએ દેખા । દેખકર  
ધર્મ કે પ્રતિ દ્વેષ હોને કી વજહ સે હસને ઉસી વસ્ત ધિચાર કિયા કિ  
આજ મેં હસ મુનિ કે મસ્તક પર પૈર રખું । એસા વિચાર કર ઈરોલે કે  
પાસ સે નિકલતે હુએ મુનિ કે સિર કે ઉપર અપને પૈર લટકા દિયે ।

એક દિન ઉસ નગર કે સેઠ ને કિ જિસકા નામ સુભદ્ર થા હસ  
પુરોહિત કો મુનિ કે મસ્તક કે ઉપર પૈર રખતે હુએ દેખ લિયા । મુનિ  
કે મસ્તક ઉપર પુરોહિત પૈર હસ તરહ રખતા થા કિ મુનિ જબર  
ભિક્ષા કે લિયે યા શૌચ કે લિયે ઉસકે મકાન કી ઝિઢકી કે પાસ કે  
માર્ગસે હો કર નિકલતે તબર યહ પુરોહિત અપને મકાનકી ઉસ ઝિઢકી  
મેં બેઠ જાતા ઔર ચલતે હુએ મુનિ કે મસ્તક ઉપર અપને દોનો પૈર

તેનો વિરોધ સદા ચાલ્યો આવતો હતો. એક દિવસની વાત છે કે, બ્યારે તે  
પોતાના મકાનના ઝડખામાં બેઠેલ હતો તે સમયે તેણે અરુણાચાર્યના એક  
શિષ્યને કે જેનું નામ સુધર્મશીલ મુનિ હતું તેને નીચે માથું રાખી જતા તેણે  
જોયા. જોઈને ધર્મના તરફ દ્વેષ હોવાના કારણે તેણે તે વખતે વિચાર કર્યો  
કે, આજ હું આ મુનિના મસ્તક ઉપર પગ રાખું. એવો વિચાર કરી ઝડ-  
ખાની પાસેથી નિકળતા મુનિના માથા ઉપર પોતાના પગ લટકાવ્યા.

એક દિવસ એ નગરના જ સુભદ્ર નામના શેઠે આ પુરોહિતને મુનિના  
માથા ઉપર પગ રાખતા જોઈ લીધા. મુનિના માથા ઉપર પુરોહિત પગ એવી  
રીતે રાખતા કે, મુનિ બ્યારે બ્યારે ભિક્ષા માટે અગર શૌચ માટે તેના મકાનની  
ખડકીની પાસેના માર્ગથી નીકળે ત્યારે ત્યારે તે પુરોહિત પોતાના મકાનની  
ખડકીમાં બેસી રહેતો, અને ચાલતા મુનિના માથા ઉપર પોતાના પગ રાખતો.



प्रियदर्शिनी टीका अ०२ गा०३९ सत्कारपुरस्कारपरीषद्दे सुधर्मशीलमुनिदृष्टान्तः ४९१

पुरोहितस्तनगरश्रेष्ठिना सुभद्रनामकेन श्रावकेण दृष्टः। स सुभद्रश्रावको गुरोरपमानम-  
सहमानोऽरुणाचार्यसमीपं गत्वा वदति-भदन्त ! पुरोहितकृतो भवदपमानो मया न  
सह्यते, यतो भवदीयशिष्यस्य मस्तकोपरि इन्द्रदत्तपुरोहितेन पादो निक्षिप्तः,  
तस्मादस्य यथोचितशासनं कर्तुमिच्छामि । आचार्येणोक्तम्-देवानुप्रिय ! यथा  
नृपादिकृते सत्कारे पुरस्कारे च न प्रमोदः क्रियतेऽस्माभिः, तथा तदभावे द्वेष-  
दैन्यादिकमपि न क्रियते, जैनधर्मद्वेषादसौ तथा करोति । अस्माभिस्त्वेव परीषद्ः  
सौढव्य एव ।

रखने की इच्छा से पसार देता इससे वे मुनि के माथे ऊपर हो जाते  
थे । इस कार्य से पुरोहित को बड़ा मजा आता । पुरोहित की इस प्रवृत्ति  
को देखकर भी मुनिके चित्त में जरा भी विकृति नहीं आती, क्यों कि  
वे शान्तरस के समुद्र थे । किन्तु सुभद्र श्रावक को पुरोहित की यह बात  
सहन नहीं हुई । गुरु का अपमान देखकर उसका मन तिलमिला उठा ।  
वह शीघ्र ही अरुणाचार्य के पास पहुँचकर कहने लगा-भदन्त ! पुरो-  
हित द्वारा होता हुआ आपका अपमान मुझसे सहन नहीं किया  
जाता है, क्यों कि वह आप के शिष्य के मस्तक पर कई दिन से पैर  
जो रख रहा है, इसलिये मैं उसे इसका उचित उत्तर देना चाहता हूँ ।  
सुभद्र सेठ की बात सुनकर आचार्यमहाराज ने कहा कि देवानुप्रिय !  
हम लोग जिस प्रकार नृपादिकद्वारा क्रियमाण सत्कारपुरस्कार में  
प्रसन्न नहीं होते हैं उसी प्रकार उसके अभाव में द्वेष एवं दैन्यादिक भी

आ किया એવી રીતે કરતો કે, પગ લાંબા કરી પસારતો કે જેથી તે મુનિના  
માથા ઉપર આવે. આ કાર્યમાં પુરોહિતને ખૂબ મજા આવતી. પુરોહિતની આ  
પ્રકારની પ્રવૃત્તિને જોઈને મુનિના મનમાં જરા પણ વિકૃતિ આવતી ન હતી.  
કારણ કે, તેઓ શાંતરસના સમુદ્ર હતા. પરંતુ સુભદ્રશ્રાવકથી પુરોહિતનું આ  
વર્તન સહન ન થયું. ગુરુનું અપમાન જોઈને એનું મન ખૂબ વ્યથ થઈ ગયું.  
તે તરત જ અરુણાચાર્યની પાસે પહોંચીને કહેવા લાગ્યા, હે ભદન્ત ! પુરોહિતથી  
થતું આપનું અપમાન મારાથી સહન થતું નથી કેમકે, તે આપના શિષ્યના  
મસ્તક પર કેટલાક દિવસથી પગ રાખી અસાતના કરે છે. હું તેને આનો ઉચિત  
ઉત્તર આપવા ચાહું છું. સુભદ્રશેઠની વાત સાંભળીને આચાર્ય મહારાજે કહ્યું કે,  
દેવાનુપ્રિય ! અમે લોકો જે પ્રકારે નૃપાદિક દ્વારા કરાવેલા સત્કારપુરસ્કારમાં  
પ્રસન્ન નથી થતા, તેવી રીતે તેના અભાવમાં દ્વેષ અને દૈન્ય આદિક પણ

एकदा गुरोः समीपमागत्य सुभद्रश्रावको वदति-भदन्त ! पुरोहितेन नूतनं भवनं निर्मापितं, तत्राऽसौ राजानं भोजयितुं निमन्त्रयति । तदा स आचार्यः पूर्वं उपयोगं दत्त्वा कथयति-देवानुमिय ! यदा राजा भवने प्रवेशं करिष्यति तदैव त्वया करं धृत्वा राजा भवनाद् बहिर्निःसारणीयः, तद्भवनं कुमुहूर्ते निर्मापितं, येन राज्ञः प्रवेशसमये निश्चयेन तत् पतिष्यति । एतच्छ्रुत्वा सुभद्रश्रावकस्तस्मिन् भवने

नहीं करते हैं। यह पुरोहित जो कुछ करता है वह जैनधर्म के प्रति अपने द्वेष से करता है। हमारा तो यही आचार है कि हमें यह परीषह सहन करना ही चाहिये। आचार्य महाराज की बात सुनकर सेठ अपने घर चला गया। पुनः एक समय आकर सुभद्र श्रावक ने आचार्य महाराज को यह खबर सुनाई कि पुरोहित ने एक नूतन भवन बनवाया है सो आज उसके प्रवेश के उत्सव में उस ने राजा को भोजन के लिये आमंत्रित किया है। मैं चाहता हूं कि पुरोहित का यह व्यवहार जो उसने मुनिराज के साथ किया है वहां जाकर चुपके २ राजा को सुनाया जाय। आचार्य महाराज ने सेठ की इस बात पर ध्यान न देकर उसे इस बात से सचेत किया कि-देखो जब राजा पुरोहित के नूतन भवन में प्रवेश करने लगे तो तुम उसी समय उनका हाथ पकड़ कर मकान से बाहर निकाल लेना, क्योंकि वह भवन कुमुहूर्त में बना है, और ज्यों ही राजा उसमें प्रविष्ट होगा त्यों ही वह उस समय गिर पड़ेगा। मरते को बचाना अपना काम है, आचार्य महाराज की बात

કરતા નથી. આ પુરોહિત જે કંઈ કરે છે તે જૈનધર્મ તરફના તેના દ્વેષને લઈને કરે છે. અમારો તો એ આચાર છે જ કે, અમારે આ પરીષહ સહન કરવો જ જોઈએ. આચાર્ય મહારાજની વાત સાંભળીને શેઠ પોતાને ઘેર ચાલ્યા ગયા. ફરીથી એક વખતે આવીને સુભદ્રશ્રાવકે આચાર્ય મહારાજને એવી ખબર આપી કે, પુરોહિતે એક નવું મકાન બનાવ્યું છે. અને આજ તેના વાસ્તુ સુહૂર્તમાં તેણે રાજાને ભોજન માટે આમંત્રણ આપેલ છે. હું ચાહું છું કે, પુરોહિતનો આ વહેવાર જે તેણે મુનિરાજની સાથે કર્યો છે, તે ત્યાં જઈને રાજાને ચુપકીદીથી કહેવામાં આવે. આ પ્રકારની શેઠની વાત ઉપર ધ્યાન ન આપતાં આચાર્ય મહારાજે જોઈને કહ્યું કે, એ મકાન એવા કુમુહૂર્તમાં તૈયાર કરવામાં આવ્યું છે કે તે સુહૂર્તને દિવસે જ પડી જવાનું છે. માટે રાજા જે સમયે એમાં દાખલ થવા જાય તે સમયે તમે તેમનો હાથ પકડીને બહાર ખેંચી દેજો. મરતાને બચાવવા તે આપણો ધર્મ છે. આચાર્ય મહારાજની આ વાત સાંભળી શ્રાવક સુભદ્ર શેઠ ત્યાંથી નિકળી પુરોહિતના નવા

प्रियदर्शिनी टीका. अ० २ गा० ३९ सत्कारपुंरंस्कारपरीपद्दे सुधर्मशोलमुनिदृष्टान्तः ४९३

राज्ञः प्रवेशसमये तद्रक्षार्थं गतः । तत्र भवने राजा यदैव प्रविशति, तदैव स करं धृत्वा वेगेन राजानमाकृष्य भवनाद्वहिर्निःसारयति, नृपे निःसारिते सत्येव तद्भवनं समूलं निपतितम् । नृपेणोक्तम्—कथमेतद्भवता विदितम् । श्रावकः प्राह—मम गुरु-देवेन केनचित् कथाप्रसङ्गेन बोधितम्—कुमुहूर्तनिर्मापितं भवनं नृपस्य प्रवेशकाष्ठे पतितं भविष्यतीति । इत्युक्त्वा श्रावको नृपतिं निवेदयति—राजन् ! अयं पुरोहितः

सुनकर श्रावक सुभद्र सेठ प्रवेश होने के समय राजा की रक्षा करने के अभिप्राय से उस मकान पर गया । ज्यों ही राजा ने आकर उस भवन के भीतर प्रवेश करना चाहा कि सुभद्र सेठ ने उनका हाथ पकड़ वहाँ से शीघ्र ही राजा को बाहिर की ओर खेंच लिया । राजा के बाहर होते ही वह मकान पूरा का पूरा गिरपड़ा । राजा ने जब परिस्थिति देखी तो उसे बड़ा ही आश्चर्य हुआ । राजा ने हाथ पकड़ कर बाहिर निकालने का कारण पूछा तो सुभद्रसेठ ने सब बात उन्हें स्पष्ट कह सुनाई । राजाने प्रसन्न होकर सुभद्र सेठ से पूछा सुभद्र ! तुम्हें इस बात का पता कैसे पड़ा ? सुभद्र सेठ ने कहा महाराज ! किसी प्रसङ्ग पर आज मेरे गुरु-महाराज ने मुझ से यह बात कही कि कुमुहूर्त में निर्मापित यह भवन नृप के प्रवेश करते समय गिर जायगा । राजा को इस पर बड़ा सन्तोष हुआ । उन्होंने आचार्य महाराज के अतिशय ज्ञान की बहुत प्रशंसा की और वहीं से उन्हें परोक्ष वंदन किया । इतने में ही सुअवसर देख

। भडाने પહોંચ્યા અને રાજાના આવવાની પ્રતિક્ષા કરવા લાગ્યા. રાજાએ આવી એ મકાનમાં પ્રવેશ કરવો શરૂ કર્યો એટલે રાજાને બચાવીલેવાના અભિપ્રાયથી તેની પ્રતિક્ષા કરી રહેલ સુભદ્ર શેઠે રાજાનો હાથ પકડી આગળ વધતા અટકાવી દીધા અને થોડા પાછા ખેંચી લીધા. રાજાના બહાર ખેંચાઈ જવાની સાથેસાથ જ એ આખુંએ મકાન કડકડોસ કરતું જમીનદોસ્ત બન્યું. રાજાને આ પરિસ્થિતિ જોઈ ખૂબજ આશ્ચર્ય થયું. તેણે સુભદ્રશેઠને તેનું કારણ પૂછ્યું ત્યારે તેણે સઘળી વાત રાજાને કહી સંભળાવી. રાજાએ પ્રસન્ન થતાં કહ્યું કે, આ વાતની જાણ કઈ રીતે થઈ ? સુભદ્રશેઠે જણાવ્યું કે, આજ મારા ગુરુદેવ સાથે વતચિતમાં આ પ્રસંગની વાત ઉપસ્થિત થતાં તેઓશ્રીએ કહ્યું કે, પુરોહિતના એ મકાનનો પાથો એવા મુહૂર્તમાં નાખવામાં આવ્યો છે કે રાજાનો પ્રવેશ થતાંજ એ આખુંએ મકાન જમીનદોસ્ત થવાનું. રાજાને આ વાતથી ઘણોજ સંતોષ થયો. એણે આચાર્યમહારાજના અગાધ એવા જ્ઞાનની ખૂબજ પ્રસંશા કરી અને ત્યાંથીજ એમને પરોક્ષ વંદન કર્યું. આ વખતે સુઅવસર જોઈ સુભદ્ર શેઠે

કુમુદર્તે ભવનં નિર્માણ્ય ભોજનાર્થં ભવન્તમામન્ત્રિતવાન્, મમ ગુરુદેવં ચાનેન પથા  
ગચ્છન્તં દૃષ્ટ્વા ગવાક્ષદેશાવસ્થિતોઽયં પ્રત્યહં તન્મસ્ત્વકોપરિ ધર્મદ્વેષાત્ પાદં નિશ્ચિ-  
પતિ । એતદ્વચનં શ્રુત્વા નૃપસ્તસ્ય દુષ્ટભાવસંપન્નસ્ય પુરોહિતસ્ય પાદચ્છેદરૂપં દષ્ટં  
કર્તું સ્વમૃત્યાનાજ્ઞાપયત્ । હયં રાજાજ્ઞાનગરે તત્કાલમેવ પ્રમૃતા, અરુણાચાર્યેણાપિ  
શ્રુતા । તતઃ કરુણાર્દ્રચિત્તઃ સ મુનિઃ સ્વશિષ્યેણ નૃપતિં પ્રવોધ્ય તં પુરોહિતમરક્ષયત્ ।  
એવમન્યૈરપિ મુનિભિઃ સુધર્મશીલમુનિવત્ સત્કારપુરસ્કારપરીપ્તહઃ સોઢવ્યં ઇતિ ॥૩૯॥

કર સુભદ્ર સેઠ ને રાજા કો મુનિ કે પ્રતિ હુગ પુરોહિત કા વ્યવહાર મી  
આવ્યોપાન્ત સવ સ્પષ્ટ કર કે સુના દિયા, કહા કિ-હે રાજન્ ! આપકે  
ઇન પુરોહિત ને હસ ભવન કા નિર્માણ કુમુદર્ત મેં કરાયા હૈ ઓર ઉસમેં  
પ્રવેશ કે ઉત્સવ પર આપકો ભોજન કે લિયે આમંત્રિત કિયા હૈ । મેરે  
ગુરુ મહારાજ હસ ભવન કી દ્વરોલે કે પાસ સે જવ ૨ હોકર નિકલતે  
હેં તવ ૨ યહ ધર્મ કે દ્વેષ સે દ્વરોલે મેં વેઠ કર “મુનિકે માથે ઉપર દોનોં  
પૈર, મેરે રહે ” હસ ભાવના સે પૈર પસાર દિયા કરતા હૈ । સુભદ્ર આવક  
કી હસ વાત કો સુનકર રાજા ને “યહ પુરોહિત દુષ્ટભાવ સંપન્ન હૈ ”  
યહ જાન લિયા ઓર અપને નૌકરોં કો યહ આદેશ દિયા કિ હસકે દોનોં  
પૈર કાટ ઢાલો । યહ રાજાજ્ઞા નગર મેં વાયુવેગ સે ફૈલ ગયી । અરુણા-  
ચાર્ય કો મી યહ વાત માલુમ હુઈ તો ઉન્હોં ને અપને શિષ્ય દ્વારા રાજા  
કો સમજા બુઝા કર પુરોહિત કો વચા લિયા । હસ કથા સે યહી શિક્ષા

પુરોહિતદ્વારા મુનિપ્રત્યે કરાતા અપમાનીત વ્યવહારની વાત વિગતથી રાજા  
સમક્ષ રજુ કરી અને કહ્યું કે, હે રાજન્ ! આપના આ પુરોહિતે આ મકા-  
નનું નિર્માણ કુમુદર્તમાં કર્યું અને તેમાં પ્રવેશના ઉત્સવ ઉપર આપને ભોજન  
માટે આમંત્રણ આપેલ છે. મારા ગુરુમહારાજ આ મકાનના અરૂણાચાર્યથી  
બ્યારે બ્યારે નિકળે છે ત્યારે ત્યારે પુરોહિત ધર્મના દ્વેષથી અરૂણામાં એસી  
એમના માથા ઉપર “મારા બન્ને પગ રહે” આ ભાવનાથી પગ લાંબા કરી  
દે છે. સુભદ્ર શેઠેની વાત સાંભળી રાજાએ “આ પુરોહિત દુષ્ટ ભાવનાથી  
ભરેલ છે” આ વાત બહુ લીધી, અને પોતાના નોકરોને હુકમ કર્યો કે,  
પુરોહિતના બન્ને પગ કાપી નાખો. આ પ્રમાણેની રાજાની આજ્ઞા વાયુવેગથી  
નગરમાં ફેલાઈ ગઈ અને તે અરૂણાચાર્ય મુનિના બહુવામાં આવતા તેઓએ પોતાના  
શિષ્ય મારકુત રાજાને સમજાવી પુરોહિતને બચાવી લીધો. આ કથાથી એ બહુ

अथ विंशतितमं प्रज्ञापरीपहमाह—

मूलम्—‘से’ य नूणं मए पुंवं, कम्माऽणाणफला कंडा ।

जेणाहं नाभिजाणामि, पुंठो केणइ कंणहुइ ॥ ४० ॥

अहं पच्छा उइज्जंति, कम्माऽणाणफला कंडा ।

एवमासासि अप्पाणं, नच्चा कम्मविवागयं ॥ ४१ ॥

छाया—अथ नूनं मया पूर्व, कर्माणि अज्ञानफलानि कृतानि ।

येनाहं नाभिजानामि, पृष्टः केनचित् कस्मिंश्चित् ॥ ४० ॥

अथ पश्चाद् उदीयन्ते, कर्माणि अज्ञानफलानि कृतानि ।

एवम् आश्वासय आत्मानं, ज्ञात्वा कर्मविपाककम् ॥ ४१ ॥

टीका—‘से य नूणं’ इत्यादि, ‘अहं पच्छा’ इत्यादि ।

अथ च नूनं=निश्चयेन, मया पूर्व=पूर्वकाले-पूर्वभवे इत्यर्थः, अज्ञानफलानि=अज्ञानोत्पादकानि, कर्माणि=ज्ञानावरणीयकर्माणि, कृतानि=धर्माचार्यगुरुश्रुतज्ञान-निन्दाध्ययनवाधादिभिरुपार्जितानि । उक्तञ्च—

मिलती है कि सुधर्मशील मुनि की तरह प्रत्येक मुनि को सत्कारपुरस्कार परीपह सहन करते रहना चाहिये ॥ ३९ ॥

अथ बीसवाँ प्रज्ञापरीपहको सूत्रकार बतलाते हैं—

‘से य नूणं’ इत्यादि । ‘अहं पच्छा’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—प्रज्ञापरीपहको जीतनेके लिये साधु विचार करे कि (नूणं-नूनम्) निश्चयसे (मए-मया) मैंने (पुंवं-पूर्वम्) पूर्वभवमें (अणाणफला कम्मा कंडा-अज्ञानफलानि कर्माणि कृतानि) धर्माचार्य गुरु महाराज और श्रुतज्ञान की निंदा करने से तथा किस के ध्यान अध्ययनमें विघ्न डालनेसे अज्ञानोत्पादक ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का उपार्जन किया है ।

शक्य છે કે, સુધર્મશીલ મુનિની જેમ પ્રત્યેક મુનિએ સત્કારપુરસ્કારપરીપહ સહન કરતા રહેવું જોઈએ. ॥ ૩૯ ॥

હવે વીસમા પ્રજ્ઞાપરીપહને સૂત્રકાર બતાવે છે—

‘સે ય નૂણં’ ઇત્યાદિ. ‘અહં પચ્છા’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પ્રજ્ઞાપરીપહને જીતવા માટે સાધુ વિચાર કરે કે, નૂણં-નૂનં નિશ્ચયથી મએ-મયા મેં પુવ્વં-પૂર્વ પૂર્વભવમાં અણાણફલા કમ્મા કંડા-અજ્ઞાત-ફલાનિ-કર્માણિ કૃતાનિ ધર્માચાર્ય ગુરુમહારાજ અને શ્રુતજ્ઞાનની નિંદા કરવામાં તથા કોઈના ધ્યાન અધ્યયનમાં વિઘ્ન નાખવાનું, અજ્ઞાનોત્પાદક જ્ઞાનાવરણીય

નાણસ્સ નાણિણં ચિય, નિંદા પદોસમચ્છરેહિં ય ।

ઉવઘાયણવિગ્ધેહિં, નાણગ્ધં વજ્જણે કમ્મં ॥ ૧ ॥ ”

છાયા-જ્ઞાનસ્ય જ્ઞાનિનાં ચૈવ, નિન્દાપ્રદેપમત્સરૈશ્વ ।

ઉપઘાતનવિઘ્નૈઃ, જ્ઞાનઘ્નં વધ્યતે કમ ॥ ૧ ॥

येन=यस्मात् कारणात्, केनचित्=जिज्ञासुना, कस्मिंश्चित्=जीवादितत्त्व-विषये, पृष्टोऽहं नाभिजानामि=अज्ञानवशात् प्रश्नस्योत्तरं कर्तुं न शक्नोमीत्यर्थः । पूर्वोपार्जित-ज्ञानावरणीय-कर्मोदयात् मया ज्ञानं न लभ्यते, अतः प्रश्नोत्तरं कर्तु-मसमर्थो भवामीति भावः । उक्तञ्च—

( जेण-येन ) जिसके कारण से ( केणइ-केनचित् ) किसी जिज्ञासु के द्वारा ( कणहुइ-कस्मिंश्चित् ) किसी भी जीवादिक तत्त्व के विषय में ( पुट्ठो-पृष्टः ) पूछे जाने पर ( अहं ) मैं ( नाभिजाणामि-नाभिजानामि ) कुछ भी नहीं जान सकता हूँ, अर्थात् अज्ञानवश उसके प्रश्न का कुछ भी उत्तर नहीं दे सकता हूँ । कहा भी है—

“નાણસ્સ નાણિણં ચિય, નિંદા પદોસમચ્છરેહિં ય ।

ઉવઘાયણ વિગ્ધેહિં, નાણગ્ધં વજ્જણે કમ્મં ॥ ૧ ॥ ”

જ્ઞાન એવં જ્ઞાનિયોંકી નિંદા કરને સે, ઉનમેં દ્વેષબુદ્ધિ રાખને સે, ઉનકે સાથ મત્સરભાવ રાખને સે, ઉનકા ઉપઘાત કરને સે અથવા જ્ઞાન કે સાધનોં મેં અથવા જ્ઞાનિયોં કે જ્ઞાનોપાર્જન મેં વિઘ્ન કરને સે જીવ જ્ઞાનનાશક કર્મ કા બંધ કરતા હૈ ।

આદિ કર્મોનું ઉપાર્જન કરેલ છે જેણ-એના એના કારણથી કેણइ-કેનચિત્ કોઈ જિજ્ઞાસુ દ્વારા કણहुइ-કસ્મિંશ્ચિત્ કોઈ પણ જીવાદિક તત્ત્વના વિષયમાં પુટ્ठो-પૃષ્ઠઃ પુછવામાં આવવાથી અહં હું નાભિજાણામિ-નાભિજાનામિ કાંઈ પણ જાણતો નથી અર્થાત્ અજ્ઞાનવશ એમના પ્રશ્નો કાંઈ પણ ઉત્તર આપી શકતો નથી. કહ્યું પણ છે કે—

“નાણસ્સ નાણિણં ચિય, નિંદા પદોસમચ્છરેહિં ય ।

ઉવઘાયણ વિગ્ધેહિં, નાણગ્ધં વજ્જણે કમ્મં ॥ ”

જ્ઞાન અને જ્ઞાનીયોંની નિંદા કરવાથી, એમનામાં દ્વેષબુદ્ધિ રાખવાથી, એની સાથે મત્સરભાવ રાખવાથી, એના ઉપઘાત કરવાથી અથવા જ્ઞાનના સાધ-નોમાં અથવા જ્ઞાનીયોના જ્ઞાનોપાર્જનમાં વિઘ્ન કરવાથી જીવ જ્ઞાનનાશક કર્મનો બંધ કરે છે.



“સુહાસુહાણિ કમ્માણિ, સયં કુવ્વંતિ દેહિણો ।  
સયમેવોવભુંજંતિ, દુહાણિ ય સુહાણિ ય ॥ ૧ ॥”

છાયા—શુભાશુભાણિ કર્માણિ, સ્વયં કુર્વન્તિ દેહિનઃ ।  
સ્વયમેવોપભુજ્ઞતે, દુઃસ્વાણિ ચ સુસ્વાણિ ચ ॥ ૧ ॥ ૪૦ ॥

ભાવાર્થ—સાધુ કે ઊપર સવ હી કા વિશ્વાસ હોતા હૈ । પ્રત્યેક વ્યક્તિ ઉનસે અપનીર જિજ્ઞાસાકા સમાધાન જાનને કા અભિલાષી તથા ઉત્સુક રહતા હૈ, હસ પરિસ્થિતિ મેં યદિ કોઈ જિજ્ઞાસુ પુરુષ મુનિ કે પાસ આકર જીવાદિતત્ત્વવિષયક અપની શંકા કી નિવૃત્તિ કરના યાહે ઓર વહ સાધુ સે હસ વિષય મેં પ્રશ્ન કરે, ઓર મુનિ ઉસકા ઉત્તર નહીં દે સકે તો ઉસ મુનિ કો યાહિયે કિ અપની આત્મા મેં સંક્લિષ્ટ પરિણામ ન કરે, કિન્તુ સમભાવ સે હસ પ્રકાર સોચે કિ મેરે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કા કિતના તીવ્ર ઉદય હૈ જો જ્ઞાન કે સાધન હોને પર મી મુજે જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હુઈ હૈ । બુદ્ધિ મેં હસ પ્રકાર કી મંદતા કા કારણ મેરે-પૂર્વ મેં ગુર્વાદિક કી નિંદા આદિ સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મ હી હૈ । હસ મેં કિસી કા દોષ નહીં હૈ । જૈસે કહા મી હૈ—

“સુહાસુહાણિ કમ્માણિ, સયં કુવ્વંતિ દેહિણો ॥  
સયમેવોવભુંજંતિ, દુહાણિ ય સુહાણિ ય ॥ ૧ ॥”

દેહી-આત્મા-શુભ ઓર અશુભ કર્મોં કો સ્વયં ઉપાર્જિત કરતા હૈ ઓર ઉનકે ફલ સુખ દુઃસ્વાદિક કો સ્વયં હી ભોગતા હૈ ॥ ૪૦ ॥

ભાવાર્થ—સાધુના ઉપર દરેકનો વિશ્વાસ હોય છે, પ્રત્યેક વ્યક્તિ પોતા પોતાની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન એમની પાસેથી મેળવવાના અભિલાષી તથા ઉત્સુક રહે છે. આ પરિસ્થિતિમાં જો કોઈ જિજ્ઞાસુ પુરુષ મુનિની પાસે આવી જીવાદિતત્ત્વ વિષયક પોતાની શંકાનું નિવારણ કરવા ઇચ્છે અને તે સાધુને આ વિષયમાં પ્રશ્ન કરે અને મુનિ એનો ઉત્તર ન આપી શકે તો એ મુનિ પોતાના આત્મામાં શંકાશિલ વૃત્તિ ન લગવા દે પરંતુ સમભાવથી એવું વિચારે કે, મારા જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો કેટલો તીવ્ર ઉદય છે કે જે જ્ઞાનના સાધન હોવા છતાં પણ મને જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ શકી નથી. બુદ્ધિમાં આ પ્રકારની મંદતાનું કારણ મેં-પૂર્વભવમાં શુભ આદિની નિંદા વગેરેથી ઉપાર્જિત કરેલ જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મજ છે. એમાં કોઈનો દોષ નથી. જેમ કહ્યું પણ છે—

“સુહાસુહાણિ કમ્માણિ, સયં કુવ્વંતિ દેહિણો ।  
સયમેવોવભુંજંતિ, દુહાણિ ય સુહાણિ ય ॥ ૧ ॥”

આત્મા શુભ અને અશુભ કર્મોને સ્વયં ઉપાર્જિત કરે છે, અને એને સ્વરૂપ સુખ દુઃખાદિકને સ્વયં ભોગવે છે. ॥ ૪૦ ॥

‘અહ પચ્છા’ ઇતિ ।

અથ અજ્ઞાનફલાનિ=અજ્ઞાનોત્પાદકાનિ કર્માણિ કૃતાનિ તાનિ પશ્ચાત્-અવા-  
ધોત્તરકાલમ્, ‘ઉદીયન્તે’=અજ્ઞાનરૂપેણ અલર્ક-મૂષિકવિપવિકારવદ્ ઉદિતાનિ  
ભવન્તિ, એવમ્=અમુના પ્રકારેણ કર્મવિપાકકમ્=કર્મણઃ ફલં, જ્ઞાત્વા હે શિષ્ય ! આ-  
ત્માનમ્ આશ્વાસય=સ્વસ્થીકુરુ, ‘સ્વયં કૃતાનામેવ જ્ઞાનાવરણીયકર્મણાં કૃત્સિતં  
ફલમેતત્, યદહં ન જાનામિ-પ્રશ્નોત્તરમિતિ વિજ્ઞાય સ્વસ્થો ભવ, ન તુ તન્નિમિ-  
ત્તકં વિપાદં કુરુ ઇત્યર્થઃ । ‘કમ્મા’ ઇતિ વહુવચનં કર્મવન્ધહેતૂનાં વહુત્વાત્ ।

અન્વયાર્થ—(કહાડનાળફલા કમ્મા-કૃતાનિ અજ્ઞાનફલાનિ કર્માણિ )  
ગુર્વાદિકોંકી નિંદા આદિસે.પૂર્વભવમેં ઉપાર્જિત તથા જ્ઞાનમેં અંતરાય ઢાલને  
વાલે-જ્ઞાન કે નિરોધક-એસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મ અપને અવાધાકાલ  
કે વાદ (ઉદ્ગજ્જંતિ-ઉદીયન્તે) પાગલ કુત્તે અથવા પાગલ ચૂહેકે વિષ કે  
વિકાર કી तरह અજ્ઞાનરૂપ સે ઉદય મેં આતે હેં । (એવં કમ્મવિવાગયં-  
એવં કર્મવિપાકકમ્) ઇસ પ્રકાર કર્મ કે ફલ કો (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા)  
જાનકર હે શિષ્ય ! (અપ્પાણં આસાસિ-આત્માનં આશ્વાસય) તુમ  
અપની આત્મા કો કુછ નહીં આને પર-દૂસરોં કે પ્રશ્નોં કા ઉત્તર નહીં  
દે સકને પર ધૈર્ય વધાઓ-ઇસ નિમિત્ત કો લેકર વિપાદ મત કરો ।

ભાવાર્થ—પ્રજ્ઞાપરીષદ્ કો જીતને કે લિયે સૂત્રકાર સાધુઓં કે  
લિયે શિક્ષા દેતે હેં કિ જો જૈસા કરતા હૈં ઉસે ફલ મી વૈસા હી  
મિલતા હૈં । બબુલ કા જ્ઞાડ વોને પર કોઈ ઉસસે આમ્રફલ પ્રાપ્તિ કી  
આશા કરે તો વ્યર્થ હૈં । ઇસી પ્રકાર પૂર્વભવ મેં જિસ જીવ ને જિન. ૨

અન્વયાર્થ—કહાડનાળફલા કમ્મા-કૃતાનિ અજ્ઞાનફલાનિ કર્માણિ . પૂર્વભવમાં  
શુરુઆદિની નિંદાર્થી ઉપાશ્રીત તથા જ્ઞાનમાં અંતરાયના અવારૂપ-જ્ઞાનના નિરોધક-  
એવા જ્ઞાનાવરણીયાદિકે કર્મ પોતાના વિતેલા કાળ પછી ઉદ્ગજ્જંતિ-ઉદીયન્તે હુડકાયા  
કૃતરાના અથવા વકરેલા ઉંદરના વિષના વિકારની માફક અજ્ઞાન રૂપથી ઉદયમાં  
આવે છે. એવં કમ્મવિવાગયં-એવં કર્મવિપાકકમ્ આ પ્રકારે કર્મના ફળને નચ્ચા-જ્ઞાત્વા  
જાણી હે શિષ્ય ! અપ્પાણં આસાસિ-આત્માનં આશ્વાસય તમે પોતાના આત્મામાં  
કાંઈ ન આવવાથી ધીભના પ્રશ્નોને ઉત્તર આપી શકતા નથી એ. જાણીને આ  
અધાના નિમિત્તને લઈ વિપાદ ન કરો.

ભાવાર્થ—પ્રજ્ઞાપરીષદ્ને શ્રુતવા માટે સૂત્રકાર સાધુઓ માટે શિક્ષા  
રૂપથી કહે છે કે, જે જેવું કરે છે, તેને તેવું ફળ મળે છે. કાંઈ  
આવળવું ઝાડ વાવીને તેમાંથી આંખાના ફળની આશા રાખે તો તે વ્યર્થ છે.

इदं गाथायुग्मं प्रज्ञाया अपकर्षमाश्रित्य व्याख्यातम् । इदमुपलक्षणं - यदि ज्ञानावरणीयकर्मणां क्षयोपशमात् प्रज्ञाया उत्कर्षः स्यात् तदा तन्निमित्तकं मदं न कुर्यादित्यपि बोध्यमिति । उक्तं हि ।

कारणों द्वारा जिन २ कर्मों का बन्ध किया है वे वे कर्म अवाधाकाल के बाद उस जीव के उदय आते रहते हैं । जब है आत्मन् ! गुर्वादिक की निंदा करने से, शास्त्रों का अवर्णवाद बोलने से, उपघात से अर्थात् ज्ञानादिक के साधनों का नाश करने से, ज्ञान की अन्तराय देने से तूने तीव्र ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का बंध किया है, तो उनका फल भी तुझे वैसा ही भोगना पड़ेगा । इसमें कोई के हाथ की बात नहीं है । जिन ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का तूने बंध किया है वे उन उन रूप में ही उदय आवेंगे । अतः यदि तेरे से कोई जीवादिक तत्त्वों के विषय में कुछ पूछता है और तुझे उस विषय का कोई उत्तर ज्ञान में नहीं झलकता है इससे तू आत्मा में हीनता की भावना मत कर, और न खेद ही कर, किन्तु अपने आत्मा को धैर्य बंधा और इस प्रकार समझा कि यह तेरे ही किये हुए कर्म हैं अतः तुझे ही भोगना पड़ेगा । फिर इसमें हर्षविपाद करने की जरूरत क्या है ? । इस प्रकार इस परिणति से आत्मा प्रज्ञापरीपह को बहुत अच्छी तरह सहन कर सकता है ।

આ પ્રકારે પૂર્વભવમાં જે ભવે જે જે કારણો દ્વારા જે જે કર્મોનો બંધ કર્યો હોય તે તે કર્મ અબાધાકાળની બાદ તે તે ભવને ઉદયમાં આવે છે. આથી છે આત્મન્ ! ગુરુ આદિની નિંદા કરવાથી, શાસ્ત્રોનો અવર્ણવાદ બોલવાથી, ઉપ-  
ધાતથી અર્થાત્ જ્ઞાનાદિકનાં સાધનોનો નાશ કરવાથી જ્ઞાનમાં અંતરાય નાખવાથી, તેં તીવ્ર જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો બંધ કર્યો છે તો તેનું ફળ પણ તારે તેવુંજ ભોગવવું પડશે. તેમાં કોઈના હાથની વાત નથી. જે જ્ઞાનાવરણીય કર્મોનો તેં બંધ કર્યો છે, તે તેવા તેવા રૂપમાંજ ઉદયમાં આવશે. આથી જો તને કોઈ ભવા-  
દિક તત્વોના વિષયમાં કંઈ પૂછે છે તો તને એ વિષયનો કોઈ જ્ઞાનભર્યો ઉત્તર જડતો નથી તો તેનાથી તું પોતાના આત્મામાં હિનતાની ભાવના અને ખેદ કરીશ નહીં. પરંતુ પોતાના આત્મામાં ધૈર્ય રાખ અને એ પ્રકારે સમજાવ કે, આ તારાંજ કરેલાં કર્મ છે. એથી એ તારેજ ભોગવવાં પડશે. પછી આમાં કંઈ વિપાદ કરવાની જરૂર જ શું છે ? આ પ્રકારે આ પરિણતીથી આત્મા પ્રજ્ઞા પરીપહને ખૂબજ સારી રીતે સહન કરી શકે છે. ગાથામાં “કમ્મા” એ બંદુ-

પૂર્વપુરુષસિંહાનાં, વિજ્ઞાનાતિશયસાગરાનન્ત્યમ્ ।

શ્રુત્વા સામ્પ્રતપુરુષાઃ, કથં સ્વબુદ્ધ્યા મદં યાન્તિ ॥ ૧ ॥

યદ્વા-ઇહ તન્ત્રેણાર્થદ્વયસંભવઃ અનેકાર્થબોધનેચ્છાતઃ સઠ્ઠુચ્ચારણં તન્ત્રહ ।  
અથ ચ-તન્ત્રન્યાયેનાર્થદ્વયસ્ય યુગપત્સંભવઃ-તન્ત્રં ચ દૈર્ઘ્યપ્રસારિતાસ્તન્તવઃ, તત્તો  
યથા-દૈર્ઘ્યપ્રસારિતમેકં મૂત્રમનેકસ્ય તિરસ્વીનસ્ય તન્તોઃ=સંગ્રાહિ, તથા-યદેકયા

ગાથા મેં “કમ્મા” યહ જો વ્રહ્મવચનાન્ત શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા ગયા  
હે વહ કર્મોંકે વંધ કે હેતુ અનેક હેં, ઇસ આશય કો પ્રગટ કરને કે લિયે  
કિયા હે । ચાલીસ ઓર ઇકતાલીસવી ગાથા કા જો ઇસ પ્રકાર વિવેચન  
કિયા ગયા હે વહ બુદ્ધિ કી મન્દતા કો લક્ષ્ય મેં લેકર કિયા હે । યદિ  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મોં કે ક્ષયોપશમ સે પ્રજ્ઞા કા ઉત્કર્ષ આત્મા મેં હો તો  
ઉસ સમય સાધુ કો ઇસ પ્રજ્ઞાનિમિત્તક મદ-અહંકાર નહીં કરના  
ચાહિયે । યહ વાત બી ઉપલક્ષણ સે સમજ લેની ચાહિયે । કહા બી હે-

પૂર્વપુરુષસિંહાનાં, વિજ્ઞાનાતિશયસાગરાનન્ત્યમ્ ।

શ્રુત્વા સામ્પ્રતપુરુષાઃ, કથં સ્વબુદ્ધ્યા મદં યાન્તિ ॥ ૧ ॥

પહિલે કે શ્રેષ્ઠ પુરુષોં કે અસાધારણ વિજ્ઞાન કી વાતોં કો સુનકર  
એસા કૌન પુરુષ હોગા જો અપને જ્ઞાન કા મદ-અહંકાર કરેગા । ઇસ-  
લિયે બુદ્ધિ કી પ્રકર્ષતા કા બી મદ નહીં કરના ચાહિયે । તન્ત્ર ન્યાય  
સે પ્રજ્ઞા કે ઉત્કર્ષ અપકર્ષરૂપ દોનોં અર્થ બી યુગપત્ વિવક્ષિત હો  
સકતે હેં । જૈસે એક લંવા ફેલા હુઆ ઢોરા તિરછે ફેલે હુએ અનેક

વચનાત્મક શબ્દનો પ્રયોગ કરેલ છે તે કર્મના બંધના હેતુ અનેક છે તેવો આશય  
ખતાવવા માટે જ કરેલ છે. ચાલીસ અને એકતાલીસવી ગાથામાં જે આ પ્રકારે  
વિવેચન કરેલ છે તે બુદ્ધિની મંદતાને લક્ષમાં લઈને કરેલ છે. જે કદી જ્ઞાના-  
વરણીય કર્મોના ક્ષયોપશમથી પ્રજ્ઞાનો ઉત્કર્ષ આત્મામાં હોય તો તે સમયે સાધુએ  
આ પ્રજ્ઞા નિમિત્તક મદ અહંકાર ન કરવો જોઈએ. આ વાત પણ ઉપલ-  
ક્ષણથી સમજાવેલી જોઈએ. કહું પણ છે—

પૂર્વપુરુષસિંહાનાં, વિજ્ઞાનાતિશયસાગરાનન્ત્યમ્ ।

શ્રુત્વા સામ્પ્રતપુરુષાઃ, કથં સ્વબુદ્ધ્યા મદં યાન્તિ ॥ ૧ ॥

પહેલાં શ્રેષ્ઠ પુરુષોની અસાધારણ વિજ્ઞાનની વાતો સાંભળીને એવો કયો  
પુરુષ હશે કે જે પોતાના જ્ઞાનનો મદ અહંકાર કરશે ? આથી બુદ્ધિની પ્રકર્ષ-  
તાનો પણ મદ ન કરવો જોઈએ.

તંત્ર ન્યાયથી પ્રજ્ઞાનો ઉત્કર્ષ અપકર્ષરૂપ બનને અર્થ પણ યુગપત્ વિવ-  
ક્ષિત બની શકે છે. જેમ એક લાંબો ફેલાએલો ઢોરો આડા અવળા

ગાથા અનેકાર્થસ્યાભિધાનં સ તન્ત્રન્યાયઃ, તદ્વિવક્ષયા પ્રજ્ઞાયા ઉત્કર્ષમાશ્રિત્યાપિ ભગવતા ગાથાદ્વયં કથિતમ્ । ઉપલક્ષણત્વે તુ તાત્પર્યગ્રાહકતયા પ્રમાણાન્તરં શ્રુતમ-  
પેક્ષણીયં સ્યાત્, અતસ્તન્ત્રાશ્રયણાદિહ વ્યાખ્યાદ્વયં ક્રિયતે । તત્ર પ્રજ્ઞાયા ઉત્કર્ષ-  
પક્ષે એવં ગાથાદ્વયં વ્યાખ્યાયતે—

પ્રજ્ઞોત્કર્ષવતા એવં ચિન્તનીયમ્—અથ નૂનં મયા પૂર્વં કર્માણિ=જ્ઞાનપ્રશંસા-  
જ્ઞાનિવૈયાવૃત્ત્યાદિરૂપાણ્યનુષ્ઠાનાનિ, જ્ઞાનફલાનિ = જ્ઞાનમિદં વિમર્શપૂર્વકો વ્રોધ-  
સ્તત્ફલકાનિ, કૃતાનિ, યેન હેતુના—કેનાપિ=અવિવક્ષિતવિશેષેણ સર્વેણાપીત્યર્થઃ,  
કસ્મિંશ્ચિત્=યત્ર કુત્રાપિ વસ્તુનિ વિષયે પૃષ્ઠઃ અહં, ના=મનુષ્યઃ, વિશિષ્ટમનુષ્યત્વ-  
મનુભવન્ અભિજાનામિ ।

તન્તુઓં કા વસ્ત્રાદિક મેં સંગ્રાહક હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર એક ગાથા દ્વારાં  
યુગપત્ અનેક અર્થોં કા ભી સંગ્રહ હોતા હૈં, યહી તન્ત્ર ન્યાય હૈં । ઇસ  
વિવક્ષા સે ઇન દોનોં ગાથાઓં દ્વારા પ્રજ્ઞા કા ઉત્કર્ષ લેકર ભી પ્રજ્ઞા-  
પરીપહ કા કથન હો સકતા હૈં । ઇસી અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ને યે દોનોં  
ગાથાએં કહી હૈં । બુદ્ધિ કી પ્રકર્ષતા કો લેકર વ્યાખ્યાન ઇસ પ્રકાર હૈં—

મેંને પૂર્વભવ મેં જ્ઞાનપ્રશંસા, જ્ઞાનિયોં કી વૈયાવૃત્ત્ય આદિરૂપ  
શુભ કર્મ કિયે હૈં ઇસલિયે ઇનકા ફલ મુજે વિમર્શપૂર્વક વ્રોધરૂપ મેં  
મિલા હૈં । ઇસલિયે ઇસ કે પ્રભાવ સે મેં જવ કોઈ મુશ્ક સે કિસી ભી  
વિષય કી અપની જિજ્ઞાસા સમાધાન કરને કે રૂપ મેં ઉપસ્થિત કરતા  
હૈં ઉસકી ઉસ જિજ્ઞાસા કા યથોચિત સમાધાન કર દેતા હું, ઇસસે ઉસ  
પૂછને વાલે કો સન્તોપ હો જાતા હૈં । ઇસલિયે સૂત્રકાર ઇકતાલીસવીં  
ગાથા દ્વારા એસે શ્રુતશાલી-સાધુ કો યહ સમજાતે હૈં કિ હે સાધો !

અનેક તાણાવાણાને વસ્ત્રરૂપમાં ફેરવનાર બને છે, તે પ્રકારે એક ગાથા દ્વારા  
યુગપત્ અનેક અર્થોનો પણ સંગ્રહ થાય છે આ તન્ત્ર ન્યાય છે આ વિવક્ષાથી  
આ બંને ગાથાઓ દ્વારા પ્રજ્ઞાનો ઉત્કર્ષ લઈને પણ પ્રજ્ઞાપરીપહનું કથન  
બની શકે છે, આ અભિપ્રાયથી ભગવાન સૂત્રકારે આ બંને ગાથાઓ કહી છે.  
બુદ્ધિની પ્રકર્ષતા બતાવનાર વ્યાખ્યાન આ પ્રકારનું છે.

મેં પૂર્વભવમાં જ્ઞાન પ્રશંસા, જ્ઞાનિઓની વૈયાવૃત્તિ આદિ રૂપ શુભ કર્મ  
કરેલ છે. એનું ફળ મને વિમર્શપૂર્વક વ્રોધરૂપમાં મળેલ છે. આ કારણે એના  
પ્રભાવથી જ્યારે કોઈ મારી પાસે કોઈ પણ વિષયની પોતાની જિજ્ઞાસા સમા-  
ધાન કરવાના રૂપમાં ઉપસ્થિત કરે છે ત્યારે હું એ જિજ્ઞાસાનું યથોચિત સમા-  
ધાન કરી દઉં છું. આથી એ પૂછવાવાળાને સન્તોપ થાય છે, આ માટે સૂત્રકાર  
એકતાળીસમી ગાથાદ્વારા એવા શ્રુતશાળી-સાધુને એમ સમજાવે છે કે, હે સાધો !

તત્ર-શ્રુતમદો ન કર્તવ્ય इति बोधयितुमाह-‘ अह पच्छा ’ इत्यादि । अयं= उत्कर्षभाषनानन्तरम्, एवं विभावनीयम्-मया पूर्वभवे कृतानि ज्ञानफलानि कर्माणि पश्चात्=अबाधोत्तरकालम्, इदानीम्, उदीयन्ते-उदितानि भवन्ति, एवं कर्म-विपाककं ज्ञात्वाऽऽत्मानम् आश्वासय-आत्मनि शान्तिं स्थापय, न तु तन्निमित्तकं मदं कुरु । अयं भावः-श्रुतमदो हि ज्ञानावरणीयकर्मणः कारणम्, तच्चावश्यवेधम्, तदुदये च कुतो ज्ञानम्, तस्माच्छ्रुतमदो न कर्तव्यः ।

यतः--“ नाणं मयदप्पहरं, मज्जइ जो तेण तस्स को वेज्जो ।

अमियं जस्स विसायइ, तस्स तिगिच्छा कहं किज्जइ ” ॥ १ ॥

छाया--ज्ञानं मददर्पहरं, माद्यति यस्तेन तस्य को वैद्यः ।

अमृतं यस्य विपायते, तस्य चिकित्सा कथं क्रियते ॥ १ ॥

इत्येवं चिन्तनेन शान्तिं प्राप्नुहोति ।

वस्तुतस्तु-गाथाद्वयमिदं युग्मकम् । ‘ से ’ अथ नूनं=निश्चयेन मया पूर्व=पूर्व भवे-अज्ञानफलानि कर्माणि कृतानि येन कारणेनाहं केनापि जिज्ञासुना क-स्मिंश्चित् जीवाजीवादિस्वरूपविषये पृष्ठः सन् नाभिजानामि=मन्दबुद्धित्वाज्जी-

તુમને યદિ પૂર્વભવ મેં જ્ઞાન કે સાધનોં કા અનુષ્ઠાન કરકે યદિ હસ ભવ મેં દૂસરોં કી અપેક્ષા કુછ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ, તો તુમ હસ જ્ઞાનરૂપ શ્રુત કા મદ મત કરો, કિન્તુ અપની આત્મા મેં શાંતિ-ભાવ સે રહો-આત્મા કો સમજાતે રહો કિ કહીં એસા ન હો જાય કિ મદ કરને સે આત્મા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ કા બંધ કરલે । હસ કર્મ કે બંધ મેં જવ હસકા ઉદય અપની અબાધાકાલ કે બાદ મેં આતા હૈ તો જીવ યથાર્થ જ્ઞાન સે રહિત હો જાતા હૈ, હસલિયે હૈ શિષ્ય તું શ્રુત કા મદ મતકર । તાત્પર્ય હન દોનોં ગાથાઓં કા યહ હૈ કિ જિસ સમય આત્મા મેં પ્રજ્ઞા કી હીનતા હો તો મુનિ કો એસા

તમે કહાય પૂર્વભવમાં જ્ઞાનના સાધનોનું અનુષ્ઠાન કરી જો આ ભાવમાં ખીલની અપેક્ષાએ કાંઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરેલ છે તો તમે એ જ્ઞાનરૂપ શ્રુતનો મદ ન કરો. પણ તમારા આત્મામાં શાંતિભાવથી રહો આત્માને સમજાવતા રહો કે કયાંય એવું ન બની જાય કે, મદ કરવાથી આત્મા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનું બંધન કરી લે. એ કર્મના બંધમાં જ્યારે એનો ઉદય પોતાની અબાધાકાળની પછી આવે છે ત્યારે જીવ યથાર્થ જ્ઞાનથી રહિત થઈ જાય છે. આ માટે હૈ શિષ્ય ! તું શ્રુતનો મદ ન કર. આ બંને ગાથાનું તાત્પર્ય એ છે કે, જે સમયે આત્મામાં પ્રજ્ઞાની હિનતા હોય ત્યારે મુનિએ એવો વિચાર ન કરે એઈએ



વાદિસ્વરૂપં નિરૂપયિતું ન સમર્થોઽસ્મિ । એવમ્=અમુના પ્રકારેણ કર્મવિપાકં-પૂર્વો-  
પાર્જિત-જ્ઞાનાવરણીયકર્મફલં જ્ઞાત્વા આત્માનમ્ આશ્વાસયેત્યુત્તરગાથયા સમ્બન્ધઃ  
અયમર્થઃ-હે શિષ્ય ! બુદ્ધિમાન્ધવિષયે વિપાદમકૃત્વા, તપઃ સંયમારાધને પ્રવૃત્તો ભવ ।  
તપઃસંયમારાધનેન હિ કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્તિરપિ ભવિતુમર્હતીતિ સોત્સાહં તત્સમારાધને  
તત્પરો ભવેતિ ભાવઃ ।

અથ-પ્રજ્ઞાપકર્પે પશ્ચાત્-કદાચિત્તથાવિધજ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમાનન્તરં 'કમ્મા-  
ણાણફલા' इत्यस्य कर्माणि ज्ञानफलानि इति च्छाया तत्र - ज्ञानफलानि-  
जीवाजीवादिस्वरूपनिर्णयजनकानि कर्माणि कृतानि=पूर्वभवोपार्जितानि उदीयन्ते  
तदा एवम्=अमुना प्रकारेण कर्मविपाकं ज्ञानावरणीयक्षयोपशमजन्यं प्रज्ञापकर्परूपं  
कर्मफलं ज्ञात्वा हे शिष्य ! आत्मानम् आश्वासय=ज्ञानमदं परित्यज्य स्वस्थीकुरु ।  
पूर्वकृतशुभकर्मणा मम ज्ञानावरणीयकर्मणः क्षयोपशमो जातस्तेन सूक्ष्म-सूक्ष्मतर-  
सूक्ष्मतममपि जीवादिस्वरूपं सम्यग् जानामि, तथा केनापि पृष्टः सन् तस्मै  
सम्यगवबोधयितुं समर्थोऽस्मीति विचारणया प्रज्ञामदं परिहरेत्यर्थः ।

વિચાર નહીં કરના ચાહિયે કિ મૈં કુછ નહીં જાનતા હું-મૂર્ખ હું જહાં  
તહાં મેરા પરાભવ હોતા હૈ । ઇસ વિચાર સે આત્મા મૈં પરિતાપ હોતા  
હૈ, ઇસ પ્રકાર વિચાર નહીં કરના યહ પ્રજ્ઞાપરીપહ હૈ । અથવા  
શ્રુતજ્ઞાન કી વિશિષ્ટતા આત્મા મૈં હોને પર ઉસ સમય ઉસ મુનિ કો  
ઉસકા મદ નહીં કરના ચાહિયે કિ-મૈં વિશિષ્ટજ્ઞાનસંપન્ન હું, પ્રત્યેક  
વ્યક્તિ મેરે પાસ અપની ૨ જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરને કે લિયે આતે  
હૈ । પ્રત્યેક આત્મા કો મુક્ત સે કિતના લાભ હોતા રહતા હૈ । ઇસ  
પ્રકાર કા મદ નહીં કરના ચાહિયે । પ્રજ્ઞા કા મદ કરના ઇસ લિયે  
નિષિદ્ધ હૈ કિ યહ જો જ્ઞાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીયકર્મ કે  
ક્ષયોપશમ સે પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । ઇસકા મૈં ક્યોં મદ કરૂં । ઇસ પ્રકાર

કે, હું કાંઈ જાણતો નથી, મૂર્ખ છું, જ્યાં ત્યાં મારો પરાભવ થાય છે. આ  
વિચારથી આત્મામાં પરિતાપ થાય છે માટે આ પ્રકારનો વિચાર ન કરવો તે  
પ્રજ્ઞાપરીપહ છે. અથવા શ્રુતજ્ઞાનની વિશિષ્ટતા આત્મામાં થવાથી તે સમયે તે  
મુનિએ તેનો મદ ન કરવો જોઈએ કે હું, વિશિષ્ટ જ્ઞાન સંપન્ન છું. પ્રત્યેક  
વ્યક્તિ મારી પાસે પોતપોતાની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા આવે છે. પ્રત્યેક  
આત્માને મારાથી કેટલો લાભ થાય છે? આ પ્રકારનો મદ ન કરવો જોઈએ.  
પ્રજ્ઞાનો મદ કરવાનો આ માટે નિષેધ છે કે, જે જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયું છે તે જ્ઞાના-  
વરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી પ્રાપ્ત થયેલ છે. આનો હું કંઈ રીતે મદ કરી

અસ્ય ગાથાદ્વયસ્યાયં નિષ્કર્ષઃ—પ્રજ્ઞાયા અપકર્ષે 'નાહં કિંચિજ્ઞાનામિ, મૂર્ખોઽસ્મિ, યત્ર તત્ર પરાજિતો ભવામિ' इत्येयं परितापो न कर्तव्यः उत्कर्षे भुक्त-  
मदो न कर्तव्यः । किन्तु कर्मविपाकोऽयमिति ज्ञात्वाऽऽत्मनः स्थिरीकरणेन द्वि-  
धोऽपि प्रज्ञापरीषहः सोढव्यः ।

અત્ર પ્રજ્ઞાપકર્ષે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે--

પુષ્પદન્તાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ ચંપાનગર્યાં સમવસ્યતઃ । તેષુ શિષ્યેષુ  
ભદ્રમતિનામકઃ શિષ્યોઽતીવમન્દમતિરાસીત । સ આવશ્યકસમાપ્ત્યનન્તરં દશ-  
વૈકાલિકસૂત્રાભ્યાસાર્થં પ્રવૃત્તઃ, પરન્તુ તદા તસ્ય પ્રવલજ્ઞાનાવરણીયાન્તરાયકર્મો-  
દયો જાતસ્તે નૈકમપ્યક્ષરં ન સ્મરતિ, તતોઽસૌ ચિન્તયતિ—અહમસ્મિ પૂર્વધરાચાર્યસ્ય  
શિષ્યઃ, આચાર્યો વાત્સલ્યેન મામધ્યાપયતિ, અન્યે મુનયશ્ચાપિ પ્રેમ્ણા મામક્ષરં  
આત્મા કો અપને સ્વભાવ મેં સ્થિર કરતે હુણ પ્રજ્ઞા કે પ્રકર્ષ કો સહન  
કરના યહ મી પ્રજ્ઞાપરીષહ હૈ । હસ તરહ પ્રજ્ઞા કે ઉત્કર્ષ ઔર અપ-  
કર્ષ કે મેદ સે યહ પરીષહ દો પ્રકાર કા હો જાતા હૈ । યહ દોનો પ્રકાર  
કા પરીષહ સહન કરના મુનિ કે લિયે આવશ્યક હૈ ।

પ્રજ્ઞા કે અપકર્ષ મેં દૃષ્ટાન્ત—કિસી સમય પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્ય-  
પરિવાર કે સાથ ચંપાનગરી મેં આયે । ઇનકી હસ શિષ્યમંડલી મેં  
ભદ્રમતિ નામ કા એક શિષ્ય અતીવ મંદમતિ થા । એક દિન કી વાત  
હૈ કિ ઉસને આવશ્યક કી સમાપ્તિ કે બાદ દશવૈકાલિકસૂત્ર કા  
અભ્યાસ કરના પ્રારંભ કિયા । પરન્તુ ઉસ સમય ઉસકે પ્રવલ જ્ઞાના-  
વરણીયકર્મ કા ઉદય હોને સે એક મી અક્ષર ઉસકો યાદ નહી હોતા ।  
હસને વિચાર કિયા કિ પૂર્વધર આચાર્ય કા મેં શિષ્ય હૂં વાત્સલ્યભાવ

શકું ? આ પ્રકારે આત્માને પોતાના સ્વભાવમાં સ્થિર કરીને પ્રજ્ઞાને પ્રકર્ષ  
સહન કરવો તે પણ પ્રજ્ઞાપરીષહ છે, આવી રીતે પ્રજ્ઞાને ઉત્કર્ષ અને અપ-  
કર્ષના ભેદથી આ પરીષહ બે પ્રકારનો બને છે. આ બન્ને પ્રકારના પરીષહ  
સહન કરવા મુનિને માટે આવશ્યક છે. પ્રજ્ઞાના અપકર્ષનું દૃષ્ટાન્ત—

કોઈ એક સમયે પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્યપરિવાર સાથે ચંપાનગરીમાં આવ્યા.  
આ શિષ્ય મંડળીમાં ભદ્રમતિ નામનો એક શિષ્ય ઘણો મંદમતી હતો. એક  
દિવસની વાત છે કે, તેણે આવશ્યકની સમાપ્તિ બાદ દશવૈકાલિક સૂત્રનો અભ્યાસ  
કરવો શરૂ કર્યો. પરંતુ તે સમયે તેને પ્રબળ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ઉદય થવાથી  
એક પણ અક્ષર યાદ રહેતો નહીં. તેણે વિચાર કર્યો કે, હું પૂર્વધર આચાર્ય-  
નો શિષ્ય છું, વાત્સલ્યભાવથી તેઓ મને શાસ્ત્રાધ્યયન કરાવે છે. બી નિઝે

બોધયતિ, તથાપિ મમ તત્ સ્મૃતિપથં નાયાતિ, અન્ન કથિત્ મુનિઃ સકૃદેવ શ્રુત્વા ધારયતિ, કથિદ્ દ્વિવારં, કથિત્ ત્રિવારમ્ ।

કેનચિત્-શતં શતં ગાથા પ્રત્યહમભ્યસ્તાઃ, કેનચિત્ દ્વે દ્વે શતે । કથિદેક-પૂર્વધરઃ, કથિદ્ દ્વિપૂર્વધરો યાવચ્ચતુર્દશપૂર્વધરઃ સંજાતઃ, પરન્તુ મહાનિષ્ઠુરોઽતીવ નિર્બુદ્ધિરહમસ્મિં, શતશોઽભ્યાસે કૃતેઽપિ ધારણા ન ભવતિ । મમ પૂર્વજન્મોપાર્જિતં જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ, તથા જ્ઞાનાન્તરાયરૂપં કર્મ તીવ્રતયા સંપ્રત્યુદયાવસ્થાં પ્રાપ્તમ્,

સે વે મુક્તે પડાતે હૈં, અન્ય મુનિ ભી મુક્ત પર વિશેષ અનુગ્રહ રાખતે હૈં, વે ભી સમય ૨ પર મુક્તે વચવાતે હૈં-તો ભી મુક્ત કો યાદ નહીં હોતા । હમારે મેં કોઈ તો મુનિરાજ એસે હૈં જો એક વાર ભી સુનકર યાદ કર લેતે હૈં, કોઈ ૨ એસે હૈં જિन्हૈં દો વાર કહને સે યાદ હો જાતા હૈ । કોઈ ૨ એસે હૈં જો ત્રીન વાર સુનકર વિષય કો અચ્છી તરહ યાદ કર લેતે હૈં । કિતને એસે હૈં જો એક હી દિન મેં સૌ-સૌ ૧૦૦-૧૦૦ ગાથાઈ યાદ કર લેતે હૈં । કોઈ ૨ એસે હૈં જો દો સૌ ૨૦૦-દો સૌ ૨૦૦ ગાથાઈ તક કંઠસ્થ કર લેતે હૈં । કોઈ એક પૂર્વધર હૈં । કોઈ દો પૂર્વધર હૈં । કોઈ ત્રીન, કોઈ ચાર, કોઈ પાંચ, કોઈ છહ, કોઈ સાત ઓર કોઈ આઠ આદિ સે લેકર ચૌદહ પૂર્વતક કે પાઠી હૈં, કિન્તુ ઇન સબ મેં એક મેં હી એસા મન્દબુદ્ધિ હું જિસકો કુછ નહીં આતા હૈં । બુદ્ધિહીન યુના હુઆ હૈં । સૌ વાર યાદ કરને પર ભી ધારણા હોતી હી નહીં હૈં । કયા કરૂં પૂર્વોપાર્જિત જ્ઞાનાવરણીયકર્મ કા હી ઇસ સમય તીવ્ર ઉદય

પણ આરા ઉપર વિશેષ ભાવ રાખે છે અને સમય સમય ઉપર તેઓ મને બતાવે છે, તો પણ મને યાદ રહેતું નથી. અમારામાં કેટલાક મુનિરાજ એવા છે કે, તેઓ એકવાર સાંભળીને તેને કંઠસ્થ કરી લે છે, કોઈ કોઈ એવા છે કે, તેમને બે વખત કહેવાથી યાદ થઈ જાય છે, કોઈ કોઈ ત્રણ વાર સાંભળ્યાથી વિષયને સારી રીતે યાદ કરી લે છે. કેટલાક એવા પણ છે કે જે એક જ દિવસમાં ૧૦૦-૧૦૦ (સૌ-સૌ) ગાથાઓ યાદ કરી લે છે. કોઈ કોઈ ૨૦૦-૨૦૦ (બસૌ-બસૌ) ગાથાઓ કંઠસ્થ કરી લે છે. કોઈ કોઈ પૂર્વધર છે, કોઈ બે પૂર્વધર છે, કોઈ ત્રણ, કોઈ ચાર, કોઈ પાંચ, કોઈ છ, કોઈ સાત, કોઈ આઠ આદિથી લઈને ચૌદ પૂર્વ સુધીના પાઠી છે આ બધા વચ્ચે હું એકજ એવો મંદબુદ્ધિનો છું કે મને કોઈ પણ આવડતું નથી. હું બુદ્ધિહીન બનેલો છું સૌ વખત યાદ કરવા છતાંયે અહુણ કરી શકતો નથી. શું કરું? પૂર્વોપાર્જિત જ્ઞાનાવરણીય કર્મજ આ સમયે તીવ્ર ઉદયમાં આવેલ છે. એનો જ આ પ્રતાપ છે.

અસ્ય ગાથાદ્વયસ્યાયં નિષ્કર્ષઃ—પ્રજ્ઞાયા અપકર્ષે 'નાહં કિંચિજ્ઞાનામિ, મૂર્ખોઽસ્મિ, યત્ર તત્ર પરાજિતો ભવામિ' इत्येवं परितापो न कर्तव्यः उत्कर्षे श्रुत-  
मदो न कर्तव्यः । किन्तु कर्मविपाकोऽपमिति ज्ञात्वाऽऽत्मनः स्थिरीकरणेन द्विवि-  
धोऽपि प्रज्ञापरीपहः सोढव्यः ।

अत्र प्रज्ञापकर्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

पुष्पदन्ताचार्यः शिष्यपरिवारेण सह चम्पानगर्यां समवसृतः । तेषु शिष्येषु  
भद्रमतिनामकः शिष्योऽतीवमन्दमतिरासीत् । स आवश्यकसमाप्त्यनन्तरं दश-  
वैकालिकसूत्राभ्यासार्थं प्रवृत्तः, परन्तु तदा तस्य प्रबलज्ञानावरणीयान्तरायकर्मो-  
दयो जातस्तेनैकमप्यक्षरं न स्मरति, ततोऽसौ चिन्तयति—अहमस्मि पूर्वधराचार्यस्य  
शिष्यः, आचार्यो वात्सल्येन मामध्यापयति, अन्ये मुनयश्चापि प्रेम्णा मामक्षरं  
आत्मा को अपने स्वभाव में स्थिर करते हुए प्रज्ञा के प्रकर्ष को सहन  
करना यह भी प्रज्ञापरीपह है । इस तरह प्रज्ञा के उत्कर्ष और अप-  
कर्ष के भेद से यह परीपह दो प्रकार का हो जाता है । यह दोनों प्रकार  
का परीपह सहन करना मुनि के लिये आवश्यक है ।

प्रज्ञા के अपकर्ष में दृष्टान्त—કિસી સમય પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્ય-  
પરિવાર કે સાથ ચંપાનગરી મેં આયે । इनकी इस शिष्यमंडली में  
भद्रमति नाम का एक शिष्य अतीव मंदमति था । एक दिन की बात  
है कि उसने आवश्यक की समाप्ति के बाद दशवैकालिकसूत्र का  
अभ्यास करना प्रारंभ किया । परन्तु उस समय उसके प्रबल ज्ञान-  
वरणीयकर्म का उदय होने से एक भी अक्षर उसको याद नहीं होता ।  
इसने विचार किया कि पूर्वधर आचार्य का मैं शिष्य हूँ वात्सल्यभाव

શકું ? આ પ્રકારે આત્માને પોતાના સ્વભાવમાં સ્થિર કરીને પ્રજ્ઞાને પ્રકર્ષ  
સહન કરવો તે પણ પ્રજ્ઞાપરીપહ છે, આવી રીતે પ્રજ્ઞાને ઉત્કર્ષ અને અપ-  
કર્ષના ભેદથી આ પરીપહ બે પ્રકારનો બને છે. આ બંને પ્રકારના પરીપહ  
સહન કરવા મુનિને માટે આવશ્યક છે. પ્રજ્ઞાના અપકર્ષનું દષ્ટાંત—

કોઈ એક સમયે પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્યપરીવાર સાથે ચંપાનગરીમાં આવ્યા.  
આ શિષ્ય મંડળીમાં ભદ્રમતિ નામનો એક શિષ્ય ઘણો મંદમતી હતો. એક  
દિવસની વાત છે કે, તેણે આવશ્યકની સમાપ્તિ બાદ દશવૈકાલિક સૂત્રનો અભ્યાસ  
કરવો શરૂ કર્યો. પરંતુ તે સમયે તેને પ્રબળ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ઉદય થવાથી  
એક પણ અક્ષર યાદ રહેતો નહીં. તેણે વિચાર કર્યો કે, હું પૂર્વધર આચાર્ય  
નો શિષ્ય છું, વાત્સલ્યભાવથી તેઓ મને શાસ્ત્રાધ્યયન કરાવે છે. બીજા મુનિઓ

પ્રજ્ઞાપ્રકર્ષે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે--

एकदा-कालकाचार्यः प्रमादवतः स्वशिष्यानुज्जयिन्यां विहाय धारावासनगरे स्वशिष्यस्य सागरचन्द्रमुनेः समीपे समागतः । सागरचन्द्रस्तं सामान्यसाधुबुद्ध्या जानाति कालकाचार्योऽपि न किञ्चित् परिचयं ददाति ।

अथाऽन्यदा सागरचन्द्रमुनिनाऽऽगमनिर्णीततत्त्वस्वरूपव्याख्यानं कृते सति लोकास्तं प्रशंसन्ति, तदा सागरचन्द्रमुनिः कालकाचार्यं प्रति प्राह—मद्व्याख्यानं सकेगा, इस गाथा को तो याद करके ही छोड़ने का भाव है । इस प्रकार निश्चय करके प्रज्ञापकर्मकरूप परीषह को सहन करते हुए उस भद्रमुनि ने शुभाध्यवसायजन्य प्रशस्त ध्यान से क्षपकश्रेणी को अरोहण कर केवलज्ञान को प्राप्त किया ।

પ્રજ્ઞા કે પ્રકર્ષ મેં દૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર છે—એક સમય કાલકાચાર્ય પ્રમાદશીલ અપને શિષ્યોંકો ઉજ્જયિની નગરીમેં છોડકર ધારાવાસનગર મેં સ્વશિષ્ય સાગરચંદ્રમુનિ કે પાસ આ ગયે । સાગરચંદ્રશિષ્યને અનેક સાધ સામાન્ય સાધુકે જૈસાં હી વ્યવહાર કિયા, ગુરુ જૈસા નહીં । કાલકા-ચાર્યને ખી હસ વાત પર કુછ ખી ધ્યાન નહીં દિયા ઓર અપના પરિચય ખી નહીં દિયા । એક દિન કી વાત હૈ કિ જવ સાગરચંદ્રમુનિ ને આગમ-નિર્ણીત તત્ત્વોં કે સ્વરૂપ કો સમજાતે હુએ વ્યાખ્યાન દિયા તો સુનકર લોગોં કો અપાર આનંદ આયા,—સવને પ્રવચન કી મુક્તકંઠ સે પ્રશંસા કી । સાગરચંદ્રમુનિ ને અપરિચિત ગુરુ કે સમીપ આકર કહા—આપને

યાદ કયે જ છુટકો, તેવો મનોભાવ છે. આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને પ્રજ્ઞાપ-કર્ષપરીષદને સહન કરતાં કરતાં તે ભદ્રમુનિએ શુભ અધ્યવસાય જન્ય પ્રશસ્ત ધ્યાનથી ક્ષપકશ્રેણી ઉપર ચડી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું.

પ્રજ્ઞાના પ્રકર્ષમાં દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે—

એક સમય કાલકાચાર્ય પ્રમાદશીલ પોતાના શિષ્યોને ઉજ્જૈનિ નગરીમાં મૂકીને ધારાવાસ નગરમાં સ્વશિષ્ય સાગરચંદ્ર મુનિની પાસે આવ્યા. સાગરચંદ્ર શિષ્યે તેમની સાથે સામાન્ય સાધુ જેવો વહેવાર કર્યો, ગુરુ શિષ્ય જેવો નહીં. કાલકાચાર્યે આ વાત ઉપર કાંઈ ધ્યાન ન આપ્યું, અને પોતાનો પરિચય પણ ન આપ્યો. એક દિવસની વાત છે કે, જ્યારે સાગરચંદ્ર મુનિએ આગમ નિર્ણીત તત્ત્વોના સ્વરૂપને સમજાવવાનું વ્યાખ્યાન આપ્યું તે સાંભળીને લોકોને અપાર આનંદ થયો. સધળાએ પ્રવચનની મુક્તકંઠે પ્રશંસા કરી. સાગરચંદ્ર મુનિએ અપરિચિત ગુરુની સમીપ આવીને કહ્યું. આપે આજ મારું તાત્વિક પ્રવચન

તસ્માન્મયા પ્રજ્ઞાયા અસદ્ભાવરૂપોડયં પરીપદ્ધઃ સોઢવ્યઃ, ન તુ કસ્મિન્નિત્ત્વ ઈર્ષ્યા દ્વેષો  
વા કરણીયઃ, એવં વિચિન્ત્ય પ્રત્યહં પઠતિ, પુનઃ પુનરભ્યસ્યતિ ચ, પરં તુ ધારણા  
ન ભવતિ, 'ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધ' ઇતિ ગાથા દ્વાદશવર્ષાણિ અભ્યસતા, પરં તુ  
તસ્યા એકસ્યા અપિ ગાથાયાઃ સ્મૃતિસ્તસ્ય નાભૂત્, અભ્યાસકાલે ધારિતેવ સા  
તસ્ય ભવતિ, પરં ત્વલ્પકાલ એવ પુનસ્તાં વિસ્મરતિ । તદાડસો પુનરભ્યવસ્યતિ-  
પુનરપિ દ્વાદશવર્ષાણિ કાલમભ્યાસાર્થં યાપયિષ્યામિ, યેન કેનાપિ પ્રકારેણ ગાથા-  
મેતાં કઠ્ઠસ્થીકરિષ્યામ્યેવ । ઇત્યેવં નિશ્ચિત્ય પ્રજ્ઞાસ્પર્કર્પપરીપદ્ધં સહમાનઃ શુભા-  
ધ્યવસાયેન પ્રશસ્તધ્યાનેન ક્ષપકથ્રેણિમારુહ્ય સ ભદ્રમુનિઃ કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્તવાન્ ।

હો રહા હૈ, ઉન્હીં કા યહ કામ હૈ, અતઃ પ્રજ્ઞા કા અસદ્ભાવરૂપ યહ  
પરીપદ્ધ મુક્ષે શાંતિ કે સાથ સહન કરના ચાહિયે, ઇસી મેં મેરા કલ્યાણ  
હૈ, કિસી કે સાથ ઈર્ષા યા દ્વેષ કરને સે કોઈ લાભ નહીં । ઇસ પ્રકાર  
ભદ્રમતિ મુનિ વાર ૨ વિચાર કરતા ઓર અપને પૂર્વોપાર્જિતકર્મોં કી  
નિન્દા કરતા થા, પરન્તુ ઉસને અપના પઢના ઓર યાદ કરના બંદ નહીં  
કિયા । અકેલે “ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધ” ઇસ ગાથા કો હી ઉસને લગા-  
તાર ચારહ વર્ષતક યાદ કિયા-રદા, પર તો હી ઉસ કો યહ ગાથા યાદ  
નહીં હુઈ । જિસ સમય યહ યાદ કરને બેઠતા ઉસ સમય તો યહ યાદ હો  
જાતી પર ઉયોં હી યહ યાદ કરના બંદ કર દેતા અથવા કિયા કરને મેં  
ઉપયોગ લગાતા તો શીઘ્ર હી ઉસ ગાથા કો ભૂલ જાતા થા । યહ ફિર  
હી ઉસકો યાદ કરના ઓર પઢના નહીં છોડતા ઓર વિચાર કરતા  
કિ યદિ યહ ગાથા ઇન ચારહ ૧૨ વર્ષોં મેં કંઠસ્થ નહીં હુઈ તો અબ-  
આગે કે ૧૨ વર્ષોં મેં કંઠસ્થ હો જાયેગી, કયા ચિંતા જૈસે હી હો

આથી પ્રજ્ઞાનો આ અસદ્ભાવરૂપ પરીપદ્ધ મારે શાંતિથી સહન કરવો જોઈએ.  
તેમાં જ મારું કલ્યાણ છે. કોઈની સામે ઈર્ષા અથવા દ્વેષ કરવાથી કોઈ લાભ  
નથી. આ પ્રકારે ભદ્રમતિ મુનિ વારંવાર વિચાર કરતા અને પોતાના પૂર્વો-  
પાર્જિત કર્મોની નિંદા કરતા. પણ પોતાના પઠન-પાઠન આદિને તેણે બંધ ન કર્યો.  
“ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધ” એ એક ગાથાને એકલાં તેણે બાર વર્ષ સુધી યાદ કરી ગોખ્યું  
છતાં પણ તેને એ ગાથા યાદ ન થઈ. જે સમય તે યાદ કરવા બેસતા તો તે વખતે યાદ  
રહી જતી પણ એ પછી યાદ કરવાનું બંધ કરી ક્રિયામાં ગુથાતાં તે ગાથા  
બૂલાઈ જતી. છતાં પણ તે એને યાદ કરવાનું છોડતા નહીં. અને વિચાર  
કરતા કે, આ બારવર્ષમાં યાદ ન થઈ તો આવતા બારવર્ષમાં જરૂર યાદ થઈ  
જશે. ચિંતા શા માટે કરવી જોઈએ. જે રીતે બનશે તે રીતે પ ગાથાને



सहितः कालकाचार्य आगच्छति इति बुद्ध्या सागरचन्द्रमुनिस्तत्रागच्छतां कालका-  
चार्यशिष्याणां संमुखे समागतः । स तत्र परितो विलोक्याचार्यमदृष्ट्वा; तान्  
समागतान् मुनीन् पृच्छति-भो मुनयः ! क्व वर्तन्ते पूज्यचरणाः, सागरचन्द्रमुने-  
रेतद्वचनं निशम्य हताशाः सर्वे मुनयः साधुनेत्राः संगद्गदं प्रोक्तवन्तः-हतभाग्या-  
नस्मान् परित्यज्य गुरुचरणाः क्व गता इति वयं न विद्मः, भवता ज्ञायते किम् ? ।  
सागरचन्द्रमुनिनोक्तम्-तं न विद्मो वयम्, किं तु एकः कोऽपि वृद्धः संप्रति वर्तते  
उपाश्रये । ततः सर्वे गुरुभक्त्युद्रेकात् तद्विरहखिन्ना उपाश्रये आगताः । सागरमुनि-  
नाऽङ्गुल्या निर्देशेन प्रदर्श्य कथितम्-अयमागन्तुको महानुभावः । शिष्यास्तदैव

चल दिये । सागरचंद्रमुनि को जब पता चला कि सशिष्य गुरु महा-  
राज कालकाचार्य विहार करते हुए यहां आ रहे हैं तो वे उनका  
स्वागत करने के लिये सामने गये । वहां उन्हें मुनियों में गुरु महाराज  
को नहीं देखा तब उन्होंने उन अपने गुरुभार्इओं से पूछा कि-पूज्य  
गुरु महाराज तो दिखते नहीं हैं कहां वे इस समय कहां हैं । तब  
मुनियों ने सागरचंद्रमुनि के वचन सुनकर हताश एवं आंसू डालते  
हुए गद्गद कंठ से बोले हतभाग्य हम लोगों को छोड़कर गुरु महाराज  
कहां चले गये हैं यह हम नहीं जानते हैं । कहो आप को मालूम है  
क्या ? सागरचंद्रमुनि ने कहा उन्हें तो हम जानते नहीं हैं किन्तु एक  
कोई वृद्ध महात्मा इस समय उपाश्रय में अवश्य ठहरे हुए हैं ।  
सागरचंद्रमुनि की इस बात को सुनकर समस्त शिष्य जो गुरु महा-  
राज के विरह से खेदखिन्न बने हुए थे गुरुभक्ति के उद्रेक से प्रेरित  
होकर उपाश्रय में पहुँचे । सागरचंद्रमुनि ने अंगुली के इशारे से

करवा लाया. सागरचंद्र मुनिने એ ખબર મળ્યા કે, ગુરુમહારાજ કાલકાચાર્ય  
શિષ્યો સાથે વિહાર કરતા કરતા અહીં પધારે છે ત્યારે તે તેમનું સ્વાગત  
કરેલા સામે ગયા. ત્યાં એ મુનિઓમાં ગુરુમહારાજને ન મળ્યા ત્યારે તેણે પોતાના  
એ ગુરુભોઈઓને પૂછ્યું કે પૂજ્ય ગુરુમહારાજ તો દેખાતા નથી કહો, તે આ  
સમયે ક્યાં છે ? સાગરચંદ્ર મુનિનાં આ વચન સાંભળતાં તે શિષ્યો હતાંશી  
ખની ગયા અને આંસુભરી આંખે ગદ્ગદ કંઠથી બોલ્યા, હતભાગી અમે  
ખધાને છોડીને ગુરુમહારાજ ક્યાં ચાલ્યા ગયા છે એ અમે જાણતા નથી. કહો  
કહો આપને ખબર છે ? સાગરચંદ્ર મુનિએ કહ્યું, એમને હું જાણખતો નથી  
પરંતુ એક વૃદ્ધ મહાત્મા આ વખતે ઉપાશ્રયમાં રોકાયેલા છે. સાગરચંદ્રની  
આ વાત સાંભળી સઘળા શિષ્યો જે ગુરુમહારાજના વિરહથી ખેદખિન્ન બનેલા  
હતા; તે સઘળા ગુરુભક્તિના લોવથી પ્રેરિત બની ઉપાશ્રયમાં પહોંચ્યા. સાગર-

શ્રુતં ભવદ્વિઃ, કીદૃશં તત્, ? તેનોક્તમ્-શોભનમ્; કાલકાચાર્યેણ સહ તસ્ય તર્ક-  
માથિસ્ય વાદઃ પ્રવૃત્તેઃ । સાગરચન્દ્રમુનિસ્તસ્ય તુલ્યતયા પ્રત્યુત્તરં કર્તુમસમર્થો જાત-  
સ્તતોડ્તીવ ચમત્કારં સ પ્રાપ્તવાન્ ।

इतश्च कालकाचार्यस्य शिष्याः स्वगुरुपरित्यक्ताश्चतुर्विधसंधेस्तिरस्कारं प्राप्य;  
लज्जिताः सन्तः स्वगुरुं गवेपयन्ति । ते ग्रामानुग्रामं विहरन्तः कालकाचार्यवार्तां  
प्रतिग्रामं प्रतिनगरं प्रतिस्थलं पृच्छन्तः क्रमेण धारावासनगरं समीगताः । शिष्यः-

आज मेरा तात्त्विक प्रवचन तो सुना है ? वह कैसा हुआ । कालका-  
चार्य ने कहा अच्छा हुआ, वातचीत के सिलसिले में ही गुरु शिष्य का  
तर्कशास्त्र पर परस्पर में वादविवाद छिड़ गया । सागरचंद्रमुनि को  
यह पता नहीं था कि ये मेरे गुरु महाराज कालकाचार्य हैं । सागरचंद्र  
मुनि कालकाचार्य को तर्कणाओं का प्रत्युत्तर नहीं दे सका अतः वह  
कालकाचार्य के अगाध ज्ञान से विशेष प्रभावित हुआ ।

उधर से जब अपने शिष्यों को उज्जयिनी में छोड़कर कालकाचार्य  
आगये तो उन शिष्यों का वहाँ के चतुर्विधसंधेने बड़ा ही तिरस्कार  
किया । वे सबके सब लज्जित होने लगे । सबने विचार किया कि  
गुरु महाराज का पता लगाना चाहिये कि वे कहाँ पधारें हैं । विचार  
निश्चित कर सबने वहाँ से गुरु महाराज की गवेपणा करने के लिये  
विहार कर दिया । ग्रामानुग्राम विचरते हुए उन्होंने ने प्रत्येक जगह में,  
प्रत्येक ग्राम में, प्रत्येक शहर में कालकाचार्य का पता लगाया तथा  
उनकी खबर भी पूछी । पूछते-र ये सब के सब धारावास नगर की ओर

સાંભળ્યું ? તે કેમ હતું ? કાલકાચાર્યે કહ્યું; સાડું હતું; વાતચીતની ચર્ચામાં  
જે ગુરુ શિષ્યને તર્કશાસ્ત્ર ઉપર પરસ્પરમાં વાદવિવાદ થયો; સાગરચંદ્ર મુનિને  
એ ખ્યાલ ન હતો કે આ મારો ગુરુમહારાજ કાલકાચાર્ય છે. સાગરચંદ્ર મુનિ  
કાલકાચાર્યની તર્ક ધારાઓનો પ્રત્યુત્તર આપી શક્યો નહીં; આથી તે કાલકા-  
ચાર્યના અગાધ જ્ઞાનથી ખૂબ પ્રભાવિત બની ગયા.

આ તરફ ઉજ્જૈનીમાં રહેલા તે શિષ્યોનો ત્યાંના ચતુર્વિધ સંઘે ઘણો  
તિરસ્કાર કર્યો. તે સઘળા આથી ખૂબજ શરમાયા. અને બધાએ મળી એ વિચાર  
કર્યો કે, ગુરુમહારાજનો પત્તો મેળવવો જોઈએ કે તેઓ કયાં વિચરે છે. વિચાર  
નક્કી કરી એ શિષ્યોએ ગુરુમહારાજની તપાસ માટે વિહાર કર્યો. ગ્રામ-  
નુગ્રામ વિચરણ કરતાં તેમણે પ્રત્યેક જગ્યાએ, પ્રત્યેક ગામમાં, પ્રત્યેક  
શહેરમાં, કાલકાચાર્ય મહારાજની પૃચ્છા કરી; અને તેમની ખબર પૂછી.  
પૂછતાં પૂછતાં ખબર મળી જતાં તે સઘળા ધારાવાસ નગર વિહાર

‘નિરદ્વગં’ इत्यादि ।

નિરર્થકમ્=વ્યર્થમ્ મિ=અહં મૈથુનાત્=કામસુખાદ્ વિરતઃ=નિવૃત્તઃ। પ્રાણાતિપા-  
તાદિવિરમણં વિહાય ચન્મૈથુનમાત્રોપાદાનં તત્તસ્ય દુસ્ત્યજત્વબોધનાર્થમ્। દુસ્ત્યજ-  
મૈથુનાત્ પ્રતિનિવર્તનેનાહં દુષ્કરં કાર્યં વ્યર્થમેવ કૃત્વાનિતિ ભાવઃ। તથા-નિરર્થકં  
સુસંવૃતઃ = ઇન્દ્રિયનોઈન્દ્રિયવ્યાપારનિરોધેન સુષ્ટુસંવરયુક્તઃ । યોઽહં કલ્યાણં=  
શુભં, પાપકમ્=અશુભં, ધર્મ=વસ્તુસ્વભાવં સાક્ષાત્=પરિસ્ફુટં યથા સ્યાત્ તથા, ના-  
ભિજાનામિ=અવધ્યાદિજ્ઞાનાભાવેન પ્રત્યક્ષતયા સર્વથા ન જાનામીત્યર્થઃ । ઇતિ  
ભિક્ષુર્ન ચિન્તયેત્ । ‘इह भिक्षू न चिंतए’ इत्युत्तरगाथा(૪૪)સ્યેન સહ સમ્વન્ધઃ ।

મતિશ્રુતરૂપ પરોક્ષજ્ઞાન કો આશ્રિત કર પ્રજ્ઞાપરીપદ્ધત્ય કા સૂત્રકારને  
યહ વર્ણન કિયા હૈ । અવ અવધિ આદિ રૂપ જા પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન હૈ  
उनके अभावरूप इक्षीसवां अज्ञानपरीपद्दत्य कऱ वऱ्णन कियऱ जऱतऱ हऱ—

‘निरद्वगंमि’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—( નિરદ્વગંમિ મેહુણાઓ વિરઓ- નિરર્થકમહં મૈથુનાત્  
વિરતઃ ) વ્યર્થ હી મૈ કામસુખ સે વિરક્ત હુઆ હું । ( સુસંવૃહો-સુસં-  
વૃતઃ ) વ્યર્થ હી મૈને ઇન્દ્રિયોં ઇવં મન કો અપને અભિલપિત વિષયોં સે  
હટાકર સુસંવૃત્ત કિયા હૈ । (જો-યઃ) જો મૈ અભીતક ભી (કલ્હાણં પાવગં  
ધર્મ્મં સક્કલં નાભિજાણામિ-કલ્યાણં પાપકં ધર્મ્મં સાક્ષાત્ નાભિજાનામિ)  
શુભ તથા અશુભ વસ્તુસ્વભાવરૂપ ધર્મ કો અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ  
જ્ઞાનોં કે અભાવ મૈ સાક્ષાત્-સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતા હું । હસ પ્રકાર  
ભિક્ષુ વિચાર ન કરે । “इह भिक्षू न चिंतए” યહ આગે ગાથા  
ચૌવાલીસ ૪૪વીં મૈ કહા ગયા વાક્ય યહાં યોજિત કર લેના ચાહિયે ।

મતિશ્રુત રૂપ પરોક્ષજ્ઞાનને આશ્રિત કરી પ્રજ્ઞાપરીપદ્ધત્ય સૂત્રકારે આ  
વર્ણન કરેલ છે. હવે અવધિ આદિરૂપ જે પ્રત્યક્ષજ્ઞાન છે તેના અભાવરૂપ  
એકવીસમા અજ્ઞાનપરીપદ્ધત્ય વર્ણન કરવામાં આવે છે—‘નિરદ્વગંમિ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—નિરદ્વગંમિ મેહુણાઓ વિરઓ-નિરર્થકમહં મૈથુનાત્ વિરતઃ કામસુખને  
છોડીને હું નકામો વિરક્ત બન્યો છું. સુસંવૃહો-સુસંવૃતઃ ઇન્દ્રિયો અને મનને તેના  
અભિલપિત વિષયોથી હટાવીને મેં વ્યર્થ સુસંવૃત્ત કરેલ છે, જે આજ સુધી પણ  
હું કલ્હાણં પાવગં ધર્મ્મં સક્કલં નાભિજાણામિ-કલ્યાણં પાપકં ધર્મ્મં સાક્ષાત્ નાભિ-  
જાનામિ શુભ તથા અશુભ વસ્તુ સ્વભાવરૂપ ધર્મને અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનના  
અભાવથી સાક્ષાત્-સ્પષ્ટરૂપથી બાણુતો નથી. આ પ્રકારનો વિચાર ભિક્ષુ ન  
કરે. इह भिक्षू न चिंतए આ આગળ બતાવવામાં આવેલ ૪૪ મી ગાથાનું

હૃષ્ટતુષ્ટાઃ સસંભ્રમં હર્ષવશચિસર્પચૂદયાઃ, ' इमे एव मम गुरुवः ' इति वन्दितवन्तः ।  
સાગરચંદ્રમુનિસ્તદા કાલકાચાર્યે પરિચિતે પશ્ચાત્તાપં કુર્વન્ વદતિ-ભગવન્ ! મયા  
શ્રુતનિધીનાં તત્રભવતાં ભવતામાશાતના કૃતા, ક્ષમસ્વ ।

કાલકાચાર્યેણોક્તમ્—હે વત્સ ! શ્રુતમદો ન કર્તવ્યઃ । એવમન્યૈરપિ કાલકા-  
ચાર્યવત્ પ્રજ્ઞાપ્રકર્ષે મદાકરણેન પ્રજ્ઞાપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥૪૧॥

મતિશ્રુતરૂપપરોક્ષજ્ઞાનમાશ્રિત્ય પ્રજ્ઞાપરીપહો વર્ણિતઃ । અધેદાનીમવધ્યાદિરૂપં  
પ્રત્યક્ષજ્ઞાનમાશ્રિત્ય તદભાવરૂપ એકત્રિંશતિતમોઽજ્ઞાનપરીપહઃ પ્રોચ્યતે—

मूलम्—निरद्वयं मि विरओ, मेहुणाओ सुसंवुडो ।

જો સર્વસ્વં નોભિજાણોમિ, ધર્મં કલ્હાણ પાવગં ॥૪૨॥

छाया-निरर्थकम् अहं विरतः, मैथुनात् सुसंवृतः ।

યઃ સાક્ષાત્ નાભિજાનામિ, ધર્મ કલ્યાણં પાપકમ્ ॥ ૪૨ ॥

ચતલાકર કહા કિ દેસ્વો યે હં વે આગન્તુક મહાનુભાવ । વે શિષ્ય  
સવ કે સવ ઉસી સમય અપાર હર્ષ સે ઉત્ફુલ્લહૃદય હોકર હૃષ્ટ તુષ્ટ  
હોતે હુએ વહે હી આદર સે “યહી હૈ હમારે ગુરુ મહારાજ” કહ કર  
ઉનકે ચરણોં મેં ગિર કર વંદના કરને લગે । સાગરચંદ્રમુનિ ઉસ  
સમય કાલકાચાર્ય કે પરિચિત હોને પર પશ્ચાત્તાપ કરતા હુઆ ઉનસે  
બોલા ભગવન્ ! શ્રુતનિધિ પૂજ્ય આપકી મેરે દ્વારા આશાતના હુઈ હૈ,  
અતઃ મેં ઉસકી ક્ષમા ચાહતા હૂં, આપ ક્ષમા કરેં । કાલકાચાર્ય ને કહાં  
વત્સ ! શ્રુતજ્ઞાન કા મદ નહીં કરના ચાહિયે । ઇસ કથા સે યહી શિક્ષા  
મિલતી હૈ કિ કાલકાચાર્ય કી તરહ પ્રજ્ઞા કે પ્રકર્ષ મેં મદ નહીં કરને  
સે પ્રજ્ઞાપરીપહ કા જય હોતા હૈ ॥ ૪૧ ॥

ચંદ્ર મુનિએ આંગણીના ઇસારાથી બતાવીને કહ્યું કે, જુઓ આ છે તે આવેલા  
મહાનુભાવ ! આથી તે સધળા શિષ્યો તે સમયે અપાર હર્ષથી પ્રકુલિત બની  
પુશી થતાં થતાં ખૂબજ આદરથી “આ જ છે અમારા ગુરુમહારાજ” કહીને  
તેમના ચરણમાં પડીને વંદન કરવા લાગ્યા. સાગરચંદ્રમુનિ એ સમયે કાલકા-  
ચાર્યના પરિચયથી પશ્ચાત્તાપ કરતાં કરતાં તેમને કહેવા લાગ્યા, ભગવંત !  
શ્રુતનિધિ પૂજ્ય મારાથી આપની અશાતના થઈ છે. આથી હું તેની ક્ષમા  
ચાહું છું. આપ મને ક્ષમા કરો. કાલકાચાર્યે કહ્યું, વત્સ ! શ્રુતજ્ઞાનનો મદ ન  
કરવો જોઈએ. આ કથાથી એ જાણવાનું મળે છે કે, કાલકાચાર્યની મોટીક  
પ્રજ્ઞાના પ્રકર્ષમાં મદ નહીં કરવાથી પ્રજ્ઞાપરીપહનો જય થાય ॥ ૧ ॥

ટીકા--‘તવોવહાણમાદાય’ इत्यादि ।

તપઃ=યવમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા-વજ્રમધ્યચન્દ્રપ્રતિમાદિકમ્, ઉપધાનં=સાભિગ્રહં તપઃ  
આદાય=સ્વીકૃત્ય ચરિત્વેત્યર્થઃ, અભિગ્રહવિશેષરૂપાં માસિકયાદિકાં, પ્રતિપદ્યમા-  
નસ્ય=પ્રતિપદ્યમાનસ્ય અક્ષીકૃતયતઃ, એવમપિ=વિશિષ્ટચર્યયાઽપિ, વિહરતઃ=નિષ્પત્તિવ-  
ન્યં વિચરતઃ, મે=મમ, છદ્મ=છાદયતીતિ છદ્મ-જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ, ન નિવર્તતે  
=નાપગચ્છતિ, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत्, इत्युत्तरगाथास्थेन सह सम्वन्धः ।

अयं भावः—अहं यवमध्यचन्द्रप्रतिमादिकं तपः करामि, तथा साभिग्रहं तपः

किंच—‘तवोवह्णमादाय’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—( તવોવહાણમાદાય-તપઉપધામ્ આદાય ) યવમધ્ય-  
ચન્દ્રપ્રતિમા, વજ્રમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા આદિક તપ કો તથા સાભિગ્રહ તપ  
રૂપ ઉપધાન કો સ્વીકાર કર કે, તથા ઉનકા આચરણ કરકે ( પઢિમં-  
પઢિવજ્જઓ-પ્રતિમાં પ્રતિપદ્યમાનસ્ય ) અભિગ્રહવિશેષરૂપ માસિકયા  
દિક પ્રતિમા કો અંગીકાર કરને વાલે ( મે-મમ ) મેરા જો કિ ( એવં  
પિ વિહરઓ-એવમપિ વિહરતઃ ) ઇસ પ્રકાર કી વિશિષ્ટચર્યા સે મુક્તિ  
કે માર્ગ મેં વિચરણ કર રહ્યા હું ( છડમં-છદ્મ ) જ્ઞાનાવરણીયાદિક  
કર્મોં કા આવરણ તો બી ( ન નિયટ્વ-ન નિવર્તતે ) નિવર્તિત નહીં હોતા  
હે । ઇસ પ્રકાર ભિક્ષુ વિચાર નહીં કરે ।

ये दो ४२-४३ गाथाएँ अवधि आदि प्रत्यक्ष ज्ञान की प्राप्ति के विषय में कही गई हैं ।

तात्पर्य यह है कि मैं यवमध्यचन्द्रप्रतिमा आदिक तप करता हूँ

किंच—‘तवोवह्णमादाय’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—‘ તવોવહાણમાદાય ’-તપઉપધાનં આદાય યવમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા  
-વજ્રમધ્યચન્દ્ર પ્રતિમા આદિક તપને તથા સાભિગ્રહ તપરૂપ ઉપધાનને સ્વીકાર કરી  
તથા તેનું આચરણ કરી પઢિમં પઢિવજ્જઓ-પ્રતિમાં પ્રતિપદ્યમાનસ્ય અભિગ્રહ વિશેષરૂપ  
માસિકયાદિક પ્રતિમાને અંગીકાર કરવાવાળા મે-મમ હું કે જે-એવં પિ વિહરઓ-  
એવમપિ વિહરતઃ આ પ્રકારની વિશિષ્ટ ચર્યાથી મુક્તિના માર્ગમાં વિચરણ કરી  
રહ્યો છું છડમં-છદ્મ છતાં જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોંનું આવરણ ન નિયટ્વ-ન નિવર્તતે  
હર થતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર ભિક્ષુ ન કરે.

બેતાલીસ અને તેતાલીસ આ બે ગાથાઓ અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની  
અપ્રાપ્તિના વિષયમાં કહેવામાં આવેલ છે.

તાત્પર્ય આ છે કે, - હું યવમધ્ય ચન્દ્રપ્રતિમા આદિક તપ કરું છું તથા



અર્થ ભાવઃ — મયા વૃથા મૈથુનવિરમણં કૃતમ્, વૃથેવ ચેન્દ્રિયાણિ વિમિત્તાનિ  
યદહં શુભમશુભં વા વસ્તુસ્વભાવં પ્રત્યક્ષરૂપેણ નામિજાનામીત્યેવં ચિન્તનૈન મુનિર્વિ-  
પાદં ન કુર્યાત્ । ‘ મિ ’ इत्यर्पत्वात् प्रथमार्थे द्वितीया ॥ ४२ ॥

કિન્ચ—

મૂલમ્—તેવોવહાણંમાદાય, પડિમં પડિવર્જંઓ ।

एवं पि विहरओ मे, छडेमं नै निर्येदइ ॥ ४३ ॥

છાયા—તપઽપધાનમાદાય, પ્રતિમાં પ્રતિપદમાત્મસ્ય ।

एवमपि विहर्तो मे, छद्म न निवर्तते ॥ ४३ ॥

હસ ગાથા મેં એક મૈથુન માત્ર કા હી ગ્રહણ હસલિયે ક્રિયા હૈ કિ અહિંસા  
આદિ સ્વ કી અપેક્ષા મહ દુસ્તમજ જોતી હૈ હસલિયે મુનિ વિચારતા  
હૈ કિ એસે દુષ્કર ત્યાગ કરને પર ભી મુઝે કુછ લાભ નહીં જુઆ ।

ભાવાર્થ—હસકા ભાવ યહ હૈ કિ અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનોં કી  
પ્રાપ્તિ કે અભાવ મેં મિથુ કો અપની આત્મા કે લિયે હસ પ્રકાર કે  
વિચાર સે વિષાદિત નહીં કરના ચાહિયે કિ—મુઝે બ્રહ્મચર્ય કા પાત્ત  
તથા તપશ્ચર્યા કરતે ૨ મહત કાલ હો ચુકા હૈ અમી તક—મી મુઝે  
વસ્તુ કા વાસ્તવિક શુભાશુભ સ્વભાવ સ્પષ્ટ રીતિ સે જાતલજે જાલે  
પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનોં મેં સે એક મી કિસી જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ જહીં હુઈ હૈ । મહ  
દીક્ષા બ્રહ્મચર્યવ્રત ઓર તપશ્ચર્યા આદિ મેં ને ચર્ય ધારણ કિયે । હસકી  
અપેક્ષા તો સંસારદશા મેં હી આનન્દ થા ॥ ૪૨ ॥

વાક્ય અહિં યોજીત કરી હેવું જોઈએ. એ ગાથામાં એક મૈથુન ભાવનું  
એટલા માટે થકણ કરવામાં આવેલ છે કે, અહિંસા આદિ અધ્યાત્મી અપેક્ષા  
એ હસ્ત્યજ હોય છે. આ માટે મુનિ વિચારતા હોય છે કે, આવો ફગડો ત્યાગ  
કરના છતાં પણ મને કંઈ લાભ થયો નહીં.

ભાવાર્થ—અનોભાવ એ છે કે, અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનોની પ્રાપ્તિના અભાવમાં  
મિથુએ પોતાના આત્મા માટે આ પ્રકારનો વિચાર કરી કદી વિષાદિત પ્રત્યક્ષ  
ન જોઈએ—કે, મને બ્રહ્મચર્યનું પાલન અને તપશ્ચર્યા કરતાં કરતાં છલો સમય  
ગયો તેમ છતાં પણ વસ્તુનો વાસ્તવિક શુભાશુભ સ્વભાવ સ્પષ્ટ રીતે બતાવ-  
નાર પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનોમાંથી કંઈ એક પણ જ્ઞાનોની પ્રાપ્તિ થવા પ્રાપ્તી નથી. આ  
દીક્ષા, બ્રહ્મચર્યવ્રત અને તપશ્ચર્યા વગેરે મેં નકામાં ધારણ કર્યાં છે. આની  
અપેક્ષા તો સંસાર દશામાં જ આનંદ હતો ॥ ૪૨ ॥



મયા નોપલબ્ધમ્ । તદનુપલબ્ધો ચ દુસ્ત્યજમૈથુનાત્ પ્રતિનિવર્તનં મમ વ્યર્થમ્ ।  
તથા નિર્થકં સુસંગૃહ્યતઃ = ઇન્દ્રિયનોન્દ્રિયવ્યાપારનિરોધેન સુષ્ટુસંવરયુક્તોઽભવમ્ ,  
યોઽહં કલ્યાણં પાપકં વા ધર્મ=વસ્તુસ્વભાવં, સાક્ષાત્=પરિસ્ફુટં, નામિજાનામિ=અભિ-  
-સર્વથા નિરવશેષવિશેષપૂર્વકં ન જાનામિ । અયં ભાવઃ—“ જે એમં જાણહ, સે  
સબ્બં જાણહ, જે સબ્બં જાણહ, સે એમં જાણહ ” ઇત્યાગમવચનાચ્છદ્ધસ્થોઽહં  
કિમપ્યેકમપિ વસ્તુસ્વરૂપં ન તત્ત્વતો જાનામિ, યદિ સાક્ષાત્ સમસ્તભાવસ્વભાવાંવ-  
ભાસકં કેવલાલોકં ન લબ્ધવાન્, તર્હિ કિમનેનાલ્પેન મુકુલિતવસ્તુસ્વરૂપજ્ઞાનેન,  
ઇત્યેવં વિપાદં ન કુર્યાદિતિ ।

તથા—તપઉપધાનાદિભિર્નિર્જરાહેતુભિરપિ છદ્ધસ્થાવસ્થા ન નિવર્તતે=નિરવશેષં  
ન ક્ષીયતે, કિં તર્હિ મમાનેન ક્રિયાકલાપેન? ઇતિ વિચિન્ત્ય મુનિર્વિપાદં ન કુર્યાત્ ।

તથા ઇન્દ્રિય નોન્દ્રિય કા નિગ્રહ મી કિયા હૈ વે સવ નિર્થક હૈ ।  
ક્યોં કિ અમીતક મુજે શુભાશુભ વસ્તુ કા સંપૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાન કરાને  
વાલા કેવલજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત હુવા હી નહીં હૈ । ઉસકે ન હોને પર ઇસ  
દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ એવં ભાવ કી મર્યાદા કો લેકર વસ્તુ કે સ્વરૂપ કો  
પ્રકટ કરાને વાલે ઇન અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન સે કયા લાભ હૈ । ઇસ  
પ્રકાર વિચાર કર સાધુ અપની આત્મા કો દુઃખિત નહીં કરે ।

તથા—નિર્જરા કે કારણ ઇન તપ એવં ઉપધાન આદિ કે આચરણ  
કરને સે મુજે લાભ હી કયા હુઆ, ક્યોં કિ અમીતક મેરી છદ્ધસ્થા-  
વસ્થા તો દૂર નહીં હુઈ હૈ । સમસ્ત જ્ઞાનાવરણીયકર્મ નષ્ટ હોકર જઘ  
તક કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત નહીં હોતા તવતક છદ્ધસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । અતઃ  
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા અભાવસ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપહ સાધુ કો જીતના  
ચાહિયે । તથા તપ એવં ઉપધાન આદિ જો નિર્જરા કે હેતુ હૈં ઉનસે મેરે

નિથહુ પણ ક્યોં છે. તે બધું નિર્થક છે. કેમકે, હજી સુધી મને શુભાશુભ  
વસ્તુનું સંપૂર્ણરૂપથી જ્ઞાન કરાવનાર કેવળજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત થયું નથી. તેના ન  
હોવાથી આ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવની મર્યાદાને લઈને વસ્તુના સ્વરૂપને  
પ્રગટ કરાવનાર આ અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનથી શું લાભ છે? આ પ્રકારનો વિચાર  
કરી સાધુ પોતાના આત્માને દુઃખી ન કરે.

તથા—નિર્જરાનું કારણ આ તપ અને ઉપધાન આદિનું આચરણ કરવાથી  
મને લાભ શું થયો? કેમકે, હજી સુધી મારી છદ્ધ અવસ્થા દૂર થઈ નથી. જ્યાં  
સુધી જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો નાશ થઈ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત ન થાય ત્યાં સુધી છદ્ધસ્થ  
અવસ્થા રહે છે. આથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભાવ સ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપહ  
સાધુએ છતવો જોઈએ. તથા તપ અને ઉપધાન આદિ જે નિર્જરાના હેતુ છે

કરોમિ, પ્રતિમાં સમાચરામિ, एवं मोक्षमार्गे विचरामि, तथापि-अवधि-मनः पर्य-  
यरूप-प्रत्यक्षज्ञानवान् न भवामि' इति न चिन्तयेत् । इत्येवमज्ञानस्य सद्भावे  
विपादाकरणेनाज्ञानपरीपहः सोढव्य इति ।

यद्वा-इहापि तन्त्रन्यायेन गाथायुग्मस्यार्थद्वयं बोध्यम् । तत्र-अज्ञानसद्भाव-  
पक्षमाश्रित्य व्याख्याऽभिहिता । अथ ज्ञानसद्भावपक्षमाश्रित्य व्याख्या प्रदर्श्यते-

ज्ञानસદ્ભાવે—અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનસદ્ભાવેઽપિ કેવલજ્ઞાનાપ્રાપ્તૌ ભિક્ષુરેવં ન  
ચિન્તયેત્—યદહં વ્યર્થમેવ મૈથુનાદ્ વિરતઃ=નિવૃત્તઃ । પરમલક્ષ્યકેવલજ્ઞાનમઘાપિ

તથા અભિગ્રહ ભી કરતા હું એવં ભિક્ષુપ્રતિમા કા પાલન ભી કરતા હું  
इस प्रकार मैं मोक्षमार्ग में ही विचरण कर रहा हूँ तो भी मुझे अभी तक  
अवधिमनःपर्ययरूप प्रत्यक्ष ज्ञानकी प्राप्ति नहीं हुई है इस प्रकारसे साधुको  
विचार नहीं करना चाहिये । इस तरह अवधिमनःपर्ययरूप ज्ञानकी प्राप्ति  
के अभाव में विपाद नहीं करना इसी का नाम अज्ञानपरीपहका जीतना है ।

अथवा तन्त्रन्याय से भी इन दोनों गाथाओं का अर्थ जानना  
चाहिये । उस में अज्ञान के सद्भाव पक्ष को लेकर पहले व्याख्या की  
गई है अब ज्ञान के सद्भाव पक्ष को लेकर व्याख्या की जाती है, वह  
इस प्रकार है—

अवधिमनःपर्ययज्ञान के सद्भाव में केवलज्ञान की प्राप्ति न होने  
पर साधु इस प्रकार विचार नहीं करे कि—मैंने जो मૈથુન जैसे दुष्कर  
कार्यों का परित्याग किया है प्राणातिपातादिक का विरमण किया है

અભિગ્રહ પણ કરે છું. આ પ્રકારથી હું મોક્ષમાર્ગમાં જ વિચરણ કરી રહ્યો  
છું તો પણ મને હજી સુધી અવધિમનઃપર્યયરૂપ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ નથી. આ  
પ્રકારનો સાધુએ વિચાર ન કરવો જોઈએ. આ રીતે અવધિમનઃપર્યયરૂપ  
જ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભાવમાં વિપાદ ન કરવો જોઈએ. આનું જ નામ અજ્ઞાન  
પરીપહને જીતવો એ છે.

અથવા—તંત્ર ન્યાયથી પણ આ બંને ગાથાઓના અર્થ જાણવા જોઈએ.  
એમાં અજ્ઞાનના સદ્ભાવપક્ષને લઈ પહેલાં વ્યાખ્યા કરવામાં આવી છે હવે  
જ્ઞાનના સદ્ભાવ પક્ષને લઈ વ્યાખ્યા કરવામાં આવે છે, તે આ પ્રકારે છે.

અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનના સદ્ભાવમાં કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ ન થવાથી સાધુ  
આ પ્રકારનો વિચાર ન કરે કે—મેં મૈથુન જેવા દુષ્કર કાર્યોનો પરિત્યાગ કર્યો  
છે, પ્રાણાતિપાતાદિકનું વિરમણ કર્યું છે, તથા ઇન્દ્રિય નો (મન) ઇન્દ્રિયનો

મયા નોપલબ્ધમ્ । તદનુપલબ્ધૌ ચ દુસ્ત્યજમૈથુનાત્ પ્રતિનિવર્તનં મમ વ્યર્થમ્ ।  
તથા નિર્થકં સુસંવૃત્તઃ = ઇન્દ્રિયનોદ્દિવ્યવ્યાપારનિરોધેન સુષ્ટુસંવરયુક્તોઽભવમ્ ,  
યોઽહં કલ્યાણં પાપકં વા ધર્મ=વસ્તુસ્વભાવં, સાક્ષાત્=પરિસ્ફુટં, નામિજાનામિ=અભિ-  
-સર્વયા નિરવશેષવિશેષપૂર્વકં ન જાનામિ । અયં ભાવઃ—“ જે એમં જાણહ, સે  
સવ્વં જાણહ, જે સવ્વં જાણહ, સે એમં જાણહ ” ઇત્યાગમવચનાચ્છદ્યસ્થોઽહં  
કિમપ્યેકમપિ વસ્તુસ્વરૂપં ન તત્ત્વતો જાનામિ, યદિ સાક્ષાત્ સમસ્તભાવસ્વભાવાં-  
ભાસકં કેવલાલોકં ન લબ્ધવાન્, તર્હિ કિમનેનાલ્પેન મુકુલિતવસ્તુસ્વરૂપજ્ઞાનેન,  
હત્યેવં વિપાદં ન કુર્યાદિતિ ।

તથા—તપઉપધાનાદિભિર્નિર્જરાહેતુભિરપિ છદ્મસ્થાવસ્થા ન નિવર્તતે=નિરવશેષં  
ન ક્ષીયતે, કિં તર્હિ મમાનેન ક્રિયાકલાપેન? ઇતિ વિચિન્ત્ય મુનિર્વિપાદં ન કુર્યાત્ ।

તથા ઇન્દ્રિય નોદ્દિવ્ય કા નિગ્રહ મી કિયા હૈ વે સવ નિર્થક હૈ ।  
ક્યોં કિ અમીતક મુજે શુભાશુભ વસ્તુ કા સંપૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાન કરાને  
વાલા કેવલજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત હુવા હી નહીં હૈ । ઉસકે ન હોને પર હસ  
દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ એવં ભાવ કી મર્યાદા કો લેકર વસ્તુ કે સ્વરૂપ કો  
પ્રકટ કરાને વાલે હન અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન સે ક્યા લાભ હૈ । હસ  
પ્રકાર વિચાર કર સાધુ અપની આત્મા કો દુઃખિત નહીં કરે ।

તથા—નિર્જરા કે કારણ હન તપ એવં ઉપધાન આદિ કે આચરણ  
કરને સે મુજે લાભ હી ક્યા હુઆ, ક્યોં કિ અમીતક મેરી છદ્મસ્થા-  
વસ્થા તો દૂર નહીં હુઈ હૈ । સમસ્ત જ્ઞાનાવરણીયકર્મ નષ્ટ હોકર જવ  
તક કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત નહીં હોતા તવતક છદ્મસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । અતઃ  
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા અભાવસ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપહ સાધુ કો જીતના  
ચાહિયે । તથા તપ એવં ઉપધાન આદિ જો નિર્જરા કે હેતુ હૈં ઉનસે મેરે

નિશ્ચય પશુ કર્યો છે. તે બધું નિર્થક છે. કેમકે, હજી સુધી મને શુભાશુભ  
વસ્તુનું સંપૂર્ણરૂપથી જ્ઞાન કરાવનાર કેવળજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત થયું નથી. તેના ન  
હોવાથી આ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર ઠાળ અને ભાવની મર્યાદાને લઈને વસ્તુના સ્વરૂપને  
પ્રગટ કરાવનાર આ અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનથી શું લાભ છે? આ પ્રકારનો વિચાર  
કરી સાધુ પોતાના આત્માને દુઃખી ન કરે.

તથા—નિર્જરાનું કારણ આ તપ અને ઉપધાન આદિનું આચરણ કરવાથી  
મને લાભ શું થયો? કેમકે, હજી સુધી મારી છદ્મ અવસ્થા દૂર થઈ નથી. જ્યાં  
સુધી જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો નાશ થઈ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત ન થાય ત્યાં સુધી છદ્મસ્થ  
અવસ્થા રહે છે. આથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભાવ સ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપહ  
સાધુએ ભૂતવો જોઈએ. તથા તપ અને ઉપધાન આદિ જે નિર્જરાના હેતુ છે

અગ્રાઽજ્ઞાનસદ્ભાવપક્ષે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

एकदा चतुर्ज्ञानसम्पन्नो भद्रगुप्ताचार्यः शिष्यपरिवारेण सह ग्रामानुग्रामं विहरन् श्रावस्तीनगरीं तिन्दुकोद्याने समवसृतः । तत्र वसुमित्रनामकः श्रेष्ठी तस्य समीपे धर्मं श्रुत्वा प्रव्रजितः । ततः स एकादशाङ्गान्यधीतवान् । स चानिष्कण्ठं तपश्चरति, उग्रं विहारं करोति, उत्कृष्टाचारं पालयति, यतनया चरति, यतनया तिष्ठति, यतनया उपविशति यतनया शेते, यतनया भुङ्क्ते, यतनया भाषते ।

तत्र सुवीरनामको नृपतिर्भद्रगुप्ताचार्यस्य संनिधावागत्य तं वन्दित्वा पर्युपास्ते ।

જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મ સર્વથા નષ્ટ નહીં હુવે હેં તો ફસ ક્રિયાકલાપ સે મુક્તે કયા લાભ હુવા ? એસા વિચાર કર સાધુ વિપાદ નહીં કરે ।

अज्ञान के सद्भाव पक्ष में दृष्टान्त—एक समय चतुर्ज्ञानसंपन्न भद्रगुप्त आचार्य शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विचरते हुए श्रावस्ता नगरी में तिन्दुक उद्यान में आये । वहा वसुमित्र नाम के एक सेठ ने उनसे धर्मकथा सुनकर दीक्षा धारण की । ग्यारह अंगों को पढ़कर उन्होंने ने अच्छी तरह ज्ञान प्राप्त किया । सदा उग्र तपस्या करना, उग्र विहार करना, उत्कृष्ट आचार का पालन करना, यतना से उठना, यतनासे बैठना, यतनासे सोना, यतना से आहार करना और यतना से बोलना, चलना, इस तरह प्रत्येक क्रिया, इनकी यतना से होने लगी ।

श्रावस्ती नगरी का राजा कि जिनका नाम सुवीर था प्रतिदिन भद्रगुप्त आचार्य के पास वंदना एवं पर्युपासना करने के लिये आते थे ।

તેનાથી મારાં જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મ સર્વથા નાશ પામેલ નથી. તો આ ક્રિયા કરવાથી મને શું લાભ થયો ? એવો વિચાર કરી સાધુ વિપાદ ન કરે.

અજ્ઞાનના સદ્ભાવ પક્ષમાં દૃષ્ટાન્ત—

એક સમય ચતુર્જ્ઞાનસંપન્ન ભદ્રગુપ્ત આચાર્ય શિષ્ય પરિવારની સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતા શ્રાવસ્તી નગરીનાં તિન્દુક ઉદ્યાનમાં આવ્યા. ત્યાં વસુમિત્ર નામના એક શેઠે તેમનો ધર્મ ઉપદેશ સાંભળી દીક્ષા ધારણ કરી. અગીઆર અંગોને ભણીને તેમણે સારી રીતે જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. સદા ઉગ્ર તપસ્યા કરવી, ઉગ્રવિહાર કરવો, ઉત્કૃષ્ટ આચારનું પાલન કરવું, યતનાથી ઉઠવું, યતનાથી બેસવું, યતનાથી આહાર કરવો, યતનાથી બોલવું, યતનાથી ચાલવું, આ રીતે તેમની પ્રત્યેક ક્રિયાઓ યતનાપૂર્વક થવા લાગી.

શ્રાવસ્તી નગરીનો રાજા કે જેનું નામ સુવીર હતું તે દરરોજ ભદ્રગુપ્ત આચાર્યની પાસે વંદના અને પર્યુપાસના કરવા માટે આવતા હતા. આચાર્ય

તદા ભદ્રગુપ્તાચાર્યસ્તમવ્રવીત-રાજન્ ! વન્ધમોક્ષસ્વરૂપં પ્રપ્તું સમાગતોઽસિ કિમ્ ? ।  
રાજા પ્રોક્તમ્-ભદન્ત ! સત્યં ભવદીયવચનમ્ । તતોઽસૌ ભદ્રગુપ્તાચાર્યશ્ચતુર્ભિર્જાનૈસ્તં  
વન્ધમોક્ષસ્વરૂપોપદેશેન પરિતોષયતિ સ્મ । તદા સુવીરનૃપતિર્જાતવૈરાગ્યઃ સન્  
પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ ।

તદા વસુમિત્રમુનિર્ભદ્રગુપ્તાચાર્યસ્યાદ્ભુતં ચતુર્જાનિપ્રભાવમવલોક્ય મનસિ  
ચિન્તયતિ-અહો ! આત્મનો વીર્યં મહદ્ભુતમ્-યદન્તર્મુહૂર્તમાત્રેણૈવ જ્ઞાનાવરણીયા-

આચાર્ય મહારાજ મ્હી ઉન કો ધર્મદેશના દેતે થે । રાજા કે હૃદય  
મેં એક દિન વંધ ઓર મોક્ષ કે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાનને કી જિજ્ઞાસા  
હુઈ, વે શીઘ્ર હી આચાર્ય મહારાજ કે પાસ આયે ઓર વંદના એવં  
પર્યુપાસના કર સમીપ વેઠે । આચાર્ય મહારાજ ને ઉનસે કહા-કહો હે  
રાજન્ ! આજ વંધ ઓર મોક્ષ કા યથાર્થ સ્વરૂપ પૂછને કો આયે હો  
કયા ? રાજાને વહે વિનય કે સાથ દોનોં હાથ જોડકર કહા-હાં ભદન્ત ! ।  
ચાર જ્ઞાન કે ધારી આચાર્ય મહારાજ ને રાજા કો વંધ ઓર મોક્ષ કા  
યથાર્થ સ્વરૂપ અચ્છી તરહ સમજાયા । ઉપદેશમેં સ્પષ્ટ કિયે ગયે વંધ ઓર  
મોક્ષ કે સ્વરૂપ કો સુનકર રાજા કો વડા હી આનંદ આયા । રાજા અપની  
વૈરાગ્ય ભાવના સે આચાર્ય મહારાજ કે પાસ દીક્ષા ધારણ કરલી ।

વસુમિત્ર મુનિ જિનકા નામ સંસારી અવસ્થા મેં વસુમિત્ર સેઠ થા,  
ઉન્હોં ને ભદ્રગુપ્ત આચાર્ય કે ચાર જ્ઞાનોં કા પ્રભાવ દેઘકર મન મેં  
વિચાર કિયા-અહો ! આત્મા કી શક્તિ અચિન્ત્ય હૈ, હસકે વલ સે

મહારાજ પણુ તેમને ધર્મદેશના આપતા હતા. રાજાના હૃદયમાં એક દિવસ બંધ  
અને મોક્ષના યથાર્થ સ્વરૂપને જાણવાની જિજ્ઞાસા થઈ. તે તુરત જ આચાર્યની  
પાસે આવ્યા અને વંદના કરી સામે બેઠા. આચાર્ય મહારાજે તેમને કહ્યું, કહો  
રાજન્ ! આજ બંધ અને મોક્ષનું યથાર્થ સ્વરૂપ પૂછવાને આવ્યા છો ને ?  
રાજાએ વિનય સાથે બન્ને હાથ જોડીને કહ્યું, હા ! ચાર જ્ઞાનના ધારક આચાર્ય  
મહારાજે રાજાને જ્ઞાન અને બંધનું યથાર્થ સ્વરૂપ સારી રીતે સમજાવ્યું.  
ઉપદેશમાં કહેવામાં આવેલ બંધ અને મોક્ષના સ્વરૂપને સાંભળીને રાજાને  
ધણું આનંદ થયો અને વૈરાગ્ય ભાવના જાગૃત થતાં રાજાએ આચાર્ય મહારાજ  
પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરી.

વસુમિત્રમુનિ કે જેમનું સંસારી અવસ્થામાં નામ વસુમિત્ર સેઠ હતું. તેમણે  
ભદ્રગુપ્ત આચાર્યનો ચાર જ્ઞાનનો પ્રભાવ જોઈને મનમાં વિચાર કર્યો, અહો !  
આત્માની શક્તિ અચિન્ત્ય છે. તેના બળથી આત્મા એક અંતર્મુહૂર્તમાં જ જ્ઞાના-

ઘટ્ટવિધકર્મરજોઽપનીય, અયમાત્મા સર્વજ્ઞઃ સર્વદર્શી ભવતિ । મયા તુ એકાદશાન્ના-  
ન્યધીતાનિ, એવં નિરતિચારં શ્રુતજ્ઞાનમારાધિતમ્ । નિઃશંકિત-નિષ્કાક્ષિતાદિ ભેદ-  
દર્શનાચારોઽપ્યારાધિતઃ, સમિતિગુપ્તિભિઃ પ્રશસ્તયોગયુક્તો ભૂત્વા ચારિત્રાચારઃ  
સમારાધિતઃ, અગ્લાનતયા દ્વાદશવિધૈરનશનાદિતપોભિસ્તપઆચારઃ સમારાધિતઃ ।  
એપુ જ્ઞાનાચારાદિપુ ચતુર્ણુ જ્ઞાનાચારઃ કાલવિનયાદિભેદૈરષ્ટવિધઃ, દર્શનાચારઃ સહ  
નિઃશંકિત-નિષ્કાક્ષિતાદિ ભેદૈરષ્ટવિધઃ, ચારિત્રાચારઃ સમિતિ-ગુપ્તિપાલનાત્મકોઽ-  
ષ્ટવિધઃ, તથાઽનશનાદિદ્વાદશવિધસ્તપઆચારસ્તેષુ સર્વેષુ પદ્ત્રિંશદ્વિધેષ્વાચારેષુ

આત્મા એક અન્તર્મુહૂર્ત મેં હી જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકાર કી કર્મ-  
રજ કો નષ્ટ કર સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હો જાતા હૈં । મેંને ગ્યારહ અંગ પઢે હૈં  
उनका खूब मनन किया है इस प्रकार निरतिचार श्रुतज्ञान की आरा-  
धना की है । निःशंकित एवं निःकांक्षित आदि भेदों से युक्त दर्शना-  
चार का यथावत् पालन किया है । समिति गुप्तियों द्वारा प्रशस्त उप-  
योग युक्त होकर चारित्राचार का भी अच्छी तरह आराधन किया है ।  
अग्लानभाव से अनशन आदि बारह प्रकार के तपों का अनुष्ठान  
करने से तप आचार को भी अच्छी तरह पाला है । इसी तरह काल  
विनयादिक के भेद से आठ प्रकार के ज्ञानाचार, निःशंकित, निःकां-  
क्षित आदि भेद से आठ प्रकार के दर्शनाचार, समिति गुप्ति आदि  
के पालनस्वरूप आठ प्रकार के चारित्राचार, एवं चौबीस तथा अन-  
शनादि बारह प्रकार का तप, इस प्रकार छत्तीस ३६ भेदवाले इस

વરણીયાદિક આઠ પ્રકારની કર્મરજને નાશ કરી સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી બની બધ છે.  
મેં અગીયારઅંગનો અભ્યાસ કર્યો છે. તેનું ખૂબ મનન કર્યું છે. એ પ્રકારે  
નિરતિચાર શ્રુતજ્ઞાનની આરાધના કરેલ છે. નિઃશંકિત અને નિઃકાંક્ષિત આદિ  
ભેદોથી યુક્ત દર્શનાચારનું યથાવત્ પાલન કર્યું છે. સમિતિ ગુપ્તિઓ દ્વારા  
પ્રશસ્ત ઉપયોગયુક્ત બનીને ચારિત્રાચારનું પણ સારી રીતે આરાધન કર્યું છે.  
અગ્લાનભાવથી અનશન આદી ૧૨ પ્રકારના તપોનું અનુષ્ઠાન કરવાથી તપ  
આચારને પણ સારી રીતે પાળેલ છે. એવી રીતે કાલ વિનયાદિકના ભેદથી આઠ  
પ્રકારના જ્ઞાનાચાર, નિઃશંકિત, નિઃકાંક્ષિત, આદિ ભેદથી આઠ પ્રકારનો દર્શના-  
ચાર, સમિતિગુપ્તિ આદિના પાલન સ્વરૂપ આઠ પ્રકારનો ચારિત્ર આચાર અને ચોવીસ  
તથા અનશન આદિ બાર પ્રકારનું તપ આ પ્રકારે છત્રીસ ભેદવાળા આ આચારને



અગોપિતવલ્લભ્યેણ, અર્થાત્-પરિપૂર્ણસ્વશક્તિપ્રયોગેણ સોપયોગં પરાક્રમણેન વીર્યાચારોઽપિ સમારાધિતઃ । એતાનિ પદત્રિશદાચારરૂપોદ્યાનાનિ વીર્યાચારવારિણા નિરન્તરપરિસેચનેન હરિતીકૃતાનિ શુભભાવનાનિરીક્ષણેઃ શોભયા ભરિતીકૃતાનિ તથાપ્યદ્યાવધિ મમ જ્ઞાનાવરણીય-કર્મણાં ક્ષયાભાવાદવધ્યાદિરૂપં પ્રત્યક્ષજ્ઞાનં ન જાતમ્ , અતોઽહમપિ પુનસ્તથા યતિપ્યે, યથા તન્મમાવશ્યં ભવિષ્યત્યેવ । તસ્માદધુના વિપાદાકરણેનાજ્ઞાનપરીપહં સહમાનઃ પુનરપિ વીર્યાચારં નિરતિચારં નિરતિશયં

આચાર કો પરિપૂર્ણ અપની શક્તિ કે પ્રયોગ સે ઉપયોગપૂર્વક તહ્લીન હોકર પાલન કિયા હૈ । ઇસીકા નામ વીર્યાચાર હૈ । મૈને ઇન પાંચો આચારોં કા સમ્યક્ રીતિ સે પાલન કિયા હૈ । છત્તીસભેદવિશિષ્ટ ઇસ આચારરૂપ ઉદ્યાન કો વીચારરૂપ નિર્મલ જલ સે મૈને નિરન્તર સિંચિત કર હરા-ભરા રખા હૈ । શુભ ભાવનાઓં સે ઇસે શોભિત કિયા હૈ । તો ખી અખીતક જ્ઞાનાવરણીયકર્મોં કે ક્ષય નહીં હોને સે મુક્તે અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હુઈ હૈ, ઇસલિયે મૈ ફિર ઇસ પ્રકાર કા યત્ન કરૂં કિ જિસસે મુક્તે ઇસ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ અવશ્ય હો જાય । ઇસ પ્રકાર સોચકર વસુમિત્ર મુનિ ને પુનઃ યહ વિચાર કિયા કિ પ્રત્યક્ષજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હોને કા મુક્તે ઇસ સમય કુછ ખી વિપાદ નહીં કરના ચાહિયે, કયોં કિ વિપાદ કરને સે અજ્ઞાન પરીપહ વિજિત નહીં હોતા હૈ, અતઃ વિપાદ કો નહીં લાકર અજ્ઞાન પરીપહ સહન કરના યહ સાધુમાર્ગ હૈ, ઇસલિયે વીર્યાચાર કી

પરિપૂર્ણ પોતાની શક્તિના પ્રયોગથી ઉપયોગપૂર્વક તહલીન બની પાલન કર્યું છે, તેનું નામ વીર્યાચાર છે. મેં આ પાંચે આચારનું સમ્યક્ રીતિથી પાલન કર્યું છે. છત્તીસ ભેદ વિશિષ્ટ આ આચારરૂપ ઉદ્યાનને વીર્યાચાર રૂપ નિર્મળ જળથી મેં નિરન્તર સિંચિત કરી હુઈલ્યું રાખ્યું છે. શુભ ભાવનાઓથી તેને શોભિત કર્યું છે. તો પણ હજી સુધી જ્ઞાનાવરણીયકર્મોના ક્ષય ન થયોથી મને અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થયેલ નથી. આ માટે હું કરી એ પ્રકારનો યત્ન કરું કે, જેનાથી મને આ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થઈ જાય. આ પ્રકારથી વિચારીને વસુમિત્ર મુનિએ કરીથી એ વિચાર કર્યો કે પ્રત્યક્ષજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ ન થવાનો મારે આ સમયે કાંઈ પણ વિપાદ ન કરવો જોઈએ. કેમકે, વિપાદ કરવાથી અજ્ઞાનપરીપહને છતાંતો નથી. આથી વિપાદ ન લાવતાં અજ્ઞાન-પરીપહ સહન કરવો એ સાધુમાર્ગ છે, આ માટે વીર્યાચારની નિરતિશય

સમ્યગારાધયામિ इत्येवं विचिन्त्य प्रशस्तध्यानेन शुभाध्यवसायेन अवधिं मनःपर्ययं च  
संप्राप्य क्षपकश्रेणिमारुह्य केवलीं जातः । एवमन्यैरपि मुनिभिरज्ञानपरीषदः सोढव्यः॥

अथाऽज्ञानाऽसद्भाव(ज्ञानसद्भाव)पक्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

उग्रविहारी चतुर्ज्ञानचतुर्दशपूर्वधारी जिनवचनानुगामी गौतमस्वामी शिष्य-  
परिवारेण सह ग्रामानुग्रामं विहरन् भास्करवदज्ञानान्धकारं विध्वंसयन् स्याद्वाद-  
सिद्धान्तं स्थापयन् क्षान्त्यादिधर्मं प्रद्योतयन् चार्वाकादिपाखण्डमतं खण्डयन्  
विचरति स्म । एवं विहरन् गौतमस्वामी चम्पानगर्यां पूर्णभद्रोद्याने समवसृतः ।

નિરતિચાર સમ્યક્ આરાધના કરતે ૨ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ મુશ્કે હો  
જાયગી । इस प्रकार विचार करके उसने प्रशस्तध्यान के हेतुभूत शुभ  
अध्यवसाय से अवधि एवं मनःपर्यय ज्ञान को प्राप्त कर लिया, तथा  
क्षपकश्रेणी पर आरोहण कर केवलिपद को भी प्राप्त कर लिया । इसी  
तरह अन्यमुनियों को भी अज्ञानपरीषद् सहन करना चाहिये ।

अज्ञान के असद्भाव (ज्ञान के सद्भाव) पक्षमें दृष्टान्त इस प्रकार है—

उग्र विहार करने वाले, मति, श्रुत, अवधि एवं मनःपर्ययज्ञान के  
धारी, चौदह पूर्व के पाठी, एवं जिनवचन के अनुसार चलने वाले  
गौतमस्वामी शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए,  
सूर्य के समान भव्यों के अज्ञानरूप अन्धकार को ध्वस्त करते हुए,  
स्याद्वादसिद्धान्त की विजयपताका फरकाते हुए, क्षान्ति आदि धर्मका  
उद्योत करते हुए एवं भौतिकवादी चार्वाक आदि मत का निराकरण  
करते हुए विहार करते २ चंपानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारे ।

સમ્યક્ આરાધના કરતાં કરતાં પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ મને થઈ જશે. આ પ્રકારનો વિ-  
ચાર કરી તેણે પ્રશસ્ત ધ્યાનના હેતુભૂત શુભ અધ્યવસાયથી અવધિ અને મનઃપર્ય-  
યજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કર્યું, તથા ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરૂઢ થઈ કેવળ પદને પણ પ્રાપ્ત કરી  
લીધું. આ પ્રકારે અન્ય મુનિઓએ પણ અજ્ઞાનપરીષદ છૂતવો જોઈએ—

જ્ઞાનના સદ્ભાવ પક્ષમાં દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે.—

ઉગ્ર વિહાર કરવાવાળા, મતિ, શ્રુત, અવધિ અને મનઃપર્યયજ્ઞાનના ધારી,  
ચૌદ પૂર્વના પાઠી, અને જીનવચન અનુસાર ચાલવાવાળા ગૌતમસ્વામી શિષ્ય  
પરિવારની સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા, સૂર્યની માફક ભવ્યોના અજ્ઞાનરૂપ  
અંધકારને દૂર કરતા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાંતની વિજયપતાકા ફરકાવતા, ક્ષાંતિ આદિ  
ધર્મનો ઉદ્યોત કરતા કરતા અને ભૌતિકવાદિ ચાર્વાક આદિ મતનું નિરા-  
કરણ કરતા કરતા, વિચરણ કરતા કરતા, ચંપાનગરીના પૂર્ણભદ્ર યુદ્યાનમાં પધાર્યા.

एकदा सोमभद्रनामा कश्चिदधर्मानुयायी, अधर्मसेवी, अधर्मिष्ठः, अधर्मख्याति-  
रधर्मानुरागी, अधर्मप्रलोकी, अधर्मजीवी, अधर्मप्रजनकः, अधर्मप्रचारकः, सकल-  
शास्त्रदर्शी तच्चाविमर्शी प्रकाण्डकुतर्ककेसरी शास्त्रार्थं कर्तुं तत्र गौतमस्वामिसंनिधौ  
समागतः । तयोः शास्त्रार्थविषये विवादः प्रवृत्तः, परस्परं खण्डनमण्डनकरणे  
प्रवृत्तयोस्तयोरेकस्य कस्यापि जयः पराजयो वा नाभूत् । गौतमस्वामी  
शास्त्रार्थविषये स्वबुद्धिप्रतिभावलेन नास्तिकमतं निराकर्तुमुद्यतः, सोऽपि नास्तिकः  
स्वबुद्धिकौशलेन गौतमस्वामिनः स्पर्धया वाग्जालं वितन्वन् परिपदि तत्प्रदर्शितयुक्ति-

एक दिन की बात है कि सोमभद्र नामका कोई एक विशिष्ट विद्वान्  
शास्त्रार्थ करने के लिये उनके पास आया । यह जैनधर्म से अतिरिक्त  
धर्म का अनुयायी था, अधर्मसेवी था, अधर्मिष्ठ था, अधर्माख्यायी था,  
अधर्मानुरागी था, अधर्मप्रलोकी था, अधर्मजीवी था, अधर्मप्ररंजक था,  
अधर्मप्रचारक था, सकलशास्त्रदर्शी होने पर भी तत्त्व-अविमर्शी था,  
इसलिये प्रकाण्डकुतर्ककेसरी था । गौतमस्वामी एवं सोमभद्र का  
परस्पर शास्त्रार्थ के विषय में विवाद प्रारम्भ हुआ । एक दूसरे के  
खंडन मंडन करने में प्रवृत्त हुए । इन दोनों में जब किसी का भी जय  
और पराजय नहीं हुआ तब गौतमस्वामी ने शास्त्रार्थ के विषय में  
अपनी प्रतिभा के बल पर नास्तिकमत का निराकरण करना प्रारंभ  
कर दिया । सोमभद्र ने भी जो नास्तिकमत का पक्षपाती था जब  
अपने मत का खंडन होते देखा तो उसने सिर्फ अपनी बुद्धि की ही  
कुशलता से गौतमस्वामी की युक्तियों का स्पर्धा के बश सभा के

એક દિવસની વાત છે કે, સોમભદ્ર નામનો કોઈ એક વિશિષ્ટ વિદ્વાન  
શાસ્ત્રાર્થ કરવા માટે તેમની પાસે આવ્યો. તે જૈનધર્મથી અતિરિક્ત ધર્મનો  
અનુયાયી હતો. અધર્મસેવી હતો, અધર્મિષ્ટ હતો, અધર્માખ્યાયી હતો, અધ-  
ર્માનુરાગી હતો, અધર્મપ્રલોકી હતો, અધર્મજીવી હતો, અધર્મ પ્રરંજક હતો,  
અધર્મ પ્રચારક હતો, સકળ શાસ્ત્ર દર્શી હોવા છતાં પણ તત્વ-અવિમર્શી હતો.  
આ માટે પ્રકાંડકુતર્કકેસરી હતો. ગૌતમસ્વામી : અને સોમભદ્રનો પરસ્પર  
શાસ્ત્રાર્થના વિષયમાં વિવાદ શરૂ થયો. એક બીજાનું ખંડન મંડન કરવામાં  
પ્રવર્તી બન્યા. આ બંનેમાંથી બ્યારે કોઈનો પણ જય અને પરાજય ન થયો  
ત્યારે ગૌતમસ્વામીએ શાસ્ત્રાર્થના વિષયમાં પોતાની પ્રતિભાના બળ ઉપર  
નાસ્તિકમતનું નિરાકરણ કરવાનું શરૂ કરી દીધું. સોમભદ્ર કે જે નાસ્તિક  
મતનો પક્ષપાતી હતો તેણે બ્યારે પોતાના મતનું ખંડન થતું જોયું તો તેણે  
ફક્ત પોતાની બુદ્ધિની કુશળતાથી સ્પર્ધાને વશ થઈ ગૌતમસ્વામીની યુક્તિઓને

સમ્યગારાધયામિ इत्येवं विचिन्त्य प्रशस्तध्यानेन शुभाध्यवसायेन अवधि मनःपर्ययं च  
संप्राप्य क्षपकश्रेणिमारुह्य केवली जातः । एवमन्यैरपि मुनिभिरज्ञानपरीपहः सोढव्यः ।

अथाऽज्ञानाऽसद्भाव(ज्ञानसद्भाव)पक्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

उग्रविहारी चतुर्ज्ञानचतुर्दशपूर्वधारी जिनवचनानुगामी गौतमस्वामी शिष्य-  
परिवारेण सह ग्रामानुग्रामं विहरन् भास्करवदज्ञानान्धकारं विध्वंसयन् स्याद्वाद-  
सिद्धान्तं स्थापयन् क्षान्त्यादिधर्मं प्रद्योतयन् चार्वाकादिपाखण्डमतं खण्डयन्  
विचरति स्म । एवं विहरन् गौतमस्वामी चम्पानगर्यां पूर्णभद्रोद्याने समवसृतः ।

નિરતિચાર સમ્યક્ આરાધના કરતે ૨ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ મુશ્કે હો  
જાયગી । इस प्रकार विचार करके उसने प्रशस्तध्यान के हेतुभूत शुभ  
अध्यवसाय से अवधि एवं मनःपर्यय ज्ञान को प्राप्त कर लिया, तथा  
क्षपकश्रेणी पर आरोहण कर केवलिपद को भी प्राप्त कर लिया । इसी  
तरह अन्यमुनियों को भी अज्ञानपरीपह सहन करना चाहिये ।

अज्ञान के असद्भाव (ज्ञान के सद्भाव) पक्षमें दृष्टान्त इस प्रकार है—

उग्र विहार करने वाले, मति, श्रुत, अवधि एवं मनःपर्ययज्ञान के  
धारी, चौदह पूर्व के पाठी, एवं जिनवचन के अनुसार चलने वाले  
गौतमस्वामी शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए,  
सूर्य के समान भव्यों के अज्ञानरूप अन्धकार को ध्वस्त करते हुए,  
स्याद्वादसिद्धान्त की विजयपताका फरकाते हुए, क्षान्ति आदि धर्मका  
उद्योत करते हुए एवं भौतिकवादी चार्वाक आदि मत का निराकरण  
करते हुए विहार करते २ चंपानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारे ।

સમ્યક્ આરાધના કરતાં કરતાં પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ મને થઈ જશે. આ પ્રકારનો વિ-  
ચાર કરી તેણે પ્રશસ્ત ધ્યાનના હેતુભૂત શુભ અધ્યવસાયથી અવધિ અને મનઃપર્ય-  
યજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કર્યું, તથા ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરૂઢ થઈ કેવળ પદને પણ પ્રાપ્ત કરી  
લીધું. આ પ્રકારે અન્ય મુનિઓએ પણ અજ્ઞાનપરીપહ છૂતવો જોઈએ—

જ્ઞાનના સદ્ભાવ પક્ષમાં દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે.—

ઉગ્ર વિહાર કરવાવાળા, મતિ, શ્રુત, અવધિ અને મનઃપર્યયજ્ઞાનના ધારી,  
ચૌદ પૂર્વના પાઠી, અને જીનવચન અનુસાર ચાલવાવાળા ગૌતમસ્વામી શિષ્ય  
પરિવારની સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા, સૂર્યની માફક ભવ્યોના અજ્ઞાનરૂપ  
અંધકારને દૂર કરતા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાંતની વિજયપતાકા ફરકાવતા, ક્ષાંતિ આદિ  
ધર્મનો ઉદ્યોત કરતા કરતા અને ભૌતિકવાદિ ચાર્વાક આદિ મતનું નિરા-  
કરણ કરતા કરતા, વિચરણ કરતા કરતા, ચંપાનગરીના પૂર્ણભદ્ર ઉદ્યાનમાં પધાર્યા.

સ્તવ હૃદયે જાતો ન વા ? । તદાઽસૌ નાસ્તિકસ્તદ્વચનં સ્વીકુર્વન્ વદતિ-ભદન્ત !  
 ભવાન્ સત્યં વદતિ મમ મનસ્યયમેવ વિચારઃ પ્રાદુરાસીત્ । ઇત્યુત્ત્વાઽસૌ ગૌતમસ્વામિનઃ  
 શિષ્યો ભૂત્વા દીક્ષિતો જાતઃ । તેન શિષ્યેણાન્યૈશ્ચ શિષ્યપરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુગ્રામં  
 વિહરન્ ગૌતમસ્વામી રાજગૃહનગરે ગુણશિષ્ઠે ચૈત્યે ભગવતઃ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિનઃ  
 સંનિધૌ સમાગતઃ । ભગવન્તં વન્દિત્વા નમસ્કૃત્ય ગૌતમસ્વામી ચતુર્જ્ઞાનગર્વમકુર્વન્  
 સવિનયં વ્રવીતિ-હે ભગવન્ ! અયં ભગવત્પ્રભાવાદેવ સન્માર્ગે સમાયાતઃ । તતો  
 ભગવતા શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના શ્રમણનિર્ગન્થાનાહૂય કથિતમ્-ભો ! મુનયઃ ! ગૌતમ-

ભદ્ર સે પૂછા કિ-કહો મહાનુભાવ ! તુમ્હારે મન મેં યહ વિચાર ઉત્પન્ન  
 હુઆ યા નહીં ? । તવ સોમભદ્ર ને ગૌતમસ્વામી કે હસ કથન કો સ્વીકાર  
 કરતે હુએ કહા-ભદન્ત ! આપને બિલકુલ હી યથાર્થ કહા હૈ, મેરે મન  
 મેં એસા હી વિચાર ઉત્પન્ન હુઆ થા । હસ પ્રકાર અપને હૃદયંગમ અભિ-  
 પ્રાય કો પ્રગટ કરતે હુએ उसने गौतमस्वामी के पास दीक्षा धारण  
 करली और उनका शिष्य हो गया । मुनि सोमभद्र एवं अन्य शिष्यों के  
 साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए गौतमस्वामी राजगृह नगर के  
 गुणशिलचैत्य में भगवान् वर्धमान स्वामी के पास आये । वंदना एवं  
 नमस्कार कर के गौतमस्वामी ने अपने में रहे हुए चतुर्ज्ञान की विशिष्टता  
 का गर्व न करके प्रभु से बड़े विनय के साथ कहा-भगवन् ! यह सोमभद्र  
 मुनि आपके ही प्रभाव से सन्मार्ग में आया है । भगवान् श्रीवर्धमान-  
 स्वामी ने श्रमणनिर्गन्थों को बुलाकर कहा कि हे मुनियों ! देखो चार

ઉત્પન્ન થયેલ કે નહીં ? ત્યારે સોમભદ્રે ગૌતમસ્વામીના આ કથનનો સ્વીકાર  
 કરીને કહ્યું, ભદન્ત ! આપે બીલકુલ યથાર્થ કહ્યું છે. મારા મનમાં આવે જ  
 વિચાર ઉત્પન્ન થયો હતો. આ પ્રકારે પોતાના હૃદયમાંના અભિપ્રાયને પ્રગટ  
 કરીને તેણે ગૌતમસ્વામીની પાસે દીક્ષા ગ્રહણ કરી લીધી. અને તેમના શિષ્ય  
 બની ગયા. મુનિ સોમભદ્ર અને બીજા શિષ્યો સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા  
 કરતા ગૌતમસ્વામી રાજગૃહ નગરના ગુણશિલચૈત્યમાં ભગવાન વર્ધમાન  
 સ્વામીની પાસે આવ્યા. વંદના અને નમસ્કાર કરી ગૌતમસ્વામીએ પોતાનામાં  
 ચારજ્ઞાન વિશિષ્ટતાનો ગર્વ ન કરતાં પ્રભુને ઘણા વિનય સાથે કહ્યું, ભગવન્ !  
 આ સોમભદ્રમુનિ આપના જ પ્રભાવથી સન્માર્ગમાં આવ્યા છે. ભગવાનશ્રી  
 વર્ધમાન સ્વામીએ શ્રમણનિર્ગન્થોને બોલાવીને કહ્યું કે, હે મુનિઓ ! જુઓ

खण्डनात् प्रतिनिवृत्तो नाभूत् , परंतु अन्तवस्तदुक्तयुक्तिप्रतिपुक्तिस्वरूपं खण्डयितुम-  
समर्थः सन् मनसि विचारयति—“ सत्यम् अयमस्ति गौतमस्वामी महान् विद्या-  
निधिः, यदीदृशं मम मनोगतं भावं गौतमस्वामी कथयिष्यति तदाऽहमस्य शिष्यो  
भविष्यामि ” इति ।

गौतमस्वामी मनःपर्ययज्ञानधारकतया तदानीमेव परिपदि वदति—“ अस्य  
तर्ककेसरिणो मनसि संप्रति अयं विचारः समायातः—“सत्यमयं गौतमस्वामी महान्  
विद्यानिधिः परंत्वेवं मम मनोगतं विचारं गौतमस्वामी यदि कथयेत् तर्हि तस्य  
शिष्यो भविष्यामी”ति । इत्युक्त्वा पुनस्तं नास्तिकं पृच्छति—कथय किमयं विचार-

बीच खंडन करना प्रारंभ कर दिया, परन्तु गौतमस्वामी ने जब उसकी  
युक्तियों का पूरे तोर से खंडन किया तो वह उसको संभालने में समर्थ  
नहीं हो सका । गौतमस्वामी के अगाध ज्ञान को देखकर उस समय  
उसके मन में यही विचार आया कि वास्तव में ये गौतमस्वामी विशिष्ट  
विद्यानिधान हैं, परन्तु यदि ये मेरे इस मनोगत भाव को बतला दें  
तो मैं इनका शिष्य हो जाऊँगा ?

गौतमस्वामी मनःपर्ययज्ञान के धारी थे, अतः उसी समय वे  
इसके मानसिक विचार को स्पष्टरूप से जान गये । उन्होंने ने उसी  
समय सभा के बीच में कहा कि इस तर्ककेसरी सोमभद्र के मन में  
इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ है कि “ये गौतमस्वामी महान्  
विद्या के निधान हैं यदि ये मेरे इस अभिप्राय को बतला दें तो मैं  
इनका शिष्य हो जाऊँगा” । गौतमस्वामी ने ऐसा कह कर उस सोम-

સભાની વચમાં ખંડન કરવાનો પ્રારંભ કરી દીધો. પરંતુ ગૌતમસ્વામીએ જ્યારે  
તેની યુક્તિઓનું પુરી રીતે ખંડન કર્યું ત્યારે તે પોતાની જાતને સંભાળવામાં  
સમર્થ ન બન્યો. ગૌતમસ્વામીના અગાધ જ્ઞાનને જોઈ એ સમય એના મનમાં એ  
વિચાર આવ્યો કે, વાસ્તવમાં આ ગૌતમસ્વામી વિશિષ્ટવિદ્યાનિધાન છે. પરંતુ  
જો તેઓ મારા આ મનોભાવને બતાવી આપે તો હું એમનો શિષ્ય બની જાઉં.

ગૌતમસ્વામી મનઃપર્યયજ્ઞાનના ધારી હતા. આથી એજ વખતે તેમણે  
એના માનસિક વિચારને સ્પષ્ટ રૂપથી જાણી લીધા. અને એજ વખતે સભાની  
વચમાં કહ્યું કે, આ તર્કકેસરી સોમભદ્રના મનમાં એ પ્રકારનો વિચાર ઉત્પન્ન  
થયો છે કે, “આ ગૌતમસ્વામી મહાન વિદ્યાનિધાન છે તેઓ જો મારા આ  
અભિપ્રાયને બતાવી આપે તો હું તેમનો શિષ્ય બની જાઉં.” ગૌતમસ્વામીએ  
એણે કહીને સોમભદ્રને કહ્યું કે, કહો મહાનુભાવ ! તમારા મનમાં આ વિચાર



ટીકા—‘ નત્થિ નૂણં ’ ઇત્યાદિ ।

પરો લોકઃ=પરભવઃ-જન્માન્તરમ્, નૂનં=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન ભવતિ । અયં ભાવઃ-શરીરં હિ ભૂતાત્મકં, તદિદૈવ નશ્યતિ, શરીરે વર્તમાનસ્ય ચૈતન્યસ્યાપિ ભૂત-ધર્મત્વાદેવ શરીરેણ સહ નાશસંભવાત્ । શરીરવ્યતિરેકેણ આત્મનઃ પ્રત્યક્ષતોડનુપ-લભ્યમાનત્વાચ્ચ જન્માન્તરં ન ભવતીતિ નિશ્ચેતવ્યમિતિ । યદ્વા-નૂનમિતિ સંભાવ-નાયામ્ પરલોકઃ સ્વર્ગાદિર્નાસ્તીતિ સંભાવયામિ, યતઃ પરલોકે ગતઃ કોડપિ નાત્રા-ગત્ય વદતિ, તસ્માત્ પ્રત્યક્ષાભાવાન્નાસ્તિ પરલોક ઇતિ । વા=અથવા, અપિ=ઈહાપિ-

અવ સૂત્રકાર વાઈસવાં દર્શનપરીપહજય કો વતલાતે હૈં—

‘ નત્થિ નૂણં ’—ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પરે લોએ નૂણં નત્થિ-પરઃ લોકઃ નૂનં નાસ્તિ) નિશ્ચય સે જન્માન્તર નહીં હૈ-યહ શરીર ભૂતાત્મક હૈ, હસલિયે યહ તો યહાં હી વિનિષ્ટ હો જાતા હૈ । હસ શરીર મેં જો ચૈતન્ય વર્તમાન હૈ વહ ભી ભૂતોં કા ધર્મ હોને સે શરીર કે સાથ હી નાશ કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ । દૂસરે-શરીર સે ભિન્ન આત્મા-નામક કોઈ પદાર્થ હૈ, યહ કિસી ભી પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ સે સાવિત નહીં હોતા હૈ અતઃ પરલોકી (પરલોક જાને વાલા આત્મા) કા અભાવ હોને સે પરલોક કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અર્થાત્ જન્માન્તર નહીં હૈ । અથવા “ નૂનં ” યહ પદ સંભાવના મેં ભી પ્રયુક્ત કિયા જાતા હૈ હસ અપેક્ષા પરલોક-સ્વર્ગાદિક જો માને જાતે હૈં સો વે ભી નહીં હૈં, એસી સંભાવના હોતી હૈ, ક્યોં કિ કોઈ એસા તો હૈ નહીં જો પરલોક મેં જાકર પશ્ચાત્ યહાં આકર યહ કહે કિ મેં અમુક

હવે સૂત્રકાર બાવીસમા દર્શનપરીપહજને જીતવાનું બતાવે છે—

‘ નત્થિ નૂણં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પરે લોએ નૂણં નત્થિ-પરલોકઃ નૂનં નાસ્તિ નિશ્ચયથી જન્માન્તર નથી. આ શરીર ભૂતાત્મક છે, આ માટે તે તો અહિં જ વિનિષ્ટ થઈ જાય છે. આ શરીરમાં જે ચૈતન્ય વર્તમાન છે તે પણ ભૂતોનો ધર્મ હોવાથી શરીરની સાથેસાથ નાશ પામે છે, બીજું શરીરથી ભિન્ન આત્મા નામનો કોઈ પદાર્થ છે, એ કોઈ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી જાળખી શકાતો નથી. આથી પરલોકીનો (પરલોક જવાવાળો આત્મા) અભાવ હોવાથી પરલોકનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. અર્થાત્ જન્માન્તર નથી. અથવા ‘ નૂનં ’ આ પદ સંભાવનામાં પણ પ્રયુક્ત કરાય છે. આ અપેક્ષા પરલોક, સ્વર્ગાદિક જે માનવામાં આવે છે તે પણ નથી એવી સંભાવના થાય છે. કેમકે, કોઈ એવો તો છે જ નહીં જે પરલોકમાં

શ્વતુર્જનિચતુર્દશપૂર્વધારકઃ સ્વજ્ઞાનપ્રભાવાદનેકયુક્તિપતિયુક્તીઃ પ્રદર્શ્ય, મત્તગજેન્દ્રમિવ સોમભદ્રં વશીકૃત્ય દીક્ષિતં કૃત્વાઽઽનીતવાન્ । અયં ગૌતમસ્ય પ્રયત્ને નૈવ મોક્ષમાર્ગમાશ્રિતઃ, તથાપિ ગૌતમો વિનયાતિશયં કુર્વન્ જ્ઞાનગર્વં ન બહતિ, ન ચ કેવલજ્ઞાનાપ્રાપ્તૌ વિપાદં કરોતિ । યથા ગૌતમેનાઽવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનપરીપહં તન્મદાકરણેન કેવલજ્ઞાનાપ્રાપ્તિવિષયકવિપાદાકરણેન ચ પરિપક્વ તદુપરિ વિજયઃ પ્રાપ્તસ્તથાઽન્યૈરપિ મુનિભિરજ્ઞાનાભાવપરીપહઃ સોઢ્યઃ ॥ ૪૩ ॥

અથ દ્વાવિંશતિતમં દર્શનપરીપહજયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—નૅત્થિ નૂણં પેરે લોપે ઈડ્ઢી વા વિં તવસ્સિંણો ।

અદુઘા 'વંચિંઓ મિ-ત્તિ', ઈંઈ મિર્ઘૂ નં ચિંતે ॥૪૪॥

છાયા—નાસ્તિ નૂનં પરો લોકઃ કદ્ધિર્વાઽપિ તપસ્વિનઃ ।

અથવા વશ્ચિતોઽસ્મીતિ ઇતિ મિશુર્ન ચિન્તયેત્ ॥ ૪૪ ॥

જ્ઞાનકે ધારી એવં ચતુર્દશપૂર્વ કે પાઠી ગૌતમ ને અપને પ્રભાવ સે હી મત્તગજરાજ કી તરહ હસ સોમભદ્ર કો અનેક યુક્તિ પ્રયુક્તિયોં દ્વારા વશ મેં કર કે દીક્ષિત કિયા હૈ, ઓર યહાં યે હસ કો લે આયે હૈ, ગૌતમ કા હી યહ પ્રયત્ન હૈ જો યહ મોક્ષમાર્ગ મેં આ ગયા હૈ, ફિર ખી ગૌતમ કો અપને વિનયાતિશય સે હસ વાત કા જરા ખી ગર્વ નહીં હૈ । તથા કેવલજ્ઞાન કી અપ્રાપ્તિ કે વિષય મેં વિપાદ ખી નહીં હૈ । જિસ તરહ ગૌતમ ને અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન કે પરીપહ કો ડનકા મદ નહીં કરને સે તથા કેવલજ્ઞાન કી અપ્રાપ્તિ મેં વિપાદ નહીં કરને સે જીતા હૈ ડસી તરહ તુમ સવ મુનિયોં કો ખી અજ્ઞાનાભાવ અર્થાત્ જ્ઞાન કા સદ્ભાવ પરીપહ જીતના ચાહિયે ॥ ૪૩ ॥

આર જ્ઞાનના ધારી અને ચૌદપૂર્વના પાઠી ગૌતમે મત્તગજરાજની માફક સ્વૈરવિહારી અને યુક્તિ પ્રયુક્તિઓના સ્વામી એવા આમને પોતાના જ્ઞાનવડે વશ કરીને દીક્ષિત કરેલ છે. અને તેને અહીં લઈ આવેલ છે. ગૌતમને જ આ પ્રયત્ન છે કે જે આ મોક્ષમાર્ગમાં આવેલ છે. છતાં પણ ગૌતમને પોતાના વિનય અતિશયથી આ વાતને જરા પણ ગર્વ નથી તથા કેવલજ્ઞાનની અપ્રાપ્તિના વિષયમાં વિપાદ પણ નથી. જેવી રીતે ગૌતમે અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનના પરીપહને મદ નહીં કરવાથી તથા કેવલજ્ઞાનની અપ્રાપ્તિમાં વિપાદ નહીં કરવાથી જીતેલ છે. આ રીતે તમે સઘળા મુનિઓએ પણ અજ્ઞાન અભાવ અર્થાત્ જ્ઞાનને સદ્ભાવ જીતવો જોઈએ. ॥ ૪૩ ॥

ટીકા—‘ નત્યિ નૂણં ’ ઇત્યાદિ ।

પરો લોકઃ=પરભવઃ-જન્માન્તરમ્, નૂનં=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન ભવતિ । અયં ભવઃ-શરીરં હિ ભૂતાત્મકં, તદિદૈવ નશ્યતિ, શરીરે વર્તમાનસ્ય ચૈતન્યસ્યાપિ ભૂત-ધર્મત્વાદેવ શરીરેણ સહ નાશસંભવાત્ । શરીરવ્યતિરેકેણ આત્મનઃ પ્રત્યક્ષતોડનુપ-લમ્બમાનત્વાચ્ચ જન્માન્તરં ન ભવતીતિ નિશ્ચેતન્યમિતિ । યદ્વા-નૂનમિતિ સંભાવ-નાયામ્ પરલોકઃ સ્વર્ગાદિનાસ્તીતિ સંભાવયામિ, યતઃ પરલોકે ગતઃ કોડપિ નાત્રા-ગત્ય વદતિ, તસ્માત્ પ્રત્યક્ષાભાવાનાસ્તિ પરલોક ઇતિ । વા=અથવા, અપિ=શ્વાપિ-

અવ સૂત્રકાર ચાઈસવાં દર્શનપરીપહજય કો વતલાતે હૈં—

‘ નત્યિ નૂણં ’—ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પરે લોકે નૂણં નત્યિ-પરઃ લોકઃ નૂનં નાસ્તિ) નિશ્ચય સે જન્માન્તર નહીં હૈ-યહ શરીર ભૂતાત્મક હૈ, હસલિયે યહ તો યહાં હી વિનિષ્ટ હો જાતા હૈ । હસ શરીર મેં જો ચૈતન્ય વર્તમાન હૈ વહ ભી ભૂતોં કા ધર્મ હોને સે શરીર કે સાથ હી નાશ કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ । દૂસરે-શરીર સે ભિન્ન આત્મા-નામક કોઈ પદાર્થ હૈ, યહ કિસી ભી પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ સે સાવિત નહીં હોતા હૈ અતઃ પરલોકી (પરલોક જાને વાલા આત્મા) કા અભાવ હોને સે પરલોક કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અર્થાત્ જન્માન્તર નહીં હૈ । અથવા “ નૂનં ” યહ પદ સંભાવના મેં ભી પ્રયુક્ત કિયા જાતા હૈ હસ અપેક્ષા પરલોક-સ્વર્ગાદિક જો માને જાતે હૈં સો વે ભી નહીં હૈં, એસી સંભાવના હોતી હૈ, ક્યોં કિ કોઈ એસા તો હૈ નહીં જો પરલોક મેં જાકર પશ્ચાત્ યહાં આકર યહ કહે કિ મેં અમુક

હવે સૂત્રકાર બાવીસમા દર્શનપરીપહજને જીતવાનું બતાવે છે—

‘ નત્યિ નૂણં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પરે લોકે નૂણં નત્યિ-પરલોકઃ નૂનં નાસ્તિ નિશ્ચયથી જન્માન્તર નથી. આ શરીર ભૂતાત્મક છે, આ માટે તે તો અહિં જ વિનિષ્ટ થઈ જાય છે. આ શરીરમાં જે ચૈતન્ય વર્તમાન છે તે પણ ભૂતોનો ધર્મ હોવાથી શરીરની સાથેસાથ નાશ પામે છે, બીજું શરીરથી ભિન્ન આત્મા નામનો કોઈ પદાર્થ છે, એ કોઈ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી ઓળખી શકાતો નથી. આથી પરલોકીનો (પરલોક જવાવાળો આત્મા) અભાવ હોવાથી પરલોકનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. અર્થાત્ જન્માન્તર નથી. અથવા ‘ નૂનં ’ આ પદ સંભાવનામાં પણ પ્રયુક્ત કરાય છે. આ અપેક્ષા પરલોક, સ્વર્ગાદિક જે માનવામાં આવે છે તે પણ નથી એવી સંભાવના થાય છે. કેમકે, કોઈ એવો તો છે જ નહીં જે પરલોકમાં

શબ્દો મિત્રક્રમઃ અતોઽયમર્થઃ-તપસ્વિનોઽપિ મમ ઋદ્ધિઃ=આમશૌંષધ્યાદિલઙ્ઘિ-  
રૂપા નાસ્તિ=ન વિદ્યતે, તસ્યા અપ્યનુપલભ્યમાનત્વાત્ ।

પ્રસન્નાદિહ લઙ્ઘિભેદા ઉચ્યન્તે—

૧ આમશૌંષધિઃ, ૨ વિપ્રુહોપધિઃ, ૩ खेलौपधिः, ૪ जल्लौपधिः, ૫ सर्वौषधिः,  
૬ સંમિત્રશ્રોતોલઙ્ઘિઃ, ૭ અવધિલઙ્ઘિઃ, ૮ ઋજુમતિલઙ્ઘિઃ, ૯ વિપુલમતિલઙ્ઘિઃ,  
૧૦ ચારણલઙ્ઘિઃ, ૧૧ આશીર્વિપલઙ્ઘિઃ, ૧૨ કેવલિલઙ્ઘિઃ, ૧૩ ગણધરલઙ્ઘિઃ,  
૧૪ પૂર્વધરલઙ્ઘિઃ, ૧૫ અર્હલ્લઙ્ઘિઃ, ૧૬ ચક્રવર્તિલઙ્ઘિઃ, ૧૭ વલદેવલઙ્ઘિઃ,  
૧૮ વાસુદેવલઙ્ઘિઃ, ૧૯/૧ ક્ષીરાસ્રવલઙ્ઘિઃ, ૧૯/૨ મધ્વાસ્રવલઙ્ઘિઃ,  
૧૯/૩ સર્પિરાસ્રવલઙ્ઘિઃ, ૨૦ કોષ્ઠ્યુદ્ધિલઙ્ઘિઃ, ૨૧ પદાનુસારિલઙ્ઘિઃ, ૨૨

સ્વર્ગ સે આયા હું, હસલિયે પ્રત્યક્ષ સે ઉનકી ઉપલઙ્ઘિ કા અભાવ હોને  
સે પરલોક નહીં હૈ । ( વા ) અથવા ( તવસ્વિણો ઇહ્લો અવિ-તપસ્વિનઃ  
ઋદ્ધિઃ અપિ ) તપસ્વી જન કો ઋદ્ધિકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ યહ્ મી વાત  
ઠીક નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઋદ્ધિયોં અર્થાત્ લઙ્ઘિયોં કી સિદ્ધિ મી પ્રત્યક્ષપ્ર-  
માણ સે હોતી નહીં હૈ । લઙ્ઘિયાં ૨૮ પ્રકાર કી હૈં વે ચે હૈં—

આમશૌંષધિ ૧, વિપ્રુહોપધિ ૨, खेलौपधि ૩, जल्लौपधि ૪, सर्वौषधि ૫,  
સંમિત્રશ્રોતોલઙ્ઘિ ૬, અવધિલઙ્ઘિ ૭, ઋજુમતિલઙ્ઘિ ૮, વિપુ-  
લમતિલઙ્ઘિ ૯, ચારણલઙ્ઘિ ૧૦, આશીર્વિપલઙ્ઘિ ૧૧, કેવલિલઙ્ઘિ ૧૨,  
ગણધરલઙ્ઘિ ૧૩, પૂર્વધરલઙ્ઘિ ૧૪, અર્હલ્લઙ્ઘિ ૧૫, ચક્રવર્તિલઙ્ઘિ ૧૬,  
વલદેવલઙ્ઘિ ૧૭, ક્ષીરાસ્રવલઙ્ઘિ ૧૯/૧, મધ્વાસ્રવલઙ્ઘિ ૧૯/૨, સર્પિ-  
રાસ્રવલઙ્ઘિ ૧૯/૩, કોષ્ઠ્યુદ્ધિલઙ્ઘિ ૨૦, પદાનુસારિલઙ્ઘિ ૨૧, बीजबु-

જઘ પાછો ઋદ્ધિ આવી તે એમ કહે કે હું અમુક સ્વર્ગમાં જઈને આવ્યો  
હું. આ માટે પ્રત્યક્ષથી તેની ઉપલબ્ધીનો અભાવ હોવાથી પરલોક નથી. અથવા  
તવસ્વિણો ઇહ્લો અવિ તપસ્વીઓને ઋદ્ધિયોની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે એ વાત પણ  
ઠીક નથી. કેમકે, ઋદ્ધિયોની સિદ્ધિ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી થતી નથી. ઋદ્ધિયો  
૨૮ પ્રકારની છે. તે આ પ્રમાણે છે.

(૧) આમશૌંષધિ, (૨) વિપ્રુહોપધિ, (૩) खेलौपधि, (૪) जल्लौपधि,  
(૫) सर्वौषधि, (૬) સંમિત્રશ્રોતોલઙ્ઘિ, (૭) અવધિલઙ્ઘિ, (૮) ઋજુમતિ  
લઙ્ઘિ, (૯) વિપુલમતિલઙ્ઘિ, (૧૦) ચારણલઙ્ઘિ, (૧૧) આશીર્વિપલઙ્ઘિ,  
(૧૨) કેવલિલઙ્ઘિ, (૧૩) ગણધરલઙ્ઘિ, (૧૪) પૂર્વધરલઙ્ઘિ, (૧૫) અર્હલ્લઙ્ઘિ,  
(૧૬) ચક્રવર્તિલઙ્ઘિ, (૧૭) વલદેવલઙ્ઘિ, (૧૮) વાસુદેવલઙ્ઘિ, (૧૯) ક્ષીરાસ્રવ-  
લઙ્ઘિ, મધ્વાસ્રવલઙ્ઘિ, સર્પિરાસ્રવલઙ્ઘિ, (૨૦) કોષ્ઠ્યુદ્ધિલઙ્ઘિ ૧) પદાનુ-

બીજવુદ્ધિલઘ્વિઃ, ૨૩ તેજોલેશ્યાલઘ્વિઃ, ૨૪ આહારકલઘ્વિઃ, ૨૫ શીતલેશ્યાલઘ્વિઃ, ૨૬ વૈક્રિયલઘ્વિઃ, ૨૭ અક્ષીણમહાનસિકલઘ્વિઃ, ૨૮ પુલાકલઘ્વિઃ ।

ભવ્યત્વાભવ્યત્વવિશિષ્ટાનાં પુરુષાણાં ચ યાવત્યો લઘ્વયો ભવન્તિ, તા એવમ્-ભવ્યપુરુષાણામેતાઃ પૂર્વોક્તા સર્વા અપિ લઘ્વયો ભવન્તિ । અર્હચક્રવર્તિવાસુ-દેવવલદેવસંભિન્નશ્રોતશ્વારણપૂર્વધરગણધરપુલાકાઽઽહારકલઘ્વિલક્ષણા એતાદશ લઘ્વયો ભવ્યસ્ત્રીણાં નૈવ ભવન્તિ । શેષાસ્ત્વષ્ટાદશલઘ્વયો ભવ્યસ્ત્રીણાં ભવન્તિ ।

યચ મલ્હિસ્વામિનઃ સ્ત્રીત્વેઽપિ તીર્થંકરત્વમભૂત્તદાશ્ચર્યભૂતત્વાન્ન ગણ્યતે । તથા-અનન્તરોક્તાઅર્હદાઘા આહારકપર્યન્તા દશ લઘ્વયઃ, કેવલિ-ઋજુમતિ-વિપુલમતિ

દ્વિલઘ્વિ ૨૨, તેજોલેશ્યાલઘ્વિ ૨૩, આહારકલઘ્વિ ૨૪, શીતલેશ્યાલઘ્વિ ૨૫, વૈક્રિયલઘ્વિ ૨૬, અક્ષીણમહાનસીકલઘ્વિ ૨૭, પુલાકલઘ્વિ ૨૮ ।

અવ ભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ એવં અભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ પુરુષ કો જિતની જિતની લઘ્વિયાં હોતી હૈં વે કહતે હૈં—

ભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ પુરુષોં કે યે સમી લઘ્વિયાં હોતી હૈં । ભવ્ય સ્ત્રિયોં કે અર્હલ્લઘ્વિ ૧, ચક્રવર્તિલઘ્વિ ૨, :વાસુદેવલઘ્વિ ૩, વલદેવલઘ્વિ ૪, સંભિન્નશ્રોતોલઘ્વિ ૫, ચારણલઘ્વિ ૬, પૂર્વધરલઘ્વિ ૭, ગણધરલઘ્વિ ૮, પુલાકલઘ્વિ ૯, એવં આહારકલઘ્વિ ૧૦, યે દસ લઘ્વિયાં નહીં હોતી હૈં । વાકી અવશિષ્ટ અઠારહ લઘ્વિયાં ભવ્ય સ્ત્રિયોં કે મી હોતી હૈં । જો મલ્હિસ્વામી કે સ્ત્રીપના હોને પર મી તીર્થંકરત્વ વહાં હુઆ વહ અચ્છેરા-આશ્ચર્ય હોને કી વજહ સે ગિના નહીં જાતા હૈ । યે ૧૩ તેરહ લઘ્વિયાં અભવ્યપુરુષોં કે નહીં હોતી હૈં-કેવલિલઘ્વિ, ઋજુ-

સારિલઘ્વિ, (૨૨) બીજવુદ્ધિલઘ્વિ, (૨૩) તેજોલેશ્યાલઘ્વિ, (૨૪) આહારકલઘ્વિ, (૨૫) શીતલેશ્યાલઘ્વિ, (૨૬) વૈક્રિયલઘ્વિ, (૨૭) અક્ષીણમહાનસિકલઘ્વિ, (૨૮) પુલાકલઘ્વિ.

હવે ભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ અને અભવ્યત્વભાવ વિશિષ્ટ પુરુષોને જેટલી જેટલી લઘ્વિઓ થાય છે તે બતાવે છે.

ભવ્યત્વભાવ વિશિષ્ટ પુરુષોને આ બધી લઘ્વિઓ થાય છે. ભવ્ય સ્ત્રિઓને ૧ અર્હલ્લઘ્વિ, ૨ ચક્રવર્તિલઘ્વિ, ૩ વાસુદેવલઘ્વિ, ૪ બલદેવલઘ્વિ, ૫ સંભિન્નશ્રોતોલઘ્વિ, ૬ ચારણલઘ્વિ, ૭ પૂર્વધરલઘ્વિ, ૮ ગણધરલઘ્વિ, ૯ પુલાકલઘ્વિ, અને ૧૦ આહારકલઘ્વિ. આ દશ લઘ્વિઓ થતી નથી. બાકીની અઠાર લઘ્વિઓ ભવ્ય સ્ત્રીઓને પણ થાય છે. જેમ મલ્હિ સ્વામીને સ્ત્રીપણું હોવા છતાં પણ તીર્થંકરત્વ તેમને થયું. તે અચ્છેરા-આશ્ચર્ય થવાની ગણત્રીમાં ગણવામાં આવતું નથી. આ તેર લઘ્વિઓ અભવ્ય પુરુષોને થતી નથી.

—લઘ્વયથૈતાસ્યોદશ લઘ્વયઃ પુરુષાણામપ્યભવ્યાનાં નૈવ ભવન્તિ, શેષાઃ પચ્ચદશ લઘ્વયસ્તુ ભવન્તિ । અભવ્યસ્ત્રીણામપ્યેતાસ્યોદશ લઘ્વયો ન ભવન્તિ, મધુસ્રીરાસ્રવલ્લઘ્વિરપિચતુર્દશી તાસાં નૈવ ભવતિ । શેષાથતુર્દશલઘ્વયસ્તુ તાસામપિ ભવન્તિ ।

અથાસાં વ્યાખ્યા પ્રદર્શ્યતે—આમર્શોપધિઃ—આમર્શો હિ હસ્તાદિના સ્પર્શઃ, સ એવ ઓપધિઃ, કરાદિસંસ્પર્શમાત્રાદેવ વ્યાધ્યપનયનસામર્થ્યમ્ ॥ ૧ ॥

વિપુલોપધિઃ—યન્માહાત્મ્યાન્મૂત્રપુરીપાવયવમાત્રમપિ રોગરાશિમ્નાશાય સંપદ્યતે સુરમિ ચ સા ॥ ૨ ॥

મતિલઘ્વિ, વિપુલમતિલઘ્વિ ત્રીણે તથા ભવ્ય સ્ત્રીયોં કે જિન દશ ૧૦ ઋદ્ધિયોં કા અભાવ વતલાયા ગયા હૈ વે । ઇસ પ્રકાર ૧૩ તેરહ લઘ્વિયોં કા અભવ્યપુરુષોં કે અભાવ રહતા હૈ । વાકી ૧૫ લઘ્વિયાં હોતી હૈ । ઇસી તરહ અભવ્યસ્ત્રીયોં કે ભી યે હી ૧૩ તેરહ લઘ્વિયાં નહીં હોતી હૈ । તથા ક્ષીરાસ્રવ એવં મધ્વાસ્રવ નામકી ભી લઘ્વિ ઉનકે નહીં હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર તેરહ ૧૩ પૂર્વોક્ત ઓર ૧૪ ચૌદહવીં ક્ષીરાસ્રવ, મધ્વાસ્રવ સર્પિરાસ્રવરૂપ કા ઉનકેઅભાવ જાનના ચાહિયે । વાકી ૧૪ ચૌદહ લઘ્વિયાં અભવ્ય-સ્ત્રીયોં કે હોતી હૈ ।

ઇન લઘ્વિયોં કી વ્યાખ્યા કી જાતી હૈ—હસ્ત આદિ દ્વારા સ્પર્શ હોને કા નામ આમર્શ હૈ । યહ સ્પર્શ હી જિનકા ઓપધિ કા કામ કરતા હૈ વહ આમર્શોપધિ હૈ । ઇસ લઘ્વિ કે ધારી કો જો રોગી અપને હસ્તાદિક સે છૂ લેતા હૈ ઉસકા વહ રોગ છૂતે હી નષ્ટ હો જાતા હૈ ૧, જિસ કે પ્રભાવ સે મૂત્ર, પુરીપ, આદિ ભી રોગરાશિકે વિનાશ કરને મેં ઓષ-

કેવલીલઘ્વિ, ઋજુમતિલઘ્વિ, વિપુલમતિલઘ્વિ, ત્રણ આ તથા લઘ્વ સ્ત્રીઓને જે દશઋદ્ધિઓને અભાવ બતાવેલ છે તે આ પ્રકારની તેર લઘ્વિઓને અભવ્ય પુરુષોને અભાવ રહે છે. બાકી પંદર લઘ્વિઓ થાય છે. આ રીતે અભવ્ય સ્ત્રીઓને પણ આ તેર લઘ્વિઓ થતી નથી. તથા ક્ષીરાસ્રવ અને મધ્વાસ્રવ સર્પિરાસ્રવ નામની પણ તેને થતી નથી. આ રીતે તેર પૂર્વોક્ત અને ચૌદમી ક્ષીરાસ્રવ મધ્વાસ્રવ લઘ્વિઓ તેને અભાવ બતાવેલો જોઈએ. બાકી ચૌદ લઘ્વિઓ અભવ્ય સ્ત્રીઓને થાય છે.

આ લઘ્વિઓની વ્યાખ્યા કહેવામાં આવે છે,—હાથ આદિ દ્વારા થવાનું નામ આમર્શ છે. આ સ્પર્શ જે જેને ઓપધિનું કામ કરે છે તે આમર્શ ઓપધિ છે. આ લઘ્વિના ધારીને જે રોગી પોતાના હાથથી અડે છે એનો એ રોગ અડતાં જ નાશ પામે છે. (૧) જેના પ્રભાવથી મૂત્ર, પુરીપ, આદિ રોગ વિનાશ કરવામાં ઓપધિનું કામ કરવા લાગે છે તથા તેમ આવવા



खेलौपधिः—यत् प्रभावात् श्लेष्मा सर्वरोगापहारकः सुरभिश्च भवति सा ॥३॥

जल्लौपधिः—जल्लो=मलः कर्णवदननासिकानयनजिह्वासमुद्भवः शरीरसमुद्भवश्च,  
स एव ओषधिर्भवति यत्प्रभावात् सा ॥ ४ ॥

सर्वौषधिः—यत्प्रभावात् सर्वे विण्मूत्रकेशनखादय ओषधयो भवन्ति सा ॥५॥

संभिन्नશ્રોતોલઘ્વિઃ—યત્પ્રભાવાત્ સર્વેરપિ શરીરાવયવંઃ સુસ્પષ્ટ શૃણોતિ  
સા । યદ્વા—‘ સંભિન્નસ્રોતસ્ ’ ઇતિચ્છાયા । અત્ર સ્રોતસ્ શબ્દ ઇન્દ્રિયવાચકઃ, તેન  
યત્પ્રભાવાત્—એકેકમિન્દ્રિયં સર્વેયમિન્દ્રિયાણાં કાર્યં સંપાદયતિ સા । યથા—કર્ણ-  
નૈવ શ્રવણદર્શનઘ્રાણરસનસ્પર્શનકાર્યાણિ લઘ્વિપ્રભાવાત્ સંપાદયતિ ॥ ૬ ॥

अवधिलघ्विः—अवधिज्ञानमेव लघ्विः—अवधिलघ्विः । अरूपिद्रव्यं विहाय

ધિકા કામ કરને લગ જાતે હૈં, તથા ઉનમૈં સુગંધ આને લગતી હૈ, ઇસ  
કા નામ વિપ્રુહોપધિ હૈ ૨ । જિસકે પ્રભાવ સે શ્લેષ્મા સર્વરોગ કા અપ-  
હારક હો જાતા હૈ ઉસ કા નામ खेलौपधि હૈ । ઇસકે પ્રભાવ સે શ્લેષ્મ  
મી સુગંધવાલા હો જાતા હૈ ૩ । જિસકે પ્રભાવસે કાન, મુખ, નાસિકા,  
નયન, એવં જિહ્વા કા મૈલ, તથા શરીરકા મૈલ ઔપધિ જૈસા પરિણમિત  
હોતા હૈ ઉસકા નામ जल्लौपधि હૈ ૪ । જિસકે પ્રભાવસે વિષ્ટા, મૂત્ર, કેશ,  
તથા નખ આદિક ઔપધિ જૈસે હો જાતે હૈં ઉસકા નામ सर्वौषधि હૈ ૫ ।  
જિસકે પ્રભાવસે સમસ્ત શારીરિક અવયવો દ્વારા સુના જાય, અથવા એક હી  
ઇન્દ્રિય જિસકે પ્રભાવ સે અન્ય ઇન્દ્રિયોં કા કામ કરને લગ જાય ઉસ કા  
નામ સંભિન્નશ્રોતોલઘ્વિ હૈ । જિસકે યહ લઘ્વિ હોતી હૈ વહ એક કર્ણ  
ઇન્દ્રિય સે હી અવશિષ્ટ ઇન્દ્રિયોં કે કામ—દર્શનાદિક કરને કી શક્તિ-  
વાલા હો જાતા હૈ ૬ । જિસકે પ્રભાવ સે અમૂર્તિક દ્રવ્ય કો છોડ કર  
મૂર્તિક દ્રવ્યકો જાનને કી સામર્થ્ય આત્મામૈં પ્રકટ હો જાતી હૈ ઉસકા નામ

લાગે છે. તેનું નામ વિપ્રુહ ઔપધિ છે. (૨) જેના પ્રભાવથી શ્લેષ્મા સર્વ  
રોગોનો નાશ કરનાર છે તેનું નામ खेलौपधि છે, તેના પ્રભાવથી શ્લેષ્મ પણ  
સુગંધવાળા થઈ જાય છે. (૩) જેના પ્રભાવથી કાન, મોઢું, નાક, નેત્ર અને  
જીભનો મૈલ તથા શરીરનો મૈલ, ઔપધિની જેમ પરિણમિત બને છે તેનું  
નામ जल्लौपधि છે. (૪) જેના પ્રભાવથી વિષ્ટા, મૂત્ર, વાળ, નખ, આદિ  
ઔપધિ જેવા થઈ જાય છે તેનું નામ सर्वौषधि છે. (૫) જેના પ્રભાવથી શરી-  
રનાં તમામ અવયવો દ્વારા સંભળાય અથવા એક જ ઇન્દ્રિય જેના પ્રભાવથી  
બીજા ઇન્દ્રિયોના કામ કરવા લાગી જાય તેનું નામ સંભિન્નશ્રોતોલઘ્વિ છે.  
જેને આ લઘ્વિ હોય છે તે એક ઇન્દ્રિયથી જ અવશિષ્ટ ઇન્દ્રિયોનાં

રૂપિદ્રવ્યવિષયકમિન્દ્રિયનિરપેક્ષં મનઃપ્રગિધાનવીર્યકં પ્રતિવિશિષ્ટસ્યોપશ્મનિમિ-  
ત્તકં દેવમનુષ્યતિર્યહ્નારકસ્વામિકં જ્ઞાનં ભવતિ યત્પ્રભાવાત્ સા ॥ ૭ ॥

ઋજુમતિલબ્ધિઃ—ઋજુઃ=સામાન્ય—વિશેષરહિતં, દેશકાલાદ્યનેકપર્યાયવ-  
ર્જિતં, સંજ્ઞિતા ચિન્તિતં, તદ્ગ્રાહિણી મતિઃ—ઋજુમતિઃ, સૈવ લબ્ધિઃ । સા ચ-  
ઘટોડનેન ચિન્તિતઃ, इत्येवं संज्ञिमनोद्रव्यपरिच्छेदः ॥ ૮ ॥

વિપુલમતિલબ્ધિઃ—વિશુદ્ધતરઃ સંપૂર્ણમનુષ્યક્ષેત્રવર્તિસંજ્ઞિપઠ્વેન્દ્રિયમનોદ્રવ્ય-  
પ્રત્યક્ષીકરણહેતુર્મનઃપર્યયજ્ઞાનવિશેષઃ । યથા—પરેણ ચિન્તિતં ઘટં પ્રસંગતો બહુભિઃ

અવધિલબ્ધિ હૈ, यह अवधि, इन्द्रिय और मनकी सहायता से उत्पन्न नहीं होता है । अवधिज्ञानावरणीय कर्मके प्रतिविशिष्ट क्षयोपशम से उत्पन्न होता है । देव, मनुष्य, नरक एवं तीर्यञ्च, इस प्रकार चारों गतियों के जीव इस के स्वामी हो सकते हैं ७ । जिस के प्रभाव से-  
देश, काल आदि अनेक पर्यायों से वर्जित पदार्थ का सामान्य ज्ञान होता है, और जो संज्ञी जीव के द्वारा चिन्तित पदार्थ को ग्रहण करता है उसका नाम ऋजुमतिलब्धि है । जैसे जिसने अपने मन के द्वारा घट का विचार किया तो ऋजुमतिलब्धि वाला उसे शीघ्र बतला देगा कि इसने घट का विचार किया है ८ । जिसके प्रभाव से मनुष्यक्षेत्र-  
वर्ती समस्त संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के मनोद्रव्य को साक्षात् करनेवाला जो विशुद्धतर ज्ञान होता है उसका नाम विपुलमतिलब्धि है । यह मनःपर्यय ज्ञान का एक भेद है । जैसे किसी ने घट का विचार किया

કામ દર્શનાદિક કરવાની શક્તિવાળા બની જાય છે. (૬) જેના પ્રભાવથી અમુર્તિક દ્રવ્યને છોડીને મુર્તિક દ્રવ્યને જાણવાનું સમર્થ આત્મામાં પ્રગટ થાય છે. તેનું નામ અવધિલબ્ધિ છે. આ અવધિ ઈન્દ્રિય અને મનની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થતા નથી. અવધિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના પ્રતિવિશિષ્ટ ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, દેવ, મનુષ્ય, નરક અને તિર્યંચ આ ચાર ગતીના જીવો તેના સ્વામી બની શકે છે. (૭) જેનો પ્રભાવ દેશ, કાલ આદિ અનેક પર્યાયોથી વર્જિત સામાન્ય જ્ઞાન થાય છે. અને જે સંજ્ઞી જીવ દ્વારા ચિન્તિત પદાર્થને ગ્રહણ કરે છે. અને તેનું નામ ઋજુમતિલબ્ધિ છે. જેવો જેણે પોતાના મનની સાથે વિચાર કર્યો તો તે ઋજુમતિ લબ્ધિવાળા તેને તુરત બતાવી શકે છે કે આણે મનમાં આ વિચાર કર્યો છે. (૮) જેના પ્રભાવથી મનુષ્ય ક્ષેત્રવર્તી સમસ્તસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોના મનોદ્રવ્યોને સાક્ષાત્ કરવાવાળું જે વિશુદ્ધતરજ્ઞાન હોય છે. તેનું નામ વિપુલમતિલબ્ધિ છે આ મનઃપર્યયજ્ઞાનનો એક ભેદ છે. જેમ કેઈએ મનમાં વિચાર કર્યો હોય તો આ લબ્ધિવાળા તેને પ્રસંગવશ એવા

પર્યાયેરુપેતં જાનાતિ, તત્ર ઘટોઽયં દ્રવ્યતઃ સૌવર્ણઃ, ક્ષેત્રતો મરુદેશીયસ્તથા ગૃહા-  
મ્યન્તરસ્થઃ, કાલતત્ત્વમાસિકઃ, ભાવતઃ-સુસંસ્થાનચાકચિક્યાદિયુક્તઃ, આકારેણ  
મહાન્, ઇત્યાદિ પ્રચુરવિશેષણવિશિષ્ટં જાનાતિ ॥ ૯ ॥ ચારણલલ્લિધઃ-આકાશ-  
ગમનશક્તિઃ ॥ ૧૦ ॥ આશીર્વિપલલ્લિધઃ-આશીઃ-અનુગ્રહઃ, વિપં-નિગ્રહઃ, તદ્રૂપા-  
લલ્લિધઃ, નિગ્રહાનુગ્રહસામર્થ્યમિત્યર્થઃ ॥ ૧૧ ॥ કેવલિલલ્લિધઃ-કેવલિનઃ કેવલ-  
જ્ઞાનસિદ્ધિઃ ॥ ૧૨ ॥ ગણધરલલ્લિધઃ-ગણધરત્વપ્રાપ્તિઃ ॥ ૧૩ ॥ પૂર્વધરલલ્લિધઃ-  
પૂર્વધરત્વપ્રાપ્તિઃ ॥ ૧૪ ॥ અર્હલ્લલ્લિધઃ-અર્હત્વપ્રાપ્તિઃ ॥ ૧૫ ॥ ચક્રવર્તિલલ્લિધઃ-

હૈ તો હસ લલ્લિધવાલા ઉસે પ્રસંગવશ હસ રૂપ સે સ્પષ્ટ જાન લેતા હૈ  
કિ હસને દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સુવર્ણ કા, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા મરુદેશ કા  
અથવા ઘર કે ભીતર કા, કાલ કી અપેક્ષા ત્રીન માસ કા, એવં ભાવ  
કી અપેક્ષા અચ્છે આકાર કા, અથવા ચાકચિક્યાદિ રૂપ સે યુક્ત ઘટ  
કા ચિન્તન કિયા હૈ । હસ પ્રકાર વિપુલમતિલલ્લિધ વાલા ઘટકો અનેક  
વિશેષણાં સે વિશિષ્ટ જાન સકતા હૈ તવ કિ ઋજુમતિલલ્લિધ વાલા  
હસ પ્રકાર સે ઘટ કો નહીં જાન સકતા હૈ વહ તો ઉસે સામાન્યરૂપ  
સે હી જાનતા હૈ ૯ । આકાશ મેં ગમન કરને કી શક્તિ જિસ લલ્લિધ  
દ્વારા ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ વહ ચારણલલ્લિધ હૈ ૧૦ । જિસકે પ્રભાવ સે  
અનુગ્રહ ઓર નિગ્રહ કરને કી શક્તિ પ્રગટ હો જાવે વહ આશીર્વિપ-  
લલ્લિધ હૈ ૧૧ । કેવલિયોં કે જો કેવલજ્ઞાન કી સિદ્ધિ હોતી હૈ ઉસકા  
નામ કેવલિલલ્લિધ હૈ ૧૨ । ગણધરપદ કી પ્રાપ્તિ હોને મેં જો કારણ  
હોતી હૈ વહ ગણધરલલ્લિધ હૈ ૧૩ । પૂર્વધરત્વ કી પ્રાપ્તિ પૂર્વધરલલ્લિધ ।  
૧૪; અર્હત્પદ કી પ્રાપ્તિ અર્હલ્લલ્લિધ ૧૫, ચક્રધરત્વ કી પ્રાપ્તિ ચક્રવર્તિ-

। તેવા રૂપથી સ્પષ્ટ બાણી લે છે કે, તેણે દ્રવ્યની અપેક્ષા, સુવર્ણના ક્ષેત્રની  
અપેક્ષા, મરુદેશના અથવા ઘરની અંદરના કાળની અપેક્ષા ત્રણ માસનું અને  
ભાવની અપેક્ષા સારા આકારનું અથવા ચળકાટ ચકચકાટાદિ રૂપથી યુક્ત  
ઘટ બાણે છે. આ પ્રકારે વિપુલમતિ લલ્લિધવાળા ઘટને અનેક વિશેષણોથી વિશિષ્ટ  
બાણી શકે છે. ત્યારે ઋજુમતિ લલ્લિધવાળા આ રીતે ઘટને બાણી શકતા નથી.  
તે તો એને સામાન્યરૂપથી જ બાણે છે. (૯) આકાશમાં ઉડવાની શક્તિ જે લલ્લિધ-  
દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે તે ચારણલલ્લિધ છે. (૧૦) જેના પ્રભાવથી અનુગ્રહ  
અને નિગ્રહ કરવાની શક્તિ પ્રગટ થાય છે તે આશીર્વિપલલ્લિધ છે. (૧૧)  
કેવલીએને કેવળજ્ઞાની લલ્લિધ થાય છે તેનું નામ કેવળલલ્લિધ છે. (૧૨) ગણ-  
ધર પદની પ્રાપ્તિ થવામાં જે કારણ હોય છે તે ગણધરલલ્લિધ છે. (૧૩) પૂર્વધર-  
ત્વની પ્રાપ્તિ પૂર્વધરલલ્લિધ. (૧૪) અર્હત્પદની પ્રાપ્તિ અર્હત્લલ્લિધ. (૧૫)

ચક્રધરત્વપ્રાપ્તિઃ ॥૧૬॥ યલદેવલઘ્નિઃ-ચલદેવત્વપ્રાપ્તિઃ ॥૧૭॥ વાસુદેવલઘ્નિઃ-વાસુદેવત્વપ્રાપ્તિઃ ॥૧૮॥ ક્ષીરાસ્રવલઘ્નિઃ-યત્પ્રભાવાદ્વચનં ક્ષીરવન્મધુરં ભવતિ ॥ ૧૯।૧ ॥ મધ્વાસ્રવલઘ્નિઃ-યત્પ્રભાવાદ્વચનં મધુતુલ્યં ભવતિ ॥ ૧૯।૨ ॥ સર્પિરાસ્રવલઘ્નિઃ-યત્પ્રભાવાદ્વચનં ઘૃતવત્ સિન્ધમરુદ્ધં ભવતિ ॥૧૯।૩ ॥

કોઠ્ઠબુદ્ધિલઘ્નિઃ-યથા કોઠ્ઠકે ધાન્યં પ્રક્ષિપ્તં તદવસ્થમેવ ચિરમપ્યતિષ્ઠતે, ન કિમપિ કાલાન્તરેડપિ ગલતિ, एवं यस्मिन् पुरुषे श्रुतज्ञानं निक्षिप्तं तदवस्थ-मेव चिरकालं तिष्ठति न कदापि विस्मरति यत्प्रभावात् सा ॥२०॥ पदानुसारिणी लघ्निः-यत्प्रभावात् पुनरेकमपि श्रुतपदमवधार्य शेषमश्रुतमपि तदवस्थमेव श्रुतमव-गाहते सा ॥ २१ ॥ बीजबुद्धिलघ्निः-यथा-एकस्माद् बीजान्महातरुत्पद्यते, लघ्नि १६, ચલદેવ પદ કી પ્રાપ્તિ ચલદેવલઘ્નિ ૧૭, વાસુદેવ પદ કી પ્રાપ્તિ વાસુદેવલઘ્નિ ૧૮, ક્ષીર જૈસે મીઠે વચનોં કી પ્રાપ્તિ જિસકે પ્રભાવ સે હો વહ ક્ષીરાસ્રવલઘ્નિ, મધુતુલ્ય મધુર વચનોં કા હોનાં વહ મધ્વાસ્રવલઘ્નિ, સિન્ધ એવં અરુદ્ધ વચન જિસકે પ્રભાવ સે હો વહ સર્પિરાસ્રવ લઘ્નિ હૈ ૧૯ । જિસ પ્રકાર કોઠે મેં રક્ષા હુવા ધાન્ય ઝ્યોં કા ત્યોં બહુત કાલ તક રહતા હૈ-વિગડતા નહીં હૈ, ઉસી પ્રકાર જિસકે પ્રભાવ સે પ્રાપ્ત શ્રુત મી ઝ્યોં કા ત્યોં સ્થિર રહે વિસ્મૃત ન હો ઉસકા નામ કોઠ્ઠબુદ્ધિલઘ્નિ હૈ ૨૦ જિસકે પ્રભાવ સે શ્રુત કા એક પદ મી અવધારિત હોને પર શેષ નહીં સુના હુવા મી શ્રુત અવધારિત હો જાય ઇસ કા નામ પદાનુસારિણીલઘ્નિ હૈ ૨૧ । જિસ પ્રકાર એક છોટે સે મી બીજ સે વિશાલ કાય વૃક્ષ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર ઉત્પાદ; વ્યય,

ચક્રધરત્વની પ્રાપ્તિ ચક્રવર્તિલઘ્નિ. (૧૬) બલદેવપદની પ્રાપ્તિ બળદેવલઘ્નિ. (૧૭) વાસુદેવ પદની પ્રાપ્તિ વાસુદેવલઘ્નિ. (૧૮) ખીર જેવાં મીઠા વચનોની જેના પ્રભાવથી થાય તે ક્ષીરાસ્રવલઘ્નિ. મધુતુલ્ય મધુર વચનોનું બનવું તે મધ્વાસ્રવલઘ્નિ. સિન્ધ અને અરુદ્ધવચન જેના પ્રભાવથી થાય તે સર્પિરાસ્રવલઘ્નિ છે. (૧૯) જે રીતે કોઠીમાં રાખેલું અનાજ જેમનું તેમ ઘણા સમય સુધી રહે છે. છતાં બગડતું નથી. તે પ્રકારે જેના પ્રભાવથી પ્રાપ્ત શ્રુત પણ જ્યાંનું ત્યાં સ્થિર રહે, વિસ્મૃત ન બને, તેનું નામ કોઠ્ઠબુદ્ધિલઘ્નિ છે. (૨૦) જેના પ્રભાવથી શ્રુતનું એક પદ પણ અવધારિત થવાથી આગળ ન સાંભળેલ પણ શ્રુત અવધારિત થઈ જાય તેનું નામ પદાનુસારિણીલઘ્નિ છે. (૨૧) જે રીતે એક નાના બીજથી વિશાળકાય વૃક્ષ ઉત્પન્ન થાય છે. તે પ્રકારે ઉત્પાદ,

તથા-ઉત્પાદવ્યયધ્રોવ્યયુક્તં સદિત્યાદિરૂપમર્થપ્રધાનં પદમર્થપદં, તદેકં વીજભૂત-  
મર્થપદમનુસૃત્ય શેષમપિ તથૈવ પ્રભૂતતરમર્થપદં જાનાતિ યત્પ્રભાવાત્ સા ॥ ૨૨ ॥

તેજોલેશ્યાલઘ્વિઃ - યત્પ્રભાવાદનેકયોજનપ્રમાણક્ષેત્રાશ્રિતવસ્તુદહનદક્ષતી-  
વ્રતેજોનિસર્જનશક્તિરુત્પદ્યતે સા । इह यः खलु शमी-क्षमाशीलो मुनिर्निरन्तरम-  
પાનકં પઠ્ઠતપઃ કરોતિ, પારણકદિને ચ સનલ્લકુલમાપમુષ્ટયા જલચુલુકે નૈવ  
એકેન આત્માનં યાપયતિ, પુનરાતાપનાં કરોતિ તસ્ય પપ્માસાન્તે તેજોલેશ્યાલઘ્વિ-  
રુત્પદ્યતે ॥૨૩॥ આહારકલઘ્વિઃ-આહારકશરીરકરણશક્તિઃ । આહારકશરીરં ચ-  
સ્ફટિકવદુજ્જ્વલં હસ્તપ્રમાણમેકસ્મિન્ ભવે દ્વિઃ, સંસારે ચતુર્વારં કૃત્વા મોક્ષમવશ્યં

एवं ध्रौव्य युक्त सत् है, इत्यादिरूप एक भी अर्थ प्रधानपद के अनु-  
सरण से शेष प्रभूततर अर्थपद भी इसी तरह ज्ञात हो जावे वह  
वीजबुद्धिलઘ્વિ છે । ૨૨ जिसके प्रभाव से अनेकयोजनप्रमाण क्षेत्र  
में रही हुई वस्तु को जलाने वाले तेज को निकाल ने की शक्ति उत्पन्न  
हो जाती है इसका नाम तेजोलेश्यालघ्वि है, जो शमी-क्षमाशीलमुनि  
निरन्तर चौविहार पष्ठ तप करता है, और पारणा के दिन सनख-  
कल्मापमुष्टि अर्थात्-सीझे हुए एक मुट्ठी भर उड्ड खाकर उसी  
समय एक चुल्लू भर पानी पीता है, और आतापना लेता है, इस प्रकार  
उह महिने तक लगातार करता रहता है तो उसके तेजोलेश्यालघ्वि  
उत्पन्न हो जाती है । २३ आहारक-शरीर के उत्पन्न होने की लघ्वि का  
नाम आहारकलघ्वि है । आहारक शरीर स्फटिकमणि के जैसा उज्ज्वल  
तथा एक हाथ का होता है । एक भव में इसकी प्राप्ति जीव को दो बार,  
तथा संसार अवस्था में चार बार तक होती है, पश्चात् वह जीव मुक्ति

વ્યય, અને ધ્રોવ્ય યુક્ત સત્ છે રૂપ એક પણ અર્થ પ્રધાનપદના અનુસરણથી  
શેષ પ્રભુતતરઅર્થ પદ પણ તેવી રીતે જ્ઞાત થઈ જાય તે બીજીબુદ્ધિ લઘ્વિ છે. (૨૨)  
જેના પ્રભાવથી અનેક યોજન પ્રમાણક્ષેત્રમાં રહેલી વસ્તુઓને બાળનાર તેજને  
કાઢવાની શક્તિ ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ તેજોલેશ્યાલઘ્વિ છે. જે શમી-ક્ષમાશીલ  
મુનિ નિરંતર ચોવિહાર છઠ્ઠ તપ કરે છે અને પારણાના દિવસે ખાંદલા એક મુઠ્ઠીભર  
અડદ ખાઈ ને એજ વખતે એક ચાપલું પાણી પીયે છે અને આતાપના લે છે આ  
પ્રકાર લગાતાર છ મહિના સુધી કરતા રહે છે તો તેને તેજોલેશ્યાલઘ્વિ ઉત્પન્ન થાય  
છે. (૨૩) આહારક શરીરના ઉત્પન્ન થવાની લઘ્વિનું નામ આહારકલઘ્વિ છે, આહાર-  
ક શરીર સ્ફટિકમણીના જેવું ઉજ્જ્વળ અને એક હાથનું હોય છે. એક ભવમાં તેની  
પ્રાપ્તિ જીવને બે વાર તથા સંસાર અવસ્થામાં ચાર વાર થાય છે. પછીથી એ



પ્રયાતિ । કથિચતુર્દશપૂર્વધારી ઋદ્ધિ પ્રાપ્ય, તીર્થંકરસમીપે પ્રેષણાર્થમાહારકશરીરં કરોતિ । તત્ર પ્રેષણં નિગોદાદિસંશયવિચ્છેદનાર્થં, સૂક્ષ્માર્થનિર્ણયાર્થમ્ ઋદ્ધિદર્શનાર્થં, પ્રાણિરક્ષણાર્થં, છદ્મસ્થોપગ્રહાર્થં ચ ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

પાણિદય-ઋદ્ધિદરિસણ, છુડમત્યોવગ્ગહ્ણહેઉં વા ।

સુહુમત્ય સંસયચ્છે, -યત્યં ગમણં જિણસ્સંતે ॥ ૧ ॥

इदमत्र बोध्यम्—आहारकशरीरं यत्र स्थाने लब्धिधारी मुनिः प्रेषयति, तत्र भगवतोऽनुपस्थितौ तस्मादाहारकशरीराद्गृह्णहस्तं शरीरं निःसरति, तदेव भगवतः

को अवश्य प्राप्त कर लेता है । चतुर्दश पूर्व का पाठी कोई मुनि आहारक लब्धि को प्राप्त कर तीर्थंकर के समीप में भेजने के लिये आहारक शरीर की रचना करता है । निगोदादिसंबंधी संशय को दूर करने रूप सूक्ष्म अर्थ का निर्णय करने के लिये १ ऋद्धि के दर्शन करने के लिये २ प्राणियों की रक्षा करने के लिये ३ और छद्मस्थों का उपकार करने के लिये ४ इस शरीर का तीर्थंकर के पादमूल में गमन होता है । कहा भी है—

“पाणिदय-रिद्धिदंसण, -छुडमत્યોवग્गह्णहेउं वા ।

સુહુમત્યસંસયચ્છેયત્યં ગમણં જિણસ્સંતે ॥ ૧ ॥”

छाया—प्राणिदया-ऋद्धिदर्शन-छद्मस्थोपग्रहणहेतुं वा ।

सूक्ष्मार्थसंशयच्छेदार्थं गमनं जिनस्यान्ते ॥ ”

આહારક શરીર કો જિસ સ્થાન મેં લબ્ધિધારી મુનિ ભેજતા હૈ વહાં યદિ ભગવાન્ ન હોં તો ઉસ આહારક શરીર સે એક હાથ સે કુછ

જીવ અવશ્ય મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લ્યે છે. ચૌદપૂર્વનાં પાઠી કોઈ મુનિ આહારક લબ્ધિને પ્રાપ્ત કરી તીર્થંકરના સમીપમાં મોકલવા માટે આહારક શરીરની રચના કરે છે. નિગોદાદિ સંબંધી સંશયને દૂર દૂર કરવા માટે, સૂક્ષ્મ અર્થનો નિર્ણય કરવા માટે, ઋદ્ધિનાં દર્શન કરવા માટે, પ્રાણીઓની રક્ષા કરવા માટે, અને છદ્મસ્થોના ઉપકાર કરવા માટે આ શરીરનું તીર્થંકરના પાદમૂલમાં ગમન થાય છે. કહ્યું પણ છે.—

“પાણીદય-ઋદ્ધિદરિસણ, છુડમત્યોવગ્ગહ્ણહેઉં વા ।

સુહુમત્ય-સંસયચ્છેયત્યં, ગમણં જિણસ્સંતે ॥ ”

छाया—प्राणीदया ऋद्धिदर्शन, -छद्मस्थोपग्रहणहेतुं वा ।

सूक्ष्मार्थसंशयच्छेदार्थं, गमनं जिनस्यान्ते ॥

આહારક શરીરને જે સ્થાનમાં લબ્ધિધારી મુનિ મોકલે છે ત્યાં જો ભગવાન ન હોય તો તે આહારક શરીરથી એક હાથ ઓછું (અંડહાથ) શરીર બાંધ્યું



સંનિર્ધૌ ગત્વા સ્વકાર્યં સંપાદ્ય હસ્તપ્રમાણશરીરે પ્રવિશતિ । તચ્ચાદારકશરીરં સ્વમૂલ-  
ભૂતે શરીરે પુનર્લીનં ભવતિ ॥૨૪॥ શીતલેશ્યાલઘ્વિઃ—પરમકારુણ્યવશાદનુગ્રાહ્યં  
પ્રતિ તેજોલેશ્યાપ્રશમનહેતુશીતલતેજોવિશેષવિમોચનસામર્થ્યમ્ ॥ ૨૫ ॥ વૈક્રિય-  
લઘ્વિઃ — વૈક્રિયશરીરકરણશક્તિઃ । સા ચાનેકવિધા-અણુત્વ-મહત્ત્વ-લઘુત્વ-  
ગુરુત્વ-પ્રાપ્તિ-પ્રાકામ્યે-શિત્ત્વ-વશિત્ત્વા-અપ્રતિઘાતિત્ત્વા-અન્તર્ધાન-કામરૂપિત્ત્વાદિ-  
ભેદાત્ ॥૨૬॥ અક્ષીણમહાનસીલઘ્વિઃ—મહાનસમ્-અન્નપાકસ્થાનં, તદાશ્રિત-  
ત્વાદન્નમપિ મહાનસમુચ્યતે, તચ્ચ યત્પ્રભાવાત્ અક્ષીણં=સ્વલ્પમપ્યન્નં પાત્રે પતિતં  
પુરુષશતસહસ્રૈરપિ તૃપ્ત્યા ભુક્તં ન ક્ષીયતે, યાવત્ સ્વેન તદન્નં ન ભુજ્યતે સા ॥૨૭॥

કમ શરીર ઓર નિકલતા હૈ, વહો ભગવાન કે પાસ જાકર અપને કાર્ય કો  
સંપાદિત કર પૂર્વ કે હસ્તપ્રમાણ શરીર મેં સમા જાતા હૈ, ઓર વહ પૂર્વ-  
હસ્ત પ્રમાણ શરીર મી ફિર વહાં સે લૌટ કર અપને મૂલ શરીર મેં સમા-  
જાતા હૈ ૨૪ । પરમ કરુણા કે વશ સે દયા કરને યોગ્ય પ્રાણી કે પ્રતિ તેજો-  
લેશ્યા કે પ્રશમન કા હેતુ જો શીતતેજવિશેષ કો નિકાલને કી શક્તિ હૈ  
ઉસકા નામ શીતલેશ્યાલઘ્વિ હૈ ૨૫ । વૈક્રિયશરીર કો કરને કી  
શક્તિ કા નામ વૈક્રિયલઘ્વિ હૈ । યહ લઘ્વિ અણુત્વ, મહત્ત્વ, લઘુત્વ,  
ગુરુત્વ, પ્રાપ્તિ, પ્રાકામ્ય, ઈશિત્વ, વશિત્વ, અપ્રતિઘાતિત્વ, અન્તર્ધાન,  
કામરૂપિત્વ આદિ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર કી હૈ ૨૬ । મહાનસ-શબ્દ  
કા અર્થ યદ્યપિ રસોઈઘર હૈ તો મી તદાશ્રિત હોને સે અન્ન કો મી  
મહાનસ કહ દિયા ગયા હૈ ઇસલિયે મહાનસ શબ્દ સે અન્ન સમજના

નીકળે છે તે ભગવાનની પાસે જઈને પોતાના કાર્યને સંપાદિત કરી પૂર્વના હસ્ત  
પ્રમાણ શરીરમાં સમાઈ જાય છે. અને તે પૂર્વહસ્ત પ્રમાણ શરીર પણ ત્યાંથી  
પાછું ફરી પોતાના મૂળ શરીરમાં સમાઈ જાય છે. (૨૪) પરમ કરુણાના વશથી કયા  
કરીને યોગ્ય પ્રાણી તરફ તેજોલેશ્યાના પ્રશમનનો હેતુ, જે શીત તેજ વિશેષને કાઢ-  
વાની શક્તિ છે તેનું નામ શીતલેશ્યાલઘ્વિ છે. (૨૫) વૈક્રિયશરીરને બનાવવાની  
શક્તિનું નામ વૈક્રિયલઘ્વિ છે. આ લઘ્વિ અણુત્વ, મહત્ત્વ, લઘુત્વ, ગુરુત્વ, પ્રાપ્તિ,  
પ્રાકામ્ય, ઈશિત્વ, વશિત્વ, અપ્રતિઘાતિત્વ, અન્તર્ધાન, કામરૂપિત્વ આદિના ભેદથી  
અનેક પ્રકારની છે. (૨૬) મહાનસ શબ્દનો અર્થ જો કે રસોઈ ઘર છે તો પણ  
તદાશ્રિત હોવાથી અન્નને પણ મહાનસ કહેવાયેલ છે. માટે મહાનસ શબ્દથી અન્ન  
સમજવું જોઈએ. આથી આ અન્ન ભોજન સામગ્રી જેના પ્રભાવથી અક્ષીણ-સ્વલ્પ

પુલાકલઙ્ઘિઃ—તપઃશ્રુતહેતુકા પ્રવચનલાઘવાદિપ્રયોજને જિનશાસનવિરોધિનઃ સ્વલવાહનસ્ય ચક્રવર્ત્યાદેરપિ પુલાકલઙ્ઘિઃસારકરણે સમર્થા યા શક્તિઃ સા ॥૨૮॥

અથવા—ઇતિ=અનેન-કેશલુચ્ચનેન પંચમહાવ્રતાક્ષીકારેણ, યાતનાસ્મકેનાન-શનાદિના તપસા, પૃથિવીકાયાદિસપ્તદશવિધસંયમેન મહાકષ્ટપ્રદદીક્ષાગ્રહણેન ચેત્યર્થઃ, વચ્ચિતોઽસ્મિ=કામસુખાદપવર્જિતોઽસ્મીત્યર્થઃ । ઉક્તં ચ—

ચાહિયે અતઃ યહ અન્ન-ભોજનસામગ્રી જિસકે પ્રભાવ સે અક્ષીણ-સ્વલ્પ ભી અન્ન પાત્ર મેં પહે તો ભી ઉસસે હજારોં મનુષ્ય મરપેટ આહાર કરલે ફીર ભી છૂટે નહીં, જય તક કિ વહ સ્વયં આહાર ન કરલે, એસી શક્તિ કા નામ અક્ષીણમહાનસ લઙ્ઘિ હૈ ૨૭ । પ્રવચન કી લઘુતા કે સમય જિનશાસન કા વિરોધી સેના ઓર વાહનસહિત ચક્રવર્તી ભી હોવે તો વહ ભી જિસકે પ્રભાવ સે પુલાક (દાનારહિત ઘાસ કા પુલા) કી તરહ નિઃસાર કર દિયા જાતા હૈ એસી શક્તિ કા નામ પુલાકલઙ્ઘિ હૈ, યહ લઙ્ઘિ તપ એવં શ્રુત હેતુક હોતી હૈ ૨૮ ।

ઇસ પ્રકાર યે અઠાઈસ લઙ્ઘિયાં જો વતલાઈ ગઈ હૈં વે, અથવા હનમેં સે કોઈ એક લઙ્ઘિ ભી મુશ્કે પ્રાપ્ત નહીં હુઈ હૈ । ઇસી પ્રકાર કેશ લુંચન કરના પંચમહાવ્રતોં કા પાલન કરના, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોં કા તપના, પૃથિવીકાયાદિકોં કી રક્ષા કરને રૂપ સત્તરહ ૧૭ પ્રકાર કે સંયમ કા પાલના, મહાકષ્ટપ્રદ દીક્ષા કા ગ્રહણ કરના, ઇન સબ વાતોં સે મેં ઠગા ગયા હૂં—અર્થાત્ સાંસારિક વિલાસતા સે મુક્ત

પણ અન્ન પાત્રમાં પડે તો પણ તેનાથી હબરો મનુષ્ય પેટભરીને આહાર કરી દે છતાં પણ ખૂટે નહીં જ્યાં સુધી તે પોતે આહાર ન કરી લે. આવી શક્તિનું નામ અક્ષીણમહાનસલઙ્ઘિ છે. (૨૭) પ્રવચનની લઘુતાના સમયે જીન શાસનના વિરોધી સેના અને વાહન સહિત કોઈ ચક્રવર્તી હોય તો તે પણ જેના પ્રભાવથી પુલાકની માફક નિઃસાર કરી દેવામાં આવે છે. એવી શક્તિનું નામ પુલાકશક્તિ છે. આ લઙ્ઘિ તપ અને શ્રુત હેતુક હોય છે. (૨૮)

આ પ્રકારે એ અઠ્યાવીસ લઙ્ઘિઓ જે બતાવવામાં આવી છે તે અથવા આમાંથી એક લઙ્ઘિ પણ મને પ્રાપ્ત થયેલ નથી. આ રીતે કેશનો લોચ કરવો પાંચ મહાવ્રતોનું પાલન કરવું, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોને તપવા, પૃથ્વી-કાયાદિકોની રક્ષા કરવારૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમનું પાલન, મહાકષ્ટપ્રદ દીક્ષાને મહણ કરવી, આ સઘળી વાતોથી હું ઠગાયો છું. અર્થાત્ સાંસાર લાસતાથી

“તપાંસિ યાતનાશ્ચિત્રાઃ સંયમો ભોગવંચના” इत्यादि। इति=एतद्, भिक्षुः, न चिन्तयेत्=न विचारयेत्। अस्य चिन्तनस्य संयमघातकत्वेन तुच्छत्वात्।

તથાહિ-યદુચ્યતે-જન્માન્તરં નાસ્તિ, શરીરસ્ય ભૂતસમુદાયાત્મકત્વાત્ ભૂતધર્મ-સ્વાદૈતન્યરૂપસ્યાત્મનઃ શરીરેણ સદૈવ નાશાત્, इति, तदसत्-न वयं शरीरस्य जन्मान्तराऽनुगामित्वमङ्गीकुर्मः, कित्वात्मन एव, स चात्मा नास्ति भूतधर्मः, तथाहि-

મોઢ કર જો મેં ઇન કષ્ટપ્રદ નિઃસાર કાર્યોં કી આરાધના મેં લગ ગયા હું વહ સવ વ્યર્થ હૈ । કહા ભી હૈ-

तपांसि यातनाश्चित्राः, संयमो भोगवंचना ” इत्यादि।

અર્થાત્-તપ એક વિચિત્ર પ્રકાર કા કષ્ટ હૈ, સંયમ જો હૈ વહ ભાગોં સે ઠગાના હૈ ।

ભૂતવાદી ઘનકર ભિક્ષુ કો ઇસ પ્રકાર કા વિચાર નહીં કરના ચાહિયે । ક્યોં કિ ઇસ પ્રકાર કી વિચારધારા સર્વથા તુચ્છ થતલાઈ ગઈ હૈ । ઇસીકા વિચાર અવ યહાં સે કિયા જાતા હૈ ।

જો ભૂતવાદી યહ કહતા હૈ કિ “જન્માન્તર નહીં હૈ ક્યોં કિ યહ શરીર ભૂતોં કા સમુદાયસ્વરૂપ હૈ ઓર ચૈતન્યરૂપ આત્મા ભી ભૂત કા ધર્મ હૈ । ડસકા વિનાશ ભી શરીર કે વિનાશ કે સાથ હી હો જાતા હૈ ।” સો ઇસકા ઇસ પ્રકાર કા કહના ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ હમ લોગ અર્થાત્ જૈન-શરીર કો પરલોક મેં જાનેવાલા નહીં માનતે હૈં, હમ તો પરલોક મેં જાનેવાલી એક આત્મા કો હી માનતે હૈં । વહ આત્મા ભૂતોં કા ધર્મ નહીં હૈ । જવ ભિન્ન ૨ અવસ્થા મેં ભૂતોં સે

મોહુ મરડીને હું આ કષ્ટપ્રદ નિઃસાર કાર્યોંની આરાધનામાં લાગી ગયો હું તે સધળું વ્યર્થ છે. કહ્યું છે—

“તપાંસિ યાતનાશ્ચિત્રાઃ સંયમો ભોગવંચના” इत्यादि.

અર્થાત્ તપ એક વિશિષ્ટ પ્રકારનું કષ્ટ છે સંયમ જે છે તે ભોગોને ઠગનાર છે. ભૌતિકવાદી બની ભિક્ષુએ આ પ્રકારનો વિચાર નહીં કરવો જોઈએ. કેમકે, આ પ્રકારની વિચારધારા સર્વથા તુચ્છ બતાવવામાં આવી છે તેનો વિચાર હવે અહીં કહેવામાં આવે છે.

પહેલાં જે ભૌતિકવાદીએ એવું કહ્યું છે કે, “જન્માન્તર નથી કેમકે આ શરીર ભૂતોના સમુદાય સ્વરૂપ છે અને ચૈતન્યરૂપ આત્મા પણ ભૂતોનો ધર્મ છે. તેનો વિનાશ પણ શરીરના વિનાશની સાથે થાય છે.” તેનું તેવા પ્રકારનું કહેવું ઠીક નથી. કેમકે, અમે લોક અર્થાત્ જૈનશરીરને પરલોકમાં જવા વાળું માનતા નથી. અમે તો એક આત્મા ભૂતોનો ધર્મ નથી. જ્યારે જુદી જુદી

પુલાકલઙ્ઘિઃ—તપઃશ્રુતહેતુકા પ્રવચનલાઘવાદિપ્રયોજને જિનશાસનવિરોધિનઃ સવલવાહનસ્ય ચક્રવર્ત્યાદેરપિ પુલાકવન્નિઃસારકરણે સમર્થા યા શક્તિઃ સા ॥૨૮॥

અથવા—ઇતિ=અનેન-કેશલુચ્ચનેન પંચમહાવ્રતાઙ્ગીકારેણ, યાતનાસ્મકેનાન-શનાદિના તપસા, પૃથિવીકાયાદિસપ્તદશવિધસંયમેન મહાકષ્ટપદદીક્ષાગ્રહણેન ચેત્યર્થઃ, વન્નિતોઽસ્મિ=કામસુખાદપવર્જિતોઽસ્મીત્યર્થઃ । ઉક્તં ચ—

ચાહિયે અતઃ યહ અન્ન-ભોજનસામગ્રી જિસકે પ્રભાવ સે અક્ષીણ-સ્વલ્પ ભી અન્ન પાત્ર મેં પહે તો ભી ઉસસે હજારોં મનુષ્ય ભરપેટ-આહાર કરલે ફીર ભી છૂટે નહીં, જય તક કિ વહ સ્વયં આહાર ન કરલે, એસી શક્તિ કા નામ અક્ષીણમહાનસ લઙ્ઘિ હૈ ૨૭ । પ્રવચન કી લઘુતા કે સમય જિનશાસન કા વિરોધી સેના ઓર વાહનસહિત ચક્રવર્તી ભી હોવે તો વહ ભી જિસકે પ્રભાવ સે પુલાક (દાનારહિત ઘાસ કા પુલા) કી તરહ નિઃસાર કર દિયા જાતા હૈ એસી શક્તિ કા નામ પુલાકલઙ્ઘિ હૈ, યહ લઙ્ઘિ તપ એવં શ્રુત હેતુક હોતી હૈ ૨૮ ।

ઇસ પ્રકાર યે અઠાઈસ લઙ્ઘિયાં જો વતલાઈ ગઈ હૈં વે, અથવા હનમેં સે કોઈ એક લઙ્ઘિ ભી મુશ્કે પ્રાપ્ત નહીં હુઈ હૈ । ઇસી પ્રકાર કેશ લુંચન કરના પંચમહાવ્રતોં કા પાલન કરના, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોં કા તપના, પૃથિવીકાયાદિકોં કી રક્ષા કરને રૂપ સત્તરહ ૧૭ પ્રકાર કે સંયમ કા પાલના, મહાકષ્ટપદ દીક્ષા કા ગ્રહણ કરના, હન સવ વાતોં સે મેં ઠગા ગયા હૂં—અર્થાત્ સાંસારિક વિલાસતા સે મુક્ત

પણુ અન્ન પાત્રમાં પડે તો પણ તેનાથી હજારો મનુષ્ય પેટભરીને આહાર કરી લે છતાં પણ ખૂટે નહીં જ્યાં સુધી તે પોતે આહાર ન કરી લે. આવી શક્તિનું નામ અક્ષીણમહાનસલઙ્ઘિ છે. (૨૭) પ્રવચનની લઘુતાના સમયે જીન શાસનના વિરોધી સેના અને વાહન સહિત કોઈ ચક્રવર્તિ હોય તો તે પણ જેના પ્રભાવથી પુલાકની માફક નિઃસાર કરી દેવામાં આવે છે. એવી શક્તિનું નામ પુલાકશક્તિ છે. આ લઙ્ઘિ તપ અને શ્રુત હેતુક હોય છે. (૨૮)

આ પ્રકારે એ અઠ્યાવીસ લઙ્ઘિઓ જે બતાવવામાં આવી છે તે અથવા આમાંથી એક લઙ્ઘિ પણ મને પ્રાપ્ત થયેલ નથી. આ રીતે કેશનેા લેાચ કરવો યાંચ મહાવ્રતોનું પાલન કરવું, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોને તપવા, પૃથ્વી-કાયાદિકોની રક્ષા કરવારૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમનું પાલન, મહાકષ્ટપદ દીક્ષાને ગ્રહણ કરવી, આ સઘળી વાતોથી હું ઠગાયો છું. અર્થાત્ સંસાર ।સતાથી

વાયુવિશેષોઽન્નર્ગ તતોઽપ.ત્વમ્મિત્યેતિ મન્યતે, તર્હિ જીવ એવ નામાન્તરેણ સ્વીકૃતો  
ભવતિ, અસ્તુ યત્ કિંચિદેતત્, કથમપિ ભૂતસમુદાયમાત્રેણ ન ચૈતન્યાવિર્ભાવ ઇતિ  
સિદ્ધમ્, પૃથિવ્યાદિપુ એકત્ર વ્યવસ્થાપિતેષ્વપિ ચૈતન્યાનુપલબ્ધેઃ । અથ કાયાકાર-  
પરિણતૌ સત્યાં તદભિવ્યક્તિરિષ્યતે, તદપિ ન, યતો લેપ્યમયપુત્તલિકાયાં  
સમસ્તભૂતસદ્ભાવેઽપિ જડત્વમેવોલભ્યતે, તદેવમન્વયવ્યતિરેકાભ્યામાલોચ્યમાનો

ઉસકા સડના હો નહીં સકતા હૈં । યદિ હસ પર યૌં કહા જાય  
કિ “ સૂક્ષ્મ વાયુ તથા અગ્નિ વહાં સે અપગત હો ચુકી હૈ અતઃ શરીર  
મેં મરણ કા વ્યવહાર હો જાયગા ” સો એસા કહના આત્મા કે હી  
સદ્ભાવ કા રૂપાપક માના જાતા હૈ । તુમ જિસે સૂક્ષ્મ વાયુ યા અગ્નિ  
કહતે હો હમ ઉસે આત્મા કહતે હૈં । ભૂતસમુદાય સે ચૈતન્ય કા  
આવિર્ભાવ હસલિયે મો સિદ્ધ નહીં હોતા હૈ કિ એક હી જગહ હન  
ચારૌં કો સ્થાપિત કરતે પર મો ઉનસે ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ નહીં હોતી  
હૈ । યદિ ભૂતવાદી હસ પર યૌં કહે કિ “ જવ યે ભૂત કાયાકાર  
પરિણત હોતે હૈં તવ હી જાકર હન સે ચૈતન્ય કી અભિવ્યક્તિ હોતી  
હૈ ” સો એસા કહના મો હસ લિયે ઉચિત નહીં હૈ કિ લેપ્યમયપુત્તલિકા  
મેં સમસ્તભૂતૌં કા સદ્ભાવ હોને પર મો વહાં ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ  
નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ જડતા હી ઉપલબ્ધ હોતી હૈ । કાર્યકારણભાવ  
અન્વયવ્યતિરેક કે સદ્ભાવ મેં હી બનતા હૈ । હસ પ્રકાર યહાં ભૂત ઓર  
ચૈતન્ય કા અન્વયવ્યતિરેક ઘટિત નહીં હોતા હૈ, -અતઃ ભૂતૌં કા કાર્ય

ત્યાંથી અપગત થઈ ગયેલ છે, આથી શરીરમાં મરણનો વહેવાર થવાનો છે”  
તો એવું કહેવું તે આત્માના સદ્ભાવનો ખ્યાપક મનાય છે. તમે સૂક્ષ્મ વાયુ  
અગરતો અગ્નિ કહો છો અમે તેને આત્મા કહીએ છીએ. ભૂત સમુદાયથી  
ચૈતન્યનો આવિર્ભાવ એ માટે પણ સિદ્ધ નથી થતો કે, એકજ જગ્યાએ તે  
ચારેને લેખા કરવા છતાં પણ તેમાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી. જો કદાચ  
ભૂતવાદી આ ઉપર એવું કહે કે, “ જ્યારે એ ભૂતકાયઆકાર પરિણત હોય છે  
ત્યારે જ જઈને તેનાથી ચૈતન્યની અભિવ્યક્તિ થાય છે. ” તો એવું કહેવું  
પણ એ માટે ઠીક નથી કે, લેપ્યમય પુતલીકામાં સમસ્ત ભૂતોનો સદ્ભાવ  
હોવા છતાં પણ ત્યાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી પરંતુ જડતાજ ઉપલબ્ધ  
થાય છે. કાર્યકારણ ભાવ અન્વય વ્યતિરેકના સદ્ભાવમાં જ બને છે. આ પ્રકાર  
અહિં ભૂત અને ચૈતન્યનો અન્વય વ્યતિરેક ઘટિત થતો નથી માટે ભૂતોનું  
કાર્ય ચૈતન્ય છે તે કોઈ પ્રકારે સિદ્ધ થતું નથી. આ માટે આ ચૈતન્ય શુષ્ક

एकैकस्य पृथिव्यादेः पृथक्त्वे चैतन्योत्पत्तिर्न भवति चेत् तर्हि पृथिव्यादिसमुदाया-  
दपि चैतन्यं न भवितुमर्हति । यथैकस्मात् सिकताकणात् तैलं नोत्पद्यते, तेन सिकता-  
समुदायादपि न भवति तैलोत्पत्तिः किंच—चैतन्यस्य भूतधर्मत्वस्वीकारे मरणाभावः  
स्यात्, मृतकायेऽपि पृथिव्यादिभूतानां सद्भावात्, न च मृतकाये वायोस्तेजसो  
वा अभावान्मरणसद्भावः इति वाच्यम्, यतः मृतकाये शोफोपलब्धेर्न वायोरभावः ।  
पक्तिस्वभावस्य च कोथस्य (शटनस्य) दर्शनान्नाग्नेरभाव इति । अथ सूक्ष्मः कश्चिद्

चैतन्य की उत्पत्ति नहीं होती है तो उनके समुदाय में चैतन्य की  
उत्पत्ति कैसे हो सकती है, जैसे एक सिकता (रेती) के कण से जब  
तेल नहीं निकलता है तो समुदाय से तेल निकल सकेगा यह बात  
कौन बुद्धिमान मान्य कर सकता है । दूसरी बात यह भी है कि जब  
चैतन्य को भूतों का धर्म माना जायगा तो मरण का अभाव प्रसक्त  
होता है, क्योंकि मृतकाय में भी पृथिवी आदि भूतों का सद्भाव  
तो रहता ही है । यदि मृत शरीर में मरणसद्भाव स्थापित करने के  
लिये यह कहा जाय कि “वहां पर वायु एवं तेज का अभाव है  
इसलिये इन दो तत्त्वों का अभाव होने से वहां भी मरण का सद्भाव  
अंगीकार किया जाता है” सो ऐसा कहना इसलिये उचित नहीं है  
कि मृतकाय में भी शोफ (सूजन) की उपलब्धि होने से वायु का वहां  
असद्भाव नहीं माना जा सकता है । अग्नितत्त्व का भी वहां इसी  
तरह अभाव नहीं माना जा सकता है, क्योंकि इसके अभाव में

અવસ્થામાં ભૂતોથી ચૈતન્યની ઉત્પત્તિ નથી થતી તો તેનાં સમુદાયમાં ચૈતન્યની  
ઉત્પત્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? જેમ રેતીના એક કણમાંથી તેલ નીકળી શકતું  
નથી તો રેતીના ઢગલામાંથી તેલ નીકળી શકે તેવું કોણ કહી શકે ? બીજી  
વાત એ પણ છે કે, જો ચૈતન્યને ભૂતોનો ધર્મ માનવામાં આવે તો મરણનો  
અભાવ પ્રસક્ત થાય છે. કેમકે, મૃતકાયામાં પણ પૃથ્વી આદિ ભૂતોનો સદ્ભાવ  
તો રહેલો જ છે. જો મરણ શરીરમાં મરણ સદ્ભાવ પ્રાપ્ત કરવા માટે એમ  
કહેવામાં આવે કે, “ત્યાં વાયુ અને તેજનો અભાવ છે માટે આ બન્ને તત્વોનો  
અભાવ હોવાથી ત્યાં પણ મરણનો સદ્ભાવ અંગિકાર કરવામાં આવે છે.” તો એમ  
કહેવું એ માટે ઉચિત નથી કે, મૃતકાયામાં પણ સૂજનની ઉપલબ્ધિ હોવાથી  
વાયુનો ત્યાં અસદ્ભાવ માની શકાતો નથી. અગ્નિતત્વનો પણ ત્યાં તેવી રીતે  
અભાવ નથી માનવામાં આવતો કેમકે, તેના અભાવમાં એનું સડવું બનતું  
નથી, જો કદાચ એ ઉપર એમ કહેવામાં આવે કે, “સૂક્ષ્મ વાયુ તથા અગ્નિ



વાયુવિશેષોઽન્નર્ગ તતોઽપ ત્વમિતિ મન્યતે, તર્હિ જીવ એવ નામાન્તરેણ સ્વીકૃતો  
ભવતિ, અસ્તુ યત્ કિંચિદેતત્, કથમપિ ભૂતસમુદાયમાત્રેણ ન ચૈતન્યાવિર્ભાવ ઇતિ  
સિદ્ધમ્, પૃથિવ્યાદિપુ એકત્ર વ્યવસ્થાપિતેષ્વપિ ચૈતન્યાનુપલબ્ધેઃ । અથ કાયાકાર-  
પરિણતૌ સત્યાં તદભિવ્યક્તિરિષ્યતે, તદપિ ન, યતો લેપ્યમયપુત્તલિકાયાં  
સમસ્તભૂતસદ્ભાવેઽપિ જડત્વમેવોલભ્યતે, તદેવમન્વયવ્યતિરેકાભ્યામાલોચ્યમાનો

ઉસકા સડના હો નહીં સકતા હૈ । યદિ હસ પર યો કહા જાય  
કિ “ સૂક્ષ્મ વાયુ તથા અગ્નિ વહાં સે અપગત હો ચુકી હૈ અતઃ શરીર  
મેં મરણ કા વ્યવહાર હો જાયગા ” સો એસા કહના આત્મા કે હી  
સદ્ભાવ કા રૂપાપક માના જાતા હૈ । તુમ જિસે સૂક્ષ્મ વાયુ યા અગ્નિ  
કહતે હો હમ ઉસે આત્મા કહતે હૈ । ભૂતસમુદાય સે ચૈતન્ય કા  
આવિર્ભાવ હસલિયે મી સિદ્ધ નહીં હોતા હૈ કિ એક હી જગહ્ इन  
ચારોં કો સ્થાપિત કરને પર મી ઉનસે ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ નહીં હોતી  
હૈ । યદિ ભૂતવાદી હસ પર યો કહે કિ “ જવ યે ભૂત કાયાકાર  
પરિણત હોતે હૈ તવ હી જાકર इन સે ચૈતન્ય કી અભિવ્યક્તિ હોતી  
હૈ ” સો એસા કહના મી હસ લિયે ઉચિત નહીં હૈ કિ લેપ્યમયપુત્તલિકા  
મેં સમસ્તભૂતોં કા સદ્ભાવ હોને પર મી વહાં ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ  
નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ જડતા હી ઉપલબ્ધ હોતી હૈ । કાર્યકારણભાવ  
અન્વયવ્યતિરેક કે સદ્ભાવ મેં હી વનતા હૈ । હસ પ્રકાર યહાં ભૂત ઓર  
ચૈતન્ય કા અન્વયવ્યતિરેક ઘટિત નહીં હોતા હૈ, -અતઃ ભૂતોં કા કાર્ય

ત્યાંથી અપગત થઈ ગયેલ છે, આથી શરીરમાં મરણનો વહેવાર થવાનો છે”  
તો એવું કહેવું તે આત્માના સદ્ભાવનો ખ્યાપક મનાય છે. તમે સૂક્ષ્મ વાયુ  
અગરતો અગ્નિ કહો છો અમે તેને આત્મા કહીએ છીએ ભૂત સમુદાયથી  
ચૈતન્યનો આવિર્ભાવ એ માટે પણ સિદ્ધ નથી થતો કે, એકજ જગ્યાએ તે  
ચારેને લેના કરવા છતાં પણ તેમાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી. જો કદાચ  
ભૂતવાદી આ ઉપર એવું કહે કે, “ જ્યારે એ ભૂતકાયઆકાર પરિણત હોય છે  
ત્યારે જ જઈ ને તેનાથી ચૈતન્યની અભિવ્યક્તિ થાય છે. ” તો એવું કહેવું  
પણ એ માટે ઠીક નથી કે, લેપ્યમય પુતલીકામાં સમસ્ત ભૂતોનો સદ્ભાવ  
હોવા છતાં પણ ત્યાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી પરંતુ જડતાજ ઉપલબ્ધ  
થાય છે. કાર્યકારણ ભાવ અન્વય વ્યતિરેકના સદ્ભાવમાં જ બને છે. આ પ્રકાર  
અહિં ભૂત અને ચૈતન્યનો અન્વય વ્યતિરેક ઘટિત થતો નથી માટે ભૂતોનું  
કાર્ય ચૈતન્ય છે તે કોઈ પ્રકારે સિદ્ધ થતું નથી. આ માટે આ ચૈતન્ય શુધ્ધ

નાયં ચૈતન્યાख्यो गुणो भूतानां भवितुमर्हति । तस्मात् पारिशेष्याच्चैतन्यमात्मनो धर्म इति सिद्धान्तोऽनुसरणीयः ।

यदप्युक्तम्—आत्मनः प्रत्यक्षतोऽनुपलभ्यमानत्वादिति तदप्यसदेव, सर्वेषां स्वात्मा स्वप्रत्यक्ष एव, ज्ञानादीनामात्मगुणानां प्रत्यक्षानुभवात् घटमद्वं जानामीत्याद्यनुभवस्य सर्वसिद्धत्वात् । यथा घटादीनां रूपादयः प्रत्यक्षतयोपलभ्यन्ते, तथाऽऽत्मनोऽपि ज्ञानसुखादयो गुणाः कस्य न सन्ति प्रत्यक्षानुभवगोचराः, किंतु सर्वेषामाबालवृद्धानां प्रत्यक्षानुभवगोचराः सन्त्येव । उक्तं च—‘आत्मप्रत्यक्ष आत्माऽयम्’ इत्यादि ।

चैतन्य है यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता है इसलिये यह चैतन्यगुण पारिशेष्यात् (अनुमानविशेष से) आत्मा का ही एक धर्म है, इसी से आत्माका सद्भाव ख्यापित होता है यह सिद्धान्त अनुसरणीय है ।

तथा और भी जो ऐसा कहा है कि “आत्मा की प्रत्यक्ष से अनुपलब्धि होने की वजह से सत्ता ज्ञात नहीं होती है” सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि कि प्रत्येक संसारी जीवों को अपनी २ आत्मा का स्वानुभव से प्रत्यक्ष होता है, कारण कि उसके ज्ञानादिक गुणों का प्रत्यक्ष अनुभव होता रहता है । “मैं घट को जानता हूँ” यह अनुभव तो सब को ही होता है । जिस प्रकार घटादिकों के रूपादिक गुण प्रत्यक्ष से उपलब्ध हैं उसी प्रकार आत्मा के भी ज्ञानादिक गुण समस्त जीवों को प्रत्यक्ष से अनुभवित हो रहे हैं । ऐसा कोई भी जीव नहीं है चाहे वह बालक हो चाहे वृद्ध कि जिसे इन का प्रत्यक्ष से अनुभव न होता हो । कहा भी है—“आत्मप्रत्यक्ष आत्माऽयम्” इत्यादि ।

અનુમાન વિશેષથી આત્માનો જ એક ધર્મ છે. આથી જ આત્માનો સદ્ભાવ સ્થાપિત થાય છે. આ સિદ્ધાંત અનુસરણીય છે.

તેમ વધુમાં એમ પણ કહ્યું છે કે, “આત્માની પ્રત્યક્ષથી અનુપલબ્ધિ હોવાના કારણે સત્તા જ્ઞાત થતી નથી.” તેવું કહેવું પણ ઠીક નથી. કેમકે, પ્રત્યેક સંસારી જીવોને પોત પોતાના આત્માના સ્વાનુભવથી પ્રત્યક્ષ થાય છે. કારણ કે, તેને જ્ઞાનાદિક ગુણોનો પ્રત્યક્ષ અનુભવ થતો રહે છે.” હું ઘટને જાણું છું” આ અનુભવ તો દરેકને થાય છે. જેવી રીતે ઘટાદિકના તથા રૂપાદિકના ગુણ પ્રત્યક્ષથી ઉપલબ્ધ છે જેવી રીતે આત્માને પણ જ્ઞાનાદિક ગુણ સમસ્ત જીવોને પ્રત્યક્ષથી અનુભવિત થઈ રહે છે. એવો કોઈ પણ જીવ નથી, ભલે તે બાળક અથવા વૃદ્ધ હોય કે જેને તેનો પ્રત્યક્ષથી અનુભવ ન થતો હોય. કહ્યું છે કે—“આત્મ-પ્રત્યક્ષ આત્માઽયમ્” ઇત્યાદિ. જો આની ઉપર એમ કહેવામાં આવે કે,

નન્નુ ન ચં દૃષ્ટિગોચરો ભવતીત્યતો નાસ્તીત્યુચ્યતે ? નાયમપ્યેકાન્તઃ, ઉક્તં હિ—  
 “ન ચ નાસ્તીહ તત્ત સર્વં, ચક્ષુષા યન્ન ગૃહ્યતે ।” અન્યથા ચૈતન્યમપિ ન દૃષ્ટિ-  
 ગોચરીભવંતીતિ ભૂતધર્મત્વેન, તદપ્યસત્ સ્યાર્ । અથ યદિ તત્ સ્વસંવિદિતમ્, અતઃ  
 સદિત્યુચ્યતે, તર્હિ અપમાત્માઽપિ સ્વસંવિદિત એવ ભવતીતિ વિદ્યમાનો ભવતુ । યતઃ—  
 અસ્ત્યેવ ચાત્મા પ્રત્યક્ષો, જીવો હ્યાત્માનમાત્મના ।  
 અહમસ્મીતિ સંવેત્તિ, રૂપાદીનિ યથેન્દ્રિયૈઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

યદિ હસ પર યૉં કહા જાય કિ—“યહ આત્મા દૃષ્ટિગોચર નહીં  
 હોતા હૈં હસ લિયે યહ નહીં હૈં” સો યહ કથન એકાન્તતઃ સત્ય નહીં  
 માના જાં સકતા । “ન ચ નાસ્તીહ તત્સર્વં, ચક્ષુષા યન્ન ગૃહ્યતે”  
 જો ચક્ષુ સે ગૃહીત નહીં હોતા હૈં વહ નહીં હૈં, એસા મત કહો, અર્થાત્  
 જો વસ્તુ ચક્ષુ સે નહીં દિખાઈ દે વહ મી હૈં એસા કહો । નહીં તો તુમ્હારે  
 મતસે ચૈતન્ય મી દૃષ્ટિગોચર નહીં હોતા હૈં અતઃ વહ ભૂત કા ધર્મ હૈં  
 યહ ઘાત અસત્ માનની પડેગી । હસ પર યદિ યહ કહા જાય કિ “વહ તો  
 સ્વસંવેદન પ્રત્યક્ષ કા વિષય હૈં અતઃ ઉસે સત્ માન લિયા જાવેગા” તો  
 આત્મા મી સ્વસંવેદિત હૈં હસ લિયે હસે મી સત્ માનના ચાહિયે ।

યતઃ—“અસ્ત્યેવ ચાત્મા પ્રત્યક્ષો, જીવો હ્યાત્માનમાત્મના ।

અહમસ્મીનિ સંવેત્તિ, રૂપાદીનિ યથેન્દ્રિયૈઃ ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ અત્મા પ્રત્યક્ષ સે હૈં કયૉં કિ જીવ હી આત્મા સે આત્મા કો  
 “મૈં હૂં” હસ પ્રકાર સંવેદન (અનુભવ) કરતા હૈં, જૈસે ઇન્દ્રિયૉં સે રૂપાદિકકા

“આત્મા દૃષ્ટાગોચર થતો નથી માટે આ નથી” તો આ કહેવું એકાન્તતઃ  
 સત્ય માનવામાં આવતું નથી. “ન ચ નાસ્તીહ તત્સર્વં ચક્ષુષા યન્ન ગૃહ્યતે” જે  
 ચક્ષુથી ગૃહીત થતું નથી, તે નથી. એવું ન કહેા. અર્થાત્ જે વસ્તુ ચક્ષુથી  
 ન દેખાય તે પણ છે એમ કહેા નહીં તો તમારા મતથી ચૈતન્ય પણ દૃષ્ટીગોચર  
 થતું નથી. માટે તે ભૂતનો ધર્મ છે એ વાત અસત્ય માનવી પડશે. આ ઉપર  
 જે કહાય એમ કહેવામાં આવે કે, “તે તો સ્વસંવેદન પ્રત્યક્ષનો વિષય છે  
 આથી એને સાચું માની લેવામાં આવે” તો આત્મા પણ સ્વસંવેદિત છે આ  
 માટે તેને પણ સત્ માનવો જોઈ એ. કહ્યું પણ છે—

“અસ્ત્યેવ ચાત્મા પ્રત્યક્ષો, જીવો હ્યાત્માનમાત્મના ।

અહમસ્મીતિ સંવેત્તિ, રૂપાદીનિ યથેન્દ્રિયૈઃ ॥ ૧ ॥”

અર્થાત્—આત્મા પ્રત્યક્ષથી છે. કેમકે, જીવજ આત્માથી આત્માને “હું છું” આ  
 પ્રકારનો સંવેદન (અનુભવ) કરે છે. જેમ ઇન્દ્રિયોથી રૂપ આદિનું સંવેદન થાય છે.

અલમધિકેન, યથા ચૈતન્યમસ્તીતિ મન્યતે, તથા ઽઽત્માઽસ્તીત્યપિ મન્તવ્યઃ ।  
તથા ચોક્તમ્—

જ્ઞાનં સ્વસ્થં પરસ્થં વા યથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતે ।

જ્ઞાતા સ્વસ્થઃ પરસ્થો વા, તથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતામ્ ॥ ૧ ॥

અથાઽઽત્મસત્ત્વે તદભાવે સર્વસમ્બન્ધ્યનુપલમ્ભસ્ય હેતુત્વં ન સમ્ભવતીત્યુચ્યતે,  
યતોઽયમપ્યસિદ્ધો હેતુઃ, અહમસ્મીત્યનુભવસ્ય સદ્ભાવાત્, સર્વેભાં પ્રાણિનાં હિ સ્વસ્ય  
સ્વસ્યાત્મનં ઉપલમ્ભઃ પ્રતિપેદ્યુમશક્યઃ, કેવલિનાં ચ સર્વાત્મનામુપલંભઃ પ્રતિપેદ્યુપશક્યઃ ।

સંવેદન હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઉક્ત કથન સે ચૈતન્ય કા સદ્ભાવ માના  
જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર આત્માકા ભી સદ્ભાવ માનના ચાહિયે । કહા ભી હૈ—

“ જ્ઞાનં સ્વસ્થં પરસ્થં વા, યથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતે ।

જ્ઞાતા સ્વસ્થો પરસ્થો વા, તથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતામ્ ” ॥ ૧ ॥

જિસ પ્રકાર અપને મેં રહા હુઆ જ્ઞાન, તથા દૂસરે મેં રહા હુઆ જ્ઞાન,  
જ્ઞાન સે જાના જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર અપને ઓર દૂસરે મેં રહે હુઆ જ્ઞાતા  
( આત્મા ) કો ભી જ્ઞાન સે ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે ॥ ૧ ॥

આત્મા કે અભાવ મેં જો અનુપલમ્ભરૂપ હેતુ દિયા ગયા હૈ । સો  
આત્મા કા અનુપલંભ સવ કો હોતા હૈ, યદિ એસા કહા જાય તો યહ હેતુ  
અસિદ્ધ હો જાતા હૈ, ક્યોં કિ સવ કો આત્મા કા અનુપલમ્ભ હૈ એક  
તો યહ વાત ઇન્દ્રિયજન્ય પ્રત્યક્ષ સે જાન નહીં સકતે દૂસરે પ્રત્યેક પ્રાણી  
કો “ અહમસ્મિ ” ઇત્યાકારક સ્વસંવેદનરૂપ પ્રત્યક્ષ સે ઉસ કી ઉપલબ્ધિ

જે રીતે આ કથનથી ચૈતન્યનો સદ્ભાવ માની લેવામાં આવે એજ રીતે  
આત્માનો પણ સદ્ભાવ માનવો જોઈએ. ઇહું પણ છે—

“ જ્ઞાનં સ્વસ્થં પરસ્થં વા, યથાજ્ઞાનેન ગૃહ્યતે ।

જ્ઞાતા સ્વસ્થો પરસ્થો વા, તથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતામ્ ॥ ૧ ॥ ”

જે રીતે પોતાનામાં રહેલું જ્ઞાન તથા બીજામાં રહેલું જ્ઞાન જ્ઞાનથી જાણી  
શકાય છે એવી રીતે પોતામાં અને બીજામાં રહેલા આત્માને પણ જ્ઞાનથી  
સમજી લેવો જોઈએ.

આત્માના અભાવમાં જે અનુપલમ્ભરૂપ હેતુ આપેલ છે તે આત્માનો  
અનુપલંભ કરેકને થાય છે. તેલું જો કહેવામાં આવે તો આ હેતુ અસિદ્ધ બની  
જાય છે કેમકે, સઘળાને આત્માનું અનુપલંભ છે. એક તો આ વાત ઇન્દ્રિય-  
જન્ય પ્રત્યક્ષથી જાણી નથી શકાતાં બીજા પ્રત્યેક પ્રાણીને “ અહમસ્મિ ” ઇત્યાદિ

યદપિ-ઋદ્ધિર્વા તપસ્યિનો નાસ્તીત્યુક્તં, તદપિ નિષ્પમાણકમ્ । ઋદ્ધેરમાવેઽ-  
નુપલમ્ભો હેતુરુક્તઃ સોઽપિ સ્વસમ્બન્ધો, સર્વસમ્બન્ધી વા ? તત્ર સ્વસમ્બન્ધી નિ-  
યતદેશકાલાપેક્ષયાઽન્યથા વાઽનુપલમ્ભઃ સ્યાત્, તત્ર પ્રથમપક્ષે ક્વચિત્ કદાચિત્  
પશ્ચમારકાપેક્ષયા ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા ઋદ્ધેરનુપલમ્ભસ્યોપલમ્ભસ્ય ચાસ્માકમપિ સંમ-  
તત્વાત્ । દ્વિતીયપક્ષે તુ હેતોરનૈકાન્તિકતા, યથા દેશવિપ્રકૃષ્ટાનાં મેરુપ્રભૃતીનાં  
કાલવિપ્રકૃષ્ટાનાં પિતામહાદીનામનુપલમ્ભેઽપિ સત્ત્વાત્ । દૃશ્યતે ચ ક્વચિત્ કદાચિ-  
લ્લવિધિપ્રભાવાચરણધૂલિસ્પર્શાદિ માત્રેણ વ્યાધિ પ્રશમનાદિઃ । તતથ્વેહાઽપિ ભરતાદૌ  
હોતી હૈ । કેવલિયોંકો તો સવ આત્માકા ઉપલમ્ભ હોતા હૈ, યહ  
તો નિપેધ નહીં કિયા જા સકતા ।

તથા લવિધિયોંકો અસત્તા પ્રકટ કરને કે લિયે મી આપને જો  
અનુપલંભરૂપ હેતુ કહા હૈ સો વહ મી ટીક નહીં હૈ । યહાં પર અનુપ-  
લંભ સ્વસંબંધી ગ્રહણ કિયા હૈ યા સર્વસંબંધી । સ્વસંબંધી અનુપલંભ મી  
કૈસા ? નિયતદેશકાલાપેક્ષ, અથવા અનિયતદેશકાલાપેક્ષ ? પ્રથમપક્ષ મેં  
સિદ્ધસાધનતા હૈ । અર્થાત્ યહ વાત તો હમ મી માનતે હૈં કિ હસ પંચમ-  
કાલ કે અંદર ભરતક્ષેત્ર મેં લવિધિયોંકા અનુપલમ્ભ હૈ । દ્વિતીયપક્ષ  
મેં હેતુ અનૈકાન્તિક હૈ । દેશવિપ્રકૃષ્ટ મેર્વાદિકોંકા, કાલવિપ્રકૃષ્ટ  
પિતામહ આદિકોંકા અનુપલમ્ભ હોને પર મી ઉનકા સદ્ભાવ માના  
જાતા હૈ । કહીં ૨ કમો ૨ લવિધિ કે પ્રભાવ સે ચરણધૂલિ કે સ્પર્શ  
આદિ કરને માત્ર સે વ્યાધિ કી શાંતિ હોતી હુઈ દેખી જાતી હૈ । ઉસી  
તરહ યહાં ભરત આદિ ક્ષેત્રોં મેં મી પહિલે સમય મેં લવિધિયોંકા સદ્ભાવ

કારણે સ્વ સંવેદન રૂપ પ્રત્યક્ષથી તેની ઉપલબ્ધિ થાય છે. કેવલીઓને તો બધા  
આત્માનો ઉપલંભ થાય છે. આનો તો નિપેધ થઈ શકે તેમ નથી.

અર્થાત્—ઋદ્ધિઓની અસત્તા પ્રગટ કરવા માટે પણ આપે જે અનુપ-  
લંભ રૂપ હેતુ કહેલ છે તે પણ ઠીક નથી. આ સ્થળે અનુપલંભ સ્વ સંબંધી  
અહણ કરેલ છે, કે સર્વ સંબંધી ? સ્વ સંબંધિ અનુપલંભ પણ કેવો ?  
નિયત દેશકાળ અપેક્ષ કે અનિયત દેશકાળ અપેક્ષ. પ્રથમ પક્ષમાં સિદ્ધ સાધ-  
નતા છે. અર્થાત્ એ વાત અમે પણ માનીએ છીએ કે, આ પંચમકાળની અંદર  
ભરતક્ષેત્રમાં ઋદ્ધિઓના અનુપલંભ છે. બીજા પક્ષમાં હેતુ અનૈકાન્તિક છે.  
દેશવિપ્રકૃષ્ટ મેર્વાદિકોંકા કાલવિપ્રકૃષ્ટ પિતામહ આદિકોંકા અનુપલંભ હોવા  
છતાં પણ તેનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે છે. કોઈ કોઈ સ્થળે કદી કદી લવિધિના  
પ્રભાવથી ચરણરજનો સ્પર્શ આદિ કરવા માત્રથી વ્યાધિની શાંતિ થતી જોવામાં  
આવે છે. એજ રીતે અહિં ભરત આદિ ક્ષેત્રોમાં પણ પહેલા સમયમાં લવિધિ-

કાલાન્તરેઽતીતે કાલે, મહાવિદેહેષુ ચ સર્વકાલમૃદ્ધીનામપિ સદ્ભાવાત્ । સર્વસમ્બન્ધી અનુપલમ્ભસ્તુ અસિદ્ધ એવ ।

યદપિ “કામસુખાદ્ વચ્ચિતોઽસ્મી”-ત્યુક્તં તદપ્યસમીક્ષિતમ્, વિપયસુખં હિ રાગદ્વેષમોહજનનદ્વારેણ અતૃપ્તિકાંક્ષાશોકવિપાદાદિભિર્વિવિધકર્મવન્ધ્યહેતુત્વેન ચ ચતુર્ગતિભ્રમણકારકત્વેન વહુલદુઃસ્વજનકત્વાત્ પ્રેક્ષાયતાં તત્ત્વવેદિનામનુપાદેયમ્ । વિપસંપૃક્તાઽન્નસદૃશં કામસુખં કસ્ય વિવેકિનો મનો રમયેત્, ન કસ્યાપિ ।

યદપિ-તપસો યાતનાત્મકત્વમુક્તં, તદપ્યસત્-સકલદુઃસ્વમૂઢકર્મક્ષયહેતુત્વાત્, મનઃન્દ્રિયયોગાનામહાનિકારકત્વેન તપસો યથાશક્તિ વિધાનાત્ । ઉક્તં હિ—

થા તથા વિદેહક્ષેત્ર મેં સર્વદા લલ્લિયોં કા સદ્ભાવ રહતા હૈ । સર્વસંબંધી અનુપલમ્ભ તો અસિદ્ધ હી હૈ, અર્થાત્ સર્વસમ્બન્ધી અનુપલંભ લલ્લિયોં કી અભાવાત્મકતા પ્રકટ કરને મેં અસમર્થ હૈ ।

“મેં કામસુખ સે વંચિત હો ગયા હું” જો યહ્ ઘાત કહી હૈ વહ્ બી ઠીક નહીં હૈ ક્યોં કિ વિપયસુખ રાગદ્વેષ મોહ કી ઉત્પત્તિ કા કારણ હોને સે, અતૃપ્તિ, કાંક્ષા, શોક એવં વિપાદ આદિ કો ઉત્પન્ન કરતે રહતે હૈ, इनसे विविध कर्मों का बंध होता रहता है, उस के उदय से जीव चारों गतियों में भ्रमण करता २ अनेक दुःखपरम्परा को वहां भोगता रहता है, अतः काम को सुख मानना यह भ्रम है । इसी लिये तत्त्वज्ञानियों के लिये ये उपादेय नहीं हैं । विचार किया जाय तो विषमिश्रित अन्नकी तरह ये कामसुख किस विवेकी के मन को आनंद पहुँचा सकते हैं, अर्थात् किसी को भी नहीं । तप को यातनात्मक कहना इसलिये अनु-

ઓનો સદ્ભાવ રહે છે. સર્વસંબંધી અનુપલંભ તો અસિદ્ધ જ છે. અર્થાત્ સર્વસંબંધી અનુપલંભ ઋદ્ધિઓની અભાવાત્મકતા પ્રકટ કરવામાં અસમર્થ છે.

“હું કામસુખથી વંચિત બની ગયો છું” આ વાત કહી છે તે પણ ઠીક નથી. કેમકે, વિપયસુખ રાગદ્વેષ મોહની ઉત્પત્તિનું દ્વાર હોવાથી અતૃપ્તિકાંક્ષા સુખ શોક અને વિપાદ આદિને ઉત્પન્ન કરતાં રહે છે, તેનાથી વિવિધ કર્મોનો બંધ થતો રહે છે. તેના ઉદયથી જીવ ચારે ગતીઓમાં ભ્રમણ કરતાં કરતાં અનેક દુઃખ પરંપરાને ત્યાં ભોગવતો રહે છે. માટે કામને સુખ માનવું એ ભ્રમ છે. આથી તત્ત્વજ્ઞાનીઓ માટે એ ઉપાદેય નથી. વિચારવામાં આવે તો વિષમિશ્રીત અન્નની માફક એ કામ સુખ કયા વિવેકીના મનને આનંદ પહોંચાડી શકે છે? અર્થાત્ કોઈને પણ નહીં. તપને યાતનાત્મક કહેવું એ માટે અનુચિત છે કે, એનાથી કોઈને પણ કંઈ પહોંચતું નથી. કારણે તે



मनइन्द्रिययोगाना,—महानिः कथिता जिनैः ।

यतोऽत्र तत्कथं तस्य, युक्ता स्याद् दुःखरूपता ॥ १ ॥

केशलुञ्चनादीनामपि किञ्चित् पीडाजनकत्वेऽपि समीहितार्थप्रापकत्वेन दुःखं दायकत्वं नास्ति । तदुक्तम्—

“ दृष्टा चेष्टार्थसंसिद्धौ, कायपीडाऽप्यदुःखदा ।

रत्नादिवणिगादीनां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ” ॥ १ ॥

चित है कि उस से किसी को भी कष्ट नहीं पहुंचता है प्रत्युत यह सकल दुःखों के मूल कारण कर्मों का क्षय करनेवाला है । मन, इन्द्रिय तथा, योग इन को हानि न पहुंचने पावे इस रूप से यथाशक्ति तपस्या करने का विधान है । कहा भी है—

मनइन्द्रिययोगाना,—महानिः कथिता जिनैः ।

यतोऽत्र तत्कथं तस्य, युक्ता स्यात् दुःखरूपता ॥ १ ॥

तपमें मन और इन्द्रियों के योगों की हानि नहीं होती है, ऐसा भगवानने फरमाया है तो फिर तपमें दुःखरूपता कैसे मानी जाय, अर्थात् तप दुःखरूप नहीं है किन्तु सुखरूप है ॥ १ ॥

यद्यपि केशलुञ्चन आदि क्रियाएँ किञ्चित् पीडाजनक हैं तो भी समीहित अर्थ की सिद्धिके कारण होने से उनमें सर्वथा दुःखदायकता नहीं है । कहा भी है—

दृष्टा चेष्टार्थसंसिद्धौ, कायपीडाऽप्यदुःखदा ।

रत्नादिवणिगादीनां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ॥ १ ॥

सकल दुःखोंनुं भूण कारण अने कर्मोंने क्षय करनार छे. मन इन्द्रिय तथा योग अने हानि न पहुँचै तेवा रूपथी यथाशक्ति तपस्या करवानुं विधान छे. कह्युं पण्य छे—

मनइन्द्रिययोगाना,—महानिः, कथिता जिनैः ।

यतोऽत्र तत्कथं तस्य, युक्ता स्यात् दुःखरूपता ॥ १ ॥

तपमां मन अने इन्द्रियोंना योगोनी हानि यती नथी अणुं भगवाने फरमाव्युं छे. तो पछी तपमां दुःखरूपता केम मानवामां आवे ? अर्थात् तप दुःख रूप नथी परंतु सुखरूप छे.

केश लुञ्चन आदि क्रियाओ नो के पीडाजनक कहेवाय छे तो पण्य समीहित सिद्धिनुं कारण होवाथी तेनामां सर्वथा दुःखदायकता नथी. कह्युं पण्य छे—

दृष्टा चेष्टार्थ संसिद्धौ, कायपीडाऽप्यदुःखदा ।

रत्नादिवणिगादीनां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ॥ १ ॥

इत्थमत्रानुमानप्रयोगः—यत् इष्टार्थप्रसाधकं, न तत् कायपीडाकरत्वेऽपि दुःखदायकं, यथा रत्नवणिजामध्वश्रमादि । इष्टार्थप्रसाधकं च तपः। न चाऽस्याप्यसिद्धता, प्रशम-हेतुत्वेन तपस्तत्परिपक्तितारतम्यात् परमानन्दतारतम्यस्यानुभूयमानत्वेन तत्प्रकर्षे तस्यापि प्रकर्षाऽनुमानात् । प्रयोगश्च—यत्तारतम्येन यस्य तारतम्यं तस्य प्रकर्षे तत्प्रकर्षः, यथाऽग्नितापप्रकर्षे काञ्चनविशुद्धिप्रकर्षः, अनुभूयते च प्रशमतारतम्येन परमानन्दतारतम्यम्, लोकप्रतीतत्वाच्च ॥ ४४ ॥

इसलिये ऐसा अनुमान बनाना चाहिये कि जो इष्ट अर्थ का प्रसाधक होता है वह काय का पीड़ा कारक होने पर भी दुःखदायक नहीं होता है, जैसे रत्नव्यापारियों का मार्गश्रम देशाटन का परिश्रम, इसलिये तप भी इष्ट अर्थ का प्रसाधक है अतः यह भी दुःखदायक नहीं है । तप में इष्टार्थप्रसाधकता असिद्ध नहीं है, क्यों कि तप प्रशम का हेतु है । तप द्वारा प्रशमभाव की जैसी २ तरतमता आत्मा में होगी वैसी २ परमानन्द की तरतमता भी आत्मा में अनुभवित होगी इसलिये प्रशम के प्रकर्ष में परमानन्द का भी प्रकर्ष अनुमित होता है । जैसे अग्नि के ताप के प्रकर्ष में काञ्चन की विशुद्धि का प्रकर्ष, प्रयोग से देखा जाता है । अतः परम्परा रूप से तप इष्ट अर्थ का प्रसाधक सिद्ध होता है, क्यों कि तप प्रशम का कारण, प्रशम परमानन्द का कारण इस प्रकार बनता है ॥ ४४ ॥

આ માટે એવું અનુમાન બનાવવું જોઈએ કે, જે ઇષ્ટ, અર્થના પ્રસાદક હોય છે—તે કાયાને પીડા કારક હોવા છતાં પણ દુઃખ દાયક થતા નથી. જેમકે રત્નવ્યાપારીઓનો માર્ગશ્રમ દેશાટનનો પરિશ્રમ—આ માટે તપ પણ ઇષ્ટ અર્થનો પ્રસાદક છે. માટે એ પણ દુઃખદાયક નથી. તપમાં ઇષ્ટાર્થ પ્રસાધકતા અસિદ્ધ નથી, કેમકે, તપ પ્રશમનો હેતુ છે. તપ દ્વારા પ્રશમભાવની જેવી જેવી તારતમ્યતા આત્મામાં હશે તેવી તેવી પરમાનંદની તરતમતા પણ આત્મામાં અનુભવિત થશે. આ માટે પ્રશમના પ્રકર્ષમાં પરમાનંદનો પણ પ્રકર્ષ અનુમિત થાય છે. જેમ અગ્નિના તાપના પ્રકર્ષમાં કાંચનની શુદ્ધિનો પ્રકર્ષ પ્રયોગથી દેખાય છે. આથી પરંપરા રૂપથી તપ પ્રશમનું કારણ, પ્રશમ પરમાનંદનું કારણ આ પ્રકારથી બને છે ॥ ૪૪ ॥

તથા—

મૂલમ્—અમૂ જિણા અતિથિ જિણા, અદુવા વિ ભવિસ્સઈ ।

મુંસં તે એવ મોહંસુ, ઈંઈ મિક્કંઘૂ નં ચિંતં ॥ ૪૫ ॥

છાયા—અમૂવન્ જિનાઃ સન્તિ જિનાઃ, અથવાઽપિ ભવિષ્યન્તિ ।

મૃષા તે એવાહુઃ, ઇતિ મિક્કુર્ન ચિન્તયેત્ ॥ ૪૫ ॥

ટીકા—‘અમૂ જિણા’ ઇત્યાદિ ।

જિનાઃ—રાગાદિજયિનઃ—કેવલિનઃ, અમૂવન્ અતીતકાલે, ‘જિનાઃ સન્તિ’=વર્તમાનકાલે જિના વિદ્યન્તે વિદેહેષુ ઇત્યર્થઃ । અથવા—જિના ભવિષ્યન્તિ, ભરતાદિષુ ઇત્યપિ । અપિ શબ્દો મિત્રક્રમઃ, તે=જિનાસ્તિત્વવાદિનઃ, એવમ્=ઉક્તરીત્યા મૃષા=મિથ્યા-અલીકમ્, અસત્યમર્થમ્, આહુઃ=વદન્તિ, ઇતિ મિક્કુર્ન ચિન્તયેત્, અનુમાનાદિ પ્રમાણૈર્જિનાનાં કાલત્રયવર્તિત્વસિદ્ધેઃ ।

અયં ભાવઃ—મિથ્યાત્વમોહનીયોદયપ્રભાવાત્ કથંચિદસમ્યક્ત્વે સમુત્પન્ને પ્રત્યક્ષા-

તથા—‘અમૂ જિણા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(જિણા-જિનાઃ) રાગાદિક કે જીતને વાંલે કેવલી ભગવાન્ (અમૂ-અમૂવન્) અતીતકાલ મેં હુવે હેં (જિણા અતિથિ-જિનાઃ સન્તિ) વર્તમાનકાલ મેં જિન હેં (અદુવા વિ ભવિસ્સઈ-અથવાઽપિ ભવિષ્યતિ) અથવા ભવિષ્યત્કાલ મેં હોંગે । (એવં-એવમ્) હસ પ્રકાર જો કહતે હેં (તે મુંસં આહંસુ-તે મૃષા આહુઃ) વે મિથ્યા કહતે હેં, (ઈંઈ મિક્કંઘૂ ન ચિંતં-ઇતિ મિક્કુઃ ન ચિન્તયેત્) હસ પ્રકાર મિક્કુ વિચાર નહોં કરે, કારણ કિ અનુમાનાદિક પ્રમાણોં સે જિનકા ત્રિકાલ મેં અસ્તિત્વ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—આત્મામેં જવ મિથ્યાત્વમોહનીયકાઉદયરહતા હૈ તવ ઉસંકે

તથા—‘અમૂ જિણા’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—જિણા-જિનાઃ રાગાદિનને જીતનાર કેવલી ભગવાન્ અમૂ-અમૂવન્ અતીતકાળમાં થયા છે જિણા અતિથિ-જિનાઃ સન્તિ વર્તમાનકાળમાં જીન છે અદુવા વિ ભવિસ્સઈ-અથવાઽપિ ભવિષ્યતિ અથવા ભવિષ્યત્ કાળમાં થશે એવં-એવમ્ આ પ્રકારનું જે કહેવામાં આવે છે તે મુંસં આહંસુ-તે મૃષા આહુઃ તે મિથ્યા કહે છે. ઈંઈ મિક્કંઘૂ ન ચિંતં-ઇતિ મિક્કુઃ ન ચિન્તયેત્ આ પ્રકારનો વિચાર મિક્કુ ન કરે. કારણ કે, અનુમાનાદિક પ્રમાણોથી જેનું ત્રિકાળમાં અસ્તિત્વ સિદ્ધ થયું છે.

ભાવાર્થ—આત્મામાં જ્યારે મિથ્યાત્વ મોહનિયનો ઉદય હોય છે ત્યારે તેના

દિપમાણેઃ સદ્ભાવનયાં તન્નિરાકૃત્ય સમ્યક્ચરણે નૈવ દર્શનપરીપહઃ સોઢવ્ય ઇતિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

અવન્તીનગર્યાં વૈશ્રવણાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ સમવસૃતઃ । તસ્ય દૃઢમતિ નામકઃ શિષ્ય આસીત્, સ ઉગ્રતપસ્વી ઉગ્રવિહારી ઉત્કૃષ્ટક્રિયાપાલકશાસીત્, અન્તપ્રાન્તઆહારેણાવમોદરિકાદિ તપઃ કરોતિ, વીરાસનાદિકં કરોતિ, ગ્રીષ્મકાલે પ્રચણ્ડસૂર્યાતાપનાં સેવતે । શીતકાલે શીતસ્પર્શં સહતે સ્મ, કેવલં ચોલપટ્કં, મુલો-

પ્રભાવ સે સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ કા અભાવ હોને પર જીવ એસા માનતા હૈ કિ જિન આદિ પરોક્ષપદાર્થ નહીં હૈ । અતઃ उनका प्रत्यक्ष न होने पर भी अन्य अनुमानादिक प्रमाणों द्वारा उनकी सत्ता सिद्ध होती है, इसलिये उनकी सद्भावना से उनकी असंभावनारूप मिथ्यात्व-परिणति का परिहार करते हुए साधु को अपने सम्यक्त्व का रक्षण करते रहना चाहिये । इसी का नाम दर्शनपरीपह जय है ।

દૃષ્ટાન્ત—વૈશ્રવણાચાર્ય અપને શિષ્ય પરિવાર કે સાથ વિહાર કરતે હુણ કિસી સમય અવન્તી નગરી મેં પધારે । उन शिष्यों में दृढमति नाम का एक शिष्य था जो उग्रतपस्वी, उग्रविहारी एवं उत्कृष्ट-रूप से प्रत्येक क्रिया का पालन करता था । अन्त प्रान्त आहार से यह अवमोदरिका आदि तपों को तपता था । वीरासन आदि आसनों को करता था । ग्रीष्मकाल में प्रचण्ड सूर्य की अतापना लेता था । शीत-काल में शीतस्पर्श को सहता था । केवल चोलपटक तथा मुख पर

પ્રભાવથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાના કારણે જીવ એવું માને છે કે, જીવ આદિ પરોક્ષપદાર્થ નથી. આથી તે પ્રત્યક્ષ ન હોવાથી અન્ય અનુમાનાદિક પ્રમાણો દ્વારા તેની સત્તા સિદ્ધ હોય છે. આ માટે તેની સદ્ભાવનાથી તેની અસંભવતારૂપ મિથ્યાત્વ પરિણતિનો પરિહાર કરીને સાધુએ પોતાના સમ્યક્ત્વનું રક્ષણ કરતા રહેવું જોઈએ તેનું નામ દર્શનપરીપહ જય છે.

દૃષ્ટાન્ત—વૈશ્રવણાચાર્ય પોતાના શિષ્ય પરિવાર સાથે વિહાર કરતાં કરતાં એક સમય અવન્તી નગરીમાં પધાર્યા. તેમના શિષ્યોમાં દૃઢમતિ નામે એક શિષ્ય હતો. જે ઉગ્રતપસ્વી, ઉગ્રવિહારી અને ઉત્કૃષ્ટ રૂપથી પ્રત્યેક ક્રિયાઓનું પાલન કરતો હતો. અન્તપ્રાન્ત આહારથી તે અવમોદરિકા આદિ તપ તપતો હતો. વીરાસન આદિ આસનો કરતો હતો, ગ્રીષ્મકાળમાં પ્રચંડ સૂર્યની આતાપના લેતો હતો, શીતકાળમાં ઠંડીના સ્પર્શને સહન કરતો, ફક્ત ચોલપટ્ટો અને

પરિ સદોરકમુખવસ્ત્રિકાં ચ વિભ્રત્, સંપૂર્ણશરીરમનાવૃતં કૃત્વા હેમન્તે રાત્રી ઉત્થિતાં  
 એવ તિષ્ઠતિ, જિનવચને સમ્યક્ શ્રદ્ધાહુરાસીત્ ।

... એકદા કથિનિમિથ્યાત્વી દેવસ્ત્રનાગત્ય વૈક્રયિકં નન્દનવનમિવોદ્યાનં પ્રદર્શ્ય,  
 દૃઢમતિમુનિમત્રવીત્ - હે મુને ! અસ્યામાતાપનાયાં કો લાભઃ, કિં નિરર્થકમેતત્  
 કષ્ટં વહસિ, નાસ્તિ પરલોકઃ, આગમ્યતામ્, મયા સહાસ્ય નન્દનવનસમાનોદ્યાનસ્ય  
 સુખમનુભૂયતામ્ । યદાસૌ દૃઢમતિમુનિર્વીરાસનમધ્યાસ્તે, તદા વૈક્રિયપુષ્પશય્ય-  
 પ્રદર્શ્ય સ દેવો વદતિ-અત્રાસ્યતામ્, કિમર્થં કષ્ટમાવહસિ, નાસ્તિ પરલોકઃ । યદા-  
 સૌ તપસ્યતિ, તદા સ દેવઃ સ્વૈક્રિયશક્ત્યા વિવિધં મિષ્ટાન્નં નિર્માય તસ્ય વુમ્બુક્ષામુ-

સંદોરકમુખવસ્ત્રિકા કો ધારણ કર એવં સમસ્ત શરીર કો અનાવૃત રક્ષ-  
 કર હેમન્ત ઋતુ મેં રાત્રિ કે સમય કો લહે ૨ વ્યતીત કરતા થા ।  
 જિનવચન મેં હસે અપ્રતિમ શ્રદ્ધા થી ।

એક સમય કી વાત હૈ કિ કોઈ મિથ્યાત્વી દેવ વહાં આયા ઓર  
 ઉસને અપની વૈક્રિયશક્તિ સે નંદનવનકે સમાન એક ઉદ્યાન કી રચના  
 કર દૃઢમતિ મુનિ સે કહા હૈ મુને ! હસ આતાપના સે કયા લાભ હૈ ।  
 નિરર્થક આપ હસ કષ્ટ કો સહન કરતે હો । પરલોક આદિ કુછ ભી  
 નહીં હૈ, અતઃ આઓ ઓર મેરે સાથ હસ નંદનવન કે સમાન ઉદ્યાન  
 કે સુખ કા યથેચ્છ અનુભવ કરો । જિસ સમય દૃઢમતિ મુનિ વીરાસન  
 સે વિરાજતે તો વહ દેવ વૈક્રિયપુષ્પશય્યા કી રચના કર ઉનસે કહતા  
 કિ હસ આસન મેં બેઠને મેં કયા લાભ હૈ હસ પુષ્પ કી શય્યા  
 પર આપ વિરાજો । જિસ કો લક્ષિત કર વહ આપ કર રહે હો, હૈ મુનિ  
 વહ કુછ ભી નહીં હૈ । હસી તરહ જવ વહ તપ તપતે તો વહ અપની

સંદોરકમુખવસ્ત્રિકાને ધારણ કરી સારાએ શરીરને ખુલ્લું રાખી હેમન્ત ઋતુમાં

રાત ભર ઉભે પગે રહેતો હતો, જીન વચનમાં એને અપ્રતિમ શ્રદ્ધા હતી.

એક સમયની વાત છે કે, કોઈ મિથ્યાત્વી દેવ ત્યાં આવ્યો અને તેણે  
 પોતાની વૈક્રિયશક્તિથી નંદનવન જેવું સુંદર ઉદ્યાન બનાવી દીધું. અને દૃઢમતિ  
 મુનિને કહ્યું કે, હે મુનિ ! આ આતાપનાથી શું લાભ છે ? નિરર્થક આપ આ  
 કષ્ટને સહન કરો છો ! પરલોક વગેરે કંઈ પણ નથી. આથી ભારી સાથે આવો  
 અને આ નંદનવન સમાન ઉદ્યાનના સુખનો યથેચ્છ અનુભવ કરો. જે સમયે  
 દૃઢમતિ મુનિ વીરાસનમાં વિરાજીત થતા ત્યારે તે દેવ વૈક્રિય પુષ્પશય્યાની  
 રચના કરી એનાથી કહેતો કે, આ આસનથી બેસવામાં કયો લાભ ? આ પુષ્પની  
 શેયા ઉપર આપ બીરાજો. જેનું લક્ષ કરીને આપ આ બધું કરી રહ્યા છો તેવું  
 હે મુનિ કંઈ છે જ નહીં. આ રીતે તપ તપતા ત્યારે પણ તે દેવ પોતાની

દિપમાણેઃ સદ્ભાવનયા તન્નિરાકૃત્ય સમ્યક્ત્વરક્ષણેનૈવ દર્શનપરીપહઃ સોદ્યમ્ય ઇતિ ।  
અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

અવન્તીનગર્યાં વૈશ્રવણાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ સમવસતઃ । તસ્ય દૃઢમતિ  
નામકઃ શિષ્ય આસીત્, સ ઉગ્રતપસ્વી ઉગ્રવિહારી ઉત્કૃષ્ટક્રિયાપાલકમાસીત્,  
અન્તપ્રાન્તઆહારેણાવમોદરિકાદિ તપઃ કરોતિ, વીરાસનાદિકં કરોતિ, ગ્રીષ્મકાલે  
પ્રચણ્ડસૂર્યાતાપનાં સેવતે । શીતકાષ્ઠે શીતસ્પર્શ સહતે સ્મ, કેવલં ચોલપટ્કં, મુલો-

પ્રભાવ સે સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ કા અભાવ હોને પર જીવ એસા માનતા  
હૈ કિ જિન આદિ પરોક્ષપદાર્થ નહીં હૈં । અતઃ उनका प्रत्यक्ष न होने  
पर भी अन्य अनुमानादिक प्रमाणों द्वारा उनकी सत्ता सिद्ध होती  
है, इसलिये उनकी सद्भावना से उनकी असंभावितारूप मिथ्यात्व-  
परिणति का परिहार करते हुए साधु को अपने सम्यक्त्व का रक्षण  
करते रहना चाहिये । इसी का नाम दर्शनपरीपह जय है ।

દૃષ્ટાન્ત—વૈશ્રવણાચાર્ય અપને શિષ્ય પરિવાર કે સાથ વિહાર  
કરતે હુણ કિસી સમય અવન્તી નગરી મેં પધારે । ઉન શિષ્યોં મેં  
દૃઢમતિ નામ કા એક શિષ્ય થા જો ઉગ્રતપસ્વી, ઉગ્રવિહારી એવં ઉત્કૃષ્ટ-  
રૂપ સે પ્રત્યેક ક્રિયા કા પાલન કરતા થા । અન્ત પ્રાન્ત આહાર સે યહ  
અવમોદરિકા આદિ તપોં કો તપતા થા । વીરાસન આદિ આસનોં કો  
કરતા થા । ગ્રીષ્મકાલ મેં પ્રચણ્ડ સૂર્ય કી અતાપના લેતા થા । શીત-  
કાલ મેં શીતસ્પર્શ કો સહતા થા । કેવલ ચોલપટક તથા મુલ પર

પ્રભાવથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાના કારણે જીવ એવું માને છે કે, જીવ  
આદિ પરોક્ષપદાર્થ નથી. આથી તે પ્રત્યક્ષ ન હોવાથી અન્ય અનુમાનાદિક  
પ્રમાણો દ્વારા તેની સત્તા સિદ્ધ હોય છે. આ માટે તેની સદ્ભાવનાથી તેની  
અસંભવતારૂપ મિથ્યાત્વ પરિણતિનો પરિહાર કરીને સાધુએ પોતાના સમ્ય-  
ક્ત્વનું રક્ષણ કરતા રહેવું જોઈએ તેનું નામ દર્શનપરીપહ જય છે.

દૃષ્ટાન્ત—વૈશ્રવણાચાર્ય પોતાના શિષ્ય પરિવાર સાથે વિહાર કરતાં કરતાં  
એક સમય અવન્તી નગરીમાં પધાર્યા. તેમના શિષ્યોમાં દૃઢમતિ નામે એક  
શિષ્ય હતો. જે ઉગ્રતપસ્વી, ઉગ્રવિહારી અને ઉત્કૃષ્ટ રૂપથી પ્રત્યેક ક્રિયાઓનું  
પાલન કરતો હતો. અન્તપ્રાન્ત આહારથી તે અવમોદરિકા આદિ તપ તપતો  
હતા. વીરાસન આદિ આસનો કરતો હતો, ગ્રીષ્મકાળમાં પ્રચંડ સૂર્યની આતાપના  
લેતો હતો, શીતકાળમાં ઠંડીના સ્પર્શને સહન કરતો, ફક્ત ચોલપટ્ટો અને



મધુરં વારિ, કિમાત્મનઃ પિપાસાઽઽકુલીકરણેન, નાસ્તિ પરલોકઃ । इत्येवं विविध-  
परीपद्धानुत्पाद्य स देवस्तस्य मुनेः सम्यक्त्वमपनेतुं प्रवृत्तः, तथापि स दृढमति-  
मुनिस्तपःसंयमाराधनाद् लेशतोऽपि विचलितो नाभूत् । तदाऽसौ मेरुरिवाप्रकम्पः  
सागर इव गम्भीरः सन् विचारयति-भगवतः सर्वज्ञतया तद्वचनं सत्यं संदेहरहितं ध्रुवं  
नित्यं - परमकल्याणसाधकं श्रद्धेयमेवास्ति । एभ्यः पौद्गलिकसुखेभ्यः किमपि

કિ હે મુનિ ! દેખો યહ કિતના સુન્દર તાલાવ ભરા હુઆ હૈ । આપકો  
इस समय घोर पिपासा की वेदना हो रही है अतः आप शीतल  
मधुर जल का पान कर पिपासा को शान्त करो । व्यर्थ में पिपासा से  
आत्मा को आकुलित करने से क्या लाभ है ? परलोक नहीं है । इस  
प्रकार इस देव ने मुनिराज के लिये अनेक परीपदों को उत्पन्न कर उनको  
सम्यक्त्व से पतित करने के निमित्त अनेक प्रयत्न किये तो भी वे  
मुनिराज सम्यक्त्व से रंचमात्र भी चलायमान नहीं हुए । प्रत्युत  
संयम एवं तप की आराधना करने में मेरु के समान अप्रकंप होकर  
एवं सागर के समान गंभीर बनकर अधिक से अधिक दृढ बनते रहे ।  
साथ में यह भी इन्होंने विचार करने में कसर नहीं रखी कि भगवान्  
वीतराग होने से, तथा सर्वज्ञ होने से कभी भी असत्य वचन वाले  
नहीं हो सकते हैं, इनका प्रत्येक वचन संदेहरहित ध्रुव सत्य है ।  
जिन वचनों की आराधना से ही जीवों को निःश्रेयस मार्ग की प्राप्ति  
होती है, अतः यही एकान्ततः परमकल्याणसाधक है, और इसी

આ સમય ખૂબજ તરસ લાગી રહી છે, આથી આ શિતળ મધુર જળનું પાન  
કરીને તમારી તરસને છીપાવો. તરસથી આત્માને નકામે પીડીત કરવાથી શું  
લાભ ? પરલોક છે જ નહીં. આ પ્રકારે તે દેવે મુનિરાજ માટે અનેક પરીપદો  
ઉત્પન્ન કર્યા અને તેમને સમ્યક્ત્વથી પતિત બનાવવા ખૂબ પ્રયત્નો કર્યા તો  
પણ એ મુનિરાજ લેશ માત્ર પણ ચલાયમાન થયા નહીં. અને પોતાના સંયમ  
અને તપની આરાધનામાં મેરુની માફક અડગ રીતે ઉભા રહ્યા અને સાગરની  
માફક ધીર ગંભીર બની અધિક દૃઢ બનતા ગયા. સાથે સાથે તેમણે એ પણ  
વિચાર કરવામાં કસર ન રાખી કે ભગવાન વીતરાગી સર્વજ્ઞ હોવાને  
કારણે કદી પણ અસત્ય વચનવાળા હોઈ શકતા નથી. એમનું પ્રત્યેક વચન  
સંદેહ રહીત ધ્રુવ-સત્ય છે. જીવજનોની આરાધનાથી જ જીવોને નિશ્ચેયસ  
(મોક્ષ) માર્ગની પ્રાપ્તિ થાય છે. જેથી તેનો વિશ્વાસ કરવો યોગ્ય છે. આથી  
આજ એક માત્ર પરમ કલ્યાણનું સાધન છે. આ પૌદ્ગલિક સુખોથી જીવોનું

ત્પાથ વદતિ-મુને ! કિં બુધ્ધયા પ્રાણાન્ ગમયસિ ! મુંદસ્વ વિવિધાનિ મિષ્ટાન્નાનિ,  
યદર્થમેતત્ કષ્ટમઙ્ગીકરોપિ સ નાસ્તિ પરલોકઃ । યદાઽસૌ મુનિરુગ્રવિહારં કરોતિ,  
તેન ચ શ્રાન્તો ભવતિ, તદા સ દેવઃ સ્વવૈક્રિયશક્ત્યા શિવિકાં વાઙ્કૈર્નીયમાના  
પ્રદર્શ્ય વદતિ-મુને ! યાનમારુહતામ્, અલમનેન કષ્ટકરેણ પાદચારેણ, નાસ્તિ  
પરલોકઃ । ઉષ્ણકાલે સ્વશક્ત્યા ધોરપિપાસામુત્પાદ્ય શીતલસુગન્ધિનિર્મલજલપૂર્ણ-  
જલાશયં તદીયદૃષ્ટિગોચરીકુર્વન્ સ દેવસ્તં મુનીમવ્રવીત્-મુને ! પિવ શીતલમિદં

વૈક્રિયશક્તિ કે પ્રભાવ સે વિવિધ મિષ્ટાન્નોં કો તયાર કર ઓર ઉન્હે  
બુધ્ધિત વનાકર કહને લગતા હે મુને ! કયોં ભૂલ સે વ્યર્થ મેં ઇન પ્યારે  
પ્રાણોં કો નષ્ટ કરના ચાહતે હો । જિસકે નિમિત્ત તુમ યહ કષ્ટ-  
પરંપરા સહ રહે હો વહ તો કુછ હે હી નહીં, અતઃ વિવિધ ઇન મિષ્ટાન્નોં  
કો ભોગો । જવ મુનિરાજ ઉગ્રવિહારી હોતે ઓર શ્રાન્ત હો જાતે તો  
યહ દેવ ઉસ સમય શિવિકા કી રચના કર ઉન્હે હસ પ્રકાર દિલાતા  
કિ યહ શિવિકા અનેક પુરુષોં દ્વારા અપને કંધો પર ઉઠાઈ જા રહી હે,  
ઓર ફિર કહને લગતા કિ મહારાજ આપ થક ચુકે હેં અતઃ હસ  
શિવિકા પર ચઢકર વિહાર કરિયે । કષ્ટપ્રદ હસ પૈદલ ચલને સે  
કયા લાભ ? હસે છોડિયે । ઉષ્ણકાલ મેં અપની શક્તિ કે પ્રભાવ સે  
મુનિ કો ધોર પિપાસા ઉત્પન્ન કર ઓર શીતલ સુરભિ નિર્મલ જલ સે  
પરિપૂર્ણ જલાશય કી રચના કરકે મુનિ કો દિલાતા હુઆ કહને લગતા

વૈક્રિયશક્તિના પ્રભાવથી વિવિધ મિષ્ટાન્ન તૈયાર કરી તેને વિભૂષિત બનાવી  
કહેવા લાગતો હે મુનિ ! શા માટે વ્યર્થમાં ભૂખ અને તરસથી આ પ્યારા  
પ્રાણોને નષ્ટ કરી રહ્યા છો ? જે નિમિત્તથી તમે આ બધાં કષ્ટો સહન કરો  
છો એવું કાંઈ પણ નથી. આથી આ વિવિધ મિષ્ટાન્નોને આરોગો. જ્યારે મુનિ-  
રાજ ઉગ્ર વિહારી બનતા અને શ્રાન્ત બની જતા તો તે દેવ એ સમયે  
શિવિકા ( પાલખી )ની રચના કરી એને બતાવતો અને કહેતો આ શિવિકા  
અનેક પુરુષોદ્વારા પોતાના ખંભે ઉઠાવવામાં આવી રહી છે. મહારાજ આપ  
થાકી ગયા છો જેથી આ શિવિકામાં બેસી જાઓ. અને વિહાર કરો. કષ્ટપ્રદ  
એવા પગપાળા ચાલવાથી શું લાભ મળવાનો છે ? એને છોડી દો. ઉષ્ણકાળમાં  
પોતાની શક્તિના પ્રભાવથી મુનિરાજ ને પાણીની ખૂબ તરસ ઉત્પન્ન કરાવી,  
શીતળ સુરભી નિર્મળ જળથી પરિપૂર્ણ જળાશયની રચના કરી મુનિને દેખા-  
ડીને કહેતો કે, હે મુનિ ! જુઓ આ કેવું સુંદર તળાવ બન્યું છે. આપને

અથ પરીપહાવતરણમાહ—

એતે ધર્મસ્યાન્તરાયકારણભૂતાઃ દ્વાવિંશતિપરીપહાઃ સોઢવ્યા ઇત્યુક્તમ્ । તત્ર-  
જ્ઞાનાવરણીય-વેદનીય-દર્શનમોહનીય-ચારિત્રમોહનીયા-અન્તરાયાણાં કર્મણામુદયાદેતે  
સર્વે પરીપહાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ । ચતસ્રપુ કર્મપ્રકૃતિપુ=જ્ઞાનાવરણીય-વેદનીય-મોહનીયા  
-અન્તરાયેપુ દ્વાવિંશતિઃ પરીપહાઃ સમવતરન્તિ, ઇતરાસુ ચતસ્રપુ-દર્શનાવરણીયાઽઽ-  
યુષ્ક-નામ-ગોત્રેપુ પરીપહા નોત્પદ્યન્તે । ( ભગ. ૮ । ૮ )

યઃ સૂક્ષ્મ સંપરાયઃ સૂક્ષ્મલોભપરમાણુસદ્ભાવાત્ ન વીતરાગત્વં પ્રાપ્તઃ સ દશમગુણ-  
સ્થાનવર્તી ઉપશમશ્રેણિસંપન્નો વા ક્ષપકશ્રેણિસંપન્નો વા તસ્ય સંયતસ્ય, તથા છદ્મસ્થવી-  
તરાગયોર્ગુણસ્થાનમેદેન દ્વિવિધયોરેકાદશદ્વાદશગુણસ્થાનવર્તિનોથ સંયતયોથતુર્દશ-

અથ પરીપહોં કા અવતરણ કહતે હેં—

યદ્યપિ ધર્મકે સેવન કરને મેં યે વાઈસ પરીપહ અન્તરાયરૂપ હેં સાધુ  
કો હન કો સહન કરતે રહના ચાહિયે, યહ વાત વતલાઈ જા ચુકી હૈ ।  
અય કૌન ૨ સે પરીપહ કિસ ૨ કર્મ કે ઉદય સે હોતે હેં યંહ વતલાયા  
જાતા હૈ—જ્ઞાનાવરણીય, વેદનીય, મોહનીય ( દર્શનમોહનીય ચારિત્રમો-  
હનીય ) એવં અન્તરાય, હન ચાર કર્મોં કે ઉદય સે યે ૨૨ વાઈસ પરીપહ  
ઉત્પન્ન હોતે હેં । દર્શનાવરણીય આયુ નામ એવં ગોત્ર, હન ચાર કર્મોં કે  
ઉદય મેં પરીપહ ઉત્પન્ન નહીં હોતે હેં । ( ભગ. ૮ શ ૮ ૩૦ ૮ )

સૂક્ષ્મલોભ પરમાણુ કે સદ્ભાવ સે જો વીતરાગતા કો પ્રાપ્ત નહીં  
હુઆ હૈ એસા દશમગુણસ્થાનવર્તી જીવ ચાહે વહ ઉપશમશ્રેણી મેં સ્થિત  
હો ચાહે ક્ષપકશ્રેણી મેં ઉસકે તથા છદ્મસ્થ વીતરાગ કે ૧૧ ગ્યારહવેં એવં

હવે પરીપહોં અવતરણ કહેવામાં આવે છે—

ધર્મનું સેવન કરવામાં કદાચ આ બાવીસ પરીપહ અન્તરાયરૂપ થાય  
છતાં સાધુએ એને સહન કરતા રહેવું જોઈએ. આ વાત સમજાવવામાં આવી.  
હવે કયા કયા પરીપહ કયા કયા કર્મના ઉદયથી થાય છે એ બતાવવામાં આવે  
છે—જ્ઞાનાવરણીય, વેદનીય, મોહનીય, ( દર્શન મોહનીય ચારિત્ર મોહનીય ) અને  
અન્તરાય આ ચાર કર્મોના ઉદયથી આ બાવીસ પરીપહ ઉત્પન્ન થાય છે. દર્શનાવ-  
રણીય, આયુ, નામ, અને ગોત્ર આ ચાર કર્મોના ઉદયથી પરીપહ ઉત્પન્ન થતા નથી.  
ભગ. ૮, ૩, ૮, ૮

સૂક્ષ્મલોભ પરમાણુના સદ્ભાવથી જે વીતરાગતાને પ્રાપ્ત નથી થયા એવા  
દશગુણ સ્થાનવર્તી જીવ આહે તે ઉપશમ શ્રેણીમાં સ્થિત હોય, આહે ક્ષપક  
શ્રેણીમાં તથા છદ્મસ્થ વીતરાગના અગીયાર અને બારમા ગુણસ્થાનવર્તી જીવોને

કલ્યાણં નાસ્તિ । મયાઽનાદિભવસમાગતં મિથ્યાત્વમપર્નીય સમ્યક્ત્વં લઙ્ઘમ્ ।  
તદેવ પુનઃ પુનરાત્મનિ દૃઢીકૃત્ય જ્ઞાનાવરણીયાદ્યદ્વિધકર્મરજઃ સમુત્સાર-  
ણેન કેવલિત્વપ્રાપ્તિપૂર્વકં મોક્ષપદં મમ લઙ્ઘવ્યમસ્તિ । અલ્પમનેન તુચ્છેન વિષયસુ-  
ખેન । इति विमृश्य तपःसंयमसमाराधनपूर्वकनिरतिचारसम्यक्त्वरक्षणेन दृढमति  
मुनिर्दर्शनपરીषદं परिपद्य, क्षपकથ्रेणिमारुह्य, કેવલિત્વં લઙ્ઘ્વા સ્વાત્મકલ્યાણં સા-  
ધિતવાન્ । एवमन्यैरपि मुनिभिर्दर्शनपरीषदः सोढव्यः ।

કા વિશ્વાસ કરના યોગ્ય છે । इन पौद्गलिक सुखों से जीवों का कुछ  
भी आत्महित नहीं हो सकता है । मैंने बड़ी कठिनता से अनादि भवों  
से संसक्त मिथ्यात्व का अपनयन कर सम्यक्त्व का लाभ किया  
है । इसलिये यह दुर्लभता से प्राप्त होने वाली वस्तु (सम्यक्त्व)  
का नाश न होने पावे, इस प्रकार सचेष्ट होकर मुझे यार २ इस  
को निज आत्मा में दृढ करते रहना चाहिये, और ज्ञानावरणीय  
आदि अष्ट प्रकार कर्मरजके निवारण से केवलित्वकी प्राप्तिपूर्वक मुक्ति  
पदका लाभ करना चाहिये इसी में मेरा कल्याण है । इन तुच्छ वैष-  
यिक सुखों के सेवन से कौनसा निज का लाभ हो सकता है ।  
इस प्रकार विचार कर तप एवं संयम की आराधना करते हुए दृढ-  
मति मुनिराज ने निरतिचार सम्यक्त्व की रक्षा से दर्शनपरीषद को  
सहन किया और क्षपकथ्रेणी पर आरोह हो कर केवलपदका लाभ कर  
अपना आत्मकल्याण कर लिया । इसी प्रकार अन्य मुनिजनों को भी  
दर्शनपरिषदजयी बनना चाहिये ।

કાંઈ પણ આત્મહિત થઈ શકવાનું નથી. મેં ભારે કઠીનતાથી અનાદિ ભવોથી  
સંસક્ત મિથ્યાત્વનું અપનયન કરી સમ્યક્ત્વનો લાભ કર્યો છે. આ માટે આ  
દુર્લભતાથી પ્રાપ્ત થયેલ વસ્તુ સમ્યક્ત્વનો નાશ ન થાય એ રીતે સચેત બનીને  
મારે વારંવાર એને મારા પોતાના આત્મામાં દૃઢ કરતા રહેવું જોઈએ. અને  
જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારની કર્મરજના નિવારણથી કેવલિત્વની પ્રાપ્તિ-  
પૂર્વક મુક્તિ પદનો લાભ મેળવવો જોઈએ. આ કરવામાં જ મારું કલ્યાણ છે.  
તુચ્છ એવાં વૈષયિક સુખોના સેવનથી મને કયો લાભ થવાનો છે ? આ પ્રકારનો  
દૃઢ વિચાર કરી તપ અને સંયમની આરાધના કરતાં દૃઢમતિ મુનિરાજે નિર-  
તિચાર સમ્યક્ત્વની રક્ષાથી દર્શનપરીષદ સહન કરી ક્ષપકથ્રેણી ઉપર આરૂઢ  
બની કેવલપદનો લાભ કરી પોતાના આત્માનું કલ્યાણ કર્યું. આ રીતે અન્ય  
મુનિજનોએ પણ દર્શનપરીષદ જયી બનવું જોઈએ.

નનુ આત્પન્તિકશીતસ્પર્શે સતિ વહ્નિસાનિધ્યે, તથા-શરીરસ્યૈકસ્મિન્ ભાગે છાયાશ્રિતેઽપરસ્મિન્ ભાગે સૂર્યકિરણપ્રતપ્તે સતિ એકસ્ય પુરુષસ્ય એકસ્યાં દિશિ શીતમ્, અન્યસ્યાં ચોષ્ણમિત્યેવં દ્વયોરપિ શીતોષ્ણપરીપદયોર્યુગપત્ સંભવોઽસ્તીતિ ચેત્, ઉચ્યતે-અત્ર પરીપદે કાલકૃતશીતોષ્ણયોર્ગ્રહણમ્, અતો નાસ્ત્યેતત્પ્રશ્ના-વકાશ ઇતિ ।

શંકા—શીતસ્પર્શી ઓર ઉષ્ણસ્પર્શ કા જો આપને પરસ્પર વિરોધ થતલાયા હૈ વહ જચતા નહીં હૈ, ક્યોં કિ આત્યંતિક શીતસ્પર્શ હોને પર ભી અગ્નિ કે સમીપ મેં, તથા શરીર કા એક ભાગ છાયાશ્રિત હોને પર, દૂસરા ભાગ સૂર્ય કી કિરણોં સે તપ્ત હોને પર એક હી પુરુષ કો એક દિશા મેં શીત કા, અન્ય દિશા મેં ઉષ્ણ કા અનુભવ યુગપત્ હોતા હૈ, ઇસ પ્રકાર શીત ઓર ઉષ્ણસ્પર્શ કા એક હી પુરુષ મેં દેશાદિક કી અપેક્ષા એક સાથ સદ્ભાવ પાવે જાનેસે ઇનમેં આપ વિરોધ કૈસે કહતે હૈં ।

ઉત્તર—ઇસ પ્રકાર કી આશંકા યહાં નહીં કરના ચાહિયે । ક્યોં કિ યહાં જો શીત ઉષ્ણ પરીપદ કા યુગપત્ વિરોધ થતલાયા ગયા હૈ વહ કાલ કી અપેક્ષા સે થતલાયા ગયા હૈ । શીતકાલ મેં શીતપરીપદ કા ઉષ્ણકાલ મેં ઉષ્ણપરીપદ કા સદ્ભાવ રહતા હૈ । શીતકાલ મેં ઉષ્ણકાલ નહીં હોતા ઓર ઉષ્ણકાલ મેં શીતકાલ નહીં હોતા, અતઃ ઇસ અપેક્ષા સે યહાં ઇસ પ્રશ્ન કે હોને કા અવકાશ હી નહીં હૈ ।

શંકા—શીતસ્પર્શ અને ઉષ્ણસ્પર્શનો જે આપે પરસ્પર વિરોધ બતાવેલો છે તે બરોબર નથી. કેમકે, અત્યંતિક ઠંડીનો સ્પર્શ હોવાથી પણ અગ્નિના સાંનિધ્યમાં તથા શરીરનો એક ભાગ છાયાશ્રિત હોવાથી, બીજો ભાગ સૂર્યનાં કિરણોથી તૃપ્ત હોવાથી, એકજ માણસને એક દિશામાં ઠંડીનો અને બીજી દિશામાં ઉષ્ણનો અનુભવ યુગપત્ થાય છે. આ રીતે ઠંડી અને ઉષ્ણસ્પર્શનો એકજ માણસમાં દેશાદિકની અપેક્ષા એક સાથ સદ્ભાવ દેખાતાં આમાં આપ વિરોધ કેવી રીતે કહો છો ?

ઉત્તર—આ પ્રકારની આશંકા અહિં ન કરવી જોઈએ કેમકે, અહિં જે ઠંડી અને ઉષ્ણ પરીપદનો યુગપત્ વિરોધ બતાવવામાં આવેલ છે તે કાળની અપેક્ષાથી બતાવવામાં આવેલ છે. શીતકાળમાં ઠંડીનો પરીપદ અને ઉષ્ણકાળમાં ઉષ્ણપરીપદનો સદ્ભાવ રહે છે. શીતકાળમાં ઉષ્ણકાળ હોતો નથી અને ઉષ્ણકાળમાં શીતકાળ હોતો નથી. આથી આ અપેક્ષાએ અહિંયાં આ પ્રશ્ન થવાનો અવકાશ જ નથી.

અચેલા-રતિ-સ્ત્રી-નિપદ્યા-ડક્રોશ-યાચના-સત્કારપુરસ્કારપરીપદ્યાઃ મવન્તિ ।  
 દર્શનમોહનીયોદયે-એકઃ દર્શનપરીપદ્યઃ-વેદનીયોદયે-એકાદશધુ-ત્પિપાસા-શીતો-  
 ણ્ણ દંશમશક-ચર્યા-શય્યા-વધ-રોગ-તૃણસ્પર્શ-મલાશ્વ્યાઃ પરીપદ્યાઃ ઉત્પદ્યન્તે ।  
 લાભાન્તરાયોદયે-એકઃ અલામપરીપદ્યઃ । અષ્ટવિધકર્મબન્ધકસ્ય, તથા ડયુર્બલિત-  
 સપ્તવિધકર્મબન્ધકસ્ય ચ સંયતસ્ય દ્વાવિંશતિઃ પરીપદ્યાઃ સંભવન્તિ, તથા સ ઉત્કર્ષતો  
 યુગપદ્વિંશતિપરીપદ્યાન્ વેદયતિ । યત્ર સમયે શીતપરીપદ્યં વેદયતિ ન તદોષ્ણ-  
 પરીપદ્યમ્, યદા ઓષ્ણપરીપદ્યં વેદયતિ, ન તદા શીતપરીપદ્યં, તથોઃ પરસ્પરમત્ય-  
 ન્તવિરોધેન એકદા એકત્રાસમ્ભવાત્ । તથા યસ્મિન્ સમયે ચર્યાપરીપદ્યમ્ વેદયતિ,  
 ન તદા નિપદ્યાપરીપદ્યમ્, યદા નિપદ્યા પરીપદ્યં વેદયતિ ન તદા ચર્યાપરીપદ્યં,  
 ચર્યાનિપદ્યાપરીપદ્યયોરપિ પરસ્પરમત્યન્તવિરોધેન એકદા એકત્રાસમ્ભવાત્ ।

યે દો પરીપદ્ય હોતે હેં । ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય મેં અચેલ ૧; અરતિ  
 ૨, સ્ત્રી ૩, નિપદ્યા ૪, આક્રોશ ૫, યાચના ૬, સત્કારપુરસ્કાર ૭,  
 યે ૭ સાત પરીપદ્ય હોતે હેં । દર્શનમોહનીય કે ઉદય મેં એક દર્શનપરી-  
 પદ્ય, વેદનીય કે ઉદય મેં ૧૧ ગ્યારહ પરીપદ્ય-ધુધા ૧, તૃષ્ણા ૨, શીત ૩,  
 ઉષ્ણ ૪, દંશમશક ૫, ચર્યા ૬, શય્યા ૭, વધ ૮, રોગ ૯, તૃણસ્પર્શ ૧૦,  
 ઓર મેલ ૧૧ હોતે હેં । લાભાન્તરાય કે ઉદય મેં એક અલામ  
 પરીપદ્ય ઉત્પન્ન હોતા હેં । આઠોં પ્રકાર કે કર્મ કા બન્ધક તથા આયુ  
 સિવાય સાત કર્મોં કા બન્ધક જો સંયત હેં ઉસકે ૨૨ બાર્દસ પરીપદ્ય  
 હોતે હેં । એક કાલ મેં જીવ અધિક સે અધિક ૨૦ વીસ પરીપદ્યોં કા  
 વેદન કર સકતા હેં, ક્યોં કિ ચર્યા ઓર નિપદ્યા મેં સે કિસી એક કા,  
 શીત એવં ઉષ્ણ મેં સે કિસી એક એક કા હી વેદન હોગા, દોનોં કા  
 યુગપત્ નહીં, કારણ કિ ઇનકા પરસ્પર એક સાથ રહને મેં વિરોધ હેં ।

પરીપદ્ય છે. ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયમાં અચેલ, ૧ અરતિ, ૨ સ્ત્રી, ૩ નિપદ્યા, ૪  
 આક્રોશ ૫ યાચના, ૬ સત્કારપુરસ્કાર, ૭ આ સાત પરીપદ્ય હોય છે. દર્શનમોહ-  
 નીયના ઉદયમાં એક દર્શનપરીપદ્ય, વેદનીયના ઉદયમાં ૧૧ અગીયાર પરીપદ્ય,  
 ધુધ, ૧ તરસ, ૨ ઠંડી, ૩ ઉષ્ણ, ૪ દંશમશક, ૫ ચર્યા, ૬ શય્યા, ૭ વધ, ૮ રોગ,  
 ૯ તૃણસ્પર્શ ૧૦ અને મેલ ૧૧ હોય છે. લાભાન્તરાયના ઉદયમાં એક અલામ  
 પરીપદ્ય ઉત્પન્ન થાય છે. આઠ પ્રકારનાં કર્મના બંધક તથા આયુ સિવાય સાત  
 કર્મોના બંધક જે સંયત છે તેને ૨૨ બારીસ પરીપદ્ય હોય છે. એક કાળમાં એક જ  
 અધિકમાં અધિક ૨૦ વીસ પરીપદ્યનું વેદન કરી શકે છે. કેમકે, ચર્યા અને નિપ-  
 દ્યામાંથી કોઈ એકનું ઠંડી અને ઉષ્ણમાંથી કોઈ એકનું જ વેદન થતું હોય છે.  
 બન્નેનું યુગપત્ નહીં. કારણ કે, તેનો પરસ્પર એક સાથે રહેવામાં વિરોધ છે.



વેદુચ્યતે — સૂક્ષ્મસંપરાયસ્ય ચારિત્રમોહનીયં દર્શનમોહનીયં સત્તામાત્રં વર્તતે, ન તુ પરીપહહેતુભૂતઃ સૂક્ષ્મોઽપિ મોહનીયોદયોઽસ્તીતિ ન મોહનીયજન્યપરીપહો ભવતિ, તત્તથ્થ પદ્ધતિવન્ધકસ્ય મોહનીયોદયાભાવેન સર્વત્રૌત્સુક્યનિવૃત્તિર્ભવતિ, ઔત્સુક્યનિવૃત્ત્યા ચ વિહારપરિણામાભાવઃ, તેન શય્યાપરીપહવેદનસમયે ચર્યાયા અભાવઃ । અત્ર તુ—મોહનીયોદયાદ્ વાદરરાગવત્ત્વેન ઔત્સુક્યં વિહારપરિણામરૂપં સંભવતિ, તદા શય્યાપરીપહવેદનસમયે ચર્યાપરીપહં પરિણામરૂપેણ વેદયતિ, અતો વિંશતિપરીપહાન્ વેદયતીતિ કથનં સમ્યગેવ ।

કિ શય્યા ઓર નિપદ્યામેં સે એક ફિર ઘટ જાને સે વીસ કી જગહ ૧૯  
ઉન્નીસ પરીપહોં કે વેદના કા હી સદ્ભાવ કહના ચાહિયે ?

ઉત્તર—સૂક્ષ્મસંપરાય સંયત કે ચારિત્રમોહનીય એવં દર્શનમોહનીય કેવલ સત્તામાત્ર હૈ, પરીપહ કા હેતુભૂત થોડા સા મોહનીય કા ઉદય વહાં નહીં હૈ કિ જિસસે વહાં મોહનીય કે ઉદય સે હોને વાલા પરીપહ હો સકે, અતઃ છહ કર્મોં કા વંધક જો સંયત હૈ ઉસકે મોહનીય કર્મ કે ઉદય કે અભાવ સે સર્વત્ર ઔત્સુક્ય કી નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ । ઔત્સુક્ય કી નિવૃત્તિ સે વિહાર કરને કે પરિણામ કી મી નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ, હિસસે શય્યાપરીપહ કે વેદન કે સમય મેં વહાં ચર્યા કા અભાવ હૈ પરન્તુ જો સપ્તવિધ કર્મ કા અથવા અષ્ટવિધ કર્મ કા વંધક હૈ ઉસકે મોહનીય કા ઉદય હૈ હિસસે વાદર રાગવાલા હોને સે ઉસકે વિહારપરિણામરૂપ ઔત્સુક્યભાવ સંભવિત હોતા હૈ । ઉસ સમય વહ શય્યાપરીપહ કે વેદન કે સમય મેં ચર્યાપરીપહ કો પરિણામ-

કારણ કે શય્યા અને નિપદ્યામાંથી એક ઘટિ જવાથી વીસને બદલે એગણીસ પરીપહોના વેદનનો જ સદ્ભાવ કહેવો બોધ એ.

ઉત્તર—સૂક્ષ્મ સાંપરાય સંયતના ચારિત્ર મોહનીય અને દર્શનમોહનીયની કેવળ સત્તા માત્ર છે. પરીપહના હેતુભૂત થોડો પણ મોહનીયનો ઉદય ત્યાં નથી કે જેનાથી ત્યાં મોહનીયના ઉદયથી આવનાર પરીપહ થઈ શકે. આથી છ કર્મોના બંધક જે સંયત છે તેના મોહનીય કર્મના ઉદયના અભાવથી સર્વત્ર ઔત્સુક્યની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે. ઔત્સુક્યની નિવૃત્તિથી વિહાર કરવાના પરિણામની પણ નિવૃત્તિ થઈ જાય છે. આથી શય્યાપરીપહનાં વેદનના સમયે ત્યાં ચર્યાનો અભાવ છે પરંતુ જે સાત પ્રકારના કર્મોના અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધક છે તેને મોહનીયનો ઉદય છે. આ કારણે વાદર રાગવાળા હોવાથી એના વિહાર પરિણામરૂપ ઔત્સુક્યભાવ સંભવિત બને છે. એ સમયે તે શય્યાપરીપહના વેદન સંભવમાં ચર્યાપરીપહને પરિણામરૂપથી વેદિત

નતુ ભગવતા ' આયુર્મોહનીયવર્જિતપદ્ધિવિધકર્મવન્ધકઃ સૂક્ષ્મસંપરાયસંયત ઉત્કર્ષતો યુગપદ્ દ્વાદશ પરીપહાન્ વેદયતિ ' इत्युक्तम्, ત્ર યદા શ્ય્યાપરીપહં વેદયતિ, ન તદા ચર્યાપરીપહમ્, યદા ચર્યાપરીપહં વેદયતિ, ન તદા શ્ય્યાપરીપહમ્, इति कथितम्, કથં તર્હિ-સપ્તવિધકર્મવન્ધકોઽષ્ટવિધકર્મવન્ધકશ્ચ સંયતો યુગપદ્ વિંશતિપરીપહાન્ વેદયેત્ । યતશ્ચર્યયા સહ શ્ય્યાનિપદ્યયોર્વિરોધેન ચર્યાસન્નાવે શ્ય્યાનિપદ્યયોરસંભવાત્, एकोनविंशतेरेव परीपहाणां वेदनसंभव इति

શંકા—ભગવાન્ ને “આયુ એવં મોહનીય વર્જિત છહ કર્મોં કા બંધ કરનેવાલા સૂક્ષ્મસંપરાય ગુણસ્થાનવાલા સંયત ઉત્કર્ષ કી અપેક્ષા યુગપત્ ૧૨ બારહ પરીપહોંકા વેદન કરતા હૈ ” એસા કહા હૈ સો ઉસમેં જિસ સમય વહ શ્ય્યાપરીપહકા વેદન કરતા હૈ ઉસ સમય વહ ચર્યાપરીપહકા વેદન નહીં કરતા હૈ, ઓર જિસ સમય ચર્યાપરીપહ કા વેદન કરતા હૈ ઉસ સમય શ્ય્યાપરીપહ કા વેદન નહીં કરતા સો હસ પ્રકાર કી વિવક્ષા સે વહાં ચૌદહ પરીપહોં કે સામાન્ય કથન મેં ઉત્કર્ષક કી અપેક્ષા ધારહ પરીપહ કા વેદન કરના ઠીક વૈઠ જાતા હૈ, પરન્તુ જો આયુવર્જિત સાત પ્રકાર કે અથવા આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કા બંધક સંયત હૈ ઉસકે ચર્યાં કે સાથ શ્ય્યા ઓર નિષદ્યા કા વિરોધ હોને સે ચર્યાં કે સદ્ભાવ મેં શ્ય્યા ઓર નિષદ્યા કા સંભવ હો નહીં સકતા હૈ એસી પરિસ્થિતિ મેં હસ સંયત કે જો ઉત્કર્ષક કી અપેક્ષા ૨૦ થીસ પરીપહોં કા સદ્ભાવ બતલાયા હૈ વહ કેસે સંગત હો સકતા હૈ, ક્યોં

શંકા—ભગવાને “આયુ અને મોહનીય વર્જિત છ કર્મોના બંધ કરવા-વાળા સૂક્ષ્મ સંપરાય સંયત ઉત્કર્ષની અપેક્ષા યુગપત્ બાર પરીપહનું વેદન કરે છે.” એવું કહ્યું છે તો તેમાં જે સમય તે શ્ય્યાપરીપહનું વેદન કરે છે. તે સમય તે ચર્યાપરીપહનું વેદન કરતા નથી. અને જે સમય ચર્યાપરીપહનું વેદન કરે છે તે સમય શ્ય્યાપરીપહનું વેદન નથી કરતા. આ પ્રકારની વિવિક્ષાથી ચૌદ પ્રકારના પરીપહોના સામાન્ય કથનમાં ઉત્કર્ષની અપેક્ષા બાર પરીપહનું વેદન કરવું બરોબર બંધ બેસતું છે. પરંતુ આયુવર્જિત જે સાત પ્રકારના અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધક સંયત છે—એની ચર્યા સાથે શ્ય્યા અને નિષદ્યાનો વિરોધ હોવાથી ચર્યાના સદ્ભાવમાં શ્ય્યા અને નિષદ્યાનો સંભવ થઈ શકતો નથી. એવી પરિસ્થિતિમાં આ સંયત કે જે ઉત્કર્ષની અપેક્ષા ૨૦ થીસ પરીપહોના સદ્ભાવ બતાવેલ છે. તે કઈ રીતે સંગત થઈ શકે ?

સમ્યક્ત્વ-મોહનીયરૂપસ્ય વૃદ્ધિ ભાગે ઉપશાન્તે, શેષે ચાનુપશાન્તે એવ સ્યાત્ । નપુંસકવેદં ચાસૌ દર્શનત્રયસ્ય શેષાંશેન સહોપશમયિતું પ્રવર્તતે, તતથ નપુંસકવેદો-પશમાવસરે અનિવૃત્તિવાદરસંપરાયસ્ય સતો દર્શનમોહનીયસ્ય પ્રદેશત ઉદયોઽસ્તિ, ન તુ દર્શનમોહનીયસ્ય સત્તામાત્રમ્, તતસ્તન્નિમિત્તકો દર્શનપરીપદ્ધસ્તસ્યાસ્તિ, તતથા-પ્તાવપિ પરીપદ્ધાન્ વેદયતિ ।

ઉત્તર—યહ અનિવૃત્તિવાદરસંપરાય વાલા સંયમ દર્શનસસક કે ઉપશામ હોને કે.ઉપર હી નપુંસકવેદાદિક કે ઉપશામકાલ મેં હોતા હૈ । હસકે દર્શનમોહનીય કા ઉદય પ્રદેશ કી અપેક્ષા સે માના ગયા હૈ । ઘહ હસ પ્રકાર -દર્શનસસક કે અન્તર્ગત જો મિથ્યાત્વ, મિશ્ર, સમ્યક્ત્વમોહનીય, યે ત્રીન દર્શન હૈ, હનકા અધિક સે અધિક જબ ઉપશામન હો જાતા હૈ તથા કુછ ભાગ અનુપશાન્ત રહતા હૈ તવ નપુંસક-વેદ કો યહ હસી અનુપશાન્ત દર્શનત્રય કે ભાગ કે સાથ ૨ ઉપશાન્ત કરને કે લિયે પ્રવૃત્ત હોતા હૈ, હસલિયે નપુંસકવેદ કે ઉપશામન કે કાલ મેં હસ અનિવૃત્તિવાદરસંપરાય વાલે સંયત કે દર્શનમોહનીય કા પ્રદેશ કી અપેક્ષા સે ઉદય માના ગયા હૈ, અતઃ દર્શનમોહનીય કા હસકે કેવલ સત્તામાત્ર હી નહીં હૈ, પ્રદેશોદય બી હૈ । હસસે હસકે દર્શનમોહનીય ઉદય જન્ય પરીપદ્ધ હૈ એસા માનના ચાહિયે હસસે વહાં ઘહ આઠ પરીપદ્ધોં કા વેદન કરતા હૈ ।

ઉત્તર—આ અનિવૃત્તિ બાદર સંપરાયવાળા સંયમદર્શનસસકનો ઉપ-શામ થવાના ઉપર જ નપુંસકવેદાદિકના ઉપશામ કાળમાં થાય છે. એના દર્શન-મોહનીયનો ઉદય પ્રદેશની અપેક્ષાથી માનવામાં આવેલ છે તે આ પ્રકારે-દર્શન સપ્તકના અંતર્ગત જે મિથ્યાત્વ, મિશ્ર, સમ્યક્ત્વ મોહનીય આ દર્શનત્રય છે. એમનો અધિકથી અધિક ભાગ ત્યારે ઉપશાન્ત થઈ જાય છે તથા થોડા ભાગ અનુપશાન્ત રહે છે ત્યારે નપુંસકવેદને આ એજ અનુપશાન્ત દર્શનત્રયના ભાગની સાથે સાથે ઉપશાન્ત કરવા માટે પ્રવૃત્ત થાય છે. આ માટે નપુંસક-વેદના ઉપશામના કાળમાં આ અનિવૃત્તિ બાદર સંપરાયવાળા સંયતના દર્શન-મોહનીયના પ્રદેશની અપેક્ષાથી ઉદય માનવામાં આવેલ છે. આથી દર્શન મોહનીયને એમાં કેવળ સત્તા માત્ર નથી, પ્રદેશોદય પણ છે. આથી એના દર્શન મોહનીય ઉદયજન્ય દર્શનપરીપદ્ધ છે. એમ માનવું જોઈએ. આથી ત્યાં તે આઠ પરિપદ્ધોનું વેદન કરે છે.

નનુ અનિવૃત્તિવાદરસંપરાયસ્ય મોહનીયસંભવાનામપ્તાનામપિ પરીપહાનાં કથં સંભવઃ ? યતો દર્શનસપ્તકોપશમે વાદરક્ષાપાયસ્ય દર્શનમોહનાયોદયામાવેન દર્શન-પરીપહાભાવાત્ સપ્તાનામેવ સંભવો નાપ્તાનામ્ , અથ દર્શનમોહનીયોદયામાવેઽપિ દર્શનમોહનોયસત્તાઽપેક્ષયા દર્શનપરોપહોઽપિ સ્યાદિત્યુચ્યતે, તર્હિ ઉપશમકરણે સૂક્ષ્મસંપરાયસ્યાપિ મોહનીયસત્તાસદ્ભાવાત્ કથં તજ્જનિતાઃ સર્વેઽપિ પરીપહા ન ભવન્તીતિ ન્યાયસ્ય સમાનત્વાત્ ? ।

અત્રોચ્યતે—દર્શનસપ્તકોપશમસ્યોપર્યેવ નાંસકવેદાદ્યુપશમકાલે અનિવૃત્તિ-વાદરસંપરાયો ભવતિ, સ ચ દર્શનસપ્તકાન્તર્ગતસ્ય દર્શનત્રયસ્ય મિથ્યાત્વ-મિશ્ર-

રૂપ સે વેદિત કરતા હૈ । હસ કારણ વહ ૨૦ વીસ પરીપહોં કા વેદન કરતા હૈ, યહ કથન સમીચીન હી હૈ ।

શંકા—જો સંયત અનિવૃત્તિ વાદર સંપરાય વાલા હૈ ઉસકે મોહ-નીય સે સંભવિત આઠ પરીપહોં કી સંભાવના કૈસે હો સકતી હૈ ? કયોં કિ દર્શનસપ્તક કે ઉપશમ હોને પર ઉસ વાદર કષાય વાલે સંયત કે દર્શનમોહનીય કે ઉદય કે અભાવ સે દર્શનપરીપહ તો હોગા નહોં, હસલિયે વહાં આઠ કી જગહ ૭ સાન પરીપહ હી સંભવિત હોતે હૈં, ફિર આઠ કી સંભાવના કૈસે કહી ગઈ હૈ ? યદિ દર્શનમોહનીય કે ઉદય કે અભાવ મેં ભી દર્શનમોહનીય કી સત્તા કી અપેક્ષા સે દર્શન-પરીપહ ભી હૈ એસા કહા જાય તો ઉપશમક હોને પર સૂક્ષ્મસંપરાય વાલે કે ભી મોહનીય કી સત્તા કે સદ્ભાવસે ઉસકે ઉદય સે હોનેવાલે સર્વ પરીપહ નહોં માનના ચાહિયે કયોં કિ ન્યાય સર્વત્ર સમાન હોતા હૈ ।

કરે છે આ કારણે તે વીસ પરીપહોનું વેદન કરે છે આ કથન સમીચીન જ છે.

શંકા—જે સંયત અનિવૃત્તિ વાદર સંપરાયવાળા છે તેના મોહનીયથી સંભવિત આઠ પરીપહોની સંભાવના કેવી રીતે બની શકે ? કેમકે દર્શનસપ્તકનું ઉપશમ થવાથી એ વાદર કષાયવાળા સંયતના દર્શન મોહનીયના ઉદયના અભાવથી દર્શનપરીપહ તો થશે નહીં. આ માટે ત્યાં આઠની જગ્યાએ સાત પરીપહ જ સંભવિત દેખાય છે. છતાં આઠની સંભાવના કેમ કહેવાઈ છે ? કહાય દર્શન મોહનીયના ઉદયના અભાવમાં પણ દર્શન મોહનીયની સત્તાની અપેક્ષા દર્શનપરીપહ પણ છે. એવું કહેવામાં આવે તો ઉપશમક હોવા છતાં સૂક્ષ્મ સંપરાયવાળાને પણ મોહનીયની સત્તાના સદ્ભાવથી તેના ઉદયથી થનાર સર્વ પરીપહ ન માનવા જોઈએ. કારણ કે, ન્યાય સર્વત્ર સમાન હોય છે.

તત્ર પ્રથમં સ્થાનમ્-ઉદિતકર્મા । ઉદિતં પ્રવલં વા કર્મ=મિથ્યાત્વમોહનીયાદિ  
યસ્ય સ તથા, સ્વલુ અયં પુરુષ ઉન્મત્તકભૂતો મદિરાદિના વિપ્લુતચિત્ત ઇવાસ્તિ,  
તેન કારણેન 'મામયમાક્રોશતિ વા, અપહસતિ વા, નિચ્છોટયતિ=હસ્તાદી ગૃહીત્વા  
ચલાત્ સિપતિ વા, દુર્વચનૈર્નિર્ભત્સયતિ વા, રજ્જ્વાદિના વધ્નાતિ વા, કારાગાર-  
પ્રવેશનાદિના રુણદ્ધિ વા, છવિચ્છેદં-છવેઃ શરીરાવયવસ્ય હસ્તાદેઃછેદં કરોતિ વા,  
મારણસ્થાનં નયતિ વા, મારયતિ વા, અપદ્રાવયતિ વા, ઉપદ્રવં કરોતિ વા, વસ્ત્ર,

અધિક સે અધિક સમય તક રાખના ચાહિયે તાકિ ઉનકે સહન કરને  
કી ક્ષમતા આત્મા મેં આતી રહે । પાંચ સ્થાનોં મેં સર્વપ્રથમ સ્થાન  
ઉદિતકર્મા હૈ-મિથ્યાત્વ મોહનીય આદિ કર્મ જિસકા પ્રવલરૂપ સે  
ઉદય મેં આરહા હૈ એસા જીવ ઉદિતકર્મા હૈ । હસ પ્રથમસ્થાન કો  
લેકર જવ પરીપહ એવં ઉપસર્ગોં કા નિપાત સંયત કે ઉપર હો તબ  
ઉસે યહ વિચાર કરના ચાહિયે કિ યહ પુરુષ ઉદિતકર્મા હૈ-હસકા  
મિથ્યાત્વમોહનીયાદિક કર્મ પ્રવલરૂપ સે ઉદય મેં આરહા હૈ, હસલિયે  
યહ ઉન્મત્ત જૈસા હો રહા હૈ-મદિરા કે પાન સે જિસ પ્રકાર મનુષ્ય  
હોશ હવાશ લો બેઠતા હૈ ઉસી તરહ કા યહ બના હુઆ હૈ, હસી કારણ  
યહ મેરે પ્રતિ રુષ્ટ હો રહા હૈ, મેરી હંસી મજાક કરતા હૈ, હાથ પકડ  
કર મુઝે લેચના હૈ, દુર્વચનોં સે મેરા તિરસ્કાર કરતા હૈ, રસી આદિ  
સે મુઝે બાંધતા હૈ, કારાગાર મેં મુઝે બંધ કરતા હૈ, મેરે શરીર કે અવ-  
યવ કો છેદતા હૈ, વધસ્થાન પર મુઝે લે જાતા હૈ, મારતા હૈ, મુઝે યહાં

અધિક સમય સુધી રહેવું જોઈએ. જેથી તેને સહન કરવાની સમતા આત્મામાં  
આવતી રહે. પાંચ સ્થાનોમાં સર્વપ્રથમ સ્થાન ઉદિત કર્મ છે. મિથ્યાત્વ  
મોહનીય આદિ કર્મ જેનું પ્રબળ રૂપથી ઉદયમાં આવી રહેલ છે એવો જીવ  
ઉદિત કર્મ છે. આ પ્રથમ સ્થાનને લઈને જ્યારે પરીપહ અને ઉપસર્ગોના  
નિપાત સાધુ સંયતની ઉપર હોય ત્યારે તેણે એ વિચાર કરવો જોઈએ કે આ  
પુરુષ ઉદિત કર્મ છે. તેનું મિથ્યાત્વ મોહનીયાદિક કર્મ પ્રબળ રૂપથી ઉદયમાં  
આવી રહેલ છે આથી જ તે ઉન્મત્ત જેવો બની રહેલ છે. મદિરાના પાનથી જેવી  
રીતે મનુષ્ય શુદ્ધિ બુદ્ધિ ખોઈ ખેસે છે એવી રીતનું આ બનેલ છે. આ કારણથી  
તે મારા તરફ રુષ્ટ બની રહેલ છે, મારી હાંસી મજાક કરે છે, હાથ પકડીને  
મને ખેંચે છે. દુર્વચનોથી મારા તિરસ્કાર કરે છે, હારડા આદિથી મને બાંધે  
છે, કારાગારમાં મને બંધ કરે છે, મારા શરીરના અવયવોને છેદે છે, વધસ્થાન  
ઉપર મને લઈ જાય છે, મારે છે, મને ત્યાંથી લગાડે છે, મારા ઉપર ઉપદ્રવ



। એ તે ચ પરીપક્ષ દ્વિવિધાઃ-દ્રવ્યપરીપક્ષા ભાવપરીપક્ષાભ । તત્ર દ્રવ્યપરીપક્ષ  
નામ યે શ્લોક નિમિત્તકા વધવંધનાદયઃ પરવશાદધિસમન્તે તે । ભાવપરીપક્ષા ચે  
સંસારોચ્છેદનાર્થમનાકુલેન મનસાઽધિસમન્તે । અત્ર શાસ્ત્રે ભાવપરીપક્ષાભાયેવાધિકારઃ ।

અથ છદ્મસ્થપરીપક્ષાણાં ભેદાઃ—

જ્ઞાનાવરણીયાદિઘાતિકર્મચતુષ્ટયં છદ્મ, તત્ર તિષ્ઠતીતિ છદ્મસ્થઃ=કપાયસહિતઃ,  
સ પશ્ચમિઃ પરીપક્ષાદિસહનાલમ્બનરૂપેઃ સ્થાનૈરુદિતાન્ પરીપક્ષોપસર્ગાન્ સમ્યક્  
તત્કપાયોદયનિરોધાઽઽદિના સહેત=અવિચલિતો ન ભવેત્, જ્ઞાન્ત્યા ધ્વમેત, અદીનઃ  
તયા તિતિક્ષેત, અધ્યાસીત=પરીપક્ષાદાવેવ આધિક્યેનાસીત, ન ચલેત્ ।

યે પરીપક્ષ દો પ્રકાર કે હૈં-એક દ્રવ્યપરીપક્ષ દૂસરા ભાવપરીપક્ષ । ઇસ  
લોકસંયંધી જો વધ વંધન આદિક પરવશતા સે સહન કિયે જાતે હૈં ચે  
દ્રવ્યપરીપક્ષ હૈં । સંસાર વંધન કો નષ્ટ કરને કે લિયે ભવ્ય સંયમીજનો  
દ્વારા જો વિના કિસી આકુલતા કે સહન કિયે જાતે હૈં ચે ભાવપરી-  
પક્ષ હૈં । ઇસ શાસ્ત્ર મેં ઇન્હીં ભાવપરીપક્ષોં કો સહન કરને કા ઉપદેશ હૈં,  
ઔર ઉસી નિમિત્ત યહ અધિકાર હૈં ।

છદ્મસ્થપરીપક્ષોં કે ભેદ—જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મ  
કા નામ છદ્મ હૈં । ઇસ છદ્મ મેં જો રહતા હૈં ઉસકા નામ છદ્મસ્થ હૈં ।  
એસા સંયમી જીવ કપાયસહિત હોતા હૈં । ઉસે પાંચ સ્થાનોં સે ઉદિત  
પરીપક્ષોં એવં ઉપસર્ગોં કો કપાય કે ઉદય કા નિરોધ આદિ કરતે હુએ  
સહન કરના ચાહિયે । શાન્તિભાવ સે અવિચલિત હોકર ઉસે ઉસ સમય  
ઘરના નહીં ચાહિયે । પરીપક્ષ આદિ કે સ્થાન મેં હી અપને આપકો

આ પરીપક્ષ બે પ્રકારના છે-એક દ્રવ્યપરીપક્ષ બીજો ભાવપરીપક્ષ. આ બેંક  
સંબંધી જે વધ બંધન આદિક પરવશતાથી સહન કરવામાં આવે છે તે દ્રવ્યપરીપક્ષ  
છે. સંસાર બંધનને નષ્ટ કરવા માટે ભવ્ય સંયમી જનો દ્વારા જે કોઈ પ્રકારની  
વ્યાકુળતા વગર સહન કરવામાં આવે છે તે ભાવપરીપક્ષ છે. આ શાસ્ત્રમાં તે  
ભાવપરીપક્ષોને સહન કરવાનો ઉપદેશ છે અને એ નિમિત્તે આ અધિકાર છે.

છદ્મસ્થપરીપક્ષોના ભેદ—

જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મનું નામ છદ્મ છે. આ છદ્મમાં જે  
રહે છે તેનું નામ છદ્મસ્થ છે. એવા સંયમીજીવ કપાય સહીત છે. એને પાંચ  
સ્થાનોથી ઉદિત પરીપક્ષો અને ઉપસર્ગોને કપાયના ઉદયનો નિરોધ આદિ સમજીને  
સહન કરવા જોઈએ. શાન્તિભાવથી અવિચલીત બનીને તેણે એ સમયે તેનાથી  
ગભરાવું ન જોઈએ. પરીપક્ષ આદિના સ્થાનમાં જ પોતે પોતાને અધિકથી



તથા-एष बालः पापभयरहितत्वात् करोतु नाम आक्रोशनादि, मम पुनर  
सहमानस्य=अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य=अनध्यासमानस्य, सर्वथा असातादि  
पापकर्म संपद्यते । इति चतुर्थं स्थानम् ।

तथा-एष बालः पापभयरहितत्वात् करोतु नाम आक्रोशनादिकं, मम पुनः  
खलु सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्यासमानस्य किं संपद्यते, अयं तावत् पापं बध्नाति  
मया च एकान्तेन निर्जरा क्रियते । इति पञ्चमं स्थानम् ।

તૃતીય સ્થાન મેં એસા વિચાર કરેં કે યહ તો બાલ હૈ, પાપ કે ભય  
સે રહિત હોને કે કારણ ભલે હી યહ આક્રોશ આદિ કરતા રહે,  
પરંતુ મેરા કર્તવ્ય તો इनको सहन करने का ही है । यदि मैं इनको  
सहन नहीं करता हूं-सहन में साहस को छोड़ देता हूं, इनसे यदि  
घबरा जाता हूं तो मुझे असाता आदि पापकर्म का नियमतः बंध होगा ।  
इस प्रकार यह चतुर्थ स्थान है ।

પંચમસ્થાન મેં સંયમી કો એસા વિચાર કરના ચાહિયે, કે યહ  
પરીપહ એવં ઉપસર્ગકારી વ્યક્તિ પાપ કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ  
બાલ હૈ, इसकी इच्छा है यह आक्रोशादिक करे । इससे मेरा त्रिगुणता  
क्या है? मुझे तो उल्टा फायदा ही है, क्यों कि उपसर्ग और परीपह को  
समतापूर्वक सहन करनेवाले के एकान्ततः कर्मों की निर्जरा होती है,  
परन्तु यह उपसर्ग परीपहकारी पुरुष पाप का बंध करता है । यह पंचम  
स्थान है ।

ત્રીજા સ્થાનમાં-એવો વિચાર કરે કે, આ તો બાળ છે, પાપના ભયથી  
રહિત થવાના કારણે ભલે એ આક્રોશ આદિ કરતો રહે પરંતુ મારું કર્તવ્ય  
તો એને સહન કરવાનું જ છે. જો હું તેને સહન કરતો નથી. તો સહિષ્ણુતાના  
શુભથી વિરુદ્ધ થાઉં છું. જો તેનાથી હું ગભરાઈ જાઉં છું, તો મને અસાતા આદિ  
પાપે કર્મનો નિયમતઃ બંધ થશે. આ પ્રકારે આ ચોથું સ્થાન પણ છે.

પાંચમ સ્થાનમાં-સંયમીએ એવો વિચાર કરવો જોઈએ કે, આ પરીપહ  
એને ઉપસર્ગ કરનાર વ્યક્તિ પાપના ભયથી રહિત હોવાના કારણે બાળ છે.  
તેની ઇચ્છા છે કે, આ આક્રોશ આદિ કરે પણ તેથી મારું બગડે છે શું?  
મને તો એથી ઉલ્ટો ફાયદો જ છે. કારણકે ઉપસર્ગ અને પરીપહને સમતા પૂર્વક  
સહન કરનારને એકાન્તતઃ કર્મોની નિર્જરા થાય છે. પરંતુ દયાની વાત એ છે કે  
ઉપસર્ગ પરીપહકારી પુરુષ તો કેવળ પાપનો જ બંધ કરે છે. આ પાંચમું સ્થાન છે.

પાત્રં, કમ્બલં, પાદમોચ્છનં, સદોરકમુલવલ્લિકાં રજોહરણં વા આચ્છિનત્તિ=  
 બલાદુશાલપતિ વા, વિચ્છિનત્તિ=વિચ્છિન્નં કરોતિ દૂરે વ્યવસ્થાપયતિ વા, અથવા  
 વલ્લમીપચ્છિનત્તિ-આચ્છિનત્તિ, વિશેષેણ છિનત્તિ-વિચ્છિનત્તિ । મિનત્તિ=પાત્રં  
 સ્ફોટયતિ વા, અપહરતિ=ચોરયતિ વા । इदं चाक्रोशादिकमत्र आक्रोशवधाभिधान-  
 परीपहद्वयरूपं मन्तव्यम् । उपसर्गविवक्षायां तु मानुष्यकमाद्वेषिकाद्युपसर्गरूपमिति  
 प्रथमं स्थानम् ।

તથા—અયં પરીપહોપસર્ગકારી, મિથ્યાત્વાદિકર્મવશવર્તી પુરુષો યસ્યાऽऽવિષ્ટઃ  
 =દેવાધિષ્ઠિતઃ, તેન કારણેન મામાક્રોશતીત્યાદિ । इति द्वितीयं स्थानम् ।

તથા—મમ તદ્ભવવેદનીયં કર્મ ઉદિતમસ્તિ, તેનૈવ મામાક્રોશતીત્યાદિ । तेनैव  
 मानुष्यकेन भवेन वेद्यते=अनुभूयते यत्तत्, તદ્ભવવેદનીયમ્ । इति तृतीयं स्थानम् ।

સે ભગાતા હૈ, મેરે ऊपर उपद्रव करता है, वस्त्र, पात्र, कम्बल, पाद-  
 मोच्छन, दोरासहित मुखवल्लिका रजोहरण आदि मेरे छुड़ाता है,  
 और छुड़ाकर उन्हें दूर फेंक देता है, अथवा उन्हें झटकता है उन्हें फोड़ता  
 है, चुराता है । ये आक्रोश आदि यहां पर आक्रोश एवं वधपरीपहरूप  
 मानना चाहिये । जिस समय उपसर्ग की विवक्षा में ये आक्रोशादिक  
 हों उस समय इनको मनुष्यकृत अथवा किसी द्वेषीकृत उपसर्ग में  
 परिगणित करना चाहिये । इस प्रकार यह प्रथमस्थान है ।

द्वितीय स्थान में यह विचार करना चाहिये कि मिथ्यात्वादिकर्म-  
 वशवर्ती यह परीपह एवं उपसर्गकारी पुरुष किसी देव से अधिष्ठित  
 हो रहा है । इसी कारण यह मुझे आक्रोश आदि से पीड़ित कर  
 रहा है । यह द्वितीय स्थान है ।

કરે છે, વસ્ત્ર, પાત્ર, કમ્બલ, પાદમોચ્છન, દોરા સહિત મુખવલ્લિકા, રજોહરણ  
 આદિ મોરી પાસેથી ખસેડે છે, ખસેડીને તેને દૂર ફેંકી દે છે, અથવા તેને ઓટકે  
 છે, તેને ફોડે છે, ચોરાવે છે, એ આક્રોશ આદિ સર્વને આ રથેજે આક્રોશ અને વધ  
 પરીપહરૂપ માનવા જોઈએ. જે સમયે ઉપસર્ગની વિવક્ષામાં એ આક્રોશ આદિક  
 થાય તે સમયે એને મનુષ્યકૃત અથવા કોઈ દ્વેષીકૃત ઉપસર્ગમાં પરિગણીત  
 કરવું જોઈએ. એ પ્રકારે આ પ્રથમ સ્થાન છે.

બીજા સ્થાનમાં—એ વિચાર કરવો જોઈએ કે, મિથ્યાત્વ આદિ કર્મના વશવર્તી  
 આ પરીપહ અને ઉપસર્ગકારી પુરુષ કોઈ દેવથી અધિષ્ઠિત થઈ રહેલ છે. આ  
 કારણથી મને આક્રોશ વગેરેથી પીડા આપી રહેલ છે. આ બીજું સ્થાન છે.

તથા-एष बालः पापभयरहितत्वात् करोतु नाम आक्रोशनादि, मम पुनर  
सहमानस्य=अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य=अनध्यासमानस्य, सर्वथा असातादि  
पापकर्म संपद्यते । इति चतुर्थ स्थानम् ।

तथा-एष बालः पापभयरहितत्वात् करोतु नाम आक्रोशनादिकं, मम पुनः  
खलु सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्यासमानस्य किं संपद्यते, अयं तावत् पापं वध्नाति  
मया च एकान्तेन निर्जरा क्रियते । इति पञ्चमं स्थानम् ।

તૃતીય સ્થાન મેં એસા વિચાર કરેં કે યહ તો બાલ હૈ, પાપ કે ભય  
સે રહિત હોને કે કારણ ભલે હી યહ આક્રોશ આદિ કરતા રહે,  
પરંતુ મેરા કર્તવ્ય તો હનકો સહન કરને કા હી હૈ । યદિ મેં-इनको  
सहन नहीं करता हूं-सहन में साहस को छोड़ देता हूं, इनसे यदि  
घबरा जाता हूं तो मुझे असाता आदि पापकर्म का नियमतः बंध होगा।  
इस प्रकार यह चतुर्थ स्थान है ।

પંચમસ્થાન મેં સંયમી કો એસા વિચાર કરના ચાહિયે, કિ યહ  
પરીપદ્ધ એવં ઉપસર્ગકારી વ્યક્તિ પાપ કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ  
બાલ હૈ, इसकी इच्छा है यह आक्रोशादिक करे । इससे मेरा त्रिगडता  
क्या है? मुझे तो उल्टा फायदा ही है, क्यों कि उपसर्ग और परीपद को  
समतापूर्वक सहन करनेवाले के एकान्ततः कर्मों की निर्जरा होती है,  
परन्तु यह उपसर्ग परीपदकारी पुरुष पाप का बंध करता है । यह पंचम  
स्थान है ।

ત્રીજી સ્થાનમાં-એવો વિચાર કરે કે, આ તો બાળ છે, પાપના ભયથી  
રહિત થવાના કારણે ભલે એ આક્રોશ આદિ કરતો રહે પરંતુ મારું કર્તવ્ય  
તો એને સહન કરવાનું જ છે. જો હું તેને સહન કરતો નથી. તો સંહિષ્ણુતાનો  
શુભથી વિરુદ્ધ થાઉં છું. જો તેનાથી હું ગભરાઈ જાઉં છું, તો મને અસાતા આદિ  
પાપ કર્મનો નિયમતઃ બંધ થશે. આ પ્રકારે આ ચોથું સ્થાન પણ છે.

પાંચમ સ્થાનમાં-સંયમીએ એવો વિચાર કરવો જોઈએ કે, આ પરીપદ  
એને ઉપસર્ગ કરનાર વ્યક્તિ પાપના ભયથી રહિત હોવાના કારણે બાળ છે,  
તેની ઇચ્છા છે કે, આ આક્રોશ આદિ કરે પણ તેથી મારું બગડે છે શું?  
મને તો એથી ઉલટો ફાયદો જ છે. કારણકે ઉપસર્ગ અને પરીપદને સમતા પૂર્વક  
સહન કરનારને એકાન્તતઃ કર્મોની નિર્જરા થાય છે. પરંતુ દયાની વાત એ છે કે  
ઉપસર્ગ પરીપદકારી પુરુષ તો કેવળ પાપનો જ બંધ કરે છે. આ પાંચમું સ્થાન છે.

इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैश्चमस्थसंयतः उदितान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहेत, समेत, तितिक्षेत, अध्यासीत ।

अथ केवलिपरीपहाणां भेदाः—

पञ्चभिः स्थानैः केवली उदितान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहेत यावत्-अध्यासीत । तद् यथा-क्षिप्तचित्तः=पुत्रशोकादिना नष्टचित्तः खलु अयं पुरुषः, तेन कारणेन-एष पुरुषो मामाक्रोशति वा तथैव यावत् अपहरति वा । इति प्रथमं स्थानम् ।

तथा—अयं पुरुषो हर्षाधिक्याद् दृप्तचित्तोऽस्ति, पुत्रजन्मादि जनितहर्षेण गर्वितोऽस्ति, तेन कारणेन एष पुरुषो मामाक्रोशति यावत् अपहरति वा । इति द्वितीयं स्थानम् ।

इस प्रकार इन पूर्वोक्त पांच स्थानों से उदित परीपह एवं उपसर्गों को सम परिणाम से युक्त हो कर साधु को सहन करना चाहिये । उन से घबराना नहीं चाहिये ।

केवलीपरीपहों के भेद—

केवली पांच स्थानों से उदित परिपहों को सहन करते हैं, यावत् अध्यासित करते हैं—अर्थात् सम्यक् रूपसे सहन करते हैं । प्रथम स्थानमें वे यह विचार करते हैं कि—यह पुरुष पुत्रशोक आदि से विक्षिप्तचित्त है—इसका चित्त ठिकाने पर नहीं है इस कारण यह मेरे प्रति आक्रोश आदि कर रहा है ।

द्वितीयस्थानमें वे यह विचार करते हैं कि यह पुरुष हर्षातिरेकसे दृप्तचित्त है—पुत्रोत्पत्ति आदि जनित हर्ष से गर्वित हो रहा है, इस कारण यह मेरे प्रति आक्रोश आदि चेष्टाएँ कर रहा है ।

આ પ્રકારનાં એ પૂર્વોક્ત પાંચ સ્થાનોથી ઉદિત પરિપહ અને ઉપસર્ગોને સમંપરિણામથી યુક્ત, અને તે સાધુએ સહન કરવાં જોઈએ! એનાથી ગભરાવું ન જોઈએ.

કેવલીપરીપહોના ભેદ—

કેવલી પાંચ સ્થાનોથી ઉદિત પરિપહોને સહન કરે. યાવત અધ્યાસિત કરે. પ્રથમ સ્થાનમાં તે વિચાર કરે કે આ પુરુષ, પુત્રશોક આદિથી ચિત્તજન્ય સ્થિતમાં છે. એનું ચિત્ત ઠેકાણે નથી તે કારણે તે મારા ઉપર આક્રોશ આદિ કરી રહેલ છે. બીજા સ્થાનમાં તે એવો વિચાર કરે કે, આ પુરુષ હર્ષના આવેશમાં ફેલાઈ ગયેલ છે, પુત્રોત્પત્તિ વગેરેના કારણથી તે હર્ષથી છંદી ગ લ છે. આ કારણે એ મારા તરફ આક્રોશ વગેરે ચેષ્ટાઓ કરે છે.

તથા—યક્ષાવિષ્ટઃ खलु अयं पुरुषः, तेन कारणेन एष पुरुषो मामाक्रोशति यावत्-अपहरति वा । इति तृतीयं स्थानम् ।

તથા—મમ પુનઃ खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदितम् । तेन कारणेन एष पुरुषो मामाक्रोशति यावत्-अपहरति वा । इति चतुर्थं स्थानम् ।

તથા—માં પુનઃ खलु सम्यक् सहमानं क्षममाणं तितिक्षमाणम् अध्यासमानं दृष्ट्वा बहवोऽन्ये छद्मस्थाः श्रमणा निर्ग्रन्था उदितान् परीपहोपसर्गान् एवं सम्यक् सहिष्यन्ते यावत् अध्यासिष्यन्ते । इति पञ्चમं स्थानम् ॥

इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः केवली उदितान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहेत् यावत् अध्यासीत् । एतत् स्थानाङ्गसूत्रे स्पष्टम् । (स्था ५ ठा. १ उ०) ॥ ४५ ॥

તૃતીયસ્થાન મેં વે યહ વિચાર કરતે હૈં કિ યહ પરીપહ એવં ઉપ-સર્ગકારી વ્યક્તિ યક્ષાવિષ્ટ હો રહા હૈં હસ કારણ મેરે પ્રતિ આક્રોશ આદિ કર રહા હૈં ।

ચતુર્થસ્થાન મેં વે એસા વિચાર કરતે હૈં કિ—મેરે હસી ભવ કા વેદનીય કર્મ ઉદિત હો રહા હૈં હસ કારણ યહ પુરુષ મેરે પ્રતિ આક્રોશાદિક કર રહા હૈં ।

પંચમસ્થાન મેં એસા વિચાર કરતે હૈં—મુશ્કે હન પરીપહ એવં ઉપ-સર્ગોં કો અચ્છી તરહ સહન કરતે હુણ દેશ્વકર અન્ય અનેક છદ્મસ્થ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ ઉદિત પરીપહોં એવં ઉપસર્ગોં કો સહન કરેંગે, અનેક સહન કરને મેં ચલાયમાન નહીં હોવેંગે—સહન કરતે સમય ધૈર્ય ધારણ કરેંગે ।

હસ પ્રકાર હન પાંચ સ્થાનોં સે પરીપહોં એવં ઉપસર્ગોં કો સહન આદિ કરતે હૈં । યહ સ્થાનાંગસૂત્રમેં સ્પષ્ટ લિખા હુઆ હૈં । (સ્થા. ૫ ઉ. ૧) ॥ ૪૫ ॥

ત્રીજા સ્થાનમાં એવો વિચાર કરે છે, આ પરીપહ અને ઉપસર્ગ કરનાર વ્યક્તિ યક્ષાવિષ્ટ થઈ રહેલ છે. આ કારણે તે મારા તરફ આક્રોશ વગેરે કરી રહેલ છે.

ચોથા સ્થાનમાં એવો વિચાર કરે છે કે, મારાં આ ભવનાં વેદનીય કર્મ ઉદયમાં આવેલ છે, અને તે કારણે લઈ આ પુરુષ મારા તરફ આક્રોશ કરી રહેલ છે.

પાંચમા સ્થાનમાં એવો વિચાર કરે છે કે, મને આવા પરીપહ અને ઉપસર્ગોંને સારી રીતે સહન કરતાં જોઈને અન્ય અનેક છદ્મસ્થ નિર્ગ્રન્થ શ્રમણ ઉદિત પરીપહોં અને ઉપસર્ગોંને સહન કરશે. તેના સહન કરવામાં ચલાયમાન નહીં થાય અને સહન કરતી વખતે ધૈર્ય ધારણ કરતા રહેશે.

આ પ્રકારે એ પાંચે સ્થાનોથી પરીપહોં અને ઉપસર્ગોંને સહન કરે. આ સ્થાનાંગસૂત્રમાં સ્પષ્ટ લખેલ છે. (સ્થા. ૫ ઉ. ૧) ॥ ૪૫ ॥

અધ્યયનાર્થમુપસંહરન્નાહ—

મૂલમ—એણે પરીસહા સંઘે, કાસવેણં પવેડ્યા ।

જે ભિક્ષૂ પે વિહમ્મેજ્ઞાં, પુંટો કેળાં કણ્ડુ ॥૪૬॥ સિધેમિ ॥

॥ વીયં પરિસહજ્ઞયણં સમત્તં ॥

છાયા—એતે પરીપહાઃ સર્વે, કાશ્યપેન પ્રવેદિતાઃ ।

યાન્ ભિક્ષુર્ન વિહન્યેત, સ્પૃષ્ટઃ કેનાપિ કસ્મિન્થિત્ ॥૪૬॥ इति ब्रवीमि ॥

ટીકા—‘ એણે ’ इत्यादि ।

એતે સર્વે પરીપહાઃ કાશ્યપેન=કાશ્યપગોત્રોત્પન્નેન ભગવતા શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના તીર્થકરેણ પ્રવેદિતાઃ—પ્રતિવોધિતાઃ । યાન્=પરીપહાન્ જાત્વા ભિક્ષુઃ કેનાપિ પરીપહેણ કસ્મિન્થિત્ સ્થાને સ્પૃષ્ટઃ સન્ ‘ ન વિહન્યેત=ન પરાજિતો ભવેત્, સંયમાત્

અવ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે છુણે સૂત્રકાર કહેતે હૈ—  
‘ એણે ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(એણે પરીસહા—એતે પરીપહાઃ) યે ૨૨ ઘાઈસ પરીપહ (કાસ-  
વેણ-કાશ્યપેન ) કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન્ શ્રીમહાવીર સ્વામીને  
(પવેડ્યા—પ્રવેદિતાઃ) કહે હૈ । (જે—યત) જિનકા જાનકર (ભિક્ષૂ—ભિક્ષુઃ)  
ભિક્ષુ (કેળાં—કેનાપિ) કિસીં ભી પરીપહ સે (કણ્ડુ—કુત્રચિત્) કિસી  
સ્થાન મેં આક્રાન્ત હોને પર (ણ વિહમ્મેજ્ઞા—ન વિહન્યેત) પરાજિત નહીં

હવે અધ્યયનના અર્થનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.—

‘ એણે ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—એણે પરીસહા—એતે પરીપહાઃ આ બાવીસ પરીપહ કાસવેણ—કાશ્યપેન  
કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ પવેડ્યા—પ્રવેદિતાઃ  
કહેલ છે. જે—યત જેને બાણીને ભિક્ષૂ—ભિક્ષુઃ કોઈ પણ ભિક્ષુ કેળાં—કેનાપિ પરીપહથી  
કણ્ડુ—કુત્રચિત્ કોઈ સ્થાનમાં આક્રાન્ત થવાથી ણ વિહમ્મેજ્ઞા—ન વિહન્યેત સંયમથી  
ભિક્ષુ પતિત ન થાય. “ इति ब्रवीमि ” આ પ્રકારે હે જંબુ ! ભગવાને જેવું કહ્યું  
છે તેવું જ મેં કહ્યું છે. મારી પોતાની બુદ્ધિની કલ્પનાથી કોઈ પણ નથી.



પતિતો ન ભવેદિત્યર્થઃ । इति ब्रवीमि=भगवता यथा प्रतिबोधितं, तथा कथयामि  
न तु स्वबुद्ध्या प्रकल्प्येति भावः ॥ ४६ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-

कलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-

वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-

“ जैनशास्त्राचार्य ”-पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-

बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-

श्रीघासीलालप्रतिविरचितायां श्रीमदुत्तराध्ययन-

सूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां

परीपहनामकं द्वितीयमध्ययनं

सम्पूर्णम् ॥ २ ॥

—(०)—

હોવે-સંયમ સે પતિત નહીં હોવે । “ इति ब्रवीमि ” इस प्रकार हे जम्नू!  
भगवान् ने जैसा कहा है मैंने वैसा ही कहा है । अपनी बुद्धि से कल्पित  
कर कुछ नहीं कहा है ।

भावार्थ—अध्ययन की समाप्ति करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि जो  
साधु इन परीपहों से पराजित नहीं होता है वह संयम की ટીક ૨  
आराधना करता है । ये चाईस परीपह मैंने नहीं कहे हैं, भगवान् महा-  
वीरने कहे हैं । अतः इनका स्वरूप जानकर इनके सहन करने में प्रत्येक  
संयत को सावधान रहना चाहिये ॥

॥ यह द्वितीय परीपह अध्ययन समाप्त हुआ ॥ २ ॥



ભાવાર્થ—અધ્યયનની સમાપ્તિ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે, જે સાધુ  
આ પરીપહોથી પરાજીત નથી થતાં, તે સંયમની ટીક ટીક આરાધના કરે છે.  
આ બાવીસ પરીપહ મેં કહ્યા નથી ભગવાન મહાવીરે કહ્યા છે આથી એનું  
સ્વરૂપ જાણીને તેને સહન કરવામાં પ્રત્યેક સંયતે સાવધાન રહેવું જોઈએ.

॥ આ બીજું પરીપહ નામનું અધ્યયન સમાપ્ત થયું ॥ ૨ ॥



અધ્યયનાર્થમુપસંહરન્નાહ—

મૂલમ—એણે પરીસહા સંવે, કાંસવેણં પવેહ્યા ।

જે ભિક્ષૂ ણે વિહમ્મેજ્જાં, પુંદ્રો કેળહ કણ્હુહ ॥૪૬॥ સિધેમિ ॥

॥ વીયં પરિસહજ્જયણં સમત્તં ॥

છાયા—એતે પરીપહાઃ સર્વે, કાશ્યપેન પ્રવેદિતાઃ ।

યાન્ ભિક્ષુર્ન વિહન્યેત, સ્પૃષ્ઠઃ કેનાપિ કસ્મિથિત્ ॥૪૬॥ ઇતિ બ્રવીમિ ॥

ટીકા—‘ એણે ’ ઇત્યાદિ ।

એતે સર્વે પરીપહાઃ કાશ્યપેન=કાશ્યપગોત્રોત્પન્નેન ભગવતા શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના તીર્થકરેણ પ્રવેદિતાઃ—પ્રતિવોધિતાઃ । યાન્=પરીપહાન્ જ્ઞાત્વા ભિક્ષુઃ કેનાપિ પરીપહેણ કસ્મિથિત્ સ્થાને સ્પૃષ્ઠઃ સન્ ‘ ન વિહન્યેત=ન પરાજિતો ભવેત્, સંયમાત્

અવ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુણે સૂત્રકાર કહતે હૈ—  
‘ એણે ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(એણે પરીસહા—એતે પરીપહાઃ) યે ૨૨ ઘાઈસ પરીપહ (કાસ-વેણ-કાશ્યપેન ) કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન્ શ્રીમહાવીર સ્વામીને (પવેહ્યા—પ્રવેદિતાઃ) કહે હૈ । (જે—યત) જિનકા જાનકર (ભિક્ષૂ—ભિક્ષુઃ) ભિક્ષુ (કેળહ—કેનાપિ) કિસી મી પરીપહ સે (કણ્હુહ—કુત્રચિત્) કિસી સ્થાન મેં આક્રાન્ત હોને પર (ણ વિહમ્મેજ્જા—ન વિહન્યેત) પરાજિત નહીં

હવે અધ્યયનના અર્થનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.—

‘ એણે ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એણે પરીસહા—એતે પરીપહાઃ આ આવીસ પરીપહ કાસવેણ—કાશ્યપેન કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ પવેહ્યા—પ્રવેદિતાઃ કહેલ છે. જે—યત જેને બાણીને ભિક્ષૂ—ભિક્ષુઃ કોઈ પણ ભિક્ષુ કેળહ—કેનાપિ પરીપહથી કણ્હુહ—કુત્રચિત્ કોઈ સ્થાનમાં આક્રાન્ત થવાથી ણ વિહમ્મેજ્જા—ન વિહન્યેત સંયમથી ભિક્ષુ પતિત ન થાય. “ ઇતિ બ્રવીમિ ” આ પ્રકારે હે. જંભુ । ભગવાને જેવું કહ્યું છે તેવું જ મેં કહ્યું છે. મારીપોતાની બુદ્ધિની કલ્પનાથી કોઈ પણ કહેલ નથી.

મૂલમ્—ચત્તારિ પરમંગાણિ, દુલ્લહાણીહ જંતુણો ।

માણુસત્તં સુઈ સદ્ધા, સંજંમમ્મિ યં વીરિયં” ॥૧॥

છાયા—ચત્તારિ પરમાજ્ઞાનિ, દુર્લભાનિ इह જન્તોઃ ।

માનુપત્ત્વં શ્રુતિઃ શ્રદ્ધા, સંયમે ચ વીર્યમ્ ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘ચત્તારિ’ ઇત્યાદિ ।

इह=સંસારે ચત્તારિ પરમાજ્ઞાનિ-પરમાણિ=ઉત્કૃષ્ટાનિ, અજ્ઞાનિ=સાધનાનિ-મુક્તિપ્રાપ્તિકારણાનિ, જન્તોઃ=પ્રાણિનઃ, દુર્લભાનિ=દુઃસેન લભ્યાનિ, નરકનિગોદાદયનન્તજન્મમરણાનન્તરપ્રાપ્યત્વાત્ । તાનિ ધર્મપ્રાપ્તેઃ પ્રધાનકારણાનિ ચત્તારિ । કાનિ ? ઇત્યત આહ—‘માણુસત્તં’ ઇત્યાદિ । માનુપત્ત્વં=મનુષ્યજન્મ, શ્રુતિઃ=ધર્મસ્ય શ્રવણમ્, શ્રદ્ધા=ધર્મે રુચિઃ, ચ=પુનઃ સંયમે આસ્રવવિરમણરૂપે વિરતિલક્ષણે સપ્તદશવિધે વીર્ય વિશેષેણ ઈરયતિ પ્રવર્તયતિ આત્માનં તાસુ તાસુ ક્રિયાસુ ઇતિ વીર્યં=સામર્થ્યમ્ । એતાનિ ચત્તારિ જીવસ્ય દુર્લભાનિ સન્તીતિ ।

અન્વયાર્થ—(इह) इस संसार में (चत्तारि परमंगाणि-चत्तारि परमाज्ञानि) मुक्तिप्रापक ये चार अंग (जंतुणो-जन्तोः) प्राणि को (दुल्लहाणि-दुर्लभानि) महादुर्लभ हैं-नरक निगोदादिक में अनन्त जन्म कर लेने के बाद जीवों को प्राप्त होते हैं । धर्मप्राप्ति के प्रधान कारण चार अंग ये हैं-(माणुसत्तं-मानुपत्वम्) १ मनुष्यजन्म, (सुई-श्रुतिः) २ धर्म का श्रवण, (सद्धा-श्रद्धा) ३ धर्म में श्रद्धा रुचि (य-च) और (संजमम्मि य वीरियं-संयमे वीर्यम्) ४ आस्रव का विरमणरूप जो १७ सत्रह प्रकार का संयम है उसमें विशेषरूप से शक्ति के अनुरूप प्रवृत्ति । ये चार बातें जीवके लिये प्राप्त होना महादुर्लभ हैं ।

અન્વયાર્થ—इह आ संसारमां चत्तारि परमंगाणि-चत्तारि परमाज्ञानि मुक्ति आपनार अे यार अंग जंतुणो-जंतोः प्राणीने दुल्लहाणि-दुर्लभानि भडा दुर्लभ छे. नरक निगोदादिकमां अनंत जन्म करी लीधा पछी एवोने प्राप्त थाय छे. धर्म प्राप्तितुं प्रधान कारण आ यार अंग छे माणुसत्तं-मानुष्यत्वम् १ मनुष्य जन्म, सुई-श्रुतिः २ धर्मनुं श्रवण सद्धा-श्रद्धा ३ धर्ममां श्रद्धा-इयी य-च अने संजयम्मि वीरियं-संयमे वीर्यम् ४ आस्रवना विरमणरूप जे सत्तर प्रकारने संयम छे तेमां विशेषरूपयी शक्तिनी अनुरूप प्रवृत्ति आ यारे वातो एव भाटे प्राप्त भवी भडा दुर्लभ छे.

## ॥ અથ તૃતીયમધ્યયનમ્ ॥

પરીપહનામકં દ્વિતીયમધ્યયનમુક્તમ્ । અથ તૃતીયં ચતુરંગીયમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે ।  
અસ્ય ચાયમભિસમ્બન્ધઃ—શ્દાનન્તરાધ્યયને પરીપહાઃ સોઢવ્યા ઇત્યુક્તમ્, તત્ર  
'કિમાલમ્બનં કૃત્વા તે સોઢવ્યાઃ ?' ઇત્યાકાઙ્ક્ષાયાં ચતુર્ણમિક્કાનાં દુર્લભત્વમેવ  
તત્રાલમ્બનમિતિ વોધયિતું ચતુરંગીયનામકમિદં તૃતીયમધ્યયનમુચ્યતે, તત્રાદૌ તેષાં  
નામાનિ નિર્દિશન્નાહ—

### તૃતીય અધ્યયન—

પરીપહનામક દ્વિતીય અધ્યયન કહા જા ચુકા હૈ । અથ ચતુ-  
રંગીયનામક તૃતીય અધ્યયન પ્રારંભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયન કે  
બાદ હસ અધ્યયન કો પ્રારંભ કરને કા સૂત્રકાર કા યહ ઉદ્દેશ્ય હૈ કિ  
જો દ્વિતીય અધ્યયન મૈ “પરીપહ સહન કરના ચાહિયે” એસા કહા હૈ  
સો વહાં પર એસા પ્રશ્ન હોતા હૈ કિ “ઇન પરીપહોં કો કિસકા અવલમ્બન  
લેકર સહન કરના ચાહિયે” । હસકે સમાધાન નિમિત્ત હી હસ તૃતીય  
અધ્યયન કા પ્રારંભ હૈ । હસમેં યહ બતલાયા જાયગા કિ ચાર પરમ-  
ઉત્કૃષ્ટ અંગોં કી પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ હૈ । યે ચાર અંગ બડે પુણ્ય સે મિલે  
હૈ, એસા સમજકર મુનિ પરીપહોં કો સહન કરતે હૈ, વે હી ચાર અંગ  
ઘહાં અવલમ્બન-આધાર-રૂપ હૈ અતઃ ઉન ચાર અંગોંકો ઘહાં બતલાતે હૈ—  
'ચત્તારિ'—ઇત્યાદિ ।

### અધ્યયન ત્રીણું

પરીપહ નામનું ત્રીણું અધ્યયન કહેવાઈ ગયું. હવે ચતુરંગીય નામનું  
ત્રીણું અધ્યયન શરૂ થાય છે. ત્રીજા અધ્યયન પછી આ ત્રીજા અધ્યયનનો  
પ્રારંભ કરવાનો સૂત્રકારનો એ ઉદ્દેશ છે કે, ત્રીજા અધ્યયનમાં “પરીપહ સહન  
કરવો જોઈએ” એવું કહેલ છે. તેમાં એવો પ્રશ્ન ઉત્પન્ન થાય છે કે, આ  
પરીપહોને કેાનું અવલંબન લઈને સહન કરવા જોઈએ. એના સમાધાન નિમિત્તે  
જ આ ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ છે. આમાં એ વાત બતાવવામાં આવે છે કે,  
ચાર પરમ-ઉત્કૃષ્ટ અંગોની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે. એ ચાર અંગ ઘણા પુણ્યથી  
મળે છે. એવું સમજીને મુનિ પરીપહોને સહન કરે. એ ચાર અંગ અહીં  
અવલંબન આધાર રૂપ છે. આથી એ ચાર અંગોને અહીં બતાવવામાં આવેલ છે.

‘ચત્તારિ’ ઇત્યાદિ.

માનુષત્વાદિષુ ચતુર્ણામપ્યેકસ્યામાત્રે મોક્ષો ન સંભવતીત્યતુક્તં 'ચત્તારિ' इति ।  
ધર્મશ્રવણં વિનાऽपि यस्य श्रद्धा दृश्यते सा जन्मान्तरीयश्रवणजन्यैवेति नास्ति  
शङ्कावसरः । मृदं विना घट इव, तन्तून् विना पट इव, काष्ठं विना शकटमिव  
मानुषत्वादिचतुष्टयं विना मोक्षो न भवति ।

નિર્જરા કી અપેક્ષા યે ચાર અંગ સર્વપ્રથમ ઉપાદેય હોને કે કારણ  
મુખ્ય હૈ । ઇસલિયે ડનમેં હી ઉત્કૃષ્ટતા આતી હૈ । ઇન ચારોં મેં સે યદિ  
એક ભી અંગ કા અભાવ રહતા હૈ તો મુક્તિ કા લાભ જીવ કો નહોં  
હો સકતા હૈ । યહી વાત "ચત્તારિ" ઇસ વિશેષણ સે પુષ્ટ કી ગઈ હૈ ।

પ્રશ્ન—ધર્મ કે શ્રવણ સે હી જીવ કો ધર્મ મેં શ્રદ્ધા હાતી હૈ. એસાં  
એકાન્તિક નિયમ નહીં હૈ, ક્યોં કિ પ્રાયઃ એસે ભી જીવ દેસે જાતે હૈ  
કિ જો ધર્મ કા શ્રવણ તો નહીં કરતે હૈ ફિર ભી ડનકી ધર્મ મેં  
અટૂટ શ્રદ્ધા રહતી હૈ ।

ઉત્તર—પ્રશ્ન ઠીક હૈ । પરંતુ ડસકા ઉત્તર યહ હૈ કિ—જો જીવ  
એસે હૈ કિ ધર્મ શ્રવણ કિયે વિના ભી ધર્મ મેં શ્રદ્ધાશાલી હોતેહૈ ડન્હોં ને  
પહિલે ભવ મેં ધર્મશ્રવણ કિયા હૈ, ડસીકા પ્રતાપ હૈ । મિટી  
કે વિના જૈસે ઘટ ઉત્પન્ન નહીં હો સકતા હૈ, તંતુઓં કે વિના  
જૈસે વસ્ત્ર નહીં વન સકતા હૈ, કાષ્ઠ કે વિના જૈસે શકટ કા નિર્માણ

ચાર અંગ સર્વ પ્રથમ ઉપાદેય થવાના કારણે મુખ્ય છે. આ કારણે તેનામાં  
ઉત્કૃષ્ટતા આવે છે. આ ચારમાંથી જો એક પણ અંગનો અભાવ રહે તો  
મુક્તિનો લાભ જીવને થઈ શકતો નથી. આ વાત "ચત્તારિ" એ વિશેષણથી  
નક્કી કરવામાં આવેલ છે.

પ્રશ્ન—ધર્મના શ્રવણથી જ જીવને ધર્મમાં શ્રદ્ધા થાય છે એવો એકાન્તિક  
નિયમ નથી. કેમકે, ઘણા એવા જીવ જોવામાં આવે છે કે, જે ધર્મનું શ્રવણ  
કરતા નથી છતાં પણ એની ધર્મમાં અટૂટ શ્રદ્ધા રહે છે.

ઉત્તર—પ્રશ્ન ઠીક છે. પરંતુ એનો ઉત્તર એ છે કે,—જે જીવ એવા છે કે  
જે ધર્મનું શ્રવણ ક્યો વગર પણ ધર્મમાં શ્રદ્ધાવાળા છે, એમણે આગલા જીવમાં  
ધર્મ શ્રવણ કરેલું હોય છે આથી જ આ જીવમાં ધર્મમાં જે શ્રદ્ધા છે તે પરભવને  
વીશે સાંભળેલા ધર્મ શ્રવણનો પ્રતાપ છે. માટી વગર જેમ ઘડો બની શકતો નથી,  
તંતુઓ વગર જેમ વસ્ત્ર બની શકતું નથી, લાકડા વગર જેમ શકટનું નિર્માણ

एतदङ्गचतुष्टयं हि गिरिषु मेरुरिव, तरुषु कल्पतरुरिव, धातुषु सुवर्णमिव, पानेषु पीयूषमिव, मणिषु चिन्तामणिरिव, प्रामाणिकपुरुषेषु तीर्थकर इव, घेनुषु कामधेनुरिव, मनुष्येषु चक्रवर्तीव, देवेषु शक्र इव प्रधानमस्तीति सूचनार्थं 'परमंगाणि' इत्यत्र परमेति विशेषणम् ।

ननु मानुषत्वादीनां कथं परमाङ्गत्वम् निर्जराया एव मुक्तिप्राप्तौ साक्षात् कारणत्वेन प्राधान्यादिति चेत् ? उच्यते—मानुषत्वादિचतुष्टयं विना निर्जराया अनुत्पत्त्या तदपेक्षया मानुषत्वादિचतुष्टयस्य प्रथमोपादेयतया मुख्यत्वादुक्तृष्टत्वमस्ति ।

ये चાર અંગ, પર્વતોં મેં જૈસે મેરુ પ્રધાન હૈ, વૃક્ષોં મેં જૈસે કલ્પવૃક્ષ પ્રધાન હૈ, ધાતુઓં મેં જૈસે સુવર્ણ પ્રધાન હૈ, પેય પદાર્થોં મેં જૈસે અમૃત પ્રધાન હૈ, મણિયોં મેં જૈસે ચિન્તામણિ પ્રધાન હૈ, પ્રામાણિક પુરુષોં મેં જૈસે તીર્થકર પ્રધાન હૈ, ગાયોં મેં જૈસે કામધેનુ પ્રધાન હૈ, મનુષ્યોં મેં જૈસે ચક્રવર્તી પ્રધાન હૈ ઓર દેવોં મેં જૈસે ઇન્દ્ર પ્રધાન હૈ ડસી પ્રકાર યે ચાર અંગ પ્રધાન હેં । ઇસી વાત કો યોતન કરને કે લિયે સૂત્રકારને “પરમ” યહ વિશેષણ દિયો હૈ ।

પ્રશ્ન—માનુષત્વ આદિ મેં પરમાઙ્ગતા-પ્રધાનતા કૈસે હો સકતી હૈ ।  
ક્યોં કિ મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ મેં નિર્જરા હી સાક્ષાત્કારણ હોતી હૈ અતઃ નિર્જરા કી પ્રધાનતા હૈ ।

ઉત્તર—યદ્યપિ મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ મેં સાક્ષાત્કારણ નિર્જરા હૈ પરંતુ નિર્જરા નિરાશ્રય તો હોગી નહીં, અતઃ માનુષત્વાદિ ચાર કે વિના જય નિર્જરા નહીં બન સકતી હૈ તો યહ વાત સ્વતઃ સિદ્ધ હોતી હૈ કિ

જેવી રીતે પર્વતોમાં મેરુ પ્રધાન છે, વૃક્ષોમાં જેમ કલ્પવૃક્ષ પ્રધાન છે, ધાતુમાં જેમ સુવર્ણ પ્રધાન છે, પીવાના પદાર્થોમાં જેમ અમૃત પ્રધાન છે, મણીઓમાં જેમ ચિન્તામણી પ્રધાન છે, પ્રામાણિક પુરુષોમાં જેમ તીર્થકર પ્રધાન છે, ગાયોમાં જેમ કામધેનુ પ્રધાન છે, મનુષ્યોમાં જેમ ચક્રવર્તી પ્રધાન છે, અને દેવોમાં જેમ ઇન્દ્ર પ્રધાન છે, આવી રીતે આ ચાર અંગ પ્રધાન છે. આ વાતને સમજાવવા માટે સૂત્રકારે “પરમ” એવું વિશેષણ આપેલ છે.

પ્રશ્ન—માનુષ્યત્વ આદિમાં પરમાંગતા-પ્રધાનતા કઈ રીતે હોઈ શકે કેમકે, મુક્તિની પ્રાપ્તિમાં નિર્જરા જ સાક્ષાત્કારણ હોય છે. આથી નિર્જરાની પ્રધાનતા છે.

ઉત્તર—કહેાચ મુક્તિની પ્રાપ્તિમાં સાક્ષાત્કારણ નિર્જરા છે. પરંતુ નિર્જરા નિરાશ્રય તો રહે નહીં. આથી માનુષત્વાદિ ચાર અંગ વગર નિર્જરા બની શકતી નથી. આથી આ વાત સ્વતઃ સિદ્ધ થાય છે કે, નિર્જરાની આ



ચુલન્યામાસક્તો જાતઃ । તયોર્દુશ્ચરિતં બ્રહ્મદત્તેન વિદિતમ્ । બ્રહ્મદત્તેન કાકહંસી  
યુગલં પિષ્ટમયં મૈથુનપરાયણં નિર્માય શૂલપ્રોતં કૃત્વા તાભ્યાં પ્રદર્શિતમ્ । તથા-  
ગોનસ-પદ્મનાગિનીયુગલં પિષ્ટમયં કૃત્વા વાચા તર્જયતિ-રે દુષ્ટ ! દુરાચારિન્ !  
ગોનસ ! કિં પદ્મનાગિન્યા સહ રમસે ? તત્કલં મુદ્ગશ્ચ, ઇત્યુત્ત્વા તદુભયં પ્રજ્વલજ્જ્વ-  
લને પ્રક્ષિપતિ । એવં દુષ્કર્મનિવૃત્ત્યર્થં બ્રહ્મદત્તપ્રદર્શિતં દણ્ડં વિલોક્યાપિ તૌદુષ્કર્મ-  
કરણાન્ન નિવૃત્તૌ । તત્ચુલન્યા દીર્ઘપૃષ્ઠનૃપેણ ચ પરસ્પરં વિચાર્ય બ્રહ્મદત્તસ્ય વિવાહઃ

તો વહ દીર્ઘપૃષ્ઠ ચુલની કે મોહ મેં પેસ ગયા । ચુલની ઓર દીર્ઘપૃષ્ઠ  
કે દુશ્ચરિત કી વાત બ્રહ્મદત્ત કે કાન તક ભી પહુચ ગઈ । બ્રહ્મદત્ત ને  
ઉન દોનોં કો શિક્ષા દેને કે અભિપ્રાય સે આટે કા એક, મૈથુન મેં પરા-  
યણ કાક ઓર હંસી કા જોડા નિર્માપિત કર ઓર ઉસે શૂલ મેં પિરો-  
કર ઉન દોનોં કો દિલ્લાયા । તથા ગોનસ (ફળરહિત સર્પ) ઓર  
પદ્મનાગિની કા ભી એક જોડા આટે સે ઉસને તયાર કિયા, ઓર  
ઉન્हीं કે સમક્ષ કહને લગા રે-દુષ્ટ ! દુરાચારી ગોનસ ! તુझे લજ્જા નહીં  
આતી જો તૂ પદ્મનાગિની કે સાથ રમતા હૈ ? અરે અધમ ! તૂ અબ  
અપને કિયે હુએ કર્મ કા ફલ ભોગ । ઇસ પ્રકાર વાળી સે તર્જિત કર  
ઉસને ઉન દોનોં કો જલતી હુઈ અગ્નિ મેં ડાલ દિયા । ઇસ પ્રકાર  
દુષ્કર્મ કી નિવૃત્તિ કે લિયે બ્રહ્મદત્ત કે દ્વારા પ્રદર્શિત દણ્ડ કો દેલ્લકર  
ભી રાની ઓર દીર્ઘપૃષ્ઠ અપને અનર્થવિધાયક દુષ્કર્મ સે પીછે નહીં હટા ।

સમય વિતી ગયા બાદ તે દિર્ઘપૃષ્ઠ ચુલનીના મોહમાં ફસાઈ ગયો. ચુલની  
અને દિર્ઘપૃષ્ઠની આ દુશ્ચરિત્રની વાત બ્રહ્મદત્તના કાન સુધી પહોંચી ગઈ,  
બ્રહ્મદત્તે એ બંનેને શિક્ષા દેવાના અભિપ્રાયથી આટામાંથી (લોટમાંથી)  
એક મૈથુનમાં પરાયણ કાક અને હંસલીનું જોડું નિર્માણ કરી તેને શુદ્ધમાં  
પરોવીને તે બંનેને બતાવ્યું. તથા કૈષ્ણ વગરનો સાપ અને પદ્મનાગણનું  
પણ એક જોડું આટામાંથી (લોટમાંથી) બનાવી તૈયાર કર્યું. અને તેની સામે  
કહેવા લાગ્યો, રે દુષ્ટ ! દુરાચારિ ગોનસ (કૈષ્ણ રહિત સર્પ) ! તને લાજ નથી  
આવતી કે તું, પદ્મનાગણની સાથે રમી રહ્યો છે. અરે અધમ ! તું હવે પોતાના  
કરેલા કર્મનું ફળ ભોગવ. આ પ્રકારે કહીને એ બંનેને તેણે બડબડતી  
અગ્નિમાં નાખી દીધા. આ પ્રકારે દુષ્કર્મની નિવૃત્તિ માટે બ્રહ્મદત્તદ્વારા  
પ્રદર્શિત દંડને જોઈને રાણી અને દિર્ઘપૃષ્ઠ પોતાના અનર્થ વિધાયક  
દુષ્કર્મથી પાછાં ન કર્યાં. એક દિવસની વાત છે કે, આ બંનેએ એકાંતમાં

માનુષ્યત્વં દુર્લભમિત્યત્ર દશ દૃષ્ટાન્તાઃ પ્રદર્શ્યન્તે, તદ્ યથા—ચોલ્લકઃ ૧, પાશકઃ ૨, ધાન્યં ૩, દૂતં ૪, રત્નં ૫, સ્વપ્નઃ ૬, ચક્રં ૭, કૂર્મઃ ૮, યુગં ૯, પરમાણુઃ ૧૦ ।

અથ પ્રથમચોલ્લકદૃષ્ટાન્તઃ—ચોલ્લકો=ભોજનં તદુપલક્ષિતો દૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—કામ્પિલ્યનગરે બ્રહ્મનામકો નૃપતિરાસીત્, તસ્ય માર્યાં ચુલનીનામ્ની, પુત્રો બ્રહ્મદત્તનામકઃ । તસ્મિન્ બ્રહ્મનૃપતૌ મૃતે સતિ તત્પુત્રસ્ય બ્રહ્મદત્તસ્ય ચાલ્યા-વસ્થાં વિલોક્ય બ્રહ્મનૃપસુહૃદ્ દીર્ઘપૃષ્ઠનામકો નૃપસ્તદ્રાજ્યં રક્ષતિ । તદનન્તરં સ

નહીં હો સકતા હૈ उसी तरह इन मानुषत्व आदि चार अंगों की प्राप्ति हुए बिना मुक्ति की प्राप्ति जीव को नहीं हो सकती है ।

“માનુષ્યત્વં દુર્લભં” મનુષ્યપણની પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ છે, આ વિષયમાં દશ દૃષ્ટાન્ત કહે જાતે છે, જેસે—ચોલ્લક ૧, પાશક ૨, ધાન્ય ૩, દૂત ૪, રત્ન ૫, સ્વપ્ન ૬, ચક્ર ૭, કૂર્મ ૮, યુગ ૯, પરમાણુ ૧૦ ।

ચોલ્લક નામ ભોજનકા છે । હસસે ઉપલક્ષિત હોનેસે ચોલ્લકકો મી દૃષ્ટાન્ત કહ દિયા ગયા છે । યહ પ્રથમ ચોલ્લકદૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—

કાંપિલ્ય નગર મેં બ્રહ્મ નામ કા રાજા થા । હસકી સ્ત્રી કા નામ ચુલની ઓર પુત્ર કા નામ બ્રહ્મદત્ત થા । રાજા બ્રહ્મ કે કાલ પ્રાપ્ત હો જાને કે ઘાદ બ્રહ્મદત્ત કી ચાલ અવસ્થા દેખકર “રાજ્ય મેં અવ્યવસ્થા ન પેલ જાય” હસ દૃષ્ટિ સે રાજા બ્રહ્મ કે મિત્ર દીર્ઘપૃષ્ઠ નામ કે રાજા ને હસકે રાજ્ય કો સંભાલ લિયા । જવ કુછ સમય વ્યતીત હો ગયા

થઈ શકતું નથી, એજ રીતે આ માનુષ્યત્વ આદિ ચાર અંગોની પ્રાપ્તિ થયા વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ હોવને થઈ શકતી નથી.

માનુષ્યત્વં દુર્લભં મનુષ્યપણની પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ છે, આ વિષયમાં દશ દૃષ્ટાન્ત કહેવામાં આવે છે. જેમ—ચોલ્લક ૧, પાશક ૨, ધાન્ય ૩, દૂત ૪, રત્ન ૫, સ્વપ્ન ૬, ચક્ર ૭, કૂર્મ ૮, યુગ ૯, પરમાણુ ૧૦.

ચોલ્લક નામ ભોજનનું છે એથી ઉપલક્ષિત થવાથી ચોલ્લકનું પણ દૃષ્ટાન્ત કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રથમ ચોલ્લકદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.—

કાંપિલ્ય નગરમાં બ્રહ્મનામનો રાજા હતો. તેની સ્ત્રી નામ ચુલની અને પુત્રનું નામ બ્રહ્મદત્ત હતું. રાજા બ્રહ્મની કાળપ્રાપ્તિ પછી, બ્રહ્મદત્તની પણ અવસ્થા જોઈ ને “રાજ્યમાં અવ્યવસ્થા ન ફેલાઈ જાય” આ દૃષ્ટીથી રાજા બ્રહ્મના મિત્ર દિર્ઘપૃષ્ઠ નામના રાજાએ તેના રાજ્યને સંભાળી લીધું. એક

તત્સમીપે પ્રકોષ્ઠકાન્તરે શયનાર્થે ગતઃ । તદાધરાત્રે જનન્યાઽગ્નિસંયોજનાત્  
તજ્જતુર્ગૃહં પ્રદીપિતમ્ । બ્રહ્મદત્ત ઉત્થિતઃ । તદા વરધનુર્બ્રહ્મદત્તં વદતિ-નાથ !  
પ્રાસાદઃ પ્રજ્વલતિ, ભવાન્ નિઃસરતુ । ઇતિ તદ્વચનં શ્રુત્વા બ્રહ્મદત્તો વ્રવીતિ-પ્રદર્શય  
માર્ગમ્, તદા વરધનુર્વદતિ નાથ ! અયમસ્તિ સુરજ્ઞામાર્ગઃ, પાદાઘાતેન સુરજ્ઞાદ્વારવર્તિ-  
શિલાપટ્કં ચૂરય, બ્રહ્મદત્તેન તથા કૃતે સતિ ઉભૌ તેનૈવ સુરજ્ઞાપથેન નિઃસૃત્ય વહિ-  
દ્વારાવસ્થિતતુરજ્ઞમૌ સમારુઢ્ય દેશાન્તરં ગતૌ ।

દ્વારા પ્રેરિત होने પર ब्रह्मदत्त उस लाक्षागृह में जाकर सो गया । वर-  
धनु भी उसी के समीप एक प्रकोष्ठक में सो गया । जब आधी रात  
होने का समय आया तो चुलनी माता ने उस लाक्षागृह में आग  
लगा दी मकान जलने लगा । ब्रह्मदत्त एकदम उठा । वरधनु ने शीघ्र  
पास आकर ब्रह्मदत्त से कहा-नाथ ! महल जल रहा है, अपन यहां से  
शीघ्र चले जायें । वरधनु के वचन सुनकर ब्रह्मदत्तने कहा-वताओ मार्ग  
कहां है ? ब्रह्मदत्त के वचन सुनकर वरधनु ने कहा-नाथ ! यह रहा  
सुरंग का मार्ग । इसके द्वार पर जो यह पत्थर की शिला का ढक्कन  
लगा हुआ है इसे आप पैरों से हटा दीजिये और बाहर निकल जाईये ।  
ब्रह्मदत्त ने ऐसा ही किया । सुरंग के द्वार पर लगे हुए पत्थर को पैर से  
हटाकर वे और वरधनु दोनों सुरंगमार्गसे बाहर निकल आये और बाहर  
के द्वारपर खड़े हुए दोनों घोड़ोंपर चढ़कर वहांसे दूसरे देशको चले गये ।

મહેલમાં સુતા માટે ગયો. મંત્રીનો પુત્ર વરધનું પણ તેની સાથે તે મહેલમાં  
ગયો અને તેની સાથે એ મહેલમાં તે પણ એક આસન ઉપર સુતો. બ્યારે  
અરધી રાતનો પ્રારંભ થઈ ચુક્યો ત્યારે દુષ્ટમિત્રી એવી કુમારની માતા  
ચુલનીએ તે લાખાગૃહમાં આગ લગાડી. મહેલ સળગવા લાગ્યો, બ્રહ્મદત્ત  
એકદમ ઉઠ્યો. વરધનુએ એ વખતે તેની પાસે આવીને કહ્યું, નાથ ! મહેલ  
સળગી રહ્યો છે. આપણે અહીંથી તુરત જ નીકળી જવું જોઈએ. વરધનુનાં  
વચન સાંભળીને બ્રહ્મદત્તે કહ્યું કે માર્ગ કયાં છે ? બતાવો. બ્રહ્મદત્તનું વચન  
સાંભળીને વરધનુએ કહ્યું, નાથ ! આ રહ્યો બહાર નીકળવાનો રસ્તો. અહીં જે  
પત્થરનું ઢાંકણ લગાડેલું છે તેને આપ પગથી દૂર કરો અને પછી ભોંયરામાં  
ઉતરી બહાર નીકળી જાઓ. બ્રહ્મદત્તે એ પ્રમાણે કર્યું. ભોંયરાના મુખદ્વારના  
પત્થરને દૂર કરી કુમાર બ્રહ્મદત્ત અને વરધનુ બન્ને ભોંયરાના રસ્તે બહાર  
નીકળી ગયા અને બહારના દ્વાર પાસે તૈયાર રાખવામાં આવેલા ઘોડા ઉપર  
બેસી જવા દેશમાં ચાલ્યા ગયા.

કારિતઃ । તતઃ કપટપ્રવન્ધેન બ્રહ્મદત્તમારણાર્થં જતુગૃહં કારિતમ્ । તદા ધનુનામકાં  
બ્રહ્મનૃપતેર્મન્ત્રી તત્ કપટં જ્ઞાતવાન્ । સ ચ નદીતીરાત્ તદ્ગૃહાભ્યન્તરેઽધઃ પૃથિવ્યાં  
સુરજ્ઞાં નિર્માય નદીતટે સુરજ્ઞાદ્વારે તુરંગમદ્વયં સ્થાપયિત્વા સ્વપુત્રં વરધનુનામકં  
જતુગૃહનિર્માણકારણં જ્ઞાપયતિ । તતો નિઃસરણાર્થં નિર્માણિતાં સુરજ્ઞાં ચ દર્શયતિ ।  
સ વરધનુઃ સ્વપિત્રાજ્ઞયા બ્રહ્મદત્તાનુચરોઽભવત્ ।

અન્યદા કદાચિત્ જનન્યા પ્રેરિતો બ્રહ્મદત્તસ્તસ્મિન્ જતુગૃહે સુપ્તઃ, વરધનુઃ

એક દિન કી વાત હૈ કિ इन दोनोंने एकान्त में इस प्रकार की  
गुप्तमंत्रणा की कि ब्रह्मदत्त का विवाह कर देना चाहिये । ऐसा ही हुआ  
ब्रह्मदत्त का विवाह कर दिया गया । तथा ब्रह्मदत्त को मारने के लिये  
कपट से एक लाक्षागृह-लाख का महल भी बनवा कर तयार कराया  
गया । राजा ब्रह्म के मंत्री को उनकी यह कपट रचना ज्ञात हो गई ।  
मंत्री का नाम धनु था । उसने नदी के तीर से लेकर उस लाक्षागृह के  
भीतर तक पृथिवी के नीचे एक सुरंग बनवाई । जब सुरंग बनकर  
तयार हो चुकी तो नदी के तट पर कि जहां सुरंग से बाहर निकल ने  
का द्वार था दो घोड़े खड़े करवा दिये और अपने पुत्र से कि जिसका  
नाम वरधनु था लाक्षागृह के निर्माण का कारण प्रकट कर दिया । तथा  
यहां से निकलने के लिये जो सुरंग बनाई गई थी उसका भी भीतरी  
दरवाजा उसे दिखला दिया । वरधनु अपने पिता की आज्ञा से ब्रह्म-  
दत्त का अनुचर बन गया । एक दिन की बात है कि अपनी माता

એવા પ્રકારની ગુપ્ત મંત્રણા કરી કે, બ્રહ્મદત્તનો વિવાહ કરી દેવો. અને એ  
પ્રમાણે બ્રહ્મદત્તનો વિવાહ કરી દેવામાં આવ્યો. આ પછી બ્રહ્મદત્તને  
કપટથી મારવા માટે એક લાખાગૃહ (લેગણીનો મહેલ) બનાવી તૈયાર  
કર્યો. રાજા બ્રહ્માના મંત્રીને તેમની આ કપટ રચના જાણવામાં આવી ગઈ. મંત્રીનું  
નામ ધનુ હતું. તેણે નદીના કાંઠાથી લઈને એ લાખાગૃહની અંદર સુધીનું  
એક ભોંયડું તૈયાર કરાવ્યું. જ્યારે ભોંયડું તૈયાર થઈ ગયું ત્યારે નદીના કાંઠા ઉપર  
કે જ્યાં ભોંયારમાંથી બહાર નીકળવાનો રસ્તો રાખ્યો હતો તે સ્થળે એ ઘોડા તૈયાર  
રખાવ્યા. અને પોતાના પુત્ર કે જેનું નામ વરધનુ હતું તેને લાખાગૃહની સમસ્ત  
વાતથી જાણકાર કરી તેમાંથી નીકળવા માટે જે ભોંયડું બનાવવામાં આવેલ  
હતું તેની સઘળી માહિતી આપી નીકળવા માટેનો દરવાજો તેને બતાવી દીધો. એક  
દિવસની વાત છે કે, કુમાર બ્રહ્મદત્ત તેની માતાના કહેવાથી,

તત્સમીપે પ્રકોષ્ઠકાન્તરે શયનાર્થે ગતઃ । તદાઽર્ધરાત્રે જનન્યાઽગ્નિસંયોજનાત્  
તજ્જતુર્ગૃહં પ્રદીપિતમ્ । બ્રહ્મદત્ત ઉત્થિતઃ । તદા વરધનુર્બ્રહ્મદત્તં વદતિ-નાથ !  
પ્રાસાદઃ પ્રજ્વલતિ, ભવાન્ નિઃસરતુ । ઇતિ તદ્વચનં શ્રુત્વા બ્રહ્મદત્તો વ્રવીતિ-પ્રદર્શય  
માર્ગમ્, તદા વરધનુર્વદતિ નાથ ! અયમસ્તિ સુરજ્ઞામાર્ગઃ, પાદાઘાતેન સુરજ્ઞાદ્વારવર્તિ-  
શિલાપટ્ટકં ચૂરય, બ્રહ્મદત્તેન તથા કૃતે સતિ ઊભૌ તેનૈવ સુરજ્ઞાપથેન નિઃમૃત્ય વહિ-  
ર્દ્વારાવસ્થિતતુરજ્ઞમૌ સમારુઘ્ય દેશાન્તરં ગતૌ ।

દ્વારા પ્રેરિત હોને પર બ્રહ્મદત્ત ઉસ લાક્ષાગૃહ મેં જાકર સો ગયા । વર-  
ધનુ મી ઉસી કે સમીપ એક પ્રકોષ્ઠક મેં સો ગયા । જવ આધી રાત  
હોને કા સમય આયા તો ચુલની માતા ને ઉસ લાક્ષાગૃહ મેં આગ  
લગા દી મકાન જલને લગા । બ્રહ્મદત્ત એકદમ ઉઠા । વરધનુ ને શીઘ્ર  
પાસ આકર બ્રહ્મદત્ત સે કહા-નાથ ! મહલ જલ રહા હૈ, અપન યહાં સે  
શીઘ્ર ચલે જાવેં । વરધનુ કે વચન સુનકર બ્રહ્મદત્તને કહા-વતાઓ માર્ગ  
કહાં હૈ ? બ્રહ્મદત્ત કે વચન સુનકર વરધનુ ને કહા-નાથ ! યહ રહા  
સુરંગ કા માર્ગ । હસકે દ્વાર પર જો યહ પથર કી શિલા કા ઢક્કન  
લગા હુઆ હૈ હસે આપ પૈરોં સે હટા દીજિયે ઓર વાહર નિકલ જાઈયે ।  
બ્રહ્મદત્ત ને એસા હી કિયા । સુરંગ કે દ્વાર પર લગે હુએ પથર કો પૈર સે  
હટાકર વે ઓર વરધનુ દોનોં સુરંગમાર્ગસે વાહર નિકલ આયે ઓર વાહર  
કે દ્વારપર સ્વહે હુએ દોનોં ઘોડોંપર ચઢકર વહાંસે દૂસરે દેશકો ચલે ગયે ।

મહેલમાં સુવા માટે ગયો. મંત્રીનો પુત્ર વરધનુ પણ તેની સાથે તે મહેલમાં  
ગયો અને તેની સાથે એ મહેલમાં તે પણ એક આસન ઉપર સુતો બ્યારે  
અરધી રાતનો પ્રારંભ થઈ ચુક્યો ત્યારે હુકમિણી એવી કુમારની માતા  
ચુલનીએ તે લાખાગૃહમાં આગ લગાડી. મહેલ સળગવા લાગ્યો, બ્રહ્મદત્ત  
એકદમ ઉઠ્યો. વરધનુએ એ વખતે તેની પાસે આવીને કહ્યું, નાથ! મહેલ  
સળગી રહ્યો છે. આપણે અહીંથી તુરત જ નીકળી જવું જોઈએ. વરધનુનાં  
વચન સાંભળીને બ્રહ્મદત્તે કહ્યું કે માર્ગ કયાં છે? બતાવો. બ્રહ્મદત્તનું વચન  
સાંભળીને વરધનુએ કહ્યું, નાથ! આ રહ્યો બહાર નીકળવાનો રસ્તો. અહીં જે  
પથરનું ઢાંકણ લગાડેલું છે તેને આપ પગથી ફર કરો અને પછી ભોંયરામાં  
ઉતરી બહાર નીકળી જાઓ. બ્રહ્મદત્તે એ પ્રમાણે કર્યું. ભોંયરાના મુખદ્વારના  
પથરને ફર કરી કુમાર બ્રહ્મદત્ત અને વરધનુ બન્ને ભોંયરાના રસ્તે બહાર  
નીકળી ગયા અને બહારના દ્વાર પાસે તૈયાર રાખવામાં આવેલા ઘોડા ઉપર  
બેસી બન્ને જણા ફર દેશમાં આવ્યા ગયા.

અત્યન્તદૂરપથભ્રમણજનિતશ્રગદશ્વૌ મૃતૌ । પાદચારેણ બ્રહ્મદત્તો વરધેનુના  
સહ પૃથિવ્યામટી । તતો દીર્ઘપૃષ્ઠનૃપસ્ય ભયાત્ પૃથક્ પૃથક્ ભૂત્તા તૌ પર્યટતઃ ।  
અથ બ્રહ્મદત્તઃ પર્યટન્ નિર્ધનવેપેણ ક્વચિદ્ વૃક્ષતલે ઉપવિષ્ટઃ । તદા કેનચિત્  
સામુદ્રિકવિધાવતા વિપ્રેણ માર્ગે બ્રહ્મદત્તચરણન્યાસં દૃષ્ટ્વા મુદિતચિત્તઃ શીઘ્રગત્યા  
તત્ર વૃક્ષતલે સમાયાતઃ । તત્ર નિર્ધનવેપેણ વર્તમાનં બ્રહ્મદત્તમવલોસ્ય સ વિમો  
રોદિતિ । તં બ્રહ્મદત્તઃ પૃચ્છતિ-હે વિપ ! કથં રોદિપિ ? સામુદ્રિકશાસ્ત્રજ્ઞોઽસૌ વિપ  
આહ-અથ મમ વિદ્યા અસદર્થવોધિકા જાતા, મદચરણલક્ષણં ભવતશ્ચક્રવર્તિત્વમાલે-

અત્યન્ત દૂર તક અધિક વેગ સે ચલને કે કારણ અનેકે ઘોડે બહુત  
થક ગયે થે હસલિયે અનેકા પેટ ફૂલ ગયા ઓર દોનોં ઘોડે મર ગયે ।  
બ્રહ્મદત્ત ઓર વરધનુ દોનોં હી પૈદલ જંગલમેં ધૂમને લગે, પર દીર્ઘપૃષ્ઠ  
રાજા કા ભય હૃદય મેં વના હુઆ થા । હસલિયે અનેકોં ને અથ  
અલગ ૨ હોકર ચલના હી અચ્છા સમજા । બ્રહ્મદત્ત ચલતે ૨ એક કિસી  
વૃક્ષ કે નીચે આકર ઠહર ગયા । હતને મેં વહાં એક સામુદ્રિક શાસ્ત્ર  
કા વેત્તા બ્રાહ્મણ જો ઉસી રસ્તેસેં હોકર કહીં જા રહા થા માર્ગમેં બ્રહ્મદત્ત  
કે ચરણચિહ્નોં કો દેખકર વડા હી પ્રસન્ન હુઆ, ઓર ચરણચિહ્નોં કો  
લક્ષિત કર વહ ઉસ સ્થાન પર આપહુંચા જહાં બ્રહ્મદત્ત વૃક્ષ કે નીચે  
બેઠા હુઆ થા । બ્રહ્મદત્ત કી નિર્ધન અવસ્થા દેખકર બ્રાહ્મણ કો રોના  
આગયા । બ્રાહ્મણ કો રોતે દેખકર બ્રહ્મદત્ત ને પૂછા હે બ્રાહ્મણ ! કયોં રો  
રહે હો ? સામુદ્રિક શાસ્ત્રજ્ઞ ઉસ બ્રાહ્મણ ને કહા કિ મૈંને જો સામુદ્રિક

મણા વેગથી લાંબી મજલ કાપવાથી તેમના ઘોડા થાકી ગયા અને એથી એ  
ઘોડાઓનું પેટ ફુલી જતાં બંને ઘોડા મરી ગયા. વરધનુ અને બ્રહ્મદત્ત બંને  
પગપાળા જંગલમાં ફરવા લાગ્યા, આ રીતે ફરવાથી દીર્ઘપૃષ્ઠ રાજા તરફથી  
ભય આવી પડશે તેવી દહેશતથી બંને જણાએ જુદા જુદા ચાલવાનું રાખ્યું.  
બ્રહ્મદત્ત ચાલતાં ચાલતાં કોઈ એક વૃક્ષની નીચે જઈ પહોંચ્યો અને ત્યાં રોકાઈ ગયો.  
આ સમયે સામુદ્રિકશાસ્ત્રજ્ઞાનનો બળુકાર એક બ્રાહ્મણ કે જે એ રસ્તેથી જઈ રહ્યો  
હતો તેણે માર્ગમાં બ્રહ્મદત્તનાં ચરણનાં ધૂળમાં પડેલાં પગલાંનાં ચિન્હોને જોઈને  
ધૂળ પ્રસન્નતા અનુભવી અને ચરણ ચિન્હોને લક્ષમાં રાખતો રાખતો તે જે સ્થળે  
કુમાર બ્રહ્મદત્ત હતો ત્યાં આવી પહોંચ્યો. બ્રહ્મદત્તની નિર્ધન અવસ્થા જોઈને બ્રાહ્મણની  
આંખમાં આંસુ આવી ગયાં. બ્રાહ્મણને રોતાં જોઈ બ્રહ્મદત્તે કહ્યું, હે બ્રાહ્મણ શા માટે  
રડો છો ? સામુદ્રિક શાસ્ત્રના બળુકાર તં બ્રાહ્મણે કહ્યું કે, મેં આજ સુધી



દયતિ કિંતુ ભવાન્ નિર્ધનાવતારો મિલિતઃ । વ્રહ્મદત્તો વદતિ-અહમસ્મિ ચક્રવર્તી,  
યદા મમ રાજ્યપ્રાપ્તિઃ સ્યાત્તદા ભવતા મમાન્તિકમાગન્તવ્યમ્ ।

કાલાન્તરે વ્રહ્મદત્તેન ચક્રવર્તિરાજ્યં પ્રાપ્તમ્, દ્વાદશ વર્ષાણિ રાજ્યાભિષેકો-  
ત્સવઃ પ્રારબ્ધઃ । સામુદ્રિકશાસ્ત્રજ્ઞોઽસૌ વિપ્રસ્તદુત્સવસમાચારં પ્રાપ્ય તત્રાગતઃ ।

શાસ્ત્ર કા અભીતક અધ્યયન કિયા હૈ વહ આજ ચિલકુલ ગલત સાધિત હો રહા હૈ । સસલિયે મૈં રો રહા હૂં । આપકે ચરણોં મૈં જો ચિહ્ન યને હુએ હૈં ઉનસે યહ વાત જ્ઞાત હોતી હૈ કિ આપંકો ચક્રવર્તી હોના ચાહિયે પર આપકી તો યહ દશા હૈ કિ હસ સમય આપકે પાસ યાને તક કો અન્ન ભી નહીં હૈ । આપકા યહ વેષ દરિદ્રિયોં જૈસા હૈ । અવ-  
સ્થા આપકી નિર્ધન હૈ । એસે માલૂમ પડતા હૈ કિ માનોં આપ મૈં નિર્ધનતાને હી અવતાર લિયા હૈ । વ્રાહ્મણ કી વાત સુનકર વ્રહ્મદત્ત ને કહા-તુમ્હારા સામુદ્રિક શાસ્ત્ર મિથ્યા નહીં હૈ દુઃખી મત હોઓ, મૈં વાસ્તવ મૈં ચક્રવર્તી હી હૂં । જવ મુજે રાજ્ય કી પ્રાપ્તિ હો તો ઉસ સમય તુમ મેરે પાસ આના ।

કાલાન્તર મૈં વ્રહ્મદત્ત કો ચક્રવર્તિપદ કી પ્રાપ્તિ હુઈ । વ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી બન ગયે । વારહ વર્ષ કા રાજ્યાભિષેક વડા હો ઠાટ વાટ સે મનાયા જાને લગા । હસી અવસર મૈં ઉસ વ્રાહ્મણ ને જવ યહ સમાચાર સુના તો વહ ભી વહાં પર આગયા પર વહ વ્રહ્મદત્તસે મિલ નહીં સકા ।

સામુદ્રિક શાસ્ત્રનું જે અધ્યયન કર્યું છે તે આજે બીલકુલ નકામું માલુમ પડ્યું છે. આ માટે હું રોઇ રહ્યો છું. આપના ચરણોમાં જે ચિન્હ બેવામાં આવે છે તેનાથી એવી વાત સિદ્ધ થાય છે કે, આપ ચક્રવર્તી બનવા બેઠાં છે. પરંતુ આપની તો એ દશા છે કે, આ સમયે આપની પાસે આવવાને અન્ન પણ નથી. આપનો આ વેશ દરિદ્રીઓના જેવો છે. આપની અવસ્થા નિર્ધન છે. એવું માલુમ પડે છે કે, આપનામાં નિર્ધનતાએ અવતાર લીધો છે, બ્રાહ્મણની વાત સાંભળી બ્રહ્મદત્તે કહ્યું. આ તમારું સામુદ્રિક શાસ્ત્ર મિથ્યા નથી, દુઃખી ન બનો. હું વાસ્તવમાં ચક્રવર્તી જ છું બ્યારે મને રાજ્યની પ્રાપ્તિ થાય એ સમયે તમે મારી પાસે આવજો.

સમયના વહેવા સાથે બ્રહ્મદત્તને ચક્રવર્તિ પદ પ્રાપ્ત થયું. રાજ્યમાં ૧૨ વર્ષ સુધી તેના રાજ્યાભિષેકનો ઉત્સવ ઠામઠામ મનાવા લાગ્યો. એ બ્રાહ્મણે બ્યારે આ પ્રસંગના શુભ સમાચાર જાણ્યા તો તે પણ ત્યાં આવી પહોંચ્યો, પંથું તે બ્રહ્મદત્તને મળી શક્યો નહીં. બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી સાથે તેનો મેળાપ

ब्रह्मदत्तचक्रवर्तिनो दर्शनं मम कथं स्यादिति पृष्ठः कथित् श्रेष्ठो तं विप्रं मार्गं दर्शयति । अथोत्सवसमये चक्रवर्ती गजमास्त्य वहिर्निःसरति । स विप्रस्तदा जन-समूहमध्ये वंशाग्रे पादत्राणमालां संयोज्य तं वंशमुत्थाप्य स्थितवान् । चक्रवर्ती स्वराज्यैश्वर्यशोभां समन्ताद् विलोकयन् वंशाग्रसंलग्नानुपानद्मालामपश्यत् । ततः कोपारुणनेत्रश्चक्रवर्ती भृत्यैस्तमाहूय पृच्छति-किमेतत् त्वया मर्तुमाचरितम् ? । विप्रः प्राह-नहि मर्तुं, किंतु जीवितुम् । चक्रवर्ती वंशोत्थापनकारणं विज्ञाय

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती से अब मेरा मिलाप कैसे हो ? इस बात को उसने किसी वहीँ के सेठ से पूछा तो उसने उसे मिलाप का रस्ता भी बतला दिया । उत्सव के समय चक्रवर्ती हाथी पर चढ़कर आ रहे थे, भीड़ काफी थी । ब्राह्मण ने मिलाप का मार्ग सोचा, उसके अनुसार एक वांस पर जूतों की माला लटका कर और उस वांस को भीड़ के बीच में ऊपर उठा कर वह खड़ा हो गया । चक्रवर्ती अपने राज्य के ऐश्वर्य की शोभा का चारों ओर से निरीक्षण करते हुए चल रहे थे । उन्होंने इस दृश्य को ज्यों ही देखा इकदम देखते ही आंखों में क्रोध की लाली उतर आई, नौकरों के जरिये उस ब्राह्मण को बुलवाकर पूछा, अरे ! इस सुन्दर अवसर पर यह तूने क्या काम किया है ? मालूम पड़ता है तेरी मौत आ गई है । ब्राह्मण ने चक्रवर्ती की बात सुनकर कहा यह काम मैंने अपनी मौत को बुलाने के लिये नहीं किया है, किन्तु जीने के लिये किया है । जब चक्रवर्ती वंशोत्थापन के कारण से

ઝઈ રીતે થાય આ વાત તેણે ત્યાંના કોઈ શેઠને પૂછી તો તેણે મેળાપ માટેનો રસ્તો બતાવ્યો. ઉત્સવના સમયે ચક્રવર્તી હાથી ઉપર બેસી આવી રહ્યા હતા. ભીડ ખૂબ હતી, બ્રાહ્મણે મેળાપનો માર્ગ વિચાર્યો. આ અનુસાર તે એક વાંસ ઉપર લટકાવેલ જોડાની માળા સાથે તે લોકોની ભીડમાં હાથમાં વાંસડો ઉંચે રાખીને ઉભો રહ્યો. ચક્રવર્તી પોતાના રાજ્યની ઐશ્વર્યની શોભાને ચારે તરફ દૃષ્ટી ફેરવી જોઈ રહેલ હતા, તેમણે આ દૃશ્ય જોયું અને જોતાં જ એકદમ આંખોમાં ક્રોધની લાલીમાં છવાઈ ગઈ. નોકરો દ્વારા એ બ્રાહ્મણને બોલાવી પૂછ્યું. અરે ! આ સુંદર અવસર ઉપર તું આંબું કામ કેમ કરી રહ્યો છે ? મોલુમ પડે છે કે તારૂં મોત આવ્યું છે. ચક્રવર્તીની વાત સાંભળી બ્રાહ્મણે કહ્યું, આ કામ મેં મારા મોતના બોલાવવાથી નથી કર્યું, પરંતુ જીવવા માટે કરેલ છે. આ પછી ચક્રવર્તી વંશોત્થાપનના કારણથી યથાર્થ રૂપથી

પરિતુષ્ટો ભૂત્વા ગજોપરિ સ્વપાર્થે તમુપવેશ્ય વ્રવીતિ-હે વિપ્ર! સ્વામોષ્ટં દૂહિ, સોઽવદત્ ભાર્યાં પૃષ્ઠા કથયામિ । તતસ્તેન સ્વગૃહમાગત્ય ભાર્યાં પૃષ્ઠા । ભાર્યાં મનસિ ચિન્તયતિ-ધનાગમે ત્રીણિ નશ્યન્તિ જીર્ણં ગૃહં, જીર્ણાં ભાર્યાં, જિર્ણં મિત્રમ્ । ઇતિ વિચાર્ય સા પ્રાઢ - એકૈકસ્મિન્ દિને એકૈરુગૃહે પાયસભોજનં ભવતુ, ઇત્યેવ પ્રાર્થનીયમ્ । તતોઽસૌ વિપ્રથકવર્તિસંનિધૌ સમાગત્ય તદેવ પ્રાર્થિતવાન્ । ચક્રવર્તી

યથાર્થરૂપ મેં પરિચિત્ત હો ચુકે, તવ વે વડે પ્રસન્ન હુણ । ઉન્હોં ને ઉસ વ્રાહ્મણ કો શીઘ્ર હી હાથી પર અપને પાસ વૈઠા કર કહા કિ કહો વિપ્રદેવ ! તુમ કયા ચાહતે હો ? ઉસને કહા મહારાજ ! મેં કયા ચાહતા હું યહ વાત તો અપની ભાર્યાં સે પૂછકર આપસે કહુંગા । ચક્રવર્તી સે વહ ઘર જાને કી આજ્ઞા લેકર ઘર આગયા । ઘર પર આકર ઉસને અપની પત્ની સે સમસ્ત વૃત્તાન્ત કહ દિયા । પત્ની ને સુનકર વિચાર કિયા કિ યદિ યહ ધનવાન્ યન જાયગા તો મુઝે અવશ્ય છોડ દેગા, કયોં કિ ધન કે આને પર ત્રીન ચીજેં છોડ દી જાતી હેં—૧ જૂના ઘર, ૨ જૂની ભાર્યાં ઓર ૩ જૂનાં મિત્ર । ઇસલિયે ઇસસે કહ દિયા જાય કિ હમેં તો પ્રતિદિન એકર ઘર પર સ્ત્રીર કા ભોજન મિલતા રહે, એસી વ્યવસ્થા હો જાની ચાહિયે । વસ ઇસ પ્રકાર વિચાર કર વ્રાહ્મણી ને અપને પતિ સે યહી વાત કહી ઓર કહા કિ જાકર તુમ રાજા સે યહી માંગો અપને લિયે ઓર વસ્તુ કો કયા કરના હૈ । વ્રાહ્મણ ને અપની પત્ની કી સલાહ માન કર ચક્રવર્તી સે યહી માંગા । ચક્રવર્તી ને વ્રાહ્મણ સે કહા

પરિચિત્ત બનતાં ખૂબજ પ્રસન્ન થયા અને તેમણે બ્રાહ્મણને એજ વખતે પોતાના હાથી ઉપર બેસાડી લઈને પૂછ્યું, કહો વિપ્રદેવ તમે શું ચાહો છો ? જવાબમાં તે બ્રાહ્મણે કહ્યું, મહારાજ ! હું શું ચાહું છું તે વાત મારી સ્ત્રીને પૂછ્યા પછી આપને કહીશ. ચક્રવર્તીની આજ્ઞા લઈ તે પોતાને ઘેર ગયો. ઘેર પહોંચી તેણે પોતાની સ્ત્રીને સઘળો વૃત્તાન્ત કહી સંભળાવ્યો. સ્ત્રીએ સઘળી ખીના સાંભળીને વિચાર કયોં કે, મારો પતિ ધનવાન બની જશે તો એ મને અવશ્ય છોડી દેશે. કેમકે, ધનના આવવાથી ત્રણ સ્ત્રીને ભુલાઈ જાય છે. એક તો જુનાં ઘર, બીજું સ્ત્રી, ત્રીજું જુનામિત્ર. આ માટે એને એમ માગવાનું કહેવામાં આવે કે, અમને પ્રતિદિન એક એક ઘેરથી ખીરનું લોજન મળતું રહે એવી વ્યવસ્થા કરવામાં આવે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી બ્રાહ્મણીએ પોતાના પતિને એ વાત કહી અને કહ્યું કે, તમે રાજા પાસે જઈને એ પ્રમાણે માગો. આપણે ખીણ વસ્તુની શું જરૂર છે ? બ્રાહ્મણે સ્ત્રીની સલાહ માનીને રાજા પાસે જઈ તેની સ્ત્રીના કીધા પ્રમાણે જ માગ્યું.

પ્રાહ-કિમિદં પ્રાર્થયસિ ? ગ્રામો, નગરં, વા કોશો વા યાચ્યતામ્ । સ વિપ્રોઽવદત્-  
 ઇદમેવ મમેપ્સિતમ્, તતશ્ચક્રવર્તિના તત્સ્વીકૃતમ્ । પ્રથમદિને ચક્રવર્તિનો ભવને પરમ-  
 સુસ્વાદુ પાપસં લબ્ધમ્ । તત્ર કામ્પિલ્યનગરે ચક્રવર્ત્યાજ્ઞયાઽસૌ વિપ્રઃ પ્રત્યેકગૃહે  
 ભોજનં ક્રમેણ પ્રતિદિનં લભતે, તથાપ્યસૌ ગૃહાણામન્તં ન પ્રાપ, કથં તર્હિ તસ્ય સમસ્ત  
 ભરતક્ષેત્રવર્તિપુ ગૃહેષુ एकैकગૃહે ક્રમેણ પ્રતિદિનં ભોજનપ્રાપ્ત્યનન્તરં પુનશ્ચક્રવર્તિભવને

યહ તુમને કયા चीज मांगी है, गांव मांगो नगर मांगो वा कोश-  
 खजाना मांगो । सुनकर ब्राह्मण ने कहा हमें इन चीजों की आवश्य-  
 कता नहीं है । हमारी इच्छा तो जो है वह आप से निवेदित कर दी है ।  
 चक्रवर्ती ने ब्राह्मणकी बात स्वीकार करली । चक्रवर्तीने स्वयं सबसे  
 पहिले दिवस इसके लिये परम स्वादिष्ट बढ़िया खीर अर्चने महलमें तैयार  
 करवाई । ब्राह्मण ने बड़े आनंद के साथ खाई । क्रमर से अब यह उस  
 कांपिल्य नगर में सब के घर एकर दिन खीर के भोजन के लिये जाने  
 लगा, परन्तु वहां इतने अधिक घर थे कि इसके जीवनभर तक भी  
 जीमतेर घरों के वारे नहीं समाप्त हो सकते थे । तथा छह खंड की  
 पृथिवी का अधिपति चक्रवर्ती होता है इसलिये यद्यपि उसके जीमने  
 का नंबर छह खंडोंमें नियत कर दिया गया था, पर जब कांपिल्य नगर  
 के घरों की ही समाप्ति नहीं हो सकी तो भरतक्षेत्र भर के घरों का  
 बारा उसके कैसे प्राप्त हो सकता था ? अतः वह बड़ा ही चिन्तित रहने  
 लगा । वह विचारता रहता कि कब समस्त घरों का बारा मेरा समाप्त

ચક્રવર્તીએ બ્રાહ્મણને કહ્યું કે તમે આ શું માગ્યું ? ગામ, નગર અથવા તો ધન  
 દોલત જે ભેદ એ તે માગીલ્યો. બ્રાહ્મણે કહ્યું કે, મહારાજ ! મને એવી કોઈ ચીજની  
 જરૂરીઆત નથી. અમારી જે ઇચ્છા છે તે આપની સમક્ષ રજુ કરી છે. ચક્રવર્તીએ  
 બ્રાહ્મણની વાતનો સ્વીકાર કરી અને પોતાનાજ મહેલમાં તેને માટે સ્વાદિષ્ટ  
 એવી ખીર તૈયાર કરાવી. બ્રાહ્મણે ખૂબ જ આનંદથી તે ખાધી. ક્રમે ક્રમે તે  
 કાંપિલ્ય નગરમાં બધાને ત્યાં એક એક દિવસ ખીરના ભોજન માટે જવા  
 લાગ્યો. પરંતુ ત્યાં એટલાં બધાં ઘરો હતાં કે એના જીવન સુધી જમતાં જમતાં  
 ઘરનો વારો સમાપ્ત થઈ શકે તેમ ન હતું. તેમાંથી ચક્રવર્તી તો છ ખંડ  
 ધરતીનો અધિપતિ હોય છે. આથી તેના જમવાનો નંબર છ ખંડોમાં નક્કી  
 કરી આપેલ હતો પણ જ્યારે એકલા કાંપિલ્ય નગરનાં જ ઘરો તે પુરાં કરી  
 શકે તેમ ન હતું ત્યાં ભરતક્ષેત્રના વિસ્તારનાં ઘરોનો વારો તો ક્યાંથી જ આવે ?  
 આથી તે ખૂબ જ ચિંતા કરવા લાગ્યો. તે વિચારવા લાગ્યો કે, ક્યારે સમસ્ત

ભોજનં લઘ્વવ્યમ્ , સમસ્તભરતક્ષેત્રાન્તર્ગતગૃહાણાં વાહુલ્યાત્ । એવં યથા ચક્રવર્તિનો  
ભવનેઽનુપમં પાપસં પ્રાપ્તુમિચ્છતસ્તસ્ય વિપ્રસ્ય તદ્ દુર્લભં તથા મનુષ્યજન્મ દુર્લભમ્ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ — (શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તમ્)

મુક્તં સ્વાદુરસં દ્વિજેન ભવને શ્રીવ્રહ્મદત્તસ્ય યત્ ,  
ક્ષેત્રેઽસ્મિન્ ભરતેઽસ્થિલે પ્રતિગૃહે મુક્ત્વા પુનસ્તદ્ગૃહે ।  
જાતં તસ્ય યથા મનોઽભિલપિતં તદ્ ભોજનં દુર્લભં,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમ્વો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

॥ ઇતિ પ્રથમશ્ચોલકદષ્ટાન્તઃ ॥ ૧ ॥

હો, ઓર કવ મુજે પુનઃ ચક્રવર્તી કે ઘર પર વઢિયા खीर खानेको मिले,  
परन्तु न समस्त छह खण्ड के घरों का वारा उसका समाप्त हो और  
न पुनः चक्रवर्ती के घर की खीर उसको मीले । जैसे इस ब्राह्मण को  
पुनः वह खीर भोजन दुर्लभ हो गया उसी प्रकार यह मनुष्यजन्म भी  
बड़ा दुर्लभ है । यह प्रथम दृष्टान्त है । इस पर यह संग्रह श्लोक है—

મુક્તં સ્વાદુરસં દ્વિજેન ભવને શ્રીવ્રહ્મદત્તસ્ય યત્ ,  
ક્ષેત્રેઽસ્મિન્ ભરતેઽસ્થિલે પ્રતિગૃહે મુક્ત્વા પુનસ્તદ્ગૃહે ।  
જાતં તસ્ય યથા મનોઽભિલપિતં તદ્ભોજનં દુર્લભં ।  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમ્વો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इस श्लोक में इस कथा का सार घतलाया गया है । अर्थात् जिस  
प्रकार ब्रह्मदत्तचक्रवर्ती के घर पर एक बार वडिया खीर का भोजन

घरेनो वारे पुरो थाय अने क्यारे भने अकवतीना महालयमां इरीथी उत्तम  
ओवी भीर आवानो प्रसंग भजे ? आ रीते न तो समस्त छ ञंडना घरेनो  
तेनो वारे पुरो थाय अने न अकवतीने त्यां इरीथी भीर आवा जवानो  
प्रसंग भजे. आ रीते ते ब्राह्मणेने इरीथी अकवतीने त्यां भीर आवानो  
प्रसंग प्राप्त न थयो. तेवी न रीते आ मनुष्य जन्म पण घण्टे दुर्लभ  
छ. आ प्रथम दृष्टान्त छ ओना उपर आ संग्रह श्लोक छ.

મુક્તં સ્વાદુરસં દ્વિજેન ભવને શ્રીવ્રહ્મદત્તસ્ય યત્ ।  
ક્ષેત્રેઽસ્મિન્ ભરતેઽસ્થિલે પ્રતિગૃહે મુક્ત્વા પુનસ્તદ્ગૃહે ॥  
જાતં તસ્ય યથા મનોઽભિલપિતં તદ્ભોજનં દુર્લભં ।

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમ્વો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ શ્લોકમાં આ કથાનો સાર બતાવવામાં આવેલ છે. અર્થાત્ જે રીતે  
બ્રહ્મદત્તચક્રવર્તીના ઘરે એકવાર ઉત્તમ ખીરનું ભોજન કરીને તે બ્રાહ્મણને

અથ દ્વિતીયઃ પાશકદૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

પાશકો ઘૂતોપકરણવિશેષઃ, સ એવ દૃષ્ટાન્તઃ—પાશકદૃષ્ટાન્તઃ, સ ચૈવમ્—

ગોહ્લદેશે ચળકનામકે ગ્રામે વહુ શીલવ્રતગુણવ્રતવિરમણપ્રત્યાખ્યાનપૌપધોપવાસાદિ શ્રાવકધર્મ પાલપન્ ચળકનામકો બ્રાહ્મણ આસીત્ । સ વદ્ધસદોરકમુખવલ્લિકઃ સન્નુભયકાલં સામાયિકપતિક્રમણં કુર્વન્નાસીત્ । અન્યદા કદાચિત્ તસ્ય ગૃહે સુવ્રત-

કર ઉસ બ્રાહ્મણ કો ઉસી ઘરપરં પુનઃ ભોજન કરને કી અભિલાષા હુઈ પરન્તુ ઉસકી પૂર્તિ હોની વઢી હી મુશ્કિલ થી ક્યોં કિ જવ તક ઉનકે સામ્રાજ્યભર કે ઘરોં કા વારા વહ સમાપ્ત નહીં કર લેતા તથ તક ઉસકો પુનઃ ચક્રવર્તી કે ઘર કા નંવર પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । ઇસી પ્રકાર ઇસ સંસાર મેં ભ્રમણ કરને વાલે ઇસ જીવ કો પુનઃ નરભવ મિલના વઢા દુર્લભ હૈ । યહ પ્રથમ ચોહ્લકદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૧ ॥

અથ દૂસરા પાશકદૃષ્ટાન્ત કહતે હૈ—

જુઆ खेलने का जो उपकरण विशेष होता है जिसको हिन्दी में पासा कहते हैं उसका नाम पाशक है । उसका दृष्टान्त इस प्रकार है—

ગોહ્લદેશસ્થ ચળક નામ કે ગ્રામ મેં વહુ શીલ વ્રત ગુણ અર્થાત્ વ્રત-પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણ, પ્રત્યાખ્યાન-પૌપધોપવાસ આદિ શ્રાવકધર્મ કો પાલન કરને વાલા ચળક નામ કા એક બ્રાહ્મણ રહતા થા । યહ દોનોં કાલ મુખ પર હોરે સે મુખપત્તિ વાંધકર સામાયિક એવં પ્રતિ ક્રમણ કિયા કરતા થા । એક દિન કી વાત હૈ કિ ઉસકે ઘર પર એક

ચક્રવર્તિને ત્યાં ખીરતું ભોજન ફરીથી કરવાની ઇચ્છા ભગી પરંતુ તેની એ ઇચ્છા પૂર્ણ થઈ શકી નહીં. કેમકે, એના સામ્રાજ્યભરનાં ઘરોનો વારો તે પૂર્ણ ન કરી લે ત્યાં સુધી તેને ફરી ચક્રવર્તીને ત્યાં ખીર ખાવા માટે જવાનો વારો પ્રાપ્ત થતો ન હતો. એ પ્રકારે આ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ જીવને પુનઃ મનુષ્ય અવતાર મળવો મહા દુર્લભ છે. આ પ્રથમ ચોહ્લક દૃષ્ટાંત બતાવેલ છે.

હવે ખીણું પાશકદૃષ્ટાંત કહેવામાં આવે છે—

જુગાર ખેલવામાં જેનો ઉપયોગ કરવામાં આવે છે તેને પાસા કહે છે. તેનું નામ પાશક છે. તેનું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે.—

ગોહ્લ દેશમાં ચણક નામના ગામમાં ઘણા જ શીલ વ્રત ગુણ સંપન્ન અને વ્રત પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણ પ્રત્યાખ્યાન પૌપધ ઉપવાસ વગેરેથી શ્રાવક ધર્મનું પાલન કરવાવાળો ચણક નામનો એક બ્રાહ્મણ રહેતો હતો. એ બંને વખત મોઠા ઉપર દોરા સાથેની મુખવલ્લિકા રાખીને સામાયિક અને પ્રતિક્રમણ કરતો હતો. એક દિવસની વાત છે કે, તેને ઘેર સુવ્રત નામના એક સુ



नामा मुनिर्भिक्षार्थं समागतः । तदा चणकब्राह्मणस्य दन्तसहितः पुत्रो जातः ।  
वालकं मुनेः समीपमानीयाऽब्रवीत्—‘भदन्त ! अयं दन्तसहितो जातः, किमस्य फलं  
भविष्यति ’ । मुनिः प्राह—अयं दन्तसहितः समुत्पन्नस्तस्मादयं राजा भविष्यति ।  
चणको मुनेर्वचनं निशम्य चिन्तयति—अयं राजा भूत्वा नरकं यास्यति । इत्येवं  
विचिन्त्य वालकस्य दन्तान् घृष्टवान् ।

पुनरेकदा कालान्तरे सुव्रतमुनिश्चणकस्य गृहे समागतः, ततश्चणकब्राह्मणो  
मुनिं प्राह—भदन्त ! अस्य वालकस्य दन्ता घृष्टाः । मुनिर्वदति—दन्तेषु घृष्टेषु  
वालकोऽयं राजा न स्यात्, किं तु सर्वाधिकारसंपन्नः सचिवो भविष्यति । चणकेन

सुव्रत नाम के मुनिराज भिक्षा के लिये आये । उस समय उस ब्राह्मण  
के यहां दांत सहित एक पुत्र उत्पन्न हुआ था । चणक ने उस वालक  
को मुनि के समीप लाकर कहा—भदन्त ! यह वालक दांतसहित उत्प-  
न्न हुआ है इसका क्या फल होना चाहिये सो कृपा कर कहिये ।  
सुनकर मुनिराज ने कहा—यह जो दांतोंसहित उत्पन्न हुआ है उसका  
यह फल है कि यह राजा होगा । चणक ने मुनि के वचन सुनकर  
विचार किया कि यदि यह राजा होगा तो दुर्गति का भागी हो  
जायगा इसलिये उसने उसके दांतों को घिस दिया ।

कालान्तर में वे ही सुव्रतमुनि एक दिन चणक के घर पर पुनः  
पधारे । मुनिराज को आये देखकर चणक ने उनसे कहा—भदन्त ! इस  
वालक के दांतों को मैंने घिस दिया है । चणक की बात सुनकर  
मुनिराज ने कहा—दांतों को घिसे जाने से यद्यपि यह वालक राजा नहीं  
हो सकेगा तो भी राजा जैसा होगा, अर्थात् राजा का सर्वाधिकार

भाटे आव्या. ते વખતે એ બ્રાહ્મણને ઘેર જન્મ વખતે દાંત સહિત એક પુત્ર જન્મ્યો.  
હતો, ચણક એ બાળકને મુનિ પાસે લઈ આવ્યો અને કહ્યું, ભદંત ! આ  
બાળક દાંત સાથે ઉત્પન્ન થયો છે. એનું શું ફળ હોવું જોઈએ ? સાંભળી  
મુનિરાજે કહ્યું કે, દાંત સહિત ઉત્પન્ન થયેલ આ બાળકનું ફળ એ છે કે, તે  
રાજા થશે. ચણકે મુનિનું વચન સાંભળીને મનમાં વિચાર કર્યો કે, જો આ બાળક  
રાજા થશે તો દુર્ગતિ ભોગવનાર બનશે. આથી તેણે તે બાળકના દાંત ઘસી નાખ્યા.

વખત જતાં તે સુવ્રત મુનિ એક દિવસ ચણકને ત્યાં ફરીથી પધાર્યા.  
મુનિરાજને આવેલા જોઈને ચણકે તેમને કહ્યું કે ભદંત ! મેં આ બાળકના  
દાંતોને ઘસી નાખ્યા છે. ચણકની વાત સાંભળીને મુનિરાજે કહ્યું,—દાંતોના ઘસી  
નાખવાથી જો કે તે રાજા ભલે ન બની શકે તો પણ તે રાજા જેવો થશે. અર્થાત

તસ્ય વાલકસ્ય 'ચાણક્ય' इति नाम कृतम् । स चतुर्दश विद्या अधीतवान् ।  
तस्य यौवने वयसि विवाहः कारितः ।

चाणક્યસ્ય શ્વશુરો ધનાઢ્ય આસીત્ । કદાચિત્ તસ્ય ગૃહે પુત્રસ્ય પરિણયો-  
ત્સવઃ સંજાતઃ । તદ્ વૃત્તં વિદિત્વા ચાણક્યસ્ય માર્યાં પિતૃભવનં ગતા । સા ગચ્છ-  
ન્તી પતિમવોચત્-ભવતાઽપિ તત્રાગન્તવ્યમ્ । ચાણક્યો વદતિ-અહં નિર્ધનોઽસ્મિ,  
સ ધનાઢ્યોઽસ્તિ, સ મમાદરં ન કરિષ્યતિ, માં નિર્ધનં મત્વા તેન નાહં નિમન્ત્રિતઃ,

સંપન્ન પ્રધાન વનેગા । ચણક ને उस वालक का नाम चाणक्य रखा ।  
चाणक्य ने १४ चौदह विद्याएँ पढ़ी । पढ़कर जब चाणक्य योग्यता  
संपन्न हो गया तब युवा होने पर पिताने इसका विवाह कर दिया ।

चाणक्य का श्वशुरपक्ष धनसंपन्न था । किसी एक समय चाणक्य  
के ससुराल में विवाह होनेवाला था । चाणक्य की भार्या को जब यह  
वृत्तान्त ज्ञात हुआ तो वह विवाह में संमिलित होने के लिये पतिगृह  
से अपने पिता के घर आई । जिस समय यह पतिगृह से पित्रगृह  
आई थी तब इसने अपने पति चाणक्य से चलते २ यह कहा था कि  
आप भी संमिलित होने के लिये वहां आवें । चाणक्य ने उसके  
प्रत्युत्तर में उससे कहा कि मैं निर्धन हूँ-वे धनिक हैं वहां बिना  
घुलाये आने पर मेरा कोई आदर नहीं होगा । यही कारण है कि  
ससुरने मुझे विवाहका आमंत्रण तक भी नहीं भेजा है । चाणक्य की यह

રાજાનો સર્વ અધિકાર સંપન્ન એવો સર્વાધિકારી પ્રધાન બનશે. ચણકે એ  
બાળકનું નામ ચાણક્ય રાખ્યું. ચાણક્યે ચૌદ વિદ્યાનો અભ્યાસ કર્યો. આ પછી  
તે વિદ્યાથી સંપન્ન બની ગયો અને યોગ્ય વયે પહેાંચ્યો ત્યારે તેના પિતાએ  
તેનો વિવાહ કરી દીધો.

ચાણક્યનો શ્વસુરપક્ષ ધન સંપન્ન હતો. કોઈ એક સમય ચાણક્યના  
શ્વસુરપક્ષમાં લગ્ન પ્રસંગ હતો. ચાણક્યની પત્નિએ જ્યારે આ હકીકત  
જાણી ત્યારે તે લગ્ન પ્રસંગમાં સામેલ થવા માટે પતિને ત્યાંથી નીકળી પોતાના  
પિતાના ઘેર આવી. જે સમય તે પોતાના પતિને ત્યાંથી નીકળેલી ત્યારે તેણે  
પોતાના પતિ ચાણક્યને પણ લગ્ન પ્રસંગમાં આવવાનું કહેલું. જેના પ્રત્યુ-  
ત્તરમાં ચાણક્યે જણાવેલું કે, હું નિર્ધન છું એ ધનવાન છે. ત્યાં બોલાવ્યા  
વગર જવાથી મારો યોગ્ય આદર ન પણ થાય અને મારી નિર્ધન અવસ્થા એ પણ  
એક કારણ છે કે જેને લઈ મને લગ્નનું આમંત્રણ પણ આપવામાં આવેલ નથી.

चाणक्ये नैवमुक्ता भार्या पुनस्तत्राऽऽगन्तुं पतिं प्रार्थितवती । ततः स्वभार्यानुरो-  
रोधेन चाणक्योऽपि पश्चात् तत्र गतः । ग्रामाद् बहिः क्वचिद् वृक्षतले चाणक्यः  
स्थित्वा श्वशुरं प्रति संदेशं प्रेषयति । श्वश्रूः श्वशुरश्च चाणक्यं प्रति तदुत्तरं दत्तवन्तौ-  
त्वया दिवसेऽत्र नागन्तव्यम्, रात्रौ भवनस्य पश्चाद्भागवर्तिना मार्गेणागन्तव्यम् ।  
चाणक्यस्तच्छ्रुत्वा तथैव रात्रौ गतः । श्वश्रूः श्वशुरश्च भवनस्याधस्तनभूमिकायां  
चाणक्यं भोजयतः । अन्धान् सम्बन्धिनस्तु भवनोत्तरितनभूमिकायाम् । श्वश्रूश्चा-  
णक्याय शुष्कं रुक्षं भोजनीयं परिवेषयति, अन्येभ्यस्तु विविधानि मिष्टानानि ।

यात सुनकर उसकी भार्या ने पुनः उनसे यही प्रार्थना की कि आप इस  
यात का विचार न कर वहां अवश्य आवें । भार्या के इस प्रकार के  
अनुरोध करने पर चाणक्य भी पीछे से वहां गया । उसने श्वशुर-  
गृह में पहुँचने के पहिले बाहिर ही किसी वृक्ष के नीचे ठहर कर श्वशुर  
के पास अपने आनेका समाचार भेजा । सास ससुर ने चाणक्य के प्रति  
उत्तररूप संदेश भेजा कि आप आये बहुत अच्छा किया परन्तु आप यहां  
दिनमें नआवे, रात्रिमें आवें, सो भी मकान के पीछे के मार्ग से आवें  
—साम्हनेके मार्ग से नहीं । चाणक्यने ऐसा ही किया । वे रात्रिमें श्वशुरगृह  
पर पहुँचे । सास और श्वशुर ने चाणक्य को भोंयरेमें बैठाकर भोजन कराया ।  
बाकीजो और संबंधीजन थे उन सबको मकान की छतपर बैठाकर भोजन  
कराया । चाणक्य के लिये सासुजी ने जो भोजन परोसा था वह इक-  
दम विलकुल शुष्क एवं रुक्ष था । दूसरे महेमानों के लिये जो भोजन  
परोसा गया था वह विविध प्रकार के मिष्टान्तों से युक्त था । चाणक्य

ચાણક્યનું આ વચન સાંભળી તેની પત્નિએ એવી પ્રાર્થના કરી કે, તમે આવી વાતને  
વિચાર ન કરતાં લગ્નમાં જરૂરથી આવો. પત્નિના આવા આગ્રહને વશ બની પાછ-  
ળથી ચાણક્ય લગ્ન પ્રસંગમાં સામેલ થવા ત્યાં ગયા. એણે સાસરાને ત્યાં પહોંચતાં  
પહેલાં ગામની ભાગોળે કોઈ એક વૃક્ષ નીચે રોકાઈને સાસરાને પોતાના આવવાના  
ખબર મોકલ્યા. સાસુ સસરાએ તેના આવવાના સમાચાર જાણી તેને કહેવરાવ્યું કે,  
તમે આવ્યા તે ઠીક કર્યું. પરંતુ તમે દિવસના ભાગમાં અહિં આવશો નહીં. રાતના  
વખતે અને તે પણ મકાનના પાછલા ભાગમાં થઈને આવજો. ચાણક્યે એમ જ  
કર્યું. તે રાતના વખતે સાસરાને ઘેર પહોંચ્યા. સાસુ સસરાએ તેને મકાનના  
ભોંયતળીયે બેસાડીને ભોજન કરાવ્યું. જ્યારે બાકીના મહેમાનોને એક સાથે સમા-  
રોહમાં ઉપરના માળે ભોજન કરાવ્યું. ચાણક્યને આપવામાં આવેલ ભોજન  
પણ સાવ નિરસ અને શુષ્ક હતું. જ્યારે બીજા મહેમાનોને સ્વાદિષ્ટ મિષ્ટ

एवमपमानितो भूत्वा सभार्यथाणक्यः स्वगृहं समागतः । तदा चाणक्येन चिन्तितम्—श्वशुरेण मम निर्धनत्वादपमानः कृतः । इति विचिन्त्य धनमर्जयितुं चाणक्यः पाटलिपुत्रनगरे नन्दनाम्नो नृपस्य समीपे योगवेधेण गतः । पूर्वाह्णे राज्यकार्यालये प्रविष्टः, तदा तस्य दासी कार्यालयं समर्जयन्ती पश्यति—चाणक्यः सिंहासने तुम्बीपात्रं स्वासनं च स्थापयति । नन्दनृपस्य भृत्याश्चाणक्यं तिरस्कृत्य बहिर्निःसारयन्ति । तदा चाणक्येन प्रतिज्ञा कृता—नन्दनृपस्य राज्यं समूलं नाशयिष्यामि ।

अपना इस प्रकार का वहां निरादर देख कर भार्या को साथ में लेकर अपने घर पर वापिस आ गया । आकर उसने विचार किया कि श्वशुर ने जो मेरा निरादर किया है उसका कारण मेरी यह निर्धनता है, अतः धन कमाने का प्रयत्न करना चाहिये । इस प्रकार विचार करने के बाद यह धन कमाने के लिये पाटलीपुत्र नगर में नन्द नाम के राजा के पास योगी का वेध धारण कर पहुँचा । पूर्वाह्न अर्थात् दिन के पूर्व भाग में चाणक्य ने कचहरी में प्रवेश किया, एक उस कचहरी की दासी ने जो उस समय उस कचहरी को झाड़ रही थी चाणक्य को देखा, चाणक्य ने वहां एक ओर सिंहासन के ऊपर अपना तुम्बीपात्र और आसन रख दिया । नन्द राजा के नौकरों ने यह देखकर चाणक्य को धक्का देकर एवं तिरस्कार कर के वहां से बाहिर निकाल दिया । चाणक्य ने इस अपमान से क्रुद्ध होकर वहीं पर यह प्रतिज्ञा की, कि मैं इस नन्दनृप के राज्य का समूल विनाश कर दूंगा । इस प्रकार कह

ભોજન જમાડ્યું. ચાણક્ય આ પ્રકારની પોતાના પ્રત્યેની વર્તણૂક જોઈને પોતાની પત્નિને લઈ ને પોતાને ઘેર પાછા ફર્યા. ઘેર આવીને તેણે મનમાં એવો વિચાર કર્યો કે, સાસુસસરાએ મારું જે અપમાન કર્યું તેનું કારણ મારી નિર્ધનતા જ છે. આથી ધન કમાવવાનો મારે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. આ પ્રમાણે વિચાર કર્યા પછી તે ધન કમાવા માટે પાટલીપુત્ર નગરમાં નંદ રાજાની પાસે યોગીનો વેશ ધારણ કરી પહોંચી ગયા. દિવસના પહેલા પ્રહરમાં ચાણક્યે રાજકચેરીમાં પ્રવેશ કર્યો. એ વખતે રાજકચેરીની દાસી કચેરીને સાફસુફ કરી રહી હતી. તેણે ચાણક્યને જોયા. ચાણક્યે ત્યાં એક સિંહાસન ઉપર પોતાનું તુંબીપાત્ર અને આસન રાખી દીધું. નંદ રાજાના નોકરોએ આ જોઈને ચાણક્યને ધક્કા મારીને તથા તેનો તિરસ્કાર કરીને બહાર કાઢી મુક્યા. ચાણક્યે આ અપમાનથી ક્રોધિત થઈને ત્યાંજ પ્રતિજ્ઞા કરી કે, હવે હું આ નંદરાજાના રાજ્યનો સમૂળગોળ વિનાશ કરી નાખીશ. આ પ્રમાણે નિર્ણય કરીને તે

ततश्चाणक्यस्तस्य नन्दनृपस्य राज्ये भ्रमन् मयूरनामके लघुग्रामे समागतः, तत्र मयूरपालको निवसति । तत्र मयूरपालकस्य सगर्भायां भार्यायाश्चन्द्रपानदोहदो जातः। सा दोहदालाभेन कुशशरीरा खिन्ना संजाता । संन्यासिवेपेण चाणक्यस्तत्र भ्रमन् मयूरपालकस्य गृहे समायातः। दोहदालाभेन मयूरपालकस्य भार्या कुशां दीनां विलोक्य चाणक्यो ब्रूते—भो ! मयूरपालक ! अहमस्या दोहदं पूरयिष्यामि, यदाऽस्याः पुत्रोऽष्टवर्षवयस्कः स्यात् तदा मम शिष्यत्वेन भवता समर्पणीयः । मयूरपालकेन तद् वचनं स्वीकृतम् । ततश्चाणक्यः सच्छिद्रं मण्डपं कारयित्वा तस्यो-

कर वह चाणक्य वहां से चलकर नंद राजा के राज्य के ही अन्तर्गत मयूर नाम के किसी एक छोटे से गांव में चला गया । वहां एक मयूरों को पालने वाला मयूरपालक नामक पुरुष रहता था । उसकी भार्या गर्भवती थी ! उसे चन्द्र को पीने का दोहला उत्पन्न हुआ था । दोहले की पूर्ति न हो सकने के कारण शरीर से वह विशेष कुश हो गई थी । तथा चिन्तित भी रहती थी । चाणक्य भी इधर उधर घूमता घामता मयूरपालक के घर आया । मयूरपालक की पत्नी को ज्यों ही उसने दोहद की पूर्ति न हो सकने के कारण कुश-शरीर एवं खेदखिन्न जाना तो कहने लगा हे मयूरपालक ! तुम्हारी धर्मपत्नी के चन्द्र पीने के दोहद की पूर्ति मैं कर सकता हूं यदि तुम हमारी इस शर्त को कबूल कर सको तो, शर्त यह है कि जब इसका बालक आठ वर्ष का हो जाय तो तुम उसे मुझे दे देना, मैं उसे अपना शिष्य बना लूंगा । मयूरपालक ने चाणक्य की शर्त स्वीकार करली ।

आणुक्य नंदराजाना राज्येनी अंदर आवेला मयूर नामना एक नानकडा गाममा आदया गया. त्यां भोरने पाणवावाणो मयूरपालक नामनो एक पुत्र रडेतो डतो. तेनी श्री गर्भवती डती. तेने चंद्र पिपानी छच्छा उत्पन्न थछ डती. ते छच्छा परिपूर्ण न थछ शकवाना कारणे ते शरीरे अत्यंत दुष्णी थछ गर्भ तथा चिंता-तुर रडेती डती. आणुक्य पणु आम तेम करतां करतां मयूरपालकने घेर आवी पडोअ्या. मयूरपालकनी श्रीने तेनी छच्छा परिपूर्ण न थछ शकवाना कारणे शरीरे दुष्णी तेमज चिंतातुर देणीने ते कडेवा लाग्या, मयूरपालक तारी पत्तिने चंद्र पीवानी जे छच्छा थछ छे ते हुं परिपूर्ण करी शकुं तेम छुं पणु तुं भारी एक शरतने कणुल करे तो ज. शर्त अे छे के, न्यारे-तारी पत्तिने अवतरनार आणक आठ वर्षनो थाय त्यारे ते आणक भने सोंपी देवो पडशे. हुं तेने भारो शिष्य जनांवीश. मयूरपालके आणुक्यनी शर्तनो स्वीकार कर्यो. आणुक्ये



ધ્વર્વાગે તચ્છિદ્રાચ્છાદનાર્થે કંચિદેકં પુરુષં ગુપ્તરીત્યા નિયોજ્ય છિદ્રસ્યાધસ્તાત્  
સિતામિશ્રપયઃપૂર્ણે સ્થાલં સ્થાપિતવાન્ । અથ મધ્યરાત્રિ તચ્છિદ્રદ્વારેણ તત્ર સ્થાલે  
ચન્દ્રપ્રતિવિમ્બસંપાતે સતિ મયૂરપાલભાર્યા તત્ર નોત્વા ચાણક્યઃ સ્થાલગતં ચન્દ્ર-  
પ્રતિવિમ્બં પ્રદર્શયન્ પ્રાહ—અયં ચન્દ્રઃ પીયતામ્ । તતઃ સા ચન્દ્રપ્રતિવિમ્બસહિતં  
સ્થાલમુત્થાપ્ય દુગ્ધં પિવતિ, તસ્મિન્નેવ સમયે છિદ્રસમીપસ્યઃ પુરુષઃ યુનૈઃ યુનૈ-  
શ્ચિદ્રમાચ્છાદયતિ ।

ચાણક્ય ને અવ ઉસકે ચન્દ્ર પીને કે દોહલે કો પૂર્તિ કરને કા પ્રયત્ન  
પ્રારંભ કર દિયા । હસમેં ઉસને એક સચિદ્ર મંડપ તયાર કરવાયા ।  
ઉસકે ઉધ્વભાગ મેં ગુપ્તરીતિ સે એક પુરુષ કો ઉસને નિયુક્તિ કી,  
જો ઉસ છિદ્ર કે પાસ જાકર વેઠ ગયા । જહાં છિદ્ર થા ઠીક ઉસી કે  
નીચે ઉસને મિશ્રી સે મિશ્રિત કર એક દૂધ કા ભરા હુઆ થાલ રસ્ત  
દિયા । મધ્યરાત્રિ મેં ઉસ છિદ્ર કે દ્વારા ઉસ થાલ મેં ચન્દ્ર કા પ્રતિવિંબ  
જ્યોં હી પડા કિ ચાણક્ય ને મયૂરપાલક કી ભાર્યા કો વહાં ઘુલવા  
લિયા । ઉસકે આનેપર ચાણક્ય ને ઉસકો ઉસ થાલ મેં રહે હુણ પ્રતિ-  
વિમ્બ કો દિશ્વલાયા ઓર કહને લગા દેશ્વો યહ રહા ચન્દ્ર, પી જાઓ ।  
ઉસ ને ઉસી સમય ચન્દ્રપ્રતિવિમ્બસહિત થાલ કો ઉઠા કર ઉસમેં કા  
દૂધ પીના પ્રારંભ કર દિયા । જ્યોં ૨ યહ દૂધ પીતી જાતી થી ત્યોં ૨  
છિદ્ર કે પાસ વેઠા હુઆ વહ મંડપ કે ઉપર રહા વ્યક્તિ ઉસ છિદ્ર કો  
ધીરે ૨ વન્દ કરતા જાતા થા । જવ વહ પૂરા દૂધ પી ચુકી તો ઉસને મી  
ઉસ છિદ્ર કો પૂરો વન્દ કર દિયા । હસ પ્રકાર ચાણક્ય ને ઉસકે ચન્દ્ર

હવે ચંદ્ર પીવાની મયૂરપાલકની પત્નિની ઇચ્છાને પરિપૂર્ણ કરવાના પ્રયત્નની શરૂ-  
આત કરી દીધી. આમાં તેણે એક છિદ્રવાળો મંડપ તૈયાર કરાવ્યો. તેના ઉધ્વ-  
ભાગમાં સુપ્ત રીતે એક પુરુષને તે છિદ્ર પાસે બેસાડ્યો. જ્યાં છિદ્ર હતું ત્યાં  
ખરાબર તેની નીચે સાકરથી મિશ્રિત કરેલ દૂધથી ભરેલો એક થાળ રાખ્યો.  
મધ્યરાત્રીએ આ છિદ્ર દ્વારા તે થાળમાં ચંદ્રનું જ્યારે પ્રતિબિંબ પડ્યું ત્યારે  
આણક્યે મયૂરપાલકની સ્ત્રીને ત્યાં બોલાવી. અને થાળીમાં દેખાતા ચંદ્રને  
બતાવી કહ્યું કે, હવે આ રહ્યો ચંદ્ર । પી જાઓ. તેણીએ તે વખતે ચંદ્રના  
પ્રતિબિંબવાળા થાળને ઉઠાવીને તેમાંનું દૂધ પીવાની શરૂઆત કરી. જેમ  
જેમ તે દૂધ પીતી ગઈ તેમ તેમ તે છિદ્રની પાસે બેઠેલો તેમજ તે મંડપની  
ઉપર ધુપાઈ રહેલો તે વ્યક્તિએ તે છિદ્રને ધીરે ધીરે બંધ કરવા માંડ્યું.  
જ્યારે તેણીએ બધું દૂધ પી લીધું ત્યારે તેણે પણ છિદ્રને પુરેપુરું બંધ કરી દીધું.



एवं चाणक्येन तस्याश्चन्द्रपानदोहदः सफलीकृतः । तदनु चाणक्यो रसायना-  
दिभिर्धनार्जनं कर्तुं प्रवृत्तः । इतश्च समये प्राप्ते सति संपूर्णदोहदायास्तस्याः पुत्रो  
जातः । जनन्या दोहदपूर्तिसमये चन्द्रस्य गोपनात् पित्रा तस्य बालकस्य 'चन्द्रगुप्त'  
इति नाम कृतम् । चन्द्रगुप्तः क्रीडनकाले बालकैः सह राजनीतिं प्रदर्शयन् क्रीडति ।  
यदा चन्द्रगुप्तोऽष्टवर्षवयस्को जातः, तदा पुनश्चाणक्यस्तत्रागतः । ततो विदित-  
स्वजन्मवृत्तान्तोऽसौ चन्द्रगुप्तश्चाणक्यं ग्राह-भो मुनीन्द्र ! भवान् स्वेन सह मां  
नयतु । चाणक्यो वदति-त्वत्पिता त्वां प्रतिपेत्स्यति । चन्द्रगुप्तो वदति-मम पिता

पीने के दोहले की पूर्ति करने में सफलता प्राप्त करली । वह भी अपने  
दोहले की पूर्ति से विशेष प्रसन्न हुई । इसके बाद चाणक्य ने रासाय-  
निक क्रिया द्वारा धन का उपार्जन करना प्रारंभ कर दिया । इस तरफ  
जब पूरे नौ मास व्यतीत हो चुके तब दोहले की पूर्ति से प्रसन्न हुई  
उस मयूरपालक की पत्नी के पुत्र उत्पन्न हुआ । माता की गर्भावस्था  
में चंद्र को गोपन करने से पिताने उसका नाम चन्द्रगुप्त रखा । धीरे २  
जब चन्द्रगुप्त बालकों के साथ क्रीडा करने के लायक हो गया तब  
वह उनके साथ खेलते समय राजनीति का प्रदर्शन करने लगा । जिस  
समय चन्द्रगुप्त की अवस्था आठ वर्ष की हो गई उस समय चाणक्य  
मयूरपालक के घर पर आया चाणक्य ने चंद्रगुप्त को उसकी उत्पत्ति  
के वृत्तान्त से विदित कर दिया । चन्द्रगुप्त को जब अपनी उत्पत्ति  
का वृत्तान्त विदित हो चुका तो उसने चाणक्य से कहा हे महात्मा !  
आप मुझे अपने ही साथ ले चलिये । चाणक्य ने कहा तुम्हारा पिता

आ प्रभाष्टे आणुक्ये तेष्णीनी चंद्र पीवानी ध्विच्छाने परिपूर्णे करवामां सक्षुण्णता  
मेणवी पोतानी ध्विच्छानी परिपूर्णेताथी मयूरपालकनी पत्नि भूष प्रसन्नतामां  
रहेवा लागी. आ पछी आणुक्ये रसायणीक क्रियाओ द्वारा धन मेणववानी  
शङ्कात करी दीधी. आ तरङ्ग न्यारे पुरा नव महिना बीती गया त्यारे  
पोतानी ध्विच्छानी पूर्तिथी प्रसन्न थयेली ते मयूरपालकनी पत्निओ पुत्रनो जन्म  
आप्यो. पिताओ तेनुं नाम चंद्रगुप्त राख्युं. समय जतां न्यारे चंद्रगुप्त  
आणकेनी साथे रमवाने लायक थये त्यारे तेले आणकेनी साथे खेलती वणते  
राजनीतिनुं शिक्षण आपवा मांड्युं. यथा समये न्यारे चंद्रगुप्त आठ वर्षनो थये  
त्यारे आणुक्य मयूरपालकने घेर आवी पडेअ्या. आणुक्ये चंद्रगुप्तने तेना  
जन्म काणनुं वृत्तांत कहुं चंद्रगुप्ते पोताना जन्मकाणनुं वृत्तांत न्हायुं त्यारे तेले  
आणुक्यने कहुं, हे महात्मा ! आप भने आपनी साथे लध न्हाओ, आणुक्ये

પૂર્વમેવ માં દત્તવાન્ । તતશ્ચાણક્યથ્ચન્દ્રગુપ્તં સહ નીત્વા પ્રાહ-તવ રાજ્યલાભં કરિ-  
ષ્યામિ । તતશ્ચાણક્યો વનં ગત્વા રસાયનેન દ્રવ્યં નિર્માય તત્પ્રભાવાત્ સેનાં સંગૃ-  
હીતવાન્ । સૈનિકૈઃ સહ સ પાટલિપુત્રનગરે નન્દનૃપતિમાક્રમતે સ્મ । નન્દનૃપતિશ્ચા-  
ણક્યસ્ય પરાજયં કૃતવાન્ । ચન્દ્રગુપ્તેન સહ ચાણક્યસ્તતોઽપ્સૃત્ય ક્વચિત્ પ્રચ્છન્નો  
ભૂત્વા સ્થિતઃ । નન્દનૃપતેઃ કશ્ચિત્ સૈનિકોઽશ્વમારુદ્ય ચાણક્યં ગ્રહીતુમાગતઃ । ચાણ-  
ક્યસ્તં વિલોક્ય ચિન્તયતિ-અયં તુ માં ગ્રહીતું પ્રત્યાસન્નો ભવતિ, વાલકોઽયં ચન્દ્ર-

મેરે સાથ ચલને મેં તુમ્હેં નિષેધ કરેગા । ચન્દ્રગુપ્ત ને કહા-નિષેધ કયો  
કરેગા ? પિતા ને તો મુઝે આપકો પહિલે સે હી દે દિયા હૈ । ચન્દ્રગુપ્ત કી  
વાત સુનકર ચાણક્ય ને ચન્દ્રગુપ્ત કો અપને સાથ લે લિયા । કહા-ચલો  
મેં તુમ્હેં રાજ્ય કી પ્રાપ્તિ કરાઝંગા । ચન્દ્રગુપ્ત કો સાથ લેકર ચાણક્ય  
વન મેં પહુંચા । રસાયન સે उसને વહાં દ્રવ્ય કો સૂચ ઇકઢા કિયા ઔર  
उसके प्रभाव से उसने वहाँ पर सेना का संग्रह करना भी प्रारंभ कर  
दिया । जब सेना अच्छी तरह संगृहीत हो चुकी तो चाणक्य ने सेना  
को लेकर पाटलिपुत्र में जाकर राजा नन्द के ऊपर आक्रमण कर दिया ।  
राजा नन्द ने चाणक्य को पराजित कर वहाँ से निकाल दिया । चाण-  
क्य भी परास्त होकर चन्द्रगुप्त को साथ लेकर वहाँ से चला गया  
और किसी जगह गुप्तरूप से जाकर छिप गया । राजा नन्द ने चाणक्य  
को पकड़ ने के लिये उसके पीछे एक अपना छुड़सवार भेजा । छुड़-  
सवार को अपना पीछा करते हुए देखकर चाणक्य ने विचार किया

કહ્યું કે તારા પિતા તને મારી સાથે મોકલવામાં અડચણ ઉભી કરશે ચન્દ્રગુપ્તે  
કહ્યું અડચણ શા માટે કરશે ? પિતાએ તો પહેલેથી જ મને આપને સુપ્રત કરેલ  
છે. ચન્દ્રગુપ્તની વાત સાંભળીને ચાણક્યે ચન્દ્રગુપ્તને પોતાની સાથે લઈ લીધો  
અને કહ્યું, ચાલો । હું તમને રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરાવીશ. ચન્દ્રગુપ્તને લઈ ચાણક્ય  
વનમાં ગયા, રસાયણ પ્રયોગથી ત્યાં તેણે ખૂબ દ્રવ્ય એકઠું કર્યું અને એની  
સહાયથી સેના એકઠી કરવાનો આરંભ કરી દીધો. સેનાને લઈને પાટલીપુત્ર  
પહોંચી નંદરાજ ઉપર આક્રમણ કર્યું. યુદ્ધમાં રાજા નંદે ચાણક્યનો પરાજય કરીને  
લગાડી મૂક્યા, ચાણક્ય હારી જવાથી ચન્દ્રગુપ્તને સાથે લઈ ત્યાંથી ચાલી  
નીકળ્યા અને કોઈ છુપા સ્થળે જઈ રહેવા લાગ્યા. રાજા નંદે ચાણક્યને  
પકડવા માટે તેની પાછળ એક ઘોડેસ્વારને મોકલ્યો. ઘોડેસ્વાર પોતાનો પીછો  
પકડી રહ્યો છે. જાણીને ચાણક્ય વિચાર કરવા લાગ્યા કે તે પકડવા

ગુપ્તઃ કથં મયા સહ ગન્તું પ્રભવતિ । इत्येवं विचार्य स तत्र सरस्तटे वस्त्रं धावमानस्य  
 रजकस्यान्तिके गत्वा वदति—अरे रजक ! नन्दनृपतेः सैनिकास्त्वां हन्तुमागच्छन्ति ।  
 रजकस्तद्वचनं श्रुत्वा तद्गयात् ततः पलायितः । चाणक्यस्तानि वस्त्राणि धावमान-  
 स्तत्र संस्थितः, चन्द्रगुप्तोऽपि तत्रैवान्यभागे जले प्रविश्य प्रच्छन्नोऽभवत् । अश्वा-  
 रुद्धोऽसौ नन्दराजपुरुषस्तत्रागत्य पृच्छति—अरे रजक ! चाणक्यः क्व गतः ?  
 रजकवेषधारी चाणक्यः प्राह—जले प्रविष्टः ततोऽसौ नन्दराजपुरुषस्तस्य कृतरज-

કિ યહ તો મુझे પકડને કે લિયે ચિલકુલ હી પાસ આ ચુકા હૈ, યહ ચન્દ્ર-  
 ગુપ્ત ચાલક હૈ મેરે સાથ દોડ સકતા નહીં હૈ અતઃ એક ઉપાય કરના  
 ચાહિયે કિ જો સામ્રાજ્યે કે તાલાવ પર ધોવી કપડે ધો રહા હૈ ઉસકો  
 કિસી વહાને સે વહાં સે ભગા દેના ચાહિયે ઓર સ્વયં કો ઉસકા કામ  
 કરને લગ જાના ચાહિયે તમ્હી રક્ષા હો સકતી હૈ । એસા વિચાર કર  
 ચાણક્ય ઉસ ધોવી કે પાસ આકર કહને લગા કિ અરે ધોવી ! તું  
 દેખતા નહીં હૈ રાજા કે સૈનિક તુજે મારને કે લિયે આ રહે હૈ । ધોવી  
 ને જ્યોં હી ચાણક્ય કી હસ યાત કો સુના કિ વહ વહાં સે એકદમ  
 ભગ ગયા । ચાણક્ય ને અપની નીતિ મેં સફલતા પ્રાપ્ત કી ઓર ઉસ  
 ધોવી કે જો કપડે વહાં ધોને કે લિયે પડે હુએ થે ઉન્હેં ધોના પ્રારંભ  
 કર દિયા । ચન્દ્રગુપ્ત મ્હી વહીં પર એક કિનારે પાની મેં જાકર છુપ  
 ગયા । વહ આશ્વારુદ્ધ રાજપુરુષ જો इनके पीछे पड़ा हुआ था वहाँ पर  
 આ પહુંચા । ઉસને આતે હી ઉસસે પૂછા કિ અરે ધોવી ! ચાણક્ય કહાં  
 ગયા હૈ । રજકવેષધારી ચાણક્ય ને કહા કિ વહ અમ્હી જલ મેં ઘુસ

માટે તદ્દન નજીક આવી ગયેલ છે. આ બાળક ચંદ્રગુપ્ત મારી સાથે દોડી  
 શકશે નહીં. માટે એનો કાંઈક ઉપાય કરવો જોઈએ. સામા તળાવ ઉપર ધોબી  
 કપડાં ધોઈ રહ્યો છે, તેમને કોઈ પણ બહાને ત્યાંથી ભગાડી દે અને  
 પોતે તે કામ કરવા લાગી જાય કે જેથી રક્ષા થાય આવો વિચાર  
 કરીને ચાણક્ય તે ધોબીની પાસે જઈને કહેવા લાગ્યા, કે હે ધોબી !  
 તું જોતો નથી કે રાજાને સૈનિક તને મારવા માટે આવી રહ્યો છે ! ધોબી  
 ચાણક્યની આ વાત સાંભળીને ત્યાંથી એકદમ ભાગવા લાગ્યો. ચાણક્યે  
 પોતાની નીતિને મજબૂતી સફળતા જોઈને તે ધોબીનાં જે કપડાં ત્યાં ધોવા માટે  
 પડ્યાં હતાં તેને ધોવા લાગ્યો. ચંદ્રગુપ્ત પણ કિનારા ઉપર પાણીમાં જઈને છુપાઈ  
 ગયો. એટલામાં પેલો ધોડેસ્વાર રાજપુરુષ જે તેમની પાછળ પડ્યો હતો તે ત્યાં  
 આવી પહોંચ્યો. તેણે આવીને પૂછ્યું, અરે ધોબી ! ચાણક્ય કઈ બાજુએ ગયો ?  
 ધોબી વેશધારી ચાણક્યે કહ્યું કે, તે હમણાં જ પાણીમાં ઉતરી ગયો છે. તેની

પૂર્વમેવ માં દત્તવાન્ । તતશ્ચાણક્યથચ્ચન્દ્રગુપ્તં સહ નીત્વા પ્રાહ-તવ રાજ્યલાભં કરિ-  
 ષ્યામિ । તતશ્ચાણક્યો વનં ગત્વા રસાયનેન દ્રવ્યં નિર્માય તત્પ્રભાવાત્ સેનાં સંગૃ-  
 હીતવાન્ । સૈનિકૈઃ સહ સ પાટલિપુત્રનગરે નન્દનૃપતિમાક્રમતે સ્મ । નન્દનૃપતિશ્ચા-  
 ણક્યસ્ય પરાજયં કૃતવાન્ । ચન્દ્રગુપ્તેન સહ ચાણક્યસ્તતોઽપહૃત્ય ક્વચિત્ પ્રચ્છન્નો  
 ભૂત્વા સ્થિતઃ । નન્દનૃપતેઃ કથિત્ સૈનિકોઽશ્વમાસ્ત્ય ચાણક્યં ગ્રહીતુમાગતઃ । ચાણ-  
 ક્યસ્તં વિલોક્ય ચિન્તયતિ-અયં તુ માં ગ્રહીતું પ્રત્યાસન્નો ભવતિ, વાલ્ક્યોઽયં ચન્દ્ર-

મેરે સાથ ચલને મેં તુમ્હેં નિપેધ કરેગા । ચન્દ્રગુપ્ત ને કહા-નિપેધ કયોં  
 કરેગા ? પિતા ને તો મુझे आपको पहिले से ही दे दिया है । चंद्रगुप्त की  
 बात सुनकर चाणक्य ने चंद्रगुप्त को अपने साथ ले लिया । कहा-चलो  
 मैं तुम्हें राज्य की प्राप्ति कराऊँगा । चन्द्रगुप्त को साथ लेकर चाणक्य  
 वन में पहुँचा । रसायन से उसने वहाँ द्रव्य को खूब इकट्ठा किया और  
 उसके प्रभाव से उसने वहीं पर सेना का संग्रह करना भी प्रारंभ कर  
 दिया । जब सेना अच्छी तरह संगृहीत हो चुकी तो चाणक्य ने सेना  
 को लेकर पाटलिपुत्र में जाकर राजा नन्द के ऊपर आक्रमण कर दिया ।  
 राजा नन्द ने चाणक्य को पराजित कर वहाँ से निकाल दिया । चाण-  
 क्य भी परास्त होकर चन्द्रगुप्त को साथ लेकर वहाँ से चला गया  
 और किसी जगह गुप्तरूप से जाकर छिप गया । राजा नन्द ने चाणक्य  
 को पकड़ ने के लिये उसके पीछे एक अपना घुड़सवार भेजा । घुड़-  
 सवार को अपना पीछा करते हुए देखकर चाणक्य ने विचार किया

કહ્યું કે તારા પિતા તને મારી સાથે મોકલવામાં અડચણ ઉભી કરશે ચંદ્રગુપ્તે  
 કહ્યું અડચણ શા માટે કરશે ? પિતાએ તો પહેલેથી જ મને આપને સુપ્રત કરેલ  
 છે. ચંદ્રગુપ્તની વાત સાંભળીને ચાણક્યે ચંદ્રગુપ્તને પોતાની સાથે લઈ લીધો  
 અને કહ્યું, ચાલો ! હું તમને રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરાવીશ. ચંદ્રગુપ્તને લઈ ચાણક્ય  
 વનમાં ગયા. રસાયણ પ્રયોગથી ત્યાં તેણે ખૂબ દ્રવ્ય એકઠું કર્યું અને એની  
 સહાયથી સેના એકઠી કરવાનો આરંભ કરી દીધો. સેનાને લઈને પાટલીપુત્ર  
 પહોંચી નંદરાજ ઉપર આક્રમણ કર્યું. યુદ્ધમાં રાજા નંદે ચાણક્યનો પરાજય કરીને  
 ભગાડી મૂક્યા. ચાણક્ય હારી જવાથી ચંદ્રગુપ્તને સાથે લઈ ત્યાંથી ચાલી  
 નીકળ્યા અને કોઈ છુપા સ્થળે જઈ રહેવા લાગ્યા. રાજા નંદે ચાણક્યને  
 પકડવા માટે તેની પાછળ એક ઘોડેસ્વારને મોકલ્યો. ઘોડેસ્વાર પોતાનો પીછો  
 પકડી રહ્યો છે. જાણીને ચાણક્ય વિચાર કરવા લાગ્યા કે તે મને પકડવા

વૃદ્ધા ગ્રાહ-ભોજને રાજ્યગ્રહણે ચ પ્રથમં પ્રાન્તભાગે હસ્તો નિક્ષેપણીયઃ । એતદ્વચનં શ્રુત્વા ચાણક્યો હિમગિરિં ગતવાન્ । તત્ર પર્વતનામકો નૃપતિરાસીત્ । તસ્ય સમીપં ગત્વા ચાણક્યોઽવદત્-પાટલિપુત્રનગરે નન્દનૃપતિના સહ યુદ્ધે ભવાન્ સહયોગં દદ્યાત્ તર્હિં તદર્થં રાજ્યં ભવતે દાસ્યામિ । તદા પર્વતેન તસ્ય વચનં સ્વીકૃતમ્ ।

તતઃચાણક્યઃ પર્વતશ્ચ ચન્દ્રગુપ્તેન સહ પાટલિપુત્રનગરમાગત્ય નન્દં વિજિત્ય રાજ્યં ગૃહીતવન્તૌ । તદા નન્દનૃપતિર્ધર્મદ્વારેણ નિઃસર્તું પ્રાર્થયતિ, ચન્દ્રગુપ્તેન તત્પ્રાર્થનં સ્વીકૃત્ય કથિતમ્-એકસ્મિન્ રથે યાવદ્ દ્રવ્યં સમાવિશતિ, તાવદ્ દ્રવ્યમુપાદાય

ને કયા અનુચિત ક્રિયા હૈ ? । વૃદ્ધા ને કહા ભોજન એવં રાજ્યગ્રહણ મેં પ્રથમ પ્રાન્તભાગ મેં હાથ ઢાલના ચાહિયે । વૃદ્ધા કે વચન સુનકર ચાણક્ય હિમગિરિ જાકર વહાં કે રાજા પર્વત સે મિલા । ડસસે ચાણક્ય ને કહા પાટલિપુત્ર નગર મેં નન્દનૃપતિ કે સાથ યદિ યુદ્ધ મેં આપ હમેં સહયોગ પ્રદાન કરેં તો વહાં કા આઘા રાજ્ય હમ આપકો દેંગે । ચાણક્ય કી વાત સુનકર પર્વત ને યુદ્ધ મેં સહાયતા દેના કઢૂલ કર લિયા ।

ચંદ્રગુપ્ત કો લેકર ચાણક્ય ઓર પર્વત ડોનોં મિલ કર પાટલિપુત્ર આયે । વહાં નન્દ રાજા કે ડપર ઇન્હોં ને ધાવા ઢોલ દિયા । નન્દ કો પરાસ્ત કર ડસકા રાજ્ય લે લિયા । ડસ સમય નન્દ ને ધર્મદ્વાર સે નિકલ ને કે લિયે પ્રાર્થના કી । ચંદ્રગુપ્ત ને ડસકી પ્રાર્થના કો સ્વીકાર કરતે હુએ કહા-એક રથ મેં જિતના દ્રવ્ય હો સકતા હો ડતને દ્રવ્ય કો

અનુચિત કામ કયું છે ? વૃદ્ધાએ કહ્યું કે, ભોજન અને રાજ્ય ગ્રહણમાં પ્રથમ એક છેડેથી હાથ નાખવો જોઈએ. વૃદ્ધાનું આ વચન સાંભળી તેને નમન કરીને ચાણક્ય ત્યાંથી ચાલતા થયા. આ પછી ચાણક્યે હિમગિરિ જઈ ત્યાંના રાજા પર્વતની મુલાકાત લીધી અને તેને કહ્યું કે, પાટલીપુત્રના રાજા નંદની સામે અમે યુદ્ધ કરવા ઇચ્છીએ છીએ. એ યુદ્ધમાં તમે જો અમને સાથ આપશો તો તે જીતેલા રાજ્યનો અરધો ભાગ તમને આપવામાં આવશે. ચાણક્યની આ વાત સાંભળી પર્વત રાજાએ યુદ્ધમાં સહાયતા દેવાનું કબુલ કર્યું.

ચંદ્રગુપ્તને લઈ ને ચાણક્ય અને પર્વત બન્નેએ પાટલીપુત્ર ઉપર આક્રમણ કર્યું. સામસામી લડાઈ થઈ જેમાં રાજા નંદ હારી ગયા, તેના રાજ્યનો કબજો ચંદ્રગુપ્તે સંભાળી લીધો. આ સમયે નંદે ધર્મદ્વારથી નિકળવા માટે પ્રાર્થના કરી. ચંદ્રગુપ્તે તેની પ્રાર્થનાનો સ્વીકાર કરીને કહ્યું કે, એક રથમાં જેટલું દ્રવ્ય સમાઈ

कवेपस्य चाणक्यस्य हस्ते स्व खड्गं हयं च दत्वा जले प्रविशति । तस्मिन्नेव समये रजकरूपश्चाणक्यस्तेन खड्गेन तस्य नन्दराजपुरुषस्य शिरश्चिच्छेद ।

ततश्चाणक्यश्चन्द्रगुप्तेन सह स्थानान्तरं गतः । कस्मिंश्चिद् ग्रामे भिक्षार्थं गृहस्थगृहे गत्वा पश्यति—एका वृद्धा स्थालके पायसं परिविप्य बालकाय भोक्तुं ददाति । तेन बालकेन स्थालकस्य मध्यभागे हस्तो निक्षिप्तः । प्रतप्तपायसस्पर्शेन तस्य हस्तो दग्धः, तेनासौ क्रन्दति । वृद्धा वदति—रे मूढ ! त्वं चाणक्य इव किमाचरसि । एतद् वचनं श्रुत्वा वृद्धा चाणक्यः प्राह—मातः ! किमनुचितं चाणक्येन कृतम्,

गया है । सचार ने ज्यों ही यह बात सुनी तो वह अपने घोड़े से नीचे उतर पड़ा और कहने लगा कि तुम मेरे इस घोड़े को और तलवार को पकड़े रहो, जबतक मैं जलमें घुस कर उसे पकड़ लाता हूं । इतने में ही चाणक्य ने उसकी ही तलवार से उसको मार दिया ।

चाणक्य वहां से चंद्रगुप्त को साथ लेकर किसी दूसरे स्थान पर चला गया । एक समय की बात है कि चाणक्य जब भिक्षा लेने के लिये किसी दूसरे गांव में एक गृहस्थ के घर पर गया हुआ था तब उसने वहां देखा कि एक वृद्धा ने धाली में गर्म खीर परोस कर खाने के लिये किसी बालक को दी और उस बालक ने उस गर्म खीर से युक्त धाली के बीचोबीच हाथ डाल दिया सो गर्म खीर के उष्णस्पर्श से उस बालक का हाथ जल गया इससे वह रोने लगा । उसको रोता देखकर वृद्धा ने कहा कि रे मूढ ! तू चाणक्य की तरह क्यों होता जा रहा है । वृद्धा के ये वचन सुनकर चाणक्य ने उससे कहा हे माता ! चाणक्य

आ बात सांभलीने ते पोताना घोडा उपरथी नीचे उतरीं अने कड़ेवा लाग्यो, मारा आ घोडाने अने तरवारने तमे साथेवा त्यांसुधीमां हुं डमब्यां न तेने पाणी-मांथी पकडी लावुं छुं. घोडा अने तरवार डायं करीने आबुंके ते तरवारथी पेला स्वारने भारी नाथ्यो. अने भारीने आबुंके चंद्रगुप्तने साथे लई केई भील स्थले आल्या गया. ओके समयनी बात छे के न्यारे आबुंके त्यां स्थिर थई भिक्षा लेवा माटे केई भील गांमे ओके गृहस्थने त्यां गया. त्यां ते भिक्षा माटे पड़ोन्थ्या. ओन वअते ओके वृद्धो धालीमां गरमा गरम भीर भीरसी आणकने अवराववानी तैयारी करी रहैल डती. आणके भीर आवानी उतावणमां ते गरम भीरथी लरेखी धालीनी वन्थ्यो वन्थ्यो डायं नाथ्यो. गरम भीरना स्पर्शथी आणकनो डायं दान्यो अने रोवा लाग्यो. आ ओके वृद्धाओ ते आणकने कहुं, के अरे मूढ ! आबुंकेना जेवो तुं केम थतो नय छे ? वृद्धानां आ वचन सांभली आबुंके ते वृद्धाने पूछ्युं के हे माता ! आबुंके



चाणक्यस्तदा नन्दराज्यस्य द्वौ भागौ कृत्वा पर्वताय चन्द्रगुप्ताय चैकैकं भागं प्रदत्तवान् । नन्देन स्वभवंने विपकन्या स्थापिता । तत्र पर्वतनृपस्तां विष्णोक्व मोहितो जातः, तस्याः स्पर्शमात्रेण पर्वतनृपो विपाक्रान्तः संजातः । तद्विषापहारार्थं चन्द्रगुप्तः प्रवृत्तः, स चाणक्येन प्रतिपेधितः, तदनन्तरं पर्वतनृपो मृतः । तदा चन्द्रगुप्तस्य राज्यमखण्डं संजातम् ।

अथ नन्दराज्यान्तर्गताः शत्रुलोकाश्चौर्यादिभिरुपद्रवं कुर्वन्ति । चाणक्यश्चौराणां

मंगल है । चक्र के जो नव आरे टूट गये हैं उससे यह सूचित होता है कि नौ पीढ़ी पर्यन्त यह राज्य स्थिर रहेगा । इसके बाद चाणक्य, पर्वत और चंद्रगुप्त राज्यभवन में प्रविष्ट हो गये ।

चाणक्य ने उस मिले हुए नन्दराज्य के दो भाग किये । एक भाग पर्वत के लिये और दूसरा भाग चन्द्रगुप्त के लिये दिया । नन्द के भवन में एक विपकन्या पाली हुई थी । पर्वत इस कन्या को देखकर उस पर मोहित हो गया । ज्यों ही उसने उसका स्पर्श किया कि उसका समस्त शरीर विष से व्याप्त हो गया । पर्वत के समस्त शरीर में व्याप्त विष को दूर करने के लिये चंद्रगुप्त ने प्रयत्न करना चाहा, परन्तु चाणक्य ने उसे इसके लिये मना कर दिया अतः वह उससे दूर रहने लगा । बाद में पर्वत मर गया । पर्वत के मरते ही चंद्रगुप्त का एकछत्र राज्य हो गया ।

राज्य परिवर्तित होने से अब नन्दराज्यान्तर्गत लोकों ने चोरी आदि उपद्रव करना प्रारंभ कर दिया । चाणक्य ने चोरों को दमन

गणरूप नहीं परंतु लारे मंगणरूप छे. अकना जे नव आरा तूटी गया छे अनाथीअे सूचित थाय छे के, तमारी नव पेढी सुधी आ राज्य अथल अने स्थिर रहेसे. पछी आणुक्य, राज पर्वत अने चंद्रगुप्त जधा राजभवनमां गया.

नंद राजनाअे राज्यना आणुक्ये जे लागला पाउया. अेक लाग राज पर्वतने अने अेक चंद्रगुप्तने सुप्रत करवामां आअे. नंदना राजभवनमां अेक विपकन्या उछेरवामां आवी हुती. पर्वत अेने जेध अेना उपर मोहीत अनी गये. तेले अे कन्याना शरीरने स्पर्श कर्ये के तुरत ज तेना समस्त शरीरमां विष प्रसरि गयुं. पर्वतना शरीरमां प्रसरि गयेला विषने दूर करवा चंद्रगुप्त तत्पर अन्ये अेज वअते आणुक्ये तेने तेम करतां अटकाअे. आथी तेले तेम करवुं मांडी पाअ्युं. विषना लारे प्रकोपथी पर्वतनुं मृत्यु थयुं. पर्वतना मृत्युने कारले राज नंदनुं समअ राज्य चंद्रगुप्तना अेक छत्र नीअे आवी गयुं.

राज्यनुं परिवर्तन थवाथी राज्यनुं शासन अदलातां केटलाक दोडोअे चोरी आदि उपद्रवने प्रारंभ करी दीधे. आणुक्ये चोरी आदि उपद्रव करनाराअे सामे

ભાર્યાપુત્રાદિભિઃ સહ ભવાન્નિઃસરતુ । નન્દેન તથૈવ કૃતમ્ । તદા રથસ્થિતા નન્દસ્ય પુત્રી નિર્ગચ્છન્તી ચન્દ્રગુપ્તં સાનુરાગં પશ્યતિ, તદા નન્દઃ સ્વપુત્રીં પ્રાહ-પુત્રિ ! અમીદં ચેચન્દ્રગુપ્તં વરય । તતોઽસૌ નન્દપુત્રી ચન્દ્રગુપ્તસ્ય રથે સમારોહતિ, તદા નવ સંખ્યકા રથચક્રસ્ય અરા ભગ્નાઃ । ચન્દ્રગુપ્તસ્તદ્ગદ્ગમમદ્ગલં વિજ્ઞાય નન્દપુત્રીં પ્રતિપેધયતિ । ચાળવ્યથ્ચન્દ્રગુપ્તં વદતિ-ઇદં મહન્મદ્ગલમ્, નવસંખ્યકા અરા ભગ્ના ઇતિ નવપુરુષપર્યન્તં રાજ્યં સ્થાસ્યતિ । તતથ્ચન્દ્રગુપ્તઃ પર્વતથ્ચાળવ્યથ્ચ સર્વે રાજભવનં પ્રવિષ્ટાઃ ।

લેકર આપ અપને સ્ત્રીપુત્રાદિકસહિત યહાં સે ચલે જાયેં । ચન્દ્રગુપ્ત કી આજ્ઞાનુસાર નન્દ ને વૈસા હી કિયા । જિસ સમય નન્દ રાજ્ય સે બાહર હોકર ચાલવચ્ચેસહિત ચલને લગા ઉસ સમય રથ મેં બેઠી હુઈ નન્દ કી પુત્રી સુચન્દ્રા ને વહે હી અનુરાગ સે ચંદ્રગુપ્ત કી ઓર દેખા । ચંદ્રગુપ્ત કી ઓર અનુરાગ સે દેખનેવાલી અપની પુત્રી કો દેખકર નન્દ ને કહા કિ હે પુત્રી ! યદિ તેરી ઇચ્છા હો તો તું ઇસ ચંદ્રગુપ્ત કો વરલે । પિતા કી વાત સુનકર પુત્રી ચંદ્રગુપ્ત કે રથ પર જાકર બેઠ ગઈ । જિસ સમય યહ ઉસકે રથ પર બેઠી ઉસી સમય ચંદ્રગુપ્ત કે રથ કે પહિયે કે નૌ આરે ટૂટ ગયે । ચંદ્રગુપ્ત ને જ્યોં હી અપને રથ કે પહિયે કી યહ હાલત દેખી તો ઉસને ઇસમેં અમંગલ માના ઓર નન્દ કી પુત્રી કો ઉસ મેં બેઠને સે નિપેધ કર દિયા । ચાળવ્ય ને ઇસ વાત કો દેખકર ચંદ્રગુપ્ત સે કહા કિ તુમ જિસે અમંગલ સમજ રહે હો વહ બડા ભારી

શકે તેટલું લઈ આપ આપના સ્ત્રી પુત્રાદિકને લઈ અહીંથી ચાલ્યા જાવ. નન્દે ચંદ્રગુપ્તની આજ્ઞાનુસાર કયું. જે સમયે રાજા નન્દ પોતાના પરિવાર સહિત રાજ્ય છોડીને જવા લાગ્યા. તે સમયે રથમાં બેઠેલ નન્દની પુત્રી સુચન્દ્રાએ ચંદ્રગુપ્તની સામે ભારે અનુરાગથી દ્રષ્ટિ ફેંકી. ચંદ્રગુપ્ત તરફ અનુરાગથી બેઈ રહેલ પોતાની પુત્રીને ઉદ્દેશીને નન્દે કહ્યું કે, હે પુત્રિ ! જે તારી ઇચ્છા હોય તો તું ખુશીથી ચંદ્રગુપ્તને વરી લે. પિતાની આ વાત સાંભળી સુચન્દ્રા તે રથમાંથી ઉતરી ચંદ્રગુપ્તના રથ ઉપર ચઢી ગઈ. જેવી તે ચંદ્રગુપ્તના રથ ઉપર જઈને બેઠી તેવાજ ચંદ્રગુપ્તના રથના પછડાંના નવ આરા તૂટી ગયા. ચંદ્રગુપ્તે પોતાના રથનાં પેડાંનો આ બનાવ જોતાં તેના મનમાં અમંગળની શંકા જાગી અને એથી નન્દની પુત્રીને રથ ઉપર ચઢવાની ના પાડી. ચાણક્યે આ જોઈ ચંદ્રગુપ્તને સમજાવ્યો કે, તમે જેને અમંગળ માનો છો તે અમં-

ચાણક્યસ્તદા નન્દરાજ્યસ્ય દ્વૌ ભાગૌ કૃત્વા પર્વતાય ચન્દ્રગુપ્તાય ચૈકૈકં ભાગં  
પદત્તવાન્ । નન્દેન સ્વભવને વિપકન્યા સ્થાપિતા । તત્ર પર્વતનૃપસ્તાં વિલોક્ય  
મોહિતો જાતઃ, તસ્યાઃ સ્પર્શમાત્રેણ પર્વતનૃપો વિપાક્રાન્તઃ સંજાતઃ । તદ્વિપાપહારાર્થં  
ચન્દ્રગુપ્તઃ પ્રવૃત્તઃ, સ ચાણક્યેન પ્રતિપેધિતઃ, તદનન્તરં પર્વતનૃપો મૃતઃ । તદા  
ચન્દ્રગુપ્તસ્ય રાજ્યમલ્લખંડં સંજાતમ્ ।

અથ નન્દરાજ્યાન્તર્ગતાઃ શત્રુલોકાશ્ચૌર્યાદિભિરુપદ્રવં કુર્વન્તિ । ચાણક્યશ્ચૌરાણાં

મંગલ હૈ । ચક્રકે જો નવ આરે ટૂટ ગયે હૈં ઉસસે યહ સૂચિત હોતા હૈં કિ  
નો પીઢી પર્યન્ત યહ રાજ્ય સ્થિર રહેગા । ઇસકે વાદ ચાણક્ય, પર્વત  
ઔર ચંદ્રગુપ્ત રાજ્યભવન મેં પ્રવિષ્ટ હો ગયે ।

ચાણક્ય ને ઉસ મિલે હુણ નન્દરાજ્ય કે દો ભાગ કિયે । એક ભાગ  
પર્વત કે લિયે ઔર દૂસરા ભાગ ચન્દ્રગુપ્ત કે લિયે દિયા । નંદ કે ભવન  
મેં એક વિપકન્યા પાલી હુઈ થી । પર્વત ઇસ કન્યા કો દેખકર ઉસ પર  
મોહિત હો ગયા । ડ્યોં હી ઉસને ઉસકા સ્પર્શ કિયા કિ ઉસકા સમસ્ત શરીર  
વિષ સે વ્યાપ્ત હો ગયા । પર્વત કે સમસ્ત શરીર મેં વ્યાપ્ત વિષ કો દૂર  
કરને કે લિયે ચંદ્રગુપ્ત ને પ્રયત્ન કરના ચાહા, પરન્તુ ચાણક્ય ને ઉસે  
ઇસકે લિયે મના કર દિયા અતઃ વહ ઉસસે દૂર રહને લગા । વાદ મેં  
પર્વત મર ગયા । પર્વત કે મરતે હી ચંદ્રગુપ્ત કા એકછત્ર રાજ્ય હો ગયા ।

રાજ્ય પરિવર્તિત હોને સે અથ નંદરાજ્યાન્તર્ગત લોકોં ને ચોરી  
આદિ ઉપદ્રવ કરના પ્રારંભ કર દિયા । ચાણક્ય ને ચોરોં કો દમન

ગણરૂપ નથી પરંતુ ભારે મંગળરૂપ છે. ચક્રના જે નવ આરા તૂટી ગયા છે  
એનાથી એ સૂચિત થાય છે કે, તમારી નવ પેઢી સુધી આ રાજ્ય અચલ અને સ્થિર  
રહેશે. પછી ચાણક્ય, રાજા પર્વત અને ચંદ્રગુપ્ત બધા રાજભવનમાં ગયા.

નંદ રાજાના એ રાજ્યના ચાણક્યે જે ભાગલા પાડ્યા. એક ભાગ રાજા પર્વતને  
અને એક ચંદ્રગુપ્તને સુપ્રત કરવામાં આવ્યો. નંદના રાજભવનમાં એક વિપકન્યા  
ઉછેરવામાં આવી હતી. પર્વત એને જોઈ એના ઉપર મોહિત બની ગયો. તેણે  
એ કન્યાના શરીરને સ્પર્શ કર્યો કે તુરત જ તેના સમસ્ત શરીરમાં વિષ પ્રસરી  
ગયું. પર્વતના શરીરમાં પ્રસરી ગયેલા વિષને દૂર કરવા ચંદ્રગુપ્ત તત્પર બન્યો.  
એજ વખતે ચાણક્યે તેને તેમ કરતાં અટકાવ્યો. આથી તેણે તેમ કરવું માંડી  
પાળ્યું. વિષના ભારે પ્રકોપથી પર્વતનું મૃત્યુ થયું. પર્વતના મૃત્યુને કારણે  
રાજા નંદનું સમગ્ર રાજ્ય ચંદ્રગુપ્તના એક છત્ર નીચે આવી ગયું.

રાજ્યનું પરિવર્તન થવાથી રાજ્યનું શાસન બદલાતાં કેટલાક લોકોએ ચોરી  
આદિ ઉપદ્રવનો પ્રારંભ કરી દીધો. ચાણક્યે ચોરી આદિ ઉપદ્રવ કરનારાઓ સામે

દમનાર્થં વિચિન્તયન્ કદાચિદ્ નગરતો વહિર્નિઃસૃતઃ સન્ પश्यति-નલદામનામા  
કુવિન્દઃ પુત્રં મત્કોટકૈર્દટ્ટં દટ્ટ્વા કોપાવિષ્ટો ભૂત્વા તેષાં વિલમન્વેપયતિ ।  
ચાણક્યસ્તથાકુર્વન્તં કુવિન્દં દટ્ટ્વા પૃચ્છતિ-કુવિન્દ ! કિમન્વેપયસિ ? કુવિન્દઃ  
પ્રાહ-મત્પુત્રદંશદાયિનાં મત્કોટકાનાં ગૃહમ્, એવં તદ્વૃત્તં વિદિત્વા ચાણક્યો મનસિ  
વિચારયતિ-યોગ્યોઽયં કુવિન્દો વૈરનિર્યાતનસ્ય । ઇતિ મનસિ વિચાર્ય તમેવ  
નગરાધ્યક્ષં કૃતવાન્ ।

एकदा कोशपूरणार्थं चाणक्यः सुवर्णप्राप्तिकामो देवाराधनं कृतवान् । देवः

કરને કા વહુત કુછ વિચાર કિયા પર સમજ્ઞ મેં નહીં બેઠા । એક દિન  
હસી વિષય કા વિચાર કરતે ૨ ચાણક્ય નગર સે બાહર જા પહુંચે ।  
પહુંચતે હી વહાં એક નલદામ નામક કુવિન્દ (જુલાહે) કો દેખા જો  
અંપને પુત્ર કો કાટને વાલે મકોડોં કે વિલ કી તલાસ કરને મેં બઢે  
ક્રોધ સે અભિભૂત હોકર ઇધર ઉધર ફિર રહા થા । ચાણક્ય ને હસ  
પ્રકાર સે તલાશી કરને મેં પ્રયત્ન કરતે હુએ દેખકર કુવિન્દ સે પૂછા  
કિ હે કુવિન્દ ! કહો કયા ઢૂંઢ રહે હો ? કુવિન્દ ને કહા મેરે પુત્ર કો એક  
મકોડે ને કાટ લિયા હૈ સો મૈં ઉસકે ઘર કો દેખ રહા હૂં । હસ પ્રકાર  
કુવિન્દ કી વાત સુનકર ચાણક્ય ને મન મેં વિચાર કિયા કિ યહ  
કુવિન્દ વૈર કા વદલા લેને મેં યોગ્ય હૈ । હસ પ્રકાર વિચાર કર  
ચાણક્ય ને ઉસે નગર કા કોતવાલ બના દિયા ।

एक समय की बात है कि खजाने की पूर्ति करने के निमित्त  
चाणक्य ने किसी देव की आराधना की । चाणक्य की आराधना से

સમ્પત હાથે કામ લેવાનો તેમજ દમનનો કોરડો વીંઝવાનો વિચાર કર્યો. પરંતુ  
તેમ કરવું અત્યારના સંજોગોમાં તેને ઉચિત ન લાગ્યું. એક દિવસ આજ બાબ-  
તનો વિચાર કરતાં કરતાં ચાણક્ય નગરની બહાર જતા હતા, ત્યાં રસ્તામાં એક  
સ્થળે એક નલદામ નામના કુવિન્દ (વણકર)ને જોયો. જે પોતાના પુત્રને ઠરડનારા  
મંકોડાનું દર શોધી રહ્યો હતો. તેને ચાણક્યે પૂછ્યું, કુવિન્દ શું શોધી રહ્યો છે ?  
ઘણા જ ક્રોધના આવેશથી અહીં તહીં ફરી રહેલા કુવિન્દે કહ્યું, મારા પુત્રને  
એક મંકોડાએ ઠરડી ખાધેલ છે, હું તેના ઘરને જોતી રહ્યો છું. આ પ્રકારની  
કુવિન્દની વાત સાંભળી ચાણક્યે વિચાર્યું કે, આ માણસ બહોલો લેવામાં યોગ્ય  
છે. આમ વિચારી તેને સમજાવી પછીથી ચાણક્યે તેને નગરના કોટવાળાની  
જગાએ નીમ્યો.

એક સમયની વાત છે-રાજ્યના ખજાનાને ભરપૂર બનાવવા ચાણક્યે

प्रसन्नो भूत्वा चाणक्याय जयप्रदानं पाशकान् ददौ । तदनन्तरं चाणक्येन दीनारपूर्णस्थालेन सह पाशकान् दत्त्वा कश्चिद् द्यूतपटुः पुरुषो द्यूतार्थं नगरे प्रेषितः । दीनारपूर्णं स्थालं पाशकानपि गृहीत्वाऽसौ पुरुषः पुराभ्यन्तरे भ्रमन् वदति—यद्यहं जयामि, तर्हि दीनारमेकं गृह्णामि । यदि मामन्यो जयति, तदा दीनारपूर्णमिदं स्थालं ददामि—इति । ततो यद्वो जना द्यूतक्रीडार्थं समागताः । सर्वे तेन पुरुषेण पराजिता, तं पाशकहस्तं पुरुषं विजितुमसमर्था जाताः । यथा तस्य पाशकहस्तपुरुषस्य पराजयो दुर्लभस्तथा संसारे खलु मनुष्यजन्म दुर्लभम् ।

देव प्रसन्न भी हो गया । प्रसन्न होकर देव ने चाणक्य के लिये जय कराने वाले चार पासे वरदानरूप में दिये । इसके बाद चाणक्य ने स्वर्णमुद्रा-सोनामुहर से परिपूर्ण एक थाली को उन पासों के साथर किसी द्यूतक्रीडा में निपुण पुरुष को देकर उसको नगर में जुआ खेलने के लिये भेजा । सोनामुहरों से पूर्ण थाल को तथा पासों को लेकर वह पुरुष नगर में यह अवाज देते हुए फिरने लगा कि यदि मैं जीत जाता हूं तो पराजित हुए व्यक्ति से सिर्फ एक ही सोनामुहर लेता हूं, और यदि हार जाता हूं तो जीतने वाले को सोनामुहरों से पूर्ण यह थाल का थाल दे देता हूं । उसकी इस घोषणा को सुनकर अनेक जन द्यूतक्रीडा के लिये आने लगे । जुआ खेलना प्रारंभ हो गया । उस पुरुष ने सब को जीत लिया, इस को कोई भी पराजित न कर सका । सारांश—जिस प्रकार इस देवप्रदत्त पासों के प्रभाव से उस पुरुष का पराजित होना

कैध देवनी आराधना करी. आणुक्यनी आराधनाथी प्रसन्न थर्ध देवे आणुक्यने विजय अपावनार ओवा चार पासा तेने आभ्या. आ पछी आणुक्ये वरदानना रुपमां भणेल्ले ओ पासानो प्रयोग करवानुं विचारी ओक थाणमां सुवर्ण मुद्राओ लरी द्यूतक्रीडांमां निपुण ओवा ओक पुश्यने पासा साथे ते थाण आपी नगरीमां जुगार रमवा भोक्ख्यो. सोनामडोरथी लरेल थाण तथा पासा लध ते पुश्य नगरमां घोषणा करतो करवा लाग्यो. के जे कैध भने दावमां डरावे तो सोनामडोरथी लरेल आ थाण आपी दडिं अने सामो भाणुस डारे तो तेले भने इक्का ओक न सोनामडोर आपवी. ओनी आवी घोषणा सांलणीने अनेक भाणुसो जुगार रमवा आववा लाग्या. जुगार रमवानो प्रारंभ थर्ध चुक्यो. तेले रमवा आवनार दरेकने जती लीधा पक्ष तेने कैध पराजित करी सकथुं नडीं. सारांश—देवना आपेला प्रसादरुप पासाना प्रभावथी जेवी रीते ओ

દમનાર્થ વિચિન્તયન્ કદાચિદ્ નગરતો વહિર્નિઃસૃતઃ સન્ પશ્યતિ-નલદામનામા કુવિન્દઃ પુત્રં મત્કોટકૈર્દૃષ્ટં દૃષ્ટ્વા કોપાવિષ્ટો ભૂત્વા તેષાં ત્રિલમન્વેષયતિ ।  
 ચાણક્યસ્તથાકુર્વન્તં કુવિન્દં દૃષ્ટ્વા પૃચ્છતિ-કુવિન્દ ! કિમન્વેષયસિ ? કુવિન્દઃ  
 પ્રાઢ-મત્પુત્રદંશદાયિનાં મત્કોટકાનાં ગૃહમ્, એવં તદ્વૃત્તં વિદિત્વા ચાણક્યો મનસિ  
 વિચારયતિ-યોગ્યોઽયં કુવિન્દો વૈરનિર્યાતનસ્ય । ઇતિ મનસિ વિચાર્ય તમેવ  
 નગરાધ્યક્ષં કૃત્વાન્ ।

एकदा कोशपूरणार्थं चाणक्यः मुवर्णमाप्तिकामो देवाराधनं कृतवान् । देवः

करने का बहुत कुछ विचार किया पर समझ में नहीं बैठा । एक दिन  
 इसी विषय का विचार करते २ चाणक्य नगर से बाहर जा पहुँचे ।  
 पहुँचते ही वहाँ एक नलदाम नामक कूविन्द (जुलाहे) को देखा जो  
 अपने पुत्र को काटने वाले मकोड़ों के बिल की तलास करने में बड़े  
 क्रोध से अभिभूत होकर इधर उधर फिर रहा था । चाणक्य ने इस  
 प्रकार से तलाशी करने में प्रयत्न करते हुए देखकर कूविन्द से पूछा  
 कि हे कूविन्द ! कहो क्या दूँढ रहे हो ? कूविन्द ने कहा मेरे पुत्र को एक  
 मकोड़े ने काट लिया है सो मैं उसके घर को देख रहा हूँ । इस प्रकार  
 कूविन्द की बात सुनकर चाणक्य ने मन में विचार किया कि यह  
 कूविन्द वैर का बदला लेने में योग्य है । इस प्रकार विचार कर  
 चाणक्य ने उसे नगर का कोतवाल बना दिया ।

एक समय की बात है कि खजाने की पूर्ति करने के निमित्त  
 चाणक्य ने किसी देव की आराधना की । चाणक्य की आराधना से

સમ્પત્તિ હાથે કામ લેવાને તેમજ દમનનો કારકો વીંઝવાનો વિચાર કર્યો, પરંતુ  
 તેમ કરવું અત્યારના સંજોગોમાં તેને ઉચિત ન લાગ્યું. એક દિવસ આજ બાબતનો  
 વિચાર કરતાં કરતાં ચાણક્ય નગરની બહાર જતા હતા, ત્યાં રસ્તામાં એક  
 સ્થળે એક નલદામ નામના કુવિન્દ (વણકર)ને જોયો. જે પોતાના પુત્રને કરડનારા  
 મંકોડાનું દર શોધી રહ્યો હતો. તેને ચાણક્યે પૂછ્યું, કુવિન્દ શું શોધી રહ્યો છે ?  
 ઘણા જ ક્રોધના આવેશથી અડી તડી કરી રહેલા કુવિન્દે કહ્યું, મારા પુત્રને  
 એક મંકોડાએ કરડી ખાધેલ છે, હું તેના ઘરને જોતી રહ્યો છું. આ પ્રકારની  
 કુવિન્દની વાત સાંભળી ચાણક્યે વિચાર્યું કે, આ માણસ બહુ જોવામાં યોગ્ય  
 છે. આમ વિચારી તેને સમજાવી પછીથી ચાણક્યે તેને નગરના કોટવાજાની  
 જગ્યાએ નીમ્યો.

એક સમયની વાત છે-રાજ્યના ખજાનાને ભરપૂર બનાવવા ચાણક્યે



ग्रीहि-कङ्क-कोद्रव-मकुष्ठका-ढकी-वल्ल-कुलत्थ-शण-चीनक-ममूरा-तसी-  
कलम्बपट्टिका-मक्का-वर्जरीत्यादिवहुभेदभिन्नान् संपूर्णभरतक्षेत्रमध्यगान् धान्य-  
राशीन् कोऽपि देवः स्वशक्त्या संमील्याभ्रंलिहं तत्पुञ्जं कुर्यात् तत्र प्रस्थैकपरिमित-  
सर्पपं निक्षिप्य सर्वं धान्यं संमिश्रयेत्, तदनन्तरं जराजर्जरां विगलन्नेत्रां कम्पमा-  
नगात्रामेकां वृद्धां तान् सर्पपान् धान्यराशिभ्यः कणशः पृथक् कृत्य प्रस्थं पूरयितुं  
समादिशेत् तदा तस्यास्तत्पृथक्करणं यथा दुष्करं भवेत् तथा मनुष्यभवात् प्रच्यु-  
तस्य प्रमादिनः पुनर्मनुष्यजन्म दुर्लभमिति ॥

उडद, तिल, राजमाप (चौला), मटर, मोंठ, वाजरा आदि समस्त  
धान्यों को वो देवें और वे जब अपने समय पर निरूपद्रवरूप से  
पककर तैयार हो जावें तब कोई देव इस समस्त धान्यराशि की  
उड़ावनी अर्थात्-तुप साफ-करके एक बहुत अधिक ऊँची जो मानो  
आकाश को भी स्पर्श करती हो ऐसी ढेरी लगा दे। फिर उसमें एक  
प्रस्थप्रमाण सर्पप मिलाकर किसी वृद्धा को कि जिसे कम दीखता हो  
तथा शरीर भी जिसका कंपित हो रहा हो यह आदेश दे कि तू इस  
ढेरी में उस प्रस्थप्रमाण सर्पप को अलग २ छांट दे। तो जैसे ढेरी में  
उस प्रस्थप्रमाण सर्पप का एक २ कण करके छांटना बड़ा मुश्किल है,  
उसी प्रकार मनुष्य भव के छूट जाने पर पुनः उसका मिलना जीव  
को बड़ा दुर्लभ है।

ચોળા, ઘઉં, ચણા, મગ, અડદ, તલ, ચોળા, મઠ, કળથી, બાજરો, જુવાર  
વગેરે સમસ્ત ધાન્યોનાં વાવેતર કરવાના કામમાં લાગી જાય છે. વવાયેલ તે  
સમગ્ર ધાન્ય તેના ચોગ્ય સમયે ઉપદ્રવરહીત પાકીને તૈયાર થઈ જાય ત્યારે  
કોઈ દેવ એ સમસ્ત ધાન્યરાશીની ઉડાવણી અર્થાત્ તુલ સાફ કરીને એક  
ખૂબ અધિક ઉંચો માનો કે આકાશને પણ સ્પર્શ કરી જાય એવડો મોટો એક ઢગલો  
કરી દે, યહી તેમાં એક પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવ મેળવીને કોઈ વૃદ્ધા કે જેને આંધું  
હેખાતું હોય, તથા શરીર પણ જેનું કંપતું હોય તેને કહે કે, તું આ ઢગલા  
માંથી એ પ્રમાણપ્રસ્થ સરસવને જોળી જોળીને અલગ પાડી આપતો જેમ એ  
ઢગલામાંથી એ પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવનો એકેક કણ કરીને જુદા પાડવા ઘણું મુશ્કેલ  
છે છતાં પણ તે શક્ય બને તો પણ મનુષ્યભવ પુરો થતાં ફરીથી મનુષ્ય ભવ  
પામવો આત્માને ઘણું જ દુર્લભ છે.

અગ્ર સંગ્રહઃ શ્લોકઃ—( શાર્દૂલ વિક્રીડિતપૃષ્ઠામ્ )

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,  
 ચાળક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।  
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,  
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

इति द्वितीयः पाशकदृष्टान्तः ॥ २ ॥

અથ તૃતીયો ધાન્યદૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ભરતક્ષેત્રે દ્વાત્રિશત્સહસ્રદેશસમન્વિતેઽનેકગ્રામનગરપત્તનાદિસહિતે પ્રશસ્ત  
 વૃષ્ટૌ સત્યાં કૃપિકર્મદક્ષેઃ કૃપીવલૈઃ સર્વધાન્યવીજેષુસેષુ સમુત્પન્નાન્ નિરુપદ્રવં  
 નિષ્પન્નાન્ શાલિ-ગોધૂમ-ચણક-મુદ્ગ-માપ-તિલાણુક-રાજમાપ-કલાય-યવ-

દુર્લભ યના ઉસી પ્રકાર હસ સંસાર મેં યહ મનુષ્યજન્મ થડા દુર્લભ હૈ ।

સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,  
 ચાળક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।  
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,  
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

यह दूसरा पाशकदृष्टान्त हुआ ॥ २ ॥

તૃતીય ધાન્યદૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—અનેક ગ્રામ, નગર, પત્તન  
 આદિ સે સહિત હસ ૩૨ વતીસ હજાર દેશવાલે ભરતક્ષેત્ર મેં વૃષ્ટિ કે  
 હોને પર કૃપિ કર્મ મેં દક્ષ કિસાન લોગ શાલિ, ગોધૂમ, ચણક, મુદ્ગ,

પુરુષને પરાજીત બનાવવો. મહાદુર્લભ હતું એવીજ રીતે આ સંસારમાં આ  
 મનુષ્ય જન્મ મહાદુર્લભ છે. સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્, સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,  
 ચાળક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।  
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,  
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

આ બીજું પાશકદૃષ્ટાન્ત થયું ॥ ૨ ॥

ત્રીજું ધાન્યદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.

અનેક ગ્રામ, નગર, જંગલ વગેરે દરેક સ્થળે ૩૨ હજાર દેશવાળા આ  
 ભરતક્ષેત્રમાં વસતાં વસતાં ખેતીના કામમાં રચ્યા પચ્યા ખેડુતો

ગ્રીહિ-કદ્દુ-કોદ્રવ-મકુષ્ઠકા-ઢકી-વલ્લ-કુલ્ત્ય-શુણ-ચીનક-મમૂરા-તસી-  
કલમ્વપઠ્ઠિકા-મક્કા-વર્જરીત્યાદિવહુભેદમિન્નાન્ સંપૂર્ણમસ્તક્ષેત્રમંધ્યગાન્ ધાન્ય-  
રાશીન્ કોઽપિ દેવઃ સ્વશક્ત્યા સંમીલ્યાશ્રંલિહં તત્પુઞ્જં કુર્યાત્ તત્ર પ્રસ્થૈકપરિમિત-  
સર્પપં નિશ્લિપ્ય સર્વં ધાન્યં સંમિશ્રયેત્, તદનન્તરં જરાજર્જરાં વિગલન્નેત્રાં કમ્પમા-  
નગાત્રામેકાં વૃદ્ધાં તાન્ સર્પપાન્ ધાન્યરાશિભ્યઃ કણશઃ પૃથક્ કૃત્ય પ્રસ્થં પૂરયિતું  
સમાદિશેત્ તદા તસ્યાસ્તત્પૃથક્કરણં યથા દુષ્કરં ભવેત્ તથા મનુષ્યભવાત્ પ્રચ્યુ-  
તસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ॥

ઉડદ, તિલ, રાજમાપ (ચૌલા), મટર, મોંઠ, વાજરા આદિ સમસ્ત  
ધાન્યોં કો વો દેવેં ઓર વે જવ અપને સમય પર નિરૂપદ્રવરૂપ સે  
પકકર તૈયાર હો જાવેં તવ કોઈ દેવ હસ સમસ્ત ધાન્યરાશિ કી  
ઉડાવની અર્થાત્-તુપ સાફ-કરકે એક વહુત અધિક ડુંચી જો માનો  
આકાશ કો ખી સ્પર્શ કરતી હો એસી ઢેરી લગા દે । ફિર ઉસમેં એક  
પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ મિલાકર કિસી વૃદ્ધા કો કિ જિસે કમ દીક્ષતા હો  
તથા શરીર ખી જિસકા કંપિત હો રહા હો યહ આદેશ દે કિ તૂ હસ  
ઢેરી મેં ઉસ પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ કો અલગ ૨ છાંટ દે । તો જૈસે ઢેરી મેં  
ઉસ પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ કા એક ૨ કણ કરકે છાંટના વડા મુશ્કિલ હૈ,  
ઉસી પ્રકાર મનુષ્ય ભવ કે છૂટ જાને પર પુનઃ ઉસકા મિલના જીવ  
કો વડા દુર્લભ હૈ ।

ચોળા, ઘઉં, ચણા, મગ, અડદ, તલ, ચોળા, મઠ, કળથી, બાજરો, જુવાર  
વગેરે સમસ્ત ધાન્યોનાં વાવેતર કરવાના કામમાં લાગી જાય છે. વવાયેલ તે  
સમગ્ર ધાન્ય તેના ચોળ્ય સમયે ઉપદ્રવરહીત પાકીને તૈયાર થઈ જાય ત્યારે  
કોઈ દેવ એ સમસ્ત ધાન્યરાશીની ઉડાવણી અર્થાત્ તુલ સાફ કરીને એક  
ખૂબ અધિક ઉંચો માનો કે આકાશને પણ સ્પર્શ કરી જાય એવડો મોટો એક ઢગલો  
કરી દે, પછી તેમાં એક પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવ મેળવીને કોઈ વૃદ્ધ કે જેને ઓછું  
દેખાતું હોય, તથા શરીર પણ જેનું કંપતું હોય તેને કહે કે, તું આ ઢગલા  
માંથી એ પ્રમાણપ્રસ્થ સરસવને જોળી જોળીને અલગ પાડી આપતો જેમ એ  
ઢગલામાંથી એ પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવનો એકેક કણ કરીને જુદા પાડવા ઘણું મુશ્કેલ  
છે છતાં પણ તે શક્ય બને તો પણ મનુષ્યભવ પુરો થતાં ફરીથી મનુષ્ય ભવ  
પામવો આત્માને ઘણું જ દુર્લભ છે.

અગ્ર સંગ્રહઃ શ્લોકઃ—( શાર્દૂલ વિક્રીઢિતપૃષ્ઠામ્ )

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્ભૂતં,  
ચાળક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।  
સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

ઈતિ દ્વિતીયઃ પાશકદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૨ ॥

અથ તૃતીયો ધાન્યદૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ભરતક્ષેત્રે દ્વાત્રિશત્સહસ્રદેશસમન્વિતેઽનેકગ્રામનગરપત્તનાદિસહિતે પ્રશસ્ત  
વૃષ્ટો સત્યા કૃપિકર્મદક્ષેઃ કૃપીવલૈઃ સર્વધાન્યવીજેષુમેષુ સમુત્પન્નાન્ નિરુપદ્રવં  
નિષ્પન્નાન્ શાલિ-ગોધૂમ-ચળક-મુદ્ગ-માપ-તિલાણુક-રાજમાપ-કલાય-યવ-

દુર્લભ યના ઉસી પ્રકાર હસ સંસાર મેં યહ મનુષ્યજન્મ ઘડા દુર્લભ હૈ ।

સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્ભૂતમ્,  
ચાળક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।  
સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

યહ દૂસરા પાશકદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૨ ॥

તૃતીય ધાન્યદૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—અનેક ગ્રામ, નગર, પત્તન  
આદિ સે સહિત હસ ૩૨ વતીસ હજાર દેશવાલે ભરતક્ષેત્ર મેં વૃષ્ટિ કે  
હોને પર કૃપિ કર્મ મેં દક્ષ કિસાન લોગ શાલિ, ગોધૂમ, ચળક, મુદ્ગ,

પુરુષને પરાશ્રુત બનાવવેા મહાદુર્લભ હતું એવીજ રીતે આ સંસારમાં આ  
મનુષ્ય જન્મ મહાદુર્લભ છે. સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્, સ્થાલં ચ રત્નૈર્ભૂતમ્,  
ચાળક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।  
સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

આ બીજું પાશકદૃષ્ટાન્ત યથુ ॥ ૨ ॥

ત્રીજું ધાન્યદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.

અનેક ગ્રામ, નગર, જંગલ વગેરે દરેક સ્થળે ઉર હજાર દેશવાળા આ  
ભરતક્ષેત્રમાં વરસાદ વરસતાં ખેતીના કામમાં રમ્યા પમ્યા ખેડુતો

અત્ર સંગ્રહઃ—(શાર્દૂલ વિક્રોડિતવૃત્તમ્)

સ્તમ્ભાનાં હિ સહસ્રમષ્ટસહિતં પ્રત્યેકમષ્ટોત્તરં ।

કોણાનાં ચ સહસ્રમેષુ જયતિ દ્યૂતે પિતુ ર્યઃ સુતઃ ।

સામ્રાજ્યં લભતે સ, તસ્ય વિજયો દ્યૂતે યથા દુર્લભઃ ।

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તો સ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

इति चतुर्थो द्यूतदृष्टान्तः ॥ ४ ॥

અથ પાંચમો રત્નદૃષ્ટાન્તઃ—

ધનસમૃદ્ધે પુરે રત્નકોટિપ્રમુર્ધનદનામા વણિક્ષ પ્રતિવસતિ સ ભૂમૌ રત્નાનિ નિલ્લખ્ય તદ્દુપરિ પર્યટ્કં નિધાય ગ્રયનં કરોતિ । સ વિશ્વાસાભાવેન પુત્રાનપિ તાનિ ન પ્રદર્શયતિ । સ્વધનાનુરૂપં વેપં ભવનાદિકં ચ ન કરોતિ, વ્યાપારકરણે ધનાનિ હસ્તાદપગતાનિ ભવિષ્યન્તીતિ બુદ્ધ્યા વ્યાપારમપિ ન કરોતિ ।

સંગ્રહ શ્લોક—

સ્તમ્ભાનાં હિ સહસ્રમષ્ટસહિતં પ્રત્યેકમષ્ટોત્તરં,

કોણાનાં ચ સહસ્રમેષુ જયતિ દ્યૂતે પિતુ ર્યઃ સુતઃ ।

સામ્રાજ્યં લભતે સ તસ્ય વિજયો દ્યૂતે યથા દુર્લભઃ

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૪ ॥

यह चौथा द्यूतदृष्टान्त है ॥ ४ ॥

પાંચવા રત્ન દૃષ્ટાન્તે આ પ્રકાર છે—ધનસમૃદ્ધ નામકા એક નગર થા । ઉસમેં એક કરોડ રત્નોં કા માલિક ધનદ નામકા વણિક્ષ રહતા થા । વહ જમીન મેં ગડે હુએ રત્નોં કે ઉપર પલંગ વિછાકંર સોયા કરતા થા । ઉસકો અપને પુત્રોં તક કા ભી વિશ્વાસ નહીં થા

સંગ્રહ શ્લોક—સ્તમ્ભાનાં હિ સહસ્રમષ્ટસહિતં પ્રત્યેકમષ્ટોત્તરં,

કોણાનાં ચ સહસ્રમેષુ જયતિ દ્યૂતે પિતુ ર્યઃ સુતઃ ॥

સામ્રાજ્યં લભતે સ તસ્ય વિજયો તે યથા દુર્લભઃ

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૪ ॥

આ ચોથું દ્યૂતદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૪ ॥

પાંચમું રત્નદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે—

ધનસમૃદ્ધ નામનું એક નગર હતું, તેમાં એક કરોડ રત્નોનો માલિક એવો ધનદ નામનો વણિક રહેતો હતો. તે જમીનમાં દાટી રાખેલા રત્નો ઉપર પલંગ પાથરીને સુઈ રહેતો હતો. તેને પોતાના પુત્રોનો પણ વિશ્વાસ ન હતો, તેથી

ત્તરસહસ્રવારં વિજિતે સતિ તનૈવ ક્રમેણ સર્વે સ્તમ્ભા વિજિતા ભવેયુઃ, તત્રાપ્યષ્ટો-  
ત્તરસહસ્રવારવિજયકરણે દૈવાત્ તન્મધ્યે પરાજયઃ સ્યાત્ તદા સર્વે વિજિતાઃ  
કોણા અવિજિતાઃ ભવન્તિ, સઠદપિ વ્રહ્મચર્યમક્રે સર્વ મહાવ્રતમિવ, અતઃ  
પુનરાદિત એવ સર્વે કોણા વિજેતવ્યાઃ, એવં ત્વમપિ કુરુ । ઇતિ પિતૃવચનં શ્રુત્વા  
વસુમિત્રશ્ચિન્તયતિ-દ્યૂતાદેવ રાજ્યં લભ્યં પુનઃ કિમર્થં પિતરં હન્મિ, ઇતિ વિચાર્ય  
રાજા સહ ધૂતક્રીડાર્યા પ્રવૃત્તઃ, તથાપિ જયો દુર્લભો જાતઃ તસ્ય વસુમિત્રસ્યૈતત્  
કાર્યં યથા દુષ્કરં, તથા મનુષ્યત્વમપિ દુર્લભમ્ ।

इनके जो प्रत्येक के एक हजार आठ १००८ कोने हैं उन कोनों में से  
एक २ कोने को एक हजार आठ १००८ बार जीत जाता है । इसी क्रम  
से ये समस्त खंभे जब जीत लिये जाते हैं तब जाकर वह विजयी  
कहलाता है । यदि सब कोने जीत भी लिये जायें और एक भी कोना  
यदि जीता न जा सके तो जीते हुए भी सब कोने नहीं जीते समझे  
जा सकते हैं, और उन सब को पुनः जीतने के लिये द्यूत का आरंभ  
करना पड़ता है । जैसे एक बार भी यदि गृहीत ब्रह्मचर्य खंडित हो  
जाता है तो समस्त महाव्रत खंडित माना जाता है । इस प्रकार पिता  
के वचन को सुनकर वसुमित्र ने विचार किया कि जब द्यूत क्रीडा में  
जीत होने से राज्य मिलता है तो फिर पिता के मार ने से क्या लाभ ।  
इस प्रकार विचार कर पिता के साथ जुआ खेलने में प्रवृत्त हो गया ।  
परन्तु उसे विजय पूर्वोक्त प्रकार से जैसे दुष्कर बनी उसी प्रकार यह  
मनुष्यभवं भी पुनः प्राप्त होना प्राणी के लिये दुर्लभ जानना चाहिये ।

છે અને એ પ્રત્યેકને એકહજારઆઠ ૧૦૦૮ ખુણા છે એ ખુણામાંથી એક એક ખુણાને  
એકહજારઆઠ ૧૦૦૮વાર જીતવામાં આવે છે. આ ક્રમથી તે સઘળા થાંભલા બધારે  
જીતવામાં આવે ત્યારે તે વિજયી કહેવાય છે. કદાચ બધા ખુણા જીતી દેવામાં આવે  
અને એકાદ ખુણા જીતવામાં બાકી રહે તો બધા ખુણા ન જીતાયેલા જ મનાય  
છે. અને એ બધાને જીતવા માટે ફરીથી જુગાર રમવો પડે છે. જેમ એક  
વાર પણ ગ્રહણ કરેલા બ્રહ્મચર્ય ખંડિત થઈ જાય તો સમસ્ત મહાવ્રત ખંડિત  
માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારનાં પિતાનાં વચન સાંભળીને વસુમિત્રે વિચાર  
કર્યો કે, બધારે જુગાર રમવામાં જીત થવાથીજ જો રાજ મળતું હોય તો પિતાને  
મારવાથી લાભ શું થવાનો ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી વસુમિત્ર પિતાની સાથેજુગાર  
ખેલવામાં પ્રવૃત્ત બન્યો. પરંતુ તેને ઉપરોક્ત પ્રકારથી વિજય મેળવવો દુષ્કર  
બન્યો તેવીજ રીતે આ મનુષ્યભવ પુનઃ પ્રાપ્ત થવો પ્રાણી માટે દુર્લભ બન્યો તેમજ



अत्र संग्रहः—(शार्दूल विक्रीडितवृत्तम्)

स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं ।

कोणानां च सहस्रमेष्टु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ।

साम्राज्यं लभते स, तस्य विजयो द्यूते यथा दुर्लभः ।

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तो स्तथा दुर्लभः ॥ २ ॥

इति चतुर्थो द्यूतदृष्टान्तः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमो रत्नदृष्टान्तः—

धनसमृद्धे पुरे रत्नकोटिप्रभुर्धनदनामा वणिक् प्रतिवसति स भूमौ रत्नानि निखन्य तदुपरि पर्यङ्कं निधाय शयनं करोति । स विश्वासाभावेन पुत्रानपि तानि न प्रदर्शयति । स्वधनानुरूपं वेषं भवनादिकं च न करोति, व्यापारकरणे धनानि हस्तादपगतानि भविष्यन्तीति बुद्ध्या व्यापारमपि न करोति ।

संग्रह श्लोक—

स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं,

कोणानां च सहस्रमेष्टु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ।

साम्राज्यं लभते स तस्य विजयो द्यूते यथा दुर्लभः

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ ४ ॥

यह चौथा द्यूतदृष्टान्त है ॥ ४ ॥

पांचवा रत्न दृष्टान्त इस प्रकार है—धनसमृद्ध नामका एक नगर था । उसमें एक करोड रत्नों का मालिक धनद नामका वणिक् रहता था । वह जमीन में गड़े हुए रत्नों के ऊपर पलंग बिछाकर सोया करता था । उसको अपने पुत्रों तक का भी विश्वास नहीं था

संश्रु १६।३—स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं,

कोणानां च सहस्रमेष्टु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ॥

साम्राज्यं लभते स तस्य विजयो ते यथा दुर्लभः

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ ४ ॥

आ योथुं द्यूतदृष्टान्तं ॥ ४ ॥

पांचमुं रत्नदृष्टान्तं आ प्रकारतुं ॥

धनसमृद्ध नामतुं एक नगर હતું, તેમાં એક કરોડ રત્નોનો માલિક એવો ધનદ નામનો વણિક રહેતો હતો. તે જમીનમાં દાટી રાખેલા રત્નો ઉપર પલંગ પાથરીને સુઈ રહેતો હતો. તેને પોતાના પુત્રોનો પણ વિશ્વાસ ન હતો, તેથી

ત્તરસહસ્રવારં વિજિતે સતિ તનૈવ ક્રમેણ સર્વે સ્તમ્ભા વિજિતા ભવેયુઃ, તત્રાપ્યષ્ટો-  
ત્તરસહસ્રવારવિજયકરણે દૈવાત્ તન્મધ્યે પરાજયઃ સ્યાત્ તદા સર્વે વિજિતાઃ  
કોના અવિજિતાઃ ભવન્તિ, સઠદપિ વ્રહ્મચર્યમક્રે સર્વં મહાવ્રતમિવ, અતઃ  
પુનરાદિત એવ સર્વે કોના વિજેતવ્યાઃ, એવં ત્વમપિ કુરુ । ઇતિ પિતૃવચનં શ્રુત્વા  
વસુમિત્રશ્ચિન્તયતિ-ધૂતાદેવ રાજ્યં લભ્યં પુનઃ કિમર્થં પિતરં હન્મિ, ઇતિ વિચાર્ય  
રાજ્ઞા સહ ધૂતક્રીડાયાં પ્રવૃત્તઃ, તથાપિ જયો દુર્લભો જાતઃ તસ્ય વસુમિત્રસ્યૈતત્  
કાર્યં યથા દુષ્કરં, તથા મનુષ્યત્વમપિ દુર્લભમ્ ।

इनके जो प्रत्येक के एक हजार आठ १००८ कोने हैं उन कोनों में से  
एक २ कोने को एक हजार आठ १००८ बार जीत जाता है । इसी क्रम  
से ये समस्त खंभे जब जीत लिये जाते हैं तब जाकर वह विजयी  
कहलाता है । यदि सब कोने जीत भी लिये जायें और एक भी कोना  
यदि जीता न जा सके तो जीते हुए भी सब कोने नहीं जीते समझे  
जा सकते हैं, और उन सब को पुनः जीतने के लिये द्यूत का आरंभ  
करना पड़ता है । जैसे एक बार भी यदि गृहीत ब्रह्मचर्य खंडित हो  
जाता है तो समस्त महाव्रत खंडित माना जाता है । इस प्रकार पिता  
के वचन को सुनकर वसुमित्र ने विचार किया कि जब द्यूत क्रीडा में  
जीत होने से राज्य मिलता है तो फिर पिता के मार ने से क्या लाभ ।  
इस प्रकार विचार कर पिता के साथ जुआ खेलने में प्रवृत्त हो गया ।  
परन्तु उसे विजय पूर्वोक्त प्रकार से जैसे दुष्कर बनी उसी प्रकार यह  
मनुष्यभव भी पुनः प्राप्त होना प्राणी के लिये दुर्लभ जानना चाहिये ।

છે અને એ પ્રત્યેકને એકહજારઆઠ ૧૦૦૮ ખુણા છે એ ખુણામાંથી એક એક ખુણાને  
એકહજારઆઠ ૧૦૦૮વાર જીતવામાં આવે છે. આ ક્રમથી તે સઘળા થાંભલા બ્યારે  
જીતવામાં આવે ત્યારે તે વિજયી કહેવાય છે. કદાચ બધા ખુણા જીતી, દેવામાં આવે  
અને એકાદ ખુણા જીતવામાં બાકી રહે તો બધા ખુણા ન જીતાયેલા જ મનાય  
છે, અને એ બધાને જીતવા માટે ફરીથી જુગાર રમવો પડે છે. જેમ એક  
વાર પણ ગ્રહણ કરેલા બ્રહ્મચર્ય ખંડિત થઈ જાય તો સમસ્ત મહાવ્રત ખંડિત  
માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારનાં પિતાનાં વચન સાંભળીને વસુમિત્રે વિચાર  
કર્યો કે, બ્યારે જુગાર રમવામાં જીત થવાથીજ જો રાજ્ય મળતું હોય તો પિતાને  
મારવાથી લાભ શું થવાનો ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી વસુમિત્ર પિતાની સાથે જુગાર  
ખેલવામાં પ્રવૃત્ત બન્યો. પરંતુ તેને ઉપરોક્ત પ્રકારથી વિજય મેળવવો દુષ્કર  
બન્યો તેવીજ રીતે આ મનુષ્યભવ પુનઃ પ્રાપ્ત થવો પ્રાણી માટે દુર્લભ બન્યો બેધએ

સન્તસ્તન્નગરાગતાનામન્યાન્યદેશવાસિનાં શ્રેષ્ઠિનાં હસ્તે રત્નાનિ વિક્રીય વાણિ-  
જ્યાર્થં પણ્યવસ્તુનિ ક્રીતવન્તઃ, તૈર્વાણિજ્યકાર્યં પ્રસારયન્તિ સ્મ । તતસ્તત્પુત્રાઃ  
કોટિધ્વજા જાતાઃ । ચિરેણ તેષાં પિતા ગૃહમાગતઃ । સ સ્વસ્થાપિતાનિ રત્નાન્ય-  
દ્વા વસુપ્રિયં પુત્રં પૃચ્છતિ-અરે ! કેન મમ રત્નાનિ ગૃહીતાનિ ? । વસુપ્રિય આહ-  
સર્વેર્ભ્રાતૃભિરપહૃતાનિ । તતઃ પુત્રવાક્યં શ્રુત્વા ધનદઃ કોપાવિપ્તઃ સન્નવ્રતીત્-રે  
લક્ષ્મીકન્દકુદાલકાઃ । યૂયં મદ્ગૃહાન્નિર્ગચ્છત, તાનિ વિક્રીતરત્નાનિ સમાનીય  
મદ્ગૃહે સ્થાપયન્તુ, અન્યથા ગૃહે નાગન્તવ્યમ્ । યથા તેષાં રત્નાનાં પુનરાનયનં  
ધનદપુત્રાણાં દુષ્કરં, તથા મનુષ્યત્વમપિ દુર્લભમ્ ॥

રત્નોં કો નિકાલ લિયા । સર્વોં કો રત્ન કી પ્રાપ્તિ સે અપાર હર્ષ હુઆ ।  
જો દૂસરે દેશ કે વણિજન વ્યાપાર કે લિયે નગર મેં આયે હુએ થે  
उनके लिये वे सब रत्न उन लोगों ने बेच दिये और अपनी पुंजी बना-  
कर फिर वे सब के सब व्यापार करने में लग गये । इनका व्यापार  
कार्य खूब चला । सब के सब कोटिध्वज हो गये । कालान्तर में धनद  
घर पर वापिस आया । उसने अपने रखे हुए रत्नों की ज्यों ही  
संभाल की वे :उसको नहीं मिले-तब उसने वसुप्रिय पुत्र से पूछा ।  
किसने मेरे रत्नों को लिया है । वसुप्रिय ने कहा-सब भाईओं ने ।  
वसुप्रिय की बात सुनकर धनद को बहुत ही अधिक क्रोध आ गया ।  
गुस्से में आकर उसने कहा-तुम सब के सब लक्ष्मीरूपी कन्द को  
उखाड़ ने के लिये कुदाली के समान हो अतः तुम्हारी अब भलाई  
इसी में है कि तुम सब मेरे घर से निकल जाओ । नहीं तो बेचे हुए  
रत्नों को वापिस लाओ । जब तक रत्न नहीं आवे तब तक याद

હવે થયો. બીજા દેશના વણિકજનો વેપાર માટે નગરમાં આવ્યા હતા તેમને  
આ લોકોએ બધાં રત્નો વેચી દીધા અને પોતપોતાની પુણ બનાવી લઈને દરેક  
જણ વેપાર કરવા લાગ્યા. તેમનો વેપાર ખૂબ ચાલ્યો. બધા કરોડપતી બની  
ગયા કાળાન્તરે ધનદ પાછો ઘેર આવ્યા, ત્યારે તેણે પોતે રાખેલાં રત્નોની જે  
તે સ્થળે તપાસ કરી તો તે તેને મળ્યાં નહીં. ત્યારે તેણે વસુપ્રિયને પૂછ્યું, કેણે  
મારાં રત્નોને લીધાં છે ? વસુપ્રિયે કહ્યું, બધા ભાઈ એાએ રત્નો વહેંચી લીધાં છે.  
વસુપ્રિયની વાત સાંભળીને ધનદને એકદમ ઠેાધ થડયો અને ગુસ્સામાં આવીને  
તેણે કહ્યું, તમે બધા લક્ષ્મીરૂપી કંદને ઉખાડનારા કોદાળી જેવા છો. આથી  
તમે બધા મારા ઘરમાંથી ચાલ્યા જાવ એમાંજ તમે સઘળાની ભલાઈ છે,  
નહિતર વેચેલાં રત્નોને પાછાં લાવો. જ્યાં સુધી રત્નો પાછાં નહીં આવે ત્યાં

કદાચિત્ સમ્યન્ધિનઃ કાર્યવશાદામન્ત્રણપત્રં સમાગતમ્ । તત્ર ગન્તું પ્રસ્થિતો  
ધનદસ્તદ્રત્નરક્ષણાય વસુપ્રિયં સ્વકનિષ્ઠપુત્રં મૂચયતિ । તદનન્તરં ધનદે ગૃહાભિઃ-  
સૃતે સતિ વસુપ્રિયસ્ય ભ્રાતરઃ સર્વે ગૃહે સમાગતાઃ । વસુપ્રિયઃ પિતૃમુચિતં રત્ન-  
સ્થાનં ભ્રાતૃન્ કથયતિ । તૈર્ભૂમિં લ્લનિત્વા રત્નાન્યુદ્ધૃતાનિ । સર્વે દૃષ્ટચિત્તાઃ

इसलिये वह रत्नों को वे कहाँ २ रखे हुए हैं पुत्रों को नहीं बतलाया  
था । जैसा यह धनपति था उसके अनुरूप न इसका मकान था और  
न रहन सहन भी । व्यापार भी यह इसलिये नहीं करता था, यह मानता  
था कि व्यापार करने में जो धन लगाया जाता है वह हाथ से चला  
जाता है । उसकी पुनः प्राप्ति कोई निश्चित नहीं होती है ।

एक समय की बात है कि किसी संघधी का इसके पास बुलाने के  
लिये आमंत्रण पत्र आया । जब यह वहाँ जाने को तयार हुआ तब  
रत्नों की रक्षा करने के लिये इसने सब से छोटे पुत्र को कि जिसका  
नाम वसुप्रिय था, नियुक्त कर दिया । तब कहाँ कितने २ रत्न रखे  
हुए हैं यह बात भी उसको बतला दी । धनद जब चला गया और  
वसुप्रिय रत्नादिक की रक्षा करने लगा तब सब भाई मिलकर वसुप्रिय  
के पास आये और बातों बातों में उसने उन अपने भाईओं को रत्न  
रखने के समस्त स्थानों को बतला दिया । उन्होंने ने जमीन खोद कर

રત્નોને તેણે ક્યાં ક્યાં રાખ્યાં છે તે પોતાના પુત્રોને પણ બતાવતો ન હતો. જેવો  
તે ધનપતી હતો તેને અનુરૂપ તેને રહેવાનું મકાન ન હતું તેમ તેની રહેણી  
કરણી પણ તેને અનુરૂપ ન હતી. તે વેપાર પણ કરતો નહીં કારણ કે તેની માન્યતા  
એવી હતી કે, વેપારમાં જે ધન રોકવામાં આવે તે હાથથી ચાલ્યું જાય  
છે. અને ગયેલું ધન ફરીથી મળવાનું નિશ્ચિત હોતું નથી.

એક સમયની વાત છે કે, જ્યારે તેને બોલાવવા માટે તેના કેાઈ સંબં-  
ધીનું આમંત્રણ આવ્યું. જ્યારે તે ત્યાં જવા માટે તૈયાર થયો ત્યારે  
તેણે રત્નોની રક્ષા માટે પોતાનો સૌથી નાનો પુત્ર કે જેનું નામ વસુપ્રિય હતું  
તેને નિયુક્ત કર્યો. અને કંઈ કંઈ જગ્યાએ કેટલાં રત્નો રાખ્યાં છે, એ વાત  
પણ તેને બતાવી દીધી. તે ધનદ જ્યારે બહારગામ ગયો ત્યારે વસુપ્રિય રત્ના-  
દિકની રક્ષા કરવા લાગ્યો. બધા ભાઈએ એકઠા મળીને વસુપ્રિયની પાસે આવ્યા  
અને વાત વાતમાં વસુપ્રિયે પોતાના ભાઈઓને રત્નનાં બધાં ઠેકાણાં બતાવી દીધાં.  
તેમણે જમીન ખોદી રત્નો કાઢી લીધાં. દરેકને રત્નોની પ્રાપ્તિ થવાથી અપાર

જિનવચ્ચતાનુરાગી ધર્મે દ્વમતિરાસીત્ । મૂલદેવઃ કાર્પટિકથોમૌ; કાશ્ચનપુરનગરાદ્રહિઃ  
સસસ્તટે રાત્રૌ વિષ્ટતઃ । તત્ર સુપ્તેન મૂલદેવેન રાત્રિશેષે સ્વપ્નો દૃષ્ટઃ—  
મુખે ચન્દ્રઃ પ્રવિષ્ટઃ ઇતિ । તદાનીમેવ તત્ર સુપ્તેન કાર્પટિકેનાપિ તાદૃશઃ એવ સ્વપ્નોઃ  
દૃષ્ટઃ । સ્વપ્નદર્શનાત્તન્તરં તૌ વિનિદ્રૌ જાતૌ । કાર્પટિકો વદતિ—સ્વપ્નાવસ્થાયાં મમ  
મુખે ચન્દ્રઃ પ્રવિષ્ટઃ ઇતિ મયા દૃષ્ટઃ । મૂલદેવઃ પ્રાહ—અયં સ્વપ્નો રક્ષણીયઃ, સાધારણ-  
જનાનામગ્રે નાયં પ્રકાશનોયઃ । સ્વપ્નોત્થિતંયોસ્તયોર્મનઃ પ્રસન્નમભવત્ । સૂર્યોદયા-  
નન્તરમેવ તૌ કાશ્ચનપુરનગરે પ્રવિષ્ટૌ ।

વૃદ્ધિ કે લિયે દૂસરે દેશ કો ઘર સે ચલા । માર્ગ મેં જાતે ૨ એક કાર્પ-  
ટિક ને હસકા સાથ કર લિયા । મૂલદેવ જિન વચન મેં શ્રદ્ધાલુ થા ।  
ચલતે ૨ યે દોનોં કાંચનપુર નગર કે વહાર રહે હુએ કિસી એક તાલાવ  
કે તીર પર રાત્રિ કો ઠહર ગયે । મૂલદેવ કો રાત્રિ કે શેષભાગ મેં એક  
સ્વપ્ન દિસ્વાઈ દિયા । જિસમેં ઉસને દેખા કિ મેરે મુખ મેં ચન્દ્રમા  
પ્રવિષ્ટ હો ગયા હૈ । ઉસી સમય કાર્પટિક ને બી હસી તરહ કા સ્વપ્ન  
દેખાં । સ્વપ્ન દેખને કે વાદ દોનોં જંગ ગયે । આપસ મેં વાતચીત હોને  
લગી કાર્પટિક ને કહા આજ મેં સ્વપ્ન મેં ચન્દ્રમા કો અપને મુખ મેં  
પ્રવેશ કરતા હુઆ દેખા હૈ । મૂલદેવ ને ઉસકા સ્વપ્ન સુનકર ઉસસે  
કહા યહ સ્વપ્ન ગોપનીય હૈ, હર એક આદમી કે સામને હસકો પ્રકા-  
શિત નહોં કરના । જવ પ્રાતઃ કાલ હો ચુકા તવ યે દોનોં ઉઠે, ઉસ સમય  
વે વહે હી પ્રસન્ન માલૂમ દેતે થે, ક્યોં કિ હનકા મન વડા પ્રસન્ન થા ।  
સૂર્યોદય કે અનન્તર ફિર હન દોનોં ને કાંચનપુર નગરમેં પ્રવેશ કિયા ।

માર્ગમાં ચાલતાં ચાલતાં તેને એક ભુવાને સાથ થઈ ગયો. મૂળદેવ જીન  
વચનમાં પ્રભુ શ્રદ્ધાળુ હતો ચાલતાં ચાલતાં બન્ને કાંચનપુર નગરની બહારના  
એક તળાવના કાંઠા ઉપર રાતના રોકાઈ ગયા. મૂળદેવને રાત્રીના પાછલા  
ભાગમાં એક સ્વપ્ન દેખાયું. જેમાં તેણે જોયું કે, જાણે તેના મોઢામાં ચંદ્રમાએ  
આવીને પ્રવેશ કર્યો છે. આજ સમયે તેની બાજુમાં સુતેલા ભુવાએ પણ  
તેવું જ સ્વપ્ન જોયું. સ્વપ્ન જોયા પછી બન્ને જાગી ગયા. આપસમાં વાતચીત  
કરવા લાગ્યા ભુવાએ કહ્યું, આજે મેં સ્વપ્નમાં ચંદ્રમાને મારા મોઢામાં પ્રવેશ  
કરતાં જોયાં મૂલદેવે તેના સ્વપ્નાનું કથન સાંભળીને કહ્યું કે, આ સ્વપ્ન ખાનગી  
રાખવા જેવું છે. દરેક આદમીની સામે આને પ્રકાશિત ન કરવું જોઈએ.  
બ્યારે સવાર થયું ત્યારે બન્ને ઉઠ્યા તે સમયે તેઓ ધણી પ્રસન્ન માલુમ  
પડતા હતા કેમકે, તેમનાં મન ઘણાં પ્રસન્ન હતાં. સૂર્યોદય પછી બન્ને  
જાણીએ કાંચનપુર નગરમાં પ્રવેશ કર્યો.

અત્ર સંગ્રહ—( શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તમ્ )

તાતેઽન્યત્ર ગતે ધરાઽન્તરગતાન્યાદાય રત્નાનિ યદ્ ,  
વિક્રીતાનિ સુતૈર્વિદેશિવણિજાં હસ્તેષુ પશ્ચાત્ તતઃ ।  
રત્નાન્યાનયતેતિ તાતકથને, તત્પ્રાપ્તિ ટુષ્કરં,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૫ ॥

इति पञ्चमो रत्नदृष्टान्तः ॥ ५ ॥

अथ पष्ठः स्वप्नदृष्टान्तः—

આસીત્ પાટલિપુત્રનગરે મૂલદેવનામકઃ ક્ષત્રિયઃ । સ સ્વાભ્યુદયાર્થે દેશાન્તરં  
ગન્તું પ્રસ્થિતઃ । માર્ગે ગચ્છતસ્તસ્ય કશ્ચિત્ કાર્પટિકઃ સહચરોઽભવત્ । મૂલદેવઃ સહ

રત્નના ઘર મેં તુમ્હારે લિયે સ્થાન નહીં હૈ । હસ દૃષ્ટાન્ત સે યહ સમસાના  
ચાહિયે કિ જૈસે ઉન વિક્રીત રત્નોં કી પ્રાપ્તિ ઉન પુત્રોં કે લિયે ટુષ્કર  
હુઈ ઉસી તરહ સે હાથ સે નિકલા હુઆ મનુષ્ય જન્મ સી મહા દુર્લભ હૈ ।

इस दृष्टान्त का सार प्रदर्शक श्लोक इस प्रकार है—

તાતેઽન્યત્રગતે ધરાન્તરગતાન્યાદાય રત્નાનિ યત્,  
વિક્રીતાનિ સુતૈર્વિદેશિવણિજાં હસ્તેષુ પશ્ચાત્તતઃ ।  
રત્નાન્યાનયતેતિ તાતકથને તત્પ્રાપ્તિ ટુષ્કરમ્,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

यह पांचवां रत्नदृष्टान्त है ॥ ५ ॥

છઠા સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—પાટલિપુત્ર નગર મેં મૂલદેવ  
નામ કા એક ક્ષત્રિય રહતા થા । વહ કિસી સમય અપને ભાગ્ય કી

સુધી યાદ રાખો કે, તમારા માટે ધરમાં કોઈ સ્થાન નથી. એટલા માટે આ  
દૃષ્ટાંતથી એમ સમજવું જોઈ એ કે, વેચેલા રત્નોની પ્રાપ્તિ તે પુત્રોને માટે જેમ ટુષ્કર  
થઈ તેમ હાથમાંથી નિકળી ગયેલા મનુષ્યજન્મ પણ કુરી પ્રાપ્ત થયો મહાદુર્લભ છે.

સંગ્રહ શ્લોક—તાતેઽન્યત્રગતે ધરાન્તરગતાન્યાદાય રત્નાનિ યત્,  
વિક્રીતાનિ સુતૈર્વિદેશિવણીજાં હસ્તેષુ પશ્ચાત્તતઃ ।  
રત્નાન્યાનયતેતિ તાતકથને તત્પ્રાપ્તિ ટુષ્કરમ્,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

આ પાંચમું રત્નદૃષ્ટાંત છે. ॥ ૫ ॥

છઠું સ્વપ્નદૃષ્ટાંત આ પ્રકારથી છે—

પાટલીપુત્ર નગરમાં મૂલદેવ નામનો એક ક્ષત્રિય રહેતો હતો. તે એક  
સમય પોતાના ભાગ્યની વૃદ્ધિ માટે ઘેરથી બીજા દેશમાં જ નીકળ્યો.



લોકૈઃ કથિતમ્-શુક્રસ્ય રાત્રી સ્વપ્નો દૃષ્ટઃ, અથ શનિવાસરઃ, તેન કારણેન ઘૃતગુડસ-  
હિતં રોટકં તૈલં ચ મિલિપ્યતિ। યત્ર યત્ર ગૃહસ્થગૃહે કાર્પટિકો ભિક્ષાર્થં ગચ્છતિ,  
તત્ર તત્ર શનિદિવસે પ્રચુરં તાદૃશં રોટકં તૈલં ચ તેન લબ્ધમ્ ।

અથ પુત્રરહિતસ્તન્નગરનૃપઃ સ્વાયુષઃ ક્ષયેણ મૃતઃ। તસ્મિન્ મૃતે સતિ મન્ત્રિ  
પ્રમૃતયસ્તદા વ્યવસ્થાં કૃતવન્તઃ-ઇયં રાજહસ્તિની યસ્ય ગલે પુષ્પમાલાં દદ્યાત્ સ  
એવ રાજા ભવિષ્યતિ । इत्येवं निश्चिते सति हस्तिनी स्वशुण्डया पुष्पमालां नीत्वा  
મનુષ્યપરિવારૈઃ સહ નગરે પ્રતિમાર્ગં ભ્રમન્તી વનં ગતા । સા તત્ર વૃક્ષચ્છાયાયામુ-  
પવિષ્ટસ્ય મૂલદેવસ્ય ગલે પુષ્પમાલાં દદૌ । તતો મનુષ્યવૃન્દૈઃ સહ રાજમન્ત્રિણો મૂલદેવં

તુમને શુક્ર કી રાત્રિ મેં યહ સ્વપ્ન દેખા હૈ, આજ શનિવાર હૈ, હસ  
કારણ તુમકો ઘૃત ગુડ સહિત રોટ એવં તૈલ મિલેગા । અથ જિંસર ઘરમેં  
વહ કાર્પટિક ભિક્ષા કે લિયે ગયા વહાં ૨ ઉસકો વહીંં ચીજ સૂવ મિલી ।

જવ છહ દિન પૂરે હુએ ઉસી રાત મેં ઉસ નગર કા રાજા મર ગયા ।  
રાજા કે કોઈ પુત્ર નહીંં થા હસલિયે જવ વહ મરા તવ મન્ત્રિયોં ને  
રાજ્ય કી વ્યવસ્થા કે લિયે એસા વિચાર ક્રિયા કિ યહ રાજા કી હથિની  
જિસકે ગલે મેં પુષ્પમાલા ડાલે વહી રાજા સમજા જાય । હસ પ્રકાર  
કા વિચાર જવ પૂર્ણરૂપ સે નિશ્ચિત હો ચુકા તવ હથિની કો અપની  
સૂંડ મેં પુષ્પમાલા દેકર છોડા । નગર કે પ્રત્યેક માર્ગ મેં વહ ઘૂમતી  
રહી । ઉસકે સાથ મનુષ્યોં કા સમુદાય બી વહુત થા । ઘૂમતે ૨ વહ  
જંગલ મેં પહુંચી । મૂલદેવ ઉસ સમય એક વૃક્ષ કે નીચે છાયા મેં વેઠા હુઆ  
થા । હથિની ને પહુંચતે હી મૂલદેવ કે ગલે મેં વહ પુષ્પમાલા ડાલ દી ।

કહ્યું કે, શુકની રાત્રીમાં આ સ્વપ્ન દેખાયું છે આજે શનીવાર છે. એ કારણે  
તમને ધી ગોળ સાથે રોટલો અને તેલ મળશે. હવે જ્યાં જ્યાં એ ભિક્ષા  
માટે ગયો ત્યાં ત્યાં તેને એ ચીજો ખૂબ પ્રમાણમાં મળી.

જ્યારે છ દિવસ પુરા થયે એક રાત્રિએ તે નગરનો રાજા મરી ગયો.  
રાજાને કોઈ પુત્ર ન હતો. મંત્રીઓએ રાજ્યની વ્યવસ્થા માટે એવી  
મસલત કરી કે રાજાની હાથણી જેના ગળામાં પુષ્પમાળા પહેરાવે  
તેને રાજગાદી સુપ્રદ કરવી. આ પ્રકારનો જ્યારે પૂર્ણરૂપથી નિર્ણય  
લેવાયો ત્યારે હાથણીની સુંઠમાં પુષ્પમાળા આપીને તેને છુટી મુકી. નગરના  
દરેક માર્ગ ઉપર તે ફરતી હતી, તેની પાછળ માણસોનો સમૂહ પણ ચાલ્યો  
આવતો હતો. ધૂમતાં ધૂમતાં તે જંગલ તરફ વળી. મૂળદેવ આ વખતે  
ત્યાં એક વૃક્ષની છાયામાં બેઠો હતો. હાથણીએ ત્યાં પહોંચીને મૂળદેવના

તત્ર મૂલદેવઃ સ્વપ્નપાઠકસ્ય ગૃહે ગત્વા વિનયેન સ્વપ્નપાઠકં પૃચ્છતિ—  
મુખે ચન્દ્રઃ પ્રવિષ્ટઃ ઇતિ સ્વપ્નો મયા દૃષ્ટઃ કિમસ્ય ફલં ભવિષ્યતિ ? । તેનોક્તમ્—  
પ્રથમં મમ કન્યકયા સહ વિવાહમક્ષીકરોપિ ચેત્તદાઽસ્ય સ્વપ્નસ્ય ફલં વક્ષ્યામિ ।  
મૂલદેવેન તદક્ષીકૃતમ્, સ સ્વપ્નપાઠકઃ સ્વપુત્રીં પ્રદાય જામાતૃસમ્બન્ધં વિધાય ભોજનં  
કારયિત્વા મૂલદેવં વદતિ—ઇતઃ સપ્તમે દિવસે ભવાનસ્ય નગરસ્ય રાજા ભવિષ્યતિ ।  
કાર્પટિકસ્તુ સ્વકીયસ્વપ્નઘૃતં તત્ર નગરે સાધારણલોકાનાં પુરઃ પ્રકાશિતવાન,

મૂલદેવ ને વહાં સ્વપ્ન કે ફલ કો કહને વાલે વિદ્વાન કે ઘર કી  
તલાશ કી । જવ ઉસકો હસકા પતા લગ ગયા તો વહ થડે હી વિનય  
કે સાથ સ્વપ્નપાઠક કે ઘર ગયા—ઑર વહાં વિનીતભાવ સે ઉસને  
સ્વપ્નપાઠક સે પૂછા—મહાનુભાવ ! આજ મેને રાત્રિ કે પિછલે પહર મેં  
ચન્દ્રમા કો મુખ મેં પ્રવેશ કરતે હુવે દેખા હૈ હસકા ફલ કયા હોગા ।  
કૃપાકર કહિયે । મૂલદેવ કી વાત સુનકર સ્વપ્નપાઠક ને કહા કિ—  
યદિ તુમ પહિલે મેરી કન્યા કે સાથ અપના વિવાહ કરના મંજૂર કરો  
તો મેં હસકા ફલ તુમ્હેં વતલા સકતા હું । મૂલદેવ ને સ્વપ્નપાઠક કી  
વાત અંગીકાર કરલી । સ્વપ્નપાઠક ને અપની પુત્રી કા વિવાહ ઉસકે  
સાથ કર દિયા । મૂલદેવ અવ સ્વપ્નપાઠક કા જમાઈ બન ગયા । સ્વપ્ન-  
પાઠક ને જમાઈ કા આદરસત્કાર કિયા ઑર ભોજન કરા કર કહા  
આજ સે સાતવેં દિન આપ હસ નગર કે રાજા હો જાયેંગે ।

હધર કાર્પટિક ને અપના સ્વપ્ન નગર કે સાધારણ સે મી સાધારણ  
વ્યક્તિ કો સુનાના શુરુ કર દિયા । લોકોં ને મી ઉસસે યહી કહા કિ

મૂલદેવે ત્યાં સ્વપ્ન ફળના કહેવાવાળા વિદ્વાનના ઘરની તપાસ કરી,  
તેના પેત્તો મેળવી સ્વપ્નપાઠકને ઘેર ગયો અને ત્યાં વિનીત ભાવથી તેણે સ્વપ્ન-  
પાઠકને પૂછ્યું, મહાનુભાવ ! આજ મેં રાત્રિના પાછલા પહોરમાં ચંદ્રમાને મુખમાં  
પ્રવેશ કરતો જોયો છે. તેનું ફળ શું હશે ? તે કૃપાકરીને કહ્યો. મૂળદેવની વાત  
સંભળીને સ્વપ્નપાઠકે કહ્યું કે, જો તમે પહેલાં મારી કન્યાની સાથે તમારા વિવાહ  
કરવાનું મંજૂર કરો તોજ હું તમને તેનું ફળ બતાવું. મૂળદેવે સ્વપ્નપાઠકની વાત  
સ્વીકારી લીધી. સ્વપ્નપાઠકે પોતાની પુત્રીને વિવાહ તેની સાથે કરી દીધો.  
મૂળદેવ હવે સ્વપ્નપાઠકનો જમાઈ બની ગયો. સ્વપ્નપાઠકે જમાઈનો  
આદરસત્કાર કર્યો અને ભોજન જમાડીને કહ્યું કે આજથી સાતમે દિવસે તમે  
આ નગરના રાજા થશો. બીજી બાજુ બુવાએ પોતાનું સ્વપ્ન નગરના સાધા-  
રણથી સાધારણ માણસને પણ સંભળાવવું શરૂ કરી દીધું. લોકોએ તેને એમ

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—(શાર્દૂલચિન્તીકૃતવૃત્તમ્)

સ્વપ્ને કાર્પટિકેન રાત્રિવિગમે ચન્દ્રં મુખાન્તર્ગતં,

દૃષ્ટ્વા સર્વજનાગ્રતો નિગદિતં લબ્ધં ન રાજ્યં ફલમ્ ।

સ્વપ્નસ્તસ્ય પુનઃ સ તત્ર શયિતસ્યાસીદ્ યથા દુર્લભઃ,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

॥ ૬ ॥

અર્થ સપ્તમશ્લોકદૃષ્ટાન્તઃ—ચક્રોપલેક્ષિતો દૃષ્ટાન્તઃ, રાધાવેધદૃષ્ટાન્ત  
ઈત્યર્થઃ ॥ સિંચૈવમ્—

મથુરાનગર્યાં જિતશત્રુનામકો ભૂપતિરાસીત્ । ઇન્દિરાનામ્ની તસ્ય પુત્રી ચતુઃ-

ઉસ સ્વપ્ન કી પ્રાપ્તિ પુનઃ દુર્લભ હુઈ ઉસી પ્રકાર ॥ ૬ ॥

ઇસ કથા કા ભાવદર્શક શ્લોક ઇસ પ્રકાર હૈ—

સ્વપ્ને કાર્પટિકેન રાત્રિવિગમે ચન્દ્રં મુખાન્તર્ગતં,

દૃષ્ટ્વા સર્વજનાગ્રતો નિગદિતં લબ્ધં ન રાજ્યં ફલમ્ ।

સ્વપ્નસ્તસ્ય પુનઃ સ તત્ર શયિતસ્યાસીદ્ યથા દુર્લભઃ,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

— યહ છટ્ટા સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત હૈ ॥ ૬ ॥

સાતવાં ચક્ર દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—ઇસકા દૂસરા નામ રાધાવેધ  
દૃષ્ટાન્ત મી હૈ—મથુરા નગરી મેં જિતશત્રુ નામ કા રાજા રહતા થા ।

ઇસકી એક કન્યા થી, જિસકા નામ ઇન્દિરા થા । યહ ચૌસઠ કલાઓં

પ્રાપ્તિ દુર્લભ બની તે રીતે આ મનુષ્યજન્મથી પ્રચ્યુત પ્રમાદીભવને દૂરી  
મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે.

આ કથાનો ભાવદર્શક શ્લોક આ પ્રકારનો છે.

સ્વપ્ને કાર્પટિકેન રાત્રિવિગમે ચન્દ્રં મુખાન્તર્ગતં,

દૃષ્ટ્વા સર્વ જનાગ્રતો નિગદિતં લબ્ધં ન રાજ્યં ફલમ્ ।

સ્વપ્નસ્તસ્ય પુનઃ સ તત્ર શયિતસ્યાસીદ્ યથા દુર્લભઃ,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

— છટ્ટા સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત છે.

સાતમું ચક્રદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે. આનું બીજું નામ રાધાવેધ દૃષ્ટાન્ત પંચુ છે.

મથુરા નગરીમાં જિતશત્રુ નામનો એક રાજા રાજ્ય કરતો હતો તેને એક  
કન્યા હતી જેનું નામ ઇન્દિરા હતું. તે ચૌસઠ કલાઓમાં કુશળ હતી એક

તામેવ હસ્તિનીં સાદરં સમારોહ્ય નગરં પ્રવેશયન્તિ ।

કાર્પટિકસ્તુ—મનુષ્યવૃન્દૈઃ સહ હસ્તિનીસમારૂઢં પ્રાપ્તરાજ્યં મૂલદેવં વિલોક્ય  
ચન્દ્રપાનસ્વપ્નારાધનેન મૂલદેવસ્ય રાજ્યલાભો જાતઃ, ઇતિ બુદ્ધ્યાં સ્વાત્માનં નિન્દયન્  
પશ્ચાત્તાપં કરોતિ—ધિગૂમામ્, મન્દલોકાનાં પુરસ્તાત્ સ્વપ્નપ્રકાશનેન મયા સ્વપ્નો  
નિષ્ફલીકૃતઃ, તસ્માત્ પુનરહં તત્રૈવ સરસ્તીરે શયિષ્યે, તદા રાજ્યપ્રાપ્તિકરં સ્વપ્નં  
પુનઃ પશ્યામીતિ ધિચિન્ત્ય રાજ્યલક્ષ્મીં કાઠક્ષમાણઃ પુનઃ પુનસ્તત્ર સ્વપિતિ ।

યથા કાર્પટિકસ્ય તત્સ્વપ્નદર્શનં દુર્લભં, તથા મનુષ્યદેહાત્ પ્રચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ  
પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમ્ ।

હથિની તે પુષ્પમાલા મૂલદેવં કે ગલે મેં ઢાલી દેલ્લકર મન્ત્રિયોં ને  
મૂલદેવ કોં ઉસી સમયે ઉસ હથિની પર વેઠા કર વહે આદર કે સાથ  
ઉનેકા નગર મેં પ્રવેશ કરાયા ।

કાર્પટિક ને મનુષ્યવૃન્દોં કે સાથ મૂલદેવ કોં હસ્તિની પર બેઠા  
એવં વહાં કા રાજા બના હુઆ દેલ્લકર “ચન્દ્રમાપાનરૂપ સ્વપ્ન કે આરા-  
ધન કે પ્રભાવ સે મૂલદેવ કો રાજ્ય કાં લાભ હુઆ હૈ” હસ વિચાર સે  
અધિક સે અધિક પશ્ચાત્તાપ કિયા—મુઝ અભાગે કો ધિકાર હૈ જો મૈને  
સબ લોકોં કે સામને અપને સ્વપ્ન કે પ્રકાશિત કર નિષ્ફલ બનાયા ।  
અવ વહ પુનઃ હસ વિચાર સે રાજલક્ષ્મી કી પ્રાપ્તિ કી આશાં સે—ઉસ  
સ્થાન પર ચાર રૂ સોને લગા કિ કવ વહ ચન્દ્રસ્વપ્ન મુઝે દિલ્લભાઈ દે  
ઔર કલ મુઝે રાજ્ય કી પ્રાપ્તિ હો ।

હસ દૃષ્ટાન્ત સે યહી સમજનાં ચાહિયેં કિં જિસ પ્રકાર કાર્પટિક કા  
ગાળામાં પુષ્પમાળા પહેરાવી દીધી. હાથણીએ મૂળદેવને પુષ્પમાળા પહેરાવેલી  
બેઠીને મંત્રીઓએ મૂળદેવને તે સમયે તે હાથણી ઉપર બેસાડીને ઘણા આદર-  
સત્કારની સાથે તેનો નગરપ્રવેશ કરાવ્યો.

ભુવાએ મનુષ્યના ટોળાની વચ્ચે મૂળદેવને હાથણીપર બેઠેલો તેમજ ત્યાંનો રાજા  
બનેલો બેઠીને તેને લાગ્યું કે સ્વપ્નના આરાધનના પ્રભાવથી મૂળદેવને રાજ્યનો  
લાભ થયો છે. આ વિચારથી તેને ઘણું જ પશ્ચાત્તાપ થયો અને મનમાંને  
મનમાં બડબડ્યો કે, મને અભાગીને ધીક્કાર છે કે, મેં સઘળા લોકોની સામે  
મારા સ્વપ્નને પ્રકાશિત કરી નિષ્ફળ બનાવ્યું, આપણી જ્યાં તેને સ્વપ્ન  
આવ્યું હતું ત્યાં રાજલક્ષ્મીની આશાથી રાજા રાત્રીના સુઈ જવા લાગ્યો,  
ક્યારે સ્વપ્નમાં મને ચંદ્ર દેખાય અને ક્યારે મને રાજ્યની પ્રાપ્તિ થાય.

આ દૃષ્ટાન્તથી એ સમજવું બેઠીએ કે, જે પ્રકારે ભુવાને સ્વપ્નની

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—(શાર્દૂલચિંકીઢિતવૃત્તમ્)

સ્વપ્ને કાર્પટિકેન રાત્રિવિગમે ચન્દ્રં મુખાન્તર્ગતં,

દૃષ્ટ્વા સર્વજનાગ્રતો નિગદિતં લઘ્વં ન રાજ્યં ફલમ્ ।

સ્વપ્નસ્તસ્ય પુનઃ સ તત્ર શયિતસ્યાસીદ્ યથા દુર્લભઃ,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

॥ ૬ ॥ ૬ ॥

અત્ર સપ્તમચક્રદૃષ્ટાન્તઃ—ચક્રોપલક્ષિતો દૃષ્ટાન્તઃ, રાધાવેધદૃષ્ટાન્ત  
ઇત્યર્થઃ સિંચેવમ્—

મથુરાનગર્યાં જિતશત્રુનામકો ભૂપતિરાસીત્ । ઇન્દિરાનામ્ની તસ્ય પુત્રી ચતુઃ-

ઉસ સ્વપ્ન કો પ્રાપ્તિ પુનઃ દુર્લભ હુઈ ઉસી પ્રકાર હસ મનુષ્યજન્મ સે  
પ્રચ્યુત પ્રમાદીં જીવ કો પુનઃ મનુષ્યભવ કો પ્રાપ્તિ દુર્લભ હૈ ।

હસ કથા કા ભાવદર્શક શ્લોક હસ પ્રકાર હૈ—

સ્વપ્ને કાર્પટિકેન રાત્રિવિગમે ચન્દ્રં મુખાન્તર્ગતં,

દૃષ્ટ્વા સર્વજનાગ્રતો નિગદિતં લઘ્વં ન રાજ્યં ફલમ્ ।

સ્વપ્નસ્તસ્ય પુનઃ સ તત્ર શયિતસ્યાસીદ્ યથા દુર્લભઃ,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

યહ છદ્વા સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત હૈ ॥ ૬ ॥

સાતવાં ચક્ર દૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—હસકા દૂસરા નામ રાધાવેધ  
દૃષ્ટાન્ત હૈ—મથુરા નગરી મેં જિતશત્રુ નામ કા રાજા રહતા થા ।

હસકી એક કન્યા થી, જિસકા નામ ઇન્દિરા થા । યહ ચૌસઠ કલાઓ

પ્રાપ્તિ દુર્લભ બની તે રીતે આ મનુષ્યજન્મથી પ્રચ્યુત પ્રમાદી ભવને ફરી  
મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે.

આ કથાનો ભાવદર્શક શ્લોક આ પ્રકારનો છે.

સ્વપ્ને કાર્પટિકેન રાત્રિવિગમે ચન્દ્રં મુખાન્તર્ગતં,

દૃષ્ટ્વા સર્વજનાગ્રતો નિગદિતં લઘ્વં ન રાજ્યં ફલમ્ ।

સ્વપ્નસ્તસ્ય પુનઃ સ તત્ર શયિતસ્યાસીદ્ યથા દુર્લભઃ,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

છદ્વા સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત છે.

સાતમું ચક્રદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે. આનું બીજું નામ રાધાવેધ દૃષ્ટાન્ત પણ છે.

મથુરા નગરીમાં જિતશત્રુ નામનો એક રાજા રાજ્ય કરતો હતો તેને એક  
કન્યા હતી જેનું નામ ઇન્દિરા હતું. તે ચૌસઠ કલાઓમાં કથળી હતી એક

પષ્ટિકલાભિજ્ઞા જાતા । જિતશત્રુનૃપસ્તસ્યાઃ વિવાહયોગ્યં વયો વિષ્ણોવ્ય ચિન્તયતિ  
 —યઃ સ્વલુ રાજકુમારો ધાર્મિકઃ કલાકુશલઃ સ્વલનીતિશાસ્ત્રનિપુણો રાધાવેધસાધ-  
 નસમર્થઃ સ્યાત્ સ એવ યોગ્યો વરઃ સ્યાદસ્યાઃ ઇતિ વિચિન્ત્ય, તેન રાજા સ્વયંવર-  
 મંડપઃ કારિતઃ । તત્સંનિધૌ ચૈકગુચતરઃ સ્તમ્ભઃ સ્થાપિતઃ । તસ્ય સ્તમ્ભસ્યોર્ધ્વ-  
 ભાગેઽનુલોમેન ચત્વારિ, વિલોમેન ચ ચત્વારિ લોહચક્રાણિ નિવેશિતાનિ । તેષાં  
 ચક્રાણામુપરિ રાધાનામ્ના પ્રસિદ્ધા કાષ્ઠમયી ભ્રમન્તી પુત્તલિકા સ્થાપિતા । તન્ના-  
 ધસ્તાત્ તૈલપૂર્ણકટાહશ્ચ સ્થાપિતઃ । યઃ સ્વલુ રાધાયા વામનયનં શરેણ વિધ્યેત્ સ  
 એવ મત્કન્યકાયા ઇન્દિરાયા વરઃ સ્યાદિતિ જિતશત્રુના ઘોષણારૂપેણ પ્રતિજ્ઞાતમ્ ।

કી જ્ઞાતા થી । જિસ સમય જિતશત્રુ ને વિવાહયોગ્ય હસકી અવસ્થા  
 દેખી તો વિચાર કિયા કિ-જો રાજકુમાર ધાર્મિક, કલાકુશલ;  
 સ્વલનીતિ શાસ્ત્ર મેં નિષ્ણાત એવં સાથ મેં રાધાવેધસાધન મેં મી  
 સમર્થ હો વહી હસ કન્યાં કા પતિ હોને યોગ્ય હૈ । હસ પ્રકાર વિચાર  
 કર રાજા ને સ્વયંવરમંડપ રચાયા ઓર ઉસકે પાસ હી એક ઓર એક  
 વડા ઝંચા લંબા મી સ્વડા કરવાયા । પશ્ચાત્ ઉસને ઉસ લંબે કે ઉર્ધ્વ-  
 ભાગ મેં લોહે કે ચાર ચક્ર અનુલોમ-સુલટે ફિરને વાલે ઓર ચાર  
 ચક્ર વિલોમ-ઉલટે ફિરનેવાલે લગવા દિયે । ફિર ઉન ચક્રોં કે મી  
 ઉપર રાધા નામ કી એક કાષ્ઠમયી ઘૂમતી હુઈ પુત્તલી રખવા દી । લંબે  
 કે ઠીક નીચે કે ભાગ મેં તૈલ સે ભરા હુઆ એક કડાહ મી રખવા દિયા ।  
 જબ હસ પ્રકાર સે સ્વયંવરમંડપ કી પૂર્ણ તયારી હો ચુકી તબ ઉસને યહ  
 ઘોષણારૂપ મેં અપની પ્રતિજ્ઞા પ્રકટ કરવાઈ કિ જો વ્યક્તિ રાધા કે  
 વામનયન કો વાળ સે વેધ દેગા વહી મેરી કન્યા ઇન્દિરા કા પતિ

સમયે જિતશત્રુએ તેની વિવાહયોગ્ય વય જોઈને વિચાર કર્યો કે, જે  
 રાજકુમાર ધાર્મિક, કલાકુશલ, સ્વલનીતિશાસ્ત્રમાં નિષ્ણાત અને સાથે સાથે  
 રાધાવેધ સાધવામાં પણ સમર્થ હોય તેજ આ કન્યાનો પતિ થવા યોગ્ય છે.  
 આ પ્રકારનો વિચાર કરી રાજાએ સ્વયંવરમંડપ રચ્યો અને તેની પાસે જ  
 એક ખૂબ જડો ઉંચો સ્તંભ પણ ઉભો કરાવ્યો. એ પછી તેણે તે સ્તંભના  
 ઉર્ધ્વ ભાગમાં લોહના ચાર ચક્ર સીધાં ફરવાવાળાં અને ચાર ચક્ર અવળાં ફરવા  
 વાળાં ગોઠવાવ્યાં પછી તે ચક્રોની ઉપર પણ રાધા નામની ફરતી લાકડાની  
 પુતળી ગોઠવાવી સ્તંભના છેક નીચા ભાગમાં તૈલથી ભરેલી એક કડાઈ રખાવી.  
 જ્યારે આ પ્રકારે સ્વયંવરની સંપૂર્ણ તૈયારી થઈ ચુકી ત્યારે એક હઠે



ततस्तेन नृपतिना निमन्त्रिता बहवो राजानो राजकुमाराश्च देशाद् देशान्तरादपि  
तत्र सोत्साहं समागताः । सर्वेपु राजसु राजकुमारेषु च मण्डपे समुपविष्टेषु जित-  
शत्रुनृपस्तत्रागत्य वदति-यो राधापुत्तलिकाया वामनेत्रं शरेण विध्येत् तस्मैमया  
कन्यका दातव्येति । राज्ञो वचः श्रुत्वा एकैकमुत्थितो नृपादिकस्तत्र राधावेधनाय  
शरं धनुषि संयोज्य प्राक्षिपत् । स च शरः कस्यचिदेकेन चक्रेणास्फाल्य भग्नः सन्  
भूमौ निपतितः, कस्यचिदेकं चक्रमतिक्रान्तः, कस्यचिद् द्वे, कस्यचित् त्रीणि,  
अन्येषां तु लक्ष्यादन्यत्रैव निर्गतः, कोऽपि राधावेधं साधयितुं नाशक्तः ।

होगा । राजा ने इस प्रकार अपना भाव प्रकट कर सब राजाओं एवं  
राजपुत्रों के लिये स्वयंवरमंडप में आनेका आमंत्रण भेज दिया ।  
राजा से आमंत्रित हो बड़े उत्साह से अनेक राजा और राजकुमार  
देश देशान्तर से उत्साहपूर्वक आये और स्वयंवरमंडप में बैठ गये ।  
जब समस्त राजा और राजपुत्र अच्छी तरह अपने २ स्थानों पर बैठ  
गये तब राजा जितशत्रु वहां आये और कहने लगे कि जो इस भ्रमण  
करती हुई राधा पुत्तलिका के वामनेत्र को बाण से वेधित करेगा वही  
मेरी पुत्री का पति होगा-अपनी पुत्री मैं उसे ही परणाऊँगा । राजा  
के इस प्रकार वचन सुनकर वे राजा तथा राजकुमार आदि राधावेध  
साधने के लिये उठे और अपने २ धनुष पर बाण रख कर राधावेध  
साधने के अभिप्राय से बाण को छोड़ने लगे । इनमें से किसी का  
बाण एक चक्र से टकरा कर, किसी का दूसरे चक्र से टकरा कर और

भड़ार पाड़ी पोतानी भड़ेच्छा प्रगट करी के, जे व्यक्ति राधाना डाणा नेत्रने पाणुथी  
वींधशे ते भारी राजकन्या धन्दिशाने पति बनशे. राज्ञे आ प्रकारे ढंढेरे  
पीटावीने सधणा राज्ञे. अने राजपुत्रने स्वयंवर मंडपमां आववानुं  
आमंत्रण भोडलाव्युं. राजनुं आमंत्रण भणतां धणु उत्साहथी अनेक राज  
अने राजकुमारो देश देशांतरथी उत्साहपूर्वक आव्या अने स्वयंवर मंडपमां  
भिराज्या. न्यारे सर्व राज्ञे. अने राजपुत्रो सारी रीते पोते पोताना  
स्थान उपर भेसी गया त्यारे राज लुतशत्रु त्यां आव्या अने कडेवा लाग्या  
के, जे केछ व्यक्ति आ इरती राधा पुतणीना डाणा नेत्रने पाणुथी विंधशे तेने  
भारी पुत्री वरभाणा पडेशवशे अने तेनेज हुं भारी पुत्री परणावीश. राजनुं  
आ प्रकारनुं वचन सांलणीने मंडपमां भिरालुत थयेला राज तथा  
राजकुमार वगेरे राधावेध साधवा भाटे उठ्या अने पोतपोताना धनुष्य उपर  
पाणु अठावीने राधावेध साधवाना लक्ष्यथी पाणुने छोडवा लाग्या. तेओभांथी केछनुं



म्वनिवेशितदृष्टिरुर्ध्वमुष्टिर्भवति, तदा जयन्तकुमारस्य कलाचार्यस्तं पृच्छति-  
पश्यसि, किं दृष्टिगतं भवति? जयन्तकुमारः प्राह-केवलं पुत्तलिकाया वामनेत्रम्,  
न तु किंचिदन्यत् । तद्वचनं श्रुत्वा गुरुः परितुष्टो जातः । ततोऽसौ जयन्तकुमार-  
स्तेलपूर्णकटाहगतं प्रतिविम्बितं वामनेत्रं पश्यन् निश्चलेन मनसा करं स्थिरीकृत्य  
हस्तलाघवं दर्शयन् सद्यः शरं व्यमुचत् । स शरश्चक्रान्तरालेन सवेगं निर्गच्छन्  
पुत्तलिकाया वामनेत्रकनीनिकामविध्यत् । ततस्तस्य करस्थैर्यलग्नुहस्तत्वादिकं वर्ण-  
यन्तो लोकाः प्रमुदिता जयजयध्वनिं प्रकुर्वन्ति । तदा जितशत्रुपुत्री इन्दिरा

अन्तराल मार्ग से फिर उसने राधा पुत्तली के वामनेत्र का प्रति-  
विम्ब देखा । देखकर उसने फिर धनुष को चढ़ाने के लिये हाथ की  
मुट्टी ऊँची की । इतने में उसके कालाचार्य बीच ही में उससे पूछा  
जयन्त ! तुम्हें इस समय क्या दिख रहा है ? । जयन्त ने कहा-गुरुमहा-  
राज ! मुझे इस समय पुत्तली के वामनेत्र सिवाय और कुछ नहीं  
दिख रहा है । जयन्तकुमार के वचन सुनकर कलाचार्य के हर्ष का  
टिकाना नहीं रहा । जयन्त ने तेलपूर्ण कडाह में पड़े हुए पुत्तली के  
वामनेत्र के प्रतिविम्ब को लक्ष्यकर शीघ्र ही निश्चल मन से हाथ को  
संभालते हुए उस ओर धनुष से बाण छोड़ दिया । छूटते ही बाण ने  
चक्र के अन्तराल से निकलते हुए उस पुत्तली के वामनेत्र की कनी-  
निका को वेध दिया । उपस्थित जनताने जयन्तके लक्ष्यवेधकी निपुणता  
की एवं हस्तलाघवकी बहुत अधिक प्रशंसा की । सब के सब बड़े ही प्रसन्न  
हुए । जयन्त की चारों ओर से जयध्वनिपूर्वक बधाई होने लगी ।

आंणनुं प्रतिभिंण जेयुं. जेधने तेणे धनुष्यने चडाववा भाटे डायनी मुठी  
ठंथी करी. जे वणते तेना कणाथाये वयभां ज तेने पूछयुं ज्यंत तमने  
आ समये शुं देणाय छे? ज्यंत कहुं. गुरुमहाराज भने आ समये पुतणीनी  
डाणी आंण सिवाय थीणुं कंछ देणातुं नथी. ज्यंतकुमारनां वयन सांभणीने  
कलाथायें डुपित जन्था. ज्यंत तेव लरेव कडाधमां पडता पुतणीना डाणा  
नेत्रना प्रतिभिंणने लक्ष्य करी तरत ज निश्चले मनथी डायने सांभाणीने  
ते तरक्ष गाणु छेडयुं गाणु छुटतां ज चकेना अंतरालथी नीकणीने  
पुतणीनी डाणी आंणनी डीडीनुं वेधन कयुं. लेणी थयेली जनताजे ज्यंत-  
कुमारना लक्ष्यवेधनी प्रशंसा करी अने डायकुशणतानी धण्णीज प्रशंसा करी.  
सधणा भूणज प्रसन्न थया. ज्यंतनी आरे आणुथी जयध्वनी पूर्वक वधाई थवा  
लागी. धन्दिरा पणु पोताना लायने वणाणुती ज्यंतना गणाभां वरभाणा

જયન્તકુમારસ્ય કણ્ઠે પુષ્પમાલાં દદૌ । યથા રાધાવેધો દુષ્કરસ્તથા મનુષ્યદેહ-  
ચ્ચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—( શાર્દૂલચિક્રીડિતવૃત્તમ્ )  
રાધાયાવદનાદધઃ ક્રમવશાચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,  
આમ્યન્તીહ વિપર્યયેણ સ્વલુ તદ્વામાક્ષિવેધો યથા ।  
પ્રાપ્તો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણાં,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥  
इति सप्तमश्चक्रदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

અધાષ્ટમઃ કૂર્મદૃષ્ટાન્તઃ—

अगाधजलपरिपूर्णः सहस्रयोजनविस्तीर्णः सलिलजन्तुसंभृतः सुशोभितः

इन्दिरा भी अपने भाग्य की सराहना करती हुई जयन्त के गले में  
वरमाला डालकर अपने आपको धन्य मानने लगी । इस दृष्टान्त का भाव  
केवल इतना ही है कि जिस प्रकार राधावेध साधना दुष्कर कार्य  
है उसी प्रकार मनुष्य जन्मको हारा हुआ प्रमादी प्राणी को पुनः मनुष्य-  
जन्मकी प्राप्ति दुर्लभ है । इस दृष्टान्तका भावप्रदर्शकश्लोक इस प्रकार है—

રાધાયા વદનાદધઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,  
આમ્યન્તીહ વિપર્યયેણ સ્વલુ તદ્વામાક્ષિભેદો યથા ।  
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્ ;  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

यह सातवा चक्रदृष्टान्त है ॥ ७ ॥

આઠવા કૂર્મ ( કચ્છપ ) કા દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—અગાધજલ સે

પહેરાવીને પોતે પોતાને ધન્ય માનવા લાગી, આ દૃષ્ટાન્તનો ભાવ એટલો છે કે,  
જે રીતે રાધાવેધ સાધના અત્યંત કઠીન અને દુષ્કર છે એજ રીતે મનુષ્ય  
જન્મને હારી ગયેલ પ્રમાદી પ્રાણીને પુનઃ મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે.

આ દૃષ્ટાન્તનો ભાવપ્રદર્શક શ્લોક આ પ્રકારનો છે.

રાધાયા વદનાદધઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,  
આમ્યન્તીહ વિપર્યયેણ સ્વલુ તદ્ વામાક્ષિ ભેદો યથા ।  
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ સાતમું ચક્રદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૭ ॥

આઠમું કૂર્મ કાચળા (કચ્છપ) નું દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.—

જળથી પરિપૂર્ણ એવો એક (ધરો) હોજ હોતો, જે

એક

एको ह्रद आसीत् । तदुदकं च परस्परसम्बद्धशैवालजालैश्छादितमभवत् । तत्र  
स्वापत्यसंततितिसमन्वितः कच्छपः प्रतिवसति । अन्यदा कदाचित् तत्र सान्द्र  
शैवालमध्ये ह्रदोपान्तस्थितजम्बूविटपिनः सुपक्वफलसंपातेन शैवालतन्तु-  
विच्छेदाच्छिद्रमभवत्, तस्मिन्नेव समये तत्रस्थिताऽसौ कूर्मस्तत्कालजातच्छिद्रमा-  
श्रित्य ग्रीवां वहिष्करोति । तदनु खल्वसौ निर्मलगगनमण्डलमण्डनायमान तारा-  
गणसमन्वितसुपमासम्पन्नशरदपूर्णशशाङ्कविम्बमवलोक्य साश्चर्यं मनसि चिन्तयति  
-अहो ! किमिदं विलोक्यते । कीदृशमिदमदृष्टपूर्वं नयनानन्दजनकम् ? । इत्येवं

परिपूर्ण एक द्रह था । जिसका विस्तार एक हजार योजन का था ।  
इसमें अनेक जलचर जीव रहते थे । यह बड़ा सुन्दर था । इसका जल  
परस्पर संबद्ध शैवालसमूह से आच्छादित था । इसमें एक कच्छुआ  
अपने घच्चों के साथ रहता था । एक समय की बात है कि उस द्रह  
के किनारे पर जो जामुन के वृक्ष खड़े हुए थे उनके कुछ जम्बूफल  
उस शैवालजाल के ऊपर गिरे । उनके गिरने से उस शैवालजाल के  
बीच में शैवाल के तन्तुओं के टूट जाने से छिद्र हो गया । उसी समय  
कच्छुए ने जो उस शैवालजाल के नीचे रहता था उस छिद्र से अपनी  
गर्दन को बाहर निकाला । बाहर निकालते ही उसने स्वच्छ आकाश  
में आकाश का मण्डनस्वरूप एवं तारागणों से सुशोभित परमशोभा-  
संपन्न ऐसे शरदकालीन पूर्णचन्द्रमा के विम्ब को देखा । देखते ही उसे  
बड़ा भारी आश्चर्य हुआ । विचार ने लगा-अहो ! यह क्या दिखाई  
देता है ? मैंने तो आज तक ऐसा नेत्रों को अपूर्व आनन्द देने वाला

इन्द्र योजन जेटवो हुतो. तेमां अनेक प्रकारना जणचर एव रहैता हुता. ते धरो  
भूषण सुंदर हुतो. तेनुं जण शेवाण समूहथी आच्छादित हुतुं अेमां अेक कायणे  
पोतानां अेयांअे साधे रहैतो हुतो. अेक समयनी बात छे डे, ते धराना  
डाँठे लंभुडानां वृक्षो डारभंध उग्यां हुतां ते पैडीना अेक वृक्ष उपरथी थोडां लंभुक्ष  
शेवाण उपर पड्यां. आ रीते लंभुडाना पडवाथी जण उपर आच्छादित थयेली  
शेवाणमां छिद्र पडी गयां. आ वणते अे शेवाणनी नीचे रहैता कायणाअे  
लंभुने लधने शेवाणमां पडैला छिद्रमांथी पोतानी डोक अडार काढी. पोतानी  
डोकने शेवाणमांथी अडार काढतां ज कायणाअे स्वच्छ आकाशमां तारागणोथी  
सुशोभित परम शोभासंपन्न अेवा शरदकाणना पूर्ण चंद्रमाना प्रकाशने जेयो.  
जेतां ज तेने धरुं ज आश्चर्य थयुं अने ते मनोमन विचारवा लाग्यो डे,  
'अहो ! किमिदं देखाध रहुं छे ? मे' आज सुधी नेत्रोने आनंद देवावाणो आवो

જયન્તકુમારસ્ય કણ્ઠે પુષ્પમાલાં દદૌ । યથા રાધાવેધો દુષ્કરસ્તથા મનુષ્યદેશ-  
ચ્ચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—( શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તમ્ )

રાધાયાવદનાદધઃ ક્રમવશાચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,  
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ खलु તદ્વામાક્ષિવેધો યથા ।  
પ્રાપ્તો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણાં,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इति सप्तमश्चक्रदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

અધાષ્ટમઃ કૂર્મદૃષ્ટાન્તઃ—

अगाधजलपरिपूर्णः सहस्रयोजनविस्तीर्णः सलिलजन्तुसंभृतः सुशोभितः  
इन्दिरा भी अपने भाग्य की सराहना करती हुई जयन्त के गले में  
वरमाला डालकर अपने आपको धन्य मानने लगी । इस दृष्टान्त का भाव  
केवल इतना ही है कि जिस प्रकार राधावेध साधना दुष्कर कार्य  
है उसी प्रकार मनुष्य जन्मको हारा हुआ प्रमादी प्राणी को पुनः मनुष्य-  
जन्मकी प्राप्ति दुर्लभ है । इस दृष्टान्तका भावप्रदर्शकश्लोक इस प्रकार है—

राधाया वदनादधः क्रमवशात् चक्राणि चत्वार्यपि,  
भ्राम्यन्तीह विपर्ययेण खलु तद्वामाक्षिभेदो यथा ।  
जातो दुष्करतां नरेन्द्रतनयापाणिग्रहाकाक्षिणाम्;  
संसारं भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

यह सातवा चक्रदृष्टान्त है ॥ ७ ॥

આઠવાં કૂર્મ ( કચ્છપ ) નો દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકાર છે—અગાધજલ સે

પહેરાવીને પોતે પોતાને ધન્ય માનવા લાગી. આ દૃષ્ટાન્તનો ભાવ એટલો છે કે,  
જે રીતે રાધાવેધ સાધના અત્યંત કઠીન અને દુષ્કર છે એજ રીતે મનુષ્ય  
જન્મને હારી ગયેલ પ્રમાદી પ્રાણીને પુનઃ મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે.  
આ દૃષ્ટાન્તનો ભાવપ્રદર્શક શ્લોક આ પ્રકારનો છે.

રાધાયા વદનાદધઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,  
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ खलु તદ્ વામાક્ષિ ભેદો યથા ।  
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ સાતમું ચક્રદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૭ ॥

આઠમું કૂર્મ કાચખા (કચ્છપ) નું દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.—

અગાધ જળથી પરિપૂર્ણ એવો એક (ધરો) હોજ હોતો, એક



શૈવાલે મિલિતે યથૈવ શશિનઃ સંદર્શનં દુર્લભં,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इत्यष्टमः कूर्मदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

अथ नवमो युगदृष्टान्तः प्रोच्यते—

असंख्ययोजनविस्तीर्णो वलयाकारः सहस्रयोजनगम्भीरः स्वयंभूरमण-  
समुद्रोऽस्ति । तस्य प्राच्यां दिशि कोऽपि देवो युगं प्राक्षिपत् तस्य युगस्य कीलिकां  
पश्चिमायां दिशि । यथा तस्मिन् समुद्रे भ्राम्यन्त्यास्तस्याः कीलिकायास्तेन युगेन

शૈવાલે મિલિતે યથૈવ શશિનઃ સંદર્શનં દુર્લભમ્,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

यह आठवा कूर्मदृष्टान्त हुआ ॥ ८ ॥

नौवां युगदृष्टान्त इस प्रकार है—यह दृष्टान्त कल्पना से संबंध  
रखता है । असंख्यात द्वीप और समुद्रों के बाद एक अन्तिम द्वीप  
और समुद्र है । अन्तिम समुद्र का असंख्यात योजन का विस्तार है ।  
गहराई भी इसकी एक हजार योजन की हैं । इसमें कल्पना करो कि  
कोई एक देव पूर्व दिशा की ओर एक जुआ-गाड़ी का अवयवविशेष  
जो बैलों के कन्धों पर रखा जाता है—डाल दे, और पश्चिम दिशा की  
ओर उसकी कीलिका-सेल-डाल दे । अब यह कीलिका उस समुद्र में  
उस दिशा से बहती हुई चली आवे और बहते हुए जुआ के साथ

શૈવાલે મિલિતે યથૈવ શશિનઃ સંદર્શનં દુર્લભમ્,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ આઠમું કૂર્મદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૮ ॥

નવમું યુગદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે—

આ દૃષ્ટાન્ત કલ્પનાથી સંબંધ રાખે છે. અસંખ્યાત દ્વીપ અને સમુદ્રો  
પછી એક છેલ્લો દ્વીપ અને સમુદ્ર છે. એ છેલ્લા સમુદ્રનો વિસ્તાર અસંખ્ય  
યોજનનો છે. ઉંડાઈ પણ તેની એક હજાર યોજનની છે. આમાં કલ્પના કરો  
કે, કેઈ એક દેવ પૂર્વદિશા તરફ એક ધોંસરું કે જે ગાડીમાં બળદના કાંધ  
ઉપર રાખવામાં આવે છે તે નાખી દે અને પશ્ચિમ દિશા તરફથી એ ધોંસ-  
રાની લાકડીઓ નાખી દે. પશ્ચિમ દિશાએ નાખેલી ધોંસરાની એ સાંબેલ  
વહેતાં વહેતાં ચાલી આવે અને તે ધોંસરી સાથે મળી જાય. જે રીતે આ વાત

વિચિન્ત્ય સ કૂર્મઃ સ્વબન્ધૂનપિ તદ્ દર્શયિતું જલે નિમજ્ય યાવતા કાછેન તૈઃ  
સહ પુનરાયાતિ, તાવત્ પુનઃ સમીરસંયોજિતશેવાલૈસ્તઞ્ચિદ્રમાચ્છાદિતમ્ । યથા  
તચ્ચન્દ્રમણ્ડલદર્શનં પુનસ્તસ્ય કૂર્મસ્ય દુર્લભં તથા મનુષ્યદેહાચ્ચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ  
પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—( શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તામ્ )

દૃષ્ટ્વા કોઽપિ હિ કચ્છપો હ્રદમુખે શૈવાલબન્ધચ્યુતે,  
પૂર્ણેન્દુ મુદિતઃ કુદુમ્બમિહ તં દ્રષ્ટું સમાનીતવાન્ ।

પદાર્થ નહીં દેखा है, यह कितना सुन्दर है । इस प्रकार विचार कर  
उसने इस अपूर्व वस्तु को अपने परिवार को भी दिखाने का विचार  
किया, अतः वह पानी में डुबकी लगाकर अपने परिवार के पास  
पहुँचा और उनको साथ में लेकर ज्यों ही यह वहाँ आया कि वह  
शैवालजाल हवा के लगने से फिर से ज्यों का त्यों परस्पर में मिल  
गया । इस दृष्टान्त से हम को यह शिक्षा मिलती है कि जिस प्रकार  
हवा के झोकों के लगने से शैवाल के तन्तु आपस में मिल गये और छिद्र  
का अभाव हो गया, अतः उस अभागे कछुए को पुनः चंद्रदर्शन होना  
दुर्लभ हुआ, उसी प्रकार मनुष्यजन्म को हारे हुए प्रमादी प्राणी को  
पुनः मनुष्यजन्म मिलना महा दुर्लभ है । इस दृष्टान्त का भावसंग्रह  
श्लोक इस प्रकार है—

दृष्ट्वा कોऽपि हि कच्छपो ह्रदमुखे शैवालबन्धच्युते,  
पूर्णेन्दु म्रुदितः कुदुम्बमिह तं द्रष्टुं समानीतवान् ।

અપૂર્વ પદાર્થ કદી પણ જોયો નથી..આ કેવો સુંદર છે ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી,  
એ અપૂર્વ વસ્તુ પોતાના પરિવારને પણ બતાવવાનો વિચાર કર્યો અને પાણીમાં  
ડુબકી મારી તે પોતાના પરિવારની પાસે પહોંચ્યો. અને તેને સાથે લઈ તે  
ઉપરોક્ત સ્થળે પહોંચ્યો ત્યારે તે શેવાળ કે જેમાં બાંધુને લઈ છિદ્ર પડેયું હતું.  
તે પવનને કારણે પુરાઈ જતાં શેવાળની સપાટી ફરીથી સંધાઈ ગઈ તેથી  
કાચબા અને તેના પરિવારને ફરીથી ચંદ્રનાં દર્શન ન થયાં. એ પ્રકારે મનુષ્ય  
જન્મને હારી ગયેલ પ્રમાદી પ્રાણીને મનુષ્ય જન્મ મળવો મહા દુર્લભ છે.

આ દૃષ્ટાંતનો ભાવસંગ્રહક શ્લોક આ પ્રમાણે છે.—

દૃષ્ટ્વા કોઽપિ હિ કચ્છપો હ્રદમુખે શૈવાલબન્ધચ્યુતે,  
પૂર્ણેન્દુ મુદિતઃ કુદુમ્બમિહ તં દ્રષ્ટું સમાનીતવાન્ ।

તુલ્યં તચ્ચૂર્ણં નલિકાન્તર્નિધાય મેરુશિખરં સમાભ્ય ફૂલકૃતસમીરણેસ્તચ્ચૂર્ણં  
સકલં સર્વતઃ સમૃદ્ધાયિતમ્ ।

અથ તેન દેવેન વિસિત્તાસ્તે પરમાણવઃ પ્રચણ્ડપવનોદ્ભૂતાઃ સર્વાસુ દિશુ  
દૂરં ગતા પૈકશો વિભિન્નાઃ પતિતાઃ ।

યથા તાન્ પરમાણૂન્ સર્વતઃ સંચિત્ય તૈઃ પુનઃ સ્તમ્ભનિષ્પાદનં લોકસ્ય દુષ્કરં,  
તથા મનુષ્યભવાત્ પ્રચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પ્રાણિનો મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ॥

દસવાં પરમાણુ દૃષ્ટાન્ત્તે પ્રકાર હૈ—યહ દૃષ્ટાન્ત્તે મી કલ્પના સે  
સંબંધ રાખને વાલા હૈ—જૈસે ક્રીડાવશ કિસી દેવ ને માણિક્યનિર્મિત  
એક સ્તમ્ભ કો વજ્ર કે પ્રહાર સે તોડા । પશ્ચાત્તે ઉસે ઇતના પીસા કિ  
ઉસકા ચૂરાં ચૂરાં હો ગયા । ચૂર્ણ જૈસા જવ વહ વન ચુકા તવ ઉસ  
ચૂર્ણ કો ઉસને એક નલિકા મેં ભરા ઓર સુમેરુ પર્વત કે શિખર પર  
લહે હોકર ઉસકો સવ તરફ ફૂંક સે ઉડા દિયા । વે સવ કે સવ ઉસ  
સ્તમ્ભકે પરમાણુ જો ઉસ દેવ ને અપની ફૂંક સે ઇધર ઉધર ઉડા દિયે હૈ  
ઓર વાયુકે પ્રવલ ઈંકો ને ઉનકો પ્રત્યેક દિશા મેં લે જાકર ઓર મી  
દૂર ફેંક દિયે । ઉન સવ કે સવ પરમાણુઓં કો એકત્રિત કર કે ફિર સે  
જૈસે ઉસ સ્તમ્ભ કા ઉસી રૂપ સે નિર્માણ કરના દુષ્કર હૈ—ઉસી તરહ  
મનુષ્યભવ સે પ્રચ્યુત જીવ કો મનુષ્યભવકી પુનઃ પ્રાપ્તિ હોના દુર્લભ હૈ ।

દસમું પરમાણુદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.

આ દૃષ્ટાન્તે પણ કલ્પનાથી સંબંધ રાખવાવાળું છે. જેમ રમતના તોરથી  
કોઈ દેવે માણિક્યથી ભરેલા એવા એક સ્તંભને વજ્રના પ્રહારથી તોડી નાખ્યો.  
પછી તેને એટલો પિસ્યો કે, તેના ચૂરેચૂરા થઈ ગયા. ચૂર્ણ જેવો બ્યારે તે  
થઈ ગયો ત્યારે તે ભુકાને તેણે એક નળીમાં ભર્યો અને સુમેરુપર્વતના શિખર  
ઉપર ઉભા રહીને ત્યારે બાણુ તે ભુકાને ફૂંકથી ઉડાડી દીધો. એ સ્તંભના  
ભુકા રૂપે બનેલા સઘળા પરમાણુઓને તે દેવે પોતાની ફૂંકથી ત્યારે કોર ઉડાવી  
દીધો અને વાયુએ પ્રબળ વેગથી દરેક દિશામાં લઈ જઈને દૂર ફેંકી દીધા.  
હર હર બ્યાં ત્યાં ફેંકાઈ ગયેલા એ સઘળા પરમાણુઓને એકત્રિત કરી ફરીથી  
સ્તંભનું નિર્માણ કરવું દુષ્કર છે તેવીજ રીતે આ મનુષ્યભવને હારી બેઠેલા  
જીવ ફરી મનુષ્ય જન્મની પ્રાપ્તિ કરી શકતો નથી.

સહ સંઘટનમેવ દુર્લભં, તસ્ય યુગસ્ય છિદ્રે પુનઃ પ્રવેશસ્તુ તત્રાપિ દુર્લભસ્તથા  
મનુષ્યભવાત્પ્રચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહઃ— ( શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તામ્ )

પ્રાચ્યબ્ધૌ યુગ-કીલિકા વિનિહિતા ક્ષિપ્તં યુગં પશ્ચિમે,  
યદ્વદ્ દુર્લભમેવ તત્ર વહતોઃ સંમીલનં તદ્વયોઃ ।  
શમ્યાયાસ્તુ પુનર્યુગસ્ય વિવરે તસ્યાઃ પ્રવેશો યથા,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥  
इति नवमो युगदृष्टान्तः ॥ ९ ॥

અથ દશમઃ પરમાણુદૃષ્ટાન્તઃ—

કેનાડપિ ક્રીડાપરેણ દેવેન મણિક્યમયં સ્તમ્ભં વજ્રેણ ચૂર્ણીકૃત્ય પરમાણુ-  
મિલિ જાવે તો જિસ પ્રકાર યહ વાત વહુત દુર્લભ હૈ ઓર હસસે મી  
અધિક દુર્લભ યહ હૈ કિ વહ કીલિકા વહતે ૨ ઉસ જુએ કે છેદ મેં  
પ્રવિષ્ટ હો જાવે યહ વાત દુર્લભ હૈ । હસી તરહ મનુષ્ય ભવ સે પ્રચ્યુત  
પ્રમાદી જીવ કો પુનઃ મનુષ્યભવ કી પ્રાપ્તિ હોના દુર્લભ હૈ । હસકા  
ભાવપ્રદર્શકશ્લોક હસ પ્રકાર હૈ—

પ્રાચ્યબ્ધૌ યુગકીલિકા વિનિહિતા ક્ષિપ્તં યુગં પશ્ચિમે,  
યદ્વદ્ દુર્લભમેવ તત્ર વહતોઃ સંમીલનં તદ્વયોઃ ।  
શમ્યાયાસ્તુ પુનર્યુગસ્ય વિવરે તસ્યાઃ પ્રવેશો યથા,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥  
यह नौवां युगदृष्टान्त है ॥ ९ ॥

ઘણી જ દુર્લભ છે અને તેનાથી પણ અધિક દુર્લભ તો એ છે કે, ધોંસરાની  
તે સાંભેલો વહેતાં વહેતાં તે ધોંસરાના વીંધમાં જોડાઈ જાય એ વાત દુર્લભ  
છે. આ રીતે મનુષ્યભવથી પ્રચ્યુત પ્રમાદી જીવને ફરીથી મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ  
થવી દુર્લભ છે.

તેના ભાવને દર્શાવતો શ્લોક આ પ્રકારનો છે—

પ્રાચ્યબ્ધૌ યુગકીલિકા વિનિહિતા ક્ષિપ્તં યુગં પશ્ચિમે,  
યદ્વદ્ દુર્લભમેવ તત્ર વહતોઃ સંમીલનં તદ્વયોઃ ।  
શમ્યાયાસ્તુ પુનર્યુગસ્ય વિવરે તસ્યાઃ પ્રવેશો યથા,  
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ નવમું યુગદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૯ ॥

छाया—एकदा देवलोकेषु, नरकेष्वपि एकदा ।

एकदा आसुरं कायं, यथा कर्मभिः गच्छति ॥ ३ ॥

टीका—‘एगया’ इत्यादि ।

जीवः, एकदा=एकस्मिन् काले शुभकर्मनुभवकाले देवलोकेषु=सौधर्मादिषु यथाकर्मभिः=तद्वत्पुनरुत्पत्तयेऽप्येष्टितैः सरागसंयमदेशविरत्यकामनिर्जरावालतपःकर्मभिः गच्छति । एकदा=अशुभकर्मोदयकाले, नरकेषु=रत्नप्रभादिषु यथाकर्मभिः=महा-रम्भमहापरिग्रहपञ्चेन्द्रियवधकुणपाहारैर्गच्छति । एकदा आसुरम्-असुरसम्बन्धिनं, कायं=निकायम् असुरकुमारभावमित्यर्थः, यथा कर्मभिः=सरागसंयमादिभिः, गच्छति=प्राप्नोति । उपलक्षणत्वाज्ज्योतिर्व्यन्तरयोरपि गच्छतीति बोध्यम् ॥ ३ ॥

उपरोक्त कथन को स्पष्ट करते हुए कहते हैं—‘एगया’—इत्यादि ।  
अन्वयार्थ—यह जीव (एगया-एकदा) कभी तो शुभ कर्म के अनुभवन काल में (देवलोकेषु-देवलोकेषु) सौधर्म आदि देव लोक में (अहाकस्मेहिं - यथाकर्मभिः) ‘सरागसंयम, देशविरति, अकामनिर्जरा एवं वालतप आदिरूप उस गति के कर्म के कारणों से (गच्छद्-गच्छति) जन्म लेता है । (एगया-एकदा) कभी अशुभकर्म के अनुभवनकाल में (नरकेषु-नरकेषु) रत्नप्रभा आदिक नरकों में (अहाकस्मेहिं-यथाकर्मभिः) महा ‘आरंभ, महापरिग्रह, पञ्चेन्द्रियवध कुणप (मांस) आहार आदि करने से (गच्छद्-गच्छति) जाता है । (एगया-एकदा)

उपरोक्त कथनने वधारे स्पष्ट करतां ठडे छे—

“एगया” इत्यादि.

अन्वयार्थ—आ जीव एगया-एकदा कथारेक तो शुभकर्मना अनुभव कालमां देवलोकेषु-देवलोकेषु सौधर्म आदि देवलोकमां अहाकस्मेहिं-यथाकर्मभिः सराग संयम, देशविरति, अकाम निर्जरा, अने वालतप आदिरूप ये गतीनां कर्मोनां कारणोथी गच्छद्-गच्छति जन्म ले छे. एगया-एकदा कथारेक अशुभ कर्मना उदयमां नरकेषु-नरकेषु रत्नप्रभा आदिक नरकोमां अहाकस्मेहिं-यथाकर्मभिः आरंभ, महाआरंभ, महापरिग्रह, पञ्चेन्द्रियवध कुणप (मांस) आहार आदि करवाथी

(१) “चउहिं ठणेहिं जीवा देवाउयत्ताए कम्मं पगरेति, तं जहा-सराग संजमेणं, संजमासंजमेणं, वालतवोकस्मेणं, अकामणिज्जराए” । (स्था. स्था. ४ उ. ४ एवं औपातिक सूत्रेऽपि)

(२) “चउहिं ठणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मंपकरेति, तं जहा-महारंभाए महा-परिग्गाहाए, पंचिंदियवहेणं, कुणिमाहारेणं (स्था० स्था० ४ उ ४. एवम् औपा-तिकसूत्रेऽपि)

અયં ભાવઃ—માનુષં જન્મ લઙ્ઘ્યાઽપિ પ્રમાદકૃતદુષ્કર્મપ્રભાવાદેકેન્દ્રિયાદિ-  
જાતિપ્રાપ્ત્યા ચક્રવર્તિપાયસાદિવત્ પુનર્માનુષત્વં દુર્લભમિતિ ॥ ૨ ॥

एतदेव स्पष्टयति—

मूलम्—एगया देवलोएसु, नरएसुवि एगया ।

एगया आसुरं कायं, अहा कस्मोहि गच्छइ ॥ ३॥

ને અપને જન્મ મરણ સે ન ભર દિયા હો । જીવ ને સૂક્ષ્મપૃથિવી-  
કાયાદિ સ્થાવર કાય મેં ઉત્પન્ન હોકર લોકાકાશ કા પ્રત્યેક પ્રદેશ કો  
તૈલ સે તિલ કી તરહ ભર દિયા હૈ । ફસલિયે મનુષ્યજન્મ પાકર મી  
જો પ્રમાદી હોકર દુષ્કર્મોં કા ઉપાર્જન કરતે હૈં વે અનેક પ્રભાવ સે  
એકેન્દ્રિયાદિક જાતિ કી પ્રાપ્તિ સે ચક્રવર્તીં કે પાયસ આદિ કી તરહ  
મનુષ્યભવ કી પ્રાપ્તિ કો દુર્લભ બનાલેતે હૈં—

ભાવાર્થ—મનુષ્યભવ પાકર મી પ્રાણી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ  
પ્રમાદી નહીં બને । પ્રમાદ કે કારણ જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કા બંધ  
હોને સે ઇસ જીવ કા એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોં મેં જન્મ હોતા હૈ ।  
ઇસમેં ઇસકા અનન્તકાલ નિકલ જાતા હૈ । અતઃ પુનઃ મનુષ્યભવ કી  
પ્રાપ્તિ દુર્લભ બન જાતી હૈ । તાત્પર્ય કહેને કા યહ હૈ કિ મનુષ્યભવ  
સાર્થક કરને કા યહી ઉપાય હૈ કિ પ્રમાદી ન બના જાય ॥ ૨ ॥

જન્મમરણથી ન ભરી દીધે હોય. એ સૂક્ષ્મ પૃથ્વી કાયાદિ સ્થાવર કાયમાં  
ઉત્પન્ન થઈ થઈને લોકાકાશના પ્રત્યેક પ્રદેશને તલના તેલની માફક ભરી દીધેલ  
છે. આ માટે મનુષ્યજન્મ મળવાં છતાં પણ જે પ્રમાદી બની દુષ્કર્મોનું ઉપાર્જન  
કરે છે, તે એના પ્રભાવથી એકેન્દ્રિયાદિક જાતીની પ્રાપ્તિથી ચક્રવર્તીના દુધપાંક  
વગેરેની માફક ફરી મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિને દુર્લભ બનાવે છે.

ભાવાર્થ—મનુષ્યભવ મેળવીને પણ પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે, તે પ્રમાદી ન  
બને. પ્રમાદના કારણે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો બંધ થવાથી આ જીવનો એકે-  
ન્દ્રિયાદિક જેવી યોનીઓમાં જન્મ થાય છે. તેમાં તેનો અનંત કાળ નીકળી  
જાય છે. આથી મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ દુર્લભ બની જાય છે. તાત્પર્ય કહેવાનું  
એ છે કે, મનુષ્યભવ સાર્થક કરવાનો એક માત્ર ઉપાય એ છે કે, જીવણે  
પ્રમાદી ન બની અને જ્યાં સુધી સુક્તિની પ્રાપ્તિ ન થાય ત્યાં સુધી મનુષ્યભવની જ  
ફરી ફરી પ્રાપ્તિ થતી રહે એવો પ્રયત્ન તો કરવો જોઈએ. ॥ ૨ ॥



एवं चतुरशीतिलक्षसंख्यका योनयस्तासु, इत्यर्थः । न निर्विद्यन्ते=अस्मात् पर्यटनात् कदा मोक्षो भविष्यतीति नोद्विजन्ते=उद्वेगं न प्राप्नुवन्ति । केषु कं इव ? सर्वार्थेषु=सर्वे च ते अर्थाः, सर्वार्थस्तेषु हिरण्य-सुवर्ण-मणि-मुक्ताफल-वज्र-वैडूर्य-ग्राम-नगर-कोश-कोष्ठागार-भूमि-गजाश्वादिषु सर्वविभवेषु प्राप्तेष्वपि, क्षत्रियाः=राजान इव । अयं भावः—यथा सर्वेषु विषयेषु प्राप्तेष्वपि राजानः संतोषं नाप्नुवन्ति, किंतु तत्प्राप्त्यर्थमेव पुनः पुनः प्रवर्तन्ते । एवं तासु तासु योनिषु पुनः पुन-रुत्पत्तिमनुभवन्तोऽपि जीवाः पुनः पुनः ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्म कुर्वन्तस्तत्तद् योनिप्राप्त्यर्थमेव प्रवर्तन्ते, तस्मान्मनुष्यजन्म दुर्लभम् इति ।

લાખ, તથા મનુષ્ય કી ચૌદહ લાખ, હસ પ્રકાર હન ચૌરાસી લાખ યોનિયોં-ઉત્પત્તિ સ્થાનો મેં) (ન નિવિજ્જંતિ-ન નિર્વિદ્યન્તે) 'હસ સંસાર પરિભ્રમણસે મેરા કવ મોક્ષ હોગા' હસ પ્રકાર કમી મી નિર્વેદ-ઉદ્વેગ કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હેં । (વ-ઇવ) જૈસે(સવઢેસુ સ્વત્તિયા-સર્વાર્થેષુ ક્ષત્રિયાઃ)હિરણ્ય સુવર્ણ, મણિ, મુક્તાફલ, વજ્ર વૈદૂર્ય, ગ્રામ, નગર, કોશ એવં કોષ્ટાગાર, ભૂમિ, ગજ અશ્વ આદિ પ્રાપ્ત વિભવોમેં ક્ષત્રિય લોગ ઉદ્વેગ (ઉદાસીનતા) કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હેં । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ જૈસે યુદ્ધ કર રે.કે સમસ્ત દેશોં કા રાજ્ય પ્રાપ્ત હોને પર મી ક્ષત્રિય લોગ ઉદ્વેગ (ઉદાસીનતા) કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હેં, કિન્તુ ડનકી પ્રાપ્તિ કે લિયે હી વે ચાર ૨ ચેષ્ટા કિયે કરતે હેં ડસો પ્રકાર ડન ડન યોનિયોં મેં ચાર ૨ જન્મ મરણ કે દુઃખોં કા અનુભવ કરતે હુએ મી યે જીવ પુનઃ પુનઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટ-વિધ કર્મોં કા બન્ધ કરતે હુએ ડન ૨ યોનિયોં કી પ્રાપ્તિ કરને કે ડિયે

તથા મનુષ્યોની ચૌદ લાખ, આ પ્રકારે એ ચૌરાસી લાખ યોનીઓમાં 'ન નિવિજ્જંતિ-ન નિર્વિદ્યન્તે' આ સંસાર પરિભ્રમણથી મારો કયારે મોક્ષ થશે?' એ પ્રકારે તેને કોઈ જાતની ચિંતા થતી નથી. વ-ઇવ જેમ સવઢેસુ સ્વત્તિયા-સર્વાર્થેષુ ક્ષત્રિયાઃ હીરા માણેક, સુવર્ણ, મણી, મુક્તાફળ, વજ્ર, વૈદૂર્ય, ગ્રામ, નગર, કોશ અને કુષ્ટાગાર, ભૂમિ, ગજ, અશ્વ, આદિ પ્રાપ્ત વૈભવોમાં રચ્યાપચ્યા રહેતા ક્ષત્રિયોને કોઈ ઉદ્વેગ થતો નથી. તાત્પર્ય એનું એ છે કે, જેમ યુદ્ધ કરી કરીને સમસ્ત દેશનું રાજ્ય પ્રાપ્ત થવા છતાં પણ ક્ષત્રિયોને કોઈ ઉદ્વેગ થતો નથી પરંતુ તેની પ્રાપ્તિને માટે જ એ વારંવાર પ્રયત્ન કરતા રહે છે. એવી રીતે યોનીઓમાં વારંવાર જન્મ મરણનો અનુભવ કરવા છતાં પણ એ જીવ ફરી ફરી જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકારના કર્મોને બંધ કરીને તે તે યોનીઓની પ્રાપ્તિ કરવામાં જ કીયાશીલ રહે છે.

મૂલમ્—એવમાવદ્વજોણીસુ, પાણિણો કમ્મકિલ્લિસા ।

ન નિવિજ્ઞંતિ સંસારે, સંવદ્દેસુ વં લલ્લિયા ॥ ૫ ॥

છાયા—એવમ્ આવર્તયોનિષુ, પ્રાણિનઃ કર્મકિલ્લિપાઃ ।

ન નિવિઘન્ટે સંસારે, સર્વાર્થેષુ શ્વ સત્રિયાઃ ॥ ૫ ॥

ટીકા—‘ એવમ્ ’ इत्यादि ।

કર્મકિલ્લિપાઃ=કર્મભિર્મલિનાઃ પ્રાણિનઃ સંસારે=ભવે એવમ્=અમુના પ્રકારેણ, આવર્તયોનિષુ=આવર્તન-પુનઃપુનઃપરિભ્રમણેન સ્પૃષ્ઠા યોનયઃ આવર્તયોનયસ્તાસુ ચતુરશીતિલક્ષપ્રકારાસુ, તત્ર પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુકાયેષુ પ્રત્યેકં સપ્ત સપ્ત લક્ષાઃ, દશ લક્ષાઃ પ્રત્યેકવનસ્પતિષુ, નિગોદજીવેષુ ચ ચતુર્દશ લક્ષાઃ, દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિયેષુ પ્રત્યેકં દ્વે દ્વે લક્ષે, તિર્યક્નાસ્કદેવેષુ પ્રત્યેકં ચતસ્રશ્વતસ્રો લક્ષાઃ મનુજેષુ ચતુર્દશ લક્ષાઃ,

કभी તેન્દ્રિય જીવોં મેં ઓર કभी ચતુરિન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ લેતા હૈ ।  
હસ પ્રકાર હસ સંસાર મેં પ્રમાદી જીવ ભ્રમણ કરતા હી રહતા હૈ ।  
હસ કીટાદિક શબ્દ કે ઉપલક્ષણસે સમસ્ત તીર્યશ્વજાતિ કે ભેદોપભેદોં  
કા ગ્રહણ જાનનાં ચાહિયે ॥ ૪ ॥

‘ એવમ્ ’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—( કર્મકિલ્લિસા-કર્મકિલ્લિપાઃ ) કર્મોં સે મલિન  
( પાણિણો-પ્રાણિનઃ ) પ્રાણી ( સંસારે-સંસારે ) સંસાર મેં ( એવં-એવમ્ )  
ઉક્ત પ્રકાર સે ભ્રમણ કરતે હુણ ( આવદ્વજોણીસુ-આવર્તયોનિષુ ) હમ  
ચોરાસી લાખ યોનિયોં મેં ( પૃથિવીકાય કી સાતલાખ, અપકાય કી  
સાત લાખ, તેજસ્કાય કી સાત લાખ, વાયુકાય કી સાત લાખ, પ્રત્યેક  
વનસ્પતિ કી દશ લાખ, નિગોદજીવોં કી ચૌદહ લાખ, દ્વિન્દ્રિય, તેન્દ્રિય  
ચતુરિન્દ્રિય કી દો દો લાખ, તિર્યગ્ચ, દેવ એવં નારકી કી ચાર ચાર

એ પ્રકારે આ સંસારમાં પ્રમાદી જીવ ભ્રમણ કરતા જ રહે છે આ કીટાદિક શબ્દનાં  
ઉપલક્ષણથી સમસ્ત તિર્યગ્ જાતીના ભેદોપભેદોં ગ્રહણ જાણવું જોઈએ. ॥ ૪ ॥

“ એવમ્ ”—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—કર્મકિલ્લિસા-કર્મકિલ્લિપાઃ કમોંથી મલિન પાણિણો-પ્રાણિનઃ  
પ્રાણી સંસારે-સંસારે સંસારમાં એવં-એવમ્ ઉક્ત પ્રકારથી ભ્રમણ કરતાં કરતાં  
આવદ્વજોણીસુ-આવર્તયોનિષુ આ ચોરાસી લાખ યોનીઓમાં ( પૃથ્વીકાયની સાત લાખ,  
અપકાયની સાત લાખ, તેજસ્કાયની સાત લાખ, વાયુકાયની સાત લાખ, પ્રત્યેક  
વનસ્પતિની દસ લાખ, નિગોદ જીવોની ચૌદ લાખ, બે ઇન્દ્રિય, ત્રણ ઇન્દ્રિય,  
ચાર ઇન્દ્રિયની બધે લાખ અને તિર્યગ્, દેવ અને નારકોની ચાર ચાર લાખ,

एवं चतुस्शीतिलक्षसंख्यका योनयस्तासु, इत्यर्थः । न निर्विद्यन्ते=अस्मात् पर्यटनात् कदा मोक्षो भविष्यतीति नोद्विजन्ते=उद्वेगं न प्राप्नुवन्ति । केषु कं इव ? सर्वार्थेषु=सर्वे च ते अर्थाः, सर्वार्थास्तेषु हिरण्य-सुवर्ण-मणि-मुक्ताफल-वज्र-वैडूर्य-ग्राम-नगर-कोश-कोष्ठागार-भूमि-गजाश्वादिषु सर्वविभवेषु प्राप्तेष्वपि, क्षत्रियाः=राजान इव । अयं भावः—यथा सर्वेषु विषयेषु प्राप्तेष्वपि राजानः संतोषं नाप्नुवन्ति, किंतु तत्प्राप्त्यर्थमेव पुनः पुनः प्रवर्तन्ते । एवं तासु तासु योनिषु पुनः पुनरुत्पत्तिमनुभवन्तोऽपि जीवाः पुनः पुनः ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्म कुर्वन्तस्तत्तद् योनिप्राप्त्यर्थमेव प्रवर्तन्ते, तस्मान्मनुष्यजन्म दुर्लभम् इति ।

लाख, तथा मनुष्य की चौदह लाख, इस प्रकार इन चौरासी लाख योनियों-उत्पत्ति स्थानों में) (न निविज्जन्ति-न निर्विद्यन्ते) 'इस संसार परिभ्रमणसे मेरा कब मोक्ष होगा' इस प्रकार कभी भी निर्वेद-उद्वेग को प्राप्त नहीं होते हैं । (व-इव) जैसे(सबढेसु खत्तिया-सर्वार्थेषु क्षत्रियाः)हिरण्य सुवर्ण, मणि, मुक्ताफल, वज्र वैडूर्य, ग्राम, नगर, कोश एवं कोष्ठागार, भूमि, गज अश्व आदि प्राप्त विभवोंमें क्षत्रिय लोग उद्वेग(उदासीनता) को प्राप्त नहीं होते हैं । तात्पर्य इसका यह है कि जैसे युद्ध कर २ के समस्त देशों का राज्य प्राप्त होने पर भी क्षत्रिय लोग उद्वेग (उदासीनता) को प्राप्त नहीं होते हैं, किन्तु उनकी प्राप्ति के लिये ही वे बार २ चेष्टा किये करते हैं उसी प्रकार उन उन योनियों में बार २ जन्म मरण के दुःखों का अनुभव करते हुए भी ये जीव पुनः पुनः ज्ञानावरणीयादिक अष्टविध कर्मों का बन्ध करते हुए उन २ योनियों की प्राप्ति करने के लिये

तथा मनुष्यों की चौदह लाख, आ प्रकार से चौरासी लाख योनीओं में 'न निविज्जन्ति-न निर्विद्यन्ते आ संसार परिभ्रमणुधी भारे क्यारे मोक्ष थशे?' से प्रकार से तेने के। छ जतनी चिंता थती नथी. व-इव जेभ सबढेसु खत्तिया-सर्वार्थेषु क्षत्रियाः हीरा भाण्डेक, सुवर्ण, मणि, मुक्ताफल, वज्र, वैडूर्य, ग्राम, नगर, कोश अने कुष्ठागार, भूमि, गज, अश्व, आदि प्राप्त वैभवों में रन्ध्यापन्ध्या रहैता क्षत्रियोने के। छ उद्वेग थतो नथी. तात्पर्य जेनुं से छे के, जेभ युद्ध करी करीने समस्त देशनुं राज्य प्राप्त थवा छतां पणु क्षत्रियोने के। छ उद्वेग थतो नथी परंतु तेनी प्राप्तने भाटे जे से वारंवार प्रयत्न करता रहै छे. जेवी रीते योनीओं में वारंवार जन्म मरणने अनुभव करवा छतां पणु से जेव करी करी ज्ञानावरणीयादि आठ प्रकारना कर्मोंने बंध करीने ते ते योनीओं की प्राप्ति करवा में जे कीयाशील रहै छे.

મનુષ્યાણામ્, તથા વિષયા અપ્યનુકૂલતયા મનો હરન્તિ સર્વેણામ્ । વર્ષાકાલે જલબુદ્બુદા ઇવ, કરાઞ્જલિગતા આ ઇવ સમ્પદઃ ક્ષણભરાઃ સન્તિ । યથા—સ્વચ્છ-જલપરિપૂર્ણગમ્भीરગર્તે પ્રતિવિમ્બભાવાપન્નં તત્તટવર્તિવૃક્ષ-ચ્છાયા-લતા-પત્ર-પુષ્પાદિકં કિમપિ કાર્યં સાધયિતું ન શકનોતિ, તથા સંસારાન્તર્ગતં વસ્તુજાતમ્ કિમપિ સ્વા-ત્મકલ્યાણાય ન ભવતિ । એવમનન્તદુઃખસંમૃતે સંસારેऽનન્તાનન્તદુઃખમનુભવન્તોऽપિ નોદ્વિજન્તે સર્વાર્થેષુ લઘ્વેષ્વપિ રાજાન ઇવ પ્રાણિનઃ । અતો મનુષ્યજન્મદુર્લભમ્ ।

વિષયસુખ મી અનુકૂલ હોને સે સય કો સુહાવને લગતે હૈં, સય કે ચિત્ત લુભાતે રહતે હૈં । વર્ષાકાલ મેં જૈસે જલ કા બુદ્બુદા દેખતે ૨ નષ્ટ હો જાતા હૈ, ઓર અંજલિ કા જલ જૈસે ક્ષણભર મેં ઝર જાતા હૈ, ઓસી પ્રકાર સે યહ વૈભવ મી ક્ષગવિનશ્વર જાનના ચાહિયે । જૈસે સ્વચ્છ જલ સે પરિપૂર્ણ ગંભીર ઘડે મેં પ્રતિવિમ્બરૂપ સે પતિત ઓસકે તટવર્તી વૃક્ષ કી છાયા લતા પત્ર પુષ્પાદિક કુછ મી કાર્ય સાધક નહીં હો સકતે હૈં, ઓસી તરહ સંસાર કે અન્તર્ગત વસ્તુઓં કા સમૂહ મી આત્મકલ્યાણ કા કુછ મી સાધક નહીં હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અનંત દુઃખોં સે ભરે હુએ ઇસ સંસાર મેં અનન્ત દુઃખોં કા અનુભવ કરતે હુએ મી સંસારી જીવ પ્રાપ્ત અર્થ મેં અધિકતર લુભાને વાલે રાજા કી તરહ પ્રતિદિનં ડન્હોં સંસારવર્ધક વૈપથિક સુખોં મેં લુભાતે રહતે હૈં । આત્મકલ્યાણ કૈસે હોગા ઇસકી થોડી સી મી ચિન્તા નહીં કરતે હૈં । ઇસલિયે યદિ મનુષ્યજન્મ પાયા હૈ તો કુછ કર લેના ચાહિયે, નહીં તો ઇસ મનુષ્ય

પ્રકારથી આ વિષયસુખ પણ અનુકૂળ હોતાં સધળાને સુખરૂપ લાગે છે. બધાના ચિત્તને લોભાવે છે, વર્ષાકાળમાં પાણીના પરપોટાની જેમ ભેત ભેતામાં નાશ પામે છે અને હાથમાં લીધેલ પાણી જેમ ક્ષણભરમાં ચોદ્યું બય છે. એજ પ્રકારથી આ વૈભવ પણ ક્ષણભરમાં નાશ પામનાર સમજવો જોઈએ. જેમ સ્વચ્છ જળથી ભરેલા ઊંડા ખાડામાં પ્રતિબિંબ રૂપથી પતિત તેની પાસેના વૃક્ષની છાયા, લતા, પાંદડાં, પુષ્પ વગેરે, કાંઈ પણ કાર્યસાધક થતાં નથી. એવી રીતે સંસારનો અંતર્ગત વસ્તુઓનો સમૂહ પણ આત્મકલ્યાણમાં કાંઈપણ સાધક બનતો નથી. આ પ્રકારનાં અનંત દુઃખોથી ભરેલા આ સંસારમાં અનંત દુઃખોનો અનુભવ કરવા છતાં પણ સંસારી જીવ પ્રાપ્ત અર્થમાં અધિકતર લોભાવનારા રાજાની માફક દરરોજ તેની સંસારવર્ધક વિષયી સુખોમાં લોભાતો રહે છે. આત્માનું કલ્યાણ કઈ રીતે થશે તેની થોડી પણ ચિન્તા કરતો નથી. આટલા માટેજ મનુષ્યજન્મ મળેલ છે તો તેનું કાંઈક સાર્થક કરી જોઈએ.

તસ્માન્મનુષ્યજન્મ લબ્ધ્વા સંસારસ્વરૂપં ભાવयेत्-અહો ! ઈદ્દશં દુઃખસ્થાનમન્યત્  
કિમપિ નાસ્તિ યાદૃશઃ સંસારઃ ॥ ૫ ॥

જન્મ છુટ જાને કે વાદ્દે હસકી પુનઃ પ્રાપ્તિ દુર્લભ હૈ, અતઃ મનુષ્ય કા  
કર્તવ્ય હૈ કિ વહ મનુષ્યજન્મ પ્રાપ્ત કર સંસાર કે સ્વરૂપ કા અવશ્યર  
વિચાર કરતા રહે, ઉસકો સોચના ચાહિયે કિ એસા દુઃખ કા સ્થાન  
ઑર કોઈ દૂસરા નહીં હૈ જૈસા કી યહ સંસાર હૈ ।

ભાવાર્થ—કર્મ સે કદર્થિત યે સંસારી જીવ ચૌરાસી લક્ષ યોનિયોંમેં  
ભ્રમણ કરતે હુએ ખી પુનઃ ઉસી ચક્કર મેં ફેસને કે અભિલાષી હોતે  
રહતે હૈં । યહ ચક્કર કૈસે વંદ હોગા હસકી ચિન્તા હી નહીં કરતે હૈં ।  
જૈસે કોઈ ક્ષત્રિય વાર વાર યુદ્ધ કરને પર ખી યુદ્ધ સે અરુચિ નહીં  
લાતા હૈ । ઉસી પ્રકાર યે સંસારી જીવ ખી સાંસારિક અનંત દુઃખોં સે  
અરુચિ ન લાકર જ્ઞાનાવરણીય કર્મોં કો પુનઃ પુનઃ વઢાને કી ઑર હી  
અગ્રેસર વને રહતે હૈં । હન કો હસ વાત કા પતા નહીં કિ હસ મનુ-  
ષ્યભવ સે હી હન અનંત દુઃખોં કા અંત હોતા હૈ, અતઃ હસ ભવસે  
યદિ યે દુઃખ નહીં નષ્ટ કિયે ગયે તો ફિર દૂસરા કૌન એસા ભવ હૈ જો  
હન દુઃખોં કા અન્ત કરનેવાલા હો સકેગા, અતઃ મિલે હુએ મનુષ્ય ભવ

નહીં તો આ મનુષ્યજન્મ પુરો થતાં તેની પ્રાપ્તિ ફરી થવી દુર્લભ છે. આથી  
મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે, જ્યારે મહાદુર્લભ એવો મનુષ્યજન્મ તેને પ્રાપ્ત થયો છે  
તો સંસારના સાચા સ્વરૂપનો અવશ્ય અવશ્ય વિચાર કરતો રહે. તેણે વિચારનું  
જોઈએ કે, જેવો આ સંસાર છે તેના જેવું દુઃખનું સ્થાન ખીજું કોઈ નથી.

ભાવાર્થ—કર્મથી કદાચ સંસારી જીવ ચૌરાસી લાખ યોનીઓમાં ભ્રમણ  
કરવા છતાં પણ ફરી એજ ચક્કરમાં ફસાય-ખૂંચી જાય તેવાં કાર્યોમાં તે રત  
રહે છે પણ એ ચક્કર કઈ રીતે બંધ થાય તેની ચિંતા કરતો નથી. જેમ કોઈ  
ક્ષત્રિય વારંવાર યુદ્ધ કરવા છતાં તેના દિલમાં યુદ્ધની અરૂચી જાગતી નથી.  
તેવી રીતે સંસારી જીવ પણ સંસારનાં અનંત દુઃખોને જાણવા છતાં તેના  
પ્રત્યે અરૂચી ન લાવતાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મોને ફરી ફરી વધારવાની તરફ જ તેની  
મુખ્ય પ્રવૃત્તિ બની રહે છે. તેને એ વાતનો ખ્યાલ પણ નથી આવતો કે,  
આ મનુષ્યભવદ્વારા જ તે અનંત દુઃખોનો અંત લાવી શકાય છે. એ કારણે  
આ ભવદ્વારા જ જો તે દુઃખ નષ્ટ કરવામાં નહીં આવે તો ફરી એવો કયો  
ભવ છે કે, આ દુઃખોનો અંત લાવવામાં ઉપયોગી થાય ? આથી મહાપૂણ્યના  
ઉદ્ધયથી અપ્રાપ્ય એવા મળેલા મનુષ્યભવને સફળ બનાવવા તરફ લક્ષ દેવું

મૂલમ્—કર્મસંગેહિં સંમૂઢા, દુઃસ્વિયા વહુવેયર્ણા ।

અમાણુસાસુ જોળીસુ, વિણિહમ્મંતિ પાણિણો ॥ ૬ ॥

છાયા—કર્મસંગૈઃ સંમૂઢાઃ, દુઃસ્વિતા વહુવેદનાઃ ।

અમાનુષીપુ યોનિપુ, વિનિહન્યન્તે પ્રાણિનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—‘કર્મસંગેહિં’ ? इत्यादि ।

કર્મસંગૈઃ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મસંયોગૈઃ, સંમૂઢાઃ=તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરહિતાઃ, દુઃસ્વિતાઃ=વિવિધદુઃસ્વજાલજનકરોગશોકાદિસમાક્રાન્તાઃ, વહુવેદનાઃ=મન્દ તીવ્ર-તીવ્રતર-પીડાયુક્તાઃ પ્રાણિનઃ, અમાનુષીપુ=એકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિયમનુષ્યભિન્નપચ્ચેન્દ્રિયરૂપાસુ ચ, યોનિપુ કર્મભિઃ વિનિહન્યન્તે=પુનઃ પુનઃ-ત્પદ્યન્તે । અતો માનુષત્વં દુર્લભમિતિ ભાવઃ ॥ ૬ ॥

કો સફલ બનાવે કો ઓર લક્ષ્ય દેના યહી સવ સે પ્રથમ કર્તવ્ય હૈ ॥ ૫ ॥

“કર્મસંગેહિં” इत्यादि

અન્વયાર્થ—(કર્મસંગેહિં—કર્મસંગૈઃ) જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે સંયોગ સે (સંમૂઢા—સંમૂઢાઃ) તત્ત્વાતત્ત્વ કે વિવેક સે વિકલ બને હુએ અતઃએવ (દુઃસ્વિયા—દુઃસ્વિતાઃ) વિવિધદુઃસ્વજનક એસે રોગ, શોક આદિ સે સમાક્રાન્ત એવં (વહુ વેયણા—વહુ વેદનાઃ) મન્દ, તીવ્ર, તીવ્રતર પીડાઓં સે યુક્ત યે (પાણિણો—પ્રાણિનઃ) સંસારી પ્રાણી (અમાણુસાસુ જોળીસુ-અમાનુષીપુ યોનિપુ) એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય એવં મનુષ્ય ભિન્ન પચ્ચેન્દ્રિય ઇન યોનિયોં મેં (વિણિહમ્મંતિ—વિનિહન્યન્તે) પુનઃ પુનઃ જન્મમરણજનિત દુઃસ્વ પાતે હેં । ઇસલિયે મનુષ્યમવ દુર્લભ હૈ ।

જોઇએ અને તે પ્રાણીમાત્રનું એક માત્ર સૌ પ્રથમ કર્તવ્ય છે. ॥ ૫ ॥

“કર્મસંગેહિં”—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—કર્મસંગેહિં—કર્મસંગૈઃ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંયોગથી સંમૂઢા—સંમૂઢાઃ તત્ત્વાતત્ત્વના વિવેકથી, વિકળ અનેલા તેમજ દુઃસ્વિયા—દુઃસ્વિતાઃ વિવિધ દુઃખજનક એવા રોગ, શોક આદિથી સમાક્રાન્ત અને વહુ વેયણા—વહુ વેદનાઃ મંદ, તીવ્ર, તીવ્રતર, પીડાઓથી યુક્ત આ પાણિણો—પ્રાણિનઃ સંસારી પ્રાણી અમાણુસાસુ જોળીસુ-અમાનુષીપુ યોનિપુ એકેન્દ્રિય, બેઇન્દ્રિય, ત્રીઇન્દ્રિય, ચાર ઇન્દ્રિય, અને મનુષ્ય ભિન્ન પાંચ ઇન્દ્રિય આ યોનીઓમાં વિણિહમ્મંતિ—વિનિહન્યન્તે ફરી ફરી જન્મ મરણ જનીત દુઃખ પામે છે. એટલા માટે મનુષ્યમવ દુર્લભ કહ્યો છે.



કથં તર્હિ માનુષત્વં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—

મૂલમ્—કર્મમાણં તુ પ્રહાણાણ, આણુપુર્વિં કંયાઈ વિં ।

જીવાં સોહિમણુપ્પંત્તા, ઔયયંતિ મણુંસ્સયં ॥ ૭ ॥

છાયા—કર્મણાં તુ પ્રહાણ્યા, આનુપૂર્વ્યા કદાચિદપિ ।

જીવા શોધિમનુપ્રાપ્તાઃ, આદદતે મનુષ્યતામ્ ॥ ૭ ॥

ટીકા—‘ કર્મમાણં ’ इत्यादि ।

તુ=પુનઃ આનુપૂર્વ્યા=અનુક્રમેણ, કર્મણાં=મનુષ્યગતિવિધાતકાનામનન્તાનુ-  
વન્ધિક્રોધાદિરૂપાણામ્, પ્રહાણ્યા=ક્ષયેગ-અપગમેન, જીવાઃ=પ્રાગિનઃ, આનુપૂર્વ્યા  
=અનુક્રમેણ પૃથિવીકાયાદિક્રમેણેત્યર્થઃ, શોધિમ્=અશુભકર્માપગમરૂપાં શુદ્ધિમ્,

ભાવાર્થ—પ્રાપ્ત મનુષ્યભવ યદિ પ્રમાદી હોકર યોં હી શુમા દિયા  
જાતા હૈ તો ફિર ઇસ જીવ કો કર્મોં કે પ્રભાવ સે તત્ત્વાતત્ત્વવિવેક  
રહિત ઘનકર અનેક અમાનુષીય યોનિયોં મેં અનેક પ્રકાર કે કપ્ડોં કા  
સામ્હના કરતે હુએ ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈં । ઇસલિયે મિલે હુએ ઇસ મનુષ્ય-  
ભવ કો વ્યર્થ મત જાને દો, નહીં તો પુનઃ ઇસકા મિલના દુર્લભ હૈ ॥ ૬ ॥

મનુષ્યભવ પ્રાપ્ત કૈસે હોતા હૈ યહ વાત સૂત્રકાર વતલાતે હૈ—

“ કર્મમાણં ” इत्यादि

અન્વયાર્થ—(આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યા) અનુક્રમ સે (કર્મમાણં-કર્મણામ્)  
મનુષ્યગતિવિધાતક અનંતાનુબંધી ક્રોધાદિ કર્મોં કી પ્રહાણાણ-પ્રહાણ્યા  
પ્રહાણિ-ક્ષયસે (જીવા જીવાઃ) જીવ (આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યા) પૃથિવી-

ભાવાર્થ—પ્રાપ્ત મનુષ્યભવ જે પ્રમાદી બની એમને એમજ શુભાવી દેવાય તો  
પછી આ જીવને કર્મોના પ્રભાવથી તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરહીત બની અનેક અમા-  
નુષીય યોનીઓમાં અનેક પ્રકારનાં કષ્ટોનો સામનો કરતાં કરતાં ઉત્પન્ન થતા  
રહે છે. પણ મનુષ્યભવ પામવો દુર્લભ રહે છે. માટે મળેલા આ મનુષ્યભવને  
વ્યર્થ જવા ન દેવો જોઈએ. જીવને ફરી ફરી મનુષ્યભવ મળવો દુર્લભ છે. ॥ ૬ ॥

મનુષ્યભવ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે—

‘ કર્મમાણં ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યા અનુક્રમથી કર્મમાણં-કર્મણામ્ મનુષ્યગતી  
વિધાતક અનંતાનુબંધી ક્રોધાદિ કર્મોના પ્રહાણાણ-પ્રહાણ્યાક્ષયથી જીવા-જીવાઃ જીવ  
આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યાપૃથ્વીકાયાદિકના કર્મથી સોહિ-શોધિમ્ અશુભ કર્મોના અપગ-

મૂળમ્—કર્મસંગેહિં સંમૂઢા, દુઃખિલયો વહુવેયર્ણા ।

અમાણુસાસુ જોળીસુ, વિણિહમ્મંતિ પાણિણો ॥ ૬ ॥

છાયા—કર્મસંગૈઃ સંમૂઢાઃ, દુઃખિતા વહુવેદનાઃ ।

અમાનુષીપુ યોનિપુ, વિનિહન્યન્તે પ્રાણિનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—‘કર્મસંગેહિં’ इत्यादि ।

કર્મસંગૈઃ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મસંયોગૈઃ, સંમૂઢાઃ=તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરહિતાઃ, દુઃખિતાઃ=વિવિધદુઃખજાલજનકરોગશોકાદિસમાક્રાન્તાઃ, વહુવેદનાઃ=મન્દ તીવ્ર-તીવ્રતર-પીડાયુક્તાઃ પ્રાણિનઃ, અમાનુષીપુ=એકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિયમનુષ્યભિન્નપચ્ચેન્દ્રિયરૂપાસુ ચ, યોનિપુ કર્મભિઃ વિનિહન્યન્તે=પુનઃ પુનરુત્પન્તે । અતો માનુષત્વં દુર્લભમિતિ ભાવઃ ॥ ૬ ॥

કો સફલ બનાવે કો ઓર લક્ષ્ય દેના યહી સવ સે પ્રથમ કર્તવ્ય હૈ ॥ ૬ ॥

“કર્મસંગેહિં” इत्यादि

અન્વયાર્થ—(કર્મસંગેહિં-કર્મસંગૈઃ) જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે સંયોગ સે (સંમૂઢા-સંમૂઢાઃ) તત્ત્વાતત્ત્વ કે વિવેક સે વિકલ બને હુએ અતએવ (દુઃખિલયા-દુઃખિતાઃ) વિવિધદુઃખજનક એસે રોગ, શોક આદિ સે સમાક્રાન્ત એવં (વહુ વેયણા-વહુ વેદનાઃ) મન્દ, તીવ્ર, તીવ્રતર પીડાઓં સે યુક્ત યે (પાણિણો-પ્રાણિનઃ) સંસારી પ્રાણી (અમાણુસાસુ જોળીસુ-અમાનુષીપુ યોનિપુ) એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય એવં મનુષ્ય ભિન્ન પચ્ચેન્દ્રિય इन યોનિયોં મેં (વિણિહમ્મંતિ-વિનિહન્યન્તે) પુનઃ પુનઃ જન્મમરણજનિત દુઃખ પાતે હેં । હસલિયે મનુષ્યભવ દુર્લભ હૈ ।

જોઇએ અને તે પ્રાણીમાત્રનું એક માત્ર સૌ પ્રથમ કર્તવ્ય છે. ॥ ૫ ॥

“કર્મસંગેહિં”—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—કર્મસંગેહિં-કર્મસંગૈઃ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંયોગથી સંમૂઢા-સંમૂઢાઃ તત્ત્વાતત્ત્વના વિવેકથી, વિકલ અનેલા તેમજ દુઃખિલયા-દુઃખિતાઃ વિવિધ દુઃખજનક એવા રોગ, શોક આદિથી સમાક્રાન્ત અને વહુ વેયણા-વહુ વેદનાઃ મન્દ, તીવ્ર, તીવ્રતર, પીડાઓથી યુક્ત આ પાણિણો-પ્રાણિનઃ સંસારી પ્રાણી અમાણુસાસુ જોળીસુ-અમાનુષીપુ યોનિપુ એકેન્દ્રિય, બેધન્દ્રિય, ત્રીધન્દ્રિય, ચાર ધન્દ્રિય, અને મનુષ્ય ભિન્ન પાંચ ધન્દ્રિય આ યોનીઓમાં વિણિહમ્મંતિ-વિનિહન્યન્તે ફરી ફરી જન્મ મરણ જનીત દુઃખ પામે છે. એટલા માટે મનુષ્યભવ દુર્લભ કહ્યો છે.

કસ્યચિદ્ વિશિષ્ટપુણ્યસ્યોદયેન માનુષત્વલાભેઽપિ શ્રુતિદુર્લભેત્યાહ—

મૂલમ્—માણુસ્સં વિગ્ગહં લંઘું, સુઈ ધમ્મસ્સ દુલ્લહા ।

જં સોચ્છા પહિવ્વજ્જંતિ, તંવં 'સ્વંતિમહિંસયં' ॥૮॥

છાયા—માનુષ્યં વિગ્રહં લઙ્ઘ્વા, શ્રુતિધર્મસ્ય દુર્લભા ।

યં શ્રુત્વા પ્રતિપદ્યન્તે, તપઃ ક્ષાન્તિમ્ અહિંસતામ્ ॥ ૮ ॥

ટીકા—‘ માણુસ્સં ’ ઇત્યાદિ ।

માનુષ્યં=મનુષ્યભવસમ્બન્ધિનં, વિગ્રહં=શરીરં, લઙ્ઘ્વા=પ્રાપ્ય, ધર્મસ્ય=શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્ય, શ્રુતિઃ=શ્રવણં, દુર્લભા, યં ધર્મં શ્રુત્વા, તપઃ=અનશનાદિ દ્વાદશવિધમ્, ઇન્દ્રિયજયં વા, ક્ષાન્તિ=ક્રોધજયરૂપાં, ઉપલક્ષણમેતન્માનાદિજયસ્યાપિ, અહિંસતામ્=અહિંસકત્વમ્, અનેન પ્રથમવ્રતમુક્તમ્, इदमप्युપલक्षणम्—મૃપાવાદાદ-ત્તાદાનમૈથુનપરિગ્રહવિરમણસ્ય, પ્રતિપદ્યન્તે=પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ । ધર્મસ્ય શ્રવણં હિ મિથ્યાત્વતિમિરમણાશકં, શ્રદ્ધાજ્યોતિઃપ્રકાશકં, તત્ત્વાતત્ત્વવિવેચકં, પીયૂષપાનમિવ

કહતે હૈં—“ માણુસ્સં ” ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(માણુસ્સં વિગ્ગહં લંઘું માનુષ્યકં વિગ્રહં લઙ્ઘ્વા) મનુષ્યભવ સંબંધી શરીર કો પાકર ખી ( ધમ્મસ્સ સુઈ દુલ્લહા—ધર્મસ્ય શ્રુતિઃ દુર્લભા ) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકા શ્રવણ દુર્લભ હૈ । ( જં સોચ્છા—યં શ્રુત્વા ) જિસ ધર્મ કો સુનકર પ્રાણી ( તંવં સ્વંતિમહિંસયં—તપઃ ક્ષાન્તિમ્ અહિંસતામ્ ) અન-શન આદિ ચારહ ૧૨ પ્રકાર કે તપ કો, અથવા ઇન્દ્રિયનિગ્રહ કો, ક્રોધ જયરૂપ ક્ષાંતિ કો, ઉપલક્ષણ સે માન આદિ કપાય કે વિજય કો, તથા અહિંસક ભાવ કો, ઉપલક્ષણ સે મૃપાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન એવં પરિ-ગ્રહ સે વિરમણરૂપ વ્રત કો ( પહિવ્વજ્જંતિ—પ્રતિપદ્યન્તે ) પ્રાપ્ત કરતે હૈ । ધર્મ કા શ્રવણ જીવ કે મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર કા વિનાશક, શ્રદ્ધારૂપ જ્યોતિ કા પ્રકાશક, તત્ત્વ અતત્ત્વ કા વિવેચક, અમૃતપાન કે સંમાન

‘ માણુસ્સં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—માણુસ્સં વિગ્ગહં લંઘું—માનુષ્યકં વિગ્રહં લઙ્ઘ્વા મનુષ્યભવ સંબંધી શરીરને મેળવીને પણ ધમ્મસ્સ સુઈ દુલ્લહા—ધર્મસ્ય શ્રુતિઃ દુર્લભા શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ દુર્લભ છે. જં સોચ્છા—યં શ્રુત્વા જે ધર્મને સાંભળીને પ્રાણી તંવં સ્વંતિમહિંસયં—તપઃ ક્ષાન્તિમ્ અહિંસતામ્ અનશનાદિ બાર ૧૨ પ્રકારના તપને અથવા ઇન્દ્રિયનિગ્રહને, ક્રોધજયરૂપ, ક્ષાંતિને ઉપલક્ષણથી માન આદિ કપાયના વિજયને તથા અહિંસક ભાવને ઉપલક્ષણથી મૃપાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન અને પરિગ્રહથી વીરમણ રૂપ વ્રતને પહિવ્વજ્જંતિ—પ્રતિપદ્યન્તે પ્રાપ્ત કરે છે. ધર્મનું શ્રવણ જીવને મિથ્યાત્વરૂપી અંધકારનો નાશ કરનાર, શ્રદ્ધારૂપ જ્યોતિનો પ્રકા-

અનુપાતાઃ સન્તઃ, કદાચિદેવ, ન તુ સર્વદા, અત્ર તુ-શબ્દ એવાર્થકઃ । મનુષ્યતામ્ આદદતે=ગૃહ્ણન્તિ-પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ-પ્રકૃતિભદ્રતયા, પ્રકૃતિવિનીતતયા, સાનુક્રોશતયા (સદયતયા) અમત્સરિતયા મનુષ્યેષુ પ્રાણિન ઉત્પદ્યન્તે । અપિ ચ-વિશિષ્ટશુદ્ધિહેતુભિસ્તનુકપાયત્વાદિભિર્મનુષ્યાયુર્વન્થો ભવતિ । ઉક્તચ્ચ—

પયર્ષે તણુકસાઓ, દાળરઓ સીલસંજમવિહૂળો ।

મજ્જમગુણેહિં જુત્તો મણ્યાઁ વંધે જીવો ॥ ૨ ॥

છાયા-પ્રકૃત્યા તનુકપાયો, દાનરતઃ શીલસંયમવિહીનઃ ।

મધ્યમગુણૈર્યુક્તો મનુજાયુર્વધ્નાતિ જીવઃ ॥ ૧ ॥ ૭ ॥

કાયાદિક કે ક્રમસે (સોહિં-શોધિમ્) અશુભ કર્મોં કે અપગમરૂપ શુદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હોતે હુએ (કયાઈ વિ-કદાચિદપિ) કમી કમી હી-સર્વદા નહીં, (મણુસ્સયં આયયંતિ-મનુષ્યતાં આદદતે) મનુષ્યભવ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । પ્રાણી સ્વાભાવિક ભદ્રપરિણામી હો, સ્વાભાવિક વિનીત હો, દયાલુ હો, મત્સરભાવ સે રહિત હો તો વહ મરકર મનુષ્યપર્યાય કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં । વિશિષ્ટ શુદ્ધિ કા કારણ જો કષાયોં કી મંદતા હૈં ઉસસે મી મનુષ્યાયુકા વંધ પ્રાણી કો હોતા હૈં । ઉક્તચ્ચ—

પયર્ષે તણુકસાઓ દાળરઓ સીલસંજમવિહૂળો ।

મજ્જમગુણેહિં જુત્તો મણ્યાઁ વંધે જીવો ॥ ૧ ॥

છાયા-પ્રકૃત્યા તનુકપાયો દાનરતઃ શીલસંયમવિહીનઃ ।

મધ્યમગુણૈર્યુક્તો મનુજાયુર્વધ્નાતિ જીવઃ ॥ ૧ ॥ ૭ ॥

વિશિષ્ટ પુણ્ય કે ઉદય સે કિસી જીવ કો મનુષ્યભવ કી પ્રાપ્તિ હો મી જાય તો મી ધર્મ કા સુનના દુર્લભ હૈં । ઇસ વાત કો સૂત્રકાર

મરૂપ શુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને કયાઈ વિ-કદાચિદપિ કોઈ કોઈ વખત મણુસ્સયં-મનુષ્યતા-મનુષ્યભવને આયયંતિ-આદદતે પ્રાપ્ત કરે છે. પ્રાણી સ્વાભાવિક ભદ્ર પરિણામી હોય, સ્વાભાવિક વિનીત હોય, દયાલુ હોય, મત્સરભાવથી રહિત હોય તો તે મરીને મનુષ્યપર્યાયને પ્રાપ્ત કરે છે. વિશિષ્ટ શુદ્ધિનું કારણ જે કષાયોની મંદતા છે તેનાથી પણ મનુષ્ય આયુનો વંધ પ્રાણીનો થાય છે. કહ્યું પણ છે—

પયર્ષે તણુકસાઓ દાળરઓ સીલસંજમવિહૂળો ।

મજ્જમ ગુણેહિં જુત્તો મણ્યાઁ વંધે જીવો ॥ ૧ ॥

છાયા—પ્રકૃત્યા તનુકપાયો દાનરતઃ શીલસંયમવિહીનઃ ।

મધ્યમગુણૈર્યુક્તો મનુજાયુર્વધ્નાતિ જીવઃ ॥ ૧ ॥ ૭ ॥

વિશિષ્ટ કર્મના ઉદયથી કોઈ જીવને મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ પણ જાય તો પણ ધર્મને સાંભળવો ફરજી છે આ વાતને સૂત્રકાર

ટીકા—‘ આહચ્ચ ’ ઇત્યાદિ ।

કદાચિત્ શ્રવણં=ધર્મશ્રવણં લઙ્ઘ્વાઽપિ શ્રદ્ધા=ધર્મવિપયિકા રુચિઃ, પરમદુર્લભાઽસ્તિ । શ્રદ્ધા હિ સંસારસાગરતરણતરણિઃ, મિથ્યાત્વતિમિરહરણદ્યુમણિઃ, સ્વર્ગાપવર્ગસુખચિન્તામણિઃ, ક્ષપકશ્રેણિસરણિઃ, કર્મરિપુદમની, કેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનજનની । શ્રદ્ધાયાઃ પરમદુર્લભત્વે હેતુમાહ—‘ વહવે ’ ઇત્યાદિ ।

વહવો મનુષ્યા નૈયાયિકં-ન્યાયે પञ્ચસમવાયકારણે ભવં નૈયાયિકં પञ્ચસમ-

ધર્મશ્રવણ કી પ્રાપ્તિ કે વાદ સૂત્રકાર અવ શ્રદ્ધા કી દુર્લભતા દિશ્વ-  
લાતે હૈં—‘ આહચ્ચ ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--(આહચ્ચ-આહત્ય) કદાચિત્ (સવણં લઙ્ઘુ-શ્રવણં લઙ્ઘ્વા) ધર્મકા શ્રવણ મી પ્રાપ્ત હો જાય તો મીં (સદ્ધા પરમદુર્લભા-શ્રદ્ધા પરમદુર્લભા) ધર્મ મેં શ્રદ્ધા-રુચિ-હોના પરમ દુર્લભ હૈ । યહ શ્રદ્ધા સંસારરૂપી સાગર સે પાર કરાને કે લિયે નૌકા જૈસી હૈ, મિથ્યાત્વરૂપી તિમિર કો દૂર કરને કે લિયે દ્યુમણિ-સૂર્ય જૈસી હૈ । સ્વર્ગ એવં મોક્ષ કે સુખોં કો દેને કે લિયે ચિન્તામણિરત્ન જૈસી હૈ । ક્ષપક શ્રેણી પર આરૂઢ હોને કે લિયે નિસરણી જૈસી હૈ । કર્મરૂપી શત્રુ કો પરાસ્ત કરને વાલી હૈ, એવં કેવલ જ્ઞાન કેવલદર્શન કો ઉત્પન્ન કરને કે લિયે જનની જૈસી હૈ । યહ શ્રદ્ધા પરમ દુર્લભકયોં હૈ ? યહ વાત સ્વયં સૂત્રકાર કહતે હૈં (વહવે-વહવઃ) સંસારમેં એસે મી કિતનેક મનુષ્ય હૈં જો

ધર્મ શ્રવણની પ્રાપ્તિ બાદ સૂત્રકાર હવે શ્રદ્ધાની દુર્લભતા સમજાવે છે.—

‘ આહચ્ચ ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—આહચ્ચ-આહત્ય કદાચિત્ સવણં લઙ્ઘુ-શ્રવણં લઙ્ઘ્વા ધર્મનું શ્રવણ પ્રાપ્ત થઈ જાય તો પણ સદ્ધા પરમદુર્લભા-શ્રદ્ધા પરમદુર્લભા ધર્મમાં શ્રદ્ધા રૂચી થવી એ પરમ દુર્લભ વાત છે. આ શ્રદ્ધા સંસારરૂપી સાગરથી પાર ઉતારનાર નૌકાનું કામ કરે છે. મિથ્યાત્વ રૂપી ઘોર અંધકારને દૂર કરી માણસના હૃદયમાં સૂર્ય તેજનાં કિરણો જેવો પ્રકાશ પહોંચાડે છે. સ્વર્ગ અને મોક્ષનાં સુખોને આપવા માટે ચિન્તામણીરત્ન જેવી છે. ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરૂઢ થવા માટે એ નિસરણી જેવી છે. કર્મરૂપી શત્રુનો નાશ કરવા માટે એ અતુલ બળવાળી છે. અને કેવળજ્ઞાનદર્શનને ઉત્પન્ન કરવા માટે એ જનની જેવી છે. આ શ્રદ્ધા પરમ દુર્લભ કેમ છે ? આ વાત સ્વયં સૂત્રકાર બતાવે છે. ‘તેઓ કહે છે કે, વહવે-વહવઃ સંસારમાં એવા પણ કેટલાક મનુષ્યો છે જે નૈયાયિક.’

હિતાવહં, ચક્ષુચન્દ્રચન્દ્રિકેવ હૃદયાહાદકં, સ્વપ્નદૃષ્ટુનઃ પુનર્જાગ્રિદવસ્થાયાં તદ્વા-  
ભવત્ પ્રમોદજનકં, ભૂમિગતનિધાનપ્રાપ્તિરિવ સુખજનકં, સકલસંતાપહારકમ્ ।  
તસ્માદ્ ધર્મઃ શ્રોતવ્ય इति भावः ॥ ૮ ॥

શ્રુતિલાભેઽપિ શ્રદ્ધા દુર્લભેત્યાહ—

મૂલમ્—આહચ્ચ સર્વણં લઙ્ઘ્યું, સંદ્ધા પરમંદુલ્લહા ।

સોચ્ચ નૈયાઉયં મર્ગં, વંહવે પરિભંસસઙ્ ॥ ૯ ॥

છાયા—ઋદાચિત્ શ્રવણં લઙ્ઘ્યા, શ્રદ્ધા પરમદુર્લભા ।

શ્રુત્વા નૈયાયિકં માર્ગં, વંહવઃ પરિભ્રમ્યન્તિ ॥ ૯ ॥

एकान्ततः हितविधायक, निर्मल चादनी के समान हृदय को आनंद  
उत्पन्न करने वाला, स्वप्न में दृष्ट पदार्थ की जागृत अवस्था में प्राप्ति  
होने की तरह प्रमोदजनक, भूमि में गड़े हुए निधान की प्राप्ति के समान  
सुखजनक एवं समस्त संताप का अपहारक होता है, इसलिये धर्म  
अवश्य श्रवण करने योग्य है ।

भावार्थ—મનુષ્યભવ પાકર મી જીવ કો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કાં  
શ્રવણ વડે ભાગ્ય સે મિલતા હૈ । ધન્ય વે પુરુષ હૈ જો હસ પ્રકાર સે  
અપને જીવન કો સફલ કરતે હૈં, ક્યોં કિ ધર્મ કે શ્રવણ સે હી યહ  
જીવ કો માલૂમ હોતા હૈ કિ હમારા કયા કર્તવ્ય હૈ કયા અકર્તવ્ય હૈ ?  
હિંસાદિક પાપ અકર્તવ્ય હૈં, તથા પ્રણાતિપાતાદિ વિરમણરૂપકર્તવ્ય હૈં ।  
તપ પાળો યોગ્ય હૈં એવં કષાયાદિક પરિત્યાગ કરને યોગ્ય હૈં ॥ ૮ ॥

શક, તત્ત્વ અતત્ત્વનો વિવેચક અમૃત પાન સમાન, એકાન્તતઃ હિત વિધાયક,  
નિર્મળ ચાંદની સમાન હૃદયને ઉત્પન્ન કરવાવાળા, સ્વપ્નમાં દૃષ્ટ પદાર્થની જાગૃત  
અવસ્થામાં પ્રાપ્તિ થવાની માફક, પ્રમોદ જનક ભૂમિમાં દટાયેલા ધનની પ્રાપ્તિ  
સમાન, સુખ જનક અને સમસ્ત સંતાપનો અપહારક બને છે. માટે ધર્મ  
અવશ્ય શ્રવણ કરવા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ—મનુષ્યભવ મેળવીને પણ જીવને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ ભાગ્યના  
ઉદયથી જ મળે છે. એ પુરુષને ધન્ય છે કે જે આ પ્રકારથી પોતાના જીવનને  
સફળ બનાવે છે. કેમકે ધર્મનું શ્રવણ કરવાથી જ આ જીવને ખબર પડે છે  
કે માફ કર્તવ્ય શું છે અને અકર્તવ્ય શું ? છે. હિંસાદિક પાપ એ અકર્તવ્ય  
છે, અને એનાથી પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણરૂપ કર્તવ્ય છે. તપ પાળવા યોગ્ય  
છે, અને કષાયાદિક પરિત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. ॥ ૮ ॥



યસ્ય સઃ, સંયતાદિજ્ઞાને સંદિગ્ધબુદ્ધિઃ । ૩ । અશ્વમિત્રત્રતુર્યઃ સામુચ્છેદિકઃ, સ  
ઉત્પાદાનન્તરમેવ વસ્તુનઃ સમુચ્છેદઃ—વિનાશો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૪ । ગંગાચાર્યઃ  
પન્ચમો દ્વૈક્રિયઃ—સ એકસ્મિન્ સમયે ક્રિયાદ્વયાનુભવો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૫ ।  
પટુલૂકઃ પૃથ્વૈરાશિકઃ, સ જીવા-જીવ-નોજીવ-ભેદાત્ ત્રયો રાશયઃ સન્તીતિ  
પ્રરૂપયતિ । ૬ । ગોષ્ઠઃ માહિલઃ સ્થવિરઃ સપ્તમોઽવદ્ધિકઃ સ ચ જીવેન સ્પૃષ્ઠં કર્મ  
અવદ્ધં પ્રરૂપયતિ । ૭ ।

તત્ર જમાલેઽર્થત્તાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરે ભગવતઃ શ્રીવીરવર્ધમાનસ્વામિનો ભગિન્યાઃ સુદર્શનાયાઃ પુત્રઃ ક્ષત્રિયા  
એસી માન્યતા હૈ કિ સંયત આદિકા જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહતા હૈ, કૌન  
સંયત હૈ કૌન નહીં ઇસકા યથાર્થ નિશ્ચય નહીં હો સકતા હૈ, ઇસ પ્રકાર  
યે અવ્યક્તવાદી હૈ ૩ । ચતુર્ય નિહવ-અશ્વમિત્ર હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ  
કિ ઉત્પાદ કે અનન્તર હી વસ્તુ વિનષ્ટ હો જાતી હૈ ૪ । પંચમ નિહવ  
ગંગાચાર્ય હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ કિ એક સમય મેં દો ક્રિયાઓ  
કા અનુભવ હોતા હૈ ૫ । છઠવાં નિહવ પટુલૂક હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા  
હૈ કિ જીવ અજીવ ંગ નોજીવ, ઇસ પ્રકાર ત્રીન રાશિ હૈ ૬ । ગોષ્ઠ  
માહિલ સ્થવિર સાતવાં નિહવ હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ કિ જીવ કે  
સ્પૃષ્ઠ કર્મ સદા ઉસસે અવદ્ધ રહતા હૈ ૭ ।

જમાલિ કા વૃત્તાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—જમાલિ ભગવાન્ વર્ધમાન  
સ્વામી કી વહિન સુદર્શના કે પુત્ર થે । યે ક્ષત્રિયકુણ્ડપુર કા નિવાસી  
ક્ષત્રિય થે । ભગવાન્ વીર પ્રભુ કી પુત્રી જો પ્રિયદર્શના થી ઉસકા

સ્વરૂપ છે. (૨) તૃતીય નિહવ આપાઢ હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, સંયત  
આદિનું જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહે છે. કેણુ સંયત છે ? કેણુ સંયત નથી ? એનો  
યથાર્થ નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. આ પ્રકારથી તેઓ અવ્યક્તવાદી હતા. (૩) ચતુર્ય  
નિહવ અશ્વમિત્ર હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, ઉત્પાદના અનંતરજ વસ્તુનો  
નાશ થઈ જાય છે. (૪) પંચમ નિહવ ગંગાચાર્ય હતા, એમની એવી માન્યતા  
હતી કે, એક સમયમાં બે ક્રિયાઓનો અનુભવ થાય છે. (૫) છઠા નિહવ પટુલૂક  
હતા એમની એવી પણ માન્યતા હતી કે, જીવ, અજીવ અને નો જીવ આ રીતે ત્રણ  
પ્રકારની રાશી છે. (૬) સાતમા નિહવ ગોષ્ઠમાહિલસ્થવિર હતા એમની એવી પણ  
માન્યતા હતી કે, સ્પૃષ્ઠ કર્મ હંમેશાં તેનાથી અખદ્ધ રહે છે.

જમાલિનું વૃત્તાન્ત આ પ્રકારે છે—જમાલિ ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીની  
બહેન સુદર્શનાના પુત્ર હતા. તેઓ ક્ષત્રિય હતા અને ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરના  
નિવાસી હતા. ભગવાન વીરપ્રભુની પુત્રી જે પ્રિયદર્શના હતી, તેના તેઓ

વાયકારણવાદરૂપં જૈનદર્શનં, યદ્વા-ન્યાયયુક્તં માર્ગં સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપં માર્ગ-  
મોક્ષમાર્ગં શ્રુત્વા પરિભ્રમ્યન્તિ=મોક્ષમાર્ગાત્ પ્રચ્યુતા ભવન્તિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તાઃ—જમાલિપ્રભૂતયો નિહ્વાઃ ।

અથ કે તે જમાલિપ્રભૂતયઃ ? इत्युच्यते—जमालिप्रभूतयः सप्त प्रवचननिह्वाः—  
मिथ्यात्वाभिनिवेशाज्जिनोक्ततत्त्वापलापकास्त्यक्तसम्यग्दर्शना अभूवन् । तत्र ज-  
मालिः प्रथमः, स बहुस्तः—बहुषु समयेषु रतः=सक्तः, प्रभूतसमयैः कार्योत्पत्तिर्भ-  
वति, नत्वेकेन समयेनेति प्ररूपयति ॥ १ ॥ तिष्यगुप्तो द्वितीयः—स जीवप्रदेशिकः  
—जीवः प्रदेश एव यस्य स जीवप्रदेशः, स एव जीवप्रदेशिकः, चरमप्रदेश एव जीव  
इति प्ररूपयति ॥ २ ॥ तृतीय आपादः—स तु अव्यक्तिकः, अव्यक्तम्—अस्फुटं वस्तु

( નેયાઉયં મર્ગ-નૈયાયિકં માર્ગ ) પંચસમવાયકારણવાદરૂપ જૈનદર્શન  
કો, અથવા સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપ ન્યાયયુક્ત માર્ગ-મોક્ષમાર્ગ કો (સોચ્ચા-  
શ્રુત્વા) સુનકર મી ઉસમેં શ્રદ્ધાનહીં હોને સે (પરિભ્રમ્સઈ-પરિભ્રમ્યન્તિ)  
ઉસ મોક્ષમાર્ગ સે ભ્રષ્ટ હો જાતે હેં ઇસલિયે શ્રદ્ધા કો દુર્લભ થતલાઈ હૈ ।

इस विषय में दृष्टान्तस्वरूप जमालि निह्व आदि समझना चाहिये ।  
जमालि आदि कौन हैं ? इस विषय को यहां प्रदर्शित किया जाता है ।  
ये जमालि आदि सात व्यक्ति निह्व-प्रवचन को छिपाने वाले हुए हैं—  
मिथ्यात्व के अभिनिवेश से जिनोक्त तत्त्व के अपलापक-सम्यग्दर्शन  
से रहित हुए हैं । इनमें सर्वप्रथम जमालि हुए हैं, इनकी मान्यता यह  
है कि अनेकसमयों से द्रव्य की उत्पत्ति होती है, एक समय से नहीं ?  
द्वितीय निह्व तिष्यगुप्त हुए हैं, इनकी ऐसी मान्यता है कि जीवका एक  
अन्तिम प्रदेश ही जीवस्वरूप है २ । तृतीय निह्व आपाद हुए हैं, इनकी

મર્ગ-નૈયાયિકં માર્ગ પાંચ સમવાયકારણવાદરૂપ જૈનદર્શનને અથવા સમ્યગ્  
દર્શનાદિરૂપ ન્યાયયુક્ત માર્ગ-મોક્ષ માર્ગને સૌએ સોચ્ચા-શ્રુત્વા સાંભળીને પણ  
એનામાં શ્રદ્ધા ન હોવાથી પરિભ્રમ્સઈ-પરિભ્રમ્યન્તિ એ મોક્ષમાર્ગથી ભ્રષ્ટ થઈ  
જાય છે. આ માટે શ્રદ્ધાને દુર્લભ થતાવેલ છે.

આ વિષયમાં દૃષ્ટાંતસ્વરૂપ જમાલિ નિહ્વ આદિ સમજવા જોઈએ.  
જમાલિ આદિ કેણુ હતા એ વિષયને અહિં પ્રદર્શિત કરવામાં આવે છે. એ  
જમાલિ આદિ સાત વ્યક્તિ પ્રવચનનિહ્વ છુપાવવાવાળા હતા. મિથ્યાત્વના  
અભિનિવેશથી જીનોક્ત તત્ત્વના અપલાપક—સમ્યગ્દર્શનથી રહિત હતા.  
એમાં સર્વ પ્રથમ જમાલિ હતા. એમની માન્યતા એ હતી કે અनेक समयથી  
द्रव्यની उत्पत्ति થાય છે એક સમયથી નહીં. (૧) દ્વિતીય નિહ્વ તિષ્યગુપ્ત  
હતા, એમની એવી માન્યતા હતી કે, एवमेव એક અંતિમ પ્ર જ એવ

યસ્ય સઃ, સંયતાદિજ્ઞાને સંદિગ્ધબુદ્ધિઃ । ૩ । અશ્વમિત્રશ્ચતુર્થઃ સામુચ્છેદિકઃ, સ  
ઉત્પાદાનન્તરમેવ વસ્તુનઃ સમુચ્છેદઃ—વિનાશો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૪ । ગંગાચાર્યઃ  
પન્ચમો દ્વૈક્રિયઃ—સ એકસ્મિન્ સમયે ક્રિયાદ્વયાનુભવો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૫ ।  
પડુલૂકઃ પઠ્ઠૈરાશિકઃ, સ જીવા-જીવ-નોજીવ-ભેદાત્ ત્રયો રાશયઃ સન્તીતિ  
પ્રરૂપયતિ । ૬ । ગોઘઃમાહિલઃ સ્થવિરઃ સપ્તમોઽવદ્ધિકઃ સ ચ જીવેન સ્પૃષ્ઠં કર્મ  
અવદ્ધં પ્રરૂપયતિ । ૭ ।

તત્ર જમાલેષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરે ભગવતઃ શ્રીવીરવર્ધમાનસ્વામિનો ભગિન્યાઃ સુદર્શનાયાઃ પુત્રઃ ક્ષત્રિયા  
એસી માન્યતા હૈ કિ સંયત આદિ કા જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહતા હૈ, કૌન  
સંયત હૈ કૌન નહીં ઇસકા યથાર્થ નિશ્ચય નહીં હો સકતા હૈ, ઇસ પ્રકાર  
યે અવ્યક્તવાદી હૈ ૩ । ચતુર્થ નિહ્વ-અશ્વમિત્ર હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ  
કિ ઉત્પાદ કે અનન્તર હી વસ્તુ વિનષ્ટ હો જાતી હૈ ૪ । પંચમ નિહ્વ  
ગંગાચાર્ય હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ કિ એક સમય મેં દો ક્રિયાઓ  
કા અનુભવ હોતા હૈ ૫ । છઠવાં નિહ્વ પડુલૂક હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા  
હૈ કિ જીવ અજીવ એવં નોજીવ, ઇસ પ્રકાર ત્રીન રાશિ હૈ ૬ । ગોઘ  
માહિલ સ્થવિર સાતવાં નિહ્વ હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ કિ જીવ કે  
સ્પૃષ્ઠ કર્મ સદા ડસસે અવદ્ધ રહતા હૈ ૭ ।

જમાલિ કા વૃત્તાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—જમાલિ ભગવાન્ વર્ધમાન  
સ્વામી કી વહિન સુદર્શના કે પુત્ર થે । યે ક્ષત્રિયકુણ્ડપુર કા નિવાસી  
ક્ષત્રિય થે । ભગવાન્ વીર પ્રભુ કી પુત્રી જો પ્રિયદર્શના થી ડસકા

સ્વરૂપ છે. (૨) તૃતીય નિહ્વ આપાઢ હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, સંયત  
આદિતું જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહે છે. કેણુ સંયત છે ? કેણુ સંયત નથી ? એનો  
યથાર્થ નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. આ પ્રકારથી તેઓ અવ્યક્તવાદી હતા. (૩) ચતુર્થ  
નિહ્વ અશ્વમિત્ર હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, ઉત્પાદના અનંતરજ વસ્તુનો  
નાશ થઈ જાય છે. (૪) પંચમ નિહ્વ ગંગાચાર્ય હતા, એમની એવી માન્યતા  
હતી કે, એક સમયમાં બે ક્રિયાઓનો અનુભવ થાય છે. (૫) છઠા નિહ્વ પડુલૂક  
હતા એમની એવી પણ માન્યતા હતી કે, જીવ, અજીવ અને નો જીવ આ રીતે ત્રણ  
પ્રકારની રાશી છે. (૬) સાતમા નિહ્વ ગોઘમાહિલસ્થવિર હતા એમની એવી પણ  
માન્યતા હતી કે, સ્પૃષ્ઠ કર્મ હંમેશાં તેનાથી અખદ્ધ રહે છે.

જમાલિતું વૃત્તાન્ત આ પ્રકારે છે—જમાલિ ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીની  
બહેન સુદર્શનાના પુત્ર હતા. તેઓ ક્ષત્રિય હતા અને ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરના  
નિવાસી હતા. ભગવાન વીરપ્રભુની પુત્રી જે પ્રિયદર્શના હતી, તેના તેઓ

જમાલિરાસીત્ । શ્રીવીરવર્ધમાનસ્વામિનઃ પુત્રી પ્રિયદર્શના જમાલેઃ ભાર્યાઽમ્ભવત્ ।

एकदा कदाचित् भगवान् श्रीवीरवर्धमानस्वामी तत्र क्षत्रियकुण्डपुरे समवसृतः । जमालिर्भार्यया सह तं वन्दितुं समागतः । भगवद्देशनया जातवैराग्योऽसौ जमालिर्गृहमागत्य पित्रोरनुज्ञां गृहीत्वा पञ्चशतक्षत्रियकुमारैः सह प्रव्रज्यां गृहीतवान् । अयं भगवतः श्रीमहावीरस्य केवलज्ञानप्राप्त्यनन्तरं चतुर्दशे वर्षे प्रव्रजितः । तदा तस्य भार्या प्रियदर्शनाऽपि भगवतः श्रीवीरवर्धमानस्वामिनः समीपे स्त्रीसहस्रेण सह प्रव्रजिता । ततः पञ्चशतसंख्यकान् साधून् जमालिमुनये, तस्यै प्रियदर्शनासाध्व्यै च साध्वी-सहस्रं शिष्यतया भगवान् प्रददौ । अथ जमालिमुनिः श्रीवर्धमानस्वामिना सह विहरन् दुश्चरं तपस्तेपे, एकादशाङ्गानि चाधीतवान् ।

ये पति थे । एक दिन की बात है कि वीर श्रीवर्धमान स्वामी क्षत्रिय-कुण्डपुर में पधारे । जमालि अपनी पत्नी प्रियदर्शना के साथ उनको वंदना करने के लिये आये । भगवान् ने इनको धर्मदेशना दी । दिव्य धर्मदेशना का पान कर जमालि को वैराग्य जागृत हो गया । घर पर आकर इन्होंने ने अपने माता पिता से आज्ञा लेकर पांचसौ क्षत्रिय-कुमारों के साथ दीक्षा अंगीकार करली । उस समय भगवान् को केवल ज्ञान प्राप्त हुए को चौदह वर्ष व्यतीत हो चुके थे । पति को दीक्षित देखकर प्रियदर्शना ने भी एक हजार स्त्रियों के साथ दीक्षा अंगीकार करली । प्रभु ने पांचसौ मुनियों को जमालिमुनि की नेस-राय में करदिये, एवं एक हजार साध्वियों को प्रियदर्शना साध्वी की नेसराय में कर दी । पांचसौ जमालि के शिष्य और एक हजार साध्वियां प्रियदर्शना की शिष्याएँ हुई । जमालिमुनि ने श्री वर्धमान-

પતિ હતા. એક સમયની વાત છે કે, શ્રી વીર વર્ધમાનસ્વામી દીક્ષા લીધા પછી ક્ષત્રિયકુન્ડપુરમાં પધાર્યા. જમાલિ પોતાની પત્ની પ્રિયદર્શનાની સાથે તેમને વંદના કરવા માટે આત્યા. ભગવાને તેમને ધર્મદેશના આપી. દિવ્ય ધર્મ દેશનાનું પાન કરતાં જમાલિને વૈરાગ્ય જાગૃત થયો. ઘેર આવી પોતાનાં માતાપિતાની આજ્ઞા લઈ તેમણે પાંચસો ક્ષત્રિય કુમારો સહિત દીક્ષા અંગીકાર કરી. આ સમયે ભગવાનને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયા ને ચૌદ વર્ષ વિતી ગયાં હતાં. પતિને દીક્ષિત થયેલા બેઈ પ્રિયદર્શનાએ પણ એક હજાર સ્ત્રીઓ સહિત દીક્ષા અંગીકાર કરી. પ્રભુએ પાંચસો મુનિઓને જમાલિ મુનિની નેસરાયમાં કરી દીધા. અને એક હજાર સાધ્વીઓને પ્રિયદર્શના સાધ્વીની નેસરાયમાં કરી દીધી. જમાલિના પાંચસો શિષ્ય થયા અને એક હજાર સાધ્વીઓ પ્રિયદર્શનાની શિષ્યા થઈ. જમાલિ મુનિએ શ્રી વર્ધમાન સ્વામીની

अथान्यदा जमालिमुनिर्भगवतः श्रीवीरवर्धमानस्वामिनं वन्दित्वा नमस्कृत्य कृताञ्जलिः सन् पप्रच्छ—भगवन् ! भवदाज्ञयाऽन्यत्र विहर्तुमिच्छामि ? तदा भगवता पृथग्विहारे जमालेर्लाभादर्शनात् मौनमवलम्बितम् । जमालिस्तु अप्रतिपिद्धमनुमतं भवतीति मत्वा भगवन्तं वन्दित्वा नमस्कृत्य पञ्चशतशिष्यैः सह तदन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामति ।

अथाऽसौ पञ्चशतैरनगारैः सह ग्रामानुग्रामं विहरन् श्रावस्तीनगर्यां कोष्ठकनामके उद्याने समागतः । तत्र यथाप्रतिरूपमवग्रहं गृहीत्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति ।

स्वामी के साथ विहार करते २ खूब तो तपश्चर्या की और ग्यारह अंगों का अध्ययन भी कर लिया ।

किसी समय जमालि मुनि ने भगवान् श्री वर्धमानस्वामी को दोनों हाथ जोड़कर वन्दना एवं नमस्कार कर के पूछा कि हे भगवान् ! आपकी आज्ञा से मैं दूसरी जगह विहार करना चाहता हूँ । जमालि की बात सुनकर भगवान् ने इस अभिप्राय से कि इनका पृथग् विहार लाभकारी नहीं है, उनको कुछ भी उत्तर नहीं दिया किन्तु मौन रहे । भगवान् ने जब जमालि से कुछ भी नहीं कहा तो उन्होंने ने यह समझकर कि “अप्रतिपिद्धं अनुमतम्” अप्रतिपिद्ध अनुमत होता है, वहाँ से प्रभु को वन्दना नमस्कार करके अपने पांचसौ शिष्यों को साथ लेकर विहार कर दिया ।

पांचसौ शिष्यो के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वे श्रावस्ती

साथे विहार करतां करतां भूष तपश्चर्या करी अने अग्यार अंगोने। अभ्यास पशु करी दीधो।

कोई एक समये जमालिमुनिअे लगवान श्री वर्धमान स्वामीने जे हाथ जोडीने वंदना नमस्कार करीने पूछयुं के, जे लगवत ! आपनी आज्ञाथी हुं भीछ जग्याअे विहार करवा छियुं छुं। जमालिनी आ बात सांलगनीने लगवान अेमने। बुद्धो विहार लाभकारी नथी। अेवा अलिप्रायधी मौन रह्या अने उत्तर न आप्यो। लगवाने ज्यारे जमालिने कांछ कछुं नडीं त्यारे तेमले अेम समछ दीधुं के, “अप्रतिपिद्धं अनुमतं भवति” मौन अे अनुमती छे, अेम समछने त्यांथी प्रभुने वंदना नमस्कार करीने पोताना पांचसो शिष्यो साथे प्रभुथी अलग विहार करी दीधो।

पांचसो शिष्योनी साथे ग्रामानुग्राम विहार करतां करतां तेअो श्रावस्ती

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरोऽन्यदा कदाचित् पूर्वानुपूर्व्याचरन् यावत् सुखंसुखेन विहरन् यत्रैव चम्पानगरी यत्रैव पूर्णभद्रनामकमुद्यानं तत्रैवापागतः, उपांगत्य यथाप्रतिरूपमवग्रहं गृहीत्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति।

ततः खलु तस्य जमालेरनगारस्य शरीरेऽन्तप्रान्तरुक्षतुच्छाहारैरन्यदा कदाचित् विपुलरोगातङ्कः प्रादुर्भूतः। तदा स उपवेष्टुमशक्तः सन्ननगारान् प्राह—मम संस्तारकः शीघ्रं क्रियताम्। ते मुनयः संस्तारकं कर्तुं प्रवृत्ताः। जमालिस्तान् पुनः पुनः पृच्छति—संस्तारकः कृतो नो वा भवद्भिः? त उच्युः—संस्तारकः कृतो

नगरी के कोष्ठक नामक उद्यान में आये। वहां वनपाल से वसति की आज्ञा ग्रहण कर संयम एवं तप से अपनी आत्मा को भवित करते हुए विचरने लगे।

श्रमण भगवान् महावीर ने भी कोई समय पूर्वानुपूर्वी से ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वे चंपानगरी के पूर्णभद्रनामक उद्यान में पधारे और यथाप्रतिरूप अवग्रह (वसति की आज्ञा) ग्रहण कर संयम एवं तप से आत्मा को भवित करते हुए विचरने लगे।

इधर जमालि के शरीर में अन्त प्रान्त रुक्ष एवं तुच्छ आहार के लेने से अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो गये। इससे ये बैठने में भी अशक्त बन गये। इस स्थिति में इन्होंने अपने शिष्यों से कहा—मेरे लिए संस्तारक शीघ्र कर दो। मुनियों ने संस्तारक करना प्रारंभ कर दिया।

नगरीना डोळक नामना आगमां आवी पडोऱ्या. त्यां वनपाल पासैथी आज्ञा लधने उतर्या. अने ते स्थळे संयम अने तपथी पोतानी आत्माने लावित करतां करतां विचरवा लाग्या.

श्रमणु भगवान् महावीर पणु डोळ संयम पूर्वानुपूर्वीथी ग्रामानुग्राम विहार करता करता चंपानगरीना पूर्णभद्र नामना आगमां पधार्या. अने यथाप्रतिरूप अवग्रह (वसतीनी आज्ञा) लधने संयम अने तपथी आत्माने लावित करतां करतां विचरवा लाग्या.

आ तरक्ष जमालिना शरीरमां अन्त, प्रान्त, रुक्ष तेमज तुच्छ आहार लेवाथी अनेक प्रकारना रोगो उत्पन्न थया, आ रोगोना कारवु तेओ जेसवामां पणु अशक्त जनी गया। आ स्थितिमां तेमवु पोताना शिष्योने कहुं के, भारे भाटेजव्ही संस्तारक (पयारी) करी हो. मुनियो संस्तारकनी तयारी करवा लाग्या जमालिओ तेमने वारंवार पूछवा भाड्युं के, संस्तारक क - नडी ?



નાસ્તિ, કિં તુ ક્રિયતે, एवमुक्ते सति स जमालिर्मिथ्यात्वमोहनीयोदयात् सम्य-  
क्त्वपरिभ्रष्टः सन् व्यचिन्तयत्-क्रियमाणं कृतमिति जिनोक्तं सत्यं न भवितुमर्हति,  
यतोऽयं संस्तारकः क्रियमाणो न कृतः संस्तीर्यमाणोऽपि न संस्तृतः इत्युच्यते ।  
इति मनसि विचिन्त्य तत्र सर्वान् मुनीनाहूय जमालिः प्राह—यत् क्रियमाणं तत्  
कृतम्, यच्चलत् तच्चलितम्, यदुदीर्यमाणं तदुदीरितम्, इत्यादि श्रीमहावीरस्वा-  
मिना यद् भाषितं तत् खलु मिथ्या, क्रियमाणे संस्तारके शयनरूपार्थसाधकत्वा-  
भावेन कृतत्वाभावात् ।

जमालि ने उनसे चार २ पूछना शुरू किया कि संस्तारक किया या नहीं ?  
उन्हों ने कहा संस्तारक अभी नहीं किया है कर रहे हैं । इस  
प्रकार जब उन्होंने ने कहा तब मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से  
सम्यक्त्व से पतित होकर जमालि ने विचार किया कि “ क्रियमाणं  
कृतम् ” जो किया जा रहा है वह “ किया गया ” ऐसा जो जिन  
भगवान ने कहा है वह सत्य नहीं हो सकता है, क्यों कि संस्तारक  
क्रियमाण है वह “ कृतः ” किया गया ऐसा नहीं कहा जा सकता है ।  
उसी तरह यह तो अभी “ संस्तीर्यमाण ” है विछाया जा रहा है, इसे  
“ संस्तृतः ” विछ गया है, ऐसे कैसे कह सकते हैं । इस प्रकार विचार  
कर उन्होंने ने अपने समस्त शिष्यों को बुलाकर कहा कि देखो भगवान्  
वीर प्रभु जो ऐसा कहते हैं कि “ क्रियमाणं कृतम् ” “ यच्चलत् तत्  
चलितम् ” “ यदुदीर्यमाणं तदुदीरितम् ” जो क्रियमाण है वह  
किया गया है, जो चल रहा है वह चल चुका है, जो उदय में आ

शिષ્યોએ કહ્યું કે, સંસ્તારક હજી કરેલ નથી પરંતુ કરીએ છીએ આ પ્રકારે  
જ્યારે શિષ્યોએ કહ્યું, ત્યારે મિથ્યાત્વ મોહનીયતા ઉદયથી સમ્યક્ત્વથી પતિત  
થઈને જમણિએ વિચાર કર્યો કે, “ ક્રિયમાણં કૃતં ” ને કરવામાં આવે છે તે  
“ થઈ ચૂક્યું ” એવું ને જીન ભગવાને કહ્યું છે તે સત્ય ઠરતું નથી. કેમ કે  
સંસ્તારક ક્રિયમાણ છે તે “ કૃતઃ ” થઈ ચૂક્યું છે એમ કહી શકાય નહિ.  
આ પ્રમાણે આ ને હમણાં “ સંસ્તીર્યમાણ ” છે—ખીછાવવામાં આવે છે એને  
ખીછાવી દીધલ છે એમ કેમ કહી શકાય ? આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેમણે  
પોતાના સમસ્ત શિષ્યોને બોલાવીને કહ્યું કે, જુઓ ભગવાન વીર પ્રભુ ને એમ  
કહે છે કે, “ ક્રિયમાણં કૃતમ્ ” “ યચ્ચલત્ તત્ ચલિતમ્ ” “ યદુદીર્યમાણં તદુ-  
દીરિતમ્ ” ને ક્રિયમાણ છે તે થઈ ચૂક્યું છે, ને ચાલી રહ્યું છે, તે ચાલી

તતઃ સ્વલુ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરોઽન્યદા કદાચિત્ પૂર્વાનુપૂર્વાચરન્  
યાવત્ સુલેસુલેન વિહરન્ યત્રૈવ ચમ્પાનગરી યત્રૈવ પૂર્ણભદ્રનામકમુદ્યાનં તત્રૈવાંષા-  
ગતઃ, ઉપાગત્ય યથાપતિરૂપમવગ્રહં ગૃહીત્વા સંયમેન તપસાઽઽત્માનં ભાવયન્ વિહરતિ ।

તતઃ સ્વલુ તસ્ય જમાલેરનગારસ્ય શરીરેઽન્ત્રાન્તરૂક્ષતુચ્છાહારૈરન્યદા કદા-  
ચિત્ વિપુલરોગાતઃ પ્રાદુર્ભૂતઃ । તદા સ ઉપવેણ્ડુમશક્તઃસન્નનગારાન્ પ્રાહ-મમ  
સંસ્તારકઃ શીઘ્રં ક્રિયતામ્ । તે મુનયઃ સંસ્તારકં કર્તુ મૃત્તાઃ । જમાલિસ્તાન્ પુનઃ  
પુનઃ પૃચ્છતિ-સંસ્તારકઃ કૃતો નો વા ભવદ્ધિઃ ? ત ડચુઃ-સંસ્તારકઃ કૃતો

નગરી કે કોષ્ઠક નામક ઉદ્યાન મેં આયે । વહાં વનપાલ સે વસતિ કી  
આજ્ઞા ગ્રહણ કર સંયમ એવં તપ સે અપની આત્મા કો ભવિત કરતે  
હુએ વિચરને લગે ।

શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર ને મી કોઈ સમય પૂર્વાનુપૂર્વી સે ગ્રામા-  
નુગ્રામ વિહાર કરતે હુએ વે ચંપાનગરી કે પૂર્ણભદ્રનામક ઉદ્યાન મેં  
પધારે ઓર યથાપતિરૂપ અવગ્રહ ( વસતિ કી આજ્ઞા ) ગ્રહણ કર સંયમ  
એવં તપ સે આત્મા કો ભવિત કરતે હુએ વિચરને લગે ।

ઈધર જમાલિ કે શરીર મેં અન્ત પ્રાન્ત રૂક્ષ એવં તુચ્છ આહાર કે  
લેને સે અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હો ગયે । ઇસસે યે બેઠને મેં મી  
અશક્ત વન ગયે । ઇસ સ્થિતિ મેં ઇન્હોં ને અપને શિષ્યોં સે કહા-મેરે લિએ  
સંસ્તારક શીઘ્ર કર દો । મુનિયોં ને સંસ્તારક કરના પ્રારંભ કર દિયા ।

નગરીના કોષ્ઠક નામના બાગમાં આવી પહોંચ્યા. ત્યાં વનપાલ પાસેથી આજ્ઞા  
લઈને ઉતર્યા. અને તે સ્થળે સંયમ અને તપથી પોતાની આત્માને ભાવિત  
કરતાં કરતાં વિચરવા લાગ્યા.

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પણ કોઈ સમય પૂર્વાનુપૂર્વીથી ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર  
કરતા કરતા ચંપાનગરીના પૂર્ણભદ્ર નામના બાગમાં પધાર્યા. અને યથાપતિરૂપ  
અવગ્રહ ( વસતિની આજ્ઞા ) લઈને સંયમ અને તપથી આત્માને ભવિત કરતાં  
કરતાં વિચરવા લાગ્યા.

આ તરફ જમાલિના શરીરમાં અન્ત, પ્રાન્ત, રૂક્ષ તેમજ તુચ્છ આહાર  
લેવાથી અનેક પ્રકારના રોગો ઉત્પન્ન થયા, આ રોગોના કારણે તેઓ  
બેસવામાં પણ અશક્ત બની ગયા. આ સ્થિતિમાં તેમણે પોતાના શિષ્યોને કહ્યું કે,  
મારે માટે જલ્દી સંસ્તારક (પદાર્થ) કરી દો. મુનિઓ સંસ્તારકની તૈયારી કરવા  
લાગ્યા જમાલિએ તેમને વારંવાર પૂછવા માડ્યું કે, સંસ્તારક કયો કે નહીં ?

इत्यादि; तत्सर्वमसंबद्धमेवेति । एवं मिथ्यात्वमोहनीयोदयात् जमालिमुन्मार्गगतं  
ज्ञात्वा स्थविरा अवदन्-जमाले । भगवत आशयं न जानासि, भगवान् आप्तः,  
विगतदोषसत्यवक्ता, तन्मतमनेकान्तवादात्मकम्, एकोपि प्रदार्थः अपेक्षाभेदेन  
अनेकरूपो भवति; यथा एक एव पुरुषः अपेक्षाभेदेन जामाताः श्यालकः पुत्रः  
पिता च । तथैव प्रकृतेऽपि क्रियमाणत्वेपि संस्तारके कृतत्वं संभवति । पटस्य  
क्रियमाणतायां कृतः पटः' इत्यादिवत् । ननु कथं क्रियमाणं पटादिकं कृतं स्यादिति  
चेत्तत्रोच्यते-पटस्योत्पद्यमानताकाले प्रथमतन्तुप्रवेशे उत्पद्यमान एव पट उत्पन्नो

-‘इत्यादि’ सो यह श्रद्धेय नहीं है । इस प्रकार भाग्यदोष से  
जमालि को विपरीत मार्ग में जाते हुए देखकर स्थविरा ने कहा-हे  
जमालि ! आप भगवान के आशय को नहीं जानते हो । भगवान सर्व  
दोष-रहित यथार्थवक्ता हैं । भगवान का मत अनेकान्तरूप है । एक  
ही प्रदार्थ अपेक्षा-भेद से अनेकरूप होता है । जैसे एक ही पुरुष शशुर  
की अपेक्षा से जामाता कहलाता है, वहनोई की अपेक्षा साला कहलाता है  
पिता की अपेक्षा से पुत्र कहलाता है, पुत्र की अपेक्षा से पिता कह-  
लाता है । वंसी प्रकार प्रकृत में आपका विस्तर हो भी रहा है, हो भी  
गया है, ऐसा कह सकते हैं । जैसे कि पट की क्रियमाणता में भी  
कृतत्वं का व्यवहार होता है उसी तरह । पुनः प्रश्न करता है कि जो  
क्रियमाण है वह कृत कैसे हो सकता है ? इसका उत्तर देते हैं-पट के  
उत्पत्तिकाल में प्रथम तंतु के प्रवेश समय में भी वह उत्पन्न होता ही है

તે શ્રદ્ધા-કરણીયો નથી. આ પ્રમાણે ભાગ્યદોષથી વિપરીત માર્ગે જતા  
જમालીને જોઈ તે સ્થવિરોએ તેઓને કહ્યું કે-હે જમालિ ! તમે ભગવાનના  
આશયને જાણતા નથી. ભગવાન સર્વદોષ રહિત સાચું જ્ઞાતવાવાળા છે.  
ભગવાનનો મત અનેકાન્ત રૂપ છે. એક જ પ્રદાર્થ અપેક્ષા લેઢથી અનેકરૂપ થાય  
છે, જેમ એક જ પુરુષ સસરાની આગળ જમાઈ કહેવાય છે, બનેલીની આગળ સાળો  
કહેવાય છે, અને પિતા આગળ પુત્ર કહેવાય છે. અને તે જ પુરુષ પુત્ર આગળ  
પિતા કહેવાય છે. એવી જ રીતે પ્રસ્તુતમાં આપની પચારી થઈ રહી છે. થઈ પણ  
ગઈ છે. એવું કહેવામાં આવે છે. જેવી રીતે પ્રદર્શી ક્રિયમાણતામાં કૃતત્વનો  
વ્યવહાર થાય છે, તેવી જ રીતે.

...કરીથી પ્રશ્ન કરે છે કે-જે ક્રિયમાણ છે તે કૃત કેવી રીતે થઈ શકે ?  
...એનો ઉત્તર આપતાં કહે છે કે-પટના ઉત્પત્તિકાળમાં પ્રથમ તન્તુના પ્રવેશ  
...અર્થે પટને ઉત્પન્ન થાય છે. કેમકે પ્રથમ તન્તુપ્રવેશ કાળથી જ “ પટ

કૃતે સંસ્તારકે શયનાર્થક્રિયાકારિત્વં વિધતે, કરણસમયે હુ નાસ્તિ તાદૃશી અર્થક્રિયા, અતઃ ક્રિયમાણં કૃતમિતિ વ્યપદેશઃ કથં સ્યાત્ ? । કિંચ-ક્રિયમાણમિતિ વર્તમાનવ્યપદેશઃ, કૃતમિતિ ચ ભૂતવ્યપદેશઃ, વર્તમાનત્વં ભૂતત્વં ચ પરસ્પરવિરુદ્ધમિતિ પરસ્પરવિરુદ્ધયોસ્તયોરેકતા ન સ્યાત્, વર્તમાનધ્વંસપ્રતિયોગિત્વસ્ય ભૂતત્વાદિતિ મહાવીરસ્વામિના યત્ પ્રતિપાદિતમ્-‘ કરેમાણે કઢે ચલમાણે ચલ્લિય ’

રહા હૈ વહ ઉદય મેં આચુકા હૈ ” સો વહ સય મિથ્યા હૈ, કારણ કિ ક્રિયમાણ સંસ્તારક મેં શયનરૂપ અર્થક્રિયા કે પ્રતિ સાધકત્વ કા અભાવ હોને સે વહાં કૃતત્વ નહીં આ સકના હૈ ।

સંસ્તારક (વિસ્તર) કરને કે યાદ હી ઉસમેં શયનાદિરૂપ અર્થ ક્રિયાકારિતા આતી હૈ, પરન્તુ સંસ્તારક કરને કે સમય મેં ઉસમેં ઉસ પ્રકાર કી અર્થક્રિયાકારિતા નહીં હૈ, ફિર “ ક્રિયમાણં કૃતમ્ ”-ક્રિયમાણ કૃત હોતા હૈ-યહ વ્યપદેશ કૈસે હો સકતા હૈ ? ।

ઑર મી-“ ક્રિયમાણમ્ ” યહ વર્તમાન કાલ કા કથન હૈ ઑર “ કૃતમ્ ” યહ ભૂતવ્યપદેશ હૈ । ભૂત ઑર વર્તમાન પરસ્પર વિરુદ્ધ હૈ, ઑર પરસ્પર વિરુદ્ધ દો પદાર્થોં કી એકતા નહીં હો સકતી હૈ, ક્યોં કિ વર્તમાન કાલ મેં વિદ્યમાન જો ધ્વંસ ઉસકે વિરોધી કા નામ હૈ ભૂત, એતાદૃશ ભૂત ઑર વર્તમાન યે દોનોં એક અધિકરણ મેં નહીં રહ સકતે હૈ । ફિર જો મહાવીર સ્વામી ને કહા હૈ કિ ક્રિયમાણં કૃતમ્, ચલત્ ચલિતમ્

ચુકયું છે, જે ઉદયમાં આવી રહેલ છે તે ઉદયમાં આવી ચુકેલ છે, એ બધું સઘળું મિથ્યા છે. ઝરણુ કે, ક્રિયમાણુ સંસ્તારકમાં શયનરૂપ અર્થ ક્રિયામાં સાધકત્વના અભાવથી ત્યાં કરેલ છે એમ આવી શકતું નથી.

સંસ્તારક (પથારી) ક્યાં પછી જ તેમાં શયનાદિરૂપ “ ક્રિયાકારિતા ” આવે છે. પરન્તુ સંસ્તારક કરતી વખતે તો તેમાં તેવા પ્રકારની ‘ અર્થક્રિયા કારિતા ’ આવતી નથી. તો પછી ક્રિયમાણં કૃતમ્-ક્રિયમાણુ કૃત થાય છે, એવો વ્યવહાર કેવી રીતે થઈ શકે ?

વળી “ ક્રિયમાણમ્ ” એ વર્તમાનકાળનું કથન છે. અને “ કૃતમ્ ” એ ભૂતકાળનો વ્યવહાર છે. ભૂત (કાળ) અને વર્તમાન એ બન્ને પરસ્પર વિરુદ્ધ અર્થવાળાં છે. એટલે પરસ્પર વિરુદ્ધ એવા એ પદાર્થોની એકતા થઈ શકતી નથી. કેમકે વર્તમાનકાળથી વિરુદ્ધ ભૂત (કાળ) છે, એવા પ્રકારનો ભૂત અને વર્તમાન એ બન્ને એક અધિકરણમાં રહી શકતા નથી. તો પછી મહાવીર સ્વામીએ જે કહ્યું છે કે, “ ક્રિયમાણં કૃતમ્ ” “ ચલત્ ચલિતમ્ ”-વિગેરે

પ્રવેશે પટસ્યોત્પત્તિરિતિ પ્રથમસમયાદારમ્ય કિञ્ચિત્ કાર્ય સર્વેરપિ. ક્ષણેઃ કૃતમિતિ મન્તવ્યમ્ । યદિ પ્રથમક્રિયા નોત્પન્નઃ પટસ્તદા ઉત્તરક્રિયાપિ નોત્પન્નઃ સ્યાદિતિ સર્વદેવ પટાનુત્પત્તિપ્રસંગઃ, સ ચ ન કસ્યાપિ ઇષ્ટઃ, અતઃ પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાલે એવ કિञ્ચિદુત્પન્નપટસ્ય યાવાન્ અંશો નોત્પન્નઃ સ ઇવાંશઃ ઉત્તરક્રિયા ઉત્પાદ્યતે યદિ પુનરુત્પદ્યેત તદા એકદેશેનૈવ ઉત્પાદનં ક્રિયાયા ઇતિ સ્વીકર્તવ્યમ્ । યદિ પ્રથમાં-  
શોત્પાદનનિરપેક્ષા દ્વિતીયાદિક્રિયા તદૈવ દ્વિતીયા ફલવતી સ્યાત્, નાન્યથા, તતથ યથા ઉત્પદ્યમાન એવ પટ ઉત્પન્નઃ, તથા ક્રિયમાણમેવ સંસ્તારકં કૃતમિતિ—

અન્તિમ તન્તુ કે પ્રવેશ હોને પર પટ કો ઉત્પત્તિ હોતી હૈ હસલિયે 'પટ ઉત્પન્નઃ'—એસા વ્યવહાર હોતા હૈ, અતઃ એસા માનો કિ પ્રથમ સમય સે લેકર કુછર કાર્ય સમી ક્ષણોં મેં હોતા હૈ । યદિ કદોચિત્ પ્રથમ ક્રિયા સે પટ ઉત્પન્ન નહોં છુઆ તો દ્વિતીય સે મી ઉત્પન્ન નહોં હોગા, તૃતીય સે મી નહોં હોગા, હસ પ્રકાર અન્તિમ ક્રિયા સે મી નહોં હોગા તો પટકી કમી મી ઉત્પત્તિ નહોં હોગી । પરન્તુ યહ કિસી કો મી ઇષ્ટ નહોં હૈ । અતઃ પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાલ મેં મી ધોડા પટ ઉત્પન્ન છુઆ, ઓર જો અંશ અનુત્પન્ન હૈ વહ દ્વિતીયાદિ ક્ષણોં મેં હોતા હૈ । હસ પ્રકાર યહ સિદ્ધાન્ત હોતા હૈ કિ ક્રિયા કો એક દેશ સે હી ઉત્પાદકત્વ હૈ, ઓર યહ આપકો મી માનના પડેગા । યદિ પ્રથમ અંશ કે ઉત્પાદન સે નિરપેક્ષ દ્વિતીય ક્રિયા કો માનોગે તમી દ્વિતીયાદિ ક્રિયાયેં સાર્થક હોગી, અન્યથા નહોં । તવ જૈસે પ્રથમ ક્રિયા સે ઉત્પન્ન હોતે છુપ પટ કી ઉત્પત્તિ દ્વિતીયાદિ ક્રિયા સે હોતી હૈં ઉસી પ્રકાર

તન્તુના પ્રવેશ થતાની સાથે જ પટની ઉત્પત્તિ થાય છે. એટલા માટે “પટઃ ઉત્પન્નઃ” એવો વ્યવહાર થાય છે. એટલે એવું માનવું નોંધ્યો કે પ્રથમ સમયથી લઈને દરેક ક્ષણે કંઈક કંઈક કાર્ય થાય છે જ. નો કદાચ પ્રથમ ક્રિયાથી પટ ઉત્પન્ન ન થયું તો બીજીથી પણ ઉત્પન્ન થશે. નહીં. અને ત્રીજીથી પણ ઉત્પન્ન થશે નહિ. તેવી જ રીતે અન્તિમ ક્રિયાથી પણ થશે નહીં, અને એ રીતે તો પટની કોઈ રીતે ઉત્પત્તિ થશે જ નહીં. પરંતુ એ વાત કોઈ માની શકે તેમ નથી. એટલે પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાળમાં પણ પટનો થોડો ભાગ ઉત્પન્ન થયો, અને જે અંશ ઉત્પન્ન નથી થયો, તે બીજી ત્રીજી વિગેરે ક્ષણોમાં થાય છે. આ રીતે એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે ક્રિયાના એક દેશથી જ ઉત્પાદ-  
કત્વ છે. અને એ વાત તમારે પણ માનવી પડશે. નો પ્રથમ અંશના ઉત્પાદનથી નિરપેક્ષ દ્વિતીય ક્રિયાને માનશે. ત્યારે જ દ્વિતીયાદિક્રિયાઓ સાર્થક થશે. અન્ય રીતે નહીં. તો જેવી રીતે પ્રથમ ક્રિયાથી ઉત્પન્ન થતા પટની ઉત્પત્તિ દ્વિતીયાદિ

भवति, उत्पद्यमानता च पटस्य प्रथमतन्तुप्रवेशकालादारभ्यैव भवति तदैव 'पट उत्पद्यते' इति व्यवहारदर्शनात् । उत्पन्नत्वमपि तस्य पटस्य तत्काले एव, तथाहि-उत्पत्तिक्रियाकाले-प्रथमतन्तुप्रवेशे एवासौ उत्पन्नोऽभूत्, अन्यथा उत्पत्तिक्रियाकाले यदि तस्य पटस्योत्पत्तिर्न स्वीक्रियेत तदा प्रथमक्रिया निरर्थिका स्यात्, कार्यकरणमेव धर्मः क्रियायाः । यदि प्रथमक्रिया उत्पत्तिरूपं कार्यं न कुर्यात् तदा सा निरर्थिकैव स्यात्, उत्पाद्योत्पादनमेव क्रियाया धर्मः । एवं यथा प्रथमक्षणे पटो नोत्पन्नस्तथा द्वितीयक्षणेऽपि नोत्पन्न एव, तृतीयादावपि क्षणे नोत्पन्न इति अन्तिमक्रियायापि अनुत्पन्न एव स्यात्, युक्तेः सर्वत्र समानत्वात् । यदा तु प्रथमादिक्रियाया न किमपि फलमुत्पादितं तदा अन्त्यया फलं स्यादिति प्रत्याशामात्रमेव, दृश्यते चान्त्यतन्तु'

क्यों कि प्रथमतन्तुप्रवेश-काल से ही 'पट उत्पन्न होता है' ऐसा व्यवहार देखने में आता है । तथा उत्पन्नत्व भी उस पट में उस काल से ही है, क्यों कि उत्पत्तिक्रियाकाल में प्रथम तन्तु के प्रवेश होने पर ही पट उत्पन्न हो गया, यदि उस पट की उत्पत्ति स्वीकार नहीं करें तो वह प्रथम क्रिया निरर्थक हो जायगी, कारण कि कार्योत्पाद ही क्रिया का धर्म है । यदि ऐसा मानें कि प्रथम क्षण में पट उत्पन्न नहीं हुआ तो इसी तरह द्वितीय क्षण में भी उत्पन्न नहीं होगा, तृतीय क्षण में भी उत्पन्न नहीं होगा, इस तरह से अन्तिम क्रिया तक पट की उत्पत्ति नहीं होगी, क्यों कि युक्ति सर्वत्र समान है ।

‘यदि प्रथम क्रिया से कुछ भी फल नहीं हुआ तो अन्तिम क्रियासे भी उत्पादरूप फल का होना असंभव ही है, परन्तु देखने में आता है कि

ઉત્પન્ન થાય છે” એવો વ્યવહાર જોવામાં આવે છે. તથા ઉત્પન્ન થવાપણું પણ તે પટમાં તે ક્ષણથી જ છે, કેમકે ઉત્પત્તિક્રિયાક્ષણમાં પ્રથમતન્તુનાં પ્રવેશ થતાંની સાથે જ પટ ઉત્પન્ન થઈ ગયું, જો તે પટની ઉત્પત્તિનો સ્વીકાર ન કરીએ તો તે પ્રથમક્રિયા નિરર્થક થઈ જશે. કારણ કે કાર્યની ઉત્પત્તિ જ ક્રિયાનો ધર્મ છે. કહાય જો એમ માનીએ કે પ્રથમ ક્ષણમાં પટ ઉત્પન્ન થયું નથી. તો એવી જ રીતે બીજાં ક્ષણમાં પણ ઉત્પન્ન નહિ થાય, તેમ જ ત્રીજાં ક્ષણમાં પણ ઉત્પન્ન થશે નહીં. એવી જ રીતે અંતિમક્રિયા સુધી પટની ઉત્પત્તિ થશે નહીં, કેમકે ક્રિયા સર્વત્ર એકસરખી હોય છે.

જો પ્રથમ ક્રિયાથી કંઈ પણ ફલ ન થયું તો અંતિમ ક્રિયાથી પણ ઉત્પાદરૂપ ફલનું થવું અસંભવ જ છે. પરંતુ જોવામાં આવે છે કે અંતિમ



અથ યસ્મિન્નેવ સમયે ઘટાદિકાર્ય પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્મિન્નેવ સમયે નિષ્પદ્યતે, અતો નિષ્પન્નમેવ તત્ ક્રિયતે-ઇતિ ચેન્નૈવમ્, યસ્માત્ ઘટાદિકાર્યાણામુત્પદ્યમાના- નામસંદ્યેયસમયરૂપો દીર્ઘ એવ નિર્વર્તનક્રિયાકાલો દૃશ્યતે, અતો ન યસ્મિન્નેવ

-અવસ્થા મેં અવિદ્યમાન રહતા હૈ, કુંભકારાદિક કે વ્યાપાર કે વાદ હી વહ ઉત્પન્ન હુઆ માના જાતા હૈ । ઇસલિયે જો અકૂન હોતા હૈ વહી ક્રિયા જાતા હૈ કૃત નહીં ક્રિયા જાતા, એસા માનના ચાહિયે । યહ તીસરા પક્ષ હૈ ।

યદિ કોઈ “કૃતં ક્રિયતે” ઇસ વ્યવહાર કો સત્ય સાવિત કરને કે લિયે એસા કહે કિ-જિસ સમય મેં ઘટાદિક કાર્ય વનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ ઉસી સમય મેં નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ ઇસલિયે જવ નિષ્પન્ન હી ઘટ ક્રિયા જાતા હૈ તય “કૃતમેવ ક્રિયતે” ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર મેં કૌનસી વાધા આતી હૈ ? સો એસા કહના મી ઠીક નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઉત્પદ્યમાન ઘટાદિક કાર્યોં કી ઉત્પત્તિરૂપ ક્રિયા કા વહ સમય અસં- દ્યાતસમયરૂપ વહુત ભારી કાલ હૈ । એસા નહીં હૈ કિ જિસ સમય ઘટ વનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ ઉસી સમય નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ । ઇસકે વનને મેં તો વહુત સમય લગતા હૈ । મિટ્ટી કા લાના, ઉસકા પિંડ વનાના, ઉસે ચક્ર પર રાવના શિવક આદિ પર્યાય મેં ઉસે પરિણમિત કરના, ઇસ પ્રકાર ઘટ કી ઉત્પત્તિ હોને મેં વહુત અધિક સમય લગ જાતા હૈ,

અવસ્થામાં ઘટ તરીકે તો અવિદ્યમાન રહે છે. કુંભકારાદિકના વ્યાપાર ણાદિ જ તે ઉત્પન્ન થયેલ માનવામાં આવે છે. આ માટે જે અકૃત હોય છે તેજ કરવામાં આવે છે. કૃત નથી કરાતું એવું માનવું જોઈએ. આ ત્રીજો મુદ્દો છે. ॥ ૩ ॥

જો કેઈ “કૃતં ક્રિયતે” આ વ્યવહારને સાચો સાબીત કરવા માટે એવું કહે કે જે સમયમાં ઘટાદિ બનાવવાના કાર્યનો પ્રારંભ થાય છે તે એ સમયમાં પુરું થાય છે માટે બ્યારે નિષ્પન્ન જ ઘટ કરવામાં આવે છે. ત્યારે “ક્રિયતે” આ પ્રકારના વ્યવહારમાં કઈ વાધા આવે છે ? તેથી એમ કહેવું એ થણુ ઠીક નથી. કેમકે, ઉત્પદ્યમાન ઘટાદિક કાર્યોની ઉત્પત્તિરૂપ ક્રિયાનો તે સમય અસં- દ્યાત સમયરૂપ ઘણો ભારે કાળ છે. એવું નથી કે, જે સમયે ઘટ બનાવવાનો પ્રારંભ થાય છે તે તેજ સમયે નિષ્પન્ન થઈ જાય છે. તેના બનાવવામાં તો ઘણો સમય લાગે છે. માટીને લાવવી, તેને કચરીને તેનો પિંડ બનાવવો, તે પછી તેને ચાકડા ઉપર ચઢાવવો, તેને આકાર આપવો, આ રીતે ઘટની ઉત્પત્તિ થવામાં ઘણો જ લાંબો સમય લાગે છે. આથી જે સમયે ઘટને બનાવવાનો

यदि कृतमपि क्रियते, तदाऽन्येऽपि दोषाः सन्ति, तथाहि—यदि कृतमपि क्रियते, अर्थात्—क्रियमाणं कृतं मन्यते तदा घटादिकार्योत्पादनार्थं मृन्मर्दनचक्र-भ्रमणादिकायाः क्रियाया वैफल्यं स्यात्, तस्मिन् काले कार्यस्य घटस्य कृतत्वा-भ्युपगमात्, तस्य प्रागेव सत्त्वात् ॥ २ ॥

किञ्च—कृतं क्रियते इति यन्मन्यते तत्र, प्रत्यक्षविरोधः, यस्मादुत्पत्तेः पूर्वं मृत्पिण्डावस्थायामविद्यमानं, पश्चात् कुम्भकारादिव्यापारे घटादिकार्यजायमानं दृश्यते उत्पत्तिकाले, तस्मादकृतमेव क्रियमाणं भवति ॥ ३ ॥

સદ્ભાવ સે કમી મી વહાં મન્ય-હોને-રૂપ ક્રિયા કી પરિસમાપ્તિ નહીં હો સકને કે કારણ કિસી મી કાર્ય કી પૂર્ણરૂપ સે નિષ્પત્તિ નહીં હો સકેગો । યહ કાર્યઅનિષ્પત્તિરૂપ પ્રથમ દોષ હૈ ॥ ૧ ॥

यदि कृत भी “क्रियते” ऐसा माना जाय अर्थात् जो हो चुका है वह भी किया जाता है ऐसा ही पक्ष स्वीकार किया जाय तो इसका यह भी तात्पर्य होता है कि जो क्रियमाण है—हो रहा है—वह हो चुका ऐसा कहा जाता है तो इस पक्ष में यह सब से प्रबल दोष उपस्थित होता है कि घटादि कार्य की उत्पत्ति के लिये जो मिट्टा का मर्दन चाक का भ्रमण आदि क्रियाएँ की जा रही हैं ये सब निष्फल हो जाती हैं, क्योंकि कि क्रियमाण अवस्था में भी घट कृत तो हो चुका तब उसके वर्तमान होनेसे निष्पन्न करने की क्या आवश्यकता रही? यह दूसरा पक्ष है ॥ २ ॥

और भा—“कृतं क्रियते” यह व्यवहार इसलिये भी दूषित साबित होता है कि जबतक घट उत्पन्न नहीं हो जाना है तब तक वह मृत्पिण्ड

તર ઘટોત્પત્તિરૂપ ક્રિયાના સદ્ભાવથી કહી પણ ત્યાં ભવન-થવારૂપ ક્રિયાની પરિસમાપ્તિ ન થઈ શકવાના કારણે કોઈ પણ કાર્યની પૂર્ણરૂપથી નિષ્પત્તિ થઈ શકશે નહીં. આ કાર્ય અનિષ્પત્તિરૂપ પ્રથમ દોષ છે. ॥ ૧ ॥

જો કૃત પણ “ક્રિયતે” એમ માનવામાં આવે અર્થાત જે બની ગયેલ છે તે પણ કરવામાં આવી રહ્યું છે તેવો સ્વીકાર કરવામાં આવે તો તેનું એ તાત્પર્ય થાય છે કે, જે ક્રિયમાણ છે બની રહ્યું છે તે બની ચુક્યું એમ કહેવામાં આવે છે તો આ પક્ષમાં એ બધાથી મોટો દોષ ઉપસ્થિત થાય છે. ઘટાદિકાર્યની ઉત્પત્તિ માટે જે માટીનું મર્દન અને ચાકનું ભ્રમણ આદિ ક્રિયાઓ કરવામાં આવે છે તે બધી નિષ્ફળ બની જાય છે. કેમકે, ક્રિયમાણ અવસ્થામાં પણ ઘટ કૃત તો થઈ ગયો તો એનું વર્તમાન થવાથી નિષ્પન્ન કરવાની કઈ આવશ્યકતા રહી? આ બીજો સુદો. ॥ ૨ ॥

વળી—“કૃતં ક્રિયતે” આ વ્યવહાર એટલા માટે પણ દૂષિત સાબિત થાય છે કે, જ્યાં સુધી ઘટ ઉત્પન્ન નથી થતો ત્યાં સુધી તે માટીના પિંડની

તદાનીમદર્શનાત્ । દીર્ઘક્રિયાકાલસ્યાન્તે તુ કાર્યં ભવિતુમર્હતિ, તદાનીમેવ તસ્ય દર્શનાત્ । તદેવં ન નિર્વર્તનક્રિયાકાલે કાર્યમસ્તિ, અનુપલભ્યમાનત્વાત્, કિંતુ તન્નિષ્ઠાકાલ એવ તદસ્તિ, તત્રૈવોપલભ્યમાનત્વાત્, ક્રિયાકાલનિષ્ઠાકાલયોથાત્યન્ત-  
ભેદાત્, અતઃ ક્રિયમાણં કૃતં ન ભવતિ । સર્વલોકપ્રત્યક્ષાનુભવસિદ્ધમેવૈતત્ ॥ ૫ ॥  
ઇતિ જમાલેઃ પૂર્વપક્ષઃ ।

એવં માર્ગવિચ્યુતં જમાલિં પ્રતિ સ્થવિરાઃ પ્રોચુઃ—આર્ય ! કિં વિરુદ્ધવચનં વદસિ ?, રાગદ્વેષરહિતાનાં સર્વજ્ઞાનાં જિનાનાં વચને દોષલેશોઽપિ નાસ્તિ, નહિ તે મૂળા ભાવન્તે । આર્ય ! “કૃતં ન ક્રિયતે, કૃતત્વાત્, કૃતઘટવત્” ઇતિ કુતર્કમા-

નર્હીં હો સક્તા હૈ, અતઃ “અનુપલભ્યમાનત્વાત્ નિર્વર્તનક્રિયાકાલે વિવક્ષિતઘટરૂપં કાર્યં નાસ્તિ ઇતિ મન્તવ્યમ્” જવ યહ વાત નિશ્ચિત હો જાતી હૈ તો યહ વાત ખી સ્વતઃ માન લેની પડતી હૈ કિ કાર્ય અપને નિષ્ઠાકાલ મેં હી વનકર તયાર હોતા હૈ, વયોં કિ વહીં પર ડસકી ઉપ-  
લબ્ધિ હોતી હૈ । ક્રિયાકાલ એવં નિષ્ઠાકાલ ઇન દોનોં મેં અત્યન્ત ભેદ હૈ  
ઇસલિયે ક્રિયમાણ કૃત નર્હીં કહા જા સક્તા । યહ વાત સર્વજન સાક્ષિક ખી હૈ । યહ પાંચવા પક્ષ હૈ, યહ હુવા જમાલિ કા પૂર્વ પક્ષ ॥ ૫ ॥

ઇસ પ્રકાર જમાલિ દ્વારા સ્થાપિત ઇસ પૂર્વપક્ષ કાં સુનકર સ્થવિરોં ને ડનકો માર્ગ સે ચ્યુત જાના ઓર ઇસલિયે વે ડનસે કહને લગે કિ—  
હે આર્ય ! વિરુદ્ધ વચન આપ વયોં કહતે હૈં ? રાગદ્વેષરહિત સર્વજ્ઞ જિન ભગવાન કે વચન અન્યથા નર્હીં હોતે હૈં ડનમેં દોષ કા અંશ ખી સંભવિત નર્હીં હો સક્તા હૈ । સાધારણ પુરુષોં કી તરહ વે મિથ્યાભાષી

“અનુપલભ્યમાનત્વાત્ નિર્વર્તનક્રિયાકાલે વિવક્ષિતઘટરૂપં કાર્યં નાસ્તિ ઇતિ મન્તવ્યમ્”  
ત્યારે આ નિશ્ચિત ખની જાય છે તો એ વાત પણ આપ મેળે માની લેવી પડે  
છે કે, કાર્ય પોતાના યોગ્ય વખતે જ ખનીને તૈયાર થાય છે. કેમકે, તે સ્થળે  
તેની ઉપલબ્ધિ થાય છે. ક્રિયાકાળ અને નિષ્ઠાકાળ આ બન્નેમાં અત્યંત ભેદ  
છે. આ માટે ક્રિયમાણ કૃત કહી શકાય નહીં. આ વાત સર્વજનથી સાક્ષીભૂત  
છે. આ પાંચમો મુદ્દો. આ થયો જમાલિનો પૂર્વપક્ષ. ॥ ૫ ॥

આ પ્રકારે જમાલિ દ્વારા સ્થાપિત એ પૂર્વપક્ષને સાંભળીને સ્થવિરોએ જાણ્યું  
કે જમાલીમુનિ ભગવાનના માર્ગથી ચલિત થયા છે. અને તે માટે તેઓ તેમને કહેવા  
લાગ્યા કે, હે આર્ય ! વિરોધ વચન આપ કેમ કહેા છો ? રાગદ્વેષરહિત સર્વજ્ઞ જીન  
ભગવાનનું વચન અન્યથા થતું નથી. તેમાં દોષનો અંશ પણ સંભવિત થતો નથી.  
સાધારણ પુરુષોની માફક તે મિથ્યાભાષી પણ નથી. આપે જે અસત્કાર્યવાદને

સમયે ઘટાદિ પ્રારંભ્યતે, તસ્મિન્નેવ સમયે નિષ્પદ્યતે; યદાનયનતત્પિષ્ઠવિધાન-  
ચક્રારોપણશિવકાદિવિધાનાદિભિશ્ચિરકાલેનૈવ તદ્વત્પત્તિર્ભવતિ ॥ ૪ ॥

અસ્તુ દીર્ઘઃ કાર્યનિર્વર્તનક્રિયાકાલઃ ક્રિયાયાઃ પ્રથમસમય એવ કાર્ય  
નિષ્પદ્યતે, इति चेन्न, यदि क्रियायाः प्रथमसमय एव कार्य निष्पद्येत, तर्हि  
तत् तत्रैवोपलभ्येत, न चारम्भसमय एव घटादिरूपं कार्य दृश्यते, नापि शिवक-  
स्थास-कोश-कुशलादिसमये दृश्यते । किंतु दीर्घक्रियाकालस्यान्ते घटादिरूपं कार्य  
दृश्यते, तस्मात् क्रियाया आरम्भकाले कार्यं निष्पद्यते, इति कथनं न युक्तम्, तस्य

અતઃ “ જિસ સમય મેં ઘટ કા યનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ, उसी समय  
में बन जाता है ” यह कहना अनुचित है । यह चौथा पक्ष है ॥ ४ ॥

यदि कोई फिर भी ऐसा कहे कि कर्म को निर्वर्तन करने वाली  
क्रिया का काल भले ही अधिक हो इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं है,  
परन्तु क्रिया से जो कार्य निष्पन्न होना होता है वह उस क्रिया के प्रथम  
समय में ही निष्पन्न हो जाता है, सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है ।  
कारण कि यदि क्रिया के प्रथम समय में ही कार्य निष्पन्न हो जाता है  
तो वह उस समय ही दिखना चाहिये—परन्तु ऐसा तो होता नहीं है,  
और न विवक्षित कार्य कोश कुशल शिवक स्थासक आदि समयों में  
प्रतीत होता है, किन्तु दीर्घक्रियाकाल के अन्त में ही निष्पन्न हुआ  
दिखलाई देता है । इसलिये ऐसा मानना कि क्रिया के आरंभकाल में ही  
घट बनकर तयार हो जाता है, यह कथमपि—किसी तरह भी युक्तियुक्त

પ્રારંભ થાય છે એમ સમયે તે બની જાય છે એમ કહેવું અનુચિત છે. આ  
ચોથો મુદ્દો છે. ॥ ૪ ॥

જો કોઈ ફરી પણ એમ કહે કે, કર્મને નિર્વર્તન કરવાવાળી ક્રિયાના  
કાળ ભલે અધિક હોય એમાં અમને કોઈ વાંધો નથી. પરંતુ ક્રિયાથી જે  
કાર્ય નિષ્પન્ન થવું જોઈએ તે એ ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ નિષ્પન્ન બની  
જાય છે. તેમ કહેવું પણ ઠીક નથી. કારણ કે, જો ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ  
કાર્ય નિષ્પન્ન થઈ જાય છે, તો તે તે સમયે જ દેખાવું જોઈએ. પરંતુ એવું તો  
બનતું નથી. અને વિવક્ષિત કાર્ય, કોશ, કોદાળી, આકાર, સ્થાસક આદિ  
સમયોમાં પ્રતીત થતાં નથી. પરંતુ લઘુ ક્રિયાકાળના અંતમાં જ નિષ્પન્ન થયેલ  
દેખાય છે. આ માટે એવું માનીએ કે ક્રિયાના આરંભ કાળમાં જ ઘટ બનીને  
તયાર થઈ જાય છે. તો આ કોઈ પણ રીતે માની શકાય તેવું આથી

તદાનીમદર્શનાત્ । દીર્ઘક્રિયાકાલસ્યાન્તે તુ કાર્યં ભવિતુમર્હતિ, તદાનીમેવ તસ્ય દર્શનાત્ । તદેવં ન નિર્વર્તનક્રિયાકાલે કાર્યમસ્તિ, અનુપલભ્યમાનત્વાત્, કિંતુ તન્નિષ્ઠાકાલ એવ તદસ્તિ, તત્રૈવોપલભ્યમાનત્વાત્, ક્રિયાકાલનિષ્ઠાકાલયોશ્ચાત્યન્ત-ભેદાત્, અતઃ ક્રિયમાણં કૃતં ન ભવતિ । સર્વલોકપ્રત્યક્ષાનુભવસિદ્ધમેવૈતત્ ॥ ૫ ॥  
 इति जमालेः पूर्वपक्षः ।

एवं मार्गविच्युतं जमालिं प्रति स्थविराः प्रोचुः—आर्य ! किं विरुद्धवचनं यदस्ति ?, रागद्वेषपरहितानां सर्वज्ञानां जिनानां वचने दोषलेशोऽपि नास्ति, नहि ते मृषा भाषन्ते । आर्य ! “ कृतं न क्रियते, कृतत्वात्, कृतघटवत् ” इति कुतर्कमा-

नहीं हो सकता है, अतः “ अनुपलभ्यमानत्वात् निर्वर्तनक्रियाकाले विवक्षितघटरूपं कार्यं नास्ति इति मन्तव्यम् ” जब यह बात निश्चित हो जाती है तो यह बात भी स्वतः मान लेनी पड़ती है कि कार्य अपने निष्ठाकाल में ही बनकर तयार होता है, क्यों कि वहीं पर उसकी उपलब्धि होती है । क्रियाकाल एवं निष्ठाकाल इन दोनों में अत्यन्त भेद है इसलिये क्रियमाण कृत नहीं कहा जा सकता । यह बात सर्वजन साक्षिक भी है । यह पांचवा पक्ष है, यह हुवा जमालि का पूर्व पक्ष ॥ ५ ॥

इस प्रकार जमालि द्वारा स्थापित इस पूर्वपक्ष को सुनकर स्थविरों ने उनको मार्ग से च्युत जाना और इसलिये वे उनसे कहने लगे कि— हे आर्य ! विरुद्ध वचन आप क्यों कहते हैं ? रागद्वेषरहित सर्वज्ञ जिन भगवान के वचन अन्यथा नहीं होते हैं उनमें दोष का अंश भी संभवित नहीं हो सकता है । साधारण पुरुषों की तरह वे मिथ्याभाषी

“ अनुपलभ્યમાનત્વાત્ નિર્વર્તનક્રિયાકાલે વિવક્ષિતઘટરૂપં કાર્યં નાસ્તિ ઇતિ મન્તવ્યમ્ ”  
 ત્યારે આ નિશ્ચિત બની જાય છે તો એ વાત પણ આપ મેળે માની લેવી પડે  
 છે કે, કાર્ય પોતાના યોગ્ય વખતે જ બનીને તૈયાર થાય છે. કેમકે, તે સ્થળે  
 તેની ઉપલબ્ધિ થાય છે. ક્રિયાકાળ અને નિષ્ઠાકાળ આ બંનેમાં અત્યંત ભેદ  
 છે. આ માટે ક્રિયમાણ કૃત કહી શકાય નહીં. આ વાત સર્વજનથી સાક્ષીભૂત  
 છે. આ પાંચમો મુદ્દો. આ થયો જમાલિનો પૂર્વપક્ષ. ॥ ૫ ॥

આ પ્રકારે જમાલિ દ્વારા સ્થાપિત એ પૂર્વપક્ષને સાંભળીને સ્થવિરોએ જાણ્યું  
 કે જમાલીમુનિ ભગવાનના માર્ગથી ચલિત થયા છે. અને તે માટે તેઓ તેમને કહેવા  
 લાગ્યા કે, હે આર્ય ! વિરોધ વચન આપ કેમ કહો છો ? રાગદ્વેષરહિત સર્વજ્ઞ જીન  
 ભગવાનનું વચન અન્યથા થતું નથી. તેમાં દોષનો અંશ પણ સંભવિત થતો નથી.  
 સાધારણ પુરુષોની માફક તે મિથ્યાભાષી પણ નથી. આપે જે અસત્કાર્યવાદને

સમયે ઘટાદિ પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્મિન્નેવ સમયે નિષ્પદ્યતે; ઘટાનયનતત્ત્વિષ્ઠવિધાન-  
ચક્રારોપણશિવકાદિવિધાનાદિભિશ્ચિકાલેનૈવ તદુત્પત્તિર્ભવતિ ॥ ૪ ॥

અસ્તુ દીર્ઘઃ કાર્યનિર્વર્તનક્રિયાકાલઃ ક્રિયાયાઃ પ્રથમસમય એવ કાર્ય  
નિષ્પદ્યતે, ઇતિ ચેન, યદિ ક્રિયાયાઃ પ્રથમસમય એવ કાર્ય નિષ્પદ્યત, તદિ  
તત્ તત્રૈવોપલભ્યેત, ન ચારમ્ભસમય એવ ઘટાદિરૂપં કાર્ય દૃશ્યતે, નાપિ શિવક-  
સ્થાસ-કોશ-કુશ્લાદિસમયે દૃશ્યતે । કિંતુ દીર્ઘક્રિયાકાલસ્યાન્તે ઘટાદિરૂપં કાર્ય  
દૃશ્યતે, તસ્માત્ ક્રિયાયા આરમ્ભકાલે કાર્ય નિષ્પદ્યતે, ઇતિ કથનં ન યુક્તમ્, તસ્ય

અતઃ “ જિસ સમય મેં ઘટ કા ઘનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ, उसी समय  
મેં ઘન જાતા હૈ ” યહ કહના અનુચિત્ હૈ । યહ ચોથા પક્ષ હૈ ॥૪॥

યદિ કોઈ ફિર ખી એસા કહે, કિ કર્મ કો નિર્વર્તન કરને વાલી  
ક્રિયા કા કાલ ભલે હી અધિક હો હસમેં હમેં કોઈ આપત્તિ નહીં હૈ,  
પરંતુ ક્રિયા સે જો કાર્ય નિષ્પન્ન હોના હોતા હૈ વહ उस ક્રિયા કે પ્રથમ  
સમય મેં હી નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ, સો એસા કહના ખી ઠીક નહીં હૈ ।  
કારણ કિ યદિ ક્રિયા કે પ્રથમ સમય મેં હી કાર્ય નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ  
તો વહ उस સમય હી દિખનાં ચાહિયે-પરંતુ એસા તો હોતા નહીં હૈ,  
ઑર ન વિવક્ષિત કાર્ય કોશ કુશ્લ શિવક સ્થાસક ઑદિ સમયો મેં  
પ્રતીત હોતા હૈ, કિંતુ દીર્ઘક્રિયાકાલ કે અન્ત મેં હી નિષ્પન્ન હુઆ  
દિખલાઈ દેતા હૈ । હસલિયે એસા માનના કિ ક્રિયાકે આરંભકાલ મેં હી  
ઘટ ઘનકર તયાર હો જાતા હૈ, યહ કથમપિ-કિસી તરહ ખી યુક્તિયુક્ત

પ્રારંભ થાય છે એવ સમયે તે બની જાય છે એમ કહેવું અનુચિત છે. આ  
ચોથો મુદ્દો છે. ॥ ૪ ॥

જો કોઈ ફરી પણ એમ કહે કે, કર્મને નિર્વર્તન કરવાવાળી ક્રિયાને  
કાળ ભલે અધિક હોય એમાં અમને કોઈ વાંધો નથી. પરંતુ ક્રિયાથી જે  
કાર્ય નિષ્પન્ન થવું જોઈએ તે એ ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ નિષ્પન્ન બની  
જાય છે. તેમ કહેવું પણ ઠીક નથી. કારણ કે, જો ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ  
કાર્ય નિષ્પન્ન થઈ જાય છે, તો તે તે સમયે જ દેખાવું જોઈએ પરંતુ એવું તો  
બનતું નથી. અને વિવક્ષિત કાર્ય, કોશ, કોશાળી, આકાર, સ્થાસક આદિ  
સમયોમાં પ્રતીત થતો નથી. પરંતુ દીર્ઘ ક્રિયાકાળના અંતમાં જ નિષ્પન્ન થયેલ  
દેખાય છે. આ માટે એવું માનીએ કે ક્રિયાના આરંભ કાળમાં જ ઘટ બનીને  
તયાર થઈ જાય છે. તો આ કોઈ પણ રીતે માની શકાય તેવું આથી



વેતિ દોષદ્વયં યદુક્તં, તદ્ ભવન્મતેઽપિ શક્યતે વક્તુમ્, યથાઽસ્મત્સ્વીકૃતે કૃત-  
પક્ષે દોષા ભવતા પ્રદીયન્તે, તથા ભવદક્ષીકૃતે અપ્યકૃતપક્ષેઽપિ એતે દોષાઃ આપ-  
તન્તિ । તથાદિ-યદ્યકૃતમ્-(અવિધમાનં) ક્રિયતે, તર્હિ નિત્યમેવ ક્રિયતામ્, શશ-  
વિષાણકલ્પસ્યાસતઃ કરણં કથમુપરમેત । તાદૃશે કાર્યે સમુત્પાદ્યે ક્રિયાયા વૈફલ્ય-  
મપિ તવ દુર્વારમ્, અસતઃ કદાપ્યુત્પત્યભાવાત્ ।

इससे प्रथम तो करण-क्रिया की वहां कभी भी समाप्ति नहीं हो सकती है १, दूसरा वहां करणक्रिया की विफलता भी आती है २ । जब पदार्थ स्वयं मौजूद है तो वहां करनेरूप क्रिया सफलित कैसे हो सकती है ? इस प्रकार कृत करण मानने पर आपने ये जो क्रिया की असमाप्ति १ और क्रिया की विफलता २ ये दो दोष दिये हैं सो ये दोनों दोष आपके मन्तव्य में भी आते हैं, और वे इस प्रकार से-यदि “अविद्यमान ही क्रिया जाता है” यह बात ही एकान्ततः स्वीकार की जाय तो उसको भी नित्य ही होते रहना चाहिये, क्योंकि जो शश-विषाण की तरह सर्वथा असत् है उसकी करनेरूप क्रिया का विराम कैसे हो सकता है । दूसरे असत् की जब उत्पत्ति ही नहीं होती है तो असत्कार्य की उत्पत्ति में क्रिया की सफलता भी कैसे हो सकती है ? । वह तो वहां विलकुल निष्फल ही होगी, क्योंकि उसकी उससे उत्पत्ति तो हो नहीं सकती है, कारण वह असत् है इसलिये ।

અતિ પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે. તેનાથી પ્રથમ તો કરણ ક્રિયાની ત્યાં કદી પણ સમાપ્તિ થતી નથી. બીજું ત્યાં કરણ ક્રિયાની વિક્ષણતા પણ આવે છે ? બ્યારે પદાર્થ સ્વયં મોજુદ છે તો ત્યાં કરવારૂપ ક્રિયા ક્ષણીભૂત કેમ થઈ શકે ? આ પ્રકારથી કૃતને કરણ માનવાથી આપે જે ક્રિયાની અસમાપ્તિ અને ક્રિયાની વિક્ષણતારૂપ બે દોષ આપેલ છે તો આ બન્ને દોષ આપના મંતવ્યમાં પણ આવે છે. અને તે આ પ્રકારથી-જે “અવિધમાન જ કરવામાં આવે છે” આ વાત જ એકાન્તતઃ સ્વીકાર કરવામાં આવે તો તેને પણ નિત્ય જ બની રહેવું જોઈએ. કેમકે, જે શશવિષાણની (સસલાના શીંગ) માફક સર્વથા અસત્ છે. તેના કરવારૂપ કરવાનો વિરામ કઈ રીતે હોઈ શકે ? બીજા અસતની બ્યારે ઉત્પત્તિ થતી નથી તો અસત કાર્યની ઉત્પત્તિમાં ક્રિયાની સક્ષણતા પણ કેવી રીતે હોઈ શકે ? એ તો તદ્દન નિષ્ફળ જ થવાની. કેમકે, તેનાથી ઉત્પત્તિ તો બની શકતી નથી. કારણ તે અસત છે માટે.

શ્રિત્યાઽસત્કાર્યવાદિનો ભવતાઽભિધીયતે, અકૃતં ચલુ ક્રિયમાણં ભવતીતિ, ત્વ  
 ઘયં સત્કાર્યવાદિનો દૂમઃ-નિષ્પ્રમાણમેતદ્ભવદીયવચનમ્ । અકૃતમ્ ( અવિદ્યમાનં )  
 ઘટાદિકાર્યં ન ક્રિયતે, અસત્ત્વાત્, આકાશકુસુમવત્ । યદિ અકૃતમ્ ( અવિદ્યમા-  
 નમ્ ) અપિ ક્રિયતે, તર્હિ શશવિષાણમપિ ક્રિયતામ્, અકૃતત્વાવિશેષાત્ ( અવિદ્ય-  
 માનત્વાવિશેષાત્ ) । અપિ ચ-યે નિત્યકરણાદયો દોષાઃ સત્કાર્યવાદે પ્રદત્તાસ્તે  
 સ્વસ્વસત્કાર્યવાદેઽપિ તવ સન્તિ । વિદ્યમાને વસ્તુનિ કરણક્રિયાયા અંગીકારે પુનઃ-  
 પુનરનવરતં કરણક્રિયાયા અતિપ્રસંગાત્, ક્રિયાયા અપરિસમાપ્તિઃ ક્રિયાયા વૈફલ્યં

નહીં હૈં । આપને જો અસત્કાર્યવાદ કો લેકર કુતર્ક કા આશ્રય કરતે  
 હુએ એસા કહા હૈ કિ-‘કૃતં ન ક્રિયતે કૃતત્વાત્, કૃતઘટવત્’ અર્થાત્-  
 કૃત હોનેસે કૃત કિયા નહીં જાતા હૈ જૈસે કૃત ઘટ, અકૃતં ચલુ ક્રિયમાણં  
 ‘ભવતિ’ અર્થાત્ અકૃત હી ક્રિયમાણ હોતા હૈ સો આપકા યહ કથન કથંચિત્  
 સત્કાર્યવાદી હમલોગોં કે ચિત્ત મેં ઉતરતા નહીં હૈ ભલા આપ કો યહ  
 વિચારના ચાહિયે જો સર્વથા અસત્ હોતા હૈ-દ્રવ્ય દૃષ્ટિ સે મી જિસકી  
 સત્તા કાયમ નહીં હૈ એસા અસત્ પદાર્થ કમી મી નિષ્પન્ન નહીં હો  
 સકતા હૈ । યદિ હસ પ્રકાર કા મી પદાર્થ નિષ્પન્ન હોને લગે તો શશ  
 વિષાણ કો મી ઉત્પન્ન હોના ચાહિયે । દૂસરે દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સત્ કો  
 કાર્ય માનને પરં જો આપને નિત્યકરણ હોને કી પ્રસત્તિરૂપ દોષ દિયે હૈ  
 સો યે સમી દોષ આપકે અસત્કાર્યવાદ મેં મી આતે હૈં, આપને જો  
 યહ કહા હૈ કિ વિદ્યમાન વસ્તુ મેં કરનેરૂપ ક્રિયા કો અંગીકાર કરને  
 પર પુનઃ પુનઃ અનવરત્ત ઉસ કરનેરૂપ ક્રિયા કા અતિપ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ

સ્વીકારી કુતર્કનો આશ્રય લઈને એવું કહ્યું છે કે, કૃતં ન ક્રિયતે કૃતત્વાત્  
 કૃત ઘટવત્ અર્થાત્ કૃત થવાથી કૃત કરેલ મનાતું નથી જેવી રીતે કૃત ઘટ,  
 અકૃતં ચલુ ક્રિયમાણં ભવતિ અર્થાત્ જ્યારે અકૃત જ ક્રિયમાણ હોય છે. જેથી  
 આપનું આ કથન કથંચિત્ સત્કાર્યવાદી અમારા લોકોના દિલમાં ઉતરતું નથી.  
 આપે એ વિચારવું જોઈએ કે, જે સર્વથા અસત્ હોય છે દ્રવ્યદૃષ્ટિથી પણ જેની  
 સત્તા કાયમ નથી એવા અસત્ પદાર્થ કદી તૈયાર થઈ શકતા નથી. જે કદી  
 આ પ્રકારના પણ પદાર્થ પુરા થયેલા માનવામાં આવે તો ખરવિષાણ (ગધેડાંને  
 શીંગડાં) પણ ઉત્પન્ન થવાં જોઈએ. દ્રવ્યની અપેક્ષા સત્ને કાર્ય માનવાથી  
 જે આપે નિત્યકરણ હોવાનો પ્રશસ્તીરૂપ દોષ આપ્યો છે, તે સઘળા દોષ આપના  
 અસતકાર્ય વાદમાં પણ આવે છે. આપે જે એમ કહ્યું કે, વિદ્યમાન વસ્તુમાં  
 કરવારૂપ ક્રિયાને અંગિકાર કરવાથી ફરી ફરી અનવરત એ કે. નો

દુર્વારઃ, તથાહિ-યદિ પૂર્વમ્ (કારણાવસ્થાયाम્) અસત્ (અવિદ્યમાનં) કાર્યં જાયતે, તર્હિ મૃત્પિન્ડાદ્ કુમ્ભવત્, શશશૃંગમપિ જાયમાનં કિં ન દૃશ્યતે, અસત્ત્વા વિશેષાત્? । અથ શશશૃંગમુત્પદ્યમાનમપિ ન દૃશ્યતે, તર્હિ ઘટોઽપિ તથૈવાસ્તુ, ઉત્પદ્યમાનત્વાવિશેષાત્ । અથવા-મૃત્પિન્ડાત્ પટોઽપિ ઉત્પદ્યતામ્, અસત્ત્વાવિશેષાત્ ॥ ૩ ॥

અપેક્ષા મી કાર્ય અસત્ હૈ, ઓર વહ ઉસસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ તો જિસ પ્રકાર મૃતપિંડ સે ઘટ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઁસી તરહ શશશૃંગ મી ઉસસે ઉત્પન્ન હોતે દિલ્લના ચાહિયે, કયોં કિ જિસ પ્રકાર મૃત્પિંડ મેં ઘટ વિદ્યમાન નહીં હૈ ઁસી પ્રકાર શશવિપાળ મી વહાં વિદ્યમાન નહીં હૈ ફિર અવિદ્યમાન કી અવિશેષતા હોને પર મી મૃત્પિંડ સે ઘટ હી કયોં ઉત્પન્ન હોતા હૈ શશશૃંગ કયોં નહીં? । યદિ ઁસકે ઁપર ઁસા કહાં જાય કિ શશશૃંગ મી મૃત્પિંડસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ પરંતુ વહ દિલ્લતા નહીં હૈ તો હમ મી યહ કહ સકતે હૈં કિ ઁસી તરહ ઉસસે જાયમાન ઘટ મી નહીં દિલ્લના ચાહિયે, અતઃ યહ માનના હી ચાહિયે કિ અપને કારણ મેં કિસી અપેક્ષા કાર્ય રહા હુઆ હૈ તમી જાકર વહ ઉસસે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ અન્ય સે નહીં । નહીં તો ફિર કયા હૈ ચાહે જિસસે ચાહે જૈસા પદાર્થ ઉત્પન્ન હોને લગેગા । ઁસી સ્થિતિ મેં મૃત્તિકા સે પટ કી મી ઉત્પત્તિ માનની પડેગી ॥ ૩ ॥

અપેક્ષાથી કાર્ય અસત છે અને તે એનાથી ઉત્પન્ન થાય છે. તો જે રીતે માટીના પિંડથી ઘટ ઉત્પન્ન થાય છે. એજ રીતે સસલાને શીંગડાં પણ થતાં દેખાવાં લેઈએ. કેમકે જે રીતે માટીના પિંડમાં ઘટ વિદ્યમાન નથી એજ રીતે સસલાને પણ શીંગડાં વિદ્યમાન નથી. પછી અવિદ્યમાનની અવિશેષતા હોવાથી પણ મૃત પિંડથી ઘટ જ કેમ ઉત્પન્ન થાય છે? સસલાનાં શીંગડેમ નહીં? જો આ અંગે એમ કહેવામાં આવે કે, સસલાનાં શિંગ પણ માટીના પિંડથી ઉત્પન્ન થાય છે પરંતુ તે દેખતાં નથી તો અમે પણ એમ કહી શકીએ કે, એ રીતે એનાથી તૈયાર થનાર ઘટ પણ ન દેખાવો લેઈએ. આથી એ માનવું લેઈએ કે, પોતાના કારણમાં કેઈ અપેક્ષા કાર્ય રહેલ છે ત્યારે જ તે તેમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે. બીજાથી નહીં. એમ ન હોય તો પછી ગમે તે ચીજથી ગમે તે પદાર્થ ઉત્પન્ન થવા લાગશે. આવી સ્થિતિમાં માટીથી પટની પણ ઉત્પત્તિ માનવી પડશે. ॥ ૩ ॥

આયુષ્કમેપુદ્ગલાનર્જરણેન, 'ભવસ્વર્ણ' ભવક્ષયેણ=દેવભવસમ્બન્ધકર્મેણાં  
 ગત્યાદીનાં નિર્જરણેન ઠિઠ્ઠસ્વર્ણ' સ્થિતિક્ષયેણ=દેવભવસમ્બન્ધિ શરીરાવસ્થાન-  
 ક્ષયેણ, અનન્તરં ચયં=દેવભવસમ્બન્ધિશરીરં ત્યક્ત્વા કુત્ર ગમિષ્યતિ ?  
 કુત્રોત્પત્સ્યતે ? હે ગૌતમ ! મહાવિદેહે વર્ષે=મહાવિદેહક્ષેત્રે સિજ્ઞિહિ' સેત્સ્યતિ  
 સકલકાર્યકારિતયા સિદ્ધો ભવિષ્યતિ, બુજ્ઞિહિ' ભોત્સ્યતે=ચિમલકેવલા-  
 લોકેન સકલલોકાલોકં જ્ઞાસ્યતિ, 'મુચ્ચિહિ' મોક્ષ્યતિ=સર્વકર્મભ્યો મુક્તો  
 ભવિષ્યતિ, 'પરિનિવ્વાહિ' પરિનિર્વાસ્યતિ=સમસ્તકર્મકૃતવિકારરહિતત્વેન  
 સ્વસ્થો ભવિષ્યતિ, 'સન્નદુઃસ્વાણમન્તં કરેહિ' સર્વદુઃસ્વાણામન્તં કરિષ્યતિ=  
 સમસ્તક્લેશાનાં નાશં વિધાસ્યતિ, અવ્યાવાયસુખભોગી ભવિષ્યતીત્યર્થઃ। અન્ય-

દેવે તાઓ દેવલોયાઓ આઝક્ષર્ણં ભવક્ષર્ણં ઠિઠ્ઠક્ષર્ણં અણંતરં  
 ચયં ચઙ્ગતા કહિં ગચ્છહિ કહિં ઉવવજ્જિહિ ?) इस प्रकार प्रभु के  
 मुखारविन्द से मेघकुमार की उत्पत्ति का स्थान सुन कर गौतमने पुनः  
 उनसे यह पूछा कि हे भदन्त ! अब ये मेघकुमार देव उस देवलोकसे  
 आयु के क्षय से, भव के क्षय से, स्थिति के क्षय से देवभव संबन्धी  
 शरीर का त्याग कर कहां जावेगें। कहां उत्पन्न होंगे ! (गोयमा ! महा-  
 विदेहे वासे सिज्झिहि, बुज्झिहि, मुच्चिहि, परिनिव्वाहि सन्नदुवखाण  
 मन्तं करेहि) इस प्रकार गौतम द्वारा पुनः पूछने पर प्रभुने उनसे कहा—  
 गौतम ये मेघकुमार देव महाविदेह में उत्पन्न हो कर वहीं से सिद्ध होंगे  
 चिमल केवल ज्ञानरूप आलोक से समस्तलोक और आलोक का ज्ञाता होंगे।  
 समस्त ज्ञानावरणादिक अष्ट कर्मों से रहित होंगे, कर्मकृत समस्त विकारों से

સાગર જેટલી સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે. (એસણં મંતે મેહે દેવે તાઓ દેવલો-  
 યાઓ આઝક્ષર્ણં ભવક્ષર્ણં ઠિઠ્ઠક્ષર્ણં અણંતરં ચયં ચઙ્ગતા કહિં-  
 ગચ્છિહિ કહિં ઉવવજ્જિહિ ?) આ પ્રમાણે મેઘકુમારની ઉત્પત્તિ વિષેના સ્થા-  
 નની વાત સાંભળીને ગૌતમે ફરી પ્રશ્ન કર્યો—કે હે—ભદન્ત ! મેઘકુમાર દેવ તે દેવલોકથી આયુષ્ય  
 ક્ષયથી, ભવક્ષયથી, સ્થિતિક્ષયથી દેવભવના શરીરનો ત્યાગ કરીને ક્યાં જશે ? ક્યાં  
 ઉત્પન્ન થશે ? (ગોયમા ! મહાવિદેહે વાસે સિજ્ઞિહિ બુજ્ઞિહિ, મુચ્ચિહિ,  
 પરિનિવ્વાહિ, સન્નદુવખાણમન્તે કરેહિ) આ પ્રમાણે ગૌતમના પ્રશ્નને  
 સાંભળીને પ્રભુએ તેમને કહ્યું કે—હે ગૌતમ ! આ મેઘકુમાર દેવ મહાવિદેહમાં ઉત્પન્ન  
 થઈને ત્યાંથી સિદ્ધ થશે. વિમળ અને કેવળજ્ઞાનરૂપ આલોકથી સમસ્તલોક અને આ  
 લોકના બાધુનાશ થશે. તેઓ સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ વગેરે આઠ કર્મોં રહિત થશે અને  
 વિકારો રહિત થઈને સ્વસ્થતા પામશે. તેઓ બધાં દુઃખોનો નાશ કરશે

યનાર્થમુપસહરન્ આસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામિનમાદ-एव खलु हे जंबूः।  
 શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ આદિકરેણ તીર્થકરેણ યાવત્સંપ્રાપ્તેન આત્મોપા-  
 લમ્ભનિમિત્ત-આપ્તેન હિતેન ગુરુણેત્યર્થઃ, વિનેયમ્યાવિહિતવિધાયિનઃ ઉપાલમ્ભઃ-  
 આત્મોપાલમ્ભઃ તન્નિમિત્ત-તદર્થઃ પ્રથમસ્ય જ્ઞાતાધ્યયનસ્ય અર્થઃ=પૂર્વોક્તઃ=  
 મેઘકુમારચરિતરૂપોઽર્થઃ પ્રજ્ઞસઃ=કથિતઃ। અવિધિપ્રવૃત્તસ્ય શિષ્યસ્ય ગુરુણા મોક્ષ-  
 માર્ગે સ્થાપનાય હિતસારગર્ભિતવચ્ચનેન પ્રતિવોધનમ્ ઉપાલમ્ભઃ સ દાતવ્યઃ,  
 યથા ભગવતા દત્તો મેઘકુમારાય, इत्येवमर्थं प्रथममध्ययनमिति भावः ॥

રહિત ઠોકર સ્વસ્થ હોગે, મમસ્ત દુઃખોં કા નાશ કરેંગે અવ્યાવાધ સુખ કે  
 આત્કાવનેંગે અવ સૂત્રકાર શ્રી સુધર્માસ્વામી હસ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર  
 કરતે હુણ શ્રી જંબૂસ્વામી સે કહતે હૈં। (एवंखलु जंबू। समणे णं भगवया महो-  
 वीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं जाव संपत्तेणं अप्पोपालंभनिमित्तं पढमस्स नायज्झ  
 णस्स अयमद्वे पन्नत्ते तिवेमि) कि हे जंबू। आदिकर तीर्थकर श्री श्रमण  
 भगवान् महावीरने कि जो सिद्धिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं अविहित  
 विधायी शिष्य को आप्तोपालभनिमित्त यह मेघकुमार के चरित्ररूप प्रथम  
 ज्ञाताध्ययन का अर्थ प्रज्ञस (प्ररूपित) किया है। अविधि में प्रवृत्त हुए शिष्य  
 को गुरु देव मोक्षमार्ग में म्थापन करने के लिये जो हित सारगर्भित वचनों  
 द्वारा समझाया है। इसी का नाम आप्तोपालंभ है। आप्तजन के द्वारा दिया  
 गया उपालंभ यही आप्तोपालभ का अर्थ है। मेघकुमार के साथ यही  
 कार्य प्रभुने किया है। यही विषय इस अध्ययन द्वारा समझाया गया है।  
 अतः इस अध्ययन का नाम भी आप्तदत्त परोपालंभ है। स्वोपालंभ परोपालंभ

અને અવ્યાવાધ મુખને ભોગવનારા થશે. અહીં હવે સૂત્રકાર શ્રી સુધર્માસ્વામી આ  
 અધ્યયનના અર્થને ઉપસંહાર કરતા જંબૂસ્વામીને કહે છે. (एवं खलु जंबू ! सम-  
 णेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं जाव संपत्तेणं अप्पोपालंभ-  
 निमित्तं पढमस्स नायज्झणस्स अयमद्वे पन्नत्तो तिवेमि) हे जंबू, आदिकर तीर्थ-  
 कर श्री श्रमणु भगवान् महावीरे नेभले सिद्धिस्थानने मेणव्युं. छ-એવા તેમણે અવિ-  
 હિત વિધાયી શિષ્યને આપ્તોપાલંભના માટે આ મેઘકુમારના ચરિત્રરૂપ પ્રથમ જ્ઞાતાધ્ય-  
 યનનો અર્થ પ્રરૂપિત કર્યો છે. અવધિમાં પ્રવૃત્ત થયેલ શિષ્યને ગુરુદેવ મોક્ષમાર્ગમાં  
 વાળવા માટે જે હિતસાર યુક્ત વચનો દ્વારા સમજાવે છે. તે આપ્તોપાલંભ કહેવાય છે.  
 આપ્તજન વડે આપવામાં આવેલો ઉપાલંભ એ જ આપ્તોપાલંભનો અર્થ છે મેઘકુમારની  
 સાથે પણ ભગવાને આ પ્રમાણે જ વ્યવહાર કર્યો છે. આ અધ્યયન દ્વારા એ જ  
 વિષય સમજાવવામાં આવ્યો છે. એથી આ અધ્યયનનું નામ 'આપ્તદત્ત પરોપાલંભ'

આયુષ્કમેપુદ્ગલાનર્જરણેન, 'ભવસ્વર્ણ' ભવક્ષયેણ=દેવભવસમ્બન્ધકર્મણાં  
 ગત્યાદીનાં નિર્જરણેન ઠિઠ્ઠસ્વર્ણ' સ્થિતિક્ષયેણ=દેવભવસમ્બન્ધ શરીરાવસ્થાન-  
 ક્ષયેણ, અનન્તરં ચયં=દેવભવસમ્બન્ધિશરીરં ત્યક્ત્વા કુત્ર ગમિષ્યતિ ?  
 કુત્રોત્પત્સ્યતે ? હે ગૌતમ ! મહાવિદેહે વર્પે=મહાવિદેહક્ષેત્રે સિઙ્ગિહિ' સેત્સ્યતિ  
 સકલકાર્યકારિતયા સિદ્ધો ભવિષ્યતિ, બુઙ્ગિહિ' ભોત્સ્યતે=વિમલકેવલા-  
 લોકેન સકલલોકાલોકં જ્ઞાસ્યતિ, 'મુચ્ચિહિ' મોક્ષ્યતિ=સર્વકર્મભ્યો મુક્તો  
 ભવિષ્યતિ, 'પરિનિવ્વાહિ' પરિનિર્વાસ્યતિ=સમસ્તકર્મકૃતવિકારરહિતત્વેન  
 સ્વસ્થો ભવિષ્યતિ, 'સઘ્વદુઃસ્વાણમન્તં કરેહિ' સર્વદુઃસ્વાનામન્તં કરિષ્યતિ=  
 સમસ્તક્લેશાનાં નાશં વિધાસ્યતિ, અવ્યાવાધસુખભોગી ભવિષ્યતીત્યર્થઃ। અધ્ય-

દેવે તાઓ દેવલોયાઓ આઝવસ્વર્ણં ભવસ્વર્ણં ઠિઠ્ઠસ્વર્ણં અણંતરં  
 ચયં ચડત્તા કહિં ગચ્છહિ' કહિં ઉવવજ્જિહિ ?) इस प्रकार प्रभु के  
 सुखारविन्द से मेघकुमार की उत्पत्ति का स्थान सुन कर गौतमने पुनः  
 उनसे यह पूछा कि हे भदन्त ! अब ये मेघकुमार देव उस देवलोकसे  
 आयु के क्षय से, भव के क्षय से, स्थिति के क्षय से देवभव संबन्धी  
 शरीर का त्याग कर कहाँ जावेगें ! कहाँ उत्पन्न होंगे ! (गोयमा ! महा-  
 विदेहे वासे सिङ्गिहि, बुङ्गिहि, मुच्चिहि, परिनिव्वाहि सव्वदुस्वाण  
 मन्तं करेहि) इस प्रकार गौतम द्वारा पुनः पूछने पर प्रभुने उनसे कहा—  
 गौतम ये मेघकुमार देव महाविदेह में उत्पन्न हो कर वहीं से सिद्ध होंगे  
 विमल केवल ज्ञानरूप आलोक से समस्तलोक और आलोक का ज्ञाता होंगे।  
 समस्त ज्ञानावरणादिक अष्ट कर्मों से रहित होंगे, कर्मकृत समस्त विकारों से

સાગર જેટલી સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે. (એણે મને મેહે દેવે તાઓ દેવલો-  
 યાઓ આઝવસ્વર્ણં ભવસ્વર્ણં ઠિઠ્ઠસ્વર્ણં અણંતરં ચયં ચડત્તા કહિં-  
 ગચ્છિહિ' કહિં ઉવવજ્જિહિ ?) આ પ્રમાણે મેઘકુમારની ઉત્પત્તિ વિષેના સ્થા-  
 નની વાત સાંભળીને ગૌતમે ફરી પ્રશ્ન કર્યો—કે હે—ભદન્ત ! મેઘકુમાર દેવ તે દેવલોકથી આયુષ્ય  
 ક્ષયથી, ભવક્ષયથી, સ્થિતિક્ષયથી દેવભવના શરીરનો ત્યાગ કરીને ક્યાં જશે ? ક્યાં  
 ઉત્પન્ન થશે ? (ગોયમા ! મહાવિદેહે વાસે સિઙ્ગિહિ' બુઙ્ગિહિ, મુચ્ચિહિ,  
 પરિનિવ્વાહિ, સઘ્વદુસ્વાણમન્તે કરેહિ) આ પ્રમાણે ગૌતમના પ્રશ્નને  
 સાંભળીને પ્રભુએ તેમને કહ્યું કે—હે ગૌતમ ! આ મેઘકુમાર દેવ મહાવિદેહમાં ઉત્પન્ન  
 થઈને ત્યાંથી સિદ્ધ થશે. વિભજ અને કેવળજ્ઞાનરૂપ આલોકથી સમસ્તલોક અને આ  
 લોકના બધાનારા થશે. તેઓ સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ વગેરે આઠ કર્મો રહિત થશે અને  
 વિકારો રહિત થઈને સ્વસ્થતા પામશે. તેઓ જ્યાં હુઃખોનો નાશ કરશે



તદુભયોપાલંભો યથા--

અજ્ઞાનિનોઽમી નિજજીવિતસ્ય,

હેતોઃ ક્ષિમર્થં વહુ જીવ કોટીઃ ।

સંસ્થાપયન્તીહ ચ દુઃસ્વર્ગર્ત્તે

ક્ષિં જીવનં શાશ્વતમસ્તિ તેષામ્ ? ॥ ૩ ॥

અત્ર આપદત્તપરોપાલંભાધિકારઃ—

અયમત્રાભિપ્રાયઃ—પાત્રરત્નત્રયક્ષણસ્ય વિચક્ષણસ્યાપિ વિનેયસ્ય પ્રમાદ-  
વશતસ્ત્વલનાયાં સત્યાં તં સન્માર્ગે સ્થાપનાય ભગવતા મેઘમુનેરિવ ગુરુણો-  
પાલંભો દેય ઇતિ ।

પરોપાલંભ મેં અવિધિ મેં પ્રવૃત્ત હુણ જીવ કો ગુર્વાદિ આપ્ત જન સમ-  
જ્ઞાતે હેં—જેસે હે વત્સ । તુમ્હારા જન્મ વિશુદ્ધ વંશ મેં હુઆ હૈ, ઓર તુમ  
જિનેન્દ્ર પ્રભુ કે ધર્મ મેં દીક્ષિતહુણ હો । સદા તુમ ઉત્તમ જ્ઞાનાદિ ગુણો સે  
યુક્ત હો રહે હો—તો ફિર તેસી કયા વાત હૈ જો તુમ સદમા ઇસ પ્રકાર  
કે અવિહિત કાર્ય મેં પ્રવૃત્તિ કરને કી ઓર ઝુક રહે હો । યદ કાર્ય તુમ્હેં શોભા  
નહીં દેતા હૈ અતઃ ઇસસે વિરક્ત હોકર વિહિત કર્તવ્ય કી ઓર હી પ્રવૃત્તિ કરો ॥૨॥

તદુભયોપાલંભમેં ઇમ પ્રકાર વોધ દિયા જાતા હૈ—યે અજ્ઞાની જીવ,  
અપને સ્વયં કે જીવન કે લિયે અનેક જોર્વોં કી કોટિયોં કો દુઃસ્વરૂપી  
સ્વર્ગ મેં ન માલુમ કયોં પટકતે રહેતે હેં । તો કયા વે અપને જીવન કો  
શાશ્વત માન રહે હેં ॥ ૩ ॥

મેઘકુમાર કો મહાવીર પ્રભુને જો યદ ઉપાલંભ દિયા હૈ—વહ પરોપા-  
લંભ રૂપ હૈ । જિસ અપને શિષ્યને રત્નત્રયરૂપ મુક્તિ કા માર્ગ પ્રાપ્ત કર

પરોપાલંભ અવધિમા પ્રવૃત્ત થતા હવને ગુરુ વગેરે આપ્તજનો સમજાવે છે—  
જેમકે હે બેટા ! તમારો જન્મ વિશુદ્ધ વંશમાં થયો છે અને તમે જિનેન્દ્ર પ્રભુની  
દીક્ષા પામ્યા છો હમેશાં તમે શ્રેષ્ઠજ્ઞાન વગેરે ગુણોથી યુક્ત થઈ રહ્યા છો,  
તો પછી એવું શું થઈ ગયું છે એકદમ તમે આ જાતના ન કરવા યોગ્ય  
(અવિહિત) કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરવા તૈયાર થયા છો. આ કામ તમને શોભતું નથી.  
એટલે એનાથી વિરક્ત થઈને વિહિત (ઉચિત) કર્તવ્યમાં પ્રવૃત્ત થાઓ. ॥૨॥

તદુભયોપાલંભમાં આ પ્રમાણે બોધ અપાય છે—કે આ અજ્ઞાની હવે પોતાના  
હવન માટે ઘણાં હવેને હુ બેઝી ખાડામાં કેમ નાખતા રહે છે ? શું એવા માણસો  
પોતાના હવનને શાશ્વત માનીને બેઠા છે ॥૩॥

મેઘકુમારને મહાવીર પ્રભુએ જે ઉપાલંભ આપ્યો છે તે પરોપાલંભ છે. જે શિષ્યે  
રત્નત્રય રૂપ મુક્તિમાર્ગ મેળવ્યો છે, અને હવે પ્રમાદવશ થતાં તે મુક્તિમાર્ગથી અટક

સ્વોપાલમ્ભો યથા—

લબ્ધ્વા જનુર્માનુપમઘ્ન દુર્લભં,

રે જીવ ! કલ્પદુમવત્પ્રમોદમ્ ।

જૈનેન્દ્રધર્મં ન કરોપિ સાદરં,

સ્વસ્થ્યાત્મનઃ શત્રુ રહો ! પરોઽસ્તિકઃ ? ॥ ૧ ॥

પરોપાલમ્ભો યથા—

વિશુદ્ધવંશે ચ તવાસ્તિ જન્મ,

જિનેન્દ્રધર્મે સ્વલુ દીક્ષિતોઽસિ ।

સદોત્તમજ્ઞાનગુણાદય ! વત્સ ।

કથં ત્વમેવં સદૈસા પ્રવૃત્તઃ ? ॥ ૨ ॥

તથા, તદુભયોપાલંભ કે ખેદ સે ઉપાલંભં પ્રકાર કા કહા ગયાહૈ—સ્વોપાલંભ  
મેં જીવ અપને આપકો ઉપાલંભ દેતા હૈ—જૈસે—જવ કિસી અવિહિત કાર્ય  
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હુઆ જૈનેન્દ્ર ધર્મ મેં પ્રવૃત્તિ નહી કરતા હૈ—તવ અપને  
આપ અન્તરાત્મા સે જો એસી આવાજ આતી હૈ કિ હે જીવ હસ પરિભ્રમણ  
રૂપ સંસાર મેં કિસી વહે મારી પુણ્ય કે ઉદય સે તુંજે યહ મનુષ્ય ભવ  
પાપ્ત હુઆ હૈ—સો હસમેં યદિ કોઈ પ્રમોદદાયક વસ્તુ તુંજે મિલી હૈ તો  
વહ એક જિનેન્દ્ર દેવ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મ હી હૈ । તું જિસ તરહ અન્ય  
સંસારિક કાર્યો કો વહે આદર કે સાથ કરતા હૈ, ઉસી તરહ હસે વ્યો  
નહી કરતા । યાદ રલ્લ યદિ હસકે કરને સે તું વંચિત હો રહા હૈ તો  
તું સ્વયં નિજ કા શત્રુ હૈ દુસરા નહી હૈ । ॥ ૧ ॥

છે.—સ્વોપાલંભ, પરોપાલંભ, તેમજ તદુભયોપાલંભના ભેદથી ઉપાલંભના ત્રણ પ્રકાર  
કહેવામાં આવ્યા છે. સ્વોપાલંભમાં માણસ પોતાની જાતને ઉપાલંભ આપે છે. જેમકે  
જીવ જ્યારે કોઈ અવિહિત (ન કરવા યોગ્ય) કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરતા જૈનેન્દ્ર ધર્મમાં  
પ્રવૃત્ત થતો નથી ત્યારે પોતાની મેળેજ અન્તરથી જે અવાજ ઉઠે છે કે હે જીવ !  
આ પરિભ્રમણરૂપ સંસારમાં કોઈ મહા પુણ્યના ઉદયથી તને મનુષ્યભવ મળ્યો છે.  
આ ભવ જે કંઈ એક પ્રમોદ આપનારી વસ્તુ તને મળી છે તે ક્ષેત્ર જિનેન્દ્ર દેવ  
વહે પ્રતિપાદિત ધર્મ જ છે. તું જેમ બીજા સંસારિક કામો બહુજ ખુશીથી કરે છે તેમ  
તું આ ધર્મમાં પ્રવૃત્ત કેમ થતો નથી ? બરાબર યાદ રાખજે કે આ ધર્મમાં તું  
પ્રવૃત્તિ કરીશ નહિ, તો તું પોતે પોતાની જાતને શત્રુ બની ગયો છે. તારો બીજો  
કોઈ શત્રુ નથી. ॥ ૧ ॥

જો यह संग्रह गाथा उद्धृत की गई है—उसका अभिप्राय यह है—जो मुखके  
अभिलाषी हैं उनका यह प्रधान कर्तव्य है कि वे श्रुतज्ञान का अविनय  
न हो ऐसा सदा ध्यानमें रखें । अपने मनसे कल्पित कर आगम  
की कोई बात न कहें वर्यो कि छद्मस्थावस्थामे दृष्टि अपूर्ण  
रहती है यही विषय ( तिवेमी ) इन पदों से सूचित किया  
गया है ।

જૈનાચાર્ય જૈન ધર્મદિવાકર પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત  
જ્ઞાતાધર્મકથામૂત્રકી અનગારધર્મામૃતવર્ણીટીકા કે  
ઉત્તિષ્ઠ નામક પ્રથમ અધ્યયન સંપૂર્ણ ॥ ૧ ॥

મેં તમને કહ્યો છે. આ અર્થે વિષે જે આ અંશકુગાથા ટાંકવામાં આવી છે તેનો  
અભિપ્રાય આ પ્રમાણે છે કે—જે સુખની ઇચ્છા ધરાવે છે તેમની આ સુખ્ય રૂપે ફરજ  
હોય છે કે તેઓથી શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય થાય નહિ આ વિષયમાં હુમેશાં સાવચેત  
રહે. પોતાના મનથી કદપીને આગમની કોઈ વાત કહે નહિ. કેમકે છદ્મસ્થાવસ્થામાં દૃષ્ટિ  
અપૂર્ણ રહે છે, એજ વિષય (તિવેમિ) પદોથી સૂચવવામાં આવ્યો છે.

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મ દિવાકર પૂજ્ય શ્રી. ઘાસીલાલ મહારાજ કૃત  
જ્ઞાતા ધર્મકથામૂત્રકી અનગારધર્મામૃતવર્ણી ટીકાનું  
ઉત્તિષ્ઠ નામક પહેલું અધ્યયન સમાપ્ત. ॥૧॥



‘તિ વેમિ’ એટલે=ઉત્કરૂપં તત્ત્વં યથા તીર્થંકરસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય સઠાશાન્મયા શ્રુતં ન તુ સ્વચુદ્ધયા કલ્પિતં, યતઃ સ્વચુદ્ધયા કથને શ્રુત-જ્ઞાનસ્ય ચિનયો ભવતિ, કિં ચ છદ્મસ્થાનાં દૃષ્ટ્યોઽપ્યપૂર્ણા ભવન્તિ, તસ્માદ્ યથા ભગવત્પ્રતિપાદિતમેવ ત્વાં વ્રવીમિ=ઉપદિશામીત્યર્થં હઠાર્થે ચેયં સંગ્રહગાથા—

સુખણણસ્સ અવિણ્ણો પરિહરણિજ્જો પરિહરણિજ્જો સુહાદિલાસીદિં ।

છડમત્થાણં દિટ્ઠી, પુણ્ણા ણત્થિત્થિ સુદ્ધયં દ્ઢ્ઢ્ઠા ॥ એટલે ॥ મૂત્ર. ૫૦ ॥

॥ એટલે શ્રી વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગ્લમ=મસિદ્ધવાચક-પચ્ચદશભાષાકલિતલલિત

કલાપાલાપક-મવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક શ્રી

શાહ-છત્રપતિ કોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત-‘જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય’-પદ-

ભૂષિત-કોલ્હાપુરરાજગુરુ ચાલબ્રહ્મચારિ જૈનાચાર્ય-

જૈનધર્મદિવાકર=પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલવ્રતિ-વિર-

ચિતાયાં શ્રી જ્ઞાનાધર્મકથાકાવ્યમૂત્રસ્યાઽનગાર

ધર્મામૃતવર્ણિણી ટીકાયામ્ ઉત્તિ-

સનામકં પ્રથમમધ્યયનં

સમાપ્તમ્ ॥૧॥

લિયા છે, ઓર વહ અવ પ્રમાદવશવર્તી હોકર ઉસસે સ્વલિત્ત હો રહા છે-  
યા હો છુકા છે- તો ઉસે પુનઃ સન્માર્ગ મેં સ્થાપિત કરને કે લિયે ગુરુ  
મહારાજ કા કર્તવ્ય છે કિં વે ઉસે ઉપાલંભ દેવે । જિસ પ્રકાર મહાવીર  
મશુને મેઘકુમાર મુનિરાજ કો દિયા છે (તિવેમિ) હસ પ્રકાર યહ ઉત્ત  
રૂપ તત્ત્વ જિસ તરહ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીર મશુકે પાસસે મેંને સુના  
છે, ઉસી તરહ યહ તુમસે કહા છે । અપની બુદ્ધિસે કલ્પિત કર યહ નહીં  
કહા છે । ક્યોં કિં બુદ્ધિસે કલ્પિત કર કહનેમેં શ્રુત જ્ઞાન કી આશા  
તના હોતી છે દૂસરી વાત યહ મી છે કિં છદ્મસ્થજીવોં કી દૃષ્ટિયાં  
અપૂર્ણ હોતી છે । અતઃ વે વસ્તુ કા પૂર્ણરૂપ પ્રતિપાદિત નહીં કર સકીં  
છે । હમ લિયે મશુ પ્રતિપાદિત અર્થ હી યહ તુમ સે કહા છે । હસ અર્થમેં

થઇ રહ્યો છે, અથવા તો તે મુક્તિમાર્ગથી બ્રહ્મ થઇ ચૂક્યો છે એવી વ્યક્તિને  
ફરી સન્માર્ગમાં વાળવા માટે ગુરુમહારાજની ફરજ છે કે તેને ઉપાલંભ આપે. જે  
પ્રમાણે પ્રભુએ મુનિ-જી મેઘકુમારને ઉપાલંભ આપ્યો છે. (તિવેમિ) આ રીતે ઉચ-  
રણિત તત્ત્વ મેં જેવી રીતે તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરની પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવી  
જ રીતે મેં તમને કહ્યું છે. મેં પેતાની બુદ્ધિથી કલ્પના કરીને કહ્યું નથી. કેમકે  
બુદ્ધિથી કલ્પિતકરીને કહેવાથી શ્રુતજ્ઞાનની આશાતના હોય છે. બીજી વાત એ છે  
કે છદ્મસ્થ જીવોની દૃષ્ટિઓ અપૂર્ણ હોય છે. એટલા માટે પ્રભુ પ્રતિપાદિત અર્થ જ

ज्ञाताध्ययनस्य कोऽर्थः प्रवृत्तः १ । श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनमाह-

‘एवं खलु जम्बू’ ति-एवं खलु जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत् वर्णकः, तस्य खलु राजगृहस्य नगरस्य बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे गुणशिलकं नाम चैत्यमासीत् वर्णकः, तस्य खलु

इस अध्ययन का पहिले अध्ययन के साथ इस प्रकार संबन्ध रहा हुआ है-कि पहिले अध्ययन में यह विषय समझाया गया है कि अनुचित मार्ग में प्रवृत्त हुए शिष्य को गुरु का कर्तव्य है कि वह उसे उपालम्भ देवे। इस अध्ययन में यह समझाया जावेगा कि मैं तथा अनुचित मार्ग में प्रवृत्त होते हैं उन्हें अपने अपने कृत कर्मानुसार अर्थ तथा अनर्थ की प्राप्ति परंपरा भोगनी पडती है। इसी निमित्त से यह अध्ययन पहिले के बाद प्रारंभ किया गया है इस अध्ययन का यह प्रथम सूत्र है ‘जइणं भंते ! इत्यादि ।

टीका—जंबू स्वामी सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—(जइ) यदि (णं) निश्चय से (भंते) हे भइंत ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमद्वे पणत्ते) श्रमण भगवान् महावीरने प्रथम ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रदिपादित किया है तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अद्वे पणत्ते) द्वितीय ज्ञाताध्ययन का उन्होंने क्या भाव अर्थ कहा है ? इस प्रकार जंबू स्वामी के पूछने पर श्री सुधर्मा स्वामीने उनसे कहा—(एवं खलु जंबू) हे जंबू सुनो—इस प्रकार है—(तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्या) उस काल उस समय में राजगृह नामका नगर था (वन्नओ) इसका

अध्ययननो पड़ेला अध्ययननी साथे सांघ आ रीते छे—हे पड़ेला अध्ययनमां आ विषयनुं स्पष्टीकरण करवामां आव्युं छे हे अनुचित मार्गमां प्रवृत्त शिष्यने भाटे गुरुनी करज छे हे ते तेमने उपालंभ आपे. आ अध्ययन वडे समजववामां आवये हे ने अनुचित अर्थवा तो उचित मार्गमां प्रवृत्त थांय छे, तेमने पैंताना करेलां केमो अनुसार अर्थ तेमज अनर्थनी प्राप्ति परंप । लोगववी पडे छे. आ करणथी ज आ अध्ययन पड़ेला अध्ययन पछी आरंभवामां आव्युं छे. आ भीज अध्ययननो पड़ेलुं सत्र आ छे:—‘जइणं भंते’ ! इत्यादि !

टीका—जंबूस्वामी सुधर्मास्वामीने पूछे छे—(जइ) ने (णं) निश्चित रूपे (भंते) हे भइंत ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमद्वे पणत्ते) श्रमण भगवान् महावीर पड़ेला ‘ज्ञाताध्ययन’ नो अर्थ उपर कहा मुज्ज स्पष्ट क्यों छे, तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अद्वे पणत्ते) भीज ज्ञाताध्ययननो तेमणे कछ रीते लावार्थ समजववो छे ? जंबूस्वामीनो आ प्रकारनो प्रश्न सांलणीने श्री सुधर्मास्वामीने तेमने कहुं छे (एवं खलु जंबू) हे जंबू तमारा प्रश्ननो जवाब

## अथ द्वितीयमध्ययनं प्रारम्भ्यते

व्याख्यातं प्रथमोध्ययनं, साम्प्रतं द्वितीयमारम्भ्यते, अस्य पूर्वेण सहाऽ-  
यमनिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन्नध्ययने भगवताऽनुचितमार्गप्रवृत्तास्य शिष्यस्योपा-  
लम्भः प्रोक्तः, अत्र तु अनुचितोचितमार्गप्रवृत्तानामनर्थावर्थप्राप्तिपरम्परा  
प्रोच्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्येदमादिममूत्रम् ।

मूलम्—जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स  
नयज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते वीयस्स णं भंते ! नायज्झयणस्स के  
अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु ! जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रागगिहे  
णामं नयरे होत्था वन्नओ तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स वहिया-  
उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था वन्नओ,  
तस्सणं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदुरसामंते एत्थणं महं एगे जि-  
णुज्जाणे यावि होत्था, विणट्ठदेवउले परिसडियतोरणघरे  
नाणाविहगुच्छगुल्मलयावह्लिवच्छच्छाइए अणेगवालसयसंकणिजे  
यावि होत्था । तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थणं महं  
एगे भग्गकूवए यावि होत्था, तस्सणं भग्गकूवस्स अदुरसामंते एत्थणं  
महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था, किणहे किणहोभासे जाव रम्मे  
महामेहनिउरंवभूए बहुहि रुक्खेहि य गुच्छेहि य गुम्मेहि य लयहि य  
वल्लीहि य कुसेहि य खाणुएहि य संच्छन्ने पलिच्छन्ने अंतो झुसिरे वहिं  
गंभीरे अणेग वालस संकणिजे यावि होत्था ॥सू०१॥

टीका—‘जइणं भंते !’ इत्यादि—यदि खलु भदन्त ! अमणेन भगवता  
महावीरेण प्रथमस्य ज्ञाताध्ययनस्य, अयमर्थः प्रज्ञप्तं द्वितीयस्य खलु भदन्त !

दूसरा अध्ययन प्रारम्भ

प्रथम अध्ययन संपूर्ण हो चुका है। अब द्वितीय अध्ययन प्रारंभ

धीनुं अध्ययन प्रारंभ

पडेनुं अध्ययन पुरुं धरं गयुं छे डवे धीनुं अध्ययन शुरु यथा छे. आ



ज्ञाताध्ययनस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः १ । श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनमाह-

‘एवं खलु जम्बू’ ति-एवं खलु जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत् वर्णकः, तस्य खलु राजगृहस्य नगरस्य बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे गुणशिलकं नाम चैत्यमासीत् वर्णकः, तस्य खलु

इस अध्ययन का पहिले अध्ययन के साथ इस प्रकार संबन्ध रहा हुआ है-कि पहिले अध्ययन में यह विषय समझाया गया है कि अनुचित मार्ग में प्रवृत्त हुए शिष्य को गुरु का कर्तव्य है कि वह उसे उपालम्भ देवे। इस अध्ययन में यह समझाया जावेगा कि मैं तथा अनुचित मार्ग में प्रवृत्त होते हैं उन्हें अपने अपने कृत कर्मानुसार अर्थ तथा अनर्थ की प्राप्ति परंपरा भोगनी पडती है। इसी निमित्त से यह अध्ययन पहिले के बाद प्रारंभ किया गया है इस अध्ययन का यह प्रथम सूत्र है ‘जइणं भंते ! इत्यादि ।

टीका—जंबू स्वामी सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—(जइ) यदि (णं) निश्चय से (भंते) हे भइंत ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमंठे पणत्ते) श्रमण भगवान् महावीरने प्रथम ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रदिपादित किया है तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अंठे पणत्ते) द्वितीय ज्ञाताध्ययन का उन्होंने क्या भाव अर्थ कहा है ? इस प्रकार जंबू स्वामी के पूछने पर श्री सुधर्मा स्वामीने उनसे कहा—(एवं खलु जंबू) हे जंबू सुनो—इस प्रकार है—(तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था) उस काल उस समय में राजगृह नामका नगर था (वन्नओ) इसका

अध्ययनने पहिला अध्ययननी साथे संबंध आ रीते छे—के पहिला अध्ययनमां आ विषयनुं स्पष्टीकरण करवामां आव्युं छे के अनुचित मार्गमां प्रवृत्त शिष्यने भाटे गुरुनी करण छे के ते तेमने उपालंभ आपे. आ अध्ययन वडे समन्तववामां आवये के के अनुचित अथवा तो उचित मार्गमां प्रवृत्त थांय छे, तेमने पोताना करेलां केमो अनुसार अर्थ तेमने अनर्थनी प्राप्ति परंप. लोगववी पडे छे. आ कारणथी के आ अध्ययन पहिला अध्ययन पछी आरंभवामां आव्युं छे. आ भीन अध्ययनने पहिलुं सत्र आ छे—‘जइणं भंते’ ! इत्यादि !

टीका—जंबूस्वामी सुधर्मास्वामीने पूछे छे—(जइ) ने (णं) निश्चित रूपे (भंते) हे भइंत ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमंठे पणत्ते) श्रमण भगवान् महावीर पहिला ‘ज्ञाताध्ययन’ ने अर्थ उपर कहा मुज्ज स्पष्ट क्यों छे, तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अंठे पणत्ते) भीन ज्ञाताध्ययनने तेमने कछ रीते आवार्थ समन्तव्यो छे ? जंबूस्वामीने आ प्रकारने प्रश्न सांख्यीने श्री सुधर्मास्वामीने तेमने कछुं के (एवं खलु जंबू) हे जंबू तेमारा प्रश्नने जवाब

ગુણશિલકસ્ય ચૈવ્યસ્ય 'અદૂરસામંતે' નાતિદૂરે નાત્યાસન્ને, અથ ચત્તુ  
મહદેકં જીર્ણોદ્યાનં ચાપ્યાસીત્, તન્કીદશમિત્યાદ- 'વિણદ્વદેવઉલે' વિનષ્ટ  
દેવકુલં-વિનષ્ટવ્યન્તરાયતનં, 'પરિસહિયતોરણઘરે' પરિશદિતતોરણ  
મૃદં-પરિશદિતા નિ નષ્ટપ્રાયાણ તોળાણિ વદિદ્યારાણિ ગૃહાણિ, પ્રાકાર  
દ્વારવ્યન્તરાયતનસમ્યન્ધીનિ ગૃહાણિ યત્ર તત્તથા । 'નાગવિહગુચ્છગુમ્મલયા-  
વલ્લિવચ્છચ્છાદૈ' નાનાવિધગુચ્છગુલ્મલતારહ્લીવૃક્ષચ્છાદિતં-નાનાવિધા  
યે ગુચ્છાઃ=કાર્પાસી જપાકુસુમપ્રભૃતયઃ, ગુલ્માઃ=વંશજાતી પ્રભૃતયઃ, લતાઃ  
અશોકલતાદયઃ, વચ્ચઃ=ત્રપુવીપ્રભૃતયઃ વૃક્ષાઃ=આમ્રાદયઃ તૈશ્ચાદિતં ચત્તત્તથા ।  
'અણેગવાલમયસંકણિજ્જે' અનેકગ્યાલશતશઙ્કનીયમ્, અનેકૈઃ=નાનાવિધૈ ગ્યાલ-  
શતૈઃ=સર્પાદિ શ્વાપદશતૈઃ શઙ્કનીયં=મયાવહં ચાપ્યાસીત્ ।

વર્ણન પહિલે ક્રિયા મયા દે। (તસ્સ ણં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ વહિયા ઉત્તર-  
પુરત્થિમે દિસીમાણ ગુણસિલ્લે નામે ચેદ્દણ હત્યા) ઉત્ત રાજગૃહ નગર કે  
બાહર કો ઓર ઉત્તર પૂર્વ કે દિગ્વિભાગ મેં અર્થાત્ દેશાનકોણમેં ગુણશિલક  
નામકા ઉદ્યાન થા। (વન્નઓ) इसका वर्णन पहिले क्रिया मया है। (तस्स  
णं गुणसिलयस्स चैयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंएगे जिणुज्जाणे यावि  
होत्था) उस गुणशीलक उद्यान के न अति समीप और न अति दूर एक  
और भी बड़ा भारी जीर्ण उद्यान था। (विणद्वदेवउले परिसडियतोरणघरे  
नाणाविहगुच्छगुलमलयावल्लीवच्छच्छादए अणोगवालसयसंकणिज्जे या  
वि होत्था) इसमें जो देवकुल था वह कभी का नष्ट हो चुका था।

સાંભળો- (તેણં કાલેણં તેણં સમણં રાયગિહે નામે નયરે હત્યા) તે કાળે અને તે સમયે  
રાજગૃહ નામે એક નગર હતું (વન્નઓ) તે નગરનું વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે.  
(તસ્સ ણં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ વહિયા ઉત્તરપુરત્થિમે દિસીમાણ ગુણસિલ્લે  
નામે ચેદ્દણ હત્યા) રાજગૃહ નગરની બહાર ઉત્તર પૂર્વ દિશામાં એટલે ઇશાનકોણમાં  
ગુણશીલક નામે ઉદ્યાન હતો. (વન્નઓ) આ ઉદ્યાનનું વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે.  
(તસ્સ ણં ગુણસિલયસ્સ ચૈયસ્સ અદૂરસામંતે એત્થણં મહંએગે જિણુજ્જાણે યાવિ હત્યા)  
ગુણશીલક ઉદ્યાનની વધારે પાસે પણ નહિ અને વધારે દૂર પણ નહિ એવું એક  
બીજો બહુ ઉદ્યાન હતું. (વિણદ્વદેવઉલે પરિસહિયતોરણઘરે નાનાવિહગુચ્છ  
ગુલ્મલયાવલ્લિવચ્છાદૈ અણેગવાલસયસંકણિજ્જે યાવિ હત્યા) આમાં દેવકુળ  
વ્યન્તરાયન ક્યારનુંએ નાથ પામ્યું હતું. દેવકુળનો અર્થ અડી વ્યન્તરનું આયતન

तस्य खलु जीर्णोद्यानस्य बहुमध्यदेशभागे अत्र खलु महानेको भग्नकुशावापीन् तस्य खलु भग्नकूपस्य अदूरसामंते अत्र खलु महानेः। 'मालुया कच्छए' मालुका कक्षकः मालुकाः एकास्थिफल वृक्षविशेषास्तेषां कक्षकः=गन्धं वनम् चाप्यासीत् । मकोदशः १ इत्याह—'किण्हे किण्हो भासे' कृष्णः कृष्णावभासः, तत्र—कृष्णः=कृष्णवर्ण-

देवकुल का अर्थ यहां व्यंतर का आयतन है। इस व्यन्तरायतन संबन्धी जितने घर थे उन सबके भी यहाँ चहिर्द्वार नष्टपाय हो चुके थे। यह जीर्ण उद्यान अनेक प्रकार के गुच्छों से कपास के जपा पुष्पों आदि के गुच्छों से—वंशजाली आदि गुल्मों से अशोकलता आदि लताओं से त्रयुगी (ककड़ी) आदि वेगैले, आम्र आदि वृक्षों से, आच्छादित हो रहा था। इसमें अनेक प्रकार के सँकड़ों सर्प इधर से ऊधर फिरते रहते थे अतः उनके द्वारा यह विशेष भयंकर बना हुआ था। (तस्स णं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेशभाए एत्थ णं महं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) इस जीर्ण उद्यान के ठीक मध्य भाग में एक बड़ा भारी भग्न जीर्ण हुआ कुँआ भी था (तस्स णं भग्गकूवस्य अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) उस भग्न कुँए के न अति समीप और न अति दूर—पास में मालुका वृक्षों का बहुत बड़ा गहन वन था। एकास्थिकुल वाळे वृक्ष विशेषों का नाम मालुका है (किण्हे किण्हो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बह्विं रुक्खे हि य गुच्छे हि य गुम्मे

छे. आ व्यन्तरायतननां जेटलां धर इतां, ते जधाना जडारना दरवाजा नष्टप्राय थछ गया इता. जूनु' उद्यान धर्षी जगतना गुच्छे।—जेटले के वधु अने जपापुष्प वगेरेना गुच्छे—वंशजाली वगेरे गुम्मे अशोकलता वगेरे लताओ, त्रयुली (ककड़ी) वगेरेनी वेखे, आम्र वगेरे वृक्षोथी ढंकाओले इतो. धर्षी जगतना सेंकडो साप आ उद्यानमां आभथी तेम विचरता रडेता इता. ओथी आ उद्यान सविशेषलयंकर लागतुं इतुं. (तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेशभाए एत्थणं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) आ जूता उद्याननी ठीक वय्योवय्य ओक मोटो लज्जकूप नामे ओक लुण्ठ थयेखे दूयो इतो. (तस्सणं भग्गकूवस्स अदूरसामंते एत्थणं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) ते लज्ज दूवानी वधारे हर पणु नडि अने वधारे नलुक पणु नडि डडेवाय ओवुं पासे मालुका वृक्षोतुं मोटुं सधन वन इतुं. ओकास्थिकुल वृक्ष विशेषतुं नाम मालुका छे. (किण्हे किण्हो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बह्विं रुक्खे हि य गुच्छे हि य

ગુણશિલ્પકસ્ય ચૈત્યસ્ય 'અદૂરસામંતે' નાતિદૂર નાત્યાસન્ને, અથ સ્વત્તુ મહદેકં જીર્ણોદ્યાનં ચાપ્યાસીત્, તત્કીદશમિત્યાદ- 'વિણટ્ટદેવઝલે' વિનટ્ટ દેવકુલં-વિનટ્ટવ્યન્તરાયતનં, 'પહિસહિયતોરણઘરે' પરિશટિતતોરણ ગૃહં-પરિશટિતા નિ નટ્ટમાયાણ તોરણાણિ વહિદારાણિ ગૃહાણિ, પ્રાકાર દ્વારવ્યન્તરાયતનસમ્બન્ધીણિ ગૃહાણિ યત્ર તત્તથા । 'નાગવિહગુચ્છગુલ્મલયા વલ્લિવચ્છચ્છાદૈ' નાનાવિધગુચ્છગુલ્મલતાવલીઘૃષ્ણચ્છાદિતં-નાનાવિધા યે ગુચ્છાઃ=કાર્પાસી જપાકુસુમપ્રભૃતયઃ, ગુલ્મનાઃ=વંશજાલી પ્રભૃતયઃ, લતાઃ અશોકલતાદયઃ, વશ્પઃ=ત્રપુષીપ્રભૃતયઃ વૃક્ષાઃ=આમ્રાદયઃ તૈશ્ચાદિતં ચતત્તથા । 'અણેગવાલસયસંકણિજ્જે' અનેકગ્યાલસતશઙ્કનીયમ્, અનેકૈઃ=નાનાવિધૈ ગ્યાલ-સતૈઃ=સર્પાદિ શ્વાપદસતૈઃ શઙ્કનીયં=મયાવહં ચાપ્યાસીત્ ।

વર્ણન પહિલે ક્રિયા ગયા હૈ (તસ્સ ણં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ વહિયા ઉત્તર-પુરત્થિમે દિસીમાણ ગુણસિલ્પ નામં ચેદ્દણ હત્યા) ઉસ રાજગૃહ નગર કે ચાદર કી ઔર ઉત્તર પૂર્વ કે દિગ્વિભાગ મેં અર્થાત્ ઈશાનકોણમેં ગુણશિલ્પક નામકા ઉદ્યાન થા। (વન્નઓ) इसका वर्णन पहिले किया गया है। (तस्स णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंएगे जिण्णुज्जाणे यावि होत्था) उम गुणशीलक उद्यान के न अति समीप और न अति दूर एक और भी बड़ा भारी जीर्ण उद्यान था। (विणट्टदेवउले परिसडियतोरणघरे नाणाविहगुच्छगुल्लमलयावल्लीवच्छच्छादए अणोगवालसयसंकणिज्जे या वि होत्था) इसमें जो देवकुल था वह कभी का नष्ट हो चुका था।

સાંભળો-(તેણં કાલેણં તેણં સમણં રાયગિહે નામં નયરે હત્યા) તે કાળે અને તે સમયે રાજગૃહ નામે એક નગર હતું (વન્નઓ) તે નગરનું વણું પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. (તસ્સ ણં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ વહિયા ઉત્તરપુરત્થિમે દિસીમાણ ગુણસિલ્પ નામં ચેદ્દણ હત્યા) રાજગૃહ નગરની બહાર ઉત્તર પૂર્વ દિશામાં એટલે ઇશાનકોણમાં ગુણશીલક નામે ઉદ્યાન હતો. (વન્નઓ) આ ઉદ્યાનનું વણું પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. (તસ્સ ણં ગુણસિલયસ્સ ચેइयस्સ અદૂરસામંતે એત્થણં મહંએગે જિણ્ણુજ્જાણે યાવિ હત્યા) ગુણશીલક ઉદ્યાનની વધારે પાસે પણ નહિ અને વધારે દૂર પણ નહિ એવું એક બીજો બૂતું ઉદ્યાન હતું. (વિણટ્ટદેવઝલે પરિસહિયતોરણઘરે નાનાવિહગુચ્છ ગુલ્મલયાવલ્લિવચ્છાદૈ અણેગવાલસયસંકણિજ્જે યાવિ હત્યા) આમાં દેવકુળ વ્યંતરાયન ક્યારનુંએ નાથ પામ્યું હતું. દેવકુળનો અર્થ અડી વ્યંતરનું આયતન

तस्य खलु जीर्णोद्यानस्य बहुमध्यदेशभागे अत्र खलु महानेको  
भग्नस्तथापीन् तस्य खलु भग्नकूपस्य अदूरसामंते अत्र खलु  
महानेः 'मालुया कच्छए' मालुका कक्षकः मालुकाः एकास्थिफल  
वृक्षविशेषास्तेषां कक्षकः=गहनं वनम् चाप्यासीत् । मकोदशः १  
इत्याह-'किण्हे किण्हो भासे' कृष्णः कृष्णावभासः, तत्र-कृष्णः=कृष्णवर्ण-

देवकुल का अर्थ यहां व्यंतर का आयतन है । इस व्यन्तरायतन संबन्धी  
जिनने घर थे उन सबके भी यहाँ बहिर्द्वार नष्टपाय हो चुके थे । यह  
जीर्ण उद्यान अनेक प्रकार के गुच्छों से कपास के जपा पुष्पों आदि के  
गुच्छों से—वंशजाली आदि गुल्मों से अशोकलता आदि लताओं से  
त्रपुली (ककड़ी) आदि वेगैले, आम्र आदि वृक्षों से, आच्छादित हो  
रहा था । इसमें अनेक प्रकार के सँकड़ों सर्प इधर से ऊधर फिरते रहते  
थे अतः उनके द्वारा यह विशेष भयंकर बना हुआ था । (तस्स णं  
जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेशभाए एत्थ णं महं एगे भग्नकूपए यावि हो  
त्था) इस जीर्ण उद्यान के ठीक मध्य भाग में एक बड़ा भारी भग्न जीर्ण  
हुआ कुँआ भी था (तस्स णं भग्नकूपस्य अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे  
मालुया कच्छए यावि होत्था) उस भग्न कुँए के न अति समीप  
और न अति दूर—पास में मालुका वृक्षों का बहुत बड़ा गहन वन था ।  
एकास्थिरुज्ज वाळे वृक्ष विशेषों का नाम मालुका है (किण्हे किण्हो भासे  
जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य गुम्मे

छे. आ व्यन्तरायतननां जेटलां घर इतां, ते णधाना णडारना हरवाज्ज नष्टप्राय थछ  
गया इता. जूनुं उद्यान धल्ली जतना शुच्छे. —जेटले के वल्लु अने जपापुष्प वगेरेना  
शुच्छे—वंशजाली वगेरे शुद्धो अशोकलता वगेरे लताओ, त्रपुली (ककड़ी) वगेरेनी वेढो,  
आम्र वगेरे वृक्षोथी ठंडाओलो इतो. धल्ली जतना सेंकडो साय आ उद्यानमां आभथी  
तेम विथरता रहता इता. ओथी आ उद्यान सविशेषलयंकर लागतुं इतुं. (तस्सणं  
जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेशभाए एत्थणं एगे भग्नकूपए यावि होत्था)  
आ जूना उद्याननी ठीक वन्धोवन्ध ओक मोटो लज्जकूप नामे ओक लुक्क थयेवो इवो इतो.  
(तस्सणं भग्नकूपस्स अदूरसामंते एत्थणं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था)  
ते लज्ज इवानी वधारे हर पल्लु नडि अने वधारे नल्लु पल्लु नडि छडेवाय ओवुं  
पासे मालुका वृक्षोतुं मोटुं सधन वन इतुं. ओकास्थिरुज्ज वृक्ष विशेषतुं नाम मालुका छे.  
(किण्हे किण्हो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य

ગુણશિલકસ્ય ચૈત્યસ્ય 'અદૂરસામંતે' નાતિદૂરે નાત્યાસન્ને, અત્ર સ્વત્તુ મહદેકં જીર્ણોદ્યાનં ચાપ્યાસીત્, તન્કીદશમિત્યાદ- 'વિણટ્ટદેવઉલે' વિનટ્ટ દેવકુલં-વિનટ્ટવ્યન્તરાયતનં, 'પહિસહિયતોરણઘરે' પરિશટિતતોરણ ગૃહં-પરિશટિતા નિ નટ્ટપાયાંણ તોળાણિ વહિદારાણિ ગૃહાણિ, માકાર દ્વારવ્યન્તરાયતનસમ્બન્ધીણિ ગૃહાણિ યત્ર તત્તથા । 'નાણવિહગુચ્છગુલ્મલયા વલ્લિવચ્છચ્છાઇ' નાનાવિધગુચ્છગુલ્મલતાવલીવૃક્ષચ્છાદિતં-નાનાવિધા યે ગુચ્છાઃ=કાર્પાસી જપાકુસુમપ્રભૃતયઃ, ગુલ્માઃ=વંશજાલી પ્રભૃતયઃ, લતાઃ અશોકલતાદયઃ, વશ્મયઃ=વપુષીપ્રભૃતયઃ વૃક્ષાઃ=આમ્રાદયઃ તૈશ્ચાદિતં ચત્તત્તથા । 'અળેગવાલસયસંકળિજ્જે' અનેકગ્યાલશતશઙ્કુનીયમ્, અનેકૈઃ=નાનાવિધૈ ગ્યાલ-શતૈઃ=સર્પાદિ શ્વાપદશતૈઃ શઙ્કુનીયં=ભવાવહં ચાપ્યાસીત્ ।

વર્ણન પહિલે ક્રિયા ગયા છે। (તસ્સ ણં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ વહિયા ઉત્તર-પુરત્થિમે દિસીમાણ ગુણસિલ્લે નામં ચેહણ હોત્થા) ઉત્તર રાજગૃહ નગર કે ચાહર કી ઓર ઉત્તર પૂર્વ કે દિગ્વિભાગ મેં અર્થાત્ ઈશાનકોણમેં ગુણશિલક નામકા ઉદ્યાન થા। (વન્નઓ) इसका वर्णन पहिले किया गया है। (तस्स णं गुणसिल्लयस्स चैयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंएगे जिणुज्जाणे यावि होत्था) उत્त गુणशीलक ઉદ્યાન કે ન અતિ સમીપ ઓર ન અતિ દૂર એક ઓર મી વડા ભારી જીર્ણ ઉદ્યાન થા। (વિણટ્ટદેવઉલે પરિસહિયતોરણઘરે નાનાવિહગુચ્છગુલ્મલયાવલીવચ્છચ્છાઇ અળેગવાલસયસંકળિજ્જે યા વિ હોત્થા) इसमें जो देवकुल था वह कभी का नष्ट हो चुका था।

સાંભળો- (તેણં કાલેણં તેણં સમણં રાયગિહે નામં નયરે હોત્થા) તે કાળે અને તે સમયે રાજગૃહ નામે એક નગર હતું (વન્નઓ) તે નગરનું વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. (તસ્સ ણં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ વહિયા ઉત્તરપુરત્થિમે દિસીમાણ ગુણસિલ્લે નામં ચેહણ હોત્થા) રાજગૃહ નગરની બહાર ઉત્તર પૂર્વ દિશામાં એટલે ઇથાનકોણમાં ગુણશીલક નામે ઉદ્યાન હતો. (વન્નઓ) આ ઉદ્યાનનું વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. (તસ્સ ણં ગુણસિલ્લયસ્સ ચેયસ્સ અદૂરસામંતે એત્થણં મહંએગે જિણુજ્જાણે યાવિ હોત્થા) ગુણશીલક ઉદ્યાનની વધારે પાસે પણ નહિ અને વધારે દૂર પણ નહિ એવું એક બીજો બુદ્ધ ઉદ્યાન હતો. (વિણટ્ટદેવઉલે પરિસહિયતોરણઘરે નાનાવિહગુચ્છ ગુલ્મલયાવલિવચ્છાઇ અળેગવાલસયસંકળિજ્જે યાવિ હોત્થા) આમાં જ દેવકુળ અંતરાયન ક્યારનું એ નાથ થાયું હતું. દેવકુળનો અર્થ અહીં વ્યન્તરનું આયતન



तस्य खलु जीर्णोद्यानस्य बहुमध्यदेशभागे अत्र खलु महानेको भग्नकुशापीन् तस्य खलु भग्नरूपस्य अदूरसामंते अत्र खलु महानेः 'मालुया कच्छए' मालुका कक्षकः मालुकाः एकास्थिफल वृक्षविशेषास्तेषां कक्षकः=गहनं वनम् चाप्यासीत् । मकोदशः १ इत्याह- 'किण्हे किण्हो भासे' कृष्णः कृष्णावभासः, तत्र-कृष्णः=कृष्णवर्ण-

देवकुल का अर्थ यहां व्यंतर का आयतन है । इस व्यन्तरायतन संबन्धी जिनने घर थे उन सबके भी यहां बहिर्द्वार नष्टप्राय हो चुके थे । यह जीर्ण उद्यान अनेक प्रकार के गुच्छों से कपास के जपा पुष्पों आदि के गुच्छों से--वंशजाली आदि गुल्मों से अशोकलता आदि लताओं से त्रपुली (ककड़ी) आदि वेगोंसे, आम्र आदि वृक्षों से, आच्छादित हो रहा था । इसमें अनेक प्रकार के सँकड़ों सर्प इधर से ऊधर फिरते रहते थे अतः उनके द्वारा यह विशेष भयंकर बना हुआ था । (तस्स णं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) इस जीर्ण उद्यान के ठीक मध्य भाग में एक बड़ा भारी भग्न जीर्ण हुआ कुंआ भी था (तस्स णं भग्गकूवस्य अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) उस भग्न कुँए के न अति समीप और न अति दूर--पास में मालुका वृक्षों का बहुत बड़ा गहन वन था । एकास्थिरुज्जाणस्स वृक्ष विशेषों का नाम मालुका है (किण्हे किण्हो भासे जान रम्मे महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य गुम्मे

छे. आ व्यन्तरायतननां जेटलां धरुतां, ते जधाना जडारना हरवान् नष्टप्राय थर्ध गया हुता. जूनुं उद्यान धर्षी जतना गुच्छे. - जेटले के वृक्ष अने जपापुष्प वगेरेना गुच्छे-वंशजाली वगेरे गुल्मो अशोकलता वगेरे लताओ, त्रपुली (ककड़ी) वगेरेनी वेवो, आम्र वगेरे वृक्षोथी ठंडाओवो हुतो. धर्षी जतना सेंकडो साप आ उद्यानमां आभथी तेम विचरता रहता हुता. ओथी आ उद्यान सविशेषलयंकर लागतुं हुतुं. (तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थणं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) आ जूना उद्याननी ठीक वर्योवर्य ओक मोटो लज्जकूप नामे ओक लुब्धं थयेवो कूवो हुतो. (तस्सणं भग्गकूवस्स अदूरसामंते एत्थणं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) ते लज्ज कूपानी वधारे हर पणु नडि अने वधारे नलुक पणु नडि डडेवाय ओधुं पासे मालुका वृक्षानुं मोटुं सधन वन हुतुं. ओकास्थिरुज्जाण वृक्ष विशेषतुं नाम मालुका छे. (किण्हे किण्हो भासे जान रम्मे महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य

अजनवत्, कृष्णावभासः=कृष्णप्रभः स्वरूपेण कृष्णवर्णएवावभासते, यावद्  
रम्यः=सुन्दरः 'महामेघनिउरंवभूय' महामेघनिकुरम्यभूतः, महामेघः=वर्षाकाल  
भावि मेघस्तस्य निकुरम्यः=समूहः तथाभूतः-यनीभूतः नूतनधर्मापम इत्यर्थः  
नीलधर्मसाभ्यात् । बहुभिर्दृष्टैश्च, गुच्छैश्च, गुल्मैश्च, लताभिश्च, वल्लीभिश्च,  
कुशैश्च=रैश्च, स्थाणुकैश्च=ऊर्ध्वकीलकैश्च 'हुंठाइति भाषायाम्' संछन्नाः=  
व्यासः, परिच्छन्नः=विशेषेण समाच्छादितः 'अंतो जुसिरे' अन्तः=मध्ये  
शुशिरः सावकाशत्वात् 'वहिं गंभीरे' वहिर्गंभीरः, अतिगहनत्वेन दृष्टेरपसृत-  
त्वात्, अनेक त्वालशतशङ्कुनीयः-अनेकशतसर्पादिभिः शङ्कुनीयः-मयजनकथा-  
प्यासीत् ॥ सू. १ ॥

मूलम्—तत्थ णं रायगिहे नयरेधणणे नामं सत्थवाहे अंहुं दित्ते  
जाव विच्छड्डियविउलभत्तपाणे, तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स  
भद्दा नामं भारिया होत्था, सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचि-

हि य लया हि य वल्लि हि य कुए हि य खाणुएहि य मच्छन्ने पलिच्छन्ने  
अंतो जुसिरे वहिं गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) यह  
गहन वन कज्जल की तरह कृष्ण वर्णवाला था स्वरूप से ही इसकी प्रभा  
कृष्ण थी। यावत् यह सुन्दर था। वर्षाकाल भावी मेघ के समूह जैसा  
यह नीला था। अनेक प्रकार के वृक्षों से, अनेक प्रकार के गुल्मों से, अनेक  
प्रकार की लताओं से, अनेक प्रकार की वल्लियों से, अनेक प्रकार के कुशों  
से, अनेक विध स्थाणुओं से यह बहुत अधिक रूप में आच्छादित हो रहा था।

बीच में यह सावकाश होने से पोला था। बाहिर गहन होनेकी वजह  
से गंभीर था। अनेक प्रकार के सैकड़ों सर्पों से यह भी महान भया-  
नक था। सूत्र " १ "

गुम्मे हि य लया हि य वल्ली हि य खाणुएहि य सच्छन्ने पलिच्छन्ने अंतो जुसिरे  
वहिं गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) आ सधनवन मेशनी  
जेम काणा रंगत्तुं इत्तुं. आनी प्रभा स्वरूपथी ज काणी इती. वर्षाकाणना मेघ जेवा  
ते नीला रंगत्तुं इत्तुं. धल्ली जतनां वृक्षो, धल्ली जतना गुल्मो, धल्ली जतनी लताओ  
धल्ली जतनी वल्लीओ, धल्ली जतना दंभो धल्ली जतना स्थाणुओथी आ उद्यान  
सधन रूपे ढंकायेत्तुं इतो. वेम्मे भावी जम्मा इती पत्तु आणूणाणू ओमेर वृक्षावली-  
ने वीधे ते सधन इत्तुं. धल्ली जतना सेंकडा सापोथी आ गूण ज लयकारी लागत्तुं  
इत्तुं. सूत्र ॥ १ ॥

दियसरीरा लक्खणवंजणगुणोव्वेया माणुम्माणप्पमाणपडिपुन्न-  
सुजायसव्वंगसुंदरंगा ससिसोमोगारा कंता पियदंसणा सुरूवा  
करयल-परिमियतिवलियमज्झा कुंडलुल्लिहियगंडलेहा कोमुइ-रय-  
णियर-पडिपुण्णसोमवयणा सिंगारागारचारुवेसा जाव पडिरूवा  
वंझा आवयाउरी जाणुकोप्परमाया यावि होत्था ॥सू. २॥

टीका-‘तत्थं रायगिहे’ त्ति-तत्र खलु राजगृहे नगरे धन्यनामा  
सार्थवाहः=जनसमूहनायकः गरिम-धरिम-मेय, परिच्छेद्यरूपं क्रयाणकद्रव्य-  
जातं गृहीत्वा लाभार्थमन्यदेशं व्रजन् सहागतवणिगूजनस्य योगक्षेमचिन्तया  
परिपालक इति भावः अड्ढे ‘आढ्यः-ऋद्ध्यादिपूर्णः ‘दिस्से’ दीप्तः-सच्चरित्रेण  
उज्ज्वलः यावद् विच्छर्दितविपुलभक्तपानः । यावच्छब्देनायमर्थो ग्रहीतव्यः-  
विस्तीर्णविपुल भवनशयनासनयानवाहनाकीर्णः, बहुधनबहुजातरूपरजनः, आयो-

तत्थं रायगिहे नगरे इत्यादि

टीकार्थ- (तत्थं रायगिहे नगरे) उस राजगृह नगरमें (धन्नेनामं सत्थवा  
हे) धन्य नाम के सार्थवाह थे । जब ये गरिम धरिम मेय एवं परिच्छेद्य  
रूप-क्रयाणक द्रव्य समूह लेकर लाभप्राप्ति की इच्छा से परदेश जाते थे  
तो इनके साथ जो और भी वर्णकजन होते उनके ये योगक्षेमकारक  
होते थे । उनकी हरएक प्रकार की चिन्ता रखते थे । ये (अड्ढे)  
ऋद्ध्यादि से परिपूर्ण थे । (दिस्से) सच्चरित्र से उज्ज्वल थे । (जाव विच्छ-  
द्वियविउलभत्तपाणे) यावत् विच्छर्दित विपुलभक्तपानवाले थे--  
यहां यावत् शब्द से इनके विषय में इतना और समझ लेना चाहिये कि  
इनके भवन बहुत विस्तीर्ण थे, शयन, आसन, यान, वाहन, भी इनके

‘तत्थं रायगिहे नगरे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ- (तत्थं रायगिहे नगरे) तेसज गृह नगरमां (धन्ने नामं सत्थवाहे)  
धन्य नामे सार्थवाहु हुता. न्यारे तेओ गरिम, धरिम. मेय अने परिच्छेद्य रूप कल्याणक द्रव्य-  
निधि लधने लालनी छिछाथी विद्वेश जाता हुता त्यारे ओमनी साथे ले भीज वल्लुकजन  
रहेता तेमना भाटे तेधन्य सार्थवाहु अधी रीते कुशण करनार हुता. तेमनी दरेक जातनी  
संभाण राभता हुता हुता. ओ (आड्ढे) ऋद्धि वगेरेथी संपूर्ण पले पूर्ण हुता.  
(दिस्से) सच्चरित्र्यथी उज्जवण हुता, (जाव विच्छद्वियविउलभत्तपाणे) यावत्  
विच्छर्दित विपुल भक्त पान वाला हुता. अड्ढा ले यावत् शब्द आव्यो छे तेने  
अर्थ आ प्रमाणे छे के ओमनां लवन गहुज विशाण हुतां. शयन, आसन, यान,

अञ्जनवत्, कृष्णावभासः=कृष्णप्रभः स्वरूपेण कृष्णवर्णएवावभासते, यावद्  
रम्यः=सुन्दरः 'महामेघनिउरंवभूत' महामेघनिकुरम्बभूतः, महामेघः=वर्षाकाल  
भावि मेघस्तस्य निकुरम्बः=समूहः तथाभूतः-यनीभूतः नूतनधनोपम इत्यर्थः  
नीलधर्मसाभ्यात् । बहुभिर्दृष्टैश्च, गुच्छैश्च, गुल्मैश्च, लताभिश्च, वल्लीभिश्च,  
कुशैश्च=दृष्टैश्च, स्थाणुकैश्च=ऊर्ध्वकीलकैश्च 'दुंठाइति भाषायाम्' संउन्नाः=  
व्यासः, परिच्छन्नः=विशेषेण समाच्छादितः 'अंतो जुसिरे' अन्तः=मध्ये  
शुशिरः सावकाशत्वात् 'वहिं गंभीरे' चहिर्गंभीरः, अतिगहनत्वेन दृष्टेरप्रसृत-  
त्वात्, अनेक व्यालशतशङ्कुनीयः-अनेकशतसर्पादिभिः शङ्कुनीयः-मयजनकश्चा-  
प्यासीत् ॥सू. १॥

मूलम्—तत्थ णं रायगिहे नयरेधणणे नामं सत्थवाहे अहं दित्तं  
जाव विच्छड्डियविउलभत्तपाणे, तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स-  
भदा नामं भारिया होत्था, सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचि-

हि य लया हि य वल्लि हि य कुए हि य खाणुएहि य मच्छन्ने पलिच्छन्ने  
अंतो जुसिरे वाहिं गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) यह  
गहन वन कज्जल की तरह कृष्ण वर्णवाला था स्वरूप से ही इसकी प्रभा  
कृष्ण थी। यावत् यह सुन्दर था। वर्षाकाल भावी मेघ के समूह जैसा  
यह नीला था। अनेक प्रकार के वृक्षों से, अनेक प्रकार के गुल्मों से, अनेक  
प्रकार की लताओं से, अनेक प्रकार की वल्लियों से, अनेक प्रकार के कुशों  
से, अनेक विध स्थाणुओं से यह बहुत अधिक रूप में आच्छादित हो रहा था।

बीच में यह सावकाश होने से पोला था। बाहिर गहन होनेकी वजह  
से गंभीर था। अनेक प्रकार के सैंकड़ों सर्पों से यह भी महान भया-  
नक था। सूत्र " १ "

गुम्मे हि य लया हि य वल्ली हि य खाणुएहि य सच्छन्ने पलिच्छन्ने अंतो जुसिरे  
वाहिं गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) आ सधनवन मेघनी  
जेम डाणा रंगतुं इतुं. आनी प्रसा स्वइयथी ज डाणी इती. वर्षाडाणना मेघ जेवा  
ते नीला रंगतुं इतुं. धल्ली जतनां दृक्षो, धल्ली जतना गुल्मो, धल्ली जतनी लताओ  
धल्ली जतनी वल्लीओ, धल्ली जतना दंभो. धल्ली जतना स्थाणुओथी आ उद्यान  
सधन इये दंकायेतुं इतो. वय्ये आदी जय्या इती पय्य आणूणाणू योमेर वृक्षावली-  
ने वीधे ते सधन इतुं. धल्ली जतना सेंकडा सापोथी आ पूण ज सयकारी लागतुं  
इतुं. सूत्र ॥ १ ॥

કરેવારૂપાણિ, 'વંજણ' વ્યજ્જનાનિ, વ્યજ્યન્તે-સૂચ્યન્તે ભાગ્યોદય યન્નાનિ તિલમપાદીનિ 'ગુણ' ગુણાઃ સૌશીલ્યપાતિવ્રત્યાદયમ્તૈઃ ઉવવેયા' ઉપપે ૥-સમન્વિતા, તત્ર ઉપ અપદ્વિત્યુપસર્ગયોઃ 'અપ' इत्यत्राद्यङ कारस्यपृचादरादि-त्वाद्योपः। 'माणુમ્माणપ્પમાણપડિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુંદરંગા' માનોન્માન-પ્રમાણપતિર્ગૃજાતપર્વાક્ષપુન્દરાક્ષી, તત્ર = 'માગ' માનં = જલદ્રોણપ્રમાણતા, તથાહિ-પરિપૂર્ણજઞ્ઞકુણ્ડે यस્ય પુરુષસ્ય યસ્યાઃ સ્ત્રિયો વા પ્રવેશે સ્તિ યદિ દ્રોણપરિમિતં જલ વહિર્નિસ્સરતિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા માનપાપ્નો-ચ્યતે, માનપાપ્તાયાઃ શરીરાવગાહનાવિશેષો માનમિત્યુચ્યતે। 'ઉન્માગ' ઉન્માનપ્, અર્ધભારપ્રમાણતા સાચેત્યમ્-તુલાયામારોપિતો નરો નારી વા યથ ધેભારપ્રમાણા ભવન્તિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા ઉન્માનપાપ્તા નિગદ્યતે 'પ્રમાગ' પ્રમાણ સ્વાર્થુઠૈરપ્રોતરગનોચ્છાયઃ, इत्थं च-मानं चोन्मानं च प्रमाणं

યુક્ત થા। (લક્ષણ) સે ત્રિયા, ધન આદિ કી સૂચક કરસ્થશુભ રેલા રૂપ નિહ્નો સે, તથા ભાગ્યોદય સૂચક તિલમસા આદિ રૂપ વ્યંજનોં સે યદ સમન્વિત થી। સુશીલતા તથા પાતિવ્રત આદિ ગુણોં કા યદ ઘર થી। (માણુમ્માણપ્પમાણપડિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુંદરંગા) માન, ઉન્માન ઓર પ્રમાણ इन के अनुसार इसके समस्त अंगपूर्ण थे। परिपूर्ण जल कुण्ड में प्रवेश करने पर द्रोण परिमित जल यदि उस कुंड से बाहर निकल आवे तो वह पुरुष अथवा स्त्री मान वाली कही जाती है। अर्थात् इसके शरीर की अवगाहना इनने मान प्रमाण थी। तुला पर आरोपित होने पर जिसे स्त्री अथवा पुरुष का वजन अर्धभार प्रमाण निकलता है। तो वह उन्मान प्राप्त कहलाता है। आने अंगुलीले १०८ अंगुल वाली बने हुए ऊँचाई

ધન વગેરેને સૂચવનારી હાથની શુભરેખાઓથી તેમજ ભાગ્યોદયના સૂચક તિલમપા વગેરે રૂપ વ્યંજનોથી તે સંપન્ન હતી. શાલીનતા તેમજ પાતિવ્રત્ય વગેરે ગુણોનું તે ઘર હતી. (માણુમ્માણપ્પમાણપરિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુંદરંગા) માન,

ઉન્માન અને પ્રમાણ સહિત તેનાં બધાં અંગો પૂર્ણ હતાં. સંપૂર્ણ રૂપથી ભરેલા પાણીના કુંડમાં પ્રવેશ્યા બાદ જો દ્રોણ પરિમાણ જેટલું પાણી તે કુંડમાંથી બહાર નીકળે તો તે પુરુષ અથવા સ્ત્રી 'માન' વાળી કહેવામાં આવે છે. એટલે કે તેમના શરીરની અવગાહના અમુક જેટલા માન પ્રમાણવાળી હતી. ત્રાજવાં ઉપર ચઢીને જો સ્ત્રી અથવા પુરુષ પોતાનું વજન કરાવતાં તેમનું વજન અર્ધભાર પ્રમાણ જેટલું થાય તો તે ઉન્માન પ્રાપ્ત કહેવાય છે. પોતાના આંગળથી જ માપ કરવામાં આવે અને તે પુરુષ કે સ્ત્રી એકસો આઠ જેટલા આંગળના માપ જેટલી થાય તો તે પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહેવાય છે. એવી રીતે માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ યુક્ત તેમના દરેકે

गमयोगसमयुक्तः, आयोगेन द्विगुणादिलिप्सया प्रयोगः अधमर्णानां सविधे  
द्रव्यस्य वितरणं, तेन युक्तः। विच्छर्दितविपुलभक्तपानः=यस्य गृहे भोजना-  
वशिष्टैर्वहुभिरन्नपानैः क्षुधार्तानामनेकहीनदीनानां परिपोषणमभूदित्यर्थः।

तस्य खलु धन्यस्य सार्धवाहस्य भद्रा नामभार्याऽभवत् सा कीदृशीत्याह-  
'सुकुमालपाणिपाया' सुकुमारपाणिपादा, तत्र सुकुमारौ कोमलौ पाणी च पादौ यस्या  
सा अतिकोमलकरचरणवतीत्यर्थः। 'अहीणपण्डिपुण्ण पंचिदियसरीरा' अहीन  
प्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरा, तत्र-'अहीण' अहीनानि लक्षणस्वरूपाभ्याम् 'पण्डि-  
पुण्ण' प्रतिपूर्णानि, 'पंचिदिय' पञ्चेन्द्रियाणि यस्मिन् तादृशं शरीरं यस्याः  
सा तथा 'लक्खवणंजणगुणोववेया' लक्षणगन्धजनगुणोपपेता, तत्र-'लक्खण' लक्ष-  
णानि लक्ष्यन्ते दृश्यन्ते ज्ञायन्ते यैस्तानि शुभचिह्नानि-करस्थविद्याधनादि सूच-

पास नाना प्रकार के बहुत अधिक थे। गाय भैंस आदि धन तथा चाँदी  
सोना भी इनके पास बहुत अधिक मात्रामें था। आयोग प्रयोग से ये युक्त  
थे-अर्थात् कर्जदारों के लिये ये द्विगुणित लेने की अभिलाषा से कर्ज दिया  
करते थे। भोजन के बाद जो विविध प्रकार की भोजन सामग्री बचती-  
थी उसे ये वुभुक्षित, भूखे अनेक हीन प्राणियों में वितरित करवा दिया करते  
थे। अथवा भोजन करते समय इनके यहाँ इतना अधिक खाना उच्छिष्ट  
रूप में बचता था कि जिससे अनेक दीनहीन वुभुक्षित प्राणियों का पालन-  
पोषण हो जाता था (तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स भद्रा नामं भारिया होत्था)  
उन धन्य सार्धवाह की भद्रा नाम का धर्मपत्नी थी। (सुकुमाल पाणिपाया  
अहीणपण्डिपुण्णपंचिदियसरीरा लक्खणवणंजणगुणोववेया) इनका शरीर  
सुकुमार हाथ चरण वाला था लक्षण एवं स्वरूप इन दोनों से इनका शरीर

वाढन पशु ऐमनी पासे धणी जतनां अने पुण्डण प्रमाणुमां हुतां. गाय बेंस  
वगेरे, पशु धन तेमज्जांही सोनुं पशु तेमनी पासे पुण्डण प्रमाणुमां हुतुं. आयोग  
प्रयोगधी तेओ युक्त हुता ऐटवे डे जणु आपता हुता. जम्मा पछी जे धणी  
जतनी लोअननी सामथ्रीओ वधती ते सामथ्रीने तेओ लूअ्या धणुा हीन, हीन,  
प्राणीओमां वडेंयावी देता हुता. अथवा तो ऐमने त्यां ऐटलुं जधुं पाधा पछी  
ऐहुं वधतुं डे जेधी धणुा गरीण. हीन, लूअ्या प्राणीओनुं लरणु पोषणु यध  
जतुं हुतुं. (तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स भद्रा नामं भारिया होत्था) ते धन्य  
सार्धवाडनी भद्रा नामे धर्मपत्नी हुती. (सुकुमालपाणिपाया अहीणपण्डिपुण्ण-  
पंचिदियसरीरा लक्खणवणंजणगुणोववेया) ते सुकोमल हाथपंग वाली हुती  
तेमनी हाथ चरण अने स्वरूप आ जनेथी तेमनुं शरीर युक्त हुतुं. (लक्खण) विद्या,



કરેવારૂપાણિ, 'વંજન' વ્યજ્જનાનિ, વ્યજ્જ્યન્તે-સૂચ્યન્તે ભાગ્યોદય યન્તાનિ તિલમપાદીનિ 'ગુણ' ગુણાઃ સૌશીલ્યપાતિવ્રત્યાદયસ્તૈઃ ઉચ્ચેયા' ઉપપે ૧૧-સમન્વિતા, તત્ર ઉપ અપદ્વિત્યુપસર્ગયોઃ 'અપ' इत्यत्राद्यङ कारस्यपृचादरादि-त्वालोपः। 'माणुम्माणप्रमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगा' मानोन्मान-प्रमाणपरिपूर्णनुजातमर्वाङ्गपुन्दराङ्गी, तत्र = 'माग' मानं=जलद्रोणप्रमाणता, तथाहि-परिपूर्णजळकुण्डे यस्य पुरुषस्य यस्याः स्त्रियो वा प्रवेशे सति यदि द्रोणपरिमितं जलं बहिर्निस्सरति तदा स पुरुषः सा स्त्री वा मानप्राप्नो-च्यते, मानप्राप्तायाः शरीरावगाढनाविशेषो मानमित्युच्यते। 'उम्माण' उन्मानम्, अर्धभारप्रमाणता सावेत्यम्-तुलायामारोपितो नरो नारी वा यद्य धेभारप्रमाणा भवन्ति तदा स पुरुषः सा स्त्री वा उन्मानप्राप्ता निगद्यते 'प्रमाण' प्रमाण स्वार्थे ऋट्प्रोत्तरगतोच्छ्रायः, इत्थं च-मानं चोन्मानं च प्रमाणं

યુક્ત થા। (લક્ષ્મણ) સે વિદ્યા, ધન આદિ કી સૂચક કરસ્થશુભ રેखा રૂપ ચિહ્નો સે, તથા ભાગ્યોદય સૂચક તિલમસા આદિ રૂપ વ્યંજનો સે યહ સમન્વિત થી। સુશીલતા તથા પાતિવ્રત આદિ ગુણો કા યહ ધર થી। (માણુમ્માણપ્રમાણપડિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુદરંગા) માન, ઉન્માન ઓર પ્રમાણ ઇનકે અનુસાર ઇસકે સમસ્ત અંગપૂર્ણ થે। પરિપૂર્ણ જલ કુણ્ડ મેં પ્રવેશ કરને પર દ્રોણ પરિમિત જલ યદિ ઉસ કુંડ સે વાહર નિકલ આવે તો વહ પુરુષ અથવા સ્ત્રી માન વાલી કહી જાતી હૈ। અર્થાત્ ઇસકે શરીર થી અવગાહના ઇતને માન પ્રમાણ થી। તુલા પર આરોપિત હોને પર જિય સ્ત્રી અથવા પુરુષ કા વજન અર્ધભાર પ્રમાણ નિકલતા હૈ। તો વહ ઉન્માન પ્રાપ્ત કહલાતા હૈ। અને અંગુલીતે ૧૦૮ અંગુલ વાલી વને હુર ઝૂંચાઈ

ધન વગેરેને સૂચવનારી હાથની શુભરેખાઓથી તેમજ ભાગ્યોદયના સૂચક તિલમપા વગેરે રૂપ વ્યંજનોથી તે સંપન્ન હતી. શાલીનતા તેમજ પાતિવ્રત્ય વગેરે ગુણોનું તે ધર હતી. (માણુમ્માણપ્રમાણપરિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુદરંગા) માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ સહિત તેનાં ગદ્યાં અંગો પૂર્ણ હતાં. સંપૂર્ણ રૂપથી ભરેલા પાણીના કુંડમાં પ્રવેશ્યા બાદ જો દ્રોણ પરિમાણ જેટલું પાણી તે કુંડમાંથી બહાર નીકળે તો તે પુરુષ અથવા સ્ત્રી 'માન' વાળી કહેવામાં આવે છે. એટલે કે તેમના શરીરની અવગાહના અમુક જેટલા માન પ્રમાણવાળી હતી. ત્રાજવાં ઉપર ચઢીને જો સ્ત્રી અથવા પુરુષ પોતાનું વજન કરાવતાં તેમનું વજન અર્ધભાર પ્રમાણ જેટલું થાય તો તે ઉન્માન પ્રાપ્ત કહેવાય છે. પોતાના આંગળથી જ માપ કરવામાં આવે અને તે પુરુષ કે સ્ત્રી એકસો આઠ જેટલા આંગળના માપ જેટલી થાય તો તે પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહેવાય છે. એવી રીતે માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ યુક્ત તેમના દરેકે

गमयोगसमयुक्तः, आयोगेन द्विगुणादिलिप्सया प्रयोगः अधमर्णानां सविधे  
द्रव्यस्य वितरणं, तेन युक्तः। विच्छर्दितविपुलभक्तपानः=यस्य गृहे भोजना-  
वशिष्टैर्वहुभिरन्नपानैः क्षुधार्तानामनेकहीनदीनानां परिपोषणमभूदित्यर्थः।

तस्य खलु धन्यस्य सार्धवाहस्य भद्रा नामभार्याऽभवत् सा कीदृशीत्याह-  
'सुकुमालपाणिपाया' सुकुमारपाणिपादा, तत्र सुकुमारौ कोमलौ पाणी च पादौ यस्या  
सा अतिकोमलकरचरणवतीत्यर्थः। 'अहीणपण्डिपुण्ण पंचिन्द्रियसरीरा' अहीन  
प्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरा, तत्र-'अहीण' अहीनानि लक्षणस्वरूपाभ्याम् 'पण्डि-  
पुण्ण' प्रतिपूर्णानि, 'पंचिन्द्रिय' पञ्चेन्द्रियाणि यस्मिन् तादृशं शरीरं यस्याः  
सा तथा 'लवखणवज्जणगुणोववेया' लक्षणगन्धजनगुणोपपेता, तत्र-'लवखण' लक्ष-  
णानि लक्ष्यन्ते दृश्यन्ते ज्ञायन्ते यैस्तानि शुभचिह्नानि-करस्थविद्याधनादि सूच-

पास नाना प्रकार के बहुत अधिक थे। गाय बैस आदि धन तथा चाँदी  
सोना भी इनके पास बहुत अधिक मात्रामें था। आयोग प्रयोग से ये युक्त  
थे-अर्थात् कर्जदारों के लिये ये द्विगुणित लेने की अभिलाषा से कर्ज दिया  
करते थे। भोजन के बाद जो विविध प्रकार की भोजन सामग्री बचती-  
थी उसे ये वुभुक्षित, भूखे अनेक हीन प्राणियों में वितरित करवा दिया करते  
थे। अथवा भोजन करते समय इनके यहाँ इतना अधिक खाना उच्छिष्ट  
रूप में बचता था कि जिससे अनेक दीनहीन वुभुक्षित प्राणियों का पालन-  
पोषण हो जाता था (तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स भद्रा नामं भारिया होत्था)  
उन धन्य सार्धवाह की भद्रा नाम की धर्मपत्नी थी। (सुकुमाल पाणिपाया  
अहीणपण्डिपुण्णपंचिन्द्रियसरीरा लवखणवज्जणगुणोववेया) इनका शरीर  
सुकुमार हाथ चरण वाला था लक्षण एवं स्वरूप इन दोनों से इनका शरीर

वाढन पशु ओमनी पासे धणी जतनां अने पुष्कल प्रमाणमां हुतां. गाय बैस  
वगेरे, पशु धन तेमज्ज्यांही सोत्तुं पशु तेमनी पासे पुष्कल प्रमाणमां हुतुं. आयोग  
प्रयोगथी तेओ युक्त हुता ओटवे के ऋण आपता हुता. जम्मा पछी जे धणी  
जतनी ओज्जननी सामग्रीओ वधती ते सामग्रीने तेओ भूज्या-धणा हीन, दीन,  
प्राणीओमां वडैयावी हेता हुता. अथवा तो ओमने त्यां ओटहुं जधुं भाधा पछी  
ओहुं वधतुं के जेथी धणा गरीज. हीन, भूज्या प्राणीओतुं सरणु पोषणु थछ  
जतुं हुतुं. (तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स भद्रा नामं भारिया होत्था) ते धन्य  
सार्धवाडनी भद्रा नामे धर्मपत्नी हुती. (सुकुमालपाणिपाया अहीणपण्डिपुण्ण-  
पंचिन्द्रियसरीरा लवखणवज्जणगुणोववेया) ते सुकुमल हाथपंग वाली हुती  
तेमज्ज लक्षण अने स्वरूप आ जनेथी तेमनुं शरीर युक्त हुतुं. (ल विद्या,

કરેવારૂપાણિ, 'વંજન' વ્યજ્જનનાનિ, વ્યજ્જ્યન્તે-સૂચ્યન્તે ભાગ્યોદયા યન્નાનિ તિલમપાદીનિ 'ગુણ' ગુણાઃ સૌશીલ્યપાતિવ્રત્યાદયસ્તૈઃ ઉવવેયા' સપ્પે ૥-સમન્વિતા, તત્ર ઉપ અપરિપુર્ણપરિપુર્ણયોઃ 'અપ' इत्यत्राद्यङ्कारस्य पृथादरादित्वाद्योपः। 'माणुम्माणप्प्रमाणपडिपुन्नसुजायसञ्चंगसुंदरंगा' मानोन्मान-प्रमाणपरिपूर्णनुजाउपर्वीहसुन्दराङ्गी, તત્ર = 'માગ' માનં = જલદ્રોણપ્રમાણતા, તથાહિ-પરિપૂર્ણજલકુણ્ડે યસ્ય પુરુષસ્ય યસ્યાઃ સ્ત્રિયો વા પ્રવેશે સતિ યદિ દ્રોણપરિમિતં જલં વહિર્નિસ્સરતિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા માનપ્રાપ્તો-ચ્યતે, માનપ્રાપ્તયાઃ શરીરાવગાહનાવિશેષો માનમિત્યુચ્યતે। 'ઉન્માગ' ઉન્માનપ્, અર્ધભારપ્રમાણતા સાચેત્યમ્-તુલાયામારોપિતો નરો નારી વા યથા ધેન્યારપ્રમાણા ભવન્તિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા ઉન્માનપ્રાપ્તા નિગદ્યતે 'પ્રમાગ' પ્રમાણ સ્વાર્તુઠૈષ્ટોતરગોચ્છાયઃ, इत्थं च-मानं चोन्मानं च प्रमाणं

યુક્ત થા। (લક્ષણ) સે વિદ્યા, ધન આદિ કી મૂચક કરસ્થશુભ રેખા રૂપ બિહ્નો સે, તથા ભાગ્યોદય મૂચક તિલમસા આદિ રૂપ વ્યંજનો સે યદ સમન્વિત થી। સુશીલતા તથા પાતિવ્રત આદિ ગુણો વા યદ ઘર થી। (માણુમ્માણપ્પમાણપડિપુન્નસુજાયસન્ચંગસુન્દરંગા) માન, ઉન્માન ઓર પ્રમાણ ઇનકે અનુસાર ઇસકે સમસ્ત અંગપૂર્ણ થે। પરિપૂર્ણ જલ કુણ્ડ મેં પ્રવેશ કરને પર દ્રોણ પરિમિત જલ યદિ ઉસ કુંડ સે વાહર નિકલ આવે તો વદ પુરુષ અથવા સ્ત્રી માન વાલી કહી જાતી હૈ। અર્થાત્ ઇસકે શરીર વી અવગાહના ઇતને માન પ્રમાણ થી। તુલા પર આરોપિત હોને પર જિંમ સ્ત્રી અથવા પુરુષ કા વજન અર્ધભાર પ્રમાણ નિકલતા હૈ। તો વદ ઉન્માન પ્રાપ્ત કહલાતા હૈ। અને અંગુર્જાલે ૧૦૮ અંગુઠ વાલી વને હૂર કુંચાઈ

ધન વગેરેને સૂચવનારી હાથની શુભરેખાઓથી તેમજ ભાગ્યોદયના સૂચક તિલમપા વગેરે રૂપ વ્યંજનોથી તે સંપન્ન હતી. શાલીનતા તેમજ પાતિવ્રત્ય વગેરે ગુણોનું તે ધર હતી. (માણુમ્માણપ્પમાણપરિપુન્નસુજાયસન્ચંગસુન્દરંગા) માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ સહિત તેનાં બધાં અંગો પૂર્ણ હતાં. સંપૂર્ણ રૂપથી ભરેલા પાણીના કુંડમાં પ્રવેશ્યા બાદ જો દ્રોણ પરિમાણ જેટલું પાણી તે કુંડમાંથી બહાર નીકળે તો તે પુરુષ અથવા સ્ત્રી 'માન' વાળી કહેવામાં આવે છે. એટલે કે તેમના શરીરની અવગાહના અમુક જેટલા માન પ્રમાણવાળી હતી. ત્રાજવાં ઉપર ચઢીને જે સ્ત્રી અથવા પુરુષ પોતાનું વજન કરાવતાં તેમનું વજન અર્ધભાર પ્રમાણ જેટલું થાય તો તે ઉન્માન પ્રાપ્ત કહેવાય છે. પોતાના આંગળથી જ માપ કરવામાં આવે અને તે પુરુષ કે સ્ત્રી એકસો આઠ જેટલા આંગળના માપ જેટલી થાય તો તે પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહેવાય છે. એવી રીતે માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ યુક્ત તેમના દરેકે

चेत्येषां द्वे मानान्मानप्रमाणानि तेः प्रातपूर्णानि-संयन्नानि, अतएव  
 'सुजायुः' सुजातानि यथोचितावयवमन्निवेशयन्ति 'सर्व'   
 सर्वाणि सकलानि, 'भंग' अङ्गानि-भज्यते न्यज्यते प्राणो यैस्तानि मस्त-   
 कादारभ्य चरणान्तानि यस्मिस्तत्, अतएव 'सुंदरंगा' सुन्दराङ्गी-सुंदरमङ्गं   
 वपुर्वस्याः सा तथा, 'ससिसोमगारा' शशिमीम्याकाङ्गा-सशी=चन्द्रस्तद्वत्   
 सौम्यो-रमणीय आकारः-स्वरूपं यस्याः सा 'कंता' कान्ता कमनीया। 'पिय   
 दंसणा' प्रियदर्शना प्रियं दर्शकजनमनोह्लादकं दर्शनमवलोकनं यस्याः सा, अत ए   
 'सुरुचा' सुरूपा सर्वातिशायिरूपलावण्यवतीत्यर्थः 'करयलपरिमिय-ति त्रिलीय-   
 मज्झा' करतल परिमितत्रिवलिकमध्या करतलपरिमितः=मुष्टिग्रन्थः, त्रिवलिकश्च-   
 वलिकत्रयोपेतः रेखात्रयवान् 'मज्झा' मध्यभागो यस्याः सा, कुशोदरी   
 तनु कटिश्चेत्यर्थः 'कुंडलुल्लिहियगंडलेहा' कुण्डलोल्लिखितगण्डलेखा कुण्डलाभ्या-   
 मुल्लिखिता-उग्रदृष्टागण्डलेखा-कपोलावस्थितचन्दनादि रेखा यस्याः सा, कुण्डल   
 शोभासम्पन्नेत्यर्थः। 'कौमुद-रयणियरपडि पुण्णसोम्मवयणा' कौमुदी=कार्तिकी

वाला जिस पुरुष अथवा स्त्री का शरीर होता है वह प्रमाण प्राप्त कहलाता है। इस तरह मान उन्मान एवं प्रमाण के अनुसार इसके समस्त शारीरिक अवयव थे अतएव वे यथोचित सन्निवेश विशिष्ट थे। मस्तक से लेकर चरण पर्यन्त उपांग अवयव कहलाते हैं। इसी कारण इनका शरीर बहुत अधिक सुन्दर था। (ससिसोमगारा कंता प्रियदंसणा सुरुचा करयलपरिमिय त्रिचालय-मज्झा) चन्द्रमा के समान इसका आकार सौम्य था। अतः बहुत ही कमनीय थी। दर्शक जनों के मन को इनका अवलोकन आह्लादकारक था। यह सर्वातिशायी-रूप लावण्य से युक्त थी इनका त्रिवली युक्त मध्य भाग इतना अधिक पतला था कि मुष्टि ग्राह्य हो जाता था। (कुंडलुल्लिहिय गंडलेहा कौमुदरयणियर-पडिपुण्णसोम्मवयणा सिंगारागारचारुवेसा जाव पडिरुवा बंझा अत्रियाउरी

દરેક અવયવે સપ્રમાણ અને યોગ્ય હતા. મસ્તકથી માંડીને પગ સુધી ઉપાંગ અવયવ કહેવાય છે. એટલા માટે જ એમનું શરીર ખૂબજ સુંદર હતું. (સસિ સોમગારા . કંતા પ્રિયદંસણા સુરુચા કરયલપરિમિયત્રિવલિયમજ્જા) તેમની આકૃતિ ચન્દ્ર જેવી સૌમ્ય હતી. એથી તે ખૂબ જ કમનીય હતી. બેનારા એ માટે તેમનું દર્શન આહ્લાદ કાન્ક હતું. તે અતિશય રૂપ અને લાવણ્ય સંપન્ન હતી. તેમની ત્રિવલી યુક્ત કમર (મધ્ય ભાગ) એટલી બધી પાતળી હતી કે તેને સમાવેશ મૂઠીમાં પણ થઈ શકતો હતો. (કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા કૌમુદ-રયણિયરપડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા બંજા

पीणमासी तस्याःरजनीकरश्चन्द्रस्तद्वत् प्रतिर्ण-सौम्यं=आर्द्धादजनकं वदनं-  
मुखं यस्याः सा तथा 'सिंगारागारचारुवेसा,' शृङ्गारगारचारुवेसा, शृङ्गाराख्य  
प्रथमरसस्य अगारमिव-गृहमिव चारुवेपो यस्याः सा, यद्वा शृङ्गारे  
भूषणाटोपस्तत्प्रधान आकारो यस्याः सा तथा मनोहरनेपथ्या, अत्र पद  
द्वयस्य कर्मधारयः। 'जाव' यावत् 'पडिस्वा' प्रतिरूपा 'वंझा' वन्ध्या-  
अपत्यकृतापेक्षया निष्कृता, एतवार संतानसंज्ञाता ननरमपत्यपरणेनापि  
फलतो वन्ध्या भवति, अतएव 'अत्रिया उरी' देशी शब्दः, अविजनयित्री  
मर्त्यया संतानाऽजननशीला संतानजननशक्तिरहिता, इत्यतः 'जाणु-  
कोप्परमाया' जानु कूर्परमाता, 'जाणु' जानुनी चरणयोर्मध्यभागी 'कोप्पर'  
कूर्परी करयोर्मध्यभागी तेषामेव 'माया' माता-जननी चाप्यासीत् ॥सू. २॥

मूलम्—तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स पंथए नामं दासचेडे  
होत्था, सव्वंगसुंदरंगे मंसोवचिएवालकीलावण कुसले यावि होत्था,  
तएणं से धण्णे सत्थवाहे रायगिहे नयरे वहूणं नयरनियगसेट्ठि  
सत्थवाहाणं अट्टारसण्ह य सेणिप्पसेणीणं वहुसु कज्जेसु य कुडुवेसु य  
मंतेसु य जाव चक्खुभूए यावि होत्था, नियगस्स विय णं कुडुंवस्स  
वहुसु य कज्जेसु जाव चक्खुभूए यावि होत्था ॥सू. ३॥

जाणुकोप्परमाया यावि होत्था) उसके कपोल मंडल पर जो चन्दनादिक की  
रेखा लगी रहती थी वह दोनों कानों के कुंडलों से घर्षित होती रहती  
थी। कर्त्तिही पूर्णमासी के पूर्ण चन्द्र मंडल के समान इनका सौम्य-आर्द्धाद-  
जनक-मुख था। इसका सुन्दर वेश शृंगाररस के वर जैसा था। फिर भी  
यह इतनी त्रिभुवन सुन्दरी होने पर भी वन्ध्या थी। ऐसी वन्ध्या थी-कि  
इसके प्रारंभ से ही संतान नहीं हुई थी-संतान जननशक्ति से यह बिल्कुल  
रहित थी। यह तो केवल जानु और कूर्पर-करके मध्यभाग देहनी की  
माता थी। ॥अत्र २॥

अत्रियाउरी जाणुकोप्परमाया यावि होत्था) तेमना कपोल उपर जनाववाभां  
आवेली चन्दन रेखाये, जने कानेभां पडेरला कुंडलोथी घसाती छती. कर्त्तिक  
पूतमना चन्द्रमंडलनी जेम तेमनुं भां सौम्य अने आर्द्धादजनक छतुं. त्रिभुवन  
सुंदरी होवा छतां ते वंध्या छती. शृङ्गारातथी ज तेने अके संतान थयुं न छतुं.  
संतान जनन शक्ति तेमनाभां सदंतर समूण रूपे छती नहि. अने तो संतान  
रूपे इकत दीयलु अने कोणी ज छतां. ॥ सूत्र २ ॥



ચેત્યેપાં દ્વદ્વે માનાન્માનવમાણાનિ તેઃ પ્રાતપૂર્ણાનિ-સંવન્નાનિ, અતएव  
 'સુજામુઃ' સુજાતાનિ યથોચિતાવયવમન્નિવેશપ્રવન્તિ 'સન્ધ્ય'  
 સર્વાણિ સકલાનિ, 'અંગ' અઙ્ગાનિ-અઙ્ગ્યતે વ્યઙ્ગ્યતે પ્રાણો યૈસ્તાનિ મસ્ત-  
 કાદારમ્ય ચરણાન્તાનિ યસ્મિન્સ્તત્, અતएव 'સુંદરંગા' સુંદરાઙ્ગી-સુંદરમઙ્ગ  
 વપુર્વસ્યાઃ સા તથા, 'સસિસોમાગારા' શશિમૌમ્યાકાગા-શશી=ચન્દ્રસ્તદ્વત્  
 સૌમ્યો-રમણીય આકારઃ-સ્વરૂપં યસ્યાઃ સા 'કંતા' કાન્તા કમનીયા। 'પિય  
 દંસણા' પ્રિયદર્શના પ્રિયં દર્શકજનમનોહ્લાદકં દર્શનમવલોકનં યસ્યાઃ સા, અત एव  
 'સુરુવા' સુરુપા સર્વાતિશાયિરૂપલાવણ્યવતીત્યર્થઃ 'કરચલપરિમિય-તિ ત્રિવલીય-  
 મઙ્ગલા' કરતલ પરિમિતત્રિવલિકમઙ્ગલા કરતલપરિમિતઃ=મુષ્ટિગ્રાહઃ, ત્રિવલિકશ્ચ-  
 વલિકત્રયોપેતઃ રેલાત્રયવાન્ 'મઙ્ગલા' મધ્યભાગો યસ્યાઃ સા. કુશોદરી  
 તનુ કટિશ્ચેત્યર્થઃ 'કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા' કુંડલોલ્લિખિતગંડલેહા કુંડલાભ્યા-  
 મુલ્લિખિતા-ત્ર્યુદ્દષ્ટાગંડલેહા-કપોલાવસ્થિતચન્દનાદિ રેલા યસ્યાઃ સા, કુંડલ  
 શોભાસમ્પન્નેત્યર્થઃ। 'કોમુદ-રયણિયરપડિ પુણ્ણસોમ્મવયણા' કૌમુદી=કાર્તિકી

વાલા જિસ પુરુષ અથવા સ્ત્રી કા શરીર હોતા હૈ વહ પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહલાતા  
 હૈ। ઇસ તરહ માન ઉન્માન ઇવં પ્રમાણ કે અનુસાર ઇસ્કે સમસ્ત શારીરિક  
 અવયવ થે અતएવ હે યથોચિત સન્નિવેશ ત્રિશિષ્ટ થે। મસ્તક સે લેકર ચરણ  
 પર્યન્ત ઉપાંગ અવયવ કહલાતે હૈં। ઇસી કારણ ઇનકા શરીર વહુત અધિક  
 સુંદર થા। (સસિસોમાગારા કંતા પ્રિયદંસણા સુરુગો કરચલપરિમિય તિર્વાલય-  
 મઙ્ગલા) ચન્દ્રમા કે સમાન ઇસકા આકાર સૌમ્ય થા। અતઃ વહુત હી કમનીય  
 થી। દર્શક જનોં કે મન કો ઇનકા અવલોકન આહ્લાદકારક થા। યહ સર્વાતિશાયી-  
 રૂપ લાવણ્ય સે યુક્ત થી ઇનકા ત્રિવલી યુક્ત મધ્ય ભાગ ઇતના અધિક  
 પતલા થા કિ મુષ્ટિ ગ્રાહ હો જાતા થા। (કુંડલુલ્લિહિય ગંડલેહા કોમુદરયણિયર-  
 પડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા બંજા અવિયાતરી

દરેક અવયવો સપ્રમાણ અને યોગ્ય હતા. મસ્તકથી માંડીને પગ સુધી ઉપાંગ  
 અવયવ કહેવાય છે. એટલા માટે જ એમનું શરીર ખૂબજ સુંદર હતું. (સસિ  
 સોમાગારા . કંતા પ્રિયદંસણા સુરુવા કરચલપરિમિયતિવલિયમઙ્ગલા)  
 તેમની આકૃતિ ચન્દ્ર જેવી સૌમ્ય હતી. એથી તે ખૂબ જ કમનીય હતી. બેનારા  
 એ માટે તેમનું દર્શન આહ્લાદ કારક હતું. તે અતિશય રૂપ અને લાવણ્ય સંપન્ન  
 હતી. તેમની ત્રિવલી યુક્ત કમર (મધ્ય ભાગ) એટલી બધી પાતળી હતી કે તેને  
 સમાવેશ મૂઠીમાં પણ થઈ શકતો હતો. (કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા . કોમુદ-  
 રયણિયરપડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા બંજા



पथो जनेषु च कुटुम्बेषु च परिवारेषु च 'मंतेषु' मन्त्रेषु—कर्तव्यनिश्चयार्थं सुसं-  
विनारेषु यावच्चतुर्गो मार्गदर्शकत्वाप्यासीन् 'नियगन्तवि' निजकस्यापि—स्वकी-  
यस्यापि च खलु कुटुम्बस्य बहुषु च कार्येषु यावच्चतुर्भूतत्वाप्यासीन् ॥ सूत्र ३॥

मृच्छम्—तत्थ पां रायगिहे नयरे विजए नामं तक्करे होत्था, पावे

चडालह्वे भीमतररुद्धकम्मे आरुसियदित्तरत्तनयणे खरफरुस-  
महल्लविगयवीभत्थदाडिए असंपुडियउठ्ठे उद्धयपइन्नलंवंतमूद्धए  
भमरराहुवन्ने निरणुक्कोसे निरणुतावे दारुणे पइभए निसंसइए  
निरणु हंपे अहिठ्व एगंतदिट्टिए खुरेव एगंतधारए गिद्धेव आमिस  
तल्लिच्छे अगिमिव सव्वभक्खी जलमिव सव्वगाही उक्कचण—वंच-  
णमाया—नियडि—कूड—कवड—साइ—संपओग—वहुले, चिरनगर विणट्टु  
दुट्टुसीलायारचरित्ते जूयवसंगी मज्जपसंगी, भोजवसंगी मंसपसंगी  
दारुणे हियवदारए साहसिय संविच्छेयए उवहिए विसंभवार्इ आली-  
यगतित्थमेवलहुहत्थसंपउए परस्स दव्वहरणम्मि निच्चं अणुवद्धे  
तिव्ववेरे, रायगिहस्स नयरस्स वहुणि अइगमणाणि य निग्गमणा-  
णि य दाराणि य अव्वदाराणि य छिंडीओ य खंडीओ य नगरनिद्धम-  
णाणि य संवट्टणाणि य निवट्टणाणि य जूवखलयाणि य पाणागाराणि-  
वेस्संगागाराणि य तदारट्टाणाणि य तक्करट्टाणाणि य तक्करघराणिय सिंगाड-  
गाणि य तियाणि य चउक्काणि य चच्चगणि य नागवराणि य भूयवराणि  
य जक्खवेउलाणि य सभाणि य पराणि य पणियसालाणिय सुन्न-

प्रथेगी शब्द से यहां लो गई हैं। (नियगन्तवि यणं कुटुंबस्स बहुषु य  
कज्जेसु जाव चक्खुभूए यावि होत्था) तथा अग्ने निज कुटुम्ब के भी अनेक  
कार्यआदि में चक्षुभूत थे मार्गदर्शक थे। ॥ मृच्छ ३॥

विपणं, कुटुंबस्स बहुषु य कज्जेसु जाव चक्खुभूर यावि होत्था) तेभज्ज  
पोत्तना कुटुंबेना धणा कामेसां तेओ मार्गदर्शन तरीडे उता. ॥ सूत्र ३ ॥

ટીકા—‘તસ્સ ણ ઇત-તસ્ય સ્વલુ ધન્યસ્ય સાર્થવાહસ્ય પંથકનામા  
 દાસચેટકઃ—દાસપુત્ર આસીત સર્વજ્ઞસુન્દરાદ્ઃ, માંસોવચિતઃ—પુષ્ટશરીરઃ,  
 ચાલકીલકુશલઃ—વાલાન્ ક્રીડયિતુ’ દક્ષત્થાપ્યમ્ભવત્ । તદનુ સ્વલુ મ ધન્યઃ  
 સાર્થવાહસ્તસ્મિન્ રાજગૃહે નગરે વહુનાં ‘નયરનિગમસેટ્ઠિસત્થવાહાણં’ નગર  
 નિગમશ્રેષ્ઠિસાર્થવાહાનામ્, તત્ર ‘નયર’ નગરસ્ય=રાજગૃહસ્ય, ‘નિગમ’ નિગ-  
 મસ્ય=વણિગપ્રામસ્ય. ‘સેટ્ઠિ’ શ્રેષ્ઠિનઃ—સાર્થવાહાથ, એતેવાં ચ પુનઃ ‘અટ્ઠારસઙ્ક ય’  
 અટ્ઠારસઙ્ક ય ‘સેણિપ્પસેણીયં’ શ્રેણિપ્રશ્રેણીનામ્, તત્ર ‘સેણિ’ શ્રેણયઃ કુમ્ભ-  
 કારાદિજાતયઃ ‘પ્પસેગી’ પ્રશ્રેણયઃ—અવાન્તરજાતયજ્ઞાનાં વહુવુ કાર્યેવુ—

‘નમ્મ ણં ધણ્ણસ્સ સત્થવાહસ્સ’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તસ્સ ણં ધણ્ણસ્સ) ઉસ ધન્ય સાર્થવાહ કે યહાં (પંથણામં  
 દાસચેટે હોત્થા) પંથક નામકા એક દાસપુત્ર થા (સન્વંગસુદરંગે) યહ સર્વાંગ  
 સુંદર થા । (માંસોવચિણ) પુષ્ટશરીર વાલા થા । (ચાલકીલાવળકુસલે યાવિ  
 હોત્થા) ચાલકોં કે સિલાને મેં વડા ચતુર થા । (તણ્ણં સે ધણે સત્થવાહે-  
 રાયગિહે નયરે વહુ ણં નયરનિયગસેટ્ઠિસત્થવાહાણં અટ્ઠારસઙ્ક ય સેણિપ્પસેણીયં  
 વહુસુ કજ્જેસુ ય કુટુંબેસુ ય મંતેસુ ય જાવ ચક્કલુભૂણ યાવિ હોત્થા) વહ ધન ।  
 સાર્થવાહ રાજગૃહ નગર મેં અનેક નગર નિવાસી વણિકજનોં કો—શ્રેષ્ઠિજનોં કોં  
 સાર્થવાહોં કો તથા અટ્ઠારહ શ્રી પ્રશ્રેણિયોં કો વહુત સે કાર્યોં મેં અનેક  
 પરિવારોં મેં અનેક મંત્રણાઓં મેં—ગુપ્ત વિચારોં મેં યાવત્ ચક્ષુભૂત થે માર્ગ  
 દર્શક થે । કુમ્ભકાર આદિ જાતિયાં શ્રેણી શબ્દ સે ઓર અવાન્તરજાતિયાં

‘તસ્સ ણં ધણ્ણસ્સ સત્થવાહસ્સ’ इत्यादि. ॥

ટીકાર્થ—(તસ્સ ણં ધણ્ણસ્સ) તે ધન્ય સાર્થવાહને ત્યાં (પંથણામં દાસ ચેટે હોત્થા) પંથક  
 નામે એક દાસ પુત્ર હતો. (સન્વંગસુદરંગે) તે સર્વાંગ સુંદર હતો. (માંસોવચિણ)  
 સુડાળ શરીર વાળો હતો. (ચાલકીલાવળકુસલે યાવિ હોત્થા) બાળકોને  
 રમાડવામાં તે બહુ જ કુશળ હતો. (તણ્ણં સે ધણે સત્થવાહે રાયગિહે નયરે વહુ ણં  
 નયરનિયગસેટ્ઠિસત્થવાહાણં અટ્ઠારસઙ્ક ય સેણિપ્પસેણીયં વહુસુ કજ્જેસુ ય  
 કુટુંબેસુ ય મંતેસુ ય જાવ ચક્કલુભૂણ યાવિ હોત્થા) તે ધન્ય સાર્થવાહ રાજગૃહ  
 નગરમાં ધણા નગરના વણિકો, શ્રેષ્ઠિનો, સાર્થવાહો તેમજ અટ્ઠાર શ્રેણી પ્રશ્રેણીએને  
 ધણા કામોમાં ધણા કુટુંબોમાં, અનેક જાતની મંત્રણાઓમાં, ગુપ્ત વિચારોમાં યાવત  
 ચક્ષુભૂત હતા એટલે કે માર્ગદર્શક હતા. કુંભાર વગેરેની જાતને અહીં શ્રેણી  
 શબ્દથી અને પેટા જાતને પ્રશ્રેણી શબ્દ દ્વારા જતાવવામાં આવી છે. (નિયગસ્સ

फलत्रयउल्लिख्यगीमन्त्रादिर्' खरवरुनहापिकुव्रीमत्सदंष्ट्रिकः, तत्र-  
'खरपुरुषे=अतिकर्कशे 'मदल्ल' मदत्यो=अतिविशाले 'विगय' विकृते=शोभा  
वर्जिते 'वीमत्थ' वीमत्से=वृणाजनके 'दादि' दंष्ट्रिके=दादिके हनुवर्द्धितकेशगु  
च्छरूपे वा यस्य सः-कर्कशविकृतवृणितदादिकायुक्तः, खरवरुमहापिकुव्रीमत्स-  
दन्तो वा । 'असंपुडियउट्टे' असंपुटिनौष्ठः, असंपुटितो, असंपुटितो वा परस्पर-  
रासंमिलितो स्फाटितो ओष्ठलघुवाद्दशनदीर्घत्वाच्चीप्ठौ यस्य सः स्फाटित-  
मुख इत्यर्थः । 'उद्धेयपडन्नलंबंतमुद्धए' उद्धेय प्रकीर्णलम्बमानमूर्धजः, तत्र-  
'उद्धेय' उद्धेयः=वायुमम्पकीत्प्रचलिता अत एव-'पडन्न' प्रकीर्णः=इतस्ततो  
विक्षिप्ताः 'लंबंत' लम्बमानाः=अधः प्रमर्पन्तः 'मुद्धए' मूर्धजाः=केशा यस्य  
स तथा । 'भमरराहुवन्ने' भमरराहुवर्णः-भमरराहुवर्ण इव वर्णो यस्य सः-  
अत्यन्तकृष्णवर्ण इत्यर्थः । 'निरणुकोसे' निरनुकोशः=निर्देयः, निरणुतावे'  
निरनुतावः= पापं कृत्वा पश्चात्तारहितः अतएव 'दारुणे' दारुणः=क्रूरः । 'उद्धे-

की अतिशय कठोर थीं; बहुत विशाल थीं, शोभा रहित थीं, तथा वृणा-  
जनक थी-अथवा इस की दाढ़ी के वाज कठोर थे, बहुत-  
घने थे, शोभासे रहित थे और वृणा उत्पादक थे । (असंपुडिय-  
उट्टे उद्धेय, पडन्नलंबंतमुद्धए, भमरराहुवन्ने, निरणुकोसे, निरणुतावे दारुणे  
पडभए) दाँतों को दीर्घ होने के कारण इनके ओष्ठ परस्पर में मिले हुए  
नहीं थे-किन्तु खुले हुए थे । इसके मस्तक पर जो केश थे-वे पवन में  
इधर-उधर उड़ते, इसलिये फैले हुए थे बंधे हुए नहीं थे । तथा बहुत  
बड़े हुए थे । इसका शारीरिक वर्ण राहु तथा भ्रमर जैसा अत्यन्त काला  
था । दया से यह सर्वथा रहित था । पाप करके भी इसके हृदय में  
पश्चात्ताप का भाव उत्पन्न नहीं होता था । इसलिये क्रूर प्रकृति का था ।

महालयंकर उती, तेनी दादो-पुणज कठोर उती, धल्ली मोटी उती, शोला वगरनी  
उती, तेमज धृणाजनक उती, अथवा तो तेनी दादीना वाण कठोर उता, सधन उता,  
शोला वगरना उता, अने धृणाजनक उता. (असंपुडियउट्टे उद्धेयपडन्नलंबंत  
मुद्धए, भमरराहुवन्ने निरणुकोसे, निरणुतावे दारुणे पडभए) तेना दांत  
दाँणा उता, तेथी अने ओठ ओक जीजना स्थल वगर हर न रडेता उता. ते  
उमेथां पुड्वा, न रडेता उता. तेना माथाना वाग पवनने लीधे अस्तव्यस्त-थधने  
उडता उता, अथी तेओ इलाछ नता उता. तेना वाण जांधेला रडेता न न उता  
अने ते, गहुं न बधेला उता, तेना शरीरने रंग राहु अने लमरा जेवो कणो  
मेथ जेवो उतो. ते तदन निर्देय उतो. पाप करवा छतां तेना मनमां पस्तावे  
थतो, न उतो. ओटला मटे ते क्रूर प्रकृतिने उतो. तेने जेतानी साथे न भाणीयेनां



घराणि य आभोएसाणीर मग्गमाणे गवेसमाणे बहुजणस्स छिंदेसु य  
 विसंमेसु य विहुरेसु य वसगेषु य अग्गुदएसु य उस्सवेसु य पत्तवेसु य  
 तिहीसु य छणेषु य जन्नेसु य पव्वणीसु य मत्त-पमत्तस्स य विक्खि-  
 त्तस्स य वाउलस्स य र हिदस्स य दुक्खियस्स विदेसत्थस्स य विप्प-  
 वसियस्स य मग्गं च छिदं च विरहं च अंतरं च मग्गमाणे गवेस-  
 माणे एवं च णं विहरइ, वंहिआ वि य णं रायगिहस्स नगरस्स आरा-  
 मे नु य उज्जाणेषु य वावि पोक्खरिणा-दीहि यागुंजालिया सरेसु य  
 सरपंतिवासु य सरसरपंतिवासु य जिणगुज्जाणेषु य भग्गहूवएसु य  
 मालुयाकच्छएसु य सुसाणएसु य गिरेकंदरले गउवग्गुणेषु य  
 बहुजणस्स छिंदेसु य जाव एवं च णं विहरइ ॥सू. ४॥

टीका—‘तत्थ णं’ इत्यादि । तत्र खलु राजगृहे नगरे विजयनामा  
 तस्करः=चौरः होत्था=आसीत् । स कीदृशः ! इत्याह—‘पावे’ इति, पापः=  
 पापकर्मा चाण्डालरूपः=चाण्डालसदृशः, भीमतरुदकम्मे’ भीमतरुदकर्मा-  
 चाण्डालकर्मापेक्षयाऽपि भीमतराणि=भयङ्कराणि रौद्रकर्माणि हिंसादिक्रूरकर्माणि  
 यस्य स तथा, ‘आरुसियदित्तरत्तनयणे’ आरुपित दीप्तरक्तनयनः, तत्र-‘आरुसिय’  
 आरुपितम्येव ‘दित्त’ दीप्ते=विकराले ‘रत्त’ रक्त नयने यस्य स तथा, ‘खर-

‘तत्थ णं रायगिहे नगरे विजए नामं तक्करे होत्था’ इत्यादि ।

टीका—(तत्थ णं रायगिहे नगरे) उसी राजगृह नगर में विजय नामको  
 चौर था (पावे चाण्डालरूपे भीमतरुदकम्मे आरुसियदित्तरत्तनयणे, खरफरुस  
 महल्लविगयचीमत्थदादिण) यह पापी था । चाण्डाल जैसा था । इसके हिंसा  
 दिक क्रूरकर्म चाण्डाल के कार्य की अपेक्षा भी बहुत भयंकर थे । इसके  
 नेत्र क्रौंघो पुरुष के नेत्र जैसे लाल थे, और महा विकराल था दाढ़े इस

टीका—(तत्थं रायगिहे नगरे) ते राजगृहनगरमां (विजएनामं  
 तक्करे होत्था) विजय नामे चोर रहतेो हुते। (पावे चाण्डालरूपे भीमतर  
 रुदकामे आरुसियदित्तरत्तनयणे, खरफरुस-महल्ल-विगय-चीमत्थ  
 दादिण) ते पापी हुते। चाण्डाल जेवो हुते। हिंसा वगेरे तेनां कर कमे चाण  
 करतां पण भयंकर हुतां। तेनी आंघो दीधी भाषुसना जेवी दाव हुती अने ते

फलस्य उद्धविगयीभत्यसादिर' खररुहयनहापिक्रियोभत्सदंष्ट्रिकः, तत्र-  
 'स्वापुरुषे=अतिकर्कशे 'मदल्ल' मदत्यो=अतिविशाले 'विगय' विकृते=शोभा  
 वर्जिते 'वीमत्य' वीमत्से=वृणाजनके 'दाढि' दंष्ट्रिके=दाढिके हनुवर्द्धितकेशयु  
 र्छरूपे वा यस्य सः-कर्मविकृतवृणिनदादिकायुक्तः, खरपहमहापिक्रियोभत्स-  
 दन्तो वा । 'असंपुडियउट्टे' असंपुटिनीष्ठः, असंपुटिनी, असंपुटनी वा परस्पर-  
 रासंमिलिनी स्फाटिनी ओष्ठलघुवाद्दशनदीर्घत्वाच्चोष्ठी यस्य सः स्फाटित-  
 मुख इत्यर्थः । 'उद्धयपइन्नलंबंतमुद्धए' उद्धे प्रकीर्णलम्बमानमूर्धजः, तत्र-  
 'उद्धेय' उद्धेनाः=वायुमम्पर्कप्रचलिता अत एव-'पइन्न' प्रकीर्णाः=इतस्ततो  
 विक्षिप्ताः 'लंबंत' लम्बमानाः=भयः प्रमर्षन्तः 'मुद्धए' मूर्धजाः=केशा यस्य  
 स तथा । 'भमरराहुवन्ने' भमरराहुवर्णः-भमरराहुर्वैग इव वर्णो यस्य सः-  
 अत्यन्तकृष्णवर्ण इत्यर्थः । 'निरणुकोसे' निरनुकोशः=निर्देयः, निरणुतावे'  
 निरनुतावः= पापं कृत्वा पश्चात्तारहितः अनप्य 'दारुणे' दारुणः=क्रूरः । 'उद्ध-

की अतिशय कठोर थीं; बहुत विशाल थीं, शोभा रहित थीं, तथा वृणा-  
 जनक थी-अथवा इस की दाढी के वाळ कठोर थे, बहुत  
 घने थे, शोभासे रहित थे और वृणा उत्पादक थे । (असंपुडिय-  
 उट्टे उद्धेय, पइन्नलंबंतमुद्धए, भमरराहुवन्ने, निरणुकोसे, निरणुतावे दारुणे  
 पइभए) दाँतों को दीर्घ होने के कारण इसके ओष्ठ परस्पर में मिले हुए  
 नहीं थे-किन्तु खुले हुए थे । इसके मस्तक पर जो केश थे-वे पवन में  
 झधर, उधर उडते, इसलिये फैले हुए थे चढ़े हुए नहीं थे । तथा बहुत  
 चढ़े हुए थे । इसका शारीरिक वर्ण राहु तथा भमर जैसा अत्यन्त काला  
 था । दया से यह सर्वथा रहित था । पाप करके भी इसके हृदय में  
 पश्चात्ताप का भाव उत्पन्न नहीं होता था । इसलिये क्रूर प्रकृति का था ।

महालयंकर इती. तेनी दाढी भूगज कठोर इती, यल्ली मोटी इती, शोभा वगरनी  
 इती. तेभज धृष्णाजनक इती, अथवा तो तेनी दाढीना वाण कठोर इता, सघन इता,  
 शोभा वगरना इता, अने धृष्णाजनक इता. (असंपुडियउट्टे उद्धयपइन्नलंबंत  
 मुद्धए, भमरराहुवन्ने निरणुकोसे, निरणुतावे दारुणे पइभए) तेना दांत  
 दांणा इता. तेथी जने ओक ओक जीमना रूपार्थ वगर हर ज रडता इता. ते  
 उमेथां भुइला, ज रडता इता. तेना माथाना प्राग पवनने लीधे अस्तव्यस्त थडने  
 उडता इता, ओथी तेओ इलाध जता इता. तेना वाण जांधेला रडता ज न इता  
 अने ते जहुं ज वधेला इता, तेना शरीरने रंग राहु अने लभरा जेवो अणे  
 मेध जेवो इतो. ते तदन निर्देय इतो. पाप करवा छतां तेना मनमां यस्तावे  
 थतो, न इतो. ओटला मटे ते क्रूर प्रकृतिने इतो. तेने जेतानी साथे ज प्राणीओनां

भय' प्रतिभयः=भयोत्पादकः। 'निसंसिप' नृशंसकः। 'निरनुकम्पे' निरनु-  
कम्पः=दयागुणवर्जितः। 'अहिर्व्वएगंतदिद्विए' अहिरिवैकान्तदृष्टिकः, भुजङ्ग-  
इव क्रूरकर्मकरणे एकाग्रतालक्षणः एकान्ता=एक निश्चया दृष्टिः=विचारसरणि-  
र्यस्य स तथा। खुरेव एगंतधारण'धुर इव एकान्तधारकः, धुरो=नाभितश-  
स्त्रविशेषः 'उम्तरा' इति भाषायाम्, तद्वत् 'एगंत' एकान्तेन=तीव्रत्वात्सर्व-  
प्रकारेण परवस्तुपहरणे 'धारा' धारा=परोपतापनरूपा परिणामधारा यस्य सः,  
सर्वस्वापहारीत्यर्थः। 'गिद्वेव आमिसतल्लिच्छे' गृद्ध इव-आमिप तल्लिप्सः गृद्ध-  
इव-गृहभित्तवत् 'आमिस, आमिपे=शब्दादिविषये 'तल्लिच्छे' तल्लिच्छः=  
तत्परः'तल्लिच्छे' इति तत्परार्थो देशी शब्दः। अथवा आमिपे=विषयभोगादिके  
सा=अत्युत्कटा लिप्सा यस्य सः-कामभोगे तोत्राभिलाषोत्यर्थः। 'अग्निमिव  
सर्वभक्षी' अग्निरिव सर्वभक्षी=भक्ष्याभक्ष्यसर्वभोजी सर्वजनलुण्टको

इसे देखते ही जीवों के हृदयमें भय का संचार हो जाता था। (निसंसिप निरनुकम्पे अहिर्व्वएगंतदिद्विए, खुरेव एगंतधारण, गिद्वेव आमिसतल्लिच्छे)  
यह स्वभावतः नृशंसक (घातक) था निरनुकम्पे-दयागुण वर्जित था। सर्प  
की तरह क्रूर कर्म करने में इस की विचारसरणि एक निश्चय वाली होती  
थी, धुरा-उम्तरा के समान वह सर्व प्रकार से परकीय वस्तुओं के हरण  
करने में परोपतापनरूप परिणाम धारावाला था। गिद्धपक्षी की तरह यह  
शब्दादि विषयरूप आमिप में अथवा कामवासना में तत्पर रहा करता था।  
(अग्निमिव सर्वभक्षी जलमिव पद्मगाढी उक्कंचण, वंचण, माया नियडि,  
कूड, कवड, साड, संगओग, बहुले, चिरणगरविणट्टुट्ट सीलायारचरित्ते,  
जूयपसंगी, मज्जपसंगी, भोज्ज, पसंगी, मंसपसंगी दारुणे द्विययशरण)  
अग्नि के समान यह सर्व भक्षी था, अथवा लक्षण से सर्व जीवों को

भन लयभीतें थंज्जतां डतां। (निसंसिप निरनुकम्पे, अहिर्व्व एगंतदिद्विए  
खुरेव एगंतधारण, गिद्वेव आमिसतल्लिच्छे) स्वभावधी ज ते नृशंस अने  
घातक डतो। (निरनुकम्पे) निर्दय डतो। सापनी जेम क्रूर कर्ममां प्रवृत्त थनार  
तेना विचारो दद निश्चयवागां डता। अस्तरानी जेम ते जधी रीते णीअओनी  
वस्तुओने डरी लेवामां परोपतापन इप परिणाम वाणो डतो। गीधनी जेम शब्द  
वगेरे विषय इप आमिपमां अथवा कामवासना जेवी जाअतमां ते डमेथां तैयार  
रडेतो डतो। (अग्निमिव सर्वभक्षी जलमिव सर्वगगाढी उक्कंचण, वंचण,  
माया नियडि, कूड, कवड, साइसंपओग, बहुले, चिरणगरविणट्टुट्ट  
सीलायारचरित्ते, जूयपसंगी, मज्जपसंगी भोज्जपसंगी मंसपसंगी दारुणे द्वियय  
दारण) अग्निना जेवो ते सर्वभक्षी डतो अथवा ते जपां प्राणीओने डटनार



चा । 'जलमिव सन्वग्मादी' जलमिव सर्वग्राही-यथा जलं स्वविषयप्राप्तं  
 सर्वं स्वान्वर्गनं करोति तथैवापी सर्वं सर्वस्मादपहरति । 'उक्कंचण-  
 वंचणमायानियडि कूडकपटमाइसंपभोगवहुले' उत्तञ्चनवञ्चनमाया-  
 निकृति कूडकपटमातिसंपयोगवहुलः, तत्र-'उक्कंचण' उत्कञ्चनं=स्वपरगुणा-  
 भावेऽपि गुणोत्कीर्तनम्, 'वंचण' वञ्चनं-छलकरणं, माया=परवञ्चनम्, 'नियडि'  
 निकृतिः=मायाऽऽच्छादनार्थं पुनर्मायाकरणं-चक्रवृत्त्या गर्तञ्चक्रवृत्तिधारणम्,  
 'कूड' कूटं परवञ्चनार्थं तुलादेन्युनाधिककरणम्, 'कपट' कपटम्=वेपभा-  
 षादिविपर्ययकरणम्, एभिस्तत्त्वञ्चनादिभिः सह 'साइसंपभोग' सानिसंप-  
 योगः-अतिगयेन योगस्तेन यो वहुलः=व्याप्तः सकलकूटकपटादि भण्डागार-  
 इत्यर्थः । 'चिरनगरविणदुदुसीलायारचरित्ते' चिरनगरविनष्टदुष्टशीलाचार-

लूटने वाला था । जल की तरह सर्वग्राही था अर्थात् जल जिस प्रकार  
 अपने में पड़े हुए पदार्थ को अपने भीतर ले जाता है-उसी प्रकार यह  
 भी दूसरों के पास से समस्त चीजों का अपहरण कर आने पास रख  
 लेता था । अपने भीतर जो गुण नहीं थे उनकी भी यह अपने में हैं इस  
 तरह की प्रशंसा किया करता था । वंचना-छल करने में यह विशेषपटु-वतुर था,  
 माया परवंचन में बहुत होशियार था-निकृति अपने मायाचारीको दवाने में  
 दुबारा माया करने में बड़ा ही सिद्धहस्त था । तुला आदि का न्यूनाधिक  
 करना इसका नाम व्यूह है, वेप आदि को बदलना इसका नाम कपट है  
 इन सबके करने में यह प्रह्वान था । अर्थात् इन उत्कंचन माया, निकृति  
 कूट, कपट का यह भण्डार था । चिरकाल से यह नगर से बाहर रहता  
 था । इसलिये इसका स्वभाव दुष्ट हो गया था । आचार-कुल मर्यादाह्व

હતો. પાણીની જેમ તે સર્વગ્રાહી હતો— એટલે કે પાણી જેમ તેમાં પડી ગયેલા  
 બધા પદાર્થો તે પોતાની અંદર લઈ લેતો છે, તે પ્રમાણે જ તે ચોર પણ બીજા  
 એની પાસેથી બધી વસ્તુઓ ચોરીને તેની પાસે સંગ્રહી રાખતો હતો. જે ગુણો  
 તેમાં હતા તેમની પણ બીજાઓની સામે પ્રશંસા કરતો રહેતો હતો. બીજાને છેત-  
 રવામાં તે પાવર્ધો હતો. માયા-એટલે કે બીજાને ઠગવામાં તે ખૂબ જ કુશળ હતો.  
 'નિકૃતિ'—એટલે કે માયા ચોરીને પરાજિત કરવામાં તે બીજા વખત માયા (પર  
 વંચન) કરવામાં બહુ જ ચતુર હતો. ગ્રાજવાં વગેરેને ચાલાકીથી ન્યૂનાધિક કરતું  
 તેનું નામ વ્યૂહ છે. વેપભૂષા વગેરે બદલવી તે કપટ કહેવાય છે. આ માટે તે  
 પ્રખ્યાત હતો. એટલે કે ઉત્કંચન, વંચન, માયા, નિકૃતિ, કૂટ, કપટનો તે બજાનો  
 હતો. લાંબા વખતથી તે નગરની બહાર જ રહ્યા કરતો હતો. એટલા માટે સ્વભાવે

भय' प्रतिभयः=भयोत्पादकः। 'निसंसिपे' नृशंसकः। 'निरनुकम्पे' निरनु-  
 कम्पः=दयागुणवर्जितः। 'अहिर्व्यएगंतदिद्विए' अहिरिवैकान्तदृष्टिकः, भुजङ्ग-  
 इव क्रूरकर्मकरणे एकाग्रतालक्षणः एकान्ता=एक निश्चया दृष्टिः=विचारसरणि-  
 र्यस्य स तथा। खुरेव एगंतधारए'धुर इव एकान्तधारकः, धुरो=नाभितडा-  
 श्वविशेषः 'उम्तरा' इति भाषायाम्, तद्वत् 'एगंत' एकान्तेन=तीव्रत्वात्सर्व-  
 प्रकारेण परवस्तुधारणे 'धारा' धारा=परोपतापनरूपा परिणामधारा यस्य सः,  
 सर्वस्यापहारीत्यर्थः। 'गिद्धेव आमिसतल्लिच्छे' गृद्ध इव-आमिप तल्लिप्सः गृद्ध-  
 इव-गृह्यभिवत् 'आमिस, आमिपे=शब्दादिविषये 'तल्लिच्छे' तल्लिच्छः=  
 तत्परः'तल्लिच्छे' इति तत्परार्थो देशी शब्दः। अथवा आमिपे=विषयभोगादिके  
 सा=अत्युत्कटा लिप्सा यस्य सः-कामभोगे तोत्राभिलाषोत्यर्थः। 'अग्निमिव  
 सव्वभवली' अग्निरि व सर्वभक्षी=भक्ष्याभक्ष्यसर्वभोजी सर्वजनलुण्टको

इसे देखते ही जीवों के हृदयमें भय का संचार हो जाता था। (निसंसिपे  
 निरनुकम्पे अहिर्व्यएगंतदिद्विए, खुरेव एगंतधारए, गिद्धेव आमिसतल्लिच्छे)  
 यह स्वभावतः नृशंसक (घातक) था निरनुकम्पे-दयागुण वर्जित था। सर्प  
 की तरह क्रूर कर्म करने में इस की विचारसरणि एक निश्चयवाली होती  
 थी, धुरा-उम्तरा के समान वह सर्व प्रकार से परकीय वस्तुओं के हरण  
 करने में परोपतापनरूप परिणाम धारावाला था। गिद्धपक्षी की तरह यह  
 शब्दादि विषयरूप आमिप में अथवा कामवासना में तत्पर रहा करता था।  
 (अग्निमिव सव्वभवली जलमिव जग्गाही उक्कंवण, वंचण, माया नियडि,  
 कूड, कवड, साड, संगओग, बहूले, चिरणगरविणट्टदुट्ट सीलाधारचरित्ते,  
 जूयपसंगी, मज्जपसंगी, भोज्ज, पसंगी, मंसपसंगी दारुणे दिययदारए)  
 अग्नि के समान यह सर्व भक्षी था, अथवा लक्षण से सर्व जीवों को

भय लयलीत था जाता हुआ। (निसंसिपे निरनुकम्पे अहिर्व्य एगंतदिद्विए  
 खुरेव एगंतधारए, गिद्धेव आमिसतल्लिच्छे) स्वभावधीन ते नृशंस अने  
 घातक हुतो। (निरनुकम्पे) निर्दय हुतो। सापनी जेम क्रूर कर्ममां प्रवृत्त यनारा  
 तेना विचारो दृढ निश्चयवाला हुता। अस्तरानी जेम ते जधी रीते जीअओनी  
 वस्तुओने डरी देवामां परोपतापन रूप परिणाम वाणो हुतो। गीधनी जेम शब्द  
 वगेरे विषय रूप आमिपमां अथवा कामवासना जेवी जाअतमां ते हुमेथां तयार  
 रहेतो हुतो। (अग्निमिव सव्वभवली जलमिव सव्वग्गाही उक्कंवण, वंचण,  
 माया नियडि, कूड, कवड, साइसंपओग, बहूले, चिरणगरविणट्टदुट्ट  
 सीलाधारचरित्ते, जूयपसंगी, मज्जपसंगी भोज्जपसंगी मंसपसंगी दारुणे दियय  
 दारए) अग्निना जेयो ते सर्वभक्षी हुतो अथवा ते जपा प्राणीओने बूटनार

मान्तकं पदं प्राकृतत्वात् 'नित्यभेयलघुहस्तसंपुञ्ज' तीर्थभेदलघुहस्तसंपुञ्जः,  
'नित्यभेय' तीर्थभेदे=धर्मपध्वंसने धर्मस्थानध्वंसने वा लघुहस्तसंपुञ्जः=  
हस्तलाघवयुक्तः अतिकुशल इत्यर्थः। 'परस्स दब्बहरणम्मि निच्चं अणुवद्धे'  
परस्य द्रव्यहरणे नित्यमनुवद्धः=आसक्तः। 'तिव्ववेरे' तीव्रवैरः= उत्कट  
विरोधवान् स राजगृहस्य नगरस्य बहूनि 'अइगमणाणिय' अतिगमनानि=  
च प्रवेशमार्गाः 'निगमणाणि' निर्गमनानि=निस्सरणमार्गाः, 'दाराणि' दाराणि=  
नगरदाराणि, 'अयदाराणि' अयदाराणि-लघुदाराणि गुप्तदाराणि च, 'छिंडीओ'  
छिण्डोः=वृत्तिछिद्रारूपाः कण्टक प्राकारछिद्राणीत्यर्थः, 'खंडीओ' खण्डोः=  
दुर्गछिद्राणि, 'नगरनिद्धमणाणि' नगरनिर्द्धमनानि=नगरजलनिर्गमनदाराणि,  
'संवट्टणाणि' संवर्त्तनानि=अनेकमार्गसङ्गमस्थानानि, 'निव्वट्टणाणि' निर्वर्त्तनानि=  
नूतननिर्मितमार्गरूपाणि, 'जूरखलयाणि' जूरखलकानि=द्युतकोडास्थानानि,  
'पाणाणि' 'पानागाराणि' मदिरास्थानानि, 'वेस्सागाराणि' वेश्यागाराणि=

तीर्थ भेद लघु हस्त संपुञ्ज था-अर्थात् धर्मस्थान को नष्ट करने में यह  
अति कुशल था। (परस्स दब्बहरणम्मि निच्चं अणुवद्धे) दूसरों के द्रव्य  
हरण में यह आसक्त रहता था। (तिव्ववेरे) तीव्र वैर वाला था।  
(रायगिहस्स नयरस्स बहूणि अइगमणाणि य निगमणाणि य दाराणि य अय दारा-  
णिय छिंडीओ य खंडीओ य नगरनिद्धमणाणि य) यह राजगृहनगरके अनेक  
प्रवेशमार्गों को जाने के मार्गों को वहां के अनेक द्वारों को छोटे-द्वारों  
को-अथवा गुप्त द्वारों को कांटों की लगी हुई बाड़के छिद्रों को जल के  
निकलने की नालियों को (संवट्टणाणि) अनेक मार्गों के संगमस्थानों को  
(निव्वट्टणाणि) नूतननिर्मित मार्गों को (जूरखलयाणि) जूरा के खेलने के  
स्थानों को (पाणागाराणि) मदिरा पीने के स्थानों को (वेस्सागाराणि)

विचार पण उत्पन्न थतो हुतो हे आहुं डेपुं कृत्य करी रह्यो छुं. ते ' तीर्थभेद  
लघुहस्त संपुञ्ज ' हुतो—ओटवे डे धर्मस्थानने नष्ट करवाभां ते अतिकुशल हुतो.  
(परस्सदब्ब हरणम्मि निच्चं अणुवद्धे ) परसना द्रव्यने हरवाभां न ते आसक्त  
रह्य करतो हुतो. (तिव्ववेरे) ते लयंकर रीते वेर ( दुश्मनावट ) राखनार हुतो.  
( रायगिहस्स नयरस्स बहूणि अइगमणाणि निगमणाणि य दाराणिय अय-  
दाराणि य छिंडीओ य खंडीओ य नगरनिद्धमणाणि य ) राजगृह नगरना  
धरणा प्रवेश भाओने अवर ववरना रस्ताओने, त्यां ना धरणा दरवाजाओने, नाना  
दरवाजाओने अथवा तो गुप्त दरवाजाओने, डोटोने, बाडना छिद्रोने, छिद्राना  
छिद्रोने, पाण्णीनी नणीओने. (संवट्टणाणि). धरणा रस्ताओ लोका थता होय तेवा  
स्थानोने (निव्वट्टणाणि) नवा बनाववाभां आवेला रस्ताओने (जूर खलयाणि)  
जूरखलना अहाओने, (पाणागाराणि) दारु पीवाना स्थानोने, (वेस्सागाराणि)



चरित्रः, तत्र-‘चिर’ चिरं=बहुकालं यावत् ‘नगर’ नगरान् ‘विणट्ट’ विनष्टः=  
 लूणितः, अत एव ‘दुष्ट’ दुष्टं शीलं=स्वभावः, आचारः कुलमर्षादात्मनः,  
 चरित्रं=जीवनव्यवहाररूपं यस्य स तथा । ‘जूपसंगी’ घृतमक्की=घृतकीडा-  
 सक्तः ‘मज्जप्पसंगी’ मद्यप्रसङ्गी=मद्यपायी, ‘भोज्यप्पसंगी’ भोज्यप्रसङ्गी=खण्ड-  
 खाद्यादिरसलोच्छ्रपः । ‘भोगप्रसङ्गी’ इति पाठ गणिकापरायण इति । ‘मंसप्रसंगी’  
 मांसप्रसङ्गी=मांसाहारी, उपलक्षणात् सप्तव्यसनसेवी । ‘दारुणे’ दारुणः=कठोर-  
 हृदयः । ‘हिययदारण’ हृदयदारकः-अन्येषां हृदयविदारकः । साहसिए’ साह-  
 सिकः=अविचारकारी । ‘संधिच्छेपए’ सन्धिच्छेदकः-क्षत्रखानकः=गृहादिभित्ति-  
 भेदकः ‘उवहिए’ औपधिकःसमायित्वेन प्रच्छन्नचारी । ‘विसंभयार्ड’ विसम्भ-  
 याती=विश्वासघातकः । ‘आलीयग’ आदीपकः=ग्रामादिप्रज्वालकः ‘लुप्रमय

व्यवहार इसका बिलकुल नष्ट भ्रष्ट हो गया था, और चरित्र इसका बिल्कुल  
 कुल पतित बन गया था । यह घृत संगी-जुआ खेलने में आसक्त मद्य पाने  
 में प्रसक्त भोज्य प्रसंगी-मिष्टान्न आदिरस का लोलुपी, और गणिकाओं  
 के सेवन करने में सदा तल्लीन रहता था । यह मांसाहारी था-उपलक्षण  
 से सातों ही व्यसनों का सेवन करने वाला था । कठोर हृदय था-अन्य  
 प्राणियों के हृदय विदारक था (साहसिए) बड़ा साहसिक था बिना विचारे  
 हर एक काम कर डालता था । (संधिच्छेपए, उवहिए, विसंभयार्ड, आली-  
 यगतिथ्यभेयलहुहत्थसंपउए) मकानों में संघ (खात) लगाने में उनकी  
 भित्तिकोड़ने में-यह प्रख्यात था, औपधिक था-मायाचारी होने के कारण  
 यह अपना पैर परिवर्तित कर इधर उधर फिरा करता था । विश्वासघातक  
 था । आदीपक-ग्राम आदि के जलाने में उसे कोई विचार नहीं होता था ।

ते दुष्ट थर्ग गये। उतो. आचार-अटवे के कुण्डी मर्यादा इप. तेनो व्यवहार संहार  
 नाथ पांभ्यो उतो. अने तेनुं चरित्र्य साव अष्ट थर्ग गयुं उतुं. ते घृत प्रसंगी  
 जुगारमां आसक्त, मद्यपी-दारु पीवामां प्रसक्त, भोज्य प्रसंगी-मिष्टान्न वगेरे  
 गयुं भावामां लोलुप अने गणिकाओ वगेरेना सेवनमां ते दुभेयां तल्लीन रह्या  
 करतो. उतो. ते मांस लक्षक उतो. उपलक्षणेथी. ते साते सात व्यसनोने आचरनार  
 उतो. कठोर हृदय वाणो उतो. जीम भाणुसेना. हृदयने दुःखी गनावनार उतो.  
 (साहसिए) ते जूअ व साहसिक उतो. विवेक वगरनो थर्गने ते गमे ते काम  
 करतो. उतो. (संधिच्छेपए उवहिए विसंभयार्ड आलीयगतिथ्यभेयलहु-  
 हत्थसंपउए) घरमां भातर पाडवामां ते प्रख्यात उतो. ते औपधिक उतो-अटवे  
 के माया चोरी डोवा जडव ते पेतानो वेव जडवीने आम तेम जडया करतो  
 उतो. ते विश्वास घात करनार उतो. आदीपक-अटवे के ग्राम ने सज्जगवतां तेने

रूपेषु 'विहरेषु' विधुरेषु व्याकुलावस्थारूपेषु 'वसणेषु' व्यसनेषु-विपत्सु  
'अभ्युदयसु' अभ्युदयेषु राज्यलक्ष्म्यादिप्राप्तिरूपेषु 'उत्सवेषु' उत्सवेषु  
विवाहादिपरङ्गरूपेषु 'पयवेषु' पयवेषु-पुत्रादिजन्मोत्सवेषु 'तिहिसु' 'तिथिसु'-  
सांवत्सरिकारूपेषु 'छणेषु' क्षणेषु आनन्दजनकव्यापाररूपेषु 'जन्नेषु'  
यज्ञेषु नागाद्युत्सवेषु 'पर्वणीसु' पर्वणीषु-कार्तिकपूर्णिमादिपर्वतिथिषु 'मत्त-  
पमत्तस्य' मत्तपमत्तस्य तत्र 'मत्त' उन्मत्तः 'पमत्त' प्रमत्तः-प्रमादवान् यः स  
तस्य 'विविक्त्वत्तस्य' विक्षिप्तस्य प्रयोगविशेषेण भ्रान्तचित्तस्य 'वाउलस्य'  
वातुलस्य वातरोगयुक्तस्य अन्यमनस्कस्य वा 'सुहियस्य' सुखितस्य  
सकलेन्द्रियानुकूलविषयप्राप्तत्वात्सुखमग्नस्य 'दुःखियस्य' दुःखितस्य इष्ट  
वियोगानिष्टसंयोगादिना दुःखनिमग्नस्य 'विदेसत्थस्य' विदेशस्थस्य परदेश-  
स्थितस्य 'विषयसियस्य' विप्रोपितस्य-इष्टजनवियोगिनः इत्यादि बहुज-

विहरेषु) व्याकुल अवस्था में होता था (वसणेषु) किसी और विपत्ति से  
ग्रस्त होता था उस समय में तथा (अभ्युदयसु) राज्यलक्ष्मी आदि की  
प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य पयवेषु य तिहीसु य छणेषु य जन्नेषु य  
पर्वणीसु य) विवाह आदि प्रसंगों में पुत्रादि जन्मोत्सवों में सांवत्सरिक  
तिथियों में, आनंद जनक व्यापाररूप क्षणों में नागादि उत्सवरूप यज्ञों में  
कार्तिक पूर्णिमा आदिरूप पर्वतिथियों में. (मत्त-पमत्तस्य विविक्त्वत्तस्य वाउ-  
लस्य य सुहियस्य य दुःखियस्य य विदेसत्थस्य य विषयसियस्य य) जब  
कोई जन मत्त हो जाता था प्रमादवशंगत हो जाता था, प्रयोग विशेष  
से भ्रान्त चित्त बन जाता था, वातव्याधि से युक्त हो जाता था। या  
अन्यमनस्क हो जाता था, सकल इन्द्रियों के अनुकूल विषयों की प्राप्ति  
से आनन्द युक्त बन जाता था इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग आदि से दुःख-

(वसणेषु) भील डोभ आइतमां इसायलो रडेतो, ते सभये तेमज (अभ्युदयसु)  
राज्य लक्ष्मी वगेरेनी प्राप्तिइय उत्सवोमां (उत्सवेषु य पयवेषु य तिहीसु य  
छणेषु य जन्नेसु य पर्वणीसु य) लभ वगेरेनी प्रसंगोमां, पुत्र वगेरेना जन्मो-  
त्सवोमां, सांवत्सरिक तिथियोमां, आनंदनी क्षणोमां, नाग वगेरेना उत्सव इय  
यज्ञोमां कार्तिक पूनम वगेरे इय पर्व तिथियोमां (मत्त पमत्तस्य विविक्त्वत्तस्य वाउलस्य य  
सुहियस्य य दुःखियस्य य विदेसत्थस्य य पयत्तस्य विखयस्य विषयसियस्य य)  
न्यारे डोभ भाणुस गांडो थछंजतो, प्रमादी थछंजतो, (तत्र भ्रान्ता) प्रयोग विशेषथी  
भ्रान्तचित्त थछंजतो, वातना रोगथी पीडित थछंजतो, शून्य मनस्क थछंजतो,  
अधी इन्द्रियोने सुख प्राप्ति थाय ओयो संयोग थतां न्यारे डोभ आनंद भग्न  
थछंजतो, इष्ट वियोग तथा अनिष्ट संयोग वगेरेथी दुःखी थछंजतो, परदेशमां

गणिकागृहाणि 'तदारद्वाणाणि' तद्द्वारस्थानानि=गणिकागृहद्वाराणीत्यर्थः, 'तक्ररद्वाणाणि य' तस्करस्थानानि च=चोरनिवासस्थानानि, 'सिवाडगाणि' शृङ्गाटकानि=शृङ्गाटकाकृतित्रिकोणस्थानानि, 'तियाणि' त्रिकाणि मार्गत्रयसंमीलनस्थानानि, 'चउकाणि' चतुष्काणि=चतुष्कोणस्थानानि, चचराणि चचराणि=चतुष्पथरूपाणि. 'नागघराणि' नागगृहाणि 'भूयघराणि' भूतगृहाणि 'जक्खदेउलानि' यक्षदेवकुलानि=यक्षायतनानि 'सभाणि' सभाः 'पवाणि' प्रपाः-पानीयशाला 'पणियसालानि' पणितशालानि-क्रयविक्रयस्थानानि 'मुन्नघराणि' शून्यगृहाणि 'आभोएमाणेर' आभोगयन्-सोपयोगप्रेक्षमाणः 'मग्गमाणे' मार्ग्यमाणः-अन्विष्यन् । 'गवेसमाणे' गवेसमाणः, मृक्षपरीत्या विलोकमानः-बहुजनस्य 'छिद्देसु' छिद्देसु स्खलनारूपेषु 'विसमेसु' विषमेषु-रोगाद्यवस्था-वेश्याओं के गृहों को (तदारद्वाणाणि) उनके दरवाजों को (तक्ररद्वाणाणि) चोरों के निवासस्थानों को (सिवाडगाणि) शृङ्गाटक जैसे त्रिकोण वाले स्थानों को (तियाणि) तीन मार्ग जहां मिले हों ऐसे स्थानों को (चउकाणि) चतुष्कोण वाले स्थानों को (चचराणि) चतुष्पथ रूप स्थानों को (नागघराणि) नागगृहों को, (भूयघराणि) भूतगृहों को, (जक्खदेउलानि) यक्ष के देवलों को (पभाणि) सभाओं को (वाणि) व्याऊओं को, (पणियसालाणि) क्रयविक्रय के स्थानों को (मुन्नघराणि) शून्य घरों को (आभोएमाणेर) उपयोग देकर बारबार देखता था । (मग्गमाणे) उन्हें बार-बार तलाशता । (गवेसमाणे) मृक्षमदृष्टि से उन की गवेसणा करता था (बहुजणस्स छिद्देसु य) जब कोई किसी प्रकार के कष्ट में होता था (विसमेसु) रोगादि अवस्था संगन्

वेश्याओंनां धरेने, (तदारद्वाणाणि) ते वेश्याओंना दरवाजयेने, (तक्ररद्वाणाणि) चोरेना अड्डयेने (सिवाडगाणि) शृङ्गाटक-अटके के त्रय रस्ता लेगा थता डोय तेवा स्थानेने, (चउकाणि) चतुष्कोणवाणा स्थानेने (चचराणि) चार रस्ताये लेगा थता डोय तेवा स्थानेने, (नागघराणि) नागनां गृहेने, (भूयघराणि) भूतिथां धरेने, (जक्ख देउलानि) यक्षेना देवालयेने (सभाणि) सभायेने (पवाणि) परयेने, (पणिय सालाणि-क्रय विक्रयना स्थानेने, (मुन्नघराणि) आश्री पडी रहेला धरेने, (आभोएमाणे) भुत्तर आपीने वारे धडीये लेतो डतो (मग्गमाणे) ते स्थानेने बार-बार तलासता रहे तो डतो. (गवेसमाणे) सूक्ष्म दृष्टि तीमने लेतो रहेतो डतो. (बहुजणस्स छिद्देसु य) न्यारे डोय भायुस डोय पण्ण जतना कष्टमां पीडतो रहे छे. (विसमेसु) रोग वगेरथी मुक्त रहेतो,



रूपेषु 'विहरेषु' विहरेषु व्याकुलान्ग्यारूपेषु 'वसणेषु' व्यसनेषु-विपत्सु  
'अम्बुदण्डेषु' अम्बुदण्डेषु राज्यलक्ष्म्यादिप्राप्तिरूपेषु 'उत्सवेषु' उत्सवेषु  
विवाहादिपरङ्गरूपेषु 'पवणेषु' पवणेषु-पुत्रादिजन्मोत्सवेषु 'तिहिसु' 'तिथिसु'-  
सांवत्सरिकारूपेषु 'छणेषु' क्षणेषु आनन्दजनकव्यापाररूपेषु 'जन्नेषु'  
यज्ञेषु नागाद्युत्सवेषु 'पवणीसु' पवणीषु-कार्तिकपूर्णिमादिपर्वतिथिषु 'मत्त-  
पमत्तस्य' मत्तपमत्तस्य तत्र 'मत्त' उन्मत्तः 'पमत्त' प्रमत्तः-प्रमादवान् यः स  
तस्य 'विविक्तस्य' विविक्तस्य प्रयोगविशेषेण भ्रान्तचित्तस्य 'वाउलस्य'  
वातुलस्य वातरोगयुक्तस्य अन्यमनस्कस्य वा 'सुहियस्य' सुखितस्य  
सकलेन्द्रियानुकूलविषयप्राप्तत्वात्सुखमग्नस्य 'दुःखितस्य' दुःखितस्य इष्ट  
वियोगानिष्टसंयोगादिना दुःखनिमग्नस्य 'विदेसत्थस्य' विदेशस्थस्य परदेश-  
स्थितस्य 'विष्वस्य' विष्वस्य-इष्टजतवियोगिनः इत्यादि बहुज-

विहरेषु) व्याकुल अवस्था में होता था (वसणेषु) हिंसी और विपत्ति से  
ग्रस्त होता था उस समय में तथा (अम्बुदण्डेषु) राज्यलक्ष्मी आदि की  
प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य पवणेषु य तिहिसु य छणेषु य जन्नेषु य  
पवणीसु य) विवाह आदि प्रसंगों में पुत्रादि जन्मोत्सवों में सांवत्सरिक  
तिथियों में, आनंद जनक व्यापाररूप क्षणों में नागादि उत्सवरूप यज्ञों में  
कार्तिक पूर्णिमा आदिरूप पर्वतिथियों में. (मत्त-पमत्तस्य विविक्तस्य वाउ-  
लस्य य सुहियस्य य दुःखितस्य य विदेसत्थस्य य विष्वस्य य) जब  
कोई जन मत्त हो जाता था प्रमादवशंगत हो जाता था, प्रयोग विशेष  
से भ्रान्त चित्त बन जाता था, वातव्याधि से युक्त हो जाता था। या  
अन्यमनस्क हो जाता था, सकल इन्द्रियों के अनुकूल विषयों की प्राप्ति  
से आनन्द युक्त बन जाता था इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग आदि से दुःख-

(वसणेषु) पीछे डोम आश्रितों में इसाथले रहते, ते समय तेमज (अम्बुदण्डेषु)  
राज्य लक्ष्मी वगैरेनी प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य पवणेषु य तिहिसु य  
छणेषु य जन्नेषु य पवणीसु य) लक्ष्मी वगैरेनी प्रसंगों में, पुत्र वगैरेना जन्मो-  
त्सवों में, सांवत्सरिक तिथियों में, आनंदनी क्षणों में, नाग वगैरेना उत्सव रूप  
यज्ञों में, कार्तिक पूनम वगैरे रूप पर्व तिथियों में (मत्त-पमत्तस्य विविक्तस्य वाउलस्य य  
सुहियस्य य दुःखितस्य य विदेसत्थस्य य पमत्तस्य विष्वस्य य) व्यापारे डोम भाणुस गांडो थल्लतो, प्रमादी थल्लतो, (तत्र मत्तना) प्रयोग विशेषथी  
भ्रान्तचित्त थल्लतो, वातना रोगथी पीडित थल्लतो, शून्य मनस्क थल्लतो,  
गंधी इन्द्रियोने सुख प्राप्ति थाय ओवो संयोग थलां व्यापारे डोम आनंद भग्न  
थल्लतो, इष्ट वियोग तथा अनिष्ट संयोग वगैरेथी दुःखी थल्लतो, परदेशों में

नस्य 'मग्गं' मार्गम् अवसरम् 'छिद्दं' छिद्रम्-स्खलनारूपम् विरहं' वियोगम्  
 'अंतरं' स्थानान्तरगमनरूपं सायंकालादिरूपं वा 'मग्गमाणे' मार्गयमाणः  
 विलोकमानः 'गवेसमाणे' अन्विष्यन् एवं च णं' उक्तीत्यां 'विहरइ'  
 विहरति विजयतस्करोऽवतिष्ठते इत्यर्थः, चकारः समुच्चयार्थः, णं वाक्या-  
 लङ्कारे । 'बहिया वि य णं' बहिरपि च खलु राजगृहनगरस्य 'आरामेसु' आरा-  
 मेषु-पुष्पफलादि समृद्धक्षलतासंकुलक्रीडास्थानेषु 'उज्जाणेषु' उद्यानेषु=  
 पत्रपुष्पफलच्छायोपशोभितनगरासन्नवर्तिक्रीडास्थानेषु 'वावीपोक्खरिणी-  
 दीहियागुंजालियासरेसु' वापीपुष्करिणीदीर्घिकागुञ्जालिकासरस्सु,  
 तत्र 'वावी' वापी चतुष्कोणयुक्ता 'पोक्खरिणी' पुष्करिणी-कमल युक्तगो-  
 लाकारा 'दीहिया' दीर्घिका=दीर्घाकार वापी, 'गुंजालिया' गुञ्जालिका=वक्रा-  
 कारवापी 'सरः'=तडागः, 'सरपंतियासु' सरःपार्श्वकासु=सरोवरभेगिषु

मग्न हो जाता था, परदेश में गये हुए जनों का, इष्ट जनों से वियुक्त  
 होता था-तब यह उनके (मग्गं च छिद्दं च विरहं च अंतरं च मग्गमाणे,  
 गवेसमाणे एवं च णं विहरइ) अवसर की, स्खलनारूप छिद्रको, वियोग को  
 स्थानान्तर गमनरूप अथवा सायंकाल आदिरूप अंतर को ताकता रहता था-  
 उनकी खोज में रहता था इस प्रकार से यह जब नगर में रहता था तब  
 अपना समय व्यतीत करता था । तथा (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स  
 आरामेसु य उज्जाणेषु य वाविपोक्खरिणी-दीहिया गुंजालिया-सरेसु य  
 सरपंतियासु य सरसरपंतियासु य जिणुज्जाणेषु य भग्गकूवेसु य मालुया  
 कच्छएसु य सुसाणएसु य गिरिकंदलेणउवट्टाणेषु य बहुजणस्स छिद्देषु य  
 जाव एवं च णं विहरइ) राजगृह नगरके बाहर वहाँ के आरामों में पुष्पफल

गयेला भाणुसेने तेमना छण्णोथी वियोग थण्णो तो त्यारे ते (थो.) तेमना  
 (मग्गं च छिद्दं च विरहं च अंतरं च मग्गमाणे, गवेसमाणे एवं च णं विहरइ)  
 उपर थापती नजर राखतो. वियोग, स्थानान्तर गमन, सायंकाल वगेरेना अव-  
 सरनी तेमनी असावधानीनी अराअर तकनो लाल देवा तैयार रहेतो. आवा अवसरानी  
 ते तथासभां रहे तो. आ रीते नगरभां रहीने, ते पोतानो वण्णत पसार करते.  
 डतो. तेमण्ण (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स आरामेसु य उज्जाणेषु य

वाविपोक्खरिणीदीहिया गुंजालिया,सरेसु य सरपंतियासु य सरसर-  
 पंतियासु य जिणुज्जाणेषु य भग्गकूवेसु य मालुया कच्छएसु य सुसाण-  
 एसु य गिरिकंदलेणउवट्टाणेषु य बहुजणस्स छिद्देषु य जाव एवं च णं  
 विहरइ) राजनगरनी अहार त्यांना आरामोभां, पुष्पफलथी अभुङ्गि युक्त तथा

‘સરસપંતિયાસુ’ સરઃસરઃપક્તિકામૃ=પરસ્પરં સંલગ્નેષુ બહુષુ તડાગેષુ યેષુ  
સરઃસુ પડતયા વ્યવસ્થિતેષુ એકસ્માત્સરસોઽન્યસ્મિન્ સરસિ તતોઽન્યત્ર, एवं  
જલસંવારદાપાટકેન જલં સંચરતિ। અથવા ઝઘર્વાધઃ ક્રમેણ પક્તિરુપેણ  
વ્યવસ્થિતેષુ સરસુ સ્વંન એવ સુતરાં જલં સંચરતિ, તન્નેત્યર્થઃ। ‘જિણ્ણુઝ્ઞા-  
ણેષુ’ જીર્ણોદ્યાનેષુ=શુષ્કપ્રાયતરુલતાદિયુક્તવનસ્વળ્લેષુ ‘ભગ્નકૂવણેષુ’ ભગ્ન-  
કૂપકેષુ=લઙ્ગિતકૂપકેષુ ‘માલુયાકચ્છણેષુ’ માલુયાકચ્છકેષુ સુમાણેષુ  
શ્મશાનકેષુ ગિરિકંદરલેણોવદ્ધાણેષુ’ ગિરિકંદરલયનોપસ્થાનેષુ=તત્ર-ગિરિ-  
કંદરેષુ=પર્વતરન્ત્રેષુ ‘લેણ’ લયનેષુ=ગિરિસ્થિતપાપાણગૃહેષુ ‘ઉવદ્ધાણેષુ’  
ઉપસ્થાનેષુ=લતાદિમંડપેષુ બહુજનસ્ય=જનસમુદાયસ્ય છિદ્રેષુ અત આરભ્ય  
યાવત્-અનન્તરં ગવેપયમાણોઽસૌ તસ્કરઃ एवं પ્રકારેણ વિચરતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

મૂલમ્—તપ્પણં તીસે ભદાણે મારિયાણે અન્નયા કયાઈ  
પુવ્વરત્તાવરત્તકાલસમયંસિ કુહુંવજાગરિયં જાગરમાણીણે અયમે-  
યારૂવે અઙ્ગરિથિણે જાવ સમુપજ્જિતથા—અહં ધપ્પણેણ સત્થવાહેણ  
સદ્ધિં વહૂણિ વાસાણિ સદ્ધરિસરસગંધરૂવાણિ માણુસ્સગાઈં કામ-

આદિ સે સમૃદ્ધ વૃક્ષો વાલે તથા લતા સે યુક્ત એસે ક્રીડાસ્થાનો મેં-ઉદ્યાનો  
મેં નગરાસન્નવર્તી એસે ક્રીડા કે સ્થલો મેં જો પત્ર પુષ્પ ફલ એવં છાયા વાલે  
વૃક્ષો સે શોભિત હોતે હેં, વાવડિયો મેં, પુષ્કરણિયો મેં દીર્ઘિકાઓ મેં ગુંજાલિ  
કાઓ મેં તાલાવ મેં સરોવરશ્રેણિયો મેં પરસ્પર સંલગ્ન અનેક તાલાવો  
મેં જીર્ણ ઉદ્યાનો મેં, ભગ્નકુંબો મેં, માલુયાકચ્છો મેં શ્મશાનો  
મેં, પર્વત કી ગુફાઓ મેં પર્વત ઉપર રહે હુણે પાપાણગૃહો મેં ઓર  
લતાદિ મંડપો મેં છુપર કર યહ જન સમુદાય કે છિદ્રો કી વિરહ કી  
અંતરઆદિ કી તાક મેં રહા કરતા થા અન કી ગવેપણામેં લગા રહતા થા ॥મૂ.૪॥

લતા વિતાનોથી ઢંકાએલાં ક્રીડા સ્થાણોમાં, ઉદ્યાનોમાં—નગરની પાસેના પત્ર, પુષ્પ  
ફળ અને છાયાવાળા વૃક્ષોથી શોભિત ક્રીડા સ્થાણોમાં, વાવોમાં પુષ્કરણીઓમાં,  
દીર્ઘિકાઓમાં ‘ગુંજાલિકાઓમાં, તપાવોમાં, સરોવરોની શ્રેણીઓમાં, જેમનાં પાણી  
એક થઈ રહ્યાં છે. એવાં ઘણાં તળાવોમાં જૂના બગીચાઓમાં, જૂના ભગ્ન કૂવાઓમાં,  
માલુયાકચ્છોમાં, શ્મશાનોમાં, પર્વતની ગુફાઓમાં, પર્વત ઉપરના શિલા ખડેની  
વચ્ચેના પાપાણુ ગૃહોમાં અને લતા મંડપોમાં છુપાઈને તે (ચોર) જન સમુદાયની  
અસાવધાનતા તેમ જ તેઓ ક્યારે પોતાના ઘરથી વિખૂટા થાય છે તેની શોધમાં  
રહેતો હતો, તેની બરોબર તપાસ રાખતો હતો. ॥ સૂત્ર ૪ ॥



नस्य 'मगं' मार्गम् अवसरम् 'छिदं' छिद्रम्-स्खलनारूपम् विरहं' वियोगम्  
 'अंतरं' स्थानान्तरगमनरूपं सायंकालादिरूपं वा 'मगमाणे' मार्गयमाणः  
 विलोकमानः 'गवेसमाणे' अन्विष्यन् 'एवं च णं' उक्तरीत्यां 'विहरइ'  
 विहरति विजयतस्करोऽवतिष्ठते इत्यर्थः, चकारः समुच्चयार्थः, णं वाक्या-  
 लङ्कारे । 'बहिया वि य णं' बहिरपि च खलु राजगृहनगरस्य 'आरामेसु' आरा-  
 मेषु-पुष्पफलादि समृद्धक्षलतासंकुलक्रीडास्थानेषु 'उज्जाणेषु' उद्यानेषु=  
 पत्रपुष्पफलच्छायोपशोभितनगरासन्नवर्तिक्रीडास्थानेषु 'वावीपोक्खरणी-  
 दीहियागुंजालियासरेसु' वापीपुष्करिणीदीर्घिकागुञ्जालिकासरस्सु,  
 तत्र 'वावी' वापी चतुष्कोणयुक्ता 'पोक्खरिणी' पुष्करिणी-कमल युक्तगो-  
 लाकारा 'दीहिया' दीर्घिका=दीर्घाकार वापी, 'गुंजालिया' गुञ्जालिका=वक्रा-  
 कारवापी 'सरः'=तडागः, 'सरपंतियासु' सरःपार्श्वेकासु=सरोवरभेगिषु

मग्न हो जाता था, परदेश में गये हुए जनों का, इष्ट जनों से वियुक्त  
 होता था-तब यह उनके (मगं च छिदं च विरहं च अंतरं च मगमाणे,  
 गवेसमाणे एवं च णं विहरइ) अवसर की, स्खलनारूप छिद्रकी, वियोग को  
 स्थानान्तर गमनरूप अथवा सायंकाल आदिरूप अंतर को ताकता रहता था-  
 उनकी खोज में रहता था इस प्रकार से यह जब नगर में रहता था तब  
 अपना समय व्यतीत करता था । तथा (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स  
 आरामेसु य उज्जाणेषु य वाविपोक्खरिणी-दीहिया गुंजालिया-सरेसु य  
 सरपंतियासु य सरसरपंतियासु य जिण्णुज्जाणेषु य भग्गकूवेसु य मालुया  
 कच्छएसु य सुसाणएसु य गिरिकंदलेणउवट्ठाणेषु य बहुजणस्स छिदेषु य  
 जाव एवं च णं विहरइ) राजगृह नगरके बाहर वहाँ के आरामों में पुष्पफल

गयेला भाषुसोने तेमना छट्ठनोथी वियोग थरु जतो त्थारे ते (था-) तेमना  
 (मगं च छिदं च विरहं च अंतरं च मगमाणे, गवेसमाणे एवं च णं विहरइ)  
 उपर थांपती नजर राखतो. वियोग, स्थानान्तर गमन, सायंकाल वगेरेना अव-  
 सरनी तेमनी असावधानीनी भराभर तकनो लास देवा तैथार रहेतो. आवा अवसरानी  
 ते तथासमां रहे तो. आ रीते नगरमां रहीने, ते पोतानो वण्णत पसार करतो.  
 डतो. तेम न (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स आरामेसु य उज्जाणेषु य

वाविपोक्खरिणीदीहिया गुंजालिया,सरेसु य सरपंतियासु य सरस-  
 पंतियासु य जिण्णुज्जाणेषु य भग्गकूवेसु य मालुया कच्छएसु य सुसाण-  
 एसु य गिरिकंदलेणउवट्ठाणेषु य बहुजणस्स छिदेषु य जाव एवं च णं  
 विहरइ) राजनगरनी धरार त्यांना आरामोमां, पुष्पफलथी अभ्रद्धि युक्त तथा

अहं देवाणुप्पिया ! तुव्भेहिं सदि बहुइं वासाइं जाव देंति समुल्ला-  
वए सुमहुरे पुणे मंजुलप्पभणिए तण्णं अहं अहन्ता अपुन्ना  
अलक्खणा एत्तो एगमवि न पत्ता, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया !  
तुव्भेहिं अवभणुन्नाया समाणी विपुलं असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि  
(त्तिकट्ठु) उवाइयं करेत्तए । तण्णं धण्णे सत्थवाहे भदं भारयं  
एवं वयासी—ममं।प य णं खलु देवाणुप्पिया ! एस चेव मणोरहे  
—कहं णं तुमं दारग दारिणं वा पयाएज्जसि ? भदाए सत्थवाहीए  
एयमट्ठमगुजाणइ. । तएणं सा भदा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं  
अवभणुन्नाया समाणी हट्ठुत्तु जाव हियया विपुलं असणपाण  
खाइमसाइमं उवक्खडावेइ उवक्खड्ढावित्ता सुवहुं पुप्फगंधवत्थम-  
ल्लालंकारं गेण्हइ गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता  
रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव पोक्ख-  
रिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुक्खरिणीए तीरे सुवहु  
पुप्फजाव मल्लालंकारं ठवेइ, ठवित्ता पुक्खरिणिं ओगाहइ, ओगा-  
हित्ता जलमज्जणं करेइ जलकीडं करेइ, करित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा  
उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं  
गिण्हइ गिण्हित्ता पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणमेव  
नागघरणे य जाव वेसमणघरणे य तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता  
तत्थ णं नागपडिमाणे य जाव वेसमणपडिमाणे य आलोए पणाम-  
करेइ करित्ता ईसिं पच्चुन्नमइ पच्चुन्नमित्ता लोमहत्थगं परामुसइ  
परामुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थ-

भोगाइं पच्चणुभवमाणी विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा दारिगं  
 पयायामि, तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलद्धेणं माणुस्सए  
 जम्मजीवियफले तासिं अम्मयाणं जासिं मन्ने णियगकुच्छिसंभूयाइं  
 थणदुद्धलु छयाइं महुरसमुत्तावगाइं सम्मंणपयंपियाइं थणमूलकं-  
 कखदेसभागं अभिसरमाणाइं सुद्धयाइं थणयं पिवंति, तओ य  
 कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊणं उच्छंगे निवेसियाइं देंति  
 समुल्लावए पिए सुमदुरे पुणो२ संजुलप्पभणिए, तं अहन्नं अधन्नां  
 अपुत्ता अलक्खणा अकयपुन्ना एत्तो एगमवि न पत्ता, तं सेयं मम  
 कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता  
 धण्णेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी सुवहुं विपुलं असण-  
 पाणखाइमसाइमं उवक्खंडावेत्ता सुवहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं  
 गहाय बहूहिं मित्तनाइनियगसयणसंवंधिपरिजणमहिलाहिं सद्धिं संप-  
 रिबुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य  
 जक्खाणि य इंदाणि य खंदाणि य रुद्धाणि य सिवाणिय वेसमणाणि  
 य तत्थ णं य बहूणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य मह-  
 रिहं पुप्फच्चणियं करेत्ता जाणुपायवडियाए एवं वडत्तए-जइ णं अहं  
 देवाणुप्पिया ! दारगं वा दारिगं वा पयायामि तो णं अहं तुब्भं  
 जायं च दायं च मायं च अक्खयणिहिं च अणुवड्ढेमि त्ति कट्ठे उव-  
 याइयं उवयाइत्तए, एवं संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते जेणामेव धणो  
 सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी-एवं खल्ल



अहं देवाणुप्पिया ! तुव्मेहिं सद्धिं बहुइं वासाइं जाव देंति समुल्ला-  
वण सुमहुरे पुणे मंजुलप्पभणिए तण्णं अहं अहन्ना अपुन्ना  
अलक्खणा एत्तो एगमवि न पत्ता, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया !  
तुव्मेहिं अवभणुन्नाया समाणी विपुलं असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि  
(त्तिकट्ठु) उवाइयं करेत्तए । तण्णं धण्णे सत्थवाहे भदं भारयं  
एवं वयासी—ममं।प य णं खलु देवाणुप्पिया ! एस चेव मणोरहे  
—कहं णं तुमं दारग दारिणं वा पयाएज्जसि ? भद्दाए सत्थवाहीए  
एयमट्ठमगुजाणइ. । तएणं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं  
अवभणुन्नाया समाणी हट्ठुत्तु जाव हियया विपुलं असणपाण  
खाइमसाइमं उवक्खडावेइ उवक्खड्ढावित्ता सुवहुं पुप्फगंधवत्थम-  
ल्लालंकारं गेण्हइ गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता  
रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव पोक्ख-  
रिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुक्खरिणीए तीरे सुवहु  
पुप्फजाव मल्लालंकारं ठवेइ, ठवित्ता पुक्खरिणिं ओगाहइ, ओगा-  
हित्ता जलमज्जणं करेइ जलकीडं करेइ, करित्ता पहाया कयवलिकम्मा  
उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं  
गिण्हइ गिण्हित्ता पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणमेव  
नागघरणं य जाव वेसमणघरणं य तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता  
तत्थ णं नागपडिमाणं य जाव वेसमणपडिमाणं य आलोए पणाम-  
करेइ करित्ता ईसिं पच्चुन्नमइ पच्चुन्नमित्ता लोमहत्थगं परासुसइ  
परासुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थ-

भोगाइं पच्चणुभवमाणी विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा दारिणं  
 पयायामि, तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलद्धेणं माणुस्सप  
 जम्मजीवियफले तासिं अम्मयाणं जासिं मन्ने णियगकुच्छिसंभूयाइं  
 थणदुल्लु छयाइं महुरसमुल्लावगाइं मम्मंणपयंपियाइं थणमूलकं-  
 कखदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं थणयं पियंति, तओ य  
 कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊणं उच्छंगे निवेसियाइं देति  
 समुल्लावए पिए सुमदुरे पुणो२ मंजुलप्पभणिए, तं अहन्नं अधन्ना  
 अपुत्ता अलक्खणा अकयपुत्ता एत्तो एगमवि न पत्ता, तं सेयं मम  
 कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता  
 धण्णेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी सुवहुं विपुलं असण-  
 पाणखाइमसाइमं उवक्खंडावेत्ता सुवहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं  
 गहाय बहूहिं मित्तनाइनियगसयणसंवंधिपरिजणमहिलाहिं सद्धिं संप-  
 रिनुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य  
 जक्खाणि य इंदाणि य खंदाणि य रुद्धाणि य सिवाणि य वेसमणाणि  
 य तत्थ णं य बहूणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य मह-  
 रिहं पुप्फच्चणियं करेत्ता जाणुपायवडियाए एवं वडत्तए—जइ णं अहं  
 देवाणुप्पिया ! दारगं वा दारिणं वा पयायामि तो णं अहं तुब्भं  
 जायं च दायं च मायं च अक्खयणिहिं च अणुवडुमि त्ति कहु उव-  
 याइयं उवयाइत्तए, एवं संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते जेणामेव धणो  
 सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी—एवं खलु

आध्यात्मिकः=आत्मनि विचारः यावत् समुदपद्यत—अहं खलु धन्येन सार्थ  
वाहेन सार्धं बहूनि वर्षाणि तावत्—बहुवर्षपर्यन्तं शब्दस्पर्शरसरूपात्मकान्  
मानुष्यकान् कामभोगान् 'पञ्चगुणभवमाणी' प्रत्यनुभवन्ती=परिशुजाना  
विहरामि=तिष्ठामि किन्तु नोचैव खलु अहं दारकं वा दारिकां वा प्रजन-  
यामि, तत्-धन्याः खलु ता अम्वा यावत् सुलब्धं खलु मानुष्यकं जन्म-  
जीवितफलं तासामम्बानां यासां मन्ये निजककुक्षिसम्भूताः स्तनदुग्धलुब्धा  
मधुरसमुल्लापका 'मम्मणपजंपियाइं' मम्मणपजल्लिताः— 'मम्मण' इति  
स्त्वलत् प्रजल्लितं येषां ते 'तथा थणमूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं'  
स्तनमूलकक्षदेशभागमभिमरन्तः— स्तनमूलात्=स्तनमूलभागात् कक्षदेश-

रुवे अज्झत्थिए जाव समुपज्जित्था) इस प्रकार यह आध्यात्मिक यावत्  
मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि (अहं) मैं (धन्नेण सत्थवाहेण सद्धिं) धन्य  
सार्थवाह के साथ (बहूणि) बहुत वर्षों से (सद्धफरिसरसगंधरूवाणि माणुस्स-  
गाइं कामभोगां पञ्चगुणभवमाणी विहरामि) शब्द, स्पर्श, रस, गंध,  
और रूप स्वरूप मनुष्यभूत संबंधी काम भोगों को भोग रही हुई हूं।  
(नो चैव णं अहं दारगं वा दारिगां वा पयायामि) परन्तु अभी तक मेरे  
न लड़का ही हुआ है और न लड़की ही (तं धन्नाओ णं ताओ अम्म-  
याओ जाव सुलब्धेणं माणुस्सए मण्णे जम्मजी वियफलेतासि अम्मयाओ)  
अतः मैं उन माताओं को धन्य मानती हूं, उन्हीं का जीवन सफल  
समजती हूं, और यह मानती हूं कि उन्हींने अपने मनुष्य भूत सम्बन्धी  
जन्म का और जीवन का फल पाया है। (जासि णियगकुच्छिसंभूयाइं-  
थणदुद्धलुद्धयाइं मधुरसमुल्लावगाइं मम्मणयं पियाइं थणमूलकक्खदेसभागं

धन्य सार्थवाहनी साथे (बहूणि वासाणि) बहुत वर्षों थी (सद्धफरिसरसगंध-  
रूवाणि माणुस्सगाइं कामभोगाइं, पञ्चगुणभवमाणी विहरामि)  
शब्द, स्पर्श, रस, गंध अने अपना मनुष्यभावना कामभोगों को भोगवी रही छुं.  
(नो चैव णं अहं दारगं वा दारिगां वा पयायामि) पण अत्यार सुधी भारे पुत्र के,  
पुत्रीकंधं थयुं नथी. (तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलब्धेणं माणुस्सए  
मण्णे जम्मजीवियफले तासि अम्मयाओ) हूं ते माताओंने धन्य समजुं  
छुं, तेमना एवनने न सद्धा भावुं छुं, के जेभने मनुष्यभावना जन्म  
अने एवननां सद्धा इण भव्यां छे (जासि णियगकुच्छिसंभूयाइं थण दुद्धलुद्धयाइं  
मधुरसमुल्लावगाइं मम्मणपयं पियाइं थणमूल-कक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं



एणं पमज्जइ पमज्जित्ता उदगधाराए अम्भुक्खेइ, अम्भुक्खित्ता  
 पम्हलसुकुमालाए गंधकासाइयाए गायाइं लूहेइ, लूहित्ता महरिहं  
 वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च गंधारुहणं च चुन्नारुहणं च करेइ, करित्ता  
 जाव धूवं डहइ, डहित्ता जाणुपायवडिया पंजलिउडा एवं वयासी-  
 जइणं अहं दारगं वा दारिगं वा पयायामि तो णं अहं आयं च जाव  
 अणुवड्ढेमि त्तिकुट्टे उवाइयं करेइ, करित्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव  
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता विउलं असणं४ आसाएमाणी जाव विह-  
 रइ, जिमेया जाव सुईभूया जेणेव सए गिहे तेणेव उवागया, अदु-  
 त्तर च णं भद्दा सत्थवाही चाउइसट्टुमुद्धिट्टुपुन्नमासिणीसु विउलं  
 असणं४ उवक्खडेइ, उवक्खडित्ता वहवे नागा य जाव वेसमणा य  
 उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ ॥सू० ५॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि । ततःखलु तस्याः भद्राया भार्याया अन्यदा  
 कदाचित् ‘पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि’ पूर्वरात्रापररात्रकालसमये=रात्रेः पश्चिमे  
 भागे ‘कुडुंबजागरियं’ कुडुम्बजागरिकां=कुडुम्बसम्बन्धिविन्तया निद्राक्षयरूपां  
 जागरणम् ‘जागरमाणीए’ जाग्रत्याः=कुर्वत्याः अयमेतद्रूपः ‘अज्झत्थिए’

‘तएणं तीसे भद्दाए भारियाए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (तीसे भद्दाए भारियाए) उस भद्रा भार्या  
 को (अन्नया कयाइं) किसी एक समय (पुव्वरत्तावरत्तकालं समयंसि) रात्रि  
 के पूर्वभाग के बाद पश्चाद्भाग में (कुडुंबजागरियं जागरमाणीए) कुडुम्ब  
 की चिन्ता से निद्रा नहीं आने के कारण जगती हुई स्थिति में (अयमेया-

‘तएणं तीसे भद्दाए भारियाए’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्वात् आह (तीसे भद्दाए भारियाए) भद्रा भार्याने  
 (अन्नया कयाइं) केषां वप्यते (पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि

रात्रिना पूर्वं लागनी पछी पश्चाद्भागं (कुडुंबजागरि यं जागरमाणीए)  
 कुडुम्बानी चिंताने वीधे बाध न आवतां व्यथतावस्थाभां (अय-  
 मेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुपजित्था) आ नतने आध्याभिक्क यावत्  
 भनोगत संकल्प उद्भवो के (अहं) हुं (धन्नेण सत्थवाहेण सद्धिं)

सञ्चितपुण्याऽग्नि 'एतो' इतः पूर्वमद्यावधि=एषां मध्याद् एकमपि शिशुं  
चेष्टनकलापादेकमपि चेष्टनमेकमपि शिशुं वा न प्राप्ता 'तं'तत्=तस्मात्का-  
रणात् 'सेयं' श्रेयः=श्रेयस्करं शोभनं मम कलये प्रादुर्गभातायां रजन्यां  
यावत् 'जलंति' ज्वलते'=सूर्योदये सति धन्यं सार्थवाहमापृच्छद्य धन्येन सार्थवाहेन  
'अवभणुन्नाया' अवभणुन्नाया=प्राप्तनिदेशा सती 'सुबहुं'=प्रकारबहुलं 'विपुलं'  
विपुलं=पचुरम् अशनपानस्वाद्यस्वाद्यम् 'उवक्खडावेत्ता=उपस्कार्ये चतुर्विध-  
माहारं निष्पाद्य 'सुबहु' सुबहुम्=बहुप्रकारकं पुष्पवस्त्रगन्धमाल्यालंकारं गृहीत्वा  
बहुभिर्मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनमहिलाभिः सार्द्धं संपरिवृता

है ऐसी हूं जो अभी तक इस प्रकार की चेष्टा संपन्न बालों में से एक भी चेष्टा  
विशिष्ट और मीठी तोतली वाणी बोलने वाले शिशु को नहीं पा सकी हूं। (तं सेयं  
मम कललं पाउप्पभायाएः रयणीए जाव जलंते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता  
धण्णेणं सत्थवाहेणं अवभणुन्नाया समाणी सुबहुं विपुलं असणपाण-  
खाइमसाइमं उवक्खडावेत्ता) तो अब मुझे यही श्रेयस्कर है कि मैं कल  
प्रभात होते ही-- सूर्यके उदित होने पर धन्यमार्थवाह से पूछकर और  
उनकी आज्ञा प्राप्त कर अशन, पान, स्वाद्य और स्वाद्य इस तरह चार  
प्रकार का ओहार निष्पन्न करा कर (सुबहुं पुष्पवत्थगंधमल्लालंकारं गहाय  
बहूहि मित्त नाइ-नियग-सयण-संबंधि-परिजनमहिलाहि सद्धि संपरिवुडा-  
जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य जक्खाणि य  
इंदाणि य खंदाणि य रुदाणि य) और पुष्प, वस्त्र, गंध, माला, एवं  
अलंकार को लेकर अपने अनेक मित्र, ज्ञाति निजक, स्वजन संबन्धी

हुं छुं, केमके डुल्ले अवी जाण अएअओ करनार जाणकेभांथी मे' अके पणु जाणके  
भेणु' नहीं. (तं सेयं मम कललं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलं  
ते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता धण्णेणं सत्थवाहेणं अवभणुन्नाया समाणी  
सुबहुं विपुले असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेत्ता ) अवी स्थितिमां  
भने ओ ७ उचित लागे छे के आवती डाले सवारे सूरज उदय पामतां धन्य  
सार्थवाहुने पूछीने तेमनी आज्ञा भेणवीने अशन, पान आद्य अने स्नाद्य आ रीते  
थार जतने आहार तैयारकरावडीने (सुबहुं पुष्पवत्थगंधमल्लालंकारं  
गहाय बहूहि मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजनमहिलाहि सद्धि  
संपरिवुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य  
जक्खाणि य इंदाणि य खंदाणि य रुदाणि य वेसमणाणि य) अने पुष्प वस्त्र,  
गंध भाणा अने धरेणुंओ साथे लडने अनेक मित्र, ज्ञाति, निजक स्वजन संबन्धी

ભાગમ્ અભિભરન્તઃ=મમ્મુખં સશ્વરન્તઃ સન્તઃ 'મુદ્ગયાઈ' મુગ્ધાઃ=મનોહરાઃ  
 શિશવઃ 'થળયં' પિવંતિ, સ્તનજં=દુગ્ધં પિવન્તિ સ્તન્યપાનં કુર્વન્તીત્યર્થઃ ।  
 તતથ તે 'કોમલકમલોવમેહિ' કોમલકમલોપમાભ્યાં=સુકુમાલકમલ-  
 સદૃશાભ્યાં હસ્તાભ્યાં મૃદીરવા 'ઉચ્છંગનિવેસિયાઈ' ઉત્સન્નનિવેશિતાઃ=મઢે  
 સ્થાપિતાઃ સન્તઃ સ્તનન્ધયા માતૃભ્યઃ 'દેતિ' દદતિ, કિમિત્યાહ—'સમુ-  
 લ્લાવે' સમુલ્લાપકાન્, સંજલ્પાન્ કીદશાન્ ? इत्याह—'પિર્' મિયાન્ પ્રીતિ-  
 જનકાન્ 'સુમહુરે' સુમધુરાન્=કર્ણસુખજનકાન્ 'પુળો પુળો મંજુલપ્પમણિર્'  
 પુનઃ પુનર્મંજુલપ્પમણિતાન્=વારંવારં કોમલાક્ષરપયુક્તજલ્પિતાન્ દદતિ પ્રિયમ-  
 જ્ઞાનમાપયા માપન્તે ધન્યા इत्यર્થઃ । 'તં' તન્-કિન્તુ અહં સ્વત્ત્વં 'અધન્ના'  
 અધન્યા=અકૃતાર્યા 'અપુણ્ના' અપુણ્યા=પુણ્યહીના, 'અલક્ષણા'='અજ્ઞાના  
 =કુલક્ષણા 'અકયપુણ્ના' અકૃતપુણ્યા=ન કૃતં પૂર્વભવે પુણ્યં યયા સા પૂર્વભવાઽ

અભિસરમાણાઈ મુદ્ગયાઈ થળયં પિવંતિ) કિ જિનકી કુક્ષિસે ઉત્પન્ન સ્તન  
 કે દૂધ મેં 'લુગ્ધ, મીઠી રેતોતલી ચોલતે હુર્ ચાલક શિશુ સ્તન કે  
 મૂલ ભાગ સે કક્ષ દેશ પર્યન્ત સરક કર દૂધ પીતે હેં । (તઓ ય  
 કોમલકમલોવમેહિં હત્થેહિં ગિળ્હિઝ્ઞં ઉચ્છંગે નિવેસિયાઈ) ઓર માતા  
 ઉન્હેં અપને સુકુમાર તથા કમલ જૈસા દોનોં હાથોં સે પકડ કર ઉત્સંગ  
 મેં વેઠાતી હૈ । ઓર વે સ્તનન્ધય-ચાલક (સમુલ્લાવર્ દેંતિ) ડન અપની  
 માતાઓં કો હસ પ્રકર કે આલાપોં કો દેતે હેં (પિર્ સુમહુરે પુળોર  
 મંજુલપ્પમણિર્) જો પ્રીતિ જનક દોતે હેં, કર્ણ સુખજનકેં દોતે હેં  
 ઓર જિનમેં વારંવ કોમલ અક્ષરવાલી વાણી દોતી હૈ । (તં અહન્નં અધન્ના  
 અપુન્ના અલક્ષણા અકયપુન્ના એત્તોએગમવિ ન પત્તા) કિન્તુ મેં તો અધન્ય  
 હું, પુણ્યહીન હું-કુલક્ષણા હું અકૃત પુણ્યા હું-પૂર્વભવ મેં પુણ્યજિસને નહીં દિયા

મુદ્ગયાઈ થળયં પિવંતિ) એવું માતું છે કે જેમના ઉદરે જન્મેલું, સ્તન પાન  
 માટે ઉલ્કિત, મીઠું મીઠું અને તોતડું બોલતું બાળક સ્તનો સુધી—પડખા સુધી  
 ધસી આવીને દૂધ પીવે છે. ( તઓ ય કોમલકમલોવમેહિં હત્થેહિં  
 ગિળ્હિઝ્ઞં ઉચ્છંગે નિવેસિયાઈ) અને માતા તેને કમળ જેવા અને હાથોમાં  
 ઉચકીને બોળામાં બેસાડે છે. તે બાળકે પણ (સમુલ્લાવર્ દેંતિ) માતાઓની  
 સામે એવી રીતે કાલુ કાલુ બોલે છે કે (પિર્ સુમહુરે પુળોર મંજુલપ્પમણિર્)  
 જે અત્યંત પ્રેમ જનક હોય છે, કાનોને સુખકર હોય છે. તેની વાણી કોમલ  
 અક્ષરથી સુકત હોય છે. (તં અહન્નં અધન્ના અપુન્ના અલક્ષણા  
 અકયપુન્ના એતો એગમવિ ન પત્તા) પણ હું તો અભાગી છું, પુણ્ય હીન છું,  
 કુલક્ષણ છું, અકૃત પુણ્ય છું, જેણે પૂર્વભવ જન્મમાં પુણ્ય કર્યો જ નથી એવી



‘दायच’ दायं=दानम् अभयदानादिकं, पचदिवसादिदानं वा, ‘भायच’ भागं  
वर्द्धयामि-प्रभूतद्रव्यमर्पयिष्यामीत्यर्थः, ‘तिवहु’ इति कृत्वा=इत्युक्त्वा  
‘उवाइयं’ उपयाचितम्=भयत्प्राप्तिपार्थनारूपां मान्यतां ‘मनौती’ इति  
प्रसिद्धाम् ‘उवायइत्तर’ उपयाचतुं=कर्तुं ‘शयः’ इति पूर्वेण सम्बन्धः । एवं  
सम्प्रेक्षते, सम्प्रेक्ष्य कलये यावज्ज्वलति यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपा-  
गच्छति, उपागम्य एवमवादीत्—एवं खलु अहं देवानुप्रियाः ! युष्माभिः

अणुवहुमि) यदि मैं हे देवानुप्रियों ! अपनी कुक्षिसे पुत्र या पुत्री  
को जन्म दूंगी तो मैं आपकी सेवा करूंगी—आपके निमित्त अभय-  
दानादिकका वितरण करूंगी, अथवा पूरे दिनों में दान आदि वांटने  
की व्यवस्था करदूंगी । अपने हिस्सेमें आपके लिये विभाग अलग  
तथा आपके अक्षय कोष की वृद्धि करवादूंगी—तात्पर्य इसका यह है  
कि मेरी मनो कामना पूर्णहोने पर मैं प्रभूत द्रव्य आप सबके लिये  
अर्पित करूंगी । (त्ति क् उवायइयं उवायइत्तर) इस तरह की मुझे  
उनके पास मनौती—मानता—मनाने में मेरी भलाई है । (एवं संपेहेइ)  
इस प्रकार का उसने विचार किया । (संपेहिता) और विचार कर (कल्लं-  
जावजलंते जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) वह दूसरे दिन  
(उसी दिन) प्रातः काल होते ही सूर्य के प्रकाशित होने पर जहां  
अपने पति धन्य सार्थवाह थे वहां गई । (उवागच्छिता एवं वयासी)  
वहां जाकर उसने उनसे ऐसा कहा—(एवं खलु अहं देवानुप्रिया !

याणिहिं च अणुवहुमि) हे देवानुप्रियो ! ने भारा उदरथी पुत्र के पुत्री जन्मसे  
तो हुं आपनी पूजा करीश. आपना निमित्त अभयदान वगेरे करीश, अथवा  
तो पड़ेलाना दिवसोमां दान वगेरे वड़ेयवानी व्यवस्था करीश. भारा हिस्साभां ने  
कंध आवसे तेमांथी तभारे लाग जुद्धो भूझावडावीश. तेभज तभारा अक्षय निधिनी  
पणु हुं वृद्धि करीश. मतलण ये छे के ने भारी मनोकामना पूरी थसे तो हुं  
प्रभूत द्रव्य तभारा थरलोभां लेट इपे अर्पणु करीश. (त्तिकहुं उवायइयं उवाय  
इत्तर) आ जतनी मान्यताभां ज मने हुवे भारुं श्रेय जणुथ छे. (एवं संपेहेइ)  
आ प्रमाणे तेणे विचार कर्यो. (संपेहिता) अने विचार करीने (कल्लं जाव जलंते  
जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) भीजे दिवसे सवारे सूर्योदय  
थतां ज जथां पोताना पति धन्य सार्थवाहु हुता त्यां गछ. (उवागच्छिता  
एवं वयासी) त्यां जधने तेने आभ कछं— (एवं खलु अहं देवानुप्रिया !

યાનીમાનિ રાજગૃહસ્ય નગરસ્ય ચઢિઃ 'નાગાણિ ચ' નાગાનિચ-નાગગૃહાણો-  
ત્યર્થઃ, એવં સર્વંચ વિજ્ઞેયમ્: ભૂતાનિ ન-ભૂતગૃહાણિ, યક્ષાણિ ચ યક્ષગૃહાણિ,  
ઇન્દ્રાણિ ચ-ઇન્દ્રગૃહાણિ, સ્કન્દાનિ ચ-સ્કન્દગૃહાણિ, રુદ્રાણિ ચ-રુદ્રગૃહાણિ  
શિવાનિ ચ-શિવગૃહાણિ, વૈશ્રમણાનિ ચ-વૈશ્રવણગૃહાણિ સન્તિ, તત્ર સ્વલુ વહૂનાં  
નાગપતિમાનાંચ યાવત્ વૈશ્રવણપતિમાનાં ચ 'મહરિઠં' મહાર્ઠો  
વહુમૂલ્યાં 'પુષ્પચણિયં' પુષ્પાર્ચનિકાં=કુસુમસેવાં કૃત્વા 'જાણુપાયવઢિયાણ'  
જાણુપાદપતિતાયાઃ—પાદયોઃ પતિતા-પાદપતિતા. જાણુભ્યાં પાદપતિતા જાણુ-  
પાદપતિતા=જાણુની ભૂમી વિન્યસ્ય પ્રણતેત્યર્થઃ, તસ્યા મમ એવં વક્ષ્યમાણ-  
પ્રકારેણ ચક્તું=પાર્થયિતું શ્રેયઃ 'શ્રેયઃ' ઇતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ । તદેવ દર્શ-  
યતિ--'જઈ ણં અહં' ઇત્યાદિના, -યદિ સ્વલુ અહં દેવાણુપિયાઃ ! 'દારગં  
દારકં=નિજકુક્ષિસંજાતં પુત્રં દારિકાં વા=પુત્રીં વા 'પયાયામિ' પ્રજનયામિ  
પ્રજનયિષ્યામીત્યર્થઃ 'તો ણં' તર્હિ સ્વલુ અહં યુષ્મભ્યં 'જાયં' યાગં=સેવાં

પરિજનોં કી મહિલાઓં કે સાથ મિલકર રાજગૃહનગર કે બાહર જિતને  
भी नागघर हैं, जितने भी भूत घर हैं, जितने भी यक्ष घर हैं,  
जितने भी इन्द्र घर हैं, जितने भी स्कन्द घर हैं, जितने भी रुद्र घर  
हैं, जितने भी शिव घर हैं, जितने भी वैश्रमण घर हैं— और  
(तत्थणं वयणं नागपडिमाणं य जाय वेसमणपडिमाणं य) उनमें जितनी  
नाग देव की प्रतिमाएँ हैं यावत् वैश्रवण देव प्रतिमाएँ हैं उन सबको  
(महरिठं पुष्पचणियं करिना) बहुमूल्य पुष्पों से अर्चा करके (जाणुपाय-  
वडियाए एवं वइत्तए) उनके पैरों में दोनों छुटने झुकाकार पड़जाऊँ और  
उनसे ऐसी प्रार्थना करूँ (जइणं अहं देवाणुपिया ! दारगं वा दारिगं वा  
पयायामि तो णं अहं तुब्भं जायं च दायं च मायं च अक्खयणिहिं च

પરિજનોની મહિલાઓની સાથે રાજગૃહ નગરની બહાર જેટલાં નાગ ઘરો છે, જેટલાં  
ભૂતઘરો છે, જેટલાં યક્ષ ઘરો છે, જેટલાં રુદ્ર ઘરો છે, જેટલાં ઇન્દ્ર ઘરો છે,  
જેટલાં યક્ષ ઘરો છે, જેટલાં રુદ્ર ઘરો છે, જેટલાં શિવઘરો છે, અને જેટલાં  
વૈશ્રમણ ઘરો છે તેમજ (તત્થણં વહૂણં નાગપાડિમાણં ય જાવ વેસમણ  
પડિમાણં ય) તેઓમાં જેટલાં નાગ દેવથી માંડીને વૈશ્રમણ દેવ સુધીની પ્રતિમાઓ  
છે, તે બધી પ્રતિમાઓની (મહરિઠં પુષ્પચણિયં કરિત્તા) બહુમૂલ્ય પુષ્પોથી પૂજા કરીને  
(જાણુપાયવઢિયાણં એવં વહિત્તણં) તેમના ચરણોમાં બંને ધૂંટણુ ટેકીને પડી  
બેઠું અને તેમને વિનંતી કરું કે (જઈણં અહં દેવાણુપિયા ! દારગં વા  
દારિગં વા પાયાયામિ તો ણં અહં તુબ્ભં જાયં ચ દાયંચ માયંચ અક્ક-

‘दायच’ दायं=दानम् अभयदानादिकं, पचादिवसादिदानं वा, ‘भायंच’ भारां  
वर्द्धयामि-प्रभूतद्रव्यमर्पयिष्यामीत्यर्थः, ‘तिवहु’ इति कृत्वा=इत्युक्त्वा  
‘उवाइयं’ उपयाचितम्=अपत्यप्राप्तिपार्थनारूपां मान्यतां ‘मनौती’ इति  
प्रसिद्धाम् ‘उवायइत्तए’ उपयाचतुं=कर्तुं ‘अयः’ इति पूर्वेण सम्बन्धः । एवं  
सम्प्रेक्षते, सम्प्रेक्ष्य कल्ले यावज्जलति यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपा-  
गच्छति, उपागत्य एवमवादीत्--एवं खलु अहं देवानुप्रियाः ! युष्माभिः

अणुवहुमि) यदि मैं हे देवानुप्रियों ! अपनी कुक्षिसे पुत्र या पुत्री  
को जन्म दूंगी तो मैं आपकी सेवा करूंगी—आपके निमित्त अभय-  
दानादिकका वितरण करूंगी, अथवा पूरे दिनों में दान आदि वांटने  
की व्यवस्था करदूंगी । अपने हिस्सेमें आपके लिये विभाग अलग  
तथा आपके अक्षय कोष की वृद्धि करवादूंगी—तात्पर्य इसका यह है  
कि मेरी मनो कामना पूर्णहोने पर मैं प्रभूत द्रव्य आप सबके लिये  
अर्पित करूंगी । (त्ति क्कु उवयाइयं उवयाइत्तए) इस तरह की मुझे  
उनके पास मनौती-मानता-मनाने में मेरी भलाई है । (एवं संपेहेइ)  
इस प्रकार का उसने विचार किया । (संपेहित्ता) और विचार कर (कल्लं-  
जावजलंते जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) वह दूसरे दिन  
(उसी दिन) प्रातः काल होते ही सूर्य के प्रकाशित होने पर जहां  
अपने पति धन्य सार्थवाह थे वहां गई । (उवागच्छित्ता एवं वयासी)  
वहां जाकर उसने उनसे ऐसा कहा—(एवं खलु अहं देवाणुप्पिया !

याणिहिं च अणुवहुमि) हे देवानुप्रियो ! जे भारा उदरथी पुत्र के पुत्री जन्मथे  
तो हुं आपनी पूजा करीश. आपना निमित्ते अलयदान वगेरे करीश, अथवा  
तो पड़ेलाना द्विसोभां दान वगेरे वडेंथवानी व्यवस्था करीश. भारा हिस्साभां जे  
कंध आवथे तेमांथी तमारो लाग जुद्धो भूझावडावीश. तेमज तमारो अक्षय निधिनी  
पणु हुं वृद्धि करीश. मतलब ओ छे के जे भारी मनोकाभना पूरी थथे तो हुं  
प्रभूत द्रव्य तमारो चरखोभां लेट इपे अर्पणु करीश. (त्तिकहु उवयाइयं उवया  
इत्तए) आ जतनी मान्यताभां जे भने हुवे भारुं श्रेय जणुय छे. (एवं संपेहेइ)  
आ प्रमाणे तेले विचार क्यो. (संपेहित्ता) अने विचार करीने (कल्लं जाव जलंते  
जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) भीजे द्विसे सवारो सूर्योदय  
थतां जे जथां पोताना पति धन्य सार्थवाहु हुता त्यां गछ. (उवागच्छित्ता  
एवं वयासी) त्यां जछने तेने आभ कहुं— (एवं खलु अहं देवाणुप्पिया !



સાદ્ વહ્નિ વર્ષાણિ યાવદ્ દદતિ સમુલ્લાપકાન્ સુમધુરાન્ પુનઃપુનર્મઞ્જુલ-  
પ્રમણિતાન્ તત્ સ્વલુ અહમધન્યા, અપુણ્યા, અકૃતલક્ષણા, इत एकमपि न  
प्राप्ता, तद् इच्छामि स्वलु देवानुप्रिय ! युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती विपुल-  
म-  
शनं ४ यावद् अनुवर्द्धयामि, (त्तिः) इतिकृत्वा=इत्युक्त्वा उपयाचितं  
तुम्हेहि सद्धिं वह्निं वासा जाव देति समुल्लावए सुमहुरे) हे देवानु-  
प्रिय ! आपके साथ बहुत वर्षों से मैं मनुष्य भवसंवन्धी काम भाग  
भोग रही हूं परन्तु अभी तक मेरे यहां न कोई लडका हुआ है और  
न कोई लडकी वे माताएँ धन्य हैं जो संतान से युक्त हैं एवं उनकी  
तोतली मधुर बोली से नो अपने को प्रसन्न रखती हैं—इत्यादि कह  
कर फिर उसने कहा (अहं अहन्नाअपुण्णा अलवखणा एत्तो एगमवि न पत्ता)  
मैं अधन्या हूं अपुण्णा हूं पूर्व में मैंने कोई भी ऐसा पुण्य नहीं किया  
है, जिससे मेरे यहां तो लडका लडकी मेंसे कोईभी नहीं है—  
(तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुम्हेहि अब्भणुन्नाय समाना विपुलं  
असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि त्तिः) उवयाइयं करेत्ताए) इसलिए हे देवानु-  
प्रिय ! मैं आपसे आज्ञापित होकर यह चाहती हूं। की चारों प्रकार  
का आहार विपुल मात्रा में तैयार कराकर तथा गंध पुष्पादिलेकर  
अनेक मात्रादिक महिलाओं के साथ यहां के जितने भी इन्द्रादिकों के  
घर हैं उन सब की पुष्पार्चाकर उन के चरणों में पडकर संतान होने  
की मनौती (मानता) मनाऊँ—। इस इच्छा के पूर्ण होने पर फिर मैं  
तुम्हेहि सद्धिं वह्निं वासाइं जाव देति समुल्लावए सुमहुरे)  
हे देवानुप्रिय ! तमारी साथे णहु लांणा वण्तथी हुं मनुष्यलवना कामलोगो  
लोगवी रही छुं. पणु डल्लु भारे पुत्र के पुत्री भांथी कंछ थयुं नथी. आ संसारमां  
संतानवाणी माताओ ४ लाज्यथाणी गणाय छे. के जेमनां नानां नानां आणके  
तोतडी मधुर वाणी द्वारा तेमने पुथ राजे छे. (अहं अहन्ना अपुण्णा  
अलवखणा एत्तो एगमवि न पत्ता) हुं तो अलागी छुं, पापिणी छुं, पूर्वलवमां  
में संतान थाय आहुं कंछ पुण्य कार्य क्युं नथी. (तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया !  
तुम्हेहि अब्भणुन्नाया समाना विपुलं असणं जाव अणुवड्ढेमि त्तिः) कहु  
उवयाइयं करेत्ताए) हुं तमारी आज्ञाथी पुष्कल प्रमाणमां थारे जतना आहार  
जनावजवीने तेमज गंध पुष्प वगेरे लधने अनेक भड्डिलाओनी साथे अडिंयां  
जेटलां छन्द्र वगेरे देवोना धरे छे ते जधांनी पुष्प वगेरेथी पूज करी तेमना  
थरओमां पडीने संतानवती थवानी मानता राधुं. न्यारे भारी आ मनोकामना

कर्तुं श्रेयः । ततः खलु धन्यः सार्थवाहो भद्रां भार्यामेवेमवादात्-ममापि च खलु हे देवानुप्रिये ! एष एव मनोरथः' यथा—'कहं णं' कथं खलु केनोपायेन त्वं दारकं वा दारिकां च प्रजनयिष्यसि ? इति कथयित्वा सार्थवाह्यः 'एयं' एतम्=मनोरथरूपम् अर्थम् 'अणुजाणइ' अनुजानाति=अनुमोदयति । ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही धन्येन सार्थवाहेन अभ्यनुज्ञाता सती 'हट्टतुट्ठा जाव हियया' हट्ट तुष्ट याचत—हट्ट तुष्ट चिन्तानन्दिता हर्षवशविसर्प-दहदया विपुलमशनपानखाद्यस्वाद्यमुपस्कारयति, उपस्कार्य सुबहुं

अभयदानादिक का वितरण करूं इत्यादि । इस तरह उपयुक्त सब अपनी भावना उस भद्रा भार्याने धन्य सार्थवाह से निवेदित की । (तए णं धन्ने सत्थवाहे भदं भारियं एवं वयासी) इस प्रकार धन्य सार्थवाह ने अपनी भद्राभार्या की भावना सुनकर उससे ऐसा कहा—(ममपि णं खलु देवाणुप्पिया ! एस चेव मणोरहे) हे देवानुप्रिये मेरा भी ही मनोरथ है कि (कहं णं तुमं दारगं दारियं वा पयाएज्जसि) तुम किस उपाय से दारक या दारिका को जन्म दोगी ! इस प्रकारकहकर (भदाए सत्थवाहीए एयमट्टमणुजाणइ) धन्य सार्थवाहने उस भद्रा सार्थवाही के इस मनोरथरूप अर्थ को स्वीकार कर लिया उसकी अनुमोदना की । (तए णं सा भद्रा सत्थवाही धन्नेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी हट्टतुट्ठा जाव) इसके बाद भद्रा सार्थवाहीने अपने पति धन्य सार्थवाह से आज्ञा प्राप्त कर बहुत अधिक हर्षित एवं सन्तुष्ट चित्त होते हुए (विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ) विपुलमात्रा में अशन पान खादिम और

सङ्ग थधं जय त्तारे दुं अलथदान वगेरे वडेयुं आ प्रभाणु लद्रा लार्थोअे तेना पति धन्यसार्थवाहुने विनंती डरी. (तए णं धन्ने सत्थवाहे भदं भारियं एवं वयासी) आ प्रभाणु धन्य सार्थवाहे तेमनी लद्रा लार्थोनी वात सांलणीने तेने आ प्रभाणु डह्युः— ममपि खलु देवाणुप्पिया ! एसचेव मणोरहे) हे देवानुप्रिये ! भारी पणु धंअ्छा अेवी न. छे डे (कहं णं तुमं दारगं दारियं वा पयाएज्जसि) डेवी रीते तमे पुत्र डे पुत्रीने जन्म आपी थडे ? आ रीते डडीने (भदाए सत्थवाहीए एयमट्टमणुजाणइ) धन्यसार्थवाहे तेमनी लद्रा लार्थोनी वात स्वीडारी अने तेने अनुमति आपी. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही धन्नेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी हट्ट तुट्ट जाव) त्तारणाड लद्रासार्थवाडीअे तेमना पति सार्थवाहुनी आज्ञा भेजवीने अत्यंत प्रसन्नता : अनुलवीने अने सन्तुष्ट थधने तेणु (विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ) पुङ्कण प्रभाणुमां अशन, पान, आदिम स्वादिम आहार तैयार डरावडाव्ये।

પુષ્પગન્ધવાત્પાલ્યાલંકારં યુક્તાતિ, યુક્તેત્વા સ્વભાદ્ યુક્તાન્નિર્મચ્છતિ.  
 નિર્મત્ય રાજગૃહં નગરં મધ્યમધ્યેન નિર્મચ્છતિ, નિર્મત્ય યથૈવ પુષ્કરિણી  
 તથૈવોપાગચ્છતિ, ઉપગત્ય પુષ્કરિણ્યાસ્તીરે સુવહું પુષ્પગન્ધવત્પાલ્યાલંકારં  
 સ્થાપયતિ, સ્થાપયિત્વા પુષ્કરિણીમવગાહતે, અવગાઘ જલમજ્જનં કરોતિ,  
 કૃત્વા જલક્રીડાં કરોતિ, કૃત્વા સ્નાતા કૃતચલિકર્મા 'ઉલ્લપડસાડિગા'  
 આર્દ્રપટશાટિકા=જલાવગાહનેન આર્દ્રે પટશાટિકે=ઉત્તરીયપરિધાનવસ્ત્રે યસ્યાઃ  
 સા તથ, તાદૃશી સા યાનિ તત્ર 'ઉપ્પલાઈ' ઉત્પલાનિ=કમલાનિ 'જાવ સહ-  
 સ્સપત્તાઈ' યાવન્સહસ્રપત્રાણિ=સહસ્રદલકલિતાનિ મહાપત્રાણિ સન્તિ તાનિ

સ્વાદિમ આહાર તૈયાર કરાયા-(ઉવલ્લહાવિત્તા સુવહું 'પુષ્પગંધવત્પાલ્યા-  
 લંકારં ગેળહૃ) થાદ મેં પુષ્પ ગંધ વત્પ માલ્યા અલંકાર કો લિયા ઓર (ગેળિહૃત્તા)  
 લેકર (સયાઓ ગિહાઓ) અપને વર સે (નિગચ્છહ) વહ (નિકલી-નિગ્ગ-  
 ચ્છિત્તા રાયગિહં નગરં મજ્જં મજ્જણં ણિગચ્છહ) નિકલ કર રાજગૃહ  
 નગર કે ઠીક વીચોવોચ માર્ગ સે હો કર વહ ચલી (નિગચ્છિત્તા જેણેવ  
 પોવલ્લરણીતેણેવ-ઉવાગચ્છહ) ચલતેર વહ વહાં પહુંધી જહાં પુષ્કરિણી થી.  
 (ઉવાગચ્છિત્તા પુષ્કલરિણીતીરેસુવહું પુષ્પજાવમલ્લાલંકારં ઠવેહ) પહુંચતે હી  
 उसने उस पुष्करिणी के तीर पर वह चारों प्रकार के आहार की सामग्री  
 तथा पुष्प आदि सब वस्तुएँ रख दी (ठवित्ता पुष्कलरिणि ओगाहइ) रख  
 कर फिर उसने उस में अवगाहन किया (ओगाहित्ता जलमज्जणं करेइ)  
 अवगाहन कर स्नान किया (जलक्रीड करेइ) जल क्रीडा को (करित्ता ण्हाया  
 कयवलिकम्मा उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं-

(ઉવલ્લહાવિત્તા સુવહું પુષ્પગંધવત્પાલ્યાલંકારં ગેળહૃ) ત્યારપછી પુષ્પ,  
 વસ્ત્ર, માળા અને અલંકારોને લીધા અને (ગેળિહૃત્તા) લઈને (સયાઓ ગિહાઓ)  
 પોતાના ઘેરથી (નિગચ્છહ) તે બહાર નીકળી (નિગચ્છિત્તા રાયગિહં નગરં મજ્જં  
 મજ્જણં ણિગચ્છહ) નીકળીને રાજગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચે વચ્ચે રહેતી તે ચાલી  
 (નિગચ્છિત્તા જેણેવ પોવલ્લરણી તેણેવ ઉવાગચ્છહ) ચાલતાં ચાલતાં ત્યાં પુષ્ક-  
 રિણી હતી ત્યાં પહોંચી. (ઉવાગચ્છિત્તા પુષ્કલરિણીતીરેસુવહું પુષ્પ જાવ  
 મલ્લાલંકાર ઠવેહ) ત્યાં પહોંચીને તેણે પુષ્કરિણીના કાંઠે ચારે બાજુના આહારની  
 સામગ્રી વગેરે બધી વસ્તુઓ મૂકી દીધી. (ઠવિત્તા પુષ્કલરિણિ ઓગાહइ) મૂકીને તે  
 પુષ્કરિણીમાં ઉતરી (ઓગાહિત્તા જલમજ્જણં કરેइ) ત્યાં ઉતરીને તેણે સ્નાન કર્યું  
 (જલક્રીડ કરેइ) જળક્રીડા કરી (કરિત્તા ણ્હાયા કયવલિકમ્મા ઉલ્લપડસાડિગા-  
 જાઈં તત્થ ઉપ્પલાઈં જાવ સહસ્સપત્તાઈં તાઈં ગિળહૃ) ત્યાર પછી ત્યારે તેણે



गृह्णन्ति, गृहीत्वा पुष्पाणि पातः प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य तं सुवहं पुष्पगन्ध-  
वस्त्रमालयालङ्कारं गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव नागगृहं च यावद् वैश्रमण्य-  
गृहं च तद्यैवोपागच्छति, उपागत्य तत्र खलु नागप्रतिमानां च यावद्  
वैश्रमण्यप्रतिमानां च. 'आलोए' आलोके=दृष्टिपथमागते सति प्रणामं  
करोति, कृत्वा 'ईसि पच्चुन्नमइ' ईपत्प्रत्युन्नमति=स्तोकं प्रणमति, प्रत्युन्नम्य  
'लोमहत्थगं' लोमहस्तकं=मयूरपिच्छममार्जनकं 'परामुसइ' परामुसति=गृह्णाति

गिण्डइ) बाद में जब वह अच्छी तरह स्नान कर चुकी और काकादि  
पक्षी को अन्नादि को दिया तब गीली पटशाटिका पहिने हुए ही उसने  
वहाँ जितने कमल थे यावत् सहस्रपत्र युक्त महाकमल थे उन सबको उस  
पुष्पकरिणी से लिया और (गिह्तिता पुष्करिणीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुह्तिता  
तं सुवहं पुष्प गंधवत्थमल्लालंकारं गेण्डइ, गिण्ड १ जेणामेवनागघरण  
य जाव वेसमणघरण्य तेणेव उवागच्छइ) लेकर वह उस पुष्करिणी से  
बाहर निकली-निकल कर उसने समस्त उन पुष्प, गंध वस्त्र, माला,  
अलंकार आदि को लिया-और लेकर जहाँ नागधर यावत् वैश्रमण का घर  
था वहाँ गई (उवागच्छिता तत्थणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य  
आलोए पणामं करेइ वहाँ पहुँच कर उसने वहाँ नाग प्रतिमाओं को यावत्  
वैश्रमण्य प्रतिमाओं को दृष्टिपथ होते ही प्रणाम किया। (करिता ईसि पच्चु-  
न्नमइ) प्रणाम कर फिर वह कुछ सुकी-(पच्चुन्नमिता लोमहत्थग परामुसइ-  
परामुसिता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थणं पम-

सारी रीतें स्नान करी लीधुं' अने डागडा वगेरे पक्षीओने अन्न वगेरेने। लाग  
आप्यो त्थारणाइ बीनी साडी पहेरीने न तेणे त्यां जेटलां कमणो, सडस पत्रवाणा  
भडा कमणो हुतां ते अधांने पुष्करिणीभांथी लध लीधां अने (गिह्तिता पुष्करि-  
णीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुह्तिता तं सुवहं पुष्पगंधवत्थमल्लालंकारं गेण्डइ-  
गिह्तिता जेणामेव नागघरण य जाव वेसमणघरण्य तेणेव उवागच्छइ)  
लधने ते पुष्करिणीनी अडार नीकणी-नीकणीने तेणे अधां पुष्प वस्त्र, गंध, भाणा  
अलंकार वगेरे लीधां अने लधने न्यां नागधर वैश्रमण्य घर वगेरे हुतां त्यां गध-  
(उवागच्छिता तत्थणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य आलोए पणामं  
करेइ) त्यां पडोन्थीने तेणे नाग अने वैश्रमण्य वगेरेनी प्रतिमाओने जेतां न प्रणाम करी।  
(करिता ईसि पच्चुन्नमइ) प्रणाम करीने ते नीन्थी नभी (पच्चुन्नमिता लोम  
हत्थगं परामुसइ परामुसिता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य

પુષ્પગન્ધવસ્ત્રમાલ્યલઢકારં યુક્ત્વા, યુક્ત્વા સ્વઘાત્ યુક્તિર્નિર્ગચ્છતિ.  
 નિર્મલ્ય રાજગૃહં નગરં મધ્યમધ્યેન નિર્ગચ્છતિ, નિર્મલ્ય યથૈવ પુષ્કરિણી  
 તથૈવોપાગચ્છતિ, ઉપગત્ય પુષ્કરિણ્યાંસ્તીરે સુવહું પુષ્પગન્ધવસ્ત્રમાલ્યલઢકારં  
 સ્થાપયતિ, સ્થાપયિત્વા પુષ્કરિણીમવગાહતે, અગાધ જલમજ્જનં કરોતિ,  
 કૃત્વા જલક્રીડાં કરોતિ, કૃત્વા સ્નાતા કૃતચલિકર્મ્મા 'ઉલ્લપડસાડિયા'  
 આર્દ્રપટશાટિકા=જલાવગાહનેન આર્દ્રે પટશાટિકે=ઉત્તરીયપરિધાનવસ્ત્રે યસ્યાઃ  
 સા તથ, તાદૃશી સા યાનિ તન્ન 'ઉપ્પલાહં' ઉત્પલાનિ=કમલાનિ 'જાવ સ-  
 હસ્સપત્તાહં' યાવન્સહસ્રપત્રાણિ=સહસ્રદલકલિતાનિ મહાપત્રાણિ સન્તિ તાનિ

સ્વાદિમ આઠાર તૈયાર કરાયા—(ઉવવલ્લહાવિત્તા સુવહું 'પુ'ફગંધવત્થમલ્લા-  
 લકારં ગેહ્હ) ચાદ મેં પુષ્પ ગંધ વસ્ત્ર માલ્યા અલંકાર કો લિયા ઓર (ગેહ્હિત્તા)  
 લેકર (સયાઓ ગિહાઓ) અપને ઘર સે (નિગચ્છહ) વહ (નિકલી-નિગ્ગ-  
 ચ્છિત્તા રાયગિહં નયરં મઝ્ઝં મઝ્ઝં ણિગચ્છહ) નિકલ કર રાજગૃહ  
 નગર કે ઠીક વીચોવોચ માર્ગ સે હો કર વહ ચલી (નિગ્ગચ્છિત્તા જેણેવ  
 પોવસ્થરણીતેણેવ—ઉવાગચ્છહ) ચલતેર વહ વહાં પહુંચી જહાં પુષ્કરિણી થી।  
 (ઉવાગચ્છિત્તા પુષ્કરિણીતીરે સુવહું પુષ્પજાવમલ્લાલંકારં ઠવેહ) પહુંચતે હો  
 उसने उस पुष्करिणी के तीर पर वह चारों प्रकार के आहार की सामग्री  
 तथा पुष्प आदि सब वस्तुएँ रख दी (ठवित्ता पुष्करिणि ओगाहह) रख  
 कर फिर उसने उस में अवगाहन किया (ओगाहित्ता जलमज्जनं करेह)  
 अवगाहन कर स्नान किया (जलक्रीड करेह) जल क्रीडा की (करित्ता ण्हाया  
 कयचलिकम्मा उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाहं जाव सहस्सपत्ताहं ताइं-

(ઉવવલ્લહાવિત્તા સુવહું પુષ્પગંધવત્થમલ્લાલંકારં ગેહ્હ) ત્યારપછી પુષ્પ,  
 વસ્ત્ર, માળા અને અલંકારોને લીધા અને (ગેહ્હિત્તા) લઈને (સયાઓ ગિહાઓ)  
 પોતાના ઘેરથી (નિગચ્છહ) તે બહાર નીકળી (નિગ્ગચ્છિત્તા રાયગિહં નગરં મઝ્ઝં  
 મઝ્ઝેણં ણિગચ્છહ) નીકળીને રાજગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચે વચ્ચે રસ્તેથી તે ચાલી  
 (નિગ્ગચ્છિત્તા જેણેવ પોવસ્થરણી તેણેવ ઉવાગચ્છહ) ચાલતાં ચાલતાં ત્યાં પુષ્ક-  
 રિણી હુતી ત્યાં પહોંચી. (ઉવાગચ્છિત્તા પુષ્કરિણીતીરે સુવહું પુષ્પ જાવ  
 મલ્લાલંકાર ઠવેહ) ત્યાં પહોંચીને તેણે પુષ્કરિણીના કાંઠે ચારે બતના આહારની  
 સામગ્રી વગેરે બધી વસ્તુઓ મૂકી દીધી. (ઠવિત્તા પુષ્કરિણિ ઓગાહહ) મૂકીને તે  
 પુષ્કરિણીમાં ઉતરી (ઓગાહિત્તા જલમજ્જનં કરેહ) ત્યાં ઉતરીને તેણે સ્નાન કર્યું  
 (જલક્રીડ કરેહ) જલક્રીડા કરી (કરિત્તા ણ્હાયા કયચલિકમ્મા ઉલ્લપડસાડિગા-  
 જાઈં તત્થ ઉપ્પલાહં જાવ સહસ્સપત્તાહં તાઈં ગિહ્હ) ત્યાર પછી ત્યારે તેણે

धूपं दहति, दग्धा जानुपादपतिता 'पञ्जलिउडा' प्राञ्जलिपुंटा=संयोजित-  
काद्वया एवमादीत—'यदि खलु अहं दारकं वा दारिकां वा 'पयायामि=  
प्रजनयामि=प्रजनयिष्यामि तदा खलु अहं यागं च यावत् अनुवर्द्धयामि  
=संवर्द्धयिष्यामि ! 'तिरुट्टु' इति कृत्वा=इत्युक्त्वा उपवाचितं करोति.  
कृत्वा यत्रैव पुष्करिणी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त्रिपुलमशने पानं स्वाद्यं  
स्वाद्यमास्वादयन्ती यावद् विहरति। तदनन्तरं सा 'जिमिया' जिमिता=  
भुक्ता यावद् 'सुईभूया' शुवीभूता=प्रक्षालितहस्तमुखा सती यत्रैव स्वकं

चंदनादि गंध द्रव्यों को रखा अथवा उनके ऊपर चंदनादि तेल को छिड़का  
अगरतगर आदि सुगंधिद्रव्यों का उन्हें समर्पण किया विलेपनद्रव्य उन पर  
लगाया। (करित्ता जाव धूवं डहइ डहित्ता जाणुपायपडिया पंजलिउडा एवं  
वयासी) इन सब वस्तुओं का समर्पण करने के बाद फिर उसने वहां धूप  
को जला कर फिर वह उनके समक्ष दोनों घुटने टेक कर नीचे जमीन  
पर झुक गई और दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार प्रार्थना करने लगी  
(जइणं अहं दारगं वा दारिगं वा पायायामि तो णं अहं जायं च जाव अणुवड्ढेमि  
तिरुट्टु उवाइयं करेइ) यदि मैं पुत्र अथवा पुत्री को जन्म दूंगी तो  
आपकी सेवा पूजा करूंगी यावत् आपके कोष की वृद्धि करूंगी—इस  
प्रकार उसने प्रार्थना रूपमें मनौती मानता मनाई (करित्ता जेणेव पोक्खरिणी  
तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता त्रिउलं असणं ४ आसाएमाणी जाव विहरइ)  
मनौती मना कर फिर वह उस पुष्करिणी पर आई आकर वहां उसने  
उस त्रिपुल खाने पीने की सामग्री का आहार किया (जिमिया जाव सुई-  
भूया जेणेव सएगिहे तेणेव उवागया) आहार कर के फिर उसने हाथ

धुई. अगरतगर वगेरे सुगंधित द्रव्यों अर्पण कर्था. अने सुगंधित लेपाने लेप कर्था.  
(करित्ता जाव धूवंडहइ डहित्ता जाणुपायपडिया पंजलिउडा एवं वयासी)  
आ जधी वस्तुओनुं समर्पण करीने तेणु धूपसणी सणगावी अने सणगावीने ते तेमनी  
सामे जने धूटणु। टेडीने नीचे पृथ्वी उपर नमी अने जने हाथ जेडीने आ प्रमाणे  
प्रार्थना करवा लागी (जइणं अहं दारगं वा दारिगं वा पायायामि तोणं अहं जायं  
च जाव अणुवड्ढेमि तिरुट्टु उवाइयं करेइ) जे हुं पुत्र के पुत्रीने जन्म आपीश  
तो आपनी सेवा-पूजा करीश अने आपना निधिनी अलिवृद्धि करीश. आ रीते तेणु  
प्रार्थना करतां मानता राणी. करित्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ उवा-  
गच्छित्ता त्रिउलं असणं ४ आसाएमाणी जाव विहरइ) मानता मानीनीने ते  
पुष्करिणीना कांठे आवी अने जथां तेणु पूण ज सारी पेठे लोजन कथु. (जिमिया  
जाव सुईभूया जेणेव सए गिहे तेणेव उवागया) आहार वगेरे करीने तेणु हाथ



परामृश्य नागप्रतिमाथ यावद् वैश्रमणप्रतिमाथ लाभहस्तकेन प्रमार्जयति  
 रजोऽपनयति, प्रमार्ज्य उदगधाराया 'अब्भुक्खेइ' अभ्युक्षति=अभिषिञ्चति,  
 अभ्युक्ष्य 'पम्हलसुकुमालाए' पक्ष्मलसुकुमारया=पक्ष्मवती सुकुमारा तथा  
 'गंधकासाइयाए' गन्धकापायिकया= गन्धप्रधानकपायरागेण रक्ता शाटिका=  
 लघुवस्त्रं तथा 'गायाइ' गात्राणि 'लूहेइ' रक्षयति पोच्छति, रूक्षयित्वा  
 'महरिहं महार्हं=बहुमूल्यं 'वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च वस्त्रसमर्पणम्, एं।  
 'मल्लारुहणं' माल्यारोहणं च=पुष्पसमर्पणं, गंधारुहणं' गंधारोहणं च=चन्दना-  
 दिगन्धसमर्पणं, 'चुन्नारुहणं' चूर्णारोहणं च=अगरतगरादिगन्धद्रव्यचूर्ण-  
 समर्पणं, 'वन्नारुहणं' वर्णारोहणं च=विलेपनद्रव्यसमर्पणं च करोति यावद्

जई) झुक कर वहां रखी हुई उसने मयूर पिच्छ की प्रमार्जनी को उठाया-  
 उठा कह नागप्रतिमाओं का यावत् वैश्रमण प्रतिमाओं का उस प्रमार्जनी से  
 प्रमार्जन किया। (पमल्लित्ता उदगधाराए अब्भुक्खेइ) प्रमार्जन कर फिर  
 उसने उनके ऊपर पानी की धारा छोड़ी-(अब्भुक्खित्ता पम्हलसुकुमालाए  
 गंधकासाइयाए) पानी की धारा से सिञ्चित कर के फिर उसने उनका  
 पक्ष्मल, सुकुमार गंध कपाय से रंगी हुई वस्त्र से (गायाइ लूहेइ) उनके  
 शरीर को पोंछा (लूहिच्चा) पोंछ कर (महरियं वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च  
 गंधारुहणं च चुन्नारुहणं च वन्नारुहणं च करेइ) फिर उसने उन पर वस्त्र  
 का आरोपण किया- माल्य का आरोपण किया, गंध द्रव्य का आरोपण  
 किया चूर्ण का आरोपण किया, विलेपन द्रव्य का आरोपण किया अर्थात्  
 जब वह उनके शरीर को पोंछ चुकी तब बाद में उसने उनको वेश-  
 कीमती-बहुमूल्य वस्त्र पहिराये-उन्हें बहुमूल्य मालाए पहिराई, उनके समक्ष

लोमहत्थएणं पमज्जइ) नभीने तेणे त्या भूकेली भोरना पीछांनी प्रमार्जनी उपाडी  
 उपाडीने नाग वैश्रवणु वगेरेनी प्रतिमाओन्नं प्रमार्जनीथी प्रमार्जनं कथुं. (पम-  
 ल्लित्ता उदगधाराए अब्भुक्खेइ) प्रमार्जनं कथां याद तेणे ते प्रतिमाओ उपर  
 न्णधारा वडे सिञ्चनं कथुं (अब्भुक्खित्ता पम्हलसुकुमालाए गंध कासाइयाए)  
 न्णधाराथी अब्भिषिक्त करीने तेणे ते प्रतिमाओने पक्ष्मल, सुकुमार, गंध, कपायथी  
 रंगाओला वस्त्रथी (गायाइ लूहेइ) तेमना शरीरने वूछथुं. (लूहिच्चा) वूछीने  
 (महरियं वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च गंधारुहणं च चुन्नारुहणं च वन्नारुहणं  
 च करेइ) त्थार पछी तेणे प्रतिमाओ उपर वस्त्रो चढाव्यां, भाणाओ पडेरवी, गंध-  
 द्रव्यो चढाव्यां, चूर्णं चढाव्युं, सुगंधित लेप चढाव्यो ओटवे के न्थारे तेणे प्रतिमाओने  
 वस्त्रथी वूछी वीछी त्थार पछी तेणे ते प्रतिमाओने णहु किमती वस्त्रो पडेरव्यां,  
 णहु भूत्य भाणाओ पडेरवी तेमनी साओ चंदन वगेरेना सुगंधित तेलंत्तुं सिञ्चन

गच्छिता पोक्खरिणीं ओगाहंति, ओगाहिता ण्हायाओ कयवल्लिक्-  
 म्माओ सव्वालंकारविभूसियाओ विपुलं असणं ४ आसाएमाणीओ  
 जाव परिभुंजेमणीओ दोहलं विणेइ । एवं संपेहेइ संपहिता कल्लं  
 जाव जलंते जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता  
 धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-एवं खल्ल देवाणुप्पिया ! मम तस्स  
 गव्वमस्स जाव विणेइ तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुव्वमेहिं अव्व-  
 णुन्नायासमाणी जाव विहरित्तए, अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिवधं  
 करेह, तएणं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं अव्वणुन्नाया  
 समाणी हट्टुट्टा जाव विपुलं असणं ४ जाव ण्हाया जाव उल्लपड  
 साडिया जेणेव नागघरण जाव धूवं डहइ, डहिता पणामं करेइ  
 पणामं करित्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ । तएणं ताओ  
 मित्तनाइ जाव नगरमहिलाओ भदं सत्थवाहिं सव्वालंकारविभूसियं  
 करेति, तएणं सा भद्दा सत्थवाही ताहिं मित्तनाइ नियगसयणसं-  
 वंधिपरिजणणगरमहिलाहिं सद्धिं तं विपुलं असणं ४ जाव परिभुंज-  
 माणी य दोहलं विणेइ विणेइत्ता जामेव दिसिं पाउव्वभूया तामेव दिसिं  
 पडिगयां । तएणं सा भद्दा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव तं गव्वं  
 सुहं सुहेणं परिवहइ, तएणं सा भद्दा सत्थवाही णवण्हं मासाणं  
 बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्टुमाण राइंदियाणं सुकुमालपाणिपायं जाव दारगं  
 पयाया, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जाय-  
 कम्मं करेति करित्ता तहेव जाव विपुलं असणं ४ उवक्खडावेति  
 उवक्खडावित्तां तहेव मित्तनाइ निजकसयणसंवंधिपरिजणे भोयावेइ

गृह तत्रोपागता । अदुत्तरं=तदनन्तरं 'दशा शब्दाऽयम्, गृहपन्नानन्तरं च खलु सा भद्रा सार्थवाही 'चाउदसद्विष्टपुन्नमासिणीषु' चतुर्दशपट्युद्विष्टपूर्णमासीषु 'उद्विष्ट' उद्विष्ट'-इत्यमावास्या, चतुर्दश्यादिदिवसेषु विपुलमशन-पानस्वाद्यस्वाद्यमुपस्करोति, उपस्कृत्य वपुन् नागांश्च यावद् वैश्रवणांश्च 'उवायमाणी' उपवाचमाना यावद् एवं च खलु 'विहरइ' विहरति=तिष्ठति. । म० ५ ॥

मूलम्--तएण सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं केणइ कालंतरेणं आवन्नसत्ता जाया यावि होत्था, तएणं तीसे भद्राए सत्थवाहीए दोसु मासेसु वीइकंतेसु तइए मासे वट्टमाणे इमेयारूवे दोहले पाउवभूए धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं विउलं असणं ४ सुवहुयं पुक्कवत्थगधमल्लाकारं गहाय मित्तनाइनियगसयणसंवधिपरियणमहिला हि य सद्धिं संपरिवुडाओ रावगिहस्स नयरस्स मज्झ मज्झेणं निगंच्छंति, निगच्छित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति, उवा-

वगैरह का प्रक्षालन किया इस प्रकार शुचीभूत होकर फिर वह वहां से जहां अपना घर था वहां आ गई । (अदुत्तरं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्विष्टपुणमासिणीषु' विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडित्ता वहवे नागा य जाव वेसमणा य उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ इसके बाद वह भद्रा-सार्थवाही चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या और पूर्णमासी के दिनों में विपुल चारों प्रकार के आहार बनाती और बनाकर उन अनेक नाग यावत् वैश्रवण की पूजा सेवाकरती हुई उनसे मनौती मनाती रहती । ॥सूत्र ५॥

मां धियां आ प्रभाणु शुद्ध यधने ते त्यांथी पोताने घेर आवी. (अदुत्तरं च णं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्विष्टपुणमासिणीषु विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडित्ता वहवे नागाय जाव वेसमणाय उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ) त्थारणाइ भद्रा सार्थवाही चोदश, आठम, अमास अने पूनमना दिवसोमां पुण्डण प्रभाणुमां चोरे जतना आहार जनावडवती अते जनावडवीने नाग अने वैश्रवण वगेरे जथा देवोनी पूजा करती अने मानता राखती हुती. ॥ सूत्र. ५ ॥



गच्छिता पोक्खरिणीं ओगाहन्ति, ओगाहिता पहायाओ कयवलिक-  
 म्माओ सव्वालंकारविभूसियाओ विपुलं असणं ४ आसाएमाणीओ  
 जाव परिभुंजेमणीओ दोहलं विणेइ । एवं संपेहेइ संपहिता कल्लं  
 जाव जलंते जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता  
 धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम तस्स  
 गव्वमस्स जाव विणेइ तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुव्वमेहिं अव्व-  
 णुन्नायासमाणी जाव विहरित्तए, अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिवधं  
 करेह, तएणं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं अव्वणुन्नाया  
 समाणी हट्ठुट्ठा जाव विपुलं असणं ४ जाव पहाया जाव उल्लपड  
 साडिया जेणेव नागघरण जाव धूवं डहइ, डहित्ता पणामं करेइ  
 पणामं करित्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ । तएणं ताओ  
 मित्तनाइ जाव नगरमहिलाओ भद्वं सत्थवाहिं सव्वालंकारविभूसियं  
 करेति, तएणं सा भद्दा सत्थवाही ताहिं मित्तनाइ नियगसयणसं-  
 वंधिपरिजणणगरमहिलाहिं सद्धिं तं विपुलं असणं ४ जाव परिभुंज-  
 माणी य दोहलं विणेइ विणेइत्ता जामेव दिसिं पाउव्वभूया तामेव दिसिं  
 पडिगया । तएणं सा भद्दा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव तं गव्वं  
 सुहं सुहेणं परिवहइ, तएणं सा भद्दा सत्थवाही णवण्हं मासाणं  
 बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठुमाण राइंदियाणं सुकुमालपाणिपायं जाव दारगं  
 पयाया, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जाय-  
 कम्मं करेति करित्ता तहेव जाव विपुलं असणं ४ उवक्खडावेति  
 उवक्खडावेति तस्स तस्स निजकसयणसंवंधिपरिजणे भोयावेइ

गृह तत्रोवापागता । अदुत्तरं=तदनन्तरं 'दशा शब्दाऽयम्, गृहगमनानन्तरं च खलु सा भद्रा सार्थवाही 'चाउदसद्वमुदिष्टपुन्नमासिणीसु' चतुर्दशपट्म्युदिष्टपूर्णामासीषु 'उदिष्ट' उदिष्ट'-इत्यमावास्या, चतुर्दश्यादिदिवसेषु विपुलमशन-पानस्वाद्यस्वाद्यमुपस्करोति, उपस्कृत्य च नृनामांश्च यावद् वैश्रवणांश्च 'उवायमाणी' उपवाचमाना यावद् एवं च खलु 'विहरइ' विहरति=तिष्ठति. ।म० ५ ॥

मूलम्--तएण सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं केणइ कालंतरेणं आवन्नसत्ता जाया यावि होत्था, तएणं तीमे भद्राए सत्थवाहीए दोसु मासेसु वीइक्कंतेसु तइए मासे वट्टमाणे इमेयारूवे दोहले पाउब्भूए धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं विउलं असणं ४ सुवहुयं पुप्फवत्थगधमल्लाकारं गहाय मित्तनाइनिधगसयणसंवंधिपरियणमहिला हि य सद्धिं संपरिवुडाओ रावगिहस्स नयरस्स मज्झ मज्झेणं निगंगच्छंति, निगच्छित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति, उवा-

वगैरह का प्रक्षालन किया इस प्रकार शुचीभूत होकर फिर वह वहां से जहां अपना घर था वहां आ गई। (अदुत्तरं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्वमुदिष्टपुण्णमासिणीसु विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडित्ता वहवे नागा य जाव वेसमणा य उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ इसके बाद वह भद्रा-सार्थवाही चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या और पूर्णमासी के दिनों में विपुल चारों प्रकार के आहार चनाती और बनाकर उन अनेक नाग यावत् वैश्रवण की पूजा सेवाकरती हुई उनसे मनौती मनाती रहती। ॥सूत्र ५॥

भो धियां आ प्रभाणु शुद्ध थंने ते त्यांथी पोताने घेर आवी. (अदुत्तरं च णं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्वमुदिष्टपुण्णमामिणीसु विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडित्ता वहवे नागाय जाव वेसमणाय उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ) त्थारणाइ भद्रा सार्थवाही चोदश, आठम, अमास अने पूनमना द्विसोमां पुण्ण प्रभाणुमां थारे जतना आहार जनावअवती अते जनावअवीने नाग अने वैश्रवण वगेरे जथा देवोनी पूजा करती अने मानता राणती छती. ॥ सूत्र. ५ ॥

લલુ વિપુલમશનં પાનં ત્યાગં સ્વાદ્યં, સુવહુકં પુષ્પવસ્ત્રગન્ધમાલ્યાલંકારં યદ્દીત્વા  
મિત્રજ્ઞાતિનિજકુસ્વજનસમ્બન્ધિપરિજનમહિલાભિશ્ચ સાર્દ્ધં સંપરિવૃતા રાજગૃ-  
રસ્ય નગરસ્ય મધ્યમધ્યેન નિર્ગચ્છન્તિ, નિર્ગત્ય યત્રવપુષ્કરિણી તત્તૈવોપાગચ્છન્તિ,  
ઉપાગત્ય પુષ્કરિણીમવગાહન્તે, અવ ગાહ્ય સ્નાતા કૃતચલિકર્માણઃ સર્વાલંકારચિમ્બૂ-  
પિતાઃ તદ્ઃ વિપુલમશનપાનસ્વાદ્યમાસ્વાદયન્ત્યઃ યાવત્પરિમુક્તાના દોહદં વ્યપ-

(જાઓ નં વિડલં અસળ ૪ સુવહુયં-પુષ્ક-વત્થ-ગંધ-મલ્લાલંકારં ગઢાય  
મિત્તનાઈ-નિયગ-પયળ-સંબંધિપરિયળમહિલાહિ ય સર્દિ સંપરિવુડાઓ  
રાયગિહસ્ત નયરસ્ત મડ્ઝં મડ્ઝેળં નિગચ્છંતિ) જો માતાળ વિપુલ અશન  
પાનાદિ ૪ પ્રકાર કે આહાર કો ઓર વહુત અધિક પુષ્પ વસ્ત્ર ગંધ, માલા  
અલંકાર કો લેકર મિત્રજ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન, સંબંધી-પરિજન કો મહિલાઓ  
કે સાથર ઘિરી હુઈ હોકર રાજગૃહ નગર કે ઠીક વીચો વીચ કે માર્ગ  
સે નિકલતી હેં। (નિગચ્છિત્તા જેનેવ પુષ્કરિણી તેનેવ ઉવાગચ્છિંતિ ઉવા-  
ગચ્છિત્તા પુષ્કરિણી ઓગાહંતિ, ઓગાહિત્તા ળ્ઠાયાઓ કયચલિકર્માઓ  
સન્વાલંકારવિમ્બૂસિયાઓ વિડલં અસળં આસાળમાળોઓ જાવ પરિમુજે-  
માળીઓ દોહલં વિળેઈ) ઓર નિકલ કર જહાં પુષ્કરિણી હે વઢાં જાતી હેં  
જા કર ઉસમેં અવગાહન કરતી હેં, અવગાહન કર સ્નાન કરતી હેં-સ્નાત  
હોકર ચલિકર્મ યાયસાદિ કો અન્નાદિ કા ભાગ દેકર સમસ્ત અલંકારોં  
સે શરીર કો વિમ્બૂપિત કરતી હેં ઓર ફિર ઉસ વિપુલ માત્રા મેં નિવ્વન્ન

તે માતાઓનાં જ સામુદ્રિક શાસ્ત્ર પ્રમાણેના શારીરિક લક્ષણો સફળ થયાં છે,  
(જાઓ નં વિડલં અસળં ૪ સુવહુયં પુષ્કવત્થગંધમલ્લાલંકારં ગઢાય  
મિત્તનાઈ-નિયગ-પયળ-સંબંધિપરિયળમહિલાહિ ય સર્દિ સંપરિવુડાઓ  
રાયગિહસ્ત નયરસ્ત મડ્ઝં મડ્ઝેળં નિગચ્છંતિ) જે માતાઓ પુષ્કળ પ્રમાણમાં  
અશન પાન વગેરે ચાર જાતનો આહાર અને ખૂબ જ પુષ્પ, વસ્ત્ર, ગંધ, માળા  
અને અલંકારોને લઈને મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન સંબંધી પરિજનની મહિલા  
ઓની સાથે રાજગૃહ નગરના વચ્ચે વચ્ચે માર્ગમાં થઈને પસાર થાય છે.  
(નિગચ્છિત્તા જેનેવ પુષ્કરિણી તેનેવ ઉવાગચ્છંતિ ઉવાગચ્છિત્તા,  
પુષ્કરિણી ઓગાહંતિ, ઓગાહિત્તા ળ્ઠાયાઓ કયચલિકર્માઓ સન્વા-  
લંકારવિમ્બૂસિયાઓ વિડલં અમળં આસાળમાળોઓ જાવ પરિમુજે  
માળીઓ દોહલં વિળેઈ) અને પસાર થઈને જ્યાં પુષ્કરિણી છે ત્યાં જાય છે.  
ત્યાં જઈને તેમાં ઉતરે છે, ઉતરીને નહાય છે. નહાઈને કાગડા વગેરે પક્ષીઓને  
અન્નનો ભાગ અપીને બલિકર્મ કરે છે, અને શરીરનાં બધાં અંગોને ઘરેણાંઓથી  
અલંકૃત કરે છે. અને ફરી તે પુષ્કળ પ્રમાણમાં તૈયાર કરવામાં આવેલા અશન



भोयावेत्ता अयमेयारूवं गोणं गुणनिष्फन्न नामधेज्जं करेति  
जम्हाणं अम्हं इमे दारए वहुणं नागपडिमाण य जाव वेसमण—  
पडिमाण य उवाइयलद्धे, तं होउ णं अम्हं इमे दारए देवदिन्ने  
नामेणं, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधिज्जं करेति देव-  
दिन्नेत्ति । तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं चदायं च मायं  
च अक्खयनिहि च अणुवड्ढेति ॥सू ६॥

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि—ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही अन्यदा  
कदाचित् ‘केणइकालंतरेणं’ केनापि कालान्तरेण=कियता कालान्तरेण ‘आव-  
न्नसत्ता जाया’ आपन्नसत्त्वा जाता, आपन्नः=उत्पन्नः सत्त्वः=जीवो गर्भे यस्याः  
सा तथा गर्भवती जाता चाप्यासीत् । ततः खलु तस्याः भद्रायाः सार्थवाहा  
द्वयोर्मसि योर्व्यतिक्रान्तयोः सन्नोः तृतीये मासे वर्तमानेऽयमेतद्रूपो दोहदः पाडु-  
भूतः—धन्याः खलु ता अम्माः यावत् कृतलक्षणाः खलु ता अम्माः, याः

‘तएणं सा भद्रा सत्थवाही’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (सा भद्रा सत्थवाही) वह भद्रा सार्थ-  
वाही (अन्नया कयाइं) किसी समय (केणइकालंतरेणं) कितने काल के अनन्तर  
(आवन्नसत्ता जाया यावि होत्था) गर्भवती हुई । (तएणं तीसे भद्राए सत्थ-  
वाहीए) इससे उस भद्रासार्थवाही के (दोसु मासेसु वीइक्कंतेसु) दो मास  
व्यतीत होने पर (तईए मासे वट्टमाणे) जब तीसरा मास प्रारम्भ हुआ  
तब (इमेयारूवे दोहले पाउळभूए) इस तरह का यह वक्ष्यमाण दोहला  
उत्पन्न हुआ—(धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ) वे माताएँ धन्य हैं (जाव-  
क्खयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ) यावत् वे माताएँ कृत लक्षणा हैं

‘तएणं सा भद्रा सत्थवाही’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पछी (सा भद्रा सत्थवाही) भद्रा सार्थवाही (अन्नया  
कयाइं) केई वध (केणइ कालंतरेणं) केलाउट समय बाद (आवन्नसत्ता जाया  
यावि होत्था) गर्भवती थी । (तए णं से भद्राए सत्थवाहीए) सगर्भाव-  
स्थाओं के लिये भद्रा सार्थवाहीने (दोसु मासेसु वीइक्कंतेसु) दो भडिना  
पूरा थया (तईए मासे वट्टमाणे) अने त्रीन्ने भडिने। जेठो त्थारे (इमेयारूवे  
दोहले पाउळभूए) आ प्रमाणे दोहले थयुं के—(धन्नाओ णं ताओ अम्म-  
याओ) ते माताओं ने धन्य ते (जाव कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ

भद्रा सार्थवाही धन्येन सार्थवाहेनाभ्यनुज्ञाता सती हृष्टतुष्टा यावद् विपुलम् अशनं पानं स्वाद्यं स्वाद्यं यावत् स्नाता यावत् आर्द्रपट्नाटिका यत्रैव नागगृहं यावत् धूपं दहति, दग्ध्वा प्रणामं करोति, प्रणामं कृत्वा यत्रैव पुष्करिणी तत्रैवोवागच्छति। ततः खलु ता मित्रताति यावत् नगरमहिला भद्रां सार्थवाहीं सर्वालंकारविभूषितां कुर्वन्ति। ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही ताभिर्मित्रताति निजकस्यजनसम्बन्धिपरिजननगरमहिलाभिः सार्धं तद् विपुलमशनं पानं स्वाद्यं स्वाद्यं यावत् परिभुजानां च दोहदं व्यपनयति, व्यपनीय यस्या दिग्ः प्रादु-

(अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिये ! तुम्हें जैसे सुख हो वैसा करो इसमें देरी मत करो (तएणं सा भद्रा सत्यवाही धन्नेणं सत्यवाहेणं अम्मणुन्नाया समाणी हट्ट तुट्ठा) उसके बाद उस भद्रा सार्थवाहीने धन्य सेठ से अनुमति प्राप्त कर बहुत ही अधिक हर्षित और सन्तुष्ट चित्त हो (जाव) यावत् (विपुलं असणं ४ जाव ह्हाया) विपुलमात्रा में चारों प्रकार का आहार नैवार किया—यावत् उसने पुष्करिणी में स्नान किया (जाव उल्लपडसाडिया जेणेव नागघरण जाव धूपं डहइ) यावत् गीली साडी पहिने हुए ही फिर उसने उस पुष्करिणी से कमलों को लिया और जहाँ नागघर आदि थे वहाँ गई—बहुमूल्य पुष्पाची कर उनके समक्ष धूप दिखाई। इस प्रकार यहाँ पांचवें सूत्र में जो वर्णन है वह समझ लेना (उडित्ता पणामं करेइ—पणाम करित्ता जेणेव पोखरिणी तेणेव उवागच्छइ) धूप दिखा चुकने पर उसने उन्हें प्रणाम किया प्रणाम कर फिर वह पुष्करिणी पर वापिस आ गई (तएणं ताओ मित्तनाइ नियमसमयसंबंधिपरियणनगरमहिलायहिं

बंधं करेह) हे देवानुं प्रिये ! तमने जेम सुण थाय तेम करे, मोडुं करे नडि. (तए णं सा भद्रा सत्यवाही धन्नेणं सत्यवाहेणं अम्मणुन्नाया समाणी हट्ट तुट्ठा) त्थार णाह ते भद्रा सार्थवाही धन्य सार्थवाहीनी पासेथी आत्ता मेणवीने भूण न प्रसन्न अने संतुष्ट थछ. (जाव) यावत् (विपुलं असणं ४ जाव ह्हाया) पुष्क ॥ प्रमाणुमां आरे प्रकारेण आहार णनावराज्यो. अने त्थार यही तेले पुष्करिणीमां स्नान कथुं (जाव उल्लपडसाडिया जेणेव नागघरण जाव धूपं डहइ) बीना लुगडे न तेले पुष्करिणीमांथी कमणो लीधां अने नागघर वगेरेना देवस्थानमां गछ. भूण न डिंमति पुष्पो वगेरेथी ते णधा देवानी पूज करी तेमनी सामे धूपसणी सणगावी. आगणतुं वणुंन पाठडेअे पांचमां सूत्र प्रमाणे न णाणुपुं नेछअे. (उडित्ता पणामं करेइ पणामं करित्ता जेणेव पोखरिणी तेणेव उवागच्छइ) धूप कथीं णाह तेले तेमने प्रणाम कथी. प्रणाम कथीं णाह करीने पुष्करिणीना किनारे आवी गछ. (तए णं ताओ मित्तनाइ नियमसमय

નયન્તિ । एवं संपेक्षते, संपेक्ष्य कलये यावज्ज्वलति यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य धन्यं सार्थवाहमेवमवादीत=एवं खलु देवानुप्रियाः । मम तस्य गर्भस्य (प्रभावेण) यावत् व्यपनयन्ति, तद् इच्छामि खलु देवानुप्रियाः ! भवद्विरभ्यनुज्ञाता सतो यावद् विहरिष्यामि यथा मुखं देवानुप्रिये ! मा प्रतिवन्द्यं कुरु ततः खलु स

હુ! અજ્ઞાન પાનાદિક ચારોં પ્રકાર કે આહાર કરતી હું—દૂસરોં કો કરાતી હું—ઇત્થ તરહ જો અપને દોહલે કી પૂર્તિ કરતી હું । (एवं संपेक्षेइ) इस प्रकार उस दोहले में उसने विचार किया (संपेक्षित्ता कल्लं जाय जलंते जेणेव सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) विचार करके फिर वह प्रातः होते ही जब सूर्य चमकने लग गया—तब जहां धन्य सार्थवाह था वहां गई । (उवागच्छिता धणं सत्थवाहं एवं वयासी) जाकर उसने धन्यसार्थवाह से इस प्रकार कहा (एवं खलु देवाणुप्रिया ! मम तस्स गवमस्स जाव विणेइ-तं इच्छामि णं देवाणुप्रिया तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणी जाव विहरित्तए) हे देवानुप्रिय ! मुझे उस गर्भ के प्रभाव से इस प्रकार का दोहला उत्पन्न हुआ है कि जो माताएं ऐसा २ करती हैं और अपने गर्भके मनोरथ की पूर्ति करती हैं वे धन्य हैं कृत लक्षणाहैं इत्यादि । अतः मैं आपके द्वारा आज्ञापित हो कर इसी रूप से अपना दोहलासंपन्न करना चाहती हूँ (इस प्रकार उसने अपना सब विचार धन्य सार्थवाह से निवेदित कर दिया) । धन्य सार्थवाहने उसका ऐसा अभिप्राय सुनकर उससे कहा—

પાન વગેરે ચારે જાતનો આહાર પોતે કરે છે. અને બીજાઓને કરાવે છે આ પ્રમાણે જે માતાઓ પોતાના દોહડની પૂર્તિ કરે છે તે માતાઓને ધન્ય છે (एवं संपेक्षेइ) આ પ્રમાણે તેણે પોતાના દોહડ માટે વિચાર કર્યો. (संपेक्षित्ता कल्लं जाय जलंते जेणेव सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) વિચાર કરીને તેણે સવારમાં જ્યારે સૂરજ પૂર્વ દિશામાં પ્રકાશિત થયો ત્યારે જ્યાં ધન્યવાર્થવાહ જ્યાં હતો ત્યાં ગઈ. (उवागच्छिता धणं, सत्थवाहं एवं वयासी) ત્યાં જઈને તેણે ધન્ય સાર્થવાહને આ પ્રમાણે કહ્યું—(एवं . खलु देवाणुप्रिया ! मम तस्स गवमस्स जाव विणेइ तं इच्छामि णं देवाणुप्रिया तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणी जाव विहरित्तए) હે દેવાનુપ્રિય ! ગર્ભાવસ્થાને લીધે મને દોહડ થયું છે. જે માતાઓ આ જાતનું પોતાનું દોહડ પુરું કરી શકે છે. પોતાની ગર્ભસ્થિતિ પૂરી કરે છે તે માતાઓ ખરેખર ધન્ય છે. અને કૃતલક્ષણ છે વગેરે. એટલા માટે હું આપની આજ્ઞા મેળવીને આ રીતે જ મારું દોહડ પુરું કરવા ઇચ્છું છું. (આ રીતે તેણે પોતાની ઇચ્છા ધન્ય સાર્થવાહની સામે પ્રકટ કરી). ધન્ય સાર્થવાહે તેની વાત સાંભળીને કહ્યું કે (अहामुहं देवाणुप्रिया ! मा पडि



तथैव मित्रज्ञातिनिजकम्बजनमम्बन्धिपरिजनान् भोजयित्वा इममेतद्रूपं 'गौणं'  
गौणं=गुणैर्निर्गुणं गौणं=यथार्थ, 'गुणनिष्पन्नं' गुणनिष्पन्नं=गुणसञ्जातं नाम-  
धेयं कुरुतः-यस्मात् खलु आवयोरयं दारको बहूनां नागप्रतिमानां च यावत्  
वैश्रवणप्रतिमानां च 'उवाइयल्लदे-य' उपवाचिनलब्धः=प्रार्थनया प्राप्तः तद्  
भवतु खलु आवयोरयं दारकः 'देवदिन्ने नामेण' देवदत्तो नाम्ना । ततः  
खलु तस्य दारकस्याम्मापितरौ नामधेयं कुरुतः 'देवदत्तः' इति । ततःखलु  
तस्य दारकस्याम्मापितरौ जायं च दायं च भायं च अक्षयनिधिं चानु-  
वर्द्धयतः ॥ सूत्र ६ ॥

बालक के माता पिताने प्रथम दिन बालक का जात कर्म किया  
करके उसी तरह यावत् विपुल मात्रा में अशन आदिचारों प्रकार का आहार  
तैयार किया (उचक्खडावित्ता तद्देव मित्तनाइनिजकमयणसंवधिपरिजणे  
भोयावेत्ता अयमेयारूवं गौणं गुणनिष्पन्नं नामधेज्जं करेन्ति) आहार  
तैयार करके फिर उन्होंने उसे मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन संबंधिजन  
और परिजनों को खिलाया-खिलाकर उन्होंने बच्चे का नाम यथार्थरूपं  
में गुणों से निष्पन्न होने के कारण इस तरह वक्ष्यमाणरूप से रक्खा !  
(जम्हाणं अम्हं इमे दारए बहूणं नागपडिमाणय जाव वेसमणपडिमाणय  
उवइयल्लदे तं होउणं अम्हं इमे दारए देवदिन्ने नामेणं) यह हमारा पुत्र-  
नाग प्रतिमा यावत् वैश्रवण प्रतिमाओं की मनौती से उत्पन्न हुवा है इसलिये  
इसका नाम देवदत्त हो। (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं  
करेन्ति) इस प्रकार कहकर उस दारक के माता पिताने उसका नाम देव-  
दत्त रख दिया। (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं च भायं च

आणकनां मातापिताये जन्मना पडेला द्विसे पुब्बण प्रमाणुमां अशन वगेरे  
आरे आर प्रक्षरने आहार तैयार कराव्ये. (उचक्खडावित्ता तद्देव मित्तनाइ-  
निजकमयणसंवधिपरिजणे भोयावेत्ता अयमेयारूवं गौणं गुण  
निष्पन्नं नामधेज्जं करेन्ति) आहार तैयार करावने तेभने मित्र, ज्ञाति,  
निजक, स्वजन संबंधिजन अने परिजनोने जमाउथां. जमाडीने तेभणु आणकनुं  
नाम तेना शुणु प्रमाणु राभ्युं (जम्हाणं अम्हं इमे दारए बहूणं नागपडिमा-  
णय जाव वेसमणपडिमाणय उवइयल्लदे तं होउणं अम्हं इमे दारए  
देवदिन्ने नामेणं) दोडोनी सामे आणकनां मातापिताये कहुं के आ अमारो  
पुत्र नाग वैश्रमणु वगेरे देव प्रतिमाओनी मानता राभवथी थयो छे, ज्येथी  
आनुं नाम देवदत्त राभवामां आउथुं छे. (तए णं तस्स दारगस्स अम्मा-  
पियरो नामधेज्जं करेन्ति) आ प्रमाणु आणकनां मातापिताये भजीने आण-  
कनुं नाम देवदत्त पाउथुं. (तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं च

भूता तामेव दिशं प्रतिगता । ततः खलु सा भद्रा सार्धवाही सम्पूर्ण दोहदा  
यावत् तं गर्भं सुखं सुखेन परिवहति । ततः खलु सा भद्रा सार्धवाही नवगु  
मासेषु बहुमतिपूर्णेषु अर्द्धाष्टमेषु रात्रिन्दिवेषु (व्यतीतेषु) सुकुमारपाणिपादं  
यावत् दारकं प्रजनिता । ततः खलु तस्य दारकस्य अम्मापितरो प्रथमे दिसे जातवर्म  
कुरुतः कृत्वा तथैव यावत् विपुलमशनं पानं स्वाद्यमुपस्कारयतः, उपस्कार्य

य सद्धिं तं विपुलं असणं ४ जाव परिभुञ्जमाणी य दोहलं विणेइ) इसके  
बाद उन मित्र ज्ञाति निजक, स्वजन, संबन्धी, परिजन की नगर महिलाओं  
के साथ २ उस ४ चारों प्रकार के आहार को किया कराया-और अपने  
दोहले की पूर्ति की । (विणिइत्ता जामेवदिस्सि पउब्भूया तामेव दिस्सि पडिगया)  
दोहले की पूर्ति कर वह फिर जिस दिशा से पकट हुई थी-आई थी  
उसी दिशा की ओर चली गई । अर्थात् अपने घर पहुँच गई (तएणं सा  
भद्रा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव त गव्भं सुहं सुहेणं परिवहइ) इसके अन-  
न्तर उस भद्रा सार्धवाहीने कि जिसका गर्भ मनोरथ अच्छी तरह परिपूर्ण  
हो गया है यावत् अपने गर्भ को भलीभाँति से सुख पूर्वक परिवहन किया ।  
(तएणं सा भद्रा सत्थवाही णवणं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठराइंदियाणं  
सुकुमालपाणिपायं दारगं पयाया) बाद में जब गर्भ के ठीक नौ मास ७।  
साढ़े सात दिन समाप्त हो चुके तब उसने सुकुमार कर चरणवाला पुत्र  
को जन्म दिया । (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापिगरो पढमे दिवसे जाय  
कम्मं करेति, करित्ता तहेव विउलं असणं ४ उवक्खडावेति) इसके बाद

संबन्धिपरियणनगरमहिलाहिं य सद्धिं तं विपुलं असणं ४ जाव  
परिभुञ्जमाणी य दोहलं विणेइ) त्थार ७।६ तेले पोताना सण्धीनी नगरनी  
स्त्रीओ साथे थारे जतने आहार क्यो. अने करावडाव्यो. आ रीते तेले पोताना  
दोहदनी पूर्ति करी. (विणेइत्ता जामेव दिस्सि पाउब्भूया तामेव दिस्सि  
पडिगया) दोहद पूर्ति क्यो ७।६ ते ज्यथी आवी हुती. त्यां थाली गछ. ओटले  
ते तेना घेर पडोंची गछ. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव  
तं गव्भं सुहं सुहेणं परिवहइ) त्थार पछी पूर्ण दोहदा भद्रा सार्धवाही सुजेथी  
पोताना गर्भने परिवहन करती रहेवा लागी. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही  
णवणं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठराइंदियाणं सुकुमालपाणि  
पायं दारगं पयाया) आ प्रभाले गर्भ ज्यारे णराणर नव मास अने साडा सात  
दिवस शतने थयो. त्थारे भद्रासार्धवाहीओ सुडोभण डाय पग वाणा पुत्रने  
जन्म आय्यो. (तए णं तस्स दारगस्स अम्मापिगरो पढमे दिवसे जायकम्मं  
करेति करित्ता तहेव जाव विउलं असणं ४ उवक्खडावेति) त्थार पछी

તથૈર મિત્રજ્ઞાતિનિજકમ્વજનમમ્વન્ધિપરિજનાન્ ભોજયિત્વા ઇમમેતદ્વૃપં 'ગોણં' ગૌણં=ગુણૈર્નિર્વૃત્તં ગૌણં=યથાર્થ, 'ગુણનિષ્ફન્નં' ગુણનિષ્પન્નં=ગુણસંજ્ઞાતં નામ-ધેયં કુરુતઃ-યસ્માત્ સ્વલુ આવયોરયં દારકો વહૂનાં નાગપ્રતિમાનાં ચ યાવત્ વૈશ્રવણપ્રતિમાનાં ચ 'ઉવાઙ્યલલ્લે-ય' ઉવાઙ્યલલ્લઃ=પ્રાર્થનયા પ્રાપ્તઃ તદ્ ભવતુ સ્વલુ આવયોરયં દારકઃ 'દેવદિન્ને નામેણં' દેવદત્તો નામના । તતઃ સ્વલુ તસ્ય દારકસ્યામ્વાપિતરૌ નામધેયં કુરુતઃ 'દેવદત્તઃ' ઇતિ । તતઃ સ્વલુ તસ્ય દારકસ્યામ્વાપિતરૌ યાગં ચ દાયં ચ ભાગં ચ અક્ષયનિધિં ચાનુ-વર્દ્ધયતઃ ॥મૂત્ર ૬॥

બાલક કે માતા પિતાને પ્રથમ દિન બાલક કા જાત કર્મ ક્રિયા કરકે ઉસી તરહ યાવત્ વિપુલ માત્રા મેં અશન આદિચારોં પ્રકાર કા આહાર તૈયાર ક્રિયા ( ઉવક્ષ્યલ્લઽવિત્તા તદેવ મિત્રનાઈનિજકમગ્નસંવંધિપરિજને ભોયાવેત્તા અયમેયારૂવં ગોગં ગુણનિષ્ફન્નં નામધેજ્જં કરેંતિ) આહાર તૈયાર કરકે ફિર ઉન્હોંને ઉસે મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન સંવંધિજન ઓર પરિજનોં કો સિલાયા-સિલાકર ઉન્હોંને વચ્ચે કા નામ યથાર્થરૂપં મેં ગુણોં સે નિષ્પન્ન હોને કે કારણં ઇસ તરહ વક્ષ્યમાણરૂપ સે રક્ષા ! (જમ્હાણં અમ્હં ઇમે દારણ વહૂણં નાગપડિમાણય જાવ વેસમણપડિમાણય ઉવક્ષ્યલલ્લે તં હોડણં અમ્હં ઇમે દારણ દેવદિન્ને નામેણં)યહ હમારા પુત્ર-નાગ પ્રતિમા યાવત્ વૈશ્રવણ પ્રતિમાઓં કી મનોતી સે ઉત્પન્ન હુવા હૈ ઇસલિયે ઇમકા નામ દેવદત્ત હો । (તણં તસ્સ દારગસ્સ અમ્માપિયરો નામધેજ્જં કરેંતિ) ઇસ પ્રકાર કહકર ઉસ દારક કે માતા પિતાને ઉસકા નામ દેવ-દત્તો રક્ષ દિયા । (તણં તસ્સ દારગસ્સ અમ્માપિયરો જાયં ચ ભાયં ચ

બાળકનાં માતાપિતાએ જન્મના પહેલા દિવસે પુષ્કળ પ્રમાણમાં અશન વગેરે ચારે ચાર પ્રકારનો આહાર તૈયાર કરાવ્યો. (ઉવક્ષ્યલ્લઽવિત્તા તદેવ મિત્રનાઈ-નિજકમગ્નસંવંધિપરિજને ભોયાવેત્તા અયમેયારૂવં ગોગં ગુણ નિષ્ફન્નં નામધેજ્જં કરેંતિ) આહાર તૈયાર કરાવીને તેમને મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન સંવંધિજન અને પરિજનોને જમાડ્યાં. જમાડીને તેમણે બાળકનું નામ તેના ગુણો પ્રમાણે રાખ્યું (જમ્હાણં અમ્હં ઇમે દારણ વહૂણં નાગપડિમા-ણય જાવ વેસમણપડિમાણય ઉવક્ષ્યલલ્લે તં હોડણં અમ્હં ઇમે દારણ દેવદિન્ને નામેણં) લોકોની સામે બાળકનાં માતાપિતાએ કહ્યું કે આ અમારો પુત્ર નાગ વૈશ્રવણ વગેરે દેવ પ્રતિમાઓની માનતા રાખવાથી થયો છે, એથી આનું નામ દેવદત્ત રાખવામાં આવ્યું છે. (તણં તસ્સ દારગસ્સ અમ્મા-પિયરો નામધેજ્જં કરેંતિ) આ પ્રમાણે બાળકનાં માતાપિતાએ મળીને બાળ-કનું નામ દેવદત્ત પાડ્યું. (તણં તસ્સ દારગસ્સ અમ્માપિયરો જાયં ચ



मूलम्—तएणं से पंथए दासचेडए देवदिन्नस्स दारगस्स  
 वालग्गाही जाए, देवदिन्नंदारयं कडीए गेण्हइ, गेण्हित्ता बहूहि डिंभ  
 एहि य डिंभयाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहिय  
 सद्धि संपरिवुडे अभिरमइ। तए णं भद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं देव-  
 दिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउलपायच्छित्तं सव्वालंकार-  
 विभूसियं करेइ, करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलइ। तएणं  
 से पंथए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं दारगं  
 कडिए गिण्हइ, गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनि-  
 क्खमित्ता बहूहि डिंभएहि य डिंभियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि  
 य सद्धि संपरिवुडे जेणेव गयमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता  
 देवदिन्नं दारगं एगंते ठावेइ, ठावित्ता बहूहि डिंभएहि य जाव  
 कुमारियाहिय सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ। इमं च णं विजए तक्करे  
 रायगिहस्स बहूणि दाराणि य अवहाराणि य तहेव जाव आभोएमाणे  
 मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ, उवा-  
 गच्छित्ता देवदिन्नंदारगं सव्वालंकारविभूसियं पासइ पासित्ता देवदिन्नस्स  
 दारगस्स आभरणांलंकारेसु मुच्छिए गडिए गिद्धेअज्झोववन्ने पंथयं

अक्खयनिहिं च अणुवड्ढेति) बालक के नाम संस्कार होने के पश्चात् मातापिता ने  
 उन नाग आदिक प्रतिमाओं की खूब सेवा की—दान दिया—अपने हिस्से में से खूब  
 द्रव्य का वितरण किया और उनके कोष की खूब वृद्धि की ॥ सूत्र ६॥

दायं च भाय च अक्खयनिहिं च अणुवड्ढेति) गाणकनां नाम संस्कार गाढ  
 गाणकनां मातापिताये नाग वगेरं प्रतिमाओनी पूज न सारी, पेठे पूज करी,  
 पुष्प प्रमाणुमां दान आयुं, पोताना लागना द्रव्यतुं जहु न प्रमाणुमां वितरण  
 कथुं अने देवताओना डोपनी पूज अलिपृद्धि करी ॥ सू ६ ॥

दासचेडं पमत्तं पासइ, पासित्ता दिसालोय करेइ करेत्ता देवदिन्नं  
दारगं गेण्हइ, गेण्हित्ता कक्खंसि अल्लियावेइ अल्लियावित्ता उत्तरिज्जेणं  
पिहेइ, पिहित्ता सिग्धं तुरियं चवलं चेइयं रायगिहस्स नगरस्स अव-  
दारेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव  
भग्गकूवए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं जीवि  
याओ ववरोवेइ, ववरोवित्ता आभरणालंकारे गिण्हइ गिण्हित्ता देव-  
दिन्नस्स दारगस्स सरीरं निप्पाणं निच्चैहं जीवियविप्पजठं भग्गकू-  
वए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छइ  
उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता निच्चले  
निप्फंदे तुसिगीए दिवसं खवेमाणे चिट्ठइ ॥सू. ७॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि—‘तएणं’ ततः खलु=तदनन्तरं ‘से’  
असौ पांथकनामा ‘दासचेडए’ दासचेटकः= दासपुत्रो यो धन्यसार्थवाहस्य  
गृहे कर्मकरत्वेन स्थित आसीत्—स देवदत्तस्य दारकस्य ‘वालगाही’ वाल-  
ग्राही बालं ग्रहीतुं शीलमस्यास्तीति बालग्राही=शिशुसंरक्षको जातः । असौ देव-  
दत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा बहुभिः ‘डिम्भएहि य’ डिम्भकैश्च,

‘तएणं से पंथए दासचेडए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से पंथए दासचेडए) यह पांथकनाम  
का दास पुत्र जो धन्य सार्थवाह के घर पर-नौकर-था (देवदिन्नस्स दारगस्स  
वालगाही जाए) वह देवदत्त का बालग्राही—शिशु अवस्था का संरक्षक-  
हुआ । (देवदिन्नं दारयं कडीए गेण्हइ) यह देवदत्त को अपनी कमर=गोद में  
लिये रहता था । (गेण्हित्ता) यह उसे अपनी गोद में लेकर (वहहिं

तए णं से पंथए दासचेडए इत्यादि ॥

टीकार्थ (तए णं) त्थार पछी (से पंथए दासचेडए) पांथक नामे दास  
पुत्र-के धन्यसार्थवाहना घर नोकर हुतो— (देवदिन्नस्स दारगस्स वालगाही  
जाए) जाणके देवदत्तना संरक्षणु भाटे निधुक्क उरवाभां आव्ये (देवदिन्नं दारयं  
कडीए गेण्हइ) ते देवदत्तने डेड=जोणाभां जेसाडीने राखतो हुतो. (गेण्हित्ता) अने

मूलम्—तएणं से पंथए दासचेडए देवदिन्नस्स दारगस्स  
 वालग्गाही जाए, देवदिन्नंदारयं कडीए गेण्हइ, गेण्हित्ता वहूहिं डिंभ  
 एहि य डिंभयाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि य  
 सद्धि संपरिवुडे अभिरमइ। तए णं भद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं देव  
 दिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउलपायच्छित्तं सव्वालंकार  
 विभूसियं करेइ, करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलइ। तएणं  
 से पंथए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं दारगं  
 कडिए गिण्हइ, गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनि-  
 क्खमित्ता वहूहिं डिंभएहि य डिंभियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि  
 य सद्धि संपारिवुडे जेणेव गयमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता  
 देवदिन्नं दारगं एगंते ठावेइ, ठावित्ता वहूहिं डिंभएहि य जाव  
 कुमारियाहिय सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ। इमं च णं विजए तक्करे  
 रायगिहस्स वहूणि दाराणि य अवदाराणि य तहेव जाव आभोएमाणे  
 मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ, उवा-  
 गच्छित्ता देवदिन्नंदारगं सव्वालंकारविभूसियं पोसइ पासित्ता देवदिन्नस्स  
 दारगस्स आभरणालंकारेसु मुच्छिए गडिए गिद्धे अज्झोववन्ने पंथयं

अक्खयनिहिं च अणुवड्ढेति) वालक के नाम संस्कार होने के पश्चात् मातापिता ने  
 उन नाग आदि रु प्रतिमाओं की खूब सेवा की—दान दिया—अपने हिस्से में से खूब  
 द्रव्य का वितरण किया और उनके कोप की खूब वृद्धि की ॥ सूत्र ६ ॥

दायं च भाय च अक्खयनिहिं च अणुवड्ढेति) जाणकनां नाम संस्कार जाद  
 जाणकनां मातापिताओ नाग वगेरे प्रतिमाओनी पूज ज सारी, पेठे पूजा करी,  
 पुष्पज प्रमाणुमां दान आयुं, पोताना लागना द्रव्यतुं बहु ज प्रमाणुमां वितरण  
 क्युं अने देवताओना कोपनी पूज अभिवृद्धि करी ॥ सू ६ ॥



दासचेडं पमत्तं पासइ, पासित्ता दिसालोय करेइ करेत्ता देवदिन्नं  
दारगं गेण्हइ, गेण्हित्ता कक्खंसि अल्लियावेइ अल्लियावित्ता उत्तरिजेणं  
पिहेइ, पिहित्ता सिग्धं तुरियं चवलं चेइयं रायगिहस्स नगरस्स अत्र-  
दारेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव  
भग्गकूवण तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं जीवि-  
याओ ववरोवेइ, ववरोवित्ता आभरणालंकारे गिण्हइ गिण्हित्ता देव-  
दिन्नस्स दारगस्स सरीरगं निप्पाणं निच्चेट्ठं जीवियविप्पजठं भग्गकू-  
वण पक्खिवइ, पक्खिवित्ता जेणेव मालुयाकच्छण तेणेव उवागच्छइ  
उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता निच्चले  
निष्फंदे तुसिगीए दिवसं खवेमाणे चिट्ठइ ॥सू. ७॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि—‘तएणं’ ततः खलु=तदनन्तरं ‘से’  
असौ पान्थकनामा ‘दासचेडए’ दासचेटकः= दासपुत्रो यो धन्यसार्थवाहस्य  
गृहे कर्मकरत्वेन स्थित आसीत्—स देवदत्तस्य दारकस्य ‘बालगाही’ बाल-  
ग्राही बालं गृहीतुं शीलमस्यास्तीति बालग्राही=शिशुसंरक्षको जातः । असौ देव-  
दत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा बहुभिः ‘डिम्भएहि य’ डिम्भकैश्च,

‘तएणं से पंथए दासचेडए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से पंथए दासचेडए) यह पान्थकनाम  
का दास पुत्र जो धन्य सार्थवाह के घर पर—नौकर—था (देवदिन्नस्स दारगस्स  
बालगाही जाए) वह देवदत्त का बालग्राही—शिशु अवस्था का संरक्षक—  
हुआ । (देवदिन्नं दारयं कडीए गेण्हइ) यह देवदत्त को अपनी कमर=गोद में  
लिये रहता था । (गेण्हित्ता) यह उसे अपनी गोद में लेकर (वहहिं

तए णं से पंथए दासचेडए इत्यादि ॥

टीकार्थ (तए णं) त्थार पथी (से पंथए दासचेडए) पान्थक नामे दास  
पुत्र—के धन्यसार्थवाहना घर नोकर हुतो— (देवदिन्नस्स दारगस्स बालगाही  
जाए) जाणक देवदत्तना संरक्षणु भाटे नियुक्त करवाभां आव्यो (देवदिन्नं दारगं  
कडीए गेण्हइ) ते देवदत्तने डेड=जोणाभां जेसाडीने राखतो हुतो. (गेण्हित्ता) अने

मूलम्—तएणं से पंथए दासचेडए देवदिन्नस्स दारगस्स

वालगाही जाए, देवदिन्नंदारयं कडीए गेणहइ, गेण्हत्ता वट्ठहिं डिंभ  
एहि य डिंभयाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि य  
सद्धि संपरिवुडे अभिरमइ। तए णं भद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं देव-  
दिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउलपायच्छित्तं सव्वालंकार-  
विभूसियं करेइ, करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलइ। तएणं  
से पंथए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं दारगं  
कडिए गिणहइ, गिण्हत्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनि-  
क्खमित्ता वट्ठहिं डिंभएहि य डिंभियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि  
य सद्धि संपरिवुडे जेणेव गयमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता  
देवदिन्नं दारगं एगंते ठावेइ, ठावित्ता वट्ठहिं डिंभएहि य जाव  
कुमारियाहिय सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ। इमं च णं विजए तक्करे  
रायगिहस्स वट्ठणि दाराणि य अवदाराणि य तहेव जाव आभोएमाणे  
मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ, उवा-  
गच्छित्ता देवदिन्नं दारगं सव्वालंकारविभूसियं पासइ पासित्ता देवदिन्नस्स  
दारगस्स आभरणांलंकारेसु मुच्छिए गडिए गिद्धे अज्झोववन्ने पंथयं

अवखयनिहिं च अणुवड्ढेति) बालक के नाम संस्कार होने के पश्चात् मातापिता ने  
उन नागवादि रु प्रतिमाओं की खूब सेवा की—दान दिया—अपने हिस्से में से खूब  
द्रव्य का वितरण किया और उनके कोप की खूब वृद्धि की ॥ सूत्र ६॥

दायं च भाय च अवखयनिहिं च अणुवड्ढेति) जाणकनां नाम संस्कार जाह  
जाणकनां मातापिताओ नाग वगेरे प्रतिमाओनी पूज व सारी, पेठे पूज करी,  
पुज्जण प्रमाणुमां दान आय्थुं, पोताना लागना द्रव्यत्तुं जहु व प्रमाणुमां वितरण  
कयुं अने देवताओना डोपनी पूज अलिपुद्धि करी ॥ सू ६ ॥

कृत्वा पाण्डकस्य दासचेटकस्य हस्ते ददाति । ततः खलु स पाण्डको दास-  
चेटको भद्रायाः सार्धवाद्या हस्ताद् देवदत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा  
म्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहुभिः डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च  
दारकैश्च दारिकाभिश्च, कुमारकैश्च कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतो यत्रैव राज-  
मार्गस्तत्रैवोवागच्छति, उवागत्य देवदत्तदारकमेतान्ते 'ठवेड' स्थापयति=उपवेशयति  
उपवेश्य बहुभिः डिम्भकैश्च यावत्कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतः 'पमते'  
पमतः=तद्रक्षणं प्रमादवान् चापि 'विहरड' विहरति=यात्रकचालिकादिभिः  
सदान्यत्र रमते ।

चरित कर समस्त अलंकारों से विभूषित किया (करित्ता पंथयस्स दासचेट  
यस्स हत्थयंसि दलयइ) विभूषित करके बाद में उसने उसे पांथक दास  
चेटथ के हाथमें दे दिया ! (तएणं से पंथए दासचेडए भद्दाए मत्थवा  
हीए हत्थाओ देवदिन्न दारयं कडिए गिण्हइ) उस पांथकदासचेटकने भद्रा  
सार्धवादीके हाथ से लेकर देवदत्त को अपनी कटी=गोद में ले लिया ।  
(गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ) और लेकर वह अपने घर  
से बाहर निकला । (पडिनिक्खमित्ता बहूहि डिम्भएहि डिम्भयाहिय कुमा-  
रएहि य कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव रायमग्गे तेणेव उवा-  
गच्छइ) निकल कर वह अनेक डिम्भकों से अनेक डिम्भिकाओं से कुमार  
और कुमारिकाओं से घिरा हुआ होकर जहां राजमार्ग था वहां पर गया  
(उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठवेइ, ठावित्ता बहूहि डिम्भएहि  
जाव कुमारियारि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ) जाकर उसने

अलंकृत किये। (करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलयइ) जाणकने  
घरेणुंओथी अलंकृत किये। जाह माताओ नेने पांथक दास चेटकने सोंपी दीधे।  
(तए णं से पंथए दासचेडए भद्दाए मत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं  
दारयं कडिए गिण्हइ) पांथक दासचेटके लद्दा सार्धवादीना हाथमांथी जाणकने  
लधने पोताना ओणांमां लध दीधे। (गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्ख-  
मइ) अने लधने ते घरेथी णडार निकल्ये। (पडिनिक्खमित्ता बहूहि डिम्भ  
एहि डिम्भयाहि य कुमारयाहि य कुमारियहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव  
रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने ते घणु डिंलिडे-माणडे-डिंलि-  
डाओ-जाणाओ, तेमज्ज कुमार अने कुमारीओनी साथे न्यां राज-  
मार्ग डतो त्यां गये। (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठवेइ  
ठावित्ता बहूहि डिंएहि जाव कुमारियांहि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि



डिम्भाः=अल्पकालिकाः शिशवः. डिम्भा एव डिम्भकास्तेः, डिम्भिकाभिश्च= अल्पकालिकवालिकाभिश्च. 'दारएहि य, दारकैथ=बहुकालिकवालकैः, दारिकाभिश्च=वालिकाभिः सार्द्धं संपरिवृतः=सहितः 'अभिरममाणे' अभिरममाणः= क्रीडन् सन् 'अभिरमइ' अभिरमति=तिष्ठति । ततः खलु सा भद्रा सार्थ-वाही अन्यदा कदाचित् देवदत्तं दारकं 'हाया' स्नातं कारितस्नानं, 'कय-वलिकम्मं' कृतवालिकर्माणम्=अरिषादि निवारणाय पशुपदयादि सर्वपाप-निमित्तं कारितान्नोत्सर्गम् 'कयकोउयमंगलपायच्छित्तं' कृतकौतुकमङ्गलपाय-श्चित्तं=दृष्टिरोपादिनिवारणार्थं कृतमपी तिलकादिकं सर्वालंकारविभूषितं करोति.

डिम्भएहि य डिम्भियाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारेहि य कुमारि-याहि य सद्धिं संपरिवुडे अभिरममाणे अभिरमइ) अनेक डिम्भकों के—छोटे-वालकों के साथ अनेक छोटी-र वालिकाओं के साथ, अनेक दारकों के साथ—डिम्भकों की अपेक्षा कुछ अधिक उमरवाले वालकों के साथ कुछ अधिक अनेक दारिकाओं के साथ, अनेक कुमार और कुमारिकाओं के साथ उनसे युक्त होकर क्रीडा किया करता था । अर्थात् उन सबके साथ मिलकर वह उस देवदत्त बालक को खिलाया करता था । (तएणं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कय-कोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकारविभूसियं करेइ) एक दिन की बात है कि उस भद्रा सार्थवाही उस देवदत्त नामके अपने पुत्र को स्नान करवा कर तथा उसके निमित्त से वायसादि पक्षियों को अन्नादि का भागरूप वलिकर्म कर एवं कौतुक, मंगल और प्रायश्चित्त विधि समा-

जाणाभां जेसाडीने (बहूहिं डिम्भएहि य डिम्भियाहे य दारएहि य दारि-याहि य कुमारेहि य कुमारियाहि य सद्धिं संपरिवुडे अभिरममाणे अभिरमइ) अनेक डिलडो-नाना नानां घण्टां जाणडेनी साथे-नानी नानी जाणा-ओनी साथे, घण्टा दारडेनी साथे ओटवे डे डिलडो क-तां जरा मोटी डंभर वाणा जाणडेनी साथे—घण्टी दारिकाओनी साथे, घण्टा कुमार अने कुमारिकाओनी साथे मणीने रमतो रमाउतो हुतो. ओटवे डे पांथक णधां जाणडेनी साथे मणीने देवदत्त रमाउतो हुतो. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकार-विभूसियं करेइ) ओक हिवस लद्दा सार्थवाहीये पोताना जाणक देवदत्तने नव-अवीने ते निमित्ते डागडा वगेरे पक्षीओने अन्न वगेरेनो लाग अर्पिने, कौतुक, मंगल अने प्रायश्चित्त विधि पूरी करी अने त्थार जाद जाणकने सुंदर धरेणांओर्थी

कृत्वा पान्थकस्य दासचेटकस्य हस्ते ददाति । ततः खलु स पान्थको दास-  
चेटको भद्रायाः सार्थवाद्या हस्ताद् देवदत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा  
स्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहुभिः डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च  
दारकैश्च दारिकाभिश्च, कुमारकैश्च कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतो यत्रैव राज-  
मार्गस्तत्रैवागच्छति, उवागत्य देवदत्तदारकमेतान्ते 'ठवेड' स्थापयति=उपवेशयति  
उपवेश्य बहुभिः डिम्भकैश्च यावत्कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतः 'पमते'  
'पमतः'=तद्रक्षणे प्रमादवान् चापि 'विहरइ' विहरति=वाल्क्यवाल्मिकादिभिः  
सद्वान्यत्र रमते ।

चरित कर समस्त अलंकारों से विभूषित किया (करित्ता पंथयस्स दासचेट  
यस्स हत्थयंसि दलयइ) विभूषित करके बाद में उसने उसे पान्थक दास  
चेटय के हाथमें दे दिया ! (तएणं से पंथए दासचेडए भद्दाए मत्थवा  
हीए हत्थाओ देवदिन्न दारयं कडिए गिण्हइ) उस पान्थकदासचेटकने भद्रा  
सार्थवादीके हाथ से लेकर देवदत्त को अपनी कटी=गोद में ले लिया ।  
(गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ) और लेकर वह अपने घर  
से बाहर निकला । (पडिनिक्खमित्ता बहूहि डिम्भएहि डिम्भयाहिय कुमा-  
रएहि य कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव रायमग्गे तेणेव उवा-  
गच्छइ) निकल कर वह अनेक डिम्भकों से अनेक डिम्भिकाओं से कुमार  
और कुमारिकाओं से घिरा हुआ होकर जहाँ राजमार्ग था वहाँ पर गग  
(उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठवेइ, ठावित्ता बहूहि डिम्भएहि  
जाव कुमारियारि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ) जाकर उसने

अलंकृतं कृत्यं. (करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलयइ) आलङ्कने  
धरेणुंओथी अलंकृतं कृत्यं. आह माताओ तेने पान्थक दास चेटकने सोपी दीधो.  
(तए णं से पंथए दासचेडए भद्दाए मत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं  
दारयं कडिए गिण्हइ) पान्थक दासचेटके लद्दा सार्थवादीना हाथमांथी आलङ्कने  
लङ्कने पोताना ओणाभां लङ्क दीधो. (गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्ख-  
मइ) अने लङ्कने ते घेरथी णडार निङ्गथो. (पडिनिक्खमित्ता बहूहि डिम्भ  
एहि डिम्भयाहि य कुमारयाहि य कुमारियहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव  
रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ) नीङ्गणीने ते धण्णा डिंलिङ्को-माणङ्को-डिंमि-  
ङ्को-आणाओ, तेमज्ज कुमार अने कुमारीओनी साथे ज्ज्यां राज-  
मार्गं उतो त्यां गथो. (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठवेइ  
ठावित्ता बहूहि डिंएहि जाव कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि

डिम्भाः=अल्पकालिताः शिशवः. डिम्भा एव डिम्भकास्तैः, डिम्भिकाभिश्च= अल्पकालिकवालिकाभिश्च. 'दारएहि य, दारकैश्च=चटुकालिकवालकैः, दारिकाभिश्च=वालिकाभिः सार्द्धं संपरिघृतः=सहितः 'अभिरममाणे' अभिरममाणः= क्रीडन् सन् 'अभिरमइ' अभिरमनि=तिष्ठति । ततः खलु सा भद्रा सार्थ- वाही अन्यदा कदाचित् देवदत्तं दारकं 'ह्वाया' स्नातं कारितस्नानं, 'कय- वलिकम्मं' कुनवालिकर्माणम्=अरिष्टादि निवारणाय पशुपद्म्यादि सर्वपाप- निमित्तं कारितान्नोत्सर्गम् 'कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं' कृतकौतुकमङ्गलपाय- श्चित्तं=दृष्टिशोषादिनिवारणार्थं कृतमपी तिलकादिकं सर्वालंकारविभूषितं करोति.

डिम्भएहि य डिम्भियाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारेहि य कुमारि- याहि य सद्धिं संपरिघुडे अभिरममाणे अभिरमइ) अनेक डिम्भकों के— छोटेऽवालकों के साथ अनेक छोटी २ वालिकाओं के साथ, अनेक दारकों के साथ—डिम्भकों की अपेक्षा कुछ अधिक उमरवाले वालकों के साथ कुछ अधिक अनेक दारिकाओं के साथ, अनेक कुमार और कुमारिकाओं के साथ उनसे युक्त होकर क्रीडा किया करता था । अर्थात् उन सबके साथ मिलकर वह उस देवदत्त बालक को खिलाया करता था । (तएणं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कय- कोउयमंगलपायाच्छित्तंसञ्चालंकारविभूसियं करेइ) एक दिन की बात है कि उस भद्रा सार्थवाही उस देवदत्त नामके अपने पुत्र को स्नान करवा कर तथा उसके निमित्त से वायसादि पक्षियों को अन्नादि का भागरूप बलिकर्म कर एवं कौतुक, मंगल और प्रायश्चित्त विधि समा-

जाणाभां जेसादीने (बहूहिं डिंभएहि य डिंभियाहे य दारएहि य दारि- याहि य कुमारेहि य कुमारियाहि य सद्धिं संपरिघुडे अभिरममाणे

अभिरमइ) अनेक डिंलडे—नाना नानां घणुं जाणडेनी साथे—नानी नानी जाणा- ओनी साथे, घणु दारकेनी साथे ओटवे डे डिंलडे क-तां जरा मोटी ठंभर वाणा जाणडेनी साथे—घणु दारिकाओनी साथे, घणु कुमार अने कुमारिकाओनी साथे भणीने रमतो रमाउतो हुतो. ओटवे डे पांथक णधां जाणडेनी साथे भणीने देवदत्त रमाउतो हुतो. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं

दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकार- विभूसियं करेइ) ओक दिवस भद्रा सार्थवाहीजे पोताना जाणक देवदत्तने नव- अवीने ते निमित्ते डागडा वगेरे पक्षीओने अन्न वगेरेने लाग अर्पिने, कौतुक, मंगल अने प्रायश्चित्त विधि पूरी करी अने त्यार जाह जाणकने सुंदर धरेणुंओथी



चेटं 'पमतं' प्रमतम् अन्यत्र संलग्नचित्तं पश्यति, इष्टा दिशाञ्जोयं दिशाञ्जो  
कम्— 'अस्मिन्नवसरे कस्यापि गमनागमनमस्ति न वा ?' इति सकलदिशा  
निरीक्षणं करोति, कृत्वा देवदत्तं दारकं गृह्णाति, गृहीत्वा 'कक्खंसि' कक्षे=  
चाह्मूळे 'अल्लियावेइ' आलीनयति=अन्तर्धानं करोति आलीनयित्वा 'उत्त-  
रिज्जेणं' उत्तरीयेण=उपरिचस्त्रण 'दुपट्ठा' इति भाषायां, तेन 'पिहेइ' पिह-  
धाति,=प्रच्छादयति, प्रच्छाद्य शीघ्रं त्वरितं चपलं वेगितं=शीघ्रातिशीघ्रमित्यर्थः  
राजगृहस्य नगरस्यापद्वारेण निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव जीर्णोद्यान. यत्रैव  
भग्नकूपकस्तत्रैवोपागच्छति. उपागत्य देवदत्तं दारकं 'जीवियाओ' जीविनात्

छित्त हा गया--ग्रायत हा गया--उनमें एकाग्र बन गया, अथवा गृह--  
लुब्ध हो गया--इन्हें मैं छेड़ूँ इस स्थिति से युक्त हुए उसने साथ  
में पंथक दास चेटक का भी अन्यत्र संलग्न चित्तवाला देवा (पासित्ता  
दिशाञ्जोयं करेइ करित्ता देवदिन्नं दारयं गेण्हइ) देखकर फिर उसने दिशा-  
वलोकन किया--आजू बाजू को ओर इधर उधर देखा की कहीं से कोई  
आता जाता तो नहीं है, जब कोई कहीं नहीं दिखाईपड़ा तो उसने  
उसी समय उस देवदत्त दारक को उठा लिया। (गेण्हित्ता कक्खंसि  
अल्लियावेइ, अल्लियावित्ता उत्तरिज्जेणं पिहेइ) उठाकर फिर उसने उसे  
अपनी काँख में छुपा लिया। छुपाकर बाद में उसे दुपट्ट से ढक किया  
(पिहित्ता सिग्घं, तुरियं चवलं चेइयं रायगिहस्स नयरस्स अवदारेणं निग्गच्छइ)  
ढक कर वह फिर वहाँ से शीघ्र, त्वरित, जल्दी जल्दी राजगृह नगर के  
अगद्वार पिछले द्वार २ से बाहर निकला (निग्गच्छित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव

पासइ) देवदत्तने णहु भूय धरेणुंओथी अलंकृत लेधने ते मोडवथ थछ गथो,  
तेनुं यित्त धरेणुंओमां न् थोटी गथुं अथवा तो ते बोलाछ गथो. आ धरेणु-  
ओने हुं डरी लडं आ नतनो विचार तेना मनमा स्कुथो. थारे दास चेटक  
पंथकने पणु त्यां थोडे दूर रमतमां तड्डीन लेथो. (पासित्ता दिशाञ्जोयं करेइ करित्ता  
देवदिन्नं दारयं गेण्हइ) पंथकने लेथो पछी तेणु थोमेर लेथुं डे डोछ आवतुं  
तो नथी ? न् थारे तेने डोछ देणायुं नडि. थारे तेणु तरत आणक देवदत्तने उपाडी  
दीथो. (गेण्हित्ता कक्खंसि अल्लियावेइ अल्लियावित्ता उत्तरिज्जेणं पिहेइ) उपाडीने  
तेणु आणकने पडणामां छुपावीने तेने दुपट्ठाथी ढांडी दीथो. (पिहित्ता सिग्घं तुरियं  
चांउ चेइयं रायगिहस्स नयरस्स अवदारेणं निग्गच्छइ) ढांडीने ते सत्तरे  
त्वरित गतिथी राजगृह नगरना अपद्वारथी अडार नीकणी गथो. (निग्गच्छित्ता  
जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव भग्नकूपे तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने ते  
ते न् थ्यां नूनुं उद्यान अने लग्न द्वेो डतो त्यां पछोंओ. (उवागच्छित्ता

अयं च खलु विजयस्तस्करो राजगृहस्य नगरस्य बहूनि दाराणि च  
 'अवदाराणि य' अपदाराणि=लघुदाराणि च 'तदेव तथैव=पूर्वदेवात्र सर्वस्था-  
 नानि वाच्यानि यावत् 'आभोएमाणे आभोगयन्=सोपयोगमवलोकयन् मार्ग  
 यमाणो गवेपयमाणो यथैव देवदत्तो दारकस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य देवः तं  
 दारकं सर्वालङ्कारविभूषितं पश्यति, दृष्ट्वा देवदत्तस्य दारकस्याभरणालङ्कारेषु  
 'मुच्छिष्टे' मूर्च्छितः=कर्तव्यव्यापारशून्यः 'गद्विष्टे' ग्रथितः=एकाग्रतामापन्नः,  
 'गिद्वे' गृद्धः=लुब्ध 'अज्ज्ञोववन्ने' अध्युपपन्नः=ममत्वबहुलः पान्थकं दाम

उस देवदत्त दारक को एकांत में छोड़ दिया और स्वयं उन डिम्बक  
 यावत् कुमारिकाओं के साथ घिरा हुआ होकर प्रमादवान् बन गया—  
 अर्थात् उन बालक बालिका आदिकों के—साथ अन्यत्र खेलने लग गया ।  
 (इमंच णं विजए तक्करे रायगिहस्स नगरस्स बहूणि दाराणि य अवदाराणि  
 य तहेव जाव आभोएमाणे मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव--देव  
 दिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ) इतने में विजय तस्कर राजगृह नगर के  
 अनेक द्वारों को अनेक छोटे २ द्वारों को पड़िले की तरह उपयोग पूर्वक  
 देखता हुआ उन्हें चार २ तपासता हुआ, सूक्ष्मदृष्टि से उनकी गवे-  
 पणा करता हुआ जहां वह देवदत्त दारक था वहां आया । (उवागच्छित्ता  
 देवदिन्नं दारगं सव्वालंकारविभूसियं पासइ) आकर उसने देवदत्त दारक  
 को समस्त अलंकारों से विभूषित हुआ देखा । (पासित्ता देवदिन्नस्स  
 दारगस्स आभरणालंकारेसु मुच्छिष्टे गद्विष्टे गिद्वे अज्ज्ञोववन्ने पंथयं दास-  
 चेडं पमत्तं पासइ) देखकर के वह देवदत्त के आभरण और अलंकारों में मू-  
 विहरइ) त्यां पडोन्थीने तेण्णे देवदत्तने प्रमाद वश थधने ऐकांत ज्ज्याये भूझी  
 दीधो अने पोते ते जघा डिम्बक, डिम्बिका, कुमार अने कुमारिकायेनी साथे  
 रमतमां पडी जये. ऐटवे डे तेमनी साथे रमवा लाग्थे. (इमंच णं विजए  
 तक्करे रायगिहस्स नगरस्स बहूणि दाराणि य अवदाराणि य तहेव जाव  
 आभोएमाणे गवेसमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ)  
 ऐटलाभां विजय नामे ते तस्कर (थार) राजगृह नगरना अनेक दरवाजाये,  
 अनेक नाना दरवाजायेने पडेलानी जेम ज थोरीनी ताकमां जीणी नजरे तपासतो  
 जेतो--ज्यां जाणक देवदत्त डतो त्यां आग्थे. (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारगं  
 सव्वालंकारविभूसियं पासइ) त्यां आवतांनी साथे ज तेण्णे जाणक देवदत्तने  
 सर्वालंकारोथी अलंकृत थयेवे जेतो. (पासित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स आभरणा-  
 लंकारेसु मुच्छिष्टे गद्विष्टे गिद्वे अज्ज्ञोववन्ने पंथयं दासचेडं पमत्तं

मूलम्--तएणं से पंथए दासचेडे तओ मुहुत्तंतरस्स जेणेव  
 देवदिन्ने दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं  
 दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे देव-  
 दिन्नस्स दारगस्स सब्बओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ करित्ता देव-  
 दिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे  
 जेणेव सए गिहे जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवाग-  
 च्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-एवं खलु सामी ! भद्दा सत्थ-  
 वाही देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हत्थंसि दलयइ, तएणं अहं  
 देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि गिण्हित्ता जाव, मग्गणगवेसणं करेमि  
 तं न णज्जइ णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हये वा अवहिए वा  
 अवचित्ते वा पायवडिए धण्णस सत्थवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ, त . णं  
 से धण्णे सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तेण य  
 महया पुत्तसोएणाभिभूये समाणे परसुणियत्तं चंपगपायवे धसत्ति  
 धरणीतलंसि सब्बंगेहिं सन्निवइए, तएणं मे धण्णे सत्थवाहे तओ  
 मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सब्बओ  
 समंता मग्गणगवेसणं करेइ देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा  
 खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ,  
 उवागच्छित्ता महत्थं पाहुडं गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव नगरगुत्तिया  
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता  
 एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम पुत्ते भद्दाए भारियाए अत्तए  
 देवदिन्ने नाम दारए इट्ठे जाव उंवरपुप्फंपिव दुल्लहे सवणयाए किमंग



माणेभ्यः ववरोवेइ' वपरोपयात=पृथक्कराति मरयतात्यथः, जीविता-  
 द्यपरोप्य आभरणालङ्कारान् गृह्णाति, गृहीत्वा देवदत्तास्य दारयकस्य शरीरं  
 'निष्पाणं' निष्पाणम्=श्वासोच्छ्वासादि माणरहितं 'निच्चेदं' निश्चेष्टं=जीवनव्यापार-  
 रहितं 'जीवविप्पजहं' 'जीवविप्रत्यक्तम्=आत्मप्रदेशरहितं देवदत्तादारकशरीरं भग्नकूपे  
 प्रक्षिपति, प्रक्षिप्य यत्रैव मालुकाकक्षकस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य मालुकाकक्ष-  
 कमनुप्रविशति, अनुप्रविश्य 'निच्चले' निश्चलः=गमनागमनादिवर्जितः 'निष्फंदे'  
 निष्पन्दः=हस्तपादाद्यवयवचलनरहितः 'तुसिणीए' तूष्णीकः=वचनव्यापार-  
 रहितः सन् दिवसं=तदिनं 'खवेमाणे' क्षपयन्=गमयन् तिष्ठति ॥सू० ७॥

भग्नकूपे, तेणैव उवागच्छइ) निकल कर वहां गया कि जहां वह जीर्ण  
 उद्यान और भग्न कूप था। (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं जीवियाओ  
 ववरोवेइ) वहां पहुँच कर उसने उस देवदत्त दारक को मार डाला।  
 (ववरोवेत्ता आभरणालंकारे गिण्हइ, गिण्हित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरं  
 निष्पाणं निच्चेदं जीवियविप्पजहं भग्नकूपे पक्खिवइ) मार कर उसके  
 नष्टआभूषण उतार लिये--और देवदत्त दारक के उस निष्पाण, निश्चेष्ट  
 तथा आत्मप्रदेशों से विहीन बने हुए शरीर को भग्नकूप में डाल दिया।  
 (पक्खिवित्ता जेणैव मालुया कच्छए तेणैव उवागच्छइ उवागच्छित्ता  
 मालुया कच्छए अणुपविसइ, अणुपविसित्ता निच्चले निष्फंदे तुसिणीए  
 दिवसं खवेमाणे चिदइ) डालकर फिर वह जहां मालुका कक्ष था वहां  
 आया। आकर वह उसमें प्रविष्ट हुआ--और उसी में चुपचाप घुसे  
 उसने निश्चल और निश्चेष्ट होकर वह अपना दिन व्यतीत--किया। ॥सूत्र ७॥

देवदिन्नां दारय जीवियाओ ववरोवेइ) त्यां पडोन्थीने तेण्णे णाण्डं देवदत्तने भारी  
 नाण्णो. (ववरोवेत्ता आभरणालंकारे गिण्हइ गिण्हित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स  
 सरीरं निष्पाणं निच्चेदं जीवियविप्पजहं भग्नकूपे पक्खिवइ) भारीने  
 तेनां णधां धरेण्णो तेण्णे उतारी वीधां अने तेना निष्पाण, निश्चेष्ट तेमज्ज आत्म  
 प्रदेशो वगरना शरीरने भग्न कूपमां इक्षी दीधुं. (पक्खिवित्ता जेणैव मालुया  
 कच्छए तेणैव उवागच्छइ उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अनुपविसइ  
 अणुपविसित्ता निच्चले निष्फंदे तुसिणीए दिवसं खवेमाणे चिदइ).  
 (इक्षीने ते न्यां मालुका कक्ष इतो त्यां गयो. न्धने तेमां प्रवेशीने तेण्णे थप  
 थाप निश्चल अने निश्चेष्ट थधने पोतने दिवस पसार ठयो. ॥ सूत्र ७ ॥

मूलम्--तएणं से पंथए दासचेडे तओ मुहुत्तंतरस्स जेणेव  
 देवदिन्ने दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं  
 दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे देव-  
 दिन्नस्स दारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ करित्ता देव-  
 दिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे  
 जेणेव सए गिहे जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवाग-  
 च्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी--एवं खलु सामी ! भद्दा सत्थ  
 वाही देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हत्थंसि दलयइ, तएणं अहं  
 देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि गिण्हित्ता जाव, मग्गणगवेसणं करेमि  
 तं न णज्जइ णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हये वा अवहिए वा  
 अवसित्ते वा पायवडिए धण्णस सत्थवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ, त . णं  
 से धण्णे सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तेण य  
 महया पुत्तसोएणाभिभूये समाणे परसुणियत्तं चंपगपायवे धसत्ति  
 धरणीतलंसि सव्वंगेहिं सन्निवइए, तएणं मे धण्णे सत्थवाहे तओ  
 मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वओ  
 समंता मग्गणगवेसणं करेइ देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा  
 खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ,  
 उवागच्छित्ता महत्थं पाहुडं गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव नगरयुत्तिया  
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता  
 एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम पुत्तेभद्दाए भारियाए अत्तए  
 देवदिन्ने नाम दारए इट्ठे जाव उंवरपुप्फंपिव दुल्लहे सवणयाए किमंग

पुण पासणयाए?, तएणं सा भद्दा देवदिन्नं दारयं सव्वालंकारविभू-  
 सियं पंथगस्स हत्थे दलाइ जाव पायवडिए तं मम निवेदेइ, तं इच्छा  
 मिणं देवाणुप्पिया! देवदिन्नदारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं  
 काउं। तएणं ते नगरगुत्तिया धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणा  
 सन्नद्धवद्धवम्मियकवया उप्पीलियसरासणवट्टिया जाव गहियाउयप-  
 हरणा धण्णेणं सत्थवाहेणं सद्धिं रायगिहस्स नगरस्स बहूणि अइ-  
 गमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ  
 नगराओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमिन्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव  
 भग्गकूवए तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स  
 सरीरगं निप्पाणं जीवविप्पजढं पासंति, पासित्ता हा हा अहो अक-  
 ज्जमितिकहु देवदिन्नं दारगं भग्गकूवाओ उत्तारंति उत्तारित्ता धण्णस्स  
 सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति ॥सू० ८॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि। ततःखलु स पान्थको दासचेटकः,  
 ‘तओ मुहुत्तंतरस्स’ ततो मुहूर्तान्तरस्य=मुहूर्तान्तरं यत्र देवदत्तो दारकस्थापि  
 तस्तत्रैवोपागच्छंति, उपागत्य देवदत्तं दारकं तस्मिन् स्थाने ‘अपासमाणे’ अपश्यन्

‘तएणं से पंथए दासचेडे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इसके बाद (से पंथए दासचेडे) वह पान्थकदासचेटक  
 (तओ) वहाँ से (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिन्ने दारए ठविए तेणेवाउवग-  
 च्छइ) एक मुहूर्त के बाद जहाँ देवदत्त को बैठाया था वहाँ—गया  
 (उवागच्छित्ता देवदिन्न दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंद-

तएणं से पंथए दासचेडे इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्थार गाए (से पंथए दासचेडे) पान्थक दास चेटक (तओ)  
 त्यांथी (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिण्णे दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ)  
 ओक मुहूर्त पछी जयां देवदत्तने जेसाउये उतो त्यां गये। (उवागच्छित्ता  
 देवदिन्नं दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंद-



‘रोयमाणे’ रुदन=साश्रुपातमार्तनाद कुर्वन्, ‘कंदमाणे’ क्रन्दन्=उच्चैः स्वरेण रुदन ‘विलवमाणे’ विलपन्=‘कगतो दारकः? तमन्तरेण कीदृशोऽनर्थो भविष्यति किं करोमि? क गच्छामि?’ इति जल्पन् देवदत्तस्य दारकस्य सर्वतः समन्तान् मार्गणगवेपणां करोति कृत्वा देवदत्तस्य दारकस्य कुत्रापि ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा=दारकवृत्तान्तं ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा छिक्काद्यव्यक्तं तच्चिह्नम्, ‘पउत्तिवा’ पवृत्तिं वा=पकटतरवार्ताम् ‘अलभमाणे’ अलभमानः=अप्राप्नुवन् यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति

माणे विलवमाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेइ) जाकर उसने उस स्थानपर देवदत्त दारक को नहीं देखा—तो रो पड़ा अश्रु पात करता हुआ आर्तनाद करने लग गया जोर २ से चिल्ला चिल्ला कर रोने लगा, विलाप करने लगा— देवदत्त दारक कहाँ गया—अब—उसके बिना कैसा अनर्थ होगा, क्या करूँ—कहाँ—जाऊँ—इस प्रकार बड़बड़ाने लगा—बाद में उसने उम् देवदत्त की वहाँ सब तरफ चारों ओर मार्गणा की गवेपणा की। (करिन्ता देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइंवा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) करके जब उसे उस देवदत्त दारक की कोई श्रुति नहीं सुनाई दी, छिक्कादि अव्यक्त चिन्ह भी नहीं ज्ञात हो सका तथा स्पष्ट उसकी किसी बात का पता नहीं पड़ा तो वह जहाँ अपना घर था— और जहाँ धन्य सार्थवाह थे— वहाँ आया (उवागच्छिता धणं सत्थवाहं एवं वयासी) आकर धन्य सार्थ-

देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेइ) त्यां जधने ते आण्ड देवदत्तने नडि जेतां उवा भांड्यो. विलाप करवा लाग्यो. “आण्ड देवदत्त कथां जतो रह्यो? ते वगर डवे शुं थथे? शुं डरुं? डवे कथां जठं? “आ प्रमाणो ते दुःखी थछिने विचार करवा लाग्यो. त्थार पछी तेणो योमेर आण्ड देवदत्तनी तपास करी अने शोध करी. (करिन्ता देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइंवा पउत्तिंवा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) शोध करवाभां ज्यारे तेने देवदत्तनो उवा वगेरेनो अवाज तेमज छीं वगेरेनी अव्यक्त ध्वनी संलणार्थ नडिं अने आण्डनो डोछ पणु रीते पत्तो मेणवी शक्यो नडि त्थारे ते जथां तेनुं घर डतुं अने धन्य सार्थवाहु डता त्यां आग्यो. (उवागच्छिता धणं सत्थवाहं एवं वयासी)

पुण पासणयाए?, तएणं सा भद्दा देवदिन्नं दारयं सव्वालंकारविभू-  
 सियं पंथगस्स हत्थे दलाइ जाव पायवडिए तं मम निवेदेइ, तं इच्छा  
 मिणं देवाणुप्पिया! देवदिन्नदारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं  
 काउं। तएणं ते नगरगुत्तिया धणणेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणा  
 सन्नद्धवद्धवम्मियकवया उप्पीलियसरासणवट्टिया जाव गहियाउयप-  
 हरणा धणणेणं सत्थवाहेणं सद्धिं रायगिहस्स नगरस्स बहूणि अइ-  
 गमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ  
 नगराओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमिन्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव  
 भग्गकूवए तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स  
 सरीरगं निप्पाणं जीवविप्पजढं पासंति, पासित्ता हा हा अहो अक-  
 ज्जमितिकहु देवदिन्नं दारगं भग्गकूवाओ उत्तारेंति उत्तारित्ता धणस्स  
 सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति ॥सू० ८॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि। ततःखलु स पान्थको दासचेटकः,  
 ‘तओ मुहुत्तंतरस्स’ ततो मुहूर्तान्तरस्य=मुहूर्तान्तरं यत्र देवदत्तो दारकस्थापि  
 तस्तत्रैवोपागच्छंति, उपागत्य देवदत्तं दारकं तस्मिन् स्थाने ‘अपासमाणे’ अपश्यन्

‘तएणं से पंथए दासचेडे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इसके बाद (से पंथए दासचेडे) वह पान्थकदासचेटक  
 (तओ) वहाँ से (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिन्ने दारए ठविए तेणेवाउवग-  
 च्छइ) एक मुहूर्त के बाद जहाँ देवदत्त को बैठाया था वहाँ—गया  
 (उवागच्छित्ता देवदिन्न दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंद-

तएणं से पंथए दासचेडे इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्वात्त आह (से पंथए दासचेडे) पान्थक दास चेटक (तओ)  
 त्वांथी (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिण्णे दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ)  
 ओक मुहूर्त पछी जहाँ देवदत्तने जेसाउथो हुतो त्वां गयो. (उवागच्छित्ता  
 देवदिन्नं दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलयमाणे

‘रोयमाणे’ रुदन=साश्रुपातमार्त्तनाद कुर्वन्, ‘कंदमाणे’ कन्दन्=उच्चैः स्वरेण रुदन ‘विलवमाणे’ विलपन्=‘कगतो दारकः? तमन्तरेण कीदृशोऽनर्थो भविष्यति किं करोमि? क गच्छामि?’ इति जल्पन् देवदत्तस्य दारकस्य सर्वतः समन्तान् मार्गणगवेपणां करोति कृत्वा देवदत्तस्य दारकस्य कुत्रापि ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा=दारकवृत्तान्तं ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा छिकाव्यव्यक्तं तच्चिह्नम्, ‘पउत्तिवा’ प्रवृत्तिं वा=पकटतरवार्ताम् ‘अलभमाणे’ अलभमानः=अप्राप्नुवन् यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति

माणे विलवमाणे देवदिग्नास्स दारगस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेइ) जाकर उसने उस स्थानपर देवदत्त दारक को नहीं देखा—तो रो पड़ा अश्रु पात करता हुआ आर्तनाद करने लग गया जोर २ से चिल्ला चिल्ला कर रोने लगा, विलाप करने लगा— देवदत्त दारक कहाँ गया—अब—उसके बिना कैसा अनर्थ होगा, क्या करूँ—कहाँ—जाऊँ—इस प्रकार बड़बड़ाने लगा—वाद में उसने उम् देवदत्त की वहाँ सब तरफ चारों ओर मार्गणा की गवेपणा की। (करित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइंवा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) करके जब उसे उस देवदत्त दारक की कोई श्रुति नहीं सुनाई दी, छिकादि अव्यक्त चिन्ह भी नहीं ज्ञात हो सका तथा स्पष्ट उसकी किसी बात का पता नहीं पड़ा तो वह जहाँ अपना घर था— और जहाँ धन्य सार्थवाह थे— वहाँ आया (उवागच्छित्ता धणं सत्थवाहं एवं वयासी) आकर धन्य सार्थ-

देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेइ) त्यां जधने ते णाण्ड देवदत्तने नडि जेतां रउवा भांडये. विलाप करवा लाग्यो. “णाण्ड देवदत्त कथां जतो रह्यो? ते वगर हुवे शुं थये? शुं डरुं? हुवे कथां जठं? “आ प्रमाणो ते दुःखी थधने विचार करवा लाग्यो. त्थार पछी तेणो योमेर णाण्ड देवदत्तनी तपास करी अने शोध करी. (करित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइंवा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) शोध करवाभां ज्यारे तेने देवदत्तनो रउवा वगेरेने. अवाज तेमज छीं वगेरेनी अव्यक्त ध्वनी संलणार्थ नडिं अने णाण्डनो डोछ पण् रीते पत्तो मेणवी शक्यो नडि त्थारे ते जथां तेणुं घर हुतुं अने धन्य सार्थवाहु हुता त्यां आय्यो. (उवागच्छित्ता धणं सत्थवाहं एवं वयासी)



ઉપગત્ય ધન્યં સાર્થવાહમેવમવાદીત્—(૧)—(૨) ! સ્વામિન્ મદ્રા  
સાર્થવાહી દેવદત્તાં દારકં ગ્નાતં યાવન્મમ હસ્તે દદાતિ, તતઃ સ્વલુ અહં  
દેવદત્ત દારકં કટયાં ગૃહ્ણામિ, ગૃહીત્વા યાવત્—માર્ગણગવેષણાં કરોમિ,  
તન્ન જ્ઞાયતે સ્વલુ સ્વામિન્ ! દેવદત્તો દારકઃ કેનાપિ 'ખીણ્યા' નીતઃ=  
મિત્રાદિના કુત્રાપિ ગુપ્તસ્થાને પ્રાપ્તિઃ 'અવહિણ વા' અપહ્નતઃ=ચોરાદિના  
ચોરિતઃ 'અવસ્થિવત્તે વા' અવસ્થિતઃ=અધોગતાર્તાદિપુ ક્ષિપ્તો વા ! ઇતિ મોચ્ય  
'પાયવઙ્કિણ' પાદપતિતઃ=ચરણલગ્નઃ સન્ ધન્યસ્ય સાર્થવાહસ્ય એતમર્થ  
'નિવેદેઃ' નિવેદયતિ=દારકટુત્તાન્તં કથયતિ । તતઃ સ્વલુ સ્વ ધન્યઃ સાર્થવાહઃ

વાહ સે इस प्रकार कहा--(एवं स्वलु सामी भद्रा सत्यवाही देवदिन्नं  
दारयं ण्हायं जाव मम हत्यंसि दलयइ) हे स्वामिन् ? मेरी बात सुनिये  
भद्रा सार्थवाहीने देवदत्त दारक को स्नान करा कर तथा वेप भूपा से  
सुसज्जित कर मेरे हाथ में दिया-- (तएणं अहं देवदिन्नं दारयं कडीए  
गिण्हामि) मैने उसे कटि भाग पर ले लिया (गिण्हित्ता जाव मग्गणगवेसणं  
करेमि तं न णज्जइ) उसे लेकर मैं कोई कुमार कुमारीका-आदिकों के  
साथ खेलनेमें लग-गया--खेलने के थोड़ी देर बाद ज्यों ही मैंने उस  
स्थान पर आकर देखा तो मुझे वहाँ देवदत्त दारक नहीं मिला है ।  
(णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हये वा अवहिण वा अवस्तिवत्ते वा पाय-  
वडिण धणस्स सत्यवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ) अतः हे स्वामिन् ? नहीं  
मालूम कि--देवदत्त दारक को वहाँ से किसी मित्रनेकहीं अन्यत्र रख  
दिया है या किसी चोर ने उसे वहाँ से हर लिया है या किसी खड्डे

આવીને ધન્યસાર્થવાહને આ પ્રમાણે કહ્યું--(एवं स्वलु सामी भद्रा सत्यवाही  
देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हत्यंसि दलयइ) हे स्वामी ! आणक देव-  
दत्तने नवरावीने सुंदर वस्त्रો तेमज धरेणुंओथी अवंकृत करीने, ભદ્રા સાર્થવાહીએ  
મને સોંપ્યો હતો. (तए णं अहं देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि)  
મે' તેને કેડમાં લીધો. (गिण्हित्ता जाव मग्गणगवेसणं करेमि ण जज्जइ)  
આણકને લઈને હું કેટલાક કુમાર કુમારિકાઓ વગેરેની સાથે રાજમાર્ગ ઉપર ગયો.  
ત્યાં આણકને એક તરફ બેસાડીને હું તે બધા આણક અને આણાઓની સાથે રમતમાં એક  
થિત થઈ ગયો. રમતાં રમતાં થોડો વખત પસાર થયો ત્યારે મેં જે સ્થાને આણકને બેસા  
ડ્યો હતો. ત્યાં જઈને જોયું તો મને આણક દેવદત્ત મળ્યો નહિ. (णं सामि ! देव-  
दिन्ने दारए केणइ हये वा अवहिण वा अवस्तिवत्ते वा पायवडिण धणस्स  
सत्यवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ) તેથી હે સ્વામી ! કંઈ ખબર પડતી નથી.  
હે આણકને આપણા કેઈ જ મિત્રે લઈને કંઈ બીજે મૂકી દીધો છે કે કેમ, ચોરે

पांथकदासचटकस्य एतमथ श्रुत्वा निशम्य ततः च महता पुत्रशोकन  
,अभिभूए' अभिभूतः=आक्रान्तः सन् 'परसुणियत्तेव' परशुनिकृत्त इव  
परशुना=कुठारेण निकृत्तः=छिन्नः 'चंपगपायवेव' चम्पकपादप इव=चम्पक  
वृक्ष इव 'धसत्ति धरणीतलमि' 'धस' इति शब्देन भूमितले 'सव्वंगेहि'  
सर्वाङ्गैः 'संनिवड्ए' संनिपतितः । ततः न्वत्तु स धन्यः सार्थवाहः 'ततो  
मुहुत्तंतरस्स' ततो मुहूर्तान्तरम्य=मुहूर्तस्य पश्चात् मुहूर्तान्तरमित्यर्थः  
'आसत्थे' आश्वस्थः. आश्वस्तो वा=मासचेष्टः 'पच्छागयपाणे' पश्चादाग-  
तप्राणः=पूर्वं मृतप्राण इव भूत्वा पुनर्जागरितप्राणः सन् देवदत्तस्य दारकस्य  
'सव्वओ समंता' सर्वतः समन्तान्=सर्वासु दिशासु मार्गगवेपणं करोति,

आदि में डाल दिया है । इस प्रकार कह कर वह धन्य सार्थवाह के  
पैरोंपर गिर पड़ा । (तएणं से धन्ने सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं  
सोच्चा णिमम्म तेणय महया पुत्तसोएणा भिभूए समाणे परसुणियत्ते चंपगपायवे  
धसत्ति धरणीतलमि सव्वंगेहि संनिवड्ए) इस प्रकार वह धन्य सार्थवाह  
पांथक दासचेटक से इस अर्थ—समाचार—को सुनकर और उसे हृदय में अव-  
धृतकर उस महान् पुत्र शोक से युक्त होता हुआ परशु कुठार से काटे गये चंपक  
वृक्षके समान समस्त अंगों से इकदम जमीन पर गिर पड़ा । (तएणं  
से धन्ने सत्थवाहे तओ मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे  
देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेस्सणं करेइ) बाद में  
वह धन्य सार्थवाह १ मुहूर्त के बाद आश्वस्त हुआ ऐसा उस समय  
मालूम हुआ कि मानों इसमें प्राण लौटकर पुनः आ गये हैं—  
अपने पुत्र देवदत्त की सब तरफ चारों दिशाओं में मार्गणा गवेपणा  
तेनुं अपहरणुं कथुं छे. अथवा जाणकने डोछं दुष्टे जाडा वगेरेमां हे'डी दीधा छे.  
आ रीते कहेतां ते धन्यसार्थवाडना पगे पड्यो. (तए णं से धण्णे सत्थवाहे  
पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तेणय महया पुत्तसोएणाभि  
भूये समाणे परसुणियत्तेव चंपगपायवे धसत्ति धरणीतलमि सव्वंगेहि  
संनिवड्ए) आ प्रभाणे धन्य सार्थवाडे पांथकदास चेटकना मोढथी अधी विगत  
सांलणीने तेने भराभर हृदयमां धारणुं करीने भडान पुत्रशोकथी पीडातो कुडा-  
दीथी आपेला थंयाना वृक्षनी जेम ते पृथ्वी उपर पडी गयो, (त एणं से धण्णे  
सत्थवाहे तओ मुहुत्तंतरस्स आमस्थे पच्छागयपाणे देवदिन्नस्स दार  
गस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेस्सणं करेइ) त्थार जाद ओक मुहुत्तं  
पछी धन्य सार्थवाड लानमां आव्यो. ते वणते जण्णे इरी तेओमां प्राणुनुं संध-  
युं डोय तेम लायुं. जिलो थधने ते पोताना पुत्र देवदत्तनी ओमेर तपास

देवदत्तस्य दारकस्य कुत्रापि शुक्ति वा क्षुक्ति वा मृत्ति वा अलभमानो यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य 'महत्थं' महार्थं=बहुमूल्यं 'पाहुडं' प्राप्तम्=उपहारं गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव 'नगरगुप्तिया' नगर गोप्तृकाः=नगररक्षकाः कोटपाला इत्यर्थः तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तन्महार्थं प्राप्तम् 'उवणेइ' उपनयति तेषां समीपे स्थापयति, उपनीय एवमवादीत् एवं खलु देवानुमियाः ! मम पुत्रो भद्राया भार्याया आत्मजो देवदत्तो नाम दारकः 'इहे इष्टः=अभिलषितः यावत् 'उंवरपुष्पं पिव' दुल्लहे सचणयाए किमंगपुणपासणयाए' उदुम्बरपुष्पमिव दुर्लभः श्रव-

काने मेलग गया-परन्तु (देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइ वा खुं वा पउत्ति वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) देवदत्तदारक की उसे कहीं पर भी कुछ भी खबर नहीं मिली, छिका आदि चिह्न भी उसका उसे कहीं दिखलाई नहीं दिया--और न उसकी किसी बात का ही ठीक २ उसे पता पडा। इस तरह निराश होकर वह अपने घर पर आ गया। (उवागच्छिता महत्थ पाहुडं गेहइ, गेह्णिता जेणेव नगरगुप्तिया, तेणेव उवागच्छइ) घर आकर उसने बहुमूल्य प्राप्त लिया और लेकर जहां नगर के रक्षक कोटपाल थे वहां गया--(उवागच्छिता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणिता एवं वयासी)--जाकर उसने वह बहुमूल्य नजराना उन्हें भेटमें दिया--देकर फिर इस प्रकार बोला (एवं खलु देवानुमिया ! मम पुत्तो भद्राए भारियाए अत्तए-देवदिन्ने नामं दारण इहे जाव उंवरपुष्पं पिव दुल्लहे सचणयाए किमंग पुण

करवा लाग्यो. પણ (देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइ वा खुइ वा पउत्ति वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) आजक देवदत्त तेने क्यांथ देआयो नहि. आजकना छीं'क वगेरेना अन्यक्त चिट्ठां पणु कोठपणु स्थाने संलणया नहि. आ रते धन्य सार्थवाहुने आजक देवदत्त विशेनी थोडी पणु भाडिती भणी थडी नहि. अंते निराश थधने ते पोताने घेर पाछा इथी. (उवागच्छिता 'महत्थं' पाहुडं गेहइ, गेह्णिता जेणेव नगर गुणाया, तेणेव उवागच्छइ) घेर आवीने तेणे जहुं द्रव्य वीधुं अने नगररक्षक कोटवाणनी पावे गये. (उवागच्छिता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणिता एवं वयासी) जधने तेणे जहुं'भती नजराना कोटवाणने लेटमां आभ्यां अने जहुं--(एवं खलु देवानुमिया ! मम पुत्त भद्राए भरियाए अत्तए देवदिन्ने नाम दारण इहे जाव उंवरपुष्पं पिव दुल्लहे सचणयाए किमंगपुणपासणयाए ?) हे देवानुमिया ! सांजणे-



गतया किम्पु पुनर्दर्शनेन तया=अयमुदुम्बरपुष्पवत् श्रवणगाचरतया दुर्लभः  
किं पुनर्दर्शनेन. तस्य नाम श्रवणमपि दुर्लभं वर्तते दर्शनस्य का कथे  
ति भावः । ततः खलु=एकदा सा भद्रा भार्या देवदत्तं दारकं स्नातं  
सर्वालङ्कारविभूषितं पाण्ड्यकस्य हस्ते ददाति यावत् पादपतितस्तन्मम निवे-  
दयति. तत्=तस्मात् कारणात् इच्छामि खलु हे देवानुप्रियाः देवदत्तस्य  
दारकस्य सर्वतः समन्तान्मार्गणगवेपणं कर्तुम् । ततः खलु ते नगर-

पासणयाए) हे देवानुप्रियो ! सुनो ! भद्रा भार्या की कुक्षि से उत्पन्न  
हुआ देवदत्त नामक मेरा एक पुत्र है जो विशेष इष्ट यावत् उदुम्बर  
पुष्प के समान सुनने के लिये भी मुझे दुर्लभ था । उसके देखने  
को तो बात ही क्या है (तएणं सा भद्रा देवदिन्नं दारयं ण्हायं सव्वा-  
लंकारविभूसियं पंथगस्स हत्थे दलाइ) उस देवदत्त दारक को भद्रा भार्याने  
स्नान करा कर और समस्त अलंकारों से विभूषित कर पाण्ड्य के  
हाथमें दिया । (जाव पायपडिए तं मम निवेदेइ) वह उसे गोद में  
लेकर क्रीडा के लिये राजमार्ग ले गया साथ में और भी कई बालक  
वालिकाये थीं--उसने वहाँ जाकर उसे एक तरफ एकांत स्थान में  
रख दिया और स्वयं उन बालक वालिकाओं के साथ खेलने लग गया ।  
थोड़ा समय बाद जब वह वहाँ आया तो क्या देखता है कि वहाँ देवदत्त  
नहीं हैं आकर उसने मेरे पैरों में पडकर मुझसे यह समाचार  
निवेदित किया है । अतः (इच्छामि णं देवानुप्रिया ! देवदिन्नदारगस्स  
सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं काउ) अतः मैं चाहता हूँ कि हे देवा

भारी पत्नी लद्राना उदरथी जन्मेवो देवदत्त नामे भारी पुत्र हुतो. जे भने अहु ज  
धृष्ट हुतो. तेने जेवानी बात तो हर रही पण उदुम्बरना पुष्पनी जेभ तेनु नाम श्रवण  
पण असंभव हुतुं. (तएणं सा भद्रा देवदिन्नं दारयं ण्हायं सव्वालंकार-  
विभूसियं पंथगस्स हत्थे दलाइ) देवदत्तने लद्राभार्याजे नवडावीने अधां धरेणुं-  
ओथी सुसज्ज क्यो अने पांथकने सोंध्यो. (जाव पायपडिए, तं मम निवेदेइ)  
आणकने ते डेउमां लधने राजमार्ग उपर रमाउवा लध गयो. तेनी साथे धां  
आणके अने आणाओ हुती. त्यां जधने तेणे आणक देवदत्तने ओक तरफ जेसाडी  
दीधो. अने जते ते जीज आणकेनी साथे रमतमां पडी गयो. थोडा वणत पछी  
ज्यारे ते त्यां आओ त्यारे आणक देवदत्त तेने जउयो नहि. भारी पास आवीने  
तेणे आ अधी बात करी छे. (इच्छामि णं देवानुप्रिया ! देवदिन्न  
दारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं काउ) हुं आहुं छे डे आणक देव-

દેવદત્તાસ્ય દારકમ્ય કુત્રાપિ યુતિં વા ક્ષુતિં વા પ્રવૃત્તિં વા - અલભમાનો  
 યત્રૈવ મ્વક્તં ગૃહં તત્રૈવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય 'મહત્થં' મહાર્થે=બહુમૂલ્યં  
 'પાહુહં' પ્રાપ્તમ્=ઉપહારં ગૃહાતિ, ગૃહીત્વા યત્રૈવ 'નગરગુણિયા' નગર  
 ગોપ્તૃકાઃ=નગરરક્ષકાઃ કોટપાલા इत्यर्थः તત્રૈવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય તન્મ-  
 હાર્થે પ્રાપ્તમ્ 'ઉવણેહ' ઉવનયતિ તેષાં સમીપે સ્થાપયતિ, ઉવર્નીય એવમ-  
 વાદીત્ एवं खलु देवानुप्पियाः ! मम पुत्रो भद्राया भार्याया आत्मजो  
 देवदत्तो नाम दारकः 'इहे इष्टः=अभिलषितः यावत् 'उंवरपुष्पं पिव'  
 दुल्लहे सवणयाए किमंगपुणपासणयाए' उदुम्बरपुष्पमिव दुर्लभः श्रव-

કરને મેં લગ ગયા-પરંતુ (દેવદત્તસ્ય દારગસ્ય કત્થહ સુહં વા સું વા પવૃત્તિં વા  
 અલભમાણે જેણેવ સર્વ ગિહે તેણેવ ઉવાગચ્છહ) દેવદત્તદારક કીં ઉસે  
 કહીં પર મીં કુછ મીં સ્વર નહીં મિલી, છિકા આદિ ચિહ્ન મીં  
 ઉસકા ઉસે કહીં દિસ્વલાઈ નહીં દિયા--ચૌર ન ઉસકી કિસી વાત  
 કા હી ઠીક ર ઉસે પતા પડા । હસ તરહ નિરાશ હોકર વહ અપને  
 ઘર પર આ ગયા । (ઉવાગચ્છિત્તા મહત્થ પાહુહં ગેહ્હ, ગેહ્હિત્તા જેણેવ  
 નગરગુણિયા, તેણેવ ઉવાગચ્છહ) ઘર આકર ઉસને બહુમૂલ્ય પ્રાપ્ત લિયા  
 ઓર લેકર જહાં નગર કે રક્ષક કોટપાલ થે વહાં ગયા--(ઉવાગચ્છિત્તા  
 તં મહત્થં પાહુહં ઉવણેહ, ઉવણિત્તા એવં વયાસી)--જાકર ઉસને વહ  
 બહુમૂલ્ય નજરાના ઉન્હે' મેટમેં દિયા--દેકર ફિર હસ પ્રકાર ચોલા  
 (એવં खलु देवानुप्पिया ! मम पुत्रो भद्राए भारियाए अतए-देवदिन्ने  
 नामं दारए इहे जाव उंवरपुष्पं पिव दुल्लहे सवणयाए किमंग पुण

કરવા લાગ્યો. પણ (દેવદિન્નસ્ય દારગસ્ય કત્થહ સુહંવા સુહંવા પવૃત્તિં વા  
 અલભમાણે જેણેવ સર્વ ગિહે તેણેવ ઉવાગચ્છહ) બાળક દેવદત્ત તેને ક્યાંય  
 દેખાયો નહિ. બાળકના છીંક વગેરેના અત્યંત ચિદ્રો પણ કોઇપણ સ્થાને સંભળાયા  
 નહિ. આ રીતે ધન્ય સાર્થવાહને બાળક દેવદત્ત વિશેની થોડી પણ માહિતી મળી  
 શકી નહિ. અંતે નિરાશ થઇને તે પોતાને ઘેર પાછો ફર્યો. (ઉવાગચ્છિત્તા મહત્થં  
 પાહુહં ગેહ્હ, ગેહ્હિત્તા જેણેવ નગર ગુણાયા, તેણેવ ઉવાગચ્છહ) ઘેર આવીને  
 તેણે બહુ દ્રવ્ય લીધું અને નગરરક્ષક કોટવાળની પાલે ગયો. (ઉવાગચ્છિત્તા તં  
 મહત્થં પાહુહં ઉવણેહ, ઉવણિત્તા એવં વયાસી) જ્યને તેણે બહુકિંમતી  
 નજરાણાં કોટવાળને ભેટમાં આપ્યાં અને કહ્યું--(એવં खलु देवानुप्पिया ! मम  
 पुत्र भद्राए भरियाए अतए देवदिन्ने नाम दारए इहे जाव उंवरपुष्पं  
 पिव दुल्लहे सवणयाए किमंगपुणपासणयाए ?) હે દેવાનુપ્રિયો ! સાંભળો

यत्रैव भग्नकूपस्तत्रवापागच्छन्ति, उपागत्य देवदत्तस्य दारकस्य शरीरकं निष्पाणं निश्चेष्टं जीवविप्रत्यक्तं पश्यति. इष्ट्वा 'हा ! हा ! अहो ! अकज्ज' हा ! हा ! अहो अकार्यम् = अनिट् मज्जातम् ? इतिक्रिया = इति प्रोच्य देवदत्तं दारकं भग्नकूपात् 'उत्तारेति' उत्तारयन्ति = बहिर्निष्काशयन्ति उत्तार्य धन्यस्य सार्थवाहस्य हस्ते ददति. ॥सू. ८ ॥

मूलम्—तए णं ते नगरगुत्तिया विजयस्स तक्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाणा जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसंति अणुपविसित्ता विजयं तक्करं ससक्खं सहोढं सगेवेज्जं जीवग्गाहं गिण्हति गिण्हित्ता अट्ठि-मुट्ठिजाणुकोप्परपहारसंभग्गमहियगत्तं करेति, करित्ता अवउडग वंधणं करेति कारित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स आभरणं गेण्हंति गेण्ह-

(पडिनिक्खमित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव भग्गकूवए तेणेव उवागच्छइ) निकल कर वे फिर वहाँ भाये जहाँ वह जीर्ण उद्यान और वह भग्नकूप था । उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स शरीरकं निष्पाणं निश्चेष्टं जीव विप्पजढं पासंति पासित्ता हा हा अहो अकज्जमिति कट्टुदेवदिन्नं दारगं भग्गकूवाओ उत्तारेति उत्तारित्ता धणस्स सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति) आकर के उन लोगोंने देवदत्त दारक के शरीरको निष्पाण निश्चेष्ट और जीव से विप्रमुक्त देखा देखकर "हाय होय यह महान् अनर्थ हुआ" इस प्रकार कहकर देवदत्त दारक को उस भग्नकूप से बाहर निकाला । बाहर निकाल कर फिर उसे धन्य सार्थवाह के हाथ में सौंप दिया । सूत्र ॥ ८ ॥

शोध करता राजगृह नगरनी गडार नीकल्या (पडिनिक्खमित्ता जेणेव जिण्णु-ज्जाणे जेणेव भग्गकूवए तेणेव उवागच्छइ) गडार नीकलीने तेथो करता इष्ट्वा उद्यान तेमज्ज लज्ज द्रवानी पासो आव्या. (उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स शरीरकं निष्पाणं निश्चेष्टं जीवविप्पजढं पासंति पासित्ता हा हा अहो अकज्जमिति कट्टु देवदिन्नं दारगं भग्गकूवाओ उत्तारेति उत्तारित्ता धणस्स सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति) त्यां तेथोथो जाणक देवदत्तना शरीरने निष्पाणु, निष्ठाव अने निश्चेष्ट जेथुं अने जेथीने "अरे ! अरे !! गडुं जेगडुं थयुं" आ प्रमाणे कडीने तेथोथो जाणक देवदत्तना शरीरने लज्ज द्रवमाथी गडार कडयुं. गडार कडीने धन्य सार्थवाहने ते शरीर सोपी दीधुं. ॥ सूत्र ॥ ८ ॥



गोप्तृका धन्येन सार्थवाहेन एवमुक्ताः सन्तः 'सन्नद्धवद्धवर्मियकवया' संनद्धवद्धवर्मितकवचाः संनद्धः=कृतमन्नाहः=वन्धनोपयोगिसाधनैः सज्जभूताः, वद्धा.कशावन्धनेन, वर्मिताः=शरीरे परिधृताः कवचा यैस्ते तथा, 'उत्पीलियसरामणपट्टिया' उत्पीडितशरामनपट्टिकाः—'उत्पीलिय' उत्पीडिताः=गुणारोपणेन नमिताः 'सरामणपट्टिया' शरामनपट्टिका.=धनुः पट्टिका यैस्ते तथा, यावत् 'गह्वियाउयपहरणा' गृहीतायुधप्रहरणाः 'गह्विय' गृहीतानि 'भाउह' आयुधानि=धनुरादीनि 'पहरणा' पहरणानि=असिकुन्तादीनि यैस्ते तथा, एवम्भूताः सन्तो नगरगोप्तृकाः धन्येन सार्थवाहेन सार्द्धं राजगृहस्य नगरस्य बहूनि 'अङ्गमणाणि य' अङ्गिमनानि च प्रवेशमार्गाः, इत्यादि—स्थानानि तेषु यावत् प्रवासु च मार्गणगवेपणं कुर्वन्तो राजगृहान्नगरात्प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव जीर्णोद्यानं

नुप्रियो ! आप लोक उस देवदत्त दारक का सच आर चार। दशओं में मार्गणकरें गवेपण करें। (तएणं से नगरगुप्तिया धण्णेण सत्थवाहेण एवं वुत्ता समाणा सन्नद्धवद्धवर्मियकवया उत्पीलियसरामनवट्टिया जाव गह्वियाउयपहरणा धन्नेणं सत्थवाहेणं मद्धिं रायगिहस्स बहूणि अङ्गमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ नगराओ पड्डिणिवत्थमंति) धन्य सार्थवाह से इस प्रकार कहे वे नगर रक्षक जन बंधनोपयोगी साधनों से सज्ज भूत हुए कशाबंधन से बद्ध हुए और शरीर पर कवचों को पहिन २ कर अपने २ धनुषों पर प्रत्यंचा आरोपित कर यावत् आयुध और पहरणों को लेले कर धन्यसार्थवाह के साथ राजगृह नगर के गमनागमनों के स्थानों की यावत् प्रवा (पियाउ) आदि स्थलोंकी मार्गणा गवेपणा करते हुए राजगृहनगर से निकले।

दत्तनी तमे णधा भणीने येमेर तथाअ उरे. ( तएणं से नगरगुप्तिया धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणा सन्नद्धवद्धवर्मियकवया उत्पीलियसरामनवट्टिया जाव गह्वियाउयपहरणा धन्नेणं सत्थवाहेणं मद्धिं रायगिहस्स बहूणि अङ्गमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ नगराओ पड्डिणिवत्थमंति) धन्य सार्थवाहनी आ रीते वात सांलणीने ते णधा नगर रक्षकेअ येर वगेरे शुनेगारेने णंधवा येअ्य साधने सांथे लीधा, तेमज्ज डेरउअओ णंध्या अने शरीरे उवओ पड्डेरीने पोतपोताना धनुओ उपः प्रत्यंचा यदापी आ प्रभाणे तेओ णधा आयुधा तेमज्ज प्रहरणो लधने धन्य सार्थवाहनी साथे राजगृह नगरना अवर जवरना स्थानोनी तेमज्ज परओ वगेरे स्थणोभां

चरणचिह्न 'अणुगच्छमाणा' अनुगच्छन्तो यत्रैव मालुकाकक्षकस्तत्रैवोपागच्छन्त,  
उपागत्य मालुकाकक्षकमनुप्रविशन्ति, अनुप्रविश्य विजयं तत्करं 'ससक्खं' ससाक्ष्यं  
ससाक्षिकमित्यर्थः 'सहोढं' सहोढं=समोपं चौर्यापहनवस्तुनहितं देवदत्तदार-  
काङ्कारयुक्तमित्यर्थः, 'सगेवेज्जं' सगेवेज्जं=ग्रीवाबन्धनसहितं गलबन्धन-  
बद्धं गले रज्जुं बद्धेत्यर्थः, तं 'जीवग्गाहं' जीवग्गाहं=जीवन्तं 'गिहंति' गृह्णन्ति  
गृहीत्वा 'अट्ठिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारं' अस्थिमुट्ठिजानुकूर्परपहारं  
संभग्नं मथितगात्रम्-अस्थि च मुट्ठिश्च जानुनी च कूर्परी च-अस्थिमुट्ठिजानुकूर्पराः,  
तेषु तैर्वा ये पहारास्तैः 'संभग्नं' संभग्नं=चूर्णितं 'महियं' मथितं=जर्जरितम्  
'गत्तं' गात्रं=शरीरं यस्य स तं=भग्नसकलशरीरसन्धिस्थानं कुर्वन्ति. कृत्वा  
'अवउडगवंधणं' अवकोटकवन्धनम्-अवकोटकेन बाहोः शिरसश्च पश्चाद्वागा-

तत्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाणा जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छंति)  
विजयतस्कर के पाद चिह्नों का अनुसरण करते हुए वहां पहुँचे जहाँ  
वह (मालुका काच्छया उवागच्छिता मालुयाकच्छयं अणुपविसंति)  
पहुँचकर वे उसमें घुसे (अणुपविसित्ता विजयं तत्करं ससक्खं सहोढं  
सगेवेज्जं जीवग्गाहं गिहंति) घुसकर उन्होंने उसके गलेमें रस्सी बाँधकर जीता  
ही मसाक्ष्य देवदत्त दारक के अलंकार रूप साक्ष्य सहित पकड़ लिया । गिल्लित्ता  
अट्ठिमुट्ठि जाणुकोप्परपहारं संभग्नमहियगत्तं करे'ति ) पकड़कर उन्होंने उसकी  
हड्डियों में मुठियों में, छुटनों में, कुहनियों में, खूब पहार किये--इससे  
उसका शरीर का चूर २ हो गया--जर्जरित हो गया । तात्पर्य यह  
कि उसे इतनी बुरी तरह उन लोगोंने पीटा कि जिससे उसके शरीर  
की समस्त संधियाँ भग्न हो गई । (करित्ता अवउडगवंधणं, करे'ति

तत्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाणा जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छंति)  
विजय नामना थोरनां पगना थिहोने अनुसरतां मालुका कक्षमां पडो'त्था.  
( उवागच्छिता मालुयाकच्छयं अणुपविसंति अने मालुका कक्षमां पेडा.  
अणुपविसित्ता विजयं तत्करं ससक्खं सहोढं सगेवेज्जं जीवग्गाहं  
गिहंति) . पेसीने तेओओ विजय नामना थोरने ससाक्ष्य ओटवे जाण्ड देव-  
दत्तना धरेणुओनी साथे न गणांमां घेरी जांधीने एवतो न पडडी लीधा.  
(गिल्लित्ता अट्ठिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारं संभग्नमहियगत्तं करे'ति)  
पडडीने तेओओ थोरना डाड्डां, भूडीओ, दी'थणुओ अने डोणीओ उपर थूण प्रहारे  
क्यां. ओथी तेनुं शरीर थिथिल अने भूडा नेपुं थर्छ गथुं. भतलण ओ छे तेने  
ओयो अण्णत भार पडयो डे नेथी तेना शरीरना जधा सांधाओ तूटी गया.

ता विजयस्स तक्करस्स गीवाए वंधंति वंधित्ता मालुया कच्छगाओ  
 पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता जेणेव रायगिहे नयरे तेणैव उवा  
 गच्छंति उवागच्छित्ता रायगिहं नगरं अणुपविसंति अणुपविसित्ता  
 रायगिहे नयरे सिंघाडगतियचउक्कचच्चरमहापहपहेसु कसप्पहारे य  
 लयप्पहारे य छिवापहारे य निवाएमाणा २ छारं च धूलिं च कय-  
 वरं च उवरिं पक्खिरमाणा २ महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा एवं  
 वयंति,—एसणं देवाणुप्पिया ! विजए नामं तक्करे जाव गिद्धे  
 विव आमिसभवस्वी वालघायए वालमारए, तं नो खलु देवा  
 णुप्पिया ! एयस्स केइ राया वा रायपुत्ते वा रायमच्च वा अवरज्झइ  
 एत्थट्ठे अप्पणो सयाइं कम्माइं अवरज्झंति तिकट्ठु जेणामेव चार  
 गसाला तेणामेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता हडिवंधणं करेति  
 करित्ता भत्तपाणनेरोहं करेति, करित्ता तिसंझं कसप्पहारे य जाव  
 निवाएमाणा २ विहरंति । तएणं से धण्णे सत्थवाहे मित्तनाइ  
 नियगसयणसंबंधिप रयणेणं सद्धि रोयमाणे जाव विलवमाणे  
 देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरस्स महया इट्ठिसक्कारसमुदएणं नीह-  
 रणं करेइ, करित्ता बहूइं लोइयाइं मयगकिच्चाइं करेइ करित्ता  
 केणइ कालंतरेणं अवगयसोए जाए यावि होत्था ॥ सू. ८ ॥

टीका—‘तएणं ते’ इत्यादि । ततः खलु तदनु=सज्जीभूतानन्तरं जिगमिषवो  
 ते नगरगोप्तृणां=नगररक्षकाः विजयस्य तस्करस्य ‘पयमग्गं’ पदमार्गं=पदन्यासम्

तए णं ते नगर गुत्तिया इत्यादि ॥

ट्ठ कार्य—(तएणं) उसके बाद (ते नगर गुत्तिया) वे नगर रक्षक (विजयस्य)

तएणं ते नगरगुत्तिया इत्यादि !

टीका—(तएणं) त्वां ॥ ८ ॥ (ते नगरगुत्तिया) नगर रक्षक (विजयस्य)



ચરણચિહ્ન 'અણુગચ્છમાણા' અણુગચ્છન્તો યન્નૈવ માલુકાકક્ષકસ્ત્રૈવોપાગચ્છાન્ત, ઉપાગત્ય માલુકાકક્ષકમનુપ્રવિશન્તિ, અનુપ્રવિશ્ય વિજયં તત્કરં 'સસવર્ણં' સસાક્ષ્યં સસાક્ષિકમિત્યર્થઃ 'સઢોઢં' સઢોઢં=સમોપં ચૌર્યાપહનવસ્તુમહિતં દેવદત્તદારકાઝઢ્ઢારપુક્તમિત્યર્થઃ, 'સગેવેજ્જં' સગ્રૈવેયકં=ગ્રીવાબન્ધનસહિતં ગલ્લબન્ધન-વદ્ધં ગલે રજ્જું વદ્ધેત્યર્થઃ, તં 'જીવગ્ગાહં' જીવગ્ગાહં=જીવન્તં 'ગિહંતિ' ગૃહ્ણન્તિ' ગૃહીત્વા 'અદ્દિમુદ્દિજાણુકોપ્પરપહારસમ્ભગમહિયગત્તં' અસ્થિમુદ્દિજાણુકૂર્પરપહારસંભગમથિતગાત્રમ્-અસ્થિ ચ મુદ્દિશ્ચ જાણુની ચ કૂર્પરી ચ-અસ્થિમુદ્દિજાણુકૂર્પરાઃ, તેપુ તૈર્વાં યે પહારાસ્તૈઃ 'સમ્ભગ' સમ્ભગનં=ચૂર્ણિતં 'મહિય' મથિતં=જર્જરિતમ્ 'ગત્તં' ગાત્ર=શરીરં યસ્ય સ તં=ભગ્નસકલશરીરમન્વિસ્થાનં કુર્વન્તિ. કૃત્વા 'અવઙ્ગમવંધણં' અવકોટકવન્ધનમ્-અવકોટકેન વાહોઃ શિરસથ પથ્થાઢ્ઢાગા-

તત્કરસ્સ પયમગ્ગમણુગચ્છમાણા જેણેવ માલુયાકચ્છણ તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) વિજયતસ્કર કે પાદ ચિહ્નોં કા અનુસરણ કરતે હુણ વહાં પહુચે જહાં વહ (પાલુકા કાચ્છથા ઉવાગચ્છિતા માલુયાકચ્છયં અણુપવિસંતિ) પહુંચાર વે ઉસમેં છુસે (અણુપવિમિત્તા વિજયં તત્કરં સસવર્ણં સઢોઢં સગેવેજ્જં જીવગ્ગાહં ગિહંતિ) છુસકર ઉન્ઢોંને ઉસકે ગલેમેં રસી વાંધકર જીતા હી મસાક્ષ્ય દેવદત્ત દારક કે અલંકાર રૂપ સાક્ષ્ય સહિત પકડ લિયા । ગિહિત્તા અદ્દિમુદ્દિ જાણુકોપ્પરપહારસંભગમહિયગત્ત કરેંતિ )પકડકર ઉન્ઢોંને ઉસકી હઠ્ઠિયોં મેં મુઠિયોં મેં. હુદનોં મેં, કુહનિયો મેં. સૂવ પ્રહાર કિયે--ઇસસે ઉસકા શરીર કા ચૂર ૨ હો ગયા--જર્જરિત હો ગયા । તાત્પર્ય યહ કિ ઉસે ઇતની ઘુરી તરહ ઉન લોગોંને પીટા કિ જિસસે ઉસકે શરીર કી સમસ્ત સંધિયાં ભગ્ન હો ગઈ । (કરિત્તા અવઙ્ગમવંધણં, કરેંતિ

તત્કરસ્સ પયમગ્ગમણુગચ્છમાણા જેણેવ માલુયાકચ્છણ તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) વિજય નામના ચોરનાં પગના ચિહ્નોને અનુસરતાં માલુકા કક્ષમાં પહોંચ્યા. (ઉવાગચ્છિતા માલુયાકચ્છયં અણુપવિસંતિ અને માલુકા કક્ષમાં પેઠા. અણુપવિસિત્તા વિજયં તત્કરં સસવર્ણં સઢોઢં સગેવેજ્જં જીવગ્ગાહં ગિહંતિ) પેસીને તેઓએ વિજય નામના ચોરને સસાક્ષ્ય એટલે બાળક દેવ-દત્તના ધરેણાંઓની સાથે જ ગળામાં ઘેરી બાંધીને છુવતો જ પકડી લીધો. (ગિહિત્તા અદ્દિમુદ્દિજાણુકોપ્પરપહાર સંભગમહિયગત્તં કરેંતિ) પકડીને તેઓએ ચોરના હાડકાં, મૂઠીઓ, ઢીંચણો અને કોણીઓ ઉપર ખૂબ પ્રહારો કર્યાં. એથી તેનું શરીર શિથિલ અને ભૂકા જેવું થઈ ગયું. મતલબ એ છે તેને એવો સખત માર પડ્યો કે જેથી તેના શરીરના બધા સાંધાઓ તૂટી ગયા.

नयनपूर्वकं चन्धनं गम्य स तं कुर्वन्ति. कृत्वा दण्डचम्य दारकस्याभरणं  
 गृह्णन्ति, गृहीत्वा विजयस्य तस्करस्य ग्रीवायां बध्नन्ति बद्ध्वा मालुका कच्छकात्  
 प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव राजगृहं नगरं तत्रैवापागच्छन्तः, उपा-  
 गत्य राजगृहं नगरमनुप्रविशन्ति. अनुप्रविश्य राजगृहे नगरे श्रृङ्गाटकट्टिकानृष्क-  
 चत्वरसहापथपथेषु 'कसप्पहारे य' कशापहारांश्च 'चावुक' इति भोषापाम्,  
 'लसप्पहारे य' लतापहारांश्च यष्टिपहारांश्च 'छिवापहारे य' छिवापहारांश्च=  
 चिकणकशापहारांश्च 'निवाणमाणा' निवायन्तः=पुनः पुनः कुर्वन्तः चारं 'भारं'=  
 भस्म धूलिं=रजः, कयवरं, कचवरं=तृणधूल्यादिपुञ्जं च 'उवरिं' उपरि  
 तस्योपरि 'पक्किरमाणा २' प्रकीर्यमाणाः २=पुनः पुनः उत्क्षिपन्तो महता  
 महता शब्देन उद्घोषयन्त एवं वदन्ति एष खलु देवानुप्रियाः !

करित्ता देवदिन्नम्मस आभरणं गेह्णन्ति) मार मार कर फिर उन्होंने उसके  
 दोनों हाथों को कमर के पीछे करके बांध लिया और बांध कर उसके  
 पास से देवदत्त दारक के आभरणों को ले लिया । (गेह्णित्ता विजयम्म  
 तक्करम्म गीवाण बंधन्ति बंधित्ता मालुया कच्छगाओ निक्खमन्ति) लेकर  
 फिर उन्होंने उस विजय चोर को ग्रीवामें बांधा और बांधकर फिर वे  
 उस मालुयाकच्छक से बाहर निकले । (पडिनिक्खमित्ता जेगे १ राजगिहे नयरे  
 तेणेव उवागच्छन्ति) बाहर निकल कर फिर—वे सबके सब राजगृह नगर की ओर  
 चल दिये (उवागच्छित्ता रायगिहं नगरं अणुणपविसन्ति) चलकर वे राजगृह  
 नगर आये ८ अणुणविसित्ता रायगिहे नयरे सिंघाडगतियच्चउक्कचच्चरमहा  
 पद्दपद्देषु कसप्पहारे य लसप्पहारे छिवापहारे य निवाणमाणा २ चारं च  
 धूलिं च कयवरं च उवरिं पक्किरमाणा २ महयार सणेणं उग्घोसेमाणा

(करित्ता अवउडगवंधणं करेन्ति, करित्ता देवदिन्नम्म दारगस्स आभ-  
 रणं गेह्णन्ति) आभ भारी पीटीने तेना जने डाय पाछण जांध्या अने  
 तेनी पासेथी जाणक देवदत्तनां धरेण्णो पोताना कणले कथा. (गेह्णित्ता विजयम्म  
 तक्करम्म गीवाण बंधन्ति बंधित्ता मालुयाकच्छगाओ पडिनिक्खमन्ति)  
 कणले करीने तेणोणे चोर विजयने पीछ वणत गणामां जांध्यो अने पछी तेणो  
 मालुका कच्छथी गडार नीकल्या. (पडिनिक्खमित्ता जेगेव रायगिहे नयरे तेणेव  
 उवागच्छन्ति) त्यांथी तेणो राजगृह नगर तरक्ष गया (उवागच्छित्ता रायगिहं  
 नगरं अणुणपविसन्ति) अने राजगृह नगरमां प्रवेश्या (मणुणविसित्ता रायगिहे  
 नयरे सिंघाडगानियच्चउक्कचच्चरमहापद्दपद्देषु कसप्पहारेय लसप्पहारे  
 छिवापहारे य निवाणमाणा २ चारं च धूलिं च कयवरं च उवरिं पक्किरमाणा  
 २ महयार सणेणं उग्घोसेमाणा एवं वयन्ति) राजगृह नगर वेशीने

‘विजयो नान नन्दरः याचद् गृध्र इवानिपभक्षो चालघातको चालमारकोऽन्वि-  
तः=तस्मान्काणाम् नो खलु देवानुमियाः ! एतस्य तंऽऽः राजा वा राज-  
पुत्रो वा राजामात्यो वा ‘अवरज्जड’ अपराध्यन्ति=न ‘कोऽप्यन्य एतं  
पीडयतोत्यर्थः. किन्तु ‘एत्यष्टे अत्रार्ये=एतद्विषये ‘अप्पणो’ आत्मनः=  
निजस्य ‘सयाङ्कम्माइ’ स्वकानि कर्माणि=स्वकृतान्येन कर्माणि ‘भवर-  
ज्जति’ अपराध्यन्ति=एनं पीडयन्ति, ‘उकट्टु’ इति प्राच्य यत्रैव ‘चाग्गसाला’

एवं वधेति) राजगृह नगर में आकरके वहाँ के शृगाटक, त्रिक चतुस्त  
चत्वर और महापथ इन सब मार्गों में उन्होंने उस विजय चोर को  
कोड़ों से चेतों से चिकने किये हुए कोड़ों--से बार बार और भी  
बुरी तरह पीटते हुए उसके ऊपर भस्म धूली और तृण आदि झा  
कड़ा करके बार २ डालते हुए फिर इस प्रकार जोर जोर से घोषण  
की--(एएणं देवानुमिया विजणं नामं तक्करे जाव गिद्धे विच आमिप-  
भक्षो चालघायण चालमारण) हे देवानुमियों ! यह विजय नानदा  
चोर है। यह गृध्र पक्षी की तरह आमिप (मांस) का भक्षो है चाल  
घातक है और चाल मारक है। (तं नो खलु देवानुमिया ! एयस्स  
केइ राया वा रायपुरिसे वा रायमच्चे वा अवरज्जड) सो हे देवानुमियों !  
इस विषय में इनका न कोई राजा अपराधी है, न राजपुत्र अपराधी है  
न राजा का प्रधान अपराधी है। (एयमष्टे अप्पणो सयाङ्कं कम्म इ

नयनपूर्वकं बन्धनं यम्य स तं कुर्वन्ति. कृत्वा दयदत्तस्य दारकस्याभरणं  
 गृह्णन्ति, गृहीत्वा विजस्य तस्करस्य ग्रीवायां बध्नन्ति बद्ध्वा मालुका कक्षकात्  
 प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव राजगृहं नगरं तत्रैवागच्छन्त, उपा-  
 गत्य राजगृहं नगरमनुप्रविशन्ति. अनुप्रविश्य राजगृहे नगरे श्रृङ्गाटकविक्रान्त-  
 चत्वरसहस्रपथपथेषु 'कसप्पहारे य' कशापहारांश्च 'चावुक' इति भोषायाम्,  
 'लयप्पहारे य' लतापहारांश्च यष्टिपहारान् 'छिवापहारे य' छिवापहारांश्च=  
 चिकणकशापहारांश्च 'निवाणमाणा' निषायन्तः=पुनः पुनः कुर्वन्तः छारं 'भारं'=  
 भस्म धूलिं=रजः, कयवरं, कचवरं=तृणधूल्यादिपुञ्जं च 'उवरिं' उपरि  
 तस्योपरि 'पक्किरमाणा २' प्रकीर्यमाणाः २=पुनः पुनः उत्क्षिपन्तो महता  
 महता शब्देन उद्घोषयन्त एवं वदन्ति एष म्वल्लु देवानुप्रियाः !

करित्ता देवदिन्नस्स आभरणं गेह्णन्ति) मार मार कर फिर उन्होंने उसके  
 दोनों हाथों को कमर के पीछे करके बांध लिया और बांध कर उसके  
 पास से देवदत्त दारक के आभरणों को ले लिया । (गेह्णित्ता विजयस्स  
 तक्करस्स गीवाए बंधन्ति बंधित्ता मालुया कच्छगाओ निक्खमन्ति) लेकर  
 फिर उन्होंने उस विजय चोर को ग्रीवामें बांधा और बांधकर फिर वे  
 उस मालुयाकच्छक से बाहर निकले । (पडिनिक्खमिन्ना जेगे ॥ राजगिहे नयरे  
 तेणेव उवागच्छन्ति) बाहर निकल कर फिर--वे सबके सब राजगृह नगरकी ओर  
 चल दिये (उवागच्छित्ता रायगिहं नयरं अणुणपविसन्ति) चलकर वे राजगृह  
 नगर आये ८ अणुणविसित्ता रायगिहे नयरे सिंघाडगनियच्चउक्कचच्चरमहा  
 पद्दपद्देषु कसप्पहारे य लयप्पहारे छिवापहारे य निवाणमाणा २ छारं च  
 धूलिं च कयवरं च उवरिं पक्किरमाणा २ महयार सणेणं उग्घोसेमाणा

(करित्ता अवउडगवंधणं करेन्ति, करित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स आभ-  
 रणं गेह्णन्ति) आभ भारी पीटीने तेना जने डुध पाछण आंध्या अने  
 तेनी पासैथी जाण्ड देवदत्तनां धरेण्णांओ पोताना डण्णे डर्या. (गेह्णित्ता विजयस्स  
 तक्करस्स गीवाए बंधन्ति बंधित्ता मालुयाकच्छगाओ पडिनिक्खमन्ति)  
 डण्णे डरीने तेओओ चोर विजयने पीछे बन्धत गजामां आंध्या अने पछी तेओ  
 मालुका डच्छथी णडार नीडल्या. (पडिनिक्खमिन्ना जेगेव रायगिहे नयरे तेणेव  
 उवागच्छन्ति) त्यांधी तेओ राजगृह नगर तरङ्ग गया (उवागच्छित्ता रायगिहं  
 नयरं अणुपविसन्ति) अने राजगृह नगरमां प्रवेश्या (मणुपविसित्ता रायगिहे  
 नयरे सिंघाडगनियच्चउक्कचच्चरमहापद्दपद्देषु कसप्पहारेय लयप्पहारे  
 छिवापहारे य निवाणमाणा २ छारं च धूलिं च कयवरं च उवरि पक्किरमाणा  
 २ महयार सणेणं उग्घोसेमाणा एवं वयन्ति) राजगृह नगरमां... प्रवेशीने



‘વિજયો નામ તસ્કરઃ યાવદ્ ગૃધ્ર ઇવામિષમક્ષી ચાલવાતકો ચાલમારકોઽન્તિ  
તત્=તસ્માત્કાણાન્ નો સ્વલુ દેવાનુપ્રિયાઃ ! એતસ્ય કોડાઃ રાજા વા રાજ-  
પુત્રો વા રાજામાતૃયો વા ‘અવરજ્ઞઙ્ગ’ અપરાધ્યન્તિ=ન ‘કોઽપ્યન્ય એનં  
પીડયતીત્યર્થઃ. કિન્તુ ‘એતદ્વે અત્રાર્યે=એતદ્વિષયે ‘અપ્પણો’ આત્મનઃ=  
નિજસ્ય ‘સયાઈકમ્માઈ’ સ્વકાનિ કર્માણિ=સ્વકૃતાન્યેવ કર્માણિ ‘અવર-  
જ્ઞાન્તિ’ અપરાધ્યન્તિ=એનં પીડયન્તિ, ‘ઉકટ્ટુ’ ઈતિ પ્રોચ્ય યત્રેવ ‘ચાગસાલા’

એવં વયંતિ) રાજગૃહ નગર મેં આકરકે ત્યાં કે શૃંગાટક, ત્રિક ચતુષ્ક  
ચત્વર ઓર મહાપથ ઇન સવ માર્ગોં મેં ઉન્હોંને ઉસ વિજય ચોર કો  
કોડોં સે વેતોં સે ચિકને કિયે હુણ કોડોં--સે વાર વાર ઓર ઓ  
ધુરી તરફ પીટતે હુણ ઉસકે ઉપર મસ્મ ધૂલી ઓર તૂગ આદિ રૂા  
કુડા કરકટ વાર ૨ ડાલતે હુણ ફિર ઇમ પ્રકાર જોર જોર સે ઘોષણ  
કી--(એણં દેવાણુપ્રિયા વિજણ નામં તવ્કરે જાવ ગિદ્ધે ત્રિવ આમિષ-  
મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપ્રિયોં ! યહ વિજય નાનકા  
ચોર હૈ. યહ ગૃધ્ર પક્ષી કી તરફ આમિષ (માંસ) કા મક્ષો હૈ ચાલ  
વાતક હૈ ઓર ચાલ મારક હૈ. (તં નો સ્વલુ દેવાનુપ્રિયા ! એયસ્સ  
કેઈ રાયા વા રાયપુરિસે વા રાયમચ્ચે વા અવરજ્ઞઙ્ગ) મો હે દેવાનુપ્રિયોં !  
ઇમ પિય મેં ઇનકા ન કોઈ રાજા અપરાધો હૈ. ન રાજપુત્ર અપરાધી હૈ  
ઓર ન રાજા કા પ્રધાન અપરાધો હૈ. (એયમદ્વે અપ્પણો સયાઈ કમ્માઈ  
અવરજ્ઞાન્તિ) કિન્તુ ઇમકે નિજ કૃત કર્મ હી અપરાધી વને હુણ હૈં.  
(તિકટ્ટુ) એના કહ્કર (જેગામેવ ચાગસાલા તેગામેવ ઉવાગચ્છંતિ) વે

શૃંગાટક, ત્રિક, ચતુષ્ક ચત્વર અને મહાપથ આ બધા માર્ગો ઉપર ડોરડા, વેતો  
અને ચીકણા કરાએલા ડોરડાએથી સખત રીતે વિજયચોરને મારતાં અને વારંવાર  
તેના ઉપર રાખ, માટી અને કચરો વગેરે નાખતાં રક્ષકોએ મોટેથી ઘોષણા (ઢંઢેરો)  
કરી (એણુ દેવાણુપ્રિયા વિજણ નામં તવ્કરે જાવ ગિદ્ધ ત્રિવ આમિષ  
મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપ્રિયો ! આ વિજય નામે ચોર છે.  
ગીધની જેમ આ માંસ ખાનારો છે, બાળ ઘાતી છે અને બાળ હત્યારો છે.  
(તં નો સ્વલુ દેવાણુપ્રિયા ! એયસ્સ કેઈ રાયા વા રાયપુત્તે વા રાયમચ્ચે  
વા અવરજ્ઞઙ્ગ) એટલે હે દેવાનુપ્રિયો ! આ વિષે કોઈપણ રીતે રાજા અપરાધી  
નથી, રાજપુત્ર અપરાધી નથી, તેમજ રાજાના પ્રધાન પણ અપરાધી નથી.  
(એયમદ્વે અપ્પણો સયાઈ કમ્માઈ અવરજ્ઞાન્તિ) પણ ખરી રીતે એના પોતાના  
કર્મો જ એને અપરાધી સાબિત કરે છે. (તિકકટ્ટુ) આમ કહીને (જેગામેવ

नयनपूर्वकं बन्धनं यम्य स तं कुर्वन्ति. कृत्वा द्वादत्तम्य दारकम्याभरणं  
 गृह्णन्ति, गृहीत्वा विजयस्य तस्करस्य श्रीवायां बध्नन्ति बद्ध्वा मालुका कक्षकात्  
 प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव राजगृहं नगरं तत्रैवागच्छन्त, उपा-  
 गत्य राजगृहं नगरमनुप्रविशन्ति. अनुप्रविश्य राजगृहे नगरे श्रृङ्गाटकृत्तिकानृष्क-  
 चत्वरमहापथपथेषु 'कसप्पहारे य' कशापहारांश्च 'चाबुक' इति भोषायाम्,  
 'लवण्यहारे य' लतापहारांश्च यष्टिपहारांश्च 'छिवापहारे य' छिवापहारांश्च=  
 चिकणकशापहारांश्च 'निवाणमाणा' निपायन्तः=पुनः पुनः कुर्वन्तः छारं 'क्षारं'=  
 भस्म धूलिं=रजः, कयवरं, कचवरं=तृणधूल्यादिपुञ्जं च 'उवरिं' उपरि  
 तस्योपरि 'पक्किरमाणा २' प्रकीर्ष्यमाणाः २=पुनः पुनः उत्क्षिपन्तो महता  
 महता शब्देन उद्घोषयन्त एवं वदन्ति एष खलु देवानुप्रियाः !

करिन्ता देवदिन्नस्म आभरणं गेह्णन्ति) मार मार कर फिर उन्होंने उसके  
 दोनों हाथों को कमर के पीछे करके बांध लिया और बांध कर उसके  
 पास से देवदत्त दारक के आभरणों को ले लिया । (गेह्णित्ता विजयस्म  
 तक्करस्म गीवाण् बंधन्ति बंधित्ता मालुया कच्छगाओ निवत्तमन्ति) ले कर  
 फिर उन्होंने उस विजय चोर को ग्रीवामें बांधा और बांध कर फिर वे  
 उस मालुयाकच्छक से बाहर निकले । (पडिनिक्खमिन्ता जेजेव राज गेहे नयरे  
 तेणेव उवागच्छन्ति) बाहर निकल कर फिर—वे सबके सब राजगृह नगर की ओर  
 चल दिये (उवागच्छित्ता रायगिहं नयरं अणुणपविसन्ति) चल कर वे राजगृह  
 नगर आये ८ अणुणविसित्ता रायगिहे नयरे सिंघाडगनियच्चउक्कचच्चरमहा  
 पद्दपद्देषु कसप्पहारे य लवण्यहारे छिवापहारे य निवाणमाणा २ छारं च  
 धूलिं च कयवरं च उवरिं पक्किरमाणा २ महयार सणेणं उग्घोसेमाणा

(करिन्ता अवउडगवंधणं करेन्ति, करिन्ता देवदिन्नस्म दारगस्स आभ-  
 रणं गेह्णन्ति) आम भारी पीटीने तेना जने हाथ पाछण बांध्या अने  
 तेनी पासैथी जाण्ड देवदत्तनां धरेण्णांओ पोताना कणजे कर्था. (गेह्णित्ता विजयस्म  
 तक्करस्म गीवाण् बंधन्ति बंधित्ता मालुयाकच्छगाओ पडिनिक्खमन्ति)  
 कणजे करीने तेओओ चोर विजयने पीछे बणत गणामां बांध्यो अने पछी तेओ  
 मालुका कच्छथी जाडार नीडज्या. (पडिनिक्खमिन्ता जेजेव रायगिहे नयरे तेणेव  
 उवागच्छन्ति) त्यांथी तेओ राजगृह नगर तरफ गया (उवागच्छित्ता रायगिहं  
 नयरं अणुणपविसन्ति) अने राजगृह नगरमां प्रवेश्या (मणुणविसित्ता रायगिहे  
 नयरे सिंघाडगनियच्चउक्कचच्चरमहापद्दपद्देषु कसप्पहारेय लवण्यहारे  
 छिवापहारे य निवाणमाणा २ छारं च धूलिं च कयवरं च उवरिं पक्किरमाणा  
 २ महयार सणेणं उग्घोसेमाणा एवं वयन्ति) राजगृह नगरमां प्रवेशीने



‘વિજયો નામ તન્મરઃ યાવદ્ ગૃહ્ણ ઇવામિષમક્ષી ચાલવાતકો ચાલમારકોઽસ્મિ  
તત્=તસ્માત્કાણાન્ નો સ્વલુ દેવાનુપિયાઃ ! એતસ્ય કોઽર્જી રાજા વા રાજ-  
પુત્રો વા રાજામાતૃયો વા ‘અવરજ્ઞાંતિ’ અપરાધ્યન્તિ=ન ‘કોઽપ્યન્ય એનં  
પીડયતીત્યર્થઃ. કિન્તુ ‘એત્યદ્વે અત્રાર્યે=એતદ્વિષયે ‘અપ્પણો’ આત્મનઃ=  
નિજસ્ય ‘સયાઈકમ્માઈ’ સ્વકાનિ કર્માણિ=સ્વકૃતાન્યેવ કર્માણિ ‘અવર-  
જ્ઞાંતિ’ અપરાધ્યન્તિ=એનં પીડયન્તિ, ‘ઉકટ્ટુ’ ઇતિ પ્રોચ્ય યત્રેવ ‘ચારગસાલા’

એવં વર્ણયંતિ) રાજગૃહ નગર મેં આકારકે વઢાં કે શૃંગાટક, ત્રિક ચતુષ્ઠ  
ચત્વર ઓર મહાપથ ઇન સર્વ માર્ગોં મેં ઉઢાંને ઉસ વિજય ચોર કો  
કોડોં સેં વેતોં સે ચિકને કિયે હુણ કોડોં--સે ચાર વાર ઓર ઓ  
બુરી તરહ પીટતે હુણ ઉસકે ડુપર ભસ્મ ધૂલી ઓર તુગ આદિ રૂા  
કુડા કરકટ ચાર ૨ ડાલતે હુણ ફિર ઇમ પ્રકાર જોર જોર સે ઘોષણ  
કી--(એણં દેવાણુપિયા વિજણ નામં તન્નકરે જાવ ગિદ્ધે ત્રિવ આમિષ-  
મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપિયોં ! યહ વિજય નાનહા  
ચોર હે । યહ ગૃહ્ણ પક્ષી કી તરહ આમિષ (માંસ) કા મક્ષી હે ચાલ  
વાતક હે ઓર ચાલ મારક હે । (તં નો સ્વલુ દેવાનુપિયા ! એયસ્સ  
કેહ રાયા વા રાયપુરિસે વા રાયમચ્ચે વા અવરજ્ઞાંતિ) નો હે દેવાનુપિયોં !  
ઇમ પિપ્પ મેં ઇનકા ન કોઈ રાજા અપરાધી હે. ન રાજપુત્ર અપરાધી હે  
ઓર ન રાજા કા પ્રધાન અપરાધી હે । (એયમદ્વે અપ્પણો સયાઈ કમ્મ ઇં  
અવરજ્ઞાંતિ) કિન્તુ ઇમકે નિજ કૃત કર્મ હી અપરાધી બને હુણ હેં ।  
(તિકટ્ટુ) એના કહ્કર (જેગામેવ ચારગસાલા તેગામેવ ઉવાગચ્છંતિ) વે

શૃંગાટક, ત્રિક, ચતુષ્ઠ ચત્વર અને મહાપથ આ બધા માર્ગોં ઉપર ડેરડા, વેતો  
અને ચીકણા કરાએલા ડેરડાઓથી સખત રીતે વિજયચોરને મારતાં અને વારંવાર  
તેના ઉપર રાખ, માટી અને કચરો વગેરે નાખતાં રક્ષકોએ મોટેથી ઘોષણા (ઢઢેરો)  
કરી (એણુ દેવાણુપિયા વિજણ નામં તન્નકરે જાવ ગિદ્ધ ત્રિવ આમિષ  
મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપિયો ! આ વિજય નામે ચોર છે.  
ગીધની જેમ આ માંસ ખાનારો છે, બાળ ઘાતી છે અને બાળ હત્યારો છે.  
(તં નો સ્વલુ દેવાણુપિયા ! એયસ્સ કેહ રાયા વા રાયપુત્તે વા રાયમચ્ચે  
વા અવરજ્ઞાંતિ) એટલે હે દેવાનુપિયો ! આ વિષે કોઈપણ રીતે રાજા અપરાધી  
નથી, રાજપુત્ર અપરાધી નથી, તેમજ રાજાના પ્રધાન પણ અપરાધી નથી.  
(એયમદ્વે અપ્પણો સયાઈ કમ્મ ઇં અવરજ્ઞાંતિ) પણ ખરી રીતે એના પોતાના  
કર્મો જ એને અપરાધી સાબિત કરે છે. (તિકકટ્ટુ) આમ કહીને (જેગામેવ

ચારકશાલા=કારાગારગૃહ તત્રાપાગચ્છાન્ત, ઉપાગત્ય તન્ય 'હૃદિવંધનં'  
 હૃદિવંધનં=હૃદયવંધનં 'બેડી' इति भाषाप्रसिद्धे हृदियन्त्रे बन्धनं  
 कुर्वन्ति, कृत्वा 'भक्तपाणनिरोह' भक्तपाणनिरोधम्=भक्षणपाणनिरोधं कुर्वन्ति  
 कृत्वा 'तिसंज्ञ' त्रिसन्ध्यं=प्रातर्मध्याह्नसायंस्वरूपे कालत्रये कशाप्रहारांश्च  
 यावद् निपातयन्तो निपातयन्तो विहरन्ति। 'तण्णं' ततः खलु=इतः स  
 धन्यः सार्धवाहो मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनेन सार्द्धं रुदन्  
 यावद् विलपन् देवदत्तस्य दारकस्य शरीरस्य 'महया इड्ढीसकारसमुदणं'  
 महता क्रुद्धिमन्कारसमुदयेन=महता=विस्तीर्णेन क्रुद्ध्या=रस्त्रादि सामग्रा  
 सत्कारः=मृतशरीरसम्मानं तेन, समुदयेन=जनसङ्घेन च 'नीहरणं' निर्हरणं=  
 शवस्य श्मशानभूमिनयनं करोति, कृत्वा मृतकशरीरदहनक्रियानन्तरं बहूनि

કારાગાર (કૈદખાના) જ્યાં થા। વ્યાગચ્છિન્તા હૃદિવંધનં કરેંતિ)  
 વ્યાગ જાકર વે ઉસે હૃદિયત્ર મેં વાંધ દેતે હેં। (કરિન્તા ભક્તપાણનિરોહં  
 કરેંતિ કરિન્તા તિસંજ્ઞં કસપ્પહારેય જાત્ર નિવાપમાણા ૨ વિહરંતિ)  
 વ્યાદ મેં ઉસે ગ્વાનાપીના દેના વંધ કર દેતે હેં। ઓર ત્રીનો સંધ્યા કે  
 મમથ (સુચદ્દ દો પહર તથા સાંયકાલ) ઉસે કોડે આદિ કે પ્રહારો  
 સે જર્જરિત શરીર કર દેતે હેં। (તણ્ણં સે ધન્ને સત્થવાહે મિનનાઈ  
 નિયમસયણસંવંધિપરિયણેણં સદ્ધિં રોયમાણે જાત્ર વિલપમાણે દેવદિ  
 ન્નમ્પ દારગસ્સ સરીરસ્સ મહયા ઇડ્ઢીસકકારસમુદણં નીહરણં કરેઃ)  
 હમકે વ્યાદ ઉસ ધન્ય સાર્થવાહને મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક સ્વજન, સમ્બન્ધી  
 ઓર પરિજનોં સે યુક્ત હોકર રોતે હુણ યાવત્ વિલાપ કરતે હુણ અપને  
 દેવદત્ત દારક કે શરીરની વાહે ભારી ઉત્સવ કે સાથ અર્થી નિકાલી। --

ચારગમાલા તેણામેવ ઉવાગચ્છંતિ) તેઓ જેલ તરફ ગયા. (ઉવાગચ્છિન્તા  
 હૃદિવંધનં કરેંતિ) ત્યાં બંધને તેઓએ ચોરને હૃદિયંત્ર (લાકડાની બેડી)મા  
 બંધન કર્યો 'કરિન્તા ભક્તપાણનિરોહં કરેંતિ કરિન્તા તિસંજ્ઞં કસપ્પહારેય  
 જાત્ર નિવાપમાણા ૨ વિહરંતિ' ત્યાર બાદ તેઓ ચોર ને ખાવા  
 પીવાની બધી વસ્તુઓ આપવાની બંદ કરે છે અને સવાર, બપોર અને સાંજ  
 ત્રણે સંધ્યાના સમયે કોરડા વગેરેના પ્રહારોથી તેના શરીરને શિથિલ અને જર્જરિત  
 કરી નાખે છે. (તણ્ણં સે ધન્ને સત્થવાહે મિણેનાઈનિયમસયણસંવંધિપરિ-

યણેણં સદ્ધિં રોયમાણે જાત્ર વિલપમાણે દેવદિન્નસ દારગસ્સ સરીરસ્સ મહયા  
 ઇડ્ઢીસકકારસમુદણં નીહરણં કરેઃ) ત્યાર પછી ધન્ય સાર્થવાહે મિત્ર, જ્ઞાતિ,  
 નિજક, સ્વજન, સંબંધી અને પરિજનોની સાથે મળીને રડતાં રડતા અને કરુણ કંદન  
 કરતાં બાળક દેવદત્તના શરીરની બહુ મોટા ઉત્સવ રૂપે શ્મશાનયાત્રા કરી. શ્મશા-

लौ ककानि=शोकमन्वन्धीनि 'मयगकिचाइ' मृतककृत्यानि=मृतकगिरिभुस  
म्वन्धिकार्याणि करोति, कृत्वा 'केगइ कालंतरेणं' केनचित्कालान्तरेण=कतिप  
यकालानन्तरम् 'अवगयसोए' अवगतशोकः=शोकरहितो जानश्चाप्यासीत् ॥ सू. ९ ॥

मूलम्— तएणं धणणे सत्थवाहे अन्नया कयाइं लहूसयंसि  
ययावराहंसि संपलत्ते जाए यावि होत्था, तएणं ते नगरगुत्तिया  
धणणं सत्थवाहं गेण्हंति गेण्हित्ता जेणेव चारगे तेणेव उवागच्छंति,  
उवागच्छित्ता चारगं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता विजएणं तक्करेणं  
सद्धि एगयओ हडिवंधणं करेति । तएणं सा भद्दा भारिया कल्लं  
जाव जलंते विउलं असणं ४ उवक्खडेइ, उवक्खडित्ता भोयणपिडयं  
करेइ, करित्ता भोयणाइं पक्खिक्खइ लंछियमुद्धियं करेइ, करित्ता  
एगंच सुरभिवरवारिपडिपुन्नं दगवारयं करेइ, करित्ता पंथयं दास-  
चेडं सद्दविइ, सद्दवित्ता एवं वयासी गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया !  
इमं विउलं असणं ४ गहाय चारगसालाए धणणस्स सत्थवाहस्स  
उवणेहि, तएण से थए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए एवं वुत्ते  
समाणे हट्टुट्टे तं भोयणपिडयं तं च सुरभिवरवारिपडिपुन्नं  
दगवारयं गेण्हइ, गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ,  
पडिनिक्खमित्ता रायगिहे नगरे मज्झं मज्झेणं जेणेव चारगसाला

इसमें बहुत अधिक जन समूह सम्मिलित हुआ था । (करित्ता बहूई लोड-  
या 'मयगकिच्चाइ' करेइ, करित्ता कालंतरेणं अवगयस ए जाए यावि होत्था)  
बाद में उमने अनेक और भी लौकिक कृत्य किये । कर के, फिर  
धीरे २ बर अपने पुत्र के शोक से भी रहित हो गया । सूत्र ॥ ९ ॥

नयात्राभां धणु भाणुसो ओकडा थया उता. (करित्ता बहूइ लोडयाइं मयगकि-  
च्चाइं करेइ, करित्ता कालंतरेणं अवगयसोएजाए यावि होत्था) त्थारपणी धन्य-  
सार्थवाडे पुत्रनी अन्त्येष्टी भरषु पणीनी उत्तर किया संबंधी धणु लोडिड  
उमो उयो. अने आम तेवणत पआर थतां धीमे धीमे पुत्र शोकने पणु लूली गयो. ॥ सू. ९ ॥

जेणेव धणणे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भोय-  
णपिडयं ठावेइ, ठावित्ता उल्लंछेइ, उल्लंछित्ता भायणाइं गेण्हइ  
गेण्हित्ता भायणाइं धोवेइ, धोवित्ता हत्थसोयं दलयइ, दलयित्ता  
धणं सत्थवाहं तेणं विउलेणं असणं ४ परिवेसइ, तएणं मे  
विजए तक्करे धणं सत्थवाहं एवं वयासी—तुमणं देवाणुप्पिया !  
मम एयाओ विउलाओ असण० ४ संविभागं करेहि, तएणं से  
धणणे सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी अवियाइं अहं विजया !  
एयं विउलं असणं ४ कायाणं वा सुणगाणं वा दलएज्जा उक्कुरु-  
डियाए वा णं छुट्ठेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स पुत्तमारगस्स  
अरिस्सवेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ  
असण० ४ संविभागं करेज्जामि, तएणं से धणणे सत्थवाहे तं  
विउल असणं ४ आहारेइ, आहारित्ता तं पंथयं पडिविसज्जेइ,  
तएणं से पंथए दासचेडे तं भोयणपिडगं गिण्हइ, गिण्हित्ता जामेव  
दिसिं पाउव्भूए तामेव दिसिं पडिगए, तएणं तस्स धणस्स सत्थ-  
वाहस्स तं विउलं असणं ४ आहारियस्स समाणस्स उच्चारपासवणे  
णं उव्वाहित्थो, तएणं से धणणे सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी  
—एहि ताव विजया ! एगंतमवक्कमामो जेणं अहं उच्चारपासणं  
परिट्ठवेमि, तएण से विजए तक्करे धणं सत्थवाहं एवं वयासी—  
तुव्भं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ आहारियस्स अत्थि उच्चारे वा  
पासवणे वा ममंणं देवाणुप्पिया ! इमेहिं वहुहिं कसप्पहारेहि  
य जाव लयापहारेहि य तण्हाए य लुहोय य परव्भवमाणस्स णत्थि  
केइ उच्चारे वा पासवणे वा तं छंदेणं तुमं देवाणुप्पिया ! एगंते

अवक्रमित्ता उच्चारपासवणं परिट्टवेइ, तएणं से धणणे सत्थवाहे  
विजएणं तकरेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्टेइ, तएणं से  
धणणे सत्थवाहे मुहुत्तंतरस्स वलियतरागं उच्चारपासवणेणं उट्वाहिज्ज-  
माणे विजयं तकरं एवं वयासी—एहि ताव विजया ! जाव अव-  
क्रमामो, तएणं से विजए धणणं सत्थवाहं एवं वयासी—जइणं  
तुमं देवाणुप्पिया ! तओ विउलाओ असणं ४ संविभागं करेहि  
तओहं तुव्वेहिं सद्धि एगंतं अवक्रमामि, तएणं से धणणे सत्थवाहे  
विजयं एवं वयासी—अहणणं तुव्वं तओ विउलाओ असणं ४  
संविभागं करिस्सामि, तएणं से विजए धणणस्स सत्थवाहस्स एय-  
मदं पडिसुणेइ, तएणं से विजए धणणेणं सद्धि एगंते अवक्रमेइ  
उच्चारपासवणं परिट्टवेइ, परिट्टवित्ता आयंते चोक्खे परमसुईभूए  
तमेव ठाणं उवसंकमित्ता विहरइ, तएणं सा भ । कहं जाव  
जलंते विउलं असणं ४ जाव परिवेसेइ, तएणं से धणणे सत्थ-  
वाहे विजयस्स तकरस्स तओ विउलाओ असणं ४ संविभागं  
करेइ, तएणं से पंथए भोयणपिडयं गहाय चारगाओ पडिनिक्ख-  
मइ, पडिनिक्खमित्ता रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणेव सए  
गिहे जेणेव भद्दा भारिया सत्थवाही तेणेव उवागच्छइ, उवा-  
गच्छित्ता भदं सत्थवाहिणिं एवं वयासी—एवं खल्ल देवाणुप्पिए !  
धणणे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स ताओ  
विउलाओ असणं ४ संविभागं करेइ । तएणं सा भद्दा सत्थ-  
वाही पंथयस्स दासचेडयस्स अंतिएएयमदं सोच्चा आसुरुत्ता रुट्ठा जाव  
मिसिमिसैमाणा धणणस्स सत्थवाहस्स पओसमावज्जइ ॥सू. १०॥

टीका—तए णं से इत्यादि । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहोऽन्यथा कदाचित्—एकस्मिन् कस्मिंश्चित्समये 'लहूसयंसि रायावराहंसि' लघुस्त्रके राजापराधे=स्तोके राजकागमदानरूपे भूपापराधे सति केनाऽपि पिशुनेन भूपाय 'संपलत्ते' संपलपितः=अपराधित्वेन कथितो जातश्चाप्यासीत् । ततः खलु=पैशुन्यप्रवृत्तपनानन्तरं ते नगरगोप्तृका धन्यं सार्थवाहं गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव चारकः=कारागारस्तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य चारकमनुप्रवेशयन्ति. अनुप्रवेश्य विजयेन तत्करेण सार्द्धम् 'एगयओ' एकतः=एकत्र तेन सहैव एकस्मिन् हडियन्ओ 'वेडी' इति भाषामसिद्धे हडिवन्धनं कुर्वन्ति । ततः खलु सा भद्रा भार्या कल्ये यावज्ज्वलति=धन्यश्रेष्ठिनो हडिवन्धनस्य द्वितीयदिवसे सूर्योदये सति विपुलं=विस्तीर्णं स्वपतिभोजनार्हम् अन्नं पानं त्वाद्यं भ्वाद्यं=नानाविधमशनादिकम् 'उववखडेड' उपकरोति=नीरकहिड-

तए णं से धण्णे सत्थवाहे इत्यादि ।

टीका—(तएणं) इसके बाद (से धण्णे सत्थवाहे) वह धन्यसार्थवाह (अन्नया कयाइं) किसी एक समय (लहूसयंसि रायावराहंसि) टेक्स न देने के छान्टे अपराध में (संपलत्ते जाए यावि होत्था) राजा के पास किसी चुगल खोरने फंसा हुआ कह दिया । (तएणं ते नगरगुत्तिया धण्णं सत्थवाहं गेह्णंति) इसके बाद नगररक्षकोंने उस धन्य सार्थवाह को पकड़ लिया । (गेह्णित्ता जेणेव चारगे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता चारगं अणुपविसंति) पकड़ कर वे उसे जहां कारागार था, वहां ले गये, लेजाकर उन्होंने उसे कारागार में बन्द कर दिया । (अणुपविसित्ता विजएणं तक्करेणं सद्धि एगयओ हडिवंधणं करंति) बन्द करके उसे जहां वह विजयचोर था वही उसीकी वेडी से बांध दिया । (तएणं सा भद्रा भारिया कल्लं

'(त एणं से धण्णे सत्थवाहे' इत्यादि !

टीका—(तएणं) त्थार पछी (से धण्णे सत्थवाहे) धन्यसार्थवाहे (अन्नया कयाइं) डेह ओक वण्णते (लहूसयंसि रायावराहंसि) डेर न आपवा डपी नाना अपराध भदल (संपलत्ते जाए यावि होत्था) डेह याडियाओ राजनी पास पडोयाडी दीधा. (त एणं ते नगरगुत्तिया धण्णं सत्थवाहं गेह्णंति) त्थार भाद नगर रक्षकेओ धन्य सार्थवाहने पकडयो. (गेह्णित्ता जेणेव चारगे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता चारगं अणुपविसंति) पकडीने तेओ तेने जेलमां लध गया अने तेमां पूरी दीधा. (अणुपविसित्ता विजएणं तक्करेणं सद्धि एगयओ हडिवंधणं करंति) न्थां विजय नामे थार डुतो त्यां न धन्यसार्थवाहने पणु भेडीथी ओंधी दीधा. (तएणं सा भद्रा



ग्रादिना संस्कारपूर्वकं पचति, उपस्कृत्य 'भोयणपिडयं' भोजनपिडकं=भोजन  
भरणाय पिडकं=सम्पुष्टकम् 'पिटारा' 'कटोरदान' 'डब्बा' इति. सम्प्रति  
काले 'टीफनयोवस' इति च प्रसिद्धं 'करेइ' करोति=सज्जयति, कृत्वा=  
सज्जयित्वा तस्मिन् 'भोयणाइ' भोजनानि=खाद्यपदार्थानि 'पक्खिवइ' पक्षि-  
पति=स्थायति, पक्षिप्य 'लंछियमुदियं' लाञ्छि।मुद्रियं लाञ्छितं=रेखादिचिह्न-  
युक्तं, मुद्रितं=आक्षादिमुद्रासाहतं, 'करेइ' करोति=सज्जयति, कृत्वा एकं च  
'सुरभिवरवारिपडिपुनं' सुरभिवरवारिप्रतिपूर्णं-सुरभि=केतकीपाटलादि  
सुगन्धवासितं वरं श्रेष्ठं स्वच्छं वारि=जल, तेन प्रतिपूर्णं=भृतं 'दगवारयं'  
दकवारकं=जलपात्रविशेषं 'झारी' इति भाषा प्रसिद्धं जलपात्रं 'करेइ'  
करोति=सज्जयति, कृत्वा. पान्थकं दासवेष्टकं शब्दयति शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छ-

जाव जलंते विउलं असणं ४ उवखड्डेइ) डमके बाद उस भद्रा सार्थ-  
वाहीने दूसरे दिन प्रातः काल जब सूर्यप्रकाशित हो चुका तब ४  
प्रकारका आहार तैयार किया—(उवखड्डित्ता भोयणपिडयं करेई--  
करित्ता भोयणाइं पक्खिवइ, लंछियमुदियं करेइ,--करित्ता एगं च सुरभि-  
वरवारिपडिपुनदगवारयं करेइ) जब आहार निष्पन्न हो चुका तब उसने  
उसके रखने के लिये एक कटोरदान तैयार किया। जब कटोरदान  
साफ सुथरं रूप से तैयार हो चुका तब उसमें उसने आहार को  
रख दिया—आहार रखकर फिर उसे लाख की मुद्रा से मुद्रित कर  
दिया। कटोरदान को मुद्रित करने के बाद फिर उसने एक सुगन्धित  
उत्तम जल से प्रतिपूर्ण झारी को तैयार किया। (करित्ता पंथयं दास-  
चेडं सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी) झारी तैयार कर उसने फिर  
पान्थक दास चेष्टक को बुलाया—और बुलाकर उसने उस प्रकार कहा--

भरिया कल्लं जाव जलंते विउलं असणं ४ उवखड्डेइ) त्थार जाड लद्धाभाया  
सार्थवाहीये जीम द्विसे सवारि सूरज उदय पामतां चार जतने आहार तैयार करावडाव्यो.  
(उवखड्डित्ता भोयणपिडयं करेई करित्ता भोयणाइं पक्खिवइ, लंछियमुदियं  
करेइ, करित्ता एगं च सुरभिवरवारिपडिपुनदगवारयं करेइ) आहार न्यारे तैयार  
थई गये त्थारे तेले आहारने भूकवा भाटे उणे तैयार कये न्यारे साइ पाणीथी उणे  
घोवांभने साइ थई गये त्थारे तेमां आहार भूकी दीघा. आहार भूकीने लाण वगेरे  
लगावीने तेने जणजणर जंघ करी दीघा. उणातुं "सील" करीने तेले ओक सुवास  
युक्त जणथी पूरुं लरेली आरी तैयार करी. (करित्ता पंथयं दासचेडं सदावेइ,  
सदावित्ता एवं वयासी) आरी तैयार करीने तेले पान्थकदास चेष्टकने जालाव्यो. अने

खलु त्वं देवानुप्रिया इदं विपुलं=प्रचुरम् अशनं पानं स्वाद्यं स्वाद्यं गृहीत्वो चारं  
कशालायां धन्यस्य सार्थवाहस्य 'उचणेहि' उपनय=समीपे प्रापय। ततः खलु  
स पान्थको दासचेटको भद्रया सार्थवाहा एवमुक्तः सन् दृष्टुं दृष्टुस्तद  
भोजनपिटकं, तच्च सुरभिवरवारिप्रतिपूर्णद्वारकं गृह्णाति, गृहीत्वा  
स्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य राजगृहे नगरे मध्यमध्यमेन  
यत्रैव चारकशाला यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य

(गच्छ णं तुम देवाणुप्पया। विउलं असणं ४ गहाय चारगसालाए धन्नस्स  
सत्थवाहस्स उचणेहि) हे देवानुप्रिय ! तुम इस विपुल अशन, पान, स्वाद्य  
और स्वाद्य--आहार का लेकर कारावास में धन्य सार्थवाह के पास  
पहुँचा आओ। (तएणं से पंथए दासचेडए भद्राए सत्थवाहीए एवं वुत्तो  
समाणे दृष्टुद्रे तं भोजणपिटयं तं च सुरभिवरवारिपडिपुत्तं दग्गवारयं  
गेह्णइ) भद्रा सार्थवाही के इस कथन को सुनकर वह पान्थक दास चेटक  
बहुत अधिक हर्षित हुआ और संतुष्ट हुआ। तथा उस भोजन के भरे  
हुए डिब्बेको एवं सुगन्धित उत्तम जल से परिपूर्ण उस झारी को  
उसने ले लिया। (गेह्णता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ) लेकर वह  
अपने घर से निकला--(पडिनिक्खमिन्ना रायगिहे नयरे मज्झं मज्झेण  
जेणेव चारगसाला जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) निकल कर  
वह राजगृह नगर के ठीक बीचो बीच के मार्ग से हाता हुआ जहाँ  
वह कारावास एवं धन्य सार्थवाह था वहाँ गया--(उवागच्छिता भोजण

तेने आ प्रसाण्णे तेहुं--(गच्छ णं तुम देवाणुप्पया ! विउलं असणं ४ गहाय  
चारगसालाए धन्नस्स सत्थवाहस्स उचणेहि) हे देवानुप्रिय ! तमि आ  
पुण्डण प्रमाणुमां जनावेला अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य आहारने लधने जेलमां  
धन्यसार्थवाहनी पासे पडोच्यतो करे (त एण से पंथए दासचेडए भद्राए सत्थ-  
वाहाए एवं वुत्तो समाणे दृष्टुद्रे तं भोजणपिटयं तं च सुरभिवरवारि-  
पडिपुत्तं दग्गवारयं गेह्णइ) भद्रा सार्थवाहीनी आत्ता सांजणीने पान्थकदास येदक  
जहु न प्रसन्न थयो--अने संतुष्ट थयो. त्थार पछी तेहे लोन्नथी परिपूर्णे उपाणे  
तेमज सुवासित जणथी पूरुं लरेली आसीने तेहे लध वीधी. (गेह्णिता सयाआ  
गिहाआ पडिनिक्खमइ) लधने ते पोताने घेत्थी नीकज्यो. (पडिनिक्खमिन्ना  
रायगिहे नयरे मज्झं मज्झेण जेणेव चारगसाला जेणेव धन्ने सत्थवाहे  
तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने राजगृह नगरनी ठीक वच्च्येना मार्गथी पसार थयुने  
ते त्थां जेल अने धन्यसार्थवाह उतो त्थां पडोच्यो. (उवागच्छिता भोजण

भोजनपिटके स्थापयति, स्थापयित्वा 'उल्लंछेइ' उल्लंछयति= निर्लाञ्छितं करोति=उद्वाटयतीत्यर्थः, उल्लंछय 'भायणाणि' भाजनानि= स्थाली कटोरकादीनि गृह्णाति, गृहीत्वा भाजनानि 'धोवेइ' धावति=प्रक्षालयति, धावयित्वा=पात्रप्रक्षालनानन्तरं 'हत्थसोयं दलयइ' हस्तशौचं ददाति, श्रेष्ठिनो हस्तौ धावयति, हस्तशौचानन्तरं धन्यसार्थवाहं तेन विपुलेन— अशन-पान-खाद्यस्वाद्येन 'परिवेसइ' परिवेषयति=श्रेष्ठिनो भोजनपात्रेऽशनादीनि निदधातीत्यर्थः 'तएणं' तदान्वलु=श्रेष्ठिभोजनसमये स विजयस्तस्करो धन्यं सार्थवाहमेवमवादीत्-त्वं खलु देवानुप्रिय ! मम एतस्माद् विपुलाद् अशन-पान-खाद्य-स्वाद्यात् संविभागं कुरु । ततः खलु म धन्यः सार्थवाहस्तस्य वाक्यं श्रुत्वा विजयं तस्करमेवमवादीत्अपि 'आइ' वाक्या-

पिडगं ठवेइ) जाकर उसने उस भोजन के डिब्बेको वहां रख दिया । (ठवित्ता उल्लंछेइ) रखकर फिर उसने उस डिब्बेको खोला (उल्लंछित्ता भायणाइं धोवेइ धोवित्ता हत्थसोयं दलयइ) खोलकर उसने थाली-कटोरी आदि को उठाया-उठा कर उन्हें धोया, (दलयित्ता धणं सत्थवाहं तेणं असणं ४ परिवेसइ) धुलाकर उस सेठ धन्य सार्थवाह के लिये वह विविध आहार परोसा (तएणं से विजयं तक्करे धणं सत्थवाहं एवं वयासी) इसी बीच में उस विजय चौरने धन्य सार्थवाह से इन प्रकार कहा— (तुमणं देवाणुप्पिया मम एयाओ विउलाओ असणं ४ संविभागं करेहि) हे देवानुप्रिय ! तुम इस अशन, पान खाद्य, एवं स्वाद्यरूप चार प्रकार के आहार में से विभाग करो (तएणं से धन्ने सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी) विजय चौर की इस प्रकार बात सुनकर धन्य सार्थवाहने उस विजय चौर

पिडगं ठवेइ) અને ત્યાં પહોંચીને ભોજનના ડબ્બાને તેણે ત્યાં મૂકી દીધો. (ઠવિત્તા ઉલ્લંછેइ) ત્યાં મૂકીને તેણે ડબ્બો ઉઘાડ્યો. (ઉલ્લંછિત્તા ભાયણાઈ ધોવેइ ધોવિત્તા હત્થસોયં દલયइ) ઉઘાડીને તેણે થાળી અને વાડકીને લીધી અને લઈને પાણીથી ધોઈ. ત્યાર બાદ તેણે શેઠના બંને હાથ ધોવડાવ્યા. (દલયિત્તા ધણં સત્થવાહં તેણં વિઉલેણં અસણં ૪ પરિવેસइ) ધોવડાવીને તેણે ધન્યસાર્થવાહને માટે વિવિધ જાતના આહારો પીરસ્યા. (તएणं से विजयं तक्करे धणं सत्थवाहं एवं वयासी) એ જ વખતે તે વિજય ચોરે ધન્યસાર્થવાહને આ પ્રમાણે કહ્યું—(તુમણં દેવાણુપ્પિયા મમ એયાઓ વિઉલાઓ અસણં ૪ સંવિભાગં કરેહિ) હે દેવાનુપ્રિય ! તમે આ અશન, પાન ખાદ્ય અને સ્વેદ આહારમાંથી મારોપણું હિસ્સો કરો. (તएणं से धन्ने सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी) વિજય ચોરની આ જાતની વાત સાંભળીને

लङ्कारे अहं हे विजय ! एतद् विपुलमशनं स्वाद्यं स्वाद्यं काकेभ्यो वा  
 सुनकेभ्यो वा दद्याम्, 'उक्कुरुडियाए' उक्कुरुडिरायां=रुचवरपुठननिक्षेपणस्थाने  
 वा खलु=निश्चयेन 'छडेज्जा' त्यजेयं=प्रक्षिपेयं किन्तु नैव खलु=तुभ्यं पुत्र-  
 वातकाय, पुत्रमारकाय, 'अरिस्स' अरये=अनिष्टकारिणं 'वेरियस्स' वैरिकाय=  
 परिणतशत्रुभावाय, 'पडिणीयस्स' प्रत्यनीकाय=प्रतिकूलविधायिने, 'पच्चा-  
 मित्तस्स' प्रत्यामित्राय=दार्दिकशत्रवे 'एत्तो' एतस्माद् विपुलाद् अशनपान-  
 स्वाद्यस्वाद्यात् 'संविभाग' संविभागम्=अंशरूपेण पृथक्करणं 'करेज्जामि'  
 कुर्वामि। अस्मादशनादिकात्तुभ्यं किञ्चिदपि न दास्यामीति भावः। तः। खलु=  
 इत्युक्त्वा स धन्यः सार्थवाहस्तद् विपुलमशनपानस्वाद्यस्वाद्यम् आहारेद् 'आहारयति=  
 भुङ्क्त, आहारयित्वा त पान्यकं 'पडिविसज्जेइ' प्रतिविसर्जयति=गृहंप्रति

से इस प्रकार कहा—(अविद्याः अहं विजया ! एयं विउलं असणं ४ कायाणं  
 वा सुणगाणं वा दलएज्जो उक्कुरुडियाए वा णं छडेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स  
 पुत्तमारगस्स अरिस्सवेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४  
 संविभागं करेज्जामि) हे विजय चौ ! मैं चाहे इस विपुल अशन, पान,  
 स्वाद्य, स्वाद्य, रूप चतुर्विध आहार को कौनों के लिये अथवा कुत्तों के  
 लिये दे दूंगा—या इसे उकड़े पर—कूडा करकट डालनेके स्थान पर—डाल-  
 दूंगा परन्तु पुत्रघातक, पुत्रमारक, अनिष्टकारी, शत्रुभाव से परिणत, प्रति-  
 कूल विधायी तथा हार्दिक शत्रु ऐसे तुम्हारे लिये इसमें से विभाग तुम्हें  
 नहीं दूंगा। (तएणं से धन्ने सत्थवाहे तं विउलं असणं ४ आहारेइ,  
 आहारित्ता तं पंथयं पडिविसज्जेइ) इस प्रकार उस विजय तस्कर से  
 कह कर धन्य सार्थवाहने उस विविध प्रकार के अशनादिरूप चतुर्विध

धन्यसार्थवाहे ते विजय योरने आ प्रभाणे उहु—(अविद्याः अहं विजया !  
 एयं विउलं असणं ४ कायाणं वा सुणगाणं वा दलएज्जो उक्कुरुडियाए  
 वाणं छडेज्जा नोचेव णं तव पुत्तघायगस्स पुत्तमारगस्स अरिस्स वेरियस्स  
 पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४ संविभागं करेज्जामि)  
 हे विजय योर ! आ पुक्कण प्रभाणुमां भनाववामा आवेळां यार भतना आहारे  
 हुं कागडाओ अथवा कूतराओने भवडाववा तैयार हुं हे उक्कुरुडानी ज्ज्याओ नाभीथ  
 पणु तारा जेवा पुत्तना इत्यारा पुत्र मारनारा, अनिष्ट करनार शत्रु थपु गयेला,  
 ओहुं करनान तेमज्ज इदिंठ शत्रुने आमांथी इत्थो भणी न थके, तमार  
 जेवा हुण्टने तो ओक कडो पणु आमांथी भणी थके तेम नथी। (तएणं से धन्ने  
 तं विउलं असणं ४ आहारेइ, आहारित्ता तं पंथयं पडिविसज्जेइ)  
 आ प्रभाणे विजय योरने ज्वाण आपीने धन्य सार्थवाह ते अशन, पान, वगेरेना

प्रपद्यति । ततः खलु स पान्थको दासचेष्टस्तं भोजनपिष्टकं गृह्णात, गृहीत्वा  
यस्या दिशः पादुभूतस्तस्यामेव दिशि प्रतिगतः, येन मार्गेणागतस्तस्यैव  
मार्गेण गतवानित्यर्थः । ततः खलु=तदनु तस्य धन्यस्य सार्थवाहस्य तद्  
विपुलमशनं पानं स्वाद्यं स्वाद्यम् 'आहारियस्स' आहारितस्य=भुक्तस्य सतः  
'उच्चारपासवणेण' उच्चारपस्रवणे खलु=उच्चारंच=विष्ठापस्रवणेच=मूत्रमित्युच्चार-  
पस्रवणे, ते उवाहित्या' उद्वाधपतां पीडयतः स्मेत्यर्थः । 'तएणं' ततः खलु  
=तदनु स धन्यः सार्थवाहो विजयं तस्करमेववादीत-एहि=आगच्छ तावत्-  
प्रथमं हे विजय ! आवाम् 'एगंतमवक्रमामो' एकान्तमपक्रामावः=उच्चार-  
पस्रवणनिवृत्त्यर्थं निर्जने स्थाने गच्छावः, येनाहमुच्चारपस्रवणे 'परिट्टवेमि'  
परिष्ठापयामि=उच्चारपस्रवणोत्सर्गं करोमि । ततः खलु स विजयस्तस्करो धन्यं

आहार कोया-आहार कर बादमें उस पान्थक को वहां से खाना कर दिया ।  
(तएणं से पयए दासचेष्टे तं भोजनपिडकं गिह्णइ गिह्णित्ता जायेव दिशि  
पाउब्भूए तामेव दीसि पडिगए) खाना खाते समय उस पान्थकदास चेष्टकने  
उस भोजन के डिब्बे को ले लिया और लेकर जहां से आया था वहीं  
पर चला गया (तएणं तस्स धणस्स सत्थवाहस्स तं विउलं असणं ४ आहा-  
रियस्स समाणस्स उच्चारपासवणे णं उवाहित्या) इसके बाद धन्यसार्थवाह  
को उस ४ प्रकार के अशन आदि खाने से बड़ी नीत और लघुनीत  
की बाधा उपस्थित हुई (तएणं से धन्ने सत्थवाहे विजयं तक्करं एव वयासी)  
सा उस धन्यसार्थवाहने विजय चौर से इस प्रकार कहा-(एहि ताव विजया ।  
एगंतं अवक्रमामो जेणं अहं उच्चारपासवणं परिट्टवेमि) आओ-विजए चौर  
तुम और हम दोनों निर्जन एकान्त-स्थान में चले । मुझे उच्चारपस्राण  
की बाधा हो रही है सो मैं वहां उच्चार पस्रवण से निवृत्त होऊंगा ।

यार जातना आहारने जम्हा जम्हा पछी तेले पान्थकने त्यांथी ज्वानी आशा  
आपी. (तएणं से पयए दासचेष्टे तं भोजनपिडकं गिह्णइ गिह्णित्ता जायेव दिशि पा  
उब्भूए तामेवदिशि पडिगए) जम्हा पछी पान्थकदास चेष्टके ते उजाने लीधो अने लठने  
ज्यां थीआयेो हुतो त्यां जतो रथो. (तएणं तस्स धणस्स सत्थवाहस्स तं विउलं  
असणं ४ आहारियस्स समाणस्स उच्चारपासवणे णं उवाहित्या) त्थार जाद  
धन्यसार्थवाहने यार जातना आहारो जम्हा पछी दीधं थंश तेमज लघु थंशानी  
भुशेदी उली थध. (तएणं से धन्ने सत्थवाहे विजयं तक्करं एव वयासी  
त्थारे धन्य सार्थवाहे विजय योरने कथुं—(एहि ताव विजया ! एगंतं अव-  
क्रमामो जेणं अहं उच्चारपासवणं परिट्टवेमि) विजय योर थालो आपले  
जने निर्जन ऐकान्त स्थानमां जधये. मने उच्चार पस्रवणानी भुशेदी उली



लङ्कारे अहं हे विजय ! एतद् विपुलमशनं स्वाद्यं स्वाद्यं काकेभ्यो वा  
 सुनकेभ्यो वा दद्याम्, 'उक्कुरुडियाए' उक्कुरुडिरायां=रुच्यवरपुठननिक्षेपणस्थाने  
 वा खलु=निश्चयेन 'छडेज्जा' त्यजेयं=प्रक्षिपेयं किन्तु नैव खलु=तुभ्यं पुत्र-  
 घातकाय, पुत्रमारकाय, 'अरिस्स' अरये=अनिष्टकारिणं 'वेरियस्स' वैरिकाय=  
 परिणतशत्रुभावाय, 'पडिणीयस्स' प्रत्यनोकाय=प्रतिकूलविधायिने, 'पच्चा-  
 मित्तस्स' प्रत्यामित्राय=हार्दिकशत्रवे 'एत्तो' एतस्माद् विपुलाद् अशनपान-  
 स्वाद्यस्वाद्यात् 'संविभागं' संविभागम्=अंशरूपेण पृथक्करणं 'करेज्जामि'  
 कुर्वामि। अस्मादशनादिकानुभ्यं किञ्चिदपि न दास्यामीति भावः। ताः खलु=  
 इत्युक्त्वा स धन्यः सार्थवाहस्तद् विपुलमशनपानस्वाद्यस्वाद्यम् आहारेद् 'आहारयति=  
 भुङ्क्ते, आहारयित्वा त पान्थकं 'पडिविसज्जेइ' प्रतिविसर्जयति=गृहं प्रति

से इस प्रकार कहा—(अवियाइ अहं विजया ! एयं विउलं असणं ४ कायाणं  
 वा सुणगाणं वा दलएज्जो उक्कुरुडियाए वा णं छडेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स  
 पुत्तमारगस्स अरिस्सवेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४  
 संविभागं करेज्जामि) हे विजय चौ ! मैं चाहे इस विपुल अशन, पान,  
 स्वाद्य, स्वाद्य, रूप चतुर्विध आहार को कौनों के लिये अथवा कुतों के  
 लिये दे दूंगा—या इसे उकड़े पर—कूड़ा करकट डालनेके स्थान पर—डाल-  
 दूंगा परन्तु पुत्रघातक, पुत्रमारक, अनिष्टकारी, शत्रुभाव से परिणत, प्रति-  
 कूल विधायी तथा हार्दिक शत्रु ऐसे तुम्हारे लिये इसमें से विभाग तुम्हें  
 नहीं दूंगा। (तएणं से धन्ने सत्थवाहे तं विउलं असणं ४ आहारेइ,  
 आहारित्ता तं पंथयं पडिविमज्जेइ) इस प्रकार उस विजय नस्सर से  
 कह कर धन्य सार्थवाहने उस विविध प्रकार के अशनादिरूप चतुर्विध

धन्यसार्थवाहे ते विजय योरने आ प्रभाण्णे उहुं—(अवियाइ अहं विजया !  
 एयं विउलं असणं ४ कायाणं वा सुणगाणं वा दलएज्जो उक्कुरुडियाए  
 वाणं छडेज्जा नोचेव णं तव पुत्तघायगस्स पुत्तमारगस्स अरिस्स वेरियस्स  
 पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४ संविभागं करेज्जामि)  
 हे विजय योर ! आ पुक्कण प्रभाण्णुमां जनाववामो आवेलां चार जतना आहारे  
 हुं कागडाओ अथवा कूतराओने भवडाववा तैयार हुं हे उक्कुरुडानी जव्याओ नाभीथ  
 पणु तारा जेवा पुत्रना इत्यारा पुत्र मारनारा, अनिष्ट करनार शत्रु सब गयेला,  
 जोहुं करनान तेमज्ज डडिड शत्रुने आमांथी डडिडो मणी न शके, तमार  
 जेवा हुण्टने तो एक ककडा पणु आमांथी मणी शके तेम नथी। (तएणं से धन्ने  
 तं विउलं असणं ४ आहारेइ, आहारित्ता तं पंथयं पडिविमज्जेइ)  
 आ प्रभाण्णे विजय योरने जव्याण आभीने धन्य सार्थवाह ते अशन, पान, वगेरेना



पठायत्त । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहो विजयेन तत्करेणैवमुक्तः सन्  
'तुसिणीए' तूष्णीकः= उदासीनतया चाग्न्यापारहितः सन् संतिष्ठति ।  
ततः खलु=तत्पश्चात् स धन्यः सार्थवाहः 'मुहुर्तन्तरम्' मुहूर्त्तान्तरेण पुनः  
'उच्चारपासवणेजं' उच्चारपस्रवणाभ्यां 'वलिततरागं' वलिततरम्=अतिप्रबलम्  
'उन्वाहिज्जमाणे' उद्धाध्यमानः= अतिशयेन पीड्यमानो विजयं तत्स्करमेव-  
मवादीत्—एहि तावत् हे विजय ! यावद् अपक्रामावः । ततः खलु स  
विजयो धन्यं सार्थवाहमेवमवादीत्—यदि खलु यूयं देवानुप्रियाः ! तस्माद्

प्रसन्नवर्ण की बाधा से निवृत्त होइये। (तएणं से धण्णे सत्थवाहे विजएणं तक्करेणं एवंवुत्ते समणे तुसिणीए संचिद्वइ तएणं से धण्णे सत्थवाहे सुहृत्तं-तरस्स वलियतराग उच्चारपासवेणं उव्वाहिज्जमाणे विजयं तक्करं एवं वयासी) विजय चौरने जब धन्यसार्थवाह से इस प्रकार (उलाहने के रूप में) कहा तो वह चुप हो गया। इसके बाद पुनः थोड़ी देर में धन्यसार्थवाह को उच्चार और प्रसन्नवर्ण की बाधा पहिले की अपेक्षा और अधिक रूपमें हुई तब उसने विजय चौर से इस प्रकार कहा—(एहि नाव विजया ! जाव अवक्क-माभो, तएणं से धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी—जइणं तुम देवानुप्पिया ! तओ विउलाओ अस्सण ४ संचिभागं करेहि तओ हं तुव्भेहिं सद्धिं अवक्कमामि) आओ. विजय—हम तुम दोनों एकान्त-निर्जन-स्थान में चले। मुझे उच्चार और प्रसन्नवर्ण की बहुत जोर से बाधा हो रही है। इस तरह धन्य सार्थवाह की बात सुनकर विजयने उससे कहा—यदि तुम हे देवानुपिय ! उस विपुल

મુજબ એકાન્તમાં જઈને ઉચ્ચારપ્રશ્નવણની મુશ્કેલીથી નિવૃત્તિ મેળવે. (તર્ણ સે ધર્ણે સત્થવાહે વિજર્ણ તવકરેણં એવંબુત્તે સમાર્ણે તુસિર્ણાં સંચિદ્ધં તર્ણ સે ધર્ણે સત્થવાહે મુહુત્તંતરસ્સ વલિયતરાગં ઉચ્ચારપાસવેણં ઉન્વાહિજ્જમાર્ણે વિજયં તવકરં એવં વયાસી) વિજય ચોરે એક રીતે ઉપાલંબ (ઉપકા) ના રૂપમાં ધન્યસાર્થવાહને આ પ્રમાણે કહ્યું—ત્યારે તે ચૂપ થઈ ગયો. ત્યાર પછી થોડા વખતે ધન્યસાર્થવાહને પહેલાં કરતાં વધારે સખત રીતે ઉચ્ચાર પ્રશ્નવણની મુશ્કેલી ઊભી થઈ. ત્યારે ફરી તેણે વિજય ચોરને કહ્યું (એહિ તાવ વિજયા ! જાવ અવ્વકમામો તર્ણ સે ધર્ણં સત્થવાહં એવં વયાસી જહ્ણં તુમં દેવાનુપ્પિયા ! તઓ વિહાઓ અસણ ૪ સંચિમાગં કરેહિ તઓહં તુમ્મેહિ સદ્ધિ એગંતં અવ્વકમામિ) વિજય ચાલે આપણે ખંને એકાન્ત નિર્જન સ્થાનમાં જઈએ. ઉચ્ચાર પ્રશ્નવણની સખત મુશ્કેલી મને થવા માંડી છે. આ રીતે ધન્ય સાર્થવાહની વાત સાંભળીને વિજયે તેને કહ્યું હે દેવાનુપ્રિય !

સાર્થવાદમેવમવાદીત-હે, દેવાનુપ્રિયા: ! =હે શ્રેષ્ઠિવર્યા: ! યુગ્માકં 'વિઝલં' વિપુલં=પ્રચુરમંશનાદિકમાહારિતાનામસ્તિ-ઉચ્ચારં, વા, પ્રસ્રવણં વા, મમ સ્વલુ હે, દેવાનુપ્રિયા: ! ગતૈર્વહુભિઃ કશાપહારૈશ્ચ : યાવત્-લતાપહારૈશ્ચ, તૃણયાઃ, ચ, ક્ષુધયા, ચ, 'પરંભવમાણસ્સ' , પરામવતઃ=પીડિતસ્યાઽનાહારિતસ્ય: ચ, નાસ્તિ કિમપિ ઉચ્ચારં વા પ્રસ્રવણં વા, કા, નામઃ, વુમુક્ષાપહાર-પીડિતસ્યોચ્ચારપ્રસ્રવણવાધે? . તિ ભાવઃ, 'તં' તસ્માત્કારણાત્ 'હંદેણં' હંદેન=સ્વેચ્છયા યુયં હે દેવાનુપ્રિયા: ! એકાન્તે ઉપક્રમ્યોચ્ચારપ્રસ્રવણે પરિ-

(તણં સે વિજયતવકરે' ધણં સત્યવાહં એવં વયાસો) ધન્યસાર્થવાદ કીં હિંસં વાત કો સુનકરં ઉસં વિજય ચોરને ઉનસે એસાં કદા--(તુભં દેવાણુપ્પિયા ! વિઝલં અસણં ૪ આહારિયસ્સ' અત્થિ ઉચ્ચારે વા પાસવણે વા) હે દેવાનુપ્રિય ! હિમ વિપુલ અશનાદિરૂપ ૪, પ્રકાર કા આદાર કરને ચાલે, આપ કો વડો નાન લઘુનીત કીં વાધા મળે હો, ગઈ હે। પરંતુ (મમણં દેવાણુપ્પિયા ! હિમેહિં વહૂહિં કસપ્પહારેહિય જાવ લયાપહારેહિય તળ્હાણ ય છુહાણ ય પરામવમાણસ્સ ણત્થિ કેહં ઉચ્ચારે વા પાસવણેવા ત હંદેણં દેવાણુપ્પિયા ! તુમં એમંતં અવકકામિત્તા ઉચ્ચારપાસવણં પરિહવેહ) હે દેવાનુપ્રિય ! હિન અનેક કશાં કે પહારોં સે યાવત્ લતા-યષ્ટિ-કે પહારોં સે તથા ક્ષુધા ઓર પ્યાસ સે પીડિત હુણં મુદ્ધાં અનાહારી કો ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ કીં કોઈ વાધા હી નહીં હૈ। અર્થાત મુદ્ધા પર જો માર પડી હૈ ઉમસે મૂવ ઓર પ્યામ સવઃ શાંતિ હો ગઈ હૈ। ઉચ્ચાર ઓર પ્રસ્રવણ કીં વાધા મુદ્ધા કદાં સે હો સત્તી હૈ। અતઃ હે દેવાનુપ્રિય ! આપ હી અપની ઇચ્છા સે એકાન્ત મેં જાકર ઉચ્ચાર ઓર

થઈ છે માટે મારે તેનાથી નિવૃત્ત થવું છે. (તણં સે વિજયતવકરે' ધણં સત્યવાહં એવં વયાસો) ધન્યસાર્થવાહુની આ વાત : સાંભળીને વિજય ચોરે તેને કહ્યું--(તુભં દેવાણુપ્પિયા ! વિઝલં અસણં ૪ આહારિયસ્સ' અત્થિ ઉચ્ચારે વા પાસવણે વા) હે દેવાનુપ્રિય ! યુક્ત પ્રમાણમાં, અશન વગેરે આર બાતના આધારને કરનાર તમને હીધં શંકા અને લઘુઃ શંકાની મુશ્કેલી ઓળી થઈ શકે છે, પણ (મમણં દેવાણુપ્પિયા ! હિમેહિં વહૂહિં કસપ્પહારેહિય જાવ લયાપહારેહિય તળ્હાણ ય છુહાણ ય પરામવમાણસ્સ ણત્થિ કેહં ઉચ્ચારે વા પાસવણે વા તં હંદેણં દેવાણુપ્પિયા ! તુમં એમંતં અવકકામિત્તા ઉચ્ચાર પાસવણં પરિહવેહ) હે દેવાનુપ્રિય ! કોરડા અને લાકડીઓ વગેરેના સખત મારથી તેમજ ભૂખ્યા અને તરસ્યા મારા જેવા નિરાહારી માણસને ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણની બાધા ક્યાંથી હોય ? એટલે કે સખત મારપીટ તેમજ ભૂખ અને તરસને હીધં હીધં શંકા અને લઘુશંકાઓ એકદમ શાંત પડી ગઈ છે, એથી ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણની મુશ્કેલી ઉત્પન્ન થવાની સંભાવના જ દેખાતી નથી. એટલા માટે હે દેવાનુપ્રિય ! તમે જ તમારી ઇચ્છા

'जाव जलंने' = यावज्ज्वलति = यावत् - मादुप्पभातायां रजन्यां = प्रभातसमये दिन-  
करेज्ज्वलति सूर्योदये सति पुनर्विपुलमशनं ४ यावत् - उपस्कृत्य पान्थकाय  
दामचेटाय भोजनपिटकं ददाति, स चारकशालायां गत्वा धन्यस्य सार्थ-  
वाहस्य भोजनपात्रे 'परिवेसेइ' परिवेषयति = निदधति । ततः खलु स धन्यः  
सार्थवाहो विजयस्य तस्करस्य तस्माद् विपुलाद् अग्नयानस्त्राद्यभ्याद्यात्  
संविभागं करोति, स्वयं च भुङ्क्ते । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः पान्थकं  
दासचेटं 'विमज्जेइ' विमर्जयति = गृहगमनायाऽऽदिगति । ततः खलु स  
पान्थको भोजनपिटकं गृहीत्वा 'चारगाओ' चारकात् = चारागारम् प्रतिनिष्का-  
मति, प्रतिनिष्क्रम्य राजगृहं नगरं मध्यमध्यं यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव भद्रा

चोखे हुए और परमशुचीभूत हो कर उसी अपने स्थान पर आ गये। (तएणं  
या भद्रा कल्लं जाव जलंने विउलं अमणं ४ जाव परिवेसेइ) दूसरे दिन  
जब प्रातःकाल हुआ और सूर्य प्रकाशित हो चुका तब उस भद्राने अशनादि  
स्व चतुर्विध आहार को विपुलमात्रा में बनाकर उसे भोजन के डिब्बे में  
रख पान्थकदास चेटक के हाथ धन्यसार्थवाह के पास चारागार में भेजा-  
पान्थकदासचेटकने पहिलेकी ही तरह होकर उसे थालीमें भोजन के लिये  
परोसा-परोस कर उमने सेठ के दोनों हाथों को धुलाया-(तएणं से धण्णे  
नत्थवाहे विजयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अमणं ४ संविभागं करेइ)  
बाद में उस धन्यसार्थवाहने विजय चौर के लिये उस अपने चार प्रकार  
के आहार में से विभाग कर दिये (तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथगं दास  
चेडयं विमज्जेइ) धन्य सार्थवाहने बाद में उस पान्थक दास चेटक को  
वहां से वापिस कर दिया। (तएणं से पंथए भोजणपिटगं गहाय चारगाओ

४ जाव परिवेसेइ) पीछे द्विसे सवार थयुं अने सूर्य उदय पाभ्यो त्यारे  
लद्रा लायाओ पुण्ण प्रमाणमां अशन वगेरे चार जतना आहार जनावी ते ओइ  
स्वच्छ उभामां भूझीने पान्थकदास चेटकने जेलमां धन्य सार्थवाहुनी पास पडोआउवा  
आना करी. पडोआनी जेम ४ पान्थक दास चेटके त्यां जठने थणीमां जभवत्तुं  
पीरस्थुं पीरसीने तेणे शेठना जने हाथ धावडाव्या. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे  
विजयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अमणं ४ संविभागं करेइ) त्थार पछी  
धन्य सार्थवाहे विजय चोरने माटे चार जतना आहारमांथी लाग करी आभ्यो.  
(तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथगं दासचेडगं विमज्जेइ) त्थार पछी धन्य  
सार्थवाहे पान्थक दास चेटकने घर पाछो गयो. (तएणं से पंथए भोजण-  
पिटगं गहाय चारगाओ पडिनिक्खमइ) पान्थक दास चेटक भोजनना उज्जाने

विपुलाद् अशनपानखाद्यम्वाद्यान् संविभाज्यम्=अंशरूपेण पृथक्करणं कुर्याम् तदाऽहं  
 युष्माभिः सार्द्धमेकान्तमपक्रमामि । ततः खलु=तदनु स धन्यः सार्थवाहो  
 विजयमेवमवादीत्-अहं खलु तुभ्यं तस्माद् विपुलाद् अशनपानखाद्य-म्वाद्यान्  
 संविभागं करिष्यामि । ततः खलु स विजयो धन्यस्य सार्थवाहस्यैतम्=  
 संविभागस्वीकरणरूपमर्थ 'पडिसुणेइ' प्रतिश्रूणोति=स्वीकरोति । ततः खलु=  
 अशनादि संविभागस्वीकारानन्तरं स विजयो धन्येन सार्द्धमेकान्तमपक्रमति,  
 श्रेष्ठी उच्चारणसंस्वरणे परिष्ठापयति, परिष्ठाप्य 'आयंते' आचमितः=कृत-  
 शुद्धिकः 'चोक्खे' चोक्षः=सच्छः 'परमसुइभूए' परमशुचीभूतः=प्रक्षालित-  
 मुखहस्तः सन् तदेव स्थानम् 'उवसंकमिच्चा' उपसंक्रम्य=संप्राप्य 'विहरइ'  
 विहरति=तिष्ठति । ततः खलु=इतश्च सा भद्रा 'कल्ल' कलये=द्वितीयदिवसे

अशनादिरूप चतुर्विध आहार में से विभक्त सुझे खानेको दो अर्थात्-उसमें  
 मेरा विभाग रखो-तो मैं तुम्हारे साथ एकान्त में चलता हूँ । (तएणं से  
 धण्णे सत्थवाहे विजयं एवं वयासी-अहणं तुव्भं तओ विपुलाओ असणं संवि-  
 भागं करिस्सामि तएणं से विजए धणस्स सत्थवाहस्स एयमइ पडिसुणेइ)  
 तच्च धन्य सार्थवाहने उस विजय और से इस प्रकार कहा-हां मैं तेरे लिये  
 उस विपुल आहार में से विभाग कर दूंगा । इसके बाद उस विजयने धन्य  
 सार्थवाह के इस अर्थ को-कहने को मानलिया-(तएणं से विजए धण्णेणं  
 सद्धि एगंते अवक्कमेइ उच्चारपासवणं परिट्टवेइ) बाद में वह विजय धन्य  
 सार्थवाह के साथ एकान्त में गया-वहाँ जाकर सेठ धन्यने उच्चार और  
 पसवण की परिष्ठापन की । (परिट्टवित्ता आयंते चोक्खे परमसुइभूए तमेव  
 ठाण उवसंकमिच्चा विहरइ) परिष्ठापना के बाद आचमन कर धन्यसार्थवाह

ने तमे हुवे तभारा भाटे आवता अशन, पान, वगेरे आ जतना  
 आहारभांथी हिस्सा भने पणु आपवानी णांडेधरी आपो तो हुं तभारी साथे  
 ऐकांतमां आववा तैयार हुं । (तएणं से धण्णे सत्थवाहे विजयं एवं वयासी  
 अहणं तुव्भं तओ विपुलाओ अमणं संविभागं करिस्सामि तएणं  
 से विजए धणस्स सत्थवाहस्स एयमइ पडिसुणेइ) अना जवाणमा धन्य  
 सार्थवाहे विजय ओरने कह्युं-सारुं अशन, पान, वगेरे आ जतना, विपुल  
 आहारभांथी तने पणु लाग आपीश, त्थार पछी विजय ओरे धन्य सार्थवाहनी  
 वात स्वीकारी (तएणं से विजए धण्णेणं सद्धि एगंते अवक्कमेइ उच्चार-  
 पासवणं परिट्टवेइ) अने ते धन्य सार्थवाहनी साथे ऐकांतमां गये । त्यां जधने  
 धन्य सार्थवाहे उच्चार अने प्रसवणनी परिष्ठापना करी । (परिट्टवित्ता आयंते  
 चोक्खे परमसुइभूए तमेव ठाणं उवसंकमिच्चा विहरइ) परिष्ठापना पछी  
 धन्य सार्थवाहे शुद्धी करी अने आ प्रभाणे तेओ शुद्ध अने निर्मल धधने करी  
 पोताना स्थाने आवी गया । (तएणं सा भद्रा कल्लं जाव जलंते विउल्लं असणं

'जाव जलने' = यावत्तलति = यावत्-पादुप्रभातायां रजन्या = पभातसमये दिन-  
करे जाति सूर्योदये सति पुनर्विपुलमशनं ४ यावत्- उपस्कृत्य पान्थकाय  
दामचेटाय भोजनपिटकं ददाति, स चारकशालायां गत्वा धन्यस्य सार्थ-  
वाहस्य भोजनपात्रे 'परिवेसेइ' परिवेषयति = निदधानि । ततः खलु स धन्यः  
सार्थवाहो विजयस्य तस्करस्य तस्माद् विपुलाद् अशनपानवाद्यभ्याद्यात्  
संविभागं करोति, स्वयं च भुङ्क्ते । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः पान्थकं  
दासचेटं 'विमज्जेइ' विमर्जयति = गृहगमनायाऽऽदिगति । ततः खलु स  
पान्थको भोजनपिटकं गृहीत्वा 'चारगाओ' चारकात् = रागगागान् प्रतिनिष्का-  
मति, प्रतिनिष्क्रम्य राजगृहं नगरं मध्यमध्येन यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव भद्रा

चोखे हुए और परमशुचीभूत हो कर उसी अपने स्थान पर आ गये। (तएणं  
गा भद्रा कल्लं जाव जलने विउलं अमणं ४ जाव परिवेसेइ) दूसरे दिन  
जब प्रातःकाल हुआ और सूर्य प्रकाशित हो चुका तब उस भद्राने अशनादि  
रूप चतुर्विध आहार को विपुलमात्रा में बनाकर उसे भोजन के डिब्बे में  
रख पांथकदास चेटक के हाथ धन्यसार्थवाह के पास कारागार में भेजा-  
पांथक दासचेटकने पहिलेकी ही तरह होकर उसे थालीमें भोजन के लिये  
परोसा-परोस कर उसने सेठ के दोनों हाथों को धुलाया-(तएणं से धण्णे  
सत्थवाहे विजयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अमणं ४ संविभागं करेइ)  
बाद में उस धन्यसार्थवाहने विजय चौर के लिये उस अपने चार प्रकार  
के आहार में से विभाग कर दिये (तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथमं दास  
चेटयं विमज्जेइ) धन्य सार्थवाहने बाद में उस पांथक दास चेटक को  
वहां से वापिस कर दिया। (तएणं से पंथए भोजणपिटगं गहाय चारगाओ

४ जाव परिवेसेइ) पीछा दिवसे सवार थयुं अने सूर्य उदय पाभ्यो त्थारे  
सद्रा लायाओ पुण्डण प्रमाणुमां अशन वणेरे चार जतना आहार जनावी ते ओइ  
स्वच्छ उज्जाभां भूझीने पांथकदास चेटकने जेलमां धन्य सार्थवाहनी पासो पडिंथाउवा  
आशा करी. पडिंथानी जेम ज पांथक दास चेटके त्यां जधने थजीभां जभवतुं  
पीरस्थुं पीरसीने तेल्ले शेठना जने हाथ धावडाव्या. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे  
विजयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अमणं ४ संविभागं करेइ) त्थार पछी  
धन्य सार्थवाहे विजय चोरने भाटे चार जतना आहारमांथी लाग करी आभ्यो.  
(तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथमं दासचेडमं विमज्जेइ) त्थार पछी धन्य  
सार्थवाहे पांथक दास चेटकने घेर पाछो वज्यो. (तएणं से पंथए भोजण-  
पिटगं गहाय चारगाओ पडिनिक्खमइ) पांथक दास चेटक लोचनना उज्जाने



ભાર્યા=ધન્યસાર્થવાહપત્ની તત્રીવોપાગમચ્છતિ, ઉપાગત્ય ભદ્રાં સાર્થવાહીમેવમવા-  
 દીત-एवं खलु हे देवानुप्रिये ! धन्यः सार्थवाहस्तवपुत्रघातकस्य यावत्  
 प्रत्यामित्रस्य तस्माद् विपुलाद् अशनपानखाद्यस्वाघात् संविभागं करोति ।  
 ततः=तदनन्तरं खलु सा भद्रा सार्थवाही पान्थकस्य दासचेटकस्य 'अंतिए'  
 अन्तिके=समीपे 'एवं' एतम् पान्थककथितम् 'अट्ट' अर्थम्=धन्यसार्थवाहस्य  
 विजयतस्करार्थं स्वस्याशनादेः संविभागकरणरूपवृत्तान्तं श्रुत्वा 'आसुरुक्ता'  
 आशुरुक्ता, आशुरक्ता=आशु=शीघ्रं रुक्ता=कोपोदयाद् विमूढा, यच्छा आशु=शीघ्रं

પડિનિકલમહ) વહ પાંથક દાસચેટક ભોજન પિટક કો લેકર કારાવાસ  
 સે નિકલા (પડિનિકલમિત્તા રાયગિહ નયરં મજ્જં મજ્જે ણં જેણેવ સણિહે  
 જેણેવ ભદ્રા ભારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છહ) નિકલ કરા રાત્રગૃહ નગર  
 કે ઠીક વીચો વીચ માર્ગે સે હોતા હુઆ જહોં અપના ઘર ઓર વહ  
 ભદ્રા સાર્થવાહીથી વહાં આયા—(ઉવાગચ્છિત્તા મહં સાર્થવાહીણિં એવં વયાસી)  
 આકર ઉસને ભદ્રા સાર્થવાહીની સે એમા કહા—એવં खलु देवाणुप्पिण  
 ધણે સત્થવાહે તવ પુત્તઘાયગસ્સ જાવ પચ્ચામિત્તસ્સ તાઓ વિડલાઓ  
 અસણ ૪ સંવિભાગં કરેહ) હે દેવાનુપ્રિયે ! ધન્ય સાર્થવાહ તુમ્હારે પુત્ર  
 ઘાતક યાવત્ હાર્દિક શત્રુ વિજય ચોર કો વિપુલ અશન આદિ રૂપ ચાર  
 પ્રકાર કે આઠારમેં સે હિસ્સા દેતે હૈં । (તણં સા ભદ્રા સત્થવાહી  
 પંથયસ્સ દાસચેડયસ્સ અંતિએ એમં સોચ્ચા આસુરુક્તા રુદ્ધાજાવ મિસ-  
 મિસેમાણા ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ પઓસમાવજ્જહ) હસ તરહ પાંથક

લઈને જેલમાંથી બહાર નિકળ્યો (પડિનિકલમિત્તા રાયગિહં નયરં મજ્જં  
 મજ્જેણં જેણેવ સણિહે જેણેવ ભદ્રા ભારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છહ)  
 નીકળીને રાત્રગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચેના માર્ગમાં પસાર થઈને જ્યાં પોતાના  
 ઘર અને ભદ્રા સાર્થવાહી હતી ત્યાં આવ્યો (ઉવાગચ્છિત્તા મહં સત્થ  
 વાહીણિં એવં વયાસી) આવીને તેણે ભદ્રા સાર્થવાહીને આ પ્રમાણે કહ્યું  
 (एवंखलु देवाणुप्पिए ! धण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्त  
 स्स ताओ विडलाओ असण ४ संविभागं करेह) હે દેવાનુ પ્રિયે ! ધન્ય સાર્થવાહ  
 તમારા પુત્રના ઘાતક અને શત્રુ વિજય ચોરને બહુ જ વધારે અશન વગેરેના  
 ચાર પ્રકારના આહારમાંથી હિસ્સો ખાવા માટે આવે છે. (तणं सा भद्रा भारिया  
 सत्थवाही पंथयस्स दासचेडयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा आसुरुक्ता  
 रुद्धा जाव मिसमिसेमाणा धणस्स सत्थवाहस्स पओसमावज्जह)



रक्ता=कोपावेशाद् रक्तमुखनेत्रा. 'रुद्धा' रुष्टा=रोपयुक्ता यावत् 'मिसिमिसे-  
माणा' मिसमिसन्ती=क्रोधज्वालायाऽन्तर्दाहमन्विता सती धन्यस्य सार्थ-  
वाहस्योपरि 'पथोसं' पद्वेपं=पकृष्टद्वेपम् 'आवज्जः' आपद्यते=प्राप्नोति ॥ सू० १० ॥

मूलम्— से धण्णे सत्थवाहे अन्नया कयाइं मित्तनाइ  
नियगसयणसंवंधिपरियणेणं सएण य अत्थसारेणं रायकज्जाओ  
अप्पाणं मोयावेइ, मोयावित्ता चारगसालाओ पडिनिक्खमइ पडि  
निक्खमित्ता जेणेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता  
अलंकारियकम्मं कारवेइ, कारवित्ता जेणेव पुक्करिणी तेणेव उवा-  
गच्छइ, उवागच्छित्ता अह भोयमट्ठीयं गेणहइ, गिण्हित्ता पोक्खरिणीं  
ओगाहइ, आगाहित्ता जलमज्जणं करेइ करित्ता पहाए कयवलिकम्मे  
जाव रायगिहं नगरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता रायगिहनगरस्स  
मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए । तएणं  
तं धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे बहवे नियग  
सेट्ठिसत्थवाहपभियओ आढंति परिजाणंति सक्कारेति सम्माणेति  
अव्वभुट्ठेति सरीरकुसलं पुच्छंति । तएणं से धण्णे सत्थवाहे जेणेव  
सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जा वि य से तत्थ  
वाहिरिया परिसा भवइ, तंजहा—दासाइ वा पेस्साइ वा भियगाइ

दासचेष्टक के मुख से इस नमोचार को सुनकर वह भद्रा सार्थवाही  
एकदम क्रोध से लाल मुख नेत्रवाली बन गई, और रोप से युक्त होती  
हुई क्रोध की तीव्र ज्वाला से भीतर ही भीतर जलने लगी । इस  
तरह उसने धन्यसार्थवाह के ऊपर पकृष्ट द्वेप भाव को धारण कर लिया । सूत्र १० ।

आ रीते पांथइ दासचेष्टकना भेंधी सभाथार सांअणीने लद्दा लार्थो अेइदम  
डोधधी लाल ओण थइ गइ, अने ते डोधनी ज्वाणाओधी सणगवा लागी. आ  
प्रमाणे तेना मनभां धन्य सार्थवाह उपर सज्जत रोप लाव जग्गे. ॥ सूत्र १० ॥

ભાર્યા=ધન્યસાર્થવાહપત્ની તત્રીત્રોપાગગચ્છતિ, ઉપાગત્ય ભદ્રાં સાર્થવાહીમેવમવા-  
 દીત્-एवं खलु हे देवानुप्रिये ! धन्यः सार्थवाहस्तवपुत्रघातकस्य यावत्  
 प्रत्यामित्रस्य तस्माद् विपुलाद् अशनपानखाद्यस्वाघात् संविभागं करोति ।  
 ततः=तदनन्तरं खलु सा भद्रा सार्थवाही पान्थकस्य दासचेटकस्य 'अंतिए'  
 अन्तिके=समीपे 'एवं' एतम् पान्थककथितम् 'अट्ट' अर्थम्=धन्यसार्थवाहस्य  
 विजयतस्करार्थं स्वस्याशनादेः संविभागकरणरूपवृत्तान्तं श्रुत्वा 'आसुरुक्ता'  
 आशुरूक्ता, आशुरक्ता=आशु=शीघ्रं रुक्ता=कोपोदयाद् विमूढा, यद्वा आशु=शीघ्रं

પડિનિવલ્લમહ) વહ પાંથક દાસચેટક ભોજન પિટક કો લેકર કારાવાસ  
 સે નિકલા (પડિનિવલ્લમિત્તા રાયગિહ નયરં મઝ્ઝં મઝ્ઝે ણં જેણેવ સણિદે  
 જેણેવ ભદ્દા મારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) નિકલ કરા રાજગૃહ નગર  
 કે ઠીક વીચી વીચ માર્ગ સે હોતા હુઆ જહોં અપના ઘર ઓર વહ  
 ભદ્દા સાર્થવાહીથી વહાં આયા—(ઉવાગચ્છિત્તા મહં સાર્થવાહીણિં એવં વયાસી)  
 આકર ઉત્તને ભદ્દા સાર્થવાહીની સે એવા કહા—એવં खलु देवाणुप्पिए  
 धण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स ताओ विउलाओ  
 असण ४ संविभागं करेइ) हे देवानुप्रिये ! धन्य सार्थवाह तुम्हारे पुत्र  
 घातक यावत् हार्दिक शत्रु विजय चौर को विपुल अशन आदि रूप चार  
 प्रकार के आहारमें से हिस्सा देते हैं । (तएणं सा भद्रा सत्थवाही  
 पंथयस्स दासचेडयस्स अंतिए एयमं सोच्चा आसुरुक्ता रुद्धा जाव मिस-  
 मिसेमाणा धणस्स सत्थवाहस्स पओसमावज्जइ) इस तरह पांथक

લઈને જેલમાંથી બહાર નિકળ્યો (પડિનિવલ્લમિત્તા રાયગિહં નયરં મઝ્ઝં  
 મઝ્ઝેણં જેણેવ સણિદે જેણેવ ભદ્દા મારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છઈ)  
 નીકળીને રાજગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચેના માર્ગમાં પસાર થઈને જ્યાં પોતાના  
 ઘર અને ભદ્દા સાર્થવાહી હતી ત્યાં આવ્યો (ઉવાગચ્છિત્તા મહં સત્થ-  
 વાહીણિં એવં વયાસી) આવીને તેણે ભદ્દા સાર્થવાહીને આ પ્રમાણે કહ્યું  
 (एवंखलु देवाणुप्पिए ! धण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्त  
 स्स ताओ विउलाओ असण ४ संविभागं करेइ) हे देवानु प्रिये ! धन्य सार्थवाह  
 तमारा पुत्रना घातक अने शत्रु विजय चोरने णहु न वधारे अशन वगेदेना  
 चार प्रकारना आहारमांहीं हिस्सा आवा भाटे आये छे. (तएणं सा भद्रा मारिया  
 सत्थवाही पंथयस्स दासचेडयस्स अंतिए एयमहं सोच्चा आसुरुक्ता  
 रुद्धा जाव मिसमिसेमाणा धणस्स सत्थवाहस्स पओसमावज्जइ)

एवं वृत्तः समाणी हट्ट जाव आसणाओ अम्भुट्टेइ अम्भुट्टित्ता  
कंठाकंठि अवयासइ खेमकुसलं पुच्छइ पुच्छित्ता पहाया जाव  
पायच्छित्ता विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ ॥ सू. ११ ॥

टीका—‘तण्’

अन्यदा कदाचित्

द्वारा स्वकेन च ‘अत्थमारेण’ अर्थमारेण=बहुमूल्यरत्नादिना बहुमूल्यरत्नादि

समर्पणेनेत्यर्थः ‘रायकज्जाओ’ राजकार्यात्=राजसङ्कटात् आत्मान=स्वकं

‘मोयावेइ’ मोचयति, मोचयित्वा=मुक्तो भूत्वा चारुशालायाः प्रतिनिष्का-

मति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव ‘अलंकारियसभा’ अलङ्कारिकसभा=नापितशाला-

ओरकपीदिगोरमम्भारम्यानमित्यर्थः, तत्रैवापागच्छति. उपागत्य ‘अलंकारि

यकम्मं’ अलङ्कारिककर्म=नखकेशमण्डनादिकर्म ‘कारवेइ’ कारयति, कारयित्वा

यत्रैव ‘पुक्खरिणी’ पुक्खरिणी=वर्तुलवापी तत्रैवापागच्छति. उपागत्य—अथ

‘तण् णं से घण्णे मत्थवाहे अन्नया कयाइ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तण्णं) इसके बाद (से णं से घण्णे मत्थवाहे) अन्नया कयाइ

(अन्नया कयाइ) किसी एक समय (निजक स्वजन संबंधी परिजनों द्वारा (स्वकेन

मित्र. ज्ञाति, निजक स्वजन संबंधी परिजनों द्वारा (स्वकेन

अत्थमारेण) अपने वह मूल्य रत्नादि भेट राजा को समर्पण करा कर

(रायकज्जाओ अप्पाणं मोयावेइ) राज्य संकट से अपने आपको मुक्त करा

लिया। (मोयावित्ता चारुशालाओ पडिनिक्खमिइ) जब वह मुक्त होपि

हो चुका—तब कारागार से बाहर निकला (पडिनिक्खमित्ता जेणेव

अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ) बाहर निकल कर वह जहां नापित

की दुकान थी—वहां गया—(उवागच्छित्ता अलंकारियकम्मं कारवेइ)

‘तण्णं से घण्णे मत्थवाहे अन्नया कयाइ’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तण्णं) त्थार पछी (से घण्णे मत्थवाहे) धन्य सार्थवाहे (अन्नया

कयाइ) डेअ ओअ वण्ते ( मित्तनाइनियगसयणसंघिपरियणं )

पोताना मित्र. ज्ञाति स्वजन, संबंधी अने परिजनों द्वारा (स्वकेन अत्थमारेण)

बहु डिंभती रत्नो वगेरे समर्पणु करवीने (रायकज्जाओ अप्पाणं मोयावेइ)

राज्य संकटमांथी पोतानी जतने छोडवी (मोयावित्ता चारुशालाओ पडिनि-

क्खमिइ) ज्यारे ते मुक्त थयेओ जडेर करवामां आव्यो, त्थारे ते जेलमांथी

जडार निड्यो. (पडिनिक्खमित्ता जेणेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ)

जडार नीडणीने ते दुलभनी दुकान उपर गयो. (उवागच्छित्ता अलंकारियकम्मं

वा भाइल्लागाइ वा, सा वि य णं धणं सत्थवाहं एज्जंतं पासइ,  
 पासित्ता पायवाडियाए खेमकुलं पुच्छंति, जावि य से तत्थ  
 अव्वमंतरिया . परिसा भवइ तं जहा—मायाइ वा पियाइ वा  
 भायाइ वा भगिणीइ वा, सावि य णं धणं सत्थवाहं एज्जमाणं  
 पासंति पासित्ता आसणाओ अव्वमुट्ठेइ अव्वमुट्ठित्ता कंठाकठियं अव-  
 यासिय वाहप्पमोक्खणं करेति तएणं धणे सत्थवाहे जेणेव  
 भद्दा भारिया तेणेव उवागच्छइ तएणं सा भद्दा धणं सत्थवाहं  
 एज्जमाणं पासइ पासित्ता णो आढाइ नो परियाणाइ नो सक्कारेइ,  
 नो सम्माणेइ, नो अव्वमुट्ठेइ नो सरीरकुसलं पुच्छइ, अणाढा  
 यमाणी अपरिजाणमाणी असक्कारेमाणी, असम्माणेमाणी, अणव्वु-  
 ट्ठेमाणी सरीरकुसलं अपुच्छमाणी तुसिणीया परम्मुही संचिट्ठइ,  
 तएणं से धणे सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी—किण्णं  
 तुव्वं देवाणुप्पिए ! न तुट्ठी वा न हरिसे वा नाणंदे वा जं मए  
 सएणं अत्थसारेणं रायकज्जाओ अप्पा विमोइए, तएणं सा भद्दा  
 धणं सत्थवाहं एवं वयासी—कहण्णं देवाणुप्पिया ! मम तुट्ठी  
 वा जाव आणंदे वा भविस्सइ, जेणं तुव्वं मम पुत्तवायगस्स जाव  
 पच्चामितस्स तओ विउलाओ असणपाणत्वाइम साइमाओ४ संविभागं  
 करेसि, तएणंमे धणे भद्दं एवं वयासी—नो खलु देवाणुप्पिए !  
 धम्मेत्ति वा तवोत्ति वा कयपडिकइयाइ वा लोगजत्ताइ वा घाडि-  
 एइ वा सहाएइ वा सुहि वा तओ विपुलाओ असण०४ संविभागे  
 कए नन्नत्थ सरीरचित्ताए, तएणं सा भद्दा धणेणं सत्थवाहेण

एवं वृत्त। समाणी हट्ट जाव आसणाओ अवमुट्टेइ अवमुट्टित्ता  
कंठाकंठि अवयासइ खेमकुसलं पुच्छइ पुच्छित्ता पहाया जाव  
पायच्छित्ता विउलाइं भोगभोगाइं भुजमाणी विहरइ ॥ सू. ११ ॥

ટોકા—‘તણં સે ધણે’ ઇત્યાદિ—તતઃ સ્વત્રુ મ ધન્યઃ સાર્થવાદઃ  
અન્યદા કદાચિત્ મિત્રજ્ઞાનિનિજકસ્વજનમન્થનિપરિજનેન=મિત્રજ્ઞાનિપ્રભૃતિ-  
દ્વારા સ્વકેન ચ ‘અત્યમારેણ’ અર્થસારેણ=વહુમૂલ્યરત્નાદિના વહુમૂલ્યરત્નાદિ  
સમર્પણેનેત્યર્થઃ ‘રાયકજ્ઞાઓ’ રાજકાર્યાત્=રાજસંકટાત્ આત્માન=સ્વકં  
‘મોયાવેડ’ મોચયતિ, મોચયિત્વા=મુક્તો ભૂત્વા ચારકશાલાયાઃ પ્રતિનિષ્ક્રા-  
મતિ, પ્રતિનિષ્ક્રમ્ય યત્રૈવ ‘અલંકારિયસભા’ અલંકારિકસભા=નાર્ણશાલા-  
શૌરભૂમિદિશગૌરસમ્કારમ્થાનમિત્યર્થઃ, તત્રૈવાપાગચ્છતિ. ઉપાગત્ય ‘અલંકારિ  
યકમ્મં’ અલંકારિકકર્મ=નલ્લકેશમણ્ડનાદિકર્મ ‘કારવેડ’ કારયતિ, કારયિત્વા  
યત્રૈવ ‘પુવ્વચરિણી’ પુવ્વચરિણી=વર્તુલવાપી તત્રૈવોપાગચ્છતિ. ઉપાગત્ય—અથ

‘તણં સે ધણે મન્થવાહે અન્નયા કયાઈ’ ઇત્યાદિ ॥

ટીકાર્થ—(તણં) ઇસકે વાદ (સે ધણે સાત્થવાહે) ઉસ ધન્યમાર્થવાહને  
(અન્નયા કયાઈ) કિસી એક સમય (મિત્રનાડનિયગમયણસંબંધિપરિયણેણં)  
મિત્ર. જ્ઞાતિ, નિજક સ્વજન સંબંધી પરિજનો દ્વારા (સ્વકેન  
અત્યમારેણં) અપને વહુ મૂલ્ય રત્નાદિ ખેટ રાજાકો સમર્પણ કરવા કર  
(રાયકજ્ઞાઓ અપ્પાણં મોયાવેડ) રાજ્ય સંકટ સે અપને આપકો મુક્ત કરવા  
લિયા। (મોયાવિત્તા ચારગસાલાઓ પહિણિક્કલમઈ) જવ વહુ મુક્ત થોપિ  
હો ચુકા—તથ કારાગાર સે વાહર નિકલા (પહિનિક્કલમિત્તા જેણેવ  
અલંકારિયસભા તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) વાહર નિકલ કર વહુ જઈ નાથિન  
કી દુકાન થી—યદાં ગયા—(ઉવાગચ્છિત્તા અલંકારિયકમ્મં કારવેડ)

‘તણં સે ધણે મન્થવાહે અન્નયા કયાઈ’ ઇત્યાદિ ॥

ટીકાર્થ—(તણં) ત્યાર પછી (સે ધણે મન્થવાહે) ધન્ય સાર્થવાહે (અન્નયા  
કયાઈ) કોઈ એક વખતે ( મિત્રનાડનિયગમયણસંબંધિપરિયણેણં )  
પોતાના મિત્ર. જ્ઞાતિ સ્વજન, સંબંધી અને પરિજનો દ્વારા (સ્વકેન અત્યમારેણં)  
બહુ હિંમતી રત્નો વગેરે સમર્પણ કરાવીને (રાયકજ્ઞાઓ અપ્પાણં મોયાવેડ)  
રાજ્ય સંકટમાંથી પોતાની બાતને છોડાવી (મોયાવિત્તા ચારગસાલાઓ પહિણિ-  
ક્કલમઈ) બ્યારે તે મુક્ત થયેલો બહુર કરવામાં આવ્યો, ત્યારે તે જોલમાંથી  
બહાર નિકળ્યો. (પહિનિક્કલમિત્તા જેણેવ અલંકારિયસભા તેણેવ ઉવાગચ્છઈ)  
બહાર નીકળીને તે હુલમની દુકાન ઉપર ગયો. (ઉવાગચ્છિત્તા અલંકારિયકમ્મં

वा भाइल्लागाइ वा, सा वि य णं धणं सत्थवाहं एज्जंतं पासइ,  
 पासित्ता पायवडियाए खेमकुलं पुच्छंति, जावि य से तत्थ  
 अवमंतरिया . परिसा भवइ तं जहा--मायाइ वा पियाइ वा  
 भायाइ वा भगिणीइ वा, सावि य णं धणं सत्थवाहं एज्जमाणं  
 पासंति पासित्ता आसणाओ अवमुट्ठेइ अवमुट्ठित्ता कंठाकटियं अव-  
 यासिय वाहप्पमोक्खणं करेति तएणं धणं सत्थवाहे जेणेव  
 भद्दा भारिया तेणेव उवागच्छइ तएणं सा भद्दा धणं सत्थवाहं  
 एज्जमाणं पासइ पासित्ता णो आढाइ नो परियाणाइ नो सक्कारेइ,  
 नो सम्माणेइ, नो अवमुट्ठेइ नो सरीरकुसलं पुच्छइ, अणाढा-  
 यमाणी अपरिजाणमाणी असक्कारेमाणी, असम्माणेमाणी, अणवमु-  
 ट्ठेमाणी सरीरकुसलं अपुच्छमाणी तुसिणीया परम्मुही संचिट्ठइ,  
 तएणं से धणं सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी-किण्णं  
 तुब्भं देवाणुप्पिए ! न तुट्ठी वा न हरिसे वा नाणंदे वा जं मए  
 सएणं अत्थसारेणं रायकज्जाओ अप्पा विमोइए, तएणं सा भद्दा  
 धणं सत्थवाहं एवं वयासी--कहणं देवाणुप्पिया ! मम तुट्ठी  
 वा जाव आणंदे वा भविस्सइ, जेणं तुब्भं मम पुत्तघायगस्स जाव  
 पच्चामित्तस्स तओ विउलाओ असणपाणखाइम साइमाओ४ संविभागं  
 करेसि, तएणंमे धणं भद्दं एवं वयासी-नो खलु देवाणुप्पिए !  
 धम्मेत्ति वा तवोत्ति वा कयपडिकइयाइ वा लोगजत्ताइ वा घाडि-  
 एइ वा सहाएइ वा सुहि वा तओ विपुलाओ असण०४ संविभागे  
 कए नन्नत्थ सरीरचित्ताए, तएणं सा भद्दा धणं सत्थवाहेण



‘आहंति’ आद्रियन्ते हृदयेन ‘परिजाणंति’ परिजानन्ति=सुस्वागतं श्रेष्ठिनः’ इति तस्यागमनमनुमोदयन्ति ‘सकारंति’ सत्कारयन्ति मधुरवचनैः, सम्मानेति’ सम्मानयन्ति विविधवस्तुसमर्पणेन, ‘अव्भुङ्क्षेति’ अभ्युत्तिष्ठन्ति विनयार्थमभिसुन्दमुत्तिष्ठन्ति शरीरकुशलं च पृच्छन्ति । ततः खलु=तदनन्तरं स धन्यः सार्थवाहो यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य यापि च तस्य तत्र बाह्या परिषद्=गृहवर्तिनिजनसमुदायः, ‘तंजहा’ तद्यथा- स यथा ‘दामाइवा’ दामा इतिवा. दासाः=गृहदासी पुत्राः. ‘पेस्साइ वा’

चला- (तएणं त धणं सत्थवाहं एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे वहवे नियगसेट्ठिसत्थवाहपभियओ आहंति परिजाणंति सक्कारेति सम्माणेति अव्भुङ्क्षेति शरीरकुशलं पुच्छंति) घर को आते हुए उस धन्य सार्थवाह को जब राजगृह नगर में निजक श्रेष्ठी. सार्थवाह आदि लोगोंने देखा तो उन लोगों ने उसका हृदयसे खूब आदर किया-“आपका स्वागत हो” इस प्रकार कहकर उसके आगमन की खूब अनुमोदनाकी मधुर वचनों द्वारा उसका खूब सत्कार किया। अने वस्तुओंको भेंट में देकर खूब सम्मान किया। अपनी विनय प्रकट करने के लिये उसके सम्मुख आने पर उठ बैठे शरीर में कुशल समाचार पूछे । (तएणं से धणं सत्थवाहे जेणेव सए गेहे तेणेव उवागच्छइ) इसके बाद धन्य सार्थवाह जहां अपना घर था गया (उवागच्छित्ता) जावि य से तत्थ बाहिरिया परिसा भवइ) वहां जाकर उसका जो घरक बाहर के लोगों का समुदाय था—(तं जहा) जैसा—(दामाइ वा पेस्साइ

एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे वहवे नियगसेट्ठि सत्थवाहपभियओ आहंति परिजाणंति सक्कारेति सम्माणेति अव्भुङ्क्षेति शरीरकुशलं पुच्छंति) राजगृह नगरना निजक श्रेष्ठीओ, सार्थवाहा वगेरेओ ज्यारे धन्य सार्थवाहुने घर तरइ जतां जेया त्यारे तेओ जघाओ भणीने तेभनुं उदय पूर्वक भूण ज सरस रीते सम्मान कयुं. “तमाइं स्वगत छे.” आ रीते तेना आगमनने अनुमोदन आभ्युं मधुर वचनोथी बोडोओ धन्य सार्थवाहुनो सत्कार कयो. तेने बोडोओ अनेक वस्तुओ लेटमां आपी. विनय जताववा भाटे ज्यारे धन्य सार्थवाहु बोडोनी सामे पडोअ्या त्यारे तेओ जिला थछ गया अने तेभण्णे शरीरनी दुशणता पूछी. (त एणं से धणं सत्थवाहे जेणेव सए गेहे तेणेव उवागच्छइ) त्थार जाह जथां तेनुं घर उतुं त्यां गयो. (उवागच्छित्ता जावि य से तत्थ बाहिरिया परिसा भवइ) त्यां घरनी जहार तेना घरना भाणुसोनो समुदाय ओकठो थयो उतो. (तं जहा)

‘ધોયમદ્વિયં’ ધોતમૃત્તિકાં=શુદ્ધસુગન્ધિતમૃત્તિકાં ગૃહ્ણાતિ, ગૃહ્ણીત્વા પુષ્કરિણીમ્  
 ‘ઓગાહૃ’ અવગાહતે=પ્રવિશતિ, અવગાહ્ય ‘જલમજ્જનં’ જલમજ્જનં=જલેન-  
 શરીરશુદ્ધિ કરોતિ, કૃત્વા ‘હ્લાપ’ સ્નાતઃ=સર્વતઃ કૃતસ્નાનઃ ‘કયવલિકર્મ્મે’  
 કૃતવલિકર્મ્મા કૃતં સ્નાનાન્તમવશ્યકરણીય-પશુપદ્યાદિનિમિત્તામન્નદાનાદિરૂપ-  
 વલિર્મ્મ યેન સઃ, કૃતદાનકૃત્ય इत्यर्थः, યાવદ્ રાજગૃહં નગરમનુપવિશતિ,  
 અનુપવિશ્ય રાજગૃહનગરસ્ય મધ્યમધ્યેન યત્રૈવ સ્વકં ગૃહ તત્રૈવ ‘ગમણા’  
 ગમનાય ‘પહારેત્થ’ પ્રધારયતિ=વિચારયતિ, ગૃહં પ્રતિ ગમનાયોદ્યતાં ભવતી-  
 ત્યર્થઃ, ગૃહં ગચ્છતીતિ ભાવઃ । તતઃતલ્લુ તં ધન્યં સાર્થવાહમ્ ‘પજ્જમાગં’  
 પજ્જમાનમ્=આગચ્છન્તં દૃષ્ટ્વા રાજગૃહે નગરે વહ્વા નિજકપ્રેષ્ઠિસાર્થવાહપ્રમૃતયઃ

જાકર ઉસને વહાં વાલ વનવાયે । (કારવિત્તા જેણેવ પુસ્કરિણી તેણેવ  
 ઉવાગચ્છહ) દાઢી મૂછ આદિ કે વાલ વનવા કર ફિર વહ જહાં પુષ્ક-  
 રિણી થી વહાં ગયા । (ઉવાગચ્છિત્તા અહ ધોયમદ્વિયં ગેણહ) જાકર  
 ઉસને વહાં સે શુદ્ધ સુગંધિત મિટ્ઠી કો લિયા—(ગિણિહિત્તા પોસ્કરિણી  
 ઓગાહ) લેકર વહ વાદ મેં ઉસ પુષ્કરિણી મેં પ્રવિષ્ટ હુઆ । (ઓગા-  
 હિત્તા જલમજ્જનં કરેહ, કરિત્તા ણ્હા’ કયવલિકર્મ્મે જાવ રાયગિહં નયરં  
 અણુપવિસહ) પ્રવિષ્ટ ઠોકર વહાં ઉસને સ્નાન ક્રિયા સ્નાનકર વાગસાદિ  
 પક્ષિયોં કે લિયે અન્નાદિ દેને રૂપ વલિકર્મ્મ ક્રિયા । યાવત્ રાજગૃહ  
 નગરમેં વહ પ્રવિષ્ટ હુઆ । (અણુપવિસિત્તા રાયગિહનયરસ્સ મજ્ઝાં મજ્ઝેણં જેણેવ  
 સ’ ગિહે તેણેવ પહારેત્થ ગમણા’ પ્રવિષ્ટ ઠોકર ફિર વહ ઠીક રાજગૃહ નગર કે  
 વીચો વીચવાલે માર્ગ સે હોતા હુઆ—જહાં અપના ઘર થા ઉસ તરફ  
 કારવેહ) ત્યાં જધને તેણે વાળ કપાવ્યા. (કારવિત્તા જેણેવ પુસ્કરિણી તેણેવ  
 ઉવાગચ્છહ) દાઢી મૂછ અને માથા વગેરેના વાળ સાફ કરાવીને તે પુષ્કરિણી તરફ  
 ગયો. (ઉવાગચ્છિત્તા અહ ધોયમદ્વિયં ગેણહ) ત્યાં જધને તેણે સુવાસિત માટી  
 લીધી (ગિણિહિત્તા પોસ્કરિણી ઓગાહ) માટી લધને તેણે પુષ્કરિણીમાં પ્રવેશ કર્યો.  
 (ઓગાહિત્તા જલમજ્જનં કરેહ કરિત્તા ણ્હા’ કયવલિકર્મ્મે જાવ રાયગિહં  
 નયરં અણુપવિસહ) પ્રવેશીને તેણે સ્નાન કર્યું. સ્નાન કરીને તેણે કાગડા વગેરે  
 પક્ષીઓને માટે અન્ન વગેરેનો ભાગ આપીને બલિ કર્યું. ત્યાર બાદ તે રાજગૃહ  
 નગરમાં આવ્યો. (અણુપવિસિત્તા રાયગિહનયરસ્સ મજ્ઝાં મજ્ઝેણં જેણેવ સ’ ગિહે  
 તેણેવ પહારેત્થ ગમણા’ નગરમાં આવીને તે ઠીક રાજગૃહ નગરની વચ્ચેના  
 માર્ગથી પસાર થઈને ત્યાં તેણું ઘર હતું ત્યાં ગયો. (તત્ત્વં ત ધન્યં સાર્થવાહં

धनगारधर्मोमृतवपिणीटीका अ.२ धन्यस्य विजयेन सह हृदयन्धनादिकम् ६५२

दिरुपाऽऽभ्यन्तरपरिपद धन्यं सार्थवाहमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा 'आसणाओ' भवति, अभ्युत्थाय 'कंठाकंठियं' कण्ठाकण्ठिकं=कण्ठे च कण्ठे च गृहीत्वा यत्पत्रतन तत् कण्ठद्वयसंमिलनपूर्वकम् 'अवयासिय' आश्लिष्य=समालिङ्ग्य 'वाहपमोक्खणं' वाहपमोक्षणं=चिरवियुक्तप्रियसमागमजन्य-हर्षाश्रुमोचनं करोति । ततः खलु=नदनु सं धन्यः सार्थवाहो यत्रैव भद्रा भार्या तत्रैवोपागच्छति । ततः खलु सा भद्रा धन्यं सार्थवाहम् 'एजमाणं' एजमानं=स्वसमीपे समायातं पश्यति, दृष्ट्वा नो आदिगते, नो परिजानानि,

(पासिता) तव देखकर (आसणाओ अब्भुट्टेइ अब्भुट्टित्ता कंठाकंठियं अवया-सिय वाहपमोक्खणं करेति) ने अपने २ अधिष्ठित स्थान से उठ बैठे और उठकर परस्पर मे गले से गला लगाकर मिले । सबने उससे भेंट की । आलिङ्गनकिया । तथा बहुत दिनों के बाद मिलने से उन लोगों ने आनंद जन्य हर्षाश्रुओं का मोचन भी किया अर्थात् हर्षाश्रु वरमाये (तएणं से धण्णे सत्थवाहे जेजेव भद्रा भारिया, तेणेव उवा-गच्छइ) इसके बाद वह धन्य सार्थवाह जहां भद्रा सार्थवाही थी वहां गया (तएणं सा भद्रा धण्णं सत्थवाहं एजमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नो परिगणाइ, नो सक्कारेइ, नो सम्माणेइ, णो अब्भुट्टेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) भद्रा सार्थवाहीने आते हुए धन्य सार्थवाह को देखा भी परन्तु उसने उस का आदर नहीं किया उसका स्वागत नहीं किया, मधुर वचनों से उसका सत्कार नहीं किया विविध वस्तुओंके समर्पण से उसने उसका सन्मान नहीं किया । वह उसके

सार्थवाहने घर तरफ आवतो जेयो. (पासित्ता) जेधने (आसणाओ अब्भुट्टेइ अब्भुट्टित्ता कंठा कंठियं अवयासिय वाहपमोक्खणं करेति) तेजो जधा पोतपोतानी जग्घाओथी जिला थया अने जिला थधने ओक णीजना जणाथी प्रेम पूर्वक लेट्या. धन्य सार्थवाहने जधा भाणुसो भज्या. अने तेणुं आलिङ्गन क्युं धणु द्विसो पछी धन्य सार्थवाहने जेयो अनेमिलन थयुं ओटवे जधानी आंजोमां दुर्धनां आंसुओ वरसवा लाज्यां. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे जेजेव भद्रा भारिया, तेणेव उवागच्छइ) त्थार पछी धत्य सार्थवाह ज्थां लद्रा लार्था डनी. त्यां जेयो. (तएणं सा भद्रा धण्णं सत्थवाहं एजमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नोसम्माणेइ, णो अब्भुट्टेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) लद्रा सार्थवाही ओ धन्य सार्थवाहने आवतां जेया पणु तेणु तेमने आदर क्यो नडि, तेमनुं स्वागत क्युं नडि, मधुर वाणी वडे तेमने सत्कार्यो नडि,

મેળ્યાં ઇતિ વા, મેળ્યાઃ=મયોજનવિશેષે યે નગરાન્તરાદિપુ મેળ્યન્તે તે, મિય  
 ગાઈ વા' મૃત્યુકા ઇતિ વા, મૃત્યાઃ=આચાલવોપિતા 'માઈલ્લાગા વા' ભાગિકા  
 ઇતિ વા, ભાગિકાઃ=ભાગવન્તઃ ચતુર્થાંશાદિલાભેન કૃપ્યાદિકારિણાં વા યસ્માં  
 પચ્છિદિ સાઽપિ ચ સ્વલુ-વાદ્યા પરિપદ્ધ ધન્યં સાર્થવાહમેજમાનં પદ્યતિ,  
 દદ્વા 'પાયવડિયા' પાદપતિતા=પાદસંલગ્ના પાદસ્પર્શપૂર્વકં નમ્રીભૂતા 'સ્વેમ-  
 કુશલં' ક્ષેમકુશલમ્, અનર્થાનુત્પત્તિઃ ક્ષેમમ્, અનર્થપ્રતિઘાતઃ કુશલં, તત્  
 'પુચ્છંતિ પુચ્છંતિ' । અગ્રે અપિ--ચ તસ્ય તત્ર 'અબ્ધંતરિયા' આબ્ધન્તરિકા=  
 ગૃહાબ્ધન્તરવર્તિનો પરિપદ્ધ ભવતિ=અસ્તિ, 'તથા-તથાહિ-માતેતિ વા  
 પિતેતિ વા આતર ઇતિ વા મગિન્ય ઇતિ વા, સાઽપિ ચ સ્વલુ માતાપિત્રા-

વા મિયગાઈવા માઈલ્લાગાઈ વા સાવિયળં ધળ્લં સત્થવાહં ઇજંતં પાસઈ)  
 દાસ-ગૃહદાસી પુત્ર-દાસ્ય-જો કામ પડને પર નગરાન્તરોં મેં મેજે જાતે  
 થે વે મૃત્યુ-જો ચાલક અવસ્થાસે હીં ઇસ કે ચર પલે પુસે થે--ભાગિક-  
 ચૌથાઈં હિસ્સા લેકર જો કૃપ્યાદિ કર્મ કરતે થેવહ સચ ધન્યસાર્થવાહ  
 કો જવ આતે હુઈ દેસ્વા--તચ (પાસિત્તા પાયવડિયાઈ સ્વેમકુશલં  
 પુચ્છંતિ) દેસકર ઉસકે પેરોં પર ગિર પડા ઓર ઉસકો ક્ષેમ કુશલ  
 કો વાત પૂછને લગા । અનર્થ કો નિવૃત્તિકા નામ ક્ષેમ, ઓર અનર્થ  
 કે પ્રતિઘાત કા નામ કુશલ હૈ (જા વિચ સે તત્થ અબ્ધંતરિયા પરિસા-  
 મવઈ-તંજહા-માયાઈ વા પિયાઈ વા માયાઈ વા મગિનેઈ વા સા વિળં ધળ્લં સત્થવાહં  
 ઇજ્જમાળં પામ્મંતિ) ઇસી તરહ ઉસ ધન્ય સાર્થવાહ કો જો મીતરી સમા  
 થી--જસે માતા, પિતા, માઈ, ઓર વહિને--સો ઇન માતા પિતા માઈ  
 ઓર મગિનો રૂપ સમાને જવ ધન્ય સાર્થવાહ કો આતે હુઈ દેસ્વા

જેમ કે--દાસાઈ વા પેસ્સાઈ વા મિયગાઈ વા માઈલ્લાગાઈ વા સા વિળં  
 ધળ્લં સત્થવાહં ઇજંતં પાસઈ) દાસ-ધરના દાસી પુત્ર, દાસ્ય-કેઈ પશુ જાતના  
 કામ માટે બીજા નગરોમાં મોકલવા માટેના મોકરો, મૃત્યુ-જે નાનપણથી તેને ઘેર  
 પોપણ મેળવીને મોટા થયા હોય, ભાગિક-ચૌથા ભાગ લઈને જેતી વગેરે કરતા હતા  
 આ બધાએ ધન્યસાર્થવાહને આવતો જોઈને (પાસિત્તા પાયવડિયાઈ સ્વેમકુશલં  
 પુચ્છંતિ) તેના પગે પડ્યા અને તેની કુશળ ક્ષેમ પૂછવા લાગ્યા. અનર્થ દૂર થાય  
 તે ક્ષેમ, અને અનર્થને પ્રયત્ન પૂર્વક દબાવવું તે કુશલ છે. (જા વિ ચ સે તત્થ  
 અબ્ધંતરિયા મવઈ તં જહા-માયાઈ વા પિયાઈ વા માયાઈ વા મગિનેઈ વા  
 સા વિળં ધળ્લં સત્થવાહં ઇજ્જમાળં પાસંતિ) આ પ્રમાણે જ ધન્ય સાર્થવાહના  
 ઘરમાં રહેનારા કુટુંબના માણસો-માતા, પિતા, ભાઈ અને બહેનો-વગેરેએ ધન્ય

धनगारधर्माभृतवर्णिनीटीका अ.२ धन्यस्य विजयेन सह हृदयन्धनादिकम् ६५२

दिरुणाऽऽभ्यन्तरपरिपद धन्यं सार्थवाहमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा 'आसणाओ' ग्रामनात्=स्वस्वोपवेशनस्थानात् 'अम्बुद्वेइ' अभ्युत्तिष्ठति=संसु वसूध्वी भवति, अभ्युत्थाय 'कंठाकंठियं' कण्ठाकण्ठिकं=कण्ठे च कण्ठे च गृहीत्वा यत्पवनतन तत् कण्ठद्वयसंमिलनपूर्वकम् 'अवयासिय' आश्लिष्य=समालिङ्ग्य 'वाहपमोक्खणं' वाहपमोक्षणं=चिरविपुक्तप्रियसमागमजन्य-हर्षाश्रुमोचनं करोति । ततः खलु=तदनु सं धन्यः सार्थवाहो यत्रैव भद्रा भार्या तत्रैवोपागच्छति । ततः खलु सा भद्रा धन्यं सार्थवाहम् 'एजमाणं' एजमानं=स्वसमीपे समायातं पश्यति, दृष्ट्वा नो आद्रिगने, नो परिजानानि.

(पासित्ता) तव देखकर (आसणाओ अम्बुद्वेइ अम्बुद्विक्ता कंठाकंठियं अवया-सिय वाहपमोक्खणं करेति) ने अपने २ अधिष्ठित स्थान से उठ बैठे और उठकर परस्पर मे गले से गला लगाकर मिले । सवने उससे भेंट की । आलिङ्गनकिया । तथा बहुत दिनों के बाद मिलने से उन लोगों ने आनंद जन्य हर्षाश्रुओं का मोचन भी किया अर्थात् हर्षाश्रु वरमाये (तएणं से धण्णे सत्यवाहे जेणेव भद्रा भारिया, तेणेव उवा-गच्छइ) इसके बाद वह धन्य सार्थवाह जहाँ भद्रा सार्थवाही थी वहाँ गया (तएणं सा भद्रा धण्णं सत्यवाहं एजमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नो परिगणाइ, नो सक्कारेइ, नो सम्माणेइ, णो अम्बुद्वेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) भद्रा सार्थवाहीने आते हुए धन्य सार्थवाह को देखा भी परन्तु उसने उस का आदर नहीं किया उसका स्वागत नहीं किया, मधुर वचनों से उसका सत्कार नहीं किया विविध वस्तुओंके समर्पण से उसने उसका सम्मान नहीं किया । वह उसके सार्थवाहने घर तरफ आवतो जेयो. (पासित्ता) जेधने (आसणाओ अम्बुद्वेइ अम्बुद्विक्ता कंठा कंठियं अवयासिय वाहपमोक्खणं करेति) तेजो जधा पोतपोतानी ज्य्याओधी जिला थया अने जिला थधने ओक जीलना जणायी प्रेम पूर्वक लेट्या. धन्य सार्थवाहने जधा भाणुसो मज्या. अने तेहुं आलिङ्गन क्युं धण्णु द्विसो पछी धन्य सार्थवाहने जेयो अनेमिलन थयुं ओटले जधानी आंजोभां डुपनां आंसुओ वरसवा लाज्यां. (तएणं से धण्णे सत्यवाहे जेणेव भद्रा भारिया, तेणेव उवागच्छइ) त्थार पछी धन्य सार्थवाह ज्यां लद्रा लायां डुनी-त्यां जयो. (तएणं सा भद्रा धण्णं सत्यवाहं एजमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नोसम्माणेइ, णो अम्बुद्वेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) लद्रा सार्थवाही ओ धन्य सार्थवाहने आवतां जेयो पणु तेले तेमने आदर क्यो नडि, तेमहुं स्वागत क्युं नडि, मधुर वाणी वडे तेमने सत्कार्यो नडि,

नो सत्करोति, नो सम्मानयति, नो अभ्युत्तिष्ठति, नो शरीरकुशलं पृच्छति, अनाद्रियमाणा, अपरिजानन्ती, असत्कुर्वन्ती, असम्मानयन्ती, अनभ्युत्तिष्ठन्ती, शरीरकुशलमपृच्छन्ती 'तुसिणीया' तूष्णीका=मौनावलम्बिनी 'परम्मुही' पराङ्मुखी=पतिकूला मुखं परावर्त्य संतिष्ठतीत्यर्थः । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहो भद्रां भार्यामेवमवादीत- 'किण्ण' किं खलु=किमर्थं तव हे देवानुप्रिये ! न तुट्ठी वा' न तुष्टिः=सन्तोषो न वर्तते न हर्षो वा नानन्दो वा, यन्मया स्वकेन=स्वकीयेन अर्थसारेण=बहुमूल्यरत्नादि दानेन 'रायकज्जाओ राजकार्यात्=राजसङ्कटाद् आत्मा खलु विमोचितः ? ।

सन्मुख नहीं गई-- उठी नहीं, और न उसने उसकी कुशल क्षेम पूछी । (अणाढायमाणी, अपरिजाणमाणी, असक्कारेमाणी, असम्मानेमाणी, अण-ब्भुट्टेमाणी, शरीरकुशलं अपुच्छमाणी तुसिणीया, परम्मुही संचिद्धइ) इस तरह अपने पति अनादर का भाव प्रदर्शित करने वाली अपना-- स्वागत नहीं करने वाली सत्कार नहीं करने वाली सम्मान नहीं करने वाली, उठकर अपने सन्मुख नहीं आनेवाली, शरीर की कुशल क्षेम नहीं पूछने वाली ऐसी भद्रासार्थवादी को चुपचाप मुँह-फेरकर बैठी हुई जब धन्य सार्थवाहने देखा तो (तएणं से धण्णे सत्थवाहे भद्रा भारियं एवं वयासी) उस धन्य सार्थवाह ने उस भद्रा भार्या से इस प्रकार कहा--(किण्णं तुब्भं देवाणुप्पिए ! न तुट्ठी वा न हरिसे वा, नाणं देवा जं मए सएणं अत्थसारे णं रायकज्जाओ अप्पाणं विमोइए) हे देवानुप्रिये ! क्या तुझे सन्तोष नहीं हुआ है, हर्ष नहीं हुआ है, जो मैंने बहु 'मूल्य रत्नादिरूप अर्थसार देकर राज्य सकट से अपने को मुक्त करवाया है

लेटमां अनेक वस्तुओं आधीने सम्मान क्युं नहि. लद्रा लाया तेमनी सामे गछ नहि, छेली पछु न छोती थछ तेम न तेले शेठनी कुशल क्षेम विशेषे प्रश्न क्यो न छतो. (अणाढायमाणी अपरिजाणमाणी, असक्कारेमाणी, असम्मानेमाणी, अणब्भुट्टेमाणी, शरीरकुशलं अपुच्छमाणी तुसिणीया परम्मुही, संचिद्धइ) आ रीते धन्य सार्थवाडे तेमना प्रत्ये अनादरने लाव जतावनारी, स्वागत नहि क नारी, सत्कार नहि करनारी, सम्मान नहि करनारी, छेली थछने सामे सत्कार माटे नहि आवनारी, तेमना शरीरनी कुशल अने क्षेमनी बात नहि पूछनारी पोताना पत्नी लद्रा सार्थवाडीने जेध त्यारे (तएणं से धण्णे सत्थवाहे भद्रा भारियं एवं वयासी) तेमले लद्रा सत्थवाडीने कहुं (किण्णं तुब्भं देवाणु-प्पियाए ! न तुट्ठी वा न हरिसेवा नाणं देवा जं मए सएणं अत्थसारेणं राय-कज्जाओ अप्पाणं विमोइए) हे देवानुप्रिये ! शुं तने सन्तोष थयो नथी, में न्तो वगेरे जहु किंमती द्रव्य आधीने सन्त्य संकटथी मुक्ति भेजवी छे, शुं तने



તતઃ સ્વલુ સા મદ્રા ધન્યં સાર્થવાદમેવમવાદીત્—કથં સ્વલુ માં દેવા-  
નુપ્રિય ! મમ તુષ્ટિર્વાં યાવદાનન્દો વા મવિપ્સ્યતિ 'જેણં' યઃ સ્વલુ ત્વં  
મમ પુત્રપ્રાપ્તકાય યાવત્પ્રત્યામિત્રાય તસ્માદ વિપુલાદ અશનપાનસ્વાદ્ય-  
સ્વાદ્યાત્ સંવિભાગં કરોપિ ? । તતઃ સ્વલુ= તદનુ તચ્છુત્વા સ ધન્યો મદ્રામેવ  
મવાદીત્—હે દેવાનુપ્રિયે ! નો સ્વલુ=નૈવ 'ધર્મોત્તિ વા' ધર્મં ઇતિ ખા

(તણ્ણં સા મદ્રા સત્થવાહં एवं વયાસી) ઇત્ત પ્રકાર સુનકર મદ્રા સાર્થ-  
વાહીને ધન્ય સાર્થવાહ સે એસા કહા— (કહણ્ણં દેવાણુપ્પિયા ! મમ તુટ્ઠી  
વા જાવ આણંદે વા મવિસ્સડ્ જેણં તુમં મમ પુત્રપ્રાપ્તગસ્સ જાવ પચ્ચામિ  
ત્તસ્મ તત્થો વિપુલાઓ અસણ ૪ સંવિભાગં કરેસિ) હે દેવાણુપ્રિય ! મુઝ્ઝે તુષ્ટિ  
યાવત્ આનંદ કૈસે દોગા જો તુમને (કારાવત્ત મેં) મેરે પુત્રપ્રાપ્તક યાવત્ દાર્દિક  
શત્રુ ઉપ વિજય કેલિયે વિપુલ માત્રા વાલે ઉપ ચતુર્વિધ આહાર કો વિભક્ત  
કર દિયા હૈ । (તણ્ણં સે ધણે મદ્દં એવં વયાસી) એસા સુનકર ધન્યમાર્થ-  
વાહને મદ્રા સાર્થવાહી સે એસા વહા—(નો સ્વલુ દેવાણુપ્પિયાણ ! ધર્મોત્તિ વા  
તવોત્તિ વા કયપડિકયાઈ વા લોગજત્તાઈ વા નાયણત્તિ વા ધાડિણ  
વા સહાણ્ણ વા સુહિઈ વા તત્થો વિપુલાઓ અસણ ૪ સંવિભાગે  
કણ નન્નત્થ સરીરચિંતાણ) હે દેવાનુપ્રિયે ! મૈને જો ઉપ  
ચતુર્વિધ અશન, પાન, સ્વાદ્ય એવં સ્વાદ્ય રૂપ ચતુર્વિધ આહાર મેં સે વિભાગ  
કર જો વિજય ચોર કો હિસ્સા (કારાવાસમેં) દિયા હૈં વદ સંવિભાગકારણ-

આ બધું ગમ્યું નથી ? (તણ્ણં સા મદ્રા સત્થવાહં એવં વયાસી ) આ રીતે  
ધન્ય સાર્થવાહની જાત સાંભળીને ભદ્રા સાર્થવાહીએ તેમને કહ્યું—(કહણ્ણં દેવાણુ-  
પ્પિયા ! મમ તુટ્ઠી વા જાવ આણંદે વા મવિસ્સડ્ જેણં તુમં મમ પુત્ર-  
પ્રાપ્તગસ્સ જાવ પચ્ચામિત્તસ્સ તત્થો વિપુલાઓ અસણ ૪ સંવિભાગં કરેસિ)  
હે દેવાનુપ્રિય ! મને આનંદ ક્યાં જ કેમ ? કારણ કે જ્યારે તમે જેલમાં મારા  
પુત્રના હત્યાસને તે પુષ્કળ પ્રમાણમાં બનાવવામાં આવેલા આહારમાંથી ભાગ  
આપતા હતા. ( ત તણ્ણં સે ધણે મદ્દં એવં વયાસી) ત્યારે ધન્ય સાર્થવાહે  
ભદ્રા ભાયાને કહ્યું—(નો સ્વલુ દેવાણુપ્પિયાણ ! ધર્મોત્તિ વા તવોત્તિવા કય  
પડિકયાઈવા લોગજત્તાઈ વા નાયણત્તિ વા ધાડિણ વા સહાણ્ણ વા સુહિઈ વા  
તત્થો વિપુલાઓ અસણ ૪ સંવિભાગે કણ નન્નત્થ સરીરચિંતાણ)  
હે દેવાનુપ્રિયે ! મેં જે વિજય ચોરને પુષ્કળ પ્રમાણમાં બનાવવા આવેલા  
આર બતના અશન, પાન, આદ્ય અને સ્વાદ્ય રૂપ આહારમાંથી જે કંઈ પણ ભાગ  
આપ્યો છે તે તેને ભાગ આપવો જોઈએ આ બતના સંવિભાગકરણ રૂપ ધર્મથી

‘સંવિભાગકરણરૂપા ધર્મઃ સ્મ્યાત્’ ઇતિ મત્વા, ‘તત્ત્વોત્તયા’ ‘ત’ ઇતિ ત્વા=સ્વમ્યા-ડનોદારિકં તપો ભવિષ્યતિ’ ઇતિ મત્વા, ‘કથપટિકકડયાડવા’ કૃત-પ્રતિકૃતિતેતિ ત્વા=‘કૃતસ્ય પ્રત્યુપકારોડયમ્’ ઇતિ હેતુમુખાદાય, ‘લોગજનાદવા’ લોકયાગેતિ ત્વા ‘લોકવ્યવહારોડયમ્’ ઇતિ મત્વા, લોકલજ્ઞયા ત્વા, ‘નાય-પત્તિ ત્વા’ જ્ઞાતક ઇતિ ત્વા=‘પૂર્વાપરસમ્યન્વિજનઃ’ ઇતિ જ્ઞાત્વા, ‘નાયક’ ઇતિ ચ્છાયાપક્ષે ‘સ્વામી’ તિ, ‘ન્યાયદઃ’ ઇતિ પક્ષે ‘ન્યાયદાતા’ ઇતિ ચ મત્વા ‘વાડિપત્તિ ત્વા’ ઘાટિક ઇતિ ત્વા=‘સહજાતમિત્રં’ બાલમિત્રમિત્યર્થઃ, ઇતિ કૃત્વા, ‘સહાપત્તિત્વા’ સહાય ઇતિત્વા, સહાયકઃ=સહચારીતિ મત્વા, ‘મુહિત્તિ ત્વા’ મુહિતિતિ ત્વા=પ્રિયમિત્રમયમ્, ઇતિ મત્વા મયા તસ્માદ વિપુલાદ અશનપાન-સ્વાધસ્વાધાત્ સંવિભાગો ન કૃતઃ, કિન્તુ ‘નન્નત્થસરીરચિન્તાપ્’ નાન્યત્રશરીર-ચિન્તાયાઃ, ઉચ્ચારપ્રસ્રવણપરિઘટાવનરૂપશરીરચિન્તાં વિદાય ન મયા સંવિભાગઃ

રૂપ ધર્મ માનકમર નહીં દિયા હૈ, મુજે ઝનોદર તપ કી પ્રાપ્તી હોગી એસા માનકર ભી નહીં દિયા હૈ, અથવા પ્રત્યુપકાર કે રૂપમેં ભી નહીં દિયા હૈ, લોગવ્યવહાર કી દૃષ્ટિ સે ભી નહીં દિયા હૈ, લોકલાજકે રુયાલ સે ભી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા પૂર્વાપરસંચયી હૈ હસ ભાવ સે ભી નહીં દિયા હૈ, અથવા યહ ન્યાય પ્રદાતા હૈ એસા જાનકર ભી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા ઘાટિકા હૈ બાલ મિત્ર હૈ, એસા માનકર ભી નહીં દિયા હૈ, યહ હમે સહાયતા દેનેવાલા હૈ એસા સમજ કર ભી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા પ્રિય મિત્ર હૈ એસા જાનકર ભી નહીં દિયા હૈ કિન્તુ કેવલ શારિરિક ચિન્તા કે ભાવ સે હી દિયા હૈ । અર્થાત્ મુજે કારાવાસમેં ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ કી વાધાને સતાયા થા, સો उसकी

પ્રેરાધને આપ્યો નથી, મને તેથી ઝનોદર તપની પ્રાપ્તિ થશે આમ જાણીને પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, પ્રત્યુપકારના રૂપમાં પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી લોકલાજની દૃષ્ટિએ પ્રેરાધને પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, તે મારો પૂર્વાપર સંબંધી છે, આમ જાણીને પણ લોજનમાંથી મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, તે ન્યાય આપનાર છે આવું જાણીને પણ તેને લાગ આપ્યો નથી, તે અમારો ઘાટિક છે જાળ સખા છે. આવું જાણીને પણ તેને મેં લાગ આપ્યો નથી, તે મને સહાયતા કરે છે આમ સમજીને પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, તે અમારો પ્રિય મિત્ર છે. આ જાણીને પણ તેને લોજનમાંથી લાગ આપ્યો નથી. પણ શારીરિક ચિન્તા દર ક્રવાના વિચારથી જ મેં તેને પોતાના લોજનમાંથી લાગ આપ્યો છે, જેલમાં હોતાં મને ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણની મુશ્કેલી સતાવ્યા કરતી હતી તેથી તે બાધાથી

કૃતઃ, શર્ગીરચિન્તાથેમેવ તસ્મ સંચિભાગઃ કૃત ઇતિ ભાવઃ। તતઃસ્વલુ મા મદ્રા  
ધન્યેન સાર્થવાહેન એવમુક્તા સતી 'હટ્ઠ જાવ' હટ્ઠયાવત્=હટ્ઠતુષ્ટચિત્તાનન્દિતા  
હર્ષવશવિસર્પહૃદયા આવનાત્ અમ્બુત્તિઃઠિતિ, અમ્બુત્થા 'કંઠાકંઠે' કંઠા-  
કઠિઠ=કંઠેન કંઠં સંમેલયેત્યર્થઃ 'અવયાસેઙ' અશ્લિષ્યતિ=આલિઙ્ગતિ, આદર-  
સાહારાદિકં કરોતિ ક્ષેમકુશલં=કુશલવાર્તાં પૃચ્છતિ ચ । કુશલપશ્વમોપૃચ્છયઃ  
'ઠ્ઠાયા' સ્નાતા=કૃતસ્નાના 'જાવ' યાવત્ 'કયવલિકમ્મા' કૃતર્વાલિકર્મા=કૃતં=  
સમ્પાદિતં ચલિકર્મ=પ્રિયાગમનનિમિત્તાં પશુપશ્યાદિપ્રાણિભ્યોઽન્નાદિદાનરૂપં  
યયા સા તથા, 'કયકોઽયમંગલપાયચ્છિત્તા' કૃતકૌતુકમઙ્ગલપાયશ્ચિત્તા કૃતં  
કૌતુકં=દષ્ટિદોષાદિનિવારણાર્થ મપીપુણ્ડાદિકં, મઙ્ગલં= દુસ્સ્વપ્નાદિફલસ્યાગ-

નિવૃત્તિ કે ભાવ સે ઉસે હમને ઉસ ચતુર્વિધ આહાર મેં સે વિભક્ત કર  
ઉસે હિસ્તા દિયા હૈ (તર્ણં સા મદ્રા ધર્ણેણં સત્થવાહેણં એવં વુત્તા  
સમાણી, હટ્ઠજાવ આસનાઓ અમ્બુદ્દેઙ અમ્બુદ્વિત્તા કંઠાકંઠિ અવયાસેઙ,  
સ્વેમકુસલં પુચ્છઙ) ઇસકે વાદ ધન્ય સાર્થવાહ કે દ્વારા ઇસ મહાર કહે  
જાને પર હર્ષિત ઓર સંતુષ્ટ હૃદય હોતી હુઈ. વહ મદ્રા સાર્થવાહી આમન  
સે ઉઠ કર ચેઠો, ઉઠતર ઉપકા ઉસને કંઠસે આલિઙ્ગન ક્રિયા ઓર દુઃસ્વ  
પાદિક ક્ષેમકુશલકી વાત પૂછી. (પુચ્છિત્તા ઠ્ઠાયા જાવ પાયચ્છિત્તા વિઝલોઙ  
ભોગાભોગાઙ મુંજમાણી વિહરઙ) પૂછકર ફિર ઉસને સ્નાન ક્રિયા યાવ  
પ્રયશ્ચિત્ત ક્રિયા । ઓર વિપુલ ભોગોંકો ભોગતે હુએ વહ અના સમય  
આનન્દ સે વ્યતીત કરને લગી । યહાં "જાવ" પદ સે (કયવલિકમ્મા  
કયકોઽયમંગલપાયચ્છિત્તા) "ઇન પદોં કા સૂચન ક્રિયા ગયા હૈ । ઇનકા  
ભાવ યહ હૈ કિ--પ્રિય આગમન કે નિમિત્તિ કો લેકર ઉમને પશુ પક્ષી

નિવૃત્ત થવા માટે તેને હું પોતાના ચાર જાતના આહારમાંથી આહાર આપતો હતો.  
(તર્ણં સા મદ્રા ધર્ણેણં સત્થવાહેણં એવં વુત્તા સમાણી હટ્ઠજાવ આસનાઓ  
અમ્બુદ્દેઙ, અમ્બુદ્વિત્તા કંઠાકંઠિ અવયાસેઙ, સ્વેમકુસલં પુચ્છઙ) ત્યાર બાદ  
લદ્રા સાર્થવાહી એ ધન્ય સાર્થવાહની આ વાત સાંભળીને હર્ષિત અને સંતુષ્ટ  
હૃદયા થઈને તેણે ધન્ય સાર્થવાહતું આલિંગન કર્યું અને તેની ક્ષેમ કુશળની વાત  
પૂછી. (પુચ્છિત્તા ઠ્ઠાયા જાવ પાયચ્છિત્તા વિઝલાઙ ભોગભોગાઙ મુંજમાણી  
વિહરઙ) પૂછીને તેણે સ્નાન અને પ્રાયશ્ચિત્ત કર્યું. તેમજ ધન્ય સાર્થવાહની સાથે  
વિપુલ ભોગ ભોગવતાં તેણે પોતાનો વખત સુખેથી પસાર કરવા માંડ્યો. અહીં  
'જાવ' પદથી ( 'કયવલિકમ્મા કયકોઽયમંગલપયાચ્છિત્તા' ) આ પદોતું  
સૂચન કરવામાં આવ્યું છે. એનો અર્થ આ પ્રમાણે છે કે તેણે પ્રિય આગમનત

‘સંવિભાગકરણરૂપા ધર્મઃ સ્મ્યાત્’ ઇતિ મત્વા, ‘તવોત્તયા’ ‘ત’ ઇતિ વા=સ્વમ્યા-ડનોદારિકં તપો ભવિષ્યતિ’ ઇતિ મત્વા, ‘કયપદિકડયાડવા’ કૃત-પ્રતિકૃતિતેતિ વા=‘કૃતસ્ય પ્રત્યુપકારોડયમ્’ ઇતિ મત્વા, ‘લોગજનાહવા’ લોકયાગેતિ વા ‘લોકવ્યવહારોડયમ્’ ઇતિ મત્વા, લોકલજ્ઞયા વા, ‘નાય-એતિ વા’ જ્ઞાતક ઇતિ વા=‘પૂર્વાપરસમ્બન્ધિજનઃ’ ઇતિ જ્ઞાત્વા, ‘નાયક’ ઇતિ ચ્છાયાપક્ષે ‘સ્વામી’ તિ, ‘ન્યાયદઃ’ ઇતિ પક્ષે ‘ન્યાયદાતા’ ઇતિ ચ મત્વા ‘વાહિએતિ વા’ ઘાટિક ઇતિ વા=‘સહજાતમિત્રં’ ચાલમિત્રમિત્યર્થઃ, ઇતિ કૃત્વા, ‘સહાએતિવા’ સહાય ઇતિવા, સહાયકઃ=સહચારીતિ મત્વા, ‘મુહિત્તિ વા’ મુહિદિતિ વા=પ્રિયમિત્રમયમ્, ઇતિ મત્વા મયા તસ્માદ વિપુલાદ અશનપાન-સ્વાધસ્વાધાત્ સંવિભાગો ન કૃતઃ, કિન્તુ ‘નન્નત્થસરીરચિતા’ નાન્યત્રશરીર-ચિન્તાયાઃ, ઉચ્ચારપ્રસ્રવણપરિષ્ઠાપનરૂપશરીરચિંતાં વિહાય ન મયા સંવિભાગઃ

રૂપ ધર્મ માનકમર નહીં દિયા હૈ, મુજે ઝનોદર તપ કી પ્રાપ્તી હોગી એસા માનકર ખી નહીં દિયા હૈ, અથવા પ્રત્યુપકાર કે રૂપમેં ખી નહીં દિયા હૈ, લોગવ્યવહાર કી દૃષ્ટિ સે ખી નહીં દિયા હૈ, લોકલાજકે રુચાલ સે ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા પૂર્વાપરસંબંધી હૈ ઇસ ભાવ સે ખી નહીં દિયા હૈ, અથવા યહ ન્યાય પ્રદાતા હૈ એસા જાનકર ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા ઘાટિકા હૈ ચાલ મિત્ર હૈ, એસા માનકર ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમે સહાયતા દેનેવાલા હૈ એસા સમજ કર ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા પ્રિય મિત્ર હૈ એસા જાનકર ખી નહીં દિયા હૈ કિન્તુ કેવલ શારિરિક ચિન્તા કે ભાવ સે હી દિયા હૈ । અર્થાત્ મુજે કારાવાસમેં ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ કી વાધાને સતાયા થા, સો ડસકી

પ્રેરાધને આપ્યો નથી, મને તેથી ઊનોદર તપની પ્રાપ્તિ થશે આમ જાણીને પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, પ્રત્યુપકારના રૂપમાં પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી લોકલાજની દૃષ્ટિએ પ્રેરાધને પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, તે મારો પૂર્વાપર સંબંધી છે, આમ જાણીને પણ ભોજનમાંથી મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, તે ન્યાય આપનાર છે આવું જાણીને પણ તેને લાગ આપ્યો નથી, તે અમારો ઘાટિક છે. બાળ સખા છે. આવું જાણીને પણ તેને મેં લાગ આપ્યો નથી, તે મને સહાયતા કરે છે આમ સમજીને પણ મેં તેને લાગ આપ્યો નથી, તે અમારો પ્રિય મિત્ર છે. આ જાણીને પણ તેને ભોજનમાંથી લાગ આપ્યો નથી. પણ શારીરિક ચિંતા દૂર કરવાના વિચારથી જ મેં તેને પોતાના ભોજનમાંથી લાગ આપ્યો છે, જેલમાં હોતાં મને ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણની મુશ્કેલી સતાવ્યા કરતી હતી તેથી તે બાધાથી

वधैः=यष्ट्यादिना ताडनरूपैः 'कसप्प्रहारेभ्यः' कशाप्रहारैश्च दिवसेऽनेकवार  
कशाघातरूपैः 'जाव' यावत् एवं लत्तादिपरिघातरूपैश्च प्रहारैः, तृष्ण्या  
च क्षुधया च 'परम्भवमाणे' परम्भवन्=परिपीडयमानो जर्जरितशरीरः  
सन् कालमासे=मृत्युसमये कालं कृत्वा 'नरएसु' नरके पापकर्मिणां  
यातनास्थाने 'सूत्रे प्राकृतत्वाद् बहुवचनम्' 'नेरइयत्ताए' नैरयिकतया  
नारकत्वेन 'उववन्ने' उत्पन्नः=उत्पन्नः । स खलु तत्र=नरके नैरयिको जातः,  
कीदृशः ? इत्याह— 'काले' इत्यादि, 'काले' कालः=कृष्णवर्णः 'कालोभासे'  
कालावभासः=द्रष्टव्यः काल इव=मृत्युरिव अवभासते, यद्वा कालः=श्यामः  
अवभासः=दीप्तिर्यस्य स तथा 'जाव' यावत् यावच्छब्देन—'गंभीर  
लोमहरिसे भीमे उत्तासणए परमकण्ठे वण्णेण' से णं तत्थे निच्चं भीए,

य परम्भवमाणे कालमासे कालं किच्चा नरएसु नेरइयत्ताए उववन्ने)  
उन पूर्व प्रदर्शित रज्ज्वादि द्वारा दृढनियन्त्रणरूप बंधों से यष्ट्यादि द्वारा  
ताडन रूप बंधों से, दिवस में अनेक बार कृत कशाघातरूप प्रहारों  
से— लत्तादि परिघात रूप प्रहारों से भूख और प्यास से परिपीडित  
होना हुआ—जर्जरित-शरीर होता हुआ काल अक्सर काल कर  
के ओर पार करों के पारना स्थानका नरकमें नारकी  
की पर्याय से उत्पन्न हुआ । (से णं तत्थ नेरइए जाए) वह वहां  
ऐसा नैरयिक हुआ कि जो (काले कालोभासे जाव वेयणं पच्चणुमावमाणे  
विहरइ) शरीर में कृष्ण वर्ण वाला देखने वालों को मृत्यु जैसा प्रतीत  
होता था—अथवा कालो दीप्तिवाला । या यावत् शब्द से इस पाठ का  
यहां और संग्रह किया गया है । (गंभीरलोमहरिसे, भीमे, उत्तासणए  
परमकण्ठे वण्णेणं से तत्थ निच्चं भीए, निच्चं तत्थे, निच्चं तत्थिए,

परम्भवमाणे कालमासे कालं किच्चा नरएसु नेरइयत्ताए उववन्ने) पडेलां  
वर्णुन करवाभां आव्या मुज्ज्ण दोरीओना सभत णंधने लाकडीओ वगेरेने  
भार अने दिवसमां धल्लीवार करवाभा आवेला दोरओना प्रहारो, लत्ता वगेरेना  
प्रहारो जूण अते तरसथी दुःखी थतो थिथिण शरीरवाणे थधने आभरे मृत्यु  
पाभ्यो अने पापकर्मोना यातना स्थानरूप नरकमां नारकीनी पर्यायमां जनभ्यो.  
(से णं तत्थ नेरइए जाए) नैरयिकनी पय... (काले कालोभासे जाव  
वेयणं पच्चणुमावमाणे विहरइ) शरीरे ओ भेंश जेवो अने जेनाराओ  
ते मृत्युं जेवो प्रचंड लागतो डतो. अडीं (यावत्) थण्ठथी आ पाठने संधु  
थयो छे.— (गंभीरलोमहरिसे भीमे उत्तासणए परमकण्ठे वण्णेणं से



न्तुकारिष्टादेश निवारणाय दध्यक्षतादिग्रहणं तदेव प्रायश्चित्तम्=अवश्यं करणी-  
यत्वेन यथा सा विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना सती विहरति=आस्ते स्म॥सू० ११॥

मूलम्—तएणं से विजए तक्करे चारगसालाए तेहिं वंधेहिं वहेहिं  
कसप्पहारेहि य जाव तण्हाए य लुहाए य परवभवमाणे कालमासे  
कालं किच्चा नरएसु नेरइयत्ताए उववन्ने । सेणं तत्थ नेरइए जाए काले  
कालोभासे जाव वेयणं पच्चणुभवमाणे विहरइ । से णं ताओ उव्व  
ट्ठित्ता अणाइयं अणवदग्गं दीहमच्चं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरिअट्ठि-  
स्सइ । एवामेव जंबू ! जेणं अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा आय  
रियउवज्झायाणं अंतिए सुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्व-  
इए समाणे विपुलमणिमुत्तिय धणकणगरयणसारेणं लुच्चइ से  
वि य एवं चेव ॥सू० १२॥

टीका—तएणं से विजय' इत्यादि ।

ततः खलु=इतश्च स विजयस्तस्करः 'चारगसालाए' चारकशालायां=  
कारागारे तैः पूर्वप्रदर्शितैः 'बंधेहिं' बन्धैः रज्ज्वादिदृढनियन्त्रणरूपैः, 'वहेहिं'  
आदि प्राणियों के लिये अन्नादि देनेरूप बलिर्कर्म किया । तथा दृष्टि दोष  
आदि को निवारण करने के लिये उसने मपोपुंड आदि किये तथा  
स्वप्नके फल रूप आगन्तुक अरिष्ट आदिके निवारण करने के लिये  
उसने दध्यक्षत आदिक ग्रहण किया । ॥सू० ११॥

'तएणं से विजए तक्करे' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (विजए तक्करे) विजय तस्कर—(चारग सालाए)  
कारावासमें (तेहिं वंधेहिं वहेहिं कसप्पहारेहिं य जाव तण्हाए य लुहाए  
निमित्त पशु पक्षी वगेरे प्राणीओने अन्न वगेरे अभीने बलिर्कर्म क्युं. तेमज्ज  
दृष्टि दोषथी निवृत्ति भाटे तेले मपीपुंड' वगेरे क्युं. स्वप्नना इणना इपमां  
अविप्यमां थनार अनिष्ट वगेरेनी निवृत्ति भाटे तेले द्ढी अक्षत वीधां. ( सू. ११ )

'तएणं से विजए तक्करे' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पधी (से विजए तक्करे) विजयओरे (चारगसालाए)  
जेलमां (तेहिं वंधेहिं वहेहिं कसप्पहारेहिं य जाव तण्हाए य लुहाए य



સ્વપ્નં સંસાર એવ કાનતારં=મદાડરણ્યં, તત્=મવાટવીમિત્યર્થઃ, 'અણુપરિયટ્ટિ-  
સ્મદ્' અણુપરિયટ્ટિપ્યતિ=નિરન્તરં પરિભ્રમિત્યનિ । 'એવામેવ' એવમેવ=અનેનૈવ  
પ્રકારેણ હે જન્મ્વઃ ! યઃશ્વલુ અસ્માકં નિર્ગ્રન્થો વા નિર્ગ્રન્થી વા આચાર્યો-  
પાધ્યયાનામન્તિકે 'મુંડો' મુણુઃ, દ્રવ્યતો માવતથ મુંડિતો થૂત્વા અગારાદ્=  
અનગારિતાં પત્રજિતઃ=પાત્રઃસન્ વિપુલમણિમૌક્તિકથનકનકરત્નસારેણ  
'લુબ્ધઃ' લુબ્ધતિ=મણિમૌક્તિકથનાદિ લુબ્ધો ભવતિ 'સે વિ ય' સોડપિ ચ  
સાધુર્વા સાધ્વી વા 'એવંચેવ' એવમેવ=વિજયતસ્કરવદેવ ચાતુરન્તસંસાર-  
કાન્તારે ભ્રમિત્યતીનિ માવઃ ॥મૂ० ૧૨॥

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં ધમ્મઘોસા થેરા ભગ-  
વંતો જાડ સંપન્ના જાવ પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણા ગામાણુગામં દૂઢ્ઢ્ઞમાણા  
જેણેવ રાયગિહે નગરે જેણેવ ગુણસિલણે ચેડ્ણે તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ,  
ઉવાગચ્છિત્તા અહાપહિરૂવં ઉગ્ગહં ઉગ્ગિપ્પિહિત્તા સંજમેણં તવસા અ-

માર્ગં વહુત લંવા ચોડા હે અથવા ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ કાલ  
જિસના વહુત દીર્ઘં હે—પરિભ્રમણ કરેગા । (એવામેવ જન્મ્વ ! જે ણં અમ્હં  
નિર્ગંથો વા નિર્ગંથી વા આપરિયટ્ટવજ્ઞાપાણં અંતિણ મુંડે મવિત્તા  
અગારાઓ અણગારિયં પત્રવડ્ણ સમાણે વિપુલમણિમુત્તયધનકણગ  
રયણસારેણં લુબ્ધઃ સે વિ ય એવં ચેવ) ડસી પ્રકાર સે હેજન્મ્વ । જો  
હમારે નિર્ગંથ અથવા નિર્ગંથી સાધુ સાધ્વી જન આચાર્ય, ઉપાધ્યાય કે  
પાસ દ્રવ્ય માા રૂપસે મુંડિત હોકર અગાર સે અનગારી અવસ્થા કો  
પાત્ર કરતે હુણ વિપુલ મણિમૌક્તિક, ધન, કનક, રત્ન આદિ મેં  
લુભા જાતે હે વે મી ડસી તાહ ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર અટવી મેં ભ્રમણ  
કરતે રહેંગે । ॥મૂ० ૧૨॥

ખડુ જ લાંબો અને વિસ્તાર પામેલો છે અથવા ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ કાળ  
જેમનો ખડુ દીર્ઘ છે—પરિભ્રમણ કરશે. (એવામેવ જન્મ્વ ! જે ણં અમ્હં નિર્ગંથો વા  
નિર્ગંથી વા આપરિયટ્ટવજ્ઞાપાણં અંતિણ મુંડે મવિત્તા અગારાઓ  
અણગારિયં પત્રવડ્ણ સમાણે વિપુલમણિમુત્તયધનકણગરયણસારેણં લુબ્ધઃ  
સે વિ ય એવં ચેવ) આ રીતે જ જન્મ્વ ! જે અમારા નિર્ગંથ કે નિર્ગંથી સાધુ  
સાધ્વીજન આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયની પાસે દ્રવ્ય લાવ રૂપથી મુંડિત થઈને અગારથી  
અવસ્થાને મેળવતાં ખૂબ જ મણિ, મૌકિતક, ધન, કનક રત્ન વગેરેમાં લોહુપ  
થઈ જાય છે તેઓ પણ આ વિજય તસ્કર લેવા જ છે. અને તેઓ પણ આ  
પ્રમાણે જ ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસાર રૂપી અટવીમાં પરિભ્રમણ કરતા રહેશે. સૂ. ૧૨ ।

નિચ્ચં તત્થે, નિચ્ચં તસિણ, નિચ્ચં પરમસુહસંવદ્ધં નરગઃ' इत्येतेषां सं  
 ग्रहः, तत्र—'गंभीर' गम्भीरः=प्रचुरः 'लोमहरिसे' रामहर्षः=भयजनितरोमांचो  
 यस्य सः, 'भीमे' भीमः=भयङ्करः, अत एव 'उत्तासणाण' उत्तासकः=  
 भयजनितदुःखजनकः, वर्णेन परमकृष्णः—असौ तत्र नित्यं भीतः, नित्यं 'तसिण'  
 त्रसितः=परमाधर्मिभिस्त्रासं प्रापितः सन् 'परमसुहसंवद्वं' परमाशुभसम्बद्धाम्  
 =उत्कृष्टपापकर्मोपनीतां 'नरगवेयणं' नरकवेदनां= नरकसम्बन्धिघोरयातनां  
 'पच्चणुभवमाणे' प्रत्यनुभवन्=आत्मनः प्रतिप्रदेशतोऽनुभवन् 'विहरद्' विहरति=  
 उपतिष्ठते । स खलु=विजयतस्करजीवः 'ताओ' तस्मान् नरकस्थानात् 'उव्वट्ठित्ता'  
 उद्दृत्य=निस्सृत्य 'अणाइयं' अनादिकम्=आदि रहितम् 'अणवदग्गं' अनवदग्रम्=  
 'दीहमद्धं' दीर्घाध्वानं=दीर्घमार्गं चतुर्गतिलक्षणम्, दीर्घाद्धम्' इति  
 छायापक्षे तु दीर्घा=अद्वा=कालः उत्सर्पिण्यवसर्पिणी लक्षणो यत्र तत् दीर्घका-  
 लिकामेत्यर्थः 'चाउरंतं संसारकंतारं' चातुरन्तं संसारशान्तारं—चातुरन्तं=चतुर्गति-

નિચ્ચં પરમસુહસંવદ્ધં નરગ) इन पदों का अर्थ इस प्रकार है—इसे वहां  
 सदा भय रहेता है इसलिये सर्वदा इसे भयजनित रोमांच बना रहता  
 है—यह नरक स्वयं भयंकर है—इसलिये भय से उत्पन्न होनेवाले दुःख  
 का यह उत्पादक है । वर्ण की दृष्टि से यह परम कृष्ण है । यह वहां  
 नित्य भयशील और त्रस्त बना रहता है । परमाधार्मिक देव इसे वहां  
 नित्य त्रास दिया करते है । उत्कृष्ट पाप कर्म के उदय से प्राप्त हुई  
 नरक संबन्धी घोर यातनाओं को आत्माके प्रति प्रदेश से वह भोगता  
 है (से णं ताओ उवट्ठित्ता अणाइयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसं-  
 सारकंतारं अणुपरिअट्ठिस्सइ) इसके बाद वह विजय तस्कर का जीव  
 उस नरक स्थान से निकल कर अनादि—आदि रहित नाश रहित  
 —अनन्त रूप ऐसी चतुर्गति रूप भवाटवी में जिसका कि चतुर्गति रूप

નિચ્ચં મીઠુ નિચ્ચં તત્થે, નિચ્ચં તસિણ, નિચ્ચં પરમસુહસંવદ્ધં નરગં)  
 આ પદોનો અર્થ આ પ્રમાણે છે— તેને નરકમાં બીક રહે છે. એથી સદા તે  
 ભયજનક રોમાંચ યુક્ત રહે છે. તે પોતે ભયથી ઉત્પન્ન દુઃખને તે ઉત્પન્ન કરનાર  
 છે. રંગે તે સાવકાળો છે. હંમેશાં તે નરકમાં ભયશીલ અને સંત્રસ્ત બની રહે છે.  
 પરમાધાર્મિક દેવ તેને સદા ત્યાં નરકમાં ત્રાસ આપતા રહે છે. ઉત્કૃષ્ટ પાપકર્મોને  
 લીધે પ્રાપ્ત થયેલી નરકની ભયંકર મુશ્કેલીઓને તે આત્માના હરેકે હરેક પ્રદેશથી  
 ભોગવે છે. (સે ણં તાઓ ઉવટ્ઠિત્તા અણાઈયં અણવદગ્ગં દીહમદ્દં ચાઉરંત-  
 સંસારકંતારં અણુપરિઅટ્ઠિસ્સઈ) ત્યાર બાદ વિજય ચારનો જીવ તે નરકસ્થાનથી  
 બહાર નીકળીને અનાદિ આદિરહિત નાશરહિત, અનંતરૂપ એવી ચતુર્ગતિરૂપ માર્ગ

मर्यादया विचरन्तः 'गामाणुगाम' ग्रामानुग्रामम्=एक ग्रामादव्यवधानेनान्य-  
ग्रामं 'दृङ्जमाणा' द्रवन्तः=गच्छन्तः यत्रैव राजगृहं नगरं यत्रैव गुणशिलकं  
'चेइए' चैत्यम्=उद्यानं तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागम्य 'अहापडिरुवं' यथाप्रति-  
रूपं=यथायोग्यं=साधुमर्यादाहम् 'उग्गहं' अवग्रहं=वसतेराज्ञाम् 'उग्गिहत्ता'  
अवगृह्य=वनपालसकाशान्मार्गयित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं 'भावेमाणा'  
भावयन्तः=वासयन्तो विहरन्ति=तिष्ठन्ति। परिपन्निर्गता। धर्मः कथितः।  
ततः खलु तस्य धन्यस्य सार्थवाहस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निश्चय  
अयमेतद्रूप आध्यात्मिको यावत् समुपपद्यत एव खलु स्थविरा भगवन्तो

पुत्राणुपुत्रि चरमाणा गामाणुगामं दृङ्जमाणा जेणेव रायगिहे नयरे  
गुणसिलए चेइए तेणेव उवागच्छंति) जो कि विशुद्ध मातृवंशवाले थे  
यावत् तीर्थंकरों की परम्परा के अनुसार विहार करते थे। वे एक ग्राम से  
दूसरे ग्राम में विहार करते हुए जहां राजगृह नगर और गुणशिलक चैत्य  
था वहां आये (उवागच्छित्ता अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिहत्ता संजमेणं तवसा  
अप्पाणं भावेमाणाविहरंति) वहां आकर वे साधुजन की मर्यादा के अनुसार  
वसति की आज्ञा वहां के वनपालक से मांग कर संयम और तपसे अपना आत्मा  
को भावित करते हुए ठहर गये। (परिसा निगया, धम्मो कहिओ तएणं तस्स  
धणस्स सत्यवाहस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए  
जाव समुपज्जित्था) राजगृह नगर से परिपद यहां आई-भगवान् ने उसे धर्म की  
देखना दी। इसके बाद उस धन्य सार्थवाह ने अनेक जनों के सुख से इस  
अर्थ-भगवदागमन रूप समाचार-को सुनकर-उसे हृदय में अवधारित

पुत्रि चरमाणा गामाणुगामं दृङ्जमाणा जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव  
उवागच्छंति) के जेओ विशुद्ध मानवशना हुता, अने तीर्थंकरानी परंपरागत  
प्रथा मुज्ज विहार करता हुता तेओ ओक गामथी भीजे गाम विहार करतां ज्यां  
राजगृह नगर अने गुण शिलक चैत्य हुतुं त्यां आव्या. (उवागच्छित्ता अहा  
पडिरुवं उग्गहं उग्गिहत्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति)  
त्यां आवीने तेओ साधुजनोचित मर्यादाने अनुसरतां त्यांना वन पालकनी पांसेथी  
वास करवानी आज्ञा मेणवीने तप अने संयमथी पोताना आत्माने भाविक करतां  
त्यां रोकाया. (परिसा निगया धम्मो कहिओ तएणं तस्स धणस्स सत्यवा-  
हस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए जाव  
समुपज्जित्था) राजगृह नगरथी त्यां परिपद ओकडी थछ. लगवाने परिपदने संजोधी  
ओटले के धर्म देखना आपी. त्थार पछी धन्य सार्थवाहे धणु भाणुसेना मेदिथी  
लगवाने पधारवानी समाचार सांलणीने, तेने हृदयमां अवधारित करतां तेना

પ્પાણં ભાવેમોળા વિહરંતિ, પરિસા નિગ્ગયા ધમ્મો કહિઓ, તएणं  
 તસ્સ ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ વહુજણસ્સ અંતિણ ઇયમટ્ઠં સોચ્છા ણિ  
 સમ્મ ઇમેયારૂઢે અજ્ઞરિથિણ જાવ સમુપજિત્થા—एवं સ્વલુ થેરા ભગ-  
 વંતો જાહસંપન્ના ઇહમાગયા ઇહસંપત્તા તં ઇચ્છામિ ણં થેરે ભગ-  
 વંતે વંદામિ નમંસામિ ણ્હાણ જાવ સુદ્ધપ્પવેસાહં મહ્ગહ્ગાહં વત્થાહં  
 પવરપરિહિણ પાયવિહારચારેણં જેણેવ ગુણસિલે ચેહિણ જેણેવ થેરા  
 ભગવંતો તેણેવ ઉવાગચ્છહિ, ઉવાગચ્છિત્તા વંદહિ નમંસહિ । તएणં  
 થેરા ભગવંતો ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ વિચિત્તં ધમ્મમાહવસંતિ, તएणં  
 સે ધન્ને સત્થવાહે ધમ્મં સોચ્છાં एवं વયાસી—સદ્દહામિ ણં ભંતે !  
 નિગંથે પાવયણે જાવ પઠ્ઠહિણ જાવ વહૂણિ વાસાણિ સામન્નપરિયાગં  
 પાઉણિત્તા ભત્તં પચ્ચકલાહિ, પચ્ચકિલ્લત્તા માસિયાણ સંલેહણાણ સદ્ધિં  
 ભત્તાહં અણસણાણ હેદેહિ, હેદિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્છા સોહમ્મે  
 કલ્પે દેવત્તાણ ઉવવન્ને, તત્થણં અત્થેગહયા ણં દેવાણં ચત્તારિ પલિ-  
 ઓવમાહં ઠિહિ પન્નત્તા, તત્થ ણં ધણસ્સ દેવસ્સ ચત્તારિ પલિઓ-  
 વમાહં ઠિહિ પણત્તા, સે ણં ધણે દેવે તાઓ દેવલોચાઓ આઉકલ-  
 ણં ભવકલ્લણં ઠિહિ કલ્લણં અણંતરં ચયં ચહિત્તા મહાવિદેહે વાસે  
 સિજ્ઞિહિહિ જાવ સવ્વદુકલાણામંતં કરેહિહિ ॥સૂ, ૧૩॥

ટીકા—તેણં કાલેણં ઇત્યાદિ તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ધર્મઘોષા નામ સ્થ-  
 વિરા ભગવંતો જાતિસમ્પન્ના યાવત્ ‘પુન્નાણુપુન્નિવ’ પૂર્વાણુ પૂર્વા ચરન્તઃ=તીર્થઢ્ઢર-

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં ણં’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તેણં કાલેણં તેણં સમાણં) ઉસ કાલ, ઉસ સમય મેં (ધમ્મઘોષા  
 નામં થેરા) ધર્મઘોષ નામકે સ્થવિર (ભગવંતો) ભગવાન (જાહ સંપન્ના જાવ

(તેણં કાલેણં તેણંસમણં) ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તેણં કાલેણં તેણં સમાણં) તે કાળે અને તે સમયે (ધમ્મઘોષા નામં  
 થેરા) ધર્મઘોષનામેસ્થવિર (ભગવંતો) ભગવાન (જાહસંપન્ના જાવ પુન્નાણુ-



मर्मादिया विचरन्तः 'गामाणुगाम' ग्रामानुग्रामम्=एक ग्रामादव्यवधानेनान्य-  
ग्रामं 'दृडजमाणा' द्रवन्तः=गच्छन्तः यत्रैव राजगृहं नगरं यत्रैव गुणशिलकं  
'चेइए' चैत्यम्=उद्यानं तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागन्त्य 'अहापडिरुवं' यथापति-  
रूपं=यथायोग्यं=साधुमर्यादाहम् 'उग्गहं' अवग्रहं=वसतेराज्ञाम् 'उग्गिह्मिता'  
अवग्रहं=वनपालसकाशान्मार्गयित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं 'भावेमाणा'  
भावयन्तः=वासयन्तो विहरन्ति=तिष्ठन्ति। परिपन्निर्गता। धर्मः कथितः।  
ततः खल्लु तस्य धन्यस्य सार्थवाहस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य  
अयमेतद्रूप आध्यात्मिको यावत् समुपपन्न एव खल्लु स्थविरा भगवन्तो

पुष्पाणुपुष्पि चरमाणा गामाणुगामं दृडजमाणा जेणेव रायगिहे नयरे  
गुणसिलए चेइए तेणेव उवागच्छन्ति) जो कि विशुद्ध मातृवंशवाले थे  
यावत् तीर्थंकरों की परम्परा के अनुसार विहार करते थे। वे एक ग्राम से  
दूसरे ग्राम में विहार करते हुए जहां राजगृह नगर और गुणशिलक चैत्य  
था वहां आये (उवागच्छन्ता अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिह्मिता संजमेणं तवमा  
अप्पाणं भावेमाणाविहरन्ति) वहां आकर वे साधुजन की मर्यादा के अनुसार  
वसति की आज्ञा वहां के वनपालक से मांग कर संयम और तपसे अपने आत्मा  
को भावित करते हुए ठहर गये। (परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ तएणं तस्स  
धणस्स सत्थवाहस्स बहुजणस्स अंतिए एवमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए  
जाव समुपज्जित्था) राजगृह नगर से परिपद यहां आई-भगवान् ने उसे धर्म की  
देशना दी। इसके बाद उस धन्य सार्थवाह ने अनेक जनों के मुख से इस  
अर्थ-भगवदागमन रूप समाचार-को सुनकर-उसे हृदय में अवधारित

पुष्पि चरमाणा गामाणुगामं दृडजमाणा जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव  
उवागच्छन्ति) के जेओ विशुद्ध मानवंशना हुता, अने तीर्थंकरानी परंपरागत  
प्रथा मुज्ज विहार करता हुता तेओ ओक गामथी थीजे गाम विहार करतां जथां  
राजगृह नगर अने गुण शिलक चैत्य हुतुं त्यां आव्या. (उवागच्छन्ता अहा  
पडिरुवं उग्गहं उग्गिह्मिता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरन्ति)  
त्यां आवीने तेओ साधुज्जेनोचित मर्यादाने अनुसरतां त्यांना वन पालकनी पांसेथी  
वास करवानी आज्ञा भेजवीने तप अने संयमथी पोताना आत्माने आविक करतां  
त्यां रोझाया. (परिसा निग्गया धम्मो कहिओ तएणं तस्स धणस्स सत्थवा-  
हस्स बहुजणस्स अंतिए एवमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए जाव  
समुपज्जित्था) राजगृह नगरथी त्यां परिपद ओकही थछ. भगवाने परिपदने संजोधी  
ओटले के धर्म देशना आपी. त्थार पछी धन्य सार्थवाडे धणु भाणुसोना भोडैथी  
भगवाने पधारवाना समाचार सांझणीने, तेने हृदयमां अवधारित करतां तेना

જાતિસંપન્ના ઇદાગતા, ઇહસંપન્નાઃ, તદ્ ઇચ્છામિ સ્વલુ સ્થવિરાન ભગવંતો  
વન્દે નમસ્યામિ। સ્નાતઃ યાવત્ શુદ્ધ પ્રવેશાનિ માહુર્યાનિ વસ્ત્રાણિ 'પવર-  
પરિહિણ' પવરપરિહિતા=પવરં યથાસ્યાતથા ગુરુતુલ્યેત્યર્થઃ પરિહિતઃ=શૂઠઃ  
પરિહિતપવરવસ્ત્રઃ સન્ 'પાયવિહારચારેણ' પાદવિહારચારેણ=પાદાભ્યાં  
સશ્ચરણેન યત્રૈવ ગુણશિલકં ચૈત્યં યત્રૈવ સ્થવિરા ભગવન્તસ્તત્રૈવોપાગચ્છતિ,  
ઉવાગત્ય વન્દતે નમસ્યતિ। તતઃસ્વલુ સ્થવિરા ભગવન્તો ધન્યસ્ય સાર્થવા  
હસ્ય વિચિત્રં ધર્મમારુયાતિ। તતઃ સ્વલુ સ ધન્યઃ સાર્થવાહો ધર્મં શ્રુત્વા  
એવમવાદીત-શ્રદ્ધધામિ સ્વલુ ભદન્ત। નિર્ગ્રન્થં પ્રવચનં યાવત્ મત્રજિતઃ યાવદ્

કર-ઇસ પ્રકાર કો યહ આધ્યાત્મિક યાવત્ મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન હુઆ।  
(એવં સ્વલુ થેરા-ભગવંતો જાહસંપન્ના ઇહમાગયા ઇહસંપન્ને, તં ઇચ્છામિ ણં થેરે-  
ભગવંતે વંદામિ નમંસામિ) સ્થવિર ભગવંત જો જાતિ સંપન્ન હે યહાં આયે  
હુણ હૈં-યહાં સમ્પ્રાપ્ત હુણ હૈં। અતઃ મૈં ચાહતા હૂં કિ મૈં ઉન્હેં વંદૂં-નમન  
કરૂં। એસા વિચાર કર ઉસને (હાણ, જાવ સુદ્ધપ્પવેસાઈ મંગલ્લાઈ વત્થાઈં પવર-  
પરિહિણ) સ્નાન કિયા-યાવત્ શુદ્ધ પ્રવેશ કરને યોગ્ય, મંગલ રૂપ વસ્ત્રોં કો  
પહિના (પાય વિહારચારેણં જેણેવ ગુણસિલે ચેડણ જેણેવ થેરા ભગવંતો. તેણેવ  
ઉવાગચ્છઈ, ઉવાગચ્છિત્તા વંદઈ નમંસઈ) પઢિન કર ફિર વહ પેદલ હી જહાં  
ગુણશિલક ચૈત્ય ઓર સ્થવિર ધર્મઘોષ ભગવંત વિરાજમાન થે વહાં ગયા।  
જાકર ઉસને ઉન્હેં વંદન કિયા નમસ્કાર કિયા। (તણં થેરા ભગવંતો  
ધણ્ણસ્સ સત્થવાહસ્સ વિચિત્તં ધમ્મામાહુવસંતિ) ઇસકે વાદ ઉન સ્થવિર ભગવંતને  
ધન્ય સાર્થવાહકો વિચિત્ર ધર્મ કા ઉપદેશ દિયા। (તણં સે ધણે સત્થવાહે

મનમાં આ જાતનો આધ્યાત્મિક અને મનોગત સંકલ્પ ઉદ્ભવ્યો—(એવં સ્વલુ  
થેરા ભગવંતો જાહસંપન્ના ઇહમાગયા ઇહસંપન્ને તં ઇચ્છામિ ણં થેરે  
ભગવંતે વંદામિ નમંસામિ) ભાતી સંપન્ન સ્થવિર ભગવંત અહું પધારેલા છે.  
સંપ્રાપ્ત થયા છે. એથી મને ઇચ્છા થાય છે કે હું તેમને વંદુ અને નમન કરું.  
આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેમણે (પહાણ, જાવ, સુદ્ધપ્પવેસાઈ મંગલ્લાઈ વત્થાઈં  
પવરપરિહિણ) સ્નાન કર્યું ભગવાન પાસે જવા યોગ્ય શુદ્ધ વસ્ત્રો પહેર્યાં.  
(પાયવિહારચારેણં જેણેવ ગુણસિલે ચેડણ જેણેવ થેરા ભગવંતો તેણેવ ઉવા-  
ગચ્છઈ ઉવાગચ્છિત્તા વંદઈ નમંસઈ) પહેરીને તેઓ પગથી ચાલીને જ્યાં ગુણશિલક  
ચત્ય અને સ્થવિર ધર્મઘોષ ભગવંત વિરાજમાન હતા ત્યાં ગયા. પહોંચીને તેઓએ  
ભગવાનને વંદન અને નમસ્કાર કર્યા. (તણં થેરા ભગવંતો ધણ્ણસ્સ સત્થ-  
વાહસ્સ વિચિત્તં ધમ્મામાહુવસંતિ) ત્યાર પછી તે સ્થવિર ભગવંતે ધન્ય સાર્થવાહને  
અદ્ભુત રીતે ધર્મ-દેશના આપી. (તણં સે ધણે સત્થવાહે . . . સોચા



વહ્નિ વર્ષાણિ શ્રામણ્યપર્યાયં પાલયિત્વા ભક્તં પ્રત્યાહ્વાયતિ, પ્રત્યાહ્વાય માસિવંશા સંલેખનયા પટ્ટિ ભક્તાનિ અનશનેન છિનત્તિ, છિત્ત્વા કાલમાસે કાલં કૃત્વા સૌધર્મે કલ્પે દેવત્વેન ઉપવ્રજઃ। તત્ર સ્વલુ અસ્ત્યેકકાનાં દેવાનાં ચત્વારિ પલ્યોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞસા, તત્ર સ્વલુ ધન્યસ્ય દેવસ્ય ચત્વારિ પલ્યોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞસા। સ સ્વલુ ધન્યો દેવસ્તસ્માદેવલોકાત્ આયુઃ

ધર્મં સોચા એવં વયાસી) ઇત્તકે વાદ ઉત્ત ધન્યસાર્થવાદને ધર્મ મુનકર ઇત્ત પ્રકાર કહા—(સદ્દામિ ણં મંતે નિગ્મંથે પાવયણે જાવ પન્વડ્દા જાવ વહ્નિ વાસાણિ સામન્નપરિયાગં પાઝણિત્તા ભક્તં પચ્ચકલાઈ) હે મદંત ! મેં નિર્ગન્થ પ્રવચન કો શ્રદ્ધા કરતા હું। યાવત્ વહ પ્રવ્રજિત હો ગયા। વહુત વર્ષોં તક ઉસને શ્રામણ્ય પર્યાય કા પાલન ક્રિયા—વાદ મેં ઉસને ચતુર્વિધ ભક્ત કો પ્રત્યાહ્વાન કર દિયા।—(પચ્ચક્લિત્તા માસિયાણ સંલેહ્ણાણ સટ્ઠિ ભક્તાઈ અણસણાણ છેદેઈ) પ્રત્યાહ્વાન કરકે ૧ એક માસ કી સંલેખના સે ઉમને ૬૦ ભક્તો કો અનશન દ્વારા છેદ દિયા—(છેદિત્તા કાલ માસે કાલં કિચ્ચા સોદ્દમ્મે કલ્પે દેવતાણ ઉવવન્ને) છેદકર ફિર વહ મૃત્યુ કે અવમર આને પર મરા—ઘોર મર કર સૌધર્મ કલ્પ મેં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હો ગયા। (તત્થણં અત્થેગહ્યાણં દેવાણં ચત્તારિપલિઓવમાઈં ઠિઈં પણ્ણત્તા) વહાં કિતનેક દેવોં કી ચાર પલ્યોવમપમાણસ્થિતિ કહી ગઈ હૈ સો (તત્થણં ધણ્ણસ્સ દેવસ્સ ચત્તારિપલિઓવમાઈં ઠિઈં પણ્ણત્તા) ઇત્તમેં ધન્યકુમાર દેવકી વહાં ચાર

એવં વયાસી ત્યાર પછી ધર્મ—દેશનાનું શ્રવણ કરીને ધન્ય સાર્થવાડે કહ્યું— સદ્દામિ ણં મંતે નિગ્મંથે પાવયણે જાવ પન્વડ્દા જાવ વહ્નિ વાસાણિ સામન્નપરિયાગં પાઝણિત્તા ભક્તં પચ્ચકલાઈ) હે મદંત ! નિર્ગન્થ પ્રવચનમાં હું સારી પેઠે શ્રદ્ધા ધરાવું છું. આ રીતે ધન્ય સાર્થવાડ પ્રવ્રજિત થઈ ગયા. ધણું વર્ષોં સુધી તેઓએ શ્રામણ્ય પર્યાયનું પાલન કર્યું. ત્યાર બાદ તેમણે ચતુર્વિધ ભક્તનું પ્રત્યાહ્વાન કર્યું. (પચ્ચક્લિત્તા માસિયાણ સંલેહ્ણાણ સટ્ઠિ ભક્તાઈં અણસણાણ છેદેઈ) પ્રત્યાહ્વાન કરીને એક મહિનાની સંલેખના વડે તેમણે સાધ્ધિ ભક્તોનું અનશન વડે છેદન કર્યું. (છેદિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા સોદ્દમ્મે કલ્પે દેવતાણ ઉવવન્ને) છેદન કર્યા બાદ મૃત્યુનો વખત ન્યારે આવ્યો ત્યારે તેઓ મરણ પામ્યા અને મરણ પામીને સૌધર્મ કલ્પમાં દેવની પર્યાયથી તેઓ ઉત્પન્ન થયા. (તત્થ ણં અત્થેગહ્યાણં દેવાણં ચત્તારિ પલિઓવમાઈં ઠિઈં પણ્ણત્તા) ત્યાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચારપલ્યોપમ પ્રમાણ બેટલી છે. (તત્થ ણં ચ ધણ્ણસ્સ દેવસ્સ ચત્તારિપલિઓમાઈં ઠિઈં પણ્ણત્તા) આ રીતે ધન્યકુમાર દેવની સ્થિતિ ત્યાં ચાર

ક્ષયેણ સ્થિતિક્ષયેણ ભવક્ષયેણ 'અગંતરં' અનંતરમ્-અનંતરરહિતં વ્યવધાન-  
રહિતં ચયં=શરીરં 'ચક્ષ્ણ' ત્યક્ત્વા મહાવિદેહે વર્ષે સેત્સ્યતિ યાવત્-યાવચ્છ-  
વ્દેન મોત્સ્યતે મોક્ષ્યતિ પરિનિર્વાસ્યતિ, સર્વદુઃખાનામન્તં કરિષ્યતિ । મુ. ૧૩ ।

મૂલમ્— જહા ણં જંતુ ! ધણેણં નો ધમ્મો તિ વા જાવ  
વિજયસ્સ તક્કરસ્સ તઓ વિઝલાઓ અસણવાણલાઇમસાઇમાઓ  
સંવિભાગે કણ, નન્નતથ સરીરસારકલ્લણદુણ્ણ । એવામેવ જંતુ ! જેણં  
અમ્હં નિગ્ગંથે વા નિગ્ગંથી વા જાવ પઠ્ઠવ્ઠણ સમાણે વવગયણ્ણ-  
ણુમ્મદ્દણપુલ્લકગંધમલ્લાલંકારવિભૂસે ઇમસ્સ ઓરાલિયસરીરસ્ય નો વન્ન-  
હેઠં વા રૂવહેઠંવિસયહેઠં વા અસણં વાણં લાઇમં સાઇમં આહાર-  
માહારેઇ, નન્નતથ વાણદંસણચરિત્તાણં વહણયાણ, સે ણં ઇહલોણ  
ચેવ વહૂણં સમવાણં સમણીણં સાવગાણ ય સાવિગાણ ય અચ્ચણિજ્ઞે  
વંદણિજ્ઞ, પૂયણિજ્ઞે, પજ્જુવાસણિજ્ઞે ભવઇ, પરલોણ વિ ય ણં નો  
વહૂણિ હત્થચ્છેયણાણિ ય કન્નેચ્છેયણાણિ ય નાસાચ્છેયણાણિ ય,

પલ્લવ કી સ્થિતિ હુઈ । (સે ણં ધન્ને દેવે તાઓ દેવલોયાઓ આઝવલ્લણં ભવ  
વલ્લણં ઠિઠ્ઠવલ્લણં અણંતરં ચયં ચક્ષ્ણ મહાવિદેહે વાસે સિઝ્ઞિહિઈ જાવ  
સવ્વદુઃખાણમંતં કરેહિઈ) વે ધન્યદેવ ઉસ દેવલોક સે આયુ કે ક્ષય સે,  
સ્થિતિ કે ક્ષય સે ભવ કે ક્ષય સે, અનંતર શરીર કો છોડકર મહાવિદેહ  
ક્ષેત્ર મેં (ઉત્પન્ન ઢોકર વહાં સે સિદ્ધ પદ માત્ર કરેંગે । યહાં યાવત્ પદ સે  
'મોત્સ્યતે મોક્ષ્યતિ, પરિનિર્વાસ્યતિ સર્વ દુઃખાનામન્તં કારિષ્યતિ' ઇસ પાઠકા  
સંગ્રહ હુઆ હૈ । ॥મુત્ર ૧૩॥

પલ્લવ બેટલી થઇ. (સે ણં ધન્ને દેવે તાઓ દેવલોયાઓ આઝવલ્લણં ભવવલ્લણં  
ઠિઠ્ઠવલ્લણં અણંતરં ચયં ચક્ષ્ણ મહાવિદેહે વાસે સિઝ્ઞિહિઈ જાવ સવ્વ-  
દુઃખાણમંતં કરેહિઈ) તે ધન્યદેવ તે લોકથી આયુષ્ય ક્ષય, સ્થિતિ ક્ષય અને ભાવના  
ક્ષય થયા પછી શરીરનો ત્યાગ કરીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થીને ત્યાં સિદ્ધ  
પદ મેળવશે. અહીં 'યાવત્' પદથી 'મોત્સ્યતે મોક્ષ્યતિ, પરિનિર્વાસ્યતિ સર્વદુઃખા  
નામન્તં કારિષ્યતિ' આ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. ॥ સૂ. ૧૩ ॥

एवं हियय उप्पाडणाणि य, वसणुप्पाडणाणि य, उल्लंघणाणि य  
पाविहिइ, अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसाग्कंतारं  
वीइवइस्सइ जहा व से धण्णे सत्थवाहे । एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव  
संपत्तेणं दोचस्स णायज्झयस्स अयमट्ठे पणत्ते—त्तिवेमि । सू. १४।  
॥ विइयं णायज्झयणं समत्तं ॥ २ ॥

टीका—‘जहाण जंबू’ इत्यादि । ‘जहाणं’ यथा खलु=येन प्रकारेण हे  
जम्बू ! धन्येन सार्थवाहेन ‘नो’ न ‘धम्मोत्ति वा’ धर्मइति वा मत्वा यावत्  
‘सुहृद्’ इति वा मत्वा विजयाय तस्कराय तस्माद् विपुलाद् अशनपानखा-  
द्यस्वाधात् संविभागः कृतः, नान्यत्र शरीरसंरक्षणार्थाय—शरीरसंरक्षणं विहाय  
अशनादि संविभागो न कृत इत्यर्थः एवमेव हे जम्बू ! यः खलु अस्माकं  
निर्गन्धो वा निर्ग्रन्थी वा ‘जाव’ यावत्—आचार्योपाध्यायानामन्तिके मुण्डो  
भूत्वा अगाराद् अणगारितां प्रव्रजितः सन् ‘वचगयक्काणुम्मदणपुप्फगंधम-

‘जहा णं जंबू !’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(जहाणं जंबू ! ) हे जंबू जिस प्रकार (धण्णेणं सत्थवाहेणं)  
धन्य सार्थवाहने (नो धम्मोत्ति वा जाव विजयस्स तक्करस्स तओ विउलाओ  
असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं कए) धर्म नहीं मानकर यावत् मित्र  
नहीं मानकर विजय तस्कर के लिये उस विपुल अशन, पान, खाद्य स्वाद्य  
रूप आहार में से विभाग किया (नन्नत्थ सरीरसारक्खणट्ठाए) केवल  
अपने शरीर की रक्षा के निमित्त । (एवामेव जंबू ! जेणं अम्हं निगंथे  
वा निगंथी वा जाव पव्वइए समाणे वचगयक्काणुम्मदणपुप्फगंधमल्लालंकार-  
विभूसे) इसी तरह हे जंबू ! जो हमारे निर्ग्रन्थ साधु वा निर्ग्रन्थी साध्वियां

‘जहा णं जंबू !’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(जहाणं जंबू ! ) हे जंबू ! जेवी रीते (धण्णे णं सत्थवाहेणं)  
धन्यसार्थवाडे (नो धम्मोत्ति वा जाव विजयस्स तक्करस्स तओ विउलाओ  
असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करेइ) पोतानी इरं के पोतानो मित्र  
अधुं कंठं न जणुतां विजय तस्करने भाटे विपुल अशन पान, आद्य अने स्वाद्यइए  
अङ्गुमांथी लाग करी आये। (नन्नत्थ सरीरसारक्खणट्ठाए) ते इत्त पोताना  
शरीरं रक्षा भाटे ए (एवामेव जंबू ! जेणं अम्हं निगंथे वा निगंथी वा  
जाव पव्वइए समाणे वचगयक्काणुम्मदणपुप्फमल्लालंकारविभूसे) आ प्रभावे  
ए जंबू ! जेअमारा निर्ग्रन्थ साधु के निर्ग्रन्थ साध्वीओ आचार्य के उपाध्यायनी

ક્ષયેણ સ્થિતિક્ષયેણ ભવક્ષયેણ 'અગંતરં' અનંતરમ્-અંતરરહિતં વ્યવધાન-  
રહિતં ચયં=શરીરં 'ચદ્વત્તા' ત્યક્ત્વા મહાવિદેહે વયે' સેત્સ્યતિ યાવત્-યાવચ્છ-  
વ્દેન મોત્સ્યતે મોક્ષ્યતિ પરિનિર્વાસ્યતિ, સર્વદુઃસ્વાનામન્તં કરિષ્યતિ । મુ. ૧૩।

મૂલમ્— જહા ણં જંવૂ ! ધણેણં નો ધમ્મો તિ વા જાવ  
વિજયસ્સ તક્કરસ્સ તઓ વિઝલાઓ અસણપાણલાહમસાહમાઓ  
સંવિભાગે કણ, નન્નતથ સરીરસારક્કલણટ્ટાણ । એવામેવ જંવૂ ! જેણં  
અમ્હં નિગ્ગંથે વા નિગ્ગંથી વા જાવ પઠ્ઠવ્વહિણ સમાણે વવગયણહા-  
ણુમ્મદ્દણપુપ્ફગંધમહ્હાલંકારવિભૂસે હમસ્સં ઓરાલિયસરીરસ્ય નો વન્ન-  
હેઠં વા રૂવહેઠંવિસયહેઠં વા અસણં પાણં લાહમં સાહમં આહાર-  
માહારેહિ, નન્નતથ ણાણદંસણચરિત્તાણં વહ્ણયાણ, સે ણં હિહલોણ  
ચેવ વહ્ણણં સમણાણં સમણીણં સાવગાણ ય સાવિગાણ ય અચ્ચણિજ્ઞે  
વંદણિજ્ઞ, પૂયણિજ્ઞે, પજ્જુવાસણિજ્ઞે ભવહિ, પરલોણ વિ ય ણં નો  
વહ્ણિણિ હત્થચ્છેયણાણિ ય કન્નેચ્છેયણાણિ ય નાસાચ્છેયણાણિ ય,

પલ્લવની સ્થિતિ હુઈ । (સે ણં ધન્ને દેવે તાઓ દેવલોચાઓ આઝકલ્લણં ભવ  
ક્લણં ઠિહ્વલ્લણં અણંતરં ચયં ચદ્વત્તા મહાવિદેહે વાસે સિઝ્ઞિહ્વિહ્વિ જાવ સવ્વ-  
દુક્ખાણમંતં કરેહિહિ) વે ધન્યદેવ ઉસ દેવલોક સે આયુ કે ક્ષય સે,  
સ્થિતિ કે ક્ષય સે ભવ કે ક્ષય સે, અનંતર શરીર કો છોડકર મહાવિદેહ  
ક્ષેત્ર મેં (ઉત્પન્ન હોકર વહાં સે સિદ્ધ પદ પ્રાપ્ત કરેંગે । યહાં યાવત્ પદ સે  
'મોત્સ્યતે મોક્ષ્યતિ, પરિનિર્વાસ્યતિ સર્વ દુઃસ્વાનામન્તં કરિષ્યતિ' હસ પાઠકા  
સંગ્રહ હુઆ હૈ । ॥મુત્ર ૧૩॥

પલ્લવ બેટલી થઈ. (સે ણં ધન્ને દેવે તાઓ દેવલોચાઓ આઝકલ્લણં ભવક્લણં  
ઠિહ્વલ્લણં અણંતરં ચયં ચદ્વત્તા મહાવિદેહે વાસે સિઝ્ઞિહ્વિહ્વિ જાવ સવ્વ-  
દુક્ખાણમંતં કરેહિહિ) તે ધન્યદેવ તે લોકથી આયુષ્ય ક્ષય, સ્થિતિ ક્ષય અને ભાવના  
ક્ષય થયા પછી શરીરનો ત્યાગ કરીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થઈને ત્યાં સિદ્ધ  
પદ મેળવશે. અહીં 'યાવત્' પદથી 'મોત્સ્યતે મોક્ષ્યતિ, પરિનિર્વાસ્યતિ સર્વદુઃસ્વા-  
નામન્તં કરિષ્યતિ' આ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. ॥ મુ. ૧૩ ॥

ગિજ્જે' અર્ચનીયઃ=માનનીયોઽધ્યુત્થનાદિના, વંદણિજ્જે' વન્દનીયઃ સ્તુતિયોગ્યો  
ગુણોન્કીર્તનાદિના, 'પૂયણિજ્જે' પૂજનીયઃ=આદરણીયશ્રવણસ્પર્શાદિના, 'પજ્જુ-  
વાસણિજ્જે' પર્યુપાસનીયઃ=સેવનીય આહાર વસ્ત્રપાત્રાદિભિર્ભવતિ । પરલોકે  
ઽપિ ચ સ્વલુ=ભવાન્તરેઽપિ 'વહ્ણિ' વહ્ણિ=વહુવિધાનિ 'હત્થચ્છેયણાણિ ય'  
હસ્તચ્છેદનાનિ=કરક્રન્તનાનિ, 'કણ્ણચ્છેયણાણિ ય' કર્ણચ્છેદનાનિ ચ 'નાસા-  
ચ્છેયણાણિ ય' નાસાચ્છેદનાણિ ચ, એવં 'હિયયઉપ્પાડણાણિ ય' હૃદયોત્પાટ-  
નાનિ ચ=હૃદયચિદારણાણિ 'વસણુપ્પાડણાણિ ય' વૃષણોત્પાટનાનિચ=અણ્ડ-  
કોપચિદારણાણિ 'ઉલ્લંચણાણિ ય' ઉલ્લમ્બનાનિ ચ ઉત્=ઊર્ધ્વપ્રદેશે વૃક્ષશાંખાદૌ  
લમ્બનાનિ=વન્ધનાનિ ઉલ્લમ્બનાનીત્યર્થઃ 'ના' ન 'પાવિહિ' માપ્સ્યતિ પૂર્વોક્ત-  
દુઃસ્વાનિ ન લપ્સ્યતિતિ ભાવઃ । 'અણાઇયં' અનાદિકમ્=આદિરહિતં ચ સ્વલુ  
'અણવદગ્ગં' અનવદગ્ગમ્=અનન્તમ્, દીહમદ્દં' દીર્ઘાધ્વાનં=ચતુર્ગતિલક્ષણં દીર્ઘમાર્ગમ્,

ગાગ ય સાવિગાળ ય અચણિજ્જે વંદણિજ્જે; પૂયણિજ્જે, પજ્જુવાસણિજ્જે  
ભવઈ, પરલોએ વિ ય ણં નો વહ્ણિ હત્થચ્છેયણાણિ ય કણ્ણચ્છેયણાણિ ય ના-  
સાચ્છેયણાણિ ય એવં હિયયઉપ્પાડણાણિય વસણુપ્પાડણાણિ ય ઉલ્લં-  
ચણાણિ ય પાવિહિ ) વે નિર્મન્ય સાધુ ઔર નિર્મન્ય સાધ્વિ યા મહારાજ  
ઇસ લોકમે અનેક શ્રમણ ઔર શ્રમણીયોં કે શ્રાવક ઔર શ્રાવિકાઓં કે  
માનનીય હોતે હૈં, વંદનીય હોતે હૈં, પૂજનીય હોતે હૈં પર્યુપાસનાય હોતે  
હૈં તથા પરલોકમે વે હસ્તચ્છેદસે કર્ણચ્છેદસે, નાસિકાચ્છેદસે વચતે હૈં ।  
उनके हृदय नहीं विदारें जाते हैं, अण्डकोप उनके नहीं विदारें जाते हैं । इस  
न वे उर्ध्व प्रदेशरूप वृक्षादिकों की शाखा पर ही लटकाये जाते हैं । इस  
पूर्वोक्त समस्त दुःस्वोंसे वे परे रहते हैं । (अणाइयं च णं अणवदग्गं दी

વંદણિજ્જે, પૂયણિજ્જે, પજ્જુવાસણિજ્જે ભવઈ, પરલોએ વિ ય ણં નો વહ્ણિ  
હત્થચ્છેયણાણિ ય કણ્ણચ્છેયણાણિ ય નાસચ્છેયણાણિ ય એવં હિયયઉપ્પા-  
ડણાણિય વસણુપ્પાડણાણિ ય ઉલ્લંચણાણિ ય પાવિહિ) તે નિર્ઞંથ સાધુ અને  
નિર્ઞંથ સાધ્વીઓ (મહારાજ) આ જગતમાં શ્રમણ અને શ્રણીઓના તેમજ શ્રાવક અને  
શ્રાવિકાઓની વચ્ચે સન્માન યુક્ત પદ મેળવે છે અને તેઓ વંદનીય, પૂજનીય અને  
પર્યુપાસનીય હોય છે. તથા પરલોકમાં તેવા સાધુ-સાધ્વીઓ હસ્તચ્છેદથી બચી જાય છે.  
તેમના હૃદય અને અંડકોપો વિદીર્ણ કરવામાં આવતાં નથી અને તેમને ઊંચા વૃક્ષોની  
શાખાઓ ઉપર પણ લટકાવવામાં આવતાં નથી. ઉપર કહેવામાં આવેલાં બધાં દુઃખોથી  
તેઓ યુક્ત રહે છે. (અણાઇયં ચ ણં અણવદગ્ગં દીહમદ્દં ચાઉરંતસંસારકંતારં





ગિજ્જે' અર્ચનીયઃ=માનનીયોઽધ્યુત્થનાદિના, વંદગિજ્જે' વન્દનીયઃ સ્તુતિયોગ્યો  
 ગુણોત્કીર્તનાદિના, 'પૂયગિજ્જે' પૂજનીયઃ=આદરણીયશ્વરણસ્પર્શાદિના, 'પજ્જુ-  
 વાસગિજ્જે' પર્યુપાસનીયઃ=સેવનીય આહાર વસ્ત્રપાત્રાદિભિર્ભવતિ । પરલોકં  
 ડપિ ચ સ્વલુ=ભવાન્તરેડપિ 'વહ્ણિ' વહ્ણિ=વહ્ણિવિધાનિ 'હત્થચ્છેયણાણિ ચ'  
 હસ્તચ્છેદનાનિ=કરકૃન્તનાનિ, 'કણ્ણચ્છેયણાણિ ચ' કર્ણચ્છેદનાનિ ચ 'નાસા-  
 છેયણાણિ ચ' નાસાચ્છેદનાણિ ચ, એવં 'હિયયઉપ્પાડણાણિ ચ' હૃદયોત્પાટ-  
 નાનિ ચ=હૃદયચિદારણાણિ 'ઉલ્લંચણાણિ ચ' ઉલ્લંચનાનિ ચ ઉત્=ઉર્ધ્વપ્રદેશે વૃક્ષશાંખાદૌ  
 કોપચિદારણાણિ 'ઉલ્લંચણાણિ ચ' ઉલ્લંચનાનિ ચ ઉત્=ઉર્ધ્વપ્રદેશે વૃક્ષશાંખાદૌ  
 લમ્બનાનિ=વન્ધનાનિ ઉલ્લંચનાનીત્યર્થઃ 'ના' ન 'પાવિહિ' પ્રાપ્સ્યતિ પૂર્વોક્ત-  
 દુઃસ્વાનિ ન લપ્સ્યતિતિ ભાવઃ । 'અણાહયં' અનાદિકમ્=આદિરહિતં ચ સ્વલુ  
 'અણવદગ્ગં' અનવદગ્ગમ્=અનન્તમ્, દીહમદ્દં' દીર્ઘાધ્વાનં=ચતુર્ગતિલક્ષણં દીર્ઘમાર્ગમ્,

ગાગ ય સાવિગાળ ય અચગિજ્જે વંદગિજ્જે, પૂયગિજ્જે, પજ્જુવાસગિજ્જે  
 ભવઈ, પરલોપ વિ ય ણં નો વહ્ણિ હત્થચ્છેયણાણિ ચ કણ્ણચ્છેયણાણિ ચ ના-  
 સાચ્છેયણાણિ ચ એવં હિયયઉપ્પાડણાણિ ચ વસણુપ્પાડણાણિ ચ ઉલ્લં-  
 ચણાણિ ચ પાવિહિ ) વે નિર્મન્ય સાધુ ઓર નિર્મન્ય સાધ્વિ યા મહારાજ  
 ઇસ લોકમે અનેક શ્રમણ ઓર શ્રમણીયોં કે શ્રાવક ઓર શ્રાવિકાઓં કે  
 માનનીય હોતે હૈ, વંદનીય હોતે હૈ, પૂજનીય હોતે હૈ પર્યુપાસનાંય હોતે  
 હૈ તથા પરલોકમે વે હસ્તચ્છેદસે કર્ણચ્છેદસે, નાસિકાચ્છેદસે વચતે હૈ ।  
 ઉનકે હૃદય નહીં વિદારેં જાતે હૈ, અંડકોપ ઉનકે નહીં વિદારે જાતે હૈ । ઇસ  
 ન વે ઉર્ધ્વ પ્રદેશરૂપ વૃક્ષાદિકોં કી શાખા પર હી લટકાયે જાતે હૈ । ઇસ  
 પૂર્વોક્ત સમસ્ત દુઃસ્વોંસે વે પરે રહતે હૈ । (અણાહયં ચ ણં અણવદગ્ગં દી

વંદગિજ્જે, પૂયગિજ્જે, પજ્જુવાસગિજ્જે ભવઈ, પરલોપ વિ ય ણં નો વહ્ણિ  
 હત્થચ્છેયણાણિ ચ કણ્ણચ્છેયણાણિ ચ માસચ્છેયણાણિ ચ એવં હિયયઉપ્પા-  
 ડણાણિ ચ વસણુપ્પાડણાણિ ચ ઉલ્લંચણાણિ ચ પાવિહિ) તે નિર્મન્ય સાધુ અને  
 નિર્મન્ય સાધ્વીઓ (મહારાજ) આ જગતમાં શ્રમણ અને શ્રણીઓના તેમજ શ્રાવક અને  
 શ્રાવિકાઓની વચ્ચે સન્માન યુક્ત પદ મેળવે છે અને તેઓ વંદનીય, પૂજનીય અને  
 પર્યુપાસનીય હોય છે. તથા પરલોકમાં તેવા સાધુ-સાધ્વીઓ હસ્તચ્છેદથી બચી જાય છે.  
 તેમના હૃદય અને અંડકોપો વિદીર્ણ કરવામાં આવતાં નથી અને તેમને જિંદગીમાં  
 શાખાઓ ઉપર પણ લટકાવવામાં આવતા નથી. ઉપર કહેવામાં આવેલાં બધાં દુઃખોથી  
 તેઓ અન્ન રહે છે. (અણાહયં ચ ણં અણવદગ્ગં દીહમદ્દં ચાઉરંતસંસારકંતારં

દીર્ઘાદિં વા=દીર્ઘકાલિકમ્, 'ચાતુરંતં સંસારકંતારં' ચાતુરંતં સંસારકાન્તારં=ચાતુરંતં=ચતુર્ગતિરૂપં સંસાર એવં કાન્તારં=મહારણ્યં, તત્-અટવીમિત્યર્થઃ 'વીઃ-વઙ્ઙસસઈ' વ્યતિવૃત્તિવ્યતિ=વ્યતિક્રમિવ્યતિ મોક્ષાં વ્યાસ્યતીતિ ભાવઃ, કથમ્? યથા સ ધન્યઃ સાર્થવાદઃ । અત્ર દૃષ્ટાન્તયોજના ચૈવમ્—

इह मनुष्यक्षेत्रं राजगृहनगररूपम्, तत्र साधुजीवो धन्यसार्थवाटस्वरूपः। शरीर शब्दादिविषयप्रवृत्तं सद्विजयचोरः। अनुपमानन्दजनकत्वेन संयमः पुत्रः। समितिगुप्तिपः शीलान्याभरणानि। संसारो जीर्णान्नम्। आसन्न-रूपो भग्नकूपः। तत्र=अवसन्नपार्श्वस्थत्यादि प्रवृत्तिरूपनिकुञ्जपरिवृतो मायामृषा-दिरूपो मालुकाकक्षः। अष्टादशपापभेद प्रभेदाः सर्पाः। जीवशरीरयोरविभागे-

इमदं चातुरंतसंसारकंतारं वीइवइस्सइ जहा व से धण्णे सत्थवाहे एवं खलु जंजू । समणेणं जाव संपत्तेणं दोच्चस्स णायज्झयणस्स अघमट्ठे पण्णत्ते-त्तिवेमि ) ऐसे जीव ही अनादि-अनंत इस चतुर्गतिरूप दीर्घमार्ग वाली भवाटवी को उल्लेखन कर देंगे । जैसे धन्यसार्थवाह करेगा । इस दृष्टान्त को योजना यहां इस प्रकार करनी चाहिये । यह मनुष्य क्षेत्र राजधानी के नगर के समान है । इसमें धन्य सार्थ की तरह ये साधुरूप जीव हैं । शब्दादिरूप विषयोंमें प्रवृत्त हुआ यह शरीर विजय चोर के स्थानापन्न हैं । अनुपम आनंद का जनक होने से संयम ही यहां पुत्र है । समिति, गुप्ति, तप तथा शील ये सब आभरण हैं । जीर्ण उद्यान की तरह यह संसार है । आसन्नही इसमें जीर्णरूप जैसा है । अवसन्न पासस्थ आदिकों की प्रवृत्तिरूप निकुंज से परिवृत हुआ मायामृषादिरूप मालुका कक्ष है । इसमें १८ पापस्थान के भेद प्रभेद ही सर्प हैं । जीव और शरीर का अविभाग

वीइवइस्स जहा व से धण्णे सत्थवाहे एवं खलु जંजू ! समणेणं जाव संपत्तेणं दोच्चस्स णायज्झयणस्स अघमट्ठे पण्णत्ते त्तिवेमि ) એવા છવેા જ અનાદિ અનંત રૂપ ચતુર્ગતિના દીર્ઘમાર્ગવાળા ભવાટવીને ઓળંગશે જેમ કે ધન્ય સાર્થવાહ પોતાના સદાચરણથી સિદ્ધિ મેળવશે. આ દૃષ્ટાંત અહીં આરીતે રજૂ કરવામાં આવે છે—

આ મનુષ્ય જગત પાટનગર જેવું છે આ જગતમાં ધન્યસાર્થવાહની જેમ સાધુ-રૂપ છવેા છે. શબ્દ વગેરે વિષયોમાં પ્રવૃત્ત થતું શરીર વિજય ચોરની જેમ છે. ઉત્તમ સુખ આપનાર હોવા બદલ સંયમ જ આ મનુષ્ય જગત માટે પુત્રરૂપ છે. સમિતિ, ગુપ્તિ, તપ તેમજ શીલ આ બધા આભરણો છે. જગત છલ્લું ઉદ્યાન જેવું છે. આ જગત આસ્રવધર્મો છે તે જ છર્ણો ફૂવેા છે. અવસન્ન, પાસસ્થ વગેરેની પ્રવૃત્તિરૂપ નિકુંજથી વીંટળાયેલો મય્યામૃષાવગેરે રૂપ-માલુકાકક્ષ છે આમાં અઢાર પાપસ્થાનોમાં ભેદ અને ઉપભેદ જ સાપ છે. છવ અને શરીરનું અવિભાજ્ય રૂપે — ન છે

નાવસ્થાનં હૃદિવંધનમ્, કર્મપરિણામો ભૂપઃ કર્મપ્રકૃતશ્ચો રાજપુરુષાઃ, મનુ-  
પ્યાયુષ્કવંધ્રહેતવઃ સ્વરૂપાપરાધાઃ, પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા મલમૂત્રપરિત્યાગરૂપાઃ,  
પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાર્થે હિ શરીરં પ્રવર્તતે, તચ્ચાઽઽહારાદિદાનં વિના પ્રવર્તિતું  
ન પ્રભવતિ, અતો વિજયચોરસ્થાનીયસ્ય શરીરસ્યાઽઽહારાદિદાનં પ્રતિલેખનાદિ  
ક્રિયાર્થમેવેતિ । પન્થકદાસચેટકસ્થાનીયઃ—પ્રકૃતિભદ્રકઃ સાધુઃ । યતઃ—સ  
મક્તાદિકમાનીય દદાતિ । મદ્રાસાર્થવાહીરૂપા આચાર્યાઃ । તે હિ આહારા-  
દિભિઃ શરીરપોષણપરં સાધુમુપાલમ્ભયન્તિ, તદા સાધુર્ભોજનકારણં ક્ષુધાવે-

રૂપ સે જો અવસ્થાન હૈ વહી હૃદિવંધન હૈ । કર્મપરિણામ રાજા ઔર  
કર્મ કી પ્રકૃતિયાં રાજપુરુષ હૈ । સ્વરૂપ અપરાધ મનુપ્યાયુ કે વંધ કે હેતુ  
હૈ મલમૂત્ર પરિત્યાગરૂપ પ્રતિ લેખનાદિ ક્રિયાઈ હૈ । પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા  
કરનેકે લિયે શરીર હૈ પ્રવર્તિત હોતા હૈ । પરન્તુ જવતક इसे આહારાદિ  
ન દિયા જાય તવતક इसकी प्रवृत्ति उनके करने के लिये नहीं हो सकती  
है । इस लिये विजयचोर के स्थानापन्न इस शरीर को जो आहारादि का  
देना होता है वह उससे प्रतिलेखनादि क्रिया कराने के लिये ही होता  
है । पन्थदासचेटक के जैसा प्रकृति से भद्र परिणाम वाला साधुजन है ।  
क्यों कि वह भक्तादि लाकर देता है । भद्रा सार्थवाही की तरह आचार्य  
महाराज है । क्योंकि वे आहारादिद्वारा शरीर के पोषणमें तत्पर हुए  
साधुओंको उपालंभ-उलहना देते हैं । उस समय साधुजन इसका कारण

જે જ 'હૃદિવંધન' છે. અહીં કર્મનું પરિણામ રાજા અને કર્મની પ્રકૃતિઓ રાજપુરુષ છે.  
સ્વરૂપ અપરાધ મનુપ્યાના આયુષ્યના બંધનો હેતુ છે. મળમૂત્ર પરિત્યાગરૂપ પ્રતિલે-  
ખના વગેરે ક્રિયાઓ છે. શરીર જ પ્રતિલેખના વગેરે ક્રિયાઓ કરવા માટે પ્રવૃત્ત થાય  
છે. પણ જ્યાં સુધી આ શરીરને આહાર વગેરે અપાતો નથી ત્યાં સુધી આ શરીર  
મળમૂત્રના ત્યાગ માટે પ્રવૃત્ત થતું નથી. વિજયચોરના સ્થાને મૂકાયેલા આ શરીરને  
જે આહાર વગેરે આપવામાં આવે છે, તે પ્રતિલેખના વગેરે ક્રિયાઓ કરાવવા માટે  
જ આપવામાં આવે છે. પાંચકદાસ ચેટક જેવો ઉત્તમ સ્વભાવવાળો માણસ સાધુજ-  
નના સ્થાને મૂકી શકાય. કેમકે તે ભોજન વગેરે લાવીને આપે છે. ભદ્રા સાર્થવા-  
વાહીની જેમ આચાર્ય મહારાજ છે. કેમકે તેઓ આહાર વગેરેથી પોતાના શરીરને  
પુષ્ટ બનાવનારા સાધુઓને ઉપાલંભ (ઠપકો) આપે છે. તે વખતે સાધુઓ આહારનું  
કરણ્યક્ષુધા (ભૂખ) વેદનાથી નિવૃત્તિ બતાવે છે ત્યારે તેઓ (આચાર્ય) સંતુષ્ટ થઈ જાય  
છે. સંયમ યાત્રાના નિર્વાહ માટે એટલે કે સંયમથી જીવન પસાર કરવા માટે જ સાધુઓ  
આહાર કરે છે. આ પ્રમાણે સંપૂર્ણ બીજા અધ્યયનનો આ નિષ્કર્ષા રૂપે અર્થ સ્પષ્ટ

નાદિ નિવેદયતિ, એવં નિવેદિતેસત્પાચાર્યાઃ પરિતુષ્ટા ભવન્તિ, સાધવઃ સંય-  
મયાત્રા નિર્વાહાર્થમેતાહારં કુર્વન્તીતિ સમગ્રાધ્યયનસ્ય નિષ્કર્ષ્યોઽર્થઃ ।

એવં સ્વલુ હે જન્મૂઃ ! શ્રમણેન ભગવતા યાવત્ મોક્ષાં સમ્પાપ્તેન દ્વિતીયધ્ય-  
સંઘાટાલ્યસ્ય જ્ઞાતાધ્યયનસ્યાગમર્થઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ‘તિવેમિ’ इति ब्रवीमि, पूर्ववत् । सू. १४।

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपठचंद्रशा भाषाक-  
लितललितकलापालागरु-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-  
वादिमानमर्दकक श्री शाहूच्छत्रपति कोल्हापुर राजप्रदत्त-‘जैन-  
शास्त्राचार्यपदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालहस्त  
चारी-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-  
घासीलालप्रतिविरचितायां ‘ज्ञाताधर्मकथाङ्ग’  
सूत्रख्यानगारधर्मामृतवर्षिण्या-  
ख्यां व्याख्यायां द्वितीय-  
मध्यमनं सम्पूर्णम् । २ ।

ધુધા વેદના આદિ હૈં એસા જવ કહ દેતે હૈં તો વે સંતુષ્ટ હો જાતે હૈ ।  
સંયમ યાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે હી સાધુજન આહાર કરતે હૈં । ઇસ  
પ્રકાર ઉસ સમગ્ર અધ્યયન કા યહ નિષ્કર્ષાર્થ નિકલતા હૈ ।

इस तरह हे जन्मू ! मोक्षमे संप्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीरने  
संघाटाल्य ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ प्ररूपित किया है ऐसा मैं कहता हूँ ।  
“तिवेमि” इन पदों की व्याख्या पहिले अध्ययनमे की ही जा चुकी है ।  
अतः यहाँ नही की गई है । “सूत्र १४”

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ‘જ્ઞાતાધ-  
ર્મકથાઙ્ગ સૂત્ર’ કી અનગારધર્મામૃતવર્ષિણી વ્યાખ્યકા  
દૂસરા અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

કરવામાં આવ્યો છે.

આ રીતે હે જન્મૂ ! મોક્ષમાં સંપ્રાપ્ત થયેલા શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરે સંઘાટાલ્ય  
જ્ઞાતાધ્યયનનો ઉપર લખ્યા મુજબ અર્થ બતાવ્યો છે. આ હું તને કહું છું. ‘તિવેમિ’  
આ પદોની વ્યાખ્યા પ્રથમ અધ્યયનમાં કરવામાં આવી છે. ॥સૂત્ર ૧૪॥

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલજી : મહારાજ કૃત

‘જ્ઞાતાધર્મકથાઙ્ગ સૂત્ર, ની અનગારધર્મામૃતવર્ષિણી વ્યાખ્યા

તું બીજું અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

### તૃતીયાધ્યયનમારમ્ભ્યતે.

દ્વિતીયાધ્યયને વિષયકપાયાદાવાસક્તસ્ય દોષા, અનાસક્તસ્ય ગુણા ઉપદિષ્ટાસ્તેન ચારિત્રશુદ્ધિઃ કર્તવ્યેતિ પ્રતિવોધયિતુમ્, અથાસ્મિન્નધ્યયને સશક્તિનિઃશક્ત્યોર્દોષગુણા ઉપદિશ્યન્તે, તેન સંયમશુદ્ધિકારણીભૂત—સમ્યક્ત્વશુદ્ધિ કર્તવ્યતયા પ્રતિવોધયતિ, તત્રેદ મુપક્ષેપસૂત્રમાહ—

મૂલમ્—જહ્ણં મંતે ! સમણે ણં ભગવયા મહાવીરેણં વિદ્ધય અજ્ઞયણસ્સ ણાયાધમ્મકહાણં અયમદ્દે પન્નત્તે, તદ્અસ્સ ણં મંતે ણાયજ્ઞયણસ્સ કે અદ્દે પણત્તે ? ॥સૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘જહ્ણં મંતે !’ इत्यादि

यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता महावीरेण द्वितीयस्याध्ययनस्य ज्ञाताधर्मकथानामयमर्थः प्रज्ञप्तः, तृतीयस्य खलु भदन्त ! ज्ञाताध्ययनस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सर्वं सुगमम् ॥सूत्र १ ॥

### ત્રીસરા અધ્યયન પ્રારંભ

દ્વિતીય અધ્યયનમાં, વિષય કપાય આદિ મેં આસક્ત હુએ વ્યક્તિ કે દોષ તથા તેમાં આસક્ત હુએ વ્યક્તિ કે ગુણ ઉપદિષ્ટ હુએ હૈં । इससे वहां यही समझाया है कि चारित्र की शुद्धि अवश्य ही करनी चाहिये अब इस तृतीय अध्ययनमें जो शंका सदित है और जो शंका रहित है उन दोनों के दोष और गुण कहते हैं । इससे संयम की शुद्धिमें कारणी-भूत जो सम्यक्त्व की शुद्धि है वह कर्तव्य है यह वान प्रतियोधित होती है । यह बात यहां सूत्रकार समझाते हैं—इसके लिये वे इस आरंभ बोधक सूत्र को कहते हैं—जह्णं मंते ! इत्यादि

### તૃતીય અધ્યયન પ્રારંભ

બીજા અધ્યયનમાં વિષયકપાય વગેરેમાં આસક્ત થયેલા માણસના દોષો તેમજ અસક્ત થયેલા માણસના ગુણો બતાવવામાં આવ્યા છે. આ રીતે બીજા અધ્યયનમાં મુખ્યરૂપે એજ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે ચારિત્રની શુદ્ધિ ચોક્કસ કરવી જોઈએ. આ ત્રીજા અધ્યયનમાં જે માણસો શંકાશીલ અથવા શંકા રહિત છે, તે બંનેના ગુણો કહેવામાં આવ્યા છે. એથી સંયમની શુદ્ધિ માટે કારણરૂપ જે સમ્યક્ત્વની શુદ્ધિ છે તે જ કર્તવ્ય છે, આ વાત સમજાય છે. સૂત્રકાર અહીં એજ વાત સમજાવે છે. તેઓ સમજાવતાં આરંભ બોધક પહેલું સૂત્ર કહે છે—જહ્ણં, મંતે ! इत्यादि ।

નાદિ નિવેદયતિ. એવં નિવેદિતેસત્યાચાર્યાઃ પરિતુષ્ટા ભવન્તિ, સાધવઃ સંય-  
મયાત્રા નિર્વાહાર્યમેતદ્ધારં કુર્યન્તીતિ સમગ્રાધ્યયનસ્ય નિષ્કૃષ્ટોડ્યથઃ ।

એવં સ્વલુ હે જન્નુઃ ! શ્રમણેન ભગવતા યાવત્ મોક્ષં સમ્પાપ્તેન દ્વિતીયધ્ય-  
સંઘાટાલ્યસ્ય જ્ઞાતાધ્યયનસ્યાયમર્થઃ પ્રક્ષપ્તઃ ‘તિવેમિ’ इति त्रयीमि, पूर्ववत् । सू. १४।

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धराचकपठचदशा भाषाक-  
लितललितकलापालाङ्क-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-

वादिमानमर्दकक श्री शाहच्छात्रपति कोल्हापुर राजप्रदत्त-‘जैन-

शास्त्राचार्यपदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालहस्त

चारी-जैनाचार्य-जैनधर्मद्विवाकरपूज्यश्री-

घासीलालप्रतिविरचितायां ‘ज्ञाताधर्मकथाङ्क’

सूत्ररूपानगारधर्माभूतवर्षिण्या-

रूपांवर्यारूपायां द्वितीय-

मध्ययनं सम्पूर्णम् । २ ।

હુધા વેદના આદિ હૈં એસા જવ કહ દેતે હૈં તો વે સંતુષ્ટ હો જાતે હૈં ।  
સંયમ યાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે હી સાધુજન આદાર કરતે હૈં । ઇસ  
પ્રકાર ઉસ સમગ્ર અધ્યયન કા યહ નિષ્કર્ષાર્થ નિકલતા હૈ ।

इस तरह हे जन्नु ! मोक्षमे संप्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीरने  
संघाटाल्य ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ प्ररूपित किया है ऐसा मैं कहता हूँ ।  
“तिवैमि” इन पदों की व्याख्या पहिले अध्ययनमे की ही जा चुकी है ।

अतः यहाँ नहीं की गई है । “सूत्र १४”

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ‘જ્ઞાતાધ-  
ર્મકથાઙ્ક સૂત્ર’ કી અનગારધર્માભૂતવર્ષિણી વ્યાખ્યકા  
દૂસરા અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

કરવામાં આવ્યો છે.

આ રીતે હે જન્નુ ! મોક્ષમાં સંપ્રાપ્ત થયેલા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે સંઘાટાલ્ય  
જ્ઞાતાધ્યયનનો ઉપર લખ્યા મુજબ અર્થ બતાવ્યો છે. આ હું તને કહું છું. ‘તિવેમિ’  
આ પદોની વ્યાખ્યા પ્રથમ અધ્યયનમાં કરવામાં આવી છે. ॥સૂત્ર ૧૪॥

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત

‘જ્ઞાતાધર્મકથાઙ્ક સૂત્ર, ની અનગારધર્માભૂત વર્ષિણી વ્યાખ્યા

નું બીજું અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥



नगर्या वहिर्नृत्तरपौरस्थे दिग्भागे सुभूमिभागं नामोद्यानमासीत् तत्  
कीदृशमित्याह—‘सर्वोद्यपुष्पफलसमिद्धे’ : सर्वैर्तूकपुष्पफलसमृद्धम्—  
चसन्तादिवह्क्लृत्तुनितपुष्पफलादिसम्पन्नम्, सुरम्यम्—अतिशयरमणीयं,  
नन्दनवनवत् ‘सुहसुरभिसीयलच्छायाए’ शुभसुरभि-शीतलछायाया-तत्र  
‘सुह’ शुभा-शोभना ‘सुरभि’ सुगन्धिः ‘सीयलं’ शीतला च या छाया  
तया ‘समणुवद्धे’ समनुवद्धम्—युक्तम्, तस्य खलु सुभूमिभागस्योद्यानस्य  
‘उत्तरओ’ उत्तरतः—उत्तरदिशायामित्यर्थः ‘एग देसंमि, एकदेशे—एकस्मिन्

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं इत्यादि ।

टीकार्थ—( जंबू ! एवं खलु ) हे जंबू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस  
प्रकार है—( तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था ) उस कालमें उस  
समयमें चंपा नामकी नगरी थी ( वन्नओ ) इसका वर्णन पहिले किया जा  
चुका है । ( तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सु-  
भूमिभाए नामं उज्जाणे होत्था ) उस चंपा नगरी के बाहर ईशान कोणमें  
सुभूमिभाग नामका उद्यान था । ( सर्वोद्यपुष्पफलसमिद्धे सुरम्ये नदणवणे  
इव ) यह समस्त ऋतुओं की शोभासे समृद्ध था—अर्थात् समस्त ऋतु  
संबन्धी फलपुष्पादिकों से यह सम्पन्न था. अतिशय रमणीय था । नन्दन-  
वन के समान यह ( सुहसुरभि सीयलच्छायाए समणुवद्धे ) शुभ, सुरभि  
और शीतल छायासे युक्त था । ( तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स  
उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ ) उस सुभूमिभाग उद्यान की

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—( जंबू ! एवं खलु ) जंबू ! तमारा प्रश्ननो जवाण आ प्रमाणे छे—( तेणं-  
कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था ) ते कालेअने ते समये चंपा नामे  
नगरी छती. ( वन्नओ ) ते नगरीतुं वणुंन पडैवां करवाभां आवुं छे.  
( तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभाए नामं  
उज्जाणे होत्था ) ते चंपानगरीनी णडार ध्यान डेणुमां सुभूमिभाग नामे उद्यान छते.  
( सर्वोद्यपुष्पफलसमिद्धे सुरम्ये नदणवणे इव ) ते उद्यान समस्त ऋतुओंनी  
शोभाथी युक्त छतुं अटवे डे णधी ऋतुओंनां इणेअने पुष्पोथी ते संपन्न छतुं  
अने ते णडु ज रमणीय छतुं. नंदन वननी जेम ते ( सुहसुरभिसीयलच्छायाए  
समणुवद्धे ) शुभ सुरभिअने शीतल छायावाणुं छतुं. ( तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जा-  
णस्स उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ ) ते सुभूमि भाग उद्याननी  
उत्तर दिशाअे अेक तरफ मालुका कच्छनामे वन छतुं. ते मालुका कच्छनुं वणुंन

સુધર્માસ્વામી જન્મુ સ્વામિનમાદ—‘एवं खलु जम्बू इत्यादि—

मूलम्—एव खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समणं चंपा-

नामं नयरी होत्था वन्नओ, तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तर  
पुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभाए नामं उज्जाणे होत्था, सव्वोउय  
पुप्फफलसमिद्धे सुरस्मे नंदणवणे इव सुह सुरभिस्सीयलच्छायाए  
समणुवद्धे, तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उत्तरओ एगदेसंमि  
मालुया कच्छए वन्नओ, तत्थ णं एगा वणमऊरी दो पुट्टे परि-  
यागये पिहुडी पंडुरे निव्वणे निरुवहए भिन्नमुट्ठिप्पमाणे मऊरी  
अंडए पसवइ पसवित्ता सणं पक्खवाएणं सारक्खमाणी संगो-  
वमाणी संविट्ठेमाणी विहरइ. ॥ सू. २ ॥

‘एवं खलु जम्बूः, इत्यादि

टीका—तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पानाम नगरी आसीत्,  
वर्णकः=वर्णनग्रन्थः चम्पानगर्या वणनं प्रागुक्तम्, ‘तीसेणं’ तस्याश्चम्पाया

टीकार્थ—( भંતે ) हे भदंत ( जइणं समणेणं भगवया महावीरेण ) यदि  
श्रमण भगवान् महावीरने (ળહાયાધર્મકથાણં વિહય અજ્ઞયણસ્સ) જ્ઞાતા ધર્મ  
કથા કે દ્વિતીય અધ્યયન કા (અયમદ્દે પળ્લત્તે) યહ ભાવ-અર્થ પ્રરૂપિત  
કિયા હૈ તો (તદાસ્સ ણં ભંતે ! ણાયજ્ઞયણસ્સ કે અદ્દે પળ્લત્તે) તૃતીય  
જ્ઞાતાધ્યયન કા વયા અર્થ પ્રકટ કિયા હૈ. ઇસ પ્રકાર જંબૂ સ્વામી કી  
વાત સુનકર સુધર્મા સ્વામીને ડનસે કહા કિ—“ સૂ. ૧ ”

ટોકાથ—(ભંતે) હે ભદંત! (જઇણં સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં  
શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરે (જ્ઞાયાધર્મકથાણં વિહયઅજ્ઞયણસ્સ) જ્ઞાતા ધર્મ  
કથાના બીજા અધ્યયનનો (અયમદ્દે પળ્લત્તે) આ ભાવ-અર્થ નિરૂપિત કયો છે, તો  
(તદાસ્સ ણં ભંતે ! ણાયજ્ઞયણસ્સ કે અદ્દે પળ્લત્તે) ત્રીજા જ્ઞાતા અધ્યયનનો  
શો અર્થ બતાવ્યો છે? આ રીતે જંબૂ સ્વામીની વાત સાંભળીને સુધર્માસ્વામીએ  
તેમને કહ્યું—કે પ્રસૂત્ર ૧૥

नगर्या. चठिरुत्तरपौरस्थे दिग्भागे सुभूमिभागं नामोद्यानमासीत् तत्  
कीदृशमित्याह—‘संव्वोउयपुष्पफलसमिद्धे’ : सर्वैर्तूकपुष्पफलसमृद्धम्—  
चसन्तादिवह्मनुजनितपुष्पफलादिसम्पन्नम्, सुरम्यम्—अतिशयरमणीयं,  
नन्दनवनवत् ‘सुहसुरभिसीयलच्छायाए’ शुभसुरभि-शीतलछायाया-तत्र  
‘सुह’ शुभा-शोभना ‘सुरभि’ मृगन्धिः ‘सीयलं’ शीतला च या छाया  
तथा ‘समणुवद्धे’ समनुवद्धम्-युक्तम्, तस्य खलु सुभूमिभागस्योद्यानस्य  
‘उत्तरओ’ उत्तरतः—उत्तरदिशायामित्यर्थः ‘एग देसंमि, एकदेशे-एकस्मिन्

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं इत्यादि ।

टीकार्थ—( जंबू ! एवं खलु ) हे जंबू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस  
प्रकार है—( तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था ) उस कालमें उस  
समयमें चंपा नामकी नगरी थी ( वन्नओ ) इसका वर्णन पहिले किया जा  
चुका है । ( तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सु-  
भूमिभाए नामं उज्जाणे होत्था ) उस चंपा नगरी के बाहर ईशान कोणमें  
सुभूमिभाग नामका उद्यान था । ( संव्वोउय पुष्पफलसमिद्धे सुरम्ये नंदणवणे  
इव ) यह समस्त ऋतुओं की शोभासे समृद्ध था—अर्थात् समस्त ऋतु  
संवन्धी फलपुष्पादिकों से यह सम्पन्न था. अतिशय रमणीय था । नंदन-  
वन के समान यह ( सुहसुरभि सीयलच्छायाए समणुवद्धे ) शुभ, सुरभि  
और शीतल छायासे युक्त था । ( तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स  
उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ ) उस सुभूमिभाग उद्यान की

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—( जंबू ! एवं खलु ) जंबू ! तमारा प्रश्ननो जवाब आ प्रमाणे छे—( तेणं-  
कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था ) ते कालेअने ते समये चंपा नामे  
नगरी छती. ( वन्नओ ) ते नगरीतुं वर्णन पड़ेलां करवाभां आव्युं छे.  
( तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभाए नामं  
उज्जाणे होत्था ) ते चंपानगरीनी जडार धियान केणुभां सुभूमिभाग नामे उद्यान छते.  
( संव्वोउयपुष्पफलसमिद्धे सुरम्ये नंदणवणे इव ) ते उद्यान समस्त ऋतुओंनी  
शोभाथी युक्त छतुं अेटवे के जधी ऋतुओंनां इणेअने पुष्पोथी ते संपन्न छतुं  
अने ते जडु ज रमणीय छतुं. नंदन वननी जेम ते ( सुहसुरभिसीयलच्छायाए  
समणुवद्धे ) शुभ सुरभिअने शीतल छायावाणुं छतुं. ( तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जा-  
णस्स उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ ) ते सुभूमि भाग उद्याननी  
उत्तर दिशाअे अेक तरफ मालुका कच्छनामे वन छतुं. ते मालुका कच्छनुं वर्णन

માગે માલુકાકક્ષકઃ આસીત, વર્ણકઃ વર્ણનઃ=માલુકાકક્ષકસ્ય વર્ણન-  
મત્રૈવ દ્વિતીયાધ્યયનેઽભિહિતમ્. ।

‘તત્થ ણં તત્ર સલ્લુ એકા વનમયૂરી દ્વે-દ્વિસંસ્યકે ‘પુટ્ટે’ પુટ્ટે-વદિતે  
‘પરિયાગર્’ પર્યાયાગતે-પર્યાયેણ પ્રસૂતિકાલક્રમેણ આગતે પ્રસૂતિકાલમાપ્ને  
इत्यर्थः, परियागर्-इत्यत्र यकारलोपः प्राकृतत्वात् ‘पिटुंडी पंडुरे’  
पिटुण्डी पाण्डुरे तत्र-‘पिट्र’ पिष्टस्य-ताण्डुलचूर्णस्य ‘उंडी’ पिण्डो तद्वत्  
पाण्डुरे धवले ये ते तथा ‘निव्वणे’ निर्व्वणे-क्षतरहिते ‘निरुवहते-उपद्रव-  
-रहिते ‘भिन्नमुट्ठिप्पमाणे’ भिन्नमुट्ठिप्पमाणे तत्र ‘भिन्नं’ भिन्ना मध्यरिक्ता  
या मुट्ठिः सा प्रमाणं ययोस्ते तथा ‘मऊरी अंडर्’ मयूराण्डके मयूरो  
त्पादके अंडे ‘पसवइ’ प्रसूते-जनयति, प्रसूय-जनयित्वा ‘सएण’ पक्ख  
वाएण’ स्वकेन पक्षपातेन अण्डोपरि स्वकीयपक्षाच्छादनेन ‘सारक्खमाणी’

उत्तर दिशामें एक ओर मालुक कच्छनाम का वन था । इस मालुका कच्छ  
का वर्णन इसी शास्त्र के द्वितीय अध्ययनमें किया जा चुका है । (तत्थ  
णं एगा वणमऊरी दो पुट्टे मऊरी अंडर् पसवइ परियागर्) उस कक्षकमें एक  
वन मयूरो ने दो पुष्ट मयूर उत्पादक अंड उत्पन्न किये । ये दोनों अंडे  
उसने भिन्न भिन्न समयमें अर्थात् एक पहिले और एक दूसरा उनके  
उसी समय बादमें प्रसुत किये थे । (पिटुंडी पंडुरे) ये दोनों ही तंदुल  
चूर्ण को पिठी-पिण्डो-के समान धवल थे । (निव्वणे निरुवहये भिन्न  
मुट्ठिप्पमाणे) बिना किसी क्षत के थे । उपद्रव रहित थे । और मध्यरिक्त  
पोथी मुट्ठि के बराबर थे । (पसवित्ता सएणं पक्खवाएण सारक्खमाणी  
संगोवमाणी सवड्डेमाणी विहरइ) प्रसव करके उसने उन दोनों मयू-  
रोत्पादक अंडों की अपने पंखों के द्वारा आच्छादन करके अर्थात् उन  
दोनों अंडों को अपने पंखों के नीचे रख और उन पर पंखों को प्रसार

જાતા સૂત્રના બીજા અધ્યયનમાં કરવામાં આવ્યું છે. (તત્થગં એગા વણમઝરી દો-  
પુટ્ટે મઝરીઅંડર્ પસવઈ પરિયાગર્) તે માલુકા કક્ષમાં એક વનનીઢેલે બે સુડાળ  
મોરોને ઉત્પન્નકરનારા એવા બે ઇંડા મૂક્યાં. આ ઇંડા તેણે એક પછી એકે એટલે કે  
એક પહેલાં એમ જુદા જુદા વખતે મૂક્યાં હતાં. (પિટુંડી પંડુરે) બંને ઇંડાઓ ચોખ્ખાના  
ઢોલના પીંડની જેમ ધોળા હતા. (નિવ્વણે નિરુવહયે ભિન્નમુટ્ઠિપ્પમાણે) તે બંને  
ઇંડાઓ ક્ષત વગરના, ઉપદ્રવ રહિત અને વચ્ચે પોલી મૂઠીની બરાબર હતા.  
(પસવિત્તા સएणं પક્ખવાएण સારક્ખમાણી સંગોવમાણી સંવડ્ઢેમાણી વિહરइ)  
ઇંડાં મૂક્યા બાદ બંને મયૂરોત્પાદક તેઢેલે પાંખો પ્રસારીને બંને પાંખોથી

संरक्षन्ती रक्षां कुर्वन्ती, 'संगोवेमाणी' संगोपायन्तो-उपद्रवतः परिरक्षन्ती 'संठे-  
माणी' सम्वेष्टयन्ती पोषयन्ती समन्तात् पक्षौरावृत्य वर्धयन्ती विहरति. । सू. २. ।

मूलम्—तत्थणं चंपाए नयरीए दुवे सत्थवाहदारगा परि-  
वसंति. तं जहा—जिणदत्तपुत्ते य सागरदत्तपुत्ते य सह जायया सहवड्ढि-  
यया सहपंसुकीलियया सहदारदरिसी अन्नमन्नमणुरत्तया अन्नमन्नमणु-  
व्वयया अन्नमन्नच्छंदाणुवत्तया अन्नमन्नहियइच्छियकारया अन्नम-  
न्नेसु गिहेसु किच्चाइं करणिजाइं पच्चणुभवमाणा विहरंति. ॥ सू. ३॥

'तत्थणं' इत्यादि,

टीका—तत्र खलु चम्पायां नगर्यां द्वौ सार्थवाहदारकौ परिवसतः तद्यथा  
—जिनदत्तपुत्रश्च सागरदत्तपुत्रश्च, तौ विशेषयति 'सहजायया' सहजातकौ  
—समानजन्मकालत्वात् 'सह वड्ढियया' सहवर्द्धितकौ—सार्धमेव वृद्धिमुपगतत्वात्  
'सहपंसुकीलियया' सह पांशुकीलितकौ समानकाले ब्रूली क्रीडाकरत्वात्  
'सहदारदरिसी' सहद्वारदर्शिनौ सह द्वारदर्शिनौ सह सार्धमेव परस्परं  
गृहयोद्धारे दृष्टुं शीलं ययोः तौ तथा-सहदारदर्शिनौ—इति छायापक्षे  
समानकालकृतविवाहौ 'अन्नमन्नमणुरयया' अन्योऽन्यमनुरक्तकौ—पर-

कर रक्षा की—उपद्रवों से उन्हें बचाया चारों तरफ से उन्हें पंखों से  
आवृत कर उनका पोषण किया ॥ सू. २ ॥

टीकार्थ—(तत्थ णं चंपाए नयरीए) उस चंपा नामकी नगरीमें (दुवे सत्थ-  
वाहदारगा परिवसंति) दो सार्थवाह दारक रहते थे। (तं जहा) वे ये  
हैं—(जिणदत्तपुत्ते य सागरदत्तपुत्ते य) एक जिनदत्त का पुत्र दूसरा  
सागरदत्त का पुत्र (सहजायया सहवड्ढियया सहपंसुकीलियया सहदार-  
दरिसी अन्नमन्नमणुरत्तया अणमन्नमणुव्वयया अणमन्नच्छंदाणुवत्तया

ढांकीने तेमनी रक्षा करी. उपद्रवोथी ध'उंने जयाव्यां; योमेर ध'उंने पांजोथी ढांकीने-  
यावृत्त करीने—तेओत्तुं पोषणु कयुं. ॥ सूत्र २॥

'तत्थणं चंपाए नयरीए' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) ते चंपा नामे नगरीमां (दुवे सत्थ-  
वाहदारगा परिवसंति) जे सार्थवाह दारके (पुत्ते) रहैता उता. (तं जहा)  
तेओ आ प्रभावे छे—(जिणदत्तपुत्ते य सागरदत्तपुत्ते य) जेक जिनदत्तने  
पुत्र अने जीने सागरदत्तने पुत्र (सह जायया सह वड्ढियया सह पुंसुकीलियया  
सहदारदरिसी अन्नमन्नमणुरत्तया अणमन्नमणुव्वयया अणमन्नच्छंदाणुव-

स्परं स्नेहवन्तौ 'अन्नमन्नमनुत्तराया' अन्योऽन्यानुव्रजकौ-परस्परानुगामिनौ  
 'अन्नमन्नच्छंदाणुव्रतया' अन्योऽन्यच्छन्दानुवर्तकौ-परस्पराभिप्रायानुव-  
 र्तिनौ 'अन्नमन्नहियइच्छियकारया' अन्योऽन्यहृदयेमितकारकौ परस्पर  
 चित्तानुकूलकारिणौ 'अन्नमन्नेसु गिहेसु' अन्योऽन्यगृहयोः 'किच्चाइं करणि-  
 ज्जाइं' कृत्यानि करणीयानि कृत्यानि=उचितकार्याणि, करणीयानि=अवश्यकर-  
 न्यानि गृहसंबन्धीनि 'पच्चणुभवमाणे' मत्पत्यनुभवन्तौ कुर्वन्तौ विहरतः । मृ. ३।

मूलम्— तए णं तेसि सत्थवाहदारगाणं अन्नया  
 कयाइं एगयओ सहियाणं समुवागयाणं सन्ति सन्नाणं सन्तिविट्ठणं  
 इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था जं णं देवाणुप्पिया!  
 अहं सुहं वा दुक्खं वा पव्वज्जावा विदेसगमणं वा समुप्पज्जइ-

अन्नमन्नहियइच्छियकारया अन्नमन्नेसु गिहेसु किच्चाइं करणिज्जाइं पच्चणु-  
 भवमाणा विहरन्ति ) ये दोनों एक साथ ही उत्पन्न हुए थे । एक साथ  
 ही बड़े हुए थे । साथ ही साथ खेले कूदे थे । साथ ही साथ इन दोनों  
 का विवाह हुआ था । अतः इन्हीं सब बातों को लेकर इन दोनों का  
 आपसमें बड़ा अधिक स्नेह था । जहाँ कहीं भी एक जाता था तो दूसरा  
 भी उसके साथ जाता था । कोई किसी की इच्छा के विरुद्ध काम नहीं  
 करता था अर्थात् ये दोनों परस्परमें एक दूसरे के अभिप्रायानुसार वर्तन  
 करते थे । परस्परमें ये दोनों एक दूसरे के चित्त के अनुकूल हो प्रवृत्ति  
 किया करते थे । यहाँ तक इन दोनों के स्नेह की अनुवृत्ति बड़ा  
 हुई थी कि ये आपस में एक दूसरे के घरके करने योग्य कार्यों को  
 भी कर दिया करते थे । मृ. ३ ॥

नया अन्नमन्नहियइच्छियकारया अन्नमन्नेसु गिहेसु किच्चाइं करणि-  
 ज्जाइं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति) ते. जने ऐकी साथे जनम्या हुता. ऐकी साथे  
 मोटा थया हुता, जने ऐकी साथे रम्या हुता. तेजो जनेनां लज्ज पणु साथे साथे न  
 थया हुतां. आ जधी वातोने लीधे ते जनेमां ऐक भीज्ज उपर णहुज्ज प्रेम हुतो  
 जमे त्यां ऐकने जवात्तु डोय त्तारे भीज्जे पणु नेनी साथे योअस गये न डोय जने-  
 मांथी-डोय पणु ऐकभीज्जने विपरीत काम करता न हुता. ऐटवे डे तेजो ऐक भीज्जना  
 मन मुज्ज वरता हुता. ऐक भीज्जना चित्तने अनुकूल न तेजो काम करता हुता.  
 आ जनेनो प्रेम ऐटवे सुधी पडोअ्यो हुतो डे तेजो जने ऐक भीज्जना घरतुं  
 करवा योअ्य काम पणु करी आपता हुता. ॥सू. ३॥



तन्नं अम्हेहिं एगयओ समेच्चा णित्थरियव्वं त्तिकहु अन्नमन्न  
मेयारूव्वं संगारं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता सकम्मसपउत्ता जाया  
यावि होत्था. ॥ सू. ४ ॥

टीका—‘तत्थ णं इत्यादि—तत्र खलु तयोः सार्थवाहदारकयोरन्यदा  
कदाचित् ‘एगयओ’ एकतः कस्मिंश्चित् एकस्मिन्स्थाने ‘सहियाणं’ सहितयोः  
—मिलितयोः ‘समुवागयाणं’ समुपागतयोः एकतरस्य गृहे प्राप्तयोः ‘सन्निस-  
न्नाणं’ सन्निपण्णयो’ उपविष्टयो ‘सन्निविट्ठाणं’ सन्निविष्टयोः एकस्मिन्  
स्थले संमिलिततया स्थिरसुवासनतयाच स्थितयोः ‘इमेयारूवे’ अयमे  
तूपः वक्ष्यमाणस्वरूपः ‘मिहो कहासमुल्लावे’ मिथः कथासमुल्लापः, तत्र  
‘मिहो कहा’ मिथः कथा—परस्परकथा तभ्यां ‘समुल्लाव’ समुल्लापः जल्पो यस्य  
स तथा ‘समुप्पज्जित्था’ समुपपद्यत अभवत् ‘ज णं’ यत् खलु देवानुप्रियः  
‘अम्हं’ आवयोः सुखं वा दुःखं वा ‘पव्वज्जा’ पत्रज्या वा पर्यटन—गमनेन—

‘तएणं तंसि सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (अन्नया कयाइं) किसी समयमें  
(एगयओ सहिया णं) किसी एक स्थलमें मिले हुए (समुवागयाणं)  
एक दूसरे के घरमें प्राप्त हुए (सन्निसन्नाणं, सन्नि विट्ठा गइमेयारूपे  
मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था) अच्छी तरह बैठे हुए, अच्छी तरह  
एक स्थल पर मिलकर सुस्वरूप से स्थित हुए । (तंसि सत्थवाहदारगाणं)  
उन सार्थवाह पुत्रों को (इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था) इस  
तरह यह वक्ष्यमाण मिथो कथा समुल्लाप उत्पन्न हुआ ।—परस्पर की गं. ण्ठीं  
उन लोगोंने इस प्रकार विचार किया (अम्हं सुहं वा दुक्खं वा पव्वज्जा  
वा विदेसगमणं वा समुप्पज्जइ) अपन दोनों चाहे सुखमें रहे या दुःखमें

‘तएणं तंसि सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार जाह (अन्नया कयाइं) डोहक वणते (एगयओ सहि-  
याणं) डोह ओक स्थाने संयुक्त थयेला (समुवागयाणं) ओक भीलना घरमां ओकठा  
थया. (सन्निसन्नाणं सन्निविट्ठाणं) इमेयारूवेमिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था)  
तेओ णने त्यां सारी रीते ओठा अने ओकठ्ठ स्थाने ओक भीलथी भणीने प्रसन्नता  
अनुभवी (तंसि सत्थवाहदारगाणं) ते सार्थवाह पुत्रोने (इमेयारूवे मिहो कहा-  
समुल्लावे समुप्पज्जित्था) आ प्रभाळे ओक भीलनी साथे प्रेमपूर्वक वार्तालाप करतां विचार  
उद्भव्यो—ओटवे छे तेओ णनेओ आ प्रेभाळे विचार क्यो छे—(अम्हं सुहं वा दुक्खं  
वा पव्वज्जा वा विदेसगमणं वा समुप्पज्जइ) अमे णने लवे सुखमां उडीशुं

स्परं स्नेहयन्तौ 'अन्नमन्नमनुव्रजया' अन्योऽन्यानुव्रजकौ-परस्परानुगामिनौ  
 'अन्नमन्नच्छंदाणुव्रजया' अन्योऽन्यच्छन्दानुव्रतकौ-परस्पराभिप्रायानुव-  
 तिनौ 'अन्नमन्नहियइच्छियकारया' अन्योऽन्यहृदयेष्मितकारकौ परस्पर  
 चित्तानुकूलकारिणौ 'अन्नमन्नेसु गिहेसु' अन्योऽन्यगृहयोः 'किच्चाइं करणि-  
 ज्जाइं' कृत्यानि करणीयानि कृत्यानि=उचितकार्याणि, करणीयानि=भ्राश्यकर्म-  
 न्यानि गृहसंबन्धीनि 'पच्चणुभवमाणे' प्रत्यनुभवन्तौ कुर्वन्तौ विहरन्तः । मृ. ३।

मूलम्— तए णं तेसि सत्थवाहदारगाणं अन्नया  
 कयाइं एगयओ सहियाणं समुवागयाणं सन्नि सन्नाणं सन्निविट्ठाणं  
 इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था जं णं देवाणुप्पिया!  
 अम्हं सुहं वा दुक्खं वा पव्वज्जावा विदेसगमणं वा समुप्पज्जइ-

अन्नमन्नहियइच्छियकारया अन्नमन्नेसु गिहेसु किच्चाइं करणिज्जाइं पच्चणु-  
 भवमाणा विहरन्ति ) ये दोनों एक साथ ही उत्पन्न हुए थे । एक साथ  
 ही बड़े हुए थे । साथ ही साथ खेले कूदे थे । साथ ही साथ इन दोनों  
 का विवाह हुआ था । अतः इन्हीं सब बातों को लेकर इन दोनों का  
 आपसमें बड़ा अधिक स्नेह था । जहाँ कहीं भी एक जाता था तो दूसरा  
 भी उसके साथ जाता था । कोई किसी की इच्छा के विरुद्ध काम नहीं  
 करता था अर्थात् ये दोनों परस्परमें एक दूसरे के अभिप्रायानुसार वर्तन  
 करते थे । परस्परमें ये दोनों एक दूसरे के चित्त के अनुकूल हो प्रवृत्ति  
 किया करते थे । यहाँ तक इन दोनों के स्नेह की अनुवृत्ति बड़ा  
 हुई थी कि ये आपस में एक दूसरे के घरके करने योग्य कार्यों को  
 भी कर दिया करते थे । मृ. ३ ॥

तथा अन्नमन्नहियइच्छियकारया अन्नमन्नेसु गिहेसु किच्चाइं करणि-  
 ज्जाइं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति) ते. जने ऐकी साथे जनम्या हुता. ऐकी साथे  
 मोटा थया हुता, अने ऐकी साथे रम्या हुता. तेज्जे जनेनां लग्न पणु साथे साथे ज  
 थया हुतां. आ जधी बातोने लीधे ते जनेमां ऐक जील उपर जणुज प्रेम हुतो  
 जमे त्यां ऐकने जवानु होय त्यारे जीले पणु तेनी साथे योद्धस जये ज होय जने-  
 मांभी-ऐक पणु ऐकजीलने विपरीत काम करता ज न हुता. ऐटवे के तेज्जे ऐक जीलना  
 मन मुज्ज वताता हुता. ऐक जीलना चित्तने अनुकूल ज तेज्जे काम करता हुता.  
 आ जनेनो प्रेम ऐटवे सुधी पटोन्हे हुतो के तेज्जे जने ऐक जीलना घरतुं  
 करवा योअ्य काम पणु करी आपता हुता. ॥सू. ३॥

टीका—‘तत्थणं इत्यादि तत्र खलु चम्पायां नगरीं देवदत्ता नाम गणिका परिवसति, सा च आद्या यावद् अपरिभूता ‘चउसट्टिकलापंडिया’ चतुष्पट्टि कला पण्डिता-चतुष्पट्टिसंख्यकाः कलाः नृत्यादि फलवृष्टि पर्यन्ताः तत्र पण्डिता-निपुणा ‘चउसट्टिगणियागुणोचवेया’ चतुष्पट्टि-गणिकागुणोपवेता चतुष्पट्टिसंख्यकाः गणिकागुणाः शृङ्गारचेष्टारूपाः तैरुपपेता-युक्ता ‘अउणतीसं’ विसेसे रममाणी’ एकोनविंशद् विशेषान् रममाणा-एकोनविंशद्विशेषान् कामशास्त्रप्रसिद्धान् अधिकृत्य रममाणा-विलासं कुर्वाणा ‘एक्कवीसरइगुणप्पहाणा’ एकविंशति रतिगुणप्रधाना एक-विंशति संख्यकाः रतिगुणाः. ते प्रधाना ‘वत्तीसपुरिसोवयारकुसला’ द्वाविं-शत् पुरुषोपचारकुशला द्वाविंशत् संख्यकाः पुरुषोपचाराः कामशास्त्रप्रसि-द्धास्तेषु कुशला-दक्षा ‘णवंगसुत्तपडिवोहिया’ नवाङ्गमृग पतिवोधितानि—

‘तत्थ णं चंपाए नयरीए’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) उसी चंपा नगरीमें (देवदत्ता नाम गणिया परिवसइ) देवदत्ता नाम की एक गणिका रहती थी । (अड्डैजाव अपरिभूया. चउसट्टिकलापंडिया, चउसट्टिगणियागुणोचवेया अउणतीसं विसेसे रममाणी) यह धन संपन्न थी । यावत् अपरिभूत थी—कोई इसका तिरस्कार नहीं कर सकता था । नृत्यादि से लेकर फलवृष्टि पर्यंत की ६४ कलाओं में यह निपुण थी । शृंगार चेष्टारूप जो ६४ गणिकागुण होते हैं उनसे यह भरपूर थी । कामशास्त्र प्रसिद्ध २५ विशेषों को लक्ष्य में रख कर यह विलास करती थी । (एक्कवीसरइगुणप्पहाणा) २५ प्रकार के रति गुणों से यह समन्वित थी । (वत्तीसपुरिसोवयारकुसला) ३२ प्रकार के कामशास्त्र प्रसिद्ध पुरुषोपचारों में यह कुशल थी । (णवंगसुत्तपडिवोहिया)

‘तत्थणं चंपाए नयरीए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) ते चंपा नगरीमां देवदत्ता नाम गणिया परिवसइ) देवदत्ता नामे गणिका रहेती હતી. (અડ્ડૈજાવ અપરિભૂયા ચउसट्टिकलापंडिया, चउसट्टिगणियागुणोचवेया अउणतीसं विसेसे रममाणी) ते धन संपन्न હતી. અપરિભૂત હતી—એટલે કે કોઈપણ વ્યક્તિની એવી તાકાત ન હતી કે તેનો તિરસ્કાર કરીશકે. નૃત્ય વગેરેથી માંડીને ફળવૃષ્ટિ સુધીની એસઠ કળાઓમાં તે કુશળ હતી. શૃંગારની એષ્ટાદ્વયે જે એસઠ ગણિકા ગુણો હોય છે, તેખધા ગુણો તેમાં વિદ્યમાન હતા. કામશાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ એગણત્રીસ (૨૬) વિશેષોને લક્ષ્યમાં રાખીને તે વિલાસ કરતી હતી. (एक्कवीसरइगुणप्पहाणा) એકવીસ જાતના રતિગુણોથી તે યુક્ત હતી. (वत्तीस पुरिसोवयारकुसला) બત્રીસ (૩૨) જાતના કામશાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ પુરુષો પચારોમાં

धर्मम् विदेशगमनं-व्यापाराद्यर्थे वा 'गमृप्पज्ज' समुत्पद्येत भवेत् 'तन्नं'  
तत्त्वत्तु 'अम्हेहि' आवाभ्यां: 'एगयओ' एकनः एकत्र 'समेच्चा' समेत्य  
मिलित्वा कार्यं, 'णित्थरियव्वं' निस्तरितव्यम् पारयितव्यं कर्तव्यमि-  
त्यर्थः, 'तिकट्ठु' इति कृत्वा अन्योन्यं परस्परं, एतद्दूषं-एतादृशम् 'संगारं'  
सङ्केतम् 'पडिमुणे'ति' प्रतिश्रुतः स्वीकृतः प्रतिश्रुत्य-स्वीकृत्य 'सकम्म-  
संपउत्ता' स्वकर्मसम्पत्तौ-स्वकार्यपरायणौ जातौ चाप्यभूताम्, स्व स्वकार्य  
कारणोत्सुकौ स्वगृहं जगत्पुरित्यर्थः ॥ सूत्र ४ ॥

मूलम्—तत्थणं चंपाए नयरीए देवदत्ता नामं गणिया  
परिवसइ अड्डा जाव अपरिभूया चउसट्टिकलापंडिया चउसट्टि-  
गणियागुणोववेया अउणत्तीसंविसेसे रममाणी एकवीस रइ  
गुणप्पहाणा वत्तीसपुरिसोवयारकुसला णवंगसुत्तपडिवोहिया अट्टा-  
रसदेसीभासा विसारया सिंगारागारचारुवेसा संगयगयहसिय० उसि-  
यझया सहस्सलंभा विदिन्नछत्तचामर वालवियणिवाकन्नी रहप्पयाया  
यावि होत्थां वहुणं गणिया सहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ. सू. ५।

रहे, प्रव्रज्या ग्रहण करे' या व्यापार आदि के लिये परदेशमें जावे (तन्नं  
अम्हेहि एगयओ समेच्चा णित्थरियव्वं त्ति कट्ठु अन्नमन्नमेयारुव्वं संगारं  
पडिमुणे'ति) फिर भी अपने दोनों जो कुछ काम करे वह मिलकर ही  
करें। इस प्रकार उन दोनों ने परस्परमें संकेत स्वीकृत कर लिया। (पडि  
मुणित्ता सकम्मसंपउत्ता जाया यावि होत्था) इस तरह परस्परमें संकेत  
बद्ध होकर वे दोनों अपने २ कार्य करनेमें उत्कंठित बनकर वहांसे अपने  
२ घर को चल दिये। सू. ४ ॥

डे दुःखमां रडीशुं, प्रव्रज्या ग्रहण करीशुं डे वेपार भाटे परदेश जेडीशुं (तन्नं  
अम्हेहि एगयाओ समेच्चा णित्थरियव्वंत्ति कट्ठु अन्नमन्नमेयारुव्वं संगारं पडि  
मुणे'ति) पणु अमे जने जमे जे काममां पडीशुं ते मणीने ज करीशुं. आ प्रभाणु  
तेओ जनेओ परस्पर संकेत (शरत्त) स्वीकारी लीधो. (पडिमुणित्ता सकम्म संपउत्ता  
जाया यावि होत्था) आ रीते परस्पर संकेत (शरत्त) जद्ध (प्रतिज्ञाजद्ध) यधने तेओ  
जने पोतपोताना काममां उत्सुक जनीने त्यांथी जने पोतपोताने घेर गया, ॥ सूत्र ४ ॥

यस्याः सा तथा चाप्यभवत् गणिकासहस्रस्याधिपत्यं कुर्वती यावद्विहरति ॥ सू. ५ ॥

मूलम्—तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं अन्नया कयाइ पुव्वा-  
चरण्हकालसमयंसि जिमियभुत्तुत्तरागयाणं समाणाणं आयन्ताणं  
चोक्खाणं परमसुइभूयाणं सुहासणवरगयाणं इमेयारूवे मिहो-  
कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था, तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया !  
कल्लं जाव जलंते विउलं असणं ४ उवक्खडावेत्ता तं विउलं असणं  
४ धूव पुप्फगंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धि सुभूमिभा-  
गस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिंरिं पच्चणुभवमाणाणं विहरित्तए तिकट्ठु  
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति पडिसुणित्ता कल्लं पाउप्पभायाए  
रयणीए कोउविय पुरिसे सदावेत्ति सदावित्ता एवं वयासी-गच्छह  
णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ उवक्खडेह तं विउलं असणं  
४ धूवपुप्फवत्थं गहाय जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा-  
पुक्खरिणी तेणामेव उवागच्छह, णंदा पुक्खरिणीतो अदूरसामंते  
थूणा मंडवं आहणह. । आसित्त सम्मज्जियोवलित्त सुगंध जाव कलियं  
करेह, अम्हे पडिवालेमाणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति. ॥सू. ६ ॥

पालकी-तामजाम-पर बैठ कर यह चलती थी। (नरवाहयान विशेष का नाम कर्णीरथ है) ऐसी यह गणिका (बहूणं गणियासहस्साणं आह्वेवच्चं जाव विहरइ) और हजार गणिका जनों का आधिपत्य करती हुई अपने समय को आनन्दके साथ व्यतीत करती थी। । सूत्र ४॥

‘तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

तामजाम-उपर सवार थडने ते अवरग्वर करती, नरवाहयान विशेषणुं नाम कुर्णीरथ छे. जेवी ते गणिका (बहूणं गणियासहस्साणं आह्वेवच्चं जाव विहरइ) उन्नर गणिकाओनुं आधिपत्य करती पोताना वणतने ते सुजेथी पसार करती डती. ॥सूत्र ५॥

નવાજ્ઞાનિ દ્વે શ્રોત્રે, દ્વે નયને, દ્વે નામિકે, ત્રિશ્ચા, સ્વઃ મનશ્ચેત્તેતાનિ સુષ્મા-  
 નોઽ સુષ્માનિ નાનિ ગૌચનપ્રાપ્ત્યા પ્રતિવોધિતાનિ સ્વસ્વવિષયપ્રવૃત્તિપદુર્ઘા-  
 પ્રાપિતાનિ યયા સા તથા 'અટ્ઠારસદેસભાસવિસારયા' અષ્ટાદશદેશ  
 ભાષાવિશારદા--અષ્ટાદશદેશભાષાસુ વિશારદા-કુશલા 'સિંગારાગાર-  
 ચારુવેસા' શૃંગારાગારચારુવેષા- શૃંગારસ્યાગારમિવ ચારુ મનોહરો વેષો  
 યસ્યાઃ સા તથા 'સંગય-ગય-હસિય ભગિય-વેદિય વિહિય વિલાસ-સંભાવુ-  
 છાવનિઉણજુત્તોચયારકુશલા' સંગત-ગત હસિત-ભાણિતવેદિતવિવિધ  
 --વિલાસસંભાવોલાપનિપુણયુક્તોપચારકુશલા इति तु व्याख्यातपूर्वम्  
 'ઉસિયજ્ઞયા' ઉચ્છિન્નધ્વજા-ઉચ્છિન્ના ધ્વજા યસ્યાઃ સા તથા 'સહસ્ત-  
 લંભા' સહસ્તલંભા શુભકેન સહસ્તલંભો લાભો યસ્યાઃ સા તથા 'વિદિન્નછત્ત-  
 ચામરવાલવિયગિયા' વિતીર્ણછત્રચામરવાલવ્યજનિકા વિતીર્ણાનિ=ભૂપેન દત્તાનિ  
 છત્રચામરાણિ ચાલ વ્યજનિકાચામરવિશેષો યદ્યાઃ સા તથા 'કન્નીરહપ્પયાયા'  
 કર્ણીરથપ્રયાતા-કર્ણીરથઃ પ્રવહણં નરવાહયાનવિશેષસ્તેન 'પ્રયાયા પ્રયાતં-ગમનં

દો શ્રોત્ર, દો નયન દો નાસિકા કે છિદ્ર ૬ જિહ્વા ૭ સ્પર્શ ૮ તથા મન ૯ इन  
 सुप्त नवांगों की यह प्रतिबोधक थी । (अट्ठारसदेसभासा विसारया) अष्टादश  
 देशों की भाषामें यह विशारदा-निपुण थी । (सिंगारागारचारुवेसा संगयगय  
 हसिय० ऊसियज्ञया) शृंगार के आगार के समान इसका सुन्दर वेष था ।  
 संगत यावत् निपुण युक्तोपचार में यह कुशल थी । संगत, गत, हसित,  
 भणित इत्यादि निपुणयुक्तोपचार पर्यन्त पदों की व्याख्या पहिले की जा  
 चुकी है । इसकी ध्वजा फहराती थी । (सहस्मलंभा) एक हजार रूपया इम  
 की कीम थी (विदिन्नछत्तचामरवालवियगिया) राजाने इसके लिये छत्र,  
 चामर, और चालव्यजनियें वित्तीणें किये थे । (कन्नीरहप्पयाया गाविहोत्था)

તે નિપુણ હતી. (જવંગસુત્તપહિવોહિયા) જે કાન, જે આંખો, જે નાકના કાણાં  
 છુલ, સ્પર્શ અને મન આ નવ સુષ્મા અંગોની તે પ્રતિબોધક હતી. (અટ્ઠારસદેસ-  
 ભાષાવિસારયા) અઠાર દેશોની ભાષામાં તે પંડિત હતી. (સિંગારાગારચારુવેસા  
 સંગયગયહસિય ઉસિયજ્ઞયા) શૃંગારના નિવાસસ્થાનની જેમ તેનો વેષ સુંદર  
 હતો. સંગત અને બીજાં યુક્તોપચારમાં તે નિપુણ તેમજ કુશળ હતી. સંગત, ગત,  
 હસિત, ભણિત, વગેરે નિપુણ યુક્તોપચાર સુધીના પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં કરવામાં  
 આવી છે. તે શુણિકાની ધ્વજ લહેરાતી હતી. (સહસ્તલંભા) એકહજાર રૂપિયા તેની  
 કીમ હતી. (વિદિન્નછત્રચામરવાલવિયગિયા) રાજાએ તેના માટે છત્ર, ચામર અને  
 ચાલવ્યજનિકાઓ (વીંજણી) આપી હતી. (કન્નીરહપ્પયાયાયાવિ હોત્યા) પાલખી-



यस्याः सा तथा चाप्यभवत् गणिकासहस्रस्याधिपत्यं कुर्वन्ती यावद्विहरति ॥ सू. ५ ॥

मूलम्—तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं अन्नया कयाइ पुब्बा-  
वरण्हकालसमयंसि जिमियभुत्तुत्तरागयाणं समाणाणं आयन्ताणं  
चोक्खाणं परमसुइभूयाणं सुहासणवरगयाणं इमेयारूवे मिहो-  
कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था, तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया !  
कल्लं जाव जलंते विउलं असणं ४ उवक्खडावेत्ता तं विउलं असणं  
४ धूव पुप्फगंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धि सुभूमिभा-  
गस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणाणं विहरित्तए तिकट्ठु  
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति पडिसुणित्ता कल्लं पाउप्पभायाए  
रयणीए कोड्विय पुरिसे सदावेत्ति सदावित्ता एवं वयासी—गच्छह  
णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ उवक्खडेह तं विउलं असणं  
४ धूवपुप्फवत्थं गहाय जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा—  
पुक्खरिणी तेणामेव उवागच्छह, णंदा पुक्खरिणीतो अदूरसामंते  
थूणा मंडवं आहणह. । आसित्त सम्मज्जियोवलित्तं सुगंध जाव कलियं  
करेह, अम्हे पडिवालेमाणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति. ॥सू. ६ ॥

पालकी-तामजाम-पर बैठ कर यह चलती थी। (नरवाहयान विशेष का नाम  
कर्णरिथ है) ऐसी यह गणिका (बहूणं गणियासहस्साणं आहेवच्चं जाव  
विहरइ) और हजार गणिका जनों का आधिपत्य करती हुई अपने समय  
को आनन्दके साथ व्यतीत करती थी। । सूत्र ४॥

‘तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

तामजाम-उपर सवार थडने ते अवरण्वर करती, नरवाहयान विशेषणुं नाम कर्णरिथ  
छ. जेवी ते गणिका (बहूणं गणियासहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ) ऊपर  
गणिकाओंनुं आधिपत्य करती पोताना वणतने ते सुजेथी पसार करती डती. ॥सूत्र ५॥

નવાક્ષાણિ દ્વે શ્રોત્રે, દ્વે નયને, દ્વે નામિકે, જિહ્વાસ્વઃ મનશ્રેત્યેતાનિ સુષ્મા-  
 નીચ સુષ્માનિ તાનિ યૌવનપ્રાપ્ત્યા પ્રતિવોધિતાનિ સ્વસ્વધિવયગ્રહણપદુર્ઘા-  
 માપિતાનિ યયા સા તથા 'અઢારસદેસભાસવિસારયા' અષ્ટાદશદેસ-  
 ભાષાવિશારદા--અષ્ટાદશદેશભાષાસુ વિશારદા-કુશલા 'સિંગારાગાર-  
 ચારુવેસા' શ્રૃંગારાગારચારુવેષા- શ્રૃંગારસ્યાગારમિય ચારુ મનોહરો વેષો  
 યસ્યાઃ સા તથા 'સંગય-ગય-દમિય ભગિય-વેદિય વિહિય વિલાસ-સંલાબુ-  
 હાવનિડગજુત્તોવયારકુશલા' સંગત-ગત હસિત-ભાણિતવેષ્ટિતવિવિધ  
 --વિલાસસંહાપોલાપનિપુણયુક્તોપચારકુશલા इति तु व्याख्यातपूर्वम्  
 'ઝસિયજ્ઞયા' ઝચ્છિતધ્વજા-ઝચ્છિતા ધ્વજા યસ્યાઃ સા તથા 'સહસ્ત-  
 લંભા' સહસ્તલંભા શુલ્કેન સહસ્તલંભો લાભો યસ્યાઃ સા તથા 'વિદિન્નછત્ત-  
 ચામરવાલવિયગિયા' વિતીર્ણછત્રચામરવાલવ્યજનિકા વિતીર્ણાનિ=ભૂપેન દત્તાનિ  
 છત્રચામરાણિ ચાલ વ્યજનિકાચામરવિશેષો યયાઃ સા તથા 'કન્નીરહપ્પયાયા'  
 કર્ણીરથપ્રયાતા-કર્ણીરથઃ પ્રવહણં નરવાહયાનવિશેષસ્તેન 'પ્રયાયા પ્રયાતં-ગમનં

દો શ્રોત્ર, દો નયન દો નાસિકા કે છિદ્ર ૬ જિહ્વા ૭ સ્પર્શ ૮ તથા મન ૯ इन  
 सुप्त नवांगों की यह प्रतिबोधक थी । (अष्टारसदेसभासा विसारया) अष्टा दश  
 देशों की भाषामें यह विशारदा-निपुण थी । (सिंगारागारचारुवेसा संगयगय  
 हसिय० ऊसियज्ञया) श्रृंगार के आगार के समान इसका सुन्दर वेष था ।  
 संगत यावत् निपुण युक्तोपचार में यह कुशल थी । संगत, गत, हसित,  
 भणित इत्यादि निपुणयुक्तोपचार पर्यन्त पदों की व्याख्या पहिले की जा  
 चुकी है । इसकी ध्वजा फहराती थी । (सहस्मलंभा) एक हजार रुपया इस  
 की कीम थी (विदिन्नछत्तचामरवालवियगिया) राजाने इसके लिये छत्र,  
 चामर, और चालव्यजनियें वितीर्ण किये थे । (कन्नीरहप्पयाया याविहोत्था)

તે નિપુણ હતી. (ગવંગસુત્તપડિવોદિયા) બે કાન, બે આંખો, બે નાકના કાણાં  
 છલ, સ્પર્શ અને મન આ નવ સુષ્મા અંગોની તે પ્રતિબોધક હતી. (અઢારસદેસ-  
 ભાષાવિસારયા) અઢાર દેશોની ભાષામાં તે પંડિત હતી. (સિંગારાગારચારુવેસા  
 સંગયગયહસિય ઝસિયજ્ઞયા) શ્રૃંગારના નિવાસસ્થાનની જેમ તેનો વેષ સુંદર  
 હતો. સંગત અને બીજાં યુક્તોપચારમાં-તે નિપુણ તેમજ કુશળ હતી. સંગત, ગત,  
 હસિત, ભણિત, વગેરે નિપુણ યુક્તોપચાર સુધીના પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં કરવામાં  
 આવી છે. તે શુભિકાની ધ્વજ લહેરાતી હતી. (સહસ્તલંભા) એકહજાર રૂપિયા તેની  
 કી હતી. (વિદિન્નછત્રચામરવાલવિયગિયા) રાજાએ તેના માટે છત્ર, ચામર અને  
 ચાલવ્યજનિકાઓ (વીંજણી) આપી હતી. (કન્નીરહપ્પયાયાયાવિ હોત્યા) પાલખી-

पुष्पगन्ध वस्त्रं गृहीत्वा देवदत्तया गणिकया सार्द्धं सुभूमिभागस्योद्यानस्य  
उद्यानश्रियम्—उद्यानशोभां पत्यनुभवतोः—उपवनशोभादर्शनादिना  
प्रमोदयतोः विहर्तुं=विलासितुम् इति कृत्वा अन्योऽन्ययोरेतमर्थं प्रतिश्रुणुतः  
प्रतिश्रुत्य निश्चित्येत्यर्थः 'कल्लं' कलये 'पाउप्पभाया रयणीए' पाउप्पभायां  
रजन्यां राज्यन्ते प्राच्यां दिशि प्रकाशोदये कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयतः  
शब्दयित्वा एवमवादिष्टाम् गच्छत खलु यूयं देवानुप्रियाः ! विपुलमशन-

(तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! हम दोनोंका अब यह  
अच्छा है कि (कल्लं जाव जलंते विउलं असणं उवक्खडावित्ता तं विउलं  
असणं ४ धूव, पुप्फ, गंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं  
सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिर्णि पच्चणुभवमाणानं विहरित्तए)  
हम दोनों कल जब कि प्रभात हो जाय और सूर्य प्रकाश हो  
जाय तब विपुलमात्रामें अशन पान, खाद्य, और स्वाद्य चारों प्रकार  
का आधार निष्पन्न करा कर उस निष्पन्न हुए अशन आदि ४ चारों प्रकार  
के आधारको तथा धूप, पुष्प, गंध, और वस्त्र को लेकर देवदत्त गणिका  
के साथ सुभूमिभाग उद्यान की उद्यान श्री का अनुभव करते हुए विच-  
रण करें। (त्तिकट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति) ऐसा विचार उन दोनोंने किया  
परस्पर के इस विचारको स्वीकार कर लिया (पडिसुणित्ता कल्लं पाउप्प-  
भायाए रयणीए कौटुम्बियपुरिसे सदावेति) विचार स्वीकृत हो चुकने के  
बाद कल जब रात्रि प्रभात प्राय हो चुकी और सूर्य प्रकाशित हो चुका  
तब उन दोनोंने अपने-२ कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया (सदावित्ता एवं

(तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिये ! आपणु अपने भाटे ये बात  
सुभश्य थये हे (कल्लं जावजलंते विउलं असणं ४ उवक्खडावित्ता तं विउलं  
असणं ४ धूव, पुप्फ, गंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभाग-  
स्स उज्जाणस्स उज्जाणसिर्णि पच्चणुभवमाणानं विहरित्तए) आवती आवे न्यारे  
सवार थाय अने सूर्य प्रकाशतो थाय त्यारे पुच्छण प्रमाणुमां अशन, पान, आद्य,  
अने स्वाद्य थारे प्रकारेण आधारणनावडावीने ते थारे जतना आधारने तेमज धूप,  
पुष्प, गंध अने वस्त्रने लधने देवदत्ता गणिकानी साथे सुभूमि भाग उद्याननी  
उद्यानश्रीने अनुभवता विहार करीये. (त्तिकट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति)  
आ विचारने अपनेये स्वीकारी लीये. (पडिसुणित्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए  
कौटुम्बिय पुरिसे स दावेति) विचारनी स्वीकृति आवे न्यारे रात्रि पसार थय  
प्रभात थयुं अने सूर्यने प्रकाश थामेर प्रसथीं त्यारे अपनेये पोतपोताना कौटुम्बिक  
पुरुषोने बोलाव्या. (सदावित्ता एवं वयासी) बोलावीने धुं—(गच्छह णं देवा-

टीका—‘तएणं तेसिं इत्यादि-ततः खलु तयोः सार्थवाहदारकयोरन्यदा-  
कदानित् पूर्वापराहकालसमये पश्चिमप्रदरे ‘जिमियभुत्तुरागयाणं’ जिमित  
भुक्तं-आस्वादनेन अनुभूतम् उत्तरं-तत्पश्चात् आगतयोः ‘समाणाणं’ सतोः  
‘आयंताणं’ आचमितयोः-कृतचुलुकयोः ‘चोक्खाणं’ चोक्षयोः अन्नादिले-  
पापनयनेन शुद्धयोः अतएव ‘परमसुइभूयाणं’ परमशुची भूतयोः हस्तमुख्यादि  
प्रक्षालनेन परमपवित्रयोः ‘सुहांसणवरगयाणं’ सुखासनवरगतयोः सुखा-  
सनावस्थितयोः ‘इमेयारूवे’ अयमेतद्रूपो वक्ष्यमाणलक्षणः ‘मिहो कहासमुल्लावे’  
मिथः कथासमुल्लापः विलासविषयकवार्ता संल्लापः ‘समुपज्जित्था’ समुदपघत  
अभवत् तत्प्रेयः खलु आवयोः देवानुमिय ! कल्ये यावज्जलति विपुल-  
मशनं पानं खाद्यस्वाद्यमुपस्कार्य तं विपुलमशनपानखाद्यस्वाद्यं धूप-

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (अन्नया कयाइं) किसी एक समयकी  
(तेसिं सत्थवाहदारगाणं) उन दोनों सार्थवाह पुरों को (जिमियभुत्तुरागयाणं)  
जब कि वे जीम कर और खाकर कुल्ला करने के लिये अपने स्थान से  
उठ चुके थे और (आयंताणं) अच्छी तरह कुल्लाभी कर चुके थे ।  
(चोक्खाणं) तथा धोती आदि वस्त्रों पर खाते समय पड़े हुए अन्नादिकों के  
सीतों को जब वे साफ कर शुद्ध हो चुके थे । परमसुइभूयाणं) हस्त मुख  
आदि के प्रक्षालन से उनके मुख आदि अवयव जब शुद्ध हो चुके  
थे तब (पुन्नावरहकालसमयसि) पश्चिम प्रहर में (सुहांसणवरगयाणं) जब वे  
एक स्थान पर आनन्द के साथ बैठे हुए थे—(इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे  
समुपज्जित्था) इस प्रकार का यह बातचीत करते हुए विचार बांधा—

‘तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थाइ पाठ (अन्नया कयाइं) डेअ ओक वणतनी वात छे.  
(तेसिं सत्थवाहदारगाणं) ते जने सार्थवाह पुरोने (जिमिय भुत्तुरागयाणं)—डे  
त्थाइ तेओ जमीने पोताना जमवाना स्थानेथी डोगणा करवा भाटे उला थछ थूक्या  
हुता, अने (आयंताणं) सारी रीते तेमणे डोगणा पणु करी लीधा हुता (चोक्खाणं)  
तेमज घाती वगेरे वस्त्रो उपर जमती वणते पडेला अन्न वगेरेना डेल्लेने साइ करीने  
शुद्ध जनी थूक्या हुता. (परमसुइभूयाणं) हाथ में वगेरेना प्रक्षालनथी तेमना में  
वगेरे अवयवो ज्थाइ स्वच्छ जनी थूक्या हुता. (पुन्नावरहकालसमयसि) हिवसना  
छेला पडोरमां (सुहांसणवरगयाणं) ज्थाइ तेओ ओक स्थाने आनंदपूर्वक जेठा हुता.  
(इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुपज्जित्था) त्थाइ बातचीतने विचार उद्गलये

२ पुनः पुनः प्रतीक्षमाणाः इत्यर्थः 'चिद्वद्' तिष्ठत यावत्तौ कौटुम्बिक-  
पुरुषाः तदाज्ञानुसारेण कार्यं सम्पाद्य तिष्ठन्तः ॥ सू. ६ ॥

मूलम्—तए णं ते सत्थवाहदारगा दोच्चंपि कौटुम्बिय-  
पुरिसे सदावेति सदावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव लहुकरण जुत्त  
जोयं समखुरवालिहाणसमलिहियतिक्खग्गसिंघएहिं रययमय-  
घंटसुत्तरज्जुपवरकंचणखचियणत्थपग्गहोवग्गहिंएहिं नीलुप्पलकया-  
मेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणकंचणघंटिया जाल-  
परिक्खित्तं पवरलक्खणोववेयं जुत्तमेव पवहणं उवणेह तेऽवि  
तहेव उवणेति. ॥ सू. ७ ॥

टीका—'तएणं ते सत्थवाहदारगा दोच्चंपि' इत्यादि—ततः खलु तौ सार्थ-  
वाहदारकौ द्वितीयवारमपि कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयतः शब्दयित्वा एव-

वहां का सब अच्छी तरह साफ करो। उसे अच्छे रूपमें गोमय आदि से  
लीपो। अगरवत्ती, काला गुरु आदि सुगंधित द्रव्यों से उसे वासित करो।  
पश्चात् हमारी वहां प्रतीक्षा करो। इस प्रकार उन सार्थवाह पुत्रों की बात  
सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषोंने जैसा उन्होंने कहाथा वैसा ही सब कार्य  
संपादित कर दिया और उनकी प्रतीक्षा करते हुए वहां बैठ रहे। ॥सूत्र ६॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्थ  
वाह पुत्रोंने (दोच्चंपि) दुबारा भी कौटुम्बियपुरिसे) कौटुम्बिकपुरुषों को  
(सदावेति) बुलाया (सदावित्ता) बुलाकर उनसे (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—

वगेरे, त्यांथी साक्ष करी नाओ. ते स्थानने छाण्ण माटी वगेरेथी सरस रते वी'पे  
धूप सणी, कावाशुरु, वगेरे सुवासित द्रव्येथी ते स्थानने सुगंधित जनावे. त्थार णाद  
तमे अमारी त्यां न वहीने प्रतीक्षा करो. आ रीते ते सार्थवाह पुत्रोनी बात सांल-  
जीने ते कौटुम्बिक पुरुषोअे तेमणे जेम आशा आपी हुती तेमणे काम पुरुं करी  
दीधुं. अने तेमनी प्रतीक्षा करता त्यां न जेसी रह्या. ॥ सूत्र. ६ ॥

'तए णं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्थार णाद (ते सत्थवाहदारगा) ते ज'ने सार्थवाह पुत्रोअे  
(दोच्चंपि) भील वार (कौटुम्बियपुरिसे) कौटुम्बिक पुरुषोने (सदावेति) जेलाव्या

પાનસ્વાદ્યસ્વાથં 'ઉવવલ્લહેહ' ઉપસ્કારયત ઉપસ્કાર્યં તં વિપુલમશનપાનસ્વાદ્ય  
સ્વાથં ધૂપપુષ્પગન્ધવસ્ત્રં ગૃહીત્વા યત્રૈવ સુભૂમિમાગવૃષ્ટાનં યત્રૈવ  
નન્દા પુષ્કરિણી તત્રૈવોપાગચ્છત ઉપાગત્ય નન્દાયાઃ પુષ્કરિણ્યા  
અદૂરસામન્તે 'ધૂણામંડવં સ્થૂણામંડપં છાદનાદિ સ્તમ્ભનાથં  
વહ્લી કાઠં' ધૂણા સ્થૂણા, તત્પ્રધાનો વસ્ત્રાચ્છાદિતમણ્ડવઃ સ્થૂણા મણ્ડપસ્તમ્ 'આઠ-  
ળહ' આઠત-નિવેશયત કુરુતેત્યર્થઃ 'આસિત્તસમ્મજ્જિયોવલિત્તં' આસિત્ત  
સંમાર્જિતોપલિત્તં, તત્ર-'આસિત્ત' આસિત્ત-જલેન સિત્તં 'સમ્મજ્જિય'  
સંમાર્જિતં કચવરાપનયનેન પ્રમાર્જિતં 'ઉવલિત્તં' ઉવલિત્ત-ગોમયાદિના સંલિ-  
સમ્ સુગન્ધ યાવત્ કલિતમ્--અગરત્તિ કાલાગુરુપ્રભૃતિસુગન્ધિદ્રવ્યેઃ,  
કલિતં-યુક્તમ્ 'કરેહ' કુરુત 'અમ્હે પડિવાલેમાણા' આયાં પ્રતિપાલયમાના

વયાસી) બુલાકર इस प्रकार कहा--(गच्छह णं देवाणुप्पिया)हे देवानुप्पियो !  
तुम जाओ और (विउलं असणं ४ उववल्लहेह) विपुल मात्रा में अशन, पान,  
स्वाद्य, और स्वाद्य आहार निष्पन्न करो (तं विउलं असणं ४ धूव पुप्फवत्थं गहाय  
जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा पुक्खरिणी तेणामेव उवागच्छह) निष्पन्न  
होने के बाद विपुल अशनादिरूप चतुर्विध आहार को धूप, पुष्प, वस्त्रको लेकर  
जहां सुभूमि भाग नामका उद्यान है और जहां नंदा नामकी पुष्करिणी है, वहां  
जाओ--(नंदापुक्खरिणी अदूरसामन्ते धूणामंडवं आहणह) वहां जाकर तुम  
नंदापुष्करिणी से न बिलकुल पास और न बहुत दूर किन्तु उचित प्रदेश  
में एक स्थूणामंडप को रचो-बनाओ-तैयार करो । (आसित्तसम्मज्जियोव-  
लित्तं सुगंध जाव कलियं करेह, अम्हे पडिवालेमाणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति)  
जब वह तैयार हो जावे तब उसे जल से सिञ्चित करो, कचरा वगैरह

પુપ્પિયા) હે દેવાનુપ્પિયો ! તમે જાઓ (વિઉલં અસણં ૪ ઉવવલ્લહેહ) અને પુષ્કળ  
પ્રમાણમાં અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્ય આહાર તૈયાર કરો. (તં વિઉલ અસણ ૪  
ધૂવપુષ્પવત્થં ગહાય જેણેવ સુભૂમિભાગે ઉજ્જાણે જેણેવ ણંદા પુક્કરિણી  
તેણામેવ ઉવાગચ્છહ) અને જ્યારે અશન, પાન, ખાદ્ય વગેરે તૈયાર બનતો આહાર તૈયાર  
થઈ બધા ત્યારે ચતુર્વિધ આહાર તેમજ ધૂપ, પુષ્પ અને વસ્ત્રોને લઈને જ્યાં સુભૂ-  
મિભાગ નામે ઉદ્યાન છે અને જ્યાં નંદા નામની પુષ્કરિણી (વાવ) છે ત્યાં જાઓ.

(નંદા પુક્કરિણીતો અદૂરસામંતે ધૂણામંડવં આહણહ) ત્યાં જઈને નંદા  
પુષ્કરિણીથી વધારે દૂર પણ નહિ તેમજ તેનાથી વધારે નજીક પણ નહિ એવા યોગ્ય  
સ્થાને તમે સ્થૂણા મંડપ તૈયાર કરો. (અસિત્ત સમ્મજ્જિયોવલિત્તં સુગંધ જાવ  
કલિયં કરેહ અમ્હે પડિવાલે માણા ૨ ચિટ્ઠહ જાવ ચિટ્ઠંતિ) સ્થૂણા મંડપ  
જ્યારે તૈયાર થઈ બધા ત્યારે તમે પાણી છાંટીને તે જગ્યાને સિંચિત કરો, કચરો



२ पुनः पुनः प्रतीक्षमाणाः इत्यर्थः 'चिद्वद्' तिष्ठत यावत्तौ कौटुम्बिक-  
पुरुषाः तदाज्ञानुसारेण कार्यं सम्पाद्य तिष्ठन्तः ॥ सू. ६ ॥

मूलम्—तए णं ते सत्थवाहदारगा दोच्चंपि कौटुम्बिय-  
पुरिसे सदावेति सदावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव लहुकरण जुत्त  
जोयं समखुरवालिहाणसमलिहियतिक्खग्गसिंघएहिं रययमय-  
घंटसुत्तरज्जुपवरकंचणखचियणत्थपग्गहोवग्गहिंएहिं नीलुप्पलकया-  
मेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणकंचणघंटिया जाल-  
परिक्खित्तं पवरलक्खणोववेयं जुत्तमेव पवहणं उवणेह तेऽवि  
तहेव उवणेति. ॥ सू. ७ ॥

टीका—'तएणं ते सत्थवाहदारगा दोच्चंपि' इत्यादि—ततः ग्वलु तौ सार्थ-  
वाहदारकौ द्वितीयवारमपि कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयतः शब्दयित्वा एव-

वहाँ का सब अच्छी तरह साफ करो। उसे अच्छे रूपमें गोमय आदि से  
लीपो। अगरवत्ती, काला गुरु आदि सुगंधित द्रव्यों से उसे वासित करो।  
पश्चात् हमारी वहाँ प्रतीक्षा करो। इस प्रकार उन सार्थवाह पुत्रों की बात  
सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषोंने जैसा उन्होंने कहाथा वैसा ही सब कार्य  
संपादित कर दिया और उनकी प्रतीक्षा करते हुए वहाँ बैठ रहे। ॥सूत्र ६॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्थ  
वाह पुत्रोंने (दोच्चंपि) दुवारा भी कौटुम्बियपुरिसे) कौटुम्बिकपुरुषों को  
(सदावेति) बुलाया (सदावित्ता) बुलाकर उनसे (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—

वगेरे, त्यांथी साक्ष करी नाणे. ते स्थानने छाण्णा भाटी वगेरेथी सरस रीते वी'पो  
धूप सणी, कालागुरु, वगेरे सुवासित द्रव्येथी ते स्थानने सुगंधित जनावे. त्थार पाद  
तमे अमारी त्यां ज रूढीने प्रतीक्षा करो. आ रीते ते सार्थवाह पुत्रोनी बात सांल-  
णीने ते कौटुम्बिक पुरुषोणे तेमणे जेम आसा आपी हुती तेमणे काम पुरु' करी  
दीधु'. अने तेमनी प्रतीक्षा करता त्यां ज जेसी रह्या. ॥ सूत्र. ६ ॥

'तए णं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्थार पाद (ते सत्थवाहदारगा) ते ज'ने सार्थवाह पुत्रोणे  
(दोच्चंपि) भी'ए वार (कौटुम्बियपुरिसे) कौटुम्बिक पुरुषोने (सदावेति) जेलाव्या

પાનસ્વાદ્યસ્વાદ્યં 'ઉવવલ્લહેહ' ઉપસ્કારયત ઉપસ્કાર્યં તં વિપુલમશનપાનસ્વાદ્ય  
સ્વાદ્યં ધૂપપુષ્પગન્ધવસ્ત્રં ગૃહીત્વા યત્રૈવ સુભૂમિમાગમુષ્યાનં યત્રૈવ  
નન્દા પુષ્કરિણી તત્રૈવોપાગચ્છત ઉપાગત્ય નન્દાયાઃ પુષ્કરિણ્યા  
અદૂરસામન્તે 'ધૂણામંડવં સ્થૂણામંડપં ઝાદનાદિ સ્તમ્ભનાથં  
વહ્ની કા પ્ઠં' ધૂણા સ્થૂણા, તત્પ્રધાનો વસ્ત્રાચ્છાદિતમણ્ડપઃ સ્થૂણા મણ્ડપસ્તમ્ 'આહ-  
ળહ' આહત-નિવેશયત કુરુતેત્યર્થઃ 'આસિત્તસમ્મજ્જિયોવલિત્તં' આસિત્ત  
સંમાર્જિતોપલિપ્તં, તત્ર-'આસિત્ત' આસિત્ત-જલેન સિત્તં 'સમ્મજ્જિય'  
સંમાર્જિતં કચવરાપનયનેન પ્રમાર્જિતં 'ઉવલિત્તં' ઉપલિપ્તં-ગોમયાદિના સંલિ-  
પ્તમ્ સુગન્ધ યાવત્ કલિપ્તમ્--અગત્વર્તિ કાલાગુરુપ્રભૃતિસુગન્ધિદ્રવ્યૈઃ,  
કલિત્તં-યુક્તમ્ 'કરેહ' કુરુત 'અમ્હે પડિવાલેમાણા' આવાં પ્રતિપાલયમાના

વયાસી) બુલાકર इस प्रकार कहा-(गच्छह णं देवाणुप्पिया)हे देवानुप्रियों!  
तुम जाओ और (विउलं असणं ४ उववखडेह) विपुल मात्रा में अशन, पान,  
स्वाद्य, और स्वाद्य आहार निष्पन्न करो (तं विउलं असणं ४ धूव पुष्पवत्थं गहाय  
जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा पुक्खरिणी तेणामेव उवागच्छह) निष्पन्न  
होने के बाद विपुल अशनादिरूप चतुर्विध आहार को धूप, पुष्प, वस्त्रको लेकर  
जहां सुभूमि भाग नामका उद्यान है और जहां नंदा नामकी पुष्करिणी है, वहां  
जाओ-(नंदापुक्खरिणी अदूरसामंते धूणामंडव आहणह) वहां जाकर तुम  
नंदापुष्करिणी से न बिल्कुल पास और न बहुत दूर किन्तु उचित प्रदेश  
में एक स्थूणामंडप को रचो-बनाओ-तैयार करो। (आसित्तसम्मज्जियोव-  
लित्तं सुगंध जाव कलियं करेह, अमहे पडिवालेमाणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति)  
जब वह तैयार हो जावे तब उसे जल से सिञ्चित करो, कचरा वगैरह

પુપ્પિયા) હે દેવાનુપ્રિયો ! તમે જાઓ (વિઉલં અસણં ૪ ઉવવલ્લહેહ) અને પુષ્કળ  
પ્રમાણમાં અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્ય આહાર તૈયાર કરો. (તં વિઉલ અસણ ૪  
ધૂવપુષ્પવત્થં ગહાય જેણેવ સુભૂમિભાગે ઉજ્જાણે જેણેવ ણંદા પુક્કરિણી  
તેણામેવ ઉવાગચ્છહ) અને જ્યારે અશન, પાન, ખાદ્ય વગેરે ચાર જાતનો આહાર તૈયાર  
થઈ જાય ત્યારે ચતુર્વિધ આહાર તેમજ ધૂપ, પુષ્પ અને વસ્ત્રોને લઈને જ્યાં સુભૂ-  
મિભાગ નામે ઉદ્યાન છે અને જ્યાં નંદા નામની પુષ્કરિણી (વાવ) છે ત્યાં જાઓ.

(નંદા પુક્કરિણીતો અદૂરસામંતે ધૂણામંડવ આહળહ) ત્યાં જઈને નંદા  
પુક્કરિણીથી વધારે દૂર પણ નહિ તેમજ તેનાથી વધારે નજીક પણ નહિ એવા યોગ્ય  
સ્થાને તમે સ્થૂણા મંડપ તૈયાર કરો. (અસિત્ત સમ્મજ્જિયોવલિત્તં સુગંધ જાવ  
કલિયં કરેહ અમ્હે પડિવાલે માણા ૨ ચિટ્ઠહ જાવ ચિટ્ઠંતિ) સ્થૂણા મંડપ  
જ્યારે તૈયાર થઈ જાય ત્યારે તમે પાણી છાંટીને તે જગ્યાને સિંચિત કરો, કચરો

संलग्नं-रूपभाकपेकरज्जुद्वयमित्यर्थः ताभ्याम् उपगृहीतौ शकटवाहकपुरुषेण स्ववशीकृतौ, रजतमयघण्टौ च तौ सूत्रज्जुप्रवरकाञ्चनखचिननस्त प्रग्रहापगृहीतौ इतिकर्मधारयः ताभ्याम् 'नीलोत्पलकयामेलएहिं' नीलोत्पल-कृतापीडाभ्याम् तत्र-नीलोत्पलैः=नीलकमलैः, कृतः आपीडः=शिरोभूषणं ययो स्तौ ताभ्याम्. 'प्रवरगोणजुगणएहिं' प्रवरगोयुवभ्याम्-तरुणोत्तम-वशीचदाभ्यादम् 'जुत्तमेव' युक्तं-सर्वथा संयुक्तमेव 'नानामणिरयणकंचण घंटियाजालपरिविखत्तं' नानामणिरत्नकाञ्चनघण्टिकाजालपरि-क्षिप्तं-अनेकमणिरत्नखचितसुवर्णमयघण्टिकासमूहेन युक्तम्. 'प्रवरलख-णोववेयं' प्रवरलक्षणोपपेतं-शुभलक्षणयुक्तं 'प्रवहणं' प्रवहणं-शकटम् सेजगाडीति भाषायाम्. 'उवणेह' उपनयत-समानयत. । ते कौटुम्बिकपुरुषा अपि नथैवोपनयन्ति. ॥ म. ७ ॥

हो। कपास के तन्तुओं से निर्मित रस्सी कि जो प्रवर कांचन से खचित हो जिनके दोनों नयनों में पड़ी हुई हो और इसी के बल पर जो शकट वाहक पुरुषों द्वारा वशीभूत किये गये हों ( नीलोत्पलकयामेलएहिं) तथा नीलकमलों का बना हुआ शिरोभूषण जिनके मस्तक पर लगाहो (नाणाम-णिरयणकंचणघंटिया जालपरिविखत्तं) जो एवं नानामणियों से तथा रत्नों से खचित ऐसे सुवर्णमय घंटिका समूह से युक्त हों तथा जो (प्रवरलख-णोववेयं) शुभलक्षणों से संपन्न हों (ते वि तहेव उवणेति) इस प्रकार उन दोनों सार्धवाह पुत्रों का आदेश सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषोंने जैसा उन्होंने प्रवहण लाने को कहा था-वैसा ही लाकर उपस्थित कर दिया। और उनकी ॥सूत्र ७॥

घंटडीओ जेमना गणामां गांधवामां आवी छे ओवा, तेमज सूतरनी प्रवर कांचनथी परिवेण्टित होरीनी नाथ जेमना णंने नाकनां छिट्रोमां नाथेली डोय अने ओवी नाथोने लीधे ज ते गणदे गडीने डांकनाराओ वडे वथमां रणाता डोय. (नीलोत्पलकयामेलएहिं) तेमज नीलकमणोवाणुं शिरोभूषणु जेमना मस्तके ओलतुं डोय (नाणामणिरयणकंचणघंटिया जालपरिविखत्तं) जेमले अनेक भण्डि अने रत्नो जडेली सोनानी धुधरीओ पडेरली डोय तेमज जे (प्रवरलख-णोववेयं) शुभ लक्षणोवाणा डोवा जेधओ. (ते वि तहेव उवणेति) आ रीते णंने सार्धवाह-पुत्रोनी आशा सांलणीने कौटुम्बिक पुरुषो आशा प्रमाणे ज थोअ प्रवहणु लई आव्या. ॥ सूत्र ७ ॥

મવાદિષ્ટામ્. આશાપયતઃ 'સ્વિપ્પામેવ' સ્વિપમેવ 'લઘુકરણજુતે જોડયં' લઘુકરણયુક્તયોજિતમ્ તત્ર-લઘુકરણેન-ગમનાદિક્રિયાદશત્વેન યુક્તાઃ યે પુરુષાસ્તૈઃ, યોજિતં યન્નયૂપાદિભિઃ સમ્બન્ધિતમ્. અસ્ય પ્રવહ્નમિત્યનેન સમ્બન્ધઃ 'સમસ્તુરવાલિહાણસમલિહિયતિવલ્ગસિંગર્હિ' સમસ્તુરવાલધાનસમલિહિતતીક્ષ્ણાગ્રશૃઙ્ગકાભ્યામ્. તત્ર-સમ=સમૌ-સમાનો સુતૌ, વાલધાનો=પુચ્છૌ, સમસ્તુરવાલધાનો તથા સમ=સમે-તુલ્યે, લિહિતે=શસ્ત્રાપસારિતવાલ્યત્વચે, તીક્ષ્ણાગ્રશૃઙ્ગે યયોઃ તૌ, તથા સમસ્તુરવાલધાનો ચ સમલિહિતતીક્ષ્ણાગ્રશૃઙ્ગકૌ ચેતિ કર્મધારયઃ તાભ્યામ્ 'રયયમયઘંટસુત્તરજ્જુપવરકંચણસ્વચિયણત્થપગ્ગહોવગ્ગહિર્હિ' રજતમયઘંટાગ્રતરજ્જુપવરકાઠચન-સ્વચિતનસ્તપ્રગ્રહોપગૃહીતાભ્યામ્ તત્ર-રજતમયે=રુપ્યનિર્મિતે ઘંટે=શુદ્રઘટિકે ગલપ્રદેશે વંદે યયોસ્તૌ તથા-સૂત્તરજ્જૂ=કાર્પાસિક-તન્તુ નિર્મિતે રજ્જુમયે પવરકાઠચનસ્વચિતે યે 'નત્યે।' નસ્તે-તયોઃ પ્રગ્રહી=રક્તમીનસ્ત-

(સ્વિપ્પામેવ લઘુકરણ જુત જોડયં પ્રવહ્નં ઉવણેહ) તુમલોગ શીઘ્ર હી લઘુકરણ યુક્ત પુરુષો દ્વારા યંત્રયૂપાદિ સે સંબંધિત કિયે હુએ એક પ્રવહ્ન-શકટકો લે આઓ ભાષા મેં ઇસે સેજ-ગાડી કહતે હૈં। જો (પવરગોણ જુવાણર્હિં જુત મેવ) તરુણ એવં ઉત્તમ વૈલોં સે સર્વથા યુક્ત હો (સમસ્તુરવાલિહાણ સમલિહિયતિવલ્ગસિંગર્હિં) યે વૈલ મી સમાન સુરોં વાલે હો એક સી પૂછોંવાલે હોં તથા શસ્ત્ર સે ડપર કી ચાલ ઊલ જાને સે જિનકે અગ્રભાગ તુકીલે વને રહે હૈં એસે એક સે સીંગોંવાલે હોં (રયયમયઘંટ, સુત્તરજ્જુપવરકંચણ-સ્વચિયણત્થપગ્ગહોવગ્ગહિર્હિં) ચાંદી કે ઘંટિકાઈ જિનકે ગલે મેં વંધી હુઈ

(સદાવિત્તા) બોલાવીરે તેમને (એવં વયાસી) આ પ્રમાણે કહ્યું (સ્વિપ્પામેવં લઘુકરણ જુતજોડયં પ્રવહ્નં ઉવણેહ) તમે સત્વરે લઘુકરણ યુક્ત પુરુષો વડે યંત્ર યૂપ વગેરેથી સંપન્ન એક પ્રવહ્ન-ગાડાને લાવો. ભાષામાં પ્રવહ્ન-શકટને 'સેજગાડી' કહે છે. (ધાડાગાડીની જેમ આવી 'સેજગાડી' પણ ચોમેર અને ઉપર એમ સરસ આવરણથી આચ્છાદિત રહે છે માણસ આરામથી આમાં અવરજવર કરી શકે છે એટલા માટે એને 'સેજગાડી' કહે છે.) તે સેજગાડી (પવરગોણજુવાણર્હિં જુતમેવ) જુવાન અને ઉત્તમ બળદોવાળી હોવી હોવી જોઈએ. (સમસ્તુરવાલિહાણસમલિહિય-તિવલ્ગસિંગર્હિં) બળદો સરખી પૂછડી વાળા તેમજ આંતર વડે ઉપર ઉપરથી જેમનું આમંડુ છાંટી નંખાયું છે અને તેથી જેમનાં શિંગડાંનાં આગળના ભાગ અણીદાર થઈ ગયા ગયા છે તેવા સરખા શિંગડાંવાળા હોવા જોઈએ. (રયયમયઘંટસુત્તરજ્જુપવરકંચણસ્વચિયણત્થપગ્ગહોવગ્ગહિર્હિં) ચાંદીની

देवदत्ताय गणिकाया गृहं वर्तते तत्रैवोपागच्छतः, उपागत्य प्रवहणान् प्रत्यच-  
रोहनः प्रत्यवरुह्य देवदत्तायां गणिकायां गृहमनुप्रविशतः ततस्तदनन्तरं खलु  
सा देवदत्ता गणिका तौ सार्थवाहदारकौ एजमानौ-आगच्छन्तौ पश्यति,  
दृष्ट्वा हृष्टतुष्टा=अतिशयेन प्रमुदिता, अथ मम भाग्योदयो जातो यत एताविभ्य-  
पुत्रौ मम गृहे आगताविति विचार्य स्वासनादभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय सप्ता-  
ऽष्टपदान्यनुगच्छति=अभिगच्छति अनुगम्य, तयोः संमुखं गत्वा तौ सार्थवाह-  
दारकौ प्रत्येवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् 'संदिसंतु णं' सन्दिदन्तु आदेशं

है (प्रवहणं दुरुहंति) उस प्रवहण पर सवार हुए। (दुरुहिता जेणेव देवदत्ताए  
गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति) सवार होकर जहां देवदत्ताका घर था वहां  
पहुँचे। (उवागच्छिता प्रवहणाओ पच्चोरुहंति) पहुँच कर वे उसे प्रवहण से  
नीचे उतरे। (पच्चोरुहिता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुप्रविसंति) नीचे  
उतरकर देवदत्ता गणिका के घरमें प्रवेश किया (तएणं सा देवदत्ता गणिया  
सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ) देवदत्ता गणिकाने उन दोनों सार्थवाह पुत्रोंको  
आते हुए देखा (पासित्ता हट्टतुट्ठ आसणाओ अब्भुट्ठेइ) देखकर बड़ी  
अधिक प्रसन्न हुई उसने विचार आज मेरे भाग्य का उदय हुआ है, जो  
ये दोनों इभ्यपुत्र मेरे घर पर आये हैं-इस प्रकार विचार कर वह अपने  
आसन से उठी-(अब्भुट्ठिता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ) उठ कर वह सात  
आठ पैर और सामने गई (अणुगच्छिता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी)  
जाकर उसने उन सार्थवाह दारकों से इस प्रकार कहा (संदिसंतु णं देवाणु-

वस्सो धारणु क्थीं. (प्रवहणं दुरुहंति) अने प्रवहणु (सेज्जगाडी) मां जेठा (दुरुहिता  
जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति) जेसिने तेज्जे देवदत्ताने  
घेर पडोन्था. (उवागच्छिता प्रवहणाओ पच्चोरुहंति) त्यां पडोन्थीने तेज्जे प्रव-  
हणु मांथी नीचे उतर्या (पच्चोरुहिता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुप्रविसंति)  
नीचे उतरीने गणिका देवदत्ताना घरमां प्रविष्ट थया. (तए णं सा देवदत्ता गणिया  
सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ) गणिका देवदत्ताज्जे जने सार्थवाह पुत्रोने आवता  
जेया. (पासित्ता हट्ट तुट्ठ आसणाओ अब्भुट्ठेइ) जेधने ते पूण न प्रसन्न  
थय अने तेने थयुं के आजे भारे लायेदथ थये छे केभके आ जने इभ्यपुत्रो  
(शेठियाना पुत्रो) भारे घेर आव्या छे. आ रीते विचार करीने ते पोताना आसन  
परथी जेथी थय (अब्भुट्ठिता सत्तट्ठपयाइं) जेथी थधने ते सात-आठ पगलां सामे  
गय. अणुगच्छिता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी) सामे जधने तेले सार्थवाह  
पुत्रोने क्थुं-- (संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमिहागमणप्पओयणं)

भू७५--तए णं ते सत्थवाहदारगा ण्हाया जाव सरीरा पवहणं दुरुहंति दुरुहित्ता जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता पवहणाओ पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुप्पविसंति, तएणं सा देवदत्ता गणिया सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ पासित्ता हट्टुट्टु आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी--सदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! किमिहागमणप्पओयणं ? तएणं ते सत्थवाहदारगा देवदत्तं गणियं एवं वयासी-इच्छामो णं देवाणुप्पिए ! तुव्वमेहिं सद्धिं सुभुमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिं पच्चणुव्वभवमाणा विहरित्तए । तएणं सा देवदत्ता तौस सत्थवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाया कयकिच्चा कित्ते पवर जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्थवाहदारगा तेणेव समोगया ॥ सू. ८ ॥

टीका--‘तएणं ते सत्थवाहदारगा ण्हाया’ इत्यादि-ततस्तदनन्तरं खलु तौ सार्थवाहदारकौ स्नातौ-स्नानानन्तरं कृतबलिकर्माणौ यावदाभरणालङ्कृतशरीरौ परिहितशुद्धवस्त्रौ प्रवहणं दूरोहतः आरोहतः दूरुह्य यत्रैव

‘तएणं से सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ--(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्थवाहदारक (ह्वाया) कि जिन्होंने पहिले से स्नान कर लिया है (जाव सरीरा) स्नान के बाद यावसादि पक्षियों के लिये अन्नादिका भागरूपबलिकर्म कर जिन्होंने अपने शरीरको आभरण से अलंकृत किया है और शुद्ध वस्त्रों को पहिना

‘तएणं से सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ--(तएणं) त्थार पछी (ते सत्थवाहदारगा) जेने सार्थवाड पुत्रोअे (ण्हाया) स्नान करीने (जाव सरीरा) अने स्नान कर्या जाइ डागडा वगेरे पक्षीअेने अन्न भाग अपीने बलिकर्म करीने पोताना शरीरे सुंदर आभरणो तेमज्ज शुद्ध



देवदत्ताया गणिकाया गृहं वर्तते तत्रैवोपागच्छतः, उपागत्य प्रवहणान् प्रत्यव-  
रोहनः प्रत्यवरुह्य देवदत्ताया गणिकाया गृहमनुप्रविशतः ततस्तदनन्तरं खलु  
सा देवदत्ता गणिका तौ सार्थवाहदारकौ एजमानौ-आगच्छन्तौ पश्यति,  
दृष्ट्वा हृष्टतुष्टा=अतिशयेन प्रमुदिता, अथ मम भाग्योदयो जातो यत एताविभ्य-  
पुत्रौ मम गृहे आगताविति विचार्य स्वासनादभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय सप्ता-  
ऽष्टपदान्यनुगच्छति=अभिगच्छति अनुगम्य, तयोः संमुखं गत्वा तौ सार्थवाह-  
दारकौ प्रत्येवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् 'संदिसंतु णं' सन्दिदन्तु आदेशं

है (प्रवहणं दुरुहंति) उस प्रवहण पर सवार हुए। (दुरुहिता जेणेव देवदत्ताए  
गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति) सवार होकर जहां देवदत्ताका घर था वहां  
पहुँचे। (उवागच्छिता प्रवहणाओ पच्चोरुहंति) पहुँच कर वे उसे प्रवहण से  
नीचे उतारे। (पच्चोरुहिता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुप्रविसंति) नीचे  
उतरकर देवदत्ता गणिका के घरमें प्रवेश किया (तएणं सा देवदत्ता गणिया  
सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ) देवदत्ता गणिकाने उन दोनों सार्थवाह पुत्रोंको  
आते हुए देखा (पासित्ता हट्टतुट्ठ आसणाओ अब्भुट्ठेइ) देखकर बड़ी  
अधिक प्रसन्न हुई उसने विचार आज मेरे भाग्य का उदय हुआ है, जो  
ये दोनों इभ्यपुत्र मेरे घर पर आये हैं-इस प्रकार विचार कर वह अपने  
आसन से उठी-(अब्भुट्ठिता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ) उठ कर वह सात  
आठ पैर और सामने गई (अणुगच्छिता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी)  
जाकर उसने उन सार्थवाह दारकों से इस प्रकार कहा (संदिसंतु णं देवाणु-

वओ धारणु क्थीं. (प्रवहणं दुरुहंति) अने प्रवहणु (सेज्जगाडी) मां भेडा (दुरुहिता  
जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति) भेसिने तेओ देवदत्ताने  
घेर पडोन्था. (उवागच्छिता प्रवहणाओ पच्चोरुहंति) त्यां पडोन्थीने तेओ प्रव-  
हणु मांथी नीचे उतर्यो (पच्चोरुहिता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुप्रविसंति)  
नीचे उतरीने गळिडा देवदत्ताना घरमां प्रविष्ट थया. (तए णं सा देवदत्ता गणिया  
सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ) गळिडा देवदत्ताओ णंने सार्थवाहु पुत्रोने आवता  
लोया. (पासित्ता हट्ट तुट्ठ आसणाओ अब्भुट्ठेइ) भेधने ते भूण न प्रसन्न  
थय अने तेने थयुं डे आले भारे भाग्योदय थयो छे डेमडे आ णंने इभ्यपुत्रो  
(शिठ्ठियाना पुत्रो) भारे घेर आव्या छे. आ रीते विचार करीने ते पोताना आसन  
परथी जेथी थय (अब्भुट्ठिता सत्तट्ठपयाइं) जेथी थयने ते सात-आठ पगलां सामे  
गय. अणुगच्छिता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी) सामे जयने तेओ सार्थवाहु  
पुत्रोने क्थुं-- (संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमिहागमणप्पओयणं)

कुर्वन्तु खलु देवानुप्रियाः किं-रुथमिहागमनप्रयोजनं जातं ? समोपरि भव-  
द्भ्यां महती कृपा कृता यतो मदृष्टे भवन्तो समागतौ ततस्तदनन्तरं तौ सार्धवाह-  
दारकौ देवदत्तां गणिकां प्रत्येवमवादिष्टाम् 'इच्छामोऽणं' आवामिच्छावः खलु  
देवानुप्रिये युष्माभिः सार्द्धं सुभूमिभागस्योद्यानस्योद्यानश्रियं प्रत्यनुभवन्तो-  
विहर्तुम् त्वया सार्द्धमावामुपवनदर्शनादिसुखं कर्तुमिच्छामोऽतस्त्वमावाभ्यां सार्द्धं  
मागच्छ, इति भावः। ततस्तदनन्तरं खलु सा देवदत्ता तयोः सार्धवाहदारकयो-  
रेतमर्थं प्रतिशृणोति, प्रतिश्रुत्य स्नाता स्नानानन्तरं कृतकृत्या 'किं ते' किं  
तेन अलं तेन वर्णनेन 'पवरपरिहिया' पवरपरिहिता=पवरं यथा स्यात्तथा  
परिहिता, वस्त्रपरिधानकलाऽभिज्ञतया सुष्ठुपरिधाना यावत् श्रीसमानवेषा=  
वेषप्रिया साक्षालक्ष्मीवत् प्रणिभासमाना यत्रैव सार्धवाहदारकौ तत्रैव समागता । सू. ८।

प्रिया ! किमिहागमनप्रयोजनं) हे देवानुप्रियो ! कहिये किस प्रयोजन से  
यहाँ आना हुआ है ? (तएणं ते सत्थवाहदारगा देवदत्तां गणियं एवं वयासी)  
देवदत्तागणिकाकी ऐसी बात सुनकर उन दोनों सार्धवाह पुत्रोंने उससे ऐसा  
कहा-(इच्छामो णं देवाणुप्पिए ! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स  
उज्जाणसिं पच्चणुब्भवमाणा विहरित्तए) हे देवाणुप्रिय हमलोग यह चाहते  
हैं कि तुम्हारे साथ सुभूमिभाग उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए  
विचरण करें। (तएणं सा देवदत्ता तेसि सत्थवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ)  
इसके बाद उस देवदत्ताने उन सार्धवाहदारकों के इस कथन रूप अर्थ  
को स्वीकार कर लिया। (पडिसुणित्ता ह्याया कयकिच्चा किं ते पार जाव  
सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्थवाहदारगा तेणेव समागया) इसके पश्चात्  
उसने स्नान किया स्नान कर वह कृत कृत्य हुई अब इस विषय में और

हे देवानुप्रियो ! आशा करो शा डारणुथी अडी, आप पधार्या छे। (तएण ते  
सत्थवाहदारगा देवदत्तां गणियं एवं वयासी) गणिका देवदत्तानी बात सांलणीने  
तेओओे कहुं--(इच्छामो णं देवाणुप्पिए ! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स  
उज्जाणस्स उज्जाणसिं पच्चणुब्भवमाणा विहरित्तए) हे देवानुप्रिये ! तमारी  
साथ सुभूमिभाग उद्याननु सौदर्य पान करतां करतां त्यां विडार करीओ ओवी अमारी  
धुओ छे। (तएणं सा देवदत्ता तेसि सत्थवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ)  
त्यारे देवदत्ताओ सार्धवाह पुत्रोनी बात स्वीकारी लीधी। (पडिसुणित्ता ह्याया कय  
किच्चा किं ते पवर जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्थवाहदारगा तेणेव  
समागया) त्वार ग्राह देवदत्ताओ स्नान कहुं अने स्नान कयो पछी आ विणे

मूलम्—तएणं ते सत्थवाहदारगा देवदत्ताए गणियाए सद्धिं  
जाणं दुरुहंति दुरुहत्ता चंपाए नयरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव सुभूमि-  
भागे उज्जाणे जेणेव नंदा पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता  
पवहणातो पच्चोरुहंति पच्चोरुहत्ता नंदा पोक्खरिणी ओगाहंति ओगाहत्ता  
जलमज्जणं करेंति, करित्ता जलकीडं करेंति, करित्ता ण्हाया देवदत्ताए  
सद्धिं पच्चुत्तरंति पच्चुत्तगित्ता जेणेव थूणामंडवे तेणेव उवा  
गच्छंति, उवागच्छित्ता थूणामंडवे अणुपविसंति अणुपविसित्ता सव्वा-  
लंकारविभूसिया आसत्था विसत्था सुहासणवरगया देवदत्ताए सद्धिं  
तं विउलं असणं ४ धूवपुप्फगंधवत्थं आसाएमाणा वीसाएमाणा  
परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरंति जिमिय भुत्तुत्तरागयावि य णं समाणा  
देवदत्ताए सद्धिं विपुलाइं माणुस्सगाइं कामभोगइं भुंजमाणा  
विहरंति ।सू. ९।

टीका—‘तएणं ते’ इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तौ सार्थवाहदारकौ  
देवदत्तया गणिकया सद्धिं यानं—रथं दूरोहतः, आरोहतः, दूरुह्य=आरुह्य चम्पा-

अधिकवर्णन क्या करें—उसने अच्छी तरह वस्त्र पहिरे यात्रत अपना वेषश्री केजैसा  
बनाया-और जहां वे दोनों सार्थवाह पुत्र थे, वही आनंद के साथ गई । ॥सूत्र ८॥

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्थ-  
वाह पुत्र (देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) देवदत्ता गणिका के साथ (जाणं दुरुहंति)

वधारे शुं ड्डीये तेणे सुंदर वस्त्रो पहियां अने तेणे पोतानो देह लक्ष्मी जेवो  
सुंदर ण्हावीने ते ज्ज्यां अने सार्थवाह पुत्रो हुता त्यांआनंद अनुभवती पहियां । सूत्र ८ ।

‘तए णं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पछी (ते सत्थवाहदारगा) अने सार्थवाह पुत्रो  
(देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) गणिका देवदत्तानी साथे (जाणं दुरुहंति) ते रथभां

कुर्वन्तु खलु देवानुप्रियाः किं-कथमिहागमनप्रयोजनं जातं? ममोपरि भव-  
द्गथां महती कृपा कृता यतो मदगृहे भवन्तो समागतौ ततस्तदनन्तरं तौ सार्थवाह-  
दारकौ देवदत्तां गणिकां प्रत्येवमवादिष्ट्याम् 'इच्छामोऽणं' आवामिच्छावः खलु  
देवानुप्रिये युष्माभिः सार्द्धं सुभूमिभागस्योद्यानस्योद्यानश्रियं प्रत्यनुभवन्ती-  
विहर्तुम् त्वया सार्द्धमावापुष्वनदर्शनादिसुखं कर्तुमिच्छावोऽतस्त्वमावाभ्यां सार्द्ध-  
मागच्छ, इति भावः। ततस्तदनन्तरं खलु सा देवदत्ता तयोः सार्थवाहदारकयो-  
रेतमर्थं प्रतिशृणोति, प्रतिश्रुत्य स्नाता स्नानानन्तरं कृतकृत्या 'किं ते' किं  
तेन अलं तेन वर्णनेन 'पवरपरिहिता' पवरपरिहिता=पवरं यथा स्यात्तथा  
परिहिता, वस्त्रपरिधानकलाऽभिज्ञतया सुष्ठुपरिधाना यावत् श्रीसमानवेपा=  
वेपप्रिया साक्षादक्ष्मीवत् प्रतिभासमाना यत्रैव सार्थवाहदारकौ तत्रैव समागता ।सू. ८।

प्रिया ! किमिहागमनप्रयोजनं) हे देवानुप्रियो ! कहिये किस प्रयोजन से  
यहाँ आना हुआ है? (तएणं ते सत्यवाहदारगा देवदत्तं गणियं एवं वयासी)  
देवदत्तागणिकाकी ऐसी बात सुनकर उन दोनों सार्थवाह पुत्रोंने उससे ऐसा  
कहा-(इच्छामो णं देवाणुप्पिण्ण ! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स  
उज्जाणसिं पच्चणुग्भवमाणा विहरित्तण्ण) हे देवाणुप्रिय हमलोग यह चाहते  
हैं कि तुम्हारे साथ सुभूमिभाग उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए  
विचरण करें। (तएणं सा देवदत्ता तेसिं सत्यवाहदारगाणं एयमहं पडिसुणेइ)  
इसके बाद उस देवदत्ताने उन सार्थवाहदारकों के इस कथन रूप अर्थ  
को स्वीकार कर लिया। (पडिसुणित्ता ह्याया कयकिच्चा किं ते पार जाव  
सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्यवाहदारगा तेणेव समागया) इसके पश्चात्  
उसने स्नान किया स्नान कर वह कृत कृत्य हुई अब इस विषय में और

हे देवानुप्रियो ! आशा करो था शरभुथी अच्छी, आय पधार्या छ। (तएण ते  
सत्यवाहदारगा देवदत्तं गणियं एवं वयासी) गणिका देवदत्तनी बात सांलणीने  
तेयोअये कथुं--(इच्छामो णं देवाणुप्पिण्ण ! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स  
उज्जाणस्स उज्जाणसिं पच्चणुग्भवमाणा विहरित्तण्ण) हे देवानुप्रिये ! तमारी  
साथ सुभूमिभाग उद्याननु सौदर्थ पान करतां करतां त्यां विहार करीअे अेवी अमारी  
धन्धा छ। (तएणं सा देवदत्ता तेसिं सत्यवाहदारगाणं एयमहं पडिसुणेइ)  
त्यारे देवदत्ताअे सार्थवाह पुत्रोनी बात स्वीकारी लीधी। (पडिसुणित्ता ह्याया कय  
किच्चा किं ते पवर जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्यवाहदारगा तेणेव  
समागया) त्पार णाह देवदत्ताअे स्नान कथुं अने स्नान कथो पछी आ विपे

भरणशोभितौ, 'असत्था' आस्वस्थौ परिश्रमापनयनेन स्वस्थीभूतौ, प्रसन्नचित्तौ इत्यर्थः  
 'वीसत्था' विस्वस्थौ विशेषेण स्वस्थीभूतौ सर्वथाऽपगतश्रमौ, सुखासनवरगतौ  
 सुखप्रदपर्यङ्काद्यासनोपविष्टौ, देवदत्तया सार्द्धं तं विपुलं विस्तीर्णम् अशनं पानं स्वाद्यं-  
 स्वाद्यं धूपं पुष्पं गन्धं वस्त्रं च, 'असाएमाणा' आस्वादयन्तौ-ईषत्स्वादयन्तौ  
 'विसाएमाणा' विस्वादयन्तौ-विशेषेण वारं वारमास्वादयन्तौ, 'परिभुंजेमाणा'  
 परिभुंजानौ-परिभोगं कुर्वानौ एवं च अनेन प्रकारेण खलु विहरतः आसाते।  
 अपि च खलु 'जिमिय भुत्तुत्तरागया' जिमित भुक्तोत्तरागतौ जिमितं=खादितं,  
 भुक्तम्=आस्वादितं ताभ्यामुत्तरं=अनन्तरम् आगतौ सुखासनं पर्यङ्कादिकं प्राप्तौ,  
 जिमितमुक्तानन्तरम्-आचान्तौ शुद्धोदकेन कृताचमनौ, लेपाद्यपनयनेन चोक्षौ

आकर वे उसमें प्रविष्ट हुए (अणुप्रविसिक्ता सव्वालंकारविभूसिया आसत्था  
 वीसत्था सुहासणवरगया देवदत्ताए सद्धि) प्रविष्ट होकर सर्व अलंकारो  
 से विभूषित बने हुए वे आश्वस्त-परिश्रम के अपनयन से स्वस्थचित्त हुए  
 विश्वस्त हुए-सर्वथा परिश्रम से रहित हुए और सुखप्रदपर्यङ्क (पलंग) आदि  
 आसन पर जाकर बैठ गये। बाद में उन्होंने उस देवदत्ता के साथ (तं  
 विउलं असणं ४ धूपपुष्पगंधवत्थं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परिभुंजे  
 माणा एवं च णं विहरंति) उस विपुलमात्रामें निष्पन्न हुए अशन, पान, स्वाद्य,  
 स्वाद्य, रूप चारों प्रकार के आहार को किया रुचर कर उसका स्वाद लिया-  
 धूप, पुष्प, गंध, वस्त्र का वितरण किया-(जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा  
 देवदत्ताए सद्धि विउलाइंमाणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा विहरंति) जब  
 वे अच्छी तरह खा पी चुके-तब देवदत्ता के साथ वे पर्यङ्क आदि आसन  
 पर आकर बैठ गये वहां इतना संबन्ध और इस प्रकार जोड़ लेना चाहिये-

(अणुप्रविसिक्ता सव्वालंकारविभूसिया आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया  
 देवदत्ताए सद्धि) प्रवेशीने सर्व अलंकारोत्थी विभूषित थयेला तेथो आश्वस्त-थाके वगर  
 स्वस्थचित्त जन्त्या. विश्वस्त थया-सर्वथा श्रम रहित थया, अने सुषेथी जेसाथ तेवा  
 पलंग (पर्यङ्क) वगेरे आसने पर जेसी गया. त्यारणाह तेमणे देवदत्ता गुण्डिकानी साथे  
 (तं विउलं असण धूपपुष्पगंधवत्थं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परि-  
 भुंजेमाणा एवं च णं विहरंति) पुष्कळ प्रमाणुमां तैयार करावीने त्यां पडोऱ्या-  
 डावां आवेला अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य इष आर जतना आहारने यथारुचि  
 जम्या. तंमज धूप, पुष्प, गंध अने वस्त्रोत्तुं वितरणुकथुं. (जिमिय भुत्तुत्तरागया  
 वि य णं समाणा देवदत्ताए सद्धि विउलाइं माणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा  
 विहरंति) जम्या पडी तेथो पलंग वगेरे सरस आसने पर आवीने देवदत्ता  
 गुण्डिकानी साथे जेसी गया. अडीं आटली विगत वधारांनी जाली लेवी जेधये हे-

नगर्या मध्य-मध्येन-मध्येभूत्वा नैव सुभूमिभागप्रधानमस्ति यगैव नन्दा नाम्नी  
 पुष्करिणी तत्रैवोपागच्छतः, उपागत्य प्रवहणात्=रथात् प्रत्यवरोहतः-प्रत्यवरोहतः  
 केश्यापि यानादुत्तीर्णा, ततःपश्चात्, नन्दा पुष्करिणीमवगाहन्ते, अवगाह=प्रवेशं  
 कृत्वा देवदत्तया सार्द्धं जलमज्जनं-स्नानं कुरुतः स्नानं कृत्वा जलक्रीडां कुरुतः  
 कृत्वा स्नात्वा (स्नातो) देवदत्तया गणिकया सार्द्धमुभौ प्रत्युत्तरतः नन्दापुष्क-  
 रणीतो यद्विनिस्सरतः प्रत्युत्तीर्य यत्रैव स्थूणामण्डपो वस्त्राच्छादितमण्डपस्तत्रैवो-  
 पागच्छतः, उपागत्य स्थूणामण्डपमनुप्रविशतः,=मण्डपमध्ये देवदत्तया सार्द्धं तौ  
 सार्धवाहदारकौ प्रवेशं कुरुत इत्यर्थः । अनुप्रविश्य सर्वालंकारविभूषितौ वस्त्रा-

उस रथ पर आरुढ़ हुए (दुरुहिता चंपाए नयरोए) आरुढ़ होकर चंपा-  
 नगरी के (मज्झं मज्झेणं) ठीक बीचोबीच से होकर (जेणेव सुभूमिभागे  
 उज्जाणे) जहां सुभूमि भाग नाम का उद्यान और उसमें भी (जेणेव नन्दा-  
 पुष्करिणी) जहां नन्दा नाम की पुष्करिणी (वावडी) थी (तेणेव उवागच्छंति)  
 वहां पहुँचे । (उवागच्छिता प्रवहणातो पच्चोरुहंति) पहुँच कर फिर वे रथ  
 से नीचे उतरे । (पच्चोरुहिता नन्दापोष्करिणीं ओगाहंति) उतर कर नन्दा  
 पुष्करिणी में प्रवेश किया (ओगाहिता जलमज्जनं करेंति) प्रवेश कर वहां  
 उन्होंने स्नान किया (करिता जलक्रीडां करेंति) स्नान करके जलक्रीडा की  
 (करिता लाया देवदत्ताए सार्द्धं पच्चुत्तरंति) जलक्रीडा करके वे दोनों देव-  
 दत्ता गणिका के साथ उस पुष्करिणी से बाहर निकले (पच्चुत्तरिता जेणेव  
 थूणामंडवे तेणेव उवागच्छंति) बाहर निकल कर जहां वह स्थूणामंडप-  
 वस्त्राच्छादितमंडप-था-वहां आये-(उवागच्छिता थूणामंडवं अणुपविसंति)

सवार थया. (दुरुहिता चंपाए नयरीए) सवार थयने थंपानगरीनी (मज्झं  
 मज्झेणं) ठीक वय्थे थयने (जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे) ज्थां सुभूमिभाग उद्यान  
 तेमज् (जेणेव नन्दा पुष्करिणी) ज्थां नन्दा नामे पुष्करिणी (कमण जेमां डोय  
 तेवी स्वयंछ पाणीनी नानी सुंदर वाव) डती (तेणेव उवागच्छंति) त्यां पडोन्थ्या.  
 (उवागच्छिता प्रवहणातो पच्चोरुहंति) पडोन्थीने तेज्थो रथमांथी नीचे उतर्या.  
 (पच्चोरुहिता नन्दा पोष्करिणीं ओगाहंति) उतारीने नन्दा पुष्करिणी (वाव) मां पेडा  
 थने (ओगाहिता जलमज्जनं करेंति) प्रवेशीने तेज्थोस्ते स्नान करुं. (करिता  
 जलक्रीडां करेंति) स्नान करीने तेज्थोस्ते जल डीडास्ते करी. (करिता लाया देव-  
 दत्ताए सार्द्धं पच्चुत्तरंति) जल डीडा करीने तेज्थो थने देवदत्ता गणिकानी साथे  
 पुष्करिणीमांथी जडार नीडज्या. (पच्चुत्तरिता जेणेव थूणामंडवे तेणेव उवागच्छंति  
 जडार नीडणीने ज्थां स्थूणा मंडप (वस्त्रथी आच्छादितमंडप) अथात् तणू डतो त्यां गयां.  
 (उवागच्छिता थूणामंडवं अणुपविसंति) त्यां जयने तेज्थो मंडपमां प्रविष्ट थया.



भरणशोभितौ, 'असत्था' आस्वस्थौ परिश्रमापनयनेन स्वस्थीभूतौ, प्रसन्नचित्तौ इत्यर्थः  
 'वीसत्था' विस्वस्थौ विशेषेण स्वस्थीभूतौ सर्वथाऽपगतश्रमौ, सुखासनवरगतौ  
 सुखप्रदपर्यङ्कायासनोपविष्टौ, देवदत्तया सार्द्धं तं विपुलं विस्तीर्णम् अशनं पानं खाद्यं-  
 स्वाद्यं धूपं पुष्पं गन्धं वस्त्रं च, 'असाएमाणा' आस्वादयन्तौ-ईषत्स्वादयन्तौ  
 'विसाएमाणा' विस्वादयन्तौ-विशेषेण वारं वारमास्वादयन्तौ, 'परिभुंजेमाणा'  
 परिभुञ्जानौ-परिभोगं कुर्वानौ एवं च अनेन प्रकारेण खलु विहरतः आसाते।  
 अपि च खलु 'जिमिय भुत्तुत्तरागया' जिमित भुक्तोत्तरागतौ जिमितं=खादितं,  
 भुक्तम्=आस्वादितं ताभ्यामुत्तरं=अनन्तरम् आगतौ सुखासनं पर्यङ्कादिकं प्राप्नो,  
 जिमितमुक्तानन्तरम्-आचान्तौ शुद्धोदकेन कृताचमनौ, लेपाद्यपनयनेन चोक्षौ

आकर वे उसमें प्रविष्ट हुए (अणुप्रविसिक्ता सञ्चालंकारविभूतिया आसत्था  
 वीसत्था सुहासणवरगया देवदत्ताए सद्धि) प्रविष्ट होकर सर्व अलंकारों  
 से विभूषित बने हुए वे आश्वस्त-परिश्रम के अपनयन से स्वस्थचित्त हुए  
 विश्वस्त हुए-सर्वथा परिश्रम से रहित हुए और सुखप्रदपर्यङ्क (पलंग) आदि  
 आसन पर जाकर बैठ गये। बाद में उन्होंने उस देवदत्ता के साथ (तं  
 विउलं असणं ४ धूपपुष्पगन्धवत्थं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परिभुंजे  
 माणा एवं च णं विहरंति) उस विपुलमात्रामें निष्पन्न हुए अशन, पान, खाद्य,  
 स्वाद्य, रूप चारों प्रकार के आहार को किया रुचर कर उसका स्वाद लिया-  
 धूप, पुष्प, गन्ध, वस्त्र का वितरण किया-(जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा  
 देवदत्ताए सद्धि विउलाइंमाणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा विहरंति) जब  
 वे अच्छी तरह खा पी चुके-तब देवदत्ता के साथ वे पर्यङ्क आदि आसन  
 पर आकर बैठ गये वहां इतना संवन्ध और इस प्रकार जोड़ लेना चाहिये-

(अणुप्रविसिक्ता सञ्चालंकारविभूतिया आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया  
 देवदत्ताए सद्धि) प्रवेशीने सर्व अलंकारोत्थी विभूषित थयेला तेथो आश्वस्त-थाड वगर  
 स्वस्थचित्त जन्त्या. विश्वस्त थया-सर्वथा श्रम रहित थया, अने सुप्तेथी जेसाथ तेवा  
 पलंग (पर्यङ्क) वगेरे आसने पर जेसी गया. त्यांरथाह तेमणे देवदत्ता गुणिकानी साथे  
 (तं विउलं असण धूपपुष्पगन्धवत्थं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परि-  
 भुंजेमाणा एवं च णं विहरंति) पुष्कण प्रमाणुमां तैयार करावीने त्यां पडोऱ्या-  
 डावां आवेला अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य रूप आर जतना आहारने यथारुचि  
 जम्या. तेमज धूप, पुष्प, गन्ध अने वस्त्रोत्तुं वितरणकथुं. (जिमिय भुत्तुत्तरागया  
 वि य णं समाणा देवदत्ताए सद्धि विउलाइं माणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा  
 विहरंति) जम्या पडी तेथो पलंग वगेरे सरस आसने पर आवीने देवदत्ता  
 गुणिकानी साथे जेसी गया. अडीं आटली विगत वधाराणी जाली लेवी जेधथे हे-

स्वच्छौ, अत एव परमशुचिभूतो सुखासनं प्राप्योपविष्टौ इत्यर्थः । 'समाणा' सन्तौ देवदत्ताया गणिकया साद्विधुलान्-रीस्तीर्णान् मानुष्यदान्-मनुष्य-संबन्धिनः कामभोगान् शब्दादीन् पञ्चेन्द्रियविषयान् भुञ्जानौ विहरत आसातेस्मात् ९

मूलम्—तएणं ते सत्थवाहदारगा पुब्बावरण्हकालसमयंसि देवदत्ताए गणियाए सद्धिं धूणामंडवाओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता हत्थ संगेह्ठीए सुभूमिभागे उज्जाणे वहुसु आलिघरएसु य कयलीघरेसु य लयाघरएसु य अच्छणघरएसु य पेच्छणघरएसु य पसाहणघरएसु य मोहणघरएसु य सालघरएसु य जालघरएसु य कुसुमघरएसु य उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणा विहरंति ॥सू. १०॥

टीका—ततस्तदनन्तरं खलु तौ सार्थवाहदारकौ पूर्वापराह्नकालसमये-पश्चिमे महरे देवदत्तया गणिकया साद्विधुणामण्डपात् प्रतिनिष्क्रामतः बहि-

‘भोजन करने के बाद उन्होंने आचमन-शुद्ध जल से कुल्ला किया । खाते समय जो अन्नादि के सीत उनके पैर आदि अवयवों पर गिर गये थे उन्हें उन्होंने दूर कर उन अवयवों को साफ किया । इस तरह परमशुचि भूत होकर सुखासन पर आकर बैठ गये’ बैठने के बाद उन्होंने उस देवदत्ता गणिका के साथ विपुल मनुष्यभव संबन्धी कामभोगों को शब्दादिक पांचो इन्द्रियों के विषयों को सेवन किया । ॥सूत्र ९॥

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएण) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे सार्थवाह दारक (पुब्बावरण्ह-काल समयंसि) पश्चिम महर में (देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) देवदत्ता

जम्हा पछी तेओओ शुद्ध पाणीथी डोगणा क्यो. जमती वणते अन्न वगेरेना उणो तेमना डाय पग उपर पडी गया डता तेमने तेओओ साक्ष क्यो. अने आ प्रमाणे पोताना अवयवोने स्वच्छ बनाव्या. शुद्ध थया. णाह तेओ सरस सुण्ह आसन पर आवीने ओहा. ओसीने तेओओ गणिका देवदत्तानी साथे पुण्हण मनुष्यभवना कामभोगो तेमज् शण्ह वगेरे पांचे छन्द्रियोना विषयोनुं सेवन क्युं. ॥सूत्र. ९॥

‘त एणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि !

टीकार्थ—(तएणं) त्पराह (ते सत्थवाहदारगा) सार्थवाहना पुत्रो (पुब्बावर-हकालसमयंसि) पाछला पंडोरना वणते (देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) देवदत्ता शु-षिकांनी साथे (धूणामंडवाओ पडिनिक्खमंति) स्थूला मंडपनी णडार नीकल्या.

નિસ્સરતઃ પ્રતિપ્ક્રિમ્ય 'હત્યસંગેહિના-અન્યોન્યં હસ્તાવલમ્બનેન સુભૂમિભાગે ઉદ્યાને  
વહુષુ 'આલિઘરણ્ણુ' આલિગૃહકેષુ શ્રેણિચદ્વગૃહાકારપરિણતવનસ્પતિવિશેષ-  
નિકુઞ્જેષુ ચ-પુનઃ 'કયલીઘરેણુ' કદલી ગૃહકેષુ-કદલી નિકુઞ્જેષુ ચ 'લયા-  
ઘરણ્ણુ' લતાગૃહકેષુ-ચંપકાશોકાદિલતાગૃહેષુ ચ 'અચ્છળઘરણ્ણુ'  
આસનગૃહકેષુ આસન-ઉપવેશનમ્ તેષાં ગૃહેષુ યદા તદા જના આગત્ય સુસ્વા-  
સિકવોપવિશન્તિ યત્ર તત્ર ચ 'પેચ્છળઘરણ્ણુ' પ્રેક્ષણગૃહકેષુ-પ્રેક્ષણ-પ્રેક્ષણકં  
તસ્યગૃહેષુ-યત્રાગત્ય જના નાટકાદિકં કુર્વન્તિ પ્રેક્ષન્તે ચ તેષુ 'પસાદળઘર-  
ણ્ણુ ય' પ્રસાધનગૃહકેષુ પ્રસાધનં મણ્ડનં યત્રાગત્ય જના સ્વં પેરં ચ મણ્ડયન્તિ તેષાં  
ગૃહેષુ 'મોહળઘરણ્ણુ' મોહનગૃહકેષુ-વિલાસગૃહેષુ 'સાલઘરણ્ણુ' શાલા-  
ગૃહકેષુ શાલા શાલા તાસાં ગૃહેષુ વસત્તગૃહેષુ વા' જાલઘરણ્ણુ' જાલગૃહકેષુ—  
જાલિકાન્વિતગૃહેષુ યત્રાભ્યન્તરસ્થિતા વહિઃ સ્થિતૈ ન દશ્યન્તે કિન્તુ અન્તઃ

ગણિકા કે સાથ (થૂળામંડવાઓ પડિનિવલ્લમંતિ) ઉસ સ્થૂળામંડપ સે  
ચાહર નિકલે (પડિનિવલ્લમિત્તા) ચાહર નિકલ કર (હત્યસંગેલ્લીઈ) હાથ મેં  
હાથ મિલાઈ હુઈ વે (સુભૂમિભાગે ઉજ્જાણે વહુસુ આલિઘરણ્ણુય) ઉસ  
સુભૂમિભાગ ઉદ્યાન મેં અનેક શ્રેણિચદ્વ ગૃહાકાર પરિણત હુઈ વનસ્પતિ  
વિશેષોં કે નિકુંજોં મેં (કયલીઘરણ્ણુ ય લયાઘરણ્ણુય) કદલીગૃહોં મેં ઓર લતાગૃહોં મેં  
(અચ્છળ ઘરણ્ણુય) યદા કદા આઈ હુઈ જનતા કો વેઠને કે લિયે વનાયે હુઈ આસન  
ગૃહોં મેં (પેચ્છળઘરણ્ણુય) જહાં પર આકર કે જન નાટક આદિ કરતે હૈં ઓર દેખતે હૈં  
ઉન પ્રેક્ષણ ઘરોં મેં (પસાદળઘરણ્ણુ ય) પ્રસાધન ગૃહોં મેં—જહાં આકર કે  
મનુષ્ય અપને કો ઓર દૂસરો કો અલંકારો સે વિભૂષિત કરતે હૈં એસે  
ઘરોં મેં (મોહળઘરણ્ણુય) વિલાસ ગૃહોં મેં (સાલઘરણ્ણુ ય શાલા ઘરોં  
મેં (જાલઘરણ્ણુ ય) જાલિકાન્વિત ઘરોં મેં—જિનકે ખીતર રહે હુઈ

(પડિનિવલ્લમિત્તા) બહાર નીકળીને (હત્યસંગેલ્લીઈ) હાથમાં હાથ નાખીને તેઓ  
(સુભૂમિભાગે ઉજ્જાણે વહુસુ આલિઘરણ્ણુ ય) સુભૂમિભાગ ઉદ્યાનમાં આવેલા  
ઘણા શ્રેણિચદ્વ ઘરના આકાર જેવા વનસ્પતિ વિશેષોથી બનાવવામાં આવેલા નિકુંજોંમાં  
(કયલીઘરણ્ણુ ય લયાઘરણ્ણુ ય) કદલી ગૃહોંમાં, લતાગૃહોંમાં, (અચ્છળઘર-  
ણ્ણુ ય) અવારનવાર આવતા સામાન્યિકોને ખેંચવા માટે બનાવવામાં આવેલા આસનગૃહોંમાં  
(પેચ્છળઘરણ્ણુ ય) માણસો બધાં આવીને નાટક વગેરે કરે છે અને બુઝે છે તેવા  
પ્રેક્ષાગૃહોંમાં (પસાદળઘરણ્ણુ ય) પ્રસાધન ગૃહોંમાં એટલે કે બધાં માણસો પોતાની  
બાતને અને બીજાઓને શણગારે છે, તેવા ઘરોંમાં, [મોહળઘરણ્ણુ ય] વિલાસગૃહોંમાં  
(સાલઘરણ્ણુ ય) શાળાગૃહોંમાં (જાલઘરણ્ણુ ય) જાળીઓવાળા ઘરોંમાં એટલે કે

स्थितैर्बहिःस्था दृश्यन्ते तादृशेषु च 'कुसुमघरणसु' कुसुमगृहकेषु=पुष्पगृहकेषु, इत्यादिषु, स्थानेषु 'उज्जाणसिरि' उद्यानश्रियं, उपवनस्य शोभां सुखं च 'पञ्चणु भवमाणा' प्रत्यनुभवन्ती देवदत्ताया सार्द्धमनुभवन्ती विहरतः=विचरतः । सू. १०।

मूलम्—तए णं ते सत्थवाह दारया जेणेव से मालुया कच्छए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएणं सा वणमऊरी ते सत्थहदारए एज्जमाणे पारुइ पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा पलाया महया महया सइणं केकारवं विणिम्मुयमाणी २ मालुयाकच्छाओ पडिणिकखमइ, पडिणिकखमित्ता एगसि रुक्खडालयंसि टिच्चा ते सत्थ वाहदारए मालुयाकच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिट्ठइ ॥सू० ११॥

टीका—'तएणं ते' इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तदुद्यानशोभासु-  
खानुभवानन्तरं तौ सार्थवाहदारकौ यत्रैव स मालुकाकक्षकः पूर्वोक्त एका-  
स्थिकफलानां वृक्षविशेषाणां काननं वर्तते तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' आधार यतां

मनुष्य वाहिर रहे हुए मनुष्यों की दृष्टि में न आवे किन्तु वाहिर मनुष्य उन भीतर में रहे हुए मनुष्यों को दिखलाई पड़ते रहे ऐसे घरों में—(कुसुमघरणसु य) पुष्प गृहों (उज्जाणसिरि पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) देवदत्ता के साथ २ उद्यानश्री का निरीक्षण करता हुआ आनंद भोग करते हुए विचरते रहे । सूत्र १० ॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्थवाह दारक (जेणेव मालुयाकच्छए) जहां वह मालुका कच्छ था (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर जानेके लिये उत्कंठित हुए (तएणं सा वणमऊरी ते

ओवा धशेमां डे जेमनी अंदर जेडेला भाणुसेने सारी पेडे जेध शडे पणु जडारना भाणुसे अंदरना भाणुसेने जेध न शडे, (कुसुमघरणसु य) पुष्प गृहों, (उज्जाणसिरि पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) उद्यानश्री शोभा नेता देवदत्तानी साथे सुख अनुभवता विचरता रह्या । ॥सूत्र १०॥

'तएणं ते सत्थवाह-दारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्पारणाद (ते सत्थवाहदारगा) जाने सार्थवाह पुत्रे (जेणेव-  
से मालुया कच्छए) जे तरक्ष मालुका कच्छ डतो. (तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

गमनाय=तत्र गन्तुमुत्कण्ठितौ गतौ च, ततस्तदनन्तरं खलु सा वनमयूरी  
तौ सार्थवाहदारकौ 'एजमाणे' एजमानौ प्रत्यागच्छन्तौ पश्यति दृष्ट्वा च'  
'भीया' भीताः अकस्माद् भयजनकवस्तुदर्शनेन भयं प्राप्ता 'तत्था' अस्ता-  
'भयजनितदुःखं प्राप्ता स्तब्धा वा क्षणमात्रं भयेन निश्चला जाता 'तसिया'  
अन्तर्भावितव्यर्थः, त्रासिता आत्मनः प्रतिप्रदेशं भयेन संक्रान्ता जाता 'उव्विग्गा'  
उद्विग्ना-त्राणशरणरहितत्वेनोद्वेगं प्राप्ता 'पलाया' पलायिता-उड्डियनोद्युक्ता  
'महया २ सद्देणं' महता २ शब्देन उच्चस्वरेण 'केकारवं' मयूरशब्दं 'विणि-  
म्मुयमाणी २' विनिर्मुञ्चन्ती=पुनःपुनः कुर्वन्ती मालुकारुक्ष्णात् 'पडिनिक्ख-  
मइ' प्रतिनिष्कामति-निस्सरति 'पडिनिक्खत्ता' प्रतिनिष्क्रम्य निस्सृत्य स्वस्था-  
नादुड्डिय 'एगंसि' एकस्यां वृक्षशाखायां 'ठिच्चा' स्थित्वा तौ सार्थवाहदारकौ तं

सत्यवाहदारण एजमाणे पासइ) उस वनमयूरीने उन दोनों सार्थवाह  
दारकों का ज्यों ही आते हुए देखा-तो (पासित्ता) देखकर (भीया तत्था  
तसिया उव्विग्गा पलाया) भयभीत हो गई अस्त हो गई--अकस्मान्  
भयजनक वस्तु को देखने से भय जनित दुःखको प्राप्त हुई-अथवा क्षण  
मात्र के लिये भयसे निश्चल हो गई-आत्मा के प्रतिप्रदेश में भय  
से युक्त हो गई, उद्वेग वो प्राप्त हो गई-और उस स्थान से उड़ी (महया २ सद्देणं  
केकारवं विणिम्मुयमाणी २ मालुयारुच्छाओ पडिनिक्खमइ) उड़ती २ बड़े जोर २ से  
केकारव (शब्द) बारबार करती करती वह उस मालुका कच्छरु से बाहर हो गई  
(पडिनिक्खमिता एगंसि रुक्खडालयंसि ठिच्चा ते सत्यवाहदारण मालुया-  
कच्छयं च अणिमिस्सए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिड्डइ) बाहर होकर एक

ते जालु जवा आगण वध्या (तएणं सा वणमऊरी ते सत्यवाहदारण एजमाणे पासइ)  
ते देखे जने सार्थवाहाने जेया अने (पासित्ता) जेधने (भीया तत्था तसिया उव्विग्गा  
पलाया) ठरी गछ, संत्रस्त थछ गछ ओचिंता लय पमाडनारी वस्तुने जेधने ते  
दुःख पाभी, अथवा तो ते लयलीत थछने थोडा वणत भाटे स्तब्ध थछ गछ, तेना  
आत्मप्रदेशोभां लय प्रसरि गयो. ते उद्विग्न थछ गछ तेनी सामे रक्षाने डोछ पणु  
जतने उपाय हुतो नहि तेथी ते व्याकुण जनी गछ अने ते स्थानेथी उडी  
(महया २ सद्देणं केकारवं विणिम्मुयमाणी २ मालुया कच्छाओ पडिनिक्खमइ)  
अने मोटा स्वरेथी टड्डुक्ती २ उडती ते मालुका कच्छथी जडार नीकणी गछ. (पडिनि-  
क्खमिता एगंसि रुक्खडालयंसि ठिच्चा ते सत्यवाहदारण मालुया  
कच्छयं च अणिमिस्सए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिड्डइ) मालुका कच्छनी जडार नीकणीने ते



स्थितैर्घडिःस्था दृश्यन्ते तादृशेषु च 'कुसुमघरएसु' कुसुमगृहकेषु=पुष्पगृहकेषु, इत्यादिषु, स्थानेषु 'उज्जाणसिरि' उद्यानश्रियं, उपवनस्य शोभां सुखं च 'पञ्चणु भवमाणा' प्रत्यनुभवन्ती देवदत्ताया सार्द्धमनुभवन्ती विहरतः=विचरतः । सू. १०।

मूलम्—तए णं ते सत्थवाह दारया जेणेव से मालुया कच्छए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएणं सा वणमऊरी ते सत्थहदारए एज्जमाणे पारुइ पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा पलाया महया महया सइणं केकारवं विणिम्मुयमाणी २ मालुयाकच्छाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता एगसि रुक्खडालयंसि ठिच्चा ते सत्थ वाहदारए मालुयाकच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिट्ठइ ॥सू० ११॥

टीका—'तएणं ते' इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तदुद्यानशोभासु-  
खानुभवानन्तरं तौ सार्धवाहदारकौ यत्रैव स मालुकाकक्षकः पूर्वोक्त एका-  
स्थिकफलानां वृक्षविशेषाणां काननं वर्तते तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' प्राथार यतां

मनुष्य बाहिर रहे हुए मनुष्यों की दृष्टि में न आवे किन्तु बाहिर मनुष्य उन भीतर में रहे हुए मनुष्यों को दिखलाई पड़ते रहे ऐसे घरों में—(कुसुमघरएसु य) पुष्प गृहों (उज्जाणसिरि पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) देवदत्ता के साथ २ उद्यानश्री का निरीक्षण करता हुआ आनंद भोग करते हुए विचरते रहे । सूत्र १० ॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्धवाह दारक (जेणेव मालुयाकच्छए) जहां वह मालुका कच्छ था (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर जानेके लिये उत्कंठित हुए (तएणं सा वणमऊरी ते

ओवा घरेमां डे जेमनी अंदर जेठेला भाणुसोने सारी पेठे जेध शके यणु जडारना भाणुसो अंदरना भाणुसोने जेधन शके, (कुसुमघरएसु य) पुष्प गृहों, (उज्जा-  
णसिरि पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) उद्यानश्री शोभा नेता देवदत्तानी साथे सुख अनुभवता विचरता रह्या । ॥सूत्र १०॥

'तएणं ते सत्थवाह-दारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्थारणाद (ते सत्थवाहदारगा) जने सार्धवाह पुत्रे (जेणेव-  
से मालुया कच्छए) जे तश्च मालुका कच्छ डतो. (तेणेव पहारेत्थ गमणाए)



टाका—‘तएणं ते’ ततस्तदनन्तरं—मयूर्या उड्डुगनान्तरा’ तौ सार्थवाह-  
दारकाँ अन्योऽन्यं=परस्परं शब्दयतः=भाषयतः=संमुखी कुरुतः ‘सदावित्ता’  
शब्दयित्वा=अन्योन्यमाहूय वक्ष्यमाणप्रकारेणावादिष्टाम् ‘जहाणं’ यथा खलु  
देवानुप्रिय ! एषा वनमयूरी आवामेजमानौ आगच्छन्ती दष्टा च भीता, त्रस्ता,  
त्रसिता, उद्विग्ना पलायिता—त्वस्थानं त्यक्त्वाऽन्यत्स्थानं गता महता शब्देन  
केकारवं मुठवन्ती मती यावदात्रां मालुकाकच्छकं च पुनः पुनः प्रेक्षमाणी  
तिष्ठति ‘तं’ तत्-तस्मात् ‘भवियच्चं’ भवितव्यम् ‘एत्थ’ अत्र केनापि कार-

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्थवाह-  
दारगोंने (अन्नमणं सदावेति) परस्पर में विचार किया बातचीत की (सदा-  
वित्ता) बातचीत कर के (एवं वयासी) फिर वे इस प्रकार कहने लगे—  
(जहाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमज्जरी अम्हे एज्जमाणा पासित्ता भीया  
तत्था तसिया उद्विग्गा पलाया महया २ सदेणं जाव अम्हे मालुयाक  
च्छयं च पेच्छमाणी २ चिट्ठइ) जिस कारण हे देवानुप्रिय ! यह वनमयूरी  
हम लोगों को आता हुआ—देखकर भयभीत, त्रस्त और त्रासित होकर  
उद्विग्न बनी और यहां से उड़ गई—उड़ती २ उसने बड़े जोर २ से के-  
कारव किया—और इस मालुकाकच्छक से बाहर होकर एक वृक्ष की  
डाल पर बैठी २ यह हम लोगों की ओर और मालुकाकच्छक की ओर  
बार २ देख रही है (तं भवियच्चं एत्थ कारणेणं त्तिरुहु मालुयाकच्छयं अंतो  
अणुपविसंति) तो इसमें कोई न कोई कारण अवश्य होना चाहिये—ऐसा

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थारणाह (ते सत्थवाहदारगा) अने सार्थवाह पुत्रोअे  
(अन्नमणं सदावेति) अेकअीज्ज साथे बातो करी (सदावित्ता) बातचीत करीने  
(एवं वयासी) तेअो उडेवा लाअ्या (जहाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमज्जरी अम्हे  
एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उद्विग्गा पलाया महया २ सदेणं जाव  
अम्हे मालुयाकच्छयं च पेच्छमाणी २ चिट्ठइ) हे देवानुप्रिय ! आ देव आपणुने  
आवता नेअने लयलीत संतस्त, त्रासित, अने व्याकुल थअने अडीथी डडी, अने  
न्यारे ने डडी त्थारे तेअे मोटा अवाअे डेकारव क्यो. अने ते मालुकाकच्छनी णडार  
नीडणीने अेक अडनी थाणा उपर जेसी गअ छे अने त्थांथी पणु ते आपणुने अने  
मालुकाकच्छने बारंवार नेअ रही छे. (तं भवियच्चं एत्थ कारणेणं त्तिरुहु मालुया  
कच्छयं अंतो अणुपविसंति) तो अेनी पाछण कअने कअ रहस्य अेअस डेअु

मालुकाकक्षकं च 'अणिमिसाए' भनिमेषया निथलया 'दिट्ठीए' दृष्टया  
'पेहमाणी २' प्रेक्षमाणी २-पुनः पुनः पश्यन्ती 'चिट्ठइ' तिष्ठति ॥सू० ११॥

भूल५—तएणं ते सत्थवाहदारगा अणमणं सदावेति  
सदावित्ताः एवं वयासी जहाणं देवानुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे  
एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा पलाया महया  
महया सदेणं जाव अम्हे मालुया कच्छयं च पेच्छमाणी २चिट्ठइ, तं  
भयियव्वमेत्थ कारणेणं त्तिकट्ठ मालुयाकच्छयं अंतो अणुपविसंति  
अणुपविसित्ता तत्थ दो पुट्ठे परियागये जाव पासित्ता अन्नमन्नं  
सदावेति, सदावित्ता एवं वयासी-सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं  
इमे वणमऊरी अंडए साणं २ जाइमंताणं कुकुडियाणं अंडएसुअ  
पक्खिवावित्तए तएणं ताओ जाइमंताओ कुकुडियाओ एए अंडए  
सएणं पक्खिवाएणं सारक्खमाणीओ संगेवेमोणीओ विहरिस्संति,  
तएणं अम्हं एत्थं दो कीलामणगा मऊरीपोयगा भविस्संतित्ति कट्ठु  
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणति, पडिसुणित्ता सए मए दासचेडए  
सदावेति सदावित्ता एवं वयासी गच्छह णं तुब्भेदेवाणुप्पिया ! इमे  
अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुकुडीणं अंडएसु पक्खिवह जाव-  
तेवि पक्खिवेति ॥सू. १२॥

वृक्ष की डाल पर जाकर बैठ गई और बैठी २ वहीं से उन दोनों  
सार्थवाहदारकों को और मालुका कक्षक की ओर बार बार अनिमिष  
दृष्टि से देखने लगी । सूत्र । ११ ।

એક ઝાડની શાખા ઉપર બેસી ગઈ, અને ત્યાંથી જ તે બંને સાર્થવાહોને તેમજ  
માલુકા કચ્છની તરફ વારંવાર એકી નજરે બેવા લાગી. ॥સૂત્ર ૧૧॥

टाका—‘तएणं ते’ ततस्तदनन्तरं—मयूरा उड्डयनान्तरं तौ सार्धवाह-  
दारको अन्योऽन्यं=परस्परं शब्दयतः=भाषयतः=संमुखी कुरुतः ‘सदावित्ता’  
शब्दयित्वा=अन्योन्यमाहूय वक्ष्यमाणप्रकारेणावादिष्टाम् ‘जहाणं’ यथा खलु  
देवानुप्रिय ! एषा वनमयूरी आवामेजमानौ आगच्छन्तौ दष्टा च भीता, त्रस्ता,  
त्रसिता, उद्विग्ना पलायिता—स्वस्थानं त्यक्त्वाऽन्यत्स्थानं गता महता शब्देन  
केकारवं मुञ्चन्ती मती यावदावां मालुकाकच्छकं च पुनः पुनः प्रेक्षमाणी  
तिष्ठति ‘तं’ तत्-तस्मात् ‘भवियच्च’ भवितव्यम् ‘एत्थ’ अत्र केनापि कार-

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्धवाह-  
दारकोंने (अन्नमणं सदावेति) परस्पर में विचार किया बातचीत की (सदा-  
वित्ता) बातचीत कर के (एवं वयासी) फिर वे इस प्रकार कहने लगे—  
(जहाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे एज्जमाणा पासित्ता भीया  
तत्था तसिया उद्विग्गा पलाया महया २ सहेणं जाव अम्हे मालुयाक  
कच्छयं च पेच्छमाणी २ चिट्ठइ) जिस कारण हे देवानुप्रिय ! यह वनमयूरी  
हम लोगों को आता हुआ—देखकर भयभीत, त्रस्त और त्रासित होकर  
उद्विग्न बनी और यहां से उड़ गई—उड़ती २ उसने बड़े जोर २ से के-  
कारव किया—और इस मालुकाकच्छक से बाहर होकर एक वृक्ष की  
डाल पर बैठी २ यह हम लोगों की ओर और मालुकाकच्छक की ओर  
बार २ देख रही है (तं भवियच्च एत्थ कारणेणं तिरुहु मालुयाकच्छयं अंतो  
अणुपविसंति) तो इसमें कोई न कोई कारण अवश्य होना चाहिये—ऐसा

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थारणाद (ते सत्थवाहदारगा) जिनने सार्धवाह पुत्रोणे  
(अन्नमणं सदावेति) ओकणीज साथे बातो करी (सदावित्ता) बातचीत करीने  
(एवं वयासी) तेओ उडेवा लाया (जहाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे  
एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उद्विग्गा पलाया महया २ सहेणं जाव  
अम्हे मालुयाकच्छयं च पेच्छमाणी २ चिट्ठइ) हे देवानुप्रिय ! आ देल आपणुने  
आपता नेधने लयलीत संत्रस्त, त्रासित, अने व्याकुल थधने अडीथी उडी, अने  
न्यारे ने उडी त्थारे तेणु मोटा अवाणे डेकारव क्यो अने ते मालुकाकच्छनी णडार  
नीकणीने ओक आडनी शाणा उपर जेसी गध छे अने त्यांथी पणु ते आपणुने अने  
मालुकाकच्छने वारंवार नेध रडी छे. (तं भवियच्च एत्थ कारणेणं तिरुहु मालुया  
कच्छयं अंतो अणुपविसंति) तो ऐनी पाछण कंधने कंध रहस्य थोक्कस डोणुं

मालुकाकक्षकं च 'अणिमिसाए' अनिमेषया निधलया 'दिहीए' दृष्ट्या  
'पेहमाणी २' प्रेक्षमाणी २-पुनः पुनः पश्यन्ती 'चिदुइ' तिष्ठति ॥सू० ११॥

भूलम्—तएणं ते सत्थवाहदारगा अणमणं सदावेति  
सदावित्ताः एवं वयासी जहाणं देवानुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे  
एजमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा पत्ताया महया  
महया सहेणं जाव अम्हे मालुया कच्छयं च पेच्छमाणी २चिट्ठइ, तं  
भयिस्समेत्थ कारणेणं तिकट्ठ मालुयाकच्छयं अंतो अणुपविसंति  
अणुपविसित्ता तत्थ दो पुढे परियागये जाव पासित्ता अन्नमन्नं  
सदावेति, सदावित्ता एवं वयासी-सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं  
इमे वणमऊरी अंडए साणं २ जाइमंताणं कुकुडियाणं अंडएसुअ  
पक्खिवावित्तए तएणं ताओ जाइमंताओ कुकुडियाओ एए अंडए  
सएणं पक्खिवाएणं सारक्खमाणीओ संगेवेमाणीओ विहरिस्संति,  
तएणं अम्हं एत्थं दो कीलामणगा मऊरीपोयगा भविस्संतिसि कट्ठु  
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणति, पडिसुणित्ता सए मए दासचेडए  
सदावेति सदावित्ता एवं वयासी गच्छह णं तुव्वेदेवाणुप्पिया ! इमे  
अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुकुडीणं अंडएसु पक्खिवह जाव-  
तेवि पक्खिवेति ॥सू. १२॥

दृक्ष की डाल पर जाकर बैठ गई और बैठी २ वही से उन दोनों  
सार्थवाहदारकों को और मालुका कक्षक की ओर बार बार अनिमिष  
दृष्टि से देखने लगी । सूत्र । ११ ।

એક આડની શાખા ઉપર બેસી ગઈ, અને ત્યાંથી જ તે બંને સાર્થવાહીને તેમજ  
માલુકા કચ્છની તરફ વારંવાર એકી નજરે બેવા લાગી. ॥સૂત્ર ૧૧॥

स्थाने स्वगृहे एवं अ(नेन प्रकारेण) 'दो कीलामणगा' दूँ क्रीडनकौ-क्रीडा कारकौ दूँ मयू(पोतकौ मयूरीशावकौ भविष्यत इति कृत्वा-इति विचार्य, अन्योऽन्यस्यैतमर्थं प्रतिशृणुतः मनसि धारयतः, प्रतिश्रुत्य 'सए सए' स्वकान् स्वकान्-दासचेष्टकान् शब्दयतः शब्दयित्वा चैवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादिष्टाम् हे देवानुपियाः गच्छत स्त्रुतु यूयं इमे-एने अण्डके मयूरी अण्डके गृहीत्वा स्वकानां जातिमतीनां कुकुटीनामण्डकेषु प्रक्षिपत, इति वचनं श्रुत्वा यावत्ते दासा अपि तथैवाण्डके प्रक्षिपन्ति ॥ सू. १२ ॥

वाली हम दोनों की कुक्कुटिकाएं उन हम लोगों के द्वारा लाये हुए मयूरी के अंडों की अपने २ अंडों की रक्षा तथा उनकी परकृत उपद्रवों से प्रतिपालना करती हुई रक्षा और प्रतिपालना करलेगी। (तएणं अमहं एत्थं दो कीलामणगा मऊरपोयगा भविस्संति तिकट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेति) इस प्रकार हम लोगों के अपने २ घर पर दो क्रीडा कारक मयूरी पोत (वच्चे) हो जावेंगे ऐसा विचार कर उन दोनोंने आपसमें एक दूसरे का विचार स्वीकार कर लिया (पडिसुणिच्चा सए सए दासचेडए सदावेति) स्वीकार कर फिर उन्होंने अपने २ नौकरों को बुलाया (सदा-विच्चा एवं वयासी) बुलाकर ऐसा कहा—(गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! हे देवानुपियो ! तुम लोग जाओ और (इमे अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अंडएसु पक्खिवह जाव ते वि पक्खिवेति) इन मयूरी के दोनों अंडोंको ले जाकर अपनी २ जातीवाली कुक्कुटिकाओं के अंडों में रख दो। इस प्रकार के उनके कथन को सुनकर “यावत् उन दासोंने भी उस तरह उन दोनों अंडों को ले जाकर उन कुक्कुटिकाओं के अंडों में रख दिया ॥ सू. १२ ॥

બહારના ઉપદ્રવોથી રક્ષણ કરતી ઢેલના ઇંડાનું પણ રક્ષણ કરશે અને પાલન પોપણ કરશે (તएणं अमहं एत्थं दो कीलामणगा मऊरपोयगा भविस्संति तिकट्टु अन्नम-न्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेति)આ રીતે આપણા બંનેનાં ઘરોમાં ક્રીડામયૂરના બંન્થાઓ થઈ જશે. આમ તેઓ બંને એક બીજાના વિચારોથી સહમત થયા. (पडिसुणिच्चा सए सए दासचेडए सदावेति) સહમત થઈને તેઓએ પોતપોતાના નોકરોને બોલાવ્યા (सदाविच्चा एवं वयासी) બોલાવીને આ પ્રમાણે કહ્યું (गच्छहणं तुब्भे देवाणु-प्पिया ! ) હે દેવાનુપ્રિયો ! તમે જાઓ અને (इमे अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अंडएसु पक्खिवह जाव ते वि पक्खिवेति) આ ઢેલના બંને ઇંડાને અમારી મરઘીઓના ઇંડાઓની વચ્ચે મૂકી દો. આ રીતે તેમની વાત સાંભળીને નોકરોએ બંને ઇંડાને લઈને સાર્થવાહ પુત્રોની મરઘીઓના ઇંડાઓની વચ્ચે મૂકી દીધાં સૂ. ૧૨



વિનશ્યન્તીત્યર્થઃ, एवं 'परित्ता जीवयणा उत्पज्जित्ता उत्पज्जित्ता निलीयन्ति' परीताः असंख्याताः प्रत्येकशरीराः अतीतानागत सन्तानानपेक्षया वा संक्षिप्ताः जीवयणाः उत्पद्य उत्पद्य निलीयन्ते विनश्यन्ति । अनेन असंख्यातप्रदेशात्मके लोके अनन्तानां रात्रि दिवानाम्, परीतानाम् असंख्यातानां च रात्रिदिवानां समावेशो भवतीति सिद्धम् । यतोऽनन्त-परीतजीवसम्बन्धात् कालविशेषा अपि अनन्ताः, परीताश्च व्यपदिश्यन्ते अतः असंख्यातप्रदेशात्मके लोके अनन्तानाम् असंख्यातानां च रात्रि दिवानां कथं समावेशो भवतीति विरोधोऽपि परिहृतो भवति । अथ लोकमेव स्वरूपतः प्रतिपादयति- 'से णूणं भूए, उत्पन्ने, विगए, परिणए, अजीवेहिं लोकइ, पलोकइ' स लोकः नूनं निश्चितं भूतः, यत्र जीवयणा-

कहा है । (परित्ता जीवयणा उत्पज्जित्ता उत्पज्जित्ता निलीयन्ति) परीत-असंख्यात-प्रत्येक शरीर की अपेक्षा के असंख्यात जीवयन, अथवा अतीत अनागत सन्तान की अपेक्षा से संक्षिप्त जीवयन उत्पन्न हो हो नष्ट होते हैं । इस कारण असंख्यातप्रदेशात्मक लोक में अनन्तरातदिनों का समावेश हो जाता है यह बात सिद्ध हो जाती है । क्यों कि अनन्त और परीत ऐसे जीवों के सम्बन्ध से कालविशेष भी अनन्त और परीत इस रूप से कहे जाते हैं । अतः असंख्यात प्रदेशात्मक इस लोक में अनन्त और असंख्यात रातदिनों का समावेश कैसे हो सकता है ऐसा विरोध भी परिहृत हो जाता है । अब सूत्रकार स्वरूप की अपेक्षा लेकर लोक का ही प्रतिपादन करते हैं- (से णूणं भूए उत्पन्ने, विगए,

સૂક્ષ્માદિ સાધારણ શરીરોને અનુલક્ષીને અથવા અવસન્તતિની સપર્યવસાનતાને અનુલક્ષીને કસાયેલ છે. તથા એવ સ્નાનાદિક અનંત પર્યાયોના સમુદાય રૂપ છે, અથવા અસંખ્યાત પ્રદેશોના એક પિન્ડરૂપ છે, તેથી તેને “જીવધન” કહેલ છે. (પરિત્તા જીવયણા ઉત્પજ્જિત્તા ઉત્પજ્જિત્તા નિલીયન્તિ) પરીત-અસંખ્યાત-પ્રત્યેક શરીરની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત જીવધન, અથવા અતીત અનાગત સાન્તતાની અપેક્ષાએ સંક્ષિપ્ત જીવધન ઉત્પન્ન થઈ થઈને નષ્ટ થયાં કરે છે. આ કારણે અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા લોકમાં અનંત રાત્રિદિવસનો સમાવેશ થઈ જાય છે, એ વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે. કારણ કે અનંત અને પરીત એવાં જીવોના સંબંધથી કાળવિશેષને પણ અનંત અને પરીત રૂપે સ્વીકારી શકાય છે. આ રીતે “અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા આ લોકમાં અનંત અને અસંખ્યાત રાત્રિદિવસોનો સમાવેશ કેવી રીતે થઈ શકે” એવી જે વિરોધાત્મક શંકા ખતાવવામાં આવી છે, તેનું પણ સમાધાન થઈ જાય છે. હવે સૂત્રકાર સ્વરૂપની અપેક્ષાએ લોકનું પ્રતિપાદન કરે છે-“સે ણૂણં ભૂએ ઉત્પન્ને, વિગએ,



ઉત્પન્ન ઉત્પન્ન વિલીયન્તે સ લોકો ભૂતઃ ભવનધર્મયોગાત્ સદ્ભૂતઃ, સ ચ ભૂતઃ  
અનુત્પત્તિકોઽપિ સ્યાત્ પથા નયમતેન ગગનમ્, અત આહ-ઉત્પન્નઃ-ઉત્પાદયુક્તઃ,  
ઉત્પન્નથ ઘટાભાવત્ અવિનશ્વરોઽપિ સ્યાત્ અત આહ-વિગતઃ-વિનષ્ટઃ વિનાશ-  
યુક્તઃ, વિગતથ નિરન્વયોઽપિ ભવતિ અત આહ-પરિણતઃ, પર્યાયાન્તરાણ્યાપન્નઃ, ન  
તુ નિરન્વયનાશં નષ્ટઃ । અથ તસ્યૈવંવિધસ્ય લોકસ્ય નિશ્ચયાર્થમાહ-અજીવૈઃ

પરિણે, અજીવેહિં લોકે, પલોકે ) જ્યાં પર ચાર ૨ જીવધન ઉત્પન્ન  
હો હોકર નષ્ટ હોતે રહતે હેં એસા વહ લોક ભવનધર્મ કે યોગ સે સદ્  
ભૂતસ્વરૂપ હૈ-અસદ્ભૂતરૂપ નહીં હેં અર્થાત્ દ્રવ્ય કા લક્ષણ ઉત્પાદ વ્યય  
ઔર ધ્રોવ્યાત્મક માના ગયા હૈ લોક ઔ એક દ્રવ્ય હૈ-અતઃ યહ ઔ  
ઉત્પાદ વ્યય ઔર ધ્રોવ્ય લક્ષણ ચાલા હૈ-યહી વાત સૂત્રકાર ને ( ભૂત  
ઉત્પન્ને વિગે ) ઇન પદોં દ્વારા પ્રકટ કી હૈ-ભૂતપદ સે સૂત્રકાર ને લોક  
મેં ધ્રોવ્ય ધર્મ પ્રકટ કિયા હૈ જો પદાર્થ અનુત્પન્ન હોતા હૈ વહ ઔ નૈયા-  
યિકમતમેં આકાશકી તરહ ભૂતધર્મવાલા હોતા હૈ-સો લોક પદાર્થ એસા  
ભૂત ધર્મવાલા નહીં હૈ કિન્તુ વહ ( ઉત્પન્ને ) ઉત્પત્તિ ધર્મવાલા-ઉત્પાદ-  
ધર્મવાલા હૈ-જો ઉત્પાદ ધર્મવાલા હોતા હૈ વહ ઘટાભાવ અર્થાત્ ઘટપ્ર-  
ધ્વંસાભાવ કી તરહ અવિનશ્વર ઔ હોતા હૈ-અતઃ યહ લોકપદાર્થ એસા  
નહીં હૈ, કિન્તુ ( વિગે ) વિનાશ-વ્યય-ધર્મ વાલા હૈ જો વિનાશધર્મ-  
યુક્ત હોતા હૈ વહ નિરન્વય ઔ હોતા હૈ-અર્થાત્ વિનાશ કો નિરન્વય

પરિણે, અજીવેહિં લોકે, પલોકે ” ત્યાં વારંવાર જીવધન ઉત્પન્ન થઈ થઈને  
નાશ થયા કરે છે એવો આ લોક ભવનધર્મથી યુક્ત હોવાને કારણે સદ્ભૂત  
સ્વરૂપ છે. પણ અસદ્ભૂત-સ્વરૂપ નથી. એટલે કે દ્રવ્યનું લક્ષણ ઉત્પાદ, વ્યય  
અને ધ્રોવ્યાત્મક મનાય છે લોક પણ એક દ્રવ્ય છે, તેથી તે પણ ઉત્પાદ,  
વ્યય અને ધ્રોવ્યના લક્ષણવાળો છે. એજ વાત સૂત્રકારે “ ભૂત ઉત્પન્ને વિગે ”  
ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ‘ ભૂત ’ પદથી સૂત્રકારે લોકમાં ધ્રોવ્ય ધર્મ  
પ્રકટ કર્યો છે. જે પદાર્થ અનુત્પન્ન હોય છે તેને પણ નૈયાયિક મતાનુસાર  
ભૂત-ધર્મવાળો કહ્યો છે, જેમકે આકાશને નૈયાયિક મત પ્રમાણે ભૂતધર્મવાળું  
કહ્યું છે. પરંતુ લોકપદાર્થ આકાશના જેવા ભૂતધર્મવાળો નથી, તે તો  
“ ઉત્પન્ને ” ઉત્પત્તિ ધર્મવાળો ( ઉત્પાદ ધર્મવાળો ) છે. ઉત્પાદ ધર્મવાળો  
પદાર્થ ઘટાભાવ ( ઘટપ્રધ્વંસાભાવ ) ની જેમ અનિશ્ચર પણ હોઈ શકે છે,  
પરંતુ આ લોકપદાર્થ એવો નથી, આ લોક તો “ વિગે ” વિનાશ ( વ્યય )  
ધર્મવાળો છે. વિનાશ ધર્મયુક્ત પદાર્થ નિરન્વય પણ હોઈ શકે છે ( બૌદ્ધ  
મતની આ પ્રકારની માન્યતા છે. ) પરંતુ આ લોક નિરન્વય વિનાશથી

પુદ્ગલાદિભિઃ, જીવૈશ્ચ સત્તાં ધારયદ્ભિઃ, ઉત્પન્નમાનૈઃ, વિનશ્યદ્ભિઃ, પરિણમદ્ભિશ્ચ  
લોકાનન્યભૂતૈઃ લોકયતે-નિશ્ચીયતે, પ્રલોભયતે પ્રકર્ષેણ નિશ્ચીયતે ભૂતાદિધમ-  
કોડયં લોકં ઇતિ વિનીશ્ચયતે, અતઃ એવાન્વર્થતયા યથાર્થસંત્રકોડસો ઇતિ દર્શયતિ  
-‘ જે લોકકહ સે લોણ ? ’ યો લોકયતે પ્રમાણેન સ લોકઃ પશ્ચાસ્તિકાયાત્મક

પૌદ્વોં ને સ્વીકાર કિયા હૈ-એસે નિરન્વયવિનાશ સે યુક્ત યહ લોક નહીં  
હૈ, કિન્તુ ( પરિણા ) યહ લોક વિનાશ ધર્મવાલા હોકર બી અપને  
મૂલરૂપ સે નષ્ટ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ પર્યાયાન્તરોં કો પ્રાપ્ત કરતા રહતા  
હૈ જો નિરન્વયનાશ ધર્મવાલા હોતા હૈ વહ અપને મૂલરૂપ સે બી નષ્ટ  
હો જાતા હૈ ઓર જય વહ મૂલરૂપ સે હી નષ્ટ હો જાતા હૈ-તવ પર્યાયા-  
ન્તરોં કો પ્રાપ્ત કૌન કર સકતા હૈ અતઃ યહ લોક એસા નહીં હૈ, કિન્તુ  
પર્યાયાન્તરોં કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ અતઃ નિરન્વયનાશ ધર્મયોગી નહીં હૈ ।  
હસ પ્રકાર કે લોક કા નિશ્ચય કેસે હોતા હૈ તો હસકે લિયે સૂત્રકાર  
કહતે હૈં કિ-( અજીવેહિં લોકહ પરલોકહ ) સત્તા કો ધારણ કરનેવાલે  
-ધ્રૌવ્યરૂપ-ઉત્પાદ ધર્મવાલે, વિનાશ ધર્મવાલે, પરિણમનશીલ ઓર  
લોક સે અનન્યભૂત-અભિન્ન-એસે અજીવ પુદ્ગલોં સે તથા જીવોં સે હસ  
લોક કા નિશ્ચય કિયા જાતા હૈ તથા યહ લોક ભૂતાદિ ધર્મવાલા હૈ  
એસા પ્રકર્ષરૂપ સે નિશ્ચય કિયા હૈ હસલિયે હસકા લોકએસા નામ  
સાર્થક હૈ હસ વાત કો દિખાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ ( જે લોકહ

નથી, “ પરિણા ” આ લોક વિનાશ ધર્મવાળો હોવા છતાં પણ પોતાના મૂળ  
રૂપમાંથી નાશ પામતો નથી, પણ અન્ય પર્યાયોને ( પર્યાયાન્તરોને ) પ્રાપ્ત  
કરતો રહે છે. નિરન્વયનાશ ધર્મવાળો પદાર્થ તો પોતાના મૂળ રૂપમાંથી પણ  
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ રીતે મૂળ રૂપનો નાશ પામ્યા પછી અન્ય પર્યાયો  
પ્રાપ્ત કરવાની વાત જ સંભવી શકતી નથી આ લોક તો પર્યાયાન્તરોને પ્રાપ્ત  
કરતો રહે છે, તેથી તે નિરન્વયનાશ ધર્મવાળો નથી. આ પ્રકારનો લોક છે  
એનો નિશ્ચય કેવી રીતે કરી શકાય છે ? સૂત્રકાર હવે એજ પ્રશ્નનું નીચેનાં  
સૂત્રો દ્વારા સમાધાન કરે છે. ( અજીવેહિં લોકહ પરલોકહ ) સત્તાને ધારણ  
કરનારા-ધ્રૌવ્યરૂપ ( ઉત્પાદ ધર્મવાળાં, ) વિનાશ ધર્મવાળા, પરિણમનશીલ અને  
લોકથી અભિન્ન એવાં અણુવ પુદ્ગલોથી તથા જીવોથી આ લોકનો નિશ્ચય  
કરી શકાય છે, તથા આ લોક ભૂતાદિ ધર્મવાળો છે એવો પ્રકર્ષરૂપે નિશ્ચય  
કરી શકાય છે. તેથી તેનું “ લોક ” એવું નામ સાર્થક છે. એજ વાતનું પ્રતિ-  
પાદન કરતા સૂત્રકાર કહે છે-“ જે લોકહ સે લોણ ” જેને પ્રમાણ દ્વારા

મગનલ્ખંડો લોકપદવાચ્યઃ, इति सत्यं किम् ? ततः उक्तरीत्या लोकस्वरूपाऽभि-  
धायकपार्श्वजिनवचनसंस्मरणद्वारा भगवान् स्ववचनं समर्थितवानिति ' स्थविरा  
आहुः ' हंता, भगवं ' हे भदन्त ! इन्त, सत्यं भवता यद् लोकस्वरूपं प्रतिपादितं  
तत् सर्वथा सत्यमेवेत्यर्थः ।

भगवानाह-‘ से तेणद्वेणं अज्जो ! एवं वुच्चइ-असंखेज्जे तं चेव ’ हे आर्या !  
स्थविरा ! तत् तेनार्थेन तस्माद्धेतोः एवम् उक्तरीत्या उच्यते-असंख्येये लोके  
तदेव पूर्ववदेव अनन्तानि रात्रिदिवानि परीतानि च उदपद्यन्त ’ इत्यादि बोध्यम्  
‘ तप्पभिइं च णं ते पासावच्चेज्जा थेरा भगवंतो समणं भगवं महावीरं ’ सव्वन्नु

સે લોણ) જો પ્રમાણ કે દ્વારા વિલોકિત ક્રિયા જા સકે उसका नाम  
लोक है यह लोक गगन का पंचास्तिकाय रूप एक खण्ड है कहो आर्यो  
यह बात सत्य है न ? इस प्रकार पार्श्वनाथ भगवान के लोकस्वरूप के  
अभिधायक वचनों को याद कराकर भगवान ने अपने वचनों को सम-  
र्थन किया तब स्थविरो ने (हंता भगवं) हां भगवान् ! ऐसा ही है-  
अर्थात् आपने जो लोक के स्वरूप का प्रतिपादन किया है वह सर्वथा  
सत्य ही है ऐसा कहा-तब प्रभु ने उनसे ( से तेणद्वेणं अज्जो एवं वुच्चइ  
असंखेज्जे तं चेव ) ऐसा कहा कि हे आर्यो ! इसी कारण मैंने ऐसा  
कहा है कि असंख्यात लोक में असंख्यात और अनंत रातदिन उत्पन्न  
हुए हैं, उत्पन्न होते हैं और आगे भी उत्पन्न होते रहेंगे इत्यादि सब  
कथन यहांपर पूर्वोक्त रूप से लगालेना चाहिये । ( तप्पभिइं च णं ते  
पासावच्चेज्जा थेरा भगवंतो समणं भगवं महावीरं सव्वन्नु सव्वदरिसी

વિલોકી શકાય (જોઈ શકાય) છે, તેનું નામ જ લોક છે. આ લોક ગગનનો  
(આકાશનો) પંચાસ્તિકાય રૂપ એક ખંડ છે. “કહો આર્ય ! આ વાત સત્ય  
છે ને ? ” આ પ્રમાણે પાર્શ્વનાથ ભગવાનના લોક-સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારાં  
વચનોને યાદ કરાવીને ત્યારે ભગવાન મહાવીરે પોતાનાં વચનોનું સમર્થન  
કયું, ત્યારે સ્થવિરોએ કહ્યું “હંતા ભગવં” હા, ભગવાન ! એવું જ છે.  
એટલે કે લોકના સ્વરૂપનું આપે જે પ્રતિપાદન કયું છે તે સર્વથા સત્ય છે.  
ત્યારે મહાવીર પ્રભુએ તેમને કહ્યું-( સે તેણદ્વેણં અજ્જો ! એવં વુચ્છઈ, અસંખેજ્જં  
તં ચેવ ) હે આર્યો ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા  
લોકમાં અનંત અને અસંખ્યાત રાત્રિદિવસ ઉત્પન્ન થયાં છે, ઉત્પન્ન થાય છે  
અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્પન્ન થશે, ઇત્યાદિ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અહીં અંકલુ કરવું.

“ તપ્પભિઈં ચ ણં તે પાસાવચ્છેજ્જા થેરા ભગવંતો સમણં ભગવં મહાવીરં  
સવ્વન્નુ સવ્વદરિસીંતિ પચ્ચભિજાણંતિ ” આ પ્રમાણે શ્રમણ ભગવાન મહા-



सर्वदरित्री ' त्ति पच्चभिजाणंति' तत्प्रभृति तत्कालादारभ्य च ते पार्श्वपत्तीयः पार्श्वनाथशिष्यशिष्याः स्थविराः भगवन्तः श्रमणं भगवन्तं महावीरं ' सर्वज्ञः, सर्वदर्शी ' इति अनेन रूपेण प्रत्यभिजानन्ति निश्चिन्वन्ति ! ' तएणं ते थेरा भगवन्तो समणं भगवं महावीरं वंदंति, नमंसंति,' ततः तदनन्तरं ते स्थविराः भगवन्तः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दन्ते, नमस्यन्ति, ' वंदित्ता, नमंसित्ता, एवं वयासी ' वन्दित्वा, नमस्यित्वा, एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादिषुः—' इच्छामो णं भंते ! तुव्वं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंच महव्वयाइं, सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए ' हे भदन्त ! इच्छामः खलु वयं युष्माकम् भवताम् अन्तिके समीपे चातुर्यामाद् धर्माद् चातुर्यामधर्मं परित्यज्येत्यर्थः पञ्चमहाव्रतानि संप्रति-

त्ति पच्चभिजाणंति ) इस प्रकार से श्रमण भगवान् महावीर के मुख से लोकविषयक सत्य प्रतिपादन श्रवणकर उन पार्श्वपत्तीय स्थविरों ने उन श्रमण भगवान् महावीर को सर्वज्ञ और सर्वदर्शीरूप से निश्चित किया ( तएणं ते थेरा भगवन्तो समणं भगवं महावीरं वंदंति, नमंसंति) तब उन स्थविर भगवन्तों ने श्रमणभगवान् महावीर को वंदना की अर्थात् गुणोंकी स्तुति की और फिर उन्हें पंचांग झुकाकर नमस्कार किया । ( वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने ने ऐसा कहा ( इच्छामो णं भंते ! तुव्वं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वयाइं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए ) हे भदन्त ! हमलोग यह चाहते हैं कि चातुर्याम धर्म को छोड़ कर प्रतिक्रमण सहित पंचमहाव्रतरूप धर्म को धारण करें—आदि जिन और अन्तिम

वीरने भुजेथी लोकविषयक सत्य प्रतिपादनने सांभलीने ते पार्श्वपत्तीय ( पार्श्वनाथना प्रशिष्य ) स्थविराओ श्रमण भगवान् महावीरने सर्वज्ञ अने सर्वदर्शी इये निश्चित कया—त्यारथी तेओ तेभने सर्वज्ञ अने सर्वदर्शी मानवा लाओ. " तएणं ते थेरा भगवन्तो समणं भगवं महावीरं वंदंति, नमंसंति " त्यारणाह ते स्थविर भगवन्तोओ श्रमण भगवान् महावीरने वंदणु करी ओटवे के गुणोनी स्तुति करी, अने त्यारणाह पांच अंगे. झुकावीने तेभणे तेभने नमस्कार कया. " वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " वंदणु नमस्कार करीने तेभणे तेभने आ प्रभाणे कहुं—( इच्छामो णं भंते ! तुव्वं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वयाइं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए ) हे भदन्त ! अमे चार यामयुक्ता ( चार महाव्रतोवाणा ) धर्मने णट्ठे, आपनी समक्ष पंच महाव्रतोने अने प्रतिक्रमण युक्ता धर्मने धारण करवा भागीये छीओ. आदि

ક્રમણં પ્રતિક્રમણસહિતં ધર્મં ચ ઉપસંપન્ન અક્ષીકૃત્ય સ્વલુ વિહર્તુ સ્થાતુમ્ 'ચ્છામઃ' ઇતિ પૂર્વેણાન્વયઃ । તથા આદિમાન્તિમજિનયોરાદિનાથ-મહાવીરયોરેવ નિયમેના-વશ્યં કર્તવ્યઃ સપ્રતિક્રમણો ધર્મઃ, અન્યેષાં, તુ મધ્યમાનાં દ્વાવિંશતિતીર્થકારણાં કદાચિત્ક એવ સહેતુકઃ પ્રતિક્રમણધર્મઃ, ઉક્તઃ—

“ સપટ્ટિકમણો ધમ્મો, પુરિમસ્સ ચ પચ્છિમસ્સ ચ જિણસ્સ ।

મજ્ઞિમગાણ જિણાણં, કારણજાણ પટ્ટિકમણં ” ॥ ૧ ॥

“ સપ્રતિક્રમણો ધર્મઃ પૂર્વસ્ય ચ પશ્ચિમસ્ય ચ જિનસ્ય ।

મધ્યમકાનાં જિનાનાં કારણજાતે પ્રતિક્રમણમ્ ” ॥ ૨ ॥

તતો મગધનાથ—‘ અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા ! મા પટ્ટિવંધં કરેહ ’ મો દેવા-નુપ્રિયાઃ ! યથાસુખં યથા સુખં ભવેત્તથા ક્રિયન્તામ્, કિન્તુ પ્રતિવંધં ચિલમ્બં

જિન-આદિનાથ ઓર મહાવીર કો હી નિયમ સે પ્રતિક્રમણ સહિત ધર્મ અવશ્ય કરણીય હૈ ઓર અન્ય ૨૨ તીર્થકરોં કો વહ પ્રતિક્રમણ અતિચાર લગને પર કરને કા હૈ—કહા હૈ કિ—

“ સપટ્ટિકમણો ધમ્મો પુરિમસ્સ ચ પચ્છિમસ્સ ચ જિણસ્સ ।

મજ્ઞિમગાણ જિણાણં કારણજાણ પટ્ટિકમણં ॥૧॥ ”

પ્રતિક્રમણ સહિત ધર્મ આદિજિન ઓરઅન્તિમ જિનકો હોતા હૈ ઓર મધ્ય જિનકે કારણ હોને પર પ્રતિક્રમણકિયા જાતા હૈ ।

જવ ઉન સ્થવિરોં ને એસા કહા—તથા શ્રમણ મગધના મહાવીર ને ઉનસે કહા—‘ અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા ! મા પટ્ટિવંધં કરેહ ’ હે દેવાનુપ્રિયો ! જૈસા આપકો રુચે વૈસા આપલોગ કરેં પરન્તુ હસ કાર્ય મેં ચિલમ્બ કરના

જિન ( આદિનાથ ભગવાન ) અને અન્તિમ જિન ( મહાવીર ભગવાન ) ને નિયમથી જ પ્રતિક્રમણ યુક્ત ધર્મ અવશ્ય કરવા યોગ્ય છે, એ સિવાયના ૨૨ તીર્થકરોને ક્યારેક કારણસર જ પ્રતિક્રમણ સહિત આચરવા યોગ્ય છે. કહું પણ છે:—

“ સપટ્ટિકમણો ધમ્મો પુરિમસ્સ ચ પચ્છિમસ્સ ચ જિણસ્સ ।

મજ્ઞિમગાણ જિણાણં કારણજાણ પટ્ટિકમણં ॥ ૧ ॥ ”

પ્રતિક્રમણ સહિત ધર્મ પડેલા જન તથા છેલ્લા જન ભગવાનને આદ્ય થાય છે અનેમધ્યમ જનને કોઈ પણ કારણ હોય તેજ પ્રતિક્રમણ કરાય છે.

જ્યારે તે સ્થવિરોએ આ પ્રમાણે કહું ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર તેમને કહું—( અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા ! મા પટ્ટિવંધં કરેહ ) હે દેવાનુપ્રિયો ! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો, પણ આવા કામમાં વિલંબ કરવો નોંધ્યો

ન કુલ્લ । ‘તણં તે પાસાવચ્ચિજ્ઞા થેરા ભગવંતો જાવ-ચરમેહિં ઉસ્સાસનિસ્સા-  
સેહિં સિદ્ધા ’ તતસ્તે પાર્શ્વપત્તીયાઃ-પાર્શ્વશિષ્યશિષ્યાઃ સ્થવિરાઃ ભગવન્તઃ યાવત્  
ચરમેરુચ્છવાસ-નિઃશ્વાસૈઃ સિદ્ધાઃ સંજાતાઃ ‘ જાવ-સન્વદુક્ખપ્પહીણા, અત્થેગદ્યા  
દેવલોપસુ ઉચ્ચન્ના ’ યાવત્-સર્વદુઃખપ્રહીણાઃ સર્વદુઃખરહિતાઃ અસ્ત્યેકે અવશિષ્ટ-  
શુભકર્માણઃ અન્યતમાઃ કેચિદ્ સ્થવિરા દેવલોકેષુ દેવરૂપેણ ઉત્પન્નાઃ દેવાઃ સંજાતા  
ઇત્યર્થઃ પ્રથમયાવત્કરણાત્ સંલેખનાદિકં કૃત્વા, ઇત્યાદિ સંગ્રાહમ્ । દ્વિતીયયાવ-  
ત્કરણાત્ ‘બુદ્ધા મુક્તા પરિનિર્વાતા ’ ઇતિ સંગ્રાહમ્ ॥ સૂ. ૪ ॥

દેવલોકવક્તવ્યતા

પૂર્વ દેવલોકેષુ ઉત્પન્ના ઇત્યુક્તમ્ અતો દેવલોકં નિરૂપયિતુમાહ-‘ કઙ્કિવિહાણં  
ભંતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂળમ્-કઙ્કિવિહા ણં ભંતે ! દેવલોગા પન્નત્તા ? ગોયમા!  
ચઉવ્વિહા દેવલોગા પન્નત્તા, તં જહા-ભવણવાસી-વાણમંતર-  
જોતિસિય-વેમાણિય-ભેયેણં । ભવણવાસીવાણમંતરા અટ્ટવિહા,

ઉચિત નહીં છે । ( તણં તે પાસાવચ્ચિજ્ઞા થેરા ભગવંતો જાવ ચરમેહિં  
ઉસ્સાસનિસ્સાસેહિં સિદ્ધા ) હસકે વાદ વે પાર્શ્વપત્તીય સ્થવિર ભગ-  
વંત યાવત્ અંતિમ શ્વાસોં સે સિદ્ધ હો ગયે ( જાવ સન્વદુક્ખપ્પહીણા )  
યાવત્ વે સમસ્ત દુઃખોં સે રહિત હો ગયે તથા કિતનેક સ્થવિર એસે મી  
થે ફિ જિનકા શુભકર્મ અવશિષ્ટ થા સો વે દેવરૂપ સે દેવલોકોં મેં  
ઉત્પન્ન હો ગયે । યહાં પહિલે યાવત્ પદ સે ( સંલેખનાદિક કરકે ) ઇત્યાદિ  
પાઠ ગ્રહણ કિયા ગયા છે ઓર દ્વિતીય યાવત્પદ સે ( બુદ્ધા, મુક્તા, પરિ-  
નિર્વાતા ) એસા પાઠ ગ્રહણ કિયા ગયા છે ॥ સૂ. ૪ ॥

નહીં. ( તણં તે પાસાવચ્ચિજ્ઞા થેરા ભગવંતો જાવ ચરમેહિં ઉસ્સાસનિસ્સા-  
સેહિં સિદ્ધા ) ત્યારબાદ પંચમહાવ્રતરૂપ ધર્મની સંયમ પૂર્વક આરાધના કરીને  
તે પાર્શ્વનાથ ભગવાનના કેટલાક શિષ્ય સ્થવિર ભગવંતો ( યાવત્ ) અંતિમ  
શ્વાસોથી સિદ્ધ પદને પામ્યા. “ જાવ સન્વદુક્ખપ્પહીણા ” ( યાવત્ ) તેઓ  
સમસ્ત દુઃખોથી રહિત થઈ ગયા, તથા કેટલાક સ્થવિરો એવા પણ હતા કે  
જેમનાં શુભ કર્મ અવશિષ્ટ ( બાકી ) હતાં. એવા સ્થવિરો દેવલોકમાં દેવ-  
પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા. અહીં પહેલા “ યાવત્ ” પદથી “ સંલેખના આદિ  
કરીને ” ઇત્યાદિ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે, અને બીજા “ યાવત્ ” પદથી “ બુદ્ધા,  
મુક્તા, પરિનિર્વાતા ” આ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે. ॥ સૂ. ૪ ॥



જોતિસિયા પંચવિહા, વેમાણિયા દુવિહા, ગાહા-કિસિયં રાય-  
ગિહં તિ ય, ઉઝ્જોણ, અંધયાર, સમણ ય પાસંતિવાસિપુચ્છા,  
રાહંદિયદેવલોગા ય, સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! તિ ॥ સૂ૦૫ ॥

છાયા-કતિવિધાઃ સ્વલુ મદન્ત ! દેવલોકાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! ચતુર્વિધાઃ  
દેવલોકાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-ભવનવાસિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષ્ક-વૈમાનિક-ભેદેન ।  
ભવનવાસિનો દશવિધાઃ, વાનવ્યન્તરાઃ અષ્ટવિધાઃ, જ્યોતિષ્કાઃ પંચવિધાઃ  
વૈમાનિકા દ્વિવિધાઃ,

દેવલોક વક્તવ્યતા-

( કહવિહા ણં ) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—( કહવિહા ણં મંતે ! દેવલોગા પન્નત્તા ) હે મદન્ત ! દેવલોક  
કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હે ? ( ગોયમા ! ચઝઙ્ગિહા દેવલોગા પન્નત્તા )  
હે ગૌતમ ! દેવલોક ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હે । ( તં જહા ) વે હસ  
પ્રકાર સે હે ( ભવણવાસી-વાણમંતર-જોહસિય-વેમાણિય મેણં ) ભવ-  
નવાસી ? વાણવ્યન્તર ૨, જ્યોતિષિક ૨, ઓર વૈમાનિક ૪ ( ભવનવાસી  
દસવિહા પન્નત્તા ) ભવનવાસીદેવ દસ પ્રકાર કે કહે ગયે હે ( વાણમંતરા  
અઢવિહા ) વાણ વ્યન્તરદેવ આઠ પ્રકાર કે હે । ( જોહસિયા પંચવિહા )  
જ્યોતિષિક દેવ પાંચ પ્રકાર કે હે ( વેમાણિયા દુવિહા ) વૈમાનિક દેવ દો  
પ્રકાર કે હોતે હે । ( કિમિયં રાયગિહં તિ ય ઉઝ્જોણ અંધયારસમણ ય,  
પાસંતિ વાસિપુચ્છા રાહંદિય દેવલોગા ય ) હસ ઉદ્દેશક મેં પ્રતિપાદિત  
વિષય કી સંગ્રહ ગાથા યહ હૈ-હસમેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ-કિ

દેવલોકની વક્તવ્યતા:-

“ કહવિહાણ ” इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—( કહવિહાણં મંતે ! દેવલોગા પન્નત્તા ? ) હે મદન્ત ! દેવ-  
લોકના પ્રકાર કેટલા છે ? ( ગોયમા ! ચઝઙ્ગિહા દેવલોગા પન્નત્તા ) હે ગૌતમ !  
દેવલોક ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે. ( તં જહા ) તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—  
( ભવણવાસી, વાણમંતર, જોહસિયવેમાણિય મેણં ) (૧) ભવનવાસી, (૨)  
વાનવ્યન્તર, (૩) જ્યોતિષિક અને (૪) વૈમાનિક એ ભેદથી ( ભવણવાસી દસ-  
વિહા પન્નત્તા ) ભવનવાસી દેવો દસ પ્રકારના કહ્યા છે, ( વાણમંતરા અઢવિહા )  
વાનવ્યન્તરો આઠ પ્રકારના કહ્યા છે, ( જોહસિયા પંચવિહા ) જ્યોતિષિક દેવો  
પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે અને ( વેમાણિયા દુવિહા ) વૈમાનિક દેવો બે પ્રકારના  
કહ્યા છે ( કિમિયં રાયગિહં તિ ય ઉઝ્જોણ અંધયાર સમણ ય, પાસંતિવાસિ પુચ્છા  
રાહંદિય દેવલોગા ય ) આ ઉદ્દેશકમાં જેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એ

ગાથા—‘ કિમિદં રાજગૃહમિતિ ચ ઉદ્યોતોઽન્ધકારઃ સમયથ,  
પાર્શ્વન્તેયાસિપૃચ્છા, રાત્રિ દિવાનિ દેવલોકાથ ॥

તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ શ્લોક ૫ ॥

ટીકા—‘ કઙ્કિદા ણં મંતે ! દેવલોગા પણ્ણત્તા ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘હે  
ભદન્ત ! કતિવિધાઃ કિયત્પકારાઃ સલ્લ દેવલોકાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ કથિતાઃ ? ભગવાનાહ  
—‘ ગોયમા ! ચત્તવિદા દેવલોગા પન્નત્તા ’ હે ગૌતમ ! ચતુર્વિધાઃ ચતુઃપકારાઃ  
સલ્લ દેવલોકાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ કથિતાઃ ‘ તં જહા ભવણવાસી-ચાણમંતર-જોડસિય-

“ રાજગૃહ નગર યહ કયા હૈ ? દિનમેં ઉચોત ઓર રાત્રિમેં અંધકાર કયો  
હોતા હૈ ? સમય આદિ રૂપ કાલ કા જ્ઞાન કિન જીવોં કો હોતા હૈ ઓર  
કિન જીવોં કો નહીં હોતા હૈ ? રાત્રિ ઓર દિવસ કે પ્રમાણ મેં શ્રી  
પાર્શ્વનાથ જિન કે પ્રશિષ્યોં કે પ્રશ્ન ? દેવલોક સંબંધી પ્રશ્ન ” ઇતને વિષય  
હસ ઉદ્દેશક મેં આપે હૈં । ( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ) હે ભદન્ત !  
આપકા કહા હુઆ ભાવ સર્વથા સત્ય હી હૈ—સર્વથા સત્ય હી હૈ ।

ટીકાર્થ—( દેવલોકોં મેં ઉત્પન્ન હુણ ) એસી વાત પહિલે કહી ગઈ હૈ  
—સો દેવલોક કે સ્વરૂપ કો નિરૂપણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર યહાં પર  
કહતે હૈં હસમેં ગૌતમ ને ઉનસે યહ પૂછા હૈ કિ ( કઙ્કિદા ણં મંતે !  
દેવલોગા પન્નત્તા ) હે ભદન્ત ! દેવલોક કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં ?  
હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ને ઉનસે કહા—( ગોયમા ! ચત્તવિદા દેવલોગા  
પણ્ણત્તા ) હે ગૌતમ ! દેવલોક ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં—ભવનવાસી

વિષયની સંબંધ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—“ રાજગૃહ નગર કયો  
પદાર્થ છે ? દિવસે પ્રકાશ અને રાત્રે અંધકાર કેમ હોય છે ? સમય આદિ-  
રૂપ કાળનું જ્ઞાન કયા જીવોને હોય છે અને કયા જીવોને હોતું નથી ? રાત્રિ  
અને દિવસ વિષયક શ્રી પાર્શ્વનાથ જિનેન્દ્રના પ્રશિષ્યોના પ્રશ્ન ? દેવલોક  
સંબંધી પ્રશ્ન ” આટલા વિષયોનું આ ઉદ્દેશકમાં નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે.  
“ સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ” હે ભદન્ત ! આપની વાત સર્વથા સત્ય છે,  
આપે આ વિષયનું જે પ્રતિપાદન કર્યું તે યથાર્થ જ છે.

ટીકાર્થ—પૂર્વ પ્રકરણનું અંતિમ વાક્ય “ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયા ” એવું  
છે. તેથી દેવલોકના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવાને માટે સૂત્રકારે નીચેના પ્રશ્નોત્તરો  
આપ્યા છે:—

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે—( કઙ્કિદા ણં મંતે ! દેવલોગા  
પન્નત્તા ? ) હે ભદન્ત ! દેવલોક કેટલા પ્રકારના કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ચત્તવિદા દેવલોગા પણ્ણત્તા ” હે ગૌતમ ! દેવલોક

વૈમાણિયભેદેણ ' તથા-ભવનવાસિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષ્ક-વૈમાનિક ભેદેન તત્ર-' ભવનવાસી દસવિદા ' ભવનવાસિનોઽસુરકુમારાદિકાઃ દશવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, ' વાણમંતરા અઢવિદા ' વાનવ્યન્તરાઃ પિશાચાદિકા અઢવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, एवं ' જોડસિયા પંચવિદા ' જ્યોતિષ્કાઃ ચન્દ્રસૂર્યાદયઃ પંચવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, ' વૈમાણિયા દુવિદા ' વૈમાનિકાઃ કલ્પોપન્ન-કલ્પાતીતભેદેન દ્વિવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ- ઉરેશ્ચકાર્ય સંગ્રહાય ગાથામાહ—

ગાથા—“ કિમિદં રાયગિદં તિ ય ડજ્જોણ અંધયાર-સમણ ય,  
પાસંતિ વાસિપુચ્છા રાંદિય દેવલોગા ય ” ॥ ૧ ॥

કિમિદં રાજગૃહં નગરમિતિ ચ ઇદં રાજગૃહં કિમ્ પૃથિવી ? ઇત્યાદિવિચાર-ચર્ચા, તતઃ કથમ્ ઉદ્ધોતઃ દિવસે પ્રકાશઃ, રાત્રી ચ અન્ધકારઃ ? અત્ર કિં-વાણવ્યન્તર, જ્યોતિષિક ઓર વૈમાનિક હનમેં ભવનવાસી-દશ પ્રકાર કે હૈં-उनके नाम ये हैं १ असुरकुमार २ नागकुमार ३ सुवर्णकुमार ४ विद्युत्कुमार ५ अग्निकुमार ६ द्वीपकुमार ७ उदधिकुमार ८ दिक्कुमार ९ वायुकुमार और १० स्तनितकुमार वाणव्यन्तर आठ प्रकार के हैं, उनके नाम ये हैं-१ पिशाच, २ भूत, ३ यक्ष, ४ राक्षस, ५ किन्नर, ६ किं पुरुष, ७ महोरग, और ८ गन्धर्व ।

જ્યોતિષિક ૫ પાંચ પ્રકાર કે હૈં-સૂર્ય ૧ ચન્દ્રમા ૨, ગ્રહ ૩ નક્ષત્ર તારા યે उनके नाम हैं ।

વૈમાનિક દેવ દો પ્રકાર કે હોતે હૈં-કલ્પોપપન્ન ૨ ઓર દૂસરે કલ્પાતીત અવશિષ્ટ પદોં કા અર્થ મૂલાર્થ મેં લિખ દિયા ગયા હૈં હસી પ્રકાર સંગ્રહ ગાથા કા ખી અર્થ મૂલ કા અર્થ કરતે સમય લિખા જા

ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે. તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(૧) ભવનવાસી, (૨) વાનવ્યન્તર, (૩) જ્યોતિષિક અને (૪) વૈમાનિક.

ભવનવાસી દેવોના નીચે પ્રમાણે દસ પ્રકાર છે-(૧) અસુરકુમાર, (૨) નાગકુમાર, (૩) સુવર્ણકુમાર (૪) વિદ્યુત્કુમાર (૫) અગ્નિકુમાર (૬) દ્વીપકુમાર (૭) ઉદધિકુમાર, (૮) દિશાકુમાર (૯) પવનકુમાર (૧૦) સ્તનિતકુમાર.

વાણવ્યન્તર દેવોના આઠ પ્રકાર છે-(૧) પિશાચ (૨) ભૂત (૩) યક્ષ (૪) રાક્ષસ (૫) કિન્નર (૬) કિંપુરુષ (૭) મહોરગ (૮) ગંધર્વ.

જ્યોતિષિક દેવોનાં પાંચ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-(૧) સૂર્ય, (૨) ચન્દ્ર, (૩) ગ્રહ, (૪) નક્ષત્ર અને (૫) તારાઓ.

વૈમાનિક દેવોના બે પ્રકાર છે-(૧) કલ્પોપપન્ન, (૨) કલ્પાતીત.

આકીનાં પદોનો અર્થ સૂત્રાર્થમાં આપી દીધો છે. સંગ્રહગાથાનો અર્થ



કારણમ્ એતિ પ્રશ્નોત્તરમ્ । તતઃ સમયથ, સમયાદિકાલપરિજ્ઞાનં કેષાં જીવાનાં  
મવતીતિ પ્રશ્નોત્તરમ્ । તદનન્તરમ્ પાર્શ્વન્તેવાસિનાં પાર્શ્વનાથશિષ્ય-શિષ્યાણામ્  
સ્થવિરાણામ્, અસંખ્યાતપ્રદેશે કથમનન્તાનિ રાત્રિદિવાનિ સંભવન્તિ, ઇત્યાદિ  
રાત્રિ દિવવિષયે પૃચ્છા પ્રશ્નોત્તરમ્, અન્તે દેવલોકાથ-દેવલોકભેદાનાં પ્રતિપા-  
દનમિત્યર્થઃ । અન્તે ગૌતમઃ સત્યાપયતિ-તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ઇતિ । હે  
ભદન્ત ! તદેવં મવદુક્તં સર્વં સત્યમેવ, -તદેવં સત્યમેવેત્યર્થઃ । ઇતિ કથયિત્વા  
ભગવાન્ ગૌતમઃ સંયમેન તપસા આત્માનં ભાવયન્ વિહરતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

શિશ્રી-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલં વ્રતિવિરચિતાયાં ભગવતી  
સૂત્રસ્ય પ્રમેયચન્દ્રિકાસ્વાયાયાં વ્યાખ્યાયાં પચ્ચમશતકસ્ય નવમોદેશકઃસમાપ્તઃ ॥૫-૯॥

શુકા હૈ । અન્ત મેં ગૌતમ પ્રશ્નુ સે કહતે હેં કિ હે ભદન્ત ! આપ દેવાનુ-  
પ્રિય દ્વારા પ્રતિપાદિત યહ સર્વ વિષય સર્વથા સત્ય હી હૈ । હે ભદન્ત !  
સર્વથા સત્ય હી હૈ । હસ પ્રકાર કહકર વે ભગવાન્ ગૌતમ સંયમ ઓર  
તપ સે આત્મા કો ભાવિત કરતે છુણુ અપને સ્થાન પર વિરાજમાન હો  
ગયે ॥ સૂ૦૫ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત “ભગવ-  
તીસૂત્ર ” કી પ્રમેયચન્દ્રિકાસ્વ વ્યાખ્યાકે પાંચવે શતકકા નવવા  
ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૯ ॥

પણુ સૂત્રાર્થમાં આપી હીધો છે. સૂત્રને અન્તે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નુને  
કહે છે હે ભદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિય દ્વારા આ વિષયનું જે પ્રતિપ્રાદન કરવામાં  
આવ્યું છે તે સર્વથા સત્ય જ છે । હે ભદન્ત ! તે સર્વથા સત્ય અને યથાર્થ  
છે. આ પ્રમાણે કહીને ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કરીને, સંયમ  
અને તપથી આત્માને ભાવિત કરતા ગૌતમ સ્વામી પોતાને સ્થાને વિરાજ-  
માન થઈ ગયા. ॥ સૂત્ર ૫ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ‘ભગવતીસૂત્ર’ની પ્રમેયચન્દ્રિકા

વ્યાખ્યાનો. પાંચમાં શતકનો નવમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૬ ॥

## ॥ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

चन्द्रवक्तव्यता

अनन्तरैतदुद्देशकान्ते देवाः प्रविपादिताः, अतो देवविशेषभूतो चन्द्रमसो समुद्दिश्य दशमोद्देशकमाह—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं, तेणं समएणं चंपा नामं नयरी, जहा पढमिल्लो उद्देसओ तथा नेयव्वो एसो वि, नवरं—चंदिमा भाणियव्वा ॥ सू० १ ॥

छाया—तस्मिन् काले, तस्मिन् समये खलु चम्पा नाम नगरी आसीत्, यथा प्रथम-उद्देशकस्तथा ज्ञातव्य एषोऽपि, नवरं चन्द्रमसो भणितव्याः ॥ १ ॥

टीका—‘तेणं कालेणं, तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था’ तस्मिन् काले, तस्मिन् समये खलु चम्पा नाम नगरी आसीत्—‘जहा पढमिल्लो उद्देसओ तथा

पंचम शतक १० वां उद्देशक

चन्द्रवक्तव्यता—

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी) उस काल और उस समय में चंपा नाम की नगरी थी (जहा पढमिल्लो उद्देसओ तथा नेयव्वो एसो वि नवरं—चंदिमा भाणियव्वा) जैसा प्रथम उद्देशक कहा है उसी प्रकार से यह उद्देशक भी समझना चाहिये, विशेष यह कि यहाँ चन्द्रमा कहना चाहिये ।

टीकार्थ—अभी अभी इस उद्देशक के पास के उद्देशक के अन्त में देवों का कथन किया गया है सो देवविशेषभूत चन्द्रमाको लेकर ही सूत्रकार ने इस दशवें उद्देशक का कथन किया है (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (चंपा नामं नयरी होत्था) चंपा

पांचमा शतकेनो दसमो उद्देशक—

चन्द्रनी वक्तव्यता—

“तेणं कालेणं तेणं समएणं” इत्यादि—

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी) ते काले अने ते समये चंपा नामनी नगरी छती. (जहा पढमिल्लो उद्देसओ तथा नेयव्वो एसो वि नवरं चंदिमा भाणियव्वा) जे प्रमाणे पड़ेले उद्देशक छडेवाभां आये।

નેયવ્વો एसो वि' यथा प्रथमः उद्देशकः प्रतिपादितः, तथा एषोऽपि दशमोद्देशकः  
ज्ञातव्यः वक्तव्यः, 'णवरं-चंदिमा भाणियव्वा' नवरं चन्द्रमसौ भणितव्यौ,  
विशेषः पुनरेतावानेव यद् दशमोद्देशकः चन्द्राभिलापेन पञ्चमशतकस्य प्रथमोद्देशक-  
गत सूर्यवर्णनवच्चन्द्रवर्णनपरतया विज्ञेयः ।

तथा च चन्द्रविषयकाभिलाषकाकारश्चेन्धम्—' तस्मिन् काले, तस्मिन् समये  
चंपा नाम नगरी आसीत्, वर्णकः स्वामी समग्रतः यावत्-पर्यत् प्रतिगता, तस्मिन्  
नाम की नगरी थी ( जहा पढमिल्लो उद्देशओ तहा नेयव्वो एसो वि )  
जिस प्रकार से प्रथम उद्देशक प्रतिपादित हुआ है उसी तरह से यह  
दशवां उद्देशक भी जानना चाहिये ( णवरं चंदिमा भाणियव्वा ) यहां  
यही केवल विशेष है कि पांचवें शतक में जिस तरह से प्रथम उद्देशक  
कहा गया है उसी तरह से यह उद्देशक चंद्रमा के अभिलाप से कह-  
लेना चाहिये—

तथा च—चन्द्रविषयक अभिलाप का आधार इस प्रकार से है  
( तस्मिन् काले तस्मिन् समये चंपा नाम नगरी आसीत्, वर्णकः तस्यां  
चंपाया नगर्यां पूर्णभद्रं नाम उद्यानं आसीत् वर्णकः इत्यादि—उस काल

છે, એ જ પ્રમાણે આ ઉદ્દેશક પણ સમજવો. પણ વિશેષતા જ છે કે, એટલી  
આ ઉદ્દેશકમાં 'સૂર્યની' જગ્યાએ 'ચન્દ્રમા' કહેવો જોઈએ.

ટીકાઈ—નવમાં ઉદ્દેશકના છેલ્લા સૂત્રમાં કેવોનું કથન કરવામાં આવ્યું  
છે. ચન્દ્રમા પણ જ્યોતિષિક દેવ ગણાય છે. તેથી સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ચન્દ્ર-  
માનું નિરૂપણ નીચેના પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા કર્યું છે—

“ તેણં કાલેણં તેણં સમણં ” તે કાળે અને તે સમયે “ ચંપા નામ  
નયરી હત્યા ” ચંપા નામે નગરી હતી “ જહા પઢમિલ્લો ઉદ્દેસઓ તહા નેયવ્વો  
एसो वि ” જે રીતે હેલા ઉદ્દેશકનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એ જ  
પ્રમાણે આ દસમાં શકનું પણ પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. “ ણवरं चंदिमा  
भाणियव्वा ” અહીં ક્રિયા એટલી જ વિશેષતા છે કે પાંચમાં શતકના પહેલા  
ઉદ્દેશકમાં જે આલાપકો આપ્યા છે, તે આલાપકોમાં 'સૂર્યને' બદલે 'ચન્દ્રમા'  
શબ્દ વાપરીને પ્રશ્નોત્તરોનું કથન થવું જોઈએ.

ચન્દ્ર વિષયક આલાપકોની રચના આ પ્રકારની થશે—( તસ્મિન્ કાલે  
તસ્મિન્ સમયે ચંપા નામ નગરી આસીત્, વર્ણકઃ તસ્યાં ચંપાયાં નગર્યાં પૂર્ણભદ્ર  
નામ ઉદ્યાનં આસીત્ વર્ણકઃ ) ઇત્યાદિ. તે કાળે અને તે સમયે ચંપા નામે



કાલે, તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય મગધતો મહાવીરસ્ય ઝ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી ઇન્દ્રભૂતિર્નામ  
અનગારઃ ગૌતમગોત્રો યાવત્-પવમ્ અવાદીત્-જમ્બૂદ્વીપે મગધન્ । દ્વીપે દ્વયોમન્દ્ર-  
મસોઃ સદ્ભાગાત્-ચન્દ્રમસો ઉદીચીપાચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પાચીદક્ષિણસ્યામ્ આગચ્છતઃ ?  
પાચીદક્ષિણસ્યામ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણપતીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? ૨ દક્ષિણપતીચ્યામ્ ઉદ-  
ગત્ય પતીચ્યુદીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? ૩ પતીચ્યુદીચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય ઉદીચીપાચ્યામ્

ઔર उस समय में चंपा नाम की नगरी थी उस नगरी का वर्णन  
औपपातिक सूत्र से जानना चाहिये उस नगरीमें पूर्णमद्र नामका उद्यान  
था वर्णक-श्रमण भगवान् महावीर प्रभु उस उद्यान में विहार करते हुए  
पधारें, धर्म का उपदेश सुनने के लिये जनता वहां पर एकचित्र हुई,  
प्रभुने श्रुतचारित्ररूप धर्म का उपदेश दिया, उपदेश सुनकर जनता वहां  
से वापिस गई । उस काल में और उस समय में श्रमण भगवान् महा-  
वीर के प्रधान शिष्य ने जिनका नाम इन्द्रभूति अनगार था, और गोत्र  
जिनका गौतम था प्रभु से यावत् इस प्रकार पूछा-हे भदन्त ! जम्बूद्वीप  
नामके इस द्वीप में दो चंद्रमा हैं ये उत्तर और पूर्वदिशाके अन्तरालवर्ती  
ईशानकोणसे उदित होकर पूर्व और दक्षिणदिशाके अन्तरालवर्ती अग्नि-  
कोण में अस्त होते हैं क्या ? अग्निकोणसे उदित होकर नैऋत्यकोण में  
अस्त होते हैं क्या ? नैऋत्यकोणसे उदित होकर वायव्यकोणमें अस्त होते  
हैं क्या ? और वायव्यकोणसे उदित होकर ईशानकोणमें अस्त होते हैं क्या ?

નગરી હતી. તે નગરીનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાંથી જાણી લેવું. તે નગરીમાં  
પૂર્ણમદ્ર નામે ઉદ્યાન હતું. તે ઉદ્યાનનું વર્ણન પણ ઔપપાતિક સૂત્રમાંથી  
જાણી લેવું. શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિહાર કરતાં કરતાં એ ઉદ્યાનમાં પધાર્યા.  
ધર્મોપદેશ સાંભળવાને લોકો ત્યાં એકઠાં થયા. પ્રભુએ શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનો  
ઉપદેશ દીધો. ઉપદેશ સાંભળીને લોકો પોતપોતાને સ્થાને પાછા ફર્યા. તે કાળે  
અને તે સમયે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના મુખ્ય શિષ્ય ઇન્દ્રભૂતિ અણગાર  
હતા. તેઓ ગૌતમ ગોત્રના હતા. અહીં ગૌતમના શુભેચ્છાનું વર્ણન થયું.  
ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-હે ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામના  
આ દ્વીપમાં બે ચન્દ્રમા છે. તેઓ શું પૂર્વ અને ઉત્તર દિશાની વચ્ચેના ઇશાન  
કોણમાંથી ઉદય પામીને પૂર્વ અને દક્ષિણ દિશાની વચ્ચેના અગ્નિકોણમાં  
અસ્ત પામે છે ? અથવા અગ્નિકોણમાંથી ઉદય પામીને નૈઋત્ય કોણમાં અસ્ત  
પામે છે ? અથવા નૈઋત્ય કોણમાંથી ઉદય પામીને વાયવ્ય કોણમાં અસ્ત પામે  
છે ? અથવા વાયવ્ય કોણમાંથી ઉદય પામીને ઇશાન કોણમાં અસ્ત પામે છે ?

આગચ્છતઃ ૪ ? હન્ત, ગૌતમ ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપેચન્દ્રમસી ઉદીચી-માન્યામુદ્ગત્ય યાવત્-ઉદીચી-માન્યામાગચ્છતઃ । યદા સ્વલુ ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદા જમ્બૂ-દ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે પશ્ચિમે ચ દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્ય પશ્ચિમે-દિવસો ભવતિ ।

યદા સ્વલુ ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે રાત્રિર્ભવતિ, તદા પશ્ચિમેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા પશ્ચિમે રાત્રિર્ભવતિ તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દ-

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! પેસા હી હોતા હૈ—જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં દો ચન્દ્રમા ઈશાનકોણ સે ઉદિત હોકર યાવત્ ઈશાનકોણ મેં અસ્ત હોતે હૈં ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ, ઉસ સમય ઉત્તરાર્ધ મેં બી રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ તય જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમદિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ તય ઉત્તરાર્ધ મેં બી રાત્રિ હોતા હૈ । ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ, તય જમ્બૂદ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમદિશા મેં દિવસ હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વ દિશામેં રાત્રિ હોતી હૈ તય પશ્ચિમ મેં બી રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જય પશ્ચિમ મેં

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે. “ જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં બે ચન્દ્રમા ઇશાન કોણમાં ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં અસ્ત પામે છે, ત્યાંથી ચંદ્ર કરીને ઇશાન કોણમાં અસ્ત પામે છે. ” ત્યાં સુધીનું પૂર્વોક્ત સમસ્ત કથન અહીં અહુષ્ય કરવું.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જ્યારે જમ્બૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું જમ્બૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જમ્બૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ રાત્રિ હોય છે, અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે જમ્બૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં દિવસ હોય છે.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જ્યારે જમ્બૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું પશ્ચિમ દિશામાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે

સ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરપૌરસ્ત્યે રાત્રિર્ભવતિ, તદા પશ્ચિમેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યથા પશ્ચિમે રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તર-દક્ષિણે દિવસો ભવતિ । યદા ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે ઉત્કૃષ્ટાઽષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ઉત્કૃષ્ટાઽષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે ઉત્કૃષ્ટાઽષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ તદા મન્દરસ્ય પૌરસ્ત્યપશ્ચિમે જઘન્યેન દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ ? હન્ત ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે યાવત્-દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ । યદા ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે મન્દર-પૌરસ્ત્ય રાત્રિ હોતી હૈ તથ જંબૂદ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી ઉત્તરદક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જય જંબૂદ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વદિશા મેં રાત્રિ હોતી હૈ તથ પશ્ચિમ મેં ભો રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જય પશ્ચિમ મેં ભો રાત્રિ હોતી હૈ તથ ઉત્તર-દક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં ઉત્કૃષ્ટ ૧૮ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ તથ ઉત્તરાર્ધ મેં ભો ૧૮ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ ? ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં ભો ૧૮ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ તથ મન્દરપર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમ દિશા મેં જઘન્ય સે ૧૨ ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! તથ જંબૂદ્વીપ મેં યાવત્ ૧૨ ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ ?

મન્દર પર્વતની પશ્ચિમ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું જંબૂદ્વીપમાં મંદર પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે પશ્ચિમ દિશામાં પણ રાત્રિ હોય છે, અને જ્યારે પશ્ચિમમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં પણ ૧૮ મુહૂર્તની જ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં વધારેમાં વધારે ૧૮ મુહૂર્તની જ રાત્રિ હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં શું ટુંકામાં ટુંકો ૧૨ મુહૂર્તનો દિવસ થાય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એ પ્રમાણે જ અને છે. ( અહીં પ્રશ્નોક્ત કથનજ અહ્યં કર્યું. )



પશ્ચિમે ઉત્કૃષ્ટાષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ, તદા ઉત્તર-દક્ષિણે જયન્ત્યેન દ્વાદશ મુહૂર્તો દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા પૌરસ્ત્યપશ્ચિમેષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિ સ્વોત્તરદક્ષિણે દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્ દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ, इत्यादिरीत्या स्वप्नम् । तथा ' यदा खलु भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे दक्षिणार्धे वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा उत्तरार्धेऽपि वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते, यदा उत्तरार्धेऽपि वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्यपश्चिमेऽनन्तरपुरस्कृतसमये अन्यव- हितोत्तरकाले वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते ! हन्त, गौतम ! यदा जम्बूद्वीपे

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જંબૂદ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં ઉત્કૃષ્ટ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ, તવ ઉત્તર દક્ષિણ દિશા મેં જયન્ત્ય સે કયા ૧૨ ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ ? હાં ગૌતમ ! જય પૂર્વપશ્ચિમ મેં ૧૮ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ, તવ ઉત્તર દક્ષિણ મેં ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ । इत्यादि रीति से सब विषय प्रथम उद्देशक में कहे हुए अनुसार अपने आप समझलेना चाहिये ।

તથા—પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં જય દક્ષિણાર્ધ મેં વર્ષાઋતુ કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ—તવ ઉત્તરાર્ધ મેં ભી વર્ષા કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં ભી વર્ષા કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં અન્યવહિત ઉત્તરકાલ મેં વર્ષા કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ કયા ?

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ત્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં લાંબામાં લાંબી ૧૮ મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં ટુંકામાં ટુંકો ૧૨ મુહૂર્તનો દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! ત્યારે પૂર્વ-પશ્ચિમમાં લાંબામાં લાંબી ૧૮ મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે, ત્યારે ઉત્તર-દક્ષિણમાં ટુંકામાં ટુંકો ૧૨ મુહૂર્તનો દિવસ હોય છે.

इत्यादि समस्त विषयानुं कथन पडेता उद्देशकમાં કહ્યા પ્રમાણે સમજવું.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ત્યારે જંબૂદ્વીપમાં દક્ષિણાર્ધમાં વર્ષાઋતુનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ વર્ષાઋતુનો પ્રથમ સમય હોય છે ? અને ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અન્યવહિત ( આંતરા રહિત ) ઉત્તર કાળમાં શું વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે ?

દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, યદા ઉત્તરાર્ધે વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે તદા મન્દર-પૌરસ્ત્યપશ્ચિમેઽનન્તરપુરસ્કૃતસમયે વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે । યદા મદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરપર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, તદા પશ્ચિમેઽપિ વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, યદા પશ્ચિમેઽપિ વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે તદા મન્દરપર્વતસ્ય ઉત્તરદક્ષિણેઽનન્તરપુરસ્કૃતસમયે વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપન્નો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે તદા પશ્ચિમેઽપિ પ્રથમઃ સમયઃ,

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જવ જંબૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, તવ ઉત્તરાર્ધ મેં બી વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ ઓર જવ ઉત્તરાર્ધ મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ મન્દર પર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં અવ્યવહિત ઉત્તરકાલ મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! જવ જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વદિશા મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, તવ પશ્ચિમ મેં બી વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, ઓર જવ પશ્ચિમ મેં બી વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ મન્દર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણદિશા મેં અનન્તર પશ્ચાત્કૃત સમય મેં અવ્યવહિત પૂર્વકાલ મેં—વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જવ જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વદિશા મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ પશ્ચિમ મેં બી વર્ષાં કા

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની પૂર્વ પશ્ચિમ દિશામાં અવ્યવહિત ઉત્તરકાળમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે.

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે શું પશ્ચિમ દિશામાં પણ વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે ? અને જ્યારે પશ્ચિમમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે શું મન્દર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં અનન્તર પશ્ચાત્કૃત (ત્યારબાદના સમયમાં) સમયમાં અવ્યવહિત (આંતરા રહિત) પૂર્વકાળમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે પશ્ચિમમાં પણ વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય

યદા પશ્ચિમે પ્રથમઃ સમયઃ, તદા મન્દરસ્ય ઉત્તરદક્ષિણેऽનન્તરપુરસ્કૃતસમયે  
વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પતિપદ્ધતો ભવતિ । एवं यथा समयेन अभिलापो भणितो  
वर्षाणां तथा आवलिकयाऽपि भणितव्यः । एवम्—आनप्राणाभ्यामपि, स्तोकेनापि,  
लवेनापि, गृहर्त्तनापि, अहोरात्रेणापि, पक्षेणापि, मासेनापि, ऋतुनाऽपि, एतेषां  
सर्वेषां यथा समयस्याभिलापस्तथा भणितव्यः । यदा खलु भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे  
हेमन्तानां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते० ? यथैव वर्षाणाम् अभिलापः, तथैव हेमन्ता-  
नामपि, ग्रीष्माणामपि भणितव्यो यावत्-ऋतुना, एवं त्रीणि अपि । एतेषां  
त्रिंशद् आलापका भणितव्याः । यदा भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य

પ્રથમ સમય હોતા હૈ ઓર જય પશ્ચિમ મેં મી પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ  
મન્દર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણદિશા મેં અનન્તર પથ્થાલ્કૃત સમય મેં વર્ષા  
કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર સે વર્ષા કા યહ અભિલાપ સમય  
કો લેકર કહા ગયા હૈ—ઉસી પ્રકાર સે આવલિકા કો લેકર મી વર્ષા  
કા અભિલાપ કહલેના ચાહિયે તથા આનપ્રાણ કો, સ્તોક કો, લવ કો,  
ગૃહર્ત્ત કો, અહોરાત્ર કો, પક્ષ કો માસ કો ઓર ઋતુ કો મી લેકર  
હસી પ્રકાર સે અભિલાપ વર્ષા કા કહલેના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં દક્ષિણ મેં જય હેમન્ત-  
ઋતુ કા પ્રથમ સમય પ્રારંભ હોતા હૈ, તવ ઉત્તર મેં મી હેમન્ત ઋતુ કા  
પ્રથમ સમય પ્રારંભ હોતા હૈ ઓર જય ઉત્તર મેં મી હેમન્ત ઋતુ કા પ્રથમ  
સમય પ્રારંભ હોતા હૈ તવ જંબૂદ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમદિશા  
મેં કયા અનન્તપુરસ્કૃત સમય મેં હેમન્ત ઋતુ કા પ્રારંભ હોતા હૈ ?

છે અને જ્યારે પશ્ચિમમાં પાંતો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની  
ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં અનન્તર ( ત્યારખાદના સમયમાં ) સમયમાં વર્ષાનો  
પ્રથમ સમય હોય છે. જેવી રીતે સમયની અપેક્ષાએ વર્ષાનો આ આલાપક  
( પ્રશ્નોત્તર ૩૫ સૂત્રો ) કહ્યો છે, એજ પ્રમાણે આવલિકા, આનપ્રાણ, સ્તોક,  
લવ, ગૃહર્ત્ત, રાત્રિ-દિવસ, પક્ષ, માસ અને ઋતુઓની અપેક્ષાએ પણ વર્ષાના  
આલાપક કહેવા જોઈએ.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જંબૂદ્વપ નામના દ્વીપમાં દક્ષિણ દિશામાં જ્યારે  
હેમન્ત ઋતુના પ્રથમ સમયનો પ્રારંભ થાય ત્યારે શું ઉત્તરમાં પણ હેમન્ત  
ઋતુના પ્રથમ સમયનો પ્રારંભ થાય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરમાં હેમન્ત ઋતુના  
પ્રથમ સમયનો પ્રારંભ થાય છે, ત્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-  
પશ્ચિમ દિશામાં શું ( ત્યારખાદના સમયમાં ) હેમન્ત ઋતુના પ્રારંભ થાય છે ?



દક્ષિણાર્ધે પ્રથમમ્ અયનં પ્રતિપદ્યતે તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ પ્રથમમ્ અયનં પ્રતિપદ્યતે ! યથા સમયેનાભિલાપસ્તથૈવ અયનેનાપિ મણિતવ્યઃ, યાવત્-અનન્તરપશ્ચાત્કૃતસમયે પ્રથમમ્ અયનં પ્રતિપન્નં ભવતિ । યથાઽયનેનાભિલાપસ્તથા સંવત્સરેણાપિ મણિતવ્યઃ પુનેના-

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! इस संबंधी समस्त कथन अर्थात् हेमन्त संबंध अभिलाप वर्षा के अभिलाप की तरह कह लेना चाहिये—इसी तरह से ग्रीष्म ऋतु संबंधी अभिलाप भी जानना चाहिये तथा हेमन्त और ग्रीष्म के प्रथम समय की तरह उनकी प्रथम आवलिका आदि सब ऋतु तक समझना चाहिये, इस तरह इन तीन ऋतुओं के विषय में एक सरीखा कथन जानना चाहिये ये सब मिलकर ३० तीस आलापक हो जाते हैं ।

प्रश्न—हे भदन्त ! जम्बूद्वीप नामके द्वीप में मन्दरपर्वत के दक्षिणार्ध में जब प्रथम अयन प्रारंभ होता है, तब उत्तरार्ध में भी प्रथम अयन प्रारम्भ होता है क्या ? उ०—हे गौतम ! जिस प्रकार से समयके सम्बन्ध में कहा जा चुका है उसी तरह से अयन के सम्बन्धमें भी जानना चाहिये । और यह कथन इस विषयमें “यावत् अनन्तर पश्चात्कृतसमये प्रथमं अयनं प्रतिपन्नं भवति यहाँ तक ही ग्रहण करना चाहिये । जिस प्रकार से अयन को लेकर अभिलाप कहा है उसी तरह

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! વર્ષાના આલાપકો જેવાં જ હેમન્તના આલાપકો પણ સમજવા. એજ પ્રમાણે ગ્રીષ્મઋતુ સંબંધી આલાપકો પણ સમજવા. તથા વર્ષાઋતુના સમય, આવલિકા આદિની અપેક્ષાએ જેવા આલાપકો કહ્યા છે એવાં આલાપકો હેમન્ત અને ગ્રીષ્મના સમયથી ઋતુ પર્યંતના કાળને અનુલક્ષીને કહેવા ભોધએ. આ રીતે આ ત્રણે ઋતુઓનું કથન એકસરખું સમજવું. ત્રણે ઋતુના એકંદર ૩૦ આલાપકો બને છે.

प्रश्न—हे भदन्त ! जम्बूद्वीपना मन्दर पर्वतना दक्षिणार्धमां न्यारे पड़ेला अयननी शरूआत थाय छे, त्यारे शुं उत्तरार्धमां पणु पड़ेला अयननी शरूआत थाय छे ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! સમયના વિષે જેમ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ અયનના વિષયમાં પણ સમજવું. અને તે કથન “અનન્તરપશ્ચાત્કૃતસમયે પ્રથમં અયનં પ્રતિપન્નં ભવતિ ” અહીં સુધી જ ગ્રહણ કરવું. જેવી રીતે અયન વિષેના આલાપકો કહ્યા છે એજ પ્રમાણે સંવત્સર વિષેના આલાપકો પણ કહેવા

પિ, વર્ષગતેનાપિ વર્ષસહસ્રેણાપિ, વર્ષશતસહસ્રેણાપિ, પૂર્વાદ્વિનાપિ, પૂર્વેણાપિ, ત્રુટિતા-  
દ્વેનાપિ ત્રુટિતેનાપિ, એવમ્-અટટાદ્વમ્, અટટમ્, અવવાદ્વમ્, અવવમ્, હુહુકાદ્વમ્,  
હુહુકમ્, ઉત્પલાદ્વમ્, ઉત્પલમ્, પદ્માદ્વમ્, પદમ્, નલિનાદ્વમ્, નલિનમ્, અર્થનિ-  
પુરાદ્વમ્, અર્થનિપુરમ્, અયુતાદ્વમ્, અયુતમ્, નયુતાદ્વમ્, નયુતમ્, પ્રયુતાદ્વમ્,  
પ્રયુતમ્, ચૂલિકાદ્વમ્, ચૂલિકા, શીર્ષપ્રહેલિકયા, પલ્યોપમેન, સાગરોપમેણાપિ  
મણિતવ્યઃ । યદા ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે પ્રથમાવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે,  
તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ પ્રથમાવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે યદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ પ્રથમાવસર્પિણી  
પ્રતિપદ્યતે તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે પશ્ચિમે નૈવાસ્તિ અવસ-  
ર્પિણી, નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી, અવસ્થિતસ્તત્ર કાલઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, શ્રમણાયુષ્મન્ ! હન્ત,

સે સંવત્સરકો લેકર મી અમિલાપ કહલેના ચાહિયે હસી તરહ સે યુગ,  
વર્ષરાત વર્ષસહસ્ર, વર્ષશતસહસ્ર, પૂર્વાદ્વ, પૂર્વ ત્રુટિતાદ્વ, ત્રુટિત, અટટાદ્વ,  
અટટ, અવવાદ્વ, અવવ, હુહુકાદ્વ, હુહુક, ઉત્પલાદ્વ ઉત્પલ, પદ્માદ્વ, પદ્મ નલિ-  
નાદ્વ, નલિન, અર્થનિપુરાદ્વ, અર્થનિપુર, અયુતાદ્વ, અયુત, નયુતાદ્વ, નયુત,  
પ્રયુતાદ્વ, પ્રયુત, ચૂલિકાદ્વ, ચૂલિકા, શીર્ષપ્રહેલિકાદ્વ, શીર્ષપ્રહેલિકા, પલ્યો-  
પમ ઓર સાગરોપમ હન કો લેકર મી અમિલાપ કહલેના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન— હે ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં જવ પ્રથમ  
અવસર્પિણી પ્રારંભ હોતી હૈ, તવ ઉત્તરાર્ધ મેં મી પ્રથમ અવસર્પિણી  
પ્રારંભ હોતી હૈ ઓર જવ ઉત્તરાર્ધ મેં મી પ્રથમ અવસર્પિણી પ્રારંભ હોતી  
હૈ તો કયા જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમ દિશા  
મેં જવ અવસર્પિણી નહીં હૈ ઓર ઉત્સર્પિણી મી નહીં હૈ તો કયા હૈ  
દીર્ઘજીવિન્ ! શ્રમણ ! વહાં પર કાલ અવસ્થિત કહા ગયા હૈ ?

જોધએ. એજ પ્રમાણે યુગ, વર્ષસહસ્ર, પૂર્વાદ્વ, પૂર્વ, ત્રુટિતાદ્વ, ત્રુટિત, અટ-  
ટાદ્વ, અટટ, અવવાદ્વ, અવવ, હુહુકાદ્વ, હુહુક, ઉત્પલાદ્વ, ઉત્પલ, પદ્માદ્વ, પદ્મ,  
નલિનાદ્વ, નલિન, અર્થનિપુરાદ્વ, અર્થનિપુર, અયુતાદ્વ, અયુત, નયુતાદ્વ, નયુત,  
પ્રયુતાદ્વ, પ્રયુત, ચૂલિકાદ્વ, ચૂલિકા, શીર્ષપ્રહેલિકાદ્વ, શીર્ષપ્રહેલિકા, પલ્યોપમ  
અને સાગરોપમના વિષયમાં પણ આલાપક કહેવા જોઈએ.

પ્રશ્ન— હે ભદન્ત ! ત્યારે જમ્બૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી  
શરૂ થાય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી શરૂ થાય છે ?  
અને ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ અવસર્પિણી શરૂ થાય છે, ત્યારે શું જમ્બૂદ્વીપમાં  
મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં ઉત્સર્પિણી પણ હોતી નથી અને અવ-  
સર્પિણી હોતી નથી ? તો હે ભદન્ત ! હે દીર્ઘજીવન ! શું ત્યાં અવસ્થિત  
કાલ કહ્યો છે ?

ગૌતમ ! તદેવ ગાવત્-ઉચારયિતવ્યમ્, યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ ! યથા અવસર્પિણ્યા આલાપકો મણિતઃ, એવમ્ ઉત્સર્પિણ્યાઽપિ મણિતવ્યઃ ।

તથા ચન્દ્રવિષયકસ્તૃતીયાલાપકમેત્યમ્-હવણે મદન્ત ! સમુદ્રે ચન્દ્રો ઉદીચી-પાચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પાચી-દક્ષિણાયામ્ આગચ્છતઃ ? પાચી-દક્ષિણાયામ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણ-મતીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? દક્ષિણ-મતીચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય મતીચ્યુદીચ્યા માગચ્છતઃ ? મતીચ્યુદીચ્યુદ્ગત્ય ઉદીચી-પાચ્યામાગચ્છતઃ ? લવણસમુદ્રે ચત્તારચન્દ્રા ભવન્તિ તેષુ પ્રતિદિનં તત્ર ભાગદ્વયં દ્વૌ ચન્દ્રો આગચ્છતઃ, તદપેક્ષયા 'દ્વૌ' इत्युक्तम्, યા એવ જમ્બૂદ્વીપસ્ય ચક્તવ્યતા મણિતા સા એવ અપરિશેષિકા

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! પેસા હી હૈ-પૂર્વ કી તરહ સે હી યહાં સય કહ-લેના ચાહિયે-યાવત્ હૈ શ્રમણાયુષ્મન્ ! જિસ પ્રકાર સે અવસર્પિણી કે સંબંધ મેં આલાપક કહા હૈ-ઉસી પ્રકાર સે ઉત્સર્પિણી કે વિષય મેં બી આલાપક જાનના ચાહિયે ।

તથા—ચન્દ્ર કે વિષય મેં તૃતીય આલાપક હસ પ્રકાર સે હૈ-પ્ર૦—હૈ મદન્ત ! લવણસમુદ્ર મેં દો ચંદ્રમા ઈશાન કોણ મેં ઉદિત હોકર અગ્નિકોણ મેં જાતે હૈં કયા ? અગ્નિકોણ મેં ઉદિત હોકર નૈઋત્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? નૈઋત્ય કોણ મેં ઉદિત હોકર વાયવ્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? વાયવ્યકોણ મેં ઉદિત હોકર ઈશાન કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? લવ-ણસમુદ્ર મેં ચાર ચંદ્રમા હૈં । ડનમેંસે પ્રતિદિન વહાં પર દો ભાગમેં દો ચંદ્ર ઉદિત હોતે હૈં-હસી અપેક્ષા કો લેકર (દો) પેસા પાઠ કહા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. એટલે કે પ્રશ્નસૂત્ર પ્રમાણે જ અહીં સમસ્ત કથન સમજવું. જે પ્રકારે અવસર્પિણીના વિષયમાં આલાપક કહ્યો છે, એ જ પ્રમાણે ઉત્સર્પિણીના વિષયમાં પણ આલાપક સમજવો. તથા ચન્દ્રના વિષયમાં ત્રીજો આલાપક આ પ્રમાણે છે:—

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્રમાં જે ચન્દ્રમા ઈશાન કોણમાં ઉદય પામીને શુ' અગ્નિકોણમાં જાય છે ? અગ્નિકોણમાં ઉદય પામીને શુ' નૈઋત્ય કોણમાં જાય છે ? નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને શુ' વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને શુ' ઈશાન કોણમાં જાય છે ? ( લવણ સમુદ્રમાં ચાર ચન્દ્રમા છે. તેમાંથી પ્રતિદિન ત્યાં જે ભાગમાં જે ચન્દ્ર ઉદય પામે છે, તે કારણે સૂત્રપાઠમાં 'જે ચન્દ્ર' કહ્યા છે. )



લવણસમુદ્રસ્યાપિ ભણિતવ્યા, નવરમ્-અભિલાષોઽયં જ્ઞાતવ્યઃ-યદા ભદન્ત ! લવણે સમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદેવ યાવત્-તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ, एतेन અભિલાષેન જ્ઞાતવ્યમ્ । યદા ભદન્ત ! લવણસમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે, તદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે ? યદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે નૈવાસ્તિ અવસર્પિણી નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી શ્રમણાયુષ્મન્ ! । હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્, ધાત-

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપ કી જો વક્તવ્યતા કહી હૈ, વહી પૂરી વક્તવ્યતા લવણસમુદ્ર કી બી કહની ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ ઉસમેં યહી હૈ કિ યહાં અભિલાષ હસ પ્રકાર સે જાનના—( હે ભદન્ત ! જિસ સમય લવણ સમુદ્ર કે દક્ષિણાર્ધ મેં દિવસ હોતા હૈ ઇત્યાદિ સબ ઉસી પ્રકાર સે કહના ચાહિયે—યાવત્ તવ લવણ સમુદ્ર મેં પૂર્વ પશ્ચિમ મેં રાત્રિ હોતી હૈ ” । હસ પ્રકાર કે અભિલાષ દ્વારા હસ વિષય સે સંબંધ રાખને વાલે પ્રશ્નોત્તર કહના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્ર મેં જય દક્ષિણાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ તથા ઉત્તરાર્ધ મેં બી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં બી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ, તથા લવણસમુદ્ર મેં પૂર્વ ઓર પશ્ચિમમેં ન અવસર્પિણીકાલ હોતા હૈ ઓર ન ઉત્સર્પિણીકાલ હી હોતા હૈ તો કયા વહાં કાલ અવસ્થિત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપના વિષયમાં જે વક્તવ્યતા કહી છે, એજ પ્રમાણેની પૂરેપૂરી વક્તવ્યતા લવણ સમુદ્રના વિષયમાં પણ સમજવી. વિશેષતા એટલીજ છે કે ત્યાં સૂત્રપાઠમાં આવતા ‘જંબૂદ્વીપને’ બદલે અહીં ‘લવણ સમુદ્ર’ સમજવો. જેમકે—“ હે ભદન્ત ! ત્યારે લવણસમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે ” ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન એ પ્રમાણેજ કહેવું. “ ત્યારે લવણ સમુદ્રમાં પૂર્વ-પશ્ચિમે રાત્રિ હોય છે, ” પર્યન્તનું કથન અહીં ગ્રહણ કરવું. આ પ્રકારના આભાષકો દ્વારા આ વિષય સાથે સંબંધ રાખતા પ્રશ્નોત્તરો અહીં કહેવા જોઈએ.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં ત્યારે પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, અને ઉત્તરાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે લવણ સમુદ્રની પૂર્વ અને પશ્ચિમમાં અવસર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી. તો શું ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે ?

ગૌતમ ! તદેવ ગાવત્-ઉચારયિતવ્યમ્, યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ ! યથા અવસર્પિણ્યા આલાપકો ભણિતઃ, એવમ્ ઉત્સર્પિણ્યાઽપિ ભણિતવ્યઃ ।

તથા ચન્દ્રવિષયકસ્તૃતીયાલાપકથેત્યમ્-લવણે ભદન્ત ! સમુદ્રે ચન્દ્રો ઉદીચી-પાચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રાચી-દક્ષિણાયામ્ આગच्छतः ? પ્રાચી-દક્ષિણાયામ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણ-પ્રતીચ્યામ્ આગच्छतः ? દક્ષિણ-પ્રતીચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રતીચ્યુદીચ્યા માગच्छतः ? પ્રતીચ્યુદીચ્યુદ્ગત્ય ઉદીચી-પાચ્યામાગच्छतः ? લવણસમુદ્રે ચત્વાશ્ચન્દ્રા ભવન્તિ તેષુ પ્રતિદિનં તત્ર ભાગદ્વયે દ્વૌ ચન્દ્રો આગच्छतः, તદપેક્ષયા 'દ્વૌ' इत्युक्तम्, યા એવ જમ્બૂદ્વીપસ્ય વક્તવ્યતા ભણિતા સા એવ અપરિશેષિકા

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! એસા હી હૈ-પૂર્વ કી તરહ સે હી યહાં સઘ કહ-લેના ચાહિયે-યાવત્ હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! જિસ પ્રકાર સે અવસર્પિણી કે સંબંધ મેં આલાપક કહા હૈ-ઉસી પ્રકાર સે ઉત્સર્પિણી કે વિષય મેં બી આલાપક જાનના ચાહિયે ।

તથા—ચન્દ્ર કે વિષય મેં તૃતીય આલાપક હસ પ્રકાર સે હૈ-પ્ર૦-હે ભદન્ત ! લવણસમુદ્ર મેં દો ચંદ્રમા ઈશાન કોણ મેં ઉદિત હોકર અગ્નિકોણ મેં જાતે હૈં કયા ? અગ્નિકોણ મેં ઉદિત હોકર નૈઋત્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? નૈઋત્ય કોણ મેં ઉદિત હાકર વાયવ્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? વાયવ્યકોણ મેં ઉદિત હોકર ઈશાન કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? લવ-ણસમુદ્ર મેં ચાર ચંદ્રમા હૈં । ડનમેંસે પ્રતિદિન વહાં પર દો ભાગમેં દો ચંદ્ર ઉદિત હોતે હૈં-હસી અપેક્ષા કો લેકર (દો) એસો પાઠ કહા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. એટલે કે પ્રશ્નસૂત્ર પ્રમાણે જ અહીં સમસ્ત કથન સમજવું. જે પ્રકારે અવસર્પિણીના વિષયમાં આલાપક કહ્યો છે, એ જ પ્રમાણે ઉત્સર્પિણીના વિષયમાં પણ આલાપક સમજવો. તથા ચન્દ્રના વિષયમાં ત્રીજો આલાપક આ પ્રમાણે છે:—

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્રમાં જે ચન્દ્રમા ઈશાન કોણમાં ઉદય પામીને શુ' અગ્નિકોણમાં જાય છે ? અગ્નિકોણમાં ઉદય પામીને શુ' નૈઋત્ય કોણમાં જાય છે ? નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને શુ' વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને શુ' ઈશાન કોણમાં જાય છે ? ( લવણ સમુદ્રમાં ચાર ચન્દ્રમા છે. તેમાંથી પ્રતિદિન ત્યાં જે ભાગમાં જે ચન્દ્ર ઉદય પામે છે, તે કારણે સૂત્રપાઠમાં 'જે ચન્દ્ર' કહ્યા છે. )

લવણસમુદ્રસ્યાપિ મણિતવ્યા, નવરમ્-અભિજ્ઞાપોઽયં જ્ઞાતવ્યઃ-યદા મદન્ત ! લવણે સમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદેવ યાવત્-તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ, एतेन અભિજ્ઞાપેન જ્ઞાતવ્યમ્ । યદા મદન્ત ! લવણસમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે, તદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે ? યદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે નૈવાસ્તિ અવસર્પિણી નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી શ્રમણાયુષ્મન્ ! । હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્, ધાત-

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપ કી જો વક્તવ્યતા કહી હૈ, વહી પૂરી વક્તવ્યતા લવણસમુદ્ર કી ભી કહની ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ ઉસમેં યહી હૈ કિ યહાં અભિલાપ હસ પ્રકાર સે જાનના—( હે મદન્ત ! જિસ સમય લવણ સમુદ્ર કે દક્ષિણાર્ધ મેં દિવસ હોતા હૈ ઇત્યાદિ સથ ઉસી પ્રકાર સે કહના ચાહિયે—યાવત્ તથ લવણ સમુદ્ર મેં પૂર્વ પશ્ચિમ મેં રાત્રિ હોતી હૈ ” । હસ પ્રકાર કે અભિલાપ દ્વારા હસ વિષય સે સંબંધ રાખને વાલે પ્રશ્નોત્તર કહના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! લવણ સમુદ્ર મેં જય દક્ષિણાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ તથ ઉત્તરાર્ધ મેં ભી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં ભી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ, તથ લવણસમુદ્ર મેં પૂર્વ ઓર પશ્ચિમમેં ન અવસર્પિણીકાલ હોતા હૈ ઓર ન ઉત્સર્પિણીકાલ હી હોતા હૈ તો કયા વહાં કાલ અવસ્થિત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપના વિષયમાં જે વક્તવ્યતા કહી છે, એજ પ્રમાણેની પૂરેપૂરી વક્તવ્યતા લવણ સમુદ્રના વિષયમાં પણ સમજવી. વિશેષતા એટલીજ છે કે ત્યાં સૂત્રપાઠમાં આવતા ‘જંબૂદ્વીપને’ બદલે અહીં ‘લવણ સમુદ્ર’ સમજવો. જેમકે—“ હે મદન્ત ! જ્યારે લવણસમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે ” ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન એ પ્રમાણે જ કહેવું. “ ત્યારે લવણ સમુદ્રમાં પૂર્વ-પશ્ચિમે રાત્રિ હોય છે, ” પર્યંતનું કથન અહીં ગ્રહણ કરવું. આ પ્રકારના આલાપકો દ્વારા આ વિષય સાથે સંબંધ રાખતા પ્રશ્નોત્તરો અહીં કહેવા લેઈએ.

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! લવણ સમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં ત્યારે પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, અને ઉત્તરાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે લવણ સમુદ્રની પૂર્વ અને પશ્ચિમમાં અવસર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી. તો શું ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે ?



કીલ્ખણે મદન્ત ! ચન્દ્રો ઉદીચી-પાચ્યામુદ્ગત્ય યાવત્ - પ્રતીચ્ચુદીચ્યા મુદ્ગત્ય ઉદીચી-પાચ્યામાગચ્છતઃ ? ગૌતમ ! યથૈવ જમ્બૂદ્વીપસ્ય વક્તવ્યતા મણિતા, સા એવ ધાતકીલ્ખણસ્યાપિ મણિતવ્યા, નવરમ્-અનેન અમિલાપેન સર્વે અમિલાપાઃ મણિતવ્યાઃ- યદા મદન્ત ! ધાતકીલ્ખણે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેડપિ ? યદા ઉત્તરાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ તદા ધાતકીલ્ખણે દ્વીપે મન્દરાણાં પર્વતાનાં પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! એવમેવ યાવત્-પૌરસ્ત્ય-

હે ગૌતમ ! હાં, વહાં પર इसी प्रकार से है यावत् हे श्रमणा-युष्मन् ! इत्यादि ।

પ્રશ્ન-હે મદન્ત ! ધાતકીલ્ખણમાં દ્વાદશ ચંદ્રમા ઈશાનકોણે ઉદિત હોકર અગ્નિકોણે જાય છે કે ? અગ્નિકોણે ઉદિત હોત્તર નૈઋત્યકોણે જાય છે કે ? નૈઋત્યકોણે ઉદિત હોકર વાયવ્યકોણે જાય છે કે ? વાયવ્યકોણે ઉદિત હોકર ઈશાનકોણે જાય છે કે ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! इस विषय में जैसी वक्तव्यता जम्बूद्वीप को लेकर कही गई है उसी प्रकार से वक्तव्यता यहां पर भी कह लेनी चाहिये. विशेषता केवल इस वक्तव्यता में उस वक्तव्यता की अपेक्षा इतनी ही है कि जम्बूद्वीप के स्थान पर इस वक्तव्यता में ( धातकीलखण्ड ) शब्द का उच्चारण करना चाहिये

પ્રશ્ન-હે મદન્ત ! જવ ધાતકીલ્ખણદ્વીપે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિ હોતી હૈ, તવ ઉત્તરાર્ધે રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જવ ઉત્તરાર્ધે રાત્રિ હોતી હૈ, તવ ધાતકી લ્ખણ દ્વીપે મન્દરપર્વતો કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કે ?

ઉત્તર-હા, ગૌતમ ! ત્યાં એ પ્રમાણે જ છે. ( હે શ્રમણ આયુષ્મન્ ! પર્યન્તનું સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અહીં અહણ કરવું. )

પ્રશ્ન-હે મદન્ત ! ધાતકી ખંડમાં બાર ચન્દ્રમા શું ઈશાન કોણમાં ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શું નૈઋત્ય કોણમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શું વાયવ્યમાં જાય છે ? વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને શું ઈશાન કોણમાં જાય છે ?

ઉત્તર-હા, ગૌતમ ! આ વિષયમાં જમ્બૂદ્વીપની વક્તવ્યતા એવી જ વક્તવ્યતા સમજવી. તે વક્તવ્યતામાં ' જમ્બૂદ્વીપની ' જગ્યાએ ' ધાતકીખંડ ' પદ મૂકવાથી ધાતકીખંડ વિષેના પ્રશ્નોત્તરો તૈયાર થશે. જેમકે-“ હે મદન્ત ! જ્યારે ધાતકી ખંડના દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે ધાતકીખંડ દ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમે શું દિવસ હોય છે ? ”

પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ । યદા ભદન્ત ! ધાતકીઘ્વંડે દ્વીપે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ પૌરસ્ત્યે રાત્રિર્ભવતિ, તદા પશ્ચિમેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ ? યદા પશ્ચિમેઽપિ તદા ધાતકીઘ્વંડે દ્વીપે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ ઉત્તરે દક્ષિણે દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-ઉત્તર-દક્ષિણે દિવસો ભવતિ, એવમ્ એતેન અભિધાપેન જ્ઞાતવ્યં યાવત્, યદા ભદન્ત ! દક્ષિણાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ? યદા ઉત્તરાર્ધે તદા ધાતકીઘ્વંડે દ્વીપે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ પૌરસ્ત્ય પશ્ચિમે નાસ્તિ અવસર્પિણી યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ !

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! એસા હી હોતા હૈ । યાવત્ પૂર્વપશ્ચિમદિશા મેં દિવસ હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ધાતકી ઘ્વંડ દ્વીપ મેં જવ દો મન્દરપર્વતોં કી પૂર્વદિશા મેં રાત્રિ હોતી હૈ તવ પશ્ચિમ મેં બી કયા રાત્રિ હોતી હૈ ? ઓર જવ પશ્ચિમ મેં રાત્રિ હોતી હૈ તવ ધાતકીઘ્વંડ દ્વીપ મેં મન્દરપર્વતોં કી ઉત્તર ઓર દક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! યાવત્ ઉત્તર ઓર દક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ । હસ તરહ હસ અભિલાપ દ્વારા જાનના ચાહિયે યાવત્—

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જવ દક્ષિણાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી હોતી હૈ તવ ઉત્તરાર્ધ મેં બી પ્રથમ અવસર્પિણી હોતી હૈ । ઓર જવ ઉત્તરાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી હોતી હૈ, તવ ધાતકીઘ્વંડ દ્વીપ મેં મન્દર પર્વતોં કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં અવસર્પિણી નહીં હોતી, ઉત્સર્પિણી બી નહીં હોતી—તો કયા હૈ શ્રમણાયુષ્મન્ વહાં કાલ અવસ્થિત માના ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે. એટલે કે પ્રશ્નમાં કહ્યા પ્રમાણે જ સમસ્ત કથન અહીં શ્રદ્ધા કરવું.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ધાતકીઘ્વંડ દ્વીપના બે મન્દર પર્વતોની પૂર્વ દિશામાં જ્યારે રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું પશ્ચિમમાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે પશ્ચિમમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ધાતકીઘ્વંડ દ્વીપના મન્દર પર્વતોની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એ પ્રમાણે જ હોય છે. એટલે કે “ ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે, ” ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન અહીં શ્રદ્ધા કરવું.

હે ભદન્ત ! જ્યારે ધાતકીઘ્વંડ દ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી હોય છે ? અને ઉત્તરાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતોની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અવસર્પિણી પણ હોતી નથી અને ઉત્સર્પિણી પણ હોતી નથી. તો હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! શું ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે ?

इन्त, गौतम ! यावत्-श्रमणायुष्मन् ! यथा-लवणसमुद्रस्य वक्तव्यता तथा कालो-  
दस्यापि वक्तव्यता भणितव्या, नवरम्-कालोदस्य नाम भणितव्यम्, अभ्यन्तर-  
पुष्करार्धे भदन्त ! चन्द्रो उदीची - माघ्याम् उद्गस्य यावत्-उदीची-माघ्या  
मागच्छतः ? गौतम ! यथैव धातकीखण्डस्य वक्तव्यता तथैव अभ्यन्तरपुष्करार्ध-  
स्यापि भणितव्या, नवरम्-अभिलापो ज्ञातव्यः, यावत्-तदा अभ्यन्तरपुष्करार्धे  
मन्दरयोः पर्वतयोः पौरस्त्य-पश्चिमे नैवास्ति अवसर्पिणी, नैवास्ति उत्सर्पिणी,

उत्तर—हां गौतम ! इसी तरह से है यावत् श्रमणायुष्मन् ! जिस प्रकार से लवणसमुद्र की यह वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार से कालोद संबंधी वक्तव्यता भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है कि लवणसमुद्र के स्थानपर पाठ के उच्चारण करते समय ( कालोद ) इस शब्द का प्रयोग करना चाहिये ।

प्रश्न—हे भदन्त ! आभ्यन्तरपुष्करार्ध में दो चन्द्रमा ईशानकोण से उदित होकर अग्निकोण में जाते हैं क्या ? अग्निकोण से उदित होकर नैऋत्यकोण में जाते हैं क्या ? नैऋत्यकोण से उदित होकर वायव्यकोण में जाते हैं क्या ? वायव्य कोण से उदित होकर ईशान कोण में जाते हैं क्या ? हे गौतम ! इस विषय में जैसी धातकीखण्ड को लेकर कही गई है वैसी ही वक्तव्यता आभ्यन्तर पुष्करार्धके विषय में भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है । कि धातकीखण्ड शब्दके बदले इस वक्त-

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. શ્રમણાયુષ્મન્ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં અહણ કરવું. લવણ સમુદ્રની આ વક્તવ્યતા પ્રમાણે જ કાલોદની વક્તવ્યતા પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે સૂત્રપાઠમાં લવણ સમુદ્રને બદલે ' કાલોદ ' શબ્દનો પ્રયોગ કરવો.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં બે ચન્દ્રમા શું ઈશાન કોણમાંથી ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શું નૈઋત્યમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શું વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? શું વાયવ્યમાં ઉદય પામીને ઈશાનમાં જાય છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! આ વિષયને અનુલક્ષીને ધાતકીખંડના વિષયમાં જે પ્રમાણે કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધના સંબંધમાં પણ સમજવું. આ કથનમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે ' ધાતકીખંડ ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તેને બદલે અહીં " આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ " શબ્દનો પ્રયોગ કરવો. આ પ્રમાણે દેરફાર કરીને પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા જોઈએ. ક્યાં સુધી તે કથનને અહણ



અવસ્થિતસ્ત્ર કાલઃ પ્રશ્નઃ શ્રમણાયુષ્મન્ । સૂત્રે વહુવચન કથનેન લવણસમુદ્રે  
ચત્વારઃ સૂર્યાઃ ચત્વારચન્દ્રાઃ, તથા ધાતકીલ્ખંડે દ્વાદશસૂર્યા દ્વાદશ ચન્દ્રાશ્ચ  
વક્તવ્યાઃ ॥ સૂ ૧ ॥

इति पञ्चमशतकस्य दशमोद्देशकः समाप्तः ॥ ५-१०

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-  
तललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैरुग्रन्यनिर्मापक-त्रादिमानमर्दक-  
श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजमदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-  
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री  
घासीलालप्रतिविरचितायां श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां  
व्याख्यायां पञ्चमं शतकं समाप्तम् ॥१०॥

વ્યતા મેં આખ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કર પાઠ ઘોલના  
ચાહિયે । યાવત્ આખ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ મેં મંદરો કી પૂર્વ પશ્ચિમદિશા મેં  
અવસર્પિણી કાલ નહીં હોતા હૈ ઓર ઉત્સર્પિણી કાલ મી નહીં હોતા હૈ  
કર્પો કિ વહાં પર કાલ અવસ્થિત કહા ગયા હૈ । સૂત્રમેં વહુવચનકે કથન  
સે લવણસમુદ્ર મેં ચાર સૂર્ય ચંદ્રમા હૈ તથા ધાતકી લ્ખંડ મેં ૧૨ વારહ  
સૂર્ય ૧૨ વારહ ચંદ્રમા હૈ યહ વાત પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ ॥ સૂ ૧ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મ દિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત “ ભગવ-  
તીસૂત્ર ” કી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાકે પાંચવે શતકકા દશવા  
ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૧૦ ॥

કરવું, તે બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-“ આખ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં મન્દર  
પર્વતોની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અવસર્પિણી કાળ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી  
કાળ પણ હોતો નથી, કારણ કે ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે, ” અહીં સુધીનું  
કથન અહીં કરવું. સૂત્રમાં બહુવચનનો પ્રયોગ થયેલો હોવાથી એ વાતનું  
પ્રતિપાદન થાય છે કે લવણ સમુદ્રમાં ચાર સૂર્ય અને ચાર ચન્દ્રમા છે, તથા  
ધાતકી ખંડમાં બાર સૂર્ય અને બાર ચન્દ્રમા છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રમેયચ-  
ન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના પાંચમા શતકનો દશમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૧૦ ॥

અન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ ! યથા-લવણસમુદ્રસ્ય વક્તવ્યતા તથા કાલોદસ્યાપિ વક્તવ્યતા મણિતવ્યા, નવરમ્-કાલોદસ્ય નામ મણિતવ્યમ્, અભ્યન્તર-પુષ્કરાર્ધે મદન્ત ! ચન્દ્રો ઉદીચી - માચ્યામ્ ઉદગમ્ય યાવત્-ઉદીચી-માંચ્યા માગચ્છતઃ ? ગૌતમ ! યથૈવ ધાતકીલ્ખણ્ડસ્ય વક્તવ્યતા તથૈવ અભ્યન્તરપુષ્કરાર્ધ-સ્યાપિ મણિતવ્યા, નવરમ્-અભિલોપો જ્ઞાતવ્યઃ, યાવત્-તદા અભ્યન્તરપુષ્કરાર્ધે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ પૌરસ્ત્ય-પથિમે નૈવાસ્તિ અવસર્પિણી, નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી,

ઉત્તર--હાં ગૌતમ ! इसी तरह से है यावत् श्रमणायुष्मन् ! जिस प्रकार से लवणसमुद्र की यह वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार से कालोद संबंधी वक्तव्यता भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है कि लवणसमुद्र के स्थानपर पाठ के उच्चारण करते समय ( कालोद ) इस शब्द का प्रयोग करना चाहिये ।

प्रश्न-हे भदन्त ! आभ्यन्तरपुष्करार्धे में दो चन्द्रमा ईशानकोण से उदित होकर अग्निकोण में जाते हैं क्या ? अग्निकोण से उदित होकर नैऋत्यकोण में जाते हैं क्या ? नैऋत्यकोण से उदित होकर वायव्यकोण में जाते हैं क्या ? वायव्य कोण से उदित होकर ईशान कोण में जाते हैं क्या ? हे गौतम ! इस विषय में जैसी धातकीलखण्ड को लेकर कही गई है वैसी ही वक्तव्यता आभ्यन्तर पुष्पकरार्धके विषय में भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है । कि धातकीलखंड शब्दके बदले इस वक्त-

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. શ્રમણાયુષ્મન્ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં અહંણુ કરવું. લવણ સમુદ્રની આ વક્તવ્યતા પ્રમાણે જ કાલોદની વક્તવ્યતા પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે સૂત્રપાઠમાં લવણ સમુદ્રને બદલે ' કાલોદ ' શબ્દનો પ્રયોગ કરવો.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં બે ચન્દ્રમા શું ઈશાન કોણમાંથી ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શું નૈઋત્યમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શું વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? શું વાયવ્યમાં ઉદય પામીને ઈશાનમાં જાય છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! આ વિષયને અનુલક્ષીને ધાતકીખંડના વિષયમાં જે પ્રમાણે કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધના સંબંધમાં પણ સમજવું. આ કથનમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે ' ધાતકીખંડ ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તેને બદલે અહીં " આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ " શબ્દનો પ્રયોગ કરવો. આ પ્રમાણે ફરફાર કરીને પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા ભેદજો. ક્યાં સુધી તે કથનને અહંણુ

અવસ્થિતસ્ત્ર કાલઃ પ્રજ્ઞઃ શ્રમણાયુષ્મન્ । સૂત્રે વહુવચન કથનેન લવણસમુદ્રે  
ચત્વારઃ સૂર્યાઃ ચત્વારચન્દ્રાઃ, તથા ધાતકીલ્ખંડે દ્વાદશસૂર્યા દ્વાદશ ચન્દ્રાશ્ચ  
વક્તવ્યાઃ ॥ સુ. ૧ ॥

इति पञ्चमशतकस्य दशमोद्देशकः समाप्तः ॥ ५-१०

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-  
तललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैरुग्रन्यनिर्मापक-वादिमानमर्दक-  
श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-  
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री  
घासीलालव्रतिविरचितायां श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां  
व्याख्यायां पञ्चमं शतकं समाप्तम् ॥१०॥

વપતા મેં આમ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કર પાઠ ચોલના  
ચાહિયે । યાવત્ આમ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ મેં મંદરો કી પૂર્વ પશ્ચિમદિશા મેં  
અવસર્પિણી કાલ નહીં હોતા હૈ ઓર ઉત્સર્પિણી કાલ મી નહીં હોતા હૈ  
કયોં કિ વહાં પર કાલ અવસ્થિત કહા ગયા હૈ । સૂત્રમેં વહુવચનકે કથન  
સે લવણસમુદ્ર મેં ચાર સૂર્ય ચંદ્રમા હૈ તથા ધાતકી લ્ખંડ મેં ૧૨ ચારહ  
સૂર્ય ૧૨ ચારહ ચંદ્રમા હૈ યહ વાત પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ ॥ સુ. ૧ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत " भगव-  
तीसूत्र"की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके पांचवे शतकका दशवा  
उद्देशक समाप्त ॥ ५-१०॥

કરવું, તે જતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-“ આમ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં મન્દર  
પર્વતોની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અવસર્પિણી કાળ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી  
કાળ પણ હોતો નથી, કારણ કે ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે, ” અહીં સુધીનું  
કથન અહણ કરવું. સૂત્રમાં જહુવચનનો પ્રયોગ થયેલો હોવાથી એ વાતનું  
પ્રતિપાદન થાય છે કે લવણ સમુદ્રમાં ચાર સૂર્ય અને ચાર ચન્દ્રમા છે, તથા  
ધાતકી ખંડમાં જાર સૂર્ય અને જાર ચન્દ્રમા છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलाल महाराज कृत भगवती सूत्रनी प्रमेयच-

न्द्रिका व्याख्याना पांचमा शतकनो दशमो उद्देशक समाप्त ॥५-१०॥



इन्त, गौतम ! यावत्-श्रमणायुष्मन् ! यथा-लवणसमुद्रस्य वक्तव्यता तथा कालो-  
दस्यापि वक्तव्यता भणितव्या, नवरम्-कालोदस्य नाम भणितव्यम्, अभ्यन्तर-  
पुष्करार्थे भदन्त ! चन्द्रो उदीची - माघ्याम् उद्गम्य यावत्-उदीची-माघ्या  
मागच्छतः ? गौतम ! यथैव धातकीखण्डस्य वक्तव्यता तथैव अभ्यन्तरपुष्करार्थ-  
स्यापि भणितव्या, नवरम्-अभिलापो ज्ञातव्यः, यावत्-तदा अभ्यन्तरपुष्करार्थे  
मन्दरयोः पर्वतयोः पौरस्त्य-पथिमे नैवास्ति अवसर्पिणी, नैवास्ति उत्सर्पिणी,

उत्तर--हां गौतम ! इसी तरह से है यावत् श्रमणायुष्मन् ! जिस प्रकार से लवणसमुद्र की यह वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार से कालोद संबंधी वक्तव्यता भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है कि लवणसमुद्र के स्थानपर पाठ के उच्चारण करते समय ( कालोद ) इस शब्द का प्रयोग करना चाहिये ।

प्रश्न-हे भदन्त ! आभ्यन्तरपुष्करार्थ में दो चन्द्रमा ईशानकोण से उदित होकर अग्निकोण में जाते हैं क्या ? अग्निकोण से उदित होकर नैऋत्यकोण में जाते हैं क्या ? नैऋत्यकोण से उदित होकर वायव्यकोण में जाते हैं क्या ? वायव्य कोण से उदित होकर ईशान कोण में जाते हैं क्या ? हे गौतम ! इस विषय में जैसी धातकीखण्ड को लेकर कही गई है वैसी ही वक्तव्यता आभ्यन्तर पुष्करार्थके विषय में भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है । कि धातकीखण्ड शब्दके बदले इस वक्त-

ઉત્તર--હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. શ્રમણાયુષ્મન્ પર્યાન્તનું સમસ્ત કથન અહીં અહણ કરવું. લવણ સમુદ્રની આ વક્તવ્યતા પ્રમાણે જ કાલોદની વક્તવ્યતા પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે સૂત્રપાઠમાં લવણ સમુદ્રને બદલે ' કાલોદ ' શબ્દનો પ્રયોગ કરવો.

પ્રશ્ન--હે ભદન્ત ! આભ્યન્તર પુષ્કરાર્થમાં બે ચન્દ્રમા શુ' ઈશાન કોણમાંથી ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શુ' નૈઋત્યમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શુ' વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? શુ' વાયવ્યમાં ઉદય પામીને ઈશાનમાં જાય છે ?

ઉત્તર--હે ગૌતમ ! આ વિષયને અનુલક્ષીને ધાતકીખંડના વિષયમાં જે પ્રમાણે કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આભ્યન્તર પુષ્કરાર્થના સંબંધમાં પણ સમજવું. આ કથનમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે ' ધાતકીખંડ ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તેને બદલે અહીં " આભ્યન્તર પુષ્કરાર્થ " શબ્દનો પ્રયોગ કરવો. આ પ્રમાણે દેરદાર કરીને પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા બેઠાએ. ક્યાં સુધી તે કથનને અહણ

તતો મહાવેદના-અલ્પવેદનયોર્મધ્યે મશરતનિર્જરાવાન્ શ્રેષ્ઠઃ ઇતિ પ્રતિપાદનમ્ ।  
તતઃ પૃષ્ઠી-સપ્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોર્નિવાસિનાં નૈરયિકાણાં મહાવેદનાવત્ત્વપ્રતિપાદનમ્ ।  
મહાવેદનાવતામપિ નૈરયિકાણાં શ્રમણનિર્ગ્રન્થાપેક્ષયા અલ્પનિર્જરત્વકથનમ્, તત્ર  
કર્દમરાગરક્તપત્તરાગરક્તવત્ત્વયોર્દૃષ્ટાન્તત્ત્વોપન્યાસઃ । નૈરયિકાણાં પાપકર્મણાં  
ચિક્ષ્ણત્વેન દુર્ધાવ્યત્વે અયોગ્યત્વે દૃષ્ટાન્તીકરણમ્ । શ્રમણનિર્ગ્રન્થાનાં તુ કર્મણાં  
શુક્લતુળપુષ્પામ્યોઃ, જલચિન્દુ-સંતપ્તાયસ્કટાદયોથ દૃષ્ટાન્તત્ત્વયા પ્રતિપાદનમ્,  
તતો મનોવચઃકાયકર્મરૂપકરણાનાં ચતુર્વિધાનામ્ પ્રતિપાદનમ્ । નૈરયિકાણાં  
પંચેન્દ્રિયાણાં ચ જીવાનામ્ ઉપર્યુક્તચતુર્વિધકરણપ્રતિપાદનમ્ । એકેન્દ્રિ-  
યાણાં કાય-કર્મરૂપદ્વિકરણકથનમ્ । વિકલેન્દ્રિયાણાં વચન-કાય-કર્મરૂપત્રિક-

इसका उत्तर महावेदनावालों और अल्पवेदनो वालों के बीच में प्रश-  
स्तनिर्जरावाला श्रेष्ठ है, ऐसा कथन छद्दी और सान्त्वीके नारकोंके महा-  
वेदना का कथन; महावेदनावाले नारकों में श्रमणनिर्ग्रन्थों की अपेक्षा  
अल्पनिर्जरावत्त्व का प्रतिपादन, कर्दमराग से रक्त और पतङ्गरागसे  
रक्त वस्त्र का दृष्टान्त प्रदर्शन नारक जीवों के पापकर्म चिकने  
होते हैं इस कारण वे दुर्धान्य होते हैं अर्थात्-कर्मका धोना बहुत  
ही कठिन होता है इस विषय में एरण का दृष्टान्त-श्रमणनिर्ग्र-  
न्थों के कर्म-क्षपण के विषयमें शुक्लतुल्यपुष्प और अग्नि का, जलचि-  
न्दु का, संतप्त लोहे के कटाह का दृष्टान्त, मन, वचन, काय और कर्म  
इन चार प्रकार के करणों का कथन, नारकों के और पंचेन्द्रिय जीवों  
के इन चार करणों का प्रतिपादन एकेन्द्रिय जीवों के काय और कर्म-  
रूप दो करण होते हैं ऐसा कथन विकलेन्द्रिय जीवों के वचन, काय

ક્યું છે કે મહાવેદનાવાળા અને અલ્પ વેદનાવાળા કરતાં પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળા  
શ્રેષ્ઠ છે. છદ્દી અને સાતમી પૃથ્વી (નરકો) ના નારકોની મહાવેદનાનું કથન,  
મહાવેદનાવાળા નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોની અપેક્ષાએ અલ્પ નિર્જરાયુક્ત  
કથન, કર્દમરાગથી રક્ત અને (પાંગનરાગ) પતંગ રાગથી રક્ત અને મલિન  
વસ્ત્રનું દૃષ્ટાંત, નારકોના પાપકર્મ ચિક્ષ્ણ હોય છે અને તે કારણે તે કર્મોને  
ધોઈ નાખવાનું કાર્ય ઘણું જ કઠિન હોય છે, આ વિષયના પ્રતિપાદન માટે  
એણનું દૃષ્ટાંત શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના કર્મોના ક્ષય કેવી રીતે થાય છે તે બતા-  
વવા માટે સૂક્ષ્મ તુલ્યપુષ્પનું, અગ્નિનું, જળચિન્દુનું અને તપાવેલી લોખંડની કઠાહીનું  
દૃષ્ટાંત. મન, વચન, અને કર્મ, એ ચાર પ્રકારનાં કરણોનું કથન. નારકો અને  
પંચેન્દ્રિય જીવોનાં તે ચાર કરણોનું પ્રતિપાદન એકેન્દ્રિય જીવોને કાય અને  
કર્મરૂપ બે કરણ હોય છે એવું કથન, વિકલેન્દ્રિય જીવોને વચન, કાય અને

## ॥ पण्डे शतकम् ॥

॥ पण्डशतके प्रथमोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविवरणम् ॥

प्रथमं पण्डशतकस्य सर्वोद्देशकार्यसंग्रहाय गाथायाः प्रतिपादनम्—

वेदना १ अहार २ महास्रव ३ संप्रदेश ४ तमस्काय ५ भव्य ६ शालि  
पृथिवीकर्म ९-अन्यतीर्थिका १० एते विषयाप्रतिपादिता सन्ति ।

अथ प्रथमोद्देशकार्यं माह—महावेदनावन्तो महानिर्जरावन्तो भवन्ति, महानि-  
र्जरावन्तो महावेदनावन्तो भवन्ति ? इति प्रश्नोत्तरम् ।

### छद्वाशतक के पहला उद्देशा का प्रारंभ

इस छद्मे शतक के प्रथम उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया गया है—उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है—सब से पहिले इसमें (वेयण-आहार) यह गाथा कही गई है—इसमें वेदना (१) आहार (२) महास्रव (३) संप्रदेश (४) तमस्काय (५) भव्य (६) शालि (७) पृथिवी (८) कर्म (९) अन्यतीर्थिक (१०) ये विषय जो कि दश उद्देशकों में प्रतिपादित किये गये हैं उनका संग्रह किया गया है (वेदना) यह प्रथम शब्द है इसका अर्थ ऐसा है—कि जो महावेदना वाले होते हैं वे महानिर्जरा वाले होते हैं या नहीं होते हैं—तथा जो महानिर्जरा वाले होते हैं वे महावेदनावाले होते हैं, या नहीं होते हैं ऐसा प्रश्न—और फिर

### छद्वा शतकनो प्रारंभ

शतक-६ उद्देशक-१

छद्वा शतकना उद्देशकभां जे विषयनुं प्रतिपादन करवाभां आव्युं छे, तेनुं संक्षिप्त वणुं न नीचे प्रमाणे छे—सौथी पड़ेलां तेभां “वेयण-आहार” आदि गाथा कही छे. आ गाथाभां इस उद्देशाओभां जे इस विषयोनुं प्रतिपादन करवाभां आव्युं छे, ते विषयो कहे छे. ते दश विषयो नीचे प्रमाणे छे.

(१) वेदना, (२) आहार, (३) महास्रव, (४) संप्रदेश, (५) तमस्काय, (६) भव्य, (७) शालि, (८) पृथ्वी, (९) कर्म अने (१०) अन्यतीर्थिक.

“वेदना उद्देशक” नामना पड़ेला उद्देशकभां ओवे प्रश्न पूछये के “जेओ महावेदनावाणा होय छे, तेओ शुं महानिर्जरावाणा होय छे के नथी होता ? तथा जेओ महानिर्जरावाणा होय छे, तेओ महावेदनावाणा होय छे के नथी होता ? आ प्रश्नोत्तर आये छे:—



તતો મહાવેદના-અલ્પવેદનયોર્મધ્યે પ્રશસ્તનિર્જરાવાન્ શ્રેષ્ઠઃ इति प्रतिपादनम् ।  
 તતઃ પૃષ્ઠી-સપ્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોર્નિવાસિનાં નૈરયિકાણાં મહાવેદનાવચ્ચપ્રતિપાદનમ્ ।  
 મહાવેદનાવતામપિ નૈરયિકાણાં શ્રમણનિર્ગ્રન્થાપેક્ષયા અલ્પનિર્જરત્વકથનમ્, તત્ર  
 કર્દમરાગરક્તપત્તદ્વારાગરક્તચ્ચયોર્દૃષ્ટાન્તરયોરન્યાસઃ । નૈરયિકાણાં પાપકર્મણાં  
 ચિક્ષ્ણત્વેન દુર્ધાવ્યત્વે અયોગ્યસ્ય દૃષ્ટાન્તીકરણમ્ । શ્રમણનિર્ગ્રન્થાનાં તુ કર્મણાં  
 શુક્તજુગપુષ્પામ્બોઃ, જલચિન્દુ-સંતપ્તાયસ્કટાદયોથ દૃષ્ટાન્તતયા પ્રતિપાદનમ્,  
 તતો મનોવચઃકાયકર્મરૂપકરણાનાં ચતુર્વિધાનામ્ પ્રતિપાદનમ્ । નૈરયિકાણાં  
 પંચેન્દ્રિયાણાં ચ જીવાનામ્ ઉપર્યુક્તચતુર્વિધકરણપ્રતિપાદનમ્ । એકેન્દ્રિ-  
 યાણાં કાય-કર્મરૂપદ્વિકરણકથનમ્ । વિકલેન્દ્રિયાણાં વચન-કાય-કર્મરૂપત્રિક-

इसका उत्तर महावेदनावालों और अल्पवेदनो वालों के बीच में प्रश-  
 स्तनिर्जरावाला श्रेष्ठ है, ऐसा कथन छद्दी और सान्त्वीके नारकोंके महा-  
 वेदना का कथन; महावेदनावाले नारकों में श्रमणनिर्ग्रन्थों की अपेक्षा  
 अल्पनिर्जरावच्च का प्रतिपादन, कर्दमराग से रक्त और पतद्गरागसे  
 रक्त च्च का दृष्टान्त प्रदर्शन नारक जीवों के पापकर्म चिकने  
 होते हैं इस कारण वे दुर्धाव्य होते हैं अर्थात्-कर्मका बोना बहुत  
 ही कठिन होता है इस विषय में एरण का दृष्टान्त-श्रमणनिर्ग्र-  
 न्थों के कर्म-क्षपण के विषयमें शुक्लजुगपुष्प और अग्नि का, जलचि-  
 न्दु का, संतप्त लोहे के कटाह का दृष्टान्त, मन, वचन, काय और कर्म  
 इन चार प्रकार के करणों का कथन, नारकों के और पंचेन्द्रिय जीवों  
 के इन चार करणों का प्रतिपादन एकेन्द्रिय जीवों के काय और कर्म-  
 रूप दो करण होते हैं ऐसा कथन विकलेन्द्रिय जीवों के वचन, काय

કયું છે કે મહાવેદનાવાળા અને અલ્પ વેદનાવાળા કરતાં પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળા  
 શ્રેષ્ઠ છે. છદ્દી અને સાતમી પૃથ્વી ( નરકો ) ના નારકોની મહાવેદનાનું કથન,  
 મહાવેદનાવાળા નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રંથોની અપેક્ષાએ અલ્પ નિર્જરાયુક્ત  
 કથન, કર્દમરાગથી રક્ત અને ( પાંચનરાગ ) પતંગ રાગથી રક્ત અને મલિન  
 વચ્ચનું દૃષ્ટાંત, નારકોના પાપકર્મ ચિક્ષ્ણા હોય છે અને તે કારણે તે કર્મોની  
 ઘોષ નાખવાનું કાય ધણું જ કઠિન હોય છે, આ વિષયના પ્રતિપાદન માટે  
 એણનું દૃષ્ટાંત. શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના કર્મોના ક્ષય કેવી રીતે થાય છે તે બતા-  
 વવા માટે સૂકા તુણપુજનું, અગ્નિનું, જળચિન્દુનું અને તપાવેલી લોખંડની કડાહીનું  
 દૃષ્ટાંત. મન, વચન, અને કર્મ, એ ચાર પ્રકારનાં કરણોનું કથન. નારકો અને  
 પંચેન્દ્રિય જીવોનાં તે ચાર કરણોનું પ્રતિપાદન એકેન્દ્રિય જીવોને કાય અને  
 કર્મરૂપ એ કરણ હોય છે એવું કથન, વિકલેન્દ્રિય જીવોને વચન, કાય અને

## ॥ पण्डं शतकम् ॥

॥ पण्डशतके प्रथमोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविवरणम् ॥

प्रथमं पण्डशतकस्य सर्वोद्देशकार्यसंग्रहाय गाथायाः प्रतिपादनम्—

वेदना १ आहार २ महावस्त्र ३ संप्रदेश ४ तमस्काय ५ भव्य ६ शालि  
पृथिवीकर्म ९-न्यतीर्थिका १० एते विषयाप्रतिपादिता सन्ति ।

अथ प्रथमोद्देशकार्यं माह—महावेदनावन्तो महानिर्जरावन्तो भवन्ति, महानि-  
र्जरावन्तो महावेदनावन्तो भवन्ति ? इति प्रश्नोत्तरम् ।

### छट्ठाशतक के पहला उद्देश का प्रारंभ

इस छठे शतक के प्रथम उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया गया है—उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है—सब से पहिले इसमें (वेद्यण-आहार) यह गाथा कही गई है—इसमें वेदना (१) आहार (२) महावस्त्र (३) संप्रदेश (४) तमस्काय (५) भव्य (६) शालि (७) पृथिवी (८) कर्म (९) अन्यतीर्थिक (१०) ये विषय जो कि दश उद्देशकों में प्रतिपादित किये गये हैं उनका संग्रह किया गया है (वेदना) यह प्रथम शब्द है इसका अर्थ ऐसा है—कि जो महावेदना वाले होते हैं वे महानिर्जरा वाले होते हैं या नहीं होते हैं—तथा जो महानिर्जरा वाले होते हैं वे महावेदनावाले होते हैं, या नहीं होते हैं ऐसा प्रश्न—और फिर

### छठा शतकનો प्रारंभ

शतक-६ उद्देशक-१

छठा शतकના ઉદ્દેશકમાં જે વિષયનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન નીચે પ્રમાણે છે—સૌથી પહેલાં તેમાં “વેદના-આહાર” આદિ ગાથા કહી છે. આ ગાથામાં દસ ઉદ્દેશાઓમાં જે દસ વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો કહ્યા છે. તે દસ વિષયો નીચે પ્રમાણે છે.

(૧) વેદના, (૨) આહાર, (૩) મહાવસ્ત્ર, (૪) સંપ્રદેશ, (૫) તમસ્કાય, (૬) ભવ્ય, (૭) શાલિ, (૮) પૃથ્વી, (૯) કર્મ અને (૧૦) અન્યતીર્થિક.

“વેદના સ્પેશક” નામના પહેલા ઉદ્દેશકમાં એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો કે “જેઓ મહાવેદનાવાળા હોય છે, તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે કે નથી હોતા ? તથા જેઓ મહાનિર્જરાવાળા હોય છે, તેઓ મહાવેદનાવાળા હોય છે કે નથી હોતા ?” આ પ્રશ્નો હેતુર આપ્યો છે. તથા એનું પ્રતિપાદન



પાંચમું શતકં વિવિધવર્ણનતયા વ્યાખ્યાતમ્, અથ અવસર સંગત્યા માપ્તં  
પષ્ટં શતકમપિ વિવિધવર્ણનતયેવ વિવિચ્યતે, તસ્ય ચ પષ્ટશતકસ્ય દશો-  
દેશકાર્થસંગ્રહગાયામાહ-‘ વેયણ ’ इत्यादि ।

મૂલ-વેયણ-આહાર-મહસ્તવે ચ. સપણસ-તમુયાણ-ભવિસણ ચ ।

સાલી પુઢવી કમ્મં, અન્નઉત્થિં દસ છટ્ટગમ્મિ સણ” ॥૧॥

છાયા-વેદના ૧-ડડહાર ૨-મહાસ્રવાથ ૩-સપ્રદેશ ૪-તમસ્કાયો ૫ ભવ્યથ ૬ ।

શાલી: ૭, પૃથ્વી ૮, કર્મો ૯ ડન્યયૂથિકા ૧૦ દસ પષ્ટકે શતકે ।

ટીકા—વેદના મહાવેદના મહાનિર્જરા इत्याद्यर्थप्रतिपादनपरतया प्रथमः उद्दे-  
शकः १, आहारः—आहाराद्यर्थाभिधायको द्वितीयः २ महास्रवथ—महास्रव-

વેદના ૧, આહાર ૨, મહાઆસ્રવ ૩, સપ્રદેશ ૪, તમસ્કાય ૫, ભવ્ય  
૬, શાલી ૭, પૃથિવી ૮, કર્મ ૯ ઓર અન્યયૂથિક વક્તવ્યતા ચે ૧૦  
ઉદ્દેશક હસ છટે શતક મેં હેં ।

વિચત્ર અર્થવાલે પાંચવેં શતક કી વ્યાખ્યા હો ચુકી અથ અવ-  
સર પ્રાપ્ત છટે શતક કા કિ તિસમેં વિવધ પ્રકાર કા વર્ણન હૈ  
વિવેચન પ્રારંભ હોતા હૈ—હસ છટે શતક મેં દસ ૧૦ ઉદ્દેશક હેં । इन  
दस १० उद्देशकों में क्या २ विषय प्रतिपादित हुआ है इस बात को  
कहने वाली यह संग्रह गथा है—प्रथम उद्देशक का नाम वेदना है—इसमें  
महावेदना महानिर्जरा इत्यादि अर्थ का प्रतिपादन किया गया है इस  
कारण इसका नाम वेदना उद्देशक ऐसा हुआ है । आहार—इस उद्देशक

આ છટ્ટા શતકમાં નીચે પ્રમાણે દસ ઉદ્દેશકો છે—(૧) વેદના (૨) આહાર,  
(૩) મહાઆસ્રવ, (૪) સપ્રદેશ, (૫) તમસ્કાય, (૬) ભવ્ય, (૭) શાલી,  
(૮) પૃથિવ, (૯) કર્મ અને (૧૦) અન્યયૂથિક વક્તવ્યતા.

ટીકા—વિચિત્ર અર્થવાળા પાંચમાં શતકની વ્યાખ્યા પૂરી થઈ હવે  
છટ્ટા શતકની શરૂઆત થાય છે. આ શતકમાં વિવિધ વિષયોનું પ્રતિપાદન થયું  
છે છટ્ટા શતકના દસ ઉદ્દેશક છે. દસે ઉદ્દેશકમાં કયા કયા વિષયનું પ્રતિપાદન  
કરવામાં આવ્યું છે, એ ઉપર્યુક્ત સંગ્રહ ગાથામાં કહ્યું છે. પહેલા ઉદ્દેશકનું  
‘વેદના’ છે, કારણ કે તેમાં મહાવેદના, મહાનિર્જરા વગેરે વિષયોનું પ્રતિ-  
પાદન કરવામાં આવ્યું છે. બીજા ઉદ્દેશાને ‘આહાર ઉદ્દેશક’ કહ્યો છે, કારણ

રણાનિ । તતો નૈરયિકાણાં કરણદ્વારા અશાતાવેદના, અસુરકુમારાદિ યાત્રત્  
સ્તનિતકુમારપર્યન્તાનાં તુ કરણદ્વારા શાતાવેદના । પૃથિવીકાયાનામ્, ઔદારિ-  
કશરીરચતાં દેવાનાં ચ વિપયે તદ્વિચારચર્ચા, । તતો મહાવેદના-મહાનિર્જરા,-  
મહાવેદના-અલ્પનિર્જરા, અલ્પવેદના-મહાગુનીનાં મહાવેદના-મહાનિર્જરા, પષ્ટી-  
સપ્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોઃ વાસિનાં નૈરયિકાણાત્ મહાવેદના-અલ્પનિર્જરા, શૈલેશીકરણ-  
યોગવતામ્ અનગારાણામ્ અલ્પવેદના-મહાનિર્જરા, અનુત્તરોપપાતિકદેવાનામ્ અલ્પ-  
વેદના-અલ્પનિર્જરા ભવન્તીતિ પ્રતિપાદનમ્ । તતો ગૌતમસ્ય ભગવદ્વાક્યસ્વીક-  
રણમ્ । સંગ્રહગાથા, ઉદ્દેશસમાપ્તિશ્ચ ॥

और कर्म ये तीन करण होते हैं ऐसा कथन नारक जीवों के करणद्वारा  
आशातावेदना, असुरकुमार से लेकर स्तनितकुमारों तक के दोनों के  
करण द्वारा शातावेदना पृथिवीकायों के औदारिक शरीरवालों के और  
देवों के विषय में इसके विचार की चर्चा महावेदना, महानिर्जरा, महा-  
वेदना अल्पनिर्जरा, अल्पवेदना महानिर्जरा अल्पवेदना अल्पनिर्जरा,  
ऐसा कथन, प्रतिमाधारी मुनियों के महावेदना महानिर्जरा, और सात-  
वीं पृथिवीमें रहने वाले नारकोंमें महावेदना और अल्पनिर्जरा, शैलेशी-  
करण योगवाले अनगारों के अल्पवेदना महानिर्जरा और अनुत्तरोप-  
पातिक देवों के अल्पवेदना अल्पनिर्जरा होती है ऐसा कथन गौतमद्वारा  
भगवान् के वचनों का स्वीकरण, संग्रह गाथा उद्देशसमाप्ति ।

સંગ્રહ ગાથા—

“ वेयण १ आहार २ महस्सवे ३ य सपएस ४ तमुयाए ५ भविए ६ य ।  
साली ७ पुढवी ८ कम्म ९ अन्नउत्थि १० दस छट्ठगम्मिसए ॥१॥ ”

કર્મરૂપ ત્રણ કરણ હોય છે એવું કથન. નારક જીવોને કરણ દ્વારા અશાતા  
વેદના, અસુરકુમારોથી સ્તનિતકુમારો પર્યન્તના દેવોને કરણ દ્વારા શાતા વેદના.  
પૃથ્વિકાયો, ઔદારિક શરીરવાળા અને દેવોના વિષયમાં આ બાબત (કરણ)  
ની ચર્ચા. મહાવેદના મહાનિર્જરા, મહાવેદના અલ્પ નિર્જરા, અલ્પ વેદના  
મહાનિર્જરા, અલ્પ વેદના અલ્પનિર્જરા, ઇત્યાદિનું કથન. પ્રતિમાધારી મુનિ-  
ઓમાં મહાવેદના મહાનિર્જરા, છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકોમાં મહાવેદના  
અને અલ્પનિર્જરા, શૈલેશીકરણ યોગવાળા અણુગારોમાં અલ્પ વેદના અને મહા-  
નિર્જરા, અનુત્તરોપપાતિક દેવોમાં અલ્પ વેદના અને અલ્પનિર્જરા થાય છે એવું  
કથન. ગૌતમ દ્વારા ભગવાનનાં વચનોનો સ્વીકાર, સંગ્રહ ગાથા, ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ.

સંગ્રહગાથા—

वेयण १, आहार २, महस्सवे ३, य सपएस ४, तमुयाए ५, भविए ६ य, ।  
साली ७, पुढवी ८, कम्म ९, अन्नउत्थि १०, दस छट्ठगम्मिसए ॥ १ ॥

## વેદના-નિર્જરા-વક્તવ્યતા

મહાવેદનાં મહાનિર્જરાં ચ સ્વરૂપતઃ ફલતથ નિરૂપયિતુમાદ 'સે ણૂણં મંતે' ૬૦

મૂલ્ય—સે ણૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજરે, જે મહાનિજરે સે મહાવેયણે, મહાવેયણસ્સ ય, અપ્પવેયણસ્સ ચ સે સેએ જે પસત્થનિજરાણ ? હંતા, ગોયમા ! જે મહાવેયણે એવંચેવ । છટ્ટિ—સત્તમાસુ ણં મંતે ! પુઢવીસુ નેરડયા મહાવેયણા ? હંતા મહાવેયણા તેણં મંતે ! સમણેહિંતો નિગંથેહિંતો મહાનિજરતરા ? ગોયમા ! ણો ઇણદ્દે સમદ્દે । સે કેણદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્છઈ—જે મહાવેયણે, જાવ—પસત્થનિજરાણ ? ગોયમા ! સે જહા નામણ દુવે વત્થા સિયા, એગેવત્થે કદ્દમરાગરત્તે, એગે વત્થે સ્વંજણરાગરત્તે, એણસિ ણં ગોયમા ! દોણહં વત્થાણં કયરે વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ, દુપ્પરિકમ્મતરાણ ચેવ, કયરે વા વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ, જે વા સે વત્થે કદ્દમરાગરત્તે, જે વા સે વત્થે સ્વંજણરાગરત્તે ? । મયવં ! તત્થ ણં જે વત્થે કદ્દમરાગરત્તે, સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ, દુપ્પરિકમ્મતરાણ ચેવ । એવામેવ ગોયમા ! નેરડયા-ણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં, ચિક્કણીકયાઈં, સિલિટ્ટીકયાઈં, ચિલીભૂયાઈં ભવંતિ, સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણમાણાણો મહાનિજરા, નો મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ । સે જહા વા કેઈ પુરિસે

કરને વાલા અન્યયૂથિક નામકા ૧૦ વાં ઉદ્દેશક હૈ । હસ પ્રકાર ચે ૧૦ વસ ઉદ્દેશક હસ ઉઠે શતક મેં કહે ગયે હૈ ।

તીર્થિકેની વક્તવ્યતાનુ' નિરૂપણ કથુ' છે તેથી તેને 'અન્યયૂથિક' ઉદ્દેશક કહ્યો છે. આ પ્રકારના હસ ઉદ્દેશાઓ આ છઠ્ઠા શતકમાં છે.



સમ્પન્નસ્ય પુદ્ગલા વધ્યન્તે, इत्याद्यर्थाभिधानपरतया तृतीयः ३, सप्रदेशः-स-  
प्रदेशो जीवः, अप्रदेशो वा ? इत्याद्यर्थाभिधायकतया चतुर्थः ४, तमस्कायः-तम-  
स्कायार्थाभिधानपरतया पञ्चमः ५, भव्यः-मनुष्यत्वेन नैयिकस्यादिना वा  
उत्पत्तियोग्यस्य निरूपणपरतया षष्ठः ६, शालिः-शाल्यादिधान्यवक्तव्यता परतया  
सप्तमः ७, पृथिवी-रत्नप्रभादिपृथिवीवक्तव्यतापरोऽष्टमः ८, कर्म-कर्मबन्धा-  
भिधायकतया नवमः ९, अन्ययुक्तिकाः-अन्यतीर्थिकवक्तव्यतानिरूपणार्थं दशमः १०  
उद्देशकाः प्रतिपादिताः पष्ठके शतके ॥ १ ॥ इति

મેં આહાર આદિ કા વર્ણન ક્રિયા ગયા છે ફસલિયે ફસકા નામ આહાર  
ઉદ્દેશક છે યહ દૂસરા ઉદ્દેશક છે મહાસ્રવ વાલે કે પુદ્ગલોં કા બંધ હોતા  
છે ફસ અર્થ કો કહને વાલા મહાસ્રવ ઉદ્દેશક છે યહ તૃતીય ઉદ્દેશક છે ।  
જીવ પ્રદેશ સહિત છે યા અપ્રદેશ-પ્રદેશ રહિત છે ફત્યાદિ અર્થકા કથન  
કરને વાલા સપ્રદેશ ઉદ્દેશક છે યહ ચતુર્થ ઉદ્દેશક છે । તમસ્કાય સંબંધી  
અર્થ કા વિવેચન કરને વાલા યહ તમસ્કાય ઉદ્દેશક છે યહ પાંચવાં  
ઉદ્દેશક છે, જો જીવ મનુષ્યરૂપ સે અથવા નારકરૂપ સે ઉત્પન્ન હોને કે  
યોગ્ય હોતા છે વહ ભવ્ય કહા ગયા છે-ફસ ભવ્ય કા કથન કરને વાલે  
યહ ભવ્ય. ઉદ્દેશક છે-યહ છઠા ઉદ્દેશક છે । શાલિ આદિ ધાન્ય કી  
વક્તવ્યતા કરને વાલા શાલિ ઉદ્દેશક છે-યહ સાતવાં ઉદ્દેશક છે । રતન-  
પ્રભા આદિ પૃથિવીયોં કા કથન કરને વાલા પૃથિવી ઉદ્દેશક છે યહ  
આઠવાં ઉદ્દેશક છે । કર્મબન્ધ કા કથન કરને વાલા કર્મ ઉદ્દેશક છે,  
યહ નવવાં ઉદ્દેશક છે ઓર અન્યતીર્થિક જનોં કી વક્તવ્યતા કા નિરૂપણ

કે તેમાં આહાર વગેરેનું વર્ણન કરાયું છે. ત્રીજા ઉદ્દેશકને ‘મહા આસ્રવ  
ઉદ્દેશો’ કહ્યો છે, કારણ કે આ ઉદ્દેશમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન થયું છે કે મહા  
આસ્રવવાળા જીવો કર્મનો બંધ કરતા હોય છે. ચોથા ઉદ્દેશને ‘સપ્રદેશ  
ઉદ્દેશ’ કહ્યો છે, કારણ કે આ ઉદ્દેશમાં જીવ પ્રદેશ સહિત છે કે પ્રદેશરહિત  
છે એ બતાવ્યું છે. તમસ્કાય સંબંધી અર્થનું વિવેચન કરનાર પાંચમા ઉદ્દે-  
શનું નામ ‘તમસ્કાય ઉદ્દેશ’ છે. જે જીવ મનુષ્ય રૂપે અથવા નારક રૂપે  
ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય હોય છે, તેને ભવ્ય કહે છે. છઠા ઉદ્દેશમાં તે ભવ્યનું  
પ્રતિપાદન કર્યું છે, તેથી તેને ‘ભવ્ય ઉદ્દેશક’ કહ્યો છે. સાતમા ઉદ્દેશમાં  
શાલિ (એક જાતના ચોખા) આદિ ધાન્યનું વર્ણન કર્યું છે. તેથી તેને  
‘શાલિ ઉદ્દેશક’ કહ્યો છે. આઠમા ઉદ્દેશમાં રતનપ્રભા આદિ પૃથ્વીઓનું નિરૂ-  
પણ કર્યું છે તેથી તેને પૃથ્વી ઉદ્દેશક કહ્યો છે. નવમા ઉદ્દેશકમાં કર્મબંધનું  
વર્ણન કર્યું છે, તેથી તેને કર્મ ઉદ્દેશક કહ્યો છે. દશમાં ઉદ્દેશમાં અન્ય

દન્ત, ગૌતમ ! યો મહાવેદનઃ એવમેવ । પૃષ્ઠી-સત્તમ્યોઃ મદન્ત ! પૃથિવ્યોઃ  
નૈરયિકા મહાવેદનાઃ ? દન્ત, મહાવેદનાઃ, તે સ્વત્તુ મદન્ત ! શ્રમણેભ્યો નિર્ગંથેભ્યો  
મહાનિર્જરતરાઃ ? ગૌતમ ! નો અયમર્થઃ સમર્થઃ । તત્ કેનાર્થેન મદન્ત ! એવમ્

વેદના-નિર્જરા-વસ્ત્ર વક્તવ્યતા-

‘ સે ણૂણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ॥

સૂત્રાર્થ—( સે ણૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જે મહા-  
નિજ્જરે સે મહાવેયણે, મહાવેયણસ્સ ય અપ્પવેયણસ્સ ય સે સેણ જે  
પસત્થનિજ્જરાણ ? ) હે મદન્ત ! જો મહાવેદના વાળા હોતા હૈં વહ મહા-  
નિર્જરા વાળા હોતા હૈં કયા ? તથા જો મહાનિર્જરાવાળા હોતા હૈં વહ  
મહાવેદના વાળા હોતા હૈં કયા ? તથા જો મહાવેદનાવાળા એવં અલ્પવે-  
દના વાળા હૈં—અને કયા વહ જીવ ઉત્તમ હૈં જો પ્રશસ્ત નિર્જરા વાળા  
હોતા હૈં ? ( હંતા, ગોયમા ! જે મહાવેયણે એવં ચેવ ) હાં ગૌતમ ! જો  
મહાવેદના વાળા હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર જાનના ચાહિયે હૈં । ( છટ્ટી-સત્ત-  
માસુ ણં મંતે ! પુઢવીસુ નેરહ્યા મહાવેયણા ) હે મદન્ત ! છટ્ટી ઓર  
સાતવો પૃથિવી મેં નારક જીવ કયા મહાવેદના વાળે હોતે હૈં ? ( હંતા,  
મહાવેયણા ) હાં ગૌતમ ! છટ્ટી ઓર સાતવીં પૃથિવી મેં નારક જીવ  
મહાવેદન વાળે હોતે હૈં । ( તેણં મંતે ! સમણેહિતો નિર્ગંથેહિતો મહા-  
નિજ્જરતરા ) હે મદન્ત ! છટ્ટી ઓર સાતવી પૃથિવી મેં રહને વાળે નારક

વેદના-નિર્જરા-વસ્ત્રવક્તવ્યતા—

“ સે ણૂણં મંતે ! ” ઇત્યાદિ.

સૂત્રાર્થ—( સે ણૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જે મહાનિજ્જરે સે  
મહાવેયણે, મહાવેયણસ્સ ય અપ્પવેયણસ્સ ય સે સેણ જે પસત્થનિજ્જરાણ ? ) હે મદન્ત !  
જે એવ મહાવેદનાવાળો હોય છે તે શું મહાનિર્જરાવાળો હોય છે ? તથા જે  
એવ મહાનિર્જરાવાળો હોય છે તે શું મહાવેદનાવાળો હોય છે ? તથા મહા-  
વેદનાવાળા અને અલ્પવેદનાવાળા એવાની અપેક્ષાએ શું એ એવ ઉત્તમ છે  
કે જે પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળો હોય છે ? ( હંતા ગોયમા ! જે મહાવેયણે એવં ચેવ )  
હા, ગૌતમ ! એવું જ અને છે. “ જે મહાવેદનાવાળો હોય છે ” ત્યાંથી લઈને  
સમસ્ત પ્રશ્નોક્ત કથન અહીં અહીં કરવું. ( છટ્ટી-સત્તમાસુ ણં મંતે ! પુઢવીસુ નેરહ્યા  
મહાવેયણા ? ) હે મદન્ત ! છટ્ટી અને સાતમી નરકના નારકો શું મહાવેદનાવાળા  
હોય છે ? ( હંતા મહાવેયણા ) હા, ગૌતમ ! છટ્ટી અને સાતમી નરકના નારકો  
મહાવેદનાવાળા હોય છે. ( તેણં મંતે ! સમણેહિતો નિર્ગંથેહિતો મહાનિજ્જરતરા



अहिगरणि आउडेमाणे महया महया सर्वेणं, महया महया  
घोसेणं, महया महया परंपराघाएणं णो संचाएइ तीसे अहि-  
गरणीए केइ अहावायरे पोग्गले परिसाडित्तए, एवामेव गोयमा !  
नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं, जाव-णो महापज्जव-  
साणा भवंति । भयवं ! तत्थ जे से वत्थे खंजणरागरत्ते से  
णं वत्थे सुद्धोयतराए चेव, सुवामतराए चेव, सुपरिकम्मतराए  
चेव । एवामेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं अहावायराइं  
कम्माइं सिढिलीकयाइं, निट्ठियाइं कडाइं विप्परिणामियाइं  
खिप्पामेव विद्धत्थाइं भवंति, जाव तियं तावतियं पि ते वेयणं  
वेएमाणा महानिज्जरा, महापज्जवसाणा भवंति । से जहा नामए  
केइ पुरिसे सुक्कं तणहत्थयं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा, से णूणं  
गोयमा ! से सुक्कं तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समाणे  
खिप्पामेव मसमसाविज्जइ ? हंता, मसमसाविज्जइ । एवामेव  
गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं अहावायराइं कम्माइं, जाव-  
महापज्जवसाणा भवंति । से जहा नामए केइ पुरिसे तत्तंसि  
अयकवेल्लुयंसि उदगविंदुं, जाव-हंता, विद्धंसं आगच्छइ । एवा-  
मेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं, जाव - महापज्जवसाणा  
भवंति, से तेणट्ठेणं जे महावेयणे से महानिज्जरे जाव-  
पसत्थनिज्जराए ॥ सू० १ ॥

छाया-तद् नूनं भदन्त । यो महावेदनः स महानिर्जरः यो, महानिर्जरः स  
महावेदनः, महावेदनस्य च, अल्पवेदनस्य च स श्रेयान् यः पशस्तनिर्जरकः ?

યદા તદ્ વસ્તુ કદમરાગસ્વતં, યદા તદ્ વસ્તુ સ્વજનરાગસ્વત્? । મદન્ત ! તત્ર યત્  
તદ્ વસ્તુ કદમરાગસ્વતં તત્ સ્વત્ મદન્ત ! વસ્તુ દુર્ધૌતતરકં ચૈવ, દુર્વામ્યતરકં ચૈવ,  
દુષ્પરિકર્મતરકં ચૈવ । એવમેવ ગૌતમ ! નૈરપિકાણાં પાપાનિ કર્માણિ ગાઢીકૃ-  
તાનિ, ચિક્ષણીકૃતાનિ, શિષ્ટીકૃતાનિ, સ્થિલીભૂતાનિ, ભવન્તિ, સંપગાઢામપિ ચ

તરાણ ચૈવ ) કૌનસા વસ્ત્ર સુધૌતતર, સુવામ્યતર ઓર સુપરિકર્મતર  
હોગા ( જે વા સે વત્થે કદમરાગસ્વતે જે વા સે વત્થે સ્વજનરાગસ્વતે ? )  
અર્થાત્ હે ગૌતમ ! જો વસ્ત્ર કદમરાગ સે રક્ત હો ઓર જો વસ્ત્ર સ્વજ-  
નરાગ સે રક્ત હો તો इनमें કૌન સા દુઃશોધ્ય ઓર કૌન સા સુશોધ્ય  
હોગા-કહો-( ભગવં ! તત્થ ણં જે સે વત્થે કદમરાગસ્વતે, સે ણં મંતે !  
વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, દુવામતરાણ ચૈવ, દુષ્પરિકર્મતરાણ ચૈવ ) હે  
ભગવન્ ! इन दोनों વસ્ત્રોં મેં સે જો વસ્ત્ર કદમરાગ સે રંગા હુઆ હોગા  
હે મદન્ત ! વહી વસ્ત્ર દુર્ધૌતતર, દુર્વામ્યતર ઓર દુષ્પરિકર્મતર હોગા,  
( એવામેવ ગૌતમ ! નૈરદ્યાણં પાપાદં કર્માદં ગાઢીકયાદં ચિક્ષણીકયાદં,  
સિલિટ્ટીકયાદં સ્થિલીભૂયાદં ભવંતિ ) હસી તરહ સે હે ગૌતમ ! નૈર-  
પિકો કે પાપકર્મ ગાઢીકૃત હોતે હૈં, ચિક્ષણીકૃત હોતે હૈં, શિષ્ટીકૃત  
હોતે હૈં, ઓર સ્થિલીભૂત હોતે હૈં । ( સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણમાણા

રાણ ચૈવ, સુપરિકર્મતરાણ ચૈવ ? ) કયું વસ્ત્ર ધોવામાં વધારે સરલતા રહેશે ?  
કયા વસ્ત્ર ઉપરના ડાઘ દાઢવા સરળ પડશે ? કયા વસ્ત્રપર ચિત્રાલેખન આદિ  
કરવું સરળ થઈ પડશે ? ( જે વા સે વત્થે કદમરાગસ્વતે જે વા સે વત્થે સ્વજનરાગસ્વતે ? )  
એટલે કે હે ગૌતમ ! દીચડથી ખરડાયેલા અને ખાંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રો-  
માંથી કયું વસ્ત્ર દુઃશોધ્ય ( મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય એવું ) હશે, અને કયું  
વસ્ત્ર સુશોધ્ય ( સરળતાથી સાફ કરી શકાય એવું ) હશે ? ( ભગવં તત્થણં  
જે સે વત્થે કદમરાગસ્વતે, સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, દુવામતરાણ ચૈવ,  
દુષ્પરિકર્મતરાણ ચૈવ ) હે ભગવાન ! તે જાન્ને વસ્ત્રોમાંથી જે વસ્ત્ર દીચડથી  
ખરડાયેલું હશે, તે મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય તેવું, મુશ્કેલીથી ડાઘ દૂર કરાય  
તેવું અને મુશ્કેલીથી ચિત્રાલેખન કરી શકાય એવું હશે. ( એવામેવ ગૌતમ !  
નૈરદ્યાણં પાપાદં કર્માદં ગાઢીકયાદં, ચિક્ષણીકયાદં, સિલિટ્ટીકયાદં, સ્થિલીભૂયાદં  
ભવંતિ ) હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે નારકોનાં પાપ કર્મ ગાઢીકૃત ( દાઢતાથી  
સંબદ્ધ ) ચીકણા, શિષ્ટીકૃત ( એકએકથી અલગ ન કરી શકાય તેવા ) અને  
સ્થિલીભૂત ( ભોગવ્યા વિના જેનો નાશ ન થઈ શકે તેવા ) હોય છે. ( સંપ-  
ગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણમાણા જો મહાનિજ્જરા, જો મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ )

ઉચ્યતે—યો મહાવેદનઃ યાવત્-પ્રશસ્તનિર્જરકઃ ? ગૌતમ ! તત્ત્વ યયા નામ દ્વેષકો  
સ્પાતામ્, એકં વસ્ત્રં કર્દમરાગરક્તમ્, એકં વસ્ત્રં સ્વંજનરાગરક્તમ્, એતયોઃ સ્વલુ ગૌતમ !  
દ્વયોઃ વસ્ત્રયોઃ કતરદ્ વસ્ત્રં દુર્ધૌતતરકં ચૈવ, દુર્વામ્પતરકં ચૈવ, દુષ્પરિકર્મતરકં  
ચૈવ, કતરદ્ વા વસ્ત્રં સુધૌતતરકં ચૈવ, સુવામ્પતરકં ચૈવ, સુપરિકર્મતરકં ચૈવ

જીવ કયા શ્રમણનિર્ગ્રન્થોં કી અપેક્ષા મહાનિર્જરાવાળે હોતે હેં ? (ગોયમા !  
ળો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈં । (સે કેણદ્દેણં  
મંતે ! એવં વુચ્છહ જે મહાવેયણે જાવ પસત્થનિજ્જરાણ ) હે ભદન્ત ! એસા  
આપ કિસ કારણ સે કહતે હેં કિ જો મહાવેદનાવાળા હોતા હૈં યાવત્  
પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળા હોતા હૈં ? (ગોયમા ! સે જહાનામણ દુવે વત્થા સિયા,  
એગે વત્થે કર્દમરાગરક્તે, એગે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે, એણં સિં ણં ગોયમા !  
દોણહં વત્થાણં કયરે વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ ) હે ગૌતમ !  
જૈસે દો વસ્ત્ર હોં—ઇનમેં એક વસ્ત્ર કર્દમરાગ સે રંગા હુઆ હોં ઓર દુસરા  
વસ્ત્ર સ્વંજન રંગ સે રંગા હુઆ હોં તો કહો ગૌતમ ! ઇન દોનોં મેં સે કોન  
સા વસ્ત્ર દુર્ધૌતતર—વઢી સુશિકલ સે જિસકા રંગ ધોકર દૂર કિયા જા  
સકે એસા હોતા, હૈં દુર્વામ્પતર—જિસકે ધવ્વે દુઃસ્વ સે દૂર કિયે જા  
સકે એસા હોગા (દુષ્પરિકર્મતરાણ ચેવ ) ઓર દુષ્પરિકર્મતર—જિસમેં  
કઠિનાઈ સે ચિત્ર કી અઢ્ઢુન આદિ ક્રિયાઈ કી જા સકેં એસા હોગા ?  
તથા ( કયરે વા વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકર્મ-

હે ભદન્ત ! શું છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કરતાં મહા  
નિર્જરાવાળા હોય છે ? (ગોયમા ! ળો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! એવું હે.તું  
નથી. એટલે કે તેઓ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કરતાં મહા નિર્જરાવાળા હોતા નથી.  
(સે કેણદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્છહ ? જે મહાવેયણે જાવ પસત્થનિજ્જરાણ ) હે  
ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે “ જે મહાવેદનાવાળા હોય છે ”  
(યાવત્) “ પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળા હોય છે ? )

(ગોયમા ! સે જહાનામણ દુવે વત્થા સિયા, એગે વત્થે કર્દમરાગરક્તે, એગે  
વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે, એણં સિં ણં ગોયમા ! દોણહં વત્થાણં કયરે વત્થે દુદ્ધોયતરાણ  
ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ ) હે ગૌતમ ! ધારો કે જે વસ્ત્ર છે, તેમાંનું એક વસ્ત્ર  
કીચડથી ખરડાયેલું છે અને બીજું વસ્ત્ર ( ખંજનરાગથી રંગેલું )  
પતંગ રંગથી, તો હે ગૌતમ ! તે બન્ને વસ્ત્રમાંથી કયા વસ્ત્રને ધોવામાં  
વધારે મુશ્કેલી પડશે ? અને કયા વસ્ત્રપરના ડાઘ દૂર કરવામાં વધારે  
મુશ્કેલી પડશે ? (દુષ્પરિકર્મતરાણ ચેવ) અને કયા વસ્ત્રપર ચિત્રાલેખન આદિ  
કરવું વધારે મુશ્કેલ થશે ? તથા ( કયરે વા વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચેવ, સુવામત-



યદા તદ્ વસ્ત્વં કર્દમરાગસ્તત્, યદા તદ્ વસ્ત્વં સ્વજનરાગસ્તત્? । મદન્ત ! તત્ર યત્  
તદ્ વસ્ત્વં કર્દમરાગસ્તત્ તત્ સ્વજન મદન્ત ! વસ્ત્વં દુર્ધૌતતરકં ચૈવ, દુર્વામ્યતરકં ચૈવ,  
દુષ્પરિકર્મતરકં ચૈવ । એવમેવ ગૌતમ ! નૈરયિકાણાં પાપાનિ કર્માણિ ગાઢીકૃ-  
તાનિ, ચિક્ષ્ણીકૃતાનિ, શ્લિષ્ટીકૃતાનિ, સ્થિલીભૂતાનિ, ભવન્તિ, સંપગાઢામપિ ચ

તરાણ ચૈવ ) કૌનસા વસ્ત્ર સુધૌતતર, સુવામ્યતર ઓર સુપરિકર્મતર  
હોગા ( જે વા સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે જે વા સે વત્યે સ્વજનરાગસ્તે ? )  
અર્થાત્ હે ગૌતમ ! જો વસ્ત્ર કર્દમરાગ સે રક્ત હો ઓર જો વસ્ત્ર સ્વજ-  
નરાગ સે રક્ત હો તો ઇનમેં કૌન સા દુઃશોધ્ય ઓર કૌન સા સુશોધ્ય  
હોગા-કહો-( મગવં ! તત્થ ણં જે સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે, સે ણં મંતે !  
વત્યે દુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, દુવામતરાણ ચૈવ, દુષ્પરિકર્મતરાણ ચૈવ ) હે  
મગવન્ ! ઇન દોનોં વસ્ત્રોં મેં સે જો વસ્ત્ર કર્દમરાગ સે રંગા હુઆ હોગા  
હે મદન્ત ! વહી વસ્ત્ર દુર્ધૌતતર, દુર્વામ્યતર ઓર દુષ્પરિકર્મતર હોગા,  
( એવામેવ ગોયમા ! નૈરદ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં ચિક્ષ્ણીકયાઈં,  
સિલિટ્ટીકયાઈં સ્થિલીભૂયાઈં ભવંતિ ) ઇસી તરહ સે હે ગૌતમ ! નૈર-  
યિકો કે પાપકર્મ ગાઢીકૃત હોતે હેં, ચિક્ષ્ણીકૃત હોતે હેં, શ્લિષ્ટીકૃત  
હોતે હેં, ઓર સ્થિલીભૂત હોતે હેં । ( સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણમાણા

રાણ ચૈવ, સુપરિકર્મતરાણ ચૈવ ? ) ક્યું વસ્ત્ર ધોવામાં વધારે સરલતા રહેશે ?  
કયા વસ્ત્ર ઉપરના ડાઘ કાઢવા સરળ પડશે ? કયા વસ્ત્રપર ચિત્રાલેખન આદિ  
ક્યું સરળ થઈ પડશે ? ( જે વા સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે જે વા સે વત્યે સ્વજનરાગસ્તે ? )  
એટલે કે હે ગૌતમ ! ધીચડથી ખરડાયેલા અને ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રો-  
માંથી ક્યું વસ્ત્ર દુઃશોધ્ય ( મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય એવું ) હશે, અને ક્યું  
વસ્ત્ર સુશોધ્ય ( સરળતાથી સાફ કરી શકાય એવું ) હશે ? ( મગવં તત્થણં  
જે સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે, સે ણં મંતે ! વત્યે દુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, દુવામતરાણ ચૈવ,  
દુષ્પરિકર્મતરાણ ચૈવ ) હે ભગવાન ! તે જાનને વસ્ત્રોમાંથી જે વસ્ત્ર ધીચડથી  
ખરડાયેલું હશે, તે મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય તેવું, મુશ્કેલીથી ડાઘ દૂર કરાય  
તેવું અને મુશ્કેલીથી ચિત્રાલેખન કરી શકાય એવું હશે. ( એવામેવ ગોયમા !  
નૈરદ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં, ચિક્ષ્ણીકયાઈં, સિલિટ્ટીકયાઈં, સ્થિલીભૂયાઈં  
ભવંતિ ) હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે નારકોનાં પાપ કર્મ ગાઢી કૃત ( દૃઢતાથી  
સંબદ્ધ ) ચીકણા, શ્લિષ્ટીકૃત ( એકમેકથી અલગ ન કરી શકાય તેવા ) અને  
સ્થિલીભૂત ( ભોગવ્યા વિના જેનો નાશ ન થઈ શકે તેવા ) હોય છે. ( સંપ-  
ગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણમાણા જો મહાનિજ્જરા, જો મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ )

સ્વલુ તે વેદનાં વેદ્યમાના નો મહાનિર્જરાઃ, નો મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તદ્ યયા  
વાં કોઽપિ પુરુષોઽધિકરણીમ્ આકુરુચન્ મહતા મહતા શબ્દેન, મહતામહતા ઘોષેન,  
મહતા મહતા પરંપરાઘાતેન નો શ્રવનોતિ, તસ્યાઃ અધિકરણ્યાઃ કાનપિ  
યથાવાદરાન્ પુદ્ગલાન્ પરિશટયિતુમ્, પૂર્વમેવ ગૌતમ ! નૈરયિકાણાં  
પાપાનિ કર્માણિ ગાઢીકૃતાનિ, યાવત્-નો મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । મદન્ત ! તત્ર  
યત્ તદ્ વત્તં સ્વજનરાગરક્તમ્ તદ્ વત્તં સુધીતવરકં ચૈવ, સુધામ્યતરકં ચૈવ,

જો મહાનિર્જરા નો મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ) રૂસ કારણ વે સમ્પ્રગાઢ  
મી વેદના કો મોગતે દુષ્ મહાનિર્જરા વાલે નહીં હોતે હિં ઓર ન મહા  
પર્યવસાન ( અન્ત ) વાલે હોતે હિં । ( સે જહા વા કેહ પુરિસે અહિગરણિ  
આઝહેમાણે મહયા ૨ સદ્દેણં, મહયા ૨ ઘોસેણં મહયા ૨ પરંપરાઘાણં  
જો સંચાણ્હ તીસે અહિગરણીણ્ કેહ અહાવાયરે પોગલે પરિસાહિત્તણ્ )  
અથવા-જૈસે કોઈ પુરુષ જોર ૨ સે શબ્દોં કા ઉચ્ચારણ કરતા હુઆ,  
મયંકર શબ્દોં કો વોલતા હુઆ ણરણ કે ઉપર નિરન્તર હથોડા સે  
આઘાત કરે તો મી વહ ઉસ ણરણ કે યથાવાદર-સ્થૂલ પુદ્ગલોં કો ઉસસે  
નિકાલ કર ઉન્હેં નષ્ટ કરને કે લિયે સમર્થ નહીં હો સકતા હૈ ( ણવામેવ  
ગોયમા ! નેરહયા ણં પાવાહં કમ્માહં ગાઢીકયાહં જાવ જો મહાપજ્જવ-  
સાણાહં ભવંતિ ) રૂસી તરહ સે હે ગૌતમ ! નારક જીવોં કે જો પાપ  
કર્મ હોતે હૈ વે ગાઢીકૃત હોતે હિં યાવત્ વે મહાપર્યવસાનવાલે નહીં હોતે હિં  
( તત્થ જે સે વત્થે સુદોષતરાણ્ ચૈવ, સુધામતરાણ્ ચૈવ સુપરિકમ્મતરાણ્

તે કારણે બયંકરમાં બયંકર વેદના ભોગવવા છતાં તેઓ મહા નિર્જરાવાળા  
હોતા નથી અને પર્યવસાનવાળા ( સર્વથા કર્મથી રહિત ) પણ હોતા નથી.  
“ સે જહા વા કેહ પુરિસે અહિગરણિ આઝહેમાણે મહયોર સદ્દેણં, મહયાર, ઘોસેણં,  
મહયાર, પરંપરાઘાણં જો સંચાણ્હ તીસે અહિગરણીણ્ કેહ અહાવાયરે પોગલે  
પરિસાહિત્તણ્ ” ધારેા કે કોઈ એક માણસ જોર જોરથી હોંકારા પડકારા કરતો  
કરતો, અને બયંકર શબ્દો બોલતો બોલતો હથોડા વડે એરણુ ઉપર નિરંતર  
ધા કર્યા કરે, તો પણ તે માણસ એરણુના સ્થૂલ પુદ્ગલોને તેમાંથી બહાર  
ઠાઢીને તેમનો નાશ કરવાને શક્તિમાન થતો નથી, “ ણવામેવ ગોયમા ! નેર-  
હયાણં પાવાહં કમ્માહં ગાઢીકયાહં જાવ જો મહાપજ્જવસાણાહં ભવંતિ ” એજ  
પ્રમાણે હે ગૌતમ ! નારક, જીવોનાં જે પાપકર્મો હોય છે તે ગાઢીકૃત ( દઢ-  
તાથી વળગેલાં ) હોય છે, તેથી તેઓ મહાનિર્જરાવાળા હોતા નથી અને તે  
કર્મોનો સર્વથા નાશ કરવાને તેઓ સમર્થ હોતા નથી. ( તત્થ જે સે વત્થે



સુપરિકર્મંતરકં ચૈવ, એવમેવ ગૌતમ ! શ્રમણાનાં નિર્ગ્રન્થાનાં યથાવાદરાણિ કર્માણિ શિથિલીકૃતાનિ, નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ, વિપરિણામિતાનિ ક્ષિપ્રમેવ વિધ્વ-સ્તાનિ ભવન્તિ, યાવતિકાં તાવતિકામપિ વેદનાં વેદયમાના મહાનિર્જરાઃ મહાપ-ર્યસાનાઃ ભવન્તિ, તદ્ યથા નામ કોઽપિ પુરુષઃ શુષ્કં તુગદસ્તકં જાતતેજસિ પ્રસિપેત્, તદ્નૂનં ગૌતમ ! સ શુષ્કઃ તુગદસ્તકો જાતતેજસિ પ્રસિપ્તઃ સન્ ક્ષિપ્ર-મેવ મસમસાપ્યતે ? । દન્ત, મસમસાઽપ્યતે । એવમેવ ગૌતમ ! શ્રમણાનાં નિર્ગ્રન્થા-

ચૈવ-એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંથાણં અહાવાયરાહં કમ્માહં સિદ્ધિ-લીકયાહં નિઠ્ઠિયાહં કઢાહં વિપ્પરિણામિયાહં ક્ષિપ્પામેવ વિદ્ધત્થાહં ભવંતિ ) તથા જો વસ્ત્ર લંજનરાગ સે રક્ત હોતા હૈ વદ્ વસ્ત્ર સુધોતતર હી હોતા હૈ, સુવામ્યતર હી હોતા હૈ ઓર સુપરિકર્મતર હી હોતા હૈ, इसी तरह से हे गौतम ! श्रमण निर्ग्रन्थोंके जो स्थूल स्कन्धरूपकर्म होते हैं-वे शिथि-लीकृत होते हैं, अर्थात् मंदविपाक वाले होते हैं, निष्ठित होते हैं सत्ता विनाके होते हैं, विपरिणाम वाले होते हैं इसलिये वे शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं (जावइयं तावइयं वि ते वेयणं वेणमाणा, महानिज्जरा महाप-ज्जवसाणा भवन्ति ) जितनी जितनी भी-कुछ भी-वेदना को भोगते हुए वे श्रमण निर्ग्रन्थ महानिर्जरावाले और महापर्यसान वाले होते हैं । (से जहा नामए केइ पुरिसे सुक्कंतण हत्थणं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा से णूणं गोयमा ! से सुक्के तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समाणे क्खिप्पामेव मसमसाविज्जइ) जैसे कोई पुरुष शुष्क घासके पूलेको अग्नि

લંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, સુવામતરાણ ચૈવ, સુપરિકર્મતરાણ ચૈવ-એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંથાણં અહાવાયરાહં કમ્માહં સિદ્ધિલીકયાહં નિઠ્ઠિયાહં કઢાહં વિપ્પરિણામિયાહં ક્ષિપ્પામેવ વિદ્ધત્થાહં ભવંતિ )

જેવી રીતે ખંજનરાગથી ખરડાયેલું વસ્ત્ર સરળતાથી ઘોઘ શકાય તેવું સરળતાથી ડાઘ દૂર કરી શકાય એવું અને સરળતાથી ચિત્રાલેખન આદિ કરી શકાય તેવું હોય છે, એજ પ્રમાણે હે ગૌતમ ! શ્રમણ નિર્ગ્રન્થાના જે સ્થૂલ-તર સ્કન્ધરૂપ કર્મ હોય છે, તે શિથિલીકૃત હોય છે-એટલે કે વિપાકવાળાં હોય છે. તેથી તે કર્મેના જલ્દીથી નાશ થઈ જતો હોય છે. ( જાવइयं तावइयं वि ते वेयणं वेणमाणा, महानिज्जरा महापज्जवसाणा भवन्ति ) એટલી તેટલી પણ-એટલે કે નાની સરળી પણ વેદનાને લોગવતા તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા ( કર્મેના અન્ત કરનારા ) હોય છે. ( સે જહા નામए केइ पुरिसे सुक्कंतण हत्थयं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा-से णूणं गोयमा ! से सुक्के तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समाणे क्खिप्पामेव मसमसाविज्जइ ) હે

નાં યથાવાદરાણિ કર્માણિ-યાવત્-મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તદ્વ્યથાનામ કોઽ  
પિ પુરુષસ્તપ્તે અયસ્કપાલે ઉદગવિન્દુમ્, યાવત્-હન્ત, વિધ્વંસમ્ આગચ્છતિ ।  
एवमेव गौतम ! श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम्, यावत्-महापर्यवसाना भवन्ति, तत्  
तेनार्थेन यो महावेदनः सः महानिर्जरः यावत्-प्रवृत्तिर्निर्जराकः ॥ सू० १ ॥

મેં ઢાલ દે-તો હે ગૌતમ ! વહ શુષ્ક ઘાસ કા પૂલા અગ્નિ મેં ઢાલતે હી  
શીઘ્ર હી જલ જાતા હૈ ન ? ( હંતા, મસમસાવિજ્જહ ) હાં, બદન્ત ! વહ  
શીઘ્ર હી જલ જાતા હૈ ( એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિગ્ગંથાણં અહા  
યાયરાહં કમ્માહં જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ) इसी तरह से हे गौतम !  
श्रमण निर्ग्रन्थों के स्थूलतर स्कन्धरूप कर्म जल जाते हैं यावत् वे श्रमण  
निर्ग्रन्थ महापर्यवसानवाले होते हैं ( से जहा नामए केइ पुरिसे तत्तंसि  
अयकवेल्लुंसि उदगविंदुं जाव हंता विध्वंस आगच्छइ ) जैसे कोई पुरुष  
तपावे-लाल हुए गरम-तवे पर जल के बिन्दु को डाले तो वह शीघ्र ही  
विध्वस्त हो जाता है न ? हां, प्रभु शीघ्र ही वह विध्वस्त हो जाता है  
( एवामेव गोयमा ! समणाणं निगगंधाणं जाव महापज्जवसाणा भवन्ति )  
इसी तरह से हे गौतम ! श्रमण निर्ग्रन्थों के स्थूलतर स्कन्धरूप कर्म  
शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं-यावत् वे महापर्यवसानवाले होते हैं ।  
( से तेणट्ठेणं जे महावेयणे से महानिज्जरे जाव पसत्थनिज्जराए ) इस

ગૌતમ ! કેઈ પુરુષ કેઈ સૂકા ઘાસના પૂજાને અગ્નિમાં નાખી દે તો તે સૂકા  
ઘાસનો પૂજો અગ્નિમાં નાખતાની સાથે જ બળી બાય છે કે નહીં ? ( હંતા  
મસમસાવિજ્જહ ) હા, તે તુરત જ બળી બાય છે. ( એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં  
નિગ્ગંથાણં અહાવાયરાહં કમ્માહં જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ) હે ગૌતમ !  
એજ પ્રમાણે શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના સ્થૂલતર સ્કન્ધરૂપ કર્મ બળી બાય છે, તે  
કારણે તેઓ મહાનિર્જરાવાળા અને મહા પર્યવસાનવાળા હોય છે. ( સે જહા  
નામए केइ पुरिसे तत्तंसि अयकवेल्लुंसि उदगविंदुं जाव हंता विध्वंस आगच्छइ )  
જેમ કેઈ પુરુષ તપાવેલી લાલચોળ જેવી કડાહી પર પાણીનું ટીપું નાખે, તો  
તે ટીપું તુરત જ નષ્ટ થઈ બાય છે કે નહીં ? “ હા, પ્રભુ ! તે તુરત જ નષ્ટ  
થઈ બાય છે. ” ( એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિગ્ગંથાણં મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ )  
હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના સ્થૂલતર સ્કન્ધરૂપ કર્મ જલથી  
નષ્ટ થઈ બાય છે, તે કારણે તેઓ મહા નિર્જરાવાળા અને મહા પર્યવસાન-  
વાળા હોય છે. ( સે તેણટ્ઠેણં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જાવ પસત્થનિજ્જરાણે )

ટીકા—‘ સે ણૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે ભદ્રન્ત ! તદ્ નૂનં નિશ્ચયેન કિમ્ યો મહાવેદનઃ મહતી વેદના દુઃખં યસ્ય સઃ ઉપસર્ગાદિસમુત્પન્નવિશિષ્ટદુઃખવાન્ ભવતિ સઃ મહાનિર્જરઃ મહતીનિર્જરા યસ્ય એવંવિધવિશિષ્ટકર્મક્ષયવાન્ ભવતિ । અનયોથ તાદૃશવેદનનિર્જરયોઃ પરસ્પરમવિનાભાવસમ્બન્ધયોતનાય=પ્રાહ—યો મહાનિર્જરઃ વિશિષ્ટકર્મક્ષયવાન્ સ કિમ્ મહાવેદનો ભવતિ ? इति प्रथमः प्रश्नः अथ द्वितीयं प्रश्नमाह—“ महावेयणस्त य, अप्पवेयणस्त य से सेए जे पसत्थनिर्जराए ? ”

કારણ હે ગૌતમ ! મને એસા કહા હે કિ જો મહાવેદનાવાલા હોતા હે વહ મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે યાવત્ વહ પ્રશસ્ત નિર્જરાવાલા હોતા હે ।

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા મહાવેદના ઓર મહાનિર્જરા કા સ્વરૂપ ફલ કી અપેક્ષા સે નિરૂપણ કિયા હૈ—હસમેં ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈ કિ—( સે ણૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે ) હે ભદ્રન્ત ! જો મહાવેદના વાલા હોતા હે વહ કયા મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે ? તાત્પર્ય કહનેકા યહ હે કિ જો ઉપસર્ગ આદિસે ઉદ્ભૂત વિશિષ્ટ દુઃખોવાલા હોતા હે—યહ કયા વિશિષ્ટ કર્મક્ષય રૂપ નિર્જરાવાલા હોતા હે ? હસ પ્રકારકી હન દોનોં વેદના ઓર નિર્જરા મેં કયા પરસ્પર અવિનાભાવ સંબંધ હે ? હસ વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે પૂછા ગયા હૈ કિ “જો મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે વહ મહાવેદનાવાલા હોતા હે” હસ પ્રકાર યહ પ્રથમ પ્રશ્ન હૈ । દ્વિતીય પ્રશ્ન હસ પ્રકાર સે હૈ—(મહા

હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, ( યાવત્ ) તે પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળો હોય છે.

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા મહાવેદના અને મહાનિર્જરાનું સ્વરૂપ રૂપની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કયું છે—

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( સે ણૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે ) હે ભદ્રન્ત ! જે એવ મહાવેદનાવાળો હોય છે, તે શું મહાનિર્જરાવાળો હોય છે ? પ્રશ્નનો સાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

જે એવ ઉપસર્ગ આદિથી જનિત વિશિષ્ટ દુઃખોવાળો હોય તે શું વિશિષ્ટ કર્મક્ષયરૂપ નિર્જરાવાળો હોય છે ? આ પ્રકારની વેદના અને નિર્જરા વચ્ચે શું અવિનાભાવ સંબંધ છે ? એ વાત બાણવાને માટેજ આ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે કે “ જે મહાનિર્જરાવાળો હોય તે શું મહાવેદનાવાળો હોય છે ? ” બીજો પ્રશ્ન આ પ્રમાણે પૂછ્યો છે—



મ્યો નિર્ગ્રન્થેમ્યો નિર્ગ્રન્થશ્રમણાપેક્ષયા, इत्यर्थः किम् महानिर्जरतराः ? अतिशय विशिष्टकर्म क्षयवन्तो भवन्ति ?

મગધનાહ—‘ ગોયમા ! જો ઇણદ્દે સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ, નૈવં ભવિતુમર્હતિ મહાવેદનાવાન્ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્તુ દુરેડપાસ્તામ્ કિન્તુ અલ્પવેદનસ્યાપિ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્યાપેક્ષયા મહાવેદનાવતોડપિ નૈરપિકસ્ય મહાનિર્જરત્વાસંભવાત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—“ સે કેણદ્દેણં ભંતે ! एवं बुच्चइ जे महावेयणे, जाव पसत्थ निज्जराए ? हे भदन्त ! तत् केनार्थेन एवम् उपर्युक्तरीत्या उच्यते यद् यो महावेदनः, स यावत्-महानिर्जराकः, यश्च महानिर्जराकः स महावेदनः, अथ च महावेदना-अल्प वेदनयोर्मध्ये प्रशस्तनिर्जरः श्रेयान् ? इति,

હોતે હેં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( જો ઇણદ્દે સમદ્દે ) યહ અર્થ સમર્થ નહોં હે । મહાવેદનાવાલે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ કી તો વાત હી કયા હે, પર જો અલ્પવેદનાવાલે ભી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ હે ઉસકી અપેક્ષા સે ભી નૈરપિક જીવ મેં મહાનિર્જરા-વત્તવ અસંભવ હે । અવ હસ વિષય મેં કારણ કી જિજ્ઞાસા સે ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૂછતે હેં—કિ ( સે કેણદ્દેણં ભંતે ! एवं बुच्चइ जे महावेयणे जाव पसत्थ निज्जराए ) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હેં કિ જો મહાવેદનાવાલા હોતા હે વહ યાવત્ મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે ઓર જો મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે વહ મહાવેદનાવાલા હોતા હે તથા મહાવેદના-વાલે ઓર અલ્પવેદનાવાલે જીવ કે વીચ મેં પ્રશસ્તનિર્જરાવાલા જીવ

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનું સમાધાન કરતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે, ( ગોયમા ! જો ઇણદ્દે સમદ્દે ) હે ગૌતમ ! એવું બનતું નથી, મહાવેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થની વાત જ શું કરવી ! એટલે કે મહાવેદનાવાળા શ્રમણનિર્ગ્રન્થો તો નારકો કરતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે જ. એટલું જ નહીં પણ અલ્પ-વેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થો પણ છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકો કરતાં મહા-નિર્જરાવાળા હોય છે—તે નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કરતાં મહાનિર્જરાયુક્તતા સંભવી શકતી નથી. તેનું કારણ બાણવાની જ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી મહા-વીર પ્રભુને પૂછે છે—

( સે કેણદ્દેણં ભંતે ! एवं बुच्चइ जे महावेयणे जाव पसत्थ निज्जराए ? ) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, અને જે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે તે મહા-વેદનાવાળો હોય છે, તથા મહાવેદનાવાળા અને અલ્પવેદનાવાળા જીવોની અપે-ક્ષાએ પ્રશસ્ત-નિર્જરાવાળો જીવ શ્રેષ્ઠ હોય છે ?

भगवानाह—‘ गोयमा ! से जहा नामए दुवे वत्था सिया ’ हे गौतम ! तद्  
यथा ‘ नाम ’ इति वाक्यालङ्कारे द्वे वस्त्रे स्याताम् , तयोर्मध्ये ‘ एगे वत्थे कद्-  
मरागरत्ते ’ एकं वस्त्रं कर्दमरागरक्तं स्यात् पद्मपुञ्जेन लिप्तं भवेत् अथ ‘ एगे वत्थे  
खंजणरागरत्ते एहम् अवरं वत्थं खञ्जनरागरक्तं स्यात् पतङ्गरागेण रक्तं भवेत्,  
अथ खञ्जनरागशब्देन पतङ्गरागो गृह्यते । एएसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं  
कयरे वत्थे दुद्धोयतराए चेव ’ हे गौतम ! एतयोः उपर्युक्तयोः द्वयोर्वस्त्रयोः  
कर्दमखञ्जनरागरक्तयोर्मध्ये कतरद् वत्थं, कर्दमरागरक्तं वा, खञ्जनरागरक्तं वा,  
दुर्धौततरकं चैव, अनिशयदुष्तरमक्षालनप्रक्रियं स्यात् ? ‘ दुवामतराए चेव ’  
दुर्धौततरकं चैव ? दुस्त्याज्यतरमलं स्यात् ? दुःशोध्यमलमित्यर्थः, ‘ दुपरिक-  
म्मताराए चेव ’ दुष्परिकर्मतरकं चैव, कष्टसाध्यचित्रोल्लेखनभङ्गकरणादिप्रक्रियम्

उत्तम होता है ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा)  
हे गौतम ! ( से जहा नामए दुवे वत्था सिया ) जैसे कोई दो वस्त्र हों  
( एगे वत्थे कद्मरागरत्ते ) इनमें एक वस्त्र कर्दमराग से रक्त हो—अर्थात्  
कीचड़ से मलिन हो—और दूसरा ( एगे वत्थे खंजणरागरत्ते ) दूसरा वस्त्र  
खंजनराग से पतंगरंग से रक्त हो ( एएसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं  
कयरे वत्थे दुद्धोयतराए चेव ) तो हे गौतम ! हम तुमसे यह पूछते हैं कि  
इन दोनों वस्त्रों के बीच में कौन सा वस्त्र दुर्धौततरक—जिसकी प्रक्षा-  
लन क्रिया अत्यन्त कठिन होगी ( दुवामतराए ) दुर्धौततरक—जिसका  
कलङ्क धब्बे वगैरह—बड़ी कठिनाई से धोयेजा सकेगा होगा तथा ( दुष्प-  
रिकम्मताराए चेव ) दुष्परिकर्मतरक—जिसमें चित्रोल्लेखन क्रिया एवं  
भङ्गकरणादित्थ क्रिया—विशेष प्रकार की रचना करने रूप क्रिया कष्ट

तेनो जवाण आपता भडापीर प्रभु कडे छे—“ गोयमा ! ” हे गौतम !  
( से जहा नामए दुवे वत्था सिया ) जेभडे डोढ जे वस्त्र डोय. ( एगे वत्थे  
कद्मरागरत्ते ) तेमांनुं ओक वस्त्र कर्दमरागथी रक्त डोय—ओटले डे डीथडथी  
मलिन थयेतुं डोय. अने श्रीगुं “ एगे वत्थे खंजणरागरत्ते ” श्रीगुं वस्त्र णंजनरा  
गथी रक्त डोय—ओटले डे पतंग रंगथी रंगायेतुं ओटले मलिन थयेतुं डोय.  
( ए एसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं कयरे वत्थे दुद्धोयतराए चेव ) हे  
गौतम ! ते जन्ने वस्त्रोमांथी कथुं वस्त्र “ दुर्धौततरक ” छे—ओटले डे कथा  
वस्त्रने धोवानुं वधारे मुश्केल जनशे ? “ दुवामतराए ” दुर्धौततरक ओटले डे  
जेना उपरथी डोय डोढा मुश्केल पडे तेवुं छे ? “ दुष्परिकम्मताराए ” दुष्प-  
रिकर्मतरक छे—ओटले डे जेमां चित्रालेखन अने लङ्गकरणादि रूप क्रियाओ  
( विशेष प्रकारनी रचना करवा रूप क्रिया ) करवामां मुश्केली पडशे ? आ त्रये



મ્યો નિર્ગ્રન્થેમ્યો નિર્ગ્રન્થશ્રમણાપેક્ષયા, इत्यर्थः किम् महानिर्जरतराः ? अतिशय विशिष्टकर्म क्षयवन्तो भवन्ति ?

મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! જો ઇણદ્દે સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નામર્થઃ સમર્થઃ, નૈવં ભવિતુમર્હતિ મહાવેદનાવાન્ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્તુ દૂરેડવાસ્તામ્ કિન્તુ અલ્પવેદનસ્યાપિ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્યાપેક્ષયા મહાવેદનાવતોડપિ નૈરપિકસ્ય મહાનિર્જસ્ત્વાસંભવાત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—“ સે કેણદ્દેણં મંતે ! एवं वृचइ जे महावेयणे, जान पसत्थ निज्जराए ? हे भदन्त ! तत् केनार्थेन एवम् उपर्युक्तरीत्या उच्यते यद् यो महा-वेदनः, स यावत्-महानिर्जराकः, यथ महानिर्जराकः स महावेदनः, अथ च महावेदना-अल्प वेदनयोर्मध्ये प्रशस्तनिर्जरः श्रेयान् ? इति.

હોતે હું ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જો ઇણદ્દે સમદ્દે) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । મહાવેદનાવાલે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ કી તો વાત હી કયા હૈ, પર જો અલ્પવેદનાવાલે મી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ હૈ ઉસકી અપેક્ષા સે મી નૈરપિક જીવ મેં મહાનિર્જરા-વત્તવ અસંભવ હૈ । અવ હસ વિષય મેં કારણ કી જિજ્ઞાસા સે ગૌતમ પ્રભુ સે પૂછતે હું—કિ (સે કેણદ્દેણં મંતે ! एवं वृचइ जे महावेयणे जाव पसत्थनिज्जराए) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હું કિ જો મહાવેદનાવાલા હોતા હૈ વહ યાવત્ મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ ઓર જો મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ વહ મહાવેદનાવાલા હોતા હૈ તથા મહાવેદના-વાલે ઓર અલ્પવેદનાવાલે જીવ કે વીચ મેં પ્રશસ્તનિર્જરાવાલા જીવ

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનું સમાધાન કરતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે, (ગોયમા ! જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! એવું બનતું નથી. મહાવેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થની વાત જ શું કરવી ! એટલે કે મહાવેદનાવાળા શ્રમણનિર્ગ્રન્થો તો નારકો કરતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે જ. એટલું જ નહીં પણ અલ્પ-વેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થો પણ છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકો કરતાં મહા-નિર્જરાવાળા હોય છે—તે નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કરતાં મહાનિર્જરાયુક્તતા સંભવી શકતી નથી. તેનું કારણ બાણવાની જણાસાથી ગૌતમ સ્વામી મહા-વીર પ્રભુને પૂછે છે—

(સે કેણદ્દેણં મંતે ! एवं वृचइ जे महावेयणे जाव पसत्थनिज्जराए ?) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહેા છે કે જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, અને જે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે તે મહા-વેદનાવાળો હોય છે, તથા મહાવેદનાવાળા અને અલ્પવેદનાવાળા જીવોની અપે-ક્ષાએ પ્રશસ્ત-નિર્જરાવાળો જીવ શ્રેષ્ઠ હોય છે ?

પત્તુ તદ્ વત્તં કર્દમરાગસ્વતં સ્યાત્, ' સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ ' હે મહન્ત ! તત્તુ ત્વહ્ કર્દમરાગસ્વતં વત્તં દુર્ધોતતરકં ચેવ સ્યાત્ ' દુવ્વામતરાણ ચેવ ' દુર્વામતરકં ચેવ દુસ્સપાઞ્ચક્કલ્લહ્લં સ્યાત્, ' દુપ્પરિકમ્મતરાણ ચેવ ' દુપ્પરિકર્મ-તરકં ચેવ, કાટ્ઠમાધ્વચિત્તોલ્લેખન-મદ્ધકરણાદિપ્રક્રિયં સ્યાત્ ।

મગવાનાહ- ' એવામેવ ગોયમા ! નેરહ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં ' હે ગૌતમ ! એવમેવ કર્દમદ્ધરાગસ્વત્ત્વરદેવ નેરહ્યાણાં પાપાનિ પાપરૂપાણિ કર્માણિ ગાઢીકૃતાનિ ગુણસુત્રદ્વચ્ચદ્ધુચીકઢાપવત્ આત્મપ્રદેશેઃ સહ અત્યન્તગાઢ-

કર્દમરાગ સે યુક્ત હોગા ( સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ ) વહી વલ્લ દુર્ધોતતરક હોગા, ( દુવ્વામતરાણ ચેવ ) દુર્વામતરક હોગા, ઓર ( દુપ્પરિકમ્મતરાણ ) દુપ્પરિકર્મતરક હોગા, -જય ગૌતમ ને એસા અપના અભિ-પ્રાય પ્રકટ કર દિયા તવ પ્રભુ ને ડનસે કહા- ( એવામેવ ગોયમા ) હે ગૌતમ ! હસી તરહ સે ( નેરહ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં ) નારક જીવોં કે જો પાપરૂપ કર્મ હોતે હું, વે કર્દમ કે દ્ધ રાગ સે રક્ત હુણ વલ્લ કી તરહ હી ગાઢી કૃત હોતે હું-અર્થાત્ જિસ પ્રકાર સે શણ કી સૂતલી સે સ્વય મજ્જૂતી કે સાથ સુહ્યોં કા સમુદાય કસકર વાંધ દિયા જાતા હૈ ડસી પ્રકાર જો પાપરૂપ કર્મ આત્મા કે પ્રદેશોં કે સાથ અત્યન્ત ગાઢરૂપ સે દ્ધરૂપ મેં સંબદ્ધ હોતે હું વે ગાઢીકૃત પાપરૂપ કર્મ કહલાતે હું, એસે હી ગાઢીકૃત પાપરૂપ કર્મ નારક જીવોંકે હોતે હું, ( ચિક્કણીકયાઈં ) જિસ પ્રકાર

ગૌતમ સ્વામીએ કહ્યું “ મગવં ” હે પ્રભો ! “ તત્થ ણં જે સે વત્થે કર્દમરાગસ્વતે ” તે બન્નેમાંથી જે વચ્ચ ડીચડથી ખરડાયેલું હશે ( સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયત-રાણ ચેવ ) તે વચ્ચ દુર્ધોતતર ( ધોવામાં મુશ્કેલ હશે, ( દુવ્વામતરાણ ચેવ ) દુર્વામતરક ( ડાઘ ઢાઢવા મુશ્કેલ પડે એવું ) હશે, અને “ દુપ્પરિકમ્મતરાણ ” દુપરિકર્મતરક ( ચિત્રાલેખન આદિ કરવામાં મુશ્કેલી પડે એવું ) હશે. ગૌત-મનો આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને મહાવીર પ્રભુ તેમને કહે છે- “ એવામેવ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે “ નેરહ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં ” નારક જીવોનાં જે પાપકર્મો હોય છે, તે કર્દમના ( ડીચડના ) ગાઢ રંગથી ખરડા-યેલા વચ્ચની જેમ ગાઢીકૃત હોય છે. જેમ શણની સૂતળી વડે સોયોના સમુ-દાયને જૂથ મજ્જૂતીથી બાંધી દેવામાં આવે છે, તેમ પાપરૂપ કર્મ આત્મ-પ્રદેશોની સાથે અત્યન્ત દઢતાથી સંબદ્ધ હોય છે, એવાં પાપકર્મોને ગાઢીકૃત પાપકર્મ કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવા ગાઢીકૃત હોય છે. “ ચિક્ક-ણીકયાઈં ” જેવી રીતે ચીકણી માટીનો બનેલો પિંડ તેની ચીકણાને કારણે

ભવેત્ ? એતાવતા વિશેષણત્રયેણાપિ દુર્વિશોધ્યત્વમુક્તમ્ । અપરાધમાદ-‘ કયરે વા વત્યે સુદ્ધોયતરાણ ચેવ ’ કતારદ્ વા વ કર્દમરાગરક્તં વા, સવ્રનરાગરક્તં વા, સુધૌતતરકં ચેવ, સુપ્રાશ્નિતતરં સ્યાત્ ? ‘ સુવામતરાણ ચેવ ’ સુવામ્પતરકં ચેવ, સુપ્રાશ્નિતતરકં સ્યાત્ ? ‘ સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ ’ સુપરિકમ્મતરકં ચેવ, સુસાધ્યચિત્રલેખનમદ્ધકરણાદિપ્રક્રિયં સ્યાત્ ? ઉક્તચિત્તરવિષયમાદ-‘ જે વા સે વત્યે કદમરાગરક્તે, જે વા સે વત્યે સંજનરાગરક્તે ? ’ યદ્ વા તદ્ વદ્યં કર્દમરાગરક્તમ્ ? યદ્વા તદ્વદ્યં સવ્રનરાગરક્તમ્ ? અનર્ગોર્મધ્યે કિમ્ દુઃશોધ્યં કિમ્ સુશોધ્યં ભવેદિતિ ભગવત આશ્રયઃ । ઉપર્યુક્તં મગચ્છવચનં શ્રુત્વા ગૌતમઃ કથયતિ ‘ મગચ્છં તત્થ ણં જે સે વત્યે કદમરાગરક્તે ’ હે મગચ્છ ! તત્ર તર્ગોર્વદ્યર્ગોર્મધ્યે સદ્ધ

સાધ્ય હો-હોગી इन तीन विशेषणों द्वारा ऐसे वस्त्र में दुर्विशोध्यता प्रकट की गई है तथा ( कयरे वा वत्ये ) कौनसा वस्त्र-( सुद्धोयतराण चैव ) सुधौततरक होगा-जिसकी सफाई करना सरल हो-ऐसा होगा, ( सुवामतराण चैव ) सुवामतरक होगा-जिसमें से धब्बे आदि रूप कलङ्क सरलता से निकाला जा सके ऐसा होगा तथा ( सुपरिकम्मतराण चैव ) जिसमें चित्रोल्लेखन क्रिया एवं विशेष प्रकार की रचना करनेवाप क्रिया सुसाध्य हो ऐसा होगा अर्थात् ( जे वा से वत्ये कदमरागत्ते, जे वा से वत्ये खंजनरागत्ते ) इन वस्त्रों के बीच में जो वस्त्र कर्दमराग से रक्त है और जो वस्त्र खंजनराग से रक्त है, कौन सा वस्त्र दुःशोध्य होगा और कौन सा वस्त्र सुशोध्य होगा इस प्रकार से भगवान् के द्वारा पूछे गये वचन को सुन करके गौतम ने उनसे कहा-( भगवं ) हे भगवन् ( तत्थ णं जे से वत्ये कदमरागत्ते ) इन दोनों वस्त्रों में से जो वस्त्र

વિશેષણો દ્વારા એવા વસ્ત્રમાં દુર્વિશોધ્યતા ( તેની સફાઈ કરવામાં મુશ્કેલી ) પ્રકટ કરી છે. તથા ( કયરે વા વત્યે સુદ્ધોયતરાણ ચેવ ) કયું વસ્ત્ર સુધૌતતરક હશે-એટલે કે કયા વસ્ત્રને સાફ કરવામાં સરળતા રહેશે ? “ સુવામતરાણ ચેવ ” કયા વસ્ત્રપરથી સરળતાથી ડાઘ દૂર કરી શકાશે ? “ સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ ” કયા વસ્ત્ર ઉપર ચિત્રાલેખન અને વિશેષ પ્રકારની રચના કરવી સુગમ થઈ પડશે ? પ્રશ્નોના ભાવાર્થ એ છે કે “ જે વા સે વત્યે કદમરાગરક્તે, જે વા સે વત્યે સંજનરાગરક્તે ” એક વસ્ત્ર કે જે કીચડથી ખરડાયેલું છે અને બીજું વસ્ત્ર કે જે પતંગ રંગથી ખરડાયેલું છે, તેમાંથી કયું વસ્ત્ર દુઃશોધ્ય ( મુશ્કેલીથી સફાઈ કરી શકાય તેવું ) હશે અને કયું સુશોધ્ય ( સુગમતાથી સફાઈ કરી શકાય તેવું ) હશે ?



વ્યાનિ નિકાચિતાનીત્યર્થઃ, एतेनापि विशेषणचतुष्टयेन नैरयिकपापानि दुर्विशो-  
 ध्यानि भवन्ति, इति प्रतिपादितम्, तथा च नैरयिकाणां पापानामपि कर्मणां  
 दुर्विशोध्यत्वेन ' एवामेव ' इत्याद्युपनयवाक्यं सुवटितं भवति । एवं च ' संपगा-  
 ढं पि य णं ते वेयणं वेण्माणं णो महानिज्जरा, णो महापज्जवसाणा भवंति ' तस्मात्  
 हे गौतम ! संपगाढामपि अत्यन्तदृढीभूतामपि च तां वेदनां वेदयमानाः अनुभवन्तः  
 ते नैरयिका नो महानिर्जराः नात्यन्तविशिष्टकर्मक्षयवन्तो. नो वा महापर्यवसाना

ટીકા કી પંક્તિ દારા સમજાઈ ગઈ છે-અર્થાત્ જિસ પ્રકાર અગ્નિ મેં લૂવ  
 તપા તપા કર લોહે કે સુદ્ધર સે કૂટ ૨ કર પિણ્ડીભૂત કરલી જાતી હૈં,  
 ઇસી પ્રકાર જો કર્મ આપસ મેં ઇસ રૂપ સે મિલકર પિણ્ડીભૂત હો જાતે  
 હૈં વે કર્મ નિકાચિત સ્વિલીભૂત કહે જાતે હૈં । ઇન ચાર વિશેષણોં દારા  
 યહ સમજાયા ગયા છે કે નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુર્વિશોધ્ય હોતે હૈં  
 ઇસી કારણ વે મેલે સે મેલે વસ્ત્રકે સમાન યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હૈં અતઃ  
 ( એવામેવ ) એસા જો યહ ઉપનય વાક્ય છે વહ સુવટિત હો જાતા છે ।  
 અથ આગે સૂત્રકાર યહ પ્રકટ કરતે હૈં કે નારક જીવોં કે પાપકર્મ એસે  
 દુર્વિશોધ્ય હોતે હૈં-ઇસી કારણ વે ઉન્હેં અત્યન્તવેદનાકે કારણ વનતે હૈં  
 ( સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણ્માણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જ-  
 વસાણા ભવંતિ ) હે ગૌતમ ! વે નારક જીવ ઇસી નિમિત્ત સે અત્યન્ત  
 દૃઢીભૂત ભયઢ્ઢર સે બી ભયઢ્ઢર વેદનાં કો ભોગતે હુણ બી અત્યન્તવિ-

“ અગ્નિસંતપ્તલોહસુદ્ગરકુટ્વિત સૂચીકલાપવત્ પિણ્ડીભૂતાનિ ભવંતિ ”  
 ઉપર્યુક્ત વાત જ આ લીંટીઓ દારા સમજાવી છે-જેમ લોઢાની સોયોને  
 અગ્નિમાં ખૂણ તપાવી તપાવીને તેમના પર લોઢાના ઘણુનો ઘા મારી મારીને  
 તેમને એક પિંડરૂપ બનાવી દેવામાં આવે છે, એવી જ રીતે જે કર્મો એક-  
 મેકની સાથે મળી જઈને પિંડરૂપ બની જાય છે, એવાં કર્મોને નિકાચિત અથવા  
 ખિલીભૂત કહેવામાં આવે છે. ઉપર્યુક્ત ચાર વિશેષણો દારા એ સમજાવવામાં  
 આવ્યું છે કે નારકોનાં પાપકર્મો દુર્વિશોધ્ય હોય છે તે કારણે તેમને અહીં  
 મેલામાં મેલા વસ્ત્ર જેવાં કહ્યાં છે. “ એવામેવ ” તે પાપકર્મો મલિનમાં મલિન  
 વસ્ત્રની જેમ દુર્વિશોધ્ય હોય છે. હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રો દારા એ વાત  
 પ્રકટ કરે છે કે નારક જીવોનાં પાપકર્મો ઉપર કહ્યા પ્રમાણે દુર્વિશોધ્ય હોવાને  
 લીધે તેમને અત્યન્ત વેદના કરાવવામાં કારણભૂત બને છે. ( સંપગાઢં પિ ય ણં  
 તે વેયણં વેણ્માણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ) હે ગૌતમ !  
 આ કારણે તે નારક જીવો અત્યંત દૃઢીભૂત ( ભયંકરમાં ભયંકર ) વેદનાને

ત્વેન દ્યવતયા સંવદાતિ, 'ચિકણીકયાઈ' નિકળીકૃતાનિ, અત્યન્તસ્નિગ્ધતયા દુર્મેઘમૃત્પિણ્ડવત્ સૂક્ષ્મકર્મસ્કન્ધાનાં સરસતયા પરસ્પરં દદતમ્બન્ધકરણતો દુર્મેદી-કૃતાનિ 'સિલિટ્ટીકયાઈ' શ્લિષ્ટીકૃતાનિ લોહદુષ્ટવદ્વાઽગ્નિતત્ત્વોદશલાકાકલા-પવત્ નિધત્તાનીત્યર્થઃ 'ચિલીભૂયાઈ' ચિલીભૂતાનિ, અગ્નિસંતત્ત્વોદ્દુગ્ધગરકુટ્ટિત સૂચીકલાપવત્ પિણ્ડીભૂતાનિ ભવન્તિ, યાનિ ભોગં વિના ઉપાયાન્તરેણ ક્ષપયિતુમશ-

સે ચિકનાઈ-ચિકાશકે સંબંધસે અત્યન્ત સ્નિગ્ધ હોને કે કારણ નૃત્તિકા ફા પિણ્ડ દુર્મેઘ હો જાતા હૈ उसी प्रकार से जो कर्म सूक्ष्मकर्मों के रस के साथ परस्परगाढ संबंध करने के कारण दुर्मेघ हो जाते हैं वे चिक-णीकृत पापकर्म कहलाते हैं-ऐसे ही चिकणीकृत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं। (सिलिट्टीकयाई) जिस प्रकार लोहे के तार से मजबूत बांध-कर अग्नि में तपायी गईं लोहे की शालियों परस्पर चिपक जाती हैं-फिर वे अलग नहीं हो सकती हैं, उसी प्रकार से जो कर्म आपस में एकमेक हो जाते हैं-जुदे नहीं किये जा सकते हैं-अर्थात् निधत्त हों वे पापकर्म श्लिष्टीकृत कहलाते हैं-ऐसे श्लिष्टीकृत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं। (चिली भूयाई) जो कर्म भोगे विना और किसी उपाय से नष्ट न किये जा सकें अर्थात् निकाचित हो वे पापकर्म चिलीभूत कह-लाते हैं ऐसे चिलीभूत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं (अग्नि संतत लोहमुद्गरकुट्टित सूचीकलापवत् पिण्डीभूतानि भवन्ति) यही बात इस

દુર્મેઘ બની જાય છે, એજ પ્રમાણે જે કર્મો સૂક્ષ્મકર્મોના રસની સાથે પરસ્પર ગાઢ સંબંધ થવાને કારણે દુર્મેઘ બની જાય છે, એવાં કર્મોની ચીકણા પાપ-કર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં ચીકણાં હોય છે.

“સિલિટ્ટીકયાઈ” જેવી રીતે લોઢાના તારથી મજબૂત બાંધીને અગ્નિમાં તપાવેલી લોઢાની સળીઓ એક બીજી સાથે ચોટી જાય છે-અને તેમને પછી જુદી પાડી શકાતી નથી-એટલે કે જે પાપકર્મો નિધત્ત હોય છે તેને શ્લિષ્ટી-કૃત પાપકર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં શ્લિષ્ટીકૃત હોય છે. “ચિલી ભૂયાઈ” જે કર્મોનો લોગવ્યા વિના-બીજા કોઈ પણ ઉપાયથી નાશ થતો નથી, એવાં નિકાચિત્ત કર્મોની ચિલીભૂત કહે છે. નારકોનાં કર્મો એવાં ચિલીભૂત હોય છે.



વ્યાનિ નિકાચિતાનીત્યર્થઃ, एतेनापि विशेषणचतुष्टयेन नैरयिकपापानि दुर्विशो-  
 ध्यानि भवन्ति, इति प्रतिपादितम्, तथा च नैरयिकाणां पापानामपि कर्मणां  
 दुर्विशोध्यत्वेन 'एवामेव' इत्याद्युपनयवाक्यं सुघटितं भवति । एवं च 'संपगा-  
 ढं पि य णं ते वेयणं वेण्माणा णो महानिज्जरा, णो महापज्जवसाणा भवन्ति' तस्मात्  
 हे गौतम ! संपगाढामपि अत्यन्तदृढीभूतामपि च तां वेदनां वेदयमानाः अनुभवन्तः  
 ते नैरयिका नो महानिर्जराः नात्यन्तविशिष्टकर्मक्षयवन्तो. नो वा महापर्ववसाना

ટીકા કી પંક્તિ દ્વારા સમજાઈ ગઈ છે—અર્થાત્ જિસ પ્રકાર અગ્નિ મેં છૂવ  
 તપા તપા કર લોહે કે સુદ્ધર સે કૂટ ૨ કર પિળ્લીભૂત કરલી જાતી હૈં,  
 ઇસી પ્રકાર જો કર્મ આપસ મેં ઇસ રૂપ સે મિલકર પિળ્લીભૂત હો જાતે  
 હૈં વે કર્મ નિકાચિત સ્વિલીભૂત કહે જાતે હૈં । ઇન ચાર વિશેષણો દ્વારા  
 યહ સમજાયા ગયા છે કે નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુર્વિશોધ્ય હોતે હૈં  
 ઇસી કારણ વે મેલે સે મેલે વસ્ત્રકે સમાન યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હૈં અતઃ  
 (એવામેવ) એસા જો યહ ઉપનય વાક્ય છે વહ સુઘટિત હો જાતા છે ।  
 અવ આગે સૂત્રકાર યહ પ્રકટ કરતે હૈં કે નારક જીવોં કે પાપકર્મ એસે  
 દુર્વિશોધ્ય હોતે હૈં—ઇસી કારણ વે ઉન્હેં અત્યન્તવેદનાકે કારણ વનતે હૈં  
 (સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણ્માણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જ-  
 વસાણા ભવન્તિ) હે ગૌતમ ! વે નારક જીવ ઇસી નિમિત્ત સે અત્યન્ત  
 દૃઢીભૂત મગ્ધુર સે મી મગ્ધુર વેદનાં કો ભોગતે હુણ મી અત્યન્તવિ-

“ અગ્નિસંતપ્તલોદ્દમુદ્ગરકુટ્વિત સૂચીકલાપવત્ પિળ્લીભૂતાનિ ભવન્તિ ”  
 ઉપરુક્ત વાત જ આ લીંટીઓ દ્વારા સમજાવી છે—જેમ લોઢાની સોયોને  
 અગ્નિમાં ખૂણ તપાવી તપાવીને તેમના પર લોઢાના ઘણુનો ઘા મારી મારીને  
 તેમને એક પિંડરૂપ બનાવી દેવામાં આવે છે, એવી જ રીતે જે કર્મો એક-  
 મેકની સાથે મળી જઈને પિંડરૂપ બની જાય છે, એવાં કર્મોને નિકાચિત અથવા  
 પિલીભૂત કહેવામાં આવે છે. ઉપરુક્ત ચાર વિશેષણો દ્વારા એ સમજાવવામાં  
 આવ્યું છે કે નારકોનાં પાપકર્મો દુર્વિશોધ્ય હોય છે તે કારણે તેમને અહીં  
 મેલામાં મેલા વસ્ત્ર જેવાં કહ્યાં છે. “ એવામેવ ” તે પાપકર્મો મલિનમાં મલિન  
 વસ્ત્રની જેમ દુર્વિશોધ્ય હોય છે. હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રો દ્વારા એ વાત  
 પ્રકટ કરે છે કે નારક જીવોનાં પાપકર્મો ઉપર કહ્યા પ્રમાણે દુર્વિશોધ્ય હોવાને  
 લીધે તેમને અત્યન્ત વેદના કરાવવામાં કારણભૂત બને છે. (સંપગાઢં પિ ય ણં  
 તે વેયણં વેણ્માણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જવસાણા ભવન્તિ) હે ગૌતમ !  
 આ કારણે તે નારક જીવો અત્યંત દૃઢીભૂત (ભયંકરમાં ભયંકર) વેદનાને

से चिकनाई-चिकाशके संबंधसे अत्यन्त स्निग्ध होने के कारण नृसिका का पिण्ड दुर्भेद्य हो जाता है उसी प्रकार से जो कर्म सूक्ष्मकर्मों के रस के साथ परस्परगाढ संबंध करने के कारण दुर्भेद्य हो जाते हैं वे चिकनीकृत पापकर्म कहलाते हैं-ऐसे ही चिकनीकृत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं। (सिलिष्टीकयाइं) जिस प्रकार लोहे के तार से मजबूत बांधकर अग्नि में तपायीं गईं लोहे की शलियों परस्पर चिपक जाती हैं-फिर वे अलग नहीं हो सकती हैं, उसी प्रकार से जो कर्म आपस में एकमेक हो जाते हैं-जुदे नहीं किये जा सकते हैं-अर्थात् निवृत्त हों वे पापकर्म श्लिष्टीकृत कहलाते हैं-ऐसे श्लिष्टीकृत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं। (खिली भूयाइं) जो कर्म भोगे बिना और किसी उपाय से नष्ट न किये जा सकें अर्थात् निकाचित हों वे पापकर्म खिलीभूत कहलाते हैं ऐसे खिलीभूत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं (अग्नि संतप्त लोहमुद्गरकुट्टित सूचीकलापवत् पिण्डीभूतानि भवंति) यही बात इस

“ સિલિટ્ટીકયાઈ ” જેવી રીતે લોઢાના તારથી મજબૂત બાંધીને અગ્નિમાં તપાવેલી લોઢાની સળીઓ એક બીજી સાથે ચોંટી જાય છે-અને તેમને પછી જુદી પાડી શકાતી નથી-એટલે કે જે પાપકર્મો નિધત્ત હોય છે તેને શિલ્પી-કૃત પાપકર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં શિલ્પીકૃત હોય છે. “ ચિલી મૂયાઈ ” જે કર્મોનો લોગબ્યા વિના-બીજા કોઈ પણ ઉપાયથી નાશ થતો નથી, એવાં નિકાચિત કર્મોને ખિલીભૂત કહે છે. નારકોનાં કર્મો એવાં ખિલીભૂત હોય છે.

દૃષ્ટાન્તાન્તરમાદ-‘સે જહા વા કેડ પુરિસે અહિગરણિ આઝહેમાણે મહયા મહયા સદેણં’ તદ્-અથવા યયા કોડપિ પુરુષઃ અધિકરણીમ્ અધિકરણી-લોહકારા યત્રા-યોધનેન ‘હથોડા’ इति भाषाप्रसिद्धेन लोहानि आकुट्टयन्ति सा तामित्यर्थः ‘एरण’ इति प्रसिद्धाम् आकुट्टयन् मदता मदता अतिदीर्घेण शब्देन अयोधनवान-जन्यध्वनिना, पुरुषहुंकारेण वा, ‘महया महया घोसेणं’ मदता मदता घोषेण अतिभङ्ग्यरसवेण प्रतिध्वनिना वा ‘महया महया परंपराघाएणं’ मदता मदता पर-म्पराघातेन अतिदीर्घनिरन्तरोपयुपरिघातेन ‘अधिकरणीम् आकुट्टयन्’ इति

યહાં ૨ પર મહાવેદનાવત્વ હો હી વયોં કિ કોઈ ૨ અયોગિકેવલી એસે બી હોતે હેં જો મહાનિર્જરા વાલે હોકર બી મહાવેદના વાલે કદાચિત્ નહીં બી હોતે હેં ।

દૃષ્ટાન્ત સે સૂત્રકાર હસી પૂર્વોક્ત વાત કો સમજાતે હેં-(સે જહા વા કેડ પુરિસે અહિગરણિ આઝહેમાણે મહયા ૨ સદેણં) લુહાર જિસ પર લોહા રાખકર હથોડા સે કૂટતા હૈ-ઉસકા નામ (एरण) હૈ તો જૈસે કોઈ પુરુષ લુહાર-एरण કો વઢે જોર ૨ સે હું હું એસે શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કરતા હુઆ કૂટે અથવા-વહ્ હસ રૂપ સે ઉસે કૂટે કિ જિસસે ઉસસે કૂટને કા વઢે જોર કા શબ્દ હોવે, (મહયા ૨ ઘોસેણં) કૂટતે સમય ઉસકે મુખસે એસા શબ્દ નિકલે કિ જો વઢા ભયફૂર હો-અથવા કૂટને કે શબ્દ કો વહાં પ્રતિધ્વનિ હો રહી હો હસ રૂપ સે ઉસ एरण કો વહ્ કૂટે (મહયા ૨ પરંપરાઘાएणं) એક હી વાર વહ્ ઉસે નહીં કૂટે

નિર્જરાયુક્તતા હોય ત્યાં ત્યાં મહાવેદનાયુક્તતા પણ હોવી જ નોંધએ, કારણ કે કોઈ કોઈ અયોગિ-કેવલી એવા પણ હોય છે કે જે મહાનિર્જરાવાળા હોવા છતાં ક્યારેક મહાવેદનાવાળા હોતા નથી.

હવે સૂત્રકાર બીજા દૃષ્ટાન્તો દ્વારા પૂર્વોક્ત વાતનું વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-“સે જહા વા કેડ પુરિસે અહિગરણિ આઝહેમાણે મહયાર સદેણં” જેમકે કોઈ પુરુષ (લુહાર) ધણા જોરથી હાંકારા અને પડકારા કરતો કરતો એરણ પર ધણુના પ્રહાર કરે-અથવા તો તે એવા જોરથી એરણ પર હથોડાના પ્રહાર કરે કે તેના આઘાતથી ધણુ ભારે ધ્વનિ થતો હોય, “મહયા ૨ ઘોસેણં” આ રીતે ધણુનો એરણ પર પ્રહાર કરતી વખતે તેના મુખમાંથી એવો ધ્વનિ નીકળતો હોય કે જે ધણુ ભયંકર લાગતો હોય-અથવા એરણ પર ધણુનો ધા પડવાથી ત્યાં અવાજનો પ્રતિધ્વનિ ઉઠતો હોય એવી રીતે તે એરણ પર ધણુના ધા મારતો હોય “મહયાર પરંપરાઘાएणં” આ પ્રમાણે



भवन्ति, सर्वथा कर्मरहिताः न भवन्तीत्यर्थः । एतेन महानिर्जराया अभावस्य निर्वाणभावस्वरूपफलं प्रतिपादितम् । एतच्च 'यो महावेदनः स महानिर्जरः' इति प्रागुक्तो नियमः विशिष्टात्मापेक्षो वेदितव्यः, नतु नैरयिकादिविलष्टकर्मजीवापेक्ष इति, एवं 'यो महानिर्जरः स महावेदनः' इति नियमोऽपि प्रायिको बोध्यः, अयोगिकेवलिनो महानिर्जरत्वेऽपि महावेदनत्वस्य अनेकान्तिकत्वात् अयोगिकेवली महानिर्जरो भवत्येव, महावेदनस्तु कदाचित् स्यात्, कदाचित् नापिर्यादिति भावः ।

શિષ્ટ કર્મક્ષયરૂપ નિર્જરાવાળે નહીં હોતે હું ઓર ન સર્વથા કર્મ સે હી રહિત હોતે હું । ઇસસે સૂત્રકાર ને યહ પ્રકટ કિયા હૈ કિ જય उनमें महानिर्जरा का ही अभाव रहता है तब इस महानिर्जरा के अभाव का फल तो निर्वाणभाव ( मोक्ष का अभाव ) है वह उनमें है ही यह स्पष्ट है अतः इस कथन से सूत्रकार ने यह प्रमाणित किया है कि ( यो महावेदनः स महानिर्जरः ) यह जो पहिले कहा गया है " जो महावेदनावाला होता है वह महानिर्जरावाला होता है " सो यह कथन विशिष्ट आत्मा की अपेक्षा से कहा गया ही जानना चाहिये । विलष्ट कर्मवाले नारक जीवों की अपेक्षा से नहीं । इसी तरह से " जो महानिर्जरावाला होता है वह महावेदनावाला होता है " यह कथन भी-नियम भी प्रायिक जानना चाहिये क्यों कि अयोगि केवली जो होते हैं वे महानिर्जरावाले होकर भी महावेदनावाले नहीं भी होते हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि ऐसा नियम नहीं बन सकता है कि जहां २ पर महानिर्जरावत्व हो

લોગવવા છતાં પણ વિશિષ્ટ કર્મક્ષયરૂપ નિર્જરાવાળા હોતા નથી, અને તેઓ કર્મથી સર્વથા રહિત હોતા નથી. આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ કરી છે કે નારકોમાં મહાનિર્જરાનો અભાવ હોય છે, તે કારણે મહાનિર્જરાના કળ સ્વરૂપ નિર્વાણનો પણ અભાવ હોય છે. સૂત્રકારે આ કથન દ્વારા એ સિદ્ધાન્તનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે " યો મહાવેદનઃ સ મહાનિર્જરઃ " જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે. એવું જે પહેલા કહેવામાં આવ્યું છે તે વિશિષ્ટ આત્માને અનુલક્ષીને જ કહેવામાં આવ્યું છે, વિલષ્ટ કર્મોવાળા નારકાદિ જીવોને આ કથન લાગુ પડતું નથી. એજ પ્રમાણે " જે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, તે મહાવેદનાવાળો હોય છે. "

આ કથન પણ પ્રાયિક સામાન્યતઃ સમજવું, કારણ કે અયોગિકેવલી મહાનિર્જરાવાળા હોવા છતાં પણ મહાવેદનાવાળા નથી-પણ હોતા. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એવો કોઈ નિયમ સંભવી શકતો નથી કે જ્યાં જ્યાં મહા-

શિલીભૂતાનિ ભવન્તિ, સંપગાદામપિ ચ તાં તે વેદનાં વેદયમાના નો મહાનિર્જરાઃ  
નો વા મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તથા ચાત્રાપિ ' ગાઢીકૃતાનિ ' ઇત્યાદિવિશેષ-  
ણચતુષ્ટયેન દુષ્પરિશાટનીયાનિ ભવન્તિ, ઇતિ પ્રતિપાદિતમ્ ।

અથ સ્વજનરાગરક્તવસ્ત્રવિષયે પૃષ્ઠો ગૌતમ આહ- ' ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે  
સ્વજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકમ્મતરાણ  
ચેવ ' હે ભદન્ત ! તત્થ તયોઃ કર્દમરાગરક્તસ્વજનરાગરક્તયોઃ વસ્ત્રયોર્મધ્યે યત્  
તદ્ વસ્ત્રં સ્વજનરાગરક્તં પતંગરાગેણ રણિતં તદ્ વસ્ત્રં સુધૌતતરકં ચૈવ સુપ્રક્ષાલિતતરં  
સ્પાત્, સુવામ્યતરકંચૈવ સુત્યાજ્યકલકલ્લં સ્પાત્, ' સુપરિકર્મતરં ચૈવ-અનાયાસચિ-

( દહતા સે આત્મા મેં લગે હુણ ) હોતે હેં તથા હસી કારણ જો નારક  
જીવ ભયદૂરસે ભી ભયદૂર વેદનાકો ભોગા કરતે હેં-એસે વે નારક જીવ  
મહાનિર્જરાવાલે નહોં હોતે હેં ઓર ન મહાપર્યવસાનવાલે હી હોતે હેં ।  
યહાં પર " ગાઢીકૃતાનિ " આદિ ચાર વિશેષણો દ્વારા યહ સમજાયા  
ગયા હૈ કિ ઉન નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુષ્પરિશાટનીય હોતે હેં ।

અથ સ્વજનરાગસે રક્ત હુણ વસ્ત્રકે વિષયમેં પ્રભુ દ્વારા પૂછે ગયે ગૌતમ  
ને ઉનસે કહા-(ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે સ્વજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધો-  
યતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ) હે ભગવન્ ! જો વસ્ત્ર  
સ્વજનરાગ સે-પતંગરાગ સે રંગા હુઆ હોતા હૈ અર્થાત્-કર્દમરાગ ઓર  
પતંગરાગ સે રંગે હુણ વસ્ત્રોં કે વીચ મેં જો પતંગરાગ સે રંગા ગયા વસ્ત્ર  
હૈ-વહ સુધૌતતરક હોતા હૈ-અચ્છીતરહ સે ધોયા જા સકે એસા હોતા

( દહ રૂપે આત્મામાં લાગેલા ) હોય છે, અને જે પાપકર્મોને કારણે નારક  
હોવા ભયંકરમાં ભયંકર વેદનાને ભોગવતા હોય છે, એવા તે નારક હોવા  
મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા ( કર્મોનો સદંતર ક્ષય કરનારા )  
હોતા નથી. સૂત્રમાં વપરાયેલાં " ગાઢીકૃત " આદિ ચાર વિશેષણો દ્વારા એ  
સમજાવવામાં આવેલ છે કે તે નારક હોવાનાં પાપકર્મો દુષ્પરિશાટનીય (જેનો  
ક્ષય મહા મુશ્કેલીએ કરી શકાય તેવાં ) હોય છે.

ખંજનરાગથી રક્ત એવા વસ્ત્રના વિષયમાં જે પ્રશ્ન મહાવીર પ્રભુ દ્વારા  
પૂછવામાં આવ્યો હતો. તેના જવાબરૂપે ગૌતમ સ્વામી કહે છે-(ભયવં !  
તત્થ જે સે વત્થે સ્વજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ,  
સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ ) હે પ્રભો, જે વસ્ત્રને ખંજનરાગથી ( પતંગરાગથી )  
રંગેલું હોય છે-એટલે કે કર્દમરાગ ( ક્રીચક ) અને પતંગરાગથી રંગેલા  
વસ્ત્રોમાંથી જે વસ્ત્ર પતંગરાગથી રંગેલું હોય છે તે સુધૌતતરક ( સુગમતાથી



પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ ‘ળો સંચાણ્દ તીસે અહિગરણીણ કેઈ અહાવાયરે પોગલે પરિસાહિત્તણ’ નો શવનોતિ નો પારયનિ, તસ્મા અધિકરણ્યાઃ કાનપિ યથાવાદ-  
 રાન્ યથાસ્થૂલાન્ પુદ્ગલાન્ પરિસાટયિતું પૃથગર્ત્તમ્ અધિકરણ્યાઃ સ્થૂલાન્ પુદ્ગલાન્  
 લોઢકણરૂપાન્ પૃથક્કૃત્વા ધ્યંસયિતું સમર્થં ન ભવતીતિ ભાવઃ । એતદેવ મગવાન્  
 દાપ્ટાન્તિકે યોજયતિ-‘એવામેવ ગોયમા । નેરહયાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં’  
 હે ગૌતમ ! એવમેવ મહતા આવાતેન પરિહન્યમાનાયા અપિ અધિકરણ્યાઃ સ્થૂલપુદ્-  
 ગલવદેવ નૈરયિકાણાં પાપાનિ કર્માણિ ગાઢીકૃતાનિ રૂઢતયા અત્મપ્રદેશીઃ સહ સં-  
 વદ્ધાનિ યાવત્-ચિક્ષીકૃતાનિ અતિસ્નિગ્ધતામાપાદિતાનિ, શ્લિષ્ટીકૃતાનિ,

કિન્તુ લગાતાર વહ ઉસે કુટતા જાવે તો ખી વહ ( ળો સંચાણ્દ તીસે અહિગરણીણ કેઈ અહાવાયરે પોગલે પરિસાહિત્તણ ) હસ સ્થિનિ મેં ઉસ  
 ણરણ કે યથાવાદર પુદ્ગલોં કો-લોહ કે કળોં કો-ઉસસે અલગ કરકે  
 નષ્ટ કરને કે લિયે સમર્થ નહોં હોતા હૈ, ( એવામેવ ગોયમા ) હસી તરહ  
 સે હે ગૌતમ ! ( નેરહયાણં પાવાઈં કમ્માઈં ) નારક જીવોં કે જો પાપરૂપ  
 કર્મ હોતે હૈં વે ( ગાઢીકયાઈં જાવ ળો પજ્જવસાણાઈં ભવંતિ ) ગાઢીકૃત  
 હોતે હૈં યાવત્ વે નારક જીવ મહાપર્યવસાનવાલે નહોં હોતે હૈં-અર્થાત્  
 કહને કા તાત્પર્ય એસા હૈ કિ જિસ પ્રકાર સે વડેભારી આવાતોં દારા  
 વાર ૨ કુટે જાને પર ખી ણરણ કે સ્થૂલ પુદ્ગલ ઉસસે પૃથક્ હોકર નષ્ટ  
 નહોં કિયે જા સકતે હૈ, ઉસી પ્રકાર સે નૈરયિક જીવોં કે પાપકર્મ ખી  
 જો કિ આત્મપ્રદેશોં કે સાથ ગાઢતરરૂપ સે સંબદ્ધ હોતે હૈં, યાવત્-ચિક્ષ-  
 ળીકૃત-અતિસ્નિગ્ધતા કો લિયે હુણ હોતે હૈં શ્લિષ્ટીકૃત ંવં તિલીભૂત

લગાતાર ંરણ પર નેરથી ઘા મારવા છતાં પણ ( ળો સંચાણ્દ તીસે અહિ-  
 ગરણીણ કેઈ અહાવાયરે પોગલે પરિસાહિત્તણ ) તે ંરણના સ્થૂલ પુદ્ગલોને  
 ( લોઢાના કણોને ) તેનાથી અલગ પાડીને તેમનો નાશ કરવાને તે શક્તિમાન  
 થતો ગથી. “ એવામેવ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! ંજ પ્રમાણે “ નેરહયાણં પાવાઈં  
 કમ્માઈં ” નારક જીવોનાં જે પાપરૂપ કર્મો હોય છે “ ગાઢીકયાઈં જાવ ળો  
 પજ્જવસાણાઈં ભવંતિ ” તે ગાઢીકૃત હોય છે, તેથી તે નારક જીવો મહાપર્યવ-  
 સાનવાળા (કર્મોનો સર્વથા નાશ કરનારા) હોતા નથી. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે  
 કે જેવી રીતે ંરણ ઉપર ઘણુ વડે ઘણા નેરથી વારંવાર ઘા મારવા છતાં  
 ંરણનાં સ્થૂલ પુદ્ગલોને ંરણમાંથી અલગ પાડીને તેમનો નાશ કરી શકાતો  
 નથી, એવી જ રીતે નારક જીવોનાં પાપકર્મો કે જે આત્મપ્રદેશોની સાથે દૃઢ-  
 તર રૂપે સંબદ્ધ હોય છે, જે ચીકણાં હોય છે, જે એકમેકની સાથે શ્લિષ્ટી-  
 કૃત ( સંજ્જડ રીતે ચોટેલા ) હોય છે અને જે નિકાચિત અથવા ખિલીભૂત

શિલીભૂતાનિ ભવન્તિ, સંગ્રામ્યામપિ ચ તાં તે વેદનાં વેદ્યમાના નો મહાનિર્જરાઃ  
નો વા મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તથા ચાત્રાપિ ' ગાઢીકૃતાનિ ' इत्यादिविशेष-  
णचतुष्टयेन दुष्परिशादनीयानि भवन्ति, इति प्रतिपादितम् ।

અથ સ્વંજનરાગરક્તવસ્ત્રવિષયે પૃષ્ઠો ગૌતમ આહ-‘ ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે  
સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકમ્મતરાણ  
ચેવ ’ હે ભદન્ત । તત્થ તયોઃ કર્દમરાગરક્તસ્વંજનરાગરક્તયોઃ વસ્ત્રયોર્મધ્યે યત્  
તદ્ વસ્ત્રં સ્વંજનરાગરક્તં પતંગરાગેણ રંજિતં તદ્ વસ્ત્રં સુધૌતતરકં ચૈવ સુપ્રક્ષાલિતતરં  
સ્પાત્, સુવામ્યતરકંચૈવ સુત્યાજ્યકલકલં સ્પાત્, ‘ સુપરિકર્મતરં ચૈવ-અનાયાસચિ-

( દૃઢતા સે આત્મા મેં લગે હુણ ) હોતે હેં તથા હસી કારણ જો નારક  
જીવ ભયદ્ગરસે ખી ભયદ્ગર વેદનાકો ભોગા કરતે હેં-એસે વે નારક જીવ  
મહાનિર્જરાવાલે નહોં હોતે હેં ઓર ન મહાપર્યવસાનવાલે હી હોતે હેં ।  
યહાં પર “ ગાઢીકૃતાનિ ” આદિ ચાર વિશેષણો દ્વારા યહ સમજાયા  
ગયા હેં કિ ઉન નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુષ્પરિશાદનીય હોતે હેં ।

અવ સ્વંજનરાગસે રક્ત છુણ વસ્ત્રકે વિષયમેં પ્રભુ દ્વારા પૂછેગયે ગૌતમ  
ને ઉનસે કહા-(ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થં સુધો-  
યતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ) હે ભગવન્ ! જો વસ્ત્ર  
સ્વંજનરાગ સે-પતંગરાગ સે રંગા હુઆ હોતા હેં અર્ધાત્-કર્દમરાગ ઓર  
પતંગરાગ સે રંગે હુણ વસ્ત્રોં કે વીચ મેં જો પતંગરાગ સે રંગા ગયા વસ્ત્ર  
હે-વહ સુધૌતતરક હોતા હેં-અચ્છીતરહ સે ધોયો જા સકે એસા હોતા

( દૃઢ રૂપે આત્મામાં લાગેલા ) હોય છે, અને જે પાપકર્મોને કારણે નારક  
જીવો ભયંકરમાં ભયંકર વેદનાને ભોગવતા હોય છે, એવા તે નારક જીવો  
મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા ( કર્મોનો સદંતર ક્ષય કરનારા )  
હોતા નથી. સૂત્રમાં વપરાયેલાં “ ગાઢીકૃત ” આદિ ચાર વિશેષણો દ્વારા એ  
સમજાવવામાં આવેલ છે કે તે નારક જીવોનાં પાપકર્મો દુષ્પરિશાદનીય (જેનો  
ક્ષય મહા મુશ્કેલીએ કરી શકાય તેવાં ) હોય છે.

અંજનરાગથી રક્ત એવા વસ્ત્રના વિષયમાં જે પ્રશ્ન મહાવીર પ્રભુ દ્વારા  
પૂછવામાં આવ્યો હતો. તેના જવાબરૂપે ગૌતમ સ્વામી કહે છે-(ભયવં !  
તત્થ જે સે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થં સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ,  
સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ ) હે પ્રભો, જે વસ્ત્રને અંજનરાગથી ( પતંગરાગથી )  
રંગેલું હોય છે-એટલે કે કર્દમરાગ ( કીચક ) અને પતંગરાગથી રંગેલા  
વસ્ત્રોમાંથી જે વસ્ત્ર પતંગરાગથી રંગેલું હોય છે તે સુધૌતતરક ( સુગમતાથી

ત્રોલ્લેખન-મજ્જકરણાદિમક્રિયં સ્યાત્ । एवं गौतमेन कथितं सति भगवान् पतं दृष्टान्तं दाष्टान्तिके योजयति-‘ एवमेव गोयमा ! समणाणं निर्गंथाणं अहावायराइं कम्माइं सिद्धिलीकयाइं, निद्वियाइं कयाइं, विप्परिणामियाइं खिप्पामेव विद्धत्थाइं भवंति’ हे गौतम ! एवमेव खञ्जनरागस्त्रस्य सुपक्षालनीयत्वादिवदेव श्रमणानां निर्ग्रन्थनाम् यथावादराणि स्थूलतरस्कन्धानि स्थूलप्रकाराणि असारानि कर्माणि शिथिलीकृतानि श्लथत्वमापादितानि भवन्ति, निष्ठितानि कृतानि. निःसत्तकानि

है, सुवाम्यतरक-धव्वे वगैरह जिसके अच्छी तरह से धोये जा सकें ऐसा होता है और सुपरिकर्मतरक अनायास जिसमें चित्रोल्लेखन और रचना करने रूप आदि क्रियाएँ की जा सकें ऐसा होता है ऐसा जब गौतम ने कहा-तो इसी दृष्टान्त को दाष्टान्त में योजित करते हुए प्रभु ने उन्हें समझाया-( एवामेव गोयमा ) इसी तरह से हे गौतम ! ( समणाणं निर्गंथाणं अहावायराइं कम्माइं सिद्धिलीकयाइं निद्वियाइं कयाइं विप्परिणामियाइं खिप्पामेव विद्धत्थाइं भवंति ) श्रमण निर्ग्रन्थों के जो यथावादर कर्म होते हैं, वे शिथिलीकृत होते हैं, निष्ठित होते हैं और विपरिणामित होते हैं-इसी कारण वे शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं-तात्पर्य कहने का यह है कि श्रमण निर्ग्रन्थों की आत्मा सम्यग्दर्शन से वासित रहा करती है इस कारण उनके कर्म जैसे मिथ्यादृष्टियों की आत्मा में गाढरूप आदि विशेषणों से विशिष्ट होते हैं वैसे वे यहाँ नहीं होते हैं-यहाँ तो वे खंजनराग से रंगे हुए वस्त्र की तरह शिथिल आदि विशेषणों वाले होते हैं-जैसे खंजन ( पतंग ) रंग से रंगे हुए वस्त्र

ધોઈ શકાય એવું ) હોય છે, સુવામ્યતરક ( સુગમતાથી ડાઘ દૂર કરી શકાય તેવું ) હોય છે, અને સુપરિકર્મતરક ( સરળતાથી ચિત્રાલેખન, વિશિષ્ટ રચના આદિ કરી શકાય તેવું ) હોય છે. હવે આ દૃષ્ટાન્તને આધારે શ્રમણુ નિર્ગંથોના કર્મોને પણ ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રની જેમ સુવિશેષ્ય બતાવવાને માટે મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ એવમેવ ગોયમા ! ” એજ પ્રમાણે હે ગૌતમ ! ( સમણાણં નિર્ગંથાણં અહાવાયરાઈં કમ્માઈં સિદ્ધિલીકયાઈં, નિદ્વિયાઈં કયાઈં, વિપ્પરિણામિયાઈં ચિપ્પામેવ વિદ્ધત્થાઈં ભવંતિ ) શ્રમણુ નિર્ગંથોનાં જે સ્થૂલ કર્મો હોય છે, તે શિથિલીકૃત હોય છે, નિષ્ઠિત-દૃઢ હોય છે, તે ઝરણે તેમના જલ્દી નાશ થઈ જાય છે. કહેવાતું તાત્પર્ય એ છે કે શ્રમણુ નિર્ગંથોના આત્મા સમ્યગ્દર્શનથી સુક્ત હોય છે. તેથી તેમનાં કર્મો મિથ્યાદૃષ્ટિઓની જેમ આત્માની સાથે ગાઢીકૃત ( દૃઢ રૂપે સંબંધ ) હોતાં નથી. પણ તેમના કર્મો તો ખંજન



વિદિતાનિ વિપરિણામિતાનિ સ્થિતિઘાત-રસઘાતાદિભિઃ વિપરિણામં પ્રાપિતાનિ, સિમમેવ સ્ફટિત્યેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, एतैश्च विशेषणैः सुविशोद्धानि, इत्युक्तम् । શ્રમણાનાં મહાવેદનત્વાડલ્પવેદનત્વે આદિ-‘જાવદ્યં તાવદ્યંપિ તે વેયણં વેણ-માણા મહાનિજ્જરા, મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ’ તે શ્રમણનિર્ગ્રન્થાઃ યાવતિકાં તાવ-તિકામપિ યાવત્તાવત્પરિમિતામપિ અલ્પાં વર્દાં વા વેદનાં વેદયમાનાઃ મહાનિર્જરાઃ, મહાપર્યવસાનાશ્ચ ભવન્તિ સર્વકર્મણાં ક્ષપિતત્વેન મહાનિર્જરત્વાપાદનેન સકલકર્મ-

મેં સે ઉસકા રંગ યહુત હી જલ્દી ધોને પર નિકલ જાતા હૈ ક્યોં કિ ઉસકે પ્રદેશોં મેં અત્યન્તરૂપ સે સંસક્ત નહીં હોતા, ઉસી પ્રકાર વે કર્મ બી સમ્યગ્દર્શન કે પ્રભાવ સે સ્થિતિઘાત, રસઘાત આદિ રૂપ સે વિપ-રિણામ કો વહાં પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં-અતઃ વે સત્તા સે રહિત બનકર શીઘ્ર હી કટે હુણ વૃક્ષ કી તરહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈં । इन विशेषणों द्वारा सूत्रकार ने यही प्रकट किया है कि जो ऐसे असाररूप कर्म होते हैं वे सुविशोध्य होते हैं । इसी कारण वे श्रमण निर्ग्रन्थ ( जावद्वयं ताव-द्वयं पि ते वेयणं वेणमाणा महानिज्जरा महापज्जवसाणा भवन्ति ) थोड़ी बहुत किसी भी प्रकार की चाहे वेदना को भोग रहे हो तब भी महा-निर्जरावाले और महापर्यवसानवाले होते हैं-तात्पर्य कहने का यह है कि सम्यग्दर्शन के हो जाने पर पदार्थ का यथार्थ बोध उनकी आत्मा में हो जाता है-अतः वे अल्प वा महावेदना को भोगते हुए भी उस अवस्था में रागद्वेषरूप कलुषित परिणामवाले नहीं बनते हैं-क्यों कि उन्हें यह

રાગથી રંગેલા વસ્ત્રની જેમ શિથિલ આદિ વિશેષણોવાળાં હોય છે. જેવી રીતે ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રને ધોતાની સાથે જ તેનો રંગ સુગમતાથી દૂર કરી શકાય છે, કારણ કે તે રંગ તેના પ્રદેશોમાં અધિક રૂપે સંસક્ત હોતો નથી, એજ પ્રમાણે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના કર્મ પણ સમ્યગ્દર્શનના પ્રભાવથી સ્થિતિઘાત, રસઘાત આદિરૂપે વિપરિણામને પ્રાપ્ત કરતાં રહે છે તે કારણે તે કર્મો સત્તાથી રહિત બનીને જલ્દીથી કપાયેલા વૃક્ષની જેમ આત્માથી અલગ થઈ જાય છે. આ વિશેષણો દ્વારા સૂત્રકારે એજ વાત પ્રકટ કરી છે કે તેમનાં તે શિથિલી-કૃત કર્મો સુવિશોદ્ધ્ય હોય છે.

એજ કારણે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ ( જાવદ્યં તાવદ્યં પિ તે વેયણં વેણમાણા મહાનિજ્જરા મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ) ઓછી કે વધારે, ગમે તે પ્રકારની વેદ-નાને ભોગવતા હોય છતાં પણ મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા

ક્ષયવન્તો ભવન્તીતિ ભાવઃ । તદેવ દૃષ્ટાન્તદ્વારા દૃશ્યતિ-’ સે જહાનામણ કેઈ પુરિસે સુવકં તળદત્થયં જાયતેયંસિ પવિસવેજ્જા ’ હે ગૌતમ ! તત્-અથ યથા નામ કોઽપિ પુરુષઃ શુષ્કં તૃણદસ્તકં ઘાસપૂલકં જાતતેજસિ અગ્ની મક્ષિપેત્, ’ સે

યથાર્થરૂપ સે જ્ઞાત હોને લગ જાતા હૈ કિ યહ જો વૃક્ષ હો રહ્યા હૈ વહ એસો હો હોના ધા સો હો રહ્યા હૈ-મેરે હર્ષચિપોદ કરને સે યહ કમતી ઘટતી નહીં હો સકતા હૈ-એસા કરને સે તો ઉલટા કર્મ કા હો આગામી બંધ હોગા અતઃ મધ્યસ્થ ભાવ રાખકર વે ઉસ આગતિત થોડી ચાહે યહુત મી વેદના કો સમતાભાવ સે ભોગતે રહતે હૈં । ડનકી આત્મા મેં યહ દૃઢશ્રદ્ધા જમી રહતી હૈ કિ (અનહોની કોઈ યાત હોતી નહીં હૈ ઓર જો હોતી હૈ વહ ( હોને લાયક ) ફસલિયે હોતી હૈ-અતઃ એસી સ્થિતિ મેં અધીર બનના યહ કથમપિ ઉચિત નહીં હૈ ફસ તરહ કે દૃઢ સાહસ કે સાથ રાગદ્વેષ રહિત સમતાભાવ ધારણ કરને સે આત્મા મેં નવીન કર્મોં કા બંધ હોતા નહોં હૈ ઓર જો સંચિત કર્મ હોતે હૈં, ડનકી નિર્જરા હોતે રહને સે અન્ત મેં વે સર્વ કર્મોં સે વિપ્રમુક્ત હોતે હૈં । ફસી યાત કો સૂત્ર-કાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુષ્ટ કરને કે નિમિત્ત ગૌતમ સે (સે જહા નામણ કેઈ

( કર્મેના સર્વથા અન્ત કરનારા ) હોય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સમ્ય-ગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થઈ ગયા પછી તેમને પદાર્થનું યથાર્થ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકતું હોય છે, તે કારણે અદ્ય અથવા મહાવેદનાનું વેદન કરવા છતાં પણ તેઓ એ પરિસ્થિતિમાં રાગદ્વેષ રૂપ કલુષિત પરિણામવાળા બનતા નથી, કારણ કે તેમને તે યથાર્થ રૂપે સમજાવા લાગે છે કે જે બનવાનું હતું એજ બની રહ્યું છે. મારા દ્વારા હર્ષ અથવા શોક કરવાથી તેમાં કંઈ પણ ફરક પડી શકે તેમ નથી. એમ કરવાથી ઉલટા કર્મેના વધુ બંધ બંધાશે. તે કારણે તઓ તેમના પર આવી પડેલ દુઃખને અથવા થોડી કે વધારે વેદનાને સમતાલાવે સહન કર્યા કરે છે. એમના આત્મામાં એવી પાકી શ્રદ્ધા બંધાયેલી રહે છે કે “ ન બનવા લાયક કોઈ વાત બનતી નથી અને જે કંઈ બને છે તે બનવાને લાયક હોવાથી જ બન્યા કરે છે ” તો એવી પરિસ્થિતિમાં અકળાઈ જવું અથવા સમતાવૃત્તિનો ત્યાગ કરવો તે બિલકુલ ઉચિત નથી. આ પ્રકારનો રાગદ્વેષ રહિતનો સમતાભાવ રાખવાથી આત્મામાં નવીન કર્મેના બંધ થતો નથી અને સંચિત કર્મેની નિર્જરા થતી રહે છે અને અન્તે એવો જીવ સમસ્ત કર્મેના મોક્ષ પામી શકે છે.



પૂર્ણં ગોયમા ! સે સુપ્તકે તળહત્થપ્ જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે લિપ્પામેવ મસ-  
મસા વિજ્જહ ? ' હે ગૌતમ ! તત્ નૂનં નિશ્ચયેન સ શુષ્કઃ તળહસ્તકઃ વાસપૂલકઃ  
જાયતેજસિ અગ્ની મક્ષિત્તઃ સન્ સિપ્પમેવ સ્પટિત્યેવ મસમસાપ્યતે ? દહ્યતે ભસ્મી  
ભવતિ લલ્લ ? । ગૌતમઃ સ્વીકરોતિ-‘ હંતા, મસમસાવિજ્જહ ’ હે ભદન્ત ! હન્ત,  
સત્યમ્ મસમસાપ્યતે, સથ એવ દગ્ધો ભવતિ । તમેવ ભગવાન દાર્પાન્તિકે યોજ-  
યતિ - ‘ એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંધાણં : અહાવાયરાઈં કમ્માઈં, જાવ-  
પજ્જવસાણા ભવંતિ ’ હે ગૌતમ ! એવામેવ અગ્નિમક્ષિત્તશુષ્કતળપૂલકવદેવ શ્રમ-  
ણાનાં નિર્ગંધાનાં યથાવાદરાણિ યાવત્-શિથિલીકૃતાનિ નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ,  
વિપરિણામિતાનિ સિપ્પમેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, યાવત્ તાવત્પરિમિતામપિ વેદનાં  
વેદયમાના નિર્ગંધાઃ શ્રમણાઃ મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાના ભવન્તીત્યાશયઃ ।

પુરિસે સુપ્તકે તળહત્થયં જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લેજા ) એસા કહ રહે હેં કિ-  
હે ગૌતમ ! જૈસે કોઈ એક પુરુષ શુષ્ક વાસ કે પૂલે કો ધધકતી હુહ  
અગ્નિ મેં ડાલતા હૈ-તો ( સે પૂર્ણં ગોયમા ! સે સુપ્તકે તળહત્થપ્ જાયતે-  
યંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે લિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ ) હે ગૌતમ ! કયા વહ  
શુષ્ક વાસ કા પૂલા દેલતે ૨ ઉસ ધધકતી હુહ જ્વાલા મેં જલ નહીં  
જાતા હૈ કયા ? ( હંતા મસમસાવિજ્જહ ) હાં, ભદન્ત ! જલ જાતા હૈ તો  
( એવામેવ ગોયમા ) હસી તરહ સે હે ગૌતમ ! ( સમણાણં નિર્ગંધાણં )  
શ્રમણ નિર્ગંધોં કે ( અહાવાયરાઈં કમ્માઈં ) યથાવાદર-અસાર કર્મ  
( જાવ પજ્જવસાણા ભવંતિ ) યાવત્ શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત, એવં વિપરિ-  
ણામિત હોકર શીઘ્ર હી વિધ્વસ્ત હો જાતે હેં વે ચાહે થોડી યોં બહુત  
કૈસે હી વેદના કયોં ન ભોગેં અન્ત મેં મહાનિર્જરાવાલે વનકર વે સમસ્ત  
કર્મોં કો નષ્ટ કર દેતે હેં ।

હવે સૂત્રકાર એજ વાતની દૃષ્ટાંતો દ્વારા પુષ્ટિ કરે છે-“ સે જહા નામપ્  
કેહ પુરિસે સુપ્તકે તળહત્થયં જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લેજા ” હે ગૌતમ ! કેહ પુરુષ  
સૂક્ષ્મ વાસના પૂજાને પ્રત્યક્ષિત અગ્નિમાં નાખે તો “ સે પૂર્ણં ગોયમા ! સે  
સુપ્તકે તળહત્થપ્ જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે લિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ ” હે  
ગૌતમ ! શુ’ તે સૂક્ષ્મ વાસનો પૂજો ભેતભેતામાં તે પ્રત્યક્ષિત આગમાં બળી  
જતો નથી ? “ હંતા મસમસાવિજ્જહ ” હા, પ્રભો ! તે જરૂર બળી જાય છે.  
“ એવામેવ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રભાણે “ સમણાણં નિર્ગંધાણં ”  
શ્રમણ નિર્ગંધોના “ અહાવાયરાઈં કમ્માઈં ” અસાર કર્મ “ જાવ પજ્જવસાણા  
ભવંતિ ” શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત અને વિપરિણામિત થઈને જલદી નષ્ટ થઈ જાય  
છે. લલ્લે તેઓ થોડી વેદના ભોગવતા હોય કે વધારે વેદના ભોગવતા હોય,  
પણ અંતે મહાનિર્જરાવાળા બનીને સમસ્ત કર્મોનો ક્ષય કરી નાખે છે.

ક્ષયવન્તો ભવન્તીતિ ભાવઃ । તદેવ દૃષ્ટાન્તદ્વારા દૃઢયતિ—‘ સે જહાનામણ કેઈ પુરિસે સુવકં તણહત્થયં જાયતેયંસિ પવિસવેજના ’ હે ગૌતમ ! તત્-અથ યથા નામ કોઽપિ પુરુષઃ શુષ્કં તૃણદસ્તકં ઘાસપૂત્રકં જાતતંત્રસિ અગ્ની પશિપેન્, ‘ સે

યથાર્થરૂપ સે જ્ઞાત હોને લગ જાતા હૈ કિ યહ જો કૃત્ત હો રહ્યા હૈ વહ એસો હો હોના ધા સો હો રહ્યા હૈ-મેરે તૃણવિષાદ કરને સે યહ કમતી ઘટતી નહીં હો સકતા હૈ-એસા કરને સે તો ઉલ્ટા કર્મ કા હો આગામી બંધ હોગા અતઃ મધ્યસ્થ ભાવ રાખકર વે ઉસ આવૃત્તિ થોડી વાહે ઘટતુ મો વેદના કો સમતાભાવ સે ભોગતે રહતે હું । ડનકી આત્મા મેં યહ દૃઢશ્રદ્ધા જમી રહતી હૈ કિ (અનહોની કોઈ ઘાત હોતી નહીં હૈ ઓર જો હોતી હૈ વહ ( હોને લાયક ) હસલિયે હોતી હૈ-અતઃ એસી સ્થિતિ મેં અધીર બનના યહ કયમપિ ઉચિત નહીં હૈ હસ તરહ કે દૃઢ સાહસ કે સાથ રાગદ્વેષ રહિત સમતાભાવ ધારણ કરને સે આત્મા મેં નવીન કર્મોં કા બંધ હોતા નહીં હૈ ઓર જો સંચિત કર્મ હોતે હું, ડનકી નિર્જરા હોતે રહને સે અન્ત મેં વે સર્વ કર્મોં સે વિપ્રમુક્ત હોતે હું । હસી ઘાત કો સૂત્ર-કાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુષ્ટ કરને કે નિમિત્ત ગૌતમ સે (સે જહા નામણ કેઈ

( કમેનિા સર્વથા અન્ત કરનારા ) હોય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સમ્ય-જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ ગયા પછી તેમને પદાર્થનું યથાર્થ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકતું હોય છે, તે કારણે અદ્ય અથવા મહાવેદનાનું વેદન કરવા છતાં પણ તેઓ એ પરિસ્થિતિમાં રાગદ્વેષ રૂપ કલુષિત પરિણામવાળા બનતા નથી, કારણ કે તેમને તે યથાર્થ રૂપે સમજવા લાગે છે કે જે બનવાનું હતું એજ બની રહ્યું છે. મારા દ્વારા હવે અથવા શોક કરવાથી તેમાં કંઈ પણ ફરક પડી શકે તેમ નથી. એમ કરવાથી ઉલ્ટા કર્મનો વધુ બંધ બંધાશે. તે કારણે તેઓ તેમના પર આવી પડેલ દુઃખને અથવા થોડી કે વધારે વેદનાને સમતાલાવે સહન કર્યા કરે છે. એમના આત્મામાં એવી પાકી શ્રદ્ધા બંધાયેલી રહે છે કે “ ન બનવા લાયક કોઈ વાત બનતી નથી અને જે કંઈ બને છે તે બનવાને લાયક હોવાથી જ બન્યા કરે છે. ” તેા એવી પરિસ્થિતિમાં અકળાઈ જવું અથવા સમતાવૃત્તિનો ત્યાગ કરવો તે બિલકુલ ઉચિત નથી. આ પ્રકારનો રાગદ્વેષ રહિતનો સમતાલાવ રાખવાથી આત્મામાં નવીન કમેનિા બંધ થતો નથી અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે અને અન્તે એવો જીવ સમસ્ત કમેનિા ક્ષય કરીને મોક્ષ પામી શકે છે.

પૂર્ણં ગોયમા ! સે સુવકે તળહત્થપ્પ જાયતેયંસિ પવિસ્સત્તે સમાણે સ્વિપ્પામેવ મસ-  
મસા વિજ્જહ ? ' હે ગૌતમ ! તત્ત્વ નૂનં નિશ્ચયેન સ શુષ્કઃ તળહસ્તકઃ વાસપૂલકઃ  
જાતતેજસિ અગ્નો પ્રક્ષિપ્તઃ સન્ સિપ્પમેવ સ્પટિત્યેવ મસમસાપ્યતે ? દહ્યતે મસ્મી  
ભવતિ સલ્લુ ? । ગૌતમઃ સ્વીકરોતિ—' હંતા, મસમસાવિજ્જહ ' હે ભદન્ત ! હન્ત, સત્યમ્  
મસમસાપ્યતે, સઘ એવ દગ્ધો ભવતિ । તમેવ ભગવાન્ દાર્પાન્તિકે યોજ-  
યતિ — ' એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંથાણં : અહાવાયરાહં કમ્માહં, જાવ-  
પજ્જવસાણા ભવંતિ ' હે ગૌતમ ! એવામેવ અગ્નિપ્રક્ષિપ્તશુષ્કતળપૂલકવદેવ શ્રમ-  
ણાનાં નિર્ગંથાનાં યથાવાદરાણિ યાવત્-શિથિલીકૃતાનિ નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ,  
વિપરિણામિતાનિ સિપ્પમેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, યાવત્ તાવત્પરિમિતામપિ વેદનાં  
વેદયમાના નિર્ગંથાઃ શ્રમણાઃ મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાના ભવન્તીત્યાશયઃ ।

પુરિસે સુવકં તળહત્થયં જાયતેયંસિ પવિસ્સવેજ્જા ) એસા કહ રહે હું કિ-  
હે ગૌતમ ! જૈસે કોઈ એક પુરુષ શુષ્ક વાસ કે પૂલે કો ધધકતી હુહ  
અગ્નિ મેં ડાલતા હૈ-તો ( સે પૂર્ણં ગોયમા ! સે સુવકે તળહત્થપ્પ જાયતે-  
યંસિ પવિસ્સત્તે સમાણે સ્વિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ ) હે ગૌતમ ! કયા વહ  
શુષ્ક વાસ કા પૂલા દેખતે ૨ ઉસ ધધકતી હુહ જ્વાલા મેં જલ નહીં  
જાતા હૈ કયા ? ( હંતા મસમસાવિજ્જહ ) હાં, ભદન્ત ! જલ જાતા હૈ તો  
( એવામેવ ગોયમા ) હસી તરહ સે હે ગૌતમ ! ( સમણાણં નિર્ગંથાણં )  
શ્રમણ નિર્ગંથોં કે ( અહાવાયરાહં કમ્માહં ) યથાવાદર-અસાર કર્મ  
( જાવ પજ્જવસાણા ભવંતિ ) યાવત્ શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત, એવં વિપરિ-  
ણામિત હોકર શીઘ્ર હી વિધ્વસ્ત હો જાતે હું વે ચાહે થોડી યાં વહુત  
કૈસે હી વેદના કર્યો ન ભોર્ગે અન્ત મેં મહાનિર્જરાવાલે વનકર વે સમસ્ત  
કર્મોં કો નષ્ટ કર દેતે હું ।

હવે સૂત્રકાર એજ વાતની દૃષ્ટાંતો દ્વારા પુષ્ટિ કરે છે—“ સે જહા નામપ્પ  
કેહ પુરિસે સુવકં તળહત્થયં જાયતેયંસિ પવિસ્સવેજ્જા ” હે ગૌતમ ! કેાઇ પુરુષ  
સૂકા ધાસના પૂણાને પ્રત્વલિત અગ્નિમાં નાખે તો “ સે પૂર્ણં ગોયમા ! સે  
સુવકે તળહત્થપ્પ જાયતેયંસિ પવિસ્સત્તે સમાણે સ્વિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ ” હે  
ગૌતમ ! શું તે સૂકા ધાસનો પૂણો જોતજોતામાં તે પ્રત્વલિત આગમાં બળી  
જતો નથી ? “ હંતા મસમસાવિજ્જહ ” હા, પ્રભો ! તે જરૂર બળી જાય છે.  
“ એવામેવ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રભાણે “ સમણાણં નિર્ગંથાણં ”  
શ્રમણ નિર્ગંથોના “ અહાવાયરાહં કમ્માહં ” અસાર કર્મ “ જાવ પજ્જવસાણા  
ભવંતિ ” શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત અને વિપરિણામિત થઇને જલદી નષ્ટ થઇ જાય  
છે. ભલે તેઓ થોડી વેદના ભોગવતા હોય કે વધારે વેદના ભોગવતા હોય,  
પણ અંતે મહાનિર્જરાવાળા બનીને સમસ્ત કર્મોનો ક્ષય કરી નાખે છે.



તમેનાપરદૃષ્ટાન્તેન દૃઢતરં કરોતિ—‘ સે જહા નામણ કેહ પુરિસે તત્તંસિ અય કવેલ્લુપંસિ ઉદગવિંદું, જાવ-દંતા, વિદંસં આગચ્છદ ’ હે ગૌતમ ! તત્તંસિ નામ કોઽપિ પુરુષ તપ્તે અય કવેલ્લુકે-લોહકટાદે ઉદકવિન્દું યાવત્-પશિંગત્, તત્તં નૂનં સ ઉદકવિન્દુઃ તપ્તે લોહકટાદે પ્રશિષ્તઃ સન્ શિપમેવ વિધ્વંસમાગચ્છતિ? હન્ત, ભદન્ત ! શિપમેવ વિધ્વંસમાગચ્છતિ નાશં પ્રાપ્નોતિ । મગધાન્ તં દાર્ઢ્ય-ન્ટિકે યોજયતિ—‘ એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિગ્ગંથાણં, જાવ-મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ’ હે ગૌતમ ! એવમેવ તસલોહકટાદપ્રશિષ્તોદકવિન્દુવદેવ શ્રમણાનાં નિર્ગ્રં-ન્યાના યાવત્-યથાવાદરાણિ કર્મણિ શિથિલીકૃતાનિ નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ, વિપરિણામિતાનિ શિપમેવ વિધ્વંસમાગચ્છન્તિ, યાવતિકાં તાવતિકામપિ ચ વેદનાં

હસી વાત કો દૂસરે દૃષ્ટાન્ત સે દૃઢતર કરતે હુણ વે ગૌતમ સે કહતે હૈં—( સે જહા નામણ કેહ પુરિસે ) ગૌતમ ! જૈસે કોઈ એક પુરુષ ( તત્તંસિ અયકવલ્લુપંસિ ) અત્યન્ત ગરમ હુણ લોહે કે તવે પર ( ઉદગ વિન્દુ ) જલ કી વિન્દુ કો ડાલે-તો કયા ગૌતમ ! ઉસ લોહે કે અત્યન્ત ગરમ હુણ તથો પર ડાલા ગયા વહ જલ કા વિન્દુ વહાં નષ્ટ નહીં હોગા કયા ? હસકે ઉત્તર મેં ગૌતમ સ્વામી પ્રભુ સે કહતે હૈં—વયોં નહીં-ભદન્ત ! વહ વહાં અવશ્ય હી શીઘ્ર નષ્ટ હો જાયગા—( એવામેવ ગોયમા ) તો હે ગૌતમ ! હસી તરહ સે ( સમણાણં નિગ્ગંથાણં ) શ્રમણ નિર્ગ્રંથોં કે ( જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ) શ્રમણ, નિર્ગ્રંથોં કે યથાવાદર કર્મ શિથિ-લીકૃત, નિષ્ઠિત, એવં વિપરિણામિત હોકર શીઘ્ર હી આમૂલચલ(વિલ્કુલ) નષ્ટ હો જાતે હૈં । વે ચાહૈં થોડી યા વહુત-કૈસી હી વેદના કયોં ન ભોગૈં અન્ત મેં વે મહાનિર્જરા શાલી હોકર વે સમસ્ત કર્મોં કે વિધ્વંસ કર્તા

એજ વાતને બીજા દૃષ્ટાન્ત દ્વારા વધારે પુષ્ટિ આપવા માટે મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે—“ સે જહા નામણ કેહ પુરિસે ” હે ગૌતમ ! કેાઈ એક પુરુષ “ તત્તંસિ અયકવલ્લુપંસિ ” અતિશય તપાવેલા લોહના તાવડા ઉપર “ ઉદગ વિન્દુ ” પાણીનું ટીપું નાખે, તો હે ગૌતમ ! શું તે પાણીનું ટીપું નાશ નહીં પામે ? તેનો જવાબ આપતા ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને કહે છે “ હે ભદન્ત ! તે ટીપું તુરત જ અવશ્ય નાશ પામશે.

“ એવામેવ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે “ સમણાણં નિગ્ગંથાણં ” શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના “ જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ” સ્થૂણ પુદ્ગલો અસાર કર્મો શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત અને વિપરિણામિત થઇને તુરત જ સર્વથા નષ્ટ થઇ જાય છે. તેઓ બહે થોડી વેદના ભોગવે કે વધારે વે ભોગવે, પણ તેઓ અન્તે મહાનિર્જરાવાળા બનીને સમસ્ત કર્મોના

વેદ્યમાનાસ્તે નિર્ગ્રન્થાઃ શ્રમણાઃ મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાનાથ ભવન્તિ । ભગ-  
વાન ઉપસંહરન્નાદ—‘ સે તેણદ્દેણં જે મહાવેયણે સે’ મહાનિજ્જરે જાવ-પસત્થ  
નિજ્જરાણ ’ હે ગૌતમ ! તત્ તેનાર્થેન એવમુચ્યતે—યે મહાવેદનાસ્તે મહાનિર્જરા  
ભવન્તિ । યાવત્-યે મહાનિર્જરાસ્તે મહાવેદનાઃ ભવન્તિ, મહાવેદનસ્ય અલ્પવેદન-  
સ્ય ચ મધ્યે સ શ્રેયાન્ ભવતિ, યઃ પ્રશસ્તનિર્જરાભવતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જીવકરણવક્તવ્યતા ।

પૂર્વે જીવાનાં વેદના પ્રતિપાદિતા, સા ચ વેદના કરણતો ભવતીતિ કરણ  
પદાર્થ નિરૂપયિતુમાદ—‘ કઙ્કિવિહેણં ભંતે ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—કઙ્કિવિહે ણં ભંતે ! કરણે પપ્પણત્તે ? ગોયમા ! ચડ઼વિહે  
કરણે પપ્પણત્તે, તં જહા—મણકરણે, વડ્ઢકરણે, કાયકરણે, કમ્મ-  
કરણે । ણેરડ્ઢયાણં ભંતે ! કઙ્કિવિહે કરણે પપ્પણત્તે ? ગોયમા !  
ચડ઼વિહે પપ્પણત્તે, તં જહા — મણકરણે, વડ્ઢકરણે, કાયકરણે,  
કમ્મકરણે । પંચિંદિયાણં સત્ત્વેસિં ચડ઼વિહે કરણે પપ્પણત્તે ।  
એગિંદિયાણં દુવિહે—કાયકરણે ય, કમ્મકરણે ય । વિગલિંદિયાણં  
તિવિહે વડ્ઢકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે ય । નેરડ્ઢયાણં ભંતે ! કિં  
કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ ?

હી ઘનતે હેં । અય ભગવાન્ હસ વિષય કા ઉપસંહાર કરતે હુએ કહતે  
હેં ( સે તેણદ્દેણં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જાવ પસત્થનિજ્જરાણ ) હે  
ગૌતમ ! હસી કારણ સે મેંને એસા કહા હે કિ જો મહાવેદનાવાલે હોતે  
હેં વે મહાનિર્જરાવાલે હોતે હેં—યાવત્-જો મહાનિર્જરાવાલે હોતે હેં—વે  
મહાવેદનાવાલે હોતે હેં । મહાવેદનાવાલે એવં અલ્પવેદનાવાલે કે વીચ  
મેં વહી ઉત્તમ હોતા હેં જો પ્રશસ્ત નિર્જરાવાલા હોતા હે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ળને છે. હવે મહાવીર પ્રભુ આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા ગૌતમ સ્વામીને  
કહે છે—( સે તેણદ્દેણં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જાવ પસત્થનિજ્જરાણ ) હે  
ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે જે મહાવેદનાવાળા હોય છે, તે મહા-  
નિર્જરાવાળા હોય છે અને મહાનિર્જરાવાળા હોય છે, તે મહાવેદનાવાળા હોય  
છે. પણ મહાવેદનાવાળા અને મહાનિર્જરાવાળાની અપેક્ષાએ પ્રશસ્ત નિર્જરા-  
વાળો એવ ઉત્તમ હોય છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥



ગોયમા ! નેરહયા ણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ । સે કેણટ્ટેણં ? । ગોયમા ! નેરહયાણં ચત્તવિહે કરણે પપ્પત્તે, તં જહા-મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે, ઇચ્છેણં ચત્તવિહેણં અસુભેણં કરણેણં નેરહયા કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ, સે તેણટ્ટેણં ० । અસુરકુમારા ણં કિં કરણઓ અકરણઓ ? ગોયમા ! કરણઓ, ણો અકરણઓ । સે કેણટ્ટેણં ? । ગોયમા ! અસુરકુમારાણં ચત્તવિહે કરણે પપ્પત્તે, તં જહા-મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે, ઇચ્છેણં સુભેણં કરણેણં અસુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ । एवं जाव-थणियकुमाराणं । पुढवीकाइयाणं एवामेव पुच्छा ? णवरं-इच्छेणं सुभाऽसुभेणं करणेणं पुढविक्काइया करणओ वेमायाए वेयणं वेयंति, णो अकरणओ । ओरालियसरीरा सव्वे सुभाऽसुभेणं वेमायाए, देवा सुभेणं सायं ॥ सू० २ ॥

છાયા-કતિવિધં સ્વલુ ભદન્ત ! કરણં પ્રજ્ઞપ્પમ્ ? ગૌતમ ! ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્પમ્, તથથા-નનસ્કરણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્ । નૈરયિકાણાં

जीवकरण वक्तव्यता-

‘कइविहेणं भंते !’ इत्यादि-

સૂત્રાર્થ—(કહવિહેણં ભંતે ! કરણે પપ્પત્તે) હે ભદન્ત ! કરણ કિતને પ્રકારે કહા ગયા છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ચત્તવિહે

जीवकरण वक्तव्यता-

“कइ विहेणं भंते ” इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—(કહ વિહેણં ભંતે ! કરણે પપ્પત્તે ?) હે ભદન્ત ! કરણ કેટલાં પ્રકારનાં કહ્યાં છે ? (ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (ચત્તવિહે કરણે પપ્પત્તે) કરણ ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે. (તં જહા) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—(મણકરણે

મદન્ત ! કતિવિધં કરણં પ્રશ્નમ્ ? ગૌતમ ! ચતુર્વિધં પ્રશ્નમ્, તથા-મનસ્કરણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્ । પચ્ચેન્દ્રિયાણાં સર્વેણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રશ્નમ્ । એકેન્દ્રિયાણામ્ દ્વિવિધમ્-કાયકરણં ચ, કર્મકરણં ચ વિકલેન્દ્રિયાણાં ત્રિવિધમ્-વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્ । નૈરયિકાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કિં કરણતોઽસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, અકરણતોઽસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ! ગૌતમ !

કરણે પળ્લત્તે ) કરણ ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા ) વે ચાર પ્રકાર ઘે હૈ—( મળકરણે, વહકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર ચૌથા કર્મકરણ । (નેરહયાણં મંતે ! કહ્વિહે કરણે પળ્લત્તે ) હે મદન્ત ! નારકોં કે કિતને કરણ કહે ગયે હૈ ? (ગોયમા-ચત્તવિહે પળ્લત્તે ) હે ગૌતમ ! ચાર કરણ કહે ગયે હૈ । (તંજહા ) જૈસે—( મળકરણે, વહકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર કર્મકરણ (પંચિંદિયાણં સવ્વેસિં ચત્તવિહે કરણે પળ્લત્તે ) સમસ્ત પચ્ચેન્દ્રિય જીવોં કે ચાર કરણ કહે ગયે હૈ (એગિંદિયાણં દુવિહે કાયકરણે કર્મકરણે ય ) એકેન્દ્રિય જીવોં કે દો કરણ કહે ગયે હૈ—એક કાયકરણ ઓર દૂસરા કર્મકરણ (વિગલેંદિયાણં તિવિહે-વહકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) વિકલેન્દ્રિયોં કે ત્રીન કરણ કહે ગયે હૈ—એક-વચનકરણ દૂસરા કાયકરણ ઓર ત્રીસરા કર્મકરણ । (નેરહયાણં મંતે ! કિં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ ) હે મદન્ત ! નારક જીવ કયા કરણ સે અશાતાવેદના કો વેદતે

વહકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ. (નેરહયાણં મંતે ! કહ્વિહે કરણે પળ્લત્તે ? ) હે ભદન્ત ! નારક જીવોનાં કેટલા કરણ કહ્યાં છે ? (ગોયમા ! ચત્તવિહે પળ્લત્તે ) હે ગૌતમ ! નારકોનાં ચાર કરણ કહ્યાં છે. (તંજહા ) જેવાં કે (મળકરણે, વહકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ. (પંચિંદિયાણં સવ્વેસિં ચત્તવિહે કરણે પળ્લત્તે ) સમસ્ત પચ્ચેન્દ્રિય જીવોનાં ચાર કરણ કહ્યાં છે (એગિંદિયાણં દુવિહે કાયકરણે કર્મકરણે ય ) એકેન્દ્રિય જીવોનાં બે કરણ કહ્યાં છે—(૧) કાયકરણ અને (૨) કર્મકરણ. (વિગલેંદિયાણં તિવિહે-વહકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) વિકલેન્દ્રિયોને ત્રણ કરણ કહ્યાં છે—(૧) વચનકરણ, (૨) કાયકરણ અને કર્મકરણ.

(નેરહયાણં મંતે ! કિં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ ? ) હે ભદન્ત ! નારક જીવો શું કરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન

નૈરયિકાઃ કરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ।  
તત્ કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! નૈરયિકાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞતમ્, તદધ્યા-ગનસ્ક-  
રણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, ક્ષયેતેન ચતુર્વિધેન અશુભેન કરણેન નૈરયિકાઃ  
કરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ, તત્ તેનાર્થેન૦ । અસુરકુમારાઃ  
કિં કરણતઃ, અકરણતઃ ? ગૌતમ ! કરણતઃ, નો અકરણતઃ, તત્-કેનાર્થેન ? ।

હેં ? યા અકરણ સે અશાતાવેદના કો વેદતે હેં ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ !  
( નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ અસાયં વેયણં  
વેયંતિ ) નારક જીવ કરણ સે અશાતાવેદના કા વેદન કરતે હેં, વે  
અકરણ સે અશાતાવેદના કા વેદન નહીં કરતે હેં । ( સે કેણદ્દેણં ) હે  
ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હેં ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ !  
( નેરહ્યાણં ચત્તવિદ્દે કરણે પણ્ણત્તે ) નારક જીવોં કે ચાર કરણ કહે  
ગયે હેં ( તં જહા ) જૈસે—( મળકરણે, વહકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે )  
મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર કર્મકરણ ( હચ્ચેણં ચત્તવિદ્દેણં  
અસુભેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ  
સે તેણદ્દેણં૦ ) इन चार प्रकार के अशुभ करणों से नारक जीव अशा-  
तावेदना का वेदन करते हैं अतः वे करण से अशातावेदना का वेदन  
करते हैं—अकरण से नहीं इस कारण मैंने ऐसा कहा है । ( असुरकुमा-  
राणं किं करणओ, अकरणओ ) हे भदन्त ! असुरकुमार क्या करण से  
शातावेदना करते हैं, या अकरण से शातावेदना का वेदन करते हैं ?

કરે છે, કે અકરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ !  
( નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ )  
નારક જીવો કરણથી અશાતા વેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ અકરણથી અશાતા  
વેદનાનું વેદન કરતા નથી. ( સે કેણદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! એવું આપ શા કારણે  
કહો છો ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! નેરહ્યાણં ચત્તવિદ્દે કરણે પણ્ણત્તે ) નારક  
જીવોનાં ચાર કરણ કહ્યા છે, ( તં જહા ) જેવાં કે ( મળકરણે વહકરણે, કાય-  
કરણે, કમ્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

( હચ્ચેણં ચત્તવિદ્દેણં અસુભેણં કરણેયં નેરહ્યા કરણઓ અસાયં વેયણં  
વેયંતિ, ણો અકરણઓ—સે તેણદ્દેણં ) આ ચાર પ્રકારનાં અશુભ કરણોથી નારક  
જીવો અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે. તેથી તેઓ કરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન  
કરે છે, અકરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન કરતા નથી. હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં  
એવું કહ્યું છે. ( અસુરકુમારાણં કિં કરણઓ, અકરણઓ ? ) હે ભદન્ત ! અસુરકુમારો  
શું કરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, કે અકરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે



ગૌતમ ! અસુરકુમારાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રાપ્તમ્, તથા-મનસ્કરણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્, इत्येतेन शुभेन करणेन असुरकुमाराः करणतः सातां वेदनां वेदयन्ति, नो अकरणतः । एवं यावत्-स्तनितकुमाराणाम् । पृथिवीकायिकानाम्-एवमेव पृच्छा ? नवरम्-इत्येतेन शुभाशुभेन करणेन पृथिवीका-

(ગોયમા) હે ગૌતમ ! ( કરણઓ નો અકરણઓ ) અસુરકુમાર કરણ સે શાતાવેદનાકા વેદન કરતે હૈં-અકરણ સે વે શાતાવેદના કા વેદન નહીં કરતે હૈં । ( સે કેણદ્વેણં ) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? ( ગોયમા ! અસુરકુમારાણં ચતુર્વિધે કરણે પળગત્તે ) હે ગૌતમ અસુરકુમારોં કે ચાર પ્રકાર કે કરણ કહે ગયે હૈં ( તં જહા ) જો હસ પ્રકાર સે હૈં ( મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર કર્મકરણ ( इच्छेएणं सुभेणं करणेणं असुरकुमाराणं करणओ सायं वेयणं वेयंति ) इन शुभ करणों से असुरकुमार शातावेदनाका वेदन करते हैं इस कारण वे करणसे शातावेदन का वेदन करते हैं ( नो अकरणओ ) अकरण से शातावेदना का वे वेदन नहीं करते हैं ( एवं जाव धणियकुमाराणं ) इसी तरह से यावत् स्तनितकुमारों के भी जानना चाहिये । ( पुढवीकाइयाणं एवामेव पृच्छा ) हे भदन्त ! पृथिवीकायिक जीव करण से शाता और अशातारूप वेदना का अनुभव करते हैं ? या अकरण से शाता और अशाता वेदना का

છે ? ( ગોયમા ! કરણઓ, નો કરણઓ ) હે ગૌતમ ! કરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ અકરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરતા નથી. ( સેકેણદ્વેણં ) હે ભદન્ત ! આપ શા કરણે એવું કહ્યું છે ? ( ગોયમા ! અસુરકુમારાણં ચતુર્વિધે કરણે પળગત્તે ) હે ગૌતમ ! અસુરકુમારોનાં ચાર પ્રકારનાં કરણ કહ્યાં છે, ( તંજહા ) જેવાં કે ( મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે ) મન કરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ. ( इच्छेएणं सुभेणं करणेणं असुरकुमाराणं करणओ सायं वेयणं वेयंति ) તે શુભ કરણોથી અસુરકુમારો શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે. તે કરણે તેઓ કરણોથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે. ( नो अकरणओ ) अकरणથી शातावेदनाનું वेदन કરता नहीं. ( एवं जाव धणियकुमाराणं ) स्तनितकुमार पर्यन्तना देवाना त्रिपथमां पण्य एभञ्ज सभञ्जुं. ( पुढवीकाइयाणं एवामेव पृच्छा ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાય જીવો કરણથી શાતા વેદના અને અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, કે અકરણથી શાતાવેદના અને અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે ?

યિકાઃ કરણતો વિમાત્રયા વેદનાં વેદયન્તિ, નો મહાજ્ઞતઃ । ઔદારિકઃ  
સર્વે શુભાશુભેન વિમાત્રયા । દેવાઃ શુભેન ॥

ટીકા—‘કઠ્ઠિવિદે જં મંતે ! કરણે પળ્લતે ? ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—દે મ-  
કતિવિધં ક્વિયત્પ્રકારમ્ સ્વલ્લુ કરણં સુલદુઃસ્વાનુમનનિમિત્તભૂતં પ્રત્યક્તમ્ ? મગ્ધ  
અનુભવ કરતે હું ? (જવરં-ઇચ્છેણં સુમાઽસુમેણં કરણેણં પુદ્ગલિકા  
કરણઔ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ, જો અકરણઔ) હે ગૌતમ ! પૃથિવી  
યિક જીવ શુભાશુભ કિતને ભેદ કદાચિત્ શાતારૂપ ઓર કદા  
અશાતારૂપ વેદના કા અનુભવ કરતે હું । અકરણ સે-કરણ કે વિ  
નહીં । યહી યહાં પર વિશેષતા હૈ । (ઓરાલિય સરીરાસન્વે સુમાસુમે  
કરણેણં વેમાયાણ-દેવા સુમેણં સાયં ) જિતને મી ઔદારિક શરીરવા  
જીવ હૈ વે સવ હી શુભ ઓર અશુભરૂપ કરણ સે હી દોનો પ્રકાર ઢ  
વેદના કા અનુભવ કરતે હું દેવ શુભકરણ સે કેવલ શાતાવેદના વ  
અનુભવ કરતે હૈ ।

ટીકાર્થ—પહિલે જીવોં કી વેદના કા કથન કિયા ગયા હૈ । વદ  
વેદના કરણ દ્વારા હોતી હૈ ઇસ કારણ સૂત્રકાર ઇસ સૂત્ર સે ડસી કા  
નિરૂપણ કર રહે હૈ—ઇસમેં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે ઇસા પૂછા હૈ કિ—“કઠ્ઠિવિ-  
દેણં મંતે ! કરણે પળ્લતે ) હે મદન્ત ! કરણ કિતને પ્રકાર કા હોતા  
હૈ ? સુખ ઓર દુઃખ કે અનુભવ કરને મેં જો નિમિત્ત ભૂત હોતા હૈ  
ડસકા નામ કરણ હૈ સો ઇસ કરણ કે કિતને ભેદ હૈ ? ઇસ

( જવરં-ઇચ્છેણં સુમાઽસુમેણં કરણેણં પુદ્ગલિકા-ઇયા કરણઔ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ,  
જો અકરણઔ ) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાય જીવો શુભાશુભ કરણથી જ ક્યારેક  
શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે અને ક્યારેક અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, અક-  
રણથી તેઓ તેનું વેદન કરતા નથી, એટલી જ અહીં વિશેષતા છે. ( ઓરાલિય  
સરીરા સન્વે સુમાસુમેણં કરણેણં વેમાયાણ-દેવા સુમેણં સાયં ) સમસ્ત ઔદારિક  
શરીરવાળા જીવો શુભ અને અશુભરૂપ કરણથી જ અને પ્રકારની વેદનાનું  
વેદન કરે છે. દેવો શુભકરણથી ફક્ત શાતાવેદનાનો જ અનુભવ કરે છે.

ટીકાર્થ—આગલા પ્રકરણમાં જીવોની વેદનાનું કથન કરવામાં આવ્યું છે.  
તે વેદના કરણ દ્વારા થતી હોય છે. તે કારણે સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં કરણનું  
નિરૂપણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે “કઠ્ઠિવિદેણં મંતે !  
કરણે પળ્લતે ? ” હે મદન્ત ! કરણ કેટલાં પ્રકારનાં હતાં છે ? ( સુખ અને  
દુઃખનો અનુભવ કરવામાં જે નિમિત્તરૂપ હોય છે, તેને કરણ કહે છે. )



—‘ગોયમા ! ચતુર્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે’ હે ગૌતમ ! ચતુર્વિધં—ચતુઃપ્રકારં કરણં પ્રજ્ઞ-  
પ્તમ્, ‘તં જહા—મળકરણે, વચ્ચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે’ તથા—મનઃકરણમ્,  
વચ્ચકરણમ્, કાયકરણમ્, કમ્મકરણં ચ—તત્ર મનોવાકાયવિપયકં કરણં તત્તત્કર-  
ણમ્, કમ્મકરણં ચ કમ્મવિપયકં કરણં, વન્યન—સંક્રમણાદિનિમિત્તભૂતં જીવવીર્યં  
કમ્મકરણમ્ । ગૌતમઃપૂચ્છતિ—‘નેરહયાણં ભંતે ! કહ્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે ?’ હે ભદન્ત !  
નેરયિકાણાં કતિવિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા ! ચતુર્વિદ્ધે પળ્લત્તે’ હે  
ગૌતમ ! નેરયિકાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તં જહા—મળકરણે, વચ્ચકરણે, કાય-  
કરણે, કમ્મકરણે’ તથા—મનઃકરણમ્, વચ્ચકરણમ્, કાયકરણમ્, કમ્મકરણમ્,

ગૌતમ કે પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્નુ ઉનસે વાહતે હૈં કિ—( ગોયમા )  
હે ગૌતમ ! ( ચતુર્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે ) કરણ ચાર પ્રકાર કા હોતા હૈ ( તં  
જહા ) જૈસે—( મળકરણે ) મનકરણ, ( વચ્ચકરણે ) વચ્ચનકરણ, ( કાયકરણે )  
કાયકરણ, ( કમ્મકરણે ) કમ્મકરણ, કર્મોં કે વંધન મેં. ઉનકે સંક્રમણ  
આદિમેં જો નિમિત્તભૂત જીવ કા વીર્યવિશેષ હૈ વહ કમ્મકરણ હૈ ।

અવ ગૌતમ પ્રશ્નુ સે પુનઃ પૂછતે હૈં કિ—( નેરહયાણં ભંતે ! કહ્વિદ્ધે  
કરણે પળ્લત્તે ) હે ભદન્ત ! નારક જીવોં કે કિતને કરણ હોતે હૈં—અર્થત્તિ  
પૂર્વોક્ત ફન ચાર કરણોં મેં સે ચાર હી કરણ હોતે હૈં યા કુછ કમ્મ કરણ  
હોતે હૈં ? તો ફસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ઉનસે વાહતે હૈં કિ ( ગોયમા )  
હે ગૌતમ ! નારક જીવોં કે ( ચતુર્વિદ્ધે પળ્લત્તે ) ચારોં પ્રકાર  
કે હી કરણ હોતે હૈં । ( તં જહા ) જૈસે ( મળકરણે, વચ્ચકરણે,  
કાયકરણે, કમ્મકરણે ) મનકરણ, વચ્ચનકરણ, કાયકરણ, ઓર કમ્મકરણ

મહાવીર પ્રશ્નુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—“ ગોયમા ! ચતુર્વિદ્ધે કરણે  
પળ્લત્તે ” હે ગૌતમ ! કરણ ચાર પ્રકારનાં હોય છે, “ તં જહા ” જેવાં કે—  
“ મળકરણે ” મનકરણ, “ વચ્ચકરણે ” વચ્ચનકરણ, “ કાયકરણે ” કાયકરણ  
અને “ કમ્મકરણે ” કમ્મકરણ. કર્મોના બંધન અને તેમના સંક્રમણ આદિમાં  
નિમિત્તભૂત ( કારણરૂપ ) જે શ્રવણ વીર્ય વિશેષ છે તેને કમ્મકરણ કહે છે

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—( નેરહયાણં ભંતે ! કહ્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે ? )  
હે ભદન્ત ! નારક શ્રવણોનાં કેટલાં કરણ હોય છે ? એટલે કે પૂર્વોક્ત ચાર  
ચાર કરણ હોય છે, કે તેથી ઓછાં કરણો હોય છે ?

મહાવીર પ્રશ્નુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—“ ચતુર્વિદ્ધે પળ્લત્તે ” હે  
ગૌતમ ! નારકોનાં ચાર કરણ હોય છે, “ તં જહા ” જેવાં કે ( મળકરણે, વચ્ચ-  
કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે ) મનકરણ, વચ્ચનકરણ, કાયકરણ અને કમ્મકરણ.

યિકાઃ કરણતો વિમાત્રયા વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ । ઔદારિકશરીરાઃ સર્વે શુભાશુભેન વિમાત્રયા । દેવાઃ શુભેન ॥

ટીકા—‘કહ્વિદે જં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ? ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે મદન્ત ! કતિવિધં ક્રિયત્પ્રકારમ્ સ્વલ્લ કરણં સુલ્લદુઃસ્વાનુભવનિમિત્તભૂતં પ્રશ્નત્વમ્ ? મગવાનાર અનુભવ કરતે હેં ? (જવરં-ઇચ્છેણં સુમાઽસુમેણં કરણેણં પુદ્ધીકાદ્યા કરણઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ, જો અકરણઓ) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકા-યિક જીવ શુભાશુભ કિતને ભેદ કદાચિત્ શાતારૂપ ઓર કદાચિત્ અશાતારૂપ વેદના કા અનુભવ કરતે હેં । અકરણ સે-કરણ કે વિના નહીં । યહી યહાં પર વિશેષતા હે । (ઓરાલિય સરીરાસન્વે સુમાસુમેણં કરણેણં વેમાયાણ-દેવા સુમેણં સાયં ) જિતને ખી ઔદારિક શરીરવાળે જીવ હેં વે સવ હી શુભ ઓર અશુભરૂપ કરણ સે હી દોનો પ્રકાર કી વેદના કા અનુભવ કરતે હેં દેવ શુભકરણ સે કેવલ શાતાવેદના કા અનુભવ કરતે હે ।

ટીકાર્થ—પહિલે જીવોં કી વેદના કા કથન ક્રિયા ગયા હે । વહ વેદના કરણ દ્વારા હોતી હે । સ્વ કારણ સૂત્રકાર સ્વ સૂત્ર સે ડસી કા નિરૂપણ કર રહે હેં—સમ્મિં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા પૂછા હે કિ—“કહ્વિ-હેણં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ) હે મદન્ત ! કરણ કિતને પ્રકાર કા હોતા હે ? સુલ્લ ઓર દુઃલ્લ કે અનુભવ કરને મેં જો નિમિત્ત ભૂત હોતા હે । ડસકા નામ કરણ હે સો સ્વ કરણ કે કિતને ભેદ હેં ? સ્વ

( જવરં-ઇચ્છેણં સુમાઽસુમેણં કરણેણં પુદ્ધીકાદ્યા કરણઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ, જો અકરણઓ ) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાય જીવો શુભાશુભ કરણથી જ ક્યારેક શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે અને ક્યારેક અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, અકરણથી તેઓ તેનું વેદન કરતા નથી, એટલી જ અહીં વિશેષતા છે. ( ઓરાલિય સરીરા સન્વે સુમાસુમેણં કરણેણં વેમાયાણ-દેવા સુમેણં સાયં ) સમસ્ત ઔદારિક શરીરવાળા જીવો શુભ અને અશુભરૂપ કરણથી જ જન્મે પ્રકારની વેદનાનું વેદન કરે છે. દેવો શુભકરણથી ક્ષત્ત શાતાવેદનાનો જ અનુભવ કરે છે.

ટીકાર્થ—આગલા પ્રકરણમાં જીવોની વેદનાનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. તે વેદના કરણ દ્વારા થતી હોય છે. તે કરણે સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં કરણનું નિરૂપણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે “કહ્વિદેણં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ? ” હે મદન્ત ! કરણ કેટલાં પ્રકારનાં કહ્યાં છે ? ( સુખ અને દુઃખનો અનુભવ કરવામાં જે નિમિત્તરૂપ હોય છે, તેને કરણ કહે છે. )

અશુભાત્મિકાં વેદનાં વેદયન્તિ ? અનુભવન્તિ ? અથવા ‘ અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ ? ’ અકરણતઃ કરણં વિના અસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ? । મગવાનાહ—  
‘ ગોયમા ! નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, હે ગૌતમ ! નૈરયિકાઃ સ્વલુ  
કરણતો મનોવચનાદિદ્વારા અસાતામ્ દુઃસ્વરૂપાં વેદનાં વેદયન્તિ, ‘ ગો અકરણઓ  
અસાયં વેયણં વેયંતિ ’ નો અકરણતઃ કરણં વિના અસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ।  
ગૌતમ આહ—‘ સે કેણદ્દેણં ’ હે મહન્ત ! તત્ કેનાર્થેન નૈરયિકાઃ કરણતોડસાતાં  
વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ ? કિં તત્ત્વ કારણમિતિ પ્રશ્નાશયઃ ? મગવાનાહ—  
‘ ગોયમા ! નેરહ્યાણં ચત્ત્વિહે કરણે પ્પણ્ણત્તે ’ હે ગૌતમ ! નૈરયિકાણાં ચતુર્વિધં  
કરણં પ્રજ્ઞપ્પમ્, ‘ તં જહા—મણકરણે, વચ્ચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે ’ તથથા-

આશાતાવેદના કા અનુભવ કરતે રહતે હૈં સો વે મનવચન કાયાદિ દ્વારા  
ઉસ અશુભાત્મક અશાતા કા અનુભવ કરતે હૈં ? યા કરણ કે વિના હી  
અસાતાવેદના કા અનુભવ કરતે હૈં ? હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મૈં પ્રશ્નુ ઉનસે  
કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હૈં ગૌતમ ! ( નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયં વેયણં  
વેયંતિ ) નારક જીવ નરકોં મૈં જો અશુભાત્મક અસાતા કા વેદન કરતે  
હૈં—વે મનવચન કાય આદિ કરણ દ્વારા ઉત્તકા વેદન કરતે હૈં, કરણ-  
વિના ઉત્તકા વેદન નહીં કરતે હૈં । નારક જીવ નરકોં મૈં કરણદ્વારા હી  
અશાતાવેદના કા અનુભવ કરતે હૈં કરણ કે વિના નહીં ઈસા જો આપને  
કહા હૈં સો ( સે કેણદ્દેણં ) ઈસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? હસકે  
ઉત્તર મૈં પ્રશ્નુ ઉનસે કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( નેરહ્યાણં  
ચત્ત્વિહે કરણે પ્પણ્ણત્તે ) નારક જીવોં મૈં અભી મનકરણ, વચ્ચનકરણ,

વેદન કરે છે, તે શું મન, વચ્ચન, કાય અને કમ્મ કરશે. વડે અશુભાત્મક  
અશાતાનું વેદન કરે છે, કે અકરણથી ( કરણ વિના જ ) અશાતાવેદનાનું  
વેદન કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ( નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયંવેયણં  
વેયંતિ ) નારકો નરકોની અંદર જે અશુભાત્મક અશાતાનું વેદન કરે છે, તે  
મન, વચ્ચન, કાય આદિ કરશે. દ્વારા જ કરે છે, કરણ વિના તેઓ તેનું  
વેદન કરતા નથી.

પ્રશ્ન—“ સે કેણદ્દેણં ” હે મહન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો  
કે નારક એવો કરણ દ્વારા જ અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, કરણ વિના તેઓ  
તેનું વેદન કરતા નથી ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ( નેરહ્યાણં ચત્ત્વિહે કરણે પ્પણ્ણત્તે )  
મેં આગળ કહ્યું તે પ્રમાણે નારક એવોમાં મનકરણ, વચ્ચનકરણ, કાયકરણ



एवं 'पंचिन्द्रियाणं सञ्चेति चउच्चिहे करणे पण्णत्ते' पञ्चेन्द्रियाणां तिर्यग्योनिकादि-  
मनुष्यपर्यन्तानां सर्वेषां चतुर्विधं करणं प्रपुप्तम्, तत्र मनोवचःकायकर्मरूपं  
बोध्यम् 'एगिन्द्रियाणं दुविहे-कायकरणे य, कम्मकरणे य' एकेन्द्रियाणां द्विवि-  
धम् करणम् प्रपुप्तम्, तद्यथा-कायकरणं च, कर्मकरणं च, विगल्लिन्द्रियाणं त्रिविहे-  
वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे य 'विकल्लेन्द्रियाणां त्रिचतुरिन्द्रियाणां जीवानां  
त्रिविधं करणं प्रपुप्तम्, तद्यथा-वचःकरणम्, कायकरणम्, कर्मकरणं च । गौतमः  
पुनः पृच्छति—' नेरइया णं भंते ! किं करणओ असायं वेयणं वेयंति ?  
हे भदन्त ! नैरयिकाः खलु किम् करणतः-मनोवचनकायादिद्वारा असायाम्

-ये चारों ही करण नारक जीवों में पाये जाते हैं । ( एवं ) इसी तरह से  
( पंचिन्द्रियाणं सञ्चेति चउच्चिहे करणे पण्णत्ते ) जितने भी पंचेन्द्रियजीव  
-संज्ञी पञ्चेन्द्रिय प्राणी हैं-तिर्यग्योनि के संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों से  
लेकर मनुष्यपर्यन्त उन सबके ये मनवचन काय और कर्मरूप चारों  
प्रकार के ही करण होते हैं । ( एगिन्द्रियाणं दुविहे कायकरणे य कम्मक-  
रणे य ) एकेन्द्रिय जीवों के कायकरण और कर्मकरण ये दो ही करण  
होते हैं । ( विगल्लेन्द्रिया णं त्रिविहे वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे य )  
दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवों के वचनकरण, कायकरण,  
और कर्मकरण ये तीन प्रकार के करण होते हैं । अब गौतम प्रश्न से  
पुनः पूछते हैं कि-( नेरइयाणं भंते ! किं करणओ असायं वेयणं वेयंति,  
अकरणओ असायं वेयणं वेयंति ) हे भदन्त ! नारक जीव नरकों में जो

આ ચારે કારણો નારક જીવોમાં જોવામાં આવે છે. “ એવં ” એ જ પ્રમાણે  
( પંચિન્દ્રિયાણં સંચેતિ ચઉચ્ચિહે કરણે પણ્ણત્તે ) સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવોને  
સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને-મન, વચન, કાય અને કર્મરૂપ ચારે કરણો હોય  
છે. એટલે કે તિર્યગ્યોનિના સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોથી લઈને મનુષ્ય પર્યન્તના  
સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવો મન, વચન, કાય અને કર્મરૂપ ચારે કરણોવાળા  
હોય છે. ( એગિન્દ્રિયાણં દુવિહે કાયકરણે ય કમ્મકરણે ય ) એકેન્દ્રિય જીવોને  
એ જ કરણ હોય છે-(૧) કાયકરણ અને (૨) કર્મકરણ.

( વિગલ્લેન્દ્રિયાણં ત્રિવિહે વइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे ) विकल्लेन्द्रिय જીવોને  
( દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને ) ત્રણ કરણ હોય છે-(૧) વચન  
કરણ, (૨) કાયકરણ અને (૩) કર્મકરણ.

પ્રશ્ન—“ નેરइयाणं भंते ! किं करणओ असायंवेयणं वेयंति, अकरणओ  
असायंवेयणं वेयंति ? ” હે ભદન્ત ! નારક જીવો નરકોમાં જે અશાતાવેદનાનું

વેદનામ્ અનુભવન્તિ, નો અકરણતસ્તામનુભવન્તિ ? ગૌતમ આદ-‘સે કેણદ્દેણં ?’ હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્થેન અમુરકુમારાઃ કરણત્ત્વ એવ, નો અકરણતઃ સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ? । ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! અમુરકુમારાણં ચત્તવિંહે કરણે પ્પણ્ણત્તે ’ હે ગૌતમ ! અમુરકુમારાણામ્ ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્પમ્, ‘તં જહા-મણકરણે, વચ્ચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે’ તન્નથા-મનઃકરણમ્, વચ્ચકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણં ચ, ‘ ઇચ્છેણં સુભેણં કરણેણં અમુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ’ इत्येतेन उपर्युक्तेन मनोवचःकायादिना शुभेन करणेन अमुरकुमाराः खलु करणत एव सातां वेदनां वेदयन्ति, ‘ णो अकरणओ ’ नो अकरणतः सातां वेदनां ते वेदयन्ति, ‘ एवं जाव-थणियकुमाराणं ’ एवम्-अमुरकुमारवदेव यावत्-नागकुमार

उनसे कहते हैं ( गोयमा ) हे गौतम ! ( करणओ नो अकरणओ ) असुरकुमार करणद्वारा ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं अकरण-करण के बिना नहीं, अब गौतम स्वामी प्रभु से ऐसे कथन में कारण क्या है ? इस विषय को जानने की इच्छा से पूछते हैं ( से केणद्वेणं ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं ? इसके उत्तर में प्रभु कहते हैं कि ( गोयमा ) हे गौतम ! ( असुरकुमाराणं चतव्विहे करणे प्पण्णत्ते तं जहा मणकरणे, वच्यकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे-इच्चेणं सुभेणं करणेणं असुरकुमाराणं करणओ सायं वेयणं वेयंति ) असुरकुमारों के मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण ये चार होते हैं ऐसा अभी २ प्रकट किया गया है सो इन चार शुभ करणों से युक्त होने के कारण ये करण से ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं ( णो अकरणओ ) करण के सिवाय नहीं ऐसा मैंने कहा है ( एवं जाव

કુમારો કરણ દ્વારા જ શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ કરણ વિના તેનું વેદન કરતા નથી. તેનું કારણ બાણુવા માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે.

“ સે કેણદ્દેણં ” હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ” ( અસુરકુમારાણં ચત્તવિંહે કરણે પ્પણ્ણત્તે-તં જહા ” અસુરકુમારોને નીચે પ્રમાણે ચાર કરણો હોય છે-( મણકરણે, વચ્ચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

( ઇચ્છેણં સુભેણં કરણેણં અસુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ ) આ શુભ કરણોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેઓ કરણ દ્વારા જ સુખરૂપ શાતા-વેદનાનો અનુભવ કરે છે, “ ણો અકરણઓ ” કરણ વિના તેઓ તેનો અનુભવ કરતા નથી.



મનઃકરણમ્, વચઃકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણં ન 'ઈચ્છેણં ચત્ત્વિહેણં અસુમેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણમ્ અસાયં વેયણં વેયંતિ,' इत्येतेन उपर्युक्तेन मनोवचनादिरूपेण चतुर्विधेन अशुभेन करणेन नैरयिकाः करणत एव असातां वेदनां वेदयन्ति, 'णो अकरणमो' नो अकरणतः करणे विना नैरयिकाः असातां वेदनां न वेदयन्ति-इत्यर्थः । उपसंहरति-'से तेणट्ठेणं' हे गौतम ! तत् तेनार्येन यत् नैरयिकाः करणत एव, नो अकरणतः असातां वेदनां वेदयन्तीत्युच्यते । गौतमः पृच्छति-'असुरकुमाराणं किं करणमो ?' असुरकुमाराः खलु किम् करणतः, अकरणतो वा सातां सुखरूपां वेदनां वेदयन्ति ? भगवानाह—'गोयमा ! करणमो, नो अकरणमो' हे गौतम ! असुरकुमाराः करणत एव सातां सुखरूपां

કાયકરણ, ઓર કર્મકરણ એ ચાર પ્રકાર કે કરણ હોતે હેં એસા પ્રકટ ક્રિયા ગયા હે સો (ઈચ્છેણં ચત્ત્વિહેણં અસુમેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણમ્ અસાયં વેયણં વેયંતિ) એ નારક જીવ इन पूर्वोक्त चार करणों वाले होते हैं-इस कारण वे करण द्वारा आशातावेदना का अनुभव करते हैं (णो अकरणमो) करण के बिना वे उस वेदना का अनुभव नहीं करते हैं (से तेणट्ठेणं) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि नारक जीव करण से ही अशाता का अनुभव करते हैं करण के बिना नहीं । अब गौतम स्वामी प्रभु से पुनः ऐसा पूछते हैं कि—(असुरकुमाराणं किं करणमो अकरणमो) हे भदन्त ! असुरकुमार क्या करण द्वारा ही शाता-सुखरूप वेदना का अनुभव करते हैं या करण के बिना ही सुखरूप शातो वेदना का अनुभव करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभु

અને કર્મકરણ, એ ચાર પ્રકારનાં કરણ હોય છે. (ઈચ્છેણં ચત્ત્વિહેણં અસુમેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણમ્ અસાયં વેયણં વેયંતિ) એ ચાર પ્રકારનાં અશુભ કરણો દ્વારા તેઓ અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે, “ણો અકરણમો” તેઓ અકરણથી (કરણો વિના) તે વેદનાનો અનુભવ કરતા નથી. “સે તેણટ્ઠેણં” હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે નારક જીવો કરણથી જ અશાતા વેદનાનો અનુભવ કરે છે, કરણ વિના તેઓ અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરતા નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(અસુરકુમારાણં કિં કરણમો અકરણમો ?) હે ભદન્ત ! શું અસુરકુમાર દેવો કરણ દ્વારા જ શાતા-સુખરૂપ-વેદનાનો અનુભવ કરે છે, કે અકરણ દ્વારા (કરણ વિના) જ સુખરૂપ શાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા !” હે ગૌતમ ! (કરણમો નો અકરણમો) અસુર-

वेदनाम् अनुभवन्ति, नो अकरणतस्तामनुभवन्ति ? गौतम आह—‘से केणट्ठेणं ?’ हे भदन्त ! तत् केनार्थेन असुरकुमाराः करणत एव, नो अकरणतः सातां वेदनां वेदयन्ति ? । भगवानाह—‘गोयमा ! असुरकुमाराणं चउत्विहे करणे पणत्ते ’ हे गौतम ! असुरकुमाराणाम् चतुर्विधं करणं प्रवृत्तम्, ‘तं जहा—मणकरणे, वयकरणे कायकरणे, कम्मकरणे’ तदथा—मनःकरणम्, वचःकरणम्, कायकरणम्, कर्मकरणं च, ‘इच्चेणं सुभेणं करणेणं असुरकुमारा णं करणओ सायं वेयणं वेयंति’ इत्येतेन उपर्युक्तेन मनोवचःकायादिना शुभेन करणेन असुरकुमाराः खलु करणत एव सातां वेदनां वेदयन्ति, ‘णो अकरणओ’ नो अकरणतः सातां वेदनां ते वेदयन्ति, ‘एवं जाव—यणियकुमाराणं’ एवम्—असुरकुमारवदेव यावत्—नागकुमार

उनसे कहते हैं ( गोयमा ) हे गौतम ! ( करणओ नो अकरणओ ) असुरकुमार करणद्वारा ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं अकरण-करण के विना नहीं, अब गौतम स्वामी प्रभु से ऐसे कथन में कारण क्या है ? इस विषय को जानने की इच्छा से पूछते हैं ( से केणट्ठेणं ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं ? इसके उत्तर में प्रभु कहते हैं कि ( गोयमा ) हे गौतम ! ( असुरकुमाराणं चउत्विहे करणे पणत्ते तं जहा मणकरणे, वयकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे—इच्चेणं सुभेणं करणेणं असुरकुमाराणं करणओ सायं वेयणं वेयंति ) असुरकुमारों के मनकरण, वचनकरण कायकरण और कर्मकरण ये चार होते हैं ऐसा अभी २ प्रकट किया गया है सो इन चार शुभ करणों से युक्त होने के कारण ये करण से ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं ( णो अकरणओ ) करण के सिवाय नहीं ऐसा मैंने कहा है ( एवं जाव

कुमारो કરણ દ્વારા જ શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ કરણ વિના તેનું વેદન કરતા નથી. તેનું કરણ બાણવા માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે.

“ સે કેણટ્ઠેણં ” હે ભદન્ત ! આપ શા કરણે એવું કહો છો ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ” ( અસુરકુમારાણં ચઉત્તિહે કરણે પણત્તે-તંજહા ” અસુરકુમારોને નીચે પ્રમાણે ચાર કરણો હોય છે—( મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે ) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

( ઇચ્છેણં સુભેણં કરણેણં અસુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ ) આ શુભ કરણોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેઓ કરણ દ્વારા જ સુખરૂપ શાતા-વેદનાનો અનુભવ કરે છે, “ ણો અકરણઓ ” કરણ વિના તેઓ તેનો અનુભવ કરતા નથી.

સુવર્ણકુમાર-વિદ્યુત્કુમાર - અગ્નિકુમાર - દ્વીપકુમારો-દધિકુમાર-દિશાકુમાર-  
પવનકુમારાણાં સ્તનિતકુમારાણાં ચ ભવનપતીનામપિ बोध्यम्, तथा च नागकुमा-  
सदि-स्तनितकुमारपर्यन्ता अपि देवाः करणत एव सातां वेदनां वेदयन्ति, नो  
अकरणत इति । ' पृथ्वीकाश्याणं एवामेव पुच्छा ? ' पृथिवीकायिकानामपि  
जीवानाम् एवमेव नैरयिकादिवदेव पृच्छा प्रश्नः, तथा च-पृथिवीकायिका जीवाः  
किं करणतः अकरणतो वा साताम् असातां वा वेदनां वेदयन्ति ? इति प्रश्न उद्-  
नीयः, भगवान् तत्र विशेषतां प्रतिपादयति-' णवरं-इच्छेएणं सुभासुभेणं कर-  
णेणं पुढवीकाइया करणओ वेमायाए चेयणं चेयंति, णो अकरणओ ' नवरम्-

યણિયકુમારાણં ) અસુરકુમારોં કોં તરહ સે હી યાવત્-નાગકુમાર,  
સુવર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર,  
દિશાકુમાર, પવનકુમાર, ઓર સ્તનિતકુમાર इन भवनपतिषो के भी  
જાનના ચાહિયે । इस तरह नागकुमारदि स्तनितकुमारतक के साथ ही  
देव भवनपतिदेव-करणद्वारा ही सातावेदना का अनुभव करते हैं अक-  
रण द्वारा नहीं । ( पुढवीकाइयाणं एवामेव पुच्छा ) पृथिवीकायिक जीवों  
के भी नारक जीवों की तरह से ही प्रश्न करना चाहिये-तथा च हे भदन्त !  
पृथिवीकायिक जीव क्या करण द्वारा, या करण के बिना ही साता  
असातारूप वेदना का अनुभव करते हैं ? ऐसा प्रश्न अपने आप  
समझलेना चाहिये-तब इस प्रश्न के उत्तर में प्रभु विशेषता का प्रति-  
पादन करते हैं ( णवरं इच्छेएणं सुभासुभेणं करणेणं पुढवीकाइया कर

( एवં जाव यणियकुमाराणं ) એ જ પ્રમાણે ( અસુરકુમારોની જેમજ )  
સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના દેવો પણ ચાર કરણ દ્વારા જ અનુભવ કરે છે. એટલે  
કે અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુવર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર,  
ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, પવનકુમાર, અને સ્તનિતકુમાર, એ ભવનપતિ દેવો  
પણ ચાર કરણો વડે જ સુખરૂપ સાતાવેદનાનું વેદન કરે છે. તેઓ અકરણ  
દ્વારા સાતાવેદનાનો અનુભવ કરતા નથી.

( पुढविकाइयाणं एवामेव पुच्छा ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાય જીવોના વિષ-  
યમાં પણ હું એજ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવા માગું છું-શું પૃથ્વીકાય જીવો કરણ  
દ્વારા સાતાવેદના અને અસાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે, કે અકરણ દ્વારા તેનો  
અનુભવ કરે છે ?

આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ તેમના વિષયમાં કેટલીક  
વિશેષતાનું પ્રતિપાદન કરે છે-( णवरं इच्छेएणं सुभासुभेणं करणेणं काइया



વિશેષ: પુનરેતાવાનેચ યત્ કલ્પેતેન ઉપરિ વર્ણિતેન શુભાશુભેન કરણેણ પૃથિવી  
કાયિકાઃ કરણતો વિમાત્રયા-વિવિધયા માત્રયા કદાચિત્ સુખાત્મિકાં સાતાં  
વેદનાં વેદયન્તિ, કદાચિચ્છ દુઃખાત્મિકામ્ અસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ કિન્તુ નો  
અકરણતઃ કરણં વિના તથાવિધવેદનાં શુભાશુભાં વા વેદયન્તિ । તથા  
' ઓરાલિયસરીરા સન્વે સુભાસુમેણં વેમાયાણ ' ઔદારિકશરીરાઃ સર્વે જીવાઃ  
શુભાશુભેન કરણેન વિમાત્રયા કદાચિત્ સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, કદાચિત્ અસાતાં  
વેદનાં વેદયન્તિ । ' દેવા સુમેણં સાયં ' દેવાઃ શુભેન કરણેન સાતાં સુખરૂપાં  
વેદનાં વેદયન્તિ, નો દુઃખરૂપામ્ અસાતાં વેદનાં વેદયન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ળઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ ) યે કહતે હેં કિ જો  
પૃથિવીકાયિક ણકેન્દ્રિય જીવ હેં વે પૂર્વોક્ત શુભાશુભ કરણ દ્વારા,  
વિમાત્રા સે-ભજના સે કમી સુખરૂપ શાતાવેદના કા ઓર કમી દુઃખ-  
રૂપ અશાતાવેદના કા-હસ પ્રકાર કી વિવિધમાત્રા સે-વેદના કા અનુભવ  
કરતે હેં-કરણ કે વિના તથાવિધ શુભાશુભ વેદના કા અનુભવ નહોં  
કરતે । તથા-( ઓરાલિયસરીરા સન્વે સુભાસુમેણં વેમાયાણ ) જિતને  
મી ઔદારિક શરીરવાલે-ણકેન્દ્રિય સે લેકર સમસ્ત પંચેન્દ્રિય મનુષ્ય  
ઓર તિર્યચ જીવ હેં વે સચ શુભ ઓર અશુભકરણ દ્વારા હી વિમાત્રા  
સે કદાચિત્ સાતાવેદના કા ઓર કદાચિત્ અસાતાવેદના કા અનુભવ  
કરતે હેં । ( દેવા સુમેણં સાયં ) દેવ શુભકરણ દ્વારા સાતા સુખરૂપ  
વેદનાકા હી અનુભવ કરતે હેં, દુઃખરૂપ અસાતાવેદના કા નહોં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

કરણઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ ) હે ગૌતમ ! જે પૃથ્વીકાયિક એકેન્દ્રિય જીવો  
છે તેઓ ઉપર્યુક્ત શુભાશુભ કરણો વડે ક્યારેક દુઃખરૂપ અશાતાવેદનાનો  
અનુભવ કરે છે, તેઓ કરણ વિના શાતાવેદના અને અશાતાવેદનાનો અનુભવ  
કરતા નથી. આ રીતે પૃથ્વીકાયોમાં વિકલ્પે શાતાવેદના અને અશાતાવેદનાના  
વેદનનું પ્રતિપાદન કરાયું છે.

( ઓરાલિયસરીરા સન્વે સુભાસુમેણં વેમાયાણ ) જેટલા ઔદારિક શરીર-  
વાળા જીવો છે, ( એટલે કે એકેન્દ્રિયથી લઈને સમસ્ત પંચેન્દ્રિય મનુષ્ય અને  
તિર્યંચો ) તેઓ શુભ અને અશુભ કરણ દ્વારા વિકલ્પે શાતાવેદના અને  
અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે-એટલે કે ક્યારેક શાતાવેદનાનો અનુભવ કરે  
છે અને ક્યારેક અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે. " દેવા સુમેણં સાયં "   
દેવો શુભ કરણ વડે સુખરૂપ શાતાવેદનાનો જ અનુભવ કરે છે. તેઓ દુઃખ-  
રૂપ અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરતા નથી. ॥ સૂત્ર ૨ ॥

વેદના-નિર્જર્યોઃ સાદ્યર્થવક્તવ્યતા ।

વેદના-નિર્જર્યોરધિકારાત્ તયોઃ સાદ્યર્થ મનિષાદયિતુમાદ-‘ જીવાણં ભંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-“ જીવા ણં ભંતે ! કિં મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ? ગોચમા ! અત્થેગદ્ધયા જીવા મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સે કેણટ્ટેણં ? ગોચમા ! પડિમા પડિવન્નણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે, છટ્ટિ-તત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરદ્ધયા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેલેસિ પડિવન્નણ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરે । અણુત્તરોવવાદ્ધયા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ,

‘મહાવેયણે ય વત્થ કદ્દમ-સ્વંજણકણ ય અહિગરણી । તણહત્થે ય કવલ્લે, કરણ મહાવેયણા જીવા ’ ॥સૂ.૦૩॥

છાયા- જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં મહાવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૧, મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ ૨, અલ્પવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ, ૩, અલ્પવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ ૪,

વેદના ઓર નિર્જરા મેં સાદ્યર્થવક્તવ્યતા-

‘ જીવાણં ભંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—( જીવા ણં ભંતે ! કિં મહાવેયણા, મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા )

વેદના અને નિર્જરામાં સાદ્યર્થ વક્તવ્યતા—

“ જીવાણં ભંતે ! ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—( જીવાણં ભંતે ! કિં મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ? ) હે ભદન્ત ! જે



ગૌતમ ! સન્ત્યેકકે જીવાઃ મહાવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૧, સન્ત્યેકકે જીવાઃ મહાવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ ૨, સન્ત્યેકકે જીવાઃ અલ્પવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૩, સન્ત્યેકકે જીવાઃ અલ્પવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૪ । તત્ કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! પઠિમાપતિપદ્મકોડનગારો મહાવેદનો-મહાનિર્જરઃ । પૃષ્ઠી-સપ્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોઃ

હે ભદન્ત ! જો જીવ મહાવેદના વાળે હોતે હૈં ? વે કયા મહાનિર્જરાવાળે હોતે હૈં ? તથા-જો જીવ મહાવેદના વાળે હોતે હૈં, વે કયા અલ્પનિર્જરા વાળે હોતે હૈં ? તથા-જો જીવ અલ્પવેદના વાળે હોતે હૈં, વે કયા મહાનિર્જરાવાળે હોતે હૈં ? તથા-જો જીવ અલ્પવેદનાવાળે હોતે હૈં વે કયા અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હૈં ? (અત્યેગદ્યા જીવા મહાવેયણા મહાનિર્જરા મહાવેયણા અલ્પનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અલ્પવેયણા મહાનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અલ્પવેયણા અલ્પનિર્જરા) હે ગૌતમ ! કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો મહાવેદનાવાળે હોતે હૈં ઓર મહાનિર્જરાવાળે હોતે હૈં । કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો મહાવેદનાવાળે હોતે હૈં ઓર અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હૈં । કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો અલ્પવેદનાવાળે હોતે હૈં ઓર મહાનિર્જરાવાળે હોતે હૈં ? ઓર કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો અલ્પવેદના વાળે હોતે હૈં ઓર અલ્પનિર્જરા વાળે હોતે હૈં ? (સે કેળદ્રેણં) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (પઠિમા-પઠિવત્તપ્પ અણગારે મહાવેયણે મહાનિર્જરે, છદ્ધસત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરહયા

અવ મહાવેદનાવાળા હોય તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે ? અથવા જે અવ મહાવેદનાવાળા હોય તેઓ શું અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે ? તથા જે અવ અલ્પવેદનાવાળા હોય તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે ? અથવા જે અવ અલ્પવેદનાવાળા હોય તેઓ શું અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે ?

(અત્યેગદ્યા જીવા મહાવેયણા મહાનિર્જરા મહાવેયણા અલ્પનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અલ્પવેયણા મહાનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અલ્પવેયણા અલ્પનિર્જરા) હે ગૌતમ ! કેટલાક અવ એવા હોય છે કે જે મહાવેદનાવાળા હોય છે અને મહાનિર્જરાવાળા હોય છે. કેટલાક અવ એવાં હોય છે કે જે મહાવેદનાવાળા હોય છે અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે. કેટલાક અવ એવાં હોય છે કે જે અલ્પવેદનાવાળા હોય છે અને મહાનિર્જરાવાળા હોય છે. અને કેટલાક અવ એવા હોય છે કે જે અલ્પવેદનાવાળા હોય છે અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.

(સે કેળદ્રેણં) હે ભદન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહો છો ? (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (પઠિમાપઠિવત્તપ્પ અણગારે મહાવેયણે મહાનિર્જરે, છદ્ધ સત્તમાસુ

વેદના-નિર્જરોઃ સાદ્વર્ગ્યવક્તવ્યતા ।

વેદના-નિર્જરયોરધિકારાન્ તયોઃ સાદ્વર્ગ્ય પ્રતિપાદયિતુમાદ-‘ જીવાળં ભંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—“ જીવા ણં ભંતે ! કિં મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ? ગોચમા ! અત્થેગદ્ધયા જીવા મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સે કેણટ્ટેણં ? ગોચમા ! પડિમા પડિવન્નણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે, છટ્ઠિ-તત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરદ્ધયા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેલેસિ પડિવન્નણ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરે । અણુત્તરોવવાદ્ધયા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ,

‘મહાવેયણે ય વત્થ કદ્દમ-સંજળકણ ય અહિગરણી । તણહત્થે ય કવલ્લે, કરણ મહાવેયણા જીવા ” ॥સૂ.૦૩॥

છાયા- જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં મહાવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૧, મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ ૨, અલ્પવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ, ૩, અલ્પવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ ૪,

વેદના ઓર નિર્જરા મેં સાદ્વર્ગ્યવક્તવ્યતા-

‘ જીવાળં ભંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—( જીવા ણં ભંતે ! કિં મહાવેયણા, મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા )

વેદના અને નિર્જરામાં સાદ્વર્ગ્ય વક્તવ્યતા--

“ જીવાળં ભંતે ! ઇત્યાદિ--

સૂત્રાર્થ—( જીવાળં ભંતે ! કિં મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ? ) હે ભદન્ત ! જે

અતિશય વેદનાવન્તઃ, અતિશય નિર્જરાવન્તથ?, અથવા ‘મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ ૨, ‘અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ મહાનિર્જરા વા ભવન્તિ? ૩, ઉતાહો ‘અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ? ૪। ભગવાનાહ-‘ગોયમા! અત્યેગદ્યા જીવા મહાવેયણા-મહાનિજ્જરા’ હે ગૌતમ! સન્તિ એકકે કેવન જીવાઃ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરા-વન્તથ?, ઇત્યાદિવ્યાખ્યા નિગદસિદ્ધા, ગૌતમ આહ-‘સે કેળદ્દેણ?’ હે ભદન્ત! તત્ કેનાર્થેન એવમ્-પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ઉચ્યતે? ભગવાનાહ-‘ગોયમા! પઢિમાપઢિવન્નપ્પ અળગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે’ હે ગૌતમ! પ્રતિમાપ્રતિ-પન્નકઃ પ્રતિમાધારી અનગારઃ મહાવેદનાવાન્ મહાનિર્જરાવાંથ ભવતિ। ‘છટ્ઠિ-સત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરડ્યા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ પઠ્ઠી-સત્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોઃ

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! જીવ એસે બી હોતે હેં ક્યા? જો મહાવેદના-વાળે હોકર બી મહાનિર્જરાવાળે હોતે હેં? અથવા-(મહાવેયણા અપ્પ-નિજ્જરા) જો મહાવેદનાવાળે હોકર બી અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હેં? અથવા (અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો મહાનિર્જરા-વાળે હોતે હેં? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો અલ્પ હી નિજ્જરાવાળે હોતે હેં? એસે યે ચાર પ્રશ્ન ગૌતમ-સ્વામી ને પ્રશ્ન સે પૂછે હેં। ફન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ! (પઢિમાપઢિવન્નપ્પ અળગારે મહાવે-યણે મહાનિજ્જરે) જો, પ્રતિમા કો જિસને ધારણ કર રહ્યા હૈ એસા અનગાર હોતા હૈ વહ મહાવેદના કો બી સહન કરતા હૈ ઓર મહાનિ-ર્જરા અતિશય નિર્જરાવાલા બી હોતા હૈ। (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ નેર-

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે મહાવેદના-વાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે મહાવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પ-વેયણા મહાનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો મહા-વીર પ્રભુને પૂછ્યા છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નોના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—  
“ગોયમા!” હે ગૌતમ! (પઢિમાપઢિવન્નપ્પ અળગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે) પ્રતિમાધારી અળગાર મહાવેદનાનું પણ વેદન કરતો હોય છે અને મહાનિર્જ-રાવાળો (અતિશય નિર્જરા કરનારો) પણ હોય છે. (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ



નેરયિકાઃ મહાવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ । શૈલેશીં પ્રતિપન્નકઃ અનગારઃ અલ્પવેદનો-  
મહાનિર્જરઃ । અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ । તદેવં ભદન્ત !  
તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ “મહાવેદનમ્, વત્સં, કર્દમ-સહજનકતં ચાધિકરણી । ત્વ  
હસ્તકથ કવલ્લં, કરણ-મહાવેદના જીવાઃ ” ॥ પૂ૦ ૩ ॥

ટીકા— ‘ જીવા ણં મંતે ! કિં મહાવેયણા - મહાનિજ્જરા ? ’ ગૌતમઃ  
પૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! જીવાઃ સહુ કિમ્ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરાશ્ચ ભવન્તિ,

મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા સેલેસિં પઢિવન્નપ્પ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિ-  
જ્જરે અણુત્તરોવવાહ્યા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેવં મંતે ! સેવં  
મંતે ! ત્તિ ) જો અનગાર પ્રતિમાપ્રતિપન્ન હોતા હૈ, વહ મહાવેદનાવાલા  
ઔર મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ, છટ્ટી ઔર સાતવીં પૃથિવી મેં જો નારક  
જીવ હોતે હૈં વે મહાવેદનાવાલે ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । શૈલેશી  
અવસ્થા પ્રાપ્ત જો અનગાર હોતા હૈ, વહ અલ્પવેદનાવાલા ઔર મહાનિ-  
ર્જરાવાલા હોતા હૈ । તથા અનુત્તરોપપાતિક જો દેવ હાતે હૈં, વે અલ્પ-  
વેદના ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । હે ભદન્ત ! જૈસા આપને યહ  
કહા હૈ વહ એસા હી હૈ-હે ભદન્ત ! વહ એસા હી હૈ । એસા કહકર વે  
ગૌતમ યાવત્ અપને સ્થાન પર વિરાજમોન હો ગયે ।

ટીકાર્થ—વેદના ઔર નિર્જરા કા અધિકાર ચલ રહા હૈં હસસે યહાં  
પર સૂત્રકાર ને હન દોનોં કા સાહચર્ય પ્રતિપાદન કિયા હૈં-ગૌતમ ને  
પ્રશ્ન સે હસ વિષય મેં એસા પૂછા હૈં કિ—( જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

પુદ્ગલોસુ નેરહ્યા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, સેલેસિં પઢિવન્નપ્પ અણગારે અપ્પવેયણે  
મહાનિજ્જરે, અણુત્તરોવવાહ્યા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ) પ્રતિમા ધારણ કર-  
નારો અણુગાર મહાવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, છટ્ટી અને  
સાતમી નરકના નારકો મહાવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.  
શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર અણુગાર અલ્પવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો  
હોય છે, અને અનુત્તર વિમાનવાસી દેવો અલ્પવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરા-  
વાળા હોય છે. ( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ત્તિ ) હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ  
છે. આપની વાત સત્ય અને યથાર્થ છે. આ પ્રમાણે કહીને વંદણા નમસ્કાર  
કરીને ગૌતમ સ્વામી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

ટીકાર્થ—વેદના અને નિર્જરાનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. તેથી સૂત્રકારે  
આ સૂત્રમાં તે બંનેના સાહચર્યનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. આ વિષયમાં ગૌતમ  
સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

અતિશય વેદનાવન્તઃ, અતિશય નિર્જરાવન્તઃ?, અથવા ‘મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ ૨, ‘અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ મહાનિર્જરા વા ભવન્તિ? ૩, ઉતાહો ‘અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ? ૪। ભગવાનાહ-‘ગોયમા! અત્થેગણ્યા જીવા મહાવેયણા-મહાનિજ્જરા’ હે ગૌતમ! સન્તિ એકકે કેવન જીવાઃ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરા-વન્તઃ?, इत्यादिव्याख्या निगदसिद्धा, गौतम आह-‘से केणट्ठेणं?’ हे भदन्त! तत् केनार्थेन एवम्-पूर्वोक्तिप्रकारेण उच्यते? भगवानाह-‘गोयमा! पडिमापडिवन्नए अणगारे महावेयणे महानिज्जरे’ हे गौतम! प्रतिमाप्रति-पन्नकः प्रतिमाधारी अनगारः महावेदनावान् महानिर्जरावांश्च भवति। ‘छट्ठि-सत्तमासु पुढवीसु नेरइया महावेयणा अप्पनिज्जरा’ पट्ठी-सत्तन्योः पृथिव्योः

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! જીવ એસે બી હોતે હૈં કયા? જો મહાવેદના-વાળે હોકર બી મહાનિર્જરાવાળે હોતે હૈં? અથવા-(મહાવેયણા અપ્પ-નિજ્જરા) જો મહાવેદનાવાળે હોકર બી અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હૈં? અથવા (અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો મહાનિર્જરા-વાળે હોતે હૈં? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો અલ્પ હી નિજ્જરાવાળે હોતે હૈં? એસે યે ચાર પ્રશ્ન ગૌતમ-સ્વામી ને પ્રશ્ન સે પૂછે હૈં। इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! (पडिमापडिवन्नए अणगारे महावे-यणे महानिज्जरे) जो, प्रतिमा को जिसने धारण कर रखा है ऐसा अनगार होता है वह महावेदना को भी सहन करता है और महानि-र्जरा अतिशय निर्जरावाला भी होता है। (छट्ठिसत्तमासु पुढवीसु नेर-

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે મહાવેદના-વાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે મહાવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પ-વેયણા મહાનિજ્જરા) જે અલ્પનિર્જરાવાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો મહા-વીર પ્રભુને પૂછ્યા છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નોના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—  
“ગોયમા!” હે ગૌતમ! (પડિમાપડિવન્નણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે) પ્રતિમાધારી અણગાર મહાવેદનાનું પણ વેદન કરતો હોય છે અને મહાનિર્જ-રાવાળો (અતિશય નિર્જરા કરનારો) પણ હોય છે. (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ



નેરયિકાઃ મહાવેદનાઃ—અલ્પનિર્જરાઃ । શૈલેશીં પ્રતિપન્નકઃ અનગારઃ અલ્પવેદનો-  
મહાનિર્જરઃ । અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ । તદેવં ભદન્ત ।  
તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ “મહાવેદનમ્, વયમ્, કર્દમ-લગ્નનકૃતં નાધિકરણી । ત્વમ્  
હસ્તકથ કલ્લલં, કરણ-મહાવેદના જીવાઃ ” ॥ મૂ. ૩ ॥

ટીકા— ‘જીવા ણં મંતે ! કિં મહાવેયણા — મહાનિજ્જરા ? ’ ગૌતમઃ  
પૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! જીવાઃ સ્વલુ કિમ્ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરાશ્ચ ભવન્તિ,

મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા સેલેસિં પઢિવન્નપ્પ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિ-  
જ્જરે અણુત્તરોવવાદયા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેવં મંતે ! સેવં  
મંતે ! ત્તિ ) જો અનગાર પ્રતિમાપ્રતિપન્ન હોતા હૈ, વહ મહાવેદનાવાલા  
ઔર મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ, છટ્ટી ઔર સાતવીં પૃથિવી મેં જો નારક  
જીવ હોતે હૈં વે મહાવેદનાવાલે ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । શૈલેશી  
અવસ્થા પ્રાપ્ત જો અનગાર હોતા હૈ, વહ અલ્પવેદનાવાલા ઔર મહાનિ-  
ર્જરાવાલા હોતા હૈ । તથા અનુત્તરોપપાતિક જો દેવ હાતે હૈં, વે અલ્પ-  
વેદના ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । હે ભદન્ત ! જૈસા આપને યહ  
કહા હૈ વહ એસા હી હૈ—હે ભદન્ત ! વહ એસા હી હૈ । એસા કહકર વે  
ગૌતમ યાવત્ અપને સ્થાન પર વિરાજમાન હો ગયે ।

ટીકાર્થ—વેદના ઔર નિર્જરા કા અધિકાર ચલ રહા હૈં ઇસસે યહાં  
પર સૂત્રકાર ને ઇન દોનોં કા સાહચર્ય પ્રતિપાદન કિયા હૈં—ગૌતમ ને  
પ્રમુ સે ઇસ વિષય મેં એસા પૂછા હૈં કિ—( જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

પુલ્લોસુ નેરડયા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, સેલેસિં પઢિવન્નપ્પ અણગારે અપ્પવેયણે  
મહાનિજ્જરે, અણુત્તરોવવાદયા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ) પ્રતિમા ધારણુ કર-  
નારો અણુગાર મહાવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, છટ્ટી અને  
સાતમી નરકના નારકો મહાવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.  
શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર અણુગાર અલ્પવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો  
હોય છે, અને અનુત્તર વિમાનવાસી દેવો અલ્પવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરા-  
વાળા હોય છે. ( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ત્તિ ) હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણુ જ  
છે. આપની વાત સત્ય અને યથાર્થ છે. આ પ્રમાણુ કહીને વંદણુ નમસ્કાર  
કરીને ગૌતમ સ્વામી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

ટીકાર્થ—વેદના અને નિર્જરાનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. તેથી સૂત્રકારે  
આ સૂત્રમાં તે બંનેના સાહચર્યનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. આ વિષયમાં ગૌતમ  
સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

અતિશય વેદનાવન્તઃ, અતિશય નિર્જરાવન્તથ?, અથવા ‘મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ ૨, ‘અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ મહાનિર્જરા વા ભવન્તિ? ૩, ઉતાહો ‘અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ? ૪। ભગવાનાહ-‘ગોયમા! અત્યેગદ્યા જીવા મહાવેયણા-મહાનિજ્જરા’ હે ગૌતમ! સન્તિ એકકે કેવન જીવાઃ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરા-વન્તથ?, इत्यादिव्याख्या निगदसिद्धा, ગૌતમ આહ-‘સે કેળદ્દેણં?’ હે ભદન્ત! તત્ કેનાર્થેન એવમ્-પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ઉચ્યતે? ભગવાનાહ-‘ગોયમા! પઢિમાપઢિવન્નણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે’ હે ગૌતમ! પ્રતિમાપ્રતિ-પન્નકઃ પ્રતિમાધારી અનગારઃ મહાવેદનાવાન્ મહાનિર્જરાવાંથ ભવતિ! ‘છટ્ઠિ-સત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરડ્યા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ પઠી-સત્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોઃ

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! જીવ એસે બી હોતે હેં કયા? જો મહાવેદના-વાળે હોકર બી મહાનિર્જરાવાળે હોતે હેં? અથવા-(મહાવેયણા અપ્પ-નિજ્જરા) જો મહાવેદનાવાળે હોકર બી અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હેં? અથવા (અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો મહાનિર્જરા-વાળે હોતે હેં? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો અલ્પ હી નિજ્જરાવાળે હોતે હેં? એસે યે ચાર પ્રશ્ન ગૌતમ-સ્વામી ને પ્રશ્નુ સે પૂછે હેં। इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! (पडिमापडिवन्नण अणगारे महावे-यणे महानिज्जरे) जो, प्रतिमा को जिसने धारण कर रखा है ऐसा अनगार होता है वह महावेदना को भी सहन करता है और महानि-र्जरा अतिशय निर्जरावाला भी होता है। (छट्टिसत्तमासु पुढवीसु नेर-

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે મહાવેદના-વાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે મહાવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પ-વેયણા મહાનિજ્જરા) જે અલ્પનિર્જરાવાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો મહા-વીર પ્રશ્નુને પૂછ્યા છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નોના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્નુ કહે છે—  
“ગોયમા!” હે ગૌતમ! (પઢિમાપઢિવન્નણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે) પ્રતિમાધારી અણગાર મહાવેદનાનું પણ વેદન કરતો હોય છે અને મહાનિર્જ-રાવાળો (અતિશય નિર્જરા કરનારો) પણ હોય છે. (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ

નેરપિકાઃ મહાવેદનાવન્તોઽલ્પ નિર્જરાવન્તથ મરન્તિ તેષાં સર્વથા અશુભકર્મ સમ્બન્ધસદ્ભાવાત્, । ' સેલેસિં પઙ્કિવન્નપ્ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરં ' શૈલેશીં ચતુર્દશગુણસ્થાનાવસ્થાયામ્, મતિપન્નકઃ પ્રાપ્તઃ કેવલી અનગારઃ અલ્પ-વેદનો મહાનિર્જરાવાન્ ભવતિ । ' અણુત્તરોવવાહ્યા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા, ' અણુત્તરોપશાંતિકા દેવાઃ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાથ ભવન્તિ । ગૌતમ આદ-સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ ' હે મદન્ત ! તદેવં મવદુક્તં સત્યમેવ, હે મદન્ત ! મવદુક્તં સત્યમેવેતિ ? અપૈતદુદ્દેશકાર્યસંગ્રહ ગાથામાહ- ' મદાવેયણે ' રૂપાદિ । ગાયાર્યઃ પૂર્વપ્રકરણેનૈવ વ્યાખ્યાત એવ ॥ મૂ. ૩ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री मासीलाल प्रतिविरचितायां भगवती सूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां पटुशतकस्य प्रथमोद्देशकः समाप्तः । ६-१।

इयां महावेयणा अप्पनिज्जरा ) तथा छट्ठी और सातवीं पृथिवी में जो नारक जीव रहते हैं, वे वहां पर महावेदना को भोगते हुए भी अल्प ही निर्जरावाले होते हैं । क्योंकि कि वहां पर उनके सर्वथा अशुभकर्म का ही उदय चलता रहता है ( सेलेसिं पङ्किवन्नप अणगारे अप्पवेयणे महा-निज्जरे ) तथा-जो अनगार शैलेशी अवस्था को-चौदहवें गुणस्थान को प्राप्त हो जाता है-ऐसा वह केवलज्ञानी अनगार अल्पवेदनावाला होकर भी महानिर्जरावाला होता है । (अणुत्तरोववाह्या देवा अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ) तथा जो देव अनुत्तरविमानों में रहते हैं, वे अल्पवेदनावाले होते हैं और अल्प ही निर्जरावाले होते हैं । इस प्रकार का कथन प्रभु के मुख से सुनकर गौतम ने ( सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति )

નેરૂપા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા ) છઠ્ઠી અને સાતમી નરકોમાં રહેનારા નારકો ત્યાં મહાવેદના ભોગવતા હોય છે. છતાં પણ તેઓ અલ્પનિર્જરાવાળા જ હોય છે, કારણ કે ત્યાં તેમના અશુભ કર્મોનો જ ઉદય લગાતાર ચાલ્યા કરે છે. ( સેલેસિં પઙ્કિવન્નપ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરે ) શૈલેશી અવસ્થા ( ચૌદમું ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરનાર કેવળજ્ઞાની અણગાર અલ્પવેદનાવાળો હોવા છતાં મહા-નિર્જરાવાળો હોય છે. ( અણુત્તરોવવાહ્યા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ) તથા જે દેવો અણુત્તર વિમાનોમાં રહે છે, તેઓ અલ્પવેદનાવાળા હોય છે અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.

આ પ્રકારનું પ્રતિપાદન મહાવીર પ્રભુને શ્રીમુખે સાંભળીને ગૌતમ સ્વામી તેમના વચનોમાં પોતાની શ્રદ્ધા પ્રકટ કરતા કહે છે-( સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે !



ऐसा प्रभु से कहा-हे भदन्त ! आपका कहा हुआ सय सत्य ही है हे भदन्त ! आपका कहा हुआ सय सत्य ही है ।

इस उद्देशक के अर्थ का संग्रह करनेवाली ( महावेयणे य वत्थे कइ-मखंजणकए य अहिकरणी, तणहत्थे य कवल्ले करण महावेयणा जीवा ) यह गाथा है-इसके द्वारा यह प्रकट किया गया है कि इस उद्देशक में महावेदना, कर्दमराग और खंजनराग से रक्त चस्त्र, एरण तृण का पूला, लोहेका गरम तथा, करण और महावेदना और निर्जरा का साहचर्य ये सब विषय प्रतिपादित हुए हैं ॥ सू० ३ ॥

श्री जैनचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत “ भगव-  
तीसूत्र ” की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छठे शतकका पहला  
उद्देशक समाप्त ॥ ६-१ ॥

ति) હે ભદન્ત ! આપે આ વિષયનું જે પ્રતિપાદન કર્યું તે સર્વથા સત્ય છે.  
આ પ્રભાણે ઠહીને વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

આ ઉદ્દેશકના વિષયોનો સંગ્રહ કરનારી ગાથા--

( મહાવેયણે ય વત્થે કइમखंजणकए य अहिकरणी, तणहत्थे य कवल्लुकरण  
महावेयणा जीवा ) આ ગાથા દ્વારા એ વાત બતાવવામાં આવી છે કે આ  
ઉદ્દેશકમાં મહાવેદના, કર્દમરાગ અને ખંજનરાગથી રંગેલું વસ્ત્ર, એરણ, ઘાસનો  
પૂજો, લોહાનો ગરમ તાવડો, કરણ, મહાવેદના અને નિર્જરાનું સાહચર્ય એ  
બધા વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂત્ર ૩ ॥

જેનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ‘ભગવતીસૂત્ર’ની પ્રમેયચન્દ્રિકા  
વ્યાખ્યાનો છઠ્ઠા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૬-૧ ॥

॥ पष्ठशतकस्य द्वितीयोद्देशकः ॥

आहारपक्षव्यता

पूर्वोद्देशके येषां जीवानां वेदनावत्त्वं प्रतिपादितम् ते च जीवाः आहारका अपि भवन्ति अतस्तेषामाहारं निरूपयितुं द्वितीयोद्देशकमारभते—‘ रायगिहं ’ इत्यादि ।

मूलम्—रायगिहं नगरं जाव-एवं वयासी — आहारुद्देसओ जो पन्नवणाए सो सव्वो नेयव्वो, सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति । ” ॥ १ ॥

छट्सपस्स वीओ उद्देसो समत्तो ॥ ६-२ ॥

छाया—राजगृहं नगरं यावत्-एवम् अयासीत्-आहारोद्देशको यः प्रज्ञाप-  
नायां स सर्वो ज्ञातव्यः, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥ सू० १ ॥

पष्ठशतकस्य द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ ६-२ .

टीका— ‘ रायगिहं नगरं जाव-एवं वयासी- आहारुद्देसओ पन्नवणाए  
सो सव्वो नेयव्वो ’ तस्मिन् काले, तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत्

छठे शतक के दूसरे उद्देशक का प्रारंभ

‘ रायगिहं नगरं जाव एवं वयासी ’

सूत्रार्थ—(रायगिहं नगरं जाव एव वयासी-आहारुद्देसओ जो पन्नव-  
णाए सो सव्वो नेयव्वो) राजगृह नगर यावत् इस प्रकारसे बोले—आहार  
उद्देशक, जो प्रज्ञापना सूत्र में कहा गया वह सब यहां जानना चाहिये  
( सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति ) हे भदन्त ! आपका कहा हुआ सब सत्य  
है, हे भदन्त ! आप का कहा हुआ सब सत्य ही है ।

टीका—पूर्व उद्देशक में जिन जीवों में वेदनावत्त्व प्रतिपादित  
किया गया है—वे जीव आहारक भी होते हैं, इसलिये उनके आहार

छठा शतकનો બીજો ઉદ્દેશક

“ રાયગિહં નગરં જાવ એવં વયાસી ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—( રાયગિહં નગરં જાવ એવં વયાસી-અહારુદ્દેસઓ જો પન્નવણા  
ઓ સવ્વો નેયવ્વો ) “ રાજગૃહ નગર ” થી લઇને “ આ પ્રમાણે બોલ્યાં ”  
ત્યાં સુધીનું પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના આધાર ઉદ્દેશકનું સમસ્ત કથન અહીં શ્રુત્ય કરવું.  
( સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! તિ ) હે ભદન્ત ! આપની વાત તદ્દન સાચી છે.  
હે ભદન્ત ! આ વિષયનું આપે જે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે યથાર્થજ છે.

ટીકા—પહેલા ઉદ્દેશકમાં જે જીવોમાં વેદનાયુક્તતાનું પ્રતિપાદન કર-  
વામાં આવ્યું છે તે જીવો આહારક ( આહાર લેનારા ) પણ હોય છે. તે કારણે



યાવત્-સ્વામી સમવ્યવહારઃ, નિર્ગચ્છતિ પર્વત, પ્રતિગતા પર્વત, તતઃ શ્રમ-  
ણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય જ્યેષ્ઠઃ અન્તેવાસી ગાતમગોત્રીયઃ ઇન્દ્રભૂતિઃ શુશ્રૂ-  
ષમાણો નમસ્વન્ અભિપુરુષં વિનયેન માઙ્ગલિપુટઃ ત્રિવિધયા પર્યુપાસનયા પર્યુપા-  
સીનઃ એવં વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ અવાદીત-પૃષ્ઠવાન્, અત્ર આદારોદ્દેશકો યઃ પ્રજ્ઞાપ-  
નાયાં પ્રતિપાદિતઃ । સ સર્વઃ અત્ર જ્ઞાતવ્યઃ,

અન્તે ગૌતમો ભગવદ્વાક્યં યથાર્થત્વેન સ્વીકુર્વન્નાદ-‘ સેવં મંતે ! સેવં મંતે  
ત્તિ ’ હે મદન્ત ! તદેવં-ભવદુક્તં સત્યમેવ હે વદન્ત ભવદુક્તં સત્યમેવ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પૃષ્ઠશતકસ્ય દ્વિતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૬-૨ ॥

કા નિરૂપણ કરને કે લિયે યહ દ્વિતીય ઉદ્દેશક સૂત્રકાર ને પ્રારંભ કિયા  
હે-( રાયગિહં નયરં જાવ-એવં વયાસી-આહારુદ્દેસઓ જો પત્રવળાણ સો  
સવ્વો નેયવ્વો ) ઉસ કાલ મેં ઉસ સમય મેં રાજગૃહ નામકા નગર થા  
યાવત્-મહાવીર સ્વામી પધારે, પરિપટા અપને ૨ સ્થાન સે નિકલી  
ફિર વાપિસ અપને ૨ સ્થાન પર વહ ગઈ હસ કે ઘાદ શ્રમણ ભગવાન્  
મહાવીર કે પ્રધાનશિષ્ય ગૌતમગોત્રીય ઇન્દ્રભૂતિ જો કિ ધર્મ કે ઉપ-  
દેશ કો સુનને કે અભિલાપા વાલે થે પ્રભુ કો નમસ્કાર કર ફિર ઉન્હો  
ને પ્રભુ સે એસા પૂછા-હત્યાદિ આહારક ઉદ્દેશક જો પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કે  
અઠાહસ થે પદ મેં પ્રતિપાદિત હુઆ હૈ વહ સવ યહાં જાનના ચાહિયે ।

અન્ત મેં ગૌતમ ને ભગવાન્ કે કથન કો યથાર્થસ્વરૂપ સે સ્વીકાર  
કરતે હુણે ઉનસે કહા-( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ) હે મદન્ત ! આપકે  
દ્વારા કહા ગયા સવ વિષય સત્ય હી હૈ વહ સવ સત્ય હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સૂત્રકારે આ બીજા ઉદ્દેશકમાં તેમના આદારનું નિરૂપણ કર્યું છે. ( રાયગિહં  
નયરં જાવ એવં વયાસી-આહારુદ્દેસઓ જો પત્રવળાણ સો સવ્વો નેયવ્વો ) તે  
કાળે અને તે સમયે રાજગૃહ નામે નગર હતું. ત્યાં મહાવીર સ્વામી પધાર્યા.  
ધર્મોપદેશ શ્રવણ કરવાને પરિપટા પોતપોતાને સ્થાનેથી નીકળી, અને ધર્મોપદેશ  
સાંભળીને પરિપટા વિખરાઈ ગઈ. ત્યારબાદ શ્રમણુ લગવાન મહાવીરના પ્રધાન  
શિષ્ય ગૌતમ ગોત્રીય ઇન્દ્રભૂતિ ( ગૌતમ સ્વામી ) કે જે ધર્મોપદેશ  
સાંભળવાની તીવ્ર જિજ્ઞાસાવાળા હતા, તેમણે મહાવીર પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર  
કરીને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-હત્યાદિ ઉદ્દેશક કે જેનું પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ૨૮ માં  
પદમાં પ્રતિપાદન કરાયું છે તે સમસ્ત કથન અહીં થયું કરવું.

ઉદ્દેશકને અન્તે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુના કથનમાં પોતાનો વિશ્વાસ  
પ્રકટ કરતાં કહે છે-“ સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ” હે મદન્ત ! આપના દ્વારા  
આ વિષયનું જે પ્રતિપાદન કરાયું છે તે સર્વથા સત્ય અને યથાર્થ જ છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

॥ છઠ્ઠા શતકનો બીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥

## अथ तृतीयोद्देशकः

पष्ठशतके तृतीयोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविवरणम्

तत्र प्रथमं तृतीयोद्देशकार्यं संपदगाथाप्रथमम्—‘बहुकम्म’ इत्यादि ।

ततो महाकर्मवतो जीवस्य सर्वतः कर्मपुद्गलाः कथ्यन्ते, ? सर्वतः कर्मपुद्गलाधीयन्ते ? सर्वतः कर्मपुद्गला उपजीयन्ते ? निरन्तरं कर्मपुद्गलाः कथ्यन्ते, निरन्तरं कर्मपुद्गलाधीयन्ते ? निरन्तरं कर्मपुद्गला उपजीयन्ते ? तस्य च महाकर्मवतो जीवस्य शरीराणि बाह्यात्मरूपाणि दुरूपतया, दुर्बलतया, अधुमतया, अनिष्टतया भूयोभूयः परिणमन्ति ? इति गौतमस्य प्रश्नः, स्वीकारात्मकं भगवत उत्तरं

### छठे शतक के उद्देशक प्रारंभ

छठे शतक के इस तीसरे उद्देशो का विषयविवरण संक्षेप से इस प्रकार से है—सब से पहिले इस उद्देशक में प्रतिपादित विषयको संग्रह करके प्रकट करनेवाली दो गाथाएँ कही गई हैं—उनमें प्रथमरूप से यह प्रकट किया गया है कि महाकर्मवाले जीव के क्या सर्व प्रकार से कर्म पुद्गलों का बंध होता है ? सर्व प्रकार से उसके क्या कर्मपुद्गलों का चय होता है ? सर्व प्रकार से क्या उसमें कर्मपुद्गलों का उपचय होता है ? या निरन्तर कर्मपुद्गल क्या उस जीव के बंधते रहते हैं ? निरन्तर कर्मपुद्गलों का क्या उसके चय होता रहता है ? निरन्तर कर्मपुद्गलों का क्या उसके उपचय होता रहता है ? उस महाकर्मवाले जीव की बाह्यशरीर रूप आत्मा कुत्सितरूप से, कुत्सितवर्ण से, कुत्सित दुर्मेध आदिरूप से, अशुभरूप से, अनिष्टरूपसे, क्या बार २ परिणमित होती रहती है ?

### छठा शतकने त्रीन्ने उद्देशक—

आ उद्देशकना विषयनुं संक्षिप्त विवरणु—

“आ उद्देशकनी शब्दात्तमां आ उद्देशकमां जे विषयनुं प्रतिपादन करायुं छे ते विषयने प्रकट करनारी जे संग्रह गाथाओ आपी छे—ते गाथाओमां प्रश्नइये जे प्रकट करवामां आयुं छे के—महाकर्मवाणा एवो शुं सर्व प्रकारे कर्मपुद्गलोना बंध करे छे ? शुं ते सर्व प्रकारे कर्मपुद्गलोना चय करे छे ? शुं ते सर्व प्रकारे कर्मपुद्गलोना उपचय करे छे ? शुं ते एवोनां कर्मपुद्गल निरंतर बंधातां रहे छे ? शुं तेमना कर्मपुद्गलोना निरंतर चय यतो रहे छे ? शुं तेमनां कर्मपुद्गलोना निरंतर उपचय यथा करे छे ? ते महाकर्मवाणा एवोना बाह्य शरीरइय आत्मां शुं कुत्सितइये, कुत्सित वर्णइयी, कुत्सित दुर्मेध आदि इये, अशुभ इये, अने अनिष्ट इये बारंवार परिणमित यथा

ચ, । તત્રહેતુપદર્શનપ્રસન્ને અદત ધૌત-તન્નૂદગત વસ્ત્રસ્ય દૃષ્ટાન્તીકરણમ્ । તતઃ  
અલ્પકર્મવતો જીવસ્ય સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ ભિદ્યન્તે ? સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ યાવત્-  
પરિવિધ્વસ્યન્તે ? તસ્ય ચાલ્પકર્મવતો જીવસ્ય વાદ્યાત્માનઃ શરીરાણિ સુરૂપતયા,  
શુભતયા, યાવત્-દૃષ્ટતયા, સુખતયા નો દુઃખતયા ભૂયોભૂયઃ વરિણમન્તિ ? इति  
પ્રશ્નસ્ય સ્વીકારાત્મકમુત્તરમ્ । તત્ર હેતુકથને જલ્હિત-પદ્ધિત-મલિન-ધૂલિધૂસરિ-  
તસ્યાપિ વસ્ત્રસ્ય જલેન પ્રક્ષાલ્યમાનસ્ય દૃષ્ટાન્તતયોપન્યાસઃ । તતો વસ્ત્રે પુદ્ગલાના-

इस प्रकार से ये गौतम के प्रश्न हैं-इनका स्वीकारात्मक प्रभु का उत्तर  
है । इसमें कारण क्या है ? इस विषय में हेतु का प्रदर्शन इसी प्रसङ्ग  
में अर्हति, धौत और यन्त्रोद्गत वस्त्र का उदाहरण अल्पकर्मवाले जीव  
के सर्वप्रकार से क्या कर्मपुद्गल भेद को प्राप्त होते हैं ? सर्वप्रकार से  
क्या कर्मपुद्गल यावत् उसके परिविध्वस्त होते हैं ? उस अल्पकर्मवाले  
जीव की वाद्यशरीररूप आत्मा क्या अच्छे रूप से शुभरूप से यावत्  
दृष्टरूप से सुखरूप से, दुःखरूप से नहीं-बार २ परिणमित होती  
रहती है ? इन प्रश्नों का स्वीकारात्मक उत्तर इस विषय में क्या कारण  
है ? इस प्रश्न में हेतु का कथन इसी प्रसङ्ग में जल्लित, पद्विजित, मलिन  
और धूलि से धूसरित हुए वस्त्र का जो कि जल से प्रक्षालित किया जा  
रहा है उदाहरण ।

વસ્ત્ર મેં પુદ્ગલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે હોતા હૈ યા સ્વભાવ સે હોતા

કરે છે ? ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નોનો પ્રભુ હકારમાં ( સ્વીકારાત્મક ) જવાબ  
આપે છે તેનું કારણ શું છે ? કારણનું પ્રતિપાદન કરવા માટે અહત ( વપરાયા  
વિનાના ) ઘોયેલા અને સાળ ઉપર તૈયાર કરેલા નવા વસ્ત્રનું ઉદાહરણ.

અલ્પકર્મવાળા જીવનાં કર્મપુદ્ગલ શું સર્વ પ્રકારે ભેદને પ્રાપ્ત કરે છે ?  
એટલે કે અલગ થઈ જાય છે ? શું અલ્પકર્મવાળા જીવનાં કર્મપુદ્ગલ સર્વ  
પ્રકારે પરિવિધ્વસ્ત ( ખિલકુલ નષ્ટ ) થઈ જાય છે ? તે અલ્પકર્મવાળા જીવનો  
વાદ્યશરીર રૂપ આત્મા શું સુંદર રૂપે, શુભરૂપે, ( યાવત્ ) ઈષ્ટરૂપે અને સુખ-  
રૂપે વારંવાર પરિણમિત થયા કરે છે ? આ પ્રશ્નોનો પ્રભુ દ્વારા સ્વીકારાત્મક  
ઉત્તર-તેનું કારણ જાણવાની ગૌતમની જિજ્ઞાસા-કારણનું પ્રતિપાદન કરવા માટે  
પરસેવાથી કાદવથી, મેલથી અને ધૂળથી મેલા થયેલા વસ્ત્રને પાણીથી સ્વચ્છ  
કરાય છે, તેવું દૃષ્ટાન્ત.

પ્રશ્ન-વસ્ત્રમાં પુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી થાય છે કે સ્વભાવથી થાય છે ?



મુપચયઃ પ્રયોગેણ વિસ્રસયા ચ, જીવે કર્મપુત્રલાનામુપચયસ્તુ પ્રયોગેણ, નો વિસ્ર-  
સયા, સ્વભાવેન । તતઃ પંચેન્દ્રિયાણાં જીવાનાં મનઃપ્રયોગઃ, વચઃ પ્રયોગઃ,  
કાયપ્રયોગઃ, પૃથિવ્યાદિ-યાવત્-વનસ્પતિપર્યન્ત જીવાનાં કાયપ્રયોગ એવ, વિકલ્પે-  
ન્દ્રિયાણાં વચનપ્રયોગઃ, કાયપ્રયોગઃ, દેવાનાં મનઃપ્રયોગાદિત્રિપ્રયોગા મયન્તિ,  
इति कथनम् । ततो वस्त्रे वध्यमानः पुद्गलोपचयः किं सादिः सान्तः ? सादिरनन्तो  
वा ? अनादि सान्तो वा ? अनादिरनन्तो वा ? इति प्रश्नस्य सादिः सान्त एव  
वस्त्रे पुद्गलोपचयः इत्युत्तरम् । वस्त्रवदेव जीवानां वध्यमानकर्मपुद्गलोपचयविषये

है ऐसा प्रश्न?—दोनों प्रकार से भी होता है ऐसा उत्तर—जीव में कर्म-  
पुद्गलों का उपचय प्रयोग से होता है या स्वभाव से होता है ? तो इस  
प्रश्न का उत्तर यह है कि जीव में कर्मपुद्गलों का उपचय प्रयोग से ही  
होता है, स्वभाव से नहीं ऐसा कथनः जीव के तीन प्रकार के प्रयोगों  
का कथन करते हुए पंचेन्द्रिय जीवों में मनप्रयोग, वचनप्रयोग और  
काय प्रयोग इन तीन प्रयोगों से कर्म के उपचय होने का कथन पृथिवी  
कायिक जीव से लेकर वनस्पतिकायिक तक के जीवों के कायप्रयोग  
से ही कर्मपुद्गलों का उपचय होता है ऐसा कथन विकलेन्द्रिय जीवों के  
वचनप्रयोग, तथा देवों के मनः प्रयोग अदि तीनों प्रयोग कर्मपुद्गलों  
के उपचय होने में कारण होते हैं ऐसा कथन वस्त्र में वध्यमान पुद्गलों  
पचय क्या सादि सान्त है ? या सादि अनन्त है ? या अनादिसान्त है ?  
या अनादि अनन्त है ? इस प्रश्न के उत्तर में, “ वस्त्रमें पुद्गलोपचय सादि

ઉત્તર—મને પ્રકારે થાય છે.

પ્રશ્ન—જીવમાં કર્મપુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી થાય છે કે સ્વભાવથી થાય છે ?

ઉત્તર—જીવમાં કર્મપુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વભાવથી  
થતો નથી. જીવના ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગનું કથન—પંચેન્દ્રિય જીવોમાં મનપ્રયોગ,  
વચનપ્રયોગ અને કાયપ્રયોગ, આ ત્રણ પ્રયોગોથી કર્મનો ઉપચય થાય છે  
એવું કથન. પૃથ્વીકાયિક જીવોથી લઈને વનસ્પતિ કાયિક પર્યન્તના જીવોમાં  
કાયપ્રયોગથી જ કર્મનો ઉપચય થાય છે એવું પ્રતિપાદન. વિકલ્પેન્દ્રિય જીવોમાં  
વચનપ્રયોગ અને કાયપ્રયોગથી અને દેવોમાં મનપ્રયોગ આદિ ત્રણ પ્રયોગોથી  
કર્મપુદ્ગલોનો ઉપચય થાય છે એવું કથન.

વસ્ત્રમાં થતો પુદ્ગલોપચય શું સાદિ સાન્ત ( આદિ સહિત અને અન્ત  
સહિત ) હોય છે ? કે સાદિ અન્ત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય છે ?  
કે અનાદિ અન્ત હોય છે ?

પ્રશ્નઃ, ઈર્યાપથવન્ધકજીવસ્ય કર્મપુદ્ગલોપચયઃ સાદિઃ સાન્તઃ, ભવ્યસ્ય અનાદિઃ સાન્તઃ, અભવ્યસ્ય અનાદિરનન્તઃ, નતુ કશ્ચિત્ કર્મપુદ્ગલોપચયઃ સાદિરનન્તઃ, ઇત્યુત્તરમ્ । તતો વદ્ધં સાદિ-સાન્તમ્ ? સાદિ-અનન્તમ્ ? અનાદિ-સાન્તમ્ ? અનાદિ-અનન્તં વા ? इति प्रश्नः, वद्धं सादि सान्तमेव, नान्यत्, इत्युत्तरम् । ततो वद्वद्वदेव जीव विषये प्रश्नः । नैरयिक-तिर्यग्-मनुष्य-देवाः सादयः सान्ताः, सिद्धः सादिरनन्तः, भव्योऽनादिः सान्तः, अभव्योऽनादिरनन्तश्च, इत्युत्तरम् । ततः कर्म प्रकृतीनामृणां ज्ञानावरणयावत्-अन्तरायिकानाम् अवाधाकालसहितवन्धस्थिति प्रतिपादनम् । तेषां कर्मणां बन्धकत्वेन स्त्रीपुरुषनपुंसकानां कथनम्, तदभिन्नानां तु कदाचित्

સાન્ત હી હૈ” એસા, ઉત્તર વદ્ધ સાદિ સાન્ત હૈ ? કિ-સાદિ અનન્ત હૈ ? અથવા-અનાદિ સાન્ત હૈ ? યા અનાદિ અનન્ત હૈ ? એસા પ્રશ્ન-“ વદ્ધ-સાદિસાન્ત હી હૈ એસા ઉત્તર, વદ્ધ કી તરહ હી જીવ કે વીષય મેં પ્રશ્ન નૈરયિક, તીર્યજ્ઞ, મનુષ્ય એવં દેવ યે સય જીવ તો સાદિસાન્ત હૈં, સિદ્ધ સાદિ અનન્ત હૈં, ભવ્યજીવ અનાદિ સાન્ત હૈં, ઓર અભવ્યજીવ અનાદિ અનન્ત હૈં એસા ઉત્તર ।

જ્ઞાનાવરણસે લેકર અન્તરાયતક આઠ કર્મપ્રકૃતિયોંકી અવાધાકાલ સહિત વન્ધસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન इन कर्मों के बन्धक होने के कारण स्त्री, पुरुष और नपुंसक जीवों का कथन जो जीव स्त्री, पुरुष और नपुंसक नहीं हैं वे इन कर्मों को बांधे भी और नहीं भी बांधे ऐसा कथन स्त्री आदिको में कदाचित् आयुष्क कर्म का बन्धकत्व और कदाचित्

ઉત્તર—વદ્ધમાં પુદ્ગલોપચય સાદિ સાન્ત જ હોય છે.

પ્રશ્ન—વદ્ધ સાદિ સન્ત છે ? કે સાદિ અનન્ત છે ? અથવા અનાદિ સાન્ત છે ? કે અનાદિ અનન્ત છે ?

ઉત્તર—વદ્ધ સાદિ સાન્ત જ છે.

વદ્ધની જેમ જ જીવના વિષયમાં પ્રશ્નો—નારકો, તિર્યંચો મનુષ્યો અને દેવો સાદિ સાન્ત જ છે; સિદ્ધ સાદિ અનન્ત છે, ભવ્ય જીવ અનાદિ સાન્ત છે અને અભવ્ય જીવ અનાદિ અનન્ત છે, એવો ઉત્તર.

જ્ઞાનાવરણથી લઈને અન્તરાય પર્યન્તની આઠ કર્મપ્રકૃતિઓની અવાધાકાલ સહિત બન્ધસ્થિતિનું પ્રતિપાદન, સ્ત્રી, પુરુષ, નપુંસક આદિ જીવોએ કર્મના બાંધનાર હોવાથી તેમનું કથન. જે જીવો સ્ત્રી, પુરુષ કે નપુંસક હોતા નથી, તેઓ કર્મોના બંધક હોય છે પણ ખરાં અને નથી પણ હોતા. સ્ત્રી આદિ-કર્મમાં ક્યારેક આયુષ્યકર્મના બંધકત્વનું અને ક્યારેક અબન્ધકત્વનું કથન.



बन्धकत्वं कदाचिदबन्धकत्वं च । इत्यादीनां कदाचिद् आयुष्यकर्मबन्धकत्वं, कदा-  
चिन्न । ततः संयतासंयतादीनां कर्मबन्धकत्वे मनोत्तरम् । तथा सम्यग्दृष्टि मिथ्या-  
दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टि-संशयसंश्लि-नोसंश्लि नोभसंश्लि, -भवसिद्धिका-भवसिद्धिक-  
नोतदुभयसिद्धिक-चक्षुर्दर्शन्यचक्षुर्दर्शनि-केवलदर्शनि-पर्याप्ता-पर्याप्ति-नोतदुभय-  
भाषका-भाषक-परित्ता-परित्त - नोतदुभय-मतिज्ञानि-श्रुतज्ञान्यवधिज्ञानि-मनः  
पर्यवज्ञानि-केवलज्ञानि - मतिश्रुतावध्यज्ञानि - मनोवचः कापयोग्ययोग्याकारोप-  
योगि-निराकारोपयोग्याहारका-नाहारक-सूक्ष्म - वादर नोतदुभय - चरमाचर-  
माणाम् कर्मबन्धविवारः, स्त्री-पुरुष-नपुंसकवेदका-वेदक जीवालपबहुत्वकथनम् ।

अबन्धकत्व का कथन संयतासंयतादिकों के कर्मबन्ध होने में प्रश्नोत्तर  
इसके बाद-सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संज्ञी, असंज्ञी,  
नो संज्ञी, नो असंज्ञी, भवसिद्धक, अभवसिद्धिक, नो भवसिद्धिक, नो  
अभवसिद्धिक, चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी, अवधिदर्शनी, केवलदर्शनी,  
पर्याप्त, अपर्याप्त, नो पर्याप्त, नो अपर्याप्त, भाषक, अभारक, परित्त,  
अपरित्त, नो परित्त, नो अपरित्त, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, मनः पर्यवज्ञानी  
केवलज्ञानी, मति अज्ञानी, श्रुत अज्ञानी, विभक्त अज्ञानी मनोयोगी,  
वचोयोगी, काययोगी, अयोगी, साकारोपयोगी निराकारोपयोगी, आ-  
हारक, अनाहारक, सूक्ष्म, वादर, नो सूक्ष्म, नो वादर, चरम और  
अचरम इन सब के कर्मबन्ध का विचार तथा अन्त में स्त्री, पुरुष, एवं  
नपुंसक इन वेदवालों के और अवेदवालों के अल्प, बहुत्व का कथन ।

संयतासंयत आदिकेमां कर्मबन्ध यवा विधेना प्रश्नोत्तरे। तयारणां सम्यग्-  
दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संज्ञी, असंज्ञी, नो असंज्ञी, भवसिद्धिक,  
अभवसिद्धिक, नो भवसिद्धिक, नो अभवसिद्धिक, चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी,  
अवधिदर्शनी, केवलदर्शनी, पर्याप्त, अपर्याप्त, नो पर्याप्त, नो अपर्याप्त, भाषक,  
अभाषक, परित्त, अपरित्त, नो परित्त, नो अपरित्त, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी,  
मनःपर्यवज्ञानी, केवलज्ञानी, मतिअज्ञानी, श्रुतअज्ञानी, अवधिअज्ञानी, मनो-  
योगी, काययोगी, अयोगी, साकारोपयोगी, निराकारोपयोगी, आहारक, अना-  
हारक, सूक्ष्म, वादर, नो सूक्ष्म, नो वादर, चरम अने अचरम, ये अधाता  
कर्मबन्धनो विचार अन्ते स्त्री, पुरुष अने नपुंसक अने अवेदवाणाना  
अल्प-बहुत्व कथन।

द्वितीयोद्देशके पुद्गलानामाहारतो निरूपणं कृतम् अथ बन्धादित-  
स्तान्निरूपयितुमादौ तृतीयोद्देशकार्यसंग्रहाय गाथाद्वयमाह—‘ बहुकम्म ’ इत्यादि,  
‘ भविण् ’ इत्यादि च—

मूलम्—गाथा

‘ बहुकम्मे वत्थ पोग्गल पओगसा वीससा ये सादीए ।

कम्मट्ठिईं तिथे संजये सम्मदिट्ठी ये सन्नी य ॥ १ ॥

भविण् दंसण—पज्जत्त—भासअ—परित्त,—नाण—जोगे य ।

उवओगा—ऽऽहारग—सुहुम—चरिम—वंधे यं अप्पवहु ॥ २ ॥

गाथा छाया—बहुकर्म, वत्थ पुद्गलाः प्रयोगेन विस्रसया च सादिकः ।

कर्मस्थिति—स्त्री—संयत—सम्यग्दृष्टिश्च संज्ञी च ॥ १ ॥

भविको दर्शन—पर्याप्त—भाषक—परीताज्ञान—योगाश्च ।

उपयोगा—ऽऽहारक—सूक्ष्म—चरमबन्धश्चाल्पबहुत्वम् ॥ २ ॥

टीका—‘ बहुकर्म ’ महाकर्मणो जीवस्य सर्वतः पुद्गला बध्यन्ते  
इत्यादिनिरूपणम् १, ‘ वत्थपोग्गलपओगसा वीससा य ’ ‘ वस्त्रे पुद्गलाः प्रयो-

‘ बहुकम्म ’ इत्यादि ।

बहुकर्म १, वस्त्रपुद्गल प्रयोग से या स्वभाव से २, सादिक ३, कर्म-  
स्थिति ४, स्त्री ५, संयत ६, सम्यक् दृष्टि ७, संज्ञी, भव्य, दर्शन,  
पर्याप्त, भाषक, परित्त, ज्ञान, योग, उपयोग, आहारक, सूक्ष्म, चरम  
बंध ८, अल्पबहुत्व ९,

टीकार्थ—द्वितीय उद्देशक में आहार की अपेक्षा से पुद्गलों का निरू-  
पण किया जा चुका है अथ उन्होंने पुद्गलों का बंधादिककी अपेक्षा लेकर  
इस उद्देशक में निरूपण करने के लिये, सब से प्रथम सूत्रकार ने इस

“ बहुकम्म ” इत्यादि—

संग्रहगाथा—(१) बहुकर्म, (२) वस्त्रपुद्गल प्रयोगशी के स्वभावशी,  
(३) सादिक, (४) कर्मस्थिति, (५) स्त्री, (६) संयत, (७) सम्यग्दृष्टि, (८)  
संज्ञी, भव्य, दर्शन, पर्याप्त, भाषक, परित्त, ज्ञान, योग, उपयोग, आहारक,  
सूक्ष्म, चरम, बंध, (९) अल्पबहुत्व.

टीकार्थ—भीत उद्देशकमां आहारनी अपेक्षाये पुद्गलानुं निरूपण करवाभां  
आणुं छे. इवे अत्र पुद्गलानुं बंधादिकनी अपेक्षाये निरूपण करवाने भाटे

ગેણ વિસ્રસયા ચ ' યથા વસ્ત્રે પુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન-પયોગદ્વારા વિસ્રસયા સ્વભાવિક તયા ચ વધ્યન્તે તથા જીવાનામપિ કિમ્ કર્મપુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન વિસ્રસયા ચ વધ્યન્તે ?' ઇત્યાદિ વિવેચનમ્ ૨, ' સાદીપ ' ' સાદિકઃ ' -યથા વસ્ત્રસ્ય સાદિઃ પુદ્ગલચયઃ, एवं जीवानामपि किम् सादिः कर्मपुद्गलचयः ?' ઇત્યાદિનિરૂપણમ્ ૩, ' કમ્મદ્વિહ ' કર્મસ્થિતિઃ કર્મણાં સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૪, ' ઇત્થી ' સ્ત્રી ' કિમ્ સ્ત્રી.

ઉદ્દેશક કે અર્થ કો સંગ્રહ કરને ચાલી इन दो गाथाओं को कहा है- ( बहुकम्म ) इत्यादि तथा ( भविष्य ) इत्यादि-( बहुकर्म ) इस पद से प्रश्नरूप में यह प्रकट किया गया है कि जिस जीव के कर्म बहुत हैं-उस के क्या कर्मपुद्गलों का सर्व प्रकार से बंध होता है ? इत्यादि ( वत्थ-पोगल पओगसा बीससा य ) इस पद द्वारा प्रश्न रूपमें यह प्रकट किया गया है कि जिस प्रकार से वस्त्र में पुद्गल प्रयोगद्वारा और स्वभाविक रीति से बंधते हैं, उसी तरह से क्या जीवों के भी कर्मपुद्गल प्रयोग और स्वभाव से बंधते हैं ? इत्यादि ( सादिकः ) इस पद द्वारा प्रश्नरूप में यह प्रकट किया गया है कि जिस प्रकार से वस्त्र में सादि पुद्गलों का चय होता है, उसी प्रकार से क्या जीवों को भी सादि कर्म पुद्गलों का चय होता है ? इत्यादि ( कम्मद्विह ) इस पद द्वारा कर्म की स्थिति का विचार प्रकट किया गया है ( इत्थी ) इस पद द्वारा यह पूछा गया

સૂત્રકારે આ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમાં બે સંગ્રહગાથાઓ આપી છે. તે ગાથાઓ આ ઉદ્દેશકમાં આવતા વિષયને પ્રકટ કરે છે. પહેલી ગાથા “ बहुकम्म ” ઇત્યાદિ. બીજી ગાથા “ भविष्य ” ઇત્યાદિ છે. “ बहुकर्म ” આ પદથી પ્રશ્નરૂપે બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જે જીવનાં કર્મ ઘણાં જ છે એવો બહુકર્મ-જીવ શું સર્વ પ્રકારે કર્મનો બંધ કરે છે ? ઇત્યાદિ.

“ वत्थ-पोगल-पओगसा बीससा य ” આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેવી રીતે વસ્ત્રમાં પુદ્ગલ પ્રયોગદ્વારા અને સ્વાભાવિક રીતે બંધાય છે, એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં કર્મપુદ્ગલ પણ પ્રયોગ અને સ્વાભાવિકી બંધાય છે ? ઇત્યાદિ.

“ सादिकः ” આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેમ વસ્ત્રમાં સાદિ ( આદિ યુક્ત ) પુદ્ગલોનો ચય થાય છે, તેમ શું જીવોમાં પણ સાદિ કર્મપુદ્ગલોનો ચય થાય છે.

“ कम्मद्विह ” આ પદ દ્વારા કર્મની સ્થિતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

“ इत्थी ” આ પદ દ્વારા બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે શું સ્ત્રી અથવા



પુરુષાદિર્વાં કર્મવન્ધાતિ ? इत्यादिविचारः ५ 'संजय' संयतः 'कः संय-  
तादिः ? इत्यादिनिरूपणम् ६ 'सम्मदिट्ठी' 'सम्यग्दृष्टिः' कः सम्यग्-  
दृष्ट्यादिः ? इत्यादिनिरूपणम् ७ । एवं 'सन्नी' इत्यादि । 'संज्ञी, भव्यः,  
दर्शनी, पर्याप्तकः, भाषकः, परीतः, ज्ञानी योगी, उपयोगी, आहारकः, सूक्ष्मः,  
चरमः' एतान् समाश्रित्य 'बन्धश्च' बन्धविषयकं निरूपणम् ८, 'अल्पबहु' '  
'अल्पबहुत्वम्' एतेषामेव उपर्युक्तानां स्त्रीप्रभृतीनां कर्मबन्धकानां परस्परम्  
अल्प-बहुत्वविवेचनं प्रतिपादितम् ॥ २ ॥

મહાકર્મા—લ્પકર્મવત્કવ્યતા ।

મહાકર્માલ્પકર્માદીનાં જીવાનાં દુઃખસુખાદિવન્ધતારતમ્યં વસ્તુદૃષ્ટાન્તેન

है कि क्या स्त्री अथवा पुरुष आदि जीव कर्म का बंध करते हैं ? इत्यादि  
(संजय) पद से संयत आदि कोन हैं ? इत्यादि विचार प्रकट किया  
गया है । (सम्मदिट्ठी) पद यह प्रकट करता है कि सम्यग्दृष्टि आदिकौन  
हैं ? (सन्नी) संज्ञी—(भविष्य) भव्य (दंसण) दर्शनी, (पञ्जत्त) पर्याप्तक  
(भाषय) भाषय (परित्ते) परीत, (नाण) ज्ञानी, (जोगे) योगी,  
(उवओगाऽऽहारग) उपयोगी, आहारक, (सुहुम, चरिम) सूक्ष्म, चरम  
ये सब पद यह बतलाते हैं कि इनको अश्रित करके (बंधेय) बन्धवि-  
षयक निरूपण हुआ है (अल्पबहुं) यह पद यह कहता है कि इन्हीं  
उपर्युक्त स्त्री आदि कर्मबन्ध जीवों का परस्पर में अल्प बहुत्व का विचार  
किया गया है ।

પુરુષ આદિ જીવો કર્મનો બંધ કરે છે ? ઇત્યાદિ.

“સંજય” આ પદથી સંયત આદિનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે.

“સમ્મદિટ્ઠી” આ પદ એ પ્રકટ કરે છે કે સમ્યગ્દૃષ્ટિ આદિ કોણ છે ?

“સન્ની” સંજ્ઞી, “ભવિષ્ય” ભવ્ય, “દંસણ” દર્શની, “પજ્જત્ત”  
પર્યાપ્તક, “ભાષય” ભાષક, “પરિત્તે” “નાણ” જ્ઞાની, “જોગે” યોગી,  
“ઉવઓગાઽઽહારગ” ઉપયોગી, આહારક, “સુહુમ, ચરિમ” સૂક્ષ્મ, ચરમ આ  
બધાં પદો એ બતાવે છે કે તે બધાંને અનુલક્ષીને “બંધેય” બંધવિષયક  
નિરૂપણ આ ઉદ્દેશકમાં કરાયું છે.

“અલ્પબહુ” આ પદ એ પ્રકટ કરે છે કે આ ઉદ્દેશકમાં સ્ત્રી આદિ  
કર્મબંધક જીવોમાં કોણ વધારે છે અને કોણ અલ્પ પ્રમાણમાં છે. આ રીતે  
તેમના અલ્પબહુત્વનું આ ઉદ્દેશકમાં પ્રતિપાદન કરાયું છે.

મેણ વિસ્રસયા ચ ' યથા નલ્લે પુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન-પ્રયોગદ્વારા વિસ્રસયા સ્વભાવિક તથા ચ વધ્યન્તે તથા જીવાનામપિ કિમ્ કર્મપુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન વિસ્રસયા ચ વધ્યન્તે ?' ઇત્યાદિ વિવેચનમ્ ૨, ' સાદીપ ' ' સાદિકઃ ' -યથા વસ્ત્રસ્ય સાદિઃ પુદ્ગલચયઃ, એવં જીવાનામપિ કિમ્ સાદિઃ કર્મપુદ્ગલચયઃ ?' ઇત્યાદિનિરૂપણમ્ ૩, ' કમ્મઢિહ ' કર્મસ્થિતિઃ કર્મણાં સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૪, ' ઇત્થી ' સ્ત્રી ' કિમ્ સ્ત્રી,

ઉદ્દેશક કે અર્થ કો સંગ્રહ કરને ચાલી इन दो गाथाओं को कहा है- ( बहुकम्म ) इत्यादि तथा ( भविष्य ) इत्यादि-( बहुकर्म ) इस पद से प्रश्नरूप में यह प्रकट किया गया है कि जिस जीव के कर्म बहुत हैं-उस के क्या कर्मपुद्गलों का सर्व प्रकार से बंध होता है ? इत्यादि ( वत्थ-पोग्गल पओगसा बीससा य ) इस पद द्वारा प्रश्न रूपमें यह प्रकट किया गया है कि जिस प्रकार से वस्त्र में पुद्गल प्रयोगद्वारा और स्वभाविक रीति से बंधते हैं, उसी तरह से क्या जीवों के भी कर्मपुद्गल प्रयोग और स्वभाव से बंधते हैं ? इत्यादि ( सादिकः ) इस पद द्वारा प्रश्नरूप में यह प्रकट किया गया है कि जिस प्रकार से वस्त्र में सादि पुद्गलों का चय होता है, उसी प्रकार से क्या जीवों को भी सादि कर्म पुद्गलों का चय होता है ? इत्यादि ( कम्मडिह ) इस पद द्वारा कर्म की स्थिति का विचार प्रकट किया गया है ( इत्थी ) इस पद द्वारा यह पूछा गया

સૂત્રકારે આ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમાં બે સંગ્રહગાથાઓ આપી છે. તે ગાથાઓ આ ઉદ્દેશકમાં આવતા વિષયને પ્રકટ કરે છે. પહેલી ગાથા “ बहुकम्म ” ઇત્યાદિ. બીજી ગાથા “ भविष्य ” ઇત્યાદિ છે. “ बहुकर्म ” આ પદથી પ્રશ્નરૂપે એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જે જીવનાં કર્મ ઘણાં જ છે એવો બહુકર્મ-જીવ શું સર્વ પ્રકારે કર્મનો બંધ કરે છે ? ઇત્યાદિ.

“ वत्थ-पोग्गल-पओगसा बीससा य ” આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેવી રીતે વસ્ત્રમાં પુદ્ગલ પ્રયોગદ્વારા અને સ્વાભાવિક રીતે બંધાય છે, એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં કર્મપુદ્ગલ પણ પ્રયોગ અને સ્વાભાવિકી બંધાય છે ? ઇત્યાદિ.

“ सादिकः ” આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેમ વસ્ત્રમાં સાદિ ( આદિ યુક્ત ) પુદ્ગલોનો ચય થાય છે, તેમ શું જીવોમાં પણ સાદિ કર્મપુદ્ગલોનો ચય થાય છે.

“ कम्मडिह ” આ પદ દ્વારા કર્મની સ્થિતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

“ इत्थी ” આ પદ દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે શું સ્ત્રી અથવા



વા, રહિયસ્સ વા, આણુપુઘ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ સુદ્ધેણં  
વારિણા ધોઘ્વેમાણસ્સ સવ્વઓ પોગ્ગલા ભિજ્જંતિ, જાવ  
પરિણમત્તિ, સે તેણદ્દેણં ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—તદ્ નૂનં ભદન્ત ! મહાકર્મણઃ, મહાક્રિયસ્ય, મહાસ્રવસ્ય, મહાવેદ-  
નસ્ય, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાશ્વીયન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલા ઉપચીયન્તે,  
સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્વીયન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલા  
ઉપચીયન્તે, સદાસમિતં ચ સ્વલુ તસ્ય આત્મા દૂરૂપતયા, દુર્વર્ણતયા, દુર્ગન્ધ-  
તયા, દૂરસતયા, દુસ્પર્શતયા, અનિષ્ટતયા, અકાન્તા-ડપ્રિયા-ડશુભા-ડનોદ્ધા-ડમ-

મહાકર્માલ્પકર્મ વક્તવ્યતા

‘ સે જૂણં ભંતે ! ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—( સે જૂણં ભંતે ! મહાકર્મસ્સ, મહાકિરિયસ્સ, મહાસવસ્સ, મહા-  
વેયણસ્સ, સવ્વઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા  
ઉવચિજ્જંતિ ) હે ભદન્ત ! યહ નિશ્ચિત હૈ કયા કિ જો  
જીવ મહાકર્મવાલા હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાલા હોતા હૈ, મહા આસ્રવવાલા  
હોતા હૈ ઓર મહાવેદનાવાલા હોતા હૈ, ઉસકે સવ તરફ સે પુદ્ગલોં કા  
બંધ હોતા હૈ ? સવ તરફ સે ઉનકે પુદ્ગલોં કા ચય હોતા હૈ ? સવ તરફ  
સે ઉસકે પુદ્ગલોં કા ઉપચય હોતા હૈ ? ( સયા સમિયં પોગ્ગલા વજ્જંતિ,  
સયા સમિયં પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, સયા સમિયં પોગ્ગલા ઉવચિજ્જંતિ,  
સયા સમિયં ચ જં તસ્સ આયા દુરૂવત્તાણ દુવણ્ણતાણ દુર્ગંધત્તાણ, દુર-

મહાકર્મ અને અલ્પકર્મ વક્તવ્યતા—

“ સે જૂણં ભંતે ! ” इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—( સે જૂણં ભંતે ! મહાકર્મસ્સ, મહાકિરિયસ્સ, મહાસવસ્સ, મહા-  
વેયણસ્સ, સવ્વઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા  
ઉવચિજ્જંતિ ? ) હે ભદન્ત ! શું એ વાત નિશ્ચિત છે કે જે જીવ મહાકર્મ-  
વાળો હોય, મહાક્રિયાવાળો પણ હોય છે, મહાઆસ્રવવાળો હોય છે અને  
મહાકર્મવાળો હોય છે, તે બધી દિશાઓમાંથી કર્મપુદ્ગલોનો બંધ કરતો રહે  
છે ? શું તે બધી દિશાઓમાં કર્મપુદ્ગલોનો ચય કરતો હોય છે ? શું તેને  
બધી દિશાઓમાંથી કર્મપુદ્ગલોનો ઉપચય થતો હોય છે ? ( સયા સમિયં  
પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સયાસમિયં પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, સયા સમિયં પોગ્ગલા ઉવચિજ્જંતિ,  
સયા સમિયં ચ જં તસ્સ આયા દુરૂવત્તાણ દુવણ્ણતાણ દુર્ગંધત્તાણ, દુરસત્તાણ, દુસ્પર્શ-  
ત્તાણ, અનિષ્ટત્તાણ, અકાન્તા-ડપ્રિયા-ડશુભા-ડનોદ્ધા-ડમ-

प्रतिपादयति—‘ से णूणं भंते ! ’ इत्यादि ।

मूळम्—से णूणं भंते ! महाकम्मस्स, महाकिरियस्स महासवस्स, महावेयणस्स सव्वओ पोग्गला वज्झंति, सव्वओ पोग्गला चिज्जंति, सव्वओ पोग्गला उवचिज्जंति ? । सया समिअं पोग्गला वज्झंति, सयासमियं पोग्गला चिज्जंति, सया समियं पोग्गला उवचिज्जंति, सया समियं चं णं तस्स आया दूरुवत्ताए, दुव्वणत्ताए, दुग्गं-धत्ताए, दूरसत्ताए, दुप्फासत्ताए, अणिट्ठत्ताए, अकंत-अप्पिय-असुभ-अमणुन्न-अमणामत्ताए, अणिव्वच्छियत्ताए, अभिज्झि-यत्ताए, अहत्ताए--णो उड्डत्ताए, दुक्खत्ताए नो सुहत्ताए, भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? । हंता, गोयमा ! महाकम्मस्स तं चेव । से केणट्ठेणं० ? गोयमा ! से जहा नामए वत्थस्स अहयस्स वा, धोयस्स वा, तंतुग्गयस्स वा आणुपुव्वीए परिभुज्जमाणस्स सव्वओ पोग्गला वज्झंति, सव्वओ पोग्गला चिज्जंति, जाव-परिणमइ, से तेणट्ठेणं० । से णूणं भंते ! अप्प-कम्मस्स, अप्पकिरियस्स, अप्पासवस्स अप्पवेयणस्स सव्वओ पोग्गला भिज्जंति, सव्वओ पोग्गला छिज्जंति, सव्वओ पोग्गला विद्धंसंति, सव्वओ पोग्गला परिविद्धंसंति, सया समियं पोग्गला भिज्जंति, सया समियं पोग्गला छिज्जंति, विद्धस्संति, परिवि-द्धस्संति, सया समियं च णं तस्स आया सुरुवत्ताए पसत्थं नेयव्वं, जाव-सुहत्ताए णो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! जाव--परिणमइ । से केणट्ठेणं० ? गोयमा ! से जहा नामए वत्थस्स जल्लियस्स वा, पंकिरियस्स वा, मइल्लियस्स

ધીયન્તે, યાવત્-પરિણમતિ, તત્ તેનાર્થેન૦, । તદ્ નૂનં મદન્ત ? અલ્પકર્મણઃ, અલ્પક્રિયસંપ, અલ્પાસ્રવસ્ય, અલ્પવેદનસ્ય, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ મિથ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલા િઠ્ઠધન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વિઘ્વંસન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ પરિવિઘ્વંસન્તે, સદા સમિતં

તંતુગયસ્સ વા આણુપુન્ઘીણપરિભુજ્જમાણસ્સ સવ્વાઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ સવ્વાઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ, સે તેણદ્દેણં ) હે ગૌતમ ! જેસે કોઈ એક નવીન અહત-અક્ષત-અપરિભુક્ત-નહીં પહિરા હુઆ એસા વસ્ત્ર હો અથવા એસા વસ્ત્ર હો જો પહિન કરકે ફિર સાફ કિયા ગયા હો અથવા એસે વસ્ત્ર હો જો તુરીવેમાદિરૂપ તન્ત્ર સે અમી ૨ ઉતારા ગયા હો તો એસે વહ વસ્ત્ર જેસે અપને પહિરને કે કામ મેં આતા રહતા હૈ -તૈસે ૨ વહ મલિન હોતા રહતા હૈ-અર્થાત્ સય તરફ સે પુદ્ગલ આ આકર ઉસમેં સંવંદિત હોતે રહતે હૈં, સય તરફ સે આ આ કરકે પુદ્ગલ ઉસમેં નિધત્તા હોતે રહતે હૈં, યાવત્ વે પુદ્ગલ ઉસમેં પર્યાયાન્તરોં કો પાંતે રહતે હૈં-હસી કારણ વહ કાલાન્તર મેં રસોઈ ઘર મેં દાલ શાક આદિ કે વર્તનોં કો સિગડી ડપર સે ઉતારને આદિ કે કામ મેં આને વાલે વસ્ત્ર કે સમાન મૈલા હો જાતા હૈ । હસી કારણ હે ગૌતમ ! મેંને મહા-કર્મ આદિ વિશેષણોંવાલે જીવ કે વિષય મેં પૂર્વોક્ત રૂપ સે કહા હૈ । ( સે ણૂણં મંતે ! અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પકિરિયસ્સ અપ્પાડ્ડસવસ્સ, અપ્પવે-યણસ્સ, સવ્વઓ પોગ્ગલા વિદ્ધંસંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા પરિવિદ્ધંસંતિ,

માણસ્સ સવ્વઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ, સે તેણદ્દેણં ) હે ગૌતમ ! જેમકે કોઈ એક નવીન ( વાપર્યા વિનાનું ) વસ્ત્ર હોય, અથવા એવું વસ્ત્ર હોય કે જેને પહેરીને સાફ કરવામાં આવ્યું હોય, અથવા એવું વસ્ત્ર હોય કે જેને સાળ આદિ ઉપર તાણાવાણાથી વણીને તૈયાર કરવામાં આવ્યું હોય. એવાં તે વસ્ત્રને જેમ જેમ પહેરવાના ઉપયોગમાં લેવામાં આવે તેમ તેમ તે વધારેને વધારે મલિન થતું જાય છે-એટલે કે બધી દિશામાંથી પુદ્ગલો આવી આવીને તેની ઉપર ચોટતાં રહે છે, તેના ઉપર જમા થતાં રહે છે, ( યાવત્ ) તે પુદ્ગલો તેમાં પર્યાયાન્તરો ( એક પર્યાયમાંથી બીજી પર્યાયમાં પરિભ્રમન પામતાં રહે છે, તે કારણે કાળાન્તરે તે વસ્ત્ર મસોતાના એવું મલિન થઈ જાય છે. હે ગૌતમ ! તે કારણે મહાકર્મઆદિથી યુક્ત જીવના વિષયમાં મેં ઉપર પ્રમાણે કહ્યું છે.

( સે ણૂણં મંતે ! અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પકિરિયસ્સ, અપ્પાડ્ડસવસ્સ, અપ્પવેય-ણસ્સ સવ્વઓ પોગ્ગલા વિદ્ધંસંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા પરિવિદ્ધંસંતિ, સયા સમિયં



નોડમતયા, અનિચ્છિતયો, અભિધ્યનતયા, અપસ્તયા, નો ઝર્ચતયા, દુઃસ્વતયા, નો સુસ્વતયા ભૂયો ભૂયઃ પરિણમતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! મહાકર્મણસ્તદેવ । તત્કેના-  
ર્યેન૦ ? ગૌતમ ! તદ્ યથા નામ-વચ્સ્ય અહતસ્ય વા, પ્રીતસ્ય વા, તન્મોદ-  
ગતસ્ય વા, આનુપૂર્ણા પરિભુજ્યમાનસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલા-

સત્તાણ, દુષ્ણસત્તાણ અણિદ્ધત્તાણ, અકંત, અપ્પિય-અસુખઅમણુસ અમ-  
ણામત્તાણ અણિવ્વચ્છિયત્તાણ, અભિજ્ઞિયત્તાણ અહત્તાણ, ણો ઉદ્ધત્તાણ, દુક્ખત્તાણ, નો સુહત્તાણ ભુજ્જો ૨ પરિણમદ્ધ ) કયા એસે જીવ કે નિત્ય  
નિરન્તર પુદ્ગલોં કા વંધ હોતા રહતા હૈ ? નિરંતર ઉસકે કયા પુદ્ગલોં કા  
વચ હોતા રહતા હૈ ? નિરન્તર કયા ઉસકે પુદ્ગલોં કા ઉપવચ હોતા રહતા  
હૈ ? ઉસકા આત્મા-શરીરરૂપ યાહ આત્મા-કયા સદા નિરન્તર દુરૂપ  
રૂપ સે, દુર્વર્ણરૂપ સે, દુર્ગંધરૂપ સે, સ્વોદે રસરૂપ સે, સ્વોદેસ્પર્શરૂપ સે,  
અનિષ્ટરૂપ સે, અકાન્તરૂપ સે, અપ્રિયરૂપ સે, અમનામરૂપ સે, અનીપ્પિ-  
સતરૂપ સે, અભિપ્પિસતરૂપ સે, જઘન્યરૂપ સે, અનૂર્ધ્વરૂપ સે, દુઃસ્વરૂપ સે  
ઔર અસુખરૂપ સે, વારંવાર પરિણમિત હોતા રહતા હૈ ? ( હંતા ગોયમા !  
મહાકમ્મસ્સ તં ચેવ ) હાં, ગૌતમ ! મહાકર્મવાલે જીવ કી યહી પૂર્વોક્ત  
સવ કુછ સ્થિતિ હોતી હૈ । ( સે કેણદ્દેણં ) હે મદન્ત ! એસા આપ કિસ  
કારણ સે કહતે હૈ ? ( સે જહાનામણ વચ્સ્ય અહયસ્સ વા ધોયસ્સ વા,

સત્તાણ અણિદ્ધત્તાણ અકંત, અપ્પિય-અસુખ, અમણુસ અમણામત્તાણ અણિવ્વચ્છિય-  
ત્તાણ, અભિજ્ઞિયત્તાણ અહત્તાણ, ણો ઉદ્ધત્તાણ, દુક્ખત્તાણ, નો સુહત્તાણ ભુજ્જો ૨  
પરિણમદ્ધ ) શું એવો એવ નિત્ય નિરંતર પુદ્ગલોનો વંધ કરતો રહે છે ?  
શું તે નિરંતર પુદ્ગલોનો ચય કર્યા કરે છે ? શું નિરંતર તેનાં પુદ્ગલોનો  
ઉપચય થતો રહે છે ? તેનો આત્મા-શરીરરૂપ યાહ આત્મા-શું નિરંતર દુરૂપે  
ખરાબ વર્ણરૂપે, દુર્ગંધરૂપે, ખરાબ રસરૂપે, ખરાબ સ્પર્શરૂપે, અનિષ્ટરૂપે,  
અકાન્તરૂપે, અપ્રિયરૂપે, અમનામરૂપે, ( અમનોસરૂપે ), અનીપ્પિસતરૂપે, અભિ-  
પ્પિસતરૂપે, જઘન્યરૂપે, અનૂર્ધ્વરૂપે, દુઃખરૂપે અને અસુખરૂપે વારંવાર પરિભ્રમન  
ચામ્યા કરે છે ?

( હંતા ગોયમા ! મહાકમ્મસ્સ તં ચેવ ) હા, ગૌતમ ! મહાકર્મવાળા એવની  
એવી જ દશા થાય છે.

( સે કેણદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહે છે ? ( સે જહા  
નામણ વચ્સ્ય અહયસ્સ વા ધોયસ્સ વા, તંતુગાયસ્સ વા આણુપુવ્વીણ પરિભુજ્જ-

કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! તદ્ યથા નામ વસ્તુસ્ય જલ્હિતસ્ય વા પક્લિતસ્ય વા મલિ-  
તસ્ય વા, રજસ્કિતસ્ય વા, આનુપૂર્વ્યાં પરિકર્મ્યમાણસ્ય શુદ્ધેન વારિણા ધોવ્ય-  
માનસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલા ભિઘ્નન્તે, યાવત્-પરિણમતિ, તત્ તેનાર્થેન૦ ॥ સુ ૧ ॥

ટીકા—‘ સે પૂણં મંતે ! મહાકર્મસ્ય, મહાકિરિયસ્સ, મહાસવસ્સ,  
મહાવેયણસ્સ સન્વઓ પોગ્ગલા વ્ઝ્ઝંતિ ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ — હે ભદન્ત !

જાવ પરિણમંતિ ) હાં, ગૌતમ ! યાવત્ પરિણમતા રહતા હૈ । ( સે કેળ-  
દ્દેણં ) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? ( સે જહા  
નામણ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા પંકિયસ્સ વા મહલ્હિયસ્સ વા રહલ્હિયસ્સ  
વા આણુપુવ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ સુદ્દેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ  
સન્વઓ પોગ્ગલા ભિઝ્ઝંતિ, જાવ પરિણમંતિ, સે તેણદ્દેણં૦ ) હે ગૌતમ !  
જેસે કોઈ એક વસ્ત્ર એસા હો કિ જો શારીરિક મેલ સે યુક્ત હો, જિસ  
મેં મીલી કીચઢ લગી ઢુઈ હો, રજ સહિત હો, તો વહ જેસે ધીરે ર સાફ  
કિયે જાને પર, શુદ્ધપાનીસે ધોયે જાને પર સાફ-શુદ્ધ હો જાતા હૈ અર્થાત્  
ઉસમેં સંસક્ત હુણ મલિન પુદ્ગલ ઉસસે સય તરફ સે પૃથક્ હો જાતે હૈં  
યાવત્ વહ વસ્ત્ર અપને રૂપમેં પરિણમ જાતા હૈ-ઈસકા કારણ હૈ ગૌતમ !  
મેંને અલ્પકર્માદિ વિશેષણોવાલે જીવકે વિષયમેં પૂર્વોક્તરૂપસે કહા હૈ ।

ટીકાર્થ—મહાકર્મ ઓર અલ્પકર્મ આદિ વાછે જીવોં કે દુઃખ સુખ  
આદિ બંધ કી તરત્તમતા ( ભેદ ) ઈસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કર

હો, ગૌતમ ! તેનો આત્મા તે રૂપે વારંવાર પરિણમન પામ્યા કરે છે.

( સે કેળદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! આપ શા દારણે એવું કહો છો ? ( સે જહા  
નામણ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા, મહલ્હિયસ્સ વા, રહલ્હિયસ્સ વા, આણુ-  
પુવ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ સુદ્દેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ સન્વઓ પોગ્ગલા ભિઝ્ઝંતિ  
જાવ પરિણમંતિ, સે તેણદ્દેણં )

હે ગૌતમ ! કોઈ એક વસ્ત્ર શરીરના પરસેવાથી યુક્ત હોય, જેના ઉપર  
ખીની માટી લાગી હોય ( કાદવથી જે ખરડાયેલું હોય ) જેના ઉપર ખૂણની  
રજ જેમા થયેલી હોય, એવાં વસ્ત્રને ધીમે ધીમે સાફ કરવાથી, અને શુદ્ધ  
પાણીમાં ધોવાથી તે સાફ થઈ જાય છે—એટલે કે તેને વળગેલાં મલિન પુદ્ગલો  
તેમાંથી તદ્દન અલગ થઈ જાય છે, અને તે વસ્ત્ર શુદ્ધરૂપે પરિણમન પામે છે.  
હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવોના વિષયમાં  
પૂર્વોક્ત કથન કર્યું છે.

ટીકાર્થ—મહાકર્મ, અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવોના દુઃખ, મુખ આદિ  
બંધના ભેદોનું સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા નિરૂપણ કરે છે—ગૌતમ સ્વામી મહાવીર



હે બદન્ત ? શું એ નિશ્ચિત છે કે જે જીવ અલ્પકર્મવાળો, અલ્પક્રિયા-  
વાળો, અલ્પઆસ્ત્રવવાળો અને અલ્પવેદનાવાળો હોય તેનાં પુદ્ગલો બધી તરફથી  
અલગ થઈ જાય છે ? બધી તરફથી છિન્ન થઈ જાય છે ? બધી તરફથી નષ્ટ  
થઈ જાય છે ? બધી તરફથી સર્વરૂપે નષ્ટ થઈ જાય છે ? શું તેનાં તે પુદ્ગલો  
સદા નિરંતર તેનાથી અલગ થતાં રહે છે ? શું તે પુદ્ગલો સદા નિરંતર છેદાતાં  
રહે છે ? શું તેનાં તે પુદ્ગલ સદા નિરંતર નષ્ટ થતાં રહે છે ? શું તેનાં તે  
પુદ્ગલો સદા નિરંતર સર્વરૂપે નષ્ટ થતાં રહે છે ? ( સયા સમિયં ચ જં તસ્મ  
આયા સુંહવત્તાય પદ્મત્થં નેયઙ્ગં ) અને તેનો આત્મા બાહ્યશરીરરૂપ આત્મા  
શું નિરંતર એટલે કે જ્યાં સુધી શરીરનું અસ્તિત્વ રહે ત્યાં સુધી સુરૂપ, સુવર્ણ  
( અહીં પ્રશસ્ત વર્ણ આદિ સમજવા ) આદિ રૂપે, ( જાવ સુહત્તાય જો દુઃખ-  
ત્વાય મુજ્જોર પરિણમંતિ ? ) અને કાન્તથી લઈને સુખ પર્યાન્તના રૂપે અને  
અદુઃખરૂપે વારંવાર પરિણમિત થયા કરે છે ? ( હંતા ગોયમા ! જાવ પરિણમંતિ ).

પુદ્ગલાઃ ઉપચીયન્તે નિપેક્ષરચનતઃ ઉપચિતા ભવન્તિ કિમ્ ? અથવા વન્ધનતો વધ્યન્તે, નિધત્તત્ત્રીયન્તે, નિકાચનત ઉપચીયન્તે કિમ્ ? ‘ સયા સમિયં પોગ્ગલા વજ્જંતિ ’ સદા-સર્વદા-નિત્યમ્, સમિતં-નિરન્તરં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે ? સદાત્વં તુ વ્યવહારતોઽસાતત્યેઽપિ સ્યાત્ અત આઢ-સમિતપ્રિતિ ’ ‘ સયા સમિયં પોગ્ગલા

ઉપચિત્ત હોતે હેં કયા ? અથવા-( વજ્જંતિ, ચિજ્જંતિ, ઉવચિજ્જંતિ ) એસી इन तीन क्रियाओं का जो सूत्रकार ने पाठ रखा है सो उसका अभिप्राय ऐसा भी हो सकता है कि प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश इन चार प्रकार के बंधों की अपेक्षा लेकर ( वज्जंति ) ऐसा प्रश्न किया गया है कर्मवन्धन के बाद कर्मों में दस १० प्रकार की अवस्थाएँ होती हैं उनमें एक अथवा निधत्त है सो इस अवस्था को लेकर ( चिज्जंति ) ऐसा प्रश्न किया गया है और निकाचित अवस्था को लेकर ( उवचिज्जंति ) ऐसा प्रश्न किया है ( सया समियं पोग्गला वज्जंति ) ऐसा जो पूछा गया है-सो उसका अभिप्राय ऐसा है कि ( जीवो समयवद्धं वज्जंति ) इस सिद्धान्त स्वीकृत मान्यता को ध्यान में रखकर ही पूछा गया है-अर्थात् जीव क्या समयासमय कर्मका बंध करता है ? यहाँ जो ( समियं ) यह पद दिया गया है वह इस बात को दूर करने के लिये दिया गया है कि निरंतरता के अभाव में भी जो लोकस्वर्ग से ( सदा )

છે ? “ સન્વઓ પોગ્ગલા ઉવચિજ્જંતિ ” શું એવો જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી કર્મવર્ગણા રૂપ પુદ્ગલોનો ઉપચય કરે છે ? ( વજ્જંતિ, ચિજ્જંતિ, ઉવચિજ્જંતિ ) આ ત્રણે ક્રિયાઓનો એવો પણ અર્થ થાય છે કે પ્રકૃતિ, સ્થિતિ, અનુભાગ અને પ્રદેશ આ ચાર પ્રકારના બંધોની અપેક્ષાએ “ વજ્જંતિ ” એવો પ્રશ્ન કરાયો છે.

કર્મવન્ધન થયા પછી કર્મોમાં દસ પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે, તેમાંની એક નિધત્ત અવસ્થા છે, અને તે નિધત્ત અવસ્થાને અનુલક્ષીને “ ચિજ્જંતિ ” એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે, અને નિકાચન અવસ્થાને અનુલક્ષીને “ ઉવચિજ્જંતિ ” એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે. “ સયાસમીયં પોગ્ગલા વજ્જંતિ ” આ પ્રશ્ન પૂછવા પાછો જનો હેતુ એવો છે કે “ જીવો સમયવદ્ધં વજ્જંતિ ” શું જીવ પ્રત્યેક સમયે કર્મનો બધ કરે છે ? સૂત્રમાં જે “ સમિયં ” પદ આપવામાં આવ્યું છે તે એ વાતને દૂર કરવાને માટે આપવામાં આવ્યું છે કે નિરન્તરતાનો અભાવ હોવા છતાં લોકો “ સદા ” પદનો ઉપયોગ કરતા હોય છે. અહીં તો સૂત્રકાર એમ બતાવવા માગે છે કે જીવ સદા ( હંમેશા ) નિરન્તર ( અવધાન

તદ્ અય, નૂનં નિશ્ચયેન કિમ્ મહાકર્મણઃ સ્થિત્યાપેક્ષયા મહુર્કર્મવતઃ મહાક્રિયસ્ય ક્રિયાયિત્યાદિમહાક્રિયાયુક્તસ્ય, મહાસ્રવસ્ય — કર્મબંધહેતુમૂત-મહામિથ્યાત્વમહારમ્ભમહાપરિશ્રદ્ધાદિમતઃ, મહાવેદનસ્ય — મહાદાહજ્વરાદિજનિત-પીડાયુક્તસ્ય જીવસ્ય, સર્વતઃ સર્વાંસુ દિશુ, સર્વાંત્ર ચા જીવપ્રદેશાન્ અશ્રિત્ય પુદ્ગલાઃ કર્મપરમાણવઃ વધ્યન્તે ? ' સર્વઓ પોગલા નિજ્જન્તિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ ધીયન્તે ? વંધનરૂપેણ સંઘટ્ટન્તે કિમ્ ? ' સર્વઓ પોગલા ઉવચિજ્જન્તિ ' સર્વતઃ

રહે છે-હસમેં ગૌતમ પ્રશ્નુ સે પૂછ રહે છે કિ ( સે જૂણં મંતે ! ) હે મદન્ત ! કયા યહ નિશ્ચિત યાત હે કિ ( મહાકર્મસસ ) જિસ જીવ કે કર્મ કી સ્થિતિ વગેરહ યહુત અધિક ઘડી એસે મહાકર્મવાલે જીવ કે અર્થાત્ અધિક સ્થિતિવાલે, અધિક અનુભાગવાલે ઓર અધિક પ્રદેશવાલે કર્મો સે સહિત જીવ કે ( મહાકિરિયસસ મહાસવસસ ) જિસવી કાયિકી આદિ ક્રિયાઈ યહુત ઘડી ચઢી હુઈ છે હસી કારણ જો કર્મબંધ કે હેતુમૂત મહામિથ્યાત્વ, મહારમ્ભ મહાપરિશ્રદ્ધ મેં પેસા હુઆ હે ( મહાવેયણસસ ) મહાદાહજ્વર આદિ જનિત વ્યથા સે જો યહુત ધુરી તરહ તડફડ રહા હે એસે જીવ કે ( સર્વઓ પોગલા વજ્જન્તિ ) સમસ્ત દિશાઓં મેં સે અથવા જીવ કે સર્વ પ્રદેશોં કો આશ્રિત કરકે પુદ્ગલ-કર્મપરમાણુઓં કા સંકલનરૂપ વંધ હોતા હે ? ( સર્વઓ પોગલા ચિજ્જન્તિ ) સમસ્ત દિશાઓં મેં સે અથવા જીવ કે સર્વ પ્રદેશોં કા આશ્રિત કરકે કર્મ વર્ગણારૂપ પુદ્ગલ એસે જીવ દ્વારા વંધનરૂપ સે ગ્રહણ કિયે જાતે છે કયા ? ( સર્વઓ પોગલા ઉવચિજ્જન્તિ ) સર્વતઃ નિપેક્ષ રચના કી અપેક્ષા સે વે

પ્રશ્નુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ સે જૂણં મંતે ! ” હે મદન્ત ! શું એ વાત નિશ્ચિત છે કે “ મહાકર્મસસ ” જે જીવનાં કર્મની સ્થિતિ વગેરે બહુ જ વધારે હોય છે એવા મહાકર્મવાળા જીવના-એટલે કે અધિક સ્થિતિવાળા, અધિક અનુભાગવાળા અને અધિક પ્રદેશવાળા કર્મથી યુક્ત જીવ કે જેની “ મહાકિરિયસસ મહાસવસસ ” કાયિકી આદિ ક્રિયાઓ ઘણી જ વધારે પ્રમાણમાં અને તે કારણે જે કર્મબંધના કારણરૂપ મહામિથ્યાત્વ, મહાઆરંભ, મહાપરિશ્રદ્ધ આદિમાં કસાયેલો હોય છે, “ મહાવેયણસસ ” અને જે મહાદાહ જ્વર આદિથી જનિત વ્યથાથી ( પીડાથી ) બચકર વેદનાનો અનુભવ કરતો હોય છે, એવો જીવ “ સર્વઓ પોગલા વજ્જન્તિ ” શું સમસ્ત દિશાઓમાંથી અથવા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી પુદ્ગલ એટલે કે કર્મપરમાણુઓના સંકલનરૂપ બંધ કરે છે ખરો ? “ સર્વઓ પોગલા ચિજ્જન્તિ ” શું એવો જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી અથવા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી કર્મવર્ગણારૂપ પુદ્ગલોનો અથ કરે



દુષ્કાસત્તાઈ ' દુર્ગન્ધતયા-દુર્ગન્ધત્વેન, દૂરસતયા કટુકટ્યાદિરસત્વેન દુસ્પર્શતયા-  
કર્કશકઠોરાદિસ્પર્શતયા, ' અણિઠ્ઠત્તાઈ ' અણિઠ્ઠતયા કસ્યાપિ ઇચ્છાયા અવિપય-  
ત્વેન ' અકંત-અપ્પિય-અસુખ-અમણુન્ન-અમણામત્તાઈ, અણિચ્છિયેત્તાઈ ' અકાન્ત  
તયા અરમણીયતયા, અપ્પિયતયા પ્રેમરાહિત્યેન અમનોજ્ઞત્વેન, અસુન્દરતયા, અપુખ-  
ત્વેન-અમદ્ગત્તયા, અમનોડમતયા મનસા પ્રાપ્તુમવાઞ્છિતતયા, અણિચ્છિતતયા-  
પ્રાપ્તુમનભિવાઞ્છિતત્વેન 'અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ-જો ઉદ્ધત્તાઈ' અભિધિયતતયા

(દૂરસત્તાઈ) કુત્તિસતરસવાલા (દુષ્કાસત્તાઈ) કુત્તિસતસ્પર્શવાલા,-ક-  
ર્કશ કઠોર આદિસ્પર્શવાલા હોતા હૈ કયા ? ( અણિઠ્ઠત્તાઈ ) કિસી કી  
મી ઇચ્છા કા વિપય મૂત વહ નહીં ઘનતા હૈ કયા ? અર્થાત્ એસે શરીર  
ધારી કો કોઈ મી નહીં ચાહતા હૈ કયા (અકંત-અપ્પિય-અસુખ-અમ-  
ણુન્ન-અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ) વહ સુન્દર નહીં હોતા હૈ કયા ?  
કોઈ મી ઉસસે પ્યાર નહીં કરતા હૈ કયા ? કિસી કે મી મન કો વહ  
નહીં ગમતા હૈ કયા ? કોઈ મી જીવ કયા એસે વ્યક્તિ કી મન સે મી  
કમી વાદ નહીં કરતા હૈ કયા ? અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ " નો ઉદ્ધ-  
ત્તાઈ " દુક્ખત્તાઈ "નો સુદ્ધત્તાઈ મુજ્જો ૨ પરિણમઈ " એસી સ્થિતિ  
કો પ્રાપ્ત કરને કા કિસી કો લોભ મી નહીં હોતા હૈ કયા ? વહ સર્વ  
પ્રકાર સે કયા ચિલકુલ જઘન્યરૂપ ( નીચે પરિસ્થિતિ ) મેં હી રહતા હૈ ?  
કમી મી કયા વહ ઉત્કૃષ્ટ નહીં માના જા સકતા હૈ ? સદા ઉસમેં  
દુઃખોં કા હી વાસ રહતા હૈ કયા ? કમી મી કયા ઉસમેં સુખરૂપતા  
કો માસતક મી નહીં હોતા હૈ ? ઇસ રૂપ સે હી વહ કયા પ્રત્યેક ક્ષણ  
૨ મેં પરિણામિત હોતા રહતા હૈ ? તાત્પર્ય પૂછને કા કેવલ યહી હૈ કિ

ખરાળ સ્પર્શવાળું ( કર્કશ, કઠોર, આદિ સ્પર્શવાળું ) થાય છે ખરું ? ( અણિ-  
ઠ્ઠત્તાઈ ) શું એવા જીવને કોઈ પણ ચાહતું નથી ? ( અકંત, અપ્પિય, અસુખ,  
અમણુન્ન, અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ ) શું તે સુંદર હોતો નથી ? શું કોઈ પણ  
તેના પર પ્રેમ રાખતું નથી ? શું કોઈના મનને તે ગમતો નથી ? શું કોઈ  
પણ વ્યક્તિ એવા જીવને મનથી પણ કદી વાદ કરતી નથી ? ( અભિજ્ઞિયત્તાઈ  
અદત્તાઈ, નો ઉદ્ધત્તાઈ, દુક્ખત્તાઈ નો સુદ્ધત્તાઈ મુજ્જો મુજ્જો પરિણમઈ ) એવી  
સ્થિતિને પ્રાપ્ત કરવાનો શું કોઈને પણ લોભ થતો નથી ? શું તે સર્વ પ્રકારે  
અધમ દશામાં જ રહે છે ? શું કદી પણ તેની ઉન્નતિ થતી નથી ? શું સદા  
તેને દુઃખો જ સહન કરવા પડે છે ? શું તેને કદી પણ સુખનો ભાસમાત્ર  
પણ થતો નથી ? આ પ્રકારે જ શું તે સદા પરિણમિત થતો રહે છે ?

ચિજ્જંતિ ? ' સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ પીયન્તે ? ' સયા સમિયં પોગલા ઉવચિજ્જંતિ ' સદા સમિતં પુદ્ગલા ઉપપીયન્તે ? ' સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા ' સદા સર્વદા સમિતં સતતં ચ સ્વલુ તસ્ય મહાકર્માદિમતો જીવસ્ય આત્મા, યસ્ય જીવસ્ય પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે તસ્ય આત્મા-શરીરરૂપવાદ્યાત્મા 'દુરુવત્તાણ, દુવ્વગ્ગત્તાણ' દુરુ-પતયા કુત્તિસતરૂપતયા, દુર્વર્ણતયા કુત્તિસતવર્ણતયા ' દુર્ગંધત્તાણ, દુરસત્તાણ' એસા વ્યવહાર હો જાતા હૈ સો એસી યાત યદાં નહીં સમક્ષની ચાહિયે અર્થાત્ એસા જીવ તો-સદા-હમેશા-નિરન્તર હી અન્તર-વ્યવધાન-પદે વિના હી-કર્મોં કા વંધ કરતા રહતા હૈ કયા ? ઉત્તકા જયતક વહ સંસારદશા મેં હસ સ્થિતિવાલા બના રહતા હૈ એસા એક ભી સમય નહીં નિકલતા હૈ કયા કિ જિસમેં ઉત્તકે કર્મવંધ ન હોતા રહતા હો ? કર્મ-વંધ હો જાને કે વાદ ( સયા સમિયં પોગલા ચિજ્જંતિ ) નિરન્તર ઉત્ત કે વે વંધદશા કો પ્રાપ્ત હુણ કર્મવર્ગણારૂપ પુદ્ગલ ચયરૂપ મેં ઓર ( સયા-સમિયં પોગલા ઉવચિજ્જંતિ ) ઉપચયરૂપ અવસ્થા મેં આતે રહતે હૈં કયા ? ( સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા ) જિસ મહાકર્મ આદિ વિશેષણોવાલે જીવ કે નિરન્તર કર્મપુદ્ગલ વંધતે રહતે હૈં ઉત્ત જીવ કા આત્મા-બાહ્ય શરીરરૂપ આત્મા ( દુરુવત્તાણ, દુવ્વગ્ગત્તાણ ) કુત્તિસતરૂપતા કે કુત્તિ-તવર્ણતા સે યુક્ત હોતા રહતા હૈ કયા ? તાત્પર્ય પૂછને કા યહ હૈ કિં એસે કર્મવંધનાદિરૂપ ભાર સે અધિક વજનદાર બને હુણ જીવ કા શરીર કુત્તિસતરૂપવાલા કુત્તિસતવર્ણવાલા, ( દુર્ગંધત્તાણ ) કુત્તિસત દુર્ગંધવાલા

પડ્યા વિના ) કર્મોના બંધ કરે છે. પ્રશ્નકાર એ બાણુના માગે છે કે મહા-કર્મ આદિથી યુક્ત જીવ શું સદા નિરંતર કર્મોના બંધ કરતો રહે છે ? જ્યાં સુધી તે સંસારદશામાં એજ સ્થિતિવાળો રહે ત્યાં સુધી તે એક પણ એવો સમય વ્યતીત કરતો નથી કે જ્યારે તેના દ્વારા કર્મબંધ બંધાતો ન હોય. કર્મબંધ થઈ ગયા પછી ( સયા સમિયં પોગલા ચિજ્જંતિ ) તે જીવના બંધદશાને પામેલાં કર્મવર્ગણારૂપ પુદ્ગલો શું નિરંતર ચય અને ( સયા સમિયં પોગલા ઉવચિજ્જંતિ ) ઉપચયરૂપ અવસ્થામાં આવતાં રહે છે ? ( સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા ) જે મહાકર્મ આદિ વિશેષણોવાળા જીવનાં કર્મપુદ્ગલ નિર-ન્તર બંધદશાને પ્રાપ્ત કરતાં રહેતાં હોય છે, તે જીવનો આત્મા બાહ્યશરીર રૂપ આત્મા- ( દુરુવત્તાણ, દુવ્વગ્ગત્તાણ ) કુરૂપતાથી અને દુર્વણુતાથી ( ખરાબ વણુથી ) શું યુક્ત થતો રહે છે ? આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે એવાં કર્મ-બંધનાદિરૂપ ભારથી અધિક વજનદાર બનેલા જીવનું શરીર શું ખરાબ રૂપ-વાળું, ( દુર્ગંધત્તાણ ) દુર્ગંધવાળું, ( દુરસત્તાણ ) ખરાબ રસવાળું,



દુષ્કાસત્તાઈ ' દુર્ગન્ધતયા-દુર્ગન્ધત્વેન, દૂરસતયા કદુકટયાદિરસત્વેન દુસ્પર્શતયા-  
કર્કશકઠોરાદિસ્પર્શતયા, ' અણિઢત્તાઈ ' અણિઢતયા કસ્યાપિ ઇચ્છાયા અવિપય-  
ત્વેન ' અક્રંત-અપ્પિય-અસુમ-અમણુન-અમણામત્તાઈ, અણિચ્છિયેત્તાઈ ' અકાન્ત  
તયા અમણીયતયા, અમિયતયા પ્રેમરાહિત્યેન અમનોજ્ઞત્વેન, અમુન્દરતયા, અમુમ-  
ત્વેન-અમદ્ગલતયા, અમનોઽમતયા મનસા પ્રાપ્તુમવાઞ્ઞિતતયા, અણિચ્છિતતયા-  
પ્રાપ્તુમનભિવાઞ્ઞિતત્વેન 'અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ-નો ઉદ્દત્તાઈ' અભિધિયતતયા

(દૂરસત્તાઈ) કુત્તિસતરસવાલા (દુષ્કાસત્તાઈ) કુત્તિસતસ્પર્શવાલા, -ક-  
ર્કશ કઠોર આદિસ્પર્શવાલા હોતા હૈ કયા ? ( અણિઢત્તાઈ ) કિસી કી  
મી ઇચ્છા કા વિપય મૂત વહ નહીં ઘનતા હૈ કયા ? અર્થાત્ એસે શરીર  
ધારી કો કોઈ મી નહીં ચાહતા હૈ કયા (અક્રંત-અપ્પિય-અસુમ-અમ-  
ણુન-અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ) વહ સુન્દર નહીં હોતા હૈ કયા ?  
કોઈ મી ડસસે પ્યાર નહીં કરતા હૈ કયા ? કિસી કે મી મન કો વહ  
નહીં ગમતા હૈ કયા ? કોઈ મી જીવ કયા એસે વ્યક્તિ કી મન સે મી  
કમી પાદ નહીં ફરતા હૈ કયા ? અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ " નો ઉદ્દ-  
ત્તાઈ " દુક્લત્તાઈ "નો સુહત્તાઈ મુજ્જો ૨ પરિણમઈ " એસી સ્થિતિ  
કો પ્રાપ્ત કરને કા કિસી કો લોભ મી નહીં હોતા હૈ કયા ? વહ સર્વ  
પ્રકાર સે કયા વિલકુલ જઘન્યરૂપ ( નીચે પરિસ્થિતિ ) મેં હી રહતા હૈ ?  
કમી મી કયા વહ ઉત્કૃષ્ટ નહીં માના જા સકતા હૈ ? સદા ડસમેં  
દુઃખોં કા હી વાસ રહતા હૈ કયા ? કમી મી કયા ડસમેં સુખરૂપતા  
કો માસતક મી નહીં હોતા હૈ ? ઇસ રૂપ સે હી વહ કયા પ્રત્યેક ક્ષણ  
૨ મેં પરિણામિત હોતા રહતા હૈ ? તાત્પર્ય પૂછને કા કેવલ ઘહી હૈ કિ

ખરાળ સ્પર્શવાળું ( કર્કશ, કઠોર, આદિ સ્પર્શવાળું ) થાય છે ખરું ? ( અણિ-  
ઢત્તાઈ ) શું એવા જીવને કોઈ પણ ચાહતું નથી ? ( અક્રંત, અપ્પિય, અસુમ,  
અમણુન, અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ ) શું તે સુંદર હોતો નથી ? શું કોઈપણ  
તેના પર પ્રેમ રાખતું નથી ? શું કોઈના મનને તે ગમતો નથી ? શું કોઈ  
પણ વ્યક્તિ એવા જીવને મનથી પણ કદી યાદ કરતી નથી ? ( અભિજ્ઞિયત્તાઈ  
અદત્તાઈ, નો ઉદ્દત્તાઈ, દુક્લત્તાઈ નો સુહત્તાઈ મુજ્જો મુજ્જો પરિણમઈ ) એવી  
સ્થિતિને પ્રાપ્ત કરવાનો શું કોઈને પણ લોભ થતો નથી ? શું તે સર્વ પ્રકારે  
અધમ દશામાં જ રહે છે ? શું કદી પણ તેની ઉન્નતિ થતી નથી ? શું સદા  
તેને દુઃખો જ સહન કરવા પડે છે ? શું તેને કદી પણ સુખનો ભાસમાત્ર  
પણ થતો નથી ? આ પ્રકારે જ શું તે સદા પરિણમિત થતો રહે છે ?

મિથ્યા લોભઃ સા સંજાતાઽસ્મિન્ રૂતિ મિથ્યિતસ્તસ્ય માનસ્તદ્વાદિત્યેન સર્વ-  
યાઽવાઞ્છનીયત્વેન અલોભનીયતયા, અથસ્તયા જયન્યત્વેન, નો ઝર્ધીતયા નોત્ક-  
પ્ત્વેન ' દુઃસ્વત્તાપ, ણો સુદગ્ધાપ ' દુઃસ્વતયા દુઃસ્વત્વેન, નો સુસ્વતયા નો સુસ્વ-  
ત્વેન ' ભુજ્જો ભુજ્જો પરિણમઈ ? ' ભૂયો ભૂયઃ વારં વારં પરિણમતિ ? એવં મહા-  
કર્માદિજીવસ્પાત્મા દુરૂપદુર્વળાદિયુક્તો ભવતિ કિમિતિ માનઃ ।

મગધાન્ આહ—' હંતા, ગોયમા ! મહાકમ્મસ્સ તં ચેવ ' હે ગોતમ ! હન્ત, સત્યમ્ મહાકર્મણઃ તદેવ પૂર્વોક્તચદેવ મહાક્રિયસ્સ મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય જીવસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલા વધ્યન્તે, રૂત્યાદિ સર્વં સંગ્રાહમ્ ।

ગોતમ આહ—' સે કેણદ્દેણં ? ' હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્યેન એવં પૂર્વોક્તહ-  
ચ્યતે યત્-મહાકર્મણઃ મહાક્રિયસ્ય મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય ચ જીવસ્ય પુદ્ગલા  
વધ્યન્તે રૂત્યાદિ । મગધાન્ સદ્દણ્તમાહ—' ગોયમા ! સે જહા નામણં વત્થસ્સ

મહાકર્માદિ યુક્ત જીવ કા શરીર દુરૂપ દુર્વળાદિ સે યુક્ત હોતા હે વધા ?  
ઉ. ( હંતા, ગોયમા ! મહાકમ્મસ્સ તં ચેવ ) હાં, ગોતમ ! મહાકર્મવાલે  
જીવ કે વહી પૂર્વોક્તરૂપ સે સય કુછ હોતા હે । અર્થાત્ જો જીવ મહાક-  
ર્મવાલા હોતા હે, મહાક્રિયાવાલા હોતા હે, મહાસ્રવવાલા હોતા હે, મહા-  
વેદનાવાલા હોતા હે, ઉસ જીવ કે સર્વતઃ પુદ્ગલો કા બંધ હોતા હે  
રૂત્યાદિ સય કથન યહાં પર લગા લેના ચાહિયે । ( સે કેણદ્દેણં ) હે  
ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હેં કિ જો જીવ મહાકર્મ  
હોતા હે, મહાક્રિયાવાલા હોતા હે, મહાસ્રવવાલા હોતા હે, ઓર મહાવે-  
દનાવાલા હોતા હે એસે જીવ કે પુદ્ગલ બંધતે હેં રૂત્યાદિ । મગધાન્ હસ  
પ્રશ્ન કા ઉત્તર દ્દણ્ત દેકર દેતે હેં-વે વતલાતે હેં કિ ( ગોયમા ) હે

આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એટલું જ છે કે મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનું  
શરીર શું કુર્ણુ, કુરૂપ આદિથી યુક્ત હોય છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—( હંતા ગોયમા ! મહાક-  
મ્મસ્સ તં ચેવ ) હા, ગોતમ ! મહાકર્મવાળા જીવની એવીજ દશા હોય છે.  
એટલે કે જીવ મહાકર્મવાળો, મહાક્રિયાવાળો, મહાસ્રવવાળો અને મહા-  
વેદનાવાળો હોય છે, એ જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી—આત્મપ્રદેશોમાંથી  
કર્મનો બંધ કરે છે, રૂત્યાદિ કથન અહીં ગ્રહણ કરવું. ( સે કેણદ્દેણં )  
હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જે જીવ મહાકર્મવાળો હોય  
છે, મહાક્રિયાવાળો હોય છે, મહાસ્રવવાળો હોય છે અને મહાવેદનાવાળો  
હોય છે, એવો જીવ કર્મબંધ કરતો રહે છે ?

અહ્યસ્સ વા, ધોયસ્સ વા ' હે ગૌતમ ! તદ્ યથા નામ વસ્ત્રસ્ય અહતસ્ય નૂતનસ્ય સર્વથા અપરિહિનસ્ય વા વસ્ત્રસ્ય ધોતસ્ય પરિધાયાપિ પ્રક્ષાલિતસ્ય વા, તથા 'તંતુ-ગયસ્સ વા, અણુપુન્વીષ્ પરિભુજ્જમાણસ્સ ' તન્નોદ્ગતસ્ય, તન્નાત્-તુરી-વેમાદેઃ સઘઃ ઉદ્ધૃતમાત્રસ્ય નિષ્કાશિતમાત્રસ્ય આનુપૂર્વ્યાં અનુક્રમેણ પરિભુજ્યમાનસ્ય પરિધીયમાનસ્ય ' સન્વઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ ' સર્વતઃ સર્વાભ્યો દિશાભ્યઃ પુદ્ગલા દ્રવ્યાદિપરમાણવઃ વધ્યન્તે-સંવદ્ધાઃ ભવન્તિ ' સન્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાધીયન્તે નિધત્તાઃ ભવન્તિ, ' જાવ-પરિણમતિ ' યાવત્-પરિણમતિ પર્યાયાન્તરાણિ પ્રાપ્નુવન્તિ, યાવત્ કરણાત્-' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ ઉપચીયન્તે, સદા-

ગૌતમ ! ( સે જહા નામણ વત્થસ્સ અહ્યસ્સ વા ધોયસ્સ વા, તંતુગયસ્સ વા અણુપુન્વીષ્ પરિભુજ્જમાણસ્સ સન્વઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સન્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિમંતિ-સે તેણદ્દેણ ) જૈસે કોઈ વસ્ત્ર હો ઓર વહ કામ મેં આયા હુઆ નહીં હો-ચિલકુલ નયા હો, અથવા કામ મેં આયા હુઆ હોને પર ખી ફિર સે વહ ચિલકુલ સાફ-સ્વચ્છ કર દિયા ગયા હો અથવા-તુરીવેમાદિરૂપ તાને ડપર સે વસી વસ્ત્ર ઉતારા ગયા હો-તો એસા વહ તાજા વસ્ત્ર જય ક્રમ ૨ સે પહિરને આદિ કે કામ મેં આતા રહતા હૈ-તપ ધીરે ૨ વસકે ડપર સર્વ દિશાઓં કી તરફ સે મલિન પુદ્ગલ આ ૨ કર ચિપકતે રહતે હૈ-ઉસ પર વે ચય હો જાતે હૈ-યાવત્ વહી સાફ સુધરા નવીન વસ્ત્ર કાલાન્તર મેં ચિલકુલ મલિન હો જાતા હૈ-ઉસસે દુર્ગંધ આને લગતી હૈ-ઉસકે સ્પર્શ આદિ સય મેં ભિન્નતા આ જાતી હૈ-યર્હા યાવત્ શબ્દ સે " સર્વતઃ પુદ્ગલા

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-" ગોયમા ! " હે ગૌતમ ! ( સે જહા નામણ વત્થસ્સ અહ્યસ્સ વા ધોયસ્સ વા, તંતુગયસ્સ વા અણુપુન્વીષ્ પરિભુજ્જમાણસ્સ સન્વઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સન્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ-સે તેણદ્દેણ ) જેમકે કોઈ એક વસ્ત્ર હોય, તેને બિલકુલ ઉપયોગમાં લીધું ન હોય-એટલે કે તે બિલકુલ નવું હોય, અથવા તેનો ઉપયોગ કયાં પછી તેને ઘોષને બિલકુલ સ્વચ્છ કરેલું હોય, અથવા તેને સાળ ઉપરથી તાબું જ ઉતારેલું હોય, એવું તે વસ્ત્ર જ્યારે વારંવાર પહેરવાના કામમાં આવતું રહે છે અથવા બીજા ઉપયોગમાં આવતું રહે છે ત્યારે ધીરે ધીરે તેના ઉપર સમસ્ત દિશાઓમાંથી મલિન પુદ્ગલો આવી આવીને ચોટી જાય છે-તેના ઉપર તેમનો ચય (જમાવ) થતો રહે છે, અને ઉપચય થતો રહે છે. તે વસ્ત્ર કાલાન્તરે એટલું બધું મલિન થઈ જાય છે કે તે મસોતા જેવું દેખાય છે, તેમાંથી દુર્ગંધ નીકળતી હોય છે, તેના સ્પર્શોદ્ધિમાં પણ ભિન્નતા દેખાય છે. અહીં ' યાવત્ ' પદથી ( સર્વતઃ



મિથ્યા લોભઃ સા સંજાતાઽસ્મિન્ રૂઢિ મિથ્યિતસ્તસ્ય માયસ્તદ્દરાદિત્યેન સર્વ-  
યાઽવાઞ્છનીયત્વેન અલોભનીયતયા, અપસ્તયા જઘન્યત્વેન, નો ઝર્થતયા નોત્ક-  
ષ્ટત્વેન ' દુઃસ્વત્તાપ, નો સુદત્તાપ ' દુઃસ્વત્તાપ દુઃસ્વત્વેન, નો સુસ્વત્તાપ નો સુસ્વ-  
ત્વેન ' ભુજ્જો ભુજ્જો પરિણમઃ ? ' ભૂયો ભૂયઃ વારં વારં પરિણમતિ ? એવં મહા-  
કર્માદિજીવસ્યાત્મા દુરૂપદુર્વળાદિયુક્તો ભવતિ કિમિતિ માયઃ ।

મગધાન્ આહ—' હંતા, ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં ચેવ ' હે ગોતમ ! હન્ત, સત્યમ્ મહાકર્મણઃ તદેવ પૂર્વોક્તવદેવ મહાક્રિયસ્સ મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય જીવસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલા વધ્યન્તે, રૂપાદિ સર્વં સંગ્રાહમ્ ।

ગોતમ આહ—' સે કેણદ્દેણં ? ' હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્યેન એવં પૂર્વોક્તમ્-  
ચ્યતે યત્-મહાકર્મણઃ મહાક્રિયસ્ય મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય ચ જીવસ્ય પુદ્ગલા  
વધ્યન્તે રૂપાદિ । મગધાન્ સદ્દણ્ણન્તમાહ—' ગોયમા ! સે જહા નામણં વત્થસ્સ

મહાકર્માદિ યુક્ત જીવ કા શરીર દુરૂપ દુર્વળાદિ સે યુક્ત હોતા હૈ કયા ?  
ઉ. (હંતા, ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં ચેવ) હાં, ગોતમ ! મહાકર્મવાળે  
જીવ કે વહી પૂર્વોક્તરૂપ સે સઘ કુછ હોતા હૈ । અર્થાત્ જો જીવ મહાક-  
ર્મવાળા હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાળા હોતા હૈ, મહાસ્રવવાળા હોતા હૈ, મહા-  
વેદનાવાળા હોતા હૈ, ઉસ જીવ કે સર્વતઃ પુદ્ગલોં કા બંધ હોતા હૈ  
રૂપાદિ સઘ કથન યહાં પર લગા લેના ચાહિયે । (સે કેણદ્દેણં) હે  
ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ જો જીવ મહાકર્મ  
હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાળા હોતા હૈ, મહાસ્રવવાળા હોતા હૈ, ઓર મહાવે-  
દનાવાળા હોતા હૈ એસે જીવ કે પુદ્ગલ બંધતે હૈં રૂપાદિ । મગધાન્ રૂપ  
પ્રશ્ન કા ઉત્તર દ્દણ્ણન્ત દેકર દેતે હૈં-વે ચતલાતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હૈ

આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એટલું જ છે કે મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનું  
શરીર શું કુવર્ણ, કુરૂપ આદિથી યુક્ત હોય છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—( હંતા ગોયમા ! મહાક-  
ર્મસ્સ તં ચેવ ) હા, ગોતમ ! મહાકર્મવાળા જીવની એવીજ દશા હોય છે.  
એટલે કે જીવ મહાકર્મવાળો, મહાક્રિયાવાળો, મહાસ્રવવાળો અને મહા-  
વેદનાવાળો હોય છે, એ જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી—આત્મપ્રદેશોમાંથી  
કર્મનો બંધ કરે છે, રૂપાદિ કથન અહીં અહીં કરવું. (સે કેણદ્દેણં)  
હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહે છે કે જે જીવ મહાકર્મવાળો હોય  
છે, મહાક્રિયાવાળો હોય છે, મહાસ્રવવાળો હોય છે અને મહાવેદનાવાળો  
હોય છે, એવો જીવ કર્મબંધ કરતો રહે છે ?

અલ્પકર્મવતઃ, અલ્પક્રિયસ્ય કાપિક્યાલ્પક્રિયાયુક્તસ્ય, અલ્પાસ્રવસ્ય-કર્મવન્ધ-  
હેતુ ભૂતાલ્પમિથ્યાત્વાદિયુક્તસ્ય, અલ્પવેદનસ્ય રૂપજ્વરાદિજનિતપીડાયુક્તસ્ય,  
જીવસ્ય સર્વતઃ સર્વાનુ દિશુ સર્વેભ્યો જીવપ્રદેશેભ્યો વા પુદ્ગલાઃ મિચન્તે પ્રાક્ત-  
નસમ્બન્ધવિશેષપરિત્યાગાત્ પૃથક્ ભવન્તિ ? ' સત્યઔ પોગલા છિજ્જન્તિ ? '

કરતે હું- હે ભદન્ત ! યહ યાત નિશ્ચિત હૈ વયા ? કિ જો જીવ અલ્પ-  
કર્મા હોતા હૈ-કર્મ કી અલ્પસ્થિતિવાલા, કર્મ કે અલ્પપ્રદેશોવાલા-હોતા  
હૈ, તથા-અલ્પક્રિયાવાલા-કાપિક આદિ થોડી ક્રિયાઓ વાલા હોતા હૈ,  
અલ્પાસ્રવવાલા-કર્મવંધ કે હેતુભૂત અલ્પમિથ્યાત્વવાલા-હોતા હૈ,  
ઔર અલ્પવેદનાવાલા-રૂપત્ જ્વરાદિ જનિતપીડાવાલા-હોતા હૈ એસે  
ઉસ જીવ કે સર્વતઃ-સમસ્ત દિશાઓ મેં સે અથવા સમસ્ત જીવ પ્રદેશો  
સે પુદ્ગલ-કર્મ પરમાણુ ( મિચન્તે ) ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હું ? અર્થાત્ પહિછે  
કે જિસ સંબંધ વિશેષ કો લેકર વંધતે થે-અથ વે ઉસ સંબંધ વિશેષ  
સે વહાં પરિત્યક્ત હો જાતે હું વયા ? તાત્પર્ય-ઇસ કા યહ હૈ કિ મહા-  
કર્માદિ સે યુક્ત હોને કી સ્થિતિ મેં જીવકે સાથ જિસ સ્થિતિ અનુભાગ  
આદિ કો લેકર ગાઢ આદિ રૂપ મેં કર્મપુદ્ગલોં કા વંધ હોતા થા-અથ  
અલ્પકર્માદિ સે યુક્ત હોને કી સ્થિતિ મેં જીવ કે સાથ ઉસ સ્થિતિ  
અનુભાગ કો લેકર ગાઢ આદિ રૂપ મેં કર્મપુદ્ગલોં કા વંધ નહીં હોતા હૈ  
યહી ઉનકા ભેદન હૈ યહી ઘાત ગૌતમ ને યહાં પ્રશ્ન સે પ્રશ્ન કે રૂપ મેં

શું એ વાત તો નિશ્ચિત છે કે જે જીવ અલ્પકર્મવાળો હોય છે-એટલે કે  
કર્મની અલ્પ સ્થિતિવાળો, કર્મના અલ્પ અનુભાગવાળો અને કર્મના અલ્પ  
પ્રદેશોવાળો હોય છે, તથા અલ્પ ક્રિયાવાળો ( કાપિક આદિ થોડી ક્રિયાઓ-  
વાળો ) હોય છે, અલ્પ આસ્રવવાળો ( કર્મવંધના કારણ રૂપ મિથ્યાત્વ જેનામાં  
ઓછું છે એવો ) હોય છે, અને અલ્પ વેદનાવાળો ( જ્વર વગેરેથી જનિત  
પીડા ભાગ્યે જ ભોગવનારો ) હોય છે, એવાં જીવના કર્મપરમાણુઓ શું સમસ્ત  
દિશાઓમાંથી અથવા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોમાંથી “ મિચન્તે ” ભેદતાં રહે છે ?  
એટલે કે પહેલાં જે કારણે તેમનો બંધ પડતો હતો તે કારણે નહીં રહેવાથી  
તેમનું ભેદન થવા માંડે છે ખરું ?

આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-મહાકર્મઆદિથી યુક્ત હોય એવી  
સ્થિતિમાં જીવની સાથે જે સ્થિતિ, અનુભાગ આદિની અપેક્ષાએ ગાઢ આદિ  
રૂપે કર્મપુદ્ગલોનો જે બંધ થતો હતો, તે અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવને  
શું થતો નથી ? એનું નામ જ તેમનું ભેદન છે. એજ વાત ગૌતમ સ્વામીએ



સમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચીયન્તે ' इत्यादि संग्राहम् ।  
અન્તે ઉપસંહરતિ-‘ સે તેણ્ટેણં ’ હે ગૌતમ ! તત્ તેનાર્થેન તેન પૂર્વોક્તેન કારણેન  
મહાકર્મણો યાવત્ મહાવેદનસ્ય જીવસ્ય સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, ચીયન્તે,  
ઉપચીયન્તે યાવત્-दुःखतया नो सुखतया भूयो भूयः परिणमति इति भावः ।  
‘ વધ્યન્તે ’ इत्यादि पदत्रयेणात्र वस्त्रस्य पुद्गलानां चोत्तरोत्तरं सम्बन्धप्रकर्षः  
પ્રતિપાદિતઃ । અપાલ્પકર્માદિયુક્તસ્ય જીવસ્ય સ્વરૂપં પૂછંતિ-‘ સે ણૂણં મંતે !  
અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પકિરિયસ્સ અપ્પાસવસ્સ અપ્પવેયણસ્સ, સવ્વઓ પોગ્ગલા  
મિજ્જંતિ ’ હે મહન્ત ! તત્-અથ નૂનં નિશ્ચયેન કિમ્ અલ્પકર્મણઃ, સ્થિત્યાઘપેક્ષયા

ઉપચીયન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચીયન્તે ”  
इत्यादि पाठका ग्रहण हुआ है । अब अन्त में इस विषय का उपसंहार  
करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं-गौतम ! इसी पूर्वोक्त कारण को  
लेकर मैं ने ऐसा कहा है कि महाकर्मवाले यावत् महावेदनावाले जीव के  
सर्वतः कर्मपुद्गल बंधते हैं, चप होते हैं, उपचित होते हैं यावत् उसका  
बाल शरीररूप आत्मा दुःखरूप से, सुखरूप से नहीं, क्षण २ में परिण-  
मता रहता है । “ वध्द्यन्ते, चीयन्ते, उपचीयन्ते ” इत्यादि इन तीन  
क्रियापदों से सूत्रकार ने वस्त्र और पुद्गलों का उत्तरोत्तर संबंध का  
प्रकर्ष बतलाया है, अब गौतम प्रभु से अल्पकर्मादि से युक्त जीव के  
स्वरूप को पूछते हुए उनसे ( सेणूणं मंते ! अप्पकम्मस्स अप्पकिरिय-  
स्स अप्पासवस्स अप्पवेयणस्स सव्वओ पोग्गला मिज्जंति ) ऐसा प्रश्न

પુદ્ગલા ઉપચીયન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચીયન્તે )  
इत्यादि सूत्रपाठने श्रद्धा करवामां आव्यो छे. इवे सूत्रेणो उपसंहार करता  
सूत्रकार कहे छे के छे गौतम ! उपर कहा प्रमाणेना कारणे मे अबु कहुं छे  
के महाकर्मवाणे, महाद्वियावाणे, महाआभववाणे अने महावेदनावाणे अब  
समस्त दिशाओमांथी कर्मपुद्गल बांधतो रहे छे, कर्मपुद्गलेनो यय अने उप-  
यय करतो रहे छे, अने तेनो आद्यशरीररूप आत्मा दुःखरूपे-नहीं के सुख  
रूपे-क्षणे-क्षणे परिणमतो रहे छे “ वध्द्यन्ते, चीयन्ते, उपचीयन्ते ” आ त्रय  
क्रियापदोनो प्रयोग करीने सूत्रकारे वस्त्र अने पुद्गलेना संबन्धनो उत्तरोत्तर  
प्रकर्ष बताव्यो छे.

હવે ગૌતમ સ્વામી અલ્પકર્માદિથી યુક્ત જીવનું સ્વરૂપ બહુવાને માટે  
મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે-( સે ણૂણં મંતે ! અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પ-  
કિરિયસ્સ, અપ્પાસવસ્સ અપ્પવેયણસ્સ સવ્વઓ પોગ્ગલા મિજ્જંતિ ) હે મહન્ત !

‘સયા સમિયં પોગ્ગલા છિજ્જંતિ’ સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચિદ્યન્તે ? ‘વિદ્ધસ્સંતિ, પરિવિદ્ધસ્સંતિ ?’ સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ વિધ્વંસન્તે ? પરિવિધ્વંસન્તે ? ‘સયા-સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા સુહુવત્તાણ પસત્થં નેયવ્વં’ સદા સમિતં ચ સ્વલુ તસ્ય અલ્પકર્મણઃ, અલ્પક્રિયસ્ય, અલ્પાસ્રવસ્ય, અલ્પવેદનસ્ય જીવસ્ય આત્મા સુરૂપતયા પ્રગસ્તં જ્ઞાતવ્યમ્, અત્ર વર્ણાદિપદાનિ પ્રગસ્તરૂપેણ વ્યાખ્યેયાનિ, તથા ચ સુવર્ણતયા

મેં અકર્મપર્યાય સે उस आत्मामें स्थित रहते आते हैं यही सिद्धान्तकी यात ( सच्चओ पोग्गला परिविद्धं संति ) इस पद द्वारा पुष्ट की गई है— सो इसी यात को गौतम ने प्रभु से प्रश्न के रूप में पूछा है । ( सया समियं पोग्गला भिज्जंति ) सदा निरन्तर कर्मपुद्गल भेद को प्राप्त होते हैं क्या ? ( सया समियं पोग्गला छिज्जंति ) सदा निरन्तर कर्मपुद्गल छेद को प्राप्त होते हैं क्या ? ( विद्धंस्संति परिविद्धंस्संति ) विध्वंस को प्राप्त होते हैं क्या, समस्त रूप से नाश होते हैं क्या ? इन प्रश्नों को करने की आवश्यकता इसलिये हुई कि जब पूर्वोक्त रूप से आत्मा से कर्म-पुद्गलों का भेदन छेदन पूछा गया है तो वहां निरन्तर छेदन भेदन आदि होने की यात नहीं पूछी गई है अतः इन प्रश्नों द्वारा यही यात यहां पूछी गई है (सया समियं च णं तस्स आया सुहवत्ताए पसत्थं नेयव्वं) अल्पकर्म आदि विशेषणों से विशिष्ट उस जीव का आत्मा बाह्य शरीर रूप आत्मा-क्षण २ में क्या अच्छेरूप में, अच्छेवर्ण में, अच्छे गंध में,

આવે છે કે બ્યારે તે કર્મપુદ્ગલો સર્વથા અકર્મપર્યાયરૂપે તે આત્મામાં રહેવા લાગે છે. એ જ સિદ્ધાન્તની વાત ( સચ્ચઓ પોગ્ગલા પરિવિદ્ધંસંતિ ) આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

ગૌતમ સ્વામીએ પ્રશ્ન દ્વારા એ જ વાત પ્રભુને પૂછી છે, ( સયા સમિયં પોગ્ગલા ભિજ્જંતિ ) હે ભદ્રન્ત ! અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનાં કર્મપુદ્ગલો શું સદા નિરન્તર ભેદાતાં રહે છે ? ( સયા સમિયં પોગ્ગલા છિજ્જંતિ ) શું તેના કર્મપુદ્ગલો સદા નિરન્તર છેદ.તાં રહે છે ? ( વિદ્ધંસ્સંતિ પરિવિદ્ધંસ્સંતિ ) શું તેનાં કર્મપુદ્ગલોનું આ પ્રકારના પ્રશ્નો પૂછવાની આવશ્યકતા એ છે કે પૂર્વોક્ત પ્રશ્નોમાં કર્મપુદ્ગલોનું નિરન્તર ભેદન, છેદન આદિ થવાની વાત પૂછવામાં આવી નથી. છેદન, ભેદન આદિ નિરન્તર થયા કરે છે કે નહીં, તે જાણવાને માટે ( સયાસમિયં પોગ્ગલા ભિજ્જંતિ ) ઇત્યાદિ પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા છે. ( સયા-સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા સુહુવત્તાણ પસત્થં નેયવ્વં ) અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનો આત્મા-બાહ્યશરીર રૂપ આત્મા શું ક્ષણે ક્ષણે સુરૂપતા, સુવર્ણયુક્તાતા,

સર્વતઃ પુદ્ગલાશ્ચિઘ્નન્તે ? ' સવ્વઓ પોગ્ગલા વિદ્ધંમંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વિઘ્નંસન્તે ? તેભ્યો જીવપદેશેભ્યોઽધો ધ્રંશન્તે ? ' સવ્વઓ પોગ્ગલા પરિવિદ્ધંસંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ પરિઘ્નંસન્તે ? તત્તજીવ પદેશેભ્યો નિઃશેષતયા પરિધ્રંશન્તે ? ' સયા સમિયં પોગ્ગલા મિજ્જંતિ ' સદા સમિતં નિરન્તરં પુદ્ગલાઃ મિઘન્તે ?

પૂછી છે ( સવ્વઓ પોગ્ગલા ઇજ્જંતિ ) વે પુદ્ગલ સર્વતઃ હેદ કો પ્રાપ્ત થા જાતે હૈં કયા ? અર્થાત્-જય વે કર્મપુદ્ગલ શિથિલ આદિ અવસ્થા મેં અલ્પસ્થિતિ અનુભાગ આદિ કો લેકર ઉસ આત્મા મેં વંધેંગે-તો યહ નિશ્ચિત હૈ કિ વે હેદ કો પ્રાપ્ત હોકર-ધીરે ૨ નષ્ટ હી હોતે રહેંગે-યહી ઘાત યહાં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે પ્રશ્ન કે રૂપ મેં પૂછી હૈ ? ( સવ્વઓ પોગ્ગલા વિદ્ધંસંતિ ) કયા વે જીવ કે પ્રદેશોં સે અધઃપતિત હો જાતે હૈં ? તાત્પર્ય યહ હૈ-કિ કર્મપુદ્ગલોં કા ધીરે ૨ નષ્ટ હોના અર્થાત્ નિર્જરા હોને સે હસકા યહ મતલબ નહોં હૈ કિ વે કર્મપુદ્ગલ ઉસ આત્મા સે બિલકુલ અપને મૂલરૂપ સે હી નષ્ટ હો જાતે હૈં-કારણ દ્રવ્ય કા તો કબી નાશ હોતા હી નહોં હૈ-અતઃ “ વે જીવ કે પ્રદેશોં સે અધઃ પતિત હો જાતે હૈં ” સો હસકા તાત્પર્ય એસા હૈ કિ વે વહાં અલ્પમાત્રા મેં અકર્મરૂપ પર્યાય સે આક્રાન્ત હોને લગ જાતે હૈં-એસી સ્થિતિ હોતે ૨ એક સમય એસા બી આતા હૈ કિ જય કે કર્મપુદ્ગલ બિલકુલ હી રૂપ મેં-સર્વથા રૂપ

મહાવીર પ્રભુને આ પ્રશ્ન દ્વારા પૂછી છે. ( સવ્વઓ પોગ્ગલા ઇજ્જંતિ ? ) શું તે પુદ્ગલોનું સર્વથા છેદન થાય છે ? એટલે કે-ન્યારે તે કર્મપુદ્ગલો શિથિલ આદિ અવસ્થામાં અલ્પસ્થિતિ, અનુભાગ આદિથી યુક્ત થઈને તે આત્મામાં બંધાય છે-જમા થાય છે-તો એ વાત નક્કી જ છે કે તેઓનું ધીરે ધીરે છેદન થતું રહેશે-તેઓ ધીરે ધીરે નષ્ટ થતાં રહેશે. એ જ વાત ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રશ્નરૂપે પૂછી છે. ( સવ્વઓ પોગ્ગલા વિદ્ધંસંતિ ) શું તે કર્મપુદ્ગલો જીવના આત્મપ્રદેશોમાંથી ખરી ડે છે ખરાં ?

આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—કર્મપુદ્ગલોનું ધીરે ધીરે નષ્ટ થવું એટલે કે નિર્જરા થવી. પણ તેનો એવો અર્થ નથી થતો કે તે કર્મપુદ્ગલો તે આત્મામાંથી બિલકુલ પોતાના મૂળ રૂપમાંથી નષ્ટ થઈ જાય છે, કારણ કે દ્રવ્યનો તો કદી નાશ જ થતો નથી. એટલે “ તે જીવના પ્રદેશોમાંથી અધઃ પતિત થઈ જાય છે. ”

આ કથનનું તાત્પર્ય એવું સમજવું કે તેઓ ત્યાં અલ્પમાત્રામાં અકર્મરૂપ પર્યાયમાં આવી જવા માંડે છે, આમ થતાં થતાં એક સ - એવો પણ



‘સે કેળદ્વેણં’ હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્થેન એવં પૂર્વોક્તમુચ્યતે યત્ તસ્યાત્મા યાવત્-સુખતયા નો દુઃસ્વતયા પરિણમતિ ? મગવાનાહ-‘ગોયમા ! સે જહાનામણ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા’ હે ગૌતમ ! તત્ યથા નામવસ્તુસ્ય જલ્હિતસ્ય શરીરમલોપેતસ્ય વા, પદ્ધિતસ્ય-આર્દ્રમલોપેતસ્ય વા ‘મહલ્હિયસ્સ વા, રહલ્હિયસ્સ વા’ મલિતસ્ય-કઠિનમલયુક્તસ્ય વા, રજસ્કિતસ્ય-રજોયુક્તસ્ય ધૂલિધૂસરિત સ્ય વા, ‘આણુપુઘ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ’ આણુપૂર્વ્યા અનુક્રમેણ પરિકર્મ્ય-માણસ્ય મલાપનયનાર્થે ક્ષારાદિદ્રવ્યેણ શોધ્યમાનસ્ય ‘સુદ્ધેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ’ શુદ્ધેન નિર્મલેન સ્વચ્છેન વારિણા જલેન ધાવ્યમાનસ્ય પ્રક્ષાલ્યમાનસ્ય વસ્ત્રસ્ય

પરિણમ જાતા હૈ ! અવ ગૌતમ હસ વિષય મેં પ્રભુ સે કારણ જાનને કી ઇચ્છા સે (સે કેળદ્વેણં) એસા પ્રશ્ન કરતે હેં વે પૂછતે હેં કિ હે ભદન્ત ! ઓપેસા કિસ કારણ કી લેકર કહતે હેં કિ ઉસકા આત્મા-શરીર યાવત્ સુખરૂપ સે-દુઃસ્વરૂપ સે નહીં પરિણમતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ઉનસે કહતે હેં કિ (ગોયમા સે જહા નામણ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા) હે ગૌતમ ! જૈસે કોઈ એક વસ્ત્ર હો ઓર ઉસકે ઉપર શરીર કા મલ લગા હો, અથવા કોઈ તાજી ગીલી કીચડ લગી હો મહલ્હિયસ્સ વા, રહલ્હિયસ્સ વા) યા કોઈ ઉસકે ઉપર કઠિન મૈલ લગા હો, યા ધૂલ ઉસ પર ચિપકી હો-ધૂલસે ધૂસરિત બના હુઆ હો એસા વહ વસ્ત્ર હો-તો વહ જવ (આણુપુઘ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ) વાર ૨ ધો ધાકર સાફ કિયા જાતા હૈ અર્થાત્-ક્ષારદ્રવ્ય સે જવ મૈલ દૂર કરને કે લિયે વહ ધોયા જાતા હૈ (સુદ્ધેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ) ઓર નિર્મલ-સાફ-જલ સે જવ વહ નિશ્વારા જાતા હૈ, તો (સવ્વઓ પોગલા

હોય છે. તેમનો આત્મા સુખરૂપે પરિણમે છે, ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન શ્રદ્ધા કરવું “સે કેળદ્વેણં” હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો ?

આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતાં મહાવીર પ્રભુ નીચેનું દષ્ટાંત આપે છે— (ગોયમા ! સે જહા નામણ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા) હે ગૌતમ ! કોઈ એક વસ્ત્રને શરીરનો મેલ, પરસેવો વગેરે લાગેલાં હોય, અથવા તેના ઉપર તાજી બીની માટી લાગી હોય, “મહલ્હિયસ્સ વા, રહલ્હિયસ્સ વા” અથવા તેના ઉપર ધૂળનાં રજકણો ચોંટ્યાં હોય, એવાં વસ્ત્રને જ્યારે “આણુપુઘ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ” વારંવાર ધોઈને સાફ કરવામાં આવે છે-એટલે કે સોડા જેવા ક્ષારયુક્ત પાણીથી તેનો મેલ દૂર કરવામાં આવે છે, (સુદ્ધેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ) અને નિર્મળ પાણીમાં જ્યારે તેને તારવવામાં આવે છે, ત્યારે

સુગન્ધતયા, સુરસતયા, સુસ્પર્શતયા, રૂઢતયા, કાન્તતયા, પ્રિયતયા, શુભતયા, મનોજ્ઞતયા, મનોઽમતયા, રૂઢિસિતતયા, ગિધિપતતયા, ઉત્કૃષ્ટતયા, નો અધમ-તયા, સુખતયા, નો દુઃખતયા, ભૂયો ભૂયઃ પરિણમતિ રિમિતિ । મગધાનાર—  
'હંતા, ગોયમા ! જાવ-પરિણમઈ' હે ગૌતમ ! દન્ત, સત્યમ્ અલ્પકર્માદિમતો જીવસ્ય સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ યાવત્-પરિધ્વંસન્તે, તસ્ય ચ જીવસ્યાત્મા યાવત્ સુખતયા નો દુઃખતયા પરિણમતિ, રિતિ મગધદુત્તરમ્ । ગૌતમસ્ત્વ કારણં પૃચ્છતિ

અच्छे रस में, अच्छे स्पर्श में, परिणमता है ? तथा इष्टरूप से, कान्तरूप से, प्रियरूप से, शुभरूप से, मनोमरूप से, रूढिसितरूप से, पुनः प्राप्त करने के लोभरूप से, उत्कृष्टरूप से, अधमरूप से नहीं—सुखरूप से, दुःखरूप से नहीं—परिणमता है क्या ? तात्पर्य इस प्रश्न का यही है कि जो जीव अल्पकर्मवाला है, अल्पक्रियावाला है, अल्प-आस्रववाला है, अल्पवेदनावाला है, उसका शरीर क्या अच्छेरूपादि विशेषणों वाला होता है क्या ? तथा वह इच्छा आदि का विषयभूत बनता है क्या ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि—( हंता गोयमा ! जाव परिणमंति ) हां गौतम ! यावत् उसका बाह्य शरीर रूप आत्मा परिणमता है । अर्थात् हे गौतम ! जो अल्पकर्म आदि विशेष-णोपेत जीव होता है उसके कर्मपुद्गल सर्वतः यावत् बिलकुल नष्ट हो जाते हैं, और उस जीव का शरीर यावत् सुखरूप से, दुःखरूप से नहीं

સુગંધયુક્તતા, સુરસતા, અને સુસ્પર્શતા રૂપે પરિણમતો રહે છે ? તથા શું તેના જીવનો આત્મા ઇષ્ટરૂપે, કાન્તરૂપે, પ્રિયરૂપે, શુભરૂપે, મનોજ્ઞરૂપે, મનો-મરૂપે, ઇષ્ણિતરૂપે, પુનઃ પ્રાપ્ત કરવાની લાલચ થાય એવી રીતે, ઉત્તરૂપે ( નહીં કે અધમરૂપે ) સુખરૂપે ( નહીં કે દુઃખરૂપે ) પરિણમતો રહે છે ?

આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જે જીવ અલ્પકર્મવાળો, અલ્પ ક્રિયાવાળો, અલ્પઆસ્રવવાળો અને અલ્પવેદનાવાળો હોય છે, તેનું શરીર શું સુંદર રૂપ, વર્ણ આદિથી યુક્ત હોય છે ? તથા શું તે બીજાને ઇષ્ટ, પ્રિય આદિ થઈ પડે છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—( હંતા ગોયમા ! જાવ પરિ-ણમંતિ ) હા, ગૌતમ ! અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનાં કર્મપુદ્ગલોના વિષયમાં એવું જ બને છે. અહીં પ્રશ્નોક્ત સમસ્ત કથનનો સ્વીકાર થયો છે તેમ સમ-જવું. એટલે કે એવાં જીવોનાં કર્મપુદ્ગલોનું છેદન, ભેદન, વિધ્વંસ આદિ થયા કરે છે અને તેમનો આત્મા-બાહ્યશરીર રૂપ આત્મા-સુરૂપતા આદિથી યુક્ત



ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર મેં શુદ્ધવસ્ત્ર ઓર મલિનવસ્ત્ર કે દૃષ્ટાન્ત સે સૂત્ર-  
કાર ને યહ સમજાયા હૈ કિ જિમ પ્રકાર સે શુદ્ધ વસ્ત્ર મૈલા હો  
જાતા હૈ उसी प्रकार से महाकर्मादि विशेषणों वाला जीव सव तरफ से  
कर्मरूप परिणमने योग्य पुद्गल द्रव्य का-कर्मणवर्गणाओं का योग और  
कषाय से युक्त होने के कारण आकर्षण करता रहता है और बंधादि-  
रूप में उन्हें चिपका लेता है उसका शरीर भी अशुभ रूप से ही परि-  
णमता रहता है-अर्थात् उसकी मानसिक, वाचनिक और कायिक ये  
सब क्रियाएँ अशुभरूप में ही चलनी रहनी हैं। इससे वह प्रत्येक  
समय में कर्मों का बंध आदि किया करता है-अतः ऐसा जीव अशुद्ध-  
वस्त्र की तरह से जानना चाहिये यहां पर ऐसी आशंका हो सकती है  
कि जिस प्रकार से वस्त्र मूल में तो शुद्ध है-परन्तु निमित्त आदि के  
सम्बन्ध से वह अशुद्ध-मलिन बन जाता है ऐसा क्या यह जीव है ?  
तो इसका समाधान भी यही है कि यह जीव मूलमें ऐसा ही है पर  
अनादिकाल से अपनी ही भूल से यह अज्ञानी बनकर पर पदार्थों को  
अपना मानता हुआ और उनमें रागद्वेष करता हुआ कर्म के बंधन  
आदि से जकड़ा चला आ रहा है अतः यह मूल में शुद्ध बुद्ध होने पर

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં શુદ્ધ વસ્ત્ર અને અશુદ્ધ વસ્ત્રના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સૂત્ર-  
કારે એ વાત સમજાવી છે કે જેમ શુદ્ધ વસ્ત્ર મેલું થઈ જાય છે, તેજ પ્રમાણે  
મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવ પણ યોગ અને કષાયોથી યુક્ત હોવાને કારણે કર્મરૂપ  
પરિણમનને યોગ્ય પુદ્ગલ દ્રવ્યનું-કર્મણ વર્ગણાઓનું સમસ્ત દિશાઓમાંથી  
( આત્મપ્રદેશો દ્વારા ) આકર્ષણ કરતો રહે છે અને કર્મબંધ બાંધતો રહે છે,  
તેનું શરીર પણ અશુભરૂપે પરિણમતું રહે છે-એટલે કે તેની માનસિક વાચ-  
નિક અને કાયિક ક્રિયાઓ અશુભ રૂપે જ ચાલતી રહે છે. તે કારણે તે પ્રત્યેક  
સમયે કર્મોના બંધ કરતો રહે છે. એવાં જીવને સૂત્રકારે અશુદ્ધ વસ્ત્રની ઉપમા  
આપી છે. જેવી રીતે વસ્ત્ર પહેલાં શુદ્ધ હતું, એજ પ્રમાણે જીવ ( આત્મા )  
પણ મૂળ તો શુદ્ધ જ હતો. જેવી રીતે વસ્ત્ર પર ધીરે ધીરે રજ, મેલ આદિ  
જમા થવાથી વસ્ત્ર મલિન થઈ જાય છે, એવી જ રીતે શુદ્ધ આત્મા પણ રાગ  
દ્વેષ આદિને કારણે કર્મબંધન આદિથી જકડાતો રહે છે. અનાદિ કાળથી  
પોતાની જ ભૂલથી તે અજ્ઞાની બનીને પર પદાર્થોમાં આસક્ત બનેલો છે. તેથી  
મૂળ જે શુદ્ધ હતો એવો આત્મા ક્રમે ક્રમે અશુદ્ધ અને અણુદ્ધ બનેલો છે.  
જેવી રીતે મલિન વસ્ત્રને ધોઈને શુદ્ધ કરી શકાય છે એજ પ્રમાણે પોતાના

‘ સઘ્વઓ પોગલા મિજ્જંતિ ’ સર્વેતઃ સર્વાણિ દિશુ સર્વેભ્યો વસ્તુપદ્ધેશોભ્યો વા પુદ્-  
ગલા મિથન્તે પૃથગભવન્તિ, ‘ જાવ-પરિણમહ ’ યાવત્-પરિણમતિ, યાવત્ કરણાત્  
સર્વેતઃ પુદ્ગલાશ્ચિઘન્તે, સર્વેતઃ પુદ્ગલાઃ પરિવિઘ્વંસન્તે, સદા સમિતં પુદ્-  
ગલાઃ મિથન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાશ્ચિઘન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ વિઘ્વંસન્તે  
પરિવિઘ્વંસન્તે, સદા સમિતં ચ સ્વલુ તસ્ય વાગ્ધ્યાત્મા તદ્વસ્તુમિત્યર્થઃ  
સુરૂપતયા સુવર્ણતયા ઇત્યાદિ યાવત્-સુરૂપતયા નો દુઃસ્વતયા પરિણમતિ, ઇતિ સંગ્રા-  
હમ્, ‘ સે તેણદ્દેણ ’ હે ગોતમ ! તન્.તેનાર્યેન અલ્પકર્મિણઃ યાવત્ અલ્પવેદનસ્ય  
જીવસ્ય યાવત્-સર્વેતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ પરિવિઘ્વંસન્તે, તસ્ય ચ જીવસ્ય આત્મા  
યાવત્-સુરૂપતયા નો દુઃસ્વતયા પરિણમતીતિ ॥ ૫૫ ॥

મિજ્જંતિ ) उस पर जो मेल के पुद्गल जमे हुए होते हैं वे उस वस्तु से  
सब ओर से दूर होने लग जाते हैं, ( जाव परिणमह ) यावत् वह वस्तु  
बिलकुल साफ स्थिति में परिणम जाता है । यहां ( यावत् ) शब्द से  
( सर्वतः पुद्गलाः छिद्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाः विध्वस्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाः परि-  
विध्वंसन्ते, सदा समितं पुद्गला मित्यन्ते, सदा समितं पुद्गलाश्चिद्यन्ते,  
सदा समितं पुद्गलाः विध्वंसन्ते, परिविध्वंसन्ते, सदा समितं च तस्य  
वस्तुस्य आत्मा सुरूपतया ) इत्यादि सब पूर्वोक्त पाठ यहां ग्रहण किया  
गया है ऐसा जानना चाहिये । ( से तेणद्वेण ) इस कारण हे गौतम !  
मैंने ऐसा कहा है कि अल्पकर्मवाले यावत् अल्पवेदनवाले जीव के  
यावत् सर्वतः कर्मपुद्गल बिलकुल नष्ट हो जाते हैं और उस जीव का  
आत्मा यावत् सुखरूप से दुःस्वरूप से नहीं-परिणम जाता है ।

“ સઘ્વઓ પોગલા મિજ્જંતિ ” તે વસ્તુને વળગેલાં મેલનાં પુદ્ગલો વસ્તુમાંથી  
અલગ થઈ જાય છે, “ જાવ પરિણમહ ” અને તે વસ્તુ તદન સ્વચ્છ થઈ જાય  
છે. અહીં “ યાવત્ ” પદથી “ સર્વેતઃ પુદ્ગલાઃ છિદ્યન્તે, સર્વેતઃ પુદ્ગલાઃ વિધ્વસ્યન્તે  
સર્વેતઃ પુદ્ગલાઃ પરિવિધ્વસ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલા મિથન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ  
ચિઘન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ વિધ્વંસન્તે, પરિવિધ્વંસન્તે, સદા સમિતં ચ તસ્ય વસ્તુસ્ય  
આત્મા સુરૂપતયા ” ઇત્યાદિ પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ અહીં થકલુ કરવામાં આવ્યો છે.

“ સે તેણદ્દેણ ” હે ગોતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે અલ્પકર્મથી  
અલ્પવેદના પર્યાન્તના વિશેષણવાળા જીવના કર્મપુદ્ગલોનું છેદન, ભેદન આદિ  
થવા કરે છે અને તેમનો આત્મા સુરૂપતા યુક્ત બને છે અને ઈષ્ટ, ઠાન્ત,  
પ્રિય આદિ રૂપે પરિણમતો રહે છે. એવો આત્મા દુઃખરૂપે પરિણમતો નથી.

છાયા-વત્સ્ય સ્વલ્પ મદન્ત ! પુદ્ગલોપચયઃ કિં પ્રયોગેણ, વિસ્રસયા ? ગૌતમ ! પ્રયોગેનાપિ, વિસ્રસયાપિ । તથા સ્વલ્પ મદન્ત ! વત્સ્ય સ્વલ્પ પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ, વિસ્રસયાપિ, તથા સ્વલ્પ જીવાનાં કર્મોપચયઃ કિં પ્રયોગેણ વિસ્રસયા ? । ગૌતમ ! પ્રયોગે, ન વિસ્રસયા । તત્ કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! જીવાનાં ત્રિવિધઃ પ્રયોગઃ પ્રવૃપ્તઃ,

### જીવકર્મ વક્તવ્યતા

( વત્સ્યસ પં મંતે ! ) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—( વત્સ્યસ પં મંતે ! પોગલોવચચે કિં પયોગસા વીસસા ) હે મદન્ત ! વસ્ત્ર કે પુદ્ગલોં કા જો ઉપચય હોતા હૈ વહ કયા પ્રયોગ સે હોતા હૈ ? યા સ્વાભાવિકરૂપ સે હોતા હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( પઓગસા વિ વીસસા વિ ) પ્રયોગ સે—પુરુષપ્રયત્ન સે મી હોતા હૈ ઓર સ્વાભાવિકરૂપ સે મી હોતા હૈ । ( જહાં પં મંતે ! વત્સ્યસ પં પોગલોવચચે પયોગસા વિ વીસસા વિ, તહા પં જીવા પં કર્મોવગણ કિં પયોગસા વીસસા ) હે મદન્ત ! જિસ પ્રકાર સે વસ્ત્ર કે પુદ્ગલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે મી ઓર સ્વાભાવિકરૂપ સે મી હોતા હૈ, ડસી તરહ સે કયા જીવોં કે કર્મ કા ઉપચય મી પ્રયોગ સે ઓર સ્વાભાવિકરૂપ સે હોતા હૈ ? ( ગોયમા ! પઓગસા નો વીસસા ) હે ગૌતમ ! જીવોં કે જો કર્મ કા ઉપચય હોતા હૈ વહ પ્રયોગ સે હી હોતા હૈ—સ્વાભાવિકરૂપ સે નહીં હોતા । ( સે કેળદ્દેણં ) હે મદન્ત ! ંસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ જીવ કે જો કર્મકા ઉપચય હોતા હૈ વહ પ્રયોગસે હી હોતા હૈ—સ્વાભાવિકરૂપ

### ઉપકર્મવક્તવ્યતા—

( વત્સ્યસ પં મંતે ! ) इत्यादि

સૂત્રાર્થ—( વત્સ્યસ પં મંતે ! પોગલોવચચે કિં પયોગસા વીસસા ) હે મદન્ત ! વત્સનાં પુદ્ગલોનો જે ઉપચય થાય છે તે શું પ્રયોગથી થાય છે, કે સ્વાભાવિક રૂપે થાય છે ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( પયોગસા વિ વીસસા વિ ) પ્રયોગથી—પુરુષ પ્રયત્નથી પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રૂપે પણ થાય છે. ( જહાં પં મંતે ! વત્સ્યસ પં પોગલોવચચે પયોગસા વિ વીસસા વિ, તહાં જીવાં કર્મોવગણ કિં પયોગસા વીસસા ? ) હે મદન્ત ! જેમ વત્સનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રૂપે પણ થાય છે ? ( ગોયમા ! પયોગસા નો વીસસા ) હે ગૌતમ ! હવેનાં કર્મનો ઉપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી.

( સે કેળદ્દેણં ) હે મદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે હવેનાં કર્મનો જે ઉપચય થાય છે તે પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો



## जीवसंनतव्यता

यस्यपुद्गलोपनयदृष्टान्तेन जीवसंनतव्यता उपनयं प्रतिपादयितुमाह—'वत्थस्स णं भंते' इत्यादि ।

मूल्य—वत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचये किं पयोगसा वीससा ? गोयमा ! पओगसा वि, वीससा वि जहाणं भंते ! वत्थस्स णं पोग्गलोवचए पओगसावि, वीससावि, तथा णं जीवाणं कम्मोवचए किं पयोगसा, वीससा ? गोयमा ! पयोगसा नो वीससा । से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जीवाणं तिविहे पओगे पणत्ते तं जहा--मणप्पओगे, वडप्पओगे, कायप्पओगे । इच्चेएणं, तिविहेणं पओगेणं जीवाणं कम्मोवचये पयोगसा णो वीससा । एवं सट्ठेसि पंचिदियाणं तिविहे पओगे भाणियत्ते पुट्ठवीकाइयाणं एगविहेणं पओगेणं, एवं जाव-वणस्सइकाइयाणं । विगल्लिदियाणं दुविहे पओगे पणत्ते, तं जहा-वडप्पओगे, कायप्पओगे य । इच्चेएणं दुविहेणं पओगेणं कम्मोवचए पयोगसा, णो वीससा, । से तेणट्ठेणं जाव-णो वीससा । एवं जस्स जो पओगो, जाव-वेमाणियाणं ॥ सू० २ ॥

भी व्यवहार की दृष्टि से अशुद्ध और अवुद्ध बना हुआ है । परन्तु जिस प्रकार मलिन वस्त्र साफ हो जाता है उसी प्रकार यह आत्मा भी अपने पुरुषार्थ के चलपर कर्मरूपी मैल को धोकर के अपने मूल रूप में आ सकता है । जैसे कि मलिन वस्त्र साफ करने की प्रक्रिया से अपने मूल रूप में आ जाता है ॥ सू० १ ॥

पुरुषार्थार्थी कर्मरूपी मैलने घाँघोने आत्मा पण तेना मूल शुद्ध स्वरूपमा आवी शके छे. जेन मलिन वस्त्रने साँझ करवानी प्रक्रिया द्वारा मूल रूपमा साँझ शक्य छे, जेवी न रीते आत्मा पण शुद्ध भई शके छे. ॥ सू० १ ॥

પ્રયોગથ । इत्येतेन द्विविधेन प्रयोगेण कर्मोपचयः प्रयोगेण, न विस्रसया, तत्  
तेनार्थेन यावत्-नो विस्रसया, एवं यस्य यः प्रयोगः यावत्-वैमानिकानाम् ॥ सू० ॥ २

ટીકા—‘વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચવે કિં પયોગસા, વીસસા ?’  
ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદ્રન્ત ! વત્થસ્ય સ્વલુ પુદ્ગલાનામ્ ઉપચયઃ-વૃદ્ધિઃ કિમ્  
પ્રયોગેણ પુરુષવ્યાપારેણ ? આદોસ્વિત્ વિસ્રસયા=સ્વભાવેન, પુરુષવ્યાપારમન્તરાડપિ

વચનપ્રયોગ ઓર દૂસરા કાપ્રયોગ ( इच्छेएणं दुविहेणं पओगेणं कम्मो-  
वचण पओगसा णो वीससा ) इन दो प्रकार के प्रयोगों से कर्म का उप-  
चय विकलेन्द्रिय जीवों के होता है अतः वह स्वाभाविकरूप से नहीं  
होता है ( से तेणद्वेणं जाव णो वीससा ) इस कारण हे गौतम ! मैंने  
ऐसा कहा है जीवों के कर्म का उपचय यावत् स्वाभाविकरूप से नहीं  
होता है ( एवं जस्स जो पओगो-जाव वेमाणियाणं ) इस तरह जिस  
जीव के जो प्रयोग हो वह उस तरह से यावत् वैमानिक देवों तक  
कहना चाहिये ।

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર, इस सूत्र द्वारा वल्लपुद्गलोपचय के दृष्टान्त से  
जीव और कर्मपुद्गलों के उपचय का प्रतिपादन कर रहे हैं-इसमें गौतम  
ने प्रभुसे ऐसा पूछा है कि (वत्थस्स णं मंते ! पोग्गलोवचवे किं पयोगसा  
वीससा ? ) हे भदन्त ! वल्ल के पुद्गलों का जो उपचय-वृद्धि होता है,  
वह क्या प्रयोग से-पुरुषप्रयत्न से होता है या स्वाभाविकरूप से होता

(वश्यओगे, कायप्पओगे च ) (१) वचनप्रयोग અને (२) કાયપ્રયોગ. ( इच्छेएणं  
दुविहेणं पओगेणं कम्मोवचण पओगसा णो वीससा ) આ બે પ્રયોગથી વિકલેન્દ્રિય  
જીવોને કર્મનો ઉપચય થાય છે. તેથી સ્વાભાવિક રૂપે તેમને કર્મનો ઉપચય થતો  
નથી. (સે તેણદ્વેણં જાવ ણો વીસસા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે  
જીવોને પ્રયોગથી કર્મનો ઉપચય થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી. (એવં  
જસ્સ જો પઓગો-જાવ વેમાણિયાણં ) આ રીતે જે જીવના જે પ્રયોગ હોય,  
તે પ્રયોગથી તે જીવ કર્મનો ઉપચય કરે છે. વૈમાનિક દેવો પર્યાન્તના જીવોના  
વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું.

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં વચ્ચના પુદ્ગલોપચયના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા જીવ  
અને કર્મપુદ્ગલોના ઉપચયનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને  
એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચવે કિં પયોગસા વીસસા ? )  
હે ભદ્રન્ત ! વચ્ચના પુદ્ગલોનો જે ઉપચય (જમાવટ, વૃદ્ધિ) થાય છે, તે શું  
પ્રયોગથી (પુરુષ પ્રયત્નથી) થાય છે, કે સ્વાભાવિક રીતે થાય છે ? એટલે  
કે પુરુષ પ્રયત્ન વિના થાય છે ?



તથા-મન પ્રયોગઃ, વચઃપ્રયોગઃ, કાયપ્રયોગઃ, इत्येतन् त्रिविधेन प्रयोगेण जीवनां कर्मोपचयः प्रयोगेण, न विस्तृतया । एवं सर्वेषां पञ्चेन्द्रियाणां त्रिविधः प्रयोगो भणितव्यः । पृथ्वीकायिकानाम् एकविधेन प्रयोगेण । एवं यावत्-वनस्पतिकायिकानाम् । विकलेन्द्रियाणां द्विविधः प्रयोगः मशस्तः, तथા-વચઃપ્રયોગઃ, કાય-

સે નહીં હોતા હે ? ( ગોયમા ! જીવાણં તિવિહં પઓગે પળ્લત્તે ) હે ગૌતમ ! જીવોં કે તીન પ્રયોગ કહે ગયે હેં । ( તં જહા ) વે તીન પ્રયોગ યે હેં ( મળ્લપ્પઓગે, વહ્લ્લપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે, इच्छेएणं तिविहेणं पओगेणं जीवाणं कम्मोवचये पओगसा णो वीससा ) મનઃ પ્રયોગ, વચઃ પ્રયોગ ઓર કાયપ્રયોગ ઇન તીન પ્રકાર કે પ્રયોગોં ( વ્યાપારોં ) સે જીવોં કે કર્મ કા ઉપચય હોતા હે, અતઃ જીવોં કે કર્મ કા ઉપચય પ્રયોગ સે હોતા હે સ્વાભાવિકરૂપ સે નહીં હોતા એસા કહા ગયા હે । ( એવં સવ્વે સિં પંચિંદિયાણં તિવિહે પઓગે ભાણિયવ્વે ) ઇસી તરહ સે સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવોં કે તીન પ્રકાર કા પ્રયોગ કહના ચાહિયે ( પુઢવીકાદયાણં એગવિહેણં પઓગેણં એવં જાવ વળસ્સહ કાદયાણં ) પૃથ્વીકાયિક જીવોં કે કેવલ એક પ્રકાર-કા હી પ્રયોગ હોતા હે-ઇસી પ્રકાર સે યાવત્ વનસ્પતિકાયિક જીવોં કે ભી જાનના ચાહિયે । ( વિગલિંદિયાણં દુવિહે પઓગે પળ્લત્તે ) વિકલેન્દ્રિય જીવોં કે દો પ્રકાર કા પ્રયોગ હોતા હે એસા કહા ગયા હે ( તં જહા ) જૈસે-( વહ્લ્લપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે ય ) એક

નથી ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જીવાણં તિવિહે પઓગે પળ્લત્તે તં જહા ) જીવોનાં તીયે પ્રમાણે ત્રણ પ્રયોગ કહ્યા છે-( મળ્લપ્પઓગે, વહ્લ્લપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે, इच्छेएणं तिविहेणं पओगेणं जीवाणं कम्मोवचये पओगसा णो वीससा ) મનઃપ્રયોગ, વચનપ્રયોગ અને કાયપ્રયોગ. આ ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગોથી ( વ્યાપારોથી-પ્રવૃત્તિઓથી ) જીવોને કર્મનો ઉપચય થતો હોય છે. તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે જીવોને કર્મનો ઉપચય પ્રયોગથી થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી. ( એવં સવ્વેસિં પંચિંદિયાણં તિવિહે પઓગે ભાણિયવ્વે ) એજ પ્રમાણે સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવોના ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગ સમજવા. ( પુઢવીકાદયાણં એગવિહેણં પઓગેણં એવં જાવ વળસ્સહકાદયાણં ) પૃથ્વીકાયિક જીવોને એક જ પ્રકારનો પ્રયોગ-કાયપ્રયોગ હોય છે. વનસ્પતિકાય પર્યન્તના વિષયમાં પણ એજ પ્રમાણે સમજવું. ( વિગલિંદિયાણં દુવિહે પઓગે પળ્લત્તે ) દ્વીન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યન્તના વિકલેન્દ્રિય જીવોના બે પ્રયોગ કહ્યા છે. ( તજહા ) જેવાં કે

પ્રયોગથ । इत्येतेन द्विविधेन प्रयोगेण कर्मोपचयः प्रयोगेण, न विस्रसया, तत् तेनार्थेन यावत्-नो विस्रसया, एवं यस्य यः प्रयोगः यावत्-वैमानिकानाम् ॥ सू० ॥ २

टीका—‘वत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचए किं पयोगसा, वीससा ?’  
गौतमः पृच्छति-हे भदन्त ! वत्थस्य खलु पुद्गलानाम् उपचयः-वृद्धिः किम् प्रयोगेण पुरुषव्यापारेण ? आहोस्वित् विस्रसया=स्वभावेन, पुरुषव्यापारमन्तराऽपि

वचनप्रयोग और दूसरा कायप्रयोग (इच्छेएणं दुविहेणं पओगेणं कम्मो-  
वचए पओगसा णो वीससा) इन दो प्रकार के प्रयोगों से कर्म का उप-  
चय विकलेन्द्रिय जीवों के होता है अतः वह स्वाभाविकरूप से नहीं  
होता है (से तेणहेणं जाव णो वीससा) इस कारण हे गौतम ! मैंने  
ऐसा कहा है जीवों के कर्म का उपचय यावत् स्वाभाविकरूप से नहीं  
होता है (एवं जस्स जो पओगो-जाव वेमाणियाणं) इस तरह जिस  
जीव के जो प्रयोग हो वह उस तरह से यावत् वैमानिक देवों तक  
कहना चाहिये ।

टीकार्थ—सूत्रकार, इस सूत्र द्वारा वत्थपुद्गलोपचय के दृष्टान्त से  
जीव और कर्मपुद्गलों के उपचय का प्रतिपादन कर रहे हैं-इसमें गौतम  
ने प्रभुसे ऐसा पूछा है कि (वत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचये किं पयोगसा  
वीससा ?) हे भदन्त ! वत्थ के पुद्गलों का जो उपचय-वृद्धि होता है,  
वह क्या प्रयोग से-पुरुषप्रयत्न से होता है या स्वाभाविकरूप से होता

(वइप्पओगे, कायप्पओगे च) (१) वचनप्रयोग અને (૨) કાયપ્રયોગ. (इच्छेएणं  
दुविहेणं पओगेणं कम्मोवचए पओगसा णो वीससा) આ જે પ્રયોગથી વિકલેન્દ્રિય  
જીવોને કર્મનો ઉપચય થાય છે. તેથી સ્વાભાવિક રૂપે તેમને કર્મનો ઉપચય થતો  
નથી. (સે તેણહેણં જાવ ણો વીસસા) કે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે  
જીવોને પ્રયોગથી કર્મનો ઉપચય થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી. (एवं  
जस्स जो पओगो-जाव वेमाणियाणं) આ રીતે જે જીવના જે પ્રયોગ હોય,  
તે પ્રયોગથી તે જીવ કર્મનો ઉપચય કરે છે. વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવોના  
વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું.

टीकार्थ—सूत्रकारे आ सूत्रमां वत्थना पुद्गलोपचयना दृष्टान्त द्वारा एवं  
अने कर्मपुद्गलोना उपचयनं प्रतिपादन कथुं छे. गौतम स्वामी भूषावीर प्रभुने  
એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્થસ્સ ણં ભંતે ! પોગ્ગલોવચયે કિં પયોગસા વીસસા ?)  
કે ભદન્ત ! વત્થના પુદ્ગલોનો જે ઉપચય (જમાવટ, વૃદ્ધિ) થાય છે, તે શું  
પ્રયોગથી (પુરુષ પ્રયત્નથી) થાય છે, કે સ્વાભાવિક રીતે થાય છે ? એટલે  
કે પુરુષ પ્રયત્ન વિના થાય છે ?

સ્વાભાવિકઃ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! પયોગસાવિ વીસસાવિ ’ હે ગૌતમ ! વસ્ત્રસ્ય પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ — પુરુષાદિવ્યાપારેનાપિ, વિસ્રસયાઽપિ સ્વભાવેનાપિ । તતો ગૌતમઃ પુચ્છતિ—‘ જહાણં મંતે ! વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણ પયોગસા વિ, વીસસા વિ ’ હે મદન્ત ! યથા સ્વલુ વસ્ત્રસ્ય પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ,—પુરુષવ્યાપારેનાપિ, વિસ્રસયાઽપિ—સ્વભાવેનાપિ, ‘ તદા ણં જીવાણં કમ્મોવચણ કિં પયોગસા, વીસસા ? ’ તથા સ્વલુ જીવાણં કર્મોપચયઃ કિમ્ પ્રયોગેના પુરુષાદિવ્યાપારેનાપિ વિસ્રસયા સ્વભાવેનાપિ ભવતિ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! પયોગસા, ણો વીસસા । ’ હે ગૌતમ ! જીવાણં કર્મ પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેના પુરુ-

હૈ અર્થાત્ પુરુષવ્યાપાર કે વિના હી હોતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( પયોગસા વિ વીસસા વિ ) વસ્ત્ર કે પુદ્ગલોં કા જો ઉપચય હોતા હૈ વહ પુરુષાદિ કે વ્યાપાર સે મી હોતા હૈ ઓર પુરુષાદિ કે વ્યાપાર કે વિના મી હોતા હૈ, અવ ગૌતમસ્વામી પુનઃ હસી વિષય કો લેકર પ્રમુ સે પ્રશ્ન કરતે હેં કિ—( જહા ણં મંતે ! વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણં પયોગસા વિ વીસસા વિ ) હે મદન્ત ! જિસ તરહ વસ્ત્ર કે પુદ્ગલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે મી હોતા હૈ ઓર પ્રયોગ કે વિના—સ્વાભાવિક રીતિ સે મી હોતા હૈ ( તદા ણં જીવાણં કમ્મોવચણ કિં પયોગસા વીસસા ) હસી તરહ સે કયા જીવોં કે જો કર્મ કા ઉપચય હોતા હૈ વહ કયા પ્રયોગ સે મી હોતા હૈ ? યા પ્રયોગ કે વિના મી હોતા હૈ ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ —( ગોયમા ) ગૌતમ ! ( પયોગસા ણો વીસસા ) જીવોં કે જો કર્મ કા

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રમુ કહે છે—( ગોયમા ! પયોગસા વિ વીસસા વિ ) હે ગૌતમ ! વસ્ત્રનાં પુદ્ગલોનો જે ઉપચય થાય છે તે પ્રયોગથી ( પુરુષાદિની પ્રવૃત્તિથી ) પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રીતે પણ થાય છે, એટલે કે પુરુષાદિની પ્રવૃત્તિ વિના પણ થાય છે.

ગૌતમ સ્વામી જીવોનાં પુદ્ગલોપચયના વિષયમાં એવો પ્રશ્ન કરે છે કે ( જહાણં મંતે ! વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણં પયોગસા વિ વીસસા વિ ) હે મદન્ત ! જેવી રીતે વસ્ત્રનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી પણ થાય છે અને પ્રયોગ વિના સ્વાભાવિક રીતે પણ થાય છે, ( તદા ણં જીવાણં કમ્મોવચણ કિં પયોગસા વીસસા ? ) એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રીતે ( પ્રયોગ વિના ) પણ થાય છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રમુ કહે છે—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( પયોગસા ણો વીસસા ) જીવોને કર્મોનો જે ઉપચય થાય — ગથી



પાદિવ્યાપારેણૈવ ભવતિ નો વિત્તસયા સ્વભાવેન, અન્યથા અયોગિનોઽપિ કર્મ-  
વન્ધાપત્તિઃ સ્યાત્ । ગૌતમસ્તત્ર કારણં પૂચ્છતિ—‘ સે કેણદ્દેણં ’ હે ભદન્ત !  
તત્ કેનાર્થેન કથં તાવત્ જીવાનાં કર્મોપચયઃ પ્રયોગેણૈવ, નો સ્વભાવેન ? ભગવા-  
નાહ—‘ ગોયમા ! જીવાણં તિવિદ્દે પયોગે પણ્ણત્તે હે ગૌતમ ! જીવાનાં ત્રિવિધઃ  
પયોગઃ, પ્રજ્ઞસઃ, ‘ તં જહા—મણ્ણપ્પઓગે, વહ્ણપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે ’ તથથા—મનઃ  
પયોગઃ, માનસિકશુભાશુભચિન્તનાદિવ્યાપારઃ, વચઃપયોગઃ—શબ્દોચારણાદિ-  
વચનવ્યાપારઃ, કાયપ્રયોગશ્ચ ચેષ્ટા, પરતાડનહિંસનાદિકાયિકવ્યાપારઃ, ‘ હચ્ચે-  
ણં તિવિદ્દેણં પઓગેણં જીવાણં કમ્મોવચ્છણં પયોગસા, નો વીસસા ’ इत्यनेन

ઉપચય હોતા હે વહ પ્રયોગ સે હી—પુરુષ આદિ વ્યાપાર સે હી હોતા હે,  
સ્વભાવ સે નહીં હોતા હે । યદિ સ્વભાવ સે હી જીવોં કે કર્મપુદ્ગલોં કા  
ઉપચય હોના માના જાય તો અયોગિ જીવોં કે ભી કર્મબંધ હોને કી  
આપત્તિ આ જાવેગી । અવ ગૌતમ હસ વિષય મેં કારણ જાનને કી ઇચ્છા  
સે પૂછતે હેં કિ ( સે કેણદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે  
કહતે હેં કિ જીવોં કે કર્મોપચય પ્રયોગ સે હી હોતા હે—સ્વભાવ સે નહીં  
હોતા—હસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ—( ગોયમા ) હે  
ગૌતમ ! ( જીવાણં તિવિદ્દે પઓગે પણ્ણત્તે ) જીવોં કે ત્રીન પ્રકાર કે  
પ્રયોગ કહે ગયે હેં—( તં જહા ) જો હસ પ્રકાર સે હેં—( મણ્ણપ્પઓગે, વહ્ણ-  
પ્પઓગે, કાયપ્પઓગે ) મનઃ પ્રયોગ—માનસિક શુભાશુભ ચિન્તન આદિ  
વિચાર, વચઃ પ્રયોગ—શબ્દોચારણ આદિરૂપ વચન વ્યાપાર, ઓર કાયપ્ર-  
યોગ—ચેષ્ટા કરને, દુસરોં કો તાડને ઓર હિંસા આદિ કરને રૂપ શરીર  
કા વ્યાપાર ( હચ્ચેણં તિવિદ્દેણં પઓગેણં જીવાણં કમ્મોવચ્છણં પઓ-

( પુરુષાદિના વ્યાપારથી ) જ થાય છે, સ્વાભાવિક રીતે થતો નથી. જો સ્વભા-  
વથી જ હોવાને કર્મપુદ્ગલોનો ઉપચય થાય છે એમ માનવામાં આવે તો  
અયોગિ હોવાને પણ કર્મબંધ થવાની વાત સ્વીકારવી પડશે. તેનું કારણ  
જાણુવા માટે ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે ( સે કેણદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! આપ શા  
કારણે એવું કહો છો કે હોવાને કર્મનો ઉપચય પ્રયોગથી જ થાય છે,  
સ્વભાવથી થતો નથી ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જીવાણં તિવિદ્દે પઓગે પણ્ણત્તે )  
હોવાના ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગ કહ્યા છે—“ તં જહા ” જે આ પ્રમાણે છે—

( મણ્ણપ્પઓગે, વહ્ણપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે )—(૧) મનપ્રયોગ—માનસિક શુભા-  
શુભ ચિન્તન આદિ વિચાર, (૨) વચનપ્રયોગ—શબ્દોચારણ આદિ રૂપ વ્યાપાર,  
અને (૩) કાયપ્રયોગ—શારીરિક ચેષ્ટા, મારપીટ આદિ રૂપ શારીરિક વ્યાપાર.  
( હચ્ચેણં તિવિદ્દેણં પઓગેણં જીવાણં કમ્મોવચ્છણં પઓગસા ‘ નો વીસસા ) આ

ઉપર્યુક્તેન ત્રિવિધેન પ્રયોગેન જીવાનાં કર્મોપચયઃ—કર્મબંધો ભવતિ પ્રયોગેનૈવ, નાં ત્રિસપ્તા સ્વભાવેન । ‘ એવં સર્વેસિ પંચિદિયાણં તિવિદે પઓગે ભાણિયવ્વે ’ એવં-તથૈવ સર્વેષાં પચ્ચેન્દ્રિયાણાં જીવાનાં ત્રિવિધઃ પ્રયોગઃ મનોવચઃકાયભેદેન ત્રિપ્રકારો વ્યાપારો ભણિતવ્યઃ । ‘ પુઢ્ઢવીકાદ્યાણં એગવિદેણં પઓગેણં ’ પૃથિવી-કાયિકાનાં જીવાનામ્ એકવિધેન પ્રયોગેનૈવ કાયવ્યાપારરૂપેણ કર્મોપચયો વક્તવ્યઃ, ‘ એવં જાવ-વણસ્સહકાદ્યાણં ’ એવં પૃથિવીકાયિકવદેવ યાવત્-અપ્રકાયિક-તેજસ્કાયિક-વાયુકાયિકાનાં વનસ્પતિકાયિકાનામપિ એકવિધેન કાયવ્યાપાર લક્ષણેન પ્રયોગેનૈવ કર્મોપચયો વોધ્યઃ । ‘ વિગલેદિયાણં દુવિદે પઓગે વણ્ણત્તે ’

મસા, નો વીસસા ) હસ તીન પ્રકાર કે પ્રયોગ સે જીવોં કે કર્મોપચય હોતા હૈ અતઃ હસ કર્મોપચય—કર્મબંધ મેં કારણ જીવ કા ત્રિવિધરૂપ પ્રયોગ પડતા હૈ હસલિયે વહ કર્મોપચય પ્રયોગ સે હોતા હૈ સ્વાભાવ સે નહીં, એસા માનના ચાહિયે ( એવં સર્વેસિ પંચિદિયાણં તિવિદે પઓગે ભાણિયવ્વે ) જિતને ભી પંચેન્દ્રિય જીવ હૈં, ડન સવ કે યહ તીન પ્રકાર કા પ્રયોગ હોતા હૈ ( પુઢ્ઢવીકાદ્યાણં એગવિદેણં પઓગેણં ) પૃથિવીકાયિક જો એકેન્દ્રિય જીવ હૈં—ડનકે એક કાયપ્રયોગ હી હોતા હૈં—ડસસે વે કર્મોપચય ક્રિયા કરતે હૈં । ( એવં જાવ વણસ્સહ કાદ્યાણં ) હસી તરહ સે અપ્રકાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક ઓર વનસ્પતિકાયિક યે એકેન્દ્રિય જીવ ભો એક કેવલ કાયપ્રયોગ સે હી કર્મોપચય કરતે રહતે હૈં એસા જાનના ચાહિયે । અવ રહે દોહ્ન્દ્રિય તેહ્ન્દ્રિય ઓર ચોહ્ન્દ્રિય જીવ સો યે ( વિગલેદિયાણં દુવિદે પઓગે વણ્ણત્તે ) ડન વિકલેન્દ્રિય જીવોં કે

ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગથી જીવોને કર્મોપચય થાય છે. તેથી આ કર્મોપચયના ( કર્મબંધના ) કારણ રૂપ જીવના એ ત્રિવિધ પ્રયોગ ગણાય છે. તેથીજ એવું કહ્યું છે કે કર્મોપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વભાવથી થતો નથી.

( એવં સર્વેસિ પંચિદિયાણં તિવિદે પઓગે ભાણિયવ્વે ) એજ પ્રમાણે ગદાં પંચેન્દ્રિય જીવોનાં પણ એજ ત્રણ પ્રયોગ હોય છે. ( પુઢ્ઢવીકાદ્યાણં એગવિદેણં પઓગેણં ) પૃથ્વીકાયિક જીવોને એક કામપ્રયોગ જ હોય છે. તેઓ તે પ્રયોગ દ્વારા જ કર્મોપચય કરે છે. ( એવં જાવ વણસ્સહકાદ્યાણં ) એજ પ્રમાણે અપ્રકાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય, એ એકેન્દ્રિય જીવોને પણ દ્રક્ષા એક જ પ્રયોગ—કાયપ્રયોગ હોય છે, અને તેઓ કાયપ્રયોગથી જ કર્મોપચય કરતા રહે છે. ( વિગલેદિયાણં દુવિદે પઓગે વણ્ણત્તે ) દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય, એ વિકલેન્દ્રિય, જીવોના એ પ્રયોગ હોય છે.



વિકલેન્દ્રિયાણાં દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિયાણાં જીવાનાં દ્વિવિધઃ પ્રયોગઃ પ્રશ્નઃ, 'તં જહા-વૃષ્પ્રભોગે, કાયપ્રભોગે ચ' તથા-વચઃપ્રયોગઃ, કાયપ્રયોગઃ, 'ઇચ્છે-  
 ણં દુવિદ્ધેણં પપ્રભોગેણં કમ્મોવચર પયોગમા, નો વીમસા' इत्येतेन उपर्युक्तरूपेण  
 દ્વિવિધેન પ્રયોગેણ કર્મોપચયઃ વિકલેન્દ્રિયાણાં પ્રયોગેણં, નો વિસ્રમયા-સ્વભાવેન  
 'સે તેણદ્ધેણં, જાવ-નો વીમસા' હે ગૌતમ । તત્ તેનાર્થેન યાવત્-જીવાનાં  
 કર્મોપચયઃ પ્રયોગેણં, નો વિસ્રમયા-સ્વભાવેન, 'એવં જસ્સ જો પયોગો, જાવ-  
 વેમાણિયાણં' એવં તથૈવ પૂર્વોક્તરદેવ યસ્ય જીવસ્ય ચઃ પ્રયોગઃ માનસિકો વા,  
 વાચિકો વા, કાયિકો વા, તસ્ય તથૈવ વક્તવ્યઃ, યાવત્-વૈમાનિકાનામ્-વૈમાનિક-  
 દેવપર્યન્તાનામ્ વોદ્યઃ, યાવત્કરણાત્-નૈરપિકામુક્કુમારાદિમયનવતિ-યાનવ્ય-  
 ન્તર-જ્યોતિષિકદેવાઃ સંગ્રાહ્યાઃ ॥ શ૦ ૨ ॥

દો પ્રકાર કા પ્રયોગ હોતા હૈ (તં જહા) જૈસે કિ (વૃષ્પ્રભોગે, કાય-  
 પ્રભોગે) વચનપ્રયોગ ઓર કાયપ્રયોગ (ઇચ્છેણં દુવિદ્ધેણં પપ્રભોગેણં  
 કમ્મોવચર પયોગમા નો વીમસા) इन दो प्रकार के प्रयोग से ये विक-  
 लेन्द्रिय जीव कर्मोपचय करते हैं-अतः इनका कर्मोपचय प्रयोगद्वारा ही  
 होता है स्वभाव से नहीं (से तेणद्वेणं जाव, नो वीमसा) इसी कारण  
 हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि जीवों के जो कर्मोपचय होता है, वह  
 प्रयोग से ही होता है-स्वभाव से नहीं, (एवं जस्स जो पप्रोगो जाव  
 वेमाणियाणं) इस तरह जिस जीव के जो प्रयोग हो-चाहे वह मान-  
 सिक प्रयोग हो, चाहे वह वाचनिक प्रयोग हो, चाहे वह कायिक हो  
 उसके उसी प्रयोग से कर्मबंध होता है-ऐसा यावत् वैमानिक देवों तक

“તંજહા” એવાં કે (વૃષ્પ્રભોગે, કાયપ્રભોગે)-(૧) વચનપ્રયોગ અને  
 કાયપ્રયોગ. (ઇચ્છેણં દુવિદ્ધેણં પપ્રભોગેણં કમ્મોવચર પયોગમા, નો વીમસા)  
 તે બે પ્રકારના પ્રયોગોથી વિકલેન્દ્રિય જીવો કર્મોપચય કરે છે. તેથી તેમનો  
 કર્મોપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, પ્રયોગ વિના (સ્વાભાવિક રીતે) થતો નથી.  
 (સે તેણદ્ધેણં જાવ નો વીમસા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે  
 જીવોને જે કર્મોપચય થાય છે તે પ્રયોગ દ્વારા થાય છે, સ્વાભાવિક રીતે  
 (પ્રયોગ વિના) થતો નથી. (એવં જસ્સ જો પપ્રોગો જાવ વેમાણિયાણં) એજ  
 પ્રમાણે જે જીવના જે પ્રયોગ હોય છે તે પ્રયોગ દ્વારા જ તે કર્મોપચય કરે  
 છે-કર્મબંધ કરે છે. એટલે કે માનસિક, કાયિક અથવા વાચિક, જે પ્રકારનો  
 જીવનો પ્રયોગ (વ્યાપાર) હોય તે પ્રકારના પ્રયોગ દ્વારા જીવ કર્મને બંધ  
 કરતો રહે છે. એજ પ્રમાણે વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે સમજવું.

જીવાનાં કર્મવૃદ્ધગ્લોપનપસ્ય સાદિસાન્તત્વવિપચે વસ્યવૃદ્ધગ્લોપનપદ્ધા-  
ન્તેન વિશેષં પ્રરૂપયિતુનાદ-‘વત્થસ્સ પં ભંતે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—વત્થસ્સ પં ભંતે ! પોગ્ગલોવચણ્ કિં સાદ્દણ, સપ-  
જ્જવસિણ્ ૧, સાદ્દણ અપજ્જવસિણ્ ૨, અણાદ્દણ સપજ્જવસિણ્ ૩,  
અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ્ ૪ ? । ગોયમા ! વત્થસ્સ પં પોગ્ગલો  
વચણ્ સાદ્દણ-સપજ્જવસિણ્, ણો સાદ્દણ-અપજ્જવસિણ્, ણો  
અણાદ્દણ-સપજ્જવસિણ્, ણો અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ્ જહાણં  
ભંતે ! વત્થસ્સ પોગ્ગલોવચણ્ સાદ્દણ સપજ્જવસિણ્ ? નો  
સાદ્દણ અપજ્જવસિણ્ ૨, નો અણાદ્દણ સપજ્જવસિણ્ ૩,  
નો અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ્ ૪, તહા પં જીવાણં કમ્મો-  
વચણ્ પુચ્છા ? ગોયમા ! અત્થેગદ્ધયાણં જીવાણં કમ્મો-  
વચણ્, સાદ્દણ સપજ્જવસિણ્, અત્થેગદ્ધયાણં અણાદ્દણ  
સપજ્જવસિણ્, અત્થે ગદ્ધયાણં અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ્,  
ણો ચેવ પં જીવાણં કમ્મોવચણ્ સાદ્દણ અપજ્જવ-  
સિણ્ । સે કેણટ્ટેણં ? । ગોયમા ! ઇરિયાવહિયવંધયસ્સ  
કમ્મોવચણ્ સાદ્દણ સપજ્જવસિણ્, ભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવ-  
વચણ્ અણાદ્દણ સપજ્જવસિણ્, અભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવ-  
વચણ્ અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ્, સે તેણટ્ટેણં ગોયમા ! એવં  
વુચ્છદ્ધ અત્થેગદ્ધયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ્ સાદ્દણ ૦ ણો ચેવ પં  
જીવાણં કમ્મોવચણ્ સાદ્દણ અપજ્જવસિણ્ । વત્થે પં ભંતે !

કહનાં चाहिये, यहां यावत् शब्द से नैरयिक, असुरकुमार आदि भव-  
नपति, वानव्यन्तर और ज्योतिषिक देव इनका ग्रहण हुआ है ॥ सू० २ ॥

અહીં ‘યાવત્’ પદ્ધતી તારકો, અસુરકુમારો, વાનવ્યન્તરો અને જ્યોતિષિક  
દેવોને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. ॥ સૂત્ર ૨ ॥

કિં સાદૃષ સપજ્જવસિણ?, ચત્થમંગો । ગોયમા ! વત્થે  
સાદૃષ સપજ્જવસિણ, અવમેસા તિન્નિવિ પડિસેહેયવ્વા, ।  
જહા ણં મંતે ! વત્થે સાદૃષ સપજ્જવસિણ, ણો સાદૃષ અપ-  
જ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ સપજ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ અપ-  
જ્જવસિણ, તહા ણં જીવા ણં કિં સાદૃયા સપજ્જવસિયા ?,  
ચત્થમંગો પુચ્છા ? । ગોયમા ! અત્થેગદ્ધયા સાદૃયા સપજ્જ-  
વસિયા, ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા । સે કેણદ્દેણં ? ગોયમા !  
નેરદ્ધયા તિરિક્ખજોણિયા મણુસ્સા, દેવા ગદ્ધમાગદ્ધં પહુચ્ચ  
સાદૃયા સપજ્જવસિયા । સિદ્ધા ગદ્ધં પહુચ્ચ સાદૃયા અપજ્જવ-  
સિયા । ભવસિદ્ધિયા લલ્લિં પહુચ્ચ અણાદ્ધયા સપજ્જવસિયા,  
અભવસિદ્ધિયા સંસારં પહુચ્ચ અણાદ્ધયા અપજ્જવસિયા,  
સે તેણદ્દેણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—વસ્ત્રસ્ય સ્વલુ ભદન્ત ! પુદ્ગલોપચયઃ કિં સાદિકઃ—સપર્યવસિતઃ ૧,  
સાદિકઃ—અપર્યવસિતઃ ૨, અનાદિકઃ—સપર્યવસિતઃ ૩, અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ ૪?,  
ગૌતમ ! વસ્ત્રસ્ય સ્વલુ પુદ્ગલોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, નો સાદિકઃ અપર્ય-

(વત્થસ્સ ણં મંતે ! ) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાદૃષ સપજ્જવ-  
સિણ, સાદૃષ અપજ્જવસિણ, અણાદૃષ સપજ્જવસિણ, અણાદૃષ અપજ્જ-  
વસિણ ) હે ભદન્ત ! વસ્ત્ર કે જો પુદ્ગલોપચય હોતા હૈ, વહ કયા નાદિ  
સાન્ત હૈ ? અથવા સાદિ અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ? કિ—અનાદિ  
અનન્ત હૈ ? (ગોયમા—વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણ સાદૃષ સપજ્જવસિણ,

(વત્થસ્સ ણં મંતે ! ) इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—(વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાદૃષ, સપજ્જવસિણ,  
સાદૃષ અપજ્જવસિણ અણાદૃષ સપજ્જવસિણ, અણાદૃષ અપજ્જવસિણ ) હે ભદન્ત !  
વસ્ત્રનાં પુદ્ગલોપચય ને ઉપચય થાય છે, તે શું આદિ (આદિયુક્ત) સાન્ત  
(અન્તયુક્ત) હોય છે ? કે સાદિ અનન્ત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય  
છે ? કે અનાદિ અનન્ત હોય છે ?

(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણ સાદૃષ સપજ્જવસિણ, ણો



વસિતઃ, નો અનાદિકઃ સર્વવસિતઃ, નો અનાદિકઃ અર્થવસિતઃ । યથા સ્વલુ  
ભદન્ત ! વત્સસ્ય પુદ્ગલોપનયઃ, સાદિકઃ સર્વવસિતઃ ૧, નો સાદિકોઽર્થવ-  
સિતઃ૨, નો અનાદિકઃ સર્વવસિતઃ ૩, નો અનાદિકઃ અર્થવસિતઃ૪, તથા સ્વલુ  
જીવાનાં કર્મોપચયઃ પુચ્છા ? ગૌતમ ! અસ્ત્યેકેષાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ  
સર્વવસિતઃ, અસ્ત્યેકેષામ્ અનાદિકઃ સર્વવસિતઃ અસ્ત્યેકેષામ્ અનાદિકઃ

ળો સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ, નો અણાદ્ સપજ્જવસિદ્ધિ, ણો અણાદ્ અપ-  
જ્જવસિદ્ધિ ) હે ગૌતમ ! વત્સ કે જો પુદ્ગલોપચય હોતા હે વહ સાદિ સાન્ત  
હે, સાદિ અનન્ત નહીં હે, ન અનાદિ સાન્ત હે ઓર ન વહ અનાદિઅનન્ત  
હે । (જહા ણં મંતે ! વત્થસ્સ પોગ્ગલોવચદ્ધિ સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ ણો સાદ્ અપ-  
જ્જવસિદ્ધિ, નો અણાદ્ સપજ્જવસિદ્ધિ, ણો અણાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ,  
તહા ણં જીવાણં કર્મોવચદ્ધિ પુચ્છા ) હે ભદન્ત ! જિસ પ્રકાર વત્સ કા  
પુદ્ગલોપચય સાદિ સાન્ત હે । સાદિ અનન્ત નહીં, અનાદિ સાન્ત નહીં હે  
ઓર અનાદિ અનન્ત મી નહીં હે, ડસી પ્રકાર વ્યા જીવોં કા કર્મોપ-  
ચય મી સાદિ સાન્ત હે સાદિ અનન્ત નહીં હે ? અનાદિ સાન્ત નહીં હે ?  
ઓર અનાદિ અનન્ત મી નહીં હે ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અત્થેગહ-  
યાણં જીવાણં કર્મોવચદ્ધિ સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ ) કિત્તનેક જીવ એસે હે  
કિ જિનકા કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હે ( અત્થેગહયાણં અણાદ્ સપજ્જ-  
વસિદ્ધિ ) કિત્તનેક જીવ એસે હે કિ જિનકા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હે  
( અત્થેગહયાણં અણાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ ) તથા કિત્તનેક જીવ એસે હે

સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ, ણો અણાદ્ સપજ્જવસિદ્ધિ, ણો અણાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ) વત્થનાં  
પુદ્ગલોનેા જે ઉપચય થાય છે તે સાદિ સાન્ત હોય છે, સાદિ અનન્ત હોતો નથી  
અનાદિ સાન્ત હોતો નથી અને અનાદિ અનન્ત પણ હોતો નથી. (જહાણં મંતે !  
વત્થસ્સ પોગ્ગલોવચદ્ધિ સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ, ણો સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ, ણો અણાદ્  
અપજ્જવસિદ્ધિ, તહાણં જીવાણં કર્મોવચદ્ધિ પુચ્છા ) હે ભદન્ત ! જેવી રીતે વત્થનાં  
પુદ્ગલોનેા ઉપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, સાદિ અનન્ત હોતો નથી, અનાદિ  
સાન્ત હોતો નથી અને અનાદિ અનન્ત હોતો નથી, એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં  
પુદ્ગલોનેા ઉપચય પણ સાદિ સાન્ત હોય છે ? શું તે સાદિ અનન્ત, અનાદિ  
સાન્ત અને અનાદિ અનન્ત હોતો નથી ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અત્થેગ-  
હયાણં જીવાણં કર્મોવચદ્ધિ સાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ ) હે ગૌતમ ! કેટલાક જીવો  
એવાં હોય છે કે તેમનેા કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, ( અત્થેગહયાણં  
અણાદ્ સપજ્જવસિદ્ધિ ) કેટલાક જીવોનેા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોય છે,  
( અત્થેગહયાણં અણાદ્ અપજ્જવસિદ્ધિ ) કેટલાક જીવોનેા કર્મોપચય અનાદિ

અપર્યવસિતઃ, નો ચૈવ સ્વલુ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકોઽપર્યવસિતઃ । તત્  
કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! ઐર્થાપથિકચન્ધકસ્ય કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ।  
ભવસિદ્ધિકસ્ય કર્મોપચયોઽનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, અભવસિદ્ધિકસ્ય કર્મોપચયઃ  
અનાદિકોઽપર્યવસિતઃ, તત્ તેનાર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે-અસ્ત્યેકેષાં જીવાનાં

કિં જિનકા કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હં ( જો ચેવ જં જીવા જં કર્મો-  
વચણ સાદ્ અપજ્જવસિણ ) પરન્તુ એસા કોઈ મી જીવ નહીં હૈ કિ  
જિસકા કર્મોપચય સાદિ ઓર અનન્ત હો । ( સે કેણદ્દેણં ) હૈ મદન્ત !  
એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈ ? ( ગોયમા ) હૈ ગૌતમ ! ( ઈરિયા  
વહિયવંધયસ્સ કર્મોવચણ સાદ્ અપજ્જવસિણ ) ઐર્થાપથિકચન્ધક કે  
૧૧ વે ૧૨ વે ઓર ૧૩ વે ગુણસ્થાનવર્તી જીવ કે કર્મોપચય સાદિ ઓર  
સાન્ત હોતા હૈ ( ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદ્ અપજ્જવસિણ )  
ભવસિદ્ધિક જીવ કા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોતા હૈ । ( અભવસિ-  
દ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદ્ અપજ્જવસિણ ) અભવસિદ્ધિક જીવ કા  
કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા હૈ । ( સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ )  
હસ કારણ હૈ ગૌતમ ! મેને પૂર્વોક્ત રૂપ સે એસા કહા હૈ કિ ( અત્થેગ-  
હયાણં જીવાણં ) કિત્તનેક જીવોં કા ( કર્મોવચણ ) કર્મોપચય ( સાદ્ અપ-  
જ્જવસિણ ) જો ચેવ જં જીવાણં કર્મોવચણ સાદ્ અપજ્જવસિણ ) સાદિ સાન્ત  
હોતા હૈ, કિત્તનેક જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોતા હૈ કિત્તનેક  
જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા હૈ-પરન્તુ એસા કોઈ સા મી

અનંત હોય છે, ( જો ચેવ જં જીવાણં કર્મોવચણ સાદ્ અપજ્જવસિણ ) પણ  
એવો કોઈ પણ જીવ નથી કે જેનો કર્મોપચય સાદિ અને અનંત હોય.  
( સે કેણદ્દેણં ) હૈ મદન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહો છો ?

( ગોયમા ! ) હૈ ગૌતમ ! ( ઈરિયાવહિયવંધયસ્સ કર્મોવચણ સાદ્ અપ-  
જ્જવસિણ ) ઐર્થાપથિક બંધકનો-૧૧ માં, બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનવર્તી  
જીવનો કર્મોપચય સાદિ અને સાન્ત હોય છે. ( ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણા-  
દ્ અપજ્જવસિણ ) ભવસિદ્ધિક જીવનો કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોય છે.  
( અભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદ્ અપજ્જવસિણ ) અભવસિદ્ધિક જીવનો કર્મો-  
પચય અનાદિ અનંત હોય છે. ( સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ ) હૈ  
ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ( અત્થેગહયાણં જીવાણં ) કેટલાક  
જીવોનો ( કર્મોવચણ ) કર્મોપચય ( સાદ્ અપજ્જવસિણ ) જો ચેવ જં જીવાણં કર્મોવચણ  
સાદ્ અપજ્જવસિણ ) સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ  
સાન્ત હોય છે અને કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ અનંત હોય છે.  
પરંતુ એક પણ એવો જીવ નથી હોતો કે જેનો કર્મોપચય સાદિ અનંત હોય.



કર્મોપચયઃ સાદિકઃ, નો ચૈવ સ્વલુ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ  
અપર્યવસિતઃ । વસ્તુ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં સાદિકમ્-સપર્યવસિતમ્, ચતુર્ભંગમ્ ?  
ગૌતમ ! વસ્તુ સાદિકં સપર્યવસિતમ્, અવશેષાત્તયોઽપિ પ્રતિષેધયિતવ્યાઃ  
યથા સ્વલુ ભદન્ત ! વસ્તુ સાદિકં સપર્યવસિતમ્, નો સાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્, નો  
અનાદિકં સપર્યવસિતમ્, નો અનાદિકમ્ અપર્યવસિતં તથા જીવાઃ કિં સાદિકાઃ  
સપર્યવસિતાઃ, ચતુર્ભંગમ્ પૃચ્છા ? ગૌતમ ! અસ્ત્યેકકે સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ,  
ચત્વારોઽપિ ભણિતવ્યાઃ ।

જીવ નહીં હૈ કિ જિસકા કર્મોપચય સાદિ ઓર અનન્ત હો  
(વત્થે ણં ભંતે ! કિં સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, ચતુર્ભંગો) હૈ ભદન્ત !  
વસ્તુ કયા સાદિસાન્ત હૈ ? કિ સાદિ અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ  
સાન્ત હૈ ? કિ અનાદિ અનન્ત હૈ ? હસ પ્રકાર યે યહાં ચાર ભંગ હોતે હૈ  
કયા ? (ગોયમા ! વત્થે સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, અવશેસા તિન્નિ વિ પડિસેદ્ધે  
યવ્વા) હૈ ગૌતમ ! વસ્તુ સાદિ સાન્ત હૈ વાકી કે ત્રીન ભંગ વસ્તુ મેં  
પ્રતિષેધ્ય હૈ । (જહા ણં ભંતે ! વત્થે સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, ણો સાદ્દે  
અપજ્જવસિદ્ધ, ણો અણાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, ણો અણાદ્દે અપજ્જવસિદ્ધ-  
તહાણં જીવાણં કિં સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ ? ચતુર્ભંગો પુચ્છા) હૈ ભદન્ત !  
વસ્તુ જિસ તરહ સે સાદિ સાન્ત હૈ, વહ સાદિ અનન્ત નહીં હૈ, અનાદિ  
સાન્ત નહીં હૈ, ઓર અનાદિ અનન્ત મી નહીં હૈ, ડસી પ્રકાર સે કયા  
જીવ મી સાદિ સાન્ત હૈ ? વે સાદિ અનન્ત નહીં હૈ કયા ? અનાદિ  
સાન્ત નહીં હૈ ? કયા ? અનાદિ અનન્ત નહીં હૈ કયા ? (ગોયમા ! ) હૈ

(વત્થે ણં ભંતે કિં સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ ચતુર્ભંગો) હૈ ભદન્ત ! વસ્તુ  
સાદિ (આદિયો યુક્ત) સાન્ત (અન્તયો યુક્ત) હૈ, કે સાદિ અનન્ત હૈ ?  
અથવા અનાદિ સાન્ત હૈ, કે અનાદિ અનન્ત હૈ ? શું વસ્તુને આ ચારે ભંગ  
(વિકલ્પો) લાગુ પડે હૈ ?

(ગોયમા ! વત્થે સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, અવશેસા તિન્નિ વિ પડિસેદ્ધેયવ્વા) હૈ  
ગૌતમ ! વસ્તુ સાદિ સાન્ત હૈ, આદીના ત્રણે ભંગને અસ્વીકાર થયો સમજવો  
એટલે કે વસ્તુ સાદિ અનન્ત નથી, અનાદિ સાન્ત નથી અને અનાદિ અનન્ત નથી.

(જહાણં ભંતે ! વત્થે સાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, ણો સાદ્દે અપજ્જવસિદ્ધ, ણો  
અણાદ્દે સપજ્જવસિદ્ધ, ણો અણાદ્દે અપજ્જવસિદ્ધ-તહાણં જીવાણં કિં સાદ્દે સપ-  
જ્જવસિદ્ધ ? ચતુર્ભંગો પુચ્છા) હૈ ભદન્ત ! જેમ વસ્તુ સાદિ સાન્ત હૈ, તે  
સાદિ અનન્ત નથી, તે અનાદિ સાન્ત નથી અને અનાદિ અનન્ત પણ નથી.  
એજ પ્રમાણે શું હવે પણ સાદિ સાન્ત હૈ ? શું હવે સાદિ અનન્ત,  
અનાદિ સાન્ત અને અનાદિ અનન્ત નથી ?

તત્ કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! નૈરયિક-તિર્યગ્યોનિક-મનુષ્ય-દેવાઃ, ગતિમ્-આગતિ પ્રતીત્ય સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ, સિદ્ધા ગતિ પ્રતીત્ય સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ, ભવસિદ્ધિકા લઙ્ઘિ પ્રતીત્ય અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ, અભવસિદ્ધિકાઃ સંસારં પ્રતીત્યાનાદિકા અપર્યવસિતાઃ, તત્ તેનાર્થેન ॥ છૂ. ૩ ॥

ગૌતમ ! ( અત્યેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા, ચત્તારિ વિ ભાણિયવ્વા ) કિતનેક જીવ એસે હું જો સાદિ સાન્ત હું, કિતનેક જીવ એસે હું જો સાદિ અનન્ત હું । કિતનેક જીવ એસે હું જો અનાદિ સાન્ત હું ઓર કિતનેક જીવ એસે હું જો અનાદિ અનન્ત હું । ઇસ પ્રકાર સે યહાં ચારોં ભંગ કહના ચાહિયે । ( સે કેળદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હું ? ( ગોયમા ! નેરદ્યા તિરિવ્વજોણિયા મણુસ્સા દેવા ગદ્દમાગદ્દં પહુચ્ચ સાદ્યા, સપજ્જવસિયા સિદ્ધા ગદ્દં પહુચ્ચ સાદ્યા અપજ્જવસિયા, ભવસિદ્ધિયા લઙ્ઘિ પહુચ્ચ અણાદ્યા સપજ્જવસિયા, અભવસિદ્ધિયા સંસારં પહુચ્ચ અણાદ્યા અપજ્જવસિયા સે તેણદ્દેણં ) હે ગૌતમ ! નૈરયિક, તિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય ઓર દેવ ગતિ આગતિ કી અપેક્ષા સે સાદિ સાન્ત હું । સિદ્ધ જીવ સિદ્ધ ગતિ કી અપેક્ષા સે સાદિ અનન્ત હું । ભવસિદ્ધિક જીવ લઙ્ઘિ કી અપેક્ષા સે અનાદિ સાન્ત હું ઓર અભવસિદ્ધિક જીવ સંસાર કી અપેક્ષા સે અનાદિ અનન્ત હું ।

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અત્યેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા, ચત્તારિ વિ ભાણિયવ્વા ) કેટલાક જીવો સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક જીવો સાદિ અનન્ત હોય છે, કેટલાક જીવો અનાદિ સાન્ત હોય છે અને કેટલાક જીવો અનાદિ અનન્ત હોય છે. આ રીતે અહીં ચારે ભંગ ( વિકલ્પો ) કહેવા લેઈએ. ( સે કેળદ્દેણં ? ) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો ?

( ગોયમા ! નેરદ્યા તિરિવ્વજોણિયા મણુસ્સા દેવા ગદ્દમાગદ્દં પહુચ્ચ સાદ્યા સપજ્જવસિયા, સિદ્ધા ગદ્દં પહુચ્ચ સાદ્યા અપજ્જવસિયા, ભવસિદ્ધિયા લઙ્ઘિ પહુચ્ચ અણાદ્યા સપજ્જવસિયા, અભવસિદ્ધિયા સંસારં પહુચ્ચ અણાદ્યા અપજ્જવસિયા સે તેણદ્દેણં ) હે ગૌતમ ! નારકો, તિર્યંચો, મનુષ્યો અને દેવગતિના જીવોને નારક આદિ ગતિમાં આવવાને કારણે સાદિ કહ્યા છે અને નારક આદિ ગતિઓમાંથી તેઓ નીકળવાના હોવાથી તેમને સાન્ત કહ્યા છે. સિદ્ધ જીવ સિદ્ધ ગતિની અપેક્ષાએ સાદિ અનન્ત છે, ભવસિદ્ધિક જીવ લઙ્ઘિની અપેક્ષાએ અનાદિ સાન્ત છે અને અભવસિદ્ધિક જીવ સંસારની અપેક્ષાએ અનાદિ અનન્ત છે. હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે.

ટીકા—‘વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાણ્ણ સપજ્જવસિણ ? ’ ગૌતમઃ  
 પૃચ્છતિ:—હે મહન્ત ! વત્થસ્ય સહ પુદ્ગલોપચયઃ કિં સાદિકઃ આદિના સહિતઃ, સપ-  
 ર્યવસિતઃ પર્યવસિતેન પર્યવસાનેન સહિતઃ સાન્તઃ ?? અથવા ‘સાણ્ણ અપજ્જવસિણ’  
 સાદિકઃ—અપર્યવસિતઃ અન્તરહિતઃ ૨ ?, અથવા ‘અણાણ્ણ સપજ્જવસિણ’ અનાદિકઃ  
 —આદિરહિતઃ, સપર્યવસિતઃ સાન્તઃ ૩ ?, અથવા ‘અણાણ્ણ અપજ્જવસિણ ! ’ અના-  
 દિકઃ અપર્યવસિતઃ ૪ કિમ્ ? મગધનાહ—‘ ગોયમા ! વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણ

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર ને જીવોં કે કર્મપુદ્ગલોપચય કે દૃષ્ટાન્તત્વ કે  
 વિષય મેં વત્થપુદ્ગલોપચય કે દૃષ્ટાન્ત સે વિશેષતા પ્રહપિત કરને કે લિયે  
 (વત્થસ્સ ણં મંતે ! ) इत्यादि सूत्र कहा है—इसमें गौतम ने प्रभु से  
 ऐसा पूछा है कि ( वत्थस्स णं मंते ! पोग्गलोवचण किं साण्ण सपज्ज-  
 वसिण ) हे भदन्त ! वत्थ का जो पुद्गलोपचय है वह क्या सादि सान्त  
 है ? अथवा—( साण्ण अपज्जवसिण ) सादि अनन्त है ? अथवा—( अणा-  
 ण्ण सपज्जवसिण ) अनादि सान्त है ? अथवा—( अणाण्ण अपज्जवसिण )  
 अनादि अनन्त है ? जो आदि-प्रारम्भ-सहित होता है उसका नाम  
 सादि और जो पर्यवसान-अन्त सहित होता है वह सपर्यवसित होता  
 है । तथा जो अन्त रहित होता है वह अपर्यवसित होता है तात्पर्य यह  
 है कि यहां परवत्त विषय में ऐसे ये चार प्रश्न गौतमस्वामी ने प्रभु से  
 पूछे हैं । इनका उत्तर देने के लिये प्रभु ने उनसे कहा ( गौयमा ) हे

ટીકાર્થ—જીવોનાં કર્મપુદ્ગલોપચયની સાદિ સાન્તતા આદિનું સૂત્રકારે  
 વચ્ચનાં પુદ્ગલોપચયના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કર્યું છે, અને જીવોનાં  
 કર્મપુદ્ગલોપચયમાં રહેલી વિશેષતાનું આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કર્યું છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાણ્ણ સપ-  
 જ્જવસિણ ? ) હે ભદન્ત ! વચ્ચનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય ( વૃદ્ધિ, જમાવ ) શું  
 સાદિ સાન્ત હોય છે ? અથવા ( સાણ્ણ અપજ્જવસિણ ? ) સાદિ અનંત હોય  
 છે ? અથવા ( અણાણ્ણ સપજ્જવસિણ ? ) અનાદિ સાન્ત હોય છે ?

અથવા ( અણાણ્ણ અપજ્જવસિણ ? ) અનાદિ અનંત હોય છે ? ( સાદિ '  
 એટલે આદિ ( પ્રારંભ ) સહિત અને ‘સપર્યવસિત અથવા સાન્ત’ એટલે  
 અન્ત સહિત, ( અપર્યવસિત ’ એટલે અન્ત રહિત ) અહીં વચ્ચનાં પુદ્ગલો-  
 પચયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામીએ ઉપર મુજબ ચાર પ્રશ્નો મહાવીર પ્રભુને  
 પૂછ્યા છે. હવે તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—



साइए सपज्जवसिए ' हे गौतम ! वत्थस्स खलु पुद्गलोपचयः सादिकः सपर्यवसितः ' णो साइए अपज्जवसिए ' नो सादिकः अपर्यवसितः ' णो अणाइए सपज्जवसिए ' नो वा अनादिकः सपर्यवसितः, ' णो अणाइए अपज्जवसिए ' नापि अनादिकः अपर्यवसितो वा वत्थस्स पुद्गलोपचयो भवति, गौतमः पृच्छति— ' जहा णं भंते ! वत्थस्स पोग्गलोवचए साइए सपज्जवसिए ' हे भदन्त ! यथा खलु वत्थस्स पुद्गलोपचयः सादिकः—सपर्यवसितो भवति, ' णो साइए

गौतम ! ' वत्थस्स णं पोग्गलोवचए साइए सपज्जवसिए ) वत्थ का जो पुद्गलोपचय है वह सादि सान्त है ' णो साइए अपज्जवसिए ' सादि अनन्त नहीं है ' णो अणाइए सपज्जवसिए ' अनादि सान्त नहीं है ( णो अणाइए अपज्जवसिए ) और अनादि अनन्त भी नहीं है । कहने का भाव यह है कि वत्थ में जो पुद्गलोपचय है वह प्रारंभ होने के कारण तो सादि है और भविष्य में वह नष्ट हो जाने वाला है इसलिये सान्त है सादि अपर्यवसित वह इसलिये नहीं है कि प्रारंभ होने पर भी वह शाश्वत-ध्रुव-रूप में नहीं रहा है, अनादि सपर्यवसित उसे इस लिये नहीं कहा गया है कि वत्थ में उस पुद्गलोपचय की शुरुआत हुई है अनादि अपर्यवसित वह इसलिये अमान्य हुआ है कि वह प्रारंभसहित है और अन्तसहित है । अब गौतम प्रभु से पुनः पूछते हैं कि ( जहा णं भंते ! वत्थस्स पोग्गलोवचए साइए सपज्जवसिए ) हे भदन्त जिस प्रकार से आपने वत्थ के पुद्गलोपचय को सादि और सान्त कहा है ( णो

( गोयमा ! वत्थस्स णं पोग्गलोवचए साइए सपज्जवसिए ) हे गौतम ! वत्थनां पुद्गलोपचयो उपपत्ति ( वृद्धि ) सादि सान्त इत्येव । ( णो साइए अपज्जवसिए ) ते सादि अनन्त इति नथी । ( णो अणाइए सपज्जवसिए ) ते सादि अनन्त इति नथी, ( णो अणाइए सपज्जवसिए ) ते अनादि सान्त इति नथी, ( णो अणाइए अपज्जवसिए ) ते अनादि अनन्त इत्येव । आ इत्थं तात्पर्यं नीचे प्रमाणेन वत्थनां पुद्गलोपचय प्रारंभो युक्त इत्येव, तेथी तेने सादि कथ्ये । भविष्यमां तेना नाश यतो इत्येव, तेथी तेने सान्त कथ्ये । तेना प्रारंभ तथा पछी ते शाश्वत (नित्य) इत्येव नथी तेथी तेने सादि अनन्त कथ्ये नथी । ते पुद्गलोपचयने अनादि सान्त एव कारणे कथ्ये नथी । के वत्थमां ते पुद्गलोपचयने प्रारंभ यथेति । तेने अनादि अनन्त कथ्ये नथी । कारणे ते प्रारंभ सहित अने अन्त सहित ।

गौतम स्वामी डवे जीने प्रश्न पूछे थे—( जहा णं भंते ! वत्थस्स पोग्गलोवचए साइए सपज्जवसिए ) हे भदन्त ! जेम् वत्थनां पुद्गलोपचयो उपपत्ति सादि

અપજ્જવસિણ ' નો સાદિકઃ-અપર્યવસિતઃ, 'ળો અણાણ સપજ્જવસિણ ' નો અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, ' ણો અણાણ અપજ્જવસિણ ' નો વા અનાદિકઃ અપર્યવસિતો ભવતિ ' તદ્વા ણં જીવાણં કમ્મોવચણ પુચ્છા ? ' તથા સહુ જીવાનાં કર્મોપચયઃ કિં સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, નો સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ, નો વા અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ન વા અનાદિકઃ અપર્યવસિતો ભવતિ ? इति पृच्छा प्रश्नः । भगवानाह- ' गोयमा ! अत्थेगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइए सपज्जवसिण, ' हे गौतम !

સાઈણ અપજ્જવસિણ ) સાદિ અનન્ત નહીં કહા છે ( ણો અણાણ સપજ્જવસિણ ) અનાદિ સાન્ત નહીં કહા છે ઓર ( ણો અણાણ અપજ્જવસિણ ) ન અનાદિ અનન્ત હી કહા છે ( તદ્વા ણં જીવાણં કમ્મોવચણ પુચ્છા ) ડસી તરહ સે જીવોં કે જો કર્મોપચય-કર્મવંધ હોતા છે-ડસ વિષય મેં ખી મેરા ંસા હી પૂછના છે કિ જીવોં કા કર્મોપચય કયા સાદિ સાન્ત હી હોતા છે ? સાદિ અપર્યવસિત નહીં હોતા છે ? અનાદિ સપર્યવસિત નહીં હોતા છે ? ઓર અનાદિ અપર્યવસિત નહીં હોતા કયા ? ડસકા ડત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! વચ્ચ કે પુદ્ગલોપચય કો અપેક્ષા જીવ કે કર્મવંધ મેં વિશેષતા છે-જો ડસ પ્રકાર સે છે-( અત્થેગહયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાઈણ સપજ્જવસિણ ) કિત-નેક જીવ ંસે હેં કિ જિનકા કર્મોપચય-કર્મવંધ સાદિ ઓર સાન્ત છે, યચપિ સિદ્ધાન્ત કી દૃષ્ટિ સે સમસ્ત જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ કહા

સાન્ત હોય છે, ( ણો સાઈણ અપજ્જવસિણ ) સાદિ અનન્ત હોતો નથી, ( ણો અણાણ સપજ્જવસિણ ) અનાદિ સાન્ત હોતો નથી, અને ( ણો અણાણ અપજ્જવસિણ ) અનાદિ અનન્ત હોતો નથી, ( તદ્વાણં જીવાણં કમ્મોવચણ પુચ્છા ) એજ પ્રમાણે જીવોના કર્મોપચય ( કર્મવંધ ) વિષે પણ હું એજ બોલુવા માશું છું કે શું જીવોના કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે ? શું તે સાદિ અનન્ત હોતો નથી ? શું તે અનાદિ સાન્ત હોતો નથી ? શું તે અનાદિ અનન્ત હોતો નથી ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! વચ્ચનાં પુદ્ગલોપચય કરતાં જીવોના કર્મવંધનાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે- ( અત્થેગહયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાઈણ સપજ્જવસિણ ) કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે તેમનો કર્મોપચય ( કર્મવંધ ) સાદિ અને સાન્ત હોય છે, જો કે



ગયા છે-ક्योंકિ કર્મવંધ કો સાદિ માનને મેં અનેક દૂષણ આતે હેં  
 उनमें से सब से जबरदस्त दूषण एक तो यह आता है कि कर्मबंध यदि  
 सादि माना जावेगा-तो इसके पहिले जीव को बिल्कुल सिद्ध के समान  
 ही मानना पड़ेगा फिर ऐसी स्थिति में कर्मबन्ध होगा भी कैसे क्योंकि  
 कर्मबंधके कारणभूत मिथ्यात्व अविरति तो वहां है नहीं-फिर भी यदि  
 कर्मबंध वहां होता है ऐसा कहा जावे तो सिद्धों के भी कर्म का बंध  
 हो जाना चाहिये-परन्तु होता नहीं है-अतः सामान्यरूप से यही  
 मान्यता है कि जीव के साथ कर्मों का बंध अनादिकाल का है, पर यहां  
 जो उसे सादिरूप में प्रकट किया गया है वह किसी कर्मप्रकृति के बंध  
 की अपेक्षा से ही किया गया है जैसे जिस जीव को पहिले के गुण-  
 स्थानों में जिस कर्मप्रकृति का बंध नहीं होता है वह जीव यदि आगे  
 के गुणस्थानों पर चढ़ता है तो उसे उस प्रकृति का बंध हो जाता है  
 इस अपेक्षा यह बंध सादि माना गया और जब वह जीव उस स्थान  
 से नीचे उतर आता है तो उस प्रकृति का बंध उससे छूट जाता है अतः  
 उसका अन्त हो जाता है इसलिये ऐसा कर्मबंध सादि और सान्त होता

સિદ્ધાન્તની દૃષ્ટિએ તો સમસ્ત જીવોના કર્મોપચયને ( કર્મજંધને ) અનાદિ  
 કહ્યો છે, કારણ કે કર્મજંધને સાદિ ( પ્રારંભ યુક્ત ) માનવામાં અનેક બાધા  
 રહેલ છે. સૌથી મોટી બાધા તો એ નડે છે કે કર્મજંધને એ સાદિ ( પ્રારંભ  
 સહિત ) માનવામાં આવે તો એ કર્મજંધ થયા પહેલાં જીવને બિલકુલ સિદ્ધ  
 સમાન માનવો પડશે અને એ વાત માની લેવામાં આવે તો એ સ્થિતિમાં  
 કર્મજંધ કેવી રીતે સંભવી શકે ?

કારણ કે કર્મજંધના કારણરૂપ મિથ્યાત્વ અને અવિરતિનો તો તેમનામાં  
 અભાવ હોય છે. છતાં પણ ‘ ત્યાં કર્મજંધ થાય છે, ’ એવું કહેવામાં આવે  
 તો સિદ્ધોમાં પણ કર્મજંધ સ્વીકારવો પડે; પણ એવું બનતું નથી તેથી  
 સામાન્ય રીતે એવી માન્યતા છે કે જીવોની સાથે કર્મોનો જંધ અનાદિકાળથી  
 અસ્તિત્વ ધરાવે છે. પરંતુ અહીં જે કર્મજંધને ‘ સાદિ ’ કહેવામાં આવેલો  
 છે તે કોઈ કર્મપ્રકૃતિના જંધની અપેક્ષાએ જ કહેલ છે. જેમ કે જે જીવને  
 આગલા ગુણસ્થાનોમાં જે કર્મપ્રકૃતિનો જંધ હોતો નથી, તે જીવ એ પછીના  
 ગુણસ્થાનો પર ચડે છે તો તેને તે પ્રકૃતિનો જંધ થઈ જાય છે, તે દૃષ્ટિએ  
 તે જંધને સાદિ માનવામાં આવેલ છે. ત્યારે જીવ તે સ્થાનથી નીચે ઉતરી  
 જાય છે ત્યારે તે પ્રકૃતિનો જંધ તેને છૂટી જાય છે, તેથી તેનો અન્ત આવી  
 જાય છે, તે કારણે તે કર્મજંધ સાદિ અને સાન્ત હોય છે. આ વાતને  
 ધ્યાનમાં રાખીને કેટલાક જીવોના કર્મજંધરૂપ પુદ્ગલોપચયને સાદિ સાન્ત

અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સર્વયવસિતો ભવતિ । ‘અત્યેગદયાણં અણાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્’ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં તુ કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સર્વયવસિતઃ સાન્તોઽસ્તિ ‘અત્યેગદયાણં અણાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્’ અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સર્વયવસિતઃ અનન્તઃ, કિન્તુ ‘ળો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્’ નો ચેવ સ્વલુ-નૈવ કથમપિ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સર્વયવસિતઃ અનન્તો ભવતિ । ‘ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કેણદ્દેશં ?’ હે ભદન્ત ! તત્

હે હસી અપેક્ષા કો ધ્યાન મેં રાખીને ત્યાં કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચય કો કોઈ જીવની અપેક્ષા સે સોદિ સાન્ત કહ દિયા ગયા હે એના જાનના ચાહિયે સૂત્રકાર હસ વિષય કો સ્વયં આગે સ્પષ્ટ કરનેવાળે હૈ-અતઃ વિશેષરૂપ મેં હસ પર કુછ નહીં લિખા જાતા હૈ-હસી કારણ (અત્યેગદયાણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) એસા કહા હૈ । (અત્યેગદયાણં જીવાણં અણાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) તથા કિતનેક જીવ એસે મી હૈ કિ જિનકા કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોકર મી સાન્ત હોતા હૈ । એસે વે જીવ અન્તરાત્મા-સમ્યગ્દષ્ટિ હોતે હૈ । (અત્યેગદયાણં અણાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) કિતનેક જીવ એસે મી હૈ કિ જિનકા કર્મબંધરૂપ કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા એસે જીવ અભવ્યશ્રેણી કે હોતે હૈ । કિન્તુ (ળો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) એસે જીવ કોઈ મી નહીં હૈ કિ જિનકા કર્મોપચય સાદિ હોકર મી અનન્ત હી બના રહે વયો કિ એસી માન્યતા મેં મુક્તિ કે અભાવ કા પ્રસન્ન પ્રાપ્ત હોતા હૈ । અથ ગૌતમ હસી વિષય કો વિશેષરૂપ સે સ્પષ્ટ સમજાને કે લિયે પ્રશ્ન

કહેલ છે આ વિષયનું સૂત્રકારે પહેલાં વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે, તેથી અહીં તેનું વધુ પિષ્ટિપેપણ કર્યું નથી. એ જ કારણે (અત્યેગદયાણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) કેટલાક જીવોને સાદિ સાન્ત કહ્યા છે.

(અત્યેગદયાણં જીવાણં અણાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જેમને કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોવા છતાં સાન્ત (પ્રારંભ સહિત) હોય છે. એવાં જીવો (અન્તરાત્માઓ) સમ્યગ્દષ્ટિ હોય છે. (અત્યેગદયાણં અણાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) કેટલાંક જીવો એવાં હોય છે કે જેમને કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ અને અનન્ત હોય છે. એવાં જીવો અભવ્ય શ્રેણીના હોય છે. પરંતુ (ળો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) કેઈ પણ જીવ એવાં હોતા નથી કે જેમને કર્મોપચય સાદિ અને અનન્ત હોય, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતાના સ્વીકારથી મુક્તિના અભાવ - સ્વીકાર

કેનાર્થેન કેન કારણેન વ્યવચ્યતે ? કેપાશ્ચિત્ જીવાનાં તથાવિધવર્ણિતઃ ત્રિવિધઃ કર્મોપચયો ભવતિ, ન તુ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ કર્મોપચયો ભવતિ ? ભગવાનાદ-  
'ગોયમા ! ઈરિયાવહિયવંધયસ્સ કમ્મોવચણ સાણ સપજ્જવસિણ' હે ગૌતમ !  
એર્યાપથિકવન્ધકસ્ય, એર્યાપથિકં કેવલયોગપ્રત્યયં કર્મ, તદ્વન્ધકસ્ય, ઉપ-  
શાન્તમોહસ્ય ધીણમોહસ્ય સયોગિકેવલિનશ્ચ કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ  
સાન્તો ભવતિ, એર્યાપથિકર્મણો હિ જીવસ્ય અવદ્ધપૂર્વસ્ય વન્ધનાત્ કર્મોપચયસ્ય

સે પૂછતે હું કિ-(સે કેળટ્ટેણં) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ આધાર કો  
હેકર કહતે હું કિ કિન્હીં જીવોં કા કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હૈ, કિન્હીં  
જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હૈ ઓર કિન્હીં જીવોં કા કર્મોપચય  
અનાદિ અનન્ત હૈ-પર સાદિ અનન્ત કર્મોપચય કિસીં મીં જીવ કા નહીં  
હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ઉનસે કહતે હું કિ-(ગોયમા) હૈ ગૌતમ !  
(ઈરિયાવહિયવંધયસ્સ કમ્મોવચણ સાણ સપજ્જવસિણ) જો કર્મ  
કેવલ યોગ કે હી નિમિત્ત સે આતા હૈ-કપાય કે નિમિત્ત સે નહીં-  
વહ એર્યાપથિક હૈ હસ એર્યાપથિક કર્મ કા વંધ કરનેવાલા જો  
જીવ હૈ-જૈસે ચારહવેં ૧૧ ચારહવેં ૧૨ ઓર તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તીં જીવ  
ઉસકે જો કર્મોપચય હોતા હૈ વહ સાદિક ઓર સપર્યવસિત હોતા હૈ ।  
હસમેં સાદિતા હસલિયે કહી ગઈ હૈ કિ વહ કર્મ જીવ કો નીચેકે ગુણ-  
સ્થાનોં મેં રહને પર નહીં વંધતા હૈ-ક્યોં કિ વહાં પર કપાય કા સદ્ધાવ

રવો પરશે. હવે આ વિષયના વધારે સ્પષ્ટીકરણને માટે ગૌતમ સ્વામી મહા-  
વીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—

(સે કેળટ્ટેણં ?) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહેા છો કે કેટ-  
લાક જીવોનો કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય  
અનાદિ સાન્ત હોય છે અને કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ અનંત હોય  
છે, પણ કોઈ પણ જીવનો કર્મોપચય સાદિ અનંત હોતો નથી ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ !  
(ઈરિયાવહિયવંધયસ્સ કમ્મોવચણ સાણ સપજ્જવસિણ) જે કર્મબંધ યોગને  
કારણે જ થાય છે, કપાયને કારણે થતો નથી, એવાં કર્મબંધને “એર્યાપથિક  
બંધ” કહે છે. એ પ્રકારના એર્યાપથિક કર્મોનો બંધ કરનાર જીવોનો કર્મો-  
પચય સાદિ અને સાન્ત હોય છે. જેમકે—અગિયાર, બાર અને તેરમા ગુણ-  
સ્થાને રહેલો જીવ આ પ્રકારનો હોય છે, એટલે કે તે જીવોનો કર્મોપચય  
સાદિ અને સાન્ત હોય છે. તેને સાદિ કહેવાનું કારણ એ છે કે જીવ આ  
કર્મબંધ નીચેનાં ગુણસ્થાનોમાં રહે ત્યારે બાંધતો નથી, કારણે કે નીચેનાં



અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતો ભવતિ । ‘અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્’ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં તુ કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ સાન્તોઽસ્તિ ‘અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્’ અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તઃ, કિન્તુ ‘ળો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્’ નો ચેવ સ્વલુ-નૈવ કથમપિ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો ભવતિ । ‘ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કેણદ્વેષં?’ હં ભદન્ત ! તત્ત્વ

હૈં હસી અપેક્ષા કો ધ્યાન મેં રચ્ચકર યદ્દાં કર્મવંધરૂપ પુદ્ગલોપચય કો કિસી જીવ કી અપેક્ષા સે સોદિ સાન્ત કહ દિયા ગયા હૈં એતા જાનના ચાહિયે સૂત્રકાર હસ વિષય કો સ્વયં આગે સ્પષ્ટ કરનેવાલે હૈં-અતઃ વિશેષરૂપ મેં હસ પર કુછ નહીં લિખા જાતા હૈં-હસી કારણ (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) એસા કહા હૈં । (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં અણાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) તથા કિતનેક જીવ એસે મી હૈં કિ જિનકા કર્મવંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોકર મી સાન્ત હોતા હૈં । એસે વે જીવ અન્તરાત્મા-સમ્યગ્દષ્ટિ હોતે હૈં । (અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) કિતનેક જીવ એસે મી હૈં કિ જિનકા કર્મવંધરૂપ કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા એસે જીવ અભવ્યશ્રેણી કે હોતે હૈં । કિન્તુ (ળો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) એસે જીવ કોઈ મી નહીં હૈં કિ જિનકા કર્મોપચય સાદિ હોકર મી અનન્ત હી બના રહે વયોં કિ એસી માન્યતા મેં સુક્તિ કે અભાવ કા પ્રસન્ન પ્રાપ્ત હોતા હૈં । અથ ગૌતમ હસી વિષય કો વિશેષરૂપ સે સ્પષ્ટ સમજને કે લિયે પ્રમુ

કહેલ છે આ વિષયનું સૂત્રકારે પહેલાં વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે, તેથી અહીં તેનું વધુ પિંટપેપણું કર્યું નથી. એ જ કારણે (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) કેટલાક જીવોને સાદિ સાન્ત કહ્યા છે.

(અત્યેગદ્યાણં જીવાણં અણાદૃષ્ટ સપજ્જવસિણ્) કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જેમનો કર્મવંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોવા છતાં સાન્ત (પ્રારંભ સહિત) હોય છે. એવાં જીવો (અન્તરાત્માઓ) સમ્યગ્દષ્ટિ હોય છે. (અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) કેટલાંક જીવો એવા હોય છે કે જેમનો કર્મવંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ અને અનન્ત હોય છે. એવાં જીવો અભવ્ય શ્રેણિના હોય છે. પરંતુ (ળો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ્ સાદૃષ્ટ અપજ્જવસિણ્) કોઈ પણ જીવ એવાં હોતા નથી કે જેમનો કર્મોપચય સાદિ અને અનન્ત હોય, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતાના સ્વીકારથી સુક્તિના અભાવને સ્વીકાર

સાદિત્વમ્ અયોગ્યવસ્થાયાં, શ્રેણિપતિપાતે વા અવન્યનાત્ સપર્યવસિતત્વં સાન્તત્વં  
ચ વોધ્યમ્ ' ભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ ' ભવસિદ્ધિકસ્ય  
ભવે ભવેષુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય ભવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સપર્યવ-

કે કારણ જો કર્મબંધ હોગા વહ્ ભી અપૂર્વે હી હોગા-ઑર યોગનિમિત્તક  
હી હોગા, શરીરજન્ય યા વાર્ણાજન્ય હી હોગા । હસ નિમિત્ત કો લેકર  
હસ કર્મબંધ મેં સાદિતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ઑર જવ વહી આત્મા તેરહવેં  
મેં ચૌદહવેં ગુણસ્થાન પર આરુઢ હો જાવેગા-યા ગ્યારહવેં સે વહ જીવ  
પતિત હો જાવેગા-તો ઁસી સ્થિતિ મેં ઁસ વંધ કિયે હુણ કર્મ કા અંત  
હો જાવેગા અતઃ ઁસમેં સપર્યવસિતતા આ જાવેગી હસી કારણ યહાં  
પર " કિતનેક જીવોં કા કર્મબંધ સાદિ સાન્ત હોતા હૈ " ઁસા કહા  
ગયા હૈ ( ભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ ) ઁક ભવ  
મેં અથવા અનેક ભવોં મેં જિસ જીવ કો સિદ્ધિ કી પ્રાપ્તિ હોગી વહ  
જીવ ભવસિદ્ધિક હૈ ઁસે ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવ કે જો કર્મોપચય હૈ  
વહ અનાદિ હોતા હુઆ ભી સાન્ત હોતા હૈ-હસકા કારણ યહ હૈ કિ  
જવતક ઁસકી આત્મા મેં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ નહીં હુઆ હૈ તવતક  
કર્મબંધ અનાદિ હૈ ઑર હસકે હોતે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હો જાને પર  
હસકા નાશકર વહ મુક્તિ મેં ચલા જાતા હૈ અતઃ ઁસ જીવ કા કર્મ-

પ્રમાણે બારમાં ગુણસ્થાનમાં પણ કપાયોની ક્ષીણતા થઈ જવાને કારણે જે  
કર્મબંધ થશે તે પણ અપૂર્વ જ હશે અને યોગનિમિત્તક જ હશે એટલે કે  
શરીરજન્ય કે વાર્ણાજન્ય જ હશે. આ કારણે આ કર્મબંધમાં સાદિતા (પ્રારંભ  
યુક્તતા) બતાવી છે. અને જ્યારે એ જ આત્મા તેરમાં ગુણસ્થાનેથી ચૌદમાં  
ગુણસ્થાને ચડી જશે, અથવા અગિયારમાં ગુણસ્થાનેથી નીચેની શ્રેણિના ગુણ-  
સ્થાને ઉતરી જશે, ત્યારે તે બાંધેલા કર્મનો અંત આવી જશે. તે કારણે  
તેમાં સપર્યવસિતતા (સાન્તતા-અન્ત યુક્તતા) બતાવી છે. તે કારણે એવું  
કહ્યું છે કે " કેટલાક જીવોનો કર્મબંધ સાદિ અને સાન્ત હોય છે. "

( ભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ ) જે જીવને એક ભવમાં  
અથવા અનેક ભવમાં સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ થવાની હોય એવા જીવને 'ભવસિદ્ધિક'  
કહે છે. ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવનો જે કર્મોપચય હોય છે તે અનાદિ હોવા  
છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે જ્યાં સુધી  
તેના આત્મામાં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ થયો નથી ત્યાં સુધી કર્મબંધ અનાદિ  
છે, પણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ થતાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થઈ જવાથી તેનો (કર્મબંધનો)



રહતા હૈ અતઃ અવદ્ધ પૂર્વ હોને કે કારણ ઇસ કર્મ કા બંધ હોને સે યહ કર્મવંધ સાદિ માના ગયા હૈ ઓર અયોગી અવસ્થા હોને પર અર્થાત્ ચૌદહવેં ગુણસ્થાન મેં ચલે જાને પર અથવા શ્રેણિ સે પતિત હોને પર ડસકા બંધ છૂટ જાતા હૈ, ઇસલિયે વહ સ્થાન્ત માના જાતા હૈ તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ કર્મવંધ કા જવ વિચાર કિયા ગયા હૈ તો વહાં પર ( જોગા પયડિપણસા ઠિર્હ અણુભાગા કસાયઓ હોતિ ) એસા કહા ગયા હૈ અર્થાત્ પ્રકૃતિ બંધ ઓર પ્રદેશવંધ યે દો બંધ યોગ સે હોતે હૈં ઓર સ્થિતિવંધ તથા અનુભાગ બંધ યે દો બંધ કપાય સે હોતે હૈં-ઇસતરહ કર્મવંધ કે દો મુખ્યકારણ હૈં-એક યોગ ઓર દૂસરા કપાય જો કર્મવંધ કેવલ ગમનાગમનાદિક ક્રિયાઓં કે નિમિત્ત સે હી હોતા હૈ વહ એર્થા-પથિક કર્મ કહલાતા હૈ ઇસ કર્મ કો બાંધને વાલા જીવ એર્થાપથિક વંધક કહા ગયા હૈ-દસવેં ગુણસ્થાનતક હી કપાય કા સદ્ભાવ કહા ગયા હૈ ઇસકે ડપર કે ગુણસ્થાનોં મેં કપાય તો હોતી નહીં હૈ કેવલ યોગ હી રહતા હૈ-બ્યારહવેં ગુણસ્થાન મેં કપાય બિલકુલ ઉપશાન્ત રહ-સી હૈ અતઃ વહ નહીં કે વરાધર વહાં હૈ યહાં જો કર્મપ્રકૃતિ કા બંધ હોગા ઇસી તરહ વારહવેં ગુણસ્થાન મેં બી કપાયોં કી ક્ષીણતા હો જાને

ગુણસ્થાનોમાં કપાયનો સદ્ભાવ રહે છે તેથી અવદ્ધ પૂર્વ ( પૂર્વે નહીં બંધાયેલો ) હોવાને કારણે આ કર્મબંધને સાદિ ( પ્રારંભ સુકત ) કહ્યો છે. અયોગી અવસ્થામાં એટલે કે ચૌદમાં ગુણસ્થાને ચડી જવાથી અથવા શ્રેણિથી નીચે ઉતરતા તેનો બંધ છૂટી જાય છે, તે કારણે તેને સ્થાન્ત ( અન્ત સહિત ) માનેલો છે.

કર્મબંધનો જ્યારે વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે એ વાત ધ્યાનમાં રાખવા જેવી છે કે ( જોગા પયડિપદેશા ઠિર્હ અણુભાગા કસાયઓ હોતિ ) પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ એ બન્ને બંધ યોગથી થાય છે, અને સ્થિતિબંધ તથા અનુભાગબંધ કપાયથી થાય છે. આ રીતે કર્મબંધનાં મુખ્ય બે કારણ છે—  
(૧) યોગ અને (૨) કપાય.

જે કર્મબંધ ગમનાગમન આદિ ક્રિયાઓને કારણે થાય છે તે કર્મબંધને એર્થાપથિક કર્મબંધ કહે છે, અને એવાં કર્મને બાંધનાર જીવને એર્થાપથિક બંધક કહ્યો છે. ઇસમાં ગુણસ્થાન સુધી જ કપાયનો સદ્ભાવ કહ્યો છે, ત્યાર પછીનાં ગુણસ્થાનોમાં કપાયનો અભાવ હોય છે પણ યોગનો સદ્ભાવ હોય છે. અગિયારમાં ગુણસ્થાનમાં કપાય બિલકુલ ઉપશાન્ત રહે છે. તેથી ત્યાં તે નહીં જેવી જ હોય છે. ત્યાં જે કર્મપ્રકૃતિનો બંધ થશે તે અપૂર્વ — જ

સાદિત્વમ્ અયોગ્યવસ્થાયાં, શ્રેણિપ્રતિપાતે વા અવન્યનાત્ સપર્યવસિતત્વં સાન્તત્વં  
 ચ બોધ્યમ્ ' ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ ' ભવસિદ્ધિકસ્ય  
 ભવે ભવેષુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય ભવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સપર્યવ-

કે કારણ જો કર્મબંધ હોગા વહ્ ભી અપૂર્વે હી હોગા-ઑર યોગનિમિત્તક  
 હી હોગા, શરીરજન્ય યા વાર્ણીજન્ય હી હોગા । હસ નિમિત્ત કો લેકર  
 હસ કર્મબંધ મેં સાદિતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ઑર જવ વહી આત્મા તેરહવે  
 મેં ચૌદહવે ગુણસ્થાન પર આરુઢ હો જાવેગા-યા ગ્યારહવે સે વહ જીવ  
 પતિત હો જાવેગા-તો ઁસી સ્થિતિ મેં ઁસ વંધ કિયે હુણ કર્મ કા અંત  
 હો જાવેગા અતઃ ઁસમેં સપર્યવસિતતા આ જાવેગી હસી કારણ યહાં  
 પર " કિતનેક જીવોં કા કર્મબંધ સાદિ સાન્ત હોતા હૈ " ઁસા કહા  
 ગયા હૈ ( ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ ) ઁક ભવ  
 મેં અથવા અનેક ભવોં મેં જિસ જીવ કો સિદ્ધિ કી પ્રાપ્તિ હોગી વહ  
 જીવ ભવસિદ્ધિક હૈ ઁસે ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવ કે જો કર્મોપચય હૈ  
 વહ અનાદિ હોતા હુઆ ભી સાન્ત હોતા હૈ-હસકા કારણ યહ હૈ કિ  
 જવતક ઁસકી આત્મા મેં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ નહીં હુઆ હૈ તવતક  
 કર્મબંધ અનાદિ હૈ ઑર હસકે હોતે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હો જાને પર  
 હસકા નાશકર વહ મુક્તિ મેં ચલા જાતા હૈ અતઃ ઁસ જીવ કા કર્મ-

પ્રમાણે બારમાં ગુણસ્થાનમાં પણ કપાયોની ક્ષીણતા થઈ જવાને કારણે જે  
 કર્મબંધ થશે તે પણ અપૂર્વ જ હશે અને યોગનિમિત્તક જ હશે એટલે કે  
 શરીરજન્ય કે વાર્ણીજન્ય જ હશે. આ કારણે આ કર્મબંધમાં સાદિતા (પ્રારંભ  
 યુક્તતા) બતાવી છે. અને ત્યારે એ જ આત્મા તેરમાં ગુણસ્થાનેથી ચૌદમાં  
 ગુણસ્થાને ચડી જશે, અથવા અગિયારમાં ગુણસ્થાનેથી નીચેની શ્રેણિના ગુણ-  
 સ્થાને ઉતરી જશે, ત્યારે તે બાંધેલા કર્મનો અંત આવી જશે. તે કારણે  
 તેમાં સપર્યવસિતતા (સાન્તતા-અન્ત યુક્તતા) બતાવી છે. તે કારણે એવું  
 કહ્યું છે કે " કેટલાક જીવોનો કર્મબંધ સાદિ અને સાન્ત હોય છે. "

( ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ ) જે જીવને એક ભવમાં  
 અથવા અનેક ભવમાં સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ થવાની હોય એવા જીવને 'ભવસિદ્ધિક'  
 કહે છે. ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવનો જે કર્મોપચય હોય છે તે અનાદિ હોવા  
 છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે જ્યાં સુધી  
 તેના આત્મામાં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ થયો નથી ત્યાં સુધી કર્મબંધ અનાદિ  
 છે, પણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ થતાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થઈ જવાથી તેનો (તે કર્મનો)

સિતઃ સાન્તો ભવતિ, 'અભવસિદ્ધિયસ્ય કમ્મોવચણ અણાદિણ અપજ્જવસિણ' અભ-  
વસિદ્ધિકસ્ય ન વિધતે ભવે ભવેષુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય અભવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મો-  
પચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો ભવતિ, 'સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं  
वुच्चइ-अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइए० णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचण  
साइए अपज्जवसिण' हे गौतम ! तत् तेनार्थेन एवम् उक्त्तरीत्या उच्यते-यत्-  
अस्ति एकेषां जीवानां कर्मोपचयः सादिकः, सपर्यवसितः-सान्तः, केषाञ्चित्  
अनादिकः सपर्यवसितः सान्तः, केषाञ्चित् अनादिकः अपर्यवसितः कर्मोपचयः  
किन्तु नो चैव खलु जीवानां कर्मोपचयः सादिकः अपर्यवसितः अनन्तः संभवति ।  
गौतमः पृच्छति-'वत्ये णं भंते ! किं साइए सपज्जवसिण, चउभंगो ?' हे

बंध अनादि होने पर भी सान्त प्रकट किया गया है । 'अभवसिद्धि-  
यस्य कम्मोवचण अणाइए अपज्जवसिण ) तथा जो अभवसिद्धिक जीव  
है-किसी भी भव में जिसे मुक्ति प्राप्त नहीं होती है ऐसे अभव्य जीव  
का जो कर्मोपचय है वह अनादि होकर भी अनन्त होता है । ( से  
तेणद्वेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइ-  
ए०, णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचण साइए अपज्जवसिण ) इसी कारण  
हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक जीवों का कर्मोपचय सादि  
सान्त होता है इत्यादि परन्तु किसी भी जीव का वह कर्मोपचय सादि  
और अपर्यवसित नहीं होता है ।

अब गौतम स्वामी प्रभु से पुनः ऐसा पूछते हैं कि ( वत्येणं भंते !  
किं साइए सपज्जवसिण, चउभंगो ) हे भदन्त ! वस्त्र क्या सादि होकर

નાશ કરીને તે મોક્ષે જાય છે, તે કારણે તે જીવનો કર્મબંધ અનાદિ હોવા  
છતાં પણ સાન્ત ( અન્ત સહિત ) કહ્યો છે. ( અભવસિદ્ધિયસ્ય કમ્મોવચણ અણા-  
દિણ અપજ્જવસિણ ) જે જીવને કોઈ પણ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી એવાં  
અભવ્ય જીવનો કર્મબંધ ( કર્મોપચય ) અનાદિ હોવા છતાં અનંત કહ્યો છે.  
( સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं वुच्चइ अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइए० णो  
चेव णं कम्मोवचण साइए अपज्जवसिण ) हे गौतम ! ते कારणे मे' एषु' कथं  
छे के केटलाक जिवोना कर्मोपचय सादि सान्त होय छे, केटलाकनो अनादि  
सान्त होय छे अने केटलाकनो अनादि अनंत होय छे, परंतु कौछे पण  
जिवोना कर्मोपचय सादि अने अनंत होतो नथी.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( વત્યેણં ભંતે !  
કિં સાઈએ સપજ્જવસિણ, ચઉભંગો ) હે ભદન્ત ! શું વસ્ત્ર સાદિ સા-



મદન્ત ! વત્તં સ્વલુ કિમ્ સાદિકમ્-સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્ ? ૧, ચતુર્મઙ્ગમ્ ?-  
ચત્વારો મઙ્ગા ભવન્તિ કિમ્ ? સાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્-અનન્તમ્ ૨. અનાદિકમ્-  
સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્ ૩ ? અનાદિકમ્-અપર્યસિતમનન્તં ૪ ? ભવતિ કિમ્ ? મગ-  
વાન્ આહ-‘ ગોયમા ! વત્થે સાહ્ણ સપજ્જવસિણ, ’ હે ગૌતમ ! વત્તં સાદિકં-  
સપર્યવસિતમ્ સાન્તં ભવતિ ‘ અવસેસા તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા ’ અવશેષાઃ  
સાદિસાન્તમિત્તાસ્રયોઽપિ મઙ્ગાઃ પ્રતિપેધયિતવ્યાઃ ન વાચ્યા इत्यर्थः । तथा च  
वत्तं नो सादिकम् अनन्तम्, नो वा अनादिकम्-सान्तम्, नापि अनादिकम्-  
अनन्तम्-इति भावः । गौतमः पुनः पृच्छति-‘ जहा णं भंते ! वत्थे साह्ण सप-  
ज्जवसिए ’ हे भदन्त ! यथा खलु वत्तं सादिकं सपर्यवसितम् सान्तम्, नो  
साह्ण अपज्जवसिए ’ नो सादिकम् अनन्तम्, ‘ णो अणाह्ण सपज्जवसिए ’ नो

મો સાન્ત હૈ ? યા સાદિ હોકર મી અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ?  
યા અનાદિ અનન્ત હૈ ? હસ પ્રકાર સે વત્ત કે વિષય મેં ગૌતમ ને યે ચાર  
મંગ પ્રશ્ન સે પૂછે-હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને ડનસે કહા ( ગોયમા ! વત્થે  
સાહ્ણ સપજ્જવસિણ ) હે ગૌતમ ! વત્ત સાદિ સાન્ત હૈ । ( અવસેસા  
તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા ) સાદિ અનન્ત વહ નહીં હૈ, અનાદિ સાન્ત વહ  
નહીં હૈ ઓર ન વહ અનાદિ અનન્ત હી હૈ-હસ પ્રકાર સે અવશેષ  
ત્રીન મઙ્ગોં કા યહાં પ્રશ્ન ને પ્રતિપેધ કિયા અથ્ હસી દૃષ્ટાન્ત સે ગૌત-  
મસ્વામી પ્રશ્ન સે યહ પૂછતે હેં કિ-( જહા ણં મંતે ! વત્થે સાહ્ણ સપજ્જ-  
વસિણ ) હે મદન્ત ! જિસ પ્રકાર સે આપને વત્ત કો સાન્ત કહા હૈ ( નો  
સાહ્ણ અપજ્જવસિણ ) સાદિ અનન્ત નહીં કહા હૈ, ( ણો અણાહ્ણ સપ-

કે સાદિ અનંત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય છે ? કે અનાદિ અનંત  
હોય છે ? વસ્તુના વિષે આ પ્રકારના ચાર લંગો ( વિકલ્પો ) ગૌતમ સ્વામીએ  
મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યા.

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ !  
( વત્થે સાહ્ણ સપજ્જવસિણ ) વસ્તુ સાદિ સાન્ત હોય છે, ( અવસેસા તિન્નિ વિ  
પહિસેહેયવ્વા ) તે સાદિ અનંત હોતું નથી, અનાદિ સાન્ત હોતું નથી અને  
અનાદિ અનંત પણ હોતું નથી. આ રીતે બાકીના ત્રણ વિકલ્પોનો નકારાત્મક  
જવાબ આપ્યો છે હવે એ જ દૃષ્ટાન્તને આધારે ગૌતમ સ્વામી બુદ્ધોના વિષ-  
યમાં નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે—

( જહાણં મંતે ! વત્થે સાહ્ણ સપજ્જવસિણ ) હે ભદન્ત ! જેમ આપે વસ્તુને  
સાદિ અને સાન્ત કહ્યું છે, ( નો સાહ્ણ અપજ્જવસિણ ) સાદિ અનંત કહ્યું નથી,  
( ણો અણાહ્ણ સપજ્જવસિણ ) અનાદિ સાન્ત કહ્યું નથી, અને ( ણો અણાહ્ણ

સિતઃ સાન્તો ભવતિ, ' અભવસિદ્ધિયસ્ય કર્મોપચય અણાદૈ અપજ્જવસિષ્ ' અભ-  
વસિદ્ધિકસ્ય ન વિદ્યતે ભવં ભવેષુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય અભવસ્ય જીવસ્ય કર્મો-  
પચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો ભવતિ, ' સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं  
वुच्चइ-अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचए साइए० णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचए  
साइए अपज्जवसिए ' हे गौतम ! तत् तेनार्थेन एवम् उक्तरीत्या उच्यते-यत्-  
अस्ति एकेषां जीवानां कर्मोपचयः सादिकः, सपर्यवसितः-सान्तः, केपाञ्चित्  
अनादिकः सपर्यवसितः सान्तः, केपाञ्चित् अनादिकः अपर्यवसितः कर्मोपचयः  
किन्तु नो चैव खलु जीवानां कर्मोपचयः सादिकः अपर्यवसितः अनन्तः संभवति ।  
गौतमः पृच्छति-' वत्थे णं भंते ! किं साइए सपज्जवसिए, चउभंगो ? ' हे

बंध अनादि होने पर भी सान्त प्रकट किया गया है । ' अभवसिद्धि-  
यस्य कर्मोपचय अणादए अपज्जवसिए ) तथा जो अभवसिद्धिक जीव  
है-किसी भी भव में जिसे सुक्ति प्राप्त नहीं होती है ऐसे अभव्य जीव  
का जो कर्मोपचय है वह अनादि होकर भी अनन्त होता है । ( से  
तेणद्वेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचए साइ-  
ए०, णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचए साइए अपज्जवसिए ) इसी कारण  
हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक जीवों का कर्मोपचय सादि  
सान्त होता है इत्यादि परन्तु किसी भी जीव का वह कर्मोपचय सादि  
और अपर्यवसित नहीं होता है ।

अब गौतम स्वामी प्रभु से पुनः ऐसा पूछते हैं कि ( वत्थेणं भंते !  
किं साइए सपज्जवसिए, चउभंगो ) हे भदन्त ! वस्तु क्या सादि होकर

નાશ કરીને તે મોક્ષે જાય છે, તે કારણે તે જીવનો કર્મબંધ અનાદિ હોવા  
છતાં પણ સાન્ત ( અન્ત સહિત ) કહ્યો છે. ( અભવસિદ્ધિયસ્ય કર્મોપચય અણા-  
દૈ અપજ્જવસિષ્ ) જે જીવને કોઈ પણ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી એવાં  
અભવ્ય જીવનો કર્મબંધ ( કર્મોપચય ) અનાદિ હોવા છતાં અનંત કહ્યો છે.  
( સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं वुच्चइ अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचए साइए० णो  
चेव णं कम्मोवचए साइए अपज्जवसिए ) हे गौतम ! ते कારणें मे' एवु' कहुं  
छे के डेटलाइ जिवोना कर्मोपचय सादि सान्त डोय छे, डेटलाइनो अनादि  
सान्त डोय छे अने डेटलाइनो अनादि अन्त डोय छे, परंतु कौछि' પણ  
जिवोना कर्मोपचय सादि अने अन्त डोतो नथी.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( વત્થેણં ભંતે !  
કિં સાઈએ સપજ્જવસિય, ચઉમંગો ) હે ભદન્ત ! શું વસ્તુ સાદિ સા-



મદન્ત ! વત્તં સ્વલુ કિમ્ સાદિકમ્-સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્ ? ૧, ચતુર્થમ્ ?-  
 ચત્વારો મદ્દા ભવન્તિ કિમ્ ? સાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્-અનન્તમ્ ૨. અનાદિકમ્-  
 સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્ ૩ ? અનાદિકમ્-અપર્યવસિતમનન્તં ૪ ? ભવતિ કિમ્ ? મગ-  
 વાન્ આહ-‘ ગોચમા ! વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ, ‘ હે ગૌતમ ! વત્થં સાદિકં-  
 સપર્યવસિતમ્ સાન્તં ભવતિ ‘ અવસેસા તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા ‘ અવશેષાઃ  
 સાદિસાન્તમિન્નાસ્યયોઽપિ મદ્દાઃ પ્રતિપેધયિતવ્યાઃ ન વાચ્યા इत्यर्थः । तथा च  
 वत्तं नो सादिकम् अनन्तम्, नो वा अनादिकम्-सान्तम्, नापि अनादिकम्-  
 अनन्तम्-इति भावः । गौतमः पुनः पृच्छति-‘ जहा णं भंते ! वत्थे साहण सप-  
 ज्जवसिए ‘ हे मदन्त ! यथा स्वलु वत्तं साદિકં સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્, નો  
 સાહણ અપજ્જવસિણ ‘ નો સાદિકમ્ અનન્તમ્, ‘ ણો અણાહણ સપજ્જવસિણ ‘ નો

મો સાન્ત હૈ ? યા સાદિ હોકર મી અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ?  
 યા અનાદિ અનન્ત હૈ ? હસ પ્રકાર સે વત્ત કે વિષય મેં ગૌતમ ને ચે ચાર  
 મંગ પ્રશ્ન સે પૂછે-હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને ઉનસે કહા ( ગોચમા ! વત્થે  
 સાહણ સપજ્જવસિણ ) હે ગૌતમ ! વત્ત સાદિ સાન્ત હૈ । ( અવસેસા  
 તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા ) સાદિ અનન્ત વહ નહીં હૈ, અનાદિ સાન્ત વહ  
 નહીં હૈ ઓર ન વહ અનાદિ અનન્ત હી હૈ-હસ પ્રકાર સે અવશેષ  
 ત્રીન મદ્દોં કા યહાં પ્રશ્ન ને પ્રતિપેધ કિયા અથ્ હસી દૃષ્ટાન્ત સે ગૌત-  
 મસ્વામી પ્રશ્ન સે યહ પૂછતે હેં કિ-( જહા ણં મંતે ! વત્થે સાહણ સપજ્જ-  
 વસિણ ) હે મદન્ત ! જિસ પ્રકાર સે આપને વત્ત કો સાન્ત કહા હૈ ( નો  
 સાહણ અપજ્જવસિણ ) સાદિ અનન્ત નહીં કહા હૈ, ( ણો અણાહણ સપ-

હે સાદિ અનંત હોય છે ? હે અનાદિ સાન્ત હોય છે ? હે અનાદિ અનંત  
 હોય છે ? વત્થના વિષે આ પ્રકારના ચાર લાગે ( વિકલ્પો ) ગૌતમ સ્વામીએ  
 મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યા.

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-( ગોચમા ! ) હે ગૌતમ !  
 ( વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ ) વત્થ સાદિ સાન્ત હોય છે, ( અવસેસા તિન્નિ વિ  
 પહિસેહેયવ્વા ) તે સાદિ અનંત હોતું નથી, અનાદિ સાન્ત હોતું નથી અને  
 અનાદિ અનંત પણ હોતું નથી. આ રીતે બાકીના ત્રણ વિકલ્પોનો નકારાત્મક  
 જવાબ આપ્યો છે હવે એ જ દૃષ્ટાન્તને આધારે ગૌતમ સ્વામી જીવેના વિષ-  
 યમાં નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે—

( જહાણં મંતે ! વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ ) હે મદન્ત ! જેમ આપે વત્થને  
 સાદિ અને સાન્ત કહ્યું છે, ( નો સાહણ અપજ્જવસિણ ) સાદિ અનંત કહ્યું નથી,  
 ( ણો અણાહણ સપજ્જવસિણ ) અનાદિ સાન્ત કહ્યું નથી, અને ( ણો અણાહણ

સિતઃ સાન્તો ભવતિ, ' અભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણાદણ અપજ્જવસિણ ' અભ-  
વસિદ્ધિકરણ ન વિધતે ભવે મંતેપુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય અભવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મો-  
પચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો ભવતિ, ' સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं  
बुच्चइ-अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइए० णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचण  
साइए अपज्जवसिण ' हे गौतम ! तत् तेनार्थेन एवम् उक्त्तरीत्या उच्यते-यत्-  
अस्ति एकेषां जीवानां कर्मोपचयः सादिकः, सपर्यवसितः-सान्तः, केषाञ्चित्  
अनादिकः सपर्यवसितः सान्तः, केषाञ्चित् अनादिकः अपर्यवसितः कर्मोपचयः  
किन्तु नो चैव खलु जीवानां कर्मोपचयः सादिकः अपर्यवसितः अनन्तः संभवति ।  
गौतमः पृच्छति-' वत्थे णं भंते ! किं साइए सपज्जवसिण, चउभंगो ? ' हे

બંધ અનાદિ હોને પર મી સાન્ત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । ' અભવસિદ્ધિય-  
સ્સ કમ્મોવચણ અણાદણ અપજ્જવસિણ ) તથા જો અભવસિદ્ધિક જીવ  
હૈ-કિસી મી ભવ મેં જિસે સુક્તિ પ્રાપ્ત નહીં હોતી હૈ એસે અભવ્ય જીવ  
કા જો કર્મોપચય હૈ વહ અનાદિ હોકર મી અનન્ત હોતા હૈ । ( સે  
તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं बुच्चइ, अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइ-  
ए०, णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचण साइए अपज्जवसिण ) इसी कारण  
हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक जीवों का कर्मोपचय सादि  
सान्त होता है इत्यादि परन्तु किसी भी जीव का वह कर्मोपचय सादि  
और अपर्यवसित नहीं होता है ।

અવ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પુનઃ એસા પૂછતે હૈં કિ ( વત્થેણં મંતે !  
કિં સાઈએ સપજ્જવસિણ, ચઉમંગો ) હૈ મદન્ત ! વત્થ કયા સાદિ હોકર

નાશ કરીને તે મોક્ષે જાય છે, તે કારણે તે જીવનો કર્મબંધ અનાદિ હોવા  
છતાં પણ સાન્ત ( અન્ત સહિત ) કહ્યો છે. ( અભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણા-  
દણ અપજ્જવસિણ ) જે જીવને કોઈ પણ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી એવાં  
અભવ્ય જીવનો કર્મબંધ ( કર્મોપચય ) અનાદિ હોવા છતાં અન્ત કહ્યો છે.  
( સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं बुच्चइ अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साइए० णो  
चेव णं कम्मोवचण साइए अपज्जवसिण ) हे गौतम ! ते कारणे मे' एवुं कहुं  
छे के डेटलाक जिवोना कर्मोपचय सादि सान्त होय छे, डेटलाकनो अनादि  
सान्त होय छे अने डेटलाकनो अनादि अनंत होय छे, परंतु कौछ'पण  
जिवोना कर्मोपचय सादि अने अनंत होतो नथी.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( વત્થેણં મંતે !  
કિં સાઈએ સપજ્જવસિણ, ચઉમંગો ) હૈ મદન્ત ! શું વત્થ સાદિ સાન્ત

અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ભવન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કેણદ્દેણં ? ’ હે મહન્ત ! તત્ કેનાર્થેન—કેન કારણેન એવમુચ્યતે કતિપયે સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ યાવત્—કતિપયે અનાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ ભવન્તિ ? મગયાનાદ—‘ ગોયમા ! નેરહ્ય—તિરિક્કલ—જોણિય—મણુસ્સ—દેવા ગહમાગઈં પહુચ્ચ સાહ્યા સપજ્જવસિયા ’ હે ગૌતમ ! નૈરપિક — તિર્યગ્ગ્યોનિક — મનુષ્ય — દેવાઃ ગતિમ્ નરકાશુદ્ધર્ત્તનાદિકમાશ્રિત્ય સાદિકઃ આગતિમ્—નરકાર્થો ગમનમાશ્રિત્ય સપર્યવસિતાઃ સાન્તા ભવન્તિ, ‘ સિદ્ધા ગઈં પહુચ્ચ સાહ્યા અપજ્જવસિયા ’ સિદ્ધાઃ જીવાઃ સિદ્ધગતિં પ્રતીત્ય આશ્રિત્ય સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ભવન્તિ । ‘ ભવસિદ્ધિયા લઙ્ઘિ પહુચ્ચ અણાહ્યા સપજ્જવસિયા, ’ ભવમિદ્ધિકાઃ ભવ્યાઃ જીવાઃ લઙ્ઘિ પ્રતીત્ય અનાદિકાઃ

કયા કારણ હૈં इस बात को जानने के अभिप्राय से उनसे पूछा—( से केणद्वेणं ) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि कितनेक जीव सादि सान्त हैं यावत् कितनेक जीव अनादि अनन्त हैं ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु ने उनसे कहा—( गोयमा ! नेरह्य—तिरिक्कलजोणिय मणुस्स देवा गहमागईं पहुच्च साह्या सपज्जवसिया ) हे गौतम ! नारक, तिर्यग्योनिक, मनुष्य और देव ये नरक आदिगति में आने की अपेक्षा से सादि और आगति—उस २ गति से निकलने की अपेक्षा से सान्त माने गये हैं । ( सिद्धा गईं पहुच्च साह्या अपज्जवसिया ) सिद्ध जीव सिद्ध गति की अपेक्षा से सादि अनन्त माने गये हैं । ( भवसिद्धिया लङ्घि पहुच्च अणाह्या सपज्जवसिया ) भवजीव लङ्घि की अपेक्षा अनादि सान्त माने गये हैं—क्यों कि भवसिद्धिक जीवों की भवत्वलङ्घि

હવે હવેના વિષયમાં આ પ્રકારનું પ્રતિપાદન સાંભળીને તેનું કારણ બાણવાની હજ્જાસાથી ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછે છે— ( સે કેણદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કેટલાક હવે સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક સાદિ અનંત હોય છે, કેટલાક અનાદિ સાન્ત હોય છે, અને કેટલાક અનાદિ અનંત હોય છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! નેરહ્યતિરિક્કલજોણિય, મણુસ્સ દેવા ગહમાગઈં પહુચ્ચ સાહ્યા સપજ્જવસિયા ) હે ગૌતમ ! નારક, તિર્યગ્ગ્યોનિક, મનુષ્ય અને દેવ, એ નરક આદિ ગતિમાં આવવાની અપેક્ષાએ સાદિ છે અને નરક આદિ ગતિ—ઓમાંથી નીકળવાની અપેક્ષાએ સાન્ત છે. ( સિદ્ધા ગઈં પહુચ્ચ સાહ્યા અપજ્જવસિયા ) સિદ્ધ હવેને સિદ્ધ ગતિની અપેક્ષાએ સાદિ અનંત માનવામાં આવેલા છે. ( ભવસિદ્ધિયા લઙ્ઘિ પહુચ્ચ અણાહ્યા સપજ્જવસિયા ) ભવસિદ્ધિક ભવ્ય હવેને લઙ્ઘિની અપેક્ષાએ અનાદિ સાન્ત કહ્યા છે, કારણ કે ભવ.



અનાદિકમ્ સપર્યવસિતં સાન્તમ્, ' ણો અણાદ્ અપજ્જવસિદ્ ' નો અનાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્ અનન્તમ્, ' તદ્દા ણં જીવા ણં કિં સાદ્યા સપજ્જવસિયા, ત્તઝમંગો પુચ્છા ? ' તથા સ્વલુ જીવાઃ કિમ્ સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ? ચતુર્થમ્-નો સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ? નો વા અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ? ન વા અનાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ભવન્તિ કિમ્ ? ઇતિ પૂચ્છા પ્રશ્નઃ ? મગધાનાહ- ' ગોપમા ! અત્થેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા, ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા ' હે ગૌતમ ? સન્તિ યત્-એકકે કતિપપ્પે જીવાઃ સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ભવન્તિ, ચત્થારોઽપિ મણિતવ્વાઃ તથા ચ કતિપપ્પે જીવાઃ સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ, કતિપપ્પે ચ અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ, કતિપપ્પે તુ અનાદિકાઃ

જ્જવસિદ્) અનાદિ સાન્ત નહીં કહ્યા ( ણો અણાદ્ અપજ્જવસિદ્ )  
 ઓર ન અનાદિ અનન્ત હી કહ્યા હૈ ( તદ્દા ણં જીવાણં કિં સાદ્યા સપ-  
 જ્જવસિયા ચત્તમંગો પુચ્છા ) તો કયા હસી તરહ સે જીવ મી કેવલ  
 સાદિ સાન્ત હી હૈ ? વે સાદિ અનન્ત નહીં હૈ ? અનાદિ સાન્ત નહીં હૈ ?  
 અનાદિ અનન્ત નહીં હૈ ? હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રમુ ને ડનસે કહ્યા  
 -( ગોપમા ) હે ગૌતમ ! જીવોં કે વિષય મેં એસી વાત નહીં હૈ-કર્પોં કિ  
 ( અત્થેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા ) કિતનેક જીવ એસે મી હૈં જો  
 સાદિ સાન્ત હૈં, ( ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા ) કિતનેક જીવ એસે હૈં જો  
 સાદિ અપર્યવસિત-અનન્ત હૈં । કિતનેક જીવ એસે મી હૈં જો અનાદિ  
 સાન્ત હૈં ઓર કિતનેક જીવએસે હૈં જો અનાદિ અનન્ત હૈં । હસ પ્રકાર  
 સે જીવ કે વિષય મેં પ્રમુ કા પ્રતિપોદન સુનકર ગૌતમ ને એસે કથન કા

અપજ્જવસિદ્ ) અનાદિ અનન્ત કહ્યું નથી, ( તદ્દા ણં જીવાણં કિં સાદ્યા સપજ્જ-  
 વસિયા, ચત્તમંગો પુચ્છા ) એજ પ્રમાણે શું એવો પણ માત્ર સાદિ સાન્ત જ  
 છે ? શું તેઓ સાદિ અનન્ત નથી ? શું તેઓ અનાદિ સાન્ત નથી ? શું તેઓ  
 અનાદિ અનન્ત નથી ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુએ કહ્યું—( ગોપમા ! ) એવાનાં વિષ-  
 યમાં એવી વાત નથી. ( અત્થેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા ) કેટલાક એવો એવાં  
 હોય છે કે જે સાદિ સાન્ત હોય છે, ( ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા ) કેટલાક એવો  
 એવાં હોય છે કે જે સાદિ અનન્ત હોય છે, કેટલાક એવ એવાં પણ હોય  
 છે કે જે અનાદિ સાન્ત હોય છે, અને કેટલાક એવો એવાં હોય છે કે જે  
 અનાદિ અનન્ત હોય છે.

ન સંભવતિ, તથાપિ કાલસ્યાનાદિત્વાનુસારેણ અહોરાત્રાદેરનાદિત્વેઽપિ ઉત્પત્તિ-  
માશ્રિત્ય સાદિત્વવ્યવહારવત્ સિદ્ધેઃ સિદ્ધજીવરદિત્વાભાવેન અનાદિત્વેઽપિ  
સિદ્ધસ્ય ઉત્પત્તિમાશ્રિત્ય સાદિત્વમ્ અનન્તત્વમુક્તમ્, તથા ચોક્તમ્

“ સઽવં સાઙ્ સરીરં ન ય, નામાઽઽઈમય દેહસઽભાવો ।

કાલાઽનાદિત્તણઞ્ જહા વ રાઈં-દિવાઈણં ॥ ૧ ॥

“ સર્વં સાદિ શરીરં ન ચ નામાઽઽદિમયઃ દેહસઽદ્ભાવઃ ।

કાલાઽનાદિત્વાત્ યથા યા રાત્રિદિવાદીનામ્ ॥ ૧ ॥

ગતિ કી અપેક્ષા અનાદિ અનન્તતા હી ઘટિત હોતી હૈ-માદિ અનન્તતા  
નહીં ? તો હસ શંકા કા સમાધાન યહ હૈ કિ સિદ્ધાન્ત કે હસ પ્રકાર  
કે કથન સે યચપિ સિદ્ધોં મેં સિદ્ધિગતિ કી અપેક્ષા લેકર સાદિ અન-  
ન્તતા ઘટિત નહીં હો સક્તી હૈ-ફિર ખી જૈસે કાલ અનાદિ માના ગયા  
હૈ-ઔર હસી કારણ હસ કાલ કે પરિણમન રૂપ રાત ઔર દિવસ ખી  
અનાદિ સિદ્ધ હોતે હૈ, કયોં કિ-કાલ હનસે કખી શૂન્ય રહા હો સો ઈસી  
વાત વનતી નહીં હૈ-ફિર ખી ઉત્પત્તિ કી અપેક્ષા લેકર જૈસે રાતદિનોં  
કો સાદિ કહા જાતા હૈ હસી તરહ સે નવીન સિદ્ધ જીવોં કી ઉત્પત્તિકી  
અપેક્ષા સિદ્ધ જીવોં કો સાદિ ઔર અનન્ત કહા ગયા હૈ । તથા ચોક્તમ્

સઽવં સાઙ્ સરીરં ન ય નામાઽઽઈમય દેહસઽભાવો ।

કાલાનાદિત્તણઞ્ જહા વ રાઈં દિવાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

એવું કહ્યું છે કે ભૂતકાળમાં કદી પણ સિદ્ધગતિ સિદ્ધ એવાથી રહિત રહી  
નથી. આ સિદ્ધાન્તના કથન અનુસાર તો સિદ્ધ એવામાં સિદ્ધ ગતિની અપે-  
ક્ષાએ અનાદિ અનંતતા ન ઘટાવી શકાય છે-સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી.

સમાધાન—સિદ્ધાન્તના આ કથન પ્રમાણે જો કે સિદ્ધોમાં સિદ્ધગતિની  
અપેક્ષાએ સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી, પણ જેવી રીતે કાળને અનાદિ  
માન્યો છે અને તે કારણે તે કાળના પરિણમન રૂપ રાત અને દિવસ પણ  
અનાદિ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે કાળ કદી પણ રાત અને દિવસથી રહિત  
રહ્યો નથી. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ જેમ રાત્રિ દિવસને સાદિ કહેવામાં  
આવે છે, એજ પ્રમાણે નવિન સિદ્ધ એવાની ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધ  
એવાને સાદિ અને અનંત કહ્યા છે. કહ્યું પણ છે કે—

“ સઽવં સાઙ્ સરીરં ન ય નામાઽઽઈમય દેહસઽભાવો ।

કાલાનાદિત્તણઞ્ જહા વ રાઈં દિવાઈણં ॥ ૧ ॥ ”



સપર્યવસિતાઃ સાન્તા ભવન્તિ, ભવસિદ્ધિજાનાં જીવાનાં મહ્યત્તલ્લભિઃ સિદ્ધત્વે સતિ નિવર્તતે इति कृत्वा अनादिकाः सपर्यवसिनाः सान्ताः भवन्ति । 'अभव-  
सिद्धिया संसारं पडुच्च अणाइया अरज्जवसिया ' अभवसिद्धिका अभव्या जीवाः  
संसारं प्रतीत्य आश्रित्य अनादिकाः अपर्यवसिताः अन्तरहिता भवन्ति ? ' से  
तेणहेणं ' तत् तेनार्थेन हे गौतम ! उपर्युक्तीत्या एवमुच्यते जीवाश्चतुर्विधा  
भवन्ति, यद्यपि ।

‘ साई अपज्जवसिया, सिद्धा न य नाम तीयत्तल्लम्मि ।

आसि कयाइ वि सुग्गा, सिद्धी सिद्धेहिं सिद्धंते ’ ॥ १ ॥

सादयः अपर्यवसिताः सिद्धा न च नामाऽतीतकाले । ॥ १ ॥

आसीत् कदाचिदपि शून्या सिद्धिः सिद्धैः सिद्धान्ते ’ इति वचनप्रमाण्यात्  
भूतकाले सिद्धजीवरहितसिद्धेरभावमतिपादनेन सिद्धस्यानादित्वात् सादित्वं

सिद्ध अवस्था प्राप्त कर लेने पर दूर हो जाती है । इसलिये इस अपेक्षा  
उन्हें अनादि सान्त प्रकट किया गया है । ( अभवसिद्धिया संसारं पडुच्च-  
अणाइया अपज्जवसिया ) जो अभव्य होते हैं वे संसार से कभी भी  
पार नहीं होते हैं-अतः संसार की अपेक्षा लेकर अभव्यजीव अनादि  
अनन्त कहे गये हैं । ( से केणहेणं ) इस कारण हे गौतम ! मैंने उपर्युक्त  
रूप से ऐसा कहा है कि जीव चारों प्रकार के होते हैं । यद्यपि ।

साई अपज्जवसिया सिद्धा न य नाम तीय कालम्मि, ।

आसि कयावि सुग्गा सिद्धी सिद्धेहिं सिद्धंते ॥ १ ॥

यहां पर कोई ऐसी आशंका कर सकता है कि आप सिद्ध जीवों  
को सिद्धिगति की अपेक्षा से सादि अनन्त कैसे प्रकट कर रहे हैं-क्यों  
कि सिद्धान्त का ऐसा वचन है कि अतीत कालमें कभी भी सिद्धि सिद्ध  
जीवोंसे शून्य रही नहीं है । तो इस सिद्धान्तवचनसे तो सिद्धजीवोंमें सिद्ध-

સિદ્ધિક જીવોની ભવ્યત્વ-લબ્ધિ સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરતા જ દૂર થઈ જાય છે, તે  
રીતે વિચાર કરતા તેમને અનાદિ સાન્ત કહ્યા છે ( અભવસિદ્ધિયા સંસારં પડુચ્ચ-  
અણાઈયા અપજ્જવસિયા ) જે અભવ્ય જીવો હોય છે તેઓ કદિ પણ સંસારને  
તરી જઈ શકતા નથી, તે કારણે સંસારની અપેક્ષાએ તેમને અનાદિ અનંત  
કહ્યા છે. ( સે તેણહેણં ) હે ગૌતમ ! ઉપર્યુક્ત કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે  
કેટલાક જીવો સાદિ સાન્ત હોય છે, ઇત્યાદિ. જો કે

સાઈ અપજ્જવસિયા સિદ્ધા ન ય નામ તીયકાલમ્મિ,

આસિ કયાવિ સુણ્ણા સિદ્ધિ સિદ્ધેહિં સિદ્ધંતે ॥ ૧ ॥

અહીં કોઈને એવી શંકા ઉદ્ભવી શકે કે આપ સિદ્ધ જીવોને સિદ્ધ-  
ગતિની અપેક્ષાએ સાદિ અનંત કેવી રીતે કહો છો ? કારણ કે સિદ્ધાન્તમાં

ન સંભવતિ, તથાપિ કાલસ્વાનાદિત્વાનુસારેણ અહોરાત્રાદેરનાદિત્વેઽપિ ઉત્પત્તિ-  
માશ્રિત્ય સાદિત્વવ્યવહાર્યત્ સિદ્ધેઃ સિદ્ધજીવરહિતત્વાભાવેન અનાદિત્વેઽપિ  
સિદ્ધસ્ય ઉત્પત્તિમાશ્રિત્ય સાદિત્વમ્ અનન્તત્વમુક્તમ્, તથા ચોક્તમ્

“ સઘ્વં સાહ સરીરં ન ય, નામાઽઽઈમય દેહસઘ્ભાવો ।

કાલાઽઽનાદિત્તણઓ જહા વ રાઈ—દિવાઈણં ॥ ૧ ॥

“ સર્વે સાદિ શરીરં ન ચ નામાઽઽદિમયઃ દેહસદ્ભાવઃ ।

કાલાઽનાદિત્વાત્ યથા વા રાત્રિદિવાદીનામ્ ॥ ૧ ॥

ગતિ કી અપેક્ષા અનાદિ અનન્તતા હી ઘટિત હોતી હૈ—સાદિ અનન્તતા  
નહીં ? તો ઇત્ત શંકા કા સમાધાન યહ હૈ કિ સિદ્ધાન્ત કે ઇસ પ્રકાર  
કે કથન સે યદ્યપિ સિદ્ધોં મેં સિદ્ધિગતિ કી અપેક્ષા લેકર સાદિ અન-  
ન્તતા ઘટિત નહીં હો સક્તી હૈ—ફિર ખી જૈસે કાલ અનાદિ માના ગયા  
હૈ—ઔર ઇસી કારણ ઇસ કાલ કે પરિણમન રૂપ રાત ઔર દિવસ ખી  
અનાદિ સિદ્ધ હોતે હૈં, ક્યોં કિ—કાલ ઇનસે કમી શૂન્ય રહા હો સો એસી  
વાત વનતી નહીં હૈ—ફિર ખી ઉત્પત્તિ કી અપેક્ષા લેકર જૈસે રાતદિનોં  
કો સાદિ કહા જાતા હૈ ઇસી તરહ સે નવીન સિદ્ધ જીવોં કી ઉત્પત્તિકી  
અપેક્ષા સિદ્ધ જીવોં કો સાદિ ઔર અનન્ત કહા ગયા હૈ । તથા ચોક્તમ્

સઘ્વં સાહ સરીરં ન ય નામાઽઽઈમય દેહસઘ્ભાવો ।

કાલાઽનાદિત્તણઓ જહા વ રાઈ દિવાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

એવું કહ્યું છે કે ભૂતકાળમાં કદી પણ સિદ્ધગતિ સિદ્ધ એવાથી રહિત રહી  
નથી. આ સિદ્ધાન્તના કથન અનુસાર તો સિદ્ધ એવામાં સિદ્ધ ગતિની અપે-  
ક્ષાએ અનાદિ અનંતતા ન ઘટાવી શકાય છે—સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી.

સમાધાન—સિદ્ધાન્તના આ કથન પ્રમાણે જો કે સિદ્ધોમાં સિદ્ધગતિની  
અપેક્ષાએ સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી, પણ જેવી રીતે કાળને અનાદિ  
માન્યો છે અને તે કારણે તે કાળના પરિણમન રૂપ રાત અને દિવસ પણ  
અનાદિ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે કાળ કદિ પણ રાત અને દિવસથી રહિત  
રહ્યો નથી. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ જેમ રાત્રિ દિવસને સાદિ કહેવામાં  
આવે છે, એજ પ્રમાણે નવિન સિદ્ધ એવાની ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધ  
એવાને સાદિ અને અનંત કહ્યા છે. કહ્યું પણ છે કે—

“ સઘ્વં સાહ સરીરં ન ય નામાઽઽઈમય દેહસઘ્ભાવો ।

કાલાઽનાદિત્તણઓ જહા વ રાઈ દિવાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

“ સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ન ।

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિર્દિદ્ધા રોહપુચ્છાણ ॥ ૨ ॥

“ સર્વઃ સાદિઃ સિદ્ધઃ ન ચાદિમો વિગતે તથા તચ ।

સિદ્ધિઃ સિદ્ધાથ સદા નિર્દિદ્ધા રોહપૃચ્છાયામ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ । સૂ. ૩ ॥

॥ કર્મસ્થિતિવક્તવ્યતા ॥

પૂર્વે કર્મોપચયસ્ય સાદિસાન્તલ્યમુક્તમ્, તત્સમ્યન્ધ્યાન્ કર્મણઃ ખેદાન્ સ્થિતિ  
ચ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘ કદ્ ણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કદ્ ણં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્તાઓ ?  
ગોચમા ! અટ્ટકમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્તાઓ તં જહા—

સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ॥

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિર્દિદ્ધા રોહપુચ્છાણ ॥ ૨ ॥ ”

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—કાલ અનાદિ હૈ—હમ કારણ કિસી કા બી એસે  
શરીર કા સદ્ભાવ નહીં હૈ કિ જો સચ સે પહિલા હો, ફિર બી શરીર  
સાદિ હૈ એસા કહા હી જાતા હૈ હસી પ્રકાર સે રાતદિન મેં બી એસા હી  
સમજના ચાહિયે અર્થાત્ કોઈ રાતદિવસ બી એસા નહીં હૈ જો સચ સે  
પહિલા હો—ફિર બી રાતદિવસ સાદિ પ્રકટ કિયે ગયે હૈ હસી પ્રકાર સે  
સિદ્ધિ કિસીબી સમય સિદ્ધોં રહિત નહીં હોતી હૈ હસી કારણ અમુક  
જીવ સર્વ પ્રથમ સિદ્ધ હુઆ હૈ એસા નિશ્ચય નહીં હોતા હૈ ફિર બી ઉત્પત્તિ  
કો છેકર સિદ્ધોંકો સાદિ અનન્ત કહા ગયા ગયા હૈ । હસી કારણ રોહક  
અનગારકે પ્રશ્નોંમેં સિદ્ધિ ઓર સિદ્ધ અનાદિ પ્રકટ કિયે ગયે હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

“ સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ।

સિદ્ધિ સિદ્ધા ય સયા નિર્દિદ્ધા રોહપુચ્છાણ ॥ ૨ ॥ ”

ભાવાર્થ—કાળ અનાદિ છે, તે કારણે એવું કોઈ પણ શરીર સંભવી  
શકતું નથી કે જે સૌથી પહેલું હોય ! છતાં પણ “ શરીર સાદિ છે, ” એવું  
કહેવામાં આવે છે. રાતદિવસ વિષે પણ એવું જ સમજવું. એટલે કે કોઈપણ  
રાત્રિદિવસ એવાં નથી કે જેને સૌથી પહેલા માની શકાય ! છતાં પણ રાત્રિ  
દિવસને સાદિ કહેલાં છે. એજ પ્રમાણે સિદ્ધિ કોઈ પણ સમયે સિદ્ધોથી  
રહિત હોતી નથી. તે કારણે એવો નિશ્ચય કરી શકાતો નથી કે અમુક જીવ  
સૌથી પહેલો સિદ્ધ થયો છે. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધોને સાદિ  
અનન્ત કહ્યા છે. એજ કારણે રોહક અણુગારના પ્રશ્નોમાં સિદ્ધિ અને સિદ્ધને  
અનાદિ પ્રકટ કરેલ છે. ॥ સૂત્ર ૩ ॥



ળાળાવરણિજ્જં, દરિસળાવરણિજ્જં, જાવ-અંતરાઇયં । ળાળા  
વરણિજ્જસ્સ ણં ંતે ! કમ્મસ્સ કેવઇયં કાલં વંધટ્ટિઈ  
પણ્ણત્તા ? ગોયમા ! જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં  
સાગરોવમકોડાકોડીઓ, તિન્નિ યં વાસસહસ્સાઈં અવાહા,  
અવાહૂણિયા કમ્મટ્ટિઈ—કમ્મનિસેઓ, એવં દરિસળાવરણિજ્જં  
વેયણિજ્જં જહણ્ણેણં દો સમયા ઉક્કોસેણં જહા ળાળાવરણિજ્જં,  
મોહણિજ્જં જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, ઉક્કોસેણં સત્તરિ સાગરોવમ-  
કોડાકોડીઓ, સત્તય વાસ સહસ્સાણિ અવાહા અવાહૂણિયા  
કમ્મટ્ટિઈ કમ્મનિસેઓ, આઠગં જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં,  
ઉક્કોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ પુઢ્વકોડિતિભાગો અવાહા,  
અવાહૂણિયા કમ્મટ્ટિઈ—કમ્મનિસેઓ, નામ-ગોયાણં જહણ્ણેણં  
અઢ્ઢ મુહુત્તા, ઉક્કોસેણં વીસં સાગરોવમ કોડાકોડીઓ, દોણિ  
ય વાસસહસ્સાણિ અવાહા, અવાહૂણિયા કમ્મટ્ટિઈ--કમ્મનિ-  
સેઓ, અંતરાઇયં જહા--ળાળાવરણિજ્જં ॥ સૂ ૪ ॥

છાયા—કતિ સ્વલ્લુ ભદન્ત ! કર્મપ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અષ્ટ કર્મ-  
પ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા—જ્ઞાનાવરણીયમ્, દર્શનાવરણીયમ્, યાવત્—અન્તરાયિકમ્ ।

કર્મસ્થિતિ વક્તવ્યતા—

‘કહણં ંતે ! કમ્મપ્પગહીઓ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(કહણં ંતે ! કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત !  
કર્મપ્રકૃતિયાં કિતની કહી ગઈ હેં ? (ગોયમા ! અઢ્ઢ કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણ-

કર્મસ્થિતિ વક્તવ્યતા—

“કહણં ંતે ! કમ્મપ્પગહીઓ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(કહણં ંતે ! કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! કર્મ-  
પ્રકૃતિઓ કેટલા પ્રકારની હોઈ છે ? (ગોયમા ! અઢ્ઢ કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણત્તાઓ)

“ સન્નો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ન ।

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિષ્ઠિદ્ધા રોહપુચ્છાપ્ ॥ ૨ ॥

“ સર્વઃ સાદિઃ સિદ્ધઃ ન વાદિમો વિગતે તથા તચ ।

સિદ્ધિઃ સિદ્ધાથ સદા નિર્દિષ્ટા રોહપૃચ્છાયામ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ । મૂ. ૩ ॥

॥ કર્મસ્થિતિવક્તવ્યતા ॥

પૂર્વે કર્મોપચયસ્ય સાદિસાન્તત્વમુક્તમ્, તત્સમ્બન્ધ્યાન્ કર્મણઃ ખેદાન્ સ્થિતિં  
ચ પ્રરૂપયિતુમાદ-‘ કદ્ ણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-કદ્ ણં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પપ્પણ્ણત્તાઓ ?  
ગોચમા ! અટ્ટકમ્મપ્પયડીઓ પપ્પણ્ણત્તાઓ તં જહા-

સન્નો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ॥

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિષ્ઠિદ્ધા રોહપુચ્છાપ્ ॥ ૨ ॥ ”

તાત્પર્યે યહ હૈ કિ-કાલ અનાદિ હૈ-હમ કારણ કિસી કા બી એસે  
શરીર કા સજ્જાવ નહીં હૈ કિ જો સવ સે પહિલા હો, ફિર બી શરીર  
સાદિ હૈ એસા કહા હી જાતા હૈ इसी प्रकार से रातदिन में भी ऐसा ही  
समझना चाहिये अर्थात् कोई रातदिवस भी ऐसा नहीं है जो सव से  
पहिला हो-फिर भी रातदिवस सादि प्रकट किये गये हैं इसी प्रकार से  
सिद्धि किसीभी समय सिद्धों रहित नहीं होती है इसी कारण अमुक  
जीव सर्व प्रथम सिद्ध हुआ है ऐसा निश्चय नहीं होता है फिर भी उत्पत्ति  
को लेकर सिद्धोंको सादि अनन्त कहा गया गया है । इसी कारण रोहक  
अनगारके प्रश्नोंमें सिद्धि और सिद्ध अनादि प्रकट किये गये हैं ॥ सू. ३ ॥

“ સન્નો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ।

સિદ્ધિ સિદ્ધા ય સયા નિષ્ઠિદ્ધા રોહપુચ્છાપ્ ॥ ૨ ॥ ”

ભાવાર્થ—કાળ અનાદિ છે, તે કારણે એવું કોઈ પણ શરીર સંભવી  
શકતું નથી કે જે સૌથી પહેલું હોય ! છતાં પણ “ શરીર આદિ છે, ” એવું  
કહેવામાં આવે છે. રાતદિવસ વિષે પણ એવું જ સમજવું. એટલે કે કોઈપણ  
રાત્રિદિવસ એવાં નથી કે જેને સૌથી પહેલા માની શકાય ! છતાં પણ રાત્રિ  
દિવસને સાદિ કહેલાં છે. એજ પ્રમાણે સિદ્ધિ કોઈ પણ સમયે સિદ્ધોથી  
રહિત હોતી નથી. તે કારણે એવો નિશ્ચય કરી શકાતો નથી કે અમુક જીવ  
સૌથી પહેલો સિદ્ધ થયો છે. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધોને સાદિ  
અનંત કહ્યા છે. એજ કારણે રોહક અણુગારના પ્રશ્નોમાં સિદ્ધિ અને સિદ્ધને  
અનાદિ પ્રકટ કરેલ છે. ॥ સૂત્ર ૩ ॥



નાન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ સત્તતિસાગરોપમકોટીકોટયઃ, સત્ત ચ વર્ષસહસ્રાણિ અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ કર્મનિષેકઃ આયુષ્કં જઘન્યેનાન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ ત્રયસ્ત્રિ-  
ન્ન સાગરોપમાણિ, પૂર્વકોટીત્રિભાગઃ અવાધા, અવાધોનિકા, કર્મસ્થિતિઃ-કર્મ-  
નિષેકઃ । નામ-ગોત્રયોઃ જઘન્યેનાઽપ્ત મુહૂર્તાનિ, ઉત્કર્ષેણ વિગ્રતિસાગરોપમકોટી

નીય કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્માની અપેક્ષા દો સમયની છે અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મને જેતી ત્રીસ ૩૦ કોડાકોડી સાગરોપમની છે । ( મોહણિજ્ઞં જહ્ણેણં, અંતોમુહુત્તં રક્ષોસેણં સત્તરિસાગરોપમકોડાકોડીઓ ) મોહનીય કર્મની બંધસ્થિતિ જઘન્ય તો અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ૭૦ સત્તર કોડાકોડી સાગરોપમની છે । ( સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાધા-અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિરૂં કમ્મનિસેઓ ) ૭૦૦૦ વર્ષનો આવાધકાલ છે આ અવાધકાલમાં રહિત જો કર્મસ્થિતિ છે તો આ કર્મનિષેક છે । ( આઝગં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, રક્ષોસેણં તેત્તીસં સાગરોપમાણિ પુવ્વકોટિતિભાગો અવાધા અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિરૂં કમ્મનિસેઓ ) આયુકર્મની જઘન્યસ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે -ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ તેત્તીસ ૩૩ સાગરોપમની છે અને આ અવાધકાલ પૂર્વકોટિનો ત્રિભાગ પ્રમાણ છે આ અવાધકાલમાં રહિત જો કર્મસ્થિતિ છે, તો આ કર્મનિષેકકાલ છે । ( નામ-ગોત્રયોઃ જહ્ણેણં અઠ્ઠમુહુત્તા,

જઘન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્માની અપેક્ષાએ જે સમયની છે અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બેટલી ૪-ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમની છે. ( મોહણિજ્ઞં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં રક્ષોસેણં સત્તરિસાગરોપમકોડાકોડીઓ ) મોહ-  
નીય કર્મની બંધસ્થિતિ આઠામાં આઠી અન્તર્મુહૂર્તની અને વધારેમાં વધારે ૭૦ કોડાકોડી સાગરોપમની છે.

( સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાધા-અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિરૂં કમ્મનિસેઓ ) તેનો આવાધકાલ ૭૦૦૦ વર્ષનો છે. તે આવાધકાલ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ છે તે તેનો કર્મનિષેક ( કર્મવેદનાનો કાળ ) છે.

( આઝગં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં રક્ષોસેણં તેત્તીસં સાગરોપમાણિ પુવ્વકોટિતિભાગો અવાધા, અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિરૂં કમ્મનિસેઓ ) આયુકર્મની સ્થિતિ આઠામાં આઠી અન્તર્મુહૂર્તની અને વધારેમાં વધારે ૩૩ સાગરોપમની છે, અને તેનો આવાધકાલ પૂર્વ કોટિના ત્રીજા ભાગ બેટલો છે, તે આવાધકાલ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ છે, તે તેનો કર્મનિષેક ( કર્મવેદનાનો કાળ ) છે.

( નામ-ગોત્રયોઃ જહ્ણેણં અઠ્ઠમુહુત્તા, રક્ષોસેણં વીસં સાગરોપમકોડાકોડીઓ

જ્ઞાનાવરણીયસ્ય સ્વત્તુ ભદન્ત ! કર્મણઃ કિયન્તં કાલં વંધસ્થિતિઃ મદ્વપ્તા ? ગૌતમ !  
જઘન્યેનાન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટેન ત્રિસતાગરોપમકોટીકોટયઃ, ત્રીણિ ચ વર્ષ  
સહસ્રાણિ અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ-કર્મનિષેકઃ એવં દર્શનાવરણીય-  
મપિ, વેદનીયં જઘન્યેન દ્વો સમયો ઉત્કૃષ્ટેન યથા જ્ઞાનાવરણીયમ્, મોહનીયં જઘન્યે-

ત્તાઓ ) હે ગૌતમ ! કર્મપ્રકૃતિયાં આટ કહી ગઈ હું । (તં જહા) જો इस  
પ્રકાર સે હું (ળાળાવરણિજ્જં, દરિસળાવરણિજ્જં જાવ અંતરાયં ) જ્ઞાના  
વરણીય, દર્શનાવરણીય, યાવત્ અન્તરાય । (ળાળાવરણિજ્જસ્સ ણં  
મંતે ! કમ્મસ્સ કેવદ્દયં કાલં વંધટ્ઠિદ્દં પળ્લત્તા ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવર-  
ણીય કર્મ કી વંધ સ્થિતિ કિતને કાલતક કી કહી ગઈ હું ? (ગોયમા)  
હે ગૌતમ ! (જહણ્ણેણં અંતો મુહુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમકોડાકો-  
ડીઓ-તિન્નિય વાસસહસ્સાઈં આવાહા ) જઘન્ય સે અન્તમુહૂત્તં કી  
ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે તીસ સાગરોપમ કોડાકોડી કી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી  
વંધસ્થિતિ કહી ગઈ હું । તથા इस કા અવાધાકાલ તીન હજાર વર્ષ કા  
કહા ગયા હું (અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિદ્દં કમ્મનિસેઓ ) તથા અવાધાકાલ  
સે રહિત જો કર્મસ્થિતિ હું વદ્દ કર્મનિષેક હું (એવં દરિસળાવરણિજ્જં-  
પિ) હસી તરહ સે દર્શનાવરણીય કર્મ કે વિષય મેં ંી જાનના ચહિયો  
(વેયણિજ્જં જહન્નેણં દો સમયા, ઉક્કોસેણં જહા ળાળાવરણિજ્જં ) વેદ-

હે ગૌતમ ! કર્મપ્રકૃતિઓ આઠ કહી છે (તં જહા) તે આઠ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે.

(ળાળાવરણિજ્જં, દરિસળાવરણિજ્જં જાવ અંતરાયં ) જ્ઞાનાવરણીય, દર્શના-  
વરણીય, વેદનીય, મોહનીય, આયુષ્ઠ, નામ, ગોત્ર અને અન્તરાય.

(ળાળાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવદ્દયં કાલં વંધટ્ઠિદ્દં પળ્લત્તા ? )

હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મની વંધ સ્થિતિ કેટલા કાળ પર્યંતની કહી છે ?

(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (જહણ્ણેણં અંતો મુહુત્તં ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમ-  
કોડાકોડીઓ-તિન્નિય વાસસહસ્સાઈં આવાહા ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મની વંધસ્થિતિ  
જઘન્યની અપેક્ષાએ (ઓછામાં ઓછી) અન્તર્મુહૂર્તની અને ઉત્કૃષ્ટની અપે-  
ક્ષાએ (વધારેમાં વધારે) ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડી કાળની કહી છે. તથા  
તેનો આવાધાકાળ (કર્મવંધ તથા પછી કર્મ ઉદયમાં ન આવે ત્યાં સુધીનો  
કાળ) ત્રણ હજાર વર્ષનો કહ્યો છે. (અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિદ્દં કમ્મનિસેઓ) તથા  
આવાધાકાળ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ છે તેને કર્મનિષેક કહે છે. (એવં દરિ-  
સળાવરણિજ્જંપિ) એજ પ્રમાણે દર્શનાવરણીય કર્મના વિષયમાં પણ સમજવું.  
(વેયણિજ્જં જહન્નેણં દો સમયા ઉક્કોસેણં જહા ળાળાવરણિજ્જં ) વેદનીય કર્મની

નાન્તર્મુહૂર્તમ્ , ઉત્કર્ષેણ સપ્તતિસાગરોપમકોટીકોટયઃ, સપ્ત ચ વર્ષસહસ્રાણિ અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ કર્મનિપેક્તઃ આયુષ્કં જયન્યેનાન્તર્મુહૂર્તમ્ , ઉત્કર્ષેણ ત્રયલ્લિ-  
શ્ચ સાગરોપમાણિ, પૂર્વકોટીત્રિભાગઃ અવાધા, અવાધોનિકા, કર્મસ્થિતિઃ-કર્મ-  
નિપેક્તઃ । નામ-ગોચરોઃ જયન્યેનાષ્ટ મુહૂર્તાનિ, ઉત્કર્ષેણ વિંશતિસાગરોપમકોટી

નીય કર્મ કી જયન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્મા કી અપેક્ષા દો સમય કી  
હે ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે જેસી તીસ ૩૦ કોડાકોડી  
સાગરોપમ કી હે । ( મોહણિજ્જં જહ્ણેણં, અંતોમુહુત્તં ઉક્ષોસેણં સત્ત-  
રિસાગરોવમકોડાકોડીઓ ) મોહનીય કર્મ કી બંધસ્થિતિ જયન્ય તો  
અન્તર્મુહૂર્ત કી હે ઓર ઉત્કૃષ્ટ ૭૦ સત્તર કોડાકોડી સાગરોપમ કી હે ।  
( સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાહા-અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિર્હ કમ્મનિસેઓ )  
૭૦૦૦ વર્ષ કાં ઇસકા અવાધાકાલ હે ઇસ અવાધાકાલ સે રહિત જો  
કર્મસ્થિતિ હે વહ ઇસકા કર્મનિપેક્ત હે । ( આડગં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં,  
ઉક્ષોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ પુન્નવકોડિતિભાગો અવાહા અવાહુણિયા  
કમ્મટ્ઠિર્હ કમ્મનિસેઓ ) આયુકર્મ કી જયન્યસ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત કી હે  
-ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ તેત્તીસ ૩૩ સાગરોપમ કી હે ઓર ઇસકા અવાધાકાલ  
પૂર્વકોટિ કાં ત્રિભાગ પ્રમાણ હે ઇસ અવાધાકાલ સે રહિત જો કર્મસ્થિતિ  
હે, વહ ઇસકા કર્મનિપેક્તકાલ હે । ( નામ-ગોચાણં જહ્ણેણં અદ્દમુહુત્તા,

જયન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્માની અપેક્ષાએ જે સમયની છે અને ઉત્કૃષ્ટ  
સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બેટલી જ-ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમની છે.  
( મોહણિજ્જં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં ઉક્ષોસેણં સત્તરિસાગરોવમકોડાકોડીઓ ) મોહ-  
નીય કર્મની બંધસ્થિતિ ઓછામાં ઓછી અન્તર્મુહૂર્તની અને વધારેમાં વધારે  
૭૦ કોડાકોડી સાગરોપમની છે.

( સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાહા-અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિર્હ કમ્મનિસેઓ )  
તેનો આબાધકાલ ૭૦૦૦ વર્ષનો છે. તે આબાધકાળ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ  
છે તે તેનો કર્મનિપેક્ત ( કર્મવેદનાનો કાળ ) છે.

( આડગં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં ઉક્ષોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ પુન્નવકોડિતિભાગો  
અવાહા, અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિર્હ કમ્મનિસેઓ ) આયુકર્મની સ્થિતિ ઓછામાં  
ઓછી અન્તર્મુહૂર્તની અને વધારેમાં વધારે ૩૩ સાગરોપમની છે, અને તેનો  
આબાધકાળ પૂર્વ કોટિના ત્રીજા ભાગ બેટલો છે, તે આબાધકાળ સિવાયની  
જે કર્મસ્થિતિ છે, તે તેનો કર્મનિપેક્ત ( કર્મવેદનાનો કાળ ) છે.

( નામ-ગોચાણં જહ્ણેણં અદ્દમુહુત્તા, ઉક્ષોસેણં વીસં સાગરોવમકોડાકોડીઓ



કોટયઃ, હે ચ વર્ષસહસ્રે અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ-કર્મનિપેકઃ ॥ શાન્ત-  
રાયિકં યથા જ્ઞાનાવરણીયમ્ ॥ મૂ. ૪ ॥

ટીકા — 'કઙ્ઠ ણં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લતાઓ ' ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે  
મહન્ત ! કતિ કિયત્થઃ સલુ કર્મપ્રકૃતયઃ કર્મભેદાઃ પ્રજ્ઞાઃ ? કથિતાઃ ? મગ-  
ધાનાહ-ગોયમા ! અટ્ઠ કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લતાઓ ' હે ગૌતમ ! અટ્ઠ કર્મપ્રકૃતયઃ

ઉપોસેણં વીસં સામરોપમકોઢાકોઢીઓ-દોણિય ય વાસસહસ્સાણિ  
અવાહા, અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ-અંતરાહયં જહા ણાણાવર-  
ણિજ્ઞં) નામ ઓર ગોત્ર દુન દો કર્મોં કી જવન્યસ્થિતિ આઠ મુહૂર્ત્તં કી  
હે ઉલ્કૃષ્ટસ્થિતિ વીસ ૨૦ કોઢાકોઢી સામરોપમ કી હે દો હજારવર્ષ કી  
દુનકી અવાધા હે દુન અવાધા સે રહિત જો કર્મસ્થિતિ હે વહ કર્મ-  
નિપેકકાલ હે । અંતરાયકર્મ કે વિષય મેં સ્થિતિ આદિ કા કથન જ્ઞાના-  
વરણીય કર્મ કે સમાન જાનના ચાલિયે ।

ટીકાર્થ—પહિલે કર્મોપચય-કર્મબંધ-કો સાદિ સાન્ત કહા ગયા હે  
સો હસી સંવંધ કો લેકર સૂત્રકાર હસ સૂત્રદારા કર્મ કે ભેદોં કી ઓર  
ડુનકી સ્થિતિ કી પ્રરૂપણા કર રહે હે—હસમેં ગૌતમ ને પ્રમુ સે એસા  
પૂછા હે કિ—(કઙ્ઠ ણં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લતાઓ) હે મહન્ત !  
કર્મ કે કિતને ભેદ કહે ગયે હે ? ઉત્તર મેં પ્રમુ ને કહા—(ગોયમા) હે  
ગૌતમ ! (અટ્ઠ કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લતાઓ) કર્મ કે ભેદ આઠ કહે ગયે

દોણિય ય વાસસહસ્સાણિ અવાહા, અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ અંતરાહયં  
જહા ણાણાવરણિજ્ઞં ) નામકર્મ અને ગોત્રકર્મની સ્થિતિ ઓછામાં ઓછી આઠ  
મુહૂર્ત્તની અને વધારેમાં વધારે ૨૦ કોઢાકોઢી સામરોપમની છે. તેમને  
આખાધકાળ બે હજાર વર્ષનો છે, આ આખાધકાળ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ  
છે તે તેનો કર્મનિપેક કાળ છે. અંતરાય કર્મની જવન્ય, ઉલ્કૃષ્ટ આદિ  
સ્થિતિના વિષયમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મ પ્રમાણે જ સમજવું.

ટીકાર્થ—પહેલાના સૂત્રમાં કર્મોપચયને (કર્મબંધને) સાદિ સાન્ત કહ્યા  
એ કર્મબંધને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા કર્મના પ્રકારોની અને  
તેમની સ્થિતિની પ્રરૂપણા કરી રહ્યા છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી  
મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (કઙ્ઠ ણં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લતાઓ ?)  
હે મહન્ત ! કર્મના કેટલા ભેદ કહ્યા છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અટ્ઠ કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લતાઓ) કર્મના  
આઠ પ્રકાર કહ્યા છે (તંજહા) તે આઠ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

પ્રજ્ઞતાઃ 'તં જહા-ળાળાવરણિજ્જં, દરિસળાવરણિજ્જં, જાવ-અંતરાહયં' તથથા-જ્ઞાનાવરણીયમ્, દર્શનાવરણીયમ્, યાવત્-આન્તરાયિકમ્ ! યાવત્ કરણાત્-વેદનીયમ્, મોહનીયમ્, આયુષ્કમ્, નામ, ગોત્રમ્, ઇતિ સંગ્રાહ્યમ્ । તત્ર જ્ઞાનાવરણીયાદિ-કર્મણો વન્ધસ્થિત્યાદિવિષયે પૃચ્છતિ—'ળાળાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવહયં કાલં વંધટ્ઠિઈ પળ્ળત્તા ? હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયસ્ય સ્વલુ કર્મણઃ કિયન્તં કાલં કિયત્કાલપર્યન્તમ્ વન્ધસ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા ? મગધાન્ ઉત્તરયતિ—'ગોયમા ! જહળ્ળેણં અંતોમુહુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમકોડાકોડીઓ ગૌતમ ! કર્મણો વન્ધસ્થિતિઃ વન્ધનકાલઃ જઘન્યેન અન્તર્મુહૂર્ત્તપરિમિતા, ઉત્કર્ષેણ ત્રિંશન્સાગરોપમકોટીકોટયઃ, અથ ચ 'તિન્નિ ય વાસસહસ્સાઈ અવાહા, અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ' ત્રીણિ ચ વર્પસહસ્રાણિ

હેં ? (તં જહા) જો હસ પ્રકાર સે હેં—(ળાળાવરણિજ્જં, દરિસળાવરણિજ્જં જાવ અંતરાહયં) જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય યાવત્-વેદનીય, મોહનીય, આયુષ્ક, નામ, ગોત્ર ઓર અન્તરાય । અવ ગૌતમસ્વામી હન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કી વંધસ્થિતિ આદિ કે વિષય મેં પૂછતે હેં કિ—(ળાળાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવહયં કાલં વંધટ્ઠિઈ પળ્ળત્તા) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય જો કર્મ હે—ઁસકી વંધસ્થિતિ કિતને કાલ કી કહી ગઈ હે ? હસકા ઉત્તર દેતે છુઁ પ્રમુ ઁનસે કહતે હેં—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જહળ્ળેણં અંતોમુહુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમકોડાકોડીઓ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી વંધસ્થિતિ જઘન્ય સે તો ઁક અન્તર્મુહૂર્ત્ત કી હે ઁર ઉત્કૃષ્ટ સે તીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડા હોડી કી હે । (તિન્નિ ય વાસસહસ્સાઈ અવાહા અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ) હસકા

“ળાળાવરણિજ્જં, દરિસળાવરણિજ્જં, જાવ અંતરાહયં” જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, વેદનીય, મોહનીય, આયુષ્ક, નામ, ગોત્ર અને અન્તરાય.

હવે ગૌતમ સ્વામી તે કમોની વંધસ્થિતિ આદિ વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે—(ળાળાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવહયં કાલં વંધટ્ઠિઈ પળ્ળત્તા ?) હે હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મની વંધસ્થિતિ કેટલા કાળની કહી છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (જહળ્ળેણં અંતોમુહુત્તં ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમકોડાકોડીઓ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મની વંધસ્થિતિ આઠામાં આઠી અંતર્મુહૂર્ત્તની છે અને અધિકમાં અધિક ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડી કાળથી છે. (તિન્નિ ય વાસસહસ્સાઈ અવાહા, અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ) તેને આઠાધકાળ ત્રણ હજાર વર્ષનો છે, અને તે આઠાધકાળથી રહિત તે કર્મની જે સ્થિતિ છે, તે તેનો નિષેકકાળ (વેદનકાળ) છે.



સદસ્રવર્ષવર્ષાણિ અવાધા, વાપતે इति वाधा, વાપનં વા વાધા-કર્મણઃ ઉદયઃ, ન વાધા, અવાધા, કર્મણો વન્ધકાલાદારભ્ય ઉદયકાલવર્ષાન્તો યઃ કાલઃ કર્મણો વન્ધસ્ય ઉદયસ્ય ચ મધ્યકાલઃ અવાધાપદાર્થઃ કથ્યતે, તત્કાલશ્ચ સદસ્રવર્ષવર્ષ-

અવાધાકાલ ત્રીસ હજાર વર્ષે કા હૈ તથા ઇસ અવાધાકાલ સે રહિત જો ઇસ કર્મ કી સ્થિતિ હૈ વહ-ઇસ કર્મ કા નિષેઠકાલ હૈ । અવાધા કિસે કહતે હૈ ? સો અવ ઇસકા વિચાર કિયા જાતા હૈ-કર્મ કે ઉદય કા નામ વાધા હૈ ઇમ વાધા કા ન હોના ઇસકા નામ અવાધા હૈ । અર્થાત્ કર્મ કે વંધકાલ સે લેકર વહ કર્મ જયતક ઉદય મેં નહીં આના હૈ-ઇસી કા નામ અવાધાકાલ હૈ અર્થાત્ કર્મ કે વંધ ઓર ઉદય કે ધીચ કા જો કાલ હૈ યહી અવાધાકાલ હૈ-કર્મ કે વંધ હો જાને પર ઉસી સમય સે ઉદય મેં નહીં હૈ કિન્તુ કુછ કાલ વાદ હી વહ ઉદય મેં આતા હૈ-કિતને કાલ વાદ ઉદય મેં આતા હૈ ? વહ સવ શાસ્ત્રકારોં ને નિર્ધારિત કિયા હૈ-સો જિતને સમય તક, કર્મસ્થિતિ વંધ છુકને કે વાદ મી ઉદય મેં કર્મ નહીં આતા હૈ ઉસ સમય કા નામ અવાધાકાલ હૈ । જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સે ત્રીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડાકોડી કા વંધા-તો ઇસમેં અવાધાકાલ ત્રીસ હજાર વર્ષે કા પડતા હૈ વયોં કિ એસા સિદ્ધાન્ત કા કથન હૈ કિ કર્મસ્થિતિ જિતને કોડાકોડી સાગરોપમ કી હોતી હૈ ઉત્તને સૌ વર્ષે કા ઉસકા અવાધાકાલ હોતા હૈ ઇસ હિસાબ સે જવ યહાં

અજાધાકાળનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—કર્મના ઉદયને બાધા કહે છે. આ બાધાના અભાવને અજાધા કહે છે. કર્મના બંધ થયા પછી તે કર્મ જ્યાં સુધી ઉદયમાં આવતું નથી ત્યાં સુધીના કાળને તે કર્મના અજાધાકાળ કહે છે, એટલે કે કર્મના બંધ અને ઉદયની વચ્ચેનો જે કાળ છે તેને અજાધાકાળ કહે છે. કર્મના બંધ થયા પછી કર્મ તુરત જ એજ સમયે ઉદયમાં આવતું નથી, પણ કેટલાક કાળ પછી જ તે ઉદયમાં આવે છે. કેટલા કાળ પછી તે કર્મ ઉદયમાં આવે છે તે શાસ્ત્રકારોએ નિર્ધારિત કરી બતાવેલું છે. અજાધાકાળનો અર્થ આ પ્રમાણે બતાવ્યો છે—

“ તેમણે કર્મના બંધ થઈ ગયા પછી પણ જેટલા સમય સુધી કર્મ ઉદયમાં આવતું નથી તેટલા સમયને તે કર્મના અજાધાકાળ કહે છે. ” જેમકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ (અધિકમાં અધિક) સ્થિતિ ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડી કાળની કહી છે, તેમાં અજાધાકાળ ત્રણ હજાર વર્ષનો કહ્યો છે. સિદ્ધાન્તોમાં એવું કહ્યું છે કે “ જેટલા કોડાકોડી સાગરોપમની કર્મસ્થિતિ

રૂપઃ પ્રતિપાદિત એવમ્ । અથ ચ અવાધોનિકા, અવાધયા પૂર્વોક્તસ્વરૂપયા ઝનિકા  
ન્યૂના કર્મસ્થિતિઃ - સદસ્યવર્ષત્રય ન્યૂનઃ ઉપર્યુક્તત્રિશત્સગરોપમકોટીકોટીલક્ષણઃ  
કર્મોત્થાનકાલઃ કર્મનિપેકો ભવતિ, તત્ર કર્મનિપેકો હિ કર્મદલિકસ્યાનુભવના-  
ત્મકભોગાર્થો રચનાવિશેષ ઉચ્યતે, તત્ર ચ પ્રથમસમયે અધિકં નિપિશ્ચતિ રચ-  
યતિ, દ્વિતીયસમયે વિશેષહીનં કરોતિ, તૃતીયસમયે વિશેષહીનમ્, એવં યાવત્-  
ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિકં કર્મદલિકં તાવદ્ વિશેષહીનં નિપિશ્ચતિ,

ત્રીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડાકોડી કી કર્મસ્થિતિ હૈ-તો ઉતને સૌ વર્ષ  
કા અર્થાત્ ત્રીસ ૩૦ સૌ વર્ષ કા-ત્રીન હજાર વર્ષ કા-અવાધાકાલ હસ  
કર્મ કા હોગા-ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ લેકર જય યહ કર્મ બંધ જાતા હૈ તો હતને  
હજાર વર્ષ યાદ વહ અપના ફલ દેના પ્રારંભ કર દેતા હૈ, ત્રીન ૩ હજાર  
વર્ષતક તો યહ કેવલ સત્તામેં હી રહેગા યે ત્રીન હજાર વર્ષ જો ત્રીસ ૩૦  
કોડાકોડી સાગરોપમ સે કમ હો જાતે હૈ-અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ મેં સે  
જો અવાધાકાલ કમ હો જાતા હૈ-ઉસકા નામ કર્મનિપેક હૈ હસ કર્મ-  
નિપેક મેં કર્મદલિકોં કી અનુભવ કરને કે નિમિત્તા એક તરહ કી રચના  
વિશેષ હોતી હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ-ઉદયયોગ્ય કર્મદલિકોં  
કી જો રચના હોતી હૈ ઉસકા નામ કર્મનિપેક હૈ । ઉદય કે પ્રથમ સમય  
મેં કર્મદલિકોં કા અધિકમાત્રા મેં નિપેક હોતા હૈ હસકે યાદ દ્વિતીય  
સમય મેં વિશેષહીન કર્મદલિકોં કા નિપેક હોતા હૈ તૃતીય સમય મેં  
મી વિશેષહીન-ચયહીન-કર્મદલિકોં કા નિપેક હોતા હૈ હસ તરહ

હોય છે, એટલાં સો વર્ષનો તેનો અખાધાકાળ હોય છે. ” આ હિસાબ  
પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડીની છે,  
તેથી તેટલા સો વર્ષનો એટલે કે ત્રીસસો ( ત્રણ હજાર ) વર્ષનો તેનો અખા-  
ધાકાળ હોય છે. ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ લઈને જો આ કર્મ બંધાય જાય છે, તો  
ત્રણ હજાર વર્ષ પછી તે તેનું ફળ દેવા માંડે છે, ત્રણ હજાર વર્ષ સુધી તો  
તે ફક્ત રસ્તામાં જ રહેશે. ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમમાંથી અખાધાકાળના  
આ ત્રણ હજાર વર્ષ બાદ કરતાં જે કાળ બાકી રહે છે તેને કર્મનિપેક ( કર્મ  
વેદનકાળ ) કહે છે. આ કર્મનિપેકમાં અનુલવ ( વેદન ) કરવાને નિમિત્તે  
કર્મદલિકોની એક પ્રકારની ખાસ રચના થાય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે  
ઉદય યોગ્ય કર્મદલિકોની જે રચના થાય છે તેનું નામ કર્મનિપેક છે. ઉદયના  
પ્રથમ સમયમાં કર્મદલિકોનો અધિક માત્રામાં નિપેક થાય છે, ત્યારબાદ બીજા  
સમયમાં વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિપેક થાય છે, ત્રીજે સમયે પણ વિશેષહીન

ઉક્તञ્ચ—‘મોત્તૂણ સગમવાહં, પદમાઈ ટિહ્ઈ વહુયરં દવ્વં ।

સેસે વિસેસહીણં જા ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિ ॥ ૧ ॥

મુક્ત્વા સ્વકામ્ અવાધાં પ્રથમાયાં સ્થિતો વહુતરં દવ્વમ્ ।

શેષે વિશેષ હીનં યાવદ્ ઉત્કૃષ્ટમિતિ સર્વેણામ્ ॥ ૨ ॥

અર્થ ભાવઃ—સર્વેણુ અપ્તવિધેષ્યપિ વશ્યમાનેણુ કર્મણુ તત્તત્કર્મણઃ અવાધાકાલં મુક્ત્વા તદનન્તરં દલિકનિપેક્કો ભવતિ,

પ્રત્યેકકર્મચન્ધાનન્તરં તત્તત્કર્મણઃ ઉદયે—તત્તત્કર્મણઃ અવાધાકાલે પૂર્ણે સતિ કર્માનુભવનસ્ય પ્રથમપ્રમાણાદાભ્યેત્યર્થઃ વદ્ધકર્મણાં દલિકેભ્યો વેદિતું શક્યાનાં વેદનયોગ્યાનાં દલિકાનાં નિપેક્કો ભવતિ, તથા ચ—ઉદયસ્ય પ્રથમ-સમયે તેણુ વહુતરદલિકાનાં નિપેક્કો ભવતિ, તદનન્તરં દ્વિતીયાદિસ્થિતિણુ

વિશેષહીન કર્મદલિકોં કા નિપેક યાવત્ ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિવાલે કર્મદલિકોં તક હોતા હૈ, કહા બી હૈ—

“મોત્તૂણ સગમવાહં પદમાઈ ટિહ્ઈ વહુયરં દવ્વં ।

સેસે વિસેસહીણં જો ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિ ॥ ”

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—આઠોં પ્રકાર કે કર્મ જવ બંધ ચુકતે હૈં—ઑર અપની ૨ અવાધા કે યાદ જવ વે ઉદય મેં આને લગ જાતે હૈં તવ उन કર્મોં કે વેદને યોગ્ય દલિકોં કી નિપેક રચના હોતી હૈ અર્થાત્—કર્માનુ-ભવ કે પ્રથમ સમય સે લેકર વદ્ધકર્મોં કે દલિકોં મેં સે વેદને યોગ્ય દલિકોં કા નિપેક હોતા હૈં હસમેં ઉદય કે પ્રથમ સમય મેં હનમેં સે વહુતર દલિકોં કા નિપેક હોતા હૈ, હસકે બાદ ઁક સમય પ્રમાણવાલી દ્વિતીય આદિ સ્થિતિમેં, ક્રમ ૨ સે દ્વિતીય તૃતીયાદિ સમયોં મેં વિશેષ-

અયહીન—કર્મદલિકોનો નિપેક થાય છે, આ રીતે વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિપેક ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિવાળાં કર્મદલિકો પર્યન્ત થયા કરે છે. કહું પણ છે—

“મોત્તૂણ સગમવાહં પદમાઈ ટિહ્ઈ વહુયરં દવ્વં ।

સે સે વિસેસહીણં જો ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિ ॥ ”

ભાવાર્થ—આઠે પ્રકારનાં કર્મ જ્યારે બંધાય ચુકે છે, અને પોતપોતાના અજાધાકાળ પછી જ્યારે તેઓ ઉદયમાં આવવા માંડે છે, ત્યારે તે કર્મનાં વેદનાયોગ્ય દલિકોની નિપેક રચના થાય છે, એટલે કે કર્માનુભવના પ્રથમ સમયથી લઈને બદ્ધ કર્મોનાં દલિકોમાંથી વેદનાયોગ્ય દલિકોનો નિપેક થાય છે. તેમાં ઉદયના પ્રથમ સમયે તેમાંના અધિક દલિકોનો નિપેક થાય છે, ત્યારબાદ એક એક સમય પ્રમાણવાળી દ્વિતીય આદિ સ્થિતિમાં ક્રમશઃ દ્વિતી - ત્રીય



એકસમયપમાણાસુ કર્મણો દ્વિતીયતૃતીયાદિસમયેષુ વિશેષહીનવિશેષહીન કર્મદલિકાનાં નિપેકો ભવતિ, સ ચ તાવદ્ ભવતિ યાવત્ તત્તત્સમયવધ્યમાન- કર્મણામુત્કૃષ્ટા સ્થિતિર્ભવેત્, વદ્ધકર્મસ્થિતેશ્ચરમસમયપર્યન્તમયં નિપેકો ભવ- તોતિ ભાવઃ । અયં ચાવાધાં મુક્ત્વા દલિકનિપેકવિધિઃ આયુર્વર્જશેષસપ્તકર્મણાં વિષયે વેદિતવ્યઃ । આયુષ્કર્મણ્યપિ નિપેકસ્તુ ભવત્યેવ કિન્તુ તત્ર સ નિપેકઃ આયુષ્કર્મવંધસ્ય પ્રથમસમયાદેવ પ્રારંભ્યતે ન તત્રાવાધાકાલપૂર્ણતાયા આવશ્ય-

હીન ૨ કર્મદલિકોં કા નિપેક હોતા હૈં ઓર યહ નિપેક વદ્ધકર્મસ્થિતિ કે ચરમ સમયતક હોતા હૈ । અવાધા કો છોડકર યહ દલિક નિપેક- વિધિ આયુ કર્મ કે સિવાય સાતકર્મોં કે વિષય મૈં હી જાનના ચાહિયે આયુકર્મમૈં બી નિપેકતો હોતા હી હૈં કિન્તુ વહાં વહ નિપેક આયુકર્મવંધ પ્રથમસમય સે લેકર હી પ્રારંભ હો જાતા હૈં-યહાં નિપેકરચના મૈં અવા- ધાકાલ કે પૂર્ણ હોને કી આવશ્યકતા નહીં હૈં । યદ્યપિ આયુકર્મ કા બી અવાધાકાલ હોતા હૈં । પરંતુ આયુકર્મ કે હસ નિપેક કે પ્રસન્ન પર અવાધાકાલ કો છોડને કી જો આવશ્યકતા નહીં હૈં ઉસકા કારણ યહ હૈં કિ આયુકર્મ કે વંધ કે પ્રથમ સમય મૈં હી આયુકર્મ કે વહુત અધિક દલિકોં કા નિપેક હોના પ્રારંભ હો જાતા હૈં અર્થાત્ પ્રથમ સમય મૈં હી આયુકર્મ કે વહુત દલિકોં કા નિપેક હો જાતા હૈં ઓર હસકે વાદ દ્વિતીય આદિ સમયોં મૈં તો ઉત્તરોત્તર-આગે ૨ વિશેષ ૨ હીન હી નિપેક હોતા હૈં ઓર યહ નિપેક અન્તિમ દલિકોં તક હસી પ્રકાર સે

આદિ સમયોમાં વિશેષ હીન વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિપેક થાય છે, અને તે નિપેક બદ્ધકર્મ સ્થિતિના અન્તિમ સમય પર્યન્ત થાય છે. અવાધા સિવા- યની આ દલિક નિપેક વિધિ : આયુકર્મ સિવાયના સાત કર્મોના વિષયમાં જ સમજવી. આયુકર્મમાં પણ નિપેક તો થાય છે જ; પણ ત્યાં તે નિપેક આયુ- કર્મવંધના પ્રથમ સમયથી જ શરૂ થઈ જાય છે, આયુકર્મની નિપેક રચનામાં અવાધાકાળ પૂરો થવાની આવશ્યકતા રહેતી નથી. જો કે આયુકર્મનો પણ અવાધાકાળ હોય છે, પણ આયુકર્મના આ નિપેક વખતે અવાધાકાળને બાદ કરવાની જરૂર રહેતી નથી તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

આયુકર્મનો વંધ થયા પછી પ્રથમ સમયે જ આયુકર્મનાં ઘણાં જ અધિક દલિકોનો નિપેક થવાનો પ્રારંભ થઈ જાય છે—એટલે કે પ્રથમ સમયમાં જ આયુકર્મનાં ઘણાં દલિકોનો નિપેક થઈ જાય છે, અને ત્યારબાદ દ્વિતીય, તૃતીય આદિ સમયોમાં તો ઉત્તરોત્તર વિશેષને વિશેષ હીન નિપેક થતો રહે છે, અને આ નિપેક અન્તિમ દલિકો પર્યન્ત વધુ ને વધુ હીન થતો રહે છે.

ઉક્તञ्च—‘મોત્તૂણ સગમવાહં, પઢમાઈ ઠિહ્ઈ વઢ્ઘરં દવ્વં ।

સેસે વિસેસહીળં જા ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિં ॥ ૧ ॥

મુક્ત્યા સ્વકામ્ અવાધાં પ્રથમાયાં સ્થિતૌ વઢ્ઘતરં દ્રવ્યમ્ ।

શેષે વિશેષ હીનં યાવદ્ ઉત્કૃષ્ટમિતિ સર્વેણામ્ ॥ ૨ ॥

અર્થ ભાવઃ—સર્વેણ અપ્તવિધેષ્યપિ વધ્યમાનેણુ કર્મણુ તત્તત્કર્મણઃ અવાધાકાલં મુક્ત્યા તદનન્તરં દલિકનિપેક્કો ભવતિ,

પ્રત્યેકકર્મવન્ધ્યાનન્તરં તત્તત્કર્મણઃ ઉદયે—તત્તત્કર્મણઃ અવાધાકાલે પૂર્ણે સતિ કર્માનુભવનસ્ય પ્રથમસમયોદારભ્યેત્યર્થઃ વઢ્ઘકર્મણાં દલિકેભ્યો વેદિતું શક્યાનાં વેદનયોગ્યાનાં દલિકાનાં નિપેક્કો ભવતિ, તથા ચ—ઉદયસ્ય પ્રથમ-સમયે તેણુ વઢ્ઘતરદલિકાનાં નિપેક્કો ભવતિ, તદનન્તરં દ્વિતીયાદિસ્થિતિણુ

વિશેષહીન કર્મદલિકોં કા નિપેક્ક યાવત્ ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિવાલે કર્મદલિકોં તક હોતા હૈ, કહા ‘મી હૈ—

“મોત્તૂણ સગમવાહં પઢમાઈ ઠિહ્ઈ વઢ્ઘરં દવ્વં ।

સેસે વિસેસહીળં જો ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિં ॥ ”

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—આઠોં પ્રકાર કે કર્મ જવ વંધ ચુકતે હૈં—ઔર અપની ૨ અવાધા કે ઘાદ જવ વે ઉદય મેં આને લગ જાતે હૈં તવ્ન उन કર્મોં કે વેદને યોગ્ય દલિકોં કી નિપેક્ક રચના હોતી હૈ અર્થાત્—કર્માનુ-ભવ કે પ્રથમ સમય સે લેકર વઢ્ઘકર્મોં કે દલિકોં મેં સે વેદને યોગ્ય દલિકોં કા નિપેક્ક હોતા હૈ હસમેં ઉદય કે પ્રથમ સમય મેં હનમેં સે વઢ્ઘતર દલિકોં કા નિપેક્ક હોતા હૈ, હસકે વાદ ઇક સમય પ્રમાણવાલી દ્વિતીય આદિ સ્થિતિમેં, ક્રમ ૨ સે દ્વિતીય તૃતીયાદિ સમયોં મેં વિશેષ-

અવહીન—કર્મદલિકોનેા નિપેક્ક થાય છે, આ રીતે વિશેષહીન કર્મદલિકોનેા નિપેક્ક ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિવાળાં કર્મદલિકો પર્યન્ત થયા કરે છે. કહ્યું પણ છે—

“મોત્તૂણ સગમવાહં પઢમાઈ ઠિહ્ઈ વઢ્ઘરં દવ્વં ।

સે સે વિસેસહીળં જો ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિં ॥ ”

ભાવાર્થ—આઠે પ્રકારનાં કર્મ જ્યારે બંધાય ચુકે છે, અને પોતપોતાના અજાધાકાળ પછી જ્યારે તેઓ ઉદયમાં આવવા માંડે છે, ત્યારે તે કર્મના વેદનાયોગ્ય દલિકોની નિપેક્ક રચના થાય છે, એટલે કે કર્માનુભવના પ્રથમ સમયથી લઈને બઢ્ઘ કર્મોનાં દલિકોમાંથી વેદનાયોગ્ય દલિકોનેા નિપેક્ક થાય છે. તેમાં ઉદયના પ્રથમ સમયે તેમાંના અધિક દલિકોનેા નિપેક્ક થાય છે, ત્યારબાદ એક એક સમય પ્રમાણવાળી દ્વિતીય આદિ સ્થિતિમાં ક્રમશઃ દ્વિતીય ત્રીય



કાલઃ ત્રિંશત્સાગરોપમકોટીકોટીપ્રમાણથ વાધાકાલઃ, એતદ્વયસ્યાપિ અવાધાવાધાકાલસ્ય મિશ્રણાત્મકઃ કર્મસ્થિતિકાલઃ, અવાધાકાલવર્જિતો વાધા-  
કલાત્મકઃ કર્મનિપેક્કકાલ इत्याहुः । एवमन्यकर्मस्वपि अवाधाकालो विज्ञेयः,  
विशेषस्तु आयुषि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि निपेक्ककालः, पूर्वकोटीतृतीयभागश्च  
अवाधाकाल इति । स च पूर्वकोटित्रिभागः,—त्रयस्त्रिंशल्लक्ष त्रयस्त्रिंशत्सहस्रत्रयस्त्रि  
शदुत्तरत्रिंशत ( ૩૩૦૦૦૦૦, ૩૩૦૦૦, ૩૩૩ ) पूर्वत्रयोविंशतिलक्ष-द्विप-  
ञ्चाशत्सहस्र ( ૨૩૦૦૦૦૦, ૫૨૦૦૦ ) वर्षकोटिपरिमितो भवति । ‘ एवं  
दरिसणावरणिज्जંપि ’ एवम् ज्ञानावरणीयकर्मवदेव दर्शनावरणीयमपि कर्म-  
बोध्यम् । ‘ वेयणिज्जं जहण्णेणं दो समया, उक्कोसेणं जहा-णाणावरणिज्जं ’

અવાધાકાલ ઓર ત્રીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ વાધાકાલ,  
इन दोनों को मिला देने से जो प्रमाण निकलता है वह कर्मस्थितिकाल  
है तथा अवाधाकाल से रहित जो वधाकाल है वह कर्मनिपेक्क काल  
है ” । इसी तरह से दूसरे कर्मों के विषय में भी अवाधाकाल जान  
लेना चाहिये—आयुर्कर्म में तैंतीस ३३ सागरोपम का निपेक्ककाल है ।  
तथा इस में जो अवाधाकाल है वह पूर्व कोटि का तृतीयभागप्रमाण है।  
पूर्वकोटि तृतीय भाग तैंतीस ३३ लाख, तैंतीस ३३ हजार, तीनसौ  
तैंतीस, पूर्व और ३३ तेवीस लाख, वाचन ५२ हजार कोटि वर्षप्रमाण  
होता है । ( एवं दरिसणावरणिज्जं ) ज्ञानावरणीय कर्म की तरह दर्शना  
वरणीय कर्म को भी जानना चाहिये । ( वेयणिज्जं जहण्णेणं दो समया  
उक्कोसेणं जहा णाणावरणिज्जं ) वेदनीयकर्म की जघन्यस्थिति दो

અને ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ વાધાકાલ, એ બન્નેનો સરવાળો  
કરવાથી જે પ્રમાણ આવે છે તે કર્મસ્થિતિકાલ છે, તથા અવાધાકાલ સિવા-  
યનો જે વાધાકાલ છે, તે કર્મનિપેક્ક કાલ છે. ”

એજ પ્રમાણે બીજાં કર્મોનો આવાધકાલ પણ સમજવો જોઈએ આયુ-  
કર્મનો નિપેક્કકાલ ( વેદનકાલ ) ૩૩ સાગરોપમનો કહ્યો છે, તથા તેનો આવા-  
ધાકાલ પૂર્વકોટિના ત્રીજા ભાગ પ્રમાણ છે. પૂર્વકોટિનો ત્રીજો ભાગ તેત્રીસ  
લાખ તેત્રીસ હજાર ત્રણસો તેત્રીસ ( ૩૩૩૩૩૩૩ ) પૂર્વ અને તેવીસ લાખ  
બાવન હજાર ( ૨૩૫૨૦૦૦ ) કોટિવર્ષ પ્રમાણ છે.

( एवं दरिसणावरणिज्जं ) ज्ञानावरणीय कर्मની स्थिति પ્રમાણે જ દર્શ-  
નાવરણીય કર્મની પણ સ્થિતિ સમજવી.

(वेयणिज्जं जहण्णेणं दो समया, उक्कोसेणं जहा णाणावरणिज्जं) वेदनीय कर्मની

કતા વર્તે, યદ્યપિ આયુર્કર્મણોઽપિ અવાધાકાલસ્તુ ભવત્યેવ કિન્તુ ન તત્તદ્-  
વર્જનસ્યાવશ્યકતા ભવતિ । આયુર્કર્મવન્ધસ્ય પ્રથમસમય એવાયુષઃ પ્રભૂતદલિકાનાં  
નિષેકો ભવતિ, દ્વિતીયાદિસમયેષુ તુ ઉત્તરોત્તરં વિશેષદીનો ભવતિ યાત્ર-  
ચરમસમય इति ।

તથા ચૈવાયતા વદ્મપિ જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ સદસ્રવર્ષત્રયં યાત્ર અવેષ-  
માનતયા તિષ્ઠતિ, તતઃ સદસ્રવર્ષત્રયન્યૂનમ્નિગતસાગરોપમકોટીકોટીપમાણસ્તાન્  
જ્ઞાનાવરણીયકર્માનુભવકાલો વેદિતવ્યઃ, કેનિતુ-સદસ્રવર્ષત્રયપ્રમાણઃ આવાધા-

વિશેષ ૨ હીન હોતા રહતા હૈ । इस तरह पंधा हुआ भी ज्ञानावरणीय  
कर्म तीन हजार वर्षतक अवेद्यमान अवस्था में रहता है, बाद में वह  
अनुभव-उदय में आता है-इस प्रकार उसका अनुभवन काल तीन  
३ हजार वर्ष कम तीस ३० कोडाकोडी सागरोपम का है ऐसा जानना  
चाहिये, तात्पर्य कहने का यह है कि कर्म की स्थिति के दो प्रकार हैं-  
एक तो उसे कर्मरूप में रहना और दूसरी उसे अनुभव योग्य कर्मरूप  
में घनना, यहाँ जो उत्कृष्ट अथवा जघन्यरूप से कर्मस्थिति कही गई है  
वह कर्मरूप से रहने वाली कर्मस्थिति कही गई है और जब अवाधा-  
काल के बाद कर्म उदय में आने लग जाता है-तब की स्थिति अनुभव  
योग्य कर्मस्थिति कही गई है कर्म की स्थिति में से अवाधाकाल घटाने  
से जो स्थिति बचती है वही अनुभव योग्य कर्मस्थिति है ऐसा  
जानना चाहिये ।

કોઈ આચાર્ય ऐसा करहते हैं कि “ तीन ३ हजार वर्ष प्रमाण

આ રીતે જ્ઞાનાવરણીય કર્મને બંધ થયા પછી પણ ત્રણ હજાર વર્ષ  
સુધી તે અવેદ્યમાન અવસ્થામાં જ રહે છે અને ત્યારબાદ તે ઉદયમાં આવે  
છે. આ રીતે તેનો વેદનકાળ ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમ કરતાં ત્રણ હજાર  
વર્ષ ન્યૂન (ઓછો) છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કર્મની સ્થિતિના બે  
પ્રકાર છે-(૧) કર્મરૂપે રહેવાની સ્થિતિ અને (૨) અનુભવવા (વેદવા) યોગ્ય  
કર્મરૂપ બનવાની સ્થિતિ. અહીં બે ઓછામાં ઓછી કે વધારેમાં વધારે કર્મ  
સ્થિતિ કહી છે, તે કર્મરૂપે રહેનારી કર્મસ્થિતિ કહી છે, અને બધારે અમા-  
ધાકાળ પૂરો થયા પછી કર્મ ઉદયમાં આવવા લાગી જાય છે ત્યારની સ્થિતિને  
અનુભવયોગ્ય કર્મસ્થિતિ કહી છે. કર્મની સ્થિતિમાંથી અમાધાકાળ બાદ કરતા  
બે સ્થિતિ બાકી રહે છે એજ અનુભવયોગ્ય કર્મસ્થિતિ છે એમ સમજવું.

કોઈ કોઈ આચાર્ય એવું કહે છે કે “ ત્રણ હજાર વર્ષ ” પ્રમાણ,

મોહનીયકર્મણો જઘન્યેન અન્તર્મુહૂર્તં વન્ધસ્થિતિઃ, ઉત્કર્ષેણ સપ્તતિસાગરોપમ-  
કોટીકોટ્યઃ 'સત્ત ય વાસસદસાણિ અવાહા' સપ્ત ચ વર્પસદસાણિ અવાધા  
મોહનીયકર્મવન્ધોદયાન્તકાલઃ, 'અવાહુણિયા કમ્મટ્ટિર્દિ-કમ્મનિસેઓ' અવાધો  
નિકા અવાધયા સપ્ત સઃસ્રવર્પસ્થયા ઝનિકા ન્યૂના કર્મસ્થિતિઃ સપ્તસદસ-  
વર્પન્યૂનઃ સપ્તતિસાગરોપમકોટીકોટીમાનલક્ષણો મોહનીયકર્માવસ્થાનકાલઃ નિપેકો  
ભવતિ । 'આઝગં જહણ્ણેણં અંતોમુહૂત્તં, ડકકોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ' આયુ-  
ષ્કમ્ આયુષ્યકર્મણો જઘન્યેન અન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ ત્રયસ્થિશત્ સાગરોપમાણિ  
'પુવ્વકોટિતિમાગો અવાહા, અવાહુણિયા કમ્મટ્ટિર્દિ-કમ્મનિસેઓ' પૂર્વકોટીત્રિ-  
ભાગઃ પૂર્વકોટીયત્તોયભાગઃ અવાધાકાલઃ, અવાધોનિકા-અવાધાકાલેન ન્યૂના  
ત્રયસ્થિશત્સાગરોપમાણિ કર્મસ્થિતિઃ આયુષ્યકર્માવસ્થાનકાલઃ કર્મનિપેકો ભવતિ ।  
પૂર્વકોટિત્રિભાગસ્ય સંખ્યામાનમત્રેવ સૂત્રે પૂર્વમવાધાકાલપ્રકરણે પ્રદર્શિતમેવેતિ

અંતોમુહૂત્તં, ડકકોસેણં સત્તરિસાગરોવમકોટાકોટીઓ) મોહનીય કર્મ  
કો જઘન્ય વંધસ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ ઉત્કૃષ્ટ વંધસ્થિતિ ૭૦ સત્તર  
કોટાકોટી સાગરોપમ કી હૈ, હસકા અવાધાકાલ ૭૦૦૦ હજાર વર્ષ કા  
હૈ અત્કૃષ્ટસ્થિતિ મેં અવાધા કાલ કો ઘટાને પર જો સ્થિતિ વચે વહ  
મોહનીય કા અવસ્થાનકાલ રૂપ કર્મનિપેકકાલ હૈ । (આઝગં જહણ્ણેણં  
અંતોમુહૂત્તં ડકકોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ) આયુકર્મ કી જઘન્યસ્થિતિ  
અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૩૩ સાગરોપમ કી હૈ (પુવ્વકોટિ  
તિ ભાગો અવાહા) પૂર્વ કોટિ કે ત્રિભાગપ્રમાણ અવાધાકાલ હૈ (અવા-  
હુણિયા કમ્મટ્ટિર્દિ-કમ્મનિસેઓ) અવાધાકાલ સે હીન જો કર્મસ્થિતિ  
હૈ વહ હસ કર્મ કા નિપેક કાલ હૈ । પૂર્વકોટિ કે ત્રિભાગ કી સંખ્યા  
કા પ્રમાણ પહિલે અવાધકાલ કે પ્રકરણ મેં દિશ્વા હી દિયા હૈ (નામ-

ડકકોસેણં સત્તરિસાગરોવમકોટાકોટીઓ) મોહનીય કર્મની જઘન્ય વંધસ્થિતિ  
અન્તર્મુહૂર્તની અને ઉત્કૃષ્ટ વંધસ્થિતિ ૭૦ કોટાકોટી સાગરોપમની છે. તેનો  
આધાધકાળ ૭૦૦૦ વર્ષનો છે. ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાંથી અધાધકાળને બાદ કર-  
વાથી બેટલો કાળ બાકી રહે તેટલો મોહનીય કર્મનો કર્મનિપેક કાળ (કર્મ  
વેદનકાળ) સમજવો. (આઝગં જહણ્ણેણં અંતોમુહૂત્તં, ડકકોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ)  
આયુકર્મની જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૩૩ સાગ-  
રોપમની છે. (પુવ્વકોટિ તિમાગો અવાહા) તેનો અધાધકાળ પૂર્વ કોટિના  
ત્રીજા ભાગ પ્રમાણ છે. (અવાહુણિયા કમ્મટ્ટિર્દિ-કમ્મનિસેઓ) અધાધકાળ  
સિવાયની બે કર્મસ્થિતિ છે, તે આ કર્મનો નિપેકકાળ સમજવો. પૂર્વકોટિના  
ત્રીજા ભાગનું પ્રમાણ આ સૂત્રમાં જ અધાધકાળનું વર્ણન કરતી વખતે આપી  
મ ૧૧૦



તથા વેદનીયં કર્મ જઘન્યેન ક્ષી સમયો, તથા ન કેવલયોગમત્યવબંધાપેક્ષયા વેદનીયં કર્મ દ્વિતમયસ્થિતિકં ભવતિ, તત્ત્વ પરિમિત સમયે વધ્યતે, દ્વિતીયે તુ વેદને યતુ “ વેયણિયસ્સ જહળ્લા વારસ, નામ-ગોયાળ અદ્દ મુદ્દત્તા” વેદનીયસ્ય જઘન્યા દ્વાદશ, નામ-ગોત્રયોઃ અષ્ટમુદ્દર્ભાં શ્યુક્તમ્ તત્ સકપાયસ્થિતિ વન્ય-માથિત્ય વેદિતવ્યમિતિ ન તદ્વિરોધઃ ઉત્કૃષ્ટેણ યથા જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ તથૈવ વેદનીયમપિ કર્મ બોધ્યમ્, તથા ન વેદનીયસ્યાપિ કર્મગઃ ઉત્કૃષ્ટતઃ સ્થિતિકાલઃ ત્રિસઠ્સર્વપિન્યૂનદ્વિગત્સાગરોપમ કોટીકોટીપ્રમાણઃ । ‘ મોહણિજ્જં જહળ્ણેણં અંતોમુદ્દત્તં, ઉપકોત્તેણં સત્તરિસાગરોપમકોટાકોટીઓ ’ મોહનીયં કર્મ

સમય કી હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કે સમાન તીસ ૩૦ કોટાકોટી સાગરોપમ કી હૈ । યહાં જો વેદનીય કર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ દો સમય કી કહી ગઈ હૈ વહ કેવલ યોગ કે નિમિત્તા સે હોને વાલે બંધ કી અપેક્ષા સે કહી ગઈ હૈ-એસી સ્થિતિ મેં વેદનીય કર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ દો સમય કી હોતી હૈ એક સમય મેં વહ બંધતા હૈ, ઓર દ્વિતીય સમય મેં વહ વેદા જાતા હૈ જો ( વેયણિયસ્સ જહળ્ણા વારસ, નામ ગોયાળ અદ્દ મુદ્દત્તા ) વેદનીય કર્મ કે વિષય મેં એસા કહા ગયા હૈ કિ વેદનીયકર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ ૧૨ મુહૂર્ત કી હોતી હૈ સો યહ કથન કપાયસહિત જીવોં કી અપેક્ષા સે હી જાનના ચાહિયે-કયોં કિ કપાય-યુક્ત જીવોં કે જો વેદનીય કર્મ કા જઘન્ય સ્થિતિ બંધ હોતા હૈ વહ ૧૨ મુહૂર્ત કા હોતા હૈ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કાલ વેદનીય કર્મ કા તીન હજાર વર્ષ કમ તીસ સાગરોપમ કોટાકોટી પ્રમાણ કા હૈ ( મોહણિજ્જં જહળ્ણેણં

ઓછામાં ઓછી સ્થિતિ જે સમયની અને વધારેમાં વધારે સ્થિતિ જ્ઞાનાવર-ણીય કર્મના જેટલી જ ( ત્રીસ કોટાકોટી સાગરોપમની ) છે. અહીં જે વેદનીય કર્મની જઘન્ય ( ઓછામાં ઓછી ) સ્થિતિ જે સમયની કહી છે તે માત્ર યોગને કારણે થનારા બંધને અનુલક્ષીને કહી છે-એટલે કે એવી પરિસ્થિતિમાં વેદનીય કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ જે સમયની હોય છે-એક સમયમાં તે બંધાય છે અને બીજે સમયે તેનું વેદન થાય છે. ( વેયણિયસ્સ જહળ્ણા વારસ, નામ ગોયાળ અદ્દમુદ્દત્તા ) આ કથન પ્રમાણે વેદનીય કર્મની જે બાર મુહૂર્તની જઘન્ય સ્થિતિ કહી છે તે કપાય યુક્ત જીવોની અપેક્ષાએ જ સમજવી, કારણ કે કપાયયુક્ત જીવોના વેદનીય કર્મનો જે જઘન્ય સ્થિતિ બંધ થાય છે, તે બાર મુહૂર્તનો હોય છે, વેદનીય કર્મનો ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિકાળ ત્રીસ સાગરોપમ કોટાકોટી કરતાં ત્રણ હજાર વર્ષ ઓછો હોય છે. ( મોહણિજ્જં જહળ્ણેણં અંતોમુદ્દત્તં,

कर्मनाम	उत्कृष्टा स्थितिः	जघन्या स्थितिः	उत्कृष्टः अ- वाधाकालः	जघन्यः अवा- धाकालः	उत्कृष्टः वाधा- काल कर्मनिपेक्षः	जघन्यः वाधाकाल कर्मनिपेक्षः
मोहनीय कर्म	सप्तति सागरो- पम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तम्	७००० सप्तति वर्षशतानि	अन्तर्मुहूर्तम्	सप्तसहस्रवर्षन्यूना सप्तति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् + अन्तर्मुहूर्तम्
ज्ञानावरणीय कर्म	त्रिशत्सागरो- पम कोटीकोटयः	"	३००० सहस्र वर्षत्रयम्	"	त्रिसहस्रवर्षन्यूनाः त्रिशद् सागरोपम कोटी कोटयः	"
दर्शनावरणीय कर्म	"	"	"	"	"	"
सकापायात्म बद्धं वेदनीय कर्म	"	द्वादश मुहूर्तानि	"	"	"	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि एकादश मुहूर्तानि
अन्तरायिकं कर्म	"	अन्तर्मुहूर्तम्	"	"	"	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्
नामकर्म	विंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अष्टौ मुहूर्तानि	२००० वर्षाणि	"	विंशति शतन्यूनानि विंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि सप्तमुहूर्तानि
गोत्रकर्म	"	"	"	"	"	"
आयुष्यकर्म	पूर्वकोटि त्रिभागा धिकानि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	अन्तर्मुहूर्तम्	पूर्वकोटि त्रिभाग	"	पूर्वकोटि त्रिभाग न्यूनानि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्



‘ નામ-ગોયાણં જહ્ણણેણં મદ્દ મુહુત્તા, ઉક્કોસેણં વીસં સાગરોપમકોડાકોડીઓ ’  
 નામ-ગોત્રયોઃ કર્મણોઃ ધન્યસ્થિતિઃ જઘન્યેન મદ્દ મુહુત્તાનિ, ઉત્કર્ષેણ વિગતિસા-  
 ગરોપમકોટીકોટ્યઃ ‘ દોણિય ય વાસસહસ્સાણિ અવાહા ’ દ્વે ચ વર્ષસદસે અવાધા,  
 ‘ અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિઈ-કમ્મનિસેઓ ’ અવાધોનિદા-અવાધયા દ્વિસદસ્રવર્ષરૂ-  
 પયા કનિકા ન્યૂના કર્મસ્થિતિઃ-દ્વિ સદસ્રવર્ષન્યૂનો વિગતિસાગરોપમકોટીકોટી-  
 માનઃ નામ ગોત્ર કર્માવસ્થાન કાલઃ, કર્મનિષેધો મવતિ । ‘ અંતરાહયં જહા-ણાણા-  
 વરણિજ્જં ’ અન્તરાયિકં કર્મ યથા જ્ઞાનાવરણીયં તથા વેદિતવ્યમિતિ માવનામૃ૦૪॥

કર્મવન્ધકવક્તવ્યતા

જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મપસ્તાયાત્ તદ્વન્ધકાન્ નિરૂપયિતું પ્રથમં સ્વ્યાદિ-  
 દ્વારમાહ-‘ ણાગા વરણિજ્જં ણં મંતે ! ’ इत्यादि ।

મૂલમ્-‘ ણાગાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં इत्थી વંધइ,  
 पुरिसो वंधइ नपुंसओ वंधइ ? णोइत्थी - णोपुरिस -

ગોયાણં જહ્ણણેણં મદ્દ મુહુત્તા, ઉક્કોસેણં વીસં સાગરોપમકોડાકોડીઓ )  
 નામ ઓર ગોત્ર ઇન દોનોં કર્મોં કી જઘન્ય સ્થિતિ આઠ મુહૂર્ત કી હૈ  
 ઓર ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ વીસ ૨૦ સાગરોપમ કોડાકોડી કી હૈ । ( દોણિય ય  
 વાસસહસ્સાણિ અવાહા ) દો હજાર વર્ષ કી અવાધા હૈ । ( અવાહુણિયા  
 કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ ) અવાધાકાલરૂપ જો દો હજાર વર્ષ હૈ ડનસે  
 રહિત ૨૦ વીસ સાગરોપમ કોડાકોડી કા ઇનકા અવસ્થાનકાલ-કર્મ  
 નિષેક હૈ । ( અંતરાહયં જહા ણાગાવરણિજ્જં ) અન્તરાય કી સ્થિતિ,  
 અવાધા, અવસ્થાન કાલ યે સવ વિષય જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે સમાન હી  
 જાનના ચાહિયે ॥ સુ૦૪ ॥

દીધેલુ’ છે. ( નામગોયાણં જહ્ણણેણં મદ્દ મુહુત્તા ઉક્કોસેણં વીસં સાગરોપમકોડા-  
 કોડીઓ ) નામકર્મ અને ગોત્રકર્મની જઘન્ય સ્થિતિ આઠ મુહૂર્તની છે અને  
 ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ વીસ સાગરોપમ કોડાકોડીની છે. ( દોણિય ય વાસસહસ્સાણિ  
 અવાહા ) અનેનો આબાધકાળ બે હજાર વર્ષનો છે. ( અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિઈ  
 કમ્મનિસેઓ ) તેમની વીસ સાગરોપમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાંથી ૨૦૦૦ વર્ષ  
 પ્રમાણે આબાધકાળ બાદ કરતાં બેટલો કાળ બાકી રહે તેટલો તેમનો અવ-  
 સ્થાન કાળ-કર્મ નિષેક કાળ સમજવો. ( અંતરાહયં જહા ણાગાવરણિજ્જં ) અન્ત-  
 રાય કર્મની સ્થિતિ, આબાધકાળ, અવસ્થાન કાળ આદિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ  
 પ્રમાણે જ સમજવા, ॥ સૂત્ર ૪ ॥

कर्मस्थितिप्रमाणककोष्ठकम्						
कर्मनाम	उत्कृष्टा स्थितिः	जघन्या स्थितिः	उत्कृष्टः अ- वाधाकालः	जघन्यः अवा- धाकालः	उत्कृष्टः वाधा- काल कर्मनिपेकः	जघन्यः वाधाकाल कर्मनिपेकः
मोदनीय कर्म	सप्तति सागरो- पम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तम्	७००० सप्तति वर्षशतानि	अन्तर्मुहूर्तम्	सप्तसहस्रवर्षन्यूना सप्तति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् + अन्तर्मुहूर्तम्
ज्ञानावरणीय कर्म	त्रिशत्सागरो- पम कोटीकोटयः	"	३००० सहस्र वर्षत्रयम्	"	त्रिसहस्रवर्षन्यूनाः त्रिशत् सागरोपम कोटी कोटयः	"
दर्शनावरणीय कर्म	"	"	"	"	"	"
सकापायात्म बद्धं वेदनीय कर्म	"	द्वादश मुहूर्तानि	"	"	"	"
अन्तरायिकं कर्म	"	अन्तर्मुहूर्तम्	"	"	"	"
नामकर्म	विंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अष्टौ मुहूर्तानि	२००० वर्षाणि	"	विंशति शतन्यूनाविंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि एकादश मुहूर्तानि अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्
गोत्रकर्म	"	अन्तर्मुहूर्तम्	"	"	"	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि सप्तमुहूर्तानि
आयुष्यकर्म	पूर्वकोटि त्रिभागा धिकानि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	पूर्वकोटि त्रिभाग	"	"	पूर्वकोटि त्रिभाग न्यूनाणि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्

+ अन्तर्मुहूर्तं शब्दो भिन्न भिन्न जातीय कालवाचकोऽत्रावगन्तव्यः । ॥ सू० ४॥

+ अन्तर्मुहूर्तं शब्दो भिन्न भिन्न जातीय कालवाचकोऽत्रावगन्तव्यः । ॥ सू० ४॥

—णो नपुंसओ वंधइ ? । गोयमा ! इत्थीवि वंधइ, पुरिसो वि वंधइ, नपुंसओ वि वंधइ, णोइत्थीणोपुरिसणोनपुंसओ सिय वंधइ, सिय णो वंधइ । एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्म-  
 प्पयडीओ । आउगं णं भंते ! कम्मं किं इत्थी वंधइ, पुरिसो वंधइ, नपुंसओ वंधइ०, पुच्छा ? गोयमा ! इत्थी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ । एवं तित्ति वि भाणियत्वा, णोइत्थी णो-  
 पुरिस-णोनपुंसओ न वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं संजए वंधइ, असंजए वंधइ, संजयाऽसंजए वंधइ, णो संजय-  
 णोअसंजय-णोसंजयाऽसंजए वंधइ ? । गोयमा ! संजए सिय वंधइ, सिय णो वंधइ, असंजए वंधइ, संजयाऽ-  
 संजए वि वंधइ, नोसंजय-णोअसंजय-णोसंजयासंजए ण वंधइ । एवं आउगवज्जाओ सत्तवि, आउगे हेट्ठिला तिणिण  
 भयणाए, उवरिल्ले णं वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सम्मदिट्ठी वंधइ, मिच्छदिट्ठी वंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी वंधइ ?  
 गोयमा ! सम्मदिट्ठी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ, मिच्छदिट्ठी वंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी वंधइ, एवं आउगवज्जाओ सत्त वि,  
 आउए हेट्ठिला दो भयणाए, सम्मामिच्छदिट्ठी न वंधइ । णाणा-  
 वरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सन्ती वंधइ, णोसन्नि-णोअसन्ती वंधइ ? गोयमा ! सन्ती सिय वंधइ, सिय णो वंधइ, असन्ती  
 वंधइ, णोसन्नि-णोअसन्ती न वंधइ, एवं वेयणिज्जाऽऽउगोवज्जाओ  
 छ कम्मप्पयडीओ, वेयणिज्जं हेट्ठिला दो वंधंति, उवरिल्ले

न वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं भवसिद्धिण  
 वंधइ ? अभवसिद्धिण वंधइ, णो भवसिद्धिय-णो अभवसिद्धिण  
 वंधइ ? गोयमा ! भवसिद्धिण भयणाए, अभवसिद्धिण वंधइ,  
 णो भवसिद्धिय-णो अभवसिद्धिण न वंधइ, एवं आउगवज्जाओ  
 सत्तवि, आउगं हेट्ठिळा दो भयणाए, उपरिल्ले न वंधइ ।  
 णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं चक्खुदंसणी वंधइ ?,  
 अचक्खुदंसणी वंधइ ? ओहिदंसणी वंधइ ? केवल दंसणी  
 वंधइ ? गोयमा ! हेट्ठिळा तिण्णिण भयणाए, उवरिल्ले  
 न वंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि, वेयणिज्जं हेट्ठिळा  
 तिन्नि वंधंति, केवलदंसणी भयणाए । णाणावरणिज्जं णं  
 भंते ! कम्मं किं पज्जत्तओ वंधइ, अपज्जत्तओ वंधइ,  
 णो पज्जत्तय-णो अपज्जत्तओ वंधइ ? गोयमा ! पज्जत्तओ  
 भयणाए, अपज्जत्तओ वंधइ, णो पज्जत्तय-णो अपज्ज-  
 त्तओ न वंधइ, एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगं हेट्ठिळा  
 दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते !  
 कम्मं किं भासए वंधइ, अभासए वंधइ ? गोयमा ! दो वि  
 भयणाए, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि, वेयणिज्जं भासए  
 वंधइ, अभासए भयणाए । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं  
 किं परित्ते वंधइ, अपरित्ते वंधइ, णो परित्ते णो अपरित्ते वंधइ ?  
 गोयमा ! परित्ते भयणाए, अपरित्ते वंधइ, णो परित्तणो अप-  
 रित्ते न वंधइ, एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ,  
 आउयं परित्तो वि, अपरित्तो वि भयणाए, णो परित्त णो-



अपरितो न बंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं  
 आभिणिचोहियणाणी बंधइ, सुयणाणी, ओहिणाणी, मण-  
 पज्जवनाणी, केवलणाणी बंधइ ? गोयमा ! हेट्ठिळा चत्तारि  
 भयणाए, केवलणाणी न बंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त  
 वि, वेयणिज्जं हेट्ठिळा चत्तारि बंधंति, केवलणाणी भयणाए ।  
 णाणा वरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं मइअन्नाणी बंधइ, सुय-  
 अन्नाणी बंधइ, विभंगअन्नाणी बंधइ ? गोयमा ! आउग  
 वज्जाओ सत्त वि बंधंति, आउगं भयणाए । णाणवरणिज्जं णं  
 भंते ! कम्मं किं सणजोगी बंधइ, वयजोगी बंधइ, कायजोगी  
 बंधइ, अजोगी बंधइ ? गोयमा ! हेट्ठिळा तिन्नि भयणाए,  
 अजोगी न बंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि । वेयणिज्जं  
 हेट्ठिळा तिणिण बंधंति, अजोगी न बंधइ । णाणा वरणिज्जं णं  
 भंते ! कम्मं किं सागरोवउत्ते बंधइ, अणागारोवउत्ते बंधइ ?  
 गोयमा ! अट्ठसुवि भयणाए । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं  
 किं आहारए बंधइ, अणाहारए बंधइ ? गोयमा ! दो वि  
 भयणाए, एवं वेयणिज्जाऽऽउगवज्जाणं छण्हं, वेयणिज्जं  
 आहारए बंधइ, अणाहारए भयणाए, आउए आहारए भयणाए  
 अणाहारए न बंधइ ? णाणा वरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं  
 सुहुमे, बंधइ वायरे बंधइ णो सुहुम-णो वायरे बंधइ ? गोयमा !  
 सुहुमे बंधइ, वायरे भयणाए, णो सुहुमणो वायरे न बंधइ,  
 एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउए सुहुमे, वायरे भयणाए,



પોસુદુમળોવાયરે ન વંધઈ । પાપાવરણિજ્જં પં મંતે !  
કમ્મં કિં ચરિમે વંધઈ, અચરિમે વંધઈ ? ગોયમા ! અઠ્ઠ વિ  
મયણાણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

હાયા—જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ મદન્ત । કર્મ કિં સ્ત્રી વધ્નાતિ, પુરુષો વધ્નાતિ,  
નપુંસકો વધ્નાતિ ? નોસ્ત્રીનોપુરુષનોનપુંસકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સ્ત્રી અપિ વધ્નાતિ,  
પુરુષોઽપિ વધ્નાતિ નપુંસકોઽપિ વધ્નાતિ, નોસ્ત્રીનોપુરુષનોનપુંસકઃ સ્યાદ વધ્નાતિ,  
સ્યાદ નો વધ્નાતિ, एवम् आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतयः । आयुष्कं સ્વલુ

કર્મચન્દન વક્તવ્યતા

‘ પાપાવરણિજ્જં પં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—( પાપાવરણિજ્જં પં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યો વંધઈ, પુરિસો  
વંધઈ, નપુંસકો વંધઈ ? ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા સ્ત્રી વાંધતી  
હૈ ? યા પુરુષ વાંધતા હૈ ? યા નપુંસક વાંધતા હૈ ? કૌન વાંધતા હૈ ?  
અથવા—( જોઈત્યો જોપુરિસ — જોનપુંસકો વંધઈ ) સ્ત્રી નહીં વાંધતી  
હૈ ? પુરુષ નહીં વાંધતા હૈ ? નપુંસક નહીં વાંધતા હૈ ? તો કૌન વાંધતા  
હૈ ? ( ગોયમા ! ઇત્યો વિ વંધઈ, પુરિસો વિ વંધઈ, નપુંસકો વિ વંધઈ )  
હે ગૌતમ ! સ્ત્રી બી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વાંધતી હૈ । પુરુષ બી જ્ઞાનાવર-  
ણીય કર્મ વાંધતા હૈ । નપુંસક બી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વાંધતા હૈ । ( જો  
ઈત્યો જો પુરિસ—જો નપુંસકો સિય વંધઈ, સિય જો વંધઈ ) તથા જો  
જીવ નોસ્ત્રી હોતા હૈ—સ્ત્રી નહીં હોતા હૈ, નોપુરુષ હોતા હૈ—પુરુષ નહીં

કર્મચન્દન વક્તવ્યતા—

“ પાપાવરણિજ્જં પં મંતે ! ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—( પાપાવરણિજ્જં પં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યો વંધઈ, પુરિસો વંધઈ,  
નપુંસકો વંધઈ ? ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું સ્ત્રી બાંધે છે ? કે પુરુષ  
બાંધે છે ? કે નપુંસક બાંધે છે ? અથવા—( જોઈત્યો, જોપુરિસ, જોનપુંસકો  
વંધઈ ? ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું સ્ત્રી બાંધતી નથી ? પુરુષ બાંધતો નથી ?  
નપુંસક બાંધતો નથી ? ( ગોયમા ! ઇત્યો વિ વંધઈ, પુરિસો વિ વંધઈ, નપુંસકો  
વિ વંધઈ ) હે ગૌતમ ! સ્ત્રી પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે, પુરુષ પણ  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે. અને નપુંસક પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે.  
( જોઈત્યો, જોપુરિસ, જોનપુંસકો સિય વંધઈ, સિય જો વંધઈ ) તથા જે  
જીવ ‘ નો સ્ત્રી ’ હોય છે—સ્ત્રી હોતી નથી, ‘ નો પુરુષ ’ હોય છે—પુરુષ હોતો

મદન્ત ! કર્મ કિં છી વધ્નાતિ, પુરુષો વધ્નાતિ, નપુંસકો વધ્નાતિ પુચ્છા ?  
 ગૌતમ ! સ્ત્રી સ્વાદ વધ્નાતિ, સ્વાદ નો વધ્નાતિ, एवं प्रयोऽपि भणितव्याः, नो  
 स्त्रीनोपुरुषनोनपुंसको वध्नाति । ज्ञानावरणीयं सद्य भदन्त ! કર્મ કિં સંયતો  
 વધ્નાતિ, અસંયતો વધ્નાતિ, સંયતાઃસંયતો વધ્નાતિ, નોસંયતનોઅસંયતનો-  
 હોતા હૈ, નોનપુંસક-નપુંસક નહીં હોતા હૈ, વહ જીવ જ્ઞાનાવરણીય  
 કર્મ યાંધતા મી હૈ ઓર નહીં મી યાંધતા હૈ । ( एवं आउगवज्जाओ  
 सत्त कम्मप्पगहीओ ) इसी प्रकार का कथन आयु કર્મ કો છોડકર  
 વાકી કે સાતોં કર્મોં કે વિષયમેં મી જાનના ચાહિયે । (અઝગં ણં મંતે!  
 કમ્મં કિં ઇત્થી વંધઃ, પુરિસો વંધઃ, નપુંસકો વંધઃપુચ્છા ) હૈ મદન્ત !  
 આયુકર્મ કા વંધ કયા સ્ત્રી કરતી હૈ ? પુરુષ કરતા હૈ ? નપુંસક કરતા  
 હૈ ? इस प्रकार से पहिले के जैसा प्रश्न यहां पर भी करना चाहिये ।  
 ( गोयमा ! इत्थी मिय वंघइ, सिय णो वंघइ, एवं तिन्नि वि भाणिय-  
 व्वा ) हें गौतम ! आयुकर्म का वंघ स्त्री करती भी है और नहीं भी  
 करती है । इसी प्रकार से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी ऐसा  
 ही कथन कर लेना चाहिये । ( णोइत्थी, णोपूरिस, णो नपुंसओ  
 न वन्धइ ) जो नोस्त्री है नोपुरुष है ओ नोनपुंसक है वह आयुकर्म  
 का बन्ध नहीं करता है । ( णाणावरणिज्जं णं भन्ते ! कम्मं  
 किं संजए वंघइ, असंजए वंघइ, संजयासंजए वंघइ, णो संजय,

नथी, ' नो नपुंसक ' डोय छे-नपुंसक डोतो नथी, ते एव ज्ञानावरणीय  
 કર્મ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો. ( एवं आउगवज्जाओ सत्त-  
 कम्मप्पगहीओ ) આયુકર્મ સિવાયના બાકીનાં સાતે કર્મોના વિષયમાં પણ આ  
 પ્રકારનું કથન જ સમજવું.

( આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્થી વંધઃ, પુરિસો વંધઃ, નપુંસકો વંધઃ,  
 પુચ્છા ) હે ભદન્ત ! આયુકર્મનો બંધ શું સ્ત્રી કરે છે ? પુરુષ કરે છે ?  
 નપુંસક કરે છે ? આ પ્રમાણે પહેલાંની જેવાં જ પ્રશ્નો અહીં સમજવા.

( ગોયમા ! ઇત્થી સિય વંધઃ, સિય ણો વંધઃ एवं तिन्नि वि भाणियव्वा )  
 હે ગૌતમ ! આયુકર્મનો બંધ સ્ત્રી કરે પણ છે અને નથી પણ કરતી. પુરુષ  
 અને નપુંસકના વિષયમાં પણ એવું જ કથન થવું જોઈએ. ( णोइत्थी, णो  
 पूरिस, जोनपुंसओ न वंघइ ) નો સ્ત્રી-સ્ત્રી ન હોય એવો જીવ, નો પુરુષ-  
 પુરુષ ન હોય એવો જીવ અને નો નપુંસક-નપુંસક ન હોય એવો જીવ  
 આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી. ( णाणावरणिज्जं णं भन्ते ! किं संजए वंघइ, असं-

સંયતાસંયતો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સંયતઃ સ્યાદ્ વધ્નાતિ, સ્યાદ્ ન વધ્નાતિ' અસંયતો વધ્નાતિ, સંયતાઽસંયતોઽપિ વધ્નાતિ, નોસંયતનોઅસંયત-નોસંયતો સંયતો ન વધ્નાતિ, एवम् आयुष्कर्मजाः सप्तपि, आयुष्कर्म अधस्तनास्त्रयो णा असंजय-णो संजयासंजए बंधइ ? ) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म कया संयत जीव बांधता है ? असंयत जीव बांधता है ? या संयतासंयत जीव बांधता है ? अथवा-जो नो संयत होता है वह बांधता है ? या जो नो असंयत या नो संयतासंयत जीव होता है वह बांधता है । (गोयमा) हे गौतम ! (संजए सिय बंधइ, सिय णो बंधइ, असंजए बंधइ, संजयासंजए वि बंधइ, णो संजय, णो असंजय णो संजयासंजए ण बंधइ) ज्ञानावरणीय कर्म संयत बांधना भी है और नहीं भी बांधता है । पर जो असंयत होता है वह बांधता है तथा जो संयतासंयत होता है वह भी बांधता है । तथा जो नो संयत होता है, नो असंयत होता है, नो संयतासंयत होता है, वह नहीं बांधता है । ( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगे हेट्ठिळा तिणिण भयणाए, उवरिल्ले ण बंधइ) इसी तरह से आयुर्कर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतियों के विषय में भी जानना चाहिये । आयुर्कर्म के विषय में ऐसा जानना चाहिये कि जो जीव संयत हो, असंयत हो, या संयतासंयत हो वह आयुर्कर्म को बांधता भी है

जए बंधइ, संजयासंजए बंधइ, णो संजय, णो असंजय, णो संजयासंए बंधइ ? ) हे भदन्त ! शुं संयत एव ज्ञानावरणीय कर्म बांधे छे ? शुं असंयत एव ते कर्म बांधे छे ? शुं संयतासंयत एव ते कर्म बांधे छे ? अथवा शुं नो संयत एव ते कर्म बांधे छे ? नो असंयत एव ते कर्म बांधे छे ? शुं नो संयतासंयत एव ते कर्म बांधे छे ?

( गोयमा ! ) हे गौतम ! ( संजए सिय बंधइ, सिय णो बंधइ, असंजए बंधइ, संजयासंजए वि बंधइ, णो संजय, णो असंजय णो संजयासंजए ण बंधइ) ज्ञानावरणीय कर्म संयत एव बांधे पणु छे અને નથી પણ બાંધતો, પણ અસંયત એવ તથા સંયતાસંયત એવ બાંધે છે, નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત એવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.

( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगे हेट्ठिळा तिणिण भयणाए, उवरिल्ले ण बंधइ ) आयुर्कर्म सिवायની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓના વિષયમાં પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું. આયુર્કર્મના વિષયમાં એવું સમજવું કે જે એવ સંયત હોય, અસંયત હોય, અથવા તે સંયતાસંયત હોય તે આયુર્કર્મ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો. પરંતુ જે એવ.નો સંયત હોય, નો.અસંયત



મદન્ત ! કર્મ કિં છી વધ્નાતિ, પુરુષો વધ્નાતિ, નપુંસકો વધ્નાતિ પુચ્છા ?  
 ગૌતમ ! છી સ્યાદ વધ્નાતિ, સ્યાદ નો વધ્નાતિ, एवं प्रयोऽपि भणितव्याः, नो  
 स्त्रीनोपुरुषनोनपुंसको वध्नाति । ज्ञानावरणीयं लब्ध मदन्त ! કર્મ કિં સંયતો  
 વધ્નાતિ, અસંયતો વધ્નાતિ, સંયતાઃસંયતો વધ્નાતિ, નોસંયતનોઅસંયતનો-  
 હોતા હૈ, નોનપુંસક-નપુંસક નહીં હોતા હૈ, વહ જીવ જ્ઞાનાવરણીય  
 કર્મ પાંથતા મી હૈ ઓર નહીં મી પાંથતા હૈ । ( एवं आउगवज्जाओ  
 सत्त कम्मप्पगडीओ ) इसी प्रकार का कथन आयु કર્મ કો છોડકર  
 વાકી કે સાતોં કર્મોં કે વિષયમેં મી જાનના ચાહિયે । (અડગં ણં મંતે!  
 કમ્મં કિં હત્થી વંધહ, પુરિસો વંધહ, નપુંસઓ વંધહ પુચ્છા ) હૈ મદન્ત !  
 આયુકર્મ કા વંધ કયા સ્ત્રી કરતી હૈ ? પુરુષ કરતા હૈ ? નપુંસક કરતા  
 હૈ ? હસ પ્રકાર સે પહિલે કે જેમા પ્રશ્ન યહાં પર મી કરના ચાહિયે ।  
 ( ગોયમા ! હત્થી સિય વંધહ, સિય ણો વંધહ, एवं તિન્નિ વિ ભાણિય-  
 વ્વા ) હૈ ગૌતમ ! આયુકર્મ કા વંધ સ્ત્રી કરતી મી હૈ ઓર નહીં મી  
 કરતી હૈ । હસી પ્રકાર સે પુરુષ ઓર નપુંસક કે વિષય મેં મી એસા  
 હી કથન કર લેના ચાહિયે । ( ણોહત્થી, ણોપુરિસ, ણો નપુંસઓ  
 ન વંધહ ) જો નોસ્ત્રી હૈ નોપુરુષ હૈ ઓ નોનપુંસક હૈ વહ આયુકર્મ  
 કા વંધ નહીં કરના હૈ । ( णाणावरणिज्जं णं भन्ते ! कम्मं  
 किं संजए वंधह, असंजए वंधह, संजयासंजए वंधह, णो संजय,

नथी, 'नो नपुंसक' डोय छे-नपुंसक डोतो नथी, ते एव ज्ञानावरणीय  
 કર્મ પાંધે છે પણ ણરો અને નથી પણ પાંધતો. ( एवं आउगवज्जाओ सत्त-  
 कम्मप्पगडीओ ) આયુકર્મ સિવાયના બાકીનાં સાતે કર્મોના વિષયમાં પણ આ  
 પ્રકારનું કથન જ સમજવું.

( આડગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં હત્થી વંધહ, પુરિસો વંધહ, નપુંસઓ વંધહ,  
 પુચ્છા ) હૈ મદન્ત ! આયુકર્મનો બંધ શું સ્ત્રી કરે છે ? પુરુષ કરે છે ?  
 નપુંસક કરે છે ? આ પ્રમાણે પહેલાંની જેવાં જ પ્રશ્નો અહીં સમજવા.

( ગોયમા ! હત્થી સિય વંધહ, સિય ણો વંધહ एवं તિન્નિ વિ ભાણિયવ્વા )  
 હૈ ગૌતમ ! આયુકર્મનો બંધ સ્ત્રી કરે પણ છે અને નથી પણ કરતી. પુરુષ  
 અને નપુંસકના વિષયમાં પણ એવું જ કથન થવું જોઈએ. ( ણોહત્થી, ણો  
 પુરિસ, ણોનપુંસઓ ન વંધહ ) નો સ્ત્રી-સ્ત્રી ન હોય એવો જીવ, નો પુરુષ-  
 પુરુષ ન હોય એવો જીવ અને નો નપુંસક-નપુંસક ન હોય એવો જીવ  
 આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી. ( णाणावरणिज्जं णं भन्ते ! किं संजए वंधह, असं-

વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોમઙ્ગિ નોઅસંજિ વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સંજી સ્યાદ્ વધ્નાતિ, સ્યાદ્ ન વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોસંજિ-નોઅસંજી ન વધ્નાતિ, एवं वेदनीया-ऽऽयुष्कवर्जाः पदं कर्मप्रकृतयः, वेदनीयम् अधस्तनौ द्वौ वध्नीतः, उपरितनो भजनया, आयुष्कम् अधस्तनौ द्वौ भजनया, उपरितनो न वध्नाति ।

હોતા હે વહ હસ સ્થિતિ મેં આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતા હે । ( ણાણા-વરણિજ્જં ણં ભંતે । કર્મં કિં સન્ની વંધહ, અસન્ની વંધહ, ણો સન્ની, ણો અસન્ની વંધહ ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કૌન જીવ કરતા હે-કયા જો જીવ સંજી હોના હે વહ કરતા હે ? યા જો જીવ અસંજી હોતા હે વહ કરતા હે ? ( નો અસન્ની વંધહ ) અથવાં જો નો સંજી હોતા હે વહ યા જો અસંજી હોતા હે વહ કરતા હે ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સન્ની સિય વંધહ, સિય નો વંધહ, અસન્ની વંધહ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધહ ) જો સંજી જીવ હોતા હે વ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા ભી હે, ઓર નહીં ભી કરતા હે । જો અસંજી જીવ હોતા હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે । પર જો નો સંજી અસંજી જીવ ૨ હેં વે હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં । ( एवं वेयणिज्जाउगवज्जाओ छ कम्मप्पयडोओ, वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो वंधंति, उवरिल्ले भयणाए, आउगंहेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ ) हसी तरह से वेदनीय और आयु के सिवाय छ कर्म प्रकृतियों के विषय में भी कथन जानना चाहिये । वेदनीय कर्म का वंध

( ણાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં સન્ની વંધહ, અસન્ની વંધહ, ણો સન્ની, ણો અસન્ની વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું સંજી જીવ બાંધે છે ? કે અસંજી જીવ બાંધે છે ? અથવા જે નો સંજી હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે નો અસંજી હોય તે બાંધે છે ?

( ગોયમા ! ( સન્ની સિય વંધહ, સિય નો વંધહ, અસન્ની વંધહ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધહ ) સંજી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતો, અસંજી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ નો સંજી અને નો અસંજી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી.

( एवं वेयणिज्जाउगवज्जाओ छ कम्मप्पयडोओ, वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो वंधंति, उवरिल्ले भयणाए, आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ ) આ પ્રકારનું કથન વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયની છ કર્મપ્રકૃતિઓના વિષયમાં પણ સમજવું. સંજી જીવો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, અસંજી જીવો વેદનીય



મજનયા, ઉપરિતનો ન વધ્નાતિ । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ મદન્ત ! કર્મ કિં સમ્યગ્-  
દષ્ટિર્વધ્નાતિ, મિથ્યાદષ્ટિર્વધ્નાતિ, સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિર્વધ્નાતિ ? ગૌતમ ।  
સમ્યગ્દષ્ટિઃ સ્યાદ્ વધ્નાતિ, સ્યાદ્ ન વધ્નાતિ, મિથ્યાદષ્ટિર્વધ્નાતિ, સમ્યગ્  
મિથ્યાદષ્ટિર્વધ્નાતિ, એવમ્-આયુષ્કર્મજર્જાઃ સપ્તાઽપિ, આયુષ્કમ્ અપસ્તનો દ્વૌ મજ્જ-  
નયા, સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિર્ન વધ્નાતિ । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ મદન્ત ! કર્મ કિં સંજ્ઞી

और नहीं भी बांधता है । पर जो जीव नो संयत, नो असंयत या नो  
संयतासंयत होते हैं वे नहीं बांधते हैं । ( पाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं  
किं सम्मदिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ ) हे  
भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या सम्यग्दृष्टि जीव बांधता है ? या मिथ्या-  
दृष्टि जीव बांधता है ? ( गोयमा ! सम्मदिट्ठी सिय बंधइ, सिय  
णो बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ ) हे गौतम !  
जो जीव सम्यग्दृष्टि होता है वह ज्ञानावरणीय कर्म बांधता भी  
है और नहीं भी बांधता है । पर जो जीव मिथ्यादृष्टि या सम्यक्  
मिथ्यादृष्टि होता है वह तो बांधता ही है । ( एवं आउगवज्जाओ सत्त  
वि आउए हेट्ठिल्ला दो भयणाए, सम्मामिच्छदिट्ठी न बंधइ ) इसी तरह  
से आयुर्कर्म को छोड़कर बाकी के सातकर्मों को बांधने के विषय में भी  
जानना चाहिये । आयुर्कर्म के विषय में ऐसा समझना चाहिये कि  
जो जीव सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि होता है वह आयुर्कर्म का बंध  
करता भी है—और नहीं भी करता है परन्तु जो सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव

હોય, અથવા તો નો સંયતાસંયત હોય, તેઓ આયુકર્મ બાંધતા નથી.

પાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કિં સમ્મદિટ્ઠો બંધइ, મિચ્છદિટ્ઠો બંધइ, સમ્મામિ-  
ચ્છદિટ્ઠો બંધइ ? ) :હે ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મ સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ બાંધે  
છે ? કે મિથ્યાદષ્ટિ -જીવ બાંધે છે ? કે સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ -જીવ બાંધે છે ?

( ગોયમા ! ) :હે ગૌતમ ! ( સમદિટ્ઠી સિય બંધइ, સિય ણો બંધइ,  
મિચ્છદિટ્ઠી બંધइ, સમ્મામિચ્છદિટ્ઠી બંધइ ) હે ગૌતમ ! સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ ક્યારેક  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે અને ક્યારેક નથી બાંધતો, પરંતુ મિથ્યાદષ્ટિ જીવ  
અથવા તો સમ્યક્ મિથ્યાદષ્ટિ જીવ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે જ.

( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउए हेट्ठिल्ला दो भयणाए, सम्मामि-  
चछदिट्ठी न बंधइ ) आयुर्कर्म सिवायना साते કર્મબંધ વિષે આ પ્રમાણે જ  
સમજવું. આયુકર્મના બંધ વિષે નીચે પ્રમાણે સમજવું—જે જીવ સમ્યગ્દષ્ટિ  
હોય છે અથવા તો મિથ્યાદષ્ટિ હોય છે તે આયુકર્મનો બંધ ક્યારેક બાંધે  
છે અને ક્યારેક નથી બાંધતો. પરંતુ જે જીવ સમ્યક્ મિથ્યાદષ્ટિ હોય છે તે  
આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી.

વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોમઙ્ગિ નોઅસંજિ વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સંજી સ્પાદ વધ્નાતિ, સ્પાદ ન વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોસંજિ-નોઅસંજી ન વધ્નાતિ, એવં વેદનીયા-ડડ્યુક્કવર્જાઃ પદ્ કર્મપ્રકૃતયઃ, વેદનીયમ્ અધસ્તનો દ્વો વધ્નીતઃ, ઉપરિતનો ભજનયા, આયુક્કમ્ અધસ્તનો દ્વો ભજનયા, ઉપરિતનો ન વધ્નાતિ ।

હોતા હૈ વહ્ હસ સ્થિતિ મૈં આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । ( ણાણા-વરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં સન્ની વંધહ, અસન્ની વંધહ, ણો સન્ની, ણો અસન્ની વંધહ ) હૈ ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કૌન જીવ કરતા હૈ-કયા જો જીવ સંજી હોતા હૈ વહ્ કરતા હૈ ? યા જો જીવ અસંજી હોતા હૈ વહ્ કરતા હૈ ? ( નો અસન્ની વંધહ ) અથવા જો નો સંજી હોતા હૈ વહ્ યા જો અસંજી હોતા હૈ વહ્ કરતા હૈ ? ( ગોયમા ) હૈ ગૌતમ ! ( સન્ની સિય વંધહ, સિય નો વંધહ, અસન્ની વંધહ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધહ ) જો સંજી જીવ હોતા હૈ વ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા ભી હૈ, ઓર નહીં ભી કરતા હૈ । જો અસંજી જીવ હોતા હૈ વહ્ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ । પર જો નો સંજી અસંજી જીવ ૨ હૈં વે હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈં । ( એવં વેયણિજ્જાઝગવજ્જાઓ છ કર્મપ્પયહીઓ, વેયણિજ્જં હેટ્ઠિલ્લા દો વંધંતિ, ઉવરિલ્લે ભયણાણ, આઝગંહેટ્ઠિલ્લા દો ભયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધહ ) હસી તરહ સે વેદનીય ઓર આયુ કે સિવાય છ કર્મ પ્રકૃતિયોં કે વિષય મૈં ભી કથન જાનના ચાહિયે । વેદનીય કર્મ કા વંધ

( ણાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં સન્ની વંધહ, અસન્ની વંધહ, ણો સન્ની, ણો અસન્ની વંધહ ? ) હૈ ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું સંજી હવ બાંધે છે ? કે અસંજી હવ બાંધે છે ? અથવા જે નો સંજી હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે નો અસંજી હોય તે બાંધે છે ?

( ગોયમા ! ( સન્ની સિય વંધહ, સિય નો વંધહ, અસન્ની વંધહ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધહ ) સંજી હવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતો, અસંજી હવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ નો સંજી અને નો અસંજી હવે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી.

( એવં વેયણિજ્જાઝગવજ્જાઓ છ કર્મપ્પયહીઓ, વેયણિજ્જં હેટ્ઠિલ્લા દો વંધંતિ, ઉવરિલ્લે ભયણાણ, આઝગં હેટ્ઠિલ્લા દો ભયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધહ ) આ પ્રકારનું કથન વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયની છ કર્મપ્રકૃતિઓના વિષયમાં પણ સમજવું. સંજી હવે વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, અસંજી હવે વેદનીય

જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કમ્મં કિં ભવસિદ્ધિકો વપ્નાતિ, અભવસિદ્ધિકો વંધનાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો વપ્નાતિ ? ગૌતમ ! ભવસિદ્ધિકો ભજનયા, અભવસિદ્ધિકો વંધનાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો ન વંધનાતિ, જો જીવ સંજી હોતે હું વે તો કરતે હું પર જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું, વે વેદનોય કમ્મં કા વંધ કરતે મી હું ઓર નહોં મી કરતે હું ! આયુકમ્મં કા વંધ જો જીવ સંજી હોતે હું વે અથવા જો અસંજી હોતે હું વે કરતે મી હું ઓર નહોં મી કરતે હું તથા જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું વે આયુકમ્મં કા વંધ નહોં કરતે હું ! (જાણાવરણિ-જ્ઞં જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધહ, અભવસિદ્ધિય વંધહ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કમ્મં કા વંધ જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? યા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હોતા હે વંધ કરતા હે ! યા જો ( જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધહ ) જીવ નો ભવ-સિદ્ધિક હોતા હે, નો અભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? ( ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણા, અભવસિદ્ધિય વંધહ, જો ભવસિદ્ધિય, જો અભ-વસિદ્ધિય ન વંધહ ) હે ગૌતમ ! જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ હે જ્ઞાનાવરણીય કમ્મં કા વંધ કરતા મી હે ઓર નહોં મી કરતા હે ! પર જો અભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ તો વંધ કરતા હી હે, તથા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હું, ન અભવસિદ્ધિક હું વે જ્ઞાનાવરણીય કમ્મં કા વંધ નહોં

કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ નો સંજી અને નો અસંજી હોવો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. આયુકર્મનો બંધ સંજી તથા અસંજી હોવો કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા, પરંતુ નો સંજી હોવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કમ્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધહ, અભવસિદ્ધિય વંધહ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ભવસિદ્ધિક ( ભવ્ય હવ ) બાંધે છે કે અભ-વસિદ્ધિક ( અભવ્ય હવ ) બાંધે છે ? અથવા ( જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવ-સિદ્ધિય વંધહ ? ) જે હવ નો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે હવ નો અભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ?

( ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણા, અભવસિદ્ધિય વંધહ, જો ભવસિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિય ન વંધહ ) હે ગૌતમ ! જે હવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તે જ્ઞાના-વરણીય કર્મ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધે, પણ જે હવ અભવ-સિદ્ધિક હોય છે તે તો આ કર્મ બાંધે ન છે. નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક હોવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે નથી.



એવમ્ આયુષ્ક વર્જાઃ સપ્તાપિ, આયુષ્કમ્ અથસ્તનો દ્વૌ મજનયા, ઉપરિતનો ન વંધનાતિ, જ્ઞાનાવરણીયં ત્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ચક્ષુર્દર્શની વંધનાતિ, અચક્ષુર્દર્શની વંધનાતિ અવધિદર્શની વંધનાતિ, કેવલદર્શની વંધનાતિ ? ગૌતમ ! અથસ્તનાસ્તયો મજનયા, ઉપરિતનો ન વંધનાતિ, एवं वेदनीयवर्जाः सप्ताऽपि, वेदनीयम् अथ-

કરતે હેં । (એવં આઝગજ્ઞાઓ સત્તવિ, આઝગં હેટ્ટિલા દો મયણાણ ઉવરિલ્લે ન વંધઈ ) ઇસી તરહ સે આયુકર્મ કો છોડકર વાકી કે સાત કર્મો કે વંધ કરને કે વિષય મેં જાનનાં ચાહિયે । આયુ કર્મ કા વંધ જો ભવસિદ્ધિક હેં વે તંયાં જો અભવસિદ્ધિક હેં વે કરતે મી હેં ઓર નહીં મી કરતે હેં । પર જો ભવસિદ્ધિક હેં, નો અભવસિદ્ધિક હેં વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં । ( જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચક્ષુદંસણી વંધઈ, ? અચક્ષુદંસણી વંધઈ, ઓહિદંસણી વંધઈ ? કેવલદંસણી વંધઈ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કયા ચક્ષુ દર્શનવાળો જીવ કરતા હેં ? યા જો અચક્ષુદર્શનવાળો જીવ હેં વહ કરતા હેં ? યા જો અવધિદર્શનવાળો જીવ હેં વહ કરતા હેં ? યા કેવલદર્શનવાળો જો જીવ હેં વહ કરતા હેં ? ( હેટ્ટિલા તિણિ મયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि ) હે ગૌતમ ! નીચે કે ત્રીન-ચક્ષુદર્શની, અચક્ષુદર્શની ઓર અવધિદર્શની-યે ત્રીન-જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે મી હેં, નહીં મી કરતે હેં । તથા ઊપર કા જો કેવલદર્શનજીવ હેં વહ જ્ઞાના-

( एवं આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ, આઝગં હેટ્ટિલા દો મયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ ) આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના બંધ વિષે પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું. ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક જીવો આયુકર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. પણ નો ભવસિદ્ધિક જીવો અને નો અભવસિદ્ધિક જીવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

( જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચક્ષુદંસણી વંધઈ ? અચક્ષુદંસણી વંધઈ ? ઓહિદંસણી વંધઈ ? કેવલદંસણી વંધઈ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું ચક્ષુ-દર્શનવાળો જીવ કરે છે ? કે અચક્ષુ-દર્શનવાળો જીવ કરે છે ? કે અવધિ-દર્શનવાળો જીવ કરે છે ? કે કેવલ-દર્શનવાળો જીવ કરે છે ?

( હેટ્ટિલા તિણિ મયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि ) હે ગૌતમ ! ચક્ષુદર્શની, અચક્ષુદર્શની અને અવધિદર્શની જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરાં અને નથી પણ કરતા. પરંતુ કેવલ દર્શનવાળો

જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! ભવસિદ્ધિકો ભજનયા, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો ન વધ્નાતિ, જો જીવ સંજી હોતે હિં વે તો કરતે હિં પર જો જીવ ન સંજી હિં ઓર ન અસંજી હિં, વે વેદનોય કર્મ કા વંધ કરતે મી હિં ઓર નહીં મી કરતે હિં । આયુકર્મ કા વંધ જો જીવ સંજી હોતે હિં વે અથવા જો અસંજી હોતે હિં વે કરતે મી હિં ઓર નહીં મી કરતે હિં તથા જો જીવ ન સંજી હિં ઓર ન અસંજી હિં વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હિં । (જાણાવરણિ-જ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધહ, અભવસિદ્ધિય વંધહ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? યા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હોતા હે વંધ કરતા હે ? યા જો ( જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધહ ) જીવ નો ભવસિદ્ધિક હોતા હે, નો અભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? ( ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાણ, અભવસિદ્ધિય વંધહ, જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય ન વંધહ ) હે ગૌતમ ! જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ હે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હે ઓર નહીં મી કરતા હે । પર જો અભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ તો વંધ કરતા હી હે, તથા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હે, ન અભવસિદ્ધિક હે વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં

કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ નો સંજી અને નો અસંજી હોવા વેદનીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. આયુકર્મનો બંધ સંજી તથા અસંજી હોવા કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા, પરંતુ નો સંજી હોવા આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધહ, અભવસિદ્ધિય વંધહ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ભવસિદ્ધિક ( ભવ્યં હવ ) બાંધે છે કે અભવસિદ્ધિક ( અભવ્યં હવ ) બાંધે છે ? અથવા ( જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધહ ? ) જે હવ નો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે હવ નો અભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ?

( ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાણ, અભવસિદ્ધિય વંધહ, જો ભવસિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિય ન વંધહ ) હે ગૌતમ ! જે હવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, પણ જે હવ અભવસિદ્ધિક હોય છે તે તો આ કર્મ બાંધે ન છે. નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક હોવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.



एवम् आयुष्क वर्जाः सप्तापि, आयुष्कम् अधस्तनो द्वौ भजनया, उपरितनो न बध्नाति, ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्मा किं चक्षुर्दर्शनी बध्नाति, अचक्षुर्दर्शनी बध्नाति, अवधिदर्शनी बध्नाति, केवलदर्शनी बध्नाति ? गौतम ! अधस्तनाद्यो भजनया, उपरितनो न बध्नाति, एवं वेदनीयवर्जाः सप्ताऽपि, वेदनीयम् अध-

करते हैं। (एवं आउगज्जाओ सत्तवि, आउगं हेट्टिल्ला दो भयणाए उवरिल्ले न बंधइ) इसी तरह से आयुष्कर्म को छोड़कर बाकी के सात कर्मों के बंध करने के विषय में जानना चाहिये। आयु कर्म का बंध जो भवसिद्धिक है वे तयां जो अभवसिद्धिक हैं वे करते भी हैं और नहीं भी करते हैं। पर जो भवसिद्धिक हैं, नो अभवसिद्धिक हैं वे आयुष्कर्म का बंध नहीं करते हैं। (णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं चक्खुदंसणी बंधइ, ? अचक्खुदंसणी बंधइ, ओहिदंसणी बंधइ ? केवलदंसणी बंधइ ?) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म का बंध क्या चक्षु दर्शनवाला जीव करता है ? या जो अचक्षुदर्शनवाला जीव है वह करता है ? या जो अवधिदर्शनवाला जीव है वह करता है ? या केवलदर्शनवाला जो जीव है वह करता है ? (हेट्टिल्ला तिणिण भयणाए, उवरिल्ले न बंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि) हे गौतम ! नीचे के तीन-चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी और अवधिदर्शनी-ये तीन-ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करते भी हैं, नहीं भी करते हैं। तथा ऊपर का जो केवलदर्शनजीव है वह ज्ञाना-

( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगं हेट्टिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न बंधइ ) आयुष्कर्म सिवायना साते कर्मेणा बंध विषे पणु आ प्रमाणे न समंजसं. लवसिद्धिक अने अभवसिद्धिक एवे। आयुष्कर्मो ना बंध करे पणु छे अने नथी पणु करता. पणु नो लवसिद्धिक एवे। अने नो अभवसिद्धिक एवे। आयुष्कर्मो ना बंध करता नथी.

( णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं चक्खुदंसणी बंधइ ? अचक्खुदंसणी बंधइ ? ओहिदंसणी बंधइ ? केवलदंसणी बंधइ ? ) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्मो ना बंध शुं चक्षु-दर्शनवाणो एव करे छे ? छे अचक्षु-दर्शनवाणो एव करे छे ? छे अवधि-दर्शनवाणो एव करे छे ? छे केवल-दर्शनवाणो एव करे छे ?

( हेट्टिल्ला तिणिण भयणाए, उवरिल्ले न बंधइ. एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि ) हे गौतम ! चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी अने अवधिदर्शनी एवे। ज्ञानावरणीय कर्मो ना बंध करे छे पणु भरां अने नथी पणु करता. परंतु केवल दर्शनवाणो

જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! ભવસિદ્ધિકો ભજનયા, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો ન વધ્નાતિ, જો જીવ સંજી હોતે હું વે તો કરતે હું પર જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું, વે વેદનોય કર્મં કા વંધ કરતે મી હું ઓર નહીં મી કરતે હું ! આયુકર્મં કા વંધ જો જીવ સંજી હોતે હું વે અથવા જો અસંજી હોતે હું વે કરતે મી હું ઓર નહીં મી કરતે હું તથા જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું વે આયુકર્મં કા વંધ નહીં કરતે હું ! (જાણાવરણિ-જ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મં કા વંધ જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? યા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હોતા હે વંધ કરતા હે ! યા જો ( જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધઈ ) જીવ નો ભવ-સિદ્ધિક હોતા હે, નો અભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? ( ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય ભયણાઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ, જો ભવસિદ્ધિય, જો અભ-વસિદ્ધિય ન વંધઈ ) હે ગૌતમ ! જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ હે જ્ઞાનાવરણીય કર્મં કા વંધ કરતા મી હું ઓર નહીં મી કરતા હું ! પર જો અભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ તો વંધ કરતા હી હું, તથા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હું, ન અભવસિદ્ધિક હું વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મં કા વંધ નહીં

કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ નો સંજી અને નો અસંજી હોવા વેદનીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. આયુકર્મનો બંધ સંજી તથા અસંજી હોવા કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા, પરંતુ નો સંજી હોવા આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મં ભવસિદ્ધિક ( ભવ્યં હવ ) બાંધે છે કે અભ-વસિદ્ધિક ( અભવ્યં હવ ) બાંધે છે ? અથવા ( જો ભવસિદ્ધિય, જો અભ-વસિદ્ધિય વંધઈ ? ) જે હવ નો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે હવ નો અભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ?

( ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય ભયણાઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ, જો ભવસિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિય ન વંધઈ ) હે ગૌતમ ! જે હવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તે જ્ઞાના-વરણીય કર્મ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, પણ જે હવ અભવ-સિદ્ધિક હોય છે તે તો આ કર્મ બાંધે ન છે. નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક હોવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.

કર્મ કિમ્ આભિનિવોધિકજ્ઞાની વધ્નાતિ, શ્રુતજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની, મનઃ પર્યવજ્ઞાની, કેવલજ્ઞાની વધ્નાતિ? ગૌતમ ! અથસ્તનાથત્વારો ભજનયા, કેવલજ્ઞાની ન વધ્નાતિ, એવં વેદનીયવર્જાઃ સપ્તાઽપિ, વેદનીયમ્ અથસ્તનાથત્વારોઽપિ વધ્નન્તિ, કેવલજ્ઞાની ભજનયા । જ્ઞાનાવરણીયં ચલુ ભદન્ત । કર્મ કિં મત્યજ્ઞાની વધ્નાતિ, શ્રુતાઽજ્ઞાની

કા વંધ ભજના સે પરિત્ત મી ઓર અપરિત્ત મી યે દોનોં જીવ મી કરતે હેં । પરન્તુ જો નો પરિત્ત ઓર નો અપરિત્ત જીવ હેં વે આયુ કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં । (જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કમ્મં કિં આભિણિવોદ્ધિય-જ્ઞાણી વંધઃ, સુચણાણી, ઓહિનાણી, મણવજ્જવનાણી, કેવલજ્ઞાણી વંધઃ) હેં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ ત્થા આભિનિવોધિકજ્ઞાની-મતિ-જ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હેં ? કિં શ્રુતજ્ઞાની કરતા હેં ? અથવા કિં અવધિ-જ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હેં, યા મનઃ પર્યવ જ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હેં ? યા કેવલજ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હેં ? ( ગોયમા ! હેટ્ઠિલા ચત્તારિ ભયણાણ, કેવલજ્ઞાણી ન વંધઃ ) હેં ગૌતમ ! મતિજ્ઞાનવાલા, શ્રુતજ્ઞાનવાલા, અવધિ-જ્ઞાનવાલા ઓર મનઃ પર્યવજ્ઞાનવાલા જીવ ભજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હેં । પરન્તુ જો કેવલ જ્ઞાનવાલા જીવ હોતા હેં વહ જ્ઞાનાવ-રણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હેં । ( એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ ) હસી તરહ સે વેદનીયકર્મ કો છોડકર સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કે વંધ કરનેકે

પરંતુ જે નો પરિત્ત અને નો અપરિત્ત જીવો છે તેઓ આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

( જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કિં કમ્મં અભિણિવોદ્ધિયજ્ઞાણી વંધઃ, સુચણાણી, ઓહિનાણી, મણવજ્જવનાણી, કેવલજ્ઞાણી વંધઃ ? ) હેં ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ આભિનિવોધિકજ્ઞાની ( મતિજ્ઞાનવાળો ) જીવ કરે છે ? કે શ્રુત-જ્ઞાની કરે છે ? કે અવધિજ્ઞાનવાળો જીવ કરે છે ? કે મનઃપર્યવજ્ઞાનવાળો જીવ કરે છે ? કે કેવલજ્ઞાનવાળો જીવ કરે છે ?

( ગોયમા ! હેટ્ઠિલા ચત્તારિ ભયણાણ, કેવલજ્ઞાણી ન વંધઃ ) હેં ગૌતમ ! મતિજ્ઞાનવાળો, શ્રુતજ્ઞાનવાળો, અવધિજ્ઞાનવાળો અને મનઃપર્યવજ્ઞાનવાળો જીવ વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. એટલે કે તેઓ તે કર્મનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતા. પરંતુ કેવલજ્ઞાની જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી.

( એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ ) વેદનીય કર્મ સિવાયની સાતે કર્મ-પ્રકૃતિયોના કર્મબંધના વિષયમાં પણ એ જ પ્રમાણે સમજવું.



મદન્ત ! કર્મ કિં પરીતો વધ્નાતિ ? અપરીતો વધ્નાતિ ? નોપરીત-નોઅપરીતો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! પરીતો મજનયા, અપરીતો વધ્નાતિ, નોપરિત-નોઅપરીતો ન વધ્નાતિ, એવમ્ આયુક્તવર્જાઃ સપ્ત કર્મમક્રુતયઃ, આયુક્તં પરીતોઽપિ, અપરીતોઽપિ મજનયા, નોપરીત-નોઅપરીતો ન વધ્નાતિ । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વત્તુ મદન્ત !

હૈ । ( જાણાવરણિજ્ઞં જ્ઞં મંતે । કમ્મં કિં પરિત્તે વંધહ, અપરિત્તે વંધહ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તે વંધહ ? ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ પરિત્ત-પ્રત્યેક શરીર વાલા જીવ, અથવા જિસકા સંસાર નિકટ હૈ તેસા ભવ્વજીવ કરતા હૈ ? કિં અપરિત્ત જીવ કરતા હૈ ? અથવા નો પરિત્ત જીવ કરતા હૈ કિં નો અપરિત્ત જીવ કરતા હૈ ? ( ગોયમા ) હૈ ગૌતમ ! ( પરિત્તે મયણાણ, અપરિત્તે વંધહ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તે ન વંધહ ) જો પરિત્ત જીવ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ મજના સે કરતા હૈ-અર્થાત્ કરતામી હૈ ઓર નહીં મી કરતા હૈ । અપરિત્ત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ । જો જીવ નો પરિત્ત ઓર નો અપરિત્ત હૈં વે હમ્કા વંધ નહીં કરતે હૈં । ( એવં આઝગવજ્ઞામો સત્તકમ્મપ્પયડીઓ ) હમી તરહ કા મધન આયુકર્મ કો છોડકર રોપ સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કે વંધ કરને કે વિષય મેં મી જાનના ચાહિયે । ( આઝયં પરિત્તો વિ અપરિત્તઓ વિ મયણાણ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તો ન વંધહ ) આયુ કર્મ

( જાણાવરણિજ્ઞં જ્ઞં મંતે । કિં પરિત્તે વંધહ, અપરિત્તે વંધહ, જો પરિત્ત-જો અપરિત્તે વંધહ ? ) હૈ મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ પરિત્ત ( પ્રત્યેક શરીરવાળો ) જીવ, અથવા નોનો સંસાર પરિત્ત-મર્યાદિત છે એવો ભવ્વ જીવ કરે છે ? કે અપરિત્ત જીવ કરે છે ? કે નો પરિત્ત જીવ કરે છે ? કે નો અપરિત્ત જીવ કરે છે ?

( ગોયમા ! ) હૈ ગૌતમ ! ( પરિત્તે મયણાણ, અપરિત્તે વંધહ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તે ન વંધહ ) જે પરિત્ત જીવ છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ નિકલ્પે કરે છે-એટલે કે એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો, અપરિત્ત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ નો પરિત્ત જીવો અને નો અપરિત્ત જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી. ( એવં આઝગવજ્ઞામો સત્ત કમ્મપ્પયડીઓ ) આયુકર્મ સિવાયતી સાતે કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરવાના વિષયમાં પણ એમ પ્રમાણે સમજવું ( આઝયં પરિત્તો વિ, અપરિત્તો વિ મયણાણ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તો ન વંધહ ) પરિત્ત અને અપરિત્ત જીવો આયુકર્મનો બંધ બાંધે છે પણ ખરાં અને નથી પણ

एवं वेदनीयवर्जाः सप्ताऽपि, वेदनीयम् अधस्तना वध्नन्ति, अयोगी न वध्नाति ।  
ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्म किम् साकारोपयुक्तो वध्नाति, अनाकारोपयुक्तो  
वध्नाति ? गौतम ! अष्टमु अपि भजनया । ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्म किम्  
आहारको वध्नाति, अनाहारको वध्नाति ? गौतम ! द्वावपि भजनया, एवं वेद-

જો યોગવાળે નહીં હેં વે કરતે હેં ? ( ગોયમા ! હેઢિલ્લા તિણિ ભયળાણ,  
અજોગી ન વંધહ, એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ, વેયણિજ્જં હેઢિલ્લા,  
તિણિ વંધંતિ, અજોગી ન વંધહ ) હે ગૌતમ ! મનયોગી વચનયોગી ઓર  
કાયયોગી યે ત્રીન યોગવાળે જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ ભજના સે  
કરતે હેં-ઔર જો અયોગી જીવ હોતે હેં વે નહીં કરતે હેં । હસી તરહ  
સે વેદનીય કર્મ કો છોડકર શેષ સાત કર્મપ્રકૃતિયોં કો વાંધને કે  
વિષય મેં ભી જાનનાં ચાહિયે વેદનીય કર્મ કા વંધ નીચે કે યે મનોયોગી,  
વચનયોગી ઓર કાયયોગી જીવ કરતે હેં । અયોગી જીવ હસકા વંધ  
નહીં કરતે હેં । ( જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં સાગારોવડત્તે વંધહ ?  
અણાગારોવડત્તે વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા વંધ જો સાકાર  
ઉપયોગવાળા જીવ હોતાં હેં-વહ વાંધતા હેં કિં જો અનાકારોપયોગવાળા  
હોતા હેં વહ વાંધતા હેં ? ( અઢ્ઢસુ વિ ભયળાણ ) હે ગૌતમ ! આઠોં કર્મ-  
પ્રકૃતિયોં કો એસા જીવ ભજનાં સે વાંધતા હેં । ( જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે !  
કર્મં કિં આહારણ વંધહ ? અણાહારણ વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયકર્મકા

જ્ઞાઓ સત્ત વિ, વેયણિજ્જં હેઢિલ્લા તિણિ વંધંતિ અજોગી ન વંધહ ) હે  
ગૌતમ ! મનયોગી, વચનયોગી અને કાયયોગી એવે જ્ઞાનાવરણીય કર્મને  
બંધ વિકલ્પે કરે છે અને અયોગી એવે જ્ઞાનાવરણીય કર્મને બંધ કરતા  
નથી. વેદનીય કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયોના બંધ વિષે પણ એજ પ્રમાણે  
સમજવું. વેદનીય કર્મને બંધ મનયોગી, વચનયોગી અને કાયયોગી એવે  
કરે છે, પરંતુ અયોગી એવ તેને બંધ કરતા નથી.

( જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં સાગારોવડત્તે વંધહ ? અણાગારોવડત્તે  
વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! શું સાકાર ઉપયોગવાળો એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મને  
બંધ કરે છે ? કે અનાકાર ઉપયોગવાળો એવ તે કર્મને બંધ કરે છે ?

( અઢ્ઢસુ વિ ભયળાણ ) હે ગૌતમ ! સાકાર ઉપયોગવાળો અને અનાકાર  
ઉપયોગવાળો એવ આઠે કર્મોને બંધ વિકલ્પે બાંધે છે.

( જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધહ, અણાહારણ વંધહ ? )  
હે ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મને બંધ આહારક એવ કરે છે ? કે અના-  
હારક એવ કરે છે ?



વધ્નાતિ, વિભક્ષ્ણાની વધ્નાતિ, ? ગૌતમ ! આયુષ્કર્મજ્ઞાઃ સપ્તાઽપિ વધ્નન્તિ, આયુષ્કં ભજનયા । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુભદન્ત । કર્મ કિં મનોયોગી વધ્નાતિ, વચોયોગી વધ્નાતિ, અયોગી વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! મધસ્તનાસ્ત્રયો ભજનયા, અયોગી ન વધ્નાતિ, વિષય મેં મી જાનના ચાહિયે । ( વેયણિજ્જં હેટ્ઠિહા વચ્ચારિ વંધંતિ, કેવલણાણી ભયણાણ ) વેદનીય કર્મ કા વંધ ચાર ક્ષાયોપશમિક મતિજ્ઞાન આદિવાલે જીવ કરતે હૈં । કેવલજ્ઞાનવાલા જીવ વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હૈં ઓર નહીં મી કરતા હૈં । ( ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મદ્ અન્નાણી વંધદ્ ? સુય અન્નાણી વંધદ્ ? વિભંગ અન્નાણી વંધદ્ ? ) હૈં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વધા મતિ અજ્ઞાનવાલા જીવ વાંધતા હૈં ? કિં શ્રુતઅજ્ઞાનવાલા જીવ વાંધતા હૈં ? કિં વિભંગજ્ઞાની વાંધતા હૈં ? ( ગોયમા ! આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધંતિ, આઝગં ભયણાણ ) આયુકર્મ કો છોડકર સાતોં કર્મોં કો યે તીન અજ્ઞાનવાલે જીવ વાંધતે હૈં । તથા આયુકર્મ કા વંધ યે ભજના સે કરતે હૈં । ( ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મણજોગી વંધદ્, વયજોગી વંધદ્, કાયજોગી વંધદ્, અજોગી વંધદ્ ? ) હૈં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ વધા મનયોગવાલે જીવ કરતે હૈં ? યા વચનયોગવાલે જીવ કરતે હૈં ? યા કાયયોગવાલે જીવ કરતે હૈં ? યા

( વેયણિજ્જં હેટ્ઠિહા વચ્ચારિ વંધંતિ, કેવલણાણી ભયણાણ ) વેદનીય કર્મનો બંધ પડેલા આર પ્રકારના એવો-એટલે કે ક્ષાયોપશમિક મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવશાનવાળા એવો કરે છે, પણ કેવળજ્ઞાની એવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતો.

( ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મદ્ અન્નાણી વંધદ્, સુય અન્નાણી વંધદ્, વિભંગ અન્નાણી વંધદ્ ? ) હૈં ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મ મતિ અજ્ઞાનવાળો એવ બાંધે છે ? કે શ્રુત અજ્ઞાનવાળો એવ બાંધે છે ? કે વિભંગ અજ્ઞાનવાળો એવ બાંધે છે ?

( ગોયમા ! આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધંતિ, આઝગં ભયણાણ ) હૈં ગૌતમ ! આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનો બંધ આ ત્રણ અજ્ઞાનવાળા એવો બાંધે છે, તથા તેઓ આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે.

( ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મણજોગી વંધદ્, વયજોગી વંધદ્, કાયજોગી વંધદ્, અજોગી વંધદ્ ? ) હૈં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું મનયોગવાળા એવ કરે છે ? કે વચનયોગવાળા કરે છે ? કે કાયયોગવાળા એવો કરે છે ? કે યોગરહિત એવો કરે છે ?

( ગોયમા ! હેટ્ઠિહા તિત્થો મયણાણ, અજોગી ન વંધદ્, एवं વેયણિજ્જવ-

ગૌતમ ! સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, વાદરો ભજનયા, નોમુક્ષમ-નોવાદરો ન વધ્નાતિ, એવમ્ આયુષ્કર્ત્તાઃ સપ્તાઽપિ, આયુષ્કં મુક્ષમો, વાદરો ભજનયા, નોમુક્ષમ-નો વાદરો ન વધ્નાતિ ? જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ચરમો વધ્નાતિ, અચરમો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! અષ્ટાઽપિ ભજનયા ॥ મૃ ૫ ॥

ટીકા-જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં હત્થી વંધહ ? ' ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ કર્મ કિમ્ સ્ત્રી વધ્નાતિ ? ' પુરિસો વંધહ ? '

કા વંધ સૂક્ષ્મજીવ કરતા હૈ વાદર જીવ તો ભજના સે હસકા વંધ કરતા હૈ, જો નો સૂક્ષ્મ ઓર નો વાદર હૈ વે હસકા વંધ નહીં કરતે હૈ । ( એવં સત્ત વિ, આઝણ સુહુમે, વાયરે ભયણાણ, ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ ) હસી પ્રકાર સે યે જીવ આયુકર્મ કો છોડકર રોપ સાત કર્મ પ્રકૃતિયોં કા વંધ કરતે હૈ એસા જાનના ચાહિયે । યે દોનોં સૂક્ષ્મ વાદર જીવ આયુ કર્મ કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ । તથા જો નો સૂક્ષ્મજીવ હૈ ઓર નો વાદર જીવ હૈ વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ । ( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધહ, અચરિમે વંધહ ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જો ચરમ જીવ હોતા હૈ વહ કરતા હૈ કિ જો અચરમ જીવ હોતા હૈ વહ કરતા હૈ ? ( ગોયમા ! અઠ્ઠ વિ ભયણાણ ) હે ગૌતમ ! એસે જીવ આઠોં કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ ભજના સે કરતા હૈ ।

ટીકાર્થ-જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ કે પ્રસ્તાવ સે સૂત્રકાર હસ સૂત્ર દ્વારા ડન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે વાંધનેવાલોં કા નિરૂપણ કરંને કે લિયે સર્વપ્રથમ સ્ત્રી આદિ દ્વારા કા કથન કર રહે હૈ-હસમેં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા પ્રશ્ન કિયા કિ ( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં હત્થી

કરતા નથી. ( એવં આઝણવજ્જાઓ સત્ત વિ, આઝણ સુહુમે, વાયરે ભયણાણ, ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ ) એજ પ્રમાણે તે જીવો આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોંનો બંધ કરે છે તેમ સમજવું. સૂક્ષ્મ અને બાદર જીવો આયુકર્મનો બંધ કરે છે પરંતુ નોસૂક્ષ્મ અને નોબાદર જીવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી. ( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધહ, અચરિમે વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! શું ચરમ શરીરી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ? કે અચરમ શરીરી જીવ કરે છે ? ( ગોયમા ! અઠ્ઠ વિ ભયણાણ ) હે ગૌતમ ! એવો જીવ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોંનો બંધ વિકલ્પે કરે છે.

ટીકાર્થ-આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે જ્ઞાનાવરણીય આઠ કર્મોંનો બંધકોનું નિરૂપણ કર્યું છે. સૌથી પહેલાં સૂત્રકાર સ્ત્રી આદિ દ્વારા કથન પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા કરે છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે " જ્ઞાનાવરણિજ્જં

નીયાયુષ્કવર્જાનાં પળ્ગામ્, વેદનીયમ્ આહારકો વધ્નાતિ, અનાહારકો ભજનયા, આયુષ્કમ્ આહારકો ભજનયા, અનાહારકો ન વધ્નાતિ । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલ્પ મદન્ત । કર્મ કિં સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ વાદરો વધ્નાતિ ? નોમૂક્ષમ નોવાદરો વધ્નાતિ ?

વંધ કયા આહારક જીવ કરતા હૈ કિ અનાહારક જીવ કરતા હૈ ? (દો વિ ભયણા) હૈ ગૌતમ ! યે દોનોં જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ । ( એવં વેયણિજ્જાઝગવજ્જાણં છળ્હં ) ફસી તરહ સે યે જીવ વેદનીય ઓર આયુકર્મ કો છોડકર રોપ કર્મોં કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ ( વેયણિજ્જં આહારણ વંધહ ) વેદનીય કર્મ કા વંધ આહારક જીવ કરતા હૈ । ( અણાહારણ ભયણા ) પર જો અનાહારક જીવ હૈ વહ વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હૈ ઓર નહીં મી કરતા હૈ ( આઝણ આહારણ ભયણા, અણાહારણ ન વંધહ ) આયુ કર્મ કા વંધ જો જીવ આહારક હોતા હૈ વહ ભજના સે કરતા હૈ ઓર જો અનાહારક હોતા હૈ વહ ઉસકા વંધ નહીં કરતા હૈ । ( ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં સુહુમે વંધહ, વાયરે વંધહ, ણો સુહુમ ણો વાયરે વંધહ ) હૈ મદન્તે ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કયા સૂક્ષ્મજીવ કરતા હૈ ? કિં વાદર જીવ કરતા હૈ ? અથવા-નો સૂક્ષ્મ કરતા હૈ કિ નો વાદર કરતા હૈ ? ( ગોયમા ! સુહુમે વંધહ, વાયરે ભયણા, ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ ) હૈ ગૌતમ ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ

( દો વિ ભયણા ) હે ગૌતમ ! તે બન્ને પ્રકારના જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. ( એવં વેયણિજ્જાઝગવજ્જાણં છળ્હં ) એજ પ્રમાણે તે બન્ને પ્રકારના જીવો વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયના છ કર્મોનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. ( વેયણિજ્જં આહારણ વંધહ ) આહારક જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, ( અણાહારણ ભયણા ) પણ અનાહારક જીવ વિકલ્પે તેનો બંધ કરે છે-એટલે કે અનાહારક જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પણ કરતો. ( આઝણ આહારણ ભયણા અણાહારણ ન વંધહ ) આહાર જીવ આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે, પણ અનાહારક જીવ તેનો બંધ કરતો નથી.

( ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં સુહુમે વંધહ, વાયરે વંધહ, ણો સુહુમ ણો વાયરે વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ જીવ કરે છે ? કે બાદર ( સ્થૂળ ) જીવ કરે છે ? અથવા નો સૂક્ષ્મ જીવ કરે છે ? કે નો બાદર જીવ કરે છે ?

( ગોયમા ! સુહુમે વંધહ, વાયરે ભયણા, ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ ) હે ગૌતમ ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ જીવ કરે છે, બાદર જીવ તે કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે, પણ નો સૂક્ષ્મ અને નો બાદર જીવો તેનો બંધ



સ્યાત્ કદાચિત્ જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ, સ્યાત્-કદાચિત્ ન વધ્નાતિ, અયં  
માત્ર.-ન સ્ત્રી ન પુરુષઃ, ન નપુંસકઃ વેદોદયરહિતઃ અનિવૃત્તિવાદરમૂક્ષમસંપરા-  
યાલ્પ્યનવમ-દશમ-ગુણસ્થાનવર્તી ભવતિ, તત્ર ચાનિવૃત્તિવાદરસંપરાય-મૂક્ષમ-  
સંપરાયો જીવો સપ્તવિધ-પદ્ધિવિધકર્મવન્ધકતયા જ્ઞાનાવરણીયસ્ય વન્ધકો  
ભવતઃ, ઉપશાન્તમોહાદારમ્યાયોગિકેવલિપર્યન્તગુણસ્થાનવર્તી જીવસ્તુ એકવિધ-

નપુંસકો ) ન સ્ત્રી છે, ન પુરુષ છે ઓર ન નપુંસક છે વહ ( સિય વંધક,  
સિય ણો વંધક ) કદાચિત્ હસ કર્મકા વંધ કરતા મી છે ઓર કદાચિત્  
નહીં મી કરતા છે । તાત્પર્ય કહ્ને કા ગહ છે કિ-જો જીવ વેદ કે ઉદય  
સે રહિત હોતા છે-અર્થાત્-અદ્વોપાદ્ધ નામ કર્મ કે ઉદય સે જીવ કે  
શરીર મેં સ્ત્રી કા આકાર, પુરુષ કે શરીર મેં પુરુષ કા આકાર ઓર  
નપુંસક કે શરીર મેં નપુંસક કા આકાર મહે હી વના હુઆ હો-પરન્તુ  
વેદ સંબંધી વિકાર પરિણતિ ઉસ આત્મામેં ન હો તો એસા જીવ વેદોદય  
સે રહિત માના જાતા છે હસી કા નામ ( નો સ્ત્રી, નો પુરુષ ઓર ન નપું-  
સક ) હસ રૂપ સે ગહાં પ્રકટ કિયા ગયા છે । એસા જીવ નોવેં અનિવૃત્તિ  
વાદર ઓર દશવેં સૂક્ષ્મસાંપરાય હન દો ગુણસ્થાનોં મેં રહને વાલા હોતા  
છે । હન દો ગુણસ્થાનોં વાલા વહ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ ઓર નો નપુંસક  
જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધક હોતા છે-કયોં કિ વહ સાત પ્રકાર કે  
યો ૬ પ્રકાર કે કર્મ કા વંધક વાંધને વાલા કહા ગયા છે । તથા ગ્યારહવેં

“ નો સ્ત્રી હોય છે ”-સ્ત્રી હોતો નથી, “ નો પુરુષ હોય છે ”-પુરુષ હોતો  
નથી, અને “ નો નપુંસક હોય છે ”-નપુંસક હોતો નથી તે ( સિય વંધક,  
સિય ણો વંધક ) ક્યારેક આ કર્મનો બંધ કરે છે અને ક્યારેક નથી કરતો.  
આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે જીવ વેદનાના ઉદયથી રહિત હોય  
છે. એટલે કે અંગોપાંગ નામકર્મના ઉદયથી સ્ત્રીના શરીરમાં સ્ત્રીનો આકાર,  
પુરુષના શરીરમાં પુરુષનો આકાર અને નપુંસકના શરીરમાં નપુંસકનો આકાર  
મહે બનેલો હોય, પરંતુ વેદ સંબંધી પરિણતિ તે આત્મામાં ન હોય તો  
એવા જીવને વેદોદયથી રહિત માનવામાં આવે છે, અને એવા જીવને જ  
અહીં “ નો સ્ત્રી નો પુરુષ અને નો નપુંસક ” રૂપે બતાવવામાં આવ્યો છે.  
એવો જીવ નવમાં અનિવૃત્તિ બાદર અને દશમાં સૂક્ષ્મ સાંપરાય, એ બે  
શુણ્યસ્થાનોમાં રહેનારો હોય છે. આ બે શુણ્યસ્થાનોવાળો નો સ્ત્રી, નો પુરુષ  
અને નો નપુંસક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે, કારણ કે તેને સાત અથવા  
તે ૭ પ્રકારના કર્મોનો બંધક ( બાંધનાર ) કહ્યો છે. પરંતુ અગિયારમાં

પુરુષો વધ્નાતિ ? ' નપુંસઓ વંધ ? ' નપુંસઓ વધ્નાતિ ? જોડત્થી-જોપુરિસ-જોનપુંસઓ વંધ ? ' નોસ્ત્રી - નોપુરુષ - નોનપુંસઓ વધ્નાતિ ? યો જીવઃ ન સ્ત્રી, ન પુરુષઃ, નાપિ નપુંસઓ વર્તતે સોઽપિ કિં જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ ? इत्याश्रयः, भगवानाह - ' गोयमा । इत्थी वि वंघइ, पुरिसो वि वंघइ, नपुंसओ वि वंघइ ' हे गौतम । स्त्री अपि ज्ञानावरणीयं कर्म वध्नाति, पुरुषोऽपि तत्कर्म वध्नाति, नपुंसकोऽपि जीवः तत्कर्म वध्नाति, किन्तु ' नोइत्थी-जो-पुरिस-जोनपुंसओ सिय वंघइ, सिय जो वंघइ ' नो स्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसको जीवः

વંધઈ ) હે ભદ્રન્ત ! આત્મા કે જ્ઞાનગુણ કો આવરણકરને કે સ્વભાવવાલે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કોન કરતા હે ? કયા હસ કર્મ કા વંધ સ્ત્રી કરતી હે ? યા ( પુરિસો વંધઈ ) પુરુષ કરતા હે ? યા ( નપુંસઓ વંધઈ ) નપુંસક કરતા હે ? અથવા-એસા જીવ કરતા હે કિ જો ( જોડત્થી ) ન સ્ત્રી હે ? ( જોપુરિસ જોનપુંસઓ ) ન પુરુષ હે ? ન નપુંસક હે ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ઉનસે કહતે હે--( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( इत्थि वि वंघइ, पुरिसो वि वंघइ, नपुंसओ वि वंघइ ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વંધ કરને મેં એસી કોઈ રુકાવટ નહીં હે કિ સ્ત્રી હી હસ કર્મકા વંધ કરે-પુરુષ ન કરે અથવા પુરુષ હી કરે-નપુંસક ન કરે-ત્રીનોં હી વેદવાલે હસ કર્મ કા વંધ કરતે હે--" સ્ત્રી ભી હસ કર્મ કા વંધ કરતી હે, પુરુષ ભી હસ કર્મ કા વંધ કરતા હે ઓર નપુંસક ભી હસ કર્મ કા વંધ કરતા હે । પર હાં, યહ વાત અવશ્ય હે કિ જો જીવ ( જોડત્થી, જોપુરિસ, જો

જો મંતે ! કર્મ કિં इत्थी वंघइ ? " હે ભદ્રન્ત ! આત્માના જ્ઞાનગુણનું આવરણ કરવાના સ્વભાવવાળા જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કેણુ કરે છે ? શું આ કર્મનો બંધ સ્ત્રી કરે છે ? અથવા " પુરિસો વંધઈ " પુરુષ કરે છે ? અથવા " નપુંસઓ વંધઈ ? " નપુંસક કરે છે ? અથવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું એવો હવ કરે છે કે જે " જોડત્થી " સ્ત્રી નથી ? " જો પુરિસે " પુરુષ નથી ? " જો નપુંસઓ " અને નપુંસક નથી ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે--

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( इत्थी वि वंघइ, पुरिसो वि वंघइ, नपुंसओ वि वंघइ ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સ્ત્રી પણ કરે અથવા પુરુષ પણ કરે અને નપુંસક પણ કરે છે ત્રણે વેદવાળા એવો આ કર્મનો બંધ કરે છે--" જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સ્ત્રી પણ કરે છે, પુરુષ પણ કરે છે અને નપુંસક પણ કરે છે. " પરન્તુ એવું અવશ્ય બને છે કે જે હવ ( જોડત્થી, જોપુરિસ, જોનપુંસઓ સિય વંધઈ, સિય જો વંધઈ )



भगवानाह—‘गोयमा ! इत्थी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ, हे गोतम ! स्त्री स्यात्  
कदाचित् बध्नाति, स्यात् कदाचिन्न बध्नाति, एवं तिन्नि वि भाणियव्वा’ एवं रीत्या  
अनया त्रयोऽपि स्त्र्यपि पुरुषोऽपि, नपुंसकोऽपि कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न  
बध्नाति, इति रीत्या भगितव्याः वक्तव्याः ‘णो इत्थी—णो पुरिस—णो नपुंसओ  
न बंधइ’, नो स्त्री—नो पुरुष—नो नपुंसको जीवः आयुष्यं कर्म न बध्नाति, अयं-  
भावः—एकत्र भवे सहेदेव आयुषो बन्धात् स्त्रीपुरुषादिवयं बन्धकाले बध्नाति,  
अबन्धकाले तु न बध्नाति अत एवोक्तम्—‘सिय बंधइ, सिय नो बंधइ’ इति ।

बंधइ, पुच्छा ) हे भदन्त ! आयुर्कर्म का बंध कौन करता है ? क्या स्त्री  
आयुर्कर्म का बंध करती है ? या पुरुष आयुर्कर्म का बंध करता है ?  
या नपुंसक आयुर्कर्म का बंध करता है ? इस प्रकार से यह गोतम का  
प्रश्न है । इसका उत्तर देते हुए प्रभु गोतम से कहते हैं कि (गोयमा)  
हे गोतम ! (इत्थी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) स्त्री आयुर्कर्म का कदा-  
चित् बंध करती है और कदाचित् बंध नहीं भी करती है । (एवं ति-  
न्नी वि भाणियव्वा ) इसी तरह से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी  
जानना चाहिये । अर्थात् पुरुष आयुर्कर्म का बंध करता भी है और नहीं  
भी करता है—तथा नपुंसक भी आयुर्कर्म का बंध करता भी है और नहीं  
भी करता है । इसका भाव यह है कि एक भव में आयुर्कर्म जीव एक  
ही बार बांधता है अतः जब आयुर्कर्म के बंध होने का समय आता है—  
तब ही आयुर्कर्म का बंध जीव करता है । और जब बंध का समय नहीं  
होता—तब आयुर्कर्म का जीव बंध नहीं करता है । इसी भाव को लेकर

पुच्छा ) हे भदन्त ! आयुर्कर्मનો બંધ કોણ કરે છે ? શું સ્ત્રી આયુર્કર્મનો  
બંધ કરે છે ? કે પુરુષ આયુર્કર્મનો બંધ કરે છે ? કે નપુંસક તેનો બંધ કરે છે ?

આ પ્રકારના ગોતમના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—

“ગોયમા !” હે ગોતમ ! (ઇત્થી સિય બંધઇ, સિય નો બંધઇ) સ્ત્રી આયુ-  
કર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક નથી પંધ કરતી, (એવં તિન્ની વિ  
ભાણિયવ્વા) એજ પ્રમાણે પુરુષ અને નપુંસકનો વિષે પણ સમજવું. એટલે  
કે પુરુષ આયુર્કર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પંધ કરતો, નપુંસક  
પણ આયુર્કર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતો નથી. તેનું  
તાત્પર્ય એ છે કે—એક જ ભવમાં આયુર્કર્મ એક જ વાર બાંધે છે,  
તેથી ન્યારે આયુર્કર્મનો બંધ થવાનો સમય આવે છે ત્યારે જ એ  
આયુર્કર્મનો બંધ કરે છે, અને ન્યારે બંધનો સમય હોતો નથી ત્યારે એ  
આયુર્કર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ ભાવને અનુલક્ષીને “સિય બંધઇ, સિય

વંધકત્વાત્ જ્ઞાનાવરણીયસ્ય અવંધકો ભાતિ, અત આદ્ય-સ્યાદ્ વંધનાતિ, સ્યાત્  
 ન વંધનાતિ-ઇતિ । 'એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત કમ્મપ્પગડીઓ' એવં તથૈવ આયુક્ક-  
 વર્જાઃ આયુક્કભિન્નાઃ આયુગ્વં વર્જયિત્વા-ઇત્યર્થઃ સપ્ત કર્મપ્રકરણયઃ જ્ઞાનાવરણીયઃ  
 માશ્રિત્ય દર્શનાવરણીયાદયઃ સપ્તવેદિત્વગ્નાઃ, દર્શનાવરણીયાદીનિ કર્મોપયપિ આયુક્ક-  
 વર્જાનિ સ્ત્રી પુરુષાદયઃ વંધનાતિ, નોસ્ત્રો-નોપુરુષ-નોનપુંસકસ્તુ કદાચિન્ વંધનાતિ,  
 કદાચિન્ વંધનાતિ-ઇત્યર્થઃ । ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ-આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યી  
 વંધઈ, પુરિસો વંધઈ, નપુંસઓ વંધઈ, પૃચ્છા ? 'હે મહન્ત ! આયુક્કં કર્મ કિં સ્ત્રી  
 વંધનાતિ, પુરુષો વંધનાતિ, નપુંસકો વંધનાતિ ?' ઇતિ પૃચ્છા-ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ,

ગુણસ્થાન સે છેકર અપોગિકેવલી નામ કે ચૌદહવે ગુણસ્થાન તક કે  
 જીવ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ, ઓર નો નપુંસક હોતે, હુણ્ મી જ્ઞાનાવરણીય  
 કર્મકે વંધક નહીં હોતે હૈં, કયોં કિં યે જીવ એકવિધકર્મ (સાતાવેદનીય)  
 કે વંધક કહે ગયે હૈં । હસી કારણ એસા કહા ગયા હૈ કિં જો (નો સ્ત્રી  
 નો પુરુષ ઓર નો નપુંસક) હોતા હૈં વહ્ હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ  
 કરતા મી હૈ ઓર નહીં મી કરતા હૈ । (એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્તકમ્મ-  
 પ્પગડીઓ) હસી પ્રકાર સે યહ મી જાનના ચાહિયે કિં જો જીવ નો  
 સ્ત્રી, નો પુરુષ ઓર નો નપુંસક હૈં વહ્ જીવ આયુકર્મ કો છોડકર શેષ  
 દર્શનાવરણીય આદિ કર્મોં કો વાંધતા હૈ । પરન્તુ જો સ્ત્રી, પુરુષ ઓર  
 નપુંસક વેદનવાલે જીવ હૈં વે, તો દર્શનાવરણીય આદિ સાત કર્મોં કા  
 વંધ કરતે હી હૈં । અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે આયુ કે વંધ કે વિષય મેં પૂછતે  
 હૈં કિં-(આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યી વંધઈ, પુરિસો વંધઈ, નપુંસઓ

ગુણસ્થાનથી લઈને અયોગી કેવલી નામના ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીના જીવ નો  
 સ્ત્રી, નો પુરુષ અને નો નપુંસક હોવા છતાં પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વાંધતા  
 નથી કારણ કે તે જીવોને એક જ પ્રકારના કર્મના-સાતાવેદનીય કર્મના વંધક  
 કહ્યા છે તે કારણે એવું કહ્યું છે કે "નો સ્ત્રી, નો પુરુષ, અને નપુંસક  
 જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો વંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતા નથી." (એવં  
 આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત કમ્મપ્પગડીઓ) એ જ પ્રમાણે જે જીવ નો સ્ત્રી, નો  
 પુરુષ અને નો નપુંસક હોય છે તે આયુકર્મ સિવાયના બાકીના સાત કર્મોનાં  
 વંધ ક્યારેક વાંધે છે અને ક્યારેક વાંધતા નથી. પરંતુ જે સ્ત્રી, પુરુષ અને  
 નપુંસક વેદનાળા જીવો છે તેઓ આયુકર્મ સિવાયના (દર્શનાવરણીય આદિ)  
 સાત કર્મોના વંધ કરે જ છે.

ગૌતમ સ્વામી આયુના વંધ વિષે મહાવીર પ્રશ્નને પ્રશ્ન પૂછે છે—  
 (આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યી વંધઈ, પુરિસો વંધઈ, નપુંસઓ વંધઈ,

भगवानाह—‘गोयमा ! इत्थी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ, हे गोतम ! स्त्री स्यात् कदाचित् बध्नाति; स्यात् कदाचिन्न बध्नाति; एवं तिन्नि वि भाणियव्वा; एवं सीत्या अनया त्रयोऽपि स्त्र्यपि पुरुषोऽपि; नपुंसकोऽपि कदाचिद् बध्नाति; कदाचिन्न बध्नाति; इति सीत्या; मज्झितव्याः वक्तव्याः । णोइत्थी—णोपुरिस—णोनपुंसओ न बंधइ । नोस्त्री—नोपुरुष—नोनपुंसको जीवः आयुष्यं कर्म न बध्नाति, अयं भावः—एकत्र भवे सकृदेव आयुषो बन्धात् स्त्रीपुरुषादिवयं बन्धकाले बध्नाति, अवन्धकाले तु न बध्नाति अत एवोक्तम्—‘सिय बंधइ सिय नो बंधइ’ इति ।

बंधइ, पुच्छा ) हे भदन्त ! आयुर्कर्म का बंध कौन करता है ? क्या स्त्री आयुर्कर्म का बंध करती है ? या पुरुष आयुर्कर्म का बंध करता है ? या नपुंसक आयुर्कर्म का बंध करता है ? इस प्रकार से यह गोतम का प्रश्न है । इसका उत्तर देते हुए प्रभु गोतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे गोतम ! (इत्थी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) स्त्री आयुर्कर्म का कदाचित् बंध करती है और कदाचित् बंध नहीं भी करती है । (एवं तिन्नि वि भाणियव्वा ) इसी तरह से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी जानना चाहिये । अर्थात् पुरुष आयुर्कर्म का बंध करता भी है और नहीं भी करता है—तथा नपुंसक भी आयुर्कर्म का बंध करता भी है और नहीं भी करता है । इसका भाव यह है कि एक भव में आयुर्कर्म जीव एक ही बार बांधता है अतः जब आयुर्कर्म के बंध होने का समय आता है—तब ही आयुर्कर्म का बंध जीव करता है । और जब बंध का समय नहीं होता—तब आयुर्कर्म का जीव बंध नहीं करता है । इसी भाव को लेकर

पुच्छा ) हे भदन्त ! आयुर्कर्मना बंध केण करे छे ? शु स्त्री आयुर्कर्मना बंध करे छे ? के पुरुष आयुर्कर्मना बंध करे छे ? के नपुंसक तेना बंध करे छे ? आ प्रकारेना गोतमना प्रश्नेना जवाण आपता भेडावीर प्रभु कहे छे—  
“गोयमा !” हे गोतम ! (इत्थी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) स्त्री आयुर्कर्मना बंध क्यारेक करे छे अने क्यारेक नथी पद्य करती, (एवं तिन्नि वि भाणियव्वा ) अने प्रभु पुरुष अने नपुंसकना विषे पद्य समजवुं अटले के पुरुष आयुर्कर्मना बंध करे छे पद्य अने नथी पद्य करतो, नपुंसक पद्य आयुर्कर्मना बंध क्यारेक करे छे अने क्यारेक करतो नथी, तेनु तात्पर्य अ छे के—अके लवमा आयुर्कर्म एवं अके न वारे बांधे छे, तेथी न्यारे आयुर्कर्मना बंध यवानो समर्थ आवे छे त्यारे न लव आयुर्कर्मना बंध करे छे, अने न्यारे बंधनो समर्थ होतो नथी त्यारे लव आयुर्कर्मना बंध करतो नथी, अने लवने अनुदहीने “सिय बंधइ, सिय



નિવૃત્તિવાદરસંપરાયાદિગુણસ્થાનકેષુ આયુર્વન્ધસ્ય વ્યવચ્છેદાત્ સ્ત્ર્યાદિવેદ-  
રહિતો જીવો ન વધ્નાતિ, इति । पष्ठं संयतद्वारमाश्रित्याह—‘ णाणावरणिज्जं णं  
भंते । कम्मं किं संजए वंधइ, असंजए, संजयाऽसंजए वंधइ ’ हे भदन्त ! ज्ञाना-  
वरणीयं कर्म किं संयतो वध्नाति ? असंयतो वा वध्नाति ? संयताऽसंयतो वा

( સિય વંધइ, સિય નો વંધइ ) ऐसा कहा गया है । तथा जो जीव न स्त्री  
वेदवाले हैं, न पुरुषवेदवाले हैं और न नपुंसक वेदवाले हैं—अर्थात् जिन  
जीवों के कर्मों की सत्ता में से स्त्री आदि वेदों का उदय निकल गया  
है—उन वेदों के बंध की व्युच्छित्ति जिन जीवों के हो गई है, ऐसे वे  
निवृत्त वादर संपराय आदि गुणस्थानक वाले जीव स्त्र्यादि वेद से रहित  
हुए आयुर्कर्म के बंध का व्युच्छेद हो जाने के कारण आयुर्कर्म का बंध  
नहीं करते हैं । कारण आयुर्कर्म का व्यवच्छेद भी तो निवृत्तिवादर संप-  
राय आदि गुणस्थानों में हो जाता है ।

छठे संयतद्वारकी अपेक्षा लेकर अथ सूत्रकार कहते हैं—इसमें गौतम  
प्रश्नु से पूछते हैं कि—( णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं संजए वंधइ,  
असंजए संजया संजए वंधइ ) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्मका बंध कौनसा  
जीव करता है ? क्या जो संयतजीव होता है वह ज्ञानावरणीय कर्म का  
बंध करता है ? या जो असंयत जीव होता है वह ज्ञानावरणीय कर्म का  
बंध करता है ? या जो संयतासंयत जीव होता है, वह ज्ञानावरणीय

નો વંધइ ” એવું કથન કરવામાં આવ્યું છે. તથા જે જીવ ન સ્ત્રી વેદવાળો  
છે, ન પુરુષ વેદવાળો છે અને ન નપુંસક વેદવાળો છે—એટલે કે જે જીવોનાં  
કર્મોની સત્તામાંથી સ્ત્રી આદિ વેદોનો ઉદય નીકળી ગયો છે—તે વેદોના બંધોની  
વ્યુચ્છિત્તિ ( વિચ્છેદ ) જે જીવોને થઈ ગઈ છે, એવાં તે નિવૃત્તિમાદર સંપ-  
રાય આદિ ગુણસ્થાનકવાળા જીવો સ્ત્રી આદિ વેદથી રહિત થઈને આયુર્કર્મના  
બંધનો વિચ્છેદ થઈ જવાના કારણે, આયુર્કર્મનો બંધ કરતા નથી. કારણ કે  
નિવૃત્તિમાદર આદિ ગુણસ્થાનોમાં આયુર્કર્મનો વિચ્છેદ થઈ જતો હોય છે.

હવે સૂત્રકાર છઠ્ઠા સંયતદ્વારને અનુલક્ષીને નીચે પ્રમાણે પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા  
કર્મબંધનું નિરૂપણ કરે છે—ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે  
કે ( ણાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કમ્મં કિં સંજए વંધइ, અસંજए સંજયાસંજए  
વંધइ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કયો જીવ કરે છે ? શું સંયત  
જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ? કે અસંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો  
બંધ કરે છે ? કે સંયતાસંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ?

વધ્નાતિ ? અથવા ‘ જોસંજય—જોઅસંજય—જોસંજયાસંજય વંધઃ ? ’ નો સંયત-નોઅસંયત -- નોસંયતાસંયતો વધ્નાતિ ? મગવાનાહ--‘ ગોયમા ! સંજય સિય વંધઃ, સિય જો વંધઃ, ’ હે ગૌતમ ! સંયતઃ આદ્યસંયમચતુષ્ટયવૃત્તિર્જ્ઞાનાવરણં સ્યાત્ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, યથાહ્યાતસંયતસ્તુ ઉપશાન્ત મોહાદિઃ સ્યાત્ કદાચિત્ નો વધ્નાતિ, ‘ અસંજય વંધઃ ’ અસંયતો મિથ્યાદૃષ્ટ્યાદિઃ જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, ‘ સંજયાસંજય વિ વંધઃ ’ સંયતાસંયતોઽપિ દેશવિર-

કર્મકા વંધકરતા હૈ ? (જોસંજય-જોઅસંજય જોસંજયાસંજય વંધઃ) જો જીવ ન સંયત હૈ, ન અસંત હૈ ઓર ન સંયતાસંયત હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા વંધ કરતા હૈ કયા ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમસે કહતે હૈ કિ,(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સંજય સિય વંધઃ, સિય જો વંધઃ) સંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા ખી હૈ ઓર નહી ખી કરતા હૈ-હસકા ભાવ યહ હૈ કિ જો જીવ સામાયિક, છેદોપસ્થાપનીય, પરિહારવિશુદ્ધ ઓર સૂક્ષ્મસાંપરાય હન આદિ કે ચાર સંયમ મેં રહનેવાલા હૈ વહ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ઓર જો યથાહ્યાત સંયમવાલા જીવ હૈ વહ ઉપશાન્ત મોહ આદિ ગુણસ્થાનોં મેં રહનેવાલા હોનેકે કારણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । હસી વાત કો લક્ષ્ય મેં લેકર (સંજય સિય વંધઃ, સિય જો વંધઃ) એસા કહા ગયા હૈ । (અસંજય વંધઃ) અસંયમો જો મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ જીવ હૈ-વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ

અથવા-( જોસંજય-જોઅસંજય જોસંજયાસંજય વંધઃ ? ) જે જીવને સંયત છે, નો અસંયત છે અને નો સંયતાસંયત છે, તે શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ( સંજય સિય વંધઃ, સિય જો વંધઃ ) સંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક નથી કરતો. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—જે જીવ સામાયિક, છેદોપસ્થાપનીય, પરિહાર વિશુદ્ધ અને સૂક્ષ્મ સાંપરાય આદિ ચાર સંયમમાં રહેનાર હોય છે, તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ જે યથાહ્યાત સંયમવાળો જીવ હોય છે તે ઉપશાન્ત મોહ આદિ ગુણસ્થાનોમાં રહેનારો હોવાથી જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ વાતને અનુલક્ષીને “ સંજય સિય વંધઃ, સિય જો વંધઃ ” એવું કહેવામાં આવ્યું છે.

“ અસંજય વંધઃ ” અસંયમી મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, ( સંજયાસંજય વિ વંધઃ ) તથા સંયતાસંયત જીવ



તાદિઃ જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, કિન્તુ 'જોસંજય-જોઅસંજય-જોસંજયા-સંજય' ન વંધઈ નોસંયત-નોઅસંયત-નોસંયતાસંયતો નિપિદ્ધસંયમાદિભાવઃ સિદ્ધો ન વધ્નાતિ હેત્વભાવાત્ । 'એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્તવિ' એવમ્ અનેન પ્રકારેણ આયુષ્કર્મવર્જાઃ જ્ઞાનાવરણવદેવં સપ્તાપિ કર્મપ્રકૃતયો વિદ્યેયાઃ તથા ચ આયુષ્કર્મવર્જિતાનિ દર્શનાવરણીયાદિ કર્માણ્યપિ સંયતઃ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ । અસંયતો વધ્નાતિ । સંયતાસંયતોઽપિ વધ્નાતિ, કિન્તુ 'અઝમે હેદિલ્લા તિણિ મયણાણ' આયુષ્કર્મ અધસ્તનાઃ આદ્યાસ્તયઃ સંયતઃ, અસંયતઃ, સંયતાસંયતશ્ચ કા વંધ કરતા હૈ (સંજયાસંજય વિ વંધઈ) તથા જો સંયતાસંયત-દેશ-વિરત-પંચમગુણસ્થાનવર્તી, જીવ હૈ-ત્તહ મી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ । તથા-જો જીવ (જો સંજય-જો અસંજય) इत्यादि ह-अर्थात् जिसके संग्रमादिभाव निपिद्ध हैं, ऐसे सिद्धजीव ज्ञानावरणीय कर्म का बंध-बंध के कारण का अभाव हो जाने से नहीं करते हैं । (एवं आउ-गवज्ज्ञाओ सत्त वि) इसी तरह से संयतद्वार में जीव-संयत, असंयत और संयतासंयत जीवों में से संयतजीव आयुर्कर्म को छोड़कर दर्शना-वरणीय आदि कर्मप्रकृतियों को कदाचित् बांधता भी है और कदाचित् नहीं भी बांधता है इस विषय में समस्तकथन संयतजीव के ज्ञानावर-णीय कर्म के बांधने न बांधने के जैसा समझना चाहिये । (असंयत) जीव आयुर्कर्म को छोड़कर शेष दर्शनावरणीय आदि कर्मप्रकृतियों को बांधता है इसी तरह से जो पंचमगुणस्थानवर्ती जीव है उसे भी जानना चाहिये । किन्तु ('आउगे हेदिल्ला तिणि मयणाण') अधस्तन तीन जो ये संयत, असंयत और संयतासंयत जीव हैं वे आयुर्कर्म का बंध भजना

એટલે કે દેશવિરતિવાળો, પાંચમાં ગુણસ્થાને રહેલો જીવ-પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. તથા (જો સંજય, જો અસંજય, જો સંજયાસંજય ન વંધઈ) નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત એવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી-એટલે કે જેમના સંયમાદિ ભાવ નિપિદ્ધ છે એવાં સિદ્ધ એવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી કારણ કે ત્યાં કર્મબંધનાં કારણનો જ અભાવ હોય છે. (એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ) એજ પ્રમાણે સંયત, અસંયત અને સંયતાસંયત એવો કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતા નથી, અસંયત એવં આયુકર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધે છે. એજ પ્રમાણે પાંચમાં ગુણસ્થાને રહેલા જીવનાં વિષયમાં પણ સમજવું. પરંતુ ('આઝમે હેદિલ્લા તિણિ મયણાણ') પહેલા ત્રણ પ્રકારનાં એવો એટલે કે સંયત, અસંયત અને સંયતાસંયત એવો આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે

एते त्रयोऽपि भजनया—कदाचिद् वध्नन्ति, कदाचिन्न वध्नन्ति; आयुर्वन्धकाले वध्नन्ति तद्भिन्नकाले आयुष्यं न वध्नन्तीत्यर्थः; 'उवरिल्ले ण वंधइ' उपरितनः अन्तिमः नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयतः सिद्धो जीवः आयुर्न वध्नाति । अथ सप्तमं दृष्टिद्वारमाह—'णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सम्मदिट्ठी वंधइ ?' हे भदन्त ! ज्ञानावरणीयं खलु कर्म किं सम्यग्दृष्टिर्वध्नाति ? 'अथवा मिच्छदिट्ठी वंधइ ?' मिथ्यादृष्टिर्वध्नाति ? 'सम्मामिच्छदिट्ठी वंधइ ?' सम्यग्मिथ्यादृष्टिर्वध्नाति ? भगवानाह—'गोयमा ! सम्मदिट्ठी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ' हे गौतम ! सम्यग्दृष्टिः वीतरागः, तद्भिन्नश्च भवति, तत्र वीतराग-

से करते हैं—अर्थात् जय आयुर्कर्म के बंध का समय होता है—तब करते हैं और जय उसके बंध का समय नहीं होता तब नहीं करते हैं। (उवरिल्ले ण वंधइ) तथा जो "नो संयत, नो असंयत और नो संयतासंयत सिद्ध जीव है" वे आयुर्कर्म का बंध नहीं करते हैं ।  
अब सातवें दृष्टिद्वार की अपेक्षा सूत्रकार कथन करते हैं—इसमें गौतमने प्रभुसे पूछा है कि—(णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सम्मदिट्ठी वंधइ) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या सम्यग्दृष्टि बांधता है ? अथवा—(मिच्छदिट्ठी वंधइ) मिथ्यादृष्टि बांधता है ? या (सम्ममिच्छदिट्ठी वंधइ) सम्यग् मिथ्यादृष्टि बांधता है ? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (सम्मदिट्ठी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ) सम्यग्दृष्टि जो जीव होता है वह ज्ञानावरणीय कर्मको बांधता भी है और नहीं भी बांधता है—इस कथन का तात्पर्य ऐं है कि

છે-એટલે કે જ્યારે આયુકર્મના બંધનેા સમય હોય છે ત્યારે તેઓ આયુ-કર્મનેા બંધ કરેા છે, પણ જ્યારે તેના બંધનેા સમય ન હોય ત્યારે તેઓ તેનેા બંધ કરતા નથી. "ઉવરિલ્લે ણ વંધઇ" તથા જે " નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત સિદ્ધ જીવો છે તેઓ આયુકર્મનેા બંધ કરતા નથી. હવે સૂત્રકાર સાતમાં દૃષ્ટિદ્વારની અપેક્ષાએ નીચે પ્રમાણે પ્રશ્નપણા કરે છે-ગૌતમ સ્વામી! મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-(ણાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કમ્મં, કિં સમ્મદિટ્ઠી વંધઇ.) હે ભદ્રન્ત ! શું સમ્યગ્દૃષ્ટિ, જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનેા બંધ કરે છે ? અથવા, "મિચ્છદિટ્ઠી વંધઇ", મિથ્યાદૃષ્ટિ બાંધે છે ? અથવા "સમ્મમિચ્છદિટ્ઠી વંધઇ", સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ બાંધે છે ?  
ઉત્તર—“ગોયમા !”, હે ગૌતમ ! (સમ્મદિટ્ઠી સિય વંધઇ, સિય ણો વંધઇ), સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનેા બંધ બાંધે છે, પણ ખરો અને

ભિન્નઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિર્જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, વીતરાગશ્ચ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ શાતા-  
વેદનીયરૂપૈકવિધકર્મવન્ધકત્વાત્ જ્ઞાનાવરણં કર્મ ન વધ્નાતિ इत्यभिप्रायेणाह-  
स्याત્ કદાચિત્ અવીતરાગાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, સ્યાત્ કદાચિત્-  
વીતરાગાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણં કર્મ ન વધ્નાતિ, 'મિચ્છાદિદ્વિ વંધહ, સમ્મામિચ્છ-  
દિદ્વિ વંધહ' મિથ્યાદૃષ્ટિર્વધ્નાતિ, સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ મિશ્રદૃષ્ટિરપીત્યર્થઃ વધ્નાતિ  
'એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ' એવમ્ અનેન પ્રકારેણ આયુષ્કવર્જાઃ સપ્તાપિ  
કર્મપ્રકૃતયો વિજ્ઞેયાઃ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ આયુષ્યવર્જિતાનિ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ

સમ્યગ્દૃષ્ટિ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ एक वीतराग सत्यगृहृष्टि और दूसरा  
वीतरागभिन्न सत्यगृहृष्टि; इनमें जो वीतरागभिन्न सत्यगृहृष्टि जीव है  
वह तो ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है और जो वीतराग सत्यगृ-  
हृष्टि जीव है वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है। वह तो  
केवल एक विध-शातावेदनीयरूप-कर्मका ही बंध करता है-इसी कारण  
ऐसा कहा है कि जो सत्यगृहृष्टि जीव अवीतराग है-अर्थात् सरागस-  
त्यगृहृष्टि है-वह ज्ञानावरण कर्म का बंध करता है और जो सत्यगृहृष्टि  
वीतराग है-वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है। (मिच्छादिद्वि  
बंधह, सम्मामिच्छादिद्वि बंधह) परन्तु जो मिथ्यादृष्टि जीव है वह और  
जो मिश्र दृष्टि जीव है वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है। (एवं  
आजगवज्ज्ञाओ सत्त वि) इस द्वार में ज्ञानावरणीय कर्म का बंध की  
तरह से ही आयु को छोड़कर शेष-दर्शनावरणीय आदि कर्मों के बांधने

નથી પણ બાંધતો. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-સમ્યગ્દૃષ્ટિ બે પ્રકારના હોય છે-વીતરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ અને વીતરાગ ભિન્ન સમ્યગ્દૃષ્ટિ. આ બન્ને પ્રકારના સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવોમાંના વીતરાગ ભિન્ન સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ વીતરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. તે તો માત્ર શાતાવેદનીય કર્મનો જ બંધ કરે છે. તે કારણે એવું કહ્યું છે કે જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ અવીતરાગ છે-એટલે કે સરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે, તે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ વીતરાગ જીવ હોય છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. (મિચ્છાદિદ્વિ વંધહ, સમ્મામિચ્છાદિદ્વિ વંધહ) પરંતુ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ તથા મિશ્રદૃષ્ટિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. (એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ) આ દ્વારમાં આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનો બંધ બાંધવા વિષેનું સમસ્ત કથન જ્ઞાના-



કદાચિત્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, મિથ્યાદષ્ટિર્મિશ્રદષ્ટિશ્ચ વધ્નાત્યેવેત્યર્થઃ, કિન્તુ ' આઝે હેઠિલા દો મયણા' આયુષ્કં કર્મ અધરતનો આઘો દ્વો સમ્પગ્-દષ્ટિ-મિથ્યાદષ્ટિરૂપો ભજનયા કદાચિત્ આયુર્વન્ધકાલે વધ્નીતઃ કદાચિત્ તદ્-મિન્નકાલે ન વધ્નીતઃ, પરન્તુ ' સમ્મામિચ્છદિટ્ઠી ન વંધહ ' સમ્પગ્મિથ્યાદષ્ટિઃ મિશ્રદષ્ટિરિત્યર્થઃ આયુષ્યં કર્મ ન વધ્નાતિ, અયં ભાવઃ-અપૂર્વકરણાદૌ સમ્પગ્દષ્ટિઃ આયુષ્યં કર્મ ન વધ્નાતિ, તદ્મિન્નસ્તુ સમ્પગ્દષ્ટિરપિ આયુર્વન્ધકાલે આયુર્વધ્નાતિ, તદ્મિન્નકાલે ન વધ્નાતિ, તથા મિથ્યાદષ્ટિરપિ આયુર્વન્ધકાલે તદ્ વધ્નાતિ. અન્યદા

કે વિષય મેં મી કથન જાનનાં ચાહિયે-અર્થાત્ આયુકર્મ કો છોડકર સમ્પગ્દષ્ટિ જીવ દર્શનાવરણીય આદિ કર્મોં કો મી કદાચિત્ વાંધનાં હૈં ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈં । તથા જો મિથ્યાદષ્ટિ ઓર મિશ્રદષ્ટિ જીવ હૈં, વેં હન કર્મોં કા વંધ કરતે હીં હૈં । કિન્તુ ( આઝે હેઠિલા દો મયણા ) આયુ જો કર્મ હૈં ઉસે આદિ કે વેં સમ્પગ્દષ્ટિ ઓર મિથ્યાદષ્ટિ જીવ ભજનાં સે વાંધતે હૈં-જવ આયુ કે વંધ હોને કા સમય હોતા હૈં-તવ ઉસકા વંધ કરતે હૈં ઓર જવ સમય નહીં હોતા તવ નહીં વંધ કરતે હૈં । ઓર જો ( સમ્મામિચ્છદિટ્ઠી ન વંધહ ) મિશ્રદષ્ટિ જીવ હૈં વહ આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈં । હસકા તાત્પર્ય એસા હૈં કિ-અપૂર્વકરણ આદિ ગુણસ્થાનવર્તી સમ્પગ્દષ્ટિ જીવ આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈં ઓર હનસે મિન્ન જો સમ્પગ્દષ્ટિ હૈં વહ આયુ કે વંધ કાલ મેં આયુ કો વાંધનાં હૈં ઓર મિન્નકાલ મેં નહીં વાંધતા હૈં । મિથ્યાદષ્ટિ મી એસા હીં કરતા

વરણીય કર્મનાં કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે સમ્પગ્દષ્ટિ જીવ આયુ-કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનાં બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, તથા મિથ્યાદષ્ટિ જીવ અને મિશ્રદષ્ટિ જીવ આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનાં બંધ કરે જ છે. પણ ( આઝે હેઠિલા દો મયણા ) આયુકર્મનાં બંધ પહેલાં જે પ્રકારનાં જીવો એટલે કે સમ્પગ્દષ્ટિ અને મિથ્યાદષ્ટિ જીવો વિકલ્પે બાંધે છે, એટલે કે જ્યારે આયુનો બંધ બાંધવાનો સમય થાય છે, ત્યારે તેઓ તે કર્મનાં બંધ બાંધે છે, પણ જ્યારે તે બંધ બાંધવાનો સમય હોતો નથી ત્યારે તેઓ તે બંધ બાંધતા નથી. અને ( સમ્મામિચ્છદિટ્ઠી ન વંધહ ) સમ્પગ્ મિથ્યાદષ્ટિ ( મિશ્રદષ્ટિ ) જીવ આયુકર્મનાં બંધ બાંધતો નથી તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-અપૂર્વકરણ આદિ ગુણસ્થાનમાં રહેલો સમ્પગ્દષ્ટિ જીવ આયુ-કર્મનાં બંધ કરતો નથી, પણ તે સિવાયના જે સમ્પગ્દષ્ટિ હોય છે તેઓ આયુનાં બંધકાળે આયુકર્મનાં બંધ બાંધે છે પણ તે સિવાયના કાળે તેઓ આયુકર્મ બાંધતા નથી. મિથ્યાદષ્ટિ પણ એવું જ કરે છે, તથા સમ્પગ્ મિથ્યા-

है। तथा सम्यग्दृष्टि जीव जो है, वह आयुर्कर्म का बंध नहीं करता है  
ऐसा जो कहा गया है उसका कारण यह है कि उसके आयु के बंध के  
अव्यवसाय स्थान का अभाव रहता है।

अब गौतम आठवें संज्ञी आदि बन्धवारको लेकर प्रभुसे पूछते हैं कि (णाणावरणिज्जं णं भन्ते) कर्म किं सन्नी बंधइ, असन्नी बंधइ ? हे भवन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या संज्ञी जीव बांधता है ? या असंज्ञी जीव बांधता है ? अथवा ( णो सन्नी, णो असन्नी बंधइ ) जो जीव न संज्ञी है और न असंज्ञी है, वह बांधता है ? भगवान् इस प्रश्न का उत्तर देते हुए गौतम से कहते हैं कि ( गोयमां ) हे गौतम ! ( सन्नी सिय बंधइ, सिय णो बंधइ ) संज्ञी जीव-मनः प्रयास सहित जो जीव है वह कदाचित् ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता भी है, और कदाचित् नहीं भी करता है । यदि संज्ञी जीव अवीतराग है, तो ज्ञानावरणीय कर्म का वह बंध करता

હૃદિ જીવ આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી તેનું કારણ એ છે કે તેના આયુના બંધના અધ્યવસાય સ્થાનનો અભાવ રહે છે.

બંધના અધ્યવસાય સ્થાનનો અભાવ રહે છે. હવે ગૌતમસ્વામી આઠમાં સંસી આદિ બંધદારને અનુલક્ષીને મહાવીરપ્રભુને એવો અશ્ન પૂછે છે કે (જાણાવરણીય કમં બંધે ? કસ્મં કિં સન્નો વંધુ ?) હે ભદ્રન્ત ! શું સંસી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કમં બંધે છે ? “અસન્નો વંધુ ?” કે અસંસી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કમં બંધે છે ? અથવા (જો સન્નો જો અસન્નો વંધુ ?) જો જીવ નો સંસી છે એટલે કે સંસી નથી, અને નો અસંસી છે એટલે કે અસંસી નથી-એવો જીવ શું તે કમંનો બંધ કરે છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા !” હિં જોતમ ! ( સન્ની સિય વંધઈ સિય જો  
 વંધઈ ) સંસી જીવ (મનઃપયોસિ સહિતનો જીવ ) ક્યારેક સંસાનાવરણીય  
 કર્મનો બંધ કરે છે અને ક્યારેક કરતો નથી તે જો સંસી જીવ અપીતરાગ  
 હોય તે તે સંસાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, નો પશુ જો તે પીતરાગ હોય



તન્ન વધ્નાતીત્યર્થઃ, અનંત એવ ' સ્યાદિ ' ત્યુક્તમ્, ' અસન્ની વંધઃ ' અસંજીઃ  
મનઃ પર્યાપ્તિરહિતો જીવઃ વધ્નાત્યેવ. ' જોસન્નિ-જોઅસન્ની ન વંધઃ ' કિન્તુ  
નોસંજી-નોઅસંજી કેવલી સિદ્ધથ હેત્વમાવાત્ ન વધ્નાતિ, ' એવં વેયણિ-  
જ્ઞાડડગવજ્ઞાઓ છ કમ્મપ્પયહીઓ ' એવમ્-અનેન પ્રકારેણ વેદનીયાડડ્યુક્ક-  
વર્જાઃ પદ્ કર્મપ્રકૃતયો વિજ્ઞેયાઃ, તથા ચ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ વેદનીયાડડન્  
યુક્તવર્જિતાનિ સંજી કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, અસંજી તુ વધ્નાત્યેવ,  
નોસંજી - નોઅસંજી કેવલી સિદ્ધથ વંધકારણાભાવાત્ તાનિ ન વધ્નાત્યેવે

હે-ઔર યદિ વહ સંજી જીવ વીતરાગ હૈ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ  
નહીં કરતા હૈ હસી કારણ ( સ્યાત્ ) એસા કહા હૈ । ( અસન્ની વંધઃ )  
જો જીવ મનઃ પર્યાપ્તિ સે શૂન્ય હૈ, વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા  
હી હૈ । ( જોસન્ની જોઅસન્ની વંધઃ ) કિન્તુ જો જીવ ન સંજી હૈ ઔર  
ન અસંજી હૈ અર્થાત્ જો કેવલજ્ઞાની હૈ ઔર જો સિદ્ધ હૈ-એસા જીવ  
કર્મવંધ કે કારણોં કે અભાવ કે કારણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં  
કરતા હૈ ( એવં વેયણિજ્ઞાડડગવજ્ઞાઓ છ કમ્મપ્પયહીઓ ) જ્ઞાનાવરણીય  
કર્મ કી તરહ હી હસ દ્વાર મેં વેદનીય ઔર આયુ કો છોડકર ૬ કર્મપ્ર-  
કૃતિયોં કે વિષય મેં ભી જ્ઞાનના ચાહિયે, તથા ચ-વેદનીય ઔર આયુ  
કો છોડકર દર્શનાવરણાદિ ૬ કર્મપ્રકૃતિયોં કો ભી સંજી જીવ કદાચિત્  
વાંધતા ભી હૈ ઔર કદાચિત્ નહીં ભી વાંધતા હૈ । તથા જો અસંજી જીવ  
હૈ વહ તો વાંધતા હી હૈ ઔર જો ન સંજી હૈ, ન અસંજી હૈ-એસે કેવલી

તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ કારણે એવું કહ્યું છે કે  
“ સંજી એવ ક્યારેક જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે અને ક્યારેક કરતો  
નથી. ” “ અસન્ની વંધઃ ” અસંજી એવ ( મનઃપર્યાપ્તિથી રહિત એવ )  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. ( જો સન્ની જો અસન્ની ન વંધઃ ) પરંતુ  
જે એવ નો સંજી હોય છે અથવા તો નો અસંજી હોય છે-એટલે કે  
કેવળજ્ઞાની અથવા સિદ્ધ એવ, એવા એવને કર્મબંધનાં કારણોનો અભાવ  
હોવાથી તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. ( એવં વેયણિજ્ઞાડડ ગવ-  
જ્ઞાઓ છ કમ્મપ્પયહીઓ ) સંજી આદિ એવોના વેદનીયકર્મ અને આયુકર્મ  
સિવાયના છ કર્મોના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મબંધના કથન પ્રમાણે જ  
સમજવું. એટલે કે સંજી એવ વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયની છ કર્મ-  
પ્રકૃતિયોનો બંધ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી, અસંજી એવ  
તે છ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધે જ છે, પણ નો સંજી અને નો અસંજી

વધ્નાતિ ? મગવાન્ ઉત્તરયતિ-‘ગોયમા ! ભવસિદ્ધિર્ મયણાણ’ હે ગૌતમ ! ભવ-  
સિદ્ધિકો ભજનયા-કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, વીતરાગભિન્નો ભવ-  
સિદ્ધિકો જ્ઞાનાવરણં વધ્નાતિ, વીતરાગસ્તુ ન વધ્નાતિ, અતઃ ‘ભજનયા’ इत्युक्तम्,  
‘અભવસિદ્ધિર્ વંધઈ’ અભવસિદ્ધિકો જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાત્યેવ, કિન્તુ ‘

યા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હોતા હૈ ઓર ન અભવસિદ્ધિક હોતા હૈ વહ  
બંધતા હૈ ? હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ  
( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ભવસિદ્ધિર્ મયણાણ ) જો ભવસિદ્ધિક જીવ  
હોતા હૈ વહ ભજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ અર્થાત્-  
કદાચિત્ વહ હસ કર્મ કા વંધ કરતા ભી હૈ ઓર કદાચિત્ વહ નહીં  
ભી કરતા હૈ । હસકા કારણ યહ હૈ કિ ભવસિદ્ધિક જીવ દો પ્રકાર કે  
હોતે હૈ-એક વે જો વીતરાગ હોતે હૈં દુસરે વે જો વીતરાગ નહીં હોતે હૈં ।  
વીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે ઓર  
જો અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ હૈં વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ  
કરતે હી હૈં । ગ્યારહવેં ચારહવેં ઓર તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવ ભવસિ-  
દ્ધિક વીતરાગ હૈં ઓર હનકે નીચે કે ચતુર્થ ગુણસ્થાનતક કે જીવ  
અવીતરાગભવસિદ્ધિક જીવ હૈં । હસી અભિપ્રાય સે યહાં ( ભજના ) પદ  
કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ । તથા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હૈ વહ  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હી હૈ-હસી કારણ-(અભવસિદ્ધિર્  
વંધઈ) એસા પાઠ કહા ગયા હૈ । કિન્તુ જો જીવ એસે હૈં કિ ન ભવસિ-

જે જીવ ન ભવસિદ્ધિક અને ન અભવસિદ્ધિક હોય છે, તે આ કર્મ બાંધે છે ?  
આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ ભવસિદ્ધિર્  
મયણાણ ” ભવસિદ્ધિક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-એટલે કે  
ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી, તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે-  
ભવસિદ્ધિક જીવ બે પ્રકારનો હોય છે-(૧) વીતરાગ ભવસિદ્ધિક અને  
(૨) અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક. તેમાંનો વીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ તે કર્મનો બંધ  
કરતો નથી, પણ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ તેનો બંધ કરે છે. અગિયારમાં,  
બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનનો જીવ વીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે પણ  
આથી હસ સુધીના ગુણસ્થાને રહેલો જીવ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે.  
તે વાતને ધ્યાનમાં રાખીને અહીં એવું કહ્યું છે કે “ ભવસિદ્ધિક જીવ વિકલ્પે  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ બાંધે છે, પરંતુ ‘અભવસિદ્ધિર્ વંધઈ’ અભવસિદ્ધિક  
(અભવ્ય) જીવ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે જ છે. (જો ભવસિદ્ધિર્

नोभवसिद्धिः - नोभवसिद्धिः न बंधः' नोभवसिद्धिक-नोभवसिद्धिकः  
सिद्धो जीवो न बध्नाति, ' एवं आउगवज्जाओ सत्त वि ' एवं ज्ञानावरणवदेव  
आयुष्कवर्जाः सप्तापि कर्मप्रकृतयो विज्ञेयाः तथा च आयुष्यवर्जितानि दर्शना-  
वरणादिकर्माण्यपि भवसिद्धिकः कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न बध्नाति, अभव-  
सिद्धिकस्तु बध्नात्येव, नोभवसिद्धिकः-नोभवसिद्धिकः सिद्धस्तु न बध्नात्येवेति  
भावः । ' आउगं हेट्टिल्ला दो भयणाए ' आयुष्कं कर्म अधस्तनो आधो द्वौ  
भव्योऽभव्यश्च भवसिद्धिकपदवाच्यः, अभवसिद्धिकपदवाच्यश्चेत्यर्थः भजनया

द्विक-भव्य हैं और अभवसिद्धिक-अभव्य हैं- इन दोनों प्रकार के  
पारिणामिक भावों से रहित हैं ऐसे वे सिद्ध परमात्माह्व जीव ज्ञानाव-  
रणीय कर्म का बंध नहीं करते हैं यही बात ( नो भवसिद्धिए नो अभ-  
वसिद्धिए न बंधः ) इस सूत्र द्वारा प्रदर्शित की गई है । ( एवं आउग-  
वज्जाओ सत्त वि ) ज्ञानावरणीय कर्म की तरह ही आयुष्कवर्ज सात  
कर्मप्रकृतियों को जानना चाहिये-अर्थात् जो भवसिद्धिक जीव होता है  
वह आयुष्कवर्ज दर्शनावरणीयादि कर्मों का बंध करता भी है और नहीं  
भी करता है । तथा जो अभवसिद्धिक जीव होता है वह तो नियम से  
आयुष्कवर्ज दर्शनावरणीयादि कर्मों का बंध करता है । परन्तु जो ऐसे  
जीव होते हैं कि न वे भवसिद्धिक है और न अभवसिद्धिक है तो वे  
आयुष्कवर्ज दर्शनावरणीयादि कर्मप्रकृतियों का बंध नहीं करते हैं । कारण  
ऐसे जीवों में इन कर्मों को बंध करने के कारणों का सर्वथा अभाव हो  
जाता है । ( आउगं हेट्टिल्ला दो भयणाए ) भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक

नो अभवसिद्धिए न बंधः ) नो भवसिद्धिक ( लव्य न डाय ओवो एव )  
अने नो अभवसिद्धिक ( 'अलव्य' न डाय ओवो एव ) एव-आ अन्ने प्रका-  
रना पारिणामिक लावेथी रहित ओवा सिद्ध परमात्मा रूप एव ज्ञानावरणीय  
कर्मनो बंध करता नही. " एवं आउगवज्जाओ सत्त वि " आ एवोना  
आयुष्ककर्म सिवायना साते. कर्मोना बंधनुं कथन ज्ञानावरणीय कर्मोना कथन  
प्रमाणेन समज्जुं ओट्टे के लवसिद्धिक एव आयुष्कर्म सिवायना साते  
कर्मोना बंध निकट्ये करे छे, अलवसिद्धिक एव ते साते कर्मोना बंध अवश्य  
करे छे, अने नो भवसिद्धिक अने नो अभवसिद्धिक एवो आयुष्कर्म सिवा-  
यना साते कर्मोना बंध करता नही, कारण के ते एवोमां ओ कर्मोना बंध  
करवानां कारणोना अलाव डाय छे.

( आउगं हेट्टिल्ला दो भयणाए ) लवसिद्धिक अने अलवसिद्धिक एवो



વધ્નાતિ ? મગવાનુ ઉત્તરયતિ-‘ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાપ’ હે ગૌતમ ! ભવ-  
સિદ્ધિકો ભજનયા-કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, વીતરાગભિન્નો ભવ-  
સિદ્ધિકો જ્ઞાનાવરણં વધ્નાતિ, વીતરાગસ્તુ ન વધ્નાતિ, અતઃ ‘ભજનયા’ इत्युक्तम्,  
‘અભવસિદ્ધિય વંધહ’ અભવસિદ્ધિકો જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાત્યેવ, કિન્તુ ‘

યા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હોતા હે ઓર ન અભવસિદ્ધિક હોતા હે વહ  
બાંધતા હે ? હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હે કિ  
( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ભવસિદ્ધિય મયણાપ ) જો ભવસિદ્ધિક જીવ  
હોતા હે વહ ભજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે અર્થાત્-  
‘કદાચિત્ વહ હસ કર્મ કા વંધ કરતા મી હે ઓર કદાચિત્ વહ નહીં  
મી કરતા હે । હસકા કારણ યહ હે કિ ભવસિદ્ધિક જીવ દો પ્રકાર કે  
હોતે હે-એક વે જો વીતરાગ હોતે હે દસરે વે જો વીતરાગ નહીં હોતે હે ।  
વીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે ઓર  
જો અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ હે વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ  
કરતે હી હે । ગ્યારહવે વારહવે ઓર તેરહવે ગુણસ્થાનવર્તી જીવ ભવસિ-  
દ્ધિક વીતરાગ હે ઓર હનકે નીચે કે ચતુર્થ ગુણસ્થાનતક કે જીવ  
અવીતરાગભવસિદ્ધિક જીવ હે । હસી અભિપ્રાય સે યહાં ( ભજના ) પદ  
કા પ્રયોગ કિયા ગયા હે । તથા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હે વહ  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હી હે-હસી કારણ-(અભવસિદ્ધિય  
વંધહ) એસા પાઠ કહા ગયા હે । કિન્તુ જો જીવ એસે હે કિ ન ભવસિ-

જે જીવ ન ભવસિદ્ધિક અને ન અભવસિદ્ધિક હોય છે, તે આ કર્મ બાંધે છે ?

આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ભવસિદ્ધિય મયણાપ” ભવસિદ્ધિક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-એટલે કે ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી, તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે-

ભવસિદ્ધિક જીવ બે પ્રકારનો હોય છે-(૧) વીતરાગ ભવસિદ્ધિક અને (૨) અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક. તેમાંનો વીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ તે કર્મનો બાંધ કરતો નથી, પણ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ તેનો બાંધ કરે છે. અગિયારમાં, બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનનો જીવ વીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે પણ ચારથી દસ સુધીના ગુણસ્થાને રહેલો જીવ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે. તે વાતને ધ્યાનમાં રાખીને અહીં એવું કહ્યું છે કે “ભવસિદ્ધિક જીવ વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બાંધ બાંધે છે. પરંતુ ‘અભવસિદ્ધિય વંધહ’ અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય) જીવ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બાંધ કરે જ છે. (જો ભવસિદ્ધિય

ભગવાનાહ—'ગોપમા ! હેટ્ટિલા તિણિ મયણા' હે ગૌતમ ! અપસ્તનાઃ આઘાસ્વયશ્ચુર્દર્શની, અચ્ચુર્દર્શની, અવધિર્દર્શની ચ, ઇત્યેતે જ્ઞાનાવરણં કર્મ ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્નો વધ્નન્તિ, ચક્ષુરચક્ષુરવધિર્દર્શનિનો યદિ સરાગા ભવન્તિ તદા જ્ઞાનાવરણં વધ્નન્તિ યદા તુ છદ્મસ્થવીતરાગા પ્કાદશગુણસ્થાનવર્તિનો જીવાસ્તદા જ્ઞાનાવરણં કર્મ ન વધ્નન્તિ, છદ્મસ્થવીતરાગાણાં વેદનીયસ્યૈવ વન્ધકત્વાત્, અત એવ 'ભજનયા' ઇત્યુક્તમ્, 'ઉવરિલ્લે ન વંધઈ' ઉપરિતનઃ અન્તિમઃ કેવલદર્શની ભવસ્થઃ સયોગિકેવલી અયોગિકેવલી ઇત્યર્થઃ સિદ્ધો વા હેત્વભાવાત્ ન વધ્નાતિ । ' એવં વેયણિજ્જવજ્ઞાઓ સત્ત વિ ' એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયવર્જાઃ

(કેવલદંસણી વંધઈ) કેવલદર્શનવાલા જીવ વાંધતા હૈ? કૌન સે દર્શનવાલા જીવ વાંધતા હૈ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ઉનસે કહતે હૈ— (ગોપમા) હે ગૌતમ ! (હેટ્ટિલા તિણિ મયણા) જો જીવ ચક્ષુદર્શનવાલા, અચક્ષુદર્શનવાલા ઓર અવધિદર્શનવાલા હૈ, વહ જીવ જ્ઞાનાવરણકર્મ કા વંધ ભજના સે કરતા હૈ—અર્થાત્ કમી વાંધતા મી હૈ, ઓર કમી નહીં મી વાંધતા હૈ । યદિ ઇન દર્શનો વાલા જીવ સરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા વંધ નિયમ સે કરતા હૈ ઓર યદિ વહ છદ્મસ્થ વીતરાગ—ગ્યારહવેં ઓર ચારહવેં ગુણસ્થાનવાલા હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ ક્યોં કિ જો છદ્મસ્થ વીતરાગ હોતા હૈ ઉસકે વેદનીય કર્મ કા હી વંધ હોતા હૈ ઇસીલિયે યહાં (ભજનયા) એસા પદ કહા હૈ (ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) તથા જો કેવલદર્શની જીવ હૈ અર્થાત્ ભવસ્થ સયોગ કેવલી ઓર અયોગકેવલી હૈ—વે યા જો સિદ્ધ જીવ હૈ વહ વંધહેતુ કે અભાવ હો જાને કે કારણ જ્ઞાનાવરણીયકર્મ

ઉત્તર—“ ગોપમા ! ” હે ગૌતમ ! “ હેટ્ટિલા તિણિ મયણા ” ચક્ષુ દર્શનવાળો છવ. અચક્ષુ દર્શનવાળો છવ અને અવધિ દર્શનવાળો છવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે—એટલે કે બાંધે છે પણ ખરાં અને નથી પણ બાંધતા. જો આ દર્શનવાળા છવો સરાગ હોય તો તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય બાંધે છે, પણ જો તે છદ્મસ્થ વીતરાગ અગિયારમાં અને ખારમાં ગુણસ્થાનવાળો હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો નથી, કારણ કે છદ્મસ્થ વીતરાગને તો વેદનીય કર્મ જ બાંધાય છે. તે કારણે એવું કહ્યું છે કે “ પહેલા ત્રણ દર્શનવાળો છવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે. ” “ ઉવરિલ્લે ન વંધઈ ” પરંતુ દેવળ દર્શની છવ—એટલે કે ભવસ્થ સયોગ કેવલી અને અયોગ કેવલી અથવા તો સિદ્ધ છવ—જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી, કારણ કે એવા છવને બંધનાં કારણોનો જ સર્વાથા અભાવ હોય



કદાચિદ્ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, ઉભાવપિ તૌ આયુર્વન્ધકાલે આયુષ્યં વધ્નીતઃ, તદ્ભિન્નકાલે આયુષ્યં ન વધ્નીત ઇતિ ભાવઃ, અતएव 'મજનયા' ઇત્યુક્તમ્ 'ઉવરિલ્લે ન વંધઃ' ઉપરિતનઃ નોમવસિદ્ધિક-નોઅમવસિદ્ધિક પદ-વાચ્યઃ સિદ્ધો ન વધ્નાતીત્યર્થઃ ।

અથ દર્શનવિષયવન્ધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ચક્કુદંસણી વંધઃ, અચક્કુદંસણી વંધઃ, ઓહિદંસણી વંધઃ, કેવલદંસણી વંધઃ?' હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મે કિં ચક્ષુર્દર્શની વધ્નાતિ ? અચક્ષુર્દર્શની વા કિં વધ્નાતિ ? અવધિદર્શની વા કિં વધ્નાતિ ? કેવલદર્શની વા કિં વધ્નાતિ ?

ये दोनों जीव आयु कर्म का बंध करते भी हैं और नहीं भी करते हैं। इसका कारण यह है कि गृहीतभव में आयु कर्म का बंध जीव को एक ही बार अपने बंध काल में होता है अवंधकाल में नहीं। अतः इसी भाव को लेकर ऐसा कहा गया है। (उवरिल्ले न वंधः) जो जीव न भव-सिद्धिक हैं और न अभवसिद्धिक हैं ऐसे वे सिद्ध जीव इस आयु कर्म का बंध नहीं करते हैं।

અવદર્શન વિષયવન્ધદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હૈં કિ (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ચક્કુદંસણી વંધઃ, અચક્કુદંસણી વંધઃ ઓહિદંસણી વંધઃ કેવલદંસણી વંધઃ) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયકર્મ કો કયા ચક્ષુર્દર્શનવાલા જીવ બાંધતા હૈ ? યા અચક્ષુર્દર્શનવાલા જીવ બાંધતા હૈ ? યા અવધિદર્શનવાલા જીવ બાંધતા હૈ ? યા

આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. એટલે કે તેઓ તેનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. તેનું કારણ એ છે કે ગૃહીત ભવમાં જીવને આયુકર્મનો બંધ એક જ વાર પોતાના બંધકાળમાં બાંધાય છે, અબંધકાળમાં એ બંધ બાંધતો નથી. “ઉવરિલ્લે ન વંધઃ” નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક એવાં સિદ્ધ પરમાત્મા આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

હવે ગૌતમસ્વામી—દર્શનવિષય બંધદ્વારને અનુલક્ષીને નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ચક્કુદંસણી વંધઃ, અચક્કુદંસણી વંધઃ, ઓહિદંસણી વંધઃ, કેવલદંસણી વંધઃ ?) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું ચક્ષુ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે અચક્ષુ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે અવધિ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે કેવળ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? આ ચારમાંથી કયા દર્શનવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

ગૌતમઃ પૂછતિ—‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં પજ્જત્તઓ વંધઈ ? અપજ્જત્તઓ વંધઈ જોપજ્જત્ત—જો અપજ્જત્તઓ વંધઈ’ હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ પર્યાપ્તકો વધ્નાતિ ? અપર્યાપ્તકો વધ્નાતિ ? નોપર્યાપ્તક—નોઅપર્યાપ્તકો વધ્નાતિ ? । મગવાનાહ—‘ગોયમા ! પજ્જત્તણ મયણાણ’ હે ગૌતમ ! પર્યાપ્તકઃ મજ્જનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સરાગઃ પર્યાપ્તકો જ્ઞાનાવરણં વધ્નાતિ, વીતરાગઃ પર્યાપ્તકસ્તુ જ્ઞાનાવરણં ન વધ્નાતિ, અતો ‘મજ્જનયા’ રથુક્તમ્ । ‘અપજ્જત્તણ વંધઈ’ અપર્યાપ્તકસ્તુ જ્ઞાનાવરણં વધ્નાત્યેવ ‘જોપજ્જત્તય—

અથ પર્યાપ્તક વિષયક વ્યવહારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમ સ્વામી પ્રભુસે પૂછતે હેં કિં—( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં પજ્જત્તઓ વંધઈ ? અપજ્જત્તઓ વંધઈ ? જોપજ્જત્તઓ વંધઈ જો અપજ્જત્તઓ વંધઈ ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા પર્યાપ્તક જીવ વાંધતા હે ? યા જો અપર્યાપ્તક જીવ હોતા હે વહ વાંધના હે ? યા જો ન પર્યાપ્તક હોતા હે ઓર ન અપર્યાપ્તક હોતા હે વહ વાંધતા હે ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિં—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! ( પજ્જત્તણ મયણાણ ) જો જીવ પર્યાપ્તક હોતા હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ મજ્જના સે કરતા હે—અર્થાત્ કદાચિત્ કરતા મી હે ઓર કદાચિત્ નહીં મી કરતા હે । પર્યાપ્તક—ત્રીન શરીર ૨ પર્યાપ્તિઓં કે યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરને વાલો જીવ—યદિ સરાગ હે તો વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ અવશ્ય હી કરતા હે । ઓર યદિ વહ પર્યાપ્તક જીવ વીતરાગ હે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ વહ નહીં કરતા હે । હસી અભિપ્રાય સે

હવે પર્યાપ્તક વિષયક વ્યવહારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે (જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં પજ્જત્તઓ વંધઈ ? અપજ્જત્તઓ વંધઈ ? જો પજ્જત્તઓ—જો અપજ્જત્તઓ વંધઈ ? ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું પર્યાપ્તક જીવ કરે છે ? કે અપર્યાપ્તક જીવ કરે છે ? કે નોપર્યાપ્તક જીવ કરે છે ? કે નોઅપર્યાપ્તક જીવ કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “ પજ્જત્તણ મયણાણ ” પર્યાપ્તક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે, એટલે કે ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતો નથી. પર્યાપ્તક—ત્રણ શરીર અને છ પર્યાપ્તિઓને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરનારો જીવ—જો સરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે, પણ જો તે પર્યાપ્તક જીવ વીતરાગ હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. તેથી જ “ તેઓ વિકલ્પે કરે છે ” એવું

સંસારપિ કર્મપ્રકૃતયો વિજ્ઞેયાઃ, તથા ચ વેદનીયવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્મા-  
પ્યપિ ચક્ષુરચક્ષુરવધિદર્શનિનઃ કદાચિદ્ વધનન્તિ, કદાચિન્ન વધનન્તિ, કેવલ-  
દર્શની ભવસ્થઃ સિદ્ધો ચા ન વધ્નાતીત્યર્થઃ, 'વેયણિજ્જં હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ વંધંતિ'  
વેદનીયં કર્મ અધસ્તનાઃ આઘાઃ ચક્ષુરચક્ષુરવધિ દર્શનિનસ્રયોઽપિ છદ્મસ્થ-વીતરાગાઃ  
સરાગાશ્ચ વધનન્ત્યેવ, કિન્તુ 'કેવલદંસણી મયણાણ' કેવલદર્શની મત્તનયા કદા-  
ચિદ્ વેદનીયં વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સયોગિકેવલી વેદનીયં વધ્નાતિ,  
અયોગિકેવલી, સિદ્ધશ્ચ વેદનીયં ન વધ્નાતીતિ માયઃ । અય પર્યાપ્તિકદ્વારમાશ્રિય

કા વંધ નહીં કરતા હૈ । ( एवं વેયણિજ્ઞવજ્ઞાઓ સત્ત વિ ) જ્ઞાનાવરણ  
કી તરહ હી વેદનીય કર્મ વર્જ સાતકર્મ પ્રકૃતિયો કો-અર્થાત્ ૬ કર્મ  
પ્રકૃતિયો કો જાનના ચાહિયે-તથા ચ વેદનીય કર્મ કો છોડકર દર્શના  
વરણીયાદિ કર્મો કો ભી ચક્ષુદર્શની, અચક્ષુદર્શની ઓર અવધિદર્શની  
જીવ કદાચિત્ વાંધતે હૈ ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતે હૈ । પરન્તુ જો  
ભવસ્થ કેવલદર્શની હૈ-અથવા જો સિદ્ધ કેવલદર્શની હૈ વહ હન દર્શ-  
નાવરણીયાદિ ૬ કર્મપ્રકૃતિયો કો નહીં વાંધતા હૈ । ( વેયણિજ્ઞં હેટ્ઠિલ્લા  
તિન્નિ વંધંતિ ) વેદનીય કર્મ કા વંધ ચક્ષુદર્શની આદિ ત્રીન દર્શનવાળે  
જીવ કરતે હી હૈ-ચાહે યે સરાગ હૈ, ચાહે છદ્મસ્થ વીતરાગ હૈ, સર્વ  
હી હસ કર્મ કા વંધ કરતે હી હૈ । કિન્તુ જો ( કેવલ દંસણી મયણાણ )  
કેવલદર્શની જીવ હૈ વહ અયોગી કેવલી કો અપેક્ષા સે યા સિદ્ધ જીવ  
કો અપેક્ષા સે તો હસ વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ ઓર  
સયોગી કેવલી કો અપેક્ષાસે વેદનીય કર્મ કા વહ વંધ કરતા હૈ ।

છે ( एवं વેયણિજ્ઞવજ્ઞાઓ સત્ત વિ ) દર્શનદ્વારને અનુલક્ષીને વેદનીય  
કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયોના બંધનું સંમસ્ત કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના  
કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે દર્શનાવરણીય આદિ બીજાં છ કર્મોનો  
બંધ પણ ચક્ષુ દર્શની, અચક્ષુ દર્શની અને અવધિ દર્શની જીવ ક્યારેક કરે  
છે અને ક્યારેક કરતા નથી. પરંતુ જે ભવસ્થ કેવલ દર્શની અથવા તો સિદ્ધ  
કેવલ દર્શની જીવ હોય છે તે તો દર્શનાવરણીય આદિ છ કર્મોનો બંધ કરતો નથી.  
( વેયણિજ્ઞં હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ વંધંતિ ) વેદનીય કર્મનો બંધ ચક્ષુદર્શની, અચક્ષુ-  
દર્શની અને અવધિદર્શની જીવ કરે છે, તે જીવો ભલે સરાગ હોય કે છદ્મસ્થ  
વીતરાગ હોય પણ તેઓ વેદનીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે. પરંતુ " કેવ-  
લદંસણી મયણાણ " કેવલદર્શની જીવ વિકલ્પે વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે.  
આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-કેવલદર્શની જીવને અયોગી કેવલી હોય  
અથવા તો સિદ્ધ પરમાત્મા હોય તો તે વેદનીય કર્મનો બંધ કરતો નથી,  
પણ સયોગી કેવલી હોય તો તે વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે.



આયુર્વધ્નીતઃ, તદન્યકાલે આયુર્ન વધ્નીતઃ ઇતિ ભાવઃ, 'ઉવરિલ્લે ન વંધઈ' ઉપરિતનઃ અન્તિમઃ નોપર્યાસિક નોઅપર્યાસિકઃ-સિદ્ધો ન વધ્નાતિ । અથ ભાપકવિપયકવંધ દ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂચ્છતિ 'જ્ઞાનાવરણં મંતે ! ભાસણ વંધઈ ? અભાસણ વંધઈ ?' હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણં કર્મ કિં ભાપકો વધ્નાતિ ? અભાપકો વા વધ્નાતિ ? મહા-વાન્ ઉત્તરયતિ- 'ગોયમા ! દો વિ મયણાણ' હે ગૌતમ ! દ્વાવપિ ભાપકઃ ભાપા-લબ્ધિમાન્ તદન્યઃ અભાપકથેતિ દ્વો મજનયા કદાચિદ્ જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, તથાહિ-સરાગો ભાપકઃ જ્ઞાનાવરણીયં વધ્નાતિ, વીતરાગસ્તુ ભાપકો ન વધ્નાતિ, અભાપકઃ અયોગી સિદ્ધથ ન વધ્નાતિ, પૃથિવ્યાદયો વિગ્રહ-

કાલ મેં હી આયુ કર્મ કા વંધ કરતે હેં-અવંધકાલ મેં નહીં કરતે હેં । (ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) જો જીવ સિદ્ધ હેં-અર્થાત્ ન પર્યાસિક હેં ઓર ન અપર્યાસિક હેં-વે આયુ કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં ।

અવ ભાપકવિપયકવંધદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હેં કિ- (જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ભાસણ વંધઈ ? અભાસણ વંધઈ ? ) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કો વયા ભાપક જીવ વાંધતા હેં વા અભાપક જીવ વાંધતા હેં ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દો વિ મયણાણ) યે દોનોં હી જીવ-અર્થાત્ જો ભાપાલબ્ધિવાલા હેં એસા ભાપક જીવ ઓર જા ભાપક સે ભિન્ન-અભાપકભાપાલબ્ધિવાલા નહીં હેં-એસે દોનોં હી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કદાચિત્ કરતે મી હેં ઓર કદાચિત્ નહીં મી કરતે હેં । ભાપક યદિ સરાગ હેં તો વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ

બાંધતા નથી. તેઓ આયુકર્મના બંધકાળે જ આયુકર્મનો બંધ કરે છે, અબંધ-કાળે કરતા નથી. "ઉવરિલ્લે ન વંધઈ" જે એવ સિદ્ધ હોય છે-એટલે કે ન પર્યાસિક અને ન અપર્યાસિક હોય છે-તેઓ આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

હવે ભાપકવિપયકબંધદ્વારને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે- (જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ભાસણ વંધઈ ? અભાસણ વંધઈ ? ) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મભાપક એવ બાંધે છે ? કે અભાપક એવ બાંધે છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે- "દો વિ મયણાણ" હે ગૌતમ ! ભાપાલબ્ધિવાળો ભાપક એવ તથા ભાપાલબ્ધિ વિનાનો અભાપક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો. ભાપક જે સરાગ હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ અવશ્ય બાંધે છે, પણ જો તો

‘નોપર્યાસક-નોઅપર્યાસક: સિદ્ધો ન વધ્નાત્યેવ, ‘એવં-આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ’ એવં જ્ઞાનાવરણવદેર આયુષ્કવર્જા: સપ્તાપિ કર્મ પ્રકૃતયો વેદિતવ્યા: । તથા ચ આયુષ્યર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ પર્યાસક: કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, અપર્યાસકસ્તુ વધ્નાત્યેવ, નોપર્યાસક-નો અપર્યાસક: સિદ્ધસ્તુ ન વધ્નાત્યેવેતિ ભાવ: । ‘આઝગં હેઢિલ્લા દો ભયણા’ આયુષ્કં કર્મ અપસ્તનો આઘો દો પર્યાસિકાઅપર્યાસિકો ભજનયાઆયુષો વન્ધકાલે

(ભજનયા) યહાં એસા કહા હૈ । (અપજ્જત્તણ વંધઈ) તથા જો જીવ અપર્યાસિક હૈ-પર્યાસિક નહીં હૈ-વહ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હી હૈ । (નોપજ્જત્તણ-નોઅપજ્જત્તણ ન વંધઈ) પરન્તુ જો જીવ ન પર્યાસિક કી કોટિ મેં હૈ ઓર ન અપર્યાસિક કી હી કોટિ મેં હૈ-એસા વહ સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હી નહીં હૈ (એવં આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ) જ્ઞાનાવરણ કી તરહ હી આયુષ્કવર્જ સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કો અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણીયકો કહ ચુકે હૈ ઓર આયુષ્કકા નિવેધ હૈ, અતઃ ૬ કર્મપ્રકૃતિયોં કો જાનના ચાહિયે-તથા જ આયુષ્ક વર્જિત દર્શનાવરણીય આદિ કર્મ ભી પર્યાસિક જીવ કદાચિત્ વાંધતા હૈ । ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈ । પરન્તુ જો અપર્યાસિક હોતા હૈ વહ તો વાંધતા હી હૈ । એવં જો ન પર્યાસિક હોતા હૈ ઓર ન અપર્યાસિક હોતા હૈ અર્થાત્ જો સિદ્ધ જીવ હૈ, વહ ભી નહીં વાંધતા હૈ । (આઝગં હેઢિલ્લા દો ભયણા) આયુકર્મ કે પર્યાસિક ઓર અપર્યાસિક યે દો જીવ વિકલ્પ સે-ભજના સે-વાંધતે હૈ અર્થાત્-આયુકર્મ કે વંધ

કહું છે. “અપજ્જત્તણ વંધઈ” તથા જે જીવ અપર્યાસિક હોય છે તે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે. (નોપજ્જત્તણ નોઅપજ્જત્તણ ન વંધઈ) પણ જે જીવ નોપર્યાસિકની કોટિમાં હોય છે, અને નોઅપર્યાસિકની કોટિમાં હોય છે, એવો સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો જ નથી (એવં આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ) પર્યાસિક દ્વારની, અપેક્ષાએ આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મબંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મનો બંધ પર્યાસિક જીવ બાંધે છે પણ જરૂર અને નથી પણ બાંધતો. અપર્યાસિક જીવ તો તે આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મનો બંધ અવશ્ય બાંધે જ છે. અને જે ન પર્યાસિક અને ન અપર્યાસિક હોય છે. એટલે કે સિદ્ધ જીવ હોય છે તે આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મનો બંધ કરતો નથી. (આઝગં હેઢિલ્લા દો ભયણા) પર્યાસિક અને અપર્યાસિક જીવ આયુકર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-એટલે કે ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક



કદાચિદ્ વેદનીયં કર્મ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, પૃથિવ્યાદિકઃ અભાપકઃ વધ્નાતિ, અયોગી, સિદ્ધઃ અભાપકો ન વધ્નાતિ, અત આહ—‘ ભજનયા ’ इति । अयं परीतद्वारमाश्रित्य गौतमः पृच्छति — ‘ णाणावरणिज्जं णं भंते कम्मं किं परित्ते वंधइ अपरित्ते वंधइ णोपरित्त-णोअपरित्ते वंधइ ’ हे भदन्त ! ज्ञानावरणीयं खलु कर्म किं परीतो वध्नाति ? अपरीतो वध्नाति ? नोपरीत-नोअपरीतो वध्नाति ? भगवानाह—‘ गोयमा ! परित्तं भयणाए ’ हे गौतम ! परीतः प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायः अल्पसंसारो वा भजनया ज्ञानावरणं कदाचिद् वध्नाति,

हैं और कदाचित् नहीं बांधते हैं—ऐसा जो कहा गया है—तो उसका अभिप्राय ऐसा है कि जब अभापकपद अयोगी और सिद्धों को रखा जाता है तब वे वेदनीय कर्म का बंध नहीं करते हैं । और जब विग्रह-गत्यापन्न पृथिव्यादिक जीवों को ग्रहण किया जाता है तब वे वेदनीय कर्म का बंध करते हैं । इसी कारण यहां पर भजना प्रकट की गई है ।

अब परीतद्वार को आश्रित करके गौतम प्रभु से पूछते हैं कि—( णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं परित्ते वंधइ, अपरित्ते वंधइ ? णो परित्त णो अपरीत्ते वंधइ ? ) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म को क्या परीत जीव बांधता है कि अपरीत जीव बांधता है—अथवा जो जीव न परीत है और न अपरीत है वह बांधता है ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि ( गोयमा ) हे गौतम ! ( परित्ते भयणाए ) परीत प्रत्येक शरीरवाला वनस्पति कायिक जीव अथवा अल्पसंसार वाला

ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી. આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે—અભાપક અયોગી અને સિદ્ધ પરમાત્માઓ વેદનીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, પણ વિગ્રહ ગતિમાં રહેલા પૃથ્વીકાય આદિ જીવો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે.

હવે પરીત દ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે—( ણાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કમ્મં કિં પરિત્તે વંધइ ? અપરિત્તે વંધइ ? ણો પરિત્ત-ણો અપરિત્તે વંધइ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું પરીત ( પ્રત્યેક શરીરવાળો વનસ્પતિકાય જીવ અથવા અલ્પ સંસારવાળો જીવ ) જીવ બાંધે છે ? કે અપરીત જીવ બાંધે છે ? કે નોપરીત જીવ બાંધે છે ? કે નોઅપરીત જીવ બાંધે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—( ગોયમા ! પરિત્તે ભયણાए ) હે ગૌતમ ! પરીત જીવ ( પ્રત્યેક શરીરવાળો વનસ્પતિકાયિક જીવ અથવા

ગત્યાઽપન્નાશ્ચાભાપકા વધ્નન્તિ, અત એવ ' દોષિ ભયળાણ ' રત્યુક્તમ્ । એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ ' એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયવર્ગીઃ સત્તાપિ કર્મ પ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, તથા ચ વેદનીયવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ ભાપકા-ભાપકો ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, ' વેયણિજ્જં ભાસણ વંધઈ ' વેદનીયં કર્મ ભાપકઃ ભાપાલબ્ધિમાન્ વધ્નાતિ, સયોગ્યવસાનસ્યાપિ ભાપા-લબ્ધિમતઃ શાતવેદનીયવન્ધકત્વાત્, ' અમાસણ ભયળાણ ' અભાપકઃ ભજનયા

અવશ્ય હી કરતા હૈ । ઓર ભાપક યદિ વીતરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવર-  
ણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । હસી તરહ અગોળી જીવ ઓર સિદ્ધ  
જીવ યે અભાપક હૈ તો યે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ ।  
તથા પૃથિવી આદિ જીવ જય વિગ્રહ ગતિ મેં રહતે હૈ તય યે બી અભા-  
પક માને જાતે હૈ-સો યે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે હી હૈ ।  
હસી કારણ યહાં દોનોં મેં જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વંધ કરને કી ભજના  
કહી ગઈ હૈ । ( એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ ) હસી તરહ સે અર્થાત્  
જ્ઞાનાવરણ કર્મ કી તરહ હી-વેદનીય વર્જ સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કો જાનના  
ચાહિયે-તથા ચ-વેદનીય વર્જિત દર્શનાવરણીય આદિ કર્મ બી ભાપક  
ઓર અભાપક યે દોનોં જીવ ભજના સે વાંધતે હૈ । ( વેયણિજ્જં ભાસણ  
વંધઈ ) વેદનીય કર્મ કો ભાપક જીવ વાંધતા હૈ-કારણ કિ સયોગિ  
કે અવસાનવાલા બી ભાપક-ભાપાલબ્ધિવાલા-શાતાવેદનીય કર્મ કા  
વંધ કરતા હૈ । ( અમાસણ ભયળાણ ) અભાપક જીવ કદાચિત્ વાંધતે

વીતરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો નથી. એજ પ્રમાણે અયોગી જીવ  
અને સિદ્ધ જીવ અભાપક હોય છે. તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.  
તથા પૃથ્વીકાય આદિ જીવ જ્યારે વિગ્રહ ગતિમાં રહેતા હોય છે, ત્યારે તેમને  
પણ અભાપક ગણવામાં આવે છે. પણ તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ અવશ્ય બાંધતા  
હોય છે. તે કારણે જ એવું કહ્યું છે કે " ભાપક અને અભાપક વિકલ્પે જ્ઞાના-  
વરણીય કર્મ બાંધે છે. " ( એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ ) ભાપક તથા  
અભાપક જીવોના વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મ બાંધતું કથન જ્ઞાનાવરણીય  
કર્મ પ્રમાણે સમજવું. એટલે કે વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનો બંધ  
ભાપક અને અભાપક જીવો બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતા. ( વેયણિજ્જં  
ભાસણ વંધઈ ) વેદનીય કર્મ ભાપક જીવ બાંધે છે, કારણ કે સયોગિ અવસ્થા-  
વાળો ભાપક ( ભાપાલબ્ધિવાળો જીવ ) પણ શાતાવેદનીયનો બંધ કરે છે.  
" અમાસણ ભયળાણ " અભાપક જીવ વેદનીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે. એટલે કે

અપરીતોઽપિ દ્વાવપિ ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, પ્રત્યેકકાયઃ સાધારણકાયઃ, પરીતઃ, અપરીતઃ અલ્પસંસાર, અનન્તસંસારો વા આયુર્વન્ધકાલે एव આયુર્વન્ધાતિ, તદ્ભિન્નકાલે ન આયુર્વન્ધાતિ, અતો 'ભજનયા' इत्युक्तम्, કિન્તુ 'णोपरित्त-णोअपरित्तो न वंधइ' નોપરીત-નોઅપરીતઃ સિદ્ધસ્તુ ન વધ્નાત્યેવ ।

અથ જ્ઞાનવિષયકવંધદ્વારમધિકૃત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કમ્મં કિં આભિણિવોદ્ધિયાણી વંધइ? સુચણાણી, ઓદ્ધિણાણી, મણપજ્જવનાણી, કેવલણાણી વંધइ? ' હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ આભિણિવોધિકજ્ઞાની

સિદ્ધ જીવ હૈં, વે કમ્મી નહીં વંધતે હૈં । ( આઝગં પરિત્તો વિ અપરિત્તો વિ ભયણાણ ) આયુષ્ક કર્મ કો પરીત મી ઓર અપરીત મી ભજના સે વંધતે હૈં । પ્રત્યેક કાયવાલા જીવ પરીત ઓર સાધારણ કાયવાલા જીવ અપરીત, અથવા અલ્પસંસારવાલા પરીત જીવ ઓર અનન્તસંસાર વાલા અપરીત જીવ વે દોનોં હી પ્રકાર કે જીવ આયુ કે વંધ કાલ મેં હી આયુ કા વંધ કરતે હૈં ઓર આયુ કે વંધકાલ કે અસમય મેં આયુ કા વંધ નહીં કરતે હૈં—इस कारण भजना यहां कही गई है । किन्तु ( णोपरित्त णोअपरित्तो न वंधइ ) ऐसा जो कहा गया है सो सिद्ध जीव न परीत हें और न अपरीत ही हें—इस कारण वे सिद्ध जीव आयुर्कर्म का वंध नहीं करते हें ।

અવ જ્ઞાનવિષયકવંધદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હૈં કિ—( જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં સ્વલુ મંતે ! કમ્મં કિં અભિણિવોદ્ધિયાણી વંધइ? સુચણાણી, ઓદ્ધિણાણી, મણપજ્જવનાણી, કેવલણાણી વંધइ? ) હે મદન્ત !

કહી કરતો નથી. ( આઝગં પરિત્તો વિ અપરિત્તો વિ ભયણાણ ) પરીત અને અપરીત એવો આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે. પ્રત્યેક કાયવાળો પરીત એવ અને સાધારણ કાયવાળો અપરીત એવ, અથવા અલ્પ સંસારવાળો પરીત એવ અને અનંત સંસારવાળો અપરીત એવ, એ બન્ને પ્રકારના એવ આયુના બંધકાળે જ આયુકર્મનો બંધ કરે છે પણ આયુના અબંધકાળે આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી, તે કારણે “ વિકલ્પે કર્મબંધ ” કહ્યો છે. પરંતુ ( ણો પરિત્ત ણો અપરિત્તો ન વંધइ ) નોપરીત અને નોઅપરીત એવો સિદ્ધ એવ આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી.

હવે ગૌતમસ્વામી જ્ઞાનવિષયકવંધદ્વારને અનુલક્ષીને નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે— ( જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં સ્વલુ મંતે ! કમ્મં કિં આભિણિવોદ્ધિયાણી વંધइ? સુચણાણી, ઓદ્ધિણાણી, મણપજ્જવનાણી, કેવલણાણી વંધइ? ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા જ્ઞાનવાળો એવ બાંધે છે? શું આભિણિવોધિક જ્ઞાની ( મતિજ્ઞાની )



કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સરાગપરીતો જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ, વીતરાગપરીતસ્તુ તન્નવધ્નાતિ, અતો ' ભજનયા ' ક્ત્યુક્તમ્ ' અપરિત્તે વંધઈ ' અપરીતઃ સાધારણ-વનસ્પતિકાયઃ અનન્તસંસારો વા વધ્નાત્યેવ, ' જોપરિત્ત-જોઅપરિત્તે ન વંધઈ ' નોપરીત-નોઅપરીતઃ સિદ્ધો ન વધ્નાતિ । ' એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત કમ્મ-પ્પયડીઓ ' એવં જ્ઞાનાવરણાદેવ આયુષ્કવર્જાઃ સત્ત કર્મપ્રકૃતયો જ્ઞાતવ્યાઃ તથાહિ-આયુષ્કવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્વપિ પરીતઃ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્નવધ્નાતિ, અપરીતસ્તુ વધ્નાત્યેવ, નોપરીત-નોઅપરીતઃ સિદ્ધસ્તુ ન કયમપિ વધ્નાતીતિ ભાવઃ । ' આઝગં પરિત્તો વિ અપરિત્તો વિ ભયણાપ ' આયુષ્કં કર્મ પરીતોઽપિ,

જીવ ભજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ । હસકા ભાવ યહ હૈ કિ યદિ પરીત જીવ સરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ ઓર યદિ વહ વીતરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતા હૈ । ( અપરિત્તે વંધઈ ) સાધારણ વનસ્પતિકાયરૂપ જીવ અથવા જીસકા સંસાર અનન્ત હૈ એસા જીવ-જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ ( જો પરિત્ત જો અપરિત્તે ન વંધઈ ) જો ન પરીત હૈ ઓર ન અપરીત હૈ એસા સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતા હૈ ( એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત કમ્મપ્પયડીઓ ) જ્ઞાનાવરણ કર્મ કી તરહ સે હી આયુષ્કવર્જ સાત કર્મપ્રકૃતિયો કો જાનના ચાહિયે-તથા ચ-આયુષ્કવર્જિત દર્શનાવરણીયાદિ કર્મો કો ભી પરીત જીવ કદાચિત્ વાંધતા હૈ ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈ । પર જો અપરીત જીવ હૈ, વહ તો વાંધતા હી હૈ । જો નો પરીત નો અપરીત હૈ અર્થાત્ એસે જો

અદ્ય સંસારવાળો (૭૫) જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-જો પરીત જીવ સરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે, પણ જો તે પરીત જીવ વીતરાગ હોય, તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો નથી. " અપરિત્તે વંધઈ " સાધારણ વનસ્પતિકાય રૂપ જીવ અથવા જોનો સંસાર અનન્ત હોય છે એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે જ છે. ( જોપરિત્ત-જોઅપરિત્તે ન વંધઈ ) પરંતુ નોપરિત્ત અને નોઅપરીત એવો સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. ( એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ કમ્મપ્પયડીઓ ) પરીત દ્વારની અપેક્ષાએ આયુકર્મ સિવાયની સાતે કર્મ-પ્રકૃતિયોના બંધનું સમસ્ત કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે પરીત જીવ આયુકર્મ સિવાયની દર્શનાવરણીય આદિ સાતે કર્મ-પ્રકૃતિયોનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે, અપરીત જીવ તો તે કર્મનો બંધ અવશ્ય બાંધે છે, પણ ન પરીત અને ન અપરીત રૂપ સિદ્ધ જીવ તે કર્મનો બંધ

નીયવર્જાઃ સત્તાપિ કર્મપ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, તથાહિ-વેદનીયવર્જિતાનિ દર્શના-  
વરણાદિકર્મણ્યપિ આભિનિવોધિકૃતાનિ પ્રભૃતયથત્વાદો જ્ઞાનિનઃ કદાચિત્ સરાગો-  
વસ્થાયાં વધ્નન્તિ, કદાચિદ્ વીતરાગાવસ્થાયાં ન વધ્નન્તિ, કેવલજ્ઞાની તુ ન  
વધ્નાતિ । વેયણિજ્જં હેટ્ઠિલ્લા ચત્તારિ વંધંતિ ’ વેદનીયં કર્મ અથસ્તનાઃ આઘા-  
થત્વાર આભિનિવોધિકૃતાનિપ્રભૃતયોઽપિ વધ્નન્તિ, છદ્મસ્થાનાં શાતાશાતવેદનીયસ્ય  
વીતરાગાણાં ચ શાતવેદનીયસ્ય વન્ધકત્વાત્ । ‘ કેવલજ્ઞાની ભયણાણ્ ’ કેવલજ્ઞાની  
ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ વેદનીયમ્, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સયોગિકેવલિનાં વેદ-  
નીયવન્ધકત્વાત્ અયોગિકેવલિનાં સિદ્ધાનાં ચાવન્ધકત્વાત્ ‘ ભજનયા ’ इत्युक्तम् ।

કે સર્વથા ક્ષય સે હી કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્ત હોતા હૈ ( એવં વેયણિજ્જ-  
વજ્જાઓ સત્તા વિ ) જ્ઞાનાવરણ કર્મ કી તરહ સે હી વેદનીયવર્જ સાત  
કર્મ પ્રકૃતિયાં જાનની ચાહિયે-તથા ચ-વેદનીયકર્મ સે રહિત દર્શના-  
વરણીય આદિ કર્મોં કા ભી આભિનિવોધિક આદિ ચારજ્ઞાનવાલે જીવ  
કદાચિત્ વંધ કરતે હૈં ઓર કદાચિત્ નહીં કરતે હૈં । જવ યે સરાગાવ-  
સ્થાપન્ન હોતે હૈં-તવ તો કરતે હૈં ઓર જવ યે વીતરાગાવસ્થાપન્ન હોતે  
હૈં તવ નહીં કરતે હૈં । કેવલજ્ઞાની તો इनका વંધ કરતે હી નહીં હૈ ।  
( વેયણિજ્જં હેટ્ઠિલ્લા ચત્તારિ વંધંતિ ) આદિ કે ચાર જ્ઞાનવાલે જીવ વેદ-  
ની કર્મ કા વંધ કરતે હૈં । ક્રયોં કિ છદ્મસ્થોં કે શાતાવેદનીય કા ઓર  
અશાતાવેદનીયકા વંધ હોતા હૈં ઓર વીતરાગોંકે કેવલ એક શાતાવેદનીય  
કા હી વન્ધ હોતા હૈ । ( કેવલજ્ઞાની ભયણાણ્ ) કેવલજ્ઞાની જીવ કે  
વેદનીય કર્મ કા વંધ વિકલ્પ સે હોતા હૈં એસા જો કહા ગયા હૈં ઉસકા  
કારણ યહ હૈં કિ જવ કેવલજ્ઞાની જીવ તેરહવે ગુણસ્થાન મેં રહતા

વિનાશ થવાથી તો કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થતું હોય છે. ( એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ  
સત્તા વિ ) વેદનીય કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયોના કર્મબંધ વિષેનું કથન  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે વેદનીય કર્મ સિવા-  
યના સાતે કર્મોં મતિજ્ઞાની, શ્રુતજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની અને મનાપર્યયજ્ઞાની  
ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતા નથી-જ્યારે તેઓ સરાગ અવસ્થાવાળા  
હોય છે ત્યારે કરે છે પણ વીતરાગ અવસ્થાવાળા હોય ત્યારે કરતા નથી.  
કેવળજ્ઞાની આત્મા તો તેમનો બંધ કરતો જ નથી. ( વેયણિજ્જં હેટ્ઠિલ્લા ચત્તારિ  
વંધંતિ ) વેદનીય કર્મનો બંધ પહેલાં ચાર જ્ઞાનવાળા જીવ કરે છે, કારણ કે  
છદ્મસ્થોને શાતાવેદનીયનો અને અશાતાવેદનીયનો બંધ હોય છે, પણ વીત-  
રાગોને માત્ર શાતાવેદનીયનો જ બંધ હોય છે. ( કેવલજ્ઞાની ભયણાણ્ ) કેવળ-  
જ્ઞાની જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે. આમ કહેવાનું કારણ એ  
મ ૧૧૬



મતિજ્ઞાની કિં જ્ઞાનવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ ? । મગધનાઠ-‘ ગોયમા । હેદ્વિહ્વા  
ચત્તારિ ભયણાણે ’ હે ગૌતમ ! અવસ્તના આગ્રાધસ્વારઃ અભિનિચોધિક-  
શ્રુતા-વધિ-મનઃપર્યવજ્ઞાનિનઃ ભજનયા કદાચિદ્ જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નન્તિ,  
કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, સરાગાવસ્થાયાં વધ્નન્તિ, વીતરાગાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણીયં  
કર્મ ન વધ્નન્તિ, અતો ‘ ભજનયા ’ ક્વયુક્તમ્, ‘ કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ ’ કેવલ-  
જ્ઞાની ન વધ્નાતિ । ‘ એવં વેયણિજ્ઞવજ્ઞાઓ સત્તયિ ’ એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદ-

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કૌન સે જ્ઞાનવાલા જીવ બાંધતા હૈ ? વયા આભિનિ-  
ચોધિકજ્ઞાની-મતિજ્ઞાની જીવ બાંધતા હૈ । યા શ્રુતજ્ઞાની જીવ બાંધતા હૈ ?  
યા અવધિજ્ઞાની જીવ બાંધતા હૈ યા મનઃ પર્યવજ્ઞાનો બાંધતા હૈ ? યા  
કેવલજ્ઞાની બાંધતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ  
( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( હેદ્વિહ્વા ચત્તારિ ભયણાણે ) આદિ કે ચાર જીવ  
મતિજ્ઞાની-શ્રુતજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની ઓર મનઃ પર્યવજ્ઞાની જીવ-કેવલ-  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ ભજના સે કરતે હેં-અર્થાત્ યે ચાર જીવ  
કદાચિત્ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે ભી હેં ઓર કદાચિત્ નહીં  
ભી કરતે હેં । જવ યે સરાગાવસ્થા મેં રહતે હેં, તવ તો જ્ઞાનાવરણીય  
કર્મ કા વંધ કરતે હેં ઓર જવ યે વીતરાગાવસ્થા મેં રહતે હેં-તવ જ્ઞાના  
વરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં । હસીલિયે યહાં ( ભજના ) પદ  
પ્રયુક્ત ક્રિયા ગયા હૈ । ( કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ ) કેવલજ્ઞાની આત્મા  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ-વયોં કિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ

જીવ બાંધે છે ? કે શ્રુતજ્ઞાની જીવ બાંધે છે ? કે અવધિજ્ઞાની જીવ બાંધે છે ?  
કે મનઃપર્યવજ્ઞાની જીવ બાંધે છે ? કે કેવલજ્ઞાની જીવ બાંધે છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે ( ગોયમા । ) હે ગૌતમ !  
( ‘ હેદ્વિહ્વા ચત્તારિ ભયણાણે ’ ) પહેલા ચાર પ્રકારના જીવો-મતિજ્ઞાની, શ્રુતજ્ઞાની,  
અવધિજ્ઞાની અને મનઃપર્યવજ્ઞાની જીવો-જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે  
કરે છે-એટલે કે તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક  
બાંધતા નથી. જ્યારે તેઓ સરાગ અવસ્થાવાળા હોય છે ત્યારે તો જ્ઞાના-  
વરણીય કર્મ બાંધે છે, પરંતુ જ્યારે વીતરાગ અવસ્થાવાળા હોય છે, ત્યારે  
તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી. તે કારણે અહીં “ વિકલ્પે કર્મ બાંધે  
છે ” એવું કહ્યું છે. ( કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ ). પરંતુ કેવલજ્ઞાની આત્મા તો  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો જ નથી, કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સર્વથા

અવ યોગવિપયકચંધદારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં મણજોગી વંધહ? વયજોગી વંધહ? કાયજોગી વંધહ? અયોગી વંધહ? હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ મનોયોગી વધ્નાતિ ? કિં વચોયોગી વધ્નાતિ ? કિં કાય-યોગી વધ્નાતિ ? કિં વા અયોગી વધ્નાતિ ? । મગવાનાહ-‘ ગોયમા ! હેદ્દિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ’ હે ગૌતમ ! અધસ્તનાઃ આચાર્યયઃ મનોવચઃકાયયોગિનઃ મજનયા કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, યે તાવત્ મનોવચઃકાય-વે અજ્ઞાની જીવ મજના સે કરતે હં-અર્થાત્ આયુકર્મ કે વંધકાલ મેં આયુ કા વંધ કરતે હં ઓર મિન્ન કાલમેં ઉસકા વંધ નહોં કરતે હં ।

અવ યોગવિપયકચંધદાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૂછતે હં કિ-‘(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધહ? વયજોગી વંધહ? કાયજોગી વંધહ? અયોગી વંધહ?) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ યોગદાર કી અપેક્ષા વિચાર કરને પર કૌનસા જીવ કરતા હે-કયા મનોયોગ વાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા વચનયોગવાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા જો કાયજોગવાલા જીવ હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા જિસકે ઇન ત્રીનોં યોગોં મેં સે ઇક મી યોગ નહોં હે એસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હં કિ-‘( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( હેદ્દિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ) આદિ કે ત્રીનોં

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-‘( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( આરગવજ્જ’ઓ સત્ત વિ વંધંતિ ) મતિ અજ્ઞાની આદિ જીવો આયુકર્મ સિવાયના સાતે કમોનો જંધ જાંધે છે. પરંતુ ( આરગં મયણાણ ) અજ્ઞાની જીવો આયુકર્મનો જંધ વિકલ્પે કરે છે. તેઓ આયુકર્મના જંધકાળે આયુનો જંધ કરે છે. અધકાળે તેઓ તેનો જંધ કરતા નથી.

હવે યોગવિપયકજંધદારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-‘(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધહ? વયજોગી વંધહ? કાયજોગી વંધહ? અયોગી વંધહ?) યોગદારની દૃષ્ટિએ વિચાર કરતા કયા યોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ? શું મનોયોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ? કે વચનયોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ? કે કાયયોગવાળો જીવ જાંધે છે ? કે અયોગી જીવ ( આ ત્રણે યોગમાંથી એક પણ યોગ ન હોય એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-‘( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( હેદ્દિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ) પહેલા ત્રણ યોગવાળા જીવો-મનયોગી, વચન-

અથ અજ્ઞાનવિપયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે કમ્મં કિં મહં અન્નાણિ વંધહ સુય અન્નાણી વંધહ ?’ હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિં મત્તજ્ઞાની વધ્નાતિ ? કિમ્ શ્રુતાજ્ઞાની વધ્નાતિ ? કિં વિભંગજ્ઞાની વધ્નાતિ ? । મગવાનાહ — ગોયમા ! આઝગવજ્ઞાઓ સત્તવિ વંધંતિ ’ હે ગૌતમ ! આયુષ્કવર્ત્તાઃ સત્તાઽપિ કર્મપ્રકૃતોઃ મત્તજ્ઞાનિમમૃતયો વધ્નન્તિ । ‘આઝગં મયણાણ’ આયુષ્કં મજનયા કદાચિદ્ આયુષ્કવંધનકાલે વધ્નન્તિ, કદાચિત્ તદ્ભિન્નકાલે આયુર્ન વધ્નન્તીત્પર્યઃ ।

હૈ તથ તો વહ જ્ઞાતાવેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા હી હૈ ઓર જય વહી ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં વિરાજમાન હો જાતા હૈ યા સિદ્ધ થનજાતા હૈ તથ ઉસકે વેદનીય કર્મ કાં વંધ નહીં હોતા હૈ ।

અવ અજ્ઞાનવિપયકવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રભુ સે પૂછતે હૈં કિ—(જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મહં અન્નાણી વંધહ, સુય અન્નાણી વંધહ, વિભંગ અન્નાણી વંધહ) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જય અજ્ઞાન કી અપેક્ષા લેકર વિચાર કરતે હૈં તો કૌન સાં અજ્ઞાની જીવ વાંધતા હૈં—વયા મતિ અજ્ઞાની વાંધતા હૈ ? યા શ્રુત અજ્ઞાની વાંધતાં હૈ ? યા વિભંગજ્ઞાની—જિસકા અવધિજ્ઞાન મિથ્યાત્વ કે સંબંધ સે વિપરીત થના હુઆ હૈ—એસા જીવ વાંધતા હૈ ? હિસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમે સે કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ વંધંતિ ) આયુ કો છોડકર વાકી કી સાતોં હી કર્મ પ્રકૃતિયોં કો મત્તજ્ઞાની આદિ જીવ વાંધતે હૈં । ( આઝગં મયણાણ ) આયુ કર્મ કા વંધ

છે કે જ્યારે કેવળજ્ઞાની જીવ તેરમાં ગુણસ્થાને રહે છે, ત્યારે તો તે જ્ઞાતાવેદનીય કર્મનો બંધ કરે જ છે, પણ જ્યારે તે ચૌદમાં ગુણસ્થાને વિરાજમાન થઈ જાય છે અથવા તો સિદ્ધપદને પ્રાપ્ત કરી લે છે, ત્યારે તે વેદનીય કર્મ બાંધતો નથી.

હવે અજ્ઞાનવિપયકવંધદ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મહં અન્નાણી વંધહ, સુય અન્નાણી વંધહ, વિભંગ અન્નાણી વંધહ ?) હે મહન્ત ! અજ્ઞાનીની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો કયો અજ્ઞાની જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું મતિ અજ્ઞાની બાંધે છે ? કે શ્રુત અજ્ઞાની બાંધે છે ? કે વિભંગ અજ્ઞાની બાંધે છે ?

( જેનું અવધિજ્ઞાન મિથ્યાત્વના સંબંધથી વિપરીત બનેલું હોય એવા જીવને વિભંગ અજ્ઞાની કહે છે. )



અવ યોગવિપયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં મણજોગી વંધઃ ? વયજોગી વંધઃ ? કાયજોગી વંધઃ ? અયોગી વંધઃ ? હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ મનોયોગી વધ્નાતિ ? કિં વચોયોગી વધ્નાતિ ? કિં કાય-યોગી વધ્નાતિ ? કિં વા અયોગો વધ્નાતિ ? । મગવાનાહ-‘ ગોયમા ! હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ’ હે ગૌતમ ! અથસ્તનાઃ આદ્યાસ્યયઃ મનોવચઃકાયયોગિનઃ મજ્જનયા કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, યે તાવત્ મનોવચઃકાય-વે અજ્ઞાની જીવ મજ્જના સે કરતે હે-અર્થાત્ આયુકર્મ કે વંધકાલ મેં આયુ કા વંધ કરતે હેં ઓર મિન્ન કાલમેં ઉસકા વંધ નહીં કરતે હેં ।

અવ યોગવિપયકવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમ પ્રભુ સે પૂછતે હેં કિ-‘(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધઃ ? વયજોગી વંધઃ ? કાયજોગી વંધઃ ? અયોગી વંધઃ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ યોગદ્વાર કી અપેક્ષા વિચાર કરને પર કૌનસા જીવ કરતા હે-કયા મનોયોગ વાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા વચનયોગવાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા જો કાયજોગવાલા જીવ હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા જિસકે ઇન તીનોં યોગોં મેં સે ઇક મી યોગ નહીં હે એસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-‘( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ) આદિ કે તીનોં

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-‘( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( આદ્યમવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધન્તિ ) મતિ અજ્ઞાની આદિ જીવો આયુકર્મ સિવાયના સાતે કમોનો જંધ જાંધે છે. પરંતુ ( આદ્યમ મયણાણ ) અજ્ઞાની જીવો આયુકર્મનો જંધ વિકલ્પે કરે છે. તેઓ આયુકર્મના જંધકાળે આયુનો જંધ કરે છે. અધકાળે તેઓ તેનો જંધ કરતા નથી.

હવે યોગવિપયકવંધદ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-‘(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધઃ ? વયજોગી વંધઃ ? કાયજોગી વંધઃ ? અયોગી વંધઃ ?) યોગદ્વારની દૃષ્ટિએ વિચાર કરતા કયા યોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ? શું મનોયોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ? કે વચનયોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ? કે કાયયોગવાળો જીવ જાંધે છે ? કે અયોગી જીવ ( આ ત્રણે યોગમાંથી એક પણ યોગ ન હોય એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જાંધે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-‘( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ) પહેલા ત્રણ યોગવાળા જીવો-મનયોગી, વચન-

યોગિનઃ ઉપરાન્તમોઢગુણસ્થાનકાર્ત્તિનઃ ધોળમોઢગુણસ્થાનકાર્ત્તિનઃ સયોગિ-  
કેવલિનશ્ચ વર્તન્તે તે જ્ઞાનાવરણં ન વધ્નન્તિ, તદન્યે તુ વધ્નન્ત્યેવ, ધ્વનો ' ભજ-  
નયા ' ઇત્યુક્તમ્ । 'અયોગી ન વંધઈ' 'અયોગી અયોગિકેવલી, સિદ્ધશ્ચ ન વધ્નાતિ,  
' એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્તવિ ' એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયવર્જાઃ સપ્તાપિ  
કર્મપ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, તથાહિ--વેદનીયવર્જાનિ દર્શનાવરણીયાદિ કર્માણિ  
મનોવચઃ કાયયોગિનઃ કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, અયોગી ન વધ્ના-

હી યોગવાલે-મન વચન ઓર કાય યોગવાલે જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ  
કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ-અર્થાત્ કદાચિત્ વે કરતે ખી હૈ ઓર  
કદાચિત્ વે નહીં ખી કરતે હૈ । તાત્પર્ય્ હસકા એસા હૈ કિ જો મન,  
વચન, કાય યોગવાલે જીવ જવતક ગ્યારહવે, ચારહવે ઓર તેરહવે ગુણ-  
સ્થાન મેં વર્તમાન રહતે હૈ વે વહાં પર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં  
કરતે હૈ । હન ગુણસ્થાનોં સે ભિન્ન નીચે કે ગુણસ્થાનોં મેં જો જીવ રહતે  
હૈ વે અવશ્ય ૨ હી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે હૈ । હસી યાત  
કો સૂચિત કરને કે લિયે સૂત્રકારને યહાં ભજના પદ કા પ્રયોગ કિયા  
હૈ । અયોગિ કેવલી ઓર સિદ્ધ જીવ હન યોગોં સે રહિત હો જાને કે  
કારણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ । ( એવં વેયણિજ્જવજ્જા-  
ઓ સત્ત વિ ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી તરહ સે હી વેદનીયવર્જ સાતોં હી  
કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં ખી જાનના ચાહિયે-તથા ચ-વેદનીય કર્મ  
કો છોડકર દર્શનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ યે મન, વચન,  
કાયયોગવાલે જીવ કખી કરતે હૈ ઓર કખી નહીં ખી કરતે હૈ । તથા

યોગી અને કાયયોગી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ખંધ વિકલ્પે કરે છે એટલે  
કે ક્યારેક તેઓ તેનો ખંધ કરે છે અને ક્યારેક નથી કરતા. આ કથનનો  
ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-મન, વચન અને કાયયોગવાળાં જીવો ત્યાં સુધી  
અગિયારમાં, બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનોમાં રહેલા હોય છે, ત્યાં સુધી તેઓ  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ખંધતા નથી, પણ તે ગુણસ્થાનો કરતાં નીચેના ગુણસ્થાનોમાં  
રહેલા જ્ઞાનાવરણીય કર્મ અવશ્ય ખંધે છે. એ વાત પ્રકટ કરવાને માટે  
“ વિકલ્પે ખંધે છે, ” એવું કથન કર્યું છે. અયોગી કેવલી અને સિદ્ધ જીવ  
આ યોગીથી રહિત થઈ જવાને કારણે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ખંધતા નથી.

( એવં વેયણિજ્જવજ્જાઓ સત્ત વિ ) વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનાં  
ખંધ વિષેનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે  
મન, વચન અને કાયયોગવાળા જીવો વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનાં  
ખંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતા નથી, તથા અયોગી જીવો આ સાતે



તિતી ભાવઃ । ‘ વેયણિજ્જં હેટ્ઠિહા વંધંતિ ’ વેદનીયં કર્મ અધસ્તનાઃ આઘાત્તયો  
મનોવચઃ કાયયોગિનઃ વધ્નન્તિ, સયોગાનાં વેદનીયવન્ધકત્વાત્, ‘ અજોગી ન  
વંધઈ ’ અયોગી વેદનીયં કર્મ ન વધ્નાતિ, અયોગિનઃ સર્વકર્મવિવન્ધકત્વાત્ ।

અથ ઉપયોગવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં  
કિં સાગારોવઉત્તે વંધઈ ’ હે ભગવન્ । જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ સાકારોપયુક્તો વધ્નાતિ ?  
‘ અજાગારોવઉત્તે વંધઈ ? ’ અનાકારોપયુક્તો વા વધ્નાતિ ? ભગવાનાહ—‘ ગોયમા !

અયોગી જીવ જન કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતા હૈ ( વેયણિજ્જં  
હેટ્ઠિહા વંધંતિ ) વેદનીય કર્મ કા વંધ તીનોં યોગ વાલે કરતે હૈં । કયોં  
કિ તીનોં યોગવાલોં કો વેદનીય કર્મ કા વંધક માના ગયા હૈ । ( અજા-  
ગી ન વંધઈ ) અયોગી જીવ વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । કયોં  
કિ અયોગી જીવ કે કિસી ભી કર્મ કા વંધ નહીં હોતા હૈ ।

અથ સૂત્રકાર ઉપયોગ વિષયકવંધદ્વારકો આશ્રિત કરકે જ્ઞાનાવરણીય  
આદિકર્મોંકે વંધનેકે વિષયમેં કથન કરતે હૈં—જસમેં ગૌતમપ્રશ્નસે એસા  
પૂછતે હૈં કિ—( જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સાગારોવઉત્તે વંધઈ ?  
અજાગારોવઉત્તે વંધઈ ? ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કૌન  
સે ઉપયોગ વાલા જીવ કરતા હૈ ?—કયા જો સાકારોપયોગ સે યુક્ત  
હોતા હૈ અર્થાત્ જ્ઞાનોપયોગવાલા હોના હૈ—વહ કરતા હૈ ? યા અનાકા-  
રોપયોગવાલા હોતા હૈ—અર્થાત્ દર્શનોપયોગવાલા હોતા હૈ—વહ કરતા  
હૈ ? જસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ—( ગોયમા ) હે ગૌતમ !

કર્મપ્રકૃતિયોના જંધ કહી પણ કરતા નથી. ( વેયણિજ્જં હેટ્ઠિહા વંધંતિ )  
વેદનીય કર્મનો જંધ ત્રણે યોગવાળા જીવો કરે છે, કારણ કે ત્રણે યોગવાળા  
જીવોને વેદનીય કર્મના જંધક માનવામાં આવેલા છે, ( અજોગી ન વંધઈ )  
પણ અયોગી જીવ વેદનીય કર્મનો જંધ કરતો નથી, કારણ કે અયોગી જીવને  
કોઈ પણ કર્મનો જંધ થતો નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી ઉપયોગ દ્વારને અનુલક્ષીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ  
કર્મોના જંધના વિષયમાં મહાવીર પ્રશ્નને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—( જાણા-  
વરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સાગારોવઉત્તે વંધઈ ? અજાગારોવઉત્તે વંધઈ ? )  
હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો જંધ કયા પ્રકારના ઉપયોગવાળો જીવ કરે  
છે ? શું સાકાર ઉપયોગવાળો જીવ ( જ્ઞાનોપયોગવાળો જીવ દર્શનોપયોગવાળો  
જીવ ) તેનો જંધ કરે છે ?

અટ્ટસુ વિ ભયણાણ ' હે ગૌતમ ! અટ્ટસ્યપિ કર્મપ્રકૃતિષુ ભજનયા વન્ધો મયતિ, તથાદિ-અટ્ટાવપિકર્મપ્રકૃતીઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિપ્રકૃતીઃ, સાકારોપયુક્તઃ અનાકારોપ-યુક્તો વા ભજનયા-કદાચિદ્ વન્ધાતિ, કદાચિન્ન વન્ધાતિ, સાકારઽનાકારો સયોગાનામ્ અયોગાનાં ચ ઉપયોગો સ્યાતામ્, તત્રોપયોગદ્વયેઽપિ સયોગા જ્ઞાના-વરણાદિકર્મપ્રકૃતીઃ યથાયથં વન્ધન્તિ, અયોગાસ્તુ ન વન્ધન્તિ, અતો ' ભજ-નયા ' ઇત્યુક્તમ્ ।

અથ આહારકવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ- ' જ્ઞાનાવરણિજ્જં જં મંતે ! કમ્મં કિં આહારણ વંધઈ ? ' હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ આહારકો વન્ધાતિ ? ' અજાહારણ વંધઈ ? ' કિમ્ અનાહારકો વન્ધાતિ ? મગધાનાહ- ' ગોયમા ! દોવિ ભયણાણ ' હે ગૌતમ ! દ્વૌ અપિ આહારકઃ, અનાહારકશ્ચ ભજ-

(અટ્ટસુ વિ ભયણાણ) આઠોં મી કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં યહાં ભજના સે વંધ કરના કહા ગયા હૈ-ઇસ વિષય મેં છુલાશા ઇસ પ્રકાર સે હૈ-સયોગ ઓર અયોગ ઇન દોનોં કે સાકાર ઓર અનાકાર દોનોં પ્રકાર કા ઉપયોગ હોતા હૈ । સયોગ અર્થાત્ યોગસહિત જીવ ઇન દોનોં મી ઉપયોગોં મેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા યથાયોગ્ય વંધ કરતે હૈ । ઓર જો યોગ સે રહિત જીવ હૈં વે ઇન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્ર-કૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતે હૈં ।

અવ આહારવિષયકવંધકદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમપ્રભુસે પૂછતે હૈં કિ (જ્ઞાનાવરણિજ્જં જં મંતે ! કમ્મં કિં આહારણ વંધઈ ?) હેમહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા આહારક જીવ વાંધતે હૈં યા (અજાહારણ વંધઈ) અનાહારક જીવ વાંધતે હૈં ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે

ઉત્તર.—(ગોયમા ! અટ્ટસુ વિ ભયણાણ) હે ગૌતમ ! તે બન્ને પ્રકારના જીવો આઠે કર્મોનો બંધ વિકલ્પે કરે છે-ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતા નથી આ વિષયમાં નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરી શકાય-સયોગ અને અયોગ એ બન્નેના સાકાર અને અનાકાર એ બન્ને પ્રકારનો ઉપયોગ હોય છે. સયોગ જીવ એટલે કે યોગયુક્ત જીવ એ બન્ને ઉપયોગોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોનો યથાયોગ્ય બંધ કરે છે, પણ જે જીવો યોગથી રહિત હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરતા નથી.

હવે આહારક દ્વારને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(જ્ઞાનાવરણિજ્જં જં મંતે ! કમ્મં કિં આહારણ વંધઈ ? અજા-હારણ વંધઈ ?) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું આહારક જીવ બાંધે છે ? કે અનાહારક જીવ બાંધે છે ?

નયા કદાચિદ્ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, આહારકો વીતરાગોઽપિ ભવતિ, નાસૌ જ્ઞાનાવરણં વધ્નાતિ, સરાગસ્તુ આહારકો વધ્નાતિ, इति भजनया आहारको वध्नाति । तथा अनाहारकः समुद्घातगतकेवली, विग्रहगत्याऽऽपन्नश्च भवेत्, तत्र समुद्घातगतकेवली अनाहारको न वध्नाति, विग्रहगत्यापन्नस्तु अनाहारको वध्नाति, इति भजनया अनाहारको वध्नाति, । ' एवं वेद्यणिज्जाऽऽउगवज्जाणं छण्हं ' एवं જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયાયુક્તવર્જિતાં પળ્લામપિ કર્મપ્રકૃતીનામ્ આલાપકાઃ સ્વયમૂહનીયાઃ, तथा हि-वेदनीयायुक्त्वर्जितानि दर्शनावरणादिकर्मण्यपि

हैं कि ( गोयमा ) हे गौतम ! ( दो वि भयणाए ) आहारक और अनाहारक जीव भजना से ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करते हैं । यदि आहारक जीव वीतराग है तो वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है, और यदि वह सराग है तो अवश्य ही ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है । इसलिये भजना से आहारक जीव ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है ऐसा कहा है । जिस समय केवली भगवान् समुद्घात करते हैं उस समय वे, तथा विग्रहगति में रहा हुआ जीव ये अनाहारक होते हैं । अनाहारक समुद्घातगत केवली ज्ञानावरणकर्म का बंध नहीं करता है और विग्रहगतिवाला अनाहारक जीव ज्ञानावरणकर्म का बंध करता है-इसलिये भजना से अनाहारक जीव ज्ञानावरण कर्म का बंध करता है ऐसा कहा है । ( एवं वेद्यणिज्जा आउगवज्जाणं छण्हं ) ज्ञानावरणकर्म की तरह से ही वेदनीय और आयुक्त कर्म को छोड़कर

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-( ગોયમા ! દો વિ ભયણાએ ) હે ગૌતમ ! આહારક અને અનાહારક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે એટલે કે ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતા નથી. જો આહારક એવ વીતરાગ હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી, પણ જો તે સરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે. તેથી જ એવું કહ્યું છે કે " આહારક એવ વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. " જે સમયે કેવલી ભગવાન સમુદ્ઘાત કરે છે ત્યારે તેઓ અનાહારક હોય છે, અને વિગ્રહ ગતિમાં રહેલો એવ અનાહારક હોય છે. અનાહારક સમુદ્ઘાતગત કેવલી ભગવાન જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, પણ વિગ્રહ ગતિમાં જો અનાહારક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. તેથી જ એવું કહ્યું છે કે " અનાહારક વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. ( एवं वेद्यणिज्जा आउगवज्जाणं छण्हं ) આહારક અને અનાહારક એવાના વેદનીય અને આયુ-



અદ્ભુતિ મયણાણ' હે ગૌતમ ! અદ્ભુતપિ કર્મપ્રકૃતિષુ મજ્જનયા વન્થો મયતિ, તથાહિ-અદ્ભુતપિ કર્મપ્રકૃતીઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિપ્રકૃતીઃ, સાકારોપયુક્તઃ અનાકારોપયુક્તો વા મજ્જનયા-કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાગિન્ન વધ્નાતિ, સાકાર(અનાકાર) સયોગાનામ્ અયોગાનાં ચ ઉપયોગો સ્યાતામ્, તત્રોપયોગદ્વયેઽપિ સયોગા જ્ઞાનાવરણાદિકર્મપ્રકૃતીઃ યથાપયં વધ્નન્તિ, અયોગાસ્તુ ન વધ્નન્તિ, અતો 'મજ્જનયા' इत्युक्तम् ।

અથ આહારકવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂછતિ- 'જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ?' હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મં કિમ્ આહારકો વધ્નાતિ ? 'અજાહારણ વંધઈ' કિમ્ અનાહારકો વધ્નાતિ ? મગધનાહ- 'ગોયમા ! દોવિ મયણાણ' હે ગૌતમ ! દ્વો અપિ આહારકઃ, અનાહારકથ મન- (અદ્ભુતિ મયણાણ) આઠોં ભી કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં યહાં મજ્જના સે વંધ કરના કહા ગયા હૈ-ઇસ વિષય મેં છુલાશા ઇસ પ્રકાર સે હૈ-સયોગ ઓર અયોગ ઇન દોનોં કે સાકાર ઓર અનાકાર દોનોં પ્રકાર કા ઉપયોગ હોતા હૈ । સયોગ અર્થાત્ યોગસહિત જીવ ઇન દોનોં ભી ઉપયોગોં મેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા યથાયોગ્ય વંધ કરતે હૈં । ઓર જો યોગ સે રહિત જીવ હૈં વે ઇન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતે હૈં ।

અવ આહારવિષયકવંધકદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમપ્રભુસે પૂછતે હૈં કિં (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા આહારક જીવ વાંધતે હૈં યા (અજાહારણ વંધઈ) અનાહારક જીવ વાંધતે હૈં ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે

ઉત્તર—(ગોયમા ! અદ્ભુતિ મયણાણ) હે ગૌતમ ! તે બન્ને પ્રકારના જીવો આઠે કમોનો બંધ વિકલ્પે કરે છે-કયારેક કરે છે અને કયારેક કરતા નથી આ વિષયમાં નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરી શકાય-સયોગ અને અયોગ એ બન્નેના સાકાર અને અનાકાર એ બન્ને પ્રકારનો ઉપયોગ હોય છે. સયોગ જીવ એટલે કે યોગયુક્ત જીવ એ બન્ને ઉપયોગોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોનો યથાયોગ્ય બંધ કરે છે, પણ જે જીવો યોગથી રહિત હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરતા નથી.

હવે આહારક દ્વારને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ? અજાહારણ વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું આહારક જીવ બાંધે છે ? કે અનાહારક જીવ બાંધે છે ?

અથ સૂક્ષ્મવિષયકવંધદારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં સુદ્ધમે, વંધઈ વાયરે વંધઈ ?’ હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિં સૂક્ષ્મઃ વધ્નાતિ વાદરો વા વધ્નાતિ ? ‘જ્ઞોસુદ્ધમ-જ્ઞોવાયરે વંધઈ ?’ નોસૂક્ષ્મ-નોવાદરો વા કિં વધ્નાતિ ? મગરાનાહ—‘ગોયમા ! સુદ્ધમે વંધઈ’ હે ગૌતમ ! સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, ‘વાયરે મયણાણ’ વાદરો મજ્જનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, ચીતરાગવાદરાણાં જ્ઞાનાવરણાવન્ધકત્વાત્, સરાગવાદરાણાં ચ તદ્વન્ધ-

હારક જીવ-સમુદ્ધાનગત કેવલી ઓર વિગ્રહગતિ વાળે જીવ-આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈં । ક્યોં કિં ઇસ અવસ્થા મૈં વે આયુ કર્મ કે અવન્ધક માને ગયે હૈં ।

અવ સૂક્ષ્મવિષયકવંધદારકા આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રભુસે પૂછતે હૈં કિ—( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સુદ્ધમે વંધઈ, વાયરે વંધઈ ? ) હે મહન્ત ! સૂક્ષ્મદાર થી અપેક્ષા વિચાર કરનેપર કૌનસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? કયા જો સૂક્ષ્મનામકર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હૈં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? યા જો વાદર નામ કર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હૈં, વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? ( જ્ઞો સુદ્ધમ જ્ઞો વાયરે વંધઈ ) જો જીવ ન સૂક્ષ્મ હૈં ઓર ન વાદર હૈં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? ઇસકે ઉત્તર મૈં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હૈં ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સુદ્ધમે વંધઈ ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ( વાયરે મયણાણ ) વાદર જીવ મજ્જના સે

હારણ જો વંધઈ ) અનાહારક જીવ એટલે કે સમુદ્ધાનગત કેવલી અને વિગ્રહ ગતિવાળા જીવો આયુકર્મના બંધ કરતા નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં તેમને આયુકર્મના અવન્ધક માનવામાં આવેલા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સૂક્ષ્મદારને અનુલક્ષીને મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સુદ્ધમે વંધઈ ? ) હે મહન્ત ! સૂક્ષ્મદારની અપેક્ષાએ વિચાર કરતા કયો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું સૂક્ષ્મનામકર્મના ઉદયવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? કે “ વાયરે વંધઈ ? ” બાદર ( સ્થૂળ ) નામકર્મના ઉદયવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? અથવા ( જ્ઞો સુદ્ધમ જ્ઞો વાયરે વંધઈ ) જે જીવ ન સૂક્ષ્મ અને ન બાદર હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( સુદ્ધમે વંધઈ ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બંધ કરે છે, ( વાયરે મયણાણ ) બાદર ( સ્થૂળ ) જીવ તે કર્મના



આહારકઃ, અનાહારકય કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ 'વેયગિજ્જં આહારણ વંધઈ' વેદનીયં કર્મ આહારકો વધ્નાતિ, અયોગિર્જાનાં સર્વેણાં વેદનીયકર્મ-વન્ધકત્વાત્, 'અણાહારણ મયણાણ' અનાહારકો મજનયા વિગ્રહગત્યાપન્નઃ, સમુદ્ધાતગતકેવલી ચ વેદનીયં વધ્નાતિ, અયોગી, સિદ્ધશ્ચ ન વધ્નાતીતિ માત્રઃ । 'આઉણ આહારણ મયણાણ' આયુક્કં કર્મ આહારકો મજનયા, આયુર્વન્ધકાલે ઇવાયુક્કવન્ધકત્વાત્, તદ્મિન્નકાલે ચ તદ્વન્ધકત્વાત્, 'અણાહારણ ણ વંધઈ' અનાહારકો ન વધ્નાતિ, સમુદ્ધાતગતકેવલિનાં વિગ્રહગતિગતાનાં ચ આયુક્કા-વન્ધકત્વાત્ ।

દર્શનાવરણ આદિ છ કર્મપ્રકૃતિયોં કે આલાપક-સૂત્ર-અપને આપ વિચાર લેના ચાહિયે જૈસે-વેદનીય ઓર આયુક્ક કો છોડકર દર્શનાવરણ આદિ કર્મોં કો ઓ આહારક જીવ ઓર અનાહારક જીવ કદાચિત્ વાંધતા હૈ ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈ । (વેયગિજ્જં આહારણ વંધઈ) વેદનીય કર્મ કો આહારક જીવ વાંધતા હૈ । ક્યોં કિ અયોગી કો છોડકર સત્ત્વ હી જીવ વેદનીય કર્મકે વંધક માને ગયે હૈ । (આણાહારણ મયણાણ) અનાહારક જીવ મજના સે વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ-અર્થાત્ વિગ્રહગતિવાલા અનાહારક જીવ ઓર સમુદ્ધાતગત કેવલી તો વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતે હૈ ઓર અયોગી જીવ તથા સિદ્ધપરમાત્મા યે વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ । (આઉણ આહારણ મયણાણ) આહારક જીવ આયુકર્મ કા વંધ ડસકે વંધ હોને કે સમય મેં હી કરતા હૈ ઓર ભિન્ન સમય મેં નહીં કરતા હૈ । (અણાહારણ ણ વંધઈ) અના-

કર્મ સિવાયના છ કર્મખંધોનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે આયુકર્મ સિવાયના છ કર્મોના બંધ આહારક અને અનાહારક જીવો વિકલ્પે બાંધે છે-બાંધે છે પણ ખરાં અને નથી પણ બાંધતા. (વેયગિજ્જં આહારણ વંધઈ) વેદનીય કર્મ આહારક જીવ બાંધે છે. આનું કારણ એ છે કે અયોગી સિવાયના સધળા જીવોને વેદનીય કર્મના બંધક માનવામાં આવેલા છે. (અણાહારણ મયણાણ) અનાહારક જીવ વેદનીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે—

વિગ્રહ ગતિવાળો અનાહારક જીવ અને સમુદ્ધાતગત કેવલી તો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ અયોગી જીવ તથા સિદ્ધ પરમાત્મા વેદનીય કર્મનો બંધ કરતા નથી. (આઉણ આહારણ મયણાણ) આહારક જીવ આયુકર્મના બંધ વિકલ્પે કરે છે-એટલે કે આયુકર્મના બંધકાળે તે આયુકર્મનો બંધ કરે છે, પણ અબંધકાળે તેઓ આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી. (અણા-

અથ સૂક્ષ્મવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં સુદ્ધમે, વંધઈ વાયરે વંધઈ ?’ હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિં સૂક્ષ્મઃ વધ્નાતિ વાદરો વા વધ્નાતિ ? ‘જ્ઞોસુદ્ધમ-જ્ઞોવાયરે વંધઈ ?’ નોસૂક્ષ્મ-નોવાદરો વા કિં વધ્નાતિ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા ! સુદ્ધમે વંધઈ’ હે ગૌતમ ! સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, ‘વાયરે ભયણાણ’ વાદરો ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, વીતરાગવાદરાણાં જ્ઞાનાવરણાવન્ધકત્વાત્, સરાગવાદરાણાં ચ તદ્વન્ધ-

હારક જીવ-સમુદ્ધાનગત કેવલી ઓર વિગ્રહગતિ વાળે જીવ-આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈં । ક્યોં કિં ઇસ અવસ્થા મેં વે આયુ કર્મ કે અવન્ધક માને ગયે હૈં ।

અથ સૂક્ષ્મવિષયકવંધદ્વારકા આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હૈં.કિ—( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સુદ્ધમે વંધઈ, વાયરે વંધઈ ? ) હે ભદ્રન્ત ! સૂક્ષ્મદ્વાર કી અપેક્ષા વિચાર કરનેપર કૌનસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? કયા જો સૂક્ષ્મનામકર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હૈં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? યા જો વાદર નામ કર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હૈં, વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? ( જ્ઞો સુદ્ધમ જ્ઞો વાયરે વંધઈ ) જો જીવ ન સૂક્ષ્મ હૈં ઓર ન વાદર હૈં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈં ? ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સુદ્ધમે વંધઈ ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા વંધ કરતા હૈં ( વાયરે ભયણાણ ) વાદર જીવ ભજના સે

હારણ જો વંધઈ ) અનાહારક જીવ એટલે કે સમુદ્ધાનગત કેવલી અને વિગ્રહ ગતિવાળા જીવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં તેમને આયુકર્મના અવન્ધક માનવામાં આવેલા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સૂક્ષ્મદ્વારને અનુલક્ષીને મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સુદ્ધમે વંધઈ ? ) હે ભદ્રન્ત ! સૂક્ષ્મદ્વારની અપેક્ષાએ વિચાર કરતા કયો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું સૂક્ષ્મનામકર્મના ઉદયવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? કે “ વાયરે વંધઈ ? ” બાદર ( સ્થૂળ ) નામકર્મના ઉદયવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? અથવા ( જ્ઞો સુદ્ધમ જ્ઞો વાયરે વંધઈ ) જે જીવ ન સૂક્ષ્મ અને ન બાદર હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( સુદ્ધમે વંધઈ ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, ( વાયરે ભયણાણ ) બાદર ( સ્થૂળ ) જીવ તે કર્મનો

ફત્વાત્, અતો 'ભજનયા' इत्युक्तम्, किन्तु 'णोऽसुहृम-णोऽवायरे न बंध' नोऽसुक्ष्म-नोऽवादरो हि सिद्धो न बध्नाति, सिद्धस्य बन्धकत्वाभावात्, 'एवं आउगवज्जाओ सत्तवि' एवं ज्ञानावरणवदेव आयुष्कवर्जाः सप्तापि कर्मप्रकृतयो वेदितव्याः, तथाहि आयुष्कवर्जितानि दर्शनावरणादिकर्माण्यपि सूक्ष्मो बध्नाति, वादरो भजनया कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न बध्नाति, नोऽसुक्ष्म-नोऽवादरस्तु सिद्धो न बध्नात्येवेत्यर्थः । 'आउए सुहृमे, वायरे भयणाए' आयुष्कं सूक्ष्मः वादरश्च भजनया कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न बध्नाति, आयुर्वन्धकाले आयुर्व-

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ અર્થાત્ જો વાદર જીવ વીતરાગ હૈ વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હૈ-ઑર જો વાદર જીવ સરાગ હૈ વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતે હૈ । ( ણો સુહૃમ ણો વાયરે ન બંધઈ ) સિદ્ધ જીવ જો કિ ન સૂક્ષ્મ હૈ ઑર ન વાદર હૈ, વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હૈ । ક્યોં કિ સિદ્ધ જીવ કિસી મી કર્મ કા બંધ કરને વાલે નહીં હોતે હૈ । ( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि ) જ્ઞાનાવરણ કી તરહ સે હીં આયુષ્કવર્જ સાત કર્મોં કો મી જાનનાં ચાહિયે । તથા ચ-આયુષ્કવર્જ દર્શનાવરણ આદિ કર્મોં કો મી સૂક્ષ્મ જીવ વાંધતે હૈ । વાદર ઇન્હેં ભજનાં સે વાંધતા હૈ । ઑર જો સૂક્ષ્મ વાદર નહીં હૈ એસે સિદ્ધ જીવ ઇન્હેં નહીં વાંધતે હૈ । ( आउए सुहृमे, वायरे भयणाए ) આયુષ્કર્મ કો સૂક્ષ્મ ઑર વાદર જીવ ભજના સે વાંધતા હૈ-અર્થાત્ આયુષ્કે વંધકાલે મેં આયુ કા વંધ કરતા હૈ ઑર મિત્રકાલ મેં-

બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પણ કરતો. વીતરાગ વાદર હવે તે કર્મનો બંધ કરતો નથી, પણ સરાગ વાદર હવે તેનો બંધ કરે છે. ( ણો સુહૃમ, ણો વાયરે ન બંધઈ ) સિદ્ધ હવે કે જે સૂક્ષ્મ પણ નથી અને વાદર પણ નથી, તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે સિદ્ધ હવે કંઈ પણ કર્મનો બંધ કરતા નથી. ( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि ) આ દ્વારની અંપેક્ષાએ આયુષ્કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયોના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું.

એટલે કે આયુષ્કર્મ સિવાયના દર્શનાવરણીય આદિ સાતે કર્મો પણ સૂક્ષ્મ હવે બાંધે છે, વાદર હવે તે સાતે કર્મો વિકલ્પે બાંધે છે, અને જે હવે સૂક્ષ્મ કે વાદર નથી એવા સિદ્ધગતિના હવે તેમનો બંધ કરતા નથી. ( आउए सुहृमे वायरे भयणाए ) આયુષ્કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ અને વાદર હવે વિકલ્પે બાંધે છે. એટલે કે તેઓ આયુના બંધકાળે આયુનો બંધ કરે છે,



ન્યક્ત્વાત્, તદ્ભિન્નકાલે તદવન્ધકત્વાત્ । ' ણોસુહુમ-ણોવાયરે ન વંધહ ' નોમ્હુમ-નોવાદરો હિ સિદ્ધો જીવો ન આયુષ્કં કર્મ વધ્નાતિ । અથ ચરમદ્વાર-માશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂછતિ—' ણાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધહ, અચરિમે વંધહ ? ' જ્ઞાનાવરણીયં સ્વત્તુ કર્મં કિં ચરમો વધ્નાતિ ? કિં ના અચરમો વધ્નાતિ ? મગવાનાહ—' ગોયમા ! અટ્ટુ વિ ભયણાણ ' હે ગૌતમ ! ચરમઃ, અચરમશ્ચ અપિ કર્મપ્રકૃતીઃ ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, એવંદં વોધ્યમ્—યસ્ય ચરમો ભવોભવિષ્યતિ સઃ ચરમઃ, યસ્ય તુ કદાપિ ચરમો ભવો ન

અવંધકાલ મેં-આયુ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । ( ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ ) સિદ્ધ જીવ મી આયુ કા વંધ નહીં કરતે હૈ ।

અવ ચરમવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રભુસે પૂછતે હૈં કિ ણાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધહ, અચરિમે વંધહ ) હે ભદન્ત ! જવ ચરમદ્વાર કી અપેક્ષા સે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે વાંધને કા વિચાર કિયા જાતા હૈ તો કોન સા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? વયા જો ચરમ જીવ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? વા જો અચરમ જીવ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? મગવાના હસકા ઉત્તર દેતે હુણ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અટ્ટુ વિ ભયણાણ ) ચાહે ચરમ જીવ હો—ચાહે અચરમ જીવ હો યે દોનોં હો ભજના સે આઠોં મી કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ કરતે હૈં । જિસ જીવ કા અન્તિમ ભવ હોગા વહ ચરમ જીવ હૈ ઓર જિસકા કમી મી અન્તિમ-

પણુ અવંધકાળે આયુનો વંધ કરતા નથી ( ણોસુહુમ ણોવાયરે ન વંધહ ) સિદ્ધ જીવ પણ આયુનો વંધ કરતા નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી ચરમદ્વારને અનુલક્ષીને મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( ણાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધહ, અચરિમે વંધહ ? ) હે ભદન્ત ! ચરમદ્વારની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મો કોણ : વંધે છે ? શું ચરમ જીવ ( અન્તિમ ભવ કરીને મોક્ષે જનાર જીવ ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો વંધ કરે છે ? કે અચરમ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો વંધ કરે છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અટ્ટુ વિ ભયણાણ ) ચરમ જીવ એને અચરમ જીવ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોનો વંધ કરે છે—એટલે કે તેઓ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોનો વંધ કરે છે પણ ખરાં અને નથી પણ કરતા.

ફત્વાત્, અતો 'ભજનયા' इत्युक्तम्, किन्तु 'णोसुक्ष्म-णोवायरे न बंध' नोसૂક્ષ્મ-નોવાદરો हि सिद्धो न बध्नाति, सिद्धस्य बन्धकत्वाभावात्, 'एवं आउगवज्जाओ सत्तवि' एवं જ્ઞાનાવરણવદેવ આયુષ્કવર્જાઃ સત્તાપિ કર્મપ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, तथाहि आयुष्कवर्जितानि दर्शनावरणादिकर्माण्यपि सूक्ष्मो बध्नाति, વાદરો ભજનયા કદાચિદ્ બધ્નાતિ, कदाचिन्न बध्नाति, नोसूक्ष्म-नोवादरस्तु सिद्धो न बध्नात्येवेत्यर्थः । 'आउए सुद्धमे, वायरे भयणाए' आयुष्कं सूक्ष्मः वादरश्च भजनया कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न बध्नाति, आयुर्वन्धकाले आयुर्व-

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હે અર્થાત્ જો વાદર જીવ વીતરાગ હે વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હે-ઔર જો વાદર જીવ સરાગ હે વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતે હે । ( ણો સુદ્ધમે ણો વાયરે ન બંધઈ ) સિદ્ધ જીવ જો કિ ન સૂક્ષ્મ હે ઔર ન વાદર હે, વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હે । ક્યોં કિ સિદ્ધ જીવ કિસી મી કર્મ કાં બંધ કરને વાલે નહીં હોતે હે । ( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि ) જ્ઞાનાવરણ કી તરહ સે હી આયુષ્કવર્જ સાત કર્મોં કો મી જાનનાં ચાંહિયે । तथा च-आयुष्कवर्ज दर्शनावरण आदि कर्मों को भी सूक्ष्म जीव बांधते हैं । वादर इन्हें भजनां से बांधता है । और जो सूक्ष्म वादर नहीं हैं ऐसे सिद्ध जीव इन्हें नहीं बांधते हैं । ( आउए सुद्धमे, वायरे भयणाए ) आयुर्कर्म को सूक्ष्म और वादर जीव भजना से बांधता है-अर्थात् आयुर्के बंधकाल में आयु का बंध करता है और भिन्नकाल में-

બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પણ કરતો. વીતરાગ બાદર જીવ તે કર્મનો બંધ કરતો નથી, પણ સરાગ બાદર જીવ તેનો બંધ કરે છે. ( ણો સુદ્ધમે, ણો વાયરે ન બંધઈ ) સિદ્ધ જીવ કે જે સૂક્ષ્મ પણ નથી અને બાદર પણ નથી, તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે સિદ્ધ જીવ કોઈ પણ કર્મનો બંધ કરતા નથી. ( एवं आउगवज्जाओ सत्त वि ) આ દ્વારની અપેક્ષાએ આયુકર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું.

એટલે કે આયુકર્મ સિવાયના દર્શનાવરણીય આદિ સાતે કર્મો પણ સૂક્ષ્મ જીવો બાંધે છે, બાદર જીવો તે સાતે કર્મો વિકલ્પે બાંધે છે, અને જે જીવો સૂક્ષ્મ કે બાદર નથી એવા સિદ્ધગતિના જીવો તેમનો બંધ કરતા નથી. ( आउए सुद्धमे वायरे भयणाए ) આયુકર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ અને બાદર જીવો વિકલ્પે બાંધે છે. એટલે કે તેઓ આયુના બંધકાળે આયુનો બંધ કરે છે,



અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા !  
સવ્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, ઇત્થિવેયગા સંલેજ્જગુણા,  
અવેયગા અણંતગુણા, નપુંસગવેયગા અણંતગુણા, ઇણંસિં  
સવ્વેણિં પયાણં અપ્પ-વહુગાઈં ઉચ્ચારેયઠ્ઠાઈં, જાવ-સવ્વ-  
ત્થોવા જીવા અચરિમા, ચરિમા અણંતગુણા, સેવં ભંતે !  
સેવં ભંતે ! ત્તિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

॥ હટ્ઠસપ્પ તદ્દાઓ ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૬-૩ ॥

છાયા—એતેણાં સબ્બુ ભદન્ત ! જીવાનાં સ્ત્રીવેદકાનામ્, પુરુષવેદકાનામ્,  
નપુંસકવેદકાનામ્, અવેદકાનાં ચ કતરે કતરેભ્યઃ અલ્પા વા, વહુકા વા તુલ્યા  
વા, વિશેષાધિકા વા ? ગોતમ ! સર્વસ્ત્રોકાઃ જીવાઃ પુરુષવેદકાઃ, સ્ત્રીવેદકાઃ

વેદવાલે જીવોં કે અલ્પ-વહુત્વ કા કથન

‘ઇણંસિણં ભંતે ! ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(ઇણંસિણં ભંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિવેયગાણં,  
નપુંસગવેયગાણં, અવેયગાણ ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા  
તુલ્લા વા વિસેસાહિયા વા) હે ભદન્ત ! સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવે-  
દક ઓર અવેદક હન સબ મેં કોન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા  
સે અલ્પ હેં ? કોન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા સે વહુત હેં ?  
કોન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા સમાન હેં ? ઓર કોન ૨ જીવ  
કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા વિશેષાધિક હેં ? (ગોયમા ? સવ્વત્થો

વેદવાળા જીવોની અલ્પતા અને બહુતાનું નિરૂપણ—

“ઇણંસિણં ભંતે !” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(ઇણંસિણં ભંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિસવેયગાણં, નપું-  
સગવેયગાણં, અવેયગાણ ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા,  
વિસેસાહિયા વા ?) હે ભદન્ત ! સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક, નપુંસક વેદક અને  
અવેદક જીવોમાંથી કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અલ્પ છે ? કયા  
કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અધિક છે ? કયા કયા જીવો કયા કયા જીવોની  
અપેક્ષાએ સમાન છે ? અને કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં વિશેષાધિક  
છે ? (ગોયમા ! સવ્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, ઇત્થિવેયગા સંલેજ્જગુણા, અવેયગા

અવિપ્વતિ સ અચરમઃ અભવ્યઃ સંસારી, સિદ્ધઃ અચરમઃ, તસ્ય ચરમ મયામાવાત્, તત્ર ચરમો યથાસંભવમ્ અપ્તાપિ કર્મપ્રકૃતીઃ વધ્નાતિ, અયોગિત્વે ન વધ્નાતિ, શ્વિ મજના તત્ર વોધ્યા, અચરમસ્તુ સંસારી અપ્તાપિ કર્મપ્રકૃતીઃ વધ્નાતિ, સિદ્ધસ્તુ ન વધ્નાતીત્યત્રાપિ મજના ॥ સૂ૦ ૫ ॥

વેદકજીવાલ્પવદુત્તવક્તવ્યતા ।

કર્મવેદાધિકારાત્ વેદકજીવાનામ્ અલ્પવદુત્તવક્તવ્યતાં નિરૂપયિતુમાર્-  
'એસિ પં મંતે !' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એસિ પં મંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિસ-  
વેયગાણં નપુંસગવેયગાણં, અવેયગાણં ચ કયરે કયરેહિંતો

ભવ નહીં હોગા વહ અચરમ જીવ હૈ, અચરમ પદ સે અભવ્ય સંસારી  
કા મી ગ્રહણ હોતા હૈ ઓર સિદ્ધ જીવ કા મી ગ્રહણ હોતા હૈ વપોં કિ  
સિદ્ધ જીવ કે સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત હો જાને કે ઘાદ ચરમભવ કા અભાવ હૈ ।  
ઇનમૈં જો ચરમ જીવ હૈ—અમી જિસકા અન્તિમ ભવ નહીં હૈ વહ તો  
યથાસંભવ આઠોં મી કર્મપ્રકૃતિયોં કો ઘાંધતા હૈ ઓર જો ચરમ જીવ  
અયોગી હૈ—જિસકા અમી યહી અન્તિમ ભવ હૈ—તો વહ કિસી મી કર્મ-  
પ્રકૃતિ કા બંધ નહીં કરતા હૈ । ઇસી તરહ અચરમપદ કે જવ અભવ્ય-  
સંસારી જીવ કા ગ્રહણ કરતે હૈં તો વહ મી આઠોં કર્મપ્રકૃતિયોં કા બંધ  
કરતા હૈ ઓર જવ અચરમપદ સે સિદ્ધ જીવ કા ગ્રહણ કરતે હૈં તો વહ  
કિસી મી કર્મપ્રકૃતિ કા બંધ નહીં કરતા હૈ—ઇસ તરહ સે ઉભયત્ર  
ચરમ અચરમ દોનોં જગહે । મજના જાનની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જે જીવનો ભવ અન્તિમ હોય તેને ચરમ જીવ કહે છે, અને જેનો  
અન્તિમ ભવ કદી પણ થવાનો નથી તેને અચરમ જીવ કહે છે. અચરમ પદ  
અભવ્ય સંસારીને માટે પણ વપરાય છે, અને સિદ્ધ જીવને માટે પણ વપ-  
રાય છે કારણ કે સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કર્યા પછી તેમને ચરમભવનો અભાવ હોય  
છે. આ બંને પ્રકારના જીવોમાંથી જે ચરમ જીવ છે—અત્યારે જ જેનો અન્તિમ  
ભવ ચાલુ નથી, તે તો યથા સંભવ આઠે કર્મોના બંધ કરે છે, પણ જે  
ચરમ જીવ અયોગી છે—જેનો અન્તિમ ભવ અત્યારે જ ચાલુ છે તે તો કોઈ  
પણ કર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ પ્રમાણે અચરમ પદને અભવ્ય સંસારી  
જીવની અપેક્ષાએ પ્રયોગ કરવામાં આવે ત્યારે તે પ્રકારનો જીવ (અભવ્ય  
સંસારી જીવ) આઠે પ્રકારના કર્મોના બંધ કરે છે, પણ અચરમ પદનો પ્રયોગ  
સિદ્ધ જીવને માટે કરવામાં આવે, ત્યારે તેઓ કોઈ પણ કર્મનો બંધ કરતા નથી. તે  
કારણે “તેઓ વિકલ્પે આઠે કર્મોના બંધ કરે છે” એવું કયન કયું છે. ॥ સૂ. ૫ ॥

અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા !  
સઘ્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, ઇત્થિવેયગા સંલેજ્જગુણા,  
અવેયગા અણંતગુણા, નપુંસગવેયગા અણંતગુણા, એસિં  
સઘ્વેણિં પયાણં અપ્પ-વહુગાઈં ઉચ્ચારેયઠ્ઠાઈં, જાવ-સઘ્વ-  
ત્થોવા જીવા અચરિમા, ચરિમા અણંતગુણા, સેવં ભંતે !  
સેવં ભંતે ! ત્તિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

॥ છટ્ટસપ્પ તદ્દાઓ ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૬-૩ ॥

છાયા—એતેપાં સલ્લુ ભદન્ત ! જીવાનાં સ્ત્રીવેદકાનામ્, પુરુષવેદકાનામ્,  
નપુંસકવેદકાનામ્, અવેદકાનાં ચ કતરે કતરેભ્યઃ અલ્પા વા, વહુકા વા તુલ્યા  
વા, વિશેષાધિકા વા ? ગોતમ ! સર્વસ્તોકાઃ જીવાઃ પુરુષવેદકાઃ, સ્ત્રીવેદકાઃ

વેદવાલે જીવોં કે અલ્પ-વહુત્વ કા કથન

‘ એસિણં ભંતે ! ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—( એસિણં ભંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિવેયગાણં,  
નપુંસગવેયગાણં, અવેયગાણ ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા  
તુલ્લા વા વિસેસાહિયા વા ) હે ભદન્ત ! સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવે-  
દક ઓર અવેદક હન સઘ મેં કોન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા  
સે અલ્પ હેં ? કોન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા સે વહુત હેં ?  
કોન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા સમાન હેં ? ઓર કોન ૨ જીવ  
કિન ૨ જીવોં કી અપેક્ષા વિશેષાધિક હેં ? ( ગોયમા ? સઘ્વત્થો

વેદવાળા જીવોની અલ્પતા અને બહુતાનું નિરૂપણ—

“ એસિણં ભંતે ! ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—( એસિણં ભંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિસવેયગાણં, નપું-  
સગવેયગાણં, અવેયગાણ ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા,  
વિસેસાહિયા વા ? ) હે ભદન્ત ! સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક, નપુંસક વેદક અને  
અવેદક જીવોમાંથી કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અલ્પ છે ? કયા  
કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અધિક છે ? કયા કયા જીવો કયા કયા જીવોની  
અપેક્ષાએ સમાન છે ? અને કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં વિશેષાધિક  
છે ? ( ગોયમા ! સઘ્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, ઇત્થિવેયગા સંલેજ્જગુણા, અવેયગા



સંખ્યેયગુણાઃ, અવેદતાઃ અનન્તગુણાઃ, નપુંસકવેદતા અનન્તગુણાઃ, एतेषां सर्वेषां पदानाम् अल्प-बहुत्वकानि उचारयितव्यानि, यावत्-सर्वस्तोका जीवा अचरमाः, चरमाः अन्तगुणाः, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥ मू० ५ ॥

ટીકા—'एएसि णं भंते ! जीवाणं इत्थीवेयमाणं पुरिसवेयमाणं, अवेयमाणं य कयरे कयरेदितो अप्पा वा, बहुया वा तुल्ला वा, निसेसारिया वा जीवा पुरिसवेयगा, इत्थि वेयगा संखेज्जगुणा, अवेयगा अणंतगुणा, नपुंसगवेयगा अणंतगुणा ) हे गौतम ! सय से कम पुरुषवेदक जीव हैं । इनसे संख्यातगुणे स्त्रीवेदक जीव हैं । अवेदक जीव अनन्तगुणे हैं । नपुंसकवेदक भी अनन्तगुणे हैं । ( एएसिं सव्वेसिं पयाणं अप्पबहुगाइं उच्चारयेयवाइं जाव सव्वत्थोवा जीवा अचरिमा, चरिमा, अणंतगुणा सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति ) इन सय पदों का अल्प बहुत्व कहना चाहिये यावत् सय से कम अचरम जीव हैं और चरम जीव अनन्तगुणे हैं । हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है—वह सय ऐसा ही है—हे भदन्त ! वह सय ऐसा ही है । इस प्रकार कहकर गौतम अपने स्थान पर बैठ गये ।

टीकार्थ—कर्म और वेद के अधिकार से सूत्रकार इस सूत्र द्वारा वेदक जीवों की अल्प बहुत्व वक्तव्यता का निरूपण कर रहे हैं—इसमें गौतम ने प्रभु से ऐसा पूछा है कि—( एएसि णं भंते ! जीवाणं इत्थीवेयमाणं पुरिसवेयमाणं, नपुंसगवेयमाणं, अवेयमाणं य कयरे कयरे-

अणंतगुणा, नपुंसगवेयगा अणंतगुणा ) पુરુષ વેદવાળા જીવો સૌથી ઓછાં છે, સ્ત્રી વેદવાળા જીવો તેમના કરતાં સંખ્યાતગણા છે, અવેદવાળા જીવો અનંતગણા છે, નપુંસક વેદવાળા જીવો પણ અનંતગણા છે. ( ए एस सिं सव्वेसिं पयाणं अप्पबहुगाइं उच्चारयेयवाइं जाव सव्वत्थोवा जीवा अचरिमा, चरिमा अणंतगुणा, सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति ) આ બધા પદોનું અલ્પ બહુત્વ કહેવું જોઈએ સૌથી ઓછાં અચરમ જીવો છે અને ચરમ જીવો અનંતગણા છે, અહીં સુધીનું સમસ્ત કથન કરવું જોઈએ. હે ભદન્ત ! આપની વાત સાચી જ છે. હે ભદન્ત ! આ વિષયનું આપે જે પ્રતિપાદન કર્યું તે યથાર્થ જ છે. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ દગમી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

ટીકાર્થ—કર્મ અને વેદનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા વેદક ( જુદા જુદા વેદવાળા ) જીવોની અલ્પ-બહુતાનું પ્રતિપાદન કરે છે. ગૌતમ દગમી આ વિષયને અનુલક્ષીને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—( ए एस सिं णं भंते ! जीवाणं इत्थीवेयमाणं, पुरिसवेयमाणं, नपुंसगवेयमाणं, अवेयमाणं य कयरे

શા ? ગૌતમઃ દૃઙ્ઘતિ-હે ભદન્ત ! એતેષાં સ્વલ્પ જીવાનાં સ્ત્રીવેદકાનામ્ ,  
પુરુષવેદકાનાં, નપુંસકવેદકાનામ્ , અવેદકાનામ્ અનિવૃત્તિવાદરમુક્ષમસંપરા-  
યગુણસ્થાનવર્તિમ્ભૂતીનાં સિદ્ધાનાં ચ મધ્યે કતરે જીવાઃ કતરે જીવેભ્યોઃ  
અલ્પા વાં, વહુકા વા, તુલ્યા વા, વિશેષાધિકા વા ભવન્તિ ? ભગવાનહ-‘ગોયમા !  
સંવત્થોવાં જીવા પુરિસવેયગા ’ ગૌતમ ! સર્વસ્તોકાઃ સર્વેભ્યો જીવેભ્યોઽલ્પાઃ  
પુરુષવેદકાઃ ‘ઈત્થિવેયગા :સંલેજ્જગુણા ’ સ્ત્રીવેદકાઃ સંલેયેયગુણાઃ ભવન્તિ,  
યંતો હિં દેવપુરુષેભ્યો દેવસ્થિયઃ દ્વાવિંશદ્ગુણાઃ ભવન્તિ, મનુષ્યપુરુષેભ્યો મનુ-  
ષ્યસ્થિયઃ સપ્તવિંશતિગુણાઃ ભવન્તિ, તિર્યક્પુરુષેભ્યસ્તિચ્ચસ્થિયઃ ત્રિગુણાઃ ભવન્તિ,

હિંતો અપ્પાં વા, વહુયા વા, તુલ્યા વા વિસેસાહિયા વા ) હે ભદન્ત ! હન  
સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવેદક ઓર અવેદક-અનિવૃત્તિવાદર સૂક્ષ્મ  
સાંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ ઓર સિદ્ધ હનકે વીંચ મેં કૌન  
જીવ કિસ જીવ સે અલ્પ હે ? કૌન જીવ કિસ જીવ સે અધિક હે ?  
કૌન જીવ કિસ જીવ સે વરાયર હે ઓર કૌન જીવ કિસ જીવ સે  
વિશેષાધિક હે ? ભગવાન હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુવ ગૌતમ સે કહેતે  
હેં કિ-( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સંવત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા ) પુરુષવેદ  
વાલે જો જીવ હેં, વે સવ જીવોં સેં કમ હેં । ( ઇત્થિવેયગા સંલેજ્જગુણા )  
સ્ત્રીવેદક-સ્ત્રીવેદવાલે-જીવ સંલેયાતગુણે હેં । વયોં કિ-દેવ, પુરુષ ઓર  
તિર્યેચ રુપ પુલ્લિંગ હન કી અપેક્ષા કમશઃ હનકી સ્થિયો વત્તીસ ગુણી,  
સંત્તાઈસગુણી, ઓર તિગુની હોતી હેં । અર્થાત્ દેવોં કી અપેક્ષા દેવિયોં  
કા પ્રમાણ વત્તીસ ગુણા હોતા હે-મનુષ્ય પુરુષોં કી અપેક્ષા મનુષ્યાણિયોં

કયરેહિંતો અપ્પા વાં, વહુયા વા, તુલ્યા વા વિસેસાહિયા વા ? ) હે ભદન્ત ! આ  
સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક, નપુંસક વેદક, અને અવેદક-અનિવૃત્તિ બાદર સૂક્ષ્મ  
સાંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી હવે અને સિદ્ધ હવેમાંથી કયા કયા હવે  
કયા કયા હવે કરતાં ઓછાં છે ? કયા હવે કયા હવે કરતાં અધિક છે ? કયા  
હવે કયા હવેની બરાબર છે ? અને કયા હવે કયા હવે કરતાં વિશેષાધિક છે ?  
તેને બવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ !  
( સંવત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા ) પુરુષ વેદવાળા હવે સૌથી ઓછાં છે. ( ઇત્થિ-  
વેયગાં સંલેજ્જગુણા ) સ્ત્રી વેદવાળા હવે તેમના કરતાં સંખ્યાતંગણા છે,  
કારણ કે દેવ, પુરુષ, અને તિર્યચરૂપ પુલ્લિંગ ( નરગતિ ) કરતાં તે બંતિની  
સીએ અનુક્રમે બત્રીસગણી, સત્યાવીશગણી અને ત્રણગણી હોય છે. એટલે  
કે દેવો કરતાં દેવીઓ બત્રીસગણી છે, માણસો કરતાં સીએ સત્યાવીશગણી છે;



‘અવેયગા અણંતગુણા’ અવેદકાઃ અનિવૃત્તિ ચાદરમુક્ષમસંપરાયગુણસ્થાનવર્તિ પ્રમૃતયઃ, સિદ્ધાથ જીવાઃ અનન્તત્વાત્ સ્ત્રીવેદકેભ્યોઽનન્તગુણા ભવન્તિ. ‘નપુંસગ-વેયગા અણંતગુણા’ નપુંસકવેદકાઃ અનન્તગુણા ભવન્તિ, અનન્તકાવિકાનાં સિદ્ધે-ભ્યોઽનન્તગુણત્વાત્ । एएसि सव्वेसि पद्याणं अप्प-बहुगाइं उच्चारयेयव्वाइं । एतेषां पूर्वोक्तानां सर्वेषाम् संयतादिचरमान्तां चतुर्दशानां पदानां द्वाराणाम् तद्गतभेदा-पेक्षया अल्पबहुत्वम् उच्चारयितव्यं वक्तव्यम्, तद्यथा ‘एएसि णं भंते ! संजयाणं, असंजयाणं, संजयासंजयाणं, णोसंजय णोअसंजय - णोसंजयासंजयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा, बहुया वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ? गोयमा ।’

(મનુષ્યસ્ત્રિણે) કા પ્રમાણ ૨૭ ગુણા હોતા હૈ ઓર તિયંચ પુરુષોંકી અપેક્ષા તિયંચનિયોંકા પ્રમાણ તિગુણા હોતા હૈ । ઈસી કારણ સ્ત્રીવેદક જીવ પુરુષ વેદકોંકી અપેક્ષા સંખ્યાતગુણિત પ્રકટ કિયે ગયે હૈ । (અવેયગા અણંતગુણા અનિવૃત્તિ ચાદર સૂક્ષ્મસંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવ યે સ્ત્રીવેદકોં સે અનન્તગુણે હૈ । (નપુંસગવેયગા અણંતગુણા) નપુંસક વેદવાલે જીવ ભી અનન્તગુણે હૈ । કયોં કિ સિદ્ધોં સે અનન્તગુણે અનન્તકાવિક જીવ હૈ । (एएसि सव्वेसि पद्याणं अप्पबहुगाइं उच्चारयेयव्वाइं) इन सब पूर्वोक्त संयत से लेकर चरम तक के १४ द्वारों का अल्प बहुत्व तद्गत भेदों की अपेक्षा से कह लेना चाहिये—वह इस प्रकार से है—‘एएसि णं भंते ! संजयाणं, असंजयाणं, संजया संजयाणं णो संजय णो असंजय—णो संजया संजयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा,

અને તિયંચ નર કરતાં તિયંચ માદા ( નારી જાતિ ) ત્રણગણી હોય છે. તે કારણે પુરુષ વેદવાળા જીવોના પ્રમાણ કરતાં સ્ત્રી વેદવાળા જીવોનું પ્રમાણ સંખ્યાતગણું કહ્યું છે.

(અવેયગા અણંતગુણા) અનિવૃત્તિ બાદર સૂક્ષ્મ સંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવની સંખ્યા સ્ત્રી-વેદવાળા જીવો કરતાં અનંત ગણી છે. (નપુંસગવેયગા અણંતગુણા) અવેદક જીવો કરતાં નપુંસક વેદવાળા જીવો પણ અનંતગણા છે, કારણ કે સિદ્ધોથી અનંતગણા અનંતકાવિક જીવો છે. (एएसि सव्वेसि पद्याणं अप्पबहुगाइं उच्चारयेयव्वाइं) पूर्वोक्त संयतથી લઈને ચરમ પર્યન્તના ૧૪ દ્વારોનું અલ્પ બહુત્વ તેમના ભેદોની અપેક્ષાએ કહેવું જોઈએ. તે આ પ્રમાણે કહી શકાય—

(एएसि णं भंते ! संजयाणं असंजयाणं, संजयासंजयाणं णो संजय णो असंजय णो संजयासंजयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा, बहुया वा, तुल्ला वा,

સવ્વત્થોવા સંજયા, સંજયાસંજયા અસંલેજ્જગુણા, ણોસંજય-ણોઅસંજયા ણોસંજયા-સંજયા અણંતગુણા, અસંજયા અણંતગુણા " ઇત્યાદિ પ્રજ્ઞાપનાયાં તૃતીયાલ્પવહુત્વ પદાનુસારેણ વક્તવ્યમ્, યાવત્-ચરમાન્તાલ્પવહુત્વમ્, તદેવાદ-‘જાવ-સવ્વત્થોવાં જીવા અચરિમા ચરિમા અણંતગુણા ’ યાવત્-સર્વતોકાઃ જીવા અચરમાઃ, ચરમાઃ અનન્તગુણાઃ ભવન્તિ, તત્ર અચરમાઃ અભવ્યાઃ, ચરમાશ્ચ એ મવ્યાશ્ચરમં ભવં પ્રાપ્સ્યન્તિ=સિદ્ધિ મપિપ્સ્યન્તિ, તે અચરમેભ્યોઽભવ્યેભ્યોઽનન્તગુણા ભવન્તિ, યતઃ

પહુયા વા, તુહ્યા વા, વિસેસાહિયા વા ) હે ભદન્ત ! સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત ઇન સવ મેં કૌન જીવ કિસ જીવ કી અપેક્ષા કમ હૈ ? વહુત હૈ ? તુલ્ય હૈ ? ઓર વિશેષાધિક હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સવ્વત્થો વા સંજયા ) સવ સે કમ સંયત જીવ હૈં । ( સંજયાસંજયા અસંલેજ્જગુણા ) સંયતાસંયત ( દેશવિરતિ ) જીવ સંયત ( સર્વવિરતિ ) જીવોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણે હૈં । ( ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણોસંજયાસંજય અણંતગુણા ) નોસંયત નોઅસંયત નોસંયતાસંયત જીવ ઇનસે ભી અનંતગુણે હૈં । ઓર ( અસંજયા અણંતગુણા ) અસંયત જીવ ઇનસે ભી અનંતગુણે હૈં । " ઇત્યાદિ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કે અનુસાર ચરમ તક કે અલ્પ વહુત્વ તક કથન કર લેના ચાહિયે । જૈસે કિ-‘ જાવ સવ્વત્થોવા જીવા અચરિમા, ચરિમા અણંતગુણા ’ ઇત્યાદિ, અચરમ-અર્થાત્ અભવ્ય ઓર ચરમ-અન્તિમ ભવ કો જો પાવેંગે અર્થાત્-સિદ્ધ હોંગે વે સો

વિસેસાહિયા વા ) હે ભદન્ત ! સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત જીવોમાંથી કયા જીવો કોના કરતાં અલ્પ છે ? કયા જીવો કોના કરતાં અધિક છે ? કયા જીવો કયા જીવો જેટલાં જ છે ? કયા જીવો કયા જીવો કરતાં વિશેષાધિક છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( સવ્વત્થો વા સંજયા ) સંયત જીવ સીધી જોઈ છે, ( સંજયાસંજયા અસંલેજ્જગુણા ) સંયત જીવો કરતાં સંયતા-સંયત જીવો સંખ્યાતગુણા છે. ( ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણો સંજયાસંજયા અણંતગુણા ) સંયતાસંયત જીવો કરતાં નોસંયત, નોઅસંયત અને નો સંયતાસંયત, જીવો અનંતગુણા છે, ( અસંજયા અણંતગુણા ) તેમના કરતાં પણ અસંયત જીવો અનંતગુણા છે, ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર અનુસાર જ કરવું જોઈએ. આ રીતે ચરમ અને અચરમ જીવોના અલ્પ બહુત્વના કથન પર્યન્તનું ચીદે દારોનું કથન કરવું. જેમકે ( જાવ સવ્વત્થોવા જીવા અચરિમા,

‘ અવેયગા અણંતગુણા ’ અવેદકાઃ અનિવૃત્તિ યાદરમુદ્ધમસંપરાયગુણસ્થાનવર્તિ પ્રથુતયઃ, સિદ્ધાથ જીવાઃ અનન્તત્વાત્ સ્ત્રીવેદકેભ્યોઽનન્તગુણા ભવન્તિ, ‘ નપુંસગ-વેયગા અણંતગુણા ’ નપુંસકવેદકાઃ અનન્તગુણા ભવન્તિ, અનન્તકાયિકાનાં સિદ્ધે-ભ્યોઽનન્તગુણત્વાત્ । એસિં સન્વેસિં પદાણં અપ્પ-વહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં ’ એતેષાં પૂર્વોક્તાનાં સર્વેષામ્ સંયતાદિચરમાન્તાં ચતુર્દશાનાં પદાનાં ઢારાણામ્ તદ્ગતભેદા-પેક્ષયા અલ્પવહુત્વમ્ ઉચ્ચારયિતવ્યં વક્તવ્યમ્, તથા ‘ એસિં ણં મંતે ! સંજ-યાણં, અસંજયાણં, સંજયાસંજયાણં, ણોસંજય ણોઅસંજય - ણોસંજયાસંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા !

(મનુષ્યસ્ત્રિત્તે) કા પ્રમાણ૨૭ ગુણા હોતા હૈ ઓર તિયંચ પુરુષોંકી અપેક્ષા તિર્યચ્ચનિયોંકા પ્રમાણ તિગુણા હોતા હૈ । ઇસી કારણ સ્ત્રીવેદક જીવ પુરુષ વેદકોંકી અપેક્ષા સંખ્યાતગુણિત પ્રકટ કિયે ગયે હૈં । (અવેયગા અણંતગુણા અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મસંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવ યે સ્ત્રીવેદકોં સે અનન્તગુણે હૈં । ( નપુંસગવેયગા અણંતગુણા ) નપુંસક વેદવાલે જીવ મી અનન્તગુણે હૈં । કયોં કિ સિદ્ધોં સે અનન્તગુણે અનન્તકાયિક જીવ હૈં । ( એસિં સન્વેસિં પદાણં અપ્પવહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં ) ઇન સવ પૂર્વોક્ત સંયત સે લેકર ચરમ તક કે ૧૪ દારોં કા અલ્પ વહુત્વ તદ્ગત ભેદોં કી અપેક્ષા સે કહ લેના ચાહિયે-વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ-“ એસિં ણં મંતે ! સંજયાણં, અસંજયાણં, સંજયા સંજયાણં ણો સંજય ણો અસંજય-ણો સંજયા સંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા,

અને તિયંચ નર કરતાં તિયંચ માદા ( નારી જાતિ ) ત્રણગણી હોય છે. તે કારણે પુરુષ વેદવાળા જીવોના પ્રમાણ કરતાં સ્ત્રી વેદવાળા જીવોનું પ્રમાણ સંખ્યાતગણું કહ્યું છે.

( અવેયગા અણંતગુણા ) અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મ સંપરાય આદિ ગુણ-સ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવની સંખ્યા સ્ત્રી-વેદવાળા જીવો કરતાં અનંત ગણી છે. ( નપુંસગવેયગા અણંતગુણા ) અવેદક જીવો કરતાં નપુંસક વેદવાળા જીવો પણ અનંતગણા છે, કારણ કે સિદ્ધોથી અનંતગણા અનંતકાયિક જીવો છે. ( એ એસિં સન્વેસિં પદાણં અપ્પવહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં ) પૂર્વોક્ત સંયતથી લઈને ચરમ પર્યન્તના ૧૪ દારોનું અલ્પ બહુત્વ તેમના લેહોની અપેક્ષાએ કહેવું જોઈએ. તે આ પ્રમાણે કહી શકાય—

( એ એસિં ણં મંતે ! સંજયાણં અસંજયાણં, સંજયાસંજયાણં ણો સંજય ણો અસંજય ણો સંજયાસંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા,



## અથ ચતુર્થોદ્દેશકઃ પ્રારમ્ભ્યતે—

પદ્યશતકે ચતુર્થોદ્દેશકસ્ય સંક્ષિપ્તવિષયવિવરણમ્—

एकत्वेन जीवः कालापेक्षया संप्रदेशः किं वा अप्रदेशः इति प्रश्नः, नियमतः संप्रदेश एव नो अप्रदेश इत्युत्तरम् । तथा नैरयिकः कालापेक्षया संप्रदेशः अप्रदेशो वा ? इति प्रश्नः, कदाचित् संप्रदेशः कदाचित् अप्रदेशश्च, इत्युत्तरम् । ततो बहुत्वेन जीवाः कालापेक्षया संप्रदेशाः अप्रदेशा वा ? नियमतः संप्रदेशा एव, नो

છટ્ટે શતક કે ચૌથા ઉદ્દેશકકા પ્રારમ્ભ—

इस शतक के इस चतुर्थ उद्देशक का विषय विवरण संक्षेप से इस प्रकार है—एक जीव काल की अपेक्षा से क्या प्रदेशों से सहित है कि प्रदेशों से रहित है ? ऐसा प्रश्न—इसका “नियम से जीव प्रदेशों से सहित ही है प्रदेशों से रहित नहीं है” ऐसा उत्तर एक नारक जीव काल की अपेक्षा से क्या प्रदेशसहित है कि प्रदेशरहित है ? ऐसा प्रश्न इसका “कदाचित् वह प्रदेशसहित है और कदाचित् वह प्रदेशरहित है” ऐसा २ उत्तर, अनेक जीव काल की अपेक्षा से संप्रदेश हैं कि प्रदेशों से रहित हैं ? ऐसा प्रश्न, इसका “नियम से वे सब प्रदेशसहित ही हैं” ऐसा उत्तर, अनेक नारक जीव—सब नारक जीव—काल की अपेक्षा से प्रदेशसहित हैं कि प्रदेशों से रहित हैं ऐसा प्रश्न—इसका

છટ્ટા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશક

છટ્ટા શતકના ચોથા ઉદ્દેશકના વિષયનું સંક્ષિપ્ત વિવરણ—

પ્રશ્ન—એક જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશો સહિત છે કે પ્રદેશોથી રહિત છે ?

ઉત્તર—નિયમથી જ જીવ પ્રદેશોથી યુક્ત છે, પ્રદેશોથી રહિત નથી.

પ્રશ્ન—એક નારક જીવ શું કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશો સહિત છે કે પ્રદેશોથી રહિત છે ?

ઉત્તર—ક્યારેક તે પ્રદેશોથી યુક્ત છે અને ક્યારેક પ્રદેશોથી રહિત છે.

પ્રશ્ન—અનેક ( સધળા ) જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશોથી યુક્ત છે કે પ્રદેશોથી રહિત છે ?

ઉત્તર—નિયમથી જ તેઓ બધાં પ્રદેશોથી યુક્ત છે.

પ્રશ્ન—અનેક ( સધળા ) નારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત છે કે પ્રદેશ રહિત છે ?

અભવ્યેભ્યઃ સિદ્ધા અનન્તગુણાઃ પ્રતિપાદિતાઃ, યાવન્તશ્ચ સિદ્ધાસ્તાવન્ત એવ ચરમાઃ  
 યસ્માદ્ યાવન્તઃ સિદ્ધાઃ અતીતાદ્વાપાંતાવન્ત એવ અનાગતાદ્વાપાંસિદ્ધિ ગમિષ્યન્તિ,  
 અન્તે ગૌતમો મગવદ્વાક્યં સ્વીકૃત્વેન્નાહ-‘ સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ તદેવં  
 ભવદુક્તં સત્યમેવ, હે મદન્ત ! ભવદુક્તં સત્યમેવેત્પર્યઃ ॥ મુ. ૬ ॥

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक - पञ्चदशभाषाकलि-  
 तललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-  
 श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-  
 कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री  
 घासीलालप्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां  
 व्याख्यायां पष्ठशतकस्य तृतीयो शकः समाप्तः ॥ ६-३ ॥

इन दोनों में से चरम जीव अचरम जीवों की अपेक्षा अनन्तगुणे हैं।  
 क्यों कि अभव्यों की अपेक्षा सिद्ध जाव सिद्धान्त में अनन्तगुणे कहे  
 गये हैं। जितने सिद्ध हैं उतने ही चरम जीव हैं। क्यों कि जितने जीव  
 भूतकाल में सिद्ध हो चुके हैं उतने ही जीव भविष्यत्काल में सिद्ध  
 होंगे। अब अन्त में गौतम प्रभु के वचनों को स्वीकार करते हुए कहते  
 हैं कि (सेवं मंते ! सेवं मंते ! त्ति) हे भदन्त ! आपका कहा हुआ  
 सर्वथा सत्य ही है-हे भदन्त ! सर्वथा सत्य ही है ॥ सू. ६ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत “भगव-  
 तीसूत्र”की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छठे शतकका तीसरा  
 उद्देशक समाप्त ॥ ६-३॥

ચરિમા અનંતગુણા ) અચરમ ( અભવ્ય ) અને ચરમ ( અન્તિમ ભવ કરીને સિદ્ધપદ  
 પ્રાપ્ત કરનારા ) જીવોમાંથી ચરમ જીવો અચરમ જીવો કરતાં અનંતગણા છે, કારણ  
 કે અભવ્ય જીવો કરતાં સિદ્ધ જીવ સિદ્ધાંતમાં અનંતગણા કહ્યા છે. જેટલાં સિદ્ધ છે  
 એટલાં જ ચરમ જીવ છે, કારણ કે જેટલાં જીવો ભૂતકાળમાં સિદ્ધપદ પામી  
 ચૂક્યા છે, એટલાં જ જીવો ભવિષ્યકાળમાં પણ સિદ્ધપદ પામશે. સૂત્રનો  
 ઉપસંહાર કરતા ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુનાં વચનોનો સ્વીકાર કરતા કહે  
 છે-( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ) હે ભદન્ત ! આપે આ વિષયનું જે પ્રતિ-  
 પાદન કર્યું તે સર્વથા સત્ય છે. હે ભદન્ત ! આપ જે કહો છો તે યથાર્થ જ છે. સૂ. ૬

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રમેયચ-

ન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના છઠ્ઠા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૬-૩ ॥



કાલાપેક્ષયા સામાન્યજીવસમુચયવત્ ભદ્રદયં, ભદ્રત્રયં ચ । નોભવસિદ્ધિક-નો  
અભવસિદ્ધિકાનાં ભદ્રત્રયમ્ । સંજ્ઞિનામ્ અસંજ્ઞિનાં ચ કાલાપેક્ષયા ભદ્રત્રયમ્ । નૈર-  
યિક-દેવ - મનુષ્યાગામ્ અસંજ્ઞિનાં ભદ્રપટ્ટકમ્ । નોસંજ્ઞિ-નોઅસંજ્ઞિનાં ભદ્ર-  
ત્રિકમ્ । ઔચિકજીવવત્ લેશ્યાવતામ્ एको भद्रः, ततः कृष्णलेश्या-नीललेश्या-  
कापोतलेश्या-तेजोलेश्या-पद्मलेश्या-शुक्ललेश्या-ऽलेश्यैः सम्यग्दृष्टि-मिथ्या-  
दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टिभिः, संयता-ऽसंयत-संयतासंयत - नोसंयत नोअसं-  
यतनोसंयतासंयत, सकपायि - क्रोधकपायि-मानकपायि - लोभकपायकपा-

જીવો, અભવસિદ્ધિક જીવોં કે કાલ કી અપેક્ષા સે સામાન્ય જીવ કી  
તરહ દો ભંગ ઓર ત્રીન ભંગ, નો ભવસિદ્ધિક નો અભવસિદ્ધિક જીવોં  
કે ત્રીન ભંગ, સંજ્ઞિ જીવોં કે ઓર અસંજ્ઞી જીવોં કે કાલ કી અપેક્ષા  
સે ત્રીન ભંગ, નારક, દેવ, મનુષ્ય ઓર અસંજ્ઞી જીવ इनके ६ भंग, नो  
संज्ञी नो असंज्ञी इनके तीन भद्र होते हैं ऐसा कथन, सामान्य जीव की  
तरह लेश्यावाले जीवों के एक भद्र होता है ऐसा विचार, बाद में-  
कृष्णलेश्या, वाले नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, तेजोलेश्यावाले  
पद्मलेश्यावाले, शुक्ललेश्यावाले जीवों के साथ तथा इन लेश्याओं से  
रहित जीवों के साथ, सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संय-  
त, असंयत, संयतासंयत, नोसंयत नोअसंयत नोसंयतासंयत  
जीवों के साथ, कपायसहित-क्रोधसहित, मानकपायसहित, मायाकपा-  
यसहित, लोभकपायसहित जीवों के साथ तथा कपायरहित जीवों के

જીવોના કાળની અપેક્ષાએ સામાન્ય જીવોની જેમ બે ભંગ અને ત્રણ ભંગ,  
નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક જીવોના ત્રણ ભંગ, સંજ્ઞી જીવોના  
તથા અસંજ્ઞી જીવોના કાળની અપેક્ષાએ ત્રણ ભંગ, નારક, દેવ, મનુષ્ય અને  
અસંજ્ઞી જીવોના ૬ ભંગ, અને નો સંજ્ઞી અને નો અસંજ્ઞી જીવોના કાળની  
અપેક્ષાએ ત્રણ ભંગ થાય છે એવું કથન.

સામાન્ય જીવની જેમ લેશ્યાવાળા જીવોનો એક ભંગ થાય છે એવું  
કથન, કૃષ્ણ લેશ્યાવાળા, નીલ લેશ્યાવાળા, કાપોત લેશ્યાવાળા, તેજો લેશ્યા-  
વાળા, પદ્મ લેશ્યાવાળા અને શુક્લ લેશ્યાવાળા જીવોની સાથે તથા તે લેશ્યા-  
ઓથી રહિત જીવોની સાથે, તથા સમ્યગ્દૃષ્ટિ, મિથ્યાદૃષ્ટિ, સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ,  
સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત, નો અસંયત, અને નો સંયતા-  
સંયત જીવોની સાથે, કપાયયુક્ત ( ક્રોધ, માન, માયા, લોભથી યુક્ત ) જીવોની

અપ્રદેશાઃ । વહુત્વેન નૈરયિકાઃ કાલાપેક્ષયા સપ્રદેશાઃ, અપ્રદેશા ના ? સર્વેઽપિ કદાચિત્ સપ્રદેશાઃ, કદાચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, અહવઃ અપ્રદેશાથ' વા-અથવા 'વહવઃ સપ્રદેશા, વહવઃ અપ્રદેશાથ' ઇતિ પ્રશ્નોત્તરમ્ । एवं यावत्-સ્તનિતકુમારા अपि बोध्याः । ततः पृथिवीकायिकादीनां यावत् वनस्पतिपर्यन्तानां कालापेक्षया सप्रदेशापदेशत्वविषये प्रश्नोत्तरम् । शेषाणां विकलेन्द्रियादारभ्य सिद्धपर्यन्तानां जीवानां नैरयिकवत् सप्रदेशापदेशत्वविषयकविचारः । ततः आहारकाणां कालापेक्षया सप्रदेशत्वादिभेदत्रयम्, अनाहारकाणाम् कालापेक्षया सप्रदेशत्वादिभेद-पट्टकम्, सिद्धस्य कालापेक्षया भग्नविकल्पम्, भवसिद्धिकामवसिद्धिकानाम्

“ સમસ્ત નારક જીવ કદાચિત્ પ્રદેશોં સે સહિત હેં ઓર કદાચિત્ કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશોં સે સહિત હેં ” તથા કોઈ એક નારક જીવ પ્રદેશોં સે રહિત હેં, અથવા કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશોં સે સહિત હેં ઓર કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશોં સે રહિત હેં ” એસા ઉત્તર, હસી તરહ સે સ્તનિતકુમારોં તક જાનના ધાહિયે એસા કથન પૃથિવીકાયિક આદિ સે લગાકર વનસ્પતિકાયિક તક કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશત્વ ઓર અપ્રદેશત્વ કી ચર્ચા શેષ વિકલેન્દ્રિયોં સે લેકર સિદ્ધતક કે જીવોં મેં નૈરયિક જીવોં કી તરહ સપ્રદેશત્વ ઓર અપ્રદેશત્વ વિષયક વિચાર; આહારક જીવોં કે કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશત્વ આદિ ત્રીન ભંગ હોતે હેં તથા અનાહરકોં કે કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશત્વ આદિ ૬ ભંગ, સિદ્ધ જીવ કે કાલ કી અપેક્ષા સે ત્રીન ભંગ, ભવસિદ્ધિક

ઉત્તર—“ બધાં નારક જીવ કયારેક પ્રદેશોથી યુક્ત હોય છે, અને કયારેક કેટલાક નારક જીવ પ્રદેશોથી યુક્ત હોય છે ” તથા કોઈક નારક જીવ પ્રદેશોથી રહિત છે, અથવા કેટલાક નારક જીવ પ્રદેશોથી યુક્ત છે. અને કેટલાક નારક જીવ પ્રદેશોથી રહિત છે. એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમારો. પર્યન્તના વિષે સમજવું.

પૃથ્વીકાયિક આદિથી લઈને વનસ્પતિકાય પર્યન્તના જીવોના કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વની ચર્ચા, બાકીના વિકલેન્દ્રિય (દ્વિન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય સુધીના જીવો) થી લઈને સિદ્ધ સુધીના જીવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનો નારકોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વની જોમ વિચાર, કાળની અપેક્ષાએ આહારક જીવોમાં સપ્રદેશત્વ આદિ ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે, અનાહારકોના કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશત્વ આદિ ૬ ભંગ થાય છે, સિદ્ધ જીવોના કાળની અપેક્ષાએ ત્રણ ભંગ, ભવસિદ્ધિક જીવોના અને અભવસિદ્ધિક

નાપ્રત્યાખ્યાનિત્વપ્રતિપાદનમ્, એવમેવ નૈરગિકાદિ-ચારત્-ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિય-તિર્યગ્ચોનિક-મનુષ્યૈઃ સહ પ્રત્યાખ્યાનવિચારચર્ચા, જીવાનાં પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનજ્ઞાનપ્રશ્નઃ । પંચેન્દ્રિયાણાં તજ્ઞાનિત્વમ્, તદ્ભિન્નાનાં તદજ્ઞાનિત્વં ચ, તતો જીવાનાં પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનકરણવિચારઃ તતઃ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાન-નિર્વર્તિતાયુષ્યવંધકથનમ્ દણ્ડકચતુષ્ટયમ્, ગૌતમસ્ય સર્વસમર્થનં ચ ।

જીવસ્ય સપ્રદેશાપ્રદેશવક્તવ્યતા ।

મૂલમ્—જીવે ણં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્સે, અપણ્સે ?  
ગોયમા ! નિયમા સપણ્સે । નેરહ્ણ ણં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં

ભવ્ય, સંજી, લેશ્યા, દટ્ટિ, સંયત, કપાય, યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર, પર્યાસિ, એ દ્વાર હેં એસા કથન જીવોંકે પ્રત્યાખ્યાની અપ્રત્યાખ્યાની ઓર પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની કા પ્રતિપાદન હસી તરહ નૈરગિકસે લેકર ચૌરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિય તિર્યચ્છ ઓર મનુષ્યોંકે સાથ પ્રત્યાખ્યાન કે વિચારકી ચર્ચા, જીવોંકો પ્રત્યાખ્યાન અપ્રત્યાખ્યાન આદિકા જ્ઞાન હોતા હૈ કયા ? એસા પ્રશ્ન; પંચેન્દ્રિયોંકો હનકા જ્ઞાન હોતા હૈ ઓર હનસે ભિન્ન જીવોંકો હનકા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ એસા કથન કયા જીવ પ્રત્યાખ્યાન, અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કરતે હેં એસા પ્રશ્ન, હાં કરતે હેં એસા ઉત્તર પ્રત્યાખ્યાન ઓર અપ્રત્યાખ્યાન આદિસે આયુક્ક કા વંધ હોતા હૈ કયા ? હાં હોતા હૈ એસા ઉત્તર, હસ વિષયક ચાર દણ્ડક ગૌતમકી ઓરસે સર્વ સમર્થન ।

સંબ્રહ્મણા—તેમાં સપ્રદેશત્વ, આહારક, ભવ્ય, સંજી, લેશ્યા, દટ્ટિ, સંયત, કપાય, યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર અને પર્યાસિ, એ દ્વારે છે એવું કથન. જીવોની પ્રત્યાખ્યાની. અપ્રત્યાખ્યાની, અને પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની-તાનું પ્રતિપાદન, એજ પ્રમાણે નારકોથી લઈને ચતુરિન્દ્રિ, પંચેન્દ્રિય તિર્યચ્છ અને મનુષ્યોના પ્રત્યાખ્યાનાદિનું કથન.

પ્રશ્ન—જીવોને પ્રત્યાખ્યાન અપ્રત્યાખ્યાન આદિનું જ્ઞાન હોય છે ખરું ?

ઉત્તર—પંચેન્દ્રિયોને તેનું જ્ઞાન હોય છે, તે સિવાયના જીવોને તેનું જ્ઞાન હોતું નથી એવું કથન.

પ્રશ્ન—શું જીવ પ્રત્યાખ્યાન, અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કરે છે ?

ઉત્તર—હા કરે છે.

પ્રશ્ન—શું પ્રત્યાખ્યાન અને અપ્રત્યાખ્યાન આદિથી આયુને બંધ થાય છે ?

ઉત્તર—હા, થાય છે. આ વિષેના ચાર દંડક. ગૌતમ દ્વારા તેનું સમર્થન.



યિભિઃ, ઔધિકજ્ઞાનાઽઽભિનિવોધિકજ્ઞાન-શ્રુતજ્ઞાના-અધિજ્ઞાન-મનઃપર્યવજ્ઞાન-  
 કેવલજ્ઞાનૈઃ, ઔધિકજ્ઞાન-મત્યજ્ઞાન-શ્રુતાજ્ઞાન-વિભક્તજ્ઞાનૈઃ, સયોગિ-મનોયોગિ-  
 વચનયોગિ-કાયયોગ્યયોગિભિઃ, સાકારોપપૃક્તા-નાકારોપપૃક્તૈઃ, સવેદક-સ્ત્રીવેદક-  
 પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકા-ઽવેદકૈઃ, સશરીરોદારિકૈક્રિયા - ઽહારક-તૈજસ-  
 કાર્મણાઽશરીરૈઃ, આહારપર્યાસિ-શરીરપર્યાસી -ન્દ્રિયપર્યાપ્ત્યાનમાણપર્યાસિભાષા-  
 મનઃપર્યાસિભિઃ, આહારપર્યાસિ-શરીરપર્યાસી -ન્દ્રિયાપર્યાપ્ત્યાનમાણપર્યાસિ-  
 ભાષા-મનોઽપર્યાસિભિઃ સહ કાલાપેક્ષયા સપ્રદેશત્વાપ્રદેશત્વાદિવિચારઃ સંગ્રહ-  
 ગાથા, સપ્રદેશાહારક-ભવ્ય-સંતિ-લેશ્યા-દૃષ્ટિ-સંયત-કંપાય-યોગો-પયોગ-  
 વેદ-શરીર-પર્યાસયઃ, તતો જીવાનાં પ્રત્યાલ્પાનિત્વાઽપ્રત્યાલ્પાનિત્વ-પ્રત્યાલ્પા-

સાથ, ઔધિકજ્ઞાન-આભિનિવોધિકજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મન  
 પર્યવજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાન इन ज्ञानोंके साथ, ઔધિક અજ્ઞાન-મતિ અજ્ઞાન,  
 શ્રુતઅજ્ઞાન, વિભક્તજ્ઞાન इन तीन अज्ञानों के साथ, સયોગી, મનોયોગી,  
 વચનયોગી, કાયયોગી, इनके साथ तथा अयोगियों के साथ, સાકાર  
 ઉપયોગવાળે અનાકાર ઉપયોગવાળોં કે સાથ, સવેદક-સ્ત્રીવેદક, પુરુષ-  
 વેદક, નપુંસકવેદક, इन वेदवालों के साथ और वेदरहित जीवों के  
 સાથ, સશરીરી-ઔદારિક વૈક્રિય-આહારક-તૈજસ-કાર્મણ-અશરીર,  
 આહારપર્યાસિ, શરીરપર્યાસિ, इन्द्रियपर्यासि, આનપ્રાણપર્યાસિ, ભાષા-  
 પર્યાસિ, મન પર્યાસિ इन सबके साथ काल की अपेक्षा से सप्रदेशत्व  
 और अप्रदेशत्व आदिका विचार, संग्रहगाथा इसमें सप्रदेशत्व, आहारक,

સાથે તથા કષાય રહિત જીવોની સાથે, ઔધિકજ્ઞાન ( આભિનિવોધિક જ્ઞાન )  
 શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન, અને કેવલજ્ઞાનની સાથે, ઔધિક અજ્ઞાન  
 ( મતિ અજ્ઞાન ), શ્રુત અજ્ઞાન અને વિભંગજ્ઞાન ( વિપરીત જ્ઞાન ) આ ત્રણ  
 અજ્ઞાનોની સાથે, સયોગી, મનોયોગી, વચનયોગી અને કાયયોગીની સાથે તથા  
 અયોગીઓની સાથે, સાકાર ઉપયોગવાળા અને અનાકાર ઉપયોગવાળા સાથે,  
 સવેદકો ( સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક અને નપુંસક વેદક ) સાથે તથા વેદરહિત  
 જીવોની સાથે, સશરીરી ( ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ અને કાર્મણ  
 શરીરવાળા ) જીવોની સાથે અને અશરીરી જીવોની સાથે, આહાર પર્યાસિ,  
 શરીર પર્યાસિ, ઇન્દ્રિય પર્યાસિ, આનપ્રાણ પર્યાસિ, ભાષા પર્યાસિ અને મનઃ-  
 પર્યાસિ, આ બધા જીવોની સાથે કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશત્વ અને  
 અપ્રદેશત્વનો વિચાર.

भंगो । अलेसेहिं जीव-सिद्धेहिं तियभंगो । मणुएसु छवभंगो ।  
सम्मादिट्ठिहिं जीवाइओ तियभंगो । विगलिदिएसु छवभंगो ।  
मिच्छदिट्ठोहिं एगिंदियवज्जो तियभंगो । सम्मामिच्छदिट्ठोहिं  
छवभंगा । संजएहिं जीवाइओ तियभंगो । असंजएहिं एगिं-  
दियवज्जो तियभंगो । संजयासंजएहिं तियभंगो जीवाइओ ।  
णोसंजय-णोअसंजय-णोसंजयामंजय-जाव सिद्धेहिं तियभंगो ।  
सकसाईहिं जीवाइओ तियभंगो । एगिंदिएसु अभंगकं । कोह-  
कसाइहिं जीव-एगिंदियवज्जो तियभंगो । देवेहिं छवभंगा,  
माणकसाई मायाकसाई जीवे गिंदियवज्जो तियभंगो । नेरइय-  
देवेहिं छवभंगा । लोभकसाईहिं जीव-एगिंदियवज्जो तिय-  
भंगो । नेरएसु छवभंगा । अकसाई-जीव-मणुएहिं, सिद्धेहिं  
तियभंगो । ओहियणाणे, अभिणिवोहियणाणे, सुयणाणे, जीवा-  
इओ तियभंगो । विगलिदिएहिं छवभंगा । ओहिणाणे, मण-  
पज्जवणाणे केवलणाणे जीवाइओ तियभंगो । ओहिय-अण्णाणे,  
मइ-अन्नाणे, सुय-अन्नाणे, एगिंदियवज्जो तियभंगो । विभंगं  
अण्णाणे जीवाइओ तियभंगो । सजोगी जहा-ओहिओ ।  
मणजोगि-वयजोगि-कायजोगिहिं जीवाइओ तियभंगो, नवरं-  
कायजोगी एगिंदिया, तेसु अभंगयं । अजोगी जहां-अलेस्सा ।  
सागरोवउत्त-अणागारोवउत्तेहिं जीव-एगिंदियवज्जो तियभंगो ।  
सवेयगा य जहा-सकसाई । इत्थिवेयग-पुरिसवेयग-नपुंसग-  
वेयगेसु जीवाइओ तियभंगो, नवरं नपुंसगवेदे एगिंदिएसु



सपएसे अपएसे ? गोयमा ! सिय सपएसे, सिय अपएसे, एवं  
जाव-सिद्धे । जीवा णं भंते ! कालादेसेणं किं सपएसा, अप-  
एसा ? गोयमा ! नियमा सपएसा । नेरइया णं भंते ! काला-  
देसेणं किं सपएसा, अपएसा ? गोयमा ! सव्वे वि ताव होजा  
सपएसा, अहवा सपएसा य, अपएसे य, अहवा सपएसा य  
अपएसा य, एवं असुरकुमारा जाव थणियकुमारा । पुढवीका-  
इया णं भंते ! किं सपएसा, अपएसा ? गोयमा ! सपएसा वि,  
अपएसा वि, एवं जाव-वणस्सकाइया, सेसा जहा नेरइया  
तहा, जाव-सिद्धा, आहारगाणं जीव-एगिंदियवज्जो तियभंगो ।  
अणाहारगाणं जीवेगिंदियवज्जा छवभंगा एवं भाणियव्वा-  
सपएसा १, अपएसा २, अहवा सपएसे य, अपएसेय ३, अहवा  
सपएसे य अपएसा य ४, अहवा सपएसा य अपएसे य,  
अहवा सपएसा य अपएसा य, सिद्धेहिं तियभंगो । भवसि-  
द्धिया, अभवसिद्धिया, जहा-ओहिया । णोभवसिद्धिय-णो-  
अभवसिद्धियजीवसिद्धेहिं तियभंगो । सन्नीहिं जीवाइओ  
तियभंगो । असन्नीहिं एगिंदियवज्जो तियभंगो । नेरइय-देव-  
मणुएहिं छवभंगो । णोसन्नि - णोअसन्नि-जीवमणुयसिद्धेहिं  
तियभंगो । सलेसा जहा ओहिया । कणहलेस्सा, नीललेस्सा,  
काउलेस्सा जहा आहारओ, नवरं जस्स अत्थि एयाओ । तेउ-  
लेस्साए जीवाइओ तियभंगो, नवरं-पुढविवकाइएसु, आउव-  
णस्सईसु छवभंगा । पम्हलेस्स-सुक्कलेस्साए जीवाइओ तिय-

ગૌતમ ! સ્યાન્ સપ્રદેશઃ, સ્યાદ્ અપ્રદેશઃ । એવં યાવત્-સિદ્ધઃ । જીવાઃ સ્વલુ  
ભદન્ત । કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશાઃ, અપ્રદેશાઃ ? ગૌતમ ! નિયમાત્ સપ્રદેશાઃ,  
નેરપિકાઃ સ્વલુ ભદન્ત । કાલ્યાદેશેન કિં સપ્રદેશાઃ, અપ્રદેશાઃ ? ગૌતમ ! સર્વેઽપિ  
તાવદ્ ભવેયુઃ સપ્રદેશાઃ, અથવા સપ્રદેશાથ્ અપ્રદેશથ્, અથવા સપ્રદેશાથ્ અપ્રદે-  
શથ્, એવમ્ અસુરકુમારા યાવત્-સ્તનિતકુમારાઃ । પૃથિવીકાયિકાઃ સ્વલુ ભદન્ત !

પ્રદેશરહિત હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સિય સપણસે સિય અપણસે )  
નારકજીવ કાલકી અપેક્ષાસે કદાચિત્ પ્રદેશસહિત હૈ ઓર કદાચિત્  
પ્રદેશરહિત હૈ ( એવં જાવ સિદ્ધે ) હસી તરહ સે યાવત્ સિદ્ધ મી કદા  
ચિત્ પ્રદેશસહિત હૈ ઓર કદાચિત્ પ્રદેશરહિત હૈ । ( જીવા ણં મંતે ।  
કાલાદેસેણં કિં સપણસા અપણસા ) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવ કયા કાલ  
કી અપેક્ષા સે પ્રદેશરહિત હૈ કિ પ્રદેશરહિત હૈ ? ( ગોયમા )  
હે ગૌતમ ! સમસ્ત જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે ( નિયમા ) નિયમ સે .  
( સપણસા ) પ્રદેશસહિત હૈ । ( નેરહયા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસા  
અપણસા ) હે ભદન્ત ! સમસ્ત નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા કયા પ્રદે-  
શસહિત હૈ કિ પ્રદેશરહિત હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( સઘ્વે વિ-તાવ  
હોજ્ઞા સપણસા, અહવા સપણસા ય અપણસે, અહવા-સપણસા ય અપ  
ણસા ય એવં અસુરકુમારા જાવ થણિયકુમારા ) સમસ્ત નારક જીવ મી  
કાલ કી અપેક્ષા પ્રદેશસહિત હૈ । અથવા કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશસ-

( ગોયમા ! સિય સપણસે સિય અપણસે ) હે ગૌતમ ! નારક જીવ કાળની અપે-  
ક્ષાએ ક્યારેક સપ્રદેશી છે અને ક્યારેક અપ્રદેશી છે.

( એવં જાવ સિદ્ધે ) એજ પ્રમાણે સિદ્ધ પર્યન્તના જીવ ક્યારેક સપ્ર-  
દેશી છે અને ક્યારેક અપ્રદેશી છે.

( જીવાણં મંતે ! કાલાદેસેણં સપણસા અપણસા ) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવો  
કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશી છે કે અપ્રદેશી છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ ( નિયમા  
સપણસે ) નિયમથી જ સપ્રદેશી છે.

( નેરહયા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસા અપણસા ? ) હે ભદન્ત !  
સમસ્ત નારક જીવો જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશસહિત છે કે પ્રદેશરહિત છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( સઘ્વે વિ-તાવ હોજ્ઞા સપણસા, અહવા સપ-  
ણસા ય અપણસે, અહવા-સપણસા ય અપણસાય એવં અસુરકુમારા જાવ થણિય-  
કુમારા ) સમસ્ત નારક જીવો પણ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશસહિત છે. અથવા

અભંગયં । અવેયગા જહા--અવસાઈ । સસરીરી જહા ઓહિઓ ।  
 ઓરાલિય-વેડવિયસરીરેહિં જીવ-एगिंदियवज्जो તિયભંગો ।  
 આહારગસરીર-જીવ-મણુપસુ છઠ્ઠમંગા । તેયગ-કમ્મમેહિં જહા  
 ઓહિયા । અસરીરેહિં જીવ-સિદ્ધેહિં તિયભંગો । આહારપજ્જત્તીए,  
 સરીરપજ્જત્તીए, ઇંદિયપજ્જત્તીए આળપાળપજ્જત્તીए, જીવ-  
 एगिंदियवज्जો તિયભંગો । ભાસા-મણપજ્જત્તીए જહા સન્ની ।  
 આહાર-અપજ્જત્તીए જહા -અળાહારગા । સરીર--અપજ્જત્તીए,  
 ઇંદિયઅપજ્જત્તીए, આળપાળ અપજ્જત્તીए, જીવ-एगिंदिय-  
 વજ્જો તિયભંગો । નેરइय-देव-मणुएहिं છઠ્ઠમંગા ॥ સંગહગાહા-  
 સપएसा આહારગ ભવિય-સન્નિ-લેસા-દિટ્ઠિ-સંજય-કસાયા ।  
 ણાળે જોગુ-વઓગે વેદે ય સરીર-પજ્જત્તી ॥ સૂ૦૧ ॥

છાયા—જીવઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કાલાદેશેન કિં સપદેશઃ, અપદેશઃ, ? ગૌતમ !  
 નિયમાત્ સપદેશઃ નૈરયિકઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કાલાદેશેન કિં સપદેશઃ, અપદેશઃ ?

જીવ કે સપદેશ ઓર અપદેશ કી વક્તવ્યતા—

‘ જીવે ણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—( જીવે ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપएसे, અપएसे ) હે  
 ભદન્ત ! જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કયા પ્રદેશસહિત હૈ ? કિ પ્રદેશ-  
 રહિત હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( નિયમા સપएसे ) નિયમ સે જીવ  
 પ્રદેશસહિત હૈ । ( નેરइयणं મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપएसे અપएसे )  
 હે ભદન્ત ! નારક જીવ કયા કાલ કી અપેક્ષા સે પ્રદેશ સહિત હૈ ? કિ

अवना सप्रदेशत्व अने अप्रदेशत्वतुं निश्चय—

“ જીવે ણં મંતે ! ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—( જીવેણં મંતે ! કાલાદેસેણં સપएसे અપएसे ? ) હે ભદન્ત ! શુ  
 અવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશસહિત છે કે પ્રદેશરહિત છે ?

( ગોયમા ! નિયમા સપएसे ) હે ગૌતમ ! અવ નિયમથી જ પ્રદેશરહિત છે.

( નેરइयणं મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપएसे અપएसे ? ) હે ભદન્ત ! નારક  
 અવ શુ કાળની અપેક્ષાએ સપદેશી છે કે અપદેશી છે ?



તત્ત્વા:-સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૩, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશાથ ૪, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશથ ૫, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૬ । સિદ્ધેષુ ત્રયો ભક્તાઃ । ભવસિદ્ધિકાઃ, અભવસિદ્ધિકા યથા ઔચિતાઃ । નોભવસિદ્ધિક-નોઞભવસિદ્ધિકજીવ-સિદ્ધયોસ્ત્રયો ભક્તાઃ, સન્નિષુ જીવાદિકા-

૧, અપણસા વા ૨, અહવા-સપણસે ય અપણસે ય ૩, અહવા સપણસે ય અપણસા ૪ અહવા-સપણસા ય અપણસે ય, અહવા સપણસા ય અપણસા ય-સિદ્ધેહિં તિય ભંગો, ભવસિદ્ધિયાં અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા ) અનાહારક જીવોં કે જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર છ ભંગ હસ પ્રકાર સે કહનાં ચાહિયે-કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં (૧), કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં (૨) અથવા-કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતા હૈં ઓર કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતા હૈં (૩) કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતા હૈં ઓર કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં (૪) કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં ઓર કોઈ એક પ્રદેશરહિત હોતા હૈં (૫) કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં ઓર કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં ૬ । સિદ્ધ જીવોં કે ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । સામાન્ય જીવોં કી તરહ ભવસિદ્ધિક ભવ્યજીવ ઓર અભવ્યસિદ્ધિક

(૩) અહવા-સપણસે ય અપણસે ય, (૪) અહવા-સપણસે ય. અપણસા ય, (૫) અહવા-સપણસા ય અપણસે ય (૬) અહવા-સપણસા ય અપણસા ય-સિદ્ધેહિં તિય ભંગો, ભવસિદ્ધિયા અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા ) એવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના અનાહારક એવોના નીચે પ્રમાણે ૬ ભંગ સમજવા-(૧) કેટલાક અનાહારક એવો પ્રદેશસહિત હોય છે. (૨) કેટલાક અનાહારક એવો પ્રદેશરહિત હોય છે. (૩) અથવા કોઈક અનાહારક એવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કોઈક અનાહારક પ્રદેશરહિત હોય છે. (૪) કોઈક અનાહારક એવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક એવો પ્રદેશરહિત હોય છે. (૫) કેટલાક અનાહારક એવો પ્રદેશસહિત હોય છે અને કોઈક નારક એવ પ્રદેશરહિત હોય છે. (૬) કેટલાક અનાહારક એવો પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક એવો પ્રદેશરહિત હોય છે. સિદ્ધ એવોના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. સામાન્ય એવોની જેમ ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય એવ) અને અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય એવ) ના વિષયમાં પણ સમજવું.

કિં સપ્રદેશાઃ અપ્રદેશાઃ ? ગૌતમ ! સપ્રદેશા અપિ, અપ્રદેશા અપિ, एवं यावत्-  
वनस्पतिकायिकाः, शैवाः यथा नैरयिकास्तथा, यावत्-सिद्धाः । आहारकाणां  
जीवै-केन्द्रियवर्जस्त्रिकंमद्गः । अनाहारकाणां जीवैकेन्द्रियवर्जाः नश्मन्ना एवं भणि-

हित हैं और कोई एक नारक जीव प्रदेशरहित हैं अथवा-कितनेक  
नारक जीव प्रदेशसहित हैं और कितनेक नारक जीव प्रदेशरहित हैं ।  
इसी तरह असुरकुमारों से लेकर यावत् स्तनितकुमारों तक जानना  
चाहिये । ( पुढवीकाइया णं भंते ! किं सपएससा अपएससा ) हे भदन्त !  
पृथिवीकायिक जीव क्या प्रदेशसहित हैं कि प्रदेशरहित हैं ? ( गोयमा )  
हैं गौतम ! ( सपएससा वि अपएससा वि ) पृथिवीकायिक जीव प्रदेशसहित  
भी हैं और प्रदेशरहित भी हैं । ( एवं जाव वणस्सइकाइया सेसा जहा  
नेरइयां तहा जाव सिद्धा ) इसी तरह से यावत् वनस्पतिकायिक तक के  
जीवों के विषय में जानना चाहिये । जिस तरह से नैरयिक जीवों के  
विषय में कहा है, उसी तरह से सिद्धतक के वाकी के जीवों के विषय  
में जानना चाहिये । ( आहारगाणं जीव-एगिंदियवज्जो तियभंगो ) जीव  
और एकेन्द्रियको छोड़कर आहारक जीवों के तीनभंग होते हैं । ( अणा-  
हारगा णं जीव-एगिंदियवज्जा छवभंगा एवं भाणियव्वा-सपएससा वा

કેટલાક નારક જીવો પ્રદેશસહિત છે અને કેટલાક નારક જીવ પ્રદેશરહિત છે.  
અથવા કેટલાક નારક જીવો પ્રદેશમહિત છે અને કેટલાક નારક જીવો પ્રદેશ-  
રહિત છે. એજ પ્રમાણે, અસુરકુમારોથી લઈને સ્તનિતકુમારો પર્યંતના  
વિષયમાં સમજવું.

( પુઢવિકાઈયા ણં ભંતે ! કિં સપસસા અપસસા ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાયિક  
જીવો શું પ્રદેશસહિત છે કે પ્રદેશરહિત છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( સપસસા વિ અપસસા વિ ) પૃથ્વીકાયિક જીવો  
પ્રદેશસહિત પણ છે અને પ્રદેશરહિત પણ છે. ( एवं जाव वणस्सइकाइया  
सेसा जहा नेरइयां तहा, जाव सिद्धा ) એજ પ્રમાણે વનસ્પતિકાય સુધીના  
જીવો વિષે સમજવું. જે પ્રમાણે નારક જીવોના વિષયમાં કહ્યું છે, એજ  
પ્રમાણે સિદ્ધજીવો પર્યંતના બાકીના વિષયમાં પણ સમજવું.

( આહારગાણં જીવ-એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) જીવ અને એકેન્દ્રિય  
સિવાયના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ ( વિકલ્પ ) થાય છે. ( અણાહારગાણં  
જીવ-એગિંદિયવજ્જા છવમંગા, एवं भाणियव्वा (१) सपएससा वा, (२) अपएससा वा,



તત્ત્વો:-સપ્રદેશાં વા ૧, અપ્રદેશાં વાં ૨, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૩, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૪, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૫, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૬. સિદ્ધેષુ ત્રયો ભક્ત્તાઃ । ભવસિદ્ધિકાઃ, અભવસિદ્ધિકા યથા ઔઘિતાઃ । નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકજીવ-સિદ્ધયોસ્ત્રયો ભક્ત્તાઃ, સંક્ષિપ્ત જીવાદિકાં-

૧, અપ્રદેશાં વા ૨, અહવા-સપ્રદેશે ય અપ્રદેશે ય ૩, અહવા સપ્રદેશે ય અપ્રદેશા ૪ અહવા-સપ્રદેશા ય અપ્રદેશે ય, અહવા સપ્રદેશા ય અપ્રદેશા ય-સિદ્ધેર્હિં તિય ભંગો, ભવસિદ્ધિયાં અભવસિદ્ધિયાં જહા ઔઘિયા ) અનાહારક જીવોં કે જીવ ઔર એકેન્દ્રિય કો છોડકર છ ભંગ હસ પ્રકાર સે કહનાં ચાહિયે-કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં (૧), કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં (૨) અથવા-કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતા હૈં ઔર કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતા હૈં (૩) કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતા હૈં ઔર કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં (૪) કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં ઔર કોઈ એક પ્રદેશરહિત હોતા હૈં (૫) કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં ઔર કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં ૬ । સિદ્ધ જીવોં કે ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । સામાન્ય જીવોં કી તરહ ભવસિદ્ધિક ભવ્યજીવ ઔર અભવ્યસિદ્ધિક

(૩) અહવા-સપ્રદેશે ય અપ્રદેશે ય, (૪) અહવા-સપ્રદેશે ય. અપ્રદેશા ય, (૫) અહવા-સપ્રદેશા ય અપ્રદેશે ય (૬) અહવા-સપ્રદેશા ય અપ્રદેશા ય-સિદ્ધેર્હિં તિય ભંગો, ભવસિદ્ધિયાં અભવસિદ્ધિયાં જહા ઔઘિયા ) જીવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના અનાહારક જીવોના નીચે પ્રમાણે ૬ ભંગ સમજવા- (૧) કેટલાક અનાહારક જીવો પ્રદેશસહિત હોય છે. (૨) કેટલાક અનાહારક જીવો પ્રદેશરહિત હોય છે. (૩) અથવા કેટલાક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક પ્રદેશરહિત હોય છે. (૪) કેટલાક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક જીવો પ્રદેશરહિત હોય છે. (૫) કેટલાક અનાહારક જીવો પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક નારક જીવ પ્રદેશરહિત હોય છે. (૬) કેટલાક અનાહારક જીવો પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક જીવો પ્રદેશરહિત હોય છે. સિદ્ધ જીવોના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. સામાન્ય જીવોની જેમ ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય જીવ) અને અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય જીવ) નો વિષયમાં પણ સમજવું.

સગો મજ્ઞાઃ। અસંજિપુ એકેન્દ્રિયવર્ગીયગો મજ્ઞાઃ, નૈરયિક-દેવ-મનુજેષુ ૧૩ મજ્ઞાઃ, નોસંજિ-નોઅસંજિ-જીવ-મનુજસિદ્ધેષુ ૫૫૦ મજ્ઞાઃ। સલેશ્યા યથા ઔષ્ણિઃ। કૃષ્ણલેશ્યાઃ, નીલલેશ્યાઃ, કાપોતલેશ્યાઃ, યથા આહારકઃ, નવરમ્-યસ્ય સન્તિ એવાઃ। તેજોલેશ્યાયાં જીવાદિકામૃષો મજ્ઞાઃ, નવરમ્-પૃથિવીકાયકેષુ, અવ-

અભવ્યજીવ જાનના ચાહિયે ( ણો ભવસિદ્ધિય ણો અભવસિદ્ધિ ય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નો ભવસિદ્ધિક નો અભવસિદ્ધિક, જીવ ઓર સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં। ( સન્નીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો ) સંજી જીવોં મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં। ( અસન્નીહિં એકેન્દ્રિયવર્ગીય તિયમંગો ) અસંજી જીવોં મેં એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન મંગ હોતે હેં। ( નૈરય-દેવ-મણુઈ છવ્મંગો ) નૈરયિક દેવ ઓર મનુષ્ય મેં છહ મંગ હોતે હેં। ( ણોસણિ નોઅસન્નિ જીવમણુયસિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નોસંજી, નોઅસંજી જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં। ( સલેસા જહા ઓહિયા ) સામાન્ય જીવોં કી તરહ લેશ્યા-વાલે જીવોં કો જાનના ચાહિયે। ( કણ્ણલેસા, નીલલેસા, કાઉલેસા જહા-આહારઓ ) કૃષ્ણલેશ્યાવાલે, નીલલેશ્યાવાલે ઓર કાપોતલેશ્યા-વાલે જીવ આહારક જીવોં કી તરહ સે જાનના ચાહિયે। ( નવરં જસ્સ અત્થિયાઓ ) વિશેષતા યહ હે કિ જિસ જીવ કે જો લેશ્યા હોતી હેં ઉસ જીવ કે ઉસ લેશ્યા કો કહના ચાહિયે। ( તેજલેસાએ જીવાઈઓ

( ણો ભવસિદ્ધિય ણો અભવસિદ્ધિય જીવસિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નો ભવ-સિદ્ધિક, નો અભવસિદ્ધિક અને સિદ્ધિ એવાના ત્રણ ભંગ થાય છે. ( સન્નીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો ) સંજી એવામાં એવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( અસન્નીહિં એકેન્દ્રિયવર્ગીય તિયમંગો ) એકેન્દ્રિય સિવાયના અસંજી એવામાં ત્રણ ભંગ થાય છે. ( નૈરય, દેવ, મણુઈ છવ્મંગો ) નારક દેવ અને મનુષ્યોં માં છ ભંગ થાય છે. ( ણોસણી નોઅસણિ જીવમણુયસિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નો, સંજી, નો અસંજી, એવ, મનુષ્ય અને સિદ્ધોંમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. ( સલેસા જહા ઓહિયા ) સામાન્ય એવાની જેમ જ લેશ્યાવાળા એવાના વિષયમાં પણ સમજવું. ( કણ્ણલેસા, નીલલેસા, કાઉલેસા, જહા આહારઓ ) કૃષ્ણ લેશ્યાવાળા, નીલ લેશ્યાવાળા અને કાપોત લેશ્યાવાળા એવાના વિષયમાં આહારક એવા પ્રમાણે સમજવું. ( નવરં જસ્સ અત્થિયાઓ ) પણ તેમાં કોઈલી જ વિશેષતા છે કે જે એવાની જે લેશ્યા હોય છે, તે એવાની તે લેશ્યા

વનસ્પતિષુ પદ્મ ભક્ષાઃ । પદ્મલેશ્ય-શુક્લલેશ્યયોઃ જીવાદિકાત્રયો ભક્ષાઃ ।  
અલેશ્યેષુ જીવસિદ્ધેષુ ત્રયો ભક્ષાઃ । મનુજેષુ પદ્મભક્ષાઃ । સમ્યગ્દષ્ટિષુ જીવા-  
દિકાત્રયો ભક્ષાઃ । વિકલેન્દ્રિયેષુ પદ્મભક્ષાઃ । મિથ્યાદષ્ટિષુ એકેન્દ્રિયવર્જાત્રયો  
ભક્ષાઃ, સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિષુ પદ્મ ભક્ષાઃ । સંયતેષુ જીવાદિકાત્રયો ભક્ષાઃ । અસંયતેષુ  
એકેન્દ્રિયવર્જાત્રયો ભક્ષાઃ । સયતાઽસંયતેષુ ત્રયો ભક્ષા જીવાદિકાઃ । નોસંયત-

તિયમંગો, નવરં-પુદ્ગલિકાણસુ આઠ-વળસ્સર્ગસુ છઠ્ઠમંગા ) તેજોલેશ્યા મેં  
જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં એસા જાનના ચાહિયે । નવરં-વિશેષતા  
યદ્દ હેં કિ પૃથ્વીકાયિકા મેં, અપૃથ્વીકાયિકા મેં ઓર વનસ્પતિ કાયિકા મેં  
છદ્દ મંગ હોતે હેં । ( પદ્મલેશ્ય સુક્લલેશ્યા જીવાદો તિયમંગો ) પદ્મ-  
લેશ્યા મેં ઓર શુક્લલેશ્યા મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં । ( અલેશ્યેહિં  
જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ) લેશ્યા સે રહિત અલેશ્યાવાલો મેં જીવ ઓર  
સિદ્ધો મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં । ( મનુજેષુ છઠ્ઠમંગા ) મનુજો મેં છદ્દ મંગ  
હોતે હેં । ( સમ્યગ્દષ્ટિહિં જીવાદો તિયમંગો ) સમ્યક્ દષ્ટિયો મેં જીવા-  
દિક ત્રીન મંગ હોતે હેં । ( વિકલેન્દ્રિયેષુ છઠ્ઠમંગા ) વિકલેન્દ્રિય જીવો  
મેં છદ્દ મંગ હોતે હેં । ( મિથ્યાદષ્ટિહિં એકેન્દ્રિયવર્જો તિયમંગો ) મિથ્યા-  
દષ્ટિયો મેં એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન મંગ હોતે હેં । ( સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ-  
હિં છઠ્ઠમંગા ) સમ્યક્મિથ્યાદષ્ટિ જીવો મેં છદ્દ મંગ હોતે હેં ।  
( સંયતેહિં જીવાદો તિયમંગો ) સંયતો મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે  
હેં । ( અસંયતેહિં એકેન્દ્રિયવર્જો તિયમંગો ) અસંયત જીવો મેં એકેન્દ્રિય

કહેવી જોઈએ. ( તેજોલેશ્યામાં જીવાદો તિયમંગો, નવરં પુદ્ગલિકાણસુ આઠ-  
વળસ્સર્ગસુ છઠ્ઠમંગા ) તેજોલેશ્યામાં જીવાદિક ત્રણ ભાગ થાય છે એમ સમજવું.  
પદ્મ તેમાં એ વિશેષતા છે કે પૃથ્વીકાયિકામાં, અપૃથ્વીકાયિકામાં અને વનસ્પતિ  
કાયિકામાં છ ભાગ થાય છે. ( પદ્મલેશ્ય સુક્લલેશ્યા જીવાદો તિયમંગો )  
પદ્મ લેશ્યામાં અને શુક્લ લેશ્યામાં જીવાદિક ત્રણ ભાગ થાય છે. ( અલેશ્યેહિં  
જીવ-સિદ્ધેહિં તિયમંગો ) અલેશ્યાવાળામાં ( લેશ્યાથી રહિત જીવોમાં ) જીવ  
અને સિદ્ધોમાં ત્રણ ભાગ થાય છે. ( મનુજેષુ છઠ્ઠમંગા ) મનુજોમાં છ ભાગ  
થાય છે. ( સમ્યગ્દષ્ટિહિં જીવાદો તિયમંગો ) સમ્યક્દષ્ટિ જીવોમાં જીવાદિક  
ત્રણ ભાગ થાય છે ( વિકલેન્દ્રિયેષુ છઠ્ઠમંગા ) વિકલેન્દ્રિય જીવોમાં છ ભાગ  
થાય છે. ( મિથ્યાદષ્ટિહિં એકેન્દ્રિયવર્જો તિયમંગો ) એકેન્દ્રિય સિવાયના મિથ્યા-  
દષ્ટિજીવોમાં ત્રણ ભાગ થાય છે. ( સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિહિં છઠ્ઠમંગો ) સમ્યક્ મિથ્યા-  
દષ્ટિ જીવોમાં છ ભાગ થાય છે. ( સંયતેહિં જીવાદો તિયમંગો ) સંયતોમાં



નોસંયત-નો સંયતાસંયત-જીવ-સિદ્ધેષુ પ્રયોમદ્વાઃ । સકળાણિષુ જીવાદિકા-  
સુયોમદ્વાઃ । એકેન્દ્રિયેષુ અમદ્વકમ્ । ક્રોધકળાણિષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્જાણિયો મદ્વાઃ ।  
દેવેષુ પદ્મદ્વાઃ । માનકળાણિ માયાકળાણિષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્જાણિયો મદ્વાઃ, નૈરયિક-  
દેવેષુ પદ્મદ્વાઃ । લોભકળાણિષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્જાણિયો મદ્વાઃ, નૈરયિકેષુ પદ્મદ્વાઃ ।

વર્જ ત્રીન ભંગ હોતે હિં ( સંજયા સંજઈહિં તિયમંગો જીવાઈઓ ) સંય-  
તાસંયત જીવો મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( જો સંજય જો અસંજય  
જો સંજયાસંજય જીવસિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નો સંયત નો અસંયત નો  
સંયતાસંયત જીવસિદ્ધો મેં, ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( સકસાઈહિં જીવાઈઓ  
તિયમંગો ) કપાય સહિત છુણ જીવો મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં ।  
( ઇગિંદિયસુ અભંગકં ) એકેન્દ્રિય જીવો મેં એક ભંગ હોતા હે-ત્રીનભંગ  
નહીં હોતે । ( કોહકસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) ક્રોધ કપા-  
યવાલો મેં જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( દેવેહિં  
છબમંગો ) દેવો મેં છહ ભંગ હોતે હિં । ( માણકસાઈ માયાકસાઈ જીવ  
ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) માનકપાયવાલો મેં માયાકપાયવાલો મેં જીવ  
ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીનભંગ હોતે હિં । ( નેરય-દેવેહિં છબમંગા )  
નારક ઓર દેવો મેં છહ ભંગ હોતે હિં । ( લોભકસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિય-  
વજ્જો તિયમંગો ) લોભકપાયવાલો મેં જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર  
ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( નેરયસુ છબમંગા ) નારકો મેં છહ ભંગ હોતે હિં

અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( અસંજઈહિં ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) અસંયત  
અવોમાં એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. ( સંજયા સંજઈહિં તિયમંગો  
જીવાઈઓ ) સંયતાસંયત અવોમાં અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( જો સંજય,  
જો અસંજય, જો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો નો સંયત, નો અસંયત,  
નો સંયતાસંયત અવસિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. ( સકસાઈહિં જીવાઈઓ  
તિયમંગો ) કપાયયુક્ત અવોમાં અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( ઇગિંદિયસુ  
અભંગકં ) એકેન્દ્રિય અવોમાં એક ભંગ થાય છે-ત્રણ ભંગ થતા નથી. ( કોહ-  
કસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ). અને એકેન્દ્રિય સિવાયના ક્રોધ,  
કપાયવાળા અવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.

( દેવેહિં છબમંગો ) દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. ( માણકસાઈ માયાકસાઈ જીવ  
ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ). માન કપાયવાળામાં અને માયા કપાયવાળામાં અવ,  
અને એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. ( નેરય-દેવેહિં છબમંગા ). નારક  
અને દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. ( લોભકસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો )  
અવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના લોભકપાયવાળા અવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે,

અકુપાપિ-જીવ-મનુજેષુ સિદ્ધેષુ ત્રયો ભદ્રાઃ । ઔધિકજ્ઞાને, આભિનિયોધિક-  
જ્ઞાને, શ્રુતજ્ઞાને જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । વિકલેન્દ્રિયેષુ પદ્ ભદ્રાઃ । અવધિજ્ઞાને,  
મનઃપર્યવજ્ઞાને કેવલજ્ઞાને જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । ઔધિકાજ્ઞાને, મત્યજ્ઞાને,  
શ્રુતાજ્ઞાને એકેન્દ્રિયવર્જસ્ત્રિયો ભદ્રાઃ । વિભદ્રાજ્ઞાને જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । સયોગી  
યથા ઔધિકઃ । મનોયોગિ-વચોયોગિ-કાયયોગિષુ જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ, નવ-

(અકસાર્દ-જીવ-મણુર્પદિં સિદ્ધેર્હિં તિયમંગો) કપાયરહિત જીવોં મેં  
મનુષ્યોં મેં ઓર સિદ્ધોં મેં તોન મંગ હોતે હેં । (ઓહિયણાણે-અભિણિ-  
યોહિયણાણે સુયણાણે જીવાદો તિયમંગો) ઔધિક જ્ઞાન મેં, આભિ-  
નિયોધિક જ્ઞાન મેં, શ્રુતજ્ઞાન મેં જીવાદિક તોન મંગ હોતે હેં । (વિગ-  
લિંદિર્પદિં છત્તમંગા) વિકલેન્દ્રિયોં મેં છહ મંગ હોતે હેં । (ઓહિણાણે  
મણપડજવણાણે, કેવલણાણે જીવાદો તિયમંગો) ઔધિક જ્ઞાનમેં મનઃ  
પર્યય જ્ઞાન મેં, કેવલ જ્ઞાન મેં જીવાદિક તોન મંગ હોતે હેં । (ઓહિય  
અણાણે મદ્ અન્નાણે, સુય અન્નાણે, ઇર્ગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) ઔધિક  
અજ્ઞાન મેં, મતિ અજ્ઞાન શ્રુત અજ્ઞાન મેં એકેન્દ્રિય વર્જ તોન મંગ હોતે  
હેં । (વિમંગ અણાણે જીવાદો તિયમંગો) વિમંગ જ્ઞાન મેં જીવાદિક  
તોન મંગ હોતે હેં । (સજોગી જહા ઓહિઓ) ઔધિક કી તરહ સયોગી  
હોતે હેં । (મણ-જોગિ-વચજોગિ-કાયજોગિર્હિં જીવાદો તિયમંગો)  
મનોયોગી મેં, વચનયોગી મેં ઓર કાયયોગી મેં જીવાદિક તોન મંગ

(નેરદપસુ છત્તમંગા) અને નારકોમાં છ ભંગ થાય છે. (અકસાર્દ જીવમણુ-  
પદિં, સિદ્ધેર્હિં તિયમંગો) કપાય રહિત જીવોમાં, મનુષ્યોમાં અને સિદ્ધોમાં  
ત્રણ ભંગ થાય છે. (ઓહિયણાણે આભિનિયોધિયણાણે સુયણાણે જીવાદો તિય-  
મંગો) ઔધિક જ્ઞાનમાં-આભિનિયોધિક જ્ઞાનમાં અને શ્રુતજ્ઞાનમાં જીવાદિક  
ત્રણ ભંગ થાય છે, (વિગલિંદિર્પદિં છત્તમંગા) વિકલેન્દ્રિયોમાં છ ભંગ થાય  
છે. (ઓહિણાણે મણપડજવણાણે, કેવલણાણે જીવાદો તિયમંગો) ઔધિક જ્ઞાનમાં,  
મનઃપર્યય જ્ઞાનમાં અને કેવલ જ્ઞાનમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (ઓહિય  
અણાણે મદ્અણાણે સુયઅણાણે, ઇર્ગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) ઔધિક અજ્ઞા-  
નમાં, મતિ અજ્ઞાનમાં અને શ્રુત અજ્ઞાનમાં એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય  
છે. (વિમંગઅણાણે જીવાદો તિયમંગો) વિભંગજ્ઞાનમાં જીવાદિક ત્રણ  
ભંગ થાય છે. (સજોગી જહા ઓહિઓ) ઔધિકની જેમ સયોગીના વિષયમાં  
અમંગલું. (મણજોગિ, વચજોગિ, કાયજોગિર્હિં જીવાદો તિયમંગો) મનોયોગી,



નોઅસંયત-નો સંયતાસંયત-જીવ-સિદ્ધેષુ ત્રયોમજ્ઞાઃ । સકળાણિષુ જીવાદિકા-  
સુયોમજ્ઞાઃ । એકેન્દ્રિયેષુ અમદ્વરુપ્ । ક્રોધકળાણિષુ ત્રીર્વકેન્દ્રિયવર્જાણિયો મજ્ઞાઃ ।  
દેવેષુ પદ્મજ્ઞાઃ । માનકળાણિ માયાકળાણિષુ ત્રીર્વકેન્દ્રિયવર્જાણિયો મજ્ઞાઃ, નૈરયિક-  
દેવેષુ પદ્મજ્ઞાઃ । લોભકળાણિષુ ત્રીર્વકેન્દ્રિયવર્જાણિયો મજ્ઞાઃ, નૈરયિકેષુ પદ્મજ્ઞાઃ ।

ઘર્જ ત્રીન ભંગ હોતે હિં ( સંજયા સંજણ્દિં તિયમંગો જીવાઈઓ ) સંય-  
તાસંયત જીવોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( ણો સંજય ણો અસંજય  
ણો સંજયાસંજય જીવસિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નો સંયત નો અસંયત નો  
સંયતાસંયત જીવસિદ્ધોં મેં, ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( સકસાઈહિં જીવાઈઓ  
તિયમંગો ) કળાય સહિત છુણ જીવોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં ।  
( એગિંદિયેસુ અમંગકં ) એકેન્દ્રિય જીવોં મેં એક ભંગ હોતા હે-ત્રીનભંગ  
નહોં હોતે । ( કોહકસાઈહિં જીવ-એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) ક્રોધ કળા-  
યવાલોં મેં જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( દેવેહિં  
છઞ્મંગો ) દેવોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં । ( માણકસાઈ માયાકસાઈ જીવ  
એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) માનકળાયવાલોં મેં માયાકળાયવાલોં મેં જીવ  
ઓર એકેન્દ્રિય-કો છોડકર ત્રીનભંગ હોતે હિં । ( નૈરય-દેવેહિં છઞ્મંગા )  
નારક ઓર દેવોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં । ( લોભકસાઈહિં જીવ-એગિંદિય-  
વજ્જો તિયમંગો ) લોભકળાયવાલોં મેં જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર  
ત્રીન ભંગ હોતે હિં । ( નૈરયેસુ છઞ્મંગા ) નારકોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં

અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( અસંજણ્દિં એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) અસંયત  
અવોમાં એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. ( સંજયા સંજણ્દિં તિયમંગો  
જીવાઈઓ ) સંયતાસંયત અવોમાં અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( ણો સંજય,  
ણો અસંજય, ણો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો નો સંયત, નો અસંયત,  
નો સંયતાસંયત અવસિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. ( સકસાઈહિં જીવાઈઓ  
તિયમંગો ) કળાયયુક્ત અવોમાં અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( એગિંદિયેસુ  
અમંગકં ) એકેન્દ્રિય અવોમાં એક ભંગ થાય છે-ત્રણ ભંગ થતા નથી. ( કોહ-  
કસાઈહિં જીવ-એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ). અને એકેન્દ્રિય-સિવાયના ક્રોધ  
કળાયવાળા અવોમાં ત્રણ ભંગ થાય

( દેવેહિં છઞ્મંગો ) દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. ( માણકસાઈ માયાકસાઈ જીવ  
એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) માન કળાયવાળામાં અને માયા કળાયવાળામાં અવ  
અને એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. ( નૈરય-દેવેહિં છઞ્મંગા ) નારક  
અને દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. ( લોભકસાઈહિં જીવ-એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો )  
અવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના લોભકળાયવાળા અવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે

‘શરીર-જીવ-મનુજેષુ પડ્ ભક્તાઃ । તૈજસ-કાર્મણેષુ યથોધિકાઃ । અશરીરેષુ જીવ-  
સિદ્ધેષુ વ્રયો ભક્તાઃ । આહારપર્યાપ્તો, શરીરપર્યાપ્તો, इन्द्रियपर्याप्तો, આનવાણ-  
પર્યાપ્તો, જીવૈકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્રયો ભક્તાઃ । ભવામનઃપર્યાપ્તો યથા સંતી । આહારાઽ-  
પર્યાપ્તો યથા અનાહારકાઃ । શરીરાપર્યાપ્તો, इन्द्रियापर्याप्तो, આન-પ્રાણાઽપર્યાપ્તો  
જીવૈકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્રયોભક્તાઃ । નૈરયિક-દેવ-મનુજેષુ પડ્ ભક્તાઃ । સંગ્રહગાથા—

સરી જહા ઓહિઓ ) સામાન્ય જીવ કી તરહ શરીરવાલે જીવોં કો  
જાનનાં ચાહિયે । ( ઓરાલિય-વેઝવિય-સરીરેહિં જીવ ઇન્દિયવજ્જો  
તિયમંગો ) ઔદારિક શરીરવાલોં મેં વૈક્રિય શરીરવાલોં મેં જીવ ઇકેન્દ્રિય  
કો છોડકરં ત્રીનમંગ હોતે હેં ( આહારગસરીર જીવ મણુણસુ છઠ્ઠમંગા )  
આહાર શરીર મેં, જીવ ઓર મનુષ્યોં મેં છહ મંગ હોતે હેં । ( તેયગકમ્મ-  
ગેહિં જહા ઓહિયા ) ઔવિક કી તરહ તૈજસ ઓર કાર્મણ શરીરવાલોં  
કો જાનનાં ચાહિયે । ( અસરીરેહિં જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ) અશરીરી  
જીવ ઓર સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં । ( આહારપજ્જત્તીણ, સરીરપજ્જ-  
ત્તીણ, ઇન્દિયપજ્જત્તીણ, આણપાણપજ્જત્તીણ જીવ ઇન્દિયવજ્જો  
તિયમંગો ) આહારપર્યાપ્તિ મેં, શરીરપર્યાપ્તિ મેં, इन्द्रियपर्याप्तિ મેં, શ્વાસો-  
ચ્છ્વાસપર્યાપ્તિ મેં, જીવ ઓર ઇકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન મંગ હોતે હેં ।  
( ભાસામણપજ્જત્તીણ જહા સન્ની ) ભાપાપર્યાપ્તિ મેં ઓર મનઃપર્યાપ્તિ  
મેં સંતી કી તરહ જાનનાં ચાહિયે । ( આહાર અપજ્જત્તીણ જહા અણા-  
હારગા ) અનાહારક જીવોં કી તરહ આહાર અપર્યાપ્તિવાલે જીવોં

જહા ઓહિઓ ) શરીરવાળા જીવોના વિષયમાં સામાન્ય જીવોના કથન પ્રમા  
ણેનું જ કથન સમજવું. ( ઓરાલિય-વેઝવિય-સરીરેહિં જીવ ઇન્દિયવજ્જો  
તિયમંગો ) ઔદારિક શરીરવાળામાં અને વૈક્રિય શરીરવાળામાં જીવ એકેન્દ્રિય  
વર્જિત ત્રણ ભાગ થાય છે. ( અહારગસરીર જીવ મણુણસુ છઠ્ઠમંગા ) આહારક  
શરીરમાં, જીવ અને મનુષ્યના છ ભાગ થાય છે. ( તેયગકમ્મગેહિં જહા ઓહિયા )  
તૈજસ અને કાર્મણ શરીરવાળા જીવોના વિષયમાં ઔધિકના જેવું જ કથન  
સમજવું. ( અસરીરેહિં જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ) અશરીરી જીવ અને સિદ્ધોમાં  
ત્રણ ભાગ થાય છે. ( આહાર પજ્જત્તીણ, સરીરપજ્જત્તીણ, ઇન્દિયપજ્જત્તીણ, આણ-  
પાણપજ્જત્તીણ જીવ ઇન્દિયવજ્જો તિયમંગો ) આહાર પર્યાપ્તિમાં, શરીર પર્યા-  
પ્તિમાં, इन्द्रिय पर्याप्तिમાં અને શ્વાસોચ્છ્વાસ પર્યાપ્તિમાં જીવ અને એકેન્દ્રિય  
વર્જિત ત્રણ ભાગ થાય છે. ( ભાસામણપજ્જત્તીણ જહા સન્ની ) ભાપા પર્યાપ્તિમાં  
અને મનઃ પર્યાપ્તિમાં સંતી પ્રમાણે જ સમજવું. ( આહાર અપજ્જત્તીણ જહા  
અણાહારગા ) અહાર અપર્યાપ્તિવાળા જીવોના વિષયમાં અનાહારક જીવો

સ્મ-કાયયોગિનઃ એકેન્દ્રિયાસ્તેષુ અમન્નકમ્ । અયોગિનો યથા અલેશ્યાઃ । સાકારોપયુક્તાઽનાકારોપયુક્તેષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્યયો મન્નાઃ । સવેદકાશ્ર યથા સક્ષ્યાયિણઃ । સ્ત્રીવેદક-પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકેષુ જીવાદિકાસ્ત્યયો મન્નાઃ । નવરમ્-નપુંસકવેદકે એકેન્દ્રિયેષુ અમન્નકમ્ । અવેદકા યથા અરૂપાયિણઃ । સસરીરી યથા ઔઘિકા । ઔશારિક-વૈક્રિયશરીરેષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્યયો મન્નાઃ । આદારક

હોતે હું । ( નવરં-કાયજોગી ઇન્દ્રિયા તેસુ અમંગયં ) વિશેષતા યહ હૈ કિ એકેન્દ્રિય જીવ કાયયોગવાલે હોતે હૈ-ફસલિયે ડનમેં અધિક ભંગ નહીં હોતે હૈ-એક ભંગ હોતા હૈ । ( અજોગી જહા અલેસ્તા ) જૈસે અલેશ્યાવાલે જીવ કહે ગયે હું વૈસે હી અયોગી જીવ જાનના ચાહિયે । ( સાગરોવડત્ત-અનાગારોવડત્તેહિં જીવ ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ) સાકારોપયુક્ત અનાકારોપયુક્ત જીવોં મેં જીવ એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હૈ । ( સવેયગા ય જહા સકસાઈ ) કષાયવાલે જીવોં કી તરફ વેદવાલે જીવોં કો જાનના ચાહિયે । ( ઇત્થિવેયગ-પુરિસવેયગ-નપુંસગવેયગેસુ જીવાઈઓ તિયમંગો ) સ્ત્રીવેદકોં મેં, પુરુષવેદકોં મેં ઓર નપુંસકવેદકોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હૈ । ( નવરં-નપુંસગવેદે ઇન્દ્રિયેસુ અમંગયં ) વિશેષતા યહ હૈ કિ નપુંસક વેદ મેં, એકેન્દ્રિય મેં અધિક ભંગ નહીં હોતે હૈ-કિન્તુ એક ભંગ હોતા હૈ ( અવેયગા જહા અકસાઈ ) જૈસે કષાયરહિત જીવ હોતે હૈ વૈસે હી વેદરહિત જીવ હોતે હૈ । ( સસ-

વચનયોગી અને કાયયોગીમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે ( નવરં-કાયજોગી ઇન્દ્રિયા તેસુ અમંગયં ) વિશેષતા એટલી જ છે કે એકેન્દ્રિય જીવ કાયયોગવાળા જ હોય છે, તેથી તેમાં એક જ ભંગ થાય છે, વધારે ભંગ થતા નથી. ( અજોગી જહા અલેસ્તા ) અયોગી જીવના વિષયમાં અલેશ્યાવાળા જીવો પ્રમાણે જ સમજવું. ( સાગરોવડત્ત, અનાગારોવડત્તેહિં જીવ ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ) સાકાર ઉપયોગવાળા અને અનાકાર ઉપયોગવાળા જીવોમાં જીવ એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે ( સવેયગા ય જહા સકસાઈ ) વેદવાળા જીવોમાં વિષયમાં કષાયયુક્ત જીવો પ્રમાણે જ સમજવું. ( ઇત્થિવેયગ-પુરિસવેયગ-નપુંસગવેયગેસુ જીવાઈઓ તિયમંગો ) સ્ત્રી વેદવાળા, પુરુષ વેદવાળા અને નપુંસક વેદવાળા જીવોમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. ( નવરં-નપુંસગવેદે ઇન્દ્રિયેસુ અમંગયં ) તેમાં એટલી જ વિશેષતા છે કે નપુંસક વેદવાળા એકેન્દ્રિયમાં અધિક ભંગ થતા નથી, પણ એક જ ભંગ થાય છે. ( અવેયગા જહા અકસાઈ ) વેદરહિત જીવોના વિષયમાં કષાય રહિત જીવો પ્રમાણે જ સમજવું. ( સસરીરી



સહિતઃ ? અથવા અપ્રદેશઃ પ્રદેશરહિતો ભવતિ ? । મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! નિયમા સપણસે ’ હે ગૌતમ ! જીવઃ કાલાપેક્ષયા નિયમાત્-નિયમતઃ સપ્રદેશઃ પ્રદેશસહિતો ભવતિ, જીવસ્થાનાદિતયા અનન્તસમયસ્થિતિકત્વેન સપ્રદેશત્વ નિયમાત્, તથા ચ યઃ એકસમયસ્થિતિકઃ સ એવ અપ્રદેશઃ, દ્વયાદિસમયસ્થિતિ-કસ્તુ સપ્રદેશ એવ ભવતીતિ કલિતમ્ । ઉક્તચ્ચ—

ફર રહે હું—ઇસમેં ગૌતમ ને પ્રશ્નસે એસા પૂછા ‘ જીવે ણં મંતે ! કાલા-દેસેણં કિં સપણસે અપણસે ? ) હે મદન્ત ! જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે યયા પ્રદેશસહિત હે કિ પ્રદેશરહિત હે ? મગવાનુ ઇસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ ગૌતમ સે કહતે હું કિ—( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! જીવ ( નિયમા સપણસે ) નિયમ સે પ્રદેશ સહિત હું, તાત્પર્ય કહને કા યહ હે કિ જય કાલ કી અપેક્ષા લેકર જીવ કે પ્રદેશસહિત ઓર પ્રદેશ રહિત હોને કા વિચાર કિયા જતા હે તો વહ નિયમ સે કાલ કી અપેક્ષા પ્રદેશસહિત હી હે, પ્રદેશરહિત નહીં હે યહી વાત સિદ્ધ હોતી હે । કારણ કિ જીવ અનાદિ કાલ કા હે ઓર અનન્તસમય કી ઉસકી સ્થિતિ હે, ઇસલિયે વહ સપ્રદેશ હે જો એસા નહીં હોતા હે—અર્થાત જો એકસમય કી સ્થિતિવાલા હોતા હે, વહી કાલ કી અપેક્ષા પ્રદેશરહિત અપ્રદેશ— હોતા હે । દો આદિ સમય કી સ્થિતિવાલા નહીં વયોં કિ જો દો આદિ સમય કી સ્થિતિવાલા હોતા હે વહ કાલ કી અપેક્ષા પ્રદેશ સહિત હી હોતા હે । કહા મી હે—“ જો જસ્સ ” ઇત્યાદિ ।

સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ જીવેણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસે અપણસે ! ” હે ભદન્ત ! શું કાળની અપેક્ષાએ એવ પ્રદેશ સહિત છે કે પ્રદેશ રહિત છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! એવ ( નિયમા સપણસે ) નિયમથી જ પ્રદેશ સહિત છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો કાળની અપેક્ષાએ એવના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનો વિચાર કરવામાં આવે, તો તે નિયમથી જ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશ સહિત છે, પ્રદેશ રહિત નથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે. કારણ કે એવ અનાદિ કાળનો છે અને અનંત સમયની તેની સ્થિતિ છે, તે કારણે તે પ્રદેશ સહિત છે. જો એવ એવો ન હોય—એટલે કે જો તે એક સમયની સ્થિતિવાળો હોય તો તે પ્રદેશ રહિત હોઈ શકે છે. બે ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળો એવ અપ્રદેશી હોતો નથી, કારણ કે બે આદિ સમયની સ્થિતિવાળો તો કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત જ હોય છે. કહું પણ છે કે—

“ જો જસ્સ ” ઇત્યાદિ

સપ્રદેશા આહારક-ભવ્ય-સંત્તિ-લેશ્યા-દૃષ્ટિ-સંયત-કપાયાઃ, જ્ઞાનં યોગો-  
પયોગો વેદથ શરીરપર્યાપ્તિઃ ॥ છ૦ ૧ ॥

તૃતીયોદેશકે જીવઃ પ્રરુપિતઃ, અથ ચતુર્થોદેશકેઽપિ તમેવ પ્રકારાન્તરેણા-  
'જીવે ણં મંતે' इत्यादि ।

ટીકા—'જીવે ણં મંતે । કાન્નાદેસેણં કિં સપ્પસે, અપ્પસે ?' ગૌતમઃ  
પૃચ્છતિ-હે મદન્ત ! જીવઃ સ્વલુ કાલાદેશેન કાન્નાપેક્ષયા કિમ્ સપ્રદેશઃ-પ્રદેશ-

કો જાનના ચાહિયે । ( સરીર અપજ્જત્તીણ, ઇન્દિય અપજ્જત્તીણ આળપાળ  
અપજ્જત્તીણ જીવ ઇગિન્દિયવજ્જો તિયમંજ્જો ) શરીરપર્યાપ્તિં સે રહિત,  
ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિં સે રહિત, શ્વાસોચ્છ્વાસપર્યાપ્તિં સે રહિત જીવોં મેં જીવ  
ઔર ઇકેન્દ્રિય કો છોઢકર તીન મંગ હોતે હેં । ( નેરઇય-દેવ-મણુઈહિ  
છમંગા ) નેરયિક, દેવ ઔર મનુષ્યોં મેં છહમંગ હોતે હેં । સંગ્રહ ગાથા

સપ્પસા આહારગ ભવિય-સન્નિ-લેસા-દિટ્ઠિ-સંજય-કસાયા ।

ળાળે જોગુ-વઓળે વેદેય સરીર-પજ્જત્તી ॥ ૧ ॥

સપ્રદેશ, આહારક, ભવ્ય, સંત્તી, લેશ્યા, દૃષ્ટિ, સંયત, કપાય, જ્ઞાન,  
યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર ઔર પર્યાપ્તિ ॥

ટીકાર્થ—પ્રીત્તે કે ઉદ્દેશક મેં જીવ કા નિરૂપણ કિયા ગયા હૈ-હસ  
ચતુર્થ ઉદ્દેશક મેં મીં ઉસી જીવ કા સૂત્રકાર પ્રકારાન્તર સે નિરૂપણ

જેવું જ સમજવું. ( સરીર અપજ્જત્તીણ, ઇન્દિય અપજ્જત્તીણ આળપાળ અપજ્જત્તીણ  
જીવ ઇગિન્દિયવજ્જો તિયમંગો ) શરીર પર્યાપ્તિથી રહિત, ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિથી  
રહિત, અને શ્વાસોચ્છ્વાસ પર્યાપ્તિથી રહિત એવામાં એવ અને એકેન્દ્રિય  
સિવાયના ત્રણ ભંગ થાય છે. ( નેરઇય, દેવ, મણુઈહિ છમંગા ) નારકો, દેવો  
અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે. સંગ્રહગાથા—

“ સપ્પસા આહારગ-ભવિય-સન્નિ-લેસા-દિટ્ઠિ સંજય-કસાયા ”

ળાળે જોગુ-વઓળે વેદેય સરીર-પજ્જત્તી ॥ ૧ ॥

સપ્રદેશ, આહારક, ભવ્ય, સંત્તી, લેશ્યા, દૃષ્ટિ, સંયત, કપાય, જ્ઞાન,  
યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર અને પર્યાપ્તિ.

ટીકાર્થ—આગલા ઉદ્દેશકમાં એવનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. આ  
ઉદ્દેશકમાં પણ સૂત્રકાર ખીલ રીતે એવનું નિરૂપણ કરી રહ્યા છે-તેમાં ગૌતમ



અપ્રદેશો ભવતિ, તત્ર ક્વચાદિસમયોત્પન્નો નૈરયિકઃ સપ્રદેશઃ, પ્રથમસમયોત્પન્નસ્તુ અપ્રદેશો ભવતીતિ ભાવઃ । એવમ્ નૈરયિકવદેવ યાવત્-સિદ્ધઃ કદાચિત્ સપ્રદેશઃ, કદાચિત્ અપ્રદેશો ભવતિ । યાવત્કરુણાત્-અસુરકુમારાદિભવનપતિદશક ૧૦-પૃથિવીકાયાદિસ્થાવરપદ્ધત્-વિકલેન્દ્રિયત્રિકૃત્ - તિર્યક્પચ્ચેન્દ્રિય૧-મનુષ્ય ૧-અક્ષર૧-જ્યોતિષિક૧-વૈમાનિક૧રૂપાણાં ત્રયોચિતિ દણ્ડકાનાં સંગ્રહઃ । અથ તદેવ પુનસ્તથૈવ વહુસ્થેન નિહ્વાયિતુમાહ-‘ જીવાણં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્મા ? અપણ્મા ? ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદ્રન્ત ! જીવાઃ સ્વલુ કાલાદેશેન કાલાપેક્ષયા કિં સપ્રદેશાઃ ભવન્તિ ? અથવા અપ્રદેશાઃ ? ભવન્તિ ? ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! નિયમા સપણ્મા ’ હે ગૌતમ ! જીવાઃ સર્વે નિયમાત્ કાલાપેક્ષયા

હી સમય હુઆ હૈ વહ નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા અપ્રદેશ હૈ ઓર ઘઠી નારક જીવ જય દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં વર્તતા રહના હૈ તો કાલકી અપેક્ષા વહી સપ્રદેશ । ( એવં જાવ સિદ્ધે ) નારક કી તરહ હી યાવત્ સિદ્ધ કદાચિત્ સપ્રદેશ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હૈં એસા જાનના ચાહિયે યહાં યાવત્ પદ સે “ અસુરકુમાર આદિ ભવનપતિ ૧૦, કા પૃથિવી કાદિક પાંચ સ્થાવરોં કા વિકલેન્દ્રિયત્રિક કા, તિર્યક્ પચ્ચેન્દ્રિય ૧, મનુષ્ય ૧, જ્યોતિષિક ૧ ઓર વૈમાનિક ૧ ઇન કા ” ઇસ તરહ ૨૨ દણ્ડકોં કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । ( જીવા ણં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્મા ? અપણ્મા ? ) અથ ગૌતમ ઇમ સૂત્ર દ્વારા પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિં હે ભદ્રન્ત ! જીવકાલ કી અપેક્ષા વયા સપ્રદેશ હૈં ? યા અપ્રદેશ હૈં ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિં ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( નિયમા સપણ્મા ) સમુચય-સમસ્ત જીવ નિયમ સે કાલ કી અપેક્ષા સપ્રદેશ હૈં,

થયો છે તે નારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશ રહિત છે, પણ ત્યારે એજ નારક જીવને ઉત્પન્ન થયાને બે, ત્રણ આદિ સમયો વ્યતીત થઈ જાય છે, ત્યારે તે કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત કહેવાય છે. ( એવં જાવ સિદ્ધે ) નારક જીવની જેમ જ સિદ્ધ પદાન્તતા જીવ પણ ક્યારેક અપ્રદેશ હોય છે. અહીં ‘ જાવ ’ ( પદાન્ત ) પદ્ધતી અસુર કુમાર આદિ ભવનપતિના દસ, પૃથ્વીકાયિક આદિ સ્થાવરોના પાંચ, વિકલેન્દ્રિયના ત્રણ ( દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય એ ત્રણ ) પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચનું એક, મનુષ્યનું એક, જ્યોતિષિકનું એક અને વૈમાનિકનું એક એમ ૨૨ ઠંડકોને થકણ કરવામાં આવ્યા છે. આ સિવાયના નારક અને સિદ્ધ એ બે ઠંડકની વાત તો ઉપર કહેવામાં આવી છે.

‘ જો જસ્ય પદમસમય, વદ્ય માનસ્ય સો ડ અપણો ।

અણમ્મિ વદ્યાણો, કાલાદેસેગ સપણો ॥ ૧ ॥ ’

યો યસ્ય પ્રથમસમયે વર્તતે માનસ્ય સ તુ અપદેશઃ ।

અન્યસ્મિન્ વર્તમાનઃ કાલાદેશેન સપદેશઃ ’’ રૂતિ ॥ ૧ ॥

ગૌતમઃ પૂચ્છતિ-‘ નેરહણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસે, અપણસે ? ’

હે મહન્ત ! નૈરયિકઃ સ્વહ કાલાદેશેન કાલાપેક્ષયા કિમ્-સપ્રદેશઃ ? કિં વા અપ્રદેશઃ ? મગધનાહ-‘ ગોયમા ! સિય સપણસે, સિય અપણસે, एवं જાવ-સિદ્ધ્યે ’

હે ગૌતમ ! નૈરયિકઃ કાલાપેક્ષયા સ્યાત્ કદાચિત્ સપ્રદેશઃ, સ્યાત્ કદાચિત્

જો જીવ જિમ્મ ભવ કે પ્રથમ સમય મેં વર્તતા હૈ, વહ જીવ અપ્રદેશ પ્રદેશરહિત કહલાતા હૈ ઓર જો જીવ પ્રથમ સમય કે અતિરિક્ત દૂસરે, ત્રીસરે, આદિ સમયોં મેં વર્તતા હૈ વહ કાલ કી અપેક્ષા સપ્રદેશ કહલાતા હૈ હસ તરહ સે યહ સપ્રદેશ ઓર અપ્રદેશ કા સ્વરૂપ હસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ।

ગૌતમ સ્વામી પ્રભુ સે પૂછતે હૈં કિ-( નેરહણં મંતે કાલાદેસેણં કિં સપણસે અપણસે ) હૈ મહન્ત ! એક નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કયા સપ્રદેશ હૈ કિ અપ્રદેશ હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ઉનસે કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હૈ ગૌતમ ! ( સિય સપણસે સિય અપણસે ) હૈ ગૌતમ ! નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કદાચિત્ સપ્રદેશ હૈ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હૈ । અર્થાત્ જિસ નારક જીવ કો ઉત્પન્ન હુઅ અમી પહિલા

જે જીવ જે ભવના પ્રથમ સમયમાં રહેલો હોય છે, તે જીવ અપ્રદેશી ( પ્રદેશ રહિત ) કહેવાય છે, અને જે જીવ પ્રથમ સમય સિવાયના સમયમાં એટલે કે બીજા, ત્રીજા આદિ સમયમાં રહેલો હોય છે, તે જીવ કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશી ( પ્રદેશ સહિત ) કહેવાય છે. આ રીતે સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનું સ્વરૂપ આ ગાથામાં બતાવવામાં આવ્યું છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે ( નેરહણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસે અપણસે ? ) હૈ મહન્ત ! એક નારક જીવ શું કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત છે કે પ્રદેશ રહિત છે ?

ઉત્તર-( ગોયમા ! ) હૈ ગૌતમ ! ( સિય સપણસે સિય અપણસે ) એક નારક જીવ ક્યારેક કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ હોય છે અને ક્યારેક અપ્રદેશ હોય છે. એટલે કે જે નારક જીવને ઉત્પન્ન થયાને હજી પહેલો જ સમય

અપ્રદેશો ભવતિ, તત્ર દ્વયાદિસમયોત્પન્નો નૈરયિકઃ સપ્રદેશઃ, પ્રથમસમયોત્પન્નસ્તુ  
અપ્રદેશો ભવતીતિ ભાવઃ । એવમ્ નૈરયિકવદેવ યાવત્-સિદ્ધઃ કદાચિત્ સપ્રદેશઃ,  
કદાચિત્ અપ્રદેશો ભવતિ । યાવત્કરુણાત્-અસુરકુમારાદિભવનપતિદશક ૧૦-  
પૃથિવીકાયાદિસ્થાવરપદ્ધત્-વિકલેન્દ્રિયત્રિક ૩ - તિર્યક્પચ્ચેન્દ્રિય ૧-મનુષ્ય ૧  
-વ્યત્ ૧-જ્યોતિષિક ૧-વૈમાનિક ૧ રૂપાણાં ત્રયોવિંશતિ દણ્ડકાનાં સંગ્રહઃ ।  
અથ તદેવ પુનસ્તથૈવ વદ્યુત્તેન નિહ્યપિતુમાદ-‘ જીવાણં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં  
સપણ્મા ? અપણ્મા ? ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદ્રન્ત ! જીવાઃ સ્વલુ કાલાદેશેન  
કાલાપેક્ષયા કિં સપ્રદેશાઃ ભવન્તિ ? અથવા અપ્રદેશાઃ ? ભવન્તિ ? ભગવાનાદ-  
‘ ગોયમા ! નિયમા સપણ્મા ’ હે ગૌતમ ! જીવાઃ સર્વે નિયમાત્ કાલાપેક્ષયા

હી સમય હુઆ હૈ વહ નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા અપ્રદેશ હૈ ઓર  
ઘહી નારક જીવ જય દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં વર્તતા રહના હૈ તો કાલકી  
અપેક્ષા વહી સપ્રદેશ । ( એવં જાવ સિદ્ધે ) નારક કી તમ્હ હી યાવત્  
સિદ્ધ કદાચિત્ સપ્રદેશ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હૈં એસા જાનના ચાહિયે  
યહાં યાવત્ પદ સે “ અસુરકુમાર આદિ ભવનપતિ ૧૦, કા પૃથિવી  
કાદિક પાંચ સ્થાવરોં કા વિકલેન્દ્રિયત્રિક કા, તિર્યક્ પચ્ચેન્દ્રિય ૧, મનુ-  
ષ્ય ૧, જ્યોતિષિક ૧ ઓર વૈમાનિક ૧ હન કા ” હસ તરહ ૨૨ દણ્ડ-  
કોં કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । ( જીવા ણં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્મા ?  
અપણ્મા ? ) અથ ગૌતમ હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિં હે  
ભદ્રન્ત ! જીવકાલ કી અપેક્ષા વયા સપ્રદેશ હૈં ? યા અપ્રદેશ હૈં હસકે  
ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિં ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( નિયમા  
સપણ્મા ) સમુચય-સમસ્ત જીવ નિયમ સે કાલ કી અપેક્ષા સપ્રદેશ હૈં,

થયો છે તે નારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશ રહિત છે, પણ ક્યારે એજ  
નારક જીવને ઉત્પન્ન થયાને બે, ત્રણ આદિ સમયો વ્યતીત થઈ જાય છે,  
ત્યારે તે કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત કહેવાય છે. ( એવં જાવ સિદ્ધે ) નારક  
જીવની જેમ જ સિદ્ધ પર્યાન્તના જીવ પણ ક્યારેક અપ્રદેશ હોય છે. અહીં  
‘ જાવ ’ ( પર્યાન્ત ) પદથી અસુર કુમાર આદિ ભવનપતિના દસ, પૃથ્વીકાયિક  
આદિ સ્થાવરોના પાંચ, વિકલેન્દ્રિયના ત્રણ ( દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુ-  
રિન્દ્રિય એ ત્રણ ) પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચનું એક, મનુષ્યનું એક, જ્યોતિષિકનું એક  
અને વૈમાનિકનું એક એમ ૨૨ ઠંડકોને થઈ જી કરવામાં આવ્યા છે. આ  
સિવાયના નારક અને સિદ્ધ એ બે ઠંડકની વાત તો ઉપર કહેવામાં આવી છે.



સપ્રદેશા ભવન્તિ નતુ અપ્રદેશાઃ તેષામનાદિષ્વેન અનન્તસમયસ્થિતિકતયા સપ્રદેશત્વનિયમાત્ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ-‘ નૈરિયા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્સા; અપણ્સા ? ’ હે ભદન્ત ! નૈરિયાઃ સ્વઃ કાલાદેસેન-કાલાપેક્ષયા કિં સપ્રદેશાઃ ? આહોસ્વિત્ અપ્રદેશા ભવન્તિ ? મગવાનાહ-‘ ગોયમા । સન્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણ્સા ’ હે ગૌતમ ! સર્વેઽપિ નૈરિયા સ્વાત્ ’ ઇતિ વાચ્યાલક્ષારે સપ્રદેશા ભવન્તિ, ઉત્પાદવિરહકાલે અસંખ્યાતપૂર્વોત્પન્નનૈરિયાણાં સપ્રદેશત્વેન વિધમાનત્વાત્ । ઇતિ પ્રથમો ભગ્નઃ ? । અથ દ્વિતીયમાહ-‘ અહવા સપણ્સા ય-અપણ્સેય, ’ અથવા

અપ્રદેશ નહીં હું । ક્યોં કિ સમસ્ત જીવ અનાદિ હું ઓર અનંતકાલતક કી સ્થિતિવાલે હું । અથ ગૌતમસ્વામી પ્રભુ સે સમસ્ત નારક જીવોં કી અપેક્ષા લેકર પેસાં પૂછતે હું કિ (નૈરિયાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્સા ? અપણ્સા ?) હે ભદન્ત ! સમસ્ત નારકકયા કાલકી અપેક્ષા સપ્રદેશ હું ? યા અપ્રદેશ હું ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સન્વે વિ હોજ્જા સપણ્સા) સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હું ! “સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હું” હસકાં કારણ યહ હૈ કિ ઉત્પાદ વિરહકાલ મેં પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવોં કી સંખ્યા-અસંખ્યાત પ્રમાણ મેં રહા કરતી હૈ યહ પહિલા ભગ્ન હૈ । તથા દ્વિતીય ભગ્ન હસ પ્રકાર સે હૈ-(અહવા સપણ્સા ય અપણ્સેય) જથ હન્હોં પૂર્વોત્પન્ન અસંખ્યાત નારકોં મેં કોઈ નારક જીવ આકર ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ-તથ વહ પ્રથમ

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્સા ? અપણ્સા?) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવોં કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! નિયમા સપણ્સા) હે ગૌતમ ! સમસ્ત જીવોં કાળની અપેક્ષાએ નિયમથીજ સપ્રદેશ છે, અપ્રદેશ (પ્રદેશ રહિત) નથી કારણ કે સમસ્ત જીવ અનાદિ છે અને અનંતકાળની સ્થિતિવાળા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સમસ્ત નારક જીવોંની અપેક્ષાએ મહાવીર પ્રભુને જીવોં પ્રશ્ન પૂછે છે કે (નૈરિયાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણ્સા, અપણ્સા ?) હે ભદન્ત ! સમસ્ત નારક જીવોં કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે ? કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (સન્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણ્સા) સમસ્ત નારક જીવોં પંજી સપ્રદેશ છે. “સમસ્ત નારક જીવોં સપ્રદેશ છે,” એમ કહેવાનું કારણ એ છે કે ઉત્પાદ વિરહ કાળમાં પૂર્વોત્પન્ન (પહેલાં ઉત્પન્ન થયેલા) નારક જીવોંની સંખ્યા અસંખ્યાત પ્રમાણમાં રહ્યા કરે છે. આ રીતે પહેલાં ભગ્ન (વિકલ્પ) થાય છે. “સમસ્ત નારક જીવોં સપ્રદેશ છે.” બીજો ભગ્ન આ પ્રમાણે થાય છે-(અહવા સપણ્સા ય અપણ્સેય)

વહ્યો નૈરયિકાઃ સપ્રદેશાથ ભવન્તિ, એકઃ અપ્રદેશઃ ૨ પૂર્વોત્પન્નાનાં દ્વયાદિસમય-  
સ્થિતિકત્વેન સપ્રદેશત્વાદ્ વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ, પૂર્વોત્પન્નેષુ વિદ્યમાનેષ્વેવ એકોડ-  
પ્યન્યો નૈરયિક ઉત્પદ્યતે તદા તસ્ય પ્રથમસમયોત્પન્નત્વેનાપ્રદેશત્વાદેકોડપ્રદેશ  
ઇતિ દ્વિતીયો ભક્તઃ ૨ । અથ તૃતીયભક્તમાહ—‘ અહવા સપણસાય અપણસાય ’  
અથવા વહ્યઃ સપ્રદેશાથ, વહ્યઃ અપ્રદેશાથ ભવન્તિ, યદા પૂર્વોત્પન્નાદ્વયાદિ સમ-

સમય કી અપેક્ષા સે અપ્રદેશ હૈં ઓર વાકી વે સમસ્ત નારક જીવ  
સપ્રદેશ હૈં । હસ દ્વિતીય ભક્ત કા અભિપ્રાય એસા હૈ—કિ પ્રથમ ભક્ત મેં  
તો સમસ્ત નારક જીવોં કો સપ્રદેશ પ્રકટ કિયા હૈ ઓર હસ દ્વિતીયભક્ત  
મેં સમસ્ત નારક જીવોં કો સપ્રદેશ પ્રકટ નહીં કિયા ગયા હૈ કિન્તુ  
અધિકાંશ નારક જીવોં કો હી સપ્રદેશ પ્રકટ કિયા હૈ ઓર કોઈ એક  
નારક જીવોં કો અપ્રદેશ ભી પ્રકટ કિયા હૈ—ઉસમેં કારણ યહ હૈ કિ  
યહાં પૂર્વોત્પન્ન જિતને ભી નારક જીવ હૈં વે સબ તો દ્વયાદિ સમયોં મેં  
વર્તતે રહને કી સ્થિતિવાલે હોને કે કારણ સપ્રદેશ હૈં ઓર વહીં પર જો  
નયા કોઈ એક નારક જીવ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ વહ પ્રથમ સમય મેં ઉત્પન્ન  
હોને કે કારણ અપ્રદેશ હૈ । તૃતીયભંગ હસ પ્રકાર સે હૈ—( અહવા સપ-  
ણસા ય અપણસા ય ) પૂર્વોત્પન્ન જિતને ભી વહાં નારક જીવ હૈં વે સબ  
તો દ્વયાદિ સમયોં મેં વર્તમાન રહને કે કારણ સપ્રદેશ હૈં ઓર કિતનેક  
નારક જીવ વહાં જો ઉત્પન્ન હો રહે હૈં—વે સબ એક સમય કી ભી  
સ્થિતિવાલે હૈં સો હસ અપેક્ષા વે અપ્રદેશ હૈં—તાત્પર્ય હસ તૃતીયભંગ કા

છે. ” કારણ કે પૂર્વોત્પન્ન અસંખ્યાત નારકોમાં કોઈ નવો જીવ ઉત્પન્ન થઈને  
આવી મળે છે, ત્યારે તે આવનાર જીવ પ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ અપ્રદેશ  
હોય છે અને સમસ્ત નારકો સપ્રદેશ હોય છે. પ્રથમ ભંગમાં તો સમસ્ત  
નારકોને સપ્રદેશ કહ્યા છે પણ આ બીજા ભંગમાં સમસ્ત નારકોને સપ્રદેશ  
કહ્યા નથી પણ અધિકાંશ નારક જીવોને જ સપ્રદેશ કહ્યા છે અને કોઈક નારક  
જીવને અપ્રદેશ પણ કહ્યા છે. આ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું  
કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

નારકોમાં પૂર્વોત્પન્ન જેટલા નારકો છે તેઓ તો બે, ત્રણ આદિ સમ-  
યોથી ત્યાં રહેલા હોવાને કારણે સપ્રદેશી છે, પણ ત્યાં જે કોઈ નવો નારક  
જીવ ઉત્પન્ન થયેલો હોય છે તેને ઉત્પન્ન થવાને પ્રથમ સમય જ ચાલતો હોય  
છે તેથી તે અપ્રદેશ છે.

ત્રીજો ભંગ આ પ્રમાણે છે—( અહવા સપણસા ય અપણસા ય ) જેટલાક  
નારક જીવો સપ્રદેશ છે અને જેટલાક નારક જીવો અપ્રદેશ છે. કારણ કે



સપ્રદેશા ભવન્તિ નતુ અપ્રદેશાઃ તેષામનાદિત્યેન અનન્તસમયસ્થિતિકતયા સપ્રદેશત્વંનિયમાત્ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ-‘ નૈરદ્યા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા ? ’ હે ભદ્રન્ત ! નૈરયિકાઃ સ્વતુ કાલાદેશેન-કાલાપેક્ષયા કિં સપ્રદેશાઃ ? આહોસ્થિત્ અપ્રદેશા ભવન્તિ ? મગધનાહ-‘ ગોપમા ! સન્વે વિ તાવ હોજ્જા સપ્પણ્ણા ’ હે ગૌતમ ! સર્વેઽપિ નૈરયિકા સ્વાત્ ’ ઇતિ વાક્યાલક્ષ્યારે સપ્રદેશા ભવન્તિ, ઉત્પાદચિરહકાલે અસંખ્યાતપૂર્વોત્પન્નનૈરયિકાણાં સપ્રદેશત્વેન વિધમાનત્વાત્ । ઇતિ પ્રથમો ભક્તઃ ? । અથ દ્વિતીયમાહ-‘ અહવા સપ્પણ્ણા ય-અપ્પણ્ણેય, ’ અથવા

અપ્રદેશ નહોં હેં । ક્યોં કિ સમસ્ત જીવ અનાદિ હેં ઓર અનંતકાલતક કી સ્થિતિવાલે હેં । અથ ગૌતમસ્વામી પ્રભુ સે સમસ્ત નારક જીવોં કી અપેક્ષા લેકર એસા પૂછતે હેં કિ (નૈરદ્યા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત નારકકયા કાલકી અપેક્ષા સપ્રદેશ હેં ? યા અપ્રદેશ હેં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ (ગોપમા) હે ગૌતમ ! (સન્વે વિ હોજ્જા સપ્પણ્ણા) સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હેં ! “સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હેં” હસકા કારણ યહ હે કિ ઉત્પાદ ચિરહકાલ મેં પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવોં કી સંખ્યા-અસંખ્યાત પ્રમાણ મેં રહા કરતી હે યહ પહિલા ભક્ત હે । તથા દ્વિતીય ભંગ હસ પ્રકાર સે હે-(અહવા સપ્પણ્ણા ય અપ્પણ્ણેય) જથ હન્હોં પૂર્વોત્પન્ન અસંખ્યાત નારકોં મેં કોઈ નારક જીવ આકર ઉત્પન્ન હો જાતા હે-તથ વહ પ્રથમ

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોપમા ! નિયમા સપ્પણ્ણા) હે ગૌતમ ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે, અપ્રદેશ (પ્રદેશ રહિત) નથી કારણ કે સમસ્ત જીવ અનાદિ છે અને અનંતકાળની સ્થિતિવાળા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સમસ્ત નારક જીવોની અપેક્ષાએ મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (નૈરદ્યા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત નારક જીવો શું કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે ? કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોપમા ! ) હે ગૌતમ ! (સન્વે વિ તાવ હોજ્જા સપ્પણ્ણા) સમસ્ત નારક જીવો પણ સપ્રદેશ છે. “સમસ્ત નારક જીવો સપ્રદેશ છે,” એમ કહેવાનું કારણ એ છે કે ઉત્પાદ ચિરહ કાળમાં પૂર્વોત્પન્ન (પહેલાં ઉત્પન્ન થયેલાં) નારક જીવોની સંખ્યા અસંખ્યાત પ્રમાણમાં રહ્યા કરે છે. આ રીતે પહેલો ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. “સમસ્ત નારક જીવો સપ્રદેશ છે.” બીજો ભંગ આ પ્રમાણે થાય છે—(અહવા સપ્પણ્ણા ય અપ્પણ્ણેય)

યાવત્કરણાત્-નાગકુમારાઃ સુરર્ણકુમારાઃ, વિદ્યુત્કુમારાઃ, અગ્નિકુમારાઃ, દ્વીપકુમારાઃ, ઉદધિકુમારાઃ, દિવકુમારાઃ, પવનકુમારાઃ ' ઇતિ સંગ્રાહ્યમ્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ- ' પુઠ્ઠવિક્કાહયા ણં મંતે ! કિં સપણ્ણસા, અપણ્ણસા ? ' હે ભદન્ત ! પૃથિવીકાયિકાઃ સહુ જીવાઃ કિમ્ કાલાપેક્ષયા સપ્રદેશાઃ ભવન્તિ ? આહોસ્વિત્ અપ્રદેશા ભવન્તિ ? ભગવાનાહ- ' ગોયમા ! સપણ્ણસા વિ, અપણ્ણસા વિ ' હે ગૌતમ ! પૃથિવીકાયિકા જીવાઃ સપ્રદેશા અપિ ભવન્તિ, અપ્રદેશા અપિ ભવન્તિ, વહુનાં પૂર્વોત્પન્નત્વેન દ્વયાદિ સમયસ્થિતિકાનાં, વહુનાં ચ ઉત્પદ્યમાનત્વેન એકસમયસ્થિતિકાનાં ચ તેષાં સદ્-

કિતનેક સપ્રદેશ મી હૈં ઓર કિતનેક અપ્રદેશ મી હૈં । યહાં યાવત્ પદ સે ( નાગકુમાર, સુરર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર, દિવકુમાર, વાયુકુમાર, ઇન અવશેષ ભવનપતિભેદોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ ।

અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૃથિવીકાયિક જીવોં કે સપ્રદેશ અપ્રદેશ કે વિષય મેં પ્રશ્ન કરતે હૈં-કિ-( પુઠ્ઠવિક્કાહયાણં મંતે ! કિં સપણ્ણસા, અપણ્ણસા ? ) હે ભદન્ત ! પૃથિવીકાયિક જો જીવ હૈં વે કયા સપ્રદેશ હૈં કિ અપ્રદેશ હૈં ? ઇસકે ઉત્તરમેં પ્રશ્ન ગૌતમસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! પૃથિવીકાયિક જીવ ( સપણ્ણસા વિ અપણ્ણસા વિ ) સપ્રદેશ મી હૈં ઓર અપ્રદેશ મી હૈં । ઇસકા તાત્પર્ય એસા હૈં કિ યહાં પૂર્વોત્પન્ન જીવ મી અનેક હૈં ઓર ઉત્પદ્યમાન જીવ મી અનેક હૈં અતઃ પૂર્વોત્પન્ન જીવોં કી અપેક્ષા પૃથિવીકાયિક જીવ સપ્રદેશ હૈં ઓર ઉત્પદ્યમાન પૃથિવીકાયિક

પડેલો ભંગ-“ સમસ્ત ભવનપતિ દેવો સપ્રદેશ છે. ” બીજો ભંગ આ પ્રમાણે છે-“ બધાં ભવનપતિ દેવો સપ્રદેશ નથી, પણ અધિકાંશ સપ્રદેશ છે અને ઠોણક અપ્રદેશ છે. ”

દસ ભવનપતિના નામ—(૧) અસુરકુમાર (૨) નાગકુમાર (૩) સુપણ્ણકુમાર (૪) વિદ્યુત્કુમાર (૫) અગ્નિકુમાર (૬) દ્વીપકુમાર (૭) ઉદધિકુમાર (૮) દિક્કુમાર (૯) વાયુકુમાર (૧૦) સ્તનિતકુમાર.

હવે ગૌતમ સ્વામી પૃથ્વીકાયિક જીવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વના વિષયમાં મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( પુઠ્ઠવિક્કાહયાણં મંતે ! કિં સપણ્ણસા, અપણ્ણસા ? ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાયિક જીવો સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાયિક જીવો ( સપણ્ણસા વિ અપણ્ણસા વિ ) સપ્રદેશ પણ હોય છે અને અપ્રદેશ પણ હોય છે. કારણ કે પૃથ્વીકાયોમાં પૂર્વોત્પન્ન જીવ પણ અનેક હોય છે અને નવા ઉત્પન્ન થનારા જીવો પણ અનેક હોય છે. તેથી પૂર્વોત્પન્ન જીવોની અપેક્ષાએ પૃથ્વીકાયિકોને સપ્રદેશ કહ્યા છે, અને ઉત્પદ્યમાન પૃથ્વીકાયિકોની અપેક્ષાએ તેમને અપ્રદેશ

યસ્થિતિમન્તો વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ સન્તિ. વહ્યથ-ઉત્પદમાનાઃ પરસમયસ્થિતિમન્તો-  
પ્રદેશા ભવન્તિ તદા વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ વહ્યથાપ્રદેશા મવન્તોતિ । તૃતીયો મઃ૩।

‘ એવં અસુરકુમારા જાવ-યણિયકુમારા ’ એવં નૈરયિકવદેવ અસુરકુમારા  
યાવત્-સ્તનિતકુમારા અપિ કદાચિન્ સર્વે સપ્રદેશાઃ સ્પુઃ, કદાચિન્ વહ્યઃ સપ્ર-  
દેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશથ, કદાચિદ્ વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ, વહ્યઃ અપ્રદેશથ મવન્તિ

યહ હૈ કિ વહાં નરકોં મેં જિતને બી જીવ પહિલે સે હી નારકાવસ્થા મેં  
ચલે આરહે હૈં વે સય કે સય સપ્રદેશ હૈં ઓર જિન જીવોં કી અબી ૨  
નારકાવસ્થાપ્રારંભ હોને કે પ્રથમ સમય મેં હૈં વે સય અપ્રદેશ હૈં-ઇસ  
તરહ વહાં અધિકાંશ જીવ સપ્રદેશ હૈં ઓર અધિકાંશ જીવ અપ્રદેશ હૈં  
( એવં અસુરકુમારા જાવ યણિયકુમારા ) ઇસી તરહ કા કથન-નારક  
જીવોં કે જૈસા વિવેચન અસુરકુમારોં સે લેકર સ્તનિતકુમારોં તક  
જાનનાં ચાહિયે-અસુરકુમાર આદિ ૧૦ ભેદ ભવનપતિ દેવોં કે હૈં-સો  
પૂર્વોક્તરૂપ સે જૈસા વર્ણન સપ્રદેશ અપ્રદેશ કા નારક જીવોં મેં પ્રથમ  
ભંગ દ્વિતીયભંગ ઓર તૃતીયભંગદ્વારા કિયા ગયા હૈં ઊસી પ્રકાર કા  
સપ્રદેશ અપ્રદેશ કા વર્ણન અસુરકુમાર સે લેકર સ્તનિતકુમાર તક  
જાનનાં ચાહિયે-નિષ્કર્ષ ઇસકા યહી હૈં-કિ પ્રથમ ભંગ કી અપેક્ષા સમ-  
સ્ત સ્તનિતકુમાર સપ્રદેશ હૈં । દ્વિતીયભંગ કી અપેક્ષા સય નહીં, કિન્તુ  
અધિકાંશ સપ્રદેશ હૈં ઓર કોઈ અપ્રદેશ હૈં । તૃતીય ભંગ કી અપેક્ષા

પૂર્વોક્ત્ર જોટલાં નારક જીવો છે તેઓ તો બે, ત્રણ આદિ સમયોથી ત્યાં ઉત્પન્ન  
થઈ રહ્યા છે, તેઓ બધાં એક સમયની સ્થિતિવાળા પણ હોય છે, તેથી  
તેઓ અપ્રદેશ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એવો છે કે જોટલાં નારક જીવો  
પહેલેથી જ નારકાવસ્થામાં આવી ગયેલા છે તેઓ બધાં સપ્રદેશ છે, પણ જે  
જીવોની નારકાવસ્થાનો હજી પ્રારંભ જ થયેલો છે-એટલે કે જે નારકોની  
નારકાવસ્થા પ્રારંભ થયાનો પ્રથમ સમય જ આવી રહ્યો છે, એવાં જે નારકો  
છે તેઓ અપ્રદેશી છે. આ રીતે ત્યાં અધિકાંશ જીવો સપ્રદેશ છે અને અધિ-  
કાંશ જીવો અપ્રદેશ છે.

( એવં અસુરકુમારા જાવ યણિયકુમારા ) નારકોના જેવું જ કથન અસુર-  
કુમારોથી સ્તનિતકુમારો સુધીના દેવો વિષે સમજવું. ભવનપતિ દેવોના અસુર-  
કુમાર આદિ ૧૦ ભેદ છે. નારક જીવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વ વિષેના  
ઉપર્યુક્ત જે ત્રણ ભંગ ( વિકલ્પો ) કહ્યા છે, એજ પ્રમાણે અસુરકુમારોથી  
લઇને સ્તનિતકુમારો સુધીના દસ ભવનપતિ દેવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વ  
વિષેના પણ ત્રણ ભંગ સમજવા. એ ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે છે—



વક્તવ્યાઃ, તથા ચ-દ્વીન્દ્રિયાદયોઽપિ યાવત્-સિદ્ધાઃ કદાચિત્ સર્વેસપ્રદેશાઃ, કદા-  
ચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશથ કદાચિત્તુ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદે-  
શથ ભવન્તિ, ઉક્તરીત્યા સર્વેપામેવાં વિરહસંભવાત્, એસાદ્યુત્પત્તેથ, યાવત્કરણાત્  
દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિય-તિર્યગ્યોનિક-મનુષ્ય-વાનવ્યન્તરજ્યો-  
તિપિક-વૈમાનિકાઃ સંગ્રાહ્યાઃ । ‘ આહારગાણં જીવ-એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ’  
આહારગાણામ્ આહારક જીવૈકેન્દ્રિયવર્ગાસ્રયોભક્તાઃ, જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયપૃથિવી-  
કાયાદિપદપંચકં ચ વર્જયિત્વા ભક્ત્રિકમ્, અયં ભાવઃ-‘જીવો નિયમાત્સપ્રદેશઃ’ इति  
જીવે એક એવ ભક્તઃ તસ્ય સદા સર્વપ્રદેશત્વાત્ । એકેન્દ્રિયે ‘ સપ્રદેશા અપિ

પર્યન્ત જીવ ખી કદાચિત્ સવ સપ્રદેશ હે, કદાચિત્ કિતને સપ્રદેશ હે  
ઔર કોઈ એક જીવ અપ્રદેશ હૈ-ઔર કદાચિત્ અનેક સપ્રદેશ હે ઔર  
અનેક અપ્રદેશ હે । હસકા કારણ યહ હૈ કિ યહાં પર હન સવ કા વિરહ  
સંભવિત હૈ । હસ તરહ યહાં પર યે ત્રીન ભંગ હે એસા જાનના ચાહિયે  
યહાં યાવત્ પદ સે-તેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય,  
વાનવ્યન્તર, જ્યોતિપિક ઔર વૈમાનિક હન સવ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ ।  
(આહારગાણં જીવ એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) એક જીવપદ કો ઔર  
એકેન્દ્રિય કે પાંચ પદ કો છોડકર આહારકોં કે ત્રીન ભંગ હોતે હે ।  
જીવપદ કો છોડકર કહને કા ભાવ યહ હૈ કિ જીવ નિયમ સે સપ્રદેશ  
હોતા હૈ । હસલિયે જીવ મેં એક હી ભંગ હૈ-સપ્રદેશ હી હોને કા કારણ  
ઉસકી અનાદિતા ઔર અનન્તકાલતકસ્થિતિમત્તા હૈ । તથા એકેન્દ્રિય  
કે પાંચપદ કો છોડકર કહને કા ભાવ યહ હૈ કિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં

જવા. એટલે કે (૧) દ્વીન્દ્રિયથી લઈને સિદ્ધ પર્યન્તના બધા જીવો પણ ક્યારેક  
પ્રદેશયુક્ત હોય છે. (૨) ક્યારે કેટલાક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક  
જીવ અપ્રદેશ હોય છે. અને ક્યારેક અનેક સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક  
અપ્રદેશ હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે આ પર્યાયોમાં એ સૌનો વિરહ  
સંભવિત છે. આ રીતે તેમના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) સમજવા.

અહીં ‘ જાવ ’ ( પર્યન્ત ) પદથી તેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્  
મનુષ્ય, વાનવ્યન્તર, જ્યોતિપિક અને વૈમાનિકોને થકણ કરવામાં આવ્યા છે.

( આહારગાણં જીવ એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો ) એક જીવ પદને અને  
એકેન્દ્રિયના પાંચ પદને છોડીને બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય  
છે. જીવ પદને છોડવાનું કારણ એ છે કે જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ હોય છે.  
તેથી જીવમાં એક જ ભંગ છે-જીવને સપ્રદેશી કહેવાનું કારણ એ છે કે જીવ  
અનાદિ છે અને તેની સ્થિતિ અનંતકાળની હોય છે. એકેન્દ્રિયના પાંચ પદોને

માયાત્, ' एवं जाव-वणस्सइकाइया ' एवं पृथिवीकायिकादेव यावत्-अप्का-  
यिकाः, तेजस्कायिकाः, वायुकायिकाः, वनस्पतिकायिकाः अपि बहवः सप्रदेशाः  
बहवः अप्रदेशाश्च भवन्ति, सर्वेणामेकेन्द्रियाणामेक एव भद्रः, उत्पत्तिमरणविरहा  
मायात् । ' सेसा जहा नेरइया तहा जाव सिद्धा ' शेषाः द्वीन्द्रियादारभ्य सिद्ध-  
पर्यन्ताः जीवाः यथा नेरयिकाः अभिलापप्रयेण प्रतिपादितास्तथैव अभिलापप्रयेण  
जीवों की अपेक्षा वे अप्रदेश हैं-इसीलिये " सप्रदेश भी और अप्रदेश  
भी वे हैं " ऐसा कहा है । ( एवं जाव वणस्सइकाइया ) पृथिवीकायिक  
जीवों की तरह ही-अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्प-  
तिकायिक जीवों के विषय में सप्रदेश अप्रदेश की चर्चा जाननी चाहिये ।  
अर्थात् जिस प्रकार से पृथिवीकायिक जीवों में कितनेक जीव सप्रदेश  
और कितनेक अप्रदेश हैं उसी प्रकार से यहां अप्कायिकादिकों में भी  
कितनेक जीव सप्रदेश हैं और कितनेक जीव अप्रदेश हैं । इस तरह से  
यहां इन सब एकेन्द्रिय जीवों में उत्पत्तिमरण के चिरह के अभाव से  
एक ही भंग सप्रदेशवाला होता है ऐसा जानना चाहिये । ( सेसा जहा  
नेरइया तहा जाव सिद्धा ) शेष-द्वीन्द्रिय जीवों से लेकर सिद्धोंतक में  
कथन-सप्रदेश अप्रदेश का विवेचन-जैसा तीन अभिलापों द्वारा पहिले  
नारकों में हो चुका है-उसी प्रकार से जानना चाहिये । अर्थात्  
प्रथम भंग सप्रदेश, द्वितीय भंग अप्रदेश, तृतीय भंग सप्रदेश अप्रदेश  
इस तरह से जानना चाहिये । तथा च-द्वीन्द्रिय से लेकर यावत् सिद्ध-

કહ્યાં છે. તે કારણ એવું કહ્યું છે કે " પૃથ્વીકાયિકો સપ્રદેશ પણ છે અને  
અપ્રદેશ પણ છે. " ( एवं जाव वणस्सइकाइया ) पृथ्वीकायिक, એવોના જેવું જ  
કથન અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક એવોના વિષ-  
યમાં પણ સમજવું. એટલે કે જેમ પૃથ્વીકાયિક એવોમાં કેટલાક સપ્રદેશ  
હોય છે અને કેટલાક અપ્રદેશ હોય છે, તેમ અપ્કાયિક આદિમાં પણ કેટલાક  
એવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક અપ્રદેશ હોય છે. આ રીતે અહીં બધાં  
એકેન્દ્રિય એવોમાં ઉત્પત્તિ-મરણના વિરહના અભાવે એક જ ભંગ સપ્રદેશ-  
વાળો થાય છે એમ સમજવું.

( સેસા જહા નેરइया तहा जाव सिद्धा ) બાકીના ( દ્વીન્દ્રિયથી લઈને  
સિદ્ધ પર્યન્તના ) એવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનું કથન નારકોના કથન  
પ્રમાણે જ સમજવું. નારકોના સપ્રદેશત્વનું કથન ત્રણ આલાપકો (અભિલાપો)  
દ્વારા આગળ આપવામાં આવ્યું છે. એટલે કે પહેલો ભંગ સપ્રદેશ, બીજો  
ભંગ અપ્રદેશ અને ત્રીજો ભંગ સપ્રદેશઅપ્રદેશ, આ પ્રકારના ત્રણ ભંગ સમ-



વક્તવ્યાઃ, તથા ચ-દ્વીન્દ્રિયાદયોઽપિ યાવત્-સિદ્ધાઃ કદાચિત્ સર્વેસપ્રદેશાઃ, કદા-  
ચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશઃથ કદાચિત્તુ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદે-  
શઃથ ભવન્તિ, ઉક્તરીત્યા સર્વેપામેળાં વિરહસંભવાત્, આદ્યુત્પત્તેથ, યાવત્કરણાત્  
દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિય-તિર્યગ્યોનિક-મનુષ્ય-વાનવ્યન્તરજ્યો-  
તિપિક-વૈમાનિકાઃ સંગ્રાહ્યાઃ । ' આહારમાણં જીવ-અર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો '   
આહારમાણામ્ આહારક જીવૈકેન્દ્રિયવર્ગાસ્ત્રયોભક્તાઃ, જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયપૃથિવી-  
કાયાદિપદપશ્ચકં ચ વર્જયિત્યા ભક્તવિક્રમ્, યયં ભાવઃ- 'જીવો નિયમાત્સપ્રદેશઃ' ઇતિ  
જીવે એક એવ ભક્તઃ તસ્ય સદા સર્વપ્રદેશત્વાત્ । એકેન્દ્રિયે ' સપ્રદેશા અપિ  
પર્યન્ત જીવ મી કદાચિત્ સય સપ્રદેશ હૈ, કદાચિત્ કિતને સપ્રદેશ હૈ  
ઔર કોઈ એક જીવ અપ્રદેશ હૈ-ઔર કદાચિત્ અનેક સપ્રદેશ હૈ ઔર  
અનેક અપ્રદેશ હૈ । હસકા કારણ યહ હૈ કિ યહાં પર इन सव का विरह  
સંભવિત્ હૈ । હસ તરહ યહાં પર ये तीन भंग हूँ ऐसा जानना चाहिये  
યહાં યાવત્ પદ સે-તેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય,  
વાનવ્યન્તર, જ્યોતિપિક ઔર વૈમાનિક इन सब का संग्रह हुआ है ।  
(આહારમાણં જીવ અર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) એક જીવપદ કો ઔર  
એકેન્દ્રિય કે પાંચ પદ કો છોડકર આહારકોં કે ત્રીન ભંગ હોતે હૈ ।  
જીવપદ કો છોડકર કહને કા ભાવ યહ હૈ કિ જીવ નિયમ સે સપ્રદેશ  
હોતા હૈ । હસલિયે જીવ મેં એક હી ભંગ હૈ-સપ્રદેશ હી હોને કા કારણ  
उसकी अनादिता और अनन्तकालतकस्थितिमत्ता है । तथा एकेन्द्रिय  
કે પાંચપદ કો છોડકર કહને કા ભાવ યહ હૈ કિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં

જવા. એટલે કે (૧) દ્વીન્દ્રિયથી લઈને સિદ્ધ પર્યન્તના બધા જીવો પણ ક્યારેક  
પ્રદેશયુક્ત હોય છે. (૨) ક્યારે કેટલાક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટકિ  
જીવ અપ્રદેશ હોય છે. અને ક્યારેક અનેક સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક  
અપ્રદેશ હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે આ પર્યાયોમાં એ સૌનો વિરહ  
સંભવિત છે. આ રીતે તેમના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) સમજવા.

અહીં 'જીવ' (પર્યન્ત) પદથી તેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિય તિયમંગો  
મનુષ્ય, વાનવ્યન્તર, જ્યોતિપિક અને વૈમાનિકોને શ્રેણી કરવામાં આવ્યા છે.

(આહારમાણં જીવ અર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) એક જીવ પદને અને  
એકેન્દ્રિયના પાંચ પદને છોડીને બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય  
છે. જીવ પદને છોડવાનું કારણ એ છે કે જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ હોય છે.  
તેથી જીવમાં એક જ ભંગ છે-જીવને સપ્રદેશી કહેવાનું કારણ એ છે કે જીવ  
અનાદિ છે અને તેની સ્થિતિ અનંતકાળની હોય છે. એકેન્દ્રિયના પાંચ પદોને

અપ્રદેશા અપિ ' રૂત્યેક એર મદ્ભઃ તત્ર-ઉત્પત્તિમરણવિરહામાચાત, તત્ત્વ એવોક્તમ્  
 જીવૈવેન્દ્રિયવર્જ મદ્ભઃત્રિકમિતિ । તથાદિ ' સપ્રદેશાઃ૧, ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ૨  
 ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ૩ રૂતિ મદ્ભઃત્રયમ્, સિદ્ધપદં તત્ર ન વક્તવ્યં, તેવામનાઘાર-  
 ક્તમાત્ । તથાદિ-આહારકપદવિશેષિતી એકત્વમદ્ભૂતવિગયકદ્વંડકી અવસ્તન  
 પ્રદર્શિતરીત્યા વેદિતવ્યી, તત્ર પ્રથમમ્ એકત્વદ્વંડકાભિજ્ઞાપમાદ-‘આહારક જં મંતે !

ઉત્પત્તિ ઓર મરણ કે વિરહ કા અભાવ રહતા હૈ इस कारण उसमें  
 “ सप्रदेशा अपि अप्रदेशा अपि ” ऐसा एक ही भंग-तीसरा ही भङ्ग  
 घनता है । इसी कारण “ जीवैकेन्द्रियवर्ज भङ्गत्रिकम् ” ऐसा सूत्रकार  
 ने कहा है । आहारक जीवों में भङ्गत्रिक इस प्रकार से हैं—(१) आहारक  
 जीव सप्रदेश होते हैं ऐसा यह प्रथम भंग है । “ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च  
 कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश होते हैं और कोई एक नया  
 उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश होता है । यह द्वितीय भंग है ।  
 “ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ” कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश  
 भी होते हैं और कितनेक उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश भी होते  
 हैं, यह तृतीयभङ्ग है । “ सिद्धपदं तत्र न वक्तव्यम् ” का तात्पर्य यह  
 है कि सिद्ध जीव अनाहारक होते हैं इस कारण यहां उन्हें ग्रहण नहीं  
 किया गया है । इस विषय में विशेषरूप से स्पष्टीकरण इस प्रकार से  
 है—आहारक पद से विशेषित हुए दो द्वाण्डक कि जो एक आहारक जीव

છોડવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પત્તિ અને મરણના વિરહનો  
 અભાવ રહે છે, તે કારણે તેમનો ( સપ્રદેશા અપિ અપ્રદેશા અપિ ) એવો  
 એક જ ભંગ-ત્રીજો ભંગ જ બને છે. તે કારણે સૂત્રકારે એવું કહ્યું છે કે  
 ( જીવૈકેન્દ્રિયવર્જ ભંગત્રિકમ્ ) એક જ પદને અને એકેન્દ્રિયને છોડીને  
 બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય છે. તે ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે. (૨) ( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ )

કેટલાક પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલોક નવા ઉત્પન્ન  
 થયેલા આહારક જીવ અપ્રદેશ હોય છે. (૩) “ સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ” કેટલાક  
 પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક નવા ઉત્પન્ન થતા  
 આહારક જીવો અપ્રદેશ હોય છે. (સિદ્ધપદં તત્ર ન વક્તવ્યં) સિદ્ધ જીવ અના-  
 હારક હોય છે, તે કારણે ઉપયુક્ત આહારક જીવોમાં તેમનો સમાવેશ થતો  
 નથી. આ વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવે કાલાણ્ણેણં કિં સપણ્ણે, અપણ્ણે? ગોયમા! સિય સપણ્ણે, સિય અપણ્ણે' इत्यादि । ' आहारकः खलु भदन्त ! जीवः कालादेशेन किं सप्रदेशः? अप्रदेशः? गौतम ! स्यात् सप्रदेशः, स्यात् अप्रदेशः, तत्र यदा विग्रहगतौ केवलिसमुद्घाते वा यो जीवोऽनाहारतो भूत्वा पुनराहारकत्वं प्राप्नोति तदा स आहारकत्वप्राप्ति-प्रयत्नसमये अप्रदेशः, द्रव्यादिप्रमये तु सप्रदेशो भवति, उपर्युक्तेकत्वाभिलापः सर्वे-ष्वपि सादिभावेषु बोध्यः, अनादिभावेषु तु ' नियमा सपण्णसे ' त्ति ' नियमात्

और अनेक आहारक जीवों की अपेक्षा से कहे गये हैं वे इस प्रकट की गई रीतिके अनुसार हैं—उनमेंसे एक आहारक जीव की अपेक्षासे प्रथम दण्डक “आहारणं भन्ते । जीवे कालाण्णेणं किं सपण्णसे । अपण्णसे गोयमा । सिय सपण्णसे सिय अपण्णसे ” इत्यादि यह है—गौतम ने प्रश्न किया—कि हे भदन्त ! आहारक जीव काल की अपेक्षा सप्रदेश है कि अप्रदेश है ? इसका उत्तर प्रभुने “ कदाचित् वह सप्रदेश है और कदा-चित् वही अप्रदेश है इत्यादिरूप से दिया—जीव जब विग्रहगति में भवता केवलिसमुद्घातमें अनाहारक होकर पुनः आहारक अवस्थावाला बनता है, उस समय वह आहारक अवस्था प्राप्त करने के प्रथम समय में अप्रदेश है और जब वही जीव द्रव्यादिसमयों में वर्तमान होता है तब वह सप्रदेश है, उपर्युक्त एकत्व विषयक अभिलाप समस्त सादि-

આહારક જીવોને આધારે બે દંડક કહ્યા છે. એક દંડક એક આહારક જીવની અપેક્ષાએ કહ્યું છે અને બીજું દંડક અનેક આહારક જીવોની અપેક્ષાએ કહ્યું છે. તે બંને દંડકો નીચે બતાવ્યા પ્રમાણે છે—આહારક જીવની અપેક્ષાએ પ્રથમ દંડક આ પ્રમાણે છે—(આહારણં ભન્તે ! જીવે કાલાણ્ણેણં કિં સપણ્ણે અપણ્ણે ? ગોયમા ! સિય સપણ્ણે સિય અપણ્ણે ) ઇત્યાદિ.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! આહારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! ક્યારેક તે સપ્રદેશ હોય છે અને ક્યારેક એજ અપ્રદેશ હોય છે. જીવ જ્યારે વિગ્રહ ગતિમાં અથવા કેવલિ સમુદ્ઘાતમાં અનાહારક થઈને ફરીથી આહારક અવસ્થામાં આવે છે, ત્યારે આહારક અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવાના પ્રથમ સમયે તે અપ્રદેશ હોય છે, અને જ્યારે એજ જીવ બે વસ્તુ આદિ સમયો સુધી એજ અવસ્થામાં રહે છે, ત્યારે તે સપ્રદેશ હોય છે. ઉપર્યુક્ત એકત્વ વિષયક અભિલાપ ( આલાપક ) સમસ્ત સાદિ ભાવો-



અપ્રદેશા અપિ ' इत्येक एव भङ्गः तत्र-उत्पत्तिमरणविरहाभावान्, अत एवोक्तम् जीवैकेन्द्रियवर्जं भङ्गत्रिकमिति । तथाहि ' सप्रदेशाः १, ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशश्च २ ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च इति भङ्गवयम्, सिद्धपदं तत्र न वक्तव्यं, तेषामनाहार-  
फल्गात् । तथाहि-आहारकपदविशेषितो एकत्ववृत्त्यविषयकदण्डको अद्यस्तन  
प्रदर्शितरीत्या वेदितव्यो, तत्र प्रथमम् एकत्वदण्डकाभिन्नापमाह-‘आहारणं न भङ्गे ।

उत्पत्ति और मरण के विरह का अभाव रहता है इस कारण उसमें  
“ सप्रदेशा अपि अप्रदेशा अपि ” ऐसा एक ही भंग-तीसरा ही भङ्ग  
घनता है । इसी कारण “ जीवैकेन्द्रियवर्जं भङ्गत्रिकम् ” ऐसा सूत्रकार  
ने कहा है । आहारक जीवों में भङ्गत्रिक इस प्रकार से हैं—(१) आहारक  
जीव सप्रदेश होते हैं ऐसा यह प्रथम भंग है । “ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च  
कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश होते हैं और कोई एक नया  
उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश होता है । यह द्वितीय भंग है ।  
“ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ” कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश  
भी होते हैं और कितनेक उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश भी होते  
हैं, यह तृतीयभङ्ग है । “ सिद्धपदं तत्र न वक्तव्यम् ” का तात्पर्य यह  
है कि सिद्ध जीव अनाहारक होते हैं इस कारण यहां उन्हें ग्रहण नहीं  
किया गया है । इस विषय में विशेषरूप से स्पष्टीकरण इस प्रकार से  
है—आहारक पद से विशेषित हुए दो दण्डक कि जो एक आहारक जीव

છોડવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પત્તિ અને મરણના વિરહનો  
અભાવ રહે છે, તે કારણે તેમનો ( સપ્રદેશા અપિ અપ્રદેશા અપિ ) એવો  
એક જ ભંગ-ત્રીજો ભંગ જ બને છે. તે કારણે સૂત્રકારે એવું કહ્યું છે કે  
( જીવૈકેન્દ્રિયવર્જં ભંગત્રિકમ્ ) એક જ પદને અને એકેન્દ્રિયને છોડીને  
બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય છે. તે ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે. (૨) ( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ )  
કેટલાક પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક નવો ઉત્પન્ન  
થયેલો આહારક જીવ અપ્રદેશ હોય છે. (૩) “ સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ” કેટલાક  
પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક નવા ઉત્પન્ન થતા  
આહારક જીવો અપ્રદેશ હોય છે. (સિદ્ધપદંત્ર ન વક્તવ્ય) સિદ્ધ જીવ અના-  
હારક હોય છે, તે કારણે ઉપયુક્ત આહારક જીવોમાં તેમનો સમાવેશ થતો  
નથી. આ વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—

વિકલ્પત્રયેણ વાચ્યાઃ, તથાદિ—‘ આહારયાણં મંતે ! નેરઙ્ગયા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા, અપણસા ? ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોઝ્જા સપણસા, અહવા સપ-  
ણસા ય અપણસે ય, અહવા સપણસા ય અપણસા ય ’ ત્તિ ‘ આહારકાઃ સ્વલુ મદ-  
ન્ત ! નૈરયિકાઃ જીવાઃ કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશાઃ ? અપ્રદેશા વા ? ગૌતમ ! સર્વે  
પિ તાવત્ ભવન્તિ સપ્રદેશાઃ, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્ર-  
દેશાથ’ इति, एतदभिप्रायेणोक्तम्—‘ આહારયાણં જીવ-ર્ણિદિયવજ્જો તિયમંગો ’

ન્દ્રિય અવસ્થાવાળે હું વે પૂર્વોત્પન્ન રૂપ સે સપ્રદેશ હું ઓર વિગ્રહગતિ સે  
નિકલકર જય વે આહારકરૂપ સે ણ્કેન્દ્રિય અવસ્થાવાળે વનતે હું ઉસ  
સમય પ્રથમ સમય મેં આહારક હોને કે કારણ વે અપ્રદેશ હું ! નૈરયિક  
આદિ જીવોં કો તો તોન વિકલ્પોં દ્વાગા હસ પ્રકાર સે કહના ચાહિયે—  
( આહારયા ણં મંતે ! નેરઙ્ગયા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા અપણસા  
ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોઝ્જા સપણસા, અહવા-સપણસા ય અપણસે ય  
અહવા-સપણસા ય, અપણસા ય ) ગૌતમ ને જય પ્રભુ સે એસા પૂછા કિ  
હે મદન્ત ! જો આહારક નારક જીવ હું વે કાલકો અપેક્ષા વ્યા સપ્રદેશ  
હું ? યા અપ્રદેશ હું ? તવ હસકા ઉત્તર પ્રભુને ઉન્હેં એસા દિયા કિ ગૌત-  
મ ! આહારક અવસ્થાવાળે જિતને મી પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવ હું વે સવકે  
સવ મી સપ્રદેશ હું ! અથવા-ઉનમેં કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કોઈ ણ્ક  
અપ્રદેશ હું અથવા-કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કિતનેક અપ્રદેશ હું ! હસી

આદિના વિષયમાં પણ સમજવું. એટલે કે જે આહારક જીવો પૃથ્વીકાય  
આદિ એકેન્દ્રિય અવસ્થાવાળા હોય છે, તેઓ પૂર્વોત્પન્નરૂપે સપ્રદેશ હોય છે,  
પણ વિગ્રહ ગતિમાંથી નીકળીને જ્યારે તેઓ આહારક રૂપે એકેન્દ્રિય અવ-  
સ્થાવાળા બને છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે આહારક હોવાને કારણે તેઓ અપ્રદેશ  
હોય છે. નારક આદિ જીવોના વિષયમાં આ પ્રમાણે ત્રણ વિકલ્પ ( ભંગ )  
સમજવા—( આહારયા ણં મંતે ! નેરઙ્ગયા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા અપણસા ? )  
( ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોઝ્જા સપણસા, અહવા-સપણસા ય અપણસા ય,  
અહવા-સપણસા ય અપણસા ય ) ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—“ હે ભદ્રન્ત ! આહારક  
નારક જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશક કે અપ્રદેશ છે ? ” તેનો ઉત્તર  
આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે—“ હે ગૌતમ ! આહારક અવસ્થાવાળા જેટલાં  
પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવો છે તેઓ બધાં સપ્રદેશ છે. અથવા તેમનામાંથી કેટલાક  
સપ્રદેશ છે અને કેટલાક અપ્રદેશ છે. અથવા કેટલાક સપ્રદેશ છે. અને કેટ-



સપ્રદેશઃ ' ઇતિ વાચ્યમ્ । વદ્યત્વદબ્દકામિત્વાપરસ્ત્યેનં વોચ્યઃ—'આહારયાણં મંતે !  
જીવા કાલાણસેણં અપણસા ? ગોયમા ! સપણસા વિ, અપણસા વિ ' ત્તિ ' આહાર-  
કાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! જીવાઃ કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશઃ ? અપ્રદેશઃ ? ગૌતમ !  
સપ્રદેશા અપિ, અપ્રદેશા અપિ ' ઇતિ, તન્ન વહનામાહારકત્વેનાયસ્થિતત્વાત્ સપ્ર-  
દેશત્વમ્, વહનાં ચ વિગ્રહગતેરનન્તરં પ્રથમસમયે આહારકત્વસંભવેન આહારકા-  
ણામ્ અપ્રદેશત્વં ચ વોચ્યમ્ । एवं पृथिव्यादयोऽपि वक्तव्याः, नैरयिकादयस्तु

भावों में जानना चाहिये और अनादिभावों में तो “ नियमा सपणसे  
त्ति ” नियम से आहारक अवस्थावाला पूर्वोत्पन्न जीव सप्रदेश ही है  
ऐसा जानना चाहिये । वदत्व बहुवचन विषयक दण्डाभिलाप ऐसा है  
( आहारयाणं मंते ! जीवा कालाणसेणं किं सपणसा, अपणसा ? गोय-  
मा ! सपणसा वि अपणसा वि त्ति ) गौतम ने प्रभु से ऐसा पूछा है  
कि भदन्त अनेक आहारक जीव काल की अपेक्षा से क्या सप्रदेश हैं  
कि अप्रदेश हैं ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं कि हे गौतम !  
अनेक आहारक जीव सप्रदेश भी हैं और अप्रदेश भी हैं । अर्थात्  
पूर्वोत्पन्न जितने भी आहारक जीव हैं वे सब तो सप्रदेश हैं और विग-  
्रहगति से निकल कर जब अनेक जीव आहारक अवस्थावाले बनते हैं  
तब वे प्रथम समय में अप्रदेश हैं । क्योंकि प्रथम समय में वे अना-  
हारक नहीं रहते हैं—आहारक ही होते हैं । इसी तरह से पृथिव्यादिकों  
को भी जानना चाहिये, अर्थात् जो आहारक जीव पृथिव्यादिकरूप एके-

ને જ લાગુ પડે છે એમ સમજવું, અનાદિ ભાવોમાં તો ( નિયમા સપણસે ત્તિ )  
આહારક અવસ્થાવાળો પૂર્વોત્પન્ન જ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે એમ સમજવું.

બહુત્વ ( બહુવચન ) વિષયક અભિલાપ નીચે પ્રમાણે છે—( આહારયાણં  
મંતે ! જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા, અપણસા ? ગોયમા ! સપણસા વિ  
અપણસા વિ ત્તિ ) ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે  
ભદન્ત ! આહારક એવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—“ હે ગૌતમ ! અनेक  
આહારક એવો સપ્રદેશ પણ હોય છે અને અપ્રદેશ પણ હોય છે. ” કહેવાનું  
તાત્પર્ય એ છે કે પૂર્વોત્પન્ન જેટલાં આહારક એવો છે તેઓ તો સપ્રદેશ છે,  
પણ વિગ્રહગતિમાંથી નીકળીને જ્યારે અનેક એવો આહારક અવસ્થાવાળો  
બને છે, ત્યારે તેઓ પ્રથમ સમયે અપ્રદેશ હોય છે, કારણ કે પ્રથમ સમયે  
તેઓ અનાહારક રહેતા નથી—આહારક જ હોય છે. એજ પ્રમાણે પૃથ્વીકાય

વિકલ્પત્રયેણ વાચ્યાઃ, તથાહિ-‘ આહારયાણં મંતે ! નેરદ્યા જીવા કાલાણસે ણં કિં સપણસા, અપણસા ? ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણસા, અહવા સપ-  
ણસા ય અપણસે ય, અહવા સપણસા ય અપણસા ય ’ ત્તિ ‘ આહારકાઃ સ્વલુ મદ-  
ન્ત ! નૈરયિકાઃ જીવાઃ કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશાઃ ? અપ્રદેશા વા ? ગૌતમ ! સર્વે  
પિ તાવત્ ભવન્તિ સપ્રદેશાઃ, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્ર-  
દેશાથ’ ઇતિ, એતદભિપ્રાયેણોક્તમ્-‘ આહારયાણં જીવ-ઈન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ’

ન્દ્રિય અવસ્થાવાળે હું વે પૂર્વોત્પન્ન રૂપ સે સપ્રદેશ હું ઓર વિગ્રહગતિ સે  
નિકલકર જવ વે આહારકરૂપ સે ઈન્દ્રિય અવસ્થાવાળે વનતે હું ઉસ  
સમય પ્રથમ સમય મેં આહારક હોને કે કારણ વે અપ્રદેશ હું ! નૈરયિક  
આદિ જીવોં કો તો ત્રીન વિકલ્પોં દ્વારા ઇસ પ્રકાર સે કહના ચાહિયે-  
( આહારયા ણં મંતે ! નેરદ્યા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા અપણસા  
ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણસા, અહવા-સપણસાય અપણસે ય  
અહવા-સપણસા ય, અપણસા ય ) ગૌતમ ને જવ પ્રભુ સે ઈસા પૂછા કિ  
હે મદન્ત ! જો આહારક નારક જીવ હું વે કાલકી અપેક્ષા કયા સપ્રદેશ  
હું ? યા અપ્રદેશ હું ? તવ ઇસકા ઉત્તર પ્રભુને ઉન્હેં ઈસા દિયા કિ ગૌત-  
મ ! આહારક અવસ્થાવાળે જિતને મી પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવ હું વે સવકે  
સવ મી સપ્રદેશ હું ! અથવા-ઉનમેં કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કોઈ એક  
અપ્રદેશ હું અથવા-કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કિતનેક અપ્રદેશ હું ! ઇસી

આદિના વિષયમાં પણ સમજવું. એટલે કે જે આહારક હોયો પૃથ્વીકાય  
આદિ એકેન્દ્રિય અવસ્થાવાળા હોય છે, તેઓ પૂર્વોત્પન્નરૂપે સપ્રદેશ હોય છે,  
પણ વિગ્રહ ગતિમાંથી નીકળીને બ્યારે તેઓ આહારક રૂપે એકેન્દ્રિય અવ-  
સ્થાવાળા બને છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે આહારક હોવાને કારણે તેઓ અપ્રદેશ  
હોય છે. નારક આદિ હોવાના વિષયમાં આ પ્રમાણે ત્રણ વિકલ્પ ( ભંગ )  
સમજવા-( આહારયા ણં મંતે ! નેરદ્યા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા અપણસા ? )  
( ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણસા, અહવા-સપણસા ય અપણસા ય,  
અહવા-સપણસા ય અપણસા ય ) ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન-“ હે ભદન્ત ! આહારક  
નારક હોયો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશક કે અપ્રદેશ છે ? ” તેનો ઉત્તર  
આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ હે ગૌતમ ! આહારક અવસ્થાવાળા જેટલાં  
પૂર્વોત્પન્ન નારક હોયો છે તેઓ બધાં સપ્રદેશ છે. અથવા તેમનામાંથી કેટલાક  
સપ્રદેશ છે અને કેટલાક અપ્રદેશ છે. અથવા કેટલાક સપ્રદેશ છે. અને કેટ-

તિ । એવમ્ અનાહારકપદવિશેષિતાવપિ એકત્વ-ચતુર્તા-વિષયકદણ્ડકો વિશેષો, તપ્ત ચતુર્ત્વદણ્ડકાલાપકો વિશેષ મૂલે વક્ષ્યતિ, સમ્પતિ એકત્વદણ્ડકાલાપકવિષયે ઉચ્ચતે-અનાહારકો વિગ્રહગત્યાપન્નઃ । સમુદ્ઘાતકેવલી, અયોગી સિદ્ધો ચા અનાહારકત્વપ્રથમસમયે અપ્રદેશઃ, દ્વિતીયાદિસમયે તુ સપ્રદેશો વેદિતઃ ।

અથ અનાહારકચતુર્ત્વદણ્ડકે પતિરાદયિરુપાદ-અનાહારગાણં જીવ એગિદિય વજ્જા છબ્ભંગા એવં ભાણિયન્ના ' અનાહારગાણં જીવાનાં જીવેકેન્દ્રિયવર્જાઃ સમુ-અભિપ્રાય કો લેકર " આહારગાણં જીવએગિદિયવજ્જો તિયમંગા " સૂત્રકાર ને એસા કહ્યા હૈ કિ એક જીવ પદ કો ઓર એકેન્દ્રિય કે પાંચ પદો કો છોડકર આહારક જીવો કે ત્રીન ભંગ કહે ગયે હૈ । હસી તરહ સે અનાહારક પદ સે વિશેષિત કરકે અનાહારક જીવો કે બી એક વચન ઓર ચતુ વચન કો વિવક્ષા સે દો દણ્ડક કહના ચાહિયે । ચતુર્ત્વદણ્ડક મેં-ચતુર્ત્વ અનાહારક જીવ વિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં- " કયા વિશેષતા હૈ ? " યહ યાત તો સૂત્રકાર સ્વયં હી મૂલપાઠ મેં પ્રકટ કરેગે યહાં તો હમ એકત્વદણ્ડક કે આલાપ કે વિષય મેં કહતે હૈ-જો હસ પ્રકાર સે હૈ-વિગ્રહગતિ મેં રહ્યા હુઆ જીવ, સમુદ્ઘાતગતકેવલી, અયોગી એવં સિદ્ધ-યે સબ અનાહારક હોતે હૈ । સો યે સબ જબ અનાહારક અવસ્થા કે પ્રથમ સમય મેં રહતે હૈ, તય તો અપ્રદેશ કહે ગયે હૈ ઓર જબ યે દ્વિતીય આદિ સમયો મેં રહતે હૈ, તય સપ્રદેશ કહે ગયે હૈ । અનાહારક કે ચતુર્ત્વદણ્ડક મેં જો વિશેષતા હૈ ડસે પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-( અનાહારગાણં જીવ-એગિદિયવજ્જા છબ્ભંગા એવં

લાક અપ્રદેશ છે. એ જ વાતને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકારે કહ્યું છે કે " આહારગાણં જીવએગિદિયવજ્જો તિયમંગો " એક જીવપદને છોડીને તથા એકેન્દ્રિયનાં પાંચ પદોને છોડીને બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ કહ્યા છે. " એ જ પ્રમાણે અનાહારક જીવોના પણ એકવચન અને બહુવચનની વિવક્ષાથી બે દંડક કહેવા જોઈએ. બહુવચનવાળા દંડકમાં ( અનેક અનાહારક જીવો વિષેના બીજા દંડકમાં ) શી વિશેષતા છે તે સૂત્રકારે મૂળ સૂત્રપાઠમાં આગળ બતાવ્યું છે, અહીં તો એકત્વદંડકના આલાપક વિષે નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટતા કરવામાં આવે છે. વિગ્રહગતિમાં રહેલો જીવ; સમુદ્ઘાત, કેવલી, અયોગી અને સિદ્ધ અનાહારક હોય છે. તેઓ જ્યારે અનાહારક અવસ્થાના પ્રથમ સમયમાં રહેલા હોય છે, ત્યારે તો અપ્રદેશ જ કહેવાય છે, પણ જ્યારે તેઓ તે અવસ્થાના, બીજા, ત્રીજા આદિ સમયોમાં રહેલા હોય છે, ત્યારે તે સપ્રદેશ કહેવાય છે. હવે સૂત્રકાર અનાહારક જીવોના બહુત્વદંડકમાં જે વિશેષતા રહેલી છે તે પ્રકટ કરતા કહે છે— " અનાહારગાણં જીવ - એગિદિયવજ્જા છબ્ભંગા એવં



ચયજીવપદવત્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપશ્ચક્રપદં ચ વર્જયિત્વા પદ્મજ્ઞાઃ એવં વક્તૃ-  
માણપ્રકારેણ ભણિતવ્યાઃ વક્તૃવ્યાઃ જીવપદે, એકેન્દ્રિયપદે ચ ' સપ્રદેશા ય અપ્ર-  
દેશા ય ' ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ' इत्येवंरूप एको भङ्गो बोध्यः, વહુનાં વિગ્રહ-  
ગત્યાપન્નાનાં સપ્રદેશાનામ્ અપ્રદેશાનાં ચ સદ્ભાવાત્ । અથ તાનેવ પદ્મજ્ઞાનાહ-  
' સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨, અથવા સપ્રદેસે ય અપ્રદેસે ય ૩, અથવા સપ્ર-  
દેસે ય, અપ્રદેસા ય ૪, અથવા સપ્રદેસા ય અપ્રદેસે ય ૫ અથવા સપ્રદેસા ય,  
અપ્રદેસાય ૬' સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૩  
અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૪, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૫ અથવા સપ્રદેશથ  
અપ્રદેશથ ૬ અનાહારકા જીવા ભવન્તિ । આથી તવ દ્વૌ વહુવચનાન્તો, તૃતીયશ્ચૈક

ભાણિયવ્યા ) અનાહારક જીવોં કે છહમંગ, જીવપદ કો ઓર એકેન્દ્રિય  
પૃથિવી આદિકોં કે પાંચ પદોં કો છોડકર કે હસ પ્રકાર સે કહતે હૈ-  
જીવપદ મેં ઓર એકેન્દ્રિયપદ મેં ' સપ્રદેસા ય અપ્રદેસા ય' ' સપ્રદેશાઃ '  
ઓર 'અપ્રદેશાઃ' એસા એક હી ભંગ હોતા હૈ-ક્યોંકિ વહાં પર વિગ્રહગતિ  
મેં રહે હુએ અનેક જીવ દ્વિતીયાદિ સમય વાલે હોને કે કારણ સપ્રદેશ  
હોતે હૈ અનેક જીવ પ્રથમ સમય વર્તી હોને કે કારણ અપ્રદેશ હોતે હૈ ।  
અલ્પતર નૈરયિકોં કા અલ્પતર ભવનપતિયોં કા તથા અલ્પતર દો હન્દ્રિય  
આદિકોં કા ઉત્પાદ હોતા હૈ સો इनमें एक दो आदि अनाहारक होते  
हैं-इसी कारण यहाँ छह भंग हैं-वे छह भंग इस प्रकार से हैं-" सप-  
प्रसा वा १, अपप्रसा वा २, अथवा-सप्रसे य, अपप्रसे य ३, अथवा-  
सप्रसे य, अपप्रसा य ४, अथवा-सप्रसा य अपप्रसे य ५, अथवा-

ભાણિયવ્યા " એક જીવ પદને અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદને  
છોડીને જાડીના અનાહારકોના બે ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. જીવપદમાં અને  
એકેન્દ્રિય પદમાં " સપ્રદેસા ય અપ્રદેસા ય " " સપ્રદેશ પણ હોય છે અને  
અપ્રદેશ પણ હોય છે " એવો એક જ ભંગ થાય છે. કારણ કે ત્યાં વિગ્રહ-  
ગતિમાં રહેતા જીવો દ્વિતીય આદિ સમયવાળા હોવાને કારણે સપ્રદેશ હોય  
છે, અને અનેક જીવ પ્રથમ સમયમાં વર્તમાન હોવાને લીધે અપ્રદેશ હોય  
છે. અલ્પતર ભવનપતિઓનો તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ કોનો ઉત્પાદ થાય છે, તેથી  
તેઓમાં એક, બે આદિ અનાહારક હોય છે. તે કારણે અહીં નીચે પ્રમાણે છ  
ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે-(૧) સપ્રદેસા વા, (૨) અપ્રદેસા વા (૩) અથવા-સપ્રદેસે  
ય અપ્રદેસે ય, (૪) અથવા-સપ્રદેસે ય અપ્રદેસા ય, (૫) અથવા-સપ્રદેસા ય અપ્ર-  
દેસે ય, (૬) અથવા-સપ્રદેસા ય અપ્રદેસાય " આ છ ભંગમાંથી પહેલો અને  
બીજો ભંગ બહુવચનાન્ત છે, અને ત્રીજો, એક વચનવાળો છે. ચોથો અને

વચનાન્તઃ, એકવચન-વહુવચનસંયોગાત્ ક્તો ચતુર્થ પદ્યો , પદ્યો મક્તો વહુ-  
 વચનાન્તઃ ૬ । રતિ । તત્ર સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૧, રત્યેવંરૂપં કેવલેત્વવન-  
 ગર્ભિતોમક્તોઽથ ન સંભવતિ વહુત્વસ્પાધિકારાત્ । એવં ચ નૈરપિકાણાં ભવન-  
 પતીનાં દ્વીન્દ્રિયાદીનાં ચ અલ્પતરાણામુત્પત્તેઃ પ્લુટ્ટવાદીનામ્ અનાદારકાણાં  
 ભાવાત્ ઉપર્યુક્તાઃ ૫૨ મક્તાઃ માન્તીતિ, ‘ સિદ્ધેર્હિ ત્રિયમંગો ’ સિદ્ધેષુ ત્રયો  
 મક્તાઃ - કદાચિત્ સર્વે સિદ્ધાઃ સપ્રદેશાઃ ૧, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ  
 અપ્રદેશથ ૨, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદેશથ ભવન્તિ ૩, સપ્રદેશપદસ્ય  
 વહુવચનાન્તસ્યૈવ સિદ્ધેષુ સંભગાત્ । ‘ ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા ’  
 ભવસિદ્ધિકાઃ ભવ્યાઃ, અભવસિદ્ધિકાઃ અભવ્યાઃ જીવાઃ યથા ઔચિકાઃ સામાન્ય  
 જીવાસ્તથા જ્ઞાતવ્યાઃ, તથાહિ ઔચિકદષ્ટદ્વયત્ એતેષાં ભવસિદ્ધિકાનામ્ અભવ-  
 સપણસા ય અપણસા ય ” । હનમેં દો ભંગ પ્રથમભંગ ઓર દ્વિતીયભંગ  
 યે વહુવચનાન્ત હેં તીસરા એક વચનાન્ત હેં ઓર શોપર ભંગ-૪થા પાંચવાં  
 યે એકવચન ઓર વહુવચન કે સંયોગ સે હોતે હેં । ઓર છટ્ટા વહુવચનાન્ત  
 હેં । ( સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ) એસે કેવલ એકવચનગર્ભિત ભંગ યહાં નહીં  
 હેં । (કારણ કિય હાં પર વહુવચનકા અધિકાર હેં । (સિદ્ધેર્હિ ત્રિયમંગો)  
 સિદ્ધોંમેં તોન ભંગ હોતે હેં-“ કદાચિત્ સમસ્ત સિદ્ધ સપ્રદેશ હોતે હેં ? ”  
 કદાચિત્ અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોતે હેં ઓર કોઈ એક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોતા  
 હેં ૨, કદાચિત્ અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોતે હેં ઓર કદાચિત્ અનેક સિદ્ધ  
 અપ્રદેશ હોતે હેં ” હસ પ્રકાર સે યે તોન ભંગ હેં । યહાં પર જો સપ્રદેશ  
 પદ હેં વહુ વહુવચનાન્ત હો હેં ‘ ભવસિદ્ધિયા અભવસિદ્ધિયા, જહા ઓહિયા ’  
 ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય, અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય, યે દોનોં જીવ સામાન્ય  
 (સમુચ્ચય) જીવ કો તરહ સે જાનના ચાહિયે-અર્થાત્ સામાન્ય જીવ કે  
 દષ્ટક કો તરહ ભવસિદ્ધિક ઓર અભવસિદ્ધિક હન દોનોં મેં સે પ્રત્યેક

પાંચમે ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બનેલ છે. અને છઠ્ઠો ભંગ  
 બહુવચનવાળો છે. “ સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ” એવો એકવચનદર્શક ભંગ અહીં  
 સંભવિત નથી કારણ કે અહીં બહુવચનનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. “ સિદ્ધેર્હિ ત્રિય  
 મંગો ” સિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે-(૧) ક્યારેક સમસ્ત સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય  
 છે, (૨) ક્યારેક અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે,  
 (૩) ક્યારેક અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે,  
 આ રીતે સિદ્ધ પદને અનુલક્ષીને ત્રણ ભંગ થાય છે અહીં જે સપ્રદેશ પદ છે તે  
 બહુવચનમાં જ વપરાયું છે તેમ સમજવું. “ ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા, જહા  
 ઓહિયા ” ભવસિદ્ધિક ( ભવ્ય ) અભવસિદ્ધિક ( અભવ્ય ) એ બંને જીવના  
 વિષયમાં સામાન્ય જીવ જેવું જ કથન સમજવું. એટલે કે સામાન્ય જીવના



સિદ્ધિકાનાં અભવ્યાનાં મુક્તિગમનરહિતાનામ્ ચ પ્રત્યેકમ્ એકત્વવહુત્વ-  
વિષયકતયા દણ્ડકદ્વયં बोध्यम्, તત્ર ચ ભવ્યોઽભવ્યો વા જીવો નિયમાત્  
સપ્રદેશઃ । એવં વહુત્વેઽપિ ભવ્યા અભવ્યા વા નિયમાત્ સપ્રદેશાઃ, નૈરયિ-  
કાદિસ્તુ ભવ્યોઽભવ્યો વા સપ્રદેશઃ, અપ્રદેશો વા, વહવસ્તુ ભવ્યા અભવ્યા  
વા જીવાઃ સપ્રદેશા એવ । નૈરયિકાયાસ્તુ વહવો ભવ્યા અભવ્યા વા મજ્ઞ-  
ત્રયવન્તઃ—સર્વે સપ્રદેશા એવ કદાચિદ્ ભવેયુઃ ૧ કદાચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાથ્,  
એકઃ અપ્રદેશાથ્ ૨, કદાચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાથ્ વહવઃ અપ્રદેશાથ્,  
ભવન્તિ ૩, ઇતિભાવઃ । એકેન્દ્રિયાઃ પુનર્ભવ્યા અભવ્યા વા પૃથિવીકાયિકાદયઃ

કે દો દણ્ડક હૈં । इनमें कोई एक भव्य और कोई एक अभव्य जीव  
नियम से सप्रदेश होता है । यह एकवचनवाला दण्डक है । इसी तरह  
से बहुवचनान्त भव्य और अभव्य भी नियम से सप्रदेश होते हैं ।  
नैरयिक आदिकों में जो कोई एक भव्य अथवा अभव्यजीव है वह तो  
सप्रदेश अथवा अप्रदेश होता है । अनेक भव्य अथवा अनेक अभव्य  
जीव सप्रदेश ही होते हैं । नैरयिक आदिकों में जो अनेक भव्य अथवा  
अभव्य जीव हैं, वे तीन-भंग वाले होते हैं । कदाचित् सब सप्रदेश ही  
होते हैं १, कदाचित् अनेक सप्रदेश होते हैं और कोई एक अप्रदेश  
होता है २, कदाचित् अनेक सप्रदेश होते हैं और कदाचित् अनेक  
अप्रदेश होते हैं ३ । एकेन्द्रियपृथिवीकायिक आदि जीवों में जो भव्य  
अथवा अभव्य जीव हैं वे “ सप्रदेश और अप्रदेश होते हैं ” इस तरह

દંડકના જેવાં જ ભવસિદ્ધિકના જે દંડક અને અભવસિદ્ધિકના જે દંડક સમ-  
જવા. તેમાંનો એકવચનવાળો અભિલાપ બતાવે છે કે કોઈક ભવ્ય જીવ અને  
કોઈક અભવ્ય જીવ નિયમથી સપ્રદેશ હોય છે. બહુવચનવાળો અભિલાપ એ  
બતાવે છે કે અનેક ભવ્ય જીવો અને અનેક અભવ્ય જીવો સપ્રદેશ અથવા  
અથવા અપ્રદેશ હોય છે.

નારક આદિકોમાં કોઈક ભવ્ય અથવા અભવ્ય જીવ સપ્રદેશ અથવા  
અપ્રદેશ હોય છે. અનેક ભવ્ય અથવા અનેક અભવ્ય જીવો સપ્રદેશજ હોય છે.  
નૈરયિક આદિકોમાં જે અનેક ભવ્ય અથવા અભવ્ય જીવ છે, તેઓ ત્રણ ભંગ  
વાળા હોય છે—(૧) ક્યારેક બધાં સપ્રદેશ જ હોય છે, (૨) ક્યારેક અનેક  
સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક અપ્રદેશ જ હોય છે, (૩) ક્યારેક અનેક સપ્ર-  
દેશ હોય છે અને ક્યારેક અનેક અપ્રદેશ હોય છે તથા એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય  
આદિ જીવોમાં જે ભવ્ય અથવા અભવ્ય જીવો હોય છે તેઓ “ સપ્રદેશ  
અને અપ્રદેશ હોય છે.” આ રીતે તેમને એક જ ભંગવાળા કહ્યા છે. આથી

વચનાન્તઃ, એકવચન-વહુવચનસંયોગાત્ ઈતિ તુર્થ પદ્યો , પછો મત્તો વહુ-  
વચનાન્તઃ ૬ । રતિ । તત્ર સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૧, રત્યેવંરૂપં કેવલેકવચન-  
ગર્ભિતોમત્તોઽવ ન સંભવતિ વહુત્વસ્યાધિકારાત્ । એવં ચ નૈરયિકાણાં ભવન-  
પતીનાં ઈન્દ્રિયાદીનાં ચ અલ્પતરાણામુત્પત્તેઃ પદ્ધત્યાદીનામ્ અનાશરકાણાં  
ભાવાત્ ઉપર્યુક્તાઃ પર મત્તાઃ ભવન્તીતિ, ' સિદ્ધેર્હિ ત્રિયમંગો ' સિદ્ધેષુ ત્રયો  
મત્તાઃ - કદાચિત્ સર્વે સિદ્ધાઃ સપ્રદેશાઃ ૧, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ  
અપ્રદેશથ ૨, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદેશથ ભવન્તિ ૩, સપ્રદેશપદસ્ય  
વહુવચનાન્તસ્યૈવ સિદ્ધેષુ સંભવાત્ । ' ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા '  
ભવસિદ્ધિકાઃ ભવ્યાઃ, અભવસિદ્ધિકાઃ અભવ્યાઃ જીવાઃ યથા ઔચિકાઃ સામાન્ય  
જીવાસ્તથા જ્ઞાતવ્યાઃ, તથાહિ ઔચિકદણ્ડદ્વયત્ એતેવાં ભવસિદ્ધિકાનામ્ અભવ-

સપ્રદેશા ય અપ્રદેશા ય " । इनमें दो भंग प्रथमभंग और द्वितीयभंग  
ये बहुवचनान्त हैं तीसरा एक वचनान्त है और शेषर भंग-४था पांचवां  
ये एकवचन और बहुवचन के संयोग से होते हैं । और छठा बहुवचनान्त  
है । ( सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च ) ऐसे केवल एकवचनगर्भित भंग यहां नहीं  
हैं । ( कारण कि य हां पर बहुवचनका अधिकार है । ( सिद्धेर्हि त्रियमंगो )  
सिद्धोंमें तीनभंग होते हैं - " कदाचित् समस्त सिद्ध सप्रदेश होते हैं ? "  
कदाचित् अनेक सिद्ध सप्रदेश होते हैं और कोई एक सिद्ध अप्रदेश होता  
है २, कदाचित् अनेक सिद्ध सप्रदेश होते हैं और कदाचित् अनेक सिद्ध  
अप्रदेश होते हैं " इस प्रकार से ये तीन भंग हैं । यहां पर जो सप्रदेश  
पद है वह बहुवचनान्त ही है ' भवसिद्धिः अभावसिद्धिः, जहा ओहिया '  
भवसिद्धिक-भव्य, अभावसिद्धिक-अभव्य, ये दोनों जीव सामान्य  
( समुच्चय ) जीव की तरह से जानना चाहिये - अर्थात् सामान्य जीव के  
दण्डक की तरह भवसिद्धिक और अभावसिद्धिक इन दोनों में से प्रत्येक

પાંચમો ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બનેલ છે. અને છઠ્ઠો ભંગ  
બહુવચનવાળો છે. " સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ " એવો એકવચનદર્શક ભંગ અહીં  
સંભવિત નથી કારણ કે અહીં બહુવચનનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. " સિદ્ધેર્હિ ત્રિય  
મંગો " સિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે - (૧) ક્યારેક સમસ્ત સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય  
છે, (૨) ક્યારેક અनेक સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે.  
(૩) ક્યારેક અनेक સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને અनेक સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે,  
આ રીતે સિદ્ધ પદને અનુલક્ષીને ત્રણ ભંગ થાય છે અહીં જે સપ્રદેશ પદ છે તે  
બહુવચનમાં જ વપરાયું છે તેમ સમજવું. " ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા, જહા  
ઓહિયા " ભવસિદ્ધિક ( ભવ્ય ) અભવસિદ્ધિક ( અભવ્ય ) એ બન્ને જીવના  
વિષયમાં સામાન્ય જીવ જેવું જ કથન સમજવું. એટલે કે સામાન્ય જીવના

અત્ર વહુત્વવિષયકદ્વંડકે મદ્વકત્રયમવસેયમ્, તથાદિ-‘ નોભવસિદ્ધિય-નો-  
અભવસિદ્ધિયા ણં મંતે ! જીવા કિં સપણસા અપણસા ? ગોયમા ! સર્વે સપણસા?,  
વહુયા સપણસા, ણમે અપણસે ય ૨, વહુયા સપણસા વહુયા અપણસા ય૩ ત્તિ ’  
‘ સન્તીહિં જીવાઃઓ તિયમંગો ’ સંજિપુ જીવાદિકાસ્ત્રયો મજ્ઞાઃ, સંજિપુ યૌ એકત્વ-  
વહુત્વવિષયકો દ્વંડકો તયોર્વહુત્વવિષયકે દ્વિતીયદ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેપુ

વચનવાલે દ્વંડક કા મી અમિલાપ કહ લેના ચાહિયે-ઇસ વહુવચનવાલે  
દ્વંડક મેં ત્રીનમંગ હોતે હે-એ ઇસ પ્રકાર સે-( જો મવસિદ્ધિય નો  
અમવસિદ્ધિયા ણં મંતે ! કિં સપણમા અપણસા ? ગોયમા ! ) સર્વે સપ્ર-  
દેશાઃ ૧, વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશઃ ૨, વહવઃ સપ્રદેશાઃ ૩ વહવઃ  
અપ્રદેશાઃ ૩ હે. યહાં ગૌતમ ને પ્રમુ સે પ્રશ્ન કિયા કિ હે મદન્ત ! જો  
જીવ એસે હેં કિ ન વે મવ્ય ઓર ન વે અમવ્ય હેં તો કયા વે સપ્રદેશ  
હોતે હેં યા અપ્રદેશ હોતે હેં ? ઇસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર યહાં ત્રીનમંગસ્વરૂપ સે  
દિયા હે-અન્હોં ને કહ્યા હે ગૌતમ ! એસે જીવ યા તો સવ સપ્રદેશ હોતે  
હેં. કિતનેક સપ્રદેશ હોતે હેં ઓર કોઈ એક અપ્રદેશ હોતા હેં. યા  
કિતનેક સપ્રદેશ હોતે હેં ઓર કિતનેક અપ્રદેશ હોતે હેં. “ સન્તીહિં  
જીવાઃઓ તિયમંગો ” સંજિયોં મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં અર્થાત્  
સંજિ જીવોં મેં જો એકત્વ એવં વહુત્વ વિષયક દો દ્વંડક હેં, અનમેં સે

અપ્રદેશ હોય છે. એ જ પ્રમાણે બહુવચનવાળા દંડકને અભિલાપ પણ કહેવો  
જોઈએ. આ બહુવચનવાળા દંડકમાં ત્રણ ભાગ થાય છે. તે ત્રણ ભાગ નીચે  
પ્રમાણે છે-( જો મવસિદ્ધિય નો અમવસિદ્ધિયા ણં મંતે ! જીવા કિં સપણસા  
અપણસા ? ) “ ગોયમા ! સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, વહવઃ સપ્રદેશાઃ એક અપ્રદેશઃ ૨,  
વહવઃ સપ્રદેશાઃ ૩ વહવઃ અપ્રદેશાઃ ૩. )

આ વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! ન ભવ્ય  
અને ન અભવ્ય એવા જીવો શું સપ્રદેશ હોય છે કે અપ્રદેશ હોય છે ?

આ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે મહાવીર પ્રભુએ નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભાગ  
( વિકલ્પ ) કહ્યા છે—

(૧) એવાં બધાં જીવો કાં તો સપ્રદેશ હોય છે, (૨) અથવા અનેક  
સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક અપ્રદેશ હોય છે, (૩) અથવા અનેક સપ્રદેશ  
હોય છે અને અનેક અપ્રદેશ હોય છે.

( સન્તીહિં જીવાઃઓ તિયમંગો ) સંજી જીવોમાં જીવાદિક ત્રણ ભાગ થાય  
છે. એટલે કે સંજી જીવોમાં જે એકત્વ અને બહુત્વ વિષયક બે દંડક છે,



સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ, રૂતિ એકમદ્વરન્ત એવં । સિદ્ધપદં તત્ત્વ ન વક્તવ્યમ્  
સિદ્ધાનાં ભવ્યાભવ્યત્વવિશેષણાનુપલબ્ધ્યઃ । ‘ જોભવસિદ્ધિય-જોઅભવસિદ્ધિય-  
જીવસિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ’ નો ભવસિદ્ધિક-નો અભવસિદ્ધિક-જીવ સિદ્ધયોમ્વયો  
મદ્વા વેદિતવ્યાઃ, તથાદિ-એતદ્ નોભવસિદ્ધિક નોઅભવસિદ્ધિક વિશેષણવિશિ-  
ષ્ટમ્ ઉપર્યુક્તજીવસિદ્ધદ્વંડકદ્વયં પઠિતવ્યમ્ એકત્વાભિલાપાકારથેત્યમ્-’ જોભવ-  
સિદ્ધિય-જોઅભવસિદ્ધિયં મંતે ! જીવે કિં સપણ્સે, અપણ્સે ? ગોયમા !  
સિય સપણ્સે સિય અપણ્સે ’ રૂત્યાદિ । એવં વહુત્વદ્વંડકાલાપોઽપિ વક્તવ્યઃ,

કે યે એક મંગવાલે હી કહે ગયે હૈં । યદ્દાં ભવ્ય અભવ્ય કે પ્રકરણ મેં  
સિદ્ધપદ નહીં કહના ચાહિયે-ઝયોં કિ સિદ્ધોં મેં ભવ્ય અભવ્ય इन दोनों  
વિશેષણોં કા અભાવ હો ગયા હૈ । ( જો ભવસિદ્ધિય-જો અભવસિદ્ધિય  
-જીવસિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ” નો ભવસિદ્ધિક નો અભવસિદ્ધિક જીવ એવં  
સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હૈ-તાત્પર્ય યહ હૈ કિ “ ભવ્ય નહીં, અભવ્ય  
નહીં ” એસે વિશેષણોં વાલે જીવાદિક દો દ્વંડક કહના ચાહિયે-इनसे  
લગતા હુઆ એકત્વ અભિલાપ કા આકાર હસ પ્રકાર સે હૈ-( જો ભવ-  
સિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિયં મંતે ! જીવે કિં સપણ્સે અપણ્સે ? ) ગૌતમ  
યદ્દાં એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ હૈ મદન્ત ! જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હૈ ઓર  
ન અભવસિદ્ધિક હૈ એસા વહ જીવ કયા સપ્રદેશ હોતા હૈ યા અપ્રદેશ  
હોતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ગૌતમ સે કહેતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હૈ  
ગૌતમ ! ( સિય સપણ્સે સિય અપણ્સે ) રૂત્યાદિ-એસા જીવ કદાચિત્  
સપ્રદેશ હોતા હૈ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હોતા હૈ । હસી તરહ સે વહુ-

ભવ્ય અભવ્યના પ્રકરણમાં સિદ્ધનો સમાવેશ કરવો જોઈએ નહીં, કારણ કે  
સિદ્ધમાં ભવ્ય અને અભવ્ય એ બંને વિશેષણો સંભવી શકતાજ નથી “ જો  
ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય-જીવ સિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ” નો ભવસિદ્ધિક, નો  
અભવસિદ્ધિક જીવ અને સિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય  
એ છે કે “ ભવ્ય નહીં, અભવ્ય નહીં ” એવાં વિશેષણોવાળાં જીવાદિક એ  
દ્વંડક કહેવા જોઈએ. તેમને લાગુ પડતો એકત્વ વિષયક અભિલાપ આ પ્રમાણે  
છે—“ જો ભવસિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિયં મંતે ! જીવે કિં સપણ્સે અપણ્સે ? ”  
ગૌતમસ્વામી આહીં એવો પ્રશ્ન કરે છે કે “ હે ભદન્ત ! જે જીવ ન ભવસિદ્ધિક  
અને ન અભવસિદ્ધિક છે, તે શું સપ્રદેશ હોય છે કે અપ્રદેશ હોય છે ? તેનો  
જવાબ આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે — “ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ” સિય  
સપણ્સે, સિય અપણ્સે ” એવો જીવ ક્યારેક સપ્રદેશ હોય છે અને ક્યારેક

एकेन्द्रियवर्जः - पृथिव्यानेकेन्द्रियपदानि बहुलविषयकद्वितीयदण्डके वर्जयित्वा त्रिकभङ्गः=पूर्वमदर्शित भङ्गत्रयं बोध्यम् । एकेन्द्रियपृथिव्यादिपदेषु तु ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इत्येक एव भङ्गो वेदितव्यः, तत्र सदा बहुनाम् उत्पत्त्या तेषाम् अप्रदेशत्वस्यापि बहुत्वसंभवात् । ' नैरइय-देव-मणुएहिं छब्भंगो ' नैरयिक-देव-मनुजेषु पड् भङ्गाः भवमेवाः । तत्र असंज्ञिनोऽपि जीवाः प्रथमनरके भवनपतिवानव्यन्तरेषु च उत्पद्यन्ते अतः प्रथमनरकनैरयिहाणां भवनपतिवानव्यन्तराणां च संज्ञिनामपि पूर्वमधीयासंज्ञिभ्यः उत्पादात् भूतपूर्वगत्या असंज्ञित्वमवसेयम् । तथा

असंज्ञी सम्यन्धी बहुत्व विषयक द्वितिय दण्डक में तीन भंग होते हैं ऐसा जानना चाहिये-ये भङ्ग तीन अभी २ ऊपर दिखला ही दिये गये हैं । यहां जो पृथिवी आदिक एकेन्द्रियों को छोड़ने के लिये कहा गया है, सो उसका कारण यह है कि इन एकेन्द्रिय पृथिवी आदिक पदों में "सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च" ऐसा एक ही भङ्ग होता है । इसका कारण वन पृथिव्यादिकों में अनेक जीवों की उत्पत्ति होती है इस कारण उत्पद्यमान अनेक जीव अपनी उत्पत्ति के प्रथम समय में अप्रदेश होते हैं अतः वहां पूर्वोत्पन्न अनेक जीव सप्रदेश और उत्पद्यमान अनेक जीव अप्रदेश हैं ऐसा जानना चाहिये ।

"नैरइय-देव मणुएहिं छब्भंगो" नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग होते हैं-असंज्ञी जीव भी प्रथम नरक में भवनपति देवों में और वानव्यन्तर देवों में उत्पन्न होते हैं । इसलिये संज्ञी भी प्रथम नरक के नारकियों को, भवनपतिदेवों को, और वानव्यन्तरदेवों को, पूर्वम-

કર્માં ત્રણ ભંગ થાય છે, એમ સમજવું. એ ત્રણ ભંગો ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે ( સંજ્ઞી જીવોના ત્રણ ભંગ પ્રમાણે ) સમજવા. એકેન્દ્રિય જીવોનો તેમાં સમાવેશ નહીં કરવાનું કારણ એ છે કે પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં " સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ " એવો એક જ ભંગ થાય છે તેનું કારણ એ છે કે તે પૃથ્વીકાય આદિકોમાં અनेક જીવોની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયે અપ્રદેશ હોય છે, તેથી ત્યાં પૂર્વોત્પન્ન અनेક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને ઉત્પદ્યમાન ( ઉત્પન્ન થતા ) અनेક જીવો અપ્રદેશ હોય છે, એમ સમજવું.

" નૈરઇય-દેવ મણુએહિં છબ્ભંગો " નારક, દેવ અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે-અસંજ્ઞી જીવો પણ પહેલી નરકમાં, ભવનપતિ દેવોમાં અને વાનવ્યન્તર દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી સંજ્ઞી હોવા છતાં પણ પહેલી નરકના નારકોને, ભવનપતિ દેવોને અને વાનવ્યન્તર દેવોને



इत्यर्थः त्रयो भद्रा भवन्ति । तथाहि-संज्ञिनो जीवाः पूर्वोत्पन्नान् द्रव्यादिसमय-  
स्थितिकान् अपेक्ष्य कालतः सप्रदेशाः भवन्ति १, उत्पादविरहानन्तरं च एक-  
स्योत्पत्तौ तस्य प्रथमतमयस्थितिदशायां - बहवः सप्रदेशाः, एकः अप्रदेशश्च २,  
बहुनामुत्पत्तिसमयमाधम्ये तु बहवः संज्ञिनः सप्रदेशाश्च बहवः अप्रदेशाश्च  
भवन्ति ३, इति रीत्या भद्रत्रयं बोध्यम् । एवं सर्वपदेषु विज्ञेयम् । केवलमेतयो-  
र्दण्डकयोः एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिय-सिद्ध-पदानि न वक्तव्यानि तेषां संज्ञिविशे-  
षगत्यासंभवात् । ' असन्नीहिं एगिदियवज्जो तियभंगो ' असंज्ञिषु असंज्ञिविषये

बहुत्व विषयक द्वितीय दण्डक में जीवादिक पदों में तीन भद्र होते हैं वे इस प्रकार से होते हैं-संज्ञी जीव द्रव्यादिक समय की स्थिति वाले पूर्वोत्पन्न संज्ञी जीवों की अपेक्षा लेकर काल की अपेक्षा से सप्रदेश होते हैं । और उत्पाद विरह के अनन्तर जब एक जीव की उत्पत्ति होती है तब उसकी प्रथम समय की स्थितिदशा में अनेक संज्ञी जीव सप्रदेश और एक संज्ञी जीव अप्रदेश ऐसा कहा जाता है । तथा जब अनेक संज्ञी जीवों की उत्पत्ति के समय को प्रथमता रहती है तब अनेक संज्ञी जीव सप्रदेश, और अनेक संज्ञी जीव अप्रदेश हैं ऐसा कहा जाना है । इस तरह से यहाँ ये तीन भंग हैं । इसी तरह से सर्व पदों में जानना चाहिये । केवल इन दो दण्डकों में एकेन्द्रिय, विकेलेन्द्रिय और सिद्ध इन पदों को कहना चाहिये । क्योंकि इन सब में (संज्ञी) इस विशेषण का अभाव है । ' असन्नीहिं एगिदियवज्जो तियभंगो ' असंज्ञी जीवों में अर्थात् पृथिवी आदिक एकेन्द्रिय पदों को छोड़कर

તેમાંના બહુતર વિષયક બીજા દંડકમાં, જીવાદિક પદોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. તે ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે સમજવા-(૧) જે ત્રણ આદિ સમયોની સ્થિતિ-વાળા પૂર્વોત્પન્ન સંજ્ઞી જીવોની અપેક્ષાએ સંજ્ઞી જીવો સપ્રદેશ હોય છે. (૨) અને ઉત્પાદ વિરહ બાદ જ્યારે એક જીવની ઉત્પત્તિ થાય છે, ત્યારે તેની પ્રથમ સમયની સ્થિતિદશામાં અनेक સંજ્ઞી જીવો સપ્રદેશ હોય છે પણ એક જ સંજ્ઞી જીવ અપ્રદેશ હોય છે. (૩) તથા જ્યારે અनेक સંજ્ઞી જીવોની ઉત્પત્તિના સમયની પ્રથમતા રહે છે, ત્યારે અनेक સંજ્ઞી જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને અनेક સંજ્ઞી જીવો અપ્રદેશ હોય છે. આ પ્રકારના ત્રણ ભંગ અહીં બને છે, એજ પ્રમાણે બધાં પદોમાં સમજવું પરંતુ આ જે દંડકોમાં એકેન્દ્રિય, વિકલેન્દ્રિય અને સિદ્ધનો સમાવેશ કરવો નહીં, કારણ કે તેમને 'સંજ્ઞી' વિશેષણ લાગુ પડતું નથી. " असन्नीहिं एगिदियवज्जो तियभंगो " પૃથ્વી-કાયિક આદિ એકેન્દ્રિય સિવાયના અસંજ્ઞી જીવોમાં બહુવચનવાળા બીજા દંડ-

ત્રિયમંગો ' નોસંજિ-નોઅસંજિ-જીવ-મનુજ-સિદ્ધેષુ ત્રયો ભક્તાઃ, ' નોસંજિ-નોઅસંજિ- ' ઇતિવિશેષણવિશિષ્ટયોરેકત્વવહુત્વવિષયકદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વ-વિષયકદ્વંડકે જીવ-મનુજ-સિદ્ધપદેષુ પૂર્વોક્તરૂપં ભક્તત્રિકં ભવતિ । ' સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧ ' ' વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨ ' ' વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૩ ' ઇતિ ભક્તત્રયમ્ તેષુ વહુનામ્ અવસ્થિતાનાં લાભાત્, ઉત્પદ્યમાનાનાં ચ એકાદીનાં સંભવાત્ । એતયોશ્ચ નોસંજિ-નોઅસંજિવિષયકયોરેકત્વવહુત્વદ્વંડકયોઃ જીવ-મનુજ-સિદ્ધપદાન્વેવ ભવન્તિ ન નૈરયિકાદિપદાનિ, તેષાં નો સંજિ-નો અસંજિત્વવિશેષણસ્વાસંભવાત્ । સલેસા જહા-ઓહિયા ' સલેશ્યાઃ લેશ્યાવન્તો જીવાઃ યથા ઓચિતાઃ સામાન્યજીવાઃ પૂર્વ સપ્રદેશત્વાદિના પ્રતિપાદિતાસ્તથા

યહાં ગૃહીત નહીં હૈં । ક્યોં કિ હનમેં અસંજિત્વ કા અભાવ હૈં । ( જો સંજિ, જો અસંજિ જીવ મણુયસિદ્ધેહિં ત્રિયમંગો ) નો સંજી નો અસંજી હન વિશેષણોં સે વિશિષ્ટ એકત્વ વહુત્વવિષયક દો દ્વંડકોં મેં-સે વહુત્વ વિષયક દ્વિતીયદ્વંડક મેં જીવપદ, મનુષ્યપદ ઓર સિદ્ધ મેં પૂર્વોક્ત રૂપ સે યે ત્રીન મંગ હોતે હૈં-“ સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨ વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ । ” કારણ યહાં પર પૂર્વોત્પન્ન અનેક રહતે હૈં ઓર ઉત્પદ્યમાન કોઈ એકાદિ રહતા હૈં । હન દો નો સંજી નો અસંજી વિષય એકત્વ વહુત્વ દ્વંડકોં મેં જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધપદ હી હોતે હૈં, નૈરયિક આદિ પદ નહીં । ક્યોં કિ હનમેં નો સંજિ-નો અસંજી વિશેષણ સંભવતા નહીં હૈં । ( સલેસા જહા ઓહિયા ) લેશ્યાવાલે જીવોં કે કથન, પહિલે જૈસે સામાન્ય જીવ સપ્રદેશત્વ આદિ દ્વારા પ્રતિપાદિત ક્રિયે ગયે હૈં, વૈસા હી જાનના ચાહિયે-

અભાવ હોય છે. ( જો સંજી, જો અસંજી જીવ મણુયસિદ્ધેહિં ત્રિયમંગો ) નો સંજી, નો અસંજી એ વિશેષણોવાળા એકત્વ બહુત્વ વિષયક એ દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવ પદ, મનુષ્ય પદ અને સિદ્ધમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભાગ થાય છે—

(૧) સર્વે સપ્રદેશાઃ (૨) વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ, (૩) વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ) કારણ કે અહીં પૂર્વોત્પન્ન અનેક રહે છે અને ઉત્પદ્યમાન કોઈ એકાદિ રહે છે. નો સંજી, નો અસંજી વિષયક એકત્વ અને બહુત્વ દર્શન એ દંડકોમાં જીવ, મનુષ્ય અને સિદ્ધ એ ત્રણ પદો જ હોય છે, નારક આદિ પદ હોતાં નથી, કારણ કે નારક આદિમાં નો સંજી અને નો અસંજી વિશેષણ સંભવતા નથી. “ સલેસા જહા ઓહિયા ” લેશ્યાવાળા જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું કથન સામાન્ય જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિના કથન

નૈરયિકાદિષુ અસંશિત્વસ્ય કાદાચિત્કલ્પેન એકત્વ-વદ્યસંભવાન્ ગદ્યમજ્ઞા ભવન્તિ, તથાદિ-સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨, અથવા સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૩, અથવા સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૪, અથવા સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૫, અથવા સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૬, ઇતિ । કિન્ત્વપ્ર નૈરયિકપદેન પ્રથમનરકનૈરયિકાઃ, દેવપદેન ચ ભવનપતિ-વાનવ્યન્તરાણ્ ગ્રાહ્યાઃ નતુ દ્વિતીયાદિ નરકનીયાઃ, ઝ્યોતિષિક-વૈમાનિકાઃ, તથા સિદ્ધાશ્ચ, તેષામ્ અસંશિત્વસ્યાસંભવાત્ । 'જોતન્નિ-જોતન્નિ-ત્રી-મણુ-સિદ્ધિર્દિ

લીય અસંજી જીવોં કે ઉત્પાદ્ કી અપેક્ષા સે અર્થાત્ અસંજી જીવ યદાં ઉત્પન્ન હોતે હેં હસ ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપન નય કી અપેક્ષા સે-ભૂતપૂર્વગતિ કો ધ્યાન મેં રાખકર અર્થાત્ યે પહિલે ભવ મેં અસંજી ધે-હસ યાત કો માનકર અસંજી માન લિયા જાતા હેં । તથા નૈરયિક આદિકોં મેં અસંજીપન કાદાચિત્ક હેં હસસે હનમેં એકત્વ વદ્યત્વ કી સમ્ભાવના સે છહ ભંગ હોતે હેં વે હસ પ્રકાર સે-" સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨ સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૩, સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૪, સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૫, સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ૬ " હન છહ ભંગો મેં પ્રથમભંગ ઓર દ્વિતીયભંગ વદ્યવચનાન્ત હેં । તથા અવશિષ્ટ ચાર ભંગ એકવચન ઓર વદ્યવચન કે સંયોગ સે જન્ય હેં । ( જોરહય, દેવમણુર્દિ ) મેં નૈરયિક પદ સે યદાં પ્રથમ નરક કે નારક જીવ હી ગૃહીત હુણ હેં, દ્વિતીયાદિક નરકોં કે નારક જીવ નહીં । દેવ પદ સે ભવનપતિ દેવ ઓર વાનવ્યન્તર દેવ હી ગૃહીત હુણ હેં, ઝ્યોતિષિક દેવ ઓર વૈમાનિક દેવ નહીં । તથા સિદ્ધ મી

પૂર્વભવીય અસંજી જીવોના ઉત્પાદનની અપેક્ષાએ-એટલે કે અસંજી જીવ અહીં ઉત્પન્ન થાય છે એના ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપન નયની અપેક્ષાએ-ભૂતપૂર્વ ગતિને ધ્યાનમાં રાખીને-એટલે કે તેઓ આગળના ભવમાં અસંજી હતા એ વાતને માનીને, અસંજી માની લેવામાં આવે છે. તથા નારક આદિકોમાં અસંજીત્વ ક્યારેક હોય છે, તેથી તેઓમાં એકત્વ બહુત્વની સંભાવનાથી નીચે પ્રમાણે છ ભંગ થાય છે.

(૧) સપ્રદેશા વા (૨) અપ્રદેશા વા (૩) સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ, (૪) સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ (૫) સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ, (૬) સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ. આ છ ભંગોમાંનો પહેલો અને બીજો ભંગ બહુવચનાન્ત છે, અને બાકીના ચાર ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બન્યા છે. " જોરહય, દેવ, મણુર્દિ " માં નારક પદથી પહેલી નરકના નારકોને જ શ્રદ્ધા કરવા, બીજી, ત્રીજી આદિ નારકોને શ્રદ્ધા કરવા જોઈએ નહીં. દેવપદથી ભવનપતિ દેવો તથા વાનવ્યન્તરોને જ શ્રદ્ધા કરવા-ઝ્યોતિષિક અને વૈમાનિકોને નહીં, તથા અહીં સિદ્ધ જીવોને પણ શ્રદ્ધા કરવાના નથી, કારણ કે તેમનામાં અસંજીત્વનો



प्रमेयवन्निद्रा टी० शं ६ व० ४ सू० १ जीवस्य सप्रदेशाप्रदेशनिरूपणम् ९८१

प्रमैववन्दित्रा टी० शं ६ ४० ३ सू० १ ला० १०  
पादितस्तथा प्रत्येकम् एकत्वबहुत्वविषयकदण्डकद्वयेन वाच्याः ते च 'सर्वे सप्र-  
देशाः' 'बहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च' 'बहवः सप्रदेशाश्च बहवः अप्रदे-  
शाश्च' इति भद्रत्रयं नैरयिकादिषु बोध्यम् । जीवैकेन्द्रियेषु तु 'सप्रदेशाश्च अप्रदे-  
देशाश्च' इत्येको भद्रः । 'नवरं-जस्स अत्थि एयाओ' नवरं विशेषस्तु एतावा-  
नेव यत्-यस्य जीवनैरयिकादेः एता लेश्याः सन्ति स एव जीवनैरयिकादिः  
वक्तव्यः, एताश्च तिस्रः कृष्ण-नील-कापोतलेश्याः ज्योतिषिक-वैमानिकानां न  
भवन्ति, सिद्धानां तु सर्वा अपि न भवन्ति, इति तेऽत्र न वक्तव्याः । 'तेऽलेस्साए  
जीवाइओ तियभंगो' तेजोलेश्यायाम्-तेजोलेश्यावतां बहुत्वविषयकदण्डके जीवा-  
दिकः जीवादिपदेषु त्रयो भद्राः-ते एव पूर्वोक्ताः-सर्वे सप्रदेशाः १ बहवः सप्रदेशाः  
विषयक रूपक में तीन भंग हैं-वे हस्त

दिकः जीवादिपदेषु त्रयो भङ्गाः—त एव पूर्वोक्तः । तत्र त्रयं  
द्वारा कहना चाहिये । बहुत्वविषयक दण्डक में तीन भंग है—वे इस  
प्रकारसे हैं—“ सर्वे सप्रदेशाः ” वहवः सप्रदेशाः एकः अप्रदेशश्च वहवः  
सप्रदेशाश्च, वहवः अप्रदेशाश्च ” । जीव और एकेन्द्रियों में “ सप्रदेशाश्च  
अप्रदेशाश्च ” ऐसा एक ही भंग है । “ नवरं जस्स अत्थि एषाओ ”  
यहां विशेषता केवल इतनी ही है कि जिस जीव नैरयिक आदिके ये  
लेश्याएँ हैं वही जीव नैरयिक आदि यहां कहना चाहिके । ये कृष्ण,  
नील और कापोत लेश्याएँ ज्योतिषिक और वैमानिकदेवों के नहीं होती  
हैं । तथा जो सिद्ध जीव हैं उनके तो छहलेश्याओं में से कोई भी  
लेश्या नहीं होती है । इस कारण इन्हें यहां ग्रहण नहीं करना चाहिये ।  
(तेउलेस्साए जीवाइओ तियभंगो) तेजो लेश्यवालों के बहुत्वविषयक  
द्वितीय दण्डक में जीवादिकपदों में पूर्वोक्त ये “ सर्वे सप्रदेशाः १,  
“ वहवः सप्रदेशाः, एकः अप्रदेशश्च २ ” “ वहवः सप्रदेशाः वहवः  
“ सर्वे सप्रदेशाः ”

“વહ્વઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ”  
ખડુત્વ વિષયક હંડકોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભંગ થાય છે—“સર્વે સપ્રદેશાઃ”  
“વહ્વઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ,” “વહ્વઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહ્વઃ અપ્રદેશાશ્ચ”  
શ્રવણ અને ચેત્તેન્દ્રિયમાં “સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ” એવો એક જ ભંગ થાય  
છે. “નવરં જસસ અત્થિ ઇયાઓ” અહીં વિશેષતા એટલી જ કે જે નારક  
આદિ જીવોની લેશ્યા હોય છે, તે નારકાદિ જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું અહીં  
પ્રતિપાદન કરવું નોંધાયે. જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક દેવોમાં કૃષ્ણ, નીલ અને  
કાષ્ઠ લેશ્યાઓ હોતી નથી, તથા સિદ્ધ જીવોમાં તે છ લેશ્યાઓમાંની એક  
પણ લેશ્યા હોતી નથી. તે કારણે અહીં તેમને ચક્રણ કરવા નોંધાયે નહીં.  
(તેડલેસ્વાર જીવાદો ત્રિયમંગો) તેને લેશ્યાવાળા જીવોના ખડુત્વ વિષયક  
ખીન હંડકમાં જીવાદિક પદોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભંગ હોય છે.





પાદિતત્તથા પ્રત્યેકમ્ એકત્વવહુત્વવિષયકદણ્ડકદ્વયેન વાચ્યાઃ તે ચ ' સર્વે સપ્રદેશાઃ ' ' વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ ' ' વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશશ્ચ ' ઇતિ ભક્તત્રયં નૈરયિકાદિષુ વોધ્યમ્ । જીવૈકેન્દ્રિયેષુ તુ ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ' ઇત્યેકો ભક્તઃ । ' નવરં-જસ્સ અત્થિ ઇયાઓ ' નવરં વિશેષસ્તુ એતાવા-નેવ યત્-યસ્ય જીવનૈરયિકાદેઃ એતા લેશ્યાઃ સન્તિ સ એવ જીવનૈરયિકાદિઃ વક્તવ્યઃ, એતાશ્ચ તિસ્રઃ કૃષ્ણ-નીલ-કાપોતલેશ્યાઃ જ્યોતિષિક-વૈમાનિકાનાં ન ભવન્તિ, સિદ્ધાનાં તુ સર્વા અપિ ન ભવન્તિ, ઇતિ તેઽત્ર ન વક્તવ્યાઃ । ' તેઽલેસ્સાએ જીવાહઓ તિયમંગો ' તેજોલેશ્યાયામ્-તેજોલેશ્યાવતાં વહુત્વવિષયકદણ્ડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રયો ભક્તાઃ-તે એવ પૂર્વોક્તાઃ-સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧ વહવઃ સપ્રદેશાઃ

દ્વારા કહના ચાહિયે । વહુત્વવિષયક દણ્ડક મેં તોન મંગ હૈ-વે હસ પ્રકારસે હૈં-“ સર્વે સપ્રદેશાઃ ” વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવ અપ્રદેશશ્ચ ” । જીવ ઓર એકેન્દ્રિયોં મેં “ સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ” એસા એક હી મંગ હૈ । “ નવરં જસ્સ અત્થિ ઇયાઓ ” યહાં વિશેષતા કેવલ હતની હી હૈ કિ જિસ જીવ નૈરયિક આદિકે યે લેશ્યાઈ હૈં વહી જીવ નૈરયિક આદિ યહાં કહના ચાહિકે । યે કૃષ્ણ, નીલ ઓર કાપોત લેશ્યાઈ જ્યોતિષિક ઓર વૈમાનિકદેવોં કે નહીં હોતી હૈં । તથા જો સિદ્ધ જીવ હૈં ડનકે તો છહલેશ્યાઓં મેં સે કોઈ મી લેશ્યા નહીં હોતી હૈ । હસ કારણ ઇન્હેં યહાં ગ્રહણ નહીં કરના ચાહિયે । (તેઽલેસ્સાએ જીવાહઓ તિયમંગો) તેજો લેશ્યાવાલોં કે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત યે “ સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, “ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશશ્ચ ૨ ” “ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ

બહુત્વ વિષયક દંડકોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભંગ થાય છે-“ સર્વે સપ્રદેશાઃ ” “ વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ, ” “ વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશશ્ચ ” એવ અને એકેન્દ્રિયમાં “ સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ” એવો એક જ ભંગ થાય છે. “ નવરં જસ્સ અત્થિ ઇયાઓ ” અહીં વિશેષતા એટલી જ કે જે નારક આદિ એવોની લેશ્યા હોય છે, તે નારકાદિ એવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું અહીં પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક દેવોમાં કૃષ્ણ, નીલ અને કાપોત લેશ્યાઓ હોતી નથી, તથા સિદ્ધ એવોમાં તો છ લેશ્યાઓમાંની એક પણ લેશ્યા હોતી નથી. તે કારણે અહીં તેમને ગ્રહણ કરવા જોઈએ નહીં. (તેઽલેસ્સાએ જીવાહઓ તિયમંગો) તેને લેશ્યાવાળા એવોના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં એવાદિક પદોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભંગ હોય છે,

एकः अप्रदेशश्च २, बहवः सप्रदेशाः बहवः अप्रदेशाश्च ३, इत्येवंरूपास्तयो भक्ता बोध्याः, किन्त्वच नैरयिक-तेजस्काय-वायुकाय-विकलेन्द्रिय-सिद्धपदानि न वक्तव्यानि, तेषां तेजोलेश्याया अभावात् सिद्धानां च सर्वाणामपि लेश्यानामभावात् । विशेषमाह-‘नवरं-पुढविकाइएसु, आउवणसईसु छब्भंगा’ नवरं-विशेषः पुनस्तेजोलेश्यायामयमेव यत् - पृथिवीकायिकेषु अर्-वनस्पतिषु पइ भक्ताः वक्तव्याः यतो हि एतेषु पृथिव्यादिषु तेजोलेश्याः एकद्वयादयो देवाः पूर्वोत्पन्नाः, उत्पद्यमानाथोपलभ्यन्ते इति तत्र सप्रदेशानाम् अप्रदेशानां च एकत्व-बहुत्व संभवात् । ते च पइ भक्ता अनाहारकजीवादिवद् विशेषाः, तथाहि-सप्रदेशा वा १, अप्रदेशा वा २, अथवा सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च ३, अथवा सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च ४,

अप्रदेशाश्च ३ तीन भंग हैं । किन्तु यहाँ पर नैरयिक, तेजस्काय, वायु-काय, विकलेन्द्रिय और सिद्ध पद नहीं कहना-क्यों कि इनके तेजोलेश्या नहीं होती । तथा सिद्धों के तो कोई भी लेश्या नहीं होती । (नवरं पुढविकाइएसु आउवणसईसु छब्भंगा) इस तेजोलेश्या में जो विशेषता है वह इतनी ही है कि पृथिवीकायिकों में, अप्रकायिकों में और वनस्पतिकायिकों में छह भंग है-क्योंकि इन पृथिवी कायादिकों में, तेजोलेश्यावाले एक दो आदिक पूर्वोत्पन्न देव तथा उत्पद्यमान देव पाये जाते हैं -इस कारण यहाँ सप्रदेशोंका और अप्रदेशोंका एकत्व एवं बहुत्व संभवित है । यहाँ अनाहारक जीवादिककी तरह ही छह भंग जानना चाहिये । उनमें दो भंग बहुवचनान्त और एक भंग एक वचनान्त शेष ३ भंग एकवचन और बहुवचनके संयोगजन्य हैं-वे इस प्रकारसे हैं-सप्रदेशाः

(१) सर्वे सप्रदेशाः (२) बहवः सप्रदेशाः एकः अप्रदेशश्च, (३) बहवः सप्रदेशाः बहवः अप्रदेशाश्च । પણ તેમાં નારકો, તેજસ્કાય, વાયુકાય, વિકલેન્દ્રિય અને સિદ્ધોનો સમાવેશ થતો નથી, કારણ કે તેમને તેજલેશ્યા હોતી નથી, તથા સિદ્ધોને તો એક પણ લેશ્યા હોતી નથી. (નવરં પુઢવિકાઇએસુ આઉવણસઈસુ છબ્ભંગા) આ તેજલેશ્યામાં જે વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે-પૃથ્વીકાયિકોમાં, અપ્રકાયિકોમાં અને વનસ્પતિ કાયિકોમાં ૬ ભંગ થાય છે, કારણ કે આ પૃથ્વીકાયાદિકોમાં તેજલેશ્યાવાળા એક, જે આદિક પૂર્વોત્પન્ન દેવ તથા ઉત્પદ્યમાન દેવ પણ હોઈ શકે છે, તે કારણે ત્યાં સપ્રદેશોનું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવિત છે. અહીં અનાહારક જીવાદિકના છ ભંગના જેવાં જ છ ભંગો સમજવા. તેમાંના પહેલા બે ભંગ બહુવચનનાં છે અને બીજા એક વચનનાં છે. બાકીના ત્રણ ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બન્યા છે. તે છ ભંગ આ પ્રમાણે

અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ૫, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ૬, ઇતિ । ‘પમ્હલેસ્સ-સુફલેસ્સાણ જીવાદ્ઓ તિયમંગો’ પદ્મલેશ્ય-શુક્લલેશ્યયોર્વહુત્વવિષયકે દણ્ડકે જીવાદિકઃ જીવાદિષુ પદેષુ પૂર્વોક્તા एव ग्रन्थो भद्रा वक्तव्याः, किन्त्वत्र पञ्चेन्द्रियतिर्यग्-मनुष्य - वैमानિકપदान्येव वक्तव्यानि, अन्येषु नैરયિકાદિષુ एतयोः पद्मशुक्ललेश्ययोर्भावात् । अलेस्सेहिं जीवसिद्धेहिं तियमंगो, मणुएसु छवमंगा ’ અલેશ્યેષુ-લેશ્યારહિતેષુ જીવસિદ્ધેષુ ત્રયો ભદ્રાઃ, તથાહિ-‘સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, અથવા સપ્રદેશા અપ્રદેશાથ ૨, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથે ૩ ઇતિ । મનુજેષુ તુ અનાહારકપસદ્ધોક્તાઃ પદ્મભદ્રા વેદિતવ્યાઃ । અત્ર અલેશ્યસમ્બન્ધિનો-રેકત્વવહુત્વવિષયકદણ્ડકયોઃ જીવ-મનુષ્ય-સિદ્ધપદાન્યેવ વક્તવ્યાનિ, ન તુ નૈરયિકાદિપદાનિ, તેષામ્ અલેશ્યત્વાસંભવાત્, તત્રાપિ ચ જીવસિદ્ધયોઃ

વા ૧,” અપ્રદેશાઃ વા ૨, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૩, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૪, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૫, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૬ ।

“પમ્હલેસ્સ-સુફલેસ્સાણ જીવાદ્ઓ તિયમંગો” પદ્મલેશ્યા ઓર શુક્લલેશ્યા કે વહુત્વવિષયક દણ્ડક મેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં-યહાં પર પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્, મનુષ્ય, વૈમાનિક इन पदों का ही उच्चारण करना, नैरयिक आदि पदों का नहीं-क्यों कि इनमें ये दो लेश्याएँ नहीं होती हैं । “अलेस्सेहिं जीवसिद्धेहिं तियमंगो मणुएसु छवमंगो” लेश्या रहित जीव, सिद्धों में ये तीन भंग होते हैं-(सर्वे सप्रदेशाः १, अथवा-सप्रदेशाः अप्रदेशाथ २, अथवा-सप्रदेशाथ अप्रदेशाथ ३)” । मनुष्योंमें अनाहारक प्रकरणकी तरहसे ही ६ भंग होते हैं । यहाँ अलेश्या संबंधी एकत्व बहुत्व विषयक दो दण्डकों में

છે-(૧) સપ્રદેશાઃ વા, (૨) અપ્રદેશાઃ વા, (૩) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ (૪) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ (૫) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ (૬) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ )

( પમ્હલેસ્સ-સુફલેસ્સાણ જીવાદ્ઓ તિયમંગો ) પદ્મલેશ્યા અને શુક્લલેશ્યાના બહુત્વ વિષયક દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ જ થાય છે. અહીં પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્, મનુષ્યો અને વૈમાનિકોને જ શ્રદ્ધા કરવા, પરંતુ નારક આદિને શ્રદ્ધા કરવા જોઈએ નહીં, કારણ કે તેમનામાં આ બે લેશ્યાઓ હોતી નથી. ( અલેસ્સેહિં જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો, મણુએસુ છવમંગો ) લેશ્યારહિત જીવ અને સિદ્ધોમાં ત્રણ જ ભંગ થાય છે.

(૧) સર્વે સપ્રદેશાઃ (૨) અથવા સપ્રદેશાઃ અપ્રદેશાથ, (૩) અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ) મનુષ્યોમાં અનાહારક પ્રકરણની જેમ ૬ ભંગ થાય છે. અહીં અલેશ્યા સંબંધી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાં જીવ, મનુષ્ય અને



ઔષિકજીવાદિવદેવ મજ્જકત્રયં વક્તવ્યમ્, કિન્તુ મનુષ્યેષુ પદ્ મજ્જા વક્તવ્યાઃ  
અલેશ્યતાં પ્રતિપન્નાનાં પ્રતિપન્માનાનાં ચ પરુદ્ધવાદીનાં મનુષ્યાણાં સંપ્રદેશ-  
દેશાનામ્ અપ્રદેશાનાં ચ એકત્વવદ્વત્વસંભવાત્ । 'સમ્મદિટ્ઠીહિં જીવાહો તિય-  
મંગો, વિગલિંદિપ્પસુ છબ્ભંગા' સમ્યગ્દષ્ટિષુ સમ્યગ્દષ્ટિદંડકયોઃ વદ્વત્વવિષયક  
દંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રયો મજ્જાઃ, ઔષિકજીવાદિવદેવ મજ્જકત્રયમ્  
વક્તવ્યમ્ । વિકલેન્દ્રિયેષુ તુ પદ્મજ્ઞાઃ વાચ્યાઃ, યતો હિ તેષુ સાસાદનસમ્યગ્દ-  
ષ્ટયઃ એકાદયઃ પૂર્વોત્પન્નાઃ, ઉત્પન્નમાનાથ લભ્યન્તે, અતઃ સપ્રદેશાપ્રદેશત્વયોરે-

જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધ इन पदों को हो कहना चाहिये-नैरायक आदि  
पदों को नहीं-क्यों कि ये लेश्या से रहित नहीं हैं । लेश्या से रहित  
जीव और सिद्ध में सामान्य जीवादि की तरह से ही तीन भंग  
जानना-परंतु मनुष्यों में ६ छह भंग जानना-कारण कि जो अलेश्या-  
वस्था को प्राप्त हो चुके हैं, अथवा प्राप्त हो रहे हैं ऐसे वहां एक दो  
आदि मनुष्यों का सद्भाव हो सकने के कारण सप्रदेशों का और अप्र-  
देशों का एकत्व और वद्वत्त्व घन सकता है (सम्मदिट्ठीहिं जीवाहो  
नियमंगो विगलिंदिपसु छबभंगा) सम्यक्दष्टिजीवों के एकत्वविषयक  
और वद्वत्त्वविषयक दो दण्डकों में से वद्वत्त्वविषयक दण्डक में जीवा-  
दिक पदों में सामान्य जीवादिक की तरह से ही तीन भंग कहना तथा  
विकलेन्द्रिय जीवों में ६ भंग कहना-क्यों कि विकलेन्द्रियों में एकादि  
मासादन सम्यग्दष्टि जीव पूर्वोत्पन्नरूप से और उत्पद्यमानरूप से पाये  
जाते हैं । इस कारण यहां सप्रदेशों का और अप्रदेशों का एकत्व और

નિદ્ધને જ અહણ કરવા નારકાદિકને અહણ કરવા ભેદએ નહીં, કારણ કે તેઓ  
લેશ્યાથી રહિત હોતા નથી. લેશ્યાથી રહિત જીવ અને સિદ્ધમાં સામાન્ય  
જીવાદિની જેમ જ ત્રણ ભંગ સમજવા, પરંતુ મનુષ્યોમાં છ ભંગ સમજવા,  
કારણ કે અલેશ્ય અવસ્થાને પામી ચુકેલા અથવા પામી રહ્યા હોય એવાં  
એક, બે આદિ મનુષ્યોનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે અને તે કારણે સપ્રદેશોનું  
અને અપ્રદેશોનું એકત્વ અને બદ્વત્વ સંભવી શકે છે.

(સમદિટ્ઠીહિં જીવાહો તિયમંગો વિગલિંદિપ્પસુ છબ્ભંગા) સમ્યક્દષ્ટિ  
જીવોના એકત્વ વિષયક અને બદ્વત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બદ્વત્વ વિષયક  
દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં સામાન્ય જીવાદિકના જેવાં જ ત્રણ ભંગ સમજવા,  
કારણ કે વિકલેન્દ્રિયોમાં એકાદિ સાસાદન સમ્યક્દષ્ટિ જીવ પૂર્વોત્પન્ન રૂપે અને  
ઉત્પદ્યમાન રૂપે વિદ્યમાન હોય છે. તે કારણે તે જીવોમાં સપ્રદેશોનું અને  
અપ્રદેશોનું એકત્વ અને બદ્વત્વ સંભવી શકે છે. પરંતુ આ સમ્યક્દષ્ટિ દ્વારા

કત્વવહુત્વસંભવાત્, કિન્તિત્વહ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ન વક્તવ્યાનિ, તેષાં સમ્યગ્દર્શનાભાવાત્ તથા ચ સમ્યગ્દર્શનપ્રતિપત્તિપ્રથમસમયે અપ્રદેશત્વમ્, તત્પ્રતિપત્તિદ્વિત્વ્યાદિસમયે તુ પ્રદેશત્વં વિજ્ઞેયમ્ । ' મિચ્છદિદ્દીર્ઘિં ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ' મિથ્યાદદ્દિપ્પિ મિથ્યાદદ્દિપ્પિદ્દકયોર્વહુત્વવિપયકદણ્ડકે એકેન્દ્રિય-વર્જઃ એકેન્દ્રિયપદાનિ વર્જયિત્વા જીવાદિપદેષુ ત્રિકભક્તઃ ઉપર્યુક્તઃ ઔધિકજીવા દિવદેવ ત્રયો ભક્તઃ વક્તવ્યાઃ એકેન્દ્રિયપદેષુ તુ પૂર્વોત્પન્નાનામ્ ઉત્પદ્યમાનાનાં ચ વહુનામેવ સંભવાત્ ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' इति एक एव भङ्गो भवति । इह च

વહુત્વ ચન જાતા છે । પરન્તુ હસ સમ્યગ્દદ્દિપ્પિદ્દાર મેં એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિક પદોં કા ઉચ્ચારણ નહીં કરના ચાહિયે-કયોં કિ ઉનમેં સમ્યગ્દર્શન કા અભાવ રહતા છે । તથા ચ સમ્યગ્દર્શન કી પ્રતિપત્તિ કે પ્રથમ સમય મેં હસ દણ્ડક મેં અપ્રદેશત્વ ઓર આગે કે દો આદિ સમયોં મેં સપ્રદેશત્વ છે એસા જાનના ચાહિયે-( મિચ્છદિદ્દીર્ઘિં ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ) મિથ્યાદદ્દિપ્પિ કે દો દણ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિપયક દ્વિતી-યદણ્ડક મેં એકેન્દ્રિય પદ કો છોડ કર ત્રીન ભંગ હેં । એકેન્દ્રિયપદોં મેં ત્રીન ભંગ નહીં હેં-કારણ કિ વહાં તો પૂર્વોત્પન્ન ઓર ઉત્પદ્યમાન જીવ વહુત હોતે હેં હસલિયે ( સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ) એસા એક હી ભંગ છે । તથા-મિથ્યાદદ્દિપ્પિ કે દ્વિતીય ત્રીન ભંગ કહે ગયે હેં । સો ઉસકા કારણ યહ છે કિ વહાં પર મિથ્યાત્વ કો પ્રતિપન્ન હુએ જીવ તો અનેક હોતે હેં ઓર સમ્યક્ત્વ સે ભ્રષ્ટ હોને કે બાદ મિથ્યાત્વ કો પ્રતિપદ્યમાન-પ્રાપ્ત કરને વાટે-જીવ કોઈ એક દો આદિ હી હોતે હેં ।

એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય અદિકેને ગ્રહણ કરવાના નથી, કારણ કે તેઓમાં સમ્યગ્ દર્શનનો અભાવ હોય છે. વળી સમ્યગ્ દર્શનની પ્રાપ્તિના પ્રથમ સમયમાં આ દંડકમાં અપ્રદેશત્વ છે અને પછીના બે, ત્રણ આદિ સમયોમાં સપ્રદેશત્વ છે એમ સમજવું.

( મિચ્છદિદ્દીર્ઘિં ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ) એકેન્દ્રિય સિવાયના મિથ્યા-દદ્દિપ્પિના બે દંડકોમાંના ગહુત્વ વિપયક બીજા દંડકમાં ત્રણ ભંગ છે. એકેન્દ્રિય પદોમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી કારણ કે ત્યાં તો પૂર્વોત્પન્ન અને ઉત્પદ્યમાન જીવો ઘણા હોય છે, તે કારણે ( સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ) આ એક જ ભંગ થાય છે. તથા મિથ્યાદદ્દિપ્પિના બીજા દંડકમાં સામાન્ય જીવાદિકની જેમ જ ત્રણ ભંગ કહ્યા છે તેનું કારણ એ છે કે ત્યાં મિથ્યાત્વની જેમણે પ્રાપ્તિ કરી છે એવાં જીવો તો અનેક હોય છે અને સમ્યક્ત્વથી ભ્રષ્ટ થઈને મિથ્યાત્વ પ્રાપ્ત કરનારા જીવો તો એક, બે આદિ જ હોય છે. આ મિથ્યાદદ્દિપ્પિ દ્વારમાં સિદ્ધનો



ઔષિકજીવાદિવદેવ મદ્વક્રમ્યં વક્તવ્યમ્, કિન્તુ મનુષ્યેષુ પદ્ મદ્વા વક્તવ્યાઃ  
અલેશ્યતાં મતિપજ્ઞાનાં મતિવ્યમાનાનાં ચ એકદ્વાદીનાં મનુષ્યાણાં સંમથેન સપ-  
દેશાનામ્ અપદેશાનાં ચ એકત્વવદ્વત્સંભવાન્ । 'સમ્મદિદ્ધીહિં જીવાહો તિય-  
મંગો, વિગલિંદિપ્પસુ છબ્ભંગા' સમ્પગ્ઢપ્પિપુ સમ્પગ્ઢપ્પિદ્વકયોઃ વદ્વત્વવિષયક  
દ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિવદેષુ ત્રયો મદ્જ્ઞાઃ, ઔષિકજીવાદિવદેવ મદ્વક્રમ્યમ્  
વક્તવ્યમ્ । વિકલેન્દ્રિયેષુ તુ પદ્મદ્વાઃ વાચ્યાઃ, યતો હિ તેષુ સાસાદનસમ્પગ્ઢ-  
પ્પયઃ એકાદયઃ પૂર્વોત્પન્નાઃ, ઉત્પદ્યમાનાથ લભ્યન્તે, અતઃ સપદેશાપદેશત્વયોરે-

જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધ इन पदों को ही कहना चाहिये-नैरायिक आदि  
पदों को नहीं-क्यों कि ये लेश्या से रहित नहीं हैं । लेश्या से रहित  
जीव और सिद्ध में सामान्य जीवादि की तरह से ही तीन भंग  
जानना-परंतु मनुष्यों में ६ छह भंग जानना-कारण कि जो अलेश्या-  
वस्था को प्राप्त हो चुके हैं, अथवा प्राप्त हो रहे हैं ऐसे वहां एक दो  
आदि मनुष्यों का सद्भाव हो सकने के कारण सप्रदेशों का और अप्र-  
देशों का एकत्व और बहुत्व घन सकता है (सम्मदिद्वीहिं जीवाहो  
नियमंगो विगलिंदिपसु छबभंगा) सम्यक्दृष्टिजीवों के एकत्वविषयक  
और बहुत्वविषयक दो द्वण्डकों में से बहुत्वविषयक द्वण्डक में जीवा-  
दिक पदों में सामान्य जीवादिक की तरह से ही तीन भंग कहना तथा  
विकलेन्द्रिय जीवों में ६ भंग कहना-क्यों कि विकलेन्द्रियों में एकादि  
सासादन सम्यग्दृष्टि जीव पूर्वोत्पन्नरूप से और उत्पद्यमानरूप से पाये  
जाते हैं । इस कारण वहां सप्रदेशों का और अप्रदेशों का एकत्व और

મિદ્ધને જ ગ્રહણ કરવા નારકાનિકને ગ્રહણ કરવા જોઈએ નહીં, કારણ કે તેઓ  
લેશ્યાથી રહિત હોતા નથી. લેશ્યાથી રહિત જીવ અને સિદ્ધમાં સામાન્ય  
જીવાદિની જેમ જ ત્રણ ભંગ સમજવા, પરંતુ મનુષ્યોમાં છ ભંગ સમજવા,  
કારણ કે અલેશ્ય અવસ્થાને પામી ચુકેલા અથવા પામી રહ્યા હોય એવાં  
એક, બે આદિ મનુષ્યોનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે અને તે કારણે સપ્રદેશોનું  
અને અપ્રદેશોનું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવી શકે છે.

(સમદિદ્ધીહિં જીવાહો તિયમંગો વિગલિંદિપ્પસુ છબ્ભંગા) સમ્યક્દૃષ્ટિ  
જીવોના એકત્વ વિષયક અને બહુત્વ વિષયક બે દ્વંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક  
દ્વંડકમાં જીવાદિક પદોમાં સામાન્ય જીવ દિગ્ના જેવાં જ ત્રણ ભંગ સમજવા,  
કારણ કે વિકલેન્દ્રિયોમાં એકાદિ સાસાદન સમ્યક્દૃષ્ટિ જીવ પૂર્વોત્પન્ન રૂપે અને  
ઉત્પદ્યમાન રૂપે વિદ્યમાન હોય છે. તે કારણે તે જીવોમાં સપ્રદેશોનું અને  
અપ્રદેશોનું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવી શકે છે. પરંતુ આ સમ્યક્દૃષ્ટિ દ્વારમાં

વક્તવ્યો ન નૈરયિકાદયસ્તેષાં સંયતત્વાભાગાત્, 'અસંજર્ણિં એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો તિ' અસંયતેપુ-અસંયતપદવિશિષ્ટદણ્ડકયોર્મધ્યે बहुत्वविषयकदण्डके एकेन्द्रिय वर्जः एकेन्द्रियपृथिव्यादिपञ्चकपदानि वर्जयित्वा जीवादिपदेषु त्रिकभङ्गः पूर्वोक्तास्त्रयो भङ्गा वक्तव्याः, અસંયતત્વં પ્રતિપન્નાનાં સંયતત્વાદિપ્રતિપાનેન અસં-યતત્વં પ્રતિપદ્યમાનાનાં ચ એકાદીનાં સંભવાત્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદીનાં તુ પૂર્વો-ક્તરીત્યા 'સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ' ઇતિ એક એવ ભક્તો વાચ્યઃ, કિન્ત્વત્ર સિદ્ધપદં

ऐसे संयम प्रतिपन्नक जीव बहुत होते हैं, तथा जो जीव संयम को प्राप्त कर रहे हैं ऐसे संयम प्रतिपद्यमान जीव एक दो आदि ही होते हैं। इस द्वार में जीव और मनुष्य पद का ही उच्चारण करना क्यों कि इन्हीं में संयम होता है, नारक आदि पदों का उच्चारण नहीं करना—क्यों कि इनमें संयम नहीं होता है। 'असंजर्णिं एगिंदिय वज्जो तियमंगो' असंयत द्वारमें असंयत पद विशिष्ट एकत्व और बहुत्व विषयक दो दण्डकों में से बहुत्वविषयक द्वितीय दण्डकमें एकेन्द्रिय के पांच पदोंके छोड़कर जीवादि पदों में पूर्वोक्त तीन भंग होते हैं। क्यों कि असंयत अवस्थाको पहिलेसे पाये हुए जीव तो अनेक होते हैं और संयत आदि अवस्था से पड़ कर असंयत अवस्था को प्रतिपद्यमान होनेवाले जीव एक दो आदि ही हो सकते हैं। यहां जो एकेन्द्रिय पांच पदों का छोड़ना कहा गया है सो इसका कारण यह है कि इनमें तीन भंग नहीं होते हैं किन्तु "सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च" ऐसा एक ही भंग होता है। क्यों

જીવો તો ઘણા જ હોય છે, પણ સંયમને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય એવાં સંયમ પ્રતિપદ્યમાન જીવો તો એક, બે આદિ જ હોય છે. આ દ્વારમાં જીવ અને મનુષ્ય પદને જ ગ્રહણ કરવા, કારણ કે એ જીવો જ સંયત હોઈ શકે છે. નારક આદિને આ દ્વારમાં સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓમાં સંયમનો અભાવ હોય છે. (અસંજર્ણિં એગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) અસંયત દ્વારમાં અસંયત સંબંધી એકત્વ અને બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં એકેન્દ્રિયના પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદો સિવાયના જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, કારણ કે પહેલેથી જ અસંયત અવસ્થામાં હોય એવાં જીવો તો ઘણા જ હોય છે, પણ સંયત આદિ અવસ્થામાંથી પતન પામીને અસંયત અવસ્થા પામી રહ્યાં હોય એવાં જીવો તો એક, બે આદિ જ સંભવી શકે છે. અહીં એકેન્દ્રિયના પાંચ પદને ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કરવાનું કારણ એ છે કે તે જીવોમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી, પરંતુ (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એક જ ભંગ થાય છે. કારણ કે તે પર્યાયમાં બધાં જ જીવો

સિદ્ધા ન વાચ્યાસ્તેષાં મિથ્યાત્વાભાવાત્ 'સમ્મામિચ્છદિટ્ઠીર્હિ છઠ્ઠમંગા' સમ્યગ્-  
મિથ્યાદષ્ટિયુ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિસમ્યન્ધિવદ્વત્વવિપયકદળકે પડ્ મક્કાઃ વેદિ-  
સવ્યાઃ, યતઃ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિત્વં પ્રતિપન્નાઃ પ્રતિપદમાનાથ એકદ્વયાદયોઽપિ  
લભ્યન્તે અતસ્તેષુ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિત્વં પ્રતિપન્નાઃ પ્રતિપદમાનાથ એકદ્વયાદયોઽપિ  
લભ્યન્તે અતસ્તેષુ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિયુ પડ્ મક્કા મવન્તિ, અથ ચ એકેન્દ્રિય-વિક-  
લેન્દ્રિય-સિદ્ધપદાનિ ન વક્તવ્યાનિ તેષાં સમ્યગ્મિથ્યાદર્શનાસંભવાત્ । 'સંજણ્હિ  
જીવાહો તિયમંગો' સંયતેષુ સંયતશબ્દવિશિષ્ટદળકયોર્મધ્યે વદ્વત્વવિપયક-  
દળકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રયો મક્કાઃ ઉપર્યુક્તા વક્તવ્યાઃ, સંયમં પ્રતિપન્નાનાં  
વહુનામ્ પ્રતિપદમાનાનાં ચ એકાદીનાં સજ્ઞાવાત્, કિન્ત્વચ જીન-મનુષ્યો એવ

इस मिथ्यादृष्टिद्वार में सिद्ध पद का उच्चारण नहीं करना, क्यों कि  
सिद्ध जीवों में मिथ्यात्व नहीं होता है। (सम्मामिच्छदिट्ठीर्हि-छठमंगा)  
सम्यग्मिथ्यादृष्टि के बहुत्वविषयक द्वितीय दण्डक में छह भंग होते  
हैं-सो इसका कारण यह है कि सम्यग्मिथ्यादृष्टि अवस्था को  
जिन जीवों ने पहिले से प्राप्त कर रखा है ऐसे जीव और जो इस  
अवस्था प्राप्त कर रहे हैं ऐसे जीव सब ही नहीं होते हैं, किन्तु एक दो  
आदि जीव भी होते हैं। इससे इस सम्यग्मिथ्यादृष्टि द्वारमें दभंग कहे  
गये हैं। इस द्वार में एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय और सिद्धोंका उच्चारण नहीं  
करना क्यों कि-इनमें सम्यग्मिथ्यादृष्टिरूप मिश्र अवस्था नहीं होती है।  
'संजण्हि जीवाहो तियमंगो' संयतशब्दसे विशेषित हुए दो दण्डकों  
में से बहुत्व विषयक द्वितीय दण्डक में जीवादिक पदों में पूर्वोक्त तीन  
भंग होते हैं। कारण कि संयम को जिन्होंने पहिले प्राप्त कर लिया है

પણ સમાવેશ કરવાનો નથી કારણ કે સિદ્ધ જીવોમાં મિથ્યાત્વ હોતું જ  
નથી. (સમ્મામિચ્છદિટ્ઠીર્હિ છઠ્ઠમંગા) સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિના બહુત્વ વિષયક  
બીજા દંડકમાં છ ભંગ થાય છે. તેનું કારણ એ છે કે સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ  
અવસ્થા જેમણે પહેલેથી જ પ્રાપ્ત કરેલી હોય એવાં જીવો અને એ અવસ્થાને  
પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય એવાં જીવો બધાં હોતા નથી, પણ એક, બે આદિ  
જીવો જ હોય છે. તેથી આ સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ દ્વારમાં છ ભંગ કહ્યા છે. આ  
દ્વારમાં એકેન્દ્રિય, વિકલેન્દ્રિય અને સિદ્ધોનો સમાવેશ થતો નથી, કારણ કે  
તેઓમાં સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ રૂપ મિશ્ર અવસ્થા હોતી નથી. (સંજણ્હિ જીવા-  
હો તિયમંગો) સંયત વિશેષણવાળા બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા  
દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, તેનું કારણ એ છે કે  
સંયમને પહેલાં પ્રાપ્ત કરી લીધે હોય એવાં સંયમ પ્રતિપક્તક (સંયમી)



સંજગસંજય - જીવસિદ્ધેર્હિ તિયમંગો ' નોસંયત - નોઅસંયત - નોસંયતાસંયત-  
પદવિશિષ્ટજીવસિદ્ધવિષયકૈકત્વવહુત્વદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વદ્વંડકે જીવાદિપદેષુ  
પૂર્વોક્તાસ્યયો મજ્ઞા વક્તવ્યાઃ પૂર્વોક્તરીત્યા । વિશેષસ્તુ અત્ર જીવ-સિદ્ધાવેવ  
વક્તવ્યો, ન મનુષ્યનૈરવિકાદયસ્તેષાં નોસંયતત્વાદ્યસંભવાત્, અતઃ એવાત્ર  
' જીવ-સિદ્ધેર્હિ ' ઇત્યેવોક્તમ્ । ' સકસાઈર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયિષુ  
સકપાયશબ્દવિશિષ્ટદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વદ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ વિક્રમદ્વંઃ  
પૂર્વોક્તાસ્યયો મજ્ઞા વાચ્યાઃ, તથા ચ સકપાયાણાં સર્વદાઽવસ્થાનાત્ તે સકપાયાઃ  
' સપ્રદેશાઃ ' ઇત્યેત્તો મજ્ઞા, એવમ્ ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રચ્યવમાનતાદશાયાં સકપાયત્વં

સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ ઓર સિદ્ધ  
સમ્બન્ધી એકત્વ વહુત્વવિષયક દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વંડક  
મેં જીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત રીતિ કે અનુસાર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં  
યહાં કેવલ જીવ ઓર સિદ્ધપદ કા હી ઉચ્ચારણકરના ચાહિયે । મનુષ્ય  
નારક આદિ પદોં કા નહીં । ક્યોં કિં ઉનમેં નો સંયતત્વાદિ અવસ્થા  
નહીં હોતી હેં । હસી કારણ યહાં " જીવ સિદ્ધેર્હિ " એસા હી કહા  
ગયા હેં । " સકસાઈર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયદ્વાર મેં સકપાય  
શબ્દ વિશિષ્ટ દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વંડકમેં જીવા-  
દિકં પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં ક્યોં કિં કપાયસહિત જીવ  
સંદાં અવસ્થિત રહતે હેં-અર્થાત્ કપાયવાલે જીવ હમેશા પાયે જાતે હેં  
હસ લિયે વે કપાયવાલે જીવ સપ્રદેશ હેં યહ એક ભંગ હુઆ, તથા ઉપ-  
શમ શ્રેણી સે ગિર કર કપાયસહિત અવસ્થા કો પાનેવાલે જીવ કોહ

સંબંધી એકત્વ વહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં  
જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત રીત પ્રમાણેના જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, આ  
દ્વારમાં ક્ષિપ્ત' એવ પદ અને સિદ્ધ પદનો જ પ્રયોગ થાય છે, મનુષ્ય, નારક  
આદિ પદોને દ્વારમાં ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કર્યો છે કારણ કે તેમનામાં નો  
સંયત આદિ અવસ્થામાં હોતી નથી. તે કારણે અહીં ( જીવ સિદ્ધેર્હિ ) આ  
પ્રમાણે કહ્યું છે.

( સકસાઈર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ) સકપાય દ્વારમાં સકપાય શબ્દયુક્ત બે  
દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ  
જ દેખા છે, કારણ કે કપાયવાળા જીવો હંમેશા નજરે પડતાં હોય છે. તે  
કારણે તે કપાયવાળા જીવો સપ્રદેશ હોય છે, આ પહેલો ભંગ છે. તથા  
ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામીને કપાયયુક્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર એવો તો

ન વક્તવ્યં, તસ્ય અસંયતસ્વાભાવાન્ । ' સંજયાસંજયહિં તિયમંગો જીવાઈઓ ' સંયતા - સંયતેષુ સંયતાસંયતપદવિશિષ્ટેકત્વવહુત્વદ્વયોર્મણ્યે વહુત્વદ્વયકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ વિક્રમતઃ પૂર્વોક્તાસયો મદ્વા વાચ્યાઃ, દેશવિરતિ મતિ-પ્રજ્ઞાનાં વહુનાં, સંયમાદ્ અસંયમાદ્ વા નિવૃત્ત્ય દેશવિરતિ પ્રતિપચ્ચમાનાનાં ચ એકાદીનાં સદ્ભાવાત્, પરન્તુત્ર જીવ-પન્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્યા એવ પઠિત્વ્યાઃ ન તુ નૈરગિકાદયઃ, તેષાં સંયતાસંયતત્વવિરઠાન્, ' ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણો-

કિ યહાં સચ હી દ્વિતીયાદિ સમયો મેં અસંયમ અવસ્થાવાલે હોતે હેં ઓર અસંયમ અવસ્થા કો ધારણ કરનેવાલે ચે હી સચજીવ પ્રથમ સમય મેં મી હોતે હેં । હસ કારણ યહાં એક હી મંગ કહાં ગયા હૈ । હસ દ્વાર મેં સિદ્ધ પદ નહીં કહના-વયોં કિ સિદ્ધોં મેં અસંયત અવસ્થા નહીં હોતી હૈ । ' સંજયા સંજયહિં તિયમંગો જીવાઈઓ ' સંયતાસંયત દ્વાર મેં-સંયતાસંયતપદ વિશિષ્ટ એકત્વ વહુત્વ વિષયક દો દ્વયકોં મેં સે વહુ-ત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વયકમેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન મંગ હોતે હેં । વયોં કિ દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર કો જિન્હોં નેં પહિલે સે પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ એસે જીવ તો અનેક હોતે હેં, ઓર સંયમ સે અથવા અસંયમ નિવૃત્ત હો કર પુનઃ દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત કરનેવાલે કોઈ એક દો આદિ જીવ હી હોતે હેં । હસ દ્વારમેં જીવ પન્ચેન્દ્રિય તિર્યગ્ ઓર મનુષ્ય હન પદોં કાં હી પ્રયોગ કરના વયોં કિ હનકે સિવાય ઓર જગહ દેવનારક આદિ મેં યહ અવસ્થા સંભવિત નહીં હોતી હૈ । ' ણો સંજય-ણો અસંજય-ણો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ' નો

દ્વિતીયાદિ સમયોમાં અસંયમ અવસ્થાવાળા હોય છે અને તે બધાં બધે પ્રથમ સમયમાં પણ અસંયમ અવસ્થાવાળા જ હોય છે. આ કારણે એકેન્દ્રિય વિષયક એક જ ભંગ અસંયતને અનુલક્ષીને કહ્યો છે. આ દ્વારમાં સિદ્ધનો સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓમાં અસંયત અવસ્થા હોતી જ નથી. ( સંજયાસંજયહિં તિયમંગો જીવાઈઓ ) સંયતા સંયત દ્વારમાં-સંયતા સંયત સંબંધી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકોમાં બ્રહ્મદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થય છે. કારણ કે દેશવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરનારા બધે તો કોઈ જ હોય છે. આ દ્વારમાં બ્રહ્મ, પન્ચેન્દ્રિય તિર્યગ્ અને મનુષ્ય આટલાં પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. આ સિવાયના નારક દેવ આદિમાં આ અવસ્થા સંભવી શકતી જ નથી.

( ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણોસંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ) નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ બધે અને સિદ્ધ



સંજયાસંજય - જીવસિદ્ધેર્હિ તિયમંગો ' નોસંયત - નોઅસંયત - નોસંયતાસંયત-  
પદવિશિષ્ટજીવસિદ્ધવિષયકૈકત્વવહુત્વદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વદ્વંડકે જીવાદિપદેષુ  
પૂર્વોક્તાસ્ત્રયો ભક્ત્વા વક્તવ્યાઃ પૂર્વોક્તરીત્યા । વિશેષત્તુ અત્ર જીવ-સિદ્ધાવેવ  
વક્તવ્યો, ન મનુષ્યનૈરવિકાદયસ્તેષાં નોસંયતત્વાદ્યસંભવાત્, અતઃ એવાત્ર  
' જીવ-સિદ્ધેર્હિ ' ઇત્યેવોક્તમ્ । ' સકસાઈર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયિષુ  
સકપાયશબ્દવિશિષ્ટદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વદ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમન્નઃ  
પૂર્વોક્તાસ્ત્રયો ભક્ત્વા વાચ્યાઃ, તથા ચ સકપાયાણાં સર્વદાઽવસ્થાનાત્ તે સકપાયાઃ  
' સપ્રદેશાઃ ' ઇત્યેકો ભક્ત્, એવમ્ ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રચ્યવમાનતાદશાયાં સકપાયત્વં

સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ ઓર સિદ્ધ  
સમ્બન્ધી એકત્વ વહુત્વવિષયક દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વંડક  
મેં જીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત રીતિ કે અનુસાર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં  
યહાં કેવલ જીવ ઓર સિદ્ધપદ કા હી ઉચ્ચારણકરના ચાહિયે । મનુષ્ય  
નારક આદિ પદોં કા નહીં । ક્યોં કિ ઉત્તમેં નો સંયતત્વાદિ અવસ્થા  
નહીં હોતી હે । હસી કારણ યહાં " જીવ સિદ્ધેર્હિ " એસા હી કહા  
ગયા હે । " સકસાઈર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયદ્વાર મેં સકપાય  
શબ્દ વિશિષ્ટ દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વંડકમેં જીવા-  
દિકં પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં ક્યોં કિ કપાયસહિત જીવ  
સંદાં અવસ્થિત રહતે હેં-અર્થાત્ કપાયવાલે જીવ હમેશા પાયે જાતે હેં  
હસ લિયે વે કપાયવાલે જીવ સપ્રદેશ હેં યહ એક ભંગ હુઆ, તથા ઉપ-  
શમ શ્રેણી સે ગિર કર કપાયસહિત અવસ્થા કો પાનેવાલે જીવ કોઈ

સંબંધી એકત્વ વહુત્વ વિષયક જે દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં  
જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત રીત પ્રમાણેના જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, આ  
દ્વારમાં ફક્ત એવ પદ અને સિદ્ધ પદનો જ પ્રયોગ થાય છે, મનુષ્ય, નારક  
આદિ પદોને દ્વારમાં ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કર્યો છે કારણ કે તેમનામાં નો  
સંયત આદિ અવસ્થામાં હોતી નથી. તે કારણે અહીં ( જીવ સિદ્ધેર્હિ ) આ  
પ્રમાણે કહ્યું છે.

( સકસાઈર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ) સકપાય દ્વારમાં સકપાય શબ્દયુક્ત જે  
દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ  
જ રહ્યા છે, કારણ કે કપાયવાળા જીવો હંમેશા નજરે પડતાં હોય છે. તે  
કારણે તે કપાયવાળા જીવો સપ્રદેશ હોય છે, આ પહેલો ભંગ છે. તથા  
ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામીને કપાયયુક્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર જીવ તો

ન વક્તવ્યં, તસ્ય અસંયતસ્વાભાવાત્ । ' સંજયાસંજયહિ તિયમંગો જીવાઈઓ ' સંયતા - સંયતેષુ સંયતાસંયતપદવિશિષ્ટેકત્વવદ્વત્વદ્વયોર્મયે વદ્વત્વદ્વયકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ નિરુપદઃ પૂર્વોક્તાસ્તયો મજ્ઞા વાચ્યાઃ, દેશવિરતિ પ્રતિ- પન્નાનાં વદ્વતાં, સંયમાદ્ અસંયમાદ્ વા નિટ્ય દેશવિરતિ પ્રતિપન્નમાનાનાં ચ એકાદીનાં સદ્ભાવાત્, પરન્તુત્ર જીવ-પન્ચેન્દ્રિયતિર્દગ્-મનુષ્યા एव पटितव्याः न तु नेरयिकादयः, तेषां संयतासंयतत्वविरहात्, ' णोसंजय-णोअसंजय-णो-

કિ યહાં સચ હી દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં અસંયમ અવસ્થાવાલે હોતે હેં ઓર અસંયમ અવસ્થા કો ધારણ કરનેવાલે વે હી નચ જીવ પ્રથમ સમય મેં મી હોતે હેં । હસ કારણ યહાં એક હી ભંગ કહાં ગયા હે । હસ દ્વાર મેં સિદ્ધ પદ નહીં કહના-વયોં કિ સિદ્ધોં મેં અસંયત અવસ્થા નહીં હોતી હે । ' સંજયા સંજયહિ તિયમંગો જીવાઈઓ ' સંયતાસંયત દ્વાર મેં-સંયતાસંયતપદ વિશિષ્ટ એકત્વ વદ્વત્વ વિષયક દો દ્વયકોં મેં સે વદ્વત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વયકમેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં । વયોં કિ દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર કો જિન્હોં નેં પહિલે સે પ્રાપ્ત કર લિયા હેં એસે જીવ તો અનેક હોતે હેં, ઓર સંયમ સે અથવા અસંયમ નિવૃત્તિ હો કર પુનઃ દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત કરનેવાલે કોઈ એક દો આદિ જીવ હી હોતે હેં । હસ દ્વારમેં જીવ પન્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચ ઓર મનુષ્ય હન પદોં કો હી પ્રયોગ કરના વયોં કિ હનકે સિવાય ઓર જગહ દેવનારક આદિ મેં યહ અવસ્થા સંભવિત નહીં હોતી હે ' ણો સંજય-ણો અસંજય-ણો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિ તિયમંગો ' નો

દ્વિતીયાદિ સમયોમાં અસંયમ અવસ્થાવાળા હોય છે અને તે બધાં જીવો પ્રથમ સમયમાં પણ અસંયમ અવસ્થાવાળા જ હોય છે. આ કારણે એકેન્દ્રિય વિષયક એક જ ભંગ અસંયતને અનુલક્ષીને કહ્યો છે. આ દ્વારમાં સિદ્ધનો સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓમાં અસંયત અવસ્થા હોતી જ નથી. ( સંજયાસંજયહિ તિયમંગો જીવાઈઓ ) સંયતા સંયત દ્વારમાં-સંયતા સંયત સંબંધી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે દેશવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરનારા જીવો તો કોઈ જ હોય છે. આ દ્વારમાં જીવ, પન્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચ અને મનુષ્ય આટલાં પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. આ સિવાયના નારક દેવ આદિમાં આ અવસ્થા સંભવી શકતી જ નથી.

( ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણોસંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિ તિયમંગો ) નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ અને સિદ્ધ

સંયતસંયત - જીવસિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ' નોસંયત - નોઅસંયત - નોસંયતાસંયત-  
 પદવિશિષ્ટજીવસિદ્ધિવિષયકૈકત્વવહુત્વદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વદ્વંડકે જીવાદિપદેષુ  
 પૂર્વોક્તાસ્યયો મહ્તા વક્તવ્યાઃ પૂર્વોક્તરીત્યા । વિશેષસ્તુ અત્ર જીવ-સિદ્ધાવેવ  
 વક્તવ્યો, ન મનુષ્યનૈરયિકાદયસ્તેષાં નોસંયતત્વાદ્યસંભવાત્, અતઃ એવાત્ર  
 ' જીવ-સિદ્ધિર્હિ ' इत्येवोक्तम् । ' સકસાર્દિર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયિપુ  
 સકપાયશબ્દવિશિષ્ટદ્વંડકયોર્મધ્યે વહુત્વદ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમદ્વઃ  
 પૂર્વોક્તાસ્યયો મહ્તા વાચ્યાઃ, તથા ચ સકપાયણાં સર્વદાઽવસ્થાનાત્ તે સકપાયાઃ  
 ' સપ્રદેશાઃ ' इत्येवો મહ્તા, એવમ્ ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રત્યવમાનતાદશાયાં સકપાયત્વં

સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ ઓર સિદ્ધ  
 સમ્યન્ધી એકત્વ વહુત્વવિષયક દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વંડક  
 મેં જીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત રીતિ કે અનુસાર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં  
 યહાં કેવલ જીવ ઓર સિદ્ધપદ કા હી ઉચ્ચારણકરના ચાહિયે । મનુષ્ય  
 નારક આદિ પદોં કા નહીં । ક્યોં કિં ડનમેં નો સંયતત્વાદિ અવસ્થા  
 નહીં હોતી હે । હસી કારણ યહાં " જીવ સિદ્ધિર્હિ " એસા હી કહા  
 ગયા હે । " સકસાર્દિર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયદ્વાર મેં સકપાય  
 શબ્દ વિશિષ્ટ દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વંડકમેં જીવા-  
 દિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં ક્યોં કિં કપાયસહિત જીવ  
 સંદો અવસ્થિત રહતે હે-અર્થાત્ કપાયવાલે જીવ હમેશા પાયે જાતે હેં  
 હસ લિયે કે કપાયવાલે જીવ સપ્રદેશ હેં યહ એક ભંગ હુઆ, તથા ઉપ-  
 શમ શ્રેણી સે ગિર કર કપાયસહિત અવસ્થા કો પાનેવાલે જીવ કોઈ

સંબંધી એકત્વ વહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં  
 જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત રીત પ્રમાણેના જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, આ  
 દ્વારમાં ફક્ત એવ પદ અને સિદ્ધ પદનો જ પ્રયોગ થાય છે, મનુષ્ય, નારક  
 આદિ પદોને દ્વારમાં અડધું કરવાનો નિષેધ કર્યો છે કારણ કે તેમનામાં નો  
 સંયત આદિ અવસ્થામાં હોતી નથી. તે કારણે અહીં ( જીવ સિદ્ધિર્હિ ) આ  
 પ્રમાણે કહ્યું છે.

( સકસાર્દિર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ) સકપાય દ્વારમાં સકપાય શબ્દયુક્ત બે  
 દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ  
 જ રહ્યા છે, કારણ કે કપાયવાળા જીવો હંમેશા નજરે પડતાં હોય છે. તે  
 કારણે તે કપાયવાળા જીવો સપ્રદેશ હોય છે, આ પહેલો ભંગ છે. તથા  
 ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામીને કપાયયુક્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર જીવ તો



પ્રતિપદ્યમાનાનામ્ એકાદીનાં ત્રાનાન્ ' સપ્રદેશાથ્વ વદઃ, એકઃ અપ્રદેશાથ્વ ' ર્શિ  
 દ્વિતીયો મદ્ઃ, ' વદ્ઃ સપ્રદેશાથ્વ વદ્ઃ અપ્રદેશાથ્વ ' ર્શિ તૃતીયો મદ્ઃ । નૈ-  
 યિકસકપાયવહુત્વદ્ઽકે મદ્ઃસ્વયં પૂર્વપતિપાદિતમેતન્નારિ ચોગ્યમ્ । ' ઇન્દ્રિ-  
 દિણ્સુ અભંગકં ' એકેન્દ્રિયેણ સકપાયૈકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિવદ્ઽત્વવિષયકદ્ઽકે  
 અમદ્ઽમ્ વહુનાં મદ્ઃસ્વયં અનારઃ કિન્તુ ' સપ્રદેશાથ્વ અપ્રદેશાથ્વ ' ર્શિ એક-  
 એવ મદ્ઃ ચોગ્યઃ, યદ્યપિ પૂર્વે પૃથિવ્યાદિણ્સુ મયં મદ્ઃ પ્રતિપાદિત એવ તથાપિ તસ્ય  
 સકપાયવિષયકતયોક્તત્વેનાત્ર સકપાયવસદ્ઽરણાન્ પ્રતિપાદિતઃ, સકપાયૈકેન્દ્રિ-  
 યાણાં વહુનામ્ વદ્ઽસમયાવસ્થિતાનામ્ એકસમયસ્થિતિકાનાં ચોપલમ્ભાન્,

એક દો આદિ મિલતે હું ફસલિયે " વદ્ઃ સપ્રદેશાઃ, એક અપ્રદેશાથ્વ "  
 એસા યહ દ્વિતીયો ભંગ હુઆ તથા " વદ્ઃ સપ્રદેશાથ્વ વદ્ઃ અપ્રદેશાથ્વ "  
 અનેક સપ્રદેશા હું ઓર અનેક અપ્રદેશા હું, યહ ત્રીસરા ભંગ હુઆ ।  
 નૈરયિક જીવોંકે કપાયસહિત વહુત્વ દ્ઽકમેં જિસ પ્રકારસે ત્રીન ભંગ  
 પહિલે પ્રતિપાદિત કિયે ગયે હું ફસી તરહ સે વે હી ત્રીન ભંગ યહાં પર  
 મી જાનના ચાહિયે । ફસ કપાયદ્વારમેં " ઇન્દ્રિણ્સુ અભંગકં " એક-  
 ન્દ્રિય પદોં મેં અર્થાત્ કપાયસહિત એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિકોંકે વહુત્વ  
 વિષયકદ્ઽકમેં અનેક ભંગ નહીં હું, કિન્તુ " સપ્રદેશાથ્વ અપ્રદેશાથ્વ "  
 એસા યહ એક હી ભંગ હૈ । યદ્યપિ પહિલે પૃથિવ્યાદિ પદોં મેં યહ ભંગ  
 કહા જા ચુકા હૈ ફિર મી યહાં જો યહ કહા જા રહા હૈ વહ કપાય કે  
 પ્રસંગ કો લે કર કહા જા રહા હૈ-પહિલે કપાય કે પ્રસંગ કો લેકર યહ  
 નહીં કહા ગયા હૈ । એકેન્દ્રિય જીવોં મેં કપાયસહિત જીવ પૂર્વોત્પન્ન

કોઇક જ હોય છે, તેથી (વદ્ઃ સપ્રદેશાથ્વ એક અપ્રદેશાથ્વ) ઘણા સપ્રદેશ  
 હોય છે અને કોઇક અપ્રદેશ હોય છે, એવો ખીલો ભંગ બને છે. તથા  
 "વદ્ઃ સપ્રદેશાથ્વ વદ્ઃ અપ્રદેશાથ્વ" અનેક સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક  
 અપ્રદેશ હોય છે, એવો ત્રીલો ભંગ બને છે. નારક જીવોના કપાયસહિત બહુત્વ  
 દંડકમાં આગળ જેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે એવા જ ત્રણ ભંગ સમ-  
 જવા. આ કપાયદ્વારમાં (ઇન્દ્રિણ્સુ અભંગકં) એકેન્દ્રિય પદોમાં એટલે કે  
 કપાયસહિત પૃથ્વીકાય આદિકોના બહુત્વ વિષયક દંડકમાં અનેક ભંગ થતા  
 નથી, પણ એક જ ભંગ થાય છે. તે એક ભંગ આ પ્રમાણે છે. "સપ્રદેશાથ્વ  
 અપ્રદેશાથ્વ" જો કે પહેલાં પૃથ્વીકાય આદિ પદોમાં આ ભંગ કહેવામાં આવી  
 ગયો છે, છતાં પણ તે ભંગને અહીં જે ફરીથી કહેવામાં આવ્યો છે તે  
 કપાય અવસ્થાને અનુલક્ષીને કહેવામાં આવેલ છે, પહેલાં કપાય અવસ્થાને  
 અનુલક્ષીને આ ભંગ કહ્યો ન હતો. એકેન્દ્રિય જીવોમાં સકપાય પૂર્વોત્પન્ન જીવ

કિન્ત્વત્ર સિદ્ધો ન વક્તવ્યઃ, તસ્ય અરૂપાયિત્વાત્ । ‘કોહકસાહર્ષિં જીવ-અગ્નિદિય-વજ્જો તિયમંગો ’ ક્રોધકપાયિપુ ક્રોધકપાયિવિશિષ્ટવહુત્વદણ્ડકે જીવૈ-કેન્દ્રિય-વર્જઃ જીવપદમ્ પૃથિવ્યાદિકેન્દ્રિયપદાનિ ચ વર્જયિત્વા અન્યેષુ મનુષ્યનૈરયિકા-દિપુ વિકભક્તઃ પૂર્વોક્તં ભક્તત્રયં વાચ્યમ્, કિન્ત્વત્રાપિ સિદ્ધો ન વાચ્યઃ, તસ્ય ક્રોધકપાયિવિરહાત્ । ક્રોધકપાયિજીવપદ-પૃથિવ્યાદિકેન્દ્રિયપદેષુ ચ ‘સપ્રદે-શાથ ’ ઇતિ એક એવ ભક્તો વક્તવ્યઃ । સરૂપાયજીવસ્યોપર્યુક્તભક્તત્રયત્ કથમ-પ્રાપિ ક્રોધકપાયિજીવ-પૃથિવ્યાદિપુ ન ભક્તત્રયમિતિ ચેદાહ-ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રત્યવમાનાનાં સરૂપાયિત્વં પ્રતિપથમાનાનામ્ એકાદીનામુપલમ્બેન તત્ર ભક્તત્રયસંભ-

ઔર ઉત્પન્નમાન અનેક પાયે જાતે હૈ । યહાં ઇસ દ્વાર મેં સિદ્ધોં કો ગ્રહણ નહીં કરના चाहिये-क्यों कि वे कपायसहित नहीं होते हैं । ‘कोह-कसाहर्षिं जीव अग्निदिय वज्जो तियमंगो ’ क्रोधकपाय विशिष्ट बहुत्व दण्डकमें जीवपद को और पृथिव्यादिक पांच पदों को छोड़कर अन्य मनुष्य और नैरयिक आदि पदों में पूर्वोक्त तीन भंग होते हैं । यहां पर भी सिद्धपदका ग्रहण नहीं हुआ है क्यों कि उनमें क्रोधकपाय का विरह रहता है । क्रोधकपायवाले जीवपद में और पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय पदों में “ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ” ऐसा एक ही भंग होता है । यदि यहांपर ऐसी आशंका की जावे कि कपायविशिष्ट जीव के अभी आपने तीन भंग कहे हैं, फिर यहां पर क्रोधकपायविशिष्ट जीव और पृथिव्या-दिकों में तीन भंग न कह कर एक ही भंग क्यों कहा गया है ? तो इसका उत्तर यह है कि उपशम श्रेणी से नीचे गिरने वाले जीवों में

પણ અનેક હોય છે અને ઉત્પન્નમાન હોવો પણ અનેક હોય છે. આ દ્વારમાં સિદ્ધોનો સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓ કપાયવાળા હોતા નથી. ( કોહ-કસાહર્ષિં જીવ અગ્નિદિયવજ્જો તિયમંગો ) ક્રોધકપાય પદવાળા બહુત્વવિષયક દંડકમાં હવ પદને તથા પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિયોને છોડીને તે સિવાયના નારક, મનુષ્ય આદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. અહીં પણ સિદ્ધોને ગ્રહણ કરવા ભેદજો નહીં, કારણ કે તેમનામાં ક્રોધકપાયનો અભાવ હોય છે. ક્રોધકપાયવાળા હવ પદમાં અને પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય પદોમાં ( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) એવો એક જ ભંગ થાય છે ને અહીં કોઈ ને એવી શંકા થાય કે કપાયયુક્ત હવના હમણાં જ આપે ત્રણ ભંગ કહ્યા છે, તો અહીં ક્રોધકપાયવાળા હવ અને પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય હોવાનો એક જ ભંગ કહેવાનું કારણ શું છે ? તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે સમજવું- ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામનાર હોવામાં કપાયવાળા કોઈક હવ ( એકાદિ



વેડપિ માન-માયા-લોભેભ્યો નિવૃત્તાનાં ક્રોધં પ્રતિપ્યમાનાનાં તુ બહુનામેવોપસ-  
મ્ભેન પ્રત્યેકં ક્રોધકપાયિરાશીનામનન્તતયાઽય્ર પૃકાદીનામનુચ્છમ્ભેન મદ્વત્પા-  
સંભવાત્, કિન્તુ 'દેવેહિ છઞ્મંગા' દેવેષુ ક્રોધકપાયિદેવવિશિષ્ટબહુત્વદણ્ડકે  
પદ્મ મજ્જાઃ વક્તવ્યાઃ, ત્રયોદશાનામપિ દેવપદવાચ્યાનામ્ અસુરકુમારાદિદશભવન-  
પતિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષિક-વૈમાનિકાન્તાનાં મધ્યે ક્રોધોદયશાલિના મલ્પતયા  
પ્રકત્ત્વે, બહુત્વે ચ સપ્રદેશ-પ્રદેશત્વયોઃ સંભવેન પૂર્વોક્તદ્વિભક્તસંભવાત્ ।  
'માણકસાઈ-માયાકસાઈ-જીવ-ઈર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો' માનકપાયિ-માયા-

કપાયવિશિષ્ટ કોઈ પણ આદિ જીવ પાયા જાતા હૈં હસ કારણ કપાય-  
વાર મેં જીવપદ મેં ત્રીન ભંગ કહે ગયે હૈં પરન્તુ યહાં પર માન, માયા  
ઔર લોભ સે નિવૃત્ત હોકર ક્રોધકપાય મેં પ્રવૃત્ત હુવ જેસે અનેક જીવ  
પાયે જાતે હૈં । ક્યોં કિં હન પ્રત્યેક માનાદિ કપાયવાલોં મેં ક્રોધકપાય  
વાલોં કી રાશિ અનન્ત કહી ગઈ હૈં હસ કારણ યહાં પર પૃકાદિ જીવ  
કા ઉપલંભ નહોં હોને કે કારણ ત્રીન ભંગ નહોં હોતે હૈં જેમા કહા ગયા હૈં ।  
(દેવેહિ છઞ્મંગા) કિન્તુ ક્રોધ કપાયવાલે દેવોં કે બહુત્વવિષયક દ્વિતીય  
દણ્ડક મેં ૬ ભંગ કહે ગયે હૈં । અસુરકુમાર આદિ દસ ભવનપતિ દેવોં  
મેં વાનવ્યન્તર દેવોં મેં, જ્યોતિષિક દેવોં મેં ઔર વૈમાનિક દેવોં મેં હન  
તેરહ દેવપદ વાચ્ય દેવોં મેં ક્રોધકપાય કે ઉદયવાલે દેવ અલ્પ પાયે  
જાતે હૈં-હસલિયે એકત્વ ઔર બહુત્વ મેં સપ્રદેશત્વ ઔર અપ્રદેશત્વ કા  
સંભવ હોને કે કારણ યહાં પૂર્વોક્ત ૬ ભંગ હોતે હૈં । 'માણકસાઈ-માયા-  
કસાઈ જીવ ઈર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો' માનકપાયવાલોં મેં ઔર માયા-

જીવ ) તેા હોય છે, તે કારણે કપાય દ્વારમાં જીવ પદમાં ત્રણ ભંગ કહ્યા છે  
પરંતુ માન, માયા અને લોભમાંથી નિવૃત્ત થઈને ક્રોધકપાયમાં પ્રવૃત્ત થતા  
હોય છે વળી માનાદિ પ્રત્યેક કપાયોવાળા કરતાં ક્રોધકપાયવાળાની રાશિ અનન્ત  
કહેલી છે. તે કારણે ક્રોધકપાયવાળા એકદિ જીવની પ્રાપ્તિ થતી નથી પણ  
એવાં તેા અનેક જીવ હોય છે. તે કારણે અહીં ત્રણ ભંગ કહ્યા નથી પણ  
એક જ ભંગ કહ્યો છે. (દેવેહિ છઞ્મંગા) પરંતુ ક્રોધકપાયવાળા દેવોના બહુત્વ-  
વિષયક દંડકમાં છ ભંગ કહ્યા છે. અસુરકુમાર આદિ દસ ભવનપતિ દેવોમાં  
વાનવ્યન્તર દેવોમાં, જ્યોતિષિક દેવોમાં અને વૈમાનિક દેવોમાં-આ તેર દેવ  
પદ વાચ્યદેવોમાં ક્રોધકપાયના ઉદયવાળા દેવો આછાં હોય છે. તે કારણે એકત્વ  
અને બહુત્વમાં અપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનો સંભવ હોવાને કારણે અહીં  
પૂર્વોક્ત છ ભંગ થાય છે.

કપાયિપુ માન-માયાકપાયિપદવિશિષ્ટવદ્વટકે જીવૈ-કેન્દ્રિયવર્જઃ જીવપદમ્,  
 એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્જયિત્વા ત્રિકભક્તઃ પૂર્વોક્તાસ્ત્રયો ભક્તાઃ વક્તવ્યાઃ,  
 જીવપદે-એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ તુ અત્રાપિ ઉપર્યુક્તક્રોધકપાયિવત્ 'સપ્રદે-  
 શાથ અપ્રદેશાથ' ઇતિ એક એવ ભક્તો વક્તવ્ય ઉક્તરીત્યા । કિન્તુ 'નેરહ્ય-દેવેર્હિ  
 છન્મંગા' નૈરયિક-દેવેષુ માનકપાયિ-માયાકપાયિનૈરયિકદેવવદ્વટકે પદ્  
 ભક્તાઃ પૂર્વોક્તાઃ વક્તવ્યાઃ, નૈરયિકાણાં દેવાનાં ચ માનમાયાકપાયિણાં મધ્યે  
 અલ્પાનામેવ માન-માયોદયવતાં સંભવેન પૂર્વોક્તપુત્ર્યા પદ્મસંભવાત્ । 'લોભ-  
 કસાર્દર્હિ જીવ-એગિંદ્રિયવજ્જો તિયમંગો' લોભકપાયિપુ લોભકપાયિપદવિશિષ્ટ  
 વદ્વટકે જીવૈ-કેન્દ્રિયવર્જઃ જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ,  
 વર્જયિત્વા ત્રિકભક્તઃ પૂર્વોક્તક્રોધકપાયિત્ ભક્તત્રયં વાચ્યમ્, જીવૈકેન્દ્રિયેષુ તુ એક-  
 કપાયિવોલોં મે-વદ્વટકવિષયક દ્વિતીય દ્વટક મે જીવ પદકો ઓર એકે-  
 ન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદોં કો છોડકર પૂર્વોક્ત ત્રીન મંગ હોતે હેં ।  
 જીવપદ મેં ઓર એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદોં મેં ક્રોધકપાયિવાલે.  
 જીવોં કો તરહ 'સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ' એસા એક હી મંગ હોતા હેં ।  
 કિન્તુ 'નેરહ્ય દેવેર્હિ છન્મંગા' માનકપાયિવાલે ઓર માયાકપાયિવાલે  
 જો નૈરયિક ઓર દેવ હેં ડનકે દ્વિતીય દ્વટક મેં ૬ મંગ હોતે હેં । વધોં  
 કિ માન ઓર માયાકપાયિવાલે દેવોં ઓર નારકોં મેં માન ઓર માયાકે  
 ઉદયવાલે દેવ નારક અલ્પ હી હોતે હેં, ઇસ લિયે યહાં પર પૂર્વોક્ત ૬  
 મંગ કહે ગયે હેં । 'લોભકસાર્દર્હિ જીવ-એગિંદ્રિયવજ્જો તિયમંગો' લોભ  
 કપાયિવાલોં કે વદ્વટકવિષયક દ્વિતીય દ્વટકમેં જીવપદ કો ઓર પૃથિ-  
 વ્યાદિક એકેન્દ્રિયપદોં કો છોડકર ક્રોધકપાયિવાલોં કો તરહ ત્રીન મંગ

( માનકસાર્દ-માયાકસાર્દ જીવ એગિંદ્રિયવજ્જો તિયમંગો ) માનકપાયિવાળામાં,  
 માયાકપાયિવાળામાં બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવપદને અને પૃથ્વી ાય  
 આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોને છોડીને પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. જીવપદમાં  
 અને પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોમાં ક્રોધકપાયિવાળા જીવોના જેવોજ  
 ( સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ) આ એક ભંગ થાય છે, પરંતુ ( નેરહ્યદેવેર્હિ છન્મંગા )  
 માનકપાયિવાળા અને માયાકપાયિવાળા જે નારકો અને દેવો હોય છે તેમના બીજા  
 દંડકમાં છ ભંગ થાય છે. કારણ કે માન અને માયાકપાયિવાળા દેવો અને  
 નારકોમાં માન અને માયાના ઉદયવાળા દેવો અને નારકો ઓછાં હોય છે.

( લોભકસાર્દર્હિ જીવ એગિંદ્રિયવજ્જો તિયમંગો ) લોભકપાયિવાળાના બહુત્વ  
 વિષયક બીજા દંડકમાં જીવપદને અને પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોને  
 છોડીને ક્રોધકપાયિવાળાના જેવાં જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. પરંતુ જીવ

एव भद्रः उक्तीत्या । किन्तु 'नेरइएसु छब्भंगा' नैरयिकेण नैरयिकलोभकपायि  
 बहुत्वदण्डके पूर्वोक्ताः पइ भद्राः वाच्याः, लोभकपायिनैरयिकेण लोभोदयवता-  
 मल्पका उपर्युक्तपइभद्रसंभवात्, उक्तञ्च—

“ कोहे माणे माया, पोभया सुरगणेहिं छब्भंगा ।

माणे माया लोभे, नेरइएहिं पि छब्भंगा ’ ॥ १ ॥ इति ॥

“ क्रोधे माने मायायां वोद्दव्याः सुरगणेषु पइ भद्राः ।

माने मायायां लोभे नैरयिकेण पि पइ भद्राः ॥ १ ॥ इति न्याया,

देवाः लोभमचुरा भवन्ति नैरयिकाश्च क्रोधमचुरा भवन्तीति । ‘अकसाई-जीव-  
 -मणुएहिं तियभंगो’ अकपायिसंघंधी बहुत्वदण्डके जीव-मनुजेषु सिद्धेषु त्रिक  
 भद्र पूर्वोक्तास्त्रयो भद्राः वक्तव्याः, नतु नैरयिकादिषु, तेषाम् अकपायित्वासंभवात्,

होते हैं । जीव और एकेन्द्रियों में एक ही भंग होता है । किन्तु ‘नेर-  
 इएसु छब्भंगो’ लोभवाले नारक जीवों में—बहुत्वविषयक द्वितीयदण्डक  
 में—पूर्वोक्त छह भंग होते हैं । क्योंकि लोभकपायवाले नारकों में लोभो-  
 दयवाले नारक जीव अल्प होते हैं । इसलिये यहां छह भंग हो जाते हैं ।

क्रोध, मान, माया इनमें देवों के छह भंग होते हैं । तथा मान माया  
 एवं लोभ में नारकों के छह भंग होते हैं । देवों में लोभ अधिक होता  
 है और नारकों में क्रोध अधिक होता है । ( अकसाई जीव मणुएहिं  
 सिद्धेहिं तियभंगो ) अकपायिसंघंधी बहुत्वदण्डक में जीवपद में मनुष्य  
 पद में, और सिद्ध पद में तीन भंग होते हैं । नैरयिक आदिपदों में नहीं  
 क्योंकि इनमें अकपायित्व का संभव ही नहीं है । ( ओहियणाणे,

અને એકેન્દ્રિયમાં એક જ ભંગ થાય છે (નેરइएसु छब्भंगो) લોભવાળા નારક  
 જીવોમાં બહુત્વવિષયક બીજા દંડકમાં પૂર્વોક્ત છ ભંગ થાય છે, કારણ કે  
 લોભકપાયવાળા નારકોમાં લોભના ઉદયવાળા નારક જીવો ઓછા હોય છે તેથી  
 ત્યાં છ ભંગ થાય છે. કહ્યું પણ છે—“કોહેમાણે” ઇત્યાદિ.

ક્રોધ, માન અને માયામાં દેવોના છ ભંગ થાય છે, તથા માન, માયા  
 અને લોભમાં નારકોના છ ભંગ થાય છે. દેવોમાં લોભ અધિક હોય છે અને  
 નારકોમાં ક્રોધ અધિક હોય છે.

(અકસાઈ જીવ મણુएहिं સિદ્ધેहिં તિયભંગો) અકપાય સંબંધી બહુત્વ  
 દંડકમાં જીવ પદમાં, મનુષ્ય પદમાં અને સિદ્ધ પદમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.  
 નારક આદિમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી, કારણ કે તેમનામાં કપાય રહિતતા  
 સંભવિત નથી.



‘ઓદિયણાણે, આમિણિવોદિયણાણે, સુયણાણે જીવાદ્ઓ તિયમંગો’ ઔચિકજ્ઞાને, મત્યાદિભેદેરવિશિષ્ટજ્ઞાનમ્ ઔચિકજ્ઞાનમ્ તસ્મિન્, આમિણિવોચિકજ્ઞાને મતિજ્ઞાને શ્રુતજ્ઞાને ચ વદૃત્વવિષયકદ્વિતીયે ઝડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિભુવનઃ પૂર્વોક્તા-સર્વોમદ્ગા વક્તવ્યાઃ, તત્ર સામાન્યજ્ઞાનાન્મહોચિકજ્ઞાનિ-મતિ-શ્રુતજ્ઞાનિના સર્વદા-સ્વસ્થિતત્વેન સપ્રદેશત્વસંભવાત્ ‘સર્વે સપ્રદેશાઃ’ इति प्रथमो भङ्गः । एवं मिथ्या-જ્ઞાનાન્ મત્યાદિજ્ઞાનમાત્રમ્, મત્યજ્ઞાનાન્ મતિજ્ઞાનમ્, શ્રુતજ્ઞાનાન્ ચ શ્રુતજ્ઞાનં પ્રતિષ્ઠમાનાનાં ચ પૃક્ષાદીનાં સંભવાત્, ‘વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ’ इति द्वितीयो भङ्गः । तथा ‘वहवः सप्रदेशाश्च, वहवः अप्रदेशाश्च’ इति तृतीयो भङ्गो वेदितव्यः, किन्तु ‘विगल्लिदिग्धिं छद्मंगा’ विकलेन्द्रियेषु द्वित्रिचतुरिन्द्रियेषु

આમિણિવોદિયણાણે, સુયણાણે જીવાદ્ઓ તિયમંગો) ઔચિકજ્ઞાન મેં મતિ આદિ ભેદ રહિત સામાન્યજ્ઞાન મેં, -આમિણિવોચિક જ્ઞાન મેં-મતિ જ્ઞાન મેં ઓર શ્રુતજ્ઞાનમેં, વદૃત્વ વિષયકદ્વિતીય ઢડકમેં જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં । કયોં કિ સામાન્યજ્ઞાનવાલે તથા મતિશ્રુત જ્ઞાનવાલે જીવ સર્વદા પાચે જાતે હેં, હસલિયે ડનમેં સપ્રદેશત્વ વન જાને કે કારણ “સર્વે સપ્રદેશાઃ” यह प्रथम भङ्ग, तथा मिथ्याज्ञान से हट-कर मात्र मति आदि ज्ञान को पाने वाला तथा मति अज्ञान के अभाव से मतिज्ञान को प्राप्त करने वाला, श्रुत अज्ञान के अभाव से श्रुतज्ञान को प्राप्त करनेवाला कोई पृक्षादि जीव होता है-इसलिये ‘वहवः सप्र-देशाश्च एकः अप्रदेशाश्च’ यह द्वितीय भङ्ग, और ( वहवः सप्रदेशाश्च, वहवः अप्रदेशाश्च ), ऐसा तीसरा भङ्ग घट जाता है । किन्तु “विगल्लि-दिग्धिं छद्मंगा” जो विकलेन्द्रिय जीव हैं उनमें तीन भङ्ग न होकर छह

( ઓદિયણાણે, આમિણિવોદિયણાણે, સુયણાણે જીવાદ્ઓ તિયમંગો) ઔચિક જ્ઞાનમાં-મતિ આદિ લેહરહિત સામાન્ય જ્ઞાનમાં, આમિણિવોચિક જ્ઞાનમાં (મતિ જ્ઞાનમાં) અને શ્રુત જ્ઞાનમાં બદૃત્વ વિષયક બીજા ઢડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે સામાન્ય જ્ઞાનવાળા તથા મતિ અને શ્રુત જ્ઞાનવાળા જીવો સર્વદા મળી આવે છે, તે કારણે તેમનામાં સપ્ર-દેશત્વ સંભવી શકવાને કારણે (સર્વે સપ્રદેશાઃ) આ પ્રથમ ભંગ, તથા મિથ્યા-જ્ઞાનથી નિવૃત્ત થઈને માત્ર મતિજ્ઞાન આદિ પ્રાપ્ત કરનારો, તથા મતિ અજ્ઞા-નને અભાવે મતિ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરનારો, શ્રુત અજ્ઞાનને અભાવે શ્રુત જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરનારો કોઈ એકાદ જીવ તો હોય છે. તેથી (વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, એક અપ્રદેશાશ્ચ) આ બીજો ભંગ પણ સંભવી શકે છે, અને (વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) આ ત્રીજો ભંગ પણ બની શકે છે. પરંતુ (વિગલિંદિગ્ધિં

સાસાદનસમ્યક્ત્વસંભવેન આભિનિયોધિકાદિજ્ઞાનિનામ્ પૃક્તાદીનાં સંભવેન પૂર્વોક્તા-  
 એવ પદ્ ભક્ત્તા વક્તવ્યાઃ, ૬૬ ચ યથાયોગમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ સિદ્ધાશ્ચ ન  
 વક્તવ્યાઃ તેષાં તદસંભવાત્ । ‘ઓહિણાણે મણ-કેવલજ્ઞાણે જીવાઈઓ તિયમંગો’  
 અવધિજ્ઞાને, મનઃ પર્યવજ્ઞાને કેવલજ્ઞાને વહુત્વવિષયકઃ ડંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિ-  
 પદેષુ વિક્રમદ્વઃ, પૂર્વોક્તાસ્યયો ભક્ત્તાઃ વક્તવ્યાઃ કિન્તુ અવધિજ્ઞાનેકત્વ વહુત્વદ્વ-  
 કયોઃ પૃથિવ્યાથેકેન્દ્રિય-વિકલેન્દ્રિયાઃ સિદ્ધાશ્ચ ન વક્તવ્યાઃ, મનઃપર્યવદ્વ-  
 કયોશ્ચ જીવાઃ, મનુષ્યાશ્ચ વક્તવ્યાઃ, નતુ નૈરધિક-પૃથિવ્યાદયઃ, તેષાં તદસંભવાત્ ।

ભંગ હોતે હૈં । કયોં કિં ઇનમેં દો ઇન્દ્રિય, તેન્દ્રિય ઓર ચૌદ્વન્દ્રિયરૂપ  
 વિકલેન્દ્રિયોં મેં-સાસાદન સમ્યક્ત્વ હોને કે કારણ પૃક્તાદિ અભિનિયો-  
 ધિક જ્ઞાનચાલે જીવ કી સંભવતા હોતી હૈ-ઇસસે યહાં પર પૂર્વોક્ત છહ  
 ભંગ કહે ગયે હૈં । ઇસ દ્વાર મેં યથાયોગ એકેન્દ્રિયપદ પૃથિવ્યાદિક  
 પાંચપદ તથા સિદ્ધ ઇનકો છોડ દેના ચાહિયે-કયોં કિં યે વિકલેન્દ્રિયોં  
 મેં પરિમાણિત નહીં હુવે હૈં । ( ઓહિણાણે મણપજ્જવણાણે કેવલજ્ઞાણે  
 જીવાઈઓ તિયમંગો ) અવધિજ્ઞાન મેં, મનઃપર્યવજ્ઞાનમેં, એવં કેવલજ્ઞાન  
 મેં વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વંડક મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । કિન્તુ  
 અવધિજ્ઞાન કે એકત્વ ઓર વહુત્વદ્વંડક મેં પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદ વિક-  
 લેન્દ્રિય ઓર સિદ્ધ ઇન્હે સંગૃહીત નહીં કરના ચાહિયે તથા મનઃપર્યવજ્ઞાન  
 કે દોનોં દ્વંડકોં મેં જીવ ઓર મનુષ્ય ઇનકા-હી ગ્રહણ કરના ચાહિયે  
 નારક એવં પૃથિવ્યાદિકોં કા નહીં કયોં કિં ઇનમેં મનઃ પર્યવજ્ઞાન નહીં

છમંગા ) વિકલેન્દ્રિય એવેમાં છ ભંગ થાય છે. કારણ કે દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય  
 અને ચતુરિન્દ્રિય ૩૫ વિકલેન્દ્રિય એવેમાં સાસાદન સમ્યક્ત્વ હોવાને લીધે  
 એકાદ અભિનિયોધિક જ્ઞાનવાળા એવની સંભવિતતા હોઈ શકે છે. તેથી  
 અહીં પૂર્વોક્ત છ ભંગ કહ્યા છે. આ દ્વારમાં પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય  
 પદોનો તથા સિદ્ધપદનો સમાવેશ કરવાનો નથી, કારણ કે વિકલેન્દ્રિયમાં  
 તેઓની ગણતરી થતી નથી.

( ઓહિણાણે, મણપજ્જવણાણે, કેવલજ્ઞાણે જીવાઈઓ તિયમંગો ) અવધિ  
 જ્ઞાનમાં, મનઃપર્યવજ્ઞાનમાં અને કેવલજ્ઞાનમાં બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં  
 એવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. પરંતુ અવધિજ્ઞાનના એકત્વ અને  
 બહુત્વ દંડકમાં પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોનો, વિકલેન્દ્રિયનો અને  
 સિદ્ધપદનો સમાવેશ કરવો નહીં, તથા મનઃપર્યવજ્ઞાનના બન્ને દંડકોમાં એવ  
 અને મનુષ્યને જ ગ્રહણ કરવા, નારક, પૃથ્વીકાય આદિને ગ્રહણ કરવાના  
 નથી, કારણ કે તેમનામાં મનઃપર્યવજ્ઞાન હોતું નથી.



કેવલજ્ઞાનદણ્ડકયોસ્તુ જીવ-મનુષ્ય-સિદ્ધાદ્ય વક્તવ્યાઃ, નો નૈરયિકાદયઃ, તેષાં તદસંભવાત્, અત એવોક્તમ્—‘વિષ્ણેયં જસસ જં અત્થિ’ ત્તિ, વિષ્ણેયં ચમ્ય યદ્ અસ્તિ-ઇતિ । ‘ઓહિય અન્નાણે, મહ અન્નાણે સુય અન્નાણે ઈગિદિયવજ્જો તિયમંગો’ ઔધિકે અજ્ઞાને મત્યજ્ઞાને, શ્રુતાજ્ઞાને એકેન્દ્રિયવર્જઃ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિ વર્જયિત્વા જીવાદિપદેષુ ત્રિકભક્તઃ, પૂર્વોક્તા એવ ત્રયો ભક્ત્તા વક્તવ્યાઃ, તથાહિ—ઔધિકાદ્ય-જ્ઞાનિનાં સપ્રદેશત્વે સદાઽવસ્થિતત્વાત્ ‘સર્વે સપ્રદેશાઃ’ इत्येको भक्तः । यदा तु सदाऽवस्थितातिरिक्ताः ज्ञानं विमुच्य मत्यज्ञानादितया परिणमन्ति तदा एकादीनां संभवेन ‘बहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च’ इति द्वितीयो भक्तः, एवं ‘बहवः

હોના છે । કેવલજ્ઞાન કે દોનોં દણ્ડકોં મેં જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધ હન કા હી ઉચારણ કરના ચાહિયે, નૈરયિક આદિ પદોં કા નહીં—ક્યોં કિ હનમેં કેવલજ્ઞાન નહીં હોતા હૈ । હસીલિયે એસા કહા ગયા હૈ કિ—( વિ-ષ્ણેયં જસસ જં અત્થિત્તિ) । “ ઓહિય અન્નાણે, મહ અન્નાણે, સુય અન્નાણે, ઈગિદિયવજ્જો તિયમંગો ) ઔધિક અજ્ઞાન મેં, મતિ અજ્ઞાન મેં, શ્રુત અજ્ઞાન મેં, એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યદિકપદોં કો છોડકર જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હૈં ક્યોં કિ મતિ આદિ અજ્ઞાન સે અવિશેષિત હુએ સામાન્ય અજ્ઞાનવાલે જીવ, મતિ અજ્ઞાન વાલે જીવ ઓર શ્રુત અજ્ઞાનવાલે જીવ સદા અવસ્થિત રહતે હૈં—ઇસ કારણ “ સર્વે સપ્રદેશાઃ ” એસા પ્રથમ-ભંગ યહાં વન જાતા હૈ । તથા જવ અવસ્થિત જીવોં કે સિવાય ઓર દૂસરે જીવ જ્ઞાન કો છોડકર મતિ અજ્ઞાન આદિ રૂપ સે પરિણ-મિત હોતે હૈં તથા ડનમેં એસે જીવ એકાદિ હોતે હૈં—ઇસ કારણ ( બહવઃ

કેવળજ્ઞાનના બન્ને દંડકોમાં જીવ, મનુષ્ય અને સિદ્ધ, આ પદોનો જ પ્રયોગ કરવો, નારકાદિનો પ્રયોગ કરવો નહીં, કારણ કે નારકાદિકોમાં કેવળ-જ્ઞાન હોતું નથી. તેથી જ એવું કહ્યું છે કે (વિષ્ણેયં જસસ જં અત્થિ ત્તિ) (ઓહિય અન્નાણે, મહ અન્નાણે, ઈગિદિયવજ્જો તિયમંગો) ઔધિક અજ્ઞાનમાં, મતિ-અજ્ઞાનમાં અને શ્રુત અજ્ઞાનમાં એકેન્દ્રિય સિવાયના જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે મતિ આદિ અજ્ઞાનથી અવિશેષિત થયેલા સામાન્ય અજ્ઞાનવાળા જીવો, મતિ અજ્ઞાનવાળા જીવો અને શ્રુત અજ્ઞાનવાળા જીવો સર્વદા ભોજૂદ હોય છે. તે કારણે (સર્વે સપ્રદેશાઃ) આ પડેલો ભંગ બની શકે છે તથા બ્યારે અવસ્થિત જીવો સિવાયના બીજાં જીવો જ્ઞાનને છોંડીને મતિ અજ્ઞાન આદિ રૂપે પરિણમિત થાય છે ત્યારે તેમાં એવાં જીવ એકાદિ હોય છે. તે કારણે (બહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ) આ બીજો

સપ્રદેશાથ વહવઃ અપ્રદેશાથ ' રૂપિ ત્તોયો મહો યોગ્યઃ । એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપૃ  
તુ ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' રૂપિ એક પા મહોડ્યસેયઃ, કિન્તુ-પ્રિવ્યપિ ઉવ-  
ર્યુક્તાજ્ઞાનેષુ સિદ્ધા ન વક્તવ્યાઃ, તેષાં તાદૃશજ્ઞાનાસંભવાત્ । ' વિભંગજ્ઞાને જીવા-  
ઇઓ તિયમંગો ' વિભજ્ઞાને વદૂતરપ્પડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમજ્ઞઃ  
પૂર્વોક્તાલ્પો મદ્વા વક્તવ્યાઃ, તથા ચ મત્યજ્ઞાનાદિયન્ વિભજ્ઞાનમાવના ભાવ-  
નીયા, કેાલમત્ર એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિ-વિકલેન્દ્રિયાઃ, સિદ્ધાથ ન વક્તવ્યાઃ,  
તેષાં વિભજ્ઞાનાસંભવાત્ । ' સજોગી જહા ઓહિમો ' સયોગી યથા ઔધિકસ્તથા  
વક્તવ્યઃ, તથા ચ યથા ઔધિતો જીવાદિઃ પ્રતિપાદિતસ્તથા જીવાદિદણ્ડક દ્વયે

સપ્રદેશાથ એકઃ અપ્રદેશાથ) એસા દ્વિતીય ભંગ ઓર "વહવઃ સપ્રદેશાથ,  
વહવઃ અપ્રદેશાથ" એસા ત્રીસરા ભંગ થન જાતા હૈ । ઇસ દ્વારમેં એકેન્દ્રિય  
પૃથિવ્યાદિકકોં છોડને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિં ઇન એકેન્દ્રિયોંમેં ત્રીન ભંગ  
નહીં હોતે હૈ કિન્તુ "સપ્રદેશા અપ્રદેશાથ" એસા એક હી ભંગ હોતા હૈ ।  
યહાં સિદ્ધપદકા પ્રયોગ નહીં કરના ચાહિયે-ક્યોંકિ ઇનમેં મતિ અજ્ઞાન  
કો પ્રાપ્તિ અસંભવ હૈ । (વિભંગજ્ઞાને જીવાઇઓ તિયમંગા) વિભંગજ્ઞાનમેં  
બહુત્વ વિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ  
હોતે હૈ । મતિ અજ્ઞાન આદિ કી તરહ હી યહાં ત્રીન ભંગોં કે થનને કી  
ભાવના જાનની ચાહિયે; ઇસ દ્વાર મેં એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિ પાંચ પદ,  
વિકલેન્દ્રિયપદ, ઓર સિદ્ધપદ ઇનકા પ્રયોગ નહીં કરના ચાહિયે-ક્યોં  
કિ ઇન સવ મેં વિભંગજ્ઞાન નહીં હોતા હૈ । ( સજોગી જહા ઓહિમો )

ભંગ પણ ખતી શકે છે. અને ( વહવઃ સપ્રદેશાથ વહવઃ અપ્રદેશાથ ) આ  
ત્રીએ ભંગ ખતી જાય છે. આ દ્વારમાં પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોને  
શ્રદ્ધ પણ નહીં કરવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિયોમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી પણ  
( સપ્રદેશા અપ્રદેશાથ ) આ એકજ ભંગ થાય છે. વળી આ દ્વારમાં સિદ્ધ-  
પદનો પણ પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં કારણ કે તેમને મતિ અજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ  
સંભવી શકતી નથી ( વિભંગજ્ઞાને જીવાઇઓ તિયમંગા ) વિભંગ જ્ઞાન સંબંધી  
બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય તે  
( વિપરીત જ્ઞાનને વિભંગ જ્ઞાન કહે છે ) મતિ અજ્ઞાન આદિના ત્રણ ભંગ થવા  
વિષે જે સ્પષ્ટીકરણ ઉપર ક્યું છે, તે સ્પષ્ટીકરણ વિભંગ જ્ઞાનના ત્રણ ભંગ  
ખાટે પણ સમજાયું. આ દ્વારમાં પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોનો,  
વિકલેન્દ્રિય પદનો અને સિદ્ધ પદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં કારણ કે તેમ-  
નામાં વિભંગ જ્ઞાન હોતું નથી.

અપિ સયોગી વક્તવ્યઃ, તદમિત્યાપથૈકત્વેડયમ્—‘સયોગી જીવો નિયમાત્ સપ્રદેશઃ, નૈરયિકાન્તુ સયોગી સપ્રદેશઃ, અપ્રદેશો વા’ । વહુત્વદણ્ડકે ‘વહવો જીવાઃ સયોગિનઃ સપ્રદેશા એવ, નૈરયિકાદયસ્તુ સયોગિનઃ ‘સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧ વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨’ ‘વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૩’ ઇતિ-

જિસ પ્રકાર સે ઔચિક જીવાદિક પ્રતિપાદિત હુણ હૈં ડસી પ્રકાર સે જીવાદિક કે દોનોં દણ્ડકોં મેં ભી સયોગી પ્રતિપાદિત કરલેના ચાહિયે. इनके एकत्वविषयक दण्डक में अभिलाप का आकार इस तरह से है— “सजोगी जीवो नियमात् सप्रदेशः, नैरयिकादिस्तु सयोगी सप्रदेशः, अप्रदेशो वा” सयोगी जीव नियम से सप्रदेश है, परन्तु जो सयोगी नैरयिक आदि जीव है वह सप्रदेश भी है और अप्रदेश भी है । बहु-त्वविषयक दण्डकमें (वहवो जीवाः सयोगिनः सप्रदेशा एव, नैरयिका-दयस्तु सयोगिनः) “सर्वे सप्रदेशाः, वहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च, वहवः सप्रदेशाश्च वहवःअप्रदेशाश्च” ऐसा कथन जानना चाहिये कि अनेक सयोगी जीव सप्रदेश ही होते हैं-परन्तु जो सयोगी नैरयिक आदि जीव हैं वे तीनों भंगवाले होते हैं-प्रथम भंग में सब सयोगी नारक आदि जीव सप्रदेश होते हैं । द्वितीयभंग में कितनेक सयोगी नारक आदि जीव सप्रदेश होते हैं और कोई एक सयोगी नारक आदि जीव अप्रदेश भी होता है । तृतीयभंग में सब ही पूर्वोत्पन्न सयोगी

( સજોગી જહા ઓદિઓ ) ને રીતે ઔચિક ( સામાન્ય ) જીવાદિકનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે એજ રીતે જીવાદિકના બંને દંડકોમાં પણ સયોગીનું પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. તેમના એકત્વ વિષયક દંડકમાં આ પ્રમાણે અભિલાપ બને છે—

( સજોગી જીવો નિયમાત્ સપ્રદેશઃ, નૈરયિકાદિસ્તુ સયોગી સપ્રદેશઃ અપ્રદેશો વા ) સયોગી જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે, પરંતુ સયોગી નારકાદિ જીવ સપ્રદેશ પણ હોય અને અપ્રદેશ પણ હોય છે ” બહુત્વ વિષયક દંડકમાં ( વહવો જીવાઃ સયોગિનઃ એવ, નૈરયિકાદયસ્તુ સયોગિનઃ ) ( સર્વે સપ્રદેશાઃ, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ) એવું કથન સમજવું કે અनेक सयोगी जिव सप्रदेश જ હોય છે, પરંતુ જે સયોગી નારક આદિ જીવો છે તેઓ ત્રણ ભંગવાળા હોય છે. પહેલા ભંગમાં સમસ્ત સયોગી નારક આદિ જીવો સપ્રદેશ હોય છે. બીજા ભંગમાં કેટલાક સયોગી નારક આદિ જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક સયોગી નારક આદિ જીવ અપ્રદેશ પણ હોય છે ત્રીજા ભંગમાં સમસ્ત પૂર્વોત્પન્ન નારક આદિ જીવો સપ્રદેશ



રીત્યા મદ્ગત્રયવન્તઃ । એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ સયોગિનઃ કેવલં ' વહવઃ સપ્રદેશાઃ  
 વહવઃ અપ્રદેશાઃ ' इत्येकमद्वयत्वं एव बोध्याः, किन्त्वत्र मिदो न वक्तव्यः, तस्य  
 सयोगित्वाभावात् । ' मणजोगी वयजोगी कायजोगी जीवाइओ त्रियभंगो '  
 मनोयोगिनि योगत्रयवति संज्ञिनि, वचोयोगिनि एकेन्द्रियवर्ज, काययोगिनि सर्व-  
 स्मिन्नपि एकेन्द्रियादी जीवादिकः जीवादियदेषु त्रिकमद्वः, मद्वयं वाच्यम्, तथा-  
 च मनोयोगादीनां सदाऽवस्थितत्वे सप्रदेगा इति पूर्वोक्तः प्रथमो मद्वः, अमनोयो-  
 गित्वादियपरित्यागान्च मनोयोगित्वादिनोत्पद्यमानानाम् एकादीनां संभवेन अप्रदे-

નારક આદિ જીવ સપ્રદેશ હોતે હું. ઓર કિતનેક ઉત્પદ્યમાન સયોગી  
 નારક આદિ જીવ અપ્રદેશ ઓ હોતે હું. પરન્તુ જો એકેન્દ્રિયપૃથિવી  
 આદિક સયોગી જીવ હું એ કેવલ (વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદેશાઃ)  
 એસે એક હી ભંગવાલે હોતે હું-ત્રીન ભંગવાલે નહીં હોતે હું. હમ દ્વાર-  
 મેં સિદ્ધ પદ કા ઉચારણ નહીં કરના ચાહિયે-કયોં કિ એ સિદ્ધ જીવ  
 યોગાતીત હોતે હું. (મણજોગિ, વયજોગિ, કાયજોગિ, જીવાઈઓ ત્રિય-  
 ભંગો) મનોયોગવાલે અર્થાત્ ત્રીનો યોગવાલે સંજો જીવોંમેં, વચનયોગ-  
 વાલે અર્થાત્ એકેન્દ્રિય જીવોં કો છોડકર ચાકી કે જીવોં મેં ઓર કાય-  
 યોગવાલે અર્થાત્ સમસ્ત એકેન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં, ત્રીનભંગ હોતે હું એ  
 મનોયોગી આદિ જીવ સદા અવસ્થિત રહતે હું. હસ કારણ તો હનમેં  
 (સર્વે સપ્રદેશાઃ) એસા પ્રથમ ભંગ થન જાતા હૈ તથા અમનોયોગી આદિ  
 કે પરિત્યાગ સે જવ જીવ મનોયોગી આદિરૂપ સે ઉત્પદ્યમાન હોતે હું  
 તથ એસા આદેશરૂપ એકાદિ જીવ મિલ જાતા હૈ-હસ કારણ યહાં દ્વિતીય

હોય છે અને કેટલાક ઉત્પદ્યમાન સયોગી નારક આદિ હોવો અપ્રદેશ પણ  
 હોય છે, પરન્તુ પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય સયોગી હોવો ( વહવઃ સપ્રદેશાઃ  
 વહવઃ અપ્રદેશાઃ ) આ એક જ ભંગવાળા હોય છે. તેઓ ત્રણ ભંગવાળા  
 હોતા નથી. વળી આ દ્વારમાં સિદ્ધપદનો પણ પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં,  
 કારણ કે સિદ્ધ હવમાં સયોગીતા સંભવી શકતી નથી.

(મણજોગિ, વયજોગિ, કાયજોગિ જીવાઈઓ ત્રિયભંગો) મનોયોગવાળા  
 એટલે કે ત્રણે યોગવાળા સંજો હોવામાં, વચન યોગવાળા એટલે કે એકેન્દ્રિય  
 સિવાયના હોવામાં, અને કાયયોગવાળા હોવામાં એટલે કે સમસ્ત એકેન્દ્રિય  
 આદિક હોવામાં ત્રણ ભંગ થાય છે. આ મનોયોગી આદિ હોવાનું અવસ્થાન  
 (અસ્તિત્વ) સદા રહે છે તે કારણે તેમને અનુલક્ષીને (સર્વે સપ્રદેશાઃ) આ  
 પ્રથમ ભંગ બની જાય છે. તથા અમનોયોગી આદિ અવસ્થાનો પરિત્યાગ  
 કરીને જ્યારે હોવા, મનોયોગી આદિ રૂપે ઉત્પદ્યમાન થાય એવી છે ત્યારે

શત્વલાભે ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' इत्यन्यभङ्गकद्वयम् ।  
અવ વિશેષતામાહ—' નવરં-કાયજોગી ઇર્ગિદિયા, તેસુ અભંગયં ' નવરમ્-કાય-  
યોગિની ચે એકેન્દ્રિયાઃ પૃથિવ્યાદયો જીવાસ્તેષુ અભંગમ્ વહનાં ભજ્ઞાનામ્ અભાવો  
વક્તવ્યઃ, કિન્તુ ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' इत्येक एव भङ्गो बोध्यः । एतेषु च  
મનોવચઃકાયરૂપયોગત્રયદણ્ડકેષુ જીવાદિપદાનિ યથાયોગં વક્તવ્યાનિ, કિન્તુ  
સિદ્ધપદં ન વક્તવ્યમ્, તસ્ય મનોવચઃકાયયોગાસંભવાત્ । ' અજોગી જહા  
અલેસ્સા ' અયોગિનઃ યથા અલેશ્યાઃ ઉક્તાસ્તથા જ્ઞાતવ્યાઃ, તથા ચ અયોગિનાં  
દણ્ડકદ્વયેઽપિ અલેશ્યસમવક્તવ્યતયા અલેશ્યેષુ વહુત્વદણ્ડકે જીવ-સિદ્ધપદયોઃ  
ભજ્ઞત્રયસ્ય, મનુષ્યપદેષુ ચ ભજ્ઞપદ્મકહ્યોક્તત્વેન અત્રાપિ વહુત્વદણ્ડકે અયોગિષુ

ભંગ થન જાતા હૈ ઓર " સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ " એસા તૃતીયભંગ  
મી થન જાતા હૈ ( નવરં કાયજોગી ઇર્ગિદિયા તેસુ અભંગયં ) યહાં  
વિશેષતા હસ પ્રકાર સે હૈ કિ જો જીવ કાયયોગવાલે એકેન્દ્રિય હૈં ઉન  
મેં તીન ભંગ નહીં હૈં, કિન્તુ ( સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ) એસા એકહીભંગ  
હૈ । इन मन वचन और कायरूप योगत्रयके दण्डकों में यथायोग जीवा-  
દિક પદોં કા હી કથન કરના ચાહિયે । सिद्धपद का कथन नहीं करना  
ચાહિયે । क्यों कि सिद्धों में कोई भी योग नहीं होता है । ( अजोगी  
જહા અલેસ્સા ) લેશ્યા રહિત જીવોં કે સમાન અયોગિજીવોં કી વક્ત-  
વ્યતા જાનની ચાહિયે । कहनेका आशय यह है कि अयोगियों के दोनों  
દણ્ડકોં મેં લેશ્યારહિત જીવોં કે જૈસી વક્તવ્યતા કહી ગઈ હોને કે કા-  
રણ લેશ્યારહિત જીવોં મેં વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં જીવ ઓર

અવસ્થાવાળો એકાદિ જીવ પણ મળી આવે છે, તેથી ( વહવઃ સપ્રદેશાથ  
એકઃ અપ્રદેશાથ ) આ બીજો ભંગ પણ બની શકે છે, અને ( સપ્રદેશાથ  
અપ્રદેશાથ ) આ ત્રીજો ભંગ પણ બની શકે છે ( નવરં કાયજોગી ઇર્ગિદિયા  
તેસુ અભંગયં ) અહીં વિશેષતા એ છે કે કાયયોગવાળા એકેન્દ્રિય જીવોમાં  
ત્રણ ભંગ થતા નથી, પરંતુ ( સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ) આ એક જ ભંગ  
થાય છે. આ મન, વચન અને કાયયોગના ઢંડકોમાં યથાયોગ્ય જીવાદિક  
પદોનો જ પ્રયોગ થવો જોઈએ. અહીં સિદ્ધપદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં  
કારણ કે સિદ્ધોમાં કોઈ પણ યોગનો અભાવ હોય છે.

( અજોગી જહા અલેસ્સા ) લેશ્ય રહિત જીવોના જેવું જ કથન અયોગી  
જીવોના વિષયમાં સમજવું. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—લેશ્યારહિત  
જીવોના બહુત્વ વિષયક ઢંડકમાં જીવ અને સિદ્ધપદમાં ત્રણ ભંગ, મનુષ્યોમાં





તથા ચ વહુત્વદણ્ડકે અસકૃત્પાપ્તસાકારોપયોગાન્ વહુન્ જીવાનાશ્રિત્ય ' સપ્ર-  
દેશાઃ ' इति प्रथमो भङ्गः, तानेव असकृत्प्राप्तसाकारोपयोगान् वहून् जीवान्,  
सकृत्प्राप्तसाकारोपयोगं च एकमाश्रित्य ' वहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च ' इति द्वितीयो भङ्गः, तानेव सकृत्प्राप्तसाकारोपयोगान् वहून् आश्रित्य ' वहः सप्र-  
देशाश्च वहवः अप्रदेशाश्च ' इति तृतीयो भङ्गः । अनाकारोपयोगे तु असकृद्व्याप्ता-  
नाकारोपयोगान् वहून् आश्रित्य प्रथमो भङ्गः, तान् असकृद्व्याप्तानाकारोपयोगान्  
वहून्, सकृद्व्याप्तानाकारोपयोगं चैकमाश्रित्य द्वितीयो भङ्गः, उभयेषामपि असकृ-

कारण उनमें सप्रदेशता और उनकी एक बार बार प्राप्ति होने के कारण  
उनमें अप्रदेशता है ऐसा जानना चाहिये । तथा च-वहुत्वविषयक  
द्वितीय दण्डकमें बारंवार प्राप्त साकार उपयोगवाले अनेक सिद्ध जीवोंको  
आश्रित करके (सप्रदेशाः) ऐसा प्रथम भंग, तथा इन्हीं बारंवार प्राप्त  
साकार उपयोगवाले एक सिद्ध जीव को आश्रित करके " वहवः सप्र-  
देशाः, एकः अप्रदेशश्च ) ऐसा द्वितीय भंग, तथा एक बार प्राप्त साकार  
उपयोगवाले अनेक जीवोंको आश्रित करके ( वहवः सप्रदेशाश्च, वहवः  
अप्रदेशाश्च ) ऐसा तृतीय भंग जानना चाहिये । अनाकार उपयोग द्वारमें  
भी तीन भंग इसी प्रकार से होते हैं-अर्थात्-बारंवार प्राप्त अनाकार-  
उपयोगवाले अनेक जीवोंको आश्रित करके अनाकार उपयोग में प्रथम-  
भंग, तथा इन्हीं बारंवार प्राप्त अनाकार उपयोगवाले अनेक जीवों को  
आश्रित करके और एक बार प्राप्त अनाकार उपयोगवाले एक जीव को

આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં વારંવાર પ્રાપ્ત  
એવા સાકાર ઉપયોગવાળા અनेक सिद्ध जीवोंने अनुलक्षीने ( सप्रदेशाः ) એવા  
પ્રથમ ભંગ બને છે. તથા જેમને વારંવાર સાકાર ઉપયોગની પ્રાપ્તિ થઈ છે  
એવાં અनेક सिद्ध जीवोंने તથા જેને એક જ વાર સાકાર ઉપયોગની પ્રાપ્તિ  
થઈ છે એવા એક सिद्ध जीवोंने अनुलक्षीने બીજા ભંગ આ પ્રમાણે બને છે.  
( वहवः सप्रदेशाः, एकः अप्रदेशश्च ) તથા જેમને એક વાર સાકાર ઉપયોગની  
પ્રાપ્તિ થઈ છે એવા અनेक साकार उपयोगवाला जीवोंने अनुलक्षीने ત્રીજા  
ભંગ આ પ્રમાણે સમજવો-( वहवः सप्रदेशाश्च वहवः अप्रदेशाश्च ) અનાકાર  
ઉપયોગ દ્વારમાં પણ ત્રણ ભંગ એજ પ્રમાણે થાય છે. એટલે કે વારંવાર  
પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળા અनेक जीवोंने अनुलक्षीने અનાકાર ઉપયોગમાં  
પ્રથમ ભંગ, તથા એજ વારંવાર પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળા અनेक जीवोंने  
અને એક વાર પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળા એક जीवोंने अनुलक्षीने બીજા

જીવ-સિદ્ધ્યોર્ભક્ત્યમ્, મનુષ્યેષુ ચ વૃક્ષભક્તાઃ વક્તવ્યાઃ સ્વાગ્રયઃ । તે ચ મદ્માઃ  
 પૂર્વોક્તા એવ વિજ્ઞેયાઃ । ' સાગારોવઉત્ત-અનાગારોવઉત્તેહિં જીવ-અગ્નિદિયવજ્જો-  
 તિયમંગો ' સાકારોપયોગેષુ અનાકારોપયોગેષુ નૈરપિકાદિષુ જીવ-એન્દ્રિયવર્જઃ  
 શ્રિકભક્તઃ, જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્જયિત્વા ચતુર્થદણ્ડકે  
 પૂર્વોક્તાસ્યો મદ્મા વક્તવ્યાઃ । જીવપદે, એકેન્દ્રિયપદેષુ ન ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદે-  
 શાશ્ચ ' इत्येक एव भक्तो वाच्यः, तत्र च साकारोपयोगान् अनाकारोपयोगमपने, अना-  
 कारोपयोगाद् वा साकारोपयोगमपने प्रथमतमये अप्रदेशत्वम्, द्वयादिसमये तु  
 सप्रदेशत्वं बोध्यम् । सिद्धानां तु एकसमयोपयोगित्वेऽपि साकारस्य अनाकारस्य च  
 उपयोगद्वयस्यासक्तम् प्राप्या सप्रदेशत्वं, सकृत्प्राप्या चाप्रदेशत्वं विज्ञेयम्,  
 सिद्धपदमें तीन भंग, तथा मनुष्यों-अयोगी मनुष्यों में छह भंग होते हैं  
 ऐसा समझना चाहिये । ये छह भंग पहिले कह दिये गये हैं । (सागारोवउत्त-  
 अनागारोवउत्तहिं जीवअग्निदियवज्जो तियमंगो ) साकार उपयोगवाले  
 अनाकार उपयोगवाले नैरपिक आदि जीवों में जीवपद और एकेन्द्रिय  
 पृथिव्यादिक पदों को छोड़कर चतुर्व विषयक द्वितीय दण्डक में पूर्वोक्त  
 तीन भंग होते हैं । जीवपद में और एकेन्द्रिय पदों में ( सप्रदेशाश्च  
 अप्रदेशाश्च ) ऐसा एक ही भंग होता है । साकार उपयोग से अनाकार  
 उपयोग में आने में और अनाकार उपयोग से साकार उपयोग में आने  
 में प्रथम समय में अप्रदेशता और द्वितीयादि समयों में सप्रदेशता  
 जानना चाहिये । सिद्धों के यद्यपि एक समयोपयोगिता है, तो भी  
 साकार उपयोग और अनाकार उपयोग की बार बार प्राप्ति होने के

છ લંગ કહ્યા છે, એ જ પ્રમાણે અયોગીના વિષયમાં પણ અહીં સમજવું  
 તે છ લંગ આગળ કહેવામાં આવ્યા છે.

( સાગારોવઉત્ત અનાગારોવઉત્તહિં જીવ અગ્નિદિયવજ્જો તિયમંગો ) જીવપદ  
 અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદો સિવાયના સાકાર ઉપયોગવાળા  
 અને અનાકાર ઉપયોગવાળા નારક આદિ જીવોમાં ચતુર્થ વિષયક બીજા  
 દંડકમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ લંગ થાય છે. જીવપદમાં અને એકેન્દ્રિય પદોમાં  
 ( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) આ એક જ લંગ થાય છે. સાકાર ઉપયોગમાંથી  
 અનાકાર ઉપયોગમાં અને અનાકાર ઉપયોગમાંથી સાકાર ઉપયોગમાં આવવાના  
 પ્રથમ સમયે અપ્રદેશતા અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશતા સમજવી.  
 સિદ્ધોમાં જો કે એક સમયોપયોગિતા છે, છતાં પણ સાકાર ઉપયોગ અને  
 અનાકાર ઉપયોગની વારંવાર પ્રાપ્તિ થવાને કારણે તેમનામાં સપ્રદેશતા અને  
 તેમની એક વારંવાર પ્રાપ્તિ થવાને કારણે અપ્રદેશતા છે, એમ સમજવું. આ



સ્ત્રીવેદક-પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકેષુ જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમજ્ઞઃ પૂર્વોક્તા-  
સ્ત્રયોમજ્ઞાઃ વિજ્ઞેયાઃ । અત્રવેદાત્ વેદાન્તરસંક્રમણે પ્રથમસમયે અપ્રદેશત્વમ્, દ્વિતીયા-  
દિસમયેષુ ચ સપ્રદેશત્વં વિજ્ઞાપ્ય મજ્ઞકત્રયં વિજ્ઞેયમ્ । કિન્ત્વત્ર 'નવરં-નપુંસગવેયે  
અગિદિયેષુ અમંગયં' નવરં વિશેષસ્તુ નપુંસકવેદે એકેન્દ્રિયેષુ અમજ્ઞકમ્ વહૂનાં  
મજ્ઞાનામ્ અભાવઃ, અપિતુ એક એવ મજ્ઞઃ, તથા ચ નપુંસકવેદકદ્વંડકે પૃથિવ્યા-  
દેકેન્દ્રિયેષુ 'સાપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ' इत्येक एव मज्ञो वाच्यः पूर्वोक्तरीत्या ।  
સ્ત્રીવેદકદ્વંડક-પુરુષવેદકદ્વંડકેષુ દેવ-પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્ય-પદાન્યેવ વાચ્યાનિ,  
નપુંસકવેદકદ્વંડકયોસ્તુ દેવવર્જાનિ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્યપદાનિ વક્તવ્યાનિ,  
સિદ્ધપદં ચ ત્રિષ્ણપિ વેદકેષુ ન વક્તવ્યમ્ તત્ર વેદાભાવાત્ । 'અવેયગા જહા અક-

વેદમેં, પુરુષવેદમેં ઓર નપુંસકવેદ દ્વાર મેં જીવાદિક પદોમેં ત્રીન ભંગ  
હેં । જવ એક વેદસે દુસરે વેદમેં સંક્રમણ હોતા હે તવ પ્રથમ સમય મેં  
અપ્રદેશત્વ ઓર દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં સપ્રદેશત્વ સમજ્ઞકર પહિલે કી  
તરહ યહાં ત્રીન ભંગ સમજ્ઞના ચાહિયે । નપુંસક વેદકે દોનોં દ્વંડકોં મેં  
તો એકેન્દ્રિયોં મેં એકહી ભંગ હોતાહેં 'અમંગયં' પદ યહ સમજ્ઞતા હે કિ  
યહાં એકેન્દ્રિયોં મેં અનેક ભંગોં કા હી અભાવ હે-એક મજ્ઞ જો ( સપ્ર-  
દેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) યહ હે દસકા અભાવ નહોં હે । અતઃ યહાં પર એક  
હી ભંગ હે । સ્ત્રીવેદ દ્વંડકોં મેં પુરુષવેદ દ્વંડકોં મેં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ  
ઓર મનુષ્ય ઇન પદોં કા હી પ્રયોગ કરના ચાહિયે, તથા નપુંસક વેદકે  
દોનોં દ્વંડકોં મેં દેવ પદકો છોડકર પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ ઓર મનુષ્ય ઇન  
પદોં કા પ્રયોગ કરના ચાહિયે । સિદ્ધ પદકા પ્રયોગ ત્રીનોં વેદોં મેં સે  
કિસી ભી વેદકે દ્વંડક મેં નહોં કરના ચાહિયે-કયોં કિ ચે વેદરહિત

પુરુષવેદમાં અને નપુંસક-વેદદ્વારમાં જીવાદિક પદોમાં ત્રણ ભંગ છે. જ્યારે  
એક વેદમાંથી બીજા વેદમાં સંક્રમણ થાય છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે અપ્રદેશત્વ  
અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશત્વ સમજીને આગળ જતાવ્યા પ્રમાણેના  
ત્રણ ભંગ સમજવા. નપુંસક વેદકના જન્મે દંડકોમાં તો એકેન્દ્રિયમાં એકજ  
ભંગ થાય છે. (અમંગયં) પદ એ જતાવે છે કે અહીં એકેન્દ્રિયોમાં અનેક  
ભંગો થતા નથી, પણ (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એકજ ભંગ થાય છે.  
સ્ત્રીવેદ દંડકોમાં, અને પુરુષવેદ દંડકોમાં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યો  
આ ત્રણ પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. નપુંસક વેદના જન્મે દંડકોમાં દેવપદને  
જતું કરીને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યોનો જ પ્રયોગ કરવો. સિદ્ધપદનો  
પ્રયોગ ત્રણ વેદોમાંથી એક પણ વેદના દંડકમાં કરવા જોઈએ નહીં, કારણ

ત્માપ્તાનાકારોપયોગાનાં સઠ્ઠપાપ્તાનાકારોપયોગાનામ્ અનેકત્વે તૃતીયો મદ્દોઽ-  
વસેયઃ । ' સવેયગા ય જહા સઠ્ઠસાઈ ' સવેદકામ યથા તત્કાપિનઃ ઉક્તાસ્તથા  
વિજ્ઞેયાઃ, તથા ચ કપાયિણાં ચદ્રુત્વદણ્ડકે જીવાદિપદેષુ મદ્દવચસ્ય, એકેન્દ્રિય-  
પૃથિવ્યાદિષુ મદ્દૈરુસ્ય પ્રતિપાદિતત્વેન અમાતિ સવેદકાનાં ચદ્રુત્વદણ્ડકે જીવાદિ  
પદેષુ પૂર્વોક્તં મદ્દકવચમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ એકો મદ્દો વિજ્ઞાતવ્યઃ । વેદ-  
પ્રતિપન્નાન્ વહન્ શ્રેણિભ્રંગાનન્તરં ચ વેદં પ્રતિપચમાનાન્ એકાદીન્ આશ્રિત્ય મદ્દ-  
વચમવસેયમ્ ' इत्थिवेयग-पुरिसवेयग-नपुंसगवेयगेषु जीवाइओ त्रियभंगो '

આશ્રિત કરકે દ્વિતીય ભંગ, તથા અસકૃત પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળો  
કો એવં સકૃત-એક વાર-પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળો કો અનેકતા મેં  
તૃતીય ભંગ હોતા હે એસા જાનના ચાહિયે । (સવેયગા ય જહા સઠ્ઠસાઈ)  
જેસે સકપાય જીવ કહે ગયે હેં વેસે હી સવેદક જીવ જાનના ચાહિયે  
તથા ચ-કપાયી જીવોં કે ચદ્રુત્વ વિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં જીવાદિક-  
પદોં મેં ત્રીન ભંગ હોતે હેં એસા કહા ગયા હે-સો યહાં પર મી સવેદક  
જીવોં કે ચદ્રુત્વવિષયક દ્વિતીય દણ્ડકમેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન  
ભંગ હોતે હેં-તથા એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક પદોં મેં એક ભંગ હોતા હેં એસા  
સમજના ચાહિયે । યહાં પર સવેદક જીવોં મેં જો ત્રીન ભંગ કહે ગયે હેં સો  
વેદકો પ્રતિપન્ન છુઃ અનેક જીવોં કો આશ્રિત કરકે પ્રથમ ભંગ તથા  
શ્રેણિ સે વ્યુત હોનેકે વાદ વેદકો પ્રતિપચમાન એકાદિ જીવકો આશ્રિત  
કરકે દ્વિતીય ભંગ ઓર તૃતીય ભંગ કહે ગયે હેં એસા જાનના ચાહિયે ।  
( इत्थिवेयग-पुरिसवेयग-नपुंसगवेयगेषु जीवाइओ त्रियभंगो ) સ્ત્રી

ભંગ, તથા વારંવાર પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળાની અને એક વાર પ્રાપ્ત  
અનાકાર ઉપયોગવાળાની અનેકતાને અનુલક્ષીને ત્રીજો ભંગ થાય છે.

( સવેયગા ય જહા સઠ્ઠસાઈ ) સવેદક જીવોનું કથન કપાયયુક્ત જીવોના  
કથન પ્રમાણે જ સમજવું. જેમ કપાયયુક્ત જીવોના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં  
જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. અને એકેન્દ્રિયમાં એક ભંગ સમજવો.  
અહીં સવેદક જીવોમાં જે ત્રણ ભંગ કહ્યા છે તે નીચે પ્રમાણે સમજવા—  
પહેલો ભંગ સવેદક અવસ્થા જેમણે પ્રાપ્ત કરેલી છે એવાં અનેક જીવોને  
અનુલક્ષીને બને છે. શ્રેણિથી બ્રહ્મ થઇને સવેદક અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનારા કેઇક  
જીવને અનુલક્ષીને બીજો ભંગ બને છે, અને એવાં અનેક જીવોને અનુલક્ષીને  
ત્રીજો ભંગ બને છે, એમ સમજવું.

( इत्थिवेयग-पुरिसवेयग-नपुंसगवेयगेषु जीवाइओ त्रियभंगो ) સ્ત્રીવેદમાં



સ્ત્રીવેદક-પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકેષુ જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકભક્તઃ પૂર્વોક્તા-  
સ્ત્રયોભક્તાઃ વિજ્ઞેયાઃ । અત્રવેદાત્ વેદાન્તરસંક્રમણે પ્રથમસમયે અપ્રદેશત્વમ્, દ્વિતીયા-  
દિસમયેષુ ચ સપ્રદેશત્વં વિજ્ઞાપ્ય ભક્તકત્રયં વિજ્ઞેયમ્ । કિન્ત્વત્ર 'નવરં-નપુંસગવેયે  
અગ્નિદિયેસુ અભંગયં' નવરં વિશેષસ્તુ નપુંસકવેદે એકેન્દ્રિયેષુ અભક્તકમ્ વહૂનાં  
ભક્તાનામ્ અભાવઃ, અપિતુ એક એવ ભક્તઃ, તથા ચ નપુંસકવેદકદ્વંડકે પૃથિવ્યા-  
દ્યેકેન્દ્રિયેષુ 'સાપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ' इत्येक एव भक्तो वाच्यः पूर्वोक्तरीत्या ।  
સ્ત્રીવેદકદ્વંડક-પુરુષવેદકદ્વંડકેષુ દેવ-પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્ય-પદાન્યેવ વાચ્યાનિ,  
નપુંસકવેદકદ્વંડકયોસ્તુ દેવવર્જાનિ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્યપદાનિ વક્તવ્યાનિ,  
સિદ્ધપદં ચ ત્રિષ્વપિ વેદકેષુ ન વક્તવ્યમ્ તત્ર વેદાભાગાત્ । 'અવેયગા જહા અક-

વેદમેં, પુરુષવેદમેં ઓર નપુંસકવેદ દ્વાર મેં જીવાદિક પદોમેં ત્રીન ભંગ  
હેં । જય એક વેદસે દૂસરે વેદમેં સંક્રમણ હોતા હે તય પ્રથમ સમય મેં  
અપ્રદેશત્વ ઓર દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં સપ્રદેશત્વ સમજકર પહિલે કી  
તરહ ઘર્યાં ત્રીન ભંગ સમજનાં ચાહિયે । નપુંસક વેદકે દોનોં દ્વંડકોં મેં  
તો એકેન્દ્રિયોં મેં એકહી ભંગ હોતા હે 'અભંગયં' પદ યહ સમજતા હે કિ  
ઘર્યાં એકેન્દ્રિયોં મેં અનેક ભંગોં કા હી અભાવ હે-એક ભક્ત જો ( સપ્ર-  
દેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) યહ હે હસકા અભાવ નહીં હે । અતઃ ઘર્યાં પર એક  
હી ભંગ હે । સ્ત્રીવેદ દ્વંડકોં મેં પુરુષવેદ દ્વંડકોં મેં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્  
ઓર મનુષ્ય હન પદોં કા હી પ્રયોગ કરનાં ચાહિયે, તથા નપુંસક વેદકે  
દોનોં દ્વંડકોં મેં દેવ પદકો છોડકર પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ ઓર મનુષ્ય હન  
પદોં કા પ્રયોગ કરનાં ચાહિયે । સિદ્ધ પદકા પ્રયોગ ત્રીનોં વેદોં મેં સે  
કિસીં ભી વેદકે દ્વંડક મેં નહીં કરનાં ચાહિયે-કયોં કિ ચે વેદરહિત

પુરુષવેદમાં અને નપુંસક-વેદદ્વારમાં જીવાદિક પદોમાં ત્રણ ભંગ છે. જ્યારે  
એક વેદમાંથી બીજા વેદમાં સંક્રમણ થાય છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે અપ્રદેશત્વ  
અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશત્વ સમજીને આગળ બતાવ્યા પ્રમાણેના  
ત્રણ ભંગ સમજવા. નપુંસક વેદકના બંને દ્વંડકોમાં તો એકેન્દ્રિયમાં એકજ  
ભંગ થાય છે. (અભંગયં) પદ એ બતાવે છે કે અહીં એકેન્દ્રિયોમાં અનેક  
ભંગો થતા નથી, પણ (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એકજ ભંગ થાય છે.  
સ્ત્રીવેદ દ્વંડકોમાં, અને પુરુષવેદ દ્વંડકોમાં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ અને મનુષ્યો  
આ ત્રણ પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. નપુંસક વેદના બંને દ્વંડકોમાં દેવપદને  
જતું કરીને પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ અને મનુષ્યોનો જ પ્રયોગ કરવો. સિદ્ધપદનો  
પ્રયોગ ત્રણ વેદોમાંથી એક પણ વેદના દ્વંડકમાં કરવા બોધ્યો નહીં, કારણ

સાઈ ' અવેદકતા યથા અરુપાગિનસ્તથા વક્તવ્યાઃ, एवं च अरुपागिणां जीव-  
मनुष्यसिद्धपदेषु भद्रवयस्य परिपादितत्वेन अवेदकानामपि बहुत्वदण्डके जीव-  
मनुष्य-सिद्धपदेष्वेव भद्रवयं पूर्वोक्तं वक्तव्यम् । ' सत्તરીरी जहा ओहिओ ' शरीरी  
यथा औचितः सामान्यजीवः परिपादितस्तथा विशेषः, तथा च औचित्यदण्डक-  
वत् सरीरिणाम् एकत्वबहुत्वदण्डकयोः जीवपदे तपदेशना एव वक्तव्या, नत्व-  
प्रदेशता, सशरीरित्वस्यानादित्वात्, नैरयिक्तादिषु तु बहुत्वदण्डके भद्रवयम्,  
एकेन्द्रियपृथिव्यादिषु केवलं तृतीयो भद्रः । ' ओरास्त्रिय-वेउन्विय-सरीराणं  
जीव-एगिदियवज्जो तियभंगो ' औदारिक-वैक्रियशरीरेषु जीवैकेन्द्रियवर्जः जीव-  
पदम् एकेन्द्रियपृथिव्यादिषु दानि वर्जयित्वा त्रिकभद्रः, पूर्वोक्ताद्ययोभद्राः वाच्याः,  
तथा च औदारिक-वैक्रिय-सशरीरिणां बहुत्वदण्डके जीवपदे, एकेन्द्रियपृथिव्या-  
दिपदेषु च केवलम् 'सप्रदेशाथ अप्रदेशाथ' इति तृतीय एव भद्रो विशेषः, तेषु

होते हैं । ( अवेदकता जहा अकसाई ) जीव मनुष्य और सिद्ध इन तीन  
पदों में ही अवेदकता का आश्रय करके अरुपाववाले जीवों की तरह  
तीन भंग होते हैं । 'सत्तरीरी जहा ओहिओ' सामान्य जीव दण्डककी तरह  
सशरीरी के दोनों दण्डकोंमें जीव पदमें सप्रदेशकताका ही कथन करना  
चाहिये, अप्रदेशता का नहीं—क्यों कि सशरीरता अनादि काल से है ।  
नैरयिक आदिकों में तो बहुत्वविषयक द्वितीय दण्डक में तीन भद्र होते  
हैं । तथा एकेन्द्रिय पृथिव्यादिकों में केवल तीसरा भंग होता है । (ओरा-  
स्त्रिय-वेउन्विय सरीराणां जीव एगिदियवज्जो तियभंगो ) औदारिक  
शरीरवालों में वैक्रिय शरीरवालों में जीव पद और एकेन्द्रिय को छोड़  
कर पूर्वोक्त तीन भंग होते हैं । तथा च—औदारिक और वैक्रिय शरीर  
वाले जीवों के बहुत्व दण्डकमें और एकेन्द्रिय पृथिव्यादिक पदोंमें केवल

કે સિદ્ધો વેદરહિત હોય છે. ( અવેચકતા જહા અકસાઈ ) જીવ, મનુષ્ય અને  
સિદ્ધ આ ત્રણ પદોમાં જ અવેદકતાને અનુસક્ષીને અરુપાવવાળા જીવોની જેમ  
ત્રણ ભંગ થાય છે.

( સત્તરીરી જહા ઓહિઓ ) સામાન્ય જીવ દંડકની જેમ સશરીરીના બન્ને  
દંડકોમાં જીવપદમાં સપ્રદેશતાનું જ કથન કરવું જોઈએ, અપ્રદેશતાનું કથન  
કરવું જોઈએ નહીં, કારણ કે સશરીરતા અનાદિ કાળથી હોય છે. નારક  
આદિમાં તો બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. પણ પૃથ્વીકાય  
આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં તો માત્ર ત્રીજો ભંગ જ થાય છે. ( ઓરાસ્ત્રિય-વેઉ-  
ન્વિય સરીરાણાં જીવ એગિદિયવજ્જો તિયભંગો ) ઔદારિક શરીરવાળામાં અને  
વૈક્રિય શરીરવાળામાં જીવપદ અને એકેન્દ્રિયને છોડીને પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય  
છે. ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરવાળા જીવોના બહુત્વ દંડકમાં જીવપદમાં તથા

વહુનામેવ પ્રતિક્ષણં પ્રતિપન્નાનાં પ્રતિપદ્યમાનાનાં ચોપલમ્ભાત્, શોષેષુ મનુષ્યા-  
વિષુ પૂર્વોક્તં મદ્ગત્યમવસેયમ્, તેષુ વહુનાં પ્રતિપન્નાનામ્, ઔદારિક-વૈક્રિય-  
પરિત્યાગેત ઔદારિકં વૈક્રિયં ચ પ્રતિપદ્યમાનાનામ્ એકાદીનાં સદ્ભાવાત્,  
કિન્ત્વત્ર ઔદારિકૈકત્વવહુત્વદણ્ડકયોઃ નૈરયિકાઃ દેવાશ્ચ ન વક્તવ્યાઃ,  
વૈક્રિયદણ્ડકયોઃ પૃથિવ્યમેત્તેજોવનસ્પતિ-વિકલેન્દ્રિયાઃ ન વક્તવ્યાઃ, અત્ર વૈક્રિય-  
દણ્ડકે એકેન્દ્રિયપદે તૃતીયમદ્ગત્યને કથં ન વિરોધઃ? इति चेदाह-असंख्यातानां

( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) એસા એક તીસરા હી ભંગ હોતા હૈ । ક્યોં  
કિ ઉનમેં પ્રતિક્ષણ પ્રતિપન્ન ઓર અપ્રતિપદ્યમાન અનેક જીવોં કી પ્રાપ્તિ  
હોતી હૈ । શોષ મનુષ્યાદિકોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । ક્યોં કિ  
હનમેં અનેક પ્રતિપન્ન જીવોં કા ઓર ઔદારિક વૈક્રિય શરીર કો છોડ  
કર પુનઃ ઔદારિક ઓર વૈક્રિય શરીર કો પાનેવાલે એકાદિ જીવ કા  
સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । યહાં ઔદારિક કે એકત્વ ઓર વહુત્વ દણ્ડક  
મેં નૈરયિક ઓર દેવ હન પદોં કા પ્રયોગ નહીં કરના ચાહિયે-ક્યોં કિ  
હનકો ઔદારિક શરીર નહીં હોતા હૈ । વૈક્રિય કે દોનોં દણ્ડકોંમેં પૃથિવી  
અપ્, તેજ, વનસ્પતિ ઓર વિકલેન્દ્રિય હન પદોં કા પ્રયોગ નહીં કરના  
ચાહિયે-ક્યોંકિ હન જીવોંકો વૈક્રિય શરીર નહીં હોતા હૈ । યહાં એસી આશં-  
કા નહીં કરની ચાહિયે કિ-વૈક્રિયદણ્ડક મેં એકેન્દ્રિય પદ મેં જો આપને  
તીસરા ભંગ કહા હૈ સો ઉસમેં વિરોધ ક્યોં નહીં આવેગા ? નહીં આવેગા

પાંચે એકેન્દ્રિય પદોમાં ( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) આ એક જ ભંગ ( ત્રીજો  
ભંગ ) થાય છે. કારણ કે તેમાં પ્રત્યેક ક્ષણે પ્રતિપન્ન ( પૂર્વોત્પન્ન ) અને  
પ્રતિપદ્યમાન અનેક જીવોની પ્રાપ્તિ થતી હોય છે. એ સિવાયના મનુષ્ય  
આદિ જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે, કારણ કે તેમનામાં અનેક પૂર્વોત્પન્ન જીવોનો  
અને ઔદારિક કે વૈક્રિય શરીરનો પરિત્યાગ કરીને ફરીથી ઔદારિક કે વૈક્રિય  
શરીર પ્રાપ્ત કરનાર કોઈક ( એકાદિ ) જીવનો સદ્ભાવ રહે છે. અહીં  
ઔદારિકના એકત્વ અને બહુત્વ દંડકમાં નારક અને દેવનો પ્રયોગ થતો નથી,  
કારણ કે તેમને ઔદારિક શરીર હોતું નથી. વૈક્રિયના બન્ને દંડકોમાં પૃથ્વી-  
કાય, અપકાય, તેજસ્કાય, વનસ્પતિકાય અને વિકલેન્દ્રિયનો પ્રયોગ કરવો  
નહીં, કારણ કે તે જીવોને વૈક્રિય શરીર હોતું નથી. અહીં એવી આશંકા  
કરવી જોઈએ નહીં કે વૈક્રિય એકેન્દ્રિય જીવોને આપે ત્રીજો ભંગ લાગુ પડયો  
છે. તો શું અહીં વિરોધાભાસ લાગતો નથી ? આ શંકાનું સમાધાન નીચે



ઘ જીવૈકેન્દ્રિયવર્ગઃ જીવપદમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્મણિયા મનુષ્યા-  
દિપુ ત્રિકભક્તઃ, પૂર્વોક્તાસ્યયોગદ્વા વક્તવ્યાઃ. જીવપદે, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ તુ  
બહુનામ્ આહાર-શરીરે-ન્દ્રિયા-ડડનમાણપર્યાપ્તીઃ પ્રતિપદ્માનાં, બહુનામેવ ચ આહાર-  
પર્યાપ્તિપરિત્યગેન આહારાદિપર્યાપ્તિમિઃ પર્યાપ્તિભાવં પ્રતિપદ્માનાનાં સદ્ભાવાત્  
'વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ' ઇતિ તૃતીયો મદ્ગ એવ વક્તવ્યઃ, ઇત્યાશ્ચયઃ.

'ભાસા-મણપજ્જતીણ જહા સત્તી' ભાપામનસોઃ પર્યાપ્તિઃ ભાપામનઃપર્યા-  
પ્તિસ્તસ્સ્યામ્ બહુશ્રુતાભિપ્રત્યક્તવાદેકત્વં વિવક્ષિતમ્ ભાપા-મનઃપર્યાપ્તિયોરિત્યર્થઃ  
પર્યાપ્તિમન્તો જીવાઃ યથાતંક્ષિનઃ પૂર્વ પ્રતિપાદિતાસ્તથા સપ્રદેશસ્વાદિના વક્તવ્યાઃ.

એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિકપદો મેં છોડકર મનુષ્યાદિકોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ  
હોતે હેં. જીવપદ મેં એવં એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિક પદોં મેં તો અનેક જીવોં  
કા જો કિ આહાર, શરીર, હન્દ્રિય ઓર શ્વાસોચ્છવાસ હન પર્યાપ્તિયોં  
કો પહિલે સે હી પ્રતિપદ્મા કિયે હુણ હોતે હેં સદ્ભાવ રહતા હૈ, તથા આહાર-  
પર્યાપ્તિ અપર્યાપ્તિ ભાવ કે પરિત્યાગ સે આહારાદિ પર્યાપ્તિયોં સે જો પર્યા-  
પ્તિભાવ કો પ્રતિપદ્માના હોતે હેં એસે મી અનેક જીવોં કા સદ્ભાવ  
રહતા હૈ-હસ કારણ "વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ" યહાં  
એસા એક ત્રીસરા હી ભંગ હોતા હૈ. તથા બાકી કે અન્ય જીવોં મેં ત્રીન  
ભંગ હોતે હેં. (ભાસામણપજ્જતીણ જહા સત્તી) ભાપા ઓર મન કી  
જો પર્યાપ્તિ હૈ વહ ભાપામનઃપર્યાપ્તિ હૈ. ભાપાપર્યાપ્તિ ઓર મનઃપર્યાપ્તિ  
હસ પ્રકાર કી યે દો પર્યાપ્તિયાં અલગ ૨ હેં-ફિર મી જો યહાં ઉન્હે  
એકરૂપ જૈસા વિવક્ષિત કિયા ગયા હૈ ઉસકા કારણ બહુ શ્રુતજનોં કો

પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોને છોડીને બાકીના મનુષ્ય આદિકોમાં  
પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. જીવપદમાં અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિક  
પદોમાં તો આહાર, શરીર, હન્દ્રિય અને શ્વાસોચ્છવાસ આ પર્યાપ્તિઓને  
પહેલેથી જ પ્રાપ્ત કરી હોય એવાં અનેક જીવોનો સદ્ભાવ રહે છે, તથા  
આહારાદિ અપર્યાપ્તિક અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને આહારાદિ પર્યાપ્તિક અવસ્થામાં  
આવતા હોય એવાં અનેક જીવોનો પણ સદ્ભાવ રહે છે, તે કારણે (વહવઃ  
સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) અહીં આ એક ત્રીજો ભંગ જ થાય છે, અને  
બાકીના જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (ભાસામણ પજ્જતીણ જહા સત્તી) ભાપા  
અને મનની જે પર્યાપ્તિ છે તેને ભાપામન પર્યાપ્તિ કહે છે. ભાપા પર્યાપ્તિ અને  
મન પર્યાપ્તિ, એ બન્ને જુદી જુદી પર્યાપ્તિઓ છે, છતાં પણ અહીં તેમને  
એકરૂપ જેવી અવસ્થામાં આવી છે, તેનું કારણ એ છે કે બ્રહ્મા વિદ્વાનોએ

તથા ચ સંજ્ઞિનાં જીવાદિપુ મદ્વત્રયસ્યોક્તત્વેન અત્રાપિ સર્વપદેષુ મદ્વત્રયં વક્તવ્યમ્, પંચેન્દ્રિયપદાન્યેવાત્ર વક્તવ્યાનિ, અન્યેષાં મિશ્રિતભાવામનઃપર્યાપ્તિવિરહાત્ । ‘આહાર અપજ્જન્તીઃ જહા અનાહારગા’ આહારાપર્યાપ્તૌ યથા અનાહારકા ઉક્તા-સ્તથા વક્તવ્યાઃ; તથા ચ-અનાહારકેષુ જીવૈકેન્દ્રિયવર્જિતેષુ મદ્વપદ્મકસ્યોક્તત્વેના-ત્રાપિ પદ્ મદ્વા મણિતવ્યાઃ, આહારપર્યાપ્તિમતામલ્પત્વાત્ । જીવૈકેન્દ્રિયેષુ ચ મદ્વકસ્યોક્તત્વેન જીવપદે, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ ચ ‘સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ’ इत्येकं एव तृतीयो मद्, सततं विग्रहगतिमताम् आहारपर्याप्तिमतां वहूनां सद्-

હનમેં એકત્વ માન્ય છે । ભાવાપર્યાપ્તિ ઓર મનઃ પર્યાપ્તિ સે પર્યાપ્તિ હુએ જીવ સંજ્ઞી જીવોં કી तरह સપ્રદેશત્વ આદિ રૂપ સે કહે ગયે હેં । ऐसा जानना चाहिये । तथा-संज्ञी जीवों की तरह समस्त पदों में तीन भंग होते हैं । यहां पर पञ्चेन्द्रिय पदों का ही प्रयोग करना चाहिये । क्योंकि अन्य जीवों को मिश्रित भावामनः पर्याप्ति का अभाव रहता है । “आहार अपज्जन्तीः जहा अनाहारगा” जिस तरह से अनाहारक जीव कहे गये हैं उसी प्रकार से आहार अपर्याप्ति में भी जानना चाहिये-जीव और एकेन्द्रियवर्जित अनाहारकों में छह भंग कहे गये हैं, सो यहां पर भी छह भंग कहना चाहिये-क्यों कि आहारक पर्याप्ति वाले जीव अल्प होते हैं । जीवपद में और एकेन्द्रियपृथिवी आदिकपदों में “संप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च” ऐसा एक तीसरा ही भंग होता है । क्योंकि आहार अपर्याप्तिवाले विग्रहगत्यापन्न जीव निरन्तर अनेक मिलते

તેમના એકત્વને માન્ય કરેલું છે. ભાવા પર્યાપ્તિ અને મનઃપર્યાપ્તિની પર્યાપ્તિ થયેલા જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું કથન સંજ્ઞી જીવોના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. અહીં પણ સંજ્ઞી જીવોની જેમ સમસ્ત પદોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. આ બંને પર્યાપ્તિઓના ઠંડકોમાં પંચેન્દ્રિય પદોનો જ પ્રયોગ કરવો, કારણ કે તે સિવાયના જીવોમાં મિશ્રિત ભાવામન પર્યાપ્તિનો અભાવ હોય છે.

( આહાર અપજ્જન્તીઃ જહા અનાહારગા ) અનાહારક જીવોના કથન પ્રમાણે જે આહાર અપર્યાપ્તિવાળા જીવોનું કથન સમજવું. જીવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના અનાહારકોમાં છ ભંગ કહ્યા છે, તે અહીં પણ છ ભંગ સમજવા, કારણ કે આહાર પર્યાપ્તિવાળા જીવો ઓછાં હોય છે. જીવપદમાં એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિકોમાં ( સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ) આ એક જ ( ત્રીજો ભંગ ) ભંગ થાય છે. તેનું કારણ એ છે કે આહાર અપર્યાપ્તિવાળા વિગ્રહગતિ પ્રાપ્ત કરી હોય એવા જીવો નિરન્તર અનેક મળી શકે છે.



ભાવાત્ । ' સરીરઅપજ્જત્તીણ, ઇન્દિય-અપજ્જત્તીણ, આજ-પાજ-અપજ્જત્તીણ  
 જીવ ઇગ્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો ' શરીરઅપર્યાસી, ઇન્દ્રિયાઅપર્યાસી આત્માનાઅપર્યાસી  
 જીવેકેન્દ્રિયવર્ગઃ જીવપદમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્ગયિત્વા અન્યેષુ  
 પદેષુ ત્રિકભજ્ઞઃ પૂર્વોક્તાઘ્યો મજ્ઞાઃ, શરીરેન્દ્રિયાત્માનાઅપર્યાસિતાનાં કાન્ધા-  
 પેક્ષયા સપ્રદેશાનાં સર્વદેવ લાભાત્, અપ્રદેશાનાં ચ કદાચિત્ પદ્માદીનાં લાભાત્ ।  
 જીવપદે એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષ્વત્ર તૃતીયો મજ્ઞઃ, કિન્તુ- ' નેરહય-દેવ-મણુ-  
 ઇહિં છબ્બંગા ' નૈરયિક-દેવ-મનુજેષુ પૂર્વોક્તાઃ પડ્નજ્ઞાઃ । ' માસા-મણ-અપજ્જત્તી-  
 ણ જીવાહો તિયમંગો ' ભાવા-મનોઅપર્યાસી જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકભજ્ઞઃ  
 પૂર્વોક્તાઘ્યો મજ્ઞાઃ વક્તવ્યાઃ, તથા ચ-જીવે, પંચેન્દ્રિયતિર્યચ્ચુ ચ વહુનાં ભાવા-

હૈં । ( સરીરઅપજ્જત્તીણ, ઇન્દિય અપજ્જત્તીણ, આજપાજ અપજ્જત્તીણ  
 જીવ-ઇગ્ગિદિયવજ્જો ) જીવપદ ઓર એકેન્દ્રિયપદોં કો છોડકર શરીર  
 અપર્યાસિ મેં, ઇન્દ્રિય અપર્યાસિ મેં, શ્વાસોચ્છ્વાસ અપર્યાસિ મેં, અન્ય-  
 પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । કારણ કિ શરીર, ઇન્દ્રિય ઓર  
 શ્વાસોચ્છ્વાસ સે અપર્યાસિ અવસ્થાવાલે જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્ર-  
 દેશ સર્વદા મિલતે હૈં ઓર અપ્રદેશ કદાચિત્ પદ્માદિ મિલતા હૈં । જીવ  
 પદ મેં ઓર એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિક પદોં મેં યહાં એક ત્રીસરા હી ભંગ હૈં ।  
 કિન્તુ ( નેરહય-દેવ-મણુઇહિં છબ્બંગા ) નૈરયિક જીવોં મેં, દેવોં મેં ઓર  
 મનુષ્યોં મેં છહ ભંગ હોતે હૈં । ( માસા-મણ-અપજ્જત્તીણ જીવાહો  
 તિયમંગો ) ભવાઅપર્યાસિ ઓર મનઃ પર્યાસિ સે અપર્યાસ દ્વાર મેં જીવા-  
 દિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । તથા ચ-જીવ ઓર પંચેન્દ્રિય  
 તિર્યચોં મેં ભાવા ઓર મન કી અપર્યાસિ કો પ્રતિપન્ન હુણે અનેકજીવોંકાં

( સરીર અપજ્જત્તીણ, ઇન્દિય અપજ્જત્તીણ, આજપાજ અપજ્જત્તીણ, જીવ  
 ઇગ્ગિદિયવજ્જો ) જીવપદ અને એકેન્દ્રિય પદોં ત્રિવાચના શરીર અપર્યાસિવાળા,  
 ઇન્દ્રિય અપર્યાસિવાળા અને શ્વાસોચ્છ્વાસ અપર્યાસિવાળા બાકીના પદોંમાં  
 પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે શરીર, ઇન્દ્રિય અને શ્વાસોચ્છ્વાસમાં  
 અપર્યાસિ અવસ્થાવાળા જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ સદા મળી શકે છે  
 અને અપ્રદેશ ક્યારેક એકાદ જ ન મળી શકે છે. જીવપદમાં અને એકેન્દ્રિય  
 પદોંમાં અહીં ત્રીજો ભંગ ન થાય છે. પરન્તુ ( નેરહય, દેવ, મણુઇહિં છબ્બંગા )  
 નારકોમાં, દેવોમાં અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે.

( માસા-મણ-અપજ્જત્તીણ જીવાહો તિયમંગો ) ભાવામન અપર્યાસિ દ્વારમાં  
 જીવાદિક પદોંમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ભાવા

મનોઽપર્યાપ્તિપ્રતિપન્નાનામ્ તાદૃશાપર્યાપ્તિ પ્રતિપચ્ચમાનાનાં ચૈકાદીનાં સદ્ભાવાત્  
પૂર્વોક્તમેવ ભક્તવચનમવસેયમ્, કિન્તુ-‘ નૈરયિક-દેવ-મનુષ્ય છન્નંગા ’ નૈરયિક-  
દેવ-મનુજેષુ મનોઽપર્યાપ્તિકેષુ પૂર્વોક્તાઃ પઙ્ મહાઃ વક્તવ્યાઃ, તથા ચ નૈરયિક-  
દેવ-મનુષ્યેષુ મનોઽપર્યાપ્તિકાનામ્ અલ્પતરત્વેન સપ્રદેશાનામ્ અપ્રદેશાનાં ચૈકાદીનાં  
સદ્ભાવાત્ । એયુ ચ પર્યાપ્ત્યપર્યાપ્તિરૂપકેષુ સિદ્ધો ન વાચ્યઃ, તસ્મૈ તદસંભવાત્ ।

‘ સંગ્રહગાથા ’ ઉપર્યુક્તાનાં દ્વાદશાનામપિ સપ્રદેશાદિદ્વારાણાં વિષયે સંગ્રહ-  
ગાથા વર્ત્તે । તામેવાહ—

‘ સપણસા, આહારગ-ભવિય-તન્નિ-હેતા-દિદ્ધિ-સંજય-કસાણ ।

ળાળે જોગુ-વઝોમે, વેય સરીસ્ત-પજત્તી ॥ ૧ ॥ ’

‘ સપ્રદેશાઃ ’ કાઝાપેક્ષયા જીવાઃ સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ એકત્વ વહુત્વદણ્ડ-  
કામ્યાં પ્રતિપાદિતાઃ, ‘ આહારકાઃ ’ ‘ અનાહારકાથ તથૈવ ’ ‘ મન્યાઃ ’

ઔર भाषा एवं मन की अपर्याप्ति को प्रतिपचमान होरहे कोई एकादिजीव  
पाये जाने के कारण पूर्वोक्त तीन भंग ही यहां होते हैं ऐसा जानना चाहिये  
तथा मनोऽपर्याप्तिवाले नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग होते हैं ।  
कारण नैरयिक, देव और मनुष्यों में मनोऽपर्याप्तिवालों की अल्पतरता  
होने से एकादि सप्रदेशों का, और एकादि अप्रदेशोंका सद्भाव रहता  
है इस कारण छह भंग कहे गये हैं । इन पर्याप्ति और अपर्याप्ति के  
दण्डकों में सिद्ध पदका प्रयोग नहीं करना चाहिये क्यों कि ये न पर्याप्ति  
होते हैं और न अपर्याप्ति होते हैं । उपर्युक्त इन सप्रदेशादि द्वारों के  
विषयमें यह (सपणसा आहारा०) इत्यादि संग्रह गाथा है—इसके द्वारा इस  
प्रकरण में आये हुए विषयों को संग्रह करके प्रकट किया गया है—

અને મનની અપર્યાપ્તિને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય એવા કેાઈક એકાદ જીવનો  
સદ્ભાવ હોવાને કારણે અહીં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, એમ સમજવું.  
તથા મનઃ અપર્યાપ્તિવાળા નારકો, દેવો અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે.  
તેનું કારણ એ છે કે નારક દેવ અને મનુષ્યોમાં મનઃ અપર્યાપ્તિવાળાની  
અલ્પતરતા હોવાથી એકાદ સપ્રદેશોનો અને એકાદ અપ્રદેશોનો સદ્ભાવ રહે  
છે. તેથી તેમના છ ભંગ કહ્યા છે. આ પર્યાપ્તિ અને અપર્યાપ્તિના ઢંડકોમાં  
સિદ્ધપદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં, કારણ કે તેઓ પર્યાપ્તિ પણ હોતા  
નથી અને અપર્યાપ્તિ પણ હોતા નથી.

ઉપર જેમનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે તે બાર સપ્રદેશ આદિ  
દ્વારોના વિષયમાં (સપણસા આહારા०). ઇત્યાદિ સંગ્રહગાથા આપી છે. તે ગાથા  
દ્વારા આ પ્રકરણમાં આવેલા વિષયોનો સંગ્રહ કરીને પ્રકટ કરવામાં આવેલ

‘ અભવ્યાઃ ’ તદુભવનિપેયાત તથૈવ, ‘ સંશ્ચિનઃ ’ ‘ પ્રસંશ્ચિનઃ ’ ‘ નો સશ્ચિ-નો  
અસંશ્ચિનથ તથૈવ, ‘ સહેશ્યાઃ ’ કૃષ્ણાદિપ્રલેશ્યાઃ, ‘ અલેશ્યાઃ ’ તથૈવ,  
‘ દષ્ટિઃ ’ સમ્યગ્દષ્ટિઃ, મિથ્યાદષ્ટિઃ, મિશ્રદષ્ટિઃ તથૈવ, ‘ સંયતાઃ ’ અસંયતોઃ,  
સંયતોસંયતાઃ, નોસંયત-નોભસંયત-નોસંયતોસંયતાથ તથૈવ, ‘ કપાયિણઃ ’  
ક્રોધ-માન-માયા-લોભકપાયિણઃ, અક્ષપાયિણથ તથૈવ, ‘ જ્ઞાનિનઃ ’ મતિ-

( સપરસા ) હસ પ્રકરણમેં કાલ કી અપેક્ષાસે જીવ સપ્રદેશ મી હેં ઓર  
અપ્રદેશ મી હેં યહ યાત એકત્વ ઓર બહુત્વ દળકોં દ્વારા પ્રતિપાદિત કી  
ગઈ હૈ । ( આહારગ ) હસ પ્રકરણમેં આહારક જીવ ઓર અનાહારક જીવ  
સપ્રદેશ મી હેં ઓર અપ્રદેશ મી હેં યહ યાત એકત્વ બહુત્વ દળકોં દ્વારા  
પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ । ભવ્ય જીવ, અભવ્ય જીવ, તથા નો ભવ્ય નો  
અભવ્યજીવ પ્રકરણમેં ભવ્ય જીવ, અભવ્ય જીવ તથા નો ભવ્ય નો અભવ્ય  
જીવ મી હસી તરહ સે હેં યહ યાત પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ, સંજી અસંજી  
તથા નો સંજી નો અસંજી પ્રકરણ મેં સંજી જીવ અસંજી જીવ ઓર નો  
સંજી નો અસંજી જીવ મી હસી તરહ સે હેં યહ યાત પ્રતિપાદિત કી ગઈ  
કૃષ્ણાદિ છંદ લેશ્યાવાલેં જીવ ઓર લેશ્યાઓં સેં રહિત હુએ જીવ મી  
હસી તરહ સેં હેં, સમ્યગ્દષ્ટિ, મિથ્યાદષ્ટિ ઓર મિશ્ર દષ્ટિવાલે જીવ  
મી હસી તરહ સેં હેં, સંયત જીવ, અસંયત જીવ, સંયતોસંયત જીવ

છે-(સપરસા) આ પ્રકરણમાં કાળની અપેક્ષાએ જીવ સપ્રદેશ પણ છે અને  
અપ્રદેશ પણ છે એ વાતનું એકત્વ અને બહુત્વ ઠંડકો દ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં  
આવ્યું છે. ( આહારગ ) આ પ્રકરણમાં આહારક જીવ અને અનાહારક જીવ  
સપ્રદેશ પણ છે અને અપ્રદેશ પણ છે એ વાતનું એકત્વ અને બહુત્વ ઠંડકો  
દ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. ( ભવિય ) આ પ્રકરણમાં ભવ્ય જીવ  
અભવ્ય જીવ, નો ભવ્ય જીવ અને નો અભવ્ય જીવો પણ એવાં જ છે એવું  
પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

( સંજી ) આ પ્રકરણમાં સંજી, અસંજી, નો સંજી અને નો અસંજી  
જીવો પણ એવાં જ છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

( લેશ્યા ) કૃષ્ણાદિ છ લેશ્યાવાળા જીવો અને લેશ્યાઓથી રહિત જીવો  
પણ એવાં જ છે, એવું આ પ્રકરણમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

( દિટ્ટી ) આ પ્રકરણમાં સમ્યગ્દષ્ટિ, મિથ્યાદષ્ટિ અને મિશ્ર દષ્ટિવાળા  
જીવો પણ એવાં જ છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરાયું છે.

( સંયત ) આ પ્રકરણમાં સંયત, અસંયત, સંયતોસંયત, નો સંયત,



અવધિ-મનઃ પર્યવકેવલજ્ઞાનિનઃ, અજ્ઞાનિનો મત્યાઘજ્ઞાનિનશ્ચ તથૈવ, 'સયોગાઃ' મનોવચ્ચકાયયોગિનઃ, અયોગિનશ્ચ તથૈવ, 'ઉપયોગાઃ' સાકારાઽનાકારોપયોગાશ્ચ તથૈવ, 'સવેદાઃ' સ્ત્રીપુરુષનપુંસકવેદવન્તઃ, અવેદાશ્ચ તથૈવ, 'સશરીરાઃ' ઔદારિક-વૈક્રિયશરીરવન્તઃ, અશરીરાશ્ચ તથૈવ, 'પર્યાપ્તાઃ' આહારશરીરેન્દ્રિયાનપ્રાણ-ભાષા-મનઃપર્યાપ્તિમન્તશ્ચ તથૈવ સપ્રદેશપ્રદેશતયોક્તા ઇતિ ॥ સુ૦ ૧ ॥

તથા નો સંયત નો અસંયત જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ કપાયવાલે જીવ ઓર અકપાયી જીવ મી ઇસી તરહસે હૈં, મતિ જ્ઞાનવાલે, શ્રુત જ્ઞાનવાલે, અવધિ જ્ઞાનવાલે, મનઃપર્યય જ્ઞાનવાલે ઓર કેવલજ્ઞાનવાલે જીવ તથા મતિ આદિ અજ્ઞાનવાલે જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, સયોગ-મન, વચન ઇવં કાય ઇન ત્રીન યોગવાલે જીવ ઓર અયોગી જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, સાકાર ઉપયોગવાલે ઓર અનાકાર ઉપયોગવાલે જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, સ્ત્રીવેદવાલે, પુરુષવેદવાલે, નપુંસક વેદવાલે જીવ ઓર વેદ સે રહિત હુએ જીવ મી ઇસી તરહસે હૈં, ઔદારિક, વૈક્રિય શરીરવાલે જીવ તથા શરીરરહિત હુએ જીવ, મી ઇસી તરહ સે હૈં । આહાર, શરીર ઇન્દ્રિય ઓર શ્વાસોચ્છ્વાસ ઇવં ભાષા મનઃ પર્યાપ્તિ વાલે જીવ ઓર પર્યાપ્તિયોં સે રહિત હુએ જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં.

નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત જીવો પણ એવાં જ છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

( કસાયા ) આ પ્રકરણમાં ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ કપાયવાળા અને અકપાયી જીવોનું પણ એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

( જાણે ) આ પ્રકરણમાં મતિજ્ઞાનવાળા, શ્રુતજ્ઞાનવાળા, અવધિજ્ઞાનવાળા, મનઃપર્યાય જ્ઞાનવાળા અને કેવલજ્ઞાનવાળા તથા મિતિ આદિ અજ્ઞાનોવાળા જીવોનું એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

( જોગુવઓ ) આ પ્રકરણમાં મન, વચન અને કાયના યોગવાળા સયોગી જીવોનું તથા અયોગી જીવોનું એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરાયું છે. સાકાર ઉપયોગવાળા અને નિરાકાર ઉપયોગવાળા જીવોનું પણ એજ પ્રમાણે તેમાં પ્રતિપાદન કરાયું છે.

( વેદેય ) સ્ત્રી વેદવાળા, પુરુષ વેદવાળા અને નપુંસક વેદવાળા જીવોનું તથા અવેદક જીવોનું આ પ્રકરણમાં એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

( સરીર પઞ્જર્ત્ત ) ઔદારિક આદિ સશરીરી જીવોનું તથા અશરીરી જીવોનું તથા આહાર, શરીર, ઇન્દ્રિય, શ્વાસોચ્છ્વાસ અને ભાષામન પર્યાપ્તિ-

॥ પ્રત્યાહ્યાનાદિવક્તવ્યતા ॥

જીવાધિકારાત્ તેષાં પ્રત્યાહ્યાનાદિકં નિરૂપયિતુમાદ-‘જીવાણં ભંતે’  
इत्यादि ।

મૂલમ્-જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચક્ખાણી,  
પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી ? ગોયમા ! જીવા પચ્ચક્ખાણી  
વિ, અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી વિ ।  
સઘ્વજીવાણં એવં પુચ્છા ? ગોયમા ! નેરહયા અપચ્ચક્ખાણી,  
જાવ-ચરિંદિયા, સેસા દો પહિસેહેયઢ્વા । પંચિદિય  
તિરિક્ખજોણિયા ણો પચ્ચક્ખાણી અપચ્ચક્ખાણી વિ,  
પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી વિ । નણૂસા તિણિ વિ । સેસા  
જહા-નેરહયા । જીવા ણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણં જાણંતિ,  
અપચ્ચક્ખાણં જાણંતિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણં જાણંતિ ?  
ગોયમા ! જે પંચિદિયા તે તિન્નિ વિ જાણંતિ । અવસેસા  
પચ્ચક્ખાણં ન જાણંતિ । જીવા ણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણં  
કુઠ્ઠંતિ, અપચ્ચક્ખાણં કુઠ્ઠંતિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણં  
કુઠ્ઠંતિ ? જહા-ઓહિયા તહા કુઠ્ઠણા । જીવાણં ભંતે !  
કિં પચ્ચક્ખાણનિઠ્ઠત્તિયાઉયા, અપચ્ચક્ખાણનિઠ્ઠત્તિયા  
ઉયા, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણ નિઠ્ઠત્તિયા ઉયા ? ગોયમા !

-અર્થાત્ એ સઘ્વ પૂર્વોક્ત જીવ એકત્વ વહત્વ ઢ્વડકોં દ્વારા સપ્રદેશ  
અપ્રદેશ હૈ-ઘહી સઘ્વ ઇસ સંગ્રહ ગાથાદ્વારા ઇન પૂર્વોક્ત સપ્રદેશ આદિ  
મિન્ન ૨ પ્રકરણોં મેં પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

વાળા જીવોનું તથા અપર્યાપ્ત જીવોનું પણ એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરવામાં  
આવ્યું છે એટલે કે તે બધાં જીવોની કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશતા અને  
અપ્રદેશતાનું એકત્વ અને બહુત્વ ડંડકો દ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.  
એજ વાત આ સંગ્રહગાથા દ્વારા પૂર્વોક્ત સપ્રદેશ આદિ અલગ અલગ પ્રક-  
રણોમાં પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥



જીવા ય, વેમાણિયા ય પચ્ચક્ખાણિઠ્ઠત્તિયાડયા,  
તિન્નિ વિ । અવસેસા અપચ્ચક્ખાણિઠ્ઠત્તિયાડયા ।

ગાહા--‘પચ્ચક્ખાણં જાણઇ, કુઠ્ઠઇ, તિન્નેવ આડનિવ્વત્તી ।’

સપણસુદેસમ્મિ ય, એમેણ દંડગા ચડરો ॥ ૧ ॥

સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ ’ ॥ ૨ ॥

॥ છટ્ઠમણ ચડત્થો ડહેસો ॥ ૬--૪ ॥

છાયા—જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પ્રત્યાખ્યાનિનઃ, અપ્રત્યાખ્યાનિનઃ,  
પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનઃ ? ગૌતમ ! જીવાઃ પ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ, અપ્રત્યાખ્યા-  
નિનોઽપિ, પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ । સર્વજીવાનામ્ એવમ્ પૃચ્છા ? ગૌતમ !

॥ પ્રત્યાખ્યાનાદિવક્તવ્યતા ॥

‘જીવાણં ભંતે ’ इत्यदि ॥

સૂત્રાર્થ—( જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચક્ખાણી પચ્ચ-  
ક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી ) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાખ્યાની હૈં ? યા  
અપ્રત્યાખ્યાની હૈં ? યા પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની હૈં ? ( ગોયમા ! જીવા  
પચ્ચક્ખાણી વિ અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી વિ ) હે  
ગૌતમ ! જીવ પ્રત્યાખ્યાની ભી હૈં, અપ્રત્યાખ્યાની ભી હૈં ઓર પ્રત્યાખ્યા-  
નાપ્રત્યાખ્યાની ભી હૈં । ( સર્વજીવાણં એવં પુચ્છા ) ઇસી તરહ કે પ્રશ્ન હે  
ભદન્ત ! મેરે, સર્વ જીવોં કે વિષય મેં ભી હૈં ? ( ગોયમા ! નેરહયા અપ

પ્રત્યાખ્યાનાદિ વક્તવ્યતા—

“ જીવાણં ભંતે ! ” इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—( જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચક્ખાણી, પચ્ચક્ખાણા  
પચ્ચક્ખાણી ? ) હે ભદન્ત ! એવ શું પ્રત્યાખ્યાની ( સર્વ વિરતિવાળા ) છે ?  
હે અપ્રત્યાખ્યાની ( સર્વ વિરતિથી રહિત ) છે ? હે પ્રત્યાખ્યાના પ્રત્યાખ્યાની  
( અંશતઃ વિરતિવાળા ) છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જીવા પચ્ચક્ખાણી વિ, અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખા-  
ણાપચ્ચક્ખાણીવિ ) હે ગૌતમ ! એવ પ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે, અપ્રત્યાખ્યાની પણ  
હોય છે અને પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે ( સર્વ જીવાણં એવં પુચ્છા )  
હે ભદન્ત ! બધાં એવાના વિષયમાં પણ હું એજ પ્રશ્ન પૂછતા માણું છું.

નૈરયિકાઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનઃ, યાવદ્-ચતુરિન્દ્રિયાઃ, શેષો દ્વૌ પ્રતિપેદ્યગિતઃ, પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકા નો પ્રત્યાહ્યાનિનઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનોઽપિ, પ્રત્યાહ્યાનાઽપ્રત્યાહ્યાનિનોઽપિ, । મનુષ્યાશ્ચયોઽપિ । શેષા યથા નૈરયિકાઃ, । ત્રીવાઃ સ્વદ્ભદન્તઃ ! કિં પ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ, અપ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ, પ્રત્યાહ્યાનાઽપ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ ? ગૌતમ ! યે પંચેન્દ્રિયાસ્તે ત્રીણ્યપિ જાનન્તિ, અશેષાઃ પ્રત્યા-

ચ્ચક્ષ્ણાણી, જાત્ર ચતુરિન્દ્રિયા, સેષા દ્વૌ પદિસેહેયન્વા ) હે ગૌતમ ! નારકજીવ અપ્રત્યાહ્યાની હૈં-યાવત્ પંચેન્દ્રિયજીવોં તક કે જીવોં કો અપ્રત્યાહ્યાની જાનના ચાહિયે । યાત્રી કે દ્વૌ ભંગો-પ્રત્યાહ્યાની ઔર પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાની કા હનમેં નિવેધ કર દેના ચાહિયે ! ( પંચિન્દ્રિયતિરિક્ષજોણિયા ણો પચ્ચક્ષ્ણાણી, અપચ્ચક્ષ્ણાણી વિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણી વિ, મણૂસા તિણિ વિ, સેસા જહા નેરહ્યા ) પંચેન્દ્રિયતિર્યચ પ્રત્યાહ્યાની નહીં હૈં કિન્તુ અપ્રત્યાહ્યાની ભી હૈં, પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાની ભી હૈં । મનુષ્યોં મેં યે ત્રીનોં ભંગ હોતે હૈં । અવશિષ્ટ જીવોં કો નારકજીવોં કે સમાન સમજના ચાહિયે । ( જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ, અપચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ ? ) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હૈં ? અપ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હૈં ? પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હૈં ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( જે પંચિન્દ્રિયા તે તિન્નિ વિ જાણંતિ, અવસેસા પચ્ચક્ષ્ણાણં

( ગોયમા ! નેરહ્યા અપચ્ચક્ષ્ણાણી, જાત્ર ચતુરિન્દ્રિયા સેષા દ્વૌ પદિસેહેયન્વા ) હે ગૌતમ ! નારકો અપ્રત્યાહ્યાની હોય છે. ચતુરિન્દ્રિય પર્યન્તના હોયે પણ અપ્રત્યાહ્યાની હોય છે. તેઓ પ્રત્યાહ્યાની પણ હોતા નથી અને પ્રત્યાહ્યાના પ્રત્યાહ્યાની પણ હોતા નથી આ રીતે બાકીના બે વિકલ્પોનો અહીં સ્વીકાર થતો નથી. ( પંચિન્દ્રિયતિરિક્ષજોણિયા ણો પચ્ચક્ષ્ણાણો અપચ્ચક્ષ્ણાણો વિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણો વિ, મણૂસા તિણિ વિ, સેસા જહા નેરહ્યા ) પંચેન્દ્રિયતિર્યચો પ્રત્યાહ્યાની નથી પરંતુ અપ્રત્યાહ્યાની પણ છે અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની પણ છે. મનુષ્યોને તો ત્રણે ભંગ ( વિકલ્પ ) લાગુ પડે છે. બાકીના હોયના વિષયમાં નારકોની જેમ જ સમજવું.

( જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ, અપચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ ? ) હે ભદન્ત ! હોયે શું પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? અપ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જે પંચિન્દ્રિયા તે તિન્નિ વિ જાણંતિ, અવસેસા

ધ્યાનં ન જાનન્તિ । જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પ્રત્યાધ્યાનં કુર્વન્તિ, અપ્રત્યાધ્યાનં કુર્વન્તિ, પ્રત્યાધ્યાનાઽપ્રત્યાધ્યાનં કુર્વન્તિ ? યથા ઔધિકસ્તથા કરણમ્ । જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પ્રત્યાધ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ, અપ્રત્યાધ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ, પ્રત્યાધ્યાનાઽપ્રત્યાધ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ ? ગૌતમ ! જીવાથ વૈમાનિકાથ પ્રત્યા-

ન જાણંતિ ) જો જીવ પંચેન્દ્રિય હૈં વે તીનોં કો જાનતે હૈં । વાકી કે જીવ પ્રત્યાધ્યાન કો નહીં જાનતે હૈં । ઇસી તરહ સે વે અપ્રત્યાધ્યાન કો નહીં જાનતે હૈં ઓર પ્રત્યાધ્યાનાપ્રત્યાધ્યાન કો ખા નહીં જાનતે હૈં । ( જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણં કુર્વંતિ, અપચ્ચક્ષણં કુર્વંતિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણં કુર્વંતિ ) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાધ્યાન કરતે હૈં ? અપ્રત્યાધ્યાન કરતે હૈં ? પ્રત્યાધ્યાનાપ્રત્યાધ્યાન કરતે હૈં ? ( જહા ઓહિયા તહા કુર્વણા ) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકારસે ઔધિક દણ્ડક કહા હે ડસી પ્રકાર સે પ્રત્યાધ્યાન ક્રિયા જાનના ચાહિયે । ( જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા, અપચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા ? ) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાધ્યાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં કયા ? અપ્રત્યાધ્યાનસે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં કયા ? પ્રત્યાધ્યાનાપ્રત્યાધ્યાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં કયા ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( જીવા ય વૈમાણિયા ય પચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા, તિન્નિ વિ, અવસેસા અપચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા )

પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ) પંચેન્દ્રિય જીવો ત્રણેને જાણે છે. બાકીના જીવો પ્રત્યાધ્યાનને જાણતા નથી અને પ્રત્યાધ્યાના-પ્રત્યાધ્યાનને પણ જાણતા નથી.

( જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણં કુર્વંતિ, અપચ્ચક્ષણં કુર્વંતિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણં કુર્વંતિ ? ) હે ભદન્ત ! જીવો શું પ્રત્યાધ્યાન કરે છે ? અપ્રત્યાધ્યાન કરે છે ? પ્રત્યાધ્યાના-પ્રત્યાધ્યાન કરે છે ?

( જહા ઓહિયા તહા કુર્વણા ) હે ગૌતમ ! ઔધિક ( સામાન્ય જીવ ) દંડકમાં જે પ્રમાણે કહ્યું છે એજ પ્રમાણે પ્રત્યાધ્યાન ક્રિયાના વિષયમાં પણ સમજવું. ( જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા, અપચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા ? ) હે ભદન્ત ! જીવો શું પ્રત્યાધ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે ? શું જીવો અપ્રત્યાધ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે ? શું જીવો પ્રત્યાધ્યાના-પ્રત્યાધ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે ?

( ગોયમા । ) હે ગૌતમ ! ( જીવા ય વૈમાણિયાય પચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા, તિન્નિ વિ અવસેસા અપચ્ચક્ષણાનિવ્વત્તિયાડયા ) જીવ અને વૈમાનિક દેવો



રૂપાનિર્વર્તિતાયુક્તાઃ, પ્રપોડપિ । અવશેષાઃ પ્રપત્યારૂપાનિર્વર્તિનાયુક્તાઃ ॥

( ગાથા )—પ્રત્યારૂપાનં જાનાતિ, કરોતિ, શ્રીયેવ, પ્રાયુર્નિર્ણયિતઃ ।

સપ્રદેશોદેશો ચ એવમેતે દણ્ડકાધત્વારઃ, ॥ ૧ ॥

તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! इति ॥ सू० २ ॥

પચ્ચક્ષણકે ચતુર્થઉદ્દેશઃ ॥ ૬-૪

ટીકા— ' જીવાણં મંતે । કિં પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચક્ષણી, પચ્ચક્ષણા-  
પચ્ચક્ષણી ? ' ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! જીવાઃ સ્વત્તુ કિં પ્રત્યારૂપાનિનઃ—  
જીવ ઓર વૈમાનિક દેવ પ્રત્યારૂપાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હં ।  
અપ્રત્યારૂપાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હં । પ્રત્યારૂપાનાપ્રત્યારૂપાન  
સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હં । તથા ચાકી કે જીવ અપ્રત્યારૂપાન સે  
નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હં । ( ગાથા-પચ્ચક્ષણાણં જાણઈ, કુવ્વઈ  
તિન્નેવ આહનિવ્વત્તી । સપ્પસુદ્દેસમ્મિય એમેણ દંડગા ચરો ) “ પ્રત્યા-  
રૂપાન ” યહ એક દણ્ડક હૈ । “ જાનાતિ ” યહ દ્વિતીયદણ્ડક હૈ । “ કુ-  
વ્વઈ ” યહ ત્રીસરા દણ્ડક હૈ । પ્રત્યારૂપાન, અપ્રત્યારૂપાન ઓર પ્રત્યા-  
રૂપાનાપ્રત્યારૂપાન હન ત્રીનોં કો જાનતા હૈ, કરતા હૈ તથા આયુષ્ક કી  
નિવૃત્તિ કરતા હૈ—એસા યહ ચતુર્થ દણ્ડક હૈ સપ્રદેશ ઉદ્દેશક મેં હસ  
પ્રકાર સે યે ચાર દણ્ડક હં । ( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ) હે ભદન્ત !  
જૈસા આપને કહા હૈ વહ એસા હી હૈ, હે ભદન્ત ! વહ એસા હી હૈ ।

ટીકાર્થ—જીવ કા અધિકાર હોને કે કારણ સૂત્રકાર હનકે પ્રત્યા-  
રૂપાન આદિ કા નિરૂપણ હસ સૂત્ર દ્વારા કર રહે હે—હસમેં ગૌતમ ને

પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે, અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુ-  
વાળા થાય છે, અને પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય  
છે, તથા બાકીના જીવો અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે.

( ગાથા-પચ્ચક્ષણાણં જાણઈ, કુવ્વઈ તિન્નેવ આહનિવ્વત્તી સપ્પસુદ્દેસમ્મિય  
એમેણ દંડગા ચરો ) “ પ્રત્યાખ્યાન ” આ એક ઠંડક છે, “ જાનાતિ ( જાણે છે ) ”  
આ બીજું ઠંડક છે, “ કુવ્વઈ ( કરે છે ) ” આ ત્રીજું ઠંડક છે. “ પ્રત્યા-  
ખ્યાન, અપ્રત્યાખ્યાન અને પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે, કરે છે તથા  
આયુષ્કની નિવૃત્તિ કરે છે, ” એવું ચોથું ઠંડક છે. સપ્રદેશ ઉદ્દેશકમાં આ  
પ્રકારના આ ચાર ઠંડક છે.

( સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ) હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ છે.  
હે ભદન્ત ! આપની વાત સર્વથા સત્ય જ છે.

ટીકાર્થ—જીવનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. તેથી સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં  
મશ્નોત્તરો દ્વારા જીવનાં પ્રત્યાખ્યાન આદિનું નિરૂપણ કરે છે—

સર્વવિરતિગન્તઃ, અથવા અપ્રત્યાખ્યાનિનઃ વિરતિરહિતાઃ ‘ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યા-  
નિનો દેશવિરતિમન્તો વા ભવન્તિ ? ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! જીમા પચ્ચક્ખાણી  
વિ, અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી વિ ’ હે ગૌતમ ! જીવાઃ કેચિત્  
પ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ સર્વવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિદ્ જીવા અપ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ  
અવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિચ્ચ જીવાઃ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ દેશવિરતા

પ્રભુ સે એસા પૂઝા હૈ કિ-“ જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચ-  
ક્ખાણી, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી ? ” હે મદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાખ્યા  
ની-સર્વવિરતિવાલે હોતે હૈં ? અથવા-અપ્રત્યાખ્યાની-સર્વવિરતિ સે રહિત  
હોતે હૈં ? યા પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની-દેશવિરતિવાલે હોતે હૈં ? હસ ગૌત-  
મકે પ્રશ્નકે ઉત્તરમે પ્રભુ ઉનસે કહતે હૈં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જીવા)  
જીવ ( પચ્ચક્ખાણી વિ, અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચ-  
ક્ખાણી વિ ) પ્રત્યાખ્યાની મી હોતે હૈં, અપ્રત્યાખ્યાની મી હોતે હૈં ઓર  
પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની મી હોતે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ હસ  
સંસાર મેં કિતનેક એસે મી જીવ હૈં, જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રવાલે  
હોતે હૈં-કિતનેક એસે મી જીવ હૈં કિ જીનકે કિસી મી પ્રકાર કી  
વિરતિ નહીં હોતી હૈ-અવિરત હોતે હૈં । ઓર કિતનેક જીવ એસે મી  
હોતે હૈં કિ જો દેશવિરતિરૂપ શ્રાવકાચાર કો ધારણ કિયે હુણ હોતે હૈં ।

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-( જીવાણં મંતે !  
કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચક્ખાણી, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી ? ) હે ભદન્ત ! એવો  
શું પ્રત્યાખ્યાની-સર્વ વિરતિવાળા-હોય છે ? કે અપ્રત્યાખ્યાની-સર્વ વિરતિ  
રહિત-હોય છે ? કે પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની-દેશવિરતિવાળા ( અંશતઃ  
વિરતિયુક્ત ) હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નને જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-  
( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જીવા ) એવો ( પચ્ચક્ખાણી વિ, અપચ્ચક્ખાણી  
વિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી વિ ) પ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે, અપ્રત્યાખ્યાની  
પણ હોય છે, અને પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે. આ કથનનો  
ભાવાર્થ એ છે કે આ સંસારમાં કેટલાક એવાં એવો હોય છે કે જેઓ  
સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રવાળા હોય છે, કેટલાક એવાં પણ એવો હોય છે કે  
જેઓ કોઈ પણ પ્રકારની વિરતિથી રહિત-અવિરત હોય છે, અને કેટલાક  
એવાં પણ એવો હોય છે કે જેમણે દેશવિરતિરૂપ શ્રાવકાચારને અંગીકાર  
કરેલ હોય છે.



અપિ ભવન્તિ, ' સઙ્ગજીવાણં ઇવં પુચ્છા ' તર્વજીવાનાં નૈરયિકાદીનામપિ ઇત્થમ્-  
જીવતામાન્યવદેવ પુચ્છા ગૌતમસ્ય પ્રશ્નો વિશેષઃ । મગધનાદ- ' ગોયમા ! નૈર-  
હયા અવચ્ચક્ષણી જાવ-ચત્તરિંદિયા ' હે ગૌતમ ! નૈરયિકાઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનો-  
વિરતિરહિતા ભવન્તિ, ગાવત્-ચત્તરિન્દ્રિયા અપિ અપ્રત્યાહ્યાનિનઃ અવિરતા ભવન્તિ,  
યાવત્-કરણાત્-માનવતપ એકેન્દ્રિયાઃ પૃથિવ્યાદયઃ પદ્મ સ્વાસાઃ દ્વીન્દ્રિયાઃ  
ત્રીન્દ્રિયાઃ સંગ્રાહાઃ, કિન્તુ ' સેસા દો પડિસેહેવગ્ગા ' નૈરયિકાદિચત્તરિન્દ્રિયપર્ય-

અવ ગૌતમ હસી પાતકો જાનને કે લિયે નારક આદિ જીવોંકે વિષયમેં  
પ્રભુ સે એસા કહતે હેં ફિ હે ભદન્ત ! " સઙ્ગજીવાણં ઇવં પુચ્છા "  
મેરી ઇચ્છા ઇસી પ્રકાર સે સવ જીવોં કે પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો જાનને કે  
લિયે હો રહી હેં સો આપ મુક્તે સમગ્રાઈયે-વ્યોં ફિ અમી તક તો આપને  
હમેં સામાન્યરૂપ સે જીવ કે વિષય મેં પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો સમગ્રાયા  
હેં । ગૌતમકે હસ પ્રશ્ન કા સમાધાન કરને કે નિમિત્ત પ્રભુ ડનસે કહતે  
હેં ફિ- ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! ( નૈરહયા અવચ્ચક્ષણી જાવ ચત્તરિંદિયા )  
નારક જીવ અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં-વ્યોં ફિ ડનકે કિસી મી  
પ્રકાર કો વિરતિ કા ઉદય નહીં હો સક્તા હેં । ઇસી પ્રકાર સે  
ચૌદ્વિન્દ્રિય જીવ મી અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં । ઘહાં પર યાવત્ શબ્દ સે-  
" ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવ-અર્થાત્ પૃથિવ્યાદિક પાંચ સ્થાવર, દ્વીન્દ્રિય,  
તેજ્વિન્દ્રિય " ઇન સવકા ગ્રહણ હુઆ હેં । અતઃ જય યે સવ જીવ અપ્રત્યા-

હવે ગૌતમ સ્વામી નારકાદિ જીવોના વિષયમાં પણ આ પ્રકારનો જ  
પ્રશ્ન પૂછે છે- ( સઙ્ગજીવાણં ઇવં પુચ્છા ) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવોના  
પ્રત્યાહ્યાન આદિના વિષયમાં પણ મારો એજ પ્રકારનો પ્રશ્ન છે. આપે  
સામાન્ય રૂપે જીવના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે તો સમગ્રાવ્યું, પણ હવે નારક  
આદિ પ્રત્યેક પર્યાયના જીવોના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે જાણવાની મારી ઇચ્છા છે.

મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે- ( ગોયમા ! )  
હે ગૌતમ ! ( નૈરહયા અવચ્ચક્ષણી જાવ ચત્તરિંદિયા ) નારક જીવો અપ્રત્યા-  
હ્યાની હોય છે, કારણ કે તેઓમાં કોઈ પણ પ્રકારની વિરતિનો ઉદય સંભવી  
શકતો નથી. એજ પ્રમાણે ચત્તરિન્દ્રિય પર્યન્તના જીવો પણ અપ્રત્યાહ્યાની  
હોય છે. અહીં " જાવ ( પર્યન્ત ) " પદ્ધતી " ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવો  
( પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ સ્થાવર ) દ્વીન્દ્રિય અને તેજ્વિન્દ્રિય " આટલા જીવોને  
ગ્રહણ કરવા. આ રીતે એ બધાં જીવો અપ્રત્યાહ્યાની ( અવિરત ) હોવાથી.  
તેમને પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા નથી અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા

ન્તાનાં શેષો દ્વી પ્રત્યાખ્યાન-પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનાત્મકો પ્રતિપેદ્યિતવ્યો, તથાદિ-નૈરયિકાદિચતુરિન્દ્રિયાન્તા નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ સર્વવિરતાઃ, નો વા પ્રત્યા-  
ખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો દેશવિરતા ભવન્તિ તેપામવિરતત્વાત્, ' પંચિદિયતિરિક્લ-  
જોગિયા ણો પચ્ચક્ષાણી, અપચ્ચક્ષાણી વિ, પચ્ચક્ષાણાપચ્ચક્ષાણીવિ,' પચ્ચે-  
ન્દ્રિયતિર્યગ્ચોનિકાઃ નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ ન સર્વવિરતા ભવન્તિ કિન્તુ અપ્રત્યા-  
ખ્યાનિનોઽપિ કેચિદ્ અવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિત્ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો

ખ્યાની-અવિરત હોતે હૈં તો ફસી કારણ સે યહાં પર ( સેસા દો પહિસે  
હેયવ્વા ) પ્રત્યાખ્યાની હોને કા ઓર પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની હોને કા  
પ્રતિપેદ્ય કિયા ગયા હૈં । ચારિત્રમોહનીય કર્મકી પ્રકૃતિ જો પ્રત્યાખ્યાના-  
વરણ ક્રોધ માન માયા લોભ હૈં ઉસકે અભાવસે તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યા-  
ખ્યાન હોતા હૈં ઓર અપ્રત્યાખ્યાનવરણ ક્રોધ માન માયા લોભકે અભાવ  
સે શ્રાવકકા દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર હોતા હૈં-સો નારક જીવોં મેં યાવત્  
ચૌદિન્દ્રિય જીવોંમેં હનકા અભાવ નહીં હોતા હૈં । કારણ કિ નારક આદિ  
જીવોં મેં ઈસી યોગ્યતા નહીં હૈં ઓર ઈકેન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં મન કા  
અભાવ હૈં । સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોં કે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોના  
કહા ગયા હૈં । ' પંચિદિયતિરિક્લ જોગિયા ણો પચ્ચક્ષાણી અપચ્ચ-  
ક્ષાણી વિ, પચ્ચક્ષાણાપચ્ચક્ષાણી વિ ' પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ચોં કે સર્વ  
વિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન નહીં હોતા હૈં । કારણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે  
નિયમોં કા પ્રતિપાલન ઉનસે અપની અવસ્થા મેં પૂર્ણરૂપ સે યથાવત્ હો

નથી. એજ વાત ( સેસા દો પહિસેહેયવ્વા ) આ સૂત્રમાં પ્રકટ કરી છે એટલે  
કે અપ્રત્યાખ્યાની સિવાયના બન્ને વિકલ્પોનો અહીં અસ્વીકાર સમજવો.  
ચારિત્ર મોહનીય કર્મની પ્રકૃતિ જે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને  
લોભ છે, તેના અભાવથી તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થાય છે, અને અપ્ર-  
ત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના અભાવથી શ્રાવકનું દેશવિરતિ  
રૂપ ચારિત્ર સંભવે છે. પણ નારકથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાપ્તતા હોવામાં તેમનો  
અભાવ હોતો નથી. કારણ કે નારક આદિ હોવામાં એવી યોગ્યતા હોતી નથી  
અને એકેન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાપ્તતા હોવામાં મનનો અભાવ હોય છે.  
સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત હોવામાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ સંભવી શકે છે.

( પંચિદિયતિરિક્લજોગિયા ણો પચ્ચક્ષાણી, અપચ્ચક્ષાણી વિ, પચ્ચક્ષાણા  
પચ્ચક્ષાણી વિ ) પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ચોમાં સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થતા નથી.  
કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રના નિયમોનું પ્રતિપાલન તે અવસ્થામાં યોગ્ય

અપિ ભવન્તિ, ' સઽવજીવાણં ઇવં પુચ્છા ' તર્વજીવાનાં નૈરયિતાદીનામપિ પદ્મ-  
જીવતામાન્યવદેવ પુચ્છા ગૌતમસ્ય પ્રશ્નો વિશેષઃ । મગધનાદ- ' ગોચમા ! નેર-  
હ્યા અપચ્ચક્ષણી જાવ-ચત્તરિંદિયા ' હે ગૌતમ ! નૈરયિતાઃ અપત્યાહ્યાનિનો-  
વિરતિરહિતા ભવન્તિ, યાવત્-ચત્તરિન્દ્રિયા અપિ અપત્યાહ્યાનિનઃ અવિરતા ભવન્તિ,  
યાવત્-ઋણાત્-મનપતય એકેન્દ્રિયાઃ પૃથિવ્યાદયઃ પદ્મ સ્વાવરાઃ દ્વીન્દ્રિયાઃ  
ત્રીન્દ્રિયાઃ સંગ્રાહાઃ, કિન્તુ ' સેતા દો પડિસેહેપગ્ગા ' નૈરયિકાદિચત્તરિન્દ્રિયપર્ય-

અવ ગૌતમ હસી ઘાતકો જાનને કે લિયે નારક આદિ જીવોંકે વિષયમેં  
પ્રશ્નુ સે એસા કહતે હેં ફિ હે ભદન્ત ! “ સઽવજીવાણં ઇવં પુચ્છા ”  
મેરી હચ્છા હસી પ્રકાર સે સવ જીવોં કે પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો જાનને કે  
લિયે હો રહી હેં સો આપ મુક્કે સમજાઈયે-કયોં ફિ અમી તક તો આપને  
હમેં સામાન્યરૂપ સે જીવ કે વિષય મેં પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો સમજાયા  
હે । ગૌતમકે હસ પ્રશ્ન કા સમાધાન કરને કે નિમિત્ત પ્રશ્નુ ડનસે કહતે  
હેં ફિ-‘ ગોચમા ’ હે ગૌતમ ! ( નેરહ્યા અપચ્ચક્ષણી જાવ ચત્તરિંદિયા )  
નારક જીવ અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં-કયોં ફિ ડનકે કિસી મી  
પ્રકાર કો વિરતિ કા ઉદય નહોં હો સક્તા હે । હસી પ્રકાર સે  
ચૌદ્વિન્દ્રિય જીવ મી અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હે । ઘહાં પર યાવત્ શબ્દ સે-  
“ ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવ-અર્થાત્ પૃથિવ્યાદિક પાંચ સ્થાવર, દ્વીન્દ્રિય,  
ત્રેદ્વિન્દ્રિય ” ડન સવકા ગ્રહણ હુઆ હે । અતઃ જય યે સવ જીવ અપ્રત્યા-

હવે ગૌતમ સ્વામી નારકાદિ જીવોના વિષયમાં પણ આ પ્રકારનો જ  
પ્રશ્ન પૂછે છે-( સઽવજીવાણં ઇવં પુચ્છા ) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવોના  
પ્રત્યાહ્યાન આદિના વિષયમાં પણ મારો એજ પ્રકારનો પ્રશ્ન છે. આપે  
સામાન્ય રૂપે જીવના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે તો સમજાવ્યું, પણ હવે નારક  
આદિ પ્રત્યેક પર્યાયના જીવોના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે જાણવાની મારી ઈચ્છા છે.

મહાવીર પણ ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(ગોચમા !)  
હે ગૌતમ ! ( નેરહ્યા અપચ્ચક્ષણી જાવ ચત્તરિંદિયા ) નારક જીવો અપ્રત્યા-  
હ્યાની હોય છે, કારણ કે તેઓમાં કોઈ પણ પ્રકારની વિરતિનો ઉદય સંભવી  
શકતો નથી. એજ પ્રમાણે ચત્તરિન્દ્રિય પર્યન્તના જીવો પણ અપ્રત્યાહ્યાની  
હોય છે. અહીં “ જાવ ( પર્યન્ત ) ” પદ્ધતી “ ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવો  
( પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ સ્થાવર ) દ્વીન્દ્રિય અને ત્રેદ્વિન્દ્રિય ” આટલા જીવોને  
ગ્રહણ કરવા. આ રીતે જો બધાં જીવો અપ્રત્યાહ્યાની ( અવિરત ) હોવાથી.  
તેમને પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા નથી અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા



ત્વાનાં શેષૌ દ્વૌ પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનાત્મકૌ પ્રતિષેધયિતવ્યૌ,  
તથાદિ-નૈરયિકાદિચતુરિન્દ્રિયાન્તા નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ સર્વવિરતાઃ, નો વા પ્રત્યા-  
ખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો દેશવિરતા ભવન્તિ તેષામવિરતત્વાત્, ' પંચિદિયતિરિક્લ-  
જોગિયા ણો પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણીવિ,' પચ્ચ-  
ન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાઃ નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ ન સર્વવિરતા ભવન્તિ કિન્તુ અપ્રત્યા-  
ખ્યાનિનોઽપિ કેચિદ્ અવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિત્ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો

ખ્યાની-અવિરત હોતે હેં તો ઇસી કારણ સે યહાં પર ( સેસા દો પડિસે  
હેયવ્વા ) પ્રત્યાખ્યાની હોને કા ઓર પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની હોને કા  
પ્રતિષેધ કિયા ગયા હૈ । ચારિત્રમોહનીય કર્મકી પ્રકૃતિ જો પ્રત્યાખ્યાના-  
વરણ ક્રોધ માન માયા લોભ હૈ ઉસકે અભાવસે તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યા-  
ખ્યાન હોના હૈ ઓર અપ્રત્યાખ્યાનવરણ ક્રોધ માન માયા લોભકે અભાવ  
સે શ્રાવકકા દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર હોતા હૈ-સો નારક જીવોં મેં યાવત્  
ચૌદન્દ્રિય જીવોંમેં ઇનકા અભાવ નહીં હોના હૈ । કારણ કિ નારક આદિ  
જીવોં મેં એસી યોગ્યતા નહીં હૈ ઓર એકેન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં મન કા  
અભાવ હૈ । સંસ્રી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોં કે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોના  
કહા ગયા હૈ । ' પંચિદિયતિરિક્લ જોગિયા ણો પચ્ચક્ષણી અપચ્ચ-  
ક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણી વિ ' પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ચોં કે સર્વ  
વિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન નહીં હોતા હૈ । કારણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે  
નિયમોં કા પ્રતિપાલન ઉનસે અપની અવસ્થા મેં પૂર્ણરૂપ સે યથાવત્ હો

નથી. એજ વાત ( સેસા દો પડિસેહેયવ્વા ) આ સૂત્રમાં પ્રકટ કરી છે એટલે  
કે અપ્રત્યાખ્યાની સિવાયના બન્ને વિકલ્પોનો અહીં અસ્વીકાર સમજવો.  
ચારિત્ર મોહનીય કર્મની પ્રકૃતિ જે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને  
લોભ છે, તેના અભાવથી તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થાય છે, અને અપ્ર-  
ત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના અભાવથી શ્રાવકનું દેશવિરતિ  
રૂપ ચારિત્ર સંભવે છે. પણ નારકથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાપ્તના જીવોમાં તેમનો  
અભાવ હોતો નથી. કારણ કે નારક આદિ જીવોમાં એવી યોગ્યતા હોતી નથી  
અને એકેન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાપ્તના જીવોમાં મનનો અભાવ હોય છે.  
સંસ્રી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોમાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ સંભવી શકે છે.

( પંચિદિયતિરિક્લજોગિયા ણો પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણા  
પચ્ચક્ષણી વિ ) પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્ચોમાં સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થતા નથી.  
કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રના નિયમોનું પ્રતિપાલન તે અવસ્થામાં યોગ્ય

જીવાઃ સ્વતુ કિમ્ પ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ, અપ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ પ્રત્યાહ્યાનામપ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ ? મગધનાદ-‘ ગોયમા ! જે પંચેદિયા તે તિણિવિ જાણંતિ ’ હે ગૌતમ ! એ પંચેન્દ્રિયાઃ તિર્યગ્ગોનિકા મનુષ્યાશ્ચ તથા નૈરયિકાદયઃ તે શ્રીણ્યપિ પ્રત્યાહ્યાનામ્, અપ્રત્યાહ્યાનં, પ્રત્યાહ્યાનામપ્રત્યાહ્યાનં ચ જાનન્તિ, તેવાં સમનસ્કતયા સમ્યગ્દૃષ્ટિચે જ્ઞપરિજ્ઞા પ્રત્યાહ્યાનાદિત્રયજ્ઞાનસંભવાત્, કિન્તુ ‘ અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ’ અવશેષાઃ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ, વિકલેન્દ્રિયા અસંજીવપંચેન્દ્રિયાશ્ચ ‘ પ્રત્યાનાદિત્રયં ન જાનન્તિ, તેવામમનસ્કત્વાત્ । પ્રત્યાહ્યાનં

જાણંતિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણં જાણંતિ ’ હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? અપ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? પ્રત્યાહ્યાનપ્રત્યાહ્યાનકો જાનતે હું ? ઉત્તરમે પ્રશ્ન ઉત્તર કહતે હું-‘ ગોયમા ! હે ગૌતમ ! ( જે પંચેદિયા તે તિણિ વિ જાણંતિ ) જો પંચેન્દ્રિય તિર્યચ્છ અને મનુષ્ય નારક આદિ જીવ હું એ તો પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન, એવં પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાન इन तीनोंको जानते हैं । क्योंकि ये सब समनस्क होते हैं इस कारण इनके सम्यग्दर्शन हो सकता है-और उस समय ये ज्ञपरिज्ञा द्वारा प्रत्याह्यान आदि तीनोंको जानते हैं । ‘ अवसेसा पच्चक्खणं न जाणंति ’ अवशिष्ट जो एकेन्द्रिय पृथिव्यादिक जीव हूं वे तथा विकलेन्द्रिय एवं असंजी जीव हूं वे प्रत्याह्यान आदि त्रयको नहीं जानते हैं । क्योंकि इन सब के जानने का साधनभूत मन नहीं होता है । ये सब अमनस्क होते हैं । प्रत्याह्यान तब होता है कि जब वह किया

જીવો પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? અપ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જે પંચેદિયા તે તિણિ વિ જાણંતિ ) જે પંચેન્દ્રિય તિર્યચ્છ, અને મનુષ્ય નારક આદિ જીવ છે તેઓ તો પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન અને પ્રત્યાહ્યાના પ્રત્યાહ્યાન, એ ત્રણેને જાણે છે, કારણ કે તેઓ બધાં સમનસ્ક હોય છે તેથી તેમને સમ્યગ્દર્શન સંભવી શકે છે, અને તે સમયે તેઓ જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રણેને જાણે છે. ( અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ) બાકીના જીવો-એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ જીવો તથા વિકલેન્દ્રિય જીવો તથા અસંજી જીવો પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રણેને જાણતા નથી, કારણ કે તે ત્રણેમાં જાણવાના સાધનરૂપ મનનો અભાવ હોય છે. પ્રત્યાહ્યાન ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે કરવામાં આવે છે. એ વાતને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે—



ચ તદા ભવેત્ યદા કૃતં સ્યાત્ અતસ્તત્કરણં પ્રતિપાદયિતુમાદ-‘ જીવા ણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણં કુવ્વંતિ, અપચ્ચક્ખાણં કુવ્વંતિ પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણં કુવ્વંતિ ? ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત ! જીવાઃ સ્વલુ કિમ્ પ્રત્યાખ્યાનં કુર્વન્તિ, અપ્રત્યાખ્યાનં વા કુર્વન્તિ, પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનં કુર્વન્તિ, ? ભગવાનાદ-‘ જહા ઓહિયા તહા કુવ્વણા ’ હે ગૌતમ ! યથા ઔધિકાઃ સમુચ્ચય જીવાઃ પ્રતિપાદિતાઃ તથા કરણં પ્રત્યાખ્યાનાદિકરણમપિ વિજ્ઞાતવ્યમ્, તથા ચ સામાન્યજીવેષુ પ્રત્યાખ્યાનિત્વાદિત્રિતયસ્યાપિ પૂર્વં પ્રતિપાદિતત્વેન અત્રાપિ પ્રત્યાખ્યાનાદિત્રયસ્ય કરણમપિ વોધ્યમ્, एवं च केचिद् जीवाः प्रत्याख्यानमपि कुर्वन्ति, केचित् अप्रत्याख्यानमपि कुर्वन्ति प्रत्याख्यानं न कुर्वन्ति, केचित् प्रत्याख्यानानामप्रत्याख्यानमपि कुर्वन्ति, प्रत्याख्यानम् आयुष्यवन्धकारणमपि भवतीति

જાતા હૈ-અતઃ इसी बात को गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि-(जीवा णं भंते ! किं पचचक्खाणं कुव्वंति अपचचक्खाणं कुव्वंति पचचक्खाणा पचचक्खाणं कुव्वंति ) हे भदन्त ! जीव क्या प्रत्याख्यान करते हैं ? अप्रत्याख्यान करते हैं ? प्रत्याख्यानानामप्रत्याख्यान करते हैं ? इसके उत्तरमें प्रभु उनसे कहते हैं कि-हे गौतम ! ( जहा ओहिया तहा कुव्वणा ) जिस प्रकार से सामान्य जीव प्रतिपादित हुए हैं उसी प्रकार से प्रत्याख्यान आदिका करना भी जानना चाहिये । इस तरह से यह समझ लेना चाहिये कि कितनेक जीव ऐसे भी हैं जो प्रत्याख्यान को भी करते हैं । कितनेक जीव ऐसे हैं जो प्रत्याख्यान को नहीं अप्रत्याख्यानको भी करते हैं । कितनेक जीव ऐसे हैं जो प्रत्याख्यानानामप्रत्याख्यान को भी करते हैं । प्रत्याख्यान आयुष्यबंध का भी कारण होता है इसलिये प्रत्याख्यान कारण के बाद अब गौतम इसके द्वारा जीव आयुष्क का भी क्या बंध

( जीवाणं भंते ! किं पचचक्खाणं कुव्वंति ? अपचचक्खाणं कुव्वंति पचचक्खाणा पचचक्खाणं कुव्वंति ) हे भदन्त ! एवं शुं प्रत्याખ્યાન કરે છે ? અપ્રત્યાખ્યાન કરે છે ? પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાન કરે છે :

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જહા ઓહિયા તહા કુવ્વણા ) જે રીતે સામાન્ય જીવના પ્રત્યાખ્યાન આદિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એજ પ્રમાણે પ્રત્યાખ્યાન આદિ કરવાના વિષયમાં પણ સમજવું. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જે પ્રત્યાખ્યાન કરે છે, કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જે પ્રત્યાખ્યાન કરતા નથી પણ અપ્રત્યાખ્યાન કરે છે, અને કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જે પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાન પણ કરે છે.

પ્રત્યાખ્યાન આયુષ્યબંધમાં પણ કારણરૂપ બને છે, તેથી પ્રત્યાખ્યાનકરણનું પ્રતિપાદન કર્યો પછી હવે ગૌતમ સ્વામી એ જાણવા માગે છે કે પ્રત્યાખ્યાન

જીવાઃ સ્વલુ કિમ્ પ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ, અપ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ પ્રત્યામયાનામપ્રત્યાહ્યાનં જાનન્તિ ? મગધનાહ-‘ ગોયમા ! જે પંચેદિયા તે તિષ્ઠિન્તિ જાણંતિ ’ હે ગૌતમ ! જે પંચેન્દ્રિયાઃ તિર્યગ્યોનિકા મનુષ્યાશ્ચ તથા નૈરયિકાદયશ્ચ તે ગ્રીભ્યપિ પ્રત્યાહ્યાનામ્, અપ્રત્યાહ્યાનં, પ્રત્યાહ્યાનામપ્રત્યાહ્યાનં ન જાનન્તિ, તેવાં સમનસ્કતયા સમ્યગ્દર્શિષ્વે સુપરિજ્ઞયા પ્રત્યાહ્યાનાદિત્રયજ્ઞાનસંભવાત્, કિન્તુ ‘ અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ’ અવશેષાઃ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ, વિકલેન્દ્રિયા અસંજીવપંચેન્દ્રિયાશ્ચ ‘ પ્રત્યાનાદિત્રયં ન જાનન્તિ, તેવામમનસાત્વાત્ । પ્રત્યાહ્યાનં

જાણંતિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણં જાણંતિ ’ હે મદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? અપ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? પ્રત્યાહ્યાનપ્રત્યાહ્યાનકો જાનતે હું ? ઉત્તરમે પ્રભુ ડનસે કહતે હું-‘ ગોયમા ! હે ગૌતમ ! ( જે પંચેદિયા તે તિષ્ઠિન્તિ વિ જાણંતિ ) જો પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ ઓર મનુષ્ય નારક આદિ જીવ હું જે તો પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન, એવં પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાન ઇન ત્રીનોંકો જાનતે હું । ક્યોંકિ જે સય સમનસ્ક હોતે હું ઇસ કારણ ઇનકે સમ્યગ્દર્શન હો સકતા હૈ-ઓર ડસ સમય જે સુપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રીનોંકો જાનતે હું । ’ અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ’ અવશિષ્ટ જો એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક જીવ હું જે તથા વિકલેન્દ્રિય એવં અસંજી જો જીવ હું જે પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રયકો નહીં જાનતે હું । ક્યોં કિ ઇન સવ કે જાનને કા સાધનમૂત મન નહીં હોતા હૈ । જે સવ અમનસ્ક હોતે હું । પ્રત્યાહ્યાન તય હોતા હૈ કિ જવ વહ કિયા

હવે પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? અપ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જે પંચેદિયા તે તિષ્ઠિન્તિ વિ જાણંતિ ) જે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ, અને મનુષ્ય નારક આદિ જીવ છે તેઓ તો પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન અને પ્રત્યાહ્યાના પ્રત્યાહ્યાન, એ ત્રણેને જાણે છે, કારણ કે તેઓ બધાં સમનસ્ક હોય છે તેથી તેમને સમ્યગ્દર્શન સંભવી શકે છે, અને તે સમયે તેઓ સુપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રણેને જાણે છે. ( અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ) બાકીના જીવો-એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ જીવો તથા વિકલેન્દ્રિય જીવો તથા અસંજી જીવો પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રણેને જાણતા નથી, કારણ કે તે ત્રણેમાં જાણવાના સાધનરૂપ મનનો અભાવ હોય છે. પ્રત્યાહ્યાન ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે કરવામાં આવે છે. એ વાતને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે—

અપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ, પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાશ્ચ જીવાઃ  
વૈમાનિકા ભાન્તીત્યાશયઃ, વૈમાનિકેષુ પ્રત્યાખ્યાનાદિવ્યવતામ્ ઉત્પાદાત્ ।

આયુ કા બંધ ડસને પહિલે યા તો પ્રત્યાખ્યાન સે કિયા હૈ, યા અપ્રત્યા-  
ખ્યાન સે કિયા હૈ યા દેશવિરતિ સે કિયા હૈ, તમી વહ વર્તમાન પર્યાય  
મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । ઇસ તરહ તીનોસે યહ વદ્ધાયુષ્ક હો સકતા હૈ । ઇસી  
તરહ વૈમાનિક દેવ હોતે હૈ ક્યોં કિ પ્રત્યાખ્યાન સે નિર્વર્તિત હૈ આયુષ્ય  
( પ્રત્યાખ્યાન અવસ્થા મેં આયુષ્ય કો બંધ બાંધનેવાલે ) જિન્હોં કા એસે  
જીવ વૈમાનિક હોતે હૈ તથા અપ્રત્યાખ્યાન સે નિર્વર્તિત હૈ આયુષ્ક  
જિન્હોં કા એસે જીવ વૈમાનિક હોતે હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાન સે  
નિર્વર્તિત હૈ આયુષ્ક જિન્હોં કા એસે જીવ વૈમાનિક હોતે હૈ—કહને કા  
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અણુવ્રતી ઓર મહાવ્રતી જીવ દેવ આયુ કા હી બંધ  
કરતા હૈ ( અણુવ્યયમહવ્યયાદં ન લહ્દદેવાડયં મોક્તું ) અણુવ્રતોં ઓર  
મહાવ્રતોં કો વહી જીવ પાલતા હૈ જિસે દેવાયુ કા બંધ હો ગયા હોતા  
હૈ । રોપ આયુષ્કબંધ વાલે જીવ અણુવ્રતોં ઓર મહાવ્રતોં કો નહીં પાલ  
સકતે હૈ એસા સિદ્ધાન્ત કા મત હૈ તથા ભોગ ભૂમિ કે જીવ જો કિ  
પ્રત્યાખ્યાન કા પાલન નહીં કરતે હૈ—અપ્રત્યાખ્યાની હી હોતે હૈ વે મર  
કર દેવગતિ મેં હી જાતે હૈ ક્યોં કિ ( નિઃશીલવ્રતીત્વં ચ સર્વેષામ્ )  
એસા આગમ વાક્ય હૈ । ઇસી સવ વિચાર કો લેકર યહાં ( તિણિ વિ )

અત્યારે જે પર્યાયમાં છે તે પર્યાયના આયુનો બંધ તેણે પહેલાં કાં તો પ્રત્યા-  
ખ્યાનથી કર્યો હોય છે, કાં તો અપ્રત્યાખ્યાનથી કર્યો હોય છે, અથવા તો દેશ  
વિરતિથી કર્યો હોય છે, ત્યારે તો તે વર્તમાન પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો હોય  
છે. આ રીતે ત્રણેથી તે બદ્ધાયુષ્ક ( આયુનો બંધ કરનાર ) થઈ શકે છે.  
એજ પ્રમાણે વૈમાનિક દેવોના વિષયમાં પણ સમજવું કારણ કે વૈમાનિક દેવો  
પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત ( બદ્ધ ) આયુવાળા પણ હોય છે અને દેશવિરતિથી  
નિર્વર્તિત આયુવાળા એવો પણ વૈમાનિક હોય છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ  
છે કે અણુવ્રતી અને મહાવ્રતી એવ દેવ આયુનો જ બંધ કરે છે. ( અણુવ્યય  
મહવ્યયાદં ન લહ્દ દેવાડયં મોક્તું ) અણુવ્રતો અને મહાવ્રતોનું પાલન એજ  
એવ કરે છે કે જેને દેવ આયુનો બંધ થઈ ગયો હોય છે બાકીના આયુષ્ક  
બંધવાળા એવો અણુવ્રતો અને મહાવ્રતોને પાળી શકતા નથી, એવો સિદ્ધાં-  
તનો મત છે—તેઓ અપ્રત્યાખ્યાની જ હોય છે. તેઓ મરીને દેવગતિમાં જ  
જાય છે કારણ કે—( નિઃશીલવ્રતીત્વં ચ સર્વેષામ્ ) એવું આગમમાં કહ્યું છે. આ  
વાતને ધ્યાનમાં રાખીને અહીં ( તિણિ વિ ) આ પદનો પ્રયોગ થયો છે કહેવાનું



પ્રત્યાહ્યાનકરણાનન્તરમ્ પ્રત્યાહ્યાનરદ્વાયુષ્યં મનિવાદયન્તિ—‘જીવા ણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ?’ ગૌતમઃ પુચ્છન્તિ—‘હે મદન્ત ! જીવાઃ સન્તુ કિં પ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ ? પ્રત્યાહ્યાનેન નિર્વર્તિતં નિષ્ણાદિતમ્ વદમ્ આયુષ્કં વેપાં તે તથોક્તાઃ ભવન્તિ કિમ્ ? અથવા ‘અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ?’ અપ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ અપ્રત્યાહ્યાનેન નિર્વર્તિતં વદમ્ આયુષ્કં વેપાં તે તથોક્તા ભવન્તિ કિમ્ ? અથવા ‘પચ્ચક્ષ્ણાણપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ?’ પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ ? પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાનેન નિર્વર્તિતં વદમ્ આયુષ્કં વેપાં તે તથોક્તા ભવન્તિ કિમ્ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા ! જીવા ય, વેમાણિયા ય પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા તિણિગિ’ હે ગૌતમ ! જીતાથ પ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કા ભવન્તિ એવં વેમાનિકાથ પ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કા ભવન્તિ, ત્રીણ્યપિ,

કરતે હેં ? હસ ચાત કો પ્રશ્નસે પૂછતે હેં—‘જીવા ણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા’ હે મદન્ત ! જીવ કયા એસે મી રોતે હેં જો પ્રત્યાહ્યાનસે આયુષ્કકા વંધ કરતે હેં ? અથવા—( અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ) અપ્રત્યાહ્યાનસે વે વદ્વાયુષ્ક હોતે હેં ? અથવા ( પચ્ચક્ષ્ણાણપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ) પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાનસે આયુષ્કર્મ કા વંધ કરતે હેં ? હસકે ઉત્તરમેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( જીવા ય વેમાણિયા ય પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા તિણિગિ વિ ) જીવ પ્રત્યાહ્યાનસે નિર્વર્તિત હૈ—વદ્દ હૈ આયુષ્ય જિન્હોં કા એસા હોતા હૈ, અપ્રત્યાહ્યાનસે નિર્વર્તિત આયુષ્કવાલે હોતે હેં ઓર દેશચિરતિ સે નિર્વર્તિત આયુષ્કવાલે હોતે હેં । અર્થાત્ જીવ અમી જિસ પર્યાયમેં હેં ઉસ પર્યાયકી

આદિ દ્વારા જીવ શું આયુષ્કનો પણ બંધ કરે છે ? એજ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—

( જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ? ) હે ભદન્ત ! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે પ્રત્યાહ્યાનથી આયુષ્કનો બંધ કરતા હોય છે ? અથવા—( અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ) શું તેઓ અપ્રત્યાહ્યાનથી આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? અથવા ( પચ્ચક્ષ્ણાણપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ? ) શું તેઓ પ્રત્યાહ્યાના—પ્રત્યાહ્યાનથી આયુષ્કનો બંધ કરતા હોય છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જીવા ય વેમાણિયા ય પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા તિણિગિ વિ ) જીવ પ્રત્યાહ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુષ્યવાળા પણ હોય છે, અપ્રત્યાહ્યાનથી નિર્વર્તિત ( બદ્ધ ) આયુષ્યવાળા પણ હોય છે, અને પ્રત્યાહ્યાના—પ્રત્યાહ્યાનથી ( દેશચિરતિથી ) બદ્ધ આયુષ્યવાળા પણ હોય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવ

‘પ્રત્યાખ્યાનમ્’ इत्येतदर्थः एको दण्डकः, तथा ‘जानाति’ इत्येतदर्थो द्वितीयो दण्डकः, एवम् ‘करोति’ इत्येतदर्थस्तृतीयो दण्डकः, त्रीण्येव-प्रत्याख्यानम्, अप्रत्याख्यानम्, प्रत्याख्यानप्रत्याख्यानं चेति त्रीणि जानाति, करोति, तथा ‘आयुष्कनिर्वृत्तिः’ इत्येतदर्थस्तुतुर्थो दण्डको विज्ञातव्यः, तदुपसंहरन्नाह-सप्रदेशोद्देशो च एवम् उक्तप्रकारेण एते उपर्युक्ताः चत्वारो दण्डकाः प्रतिपादिताः॥१॥ अन्ते गौतमो भगवद्वाक्यं स्वीकुर्वन्नाह-‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! तदेवं भवदुक्तं सर्वं सत्यमेव, हे भदन्त ! तदेवं भवदुक्तं सर्वं सत्यमेवेति ॥ सू० २ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री-यासीलालप्रति विरचितायं श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां पष्ठशतकस्य चतुर्थोद्देशकः

कही है उससे सूत्रकारने यह समझाया है कि इस सप्रदेश उद्देशक में जो अभी प्रत्याख्यान आदि विषयक प्रकरण कहा है उसमें यह २ अर्थ संग्रहीत किया गया है—इसमें प्रत्याख्यान विषयक एक दण्डक है तथा अप्रत्याख्यानादिकों को जाननेरूप द्वितीय दण्डक है, प्रत्याख्यान आदि को करनेरूप तृतीय दण्डक है एवं प्रत्याख्यानादि द्वारा निर्वर्तितायुष्क का चतुर्थ दण्डक है । अन्तमें गौतम भगवान के वाक्य को स्वीकार करते हुए उन से कहते हैं कि ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! आपके द्वारा कहा गया यह सब विषय सर्वथा सत्य ही है हे भदन्त ! सर्वथा सत्य ही है ॥ सू० २ ॥

चतुर्थ उद्देशक संपूर्ण ॥ ६-६ ॥

આદિ વિષયક પ્રકરણ અહીં આપ્યું છે તેમાં નીચેના વિષયોનો સંગ્રહ કરવામાં આવ્યો છે—(૧) તેમાં પ્રત્યાખ્યાન વિષયક એક દંડક છે. (૨) પ્રત્યાખ્યાન આદિકોને જાણવા વિષેનું ત્રીજું દંડક છે, (૩) પ્રત્યાખ્યાન આદિ કરવા રૂપ ત્રીજું દંડક છે. (૪) અને પ્રત્યાખ્યાન આદિ દ્વારા નિર્વર્તિતાયુષ્કનું ચોથું દંડક છે.

અન્તે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુનાં વચનો સ્વીકાર કરતાં કહે છે—(સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ ) હે ભદન્ત ! આપે આ વિષયનું જે પ્રતિપાદન કર્યું તે સત્ય છે. હે ભદન્ત ! આપનાં વચનો યથાર્થ જ છે. એમ કહીને વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ તેમને સ્થાને ત્રિરાજમાન થઇ ગયા. ॥ સૂ. ૨ ॥

॥ છઠ્ઠા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૬-૪ ॥



કિન્તુ-‘ અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા ’ અવશેષા નૈરયિકાદયસ્તુ નૈરયિકાદારમ્ભ્ય ભવનપતિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષ્કપર્યન્તા અપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુક્કા એવ ભવન્તિ, નૈરયિકાદિયુ વસ્તુતો વિરતિરહિતાનામૈવોત્પાદાત્, । અથ ઉક્તાર્થ-સંગ્રહગાથામાહ-‘ પચ્ચક્ષણં જાણહ, કુન્વહ, તિન્નેવ આઝનિવ્વત્તી ।

સપણસુદેસમ્મિ ય, એમેદ્દ દંડગા ચડસે ॥ ૧ ॥ ઇતિ

ऐसा पद कहा गया है कि वैमानिक देवों में प्रत्याख्यानानादि तीनोंवालों का उत्पाद होता है । परन्तु ( अवसेसा अपचचक्खाणनिव्वत्तियाडया ) घाकी के जो नैरयिक से लेकर वानव्यन्तर एवं ज्योतिष्क तक के जीव हैं वे अप्रत्याख्यान निर्वर्तितायुष्क ही होते हैं । क्योंकि इन में जिन जीवों से पहिले चिरति का पालन नहीं किया होता है उनका ही उत्पाद होता है । अतः नैरयिक आदि जीवरूप से वे ही जीव उत्पन्न होते हैं जो पूर्व में चिरति से रहित होते हैं । इसी कारण यहां ( अवसेसा पचचक्खाणनिव्वत्तियाडया ) ऐसा कहा है । भावार्थ यही है कि सामान्यरूप जीव तीनों द्वारा निर्वर्तितायुष्क होते हैं-वैमानिक देव भी इसी तरह के होते हैं परन्तु नारक भवनपति, व्यन्तर और ज्योतिषिक जीव ऐसे नहीं होते हैं वे तो अप्रत्याख्यानद्वारा ही निर्वर्तितायुष्क होते हैं । यहां जो ( पचचक्खाणं-जाणह, कुन्वह तिन्नेव आउनिव्वत्ती ) इत्यादि गाथा

તાત્પર્ય એ છે કે વૈમાનિક દેવોમાં પ્રત્યાખ્યાનાદિ ત્રણેવાળા જીવોનો ઉત્પાદ થાય છે. પરન્તુ ( અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા ) બાકીના જે નારકથી લઈને વાનવ્યન્તર અને જ્યોતિષિક પર્યન્તના જીવો છે તેઓ અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા જ હોય છે-તેઓ અપ્રત્યાખ્યાનથી જ આયુનો બંધ કરતા હોય છે, કારણ કે જે જીવોએ પહેલાં વિરતિનું પાલન કર્યું નથી એવાં જીવોનો જ તેમાં ઉત્પાદ થાય છે. તેથી નારક આદિ જીવોએ જીવો જ ઉત્પન્ન થાય છે કે પૂર્વભવમાં વિરતિથી રહિત હોય છે. એજ કારણે અહીં ( અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા ) એવું કહ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સામાન્ય રૂપ જીવ પ્રત્યાખ્યાન આદિ ત્રણ વડે આયુનો બંધ કરે છે, વૈમાનિક દેવો પણ એવાં જ હોય છે, પરન્તુ નારક, ભવનપતિ, વ્યન્તર અને જ્યોતિષિક દેવો એવાં હોતા નથી. તેઓ તો અપ્રત્યાખ્યાન વડે જ આયુનો બંધ કરતા હોય છે.

અહીં જે ( પચ્ચક્ષણં જાણહ કુન્વહ તિન્નેવ આઝનિવ્વત્તી ) ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર એ સમજાવે છે કે આ સમ્પ્રદેશ ઉદ્દેશકમાં જે પ્રત્યાખ્યાન

વિષ્કંભ-પરિક્ષેપવિષયકઃ પ્રશ્નઃ, । સંખ્યેયસદસ્યયોજનવિસ્તૃતાઽસંખ્યેયસદસ્ય-  
યોજનવિસ્તૃતભેદેન તમસ્કાયસ્ય દ્વિવિધત્વપ્રતિપાદનમ્ । તન્ન સંખ્યેયસદસ્યયોજન-  
વિસ્તૃતતમસ્કાયસ્ય અતિશોઘ્રદેવગત્યા ગમને પડ્માસૈઃ કથંચિત્ પ્રાપ્યત્વસંભવેઽપિ  
અસંખ્યાતયોજનવિસ્તૃતતમસ્કાયસ્ય સર્વથા અપ્રાપ્યત્વકથનદ્વારા તસ્ય દૈર્ઘ્યસ્થૂલત્વા-  
દિવિષયકપ્રશ્નોત્તરમ્ । તમસ્કાયે ગૃહ-ઘટ્ટ-યાવત્-સન્નિવેશાન્તા ભવન્તિ કિમ્?, ઇતિ  
વિષયકપ્રશ્નસ્ય નિષેધાત્મકમુત્તરમ્ । તમસ્કાયે મશમેયસ્ય સંસ્વેદનસંમૂર્ચ્છિતવર્ષણં  
ભવતિ કિમ્? ઇતિ વિષયકપ્રશ્નસ્ય સ્વીકારાત્મકમુત્તરમ્ । સંસ્વેદનાદીનાં દેવાસુરનાગક-

તમસ્કાય કે વિષ્કંભ ઓર પરિક્ષેપ કે વિષયમેં પ્રશ્ન, સંખ્યાત હજાર  
યોજન તક વિસ્તૃત ઓર અસંખ્યાત હજાર યોજન તક વિસ્તૃત હસ  
પ્રકાર સે તમસ્કાય કે દો ભેદોં કા કથન-સંખ્યાત હજાર યોજન વિસ્તૃત  
તમસ્કાય હતની વઢી દીર્ઘતા એવં સ્થૂલતાદિવાલા હૈ કિ અતિ શીઘ્રગતિ  
વાલા દેવ યદિ છહ મહીને તક ચલે તો વહ ઉસે વઢી મુશ્કિલ સે પ્રાપ્ત  
કર સકતા હૈ અર્થાત્ ઉસકા પાર પા સકતા હૈ પરન્તુ જો અસંખ્યાત  
હજાર યોજન તકકા વિસ્તૃત તમસ્કાય હૈ ઉસકા તો કોઈ મી પાર નહીં  
પા સકતા હૈ-એસા ઉત્તરરૂપ કથન, તમસ્કાયમેં કયા ઘર હૈ, હાટ હૈ ?  
ગાંવ હૈ ? યાવત્ સન્નિવેશ હૈ ? એસા પ્રશ્ન ઓર ઉસમેં સબ કુછ નહીં  
હૈ એસા ઉત્તર, તમસ્કાય મેં વઢેર મેઘ કયા પસીજતે હૈ ? ઉસમેં વે કયા  
સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈ ? વરસતે હૈ ? એસા પ્રશ્ન હાં ઉસમેં યહ સબ હોતા હૈ  
એસા ઉત્તર વે સંસ્વેદન તથા વર્ષણ આદિ કૌન કરતે હૈ ? દેવ કરતે હૈ ।

છે. તમસ્કાયના વિષ્કંભ ( વિસ્તાર ) અને પરિક્ષેપના વિષયમાં પ્રશ્ન, સંખ્યાત  
હજાર યોજન સુધી વિસ્તૃત અને અસંખ્યાત હજાર યોજન સુધી વિસ્તૃત,  
આ પ્રમાણે તમસ્કાયના બે ભેદોનું કથન. સંખ્યાત હજાર યોજન ॥ વિસ્તાર-  
વાળો તમસ્કાય એવડી મોટી દીર્ઘતા અને સ્થૂલતા આદિથી સુજ્ઞ છે કે  
અતિશય શીઘ્રતાવાળો દેવ જો છ મહિના સુધી ચાલ્યા કરે તો મહા મુશ્કે-  
લીથી તે તેનો પાર પામી શકે છે. પરન્તુ અસંખ્યાત હજાર યોજનના વિસ્તારનો  
જો તમસ્કાય છે તેનો પાર પામવાનું કોઈનાથી શક્ય બનતું નથી.

પ્રશ્ન—શું તમસ્કાયમાં ઘર છે ? હાટ છે ? ગામ છે ? સન્નિવેશ  
પર્યન્તનાં સ્થાનો છે ? ઉત્તર—તેમાં એવું કંઈ પણ નથી.

પ્રશ્ન—શું મોટા મોટા મેઘ તમસ્કાયમાં પસીજે ( ભીંજાય ) છે ખરાં ?  
શું તેઓ તેમાં સંમૂર્ચ્છિત ( એકત્રિત ) થાય છે ? વરસે છે ?

ઉત્તર—હા, તેમાં એ બધું થાય છે.

પ્રશ્ન—તે સંસ્વેદન તથા વર્ષણ આદિ કોણ કરે છે ? ઉત્તર—દેવો કરે છે.

पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते—

पष्ठशतके पञ्चमोऽंशस्तस्य संक्षिप्तविवरणविरणम् ।

कोऽयं तमस्कृत्यपदार्थः, किम् पृथिवी तमस्कृत्यः ? भाषो वा तमस्कृत्य इत्यु-  
च्यते?, इति प्रश्नः, अण्वयिकपरिणामएव तमस्कृत्यः इत्युत्तरम् । अण्वय-तमस्कृ-  
तयोः समानस्वभावत्वायास्तत्र हेतुत्वकथनं च । ततः तमस्कृत्यस्य प्रारम्भ-  
समाप्त्योरवधिविषयकः प्रश्नः अण्वोदधिरासृष्टात्तमस्कृत्यस्य प्रारम्भः, तत्र कोके  
तस्य समाप्तिरित्युत्तरम् । ततः तमस्कृत्यस्याकारविषये प्रश्नः । अधोभागे शराय-  
बुध्नवत्, उपरिभागे कुक्कुटपञ्जराकाशवत्, इति उत्तरम् । ततः तमस्कृत्यस्य

॥ छठे शतक के पांचवा उद्देशक प्रारंभ ॥

इस शतकके इस पंचम उद्देशक में जो विषय कहा है उसका विवरण संक्षेप से इस प्रकार है—

तमस्काय क्या पदार्थ है ? क्या वह पृथिवीरूप है ? या जलरूप है ?  
ऐसा प्रश्न—अप्कायिक का परिणाम ही तमस्काय है ऐसा उत्तर, तम-  
स्काय और अप्कायिकी समान स्वभावता का कथन और इसमें हेतु-  
प्रदर्शन, तमस्काय के प्रारंभ होनेके विषय में और इसकी समाप्ति होने  
के विषयमें प्रश्न, अरुणोदयसमुद्र से तमस्काय का प्रारंभ कथनरूप और  
ब्रह्मलोक में समाप्ति कथनरूप उत्तर; तमस्काय का आकार कैसा होता  
है ऐसा प्रश्न, नीचेमें इसका आकार शरीरबुध्नकी तरह होता है और  
ऊपर भागमें कुक्कुट के पंजरके आकार जैसा होता है ऐसा उत्तर,

શતક છ ઉદ્દેશક પાંચમો—

ଆ. ଉଦ୍ଦେଶ୍ୟର ଆବତ୍ତା ବିଷୟରୁ ସଂକ୍ଷିପ୍ତ ପ୍ରତିପାଦନ—

પ્રશ્ન—તમસ્કાય શું છે? શું તે પૃથ્વીરૂપ છે કે જળરૂપ છે ?

ઉત્તર—અપૂકાયિકનું પરિણામ જ તમસ્કાય છે. તમસ્કાય અને અપૂકાયની સમાન સ્વભાવતાનું કથન અને તેના કારણનું પ્રતિપાદન.

તમસ્કાયનો પ્રારંભ થવાને વિષે અને તેની સમાપ્તિ થવા વિષે પ્રશ્ન, અરુણોદય સમુદ્રમાંથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે અને પ્રલયકાળમાં સમાપ્તિ થાય છે એવું કથન. પ્રશ્ન—તમસ્કાયનો આકાર કેવો હોય છે ?

ઉત્તર—નીચેના ભાગમાં તેનો આકાર શરવણુધનના જેવો (માટીનાં કેડિયાના તળિયા જેવો) હોય છે, અને ઉપરના ભાગમાં ઢૂકડાના પાંજરા જેવો હોય



કથનમ્, પૃથિવીપરિણામનિગેધથ । તમસ્કાયે સમસ્તજીવાનામનન્તવારમુત્પાદઃ, કિન્તુ નો વાદરપૃથિવીરૂપેણ, નો વાદરાગ્નિરૂપેણ વા । તતઃ અષ્ટવિધકૃષ્ણ-રાજીનામભિવાનમ્ । તાસાં ચ સનત્કુમાર-માહેન્દ્રકલ્પયોરુપરિ બ્રહ્મલોક-સ્યાધોમાગે ચ રિષ્ટવિમાનમસ્તટે સ્થિતિપ્રતિપાદનમ્ । આસાં ચ આકારઃ મહ્યક્રીડા-સ્થાન ( અલાડા ) વત્ ચતુરસ્રઃ । પૂર્વપશ્ચિમદક્ષિણોત્તરદિગ્ભાગેષુ ચતુર્ણાં પ્રત્યેકં દે દે કૃષ્ણરાજી સ્તઃ । તાથ સર્વાઃ પરસ્પરં સ્પૃષ્ઠાઃ સમ્બદ્ધાથ સન્તિ । એતાસામા-યામ-વિષ્કમ્ભ-પરિક્ષેપવિષયે વિચારઃ, કૃષ્ણરાજિપુ ગૃહાદિવિચારસ્તમસ્કાયવદેવ, વિશેષઃ કેવલં તત્ર મેઘાનાં સંસ્વેદનાદિકં દેવ એવ કરોતિ-ઇતિ । કૃષ્ણરાજીનામષ્ટ

પુદ્ગલ કા પરિણામ તમસ્કાય હૈ । પર પૃથિવી કા પરિણામ તમસ્કાય નહીં હૈ એસા કથન તમસ્કાય મેં સમસ્ત જીવોં કા અનન્તવાર ઉત્પાદ હુઆ હૈ પર ઉનકા યહાં વાદર પૃથિવીરૂપ સે ઓર વાદર અગ્નિરૂપસે ઉત્પાદ નહીં હુઆ હૈ એસા કથન આઠ પ્રકાર કી કૃષ્ણરાજિયોં કા કથન ઇનકા અવ-સ્થાન ડપરમેં સનત્કુમાર માહેન્દ્રકલ્પ મેં હૈ ઓર નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પમેં, અરિષ્ટવિમાન કે પાથડે મેં હૈ એસા કથન ઇનકા આકાર અલાડેકે જૈસા ચૌકોર હૈ પૂર્વ પશ્ચિમ ઓર ઉત્તર દક્ષિણ ઇન ચાર દિશાઓ મેં સે પ્રત્યેક દિશા મેં દો-દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈ । યે સવ કૃષ્ણરાજિયાં આપસ મેં સ્પૃષ્ઠ ઓર સંબદ્ધ હૈ । ઇનકે આયામ, વિષ્કંભ ઓર પરિક્ષેપ કે વિષયમેં વિચાર । તમસ્કાય કી તરહ હી ઇનમેં કૃષ્ણરાજિયાં મેં ગૃહાદિ કા વિચાર યહાં વિશેષતા કેવલ ઇતની હી હૈ કિ ઇનમેં મેઘોં કા સંસ્વેદન આદિ દેવ હી કરતા હૈ । કૃષ્ણરાજિયાં પૃથિવી કે પરિણામરૂપ હૈ । અપ્-જલ

તમસ્કાયમાં સમસ્ત જીવોનો અનંતવાર ઉત્પાદ થયો છે, પણ તેમનો ત્યાં બાદર પૃથ્વીરૂપે અને બાદર અગ્નિરૂપે ઉત્પાદ થયો નથી એવું કથન. આઠ પ્રકારની કૃષ્ણરાજીઓનું કથન. તેમનું અવસ્થાન ઉપર સનત્કુમાર માહેન્દ્ર કલ્પમાં છે અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં, અરિષ્ટ વિમાનના પાથડામાં છે એવું કથન. આકાર તેમનો અખાડાના જેવો-ચતુષ્કોણ જેવો છે. પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ એ ચારે દિશાઓમાંની પ્રત્યેક દિશામાં બે, બે કૃષ્ણરાજીઓ છે. તે બધી કૃષ્ણરાજીઓ એક બીજી સાથે સ્પૃષ્ઠ અને સંબદ્ધ છે. તમસ્કાયની જેમજ એ કૃષ્ણરાજીઓમાં ઘર, દુકાન આદિનો વિચાર. અહીં વિશેષતા એટલી જ છે કે તે કૃષ્ણરાજીઓમાં મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ દેવ જ કરે છે. તે કૃષ્ણરાજીઓના આયામ ( લંબાઈ ), વિષ્કંભ ( પહોળાઈ ) અને પરિક્ષેપ ( પરિધી ) નો વિચાર. કૃષ્ણરાજીઓનાં આઠ નામ. તે કૃષ્ણરાજીઓ પૃથ્વીના પરિણામરૂપ

ત્વંકતયા પ્રતિપાદનં ચ। તતઃ તમસ્કાયં વાદરસ્તનિતસ્ય વાદરિયુતશ્ચ દેવમમોત્પાદિ  
તાયાઃ દેવકૃતત્વેન પ્રતિપાદનમ્। તમસ્કાયં વિગ્રહગત્યાવનનિવ્યયોઃ વાદરપૃથિવી-  
વાદરાગ્ન્યોર્નિષેધકરણમ્। તમસ્કાયં ચન્દ્રસૂર્યમશ્રુતીનામ્ પ્રતિષેધઃ, તત્પાર્થ્યં તેનાં  
પ્રતિપાદનં ચ। તતઃ તમસ્કાયં ચન્દ્રસૂર્યાદિપ્રમાણામપિ તમસ્કાયરૂપતયા પરિણામેન  
અભાવસદૃશત્વમેવેતિ પ્રતિપાદનમ્। તતઃ તમસ્કાયસ્ય કૃષ્ણઃ મહાકૃષ્ણઃ, અત્ય-  
ધિકકૃષ્ણશ્ચ વર્ણઃ, અતઃ સ મહાભયદ્રઃ, દેવાનામપિ ભય-ક્ષોભોત્પાદકશ્ચ। તતઃ  
તમસ્કાયસ્ય ત્રયોદશનામકથનમ્। તતઃ તમસ્કાયસ્ય અસ્કાયજીવ-પુદ્ગલપરિણામ-

કોન સે દેવ ! અસુરકુમાર વા નાગકુમાર ? જે સવ કરતે હું એસા કથન  
ઉત્તર તમસ્કાય મેં વાદર સ્તનિત શબ્દ ( ગર્જિત શબ્દ ) ઓર વાદર  
ચિયુત્ત્વ इनको देव करते हूं ऐसा कथन तमस्काय मे विग्रहगति समापन  
से भिन्न वादर पृथिवीकाय, वादर अग्निकाय नहीं है ऐसा प्रतिपादन  
तमस्कायमें चन्द्र सूर्य आदि का प्रतिषेध और इनका उसकी याजू में  
रहने का कथन तमस्काय में चन्द्रसूर्यादि की प्रभा भी तमस्कायरूप से  
परिणामित हो जाती है इसलिये वह वहाँ एक तरह से नहीं जैसी है।  
तमस्कायका वर्ण, कृष्ण, महाकृष्ण, अत्यधिककृष्ण है, अतः वह महा-  
भयप्रद है, देवों को भी भय और क्षोभ उत्पन्न करनेवाला है, ऐसा  
तमस्काय के तेरह नाम। तमस्काय किसका परिणाम है ? पृथिवी का ?  
पानी का ? या जीव च पुद्गल का ? पानी का परिणाम तमस्काय है, जीव

પ્રશ્ન—કયા દેવો ? અસુરકુમાર કે નાગકુમાર ?

ઉત્તર—તે બધાં કરે છે. તમસ્કાયમાં વાદર સ્તનિત શબ્દ ( ગર્જનાનો  
અવાજ ) અને વાદર વિયુત દેવો કરે છે, એવું કથન. તમસ્કાયમાં વિગ્રહગતિ  
સમાપન એવો સિવાયના વાદર પૃથ્વીકાય અને વાદર અગ્નિકાય એવો નથી  
એવું પ્રતિપાદન. તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર, સૂર્ય આદિનો પ્રતિષેધ ( ન હોવાનું કથન )  
અને તેઓ તેની બાજુમાં રહે છે એવું કથન, તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર-સૂર્યાદિની  
પ્રભા પણ તમસ્કાય રૂપે પરિણમન પામે છે, તે કારણે એક રીતે તો તે નહીં  
જેવી જ હોય છે. તમસ્કાયનો વર્ણ કૃષ્ણ, મહાકૃષ્ણ અને અત્યધિક કૃષ્ણ  
હોય છે, તેથી તે ઘણો ભયજનક લાગે છે, તે દેવોમાં પણ ભય અને ક્ષોભ  
ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે, એવું કથન. તમસ્કાયના તેર નામ.

પ્રશ્ન—તમસ્કાય કોનું પરિણામ છે ? શું પૃથ્વીનું પરિણામ છે ? કે પાણીનું  
પરિણામ છે ? કે જીવ અથવા પુદ્ગલનું પરિણામ છે ?

ઉત્તર—તમસ્કાય પાણીનું પરિણામ છે, જીવ પુદ્ગલનું પરિણામ છે,  
પણ પૃથ્વીનું પરિણામ તમસ્કાય નથી એવું કથન.



કથનમ્, પૃથિવીપરિણામનિષેધઃ । તમસ્કાયે સમસ્તજીવાનામનન્તવારમુત્પાદઃ, કિન્તુ નો વાદરપૃથિવીરૂપેણ, નો વાદરાગ્નિરૂપેણ વા । તતઃ અષ્ટવિધકૃષ્ણ-રાજીનામભિધાનમ્ । તાસાં ચ સનત્કુમાર-માહેન્દ્રકલ્પયોરુપરિ બ્રહ્મલોક-સ્યાધોમાગે ચ રિષ્ટવિમાનપ્રસ્તટે સ્થિતિપ્રતિપાદનમ્ । આસાં ચ આકારઃ મલ્લક્રીડા-સ્થાન ( અલાડા ) વત્ ચતુરસ્રઃ । પૂર્વપશ્ચિમદક્ષિણોત્તરદિગ્ભાગેષુ ચતુર્ણાં પ્રત્યેકં દે દે કૃષ્ણરાજી સ્તઃ । તાથ સર્વાઃ પરસ્પરં સ્પૃષ્ઠાઃ સમ્બદ્ધાથ સન્તિ । એતાસામા-યામ-વિષ્કંભ-પરિક્ષેપવિષયે વિચારઃ, કૃષ્ણરાજિષુ ગૃહાદિવિચારસ્તમસ્કાયવદેવ, વિશેષઃ કેવલં તત્ર મેઘાનાં સંસ્વેદનાદિકં દેવ એવ કરોતિ-ઇતિ । કૃષ્ણરાજીનામષ્ટ

પુદ્ગલ કા પરિણામ તમસ્કાય હૈ । પર પૃથિવી કા પરિણામ તમસ્કાય નહીં હૈ એસા કથન તમસ્કાય મેં સમસ્ત જીવોં કા અનન્તવાર ઉત્પાદ હુઆ હૈ પર उनका यहाँ वादर पृथिवीरूप से और वादर अग्निरूपसे उत्पाद नहीं हुआ है ऐसा कथन आठ प्रकार की कृष्णराजियों का कथन इनका अव-स्थान ऊपरमें सनत्कुमार माहेन्द्रकल्प में है और नीचे ब्रह्मलोक कल्पमें, अरिष्टविमान के पाथडे में है ऐसा कथन इनका आकार अलाडेके जैसा चौकोर है पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण इन चार दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में दो-दो कृष्णराजियां हैं । ये सब कृष्णराजियां आपस में स्पृष्ट और संबद्ध हैं । इनके आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप के विषयमें विचार । तमस्काय की तरह ही इनमें कृष्णराजियां में गृहादि का विचार यहां विशेषता केवल इतनी ही है कि इनमें मेघों का संस्वेदन आदि देव ही करता है । कृष्णराजियां पृथिवी के परिणामरूप हैं । अप्र-जल

તમસ્કાયમાં સમસ્ત જીવોનો અનંતવાર ઉત્પાદ થયો છે, પણ તેમનો ત્યાં બાદર પૃથ્વીરૂપે અને બાદર અગ્નિરૂપે ઉત્પાદ થયો નથી એવું કથન. આઠ પ્રકારની કૃષ્ણરાજીઓનું કથન. તેમનું અવસ્થાન ઉપર સનત્કુમાર માહેન્દ્ર કલ્પમાં છે અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં, અરિષ્ટ વિમાનના પાથડામાં છે એવું કથન. આકાર તેમનો અખાડાના જેવો-ચતુષ્કોણ જેવો છે. પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ એ ચારે દિશાઓમાંની પ્રત્યેક દિશામાં બે, બે કૃષ્ણરાજીઓ છે. તે બધી કૃષ્ણરાજીઓ એક બીજી સાથે સ્પૃષ્ટ અને સંબદ્ધ છે. તમસ્કાયની જેમજ એ કૃષ્ણરાજીઓમાં ઘર, દુકાન આદિનો વિચાર. અહીં વિશેષતા એટલી જ છે કે તે કૃષ્ણરાજીઓમાં મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ દેવ જ કરે છે. તે કૃષ્ણરાજી-ઓના આયામ ( લંબાઈ ), વિષ્કંભ ( પહોળાઈ ) અને પરિક્ષેપ ( પરિધી ) નો વિચાર. કૃષ્ણરાજીઓનાં આઠ નામ. તે કૃષ્ણરાજીઓ પૃથ્વીના પરિણામરૂપ

નામાનિ કૃષ્ણરાજયઃ પૃથિવીરણિમાનઃ નો અપરિણામાઃ તત્ત્વસર્વે પ્રાણભૂતજીવસત્ત્વા  
અનન્તકૃત્વઃ પૂર્વમૃત્વનાઃ આસન્ સ્થિતુ વાદરજગ્નિજાતિરુપેણ નોત્પન્નત્વાઃ ।  
एतां सामवकाशान्तरेषु अर्चिः, अर्चिर्माली, वैरोचनम्, प्रभङ्करः, चन्द्राभः, सूर्याभः,  
शुक्राभः, सुप्रतिष्ठाभः, इत्येतानि अष्टौ विमानानि मध्ये मध्ये रिष्टावविमानं च, तत्राष्टौ  
लोकान्तिकदेवाः निवसन्ति, तथा हि-सारस्वतः १, आदित्यः २, वरुणः ३, गर्दतोयः ४,  
तुषितः ५, अव्यावाधः ६, आग्नेयः, ७ वरिष्ठः, ८ । एतत्सम्यग्निविचारान्तरं  
च । वायोराधारेण विमानस्थितिः । जीवाभिगमनसूत्रेणापि केवञ्चदेवत्वं  
विहाय सर्वे जीवाः पूर्वम् उत्पन्नाः, अष्टसागरोपमाणि लोकान्तिकदेवस्थितिः ।  
लोकान्तिकविमानात् लोकस्यान्तिमसंख्येययोनयानि दूरमिति ॥

કે પરિણામરૂપ નહીં છે । इनमें समस्त प्राण-समस्त भूत, समस्त जीव  
और समस्त सत्त्व अनन्तवार पहिले उत्पन्न हो चुके हैं । परन्तु ये सब  
वादर जलरूप से वादर अग्निरूप से और वादर वनस्पतिरूप से पहिले  
वहां उत्पन्न नहीं हुए हैं । इन राजियों के आठ अवकाशान्तरों में अर्चि,  
अर्चिर्माली, वैरोचन, प्रभङ्कर, चन्द्राभ, सूर्याभ, शुक्राभ, सुप्रतिष्ठाभ  
ये आठ विमान और इन विमानों के बीच बीच में रिष्टाभविमान है  
ऐसा कथन इनमें आठ लोकान्तिक देव रहते हैं-लोकान्तिक देवों के नाम  
( सारस्वत, आदित्य, वरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्यावाध, आग्नेय और  
वरिष्ठ ) ये हैं । इनके संबंध में और भी विचार वायु के आधार से  
विमानस्थिति का कथन इन विमानों में भी जीवाभिगमनसूत्र के अनु-  
सार देव की पर्याय को छोड़कर समस्त जीव पहिले उत्पन्न हो चुके हैं ।  
आठ सागरोपम की सब लोकान्तिक देवों की स्थिति होती है । तथा

છે, જળના પરિણામરૂપ નથી. તેમાં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ  
અને સમસ્ત સત્ત્વ અનંતવાર ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે. પરન્તુ તેઓ બધાં બાદર  
જળરૂપે, બાદર અગ્નિરૂપે અને બાદર વનસ્પતિરૂપે પહેલાં ત્યાં ઉત્પન્ન થયા  
નથી તે રાજ્યોના આઠ અવકાશાન્તરોમાં અર્ચિ; અર્ચિમાત્રી, વૈરોચન,  
પ્રભંકર, ચન્દ્રાભ, સૂર્યાભ, શુક્રાભ અને સુપ્રતિષ્ઠાભ, એ આઠ વિમાન અને તે  
વિમાનોની વચ્ચેવચ્ચે રિષ્ટાભવિમાન - એવું કથન. તે વિમાનોમાં આઠ  
લોકાન્તિક દેવ રહે છે લોકાન્તિક દેવોનાં નામ-“ સારસ્વત, આદિત્ય, વરુણ,  
ગર્દતોય, તુષિત, અવ્યાબાધ, આગ્નેય અને વરિષ્ઠ. ” તેમના વિષયમાં વિશેષ  
વિચાર, વાયુને આધારે વિમાનસ્થિતિનું કથન, આ વિમાનોમાં પણ જીવા-  
ભિગમસૂત્ર અનુસાર દેવની પર્યાયને છોડીને સમસ્ત જીવ પહેલે પહેલે

તમસ્કાયવક્તવ્યતા ।

ચતુર્થોદ્દેશકે જીવાનાં સપ્રદેશત્વાદિકં નિરૂપિતમ્ અથ પશ્ચમોદ્દેશકે સપ્રદેશં તમસ્કાયાદિકં નિરૂપયિતુમાહ—‘ કિમયં ભંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

મૂળ—કિમયં ભંતે ! ‘ તમુક્કાણ ’ ત્તિ પઠ્વુચ્ચઈ, કિં પુઢવી તમુક્કાણ ત્તિ પઠ્વુચ્ચઈ, આઠ તમુક્કાણત્તિ પઠ્વુચ્ચઈ ? ગોયમા ! ગો પુઢવી તમુક્કાણત્તિ પઠ્વુચ્ચઈ, આઠ તમુક્કાણત્તિ પઠ્વુચ્ચઈ । સે કેળટ્ટેળં ? ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્થેગઈણ સુમે દેસં પગાસેઈ, અત્થેગઈણ દેસં ગો પગાસેઈ—સે તેળટ્ટેળં । તમુક્કાણ ણં ભંતે ! કહિં સમુટ્ટિણ, કહિં સંનિટ્ટિણ ? ગોયમા ! જંબૂદીવસ્સ વહિયાં તિરિયમસંખેજ્જે દીવસમુદ્દે વીર્ડવઈત્તા, અરુણવરંસં દીવસ્સ વાહિરિહ્હાઓ વેઈયંતાઓ અરુણોદયં સમુદં વાયાલીસં જોયણસહસ્સાણિ ઓગાહિત્તા ઉવરિહ્હાઓ જલંતાઓ ઇગપણ-સિયાણ સેઢીણ એત્થ ણં તમુક્કાણ સમુટ્ટિણ, સત્તરસ — એકવીસે જોયણસયાઈં ઉઢું ઉપ્પઈત્તા તઓ પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મી—સાળ—સળંકુમાર—માહિંદે ચત્તારિ વિ-કપ્પે આવરિત્તા ણં, ઉઢુંપિ ય ણં વંભલોગે કપ્પે રિટ્ઠવિમાણપત્થડં સંપત્તે—એત્થ ણં તમુક્કાણ ણં સંનિટ્ટિણ । તમુક્કાણ ણં ભંતે ! કિં સંઠિણ પપ્પણત્તે ? ગોયમા ! અહે મહ્ગમૂલસંઠિણ, ઉપ્પિં કુચ્ચકુલપંજરગસંઠિણ પપ્પણત્તે ! તમુક્કાણ ણં ભંતે ! કેવઈયં વિવલ્લં-ભેણં, કેવઈયં પરિવલ્લેવેણં પપ્પણત્તે ? ગોયમા ! તમુક્કાણ ણં દુવિહે પપ્પણત્તે, તં જહા—સંખેજ્જવિત્થડે ય, અસંખેજ્જવિત્થડે, ય । તત્થ

લોકાન્તિક વિમાન સે લોક કા અન્તિમભાગં અસંખ્યાત યોજન દૂર હૈ એસા કથન ॥

ચુકેલા છે. બધા લોકાન્તિક દેવોની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની હોય છે. તથા લોકાન્તિક વિમાનમાંથી લોકનો અન્તિમ ભાગ અસંખ્યાત યોજન દૂર છે એવું કથન.



णं जे से संखेज्जावित्थडे से णं संखेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खं-  
 भेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिव्खेवेणं पणत्ते, तत्थ  
 णं जे से असंखिज्जावित्थडे से णं असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं  
 विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिव्खेवेणं पणत्ते ।  
 तमुक्काए णं भंते ! के महालण पणत्ते ? गोयमा ! अयं णं  
 जंबुदीवे दीवे सब्बदीव-समुदाणं सब्बभंतराए, जाव-परि-  
 व्खेवेणं पणत्ते । देवेणं महिद्धीए, जाव-महाणुभावे इणामेव  
 त्ति कट्ठु केवलकप्पं जंबुदीवं दीवं तिहिं अच्छरानिवाएहिं  
 तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्ठित्ताणं हव्वं आगच्छिज्जा, से णं देवे ताए  
 उक्किट्ठाए, तुरियाए, जाव-देवगईए वीईवयमाणे वीईवयमाणे  
 जाव-एगाहं दुयाहं वा, तियाहं वा, उक्कोसेणं छम्मासे वीई-  
 वइज्जा, अत्थेगइयं तमुक्कायं वीईवइज्जा, अत्थेगइयं तमुक्कायं  
 णो वीईवएज्जा, एमहालएणं गोयमा ! तमुक्काए पणत्ते ।  
 अत्थि णं भंते ! तमुक्काए गेहाइ वा, गेहावणा इ वा ? णो इणट्ठे  
 समट्ठे । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए गामा इ वा, जाव-सन्निवेसा  
 इ वा ? णो इणट्ठे समट्ठे । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए उराला  
 वलाहया संसेयंति, संमुच्छंति, संवासंति वा ? हंता, अत्थि !  
 तं भंते ! किं देवो पकरेइ, असुरो पकरेइ, नागो पकरेइ ?  
 गोयमा ! देवो वि पकरेइ, असुरो वि पकरेइ, नागो वि पकरेइ ।  
 अत्थि णं भंते तमुक्काए वायरे थणियसदे, वायरे विज्जुए ?  
 हंता, अत्थि ! तं भंते ! किं देवो पकरेइ, असुरो पकरेइ, नागो

पकरेइ ? गोयमा ! तिणिणवि पकरेंति । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए  
वायरे पुढविकाए, वायरे अगणिकाए ? णो इणट्टे संमट्टे, णणत्थ  
विग्गहगइसमावन्नएणं । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए चंदिमस्सरिय-  
गहगण-णवत्त-तारारूवा ? णो इणट्टे समट्टे, पलिप्सुओ पुण  
अत्थि । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए चंदाभा इ वा, सूराभा इ  
वा ? णो इणट्टे समट्टे, कादूसणिया पुण सा । तमुक्काए णं भंते !  
केरिसए वन्नएणं पणत्ते ? गोयमा ! काले कालोभासे, गंभीर-  
लोमहरिसज्जणणे, भीमे, उत्तासणए, परमकिण्हेवणणे पणत्ते,  
देवे णं अत्थेगइए जेणं तप्पढमयाए पासित्ता णं खुभाएज्जा,  
अहे णं अभिसमागच्छेज्जा, तओ पच्छा सीहं सीहं, तुरियं २  
खिप्पासैव वीईवएज्जा । तमुक्कायस्स णं भंते ! कइ नामधेज्जा  
पणत्ता ? गोयमा ! तेरस नामधेज्जा पणत्ता, तं जहा-तमे इ  
वा १, तमुक्काए इ वा २, अंधयारे इ वा ३, महांधयारे इ वा ४,  
लोगंधयारे इ वा ५, लोगतमिस्से इ वा ६, देवंधयारे इ वा ७,  
देवतमिस्से इ वा ८, देवरणणे इ वा ९, देववूहे इ वा १०, देवफ-  
लिहे इ वा ११, देवपडिक्खोभे इ वा १२, अरुणोदए इ वा, समुद्दे १३,  
तमुक्काएणं भंते ! किं पुढवि परिणामे, आउपरिणामे, जीव-  
परिणामे, पोग्गलपरिणामे ? गोयमा ! णो पुढविपरिणामे,  
आउपरिणामे वि, जीवपरिणामे वि, पोग्गलपरिणामे वि ।  
तमुक्काएणं भंते ! सट्ठे पाणा भूया, जीवा सत्ता पुढवीकाइ-  
यत्ताए, जावतसकाइयत्ताए उववन्नपुट्ठा ? हंता, गोयमा !



અસદં અદુવા અણંત-વસુત્તો, ણો ચેવ ણં વાદરપુઢવિકાઙ્ગય-  
ત્તાણ, વાદરઅગણિકાઙ્ગયત્તાણ વા ॥ સૂ. ૦ ? ॥

છાયા—કિમ્ અપમ્ ભદન્ત ! તમસ્કાય ઇતિપોચ્યતે ? કિં પૃથિવીતમસ્કાય  
ઇતિ પોચ્યતે, આપઃ તમસ્કાય ઇતિ પોચ્યતે ? ગૌતમ ! નો પૃથિવીતમસ્કાય ઇતિ  
પોચ્યતે, આપઃ તમસ્કાય ઇતિ પોચ્યતે । તન્ કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! પૃથિવીઠાઓ-  
ઽસ્ત્યેકકઃ શુભોદેશં પ્રકાશયતિ, અસ્ત્યેકકો દેશં નો પ્રકાશયતિ, તન્ તેનાર્થેન ।

તમસ્કાય વ્યક્તવ્યતા

‘ કિમયં ભંતે । “ તમુક્કાણ ” ત્તિ પવુચ્ચઈ ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—( કિમયં ભંતે ! તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, કિં પુઢવિ  
તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ ) હે ભદન્ત ! વહ જો  
તમસ્કાય હે વહ કયા વદાર્થ હે—અર્થાત્ કિસ વદાર્થરૂપ વહ તમસ્કાય  
કહા ગયા હે ? કયા વહ તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ કહા ગયા હે યા વહ તમ-  
સ્કાય અપ્-જલરૂપ કહા ગયા હે ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ણો પુઢવિ  
તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ ) વહ તમસ્કાય  
પૃથિવીરૂપ નહીં કહા ગયા હે કિન્તુ વહ તમસ્કાય અપ્-જલરૂપ કહા  
ગયા હે । ( સે કેણદ્દેણં ) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે  
હેં કિ તમસ્કાય પૃથિવીરૂપ નહીં કહા ગયા હે કિન્તુ અપ્-જલરૂપ કહા  
ગયા હે ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( પુઢવિકાણં અત્થેગઈણ સુભે દેસં  
પગાસેઈ અત્થેગઈણ દેસં ણો પગાસેઈ, સે તેણદ્દેણં ) કિતનીક પૃથિવી-

તમસ્કાય વક્તવ્યતા—

“ કિ અયં ભંતે ! “ તમુક્કાર ” ત્તિ પવુચ્ચઈ, ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—( કિમયં ભંતે ! “ તમુક્કાણ ” ત્તિ પવુચ્ચઈ, કિં પુઢવો તમુક્કાણ  
ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ ? ) હે ભદન્ત ! આજે તમસ્કાય છે  
તે કયો વદાર્થ છે—એટલે કે તમસ્કાય કયા વદાર્થરૂપ છે ? શું તમસ્કાયને  
પૃથ્વીરૂપ કહેલ છે ? અથવા તો તેને જળરૂપ કહેલ છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( ણો પુઢવિ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ  
ત્તિ પવુચ્ચઈ ) તમસ્કાયને પૃથ્વીરૂપ કહું નથી, પણ તેને જળરૂપ કહું છે.

( સે કેણદ્દેણં ? ) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહેા છે કે  
તમસ્કાયને પૃથ્વીરૂપ કહું નથી પણ જળરૂપ કહું છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( પુઢવિકાણં અત્થેગઈણ સુભેદેસં પગાસેઈ,  
અત્થેગઈણ દેસં ણો પગાસેઈ, સે તેણદ્દેણં ) કેટલીક પૃથ્વીકાય એવી શુભ,

તમસ્કાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કુત્રઃ સમુત્થિતઃ, કુત્ર સંનિષ્ઠિતઃ ? ગૌતમ ! જમ્બૂદ્વીપસ્ય દ્વીપસ્ય વહિઃ તિર્યગસંશ્લેષ્યાન્ દ્વીપ-સમુદ્રાન્ વ્યતિવ્રજ્ય અરુણવરસ્ય દ્વીપસ્ય વાહ્યાદ્ વેદિકાન્તાદ્ અરુગોદકં સમુદ્રં દ્વાચત્વારિંશદ્યોજનસહસ્ત્રાણિ અવગાહ્ય ઉપરિતનાદ્ જલ્યાન્તાદ્ એકપ્રદેશિકયા શ્રેણ્યા-અત્ર સ્વલુ તમસ્કાયઃ સમુત્થિતઃ, સપ્ત-

કાય એસી શુભ હોતી હૈ કિ વહ દેશકો-એક ભાગ કો પ્રકાશિત કરતી હૈ । ઓર કિતનીક પૃથ્વીકાય એસી હોતી હૈ જો વહ દેશ કો-એક ભાગ કો પ્રકાશિત નહીં કરતી હૈ । ઇસ કારણ મૈને એસા કહા હૈ કિ તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ નહીં હૈ અપ્-જલરૂપ હૈ । (તમુક્કાએ નં મંતે ) કહિં સમુદ્રિય, કહિં સંનિદ્રિય ? ) હે ભદન્ત ! યહ તમસ્કાય કહાં સે પ્રારંભ હોતા હૈ ? ઓર કહાં ઇસકા અન્ત હોતા હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! (જંબૂદીવસ્સ વહિયા તિરિયમસંશ્લેજે દીવસમુદ્દે વીર્યવદ્ધતા, અરુણવરસ્સ દીવસ્સ વાહિરિલ્લાઓ વેદ્યંતાઓ અરુણોદયં સમુદ્રં વાયાલીસં જોયણ-સહસ્ત્રાણિ ઓગહિત્તા ઉવરિલ્લાઓ જલંતાઓ એગપ્પેસિયાએ સેઢીએ પ્થળં તમુક્કાએ સમુદ્રીએ ) જંબૂદ્વીપ કે વાહિર તિરછે અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોં કો ઉત્તલંચન-પાર કરને કે વાદ અરુણવર દ્વીપ આતા હૈ । ઇસ અરુણવર દ્વીપ કો ચારોં ઓર સે અરુણોદય સમુદ્ર વેરે હુએ હૈ । ઇસ સમુદ્ર કી વાહિરી વેદિકા કે અન્ત સે લેકર અરુણોદય સમુદ્ર મેં ૪૨ હજાર યોજન આગે જાને પર ઉપરિતન જલ્યાન્ત આતા હૈ । ઇસ ઉપરિ-

( દેદીપ્યમાન ) હોય છે કે તે દેશને ( એક ભાગને ) પ્રકાશિત કરે છે, અને કેટલીક પૃથ્વીકાય એવી હોય છે કે જે ક્ષેત્રના એક ભાગને પણ પ્રકાશિત કરતી નથી. હે ગૌતમ તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ નથી પણ જળરૂપ છે.

( તમુક્કાએ નં મંતે ! કહિં સમુદ્રિય કહિં સંનિદ્રિય ? ) હે ભદન્ત ! આ તમસ્કાયનો પ્રારંભ ક્યાંથી થાય છે અને ક્યાં તેની સમાપ્તિ થાય છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (જંબૂદીવસ્સ વહિયા તિરિયમસંશ્લેજે દીવસમુદ્દે વીર્યવદ્ધતા, અરુણવરસ્સ દીવસ્સ વાહિરિલ્લાઓ વેદ્યંતાઓ અરુણોદયં સમુદ્રં વાયાલીસં જોયણસહસ્ત્રાણિ ઓગહિત્તા ઉવરિલ્લાઓ જલંતાઓ એગપ્પેસિયાએ સેઢીએ પ્થળં તમુક્કાએ સમુદ્રીએ ) જંબૂદ્વીપની બહાર તિરછા અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોને પાર કર્યા પછી અરુણવર દ્વીપ આવે છે. આ અરુણવર દ્વીપને ઘેરીને ચારે તરફ અરુણોદય સમુદ્ર રહેલો છે. તે સમુદ્રની બહારની વેદિકાના અન્તથી લઈને અરુણોદય સમુદ્રમાં ગેતાલીસ હજાર યોજન આગળ જતાં ઉપરિતન જલ્યાન્ત

દર્શકવિંશતિયોત્તનશતાનિ ઝર્ધમ્ ઉત્પત્ય તતઃ પથાન્ તિર્યક્ પરિસ્તરન્, પવિસ્ત-  
ન્ સૌધર્મ-શાન-સનત્કુમાર-માહેન્દ્રાન્ ચતુરોઽપિ કલ્પાન્ ભાવ્યત્ ઝર્ધમપિ ન લલુ  
બ્રહ્મલોકે કલ્પે રિષ્ટિમાનપસ્વટં સંપાત્ઃ-અથ લલુ તમસ્કાયઃ સંનિઢિનઃ તમસ્કાયઃ  
લલુ ભદન્ત ! કિંસંસ્થિતઃ પશ્વતઃ ? ગૌતમ ! અથો મહુત્તમૂલપંસ્થિતઃ, ઉપરિહુત્તપ-  
અરકસંસ્થિતઃ પશ્વતઃ । તમસ્કાયઃ લલુ ભદન્ત ! કિંયાન્ વિષ્કમ્ભેન, કિંયાન્ પરિક્ષે-

તન જલાન્ત સે એક શ્રેણિ પેસી આતી હે જો ઉપર ઓર નીચે સપ્રદેશ-  
વાલી હૈ-અર્થાત્ મિત્તિ કે જેસે મિત્તિ ઝપર નીચે મધ્ય મેં એકસી  
હોતી હૈ-હસી તરફ ફી યહ શ્રેણી હૈ-હસ શ્રેણિ સે તમસ્કાય પ્રારંભ  
હોતા હૈ । (સત્તરસ-એકવીસે જોયણસસ ઝડું ઉપ્પહત્તા તઓ પચ્છા તિરિયં  
પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોદમ્મીસાણસણંકુમારમાહિદે ચત્તારિ  
વિ કપ્પે આવરિત્તા ણં ઝડું પિ ય ણં પંમલોગે કપ્પે રિઢ્ઢિવિમાણપત્થડં  
સંપત્તે-પત્થ ણં તમુક્કાપ ણં સંનિઢિપ ) યહ તમસ્કાય યહાં સે પ્રારંભ  
હોકર ૧૭૨૧ યોજન ઝંચે જાહર વહાં સે પીઢે તિરછા વિસ્તૃત હોતા  
હુઆ સૌધર્મ, ઈશાન, સનત્કુમાર હન ચાર કલ્પોં કો આવૃત્ત આચ્છા-  
દિત કરકે ઝંચે બ્રહ્મલોકકલ્પ મેં રિષ્ટ વિમાન કે પાથડે તક પહુંચતા  
હૈ-યહીં પર હસ તમસ્કાય કા અન્ત હૈ । (તમુક્કાપ ણં મંતે ! કિં સંઠિપ  
પણત્તે ) હે ભદન્ત ! હસ તમસ્કાય કા આકાર કેસા હૈ ? (ગોયમા)  
હે ગૌતમ ! (અહે મહુત્તમૂલસંઠિપ ઉપ્પિ કુલ્લકુલ્લપંજરગસંઠિપ પણત્તે)

આવે છે. તે ઉપરિતન જલાન્તથી એક શ્રેણિ એવી આવે છે કે જે ઉપર અને  
નીચે સમપ્રદેશવાળી છે-એટલે કે દિવાલના જેવી છે-જેવી રીતે દિવાલ ઉપર,  
નીચે અને મધ્ય ભાગમાં એક સરખી હોય છે એજ પ્રકારની આ શ્રેણી છે.  
તે શ્રેણિમાંથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે. (સત્તરસ-એકવીસે જોયણસસ ઝડું  
ઉપ્પહત્તા તઓહત્તા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોદમ્મીસાણસણંકુમારમાહિદે  
ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા ણં ઝડું પિ ય ણં પંમલોગે કપ્પે રિઢ્ઢિવિમાણપત્થડં સંપત્તે  
પત્થ ણં તમુક્કાપ ણં સંનિઢિપ ) આ તમસ્કાય તે શ્રેણિમાંથી ૩૩ થઈને ૧૭૨૧  
યોજન ઊંચે જાય છે. ત્યારબાદ ત્યાંથી તે તિરછા વિસ્તૃત થઈને સૌધર્મ,  
ઈશાન, સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર એ ચાર કલ્પોને આવૃત્તિ દિત કરીને ઊંચે  
બ્રહ્મલોક કલ્પમાં રિષ્ટ વિમાનના પાથડા સુધી પહોંચે છે અને ત્યાં જ તેનો  
(તમસ્કાયનો) અન્ત આવી જાય છે.

(તમુક્કાપ ણં મંતે ! કિં સંઠિપ પણત્તે ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયનો  
આકાર કેવો હોય છે ?



પેણ પ્રવૃત્તઃ ? ગૌતમ ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ દ્વિવિધઃ પ્રવૃત્તઃ, તદ્યથા-સંખ્યેયવિસ્તૃતથ, અસંખ્યેયવિસ્તૃતથ, તત્ર સ્વલુ યઃ સ સંખ્યેયવિસ્તૃતઃ સ સ્વલુસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કમ્ભેણ, અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેણ પ્રવૃત્તઃ । તત્ર સ્વલુ યઃ સોઽસંખ્યેયવિસ્તૃતઃ સઃ સ્વલુ અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કમ્ભેણ, અસંખ્યે-

હે ગૌતમ ! તમસ્કાય કા નીચે કા આકાર મિટ્ટી કે દીપક કે નીચે કે ભાગ જૈસા કહા ગયા હૈ ઓર ઝપર કા આકાર મુર્ગા કે પિંજરેકે આકાર જૈસા કહા ગયા હૈ । ( તમુક્કાણ ણં મંતે ! કેવદ્યં વિક્ષલંભેણં, કેવદ્યં પરિક્ષેવેણં પણ્ણત્તે ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કા વિસ્તાર કિતના હૈ ? ઓર પરિક્ષેપ કિતના હૈ ? ( ગોયમા ! તમુક્કાણં દુવિદ્દે પણ્ણત્તે-તં જહા સંલેજ્જવિત્થડે ય અસંલેજ્જવિત્થડે ય ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાય દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ-એક સંખ્યાત વિસ્તાર વાલા તમસ્કાય ઓર દૂસરા અસંખ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય ( તત્થ ણં જે સે સંલેજ્જવિત્થડે સે ણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિક્ષલંભેણં ) હનમેં જો સંખ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય હૈ વહ અપને વિષ્કંભ સે સંખ્યાત હજાર યોજન કા તથા ( અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ષેવેણં પણ્ણત્તે ) પરિક્ષેપસે અસંખ્યાત હજાર યોજન કા કહા ગયા હૈ । ( તત્થ ણં જે સે અસંલેજ્જવિત્થડે સે ણં

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અદ્દે મહ્ગમૂઠ સંઠિદ્દે વપ્પિં કુમ્મુડપંજરા-સંઠિદ્દે પણ્ણત્તે ) તમસ્કાયના નીચેના ભાગને આકાર દીવે કરવાના માટીના કોડિયાના નીચેના ભાગ જેવો કહ્યો છે, અને તેના ઉપરના ભાગને આકાર કૂકડાના પિંજરાના આકાર જેવો કહ્યો છે.

( તમુક્કાણ ણં મંતે ! કેવદ્યં વિક્ષલંભેણં, કેવદ્યં પરિક્ષેવેણં પણ્ણત્તે ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયનો વિસ્તાર કેટલો કહ્યો છે ? તેનો પરિક્ષેપ ( પરિધી ) કેટલો કહ્યો છે ?

( ગોયમા ! તમુક્કાણં દુવિદ્દે પણ્ણત્તે-તં જહા-સંલેજ્જવિત્થડે ય અસંલેજ્જવિત્થડે ય ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયના બે પ્રકાર નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે-(૧) સંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય અને બીજો અસંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય. ( તત્થ ણં જે સે સંલેજ્જવિત્થડે સે ણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિક્ષલંભેણં ) તેમાંનો જે સંખ્યાત વિસ્તારવાળો છે તેનો વિષ્કંભ ( વિસ્તાર ) સંખ્યાત હજાર યોજનનો ; તથા ( અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ષેવેણં પણ્ણત્તે ) પરિક્ષેપ ( પરિધી ) અસંખ્યાત હજાર યોજનનો કહ્યો છે.

( તત્થ ણં જે સે અસંલેજ્જવિત્થડે સે ણં અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં

યાનિયોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેણ પ્રગુપ્તાઃ । તમસ્કાયઃ સન્તુ મદન્ત ! કિયન્મહાલયઃ પ્રગુપ્તઃ ? ગૌતમ ! અયં સ્વઽ જંબુદીપો દીપઃ તર્પણીય-મધ્યદીપાં સર્વોચ્ચન્તરકઃ, યાવત્-પરિક્ષેપેણ પ્રગુપ્તઃ । દેવઃ સન્તુ મહર્ષિઃ, યાવત્-મહાનુભાવઃ, एतदेव एतदेव-इति कृत्वा केवलकल्पं जम्बुद्वीपं द्वीपं विभिरप्यमेनिवापैः निगृभिथपुट्टिकाभिः विसप्तकृत्यः अनुपर्यटन्-शीघ्रम् आगच्छेत्, स देवस्य वा उत्कृष्टया, तुरितया, यावत्-देवगत्या व्यतिव्रजनर यावत्-एकाहं वा, द्वयहं वा त्रयहं वा, उत्क-  
 असंखेज्जाइं जोगणसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोगणसहस्साइं  
 પરિક્ષેવેણં પળ્લત્તે ) ઓર જો અસંખ્યાત વિસ્તાર ચાલા તમસ્કાય હૈ  
 વહ વિષ્કંભ સે અસંખ્યાત હજાર યોજન કા ઓર પરિક્ષેપ સે મી અસં-  
 ર્યાતહજાર યોજન કા કહા ગયા હૈ । ( તમુક્કાણ ણં મંતે ! કે મહાલણ  
 પળ્લત્તે ) હૈ મદન્ત ! તમસ્કાય કિતના યદ્ધા હૈ ? ( ગોયમા ) હૈ ગૌતમ !  
 ( અયં ણં જંબુદીવે દીવે સવ્વદીવસમુદ્ધાણં સવ્વઞ્ચન્તરાણ જાવ પરિક્ષે-  
 વેણં પળ્લત્તે ) સમસ્ત દ્વીપ ઓર સમસ્ત સમુદ્રોં કે વીચ મેં વહ જંબુદીપ  
 નામ કા દ્વીપ-મધ્યજંબુદીપ યાવત્ પરિક્ષેપચાલા કહા ગયા હૈ-અથ  
 ( દેવેણં મહિદ્ધિણ જાવ મહાણુભાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિક્કદ્ધુ કેવલ  
 કલ્પં જંબુદીવં દીવં તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાપહિં ત્તિસત્તલુત્તો અણુપરિ-  
 યટ્ઠિત્તાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા-સે ણં દેવે તાણ ઉદ્ધિટ્ઠાણ તુરિયાણ જાવ દેવ-  
 ગઈણ વીરૂંવયમાણે, જાવ ઇકાહં વા દુયાહં વા તિયાહં વા ઉક્કોસેણં છમ્માસે

વિક્ખંભેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્લત્તે ) અને તે સંખ્યાત  
 વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે તેનો વિષ્કંભ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો અને  
 પરિક્ષેપ પણ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો કહ્યો છે

( તમુક્કાણ ણં મંતે ! કે મહાલણ પળ્લત્તે ? ) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કાય  
 કેટલો મોટો છે ?

( ગોયમા ! ) હૈ ગૌતમ ! ( અયં ણં જંબુદીવે દીવે સવ્વદીવસમુદ્ધાણં  
 સવ્વઞ્ચન્તરાણ જાવ પરિક્ષેવેણં પળ્લત્તે ) સમસ્ત દ્વીપ અને સમસ્ત સમુદ્રોની  
 વચ્ચે આવેલો આ જંબુદીપ નામનો દ્વીપ-મધ્ય જંબુદીપ એક લાખ યોજ-  
 નના આયામ વિષ્કંભવાળો અને ૩૧૬૨૨૭ યોજન, ૩ કોસ, ૨૮૦૦ ધનુષ  
 અને ૧૩૧૧ આંગળથી સહેજ અધિક પરિધીવાળો કહ્યો છે. ( અહીં ' જાવ '  
 પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ સૂત્રપાઠનો અર્થ આપ્યો છે ) હવે ( દેવેણં  
 મહિદ્ધિણ જાવ મહાણુભાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિક્કદ્ધુ કેવલકલ્પં જંબુદીવં દીવં  
 તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાપહિં ત્તિ સત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ઠિત્તાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા  
 સે ણં દેવે તાણ ઉદ્ધિટ્ઠાણ તુરિયાણ જાવ દેવગઈણ વીરૂંવયમાણે, જાવ ઇકાહં વા



પેળ પળાસાન્ વ્યતિવ્રજેન્, અસ્ત્યેકકં તમસ્કાયં વ્યતિવ્રજેન્, અસ્ત્યેકકં તમ-  
સ્કાયં નો વ્યતિવ્રજેન્, ઇયન્મહાલયઃ સ્વદુ ગૌતમ ! તમસ્કાયઃ પ્રગ્નઃ ! અસ્તિ  
સ્વદુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ગેહાનિ વા, ગેહાવણા વા ? નો અયમર્થઃ, સમર્થઃ અસ્તિ  
સ્વદુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ગ્રામાદિતિ વા યાવત્સંનિવેશા ઇતિ વા ? નો અયમર્થઃ  
વીર્ઘવર્ઘજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં વીર્ઘવર્ઘજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં ણો  
વીર્ઘવર્ઘજ્ઞા-પ્રમહાલયણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળગત્તે ) કોર્ઘ વિશાલ-વઢી  
ભારી-ઝઢિવાલા યાવત્ મહાપ્રભાવવાલા દેવ “ યહ મેં ચલ્યા યહ મેં  
ચલ ” હસ તરહ કા ઉતાવલા ચનકર તીન જુટકી વજતે હી ૨૧ વાર  
જસ સમસ્ત જંબૂદ્વીપ કી પરિક્રમા દેકર શીઘ્ર આજાવે-હસ તરહ વહ  
દેવ અપની દેવગતિસંવંધી ત્વરાદિ વિશેષણવાલી ગતિ સે ઇક દિન, દો  
દિન યા તીન દિનતક ચલતા રહે ઓર અધિક સે અધિક હસ તરહ સે  
વહ છહ માહ તક ચલે તો હસ પ્રકાર કી ચાલ સે ચલને વાલા વહ દેવ  
તમસ્કાય કે કિતનેક અંશ કો પ્રાપ્ત કર સકતા હે ઓર કિતનેક તમ-  
સ્કાય કે અંશ કો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હે । હે ગૌતમ ! હતના વઢા  
વિશાલ તમસ્કાય કહા ગયા હે । ( અત્થિયં મેતે ! તમુક્કાય ગેહાદ વા,  
ગેહાવણાદ વા ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં કયા ઘર હેં ? ગૃહાવણ હેં ?  
( ણો ઇગદે ઇગદે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે । ( અત્થિ ણં  
મેતે ! તમુક્કાય ગામાદ વા જાવ સન્નિવેશાદ વા ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય

હયાહં, તિયાહં વા ઉકોસેણં છમ્માસે વીર્ઘવર્ઘજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં વીર્ઘવર્ઘજ્ઞા,  
અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં ણો વીર્ઘવર્ઘજ્ઞા-પ્રમહાલયણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળગત્તે ) કોર્ઘ  
વિશાળ ઝઢિવાળો, મહાપ્રભાવ આદિથી યુક્ત હોય એવો દેવ “ આ ઉપડયો,  
આ ઉપડયો ” એમ કહેતો ઘણો ઉતાવળો ઉતાવળો ત્રણ વાર અપરી વગા-  
ડતા તો સમસ્ત જંબૂદ્વીપની ૨૧ વાર પ્રદક્ષિણા કરીને પાછો આવી જાય છે,  
આ પ્રકારની શીઘ્ર ગતિવાળો તે દેવ, પોતાની આ પ્રકારની ત્વરાદિ વિશેષણો-  
વાળી દેવગતિથી એક દિવસ, બે દિવસ, અથવા ત્રણ દિવસ સુધી ચાલ્યા  
કરે અને આ રીતે અધિકમાં અધિક છ માસ સુધી તે ચાલ્યા કરે, તો આ  
પ્રકારની ગતિથી ચાલનારો તે દેવ તમસ્કાયના કેટલાક અંશને પાર કરી શકે  
છે અને તમસ્કાયના કેટલાક અંશને તો પાર કરી શકે નહીં પછી નથી હે  
ગૌતમ ! તમસ્કાયને એટલો બધો મોટો અને વિશાળ કહ્યો છે.

( અત્થિ ણં મેતે ! તમુક્કાય ગેહાદ વા, ગેહાવણાદ વા ? ) હે ભદન્ત !  
તમસ્કાયમાં શું ઘરો હોય છે ? ગૃહાવણો ( હાટ ) હોય છે ?

( ણો ઇગદે સમદે ) હે ગૌતમ ! તેમાં એવું કંઈ પણ હોતું નથી.

યાનિયોજનસહસ્રાગિ પરિક્ષેપેન પ્રગ્નપ્તઃ । તમસ્કાયઃ તાનુ મદન્ત ! દિપન્મહાલયઃ  
 પ્રગ્નપ્તઃ ? ગૌતમ ! અયં સ્વલ્લ જંબુદ્વીપો દ્વીપઃ સર્વદ્વીપ-સમુદ્રાનાં સર્વોચ્ચન્તરકઃ,  
 યાવત્-પરિક્ષેપેન પ્રગ્નપ્તઃ । દેવઃ સ્વલ્લ મદદ્રિહઃ, યાવત્-મહાનુભાવઃ, एतदेव  
 एतदेव-इति कृत्वा केवलकल्पं जम्बूद्वीपं द्वीपं विभिरप्यगोनिर्वाणे- निगृभिभपुटि-  
 काभिः त्रिसप्तकृत्यः अनुपर्यटयन्-शीघ्रम् आगच्छेत्, स देवस्तथा उच्छ्रया, तरि-  
 तया, यावत्-देवगत्या व्यतिव्रजनर गावत्-एकाहं वा, द्वयाहं वा त्रयाहं वा, उत्क-  
 असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं  
 परिक्खेवेणं पणत्ते ) और जो असंख्यात विस्तार वाला तमस्काय है  
 वह विष्कंभ से असंख्यात हजार योजन का और परिक्षेप से भी असं-  
 ख्यातहजार योजन का कहा गया है । ( तमुक्काए णं भंते ! के महालए  
 पणत्ते ) हे भदन्त ! तमस्काय कितना बड़ा है ? ( गोयमा ) हे गौतम !  
 (अयं णं जंबुद्वीवे दीवे सव्वदीवसमुद्धानं सव्वन्नन्तराए जाव परिक्खे-  
 वेणं पणत्ते ) समस्त द्वीप और समस्त समुद्रों के बीच में यह जंबुद्वीप  
 नाम का द्वीप-मध्यजंबुद्वीप यावत् परिक्षेपवाला कहा गया है-अथ  
 ( देवेणं महिद्विए जाव महाणुभावे, इणामेव इणामेव तिकद्दु केवल  
 कप्पं जंबुद्वीवं दीवं तिहिं तिहिं अच्छरनिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपरि-  
 यट्ठित्ताणं हव्वं आगच्छिज्जा-से णं देवे ताए उक्किट्ठाए तुरियाए जावदेव-  
 गर्हए वीईवयमाणे, जाव एकाहं वा दुयाहं वा त्रियाहं वा उक्कोसेणं छम्मासे

વિક્ખંભેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ખેવેણં પણત્તે ) અને જે સંખ્યાત  
 વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે તેનો વિષ્કંભ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો અને  
 પરિક્ષેપ પણ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો કહ્યો છે

( તમુક્કાણે ણં ભંતે ! કે મહાલણે પણત્તે ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય  
 કેટલો મોટો છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અયં ણં જંબુદ્વીવે દીવે સવ્વદીવસમુદ્ધાણં  
 સવ્વન્નન્તરાણે જાવ પરિક્ખેવેણં પણત્તે ) સમસ્ત દ્વીપ અને સમસ્ત સમુદ્રોની  
 વચ્ચે આવેલો આ જંબુદ્વીપ નામનો દ્વીપ-મધ્ય જંબુદ્વીપ એક લાખ યોજ-  
 નના આયામ વિષ્કંભવાળો અને ૩૧૬૨૨૭ યોજન, ૩ ઠોસ, ૨૮૦૦ ધનુષ  
 અને ૧૩૧૧ આંગળથી સહેજે અધિક પરિધીવાળો કહ્યો છે. ( અહીં ' જાવ '   
 પદથી થકણ કરવામાં આવેલ સૂત્રપાઠનો અર્થ આપ્યો છે ) હવે ( દેવેણં  
 મહિદ્વિણે જાવ મહાણુભાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિકદ્દુ કેવલકપ્પં જંબુદ્વીવં દીવં  
 તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાયહિં તિ સત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ઠિત્તાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા  
 સે ણં દેવે તાણે ઉક્કિટ્ઠાણે તુરિયાણે જાવ દેવગર્હણે વીઈવયમાણે, જાવ એકાહં વા

અસુરઃ પ્રકરોતિ, નાગઃ પ્રકરોતિ ? ગૌતમ ત્રયોઽપિ પ્રકુર્વન્તિ । અસ્તિ સ્વલુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે વાદરઃ પૃથિવીકાયઃ, વાદરોઽગ્નિકાયઃ ? નો અયમર્થઃ, સમર્થઃ, નાન્યત્ર વિગ્રહગતિસમાપન્નકેન । સન્તિ સ્વલુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપા : ? નો અયમર્થઃ સમર્થઃ, પરિપાર્શ્વતઃ પુનઃ સન્તિ અસ્તિ સ્વલુ

સ્તનિત શબ્દ હોતા હૈ ? વાદર વિદ્યુત્ હોતી હૈ ? ( હંતા અત્થિ ) હાં ગૌત-મ ! યહ સવ હોતા હૈ ( તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ) હૈ ભદન્ત ! તો હસ વાદર સ્તનિત આદિ કો વહાં કૌન કરતા હૈ-કયા દેવ કરતા હૈ ? યા અસુર કરતા હૈ ? યા નાગ કરતા હૈ ? ( ગો-યમા ! તિણિ વિ પકરેતિ ) હૈ ગૌતમ ! તીનોં હી કરતે હૈં । ( અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાયે વાયરે પુઢવિકાણ, વાયરે અગણિકાણ ) હૈ ભદન્ત ! તમ-સ્કાય મેં કયા વાદર પૃથિવીકાય હૈ ? વાદર અગ્નિકાય હૈ ? ( ણો હ્ણઢે સમઢે ) હૈ ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । ( ણણત્થ વિગ્ગહગહ-સમાવન્નણં ) પરન્તુ વહાં પર વિગ્રહગતિસમાપન્ન વાદર પૃથિવી ઓર વાદર અગ્નિ હૈ । અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-ણક્કલ્લ-તારાલ્લવા ) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં કયાં ચંદ્ર, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર એવં તારારૂપ હૈં ? ( ણો હ્ણઢે સમઢે ) હૈ ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । ( પલ્લિયસ્સઓ પુણ અત્થિ ) પર યે સવ ઉસકે પાર્શ્વભાગ કી

( હંતા અત્થિ ) હા, ગૌતમ ! તે બધું થાય છે.

( તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ? ) હૈ ભદન્ત ! આ ધનગર્જન આદિ ત્યાં કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? શું અસુર કરે છે ? શું નાગ કરે છે ?

( ગોયમા ! તિણિ વિ પકરેતિ ) હૈ ગૌતમ ! ત્રણે કરે છે.

( અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે પુઢવિકાણ, વાયરે અગણિકાણ ? ) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં શું બાદર પૃથ્વીકાય છે ? બાદર અગ્નિકાય છે ?

( ણો હ્ણઢે સમઢે ) હૈ ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં બાદર પૃથ્વીકાય પણ નથી અને બાદર અગ્નિકાય પણ નથી. ( ણણત્થ વિગ્ગહગહસમાવન્નરણં ) પરન્તુ તેમાં વિગ્રહગતિ સમાપન્ન બાદર પૃથ્વી અને બાદર અગ્નિ છે.

( અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદિમ-સૂરિય ગહગણ-ણક્કલ્લ-તારાલ્લવા ) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર અને તારાઓ હોય છે ખરાં ?

( ણો હ્ણઢે સમઢે ) હૈ ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં ચન્દ્રાદિક જ્યોતિષક દેવો હોતા નથી. ( પલ્લિયસ્સઓ પુણ અત્થિ ) પરન્તુ તેઓ તેની બાબુમાં હોય છે.



સર્ગ્યઃ । અસ્તિ સ્વત્તુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ઉદારા યત્પ્રાદતાઃ સંશ્વિયન્તિ, સંમૂર્ચ્છન્તિ, સંવર્ષન્તિ ? હન્ત, અસ્તિ । તદ્ ભદન્ત ! કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અપુરઃ પ્રકરોતિ, નાગઃ પ્રકરોતિ ? ગૌતમ ! દેવોઽપિ પ્રકરોતિ, અપુરોઽપિ પ્રકરોતિ, નાગોઽપિ પ્રકરોતિ । અસ્તિ સ્વત્તુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ચાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ, ચાદરા વિધુન્ ? હન્ત, અસ્તિ તામ્ । મદન્ત ! કિં દેવઃ પ્રકરોતિ,

મેં કયા ગ્રામ હું, યાવત્ સન્નિવેશ હું ? ( ખો રૂળદે સમદે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે । ( અત્થિળં મંતે ! તમુક્કાણ ઉરાલા ચલાહયા સંસેયંતિ સંમુર્ચ્છન્તિ સંવાસંતિ વા ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં કયા થકે ૨ મેઘ ગીલા કરને વાલા સ્નિગ્ધ પુદ્ગલો દ્વારા ગીંઝે હો જાતે હું ? સંમૂર્ચ્છિત-પરસ્પર મેં વે એકત્રિત-હોતે હું ! ( હંતા, અત્થિ ) હાં ગૌતમ ! એસા હોતા હે । ( તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ? ) હે ભદન્ત ! સંસ્વેદન આદિ કો દેવ કરતા હે ? યા અસુર કરતા હે ? યા નાગ કરતા હે ? ( ગોયમા ! દેવો વિ પકરેહ, અસુરો વિ પકરેહ, નાગો વિ પકરેહ ) હે ગૌતમ ! ઉસ સંસ્વેદન આદિ કો દેવ મ્હી કરતા હે, અસુર મ્હી કરતા હે ઓર નાગ મ્હી કરતા હે । ( અત્થિળં મંતે ! તમુક્કાણ ચાયરે થણિયસહે, ચાયરે વિજ્ઞુણ ) હે ભદન્ત તમસ્કાય મેં ચાદર

( અત્થિળં મંતે ! તમુક્કાણ ગામાદ વા જાવ સન્નિવેસાહ વા ) હે ભદન્ત !

શું તમસ્કાયમાં ગામ હોય છે ? સન્નિવેશ પર્યન્તનાં સ્થાનો હોય છે ?

( ખો રૂળદે સમદે ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં ગામ આદિ કંઈ પણ હોતું નથી.

( અત્થિળં મંતે ! ઉરાલા ચલાહયા સંસેયંતિ, સંમુર્ચ્છન્તિ, સંવાસંતિ વા ? ) હે ભદન્ત ! શું વિશાળ મેઘ ( વાદળાંઓ ) તમસ્કાયમાં ભીંજવનારા સ્નિગ્ધ પુદ્ગલો દ્વારા ભીંજાય છે ખરાં ? પરસ્પરમાં એકત્રિત થાય છે ખરાં ? વરસે છે ખરાં ? ( હંતા અત્થિ ) હા, ગૌતમ એવું થાય છે.

( તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ? ) હે ભદન્ત ! સંસ્વેદન આદિ દેવ કરે છે ? કે અસુર કરે છે ? કે નાગ કરે છે ?

( ગોયમા ! દેવો વિ પકરેહ, અસુરો વિ પકરેહ, નાગો વિ પકરેહ ) હે ગૌતમ ! તે સંસ્વેદન આદિ દેવ પણ કરે છે ? અસુર પણ કરે છે અને નાગ પણ કરે છે ?

( અત્થિળં મંતે ! તમુક્કાણ ચાયરે થણિયસહે, ચાયરે વિજ્ઞુણ ) હે ભદન્ત ! તે તમસ્કાયમાં શું બાહર સ્તનિત શબ્દ-ધનગજન થાય છે ? બાહર વિદ્યુત થાય છે ?

ચ્છેત્ તતઃ પથાત્ શીઘ્રં શીઘ્રમ્, ત્વરિતં ત્વરિતમ્ સ્તિમપ્રેવ વ્યતિવ્રજેત્ । તમસ્કાયસ્ય  
સ્વલુ ભદન્ત ! કતિનામધેયાનિ પ્રત્પતાનિ ! ગૌતમ ! ત્રયોદશનામધેયાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ,  
તથા-તમ इति वा, १. तमस्काय इति वा २, अन्धकार इति वा ३, महान्धकार  
इति वा ४, लोकान्धकार इति वा ५, लोकतमिस्रम् इति वा ६, देवान्धकार  
इति वा ७, देवतमिस्रम् इति वा ८, देवारण्यम् इति वा ९, देवव्यूह इति वा १०,  
देवपरिघ इति वा ११, देवप्रतिक्षोभ इति वा १२, अरुणोदक इति वा समुद्रः १३ ।

જા, સીંહં સીંહં, તુરિયં ૨ ઘિપ્પામેવ વીહવણ્જા ) કદાચિત્ કોઈદેવ  
તમસ્કાય મેં પ્રવેશ કરે તો વહ ભય કે મારે વહાં સે વહુત હી જલ્દી-  
શરીર કી ત્વરા સે ઓર મન કી ત્વરાસે વહુત હી શીઘ્ર-ઝસ તમસ્કાય  
કો ઝલ્લંચન કરકે વાહર નિકલ જાતા હૈ । ( તમુક્કાયસ્સ ણં મંતે ! કહ  
નામધેજ્જા પણત્તા ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કે કિતને નામ કહે ગયે હૈં ?  
( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( તેરસનામધેજ્જા પણત્તા ) તમસ્કાય કે તેરહ  
નામ કહે ગયે હૈં । ( તં જહા ) જો હસ પ્રકાર સે હૈં- ( તમેહ વા, તમુ-  
ક્કાણ્હવા અંધયારેહ વા, મહાંધયારેહ વા, લોગંધયારેહ વા, લોગતમિસ્સેહ  
વા, દેવંધયારેહ વા, દેવતમિસ્સેહ વા, દેવરણ્ણેહ વા, દેવવૂહેહ વા દેવફ-  
લિહેહ વા, દેવપડિક્કલોમેહ વા, અરુણોદણ્હ વા, સમુદ્દે ) તમ ૧, તમ-  
સ્કાય ૨, અંધકાર ૩, મહાંધકાર ૪, લોકાંધકાર ૫, લોકતમિસ્સ ૬,  
દેવાંધકાર ૭, દેવતમિસ્સ ૮, દેવારણ્ય ૯, દેવવૂહ ૧૦, દેવ પરિઘ ૧૧,  
દેવપ્રતિક્ષોભ ૧૨, એવં અરુણોદકસમુદ્ર ૧૩ । ( તમુક્કાણ્હ ણં મંતે ! કિં

( અહે ણં અભિસમાગચ્છેજ્જા, તઓ પચ્છા સોહં સોહં, તુરિયં તુરિયં ઘિપ્પામેવ  
વીહવણ્જા ) જે કોઈ દેવ તમસ્કાયમાં પ્રવેશ કરે છે, તો તે લયને કારણે  
જલ્દીમાં જલ્દી-શરીર અને મનની ત્વરાથી ઘણી જ અડપથી-તે તમસ્કાયને  
પાર કરીને બહાર નીકળી જાય છે.

( તમુક્કાયસ્સ ણં મંતે ! કહ નામધેજ્જા પણત્તા ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કા-  
યના કેટલા નામ કહ્યાં છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયના ( તેરસ નામધેજ્જા પણત્તા ) તેર  
નામ કહ્યાં છે, ( તં જહા ) જેમકે ( તમેહ વા, તમુક્કાણ્હ વા, અંધયારેહ વા,  
દેવરણ્ણેહ વા, દેવવૂહેહ વા, દેવફલિહેહ વા, દેવપડિક્કલોમેહ વા, અરુણોદણ્હ વા  
સમુદ્દે ) (૧) તમ, (૨) તમસ્કાય, (૩) અંધકાર, (૪) મહાંધકાર (૫) લોકાં-  
ધકાર, (૬) લોકતમિસ્સ, (૭) દેવાંધકાર, (૮) દેવતમિસ્સ, (૯) દેવારણ્ય, (૧૦)  
દેવવૂહ, (૧૧) દેવપરિઘ, (૧૨) દેવપ્રતિક્ષોભ અને (૧૩) અરુણોદક સમુદ્ર.



મદન્ત ! તમસ્કાય ચન્દ્રામેતિ ચા. સૂર્યામેતિ ચા ? નો પ્રયત્નઃ ગમ્યઃ, કાદ્મણિ  
યા પુનઃ સા । તમસ્કાયઃ સ્વત્તુ મદન્ત ! કીદન્તકો વર્ણેન પદ્મજઃ ? ગૌતમ ! કાલઃ,  
કાલોભાસઃ, ગંભીરોમહરિમજનકઃ, ભીમઃ, ઉત્તાસનકઃ, પરમકૃષ્ણવર્ણઃ પદ્મજઃ,  
દેવઃ સ્વત્તુ અત્યેગકો યઃ સ્વત્તુ તત્પ્રથમતયા દદ્ધા ક્ષુન્ધેન્, અથ તત્તુ અભિસમાગ-

ઓર હૈં । ( અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદ્રામાહ ચા સૂર્યામાહ ચા ) હૈ  
મદન્ત ! તમસ્કાય મેં ચંદ્રમા ફી પ્રમા અથવા સૂર્ય ફી પ્રમા હૈ કયા ?  
( ણો ઇણદ્દે સમદ્દે ) હૈ ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । ( કાદ્મણિયા  
પુણસા ) અર્થાત્ તમસ્કાય મેં ચન્દ્રપ્રમા ઓર સૂર્યપ્રમા હૈ તો સહી-પર-  
ન્તુ વહ વહાં નહીં જૈસી હૈ । કયોં કિ યહાં પર ઉસકા પરિણમન તમ-  
સ્કાયરૂપ સે હો જાતા હૈ । ( તમુક્કાણ ણં મંતે ! કેરિમણ વજ્રણ ણં પળ્લ-  
ત્તે ) હૈ મદન્ત તમસ્કાય કા વર્ણ કૈસે કરા ગયા હૈ ? ( ગોયમા ! કાલે,  
કાલોભાસે ગંભીરલોમહરિમજનણે, ભીમે, ઉત્તાસનણ, પરમકિણ્હે,  
વળ્ણે પળ્લત્તે ) હૈ ગૌતમ તમસ્કાય કા વર્ણકાલા. કાલીકાન્તિવાલા,  
ગંભીર, રોમરાજિ કો ચ્હડીકરદેનેવાલા, મગદ્ધર ઓર કંપિત કર દેવે  
એસા પરમકૃષ્ણ કહા ગયા હૈ । ( દેવે ણં અત્યેગદ્ધણ જે ણં તપ્પઢમયાણ  
પાસિત્તા ણં સુમાણ્જ્ઞા ) યદિ કોઈ દેવ સવ સે પહિલે હસે દેવલેતા હૈ  
તો વહ મી દેવલે હી ક્ષુમિત હો ઉઠતા હૈ । ( અદે ણં અભિસમાગચ્છે-

( અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદ્રામાહ ચા સૂર્યામાહ ચા ? ) હૈ મદન્ત !  
તમસ્કાયમાં ચન્દ્રની પ્રભા તથા સૂર્યની પ્રભા હોય છે ખરી ?

( ણો ઇણદ્દે સમદ્દે ) હૈ ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્ર અથવા સૂર્યની પ્રભા હોતી  
નથી. ( કા દૂસણિયા પુણસા ) જો કે તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર અને સૂર્યની પ્રભા  
હોય છે ખરી, પણ તે ત્યાં નહીં જોવી હોય છે, કારણ કે ત્યાં તેનું તમસ્કાય  
રૂપે પરિણમન થઈ જાય છે.

( તમુક્કાણ ણ મંતે ! કેરિમણ વજ્રણ ણં પળ્લત્તે ? ) હૈ મદન્ત ! તમસ્કાયના  
વર્ણ કયા કયા હોય છે ?

( ગોયમા ! કાલે, કાલોભાસે ગંભીરલોમ હરિમજનણે, ભીમે, ઉત્તાસનણ  
પરમકિણ્હે, વળ્ણે પળ્લત્તે ) હૈ ગૌતમ ! તમસ્કાયનો વર્ણ કાળો, કાળી કાન્તિ-  
વાળો, ગંભીર, રોમરાજીને ખડી કરી દેનારો, ભયંકર અને ભયથી થરથરાવી  
નાખે એવો પરમ કૃષ્ણ કહ્યો છે.

( દેવે ણં અત્યેગદ્ધણ જે ણં તપ્પઢમયાણ પાસિત્તા ણં સુમાણ્જ્ઞા ) જો કોઈ  
દેવ સૌથી પહેલાં તેને જોવે છે તો તે પણ તેને જોતાં જ ક્ષોભ અનુભવે છે.

ટીકા—‘ કિમયં મંતે ! તમુક્ષાણ તિ પવ્વુચ્ચઈ ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ  
—હે ભદન્ત ! અયં શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધઃ ‘ તમસ્કાયઃ ’ તમસામ્ અન્યકારપુદ્ગ-  
લાનાં કાયો રાશિઃ તમસ્કાયઃ इति किम् वस्तु ? कः पदार्थः प्रोच्यते ?  
સ ચ તમસ્કાયઃ નિયત એવ પૃથિવીરજઃસ્કન્ધઃ, ઉદકરજસ્કન્ધો વા इह विवक्षितो  
મથિતુમર્હતિ, ન ત્વન્યઃ, તદુભયભિન્નાનાં સ્કન્ધાનાં તમસ્કાયસદૃશત્વાભાવાત્,  
इति पृथिवी-जलविषयकसंदेहात्, हृदयस्थं विकल्पं प्रकाशयति—‘ किं पुढ्वी तमु-  
ક્ષाण त्ति पव्वुच्चइ ? ’ किम् तमस्कायः पृथिवी इति पृथिवीस्वरूपः प्रोच्यते ?  
અથવા ‘ આઉતમુક્ષાણ તિ પવ્વુચ્ચઈ ? ’ તમસ્કાયઃ આપઃ જલમ્ इति जलस्वरूपो  
રૂપ સે ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । પર યે સપ વહાં ચાદરપૃથિવીકાયિકરૂપ સે  
और चादर अग्निकायिकरूप से उत्पन्न नहीं हुए हैं ।

ટીકાર્થ—ચતુર્થ ઉદ્દેશક મેં, જીવો મેં સપ્રદેશતા આદિકા નિરૂપણ  
સૂત્રકાર ને કિયા હૈ—અવ વે इस पंचम उद्देशक में सप्रदेश तमस्काय  
આદિ કા નિરૂપણ કર રહે હૈ—इसमें गौतमस्वामी ने प्रभु से ऐसा पूछा  
હૈ कि “ क्मियं मंते ! तमुक्षाण त्ति ” हे भदन्त ! यह शास्त्रप्रसिद्ध  
તમસ્કાય કયા હૈ ? અંધકારરૂપ પુદ્ગલોં કી રાશિ રૂપ જો यह शास्त्र  
સંમત તમસ્કાય હૈ वह किस पदार्थरूप है ( कि ) क्या ( पुढ्वी तमुक्षाण  
त्ति-पव्वुच्चइ, आउतमुक्षाण त्ति पव्वुच्चइ ) वह तमस्काय पुढ्वीरूप  
હૈ ? या अप्कायरूप है ? इस प्रकार की जो यह संदेह भरी बात पूछी  
गई है उसका कारण यह है कि तमस्काय एक स्कन्धरूप पदार्थ है यह

વાર અથવા અનંતવાર તે સમસ્ત પ્રાણાદિ પહેલાં ત્યાં પૂર્વોક્તરૂપે ઉત્પન્ન  
થઈ ચુક્યાં છે. પરન્તુ તેઓ ત્યાં બાહર પૃથ્વીકાયિક રૂપે અને બાહર અગ્નિ-  
કાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી.

ટીકાર્થ—ચોથા ઉદ્દેશકમાં જીવોની અપ્રદેશતા આદિનું સૂત્રકારે નિરૂપણ  
કયું છે. હવે સૂત્રકાર આ પાંચમાં ઉદ્દેશકમાં સપ્રદેશ તમસ્કાય આદિનું  
નિરૂપણ કરે છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો  
પ્રશ્ન પૂછે છે કે—

“ કિમયં મંતે ! તમુક્ષાણ તિ ” હે ભદન્ત ! આ શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધ તમસ્કાય  
શું છે ? એટલે કે અંધકારરૂપ પુદ્ગલોની રાશિરૂપ જે આ શાસ્ત્રસંમત તમસ્કાય  
છે તે કયા પદાર્થરૂપ છે ? “ કિં ” શું ( પુઢ્વી તમુક્ષાણ તિ પવ્વુચ્ચઈ, આઉતમુક્ષાણ  
તિ પવ્વુચ્ચઈ ? ) શું તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ છે ? અથવા અપ્કાયરૂપ (જળરૂપ) છે ?

આ પ્રકારની અંદેહયુક્ત વાત પૂછવાનું કારણ એ છે કે તમસ્કાય એક  
સ્કન્ધરૂપ પદાર્થ છે એ તો ચોક્કસ છે, પરન્તુ એ વાત નિશ્ચિત નથી કે તે

તમસ્કાયઃ સ્વલુ મદન્ત ! કિં પૃથિવીપરિણામઃ, અપ્પરિણામઃ, જીવપરિણામઃ, પુદ્ગલપરિણામઃ, ગૌતમ ! નો પૃથિવીપરિણામઃ, અપ્પરિણામોઽપિ, જીવપરિણામો ડપિ, પુદ્ગલપરિણામોઽપિ । તમસ્કાયે સ્વલુ મદન્ત ! સ્વ માણાઃ, ભૂતાઃ, જીવાઃ, સર્ગાઃ, પૃથિવીકાયિકતયા યાવત્-ત્રસકાયિકતયા ઉવવન્નપુન્નાઃ ? હન્ત, ગૌતમ ! અસકૃત્, અથવા અનન્ત કૃત્વઃ, નાં ચૈવ સ્વલુ વાદરપૃથિવી કાયિકતયા, વાદરાગ્નિકાયિકતયા વા ” ॥ ૬૦ ॥ ૧ ॥

પુદ્ગલપરિણામે આત્મપરિણામે જીવપરિણામે, પોગ્ગલપરિણામે ) હે મદન્ત ! તમસ્કાય કિસકા પરિણામ હે ? કયા પૃથિવી કા પરિણામ હે ? યા અપ્પકાય કા પરિણામ હે ? યા જીવ કા પરિણામ હે ? કિ પુદ્ગલ કા પરિણામ હે ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( જો પુદ્ગલપરિણામે, આત્મપરિણામે વિ, જીવપરિણામે વિ, પોગ્ગલપરિણામે વિ ) તમસ્કાય પૃથિવી કા પરિણામ નહીં હે । વહ અપ્પકાય કા મી પરિણામ હે જીવ કા મી પરિણામ હે તથા પુદ્ગલ કા મી પરિણામ હે । ( તમુક્કાણં મંતે ! સન્ને પાણા, મૂયા, જીવા, સત્તા પુદ્ગલ કાઠ્યત્તાણ જાવ તસકાઠ્યત્તાણ ઉવવન્નપુન્ના ) હે મદન્ત ! તમસ્કાય મેં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ સમસ્ત સર્વ પહિલે કયા પૃથિવી કાયિકરૂપસે યાવત્-ત્રસકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હોયુકે હે ? ( હંતા, ગોયમા ! ) હાં, ગૌતમ ! ( અસદં અદુવા અણંતકલુત્તો જો ચેવ ણં વાદરપુદ્ગલિકાઠ્યત્તાણ વાદરઅગ્નિકાઠ્યત્તાણ વા ) હાં ગૌતમ ! અનેક વાર અથવા-અનંતવાર યે મય પ્રાણાદિ પહિલે વહાં પૂર્વોક્તઃ

( તમુક્કાણં મંતે ! કિં પુદ્ગલ પરિણામે આત્મપરિણામે જીવ પરિણામે, પોગ્ગલપરિણામે ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કેનું પરિણામ છે ? શું પૃથ્વીકાય પરિણામ છે ? અપ્પકાયનું પરિણામ છે ? શું જીવનું પરિણામ છે ? શું પુદ્ગલનું પરિણામ છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( જો પુદ્ગલ પરિણામે, આત્મ પરિણામે વિ, જીવ પરિણામે વિ, પોગ્ગલ પરિણામે વિ ) તમસ્કાય પૃથ્વીકાયનું પરિણામ નથી, તે અપ્પકાયનું પણ પરિણામ છે, જીવનું પણ પરિણામ છે અને પુદ્ગલનું પણ પરિણામ છે.

( તમુક્કાણં મંતે ! સન્ને પાણા, મૂયા, જીવા, સત્તા, પુદ્ગલિકાઠ્યત્તાણ જાવ તસકાઠ્યત્તાણ ઉવવન્નપુન્ના ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સર્વ પહેલાં શું પૃથ્વીકાયથી લઈને ત્રસકાયિક પર્યાન્તના રૂપે ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ?

( હંતા, ગોયમા ! ) હા, ગૌતમ ! ( અસદં અદુવા અણંતકલુત્તો, જો ચેવ ણં વાદરપુદ્ગલિકાઠ્યત્તાણ વાદરઅગ્નિકાઠ્યત્તાણ વા ) હા, ગૌતમ ! અનેક



મગવાનાદ-‘ ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગદ્દુ સુમે દેસં પગાસેદ્ ’ હે ગૌતમ ! પૃથિવીકાયઃ ક્ષત્તુ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્તુ શુભો-ભાસ્વરો મળ્યાદિવત્ દેદીપ્યમાન-ત્વાત્, વિવક્ષિતક્ષેત્રસ્ય દેશમ્ એકભાગં પ્રકાશયતિ, અથ ચ ‘ અત્યેગદ્દુ દેસં ણો પગાસેદ્ ’ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્તુ અપરઃ પૃથિવીકાયઃ યઃ પ્રકાશ્યમપિ દેશં ભાગાન્ત-રમ્ અભાસ્વરત્વાત્ કૃષ્ણપાપાણવત્ નો પ્રકાશયતિ, અપ્કાયસ્તુ સર્વોઽપિ અપ્રકા-શકત્વાત્ ન કમપિ ભાગં પ્રકાશ્યમપિ પ્રકાશયતિ, તમસ્કાયોઽપિ સર્વથૈવાપ્રકાશ-કત્વાત્ ન કમપિ પ્રકાશયતિ અતઃ અપ્કાયસ્ય તમસ્કાયસ્ય ચ સમાનસ્વભાવત્વાત્ અપ્રકાયપરિણામસ્વરૂપ એવ તમસ્કાયઃ । ‘ સે તેણદ્દેણં ’ તત્તુ તેનાર્થેન હે ગૌતમ !

કિ-( ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગદ્દુ સુમે દેસં પગાસેદ્ અત્યેગદ્દુ દેસં ણો પગાસેદ્ ) હે ગૌતમ ! કોઈ પૃથિવીકાય ભાસ્વર ( દેદીપ્યમાન ) મળિ આદિ કી તરહ એસા શુભ્ર ભાસ્વર ( દેદીપ્યમાન ) હોતા હૈ જો વિવક્ષિત ક્ષેત્ર કે અમુક ભાગ કો પ્રકાશિત કરતા હૈ । તથા કોઈ એક પૃથિવીકાય એસા હોતા હૈ જો પ્રકાશ કરને યોગ્ય સ્થાન કો ભી કૃષ્ણ-પાપાણ કી તરહ અભાસ્વર હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા હૈ । પરન્તુ એસા અપ્કાય નહીં હૈ-વહ તો પૂરા ભી એસા હી હૈ કિ પ્રકાશ્ય ભી કિસી ભી સ્થાન કો અપ્રકાશક હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા હૈ તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર કિસી એક પૃથિવી મેં ભાસ્વ-રરૂપતા ઓર કિસી એક પૃથિવી મેં અભાસ્વરરૂપતા હૈ ડસ પ્રકાર કી સ્થિતિ અપ્કાય મેં નહીં હૈ વહ તો પૂરા કા પૂરા હી અપ્રકાશક સ્વભા-વવાલા હૈ । અતઃ અપ્કાય મેં ઓર તમસ્કાય મેં સમાનસ્વભાવતા હોને

અત્યેગદ્દુ સુમેદેસં પગાસેદ્, અત્યેગદ્દુ દેસં ણો પગાસેદ્ ” હે ગૌતમ ! કોઈ પૃથ્વીકાય ભાસ્વર ( દેદીપ્યમાન ) મળિ આદિની જેમ એવું શુભ્ર ( દેદીપ્યમાન ) હોય છે કે તે ક્ષેત્રના અમુક ભાગને પ્રકાશિત કરે છે, અને કોઈ પૃથ્વીકાય એવું હોય છે કે જે પ્રકાશ કરવા યોગ્ય ક્ષેત્રના કોઈપણ ભાગને કૃષ્ણ-પાપા-ણની જેમ અભાસ્વર ( પ્રભા રહિત ) હોવાથી પ્રકાશિત કરતું નથી. પણ અપ્કાયનો સ્વભાવ એવો હોતો નથી. તે પોતે અપ્રકાશક ( પ્રભા રહિત ) હોવાથી પ્રકાશ્ય એવાં કોઈ પણ સ્થાનને પણ પ્રકાશિત કરતું નથી. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ પૃથ્વીકાયમાં પ્રભાયુક્તતા અને કોઈક પૃથ્વીકાયમાં પ્રભા-રહિતતા હોય છે, એ પ્રકારની સ્થિતિ અપ્કાયમાં હોતી નથી તે તો સંપૂર્ણપણે અપ્રકાશક સ્વભાવવાળું હોય છે. આ રીતે અપ્કાય અને તમસ્કા-યના સ્વભાવમાં સમાનતા હોવાને કારણે અપ્કાયના પરિણામ સ્વરૂપજ તમસ્કાય

વા પ્રોચ્યતે ? મગધાનાહ-‘ ગોયમા ! ણો પુઠ્ઠવી તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ’ હે ગૌતમ ! તમસ્કાયઃ નો પૃથિવી રૂપિતિ પ્રોચ્યતે, અપિતુ ‘ આઉતમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ’ તમસ્કાયઃ આપો અપ્કાય રૂપિતિ પ્રોચ્યતે । ગૌતમઃ પૂઠ્ઠનિ-‘ સે કેળદ્દેણં ? ’ હે મહન્ત ! તત્ કેનાર્થેન પવ્વમુચ્યતે તમસ્કાયઃ નો પૃથિવી, અપિતુ તમ્, રૂપિતિ ।

તો નિશ્ચિત છે અથવા તેમાં યાદ નિશ્ચિત નથી છે કે વહ તિસ પદાર્થ કા સ્કન્ધરૂપ છે-ક્યોં કિ યા તો વહ પૃથિવી રજઃ સ્કન્ધરૂપ હો સકતા હે યા ઉદકરજઃ સ્કન્ધરૂપ હો સકતા હે અન્ય સ્કન્ધરૂપ તો હો નહીં સકતા કારણ કિ હન દોનોં સે ભિન્ન જો સ્કન્ધ હેં ઝનમેં તમસ્કાય કી સદૃશતા કા અભાવ હે । અતઃ ગૌતમ ને હસી હૃદયસ્થ વિકલ્પ કો “ કિં પુઠ્ઠવી તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ, અથવા ( આઉ તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ” હસ સૂત્ર પાઠ દ્વારા વ્યક્ત કિયા હે । હસકા ઉત્તર દેતે યુગ પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ણો પુઠ્ઠવી તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ) પૃથિવીરૂપ તમસ્કાય નહીં હેં, અપિતુ ( આઉ તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ) અપ્કાયરૂપ તમસ્કાય હે-એસાં મેં કહતા હેં, અથવા ગૌતમસ્વામી હસમેં કારણ જાનને કી હચ્છા સે પ્રમુ સે પુનઃ પ્રશ્ન કરતે હેં-( સે કેળદ્દેણં ) હે મહન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હેં કિ તમસ્કાય પૃથિવીરૂપ નહીં હે-અપિતુ અપ્કાયરૂપ હે ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ઝનસે કહતે હેં

કથા પદાર્થના સ્કન્ધરૂપ છે, કારણ કે ડાં તો તે પૃથ્વી રજઃ સ્કન્ધરૂપ હોઈ શકે છે, અથવા તો ઉદક ( જળ ) રજઃ સ્કન્ધરૂપ હોઈ શકે છે અન્ય સ્કન્ધ રૂપ તો તે હોઈ શકતો નથી કારણ કે એ જાનેથી બુદ્ધા જ પ્રકારના જે સ્કન્ધ છે, તે સ્કન્ધોમાં તમસ્કાયની સદૃશતા ( સમાનતા ) નો અભાવ હોય છે. તેથી ગૌતમ સ્વામીએ તેમના હૃદયમાં ઉદ્ભવેલા આ વિકલ્પને “ કિં પુઠ્ઠવી તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ” અથવા “ આઉતમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા વ્યક્ત કર્યો છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે— “ ગોયમા ! ણો પુઠ્ઠવી તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ” હે ગૌતમ ! તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ નથી. પરંતુ “ આઉ તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ” પણ તમસ્કાય અપ્કાયરૂપ છે એવું હું કહું છું કે હવે તેનું કારણ જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે—

“ સે કેળદ્દેણં ” હે મહન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ નથી, પણ અપ્કાય રૂપ છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે— “ ગોયમા ! પુઠ્ઠવિકાણ ણં



મગવાનાહ-‘ ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગહ્ણ સુમે દેસં પગાસેહ ’ હે ગૌતમ !  
પૃથિવીકાયઃ સ્વત્તુ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્તુ શુભો-ભાસ્વરો મળ્યાદિવત્ દેદીપ્યમાન-  
ત્વાત્, વિવક્ષિતક્ષેત્રસ્ય દેશમ્ એકભાગં પ્રકાશયતિ, અથ ચ ‘ અત્યેગહ્ણ દેસં ણો  
પગાસેહ ’ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્તુ અપરઃ પૃથિવીકાયઃ યઃ પ્રકાશ્યમપિ દેશં ભાગાન્ત-  
રમ્ અભાસ્વરત્વાત્ કૃષ્ણપાપાણવત્ નો પ્રકાશયતિ, અપ્કાયસ્તુ સર્વોઽપિ અપ્રકા-  
શકત્વાત્ ન કમપિ ભાગં પ્રકાશ્યમપિ પ્રકાશયતિ, તમસ્કાયોઽપિ સર્વથૈવાપ્રકાશ-  
કત્વાત્ ન કમપિ પ્રકાશયતિ અતઃ અપ્કાયસ્ય તમસ્કાયસ્ય ચ સમાનસ્વભાવત્વાત્  
અપ્કાયપરિણામસ્વરૂપ એવ તમસ્કાયઃ । ‘ સે તેણદ્દેણં ’ તત્ તેનાર્થેન હે ગૌતમ !

કિ-( ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગહ્ણ સુમે દેસં પગાસેહ અત્યેગહ્ણ  
દેસં ણો પગાસેહ ) હે ગૌતમ ! કોઈ પૃથિવીકાય ભાસ્વર ( દેદીપ્યમાન )  
મળિ આદિ કી તરહ એસા શુભ્ર ભાસ્વર ( દેદીપ્યમાન ) હોતા હૈ જો  
વિવક્ષિત ક્ષેત્ર કે અમુક ભાગ કો પ્રકાશિત કરતા હૈ । તથા કોઈ એક  
પૃથિવીકાય એસા હોતા હૈ જો પ્રકાશ કરને યોગ્ય સ્થાન કો ભી કૃષ્ણ-  
પાપાણ કી તરહ અભાસ્વર હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા હૈ ।  
પરન્તુ એસા અપ્કાય નહીં હૈ-વહ તો પૂરા ભી એસા હી હૈ કિ પ્રકાશ્ય  
ભી કિસી ભી સ્થાન કો અપ્રકાશક હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા  
હૈ તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર કિસી એક પૃથિવી મેં ભાસ્વ-  
રરૂપતા ઓર કિસી એક પૃથિવી મેં અભાસ્વરરૂપતા હૈ ડસ પ્રકાર કી  
સ્થિતિ અપ્કાય મેં નહીં હૈ વહ તો પૂરા કા પૂરા હી અપ્રકાશક સ્વભા-  
વવાલા હૈ । અતઃ અપ્કાય મેં ઓર તમસ્કાય મેં સમાનસ્વભાવતા હોને

અત્યેગહ્ણ સુમેદેસં પગાસેહ, અત્યેગહ્ણ દેસં ણો પગાસેહ ” હે ગૌતમ ! કોઈ  
પૃથ્વીકાય ભાસ્વર ( દેદીપ્યમાન ) મળિ આદિની જેમ એવું શુભ્ર ( દેદીપ્યમાન )  
હોય છે કે તે ક્ષેત્રના અમુક ભાગને પ્રકાશિત કરે છે, અને કોઈ પૃથ્વીકાય  
એવું હોય છે કે જે પ્રકાશ કરવા યોગ્ય ક્ષેત્રના કોઈપણ ભાગને કૃષ્ણ-પાપા-  
ણની જેમ અભાસ્વર ( પ્રભા રહિત ) હોવાથી પ્રકાશિત કરતું નથી. પણ  
અપ્કાયનો સ્વભાવ એવો હોતો નથી. તે પોતે અપ્રકાશક ( પ્રભા રહિત )  
હોવાથી પ્રકાશ્ય એવાં કોઈ પણ સ્થાનને પણ પ્રકાશિત કરતું નથી. કહેવાનું  
તાત્પર્ય એ છે કે જેમ પૃથ્વીકાયમાં પ્રભાયુક્તતા અને કોઈક પૃથ્વીકાયમાં  
પ્રભા-રહિતતા હોય છે, એ પ્રકારની સ્થિતિ અપ્કાયમાં હોતી નથી તે તો  
સંપૂર્ણપણે અપ્રકાશક સ્વભાવવાળું હોય છે. આ રીતે અપ્કાય અને તમસ્કા-  
યના સ્વભાવમાં સમાનતા હોવાને કારણે અપ્કાયના પરિણામ સ્વરૂપજ તમસ્કાય

અપ્કાય એવ તમસ્કાયઃ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘તમુક્ષાણં મંતે । કહિં સમુદ્વિષ્ કહિં સંનિદ્વિષ ?’ ભદન્ત ! તમસ્કાયઃ સલ્લુ કુપ્રેતિ કસ્મિન્ પ્રદેશે સમુત્થિતઃ ? કસ્મા-  
ત્સ્થાનાદારભ્યઃ ? કુત્ર સંનિદ્વિષઃ કસ્મિન્ પ્રદેશે સમાપ્તિ ગતઃ ? તસ્ય તમસ્કાયસ્ય  
કસ્માત્ પ્રદેશાન્ આરભ્યઃ, કસ્મિન્ પ્રદેશે અન્તથ ચર્તતે ? इति પ્રશ્નઃ । મગધાનાહ—  
‘ગોયમા ! જંબૂદીપસ્ય દીવસ્ય વહિયા તિરિયમસંલેજ્જે દીવસમુદ્દે વીર્ઘ્વહત્તા’  
હે ગૌતમ ! જંબૂદીપસ્ય દ્વીપસ્ય મધ્યજંબૂદીપસ્ય વહિર્ભાગે તિર્યગ્ અસંખ્યયાન્  
દ્વીપસમુદ્રાન્ વ્યતિવ્રજ્ય—અતિકમ્પ ઉલ્લંઘ્ય ‘અરુણવસ્સ દીવસસ વાહિરિહ્ણાઓ  
વેદ્યંતાઓ’ અરુણવસ્સ દ્વીપસ્ય વાયાત્ વહિર્ભૂતાત્ વેદિકાન્તાત્ વેદિકા—જગતી,  
તસ્યાઃ અન્તભાગાદારાભ્ય ‘અરુણોદયં સમુદ્ વાયાલીસં જોયણસહસ્સાણિ ઓગહિત્તા’

કે કારણ અપ્કાય કા પરિણામ સ્વરૂપ હી તમસ્કાય હૈ । ( સે તેણદ્વેણં )  
હસ કારણ હે ગૌતમ । મંતે એસા કહા હૈ કિ અપ્કાયરૂપ હી તમસ્કાય  
હૈ । પ્રમુ કે હસ કથન કો સુનકર ગૌતમ કે ચિત્ત મેં પુનઃ એસી રીકા  
ઉત્પન્ન હુઈ કિ ( તમુક્ષાણં મંતે ! કહિં સમુદ્વિષ ) હે ભદન્ત ! યહ  
તમસ્કાય કિસ પ્રદેશ સે સમુત્થિત હુઆ હૈ ? ( કહિં સંનિદ્વિષ ) ઓર  
કહાં પર હસકી સમાપ્તિ હુઈ હૈ । હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રમુ ને ઉનસે  
એસા કહા કિ—( ગોયમા ) હે ગૌતમ । ( જંબૂદીવસ્સ દીવસસ વહિયા  
તિરિયમસંલેજ્જે દીવસમુદ્દે વીર્ઘ્વહત્તા ) જંબૂદીપ—મધ્ય જંબૂદીપ કે  
વહિર્ભાગ મેં તિરછે અસંખ્યાત દ્વીપસમુદ્રોં કો ઉલ્લંઘન કરકે ( અરુણ-  
વસ્સ દીવસસ વાહિરિહ્ણાઓ વેદ્યંતાઓ ) અરુણવર દ્વીપ આતા હૈ ઉસ  
દ્વીપ કી જો વાહિરી જગતી હૈ, ઉસકે અન્તભાગ સે પ્રારંભ કર ( અરુ-  
ણોદયં સમુદ્ વાયાલીસં જોયણસહસ્સાણિ ઓગહિત્તા ) ઉસ દ્વીપ કો

હાય છે. ( સે તેણદ્વેણં ) હે ગૌતમ । તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે તમસ્કાય  
અપ્કાયરૂપ જ છે. હવે ગૌતમ સ્વામી તમસ્કાયના ઉત્પત્તિસ્થાન અને સમાપ્તિ  
સ્થાનના વિષયમાં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે—

( તમુક્ષાણં મંતે ! કહિં સમુદ્વિષ ? ) હે ભદન્ત ! આ તમસ્કાયનો  
પ્રારંભ કયા પ્રદેશમાંથી થાય છે ? “ કહિં સંનિદ્વિષ ” અને કયા સ્થાનમાં  
તેની સમાપ્તિ થાય છે ?

ઉત્તર—‘ ગોયમા ! ’ હે ગૌતમ ! ( જંબૂદીવસ્સ દીવસસ વહિયા તિરિ-  
યમસંલેજ્જે દીવસમુદ્દે વીર્ઘ્વહત્તા ) જંબૂદીપ—મધ્ય જંબૂદીપના બહારના ભાગમાં  
તિરછા અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોને ઓળંગીને ( પાર કરીને ) ( અરુણવસ્સ  
દીવસસ વાહિરિહ્ણાઓ વેદ્યંતાઓ ) આગળ જતાં અરુણવર દ્વીપ આવે છે. તે  
દ્વીપની જે બાજુ જગતી છે તેના અન્તભાગથી પ્રારંભ કરીને ( અરુણોદયં

અરુણોદકં સમુદ્રં દ્વિચત્વારિંશદ્યોજનસહસ્રાણિ અવગાહ્ય ઉદ્દિગ્ધ્ય અરુણોદક સમુ-  
દ્રસ્ય દ્વિચત્વારિંશત્સદસ્યયોજનગમનાનન્તરમિત્યર્થઃ ' ઉવરિલ્લાઓ જલંતાઓ  
એગપ્પેસિયાએ સેટીએ-એત્થ ણં તમુક્કાએ સમુટ્ટિએ ' ઉપરિતનાદ્ જલ્લાન્તાત્ જલા-  
ન્તિમભાગાત્ એકપ્રદેશિકાયાં એક એવ નદ્વ્યાદયઃ ઉપર્યયઃ પ્રદેશો યસ્યાં સા તસ્યાં  
શ્રેણ્યાં સમભિત્તિતાયામિત્યર્થઃ નતુ એકપ્રદેશપ્રમાણાયાં, તથાત્વે જીવાનામ્ અસં-  
ખ્યાતપ્રદેશાવગાહસ્વભાવત્વેન એકપ્રદેશપ્રમાણાયાં શ્રેણી જીવાવગાહાભાવપ્રજ્ઞાત્

ચારોં ઓર સે ઘેરે હુએ અરુણોદય સમુદ્ર કો ૪૨ હજાર યોજન ઉલ્લંઘિત  
કરકે-અર્થાત્ અરુણવરદ્વીપ કી વાહ્યજગતી કે અન્તિમ ભાગ સે લગા-  
કર અરુણોદય સમુદ્ર કો ૪૨ હજાર યોજનપ્રમાણ પાર કરને કે વાદ  
( ઉવરિલ્લાઓ જલંતાઓ ) ઉપરિતન જલ્લાન્ત આતા હૈ જલ કે અન્તિમ-  
ભાગ કા નામ જલ્લાન્ત હૈ । હસ જલ્લાન્તકે ડપર હી (એગપ્પેસિયાએ સેટીએ  
એત્થ ણં તમુક્કાએ સમુટ્ટિએ ) ડપર નીચે સમાન હૈ-પ્રદેશ જિસમેં એસી  
દીવાલ કે જૈસી એક પ્રદેશિકા શ્રેણી હૈ યહાં પર " એક પ્રદેશિકા શ્રેણિ "   
કા અર્થ એસા નહીં કરના ચાહિયે કિ " જિસમેં એક હી પ્રદેશ હો, દો  
આદિ પ્રદેશ ન હો-એસી જો શ્રેણી હૈ, વહ એક પ્રદેશિકા શ્રેણી હૈ "   
કયોં કિ એસા અર્થ કરને મેં સિદ્ધાન્ત સે વાધા આતી હૈ કારણ કિ  
જીવોં કા સ્વભાવ આકાશ કે અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં અવગાહન કરને કા  
હૈ અતઃ એકપ્રદેશ પ્રમાણ વાલી શ્રેણી મેં જીવોં કે અવગાહન હોને કા

સમુદ્રં વાયાલીસં જોયણસહસ્રાણી ઓગાહિત્તા ) તે દ્વીપને આરે તરફથી ઘેરીને  
રહેલા અરુણોદય સમુદ્રમાં ૪૨૦૦૦ યોજનનું અંતર પાર કરીને-એટલે કે  
અરુણવર દ્વીપની બાહ્ય જગતીના અન્તિમ ભાગથી શરૂ કરીને અરુણોદય  
સમુદ્રને ૪૨૦૦૦ યોજન પ્રમાણ પાર કરીને " ઉવરિલ્લાઓ જલંતાઓ " ઉપ-  
રિતન જલ્લાન્ત આવે છે. ( જળના અન્તિમ ભાગને જલ્લાન્ત કહે છે. ) તે  
જલ્લાન્તની ઉપર જ ( એગપ્પેસિયાએ સેટીએ એત્થ ણં તમુક્કાએ સમુટ્ટિએ ) ઉપર  
અને નીચેના ભાગમાં સમાન પ્રદેશવાળી, દીવાલના જેવી એક પ્રદેશિકા શ્રેણિ  
છે. અહીં " એક પ્રદેશિકા શ્રેણિ " નો એવો અર્થ કરવો ભેદનો નહીં કે  
" જેમાં એક જ પ્રદેશ હોય, જે ત્રણ આદિ પ્રદેશ ન હોય, એવી જે શ્રેણી  
છે તેને એકપ્રદેશિકા શ્રેણી કહે છે. " કારણ કે એવો અર્થ કરવામાં સિદ્ધા-  
ન્તની દૃષ્ટિએ બાધા ( મુશ્કેલી ) નડે છે, કારણ કે આકાશના અસંખ્યાત  
પ્રદેશોમાં અવગાહના કરવાનો છોવોનો સ્વભાવ છે. તેથી એક પ્રદેશ પ્રમાણ-  
વાળી શ્રેણીમાં છોવોનું અવગાહન હોવાનું સંભવી શકતું નથી. તમસ્કાયને



તમસ્કાયમ્ય જલનુદ્ધુદાત્માગમ્યમ્પન્નાન્ , નદુવિમ્લીર્ણંવાયાધાગ્નિઽગ્નિધાસ્ય-  
માનવાઃ પ્રદેશમપદેશિતા શ્રેણી તમસ્કાય શ્રેણી મરુગોદકમમુદ્રત્યોપરિમાગાન્  
મમાનમિન્નિકતયા વર્તન્તે ' एत्थ णं ' ખર નન્દ મરુગોદક મમુદ્રત્યોપર્યુત્તરે સ્થાને  
તમસ્કાય ઉચિત તમસ્કાયમ્યાગ્મ્યો માનિ । મમાનાભ્યવયા તમસ્કાયસ્યોર્ચ-  
પ્રમાણતે જાનન્તઃ ' મતમ-પર્વમે જોયમમ ઉદ્ધં ઉપ્પત્તા ' પરુવિગ્-

અભાવ પ્રાપ્ત હોતા હૈ કયોં કિ તમસ્કાય જલીય નુદ્ધુદ કે આકાર મેં  
જલજીવરૂપ માના ગયા હૈ અતઃ જલનુદ્ધુદ આકારવાલે જલજીવરૂપ  
તમસ્કાય કા ઉત્તમ પ્રદેશપ્રમાણ ચાલી શ્રેણી મેં અવગાહન કૈસે હો  
સકતા હૈ કથમપિ નહીં હો સકતા હૈ, કયોં કિ જીવ અપની સ્થિતિ કે  
નિમિત્ત આકાશ કે અસંલ્પાત પ્રદેશોં કો રોકતે હૈં । તમસ્કાય કી  
વિસ્તીર્ણતા કિતની હૈં મહત્ત્વાન આગે કહી જાવેગી । મહ જો સમપ્રદેશોં  
ચાલી શ્રેણી હૈં મહ તમસ્કાય શ્રેણી હૈં । મહ શ્રેણી અરુગોદક સમુદ્ર કે  
અન્તિમ જલ ઉપરિતન ભાગ સે પ્રારંભ હોતી હૈં ઓર મહ સમાન  
વિસ્તાર ચાલી બીન કે સમાન હૈં । एत्थ णं ) ટીક મહીં પર-અર્થત્વ  
અરુગોદક સમુદ્ર કે હમ પૂર્વોક્ત સ્થાન સે-તમસ્કાય કા આરંભ હોતા  
હૈ । સમાન રૂપવાલી હોને કે કારણ મહ તમસ્કાય ઉપરમેં કહાંતક ફેલા  
જોયમમ ઉદ્ધં ઉપ્પત્તા ) મહ તમસ્કાય ઉપર મેં ૧૭૨? યોજન તક

પણીના બુદ્ધબુદ્ધ ( પરપોટા ) ના આકારના જલજીવરૂપ ( અપૂર્ણાધિક રૂપ )  
માનવામાં આવેલ છે. તે જલબુદ્ધબુદ્ધના આકારવાળા અપૂર્ણાધિક રૂપ તમસ્કા-  
યની તે એક પ્રદેશવાળી શ્રેણીમાં અવગાહના જે કેવી રીતે સંભવી શકે ?  
કહેવાનું તત્પર્ય એ છે કે એક પ્રદેશ પ્રમાણવાળી શ્રેણીમાં તે તમ-  
સ્કાયની અવગાહના જે શક્ય નથી, કારણ કે એવ પોતાની સ્થિતિને નિમિત્તે  
આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોને રોકે છે. તમસ્કાય કેટલો બધો વિસ્તૃત છે તે  
તે આગળ બતાવવામાં આવશે. કહેવાનું તત્પર્ય એ છે કે તે એક પ્રદેશિકા-  
શ્રેણી અનેક પ્રદેશોવાળી છે. તે જે સમપ્રદેશોવાળી શ્રેણી છે, એ જ તમસ્કાય,  
શ્રેણી છે તે શ્રેણીનો પ્રારંભ અરુગોદક સમુદ્રના અન્તિમ જળના ઉપરિતન  
ભાગથી થાય છે, અને તે સમાન વિસ્તારવાળી દીવાલના જેવી છે. " एत्थ णं "  
બરાબર એજ સ્થાનેથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે. સમાનરૂપ વાળો હોવાને  
કારણે તે તમસ્કાય ઉપર કયાં સુધી વ્યાપેલો છે તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે-  
( સત્તરસ-પચ્ચીસે જોયણ સદ ઉદ્ધં ઉપ્પત્તા ) તે તમસ્કાય ઉપરની બાજુએ

ત્યધિક સત્તદશસતયોજનાનિ ઝર્વ્યુ ઉત્પત્ય ' તત્રો પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે, પવિત્થરમાણે, સોહમ્મી-સાગ-સર્ણકુમાર-માહિંદે ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા ' તતઃ પથાન્ તિર્યક્ પ્રવિસ્તરન્ પ્રવિસ્તરન્ તિરથીનતયા વિસ્તારં પ્રાપ્નુવન્ સૌધર્મે-શાન-સનત્કુમાર-માહેન્દ્રાન્ ચતુરોડરિ કલ્પાન્ આટલ્ય આચ્છાદ્ય 'ઉદ્ઘં પિ ય ણં વંમલોગે કપ્પે રિદ્ધિમાગપત્થડં સંપત્તે ' ઝર્વ્યપિ ચ સ્વલુ બ્રહ્મલોકે કલ્પે રિદ્ધિ-વિમાનપ્રસ્તટં સંપ્રાપ્તોડસ્તિ ' एत्थणं तमुक्काए सन्निट्ठिए ' અત્ર સ્વલુ બ્રહ્મલોકસ્ય રિદ્ધિનામંકવિમાનપ્રસ્તટે તમસ્કાયઃ તન્નિષ્ઠિતઃ-સમાર્પિ ગતોડસ્તિ । તતો ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-' તમુક્કાએ ણં મંતે ! કિંસંઠિએ પણત્તે ? ' હે ભદન્ત ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ કિંસંસ્થિતઃ તસ્ય કીદશં સંસ્થાનં પ્રાપ્તમ્ ? મગવાનાહ= ' ગોયમા ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ અધોભાગે મલ્લકમૂલસંસ્થિતઃ શરાવસ્ય મૂલમ્-અધોભાગઃ, તત્સદશસંસ્થાનો

મર્યા હુઆ હૈ । (તઓ પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મી-સાગ સર્ણકુમાર-માહિંદે ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા) ઉસકે વાદ વહાંસે યહ તિરછા વિસ્તૃત હોતા હુઆ સૌધર્મ-ઈશાન, સનત્કુમાર ઓર માહેન્દ્ર હન ચાર કલ્પોંકો ઓ આવૃત્ત કરકે આગે યહ (ઉદ્ઘં પિ ય ણં વંમલોગે કપ્પે રિદ્ધિવિમાણપત્થડં સંપત્તે ) ઝર્વ્યમેં બ્રહ્મલોક કલ્પમેં રિદ્ધિવિમાનકે પાથડે (અંગને)મેં પહુંચા હૈ । (एत्थणं तमुक्काए सन्निट्ठिए) इसी ब्रह्मलोक कल्प के रिद्धि विमान के पाथडे में ही इसका अन्त हुआ है । अर्थात् इससे आगे तमस्काय नहीं है । “ तमुक्काए णं मंते ! किं संठिए पणत्ते ” हे भदन्त ! तमस्काय का आकार कैसा कहा गया है ? इस गौतम के प्रश्न के उत्तर में प्रभु ने उनसे कहा-( गौयमा ! अहे मल्लकमूलसंठिए, उप्पि

૧૭૨૧ થોજન સુધી ગયેલો છે. ( તઓ પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મીસાગ-સર્ણકુમાર-માહિંદે ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા ) ત્યારબાદ ત્યાંથી તે તિરછો વિસ્તૃત થઈને સૌધર્મ, ઈશાન, સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર આ ચાર કલ્પોને આચ્છાદિત કરીને ત્યાંથી આગળ વધીને “ ઉદ્ઘં પિ ય ણં વંમલોગે કપ્પે રિદ્ધિવિમાણપત્થડં સંપત્તે ” તે ઊંચે બ્રહ્મલોક કલ્પના રિદ્ધિ વિમાનના પાથ-ડામાં પહોંચ્યો છે. “ एत्थणं तमुक्काए सन्निट्ठिए ” આ બ્રહ્મલોક કલ્પના રિદ્ધિ વિમાનના પાથડામાં જ તેની સમાપ્તિ થાય છે. એટલે કે તેના કરતાં આગળ તમસ્કાય નથી. ( તમુક્કાએ ણં મંતે ! કિં સંઠિએ પણત્તે ? ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયનો આકાર કેવો કહ્યો છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—  
“ ગોયમા ! અહે મલ્લકમૂલસંઠિએ, ઉપ્પિ કુક્કુડપંજરગતંઠિએ ” હે ગૌતમ !



તમસ્કાયસ્ય જલબુદ્બુદાકારાપ્તાપ્તરૂપતાત્, તદ્વિષ્ણીર્ગંગાયાથાગ્રેઽમિયાસ્ય-  
માનત્વાત્ । ઇયમેવ મમ પ્રદેશિતા શ્રેણી તમસ્કાય શ્રેણી અરુણોદક સમુદ્રજ્યોત્સ્નાભાગાત્  
સમાનભિત્તિકતયા વર્ત્તને ' एत्थ णं ' અર તત્તુ અરુણોદક સમુદ્રજ્યોત્સ્નાને સ્થાને  
તમસ્કાયઃ ઉત્થિતઃ, તમસ્કાયસ્યારમ્ભો ભવતિ । સમાનામ્યતયા તમસ્કાયસ્યોર્વ-  
પ્રસરણયોગનાન્યાહ- ' सत्तरस-एकवीसे जोयणसए उड्डं उप्पइत्ता ' एतन्निश-

અભાવ પ્રાપ્ત હોતા હૈ કયોં કિ તમસ્કાય જલીય બુદ્બુદ કે આકાર મેં  
જલજીવરૂપ માના ગયા હૈ અતઃ જલબુદ્બુદ આકારવાલે જલજીવરૂપ  
તમસ્કાય કા ઉસ ણક પ્રદેશપ્રમાણ વાલી શ્રેણી મેં અવગાહન કૈસે હો  
સકતા હૈ કથમપિ નહીં હો સકતા હૈ, કયોં કિ જીવ અપર્ની સ્થિતિ કે  
નિમિત્ત આકાશ કે અસંરૂપાત પ્રદેશોં કો રોકતે હૈ । તમસ્કાય કી  
વિસ્તીર્ણતા કિતની હૈ યહ વાન આગે કહી જાવેગી । યહ જો સમપ્રદેશોં  
વાલી શ્રેણી હૈ વહ તમસ્કાય શ્રેણી હૈ । યહ શ્રેણી અરુણોદક સમુદ્ર કે  
અન્તિમ જલ ઉપરિતન ભાગ સે પ્રારંભ હોતી હૈ ઓર યહ સમાન  
વિસ્તાર વાલી ખીત કે સમાન હૈ । ( एत्थ णं ) ઠીક યહીં પર-અર્થાત્  
અરુણોદક સમુદ્ર કે હસ પૂર્વોક્ત સ્થાન સે-તમસ્કાય કા આરંભ હોના  
હૈ । સમાન રૂપવાલી હોને કે કારણ યહ તમસ્કાય ઉપરમેં કહાંતક ફેલા  
હુઆ હૈ, હસ વાન કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ કિ-(सत्तरस-एकवीसे  
जोयणसए उड्डं उप्पइत्ता) યહ તમસ્કાય ઉપર મેં ૧૭૨૧ યોજન તક

પાણીના બુદ્બુદ ( પરપોટા ) ના આકારના જલજીવરૂપ ( અપ્રમાયિક જીવરૂપ )  
માનવામાં આવેલ છે. તે જલબુદ્બુદના આકારવાળા અપ્રમાયિક રૂપ તમસ્કા-  
યની તે એક પ્રદેશવાળી શ્રેણીમાં અવગાહના જ કેવી રીતે સંભવી શકે ?

કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એક પ્રદેશ પ્રમાણવાળી શ્રેણીમાં તે તમ-  
સ્કાયની અવગાહના જ શક્ય નથી, કારણ કે જીવ પોતાની સ્થિતિને નિમિત્તે  
આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોને રોકે છે. તમસ્કાય કેટલો બધો વિસ્તૃત છે તે  
તો આગળ બતાવવામાં આવશે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તે એક પ્રદેશિકા  
શ્રેણી અનેક પ્રદેશોવાળી છે. તે જે સમપ્રદેશોવાળી શ્રેણી છે, એ જ તમસ્કાય  
શ્રેણી છે. તે શ્રેણીનો પ્રારંભ અરુણોદક સમુદ્રના અન્તિમ જળના ઉપરિતન  
ભાગથી થાય છે, અને તે સમાન વિસ્તારવાળી હીવાલના જેવી છે. “ एत्थ णं ”  
બરાબર એજ સ્થાનેથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે. સમાનરૂપ વાળો હોવાને  
કારણે તે તમસ્કાય ઉપર કયાં સુધી વ્યાપેલો છે તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે-  
( सत्तरस-एकवीसे जोयण सए उड्डं उप्पइत्ता ) તે તમસ્કાય ઉપરની બાજુએ

અસંખેજ્જવિત્થડે ય ' હે ગૌતમ ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ, તદ્વયા-  
સંખ્યેયવિસ્તૃતથ, અસંખ્યેયવિસ્તૃતથ. તત્ર આદિત આરભ્ય ઊર્ધ્વં સંખ્યેયયોજન-  
પર્યન્તં સંખ્યાતયોજનવિસ્તૃતઃ, તતઃ સંખ્યેયયોજનાનન્તરમ્ ઊર્ધ્વં તસ્ય વિસ્તાર-  
ગામિતયા પ્રતિશાદિતત્ત્વેન અસંખ્યાતયોજનવિસ્તૃતથેત્યર્થઃ । 'તત્થ ણં જે સે સંખેજ્જ  
વિત્થડે ' તત્ર તયોર્મધ્યે સ્વલુ યઃ સઃ સંખ્યેયવિસ્તૃતઃ તમસ્કાયઃ ' સે ણં સંખે-  
જ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિઠ્ઠલંભેણં ' સ સ્વલુ સંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્સાણિ વિઠ્ઠ-  
લંભેણ વિસ્તારેણ વર્તંતે, ' અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ખેવેણં પણ્ણત્તે '   
અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્સાણિ પરિક્ષેપેણ પરિધિના પ્રજ્ઞતઃ, તમસ્કાયસ્ય સંખ્યાત-

તમસ્કાય દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—(તં જહા) વે દો પ્રકાર ઉસકે વે  
હૈ—(સંખેજ્જવિત્થડે ય, અસંખેજ્જવિત્થડે ય) એક સંખ્યાત વિસ્તારવાલા  
તમસ્કાય ઓર દૂસરા અસંખ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય આદિ સે લેકર  
ઊંચે સંખ્યાત યોજન તક તમસ્કાય વિસ્તૃત હૈ વહ સંખ્યાત વિસ્તાર  
વાલા તમસ્કાય હૈ—ઇસકે વાદ અસંખ્યાત યોજન વિસ્તારવાલા તમસ્કાય  
અસંખ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય હૈ કારણ કિ ઊપર મેં તમ-  
સ્કાય કે વિસ્તાર ઊર્ધ્વગામીરૂપ સે કહા ગયા હૈ । ઇસી વાત કો સૂત્ર-  
કાર પ્રકટ કરતે હૈ—(તત્થ ણં જે સે સંખેજ્જવિત્થડે) ઇન દોનોં તમસ્કાય  
મેં જો તમસ્કાય સંખ્યાત વિસ્તૃત હૈ (સે ણં સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં  
વિઠ્ઠલંભેણં) વહ વિઠ્ઠલંભ કી અપેક્ષા તો સંખ્યાત યોજન સહસ્ત્ર તક  
વિસ્તૃત હૈ (અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ખેવેણં પણ્ણત્તે) ઓર

યના બે પ્રકાર કહ્યા છે. “તંજહા” તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

(સંખેજ્જાવિત્થડે ય, અસંખેજ્જવિત્થડે ય) એક તમસ્કાય સંખ્યાત  
વિસ્તારવાળો છે અને બીજો અસંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે. શરૂઆતથી  
માંડીને ઉપર સંખ્યાત યોજનો સુધી જે તમસ્કાય વ્યાપેલો છે તેને સંખ્યાત  
વિસ્તારવાળો તમસ્કાય કહે છે, ત્યારબાદ અસંખ્યાત યોજનના વિસ્તારમાં  
વ્યાપેલા તમસ્કાયને અસંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય કહે છે, કારણ કે  
ઉપર તમસ્કાયનો વિસ્તાર ઊર્ધ્વગામીરૂપે બતાવ્યો છે. એજ વાત સૂત્રકાર આ  
સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરે છે—

(તત્થ ણં જે સે સંખેજ્જવિત્થડે) તે બંને તમસ્કાયોમાંથી જે સંખ્યાત  
વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે “સે ણં સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિઠ્ઠલંભેણં”  
તે વિઠ્ઠલની અપેક્ષાએ સંખ્યાત હજારે યોજન પર્યન્ત વ્યાપેલો છે, અને  
(અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ખેવેણં પણ્ણત્તે) અને પરિક્ષેપ (પરિધ)

વર્તે, યતો દિ સમજલાન્તસ્યોપરિમાને પરિમિત્યધિકપાદગગનયોજનાનિ  
યાવત્ તમસ્કાયસ્ય ચક્ષુષસ્તંસ્થાનં વર્તે, ઉપરિ કુર્ષી તુ કુક્કુટપંજરકસંસ્થિતઃ  
કુક્કુટસ્ય પંજરવત્ સંસ્થાનમ્ આકારઃ મહત્ત્વઃ । અધઃ સંકુચિતઃ, મધ્યે વિસ્તીર્ણઃ,  
ઉપરિ પુનઃ સંકુચિતઃ, પૃથગ્ગણાકારસ્તમસ્કાયઃ મહત્ત્વ ઇતિ । ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ-  
' તમુક્કાણં ણં મંતે ! કેવદ્વયં વિક્ષેપેણ, કેવદ્વયં પરિક્ષેવેણં પળ્લભતે ? મદન્ત ।  
તમસ્કાયઃ સ્વદુ કિયાન્ વિષ્કંભેણ ચાદલ્લેપેન સ્વૂચ્છવેનેત્યર્થઃ, તથા કિયાંચ  
કિયદ્વયરિમિતઃ પરિક્ષેપેણ પરિધિના પરિધિમાથિત્ય વિસ્તારઃ મહત્ત્વઃ મતિપાદિતઃ ?  
મગધાનઃહ - ' ગોયમા ! તમુક્કાણં ણં દુવિદ્ધે પળ્લભતે તં જઘ્ના-સંલેખનવિત્યકે સ,

કુક્કુટપંજરગસંઠિત ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાય કા નીચે કા આકાર મહત્ત્વ-  
કમૂલ-મિટ્ટીકે દીપકકે અધોભાગકેજેસા કહ્વા ગયા હૈ-કયોં કિ સમ-  
જલાન્તકે ઉપરભાગમેં ૧૭૨૧ યોજન તક તમસ્કાય કા આકાર વલયકે  
સમાન ગોલ હૈ ઓર ઉપરમેં તમસ્કાયકા સંસ્થાન આકાર-મુર્ગાકે પાંજરે  
કે સમાન કહ્વા ગયા હૈ-કયોંકિ મુર્ગાકા પાંજરા નીચેકે ભાગમેં સંકુચિત,  
મધ્ય મેં વિસ્તીર્ણ ઓર ઉપર મેં સંકુચિત હોતા હૈ સો હસી તરહ કા  
ઉપર કા આકાર તમસ્કાય કા હૈ । અથ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે એસા  
પૂછતે હૈ કિ-( તમુક્કાણં ણં મંતે ! કેવદ્વયં વિક્ષેપેણ, કેવદ્વયં પરિક્ષે-  
વેણં પળ્લભતે ) હે મદન્ત ! તમસ્કાય વિષ્કંભ-સ્થૂલતા-કી અપેક્ષા કિતના  
વડા હૈ ઓર પરિક્ષેપ-પરિધિ કી અપેક્ષા કિતના વડા હૈ ? અર્થાત્ તમ-  
સ્કાય કા વિષ્કંભ ઓર પરિક્ષેપ કિતના હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને  
ઉનસે એસા કહ્વા કિ-( ગોયમા ! તમુક્કાણં ણં દુવિદ્ધે પળ્લભતે ) હે ગૌતમ !

તમસ્કાયના નીચેના ભાગનો આકાર માટીના દીપકના ( કેડિયાના ) તળિયા  
જેવો કહ્યો છે-કારણ કે સમજલાન્તના ઉપરના ભાગમાં ૧૭૨૧ યોજન  
સુધી તમસ્કાયનો આકાર વલયના જેવો ગોળ છે અને ઉપરના ભાગનો  
આકાર કૂકડાના પાંજરા જેવો કહ્યો છે, કારણ કે કૂકડાનું પાંજરું નીચેના  
ભાગમાં સંકીર્ણ ( સંકુચિત ), મધ્યમાં વિસ્તીર્ણ અને ઉપરના ભાગમાં સંકુ-  
ચિત હોય છે. તમસ્કાયના ઉપરના ભાગનો આકાર પણ એવો જ હોય છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી તમસ્કાયના વિસ્તાર આદિ વિષે મહાવીર પ્રશ્નને  
નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—( તમુક્કાણં ણં મંતે ! કેવદ્વયં વિક્ષેપેણ, કેવદ્વયં  
પરિક્ષેવેણં પળ્લભતે ? ) હે મદન્ત ! તમસ્કાયનો વિસ્તાર કેટલો કહ્યો છે ?  
તેનો પરિક્ષેપ ( પરિધિ ) કેટલો કહ્યો છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! તમુક્કાણં ણં દુવિદ્ધે પળ્લભતે ” હે ગૌતમ ! તમસ્કા-



ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ—‘ તમુક્કાણં મંતે ! કેનઢાઝર્ પળ્લત્તે ? ’ હે મદન્ત ! તમસ્કાયઃ સ્વત્તુ કિયન્નહાલયઃ કિયત્તરિમિતો વિશાલ ઇતિ પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ— ‘ગોયમા ! અયં ણં જંબુદીવે દીવે સન્વદીવ—સમુદ્દાણં સવ્વઢમંતરાણ, જાવ—પરિક્ખેવેણં પળ્લત્તે ’ હે ગૌતમ ! અયં સ્વત્તુ જમ્બૂદ્વીપો દ્વીપઃ સર્વદ્વીપ—સમુદ્દાણાં સર્વમ્ભ્યન્તરકઃ સર્વમ્ભ્યન્તરે વર્તમાનઃ મધ્યજમ્બૂદ્વીપ ઇત્યર્થઃ, યાવત્—પરિક્ષેપેન પરિધિના પ્રસૂતઃ, યાવત્કરણાત્—‘ એમં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્ખંભેણં, તિણિં જોયણસયસહસ્સાઈં સોલસસહસ્સાઈં દોણિયસત્તાવીસે જોયણસણ, તિણિં કોસે અઢ્ઢાવીસં ચ ધણુસયં તેરસ ચ અંગુલાઈં અઢ્ઢંગુલં ચ કિંચિવિસેસાહિયં ’ ઇતિ સંગ્રાહ્યમ્ । ‘ એકં યોજનશતસહસ્રમ્—આયામવિક્ખમ્ભેણ, ત્રીણિ યોજનશતસહસ્રાણિ પોઢશ સહસ્રાણિ, ઢે સપ્તવિંશતિઃ યોજનશતે, ત્રયઃ ક્રોશાઃ, અષ્ટાવિંશતિથ ધનુઃશતમ્, ત્રયોદશ ચાઢ્ઢુયાતિ, અર્ધાંગુલં ચ કિંચિદ્વિશેષાધિકમ્’ ઇતિચ્છાયા ‘દેવેણં મહિઢ્ઢિણ, અથ ગૌતમ પ્રમુ સે એસા પૂછતે હેં કિ—( તમુક્કાણં મંતે કે મહાલયે પળ્લત્તે ) હે મદન્ત ! યહ તમસ્કાય કિતના વઢા—વિશાલ કહા ગયા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ડનસે કહતે હેં કિ—( ગોયમા ! અયં ણં જંબુદીવે દીવે સન્વદીવસમુદ્દાણં સવ્વઢમંતરાણ જાવ પરિક્ખેવેણં પળ્લત્તે ) હે ગૌતમ ! સમસ્ત દ્વીપ ઓર સમસ્ત સમુદ્રોં કે વીચ મેં વર્તમાન યહ જંબુદ્વીપ નામકા દ્વીપ—મધ્ય જંબુદ્વીપ યાવત્ પરિક્ષેપ વાલા કહા ગયા હૈ—યહાં ( યાવત્ ) શબ્દ સે—‘ એમં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્ખંભેણં, તિણિં જોયણસયસહસ્સાઈં સોલસસહસ્સાઈં દોણિય સત્તાવીસે જોયણસયાઈં તિણિં કોસે અઢ્ઢાવીસં ચ ધણુસયં તેરસ ચ અંગુલાઈં અઢ્ઢંગુલં ચ કિંચિ વિસેસાહિયં ’ હસ પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । ‘ દેવેણં મહિઢ્ઢિણ જાવ—

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ તમુક્કાણં મંતે ! કે મહાલયે પળ્લત્તે ? ) હે મદન્ત ! તમસ્કાયને કેટલો વિશાળ કહ્યો છે ? ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ( અયં ણં જંબુદી દીવે સન્વદીવસમુદ્દાણં સવ્વઢમંતરાણ જાવ પરિક્ખેવેણં પળ્લત્તે ) સમસ્ત દ્વીપ અને સમસ્ત સમુદ્રોની વચ્ચે રહેલા આ જંબુદ્વીપ નામનો દ્વીપ—મધ્ય જંબુદ્વીપ..... યાવત્ પરિક્ષેપવાળો કહ્યો છે. અહીં “ જાવ ( યાવત્ ) ” પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ શ્રદ્ધા થયો છે—( એમં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્ખંભેણં, તિણિં જોયણસયસહસ્સાઈં સોલસસહસ્સાઈં દોણિય સત્તાવીસે જોયણસયાઈં તિણિં કોસે અઢ્ઢાવીસં ચ ધણુસયં તેરસ ચ અંગુલાઈં અઢ્ઢંગુલં ચ કિંચિ વિસેસાહિયં ) એક લાખ યોજનની લંબાઈ અને પહોળાઈવાળા અને ૩૧૬૨૨૭ યોજન, ૩ કોસ, ૧૨૮ એકસો અઢ્ઢાવીસ ધનુષ અને ૧૩૧૧ અંગુલથી સઢેજ અધિક પરિધવાળા આ સમસ્ત

યોજનવિસ્તૃતત્વેऽપિ અસંખ્યાતતમદ્વીપપરિશેષનો મુદ્ધત્ત્વાન્ પરિશેષાય અસં-  
 રૂપાતયોજનસદસપ્રમાણત્વાપ્, આખ્યન્તર-વદિઃપરિશેષવિનાગત્તુ નામોક્તઃ, ડમય-  
 સ્યાપિ અસંખ્યાતતયા સમાનત્વાન્, । અથ ન 'તત્ત્વ ણં જે સે અસંલિજ્જવિત્થડે'  
 તત્ર તથોઃ સંખ્યાતાસંખ્યાતવિસ્તૃતપોમિઃપે તલુ યઃ સઃ અમંલ્યેયવિસ્તૃતો વર્તતે  
 તમસ્કાયઃ 'સે ણં અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિવલંભેણં' તલુ અસંલ્યેયાનિ  
 યોજનસહસાણિ વિવલંભેણ વિસ્તારેણ વર્તતે 'અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં  
 પરિકલેવેણં પગ્ગત્તે' અસંલ્યેયાનિ યોજનસહસાણિ પરિશેષેણ પરિથિતા પ્રસપ્તઃ ।

પરિશેષ-પરિધિ કી અપેક્ષા વહ અસંખ્યાત યોજનસહસ્ર તક વિસ્તાર  
 ચાલા હૈ-અપિ તમસ્કાય કા વિસ્તાર સંખ્યાત યોજન કા પ્રત્ય ક્રિયા  
 ગયા હૈ ફિર ખી યહાં જો પરિધિ કી અપેક્ષા ડસ અસંખ્યાત યોજન  
 સહસ્ર તક વિસ્તૃત કહા ગયા હૈ સો ડસ કા કારણ વહ હૈ કિ અસં-  
 રૂપાતતમ દ્વીપકે પરિશેષ સે હસમેં મુદ્ધત્ તરતા આ જાતી હૈ ડસ કારણ  
 હસકે પરિશેષકો અસંખ્યાત યોજનસહસ્ર પ્રમાણચાલા કહા ગયા હૈ । યહાં  
 પર હસકે ખીતર ઓર બાહરકે પરિશેષકા વિભાગ તો કહાનહીં હૈ કારણ  
 કિ અસંખ્યાતતાકો લેકર દોનોં ખીતર ઓર બાહરકે પરિશેષોંમેં તુલ્યતા  
 હૈ । (તત્ત્વ ણં જે સે અસંલિજ્જવિત્થડે-સે ણં અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં  
 વિવલંભેણં) ડન દોનોં તમસ્કાયોં કે પીચ મેં જો તમસ્કાય અસંખ્યાત  
 વિસ્તૃત હૈ, વહ વિવલંભ-ચોડાઈ કી અપેક્ષા અસંખ્યાત યોજનસહસ્રતક  
 વિસ્તૃત હૈ તથા (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિકલેવેણં) પરિશેષ-પરિ-  
 ધિકી અપેક્ષા વહ અસંખ્યાત યોજનસહસ્ર તક કા વિસ્તાર ચાલા હૈ ।

ની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત હબર યોજન મુધીના વિસ્તારવાળો છે. જો કે  
 તમસ્કાયનો વિસ્તાર (વિષ્કંભ) સંખ્યાત યોજન પ્રમાણુ કહ્યો છે, તો પણ  
 તેનો પરિશેષ (પરિધિ) અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણુ કહ્યો છે, તેનું કારણ એ  
 છે કે અસંખ્યાતમ દ્વીપના પરિશેષને લીધે તેના પરિશેષની અધિકતા આવી  
 જાય છે. તેથી જ સંખ્યાત યોજનના વિસ્તારવાળા તમસ્કાયનો પરિશેષ  
 અસંખ્યાત યોજનનો કહ્યો છે. અહીં તેના બહારના અને અંદરના પરિ-  
 શેષનો વિભાગ કહ્યો નથી, તેનું કારણ એ છે કે અસંખ્યાતતાની અપેક્ષાએ  
 બહારના અને અંદરના પરિશેષમાં સમાનતા રહેલી છે. (તત્ત્વ ણં જે સે  
 અસંલિજ્જવિત્થડે-સે ણં અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિવલંભેણં) તે બંને  
 તમસ્કાયોમાંનો જે અસંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે, તે વિષ્કંભ  
 (પહોળાઈ) ની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત હબર યોજનના વિસ્તારવાળો છે,  
 તથા (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિકલેવેણં) પરિશેષ (પરિધિ) ની  
 અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાત હબર યોજન પ્રમાણુ વિસ્તારવાળો છે.



તિયાહં વા ' સ સ્વલુ દેવઃ તયા ઉપરિવર્ણિતયા ઉત્કૃષ્ટયા, ત્વરિતયા, યાવત્-  
વેગવતયા ચપલયા વૈદ્યુતયા દેવગતયા વ્યતિવ્રજન્ વ્યતિવ્રજન્ પૌનઃપુન્યેન ગચ્છન્  
યાવત્-एकाहं वा एकदिनं वा, द्वयहं वा द्विदिनं वा, त्रयहं वा त्रिदिनं वा ' उक्तो-  
सेणं छम्मासे वीईवइज्जा, अत्येगइयं तमुक्कायं वीईवइज्जा ' उत्कर्षेण पण्मासान्  
यदा व्यतिव्रजेत् निरन्तरं गच्छेत् तदा अस्त्येककं संभवति यत् एकं संख्यात-

"અત્યેગઇયં તમુક્કાયં વીઈવइज्जा " તક કે પાઠ દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ।  
(મહિઙ્ગિણ જાવ મહાણુમાવે) મેં જો યહ યાવત્ પદ આયા હૈ ઉસસે દેવ  
સમ્બન્ધી "મહાશુતિકઃ, મહાવલઃ મહાયશાઃ" ઇન વિશેષણોં કા સંગ્રહ  
હુઆ હૈ । દેવ કે યે મહદ્વર્યાદિક વિશેષણ જો યહાં પર કહે ગયે હૈ વે  
ઉસકી ગમનસામર્થ્ય કે ઉત્કર્ષ કો પ્રતિપાદન કરને કે લિયે કહે ગયે  
હૈ । "इणामेव इणामेव" ऐसे जो ये दो पद कहे गये हैं वे देव के मन  
में आई हुई गमन की शीघ्रता को सूचित करने के लिये कहे गये हैं ।  
इन पदों का शब्दार्थ "यह अब मैं चला यह अब मैं चला" ऐसा है ।  
"वह देव ३ तीन चुटकी बजने प्रमाण वाले काल में २१ इक्कीस बार  
पूरे जंबूद्वीप की प्रदक्षिणा देकर आ जावे" इस कथन से उसके गमन  
की अतिशीघ्रता सूचित की गई है । वह देव इतने काल में पूरे जंबूद्वीप  
की २१ बार प्रदक्षिणा करके आ जाता है-तो वह इसी तरह की गति  
से एक दिन तक, दो दिन तक या तीन दिन तक और अधिक से  
अधिक छह महिने तक निरन्तर चलता रहे-तब जाकर वह-संख्यात  
योजन प्रमाण वाले किसी एक तमस्काय तक ही पहुँच सकता है । तथा

‘દુવાહં વા’ થી શરૂ કરીને (અત્યેગઇયં તમુક્કાયં વીઈવइज्जा) પર્યન્તના  
સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે. આ સૂત્રમાં દેવને માટે જે મહાદ્વિક  
(મહા ઋદ્ધિવાળો) આદિ વિશેષણોનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે તેની  
ચાલવાની શક્તિના ઉત્કર્ષનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કરવામાં આવ્યો છે.  
"इणामेव इणामेव" આ જે પદો દેવના મનમાં શીઘ્ર ગમન કરવાનો જે  
વિચાર થયો છે તે સૂચિત કરવાને માટે વપરાયાં છે. તે પદોનો શબ્દાર્થ  
આ પ્રમાણે થાય છે-"आ उपड्यो, आ उपड्यो" તે દેવ ત્રણ ચપટી  
વગાડતાં તો ૨૧ વાર આખા જંબૂદ્વીપની પ્રદક્ષિણા કરીને આવે છે. આ  
કથનથી તે દેવના ગમનની અતિ શીઘ્રતા બતાવવામાં આવી છે. તે દેવ આ  
પ્રકારની ગતિથી એક દિવસ, બે દિવસ અથવા તો ત્રણ દિવસ સુધી અને  
વધારેમાં વધારે છ મહિના સુધી નિરન્તર ચાલ્યા કરે ત્યારે કદાચ તે સંખ્યાત  
યોજન પ્રમાણવાળા કોઈક તમસ્કાય સુધી જ પહોંચી શકે છે-એટલે કે તેને

જાવ-મહાણુભાવે-ઇનામેવ, ઇનામેવ તિ કદ્દુ કેવલરૂપં જંબૂદીપં દીપં તિહિ અચ્છરા-  
નિવાપહિં તિસત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ટિતાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા' દેવો મહદ્દિક્કઃ મહા-  
સમુદ્દિગાલી યાવત્-મહાયુત્તિઃ મહાવલઃ મહાયગાઃ મહાનુભાવઃ મહાપ્રભાવશાલી,  
અત્ર દેવસ્ય મહદ્દર્શાદિવિશેષણાનિ ગમનસામર્થ્યોત્કર્ષપતિપાદનાય ઉક્તાનિ, એત-  
દેવ મગનમ્ અતિશીઘ્રત્વપૂર્વકઔટિકાદ્યગતવ્યાપારપતિપાદયમ્, અપમદં પ્રસ્થિતઃ,  
અપમદં પ્રસ્થિતત્વમ્ એતિ કૃત્વા કથયિત્વા શીઘ્રતાપૂર્વનાયં દ્વિકૃત્તિઃ, કેવલરૂપં-સંપૂર્ણ  
જંબૂદીપં દીપં તિગ્ગમિઃ ત્રિસંઘપકામિઃ ત્રિવારાભિરિત્યર્થઃ ત્રિપુટ્ટિકામિઃ=ઔટિ-  
કામિઃ મધ્યમાડુદુગ્ગ'યોગજન્યધરનિબ્યઞ્ચકદસ્તવ્યાપારવિશેષરૂપાનિઃ 'ચુટ્તકી'  
એતિ ભાષાપ્રસિદ્ધામિઃ ત્રિસત્તકૃત્વઃ ત્રિભિર્ગુણિતા સત્ત ત્રિસત્ત ત્રિસત્તગાતાન્ એતિ  
ત્રિસત્તકૃત્વઃ એકવિંશતિવારાનિત્યર્થઃ, અનુપર્યટ્થ અનુપ્રદક્ષિણીકૃત્ય શીઘ્રં દ્વદિત્યેવ  
પરાવૃત્ય યાવતા કાલેન આગચ્છતિ, તાવતા કાલેન 'સે ણં દેવે તાણ ઉક્કિટ્ઠાણ,  
તુરિયાણ, જાવ-દેવગર્હણ, વીરૂવયમાણે, વીરૂવયમાણે જાવ-એગાહં વા, દુયાહં વા

મહાણુભાવે-ઇનામેવ ઇનામેવ તિ કદ્દુ કેવલરૂપં જંબૂદીપં દીપં તિહિ  
અચ્છરાનિવાપહિં તિસત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ટિતાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા''  
ઇસ પ્રકાર કી અર્થાત્ ૩૧૬ ૨૨૭ યોજન ૩ કોસ ૧૨૮ એકસો અઢાઈસ  
ધનુષ્ઠાં ઓર ૧૩૧ અંગુલ સે કુછ અધિક પરિધિવાલે ઇસ સમસ્ત જંબૂ-  
દીપ કો કોઈ મહદ્દિક્ક યાવત્ મહાનુભાવવાલા દેવ રેતીન ચુટ્તકી વજતેર  
એકીસ વાર પાર કર દેવે ઓર વહ ઇસી તરહસે એકદિન, દો દિન, યા  
ત્રીન દિનતક નિરન્તર ચલે ઓર અધિક સે અધિક વહ છહ માસ તક  
નિરન્તર ચલે તો કોઈ એક સંખ્યાત યોજન વાલે તમસ્કાય તક વહ  
પહુંચ સકતા હૈ-યહી વાત (સે ણં દેવે તાણ ઉક્કિટ્ઠાણ તુરિયાણ જાવ-  
દેવગર્હણ વીરૂવયમાણે, વીરૂવયમાણે જાવ એગાહં વા દુયાહં) સે લેકર

જંબૂદીપને (દેવેણં મહિદ્ધુદોણ જાવ મહાણુભાવે-ઇનામેવ ઇનામેવ તિ કદ્દુ કેવલ-  
રૂપં જંબૂદીપં દીપં તિહિ અચ્છરાનિવાપહિં તિસત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ટિતાણં હવ્વં-  
આગચ્છિજ્જા) કોઈ મહદ્દિક્ક, મહાધૃતિસંપન્ન, મહામણયુક્ત, મહાયશયુક્ત,  
અને મહાપ્રભાવશાળી દેવ ત્રણ અપટ્ટી વગાડતાં તો ૨૧ વાર પાર કરી-  
શકતો હોય, એવો દેવ એજ પ્રકારની શીઘ્ર ગતિથી એક દિવસ, બે દિવસ  
અથવા ત્રણ દિવસ સુધી નિરન્તર ચાલ્યા જ કરે અને અધિકમાં અધિક છ  
માસ સુધી તે નિરન્તર ચાલ્યા કરે, તો મહામુશ્કેલીએ તે કોઈ એક સંખ્યાત  
યોજનવાળા તમસ્કાયને પાર પામી શકે છે. એજ વાત (સે ણં દેવે તાણ  
ઉક્કિટ્ઠાણ તુરિયાણ જાવ દેવગર્હણ વીરૂવયમાણે, વીરૂવયમાણે જાવ એગાહં વા

માથઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ગામા ઇ વા, જાવ-સન્નિવેસા ઇ વા ? ’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ યત્ તમસ્કાયે ગ્રામાઃ ઇતિ વા યાવત્-સન્નિવેશાઃ સમાગતસાર્થવાહાદિનિવાસસ્થાનાનિ ભવન્તિ કિમ્ ? યાવત્કરણાત્-આકર નગર-ખેટ-કર્વટ-મહમ્બ-દ્રોણમુખ-પત્તન-નિગમાશ્રમ-સંવાહાનાં સંગ્રહઃ, તત્ર આકરાઃ સ્વર્ણરત્નાદ્યુત્પત્તિસ્થાનાનિ ઇતિ વા, નગરાણિ-અષ્ટાદશકરવર્જિતાનિ-ઇતિ વા, ખેટાનિ-ધૂલિપ્રાકારવેષ્ટિતાનિ ઇતિ વા, કર્વટાનિ-કુત્સિતગ્રામા ઇતિ વા, મહમ્બાનિ-સાર્થ-ક્રોશદ્વયાન્તરગ્રામાન્તરરહિતાનિ ઇતિ વા, દ્રોણમુખાનિ-જલસ્થલપથોપેતાનિ જનસ્થાનાનિ, પત્તનં સમસ્તવસ્તુ પ્રાપ્તિસ્થાનં નિગમાઃ-પ્રભૂતતરવણિગ્જનનિવાસા ઇતિ વા,

કરતે હૈં—( અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ગામા ઇ વા જાવ સન્નિવેસા ઇ વા ) હે ભદન્ત ! કયા યહ વાત સંભવિત હોતી હૈ કિ ઉસ તમસ્કાય મેં ગ્રામ યા યાવત્ સન્નિવેશ હૈં ? યહાં યાવત્ શબ્દ સે “ આકર, નગર નિગમ, ખેટ, કર્વટ, મહમ્બ, દ્રોણમુખ, આશ્રમ ઓર સંવાહ ઇન કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । જહાં પર સ્વર્ણ રત્ન આદિ પદાર્થ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઉસકા નામ આકર હૈ, ૧૮ અઠાર પ્રકાર કે ટેકસોં સે રહિત જન સ્થાન કા નામ નગર હૈ, જિસમેં અધિક સંખ્યામેં વ્યાપારી જનોંકા નિવાસ હો ઉસકા નામ નિગમ હૈ । ધૂલ કે પ્રાકાર સે વેષ્ટિત જનસ્થાન કા નામ ખેટ હૈ, છોટે ગાંવ કા નામ કર્વટ હૈ । જિસકી ચારોં દિશાઓં મેં ૨૥ કોશ તક કોઈ ગાંવ ન હો ઉસકા નામ મહમ્બ હૈ । જલમાર્ગ ઓર સ્થલમાર્ગ ઇન દોનોં માર્ગોં સે હી જિસમેં જાયા જાના હોવે ઉસકા નામ દ્રોણમુખ હૈ । તાપસ

પ્રશ્ન—( અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ગામા ઇ વા, જાવ સન્નિવેસા ઇ વા ? ) હે ભદન્ત ! શું તમસ્કાયમાં ગામ, આકર, નગર, નિગમ, ખેટ, કર્વટ, મહમ્બ, દ્રોણમુખ, પત્તન, આશ્રમ, સંવાહન અને સન્નિવેશ હોય છે ખરાં ? ( જાવ ) પદ્ધતી શ્રદ્ધણ કરવામાં આવેલાં શબ્દો સહિત અર્થ આપ્યો છે.

જ્યાં સુવર્ણ રત્ન આદિ પદાર્થ ઉત્પન્ન થાય છે, એ સ્થળને આકર કહે છે. ૧૮ પ્રકારના કરોથી રહિત જનસ્થાનને નગર કહે છે. જ્યાં અધિક પ્રમાણમાં વ્યાપારીઓ રહેતા હોય એવાં સ્થાનને નિગમ કહે છે. ધૂળના કોટની ઘેરાયેલા જનસ્થાનને ખેટ કહે છે. નાના ગામને કર્વટ કહે છે. જેની ચારે દિશામાં ૨૫ કોશ પર્યાન્તમાં કોઈ પણ ગામ ન હોય એવા સ્થાનને મહમ્બ કહે છે. જળમાર્ગ અને જમીન માર્ગ—એમ બન્ને માર્ગો—જે સ્થળે જઈ શકાય છે એવા સ્થળને દ્રોણમુખ કહે છે. જ્યાં તાપસો રહેતા હોય, તે સ્થાનને



યોજનમ્ તમસ્કાયં વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિક્રામેત્, 'અત્યેગદ્યં નો તમુક્કાયં વીર્ઘ્વજ્જા' અસ્ત્યેરુકં સંભવતિ યદ્વ દ્વિતીયમ્ અસંલ્પ્યાતયોજનમાનં તુ તમસ્કાયં નો નૈવ તાદૃશ્યાવિ મત્તયા વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિક્રમિતુનર્હેત્। એ પદ્ધતિયે તમસ્કાયસ્ય વિશાલતા મુપસંહારાદ્—'એમહાલ્પે ણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળગત્તે' હે ગૌતમ ! અન્યદાન્યઃ પુત્રાનાન્ વિશાલઃ તમસ્કાયઃ પ્રસૂતઃ । ગૌતમઃ પૂત્રઽતિ=અતિ ણં મંતે । તમુક્કાય ગેહા ઇ વા, ગેહાવળા ઇ વા ?' હે મદન્ત ! અસ્મિ સંભવતિ યદ્વ તમસ્કાયે ગેહાનિ ગૃહાણિ વા સન્તિ, ગેહાવળાઃ ગૃહદ્વાર વા સન્તિ કિમ્ ? મગધનાદ્—'ળો ઇળદ્વે સમદ્વે' હે ગૌતમ ! નાયપર્યઃ સમર્થઃ, તમસ્કાયે ગૃહા વા, ગૃહાવળા વા ન ભવન્તીતિ

જો (અત્યેગદ્યં નો તમુક્કાયં વીર્ઘ્વજ્જા) અસંલ્પ્યાત યોજન પ્રમાણ વાલા તમસ્કાય હૈં ઉસ તક તો યદ્વ દેવ ઇતની અધિક વત્કુપ્તતા એવં ત્વરા આદિ વિશેષણોં વાલી ગતિ સે ધીં નહીં પહેંન સક્તા હૈં । ઇત્ત-કથન સે પ્રમુ ને તમસ્કાય કી વિશાલતા કા વર્ણન કિયા હૈં ઇસી વાત કો ઉન્હોં ને (એમહાલ્પે ણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળગત્તે) ઇમ્ સૂત્ર પાઠ દ્વારા ગૌતમ કો ઉપસંહારરૂપ મેં સમજાયા હૈં ।

અય ગૌતમ સ્વામી પ્રમુ સે એસા પૂછતે હૈં કિ જન તમસ્કાય ઇતના અધિક વિશાલ હૈં તો (અતિ ણં મંતે ! તમુક્કાય ગેહાઇવા, ગેહાવળાઇવા) હે મદન્ત ! ઉસમેં કયા ઘર હૈં યા ગૃહાવળ-ગૃહ દ્વાર હૈં ? ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ઉનસે કહતે હૈં (ળો ઇળદ્વે સમદ્વે) હે ગૌતમ ! ઉસ વિશાલ તમ તમસ્કાય મેં ન ઘર હૈં ઓર ન ગૃહાવળ હૈં । ગૌતમ પુનઃ પ્રમુ સે પ્રશ્ન

પાર કરી શકે છે. પરન્તુ “અત્યેગદ્યં નો તમુક્કાયં વીર્ઘ્વજ્જા” અસંલ્પ્યાત યોજનતા વિસ્તારવાળો જે તમસ્કાય છે, ત્યાં સુધી તો તે દેવ આટલી બધી અધિક, ઉત્કૃષ્ટતા, ત્વરા આદિ વિશેષણોવાળી ગતિથી પણ પહેંચી શકતો નથી. આ કથન દ્વારા મહાવીર પ્રભુએ તમસ્કાયની વિશાળતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. એજ વાતને તેમણે “એમહાલ્પે ણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળગત્તે” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા ગૌતમ સ્વામીને ઉપસંહાર રૂપે સમજાવી છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી એ બાણવા માગે છે કે આટલા વિશાળ તમસ્કાયમાં ઘર, હાટ આદિ છે કે નહીં. (અતિ ણં મંતે ! તમુક્કાય ગેહાઇ વા ગેહાવળાઇ વા ?) હે મદન્ત ! જે તમસ્કાય આટલો બધો વિશાળ છે, તો તેમાં શું ઘર, છે ? ગૃહાવળ (હાટ) છે ?

ઉત્તર—“ળો ઇળદ્વે સમદ્વે” હે ગૌતમ ! તે વિશાળ તમસ્કાયમાં ઘરો પણ નથી અને હાટ પણ નથી.

સંભવતિ યત્ તમસ્કાયે ઉદારા મેવાઃ સંસ્વિદ્યન્તિ સમ્પૂર્ચ્છન્તિ, સંવર્પન્તિ ચ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, ણાગો પકરેદ્ ?’ હે મદન્ત ! તત્ સંસ્વેદનં સમ્પૂર્ચ્છનં વર્પણશ્ચ કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અથવા અસુરઃ પ્રકરોતિ, અથવા નાગઃ પ્રકરોતિ ? । મગવાનાદ—‘ગોયમા ! દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, ણાગો વિ પકરેદ્’ હે ગૌતમ ! તત્ સ્વલુ સંસ્વેદનં સમ્પૂર્ચ્છનં વર્પણં ચ દેવોઽપિ પ્રકરોતિ, અસુરોઽપિ પ્રકરોતિ, નાગોઽપિ પ્રકરોતિ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાપ વાયરે થણિયસદે, વાયરે વિજ્જુણ ?’ હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ તમસ્કાયે વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ ઘનગર્જનમ્ ? તથા વાદરા વિદ્યુત્ ? મગવા-

ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! ( હંતા અત્થિ ) એસા હોતા હે કિ-ઉદાર મેવ ઉસ તમસ્કાય મેં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલ સ્નેહરૂપ સંપત્તિ સે ગીલે હોતે હેં, પરસ્પર કે સંયોગરૂપ સે વે વર્હાં એકત્રિત હોતે હેં ઓર વરસતે હેં । અથ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હેં કિ-(તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્ અસુરો પકરેદ્, ણાગો પકરેદ્ ? ) કિં હે મદન્ત ! હસ સંસ્વેદન, સમ્પૂર્ચ્છન ઓર વર્પણ કો કયા દેવ કરતા હે ? અથવા અસુર કરતા હે ? યા નાગ કરતા હે ? હસ કે ઉત્તર પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, ણાગો વિ પકરેદ્) ઉસ સંસ્વેદન કો, સમ્પૂર્ચ્છન કો એવં વર્પણ કો દેવ મી કરતા હે, અસુર મી કરતા હે ઓર નાગ મી કરતા હે ।

(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાપ વાયરે થણિય સદે, વાયરે વિજ્જુણ) હે મદન્ત ! ઉસ તમસ્કાય મેં વાદર સ્તનિત શબ્દ-ઘનગર્જન, તથા વાદર

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—“હંતા અત્થિ” હે ગૌતમ ! એવું જ થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિશાળ મેઘ તમસ્કાયમાં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલોની ક્લિગ્ધતારૂપ સંપત્તિથી ભીંજાય છે, પરસ્પરના સંયોગથી તેઓ ત્યાં એકત્રિત થાય છે અને વરસે છે.

પ્રશ્ન—“તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, ણાગો પકરેદ્ ?” હે મદન્ત ! તે સંસ્વેદન, સમ્પૂર્ચ્છન (એકત્રિત કરવાની ક્રિયા) અને વર્પણ (વરસાવવાની ક્રિયા) શું દેવ કરે છે ? કે અસુરકુમાર કરે છે ? કે નાગકુમાર કરે છે ?

મહાવીર પ્રભુનો ઉત્તર—(દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, ણાગો વિ પકરેદ્) હે ગૌતમ ! તે સંસ્વેદન, સમ્પૂર્ચ્છન અને વર્પણ દેવ પણ કરે છે; અસુર પણ કરે છે અને નાગ પણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાપ વાયરે થણિયસદે,





સંભવતિ યત્ તમસ્કાયે ઉદારા મેવાઃ સંસ્વિયન્તિ સમ્મૂર્ચ્છન્તિ, સંવર્ષન્તિ ચ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ? ’ હે ભદન્ત ! તત્ સંસ્વેદનં સમ્મૂર્ચ્છનં વર્ષણં ચ કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અથવા અસુરઃ પ્રકરોતિ, અથવા નાગઃ પ્રકરોતિ ? । મગવાનાહ—‘ગોયમા ! દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્ ’ હે ગૌતમ ! તત્ સ્વલ્પ સંસ્વેદનં સમ્મૂર્ચ્છનં વર્ષણં ચ દેવોઽપિ પ્રકરોતિ, અસુરોઽપિ પ્રકરોતિ, નાગોઽપિ પ્રકરોતિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે થણિયસદે, વાયરે વિજ્ઞુણ ? ’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલ્પ તમસ્કાયે વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ ઘનગર્જનમ્ ? તથા વાદરા વિદ્યુત્ ? , મગવા-

ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! ( હંતા અતિથિ ) એસા હોતા હેં કિ-ઉદાર મેઘ ઉસ તમસ્કાય મેં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલ સ્નેહરૂપ સંપત્તિ સે મીલે હોતે હેં, પરસ્પર કે સંયોગરૂપ સે વે વર્હા એકત્રિત હોતે હેં ઓર વરસતે હેં । અવ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હેં કિ-(તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્ અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ? ) કિં હે ભદન્ત ! હસ સંસ્વેદન, સમ્મૂર્ચ્છન ઓર વર્ષણ કો કયા દેવ કરતા હેં ? અથવા અસુર કરતા હેં ? યા નાગ કરતા હેં ? હસ કે ઉત્તર પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં કિ-(ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્ ) ઉસ સંસ્વેદન કો, સમ્મૂર્ચ્છન કો એવં વર્ષણ કો દેવ મી કરતા હેં, અસુર મી કરતા હેં ઓર નાગ મી કરતા હેં ।

( અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે થણિય સદે, વાયરે વિજ્ઞુણ ) હે ભદન્ત ! ઉસ તમસ્કાય મેં વાદર સ્તનિત શબ્દ-ઘનગર્જન, તથા વાદર

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ હંતા અતિથિ ” હે ગૌતમ ! એવું જ થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિશાળ મેઘ તમસ્કાયમાં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલોની સ્નિગ્ધતારૂપ સંપત્તિથી ભીંજાય છે, પરસ્પરના સંયોગથી તેઓ ત્યાં એકત્રિત થાય છે અને વરસે છે.

પ્રશ્ન—“ તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ? ” હે ભદન્ત ! તે સંસ્વેદન, સમ્મૂર્ચ્છન ( એકત્રિત કરવાની ક્રિયા ) અને વર્ષણ ( વરસાવવાની ક્રિયા ) શું દેવ કરે છે ? કે અસુરકુમાર કરે છે ? કે નાગકુમાર કરે છે ?

મહાવીર પ્રભુનો ઉત્તર—( દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્ ) હે ગૌતમ ! તે સંસ્વેદન, સમ્મૂર્ચ્છન અને વર્ષણ દેવ પણ કરે છે, અસુર પણ કરે છે અને નાગ પણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—( અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે થણિયસદે,

નાહ—‘ હંતા, સત્યમેવ તમસ્કાયે વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ વાદરા વિષુભારિત, અથ-  
વાદરવિષુત્પદેન દેવપ્રભાવોત્પાદિતાઃ ભાસ્વરાઃ પુદ્ગલા ગ્રાધાઃ, નચ વાદરતેમસ્કા-  
યિકાઃ, તેનામિદેવાગ્રે પ્રતિપેત્સ્યમાનતાત્, ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—, તં મંતે ! કિં દેવો  
પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ, ? ’ હે મદન્ત ! તં વાદસ્તનિતશબ્દ વાદર-  
વિષુતં ચ કિં દેવઃ પ્રકરોતિ અથવા અસુરઃ પ્રકરોતિ, નાગો ચ પ્રકરોતિ ? પ્રશ્નઃ ।  
મનવાનાહ—‘ તિન્નિવિ પકરેતિ ’ હે ગૌતમ ! વાદરસ્તનિતશબ્દાદિકં ત્રયોઽપિ  
દેવાસુરનાગાઃ પ્રકુર્વન્તિ, ।

વિજલી होती है क्या ? इस गौतम के प्रश्न के उत्तर में प्रभु कहते हैं  
कि ( हंता अत्थि ) हां गौतम ! तमस्काय में वादर स्तनितशब्द और  
वादर विजली है । यहां पर वादरविषुत् शब्द से देवप्रभाव से उत्पादित  
भास्वर पुद्गल ही गृहीत हुए हैं । न कि वादर तेजस्कायिक, क्योंकि कि  
उसका यहां पर होना आगे निषिद्ध हुआ है ( तं मंते ! किं देवो  
पकरेह, असुरो पकरेह, नागो पकरेह ) हे मदन्त ! वादरस्तनित शब्द  
को और वादर विषुत् को वहां क्या देव करता है ? अथवा असुर क-  
रता है ? या नाग करता है ? इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देनेके लिये  
प्रभु उनसे कहते हैं कि—( तिन्नि वि पकरेति ) हे गौतम ! वादर स्तनित  
शब्द को एवं वादरविषुत् को वहां तीनों भी—देव, असुर एवं नाग ये

વાયરે વિજ્જુણ ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં શું વાદર સ્તનિત શબ્દ ( મેઘાનું  
ગર્જન ) થાય છે ? શું તેમાં વાદર વિજળી થાય છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—“ હંતા અત્થિ ” હા, ગૌતમ !  
તમસ્કાયમાં મેઘાની ગર્જના અને વાદર વિજળી થાય છે. અહીં “ વાદર  
વિષુત ” પદ દ્વારા દેવ પ્રભાવથી ઉત્પન્ન કરવામાં આવેલા દેહીપ્રમાણ પુદ્ગ-  
લો જ ગ્રહણ કરવા. અહીં વાદર તેજસ્કાયિક પુદ્ગલો ગ્રહણ કરવા જોઈએ  
નહીં, કારણ કે તેમના તમસ્કાયમાં અસ્તિત્વનો આગળ સ્વીકાર  
કરવામાં આવ્યો છે.

પ્રશ્ન—( તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ? )  
ત્યાં વાદર સ્તનિત શબ્દો તથા વાદર વિષુત્ કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ?  
અસુર કરે છે ? કે નાગ કરે છે ?

ઉત્તર—( તિન્નિ વિ પકરેતિ ) હે ગૌતમ ! ત્યાં તે વાદર સ્તનિત શબ્દ  
અને વાદર વિષુત ત્રણે કરે છે—દેવ પણ કરે છે, અસુર પણ કરે છે અને



ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે પુઢવિકાણ, વાયરે અગ્નિકાણ ? હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ તમસ્કાયે વાદરઃ પૃથિવીકાયઃ ભવતિ ? તથા વાદરઃ અગ્નિકાયો ભવતિ ? ભગવાનાહ—‘ ણોહ્ણદ્દે સમદ્દે—ણ્ણત્થ વિગ્ગહગતિસમાવન્નણં ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્યઃ સમર્યઃ, તમસ્કાયે વાદરઃ પૃથિવીકાયઃ, વાદરઃ અગ્નિકાયથ ન ભવતિ, કિન્તુ ‘ ન ’ ઇતિ શબ્દેન યોડ્યં વાદર-પૃથિવી-તેજસોઃ નિપેથઃ કૃતઃ, સ વિગ્ગહગતિસમાપન્નકેન અન્યત્ર વોઘ્યઃ। વિગ્ગહગતિ-સમાપન્નકાન્ વાદરપૃથિવીતેજસકાયાન્ વિહાય ઉક્તનિપેથો વિજ્ઞેય ઇત્યર્થઃ। વિગ્ગહ-ગત્યા વાદરપૃથિવીતેજસોઃ તમસ્કાયેડપિ સંભવાત્। વાદરાઃ પૃથિવીકાયિકાઃ રત્નપ્રમાયામુ અદ્દસુ પૃથિવીપુ ગિરિ-વિમાનેપુ ચ ભવન્તિ, વાદરતેજસ્કાયિકાસ્તુ મનુષ્યક્ષેત્રે એવ ભવન્તિ। ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-ણવલ્લ-તારાલ્લવા ? ’ હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ તમસ્કાયે ચન્દ્ર-

સથ હી કરતે હેં। ( અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે પુઢવિકાણ વાયરે અગ્નિકાણ ) હે મદન્ત ! તમસ્કાય મેં વાદર પૃથિવીકાય વાદર અગ્નિકાય હોતે હેં કયા ? હસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં ભગવાન્ ડનસે કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! ( ણો હ્ણદ્દે સમદ્દે, ણ્ણત્થવિગ્ગહગહસમાવન્ન-ણં ) વિગ્ગહગતિસમાપન્નક વાદર પૃથિવીકાય કો એવં તૈજસકાય કો છોહ્કર તમસ્કાય મેં વિગ્ગહગતિ અપ્રાપ્ત વાદર પૃથિવીકાય-ઑર વાદર અગ્નિકાય નહીં હેં। કયોં કિ વિગ્ગહગતિ મેં વર્તમાન વાદર પૃથિવી ઑર વાદર તૈજસકાયકા હી તમસ્કાયમેં મી સંભવ હો સકતા હેં। વાદર પૃથિ-વીકાયિક, રત્નપ્રમા આદિ આઠ પૃથિવીયોમેં ગિરિયોં મેં ઑર વિમાનોં મેં હી હોતે હેં। ઑર વાદર તૈજસ્કાયિક મનુષ્યક્ષેત્ર મેં હી હોતે હેં। “ અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણણવલ્લ તારાલ્લવા )

પ્રશ્ન—( અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે પુઢવીકાણ વાયરે અગ્નિકાણ ? ) હે મદન્ત ! તમસ્કાયમાં બાદર ( સ્થૂળ ) પૃથ્વીકાય અને બાદર અગ્નિકાય હોય છે ખરાં ?

ઉત્તર—“ ણો હ્ણદ્દે સમદ્દે ણ્ણત્થવિગ્ગહગહસમાવન્નણં ” હે ગૌતમ ! એધુ સંભવિત નથી. વિગ્ગહ ગતિમાં વર્તમાન બાદર પૃથ્વીકાયનો અને બાદર તૈજસ્કાયનો જ તમસ્કાયમાં સંભવ હોઈ શકે છે. વિગ્ગહગતિમાં વર્તમાન બાદર પૃથ્વીકાય અને બાદર તૈજસ્કાય સિવાયના વિગ્ગહગતિ અપ્રાપ્ત બાદર પૃથ્વીકાય અને બાદર તૈજસ્કાય તેમાં સંભવી શકતા નથી. બાદર પૃથ્વીકાયિક રત્નપ્રમા આદિ આઠ પૃથ્વીઓમાં, પર્વતોમાં અને વિમાનોમાં જ હોય છે, અને બાદર તૈજસ્કાયિક મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં જ હોય છે.

ભાસઃ કૃષ્ણકાન્તિયુક્ત ઇતિ, તથા ચ વર્ણેન કાલઃ, કાલાદમાસમ્ તમસ્કાયઃ,  
અથવા અતિશયકૃષ્ણકાન્તિશ્ચ સ ઇતિ । તથા સ ગમ્મીર-રોમ-ર્ષનનનઃ, ગમ્મીર-  
ધાસો અત્યન્તભીષણત્વાદ્ રોમર્ષનનનમેતિ ગમ્મીરરોમર્ષનનનઃ રોમાઓત્વા-  
દકઃ । તસ્ય રોમર્ષનનને કારણમાદ-‘ ભીમઃ ’ ઇતિ, વિષેતિ અસ્માદિતિ ભીમઃ  
ભયદ્ધરઃ, તથા ઉત્ત્રાસનકઃ અત્યન્તગ્રાસનનકઃ પરમકૃષ્ણર્ણઃ સ તમસ્કાયઃ મહત્ત્વઃ ।  
‘ દેવે ણં અત્યેગદ્દ જે ણં તપ્પદમયાણ પાસિત્તા ણં સુમાણ્જા ’ હે ગૌતમ ! દેવઃ  
સ્વલુ અસ્ત્યેકકઃ, યઃ સ્વલુ તં તમસ્કાયં મથમતયા મથમવારં દ્વદ્વા અલોચ્યેવ ધુમ્બેન્  
સોમં માણુયાત્ । ‘ અદે ણં અમિસમાગચ્છેજ્જા ’ અથ અનન્તરં સ્વલુ અમિસમાગ-

ઇતના ભયંકર હૈ કિ દેવલે હી વદ્ધત ધુરિ તરહ સે રોમરાજિ સ્વહી હો  
જાતી હૈ । રોમરાજિ સ્વહી હોને કા કારણ યહી હૈ કિ વહ “ ભીમઃ ”  
ભયપ્રદ હૈ । અત્યન્ત ગ્રાસ જનક હૈ । એસે પરમકૃષ્ણ વર્ણવાલા વહ  
તમસ્કાય હૈ । ( કાલોભાસે ) એસા જો પદ દિયા ગયા હૈ વહ યહ પ્રકટ  
કરતા હૈ કિ કોઈ પદાર્થ કાલા હોકર ભી કિસી કારણ વશ કાલે રૂપ  
મેં અવભાસિત નહીં હોના હૈ પરન્તુ યહ એસા નહીં હૈ-યહ તો કૃષ્ણવર્ણ-  
વાલા હોકર ભી કાલે હી રૂપ સે અવભાસિત હોતા હૈ । અથવા  
( કાલોભાસે ) યહ તમસ્કાય અત્યન્તકૃષ્ણકાન્તિ સે યુક્ત હૈ । મનુષ્યાદિ  
જિસસે ડરે વહ ( ભીમ ) હૈ । ( દેવેણં અત્યેગદ્દ જે ણં તપ્પદમયાણ  
પાસિત્તા ણં સુમાણ્જા ) કોઈ એક દેવ એસા ભી હોતા હૈ જો ઉસ તમ-  
સ્કાય કો સર્વપ્રથમ દેવ કરકે હી ધુમિત્ત હો જાતા હૈ-યદિ કોઈ દેવ  
કદાચિત્ ઉસ તમસ્કાય મેં ( અમિસમાગચ્છેજ્જા ) પાસ મેં જાકર પ્રવેશ

બધો ભયંકર હોય છે કે તેને ભેતાં જ બીકને કારણે રૂવાડા ઉભા થઇ  
જાય છે રૂવાડા ઉભા થવાનું કારણ એ છે કે તે “ ભીમઃ ” ભયજનક છે-  
અત્યન્ત ગ્રાસજનક છે, આવાં પરમકૃષ્ણ-વર્ણવાળો તે તમસ્કાય છે. “ કાલો-  
ભાસે ” આ પદ આપવાનું કારણ એ છે કે કોઈ પદાર્થ કાળો હોવા છતાં  
પણ કોઈ કારણે કાળો અવભાસિત થતો નથી-દેખાતો નથી. પરન્તુ તમસ્કાય  
એવો નથી. તે તો કૃષ્ણ વર્ણવાળો છે એટલું જ નહીં પણ કાળો જ દેખાય  
છે. અથવા “ કાલોભાસે ” આ તમસ્કાય અત્યન્ત કૃષ્ણકાન્તિથી યુક્ત છે.  
મનુષ્યાદિ જેનાથી ડરે તેને “ ભીમ ” કહે છે. ( દેવેણં અત્યેગદ્દ જે ણં તપ્પ-  
દમયાણ પાસિત્તા ણં સુમાણ્જા ) કોઈ કોઈ દેવ તો તેને પહેલી જ વાર દેખતાની  
સાથે જ દોભ પામી જાય છે. ભે કોઈ દેવ ક્યારેક તે તમસ્કાયમાં “ અમિ-  
સમાગચ્છેજ્જા ” પાસે જઈને પ્રવેશ કરે છે, તો તે ( તઓ પન્ઠા સીદં સીદં



છેત્-સતીપં ગત્વા તમસ્કાયં પ્રવિશેત્ , 'તઓ પચ્છા સીહં સીહં તુરિયં તુરિયં સ્વિપ્પા-  
મેવ વીઢવણ્જા ' તતઃ પથાત્ તદનન્તરમ્ ભયાન્ શીઘ્રં શીઘ્રમ્ અતિવેગેન ત્વરિતં  
ત્વરિતમ્ મનોગતેરતિવેગાત્ ક્ષિપમેવ અતિસત્ત્વરમેવ વ્યતિવ્રજેત્ અતિક્રામેત્ , તમુ-  
લ્લહ્ધ્ય નિર્ગચ્છેત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'તમુકાયસ્સ ણં ભંતે ! કહ્ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા ?'  
હે ભદન્ત ! તમસ્કાયસ્ય સ્વત્તુ કતિ કિયન્તિ નામધેયાનિ નામાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ ?  
ભગવાનાહ—'ગોયમા ! તેરસ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા ' હે ગૌતમ ! તમસ્કાયસ્ય ત્રયો-  
દશ નામધેયાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તાન્યેવાહ—'તં જહા'—તથા—' તમેહ વા ૧, તમુકાણ્ણ ૨  
વા ૨, અંધકારેહ વા ૩, મહંધકારેહ વા ૪, લોગંધકારેહ વા ૫, લોગતમિસ્સેહ વા ૬,  
દેવંધકારેહ વા ૭, દેવતમિસ્સેહ વા ૮, દેવારન્નેહ વા ૯, દેવવૂહેહ વા ૧૦,  
દેવફલિહેહ વા ૧૧, દેવપહ્લિક્ખોમેહ વા ૧૨, અરુણોદણ્ણિ વા સમુદ્દે ૧૩' इति ।

करता है तो वह " तओ पच्छा सीहं सीहं तुरियं तुरियं स्विप्पामेव  
वीडवण्ज्जा " कायगति के अतिवेग से और मनोगति के अतिवेग से  
अर्थात् बहुत ही शीघ्रता के साथ उस तमस्काय में से बाहर निकल  
आता है । ( तमुक्कायस्स णं भंते ! कइ नामधेज्जा पण्णत्ता ) हे भदन्त !  
तमस्काय के कितने नाम हैं ? इस गौतम के प्रश्न का उत्तर प्रभु इन्हें  
यों देते हैं कि—(गोयमा ) हे गौतम ! ( तेरस नामधेज्जा पण्णत्ता )  
तमस्काय के नाम तेरह हैं—( तं जहा ) वे इस प्रकार से हैं—( तमेह वा  
१ तमुक्काएह वा, २ अंधकारेह वा, ३ महंधकारेह वा, ४ लोर्गंधकारेह वा ५,  
लोगतमिस्सेह वा ६, देवंधकारेह वा ७, देवतमिस्सेह वा ८, देवारन्नेह  
वा ९, देववूहेह वा १०, देवफलिहेह वा ११, देवपडिक्खोमेह वा १२, अरु-  
णोदएत्ति वा समुद्धे १३, अंधकाररूप होने के कारण तमस्काय का पहला  
नाम तम है, अंधकार की राशिरूप होने के कारण तमस्काय का दूसरा

તુરિયં તુરિયં સ્વિપ્પામેવ વીઢવણ્જ્જા ) કાયગતિના અતિવેગથી અને મનોગતિના  
અતિવેગથી—એટલે કે ધણી જ શીઘ્રતાથી તે તમસ્કાયમાંથી બહાર નીકળી બાહ્ય છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—( તમુકાયસ્સ ણં ભંતે ! કહ્ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા ? )  
હે ભદન્ત ! તમસ્કાયના કેટલાં નામ છે ? ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ !  
( તેરસ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા—તંજહા ) તમસ્કાયના નીચે પ્રમાણે તેર નામ કહ્યાં છે—

( ૧ ) તમેહ વા, ( ૨ ) તમુકાણ્ણ વા, ( ૩ ) અંધકારેહ વા, ( ૪ ) મહંધકારેહ  
વા, ( ૫ ) લોગંધકારેહ વા, ( ૬ ) લોગતમિસ્સેહ વા, ( ૭ ) દેવંધકારેહ વા, ( ૮ ) દેવ-  
તમિસ્સેહ વા, ( ૯ ) દેવારન્નેહ વા, ( ૧૦ ) દેવવૂહેહ વા, ( ૧૧ ) દેવફલિહેહ વા,  
( ૧૨ ) દેવપહ્લિક્ખોમેહ વા, ( ૧૩ ) અરુણોદણ્ણિ વા સમુદ્દે )

ભાસઃ કૃષ્ણકાન્તિયુક્ત ઇતિ, તથા ચ વર્ણેન કાલઃ, કાલારમાસમ્ તમસ્કાયઃ, અથવા અતિશયકૃષ્ણકાન્તિશ્ચ સ ઇતિ । તથા સ ગમ્મીર-રોમ-દર્પનનનઃ, ગમ્મીર-ધાસો અત્યન્તમીરણત્વાદ્ રોમદર્પનનનમેતિ ગમ્મીરરોમદર્પનનનઃ રોમાધોભ્યા-દકઃ । તસ્ય રોમદર્પનનને કારણમાદ-‘ મીમઃ ’ ઇતિ, વિમેતિ અસ્માદિતિ મીમઃ ભયઙ્કરઃ, તથા ઉત્ત્રાસનકઃ અત્યન્તગ્રાસનનકઃ પરમકૃષ્ણર્ણઃ સ તમસ્કાયઃ મહત્ત્વઃ । ‘ દેવે ણં અત્યેગદ્દે જે ણં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા ણં સુમાપ્જ્ઞા ’ હે ગૌતમ ! દેવઃ સ્વલ્પ અસ્ત્યેકકઃ, યઃ સ્વલ્પ તં તમસ્કાયં પ્રથમતયા પ્રથમવારં દૃષ્ટ્વા અલોક્યેવ શુભ્યેન્ સોમં પ્રાપ્નુયાત્ । ‘ અદે ણં અભિસમાગચ્છેજ્ઞા ’ અથ અનન્તરં સ્વલ્પ અભિસમાગ-

હતના ભયંકર હૈ કિ દેવલે હી પટ્ટત પુરિ તરહ સે રોમરાજિ સ્વહી હો જાતી હૈ । રોમરાજિ સ્વહી હોને કા કારણ યહી હૈ કિ વહ “ મીમઃ ” ભયપ્રદ હૈ । અત્યન્ત ગ્રાસ જનક હૈ । એસે પરમકૃષ્ણ વર્ણવાલા વહ તમસ્કાય હૈ । ( કાલોભાસે ) એસા જો પદ દિયા ગયા હૈ વહ યહ પ્રકટ કરતા હૈ કિ કોઈ પદાર્થ કાલા હોકર મી કિસી કારણ વશ કાલે રૂપ મેં અવભાસિત નહીં હોના હૈ પરન્તુ યહ એસા નહીં હૈ-યહ તો કૃષ્ણવર્ણવાલા હોકર મી કાલે હી રૂપ સે અવભાસિત હોતા હૈ । અથવા ( કાલોભાસે ) યહ તમસ્કાય અત્યન્તકૃષ્ણકાન્તિ સે યુક્ત હૈ । મનુષ્યાદિ જિસસે હરેં વહ ( મીમ ) હૈ । ( દેવેણં અત્યેગદ્દે જે ણં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા ણં સુમાપ્જ્ઞા ) કોઈ એક દેવ એસા મી હોતા હૈ જો ઊસ તમસ્કાય કો સર્વપ્રથમ દેવ કરકે હી શુભિત્ત્વ હો જાતા હૈ-યદિ કોઈ દેવ કદાચિત્ ઊસ તમસ્કાય મેં ( અભિસમાગચ્છેજ્ઞા ) પાસ મેં જાકર પ્રવેશ

બધો ભયંકર હોય છે કે તેને ભેટાં જ ખીકને કારણે રૂવાડા ઉભા થઇ જાય છે રૂવાડા ઉભા થવાનું કારણ એ છે કે તે “ મીમઃ ” ભયજનક છે-અત્યન્ત ગ્રાસજનક છે, આવાં પરમકૃષ્ણ-વર્ણવાળો તે તમસ્કાય છે. “ કાલો-ભાસે ” આ પદ આપવાનું કારણ એ છે કે કોઈ પદાર્થ કાળો હોવા છતાં પણ કોઈ કારણે કાળો અવભાસિત થતો નથી-દેખાતો નથી. પરન્તુ તમસ્કાય એવો નથી. તે તો કૃષ્ણ વર્ણવાળો છે એટલું જ નહીં પણ કાળો જ દેખાય છે. અથવા “ કાલોભાસે ” આ તમસ્કાય અત્યન્ત કૃષ્ણકાન્તિથી યુક્ત છે. મનુષ્યાદિ જેનાથી હરે તેને “ મીમ ” કહે છે. ( દેવેણં અત્યેગદ્દે જે ણં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા ણં સુમાપ્જ્ઞા ) કોઈ કોઈ દેવ તો તેને પહેલી જ વાર દેખતાની સાથે જ શોભ પામી જાય છે. જો કોઈ દેવ ક્યારેક તે તમસ્કાયમાં “ અભિ-સમાગચ્છેજ્ઞા ” પાસે જઈને પ્રવેશ કરે છે, તો તે ( તઓ પન્ના સીદ્ધ સીદ્ધ

‘દેવવ્યૂહઃ’ ઇતિ વા. દેવાનાં દુર્ભેદત્વાત્ ચક્રાદિવ્યૂહ इव ‘દેવવ્યૂહઃ’ ઇતિનામ ૧૦ । ‘દેવપરિઘઃ’ ઇતિ વા, દેવાનામાતઙ્ગજનકતયા મનોવિચાતહેતુત્વેન ‘દેવપરિઘઃ’ ઇતિ નામ ૧૧, ‘દેવપ્રતિક્ષોભ’ ઇતિ વા, દેવાનાં મહાક્ષોભોત્પાદકત્વાત્ ‘દેવપ્રતિક્ષોભઃ’ ઇતિ નામ ૧૨, ‘અરુણોદકઃ સમુદ્રઃ’ ઇતિ વા, અરુણોદકસમુદ્રસ્ય વિકારાત્મકત્વાત્ ‘અરુણોદકસમુદ્રઃ’ ઇતિ વા નામ ૧૩ । ઇતિ તમસ્કાયસ્ય ત્રયોદશ નામાનિ પ્રદર્શિતાનિ ।

અથ તમસ્કાયપરિણામમાહ=‘તમુક્કાણં ભંતે ! કિં પુઢવિપરિણામે, આઉપરિણામે, જીવપરિણામે, પોગ્ગલપરિણામે ?’ હે ભદન્ત ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ કિં પૃથિવીપરિણામઃ, અથવા અપ્પરિણામઃ, અથવા જીવપરિણામઃ, પુદ્ગલપરિણામો

પ્ય હૈ । ચક્રાદિવ્યૂહકીતરહ યહ દેવોં દ્વારામી દુર્ભેદ્ય હોનેકે કારણહસકા દશવાં નામ દેવવ્યૂહ હૈ । દેવોં કો આતંક જનક હોનેકે કારણ હનકે મન કા વિચાત કરને ચાલા હોનેસે હસકા ગ્યારહવાં નામ દેવપરિઘ હૈ । દેવોં કે લિયે ક્ષોભ કા કારણ, હોને સે હસકા ૧૨ વાં નામ દેવપ્રતિક્ષોભ હૈ । તથા અરુણોદક સમુદ્ર કે જલ કા વિકારરૂપ હોને કે કારણ હસકા તેરહવાં નામ અરુણોદક સમુદ્ર હૈ । હસ પ્રકાર સે યે તેરહ સાર્થક નામ તમસ્કાય કે કહે ગયે હૈં ।

અથ ગૌતમ પ્રભુ સે એસા પૂછતે હૈં કિ યહ તમસ્કાય કિસ પદાર્થ કા પરિણામ હૈ—( તમુક્કાણં ભંતે ! કિં પુઢવિપરિણામે ? આઉપરિણામે જીવ પરિણામે ? પોગ્ગલપરિણામે ? ” હે ભદન્ત ? યહ તમસ્કાય ક્વયા પૃથિવી કા પરિણામ હૈ ? યા જલ કા પરિણામ હૈ ? યા જીવ કા પરિણામ હૈ ? યા પુદ્ગલ કા પરિણામ હૈ ?—કિસકા પરિણામ હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં

(૧૦) ચક્રાદિ વ્યૂહને લેદવાનું કામ દેવો દ્વારા પણ અશક્ય હોય છે, તે કારણે તેનું હસમું નામ “ દેવવ્યૂહ ” છે. (૧૧) દેવોમાં આતંક (ભય) નો જનક હોવાને કારણે અને તેમના મનનો વિચાત કરનારો હોવાને લીધે તેનું અગિયારમું નામ “ દેવપરિઘ ” છે. (૧૨) દેવોમાં ક્ષોભનો જનક હોવાને કારણે તેનું બારમું નામ “ દેવપ્રતિક્ષોભ ” છે. (૧૩) તથા અરુણોદક સમુદ્રના જળના વિકાર રૂપ હોવાથી તેનું તેરમું નામ “ અરુણોદક સમુદ્ર ” છે. આ રીતે તમસ્કાયના તેર સાર્થક (અર્થ પ્રમાણેનાં) નામ કહ્યાં છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે ( તમુક્કાણં ભંતે ! કિં પુઢવિપરિણામે ? આઉપરિણામે ? જીવપરિણામે ? પોગ્ગલપરિણામે ? હે ભદન્ત ! આં તમસ્કાય શું પૃથ્વીકાયનું પરિણામ છે ? કે જળનું પરિણામ છે ? કે જીવનું પરિણામ છે ? કે પુદ્ગલનું પરિણામ છે ? તે કોના પરિણામરૂપ છે ?

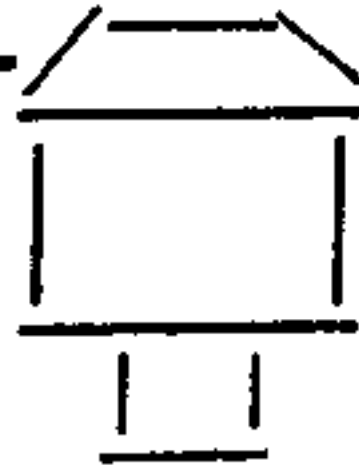


તત્ર 'તમ' ઇતિ વા તમસ્કાયસ્ય અન્ધકારરૂપત્વાન્ 'તમઃ' ઇતિ નામ વર્તેતે ૧,  
 'તમસ્કાયઃ' ઇતિ વા, તસ્ય અન્ધકારાશિરૂપત્વાન્ 'તમસ્કાયઃ' ઇતિ નામ ૨,  
 'અન્ધકારઃ' ઇતિ વા, તસ્ય તમોક્ષ્ણત્વાન્ 'અન્ધકારઃ' ઇતિ નામ ૩। 'મહાન્ધ-  
 કાર' ઇતિ વા, તસ્ય મહાતમોક્ષ્ણત્વાન્ 'મહાન્ધકારઃ' ઇતિ વા નામ વર્તેતે ૪।  
 'લોકાન્ધકારઃ' ઇતિ વા, લોકપદો તાદૃશ્ય મન્વહર અન્ધકારસ્ય અભાવાન્  
 'લોકાન્ધકારઃ' ઇતિ વા નામ ૫। ૫। 'લોકતમિષ્ટમ્' ઇતિ વા, લોકે માહાન્ધ-  
 કારરૂપત્વાન્ ૬। 'દેવાન્ધકારઃ' ઇતિ વા, દેવાનામપિ તમસ્કાયે મહાગામાનેન  
 અન્ધકારરૂપત્વાન્ 'દેવાન્ધકારઃ' ઇતિ નામ ૭। તથા 'દેવતમિષ્ટમ્' ઇતિ વા  
 તસ્યૈવ માદરૂપત્વાન્ ૮। 'દેવારણ્યમ્' ઇતિ ૧૧, સ્વાપેક્ષયા ચલચલાં દેવાતાં મનાત્  
 પલાયમાનાનાં દેવાનાં તાદૃશારણ્યમિત્ત શરણ્યત્વાન્ 'દેવારણ્યમ્' ઇતિ નામ ૯।

નામ તમસ્કાય હૈ-તમસ્કાયકા સ્વયં અંધકારરૂપ હોનેને કારણ ત્રીસરા  
 નામ અંધકાર હૈ। મહાતમ રૂપ હોને સે રૂપ કા ચૌથા નામ મહાન્ધકાર  
 હૈ। લોક કે વીચ મેં પેસા દૂસરા ઓર કોઈ અંધકાર નહોં હૈ રૂપ કારણ  
 રૂપકા પાંચવાં નામ લોકાન્ધકાર હૈ। છઠવાં નામ રૂપકા લોકતમિષ્ટ  
 રૂપકા કારણ સે હૈ। ઉદ્યોત કે ન હોને કે કારણ દેવોં કોં ખી રૂપ તમ-  
 સ્કાય અંધકારરૂપ ભાસિત હોતા હૈ રૂપ કારણ રૂપકા સાતવાં નામ  
 દેવાન્ધકાર હૈ। રૂપકા તરહ સે દેવતમિષ્ટ રૂપ રૂપકા આઠવાં નામ હૈ।  
 અપને સે ચલવાન દેવોં કે ભય સે ભગતે હુવ દેવોં કે લિધે તથાવિધ  
 જંગલ કી તરહ રૂપ શરણ્યમૂત હૈ રૂપ કારણ રૂપકા નૌવાં નામ દેવાર-

(૧) અંધકાર રૂપ હોવાને કારણે તમસ્કાયનું નામ 'તમ' છે. (૨)  
 અંધકારની રાશિરૂપ હોવાથી તેનું બીજું નામ 'તમસ્કાય' છે. (૩) તે  
 પોતે જ અંધકાર રૂપ હોવાથી તેનું નામ 'અંધકાર' પણ છે. (૪) મહા  
 તમરૂપ (અંધકાર રૂપ) હોવાથી તેનું ચોથું નામ 'મહાન્ધકાર' છે. (૫)  
 લોકમાં એવો બીજો કોઈ પણ અંધકાર ન હોવાથી તેનું પાંચમું નામ  
 "લોકાન્ધકાર" છે. (૬) વળી ઉપર્યુક્ત કારણે જ તેનું છઠ્ઠું નામ "લોક-  
 તમિષ્ટ" છે. (૭) ઉદ્યોત (પ્રકાશ) ન હોવાને કારણે દેવાને પણ આ  
 તમસ્કાય અંધકાર રૂપ લાગે છે, તે કારણે તેનું સાતમું નામ "દેવાન્ધકાર"  
 (૮) એજ રીતે તેનું આઠમું નામ "દેવતમિષ્ટ" છે. (૯) પોતાના કરતાં  
 વધારે બળવાન દેવાના ભયથી ભાગતા દેવાને માટે અંધકારમય જંગલની  
 જેમ તે આશ્રયદાયક બને છે, તેથી તેનું નવમું નામ "દેવારણ્ય" છે.

મદન્ત ! તમસ્કાયે સ્વલુ સર્વેપાણાઃ, ભૂતાઃ, જીવા, સત્ત્વાઃ પૃથિવીકાયિકતયા યાવત્-ત્રસકાયિકતયા ઉપપન્નપૂર્વાઃ પૂર્વમુત્પન્નાઃ ? યાવત્ કરણાત્-જલકાયિક-તયા, વાયુકાયિકતયા, વનસ્પતિકાયિકતયા, ઇતિ સંગ્રાહ્યમ્ । મગવાનાહ-‘ હંતા, ગોયમા ! અસદ્ અદુવા, અણંતક્ષુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયરપુઢવિકાઙ્ગચ્છાણ વા, વાયર-અગણિકાઙ્ગચ્છાણ વા ’ હે ગૌતમ ! હન્ત, સત્યમ્ સર્વે પ્રાણાઃ, ભૂતાઃ જીવાઃ, સત્ત્વાઃ, તમસ્કાયે પૃથિવીકાયિકતયા યાવત્-ત્રસકાયિકતયા અસકૃત્ ભૂયોભૂયઃ અથવા અનન્તકૃત્તઃ અનન્તવારાન્ પૂર્વમુત્પન્નાઃ, કિન્તુ નો ચૈવ નૈવ કથમપિ વાદરપૃથિવીકા-યિકતયા, વાદરાગ્નિકાયિકતયા વા ઉત્પન્નાઃ, યતોહિ તમસ્કાયસ્ય અપ્કાયિકતયા તત્ર વાદરા વાયવો વનસ્પતયઃ ત્રસાશ્ચ ઉત્પદ્યન્તે અપ્કાયે તેપામુત્પત્તિસંભવાત્, ઇતરે તુ પૃથિવીજીવા અગ્નિજીવાશ્ચ તત્ર નોત્પત્તુમર્હન્તિ તેપાં તત્ર સ્વસ્થાનત્વા ભાવાત્ ॥ મૂ૦ ૩ ॥ તમસ્કાયાકારઃ—



ત્રસકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ હૈં ? યહાં યાવત્ શબ્દ સે ( જલકાયિકતયા તેજઃકાયિકતયા, વાયુકાયિકતયા, વનસ્પતિકાયિકતયા ” ઇસ પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ઉનસે કહતે હૈં—( હંતા, ગોયમા ! અસદ્ અદુવા અણંતક્ષુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયરપુઢવિકાઙ્ગચ્છાણ વા, વાયરઅગણિકાઙ્ગચ્છાણ વા ” હાં ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સ-ત્ત્વ, તમસ્કાય મેં પૃથિવીકાયિકરૂપ સે યાવત્ ત્રસકાયિકરૂપ સે વાર ૨ અથવા અનન્તવાર પહિલે ઉત્પન્ન હુણ હૈં પરન્તુ વે વહાં કમી મી વાદર પૃથિવીકાયિકરૂપ સે ઇવં વાદર અગ્નિકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુણ હૈં । ક્યોં કિ તમસ્કાય અપ્કાયરૂપ હોને કે કારણ ઉસમેં વાદરવાયુકાય, વનસ્પતિકાય ઓર ત્રસકાય ઉત્પન્ન હોતે હૈં ક્યોં કિ વહાં ઉનકી

તમસ્કાયમાં પૂર્વે ( પહેલાં ) પૃથ્વીકાયિક, જલકાયિક, તૈજસ્કાયિક, વાયુકાયિક, વનસ્પતિકાયિક અને ત્રસકાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ખરાં ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે—( હંતા, ગોયમા ! અસદ્ અદુવા અણંતક્ષુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયર પુઢવિકાઙ્ગચ્છાણ વા, વાયર અગણિકાઙ્ગચ્છાણ વા ) હા, ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ તમસ્કાયમાં પૃથ્વીકાયિકથી લઈને ત્રસકાયિક પર્યન્તના રૂપે વારંવાર અથવા અનંતવાર પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે, પણ તેઓ ત્યાં કદી પણ બાદર પૃથ્વીકાયિક રૂપે અને બાદર અગ્નિકાયિકરૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી. કારણ કે તમસ્કાય અપ્કાય રૂપ હોવાથી તેમાં બાદર વાયુકાય, વનસ્પતિકાય અને ત્રસકાય ઉત્પન્ન



વા તમસ્કાયઃ? इति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा ! गो पुटविपरिणामे, आउप-  
रिणामे वि, जीपरिणामे वि, पोग्गलपरिणामे वि, हे गौतम ! तमस्कायः नो  
पृथिवीपरिणामः, तस्य सर्वथा अन्यत्वात्पश्चात्, अरिपु अन्यपरिणामोऽपि  
तस्यास्वरूपत्वात्, जीपरिणामोऽपि अर्था जीवत्वात्, पुद्गलपरिणामो  
ऽपि, तमसः पुद्गलरूपत्वात् । गौतमः पृच्छति—'तमुक्त्वाणं भवे ! सव्वे पाणा  
भूया, जीवा, सत्ता पुटविकाइयत्ताए जाव-तसकाइयत्ताए उववन्नपुब्बा ?' हे

પ્રશ્ન ઉત્તર કહે છે કે—( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ગો પુટવિ પરિણામે,  
અઉપરિણામે વિ, જીવપરિણામે વિ, પોગ્ગલપરિણામે વિ ) તમસ્કાય  
પૃથિવી કા પરિણામ-વિકાર નહીં છે । કિન્તુ યદ્ અસ્કાય કા ભી પરિ-  
ણામ છે, જીવ કા ભી પરિણામ છે ઓર પુદ્ગલ કા ભી પરિણામ છે ।  
પૃથિવી કા પરિણામ યદ્ ફસલિયે નહીં છે કે યદ્ સર્વથા અંધકાર રૂપ  
છે । જલકા પરિણામ ફસે ફસલિયે કહા ગયા છે કે યદ્ જલરૂપ હોતા છે  
ઓર જીવ કા પરિણામ ફસલિયે ફસે કહા ગયા છે કે જલ સ્વયં જીવ  
રૂપ છે, તથા પુદ્ગલ કા પરિણામ કહાને કા કારણ યદ્ છે કે તમસ્કાય  
સ્વયં પુદ્ગલરૂપ છે । અય ગૌતમ પ્રશ્ન સે યો પૂછતે હું કે ( તમુક્કાણં ભંતે !  
સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા પુટવીકાઈયત્તાણ જાવ તસકાઈ-  
યત્તાણ ઉવવન્નપુબ્બા ) હે મહન્ત ! સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત  
જીવ, સમસ્ત સત્ત્વ કયા તમસ્કાય મેં પહિલે પૃથિવીકાયિકરૂપસે યાવત્

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે—( ગોયમા ! ગો પુટવિપરિણામે,  
આઉપરિણામે વિ, જીવપરિણામે વિ, પોગ્ગલપરિણામે વિ ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાય  
પૃથ્વીના પરિણામ ( વિકાર ) રૂપ નથી, પણ તે જળનું ( અપ્કાયનું ) પરિ-  
ણામ પણ છે, જીવનું પરિણામ પણ છે અને પુદ્ગલનું પરિણામ પણ છે.  
તે સર્વથા અંધકાર રૂપ હોવાથી તેને પૃથ્વીનું પરિણામ કહ્યું નથી. તેને  
જળના પરિણામ રૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે જળરૂપ હોય છે. તેને  
જીવના પરિણામ રૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે જળ પોતે જ જીવરૂપ હોય  
છે, તથા તેને પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તમસ્કાય  
પોતે જ પુદ્ગલરૂપ છે.

ગૌતમ સ્વામી હવે એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—( તમુક્કાણં ભંતે ! સવ્વે  
પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા પુટવીકાઈયત્તાણ જાવ તસકાઈયત્તાણ ઉવવન્નપુબ્બા ? )  
હે મહન્ત ! સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત ભૂત અને સમસ્ત સત્ત્વ શું

दाहिणवाहिराओ कणहराईओ तंसाओ, दो पुरतिथिम-पच्च-  
 तिमाओ अविंभतराओ कणहराईओ चउरंसाओ, दो उत्तरदा-  
 हिणाओ अविंभतराओ कणहराईओ चउरंसाओ, “पुव्वाऽवरा  
 छलंसा, तंसा पुण दाहिणुत्तरा वज्झा॥ अविंभतर चउरंसा सव्वा वि  
 यं कणहराईओ”॥१॥ कणहराईओ णं भंते ! केवइयाओ आयामेणं  
 केवइयाओ विक्खंभेणं, केवइयाओ परिक्खेवेणं पणत्ताओ ?  
 गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आयामेणं, संखेज्जाइं जोय-  
 णसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेणं  
 पणत्ताओ ! कणहराईओ णं भंते ! केमहालियाओ पणत्ताओ ?  
 गोयमा ! अयं णं जंबुदीवे दीवे जाव-अद्धमासं वीइवएज्जा,  
 अत्थेगइयं कणहराइं वीइवइज्जा, अत्थेगइयं कणहराइं णो  
 वीइवएज्जा, एमहालियाओ णं गोयमा ! कणहराईओ पण-  
 त्ताओ । अत्थिणं भंते ! कणहराईसु गेहा इ वा, गेहावणा इ वा ?  
 णो इणट्ठे समट्ठे । अत्थिणं भंते ! कणहराईसु गामा इ वा ? णो  
 इणट्ठे समट्ठे अत्थि णं भंते ! कणहराईसु उराला वलाहया संसेयंति,  
 संमुच्छंति, संवासंति ? । हंता, अत्थि । तं भंते ! किं देवो पकरेइ,  
 असुरो पकरेइ, नागो पकरेइ ? । गोयमा ! देवो पकरेइ, णो  
 असुरो, णो नागो पकरेइ । अत्थि णं भंते ! कणहराईसु वायरे  
 थणियसइ ? जहा उराला तहा । अत्थि णं भंते ! कणहराईसु  
 वायरे आउकाए, वायरे अगणिकाए, वायरे वणस्सइकाए ?  
 णो इणट्ठे समट्ठे, पणत्तथ विग्गहगइसमावन्नएणं । अत्थि णं भंते !  
 चंदिम-सूरिय-गहगण-नवखत्त-तारारूवा ? । णो इणट्ठे समट्ठे ।

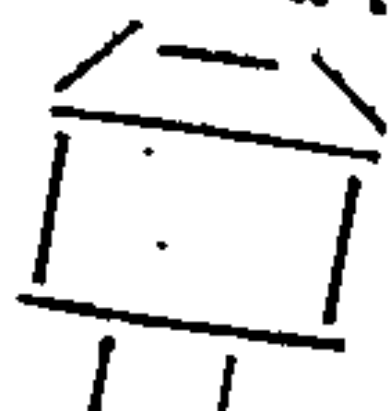
કૃષ્ણમનિવક્તૃત્વા ।

તમસ્કાયસારશ્યાન્ કૃષ્ણરાત્રિં પ્રજ્ઞયિતુમાદ—‘કદં મંતે ! ‘કપ્પરાઈઓ’  
 ઇત્યાદિ ।

પૂર્વ-કદં પં મંતે ! કપ્પરાઈઓ પપ્પણ્ણાઓ ? ગોયમા !  
 અટ્ટ કપ્પરાઈઓ પપ્પણ્ણાઓ કહિ પં મંતે ! પપ્પાઓ અટ્ટ કપ્પ-  
 રાઈઓ પપ્પણ્ણાઓ ? ગોયમા ! ઉર્વિ સળંકુમારમાહિંદાણં કપ્પાણં  
 હિદ્દિં વંમલોપ કપ્પે અરિદ્દં વિમાણપત્થઢે—પત્થ પં અવલ્લાહ  
 ગસમ ચરુસંસંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ટ કપ્પરાઈઓ પપ્પણ્ણાઓ,  
 તં જહા—પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો,  
 પુરત્થિમઽઘ્મંતરા કપ્પરાઈ દાહિણ-વાહિરં કપ્પરાઈં પુટ્ઠા, દાહિ-  
 ણઽઘ્મંતરા કપ્પરાઈ પચ્ચત્થિમ—વાહિરં કપ્પરાઈં પુટ્ઠા, પચ્ચ-  
 ત્થિમઽઘ્મંતરા કપ્પરાઈ ઉત્તર-વાહિરં કપ્પરાઈં પુટ્ઠા, ઉત્તરમઽ-  
 ઘ્મંતરા કપ્પરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કપ્પરાઈં પુટ્ઠા, દો પુરત્થિમ—  
 પચ્ચત્થિમાઓ વાહિરાઓ કપ્પરાઈઓ છલંસાઓ, દો ઉત્તર—  
 ઉત્પત્તિ સંભવિત હૈ—વાકી કે પૃથિવી જીવ ઓર અગ્નિ જીવ વહાં પર  
 ઉત્પન્ન નહીં હો સકતે હૈ—ચયોં કિ વહાં પર ઉનકા સ્વસ્થાન નહીં હૈ ।  
 તમસ્કાય કા આકાર ઇસ પ્રકાર સે હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥



થાય છે, કારણ કે ત્યાં તેમની ઉત્પત્તિ સંભવિત છે. બાકીના પૃથ્વીકાયિક  
 જીવો અને અગ્નિકાય જીવો તેમાં ઉત્પન્ન થઈ શકતા નથી, કારણ કે ત્યાં તેમનું  
 સ્વસ્થાન નથી. તમસ્કાયનો આકાર નીચે પ્રમાણે છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥





સનત્કુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ, અયો બ્રહ્મલોકે કલ્પે સ્વલુ સિદ્ધિવિમાનપ્રસ્તટે અન્ન  
અક્ષવાટકસમચતુરસ્રસંસ્થાનસંસ્થિતા અટ્ટ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-પૌરસ્ત્યે દ્વે,  
પાશ્ચાત્યે દ્વે, દક્ષિણે દ્વે, ઉત્તરે દ્વે, પૌરસ્ત્યાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ દક્ષિણવાહ્યાં કૃષ્ણ-  
રાજિ સ્પૃષ્ટા, દક્ષિણાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ પશ્ચિમવાહ્યાં કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા, પાશ્ચાત્યા-

ગઈ હેં ? અર્થાત્ યે કૃષ્ણરાજિયાં કહ્યાં પર હેં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !  
(ઉપિ સળંકુમારમાહિંદાણં કપ્પાણં, હિટ્ઠિં વંમલોપ કપ્પે અરિટ્ઠવિમા-  
ણપત્થહે, एत्थ णं अक्खाडगसमचउरंससंठाणसंठियाओ अट्टकण्ह-  
राईओ पणत्ताओ) યે આઠ કૃષ્ણરાજિયાં ઉપર મેં સનત્કુમાર,  
માહેન્દ્રકલ્પ મેં ઓર નીચે મેં બ્રહ્મલોકકલ્પ મેં અરિટ્ઠવિમાન કે પાથહે  
મેં હેં । ઇનકા આકાર સમચતુરસ્ર-ચૌકોર-અક્ષાહે કે સમાન હે । (તં  
જહા) વે હસ પ્રકાર સે હેં-(પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં  
દો, ઉત્તરેણં દો, પુરત્થિમઽબ્ધંતરા કણ્ઠરાઈ દાહિણ-વાહિરં કણ્ઠરાઈ  
પુટ્ટા, પચ્ચત્થિમઽબ્ધંતરા કણ્ઠરાઈ ઉત્તરવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા, ઉત્તરમઽ-  
બ્ધંતરા કણ્ઠરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા) દો કૃષ્ણરાજિયાં પૂર્વ-  
દિશા મેં, દો કૃષ્ણરાજિયાં પશ્ચિમદિશા મેં, દો કૃષ્ણરાજિયાં દક્ષિણદિશા  
મેં, ઓર દો કૃષ્ણરાજિયાં ઉત્તર દિશા મેં હેં । ઇનમેં જો પૂર્વદિગ્ભાગ કે  
મીતર કી કૃષ્ણરાજિ હે વહ દક્ષિણદિગ્ભાગ કે વાહિર કી કૃષ્ણરાજિ  
કો છૂતી હે । દક્ષિણદિગ્ભાગ કે મીતર કી જો કૃષ્ણરાજિ હે, વહ પશ્ચિ-

મદન્ત । તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ક્યાં આવેલી છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !  
(ઉપિ સળંકુમારમાહિંદાણં કપ્પાણં, હિટ્ઠિં વંમલોપ કપ્પે અરિટ્ઠવિમાણપત્થહે,  
एत्थ णं अक्खाडग समचउरंससंठाणसंठियाओ अट्ट कण्हराईओ पणत्ताओ)  
તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ઉપરની બાજુએ સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર દેવલોકમાં  
અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પના અરિટ્ઠ વિમાનના પાથડામાં (વિમાન પ્રસ્તટમાં)  
તેનો આકાર સમચતુરસ્ર-ચતુષ્કોણ અખાડાના જેવો છે. (તં જહા) તે આ  
પ્રમાણે આવેલી છે-(પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, વાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો)  
જે કૃષ્ણરાજિઓ પૂર્વ દિશામાં, જે કૃષ્ણરાજિઓ પશ્ચિમ દિશામાં, જે કૃષ્ણ-  
રાજિઓ દક્ષિણ દિશામાં અને જે કૃષ્ણરાજિઓ ઉત્તર દિશામાં છે (પુરત્થિમઽ-  
બ્ધંતરા કણ્ઠરાઈ દાહિણ-વાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા, પચ્ચત્થિમઽબ્ધંતરા કણ્ઠરાઈ  
ઉત્તરવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા, ઉત્તરમઽબ્ધંતરા કણ્ઠરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કણ્ઠરાઈ  
પુટ્ટા) તેમાંની જે પૂર્વ દિગ્ભાગની અંદરની કૃષ્ણરાજિ છે, તે દક્ષિણ  
દિગ્ભાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે, દક્ષિણ દિગ્ભાગની અંદરની જે

અતિથિ ણં કળ્હરાઈણં ચંદામા ઇ વા, સૂરામા ઇ વા ? ણો ઇણંટુ  
સમંટુ । કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેરિસિયાઓ વત્તેણં પળ્લતાઓ ?  
ગોયમા ! કાલાઓ, જાવ-સિલ્પામેવ વોટ્ઠવણ્ણા । કળ્હરાઈણં  
મંતે ! કહ્ નામધેજ્જા પળ્લતા ? ગોયમા ! અટ્ટ નામધેજ્જા  
પળ્લતા, તં જહા-કળ્હરાઈ ઇ વા, મેહરાઈ ઇવા, મયા ઇ વા,  
માઘવઈ ઇ વા, વાયપલિહા ઇ વા, વાયપલિવલ્લોમા ઇ વા, દેવપ-  
લિહા ઇ વા, દેવપલિવલ્લોમા ઇ વા । કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કિં પુઢવી  
પરિણામાઓ, આટપરિણામાઓ, જીવપરિણામાઓ, પોગ્ગલ  
પરિણામાઓ ? ગોયમા ! પુઢવીપરિણામાઓ, ણો આટપરિણામાઓ,  
જીવપરિણામાઓ વિ, પુગ્ગલપરિણામાઓ વિ । કળ્હરાઈસુ ણં  
મંતે ! સઠ્ઠે પાણા, મૂયા, જીવા, સત્તા ઉવવળ્ણપુઢવા ? હંતા,  
ગોયમા ! અસઈ, અદુવા અણંતવલ્લુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયરઆટ-  
કાહયત્તાણ, વાયરઅગ્ગણિકાહયત્તાણ વા, વાયરવળ્ણસ્સઈકાહ-  
યત્તાણ વા ॥સૂ.૨॥

હાયા-કતિ સ્વલ્લ મદન્ત ! કળ્હરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અટ્ટ કળ્હરાજયઃ  
પ્રજ્ઞતાઃ, કુચ સ્વલ્લ મદન્ત ! એતાઃ અટ્ટ કળ્હરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! ઉપરિ

કળ્હરાજિ વત્તવ્યતા-

(કહ્ ણં મંતે) ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-કહ્ ણં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ) હે મદન્ત ! કળ્હરા-  
જિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં ? (ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અટ્ટ કળ્હરાઈઓ  
પળ્લતાઓ) કળ્હરાજિયાં આઠ કહી ગઈ હૈં । (કહિ ણં મંતે ! એવાઓ અટ્ટ  
કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ) હે મદન્ત ! એ આઠ કળ્હરાજિયાં કહાં પર કહી

કળ્હરાજિઓની વત્તવ્યતા-

“કહ્ ણં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-—(કહ્ ણં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ ? હે મદન્ત ! કળ્હરાજિઓ  
કેટલી કહી છે ? (ગોયમા ! અટ્ટ કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ) હે ગૌતમ ! કળ્હરાજિઓ  
આઠ કહી છે. (કહિ ણં મંતે ! એવાઓ અટ્ટ કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ ? ) હે



સનત્કુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ, અગ્રો વ્રહ્મલોકે કલ્પે સ્થિતિરિમાનપ્રસ્તટે અત્ર  
અપ્પાટકસમચતુરસ્રસંસ્થાનસંસ્થિતા અટ્ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-પૌરસ્ત્યે દે,  
પાથાત્યે દે, દક્ષિણે દે, ઉત્તરે દે, પૌરસ્ત્યાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ દક્ષિણવાહ્યાં કૃષ્ણ-  
રાજિ સ્પૃષ્ટા, દક્ષિણાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ પશ્ચિમવાહ્યાં કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા, પાથાત્યા-

ગઈ હેં ? અર્થાત્ યે કૃષ્ણરાજિયાં કહ્યાં પર હેં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !  
(ઉપ્પિ સળંકુમારમાહિંદાણં કપ્પાણં, હિટ્ઠિં વંમલોપ કપ્પે અરિટ્ઠવિમા-  
ણપથ્થહે, પથ્થ ણં અવલાહગસમચડરંસસંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ઠકળ્હ-  
રાઈઓ પળ્લન્તાઓ) યે આઠ કૃષ્ણરાજિયાં ડપર મેં સનત્કુમાર,  
માહેન્દ્રકલ્પ મેં ઓર નીચે મેં વ્રહ્મલોકકલ્પ મેં અરિટ્ઠવિમાન કે પાથહે  
મેં હેં । इनका आकार समचतुरस्र-चौकोर-अखाडे के समान है । (तं  
जहा) ये इस प्रकार से हैं-(पुरत्थिमेणं दो, पच्चत्थिमेणं दो, दाहिणेणं  
दो, उत्तरेणं दो, पुरत्थिमऽब्भन्तरा कण्हराई दाहिण-वाहिरं कण्हराईं  
पुट्ठा, पच्चत्थिमऽब्भन्तरा कण्हराई उत्तरवाहिरं कण्हराईं पुट्ठा, उत्तरमऽ-  
ब्भन्तरा कण्हराई पुरत्थिमवाहिरं कण्हराईं पुट्ठा) दो कृष्णराजियां पूर्व-  
दिशा में, दो कृष्णराजियां पश्चिमदिशा में, दो कृष्णराजियां दक्षिणदिशा  
में, और दो कृष्णराजियां उत्तर दिशा में हैं । इनमें जो पूर्वदिग्भाग के  
भीतर की कृष्णराजि है वह दक्षिणदिग्भाग के बाहिर की कृष्णराजि  
को छूती है । दक्षिणदिग्भाग के भीतर की जो कृष्णराजि है, वह पश्चि-

મહન્ત ! તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ક્યાં આવેલી છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !  
(ઉપ્પિ સળંકુમારમાહિંદાણં કપ્પાણં, હિટ્ઠિં વંમલોપ કપ્પે અરિટ્ઠવિમાણપથ્થહે,  
પથ્થ ણં અવલાહગ સમચડરંસસંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્લન્તાઓ)  
તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ઉપરની ખાલુએ સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર દેવલોકમાં  
અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પના અરિટ્ઠ વિમાનના પાથડામાં (વિમાન પ્રસ્તટમાં)  
તેનો આકાર સમચતુરસ્ર-ચતુષ્કોણ અખાડાના જેવો છે. (તં જહા) તે આ  
પ્રમાણે આવેલી છે-(પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો)  
એ કૃષ્ણરાજિઓ પૂર્વ દિશામાં, એ કૃષ્ણરાજિઓ પશ્ચિમ દિશામાં, એ કૃષ્ણ-  
રાજિઓ દક્ષિણ દિશામાં અને એ કૃષ્ણરાજિઓ ઉત્તર દિશામાં છે (પુરત્થિમઽ-  
બ્ભન્તરા કળ્હરાઈ દાહિણ-વાહિરં કળ્હરાઈં પુટ્ઠા, પચ્ચત્થિમઽબ્ભન્તરા કળ્હરાઈ  
ઉત્તરવાહિરં કળ્હરાઈં પુટ્ઠા, ઉત્તરમઽબ્ભન્તરા કળ્હરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈં  
પુટ્ઠા) તેમાંની જે પૂર્વ દિગ્ભાગની અંદરની કૃષ્ણરાજિ છે, તે દક્ષિણ  
દિગ્ભાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે, દક્ષિણ દિગ્ભાગની અંદરની જે

અમ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ ઉત્તરવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, ઉત્તરામ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ  
: પૌરસ્ત્યવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, દે પૌરસ્ત્યવાયાત્મે, વાઘે કૃષ્ણરાજી પડશે; દે  
ઉત્તર-દક્ષિણવાઘે કૃષ્ણરાજી ય્યશે, દે પૌરસ્ત્ય-વાયાત્મે અમ્યન્તરે કૃષ્ણરાજી  
ચતુરશે, દે ઉત્તર-દક્ષિણે અમ્યન્તરિકે કૃષ્ણરાજી પતુરશે, "પૂર્વાંગરે વરશે, અમ્યન્તરે  
પુનર્દક્ષિણોત્તરે વાઘે, અમ્યન્તરચતુરસાઃ સર્વા અપિ ચ કૃષ્ણરાજયઃ ॥૧॥ કૃષ્ણરાજયઃ

મદિગ્ધિભાગ-કે બાહિર કી કૃષ્ણરાજિ કા સ્પર્શ કરતી હૈ । પશ્ચિમદિ-  
ગ્ધિભાગ-કે બીતર કી જો કૃષ્ણરાજિ હૈ યહ ઉત્તરદિગ્ધિભાગ-કે બાહર કી  
કૃષ્ણરાજિ કા સ્પર્શ કરતી હૈ । ઓર ઉત્તર દિશા-કે બીતર કી જો  
કૃષ્ણરાજિ હૈ યહ પૂર્વદિગ્ધિભાગ-કે બાહર કી કૃષ્ણરાજિ કો છૂતી હૈ ।  
(:દો પુરતિમપચ્ચતિમમાઓ બાહિરાઓ કળહરાઈઓ છલંસાઓ દો ઉત્તર  
દાહિણવાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ, દો પુરતિમ પચ્ચતિમમાઓ  
અન્નિમતરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ, દો ઉત્તરદાહિણાઓ અન્નિમત-  
રાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ,

“ પુઞ્વાઽવરા છલંસા, તંસા પુણ દાહિણુસરા યજ્ઞા ।

અન્નિમતર ચરંસા સન્વા વિ ય કળહરાઈઓ ” ૪૩)

પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ-કે બાહર-કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે છઠ્ઠ સ્તંદવાલી હૈં ।  
ઉત્તર ઓર દક્ષિણ-કે બાહર-કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે તિલ્હંદી હૈં ।  
પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ-કે બીતર-કી જો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે ચૌલ્હંદી હૈં । તથા  
ઉત્તર ઓર દક્ષિણ-કે બીતર-કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે બી ચૌલ્હંદી  
હૈં । હંસી વિષય-કો પુઞ્વાઽવરા ‘હત્યાદિ’ ગાથા-મેં કહા હૈં કિ-પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ

કૃષ્ણરાજિ છે તે પશ્ચિમ દિગ્ધાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે, પશ્ચિમ  
દિગ્ધાગની અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે તે ઉત્તર દિગ્ધાગની બહારની કૃષ્ણરા-  
જિને સ્પર્શે છે. અને ઉત્તર દિગ્ધાગની બહારની જે કૃષ્ણરાજિ છે તે પૂર્વ  
દિગ્ધાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે. (દો પુરતિમપચ્ચતિમમાઓ બાહિરાઓ  
કળહરાઈઓ છલંસાઓ દો ઉત્તરદાહિણવાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ, દો પુર-  
તિમપચ્ચતિમમાઓ અન્નિમતરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ, દો-ઉત્તરદાહિણાઓ  
અન્નિમતરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ, “ પુઞ્વાઽવરા છલંસા, તંસા પુણ દાહિણુ-  
સરા યજ્ઞા । અન્નિમતર ચરંસા સન્વા વિ ય કળહરાઈઓ ” ૪૩ ) પૂર્વા અને  
પશ્ચિમમાં બહારની જે બે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે છ ખૂણાવાળી છે, ઉત્તર અને  
દક્ષિણમાં બહારની જે બે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે ત્રણ ખૂણાવાળી છે, પૂર્વ અને  
પશ્ચિમમાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે ચાર ખૂણાવાળી છે, તથા ઉત્તર  
અને દક્ષિણ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે પાંચ ચાર ખૂણાવાળી છે

खलु भदन्त ! कियत्यः आयामेन ? कियत्यो विष्कम्भेण ! कियत्यः परिक्षेपेण ? प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! असंख्येयानि योजनसहस्राणि आयामेन, संख्येयानि योजनसहस्राणि विष्कम्भेण, असंख्येयानि योजनसहस्राणि परिक्षेपेण प्रज्ञप्ताः । कृष्णराजयः खलु भदन्त ! कियन्महालयाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! अयं खलु जम्बूद्वीपो द्वीपः, यावत्-अर्धमासं व्यतिव्रजेत् अस्त्येककां कृष्णराजि व्यतिव्रजेत् अस्त्येककां कृष्ण-

की कृष्णराजियां छह खूंटवाली हैं । दक्षिण और उत्तर की बाहिर की कृष्णराजियां तिखूंटो हैं । और सब अन्धन्तर की कृष्णराजियां चौरस हैं । ( कण्हराईओ णं भंते ! केवइयं आयामेणं, केवइयं विक्खंभेणं केवइयं परिकखेवेणं पणत्ताओ ) हे भदन्त ! इन कृष्णराजियोंका आयाम कितना है ? विस्तार कितना है ? और इनका परिक्षेप, कितना है ? ( गोयमा ) हे गौतम ! ( असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आयामेणं संखेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिकखेवेणं पणत्ताओ ) इन कृष्णराजियों का आयाम ( लंबापन ) असंख्यात हजार योजन का है । विष्कंभ ( चौड़ाई ) संख्यात हजार योजन का है । तथा परिक्षेप इनका असंख्यात हजार योजन का है । ( कण्हराईओ णं भंते ! के महालियाओ पणत्ताओ ) हे भदन्त ! ये कृष्णराजियां कितनी मोटी कही गई हैं ? ( गोयमा ) हे गौतम ! ( अयं णं जंबुद्वीवे दीवे जाव अद्धमासं

એ જ વાતને “ પુઢ્વાડવરા ” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ગાથાને ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

પૂર્વ અને પશ્ચિમની કૃષ્ણરાજિઓ છ ખૂણીઆ વાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તરની બહારની કૃષ્ણરાજિઓ ત્રિકોણીઆ છે, અને અંદરની બધી કૃષ્ણરાજિઓ ચોરસ છે. ( કણ્ઠરાઈઓ ણં ભંતે ! કેવઇયં આયામેણં, કેવઇયં વિક્કંભેણં, કેવઇયં પરિક્કેવેણં પણત્તાઓ ) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ લંબાઈ કેટલી છે ? પહોળાઈ કેટલી છે ? અને તેમનો પરિક્ષેપ ( પરિધિ ) કેટલો છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં, સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિક્કંભેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્કેવેણં પણત્તાઓ ) તે કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ અસંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણુ છે, તેમની પહોળાઈ સંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણુ છે અને તેમનો પરિક્ષેપ અસંખ્યાત હજાર પ્રમાણુ છે.

( કણ્ઠરાઈઓ ણં ભંતે ! કે મહાલિયાઓ પણત્તાઓ ? ) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ કેવડી મોટી કહી છે ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અયં ણં



અન્યતરા કૃષ્ણરાજિઃ ઉત્તરવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, ઉત્તરાઅન્યતરા કૃષ્ણરાજિઃ  
: પૌરસ્ત્યવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, કે પૌરસ્ત્યવાયાત્યે, વાએ કૃષ્ણરાજી પડમે, કે  
ઉત્તર-દક્ષિણવાએ કૃષ્ણરાજી અપમે, કે પૌરસ્ત્ય-વાયાત્યે અન્યતરે કૃષ્ણરાજી  
ચતુરમે, કે ઉત્તર-દક્ષિણે આમ્યન્તરિકે કૃષ્ણરાજી ચતુરમે, "પૂર્વાપરે પડમે, અપમે  
પુનર્દક્ષિણોત્તરે વાએ, આમ્યન્તરચતુરમાઃ સર્વાં અપિ ચ કૃષ્ણરાજયઃ ॥૧॥ કૃષ્ણરાજયઃ

મદિગ્ધિભાગ-કે બાહર કી કૃષ્ણરાજિ કા સ્પર્શ કરતી હૈ । પશ્ચિમદિ-  
ગ્ધિભાગ-કે ખીતર કી જો કૃષ્ણરાજિ હૈ વહ ઉત્તરદિગ્ધિભાગ-કે બાહર કી  
કૃષ્ણરાજિ કા સ્પર્શ કરતી હૈ । ઓર ઉત્તર દિશા-કે ખીતર કી જો  
કૃષ્ણરાજિ હૈ વહ પૂર્વદિગ્ધિભાગ-કે બાહર કી કૃષ્ણરાજિ કો છૂતી હૈ ।  
(દો પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ બાહિરાઓ કળહરાઈઓ છલંસાઓ દો ઉત્તર  
દાહિણબાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ, દો પુરત્થિમ પચ્ચત્થિમાઓ  
અન્નિમતરાઓ કળહરાઈઓ ચતરંસાઓ, દો ઉત્તરદાહિણાઓ અન્નિમત-  
રાઓ કળહરાઈઓ ચતરંસાઓ,

“ પુન્વાઽવરા છલંસા, તંસા પુણ દાહિણુસરા વજ્ઞા ।

અન્નિમતર ચતરંસા સઘ્વા વિ ય કળહરાઈઓ ” ૪૩)

પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ-કે બાહર-કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે છઠ્ઠી સ્તંબલાલી હૈં ।  
ઉત્તર ઓર દક્ષિણ-કે બાહર-કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે તિલ્હુટી હૈં ।  
પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ-કે ખીતર-કી જો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે ચૌલ્હુટી હૈં । તથા  
ઉત્તર ઓર દક્ષિણ-કે ખીતર-કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હૈં વે બી ચૌલ્હુટી  
હૈં । ઇસી વિષય-કો પુન્વાવરા ‘ઇત્યાદિ’ ગાથા-મેં કહા હૈં કિ-પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ

કૃષ્ણરાજિ છે તે પશ્ચિમ દિગ્ધિભાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે, પશ્ચિમ  
દિગ્ધિભાગની અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે તે ઉત્તર દિગ્ધિભાગની બહારની કૃષ્ણરા-  
જિને સ્પર્શે છે, અને ઉત્તર દિગ્ધિભાગની બહારની જે કૃષ્ણરાજિ છે તે પૂર્વ  
દિગ્ધિભાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે. (દો પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ બાહિરાઓ  
કળહરાઈઓ છલંસાઓ દો ઉત્તરદાહિણબાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ, દો પુર-  
ત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ અન્નિમતરાઓ કળહરાઈઓ ચતરંસાઓ, દો ઉત્તરદાહિણાઓ  
અન્નિમતરાઓ કળહરાઈઓ ચતરંસાઓ, “ પુન્વાઽવરા છલંસા, તંસા પુણ દાહિણુ-  
સરા વજ્ઞા । અન્નિમતર ચતરંસા સઘ્વા વિ ય કળહરાઈઓ ” ૪૩ ) પૂર્વ અને  
પશ્ચિમમાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે છ ખૂણાવાળી છે, ઉત્તર અને  
દક્ષિણમાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે ત્રણ ખૂણાવાળી છે, પૂર્વ અને  
પશ્ચિમમાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે ચાર ખૂણાવાળી છે, તથા ઉત્તર  
અને દક્ષિણ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે પણ ચાર ખૂણાવાળી છે

સહુ ભદન્ત ! કિયત્યઃ આયામેન ? કિયત્યો વિષ્કમ્ભેન ! કિયંત્યઃ પરિક્ષેપેન ? પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ આયામેન, સંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કમ્ભેન, અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેન પ્રજ્ઞતાઃ । કૃષ્ણરાજયઃ સહુ ભદન્ત ! કિયન્મહાલયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અયં સહુ જમ્બૂદ્વીપો દ્વીપઃ, યાવત્-અર્ધમાસં વ્યતિવ્રજેત્ અસ્ત્યેકકાં કૃષ્ણરાજિં વ્યતિવ્રજેત્ અસ્ત્યેકકાં કૃષ્ણ-

કી કૃષ્ણરાજિયાં છહ સ્વંટવાલી હેં । દક્ષિણ ઓર ઉત્તર કી બાહિર કી કૃષ્ણરાજિયાં તિસ્વંટી હેં । ઓર સય અભ્યન્તર કી કૃષ્ણરાજિયાં ચોરસ હેં । ( કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવહયં આયામેણં, કેવહયં વિક્કલંભેણં કેવહયં પરિક્કલેવેણં પળ્લતાઓ ) હે ભદન્ત ! ઇન કૃષ્ણરાજિયોંકા આયામ કિતના હેં ? વિસ્તાર કિતના હેં ? ઓર ઇનકા પરિક્ષેપ, કિતના હેં ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિક્કલંભેણં અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્કલેવેણં પળ્લતાઓ ) ઇન કૃષ્ણરાજિયોં કા આયામ ( લંબાપન ) અસંખ્યાત હજાર યોજન કા હેં । વિષ્કંમ ( ચૌઢાઈ ) સંખ્યાત હજાર યોજન કા હેં । તથા પરિક્ષેપ ઇનકા અસંખ્યાત હજાર યોજન કા હેં । ( કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કે મહાલિયાઓ પળ્લતાઓ ) હે ભદન્ત ! યે કૃષ્ણરાજિયાં કિતની મોટી કહી ગઈં હેં ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અયં ણં જંબુદ્વીવે દોવે જાવ અદ્ધમાસં

એ જ વાતને “ પુઠ્ઠાડવરા ” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

પૂર્વ અને પશ્ચિમની કૃષ્ણરાજિઓ છ ખૂણીઆ વાળી છે, ઠક્ષિણ અને ઉત્તરની બહારની કૃષ્ણરાજિઓ ત્રિકોણીઆ છે, અને અંદરની બધી કૃષ્ણરાજિઓ ચોરસ છે. ( કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવહયં આયામેણં, કેવહયં વિક્કલંભેણં, કેવહયં પરિક્કલેવેણં પળ્લતા ? ) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ લંબાઈ કેટલી છે ? પહોળાઈ કેટલી છે ? અને તેમનો પરિક્ષેપ ( પરિધિ ) કેટલો છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં, સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિક્કલંભેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્કલેવેણં પળ્લતાઓ ) તે કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ અસંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણ છે, તેમની પહોળાઈ સંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણ છે અને તેમનો પરિક્ષેપ અસંખ્યાત હજાર પ્રમાણ છે.

( કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કે મહાલિયાઓ પળ્લતાઓ ? ) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ કેવડી મોટી કહી છે ? ( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( અયં ણં



રાજિ નો જ્યતિવજેન્ । इपन्महालयाः खलु गौतम ! कृष्णराजपः प्रज्ञाः, । सन्ति  
 खलु भदन्त । कृष्णराजिषु गेहा इति वा, गेहावणा इति वा ? नापमर्षः समर्थः ।  
 सन्ति खलु भदन्त । कृष्णराजिषु ग्रामा इति वा, यावत्-सन्निवेशा इति वा ? नापमर्षः  
 समर्थः । अस्ति खलु भदन्त । कृष्णराजिषु उदारा बलाहकाः संक्षिपन्ति, सं-  
 वीर्ध्वपञ्जा अत्येगइઅં કળહરાઈ વીર્ધવપજ્જા, અત્યેગइयं कणहराई णो  
 વીર્ધવપજ્જા એમહાલિયાઓ ણં ગોયમા કળહરાઈઓ પળગસાઓ ) હે  
 ગૌતમ ! ત્રીન ચુટકી પજાને મેં જિતના સમય લગતા હે ઉત્તને સમય મેં  
 કોઈ મહદ્વિક આદિ વિશેષણો ચાલા દેવ હસ સમસ્ત જંબૂદ્વીપ કા  
 હવકીસ ૨૧ વાર ચક્રર લગા આવે ઓર વહ હસી તરહ સે નિરન્તર  
 પન્નહ દિન તક ચલતા રહે-તપ કહીં સંભવ હે કિ વહ દેવ કિસી ંક  
 કૃષ્ણરાજિ કે પાસ તક પહુચ સકે ઓર કિસી ંક કૃષ્ણરાજિ કે પાસ  
 તક નહીં પહુચ સકે । હે ગૌતમ ! હતની વિશાલ યે કૃષ્ણરાજિયાં હે ।  
 (અત્થિ ણં મંતે ! કળહરાઈસુ ગેહાઈ વા ગેહાવણાઈ વા ) હે-ભદન્ત !  
 કૃષ્ણરાજિયોં કે મીતર ગૃહ ઓર ગૃહહટ્ટ-ગૃહ યાજાર હેં વયા ? ઉસર-  
 ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ણો હ્ણદ્ધે સમદ્ધે ) વહ અર્થ સમર્થ નહીં હે અર્થાત્  
 હન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ઘર ઓર ઘર યાજાર યિલકુલ નહીં હે । ( અત્થિ ણં  
 મંતે ! કળહરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ સંનિવેસાઈ વા ) હે ભદન્ત ! તો વયા  
 : હન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ગ્રામ યાવત્ સન્નિવેશ હેં ? ( ણો હ્ણદ્ધે સમદ્ધે ) હે

જંબુદ્વીપે દીપે જાવ અદ્ધમાસં વીર્ધવપજ્જા અત્યેગइઅં કળહરાઈ વીર્ધવપજ્જા, અત્યે-  
 ગइयं कणहराई णो वीर्धवपज्जा-एमहालियाओ णं गोयमा ! कणहराईओ पणगसाओ )  
 હે ગૌતમ ! ત્રણ ચપટી વગાડતા જેટલો સમય લાગે છે એટલા સમયમાં કોઈ  
 મહદ્વિક આદિ વિશેષણોવાળો દેવ આ સમસ્ત જંબૂદ્વીપની ૨૧ વાર પ્રદક્ષિણા  
 કરવાને ધારો કે સમર્થ છે તે દેવ એટલી જ શીઘ્રગતિથી નિરન્તર ૧૫ દિવસ  
 આઘ્યા કરે, તો તે કદાચ કોઈ એક કૃષ્ણરાજીની પાસે પહોંચી શકે છે અને  
 કોઈ એક કૃષ્ણરાજીની પાસે પણ પહોંચી શકતો નથી. હે ગૌતમ ! તે કૃષ્ણ-  
 રાજીઓ એટલી બધી વિશાળ છે ! ( અત્થિ ણં મંતે ! કળહરાઈસુ ગેહાઈ વા  
 ગેહાવણાઈ વા ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજીઓમાં ઘરો છે ? હાટ છે ? ( ગોયમા ! )  
 હે ગૌતમ ! ( ણો હ્ણદ્ધે સમદ્ધે ) તે કૃષ્ણરાજીઓમાં ઘર પણ નથી અને  
 હાટ પણ નથી.

( અત્થિ ણં મંતે ! કળહરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ સંનિવેસાઈ વા ? ) હે ભદન્ત !  
 તો શું તેમાં ગામ આદિ સન્નિવેશ પર્યન્તનાં સ્થાનો છે ખરાં ?

( ણો હ્ણદ્ધે સમદ્ધે ) હે ગૌતમ ! એવું કોઈ પણ સ્થાન તેમાં હોતું

જીવંતિ, સંવર્ષંતિ ? હન્ત, અસ્તિ । તત્ સ્વલુ મદન્ત ? કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અસુરઃ પ્રકરોતિ, નાગઃ પ્રકરોતિ ? ગૌતમ । દેવઃ પ્રકરોતિ, નો અસુરઃ, નો નાગઃ પ્રકરોતિ । અસ્તિ સ્વલુ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિપુ વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ, યથા ઉદારાસ્તથા, ।

ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ—હન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ન ગ્રામ હૈ, ન નિગમ હૈ, ન મડંય હૈ, ન કર્બટ હૈ, ન પત્તન હૈ, ન દ્રોણમુખ હૈ, ન આશ્રમ હૈ, ન સન્નિવેશ હૈ । (અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ ણં ડરાલા વલાહયા સંસેયંતિ, સંમુચ્છંતિ, સંવાસંતિ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ઉદાર-વિશાલ-મેઘ સંસ્વેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ ? પરસ્પર કે સંઘટન સે કયા વે સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈ ? ઘૃષ્ટિ કરતે હૈ ? (હંતા અત્થિ) હાં ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં ઘડે ૨ મેઘ સંસ્વેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ, સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈ ઓર ઘૃષ્ટિ કરતે હૈ । (તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં સંસ્વેદન સંમૂર્ચ્છન ઓર સંવર્ષણ કયા દેવ કરતા હૈ ? યા અસુર કરતા હૈ ? નાગ કરતા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દેવો પકરેહ) દેવ હી કરતા હૈ (ણો અસુરો પકરેહ ણો નાગો પકરેહ) અસુર નહીં કરતા હૈ ઓર ન નાગ હી કરતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિં કૃષ્ણરાજિયોં મેં મેઘોં કા સંસ્વેદન આદિકાર્ય દેવ કરતા હૈ અસુર નાગ નહીં કરતે હૈ કયોં કિં અસુર નાગ કા વહાં ગમન હી નહીં હોતા હૈ ।

નથી ત્યાં ગામ પણ નથી, નિગમ પણ નથી, મડંય પણ નથી, કર્બટ પણ નથી, પત્તન પણ નથી, દ્રોણમુખ પણ નથી, આશ્રમ પણ નથી અને સન્નિવેશ પણ નથી, (અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ ણં ડરાલા વલાહયા સંસેયંતિ, સંમુચ્છંતિ, સંવાસંતિ ?) હે મદન્ત ! શું કૃષ્ણરાજિઓમાં વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન થાય છે ખરું ? શું તેઓ ત્યાં પરસ્પરના સંયોગથી સંમૂર્ચ્છિત (એકત્રિત) થાય છે ? શું તેઓ ત્યાં વરસે છે ? (હંતા, અત્થિ) હા, ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિઓમાં વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન થાય છે, તેઓ ત્યાં સંમૂર્ચ્છિત થાય છે અને ઘૃષ્ટિ વરસાવે છે. (તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ?) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન અને વર્ષણ કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? શું અસુરકુમાર કરે છે ? શું નાગકુમાર કરે છે ?

(ગોયમા ।) હે ગૌતમ ! (દેવો પકરેહ) દેવ જ કરે છે, (ણો અસુરો પકરેહ, ણો નાગો પકરેહ) અસુરકુમાર કરતા નથી અને નાગકુમાર પણ કરતા નથી, કારણ કે અસુરકુમાર અને નાગકુમારનું ત્યાં ગમન જ થતું નથી.

અસ્તિ સત્ત્વ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિપુ ચાદરોઽપ્કાયા, ચાદરોઽગ્નિકાયા, ચાદરોઽન-  
સ્પતિકાયા ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ, નાન્યપ્ર વિપ્રહગતિસમાપન્નકેન । સન્તિ સત્ત્વ-  
મદન્ત ! ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપાઃ ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । અસ્તિ સત્ત્વઃ  
કૃષ્ણરાજિપુ ચન્દ્રાભા ઇતિ વા, સૂર્યાભા ઇતિ વા, ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । કૃષ્ણરામયઃ

( અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે યણિયસદે ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરા-  
જિયોં મેં કયા ઘનગર્જનાત્મક વાદર સ્તનિતશબ્દ હોતા હે ? ( જહા-  
વરાલા તહા ) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે ઉદાર મેય કહે ગયે હૈં-ઉસી-  
પ્રકાર સે જાનના યાદિયે । ( અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે આઝ-  
કાણ વાયરે અગણિકાણ, વાયરે વણસસકાણ ? ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરા-  
જિયોં મેં કયા વાદર જલકાપ હે ? વાદર અગ્નિકાપ હે ? વાદર વનસ્પતિ-  
કાપ હે ? ( ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે, પર હાંઃ  
( ણણતથ વિગ્ગહગઈસમાવન્નણં ) વિપ્રહગતિસમાપન્નક યે જીવ વહાં  
પર હૈં । ( અત્થિ ણં મંતે ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપા ) હે  
મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર ઓર તારાકણ  
હૈં કયા ? ( ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે ।  
( અત્થિ ણં કણ્ઠરાઈણં ચંદામાઈ વા, સૂરામાઈ વા ? ) હે મદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ચંદ્રમા કી કાન્તિ હે ? સૂર્ય કી કાન્તિ હે ? ( ણોઃ

( અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે યણિય સદે ? ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણ-  
રાજિઓમાં શું મેઘોના ગર્જન રૂપ બાદર, સ્તનિત શબ્દો વાય છે ખરાં ?  
( જહા વરાલા તહા ) હે ગૌતમ ! વિશાળ મેઘોના વિષયમાં કદા પ્રમાણે જ  
આ વિષયમાં પણ સમજવું. ( અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે આઝકાણ,  
વાયરે અગણિકાણ, વાયરે વણસકાણ ? ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં જળ શું  
બાદર અપ્કાય, બાદર અગ્નિકાય અને બાદર વનસ્પતિકાય છે ?

( ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે ) હે ગૌતમ ! ત્યાં તે કંઈ પણ સંભવી શકતું  
નથી. ( ણણતથ વિગ્ગહગઈ સમાવન્નણં ) પણ ત્યાં વિપ્રહગતિપ્રાપ્ત તે જીવો હોય છે.

( અત્થિ ણં મંતે ! ચંદિમ, સૂરિય, ગહગણનક્ષત્ર, તારારૂપા ) હે મદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્રો અને તારાઓ હોય છે ?

( ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે ) હે ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્રમા આદિ જ્યોતિષિક દેવો  
હોતા નથી.

( અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈણં ચંદામાઈ વા, સૂરામાઈ વા ? ) હે મદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રનો પ્રકાશ હોય છે ? સૂર્યનો પ્રકાશ હોય છે ?



સ્વલુ ભદન્ત ! કીદૃશયો વર્ણેન પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! કૃષ્ણાઃ, યાવત્-ક્ષિપમેવ વ્યતિ-  
જ્ઞેત્, કૃષ્ણરાજીનાં સ્વલુ ભદન્ત ! કતિ નામધેયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અષ્ટ નામ-  
ધેયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-કૃષ્ણરાજિરિતિ વા, મેઘરાજિરિતિ વા, મઘા ઇતિ વા,  
માઘવતી ઇતિ વા, વાતપરિધા ઇતિ વા, વાતપરિક્ષોભા ઇતિ વા, દેવપરિધા ઇતિ  
વા, દેવપરિક્ષોભા ઇતિ વા । કૃષ્ણરાજયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પૃથિવીપરિણામાઃ,

ઈણદ્દે સમદ્દે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । ( કણ્ઠરાઈઓ ણં  
મંતે । કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્લન્તાઓ ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં કા  
વર્ણ કૈસા હૈ ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( કાલાઓ જાવ સિપ્પામેવ વીર્ડ-  
વણ્ણા ) યે કૃષ્ણરાજિયાં કાલી હૈં । યાવત્ ( તમસ્કાય કી તરહ ભયં-  
કર હોને કે કારણ ઇન્હેં દેવ મી વઢુત હી શીઘ્રતા સે ઉલ્લંઘ જાતા હૈ  
( કણ્ઠરાઈણં મંતે । કહ નામધેજ્જા પળ્લન્તા ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં  
કે કિતને નામ કહે ગયે હૈં । ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અઠ્ઠ નામધેજ્જા  
પળ્લન્તા ) આઠ નામ કહે ગયે હૈં । ( તં જહા ) યે યે હૈં ( કણ્ઠરાઈહ વા,  
મેહરાઈ હ વા, મઘા હ વા, માઘવર્ડ હ વા, વાયફલિયા હ વા, વાયપલિ-  
ક્ષોભા હ વા, દેવફલિયા હ વા, દેવપલિક્ષોભા હ વા ) કૃષ્ણરાજિ ૧,  
મેઘરાજિ ૨, મઘા ૩ માઘવતી ૪, વાતપરિધા ૫, વાતપરિક્ષોભા ૬,  
દેવપરિધા ૭ ઓર દેવપરિક્ષોભા ૮ । ( કણ્ઠરાઈઓણં મંતે । કિં

( જો ઇણદ્દે સમદ્દે ) હે ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્ર કે સૂર્યનો પ્રકાશ  
સંભવી શકતો નથી.

( કણ્ઠરાઈઓ ણં મંતે ! કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્લન્તાઓ ? ) હે ભદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિઓનો વણું કેવો હોય છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( કાલાઓ જાવ સિપ્પામેવ વીર્ડવણ્ણા ) તે  
કૃષ્ણરાજિઓ ઠાળી હોય છે. અહીં તમસ્કાયના વણુંના જેવું જ સમસ્ત વણુંન  
સમજવું. તે કૃષ્ણરાજિઓનો વણું તમસ્કાયના જેવો ભયંકર હોવાથી દેવ  
પણુ ઘણી શીઘ્રતાથી તેમને પાર કરીને બહાર નીકળી જાય છે.

( કણ્ઠરાઈ ણં મંતે ! કહ નામધેજ્જા પળ્લન્તા ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણ-  
રાજિઓનાં કેટલાં નામ ક્યાં છે ?

( ગોયમા ! અઠ્ઠ નામધેજ્જા પળ્લન્તા-તં જહા ) હે ગૌતમ ! તેમના નીચે  
પ્રમાણે આઠ નામ ક્યાં છે-( કણ્ઠરાઈહ વા, મેહરાઈહ વા, મઘાહ વા, માઘવ-  
ર્ડહ વા, વાયફલિક્ષોભાહ વા, દેવફલિયાહ વા, દેવપલિક્ષોભાહ વા ) (૧)  
કૃષ્ણરાજિ, (૨) મેઘરાજિ, (૩) મઘા, (૪) માઘવતી, વાતપરિધા, (૫) વાત-  
પરિક્ષોભા (૬) દેવપરિધા અને (૮) દેવપરિક્ષોભા.

અસ્તિ સ્વલ્પ ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિણુ ચાદરોઽપ્કાયા, ચાદરોઽગ્નિકાયા, ચાદરોઽવ-  
સ્પતિકાયા ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ, નાન્યત્ર વિપ્રહગતિસમાપન્નકેન । સન્તિ સ્વલ્પ  
ભદન્ત ! ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપાઃ ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । અસ્તિ સ્વલ્પ  
કૃષ્ણરાજિણુ ચન્દ્રાભા इति वा, सूर्याभा इति वा, ? नायमर्थः समर्थः । कृष्णराजयः

(અત્યિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ વાયરે યણિયસદે ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરા-  
જિયોં મેં કયા ઘનગર્જનાત્મક ચાદર સ્થનિતશબ્દ હોતા હે ? ( જહા-  
ઝરાલા તંહા ) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે ઉદાર મેઘ કહે ગયે હૈ-ઝહી  
પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે । ( અત્યિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ વાયરે આઝ-  
કાણ વાયરે અગ્નિકાણ, વાયરે વણસઠકાણ ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરા-  
જિયોં મેં કયા ચાદર જલકાપ હે ? ચાદર અગ્નિકાપ હે ? ચાદર વનસ્પતિ-  
કાપ હે ? ( જો હણદે સમદે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે, પર હાં  
( જણણતથ વિગ્ગહગઈસમાવન્નણં ) વિપ્રહગતિસમાપન્નક યે જીવ વહાં  
પર હૈ । ( અત્યિ ણં મંતે ચંદિમ-સુરિય-ગહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપા ) હે  
ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર ઓર તારાસ્થ  
હે કયા ? ( જો હણદે સમદે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે ।  
( અત્યિ ણં કળ્હરાઈણં ચંદામાઈ વા, સૂરામાઈ વા ? ) હે ભદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ચંદ્રમા કી કાન્તિ હે ? સૂર્ય કી કાન્તિ હે ? ( જો :

( અત્યિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ વાયરે યણિય સદે ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણ-  
રાજિઓમાં શું મેઘોના ગર્જન રૂપ બાદર સ્થનિત શબ્દો થાય છે ખરાં ?  
( જહા ઝરાલા તંહા ) હે ગૌતમ ! વિશાળ મેઘોના વિષયમાં કહ્યા પ્રમાણે જ  
આ વિષયમાં પણ સમજવું. ( અત્યિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ વાયરે આઝકાણ,  
વાયરે અગ્નિકાણ, વાયરે વણસઠકાણ ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં જળ શું  
બાદર અપૂકાય, બાદર અગ્નિકાય અને બાદર વનસ્પતિકાય છે ?

( જો હણદે સમદે ) હે ગૌતમ ! ત્યાં તે કંઈ પણ સંભવી શકતું  
નથી. ( જણણતથ વિગ્ગહગઈ સમાવન્નણં ) પણ ત્યાં વિપ્રહગતિપ્રાપ્ત તે જીવો હોય છે.

( અત્યિ ણં મંતે ! ચંદિમ, સુરિય, ગહગણનક્ષત્ર, તારારૂપા ) હે ભદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્રો અને તારાઓ હોય છે ?

( જો હણદે સમદે ) હે ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્રમા આદિ જ્યોતિષિક દેવો  
હોતા નથી.

( અત્યિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈણં ચંદામાઈ વા, સૂરામાઈ વા ? ) હે ભદન્ત !  
કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રનો પ્રકાશ હોય છે ? સૂર્યનો પ્રકાશ હોય છે ?



ટીકા—‘કહ્ નં મંતે કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત! કતિ કિયત્પઃ કતિસંખ્યકાઃ સ્વલુ કૃષ્ણરાજયઃ કૃષ્ણવર્ગપુદ્ગલરેલાઃ પ્રજ્ઞતા? મગવાનાહ—‘ગોયમા ! અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ’ હે ગૌતમ ! અટ્ઠ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતા ! ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ નં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ? હે ભદન્ત ! કુત્ત્વ કસ્મિન્ પ્રદેશે ઇતાઃ ઉપરિવર્ગિતાઃ અટ્ઠ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! ઉર્પિ સળંકુમાર-માહિંદાળં કળ્પાળં ’ હે ગૌતમ ! સનત્કુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ

અથવા અનન્તવાર વહાં ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । પર વે વહાં વાદર અપ્કાયિ-કરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુણ હૈં, ન વાદર અગ્નિકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ હૈં ન વાદર વનસ્પતિકાયિકરૂપ સે હી ઉત્પન્ન હુણ હૈં ।

ટીકાર્થ—તમસ્કાય કે સમાન હોને સે અથ કૃષ્ણરાજિયોં કી પ્રરૂ-પણા સૂત્રકાર કર રહે હૈં । હસમેં ગૌતમ ને પ્રભુ સે એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ ( કહ્ નં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં । કૃષ્ણવર્ગવાલે પુદ્ગલોં કી રેલાઓં કા નામ કૃષ્ણ-રાજિયાં હૈં । સો યે કિતની હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ને ડનસે એસા કહા ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ) કૃષ્ણરાજિયાં આઠ કહી ગઈ હૈં । અથ ગૌતમ પ્રભુ સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ (કહિનં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ) હે ભદન્ત ! યે પૂર્વવર્ણિત આઠ કૃષ્ણરાજિયાં કિસ પ્રદેશ મેં કહી ગઈ હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ડનસે કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ઉર્પિ સળંકુમારમાહિંદાળં કળ્પા-

બાદર અગ્નિકાય રૂપે પણ ઉત્પન્ન થયા નથી અને બાદર વનસ્પતિકાય રૂપે પણ ઉત્પન્ન થયા નથી.

ટીકાર્થ—કૃષ્ણરાજિઓ પણ તમસ્કાયના જેવી હોય છે. તે કારણે સૂત્ર-કાર હવે તેમનું નિરૂપણ કરે છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહા-વીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( કહ્ નં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓ કેટલી ઠહી છે । ( કૃષ્ણ વર્ણવાળાં પુદ્ગલોની રેખાઓને કૃષ્ણરાજિઓ કહે છે. )

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—( ગોયમા ! અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિ આઠ ઠહી છે. તે કૃષ્ણરાજિઓનું સ્થાન બાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે—( કહિ નં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ? ) હે ભદન્ત ! તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ કયા પ્રદેશમાં આવેલી છે ?

અપ્પરિણામાઃ, જીવપરિણામાઃ, પુદ્ગલપરિણામાઃ ? ગૌતમ ! પૃથિવીપરિણામાઃ, જો અપ્પરિણામાઃ, જીવપરિણામા અપિ, પુદ્ગલપરિણામા અપિ । કુળ્લરાજિણુ સ્વ મદન્ત ! સર્વે પ્રાણાઃ, ભૂતાઃ, જીવાઃ, સત્ત્વા ઉપવગ્ગાપુગ્ગાઃ ? इन्त गौतम ! मत्तइ, अथवा अनन्तइत्तः, नो चैव वादराक्कायिकतया, वादराग्निकायिकतया वा, वादरवनस्पतिकायिकतया वा ॥ सू० २ ॥

પુદ્ગલપરિણામાઓ, આત્મપરિણામાઓ, જીવપરિણામાઓ, પોગ્ગલપરિણામાઓ ) હે મદન્ત ! કુળ્લરાજિયાં કયા પૃથિવી કે પરિણામરૂપ હૈં ? યા અપૂકાય કે પરિણામરૂપ હૈં ? યા જીવ કે પરિણામરૂપ હૈં ? યા પુદ્ગલ કે પરિણામરૂપ હૈં ? ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( પુદ્ગલપરિણામાઓ ) એ કુળ્લરાજિયાં પૃથિવી-કે પરિણામરૂપ હૈં । ( જો આત્મપરિણામાઓ ) અપૂકાય કે પરિણામરૂપ નહીં હૈં । ( જીવ પરિણામાઓ વિ, પુગ્ગલપરિણામાઓ વિ ) જીવ કે પરિણામ રૂપ ખી એ કુળ્લરાજિયાં હૈં ઓર પુદ્ગલ કે પરિણામરૂપ ખી હૈં । ( કળ્હરાઈસુ ણં મંતે । સવ્વે પ્રાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા ઉવવગ્ગાપુગ્ગા ) હે મદન્ત ! કુળ્લરાજિયોં મેં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત સર્વ કયા પહિલે ઉત્પન્ન હોચુકે હૈં ? ( હંતા, ગોયમા ! અસઈ અદુવા અણંતવસ્સુત્તો, જો ચેવ ણં વાયર આત્કાઈયત્તાણ વાયર અગ્નિકાઈયત્તાણ વા વાયર વણસસઈકાઈયત્તાણ વા ) હાં ગૌતમ ! સમસ્તપ્રાણાદિ જીવ અનેક વાર

( કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કિં પુદ્ગલ પરિણામાઓ, આત્મપરિણામાઓ, જીવ પરિણામાઓ, પોગ્ગલપરિણામાઓ ? ) હે મદન્ત ! શુ કુળ્લરાજિઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે ? કે અપૂકાયના પરિણામ રૂપ છે ? કે જીવના પરિણામ રૂપ છે ? કે પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ છે ?

( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( પુદ્ગલ પરિણામાઓ ) તે કુળ્લરાજિઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે, ( જો આત્મપરિણામાઓ ) અપૂકાયના પરિણામ રૂપ નથી. ( જીવ પરિણામાઓ વિ, પુગ્ગલપરિણામાઓ વિ ) તે કુળ્લરાજિઓ જીવના પરિણામ રૂપ પણ છે અને પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ પણ છે.

( કળ્હરાઈસુ ણં મંતે ! સવ્વે પ્રાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા, ઉવવગ્ગાપુગ્ગા ? ) હે મદન્ત ! કુળ્લરાજિઓમાં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સર્વ શું પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ?

( હંતા, ગોયમા ! અસઈ, અદુવા અણંતવસ્સુત્તો, જો ચેવ ણં વાયર આત્કાઈયત્તાણ વાયર અગ્નિકાઈયત્તાણ વા, વાયર વણસસઈકાઈયત્તાણ વા ) હાં, ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણાદિ જીવ અનેકવાર અથવા અનંતવાર ત્યાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે. પરંતુ તેઓ ત્યાં બાદર અપૂકાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી,

ટીકા—‘કહ્ નં મંતે કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત! કતિ કિયત્યઃ કતિસંખ્યકાઃ સ્વલુ કૃષ્ણરાજયઃ કૃષ્ણવર્ણપુદ્ગલરેલાઃ પ્રજ્ઞતા? ભગવાનાહ—‘ગોયમા ! અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ’ હે ગૌતમ ! અટ્ઠ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતા । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ નં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ? હે ભદન્ત ! કુત્ર કસ્મિન્ પ્રદેશે ઇતાઃ ઉપરિવર્ગિતાઃ અટ્ઠ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ! ઉર્પિ સળંકુમાર-માહિંદાળં કળ્પાળં ’ હે ગૌતમ ! સનત્કુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ

અથવા અનન્તવાર વહાં ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । પર વે વહાં ઘાદર અપ્રકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુણ હૈં, ન ઘાદર અગ્નિકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ હૈં ન ઘાદર વનસ્પતિકાયિકરૂપ સે હી ઉત્પન્ન હુણ હૈં ।

ટીકાર્થ—તમસ્કાય કે સમાન હોને સે અવ કૃષ્ણરાજિયોં કી પ્રરૂપણાં સૂત્રકાર કર રહે હૈં । સમ્મે ગૌતમ ને પ્રભુ સે એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ ( કહ્ નં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં । કૃષ્ણવર્ણવાલે પુદ્ગલોં કી રેલાઓં કા નામ કૃષ્ણરાજિયાં હૈં । સો યે કિતની હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ને અનસે એસા કહા ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ) કૃષ્ણરાજિયાં આઠ કહી ગઈ હૈં । અવ ગૌતમ પ્રભુ સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ (કહિનં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ) હે ભદન્ત ! યે પૂર્વવર્ણિત આઠ કૃષ્ણરાજિયાં કિસ પ્રદેશ મેં કહી ગઈ હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ અનસે કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( ઉર્પિ સળંકુમારમાહિંદાળં કળ્પા-

ખાદર અગ્નિકાય રૂપે પણ ઉત્પન્ન થયા નથી અને ખાદર વનસ્પતિકાય રૂપે પણ ઉત્પન્ન થયા નથી.

ટીકાર્થ—કૃષ્ણરાજિઓ પણ તમસ્કાયના જેવી હોય છે. તે કારણે સૂત્રકાર હવે તેમનું નિરૂપણ કરે છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( કહ્ નં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓ કેટલી કહી છે ! ( કૃષ્ણ વર્ણવાળાં પુદ્ગલોની રેખાઓને કૃષ્ણરાજિઓ કહે છે. )

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—( ગોયમા ! અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિ આઠ કહી છે. તે કૃષ્ણરાજિઓનું સ્થાન જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે—( કહિનં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ઠ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ? ) હે ભદન્ત ! તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ કયા પ્રદેશમાં આવેલી છે ?



ઉપરિ ' હેઠિં વંમલોળ કપ્પે રિદ્ધિવિમાણપથ્થહે ' અથઃ અવસ્તાન્ વ્રત્તલોકે કલ્પે-  
અરિષ્ટે અરિષ્ટનામકે વિમાનપસ્તટે ' એત્થ ણં અવસ્તાદગમમનઉરંસતંઠાણસંઠિયાઓ  
અટ્ટ કણ્ઠરાઈઓ પળ્લતાઓ ' અત્ર સન્ન સનત્કુમાર-માહેન્દ્રસ્વર્ગયોઃ ઉપરિષ્ઠાત્  
વ્રત્તલોકકલ્પસ્ય અવસ્તાન્ અરિષ્ટનામકવિમાનપસ્તટે, અઘાટકમવનતુ (સંસ્થાન  
સંસ્થિતઃ, અઘાટકઃ મહાપુદસ્થાનવિશેષઃ તદ્વન્ સમચતુરસ્રસંસ્થાનસંસ્થિતાઃ  
સદશચતુષ્તોણાકારેણ સ્થિતાઃ) અઘ્ઠ કુળ્લરાજયઃ પશ્તાઃ । તા અઘ્ઠ કુળ્લરાજીઃ  
પદર્શયતિ-‘ તં જહા ’ તથવા-‘ પુરત્થિમેણં દો ’ પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો,  
ઉત્તરેણં દો ’ પૌરસ્થ્યે-પૂર્વદિગ્મામે દે કુળ્લરાજી, તથા પશ્ચાત્યે પશ્ચિમદિગ્મામે દે  
કુળ્લરાજી, તથા દક્ષિણે દિગ્મામે દે કુળ્લરાજી તથા ઉત્તરે-ઉત્તરદિગ્મામે દે  
કુળ્લરાજી વર્તેતે, ઇતિ સર્વાઃ સંમીલ્ય અઘૌ સંજાતાઃ । તત્ર ‘ પુરત્થિમઽઞ્ચંતરા  
કણ્ઠરાઈ દાહિણવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા ’ પૌરસ્થ્યામ્ચંતરા પૂર્વદિગ્મામામ્ચંતર-  
વર્તિની કુળ્લરાજિઃ દક્ષિણવાયાં દક્ષિણદિગ્મામામ્ચિવર્તિનો કુળ્લરાજિ સ્પૃષ્ઠા  
સ્પૃષ્ટવતીત્યર્થઃ, ‘ સ્પૃષ્ઠા ’ ઇત્યત્ર કર્ત્તરિપ્રયોગ આર્પિત્વાત્ । એવમગ્રેઽપિ

ણં.) સનત્કુમાર, માહેન્દ્ર સ્વર્ગ કે ઝંપર ઓર ( હેઠિં વંમલોળ કપ્પે રીઢે  
વિમાણપથ્થહે ) વ્રત્તલોક કલ્પ મેં નીચે રિષ્ટનામકે વિમાનપસ્તટ મેં  
(એત્થ ણં અવસ્તાદગસમચતરંસ સંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ટ કણ્ઠરાઈઓ પળ્લ-  
તાઓ.) નૈત્યાદિસ્થાન કે સમાન ચૌકોર આકાર સે-સમચતુરસ્ર સંસ્થા-  
ન સે-ચે આઠ કુળ્લરાજિયાં સ્થિતે હેં । ( તં જહા ) ચે હસ પ્રકાર સે હેં-  
“ પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો ” પૂર્વદિ-  
ગ્મામે મેં દો કુળ્લરાજિયાં, તથા પશ્ચિમદિગ્મામે મેં દો કુળ્લરાજિયાં,  
તથા દક્ષિણદિગ્મામે મેં દો કુળ્લરાજિયાં, તથા ઉત્તરદિગ્મામે મેં દો  
કુળ્લરાજિયાં હેં । હસ તરહ ચે સવ મિલકર, આઠ કુળ્લરાજિયાં હો  
જાતી હેં । ( પુરત્થિમઽઞ્ચંતરા કણ્ઠરાઈ દાહિણવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા ) હનમેં

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( ઉપિ સંનકુમાર માહિંદાણં કપ્પાણં )  
સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર દેવલોકની ઉપર ( હેઠિં વંમલોળ કપ્પે રિદ્ધે વિમાણ-  
પથ્થહે ) અને બ્રહ્મલોક કલ્પની નીચે રિષ્ટ નામના વિમાન પ્રસ્તટમાં ( એત્થણં  
અવસ્તાદગસમચતરંસસંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ટ કણ્ઠરાઈઓ પળ્લતાઓ ) અંખાડાના  
જેવા સમચોરસ આકારે તે આઠ કુળ્લરાજિઓ રહેલી છે. “ તં જહા ” તે  
આ પ્રમાણે છે—( પુરત્થિમેણં દો ) પૂર્વ દિશામાં બે કુળ્લરાજિઓ, ( પચ્ચત્થિમેણં દો )  
પશ્ચિમ દિશામાં બે કુળ્લરાજિઓ, ( દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો ) દક્ષિણમાં બે  
કુળ્લરાજિઓ અને ઉત્તરમાં બે કુળ્લરાજિઓ છે. આ રીતે બધી મળીને આઠ  
કુળ્લરાજિઓ થાય છે. ( પુરત્થિમઽઞ્ચંતરા કણ્ઠરાઈ દાહિણવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા )



વિજ્ઞેયમ્, એવં 'દાહિગઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ પચ્ચત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા' દક્ષિણાભ્યન્તરા દક્ષિણદિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિની કૃષ્ણરાજિઃ પશ્ચિમવાહ્યાં પશ્ચિમદિગ્ભાગવહિર્વર્તિની કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા, તથા—'પચ્ચત્થિમઞ્મંતરા કળ્હરાઈ ઉત્તરવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા' પશ્ચિમાભ્યન્તરા પશ્ચિમદિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિની કૃષ્ણરાજિઃ ઉત્તરવાહ્યામ્ ઉત્તરદિગ્ભાગવહિર્વર્તિની કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા, એવમ્—ઉત્તરમઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા' ઉત્તરાભ્યન્તરા ઉત્તરદિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિની કૃષ્ણરાજિઃ પૌરસ્ત્યવાહ્યાં પૂર્વદિગ્ભાગવહિર્વર્તિની કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા. 'દો પુરત્થિમ—પચ્ચત્થિમાઓ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ છલંસાઓ' દ્વે પૌરસ્ત્ય—પશ્ચિમવાહે પૂર્વપશ્ચિમદિગ્ભાગવહિર્વર્તિન્યો કૃષ્ણરાજી વડસે પદ્મસ્રાઃ અંશાઃ યયોસ્તે પદ્મ-

જો પૂર્વદિશા કે ભીતર કી કૃષ્ણરાજિ હૈ વહ દક્ષિણદિશા કે વાહિર રહી હુઈ કૃષ્ણરાજિ કો છૂનેવાલી હૈ. ઇસી તરહ સે આગે ભી જાનના વાહિયે—(દાહિગઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ પચ્ચત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા) દક્ષિણદિશા કે ભીતર કી જો કૃષ્ણરાજી હૈ વહ પશ્ચિમદિશા કે વાહિર કી કૃષ્ણરાજી કો છૂનેવાલી હૈ. તથા—(પચ્ચત્થિમઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ ઉત્તરવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા) પશ્ચિમદિશા કે ભીતર કી જો કૃષ્ણરાજી હૈ વહ ઉત્તરદિશા કે વાહિર કી કૃષ્ણરાજી કો છૂનેવાલી હૈ (ઉત્તરમઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા) ઇસી પ્રકાર જો ઉત્તરદિશા કે ભીતર કી કૃષ્ણરાજિ હૈ વહ પૂર્વદિશા કે વાહિર કી કૃષ્ણરાજી કો છૂનેવાલી હૈ. (દો પુરત્થિમ—પચ્ચત્થિમાઓ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ છલંસાઓ) પૂર્વદિશા ઓર પશ્ચિમદિશા કે વાહિર કી જો દો કૃષ્ણરા-

તેમાં પૂર્વ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે દક્ષિણ દિશાની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ સમજવું. (દાહિગઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ પચ્ચત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા) દક્ષિણ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે પશ્ચિમ દિશામાં બહારની બાજુએ આવેલી કૃષ્ણરાજિનો સ્પર્શ કરે છે, (પચ્ચત્થિમઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ ઉત્તરવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા) પશ્ચિમ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે ઉત્તર દિશામાં આવેલી બહારની કૃષ્ણરાજિનો સ્પર્શ કરે છે, (ઉત્તરમઽઞ્મંતરા કળ્હરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા) એજ પ્રમાણે ઉત્તર દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે પૂર્વ દિશાની બહારની કૃષ્ણરાજિનો સ્પર્શ કરે છે. (દો પુરત્થિમ—પચ્ચત્થિમાઓ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ છલંસાઓ) પૂર્વ દિશા અને પશ્ચિમ દિશામાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે છ બ્રહ્માવાળી (પદ્મકોણના બહારની) છે, તથા (દો

કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો ઉત્તર-દાહિણવાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ' કે ઉત્તર-દક્ષિણવાહિ ઉત્તર-દક્ષિણદિગ્ભાગવહિર્વર્તિન્યો કૃષ્ણરાજીગ્ધસે મયઃ મન્નાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ત્રિકોણેસ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમાઓ અઘ્મિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચતરંસાઓ' કે પૌરસ્થ-પશ્ચિમાભ્યન્તરિકેર્ણ-પશ્ચિમદિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિન્યો કૃષ્ણરાજી ચતુરસે ચત્વારઃ મન્નાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો ઉત્તર-દાહિણાઓ અઘ્મિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચતરંસાઓ' કે ઉત્તર-દક્ષિણાભ્યન્તરિકે ઉત્તર-દક્ષિણદિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિન્યો કૃષ્ણરાજી ચતુરસે ચત્વારોઽન્નાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । ઉક્તાર્થઃ સંપ્રણય ગાથામાર-  
'પુવ્વા-વરા છલંસા તંસા પુણ દાહિણુત્તરા વઝ્ઞા ।

અઘ્મિતર ચતરંસા, સન્વા ત્રિ ય કળ્હરાઈઓ' ॥ ૧ ॥ શ્લોક, પૂર્વાઽપરે પૂર્વ-પશ્ચિમદિગ્ભાગસ્થિતે વહિર્વર્તિન્યો કે કૃષ્ણરાજી પડસે પટ્કોણે સ્તઃ, તથા દક્ષિણોત્તરે દક્ષિણોત્તરદિગ્ભાગસ્થિતે વાહિ વહિર્વર્તિન્યો કે કૃષ્ણરાજી ગ્ધસે જિયાં હેં વે છહ કોણોવાલી હેં । તથા દો ઉત્તર દાહિણ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ ) ઉત્તરદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કે બાહર કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હેં, વે ત્રીન અંશો-કોનોવાલી હેં । તથા-(દો પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ અઘ્મિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચતરંસાઓ ) પૂર્વપશ્ચિમદિશા કી જો ખીતર કી દો કૃષ્ણરાજિયાં હેં વે ચૌલ્હંટી હેં-ચાર કોનોવાલી હેં । (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અઘ્મિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચતરંસાઓ ) ઉત્તર દક્ષિણદિશાકી જો ખીતર કી દો કૃષ્ણરાજિયાં હેં વે ખી ચાર કોનોવાલી હેં હસી અર્થ કો સંગ્રહ કરનેવાલી યહ ગાથા હૈ-(પુવ્વા-વરા છલંસા હત્યાદિ । પૂર્વાપર-પૂર્વપશ્ચિમદિગ્ભાગ બહિર સ્થિત દો કૃષ્ણરાજિયાં છહ કોને વાલી હેં, તથા દક્ષિણ ઉત્તરદિગ્ભાગવહિઃસ્થિત દો કૃષ્ણરા-

ઉત્તરદાહિણ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ ) ઉત્તર દિશા અને દક્ષિણ દિશામાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ત્રણ ખૂણાવાળી ( ત્રિકોણાકારની ) છે. તથા (દો પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમાઓ અઘ્મિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચતરંસાઓ ) પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ચાર ખૂણાવાળી (ચતુરસાકારની) છે, (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અઘ્મિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચતરંસાઓ ) અને ઉત્તર-દક્ષિણમાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે પણ ચાર ખૂણાવાળી છે. એજ અર્થનો સંગ્રહ કરનારી ગાથા નીચે પ્રમાણે છે—'પુવ્વાવર' ઇત્યાદિ આ ગાથાનો ભાવાર્થ—પૂર્વાપર-પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિગ્ભાગમાં બહાર આવેલી જે કૃષ્ણરાજિઓ છે ખૂણાવાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તર દિગ્ભાગમાં

ત્રિકોણે સ્તઃ, શેષાઃ સર્વાઃ અપિ ચતુર્દિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિન્યશ્વતસોઽપિ કૃષ્ણરાજયઃ  
ચતુરસ્રાઃ ચતુષ્કોણા एव सन्तीति संप्रहमायार्थः ॥१॥

ગૌતમઃ પૂછતિ—‘કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવહયં આયામેણં, કેવહયાઓ  
વિકલંભેણં, કેવહયાઓ પરિકલેવેણં પળ્ણત્તાઓ ? ’ હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજયઃ સ્વલ્લુ  
કિયત્યઃ—કિયત્પરિમાણા આયામેન દૈર્ઘ્યેણ પ્રજ્ઞતાઃ ? , કિયત્યશ્ચ વિષ્કમ્ભેણ  
વિસ્તારેણ પ્રજ્ઞતાઃ કિયત્યશ્ચ પરિક્ષેપેણ પરિધિના પ્રજ્ઞતાઃ ? મગવાનાહ—‘ગોયમા !  
અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં ’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજયઃ આયામેન દૈર્ઘ્યેણ  
અસંલેય્યાનિયોજનસહસ્સાણિ વર્તન્તે, તથા ‘સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિકલંભેણં ’  
સંલેય્યાનિ યોજનસહસ્સાણિ વિષ્કમ્ભેણ વિસ્તારેણ વર્તન્તે, એવમ્ ‘અસંલેજ્જાઈં  
જોયણસહસ્સાઈં પરિકલેવેણં પળ્ણત્તાઓ ’ અસંલેય્યાનિ યોજનસહસ્સાણિ પરિક્ષે-

જિયાં ત્રીન કોને વાલી હૈં—અર્થાત્ ત્રિશ્રુંટી હૈં । વાકી કી ચારોં દિશાઓં  
કી અભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિયાં સય ચાર કોનોં વાલી હી હૈં એસા હસ  
ગાથા કા અર્થ હૈ ।

અવ ગૌતમ પ્રભુ સે પૂછતે હૈં કિ—(કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવહયં  
આયામેણં, કેવહયં વિકલંભેણં પળ્ણત્તા ) હે મદન્ત ! એ કૃષ્ણરાજિયાં  
આયામ કી અપેક્ષા કિતની લંઘી હૈં ઓર વિષ્કંભ કી અપેક્ષા કિતની  
ઘોડી હૈં—તથા હનકા પરિક્ષેપ કિતના હૈં—હસકે ઉત્તર મેં મગવાન્ ને  
ઉનસે કહા—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયા-  
મેણં) કૃષ્ણરાજિયાં આયામ—લંઘાઈં કી અપેક્ષા સે અસંલ્યાત હજાર  
યોજન કી હૈં તથા—( વિકલંભેણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં ) વિસ્તાર  
કી અપેક્ષા સે સંલ્યાત હજાર યોજન કી હૈં । ઓર ( અસંલેજ્જાઈં

મહાર આવેલી બે કૃષ્ણરાજિઓ ત્રણ ખૂણાવાળી છે, બાકીને એટલે કે ચારે  
દિશાઓમાં અંદર આવેલી ચારે કૃષ્ણરાજિઓ ચાર ખૂણાવાળી છે.

હવે ગૌતમ તેમના વિસ્તાર આદિ વિષે આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—  
( કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવહયં આયામેણં કેવહયં વિકલંભેણં, પળ્ણત્તાઓ ? )  
હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ કેટલી છે ? તેમની પહોળાઈ કેટલી છે ?  
તેમની પરિધિ ( પરિમિતિ ) કેટલી છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ !  
( અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં ) કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ અસંખ્યાત  
હજાર યોજનની છે, ( વિકલંભેણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં ) અને તેમની  
પહોળાઈ સંખ્યાત હજાર યોજનની છે, અને ( અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં



કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો ઉત્તર-દાહિણવાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ' દે ઉત્તર-દક્ષિણવાળો ઉત્તર-દક્ષિણદિગ્માગવર્તિર્વર્તિન્યો કૃષ્ણરાજીગ્ર્યસે પ્રયઃ અસ્યાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ત્રિકોણેસ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમાઓ અઙ્ગિમત્તરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ' દે પૌરસ્થ-પશ્ચિમાભ્યન્તરિકેર્વૃ-પશ્ચિમદિગ્માગાભ્યન્તરવર્તિન્યો કૃષ્ણરાજી ચતુરસ્રે ચત્વારઃ પ્રયઃ અંશાઃ યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો ઉત્તર-દાહિણાઓ અઙ્ગિમત્તરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ' દે ઉત્તર-દક્ષિણાભ્યન્તરિકે ઉત્તર-દક્ષિણદિગ્માગાભ્યન્તરવર્તિન્યો કૃષ્ણરાજી ચતુરસ્રે ચત્વારોઽસ્યાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । ઉક્તાર્થઃ સંગ્રહાય ગાથામાહ—  
'પુઞ્વા-વરા છલંસા તંસા પુણ દાહિણુત્તરા વજ્ઞા ।

અઙ્ગિમત્તર ચરંસા, સઞ્વા ત્રિ ય કળહરાઈઓ' ॥ ૧ ॥ સ્તિ,  
પૂર્વાઽપરેર્વ-પશ્ચિમદિગ્માગસ્થિતે વર્તિર્વર્તિન્યો દે કૃષ્ણરાજી પડસ્રે પદ્કોણે સ્તઃ, તથા દક્ષિણોત્તરે દક્ષિણોત્તરદિગ્માગસ્થિતે વાલે વર્તિર્વર્તિન્યો દે કૃષ્ણરાજી ગ્ર્યસે જિયાં હેં વે છહ કોણોવાલી હેં । તથા દો ઉત્તર દાહિણ વાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ ) ઉત્તરદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કે બાહર કી જો દો કૃષ્ણરાજિયાં હેં, વે ત્રીન અંશો-કોનોવાલી હેં । તથા—(દો પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ અઙ્ગિમત્તરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ ) પૂર્વપશ્ચિમદિશા કી જો મીતર કી દો કૃષ્ણરાજિયાં હેં વે ચૌલ્હંદી હેં—ચાર કોનોવાલી હેં । (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અઙ્ગિમત્તરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ ) ઉત્તર દક્ષિણદિશાકી જો મીતર કી દો કૃષ્ણરાજિયાં હેં વે મી ચાર કોનોવાલી હેં હસી અર્થ કો સંગ્રહ કરનેવાલી યહ ગાથા હૈ—( પુઞ્વા-વરા છલંસા સ્તુત્યાદિ । પૂર્વાપર-પૂર્વપશ્ચિમદિગ્માગ બહિર સ્થિત દો કૃષ્ણરાજિયાં છહ કોને વાલી હેં, તથા દક્ષિણ ઉત્તરદિગ્માગવહિઃસ્થિત દો કૃષ્ણરા-

ઉત્તરદાહિણ વાહિરાઓ કળહરાઈઓ તંસાઓ ) ઉત્તર દિશા અને દક્ષિણ દિશામાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ત્રણ ખૂણાવાળી ( ત્રિકોણાકારની ) છે. તથા (દો પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમાઓ અઙ્ગિમત્તરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ ) પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ચાર ખૂણાવાળી ( ચારસાકારની ) છે, (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અઙ્ગિમત્તરાઓ કળહરાઈઓ ચરંસાઓ ) અને ઉત્તર-દક્ષિણમાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે પણ ચાર ખૂણાવાળી છે. એજ અર્થનો સંગ્રહ કરનારી ગાથા નીચે પ્રમાણે છે—' પુઞ્વાવર ' ઇત્યાદિ આ ગાથાનો ભાવાર્થ—પૂર્વાપર-પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિગ્માગમાં બહાર આવેલી જે કૃષ્ણરાજિઓ છે ખૂણાવાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તર દિગ્માગમાં



એકકાં સંખ્યાતયોજનસહસ્રવિસ્તારાં કૃષ્ણરાજિં વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિક્રામેત્ ; કિન્તુ  
‘અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈણો વીર્ઘવજ્જા’ અસ્ત્યેકકામ્ અસંખ્યાતયોજનસહસ્રવિસ્તારાં  
કૃષ્ણરાજિં નો વ્યતિવ્રજેત્ નો વ્યતિક્રામેત્ ।

તદુપસંહરનાદ—‘એમહાલિયાઓ ણં ગોયમા ! કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ’ હે  
ગૌતમ ! ઇયદ્મહાલયાઃ ઇયદ્મહત્યઃ સ્વલુ કૃષ્ણરાજયઃ મજ્જમાઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—  
‘અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ગેહા ઇ વા, ગેહાવણા ઇ વા ?’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ  
સંભવતિ સ્વલુ કૃષ્ણરાજિપુ ગેહાનિ ગૃહાઃ ઇતિ વા ભવન્તિ ? ગેહાપણાઃ ગૃહહટ્ઠાઃ  
ઇતિ ભવન્તિ ? ભગવાનાદ—‘ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ, કૃષ્ણ-  
રાજિપુ ગૃહાઃ, ગૃહાપણા વા ન ભવન્તીતિભાવઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘અત્થિ ણં મંતે !

વીર્ઘવજ્જા) કિસી એક કૃષ્ણરાજી તક પહુંચ સકતા હૈ । અર્થાત્  
સંખ્યાત હજાર યોજન વિસ્તાર વાલી કૃષ્ણરાજી તક જા સકતા હૈ ।  
કિન્તુ ( અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈ ણો વીર્ઘવજ્જા ) અસંખ્યાત હજાર યોજન  
વિસ્તાર વાલી કૃષ્ણરાજિતક નહીં જા સકતા હૈ । ( એમહાલિયાઓ ણં  
ગોયમા કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ ) ઇતની મહાન્ હે ગૌતમ ! યે કૃષ્ણરા-  
જિયાં હૈ । અવ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નુ સે એસા પૂછતે હૈ કિ—( અત્થિ ણં મંતે !  
કળ્હરાઈસુ ગેહા ઇ વા, ગેહાવણા ઇ વા ) હે ભદન્ત ! વયા યહ વાત સંભ-  
વિત્ હૈ કિ ઇન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ઘર હોં ઓર ઘર હાટ હોં ? હસકે  
ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ કહતે હૈ કિ હે ગૌતમ ! ( ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે ) યહ અર્થ સમર્થ  
નહીં હૈ—અર્થાત્ કૃષ્ણરાજિયોં મેં ન ઘર સંભવિત હૈ ઓર ન ગૃહાપણ હી  
સંભવિત હૈ । ઠીક હૈ—યે સવ વહાં પર નહીં હૈ તો ( અત્થિ ણં મંતે !

સંખ્યાત હજાર યોજનના વિસ્તારવાળી કૃષ્ણરાજિ સુધી તે જઈ શકે છે,  
પરંતુ ( અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈ ણો વીર્ઘવજ્જા ) અસંખ્યાત હજાર યોજનના  
વિસ્તારવાળી કૃષ્ણરાજિ સુધી તે જઈ શકતી નથી. ( એમહાલિયાઓ ણં  
ગોયમા ! કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ ) હે ગૌતમ ! એટલી બધી વિસ્તૃત ( વિશાળ  
તે કૃષ્ણરાજિઓ હોય છે.

આટલા બધા વિસ્તારવાળી કૃષ્ણરાજિઓમાં ઘર આદિ છે કે નહીં તે  
બાણુવા માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—( અત્થિ ણં મંતે !  
કળ્હરાઈસુ ગેહા ઇ વા, ગેહાવણા ઇ વા ? ) હે ભદન્ત ! શું કૃષ્ણરાજિઓમાં ઘર,  
હાટ આદિ હોવાનું સંભવી શકે છે ખરું ?

ઉત્તર—( ણો ઇણદ્ઢે સમદ્ઢે ) હે ગૌતમ ! આ વાત સંભવિત નથી  
એટલે કે ત્યાં ઘર પણ નથી અને હાટ પણ નથી.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—ઘર, હાટ આદિ ત્યાં સંભવિત ન હોય, તો

પેણ પરિધિના તાઃ કૃષ્ણરાત્રયઃ પ્રજ્ઞાઃ । ગૌતમઃ પૂછતિ-‘કણ્ઠરાઈઓ જં મંતે !  
 કે મહાલિયાઓ પળ્લતાઓ ?’ હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાત્રયઃ સજ્ઞ કિમ્મહત્તઃ  
 કિયન્મહત્તઃ પ્રજ્ઞાઃ ? મગ્ગાનાદ-‘ગોયમા ! અયં જં જંબુદીવે દીવે, જાવ-અદ્દ-  
 માસં વીરૂવણ્ણા’ હે ગૌતમ ! યદા કથિત્ત્વમહદ્ધિકો યાવત્-મહાનુભાવો દેવઃ મણ્ણ-  
 માઝુલ્લસંયોગાભિયાતજન્યધ્વનિગૂચકહસ્તવ્યાપારક્યાઃ છોટ્ઠિકા તામિઃ તિમ્મિઃ  
 પૂર્વવર્ણિતમેનં જંબુદીપં દ્વીપં યયા ત્વરિત્થા નપલ્લયા વેગસ્યા યાવત્-દિવ્યગત્યા  
 એકવિંશતિચારાન્ પ્રદક્ષિણીકૃત્ય પુનરાગચ્છેત્ત તથૈવ ગત્યા નિરન્તરમ્ અર્ધમાસં  
 યાવત્ વ્યતિવ્રજેત્ તદા ‘અત્થેગઈયં કણ્ઠરાઈ વીરૂવણ્ણા’ અસ્તિ સંમત્તિ યત્-

જોયણસહસ્સાઈ પરિકલેવેણં પળ્લતાઓ) પરિદોષ દ્વન સમ કા અસંખ્યાત  
 હજાર યોજનોં કા હૈ ।

અથ ગૌતમ પ્રભુ સે પેસા પૂછતે હૈં કિ-(કણ્ઠરાઈઓ જં મંતે ! કે મહા-  
 લિયાઓ પળ્લતાઓ) હે મદન્ત ! યે કૃષ્ણરાત્રિયાં કિત્તની બહી કહી ગઈ  
 હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં ભગવાન્ અનેસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ !  
 (અયં જં જંબુદીવે દીવે જાવ અદ્દમાસં વીરૂવણ્ણા) જથ કોઈ મહદ્ધિક  
 યાવત્ મહાનુભાવવાલા દેવ ત્રીન છુટકી યજાને મેં જિતના સમય લગતા  
 હૈં હતને સમયરૂપ કાલ મેં પૂર્વ મેં વર્ણિત હસ સમસ્ત જંબુદીપ કો ત્વરા-  
 વાલી યાવત્ દિવ્યગતિ દ્વારા દક્ષીણે ધાર પ્રદક્ષિણા દેકર આ જાવે-  
 અથ વહી દેવ હસી તરહ કીં અપની દિવ્ય ગતિ દ્વારા નિરન્તર-પન્દર  
 ૧૫ દિન તક ચલતા રહે-તથ કહીં જાકર વહ (અત્થેગઈયં કણ્ઠરાઈ

પરિકલેવેણં પળ્લતાઓ) તેમની પરિધિ (પરિમિતિ અસંખ્યાત હજાર  
 યોજનની કહી છે.

ગૌતમ સ્વામી હવે એવો પ્રશ્ન કરે છે કે (કણ્ઠરાઈઓ જં મંતે ! કે  
 મહાલિયાઓ પળ્લતાઓ ?) હે મદન્ત ! તે કૃષ્ણરાત્રિઓને કેટલી વિશાળ કહી છે ?  
 તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ !  
 (અયં જં જંબુદીવે દીવે જાવ અદ્દમાસં વીરૂવણ્ણા) કોઈ એક મહદ્ધિક આદિ  
 વિશેષભોવાળો દેવ, પ્રભુ ચપટી વગાડતા જેટલો સમય લાગે એટલા સમયમાં  
 પૂર્વ વર્ણિત (આ ઉદ્દેશકના પહેલા સૂત્રમાં જંબુદીપનો વિસ્તાર અને પરિ-  
 કલ્પ બતાવ્યો છે) સમસ્ત જંબુદીપની એકત્રીસ વાર પ્રદક્ષિણા કરી લેવાને  
 ધારો કે સમર્થ છે. એવો તે દેવ પોતાની તે ત્વરાયુક્ત અને દિવ્ય ગતિથી  
 નિરન્તર ૧૫ દિવસ સુધી ચાલ્યા કરે, તો મહામુશ્કેલીએ તે (અત્થેગઈયં  
 કણ્ઠરાઈ વીરૂવણ્ણા) કોઈ એક કૃષ્ણરાત્રિ સુધી પહોંચી શકે છે, એટલે કે



એકાં સંખ્યાતયોજનસહસ્રવિસ્તારાં કુળ્લરાજિં વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિક્રામેત્ , કિન્તુ  
'અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈણો વીર્ઘવણ્જા' અસ્ત્યેકકામ્ અસંખ્યાતયોજનસહસ્રવિસ્તારાં  
કુળ્લરાજિં નો વ્યતિવ્રજેત્ નો વ્યતિક્રામેત્ ।

તદુપસંહરનાદ—'એમહાલિયાઓ ણં ગોયમા ! કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ' હે  
ગૌતમ ! ઇયદ્મહાલયાઃ ઇયદ્મહત્યઃ સ્વલુ કુળ્લરાજયઃ મત્તસાઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—  
'અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ગેહા ઇ વા, ગેહાવણા ઇ વા ?' હે ભદન્ત ! અસ્તિ  
સંભવતિ સ્વલુ કુળ્લરાજિપુ ગેહાનિ ગૃહાઃ ઇતિ વા ભવન્તિ ? ગેહાવણાઃ ગૃહહટ્ઠાઃ  
ઈતિ ભવન્તિ ? ભગવાનાદ—'ણો ઇણદ્દે સમદ્દે' હે ગૌતમ ! નાયમર્યઃ સમર્યઃ, કુળ્લ-  
રાજિપુ ગૃહાઃ, ગૃહાવણા વા ન ભવન્તીતિભાવઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'અત્થિ ણં મંતે !

વીર્ઘવણ્જા) કિસી એક કુળ્લરાજી તક પહુંચ સકતા હૈ । અર્થાત્  
સંખ્યાત હજાર યોજન વિસ્તાર વાલી કુળ્લરાજી તક જા સકતા હૈ ।  
કિન્તુ (અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈ ણો વીર્ઘવણ્જા) અસંખ્યાત હજાર યોજન  
વિસ્તાર વાલી કુળ્લરાજિતક નહીં જા સકતા હૈ । (એમહાલિયાઓ ણં  
ગોયમા કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ) ઇતની મહાન્ હૈ ગૌતમ ! યે કુળ્લરા-  
જિયાં હૈ । અથ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે એસા પૂછતે હૈ કિ—(અત્થિ ણં મંતે !  
કળ્હરાઈસુ ગેહા ઇ વા, ગેહાવણા ઇ વા) હે ભદન્ત ! કયા યહ વાત સંભ-  
વિત્ હૈ કિ ઇન કુળ્લરાજિયોં મેં ઘર હોં ઓર ઘર હાટ હોં ? ઇસકે  
ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈ કિ હૈ ગૌતમ ! (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) યહ અર્થ સમર્થ  
નહીં હૈ—અર્થાત્ કુળ્લરાજિયોં મેં ન ઘર સંભવિત હૈ ઓર ન ગૃહાવણ હી  
સંભવિત હૈ । ઠીક હૈ—યે સવ વહાં પર નહીં હૈ તો (અત્થિ ણં મંતે !

સંખ્યાત હજાર યોજનના વિસ્તારવાળી કુળ્લરાજિ સુધી તે જઈ શકે છે,  
પરંતુ (અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈ ણો વીર્ઘવણ્જા) અસંખ્યાત હજાર યોજનના  
વિસ્તારવાળી કુળ્લરાજિ સુધી તે જઈ શકતી નથી. (એમહાલિયાઓ ણં  
ગોયમા ! કળ્હરાઈઓ પળ્લતાઓ) હે ગૌતમ ! એટલી બધી વિસ્તૃત (વિશાળ  
તે કુળ્લરાજિઓ હોય છે.

આટલા બધા વિસ્તારવાળી કુળ્લરાજિઓમાં ઘર આદિ છે કે નહીં તે  
જાણવા માટે ગૌતમ, સ્વામી આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(અત્થિ ણં મંતે !  
કળ્હરાઈસુ ગેહા ઇ વા, ગેહાવણા ઇ વા ?) હે ભદન્ત ! શું કુળ્લરાજિઓમાં ઘર,  
હાટ આદિ હોવાનું સંભવી શકે છે ખરું ?

ઉત્તર—(ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! આ વાત સંભવિત નથી  
એટલે કે ત્યાં ઘર પણ નથી અને હાટ પણ નથી.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—ઘર, હાટ આદિ ત્યાં સંભવિત ન હોય, તે

કળ્હરાઈસુ ગામાહ વા જાવ-સંનિવેસાહ વા ? ' હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કૃષ્ણરાજિપુ ગ્રામાહતિ વા, યાવત્-નિગમાહતિ વા, મહંચાહતિ વા, કર્વટાહતિ વા, પત્તનાનિ હતિ વા, દ્રોણમુખાહતિ વા, આશ્રમાહતિ વા, સન્નિવેસાહતિ વા કિં ભવન્તિ ? મગધાનાહ-‘ળો ઇળદે સમદે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ, કૃષ્ણરાજિપુ ગ્રામાદયો યાવત્-સન્નિવેસાહ ન ભવન્તીતિમાવઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ઊરાલા વલાહયા સંસેયંતિ, સમ્પુચ્છંતિ, સંવાસંતિ ? ' હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કૃષ્ણરાજિપુ ઉદારાઃ વિશાલા વચ્ચાહ કાંવારિવાહકા મેઘાહત્યર્થઃ સંસ્વેદન્તિ, સંસ્વેદં પ્રાપ્નુવન્તિ, સંમૂર્ચ્છન્તિ પરસ્પરાઘટ્ટનેત સંમૂર્ચ્છિતા ભવન્તિ, સંવર્ષન્તિ ? વૃષ્ટિં કુર્વન્તિ ? મગધાનાહ-‘ હંતા, અત્થિ, ’ હે ગૌતમ ! હન્ત, સત્તમ્

કળ્હરાઈસુ ગામાહ વા જાવ સંનિવેસાહ વા) હે મદન્ત ! ઉન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ગ્રામ યાવત્ સન્નિવેશ હેં કયા ? યહાં યાવત્ શબ્દ સે ( આકર નગર નિગમ, મહંચ, કર્વટ, પત્તન, દ્રોણમુખ, આશ્રમ ) હન સ્થાનોંકા સંગ્રહ હુઆ હેં હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ હે ગૌતમ ! ( ણો ઇળદે સમદે ) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે-અર્થાત્ કૃષ્ણરાજિયાં મેં ગ્રામ સે લેકર સન્નિવેશ તકકે સ્થાન નહીં હેં । ( અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ઊરાલા વલાહયા સંસેયંતિ ) હે-મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ઉદાર-વિશાલ -મેઘ સંસ્વેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હેં ? પરસ્પર કે આઘટ્ટન સે કયા વે વહાં સંમૂર્ચ્છિત હેં ? કયા વહાં વે વૃષ્ટિ કરતે હેં ? ઉત્તર મેં પ્રભુ કહતે હેં કિ ( હંતા અત્થિ ) હાં ગૌતમ ! વહાં એસા હોતા હેં । ઉદારમેઘ વહાં સંસ્વેદ

( અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ગામાહ વા જાવ સંનિવેસાહ વા ? ) શું તે કૃષ્ણરાજિઓમાં ગામથી લઇને સન્નિવેશ પર્યન્તના જનસ્થાનો હોય છે ? અહીં “ જાવ ( પર્યન્ત ) ” પદથી નિગમ, મહંચ, કર્વટ, પત્તન, દ્રોણમુખ, અને આશ્રમ ” આ સ્થાનોને ગ્રંથલુ કરવામાં આવ્યા છે. તે દરેકનો અર્થ તમ સ્થાયના સૂત્રમાં આપ્યો છે.

મહાવીર પ્રભુનો ઉત્તર—( ણો ઇળદે સમદે ) હે ગૌતમ ! આ વાત પણ સંભવિત નથી. કૃષ્ણરાજિઓમાં ગામ આદિ કોઈ પણ સ્થાન સંભવી શકતું નથી.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—( અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ઊરાલા વલાહયા સંસેયંતિ ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ઉદાર ( વિશાળ ) મેઘ સંસ્વેદન પામે છે ? પરસ્પરના આઘટ્ટન ( સંયોગથી ) શું તેઓ સંમૂર્ચ્છિત ( સંયોજિત એકત્રિત ) થાય છે ? શું તેઓ ત્યાં વૃષ્ટિ વરસાવે છે ?

મહાવીર પ્રભુનો ઉત્તર—“ હંતા અત્થિ ” હા, ગૌતમ ! ત્યાં એવું



કૃષ્ણરાજિપુ મહાન્તો મેઘાઃ સંસ્થિવન્તિ, સંમૂર્ચ્છન્તિ વર્ષન્તિ ચ, इति, गौतमः  
 पृच्छति—‘ तं भन्ते ! किं देवो पक्रेइ, असुरो पक्रेइ, नागो पक्रेइ ? हे भदन्त !  
 कृष्णराजिपु तत्-संस्वेदनं, संमूर्च्छनं, संवर्षणं च किं देवः प्रकरोति, असुरः प्रक-  
 रोति, नागो वा प्रकरोति ? भगवानाह—‘ गोयमा ! देवो पक्रेइ, णो असुरो,  
 णो नागो पक्रेइ ’ हे गौतम ! कृष्णराजिपु मेघानां संस्वेदनादिकं देवः प्रकरोति,  
 असुरो नागश्च न प्रकुरुतः असुरकुमारनागकुमाराणां तत्र गमनासंभवात् । गौतमः  
 पृच्छति—‘ अत्थि णं भन्ते ! कण्हराईसु वायरे धणियसद्दे ’ हे भदन्त ! अस्ति संभवति  
 खलु कृष्णराजिपु वादरः स्थूलः स्तनितशब्दः घनगर्जनात्मकः ? भगवानाह—  
 ‘ जहा उराला तद्वा ’ यथा उदारा मेघाः कृष्णराजिपु संસ્થिद्यन्ति इत्यादि प्रति-

को प्राप्त होते हैं, संमूर्च्छित होते हैं और वृष्टि करते हैं । इस पर गौत-  
 मस्वामी प्रभु से ऐसा पूछते हैं कि—( तं भन्ते ! किं देवो पक्रेइ, असुरो  
 पक्रेइ, नागो पक्रेइ ) हे भदन्त ! कृष्णराजियों में विशाल मेघों का  
 संस्वेदन संमूर्च्छन एवं-संवर्षण कौन करता है—क्या देव करता है, या  
 असुर करता है ? या नाग करता है ? उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते  
 हैं कि—( गोयमा ) हे गौतम ! मेघों का संस्वेदन आदि ( देवो ) देव  
 ( पक्रेइ ) करता है । ( णो असुरो णो नागो पक्रेइ ) असुर नहीं करता  
 है और न नाग ही करता है । क्यों कि असुरकुमार और नागकुमार  
 का वहां गमन ही संभवता नहीं है । गौतम पुनः प्रभु से पूछते हैं कि  
 —( अत्थि णं भन्ते ! कण्हराईसु वायरे धणियसद्दे ) हे भदन्त ! कृष्णरा-  
 जियों में क्या वादर स्तनित-मेघनिर्घोष होता है ? इसके उत्तर में प्रभु

થાય છે-વિશાળ મેઘ ત્યાં સંસ્વેદન પામે છે, સંમૂર્છિત થાય છે અને વૃષ્ટિ  
 વરસાવે છે.

પ્રશ્ન—( તં ભન્તે ! કિં દેવો પક્રેઈ, અસુરો પક્રેઈ, નાગો પક્રેઈ ? )  
 હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન, સંમૂર્છન, અને સંવ-  
 ર્ષણ કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? અસુરકુમાર કરે છે ? કે નાગકુમાર કરે છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ ( દેવો પક્રેઈ )  
 દેવ કરે છે, ( ણો અસુરો ણો નાગો પક્રેઈ ) અસુરકુમાર કરતા નથી અને  
 નાગકુમાર પણ કરતા નથી. તેનું કારણ એ છે કે અસુરકુમાર અને નાગ-  
 કુમારનું ત્યાં ગમન જ સંભવિત નથી.

પ્રશ્ન—( અત્થિ ણં ભન્તે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે-ધણિય સદ્દે ? ) હે ભદન્ત !  
 કૃષ્ણરાજિઓમાં શું બાદર સ્તનિત શબ્દ એટલે કે મેઘ ગર્જનનો અવાજ થાય છે ?

પાદિતમ્ તથા તત્ર વાદરઃ સ્તનિતશબ્દોઽપિ યનગર્જનાત્મકો ભાત્યેતિ માત્રઃ ।  
 ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘ અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે આઝકાપ્, વાયરે અગણિ-  
 કાપ્, વાયરે વણસ્સહકાપ્ ? ’ મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સત્તુ કુણ્ણરાજિયુ વાદરઃ  
 અપ્કાયઃ, વાદરઃ અગ્નિકાયઃ, વાદરો વનસ્પતિકાયઃ ? મગ્ગાનાઈ—‘ ણો ઇણદ્દે  
 સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ, કુણ્ણરાજિયુ વાદરાઃ અપ્કાયાદયો ન સંમ-  
 વન્તિ, તેષાં તત્ર સ્વસ્વસ્થનાત્માભાવાન્, કિન્તુ ‘ ણણત્થ વિગ્ગહગહસમાવજ્જ-  
 ણં ’ ‘ ન ’ ઇતિશબ્દેન યોઽયં કુણ્ણરાજિયુ વાદરાપ્કાયાદીનાં નિષેધઃ કૃતઃ, સ  
 વિગ્રહગતિસમાપન્નકેન અન્યત્ર ચોદ્ધવ્યઃ, તત્રાપિ વિગ્રહગતિસમાપન્ના વાદરાપ્કાયા-

ઉત્તરે કહતે હું કે (જહા ઝરાલા તહા) હે ગૌતમ ! જેવો પ્રકાર સે હમને  
 યહ કહા હે કે ઇન કુણ્ણરાજિયોં મેં ઉદાર મેઘોં કા સંસ્વેદન આદિ  
 કાર્ય હોતા હૈ—ઝેસી પ્રકાર સે યહ ભી સમક્ષના ચાહિયે કે ઇન કુણ્ણ-  
 રાજિયોં મેં મેઘોં કા ગર્જનરૂપ શબ્દ ભી હોતા હૈ । અય ગૌતમ પૂછતે હૈ  
 (અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે આઝકાપ્ વાયરે અગણિકાપ્, વાયરે  
 વણસ્સહકાપ્) હે મદન્ત ! કુણ્ણરાજિયોંમેં વાદર અપ્કાય, વાદર અગ્નિ-  
 કાયે ઓર વાદર વનસ્પતિકાય હેં કયા ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈ કે  
 (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ—અર્થાત્ કુણ્ણ-  
 રાજિયોં મેં વાદર અપ્કાય આદિ સ્વસ્થાન કા અભાવ હોને સે નહીં હૈ ।  
 (ણણત્થ વિગ્ગહગહસમાવજ્જણં) પરન્તુ એસા જો યહ નિષેધ વચન  
 હૈ વહ વિગ્રહગતિ સમાપન્ન જીવોં કે સિવાય હી કહા ગયા જાનના  
 ચાહિયે । કયોં કે વિગ્રહગતિસમાપત્તિ સે વાદર અપ્કાય આદિકોં કા

ઉત્તર—(જહા ઝરાલા તહા) હે ગૌતમ ! જેવી રીતે કુણ્ણરાજિઓમાં  
 વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ કાર્યો થાય છે, એજ પ્રમાણે કુણ્ણરાજિઓમાં  
 મેઘોના ગર્જન રૂપ વાદર સ્તનિત શબ્દો પણ થાય છે, એમ સંભવું.

પ્રશ્ન—(અત્થિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે આઝકાપ્, વાયરે અગણિકાપ્,  
 વાયરે વણસ્સહકાપ્ ?) હે મદન્ત ! કુણ્ણરાજિઓમાં શું વાદર અપ્કાય, વાદર  
 અગ્નિકાય અને વાદર વનસ્પતિકાય હોય છે ?

ઉત્તર—(ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! એ વાત શંક્ય નથી. એટલે  
 કે કુણ્ણરાજિઓમાં વાદર અપ્કાય આદિ હોતાં નથી કારણ કે ત્યાં તેમના  
 સ્વસ્થાનનો અભાવ હોય છે. (ણણત્થ વિગ્ગહગહસમાવજ્જણં) પરન્તુ  
 આ નિષેધાત્મક કથન વિગ્રહગતિમાં વર્તમાન જીવો સિવાયના જીવોને જ  
 લાગુ પડે છે, કારણ કે વિગ્રહગતિમાં વર્તમાન વાદર અપ્કાય આદિનો  
 ત્યાં સંસ્થાપ હોઈ શકે છે.

દીનાં સંભવાત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ અતિથિ ણં મંતે ! ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-  
નક્ષત્ર-તારારૂપા ? ’ હે ભદન્ત ! સન્તિ સ્વલુ કૃષ્ણરાજિષુ ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-  
નક્ષત્ર-તારારૂપાઃ ? ભગવાન્ આહ—‘ ણો ણ્ણદ્દે સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ  
સમર્થઃ કૃષ્ણરાજિષુ ચન્દ્રાદયો જ્યોતિષ્કાન ભવન્તિ, કૃષ્ણરાજીનામત્યન્તાન્ધકાર-  
મયત્વાત્ તત્ર તેષાં સ્વસ્થાનત્વાસંભવાત્ । ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ—‘ અતિથિ ણં કણ્ઠ-  
રાઈસુ ચંદામા ઇ વા, સૂરામા ઇ વા ? ’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કૃષ્ણ-  
રાજિષુ ચન્દ્રામા, ચન્દ્રપ્રમા ઇતિ વા, સૂરામા સૂર્યપ્રમા ઇતિ વા ? ભગવાનાહ—‘ ણો ણ્ણદ્દે  
સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ કૃષ્ણરાજિષુ ચન્દ્રપ્રમાદીનાં પ્રતિહતપ્રકાશ-

સદ્ભાવ વહાં હો સકતા હૈ । અવ ગૌતમ પ્રભુ સે પૂછતે હૈં કિ ( અતિથિ ણં  
મંતે ! ચંદિમસૂરિયગહગણનક્ષત્રતારારૂપા ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયો  
મેં ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહગણ નક્ષત્ર એવં તારારૂપ હૈં કયા ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ  
ઉનસે કહતે હૈં કિ હે ગૌતમ ! ( ણો ણ્ણદ્દે સમદ્દે ) કૃષ્ણરાજિયાં અત્યન્ત  
અંધકાર મય હૈં—અતઃ હનમેં ચન્દ્રાદિક જ્યોતિષ્ક નહીં હૈ । કયોં કિ  
હનકા હનમેં સ્વસ્થાન નહીં હૈ । ( અતિથિ ણં કણ્ઠરાઈસુ ચંદામા ઇ વા,  
સૂરામા ઇ વા ) હે ભદન્ત ! તો કયા કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્ર કી પ્રમા ઓર  
સૂર્ય કી પ્રમા બી નહીં હૈ ? હસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રભુ ઉનસે  
કહતે હૈં કિ ( ણો ણ્ણદ્દે સમદ્દે ) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ—  
અર્થાત્ કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્રપ્રમા એવં સૂર્યપ્રમા હૈં તો સહી પર વે પ્રતિ-  
હત પ્રકાશ વાલી હોને કે કારણ ઉનકાં વહાં રહના બી નહીં રહને કે

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( અતિથિ ણં  
મંતે ! ચંદિમ, સૂરિય, ગહગણનક્ષત્રતારારૂપા ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં  
શું ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્રો, અને તારાઓ હોય છે ?

ઉત્તર—( ગૌતમ ! ણો ણ્ણદ્દે સમદ્દે ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિઓ  
અત્યંત અંધકારમય હોય છે, તેથી તેમાં ચન્દ્રમા આદિ જ્યોતિષિક દેવો  
હોતા નથી, કારણ કે તેમનું ત્યાં સ્વસ્થાન નથી.

પ્રશ્ન—( અતિથિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ ચંદામા ઇ વા, સૂરામા ઇ વા ? ) હે  
ભદન્ત ! તો શું કૃષ્ણરાજિઓમાં ચન્દ્રની પ્રભા ( પ્રકાશ ) અને સૂર્યનો  
પ્રકાશ હોય છે ?

ઉત્તર—( ણો ણ્ણદ્દે સમદ્દે ) હે ગૌતમ ! આ વાત પણ શક્ય નથી.  
કૃષ્ણરાજિઓમાં ચન્દ્ર અને સૂર્યની પ્રભા હોય છે તો ખરી, પણ તેનું ત્યાં  
અંધકાર રૂપે પરિણમન થઈ જવાને કારણે તે પ્રભા ત્યાં હોવા છતાં પણ  
નહીં જોવી જ લાગે છે.



तथा विद्यमानत्वेऽपि अभिन्नमानमायतान् । गौतमः पृच्छति-‘कच्छराईभो णं भंते ! केरिसियाओ वन्नेणं पप्पत्ताओ ?’ हे भइन्त ! कृष्णराजयः सडु कोदइयो वणेन प्रज्ञप्ताः ? भगवानाह-‘गोयमा ! कालाओ, जान-सिण्णामेन वीईवाण्णमा’ हे गौतम ! कृष्णराजयो वणेन कृष्णाः भन्धहारमपत्तान्, अवयव तमस्कायवत् अतिभयद्वरत्तात् देवोऽपि यावत्-तिथमे । व्यतिव्रजेन् उट्टिःणेन उल्लङ्घय गच्छेन्, यावत्करणात्-कालावभाताः, गन्मीरिरोनहर्णं ननन्यः, मीपाः, उन्वासानिहाः, परमकृष्णाः प्रज्ञप्ताः, देवोऽस्त्येहको यसात्पथमतया दृष्ट्वा धुन्नेत्, अथामित्तमाग-

जैसा है। गौतम प्रभु से पुनः प्रश्न करते हैं ( कण्हराईओ णं भंते ! केरिसियाओ वन्नेणं पणत्ताओ ) हे भदन्त ! ये कृष्णराजियां वर्ण से कैसी कही गई हैं-अर्थात् इन कृष्णराजियों का वर्ण कैसा है ? उत्तर में प्रभु कहते हैं कि ( गोयमा ) हे गौतम ! ( कालओ जाव विप्पामेव वीई-वएज्जा ) ये कृष्णराजियां अंधकारमय होने के कारण वर्ण से काली कही गई हैं। अतएव तमस्काय की तरह अतिभङ्गुर होने के कारण इन्हें देव भी यावत् बहुत ही शीघ्रता के साथ उल्लंघित कर चला जाता है। यहाँ यावत्पद से ( कालावभासाः गम्भीररोम हर्षजनन्यः भीमाः उत्त्रा-सजनिकाः, परमकृष्णा प्रज्ञसाः ) इन कृष्णराजियों में इन पूर्वोक्त विशेषणों को भी गृहीत करलेना चाहिये-यह प्रकट किया गया है। इन विशेषणों का अर्थ तमस्काय के प्रकरण में लिखा जा चुका है। तात्पर्य कहने का यह है कि कोई एक देव यदि इन्हें सर्वप्रथम देखना है तो वह देखते ही क्षुभित हो उठता है। यदि कदाचित् कोई देव इनके समक्ष

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(કળ્હરાણ્ણો ણં મંતે ! કેરિસિયાઓ વન્તેણં  
પણ્ણત્તાઓ ?) હે ભદ્રન્ત ! તે કુણ્ણુરાણ્ણિઓ વણ્ણુ કેવી છે ? એટલે કે  
કેવા વણ્ણુની છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! ( કાલાખો જાવ લિપામેવ વીરૂવણ્જા )  
તે કૃષ્ણરાજિઓ અંધકારમય હોવાથી વર્ણ કાળી કહી છે. તેનો વર્ણ તમ-  
સ્કાયના જેવો જ ભયંકર હોય છે, દેવ પણ અતિશય શોધતાથી આજંગીને  
પાર કરીને ચાલ્યા જાય છે. અહીં “ જાવ (યાવત્) ” પદ્યથી (કાલાવમાસાઃ  
ગમ્भीરોમહર્ષજનન્યઃ, મીમાઃ ઉત્ત્રાસજનિકાઃ પરમકૃષ્ણા પ્રજ્ઞતાઃ ) આ પૂર્વેકિત  
વિશેષણો પણ ગ્રહણ કરવા જોઈએ, એમ બતાવવામાં આવ્યું છે. આ વિશે-  
ષણોનો અર્થ તમસ્કાયના પ્રકરણમાં આપવામાં આવ્યો છે. આ કથનનું તાત્પર્ય  
એ છે કે કોઈક દેવ જો તેમને સીધી પહેલીજવાર દેખે છે, તો તેમને જોતાં



ચ્છેત્, તતઃ પથાત્, શીઘ્રં શીઘ્રં, ત્વરિતં ત્વરિતમિતિ સંગ્રાહ્યમ્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-  
'કણ્ઠરાઈણં મંતે ! કતિ નામધેજ્ઞા પળ્લતા ?' હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજીનાં સ્વલુ  
કતિ નામધેયાઃ પ્રત્પ્તાઃ ? મગવાનાહ- 'ગોયમા ! અટ્ટ નામધેજ્ઞા પળ્લતા' હે  
ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજીનામ્ અટ્ટ નામધેયાઃ પ્રત્પ્તાઃ, કૃષ્ણરાજીનામ્ અટ્ટો નામાનિ,  
તાન્યેવાહ- 'તં જહા' તથયા- 'કણ્ઠરાઈં ઇ વા, મેઠરાઈં ઇ વા, મેઘા ઇ વા, માઘવઈં ઇ  
વા, વાયફલ્લિહા ઇ વા, વાયપલ્લિસ્વોમા ઇ વા, દેવફલ્લિહા ઇ વા, દેવપલ્લિસ્વોમા ઇ  
વા' કૃષ્ણરાજિરિતિ વા, કૃષ્ણવર્ણરેલામયપુદ્ગલત્વાત્ 'કૃષ્ણરાજિઃ' ઇતિનામ  
૧, મેઘરાજિરિતિ વા, કૃષ્ણમેઘરેલા સદશત્વાત્ 'મેઘરાજિઃ' ઇતિનામ ૨,  
મઘા ઇતિ વા, અન્ધકારમયત્વાત્ પૃથ્વિસદશત્વાત્ 'મઘા' ઇતિનામ ૩,

જાકર इनमें प्रविष्ट हो जाता है तो शीघ्र ही वह इनमें से कायगति के  
अतिवेग से और मनोगति के अतिवेग से युक्त होकर बाहर निकल  
आता है । अब गौतमस्वामी प्रभु से (कण्ठराईणं मंते ! ) इन कृष्णरा-  
जियों के हे मदन्त ! ( कइनामधेज्जा पणत्ता ) कितने नाम हैं, ऐसा  
पूछते हैं और प्रभु इस प्रश्न के उत्तर में उनसे (गोयमा ! अट्ट नामधेज्जा  
पणत्ता ) हे गौतम ! इन कृष्णराजियों के आठ नाम हैं-ऐसा कहते हैं  
( तं जहा ) वे आठ नाम इस प्रकार से हैं-( कण्ठराईं इ वा ) कृष्णवर्ण  
वाले पुद्गलों की रेखा स्वरूप होने के कारण इनका पहिला नाम ( कृष्ण-  
राजि ) ऐसा है । ( मेहराईं इ वा ) कृष्णमेघों की रेखा जैसी होने के  
कारण इनका दूसरा नाम ( मेघराजि ) ऐसा है । छठवें नरक की पृथिवी  
के समान अन्धकार मय होने के कारण इनका तीसरा नाम ( मघा )

તેના મનમાં ક્ષોભ અનુભવે છે. કદાચ કોઈ દેવ તે કૃષ્ણરાજિઓની પાસે  
જઈને તેમાં પ્રવેશ કરે છે, તો તે કાયગતિ અને મનોગતિના અતિવેગથી  
યુક્ત થઈને તે કૃષ્ણરાજિઓમાંથી શીઘ્રતાથી બહાર નીકળી આવે છે.

પ્રશ્ન—( કણ્ઠરાઈણં મંતે ! કઈ નામધેજ્ઞા પળ્લતા ? ) હે ભદન્ત ! તે  
કૃષ્ણરાજિઓનાં કેટલાં નામ કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! અટ્ટ નામધેજ્ઞા પળ્લતા ) હે ગૌતમ ! તે કૃષ્ણરાજિ-  
ઓનાં આઠ નામ કહ્યાં છે—( તં જહા ) તે આઠ નામ નીચે પ્રમાણે છે—  
( કણ્ઠરાઈં ઇ વા ) (૧) તે કૃષ્ણરાજિઓ કાળાં વર્ણનાં પુદ્ગલોની રેખા રૂપ  
હોવાથી તેમનું પહેલું નામ “ કૃષ્ણરાજિ ” છે. (૨) ( મેઠરાઈં ઇ વા ) કૃષ્ણ  
મેઘોની રેખા જેવી હોવાને કારણે તેમને “ મેઘરાજિ ” પણ કહે છે. (૩)  
છઠ્ઠી નારકની પૃથ્વી જેવી અન્ધકારમય હોવાને લીધે તેનું ત્રીજું નામ (મઘા)

માયવતી રૂતિ યા, અત્યન્તાન્વકારાદૃતરયાન્ સપ્તમનારકપૃથિવોત્પદશઃપાત્ ' માય-  
વતી ' રૂતિ નામ ૪, વાતપરિધા રૂતિ યા, વાત્યાવન્ બ્રમ્હાસમપત્તવાત્ દુર્લ્લ-  
ધ્યત્વાન્વ ' વાતપરિધા ' રૂતિ નામ ૫, -વાતપરિક્ષોભા રૂતિ યા, વાત્યાવદેવાન્વ-  
કારાદૃતરયાત્ પરિક્ષોભદેહુત્વાન્વવાતપરિક્ષોભા રૂતિ નામ ૬, ' દેવપરિધા ' રૂતિ યા,  
દેવાનામ્ અર્ગલેવ દુર્લ્લધ્યત્વાત્ ' દેવપરિધા ' રૂતિ નામ ૭, દેવપરિક્ષોભા રૂતિ યા દેવાનાં

એસા છે । ( મધા ) યહ છટવેં નરક કા નામ છે । ( માયવી ) યહ સસમ  
નરક કા નામ છે-સો સસમ નરક જેસા ગાઢ અંધકાર સે આદૃત રહતા  
છે ડસી પ્રકાર યે કૃષ્ણરાજિયાં ભી અત્યન્ત-ગાઢ-અન્ધકાર સે આદૃત  
રહતી હેં અતઃ ઇનકા ચોથા નામ ( માધવર્હૈ વા ) એસા છે । ( વાયકલિહાઈ  
વા ) જેસે વધૂરા ( આંધી ) અન્ધકારમય હોતા છે ઓર દુર્લ્લધ્ય હોતા છે-  
ડસી પ્રકાર સે યે કૃષ્ણરાજિયાં ભી હેં-અતઃ ડસકે સાદૃશ્ય સે ઇનકા  
ભી પાંચવાં નામ ( વાતપરિધા ) એસા છે । ( વાયપલિક્ષોભાઈ વા ) તથા  
વાત્યા-વધૂરે કી તરહ હી અન્ધકાર સે આદૃત હોને કે કારણ ઓર  
પરિક્ષોભ કી હેતુભૂત હોને કે કારણ ઇનકા ૬ વાં નામ ( વાતપરિક્ષોભા )  
એસા છે । ( દેવકલિહાઈ વા ) દેવોં કે લિયે યે અર્ગલા કી તરહ દુર્લ્લધ્ય  
હોતી હેં-હસ કારણ ઇનકા ૭ વાં નામ દેવ-પરિધા એસા છે । ( દેવપલિ-  
ક્ષોભાઈ વા ) દેવોં કે લિયે પરિક્ષોભ કી કારણ હોને સે ઇનકા ૮ વાં  
નામ ( દેવપરિક્ષોભા ) એસા છે । હસ તરહ યે ઇનકે આઠ સાર્થક નામ હેં ।

( મધા ) છે. (૪) ( માયવી ) આ સાતમી નરકનું નામ છે. જેમ સાતમી  
નરક અતિશય ગાઢ અંધકારથી છવાયેલી છે, તેમ આ કૃષ્ણરાજિઓ પણ ગાઢ  
અંધકારથી આચ્છાદિત હોય છે, તેથી તેનું ચોથું નામ ( માધવર્હૈ વા ) ' માયવી '  
છે. (૫) ( વાયકલિહાઈ વા ) જેવી રીતે વધૂરા ( વંટાળિયો ) અંધકારમય  
અને દુર્લ્લધ્ય ( જેને પાર જણુ સુસ્કેલ થઈ પડે એવો ) હોય છે, તેમ કૃષ્ણરાજિઓ  
પણ અંધકારમય અને દુર્લ્લધ્ય હોય છે. તે કારણે તેમનું પાંચમું નામ  
" વાતપરિધા " છે. (૬) ( વાયપલિક્ષોભાઈ વા ) તથા વધૂરાની જેમ અંધ-  
કારથી વીંટળાયેલ હોવાને કારણે પરિક્ષોભની જનક હોવાને લીધે તેમને  
" વાતપરિક્ષોભા " પણ કહે છે. ( દેવકલિહાઈ વા ) તે દેવાને માટે અર્ગલા  
ની જેમ દુર્લ્લધ્ય હોવાને કારણે તેનું સાતમું નામ " દેવપરિધા " છે. (૮)  
( દેવપલિક્ષોભાઈ વા ) દેવોમાં પણ પરિક્ષોભ ઉત્પન્ન કરનારી હોવાથી તેનું  
આઠમું નામ " દેવ પરિક્ષોભા " છે. આ રીતે તેના આઠ સાર્થક  
( અર્થ પ્રમાણે જ ) નામ છે.

પરિભોમહેતુત્વાત્ 'દેવપરિભોમા' इति नाम ८, इत्यष्टौ नामानि भवन्ति । गौतमः पृच्छति—' कण्हराईओ णं भंते ! किं पुढवीपरिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीव परिणामाओ, पोग्गलपरिणामाओ ? ' हे भदन्त ! कृष्णराजयः खलु किम् पृथिवी-परिणामाः ? अथवा अप्परिणामाः ? जलपरिणामाः ? उताहो जीवपरिणामाः ? अथवा पुद्गलपरिणामाः भवन्ति ? भगवानाह—'गोयमा ! पुढवीपरिणामाओ, हे' गौतम ! कृष्णराजयः पृथिवीपरिणामाः सन्ति, एवम् 'जीवपरिणामाओ वि' जीव-परिणामाः अपि सन्ति, तथा ' पोग्गलपरिणामाओ वि, पुद्गलपरिणामाः अपि सन्ति, किन्तु ' णो आउपरिणामाओ ' नो अप्परिणामाः कृष्णराजयो भवन्ति । गौतमः पृच्छति—' कण्हराईसु णं भंते ! सव्वे पाणा, भूया, जीवा, सत्ता उववण्ण-पुव्वा ! ' हे भदन्त ! कृष्णराजिषु सर्वे प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः, किम्

अव गौतमस्वामी पूछते हैं कि—( कण्हराईओ णं भंते ! किं पुढवी परिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीवपरिणामाओ, पोग्गलपरिणामाओ ) हे भदन्त ! ये कृष्णराजियां किस के परिणामरूप हैं—क्या पृथिवी के ये परिणामरूप हैं ? या जलके परिणामरूप हैं ? या जीव के परिणामरूप हैं ? या पुद्गल के परिणामरूप हैं ? इसके उत्तर में प्रभु उनसे कहते हैं—( गोयमा ) हे गौतम ! ( पुढविपरिणामाओ ) ये कृष्णराजियां पृथिवी के परिणामरूप हैं, ( जीवपरिणामाओ वि ) जीव के परिणामरूप भी हैं । तथा ( पोग्गलपरिणामाओ वि ) पुद्गल के परिणामरूप भी हैं । परन्तु ये कृष्णराजियां ( णो आउपरिणामाओ ) जलके परिणामरूप नहीं हैं । अव गौतमस्वामी प्रभु से ऐसा पूछते हैं कि—( कण्हराईसु णं भंते ! सव्वे पाणा, भूया, जीवा, सत्ता, उववण्णपुव्वा ) हे भदन्त ! इन कृष्णराजियां

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન કરે છે કે ( કણ્ઠરાઈઓ ણં ભંતે ! કિં પુઢવી પરિણામાઓ, આઉ પરિણામાઓ, જીવ પરિણામાઓ, પોગ્ગલ પરિણામાઓ ? ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓ કેના પરિણામ રૂપ છે—શું તેઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે ? કે જળના પરિણામ રૂપ છે ? કે જીવના પરિણામ રૂપ છે ? કે પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે ( ગોયમા ! હે ગૌતમ ! ( પુઢવિ પરિણામાઓ ) તે કૃષ્ણરાજિઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે, ( જીવ પરિણામાઓ વિ ) જીવના પરિણામ રૂપ છે, ( પોગ્ગલપરિણામાઓ વિ ) અને પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ પણ છે, પરન્તુ તેઓ ( આઉ પરિણામાઓ ) જળના પરિણામ રૂપ નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ( કણ્ઠરાઈસુ ણં



ઉપપન્નપૂર્વાઃ ? પૂર્વમુત્પન્નાઃ ? મગધાનાદિ—‘ હંતા, ગોયમા ! અસદં, અદુવા અણંત-  
ક્ષુત્તો ’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિપુ સર્વે પ્રાણાદયો જીવાઃ પ્રકૃત્ ભૂયો ભૂયઃ,  
અથવા અનન્તકૃત્વઃ અનન્તવારાન્ પૂર્વમ્ ઉત્પન્નાઃ ‘ જો ચેવ જં વાયરભાઉકાઇય-  
ત્તાણ, વાયરભગનિકાઇયત્તાણ વા, વાયરવણસ્સઇકાઇયત્તાણ વા ’ કિન્તુ જો ચેવ  
સલ્લુ વાદરાખ્કાધિકતયા, નો વા વાદરાગ્નિકાધિકતયા, નૈવ વા વાદરવનસ્પતિ-  
કાધિકતયા, તે પ્રાણાદયઃ પૂર્વમ્ ઉત્પન્નાઃ ઉત્પન્નં, ઉત્પત્ત્યન્ને વા તેવાં તથા  
સ્વસ્થાનત્યાભાવાત્ । ઇતિ ॥ સૂ. ૨ ॥

લોકાન્તિકદેવવક્તવ્યતા ।

કૃષ્ણરાજિપસ્તાવાત્ તન્નિકૃત્વર્તિલોકાન્તિક દેવવિમાનાદિવક્તવ્યતામાહ—  
‘ એસિણં મંતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એસિ જં અટ્ટપહં કપ્પહાર્દિણં અટ્ટસુ ઉવાસંતરેસુ  
અટ્ટ લોગંતિયવિમાણાપણત્તા, તંજહા—અચ્ચી?, અચ્ચિમાલી?,

મેં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત સત્ત્વ કયા પહિલે  
ઉત્પન્ન હો ચુકે હે ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હું કે—(હંતા ગોયમા ! અસદં,  
અદુવા અણંતક્ષુત્તો’ હાં, ગૌતમ ! અનેક વાર અથવા અનન્તવાર સમ-  
સ્તપ્રાણ આદિજીવ વહાં પૂર્વ મેં ઉત્પન્ન હો ચુકે હું । ( જો ચેવ જં વાયર  
આઉકાઇયત્તાણ, વાયરઆગનિકાઇયત્તાણ વા, વાયરવણસ્સઇકાઇય-  
ત્તાણ વા ) પરન્તુ જે વહાં વાદર અપ્કાધિક રૂપ સે વાદર અગ્નિકાધિક  
રૂપ સે ઓર વાદર વનસ્પતિકાધિક રૂપ સે ન પહિલે ઉત્પન્ન હુએ હે,  
ન ઉત્પન્ન હોતે હે ઓર ન ઉત્પન્ન હોંગે । કયોં કે ઉનકા વહાં પર  
સ્વસ્થાન નહીં હે ॥ સૂ. ૨ ॥

મંતે ! સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવા સત્તા ઉવરણ્ણા પુવ્વા ? ) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણ-  
રાજિઓમાં શું સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ  
પૂર્વે ( પહેલાં ) ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે ?

ઉત્તર—( હંતા, ગોયમા ! અસદં અદુવા અણંતક્ષુત્તો વા ) હા, ગૌતમ !  
સમસ્ત પ્રાણ આદિ જીવો અનેકવાર અથવા અનંતવાર તેમાં ઉત્પન્ન થઈ  
ચુક્યાં છે. ( જો ચેવ જં વાયર આઉકાઇયત્તાણ, વાયર અગ્નિકાઇયત્તાણ વા,  
વાયરવણસ્સઇકાઇયત્તાણ વા ) પરન્તુ તેઓ ત્યાં જાદર અપ્કાધિક રૂપે જાદર  
અગ્નિકાધિક રૂપે અને જાદર વનસ્પતિકાધિક રૂપે પહેલાં કદી પણ ઉત્પન્ન થયાં  
નથી, ઉત્પન્ન થતાં નથી અને ઉત્પન્ન થશે પણ નહીં, કારણ કે ત્યાં તેમનું  
સ્વસ્થાન નથી. ॥ સૂ. ૨ ॥



वइरोयणे३, पभंकरे४, चंदाभे५, सूराम्भे६, सुक्काभे७, सुपइट्टाभे८,  
मज्झे रिट्ठाभे । कहि णं भंते ! अच्ची-विमाणे पण्णत्ते ? गोयमा !  
उत्तर-पुरत्थिमेणं । कहि णं भंते ! अच्चिमाली विमाणे पण्णत्ते ?  
गोयमा ! पुरत्थिमेणं । एवं परिवाडीए णेयव्वं, जाव--कहि णं  
भंते ! रिट्ठे विमाणे पण्णत्ते ? गोयमा ! बहुमज्झदेसभाए ।  
एएसु णं अट्टसु लोगंतियविमाणेसु अट्ठविहां लोगंतिया देवा  
परिवसंति, तं जहा—

“ सारस्सयमाइच्चा, वण्ही वरुणा य गदतो या य ।

तुसिया अव्वा वाहा, अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य ॥ १ ॥ ”

कहि णं भंते ! सारस्सया देवा परिवसंति ? गोयमा !  
अच्चिम्मि विमाणे परिवसंति । कहिणं भंते ! आइच्चा देवा  
परिवसंति ? गोयमा ! अच्चिमालिम्मि विमाणे । एवं णेयव्वं  
जहाऽऽणुपुव्वीए, जाव--कहि णं भंते ! रिट्ठा देवा परिवसंति ?  
गोयमा ! रिट्ठिम्मि विमाणे । सारस्सयमाइच्चाणं भंते ! देवाणं  
कइ देवा, कइ देवसया परिवारे पण्णत्ते ? गोयमा ! सत्त-देवा,  
सत्तदेवसया परिवारे पण्णत्ते । वण्हि-वरुणाणं देवाणं चउइस-  
देवा, चउइस देवसहस्सा परिवारे पण्णत्ते । गदतोय-तुसियाणं  
देवाणं सत्तदेवा, सत्तदेवसहस्सा परिवारे पण्णत्ते । अवसेसाणं  
नव देवा, नव देवसया परिवारे पण्णत्ते ।

“ पढम-जुयलम्मि सत्त उ सयाणि, ब्रीयम्मि चउइस सहस्सा ।

तइए सत्त सहस्सा, नव चेव सयाणि सेसेसु ॥ १ ॥ ”

તથા—“ સારસ્વતા ૧-ઽઽદિત્યા ૨ વહ્નિ ૩ વરુણાધ ૪ ગર્દતોયાધ ૫ ।

તુષિતા, ૬ અઘ્યાયાધ, ૭ આગ્નેયાધ ૮ રિષ્ટાધ ૯ ” ॥ ૧ ॥

કુત્ર સ્થલુ ભદન્ત । સારસ્વતાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિષિ વિમાને-  
પરિવસન્તિ । કુત્ર સ્થલુ ભદન્ત । આદિત્યા દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિ-  
માલૌ વિમાને, એવં શાતવ્યં અપાઽઽનુપૂર્વાં યાવત્-કુત્ર સ્થલુ ભદન્ત । રિષ્ટાઃ

(તં જહા) उन लोकान्तिक देवोंके नाम इस प्रकार से हैं—(सारस्वतमाह-  
च्चा) इत्यादि सारस्वत, आदित्य, वह्नि, वरुण, गर्दतो य, तुषित अघ्या-  
याध आग्नेय और इनके बीच में रिष्ट देव । (कहि णं भंते ! सारस्वत्या  
देवा परिवसन्ति) हे भदन्त ! सारस्वत देव कहाँ पर रहते हैं ? (गोयमा)  
हे गौतम ! (अच्चिम्मि विमाणे परिवसन्ति) अर्चिर्नामके विमानमें सार-  
स्वत देव रहते हैं । (कहि णं भंते आहृचा देवा परिवसन्ति) हे भदन्त !  
आदित्य देव कहाँ पर रहते हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (अच्चिम्मालिम्मि  
विमाणे) अर्चिमाली नामके विमान में आदित्य देव रहते हैं । (एवं  
णेयव्वं जहाऽणुपुव्वीए) इसी तरह से यानुपूर्वी रिष्ट विमान तक  
जानना चाहिये । (जाव-कहि णं भंते ! रिष्टा परिवसन्ति) हे भदन्त !  
यावत् रिष्ट देव कहाँ पर रहते हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (रिद्धम्मि

આઠ પ્રકારનાં લોકાન્તિક દેવ રહે છે. (તં જહા) તે લોકાન્તિક દેવોનાં નામ  
આ પ્રમાણે છે—(સારસ્વતમાહૃચ્ચા વર્ણીયરુણા ય ગર્દતોયા ય, તુસિયા, અઘ્યાયાધા,  
અર્ચિચ્ચા ચેત્ત રિઠ્ઠા ય.) (૧) સારસ્વત, (૨) આદિત્ય, (૩) વહ્નિ (૪) વરુણ  
(૫) ગર્દતોય, (૬) તુષિત, (૭) અઘ્યાયાધ, (૮) આગ્નેય અને તે આઠ  
વિમાનોની વચ્ચેના વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ.

(કહિ ણં ભંતે ! સારસ્વત્યા દેવા પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! સારસ્વત  
દેવ ક્યાં રહે છે ? (ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસન્તિ)  
સારસ્વત દેવ અર્ચિ નામના વિમાનમાં રહે છે. (કહિ ણં ભંતે ! આહૃચ્ચા દેવા  
પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! આદિત્ય દેવ ક્યાં રહે છે ?

(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અચ્ચિમ્માલિમ્મિ વિમાણે) આદિત્ય દેવ  
અર્ચિમાલી વિમાનમાં રહે છે. (એવં ણેયવ્વં જહાઽણુપુવ્વીએ) એજ પ્રમાણે  
અનુક્રમે રિષ્ટ વિમાન પધન્ત સમજવું—એટલે કે વહ્નિદેવ વૈરોચન વિમાનમાં,  
વરુણ દેવ પ્રહર વિમાનમાં, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાલ વિમાનમાં, તુષિત દેવ  
સૂર્યાલ વિમાનમાં, અઘ્યાયાધ દેવ શુકાલ વિમાનમાં, અને આગ્નેય દેવ  
સુપ્રતિષ્ઠાલ વિમાનમાં વસે છે. (જાવ કહિ ણં ભંતે ! રિઠ્ઠા પરિ  
ભદન્ત ! રિષ્ટદેવ ક્યાં રહે છે ?

દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! રિષ્ટે વિમાને । સારસ્વતાદિત્યાનાં ભદન્ત ! દેવાનાં કતિ દેવાઃ, કતિ દેવશતાનિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ? ગૌતમ ! સપ્ત દેવાઃ, સપ્ત દેવશતાનિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, વહ્નિ-વરુણાનાં દેવાનાં ચતુર્દશદેવાઃ, ચતુર્દશદેવસહસ્રાણિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । ગર્દતોય-તુષિતાનાં દેવાનાં સપ્ત દેવાઃ, સપ્ત દેવસહસ્રાણિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । અવશેષાણાં નવ દેવશતાનિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ।

વિમાણે) રિષ્ટ વિમાનમેં રિષ્ટ દેવ રહેતે હેં । (સારસ્વતમાહચ્ચાળં મંતે) દેવાળં કદ્દ દેવા, કદ્દ દેવસયા પરિવારે પળ્લપ્તે) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ ઓર આદિત્ય દેવેં હન દો દેવોં કે કિતને દેવ હેં ? ઓર કિતને સૌ દેવોં કા હનકા પરિવાર હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સત્ત દેવા, સત્ત દેવસયા પરિવારે પળ્લપ્તે) સારસ્વત ઓર આદિત્ય હન દો દેવોં કે સાત દેવ હેં ઓર હનકા પરિવાર સાત સૌ દેવોં કા હે । (વહ્નિ વરુણાળં દેવાળં ચત્ત્વસ્રદેવા, ચત્ત્વસ્ર દેવસહસ્સા પરિવારે પળ્લપ્તે) વહ્નિ ઓર વરુણ હન દેવોં કે ચૌદહ દેવ હેં, ઓર હનકા પરિવાર ચૌદહ હજાર દેવોં કા હે । (ગર્દતોય-તુષિયાળં દેવાળં સત્તદેવા, સત્તદેવ-સહસ્સા પરિવારે પળ્લપ્તે-અવશેષાળં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્લપ્તે) ગર્દતોય ઓર તુષિત હનકે સાત દેવ હેં ઓર પરિવાર હનકા સાત હજાર દેવોં કા હે । વાકી કે દેવોં કે નૌ ૯ દેવ હેં ઓર હનકે પરિવાર મેં નૌ ૯ સૌ દેવ હેં । હન દેવોં કી પરિવાર સંખ્યા હી હસ ગાથા દ્વારા સૂચિત

(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (રિષ્ટિમિ વિમાણે) રિષ્ટ વિમાનમાં રિષ્ટદેવ વસે છે.

(સારસ્વતમાહચ્ચાળં મંતે) દેવાળં કદ્દ દેવા, કદ્દ દેવસયા પરિવારે પળ્લપ્તે ? ) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ અને આદિત્ય દેવ, એ બન્ને દેવોના આધિપત્યમાં કેટલા દેવો છે ? અને કેટલા સૌ દેવોનો તેમનો પરિવાર કલ્પો છે ?

(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (સત્તદેવા, સત્તદેવસયા પરિવારે) સારસ્વત અને આદિત્ય એ બન્ને દેવોના સાત દેવ છે, અને તેમનો પરિવાર ૭૦૦ દેવોનો છે. (વહ્નિ વરુણાળં દેવાળં ચત્ત્વસ્રદેવા, ચત્ત્વસ્રદેવસહસ્સા પરિવારે પળ્લપ્તે) વહ્નિ અને વરુણ, એ બન્ને દેવોના ૧૪ દેવ છે, અને ૧૪૦૦૦ દેવોનો તેમનો પરિવાર છે. (ગર્દતોય-તુષિયાળં દેવાળં સત્તદેવા, સત્તદેવ-સહસ્સા પરિવારે પળ્લપ્તે-અવશેષાળં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્લપ્તે) ગર્દતોય અને તુષિતના સાત દેવ છે, અને તેમનો પરિવાર ૭૦૦ દેવોનો કલ્પો છે. બાકીના નવ દેવ છે, અને તેમનો પરિવાર ૯૦૦ દેવોનો છે. તે દેવોના પરિવારની સંખ્યા જ આ ગાથામાં બતાવવામાં આવી છે.



તથા—“ સારસ્વતા ૧-આદિત્યા ૨ વરુણો ૩ વરુણાધ ૪ ગર્દતોયાધ ૫ ।

તુષિતા, ૬ અગ્ન્યાવાધા, ૭ આગ્નેયાધ ૮ રિષ્ટાધ ૯ ” ॥ ૧ ॥

કુત્ર સ્વલુ ભદન્ત ! સારસ્વતાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિષિ વિમાનેઃ પરિવસન્તિ । કુત્ર સ્વલુ ભદન્ત ! આદિત્યા દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિ-  
માલી વિમાને, એવં જ્ઞાતવ્યં અથાઽઽનુપૂર્વા યાવત્-કુત્ર સ્વલુ ભદન્ત ! રિષ્ટાઃ

(તં જહા) ઉન લોકાન્તિક દેવોકે નામ હસ પ્રકાર સે હે—(સારસ્વતમાઈ-  
ચ્ચા) इत्यादि सारस्वत, आदित्य, वह्नि, वरुण, गर्दतो य, तुषित अग्न्या-  
वाध आग्नेय और इनके बीच में रिष्ट देव । (कहि णं भंते ! सारस्वत्या  
देवा परिवसन्ति) हे भदन्त ! सारस्वत देव कहाँ पर रहते हैं ? (गोयमा)  
हे गौतम ! (अच्चिम्मि विमाणे परिवसन्ति) अर्चिर्नामके विमानमें सार-  
स्वत देव रहते हैं । (कहि णं भंते आइच्छा देवा परिवसन्ति) हे भदन्त !  
आदित्य देव कहाँ पर रहते हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (अच्चिमालिम्मि  
विमाणे) अर्चिमाली नामके विमान में आदित्य देव रहते हैं । (एवं  
णेयव्वं जहाऽणुपुव्वीए) इसी तरह से यथानुपूर्वी रिष्ट विमान तक  
जानना चाहिये । (जाव-कहि णं भंते ! रिष्टा परिवसन्ति) हे भदन्त !  
यावत् रिष्ट देव कहाँ पर रहते हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (रिद्धम्मि

આઠ પ્રકારનાં લોકાન્તિક દેવ રહે છે. (તં જહા) તે લોકાન્તિક દેવોનાં નામ  
આ પ્રમાણે છે—(સારસ્વતમાઈચ્ચા વર્ણીવરુણા ય ગર્દતોયા ય, તુસિયા, અગ્ન્યાવાધા,  
અગ્નિચ્ચા ચેત્ રિષ્ટા ય) (૧) સારસ્વત, (૨) આદિત્ય, (૩) વહ્નિ (૪) વરુણ  
(૫) ગર્દતોય, (૬) તુષિત, (૭) અગ્ન્યાવાધ, (૮) આગ્નેય અને તે આઠ  
વિમાનોની વચ્ચેના વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ.

(કહિ ણં ભંતે ! સારસ્વત્યા દેવા પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! સારસ્વત  
દેવ ક્યાં રહે છે ? (ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસન્તિ)  
સારસ્વત દેવ અર્ચિ નામના વિમાનમાં રહે છે. (કહિ ણં ભંતે ! આઈચ્ચા દેવા  
પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! આદિત્ય દેવ ક્યાં રહે છે ?

(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે) આદિત્ય દેવ  
અર્ચિમાલી વિમાનમાં રહે છે. (એવં ણેયવ્વં જહાઽણુપુવ્વીએ) એજ પ્રમાણે  
અનુક્રમે રિષ્ટ વિમાન પર્થન્તે સમજવું—એટલે કે વહ્નિદેવ વૈરોચન વિમાનમાં,  
વરુણ દેવ પ્રહર વિમાનમાં, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાલ વિમાનમાં, તુષિત દેવ  
સૂર્યોલ વિમાનમાં, અગ્ન્યાવાધ દેવ શુકાલ વિમાનમાં, અને આગ્નેય દેવ  
સુપ્રતિષ્ઠાલ વિમાનમાં વસે છે. (જાવ કહિ ણં ભંતે ! રિષ્ટા પરિવસન્તિ  
ભદન્ત ! રિષ્ટદેવ ક્યાં રહે છે ?



નેપુ । લોકાન્તિકવિમાનેપુ સ્વલુ ભદન્ત ! કિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા ?  
ગૌતમ ! અષ્ટ સાગરોપમાણિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા । લોકાન્તિકવિમાનેભ્યો ભદન્ત !  
કિયત્કમ્ અવાધયા લોકાન્તઃ પ્રજ્ઞન્તઃ ? ગૌતમ ! અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ  
અવાધયા લોકાન્તઃ પ્રજ્ઞન્તઃ, તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

॥ પૃથક્કે પચ્ચમો શ્લોકઃ સમાપ્તઃ ॥ ૬-૫ ॥

લોગંતિયવિમાણેસુ ' યાવત્ હાં ગૌતમ ! અનેક ચાર અથવા અનન્તચારં  
પહિલે જીવ ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં-પરન્તુ યહાં પર-લોકાન્તિક વિમાનોં મેં  
જીવ અનેકચાર અથવા અનન્ત ચાર દેવરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુએ હૈં ।  
' લોગંતિયવિમાણેસુ ણં ભંતે ! કેવદ્દયં કાલં ઠિઈ પળ્લન્તા ' હે ભદન્ત !  
લોકાન્તિક વિમાનોં મેં કિતની સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ ? ' ગોયમા ! અઠ્ઠ-  
સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લન્તા ' હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોં મેં આઠ  
સાગરોપમ કી સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ । ' લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં ભંતે !  
કેવદ્દયં અવાહાણ લોગંતે પળ્લન્તે ' હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોં સે  
કિતની દૂર લોકાન્ત કહા ગયા હૈ ? ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક  
વિમાનોં સે ' અસંખેજ્ઞાઈં જોયણસહસ્સાઈં અવાહાણ લોગંતે પળ્લન્તે '  
અસંખ્યાત હજાર યોજન દૂર લોકાન્ત કહા ગયા હૈ । ' સેવં ભંતે ! સેવં  
ભંતે ! ત્તિ ' હે ભદન્ત ! જૈસા આપને યહ કહા હૈ વહ એસા હી હૈ હે  
ભદન્ત ! જૈસા આપને કહા હૈ વહ એસા હી હૈ । ઇતિ ।

કસુલ્લો-ળો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિય વિમાણેસુ ) આ વક્તવ્યતા " હા ગૌતમ !  
અનેકવાર અથવા અનંતવાર પહેલાં જીવો અહીં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે, પરન્તુ  
અહીં ( લોકાન્તિક વિમાનોમાં ) જીવ અનેકવાર અથવા અનંતવાર દેવરૂપે  
ઉત્પન્ન થયા નથી, " ત્યાં સુધીનું શ્રવણ કરવું.

( લોગંતિય વિમાણેસુ ણં ભંતે ! કેવદ્દયં કાલં ઠિઈ પળ્લન્તા ? ) હે ભદન્ત !  
લોકાન્તિક વિમાનોના દેવોની સ્થિતિ કેટલા કાળની કહી છે ? ( ગોયમા ! અઠ્ઠ  
સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લન્તા ) હે ગૌતમ ! ત્યાં આઠસાગરોપમની સ્થિતિ કહી  
છે. ( લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં ભંતે ! કેવદ્દયં અવાહાણ લોગંતે પળ્લન્તે ? )  
હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોથી કેટલે દૂર ( અંતરે ) લોકાન્ત કહ્યો છે ?  
( ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોથી ( અસંખેજ્ઞાઈં જોયણ-  
સહસ્સાઈં અવાહાણ લોગંતે પળ્લન્તે ) અસંખ્યાત હજાર યોજન દૂર લોકાન્ત  
કહ્યો છે. ( સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ ) હે ભદન્ત ! આપની વાત સાચી છે.  
હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ છે. એમ કહીને વંદણા નમસ્કાર કરીને  
ગૌતમ સ્વામી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

“ પ્રથમયુગલે સપ્ત તુ ગતાનિ, દ્વિતીયે ચતુર્દશ સદસ્યાણિ ।

તૃતીયે સપ્ત સદસ્યાણિ નવચૈવ ગતાનિ શેષેષુ ॥ ૧ ॥ ”

લોકાન્તિકવિમાનાનિ ત્વતુ ભદન્ત ! કિમ્પતિષ્ઠિતાનિ પ્રપ્તાનિ ? ગૌતમ !  
વાયુપતિષ્ઠિતાનિ પ્રપ્તાનિ, एवं शतव्यम् विमानानां प्रतिष्ठानम् बाहुल्योच्चतमेव  
संस्थानम्, ब्रह्मलोकव्यक्तव्यता शतव्या, यथा जीवाभिगमे देवोद्देशके यावत्-  
हन्त, गौतम ! असकृत्, अथवाऽनन्तकृतरः, नो चैव देवतया लोकान्तिकविमा-

ની ગઈ છે-(પદ્મ જુગલમ્મિ સત્ત ઓ સયાણિ, વીયમ્મિ ચત્તસસહસ્સા,  
તદ્દે સત્તસહસ્સા નવ ચૈવ સયાણિ સેસેસુ) પ્રથમયુગલ મેં સાતસો  
દેવોંં કા પરિવાર છે, દ્વિતીયયુગલ મેં ૧૪ હજાર દેવોંંં કા પરિવાર છે ।  
તૃતીય યુગલ મેં સાત હજાર દેવોંંં કા પરિવાર છે । બાકી કે દેવોંંં મેં નો  
૯ સો દેવોંંં કા પરિવાર છે ।

(લોગંતિય વિમાણા ણં મંતે । કિં પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા ) છે ભદન્ત !  
લોકાન્તિક દેવોંંકે વિમાનોંંકા કયા આધાર છે ? અર્થાત્ લોકાન્તિક દેવોંં  
કે વિમાન કિસકે આધાર પર હેં ? (ગોયમા) છે ગૌતમ ! (વાત્પદ્ધિયા  
પળ્લણ્ણા) લોકાન્તિક દેવોંંં કે વિમાન વાયુ કે આધાર પર હેં । (એવં  
પેયવ્વં વિમાણાણપદ્ધાણં) હસ પ્રકાર સે વિમાનોંં કા પ્રતિષ્ઠાન જાનના  
ચાહિયે । (બાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં, વંમલોયવત્તવ્વયા પેયવ્વા-જહા  
જીવાભિગમે દેવુદ્દેસણ) વિમાનોંં કા વાહુલ્ય, ઇનકી ઊંચાઈ તથા ઇનકા  
સંસ્થાન-આકાર જિસ પ્રકાર સે બ્રહ્મલોક કી વ્યક્તવ્યતા જીવાભિગમ  
સૂત્ર મેં જીવ ઉદ્દેશ મેં કહી ગઈ છે ઓસી પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે ।  
(જાવ હંતા ગોયમા ! અસંદ્ધ અદુવા અણંતદુક્ખુત્તો-ણો ચૈવ ણં દેવત્તાણ

(પદ્મ જુગલમ્મિ સત્ત ઓ સયાણિ, વીયમ્મિ ચત્તસસહસ્સા, તદ્દે સત્ત-  
સહસ્સા નવચૈવ સયાણિ સેસેસુ) પહેલા યુગલમાં (બેના સમૂહમાં) સાતસો  
દેવોને, બીજા યુગલમાં ચૌદ હજાર દેવોને, ત્રીજા યુગલમાં સાત હજાર દેવોને  
અને બાકીનામાં નવસો દેવોને પરિવાર છે.

(લોગંતિય વિમાણા ણં મંતે । કિં પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા ? ) છે ભદન્ત !  
લોકાન્તિક દેવોનાં વિમાન કેના આધારે રહેલાં છે ?

(ગોયમા ! ) છે ગૌતમ ! (વાત્પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા) લોકાન્તિક દેવોનાં  
વિમાનો વાયુના આધારે રહેલાં છે. (એવં પેયવ્વં વિમાણાણપદ્ધાણં) આ  
પ્રમાણે તેમના પ્રતિષ્ઠાન (આધારે) ના વિષે સમજવું. (બાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ  
સંઠાણં, વંમલોયવત્તવ્વયા પેયવ્વા-જહા જીવાભિગમે દેવુદ્દેસણ) વિમાનોની  
વિશાળતા, ઊંચાઈ અને આકાર, બ્રહ્મલોકની અવાભિગમ સૂત્રના ઉપદેશકમાં  
કહેલી વ્યક્તવ્યતા પ્રમાણે સમજવા. (જાવ હંતા ગોયમા ! અસંદ્ધ અ

રિષ્ટાભઃ । તત્ર ઉત્તરપૂર્વવર્તિન્યોઃ કૃષ્ણરાજ્યોરભ્યન્તરે પ્રથમમ્ અર્ચિનામકં વિમાનં  
પ્રથમમ્ ૧, પૂર્વવર્તિન્યોસ્તયોર્વાહ્યમધ્યે દ્વિતીયમ્ અર્ચિર્માલિનામકં વિમાનમ્ ૨,  
પૂર્વદક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોરભ્યન્તરે તૃતીયં વૈરોચનનામકં વિમાનમ્ ૩, દક્ષિણવર્તિન્યો-  
સ્તયોર્મધ્યે વહિઃપત્યુર્થ પ્રભંકરનામકં વિમાનમ્ ૪, દક્ષિણ-પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોરભ્ય-  
ન્તરે પશ્ચમં ચન્દ્રાભનામકં વિમાનમ્ ૫, પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિઃ પઠું સૂર્યા-

હુઈ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પ્રથમ અર્ચિનામ કા વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા  
મેં રહી હુઈ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં દ્વિતીય  
અર્ચિમાલિ નામ કા-વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કી કૃષ્ણ  
રાજિયોં કે વીચ મેં તૈસરા વૈરોચન નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણદિશા  
મેં રહી હુઈ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં ચૌથા પ્રભંકર નામકા વિમાન હૈ ।  
દક્ષિણ ઓર પશ્ચિમ કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પાંચવાં ચન્દ્રાભ નામ  
કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમદિશા કી દો કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચમેં વાહિર કી  
ઓર છઠા સૂર્યાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમ ઓર ઉત્તર કી કૃષ્ણ-  
રાજિયોં કે વીચ મેં સાતવાં શુક્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । તથા ઉત્તર-  
દિશા કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં આઠવાં સુપ્રતિષ્ઠાભ નામકા વિમાન  
હૈ । ઓર સર્વ કે ખીતર રિષ્ટાભ નામકા નૌધાં વિમાન હૈ । યહાં  
પર એસી આશંકા નહીં કરની ચાહિયે કિ “ યહાં તો દો દો કૃષ્ણરા-  
જિયોં કે વીચ મેં અર્ચિ આદિ આઠ વિમાનોં કી વક્તવ્યતા કો કથન

(૩) વૈરોચન, ( પ્રભંકર ) (૪) પ્રભંકર, ( ચંદ્રાભ ) (૫) ચન્દ્રાભ, ( સુર્યાભ )  
(૬) સૂર્યાભ ( શુક્રાભ ) (૭) શુક્રાભ, ( સુપ્રતિષ્ઠાભ ) અને (૮) સુપ્રતિષ્ઠાભ. તે  
આઠેની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું વિમાન છે. ઉત્તર દિશા અને પૂર્વ દિશામાં રહેલી  
કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પહેલું અર્ચિ નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશામાં રહેલી  
વાહ્ય ( બહારની ) અને આભ્યન્તર ( અંદરની ) કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે બીજું  
અર્ચિમાલી નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશા અને દક્ષિણ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની  
વચ્ચે ત્રીજું વૈરોચન નામનું વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની વાહ્ય અને આભ્યન્તર  
કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ચોથું પ્રભંકર વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની અને પશ્ચિમ  
દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પાંચમું ચન્દ્રાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ  
દિશાની વાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે છઠ્ઠું સૂર્યાભ નામનું  
વિમાન છે. પશ્ચિમ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચેની, કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે સાતમું  
શુક્રાભ નામનું વિમાન છે. અને ઉત્તર દિશાની વાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણ-  
રાજિઓની વચ્ચે આઠમું સુપ્રતિષ્ઠાભ નામનું વિમાન છે. અને તે બધાંની વચ્ચે  
રિષ્ટાભ નામનું નવમું વિમાન છે.

અહીં એવી આશંકા કરવી જોઈએ નહીં કે “ અહીં તો બે, બે કૃષ્ણ-  
રાજિઓની વચ્ચે રહેલાં અર્ચિ આદિ આઠ વિમાનોની વક્તવ્યતા ચાલી રહી



टीका-एरसिणं अट्टण्हं कण्हराईणं अट्टसु उवासंतरेसु भट्ट लोगतियविमाना पण्णत्ता एतासां खलु पूर्ववर्णितानाम् अट्टानां कण्हराजीनाम् अट्टसु अवकाशान्तरेषु द्वयोरन्तरं मध्यम् अवकाशान्तरं तेषु इत्यर्थः, भट्ट लोकान्तिकविमानानि लोकस्य पञ्चम-ब्रह्मलोकस्य अन्ते समीपे भवानि लोकान्तिकानि, तानि च तानि विमानानि चेति लोकान्तिकविमानानि । अथवा लोकान्तिकाः तज्जातीयादेवास्तेषां विमाना-नीति लोकान्तिकविमानानि प्रशप्तानि । तान्येवाह—‘तं जहा’-तयथा-‘अच्चो १, अच्चिमाली २, वइरोयणे ३, पभंकरे ४, चंद्राभे ५, सुराभे ६, सुक्काभे ७, सुपइट्ठाभे, मज्जे रिट्ठाभे’ अर्चिः १, -अर्चिमाळिः २, -वैरोचनः ३, -प्रभंकरः ४, -चन्द्राभः ५, -सूर्याभः ६, -शुक्राभः ७, -सुप्रतिष्ठाभः ८, मज्जे

टीकार्थ-कृष्णराजी के प्रस्तावसे उसके समीपवर्ती लोकान्तिक देवों के विमान आदि की वर्तव्यता को इस सूत्र द्वारा सूत्रकार कह रहे हैं कि-‘एरसिणं अट्टण्हं कण्हराईणं अट्टसु उवासंतरेसु अट्टलोगतिय विमाना पण्णत्ता’ इन आठ कृष्णराजियों के आठ अवकाशान्तरों में अर्थात् दो दो कृष्णराजियों के बीच में-आठ लोकान्तिक विमान कहे गये हैं । ये लोकान्तिक विमान इसलिये कहलाते हैं कि ये पञ्चम ब्रह्म-लोक के अन्त-समीप में हैं । अथवा-लोकान्तिक देवों के ये विमान हैं इसलिये इन्हें लोकान्तिक कहा गया है । ‘तं जहा’ इनके नाम इस प्रकार से हैं-‘अच्चो १, अच्चिमाली २, वइरोयणे ३, पभंकरे ४, चंद्राभे ५, सुराभे ६, सुक्काभे ७, सुपइट्ठाभे ८ मज्जे रिट्ठाभे’ अर्चि १, अर्चि-माली २, वैरोचन ३, प्रभंकर ४, चन्द्राभ ५, सूर्याभ ६, शुक्राभ ७, सुप्रतिष्ठाभ ८ और बीच में रिट्ठाभ । उत्तरदिशा और पूर्वदिशा में रही

टीकार्थ-कृष्णराजियोनी समीपमां रडेवां लोकान्तिक विमानोनुं सूत्रकार आ सूत्रमां निरूपयु करे छे-(एरसिणं अट्टण्हं कण्हराईणं अट्टसु उवासंतरेसु अट्ट लोगतिय विमाना पण्णत्ता) ते आठ कृष्णराजियोनां आठ अवकाशान्त-रोमां (‘जे, जे’ कृष्णराजियोनी वरये) आठ लोकान्तिक विमानो कइयां छे- तेभने लोकान्तिक विमान कडेवानुं करेयु ओं छे के तेओ अहलोक नामनां पांचमां देवलोकना अन्त भागमां (समीपमां) छे, अथवा लोकान्तिक देवोनां ते विमानो डोवाथी तेभने लोकान्तिक विमानो कइयां छे, (‘तं जहा’) ते आठ लोकान्तिक विमानोनां नाम नीचे प्रमाणे छे—

(अच्चो) (१) अर्चि, (अच्चिमाली) (२) अर्चिमाली, (वइरोयणे)



રિષ્ટાભઃ । તત્ર ઉત્તરપૂર્વવર્તિન્યોઃ કૃષ્ણરાજ્યોરભ્યન્તરે પ્રથમમ્ અર્ચિનામકં વિમાનં પ્રપ્તમ્ ૧, પૂર્વવર્તિન્યોસ્તયોર્વાહ્યમધ્યે દ્વિતીયમ્ અર્ચિર્માલિનામકં વિમાનમ્ ૨, પૂર્વદક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોરભ્યન્તરે તૃતીયં વૈરોચનનામકં વિમાનમ્ ૩, દક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિશ્ચતુર્થં પ્રમદ્ધરનામકં વિમાનમ્ ૪, દક્ષિણ-પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોરભ્યન્તરે પશ્ચમં ચન્દ્રાભનામકં વિમાનમ્ ૫, પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિઃ પઠં સૂર્યા-

હુઈ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પ્રથમ અર્ચિનામ કા વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા મેં રહી હુઈ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં દ્વિતીય અર્ચિમાલિ નામ કા-વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કી કૃષ્ણ રાજિયોં કે વીચ મેં તીસરા વૈરોચન નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણદિશા મેં રહી હુઈ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં ચૌથા પ્રમદ્ધર નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણ ઓર પશ્ચિમ કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પાંચવાં ચન્દ્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમદિશા કી દો કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચમેં વાહિર કી ઓર છઠા સૂર્યાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમ ઓર ઉત્તર કી કૃષ્ણ-રાજિયોં કે વીચ મેં સાતવાં શુક્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । તથા ઉત્તર-દિશા કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં આઠવાં સુપ્રતિષ્ઠાભ નામકા વિમાન હૈ । ઓર સર્વ કે ભીતર રિષ્ટાભ નામકા નૌઘાં વિમાન હૈ । યહાં પર એસી આશંકા નહીં કરની चाहिये कि “ यहाँ तो दो दो कृष्णरा-जियों के बीच में अर्चि आदि आठ विमानों की वक्तव्यता को कथन

(૩) વૈરોચન, ( પ્રમદ્ધર ) (૪) પ્રમદ્ધર, ( ચંદ્રાભ ) (૫) ચન્દ્રાભ, ( સુર્યાભ ) (૬) સૂર્યાભ ( શુક્રાભ ) (૭) શુક્રાભ, ( સુપ્રતિષ્ઠાભ ) અને (૮) સુપ્રતિષ્ઠાભ. તે આઠની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું વિમાન છે. ઉત્તર દિશા અને પૂર્વ દિશામાં રહેલી કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પહેલું અર્ચિ નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશામાં રહેલી બાહ્ય ( બહારની ) અને આભ્યન્તર ( અંદરની ) કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે બીજું અર્ચિમાલિ નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશા અને દક્ષિણ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ત્રીજું વૈરોચન નામનું વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ચોથું પ્રમદ્ધર વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની અને પશ્ચિમ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પાંચમું ચન્દ્રાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે છઠું સૂર્યાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચેની, કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે સાતમું શુક્રાભ નામનું વિમાન છે, અને ઉત્તર દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણ-રાજિઓની વચ્ચે આઠમું સુપ્રતિષ્ઠાભ નામનું વિમાન છે. અને તે બધાંની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું નવમું વિમાન છે.

અહીં એવી આશંકા કરવી જોઈએ નહીં કે “ અહીં તો બે, બે કૃષ્ણ-રાજિઓની વચ્ચે રહેલાં અર્ચિ આદિ આઠ વિમાનોની વક્તવ્યતા થાલી રહી

મનામકં વિમાનમ્, પશ્ચિમોત્તરવર્તિન્યોસ્તયોરમ્યન્તરે સપ્તમં શુક્રામનામકં વિમાનમ્ ૭, ઉત્તરવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે અષ્ટમં મુપતિષ્ઠામનામકં વિમાનમ્ ૮, સર્વામ્યન્તરે ચ રિષ્ટામનામકં વિમાનં પ્રપ્તમ્ । અથ દ્વયોરમ્યન્તરવર્તિનુ અષ્ટમુ અર્ચિઃ પ્રભૃતિનુ વિમાનેષુ વક્તવ્યેષુ યત્ સર્વકૃત્ત્વરાજીનાં મધ્યમાગર્ભતિતયા રિષ્ટામનામકં નવમં વિમાનમુક્તમ્ તદ્ વિમાનપ્રધાવાદવસેયમિતિ ન તસ્ય અર્થાન્તરપ્રસ્તવશંકાકાર્યા । ‘કહિ ણં મંતે ! અગિ-વિમાણે પગ્ગતે ?’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત ! કુવ્વ કસ્મિન્ પદેસે સ્વલુ અર્ચિનામકં વિમાનં પ્રપ્તમ્ ? મગવાનાદ-‘ગોયમા ! ઉત્તર-પુરત્થિમેણં’ હે ગૌતમ ! ઉત્તર-પૌરસ્થ્યે-ઉત્તરપૂર્વદિગન્તરાલે અર્ચિર્વિમાનં પ્રપ્તમ્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિમાલી વિમાણે પગ્ગતે ।’ હે ભદન્ત ! કુવ્વ સ્વલુ અર્ચિર્માલિનામકં વિમાનં પ્રપ્તમ્ ? મગવાનાદ-

ચલ રહા હે ફિર યહાં નૌવે રિષ્ટામ વિમાન કા કથન કયો કિયાં ગયા ) “કયો કિ રિષ્ટામ નામકા વિમાન સથ કૃષ્ણરાજિયોંકે મધ્ય-ભાગ મેં રહા હુઆ હૈ-અતઃ વિમાન કે પ્રસ્તાવ સે યહાં પર ઉસકે કથન કરને મેં કોઈ અસંગતિ નહોં હૈ ।

અવ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે હસી પૂર્વોક્ત વિમાનોં કે રહને કે સ્થાન કો પૂછતે હૈં કિ-‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિવિમાણે પગ્ગતે’ હે ભદન્ત ! અર્ચિનામ કા વિમાન કિસ સ્થાન પર કહા ગયા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘ઉત્તરપુરત્થિમેણં’ ઉત્તરદિશા ઓર પૂર્વદિશા કે અન્તરાલ મેં યહ અર્ચિ નામકા વિમાન હૈ એસા જાનના ચાહિયે । ‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિમાલીવિમાણે પગ્ગતે’ હે ભદન્ત ! અર્ચિમાલી નામ કા જો દૂસરા વિમાન હૈ વહ કહાં પર હૈ ?

છે, તો અહીં નવમાં રિષ્ટામ વિમાનનું કથન કરવાની શી જરૂર છે ? ”

સમાધાન—રિષ્ટામ વિમાન તે આઠે વિમાનોની તથા આઠે કૃષ્ણરાજિયોંની વચ્ચે આવેલું છે. અહીં તે આઠ લોકાન્તિક વિમાનોની વક્તવ્યતા ચાલતી હોવાથી, તેમની વચ્ચે રહેલા રિષ્ટામ વિમાનનું કથન કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારની અસંગતતા જણાતી નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી તે લોકાન્તિક વિમાનોનાં સ્થાનના વિષયમાં પ્રશ્ન પૂછે છે—(કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિવિમાણે પગ્ગતે ?) હે ભદન્ત ! અર્ચિ નામનું વિમાન કયા સ્થાને આવેલું છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (ઉત્તરપુરત્થિમેણં) ઉત્તર અને પૂર્વ દિશાની વચ્ચે અર્ચિ નામનું વિમાન રહેલું છે, એમ સમજવું.

પ્રશ્ન—(કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિમાલી વિમાણે પગ્ગતે ?) હે ભદન્ત ! અર્ચિ માલી નામનું બીજું લોકાન્તિક વિમાન કયા સ્થાને છે ?

‘ગોયમા ! પુરત્થિમેણં’ હે ગૌતમ ! પોરસ્ત્યે-પૂર્વવાહ્યભાગે અર્ચિર્માલિનામકં વિમાનં પ્રત્નપ્તમ્ । ‘એવં પરિવાડીણ ણોયઘ્વં જાવ’ એવંપરિપાટયા ક્રમેણેવ અન્યાન્યપિ અવ-શિષ્ટાનિ પહ્ વિમાનાનિ યથાયથં વિજ્ઞેયાનિ યાવત્-વૈરોચનાદિસુપ્રતિષ્ઠાભવિમાન-પર્યન્તમ્ । તાનિ ચ યથાક્રમં પ્રતિપાદિતાન્વેવ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કહિણં ભંતે ! રિદ્ધે વિમાણે પળ્લત્તે !’ હે ભદ્રન્ત ! કુત્ર કસ્મિન્ પ્રદેશે સ્વલુ રિદ્ધં રિષ્ટાભનામકં વિમાનં પ્રત્નપ્તમ્ ? ભગવાનાહ-‘ગોયમા ! વહુમજ્ઞદેસમાણ’ હે ગૌતમ ! રિષ્ટાભં વિમાનં વહુમધ્યભાગે સર્વાભ્યન્તરભાગે પ્રત્નપ્તમ્ । ‘એણુ ણં અટ્ટસુ લોગંતિયવિમાણેસુ અટ્ટવિહા લોગંતિયા દેવા પરિવસંતિ’ એતેષુ ઉપરિવર્ણિતેષુ અટ્ટસુ લોકાન્તિકવિમા-નેષુ અટ્ટવિધાઃ અટ્ટપ્રકારકાઃ લોકાન્તિકાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ । ગાથયા તાનાહ-

इस गौतम के प्रश्न के समाधान निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं कि हे गौतम ! ‘पुरत्थिमे णं’ अर्चिर्माली नाम का विमान पूर्वदिशा के वाह्य-भाग में कहा गया है । ‘एवं परिपाडिण णेयघ्वं जाव’ इसी क्रम से सुप्रतिष्ठाभ विमान तक छह विमानों के रहने के संबंध में जानना चाहिये । कौन विमान कहाँ पर है यह पहिले यथाक्रम प्रकट कर ही दिया गया है । अब गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि-‘कहि णं भंते ! रिद्वे विमाणे पणत्ते’ हे भदन्त ! रिष्ट अर्थात् रिष्टाभ नाम का विमान किस स्थान पर है ? उत्तर में प्रभु उनसे कहते हैं कि-‘गोयमा ! वहुम-ज्ज्ञदेसमाण’ हे गौतम ! रिष्टाभ नाम का विमान बहुमध्यभाग में-सब के बीच में है । ‘एणसु णं अट्टसु लोगंति य विमाणेषु अट्टविहा लोगंति या देवा परि वसंति’ ऊपर में वर्णित इन आठ लोकांतिक विमा-नों में आठ प्रकार के लोकांतिक देव रहते हैं । इस गाथा द्वारा सूत्रकार

( પુરત્થિમેણં ) હે ગૌતમ ! તે વિમાન પૂર્વ દિશાના બાહ્ય ભાગમાં છે એમ સમજવું. ( એવં પરિવાડિણ ણેયઘ્વં જાવ ) આજ ક્રમ અનુસાર વૈરોચનથી સુપ્રતિષ્ઠાભ પર્યન્તના બાકીના છ વિમાનોનું સ્થાન સમજવું. કયું વિમાન કયા સ્થાને છે તે આજ પાનામાં ઉપર અનુક્રમે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-(કહિ ણં ભંતે ! રિદ્ધે વિમાણે પળ્લત્તે ) હે ભદ્રન્ત ! રિષ્ટ (રિષ્ટાભ) નામનું વિમાન કયાં છે ?

ઉત્તર—( ગોયમા ! વહુમજ્ઞદેસમાણ ) હે ગૌતમ ! રિષ્ટાભ નામનું વિમાન તે આઠેની વચ્ચે આવ્ય છે.

( એણુ ણં અટ્ટસુ લોગંતિયવિમાણેસુ અટ્ટવિહા લોગંતિયા દેવા પરિવસંતિ ) ઉપર્યુક્ત આઠ લોકાન્તિક વિમાનોમાં આઠ પ્રકારના લોકાન્તિક દેવ રહે છે. નીચેની ગાથામાં સૂત્રકારે તે આઠ લોકાન્તિક દેવોનાં નામ પ્રકટ કર્યાં છે.



‘તં જહા’ તથા—“સારસ્વતમાહ્વા, વહ્ની વરુણા ચ ગર્દતોયા ચ ।

તુસિયા અવ્યાબાધા, અગ્નિચ્ચા ચેવ રિષ્ટા ચ ॥ ૧ ॥”

સારસ્વતા—ઽઽદિત્યા વહ્નો વહ્નિઃ ગર્દતોયાથ,

તુપિતા અવ્યાબાધા આગ્નેયાથૈવ રિષ્ટાથ ॥ ૧ ॥

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ ણં મંતે ! સારસ્વત્યા દેવા પરિવસંતિ ?’ હે મદન્ત !

કુત્ર કસ્મિન્ વિમાને સ્વલુ સારસ્વતાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? મગધાનાહ—‘ગોયમા !

અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસંતિ’ હે ગૌતમ ! અર્ચિનિ વિમાને સારસ્વત્યા દેવાઃ પરિ-

વસન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ ણં મંતે ! આહ્વા દેવા પરિવસંતિ ?’ હે મદન્ત !

કુત્ર કસ્મિન્ વિમાને સ્વલુ આદિત્યાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? મગધાનાહ—‘ગોયમા !

અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે’ હે ગૌતમ ! અર્ચિમાલી વિમાને આદિત્યાઃ દેવાઃ પરિ-

વસન્તિ । ‘એવં ણેયઞ્વં જહાઽઽણુપુઞ્વીણ જાવ’ એવં યથાઽઽનુકૂળ્યાં યથાક્રમેણ

ને હન્હીં લોકાન્તિક દેવોંકો કહ્વા હં । જૈસે—“સારસ્વતમાહ્વાદિત્યાદિ ।

સારસ્વત, આદિત્ય, વહ્નિ, વરુણ, ગર્દતોય, તુપિત, અવ્યાબાધ,

આગ્નેય ઓર રિષ્ટ । અવ ગૌતમસ્વામી પ્રભુ સે જેસા પૂછતે હૈં કિ—‘કહિ

ણં મંતે ! સારસ્વત્યા દેવા પરિવસંતિ’ હે મદન્ત ! સારસ્વત દેવ કહાં

પર રહતે હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ડનસે કહતે હૈં—‘ગોયમા’ હે ગૌતમ !

‘અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસંતિ’ અર્ચિ નામ કે વિમાન મેં સારસ્વત

દેવ રહતે હૈં । ગૌતમ પુનઃ પ્રભુ સે પૂછતે હૈં કિ—‘કહિ ણં મંતે ! આહ્વા

દેવા પરિવસંતિ’ હે મદન્ત ! આદિત્ય દેવ કહાં પર રહતે હૈં ? ઉત્તર મેં

પ્રભુ કહતે હૈં કિ ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે’

‘સારસ્વતમાહ્વા’ ઇત્યાદિ ।

(૧) સારસ્વત, (૨) આદિત્ય (૩) વહ્નિ, (૪) વરુણ, (૫) ગર્દતોય, (૬) તુપિત, (૭) અવ્યાબાધ, (૮) આગ્નેય અને રિષ્ટામ વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ.

તે દેવો કયા કયા વિમાનમાં રહે છે, તે જાણવા માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(કહિ ણં મંતે ! સારસ્વત્યા દેવા પરિવસંતિ ?) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ કયાં (કયા વિમાનમાં) રહે છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસંતિ) સારસ્વત દેવ અર્ચિ નામના પહેલા વિમાનમાં રહે છે.

પ્રશ્ન—(કહિ ણં મંતે ! આહ્વા દેવા પરિવસંતિ ?) હે ભદન્ત ! આદિત્ય દેવ કયાં રહે છે ?

ઉત્તર—(અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે) હે ગૌતમ ! આદિત્ય દેવ અર્ચિમાલી વિમાનમાં રહે છે. (એવં ણેયઞ્વં જહાણુપુઞ્વીણ જાવ) એજ ક્રમે ધને



યાવત્—વહ્નિપ્રભૃતીનામાગ્નેયાન્તાનામપિ પળ્લાં નિવાસસ્થાનં વિજ્ઞાતવ્યમ્ । તથાહિ—  
વહ્નો દેવાઃ વૈરોચને વિમાને, વરુણઃ દેવઃ પ્રભંકરે વિમાને, ગર્દતોયાઃ દેવાઃ  
ચન્દ્રાભે વિમાને, તુષિતા દેવાઃ સૂર્યાભે વિમાને, અવ્યાવાધા દેવાઃ શુક્રાભે વિમાને,  
આગ્નેયાશ્ચ દેવાઃ સુપ્રતિષ્ઠાભે વિમાને પરિવસન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ ણં ભંતે ।  
રિદ્ધા દેવા પરિવસંતિ ? ’ હે ભદન્ત ! કુત્ર કસ્મિન્ વિમાને સ્થલુ રિષ્ટાઃ દેવાઃ  
પરિવસન્તિ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા । રિદ્ધિમ્મિ વિમાણે’ હે ગૌતમ ! રિષ્ટે રિષ્ટાભ-  
નામકે સર્વમધ્યવર્તિનિ વિમાને રિષ્ટા દેવાઃ પરિવસન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—  
‘સારસ્સયમાહચ્ચાણં ભંતે ! દેવાણં કહ્ દેવા કહ્ દેવસયા પરિવારે પળ્ણત્તે ? ’ હે

અર્ચિમાલી વિમાન મેં આદિત્ય દેવ રહતે હેં । ‘ એવં ણેયવ્વં જહાણુપુવ્વીઁ  
જાવ ’ હસી ક્રમ સે વહ્નિ સે લેકર આગ્નેય દેવોં તક કે નિવાસસ્થાન  
કે વિષય મેં જાનના ચાહિયે—જેસે વહ્નિ દેવ વૈરોચન વિમાન મેં રહતે  
હેં, વરુણદેવ પ્રભંકર વિમાન મેં રહતે હેં, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાભ વિમાનમેં  
રહતે હેં—તુષિતાદેવ સૂર્યાભવિમાનમેં રહતે હેં, અવ્યાવાધદેવ શુક્રાભ  
વિમાન મેં રહતે હેં ઓર આગ્નેય દેવ સુપ્રતિષ્ઠાભ વિમાન મેં રહતે હેં ।  
હસ પ્રકાર સે યે આઠ લોકાન્તિક દેવોં કે રહને કે આઠ વિમાન કહે  
ગયે હેં । અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછતે હેં કિ ‘કહિ ણં ભંતે ! રિદ્ધા  
દેવા પરિવસંતિ’ હે ભદન્ત ! રિષ્ટ દેવ કિસ વિમાન મેં રહતે હેં ? ઉત્તર  
મેં ગૌતમસે પ્રશ્ન કહતે હેં કિ—‘ગોયમા ! રિદ્ધિમ્મિ વિમાણે’ સર્વમધ્યવર્તિ  
રિષ્ટાભ નામકે વિમાન મેં રિષ્ટ દેવ રહતે હેં । અવ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે  
એસા પૂછતે હેં કિ—‘સારસ્સયમાહચ્ચાણં ભંતે ! દેવાણં કહ્ દેવા કહ્

આગ્નેય દેવો પર્યાન્તના દેવોના નિવાસસ્થાન વિષે સમજવું. કહેવાનું તાત્પર્ય  
એ છે કે વહ્નિ દેવ વૈરોચન વિમાનમાં રહે છે, વરુણ દેવ પ્રભંકર વિમાનમાં  
રહે છે, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાભ વિમાનમાં રહે છે, તુષિતા દેવ સૂર્યાભ વિમાનમાં  
રહે છે, અવ્યાવાધ દેવ શુક્રાભ વિમાનમાં રહે છે અને આગ્નેય દેવ સુપ્રતિ-  
ષ્ઠાભ વિમાનમાં રહે છે. આ રીતે તે આઠ લોકાન્તિક દેવોનાં નિવાસસ્થાન ૩૫  
આઠ વિમાનો કહ્યાં છે.

પ્રશ્ન—“કહિ ણં ભંતે ! રિદ્ધા દેવા પરિવસંતિ ? ” હે ભદન્ત ! રિષ્ટદેવ  
કયા વિમાનમાં રહે છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા ! રિદ્ધિમ્મિ વિમાણે ” હે ગૌતમ ! સર્વ મધ્યવર્તિ રિષ્ટાભ  
નામના વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ રહે છે.

હવે લોકાન્તિક દેવોના પરિવાર આદિના વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન  
પૂછે છે—“સારસ્સયમાહચ્ચાણં ભંતે ! દેવાણં કહ્ દેવા કહ્ દેવસયા પરિવારે પળ્ણત્તે ? ”

મદન્ત ! સારસ્વતાદિત્યયોરુપયોર્દેવયોઃ કનિદેવાઃ-પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ? મગધનાદ-  
હે ગૌતમ ! સમુદિતયોરેવ સારસ્વતાદિત્યયોર્દેવયોઃ સપ્ત દેવાઃ-પરિવારદેવસ્વામિનઃ  
પ્રજ્ઞપ્તાઃ । અથ દ્વિવચનેન કથનં સંગ્રહગાથાયાં યુગલરૂપેન પ્રતિપાદનાત્ । સપ્ત ચ  
દેવસતાનિ સપ્તશતસંખ્યસાથ દેવાઃ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ પરિવાસ્તયા કથિતા  
इत्यर्थः, सप्तशतसंख्यकदेवानागुपरि प्रत्येकशतस्य एकैको देवः स्वामितया  
वर्तते तेन सप्त देवाः सप्तशतसंख्यकपरिवारोपरि स्वामित्वेन सन्तीति भावः ।  
एवमग्रेऽपि विज्ञेयम् । एवं 'वह्नि-वरुणाणं देवाणं चउद्दस देवा चउद्दस देवसहस्रा  
परिवारे पण्णत्ते' वह्नि-वरुणयोर्देवयोः समुदितयोरेव चतुर्दश देवाः परिवारदेव-

દેવસયા પરિવારે પણ્ણત્તે' । હે મદન્ત ! સારસ્વત ઓર આદિત્ય इन दो  
देवों के देव-परिवार के स्वामी, तथा इनके परिवार के देव कितने सौ  
कहे गये हैं? उत्तर में प्रभु कहते हैं कि-हे गौतम ! समुदित ही सार-  
स्वत और आदित्य देवों के देव सात तो परिवार के स्वामीरूप से कहे  
गये हैं और इन दोनों देवों के परिवार के देव सात सौ कहे गये हैं ।  
इस तरह के कथन से यह समझना चाहिये कि सौ-सौ परिवारभूत  
देवों के ऊपर एक-एक देव स्वामीरूप से है-अतः सात सौ परिवारभूत  
देवों के स्वामी सात देव हैं । इसी तरह से आगे भी जानना चाहिये ।  
संग्रह गाथा में युगलरूप से प्रतिपादन किया गया है-इसी कारण यहाँ  
सूत्र में भी द्विवचन से प्रतिपादन किया है । ' वह्निवरुणाणं देवाणं  
चउद्दस देवा चउद्दस देवसहस्रा परिवारे पण्णत्ते' वह्नि और वरुण  
इन दोनों समुदित देवों के परिवार के स्वामीभूत देव चौदह कहे गये हैं

હે ભદન્ત ! સારસ્વત અને આદિત્ય આ બંને દેવોના દેવ ( પરિવારના સ્વામી )  
તથા તેમના પરિવારના દેવોની સંખ્યા કેટલા સૌ કહી છે ?

ઉત્તર--હે ગૌતમ ! સારસ્વત અને આદિત્ય એ દેવયુગલના સાત દેવો  
તો પરિવારના સ્વામીરૂપ કહ્યા છે, અને તે બંને દેવોના પરિવાર રૂપ ૭૦૦  
દેવો કહ્યા છે. આ કથનને આધારે એ વાત ધ્યાનમાં રાખવી કે પ્રત્યેક સૌ  
પરિવાર રૂપ દેવો પર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે હોય છે, એ રીતે ૭૦૦  
પરિવારભૂત દેવોના સ્વામી સાત દેવો છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ સમજવું.  
સંગ્રહ ગાથામાં યુગલ રૂપે ( બંને દેવોને સાથે લઈને ) પ્રતિપાદન  
કરવામાં આવ્યું છે, તે કારણે અહીં સૂત્રમાં પણ બહુવચન રૂપે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

“વહ્નિવરુણાણં દેવાણં ચઉદસ દેવા, ચઉદસદેવસહસ્રા પરિવારે પણ્ણત્તે”

‘વહ્નિ અને અરુણ’ આ દેવયુગલના પરિવારના દેવોની સંખ્યા ચૌદ

સ્વામિનઃ સન્તિ, પ્રત્યેકસ્ય સહસ્ર-સહસ્રસંખ્યકદેવપરિવારસદ્ભાવાત્ દેવસ્વામિનઃ સપ્ત દેવાઃ સન્તીતિ ભાવઃ । ચતુર્દશસહસ્રાણિ ચ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, એકેકસ્ય દેવસ્ય સહસ્ર - સહસ્રસંખ્યકદેવપરિવારસદ્ભાવાત્ । તથા-‘ ગદતોય-તુસિયાણં દેવાણં સત્ત દેવસહસ્રા પરિવારે પળ્ળત્તે ’ ગદતોય-તુપિતયોઃ સમુદિતયોઃ દ્વયોર્દેવયોઃ સપ્ત દેવાઃ સ્વામિનઃ, સપ્ત ચ દેવસહસ્રાણિ સપ્તસહસ્રસંખ્યકા દેવાઃ પરિવારતયા પ્રજ્ઞપ્તાઃ । ‘ અવસેસાણં નવ દેવા, નવ દેવસયા પરિવારે પળ્ળત્તે , અવશેષાણામ્-અવ્યાવાધાઽઽગ્નેયરિષ્ટાનાં ત્રયાણાં દેવાનાં સમુદિતાનામેવ નવ દેવાઃ પરિવારદેવ-સ્વામિનઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, એકેકસ્ય દેવત્રય-દેવત્રય સદ્ભાવાત્, તથા નવ દેવશતાનિ-નવશત સંખ્યકા દેવાઃ પરિવારરૂપેણ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । અવ્યાવાધાદીનાં ત્રયાણાં દેવાનામે-

ઔર પરિવાર કે દેવ ચૌદહ હજાર કહે ગયે હૈ । યહાં પર એક-એક હજાર દેવોં કે ઝપર-૧-૧ દેવ ઉનકા સ્વામી હૈ-હસ તરહ ચૌદ દેવ સ્વામીરૂપ સે કહે ગયે હૈ । તથા-‘ ગદતોય તુસિયાણં દેવાણં સત્તદેવાં સત્તદેવસહસ્રા પરિવારે પળ્ળત્તે ’ ગદતોય ઔર તુપિત હન દોનોં સમુદિત દેવોંકે પરિવારભૂત દેવોંકે સ્વામી તો સાત હૈ ઔર પરિવારભૂત સાત હજાર હૈ ‘ અવસેસા ણં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્ળત્તે ’ વાકીં કે અવ્યાવાધ, આગ્નેય, ઔર રિષ્ટ હન સમુદિત ત્રીન દેવોંકે પરિવારભૂત દેવોં કે સ્વામી નૌ દેવ હૈ, ઔર હન કે પરિવાર મેં નૌ સૌ દેવ હૈ અર્થાત્ એક એક દેવ કે ત્રીન-ત્રીન દેવ તો ત્રીન સૌ ૩૦૦-ત્રીન સૌ ૩૦૦ પરિવાર ભૂત દેવોં કે સ્વામી હૈ ઔર એક ૨ દેવ કે ૩૦૦-૩૦૦ પરિવાર કે

હજારની કહી છે અને તે પરિવારના સ્વામિભૂત દેવો ૧૪ કહ્યા છે. અહીં એક એક હજાર ઉપર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે છે, તેથી ૧૪૦૦૦ દેવોના સ્વામી રૂપ દેવો ચૌદ કહ્યા છે. તથા “ ગદતોયતુસિયાણં દેવાણં સત્તદેવા, સત્તદેવસહસ્રા પરિવારે પળ્ળત્તે ” ગદતોય અને તુપિત નામના દેવયુગલના પરિવારના દેવો ૭૦૦૦ કહ્યા છે, અને તે પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો સાત કહ્યા છે. “ અવસેસા ણં નવ દેવસયા પરિવારેપળ્ળત્તે ” બાકીના દેવોના એટલે કે અવ્યાવાધ, આગ્નેય અને રિષ્ટ એ ત્રણે દેવોના મળીને કુલે ૬૦૦ પરિવાર ભૂત દેવો છે અને પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો નવ કહ્યા છે. એટલે કે અવ્યાવાધ આદિ પ્રત્યેક દેવના પરિવારભૂત દેવો ૩૦૦-૩૦૦ છે, અને પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો ત્રણ ત્રણ છે. નીચેની ગાંથોમાં તે નવ દેવોના પરિવાર રૂપ દેવોની સંખ્યા બતાવી છે.



મદન્ત ! સારસ્વતાદિત્યયોરુપોર્દેવોઃ કઞ્ચિદેવાઃ-પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ? મગધનાદ-  
હે ગૌતમ ! સમુદિતયોરેવ સારસ્વતાદિત્યયોર્દેવોઃ સપ્ત દેવાઃ-પરિવારદેવસ્વામિનઃ  
પ્રજ્ઞપ્તાઃ । અત્ર દ્વિવચનેન કથનં સંગ્રહગાથાયાં યુગલરૂપેન પ્રતિપાદનાત્ । સપ્ત ચ  
દેવશત્તાનિ સપ્તશતસંખ્યકાશ્ચ દેવાઃ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ પરિવારતયા કથિતા  
इत्यर्थः, सप्तशतसंख्यकरुदेवानां गुपरि प्रत्येकगवत् एकेको देवः स्वामितया  
वर्तते तेन सप्त देवाः सप्तशतसंख्यकरुपरिवातेपरि स्वामित्वेन सन्तीति भावः ।  
एवमग्रेऽपि विज्ञेयम् । एवं 'वण्हि-वरुणाणं देवाणं चउदस देवा चउदस देवसहस्सा  
परिवारे पण्णत्ते' वह्नि-वरुणयोर्देवयोः समुदितयोरेव चतुर्दश देवाः परिवारदेव-

દેવસયા પરિવારે પણ્ણત્તે' હે મદન્ત ! સારસ્વત ઓર આદિત્ય इन दो  
देवों के देव-परिवार के स्वामी, तथा इनके परिवार के देव कितने सौ  
कहे गये हैं? उत्तर में प्रभु कहते हैं कि-हे गौतम ! समुदित ही सार-  
स्वत और आदित्य देवों के देव सात तो परिवार के स्वामीरूप से कहे  
गये हैं और इन दोनों देवों के परिवार के देव सात सौ कहे गये हैं ।  
इस तरह के कथन से यह समझना चाहिये कि सौ-सौ परिवारभूत  
देवों के ऊपर एक-एक देव स्वामीरूप से है-अतः सात सौ परिवारभूत  
देवों के स्वामी सात देव हैं । इसी तरह से आगे भी जानना चाहिये ।  
संग्रह गाथा में युगलरूप से प्रतिपादन किया गया है-इसी कारण यहाँ  
सूत्र में भी द्विवचन से प्रतिपादन किया है । 'वण्हिवरुणाणं देवाणं  
चउदस देवा चउदस देवसहस्सा परिवारे पण्णत्ते' वह्नि और वरुण  
इन दोनों समुदित देवों के परिवार के स्वामीभूत देव चौदह कहे गये हैं

હે ભદન્ત ! સારસ્વત અને આદિત્ય આ બંને દેવોના દેવ ( પરિવારના સ્વામી )  
તથા તેમના પરિવારના દેવોની સંખ્યા કેટલા સૌ કહી છે ?

ઉત્તર--હે ગૌતમ ! સારસ્વત અને આદિત્ય એ દેવયુગલના સાત દેવો  
તો પરિવારના સ્વામીરૂપે કહ્યા છે, અને તે બંને દેવોના પરિવાર રૂપે ૭૦૦  
દેવો કહ્યા છે. આ કથનને આધારે એ વાત ધ્યાનમાં રાખવી કે પ્રત્યેક સૌ  
પરિવાર રૂપ દેવો પર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે હોય છે, એ રીતે ૭૦૦  
પરિવારભૂત દેવોના સ્વામી સાત દેવો છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ સમજવું.  
સંગ્રહ ગાથામાં યુગલ રૂપે ( બંને દેવોને સાથે લઈને ) પ્રતિપાદન  
કરવામાં આવ્યું છે, તે કારણે અહીં સૂત્રમાં પણ બહુવચન રૂપે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

“વણ્હિવરુણાણં દેવાણં ચઉદસ દેવા, ચઉદસદેવસહસ્સા પરિવારે પણ્ણત્તે”

બહ્નિ અને અરુણ આ દેવયુગલના પરિવારના દેવોની સંખ્યા ચૌદ



સ્વામિનઃ સન્તિ, પ્રત્યેકસ્ય સહસ્ર-સહસ્રસંખ્યકદેવપરિવારસદ્ભાવાત્ દેવસ્વામિનઃ સપ્ત દેવાઃ સન્તીતિ ભાવઃ । ચતુર્દશસહસ્રાણિ ચ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, એકેકસ્ય દેવસ્ય સહસ્ર - સહસ્રસંખ્યકદેવપરિવારસદ્ભાવાત્ । તથા-‘ ગદતોય-તુસિયાણં દેવાણં સત્ત દેવસહસ્સા પરિવારે પળ્લન્તે ’ ગદતોય-તુપિતયોઃ સમુદિતયોઃ દ્વયોર્દેવયોઃ સપ્ત દેવાઃ સ્વામિનઃ, સપ્ત ચ દેવસહસ્રાણિ સપ્તસહસ્રસંખ્યકા દેવાઃ પરિવારતયા પ્રજ્ઞપ્તાઃ । ‘ અવસેસાણં નવ દેવા, નવ દેવસયા પરિવારે પળ્લન્તે , અવશેષાણામ્-અવ્યાવાધાઽઽગ્નેપરિષ્ઠાનાં ત્રયાણાં દેવાનાં સમુદિતાનામેવ નવ દેવાઃ પરિવારદેવ-સ્વામિનઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, એકેકસ્ય દેવત્રય-દેવત્રય સદ્ભાવાત્ , તથા નવ દેવશતાનિ-નવશત સંખ્યકા દેવાઃ પરિવારરૂપેણ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । અવ્યાવાધાદીનાં ત્રયાણાં દેવાનામે-

ઔર પરિવાર કે દેવ ચૌદહ હજાર કહે ગયે હૈ । યહાં પર એક-એક હજાર દેવોં કે ઝપર-૧-૧ દેવ ડનકા સ્વામી હૈ-હસ તરહ ચૌદ દેવ સ્વામીરૂપ સે કહે ગયે હૈ । તથા-‘ ગદતોય તુસિયાણં દેવાણં સત્તદેવાં સત્તદેવસહસ્સા પરિવારે પળ્લન્તે ’ ગદતોય ઔર તુપિત ઇન ડોનોં સમુદિત દેવોંકે પરિવારભૂત દેવોંકે સ્વામી તો સાત હૈ ઔર પરિવારભૂત સાત હજાર હૈ ‘ અવસેસા ણં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્લન્તે ’ વાકીં કે અવ્યાવાધ, આગ્નેય, ઔર રિષ્ઠ ઇન સમુદિત ત્રીન દેવોંકે પરિવારભૂત દેવોં કે સ્વામી નૌ દેવ હૈ, ઔર ઇન કે પરિવાર મેં નૌ સૌ દેવ હૈ અર્થાત્ એક એક દેવ કે ત્રીન-ત્રીન દેવ તો ત્રીન સૌ ૩૦૦-ત્રીન સૌ ૩૦૦ પરિવાર ભૂત દેવોં કે સ્વામી હૈ ઔર એક ૨ દેવ કે ૩૦૦-૩૦૦ પરિવાર કે

હજારની કહી છે અને તે પરિવારના સ્વામિભૂત દેવો ૧૪ કહ્યા છે. અહીં એક એક હજાર ઉપર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે છે, તેથી ૧૪૦૦૦ દેવોના સ્વામી રૂપ દેવો ચૌદ કહ્યા છે. તથા “ ગદતોયતુસિયાણં દેવાણં સત્તદેવા, સત્તદેવસહસ્સા પરિવારે પળ્લન્તે ” ગદતોય અને તુપિત નામના દેવયુગલના પરિવારના દેવો ૭૦૦૦ કહ્યા છે, અને તે પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો સાત કહ્યા છે. “ અવસેસા ણં નવ દેવસયા પરિવારેપળ્લન્તે ” બાકીના દેવોના એટલે કે અવ્યાવાધ, આગ્નેય અને રિષ્ઠ એ ત્રણે દેવોના મળીને કુલે ૬૦૦ પરિવાર ભૂત દેવો છે અને પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો નવ કહ્યા છે. એટલે કે અવ્યાવાધ આદિ પ્રત્યેક દેવના પરિવારભૂત દેવો ૩૦૦-૩૦૦ છે, અને પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો ત્રણ ત્રણ છે. નીચેની ગાંથામાં તે નવ દેવોના પરિવાર રૂપ દેવોની સંખ્યા બતાવી છે.

કૈકસ્ય ત્રિશત-ત્રિશતદેવપરિવારસદમાનાત્ ।

અથ-ઉપરિવર્ણિતદેવપરિવારસંગ્રાહિકાં ગાથામાહ—

“ પદમ-જુગલમ્મિ સત્ત ઉ, સયાણિ ત્રીયમ્મિ-ચતુરસ સહસ્સા ।

તદ્દે સત્તસહસ્સા, નવ ચૈવ સયાણિ સેસેષુ ” ॥ ૧ ॥

પ્રથમયુગલે સારસ્વતાઽઽદિત્યાત્મકે સપ્ત શતાનિ દેવપરિવારઃ,

દ્વિતીયે વહ્નિ-વરુણદેવાત્મકે ચતુશ્ચ સહસ્તાણિ દેવપરિવારઃ, તૃતીયે ગર્દતો-  
યતુષિતદેવાત્મકે સપ્તસહસ્તાણિ દેવપરિવારઃ, શેષેષુ અન્યાવાયાઽઽગ્નેય-રિષ્ટદેવેષુ  
નવ ચૈવ શતાનિ પરિવારોઽસ્તીતિગાથાર્થઃ ॥૧॥

યતુસમવાયાજ્ઞમૂત્રે સપ્તસપ્તતિતમે સમવાયે ગર્દતોય-તુષિતયોર્દેવયોઃ સપ્ત-  
સપ્તતિસહસ્રસંખ્યકા દેવાઃ પરિવારતયા પ્રોક્તાઃ । જ્ઞાતાધર્મકથાજ્ઞમૂત્રસ્યાઽષ્ટમા-  
ધ્યયને ચ લોકાન્તિકદેવાનામેકૈકસ્ય ચતુશ્ચતુઃસહસ્રપરિમિતાઃ સામાનિકદેવાઃ,

દેવ હૈં । इन्हों परिवारभूत देवों को संग्रह करके प्रकट करने वाली  
यह गाथा है—“ पदमजुगलमि ” इत्यादि ।

સારસ્વત ઓર આદિત્ય રૂપ પ્રથમ યુગલ મેં સાત સો દેવોં કા  
પરિવાર હૈં । દૂસરે વહ્નિ ઓર વરુણરૂપ યુગલ મેં ચૌદહ ૧૪ હજાર દેવોં  
કા પરિવાર હૈં । તિસરે ગર્દતોય ઓર તુષિતરૂપ યુગલ મેં સાત હજાર  
દેવોં કા પરિવાર હૈં । ચાકી અન્યાવાય, આગ્નેય ઓર રિષ્ટ દેવોં મેં નૌ  
સો દેવોં કા પરિવાર હૈં । ઇસ પ્રકાર સે યહ ગાથા કા અર્થ હૈં—

જો સમવાયાંગ સૂત્ર મેં ૭૭ વેં સમવાય મેં ગર્દતોય ઓર તુષિતઃ  
इन देवों के परिवार भूत देव ७७ हजार कहे गये हैं, ज्ञाताधर्मकथाज्ञ  
सूत्र के आठवें अध्ययन में लोकान्तिक देवों के एक एक देव के चार २  
हजार सामानिक देव कहे गये हैं, तथा ३-३ परिषदाँ कही गई हैं,

‘ पदमजुगलमि ’ इत्यादि ।

સારસ્વત અને આદિત્યના પ્રથમ યુગલના પરિવાર ૩૫ દેવો ૭૦૦ છે.  
અહ્નિ અને વરુણના બીજા યુગલના પરિવાર ૩૫ દેવો ૧૪૦૦૦ છે. ગર્દતોય  
અને તુષિતના ત્રીજા યુગલના પરિવાર ૩૫ દેવો ૭૦૦૦ છે. બાકીના અન્યા-  
વાય, આગ્નેય અને રિષ્ટ દેવોના કુલ પરિવાર ૮૦૦ દેવોના છે.

સમવાયાંગ સૂત્રના ૭૭ માં સમવાયમાં ગર્દતોય અને તુષિત, આ બે  
દેવોના પરિવાર ૩૫ ૭૭૦૦૦ દેવો કહ્યા છે, જ્ઞાતાધર્મ-કથાંગસૂત્રના આઠમાં  
અધ્યયનમાં લોકાન્તિક દેવોમાંના પ્રત્યેક દેવના ચાર ચારહજાર સામાનિક દેવ કહ્યા  
છે, તથા ત્રણ ત્રણ પરિષદાઓ કહી છે, સાત સાત અનીક અને અનીકાધિપ,

તિસસ્તિસપરિપદઃ, સપ્તપ્તાનીકાનિ, સપ્ત સપ્તન ાનીકાધિપતયઃ પોડશ-પોડશસહસ્ર-  
પરિમિતા આત્મરક્ષકદેવાઃ, અન્યેઽપિ ચ વદવો લોકાન્તિકા દેવાઃ પરિવારતયા  
પ્રોક્તાઃ, ક્ત્યાદિવર્ણનં લભ્યતે તત્ત્વ સામાન્યપરિવારતયા પ્રોક્તમ્ । ક્વ વિશેષ-  
રૂપતયા કથિતમિતિ વોધ્યમ્ ?

ગૌતમઃ પૂછતિ—‘લોગંતિયવિમાણા ણં મંતે ! કિંપદ્વિયા પળ્લતા ?’  
હે મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાનાનિ કિંપતિષ્ઠિતાનિ કસ્મિન્ આધારે પ્રતિષ્ઠિતાનિ  
સ્થિતાનિ પ્રજ્ઞાનિ ? મગવાનાહ—‘ગોયમા ! વાઉપદ્વિયા પળ્લતા’ હે ગૌતમ !  
લોકાન્તિકવિમાનાનિ વાયુપતિષ્ઠિતાનિ વાયોરાધારેણસ્થિતાનિ સન્તિ । ‘એવં  
ળેયવ્વં વિમાણાણં પદ્દાણં, વાહુલ્લુદ્વત્તમેવ સંઠાણં’ એવમ્ અનેન પ્રકારેણ

સાત સાત અનીક, અનીકાધિપ, ૧૬-૧૬ હજાર આત્મરક્ષક દેવ,  
તથા ઓર ઓ વદ્વત સે લોકાન્તિક દેવ પરિવારરૂપ સે કહે ગયે હૈં સો  
ક્ત્યાદિ યહ સવ વર્ણન સામાન્યરૂપ સે કિયા ગયા હૈં એસા જાનના  
ચાહિયે—તથા યહાં જો વર્ણન કિયા ગયા હૈં વહ વિશેષ રૂપ સે કિયા  
ગયા હૈં—એસા સમજના ચાહિયે ।

અવ ગૌતમ પ્રમુ સે પૂછતે હૈં કિ (લોગંતિય વિમાણાણં મંતે ! કિં  
પદ્વિયા પળ્લતા) હે મદન્ત ! લોકાન્તિક દેવોં કે જો વિમાન હૈં વે  
આધાર સહિત હૈં કિ વિના આધારકે હૈં ? યદિ આધાર સહિત હૈં તો કનકા  
કયા આધાર હૈં ? અર્થાત્ કિસ આધારરૂપ પદાર્થ પર યે પ્રતિષ્ઠિત હૈં ?  
ઉત્તર મેં પ્રમુ કહતે હૈં કિ—(ગોયમા ! ) હે ગૌતમ ! (વાઉપદ્વિયા પળ્લતા)  
યે લોકાન્તિક દેવોં કે વિમાન સાધાર હૈં ઓર કનકા આધારરૂપ પદાર્થ  
વાયુ કહા ગયા હૈં । અર્થાત્ વાયુ કે આધાર સે પ્રતિષ્ઠિત હૈં । (એવં

૧૬-૧૬ હજાર આત્મરક્ષક દેવો તથા ળીઝ પળ્લ અનેક દેવોનો પરિવાર  
કહ્યો છે. પળ્લ તે સમસ્ત વર્ણન સામાન્ય રૂપે કરેલું સમજવું. અહીં જે વર્ણન  
કરવામાં આવ્યું છે, તે વિશેષ રૂપે કરવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—“લોગંતિય  
વિમાણાણં મંતે ! કિં પદ્વિયા પળ્લતા ?” હે મદન્ત ! લોકાન્તિક દેવોનાં જે  
વિમાનો છે તે આધાર સહિત છે કે આધાર રહિત છે ? જો તેઓ આધાર  
સહિત હોય તો તેઓ કયા પદાર્થના આધારે રહેલાં છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે—“ગોયમા !” હે ગૌતમ !  
“વાઉપદ્વિયા પળ્લતા” તે લોકાન્તિક દેવોનાં વિમાનો આધારયુક્ત છે. અને  
તેમના આધાર રૂપ પદાર્થ વાયુ કહ્યો છે, એટલે કે તેઓ વાયુને આધાર



લોકાન્તિકવિમાનાનાં પ્રતિષ્ઠાનં સ્થિત્યધિકરણં વાયુરૂપં પ્રદર્શિતમેવ, વાહલ્યં સંસ્થાનં ચ પંચવિંશતિયોજનશતાનિ, ઉચ્ચત્વં સપ્તયોજનશતાનિ, સંસ્થાનમ્ આકારસ્તુ એતેષાં વિમાનાનાં નાનાપ્રમાણકં ચોદ્ધ્યમ્ અનાવલિકાપ્રવિષ્ટાન્, આવલિકાપ્રવિષ્ટાનિ તુ ટૂત-ચ્ચસ-ચતુરસ્રરૂપાણિ ત્રીણિ સંસ્થાનાન્યેવ ભવન્તીત્યવસેયમ્ । તદેવાદ-‘યંભલોયવત્તવ્ચયા ણેયવ્વા, જહા-ઝીવાભિગમે દેવુદેસપ્’ જાત-ણેયવ્વં વિમાણાણં પદ્ધાણં, વાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં) હસ તરહ કી સ્થિતિ કા અધિકરણ વાયુરૂપ હૈ ગહ તો પ્રદર્શિત હી કર દિયા ગયા હૈ અથ રહી હનકે વાહલ્ય ઓર સંસ્થાન કે વિષય કી વાત સો હનકા વાહલ્ય-વિમાનોં કી પૃથિવી સ્થૂલતા-૨૫૦૦ યોજન કી હૈ ઓર ઊંચાઈ ૭૦૦ યોજન કી હૈ । તથા હનકા આકાર ણકરૂપ સે નહીં હૈ ભિન્ન ૨ પ્રકાર સે હૈ ક્યોં કિ યે અનાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હૈં । જો આવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હોતે હૈં વે યા તો ગોલ હોતે હૈં, યા ત્રિકોણ હોતે હૈં, યા ચતુષ્કોણ હોતે હૈં । હસલિયે યે આવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ ન હોનેકે કારણ નિયત આકાર વાલે નહીં કહે ગયે હૈં પ્રત્યુત અનેક પ્રકાર કે આકાર વાલે કહે ગયે હૈં । હસી વાત કો સૂચિત કરને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર ને (યંભલોય વત્તવ્વતા ણેયવ્વા, જહા ઝીવાભિગમે દેવુદેસપ્) એસા કહા હૈ કિ બ્રહ્મલોક મેં રહને વાલે વિમાનોં ઓર દેવોં કે વિષય મેં જો વત્તવ્વતા ઝીવાભિગમ સૂત્ર મેં કહી હૈ, વહી વત્તવ્વતા યદ્દાં પર ભી હન લોકાન્તિક

રહેલાં છે. “એવં ણેયવ્વં વિમાણાણં પદ્ધાણં, વાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં” આ રીતે વિમાનોની સ્થિતિના આધાર રૂપ વાયુને તે ઉપર બતાવવામાં આવેલ છે, હવે તેમના વિસ્તાર, ઊંચાઈ, આકાર આદિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે-

તે વિમાનોની પૃથ્વીની સ્થૂળતા-એટલે કે તેમનો વિસ્તાર ૨૫૦૦ યોજનનો અને ઊંચાઈ ૭૦૦ યોજનની છે. તેથી તેમનો આકાર એકસરખો નથી. પણ જુદા જુદા પ્રકારનો છે, કારણ કે તેઓ આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ નથી. જે વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ હોય છે, તેઓ ગોળાકારના અથવા ત્રિકોણાકારના કે ચતુષ્કોણાકારના હોય છે. પરંતુ આ લોકાન્તિક વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ ન હોવાને કારણે કોઈ નિયત આકારના નથી પણ જુદા જુદા આકારના છે. એ જ વાતને પ્રકટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ આપ્યો છે. “યંભલોય વત્તવ્વયા ણેયવ્વા, જહા ઝીવાભિગમે દેવુદેસપ્” બ્રહ્મલોક કલ્પમાં રહેલાં વિમાનો અને દેવોના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન જીવાભિગમ સૂત્રના દેવોદેશકમાં કરવામાં આવેલું છે, એ જ પ્રમાણેનું પ્રતિપાદન અહીં પણ લોકાન્તિક દેવોના વિષયમાં શ્રદ્ધા કરવું. તે જગ્યાએ આવેલું કથન કયાં સુધી.



હંતા, ગોયમા ! અસહં, અદુવા અણંતવસ્તુતો, ણો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિયવિમા-  
ણેસુ । વ્રહ્મલોકે યા વક્તવ્યતા જીવાભિગમે દેવોદેશકે વિમાનાનામ્, દેવાનાં ચ  
પ્રતિપાદિતા, સા અત્રાઽપિ લોકાન્તિકદેવેષુ નેતવ્યા જ્ઞાતવ્યા । તદવધિમાહ-  
' જાવ-હંતા ' ઇત્યાદિ । હે ગૌતમ ! હન્ત સત્યમ્ યાવત્ અસકૃત્ ભૂયોભૂયઃ, અથવા  
અનન્તકૃત્વઃ, અનન્તવારાન્ તે સર્વે પ્રાણાઃ, ભૂતાઃ જીવાઃ, સત્ત્વાઃ પૃથિવ્યાદિકાચિ-  
કતયા ઉપપન્નપૂર્ણાઃ પૂર્વમ્ ઉત્પન્નાઃ કિન્તુ લોકાન્તિકવિમાનેષુ દેવતયા અનન્ત-  
કૃત્વઃ અનન્તવારાન્ તે જીવાઃ નો ચેવ નૈવ સ્વલુ ઉત્પન્નાઃ ઇતિભાવઃ । જીવાભિગમ  
વક્તવ્યતા ચ કિન્ચિત્પ્રદર્શયતે-' લોગંતિયવિમાણા ણં મંતે ! કઙ્ગવળ્લા પળ્લત્તા ?  
ગોયમા ! તિવળ્લા-લોહિયા, હાલિદા, સુક્કિલ્લા, એવં પમાણ નિચ્ચા લોયા, ગંધેણં  
ઇદ્ધગંધા, એવં ઇદ્ધકાસા, એવં સવ્વરયણામયા, તેસુ દેવા સમચરંસા, અહ્મહુ-  
ગવળ્લા, પમ્હલેસ્સા । લોગંતિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા

દેવોં મેં જાનનીં ચાહિયે । યહ વક્તવ્યતા કહાં તક જાનનીં ચાહિયે તો  
હસકે લિયે કહા ગયા હૈ કિ ( જાવ હંતા ! અસહં અદુવા અણંતવસ્તુતો,  
ણો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિયવિમાણેસુ ) હૈ ગૌતમ ! સત્ય હૈ યાવત્-  
ચાર ચાર અનંતવાર વે સવ પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ પૃથિવીકાચિક રૂપ  
સે પહિલે ઉત્પન્ન હુએ હૈં, કિન્તુ લોકાન્તિક વિમાનોં મેં દેવરૂપ સે વે જીવ  
પહિલે કમ્મી નહીં ઉત્પન્ન હુએ હૈં । યહાં તક જાનનીં ચાહિયે । " યહાં પર  
જીવાભિગમ વક્તવ્યતા થોડે સે રૂપ મેં પ્રકટ કી જાતી હૈ-( લોગંતિ ય  
વિમાણા ણં મંતે ! કઙ્ગવળ્લા પળ્લત્તા ? ગોયમા ! તિવળ્લા-લોહિયા,  
હાલિદા, સુક્કિલ્લા એવં પમાણ નિચ્ચાલોયા ગંધેણં ઇદ્ધગંધા એવં ઇદ્ધકાસા,  
એવં સવ્વરયણામયા, તેસુ દેવા સમચરંસા, અહ્મહુગવળ્લા, પમ્હલેસ્સા,

શ્રુત્વ કરુણું ભેદં, તે બતાવવાને માટે સૂત્રાર કહે છે કે " જાવ હંતા !  
અસહં અદુવા અણંતવસ્તુતો, ણો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિયવિમાણેસુ " " હે  
ગૌતમ ! સત્ય છે, ( યાવત્ ) તે સમસ્ત પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વારંવાર  
અથવા અનંત વાર પૃથ્વીકાચિકરૂપે પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે, પરંતુ  
લોકાન્તિક વિમાનોમાં દેવરૂપે તે જોવા પહેલાં કદી પણ દેવરૂપે ઉત્પન્ન થયા  
નથી " અહીં સુધીનું કથન શ્રુત્વ કરવું.

હવે અહીં જીવાભિગમસૂત્રની વક્તવ્યતાનો સારાંશ પ્રકટ કરવામાં આવે છે-

" લોગંતિય વિમાણાં મંતે ! કઙ્ગ વળ્લા પળ્લત્તા ? " ગોયમા ! તિવળ્લા-  
લોહિયા, હાલિદા, સુક્કિલ્લા એવં પમાણ નિચ્ચાલોયા, ગંધેણં ઇદ્ધગંધા એવં ઇદ્ધકાસા,  
એવં સવ્વરયણામયા, તેસુ દેવા સમચરંસા, અહ્મહુગવળ્લા, પમ્હલેસ્સા, લોગં-

લોકાન્તિકવિમાનાનાં પ્રતિષ્ઠાનં સ્થિત્યધિકરણં વાયુરૂપં પ્રદર્શિતમેવ, ચાહલ્યં સંસ્થાનં ચ પંચવિંશતિયોગનશતાનિ, ઉચ્ચત્વં સપ્તયોગનશતાનિ, સંસ્થાનમ્ આકારસ્તુ એતેષાં વિમાનાનાં નાનાપ્રકારકં ચોદ્ધપમ્ અનાવલિકાપ્રવિષ્ટતાત્, આવલિકાપ્રવિષ્ટાનિ તુ વૃત્ત-ચ્ચત્ત-ચતુસ્ત્વરૂપાણિ ત્રીણિ સંસ્થાનાન્વેય ભવન્તીત્યવશે-યમ્ । તદેવાદ-‘ વંમલોયવત્તવ્યયા ણેયવ્વા, જહા-ઝીવાભિગમે દેવુદેસમ્’ જાવ-ણેયવ્વં વિમાણાણં પદ્ધાણં, વાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં) इस तरह की स्थिति का अधिकरण वायुरूप है यह तो प्रदर्शित ही कर दिया गया है अब रही इनके चाहल्य और संस्थान के विषय की बात सो इनका चाहल्य-विमानों की पृथिवी स्थूलता-२५०० योजन की है और ऊंचाई ७०० योजन की है । तथा इनका आकार एक रूप से नहीं है भिन्न २ प्रकार से है क्योंकि ये अनावलिका में प्रविष्ट हैं । जो आवलिका में प्रविष्ट होते हैं वे या तो गोल होते हैं, या त्रिकोण होते हैं, या चतुष्कोण होते हैं । इसलिये ये आवलिका में प्रविष्ट न होनेके कारण नियत आकार वाले नहीं कहे गये हैं प्रत्युत अनेक प्रकार के आकार वाले कहे गये हैं । इसी बात को सूचित करने के निमित्त सूत्रकार ने ( वंमलोय वत्तव्यता णेयव्वा, जहा जीवाभिगमे देवुदेसम ) ऐसा कहा है कि ब्रह्म-लोक में रहने वाले विमानों और देवों के विषय में जो वक्तव्यता जीवाभिगम सूत्र में कही है, वही वक्तव्यता यहां पर भी इन लोकान्तिक

રહેલાં છે. “ एवं ણેયવ્વં વિમાણાણં પદ્ધાણં, વાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં ” આ રીતે વિમાનોની સ્થિતિના આધાર રૂપ વાયુને તે ઉપર બતાવવામાં આવેલ છે, હવે તેમના વિસ્તાર, ઊંચાઈ, આકાર આદિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે-

તે વિમાનોની પૃથ્વીની સ્થૂળતા-એટલે કે તેમનો વિસ્તાર ૨૫૦૦ યોજનનો અને ઊંચાઈ ૭૦૦ યોજનની છે. તેથી તેમનો આકાર એકસરખો નથી. પણ જુદા જુદા પ્રકારનો છે, કારણ કે તેઓ આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ નથી. જે વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ હોય છે, તેઓ ગોળાકારના અથવા ત્રિકોણાકારના કે ચતુષ્કોણાકારના હોય છે. પરંતુ આ લોકાન્તિક વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ ન હોવાને કારણે કોઈ નિયત આકારના નથી પણ જુદા જુદા આકારના છે. એ જ વાતને પ્રકટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ આપ્યો છે- “ વંમલોય વત્તવ્યયા ણેયવ્વા, જહા જીવાભિગમે દેવુદેસમ ” બ્રહ્મલોક કલ્પમાં રહેલાં વિમાનો અને દેવોના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન જીવાભિગમ સૂત્રના દેવોદેશકમાં કરવામાં આવેલું છે, એ જ પ્રમાણેનું પ્રતિપાદન અહીં પણ લોકાન્તિક દેવોના વિષયમાં ગ્રહણ કરવું. તે જગ્યાએ આવેલું કથન કયાં સુધી

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘લોગંતિયવિમાણેષુ ણં મંતે ! કેવદ્વયં કાલં ઠિઈ પળ્લત્તા ?’  
 હે મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાણેષુ કિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તા ? મગવાનાહ—  
 ‘ગોયમા ! અદ્ધ સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લત્તા ’ હે ગૌતમ ! અદ્ધસાગરોપમાણિ સ્થિતિઃ  
 પ્રજ્ઞપ્તા । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ લોગંતિયવિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવદ્વયં અવાહાણ  
 લોગંતે પળ્લત્તે ’ હે મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાણેભ્યઃ કિયત્ત્વં કિયદ્દુમ્ અવાધયા  
 અન્તરેણ વ્યવધાનેનેત્યર્થઃ લોકાન્તઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા !  
 અસંખેજ્જાઈ જોયણસહસ્સાઈ અવાહાણ લોગંતે પળ્લત્તે ’ હે ગૌતમ ! અસંખ્યેયાનિ

યિક રૂપ સે, તેજસ્કાયિકરૂપ સે, વાયુકાયિક રૂપ સે, વનસ્પતિકાયિક  
 રૂપ સે દેવ એવં દેવીરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ હૈં ? તવ હસકે ઉત્તર મેં ( જાવ  
 હંતા, ગોયમા ! અસઈ અદ્ધુવા ) હત્યાદિ રૂપ સે પ્રમુ ને ઉત્તર દિયા હૈ ।

અવ ગૌતમ પ્રમુ સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ—( લોગંતિયવિમાણેસુ ણં  
 મંતે ! કેવદ્વયં કાલં ઠિઈ પળ્લત્તા ) હે મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાણોં મેં  
 કિતની સ્થિતિ હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ ‘ગોયમા’  
 ગૌતમ ! ( અદ્ધસાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લત્તા ) આઠ સાગરોપમ કી સ્થિતિ  
 લોકાન્તિક વિમાણોં મેં હૈં । અવ ગૌતમ પ્રમુ સે એસા પૂછતે હૈં કિ—  
 ( લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવદ્વયં અવાહાણ લોગંતે પળ્લત્તે ) હે  
 મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાણોં સે લોકાન્ત કિતની દૂર હૈ ? ઉત્તર મેં પ્રમુ  
 કહતે હૈં કિ ( ગોયમા ) હે ગૌતમ ! ( અસંખેજ્જાઈ જોયણસહસ્સાઈ અવા-  
 હાણ લોગંતે પળ્લત્તે ) લોકાન્તિક વિમાણોં સે લોકાન્ત અસંખ્યાત હજાર

પૃથ્વીકાયરૂપે, અધ્કાયિક રૂપે, તૈજસ્કાયિકરૂપે, વાયુકાયિકરૂપે. વનસ્પતિકાયિક  
 રૂપે, દેવ અને દેવીરૂપે ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ? ઉત્તર—“ હા, ગૌતમ ! તેઓ  
 ત્યાં અનેકવાર અથવા અનંતવાર પૃથ્વીકાયિકથી વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તનારૂપે  
 ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે, પણ તેઓ ત્યાં દેવરૂપે કદી પણ ઉત્પન્ન થયા નથી.”

ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—“ લોગંતિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! કેવદ્વયં કાલં ઠિઈ  
 પળ્લત્તા ? ” હે મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાણ નિવાસી દેવોની સ્થિતિ કેટલા  
 કાળની કહી છે ? ઉત્તર—“ ગોયમા ! અદ્ધસાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લત્તા ” હે ગૌતમ !  
 તે વિમાણો દેવોની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની કહી છે.

પ્રશ્ન—“ લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવદ્વયં અવાહાણ લોગંતે  
 પળ્લત્તે ? ” હે મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાણોથી લોકાન્ત કેટલે અંતરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! અસંખેજ્જાઈ જોયણસહસ્સાઈ અવાહાણ લોગંતે પળ્લત્તે ”  
 હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાણોથી લોકાન્ત અસંખ્યાત હજાર થોજન દૂર છે.



પુઠ્ઠવિકાશ્યત્તાણ, આઝકાશ્યત્તાણ, તેઝકાશ્યત્તાણ, વાઝકાશ્યત્તાણ, યણસ્સકાશ્ય-  
ત્તાણ, દેવત્તાણ, દેવિત્તાણ ઉવવન્નપુગ્ગા ? ' इत्यन्तं गान्त्यदेन संप्राप्तम् ।

લોગંતિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! સર્વે પાળા, ભૂયા જીવા, સત્તા પુઠ્ઠવિકા-  
શ્યત્તાણ, આઝકાશ્યત્તાણ, તેઝકાશ્યત્તાણ, વાઝકાશ્યત્તાણ, યણસ્સકા-  
શ્યત્તાણ દેવત્તાણ દેવિત્તાણ ઉવવન્નપુગ્ગા ? ) યહાં તક કા પાઠ યાવત્  
પદ સે યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ ગૌતમ  
ને પ્રશ્ન સે એસા પૂછા કિ હૈ 'મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોં કે કિતને વર્ણ  
હૈં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને કહા કિ હૈ ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોં કે ત્રીન  
વર્ણ હૈં—લોહિત વર્ણ, હારિદ્ર વર્ણ ઓર શુક્લવર્ણ અર્થાત્ લોકાન્તિક  
વિમાન ત્રીન વર્ણવાલે હૈં યહ યાત પ્રશ્ન ને ગૌતમ મે પ્રકટ કી હસી તરહ યે  
અપની પ્રમા સે સદા આલોકિત ( પ્રકાશિત ) રહતે હૈં, ગંધ ઇનકા ઇષ્ટ  
હોતા હૈ, સ્પર્શ ભી ઇનકા મન કો રુચિકારક હોતા હૈ યે સમસ્ત રત્નોં  
કે બને હુએ હૈં । ઇનમેં જો દેવ રહતે હૈં ઇનકા સમચતુરસ્ત્રસંસ્થાન હોતા  
હૈ । વર્ણ ઇનકા ગીલે મહુઆ કે જેસા હોતા હૈ લેહ્યા ઇનકી પદ્મ હોતી  
હૈ । હૈ મદન્ત ! કયા ઇન લોકાન્તિક વિમાનોં સે સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત  
ભૂત, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત સર્વ પૂર્વ મેં પૃથિવીકાયિક રૂપ સે, અપ્કા-

તિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! સર્વે પાળા, ભૂયા, જીવા, સત્તા પુઠ્ઠવિકાશ્યત્તાણ, આઝકા-  
શ્યત્તાણ, તેઝકાશ્યત્તાણ, વાઝકાશ્યત્તાણ, યણસ્સકાશ્યત્તાણ, દેવત્તાણ દેવિત્તાણ  
ઉવવન્નપુગ્ગા ? ”

અહીં સુધીનો પાઠ 'યાવત્' પદથી અહણ કરવામાં આવ્યો છે. હવે આ  
સૂત્રપાઠનું તાત્પર્ય સમજાવવામાં આવે છે—ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો  
પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોના કેટલા વર્ણ હોય છે ?  
તેનો જવાબ આપતા મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે “ હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક  
વિમાનના ત્રણ વર્ણ છે—લોહિત વર્ણ, હરિદ્રવર્ણ ( હળદરના જેવો વર્ણ )  
અને શુક્લવર્ણ આ રીતે લોકાન્તિક વિમાનોને ત્રણ વર્ણવાળાં કહેલાં છે. તેઓ  
પોતાની પ્રભાથી સદા દેદીપ્યમાન રહે છે, તેમની ગંધ ઇષ્ટ હોય છે અને  
તેમનો સ્પર્શ રુચિકારક હોય છે. તે વિમાનો સમસ્ત રત્નોનાં બનેલાં હોય  
છે. તે વિમાનોમાં જે દેવો રહે છે તેઓ સમચતુરસ્ત્ર સંસ્થાનવાળા હોય છે.  
અને તેમનો વર્ણ ભીનાં મહુઆ જેવો હોય છે, તેઓ પદ્મલેશ્યાવાળા હોય  
છે.” ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—“ હે ભદન્ત ! તે લોકાન્તિક વિમાનોમાં શું  
સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સર્વ પૂર્વ ( પહેલાં )



આપણા ખાતર નહીં તે આપણી ભવિષ્યની પેઠી

ખાતર પણ આ કાર્ય પૂર્ણ કરવું જ પડશે.

૩૨ જૈન સિદ્ધાંતોનું સંશોધન કરી ચાર ભાષામાં પ્રસિદ્ધ કરવાનું જે મહત્ત્વ કાર્ય આ સમિતિ લગતગ વીસ વર્ષ થયાં કરી રહી છે. તે ખીના સમાજના દરેક અંગમાં જગ-જાહેર છે.

અત્યાર સુધીમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રીએ ત્રીસ શાસ્ત્રોનું સંશોધન પૂરું કર્યું છે અને બાકીના ત્રણ સૂત્રોનું કાર્ય આ વર્ષમાં પૂરું કરી નાખશે, તેમ અમારી ધારણા છે.

બત્રીસમાંના વીસ શાસ્ત્રો તથા તેના ભાગો પ્રસિદ્ધ થઈ ગયા છે બાકીનાં શાસ્ત્રો કેટલાંક છપાય છે. અને કેટલાંકના અનુવાદ કરવાનું કાર્ય ચાલુ છે.

અસહ્ય મોંઘવારીને લીધે સમિતિએ શરૂઆતમાં ધારેલા ખર્ચ કરતાં ત્રણ ગણો ખર્ચ થવાનો અંદાજ છે આથી બાકીના કાર્યને પહોંચી વળવા રૂપિયા ત્રણ લાખની તાકીદ જરૂર છે. અને તે વીરના લક્ષ્મીનંદન પુત્રો પાસે અમારી ટહેલ છે. તેમના તરફથી બાકીના સૂત્રો માટે રૂપિયા ૫૦૦૧ આપનારાની અમે રાહ જોઈએ છીએ.

योजनसहस्राणि लोकान्तिकविमानेभ्यः अवाधया अन्तरेण व्यवधानेन लोकान्तः  
प्रश्रुप्तः कथितः । अन्ते गौतमो भगवद्वाक्यं प्रमाणिकतया स्वीकरोति—' सेवं  
भंते ! सेवं भंते चि ' हे भदन्त ! तदेवं भवदुक्तं सत्यमेव, हे भदन्त ! तदेवं  
भवदुक्तं सत्यमेवेति ॥ सू० ३ ॥

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्गुरु - प्रसिद्धाचार्य-पञ्चदशभागाकलि-  
तललितकलापालापक-प्रतिशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्माणक-वादिमानमर्दक-  
श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-  
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री  
घासीलालप्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां  
व्याख्यायां पष्ठ शतकस्य पञ्चमोद्देशकः समाप्तः ॥ ६-५ ॥

योजन दूर है । अब अन्त में गौतम प्रभु के वचनों को प्रामाणिक रूप  
से स्वीकार करते हुए कहते हैं कि ( सेवं भंते ! सेवं भंते ! चि ) हे  
भदन्त ! आपके द्वारा कहा हुआ यह सब ऐसा ही है-सत्य ही है-हे  
भदन्त ! सत्य ही है ॥ सूत्र ३ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत " भगव-  
तीसूत्र " की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छठे शतकका पांचवा  
उद्देशक समाप्त ॥ ६-५ ॥

सूत्रने अन्ते गौतमस्वामी भडावीर प्रभुनां वचनेने प्रमाणभूत गणीने कहे  
छे — " सेवं भंते ! सेवं भंते ! चि " " हे भदन्त ! आपे आ विषयनुं जे  
प्रतिपादन कथुं ते सत्य जे छे, हे भदन्त ! आपनी बात सर्वथा सत्य छे "   
आम कडीने भडावीर प्रभुने वंदलु नमस्कार करीने तेज्जा तेमने स्थाने  
जेसी गया. ॥ सू० ३ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत भगवती सूत्रनी प्रमेयच-  
न्द्रिका व्याख्याना पांचमो शतको. त्रीजे उद्देशक समाप्त ॥ ६-५ ॥



## શાસ્ત્રોની સંપૂર્ણ માહિતી

અઢારમા વાર્ષિક રિપોર્ટમાં જતાવેલ ૨૪ શાસ્ત્રો પ્રતિદ્ધ થયા પા  
નીચે મુજબ કામકાજ થયેલ છે.

(૧) જગવતી જાગ ત્રીજે ૩ જઢાર પડી ચુકયો છે અને તે મેમ્મરે  
મોકલવાનું કામ ચાલુ છે.

(૨) જગવતી જાગ ચોથો તથા પાંચમો છપાઈ ગયો છે. અને તે  
બાઈન્ડીંગ કાર્ય ચાલે છે.

(૩) રાતા સૂત્રના કુલ ત્રણે જાગ છપાય છે જે એકાઢ માસ  
પૂરા થઈ જયે.

(૪) જગવતી જાગ છઠ્ઠો તથા સાતમો છપવાનું કામ ચરૂ થઈ ગયું છે.

(૫) કુલ્લે લગભગ ૩૦ સૂત્રો પૂજ્ય ગુરુદેવે લખીને પૂરાં કરેલાં છે  
તેમાંના છપાયા વગરનાં જે સૂત્રો બાકી છે તેનું અનુવાઢનું તેમજ સંશોધન  
કેટલુંક કામ ચાલુ છે, અને કેટલુંક બાકી છે.

(૬) નિશીથ સૂત્ર સૂર્યપત્રતી તથા ચંદ્રપત્રતી સૂત્ર એ બાકી રહેલ  
ત્રણ સૂત્રો લખવાનું કાર્ય અત્યારે ચાલે છે.

શ્રી અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા.

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

રાજકોટ

તા. ૧૫-૭-૬૩

નમ્ર સેવક

સાકરચંઢ બાઈચંઢ શેઠ

મંત્રી.



